हिन्दी विश्वकोष

बंगला विश्वकोषके सम्पादक

श्रीनगेन्द्रनाथ वसु प्राच्यविद्यामहार्णव,

सिद्धान्त-वारिधि, शब्दरत्नाकर, एम, आर, ए, एस,

तथा हिन्दीके विद्वानों द्वारा सङ्कलित।

पञ्चम भाग

[कुकील—खाड़ायनीय]

THE ENCYCLOPÆDIA INDICA

VOL. V.

COMPILED WITH THE HELP OF HINDI EXPERTS

BY

NAGENDRANATH VASU, Prāchyavidyāmahārnava,

Siddhānta-vāridhi, Sabda-ratnâkara, M. R. A. S.,

Compiler of the Bengali Encyclopædia; the late Editor of Bangiya Sâhitya Parishad and Kâyastha Patrikâ; author of Castes & Sects of Bengal, Mayurabhanja Archæological Survey Reports and Modern Buddhism; Hony. Archæological Secretary, Indian Research Society; Member of the Philological Committee, Asiatic Society of Bengal; &c. &c. &c.

Printed by H. C. Mitra, at the Visvakosha Press.
Published by
Nagendranath Vasu and Visvanath Vasu
9, Visvakosha Lane, Baghbazar, Calcutta.
1922

बारह खण्डका मूल्य ६) रुपया, एक खण्डका मूल्य ॥) आना और डाक महसूल अलग।

हिन्दी
विश्वकोष

(पञ्चम भाग)

कुकील (सं० पु०) कुः पृथिवी तस्याः कील इव, उपमि०। पर्वत, पहाड़।

कुकीर्ति (सं० स्त्री०) कु कुत्सिता कीर्तिः, कर्मधा०। निन्दा, धिकार, बदनामी। कुकीर्ति मृत्युके पीछे भी नहीं मिटती।

कुकुट (सं० पु०) कु ईषत् कुत्सितं वा यथा स्यात् तथा कुटति, कु-कुट-क। १ सितावरक्षुप, सिरियारी। २ शाल्मलीवृक्ष, सेमरका पेड़।

कुकुटुम्बिनी (सं० स्त्री०) कु कुत्सिता कुटुम्बिनी, कर्मधा०। निन्दित आत्मीय परिवारकी गृहिणी।

कुकुटी (सं० स्त्री०) १ ऋषभक। २ शाल्मली वृक्ष।

कुकुत्था (सं० स्त्री०) सिंहलकी एक नदी। वह पावा और कुशिनगरके बीच बहती है। सिंहलके बौद्ध-ग्रन्थमें उसका वर्णन मिलता है। बुद्धदेवने उसमें स्नान और जलपान किया था। ब्रह्मदेशके बौद्धग्रन्थमें उक्त नदीका नाम 'ककुथा' लिखा है। आज कल उसे 'घागी' कहते हैं।

कुकुत्सन्द (सं० पु०) बुद्धविशेष, एक बुद्ध। वह गौतम-से पूर्व आविर्भूत हुवे थे।

कुकुद (सं० पु०) कु कु इत्यव्ययं अलङ्कृता कन्या तां सत्कृत्य पात्राय ददाति, कु-कु-दा-क। सत्कार पूर्वक अलङ्कृता कन्या सम्प्रदानकारी।

कुकुद्रु (सं० पु०) कुक्कुरद्रुम, ककरौंधा।

कुकुन (सं० पु०) कद्रूका गर्भजात एक सर्प।

ककुन्द, कुकुन्दर देखो।

कुकुन्दनी (सं० स्त्री०) ज्योतिष्मती लता, रतन-जोत।

कुकुन्दर (सं० क्ली०) स्कन्द्यते कामिना अत्र, निपात-नात् साधुः। १ मेरुदण्डके निम्नभागमें नितम्बस्थान-स्थित गर्तद्वय, रीढके नीचे चूतड़ों पर पड़नेवाले दो गड्ढा। कुकुन्दर मर्मस्थानमें है। किसी रूपसे आहत होने पर उनमें सर्वज्ञान नहीं रहता और हाथ-पैर भी नहीं चलता। (सुश्रुत) (पु०) कुं भूमिं दरति दार-यति वा, कु-दृ अन्तर्भूत ण्यन्तात् अण् निपातनात् साधुः। २ कुकुरद्रु, ककुरौंधा।

कुकुन्दरमेचक (सं० पु०) गोरक्षतण्डुली, एक झाड़ी।

कुकुन्ध (वै० पु०) भूतयोनिविशेष, (अथर्ववेद, ८। ६। ११)

कुकुभ (सं० पु०) १ कुक्कुभपक्षी, जंगली मुरगा। २ छन्दोविशेष। वह मात्रिक होता है। उसके प्रत्येक पादमें सोलह और चौदहके ठहरावसे ३० मात्रा लगती हैं। चरणके अन्तमें २ गुरु आना चाहिये।

कुकुभा (सं० स्त्री०) कु ईषत् कु पृथिव्यधिष्ठात्री देवता इव भा यस्याः। एक रागिणी। ककुभ देखो।

कुकुर (सं० पु०) कु कुत्सितं कुरति शब्दायते, कु-कुर-

अच्। १ कुकुर, कुत्ता। कुक-उरच्। २ यदुवंशीय अंधकराजके पुत्र। ३ सर्पविशेष। ४ ग्रन्थिपर्णी नामक कोई वृक्ष, गंठिवना। कुकुराः स्वनामख्याताः क्षत्रियास्तेषां जनपदः। ५ देशविशेष, एक मुल्क। कोई कोई राजपुतानाके वालमेर नामक स्थानमें उक्त जनपदको अवस्थित समझते हैं। फिर किसीके मतानुसार उसका अवस्थान जेसलमेरमें है।

"जठरा कुकुराश्चैव सदशार्णाश्च भारत।" (भारत, भीष्मपर्व ९।४२।)

६ कुकुर जनपदवासी। यह शब्द नित्य बहुवचनान्त रहता है।

कुकुरआलू (हिं० पु०) लताविशेष, एक बेल। वह नेपाल, भूटान, आसाम, छोटा नागपुर प्रभृतिके वनमें उपजता है। उसका कन्द खाया जाता है।

कुकुरखांसी (हिं० स्त्री०) कासरोगविशेष, किसी किस्मकी सूखी खांसी। उसमें कफ नहीं आता।

कुकुरजिह्वा (सं० स्त्री०) कुकुरस्य जिह्वा इव जिह्वा यस्याः। १ मत्स्यविशेष, एक मछली। २ क्षुद्र वृक्षविशेष, एक पेड़।

कुकुरदन्त (हिं० पु०) १ दन्तविशेष, एक दांत। वह साधारण दन्तोंके अतिरिक्त नीचेको आड़ा आता और ओष्ठको कुछ ऊपर उठाता है। २ डाढ़के पासका पैना दांत। कड़ी चीज उसीसे कटती है।

कुकुरदन्ता (हिं० वि०) कुकुरदन्त रखनेवाला, जिसके नीचेको आड़ा दांत रहे।

कुकुरभंगरा (हिं० पु०) भंगरैया, काला भंगरा।

कुकुरमाछी (हिं० स्त्री०) मक्षिकाविशेष, एक मक्खी वह कुत्तों, गायों, बैलों, भैंसों वगैरहके लगती है। उसका रंग लाली लिये भूरा रहता है। वह एक बार चिपट जानेसे फिर कठिनतासे छूटती है। घोड़ा उससे बहुत डरता है। एक भी कुकुरमाछी आ जानेसे वह पूंछ चलाने और चारो पैर उछालने लगता है।

कुकुरमुत्ता (हिं० पु०) कुकरौंधा देखो।

कुकुराधिनाथ (सं० पु०) कुकुराणां यादवानां अधिनाथः, ६-तत्। १ यादवोंके अधिपति। २ श्रीकृष्ण।

कुकुरी (सं० पु०) कुकुर जातित्वात् ङीष्। कुक्कुरी, कुतिया।

कुकुरी (हिं० स्त्री०) कुकड़ी।

कुकुरुन्द (सं० पु०) कुकुरद्रुम, कुकरौंधा।

कुकुरौंधा, कुकुरमाछी देखो।

कुकुवाक (सं० पु०) कुकुभपक्षी, एक चिड़िया।

कुकुही (हिं० स्त्री०) १ कुकुभ, वनमुर्गी। २ बाजरेका एक रोग। उससे बाजरेकी मञ्जरी पर सूक्ष्म सूक्ष्म असितचूर्ण लग जाता और दाना नहीं आता।

कुकूट (सं० क्ली०) मयूरपुच्छ, मोरपंख।

कुकूटी (सं० स्त्री०) कोः पृथिव्याः कूटोऽस्त्यस्याः, कु कूट-अच्-ङीष्। शाल्मलीवृक्ष, सेमरका पेड़।

कुकूण, कुकूणक देखो।

कुकूणक (सं० पु०) १ शिशुओंका नेत्रवर्त्मगत रोग, कुथुआ बच्चोंकी आंखके पपोटेमें होनेवाली एक बीमारी। वह क्षीरदोषसे उत्पन्न होता है। फिर चक्षु खुजलाने लगते हैं। शिशु ललाट, अक्षिकूट और नासाको प्रघर्षण किया करता है। वह अर्कप्रभा देख नहीं सकता और न चक्षु ही खोलता है। (माधवनिदान)

२ पादरोगभेद, पैरकी एक बीमारी।

कुकूनन (वै० त्रि०) कुङ् शब्दे अत्यर्थं कुवन् शब्दं कुर्वन् नमति प्रह्वीभवति, पृषोदरादित्वात् साधुः। अत्यन्त शब्दके साथ पतनशील, बड़ी आवाजसे गिरनेवाला।

"प्रेशीनां त्वा पत्मन्नाधूनोमि कुकूननानां त्वा पत्मन्ना धूनोमि।"
(शुक्ल यजुर्वेद, ८।४८)

'अत्यर्थं कुवन्त्यः शब्दं कुर्वाणा नमन्ति प्रह्वी भवन्ति कुकूनना मेघस्था आपः तासां पतने त्वां कम्पयामि।' (महीधर)

कुकूरभ (वै० पु०) भूतयोनिविशेष।

कुकूल (सं० क्ली०) कोः भूमेः कूलम्, ६-तत्। १ श्वभ्र गड्ढा। २ वर्म, बखतर। (पु०) कू-जल्-च् कुगागमश्च ३ तुषानल, भूसीकी आग।

"शिरीषादपि मृद्वङ्गी क्वेयमायतलोचना।
अयं क्व च कुकूलाग्निकर्कशो मदनानलः॥" (उद्भट)

कुकृत्य (सं० क्ली०) कु कुत्सितं कृत्यम्, कर्मधा०। कुत्सित कार्य, खराब काम।

"किमेतद्भवता कुकृत्यमनुष्ठितम्।" (पञ्चतन्त्र)

कुकोल (सं० क्ली०) कुत्सितं कोलति, कु-कुल-अच्। कोलाहल, बेरी।

कुक्कुट (सं० पु०) कुक् सम्पदादित्वात् क्विप्, कुका आदानेन कुटति, कुक्-कुट्-क। १ पक्षिविशेष, मुरगा। उसका संस्कृत पर्याय—कृकवाकु, ताम्रचूड़, चरणायुध, कालज्ञ, नियोद्धा, विष्किर, नखरायुध, ताम्रशिखी, रात्रिवेद, उषाकर, हताक्ष, काहल, दक्ष, यामनादी और शिखण्डिक है।

उक्त पक्षिजातिके प्रधानतः मस्तक पर मांसल चूड़ा होती है। जबड़ेके नीचे मांसका टहनी (कण्ठ) और पुच्छमें १४ पर रहते हैं। पुरुष अधिक सुश्री लगता है। पर घन होते हैं। मत्थेकी चोटी बड़ी और बहुत चिकनी रहती है। पुरुषके पदमें बड़े बड़े तीक्ष्ण नख होते हैं। युद्ध काल वही अस्त्रस्वरूप व्यवहार किये जाते हैं। यह स्वेच्छाचारी और बहुपत्नीक है। भारतवर्ष और भारतमहासागरीय द्वीपपुञ्ज ही उसका प्रधान जन्मस्थान है। यहींसे वह युरोप गया है। किन्तु यह आज भी स्थिर नहीं हुवा कब वह युरोप पहुंचा था। प्राचीनग्रीक (यूनानी) लोग उसे पारस्यदेशीय पक्षी समझते थे। उससे अनुमित होता कि पारस्यदेशसे वह ग्रीस गया होगा। यह अपोलो, मार्करी और मार्स कई रोमक देवतावोंको अत्यन्त प्रिय है। उसीसे पहले ग्रीक और रोमक उसको बड़े यत्नसे रखते थे। ग्रीकों और रोमकोंकी मुद्रा तथा रत्नादिमें इसकी मूर्ति अङ्कित देख पड़ती है।

भारत, ग्रीस, रोम, चीन, मलय प्रभृति देशोंके अधिवासियोंको बहु कालसे कुक्कुटयुद्ध (मुरगेंकी लड़ाई) देखना अच्छा लगता आया है। उसीसे ग्राम्य कुक्कुट पाला जाता है। हम समझते कि पूर्वकाल मुनिऋषि ग्राम्यकुक्कुटको स्नेहके चक्षुसे देखते थे। उसीसे मनु प्रभृति धर्मशास्त्रमें ग्राम्यकुक्कुटभक्षण निषिद्ध माना गया है।

कोई कोई कहता कि वन्यकुक्कुटसे ग्राम्यकुक्कुट उपजा है। किन्तु वन्य और ग्राम्य उभयविध कुक्कुटका गठनादि परिदर्शन करनेसे वह भिन्नजातीय जैसा समझ पड़ते हैं। यवद्वीपमें 'वङ्किव' नामक एकजातीय कुक्कुट मिला है। वह भारत महासागरीय सकल द्वीपोंमें वास करता और देखनेमें ग्राम्यकुक्कुट जैसा ही रहता है। किसीके मतानुसार उक्त वङ्किवा ही ग्राम्य कुक्कुटोंका आदिपुरुष है। उसको चूड़ा वृहत् होती है, वर्ण उज्ज्वल नील और बादाम जैसा रहता है। रोमावली स्वर्णाकार लगती है। पक्षके किसी किसी स्थान पर नाना वर्णका सम्मेलन हो जाता है। भारतवर्षमें भी स्थान स्थान पर वैसा ही कुक्कुट होता है। किन्तु गठनमें वह कुछ बड़ा पड़ता है। सुमात्राद्वीपमें भी उसी प्रकारका हरा और गुलाबी लिये हुवे ताम्रचूड़ (Bronzed fowl) मिलता है। उसके अतिरिक्त वहां यगी वा कलम तथा वृहदाकार एक भिन्न जातिके कुक्कुट भी वास करते हैं।

वन्यकुक्कुट भारतके जंगलोंमें बहुत है। उसकी चूड़ा बहुत बड़ी होती है। वर्ण उज्ज्वल और देखनेमें अति सुन्दर लगता है।

ग्राम्यकुक्कुट भी नानाप्रकारका होता है। निग्रो कुक्कुट (Gallus moris) का गात्रवर्ण स्याही जैसा काला रहता है। चीन और जापानके रेशमी कुक्कुट (Gallus lanatus) का मांस स्वच्छ चमकता हुवा, चूड़ा गुलाबी और दूसरे रोम बिलकुल रेशमकी भांति मसृण और उज्ज्वल होते हैं। अपर एक जातीय कुञ्चितलोम कुक्कुट (Gallus crispus) है। शेषोक्त तीनों कुक्कुट भिन्नजातीय कहलाते हैं। पालित कुक्कुटोंमें निम्न लिखित ८ प्रकार प्रधान हैं:—१ खर्वकाय कुक्कुट। अंगरेजोंमें उसे गेम फाउल (Game Fowl) अर्थात् लड़ाईका मुरगा कहते हैं। वह अतिशय कलहप्रिय होता है। किसी समकक्ष दूसरे कुक्कुटको सामने पाते ही उसे लड़नेकी पड़ती है। बहुतसे लोग उसे पालते हैं। उसका मांस और डिम्ब अति सुस्वादु होता है। अन्य प्रकारके कुक्कटमें छोड़ देनेसे लड़ाईका मुरगा ही प्रधान बन बैठता है। २ वण्टम कुक्कुट ३ कोचीन-चीनका वृहदाकार कुक्कुट, ४ हामवर्गका सुदृश्य कुक्कुट—मांस और डिम्बके लिये उसका मूल्य अधिक होता है। ५ मलयका महत्काय कुक्कुट—बहुत लड़ता है। ६ स्पेनका कुक्कुट। बड़े बड़े डिम्ब देनेसे मूल्यवान् होता है। ७ पोलेण्डका कृष्णकाय कुक्कुट। काला होते भी उसका मस्तक सफेद रहता

है। वह बहुत अण्डे देता है। ८ विलायती मुरगा-इङ्गलेण्डके सरे प्रदेशमें वह अधिक मिलता है। (Dorking fowl) देखनेमें उसे सफेद पाते हैं। पैर छोटे होते हैं। मांस अति सुस्वादु लगता है। अंडे अधिक देनेके कारण लोग उसे प्रायः पाल लेते हैं। किसीके मतानुसार रोमकोंके आक्रमण समय असभ्य अंगरेज उक्त मुरगेसे खेल करते थे।

दूसरे भी अनेक प्रकारके कुक्कुट होते हैं। देश और जलवायुके भेदसे उनका वर्ण तथा शरीरका गठन भी नहीं मिलता।

साधारणतः ग्राम्य और वन्य भेदसे कुक्कुट दो प्रकारका होता है। उभयविध कुक्कुटका मांस विशेष बलकारक है। चरकसंहितामें लिखा है कि यावतीय बलकारक मांसके मध्य वन्यकुक्कुटका मांस श्रेष्ठ पथ्य है। भावप्रकाशमें द्विविध कुक्कुटके मांसका गुण इस प्रकार कहा है :— ग्राम्यकुक्कुटका मांस कषाय, स्निग्ध, उष्णवीर्य, गुरुपाक, पुष्टिकारक, चक्षुके लिये हितकर और वायु, कफ, शुक्र तथा बलवर्धक है। वन्य कुक्कुटका मांस स्निग्ध, पुष्टिकारक, श्लेष्मवर्धक, गुरु और वायु, पित्त, क्षय, वमि तथा विषमज्वरनाशक होता है। २ तान्त्रिक आसन भेद।

> "पद्मासनं तु संस्थाप्य जानूर्वोरन्तरे करौ।
> निवेश्य भूमौ संस्थाप्य व्योमस्थं कुक्कुटासनम्॥" (तन्त्रसार)

प्रथमतः पद्मासन लगा दोनों हाथ उभय जानुके मध्यसे भूमिपर जमाते हैं। फिर दोनों हाथों पर भर डाल शरीरको शून्यस्थ करनेसे कुक्कुटासन होता है। ३ स्फुलिङ्ग, चिनगारी। ४ शूद्रके औरस और निषादीके गर्भसे उत्पन्न एक जाति।

कुक्कुटक (सं० पु०) कुक्कुट संज्ञायां स्वार्थे वा कन्। १ कुक्कुभपक्षी, वनमुरगा। २ शूद्रकके औरस और निषादीके गर्भसे उत्पन्न एक जाति।

> "शूद्रजातौ निषाद्यां तु स वै कुक्कुटकः स्मृतः।" (मनु, १०।१८)

३ कुक्कुट, मुरगा।

कुक्कुटध्वनि (सं० पु०) कुक्कुटस्य ध्वनिः, ६-तत्। कुक्कुटका शब्द, मुरगेकी बांग।

कुक्कुटनाड़ी (सं० स्त्री०) यन्त्रविशेष, एक टेढ़ी नली। उसके द्वारा पूर्ण पात्र वा स्थानसे छूछे पात्र स्थानमें पानी आदि पहुंचाते हैं।

कुक्कुटपाद (सं० पु०) बौद्धशास्त्रोक्त एक पर्वत। चीनपरिव्राजक युयेन चुयाङ्ग बोधिद्रुम दर्शन कर नैरञ्जन और महीनदीके पूर्व प्रायः ८ कोस (१०० लि) वन्य पथ अतिक्रम कर कुक्कुटपादगिरि (किउ-किउ-च-पो-तो-षन्) पर पहुंचे थे। उन्होंने लिखा है कि उसका अपर नाम 'गुरुपादगिरि' (किउ-लिउ-पो-तो-षन्) रहा। बुद्धदेवके निर्वाणके पीछे महाकाश्यप उक्त गिरि पर जाकर बसे थे। निर्वाणके २० वर्ष पीछे वहीं उन्होंने मुक्ति लाभ किया। युयेनचुयाङ्गके बहुत पहले (ई० को ५वीं शताब्द) फाहियान नामक दूसरे चीनपरिव्राजक कुक्कुटपाद देखने गये थे। उन्होंने लिखा है—"महाकाश्यपके कारण यह गिरि एक प्रधान बौद्धतीर्थके रूपसे प्रसिद्ध है। प्रतिवर्ष बौद्ध तीर्थयात्री यहां आकर काश्यपकी पूजा करते हैं। उसी समय अर्हत् आ और धर्मोपदेश सुना उनका सन्देह मिटाते हैं। इस पहाड़ पर अति सावधान होकर आना पड़ता है। चारो ओर निविड़ वन है। सिंह, व्याघ्रादि हिंस्र जन्तु विचरण करते हैं।"

युयेनचुयाङ्गके भ्रमणवृत्तान्तमें पढ़ते हैं—"कुक्कुटपादके निकट ही त्रिशृङ्गपर्वत है। सन्ध्याकालको दूरसे इस त्रिशृङ्गपर्वतमें (स्वभावतः) उज्ज्वल आलोक हुवा करता है। किन्तु पहाड़पर चढ़नेसे कुछ देखनेमें नहीं आता।"

कुक्कुटपादका वर्तमान नाम 'कुरकीहार' है। वजीरगंजसे डेढ़ कोस उत्तरपूर्व और गयासे भी ८ कोस उत्तरपूर्व वह अवस्थित है। वर्तमान कुरकीहार नामक स्थानसे पाव कोस उत्तर पास ही पास ३ पहाड़ देख पड़ते हैं। उसपर कई बौद्धस्तूप और बुद्ध-मूर्तिका भग्नावशेष विद्यमान है।

कुक्कुटपादप (सं० पु०) कुक्कुटपादी देखो।

कुक्कुटपादी (सं० स्त्री०) देवसर्षप, किसी किस्मका सरसों। वह सर, मूलमें रक्त, रूखा, गन्धमें उग्र

और सन्निपात, कफ एवं वातनाशक होती हैं।
(वैद्यक निघण्टु)

कुक्कुटपुट (सं० पु०) हस्तप्रमाण खातमें दग्धवन करीष कृत औषधका पुट। मतान्तरमें किसीने उसे वितस्तिमात्र, किसीने षोड़शांगुल और किसीने षड़ङ्गुल प्रमाण घन खात कहा है।

कुक्कुटपुटभावना (सं० स्त्री०) मिलित पलद्वय रससे भावना दे कुक्कुटपुटद्वारा शोषण करना चाहिये।

कुक्कुटपेटक (सं० पु०) कुक्कुटपिच्छ, मुरगीकी पूंछ।

कुक्कुटमञ्जरी (सं० स्त्री०) चविका, चाव।

कुक्कुटमण्डप (सं० पु०) काशीस्थ मुक्तिमण्डप। उसके उक्त नाम होनेका कारण इस प्रकार लिखा गया है—कोई ब्राह्मण स्वीय पत्नी और दो पुत्रोंके साथ चण्डालसे दान लेनेपर कुक्कुटयोनिको प्राप्त हुवा था। फिर वह लोग कुक्कुटयोनिमें उत्पन्न हो काशीकी प्रान्तसीमा पर रहने लगे। उस जन्ममें उनके जातिस्मरण हो गया। किसी दिन कई तीर्थयात्री उक्त स्थान पर पहुंच परस्पर काशीतीर्थका माहात्म्यादि वर्णन करते थे। कुक्कुटविशेष मनोयोगसे कथा सुन उनके साथ काशीमें जाकर उपस्थित हुवे और मुक्तिमण्डपमें रह नियत रूपसे यथानियम स्नान एवं काशीकथाश्रवणादि पुण्य कार्य करने लगे। उस पुण्यफलसे वह उसी स्थान समुदाय पापशून्य हो देह परित्याग कर विमानमें आरोहणपूर्वक शिवलोकको चले गये। इसी प्रकार कुक्कुटोंके मुक्तिलाभ करनेसे यह मुक्तिमण्डप कुक्कुटमण्डप नामसे विख्यात हुवा है। (काशीखण्ड, ६८ अ०)

कुक्कुटमर्दका (सं० स्त्री०) आरामशीतला, एक खुशबूदार लता।

कुक्कुटमस्तक (सं० क्ली०) कुक्कुटस्येव मस्तकं शिखा यस्य, बहुव्री०। १ चव्य, चाव। २ मरिचभेद, किसी किस्मकी मिर्च।

कुक्कुटव्रत (सं० क्ली०) कुक्कुट इत्याख्यं व्रतम्, मध्यपदलो०। एक व्रत। सन्तानकी कामनासे स्त्री उक्त व्रत पालन करती हैं। उसे ललितासप्तमीव्रत भी कहते हैं। भाद्रमासकी शुक्ला सप्तमीको यथाविधि स्नान और शिवदुर्गाकी पूजा कर कुक्कुटव्रत आचरण करना पड़ता है।

"भाद्रे मासि सिते पक्षे सप्तम्यां नियमेन या।
स्नात्वा शिवं लेखयित्वा मण्डली च सहाम्बिकम्॥
पूजयेच्च तदा तस्या दुःखं नैव जायते॥" (तिथ्यादितत्त्व)

कुक्कुटशिख (सं० पु०) कुक्कुटस्य शिखेव शिखा यस्य, बहुव्री०। कुसुम्भवृक्ष, कुसुमका पेड़।

कुक्कुटा (सं० स्त्री०) पीतझिण्टी, पीली झाड़ी।

कुक्कुटागिरि (सं० पु०) कुक्कुटप्रधानो गिरिः, किंशुलुकादित्वात् दीर्घः। वनगिर्योः संज्ञायां कोटरकिंशुलुकादीनाम्। पा ६।३।११७। अधिक परिमाणमें कुक्कुटविशिष्ट पर्वत, मुरगोंका पहाड़।

कुक्कुटाण्ड (सं० क्ली०) कुक्कुट्याः अण्डः, पुंवद्भावः। कुक्कुटडिम्ब, मुरगीका अण्डा। २ धान्यविशेष, किसी किस्मका धान।

कुक्कुटाण्डक (सं० पु०-क्ली०) १ व्रीहिधान्यविशेष, किसी किस्मका धान, दुद्दी। उसका तण्डुल अण्ड तुल्य होता है। २ मुर्गीका अण्डा।

कुक्कुटाण्डसम (सं० पु०) कुक्कुटाकार वर्ण वार्ताकी, मुर्गीके अण्डे-जैसा बैंगन या भांटा।

कुक्कुटाभ (सं० पु०) कुक्कुट इव आभाति कुक्कुट-आ-भा-क। १ कुक्कुट सदृश वर्णरव सर्पभेद, मुर्गकी तरह रंग और चाल रखनेवाला सांप। उसे कुक्कुटाहि भी कहते हैं।

कुक्कुटाराम—एक बौद्धविहार। राजा अशोकने बौद्धधर्म अवलम्बन कर सर्वप्रथम उक्त आराम बनाया था। वह पाटलिपुत्रके दक्षिणपूर्व पार्श्वपर अवस्थित रहा।

कुक्कुटार्म (सं० क्ली०) देशविशेष, एक मुल्क या जगह।

कुक्कुटासन (सं० क्ली०) एक आसन। नाड़ी निर्मल करनेके लिये उक्त आसन लगा वायु रोकना पड़ता है। कुक्कुट देखो।

कुक्कुटाहि, कुक्कुटाभ देखो।

कुक्कुटि (सं० पु०-स्त्री०) कुक्कुट इव आचरति, कुक्कुट आचारे क्विप् ततः इन्। दम्भाचरण, गुरूरका इजहार।

कुक्कुटी (सं० स्त्री०) कुक्कुटि-ङीष्। १ मिथ्याचरण, झूठी चाल। २ क्षुद्र गृहगोधिका, छिपकली। ३ कोट-

विशेष, कोई कोड़ा। ४ स्त्रीविशेष, कोई औरत। ५ कुक्कुटपत्नी, मुरगी। ६ शाल्मलिवृक्ष, सेमरका पेड़। ७ कुक्कुट, मुरगा। ८ कुक्कुभपक्षी, जंगली मुरगी या मुरगा। ९ कुक्कुटाण्डाकार कन्द, मुरगीके अण्डे-जैसा एक डला। १० शितिवारक, एक सब्जी। ११ उत्कट वृक्ष, एक पेड़। १२ उच्चटामूल, चेंचकी जड़।

कुक्कुटीमूल (सं० क्ली०) शाल्मलिमूल, सेमरकी जड़ या मुसरा।

कुक्कुटीव्रत, कुक्कुटव्रत देखो।

कुक्कुटोरग (सं० पु०) गोणससर्प, एक सांप।

कुक्कुभ (सं० पु०) कुक् शब्दं भाषते, कुक्-भाष बाहुलकात् ड यद्वा कुक इत्यव्यक्तं कौति शब्दायते, कुक्-कु बाहुलकात् भक्। १ पक्षिविशेष, कोई चिड़िया। २ वन्यकुक्कुट, जंगली मुरगा।

कुक्कुर (सं० क्ली०) १ ग्रन्थिपर्ण, गंठीला। (पु०) कोकते आदत्ते, कुक-क्विप्; कुक् किञ्चिदपि गृह्णन्तं जनं दृष्ट्वा कुरति शब्दायते, कुक्-कुर्-क। २ जन्तुविशेष, कुत्ता। इसका संस्कृत पर्याय—कौलेयक, सारमेय, मृगदंशक, शुनक, भषक, श्वा, शुन, शुनि श्वान, भषण, भल्लुक, वक्रलाङ्गुल, वृकारि, रात्रिजागर, कालेयक, ग्राम्य-मृग, मृगारि, शूर और शयालु है। वह स्तन्यपायी मांसाशी चतुष्पद पशु है। शृगाल और वृक (भेड़िया)-के इसके गठनभङ्गिमा और कङ्कालादिका सादृश्य है। उसीसे प्राणितत्त्वविद् उक्त तीनों श्रेणीके पशुको 'कुक्कुर जातीय' (Canidae) कहते हैं। गृहपालित और वन्य भेदसे यह नानाप्रकारका होता है। गृह-पालित यह नाना श्रेणियोंमें विभक्त है। उसी प्रकार वन्यका श्रेणीभेद भी अल्प नहीं।

कुक्कुरजातीय पशुवोंके मध्य भेड़ियों, कई तरहके जंगली कुत्तों और लोमड़ियोंमें इतना सौसादृश्य रहता कि उनका पहचानना मुश्किल पड़ता है। इसीसे प्राणितत्वविद्ने स्थिर किया है कि कुक्कुर होनेसे उसका लांगुल वाम दिक्को लिपट चक्राकार बन जाता और चलते समय पीठ पर उठ आता है।

कह नहीं सकते मनुष्यके कितने कार्य पशुसे निकलते हैं। कुत्ता सर्वापेक्षा मनुष्यका वशीभूत और विश्वासी हो जाता है। उसे मनुष्यके साथ रहना भी बहुत अच्छा लगता है।

सकल देशमें यह लोगोंके घर आश्रय पाता है। हिन्दू उसे अस्पृश्य मानते हैं। फिर भी वह कुत्तेको स्नेहदृष्टिसे देखते और आहारादि प्रदान करते हैं।

कुक्कुर विश्वासी, प्रभुभक्त और इङ्गितज्ञ होता है। दोष हो जानेसे वह क्षमा प्रार्थनाका भाव दिखाता है। किसी कार्यमें आदिष्ट होनेपर पालित कुक्कुर प्राणपणसे उसे पालन करता है। साध्यातीत होने पर अक्षमताके लिये वह प्रभुके निकट लज्जित होनेके भयसे उस कार्यमें प्राण पर्यन्त दे देता है। कुक्कुर क्रोध, लज्जा, घृणा, मनोकष्ट इत्यादि भाव सुस्पष्ट व्यक्त कर सकता है।

जिन गुणोंसे निकृष्ट पशु मनुष्यका मनोयोग आकर्षण कर सकता, उन सबका समावेश कुक्कुरमें मिलता है। यह सर्वदा साहस बल और बुद्धिवृत्तिके साथ प्राणपणसे पालकके उपकारमें नियुक्त रहता है। वह प्रतिपालकके निकट स्वीय मनोभाव प्रकाश कर परामर्श ले सकता, पूंछ कर कार्य कर सकता, अन्याय्य कार्य होनेसे क्षमा मांग सकता और स्वीय बुद्धिसे प्रभुकी इच्छा, आदेश इत्यादि स्पष्ट समझ सकता है। उसकी आन्तरिक वृत्ति अति सतेज होती है। मनुष्यकी भांति स्वार्थपरताके बदले उसकी विश्वस्तता और प्रभुभक्ति इतनी अधिक एवं दृढ़ रहती कि देख कर विस्मित होना पड़ता है। उसे लोभ, स्वार्थपरता, प्रति-हिंसनेच्छा वा प्रभुकार्यमें विरक्ति नहीं होती। वह सर्वदा दृढ़प्रतिज्ञ, अध्यवसायी एवं वशीभूत रहता और प्रभुकी दया तथा आदर पर बिकता है। प्रतिपालकका सदय व्यवहार वा आदर वह जितना स्मरण रखता उतना उसके दुर्व्यवहार पर ध्यान नहीं करता। यह पालित होने पर प्रभुकी इच्छा वा आदेशके विरुद्ध कोई कार्य करनेसे हिचकता है। यदि हठात् क्रुद्ध हो जाता, तो तत्क्षणात् निकट जाकर मृदु मृदु शब्द कर पूंछ हिला कातरदृष्टिसे प्रभुके मुखकी ओर देख पैर पर मस्तक रगड़ वह क्षमा मांगता है। कोई पाषण्ड प्रभु यदि उस पर भी क्षमा न कर मारने लगता, तो यह उसे नीरव सहन

करता और उसके लिये प्रभुको कोई चति करनेसे दूर रहता है।

वह सहजमें वशीभूत और प्रतिपालित होता है। अति अल्प समयमें ही पालकका स्वभाव समझ उसके अभिप्रायानुसार चलना सीखता है। वह जैसे संसर्गमें रहता, उसीके अनुरूप उसकी प्रकृतिका भाव भी बनता है। इसलिये प्रभु धनी हो या निर्धन, वह सबके प्रति समान भावसे अनुरक्त हो सकता और प्रभुकी अवस्था बदलते भी उसका वह अनुराग नहीं घटता बढ़ता। क्या पल्लीग्राम, क्या नगर—जिस घरमें पालित होकर वह रहता, उसमें सहसा दुष्ट मनुष्य प्रवेश कर नहीं सकता। फिर शृगाल, वृक प्रभृति हिंस्र जन्तु भी वहां कोई अपकार कैसे कर सकते हैं! यह रातको जाग प्रभुके भवनको चारो ओर घूम फिर अपनी इच्छासे पहरा देता है। यदि चौरादि प्रवेश करता, तो वह तत्क्षणात् उस पर झपटता और अपहृत द्रव्य उद्धार कर उसे छोड़ चलता है। यदि दुष्ट पशु होता, तो यह उस पर आक्रमण कर खण्ड खण्ड नोच डालता है। दूसरी ओर वह इतना शान्त-स्वभाव रहता, कि प्रभुका अपहृत द्रव्य पानेसे चोर को छोड़ देता और हिंस्र पशुको भी आक्रमण नहीं करता। यदि अपनी क्षमतासे वह उनको बाधा नहीं दे सकता, तो उच्चरवसे प्रभुको जगाने लगता है। कोई कोई कुत्ता इतना संयमी और निर्लोभ रहता कि क्षुधासे मर जाते भी प्रभुके असाक्षात् वा उनके विना दिये खाद्य ग्रहण नहीं करता। उक्त स्थितिमें ३१ दिन तक वह अनाहार रहते देखा गया है। वह बहुत शीघ्र शिक्षित होता है। शिक्षित हो यह आखेट (शिकार) में आनन्दित और युद्धमें उन्मत्त पड़ जाता है। वह शिकारीका सामान्य इङ्गित भी समझ सकता है। समय समय पर शिकारी कुत्तोंके दलमें जो सर्वापेक्षा पुरातन और शिक्षित रहता, वह अपने दलमें नेतृत्व करता है। वह अपने दलको शिकारीका अभिप्राय समझ लेता और रीत्यनुसार चालना कर प्रवीण सेनापतिको भांति कार्यकुशलता दिखा देता है। कार्य हिंसाजनक होते भी शिकारी कुत्ता बड़े बड़े वीरोंको भांति उदारहृदय और इसका शान्त स्वभाव रहता है। उग्रस्वभाव भी पाया जाता है। किन्तु विना कारण उस उग्रताका प्रकाश देखनेमें कम आता है।

पुत्र भी प्रलोभनमें पड़ पिताको मार सकता, किन्तु यह इतना विश्वासी रहता कि सहस्र सहस्र प्रलोभन और प्ररोचनासे भी प्रभुका विन्दुमात्र अनिष्ट नहीं करता। वह पालित होनेसे ही अनुरक्त, अनुगत, विश्वस्त एवं अकृत्रिम वन्धु और दासको भांति व्यवहार रखता है।

यह तो उसके साधारण स्वभावसिद्ध गुणका विवरण हुवा। इसके सिवा सकल गुणों और कई असाधारण गुणोंके प्रमाणस्वरूप अनेक इतिहास प्रचलित हैं। इसकी श्रेणी और जाति-विभाग नानाविध है। उक्त सकल विभागकी इतनी अधिक संख्याका कारण केवल विभिन्न देशीय मौलिकजातिके साथ संयोग-सङ्करता है।

भारतवर्षमें आज भी किसी देशीय व्यक्तिद्वारा जीवतत्वके सम्बन्धमें आलोचना की नहीं गयी। इसीसे यह स्थिर करना असम्भव है—किस जातीय कुक्कुरको मौलिक समझ सकते हैं। युरोप और अमेरिकामें उक्त विषय पर अनुसन्धान द्वारा स्थिर हुवा है—जिस कुत्तेको गड़रियेका कुत्ता (Shepherd's Dog) कहते, वही सम्भवतः समुदय जातिका जनक है। उक्त विषयमें वह लोग इस प्रकार मीमांसा करते हैं:—

युरोपसे एक बार कई कुत्ते अमेरिकाके जंगलमें छोड़ गये थे। १५०।२०० वर्ष पीछे परीक्षा करने पर मालूम हुवा कि वंशधरके आकारादि और स्वभावसे अनेक भेद पड़ते भी उनकी गठनभङ्गी अधिकांश ग्राम्य कुक्कुरसे मिलती थी। वह बिलकुल धूसरवर्णके शिकारी कुत्ते देख पड़ते थे, किन्तु गड़रियेके कुत्तोंसे विशेष भिन्नाकार न रहे। उसीसे विवेचना की गयी—अमेरिकाके उक्त निर्वासित कुत्तोंका वंश ग्रे-हाउण्ड (Grey-hound) यानी धूसरवर्णके शिकारी कुत्तेको अपेक्षा गड़रियेके कुत्तोंसे निकट सम्बन्ध विशिष्ट है।

एतद्भिन्न विभिन्न देशका प्रमाणवृत्तान्त पढ़नेसे समझ पड़ता कि शीतप्रधान देशके कुक्कुरका नासिकाग्र लम्बा और कर्णद्वय ऊर्ध्वमुख होता है। लापलैण्डके

कुत्तेकी आकृति क्षुद्र, नासिकाग्र सूक्ष्म और कर्ण ऊर्ध्व-मुख रहता है। साइबेरियाके कुत्तेका (जिसे उल्फ डाग (Wolf Dog) अर्थात् भेड़ियाकुत्ता कहते हैं) कान सोधा, लोम कर्कश और नासाग्र सूक्ष्म होता है। किन्तु आकृतिमें वह लापलेण्डके कुत्तेसे बड़ा बैठता है। आइसलेण्डके कुत्ताकी आकृति अधिकतर साइबेरियाके कुत्तासे मिलती है। उत्तमाशा अन्तरीपादिमें उक्त आकारके कुत्ते देख पड़ते हैं। फिर गड़रियेके कुत्तोंकी भी आकृति अनेक अंशमें वैसी ही होती है। सुतरां युरोपीय अनुमान बहुत कुछ सत्य समझ पड़ता है।

'गड़रियाका कुत्ता' कुक्कुर जातिकी मौलिक भित्ति है। उत्तरदेश (लापलेण्ड, साइबेरिया, आइसलेण्ड, कामस्काटका प्रभृति स्थान) को भेजा जानेसे कालक्रम पर उसके जो सन्तान उपजते वही तत्तद्देशके जलवायुके गुणसे तत्तद्देशीय कुक्कुर बनते हैं। इस प्रकारके अनुमानका कारण पहले ही कह चुके हैं कि उक्त सकल देशोंके कुक्कुर 'गड़रियेके कुत्तों'की भांति कर्ण नासा और वन्य आकृतिविशिष्ट हैं। गात्ररोम सबके कर्कश होते हैं, केवल देशके शीततापके परिमाणसे वह दीर्घ वा क्षुद्र और घन वा विरल रहते हैं। फिर गड़रियेका कुत्ता ही समशीतोष्ण प्रदेश (इङ्गलेण्ड, फ्रांस, तिब्बत, तातार प्रभृति)में रहकर माष्टिफ (बड़े कुत्ते), हाउण्ड (शिकारी कुत्ते) या बुलडाग (गुलडांक)का आकार धारण करता है। कारण माष्टिफ और बुलडाग श्रेणीमें उसके कानका अर्धांशमात्र लटक पड़ता है, किन्तु स्वभाव विशेष नहीं बदलता। शिकारी कुत्ता आकृति और स्वभावमें गड़रियेके कुत्तेसे सम्पूर्ण विभिन्न-जैसा मालूम पड़ते भी वस्तुतः वैसा नहीं होता। शिकारी कुतियाके गर्भसे और माष्टिफ, बुलडाग या शिकारी कुत्तेके औरससे सेटिङ्गडाग, टेरियर तथा हाउण्डकी उत्पत्ति है। उक्त सकल कुक्कुर स्पेन तथा बार्बरीमें प्रेरित होनेसे स्पेनियल और बारबेट नामक श्रेणी उत्पादन करते हैं। कृष्णवर्ण स्पेनियल इङ्गलेण्ड जाकर श्वेतवर्ण 'विगल' निकालता है। अनुमान किया जाता कि टेरियर भी उक्त कृष्णकाय विगलसे उत्पन्न हुवा है।

गड़रियेका कुत्ता रूस, डेनमार्क प्रभृति स्थानोंमें जा कर 'बृहत् काय डेन' (Large Dane) नामक कुक्कुर और दक्षिण जाने पर (भूमध्यसागरके तीर) बृहत्काय धूसरवर्णका हाउण्ड उत्पादन करता है। फिर धूसर हाउण्डसे इङ्गलेण्डमें क्षुद्रकाय धूसर हाउण्ड निकलते हैं। 'बृहत्काय डेन' आयर्लेण्ड, तातार और अलबानियाका 'बृहत्काय आयरिश कुत्ता' (Large Irish Dog) उत्पादन करता है। वही सर्वापेक्षा दीर्घच्छन्द कुक्कुर है।

बुलडाग (गोमुखकुक्कुर) इङ्गलेण्डसे डेनमार्क जानेपर 'क्षुद्रकाय डेन' (Small Dane) और 'क्षुद्रकाय डेन' अपेक्षाकृत ग्रीष्म प्रदेशमें पहुंच 'तुर्की कुत्ता' (Turk Dog) उत्पादन करता है। उक्त तुर्की कुत्तेके गात्रमें अति सूक्ष्म रोम होते हैं।

उक्त कई जातीय कुक्कुर केवल मौलिक जातिसे उत्पन्न हैं। भिन्न भिन्न देशके जलवायु और आहारके तारतम्यसे वह भिन्नाकार प्राप्त होते हैं। एतद्भिन्न जितने प्रकारके कुत्ते देख पड़ते, वह वर्णसङ्कर ठहरते हैं।

वर्णसङ्कर कुक्कुर नानाविध हैं। उनमें कई जाति निर्णीत होने पर विशेष आख्यासे अभिहित होते हैं। यथा—

धूसर हाउण्डके साथ गड़रियेके कुत्तेके मिलनसे जो शावक निकलता, उसका नाम 'मङ्ग्रेल ग्रे हाउण्ड' (Mongrel Grey-hound) पड़ता है। वह व्याघ्रचर्मावृत धूसर हाउण्ड जैसा अनुमित होता है। उसका मुखाग्र धूसर हाउण्डकी भांति लम्बा नहीं रहता।

बृहद्‌काय स्पेनियलके साथ बृहत्काय डेनका सहवास होने पर 'कालब्रिया-कुत्ता' (Calabrian Dog) उत्पन्न होता है। वह देखनेमें अच्छा रहता है। उसके गात्रमें बहुत घन रोम रहता और आकारमें वह बृहत् माष्टिफकी अपेक्षा भी बड़ा निकलता है।

स्पेनियल और टेरियरके संयोगसे 'बरगण्डी स्पेनियल' (Burgundy Spanial) उत्पन्न होता है।

स्पेनियल और क्षुद्रकाय डेन मिल कर सिंह कुक्कुर (Lion Dog) उत्पादन करते हैं। उक्त कुक्कुर देखनेमें सम्पूर्ण सिंह-जेसा होता है। गात्रमें अति क्षुद्र लोम रहते हैं। किन्तु मुख, कण्ठके पश्चात्‌देश, गले और सामनेके पैरके बाल सम्पूर्ण केशरवत्‌ लम्बे लम्बे होते हैं। लांगुल भी सिंहकी भांति लोमश और कटिदेश अधिक चीण रहता है । उक्त जातिका कुत्ता बहुत कम उपजता है।

बड़े स्पेनियल और बारबेटसे 'बरगस' (Dog of Burgos) उत्पन्न होता है। उसका आकार बृहत्‌काय बारबेटसे मिलता है। गात्रमें कुञ्चित कुञ्चित लम्बे चिक्कण लोम रहते हैं। क्षुद्र स्पेनियल और बारबेटके मिश्रणसे क्षुद्र बारबेट (Little Barbet Dog) उत्पन्न होता है।

इङ्गलेण्डके बुलडाग और क्षुद्र स्पेनियल संश्रवसे 'पग' (Pug) नामक कुक्कुर निकलता है।

उक्त कुक्कुर प्राथमिक सङ्कर (Single Mongrel) हैं। किन्तु कितने ही उक्त सङ्करवर्ण और क्षुद्रजातिके मिश्रणसे उत्पन्न हुवे हैं। वह द्वैतीयिक वा 'डबल मंग्रेल' (Double Mongrel) कहलाते हैं। यथा—पग और क्षुद्रडेनके मिलनेसे शाक (Shock Dog)-का जन्म है। वह लोमसे आवृत और क्षुद्रकाय होता है। उसे इस देशमें 'झबरा' कहते हैं। पग और क्षुद्रकाय स्पेनियलके संयोगसे आलिकाण्ट (Dog of Alicant) उत्पन्न होता है।

क्षुद्र स्पेनियल और बारबेटके सहवाससे 'मालटीज' (Maltese) माल्टाद्वीपीय वा 'क्रोड़विहारी' (Lap Dog) कुत्तेका जन्म है।

साधारणत: लोग उक्त सकल कुक्कुर पालते हैं। एतद्भिन्न एस्कुइमो प्रभृति कई प्रकारके दूसरे कुत्ते भी होते हैं।

१। एस्कुइमो—अमेरिकाके तुषारावृत स्थानको अधिवासी आदिम जातिको एस्कुइमो कहते हैं। उन लोगोंके देशमें एक प्रकारका कुत्ता होता है। वह देखनेमें कुछ गड़रियेके कुत्ते और कुछ भेड़िये—जेसा रहता है। उसके कान छोटे और सीधे होते हैं। गात्र घनलोमसे आवृत रहता है। वह लोमश लांगुल वक्रभावसे पीठ पर उठाये रखता है। उसकी ऊंचाई २ फीट और लम्बाई लांगुलमूलसे मस्तक पर्यन्त २॥ फीट होती है। उसका वर्ण पिङ्गल, श्वेत, कृष्ण और उक्त तीनों वर्णविशिष्ट रहता है। एस्कुइमोंने हरिण, मकर और भालुकका शिकार करते समय उससे साहाय्य लेते हैं। ग्रीष्मकालको वह ७', ७॥ सेर बोझ ले जाता और ले आता है। शीतकालको बर्फसे ढकी राहपर उससे चक्रविहीन नौका खिंचानेका काम लेते हैं। ७.८ कुत्ते ५।६ लोगोंको अनायास घण्टेमें ७।८ मील चल ६० मील तक पहुंचा सकते हैं। एस्कुइमो उनसे बहुत प्रसन्न रहते हैं। वह भी प्रभुके बहुत अनुगत होते हैं। शीतकालको उन्हें कम खानेको मिलता है। किन्तु फिर भी वह प्रभुके लिये परिश्रम उठानेमें त्रुटि नहीं करते। नौका चलानेके लिये उन्हें चाबुककी मार सहना पड़ती है। उसपर भी वह अन्यथा व्यवहार नहीं करते। एस्कुइमो कुत्ते कभी कभी भूकते हैं। बर्फसे सारी राह ढक जाते भी वह घ्राणबलसे ठीक पथ पहचान चले जाते हैं।

२। कामस्काटकाडेश और साइबेरियाका कुत्ता वह आकृतिमें एस्कुइमो कुत्तेसे अधिक बड़ा रहता है, किन्तु देखनेमें एकरूप समझ पड़ता है। वर्ण ईषत्‌ धूसराभ श्वेत है। एस्कुइमोकी अपेक्षा भी वह बलवान्‌ और कार्यक्षम होता है। लोम दीर्घ और लाङ्गुल लम्बा लगता है। क्या बर्फ क्या जमीन्‌ पर वह डोंगी और एकपहिया गाड़ी खींच ले जाते हैं। उनमें इतना ही बल है कि सारथि व्यतीत गाड़ी पर दूसरे दो लोगोंके अपना अपना सामान लेकर बेठते भी ५ कुत्ते स्वच्छन्दमें ६० मील चल सकते हैं। गाड़ीमें एक आगे और उसके बगलमें दो २ कुत्ते जुतते हैं। सम्मुखका कुक्कुर पथप्रदर्शककी भांति भूमि सूंघते सूंघते आगे बढ़ता है। वह बहुत द्रुत दौड़ते हैं। कहते हैं किसी समय साढ़े तीन दिनमें वह २७० मील एक गाड़ी खींच ले गये थे।

कामस्काटकामें मई मासको उन्हें छोड़ देते हैं। उस समय वह इधर उधर खाते फिरते और ठीक नहीं

कहां रहते हैं। किन्तु शीतकाल लगते ही वह अपने अपने प्रभुके निकट लौट आते हैं। उन्हें खानेको बहुत कम मिलता, जिससे उनका पेट नहीं भरता। फिर भी वह प्रभुके इतने वशीभूत रहते, कि लोग देख देख कर विस्मय करते हैं।

उक्त तुषारावृत देशसमूहमें उन्हें ही परमेश्वरकी दयाके परिस्फुट लक्षणस्वरूप मानना पड़ता है।

किसी किसी प्राणितत्वविद्‌के मतमें एस्कुइमो, कामस्काटकाडेल और साइबेरियाके कुत्तेका वन्य-भाव आजभी सम्पूर्णसे गया नहीं है। वह मनुष्यके पूरे वशमें कैसे रह सकते हैं। उनकी विश्वस्तता भी वैसी दृढ़ नहीं। कभी कभी वह अवाध्य हो जाते और प्रभुके पालित पशुपक्षी पकड़ पकड़ खाते हैं। शिकार उनके मुंहसे मुश्किलमें छूटता है। उक्त सकल कारणोंसे अनेक लोग समझते कि पालू कुत्ते और भेड़ियेके सहयोगसे उनकी उत्पत्ति है। उसीसे वह वन्यभावको मनुष्यका सहवास होते हुये भी छोड़ नहीं सकते। इस अनुमानमें सत्य हो या न हो, किन्तु यह बात सब प्राणितत्वविद् स्वीकार करते हैं कि उनकी आकृति और प्रकृति भेड़ियेसे मिलती है।

३। आइसलैण्ड और लापलैण्डका कुत्ता (The Iceland and Lapland Dogs)-भी पूर्वोक्त जातीय ही है। परन्तु वह एस्कुइमो और पालू कुत्तेसे आकृति-में छोटे होते हैं, गात्रवर्ण साधारणतः श्वेत और तरल पाटल रहता है।

४। चीनदेशका कुत्ता (China Dog)-भी उसी जातिका होता हैं। उसका गात्रवर्ण सर्वदा कृष्ण रहता है, फिर कोई छोटा और बड़ा निकलता है।

५। पोमेरेणीय कुक्कुर (The Pomeranian Dogs)—भी साधारणतः उत्तर युरोपमें कुत्ता कहाते हैं। उनमें बड़े वृहत्‌काय भेड़ियेकुत्ते (Large Wolf Dogs) और छोटे स्पिज (Spitz) नामसे प्रसिद्ध हैं। वह भी पूर्वोक्त श्रेणीके ही अन्तर्गत हैं। उनकी घ्राणशक्ति अति तीव्र होती हैं। वह सम्पूर्ण-रूपसे मनुष्यकी वश्यता स्वीकार करते हैं। पोमेरेणीय प्रहरितामें अति दक्ष और अति विश्वस्त होते हैं।

पूर्वोक्त कई प्रकारके कुत्तोंसे आकारगत विलक्षण विभिन्नताविशिष्ट कुक्कुरका श्रेणी विभाग आगे लिखा जाता है। उन्हें शिकारी कुत्ते कहते हैं।

१ हाउण्डको—हिन्दीमें मृगदंशक (शिकारी कुत्ता) कहते हैं। उक्त जातीय कुक्कुरके नाना भेद हैं। मृगदंशक जातीय कुक्कुरकी घ्राणशक्ति और दृष्टिशक्ति अति तीव्र होती है। वही उन्हीं दोनों शक्तियोंके साहाय्यसे आखेट (शिकार)-का अन्वेषण और अनु-धावन करता है। उक्त शक्तियोंके अनुसार वह दो भागमें विभक्त किये जा सकते हैं। उनमें घ्राणशक्तिका प्राबल्यविशिष्ट कुक्कुर आखेटमें सर्वापेक्षा पटुता प्रकाश करता है। उक्त दोनों श्रेणियोंमें भी नानारूपविभाग लगे हैं।

(क) घ्राणशक्तिके प्राबल्यविशिष्ट कुक्कुरोंमें—बीगिल (Beagle) वा क्षुद्र शशक-आखेटिक, रक्त-पिपासु मृगदंशक (Blood-hound), शृगाल-आखेटिक (Hose-hound), हरिण-आखेटिक (Stag-hound), उद्बिडाल आखेटिक (Otter-hound), शूकर-आखेटिक (Boar-hound or Great Dane), शशक-आखेटिक (Rabbit hound or Harrier), पक्षी-अनुसन्धानकारी (Retriever), निर्दंशक (Pointer) और अफरीक-देशीय मृगदंशक (African Blood-hound.) प्रधान है।
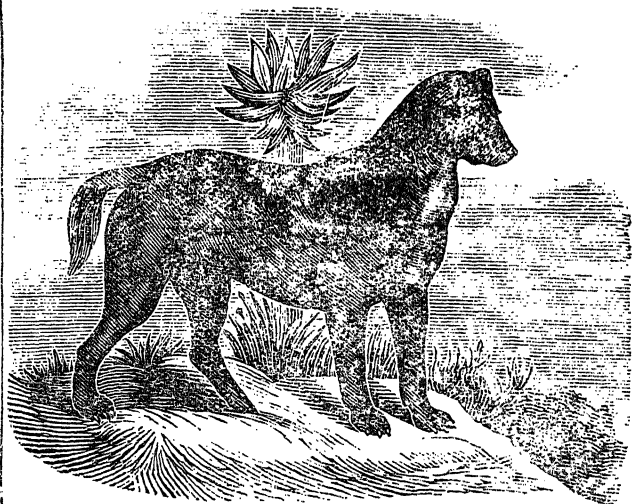
अफरीकाका शिकारी कुत्ता।

(ख) दृष्टिशक्तितीव्रताविशिष्ट कुक्कुरोंमें—धूसर मृगदंशक (Grey hound) अथवा ताजी कुत्ता सबसे बड़ा होता है।

२। स्पेनियल (Spaniel) जातीय कुक्कुर घ्राणशक्ति अति प्रबल रखते भी अपनी प्रभुभक्ति और मनुष्यको वश्यताके लिये विख्यात है। उक्त जातिमें जलचर स्पेनियल (Water-Spaniel), स्पेनियल (Spaniel), चारलस राजाका यत्नोत्पादित कुक्कुर (King Charles' Dog.) ब्लेनहिम स्पेनियल (Blenhim Spaniel), न्यूफाउण्डलेण्ड देशीय कुक्कुर (Newfoundland Dog), २ लक्ष्यकारी (Setter), हारबेट (Harbet), क्लाम्बार (Clumber), कुक्कुटआखेटिक (Cocker), उल्लम्फक (Springer) प्रभृति कुत्ते अच्छे होते हैं।

३। टेरियर (Terrier) जातीय कुक्कुर पक्षीके आखेटमें बहुत दक्ष रहता और प्रभुको भी प्रिय लगता है। वह अपेक्षाकृत कुछ क्षुद्रकाय होता है। उक्त जातीय कुक्कुर प्रधानतः दो भागमें विभक्त है। एकजातीय कुछ कोमल-लोमविशिष्ट और अपरजातीय कर्कशलोमविशिष्ट रहता है। कर्कश-लोमविशिष्ट टेरियर क्षुद्रमुख, खर्वपद, कष्टसहिष्णु, ईषत् उग्रस्वभाव और कृष्णाभ श्वेतवर्ण होता है। उसे स्काटलेण्डीय टेरियर (Scotch Terrier) कहते हैं। फिर कोमल टेरियर उन्नतमस्तक, ईषत् दीर्घमुख, उज्ज्वल घूर्णमान चक्षु, सुगठित देह, ऊर्ध्व कर्ण, (कभी कभी कर्णका ऊर्ध्व-भाग उलटा भी होता है) और सरलपद हुवा करता है। उसे साधारण या विलायती टेरियर (Common or English Terrier) कहते हैं। वह बुद्धिबलसे नाना कौतुकजनक क्रीड़ा सीख सकता और अतिशय प्रभुभक्त रहता है। उक्त जातिके सहयोगसे नानाविध सङ्करवर्ण कुक्कुर उत्पन्न होते हैं, जो हम पहले ही बता चुके हैं। टेरियर मूसे, पक्षी और लोमड़ी मारनेमें अतिशय पटु होता है। इसीसे उसे नानाविध नाम प्राप्त हैं। जैसे शृगालहन्ता टेरियर (Fox-terrier), जो कोमल और कर्कश लोम (Smooth and Rough) दो प्रकारका है, मूषकहन्ता (Rat-catcher) और खिलौना (Toy-terrier)। एतद्भिन्न उसके दूसरे भी कई श्रेणीभेद हैं। यथा आयरलेण्डीय टेरियर (Irish terrier), योर्कशायरीय टेरियर (Yorkshire-terrier), स्काईटेरियर (Sky-terrier, कर्नल स्काईके नामपर), डण्डी डिमोण्ट (Dandie Dimont व्यक्तिके नामानुसार)। बुलडागके सहयोगसे टेरियर एक प्रकारका शावक उत्पादन करता है। उसका नाम बुलटेरियर (Bull-terrier) है। उक्त सङ्करजातीयकी भांति दृढ़प्रतिज्ञ कुक्कुर आज भी कहीं देख नहीं पड़ता। टेरियर कुत्ता गर्तके बीचसे शिकारको निकाल लेता है। भारतवर्षमें शृगाल, भेड़िये और हायनेके शिकार पर उसको ले जाते हैं। वह बुद्धि और साहस जहां बुलडाग आगे नहीं बढ़ता वहां भी झपट पड़ता है।

४। मास्टिफ (Mastiff)—सर्वापेक्षा मनुष्यके वशीभूत, प्रभुभक्त और विश्वस्त होता है। वह शान्त स्वभाव, भद्र, गम्भीर, असीमक्षमताशाली, बृहन्मस्तक, विस्तृतमुखमण्डल, स्थूल ओष्ठशाली, वेष्टितकर्ण, विस्तृतकपाल, लोमश, दीर्घलाङ्गुल और सुगंधित दीर्घ देह रहता है। रक्षणावेक्षणमें रखनेसे मासष्टिफ कोई वस्तु प्राण रहते नष्ट वा अपहृत होने नहीं देता। प्रभुकी द्रव्यरक्षाके लिये मृत्यु निश्चित समझ कर भी व्याघ्रसे लड़ने लगता, किन्तु विना कारण काम बिगड़ता और क्षमताका अपव्यवहार करनेसे हिचकता है। ग्रेट ब्रटेन उक्त कुक्कुरके लिये चिर-विख्यात है। रोमक जब इङ्गलेण्डके राजा रहे, उक्त कुक्कुरको जातिगत विशुद्धतारक्षण, प्रतिपालन और शिक्षादानके लिये एक स्वतन्त्र राजकर्मचारी नियुक्त करते थे। मास्टिफ भी प्रबल घ्राणशक्तिविशिष्ट होता है। ष्ट्राबो बताते कि गलजातीय (Gaul.) लोग उक्त कुक्कुरको लड़ना सिखाते और स्वयं लड़ते समय उसे भी युद्धमें लगाते थे। उसकी क्षमताका परिमाण असीम है। यह परीक्षा करके निरूपित हुवा है कि ३ मास्टिफ युद्धमें भल्लुक और चार सिंहको परास्त कर सकते हैं। उनमें ३ श्रेणी मिलती हैं—विलायती मास्टिफ (English Mastiff), क्युबीय मास्टिफ (Cubian Mastiff.)

और तिब्बतीय वा मोलासीय कुक्कुर (Thibetan Mastiff or Molossean Dog)। रामपुरके राजाने पारस्यदेशीय (ईरानी) ूसर हाउण्ड (ताजी कुत्ते)
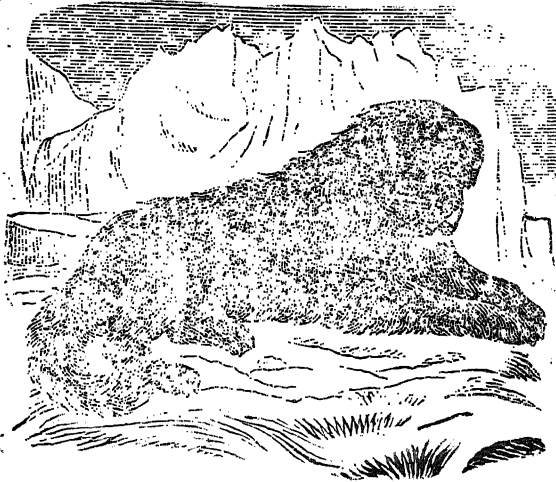
तिब्बतीय वा मोलासीय कुक्कुर।

और तिब्बतीय माष्टिफके सहयोगसे एक प्रकारका मिश्र कुक्कुर उत्पादन किया है।

५। बुलडाग (Bull Dog, गोमुखकुक्कर)-का मुखमण्डल वन्य वृषभ की भांति गम्भीर, भयजनक और कर्कश लगता है। इसीसे उसको उक्त नामपर अभिहित करते हैं। उसका निम्नोष्ठ कुछ दीर्घ, मस्तक वृहत्, मांसल, कर्कश एवं गुरुभार, मुख क्षुद्र अथच विस्तृत, ओष्ठ स्थूल, कान टेढ़े, पद क्षुद्र, काय दृढ़, कण्ठ क्षुद्र और स्वभाव क्रूर होता है। वह देखनेमें व्याघ्र जैसा भयानक लगता और स्वभाव भी भयानक उग्र रहता है। बुलडाग बड़ी मुश्किलसे हिलता है। हिल जानेसे पालकको कोई भय तो नहीं रहता, किन्तु उसका स्वभाव और रूप देख सब कोई अत्यन्त सावधानतासे व्यवहार करता है। पहले युरोपमें सांड़की लड़ाई देखनेके लिये बुलडाग सिखाया जाता था। लोग उसे सांड़को भूमिपर गिरानेका कौशल उसे बताते रहे। अति सामान्य कारणसे वह क्रुद्ध और हिंस्रक बन जाता है। उससे शिकारियोंका कोई बड़ा काम नहीं निकलता। फिर भी अनेक लोग शिक्षित कर बुलडागको भल्लूकके आखेटपर ले जाते हैं। बाइसन (जंगली भैंसे)-के शिकारमें उससे बड़ा काम निकलता है। उसका दंशनविषय बहुत भयानक और साहस असीम है। वह अनायास सिंह, भल्लूक और व्याघ्रादिसे युद्ध करता है। सन्तरणमें भी बुलडाग सातिशय पटु होता है। न्यूफाउण्डलेण्डके कुत्ते जलमें सन्तरणकाल मर जाते हैं। किन्तु बुलडाग अति भीषण तरङ्गमें सन्तरण करता है। फिर भी न्यूफाउण्डलेण्डके कुत्तेकी भांति वह सन्तरण-कौशल और द्रुत सन्तरणमें पटु नहीं होता।

६। गड़ेरियेका कुत्ता (Shepherds' Dog) युरोपीय ग्राम्यकुक्कुरोंका प्रधान है। आधुनिक जीवतत्त्वविद्के मतमें उक्त जातिसे ही समुदाय कुक्कुर उत्पन्न हैं। किन्तु इनसाइक्लोपीडिया ब्रटेनिका (अंगरेजी विश्वकोष) तुर्कीकुत्तेको ही कुक्कुर जातिका आदिजनक बताती है। स्काटलेण्डमें गड़रियेका कुत्ता सर्वापेक्षा विमिश्र अवस्था पर देख पड़ता है। उक्त देशमें उसका प्रयोजन भी बहुत अधिक रहता है। वहां अधिकांश लोग मेषपालकका व्यवसाय अवलम्बन करते हैं। इसीसे वे उसका बड़ा आदर रखते हैं कारण उक्त जातिके दो एक कुत्तेको ले कर वृहत् मेषपाल स्वच्छन्द रक्षणावेक्षण कर सकता है। वह शिक्षित होनेपर मेषोंको खड़हरसे (चारणभूमिसे) सावधानता सहकार हांक कर ले जाता है। झुण्ड (पाल)-से किसी मेषको छूट जानेपर वह खदेर लाता है। यदि मेषपाल विपथ हो जाता, तो वह उसे खदेर सुपथपर ले आता है। उसकी बुद्धि और दृष्टिशक्ति इतनी तीक्ष्ण रहती कि पालके मध्य प्रत्येक मेषको पहचान रखता है। यदि अपर दलका मेष आ कर दलमें घुस पड़ता, तो उसे देखते ही वह पहचान सकता और निकाल बाहर करता है। वह अपरिसीम बुद्धिप्रभावसे मेषपालकी संख्या ठहरा सकता है। यदि हठात् कोई मेषपालसे छूट जाता, तो तत्क्षणात् वह मैदान, सड़क और गली घूम घूम उसे ढूंढ़ लाता है। वह प्रभुका इङ्गित समझ सकता और पाल लेजाते समय घूम घूम प्रभुका आदेश ग्रहण करता है। चाहे माष्टिफकी भांति दृढ़ प्रभुभक्त वा रक्षाकार्यनिपुण न हो, स्पे नियलकी भांति प्रभुके आदरका पात्र न हो, न्यूफाउण्डलेण्डके कुत्तेकी भांति सुदृश्य वा सभ्य न हो, किन्तु वह सबसे बुद्धिमान् और

वशतापन्न होता है। उक्त गुणमें उसकी तुल्यजीव अभी तक दूसरा आविष्कृत नहीं हुवा। डारविन कहते कि मेषपालक उसे बाल्यकालसे भेड़ोंके बाड़ेमें रख भेड़ीका स्तन्यपान करा प्रतिपालन करते हैं। कुछ बढ़ने पर उसे अन्य कुक्कुर वा पशुसे मिलने नहीं देते और प्रायः अण्डच्छेद कर लेते हैं। उक्त सकल कारणसे वह मेषपालके प्रति विशेष अनुरक्त हो आता और पाल छोड़कर कहीं नहीं जाता। शिशु रहते समय वह मेषशावक (मेमने)-के साथ खेला करता है। पाल लेकर घरसे यातायातके समय वह क्रीड़ाच्छलसे मेषके ऊपर कूद फांद और ठोकर लगा खेलने लगता है। इससे उसकी स्नेहप्रवणता भी अनुमित होती है।

ये देखनेमें लोमड़ीके समान होते हैं। इनकी गर्दनमें लंबे २ बाल होते हैं। शीत प्रधान देशमें ये बाल टेढे और कडे एवं उष्णताप्रधान देशमें अतिकोमल हो हैं। इनके कान सीधे, मुख पतला, नोखदार और पैरमें एक अधिक अंगुलि होती है जिसको तुषाराङ्गुलि (Dew-claw) कहते हैं। उनकी पूंछ झबरी और ऊपरको टेढी होती है।

उसके निम्नलिखित कई एक श्रेणी भेद हैं—

(क) व्यापारीका कुत्ता (Drover's dog) हाट बाजारमें विक्रेय पशुपची रक्षा करता है।

(ख) कोली (Colly or Colie) स्काटलैण्डमें अधिक दृष्ट होता है। वह १२ इञ्चसे अधिक ऊंचा नहीं रहता। पूर्वकालको उसके लांगुलका अर्धभाग छेदन कर डालनेकी प्रथा अति प्रबल थी। आजकल उसकी संख्या बहुत घट गयी है। अनेकोंके अनुमानमें अर्ध लांगुलसे उसे सन्तान उत्पादन करने पर असुविधा पड़ती है। कोली कुत्ता कोमल और कर्कश भेदसे दो प्रकारका होता है।

(ग) विलायती मेषरक्षक (English sheepdog)

(घ) जर्मन मेषका रक्षक (German sheep dog)

(ङ) चीनदेशीय मेषरक्षक (Chinese sheepdog)

मृगदंशक (Hound) और स्पेनियल (Spanial) कुत्तेकी कई प्रधान विभिन्न श्रेणियोंके सम्बन्धमें संक्षेप कुछ कहना आवश्यक है।

७। हाउण्ड (शिकारी कुत्ते)-के मध्य—

(क) शशक आखेटिक (Beagle) पूर्वकालको शशक मारनेके लिये शिक्षित और नियुक्त होता था। उसकी घ्राणशक्ति अति प्रबल है। कण्ठस्वर मानो कुछ कुछ गीतस्वर की भांति उच्च-नीच-गमक-मूर्छना-विशिष्ट होता है। वह दो तीन घण्टे तक किसी पलायित मृगको अनुसन्धान कर विना निकाले शान्त नहीं रहता। अन्यान्य हाउण्डकी भांति शशकाखेटिक दौड़ नहीं सकता। वह निम्नलिखित कई श्रेणियोंमें विभक्त है,—

दक्षिण युरोपीय बीगिल (Southern rough Beagle), द्रुतगामी वा विडालहन्ता (Fleet or Cat-Beagle), कर्कश (Rough Beagle), कोमल (Smooth Beagle), उसमें एक प्रकारका क्षुद्रकाय विभाग भी होता है। उसे 'क्रोड़विहारी' (Smooth Lapdog Beagle) कहते हैं।
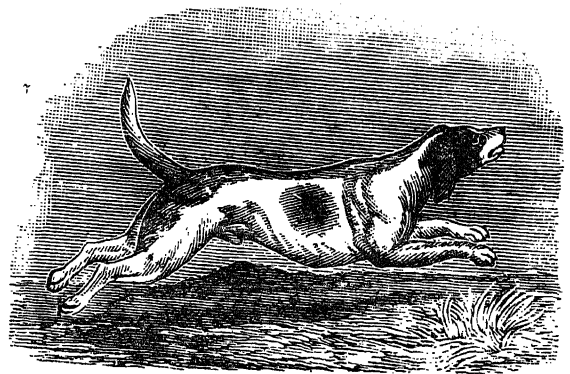
शशकाखेटिक।

(ख) रक्तपिपासु आखेटिक (Blood-hound) तीव्रघ्राणशक्ति और अप्रतिहत अध्यवसाय गुणसे शिकारीके लिये बहुत ही कार्यकारी है। पूर्वकालको युरोपीय शिकारी उसका बड़ा आदर करते थे। कारण आहत अथच पलायित मृगका अनुसन्धान वा राजाकी सुरक्षित मृगयाभूमिसे विनष्ट वा अपहृत पशुका सन्धान करनेमें उसकी अपेक्षा पटु कुक्कुर दूसरा देख नहीं पड़ता। पहले वह पलायित अपराधी, शत्रु, चोर,

इत्यादिके अनुसन्धानमें भी नियुक्त किया जाता था। उस समय युद्वावसानको पलायित शत्रुके अनुसरणमें रक्तपिपासु छोड़ते थे। वालिस एवं ब्रूसके युद्धमें अष्टम हेनरीकी फरासीसी लड़ाईमें और एलिजावेथके आयरलेण्ड-समरमें उक्त जातीय कुक्कुर सैन्य-सामन्तके मध्य गिना जाता था। एलिजावेथके सैन्याध्यक्ष अर्ल अव एसेक्सकी सेनामें ८०० रक्तपिपासु आखेटिक कुक्कुर रहे।

रक्तपिपासु आखेटिक

उक्त कुक्कुरके चपेटसे बचनेको पहले दुष्टलोग भी अच्छे अच्छे उपाय अवलम्बन करते थे। वह जिस पथसे भागते, उस पर अन्य जीव वा मनुष्यका रक्त छिड़कते थे। कुक्कुर अनुसन्धानमें पड़ अन्य रक्तके गन्धसे लक्ष्यभ्रष्ट हो जाता था। किन्तु सब कुत्तोंसे फिर भी निस्तार न रहा। आज कल यह प्रथा उठ गयी है।

उसका देह दीर्घ एवं दृढ़, मांसपेशी सुस्पष्ट, वक्ष विशाल, ओष्ठ वेष्टित, आकृति शान्त तथा गम्भीर, वर्ण गाढ़ पिङ्गल और भ्रूद्वयका उपरिभाग कृष्णवर्ण होता है। आपाततः विशुद्ध रक्तपिपासु कुक्कुरकी संख्या इतनी अल्प है कि नहीं हो कहना पड़ता है। वहीक्यूबा द्वीप, इङ्गलेण्ड, अफरीका, एशिया और युरोपमें वास करता है। क्यूबाका कुत्ता अमितपराक्रम होता है। उसकी ऊंचाई २८ इञ्च बैठती है। किसी किसीके कथनानुसार वह मृगदंशक (Stag-hound) और दक्षिण युरोपीय आखेटिक (Southern-hound)-के सहयोगसे उत्पन्न है।

क्यूबा द्वीपका रक्तपिपासु।
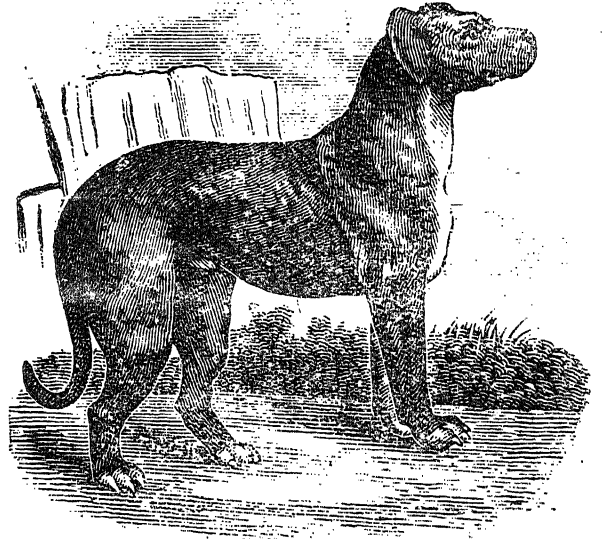
(ग) शृगालाखेटिक (Fox-hound)—मृगदंशक कुक्कुरके मध्य सर्वापेक्षा द्रुतगामी है। किन्तु वह कुछ क्षुद्रकाय होता है। ऊंचाई २२।२३ इञ्च रहती है। उसका पदद्वय सरल, स्कन्ध पूर्ण, वक्ष गभीर होते प्रशस्त, पृष्ठ विस्तृत, मस्तक तथा गलदेश किञ्चित् स्थूल और लाङ्गुल लोमश होता है।

(घ) मृगदंशक (Stag-hound)—जातीय आखेटिक अन्यान्य आखेटिकों अर्थात् विशेष विशेष पशुको मृगयामें पारदर्शी और उस उस नामसे प्रसिद्ध कुक्कुरोंकी अपेक्षा कुछ दीर्घाकार पाया और विशेष विशेष पशुकी मृगयाके लिये सिखाया जाता है।

(ङ) नव्य शशकाखेटिक (Harrier)—प्राचीन शशकाखेटिक और शृगालाखेटिकके सहयोगसे उत्पन्न है। वह प्रतिपालकके इच्छानुसार द्रुतगामी और मृदुगतिशील हो सकता है। प्राचीन शशकाखेटिकके साथ यदि हरिणाखेटिकका संयोग लगता, तो मृदुगतिशील हेरियर निकलता है। उक्त नव्यजातीय कुक्कुर उत्पादित होनेसे आजकल कोई शिकारी प्राचीन शशकाखेटिक व्यवहार नहीं करता।

(च) निर्देशक आखेटिक (Pointer)—निम्नलिखित कई श्रेणियोंमें विभक्त है—स्पेनीय-निर्देशक (Spanish pointer), नूतन विलायती निर्देशक (Modern English pointer), पोर्तगालका निर्देशक (Portuguese pointer), फरासीसी निर्देशक (French pointer) और डेनमार्कका कुत्ता (Dainish or Dalmatian or Coach-dog)। आखेटोपयोगी पशुका आवास ढूंढने या गुलिका हत पक्षी संग्रह करनेमें वह अतिशय पटु होता है। निर्देशक पशु वा पक्षीका सन्धान मिलनेसे उसी स्थान पर स्थिरभावमें खड़ा रहता और शिकारीके जा पहुंचने तथा उसके इङ्गित करने पर मृगया मारनेकी चेष्टा करता है। वह पीछा कर पक्षीको मार सकता है। उसकी घ्राणशक्ति और दृष्टिशक्ति समान तीक्ष्ण होती है। वह स्पेनका आदिमवासी है। स्पेनीय निर्देशक कुक्कुर कुछ स्थूल और देहभङ्गी सामञ्जस्यहीन लगती है। पोर्तगालका निर्देशक कुछ हलका रहता और फरासीसीके मुखमें दोनों चक्षु तथा नासिकाके निकट एक जोड़ा सादा डोरा पड़ता है। शृगालाखेटिक और स्पेनियल वा स्पेनीय निर्देशक कुक्कुरके सहयोगसे विलायती नव्य निर्देशककी उत्पत्ति है। वह अति शीघ्र शिक्षित होता और एकबार सीख जानेसे फिर कभी नहीं भूलता। प्रायः उसके पदस्फुटमें क्षत हुवा करता है। कोई कोई उसके गलेमें घण्टी बांध देता है। निर्देशक कुक्कुरके साथ चिह्नक (Setter) का संयोग लगा कर भी एक जातीय निर्देशक उत्पादन किया जाता है। किन्तु वह वैसा कार्यक्षम नहीं होता। डेनमार्कके कुत्तेमें घ्राणशक्ति कम रहती है। उसीसे वह अस्तबलकी शोभा बढ़ानेको पाला जाता और पालककी गाड़ीके साथ दौड़ लगाता है। उसके गात्र पर काले काले धब्बे होते हैं।

(छ) स्पेनियलोंके मध्य न्यूफाउण्डलेण्डका कुत्ता अति विख्यात है। वह जैसा ही मृगयापटु रहता वैसा ही प्रभुभक्त, विश्वासी, सुदर्शन और शांत स्वभाव होता है। उत्तर अमेरिकाके पूर्वकूलवर्ती न्यूफाउण्डलेण्ड द्वीपके नामपर उसका नामकरण हुवा है। आजकल युरोपमें उसकी विशुद्ध जाति प्रायः नहीं मिलती। मौलिक न्यूफाउण्डलेण्डीय और वर्णसङ्कर न्यूफाउण्डलेण्डीय कुक्कुर बिलकुल विलायती माष्टिफकी भांति सद्गुणशाली है। अधिकन्तु उसकी घ्राणशक्ति और दृष्टिशक्ति प्रबल होती है। सन्तरणमें भी वह बहुत अच्छा रहता है। इसीलिये वह जल स्थल सकल स्थानपर मृगयामें पटु पड़ता है। न्यूफाउण्डलेण्ड द्वीपमें वह अधिवासियोंका बड़ा उपकार करता है। किसी चक्रविहीन वा एकचक्र काष्ठशकट तीन चार कुत्ते जोत और उसपर ज्वलानेकी लकड़ी लाद देनेसे अनायास बहुत दूर तक खींच ले जाते हैं। वन्य अधिवासी इसी प्रकार उन्हें शकटमें जोत ग्रामादिमें काष्ठ बेचने पहुंचते हैं।

उसके पदकी अङ्गुलि जलचर जीवकी भांति पतले चर्मखण्डसे जुड़ी रहती है। वह जलमें डुबकी लगा समुद्र वा नदीतलसे पतित वस्तुको उद्धार कर सकता है। उसे स्थलका अपेक्षा जलमें रहना और खेलना अच्छा लगता है। वह इतना तीव्रदृष्टिशक्तिविशिष्ट और द्रुतकार्यकारी रहता कि वस्तुके जलमें गिरते ही साथ साथ कूदकर उद्धार करता है। उक्त सकल गुणोंके कारण अनेक नाविक एवं पोताध्यक्ष जहाज और नावमें उसे पालते हैं। वह उक्त गुणसे अनेक समय जलपतित आसन्नमृत्यु नाविक वा आरोहीके प्राण बचाता है।

न्यूफाउण्डलेण्डके निकट लब्राडर नामक स्थानमें उक्त जातीय कुक्कुर अपेक्षाकृत बड़ा होता है। उसे लब्राडरका कुत्ता (Labrador-Dog) कहते हैं। उसके कई श्रेणीविभाग हैं—सङ्कर न्यूफाउण्डलेण्ड कुक्कुर (English or European Newfoundland or Labrador dog), विशुद्ध न्यूफाउण्डलेण्ड कुक्कुर (True NewfoundlandDog), लेण्डशियर न्यूफाउण्डलेण्ड कुक्कुर (Landsheer Newfoundland Dog), लब्राडरका सेण्टजान कुक्कुर (St. John's Dog of Labrador)।

आखेटिक (हाउण्ड) जातीय दृष्टिशक्तिप्रधान कुक्कुरोंमें धूसरआखेटिक (Grey-hound) या ताजीकुत्ता बहुत विख्यात है।

युरोपमें उक्त जातीय कुक्कुरका व्यवहार बहुकालसे प्रचलित है। खृष्टीय पञ्चम शताब्दको गल लोग शशक (खरगोश)-के शिकारमें उसे व्यवहार करते थे। इङ्गलेण्डमें केनूटके राज्यशासन काल राजाधीन मृगया-कानन के पशुको निरापदरक्षा करनेके लिये व्यवस्था रही—जो व्यक्ति राजकीय कानूनसे एक कोसके बीच रहता, वह धूसराखेटिक (ताजीकुत्ता) पाल नहीं सकता। यदि कोई मान्यगण्य भद्र पुरुष उसे पाल लेता, तो व्यवस्थानुसार वाध्य हो उसके सम्मुखस्थ पदको दो प्रधान अङ्गुलि कटा देता था। तृतीय राजा एडवर्ड एसेक्सके वनमें उक्त कुक्कुर इतने अधिक रखते कि लोग उस वनको कुक्कुरद्वीप (Island of dogs) कहते थे। उस समय उनके साहाय्यसे हरिण मारा जाता था।

उसका देह पतला, एवं सीधा, मुखभाग लम्बा तथा सूक्ष्म, पदचतुष्टय अति दीर्घ, उदर क्षुद्र, कटि क्षीण, वक्ष पूर्ण गंभीर और गलदेश लम्बा होता है। पहले लोगोंने स्थिर किया था—घ्राणशक्तिके साहाय्यसे यह भी पशुका शिकार करता है। किन्तु आपाततः यह ठहर गया कि उसमें घ्राणशक्ति यत्सामान्य होती है। उससे कोई कार्य बन नहीं पड़ता। किन्तु उसको दृष्टिशक्ति अति तीव्र है। निमेषमात्र जिसे वह एकबार देख पाता, इस जन्ममें फिर उसे कभी नहीं भुलाता। एकवत्सर वयससे ही वह मृगया मारना सीखता है। अन्यान्य सकल जातीय कुक्कुरको अपेक्षा धूसराखेटक (ताजी कुत्ता) अधिक दिन जीता है। ५।६ वत्सर वयस पर्यन्त उसका साहस और बल सतेज रहता, फिर घटने लगता है। वह आजकल शशकके आखेटपर भी नियुक्त होता है। किन्तु देहकी दीर्घता और द्रुतगमनके प्रधान लक्ष्यसे अनेक समय शशकको चातुरीमें पड़ उसे अपने लक्ष्यका स्मरण नहीं रहता। उसमें निम्नलिखित श्रेणीभेद विद्यमान है—परिष्कार विलायती धूसराखेटिक (The Smooth English Grey hound), हरिणाखेटिक तथा कर्कश धूसराखेटिक (Deer-hound and Rough Grey hound), आयरलेण्डीय (Irish Grey-hound or wolf dog) (उस समय उसको भेड़िया-कुत्ता कहते थे), तीक्ष्णदृष्टि आखेटिक (Gaze-hound) और अलवानीय आखेटिक Albanian Grey-hound)। वह अमित साहसमें सिंह से लड़ता है।

रूसी (Russian Crey hound) और तुर्कीकुत्ता या नाकिद (Nakid or Turkish hound)—अपेक्षाकृत क्षुद्रकाय, हिंस्र और अनिष्टकारी है। फिर भी पालनेसे वह हिल जाता है। तुर्क उसे गृहकी रक्षामें नियुक्त करते हैं। पारस्य (ईरान)-देशीय आखेटिक (Persian Grey hound)—देखनेमें अतिसुन्दर होता है। उसके गात्र, कर्ण और पुच्छमें बड़े बड़े लोम निकलते हैं। वह विलायती ताजी कुत्तेसे बलवान् होता है। शिकारीका घोड़ा भगनेसे वह दौड़कर गतिरोधकी चेष्टा लगाता और लगाम मुंहसे पकड़ उसके साथ बढ़ा चला जाता है। अन्तको मनुष्य जाकर उसे पकड़ लेता है। इटलीका धूसराखेटिक (Italian Grey-hound)—क्षुद्रकाय और मृगयामें अक्षम रहता है। वह स्वदेशके शीत भिन्न अन्य किसी स्थानका शीत सह नहीं सकता। उसे इटलीमें क्रीड़ाका एक द्रव्य समझते हैं। अरबी ताजीकुत्ता (Arabian Grey-hound)—देखनेमें पारस्य (ईरान)-के धूसराखेटिक-जैसा होता है। वह बहुत चतुर और शीघ्रगामी है।

अरबी ताजी कुत्ता।

(ख) अलपाईन पर्वतके ऊपर अलपाइन कुक्कुर

वा 'सेण्ट बरनार्ड कुक्कुर' (St. Bernard's Dog) पाया जाता है। उसे कोई कोई रखवालेका कुत्ता या रूसी कुत्तेकी एक जाति कहता है। किन्तु बहुतसे लोगोंके मतमें वह न्यू फाउण्डलेण्डके कुक्कुरका स्वजाति है। वह बड़े माष्टिफकी भांति उच्चदेह और शान्तस्वभाव होता है। उसका कर्ण वेष्टित रहता है। गात्रमें बड़े बड़े लोम होते हैं। शरीरमें असुरकी भांति बल रहता है। वह सेण्ट बरनार्ड गिर्जाके धर्मयाजकोंको शिक्षासे चिरतुषाराच्छन्न पर्वत पर विपन्न पथिककी प्राणरक्षा करता है। जिस समय शीतकालको पार्वत्य पथ बर्फसे ढंक जाता, उस समय परिश्रान्त पथिक गतिविहीन देखाता और बर्फसे आच्छन्न हो प्राण गंवाता है। धर्मयाजक उस समय उक्त शिक्षित कुक्कुरका एक एक जोड़ा छोड़ देते हैं। वह दिवारात्र पार्वत्य पथमें घूम घूम शीताभिभूत, मृतप्राय, तुषाराच्छादित मुमुर्षु लोगोंका अनुसन्धान किया करता है। उसके गलमें शराबकी बोतल, थोड़ासा खाद्य और अति उष्ण वस्त्रका परिच्छद बांध देते हैं। वह पूर्वोक्त प्रकारके विपन्न पथिकको देख उसके निकट खड़ा हो जाता और पथिक उक्त सकल द्रव्य मिलनेसे पुनर्जीवन पाता है। यदि कोई बर्फसे ढंक अचेतन देख पड़ता, तो एक कुत्ता वहीं खड़ा रहता और दूसरा गिर्जा जाकर धर्मयाजकको सूचना करता तथा उसको साथ लेकर पथिकके पास वापस पहुंचता है। किसीके बर्फमें फस जाने पर वह नखसे बर्फ हटा उसे उद्धार करता है। कातर, श्रान्त और पथभ्रष्ट पथिक उसके साथ आश्रम जा आश्रय लेता है। वह प्राणशक्तिके प्रभावसे सम्पूर्ण तुषारावृत व्यक्तियोंको ढूंढ़ कर निकाल सकता है। वह बालकादिको पाने पर मुखसे उठा पीठ पर लाद लेजाता है। उसके इस गुणपर अनेक गल्प प्रचलित हैं।

(ग) लक्ष्यकारी कुक्कुर (Setter)—स्पानियेलिक जातीय निर्देशक (Pointer)-की अपेक्षा प्राणशक्तिमें हीन होते भी अधिक प्रभुभक्त और कष्टसहिष्णु है। वह देखनेमें सुश्री और श्वेतवर्ण रहता है। आकार कुछ कुछ स्पेनियल और निर्देशक हाउण्ड (स्पानियेटिक)-की भांति होता है। कोई कोई कहता कि वह उक्त दोनों जातिके संयोगसे उपजता है।

(घ) छलांग मारनेवाला कुत्ता (Springer)—स्पेनियल जातीय कुक्कुरोंके मध्य क्षुद्रकाय और सुदर्शन है। उसका गात्रवर्ण साधारणतः लाल और सफेद होता है। नासिका और तालुको काला पाते हैं। उसका कान जितना लम्बा और मस्तक जितना क्षुद्र होता, उतना ही उसमें गुणाधिक्य पाया जाता है। शिक्षित होनेपर वह छलांग मार ईषत् उड्डीयमान पक्षीका शिकार कर सकता है। इसीसे उसको छलांग मारनेवाला कुत्ता कहते हैं। फिर जिसके पद और भ्रूपर लाल धब्बा होता, वह पाइरेम (Pyrame) कहाता है।

(ङ) राजा चार्लसका यत्नोत्पादित कुक्कुर (King Charles' Dog)—भी सुदर्शन और क्षुद्रकाय होता है। उसका मस्तक छोटा, मुखाग्र गोलाकार खर्वसूक्ष्म, मुखभाग अत्यल्प क्षुद्रलोमविशिष्ट, देह दीर्घ एवं घन तथा कुञ्चित लोमविशिष्ट, कर्ण लम्बित, पदांगुलि संयुक्त और लांगुल लोमश रहता है। वह लांगुलको कभी नहीं झुकाता। राजा चार्लसके यत्नसे उक्त कुक्कुर उत्पन्न हुवा था। उनके सर्वदा अपने साथ रखनेसे उसका वह नाम पड़ गया।

(च) क्रोड़विहारी कुक्कुर (Lap Dog)—अति क्षुद्र सुदर्शन, शान्त और भीतस्वभाव होता है। उसे मनुष्यके पास रहना अच्छा लगता है। गात्रवर्णके भेदसे वह नानाविध और भला बुरा रहता है। माल्टा द्वीपका कुक्कुर (Maltese Dog) और राजा चार्लसका कुत्ता (King Charles' Dog) भी उक्त जातीय कुक्कुरकी भांति आदरके पशुरूपसे व्यवहृत होता है।

उक्त सकल कुक्कुर लोकालयमें या मनुष्यके निकट रहनेसे पालित कहाते हैं। वन्य कुक्कुरोंमें अष्ट्रेलियाके डिङ्गो (Dingo), अमेरिकाके मेक्सिको, दक्षिण अफरीकाके हायना और भारतवर्षके कुछ एक कुक्कुर ही प्रधान हैं।

(क) डिङ्गो (Dingo)—दल बांध कर वन वन

घूमता और कङ्गरू, छागल प्रभृति मार मार खाता है। वह बलिष्ठ, वृहत्काय, विस्तृतमस्तक, क्षुद्रकर्ण, ईषत् रक्तवर्ण, लोमश लांगुल और चतुर है। वह पर्वत-की गुहामें रहता और सावधान शावककी रक्षा करता है। डिङ्गो समय समय पर लोकालयमें घुस छागल, गो, मेष, वत्स प्रभृति मार क्षति पहुंचाता है। अति गुरुतर प्रहारसे भी वह नहीं मरता। सुतरां विना अस्त्राघात या गोलीके उसे विनाश करना भी कठिन है।
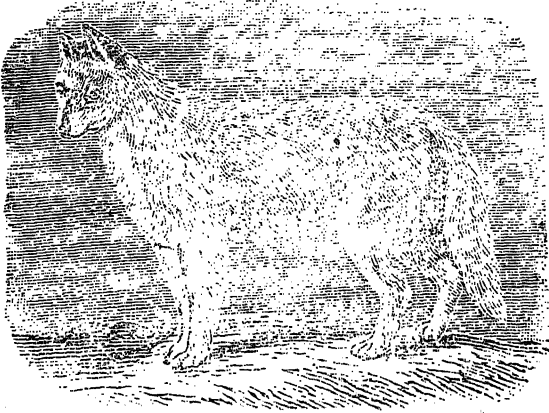
डिङ्गो कुत्ता।

(ख) मेकेञ्जी कुत्ता (Dogs of River Makenzi in America)—भूंकता नहीं। उसके गात्रमें बड़े बड़े लोम होते हैं। वह ग्रीष्ममें रक्त वा धूसरवर्ण और शीतकालको श्वेत पड़ जाते हैं। उसका कर्ण लम्बा अथच सीधा और पद मोटा रहता है। वह बर्फ पर चल सकता है। मेकेञ्जी स्वदेशमें हिल जाता, किन्तु बुलडागकी भांति अस्थिर और क्रोधनस्वभाव दिखाता है। क्रुद्ध होने पर वह वृक (भेड़िये)-की भांति शब्द करता है।
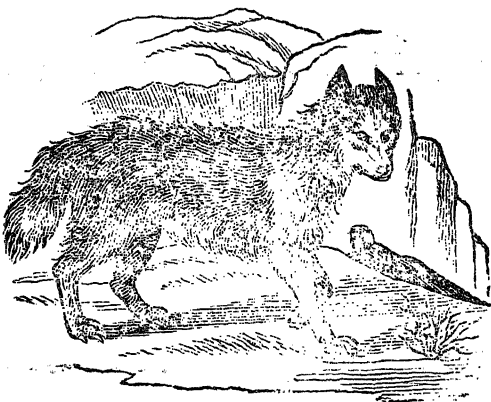
मेकेञ्जी कुत्ता।

(ग) यव और सुमात्रा द्वीपका वन्य-कुक्कुर (Canis Sumatrensis)-के साथ, कहना पड़ता है, वृकका आकारगत वैलक्षण्य नहीं रहता। फिर भी उसका आकार कुछ क्षुद्र पड़ता है। उसका कर्ण छोटा और वर्ण पिङ्गल होता है।

(घ) बलूचिस्थान और पारस्य (ईरान)-के 'वेलुक' नामक जङ्गली कुत्तेका वर्ण लोहित और स्वभाव उग्र रहता है। वह २०।३० कुत्तोंके दल बांध बांध घूमता और सम्मिलित भावसे महिष पर्यन्त मार डालता है।

(ङ) सीरिया प्रदेशका 'सीर' नामक जङ्गली कुत्ता—चीतेकी भांति उछल पशुहत्या करता है। देशीय लोग उसे वृककी भांति विवेचना करते हैं। उसके काटनेसे मनुष्य पागल होकर मर जाता है।

(च) मिसरदेशका 'भोव' नामक एक प्रकार उग्रस्वभाव वन्य कुक्कुर।

(छ) उत्तर अमेरिकाके मेक्सिको देशका अविकल वृककी भांति एक प्रकार वन्य कुक्कुर—'कोटि' कहाता है। वह वत्सरके मध्य ऋतुविशेषको वृकोंके साथ विहार करता, किन्तु अन्य समय फिर वही वृकोंका प्रिय भोज्य बनता है।

एतद्भिन्न पृथिवीके नाना स्थानमें नानारूप वन्य कुक्कुर विद्यमान हैं। उनको सविशेष वर्णना की जा नहीं सकती।

भारतीय कुक्कुरका विवरण—युरोप या अमेरिकामें कुक्कुरका जैसा यत्न और आदर रहता, भारतवर्षमें उसके सहस्रांशका एकांश भी देख नहीं पड़ता। इसलिये इस देशीय कुक्कुरके गुणागुण सम्बन्धमें अति अल्प ही लोगोंको ज्ञान है। भारतवर्षमें एकान्त असभ्य दो-एक जातिको छोड़ किसी सभ्य समाजमें उसका व्यवहार नहीं होता। उसीसे प्रायः समस्त कुक्कुर वन्य बन गये हैं। जिन सकल कुक्कुरद्वारा असभ्य जातिको उपकार पहुंचता, उन्हें किसी प्रकार पालित कहा जा सकता है। इस स्थान पर ग्राम्य कुक्कुरोंको भी वन्य बताना ही युक्तिसङ्गत है। कारण वह अस्वामिक और अयत्नरक्षित होते हैं। जो हो, पालित, वन्य वा ग्राम्यभेदसे

भारतीय कुक्कुरोंका विशेष सूक्ष्मरूपसे श्रेणी विभाग हम नहीं करते। स्थूलरूपसे उस सम्बन्धमें जो मालूम हुवा, वही आगे लिखा गया है। भारतीय वन्य कुक्कुर भों भों शब्द कर नहीं भूंकता, केवल अस्पष्ट गुरुगम्भीर स्वरसे गरजता है। वह दल बांध कर वन और पर्वतमें घूमा करता है। सिंहल, मलय उपद्वीप, भारतवर्ष और पूर्वभारतसागरीय द्वीपावलीमें उक्त कुक्कुर देख पड़ता है। चिरतुषारावृत अत्युच्च हिमालय पर भी वह मिल जाता है।

(१) हिमालयका कुक्कुर (Himalayan Dogs) देखनेमें युरोपके उत्तरप्रदेशीय कुत्ते-जैसा होता है। उसका भी कान खड़ा रहता है। शैशवमें प्रतिपालन करनेसे वह हिल जाता और आखेट करनेकी शिक्षामें मन लगाता है।

(२) ढोल कुत्ता (The Dhole or Wild dogs of Nepal Hills)—नेपालके अन्तर्गत पार्वत्यप्रदेशमें वन्य रूपसे मिलता है। वह ५०से २०० पर्यन्त दल बांध घूमा करता है। ढोल पार्वत्य अधिवासियोंके गो, छागल, मेष इत्यादि मार डालता है। हरिणके आखेटमें वह अतिशय पटुता प्रकाश करता है। जिस कौशलसे वुद्धि लड़ा ढोल हरिण मार गिराता, उसे विचार-कर आश्चर्य होता है। उक्त जातीय कुक्कुर आकृतिमें भारतीय साधारण शृगालको अपेक्षा बहुत उच्च नहीं रहता, दैर्घ्यमें कुछ अधिक बैठता है। उसका गात्रवर्ण उज्ज्वल रक्ताभ पाटल होता है। घ्राणशक्ति अति प्रबल रहती है। ठीक सन्ध्याके समय उक्त जातीय एक दल कुक्कुर कियत्काल भूंका करते हैं। फिर दो-दो तीन तीन मिल किसी ओर हरिण अन्वेषणको चले जाते हैं। जो दल प्रथम आखेटका सन्धान पाता, वह अन्य सकलको चीत्कार कर संवाद पहुंचाता है। दलके समस्त कुक्कुर एकत्र होने पर मिलित भावसे भयानक चीत्कार करते हैं। इससे हरिण सन्त्रस्त हो भगनेका उद्योग लगाता है। उस समय वह इधर उधर सरक हरिणके भागनेके भिन्न भिन्न पथ रोक खड़े हो जाते हैं। हरिण किसी ओर भगने पर आक्रान्त होता है। अन्ततः सब मिल कर उसे मार खाते हैं। उसके पीछे वह पूर्वोक्त प्रकारसे फिर नूतन आखेटका अनुसन्धान करते हैं। उनके द्वारा मनुष्य कभी आक्रान्त होते नहीं देखा गया। हरिण न मिलने पर वह भालुकको भी आक्रमण करते हैं। व्याघ्रके साथ ढोल कुत्तोंको प्रबल शत्रुता है। व्याघ्रको देखते ही वह अन्य आखेट छोड़ आक्रमण किया करते हैं। राजपूतानेके भीलोंसे सुनते हैं कि तत्स्थानीय पर्वतमें उक्त कुक्कुर व्याघ्र पर झपटते, व्याघ्र आत्मरक्षार्थ वृक्षपर चढ़ जाते भी उनसे निस्तार नहीं पाता। बाघ वृक्ष पर चढ़ बैठ जाता और कुक्कुरका दल उसके लिये नीचे खड़े घात लगाता है। किन्तु उसी समय यदि कोई मनुष्य वहां पहुंचता, तो कुक्कुरदल भीत हो भागने लगता और बाघ भी वृक्षसे नीचे उतर चुपके चुपके पलायन करता है।

(३) बखान कुत्ता (Vakhan Dog)—चित्रलमें रहता है। स्काटलेण्डके कोली कुत्ते (Collie Dog)-के साथ उसका यथेष्ट सादृश्य है। उसका बल और द्रुत गमन अति प्रसिद्ध है। बखानका कान सीधा, लाङ्गुल लोमश और गात्रवर्ण काला, रक्ताभ पाटल वा हरिताभ नील होता है।

(४) पहाड़ी कुत्ता (Hill Dog)—हिमालयमें होता है। उसके गात्रमें अति दीर्घ और काल लोम आते हैं। वह अपरिचितके पक्षमें बहुत भयानक है। किन्तु अपने देशवासियोंसे पहाड़ी कुत्ता हिल जाता और गो, छागल प्रभृतिके रक्षार्थ शिक्षा पाता है। चीता उसे सर्वदा आक्रमण करता है। उसीसे पालू कुत्तेके गलेमें लौहपेटिका बांध देते हैं।

(५) कुनावाड़का कुत्ता (Kunawar Dog) बहुत हिंसक होता है। उसके गात्रमें भी बड़े बड़े काले लोम होते हैं। वह अपरिचित व्यक्तिको देखते ही खदेर कर काटता और एकबारगी ही छिन्न भिन्न कर डालता है। ग्रामके लोग उसे पालते और दिनको शृङ्खलसे बांधते हैं। उक्त जातीय कुक्कुरशावकके गात्रलोम अति कोमल रहते और जिन छागलोमोंसे शाल बनते, उन्हींकी भांति उत्कृष्ट लगते हैं। इसीसे बहुतसे लोग उक्त लोमको शालमें मिला देते हैं।

(६) बिसेहर कुत्ता (The breed of Beseh-

ur in the Himalaya) हिमालयमें होता है। वह बृहदाकृति और कष्टसहिष्णुताके लिये विख्यात है। बिसेहर देखनेमें सम्पूर्ण माष्टिफ-जैसा लगता है। उसका गात्रवर्ण साधारणतः श्वेत एवं कृष्ण, लोम घन तथा कान और लांगुल लोमश एवं दीर्घ रहता है। किन्तु मुखाकृति माष्टिफ-जैसी नहीं होती। अधिकतर रखवालेके कुत्ते जैसा होते भी वह परिमाणमें बहुत कुछ भारी और गम्भीर पड़ता है। उसके गात्रमें दीर्घ लोमके नीचे पक्षीके कोमल परकी भांति क्षुद्र कोमल लोम निकलते हैं। वही लोम ग्रीष्मकालको अपने आप गिर जाते हैं। उक्त क्षुद्र कोमल लोम भी उत्कृष्ट होते हैं। वह अपने देशवासियोंके छागादिकी रक्षा करने और आखेटके व्यवहारमें लगनेको सिखाया जाता है। बिसेहर भी पक्षीको खदेर खदेर उछल कर पकड़ लेता है। उक्त जातीय कुक्कुर बहुमूल्यमें बिकता है।

(७) बामियान प्रदेशका ताजी कुत्ता (Greyhound of Bamian)—अपने पद और गात्रमें बड़े बड़े लोम रखता है। वह अतिशय द्रुतगामी और देखनेमें ठीक पारस्य (ईरान)-के ताजी कुत्ते-जैसा होता है।

(८) नेपाली कुत्ता (Nepal Dog)—कहानेवाला प्रकृत पक्षमें तिब्बतीय कुक्कुर है। वह देखनेमें बृहत्काय विलायती न्यूफाउण्डलेण्डके कुत्ते-जैसा होता है। उग्रस्वभाव होते भी नेपाली कुत्ता हिल जाता है। वह रातको नहीं सोता और माष्टिफकी अपेक्षा दृढ़ताके साथ प्रतिपालकके द्रव्यादिका रक्षणावेक्षण रखता है।

(९) कुमायूंका शिकारी कुत्ता (The Shikari Dog of Kumaun) दाक्षिणात्यके 'पारिया कुत्ता'-जैसा लगता, किन्तु आखेट (शिकार)-में अति पटु पड़ता है।

पूर्वोक्त कुक्कुर हिमालय प्रदेश और आर्यावर्तके अन्यान्य पार्वत्यस्थलमें मिलता है। दाक्षिणात्यमें भी कई प्रकारके कुत्ते होते हैं। यथा—

(१) लम्बर कुत्ता—दाक्षिणात्यमें लम्बर नामक एक जातीय असभ्य लोग रहते हैं। उनका गृहादि वा ग्राम, देश और नगरादि कहीं भी नहीं होता। वह स्त्री, पुत्र, कन्या, धन, रत्न और गोमिषादि ले दल दल घूमा फिरा करते हैं। लम्बर वन वनमें छावनी डाल समय बिताते हैं। उनके साथ द्रव्यादि रक्षणार्थ एकदल कुक्कुर रहते, उन्हें भी लोग लम्बर ही कहते हैं। उक्त जातीय कुक्कुर ठीक पारस्यके ताजी-कुत्ते-जैसा रहता और अपेक्षाकृत बलवान् पड़ता है। बृहत्काय लम्बर कुत्ता शिकारके लिये सर्वदा लालायित हो घूमा करता है। वह जितना प्रभुभक्त, विश्वासी, बुद्धिमान् और धनरक्षाकारी रहता, उतना उसे यत्न तथा आदर नहीं मिलता।

(२) पलिगार कुत्ता—पलिगार जातीय लोगों-द्वारा प्रतिपालन किया जाता है। इसीसे उसको पलिगार कहते हैं। वह भी क्षमतावान् और बृहत्काय होता है, किन्तु उसके गात्रमें इतना क्षुद्र लोम रहता कि नहींके बराबर लगता है।

जोड़ापुर और घुरघुरटाके बिन्दर जातीय लोग उसको लेकर वन्य शूकर मारते हैं।

(३) पारिया कुत्ता—पारिया जातीय लोगों द्वारा प्रतिपालन किया जाता है। इसीसे वह उक्त नाम पर ख्यात है। वह देखनेमें लम्बर-जैसा लगता है। आज कल अधिकांश लम्बर लोग भी उसे पालते हैं। लम्बर और पारिया कुत्तेमें आकृतिगत वैलक्षण्य भी विशेष देख नहीं पड़ता। किसी किसी स्थलमें उभयजातीय कुक्कुर इतने मिल गये हैं, कि उनको पहचान लेना अत्यन्त दुःसाध्य है। युरोपमें क्रीड़विहारी कुक्कुर जिस प्रकार आदरका वस्तु ठहरता, पारिया कुक्कुर भी नीच जातीयोंके निकट वैसा ही रहता है। उसका गात्रवर्ण श्वेत होता है। वह लालटेन लेकर चलना सीखता है।

(४) कोलशुन—प्राणितत्त्वविद् द्वारा दाक्षिणात्य कुक्कुर या दक्षिणी कुत्ता कहाता है। किन्तु महाराष्ट्र उसे कोलशुन ही कहते हैं। उसका गात्रवर्ण पीताभ-लोहित, उदरभाग अपेक्षाकृत तरलवर्णविशिष्ट, लांगुल लोमश और कर्ण वेष्टित होता है। चक्षुकी तारका गोलाकार

रहती है। चञ्चुकोटर वक्रभावसे गठित रहता है। मस्तक दबा हुवा किन्तु दीर्घाकार होता है। देखनेमें वह बहुत कुछ ईरानके ताजा कुत्तेसे मिलता है। बहुतसे लोगोंके मतमें देशभेदसे उक्त जातीय कुक्कुर ही नेपाली कुत्ता कहाता है। दक्षिणी कुत्तोंमें कितने ही 'बुयनश' नामसे ख्यात हैं। सम्भवत: बुयनश कुत्ता ही कोलशुनोंका आदिजनक है।

हिन्दुस्थानमें आजकल नाना जातीय कुक्कुर देख पड़ते हैं। उनमें ग्राम्यकुक्कुर ही प्रधान है। उसे घाटका कुत्ता कहते हैं। वह भी हिल जाता, प्रभुभक्ति दिखाता और आखेट करनेकी शिक्षा पाता है। उनमें कोई कोई अपकारी निकलनेसे प्रतिपालक भिन्न अपर प्रतिवासीके हंस, बिडाल, छागल इत्यादि मार डालता है। पल्ली ग्राममें गृहस्थ लोगोंके घरके पास अपरिष्कृत स्थानमें दो-एक ऐसे कुत्ते रहते हैं। वह वास्तवमें पालू न होते भी गृहस्थोंके निकट उच्छिष्ट अन्नादि पा जाते हैं। इसीसे वह गृहस्थोंके प्रति कृतज्ञता दिखाते और रातको शृगालादिसे घर बचाते हैं। पल्लीग्राममें दो कुत्ते गृहस्थके घर पर दो दरवानोंका काम कर सकते हैं। शृगालके साथ उनका चिरविवाद देखनेमें आता है। उभय उभय जातिको देखते ही आक्रमण करते हैं। फिर शृगालीके साथ सङ्गत हो वह शावक भी पैदा करते हैं। (इस प्रकारके विजातीय सङ्कर कुक्कुरको अंगरेजीमें Dog and fox or Jackal Cross कहते हैं।) शृगालके आक्रमणसे उक्त जातीय जो कुक्कुर क्षत विक्षत हो जाता, वह 'हन्या' कुत्ता कहाता है। फिर रोगसे पागल होने-वाले वा अन्य क्षत होनेसे उग्र-स्वभाव पड़ जानेवालेको पागल कुत्ता (बेलान कूकुर किरहा कूकुर) कहते हैं।

कुक्कुरका प्राचीनता—अति प्राचीनकालसे हिन्दुवोंको कुक्कुरके गुणकी कथा अवगत थी। उनके मतमें कुक्कुर अस्पृश्य होते भी यह स्वीकार नहीं कर सके कि कार्य-विशेषमें कुक्कुरका काम नहीं पड़ता था कारण रामायणमें लिखा है—'जिस समय भरत मातामहालयसे स्वराज्यको चले, उस समय केकयराजने अति यत्नसे अन्त:पुरमें प्रतिपालित व्याघ्रतुल्य बलवान् दो कुक्कुर उन्हें आदरपूर्वक उपहार दिये थे।' यथा—

"सत्कृत्य केकयो राजा भरताय ददौ धनम्॥ १९॥
अन्त:पुरेऽति संवृद्धान् व्याघ्रवीर्यबलोपमान्।
दंष्ट्रायुधान् महाकायान् शुनश्चोपायनं ददौ॥ २०॥
(रामायण, अयोध्याकाण्ड, ७० सर्ग)

महाभारतमें भी कुक्कुरका उल्लेख बहुस्थल पर मिलता है। उसके मध्य आदिपर्वके (पौष्यपर्वाध्याय) प्रथम अध्यायपर जनमेजयके यज्ञस्थलमें कुक्कुर की कथा कही है—जनमेजय यज्ञ करनेवाले थे। समस्त आयोजन हो गया। उसी समय देवकुक्कुरी सरमाके कई पुत्रोंने उक्त यज्ञस्थलमें प्रवेश किया था। जनमेजयके भ्राता श्रुतसेन, उग्रसेन और भीमसेनने उनको मारकर इस भयसे भगा दिया कि पीछे वह यज्ञद्रव्य अवलोकन और अवलेहन करते। सारमेयोंने निरपराध प्रहारित होने पर माताके निकट जाकर सब कथा कही थी। देवशुनी सरमा पुत्रोंके दु:खसे क्रुद्ध हो तत्क्षण भ्रातृवेष्टित जनमेजयके निकट पहुंच बोल उठीं 'महाराज! निरपराध हमारे पुत्र क्यों मारे गये? उन्होंने हवि: नष्ट करना दूर रहा, उसे अवलोकन भी नहीं किया।' जनमेजयने प्रश्नका उत्तर दिया न था। इसीसे क्रुद्ध हो निम्नलिखित अभिशाप प्रदान दे वह चला गयीं—'महाराज! आपने जैसे निरपराध हमको क्लेश पहुंचाया है, वैसेही आप भी इस यज्ञमें किसी अदृष्ट और अभावनीय भयसे भीत होंगे। जनमेजयने कुक्कुरीके शापसे उद्धारके लिये ही सोमश्रवाको पुरोहित नियुक्त करनेकी चेष्टा की। सरमाके शापका अदृष्ट भय यज्ञमें आस्तीकागमन था। उसीसे यज्ञ परिपूर्ण न हुवा। (महाभारत)

उसके पीछे जब युधिष्ठिरने स्वर्ग गमन किया, तब इन्द्रने उनसे कहा—'महाराज! रथ प्रस्तुत है। आप इस पर चढ़ कर स्वर्गको पधारिये।' युधिष्ठिर प्रत्युत्तरमें बोल उठे—'देवराज! यह कुक्कुर हमारा पूरा भक्त है। इसे हमारे साथ रहते बहुत दिन हो गये। अतएव आप अनुग्रहपूर्वक इसे हमारे साथ स्वर्ग जानेकी अनुमति प्रदान कीजिये। इसको छोड़ जानेसे हमारे ऊपर निष्ठुर व्यवहार करनेका दोष

लगेगा।' युधिष्ठिरके इस प्रकार अनुरोध करने पर इन्द्रने कहा था—'धर्मराज! इस समय आप अतुल ऐश्वर्य, परमसिद्धि, अमरत्व और हमारी स्वरूपताको प्राप्त होंगे। अतएव इस कुत्तेको छोड़ अतिशीघ्र स्वर्ग जाना आपका परम कर्तव्य है। इसको परित्याग करनेसे आप पर नृशंस व्यवहार करनेका दोष आरोपित न होगा।' युधिष्ठिरने उत्तर दिया—'शतक्रतो! अकार्य का अनुष्ठान शिष्ट लोगोंको करना न चाहिये। इस समय यदि स्वर्गीय ऐश्वर्य लाभकी आशासे हमें इस परमभक्त अनुगत कुक्कुरको छोड़ना पड़े, तो हम स्वर्ग जाना नहीं चाहते।' इन्द्रने कहा—'महाराज! जो व्यक्ति कुत्तेके साथ एकत्र अवस्थिति रखता, वह कभी स्वर्गमें रह नहीं सकता। कुत्तेको साथ ले जानेसे क्रोध-परवश नामक देवगण आपके समस्त यज्ञदानादिका फल विनष्ट कर डालेंगे। इसलिये आप शीघ्र ही कुत्ते-को छोड़ दीजिये।'

युधिष्ठिर प्रत्युत्तरमें कहने लगे—'देवराज! भक्त-को परित्याग करनेसे ब्रह्महत्याके तुल्य महापापमें लिप्त होना पड़ता है। अतएव हम आत्मसुखके निमित्त कभी इसे छोड़ न सकेंगे। भीत, भक्त, अनन्यगति, क्षीण और शरणागत व्यक्तियोंको हम प्राणपणसे रक्षा किया करते हैं।'

इन्द्रने उत्तर दिया—'धर्मनन्दन! कुक्कुरके यज्ञ, दान होम प्रभृति क्रिया दर्शन करनेसे क्रोध-परवश नामक देवगण समस्त कार्यका फल बिगाड़ देते हैं। कुक्कुर अति अपवित्र जन्तु है। अतएव आप अचिर इस कुक्कुर को परित्याग कीजिये। इससे आप अनायास स्वर्ग जा सकेंगे। जब आप द्रौपदी और भ्रातृगणको छोड़ स्वकीय उत्तम कर्मबलसे स्व° लाभके अधिकारी हुवे, हैं, तब इस कुक्कुरको परित्याग न करनेका क्या कारण है। आप सर्वत्यागी हैं। आप क्यों इस प्रकार व्यामोह-में अभिभूत हो रहे हैं।'

युधिष्ठिरने कहा—'देवराज! इहलोकमें किसी को किसीके साथ मृतव्यक्ति मिलानेका सामर्थ्य नहीं। हमारे भ्रातृगण द्रौपदीके साथ मृत्युमुखमें निपतित हुवे हैं। हम उन्हें जिला नहीं सकते। इस विषयकी विवेचना करके ही हमने उन्हें अगत्या परि-त्याग किया है। उनके जीवित रहते हमने उन्हें नहीं छोड़ा। हमारी विवेचनामें भक्तका छोड़ने, शरणागत व्यक्तिको भय देखाने, स्त्रीको मारडालने, ब्रह्मस्व चुराने और मित्रद्रोह लगानेके बराबर दूसरा पाप जनककार्य निःसन्देह नहीं होता।'

पीछे कुक्कुररूपी धर्मने युधिष्ठिरको आत्मपरिचय प्रदान किया। (महाप्रस्थानिक पर्व ३ अ०)

चाणक्यनीतिमें लिखा है—

> "बह्वाशी स्वल्पसन्तुष्टः सुनिद्रः शीघ्रचेतनः।
> प्रभुभक्तश्च शूरश्च षड़ेते च शुनो गुणाः॥"

बहुत भोजन कर स्वल्प आहारसे सन्तुष्ट रहना, भली भांति सोना, शीघ्र जागना, प्रभुभक्त होना और शूरता दिखाना, ये छह गुण कुक्कुरके हैं। समुदाय गुणमध्य कुक्कुरकी प्रभुभक्त ही विशेष प्रसिद्ध है।

भोजराजकृत युक्तिकल्पतरुग्रन्थमें गुणानुसार कुक्कुर के तीन भेद कथित हैं।—"सात्विक, राजसिक और तामसिक। जो कुत्ता बहुपरिश्रम कर भी श्रान्त वा क्षीण नहीं दिखाता, अल्प खाता और पवित्रभावसे अवस्थान लगाता वह सात्विक कहाता है। ऐसा कुत्ता बहुत कम देखनेमें आता है। जिस कुत्तेका आकार दीर्घ, वक्षःस्थल विस्तृत, उदर क्षीण, जङ्घा-देश परिपुष्ट, स्वभाव अत्यन्त क्रोधी और भोजन अधिक रहता, वह राजसिक ठहरता है। उक्त कुक्कुर जङ्गलमें रहता है। फिर अल्पपरिश्रमसे ही श्रान्त होनेवाला और सर्वदा लोलजिह्वा निकालने वाला कुत्ता तामसिक है। उसका पेट बहुत बड़ा होता है।" उक्त पुस्तकमें ही जातिभेदके अनुसार पांच प्रकारका कुत्ता बताया गया है। यथा—"ब्रह्म, क्षत्र, वैश्य, शूद्र और अन्त्यज। जिस कुत्तेका वर्ण श्वेत, आकार दीर्घ, कर्ण उच्च, पुच्छ शीर्ण, उदर क्षीण और दन्त श्वेत एवं तीक्ष्णाग्र रहता, वह ब्रह्मजाति ठहरता है। लोहितवर्ण, सूक्ष्म लोम, प्रलम्बितकर्ण, क्षीण उदर और दीर्घ नखदन्त कुक्कुर क्षत्रजाति है। जो कुत्ता पीतवर्ण, सूक्ष्म एवं मृदु लोम, क्रोधन-स्वभाव और लोलजिह्वा रहता, उसका नाम वैश्य-

जाति पड़ता है। कृष्णवर्ण, शीर्णमुख, दीर्घलोम, अल्पक्रोध और अधिक आत्मबोधयुक्त कुक्कुर शूद्र-जाति है। फिर जिस कुत्तेका आकार क्षुद्र रहता, उदर वृहत् पड़ता, लांगुल दीर्घ लगता, दन्त क्षुद्र एवं शीर्ण निकलता और जो अपवित्र द्रव्य भोजन तथा एक समयमें अधिक सन्तान उत्पादन करता, उसे प्राणितत्त्वविद् अन्त्यज कहते हैं। उक्त सकल-जातिके लक्षण मध्य जिस कुत्तेमें दोजातिका लक्षण देख पड़ता, उसका नाम द्विजाति ठहरता है। वह अतिशय भयानक होता है। तीन जातिका लक्षण रहनेसे त्रिजाति कुक्कुर भय, धननाश और शोक-जनक है।"

इसके अतिरिक्त कुत्तेके दूसरे भी कई शुभाशुभ लक्षण निर्दिष्ट हैं। वराह-मिहिरने लिखा है—"समु-दायमें पांच पांच किन्तु केवल सम्मुखके दक्षिण पदमें छह नख तथा ओष्ठ एवं नासाका अग्रभाग ताम्रवर्ण रखनेवाला, सिंहकी भांति गमन करते समय मट्टी सूंघ सूंघ चलनेवाला, पुच्छमें जटासदृश लोम लटकने-वाला, व्याघ्रकी चक्षु चमकानेवाला और दीर्घ एवं मृदु कर्ण दिखानेवाला कुत्ता जिसके घर पाला जाता, अवि-लम्ब ही उसको सम्पत्तिका अभ्युदय आता है। इसी प्रकार जिस कुक्कुरोंके भी केवल सम्मुखस्थ वाम पदमें छह तथा अपर तीनमें पांच पांच नख आते, चक्षु मल्लिका पुष्पकी भांति सुहाते, पुच्छ वक्र पाते और कर्ण पिङ्गल वर्ण एवं दीर्घ दिखाते, उसके प्रतिपालकको वृद्धिके भी दिन आजाते हैं। (वृहत्संहिता)

चिकित्सा—पूर्वकालको भारतवर्षमें अश्वगजादिकी भांति कुक्कुरकी चिकित्सा-पद्धति प्रचलित थी। शार्ङ्गधर-पद्धतिमें इस प्रकार लिखा है*—

कुक्कुरके मस्तकमें क्षत होनेसे उस पर दधि डाल अन्य कुक्कुरसे सात बार चटाना चाहिये।

वरुणफल हाथसे दबा उसका रस व्रणस्थानमें लेपन करनेसे शोथ और कृमि नष्ट होता है।

शाकवृक्ष (सागवन)-का अङ्गार (कोयला) चूर्ण कर घृतके साथ तीन दिन पिलानेसे अतिसार मिट जाता है। औषधसेवन काल पर्यन्त कुत्तेको पानी न पिलाना चाहिये।

फिर मत्त कुक्कुरके काटने पर कर्णिका, रसुन (लह-सुन), वीरगुप्ता, त्रिकटु (सोंठ, मिर्च, पीपल), माधवी, षष्टीधान्य, गुड़ और दुग्ध एकत्र कर कुत्तेको पिलाते हैं।

श्यामालता और सुरभिजिह्वा मधुके साथ पीस प्रलेप लगानेसे प्राणिमात्रके नख-दन्ताघातका विष नष्ट होता है।

कुत्तेको जुलाब देनेके लिये १से २ ड्राम तक कुस-ब्बर, रेवाचीनी, सोनामुखी अथवा जायफलका तेल काममें लाना चाहिये।

कण्डू (खुजली) और पिच्चट (चमड़ेकी बीमारी) होनेसे कुत्तेको घोल (मट्ठा) पिलाते हैं।

कर्णरोग लगनेसे प्रथम कोष्ठपरिष्कारके लिये कुत्तेको जुलाब देना चाहिये। फिर ४ औंस गुलाब जलमें आधे ड्रामको बराबर 'शुगर अव लेड' मिलाकर बाह्य प्रयोग किया जाता है।

ज्वररोगमें रेचन (जुलाब), मृगीरोगमें दो दो घण्टे पीछे १०से २० बूंद तक टिञ्चर डिजिटेलिस और उदरामयमें एक चम्मच एरण्डतैल १ या २ ड्राम लडेनम मिलाकर दो एक दिनके अन्तर प्रयोग किया जा सकता है।

कुत्तेका जलातङ्करोग बहुत भयानक होता है। उस अवस्थामें कुत्ता उन्मत्त हो जिसे काट खाता, उसको भी बहुधा जलातङ्क हो जाता है। जलातङ्क देखो।

---

*"मस्तके तु क्षते जाते दधि तत्र प्रदाय च।
लेहयेत् कुक्कुरैरन्यैः सप्तवारात् सिद्ध्यति ध्रुवम्॥
वरुणस्य फलाद्धस्तपीड़ितात् गलितो रसः।
सव्रणे पूरिते शोथं कृमिजालं निपातयेत्॥
अङ्गारः शाकवृक्षस्य चूर्णितः सघृतैस्त्र्यहम्।
दत्तैर्नश्यत्यतीसारस्तेषां पानीयवारणात्॥
कर्णिका-रसनौ वीरगुप्ता त्रिकटुमाधवी।
षष्टीधान्यं गुड़क्षीरं दष्टो मत्तशुना पिबेत्॥
श्यामासुरभिजिह्वा च निःशेषं प्राणिसम्भवम्।
नखदन्तविषं हन्ति मधुना सह लेपतः॥"
(शार्ङ्गधर-पद्धति पशुलक्षण तथा पशुचिकित्सा, ८४)

मांस—पुराण पढ़नेसे समझा गया है कि ब्रह्मर्षि विश्वामित्रने दुर्भिक्ष काल कुक्कुरका पृष्ठमांस आहार किया था। काले कुत्तेका मांस चीनजातिमें अति सुखाद्यकी भांति आहृत होता है।

पुराणमें लिखा है—यमराजके निकट कई कुत्ते रहे। उनका नाम सारमेय था। संस्कृतवित् पाश्चात्य पण्डितोंके मतसे 'सारमेय' युनानियों (ग्रीकों)-के प्राचीन पुस्तकमें 'हारमेयस्' वा 'हारमेस्' नामसे वर्णित हुआ है। वह ग्रीक (यूनानी) देवगणके दूत हैं।

सरमा और सारमेय देखो।

पहले हिन्दू 'वलिवैश्व' नामके कल्पानुष्ठान काल यमके कुक्कुरको पिण्ड प्रदान करते थे।

"श्वानौ द्वौ श्यामसवलौ वैवस्वतकुलोद्भवौ।
ताभ्यां पिण्डं प्रयच्छामि स्यातामेतावहिंसकौ॥"

३ मुनिविशेष। ४ राजविशेष, एक राजा। वह अनकराजके पुत्र थे।

कुक्कुरद्रु (सं॰ पु॰) कुक्कुरस्तद्गन्धयुक्तः द्रुः, मध्यपदलो॰। मृदुच्छद, कुकरौंधा। उसका संस्कृत पर्याय—कुकुन्दर, पीतपुष्प, कुक्कुरद्रुम, मृदुच्छद और ताम्रचूड़ है।

मदनविनोदनिघण्टुके मतमें वह कटु, तिक्त और ज्वर, रक्त तथा कफनाशक है।

भावप्रकाशके मतानुसार उसको कच्ची जड़ मुखमें धारण करनेसे मुखशोष मिट जाता है। अपर वैद्यक मतमें कुक्कुरद्रु सङ्कोचक, वेदनानिवारक और आमरक्त, उदरामय, ग्रहणी, अर्श, रक्तातिसार, ज्वर तथा रक्तदोषनाशक होता है। कुकरौंधा देखो।

कुक्कुरमेचुका (सं॰ स्त्री॰) गोरचतण्डुली, गुलशकरी, गंगेरन।

कुक्कुरसेण्डुक (सं॰ पु॰) कुक्कुरमेचुका देखो।

कुक्कुरी (सं॰ स्त्री॰) कुक्कुर जातित्वात् ङीष्। कुक्कुर जातिकी स्त्री, कुतिया। उसका संस्कृत पर्याय-सरमा, श्वानी, सारमेयी, शुनी और भषी है।

कुक्कुवाक् (सं॰ पु॰) कुक्कुरस्य वाक् शब्द इव शब्दो यस्य, बहुव्री॰। सारङ्गमृग, किसी किस्मका हिरण।

कुक्कोक—रतिरहस्य नामक ग्रन्थप्रणेता।

कुक्रिय (सं॰ त्रि॰) कुकुत्सिता क्रिया यस्य, बहुव्री॰। कुकर्मान्वित, बदफेल, खराब काम करनेवाला।

कुक्रिया (सं॰ स्त्री॰) कु कुत्सिता क्रिया, कर्मधा॰। दुष्कार्य, बुरा काम।

कुच (सं॰ पु॰) कुष् निष्कर्षे स किच्च। उन्दिगुधिकुषिभ्यश्च उण् ३। ६८। जठर, पेट, कोख।

कुक्षि (सं॰ पु॰) कुष् क्सि। प्लुषिकुषिशुषिभ्यः क्सिः। उण् ३। १५५। १ जठर, पेट, कोख। २ दानवविशेष।

"कुक्षिस्तु राजन् विख्यातो दानवानां महाबलः।"

(भारत, १।६७।५७)

३ मध्यभाग, बीचका हिस्सा।

"ततः सागरमासाद्य कुक्षौ तस्य महोर्मिणः।"

(भारत, वन, ७९ अ॰)

४ पुत्र और कन्या, औलाद। ५ बालिका नामान्तर। ६ राजविशेष, एक राजा। ७ प्रियव्रत और काम्यका नामान्तर। ८ इक्ष्वाकुके पुत्र और विकुक्षिके पिता। (रामायण, अयोध्या॰११० सर्ग)

९ गुहा, खोह। १० रामायणोक्त एक जनपद (बसती)

"पुन्नागगहनं कुक्षिं वकुलोद्दालकाकुलम्।"

(किष्किन्ध्या, ४२। ७)

मध्यभारतमें मालवेके अन्तर्गत कुक्सी नामक एक नगर है। सम्भवतः वही स्थल पूर्वकालको कुक्षि जनपद नामसे प्रसिद्ध था। वर्तमान कुक्सी नगर चारो ओर मृण्मय प्राचीर एवं गभीर गड़-खातसे वेष्टित और अक्षा॰ २२° १६′ उ॰ तथा द्राघि॰ ७४° ५१′ पू॰ पर अवस्थित है।

कुक्षिभेद (सं॰ पु॰) ग्रहणका एक मोक्ष। वराहमिहिरने अपनी वृहत्संहितामें ग्रहणमोक्षके ७ भेद लिखे हैं। कुक्षिभेद भी दो प्रकारका होता है दक्षिण और वाम। दक्षिण ओरसे मोक्ष होना दक्षिण कुक्षिभेद और वाम ओरसे मोक्ष होना 'वामकुक्षिभेद' कहाता है।

कुक्षिम्भरि (सं॰ त्रि॰) कुक्षिं बिभर्ति, कुक्षि-भृ-खिमुम् च। आत्मम्भरि, पेट पालनेवाला।

कुक्षिरन्ध्र (सं॰ पु॰) कुक्षौ रन्ध्रं छिद्रं यस्य, बहुव्री॰। नल, चोंगा।

कुक्षिशूल (सं० क्ली०-पु०) शूलरोगविशेष, कोखका दर्द। सुश्रुतमें उसका लक्षणादि इसप्रकार लिखा है—'वायुके कुपित हो जठराग्नि दूषित करने पर भुक्त द्रव्यका भली भांति परिपाक नहीं होता। निःश्वास निकालनेमें कष्ट समझ पड़ता है। अपक्व मलभेद हो जाता है। कुक्षिमें अत्यन्त वेदना बढ़ती है। कुक्षि शूल ऐसे ही रोगका नाम है।'

कुक्षेषु (सं० पु०) भागवतोक्त रुद्राश्वके पुत्र।

(भागवत, ८।२०।४)

कुखा—पार्वतीय जातिविशेष, एक पहाड़ी जाति। पञ्जाब प्रदेश, काश्मीर और सिन्धुके मध्यस्थित पर्वत पर कुखा लोग रहते हैं।

कुखेत (हिं० पु०) कुत्सित क्षेत्र, बुरी जगह, कुठांव।

कुख्यात (सं० त्रि०) कु कुत्सित-रूपेण ख्यातः, ३-तत्। निन्दित, बदनाम, जिसे सब कोई बुरा बताये।

कुख्याति (सं० त्रि०) कु कुत्सिता ख्यातिः, कर्मधा०। निन्दा, बदनामी, हंसौवा।

कुगठन (हिं० स्त्री०) कुत्सित रूप, बुरी बनावट।

कुगणी (सं० त्रि०) कु कुत्सितः गणः समूहो यस्य, बहुव्री०। कुसङ्गी, बुरे आदमियोंको साथ रखनेवाला। कु कुत्सित-रूपेण गणः गणना यस्य। कुत्सित लोगोंमें गिना जानेवाला, जो बुरे आदमियोंमें समझा जाता हो

कुगति (सं० स्त्री०) दुर्दशा, बुरी हालत।

कुगहनि (हिं० स्त्री०) कुत्सित ग्रहण, बुरी अड़।

कुगो (सं० पु०) कु कुत्सितः गौः वृषभः कर्मधा०। दुष्ट-गो, बुरा बैल।

कुग्रह (सं० पु०) कु अशुभकारी ग्रहः कर्मधा०। अशुभ फल प्रदान करनेवाला या खराब ग्रह।

कुग्राम (सं० पु०) कु कुत्सितः ग्रामः, कर्मधा०। कुत्सित ग्राम, खराब मौजा, बुरा गांव।

"कुग्रामवासः कुजनस्य सेवा।" (उद्भट)

कुघा (हिं० स्त्री०) दिक्, तरफ, ओर।

कुघात (हिं० स्त्री०) १ अशुभ अवसर, बुरा मौका। २ कपट, बुरा दांव।

कुघोषण (सं० क्ली०) कु कुत्सितं घोषणं ख्यातिः, कर्मधा०। कुख्याति, बदनामी।

कुङ्कुम (सं० क्ली०) कुकयति आदीयते असौ, कुक-उमक् निपातनात् मुम्‌च। १ गन्धद्रव्यविशेष, जाफरान, केशर। उसका संस्कृत पर्याय—काश्मीरजन्म, अग्निशिख, वर, वाह्लीक, पीतन, रक्त, सङ्कोच, पिशुन, धीर, लोहित-चन्दन, चारु, वरवाह्लिक, रक्तचन्दन, अग्निशेखर, असृक्, काश्मीरज, पीतक, काश्मीर, रुधिर, शठ, शोणित, घुसृण, वरेण्य, अरुण, कालेयक, जागुड़, कान्त, वह्निशिख, केशर-वर, गौर, केसर, हरिचन्दन, खल, रज, दीपक, लोहित, सौरभ और चन्दन है। वैद्यकमतसे वह—सुगन्ध, तिक्त एवं कटुरस, उष्ण-वीर्य, रुचिकारक, कान्तिवर्धक और कास, वायु, कफ, कण्ठरोग, ऊर्ध्व शूल तथा विषदोषनाशक है। (राजनि) कुङ्कुम—विरेचक और विवर्णता तथा कण्डु-नाशक है। (राजवल्लभ) वह स्निग्ध, बलकारक और शिरोरोग, कृमि, व्यङ्ग एवं त्रिदोषनाशक होता है। (भावप्रकाश) कुङ्कुम त्वकदोषनिवारक हैं। (रत्नावली)

वैद्यकग्रन्थ भावप्रकाशमें लिखा है—'देशभेदसे कुङ्कुम तीन प्रकारका होता है। जिसका केशर सूक्ष्म, रक्तवर्ण एवं पद्मकी भांति गन्धविशिष्ट पाया जाता, वह सर्वापेक्षा उत्तम कहाता है। वाह्लीकदेश-जात कुङ्कुम सूक्ष्मकेशर रहता है। फिर भी उसका वर्ण पाण्डु और गन्ध केतकी पुष्पकी भांति होता है। वह मध्यम है। पारसीक (ईरानी) कुङ्कुम स्थूल-केशर, ईषत् पाण्डुवर्ण और मधुकी भांति गन्धयुक्त होता है। वह सर्वापेक्षा निकृष्ट है।' केशर देखो।

२ कुङ्कुमवृक्ष, केशरका पेड़। ३ बौद्धशास्त्रवर्णित बोधिद्रुमका पार्श्ववर्ती एक स्तूप।

कुङ्कुमताम्र (सं० त्रि०) कुङ्कुमवत् ताम्रं ताम्रवर्णम्, उपमि०। १ कुङ्कुमकी भांति रक्तवर्णयुक्त, जाफरान जैसा सुर्ख, केशरकी तरह लाल। (क्ली०) २ कुङ्कुमकी भांति रक्तवर्ण, जाफरान्-जैसी सुर्खी, केशरकी तरह लाल रंग।

कुङ्कुमपाण्ड्य—एक पाण्ड्यराज। वह चेलवंशान्तक पाण्डुके पुत्र थे।

कुङ्कुमरेणु (सं० पु०) कुङ्कुमानां रेणुः, ६-तत्। कुङ्कुम-गुण्डक, केशरकी धूला।

कुङ्कुमशालि (सं॰ पु॰) शालिधान्यविशेष, केसरिया धान। वह मधुर, शीतल और रक्तपित्तातिसारघ्न होता है। (राजनिघण्टु)

कुङ्कुमा (सं॰ स्त्री॰) शाल्मलिवृक्ष, सेमरका पेड़।

कुङ्कुमाक्त (सं॰ त्रि॰) कुङ्कुमेन अक्तं लेपितम्, ३-तत्। कुङ्कुमानुलेपनयुक्त, केसर लगाये हुवा।

कुङ्कुमागुरुक (सं॰ पु॰) पीतरक्त हरिचन्दन। वह शीत, तिक्त, स्वर्गिभोग्य, मनुष्योंको दुर्लभ और पित्त, श्रम और शोषनाशक होता है। (वैद्यकनिघण्टु)

कुङ्कुमाङ्क (सं॰ क्ली॰) कुङ्कुमस्य अङ्कं चिह्नम्, ६-तत्। १ कुङ्कुमका चिह्न, जाफरानका दाग, केसरका धब्बा। (त्रि॰) २ कुङ्कुम चिह्नयुक्त, जाफरानका दाग रखनेवाला।

कुङ्कुमाद्यतैल (सं॰ क्ली॰) तैलविशेष, केसरका तेल। उसमें १ शरावक तेल और क्वाथार्थ—कुङ्कुम, रक्त चन्दन, लाचा, मञ्जिष्ठा, यष्टिमधु, कृष्णागुरु, वीरणमूल, पद्मकाष्ठ, नीलोत्पल, वटाङ्कुर, पर्कटीशुङ्गा, पद्मकेशर और दशमूल एक एक पल पड़ता है। उक्त द्रव्यको १६ शरावक जलमें उबाल ४ शरावक शेष रहनेसे उतार लेना चाहिये। उक्त तैलको लगानेसे नीलिका पिड़कादि रोग हटता और शरीर काञ्चनोपम निकलता है (रसरत्नाकर)

कुङ्कुमाद्रि (सं॰ पु॰) कुङ्कुमस्य आकारो अद्रिः, मध्यपदलो॰। काश्मीर देशका एक पर्वत। वहां बहुत कुङ्कुमवृक्ष उत्पन्न होते हैं।

कुङ्कुमारड़ कुङ्कुमताव देखो।

कुङ्कुमी (सं॰ स्त्री॰) कुङ्कुमवर्णो ऽस्त्यस्याः, कुङ्कुम-अच्-ङीष्। महाज्योतिष्मती लता, रतनजोत।

कुङ्कनी (सं॰ स्त्री॰) कुङ्कुमवर्णो ऽस्त्यस्याः, कुङ्कुम-अच्-ङीष् पृषोदरादित्वात् साधुः। कुङ्कुमी देखो।

कुच (सं॰ पु॰) कुचति सङ्कुचति, कुच-क। १ स्तन, पिस्तां। स्त्रियोंके यौवनके प्रारंभ होनेसे कुचकी वृद्धि होती है। किसी किसी स्मृतिशास्त्रमें कुचोद्गमनसे पहले ही स्त्रीको व्याह देनेका विधि कहा है। बारह वर्ष तक ही कुच उद्गमनका पूर्व काल सामान्यतः लिया जाता है। स्तन देखो।

२ जातिविशेष, कोई कौम। कोच देखो। (त्रि॰) ३ सङ्कुचित, सिकुड़ा हुवा।

कुचकलिका (सं॰ स्त्री॰) कुचः कलिका इव, उपमि॰। पद्मादि मुकुल तुल्य कुच, गुलाब वगैरहके गुच्छे-जैसे पिस्तां।

कुचकार (हिं॰ पु॰) मेषभेद, कुलञ्जा भेड़। वह गिलगिटके उत्तर कुलञ्जामें मिलता और पामीरमें भी देख पड़ता है।

कुचकुङ्कुम (सं॰ क्ली॰) कुचानुलिप्तं कुङ्कुमम्, मध्यपदलो॰। कुच पर अनुलिप्त कुङ्कुम, पिस्तां पर लगा हुवा जाफरान्।

कुचकुचवा (हिं॰ पु॰) पेचक, उल्लू, कुचकुच बोलनेवाली चिड़िया।

कुचकुचाना (हिं॰ क्रि॰) १ छेदते रहना, बार बार कोचना। २ अधिक न कुचलना।

कुचकुम्भ (सं॰ पु॰) कुचः कुम्भ इव, उपमि॰। कलसकी भांति उच्च कुच, सेव, जैसे पिस्तां।

कुचकोरक (सं॰ पु॰-क्ली॰) कुचः कोरक इव, उपमि॰। पद्मादि मुकुलकी भांति कुच, गुच्छे-जैसे पिस्तां।

कुचक्र (सं॰ पु॰) कु कुत्सितः चक्रः, कर्मधा॰। कुमन्त्रणा, बुरा फेर।

कुचक्री (सं॰ त्रि॰) कुत्सितश्चक्रो चक्रोऽस्यास्ति, कुचक्र-इनि। १ कुमन्त्रणाकारी, बुरे फेरमें पड़नेवाला। २ दूसरोंको कुमन्त्रणा देनेवाला, जो औरोंको बुरी सलाह देता हो।

कुचण्डिका (सं॰ स्त्री॰) कुत्सिता चण्डिका विकारकारित्वात् कोपना इव, उपमि॰। मूर्वा नामक लताविशेष, एक बेल।

कुचण्डी, कुचण्डिका देखो।

कुचतट (सं॰ क्ली॰) कुचस्तटमिव विशालत्वात्, उपमि॰। १ विस्तृत कुच, बड़े पिस्तां। २ कुचका कोई स्थान।

कुचतटाग्र (सं॰ क्ली॰) कुचतटस्य अग्रम्, ६-तत्। कुचाग्र, चूचक, टिभनी।

कुचना (हिं॰ क्रि॰) १ सङ्कुचित होना, सिकुड़ना। २ छिदना, लगना।

कुचनी (हिं॰ स्त्री॰) कोचजातीय स्त्री, कोचोंकी औरत।

कुचनीपाड़ा—कोचविहार, कोचजातीय स्त्रियोंके रहनेका स्थान। अपवाद है कि कुचनीपाड़ाकी स्त्रियोंके साथ शिव व्यभिचारमें लिप्त थे।

कुचन्दन (सं० क्लो०) कु गन्धहीनत्वात् कुत्सितं चन्दनम् कर्मधा०। १ रक्तचन्दन। २ पत्राङ्ग, बक्कम। ३ कुङ्कुम, जाफरान, केशर। ४ वृक्षविशेष, एक पौदा।

कुचफल (सं० पु०) कुच इव फलं यस्य, बहुव्री०। १ दाडिम्बवृक्ष, अनारका पेड़। २ कपित्थवृक्ष, कैथेका पेड़। (क्लो०) कुचवत् फलम्, कर्मधा०। ३ दाडिम्बफल, अनार।

कुचमर्दन (सं० पु०) शणभेद, किसी किस्मका पटुवा। वह रज्जु बनानेमें व्यवहृत होता है।

कुचमुख (सं० क्लो०) कुचस्य मुखं अग्रभागः, ६-तत्। कुचका अग्रभाग, पिस्तांका अगला हिस्सा।

कुचर (सं० त्रि०) कु कुत्सितं चरति, कु-चर-अच्। १ परकी निन्दा करते घूमनेवाला, जो दूसरेकी बुराई करता फिरता हो। २ कुत्सितकर्मकर्ता, बुराकाम करनेवाला।

"प्र तद्विष्णुः स्तवते वीर्येण मृगो न भीमः कुचरो गिरिष्ठाः।"
(ऋक् १।१५४।२)

'कुचराः शत्रु वधादि कुत्सितकर्मकर्ता।' (सायण)

३ कुस्थानमें विचरणकारी, बुरी जगहमें फिरनेवाला।

"दृष्ट्वा त्वादित्यमुद्यन्तं कुचराणां भयं भवेत्।"
(भारत, १४।३८।१३)

कुचरा (हिं० पु०) झाडू, बढ़नी।

कुचर्या (सं० स्त्री०) कुत्सिता चर्या आचरणम्, कर्मधा०। १ निन्दनीय आचरण, बुरी चाल। २ नीच पुरुषसेवा, कमीने शख्सकी खिदमत।

"शय्यासनमलङ्कारं कामं क्रोधमनार्जवम्।
द्रोहभावं कुचर्याञ्च स्त्रीभ्यो मनुरकल्पयत्॥" (मनु, ९।१७)

कुचल—वङ्गदेशवासी ब्राह्मजाति-वैदिकोंका एक गोत्र।

कुचलना (हिं० क्रि०) १ रौंदना, दबाना

कुचला (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पौदा। (Strychnos colubrina) उसे मलयमें मोदीरक्कनीरम, कर्णाटमें गोवागरी लकेई, माड़वारीमें कजारवल और तेलगुमें नागमुसदि कहते हैं। वह पश्चिमदक्षिण प्रायोद्वीपमें एक लता है। कोङ्कणसे कोचिन तक कुचला प्रायः पाया जाता है। उसके पत्र पानजैसे हरिद्वर्ण और आभाविशिष्ट होते हैं। पुष्प दीर्घ, सूक्ष्म और श्वेतवर्ण लगते हैं। पुष्प पतित होनेपर नारङ्गी जैसे रक्त और पीतवर्ण फल आते हैं। उनमें पीतवर्ण सार और बीज रहता है। सिंहलमें कुचलाकी जड़ पानी और शराबमें कुचलकर अन्तर्ज्वरके रोगीको खिलायी जाती है। वह प्रत्येक विष और रोगका महौषध है। अपने आक्रमणमें सर्पद्वारा दष्ट होने पर नकुल कुचलेकी ही जड़को खाता है। कुचलेकी लकड़ी बलप्रद होती है। उसमें विष रहता है। इसलिये कुचलेको बड़ी सावधानतासे व्यवहार करना चाहिये। विषाक्त कीटके काटने पर कुचला बड़ा उपकार करता है। उसका काष्ठ बहुत सुदृढ़ रहता और उसमें घुन नहीं लगता। उससे शकट, हल आदि बनाये जाते हैं। कुचलेका बीज गोल और चपटा होता है। उसपर धूसरवर्ण सूक्ष्मत्वक् चढ़ी रहती है। वह चिद्रल है। अधिक कठोर रहनेसे उसको तोड़ना या पीसना सरल नहीं।

कुचली (हिं० स्त्री०) दन्तभेद, एक दांत। वह राजदन्त और डाढ़के बीच होती है। नोकदार और बड़ी रहनेसे कुचली खाद्यको कुचल डालती है।

कुचविहार, कोचविहार देखो।

कुचाग्र (सं० क्लो०) कुचस्य अग्रम् ६-तत्। स्तनका अग्रभाग, टिंभनी।

कुचाङ्गेरी (सं० स्त्री०) कुत्सिता चाङ्गेरी, कर्मधा०। चुक्र, चूका, किसी किस्मका खट्टा साग।

कुचाल (हिं० स्त्री०) कुत्सित आचरण, बुरी आदत।

कुचाली (हिं० वि०) कुत्सित आचरणयुक्त, बदचलन, बुरी चाल चलनेवाला।

कुचावन—राजपूतानाके जयपुर राज्यकी एक जागीर और नगरी। वह अक्षा० २७° ६´ उ० और देशा० ७४° ५७´ पू० पर सांभर जिलेमें अवस्थित है। योधपुरष्टेशन कुचावनसे ८ मील उत्तर लगता है। लोकसंख्या दशहजारसे ऊपर है। वहां बन्दूकें और तलवारें

बनती हैं। किला खूब मजबूत है। उसके भीतर कई प्रासाद खड़े हैं। नगरसे दक्षिण ओर दो स्थानमें सैन्धव स्वयं जम जाता है। किन्तु परिमाण अल्प रहनेसे लोग संग्रह नहीं करते। जागीरमें १५ गांव हैं। ५४०००) रु० वार्षिक आमदनी होती है। कुचावनके ठाकुर मरतिया राठौर हैं, यहां सेठ चैनसुख गम्भीरमलजीकी तरफसे जिनेश्वर पाठशाला स्थापित है, जिसमें विना शुल्क शिक्षा और परदेशी छात्रोंको भोजनादि व्यय भी दिया जाता है।

कुचाह (हिं० स्त्री०) अशुभ विषय। खराब बात।

कुचि (सं० पु०) अष्टमुष्टिपरिमित मान, आठ मूठकी नाप।

कुचिक (सं० पु०) कुच बाहुलकात् इकन्। मत्स्यविशेष, एक मछली। उसके काटनेसे गाय मर जाती है। २ ईशान दिक्‌भागका देशविशेष, एक मुल्क। कुचिक सम्भवतः कोचविहार समझ पड़ता है।

"भल्ला-पलोल-जटासुर-कुनठ-खस-घोष-कुचिकाख्याः।" (बृहत्संहिता)

कुचिकर्ण (सं० पु०) कर्णरोगभेद, कानकी एक बीमारी। उसमें वातसे अभ्यन्तर पर शष्कुली सङ्कुचित हो जाती है।

कुचिकित्सक (सं० पु०) कु कुत्सितः चिकित्सकः, कर्मधा०। निन्दित चिकित्सक, बुरा हकीम।

कुचिन्ता (सं० स्त्री०) कु कुत्सिता चिन्ता, कर्मधा०। बुरी चिन्ता, खोटी फिक्र।

कुचिया (हिं० स्त्री०) क्षुद्रखण्ड, छोटी टिकिया।

कुचिया दांत (हिं० पु०) दंष्ट्रा, डाढ, कुचलनेवाला दांत।

कुचिरा (सं० स्त्री०) नदीविशेष, एक दरया।

(भारत, भीष्म, ९।२६)

कुचिल (सं० पु०) कुचेल, कुचला।

कुचिलना, कुचलना देखो।

कुचिला, कुचला देखो।

कुचील (हिं० वि०) मलिनवस्त्रधारी, मला कपड़ा पहने हुवा।

कुचुटक (सं० पु०) जलशाकविशेष, पानीमें होनेवाली एक सब्जी।

कुचुमार—एक प्राचीन कामशास्त्रप्रणेता। वात्स्यायनने अपने कामसूत्रमें इनका वचन उद्धृत किया है।

कुचेल (सं० त्रि०) कुत्सितं चेलं वस्त्रं यस्य, बहुव्री०। १ कुत्सित वस्त्र पहने हुवा, जो मैला कपड़ा पहने हो। (क्ली०) कुत्सितं चेलम्, कर्मधा०। २ जीर्ण वस्त्र, मैला या पुराना कपड़ा।

"कपालं वृक्षमूलानि कुचेलमसहायता।
समता चैव सर्वस्मिन्नेतन्मुक्तस्य लक्षणम्॥" (मनु, ६।४४)

३ कनकफलवृक्ष, कुचला।

कुचेला (सं० स्त्री०) कुचा सङ्कुचा इला भूमिर्निद्रा वा यस्याः, बहुव्री०। १ विद्धकर्णी। २ कनकटिया, आकनादि।

कुचेलिका, कुचेली देखो।

कुचेली (सं० स्त्री०) कुचेल-ङीष्। पाठा, आकनादि।

कुचेष्ट (सं० त्रि०) कुत्सिता चेष्टा यस्य, बहुव्री०। निन्दित कार्यकारक, बुरा फिराक रखनेवाला।

कुचेष्टा (सं० स्त्री०) कु कुत्सिता चेष्टा, कर्मधा०। १ दुष्ट चेष्टा, बुरा फिराक। २ दुष्ट कार्य, खराब काम।

कुचैन (हिं० स्त्री०) कष्ट, तकलीफ।

कुचैला (हिं० वि०) १ मलिन वस्त्र रखनेवाला, जो मैला कपड़ा पहने हो। २ मलिन, गन्दा।

कुचोद्य (हिं० पु०) असम्बद्ध प्रश्न, ऊट पटांग सवाल।

कुच्ची (हिं० स्त्री०) पात्रविशेष, छोटा कूजा, कुप्पी। कुच्ची मट्टीकी लम्बी लम्बी बनती है। तेली उसे तेल नापनेमें व्यवहार करते हैं।

कुच्चक (सं० क्ली०) कोः पृथिव्याः दुःखं द्यति दर्शनप्राणादिना लुनाति, कु-छो-क। १ कुमुद पुष्प, कोकाबेली, बघोला। २ श्वेतपद्म, सफेद कंवल।

कुच्छाय (सं० क्ली०) शरीर, जिस्म।

कुच्छुट (सं० पु०) बब्बूल वृक्ष, बबूलका पेड़।

कुछ (हिं० वि०) १ किञ्चित, थोड़ा। (सर्व०) २ कश्चित्, कोई। (क्रि० वि०) ३ ईषत् परिमाणमें, किसी कदर।

कुज (सं० पु०) कोः पृथिव्याः जायते, कु-जन-ड। १ मङ्गल ग्रह, मिरीख। २ नरकासुर। ३ वृक्ष, पेड़। (क्ली०) ४ पद्म, कंवल।

कुजन (सं० पु०) कुः कुत्सितो जनः, कर्मधा०। दुष्ट व्यक्ति, खराब आदमी।

कुजननी (सं० स्त्री०) कुत्सिता जननी, कर्मधा०। कुमाता, अपनी औलादपर मुहब्बत न रखनेवाली मा।

कुजप (सं० त्रि०) कुत्सितं जपति, कु-जप-अच्। कुत्सित जपकारक, उलटी माला फेरनेवाला।

कुजम्भन (सं० पु०) कोः पृथिव्या जम्भनमिव अत्र, बहुव्री०। सन्धिचोर, सेंध लगाकर चोरी करनेवाला चोर।

कुजम्भल (सं० त्रि०) कोः पृथिव्याः को वा जम्भलः, ६ वा ७-तत्। कुजम्भन देखो।

कुजम्भ (सं० त्रि०) कुत्सितो जम्भो दन्तोऽस्य। १ कुत्सित दन्तयुक्त, बुरे दांतवाला। (पु०) २ असुरविशेष, वह प्रह्लादके पुत्र थे।

कुजम्भिल (सं० त्रि०) सन्धिचोर, सेंध लगानेवाला।

कुजा (सं० स्त्री०) कोः पृथिव्या जायते, कु-जन-ड-टाप्। १ सीतादेवी, जानकी। कालिकापुराणमें उनका जन्म-विवरण इस प्रकार लिखा है—

'राजर्षि जनकने पुत्रकामनासे गौतम और शतानन्द ऋषिको पौरोहित्यमें नियुक्त कर एक यज्ञानुष्ठान किया। उसके द्वारा यज्ञस्थलसे दो पुत्र और एक कन्याने जन्म लिया। किन्तु कन्या भूमिमें ही अन्तर्हित हो रही। उस समय देवर्षि नारदने उक्त यज्ञस्थलको हल द्वारा कर्षण करानेका उपदेश दिया था। तदनुसार भूमि कर्षण कर राजर्षि जनकने सद्योजाता सीतादेवीको प्राप्त किया।' (कालिकापु० ३७ अ०)

कुजाः पृथिवीजाः वृचा आश्रयत्वेन सन्ति अस्याः। २ कात्यायनीदेवी। नवपत्रिका आश्रयरूप कल्पित होनेसे कात्यायनी देवीका कुजा नाम पड़ा है।

कुजाति (सं० स्त्री०) नीच जाति, कमीना कौम।

कुजाष्टम (सं० पु०) कुजो मङ्गलग्रहो अष्टमो यत्र, बहुव्री०। ज्योतिःशास्त्रोक्त जन्म लग्नसे अष्टम स्थानस्थित मङ्गलग्रहरूप योगविशेष, आठवें मङ्गलका योग। कुजाष्टम योग आनेसे अन्यान्य समस्त शुभयोग भी विनष्ट हो जाता है। किन्तु मङ्गलग्रह यदि अन्तगत, नीचगत वा शत्रु स्थान-गत रहता, तो कोई दोष नहीं लगता।

"सर्वगुणान् निहन्त्याशु विलग्नादष्टमः कुजः।
अन्तगे नीचगे भौमे शत्रुचेत्रगतेऽपि वा।
कुजाष्टमोद्भवो दोषो न किञ्चिदपि विद्यते।" (ज्योतिष)

कुजिया (हिं० स्त्री०) पात्रविशेष, छोटा कुजा या घरिया।

कुजून (हिं० स्त्री०) १ कुसमय, बुरा वक्त। २ अतिकाल, देर।

कुज्झटि (सं० स्त्री०) कौजति अपहरति सूर्यप्रकाशम् कुज क्विप् न कुलम्; झट् सङ्घाते इन् झटिः, कुज चासौ झटिश्चेति, कर्मधा०। कुज्झटिका, कुहासा। उसका संस्कृत पर्याय—धूममहिषी, रतान्धी, कुहेलिका धूमिका और नभोरेणु है। राजवल्लभके मतानुसार वह—रूक्ष, तमोगुण-बहुल और कफ तथा पित्तजनक है।

कुज्झटिका (सं० स्त्री०) कुज्झटि स्वार्थे कन् टाप्। कुज्झटि, कुहासा।

कुज्झटी कुज्झटि देखो

कुज्झटिका, कुज्झटि देखो।

कुज्झिका, कुज्झटि देखो

कुज्या (सं० स्त्री०) सिद्धान्तशिरोमणिकथित गोलाकार अर्धचेत्रके अर्धभागरूप चापकी साधनाङ्गरूप पञ्चज्याके अन्तर्गत एक जीवा। जीवा देखो।

"कुज्या भुजोऽयाकर्णं इत्यचचेत्रवयं प्रसिद्धम्।

(सूर्यसिद्धान्त टीका)

कुञ्च—युक्त प्रान्तके आगरा विभागका एक नगर। वह अक्षा० २६° २ उ० और देशा० ७९°०४ पू० पर अवस्थित है। कुञ्च जिला वृटिश गवर्नमेण्टके अधिकारमें रहते भी १८०५ ई०को सन्धिके अनुसार होलकरकी कन्या भीमा बाईको जागीरमें दिया गया था। तदवधि वह भीमा बाईके उत्तराधिकारियोंके ही हाथमें है। वही राजस्व आदि भी लेते हैं। किन्तु शासनकर्तृत्व वृटिश गवर्नमेण्टके ही अधीन है। उसे कोंच भी कहते हैं।

कुञ्चन (सं० क्ली०) कुञ्चति अनेन, कुञ्च करणे ल्युट्। १ नेत्ररोग विशेष, आंखकी एक बीमारी। उक्त रोग नेत्रवर्त्ममें होता है। वातादि दोष कुपित होनेसे चक्षु वर्त्म सङ्कुचित हो जाता और रोगी अपनी दृष्टिशक्ति गंवाता है। (माधवनिदान)

२ पादरोगभेद, पैरकी एक बीमारी। ३ सङ्कोच, सिकोड़।

कुञ्चफला (सं० स्त्री०) कुञ्चं कुञ्चितं फलं यस्याः, बहुव्री०। कुष्माण्डी लता, कुम्हिड़ा।

कुञ्चि (सं० पु०) कुनच्-इन्। अष्ट मुष्टि परिमाण, आठ मूंठकी नाप।

कुञ्चिका (सं० स्त्री०) कुनच-ख़ुल-टाप् इत्वम्। १ गुञ्जा, घुंघची। २ कुञ्चि, बांसकी डाल। ३ चाबी। ४ कृष्ण जीरक, काला जीरा। ५ मेथिका, मेथी। ६ मत्स्यविशेष, एक मछली। ७ वचा, बच।

कुञ्चित (सं० त्रि०) कुनच्-क्त। १ संकुचित, सिकुड़ा हुवा। २ वक्र, टेढ़ा। ३ घूंघर वाला। ४ अनावृत, बेढ़ञ्जत। (क्ली०) ५ तगर पुष्प। ६ पिण्डीतगर।

कुञ्ची (सं० स्त्री०) १ जीरक, जीरा। २ हृहज्जीरक, बड़ा जीरा।

कुञ्ज (सं० पु० क्ली०) को जायते कुजन्-ड पृषोदरादित्वात् साधुः। १ लता गुल्मादि द्वारा आच्छादित पर्वत गह्वर, बेलोंसे ढकी हुई पहाड़ी जगह। २ चारो ओर लतादि-वेष्टित स्थान, बेलोंसे घिरी हुई जगह।

'कुंजनमें खंजनकी चलनि बिलोकत हो।' (देवकीनन्दन)

३ हनु, नीचेका जबड़ा ४ हस्तिदन्त, हाथी दांत। ५ ऋषि विशेष।

कुंजकुटीर (सं० पु०) कुंज इव कुटीरः। निकुंजमें लता-पत्रादि द्वारा निर्मित गृह, बेलोंसे घिरी हुई जगहमें पत्तोंका बनाया हुवा घर।

"मधुकरनिकरकरम्बितकोकिलकूजितकुंजकुटीरे।"
(गीतगोविन्द)

कुंजकेलि (सं० पु०) कुंजे केलिः, ७-तत्। निकुंज मध्य क्रीड़ा, बेलोंसे घिरी जगहका खेला।

कुंजगोपी—जयपुरके एक गौड़ ब्राह्मण। इन्होंने हिन्दीमें शृङ्गार रसकी कविता लिखी है।

कुंजपुर—एक प्राचीन नगर। यह २९° ४३´ उ० और देशा० ७७° ५´ पू० पर अवस्थित है। पंजाबके कर्नाल नगरसे कुंजपुर ३ कोस उत्तरपूर्व पड़ता है।

कुंजप्रिय (सं० पु०) जवावृक्ष, गुड़ हलका पेड़

कुंजर (सं०पु०) प्रशस्तः कुंजः हनु दन्तो वा अस्यास्ति, कुंज-र। रप्रकरणे खमुखकुंजेभ्य उपसंख्यानम् पा ५।२।१०७ वार्तिक। १ हस्ती, हाथी। २ सर्व विशेष, एक सांप। ३ केश, बाल। ४ कोई राजा। ५ पर्वत-विशेष एक पहाड़। उसका वर्तमान नाम अनुमलय है। ६ मात्राप्रस्तार विषयमें पञ्च मात्रा प्रस्तारके मध्य प्रथम प्रस्तार। (छन्दःशा०) ७ हस्तानक्षत्र, हथिया। ८ अंजनाके पिता और हनुमान्‌के मातामह। (रामायण, ४।६६।१०) ९ कोई वृद्ध शुकपक्षी। ओङ्कारतीर्थमें कुंजर शुकका वास था। उसने महर्षि च्यवनको बहु विध उपदेश दिया। (पद्मपुराण) १० अश्वत्थ वृक्ष, पीपलका पेड़।

किसी शब्दके पीछे 'कुञ्जर' लगा देनेसे श्रेष्ठ अर्थ निकलता है।

"स्युरुत्तरपदे व्याघ्रपुङ्गवर्षभकुञ्जराः।
सिंहशार्दूलनागाद्याः पुंसि श्रेष्ठार्थवाचकाः॥" (अमरकोष)

उत्तरपद रूपमें व्याघ्र, पुङ्गव, ऋषभ, कुञ्जर, सिंह, शार्दूल और नाग प्रभृति शब्द, व्यवहृत होनेसे पूर्ववर्ती पदका श्रेष्ठताबोधक है। जैसे—राजकुञ्जर श्रेष्ठ राजा और पुरुषकुञ्जर श्रेष्ठ पुरुष इत्यादि।

कुञ्जरकणा (सं० स्त्री०) कुञ्जरनाम्नी कणा पिप्पली, मध्यपदलो०। गजपिप्पली, बड़ी पीपल।

कुञ्जरकर (सं० पु०) कुञ्जरस्य करः, ६-तत्। हस्तिशुण्ड, हाथीकी सूंड।

कुञ्जरक्षारमूल (सं० क्ली०) कुञ्जरस्य कुञ्जरपिप्पल्या इव क्षारं उग्रं मूलमस्य, बहुव्री०। मूला, मूली।

कुञ्जरगड़—औरङ्गाबादके अन्तर्गत चारो ओर पर्वत वेष्टित एक गिरिदुर्ग। वह अक्षा० १९° २३´ उ० और देशा० ७४° ५´ पू० पर अवस्थित है।

कुञ्जरग्रह (सं० पु०) कुञ्जरस्य ग्रहः ग्रहणम्, ६-तत्। हस्तिपालक, महावत।

"नाग्रबन्धोऽस्त्रमाजानन्न गजं कुञ्जरग्रहः।" (रामायण, २।९।५७)

कुञ्जरच्छाय (सं० क्ली०) कुञ्जरस्य छाया यत्र, बहुव्री०। ज्योतिःशास्त्रोक्त एक योग। त्रयोदशी तिथिको मघा नक्षत्र आने अथवा सूर्य वा चन्द्रके मघा नक्षत्रसे मिल जाने पर उक्त योग होता है।

मनु-व्याख्याकार कुल्लूकभट्टने अन्य तिथिको भी कुञ्जरच्छाय योगका विषय लिखा है—

"अपि नः स कुले जायात् यो न दद्यात् त्रयोदशीम्।

पायसं मधु सर्पिभ्यां प्राक् छाये कुञ्जरस्य च॥" (३२।७४)
"...कृतायां त्रयोदश्यां तथा तिथ्यन्तरेऽपि हस्तिनः पूर्वां दिशं गतायां छायायां मधुघृतसंयुक्तं पायसं दद्यात्।" (कुल्लूक)

कुञ्जरदरी (सं० स्त्री०) दक्षिणस्थ देशविशेष, एक मुल्क। उसका वर्तमान नाम 'अनुकलय' है।

"कच्छोऽथ कुञ्जरदरी स ताम्रपर्णीति विज्ञेया।" (वृहत्संहिता)

कुञ्जरपादप (सं० पु०) कुन्दरुक वृक्ष, एक पेड़।

कुञ्जरपिप्पली (सं० स्त्री०) कुञ्जरनाम्नी पिप्पली, मध्यपदलो०। गजपिप्पली, गजपीपल। गजपिप्पली देखो।

कुञ्जरपुट (सं० पु०) गजपुट, १० हाथ गहरा और १। हाथ चौड़ा गड्ढा।

कुञ्जररूपी (सं० त्रि०) कुञ्जरस्येव रूपमस्यास्ति, कुञ्जर-इनि। हस्तीकी भांति रूपयुक्त, हाथी जैसी सूरत शकल रखनेवाला।

कुञ्जरा (सं० स्त्री०) कुञ्जः हस्तिदन्त इव पुष्पं अस्त्यस्याः, कुञ्जर-अच्-टाप्। १ धातकी वृक्ष, धायके फूलका पेड़। उसका संस्कृत पर्याय—धातकी, धातुपुष्पी, ताम्रपुष्पी, सुभिचा, वहुपुष्पी और वह्निज्वाला है। धातकी देखो। २ पाटल वृक्ष, परुलका पेड़। ३ हस्तिन हथिनी।

कुञ्जराराति (सं० पु०) कुञ्जरस्य अरातिः शत्रुः, ६-तत्। १ सिंह, शेर। २ शरभ, आठ पैरवाला एक जानवर।

कुञ्जरालुक (सं० क्लो०) कुञ्जरसंज्ञकं आलुकम्, मध्यपदलो०। आलुकविशेष, एक आलू।

कुञ्जराशन (सं० पु०) कुञ्जरेण अश्यते, कुञ्जर-अश कर्मणि ल्युट्। अश्वत्थवृक्ष, पीपलका पेड़। अश्वत्थ देखो।

कुञ्जरासन (सं० क्लो०) कुञ्जरस्येव आसनं यत्र, बहुव्रो०। आसनविशेष, एक बैठक। हस्तद्वय, पदद्वय और मस्तक भूमिसे लगा शरीरका मध्यभाग शून्यमें रखनेसे कुञ्जरासन बनता है—

"अथ वक्ष्ये महाकालकुञ्जरासनमुत्तमम्।
करद्वयेन पादाभ्यां भूमौ तिष्ठेत् शिरः करः॥" (रुद्रयामल)

कुञ्जरिका (सं० स्त्री०) सल्लकीवृक्ष, एक पेड़।

कुञ्जल (सं० क्लो०) कुत्सितं जलमिव जलं यत्र, बहुव्रो०। १ काञ्जिक, कांजी। २ रसुनभेद, किसी किस्मका लहसुन।

कुञ्जलाल—हिन्दी भाषाके एक कवि। इनका जन्म १८५५ ई० को बुंदेलखण्ड झांसी जिलेके मऊ रानीपुरमें हुवा था। यह जातिके भाट रहे। इनकी कुछ फुट कर कविता मिलती है।

कुञ्जवल्लरी (सं० स्त्री०) कुञ्जाकारा वल्लरी, मध्यपदलो०। निकुञ्जिकाम्लवृक्ष, एक पेड़।

कुञ्जविहारी (सं० पु०) १ श्रीकृष्ण। २ उड़ीसा देशके कोई कवि।

कुञ्जा (हिं० पु०) १ मृण्मय पात्रविशेष, मट्टीका कुजा पुरवा। २ जमी हुई मिसरीकी गोल डली।

कुञ्जादि (सं० पु०) पाणिनि व्याकरणोक्त शब्दविशेष, लफ्जोंका एक जखीरा। यथा—कुञ्ज, व्रघ्न, शङ्ख, भस्मन्, गण, लोमन्, शठ, शाक, शुण्डा, शुभ, विपाश, स्कन्द, स्कम्भ, ये कई शब्द कुञ्जादिके अन्तर्भूत हैं। उक्त सकल शब्दोंके उत्तर गोत्र अर्थमें च्फञ् प्रत्यय लगता है। (पा ४।१।९८)

कुञ्जिका (सं० स्त्री०) कुन्ज्-ण्वुल्-टाप् इत्वम्। १ कृष्णजीरक, कालाजीरा। २ निकुञ्जिकाम्लवृक्ष, एक पेड़।

कुञ्जिलवार मलङ्गिया—कात्यायनगोत्रीय मैथिल ब्राह्मणोंका एक मूल।

कुञ्जिश (सं० पु०) कुड़िशमत्स्य, एक मछली। राजनिघण्टुके मतमें वह—मधुर एवं कषायरस, रुचिकारक, अग्निदीपक, बलकारक, स्निग्ध, गुरु, मलरोधक और वायुरोग पर हितकारक है। स्थान स्थान पर कुजभिश नामका प्रयोग भी देख पड़ता है।

कुट (सं० पु० क्लो०) कुट्-क। १ कलश, गगरा। २ कोट, गढ़, किला। ३ शिलाकुट्ट, पत्थर तोड़नेका घन, हथौड़ी। ४ वृक्ष, पेड़। ५ पर्वत, पहाड़। (वे०) ६ कृत, कार्य, काम।

"पिता कुटस्य चार्षणिः।" (ऋक् १।४६।४)
'कुटस्य चर्षणि कर्मणो द्रष्टा।' (सायण)
'पिता कृतस्य कर्मणश्चायितादित्यः।' (यास्क, ५।२४)

७ गृह, घर।

कुट (हिं० स्त्री०) १ कुष्ठ, एक मोटी झाड़ी। वह काश्मीरके निकटवर्ती पर्वतों पर ८०००से ९००० फीटतक ऊंचे उपजती है। कुट चनाव और झेलमके

ऊंचे कछारोंमें भी पायी जाती है। काश्मीरवासी उसके मूलको खण्ड खण्ड कर बम्बई कलकत्ते भेजते हैं। वहां वह युरोप और चीनको रफतनी की जाती है। काश्मीरराज कुटका मूल कर स्वरूप लेते और कृषक ला ला कर देते हैं। उसका गन्ध बहुत मनोहर होता है। चीनवासी उससे धूप बनाते हैं। वह केश धोनेके भी काम आती है। कहते हैं कुट लगनेसे श्वेतकेश कृष्णवर्ण हो जाते हैं। दुशालेको तहमें उसे रखनेसे कोड़ा नहीं लगता। वह तीन प्रकारको होती है। एक मधुर, लघु, सुगन्धि और पीताभ रहती है। द्वितीय—कटु, कृष्णाभ और गन्धविहीन होती है। तृतीय-रक्त वर्ण और आस्वादशून्य है, वह घीकार भांति महकती है। कुष्ठ देखो।

(पु॰) २ खण्ड, कूटा हुवा टुकड़ा।

कुटक (सं॰ पु॰) दक्षिणस्थ जनपदविशेष, दक्षिणको एक बसती। (भागवत, ५।६।८) २ उक्त देशके अधिपति जिनाचार्य। ३ कुटीर, झोपड़ा। ४ तरुलतागहन।

कुटका (हिं॰ स्त्री॰) १ क्षुद्र खण्ड, छोटा टुकड़ा। २ कलिमपुष्प भेद, कसीदेका तिकोना बूटा, सिंघाड़ा।

कुटकाचल (सं॰ पु॰) कुटकदेशीयः अचलः, मध्यपदलो॰। कुटकदेशीय पर्वतविशेष, एक पहाड़।

कुटकारिका (सं॰ स्त्री॰) कुटं गृहकर्मादिकं करोति, कुट-कृ-ण्वुल्-टाप्-इत्वम्। परिचारिका, टहलुई।

कुटकी (हिं॰ स्त्री॰) कटुका, एक पौदा। वह पश्चिमी तथा पूर्वी घाटों तथा अन्य पार्वत्य प्रदेशमें भी उपजती है। पत्र दीर्घाकार, खचित और ऊर्ध्वको प्रशस्त रहते हैं। मूल ग्रन्थियुक्त रहता और औषधमें पड़ता है। कटुकी देखो। २ मूलविशेष, एक जड़ी। वह शिमलेसे काश्मीर तक पहाड़ों पर होती है। ३ क्षुद्र पक्षिविशेष, एक छोटी चिड़िया। वह भारतके सघन वनमें रहती और ऋतुके अनुसार वर्ण बदलती है। उसका दैर्घ्य पांच इञ्च हैं। कुटकी ३-४ डिम्ब देती है। ४ बादियेके पेंचोंका एक हिस्सा। वह लोहेकी कील और छड़से बनता है। ५ कीटविशेष, एक कीड़ा। वह बहुत छोटी रहती और कुक्कुर विड़ाल आदिके रूयोंमें घुस काटा करती है।

कुटङ्ग (सं॰ पु॰) कुः गृहभूमिः टङ्ग्यते आच्छाद्यते अनेन, कु-टङ्ग-घञ्। गृहच्छादन, छानी, छप्पर।

कुटङ्ग (सं॰ पु॰) स्थानविशेष, एक जगह।

कुटङ्गक (सं॰ पु॰) कुटस्य अङ्गलिः, शकन्ध्वादित्वात् साधुः। १ वृक्ष लताद्वारा आच्छादित गहन स्थान, पेड़ों और बेलोंसे भरी हुई जगह। २ गृहाच्छादन, छप्पर। ३ गृहविशेष, एक घर।

कुटच (सं॰ पु॰) कुटे गिरौ चीयते उत्पद्यते, कुट-चि-ड। कुटज देखो।

कुटज (सं॰ पु॰) कुटे पर्वते जायते, कुट-जन-ड। १ स्वनामख्यात वृक्ष, कुरैया या कुर्चीका पौदा। (Holarrhena antidysenterica) उसका संस्कृत पर्याय—शक्र, वत्सक, गिरिमल्लिका, कोटज, वृक्षक, काही, कालिङ्ग, मल्लिकापुष्प, प्रवृष्टा, शक्रपादप, वरतिक्त, यवफल, संग्राही, पाण्डुरद्रुम, प्रावृषेण्य, महागन्ध, पाण्डुर, कूटज, कौट और शक्रशाखी है। फिर उसे इन्द्रके किसी नामसे अभिहित कर सकते हैं। साधारण बोलीमें इन्दुयव नाम चलता है। कुटजको बंगलामें कुड़ची, तामिलमें वेप्पल और तेलगुमें कोड़ग कहते हैं। वह कटु, तिक्त एवं कषायरस और अतिसार तथा कफनाशक है। रक्त कुटज रक्त पित्त और त्वक्दोषको निवारण करता है। (भावप्रकाश)

कुटजका वृक्ष छोटा होता है। उसकी त्वक् पीतवर्ण रहती है। वह हिमालय पर चनावसे पश्चिम ३५०० फीट ऊंचे तक उपजता है। फिर भारतके शुष्क वनमें वह मलाका तिर्वाकुर पर्यन्त विस्तृत है।

कुटजके पत्र कुछ दीर्घाकृति और प्रशस्त होते हैं। सफेद लम्बे फूलमें बहुत सुगन्ध रहता है। पंजाबके कांगड़ा जिलेमें उसकी पत्तियां पशुवोंको खिलायी जाती हैं। कुटजके ही फलको इन्द्रयव कहते हैं। इन्द्रयव देखो।

कुटजका काष्ठ श्वेतवर्ण, और मृदु होता है। उसमें बराबर दाने पड़े रहते हैं। नक्काशीके लिये वह सहारनपुर और देहरादूनमें अधिक व्यवहार होता है। आसाममें उससे तरह तरहकी चीजें बनायी जाती हैं। आसामवासी कुटजकी माला अभिचारकी भांति पहना करते हैं।

कुटजके बीज और वल्कलका व्यवसाय चलता है। बीजसे हरा पीला तेल निकलता है। सन्ताल लोग उक्त तैलको औषधको भांति व्यवहार करते है।

छोटानागपुरमें काष्ठभस्म रंगमें काम देता है।

कुटजका वल्कल और मूल ग्रहणी प्रभृति रोग निवारणके लिये बहु प्रकार व्यवहृत होता है। अंगरेजमें उसकी छालको कोनिसी छाल (Conissi bark) कहते हैं।

कुटात् घटात् जातः। २ द्रोणाचार्य। कुम्भज देखो। (क्लो०) ३ इन्द्रयव। ४ कमल।

कुटजगति (सं० स्त्री०) त्रयोदशाक्षरी छन्दोविशेष, १३ अक्षरोंका एक छन्द। यथाक्रम नगण, जगण, सगण, तगण, सगण, तगण और तगण, सगण एवं तगण रहनेसे उक्त छन्द बनता है।

'कुटजगतिर्नजौ सततसौ गुरुः।' (वृत्तरत्नाकर-टीका)

कुटजत्वक् (सं० स्त्री०) कुटजके मूलका वल्कल, कर्चीकी जड़वाली छाल।

कुटजफल (सं० क्लो०) इन्द्रयव, कुटजका फल।

कुटजपुटपाक (सं० पु०) औषधविशेष, एक दवा। इसके बनानेकी प्रणाली इस प्रकार है—३२ तोला कुटज मूलत्वक् तण्डुलोदकसे अच्छी तरह पीस गोला बनाते हैं। उसे जम्बूपत्रमें लपेट सूतसे बांध दिया जाता है। फिर गोधूम लगा और मृत्तिका लेपन चढ़ा उसको करीषाग्निमें पकाना चाहिये। लेपके रक्तवर्ण हो जाने पर गोला अग्निसे निकाल रसको टपका लेते हैं। मधुके साथ उक्त रस यथा-मात्र सेवन करनेसे अतिसार रोग आरोग्य होता है। (भावप्रकाश)

कुटजमल्ली (सं० स्त्री०) वृक्षविशेष, एक पेड़।

कुटजरस (सं० पु०) वैद्यकोक्त अर्शोरोगनाशक औषधविशेष, बवासीरकी एक दवा। कुटजत्वक् १०० पल अष्टगुण वृष्टिके जलमें पका कर १ भाग अवशिष्ट रहनेसे उतार कर छान लेते हैं। फिर उक्त क्वाथको मोचरस, वराहक्रान्ता, प्रियंगु और इन्द्रदव प्रत्येकका १ पल चूर्ण डाल पकाना चाहिये। पाक काल सकल द्रव्य घनीभूत होने पर उतार लेते हैं। कुटज रसके सेवनसे अर्शोरोगके अतिरिक्त रक्तातिसार, शूल, रक्तपित्त प्रभृति रोग भी आरोग्य हो जाते हैं। [चक्रदत्त]

कुटजरसक्रिया (सं० स्त्री०) कुटज रस देखो।

कुटजलेह (सं० पु०) वैद्यकोक्त अतिसार-रोगनाशक अवलेहविशेष, दस्तकी बीमारीमें दी जानेवाली एक चटनी। कुटजत्वक् १२॥ शरावक ६४ शरावक जलमें पाक कर ८ शरावक रहनेसे उतार लेना चाहिये। फिर वस्त्रपूत क्वाथ पुराने गुड़ (३ पल) के साथ पका कर लेहीभूत बनाते और उसमें रक्तचन्दन, विड़ङ्ग, त्रिकटु, त्रिफला, रसाञ्जन, चित्रक-मूल, इन्द्रयव, वचा, अतिविषा तथा विल्वपेशी प्रत्येकका १ पल चूर्ण मिलाते हैं। (चक्रदत्त)

कुटजवीज (सं० स्त्री०) कुटजस्य वीजं फलम्, ६-तत्। इन्द्रयव। इन्द्रयव देखो।

कुटजसुधा (सं० स्त्री०) कुटज-चूर्ण, कर्चीका चूरण।

कुटजा (सं० स्त्री०) त्रयोदशाक्षरी छन्दोविशेष। उसका लक्षण इस प्रकार कहा है—

"सजसा भवेदिह सगौ कुटजाख्यम्।" (वृत्तरत्नाकर)

सगण, जगण, सगण, सगण और गगण रहनेसे कुटजा छन्द होता है।

कुटजादिक्वाथ (सं० पु०) रक्तातिसारका औषधविशेष, खूनी दस्तोंकी एक दवा। कुटजत्वक्, अतिविषा, मुस्ता, बालक, लोध्र, चन्दन, धातकी, दाड़िम और पानका क्वाथ मधुके साथ पीनेसे अतिसार, दाह एवं शूल प्रशान्त हो जाता है। दूसरा कुटजादि क्वाथ कुटज, दाड़िम, मुस्ता, धातकी, विल्व, बालक, लोध्र, चन्दन और पाठाको पाक कर बनाते हैं। उसे भी मधुके साथ पीने पर रक्तातिसारादि रोग मिटते हैं।

(भैषज्यरत्नावली)

कुटजाद्यघृत (सं० क्लो०) अर्शोरोगनाशक घृतविशेष, बवासीरकी बीमारी पर दिया जानेवाला घी। घृत ४ शरावक, कल्कद्रव्यका समष्टि ८ पल और ४ शरावक वारि एकत्र पाक करना चाहिये। भली भांति पक जाने पर उक्त घृत सेवन करनेसे अर्शोरोग विनष्ट होता है। कल्कद्रव्यमें कुटजत्वक्, इन्द्रयव, नागेश्वर, नीलोत्पल, लोध्रकाष्ठ और धातकी प्रत्येक १॥ तोला डालते हैं। (चक्रदत्त)

कुटजावलेह (सं० पु०) अतिसारका एक अवलेह दस्त पर दी जानेवाली कोई चटनी। १२॥ शरावक कुटज मूलत्वक् ६४ शरावक पानीमें उबाल १६ शरावक रहनेसे उतार कर छान लेना चाहिये। इस क्वाथको पाक कर लेहन तुल्य होने पर सौवर्चल, यवक्षार, विट्, सैन्धव, पिप्पली, धातकी, इन्द्रयव और जीरकचूर्ण एकत्र १६ तोले डाल उतार लेते हैं। एक तोला मात्रामें मधुके साथ उक्त अवलेह सेवन करनेसे अतीसार रोग आरोग्य होता है। (चक्रपाणिदत्त)

कुटजारिष्ट (सं० पु०) अग्निदीपक और ज्वरनाशक एक अरिष्ट। १२॥ सेर कुटज मूलत्वक्, ६॥ सेर किशमिश और मउफूल तथा गाम्भारी प्रत्येक १। सेर ६ मन १६ सेर जलमें सिद्धकर १॥ सेर रहने पर उतार कर छान लेते हैं। फिर उनमें १२॥ सेर गुड़ २॥ सेर धायके फूल मिला किसी मृत्पात्रमें दृढ़ रूपसे मुख बांध एक मास पर्यन्त रख छोड़ना चाहिये। पीछे उक्त अरिष्ट व्यवहार करनेसे सर्वविध ज्वर छूट जाता और धनञ्जय नामक जठराग्नि बढ़ आता है। (शार्ङ्गधर)

कुटजाष्टक (सं० क्लो०) अतिसारका एक औषध, दस्तकी कोई दवा। १०० पल कुटजमूलत्वक् ६४ शरावक जलमें उबाल १६ शरावक शेष रहने पर उतारकर छान लेना चाहिये। फिर शाल्मली आदि प्रत्येक १ पल एकत्र पीस उक्त क्वाथमें डाल देते हैं। उसके पीछे क्वाथको पाककर गाढ़ होनेपर उतार लेनेसे औषध बन जाता है। प्रक्षेप्य द्रव्य यह हैं—शाकनादि, वराहक्रान्ता, अतीस, मुस्ता, विल्वशुण्ठी, धातकी और मोचरस उक्त द्रव्यमें प्रत्येक ८ तोले लिया जाता है।

कुटजाष्टकावलेह (सं०पु०) अतिसार रोगनाशक औषधविशेष, दस्तकी एक दवा। ५ पल कुटजमूल त्वक्को ६४ शरावक जलमें उबाल १६ शरावक शेष रहनेसे उतार लेना चाहिये। क्वाथको छान पुनः पाक कर गाढ़ होने पर लज्जालुका, धातकी, विल्वशुण्ठी, पाठा, मुस्तक, मोचरस और अतिविषा प्रत्येक द्रव्यका १ पल चूर्ण डालनेसे उक्त औषध प्रस्तुत होता है। (भावप्रकाश)

कुटजीव (सं० पु०) पुत्रजीव वृक्ष, एक पेड़।

कुटजोद्भव (सं० पु०) इन्द्रयव।

कुटजोद्भवा (सं० स्त्री०) कुटजोद्भव देखो।

कुटनई (हिं० स्त्री०) १ कूटनेका काम। २ नायक और नायिकाके बीच संवाद पहुंचानेकी क्रिया, कुटनपन।

कुटनपन (हिं० पु०) १ दूतीकर्म, औरतोंको बिगाड़नेका काम। २ पिशुनता, चुगलखोरी।

कुटनपेशा (हिं० पु०) १ दूतीकर्म द्वारा जीविकोपार्जन, औरतोंको बिगाड़ रोजी कमानेका काम। २ दूतीकर्म द्वारा जीविका उपार्जन करनेवाला, जो औरतोंको बिगाड़ कर खाता हो।

कुटनहारी (हिं० स्त्री०) धान कूटनेवाली स्त्री०, जो औरत धान कूट कर अपना काम चलाती हो।

कुटना (हिं० पु०) १ स्त्रीको परपुरुषसे मिलानेवाला, जो शख्स औरतोंका दूसरे मर्दोंसे मिलाता हो। २ वञ्चक, चुगलखोर।

(क्रि०) ३ मारा जाना, मार खाना। ४ कूटा जाना।

कुटनाना (हिं० क्रि०) १ व्यभिचारी बनाना, खराब करना। २ बहकाना, भड़काना।

कुटनापन, कुटनपन देखो।

कुटनापा, कुटनपन देखो।

कुटनी (हिं० स्त्री०) १ दूती, औरतोंको दूसरे मर्दोंसे मिलानेवाली। २ चुगलीखानेवाली, झगड़ा लगानेवाली।

कुटनी (सं० स्त्री०) महाज्योतिष्मती लता, रतनजोत।

कुटनीपन, कुटनपन देखो।

कुटन्नक, कुटन्नट देखो।

कुटन्नट (सं० पु०-क्लो०) कुटन् सन् नटति, कुटन्-नट्-अच्। १ भद्रमुस्ता, नागरमोथा। २ केशराज, केशर। ३ विकङ्कतवृक्ष, बैंचीका पेड़। ४ श्योणाकवृक्ष, एक पौदा। ५ कैवर्तमुस्तक। कैवर्तमुस्तक देखो। ६ वितुन्नक वृक्षकी त्वक्।

कुटन्नटा (सं० स्त्री०) पालङ्क शाक, एक सब्जी।

कुटप (सं० पु०) कुटात् विपज्जालात् पाति रक्षति,

कुट-पा-क। १ मुनि। २ चेत्रविशेष, कोई जगह। गृहके निकटका उपवन, घरके पासका बाग। ४ परिमाणविशेष, ३२ तोलेकी एक तौल। (क्लो॰) ५ पद्म, कंवल।

कुटपिनी (सं॰ स्त्री॰) पद्मिनी, छोटा कंवल।

कुटस्वक (सं॰ क्लो॰) सुगन्ध रोहिषतृण, एक खुशबूदार घास।

कुटर (सं॰ पु॰) कुट बाहुलकात् करन्। १ मन्थानदण्ड बांधनेका स्तम्भ, मथाने लगानेका खम्भ। २ सर्पविशेष, एक सांप।

कुटर कुटर (हिं॰ पु॰) अव्यक्त शब्दविशेष, कोई कड़ी चीज चबानेसे कुटर कुटर शब्द निकलता है।

कुटरणा, कुटरुणा देखो।

कुटरणी, कुटरुणी देखो।

कुटरवाहिनी (सं॰ स्त्री॰) श्वेतत्रिवृत्।

कुटरिणा कुटरुणा देखो।

कुटरिणी, कुटरुणी देखो।

कुटरु (सं॰ पु॰) कुट-अरुः किच्च। कुटः किच। उण् ४।८०। पटगृह, कनात।

कुटरुणा (सं॰ स्त्री॰) कुटेषु अरुणा, शकन्ध्वादित्वात् साधुः। १ त्रिवृता। २ अरुणमूल, त्रिवृत्। ३ शुक्लत्रिवृत्।

कुटल (सं॰ क्लो॰) कुटति आच्छादयति अनेन, कुट करणे कलच्। पटल, छानी छप्पर।

कुटवाना (हिं॰ क्रि॰) कूटनेमें लगाना, कुटाना।

कुटहारिका (सं॰ स्त्री॰) कुटं कलशं हरति जलाद्यानयनार्थं गृह्णाति, कुट-हृ-ण्वुल्-टाप् इत्वम्। दासी टहलुइ।

कुटाई (हिं॰ स्त्री॰) १ कूटनेका काम। २ कूटनेके कामको मजदूरी।

कुटामोद (सं॰ पु॰) गन्धमार्जाराण्ड, भबरीले बिलावका अण्डा।

कुटास (हिं॰) ताड़ना, कड़ी मारपीट।

कुटि (सं॰ पु॰ स्त्री॰) कुट-इन् कुटिमिदि छिदिभ्यश्च। उण् ४।१४२। १ गृह, घर। २ शरीर, जिस्म। ३ वृक्ष, पेड़। ४ मुरामांसी।

कुटिक (सं॰ त्रि॰) कुटिल, टेढ़ा।

"शिरसो सुखनाहापि न स्थानकुटिकासनात्।" (भारत, वनपर्व)

(पु॰) २ मृत्फली। ३ कुष्ठ, कुट।

कुटिका (सं॰ स्त्री॰) नदीविशेष, एक दरया।

(रामायण, २।७१।१५)

कुटिकोष्ठिका (सं॰ स्त्री॰) नदीविशेष, एक दरया।

(रामायण, २।७१।१०।)

कुटिचर (सं॰ पु॰) कुटि कुटिलं यथास्यात् तथा जले चरति, कुटि-चर-ट। जलशूकर, दरयायी सूवर।

कुटिञ्जर (सं॰ पु॰) पत्रशाकविशेष, जङ्गली बथुवा। वह स्वादुपाक, चार, रूक्ष, शीतल, गुरु, मलस्तम्भकर और दोषोत्पादनकारी है। (वैद्यकनिघण्टु)

कुटित (सं॰ त्रि॰) कुट कौटिल्यं जातमस्य, कुट-इतच् किच्च। कुटिल, टेढ़ा।

कुटिया (हिं॰ स्त्री॰) क्षुद्र कुटि, छोटा घर या झोपड़ा।

कुटिर (सं॰ क्लो॰) कुट्यते निर्माप्यते यत् कुट-इरन्। क्षुद्रगृह, कुटिया।

कुटिल (सं॰ त्रि॰) कुट कौटिल्यं बाहुलकात् इलच्। १ वक्र, टेढ़ा। उसका संस्कृत पर्याय—अराल, वृजिन, जिह्म, ऊर्मिमत्, कुञ्चित, नत, आविद्ध, भुग्न, वेल्लित, वक्र, भंगुर, वेंकु, विनत और उन्दुर है। (क्लो॰) २ वनवास्तूक, जङ्गली बथुवा। ३ पिण्डीतगर, तगर पादुका। उसका संस्कृत पर्याय—कालानुसारिवा, वक्र, तगर, शठ, महोरग, नत, जिह्म, दीन और तगरपादिक है। ४ छन्दोविशेष, किसी किस्मको बहर।

"युगदिगभिः कुटिल-मिति मतं स्भौ न्यौ गौ। (वृत्त रत्नाकर)

चार अक्षर तथा दश अक्षर पर यति, सगण, भगण, नगण, यगण और दो गुरुवर्ण रहनेसे उक्त छन्द होता है। (पु॰) ५ कुटिलप्रकृति, टेढ़े मिजाजवाला। ६ खल, पाजी। ७ देवनागराक्षरभेद, एक प्रकारके हरूफ। भारतके नाना स्थानों पर खृष्टीय अष्टमसे एकादश शताब्दपर्यन्त खोदित शिलालिपिमें कुटिल अक्षर बहुत मिलते हैं। वर्णमाला देखो। ८ शङ्ख। ९ शम्बूक, घोंघा।

कुटिलकीट (हिं॰ पु॰) सर्प, सांप।

कुटिलग (सं॰ त्रि॰) कुटिलं यथा तथा गच्छति,

कुटिल-गम-ड। १ वक्रगामी, तिरछा चलनेवाला। (पु०) २ सर्प, सांप।

कुटिलगति (सं० त्रि०) कुटिला वक्रा गतिर्यस्य, बहुव्री०। १ वक्रगमनकारी, तिरछा चलने वाला। (पु०) २ सर्प, सांप। (स्त्री०) ३ उत्पलिनी।

कुटिलता (सं० स्त्री०) १ कौटिल्य, तिरछापन। २ छल, धोका।

कुटिलपन (हिं० पु०) कुटिलता देखो।

कुटिलपुष्पिका (सं० स्त्री०) तगरपादिका, तगरका फूल। २ स्पृक्का नामक गन्ध द्रव्य।

कुटिला (सं० स्त्री०) कुटिल टाप्। १ सरस्वती नदी। २ स्पृक्का नामक गन्धद्रव्य, एक असवरग खुशबूदार चीज। ३ राधिकाकी ननन्दा और अयानघोषकी भगिनी। इनकी माताका नाम जटिला था। ४ तगरपादिका, तगरका फूल।

कुटिलाई (हिं० स्त्री०) कुटिलता, टेढ़ापन। २ छल, धोका।

"पीछे अनहित मन कुटिलाई।" (तुलसी)

कुटिहा (हिं० वि०) कुटोक्ति करनेवाला, जो सुवक्ता बोलता हो।

कुटी (सं० स्त्री०) कुटि ङीप्। १ गृह, कुटीर, झोपड़ा

"ब्रह्महा द्वादश समाः कुटीं कृत्वा वने वसेत्।" (मनु, ११।७२)

२ कुम्भदासी, कुटनी। ३ मुरानामक गन्धद्रव्य। ४ चित्रगुच्छक। ५ मरु-वक वृक्ष, मरुवाका पेड़। ६ श्वेत कुटजवृक्ष, सफेद कचेकि पेड़। ७ अन्नादि-रहित सिक्थ।

कुटीका (सं० स्त्री०) भूशय-मृग, एक हिरना।

कुटीकृत (सं० क्ली०) कुटि च्वि-कृ-क्त। गृहीकृत वस्त्र, तम्बू या कनातका कपड़ा।

"ऊर्णाञ्च राङ्कवञ्चैव कीटजं पट्टजं तथा।
कुटीकृतं तथैवात्र कमलाभं सहस्रशः।" (भारत, सभापर्व)

कुटीचक (सं० पु०) कुट्यां पर्णकुटीरे चकते तृप्नोति वसतीत्यर्थम्, कुटी-चक-अच्। एक संन्यासी। उक्त श्रेणीके संन्यासी कर्म-निष्ठ होते हैं।

"चतुर्विधा भिक्षवस्ते कुटीचकबहूदकौ।
हंसः परमहंसश्च यो ऽत्र पश्चात् स उत्तमः" (भारत, अनुशासनप०)

संन्यासी चार प्रकारके होते हैं—कुटीचक, बहूदक, हंस और परम-हंस। उनमें कुटीचकसे बहूदक, बहूदकसे हंस और हंससे परमहंस अच्छे हैं।

स्कन्दपुराणीय सूतसंहितामें इस प्रकार लिखा है—

"कुटीचकश्च संन्यस्तः स्वे स्वे वेश्मनि नित्यशः।
भिक्षामादाय भुञ्जीत स्वबन्धूनां गृहेऽथवा ॥ ३ ॥
शिखी यज्ञोपवीती स्यात् त्रिदण्डी सकमण्डलुः।
सपवित्रश्च काषायी गायत्रीं च जपेत् सदा ॥ ४ ॥
सर्वाङ्गोद्धूलनं कुर्यात् त्रिपुण्ड्रं च त्रिसन्धिषु।
शिवलिङ्गार्चनं कुर्यात् श्रद्धयैव दिने दिने ॥ ६ ॥"
(सूतसंहिता, ज्ञानयोग खण्ड, ६ अ०)

कुटिचक संन्यास लेकर अपने अथवा अपने बन्धुके गृहमें रहना और भिक्षाकर भोजन करना चाहिये। शिखा, यज्ञोपवीत, त्रिदण्ड और कमण्डलु धारण करना योग्य है। कषाय वस्त्र पहन और पवित्र रह सर्वदा गायत्री जपते हैं। त्रिसन्ध्याको सर्वाङ्गमें भस्म लगाना, ललाट पर त्रिपुण्ड्र चढ़ाना और प्रतिदिन श्रद्धापूर्वक शिवलिङ्गकी पूजा करना चाहिये।

कुटीचर (सं० पु०) कुट्यां चरति, कुटी-चर-ट। यति-विशेष, एक संन्यासी।

कुटीचरक (सं० पु०) कुटीचर स्वार्थे कन्। यति विशेष, एक संन्यासी।

कुटीप्रावेशिक (सं० क्ली०) कुटीप्रवेशयोग्य, द्विविध रसायनमें अन्यतम रसायन।

कुटीमय (सं० त्रि०) कुट्या विकारः अवयवो वा, कुटी-मयट्। नित्यं वृद्धशरादिभ्यः। पा ४।३।१४४। कुटीका अवयव-रूप, घरवाला।

कुटीमुख (सं० पु०) कुटीव मुखमस्य, बहुव्री०। महादेवके एक पारिषद।

"काष्ठः कुटीमुखो दन्तीविजया च तपोऽधिका।
(भारत, सभा, १० अ०)

कुटीर (सं० पु०) कुटी अल्पार्थे र। १ क्षुद्रगृह, झोपड़ा (त्रि०) २ केवल। ३ रत।

कुटीरक (सं० पु०) कुटीर स्वार्थे कन्। कुटीर, झोपड़ा।

कुटीरखेद (सं० पु०) कुट्यां क्षुद्रगृहे खेदः, ७-तत्।

वैद्यकोक्त स्वेदविधिविशेष, छोटे घरमें बैठकर पसीना निकालनेकी तरकीब।

कुटङ्गक (सं० पु०) कुटङ्ग स्वार्थे कन्। १ वृक्षलताच्छादित गहन, दरख्तों और बेलोंसे भरी हुयी जगह। २ वंशादिनिर्मित पात्रविशेष, बांसकी कोठी। ३ छानी छप्पर। ४ वृक्षलता प्रभृति, दरख्त बेल वगैरह। ५ कुटी, झोपड़ा।

कुटनी (सं० स्त्री०) कुट उन्-ङीष्। कुट्टनी, कुटनी।

कुटुम (हिं०) कुटम्ब देखो।

कुटुम्ब (सं० पु०-क्ली०) कुटुम्बयते पालयति, कुटुम्ब-अच्। यद्वा कुटुम्बयते पाल्यते सम्बध्यते वा, कुटुम्ब कर्मणि घञ्। १ कुल, खानदान। २ परिवारकी चिन्ता, खानदानकी खबरगीरी। ३ नाम। ४ ज्ञाति, जाति। ५ बान्धव, भाईबन्द। ६ सम्बन्धी, रिश्तेदार। ७ पोष्यवर्ग, बालबच्चे।

"तस्य भृत्यजनं ज्ञात्वा स्वकुटुम्बान् महीपतिः।" (मनु, ११।२२)

कुटुम्बक (सं० पु० क्ली०) कुटुम्ब स्वार्थे कन्। १ कुटुम्ब, खानदान, घराना। २ भूतृण, एक खुसबूदार घास।

कुटुम्बकलह (सं० पु०-क्ली०) कुटुम्बेन सह कलहः, ३ तत्। ज्ञातिके साथ विवाद, खानदानी झगड़ा।

कुटुम्बव्यापृत (सं० त्रि०) कुटुम्बभरणाय व्यापृतः नियुक्तः। १ कुटुम्बके पोषणमें आसक्त, बालबच्चोंकी परवरिशमें लगा हुवा। २ बहुपरिपवारविशिष्ट, बड़े खानदानवाला।

कुटुम्बिक (सं० त्रि०) कुटुम्बोऽस्यास्ति, कुटुम्ब ठन्। कुटुम्बादि-परिवृतस्थ गृहस्थाश्रमी, खानदानको लेकर घरमें रहनेवाला।

कुटुम्बिता (सं० स्त्री०) कुटुम्बोऽस्त्यस्य कुटुम्बी तस्य भावः, कुटुम्ब-ठन्-तल्-टाप्। १ कुटुम्ब-विशिष्ट व्यक्तिका कार्य, खानदानवाले शखसका काम। २ पारिवारिक-सम्बन्ध, खानदानी रिश्ता। ३ कुटुम्बके प्रति व्यवहार, घरानेके साथ किया जानेवाला बरताव। ४ परिवार-विशिष्टता, बड़ा खानदान होनेकी हालत।

कुटुम्बिनी (सं० स्त्री०) कुटुम्बः अतिशयेन अस्त्यस्याः, कुटुम्ब-इनि-ङीप्। १ कुटुम्बविशिष्टा, खानदान रखने वाली औरत। २ पतिपुत्रकन्या प्रभृति आत्मीय-विशिष्टा स्त्री, बलबच्चेवाली। उसका संस्कृत पर्याय—पुरन्ध्री, पुरन्ध्रि और पुरन्ध्रिका है। ३ स्वनामख्यात महाक्षुप, कोई क्षुद्र गुल्म। उसका संस्कृत पर्याय—पयस्या, क्षीरिणी, जलकामुका, वक्रशल्या, दुराधर्षा, क्रूरकर्मा, सिरिण्टिका, शीता, प्रहरकुटुम्बी, शीतला और जलेरुहा है। राजनिघण्टुके मतमें वह मधुररस, संग्राहक, रसायन और कफ, पित्त, व्रण, रक्तदोष तथा कण्डुनाशक होती है।

कुटुम्बी (सं० पु०) कुटुम्बः अस्यास्ति, कुटुम्ब-इनि। १ गृही, घरानेवाला। (त्रि०) २ कुटुम्बविशिष्ट, खानदान रखनेवाला। ३ कृषक, किसान।

कुटुम्बौक: (सं० क्ली०) कुटुम्बानां ओकः वासस्थानम्। कुटुम्बियोंका वासस्थान, खानदानवाले लोगोंके रहनेकी जगह।

कुटवा (हिं० पु०) १ कुटैया, कूटनेवाला। २ वृषभ वा महिषको बधिया बनानेवाला, जो बैल या भैंसेको बधिया बनाता हो।

कुटेक (हिं० स्त्री०) कुत्सित हठ, खराब जिद।

कुटेर (सं० पु०) कुटीर, झोपड़ा।

कुटेव (हिं० स्त्री०) कुत्सित स्वभाव, बुरी आदत।

कुटेयन, कोटियन देखो।

कुटौनी (हिं० स्त्री०) १ कुटाई, कूटनेका काम। २ कुटाईकी मजदूरी।

कुट्टक (सं० पु०) कुट्टकः भाज्यभाजकादिगणनं यत्र, बहुव्री०। १ अङ्कविशेष, जरब करनेवाली अदद।

"भाजो हारः क्षेपकश्चापवर्त्यः केनाप्यादौ सम्भवेत् कुट्टकार्थम्।" (लीलावती)

२ पानीयकाक। (त्रि०) कुट्टयति उपलदण्डादिभिर्भिनत्ति छिनत्ति वा, कुट्ट-ण्वुल्। ३ छेदनकारक, कूटने-पीटनेवाला। ४ चूर्णकारक, चूर कर डालनेवाला।

"दन्तोलूखलिकः काल-पक्काशी वाश्मकुट्टकः।" (याज्ञवल्क्य, ३।४९)

कुट्टन (सं० क्ली०) कुट्टते कुट्ट छेदने भावे ल्युट्। १ छेदन, काट छांट। २ कुटाई, कुटौनी। ३ कुत्सन, कोसाई। ४ तापन, तपाई। ५ नृत्यमुद्राविशेष, नाचकी एक चाल। उसमें वृद्ध वयसके कारण दांतोंका बजना दिखाया जाता है।

कुट्टनी (सं० स्त्री०) कुट्टयति छिनत्ति नाशयति इत्यर्थः स्त्रीणां कुलमिति शेषः कुट्ट स्वार्थे णिच्-ल्युट्-ङीप् यद्वा कुट्टते छिद्यते स्त्रीणां कुलमनया, कुट्ट करणे ल्युट ङीप्। १ नायक-नायिकाका संयोग लगानेवाली स्त्री, कुटनी। उसका संस्कृत पर्याय—शम्भली, कुट्टनी, सम्भली, माधवी, रङ्गमाता, अर्जुनी, कुम्भदासी और गणेरुका है।

कुट्टन्ती (सं० स्त्री०) कुट्ट-शतृ-ङीप् । छेदन-कारिणी, कूटनेवाली औरत।

कुट्टमित (सं० क्ली०) स्त्रियोंकी दश प्रकार शृङ्गार चेष्टाके अन्तर्भूत चेष्टाविशेष, आरामके वक्त औरतोंका तकलीफ दिखाना। अलङ्कारशास्त्रोक्त उसका लक्षण इस प्रकार है:—

"केशस्तनाधरादीनां ग्रहे हर्षेऽपि सम्भ्रमात्।
प्राहुः कुट्टमितं नाम शिरः करविधूननम्॥" (साहित्यदर्पण, ३।११)

स्त्रियोंका केश, स्तन वा अधर धारण करनेसे हृष्ट होते भी ससम्भ्रम मस्तक और हाथ झुका बाधा डालनेकी चेष्टा करती हैं, वही चेष्टा कुट्टमित कहलाती है।

हेमचन्द्रने कुट्टमितको स्त्रियोंके स्वाभाविक दश प्रकार अलङ्कारोंका अन्तर्भूत बताया है।

"लीला विलासो विच्छित्ति विंव्वोकः किलकिञ्चितम्।
मोट्टायितं कुट्टमितं ललितं विहृतं तथा॥
विभ्रमश्चेत्यलङ्काराः स्त्रीणां स्वाभाविका दश॥" (हेम, ३।१७१-१७२)

कुट्टल (सं० क्ली०) नीलोत्पल।

कुट्टा (हिं० स्त्री०) १ कपोत-विशेष, पर-कट्टा कबूतर। २ कूटनेवाला।

कुट्टाक (सं० त्रि०) कुट्ट-षाकन्। जल्पभिक्षकुट्टलुण्टवृङ: षाकन्। पा ३।२।१५५। छेदक, काट कूट करनेवाला।

कुट्टापरान्त (सं० पु०) महाभारतोक्त जनपदविशेष, एक पुरानी बसती। उक्त शब्द नित्य बहुवचनान्त है।

"कुट्टापरान्ता माहेया कच्छाः सामुद्रनिष्कुटाः।"
(भारत, भीष्म, ९म०)

कुट्टार (सं० पु०) कुट्यते भिद्यते हन्यते वा यस्मिन् पतिते सति शेषः, कुट्ट-आरन्। १ पर्वत, पहाड़। (क्ली०) २ कम्बल। ३ अनुराग, मुहब्बत। ४ केवल।

कुट्टित (सं० त्रि०) कुट्ट-क्त। १ छिन्न, कटा हुवा। २ चूर्णीकृत, कूटा हुवा। ३ खण्डीकृत, टुकड़े किया हुवा।

कुट्टितमांस (सं० क्ली०) मांसव्यञ्जनभेद, कीमा।

कुट्टिनी (सं० स्त्री०) कुट्टं स्त्रीणां कुलनाशः कर्तव्यतया अस्त्यस्याः, कुट्ट-इनि-ङीप्। कुट्टनी, कुटनी।

कुट्टिम (सं० पु०-क्ली०) कुट्ट भावे घञ् कुट्टेन निष्पन्नः, कुट्ट-इमप्। १ मणिखचित स्थान, जवाहरातसे जड़ी हुयी जगह। २ बद्धभूमि, कूटी पीटी जमीन्। ३ कुटीर, झोपड़ा। ४ दाड़िम्बवृक्ष, अनारका पेड़।

कुट्टिमित (सं० क्ली०) कुट्टमित देखो।

कुट्टहारिका (सं० स्त्री०) कुट्टिं मत्स्यमांसादिकं हरति कुट्टि-हृ-ण्वुल्-टाप् अतइत्वम्। दासी, टहलुई।

कुट्टीर (सं० पु०) कुट्टते अस्मिन्, कुट्ट-ईरन्। पर्वत, पहाड़।

कुट्टी (हिं० स्त्री०) १ कटाई, काटकूट। २ कटिया, गड़ांससे काटा हुवा चारा। ३ किसी किस्मका कागज। वह कूटा और सड़ाया जाता है। उससे पुट्ठे और कलमदान बनाते हैं। ४ मैत्रीभङ्ग, तर्क दोस्ती। इस शब्दको प्रायः बालक प्रयोग करते हैं। ५ परकटा कबूतर।

कुट्टीर (सं० पु०) कुट्टते अस्मिन्, कुट्ट ईरन्। पर्वत, पहाड़।

कुट्टीरक (सं० पु०-क्ली०) कुट्टीर स्वार्थ कन्। १ क्षुद्र-पर्वत, छोटा पहाड़। २ कुटीर, झोपड़ा। "द्वितीयेन तस्या अस्थीनि तद्भस्म च श्मशाने कुट्टीरकं कृत्वा रक्षितानि।" (वेतालप० १७।१२)

कुड्मल (सं० पु०-क्ली०) कुड्यते नारकिभ्यो यन्त्रणा दीयते यत्र, कुट् कृपादित्वात् कलच् मुट्च। क्षवा-दिभ्यश्चित्। उण् १। १०८। १ नरकविशेष, कोई दोजख। वहां पापियोंको रज्जु द्वारा पीड़न करते हैं। कुटति ईषत् विकाशोन्मुखो भवति। २ मुकुल, फूलकी कुछ खिली हुई कली। ३ कोष।

कुड्मलित (सं० त्रि०) कुड्मलोऽस्य सञ्जातः, कुड्मल-इतच्। मुकुलित, कलीदार।

कुठ (सं० पु०) कुठ्यते छिद्यतेऽसौ, कुठ छेदने कर्मणि घञर्थे क। १ वृक्ष, पेड़। २ चित्रकक्षुप, चीतकी झाड़ी।

कुठर (सं० पु०) कुठ बाहुलकात् करन्। १ मन्थनदण्ड

बांधनेका स्तम्भ, मथानी अटकानेका खंभा। उसका संस्कृत पर्याय दण्डविष्कम्भ है । २ सर्पविशेष, एक सांप।

कुठला (हिं० पु०) १ मृत्-पात्रविशेष, मट्टीका एक बरतन। इसमें अनाज रखते हैं। २ चूनेकी भट्ठी।

कुठांव (हिं० पु०) कुत्सित स्थान, खराब जगह।

कुठाकु (सं० पु०) कोठति आच्छन्ति भिनत्ति वा काष्ठम् कुठ्-आकुन् किच्च। पक्षिविशेष, कठफोड़वा।

कुठाट (हिं० पु०) १ कुत्सित सज्जा, बुरा ठाट। २ कुप्रबन्ध, बुरा इन्तजाम।

कुठाटङ्क (सं० पु०) कुठारटङ्क इव पृषोदरादित्वात् साधुः। कुठार, कुल्हाड़ा।

कुठार (सं० पु०) कोठति अनेन, कुठ करणे आरन्। १ अस्त्रविशेष, तबर, एक हथियार। उसका संस्कृत पर्याय—सुधिति, परशु, परश्वध, कुठारी, पशु, पश्वध, कुठाटङ्क और द्रुघन है।

"याके कण्ठ कुठार न दीन्हा। तो मैं कहा कोप करिकीन्हा॥" तुलसी

हेमाद्रिके परिशेषखण्डमें कुठारका लक्षणादि इस प्रकार लिखा है,—'कुठार दो प्रकारका है। एकसे किसी वस्तुको हाथ पर रख और दूसरेसे उसको हाथसे छोड़ कर काटते हैं। उक्त दोनों प्रकारके कुठार परिमाणमें ५० पल दैर्घ्यमें १५ अङ्गुलि और विस्तारमें ५॥ अंगुलि रहनेसे श्रेष्ठ समझे जाते हैं। इसी प्रकार परिमाणमें ४० पल दैर्घ्यमें १३॥ अङ्गुलि एवं विस्तारमें ४॥ अंगुलि होनेसे मध्यम और परिमाणमें ३० पल, दैर्घ्यमें १२ अंगुलि तथा विस्तारमें ३॥ अंगुलि रहनेसे निकृष्ट कुठार कहाता है। उक्त सकल कुठार शाल, धव, धन्वन, शाक, अर्जुन, शिरीष, शिंशप, असन, राजवृक्ष, इन्द्रवृक्ष, तिन्दुक, सोमवल्क और श्वेतार्जुन काष्ठ पर चलाये जाते हैं।'

कुठ्यते छिद्यते ऽसौ कुठ् कर्मणि आरन्। २ कुठेरक-वृक्ष, एक पेड़।

कुठार—पंजाबके शिमला जिलेका एक पहाड़ी राज्य। यह अक्षा० ३०°३५´ एवं ३१° १´ उ० और देशा० ७६° ५७´ तथा ७७° १´ पू०के मध्य सवाथूसे पश्चिम अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल २० वर्गमील है। लोकसंख्या प्रायः ४१९५ होगी। ४७ पीढ़ियां बीती कि जम्बू-राजौरीके एक राजपूतने इसे स्थापन किया जो मुसलमान आक्रमणकारियोंसे बचकर निकल आये थे। १८१५ ई० को गुरखोंके दूरीभूत होने पर अंगरेजोंने फिर राजाको सिंहासन पर बैठा दिया। राज्यका आय ११०००) रु० है। इसमें १०००) रु० कर देना पड़ता है।

कुठारक (सं० पु०) कुठार अल्पार्थे स्वार्थे वा कन्। १ कुठार कुल्हाड़ा। २ क्षुद्र कुठार, कुल्हाड़ी।

कुठारकतैल (सं० क्लो०) शरीरव्रणादिका तैलविशेष, जख्म पर लगाया जानेवाला एक तेल। १०० पल कुठारक उत्पल जलमें उबाल पादावशेष रहनेसे तेल-प्रस्थको पाक करना चाहिये। कल्कके लिये कुठार, अपामार्ग, प्रोष्ठिका और मक्षिकाका चूर्ण डालते हैं। (रसरत्नाकर)

कुठारच्छिन्ना (सं० स्त्री०) कन्दगुडूची, कुरैया।

कुठारपाणि (सं० पु०) १ परशुराम। (त्रि०) २ कुठार हाथमें लिया हुवा, जो हाथमें कुल्हाड़ी लिये हो।

कुठाराघात (सं० पु०) कुठारका आघात, कुल्हाड़ेकी चोट।

कुठारिका (सं० स्त्री०) कुठारी-कन्-टाप् पूर्वस्य ह्रस्वः। १ कुठाराकृति अस्त्रविशेष, कुल्हाड़ी-जैसा एक नश्तर उससे शिरावेध किया जाता है। उक्त अस्त्र वाम हस्त द्वारा वेध्य शिरापर रख दक्षिण हस्तका अङ्गुष्ठ और मध्यम अङ्गुलि एकत्र कर उसको ठेल लगा व्यवहार करते हैं। (सुश्रुत) २ कुठार, कुल्हाड़ी।

कुठारी (सं० स्त्री०) कुठार-ङीप्। कुठार, कुल्हाड़ी।

कुठारु (सं० पु०) कुठ-आरु। १ अस्त्रकार, हथियार बनानेवाला। २ वृक्ष, पेड़। ३ वानर, बन्दर। ४ कोश, लङ्गर।

कुठाली (हिं० स्त्री०) घरिया, सोना चांदी गलानेका छोटा बरतन।

कुठाहर (हिं० पु०) १ कुत्सित स्थान, कुठौर।

कुठि (सं० पु०) कुठ्-इन्-किच्च। कुठि कम्प्योर्नलोपश्च। उ ४।१४३। १ पर्वत, पहाड़। २ वृक्ष, पेड़।

कुठिक (सं० पु०) कुठ-इकन्-किच्च। कुष्ठौषधि, कुट।

कुठिया (हिं० स्त्री०) पात्रविशेष, एक बरतन। वह मट्टीकी बनती है। कुठियामें अनाज रखा जाता है।

कुठिल्लक (सं० पु०) रक्तपुनर्नवा।

कुठी (सं० स्त्री०) वृक्ष-विशेष, एक पेड़। वह एक प्रकारका कुसुम है। उससे बङ्गालमें रङ्ग बनता है।

कुठेर (सं० पु०) कुण्ठति तापयति वैकल्यं करोति वा, कुठि-एरक् बाहुलकात् नुमोऽभावः। पतिकठिकुठिगडिगुडि दंशिभ्य एरक्। उण् १।५८। १ अग्नि, आग। २ तुलसी। ३ सिताजंकवृक्ष, बबई। ४ पर्णास, काली तुलसी। ५ नन्दीवृक्ष, एक पेड़।

कुठेरक (सं० पु०) कुठेर इव कायति प्रकाशते, कुठेर-कै-क। १ तुलसी। २ श्वेततुलसी। ३ सितार्जक, बबई। उसका संस्कृत पर्याय—श्वेततुलसीके अर्थमें अर्जक, श्वेतपर्णास एवं गन्धपत्र और सितार्जक तुलसीके अर्थमें वर्वरी, तुवरी, तुङ्गी, खरपुष्पा, अजगन्धिका और पर्णाश है। ४ नन्दीवृक्ष।

कुठेरज (सं० पु०) कुठेर इव जायते, कुठेर-जन-ड। श्वेततुलसी, सफेद तुलसी।

कुठेरु (सं० पु०) कुठ-एरुक्। चामरवात, मुरछलकी हवा।

कुठौर (हिं० पु०) १ कुत्सित स्थान, बुरी जगह। २ अनुचित अवसर, बेमौका।

कुड़ (हिं० पु०) १ कुष्ठ, कुट। २ अन्नराशि, कूरा। (स्त्री०) ३ जांघा, अगवांसी।

कुड़कुड़ (हिं० पु०) अव्यक्त शब्दविशेष, एक बेमानी लफ्ज़। उसको उच्चारण कर पक्षपची आदि खेतसे निवारण करते हैं।

कुड़कुड़ाना (हिं० क्रि०) १ बुरा मानना, कुढ़ना। २ पक्षी उड़ना, चिड़िया भगाना।

कुड़कुड़ी (हिं० स्त्री०) बुभुक्षा वा अजीर्णके समय उदरमें होनेवाला शब्द, गुड़गुड़ाहट।

कुड़प (सं० पु०) कुड़-कपन्। १ परिमाणविशेष, एक नाप। कुड़प—२२ तोले या ८ पलका होता है।

कुड़पना (हिं० क्रि०) जोतना। वितस्ति परिमाण कंगनी बढ़ आने पर खेतका जोतना कुढ़पना कहाता है।

कुडवक्कल—बम्बई प्रान्तके धारवाड़ जिलेकी एक लिङ्गायत श्रेणी। उक्त जिलेमें इनकी संख्या प्रायः ८५०० है।

कुड़बुड़ाना (हिं० क्रि०) कुड़कुड़ाना, भीतर कुढ़ना।

कुड़री (हिं० स्त्री०) १ कुण्डली, गेंडुरी। २ भूमिविशेष, एक जमीन्। नदीके घुमावसे तीन ओर घिर जानेवाली भूमि कुड़री कहाती है।

कुड़ल (हिं० स्त्री०) शरीरकी ऐंठन, जिस्मका खिंचाव। वह रक्त गर्म या ठण्डा पड़नेसे हो जाती है।

कुड़ली (सं० पु०) काञ्चनारभेद, किसी किस्मका कचनार।

कुड़व (सं० पु०) कुण्डति परिमाति अनेन अस्मिन् वा कुड़-कवन्। १ परिमाणविशेष, एक नापजोख। लीलावतीके मतमें उक्त परिमाण प्रस्थका चतुर्थांश है। किन्तु वैद्यकमतसे वह ३२ तोलेका होता है। उसका संस्कृत पर्याय—अञ्जलि, अष्टमार और शरावार्ध है।

कुड़ा (हिं० पु०) कुटजवृक्ष, कुरैया।

कुड़ालक—कोङ्कणदेशकी एक ब्राह्मणश्रेणी। किसी संस्कृत ग्रन्थमें इन्हें षटकर्मरहित कहा है।

कुडालदेशकर—गौड़ब्राह्मणोंकी एक श्रेणी। वह बंबईके कोङ्कन जिलेमें अधिक रहते हैं।

कुड़ाली (हिं० स्त्री०) कुठारी, कुल्हाड़ी।

कुडि (सं० पु०) कुण्ड्यते दह्यते, कुडि-इन्। शरीर, जिस्म।

कुडिश (सं० पु०) कुड्यते भक्ष्यते ऽसौ, कुड़ बाहुलकात् श-इट्। मत्स्यविशेष, एक मछली। वह मधुर, हृद्य, कषाय, अग्निदीपन, लघु, स्निग्ध, वातमें पथ्य, रोचन, बल्य और कोष्ठबन्धकर होता है। (राजनिघण्टु)

कुडुक (हिं० पु०) १ वाद्यविशेष, एक बाजा। (स्त्री०) २ वन्ध्याकुक्कुटी, अण्डा न देनेवाली मुरगी। ३ निरर्थक, फजूल।

कुड़प (सं० पु०) कुफुल, द्वारका ताला।

कुड़हुञ्ची (सं० स्त्री०) कुडी क्षुद्रा हुञ्ची कारवेल्ली, कर्मधा०। क्षुद्रकारवेल्लक, छोटा करेला। उक्त लताका फल—कटु, उष्ण, अतिरुच्य, दीपन और वातरक्तकर होता है। फिर उसका कन्द—अर्शोहर, मलशोधन और योनिदोषघ्न है। (राजनिघण्टु)

कुडेर (हिं० स्त्री०) एक नाली। वह कुरियामें राव या शीरा निकालनेको प्रस्तुत की जाती है।

कुडेरना (हिं० क्रि०) रावको जैसा बहाना।

कुडौल (हिं० वि०) कुत्सित आकृतिविशेष, भद्दा।

कुड्मल (सं० पु०-क्ली०) कुड् वाल्ये कलच्-मुट् च। वृषादिभ्यश्चित्। उण् १।१०८। १ मुकुल, खिलती कली। २ नरकविशेष, कोई दोजख। ३ कुण्डस्थलीका निकटवर्ती कोई तीर्थ।

"रामकुण्डं कुड्मलञ्च प्राचीसिद्धं शुभोपमम्।
एवं चैवं महादेवि भार्गवेण विनिर्मितम्॥" (सह्याद्रिखण्ड, २।१।२८)

४ नीलोत्पल।

कुड्मलदन्ती (सं० स्त्री०) कुड्मलवत् दन्ताः अस्याः, बहुव्री०। मुकुलवत् दन्त-विशिष्टा स्त्री, कली-जैसे दांतवाली औरत।

कुड्मलित (सं० त्रि०) कुड्मलः सञ्जातोऽस्य, कुड्मल इतच्। मुकुलित, कलियाया हुवा।

कुड्य (सं० क्ली०) कुडौ साधुः, कुडि-यत्। यद्वा कौ भूम्यादित्वात् यक् डुगागमश्च। १ भित्ति, दीवार। २ विलेपन। ३ कौतूहल, ताज्जुब।

कुड्यक (सं० क्ली०) कुड्य स्वार्थे कन्। भित्ति, दीवार।

कुड्यकीटक (सं० पु०) गृहगोधिका, छिपकली।

कुड्यच्छेदी (सं० पु०) कुड्यं भित्तिं छिनत्ति विदारयति, कुड्य-छिद्-णिनि। चौरविशेष, सेंध लगानेवाला चोर।

कुड्यच्छेद्य (सं० क्ली०) कुड्यस्थितं कुड्यस्य वा छेद्यम्। भित्तिका गर्त, दीवारका गड्ढा। अपर संस्कृत नाम—खानिक है।

कुड्यमत्सी (सं० स्त्री०) कुड्ये मत्सी इव, मत्स्यजातित्वात् ङीष् यलोपः। गृहगोधिका, छिपकली।

कुड्यमत्स्य (सं० पु०) कुड्ये मत्स्य इव। छिपकली।

कुढंग (हिं० पु०) कुत्सित, आचरण, बुरा तरीका। (वि०) २ कुढंगा, अनभिज्ञ।

कुढंगा (हिं० वि०) कुत्सित आचरण वा कर्मविशिष्ट, बुरे ढंगवाला।

कुढंगी, कुढंगा देखो।

कुढ़न (हिं० स्त्री०) १ परिताप, जलन। २ परकष्टदर्शनजन्य दुःख, दूसरेको रफा न होनेवाली तकलीफको देख कर पैदा होनेवाला रञ्ज।

कुढ़ना (हिं० क्रि०) परिताप करना, जलना।

कुढ़ब (हिं० वि०) १ बेढब, खराब। २ कठिन, मुशकिल।

कुढ़ाना (हिं० क्रि०) परितापित करना, चिढ़ाना।

कुण (सं० पु०) कुण-अच्। १ अश्वत्थवृक्ष, पीपलका पेड़।

कुणक (सं० पु०) कुण्यते उपक्रियते, कुण कर्मणि घञर्थे क अनुकम्पायां कन्। सद्योजात शिशु, हालका पैदा हुवा बच्चा।

"तं त्वेणकुणकं कृपणं स्रोतसामनुवाह्यमानमवेक्षा।" (भागवत, ५।८)
'एणकुणकं हरिणबालकम्।' (श्रीधर)

कुणञ्ज (सं० पु०) कुणं शब्दकारकं स्वरभेदं जरयति कुण-जृ अन्तर्भूतण्यर्थे ड मुम् च। वनवास्तुकविशेष, किसी किस्मका जङ्गली बथुवा। वह—मधुर, रूक्ष, दीपन और पाचन होता है। उसका शाक—त्रिदोषघ्न, मधुर, रुच्य, दीपन, ईषत् कषाय, संग्राही और लघु है। (राजनिघण्टु)

कुणञ्जर (सं० पु०) कुणं जरयति, कुण-जृ बाहुलकात् खच्। कुणञ्ज देखो।

कुणञ्जा (सं० स्त्री०) कुणंजर क्षुप, जङ्गली बथुवा।

कुणञ्जी कुणञ्जा देखो।

कुणटी (सं० स्त्री०) मनःशिलाविशेष।

कुणन (सं० क्ली०) कुण-ल्युट्। शब्द, आवाज।

कुणप (सं० पु०) क्वण-कपन् सम्प्रसारणञ्च। १ शव, लाश। २ शुक्रदोष, आर्तवदोष। ३ शवकी भांति चेतनाशून्य देह, मुरदेकी तरह बंधा हुवा जिस्म। ४ अस्त्रविशेष, भाला, बरछी। उक्त अस्त्रके लक्षणादि हेमाद्रिपरिशेषखण्डमें इस प्रकार लिखे हैं—परिमाणमें ३० पल और विस्तारमें २४ अंगुलि रहनेसे कुणप श्रेष्ठ होता है। फिर परिमाणमें २५ पल एवं विस्तारमें २२ अंगुलि मध्यम और परिमाणमें २० पल तथा विस्तारमें २० अंगुलि कुणप निकृष्ट है। अल्पवयस्कोंके लिये परिमाणमें २० पल एवं विस्तारमें २० अंगुलि मध्यम और परिमाणमें १२ पल तथा विस्तारमें १६ अंगुलि कुणप निकृष्ट रहता है।

(त्रि०) ५ पूति शवकी भांति दुर्गन्ध, सड़ी लाशकी तरह बदबू देनेवाला।

कुणपगन्ध (सं० पु०) कुणपवत् गन्धः। शवगन्ध, लाशकी बदबू।

कुणपा, कुणपी देखो।

कुणपाण्ड्य (कुनपाण्ड्य)—दक्षिणापथके एक पाण्ड्यराज। नामान्तर कुब्ज वा सुन्दर-पाण्ड्य था। उन्होंने चोलराजको युद्धमें जीत उनकी कन्या वनितेश्वरीसे विवाह किया। प्रथम वह जैन रहे। किसी समय पीड़ित होनेपर उनकी रानीने प्रसिद्ध शिवोपासक ज्ञानसम्बन्धमूर्तिस्वामीको बुलाया था। स्वामीजीने राजाको आरोग्य किया। उसीसे कुणपाण्ड्यने शैवधर्म ग्रहण कर आदेश निकाला था—'हमारे राज्यमें कोई जैन रह न सकेगा। जो रह जायेगा, वह शिरश्छेदका दण्ड पायेगा।' फिर उन्होंने चोलराज्य ध्वंस और तंजोर तथा उरैयुर नगर भस्मसात् किया। उन्होंने चोलराजपुत्रका बलवत् पाण्ड्य नाम रखा था। उन्हींके आदेशसे चोलमन्त्री मदुराके प्रधान मन्त्री पदपर नियुक्त हुवे। पाण्ड्य-राजके समय अरब मदुरा नगर पंहुचे थे।

मार्कपोलोके मदुरा जाते समय कुणपाण्ड्य विद्यमान रहे। उन्होंने अपने ग्रन्थमें 'सेन्देरबन्दी' नामसे सुन्दर नामधारी कुणपाण्ड्यका उल्लेख किया है। कुणपाण्ड्यके ज्येष्ठपुत्र वीरपाण्ड्यचोल थे। वह १०६४ ई० को राजेन्द्र कुलोत्तुङ्ग चोलकर्तृक पराजित हुवे।

कुणपाशी (सं० त्रि०) कुणपभक्षक, मुर्दाखोर।

कुणपी (सं० स्त्री०) कुणप गौरादित्वात् ङीष्। विट्शारिका, एक चिड़िया।

कुणरवाड़व (सं० पु०) एक प्राचीन वैयाकरण।

"कुणरवाड़वस्त्वाह नैष वहीनरः कस्तर्हि विहीनर एव।" (महाभाष्य)

कुणवीरपण्डित—दक्षिण देशके एक विख्यात पण्डित। विङ्गलपत जिलेमें उनका जन्म हुवा था। उन्होंने नेमिनाथ और वेणपापत्तियम नामक दो काव्य रचना किये।

कुणारी (सं० स्त्री०) कुष्ठरोगविहित भक्ष्यद्रव्य, यवपर्पटी।

कुणारु (सं० त्रि०) कुण शब्दने बाहुलकात् आरु सम्प्रसारणञ्च। कुणनशील, बोलनेवाला।

"यद्दाशु पुरहूत चियन्त महस्तमिन्द्र संपिणक् कुणारुम्।"

(ऋक् २।३०।८)

'कुणारुं' कणनशीलम्' (सायण)

कुणाल (सं० पु०) क्वण-कालन् सम्प्रसारणञ्च। पीयुक्षिभ्यां कालन् क्वणः सम्प्रसारणञ्च। उण् ३।७६। १ देशविशेष, एक मुल्क। २ अशोकराजपुत्र एक बौद्ध। कुनाल देखो। ३ पक्षिविशेष, एक चिड़िया।

कुणि (सं० पु०) कुण-इन्। १ तुन्नवृक्ष, तुनका पेड़। २ मर्मस्थानविशेष, कूर्पर, जिस्मकी एक नाजुक जगह। कक्ष और अक्षके मध्यवर्ती स्थानको कुणि कहते हैं। (वाभट।)

३ राजविशेष, कोई राजा। उनके पिताका नाम जय और पुत्रका नाम युगन्धर था। ४ मुनिविशेष। ५ कोई धर्मशास्त्रप्रणेता।

"कुणिश्च कुणिताहिश्च विश्वामित्रकृताश्च ये।" (पराशरमाधव)

६ विदेहराजवंशीय सत्यध्वजके पुत्र। (विष्णुपुराण ४।५ अ०)

७ कोई प्राचीन वैयाकरण।

"कुणिना प्राग्ग्रहणमाचार्यनिर्देशार्थम्।" (महाभाष्यप्रदीपे कैयट १।१।७५)

(त्रि०) कुकर, वक्र वा अकर्मण्य हस्तविशिष्ट, टेढ़े हाथवाला। गर्भिणीका अभिलाष पूर्ण न होनेसे गर्भस्थ शिशु कुब्ज, कुणि, पङ्गु, जड़, वामन प्रभृति होता है। (सुश्रुत)

कुणिक—कोई धर्मशास्त्रप्रणेता। आपस्तम्बधर्मसूत्रमें उनका नाम उद्धृत हुवा है। (आपस्तम्बसूत्र, १।१९।७)

कुणिताहि (सं० पु०) कोई धर्मशास्त्रप्रणेता।

कुणिन्द (सं० पु०) कुण शब्दे किन्द च। कुणि पुल्योः किन्द च। उण् ४।८५। शब्द, आवाज।

कुणिपदी (सं० स्त्री०) कुणिरिव कुण्ठितशक्तिः पादोऽस्याः, कुणि-पाद-ङीष् पद्भावश्च। अल्पगमनशक्तिविशिष्टा स्त्री, कम चल सकनेवाली औरत।

कुणिबाहु (सं० पु०) एक मुनि।

कुणी (सं० पु०) कणभजातीय कीट, एक कीड़ा।

कणभ देखो।

कुपट (सं० क्ली०) १ अर्जक, सफेद तुलसी। २ गुण्ठतृण, एक घास।

कुपटक (सं० त्रि०) कुटि वैकल्ये ण्वुल्। स्थूल, मोटा।

कुण्टकुरण्ट (सं० पु०) झिण्टी, झाड़ी।

कुण्ठ (सं० त्रि) कुण्ठति क्रियासु मन्दीभूतो भवति, कुठि-अच्। १ अकर्मण्य, निकम्मा। २ मूर्ख, बेवकूफ। ३ सङ्कुचित, सिकुड़ा हुवा। ४ प्रतिबद्ध, बंधा हुवा।

कुण्ठक (सं० त्रि०) कुण्ठति कुण्ठयति वा आत्मानं जड़ीभूतं करोति, कुण्ठि-ण्वुल्। १ मूर्ख, बेवकूफ। २ सङ्कोचविशिष्ट, सकुचनेवाला।

कुण्ठता (सं० स्त्री०) कुण्ठस्य भावः, कुण्ठ-तल्। १ अक्षमता, नाताकती। २ मूर्खता, बेवकूफी। ३ सङ्कोच, सकुच।

कुण्ठित (सं० त्रि०) कुठि कर्तरि क्त। १ सङ्कुचित, सिकुचा हुवा। २ लज्जित, शरमाया हुवा। ३ अप्रतिभ, बेरोब। ४ अक्षम, नाकाबिल।

कुण्ड (सं० क्ली०) कुणति, कुण-ड। अमन्तात् डः। उण् १। ११३। १ परिमाणविशेष, एक नाप या तौल। कुण्ड्यते रक्ष्यते जलं यत्र, कुण्ड अधिकरणे अप्। २ देवखात जलाशय। ३ जलाधारविशेष। वैद्यकमतसे उसका जल अग्नि एवं कफवर्धक, रुच, लघु और मधुररस होता है। (राजव०) ४ पात्रविशेष, एक बरतन।

"भुवं कोष्णेन कुण्डोघ्नी मेध्ये नावभृतादपि।" (रघु, १। ८४)

५ स्थाली, हांडी। ६ होमके लिये अग्न्याधार स्थानविशेष। हेमाद्रि-दानखण्डमें उसका लक्षणादि इस प्रकार लिखा है—वेदिसे पदान्तर दूरवर्ती स्थानमें नौ या पांच चतुष्कोण कुण्ड बनाना पड़ते हैं। (भविष्यपुराण) आम्नायरहस्यमें गोलाकार और नानाकार कुण्ड बनानेका विधान है। नौ कुण्ड बनानेमें आठ दिक् आठ और ईशान तथा पूर्व दिक्के मध्यस्थानमें एक कुण्ड बनाते हैं। पांच बनानेमें प्रधानतः चार दिक्में चार और ईशान दिक् एक कुण्ड रखा जाता है। कामिकके फलकामनानुसार कुण्ड बनानेकी दिक् और उसका आकार पृथक् पृथक् निर्दिष्ट है। यथा—पूर्वदिक् चतुष्कोण, अग्निकोणमें योनि—जैसा आकृतिविशिष्ट, दक्षिणमें अर्धचन्द्राकार, नैऋतमें त्रिकोण, पश्चिममें गोलाकार, वायुकोणमें षट्कोण, उत्तरदिक् पद्माकार और ईशान्दिक् अष्टकोण कुण्ड बनाना चाहिये। भविष्यपुराणमें होमके अनुसार कुण्डका हस्त-परिमाण इस प्रकार लिखा है—शताध होम करनेके लिये मुष्टिबद्ध एक हस्त, एकशत होम करनेको एक अरत्नि, सहस्र होम करनेको एकहस्त, अयुत होम करनेको दो हस्त, लक्ष होम करनेको चार हस्त और कोटि होम करनेको आठ हस्त कुण्डका परिमाण रखना उचित है।

उक्त सकल कुण्डके मध्य भागमें पद्माकृति नाभि निर्माण करना पड़ता है। उसका परिमाण मुष्टि, अरत्नि और एकहस्त परिमित है। कुण्डमें तीन अङ्गुलि उच्च और चार अङ्गुलि विस्तृत नाभि बनाना चाहिये। परिमाणकी वृद्धिके अनुसार नाभिका परिमाण भी यथाक्रम दो यव बढ़ाना पड़ता है। पीछे उक्त नाभि तीन भागमें बांट उसके मध्यभागमें एक कर्णिका बनाते और कुण्डके बहिर्भागमें आठ दल निर्माण करना आवश्यक बताते हैं। पद्मराव देखो।

कुण्डके दोष इस प्रकार कहे हैं—कुण्डका खात अधिक होनेसे रोगी होना पड़ता है। खात अल्प रहनेसे धेनुक्षय और धनक्षय होता है। कुण्ड वक्र होनेसे सन्ताप सहते हैं। छिन्नमण्डल होनेसे मृत्यु आता है। मेखलाशून्य रहनेसे शोक उठाते हैं। मेखला अधिक लगानेसे वित्तनाश होता है। योनिशून्य होनेसे भार्यानाश होता है। फिर कुण्ठशून्य रहनेसे पुत्रनाश हुवा करता है। (विश्वकर्मा)

(कुण्डके सम्बन्धमें विस्तृत विवरण जाननेको निम्नलिखित संस्कृत ग्रन्थ द्रष्टव्य है—माधवशुक्ल-रचित कुण्डकल्पद्रुम, ढुण्ढिराजरचित कुण्डकल्पलता, महलश्रीधर-विरचित कुण्डकारिका, विश्वनाथकी कुण्डकौमुदी, रामानन्दतीर्थ प्रणीत कुण्डतत्त्वप्रकाश, बलभद्रसूरि-विरचित कुण्डतत्त्वप्रदीप, महादेव-विरचित कुण्डप्रदीप, बलभद्रसुत कालिदासरचित कुण्डप्रबन्ध, विश्वनाथ देवकृत कुण्डमण्डपकौमुदी, नारायणरचित कुण्डमंडपदर्पण, नरहरि भट्टकी कुण्डमण्डपप्रकाशिका, रामचन्द्राचार्यका कुण्डमण्डप लक्षण, अनन्तभट्ट एवं नीलकण्ठभट्टका कुण्डमण्डपविधान, लक्षणदेशिकेन्द्र और रामवाजपेयीकी कुण्डमण्डपविधि, रामकृष्णका कुण्डमण्डपसंग्रह, विट्ठलदीक्षित और विश्वेश्वरकी कुण्डसिद्धि, विद्याप्रणीत कुण्डमरीचिमाला, गोविन्दभट्टकृत कुण्डमार्तण्ड, विश्वनाथका कुण्ड-रत्नाकर, नीलकण्ठरचित कुण्डोद्योत, अनन्तदेवरचित कुण्डोद्योतदर्शन, कृष्णाचार्यका कुण्डार्क; परशुरामपद्धति, तन्त्रसार और अथर्ववेदका २५श परिशिष्ट)

(पु०) कुण्ड्यते दह्यते कुलं अनेन, कुडि दाह

कर्मणि घञ्। ७ पतिके वर्तमान रहते उपपतिजात पुत्र, दोगला लड़का।

"परदारेषु जायेते द्वौ सुतौ कुण्डगोलकौ।
पत्यौ जीवति कुण्डः स्यात् मृते भर्तरि गोलकः॥" मनु ३। १७४।

'पति जीवित रहते उपपतिके औरससे उत्पन्न होनेवाले पुत्रको कुण्ड और पतिके मरने पीछे उपपतिसे जन्म लेनेवाले पुत्रको गोलक कहते हैं।'

सह्याद्रिखण्डमें भी लिखा है:—

"गोलकं कुण्डगोलञ्च द्विविधं परिकीर्तितम्।
ब्राह्मणी विधवा नारी व्यभिचारेण गर्भिणी॥ १९॥
गोलकं तस्यां पुत्रो वै शूद्रवद्यदि केवलम्।
ब्राह्मणस्य यदा पुत्री जाता द्वादशवार्षिकी॥ २०॥
अविवाहिता च तस्यां वै जातश्चैवानुगोलकः।
ब्राह्मणी विधवा चैव पुनर्विवाहिता कृता॥ २१
तत्पुत्रः कुण्डगोलश्च सर्वधर्मबहिष्कृतः।"
(सह्याद्रिखण्ड, उत्तरार्ध ४ अ०)

गोलक और कुण्ड-गोलक दो प्रकारके जारज पुत्र होते हैं। विधवा ब्राह्मण-कन्या व्यभिचार द्वारा जो पुत्र उत्पादन करती, उसे विद्वन्मण्डली गोलक कहती है। उसका आचरण शूद्रवत् होता है। ब्राह्मण-कन्या द्वादशवत्सर उत्तीर्ण होते भी यदि अनूढ़ा रहे और उसी अविवाहित अवस्थामें किसी पुरुषके संसवसे पुत्रोत्पादन करे तो उस पुत्रका नाम अनुगोलक पड़ेगा। विधवा ब्राह्मणी पुनर्विवाहिता होनेसे कुण्डगोल सन्तान उत्पादन करती है। वह सकल धर्मकर्मबहिर्भूत है।

ब्राह्मणी प्रभृतिके गर्भमें ब्राह्मणादि सवर्ण उपपतिसे उत्पन्न होनेपर कुण्डको उपनयनादि संस्कारका अधिकार है। किन्तु ब्राह्मण होते भी उसे श्राद्धादिमें अन्नदान कर्तव्य नहीं। (स्मृतिस०)

८ सर्पविशेष, एक सांप।

"कच्छपश्चाथ कुण्डश्च तक्षकश्च महोरगः।" (भारत, १।१२३।६८)

कुण्डक (सं० पु०) १ धृतराष्ट्रके कोई पुत्र। (भारत, आदि, १८६ अ०) कुण्ड स्वार्थे कन्। २ कुण्ड।

कुण्डकर्ण (सं० पु०) मुनिभेद। (लिङ्गपुराण, ७।४९)

कुण्डकीट (सं० पु०) कुण्डे नरककुण्डे स्थितः कीट इव चार्वाकसंसृष्टत्वात्। १ चार्वाकमतावलम्बी, नास्तिक। कुण्डे योनिकुण्डे कीट इव। २ दासकामुक, टहलुईके साथ बुरा काम करनेका ख्वाहिशमन्द।

कुण्डकील (सं० पु०) १ दुष्ट व्यक्ति, पाजी शख्स, बुरा आदमी। २ पतित ब्राह्मणीका पुत्र।

कुण्डगोलक (सं० क्ली०) कुण्डे पात्रविशेषे गोलं कं जलं यत्र। १ काञ्जिक, कांजी। (पु०) कुण्डश्च गोलकश्च तौ, द्वन्द्व। विधवा ब्राह्मणीजात पुत्रद्वय। कुण्ड देखो।

कुण्डङ्ग (सं० पु०) कुण्डं तदाकारं गच्छति प्राप्नोति, कुण्ड-गम बाहुलकात् ख-डिच्च। कुञ्ज, पेड़ोंसे घिरी हुई जगह। प्रकृत पाठ कुड़ङ्ग है।

कुण्डङ्गक, कुण्ड देखो।

कुण्डज (सं० पु०) धृतराष्ट्रके एक पुत्र।
(भारत, आदि, ६७ अ०)

कुण्डजठर (सं० त्रि०) कुण्डमिव जठरं यस्य, बहुव्री०। कुण्डको भांति उदरविशिष्ट, गड्ढे-जैसे पेटवाला। (पु०) २ मुनिविशेष।

"आत्रेयः कुण्डजठरो द्विजः कालघटस्तथा।" (भारत, आदि, ५३ अ०)

कुण्डधार (सं० पु०) कुण्डं कुण्डाकारं धारयति, कुण्ड-धृ-णिच्-अण्। १ सर्पविशेष। (भारत, सभा, ९ अ०) २ धृतराष्ट्रके कोई पुत्र। (भारत, आदि, ११७।११)

कुण्डपाय (सं० पु०) सोमलता।

कुण्डपायिनामयन (सं० क्ली०) कुण्डपायिनां अयनम्, अलुक् समा०। एकविंशति रात्रि दीक्षित रहनेसे होता है। उसके पीछे १ मास जानेसे सोमसंग्रह करना पड़ता है। फिर यथानियम यज्ञारम्भ कर्तव्य है
(आश्वलायन श्रौतसूत्र १२।४।६७, कात्यायन श्रौतसूत्र २४.४।२१)

कुण्डपायिनामयनन्याय (सं० पु०) जैमिनिकथित न्यायविशेष। उक्त न्याय कुण्डपायिनामयन नामक यज्ञके अग्निहोत्रविधानमें प्रकृत अग्निहोत्रकी अपेक्षा अन्य कर्मका प्रतिपादक है।

कुण्डपायी (सं० पु०) कुण्डेन कुण्डाकारचमसेन पिबति सोमम्, कुण्ड-पा-णिनि। कुण्डद्वारा सोमपानकारी, उक्त शब्द प्रायः बहुवचनान्त प्रयोग किया जाता है।

कुण्डपाय्य (सं० पु०) कुण्डैः चमसैः पीयतेऽस्मिन् सोम इति शेषः, कुण्ड-पा अधिकरणे ण्यत् युगागमश्च। कृतौ कुण्डपाय्यसञ्चाय्यौ। पा ३। १। १३१। एक यज्ञ।

"यस्य प्रकृत्यम्भो नपात् प्रणपात् कुण्डपाय्यः।" (चरक, ८।१७।१२)

"कुण्डपाय्यः क्रतुः।" (महाभाष्य, ३।१।६)

कुण्डपुर—दक्षिणापथके कनाड़ाका एक नगर। वह अक्षा० २७° ३५' उ० और देशा० ७५° १५' पू० पर अवस्थित है।

कुण्डप्रस्थ (सं० पु०) नगरविशेष, एक शहर। (काशिका० ६।२।७)

कुण्डभेदी (सं० पु०) धृतराष्ट्रके एक पुत्र। (भारत, आदि. ११७।११)

कुण्डल (सं० क्ली०) कुण्डयति रक्ष्यति, कुडि वृषादित्वात् कलच् यद्वा कुण्डं तथाकारं लाति गृह्णाति, कुण्डला क। १ कर्णालङ्कारविशेष, कानका कोई गहना।

"कानन-कुण्डल-कुञ्चित केशा।" (हनुमान् चालीसा)

२ पाश, फांस। ३ वलय, बाला। ४ वलय सदृश बन्धनी। ५ समूह, ढेर। (पु०) ६ कौरव्य कुल-जात सर्पविशेष, कोई सांप। (भारत, आदि ५७अ०)
७ रक्त काञ्चन वृक्ष, लाल कचनार।

"रक्तपुष्पः कोविदारो युग्मपत्रस्तु कुण्डलः।" (रत्नमाला)

कुण्डलना (सं० स्त्री०) कुण्डलं वेष्टनं करोति, कुण्डल-णिच् भावे युच्-टाप्। वेष्टनकार्य, विराव।

"विषमां कुण्डलनामवापिता।" (नैषध)

कुण्डलपत्र (सं० पु०) वृक्षविशेष, देवनाका पेड़।

कुण्डलपाण्ड्य—एक पाण्ड्यराज। वह कुवलयानन्द पाण्ड्यके पुत्र थे।

कुण्डला (सं० स्त्री०) १ नदीविशेष, कोई खास दरया। (भारत, भीष्म, ९।२१)

२ त्रिपुरा जिलाके अन्तर्गत कोई प्राचीन ग्राम। वह अक्षा० २३° १२' उ० और देशा० ९१° १८' पू० पर अवस्थित है। ३ अजमीरके अन्तर्गत एक नगर। वह अक्षा० २७° ३५' उ० और देशा० ७५° १५' पू० पर अवस्थित है।

कुण्डलाकार (सं० त्रि०) कुण्डलवत् आकारो यस्य, बहुव्री०। कुण्डलकी भांति आकारविशिष्ट, बाला जैसा।

कुण्डलिका (सं० स्त्री०) मात्राछन्दोविशेष, कुण्डलिया। उसका लक्षण इस प्रकार है:—

"कुण्डलिका सा कथ्यते प्रथमं दोहा यत्र।
रोला चरणचतुष्टयं प्रभवति विमलं तत्र॥
प्रभवति विमलं तत्र पदमतिसुललितयमकम्।
अष्टपदी सा भवति विमलकविकौशलगमकम्॥
अष्टपदी सा भवति सुखित-पलितमण्डलिका।
कुण्डलीनायकभणिता विबुधकण्ठे कुण्डलिकेति॥"

हिन्दीमें गिरिधरदासकी कुण्डलिका (कुण्डलिया) प्रसिद्ध हैं। कुण्डलिनी देखो।

कुण्डलिनायक (सं० पु०) पिङ्गलसर्प, भूरा सांप।

कुण्डलिनी (सं० स्त्री०) कुण्डलं अस्त्यस्याः, कुण्डल-इनि-ङीप्। १ कुलकुण्डलिनी नाम्नी शक्ति। तन्त्रसारमें लिखा है—

"ध्यायेत् कुण्डलिनीं सूक्ष्मां मूलाधारनिवासिनीम्।
तामिष्टदेवतारूपां सार्धं त्रिवलयान्विताम्॥
कोटिसौदामिनीभासां स्वयम्भूलिङ्गवेष्टिनीम्।
तामुत्थाप्य महादेवीं प्राणमन्त्रेण साधकः॥
उद्यद्दिनकराभीतां यावच्छ्वासं दृढासनः।
अशेषाशुभशान्त्यर्थं समाहितमनाश्चिरम्॥
तत्प्रभापटलव्याप्तं शरीरमपि चिन्तयेत्।"

सूक्ष्मा, मूलाधारनिवासिनी, इष्टदेवतास्वरूपिणी, सार्धत्रिवलयद्वारा वेष्टिता, कोटि विद्युत्की भांति उज्ज्वलकान्तिविशिष्टा, स्वयम्भूलिङ्गकी वेष्टनकारिणी और उदयोन्मुख सूर्य सदृश प्रभासम्पन्ना कुण्डलिनीको ध्यान लगा प्राणमन्त्र द्वारा उत्थापित करना चाहिये। फिर यावतीय अशुभकी शान्तिके लिये समाहित मन एवं दृढ़भावसे उपविष्ट हो जितने क्षण श्वासरोध कर रख सकते, उतने क्षण पर्यन्त उसकी चिन्ता करते हैं। अपने शरीरमें भी इस प्रकार चिन्ता करनी पड़ती, कि वह अपने प्रभासमूह द्वारा उसमें व्याप्त रहती है।

२ मिष्टान्नविशेष, जलेबी। भावप्रकाशमें उसकी प्रस्तुतप्रणाली और गुणादि इस प्रकार लिखते हैं—'किसी नयी हांडीमें अर्धप्रस्थ-परिमित दधिका लेप लगा २ प्रस्थ मैदा, १ प्रस्थ अम्ल दधि और आध सेर घृत मिला रख छोड़ना चाहिये। फिर किसी छिद्रयुक्त पात्रमें उक्त द्रव्य अल्प अल्प उठा कर रखते और हाथ घुमा घुमा कर उत्तप्त घृतमें उसे चक्राकार डाल कर तलते हैं। किसी दूसरे पात्रमें शर्कराका रस (जलाव) रखना पड़ता है। घीमें तलनेसे लाल होते ही जलेबी निकाल कर जलावमें डुबायी जाती है। इसी प्रकार वह बनती है। कुण्डलिनी (जलेबी) पुष्टिकर, अग्नि-

कर, बलकर, धातुवर्धक, शुक्रवर्धक, रुचिकर और हृप्तिजनक है। ३गुडूची, गुर्च।

कुण्डली (सं० पु०) कुण्डलं अस्यास्ति, कुण्डल-इनि। १ सर्प, सांप। २ वरुण। ३ मयूर, मोर। ४ चित्रमृग, एक हिरन। ५ विष्णु। ६ आरग्वधवृक्ष, अमलतासका पेड़। (त्रि०) ७ कुण्डलयुक्त।

कुण्डली (सं० स्त्री०) कुण्डल जातौ ङीष्। १ मिष्टान्न-विशेष, जलेबी। २ कुलकुण्डलिनी शक्ति। हठयोग-दीपिकामें उसके कई पर्याय लिखे हैं—कुटिलाङ्गी, कुण्डलिनी, भुजङ्गी, शक्ति, ईश्वरी और अरुन्धती। सम्मोहनतन्त्रमें कहते हैं—

"त्रिकोणं तत्र विज्ञेयं शक्तिपीठं मनोहरम्।
तदगह्वरे कामवायुर्जीवरूपोऽतिचञ्चलः॥
अधोमुखस्तत्र लिङ्गः स्वयम्भूस्तं न चाल्यते।
नीवारशूकवत्तन्वी कुण्डली परदेवता॥
शङ्खतुल्यनिभा देवी सार्धं त्रिवलयान्वि ता।
मुखेनाच्छाद्य ब्रह्मास्यं तया संवेष्टितः प्रभुः॥
डाकिनी तत्र वसति द्वारपाली सयष्टिका।
यः साधकोऽत्र रमते स दिव्यो नैव मानुषः॥"

'मनोहर शक्तिपीठ त्रिकोणाकार है। उसके गह्वरमें जीवरूपी अति चञ्चल कामवायु अवस्थित है। फिर उसमें अधोमुख लिङ्गरूपी स्वयम्भू अवस्थान करते हैं। उक्त स्वयम्भूलिङ्गके नीवारधान्यके अग्रभागकी भांति सूक्ष्म, शङ्खवर्ण और साढ़े तीन वलययुक्त श्रेष्ठदेवता कुण्डली चालित होती है। वह मुख द्वारा ब्रह्ममुख आच्छादन कर प्रभुको लपेटे है। फिर उक्त स्थानमें यष्टिहस्त पर द्वारपाली डाकिनी रहती है। सुतरां जो साधक उक्त स्थानको अधिकार कर सकता, वह मानव नहीं—देवता ठहरता है।' (सम्मोहनतन्त्र)

३ गुडूची, गुर्च। ४ काञ्चनवृक्ष, कचनार। ५ सर्पिणी वृक्ष, एक पेड़। ६ कपिकच्छु, केवांच। ७ कुमारी, घीकुवार। ८ जन्मपत्रिका।

कुण्डलीकृत (सं० त्रि०) कुण्डल-च्वि-कृ-क्त। कुण्डल-रूपमें परिणत, गिंडरी बनाया हुवा।

कुण्डलीवाहन (सं० पु०) सर्पिणीवृक्ष, एक पेड़।

कुण्डलीभूत (सं० त्रि०) कुण्डल-च्वि-भू-क्त। कुण्डल-रूपमें परिणत; गिंडुरी बना हुवा।

कुण्डशायी (सं० पु०) धृतराष्ट्रके एक पुत्र।

(भारत आदि, ११७। ९)

कुण्डा—विहारप्रान्तके हजारीबाग उपविभागका एक टूटा दुर्ग। यह अक्षा० २४° १३' उ० और देशा० ८४° ३९' पू० पर अवस्थित है। कुण्डा समान्तर चतुर्भुजकी आकृतिका बना और प्रायः २८० फीट लम्बा तथा १७० फीट चौड़ा है। पश्चिमकी ओर दरवाजे पर एक केन्द्रीय बुर्ज बना है। जिसमें कोनोंके चौकोर ४बुर्ज प्रायः ३० फीट ऊंची छेददार दीवा-रसे लगी हैं। यह किला बचावके लिये बहुत अच्छा है। इसको प्रायः चारो ओर पहाड़ घिरे हैं।

कुण्डा—युक्तप्रदेशके प्रतापगढ़ जिलेकी पश्चिमी तहसील। यह अक्षा० २५° ३४' एवं २६° १' उ० और देशा० ८१° १९' तथा ८१° ४७' पू०के मध्य अवस्थित है। इसमें बिहार, धींगवास, रामपुर और [illegible] परगने लगते हैं। भूमिका परिमाण ५४३ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ३२३५०८ है। यह तहसील गंगाके उत्तरपूर्व पड़ती जिसकी सीमापर उपजाऊ चिकनी मट्टी मिलती है। भीतरी भागमें कितने ही झील हैं, जिनसे धानकी खेतीको पानी पहुंचता है।

कुण्डाग्नि (सं० पु०) स्थानविशेष, एक खास जगह।

कौण्डपक देखो।

कुण्डाचल—नीलगिरि जिलेके अन्तर्गत एक पर्वत। यह अक्षा० ११° ९' से ११° २१' ४१" उ० और देशा० ७६° २७' ५०" से ७६° ४६' पू० पर्यन्त नीलगिरि अधि-त्यकाके पश्चिम प्राचीरकी भांति अवस्थित है। कुण्डा-चलसे ही भवानी नदी निकली है।

कुण्डाशी (सं० त्रि०) कुण्डं योनिकुण्डं तदुपलक्षी-कृत्य अश्नाति जीवनयात्रां यापयति, कुण्ड-अश्-णिनि। १ कुटना, भड़वा। कुण्डस्य जारजातस्य अन्नं अश्नाति। कुण्डका अन्नभोजी, दोगलेकी रोटी खानेवाला।

"रङ्गोपजीवी कैवर्तः कुण्डाशी गरदस्तथा।
सूची माहिषिकश्चैव पर्वकारी च यो द्विजः॥
आगारदाही मित्रघ्नः शाकुनि ग्रामयाजकः।
रुधिरान्धे पतन्त्येते सोमं विक्रीणते च ये॥" (विष्णुपुराण, २। ६। २१)

नाटकादि अभिनयकार्यद्वारा जीवनयात्रा चलाने-

वाला, मत्स्यजीवी, कुण्डाशी, विषदाता, खल, माहिषिक, पर्वकारी, अपर्व दिनको पर्वप्रवर्तक, गृहदाहक, मित्रनाशक, व्याध, ग्रामयाजक और सोमलता-विक्रेता पतित होता है।

कुण्डिक (सं० पु०) कुरुवंशीय अपर धृतराष्ट्रके एक पुत्र। (भारत, आदि, ९४अ०)

कुण्डिका (सं० स्त्री०) कुण्ड स्वार्थे कन्-टाप् अत इत्वम्। १ कमण्डलु। २ पिठर, कूंजी। ३ ताम्र-कुण्ड। ४ स्थाली, हांडी। ५ सामवेदान्तर्गत उपनिषद्विशेष।

"अव्यक्तोकाक्षरं पूर्णा सूर्याचाध्यात्म कुण्डिका।" (मुक्तिकोपनिषत्)

कुण्डिन—नगरविशेष, एक शहर।

उक्त नगरके वर्तमान अवस्थिति-सम्बन्धमें मतभेद लक्षित होता है। किसीके मतानुसार युक्तप्रदेशमें बुलन्द-शहर जिलाके अन्तर्गत अनूपशहर तहसीलमें अहार नामक जो एक नगर पड़ता, उसीका प्राचीन नाम कुण्डिन ठहरता है। वहां भीष्मकदुहिता रुक्मिणीने बाल्यकाल अतिवाहित किया था। वह श्रीकृष्णसे मिलनेके लिये जिस अम्बिका-मन्दिरमें देवीको आराधना करती थीं, वह मन्दिर अद्यापि 'अहार' नगरमें विद्यमान है।

फिर अवध प्रदेशके खेरी जिलेमें खोरीगढ़ नगरके पार्श्व पर कुण्डिलपुर या 'कुण्डनपुर' नामक एक प्राचीन ग्राम है। वहां बहुतसी खोदित प्रस्तरमूर्तिका भग्नविशेष और सुवृहत् मृत्तिकास्तूप दृष्ट होता है। उक्त स्थानके लोगोंको विश्वास है कि कुण्डिनपुरमें राजा भीष्मक राजत्व करते थे, वहींसे श्रीकृष्ण रुक्मिणीको हरण करके ले गये।

आसाम प्रदेशके सदिया जिलेमें प्रवाद है कि उक्त जिलेके कुण्डिलपुर नामक स्थानसे ही श्रीकृष्ण रुक्मिणीको भगा ले गये थे।

फिर किसी पाश्चात्य प्रत्नतत्त्वविद्के मतमें—वर्तमान वेरार प्रदेशका प्राचीन नगर कोण्डवीर भीष्मककी राजधानी कुण्डिनपुर था।

ऊपर जो कई मत उद्धृत हुये हैं, उनमें कोई ठीक नहीं। हरिवंश, विष्णुपुराण और भागवत पाठसे समझ पड़ता कि भीष्मक विदर्भके राजा और कुण्डिन विदर्भकी राजधानी था। यथा—

"विदर्भा तु कुण्डिनम्।" (हेमचन्द्र, ३। ४५)

"मानुष्ये कुण्डिनगरे भीष्मकस्याङ्गनोदरे।
जायेस्त्वं विपुलश्रोणि प्रत्यवेचस्व केशवम्॥" (हरिवंश, १०९। २९)

"आगतोऽतिथिरूपेण विदर्भनगरीं हरिः।" (हरिवंश, १०८। २२)

"आगताः कुण्डिनगरे कन्याहेतोर्नराधिपाः।" (हरिवंश, १०८। २८)

"भीष्मकः कुण्डिने राजा विदर्भविषयेऽभवत्।" (विष्णुपुराण, ५। २६। २)

"पत्यश्वसङ्कुलैः सैन्यैः परीतः कुण्डिनं ययौ॥"

तं वै विदर्भाधिपतिः समभ्येत्याभिपूज्य च।" (भागवत, १०। ५३। १६)

विदर्भराजकन्या होनेसे रुक्मिणीका अपर नाम वैदर्भी था। विदर्भका वर्तमान नाम बिदर है। आजकल वह हैदराबादके अन्तर्गत है। वर्तमान हैदराबादका अधिकांश प्राचीनकालमें 'विदर्भ' नामसे विख्यात था।

विदर्भ देखो।

भागवतके पाठसे समझते हैं कि कृष्ण एक रात्रिमें आनर्तदेशसे विदर्भराज्य पहुंचे थे।

"आरुह्य स्यन्दनं शौरिर्द्विजमारोप्य तूर्णगैः।
आनर्तादेकरात्रेण विदर्भानगमध्धयैः॥ ६॥
राजा स कुण्डिनपतिः पुत्रस्नेहवशानुगः।" (भागवत, १०।५३)

प्राचीन आनर्तदेश वर्तमान गुजरात, काठियावाड़ और सूरतका कियदंश था। उसीसे थोड़ी दूर पूर्वको विदर्भराज्यको सीमा रही। यन्त्रराज नामक संस्कृत-ज्योतिषके मतमें कुण्डिनपुर २६। २९ देशीय अक्षांश-पर अवस्थित है।

वर्तमान बिदर नगरके ५४´ ५४´´ अक्षांश उत्तर गोदावरी नदीके दक्षिण कूलसे ढाई कोस दूर (अक्षा० १८° ४८´ उ० और देशा० ७७´ ४५´ पू० के मध्य) कुण्डिनवती नाम्नी एक प्राचीन नगरी है। आजकल उसकी अवस्था नितान्त मन्द होते भी भूतत्त्व पर्यालोचना करनेसे किसी समय उसके समृद्धिशाली होनेके अनेक प्रमाण मिलते हैं। उक्त कुण्डलवती* ही विदर्भराज्यको प्राचीन राजधानी 'कुण्डिन' नगर समझ पड़ती है।

कुण्डिन (सं० पु०) कुडि रक्षायां दाहे च इनच् किच्च। बहुलमन्यत्रापि। उण् २।४८। १ मुनिविशेष। २ कुरु-वंशीय कोई राजा

*कुण्डिलवती हैदराबाद नगरसे २६ कोस उत्तर पश्चिम अवस्थित है वहां लोग उसे कुण्डिलवदी कहते हैं।

"इत्थो वितर्कः कायस्य कुण्डिनस्यापि पश्चमः।" (भारत, आदि, ९४। २६)

२ वृत्तिकारविशेष।

कुण्डिनी (सं० स्त्री०) कुण्डिन्-ङीप्। रत्नभांड़विशेष, जवाहरातका कोई बरतन।

"सन्ति निष्कसहस्राणि कुण्डिन्यो भरिताः शुभाः।"

(भारत, सभा, ५९ अ०)

कुण्डी (सं० पु०) कुडि-णिनि, यद्वा कुण्ड अस्त्यर्थे इनि। १ कुण्डयुक्त। (पु०) २ शिव। ३ अश्व, घोड़ा।

कुण्डी (सं० स्त्री०) कुडि-इन्-ङीष् यद्वा कुण्ड संज्ञायां ङीष्। १ कमण्डलु। २ स्थाली, हांडी। ३ शुक्लयूथिका, सफेद जूही।

कुण्डीर (सं० पु०) कुण्ड्यते दह्यते संसारानलमत्ता येन, कुडि ईरन्। १ मनुष्य, आदमी। २ धरणी, जमीन्। (त्रि०) कुण्ड्यते रक्ष्यते बलवान् येन। ३ बलवान्, ताक़तवर।

कुण्डु—(कुण्ड) एक उपाधि। कायस्थ, आगरी, गन्धवणिक् जूलाहा, कैवर्त, तेली, कसेरा, सूत्रधार प्रभृति जातिके मध्य बङ्गालमें उक्त उपाधि दृष्ट होता है।

कुण्डृवाची (वै० स्त्री०) कुटिलगति, तिरछी चाल।

"पतति कुण्डृवाच्या।" (ऋक, १। २९। ६०)

'कुण्डृवाच्या वक्रया गत्या।' (सायण)

कुण्डोद (सं० पु०) महाभारतोक्त एक पर्वत।

"कुण्डोदः पर्वतो रम्यो बहुमूलफलोदकः।

नैषधस्तृषितो यत्र जलं शर्म च लब्धवान्॥" (भारत, वन, ८७ अ०)

कुण्डोदर (सं० पु०) कुण्ड इव उदरमस्य, बहुव्री०। १ सर्पविशेष, एक सांप। (भारत, आदि, ३५ अ०) २ जनमेजयके पुत्र और धृतराष्ट्रके भ्राता। ३ धृतराष्ट्रके कोई पुत्र। (त्रि०) ४ कुण्डकी भांति उदरयुक्त, कूंडे जैसे पेटवाला।

कुण्डोध्नी (सं० स्त्री०) कुण्डवत् ऊधाः यस्याः, बहुव्री०। १ कूंडे-जैसे आयनवाली गाय। २ पीनपयोधरा, चढ़ी छातीकी औरत।

कुत (सं० पु०) सूर्यके एक पारिपार्श्विक।

कुतः (सं० अव्य०) १ किस स्थानसे, कहांसे। २ किस हेतुसे, क्यों। ३ कैसे। ४ क्योंकि। ५ क्या।

"परमात्मनि गोविन्दे मित्रामित्रकथा कुतः।" (विष्णुपुराण, १। १९। ९७)

कुतक (सं० क्ली०) रसाञ्जन।

कुतका (हिं० पु०) १ गतका, खेलनेका कोई डंडा। २ सोंटा।

कुतनय (सं० पु०) कुत्सितो तनयश्चेति, कर्मधा०। कुपुत्र, कपूत।

कुतना (हिं० क्रि०) कूता जाना, गणनामें आना।

कुतनु (सं० पु०) कुत्सिता तनुर्यस्य, बहुव्री०। १ कुबेर। (त्रि०) २ कुत्सित शरीर, बुरे जिस्मवाला।

कुतन्त्री (सं० स्त्री०) कुनिन्दिता तन्त्री, कर्मधा०। कुत्सितवीणा, बुरी बीन।

कुतप (सं० पु०) कुत्सितं पापं तपति, यद्वा कु भूमिं तपति, कु-तप-अच् अथवा कुत-कपन्। १ सूर्य, सूरज। २ अग्नि, आग। ३ ब्राह्मण। ४ अतिथि, मेहमान्। ५ गो, गाय। ६ भागिनेय, भानजा। ७ कुश। ८ छागलोमका कम्बल, बकरीके रूयेंकी कमरी। ९ दिनमानका अष्टमांश। १० वाद्यविशेष, कोई बाजा। ११ दौहित्र, लड़कीका लड़का, नाती। १२ क्षुद्रघट, छोटा घड़ा। (त्रि०) १३ ईषदुष्ण, कुछ गर्म।

कुतपकाल (सं० पु०) कुतपश्चासौ कालश्चेति, कर्मधा०। दिनमानका अष्टमांश, दिनका आठवां हिस्सा। १५ मुहूर्त्त में विभक्त कर दिनमानके अष्टम भागको कुतप काल कहते हैं।

"अह्नो मुहूर्ता विख्याता दश पञ्च च सर्वदा।

तस्याष्टमो मुहूर्तो यः स कालः कुतपो स्मृतः॥" (मत्स्यपुराण)

कुतपकालको ही एकोद्दिष्टश्राद्ध आरम्भ करना पड़ता है।

"आरभ्य कुतपे श्राद्धं कुर्यादारौहिणं बुधः।

विधिज्ञो विधिमास्थाय रौहिणं तु न लङ्घयेत्॥" (श्राद्धतत्त्व)

कुतपकालसे आरम्भ करके नवम मुहूर्त पर्यन्त श्राद्ध करना चाहिये। विधिज्ञ व्यक्तिके लिये उक्त रौहिणकाल उल्लङ्घन करना कदापि कर्तव्य नहीं।

कुतपसप्तक (सं० क्ली०) १ श्राद्धविशेष। २ कृष्णतिल, काला तिल। ३ रौप्य, चांदी। ४ ऊर्णवस्त्र, ऊनी कपड़ा।

कुतपस्वी (सं० पु०) कुत्सितः तपस्वी, कर्मधा०। निन्दित तपस्वी, अच्छी तपस्या न करनेवाला।

कुतवार—ग्वालियरराज्यका एक प्राचीन नगर। वह ग्वालियरके दुर्गसे ८॥ कोस उत्तर आसन नदीके

दक्षिणकूल पर अवस्थित है। देशी लोगोंके विश्वासानुसार कुन्तिदेवीके पालक-पिता कुन्तिभोज वहीं रहते थे। कोई कुतवारका प्राचीन नाम कुमन्तलपुरी वा कुन्तलपुरी बताते हैं। फिर किसी किसीके मतमें उसका पौराणिक नाम कान्तिपुरी है।

हमारी समझमें कुतवार और उसका चतुर्दिक्स्थ जनपद पूर्वकालको 'कुन्तिराष्ट्र' वा 'कुन्तिभोज' नामसे प्रसिद्ध था।

"कुन्तिराष्ट्रं च विपुलं सुराष्ट्रावन्तयस्तथा।" (भारत, विराट १।१२)

सहदेवके दिग्विजयमें लिखा है—

"नवराष्ट्रं च निर्जित्य कुन्तिभोजमुपाद्रवत्।
प्रीतिपूर्वं च तस्यासौ प्रतिजग्राह शासनम्॥
ततश्चर्मण्वतीकूले जम्भकस्यात्मजं नृपम्।
ददर्श वासुदेवेन शेषितं पूर्ववैरिणा॥" (भारत, सभा, ३०।६-७)

उन्होंने नवराष्ट्र जीत कुन्तिभोजको विध्वस्त किया था। फिर चर्मण्वती नदीतीर जम्भकसे उनका साक्षात् हुवा।

चर्मण्वतीका वर्तमान नाम चम्बल है। वह ग्वालियर राज्यके पूर्व सीमा-रूपमें वर्तमान कुतवार नगरसे १० कोस पश्चिम प्रवाहित है। कुन्ति और कुन्तल देखो।

उस समय कुतवार विशेष समृद्धिशाली था। आज भी वहां विस्तर प्रस्तरमूर्ति और प्राचीन गृहादिका ध्वंसावशेष पड़ा है। कुतवारसे तोमर राजावोंकी दो और नागराक्षरोंमें लिखी हुई कई शिलालिपि निकली हैं।

कुतरन (हिं० पु०) खंडित वस्त्र, कटा हुवा कपड़ा।

कुतरना (हिं० क्रि०) १ थोड़ा थोड़ा दांतसे काटना। २ काट लेना, निकालना।

कुतर्क (सं० पु०) कुत्सितः कर्मधा०। निन्दनीय तर्क, बुरी दलील।

'व्यासवाक्यजलौघेन कुतर्कतरुहारिणा।' (मार्कण्डेयपुराण, १।१०)

कुतर्कपथ (सं० पु०) कुतर्कस्य पन्था, ६-तत्। कुतर्कका पथ वा उपाय, बुरी दलीलकी राह।

कुतर्की (सं० पु०) कुतर्क-इनि। १ कुत्सित तर्क उपस्थित करनेवाला, जो बुरी दलील लगाता हो। (त्रि०) २ कुतर्कविशिष्ट, जिसमें बुरी दलील रहे।

कुतला (हिं० पु०) हंसिया, काटनेका एक हथियार।

कुतवार (हिं० पु०) १ फसल कूटनेवाला। २ कोतवाल। ३ एक प्राचीन नगर। कुतबार देखो।

कुतवारी (हिं० स्त्री०) १ कोतवालका काम। २ कोतवालके काम करनेकी जगह।

कुतस्त्य (सं० त्रि०) कुतो भवः, कुतस्-त्यप्। कहांसे आया हुवा, कैसे गुजरा हुवा।

"कुतस्त्या" भीरु यतिभ्यो द्रुह्याम्योऽपि चमामहे।" (भट्टि, ५।८)

कुतापस, कुतपस्वी देखो।

कुतार (हिं० पु०) १ असुविधा, अड़चन। २ कुप्रबन्ध, बदइन्तिजामी।

कुतित्तिरि (सं० पु०) कुत्सितः तित्तिरिः, कर्मधा०। १ निन्दित तित्तिरिपक्षी, खराब तीतर। २ तित्तिरिपक्षिविशेष, किसी किस्मका तीतर। उसका मांस-मधुर एवं कषायरस, लघु, शीतवीर्य और त्रिदोष नाशक है। (सुश्रुत)

कुतिया (हिं० स्त्री०) १ कुक्कुरी, कुत्तेकी मादा। २ कुत्सितस्त्री, बुरी औरत।

कुतिया—युक्तप्रदेशके फतेहपुर जिलेकी कल्याणपुर तहसीलका एक गांव। वह फतेहपुर नगरसे ५॥ कोस उत्तर-पश्चिम अवस्थित है। प्रत्नतत्त्वविद् कनिङ्गहाम साहबके मतमें उक्त ग्रामही चीन-परिव्राजक युयेन चुयाङ्ग-वर्णित 'ओ-यु-तो' नामक स्थान है। कुतिया १०० वर्ष पूर्व अपनी पूर्वपार्श्वस्थ उच्च भूमि पर बसा था। आज कल उसे बड़ागांव कहते हैं। वहां नीमके नीचे कई प्राचीन भग्न प्रस्तरमूर्ति मिली हैं।

कुतीपाद (सं० पु०) सामवेदोक्त एक ऋषि।

कुतीर्थ (सं० पु०) कुत्सितः तीर्थः, कर्मधा०। १ निंदित-तीर्थ, खराब तीरथ। २ कु आचार्य।

कुतु, कुतुप देखो।

कुतुक (सं० क्लो०) कुत् बाहुलकात् उकञ्। १ कौतुक, तमाशा। २ कौतूहल, ताज्जुब।

कुतुकी (सं० त्रि०) कुतुकमस्यास्ति, कुतुक-इनि। कौतूहल-युक्त, मुताज्जिब, अचम्भेमें पड़ा हुवा।

"क्रमविगलितपुच्छैरभिमतमाशां वधैन किं खिन्नः।
कुतुकिनि! पुनर्न लाभो विषधर-विषमं वनं भविता॥" (उद्भट)

कुतुप (सं० पु०-क्लो०) कुतप पृषोदरादित्वात् साधुः

१ पञ्चदश भागमें विभक्त दिनमानका अष्टमांश। कुतप देखो। कुत्वा कुतुः-डुप् पृषोदरादित्वात् अकारागमः। २ चर्मनिर्मित तैलादिका क्षुद्रपात्र, चमड़ेकी कोटी कुप्पी।

कुतुव (अ० पु०) १ ध्रुवतारा। २ पुस्तक।

कुतुव-आलम—१ एक विख्यात मुसलमान फकीर। उनका प्रकृत नाम सैयद शेख बुरहान्-उद्-दीन था। उनके पितामह भी एक प्रसिद्ध व्यक्ति थे। उनका नाम मखदूम-जहानियां सैयद जलाल बोखारी रहा। कुतुव आलम गुजरातमें रहते थे। वहीं वह १४५३ ई० को ८ वीं दिसम्बरको मर गये। गुजरातमें अहमदाबादसे ६ मील दूर वतूह नामक स्थान पर उनका समाधि-मन्दिर है। उक्त समाधि-मन्दिर (कब्र)-के द्वारमें एक पत्थर लगा है। ठीक नहीं कहा जा सकता कि—वह वास्तवमें प्रस्तर, लौह वा काष्ठ है।

२ कोई दूसरे मुसलमान फकीर। उनका प्रकृत नाम शेख नूर-उद्-दीन् अहमद था। लाहोरमें उन्होंने जन्म लिया। १४४४ ई० को विहारके पिण्डुवा नामक स्थानमें वह मर गये। वहीं उनकी कब्र भी बनी है।

कुतुव-उद्-दीन ऐवक—दिल्लीके एक बादशाह। वह दिल्लीवाले दास-राजवंशके प्रतिष्ठाता रहे। कुतुव-उद्-दीन पहले गजनी और गोरके राजा शहाब्-उद्-दीन् मुहम्मद गोरीके क्रीतदास थे। पीछे वह उनके सेनापति हो गये। शेषमें ११९२ ई० को अजमेरके राजा पृथ्वीरावके पराजित होने पर शहाब-उद्-दीन उन्हें अजमेरमें स्वीय प्रतिनिधि शासनकर्ताकी भांति छोड़ गये। कुतुव-उद्-दीन्ने उसी वर्ष मेरठ तथा दिल्ली जीत बङ्गाल तक राज्य विस्तार किया था। १२०६ ई० को शहाब्-उद्-दीन गोरी मर गये। उनके भ्रातुष्पुत्र गियास-उद्-दीन गोरीने राजा हो कुतुव-उद्-दीन ऐवकको राजोचित चन्द्रातप, सिंहासन, राजमुकुट और सुलतान उपाधि दिया था। उसी वर्ष २७ वीं जूनको उन्होंने राजा बन दिल्लीमें राजधानी स्थापनपूर्वक सिंहासन अधिरोहण किया। ४ वर्षमात्र उनका प्रताप अक्षुण्ण रहा। किन्तु वह २० वर्षसे भी अधिक सिंहासन पर बैठे थे। १२१० ई० को कुतुव-उद्-दीन् लाहोरमें अश्वसे गिर मर गये। उनके पोष्यपुत्र आराम शाह राजा हुवे।

पुरानी दिल्लीमें कुतुव-मीनारके निकट 'कुव्वत्-उल-इसलाम' नामक एक विख्यात जुमा-मसजिद है। वहीं पहले एक बड़ा देवमन्दिर रहा। कुतुव-उद्-दीन् ऐवकने ही उक्त मन्दिर तोड़ मसजिद बनायी थी। पीछे उनके वंशके शमस्-उद्-दीन अलतमास और खिलजी वंशके अला-उद्-दीनने उसका बहुत संस्कार करा नूतन गृहादि निर्माण कराये।

कुतुव-उद्-दीन खां—एक मुसलमान अमीर। मुगल-सम्राट् अकबरके समय वह एक पांच हजारी अमीर या मनसबदार थे। अकबरने उन्हें भड़ोंचका शासनकर्ता बनाया। १५८३ ई० को गुजरातके नवाब सुलतान मुजफ्फरने विश्वासघातकता करके उन्हें मार डाला।

कुतुव-उद्-दीन खान्—अकबरके एक पालकपुत्र। वह सम्राट् अकबरके माननीय मुसलमान फकीर शेख सलीम चिस्तीके भागिनेय (भानजा) रहे। उनका प्रकृत नाम शेख खूबन था। जहांगीरके राजत्वकालमें वह पांच-हजारी मनसबदार बने और १६०६ ई० को बङ्गालके शासनकर्ता नियुक्त हुवे। १६०७ ई० को वर्धमानमें शेर अफगानके हाथ कुतुव-उद्-दीन् खान् मारे गये। फतेहपुरसीकरीमें उनकी कब्र बनी है।

कुतुव-उद्-दीन् मुनव्वर—हांसीनिवासी एक विख्यात मुसलमान फकीर। वह शेख जलाल-उद्-दीन अहमदके पुत्र थे। दिल्लीके सुलतान फीरोजशाह बरबकके समय मुनव्वर शेख विद्यमान रहे। वह दिल्लीवाले तदानीन्तन विख्यात फकीर नासिर-उद्-दीन चिरागके सतीर्थ अर्थात् शेख निजाम-उद्-दीन औलियाके शिष्य थे। उक्त दोनों व्यक्ति १३५६ ई० को मर गये।

कुतुव-उद्-दीन-मुहम्मद गोरी—ईज-उद्-दीन गोरीके पुत्र और फीरोजाकोी नामक नगरके स्थापयिता। उन्होंने गजनीराज बहरामशाहकी कन्यासे विवाह किया था। किसी समय उन्होंने गजनी आक्रमणकी भी चेष्टा लगायी। सुलतान बहरामने समझ सकनेपर उन्हें गोपनमें मार डाला। इसीसे गजनी और गोर राज्यमें चिरशत्रुता हो गयी।

कुतुब-उद्-दीन मुहम्मद लङ्गा—मूलतानके लङ्गाजातीय द्वितीय सुलतान। दिल्लीवाले सम्राट् बहलोल लोदीके समय उन्होंने अपने पूर्ववर्ती (जामाता) सुलतान शेख यूसफको पकड़ दिल्ली भेज दिया और स्वयं सिंहासन अधिकार किया था। वह अतिशय प्रजारञ्जक रहे। उनका राजत्व १६ वर्ष चला। १४६९ ई० को मरने पर उनके पुत्र हुसेन लङ्गा राजा हुवे।

कुतुब-उद्-दीन् सुलतान—गुजरातराज मुहम्मदशाहके पुत्र। १४५० ई० को राजा हो १४५९ ई० में वह मर गये। मरने पीछे उनके पितृव्य राजा हुवे।

कुतुब-उद्-दीन सूर—घोरके एक राजा। इन्होंने गजनी-के सुलतान बहरामको कन्यासे विवाह किया था, परन्तु सुलतानकेही हाथों मारे गये। इनके भाई सैफ-उद्-दीनने इस वधका बदला लिया और गजनीको अधिकार किया। बहराम भागे थे, परन्तु शीघ्र ही एक फौज कर लौट पड़े। उन्होंने सैफ-उद्-दीनको कैद कर कुचल कुचल कर वध किया। फिर इनके तीसरे भाई अलाउद्-दीन-ने बहरामको हरा गजनीमें लूटमार मचायी और आग लगायी थी। अलाउद्-दीन ११५६ ई० को चल बसे।

कुतुब-उल्-मुल्क—गोलकुण्डाराज्यस्थापयिता सुलतान कुली कुतुबके पिता। वह जातिमें तुर्क रहे, दाक्षिणा-त्यको कर्मको चेष्टामें गये थे। शेषको कुतुब-उल्-मुल्क मुहम्मद शाह वाह्मनीके सैन्यदलमें प्रविष्ट हुवे। क्रमशः उच्चपद पा उन्होंने कुतुब-उल-मुल्क उपाधि धारण किया और तेलङ्गका तरफदारी पद भी ले लिया। १४९३ ई० को वह जामकुण्डाका दुर्ग अधि-कार करने गये थे। वहीं शराघातसे विनष्ट हुवे।

कुतुबखाना (फा० पु०) पुस्तकालय, किताब रखनेका घर।

कुतुबनुमा (अ० पु०) यन्त्रविशेष, एक आला। उससे दिक्-ज्ञान होता है। वह छोटी डिबिया-जैसा बना रहता है। उसमें एक लौहसूची लगती, जो अयस्कान्त लौहकी शक्तिसे अपना मुख सदा उत्तरको ओर रखती है। समुद्रमें चलनेवाले जहाजों पर उसे अधिक व्यव-हार करते हैं।

कुतुबफरोश (फा० पु०) पुस्तकविक्रेता, किताब बेचनेवाला।

कुतुबमीनार—दिल्लीका एक उच्च स्तम्भ। दिल्लीकी जुमा मसजिदके दक्षिण-पूर्व कोणमें वह अवस्थित है। उसमें छह मनजिलें विद्यमान हैं। गठनभङ्गिमा, हरेक मनजिल और बरामदेका कारुकार्य चूड़ा इत्यादि देख उसे बिना हिन्दूकीर्ति कहे कैसे रह सकते हैं। किन्तु अधिकांश प्राचीन मुसलमान ऐतिहा-सिक और पाश्चात्य प्रत्नतत्त्वविद् उसे मुसलमानराज-कीर्ति बता गये हैं। किसी किसी मुसलमान ऐति-हासिकने उक्त विवाद भञ्जनके लिये कुतुबमीनारको हिन्दुवोंके यत्नसे आरम्भ और मुसलमानोंके हाथ समाप्त होनेवाला जैसा अभिमत प्रकाश किया है। फिर किसी किसी पाश्चात्य पुराविद्ने उक्त मीमांसाको युक्तिसङ्गत भी मान लिया है।

कुतुबमीनारको हिन्दुकीर्ति बतानेवाले कहा करते हैं कि उसका नाम यमुनास्तम्भ है। दिल्ली और अजमेरके शेष राजा पृथ्वीराजकी कन्याने प्रत्यह यमुना वा यमुनातीरस्थ स्वीय गुरुके आश्रम दर्शनको उक्त उच्च स्तम्भ बनाया था। किसी किसीके कथनानुसार पृथ्वीराजने स्वयं प्रत्यह गङ्गादर्शनाभिलाषी हो उक्त स्तम्भ निर्माण कराया, किन्तु उक्त उद्देश्य सिद्ध न होने पर द्विगुण उच्च दूसरा गङ्गा-स्तम्भ बनाने लगे। उसके संपूर्ण होते न होते मुसलमानोंने उन्हें राज्यच्युत कर दिया।

कनिङ्गहाम साहबने विशेषरूपसे पर्यवेक्षण कर अपना १८६२।६३ ई० की आरकियालाजिकल रिपोर्टमें लिखा है कि वह कोई हिंन्दूकीर्ति नहीं। उसको भित्ति पर्यन्त मुसलमानोंने स्थापन की है। कनिङ्गहामके अनुमानमें तदानीन्तन मुसलमान सन्यासी कुतुब-उद्-दीन उशीरके नाम पर जुमा मसजिदकी कुतुब-उद्-इसलाम और आजान लगानेके स्तम्भको कुतुब मीनार कहते हैं। अनुसन्धानसे उसके कब और किसके द्वारा स्थापित होनेके विषयमें यह मालूम हुवा है—

शमस-शीराजने (१३८० ई०) अपने ग्रन्थमें लिखा है कि—दिल्लीकी जुमामसजिदका उच्चस्तम्भ सुलतान शमस्-उद्-दीन अल्तमासने बनाया था।

अबदुलफिदा (१३०० ई०को वर्तमान)-ने उल्लेख किया है कि दिल्लीको जुमामसजिदका मीनार रक्त वर्ण प्रस्तर-निर्मित और अति उच्च है। उसमें ३६० सिढ़ी चढ़ना पड़ता है। (कनिङ्गहाम साहब उसमें ३७९ सिढ़ी कहते हैं)

फतूहात-फीरोजशाहीनामक इतिहासमें फीरोज शाह (१३६८ई०)-का एक वाक्य उद्धृत है। उससे मालूम पड़ता कि सुलतान मुईज-उद्-दीनका मीनार वज्राघातसे टूट गया था, फीरोजशाहने उसको संस्कार करा अति उच्च उठा दिया। अबुलफिदाके समय वज्राहत मीनारमें ३६० सिढ़ियोंका होना कुछ विचित्र नहीं शेषोक्त ग्रन्थसे यह भी विदित होता है—अलतमासके समय मीनार जितना ऊंचा था, फीरोजशाहने उससे कितना ही बढ़ा दिया।
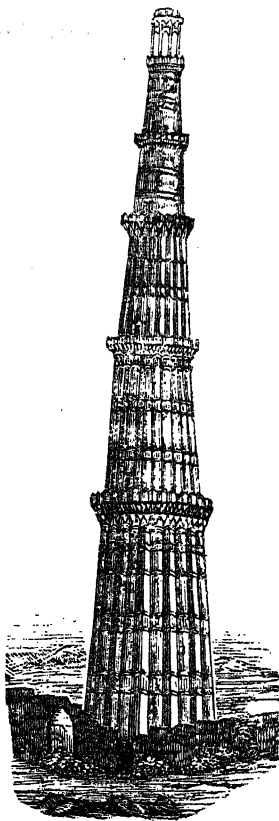
कुतुब-मीनार।

कुतुब मीनारको वर्तमान उच्चता २३८ फीट १ इञ्च है। उसके तलभागका व्यास ४७ फीट ३ इञ्च बैठता है। ऊर्ध्व भागका व्यास ९ फीट है। भूमिसे भित्ति २ फोट उठी है। चूड़ाको छोड़ भित्तिके ऊपरसे स्तम्भकी उच्चता २३४ फीट १ इञ्च है। चूड़ा २ फीट ऊंची है। भित्तिके ऊपरसे चूड़ाके नीचे तक स्तम्भ (मीनार) पांच तलमें विभक्त है। सबसे निम्नतल ९४ फीट ११ इञ्च, द्वितीय तल ५० फीट साढ़े ८ इञ्च, तृतीय तल ४० फीट साढ़े ९ इञ्च, चतुर्थ तल २५ फीट ४ इञ्च और पञ्चम वा सर्वोच्च तल २२ फीट ४ इञ्च ऊंचा पड़ता है। सर्वनिम्न एवं सर्वोच्च तलको उच्चता समग्र मीनारको ऊंचाईसे ठीक आधी है। चतुर्थ तल भी उच्चतामें द्वितीय तलसे आधा आता है। एतद्भिन्न उसके परिमाणमें दूसरा भी एक कौशल देख पड़ता है। निम्नतलके व्यासका परिमाण ४७ फीट ३ इञ्च है। चूड़ाको छोड़ समग्र स्तम्भका परिमाण उक्त व्यासके पञ्चगुणसे २ इञ्च मात्र अधिक है।

कुतुबमीनारका तलदेश चौबीस पहला है। परस्पर ३ तलके स्तम्भगात्रमें उसी प्रकार पहलू बने हैं। किन्तु चतुर्थ तल सम्पूर्ण गोलाकार है। नीचेकी ओरसे प्रथम ३ तल लाल मरमरके बने हैं। प्रत्येकमें अरबी भाषाको शिलालिपि खुदी है। फिर प्रत्येक तलमें अति सुन्दर कारुकार्य-शोभित बरामदा है। चतुर्थ तलके ऊर्ध्वभाग और पञ्चम तलके मध्य दो स्थल श्वेत मरमर पत्थरसे जड़े हैं। उसके मध्य ऊपर चढ़नेको घुमावदार जीना है।

१८०३ ई० को भूमिकम्पसे कुतुबमीनारकी चूड़ा टूट गयी और अन्यान्य स्थल पर भी विशेष क्षति हुयी। लोगोंके मुंहसे सुनते कि उस समय चूड़ा चार स्तम्भों पर मन्दिराकार गुम्बज लगी थी। भूमिकम्पके पीछे तत्कालीन गवर्नर जनरलने मरम्मत करनेको आदेश दिया। बहुयत्नसे अनेक स्थल पर (१८२८ ई०) मरम्मत हुयी। टूटे पत्थर निकाल बिलकुल उसी तरहके दूसरे पत्थर काट कर लगाये गये थे। किन्तु पुराने पत्थरोंमें जो सूक्ष्म कारुकार्य था, वह अति व्ययसाध्य होनेसे छोड़ दिया गया। फिर भी मरम्मतमें २२०००) रु० लगा था। बरामदेके सारा कटहरा (रेलिङ्ग) और सर्वनिम्नतलका प्रवेशद्वार भी टूट गया था। उसके बदले वर्तमान कारुकार्यहीन बरामदा और विलायती कारुकार्यविशिष्ट प्रवेशद्वार लगा है:

कुतुबमीनारके गात्रमें अनेक शिलालिपि खुदी

हैं। उनसे मीनारका इतिहास मिलता है। सबसे निम्न-तलमें पेटिकाकी भांति कुछ स्थानों पर खुदाई हुई है। उनमें सबसे ऊपर कुरान्‌की आयतें हैं। दूसरेमें भगवान्‌के ९९ अरबी नाम हैं। तृतीयमें मुईज-उद्-दीन, अबुल मुजफ्फर और मुहम्मद-बिन-शामका नाम तथा यशोगान लिखा है। चतुर्थमें फिर कुरान्‌की आयतें हैं। पञ्चममें मुहम्मद-बिन्-शामका नाम और यशोगान मिलता है। षष्ठमें सब लेख नष्ट हो गया है। केवल 'अमीर उल उमराव' पढ़ा जाता है। प्रवेशद्वारके मस्तकपर लिखा है—"सुलतान शमस-उद्-दीन अलतमासका यह मीनार टूट गया था। बहलोलके पुत्र सिकन्दर शाहके राजत्व-काल खवासखान्‌के पुत्र फतेहखान्‌ने ९०९ हिजरी (१५३६ ई०)-को उसको मरम्मत करायी।" द्वितीय तलमें ३ शिला लिपियां हैं। सबसे निम्न फलकमें कुरानका वचन, बीचवालेमें अलतमासका यशोगान और द्वारके मस्तकवालेमें मीनारका निर्माणकार्य शेष करनेके लिये अल्तमासका दिया हुवा आदेश खुदा है। चतुर्थ तलमें द्वारके मस्तक पर अल्तमासके मीनार निर्माण करानेके आदेश और पञ्चमतलमें द्वारके मस्तक पर ७७० हिजरी (१३६८ ई०) को वज्राघातसे मीनारका कुछ अंश टूट जाने पर फीरोजशाहके मरम्मत करानेका विवरण दिया गया है। एतद्भिन्न कारुकार्यके मध्य मध्य भी कई लिपि लगी हैं। उनसे भी अनेक बातें मालूम पड़ती हैं। सर्वनिम्नतलमें एक स्थान पर प्रधान मुल्ला अबुल मवालीके पुत्र फाजिलका नाम खुदा है। एक स्थान पर अट्टालिकामें मुहम्मद अमीरकोह नाम और दूसरे किसी स्थान पर नागरी (हिन्दी)-में 'सुलतान मुहम्मद संवत् १३८२' (१३२५ ई०) लिखा है। उक्त वत्सर ही मुहम्मद तुगलकके राजत्वका प्रथम वर्ष था। चतुर्थ तलकी दीवार (भित्ति) पर नागरी अक्षरोंमें 'फीरोज़ शाह संवत् १४२५' (१३६८ ई०) खुदा है। चतुर्थ तलके द्वारपार्श्व पर मर्मर पत्थरको एक नागरी लिपि है। उसमें भी फीरोजशाहका नाम और संवत् १४२६ (१३६९ ई०) देख पड़ता है। उक्त नागरी लिपि सर्वापेक्षा प्रयोजनीय है। किन्तु कालके दौरात्म्यसे उसका अधिकांश नष्ट हो गया है। उसमें ऊपरके एक चरणसे समझ पड़ता है—"श्रीविश्वकर्मप्रसादे रचितः।" फिर शेषको और अट्टालिकाके शिल्पी सहदेवपालके पुत्रका 'सल्हन' नाम मिलता है। मालूम पड़ता कि उन्होंने फीरोजशाहके समय मरम्मत की होगी। मध्यस्थलमें कई परिमाणसूचक अङ्क हैं। उनसे कनिङ्घाम साहबने अनुमान किया है—फीरोजशाहके समय किसप्रकार और कैसे संस्कार हुवा वह इसी बातके कोई सूचक होंगे। सर्वनिम्नतलके सर्वनिम्न स्थान पर एक मुसलमान उपाधि खुदा है। वह उपाधि कुतुब-उद्-दीन ऐबकका है। जुमामसजिदके पूर्व द्वार पर कुतुबकी जो लिपि लगी है, उसमें उनके नामके साथ उक्त उपाधि देख पड़ता है।

उक्त सकल खोदित लिपिसे स्थिर हुवा है कि गजनीराज मुहम्मदबिन शामके राजत्वकाल कुतुब-उद्-दीन् ऐबकने प्रायः १२०० ई० को मीनारका निर्माण कार्य चलाया और अल्तमासने उसे १२२० ई० को सम्पूर्ण बनाया था। चतुर्थतलके प्रवेशद्वार पर सिकन्दर लोदीके समयको लिपि है। उससे समझ पड़ता कि मीनार अल्तमासके आदेशसे बना था। उसका अर्थ सम्भवतः चतुर्थतलके निर्माणकार्य पर लगाया जा सकता है। नतुवा द्वितीयतलकी लिपि-वर्णनाके साथ उसका विरोध आता है। उक्त विषयमें फीरोजशाहकी बात ही प्रमाणकी भांति गण्य है। फीरोजशाहने मीनार संस्कार करते समय लिखा है—"हमने मुइज-उद्-दीन शामके मीनारकी मरम्मत करनेको आदेश दिया।" किसी किसीके कथनानुसार एक काल ७ तल रहे। किन्तु यह बात ठीक नहीं। कारण सिढ़ियोंकी जो संख्या है, उसमें षड्तलसे अधिक रहना कभी सम्भव नहीं। अनेकोंके अनुमानमें स्तम्भगात्र साधारण स्थूल कार्यसे शोभित रहते भी बरामदा और पेटिया अति उत्कृष्ट कारुकार्यविशिष्ट हैं। इससे मालूम होता कि वह किसी दूसरे व्यक्ति द्वारा संयोजित हैं। अमीर खुसरूके लिखे विवरणसे समझ पड़ता कि अलाउद्दीन खिलजीने कुतुबमीनारके

संस्कार और फीरोजको बनायी भग्नप्राय चूड़ाके निर्माणको आदेश दिय था। सम्भवतः उन्हींके द्वारा वह संयोजित हुये हैं। कुतुबमीनारकी गात्रस्थ लिपिका मूल और अन्यान्य विषय समझनेके लिये Cunningham's Arch. Survey Reports 1862-63, Vol. I; Edward Thomas' Chronicles of the Pathan Kings of Delhi; Dowson's Edition of Sir H. M. Elliot's Muhammdan Historians; Travel's by Docter Lee; Robert Smith's Report in Journal Archælogical Society Delhi; Asiatic Researches of Bengal, II; Rajasthan Vol II; Hand-book for Delhi; Sleeman's Rambles of an Indian official etc द्रष्टव्य हैं।

कुतुबशाही—गोलकुण्डाके सुलतानोंका एक उपाधि। इस वंशके राजावोंने १५१२ से १६८७ ई० तक राजत्व रखा। १६३८ ई०के समय उन्होंने समग्र दक्षिण-भारतको आक्रमण किया था।

कुतुम्बा (सं० स्त्री०) द्रोणपुष्पीक्षुप, एक झाड़ी।

कुतुम्बिका कुतुम्बा देखो।

कुतुम्बुरु (सं० क्ली०) कुत्सिततिन्दुकीफल, तेंदूका खराब फल।

कुतुरझा (हिं० पु०) पक्षिविशेष, एक चिड़िया। उसका वर्ण हरित् और चञ्चु, पृष्ठ तथा पद रक्तवर्ण होता है।

कुतुली (हिं० स्त्री०) मृद्वल्लिकाफल, इमलीका मुलायम फल। उसे कंटिया भी कहते हैं।

कुतू (सं० स्त्री०) कुत्सितं तन्यते, कु-तन् बाहुलकात् कू टिलोपश्च। चर्मनिर्मित तैलादिका पात्र, कुप्पी।

कुतूणक (सं० पु०) कु ईषत् तूणयति सङ्कोचयति चक्षुर्यः, कु-तूण सङ्कोचे खुल्। बालकोंका एक चक्षुरोग, बच्चोंकी आखोंमें होनेवाली एक बीमारी। उसका चलित नाम कुथुवा है।

कुतूणकका वैद्यकोक्त लक्षण यह है—स्तनदुग्धके दोषवशतः शिशुवोंकी पलकों पर कुतूणक रोग लग जाता है। उसमें चक्षुसे अनवरत जल गिरता और वह खुजलाने लगता है। उक्त रोगमें शिशु अपना ललाट, नासिका और चक्षु सर्वदा घर्षण करता तथा सूर्यकिरणको ओर देख नहीं सकता। (माधवकर)

कुतूणकरोग पर शुण्ठी, भृङ्गराज एवं हरिद्रा पीस और पुटपाकमें जलाकर सैन्धवके साथ अञ्जन करना चाहिये।

विड़ङ्ग, हरिताल, मनःशिला, दारुहरिद्रा, लाक्षा और गैरिक मृत्तिकाको अम्लपानीयसे पिस अञ्जन लगाते हैं। (चक्रदत्त)

वाग्भटने उक्त रोगका नाम कुकूणक लिखा है।

कुतूहल (सं० क्ली०) कुतूं चर्ममयतैलादिपात्रवत् अम्लं हरति सोल्लुकं करोति, कुतू-हल-अच्। १ कोई वस्तु देखने या सुननेके लिये अत्यन्त इच्छा, गहरी ख्वाहिश। २ नायिकाका अलङ्कार विशेष।

"रम्यवस्तु समालोके लोलता स्यात् कुतूहलम्।" (साहित्यदर्पण, ३।११९)

मनोहर वस्तु दर्शन करनेके लिये अतिशय आकाङ्क्षाका नाम कुतूहल है।

३ कौतुक, तमाशा। ४ क्रीड़ा, खेल। ५ आश्चर्य, ताज्जुब।

कुतूहलवान् (सं० त्रि०) कुतूहलं यस्यास्ति कुतूहल-मतुप् मस्य वः। कौतूहलविशिष्ट, किसीके देखने या सुननेकी गहरी ख्वाहिश रखनेवाला।

कुतूहलित (सं० त्रि०) कुतूहलमस्य सञ्जातम्, कुतूहल-इतच्। कौतूहल-युक्त, मुताज्जिब, अचम्भेमें पड़ा हुवा।

कुतूहली (सं० त्रि०) कुतूहलमस्यास्ति, कुतूहल-इनि। कौतूहलाक्रान्त, खेल देखने या करनेवाला।

कुतृण (सं० क्ली०) कुत्सितं तृणमिव, उपमितस०। १ कत्तृण। २ कुम्भी। कुम्भिका देखो।

कुतोनिमित्त (सं० त्रि०) कुतः किं निमित्तं यस्य, किं प्रथमार्थे तसिल्। किस निमित्तवाला, कौन मतलब रखनेवाला।

कुतोमूल (सं० त्रि०) किं मूलमस्य, किं-तसिल्। किस मूलवाला, कौन इब्तिदा रखनेवाला।

"कुतोमूलमिदं दुःखम्।" (भारत आदि)

कुत्ता (हिं० पु०) श्वान, एक जन्तु। कुक्कुर देखो।

कुत्ती (हिं० स्त्री०) कुक्कुरी, कुतिया।

कुत्थ—ज्योतिशोक्त पञ्चदश योगविशेष।

कुत्र (सं० अव्य०) कस्मिन्, किम् त्रल्। सप्तम्यास्त्रल्। पा५।३।१०। कहां, कब, कहां को, किस अवस्था या हालतमें।

"कुत्राशिषः श्रुतिसुखा मृगतृष्णिरूपाः।" (भागवत, ७।९।२५)

कुत्रचित् (सं० अव्य०) कुत्र च चित्‌ च, द्वन्द्वः। किसी अनिर्दिष्ट स्थानमें, किसी एक जगह पर।

"विशिष्टं कुत्रचिद्वीजं स्त्रीयोनिस्त्वेव कुत्रचित्।" (मनु, ९।३४)

कुत्रचन (सं० अव्य०) कुत्र च चन च, द्वन्द्वः। कहीं भी, किसी भी जगह पर।

कुत्रत्य (सं० त्रि०) कुत्र भवः, कुत्र-त्यप्। अव्ययात् त्यप्। पा ४।२।१०४। कहांसे उत्पन्न होनेवाला, कहां रहनेवाला।

कुत्स (सं० पु०) कुत्सयति संसारम्, कुत्स-अच्। १ ऋषिविशेष। आपस्तम्बधर्मसूत्रमें उनका मत उद्धृत हुवा है। (आपस्तम्बधर्मसूत्र, १।१९।७)

२ स्तवक, गुच्छा। ४ हार, सेहरा। (त्रि०) कृ-स। पृषोदरादित्वात् साधुः। ५ करनेवाला।

"कुत्सा एते हर्यश्वाय।" (ऋक् ७।२।६५)

कुत्सकुशिकिका (सं० स्त्री०) कुत्सानां कुशिकानाञ्च मैथुनम्, कुत्स कुशिक-वुन्। द्वन्द्वाद् वुन् वैरमैथुनिकयोः। पा ४।३।१२५। कुत्स और कुशिकगोत्रीय स्त्री पुरुषका मैथुन।

कुत्सन (सं० क्ली०) कुत्स भावे ल्युट्। १ निन्दा, बदगोई। २ निन्दाका उपाय, बदगोईकी तदबीर। (त्रि०) ३ निन्दित, बदनाम।

कुत्सपुत्र (सं० पु०) कुत्सस्य पुत्रः, ६-तत्। कुत्स ऋषिके पुत्र।

कुत्सला (सं० स्त्री०) कुत्सं क्रयविक्रययो निषिद्धतया निन्दां लाति, कुत्स-ला-क-टाप्। नीलीवृक्ष, नीलका पेड़।

कुत्सशिम्बी, कुत्सा देखो।

कुत्सा (सं० स्त्री०) कुत्स निन्दने भावे अच्-टाप्। १ निन्दा, बदगोई। इसका संस्कृत पर्याय—अवर्ण, आक्षेप, निर्वाद, परीवाद, अपवाद, उपक्रोश, जुगुप्सा, निन्दा, गर्हण, गर्हा, निन्दन, कुत्सन, परिवाद, जुगुप्सन, अपक्रोश, भर्त्सन, अपवाद, उपराग, अवध्वंस, घृणा, धिक् और सामि है।

"गुरुकुत्सामतिय यः।" (भारत, अनुशासन)

२ शिम्बीभेद, एक फली।

कुत्सित (सं० क्ली०) कुत्स कर्मणि क्त। १ कुष्ठ, कुट। २ दीर्घरोहिष, एक लम्बी खुशबूदार घास। (त्रि०) ३ निन्दित, बदनाम।

कुत्सितशाल्मली (सं० स्त्री०) कृष्णशाल्मली, काला सेमर।

कुत्सिताम्ब (सं० पु०) कदम्बवृक्ष, कदमका पेड़।

कुत्स्य (सं० त्रि०) कुत्स-यत्। १ निन्दनीय, हिकारतके काबिल। २ कुपरीक्षक, अच्छी जांच न करनेवाला।

कुथ (सं० पु०) कुङ्‌शब्दे थक्। १ कन्था, कथरी। २ करिकम्बल, हाथीकी झूल।

"कुथेन नागेन्द्रमिवेन्द्रवाहनम्।"—(माघ)

३ कीट, कीड़ा। ४ प्रातस्नायी द्विज। ५ कुशतृण। ६ शुक्ल दर्भ, सफेद कुश।

कुथा (सं० स्त्री०) कुथ देखो।

कुथारू (हिं०) कुतूषक देखो।

कुथित (सं० त्रि०) पूतियुक्त, सड़ा गला।

कुथुआ (हिं०) कुतूषक देखो।

कुथुम (सं० पु०) सामवेदकी किसी शाखाका नाम।

कुथुमि (सं० पु०) एक मुनि। (लिङ्गपुराण, ७। ४६) वह पौष्यिञ्जि मुनिके शिष्य थे। उन्होंने सामवेदकी कौथुमि शाखाका प्रचार किया है। कुथुमिने बदरिकाश्रममें जन्म लिया और गान्धारमें जाकर वास किया था। वहां उन्होंने अपने गुरुके निकट यह शिक्षा पायी कि आत्मा अविनश्वर और दुःख कर्मका सहचर है। इनके पिताका नाम नारायण और पुत्रका नाम कुत्स था। कौथुमी देखो।

कुथुमि नामक कोई धर्मशास्त्रकार भी रहे। रघुनन्दनके मलमासतत्त्वमें कुथुमिस्मृति उद्धृत हुयी है।

कुथुमी (सं० पु०) कुथुमं वेत्ति, कुथुम-इनि। सामवेदकी कौथुमी शाखा समझने और पढ़नेवाला।

कुथोदरी (सं० स्त्री०) कुथं हिंसात्मकं उदरं यस्याः सा कुथ-उदर स्त्रीलिङ्गे ङीष्। एक राक्षसी। वह कुम्भकर्णकी पौत्री, कौलकञ्ज राक्षसकी पत्नी और विकञ्ज राक्षसकी माता थी। कल्किपुराणमें लिखा है—"मुनियोंने कल्किदेवको देख विनयपूर्वक कहा—'हे विष्णुयशःपुत्र! कुम्भकर्णकी पौत्री और कौलकञ्जकी महिषी कुथोदरी नाम्नी राक्षसी इस स्थानमें रहती है। उसका शरीर आकाश पर्यन्त विस्तृत है। वह शयनकालको हिमालय पर मस्तक रख और निषधाचल

पर पद फैलाकर लेटती है। उसके निश्वास-वायुसे आकर्षित हो हम यहां आये हैं। भाग्यबलसे आपका साक्षात् लाभ हुवा है। आप इस विपत् समयमें हमको बचाइये।" मुनियोंको उक्त प्रार्थना सुन अत्र विजयी कल्किदेवने सैन्यपरिवृत हो कुथोदरीको विनाश करनेके लिये हिमालयके अभिमुख यात्रा की। वह सो रही थी। ससैन्य कल्किदेवको आते देख महाक्रोधमें चीत्कार करके कुथोदरी उठ बैठी। उसने निश्वास-वायुसे हस्ती-अश्व-रथके साथ कल्किदेवको खींचा था। वह समस्त सैन्यसहित कुथोदरीके उदरमें प्रविष्ट हुवे। देव और मुनि उक्त व्यापार देख हाहाकार करने लगे। उसके पीछे कल्किदेव तलवारसे उसका उदर फाड़ निकले थे। उसीसे कुथोदरी मर गयी।"

कल्कि देखो।

कुदई (हिं० स्त्री०) धान्य विशेष, कोदो।

कुदकना (हिं० क्रि०) १ आनन्दमें उछलना, खुशीसे कूदना। २ धीरे धीरे कूदना।

कुदक्का (हिं० पु०) १ कूद-फांद। २ कूदनेवाला।

कुदण्ड (सं० पु०) कुत्सितो दण्डः। अनुचित दण्ड, नामुनासिब सजा।

कुदरत (अ० स्त्री०) १ प्रकृति, माया, दुनियाको बनानेवाली ताकत। २ शक्ति, इखतियार। ३ रचना, बनावट। ४ स्वभाव, आदत।

कुदरती (अ० वि०) १ प्राकृतिक, अपने आप होनेवाला। २ दैवी।

कुदरा (हिं० पु०) कुदाल, कुदाली।

कुदर्शन (सं० त्रि०) कुरूप, बदसूरत, देखनेमें खराब।

कुदलाना (हिं० क्रि०) कुदकना, उछलना-कूदना।

कुदलि, कुद्दाल देखो।

कुदांव (हिं० पु०) १ विश्वासघात, धोका। २ सङ्कटापन्न स्थिति, बुरी हालत। ३ भयङ्कर स्थान, खराब जगह।

कुदाई (हिं० वि०) विश्वासघाती, बुरादांव लगानेवाला।

कुदान (सं० क्ली०) कुत्सित दान। १ शय्यादान, गजदान आदि कुदान हैं। २ अपात्रको दिया जानेवाला दान।

कुदान (हिं० स्त्री०) १ उछल कूद, कुदाई। २ छलांग। ३ कूदनेकी जगह।

कुदाना (हिं० क्रि०) १ कूदनेमें लगाना। २ दौड़ाना।

कुदाम (हिं० पु०) खोटा पैसा।

कुदाय, कुदांव देखो।

कुदार (सं० पु०) कुं भूमिं दारयति, कु-दृ-णिच्-अण्। कुदाल, जमीन् खोदनेका एक औजार।

कुदारकोट—युक्तप्रदेशके इटावा जिलाका एक प्राचीन नगर। वह इटावा नगरसे १२ कोस उत्तर-पश्चिम और सङ्किश (प्राचीन साङ्काश्यनगरी)से १७ कोस दक्षिण-पूर्व अवस्थित है।

पतञ्जलिने महाभाष्यमें लिखा है—

"गवीधुमतः साङ्काश्यं चत्वारि योजनानि।"

गवीधूमान्‌से साङ्काश्य चार योजन अर्थात् १६ कोस है। उक्त स्थानीय भूतत्व और आविष्कृत शिलालिपिसे समझ पड़ता है—किसी समय कुदारकोट समृद्धिशाली था। पतञ्जलिके समय सम्भवतः कुदारकोट और उसका निकटवर्ती स्थान 'गवीधूमत्, नामसे प्रसिद्ध रहा।

वहां एक अति प्राचीन दुर्ग था। अवधके नवाब आसफ्-उद्-दौलाके बड़े वजीरने उक्त प्राचीन भग्न दुर्ग पर फिर नूतन दुर्ग बनाया था।

कुदारी, कुदार देखो।

कुदाल (सं० पु०) कुं भूमिं दालयति, कु-दल् भेदने णिच अण्। १ कुद्दाल, कुदाली। २ पार्वतीय वृक्ष-विशेष, कोई पहाड़ी पेड़।

कुदाली (हिं०) कुद्दाल देखो।

कुदाव (हिं० पु०) कुदाई, कुदान।

कुदास (हिं० पु०) खड़ा पठान, जहाजकी पतवारका खम्भा।

कुदिन (सं० क्ली०) कोः पृथिव्या भ्रमणेन दिनम्, कर्मधा०। १ सावन दिन, सूर्यके उदयावधि पुनरुदय, सूरज निकलनेके पीछे फिर सूरज निकलने तकका समय।

"इनोदयद्वयान्तरं तदर्कसावनं दिनम्।
तदेव मेदिनीदिनं भवासरस्य भ्रमः॥" (सिद्धान्त-शिरोमणि)

सूर्यके दोबार उदित होनेमें जो अन्तर आता, वही अर्कसावनदिन, मेदिनीदिन (कुदिन), भवासर और भभ्रम कहा जाता है। २ निन्द्यदिन, बुरा दिन। ३ मेघाच्छन्न दिवस, पानी बरसनेका दिन। सावन देखो।

कुदिष्ट (हिं० स्त्री०) कुदृष्टि, बुरी नजर।

कुदिष्टि (सं० स्त्री०) वितस्ति अपेक्षा अल्प और दिष्टि अपेक्षा दीर्घतर परिमाण, बित्तेसे छोटी और चौबेसे बड़ी नाप।

कुदृश्य (सं० त्रि०) कुत्सितं दृश्यम्, कर्मधा०। कुत्सित दृश्य, देखनेके नाकाबिल।

कुदृष्टि (सं० स्त्री०) कुत्सिता दृष्टिः, कर्मधा०। १ मन्द दृष्टि, बुरी नजर। २ असत् तर्कसंसृष्ट मत।

"या वेदवाह्याः स्मृतयो याश्च काश्च कुदृष्टयः।
सर्वास्ता निष्फलाः प्रेत्य तमोनिष्ठाहिताः स्मृताः॥" (मनु, १२।९५)

जैन मतानुसार तीर्थंकर सर्वज्ञके उपदिष्ट तत्त्वों पर नहीं श्रद्धा करनेवाला, जो जैन शास्त्रों पर यकीन न रखता हो।

कुदेव (सं० पु०) १ भूदेव, ब्राह्मण। २ दैत्य, दानव। ३ जैनमतानुसार—धन धान्य स्त्री आदि ममत्व बढ़ानेवाले पदार्थोंको रखनेवाले, रागी द्वेषी मायावी देव।

कुदेश (सं० पु०) कुत्सितो देशः, कर्मधा०। निंद्यदेश, बुरा मुल्क।

"कुदेशमासाद्य कुतोऽर्थसञ्चयः।" (चाणक्य)

कुदेह (सं० पु०) १ कुत्सित देह, खराब जिस्म। २ महाशालवृक्ष, एक पेड़। (त्रि०) कुत्सितो देहो ऽस्य, बहुव्री०। ३ जिस्मवाला।

कुदेहक, कुदेह देखो।

कुद्दल (सं० पु०) गिरिकाञ्चन, पहाड़ी कचनार।

कुद्दार (सं० पु०) कुं भूमिं दारयति, कु-दृ-णिच्-अण्, पृषोदरादित्वात् साधुः। १ कोविदारवृक्ष, कचनारका पेड़। २ भूमिदारण अस्त्र, कुदारी।

कुद्दाल (सं० पु०) कुं भूमिं दालयति, कु-दल-णिच्-अण् पृषोदरादित्वात् साधुः। १ कोविदार वृक्ष, कचनारका पेड़। २ भूमिखननयन्त्र, कुदाल। वह लोहेका बनता है। कुद्दाल एक हस्त दीर्घ एवं चार अङ्गुलि प्रशस्त रहता है। उसकी ऊपरी ओर एक छेद बनाते, जिसमें लकड़ीका बेंट लगाते हैं। वह भूमि खोदने और खेत गोड़नेमें चलता है।

"कुद्दालैर्युक्तं येव समुद्रं यवमाश्रिताः।" (महाभारत, ३।१०७।२३)

कुद्दालूर (कडेलूर)—मन्द्राज विभागके दक्षिण आर्कटका एक नगर। वह अक्षा० ११° ४२′ ४५″ उ० और देशा० ७९° ४८′ ४५″ पू० पर अवस्थित है। पुरातन कडेलूर मुक्तकूप और सेण्टडेविड दुर्गको लेकर उक्त नगर स्थापित हुवा है। १६८४ ई० के समय प्रथम जीने अंगरेजोंको वहां दुर्गनिर्माणके लिये अनुमति दी थी। १७०२ ई० को उक्त दुर्ग पुनर्निर्मित हुवा। १७४३ ई० को लाबुरदोनीने मन्द्राज आक्रमण किया था। उस समय अंगरेज गवर्नमेण्टका राजकीय कार्यालय कुद्दालूरको ही उठ गया। उसी वर्ष फरासीसी सैन्य उसके अभिमुख अग्रसर हुवा, किन्तु महफूज़खान्से हारकर लौट पड़ा। फरासीसी सेनानायक डुप्लेने उसको एक बार अवरोध किया था। किन्तु वह कुछ बना न सके। उस समय अंगरेज-सेनानायक मेजर लारेन्सने वहां अपना प्रधान शिविर लगाया था। १७५८ ई० को फरासीसी योद्धा लालीने कडेलूर अधिकार किया। फिर २ री जूनको सेण्टडेविड दुर्ग आक्रान्त हुवा। १७६० ई० को कर्नेल कुटने उसे फिर अधिकार किया था। किन्तु १७८२ ई० को बुसीके कौशल और हैदरअलीके साहाय्यसे फरासीसियोंने कडेलूर जीत लिया, जिसे ३ वर्ष पीछे अंगरेजोंको लौटा दिया।

उक्त नगर बृहत् और समृद्धिशाली है। वहां बहुतसे लोग रहते हैं। कुद्दालूरका जलवायु स्वास्थ्यकर है।

कुद्मल (सं० क्लो०) कुड-कल-चित् पृषोदरादित्वात् साधुः। कलस्थपश्च। उण् १।१०६। वृषादिभ्यश्चित्। उण् १।१०८। विकाशोन्मुख पुष्पमुकुल, खिलनेवाली फूलकी कली।

कुद्मि (तामिल) शिखा, चोटी। दक्षिण देशमें हिन्दू मात्र शिरपर शिखा रखते हैं। उसी शिखाका नाम कुद्मि है। पूर्वकालको अधिकांश भारतीयोंकी भांति ग्रीक (यूनानी), रोमक और मिसरवासी मस्तक पर बालोंका एक गुच्छा रखते थे। बाइबिलमें बालोंका वह गुच्छा 'शिसोएन' नामसे वर्णित हुवा है। शिखा देखो।

कुद्य (सं० क्लो०) कुद्-क्यप्। भित्ति, दीवार।

कुद्रङ्ग (सं० पु०) कुद्रं मिथ्येव कायति अनित्यत्वात् क्षणभङ्गुरत्वाच्च, कुद्र-कै-क निपातनात् साधुः। गृह-विशेष, मचानके ऊपरकी मड़ैया।

कुद्रङ्ग (सं० पु०) कु ईषत् उन्नतो रङ्गः रञ्जनं यत्र, कु-उत्-रञ्ज-घञ्। मञ्चोपरिस्थित मण्डप, मचानके ऊपर रखी मड़ैया।

कुद्रव (सं० पु०) कुं भूमिं द्रावयति कु-द्रु अन्तर्णिच्-अच्। कोद्रव, कोदो।

कुद्रव (हिं० पु०) तलवार चलानेके ३२ हाथोंमें एक हाथ।

कुद्रवल, कुद्रव देखो।

कुधर (सं० पु०) १ पर्वत, पहाड़। २ शेषनाग।

कुधातु (सं० पु०) कुत्सित धातु, लोहा।

"सठ सुधरहिं सत सङ्गति पायी। पारस परसि कुधातु सुहायी।" (तुलसी)

कुधान्य (सं० क्लो०) कुत्सितं धान्यम्, कर्मधा०। तृण धान्य, क्षुद्रधान्य, घासका धान। कोरदूषक, श्यामाक, नीवार, शान्तनु, तुवरक, उद्दालक, प्रियङ्गु, मधुलिका, नान्दीमुख, कुरुविन्द, गवेधुक, वारक, उदपर्णी, मुकुन्दक, वेणुयव प्रभृतिको कुधान्य कहते हैं। वह उष्ण, कषाय, मधुर, रूक्ष, कटु, विपाकी, श्लेष्मघ्न स्रावरोधक और वातपित्तप्रकोपक होता है। (सुश्रुत)

कुधारा (सं० स्त्री०) कुत्सिता धारा, कर्मधा०। निंद्य नियम, कुचाल।

कुधी (सं० त्रि०) कुत्सिता धीरस्य, बहुव्री०। १ निर्बोध बेवकूफ। २ निर्लज्ज, बेशर्म।

"क्षाम्यन्तु तव कुधियोऽपर ईश कुर्युः।" (भागवत, ८।२२।२०)

कुध्र (सं० पु०) कुं भूमिं धारयति, कु-धृ-क। पर्वत, पहाड़।

कुनक (सं० पु०) एक जनपद और उसके अधिवासी। भीष्मपर्वके किसी किसी पुस्तकमें कुरट और कुनट पाठान्तर मिलता है।

कुनकुना (हिं० वि०) ईषत् उष्ण, गुन-गुना, कुछ गर्म।

कुनख (सं० पु०) कुत्सिताः नखो यत्र। १ रोग विशेष, नाखूनमें होनेवाली एक बीमारी। उसमें नख पककर गिर जाते हैं। (त्रि०) २ कुत्सित नखयुक्त, बुरे नाखून-वाला।

कुनखी (सं० त्रि०) कुनख इति तन्नामको रोगः अस्यास्ति, कुनख-इनि। १ कुनखरोगविशिष्ट, नाखूनकी बीमारीवाला।

"नखेन कुनखी चैव काष्ठेन व्याधिमिच्छति।" (गरुड़पुराण?, १।४८)

जो पुरुष पूर्वजन्ममें स्वर्ण अपहरण करके उसका प्रायश्चित्त नहीं करता, उसको उसी भोगावशिष्ट पापके चिह्नस्वरूप कुनख रोग लगता है। (विष्णुसंहिता)

कुनखीको प्रायश्चित्तके लिये द्वादशरात्र व्रत करके नख परित्याग करना चाहिये। (शुद्धितत्त्व) सुश्रुतके मतमें मातृदोषसे उक्त रोग लग सकता है। रजस्वला अवस्थामें स्त्रीके नखच्छेदन करने पर गर्भसे कुनखी सन्तान निकलता है। २ सङ्कुचित-नख, सिकुड़े नाखून वाला। (पु०) ३ कोई ऋषि। ४ अथर्ववेदकी एक शाखा। (अथर्व, ७।६५।३)

कुनट (सं० पु०) कु-नट पचादित्वात् अच्। १ श्योनाक वृक्ष, सनईका पेड़। इसकी आकृति शणपुष्पकी भांति रहती है। शणपुष्पी देखो। २ पीतलोध्र, पीला लोध। ३ निंद्यनर्तक, खराब खिलाड़ी। ४ कोई जनपद और उसके अधिवासी।

कुनटी (सं० स्त्री०) कुनट गौरादित्वात् ङीष्। १ मनःशिला। २ धान्यक, धनियां। ३ कुनर्तकी।

कुनदिका (सं० स्त्री०) कुत्सिता नदिका, कु-नद अल्पार्थे कन् स्त्रियां टाप्। क्षुद्रनदी, छोटा दरया।

कुनना (हिं० क्रि०) १ खरादना। २ छीलना।

कुनन्नम (वै० क्लो०) अपरिवर्तनीय, अबाध्य।

"वायुरस्मा उपामंथत् पिनष्टि स्मा कुनन्नमा।" (ऋक् १०।१३६।७)

कुनबा (हिं० पु०) कुटुम्ब, खानदान, घराना।

कुनबी—कृषिकर्मोपजीवी एक जाति, खेती करनेवाली एक हिन्दू कौम। प्रायः उक्त जातिके लोगोंको कुरमी भी कहते हैं। वह युक्तप्रदेश, बिहार, छोटानागपुर और उड़ीसामें रहते हैं। बिहार और युक्तप्रदेशके कुनबी ब्राह्मणों और क्षत्रियोंकी भांति अधिक सुखी न होते भी अच्छे रहते हैं। उनका देह सुगठित एवं नातिदीर्घ और नातिखर्व होता है। अङ्गप्रत्यङ्ग अनेक अंशमें सुसभ्य आर्योंसे मिलते हैं। वर्ण काला होता है। आचार-व्यवहार साधारण हिन्दुवोंके समान है।

किन्तु छोटानागपुर और उड़ीसाके कुनबी वैसे नहीं होते। वह देखनेमें असभ्य सन्तालों-जैसे समझ पड़ते हैं। वर्ण और आचार-व्यवहार भी असभ्य लोगोंसे मिलते हैं विहारके कुनबियोंमें गराइन और काश्यपगोत्र प्रचलित है। उनका उपाधि—चौधरी, मण्डल, मरार, महतो, महन्त, महाराय, मुखिया, प्रामाणिक, रावत, सरकार और सिंह हैं। जैसवार कुनबी कृषिकर्ममें विलक्षण पटु होते हैं। वह प्रधानतः कृषिकार्यसे ही अपनी जीविका चलाते हैं। शराब पीने और विधवा विवाह करनेवाले कुनबी भ्रष्ट और निम्न श्रेणीके मध्य गण्य हैं।

मानभूमवाले कुनबी अपनेको सबसे श्रेष्ठ बताते हैं। उनके मतमें दूसरे लोग शराब पीने और मुरगी खानेसे अधम हो गये हैं।

युक्तप्रदेशमें प्रधानतः खरोविन्द, पतरिया, घोड़चढ़ा, जैसवार, केवत और झुनैया कुनबी रहते हैं। अधिक दिन नहीं हुये, अवधमें दर्शनसिंह नामक किसी व्यक्तिने स्वजातीय कुनबियोंको राजा उपाधि प्रदान किया था। युक्तप्रदेशमें बहुत धनाढ्य कुनबी देख पड़ते हैं।

गुजरात, महाराष्ट्र, खानदेश, बरार प्रभृति स्थानोंमें भी खेतीकरनेवाले कुनबी विद्यमान हैं। सुप्रसिद्ध सेंधियाराज कुनबी ही जातिसम्भूत हैं। सेंधिया और रणजी देखो।

उनमें स्त्री पुरुष उभय बलवान्, कष्टसहिष्णु और अधिक परिश्रमी होते हैं। स्त्रियां स्वामीकी कृषिकार्यमें सहायता करती हैं। एक प्रवाद है—

"भलीजाति कुरमिनकी खुरपी हाथ। खेत निरावे अपने पीके साथ॥"

विहार और युक्तप्रदेशके कुनबियोंमें बाल-विवाह प्रचलित है। विवाहप्रणाली हिन्दूधर्मानुसार सम्पन्न होती है। विवाह स्थिर होनेपर वर कन्याकर्ताको ३) से ८) रु० तक पण देता है। ब्राह्मण लग्न विचारते हैं। विवाहके दिन प्रातःकाल कुलप्रथाके अनुसार वर अपने गृहमें प्रथम आम्रवृक्ष और कन्या महुवेके पेड़से विवाह करती है। सन्ध्याको वर बरातके साथ कन्याके पितृगृह जाता है। फिर शालवृक्षके चन्द्रातपमें वर कन्या दोनों मिलते हैं। वहां एक मृण्मय पात्रमें दीपक जला करता है। दम्पती उक्त आलोकको सात बार प्रदक्षिण करते हैं। फिर वह एक स्थान पर जाकर बैठते हैं। वर कनिष्ठाङ्गुलिके रक्तसे कन्याका वक्षःस्थल स्पर्श करता है। कुनबियोंमें रक्तदान ही सिन्दूरदान समझा जाता है। उसके पीछे कन्याके हाथमें लोहेका कङ्कण पहनाते हैं। वही कङ्कण कुनबियोंके विवाहका प्रतिभू स्वरूप है। पति पत्नी उभयका मन न मिलने या एक दूसरेका गुरुतर दोष देख पड़नेसे विवाहभङ्ग हो सकता है। उसको स्त्री वही कङ्कण स्वामीको खोलकर दे देती है। स्वामी भी आदरका कङ्कण वापस ले सम्बन्धविच्छेदज्ञापक एक पत्र फाड़कर दो खण्ड कर डालता हैं।

उक्तप्रदेश और विहारमें ब्राह्मण ही विवाहके मन्त्रादि उच्चारण करते हैं।

उड़ीसाके कुनबियोंमें बहुविवाह निन्दनीय है। किन्तु छोटानागपुरमें उसे कोई दोष नहीं समझते।

युक्तप्रदेश और विहारमें कुनबीके हाथका जल ग्रहण ब्राह्मण करते हैं। किन्तु छोटानागपुर और उड़ीसाके ब्राह्मण उनके हाथका छूवा पानी नहीं पीते। शेषोक्त दोनों स्थानोंके कुनबी मुर्गी और चूहा खाने तथा शराब पीनेसे दूसरे हिन्दुवोंकी आंखोंमें गिरे हैं।

कुनबियोंमें शैव, शाक्त और वैष्णव तीन सम्प्रदाय देख पड़ते हैं। ब्राह्मण उनका पौरोहित्य करते हैं। हिन्दुवोंको प्रधान उपास्य देव देवीको छोड़ विहारके कुनबियोंमें 'मोकिनी महतो' नामक एक ग्राम्य-देवको भी पूजा होती है। उनके उद्देशसे शूकरशावक-बलि दिया जाता है।

छोटानागपुरके कुनबी गोसाईंराय, बाट, गारोयार, ग्रामेश्वरी, किच्चकेश्वरी, बीरमदेवी, सातवाहिनी, दकुमचुड़ी और महामायाको पूजते हैं। दशहराके दिन हलकी पूजा होती है। पौषपार्वण उनके बड़े उत्साहका दिन है। पौषसंक्रान्तिको वह लोग 'अखन-यात्रा' कहते हैं। ग्राम्य बालक किसी कुक्कुटको उड़ा उसके लक्ष्य तीर चलाते हैं। उस पक्षीको जो मार लेता, उसको सब कोई अधिक आदर देता है।

वयःप्राप्तके मरनेसे कुनबियोंमें शवदेह जलाया जाता है। उत्तम श्रेणीके कुनबी १२ दिन अशौच ग्रहण और १३श दिन श्राद्ध करते हैं। किन्तु जेसवारोंमें ३१ वें दिन मृतकके उद्देश श्राद्धादि करनेका विधान है। छोटानागपुर और उड़ीसामें हैजे या चेचकसे मरनेपर शवदेह भूमिमें गाड़ दिया जाता है।

वह कृषिकर्ममें विलक्षण पटु होते हैं। गेहूं आदि शस्य उत्पादनमें वह जैसी कार्यकारिता दिखाते वैसी दूसरोंमें कम पाते हैं।

भारतमें प्रायः ७५ लाख कुनबी रहते हैं। पहले लोग उन्हें शूद्र समझते थे। किन्तु आज कल कुनबी अपनेको कूर्मवंशीय क्षत्रिय बताते हैं।

कुनलई (हिं० स्त्री०) वृक्ष-विशेष, एक पेड़। वह कण्टकाकीर्ण और क्षुद्र होती है। उसमें कितनी ही पतली पतली टहनियां निकलती हैं। त्वक्‌का वहिर्भाग सफेद रहता है। पत्र ३।४ अङ्गुलि परिमित होते हैं। ग्रीष्मकालको कुनलई फूलती है। पुष्प क्षुद्र और पीतवर्ण होते हैं। काष्ठ बहुत कठिन रहता है। उसके प्रायः खूंटे बनाये जाते हैं।

कुनली (सं० पु०) कुत्सित ईषत् वा नलोऽस्यास्ति, कु-नल-इनि। वकवृक्ष, अगस्तके फलका पेड़।

कुनवा (हिं० पु०) खरादी, बरतन वगैरह खरादनेवाला।

कुनवार (कुनावार) पञ्जाव प्रदेशके मध्यवर्ती बशाहिर राज्यका एक उपविभाग। वह अक्षा० ३१° १६´ से ३२° ३´ उ० और देशा० ७७° ३३´ से ७९° २´ पू० पर्यन्त अवस्थित है। उसके उत्तर स्पीती, पूर्व चीनराज्य, दक्षिण बशाहिर तथा गढ़वाल और पश्चिम कूलू है। कुनवार पर्वतमय है। वह ऊर्ध्व और अधः दो भागोंमें विभक्त है। शतद्रु नदीकी उपरितन अववाहिकासे उसका अधिकांश स्थान शीतप्रधान और ५००० से १०००० फीट पर्यन्त उच्च है। दूसरे शतद्रु उपत्यकाके निम्नतम स्थानमें ग्रीष्मके समय प्रस्तर अधिक उष्ण पड़जाते हैं। उसके अधोभाग और दक्षिण-अंशमें श्रावण तथा भाद्र मास वृष्टि होती है। शीतकालको विलक्षण वर्फ गिरती है। किसी किसी स्थानमें वह जम जाती है।

कुनवारके अधिवासियोंके आचार-व्यवहार और धर्ममतमें स्थानभेदसे पार्थक्य देख पड़ता है। उत्तरांशमे अधिवासी बौद्ध और तिब्बतके लामाका मत माननेवाले हैं। उनके देहका गठन तूरानियों जैसा लगता है। दक्षिणांशमें सभी हिन्दूधर्मावलम्बी हैं। फिर कुनवारके मध्यस्थलमें हिन्दू और बौद्ध दोनोंका एकत्र सम्मिलन है।

कुनवारी सुगठित, बलिष्ठ, वृहत् और कृष्णकाय होते हैं। उनमें प्रायः सभी अतिथिप्रिय, सत्यवादी, विनीत और साहसी हैं। उनमें बाहुबल भी अधिक है। एकबार गोरखोंने कुनवार अधिकार करनेको बहुसंख्यक एकत्र हो कुनवारियोंके विपक्ष अस्त्र धारण किया था। कई बार युद्ध हुवा। कुनवारियोंने अन्तको कई सेतु तोड़ डाले। अतः उससे विफल मनोरथ हो सन्धि करने पर बाध्य हुवे। उस समय शान्तिप्रिय कुनवारियोंने प्रति वर्ष ७५००) रु० कर देना स्वीकार किया था।

महाभारतमें एक द्रौपदीके पञ्चस्वामी रहनेको कथा है। किन्तु कुनवारमें द्रौपदीका दृष्टान्त बहुत मिलता है। ब्राह्मणोंसे लेकर चमारों तक उक्त नियम प्रचलित है।

कुनवारमें तातार लोग भी रहते हैं। किन्तु वह अपने पूर्वदेशवासियोंको भांति बलिष्ठ नहीं होते। निम्नप्रदेशके कुनवारी उन्हें झड़, भोटिया और भोटानी कहते हैं।

कुनवारी अति नृत्यगीतप्रिय हैं। वर्षके मध्य वहां अनेक महोत्सव होते हैं। कहते हैं कि सकल महोत्सवोंमें वह मतवाले बन अनुपम अपार आनन्द अनुभव करते हैं।

आश्विनके प्रारम्भ कुनवारमें मैन्तिक (हैमन्तिक?) नामक महोत्सव होता है। उस समय युवक युवती बालक बालिका घर बार छोड़ निकटवर्ती गिरिशृङ्ग पर चढ़ अभिनव पुष्पसज्जासे सज नृत्यगीत और वाद्य किया करती हैं। उसी पर्वत पर सब लोग खाते पीते भी हैं। जिस समय सब कुनवारी मिल कर ताल ताल पर नाचने लगते, उस समय सङ्गीत लहरी और वाद्य

ध्वनिसे गिरिगह्वर प्रतिध्वनित हो जाते हैं। वस्तुतः उस समय मनमें अभूतपूर्व भाव उठता है। विशेषतः पर्वत पर वैसा अच्छा वाद्य दूसरे स्थानमें कहीं सुन नहीं पड़ता।

कुनवारके प्रत्येक गिरिपथ, गिरिसङ्कट और तुषार मय स्थानमें चतुष्कोण प्रस्तरराशि मिलता है। कुनवारी उसे सुघर कहते हैं। लोगोंके विश्वासानुसार 'सुघर'में पर्वतको अधिष्ठातृ-देवता अधिष्ठान करती हैं। उक्त प्रस्तर पर बहुतोंको भीति, भक्ति और श्रद्धा रहती है।

आचार-व्यवहार और धर्मभेदानुसार कुनवारके उत्तरांशमें भोटानी और दक्षिणांशमें संस्कृतका अपभ्रंश हिन्दीभाषा प्रचलित है। उस हिन्दीको कुनवारी 'मिलचन' कहते हैं। मिलचन भाषामें लुबरम वा कनुम, लिदुम वा लिप्पा इत्यादि भेद विद्यमान हैं।

कुनवारमें स्थानभेदसे अति उत्तम फल होते हैं। सुंगनाका सेव, आकपाका अङ्गूर और पङ्गी नामक स्थानका जायफल प्रसिद्ध है। कुनवारके अङ्गूरसे बहुत अच्छी शराब बनती है।

२ मध्यप्रदेशका एक प्राचीन ग्राम। वह रायपुरसे ७ कोस उत्तर विलासपुर और रत्नपुर जानेको बड़ी राहके बायें अवस्थित है। वहां लोगोंमें प्रवाद है कि राजा कुनवतने उक्त ग्राम पत्तन किया था। उनकी रानीने एक वृहत् जलाशय खुदाया उसे आजकल 'रानी तलाव' कहते हैं। कुनवार ग्राममें अद्यापि अनेक हिन्दू एवं जैनमन्दिर, अनेक सरोवर और अनेक पुरातन सतोस्तम्भ विद्यमान हैं।

कुनह (सं० पु०) १ ईशानकोणस्थ कोई जनपद और उसके अधिवासी। (वृहत्‌संहिता, १४। ३०) (त्रि०) २ कुत्सित बन्धनकार, बुरा फन्दा डालनेवाला।

कुनह (हिं० स्त्री०) १ द्वेष, कीना, मनमोटाव। २ पुरातन वैर, पुरानी दुश्मनी।

कुनही (हिं० वि०) द्वेषयुक्त, कीनावर, कुढ़नेवाला।

कुनाई (हिं० स्त्री०) १ चूर्ण, बुरादा बुकनी। वह किसी चीजको खरादने या खुरचनेसे निकलती है। २ खरादनेका काम। ३ खरादनेकी मजदूरी।

कुनाथ (सं० पु०) कुत्सितो नाथः, कुगतिस०। १ निन्द्यस्वामी, बुरा शौहर।

"हताश्चाहं कुनाथेन नपुंसा वीरमानिना।" (भागवत, ९। १४। २८)

२ निन्द्य अधिपति, खराब मालिक।

(भागवत, ५। १४। २)

कुनादिका, कुनदिका देखो।

कुनाभि (सं० पु०) कु ईषत् नाभिरिव, आवर्तवत्त्वात्, कर्मधा०। १ वातमण्डली, डकूर। २ कुबेरका निधिविशेष।

कुनाम (सं० त्रि०) कुत्सितं प्रातःस्मरणीयं नामास्य। १ अतिकृपण वा अति पापकारी, बदनाम। (क्ली०) २ अख्याति, बदनामी।

कुनायक (सं० त्रि०) कुत्सितो नायकोऽस्य। १ मन्द परिचालकवाला, जिसके अच्छा मालिक न रहे।

"यस्यामिमे षण्नरदेव दस्यवः सार्थं विलुम्पन्ति कुनायकं बलात्।"

(भागवत, ५। १३। २)

(पु०) निन्द्यनायक, बुरा शौहर या मालिक।

कुनायका (सं० स्त्री०) निंद्य प्रणयपात्रवाली स्त्री, जो औरत खराब शौहर रखती हो।

कुनाल (सं० पु०) कुत्सितं नालमस्य। १ कोकिल, कोयल। २ राजा अशोकके कोई पुत्र। अशोकके अनेक पत्नी रहीं। उनमें रानी पद्मावतीके गर्भसे कुनालने जन्मग्रहण किया। उनके दोनों चक्षु अति सुन्दर और मनोहर थे। उन्हीं अनुपम चक्षुके सौन्दर्यसे उनकी विमाता तिष्यरक्षा विमुग्ध हो गयीं। अन्तको एक दिन उन्होंने कुनालसे अपना कु-अभिप्राय प्रकाश किया था। वह परम धार्मिक रहे। उन्होंने विमाताका उक्त असङ्गत अभिप्राय देख दुःख और घृणासे प्रार्थना न सुनी। उस समय तिष्यरक्षाके हृदयमें अनल जल उठा। उस पापिनीने प्रतिज्ञा की थी—'जो सुकुमार नयन-युगल हमेरी लज्जा और मनस्तापका कारण हुवा है, उसे निश्चय नाश करूंगी।'

उसी समय तक्षशिला नगरके शासनकर्ता विद्रोही हुये थे। पिताके आदेशसे कुनाल विद्रोहियोंको निवारण करनेके लिये तक्षशिला चले गये। इधर प्रियपुत्रको भेज अशोक अति चिन्तित हुवे। चिन्तासे कातर

होते पर क्रमशः उनको दारुण रोग लगा था। उस समय केवल तिष्यरक्षिताके यत्नसे ही उन्होंने आरोग्यलाभ किया। इसलिये राजा उनके प्रति बहुत सन्तुष्ट हो गये। तिष्यरक्षिताने भी समय देख अशोकसे ७ दिन साम्राज्यशासन करनेको अनुमति ली थी। उक्त सात दिनके मध्य ही उस दुर्वृत्ताने तक्षशिलाके शासनकर्ताको लिख भेजा—'हमारे आदेशके अनुसार कुनालको दोनों आंखे निकाल लो।' घटनाक्रमसे कुनालके हाथ वह पड़ गया। उन्होंने अधीश्वरीको आज्ञा अग्राह्य न कर अपनी अमूल्य कमल जैसी आंखें निकाल डालीं। पत्नी काञ्चनमाला अन्धपतीके ले राजधानी पहुंची थीं। उक्त दुर्घटना राजा अशोकके कर्णगोचर हुयी। राजा शोकसे बहुत घबरा उठे। फिर वह क्रुद्ध हो तिष्यरक्षिताको मारने चले थे। कुनाल पिताको निरस्त कर कहने लगे—'आप स्त्रीहत्या मत कीजिये। मैं विमाताके आचरणसे बहुत ही सन्तुष्ट हुवा हूं। मेरे असारदर्शी चक्षु तो चले गये, किन्तु मुझे मानसचक्षु मिले हैं।' कुनालके उक्त महच्चरित्रसे सभास्थ सभी लोग उनका यशोगान करने लगे। देखते देखते सर्वसमक्ष उन्होंने पूर्वापेक्षा समुज्ज्वल नयन लाभ किये।

(दिव्यावदान-कुनालावदान, २७ अ० और बोधिसत्वावदानकल्पलता, ४९ अ०)

कुनालिक (सं० पु०) कुत्सितं नालमस्येति, कु-नाल-ठञ्। वह्वच् पूर्वपदात् ठञ्। पा ४।४।६४। कोकिल, कोयल।

कुनाशक (सं० पु०) ईषत् नाशयति स्पर्शने, कु-नश-णिच-ण्वुल्। दुरालभा, जवासा। उसका संस्कृत पर्याय—यास, यवास, दुःस्पर्श, धन्वयास, दुरालभा, रोदिनी, गान्धारी, कच्छु, अनन्ता, कषाया और हरविग्रहा है।

कुनास (सं० पु०) उष्ट्र, ऊंट।

कुनित (हिं०) क्वणित देखो।

कुनिन्द—भारतका पुराणोक्त उत्तरदिग्वर्ती जनपद और जातिविशेष। यथा—

"शका ह्रणाः कुनिन्दाश्च पारदा हारहूणकाः।"

(ब्रह्माण्डपुराण, अनुषङ्गपाद, ४८ अ०)

महाभारत और वामनपुराणमें उक्त जातिविशेष और उसके रहनेका जनपद 'कुलिन्द' नामसे वर्णित हुवा है।

"खसा एकासना ह्यर्हाः प्रदरा दीर्घवेणवः।
पारदाश्च कुलिन्दाश्च तङ्गणाः परतङ्गणाः॥" (भारत, सभा, ५२।३)

"शातद्रवा कुलिन्दाश्च पारावतसमूषकाः।" (वामनपुराण, १३।३८)

ब्रह्माण्डपुराणके किसी किसी स्थलमें उक्त जनपद और जातिविशेषका नाम 'कुणिन्द' और वराहमिहिरकी बृहत्संहितामें 'कौणिन्द्र' लिखा है।

"ब्रह्मपुरदार्वडामरवनराज्यकिरातचीनकौणिन्दाः।"

(बृहत्संहिता, १४।३०)

पाश्चात्य भौगोलिक टलेमिने कुनिन्दको किलिन्द्रिने वा काइलिन्द्रिने (Kylindryne) नामसे वर्णन किया है। उनके मतमें उक्त जनपद विवसिस (विपाशा) और गङ्गानदीका मध्यवर्ती है। कुनिन्द वा कुलिन्द लोगोंको आजकल 'कुनेत' कहते हैं। शतद्रु-प्रवाहित कुनवार और विपाशा-प्रवाहित कूलू राज्यमें वह प्रधानतः रहते हैं। वही अञ्चल पुराणोक्त 'कुनिन्द' वा 'कुलिन्द' समझ पड़ता है। किन्तु महाभारतमें अर्जुनके दिग्विजयप्रसङ्गपर 'कुलिन्दविषय' भारतका (उत्तर) पूर्ववर्ती बताया है। यथा—

"पूर्वं कुलिन्दविषये वशे चक्रे महीपतीन्।
धनञ्जयो महाबाहुर्नातितीव्रेण कर्मणा॥
अरट्टान्* कालकूटांश्च कुलिन्दांश्च विजित्य सः।"

(भारत, सभा, २६।३)

अथच उक्त जनपद भारतवर्षके उत्तर-पश्चिम हिमालयपर अवस्थित है। सुतरां वर्तमान अवस्थान देख अर्जुनके दिग्विजयका कुलिन्द स्वतन्त्र जनपद समझ पड़ता है। किन्तु वास्तवमें यह बात ठीक नहीं। बृहत्संहितामें गान्धार और काश्मीरादि जनपद भारतके ईशानकोण अर्थात् उत्तर-पूर्वको अवस्थित लिखे जाते भी जैसे भारतके उत्तर-पश्चिम पड़ते हैं, उक्त कुलिन्द जनपदका अवस्थान भी वैसे ही समझ सकते हैं।

प्रत्नतत्त्ववित् कनिङ्गहाम साहबके मतमें "चीनपरिव्राजकने कौनिन्द जनपदका उल्लेख नहीं किया

* किसी किसी मुद्रित पुस्तकमें आनर्तान् पाठ है।

है। किन्तु उनके 'स्रुघ्न' नामसे उसका बोध हो जाता है।" उन्होंने विष्णुपुराणमें उक्त स्थानका प्रयोग "कुलिन्दोपत्यका" नामसे पाया है।

चीन-परिव्राजक युयेनचुयाङ्गसे कुछ पूर्व ई० षष्ठ शताब्दका वराहमिहिर कौनिन्द और स्रुघ्न दो भिन्न जनपदोंका वर्णन लिख गये हैं। यथा—

"स्रुघ्नौदिच्यविपाशाशतद्रुरमठशाल्वाः।" (बृहत्संहिता, १६। २१)

चीनपरिव्राजकके पहुंचते स्रुघ्नकी भग्नावस्था थी। इसका कोई प्रमाण नहीं मिलता—उस समय कुनिन्द स्रुघ्नके अन्तर्गत रहा या नहीं।

विष्णुपुराणमें 'कुलिन्द, अथवा 'कुलिन्दोपत्यका' शब्दका कहीं प्रयोग देख नहीं पड़ता। महाभारतमें उक्त दोनों जनपदोंका उल्लेख है। वह दोनों भिन्न भिन्न स्थानमें अवस्थित हैं। (भारत, भीष्म ९। ५६।६३ श्लो०)

अतिपूर्वकालसे कुनिन्द एक स्वाधीन राज्य गिना जाता है। वर्तमान ज्वालामुखीके निकट कुनिन्द-राज अमोघभूतिकी प्राचीन मुद्रा मिली है।*

वहां पूर्वतन अधिवासी विलासपुरके ६ कोस पूर्व शतद्रु नदीके दक्षिणकूल आज भी 'कुनिन्द' नामसे प्रसिद्ध हैं। तिब्बतके लोग उनको 'मन' कहके पुकारते हैं।

शिमला-शैलसे गढ़वालके उत्तरांश पर्यन्त नाना स्थानोंमें कुनिन्द वा कुनैत जातिका वास है। उन लोगोंका आचार-व्यवहार पार्वतीय खसोंसे मिलता है। खस देखो। इसलिये बहुतसे लोग उक्त जातिको खस जातिकी एक श्रेणीमें गणना करते हैं। फिर किसीके मतमें वह खसजातिसम्भूत हैं। किन्तु हमारी विवेचनापर आचार-व्यवहारमें कितनाही सौसादृश्य रहते भी प्रति पूर्वकालसे कुनिन्द और खस दो भिन्न जाति प्रसिद्ध हैं। महाभारतादि प्राचीन ग्रन्थमें उक्त सम्बन्ध पर विस्तर प्रमाण मिलता है। आज भी योषीमठके उत्तर कुनिन्द लोग रहते हैं। वह अपनेको क्षत्रिय-जाति बताते हैं। उक्त सकल स्थानमें कुनिन्द लोगोंकी अवस्था अधिकतर स्वाधीन है। यहांतक कि पवर उपत्यकाके शिलादेश नामक स्थानमें वह बराबर स्वाधीन रहे। अधिक दिन नहीं बीते, बिसहरके राजाने उक्त स्थान आक्रमण कर कुनिन्दोंको कितनाही अवनत किया था।

कुनवार प्रभृति स्थानोंके कुनैत कहते हैं कि मुसलमानों कर्तृक भारत आक्रमणसे पूर्व वह सर्वत्र स्वाधीन रहे। पीछे ब्राह्मणों और राजपूतोंने जा उनकी कितनीही स्वाधीनता हरण की है। वह राजपूत लोगोंको अपनी अपेक्षा हीन समझते और उन्हें सहजमें अपनी कन्या देनेसे हिचकते हैं।

उक्त जातिके मध्य तीन गोत्र प्रचलित हैं—मङ्गल, चौहान और राव। उनमें दूसरे श्रेणीभेद भी हैं। यथा—पश्चेक, श्रहेक, कड़्क और भज्वेक।

कुनिन्द जातिकी भाषामें हिन्दी और हिमालयकी पहाड़ी भाषा मिली है। विपाशासे तोनस (तमसा) नदीके मध्यवर्ती प्रदेश पर्यन्त प्रायः ४ करोड़ कुनैत रहते हैं। उनसे शिमला शैलकी चारो ओर सैकड़े पीछे ६७, कूलूविभागमें सैकड़े पीछे ५८ और कुनवारमें सैकड़े पीछे ६२ लोग रहते हैं।

कुनिया (हिं० पु०) १ खरादनेवाला, जो कुनता हो। २ अनुमानसे गणना करनेवाला, कनकूत लगानेवाला।

कुनीति (सं० स्त्री०) १ कुव्यवहार, बदसलूकी। २ कुत्सितनीति, बुरा तरीका।

कुनीली (सं० स्त्री०) तेरण, एक पौदा।

कुनेड़ा—एक जाति। यह शब्द संस्कृत कुण्डकारका अपभ्रंश है। कुनेड़े कहा करते हैं—'हम बैसराजपूत हैं और राजपूतानेसे आकर मिर्जापुर जिलेमें बसे हैं। जब भारतवर्षमें यज्ञादिका अधिक प्रचार था, हम कुण्ड बनाते थे, परन्तु मुसलमानोंके समय यज्ञ आदि उठ जानेसे हम लोग हुक्का, निगाली आदि बनाने लगे, कितने ही लोग इन्हें शूद्र कहते, परन्तु कुनेड़ोंके क्षत्रियत्वके भी कहीं कहीं प्रमाण मिले हैं।

कुनेत्रक (सं० पु०) एक मुनि।

कुनैन (अं० Quinine) औषध विशेष, एक दवा। वह ज्वरके रोगीको देनेसे बड़ा उपकार करता है। कुनैन सिनकोना नामक वृक्षकी त्वक्का सार है।

* कनिङ्घहाम साहबने उक्त सकल मुद्राको ईसा जन्मके ३य शताब्दकी पूर्ववर्ती माना है। Arch. Sur. Repts. Vol. XIV. p. 135.

उक्त वृक्ष प्रथम दक्षिण अमेरिकामें ही उपजता था। किन्तु अब वह भारतवर्षके नीलगिरि, महिसुर और सिकिम प्रभृति उच्च पार्वत्य स्थानोंमें भी देख पड़ता है। उसका बीज और कलम दोनों लगाते हैं। बीज घने बोये जाते हैं। सिंचाई बहुत होती है। पेड़ पर छाया भी कर देते हैं। प्रायः ६ सप्ताहमें अङ्कुर फूटता है। चार-छह पत्र निकल आनेसे वृक्ष अन्यत्र लगाये जाते हैं। उक्त क्रिया कई बार करना पड़ती है। वृक्षोंके बीज चार या छह फीटका अन्तर रहता है। सिनकोना धूसर, रक्त एवं पीतवर्ण कई प्रकारका होता है। रक्तवर्ण सर्वोत्तम, धूसर वर्ण मध्यम और पीतवर्ण गुल्मजैसा होता है। ४ वर्ष पीछे वृक्ष कार्योपयोगी होता है। किन्तु ७ वर्ष पीछे उसका क्षार ह्रास होने लगता है। अधिकांश क्षार मूलमें रहता है। इसीसे उसका मूल्य भी अधिक है।

कुनैनके सेवनसे सर्वप्रकार ज्वर आरोग्य होता है। किन्तु भारतीय वैद्य उसे हानिकारक समझ विषवत् त्याग करते हैं। वह अति उष्ण है।

कुन्त (सं॰ पु॰) कुं भूमिं उनत्ति क्लिद्यति, यद्वा कुं शरीरं उनत्ति, भिनत्ति, कुं उन्द बाहुलकात् तः शकन्ध्वादित्वात्। १ गवेधुक, एक धान। २ क्षुद्रजन्तु, छोटा जानवर। ३ कोपभाव, जोश। ४ भल्ल, भाला बरछी।

धनुर्वेदमें कुन्तास्त्रका लक्षण और निर्माणप्रणाली इस प्रकार लिखी है—'वंश, वेतस्, विल्व, चन्दन, वर्धन, शिंशपा, खदिर, देवदारु किंवा वण्टारोह काष्ठ द्वारा उसका दण्ड बनाना पड़ता है। वह सात हाथ लम्बा रहनेसे उत्तम, छहसे मध्यम और पांचसे निकृष्ट होता है। फल लौहनिर्मित रहेगा। उक्त फलका आकार दो प्रकारका है—प्रथम पुष्कलावर्तक, द्वितीय चीनजात। लौह पुष्कलावर्तक होनेसे कोमल और चीनोत्थित होनेसे तीक्ष्ण रहता है। जिस लौहसे आघात करने पर शब्द निकलता, वह तीक्ष्ण ठहरता है। फिर जिससे आघात करने पर शब्द नहीं निकलता, उसे विद्वान् मृदु कहते हैं। गिर पड़नेसे जो फल टूट जाता, वह तीक्ष्णलौह-निर्मित कहाता है। फिर गिरनेसे न टूटनेवाला फल पुष्कलावर्त लौह-निर्मित है। फलनिर्माण विषयमें चीनजात लौह अप्रशस्त है। उक्त कार्य केलिये पुष्कलावर्त लौह ही अच्छा रहता है। कुन्तका फलक मृदुलौह द्वारा एवं तीक्ष्णधार लौह द्वारा बनाना चाहिये। उक्त उभय लौह अप्राप्य होने पर किसी अच्छे लौहसे संशोधनपूर्वक फलको बनाते हैं। खजूर, बेत, बांस आदि वृक्षोंके पत्र सदृश फलका अग्रभाग भली भांति पतला रहेगा। शुभ्र, सुन्दर, तीक्ष्ण, षोड़श अङ्गुलिपरिमित फल ही प्रशस्त है। वह चौदह अङ्गुलि रहनेसे मध्यम और बारह अङ्गुलि रहनेसे निकृष्ट होता है। विस्तार दो अङ्गुलिसे क्रमशः घट एक अंगुलि रह जाना चाहिये। मोटाई दो, डेढ़ या एक चावल होती है। सुशब्द, मृदुगन्ध, सुपीन, उत्तमवर्ण और परिष्कृत होनेसे फल कअच्छा है। शब्दसे उसका गुणागुण समझा जाता है। घण्टाकी भांति शब्द निकलनेसे फलक अच्छा रहता है। भग्नपात्रकी भांति शब्द निकलनेसे समझना पड़ेगा कि वह अच्छा नहीं। देखनेमें फलक यदि चन्द्र किंवा नीलाकाशकी भांति परिष्कार लगता, तो उस प्रकारके फलकका कुन्त लेनेमें प्रशस्त पड़ता है। फलको मक्षिका-जैसा वर्ण न होनेसे परित्याग करना चाहिये। प्रस्तुत कुन्त क्रय करनेमें भी लक्षण देख लेते हैं। जिस कुन्तमें हंस, मयूर, मत्स्य प्रभृति चिह्न रहता उसको धारण करनेसे मङ्गल बढ़ता है। शकुनि, काक, शृगाल प्रभृति अमङ्गल चिह्नयुक्त कुन्त लेना न चाहिये। चुलिका और व्याघ्र नखकी बुकनी समभावमें मिला उसे परिष्कार करते हैं। उससे कुन्त जल्द मैला नहीं होता।

अन्यान्य अस्त्रकी भांति उसे भी म्यानमें रखना चाहिये। साधारणके पक्षमें कुन्तास्त्र धारण करना उचित नहीं। सत्पुरुष वीर व्यक्तिको भाला बांधना चाहिये। शुक्रनीतिमें लिखा है—

"दशहस्तमितः कुन्तः फलाग्रः शङ्कुबुध्नकः।"

कुन्तमें १० हाथ लम्बे बांसकी छड़के ऊपर लोहेका तीक्ष्ण फल लगता है। मूलमें सूक्ष्म और तीक्ष्ण लौहशलाका रहती है। फलके नीचे और मूलमें रेशमका स्तबक शोभित होना चाहिये।

उक्त वर्णनासे कुन्त और फरसा समान समझ पड़ता है। कल्याणके चौलुक्यराजावोंका राजसम्मान परिचायक कुन्तास्त्र ही था।

कुन्तन—प्रतिलोम वर्णसङ्कर जातिविशेष। वैश्यके औरस और ब्राह्मणीके गर्भसे उक्त जातिकी उत्पत्ति है। स्त्रियोंके निकट नौकरी करना और नर्तकी तथा वेश्या बुलाना ही कुन्तन लोगोंका प्रधान कार्य है।

कुन्तल (सं० पु०) कुन्तं क्षुद्रकीटं लाति, कुन्त-ला-क, यद्वा कुन्तस्य अग्राकारमिव लाति। १ केश, बाल।

"कापि कुन्तलसंव्यानसंयमव्यपदेशतः।" (साहित्यदर्पण, ३।१२४)

२ ह्रीवेर, बाला। ३ यव, जौ। ४ चषक, पीनेका बर्तन। ५ हल। ६ ध्रुवकविशेष, किसी किस्मका ध्रुरपद।

"वर्णैः षोड़शभिः कार्यः कुन्तलो लघुशेखरे।
शृङ्गारे च रसे प्रोक्तं आनन्दफलदायकः॥" (सङ्गीतदामोदर)

७ जनपदविशेष, कोई मुल्क या सूबा। महाभारतमें तीन कुन्तलराज्यके नाम मिलते हैं। यथा—

१म "मत्स्याः सुकुट्याः सौवल्या कुन्तलाः काशिकोशलाः।" (भीष्मपर्व, ९।३९)
२य "दुर्गालाः प्रतिमास्याश्च कुन्तलाः कुशलास्तथा।" (भीष्मपर्व, ९।५२)
३य "जिल्लिका कुन्तलाश्चैव सौहृदा नलकाननाः।
कौकुट्टकास्तथा चोलाः कौङ्कणा मालवानकाः॥" (भीष्मपर्व, ९।६०)

प्रथम भारतके उत्तरांशमें मध्यदेशके मध्य*, द्वितीय दक्षिण-कोशलके निकट वर्तमान गोण्डवनके मध्य और तृतीय कोङ्कणके पार्श्व पर दक्षिण-महाराष्ट्रके मध्य अवस्थित है।

दक्षिणापथसे कई शिलालिपि आविष्कृत हुयी हैं। उनसे समझ पड़ता है कि कुन्तलराज्य किसी समय पहले आदनी जिलाके पश्चिमांशमें कुदगोदसे† दक्षिण महाराष्ट्रके अन्तर्गत सांगली राज्य पर्यन्त विस्तृत‡ था। उक्त सांगली राज्यके अन्तर्गत तेरडाल ग्रामसे प्राप्त १०४५ शकको खोदित एक शिलालिपि द्वारा समझ पड़ता है कि उस समय कुन्तलराज्य चौलुक्यराजावोंके अधीन था और 'कल्याणपुर' उक्त राज्यकी राजधानी रहा। कल्याण देखो।

वराहमिहिरकी बृहत्संहितामें कोङ्कण, कुन्तल, केरल, दण्डक प्रभृति जनपद एकत्र उक्त हुये हैं।

(बृहत्संहिता, १४।१२)

दशकुमारचरितमें कुन्तल विदर्भराज्यके अधीन और अन्तर्गत कहा गया है। कुण्डिन और विदर्भ देखो।

दक्षिण-महाराष्ट्रके 'तेरडाल' ग्रामका खोदित शिलाफलक* पढ़नेसे कोल्लगिरि† कुन्तलराज्यका निकटवर्ती समझ पड़ता है।

विजयनगरके गानिगित्ती नामक जैनमन्दिरके प्रस्तरस्तम्भकी खोदित प्राचीन शिलालिपि‡ पढ़नेसे समझा जाता है कि कुन्तल-विषय कर्णाटराज्यके अन्तर्गत आता है;—

"अस्ति विस्तीर्ण कर्णाटधरामण्डलमध्यगः।
विषयःकुन्तलो नाम्ना भूकान्ताकुन्तलोपमः॥"

उक्त प्रमाणसे अनुमित होता—किसी समय प्राचीन कुन्तलजनपद वर्तमान कोङ्कणप्रदेशके पूर्व, कोल्हापुरके उत्तर तथा हैदराबादके पश्चिम कृष्णा नदीके उभय पार्श्व एवं मालपूर्वा और वर्धा नदीके मध्यस्थल उत्तरमें कल्याणपुरसे दक्षिण-पूर्व आदनी जिला तक विस्तृत था।

दक्षिणमहाराष्ट्र 'बखवा' विभागके मध्य जो रेल-पथ लगा, उसमें आठरोडके उत्तर कृष्णानदीके दक्षिण 'कुन्तलरोड' नामक एक स्थान है। सम्भवतः उसीके पास महाभारतोक्त दक्षिण कुन्तलकी राजधानी कुन्तल-नगरी रही।

कुन्तलवर्धन (सं० पु०) वर्धयति, वृध-णिच-ल्युः नन्दिग्रहिपचादिभ्यः। पा ३।१।१३४। भृङ्गराजवृक्ष, घमिराका पेड़। उक्त वृक्षका रस बालोंको बढ़ा देता। इसीसे उसे कुन्तल-वर्धन (बालोंको बढ़ानेवाला) कहते हैं।

* "मत्स्याः किराताः कुल्याश्च कुन्तलाः काशिकोशलाः॥३५॥
मध्यदेशा जनपदाः प्रायशः परिकीर्तिताः॥३६" (मत्स्यपुराण, ११३।३६)

† Asiatic Researches, Vol. IX. p. 429, Colebrooks Miscellaneous Essays, Vol. II. p. 272 n.

‡ Indian Antiquary, Vol. XIV. p. 14-25.

* Indian Antiquary, Vol. XIV. p. 23-26.

† कोल्लगिरिका वर्तमान नाम कोल्हापुर है। वह कोङ्कणके दक्षिणपूर्व अवस्थित है।

‡ E. Hultzsch, South Indian Ins-criptions, Vol. 1, p. 8.

कुन्तलिका (सं० स्त्री०) कुन्तलाग्राकारो लाङ्गलाग्राकारो विद्यते अस्याः, कुन्तल-ठन्-टाप्। १ दध्यादिच्छेदनी, दही वगैरह काटनेका औजार। इसे पालिका भी कहते हैं। २ बालानामक औषध। वह शीतल, रूक्ष, दीपन एवं पाचन और विसर्प, हृद्रोग, अरुचि तथा आमातिसार रोगनाशक है। (भावप्रकाश)

कुन्तलाका, कुन्तलिका देखो।

कुन्तलोशीर (सं० क्ली०) कुन्तल इव उशीरम्। ह्रीवेर, बाला।

कुन्ताप (वै० पु०) १ अथर्ववेदका सूक्तभेद। (क्ली०) २ उदरकी एकविंशति नाड़ी, पेटकी कोई ईक्कीसवीं नाड़ी।

"विंशतिर्वा अनुरुदरे कुन्तापानि।" (शतपथब्राह्मण १२।२।४।१२)

"अथ यत् कुन्तापमासीत् यो मज्जा।" (१३।४।४।८)

कुन्ति (सं० पु०) कम-भिच्। सुबो भिच्। उण् ३।५०। १ कोई जनपद और उस जनपदवासी क्षत्रियजातिविशेष। महाभारतमें स्थान स्थान पर उक्त जनपद कुन्तिराष्ट्र और कुन्तिभोज नामसे वर्णित हुवा है। हरिवंशके मतसे कुन्तिविषयमें कृष्णके पिता वसुदेव और पाण्डवमाता कुन्तिदेवीने जन्मग्रहण किया था—

"वसौ तु कुन्तिविषये वसुदेवः सुतो विभुः।
ततः स जनयामास सुप्रभे द्वे च दारिके।
कुन्तीच पाण्डोर्महिषीं देवतामिव भूधराम्॥"
(भारत, ९५।५१)

ग्वालियरके अन्तर्गत कुतवारमें एक प्राचीन प्रवाद है कि वहीं कुन्तिदेवी कुन्तिभोज-कर्तृक प्रतिपालित हुयीं। कुतवार देखो। वेदका कठसूत्र पढ़नेसे समझ पड़ता—पूर्वकालको कुन्ति लोगोंके साथ पञ्चालोंका एक बार घोरतर विवाद हुवा था। २ हैहयके पौत्र और धर्मनेत्रके पुत्र। (विष्णुपुराण, ४।११।३) भागवतके मतमें वह धर्मके पौत्र और नेत्रके पुत्र थे। (भागवत, ९।२३।२१) ३ क्रथके पुत्र और वृष्णिके पिता। (विष्णुपुराण, ४।१२।१५।) ४ विदर्भके पुत्र और धृष्टके पिता। (हरिवंश, १९।८९) ५ पक्षिराज गरुड़के प्रपौत्र और सम्पातिके पुत्र। (मार्कण्डेयपुराण, २।२)

कुन्तिभोज (सं० पु०) कुन्तिनामा भोजः भोजदेशाधिपः। भोजदेशके अधिपति कुन्ति। वही पृथाके पालक पिता थे।

कुन्तिक (सं० पु०) किसी देशके अधिवासी।

कुन्ती (सं० स्त्री०) कुन्ति-ङीष्। इतो मनुष्यजातेः। पा ४।१।६५। १ कुन्तिदेशीय स्त्री। २ गुग्गुलवृक्ष, गूगुलका पेड़। ३ शल्लकी वृक्ष। ४ यदुवंशीय शूरराजकी कन्या और वसुदेवकी भगिनी।

शूरसेनकी पितृस्वसाके पुत्र कुन्तिभोज अपुत्रक थे। उनसे शूरसेनने प्रतिज्ञा की—'हम अपना सन्तान आपको देंगे।' इसीसे कुन्तिभोजने शूरसेनकी प्रथमा कन्या पृथाको ले पुत्रकी भांति लालन पालन किया था। कुन्तिभोज-कर्तृक पालित होने पर ही पृथा 'कुन्ती' नामसे विख्यात हुयीं।

किसी दिन महर्षि दुर्वासा कुन्तिभोजके भवनमें अतिथि रहे। उस समय कुन्ती महर्षिकी परिचर्यामें नियुक्त हुयीं। उससे ऋषिवरने कुन्तीकी अतिसन्तुष्ट हो एक मन्त्र प्रदान किया। उस मन्त्रके प्रभावसे सकल देवता भृत्यकी भांति मन्त्रोच्चारणकारीके वशीभूत हो जाते थे।

एक बार कुन्तिने मन ही चिन्ता की—'महर्षिने हमें जो मन्त्र दिया है, उसको एकबार परीक्षा करके देखना चाहिये।' इसी प्रकार सोच रही थीं, कि कन्यावस्थामें अपने ऋतुलक्षण देख वह अतिशय लज्जित हुयीं। मनोभाव गोपन कर शय्या पर बैठ नवोदित दिवाकरके प्रति एक बार उन्होंने ताका था। क्या ही आश्चर्य! उनका मन उस दिन कैसा चञ्चल हुवा। वह सूर्यकी दिव्यमूर्ति देख मुग्ध हो गयीं। उसी समय ऋषि-प्रदत्त मन्त्रका बलाबल परीक्षा करनेको उन्हें कौतूहल लगा। उन्होंने मन्त्र पढ़ दिवाकरका आह्वान किया था। सूर्यदेव अपना देह दो भागमें बांट एक मूर्ति द्वारा पूर्ववत् ताप पहुंचाते रहे और अङ्गद एवं मुकुट-मण्डित अपर मूर्ति बना कुन्तीके पार्श्व पर जाकर कहने लगे—'सुन्दरि! हम एकान्त आपके वशीभूत हैं। कहिये, अब क्या करें।'

कुन्तीने ससम्भ्रम कहा था—'देव! कौतूहलसे आपको आह्वान कर हमने अनर्थक कष्ट दिया है। हमें क्षमा कर आप प्रस्थान कीजिये।'

उस समय सूर्यदेव बोल उठे—'देवताको वृथा आह्वान करना उचित नहीं। आप हमें आत्मदान कीजिये। हम आपको कवचकुण्डलधारी एक दिव्य पुत्र देंगे। यदि आप हमारी बात पर सम्मत न होंगी, तो हम आपको, आपके पिता कुन्तिभोजको और अयोग्यपात्रके लिये मन्त्रदाता उस ब्राह्मणको भस्म कर डालेंगे।' कुन्तीने लज्जित और भीत हो करके कहा था—'देव! हम बालिका हैं। हमें आत्मदेह दूसरेको देनेका अधिकार नहीं। हमें क्षमा कीजिये। हमारे साथ इसप्रकार अवैधरूपसे सहवास करने पर हमारी कुलकीर्ति नष्ट हो जायेगी।'

सूर्यदेवने सादर उत्तर दिया—'तुम्हें पाप न लगेगा। यहां तक कि तुम्हारा कन्याभाव भी कलङ्कित होनेसे बच जायगा। आपका गर्भभाव धात्री भिन्न दूसरा कोई जान न सकेगा। हमें आत्मदान कीजिये।'

कुन्तीने देखा कि सूर्यके हाथसे छूटना उनके लिये असाध्य था। उन्होंने सूर्यसे कहा—'यदि ऐसा प्रकृत हो, तो वह पुत्र आपका कुण्डलद्वय और अभेद्य वर्म लाभ कर सके।'

सूर्य बोले—'वही होगा।' फिर वह कुन्तीका गर्भाधान कर अन्तर्हित हुवे। उसी गर्भसे कर्णने जन्म लिया। कर्ण देखो। (भारत आदि, ६७ अ०; वन, ३०२—३०७ अ०)

कुछ दिन पीछे कुन्तिभोजके यत्नसे उनका स्वयम्बर हुवा। उन्होंने स्वयम्बर-सभामें कुरुराज पाण्डुको माला पहनायी थी। कुछ दिन अच्छे सुखमें अतिवाहित हुवे। पाण्डुराजने कुन्ती और अपनी कनिष्ठा भार्या माद्रीको सङ्ग ले वनविहारको यात्रा की थी। उसी वनविहारमें कुन्ती पतिहीना हो गयीं। पाण्डु देखो।

पतिके आदेश पर क्षेत्रजपुत्र लाभके लिये कुन्ती देवीने धर्मके औरससे युधिष्ठिरको, वायुके औरससे भीमको और इन्द्रके औरससे अर्जुनको पाया था। फिर उन्हींके मन्त्रप्रभावसे माद्रीने अश्विनीकुमारद्वयके औरससे नकुल और सहदेवको गर्भमें धारण किया। माद्री भी पतिके पीछे चल बसीं। माद्री देखो।

कुन्ती शतशृङ्गवासी ऋषियोंके साहाय्यसे पञ्चपुत्र और दोनों मृतदेह सङ्ग ले हस्तिनानगरमें भीष्मके निकट उपस्थित हुयीं। सपुत्रा कुन्तीदेवी हस्तिनामें पहुंचते भी स्वच्छन्द न रहीं। धृतराष्ट्रके पुत्र विशेषतः दुर्योधन सर्वदा ही पाण्डुपुत्रोंका अनिष्टाचरण करते थे। भीम देखो। एकबार उन्होंने वारणावत नगरके जतुगृहमें उन्हें जला देनेके लिये साजिश की थी। किन्तु विदुरके परामर्श पर सपुत्रा कुन्तीदेवी उस दारुण विपत्से बच गयी। विदुर देखो।

उस समय हस्तिना वा धार्तराष्ट्रोंके निकट रहना उचित न देख कुन्तीने अरण्यपथसे अनेक कष्ट उठा एकचक्रा नगरीको गमन किया। फिर वहां वह छद्मवेशसे किसी ब्राह्मणके गृहमें रहने लगीं। कुछ दिन पीछे उन्होंने किसी ब्राह्मणके मुखसे द्रौपदीके स्वयम्बरकी बात सुनी थी। इसलिये कुन्तीने पाञ्चाल जा किसी कुम्भकारके गृहमें आश्रय लिया और धौम्यको पुरोहितके पदपर नियुक्त किया। धौम्य देखो।

स्वयम्बर-सभामें अर्जुनने लक्ष्यभेद करके द्रौपदीको पाया था। भीमार्जुन उसी कुम्भकारके द्वार पर जा माताको पुकार कहने लगे—'मातः! आज एक अपूर्व द्रव्य मिला है।' कुन्ती गृहके मध्य रहीं। वह प्राप्त द्रव्यको विना देखे ही बोल उठीं 'वत्स! जो मिला हो, उसे समभागमें ग्रहण करो।' पीछे द्रौपदीको देख उन्होंने कहा था—'राम! राम! हमनेक्या कुकर्म कर डाला।' किन्तु धर्मभीरु पाण्डवने माताकी आज्ञा अग्राह्य न करके पांचोंने द्रौपदीसे विवाह कर लिया।

द्रौपदी देखो।

उसी समय धृतराष्ट्रने उनके पाञ्चालगणसे मिलनेकी बात सुनी। उससे उन्होंने भीत हो विदुरको पाण्डवके निकट भेजा और उन्हें हस्तिना बुला राज्यका अंश प्रदान किया। पीछे जब शकुनि और दुर्योधनके छलसे पाण्डवने द्यूतक्रीड़ामें हार वनको गमन किया, तब कुन्तीको विदुरके गृहमें रहना पड़ा। कुरुक्षेत्रके युद्धावसानमें धृतराष्ट्र पुरनारीगणके साथ मृत पुत्रपरिजनादिके उद्देश जलप्रदान करनेको समरप्राङ्गण पहुंचे थे। उसीसमय कुन्तीने भी जाकर प्रियपुत्रोंको दर्शन दिया। फिर मृत वीरगणका और्ध्वदेहिक कार्य सम्पन्न होते कुन्तीने पुत्रोंको सम्बोधन करके कहा था

'जो महावीर अर्जुनके हाथ निहत हुवा और जिसे तुमने राधागर्भ-सम्भूत समझ रखा, वही महावीर कर्ण तुम्हारा ज्येष्ठभ्राता रहा है। उसने सूर्यके औरससे हमारे गर्भमें जन्मलाभ किया था।'

माताके मुखसे कर्णका वृत्तान्त सुन युधिष्ठिर फूट फूट कर रोने लगे। फिर भीष्मके उपदेशसे राज्य ग्रहण करके उन्होंने अश्वमेध यज्ञ किया था। उक्त यज्ञ शेष होनेपर कुन्तीदेवी और धृतराष्ट्रने गान्धारी प्रभृति-के साथ वानप्रस्थका आश्रय लिया और वनमें दावानल-से उनका मृत्यु हुवा।

जैन शास्त्रानुसार—पांडुने एक विद्याधरसे कामरू-पिणी मुद्रिका प्राप्त की थी और उसके प्रभावसे वह गुप्त रूप बना कुंतिके पास गमनागमन करते थे। काल-क्रमसे अविवाहित अवस्थामें एक पुत्र उत्पन्न हुआ, और उसे एक पेटीमें बंद कर नदीमें बहा दिया। बालक अपना कान पकड़े उत्पन्न हुआ था अत: उसका नाम कर्ण रक्खा गया। इसके बाद मातापिताने कुन्ति का पांडुसे गुप्त सम्बन्ध जान विवाह कर दिया और फिर युधिष्ठिर आदि पुत्र उत्पन्न हुये।

माकंदी नगरीके स्वामी राजा द्रुपदने अपनी पुत्री द्रौपदीका गांडीवधनुष चढानेका पणकर स्वयम्वर रचा और समस्त देशोंके राजा एकत्र किये। उनमें अर्जुन ही गांडीव धनुष चढा सके अत: द्रौपदीने उनके ही गलेमें वरमाला डाली। उस समय पवन बड़े जोरोंसे चल रहा था। इसलिये माला टूट जानेसे पासमें बैठे अन्य भाइयोंके ऊपर भी फूल उडकर बिखर गये और वहां बैठे लोगोंने 'पांचोंको वरा है' ऐसा प्रवाद उडा दिया। असलमें द्रौपदीके एक ही पति था, शेष ज्येठ देवर थे। (हरिवंशपुराण)

कुन्थु (सं० पु०) "कुः पृथ्वी तस्यां स्थितिवानिति कुन्थुः तथा गर्भस्थे भगवती जननी रत्नानां, कुन्थुं राशिं दृष्ट-वतीति कुन्थुः।" इति जैनसम्मतम्। जैनोंके सप्तदश तीर्थङ्कर। उन्होंने सर्वार्थसिद्धि नामक विमानसे चय कर सूर्यराजाके औरस और श्रीमतीके गर्भसे जन्म लिया था। हस्तिनापुर नगरमें वैशाखकी शुक्लप्रतिपद् तिथि को वृषराशि पर उनका जन्म हुवा। उनका शरीरमान ३५ धनु, आयुमान ९५००० वर्ष और शरीर सुवर्ण वर्ण था। उनके ९६००० स्त्री रहीं। वह हस्तिनापुर नगरमें वैशाखसुदि पडिवाको १००० साधुवोंके साथ दीक्षित हुवे। अपराजितके घर दो दिन उपवास करके पारण किया। हस्तिनापुरमें सोलह वर्ष बाद तिलक-वृक्षके नीचे चैत्रशुक्ल-तृतीयाको उन्होंने ज्ञानलाभ किया।

कुन्द (सं० पु०) कु-दत् कीर्तिर्नुम्। अव्यादयश्च। उण् ४।९८। १ विष्णु। २ पुष्पजाति, कोई फूल। उसका पर्याय—शुक्लपुष्प, मकरन्द और सदापुष्प है। वह दन्त और शुभ्र शरीरकान्तिकी उपमामें अधिक व्यवहृत होता।

"कुन्द इन्दु सम देह उमारमण करुणा यतन।" (तुलसी)

भावप्रकाशके मतसे वह—शीतल और लघु है। उसके व्यवहारसे शिरोरोग और विषपित्त नष्ट हो जाता है। किन्तु उसका पुष्प शिवकी पूजामें व्यवहृत नहीं होता। ३ करवीरवृक्ष, कनेरका पेड़। ४ पद्म, कमल। ५ वर्षपर्वतभेद ६ कुवेरका एक निधि। ७ संख्याके सङ्केतमें नौ। ८ काष्ठ और धातु खोदनेका कोई यन्त्र। ९ मदन वृक्षविशेष।

कुन्दक (सं० पु०) कुन्द स्वार्थे कन्। १ कुन्दुरुवृक्ष, कुंदरुका पेड़। २ गन्धद्रव्यविशेष, कोई खुशबूदार चीज।

कुन्दकर (सं० पु०) काष्ठ एवं धातुद्रव्यखोदक जाति-विशेष, खरादनेवाला। कुन्दकर लोग काष्ठके नानाविध द्रव्य खराद पर उतारा करते हैं। वह प्रधानत: मुसल-मान हैं।

कुन्दकुन्दाचार्य—एक विख्यात जैन ग्रन्थकार। उन्होंने प्राकृतभाषामें षट्प्राभृत, प्रवचनसार, समयसार, रयणसार, द्वादशानुप्रेक्षाप्रभृति ग्रन्थ प्रणयन किये हैं। अभिनवपम्प, बालचन्द्र, श्रुतसागर प्रभृति जैन पण्डि-तोंने उक्त ग्रन्थसे किसी किसीकी टीका संस्कृत भाषामें रचना की है। अभिनवपम्पने षट्प्राभृत वा प्राभृत-सारकी टीकाके प्रारम्भमें लिखा कि कुन्दकुन्दाचार्यका अपर नाम पद्मनन्दी था। फिर श्रुतसागरने उसी ग्रन्थकी 'मोक्षप्राभृत नाम्नी' टीकाके शेषमें पद्मनन्दी और कुन्दकुन्दाचार्य उभयको भिन्न व्यक्ति बताया है—

"इति श्रीपद्मनन्दी-कुन्दकुन्दाचार्येलाचार्य-वक्रग्रीवाचार्य-गृध्रपिच्छाचार्य-नामपञ्चकविराजितेन चतुरङ्गुलकासगमर्धिना।" *

अभिनवपम्पके मतमें वह शिवकुमार महाराजके गुरु थे। कोई कोई उक्त शिवकुमार महाराजको ही दक्षिणापथके कदम्बराज शिवमृगेन्द्रवर्मा समझता है।

हेमचन्द्र-रचित प्राकृतव्याकरणकी १५१८ ई० को लिखी एक हस्तलिपिके शेषपर संस्कृत भाषामें कुन्द-कुन्दाचार्यकी वंशावली है। उसके पाठसे समझ पड़ता है—

"कुन्दकुन्द मूलसङ्घ सरस्वतीगच्छ और बलात्कारगणके अन्तर्भूत थे। उनके पट्टपर भट्टारक श्रीपद्मनन्दिदेव, फिर देवेन्द्रकीर्तिदेव, फिर विद्यानन्दिदेव और फिर मल्लिभूषणदेव हुवे। मल्लिभूषणके शिष्यका अमरकीर्ति और उनके शिष्यका नाम मेवाड़ जातीय श्रेष्ठ लाड़न था।"

दक्षिणमहाराष्ट्रके सांगली राज्यान्तर्गत तेरडाल ग्राममें ११०४ शककी एक खोदित शिलाफलक आविष्कृत हुवा था। उसमें लिखा है—

"स्वस्ति श्रीमत्कुन्दकुन्दाचार्यान्वयद-श्रीमूलसङ्घद-देशीयगणदपोस्तक-गच्छद-श्रीकोल्लापुरद-निम्बदेवसामन्तमाड़िसिद-श्रीरूपनारायण देवर।"

वीरनन्दीने आचारसारकी टीकामें कहा है कि १०७६ शककी वह और मेघचन्द्रके पुत्र विद्यमान रहे। मेघचन्द्रका कनाड़ी भाषामें लिखित समाधिशतक पढ़नेसे समझते हैं कि कुन्दकुन्दाचार्य अभिनवपम्पके समसामयिक थे। फिर ११०४ शककी उनके वंशोद्भव सामन्तनिम्बदेवका भी नाम मिलता है। उक्त प्रमाण द्वारा अनुमान करते हैं कि वह ई० एकादश शताब्दकी विद्यमान थे।

श्वेताम्बर और दिगम्बर उभय दल कुन्दकुन्दाचार्यका बड़ा सम्मान करते और उनका बहुविध धर्मोपदेश सादर ग्रहण करते हैं। श्वेताम्बर जैनोंके मतमें उपयुक्त धर्माचरण करनेसे स्त्री भी निर्वाण वा मोक्ष पा सकती हैं। किन्तु दिगम्बर उसको स्वीकार नहीं करते। कुन्दकुन्दाचार्यने भी 'प्रवचनसार'में बताया है—

"चित्ते चिन्ता माया तम्हा तासिं न निव्वाणं।"

'हृदयमें माया चिन्ता रहनेसे स्त्रीको निर्वाण नहीं मिलता।'

उक्त वचनसे समझ सकते हैं कि कुन्दकुन्द अपने आप भी दिगम्बर रहे। उनका समयसार पढ़नेसे समझ पड़ता है जिस देशमें उन्होंने वास किया वहां उनके रहते समय जैनधर्म विशेष प्रबल पड़ा न था, अधिकांश लोगोंमें विष्णुकी पूजाका प्रचार रहा।

कुन्दनकवि—बुंदेलखण्डके एक हिन्दी कवि। १६९५ ई० को वह विद्यमान थे। उनकी रचित आदिरसघटित कविता ही प्रधान है।

कुन्दम (सं० पु०) कुन्देन मीयते शुभ्रवर्णत्वात्, कुन्द-मा-क:। आतोऽनुपसर्गे। पा ३।२।३। मार्जार, बिलाव।

कुन्दमाला (सं० स्त्री०) १ कुन्दपुष्पकी माला। २ ग्रन्थविशेष, एक किताब। साहित्यदर्पणमें कुन्दमाला उद्धृत हुयी है।

कुन्दर (सं० पु०) कुं भूमिं दारयति वराहरूपेणेत्यर्थ:, कु-दृ-अच्। १ विष्णु। २ तृणविशेष, कोई घास। उसका संस्कृत पर्याय—कण्डर, झिण्टी, दीर्घपत्र, खरच्छद, रसाल, चेत्रसम्भूत, सुतृण और मृगवल्लभ है। उसका मूल शीत, पित्तातिसारनुत्, शोधनोंमें प्रशस्त और बलपुष्टिवर्धन होता है। (राजनिघण्ट)

कुन्दरिका (सं० स्त्री०) सल्लकी, एक खुशबूदार चीज।

कुन्दलकेशरी—उड़ीसाके एक राजा। श्रीचैत्रकी मादलापञ्जीके मतानुसार ७३३ से ७५१ शक पर्यन्त उन्होंने राजत्व किया।

कुन्दसाह्वा (सं० स्त्री०) श्वेतयूथिका, सफेद जूही।

कुन्दा, कुन्दसाह्वा देखो।

कुन्दाल (सं० पु०) महाराजवधवृक्ष, बड़े अमलतासका पेड़।

कुन्दिनी (सं० स्त्री०) कुन्दानां पद्मानां समूह:, कुन्द-

* विजयनगरके गाणगित्ति नामक देवालयके स्तम्भपर उक्त पांचों शब्द कुन्दकुन्दाचार्यके नामान्तरकी भांति वर्णित हुवे हैं—

"श्रीमूलसङ्घ ऽजनि नन्दिसङ्घस्तस्मिन् बलात्कारगणोऽतिरम्य:।
तत्रापि सारस्वतनाम्नि गच्छे स्वच्छाशयोभूदिह पद्मनन्दी॥ (३)
आचार्य: कुन्दकुन्दाख्यो वक्रग्रीवो महामति:।
एलाचार्यो गृध्रपिच्छ इति तन्नाम पञ्चधा॥" (४)

E. Hultzsch, South Indian Inscriptions, vol. 1. p. 158

इनि स्त्रियां ङीप्। पुष्करादिभ्यो देशे। पा ५।२।१५३। पद्म-समूह, पद्मिनी।

कुन्दु (सं० पु०) कुं भूमिं दृणाति, कु-दृ बाहुलकात् डु। १ मूषिक, चूहा। (स्त्री०) २ कुन्दुरु नामक गन्धद्रव्य, कोई खुशबूदार चीज।

कुन्दुकुन्दुक (सं० पु०) कुन्दुरुखोटी, एक खुशबूदार चीज।

कुन्दुखोटी (सं० स्त्री०) कुन्दुकुन्दुक देखो।

कुन्दुर (सं० पु०) कुं भूमिं दृणाति, कु-दृ-उरन्। १ सल्लकी। २ धूपभेद। ३ कुन्दर-तृण, एक घास। ४ गन्धद्रव्यविशेष, एक खुशबूदार चीज। उसका संस्कृत पर्याय—पालङ्कषा, सुकुन्द, कुन्द, कुन्दुरु, कुन्दरुक, तीक्ष्णगन्ध, सौराष्ट्र, शिखरी, गोपुरक, बहुगन्ध, पालिन्द, भीषण और बली है। भावप्रकाशके मतानुसार वह मधुर, तिक्त, कफपित्तनाशक, पान एवं लेपन करनेसे शीतल और प्रदरामय-शान्तिकर होता है।

कुन्दुरक, कुन्दुर देखो।

कुन्दुरु (सं० पु०-स्त्री०) कुन्दुर देखो।

कुन्दुरुक, कुन्दुरु देखो।

कुन्दुरुकी (सं० स्त्री०) कुन्दरुक-ङीष्। १ शल्लकीवृक्ष। २ शल्लकीनिर्यास। ३ लताभेद, एक बेल। उसका संस्कृत पर्याय—बिम्बी, रक्तफला, तुण्डी, तुण्डिकेरा, बिम्बिका, ओष्ठोपमा, फला और पीलुपर्णी है। भावप्रकाशके मतानुसार वह स्वादु, शीतल, गुरु, रक्तपित्तशान्तिकर, वायुनाशक, स्तम्भन, लेखन, रुच्य, विवन्ध और आध्मानकारक होती है। कुंदरु देखो।

कुन्दुरुखोटी (सं० स्त्री०) स्वनामख्यात गन्धद्रव्य, एक खुशबूदार चीज।

कुप (सं० पु०) भारद्वाजपक्षी, एक चिड़िया।

कुपट (सं० पु०) कुत्सितः पटः। १ छिन्न वस्त्र, चिथड़ा, फटा-पुराना कपड़ा।

"कुपटाहतकटिः रूपवीतिनोरुमसिना द्विजातिरिति।" (भागवत, ५।७।१०)

२ दानवभेद। (भारत, आदिपर्व)

कुपढ़ (हिं० वि०) अशिक्षित, नाखवांदा, जो पढ़ा न हो।

कुपत्थी (हिं० वि०) कुपथ्य करनेवाला, बदपरहेज। (पु०) २ कुपथ्य करनेवाला, परहेजसे न रहनेवाला आदमी।

कुपथ (सं० पु०) कुत्सितः पन्थाः। १ निन्द्यपथ, बुरी राह। पाणिनिके मतसे केवल 'कापथ' होता है। किन्तु बोपदेव 'कापथ' और 'कुपथ' दोनों शब्दोंको ठीक समझते हैं।

"स्वधर्मपथमकुतोभयमपहाय कुपथपाषण्डमसमञ्जसम् निजमनीषया मन्दः प्रवर्तयिष्यते।" (भागवत, ५।६।९)

२ असुरभेद। उक्त असुरने पृथिवी पर सुपार्श्व-राजाके रूपमें जन्म लिया था। (भारत, १।६७।२९)

३ जनपदविशेष, कोई बसती। (मार्कण्डेयपुराण ५७।५६, वामन १३ अ०, मत्स्य ११३।५५)

कुपथ (हिं०) कुपथ्य देखो।

कुपथ्य (सं० क्ली०) कुत्सितं पथ्यम्। अस्वास्थ्यकर पथ्य, तन्दुरुस्ती बिगाड़नेवाला खाना।

कुपन (सं० पु०) असुरभेद। उक्त असुर दैत्यराज हिरण्याक्षका एक सेनानी था। (हरिवंश, ४२ अ०)

कुपनस (सं० पु०) पनसवृक्ष, कटहलका पेड़।

कुपय (वै० त्रि०) गोपनीय, छिपाने लायक।

"प्राचा जिह्वं ध्वसयन्तं तृषुच्युतमा साच्यं कुपयं वर्धनं पितुः" (ऋक् १।१४०।३) 'कुपयं गोपनीयम्।' (सायण)

कुपरीक्षक (सं० पु०) कुत्सितः परीक्षकः, कर्मधा०। विचारकाल उचितानुचित विवेचना और गुणका यथोपयुक्त सम्मान न करनेवाला, जो जांचके वक्त भले बुरेकी पहचान न करता हो।

कुपाक (सं० पु०) कुपीलु, कुचिला।

कुपाठ (सं० पु०) कुत्सित पाठ, बुरा सबक।

कुपाठी (सं० त्रि०) कुत्सित पाठ करनेवाला, जो बुरा सबक पढ़ता हो।

कुपाणि (सं० त्रि०) कुत्सितः पाणिरस्य, बहुव्री०। वक्र-हस्त, टेढ़े हाथवाला।

कुपात्र (सं० पु०) १ कुत्सित पात्र, बुरा जर्फ। (त्रि०) २ अयोग्य, नालायक। ३ दानके लिये निषिद्ध।

कुपार (हिं० पु०) समुद्र, बहर।

कुपिञ्जल (सं० पु०) कुत्सितः पिञ्जलः इव पुच्छोऽस्य। पक्षिविशेष, एक चिड़िया।

कुपित (सं० त्रि०) १ क्रुद्ध, गुस्सासे भरा हुवा। २ अप्रीत, नाखुश।

कुपिनी (सं० स्त्री०) कुम्प्यते रक्ष्यते मत्स्योऽत्र धातूनामनेकार्थत्वात् कुप बाहुलकात् इनि नान्तात् ङीप्। मत्स्याधार, मछली रखनेका बरतन।

कुपिनी (सं० पु०) कुपिनी मत्स्यधानी अस्यास्तीति इनि। मत्स्यधारक, कैवर्त, मछली रखनेवाला।

कुपिन्द (सं० पु०) कुम्पयति विस्तारयति सूत्राणि, कुप-किन्दच्। कुपेर्वाच। उण् ४।८६। तन्तुवाय, जुलाहा, कपड़ा बुननेवाला।

कुपिलु, कुपीलु देखो।

कुपीलु (सं० पु०) कुत्सितः पीलुः। कुगतिप्रादयः। पा २।२।१८। कारस्करवृक्ष, कचिलेका पेड़। उसका संस्कृत पर्याय—जलज, दीर्घपत्रक, कुलक, कालतिन्दुक, कालपीलुक, काकेन्दु, विषतिन्दु और मर्कटतिन्दुक है। भावप्रकाशके मतमें कुपीलु व्यथानाशक, कफघ्न, रक्तपित्तप्रशमक, मूत्रकारक, अग्निवर्धक और कामोद्दीपक होता है। उसको सेवन करनेसे शूल, पक्षाघात, शुक्रमेह, अपस्मार, ग्रहणी, अतिसार, गुदभ्रंश, मदात्यय, सर्वाङ्ग कम्प और दौर्बल्य छूट जाता है। कुपीलुका वीज ग्रहणीय है।

कुपुत्र (सं० पु०) कुत्सितः पुत्रः। १ मातापिताका अवाध्य पुत्र, माबापके कहनेपर न चलनेवाला लड़का। कोः पृथिव्या पुत्रः। २ मङ्गलग्रह। ३ नरकासुर। ४ चेत्रज पुत्र।

"तादृशं फलमाप्नोति कुपुत्रैः सन्तरं स्तमः।" (मनु ९।११६)
'कुपुत्राः चेत्रजादयः।' (मेधातिथि)

कुपुरुष (सं० पु०) कुत्सितः पुरुषः। कापुरुष, बुरा शख्स, दुनियामें कोई भला काम कर न सकनेवाला आदमी।

"अयं कुपुरुषो नष्टो धिक् ततः साधुभिर्यदा।" (भागवत, ७।८।५३)

कुपुरुषजनिता (सं० स्त्री०) छन्दोविशेष, एक बहर।

"कुपुरुषजनिता ननौ नौगः।" (वृत्तरत्नाकर)

प्रथम छह वर्ण ह्रस्व, उसके पीछे एक दीर्घ फिर एक ह्रस्व और तत्पर तीन दीर्घ ग्यारह अक्षरसे उक्त छन्द बनता है।

कुपूय (सं० त्रि०) कुत्सितं पूयते, कु-पूय-अच्। कुत्सित, जाति एवं आचारनिन्दित, बुरा।

कुप्पक (हिं० पु०) अश्वरोगविशेष, घोड़ेकी एक बीमारी। उसमें अश्वको ज्वर चढ़ता और उसकी नासासे जल गिरता है।

कुप्पल (हिं० पु०) रक्तवर्ण शाकविशेष, किसी किस्मकी सुर्ख सब्जी। उसका कलम पतला और नुकीला होता है। बरारकी लोनार झीलका जल शोषण कर उसे बहिर्गत करते हैं।

कुप्पा (हिं० पु०) चर्मनिर्मित पात्रविशेष, चमड़ेका एक बरतन। उसका आकार घटतुल्य रहता है। कुप्पामें घी तेल वगैरह रखा जाता है।

कुप्पासाज (हिं० पु०) चर्मपात्र निर्माता, कुप्पा तैयार करनेवाला।

कुप्पी (हिं० स्त्री०) क्षुद्र चर्मपात्रविशेष, चमड़ेका एक छोटा बरतन। उसमें तेल-फुलेल रखते हैं।

कुप्पूशास्त्री—परिभाषाभास्कर नामक व्याकरण-प्रणेता।

कुप्य (सं० क्ली०) गुप्-क्यप्, कुत्वञ्च। राजसूयसूर्यमृषोद्यरुच्यकुप्यकृष्टेति। पा ३।१।११४।

१ सुवर्णरजतभिन्न धातु, सोना चांदीको छोड़ करके दूसरा धातु। २ जस्ता, सीसा और रांगा मिला हुवा धातु।

"हिरण्यं कुप्यभूमिष्ठं मिवं चौणमथो बलम्।" (भारत, १५।६।११)

आठ प्रकारके जिन धातुसे देवमूर्ति निर्माणका विधान बताते, उनमें कुप्यका भी नाम पाते हैं—

"सुवर्णं रजतं ताम्रं लौहं कुप्यञ्च पारदम्।
वङ्गञ्च सीसकञ्चैव अष्टैते देवसम्भवाः॥"

कुप्य अपहरण करनेसे उपपातक लगता है।
(मनु ११।६७)

कुप्यक, कुप्य देखो।

कुप्यधौत (सं० क्ली०) रौप्य धातु, चांदी या रूपा।

कुप्यलवण (सं० क्ली०) लवणविशेष, एक नमक।

कुप्यशाला (सं० स्त्री०) कुप्यानां कुप्यनिर्मितानां पात्रादीनां शाला गृहम्। १ धातुद्रव्यनिर्माणशाला, धातकी चीजें बनानेका कारखाना। २ बरतनकी दूकान।

कुप्रावरण (सं० त्रि०) कुत्सितं छिन्नं मलिनं वा प्राव-

वस्त्रं यस्य। मलिन अथवा छिन्न परिच्छदयुक्त, मैलो या फटी पोशाकवाला।

कुप्रिय (सं० त्रि०) अप्रिय, नागवार।

कुप्लव (सं० पु०) कुत्सितः तृणादिनिर्मितः प्लव उडुपः। तृणादिनिर्मित उडुप, घासफूसका बना पेड़ या चौवड़ा।

"आढ्यः फलमाप्नोति कुप्लवैः सन्तरन् जलम्।" (मनु ६। १६१)

कुफुर (हिं०) कुफ देखो।

कुफेन—कुभा, काबुल नदी।

कुफ्र (अ० पु०) १ अधर्म। २ मुसलमान धर्मसे विरुद्ध मत।

कुफ्ल (अ० पु०) तालयन्त्र, ताला।

कुबड़ा (हिं० पु०) कुब्जक, भुकी पीठका शख्स। २ भुकी मूठकी बड़ी छड़ी। (वि०) ३ टेढ़ी पीठवाला।

कुबड़ी (हिं० स्त्री०) १ भुकी मूठकी छड़ी। २ कुब्जिका, टेढ़ी पीठवाली। ३ कुब्जा। कुब्जा देखो।

कुबण्ड (हिं० पु०) १ कोदण्ड, कमान। (वि०) २ विकृताङ्ग, खोड़ा, खराब अजावाला।

कुबत (हिं० स्त्री०) १ कुवाक्य, बुरी बात। २ कुपथा, कुचाल। ३ कुवत, ताकत।

कुबरी (हिं० स्त्री०) १ कुब्जा, कंसकी एक दासी। २ भुकी मूठकी छड़ी। ३ मत्स्यविशेष, किसी किस्मकी मछली। वह चीन, भारत और सिंहलमें होती हैं।

कुबली (हिं० स्त्री०) कुवलय, गोला।

कुबाक (हिं०) कुवाक्य देखो

कुबाद—सस्सानजातीय पारस्यराज फीरोज शाहके पुत्र। ग्रीक (यूनानी) ऐतिहासिकोंने उन्हें कवदेस (Cavades) नामसे उल्लेख किया है। पिताके अवर्तमानमें प्रथम वही सिंहासन पर बैठे थे। किन्तु भ्राता पलाशके उत्तराधिकार रहते सिंहासन ग्रहण करने पर कुबाद खाकान राज्यको भाग गये। नैसापुरके बीचसे जाते समय एक दिन निशाकाल उन्होंने किसी सुन्दरी रमणीके गृह यापन किया था। फिर चार वर्ष पीछे बहुसंख्यक सैन्य सह वह वहां वापस पहुंचे थे। उस समय उसी रूपसीने उन्हें एक पुत्ररत्न प्रदान किया। वह उभयके हेलमेलका फल था। जिस समय कुबादने पुत्रको गोदमें लेनेके लिये उठाया, उसीसमय भ्राता पलाशके कालग्रासमें पतित होनेका संवाद आया—पारस्यराज मुकुट उनके लिये प्रस्तुत रहा। उस समय कुबादको धारणा हुयी—'इस सुलक्षण पुत्रके गुणसे ही आज हमने यह शुभ संवाद सुना है।' उन्होंने आदरपूर्वक कुमारका नाम नौशिरवान् रखा था। ४८८ ई० को वह पारस्य (ईरान)-के राजा हुवे। उसके पीछे उन्होंने रोमकसम्राट् अनस्तसियसको युद्धमें पराजय किया। ४३ वत्सर राज्यभोग पीछे ५३१ ई० को वह मर गये। उसके पीछे कुमार नौशिरवान् राजा हुवे।

कुबानि (हिं० स्त्री०) दुःस्वभाव, बुरी आदत।

कुबाहुल (सं० पु०) उष्ट्र, ऊंट।

कुबुद (हिं० पु०) वकभेद, किसी किस्मका बगला।

कुबुद्धि (सं० त्रि०) १ कुत्सिता बुद्धिर्यस्य, बहुव्री०। मन्दबुद्धि, बदतमीज, ठीक समझ न रखनेवाला। (स्त्री०) कुत्सिता बुद्धिः, कर्मधा०। २ कुत्सित बुद्धि, गलतफहमी, खराब समझ।

कुबेर (सं० पु०) कुम्बति आच्छादयति धनम्, कुबि-एरक् नलोपश्च। यद्वा कुत्सितं वेरं शरीरं यस्य। कुम्बेर्नलोपश्च। उण् १। ६०। १ विश्रवाके पुत्र यक्षाधिपति।

"कुत्सायां क्विति शब्दोऽयं शरीरं बेरमुच्यते।
कुबेरः कुशरीरत्वात् नाम्ना तेनायमङ्कितः॥" (वायुपुराण)

महामुनि विश्रवाने भरद्वाज मुनिकी कन्या इलविलाका पाणिग्रहण किया था। इलविलाके गर्भ और विश्रवाके औरससे कुबेरने जन्म लिया। पितामह ब्रह्माने उनका बुद्धिचातुर्य देख और सन्तुष्ट हो कहा था—'हम आशीर्वाद देते हैं तुम धनपति बन सबके पूजित हो।' ब्रह्माके इस अमोघ वरप्रभावसे कुबेर धनके अधिपति बन गये। वह किसी दिन तपोवन देखनेको उत्सुक हुवे और वहां जाकर कुछ दिन रहे। फिर उन्हें तपस्या करनेकी इच्छा हुयी। वह बहुविध शारीरिक कष्ट सह तपस्या करने लगे। इन्द्रियगणको नियन्त्रित और मनको संयत कर उसी विजन विपिनमें कभी अनाहार रह तथा कभी गलित पत्र एवं वायु भक्षण कर उन्होंने सहस्र वत्सर तपस्या की थी। ब्रह्मा

कठोर तपस्यासे सन्तुष्ट हो समस्त देवगणके साथ उनके निकट उपस्थित हो कहने लगे—'वत्स। तुम्हें हम वर देने आये हैं; जो चाहते हो, मांग लो।' कुबेरने कहा—'यदि आप दासके प्रति सन्तुष्ट हुये हैं, तो ऐसा वर दीजिये जिसमें, लोकपाल बन जाऊं।' ब्रह्माने कहा—'तुम्हें हम यह पुष्पकरथ प्रदान करते हैं। इस पर आरोहण कर तुम यथेच्छा गमन कर सकोगे और आजसे एक लोकपालकी भांति प्रतिष्ठित होगे।' कुबेरने ब्रह्मासे वर पाकर अपने पिता विश्रवाके निकट जाकर कहा था—'पितः! मैंने तपस्याकर ब्रह्मासे वर पाया है। आप अनुग्रह कर मेरा आवासस्थान निरूपण कीजिये।' उनकी प्रार्थनाके अनुसार महामुनि विश्रवाने समुद्रमध्यस्थित हेमप्राकारवेष्टित लङ्कापुरी उनको रहनेके लिये बतायी थी। कुबेरने प्रथम लङ्कापुरीमें राजत्व किया। पीछे वह रावणके भयसे उसको छोड़ कैलासपर्वतके सन्निधानको चले गये।

(रामायण, उत्तर, ३ सर्ग)

कुबेरकी पुरीका नाम अलका है। वह यक्ष, किन्नर प्रभृतिके अधीश्वर हैं। उनका देह श्वेतवर्ण है। दन्त आठ। और चरण तीन हैं। इस प्रकार विकृत शरीर होनेसे ही उन्हें कुबेर कहते हैं।

एक समय कुशावती नगरीमें देवतावोंकी सभा हुयी। कुबेर उसमें बुलाये गये। वह अपने अनुचरवर्गको साथ ले सभामें उपस्थित होनेके लिये जा रहे थे। पथमें उनके सखा मणिमान् यक्षने अगस्त्य मुनिको मस्तक पर निष्ठीवन (थूक) त्याग किया। इससे अगस्त्यने कोपान्वित हो शाप दिया था—'मनुष्यके हाथ तुम्हारा यावतीय सैन्य नष्ट हो जायगा।' वह भी उस मनुष्यको देख सङ्करूप पापमें पड़ गये। पीछे भीमसेनने उन्हें उस पापसे छोड़ा दिया। भीम देखो।

कुबेरने अपने तपस्याबलसे शतयोजन दीर्घ और ७० योजन विस्तीर्ण श्वेतवर्ण सभा बनायी थी। उक्त सभाका नाम वैश्रवणी है। उसमें सर्वदा नृत्यगीत हुवा करता है। अप्सरा किन्नरी प्रभृति स्वर्गीय नर्तकी सर्वदा वहां उपस्थित रहती हैं। कुबेरके पुत्रका नाम नलकूबर है। उनके प्रिय पारिषद विश्वावसु, हाहा हूहू, तुम्बुरु, पर्वत, चित्रसेन, चित्ररथ और चक्रधर्मा सर्वदा उक्त सभामें समासीन रहते हैं। (भारत, सभा, १० अ०)

अथर्ववेद (८।१०।२८), शतपथब्राह्मण (१३।४।३।१०) आश्वलायनश्रौतसूत्र (१०।७), और शांखायनश्रौतसूत्र (११।२।१७)-में कुबेरके वैश्रवणका नाम मिलता है—

"कुबेरो वैश्रवणो राजा तस्य रक्षांसि विशः।"

कुबेरका नामान्तर—श्रीद, सितोदर, कुह, ईशसख पिशाचकी, इच्छावसु, त्रिशिर, ऐलविल, एकपिङ्ग, पौलस्त्य, वैश्रवण, रत्नकर, यक्ष, नरधर्मन्, धनद, नरवाहन, यक्षेश्वर, धनेश्वर, निधीश्वर, किम्पुरुषेश्वर, हर्यक्ष, अलकाधिप और जटाधर है। प्राचीन ग्रीकों (युनानियों) के भी एक धनेश्वर रहे। उनका नाम प्लुटस (Plutus) है।

२ नन्दीवृक्ष, एक पेड़। (त्रि०) कुत्सितं बेरं शरीरं यस्य। ३ कुशरीर, बुरे जिस्मवाला। (क्ली०) ४ निन्दित देह, बुरा जिस्म।

कुबेर उपाध्याय—दत्तकचन्द्रिका नामक धर्मशास्त्रसंग्रहकार। रघुनन्दनने शुद्धितत्त्व और श्राद्धतत्त्वमें उनका नाम उद्धृत किया है।

कुबेरक, कुबेर देखो।

कुबेरनलिनी (सं० स्त्री०) एक तीर्थ।

कुबेरनेत्र (सं० पु०) १ पाटलवृक्ष। २ लताकरञ्ज।

कुबेरबान्धव (सं० पु०) कुबेरस्य बान्धवः, ६-तत्। शिव, महादेव।

कुबेराक्ष, कुबेरनेत्र देखो।

कुबेराक्षी (सं० स्त्री०) १ पाटलावृक्ष। २ काष्ठपाटला। ३ सितपाटला। ४ पेटिका, पिटारी। ५ लताकरञ्ज।

कुबेराचल (सं० पु०) कुबेरका पर्वत, कैलास।

कुबेरिण (सं० पु०) सङ्करजातिविशेष, एक मिली हुयी कौम।

कुबोलनी (हिं० स्त्री०) कुत्सितवादिनी, खराब बात कहनेवाली।

कुब्ज (सं० त्रि०) कुजतेर्ब्जतेर्वा उकारस्य लोपः। १ उन्नतपृष्ठ, खमीदा पुश्त, कुबड़ा। (पु०) २ वनचटक, जङ्गली चिड़ा। ३ अपामार्ग, लटजीरा। ३ वास-

व्याधिविशेष, एक बीमारी। वायु कुपित होनेसे पृष्ठदेश क्रमशः उठ जाने पर कुब्जरोग उत्पन्न होता है। वह दो प्रकारका है—अन्तरायाम और बहिरायाम। अन्तरायाम कुब्ज सम्मुख और बहिरायाम कुब्ज पश्चात् दिक् नत होता है।

कुब्जक (सं० पु०) को पृथिव्यां उब्जति, कु-उब्ज ण्वुल् उकारलोपः। १ पुष्पवृक्षविशेष, कोई फूलदार पेड़। उसका संस्कृत पर्याय—भद्रतरुणी, वृत्तपुष्प, अतिकेशर, महासह, कण्टकाढ्य, खर्व, अलिकुल, सङ्कुल और वारिकण्टक है। हिन्दीमें उसे हरसिंगार कहते हैं। भावप्रकाशके मतानुसार वह—सुरभि, स्वादु, ईषत् कषाय, त्रिदोषशान्तिकर, बलकारक और शीतनाशक है। २ शृङ्गाटक, सिंघाड़ा। ३ पीतझिण्टी। ४ तीर्थविशेष। (नृसिंहपुराण, ६५। १५)

कुब्जकण्टक (सं० पु०) श्वेतखदिर, पापड़ी खैरका पेड़। उसका संस्कृत पर्याय—श्वेतसार, वादर और सोमवल्कल है। भावप्रकाशके मतमें वह विशदवर्णजनक होता है। कुब्जकण्टकके सेवनसे मुखरोग, कफ और रक्तदोष निवारित होता है। खदिर देखो।

कुब्जकण्ठ (सं० पु०) त्रिदोषभेद, सन्निपातकी एक हालत। इसमें कण्ठ फूल जानेसे रोगी पानी पी नहीं सकता। कहते हैं कुब्जकण्ठ सन्निपात आनेसे रोगी १३ दिनमें मर जाता है।

कुब्जका (सं० स्त्री०) कुब्जक वृक्ष, सेवती।

कुब्जकिरात, कुब्जवामन देखो।

कुब्जत्व (सं० क्ली०) १ वायुरोगभेद, पीठ टेढ़ी पड़ जानेकी बीमारी। २ कुबड़ापन।

कुब्जपाण्डव, कुणपाण्डव देखो।

कुब्जपुष्प (सं० पु०) पीतझिण्टीक्षुप, पीले फूलकी झाड़ी।

कुब्जप्रसारणीतैल (सं० क्ली०) वातव्याधिका तैलविशेष, वाईकी बीमारीका एक तैल। १०० पल प्रसारणी ६४ शरावक जलमें क्वाथ कर १६ शरावक रह जानेसे उतार लेते हैं। फिर उसको १६ शरावक तिलतैल, १६ शरावक दधि, १६ शरावक काञ्जिक और ३२ शरावक दुग्धके साथ पाक कर चित्रकमूल, पिप्पलीमूल, यष्टिमधु, सैन्धव, वचा, शुलफा, देवदारु, रास्ना, गजपिप्पली, गन्ध मादनीमूल, जटामांसी और शैलक (अभावमें रक्त चन्दन) का दो दो पल कल्क डाला जाता है। सुगन्धद्रव्य यथालाभ देना चाहिये। (चक्रदत्त)

कुब्जराज—एक प्राचीन कवि। सूक्तिकर्णामृतमें उनकी कविता उद्धृत हुयी है।

कुब्जवामन (सं० पु०) कुबड़ा और बौना, खमीदापुश्त और पस्ताकद।

कुब्जविष्णुवर्धन—चालुक्यराज कीर्तिवर्मा पृथिवीवल्लभके पुत्र, सत्याश्रय पृथिवीवल्लभके ज्येष्ठ भ्राता और पूर्व-चालुक्यराजवंशके प्रतिष्ठाता। उन्होंने पूर्व उपकूलमें शालङ्कायन राजवंशको निपातित कर (६०५ ई०) वेङ्गीका सिंहासन अधिकार किया था। फिर ६१० ई० को कुब्जविष्णुवर्धनने अपने भ्रातासे स्वीय राज्यको पृथक् कर लिया।

कुब्जा (सं० स्त्री०) कुब्ज-टाप्। १ कैकेयीकी कोई दासी, उसका अपर नाम मन्थरा था। पूर्वकालको उसे गन्धर्वकन्या और दुन्दुभी कहते थे। उसने ब्रह्माके आदेशसे मन्थरा नाम पर मानवी हो जन्मपरिग्रह किया। (रामायण, आदि, और अयोध्याकाण्ड; भारत, वन, २७५ अ०)

२ कंसकी सैरिन्ध्री। उसका अपर नाम त्रिवक्रा रहा। कृष्णने कंसवधोद्देशसे मथुरा जाते समय राजपथमें उसको देख परिचय पूछा और हस्तस्थित अनुलेपन मांगा था। कुब्जाने कृष्णका भुवनमोहन रूप देख उभय भ्राताको अनुलेपन दान किया। उससे कृष्णने उसकी कुब्जता दूर कर पत्नी बनाया था। उस समयसे कुब्जा प्रकृत सुन्दरी बन गयीं।

३ कुब्जयुक्त स्त्री, कुबड़ी औरत। ४ वनचटका, जङ्गली चिड़ी।

कुब्जाम्रक (सं० क्ली०) एक तीर्थ। वह युक्तप्रदेशके वर्तमान कुमायूं जनपदमें अवस्थित है। महाभारतमें लिखते हैं—

"भद्रकर्णेश्वरं गत्वा देवमर्च्य यथाविधि।
न दुर्गतिमवाप्नोति नाकपृष्ठे च पूज्यते॥
ततः कुब्जाम्रकं गच्छेत् तीर्थसेवी नराधिप।
गोसहस्रमवाप्नोति स्वर्गलोकञ्च गच्छति॥" (वन, ८४। ३९-४०)

'भद्रकर्णेश्वर जाकर यथाविधि देवार्चन करनेसे मानव कभी दुर्गति नहीं पाता। वह देवलोकमें पूजित होता है। भद्रकर्णेश्वरसे तीर्थयात्रीको कुब्जाम्नक जानेसे सहस्र गोदानका फल मिलता और अन्तको वह स्वर्ग-लोक पहुंचता है।' नृसिंहपुराणके मतसे कुब्जाम्नकमें हृषीकेश विराज करते हैं। (नृसिंहपुराण, ६५।११।)

मत्स्यपुराणको देखते वहां त्रिसंध्या देवी अवस्थित हैं।

"कुब्जाम्रके त्रिसंध्या तु गङ्गाद्वारे रविप्रिया।"

स्कन्दपुराणके हिमाद्रिखण्डमें उक्त तीर्थका विस्तृत विवरण लिखा है। नीचे उसका सारांश उद्धृत करते हैं—

'कुब्जाम्नक क्षेत्रमें अनेक तीर्थ विद्यमान हैं। उनमें प्रधान कुमुद तीर्थ है। उसके दक्षिण यज्ञेश्वर नामक शिवका मन्दिर है। उसके निकट सार्षवतीर्थ पड़ता है। प्रति रविवारको सूर्यदेव मधुमक्षिकारूपसे वहां सलिलमें स्नान करते हैं। उसके आगे पूर्णमुखतीर्थ है। वहां सोमेश्वरलिङ्ग विराज करता है। पूर्णमुख तीर्थमें सकल उष्ण और शीतल जल उत्पन्न हुवे हैं। उक्त पूर्णतीर्थके निकट ही करवीर और अग्नितीर्थ है। आगे चल कर गायवतीर्थ, अश्वत्थतीर्थ और वासवतीर्थ मिलता है। वहां गणपतिभैरवका अवस्थान है। चन्द्रिका नाम्नी स्रोतस्वती प्रवाहित होती है। उसके आगे बहुविध वापीशोभित वाराहीतीर्थ और समुद्र-तीर्थ हैं। कुब्जाम्नकके उत्तर ऋषिशृङ्ग खड़ा है। गङ्गाके पश्चिम तपोवन है। वहां रामचन्द्रने तपस्या की थी। उसके नीचे शेषनागका प्रियस्थान विमलतीर्थ है। कुब्जाम्नकके निकट गङ्गाद्वारसे उत्तर-पश्चिम रामक्षेत्र अवस्थित है।

कुब्जालोढ़—सम्प्रदायप्रवर्तक एक व्यक्ति।

कुब्जिका (सं० स्त्री०) कुब्जक स्त्रियां टाप् इकारादेशश्च। प्रत्ययस्थात् कात् पूर्वस्यात इदाप्य सुपः। पा ७।३।४४। १ देवीविशेष, दुर्गा। कुब्जिकातन्त्रमें उनकी पूजापद्धति लिखी है। २ अष्टमवर्षीया कन्या, आठ सालकी लड़की।

"सप्तभिर्मालिनी साक्षादष्टवर्षा च कुब्जिका।" (अन्नदाकल्प)

कुब्जिकातन्त्र (सं० क्ली०) कुब्जिकायाः देव्यास्तन्त्र अर्चनादिप्रकाशकं शास्त्रम्, ६तत्। स्वनामख्यात तन्त्र-विशेष। उक्त तन्त्रमें—स्त्रीदोषलक्षण, रक्तमातृकापूजा, षष्ठीदेवीपूजा, डाङ्करकुमारपूजा, जयकुमारपूजा, आलोशुद्धि, वन्ध्यात्वप्रशमन, स्नानविधि प्रभृति वर्णित हुवा है।

कुब्जित (सं० त्रि०) कुब्जः सञ्जातोऽस्य, कुब्ज-इतच्। वक्र, नत, टेढ़ा, झुका हुवा।

कुब्बा (हिं० पु०) कुब्ज, कुबड़ा, डिब्बा।

कुब्र (सं० क्ली०) कुबि आच्छादने न् रन लोपः निपातनात्। ऋज्रेन्द्राग्रवज्रविप्रकुब्रादि। उण् २।२८। १ वन, अरण्य, जङ्गल। २ यज्ञकुण्ड। ३ शरण, पनाह। ४ कुण्डल, बाला। ५ शकट, गाड़ी। ६ अङ्गुरीयक, अंगूठी, छल्ला।

कुब्रह्म (सं० पु०) कुत्सितो ब्रह्मा, कु-ब्रह्मन्-टच्। कुमहद्भ्यामन्यतरस्याम्। पा ५।४।१०५। कुत्सित ब्राह्मण, बुरा ब्राह्मण।

कुभ (वै० क्ली०) उदक, जल, पानी।

कुभन्यु (वै० त्रि०) जलार्थी, उदकप्रार्थी, पानी मांगनेवाला।

"छन्दःस्तुभः कुभन्यव उत्समा कीरिणो नृतः।" (ऋक् ५।५२।१२)

'कुभन्यव उदकेच्छव।' (सायण)

कुभा (वै० स्त्री०) १ नदी-विशेष, कोई दरया। वह सिन्धुनदकी उपनदी है। आजकल कुभाको काबुल नदी कहते हैं। ग्रीक-भौगोलिकोंने कोफेन (Kophen) नामसे वर्णना की है।

"मा वो रसानितभा कुभा क्रमुर्मा वः सिन्धुर्नि रीरमत।" (ऋक् ५।५३।९)

कोः पृथिव्याः भा छाया, ६-तत्। २ पृथिवीकी छाया, जमीनकी परछाहीं।

"राहुः कुभामण्डलगः शशाङ्कम्।' (ज्योतिःशास्त्र)

कुत्सिता भा दीप्तिः, कर्मधा०। ३ कुत्सित दीप्ति, बुरी चमक। (त्रि०) ४ मन्ददीप्तियुक्त, कम चमकनेवाला।

कुभार्य (सं० पु०) कुत्सिता भार्या यस्य, बहुव्री० गौणि ह्रस्वः। दुश्चरित्र अथवा कुत्सिता स्त्रीका पति, खराब या बदकाश औरतका शौहर।

"तत् सङ्गभ्रंशितैश्वर्यं संसरन्तं कुभार्यवत्।" (भागवत, ८।१।१५)

कुभार्या (सं० स्त्री०) कुत्सिता भार्या, कुगति-समा०। निन्द्यस्त्री, बुरी औरत।

कुभि—एक जैनाचार्य। चाक्रिराजके कहनेसे मालखेड़ा (बम्बई)-के राष्ट्रकूट राजा ३य गोविन्दने इनके चेलेके चेले अर्ककीर्ति नामक एक जैन अध्यापकको इदिगूर विषयमें जलमङ्गल नामक ग्राम (शक ७३५, ज्यैष्ठ शुक्ला नवमी) मायापुरके जैन-मन्दिरका व्यय चलानेको प्रदान किया था।

कुभुक्त (सं० क्लो०) कुत्सितं भुक्तं भोज्यम्, भुज-क्त। कुखाद्य, खराब खाना।

कुभृत् (सं० पु०) कुं पृथिवीं बिभर्ति, भृ-क्विप् तुगागमश्च। १ पर्वत, पहाड़। २ गणनामें सात संख्या।

"कुभृद्रेखिकं सप्तशलाकाचक्रम्।" (ज्योतिःशास्त्र)

३ शेषनाग।

कुभृत्य (सं० पु०) कुत्सितो भृत्यः, भृ-क्यप् तुगागमः। निन्द्य भृत्य, बुरा नौकर।

कुम् (सं० अव्य०) आश्चर्य, अरे।

कुमंठी (हिं० स्त्री०) सूक्ष्म और लच जानेवाली टहनी।

कुमक (तु० स्त्री०) साहाय्य, मदद, सहारा।

कुमकी (हिं० वि०) १ साहाय्यसम्बन्धीय, मददके मुताल्लिक। (स्त्री०) २ शिक्षित हथिनी। वह हाथियोंको पकड़नेमें साहाय्य पहुंचाती है।

कुमकुम (हिं० पु०) १ कुङ्कुम, केसर। २ कुमकुमा।

कुमकुमा (तु० पु०) वस्तुविशेष, एक चीज। वह लाहासे निर्माण किया हुवा एक अन्तःशून्यगोलक है। होलीको कुमकुमामें अबीर या गुलाल डाल कर लोगों पर चलाते हैं। २ पात्रविशेष, एक लोटा। उसका आकार क्षुद्र और मुख सङ्कीर्ण रहता है। ३ यन्त्रविशेष, किसी किस्मकी टांकी। उससे स्वर्णकार कारुकार्यखचित आभूषणोंके उठे हुवे दाने बैठाकर बराबर कर देते हैं। ४ काच निर्मित अन्तः-शून्य गोलक, कांचका बना हुवा पोला गोला। वह शोभाके लिये छतमें बांधकर लटका दिया जाता है।

कुमकुमी (हिं० पु०) छोटा और तङ्ग मुंहका लोटा।

कुमति (सं० स्त्री०) कुत्सिता मतिर्बुद्धिः, कुगतिसमा०। १ कुअभिप्राय, बुरा मतलब। कु ईषत् मतिः। २ अल्पबुद्धि, थोड़ी समझ। ३ मूर्खता, बेवकूफी। (त्रि०) कुत्सिता मतिर्यस्य, बहुव्री०। ४ कुबुद्धियुक्त, बदतमीज।

"भूतैः पञ्चभिरारब्धे देहे देह्यबुधोऽसकृत्।
अहं ममेत्यसद्ग्राहः करोति कुमतिर्मतिम्॥" (भागवत, ३।३१।३०)

कुमनीष (सं० त्रि०) कुत्सिता अल्पा वा मनीषा बुद्धिर्यस्य, बहुव्री०। दुष्टबुद्धि, अल्पबुद्धि, बदतमीज, कम अक्ल।

"न चास्य कश्चिन्निपुणेन धातुरवैति जन्तुः कुमनीषऊतीः।"
(भागवत, १।३।३७)

कुमनीषी (सं० त्रि०) कु-मनीषा-इनि। कुत्सित बुद्धियुक्त, बदतमीज।

कुमन्त्र (सं० पु०) कुत्सितो मन्त्रो मन्त्रणा, कर्मधाः। १ कुमन्त्रणा, बुरी सलाह। २ कुत्सित मन्त्र।

कुमन्त्रणा (सं० स्त्री०) कुमन्त्र देखो।

कुमन्त्री (सं० पु०) कुत्सितो मन्त्री, कर्मधा०। निन्द्यमन्त्री, बुरा वज़ीर।

कुमरिच (सं० पु०) मरिचवृक्ष विशेष, लाल मिर्चका पेड़। हिन्दीमें उसे 'मिर्चा' कहते हैं।

कुमरिया (हिं० पु०) हस्तिभेद, किसी किस्मका हाथी, वह बहुत दीर्घ एवं प्रशस्त तथा उत्कृष्ट होता है। उसका पृष्ठ देश अधिक कुब्जित नहीं रहता।

कुमरी (अ० स्त्री०) पक्षिविशेष, चिड़िया। वह कपोतिका-जातीय एक पक्षी है। कुमरी कपोत और पण्डुकके सहयोगसे उत्पन्न होती है। उसका वर्ण श्वेत रहता है। कण्ठमें हंसली बनी होती है। कुमरीका पद लोहित वर्ण और रव गम्भीर रहता है। वह बहुधा निर्जन स्थानमें वास करती है। उल्लूकी तरह कुमरी की भी बोली अशुभ समझी जाती है। हिन्दीमें उसे 'पिढ़की' भी कहते हैं।

कुमसुम (हिं० पु०) वृक्ष विशेष, एक पेड़। उसका काष्ठ धूसरवर्ण एवं सुदृढ़ रहता और गृहनिर्माणादि कार्यमें लगता है। आसाममें उससे नौका प्रस्तुत करते हैं। कुमसुम वृक्ष बहुत उच्च रहता और बीजसे उपजता है। माघ-फाल्गुन मास उसका बीज वपन किया जाता है। कुमायूं और पश्चिमी घाटमें कुमसुम अधिक उत्पन्न होता है।

कुमाच (हिं० पु०) पट्टवस्त्र भेद, किसी किस्मका रेशमी कपड़ा। उसे अरबीमें 'कुमाश' कहते हैं। २ गंजीफेका

एक रङ्ग। ३ कच्छु, केवांच। ४ भद्दी रोटी।

कुमायूं—युक्तप्रदेशका एक उत्तर विभाग। वह अक्षा० २८° ५१′ एवं ३१° ५′ उ० और देशा० ७८° १२′ तथा ८१° ३′ पू० के मध्य तिब्बतकी सीमासे लेकर तराई प्रान्त पर्यन्त अवस्थित है। कुमायूंके उत्तर तिब्बत, पूर्व नेपाल, दक्षिण बरेली-विभाग तथा रामपुरराज्य और पश्चिम टेहरीराज्य एवं देहरादून जिला है। युक्तप्रान्तका बहुत बड़ा विभाग होते भी उसकी लोकसंख्या अधिक नहीं। उसमें साढ़े बारह लाखसे कुछ ज्यादा आबादी है। कमिश्नरका हेड क्वार्टर नैनीतालमें है। उसमें नैनीताल, अलमोड़ा और गढ़वाल तीन जिले शामिल हैं। विभागमें १००४१ग्राम और २० नगर हैं। उनमें नैनीताल, काशीपुर और अलमोड़ा बहुत बडे हैं। काशीपुर, हलद्वानी, तनकपुर, श्रीनगर, कोठद्वार और द्वारहाट व्यवसायके प्रधान स्थान हैं। बदरीनाथ और केदारनाथका मन्दिर प्रसिद्ध है। सहस्र सहस्र तीर्थयात्री वहां दर्शन करने जाते हैं।

कुमायूं-विभाग हिमालयपर अवस्थित है। उसका दक्षिणांश भावर है। वहां कोई स्रोतस्वती नहीं। बीच बीच निर्झर और प्रस्रवण दृष्ट होते हैं। १८५० ई०तक कुमायूं निविड़ वनसे परिपूर्ण रहा। उसको लोग हस्ती और नानाविध हिंस्र जन्तुका निवास समझते और निविड़ काननमें जानेको साहस न करते थे।

कुमायूं नाम अधिक प्राचीन नहीं। फीरोज शाह तुगलकके समय यहिया-बिन अहमदके लिखे इतिहासमें उक्त नामका प्रथम उल्लेख मिलता है। अनेक लोग उसे मुसलमानोंका रखाहुवा अनुमान करते हैं। किन्तु कुमायूं अति प्राचीन कालसे पुण्यस्थानकी भांति प्रसिद्ध है। त्रिशूलशृङ्ग-शोभित विख्यात वर्तमान पञ्चचुलि-गिरिमाला ब्रह्माण्डपुराणमें पञ्चकूट नामसे वर्णित है। (ब्रह्माण्डपुराण, ४७। ३२) पद्म और ब्रह्मपुराणके मतसे वहां देवगणका आवास है।

अकबर बादशाहके समय कुमायूं एक सरकारके मध्य गण्य और २१ महलमें विभक्त था।

आजकल कुमायूंमें बारमण्डल, छह खाता, चौगरखा, दानपुर, दारमा, धनियाकोट, धनिरज, गङ्गोली, जोहार, कालीकुमायूं, कोटपाली, फलदाकोट, रामगढ़, सीरा, सोर, असकत, कुतोली, और महरयुरी परगना लगता है। समस्त विभागका भूपरिमाण ६००० वर्गमील है।

काली-कुमायूं परगनेमें बहुत दिनसे प्रवाद है—"चम्पावतके पूर्व चावालके मध्य कूर्माचल नामक एक गिरिशृङ्ग है। कूर्मावतारकाल विष्णु इसी गिरिशृङ्ग पर तीनवर्ष रहे थे। इसी कूर्माचलसे स्थानका नाम 'कमायूं' पड़ गया। त्रेतायुगमें रामने कुम्भकर्ण राक्षसको मार उसका छिन्नमुण्ड हनूमान्‌के हाथ प्रदान किया था। हनूमान्‌ने उसे कूर्माचल पर फेंक दिया। जहां कपाल गिरा था, वहां चार कोस परिमाण एक ह्रद बन गया। घटोत्कचने एक बार कुमायूं जय किया था। अङ्गराज कर्णके हाथ उसके मारे जाने पर भीमसेनने वहां पुत्रको सद्गतिके लिये दो देवमन्दिर बनवा दिये। इस समय चम्पावतके पूर्व फुङ्गरके निकट 'घटका देवता' और उसके अनतिदूर दक्षिणांशको पर्वत पर 'घटकू' नामक देवमन्दिर है। यह दोनों भीमसेनके स्थापित किये हुवे हैं।* भीमसेनने कुम्भकर्ण ह्रदका तीर तोड़ डाला था। उससे यह ह्रद गण्डकी (वर्तमान गिधिया) नदीके नामसे प्रवाहित हुवा।"

भारतके अपरापर स्थानोंकी भांति कुमायूंका भी इतिहास नहीं मिलता। लोगोंके मुखसे जो प्राचीन कथा सुनी जाती, उसके अधिकांशमें अलौकिक घटना भरी दिखाती है। सुतरां पूर्वोक्त प्रवादकी भांति उससे ऐतिहासिक सत्य आविष्कार करना कठिन है। पूर्वकालको कुमायूं क्षुद्र क्षुद्र राज्योंमें विभक्त था। कत्युरी, खस प्रभृति नाना जातियोंका अधिकार रहा।

गढ़वाल देखो।

फरिस्ता नामक मुसलमान-इतिहासमें लिखते हैं कि ई० अष्टम शताब्दको 'पुरु' (पुरु वा पौरव) नामक कोई प्रबल पराक्रान्त राजा कुमायूंमें राजत्व करते थे।

* उक्त दोनों मन्दिरको वर्तमान अवस्था देखनेसे बहुत प्राचीन समझ पड़ते हैं।

उन्होंने दिल्लीश्वरको पराजय कर समुद्रतटपर वङ्ग-भूमिपर्यन्त सकल देश जीत लिया था। उस वंशके दूसरे किसी राजाका नाम नहीं मिलता।

ई० १० वें शताब्दके प्रारम्भकाल सोमचंद नामक किसी राजपूतने कुमायूं जा चम्पावत नामक स्थानको राजकन्याका पाणिग्रहण किया था। उसमें उन्हें श्वशुरने यौतुकस्वरूप राजदुर्ग (वर्तमान चम्पावत) दे डाला। कालक्रमसे उक्त व्यक्तिने प्रवल पराक्रान्त हो कुमायूंमें अपना आधिपत्य फैलाया था। उन्होंने तारागा-वंशीयों-के साहाय्यसे रावतराजाओंको पराजय कर अपनेको राजचक्रवर्ती घोषणा किया और कुमायूंके प्रधान प्रधान सामन्तोंका सभामें आह्वान कर मर्यादानुसार पद पर बैठा दिया। सोमचंदने कुमायूंको प्राचीन शासनप्रणाली बदल डाली थी। उनके समय जोशी, विषत और मुदुलिय प्रधान प्रधान राजकर्मचारी बनाये गये। उनसे राजनीतिक एवं सामरिक विभागमें जोशी और गुरु, पुरोहित, पौराणिक, वैद्य प्रभृतिके कममें विषत और पण्डा ब्राह्मण नियुक्त हुये। सोमचंदके पीछे कुमायूंमें उनके जिन वंशीयोंने राजत्व किया, उनका नाम आगे दिया है—

राजाका नाम		राजाकाल
* सोमचंद	...	१००९ ई०
आत्मचंद	...	१०३० ११२२
* पुराणचंद (पूर्णचन्द्र)		
इंद्रचन्द		
* संसारचंद		
सुधाचंद		
हम्मीरचंद		
वीनचंद * (वीरचंद)		
(खशिया अधिकार)		
* वीरचंद	...	११२२
रूपचंद	...	११३७
लक्ष्मीचंद	...	११५०
धर्मचंद	...	११७०
कर्मचंद	...	११७८
कल्याणचंद	...	११९७
निर्भयचंद	...	१२०६
नरचंद	...	१ २७
नानकीचंद	...	१२३४
रामचंद	...	१२५२ ई०
भीष्मचंद	...	१२६२
मेघचंद	...	१२८३
ध्यानचंद	...	१२९०
पर्वतचंद	...	१३०९
थोहरचंद	...	१३१८
कल्याणचंद	...	१३३२
* त्रिलोकीचंद	...	१३५३
डमरचंद	...	१३६०
धर्मचंद	...	१३७८
अभयचंद	...	१४०१
* गरुड ज्ञानचंद	...	१४३१
हरिहरचंद	...	१४७६
उद्यानचंद	...	१४७७
आत्मचंद	...	१४७८
हरिचन्द	...	१४७९
विक्रमचन्द	...	१४८०
भारतीचन्द	...	१४९४
रत्नचन्द	...	१५१८
कीरातीचन्द	...	१५४५
प्रतापचन्द	...	१५६०
ताराचन्द	...	१५७८
माणिकचन्द	...	१५९०
कालीकल्याणचन्द	...	१५९९
पूरणचन्द	...	१६०८
भीष्मचन्द	...	१६१२
* बालकल्याणचन्द	...	१६१७
* रुद्रचन्द	...	१८२५

चंद नामधारी राजा समस्त कुमायूं राज्य शासन कर न सके। एक ओर जिस प्रकार वह स्वाधीन भावसे राजत्व करते, उसी प्रकार पाली और बारामण्डल परगनेमें काथी तथा कत्यूरी राजा भी स्वाधीन रहते थे। कार्तिकेयपुर (वर्तमान वैद्यनाथ)-से आविष्कृत कत्यूरी राजावोंके ताम्रशासनमें उदयपाल, चरणपाल, अगपाल, महीपाल, अनन्तपाल (११२२ ई०), सोनपाल, अजयपाल प्रभृति और इन्द्रदेव राजवार (युवराज) कई लोगोंका नाम पाया जाता है। गढ़वाल देखो।

पूर्वोक्त चंद नामधारी राजावोंमें गरुड़ ज्ञानचंद

* चिह्नित राजावोंका विवरण तत् तत् शब्दमें द्रष्टव्य है।

को साक्षात् करनेपर दिल्लीके बादशाहसे समस्त कुमायूं राज्यकी सनद मिली थी। राजा उद्यानचंदके समय उत्तरको सरयू, दक्षिणको तराई और पश्चिमको कालीसे कोशी तथा सुवाल पर्यन्त उनके अधिकार-भुक्त रहा। उस समय सरयूका उत्तरांश गङ्गोलीके मङ्गोती-राजा, शीर, सोर, असकत, जुहार तथा दार्मं दोती-महाराज,* विसांग एवं चौदान जूमल राजा, कत्यूर, खूनार तथा लक्ष्मणपुर कत्यूरी-राजा, रामगार एवं कोटा खसिया और फल्दाकोट काथी-

* दोतीकी राजावली।

१ शालिवाहनदेव।	२८ गौराङ्गदेव।
२ शक्तिवाहनदेव।	२९ सौयमल्लदेव।
३ हरिवर्मदेव।	३० इलराजदेव।
४ शीब्रह्मदेव।	३१ नीलराजदव।
५ ब्रजदेव।	३२ फटकशीलराजदेव।
६ विक्रमादित्यदेव।	३३ पृथ्वीराजदेव।
७ धर्मपाल देव।	३४ धामदेव।
८ नीलपालदेव।	३५ ब्रह्मदेव।
९ सुक्षराजदेव।	३६ त्रिलोकपालदेव।
१० भोजदेव।	३७ निरंजनदेव।
११ समरसिंहदेव।	३८ नागमल्लदेव।
१२ आशलदेव।	३९ अर्जुनशाही।†
१३ सारङ्गदेव।	४० भूपतिशाही।
१४ नकुलदेव।	४१ हरिशाही।
१५ जयसिंह।	४२ रामशाही।
१६ अनिजलदेव।	४३ पवरशाही।
१७ विद्याराजदेव।	४४ रुद्रशाही।
१८ पृथ्वीश्वरदेव।	४५ विक्रमशाही।
१९ चुनपालदेव।	४६ मान्धाताशाही।
२० अशान्तिदेव।	४७ रघुनाथशाही।
२१ वासन्तीदेव।	४८ हरिशाही।
२२ कतारमल्लदेव।	४९ कृष्णशाही।
२३ सिंहमल्लदेव।	० दीपशाही।
२४ फणिमल्लदेव।	५१ विष्णुशाही।
२५ निधिमल्लदेव।	५२ प्रदीपशाही।
२६ निलयरायदेव।	५३ हंसध्वजशाही।
२७ वज्रवाहुदेव।	

राजवार-प्रदत्त असकतकी राजवंशावलीके मतमें—

१ शालिवाहन।	५ ब्रह्मदेव।
२ संजयदेव।	६ शकदेव।
३ कुमारदेव।	७ व्यादेव।
४ हरिदेव।	८ वणञ्जय।
९ विक्रमाजित्।	४३ उदकशील।
१० धर्मपाल।	४४ प्रीतम।
११ शार्ङ्गधर।	४५ धामदेव।
१२ निलयपाल।	४६ ब्रह्मदेव।
१३ भोजराज।	४७ त्रिलोकपालदेव।
१४ विनयपाल।	४८ अभयपालदेव।*
१५ सुजङ्गदेव।	४९ निर्भयपालदेव।
१६ समरसिंह।	५० भारतीपाल।
१७ आशल।	५१ भैरवपाल।
१८ अशोक।	५२ भूपाल।†
१९ सारङ्ग।	(?) ५३ रत्नपाल।
२० नज।	५४ श्यामपाल।
२१ कामजय।	५५ शाहीपाल।
२२ शालीनकुल।	५६ सूर्यपाल।
२३ गणपति।	५७ भोजपाल वा भद्र।
२४ जयसिंहदेव।	५८ शिवरत्नपाल।
२५ शङ्केश्वर।	५९ अच्छपाल।
२६ शनीश्वर।	६० त्रैलोक्यपाल।
२७ क्रसिदिध्य।	६१ सुन्दरपाल।
२८ विधिराज।	६२ जगतीपाल।
२९ पृथिवीश्वर।	६३ पिरोजपाल।
३० बालकदेव।	६४ रायपाल।
३१ अशान्ति।	६५ महेंद्रपाल।
३२ वासन्ती।	६६ जयन्तपाल।
३३ कतारमल्ल।	६७ वीरबलपाल।
३४ सोतदेव।	६८ अमरसिंहपाल।
३५ सिन्धुदेव।	६९ अभयपाल।
३६ कौनदेव।	७० उत्सवपाल।
३७ रक्षिदेव।	७१ विजयपाल।
३८ नीलराज।	७२ महेंद्रपाल।
३९ गौर।	७३ हिम्मतपाल।
४० सादिलदेव।	७४ दलजितपाल।
४१ इतिनराज।	७५ बहादुरपाल।
४२ तिलङ्गराज।	७६ पुष्करपाल।

† राजा रत्नचंदके समसामयिक।

* १२९९ ई० को यह कत्यूर छोड़ असकत चले गये थे।

† असकतके राजवारकी तालिकाके अनुसार भूपालके पीछे २८ पुरुषोंका नाम नहीं मिलता। उसके पीछे रत्नपाल राजा हुवे। रुद्रदत्त पन्थकी संगृहीत वंशावलीके मतमें भैरवपालके पीछे रत्नपालको राज्य मिला। संभवत: यही मत ठीक है।

राजपूतके अधिकारमें थी। राजा उद्यानचंदने कुमायूँ-के प्रसिद्ध जालेश्वर नामक शिवमन्दिरका संस्कार करा वहां गुजराती ब्राह्मणको पौरोहित्यमें नियुक्त किया। राजा कल्याणचंदके समय अलमोड़ा नगरमें राजधानी स्थापित हुयी। आजकल भी अलमोड़ा कुमायूँका प्रधान नगर है। कल्याणचंदके पुत्र रुद्रचंदने लाहोर जा अकबरसे साक्षात् किया था।

१७४४ ई० को अली मुहम्मद खान् रुहेला सेना ले कुमायूँ जीतने गये। उस समय चंद नामधारी राजावों-की क्षमता कितनी ही घट गयी थी। सुतरां वह रुहेलोंका आक्रमण सह न सके। रुहेलोंने अलमोड़ा लूट लिया। कुमायूँ राज्यमें अति अल्पकाल मुसलमानोंका अधिकार रहा। किन्तु उस अल्प कालमें उन्होंने कुमायूँ पर जो दारुण अत्याचार किया, वह नाना स्थानोंमें भग्न देवालय और अङ्गहीन देवमूर्ति देखनेसे समझा जा सकता है। कुमायूँका जल-वायु नव-विजितावोंके पक्षमें अच्छा न ठहरा। अलीमुहम्मदके प्रधान कर्मचारियोंने सात मास रह लाख रुपये राजा-से रिशवत ले उक्त स्थान परित्याग किया था। किन्तु अलीमुहम्मद कर्मचारियोंके व्यवहारसे विरक्त हो फिर १७४५ ई० को कुमायूँके अभिमुख चल पड़े। इस बार वह कुमायूँ राज्यमें घुस न सके, बारखेड़ीके निकटस्थ गिरिपथमें पराजित हुवे। मुसलमानोंमें अलीमुहम्मद-ने ही सर्वप्रथम कुमायूँ अधिकार किया था। उन्हींसे मुसलमान शासन शेष भी हो गया। ई० अष्टादश शताब्दके मध्यभाग पृथ्वीनारायण नामक गोर्खा-दल-पतिने अपने बाहुबलसे नेपाल राज्यका अधिकांश जीता था। फिर उनके उत्तराधिकारी १७९० ई० को कुमायूँ जय करनेके अभिप्रायसे गोर्खासैन्यके साथ काली नदी पार कर अलमोड़ा नगरमें जा उपस्थित हुवे। उस समय दुर्बल चंदराज राजधानी छोड़ भागी थे। उनका अधिकृत राज्य अवाध गोरखोंके हाथ लग गया। २४ वर्ष मात्र उनका अधिकार रहा। उसी बीच क्रूरप्रकृति गोरखोंने कुमायूँके लोगों पर घोर-तर अत्याचार किया था।

१८१४ ई० को अंगरेजोंने गोरखावोंके हाथसे कुमायूँ निकाललेनेकी चेष्टा की थी। उस समय चंद नामधारी राजावोंका कोई उत्तराधिकारी न रहा। हर्षदेव जोशी नामक एक मन्त्री जीवित थे। उन्होंने अंगरेजोंका पक्ष अवलम्बन किया। गोर्खा देखो।

१८१५ ई० को गोर्ख सैन्यने कुमायूँ छोड़ा था। तदवधि कुमायूँ राज्य अंगरेजोंके अधिकारभुक्त हुवा। एक कमिशनर शासनकार्य निर्वाह करते हैं।

कुमायूँमें अनेक समुच्च गिरिशृङ्ग विद्यमान हैं। उनमें नीतिपथ १६५७०, मानपथ १८००० और जुहार वा मिलमपथ १७२७० फीट ऊंचा है। त्रिशूलाद्रिमें त्रिशूलकी भांति तीन शृङ्ग हैं। उसका पूर्वशृङ्ग २२३४१, मध्यशृङ्ग २३०९२ और पश्चिम शृङ्ग २३३८२ फीट बैठता है। त्रिशूलाद्रिसे उत्तर नन्दादेवी नामक शृङ्ग २५६६२ फीट ऊंचा है।

कुमायूँमें अनेक हिन्दू देवालय हैं। उनमें ३५० स्थान प्रधान हैं। २५० शैव, ३५ वैष्णव और ६४ शाक्त मन्दिर बने हैं। मन्दिरोंमें यागेश्वर, वागेश्वर, सोमेश्वर और त्रिशूलाद्रिका मन्दिर सबसे अच्छा है। स्कन्दपुराणके हिमाद्रिखण्डमें त्रिशूलाद्रि और उसके निकटस्थ तीर्थसमूहका माहात्म्य विस्तृत भावसे लिखा है।

कुमायूँमें नाना जातीय व्याघ्र, द्विविध भल्लूक, शृगाल, वारा, नानाविध हरिण, चमरी गो, एवं नाना-प्रकार पार्वतीय पक्षी होते हैं। भावर नामक अरण्य प्रदेशमें हाथी बहुत हैं।

कुमायूँमें स्वर्ण, ताम्र, लौह, जस्ता, गन्धक, सोहागा, शिलाजतु प्रभृति खनिज द्रव्य मिलते हैं।

कुमार (सं० क्ली०) कुमारयति नन्दयति, अच्। १ निर्मल स्वर्ण, खालिस सोना। २ नेत्रतारक। (पु०) कमु कान्तौ, आरन् कित्त्वादुकारश्चोपधायाः। कमेः किदु-च्चोपधायाः। उण् ३।१३८। १ पञ्चवर्षीय बालक, पांच सालका लड़का। २ पुत्र, बेटा। ३ युवराज, राजाका बड़ा लड़का। नाटकादिमें युवराजको कुमार सम्बोधन करते हैं। ४ कार्तिकेय। ५ शुक। ६ अश्ववारक, सहीस। ७ अग्निके एक पुत्र। उन्होंने कितने ही वैदिक मन्त्र प्रकाश किये हैं। ८ सनकसे तीस वर्ष

पर्यन्त पुरुष। ११ वरुणवृक्ष। १२ समुद्रवृक्ष। १३ अवसर्पिणीके १२वें जिन। १४ सिन्धुनद। १५ सनक, सनन्द, सनातन, सनत्कुमार कई ऋषि। उक्त ऋषि शैशवसे ब्रह्मचारी रहने पर कुमार कहलाते हैं।

"अनेकानि सहस्राणि कुमारब्रह्मचारिणाम्।
दिवं गतानि विप्राणामकृत्वा कुलसन्ततिम्॥" (मनु, ५। १५९)

१६ मङ्गलग्रह।

"कुमारं शक्तिहस्तं च लोहिताङ्गं नमाम्यहम।" (नवग्रह-स्तोत्र)

१७ शाकद्वीपाधिपतिके कोई पुत्र। उनके अधिकृत वर्षका नाम कुमारवर्ष है। (विष्णुपुराण, २। ४। ५९-६०)

१८ मन्त्रविशेष। (तन्त्रसार) १९ ग्रहविशेष। उसका उपद्रव बालकों पर ही होता है। उसे स्कन्द भी कहते हैं। महादेव कर्तृक वह सृष्ट हुवा था। (सुश्रुत) २० प्रजापतिविशेष। २१ मञ्जुश्री देव। २२ भारतवर्ष।

"कुमाराख्यः परिख्यातो द्वीपोऽयं दक्षिणोत्तरः।
पूर्वे किराता यस्यान्ते पश्चिमे यवनाः स्थिताः॥"
(वामनपुराण, १३। ११)

२३ अग्नि।

"कुमारं माता युवतिः।" (ऋक्, ५। २। १)

सायणाचार्यने उक्त ऋक्‌के 'कुमार' शब्दका ब्राह्मणकुमार वा अग्नि दो प्रकार अर्थ लगाया है। शाट्यायण-ब्राह्मणमें उक्त ऋक्‌का इतिहास लिखा है—'इक्ष्वाकुवंशीय राजा त्र्यरुण अपने पुरोहित वृषके साथ रथपर बैठे जा रहे थे। पुरोहित सारथिके कार्य पर रहे। उसी रथके चक्रमें पड़ एक ब्राह्मणकुमार मर गया। उससे सन्देह हुवा—पुरोहित और रथस्वामी राजा दोनोंमें किसको ब्रह्महत्याका अपराध लगा। इक्ष्वाकुगणने पुरोहितको वही अपराधी ठहराया था। कारण वह उस समय सारथ्यमें नियुक्त रहे। पुरोहितने मन्त्रबलसे ब्राह्मणकुमारको फिर जिला दिया। इसी इतिहाससे कुमार अर्थमें रथचक्र-निहत-ब्राह्मणकुमार अर्थ लगता है।

२४ जनपदविशेष और उसके अधिवासी।

"काश्मीराश्च कुमाराश्च घोरका हंसकायनाः।"
(भारत सभा, ५१। १४)

"ततः कुमारविषये श्रे णिमन्तमथाजयत्।
कोशलाधिपतिञ्चैव बृहद्बलमरिंदमः॥" (भारत सभा, ५१। १४)

उक्त जनपद पाश्चात्य भौगोलिक टलेमि-वर्णित कम्बेरिखोन (Kamberikhon) अनुमित होता है।

२५ मुनिभेद। (लिङ्गपुराण, ७। ५०) २६ पर्वतविशेष।
"कुमारपर्वतश्चाय ये च पम्पानिवासिनः।" (नृसिंहपुराण, १। ५)

२७ तीर्थविशेष। कुमारचैव देखो।
"कुमाराख्य प्रभासश्च तथा धन्या सरस्वती।" (बृहन्नीलतन्त्र, ५ अ०)

२८ कर्णाट-राजवंशीय मुकुन्दके पुत्र। वह शत्रुके भयसे वङ्गदेश चले गये। २९ विजयनगरके बुक्कारायवंशीय राजविशेष। वह कुम्भयके पुत्र थे। १४१७ से १४२१ ई० तक उन्होंने राजत्व किया। ३० निम्नवङ्गमें प्रवाहित कोई नदी। वह अक्षा० १३° ५०' ३०" और देशा० ८८° ५८' पू० को माथाभांगासे विभिन्न हो पवना तथा यशोर जिलेको भागकर अक्षा० २३° ३२' उ० तथा देशा० ८९° २८' पू० पर नवगङ्गामें जा मिली है। ३१ असभ्य जातिविशेष, कोई जंगली कौम। (त्रि०) ३२ सुन्दर, खूबसूरत। ३३ अविवाहित, कुआंरा। ३३ एक जैन कवि। ये गोविन्दभट्टके सबसे बड़े पुत्र और हस्तिमल्लके बड़े भाई थे। ईसी सन् १२९० (वि० सं० १३४७) में यह विद्यमान थे। आत्मप्रबोध नामक ग्रंथ इनका बड़ाही सुन्दर और सुपाठ्य है।

कुमारक (सं० पु०) कुमार संज्ञायां कप्। १ वरुणवृक्ष, एक पेड़। स्वार्थे कन्। २ बालक, लड़का। ३ राजकुमार, शाहजादा। ४ कौरव्यवंशीय नागविशेष।
(भारत, आस्तीक, ५७। १३)

५ अक्षिगोलक, आंखका ढेला।

कुमारकल्पद्रुम (सं० पु०) वैद्यकोक्त घृतविशेष, एक घी। वह स्त्रीरोगका महौषध है। गर्भावस्थामें उसको सेवन करनेसे गर्भदोष नष्ट हो जाता और बलिष्ठ पुत्र जन्म पाता है। प्रस्तुत करनेका निम्नलिखित नियम कहा है—कुङ्कुम, लवङ्ग, गुड़त्वक्, वचा, अगुरु, कांचकी, नीलमूल, कल्काथ कुष्ठ, शटी, मेदा, महामेदा, जीरक, ऋषभक, प्रियङ्गु, त्रिफला, देवदारु, तेजपत्र, एला, शतमूली, गाम्भारीफल, यष्टिमधु, क्षीरकाकोली, मुस्ता, पद्म, जीवन्ती, रक्तचन्दन, काकोली, श्यामालता, अनन्तमूल, श्वेतवाट्यालकमूल,

शरपुङ्खामूल, कुष्माण्ड, भूमिकुष्माण्ड, मञ्जिष्ठा, चक्र कुल्या, शालपर्णी, नागेश्वर, देवदारु, हरिद्रा, रेणुक और कटभीमूल समभाग दो दो तोले डालना चाहिये क्वाथ प्रस्तुत करनेमें ६। मन छागमांस, ६ मन दशमूल और २॥ मन जल पड़ता है। २५ सेर शेष रहनेसे क्वाथको उतार लेते हैं। शेषकी उक्त क्वाथ शीतल होनेसे अभ्र, गन्धक तथा पारद दो दो तोला और मधु २ सेर मिलाने पर कुमारकल्पद्रुम बनता है।

(भैषज्यरत्नावली)

कुमारकल्याण (सं० क्ली०) आयुर्वेदोक्त घृतविशेष, एक घी। शङ्खपुष्पी, वचा, ब्राह्मी, कुष्ठ, त्रिफला, द्राक्षा, शर्करा, शुण्ठी, जीवन्ती, जीरक, बाला, शटी, दुरालभा, बिल्व, दाड़िम, सुरस पुष्कर-मूल, सूक्ष्म ला तथा गज-पिप्पली समभागमें डाल घृत प्रस्तुत करना चाहिये। उक्त घृतसे बालकोंके सकल प्रकार रोग आरोग्य होते हैं। विशेषतः दन्तोद्गमके लिये वह अधिक फलप्रद है।

(चक्रदत्त)

कुमारकृष्णप्प—दाक्षिणात्यमें मदुराराज्यके एक नायक। १५६३से १५७३ ई० तक उन्होंने मदुराराज्य शासन किया। उनके समय पलिगार दम्बिचि-नायक विरोधी हुये। किन्तु कृष्णप्पके यत्नसे वह मारे गये।

कुमारक्षेत्र—१ मलबारके उपकूलमें तुलुव राज्यका एक पवित्र स्थान। कुमारक्षेत्रमाहात्म्य नामक संस्कृत ग्रन्थमें उक्त तीर्थका विवरण वर्णित हुवा है। २ कुमारपर्वत। महिसुरके उत्तर-पश्चिम सोंदर विभागमें 'लोहाचल' नामक एक पर्वत है। उसीको कुमारपर्वत वा कुमारक्षेत्र कहते हैं। लोहाचलमाहात्म्यके मतानुसार कुमारस्वामीके मन्दिरके लिये वह स्थान पुण्यतीर्थ समझा जाता है।

"कुमारधामी कौमारी प्रभासे सुरपूजिता।" (वृहन्नीलतन्त्र, ५म पटल)

कुमारग (हिं०) कुमार्ग देखो।

कुमारगुप्त—गुप्तवंशीय एक महाराजाधिराज, द्वितीय चन्द्रगुप्तके पुत्र और ध्रुवदेवीके गर्भजात थे। उनका अपर नाम महेन्द्रादित्य था।

मङ्कुवार, गड़ा, बिलसड़, मन्दसोर प्रभृति स्थानोंसे १म कुमारगुप्तके समयकी खोदित शिलालिपि मिली है। उससे समझ पड़ता है कि कुमारगुप्तने ९६ गुप्तसंवत्से १३१ गुप्तसंवत् (४१६ से ४५१ ई०) पर्यन्त राजत्व किया था।

यमुनानदीतीरस्थ मङ्कुवार नामक ग्रामसे १२९ गुप्तसंवत्‌के खोदित शिलाफलकमें कुमारगुप्त केवल 'महाराज' नामसे वर्णित हुये हैं। इससे अनुमान लगता कि उनके जीवनको शेष अवस्थामें पुष्यमित्र अथवा हूण लोगोंने प्रबल हो गुप्तसम्राट्‌का पराक्रम खर्व कर डाला था।

२य कुमारगुप्त भी गुप्तवंशीय एक महाराजाधिराज रहे। वह नरसिंहगुप्तके पुत्र और श्रीमतीदेवीके गर्भजात थे। २य कुमारगुप्त १म कुमारगुप्तके प्रपौत्र रहे। किसी किसी पुराविद्‌के मतानुसार गुप्तसम्राटोंकी जो मुद्रा मिली हैं, उनसे किसी किसीमें द्वितीय कुमारगुप्तका नाम क्रमादित्य लिखा है। उन्होंने अनुमान ५३० से ५५० ई० तक साम्राज्य शासन किया था। उनके समय मालवराज यशोधर्माने प्रबल हो गुप्तराज्य पर अपना प्रभुत्व जमाया। (यशोधर्मा देखो।)

कुमारगोपाल—टिकारीके एक राजा। इनका पूरा नाम महाराज कुमारगोपालशरण नारायण सिंह था। महारानी राजकुंवरिकी दुहिता राधेश्वरी कुंवरिने इन्हें गोद लिया था। इनकी नाबालिगीमें वार्डसकोर्टने इनके हिस्सेको ९ आना रियासतका प्रबन्ध किया। १९०४ ई० को इन्हें राज्यका उत्तराधिकार मिला था। इनके समयमें ९ नई नहरें निकाल सिंचाईका सुभीता किया जाने पर राज्यकी आमदनी ५० हजार बढ़ गयी।

कुमारघाती (सं० त्रि०) कुमारं हन्ति, कुमार-हन-णिनि। कुमारशीर्षयो णिनिः। पा ३।२।५१। शिशुमारक, लड़कोंको मार डालनेवाला।

कुमारचन्द्र—दाक्षिणात्यके एक पाण्ड्यराज। वह वीरगुणराजपाण्ड्यके पुत्र थे।

कुमारजीव (सं० पु०) कुमारं जीवयति, कुमार-जीव-णिच्-अण्। १ पुत्रञ्जीवकवृक्ष, एक पेड़। २ कोई विख्यात चीनपण्डित। उन्होंने तिब्बत जा बहुतसे संस्कृत-बौद्धग्रन्थ संग्रह किये थे। ४०५ ई० को चीन-

सम्राट् के आदेश पर आठ सौ बौद्धयाजकोंके साहाय्यसे संस्कृत बौद्धशास्त्र प्रज्ञापारमिता और दशभूमीश्वरका चीनभाषामें अनुवाद उतारा ।

कुमारतनययोगी—एक विख्यात ज्योतिर्विद् । उन्होंने बृहत्संहिताकी एक टीका बनायी है ।

कुमारतन्त्र (सं० क्लो०) रावणकृत बालरोगप्रबन्ध, रावणका बनाया हुवा बालकोंकी चिकित्साका एक शास्त्र। प्रथम दिवस, मास वा वर्ष नन्दा, द्वितीय दिवस, मास वा वर्ष सुनन्दा, तृतीय दिवस, मास वा वर्ष पूतना, चतुर्थ दिवस, मास वा वर्ष मुखमुण्डितिका, पञ्चम—कटपूतना, षष्ठ—शकुनिका, सप्तम—शुष्क रेवती, अष्टम—आर्यका, नवम—सूतिका, दशम—निऋ‌ता, एकादश—पिलिपिच्छिका और द्वादश दिवस मास वा वर्ष कामुका नाम्नी मातृका शिशुको ग्रहण करती है । उस समय बालकको ज्वरादि रोग लग जाता है । (चक्रदत्त)

कुमारदत्त (सं० पु०) निधिपतिके एक पुत्र ।

कुमारदास—एक विख्यात प्राचीन कवि । उन्होंने 'जानकीहरण' प्रभृति कई काव्य बनाये हैं । क्षेमेन्द्र, श्रीधरदास, रायमुकुट प्रभृतिके ग्रन्थमें कुमारदासकी कविता उद्धृत हुयी हैं ।

कुमारदेव—१ कोई कवि । उन्होंने शालिवाहनसप्तशती बनायी है । २ दाक्षिणात्यवाले कोङ्गदेश (चेरराज्य)-के कोई राजा । वह चतुर्भुजदेवके पुत्र थे ।

कुमारदेवी (सं० स्त्री०) समुद्रगुप्तकी माता ।

कुमारदेष्ण (वै० पु०) कुमाराणां देष्णः दाता, कुमारदा, बाहुलकात् इष्णच् । कुमारदाता, लड़का देनेवाला।

"कुमारदेष्णा जयतः पुनर्हणः ।" (ऋक्, १० । ३४ । ७)
'कुमा देष्णाः कुमाराणां दातारः ।' (सायण)

कुमारधारा (सं० स्त्री०) नदीविशेष, एक दरया । कुमारधारा नदी मानससरोवरसे निकली है । उसमें स्नान करनेसे मनुष्य कृतकृतार्थ हो संसारके बंधनसे छूट जाता है। (भारत, वन, ८१ अ०)

कुमारपाल— अनहलके एक राजा । १२वीं शताब्दीके शेषभाग राजपूतानेके किसी अज्ञात कविने कुमारपाल-चरित्र नामक वीररसपूर्ण वंशकथा लिखी है, जिसमें ब्रह्मासे लेकर अनहलके बौद्ध राजा कुमारपाल तक सबका वर्णन है । यह ११५० ई० को विद्यमान थे।

कुमारपाल—चालुक्यवंशीय गुजरातके एक पराक्रान्त राजा । वह दधिस्थलीपुरके भीमदेवपुत्र क्षेमराजके पौत्र, देवप्रसादके पुत्र, जयसिंह-सिद्धराजके भागिनेय और रत्नसिंहादेवी (काश्मीरादेवी)-के गर्भजात रहे।

उन्होंने जयसिंहके निकट रह दधिस्थलीमें राज्य-शासन और प्रसिद्ध जैनाचार्य हेमचन्द्रसे सदा सदुपदेश लाभ किया । जयसिंहने कुमारपालके भ्राता त्रिभुवन-पालको गोपनमें मार डाला था । फिर वह उनको भ्राताका अनुवर्ती बनानेकी चेष्टामें रहे। कुमारपाल उक्त व्यापार अवगत होने पर सतर्क हो गये। वह सर्वदा मन्त्रीके गृहमें लुक्कायित रहते थे । एक दिन जयसिंहका नियुक्त चर संधान पाकर वहां जा पहुंचा। किन्तु हेमचन्द्रने मिथ्याकथामें चरको बहला कुमारकी रक्षा की थी। उसी दिन वह भृगुकच्छ भाग गये। फिर कैलम्बपत्तनमें उपस्थित होने पर कैलम्बराजने उन्हें अपने राज्यका अर्धांश दिया था । अन्तको प्रतिष्ठानपुर और उज्जयिनी प्रभृति स्थानोंमें कुछ दिन रह नगेन्द्रपत्तन जाकर अपने भगिनीपति (बहनोई) श्रीकृष्णदेवके गृहमें उन्होंने अवस्थान किया । भगिनीका नाम प्रेमलदेवी था ।

संवत् ११९९ के मार्गशीर्ष मास कैलम्बराजके साहाय्यसे कुमारपालने सिद्धराजको दमन कर पुनर्वार राज्य लाभ किया । उस समय उनका वयःक्रम ५० वत्सर रहा । उसके पीछे उन्होंने सुराष्ट्र, ब्राह्मणवाहक, पञ्चनद, सिन्धुसौवीर प्रभृति नानास्थान जय किये। दिग्विजय काल कुमारपालने सिन्धुके पश्चिमपारस्थ पद्मपुर नगरकी राजकन्या पद्मिनीको व्याहा था। मूलस्थानमें मालवगणके साथ उनका घोर युद्ध हुवा ।

कुमारपाल प्रथम हिन्दू रहे । उसके पीछे हेमचन्द्रके उपदेशसे उन्होंने जैनधर्म ग्रहण किया। हेमचन्द्र देखो।

उन्होंने सकल विजित स्थानोंमें अहिंसा-धर्म फैलाया था । जैनोंके पुण्यतीर्थ शत्रुञ्जयपर्वत पर कुमारपालने पार्श्वनाथका एक बृहत् मन्दिर और १२११ संवत्को हेमचन्द्रसूरि द्वारा 'त्रिभुवनपालविहार'

स्थापन किया। प्रसिद्ध आलङ्कारिक वाग्भट्ट उनके मन्त्री रहे।

हेमचन्द्रके मृत्युसे ६० वर्ष पीछे उनके भ्रातुष्पुत्र (भतीजे) अजयपालने विषदानसे उन्हें मार डाला। कुमारपालने ३० वर्ष ८ मास २७ दिन राजत्व किया था। उनके पीछे महीपालके पुत्र अजयपाल ही राजा हुवे।

अनेक जैनग्रन्थोंमें कुमारपालकी कथा लिखी है। उनमें कुमारपाल-चरित, कुमारपालप्रबन्ध, द्वैयाश्रय (१५, १६ सर्ग), उदयसागर-विरचित कालपञ्चाशिका (३१श अध्याय) प्रभृति द्रष्टव्य हैं।

कुमारभट्ट, कुमारिलभट्ट देखो।

कुमारभास्करवर्मा—कामरूपके एक राजा। प्रायः ६४० ई० को चीनपरिव्राजक आसाम आये थे। उन्होंने लिखा है—'आसाममें क्षुद्रकाय, भीषण आकृति, अध्यवसायी, सच्चे और पीतवर्ण जाति रहती है। उनके राजाका नाम कुमारभास्करवर्मा है। सब लोग ब्राह्मण मतावलम्बी हैं।'

कुमारभृत्या (सं० स्त्री०) कुमाराणां भृत्या भरणं पालनम्, कुमार-भृ भावे क्यप्-टाप्। संज्ञायां समजनिषदनिपतमनविदसुञ्शीङ् भृञिणः। पा ३।३।९९। १ कुमारपालन, बच्चेकी परवरिश। गर्भसे निर्विघ्न सन्तान वहिष्करण प्रभृति कार्यको कुमारभृत्या कहते हैं। २ गर्भिणीकी परिचर्या, हामिलाकी देखभाल। धात्रीविद्याका नामान्तर कुमारभृत्या है।

"कुमारभृत्या कुशलैरनुष्ठिते भिषग्भिराप्तैरथ गर्भभर्मणि।" (रघुवंश, ३।१२)

सुश्रुतने कुमारभृत्याका नियमादि इस प्रकार लिखा है—'प्रसूति किंवा धात्री नियम पालन न कर अहिताचरण वा अशौचाचार कर मङ्गलाचार न करने अथवा बालक भीत, पति हृष्ट वा तर्जित होने किंवा अतिशय रोनेसे स्कन्दग्रह, स्कन्दापस्मार, शकुनी, रेवती, पूतना, अन्धपूतना, शीतपूतना, मुखमण्डिका और नैगमेय वा पितृग्रह—नवग्रह बालकके शरीरमें आश्रय करते हैं। बालकके शरीरमें ग्रहका लक्षण प्रकाशित होनेसे सान्त्वनावाक्य प्रयोग करना उचित है।

स्कन्दग्रह-पीड़ित बालकमें निम्नलिखित लक्षण देख पड़ते हैं—नेत्रद्वयकी स्फीतता, देहमें रक्तका गन्ध, स्तन्यपानमें अनिच्छा, मुखकी वक्रता, नेत्रके एक पक्ष्मकी स्थिरता, अपर पक्ष्मकी चञ्चलता, उद्विग्नता, चक्षुर्द्वयका चाञ्चल्य, अल्प अल्प रोदन और हस्तकी सकल अङ्गुलि वक्र कर दृढ़ मुष्टिकरण।

स्कन्दापस्मारग्रह-कर्तृक पीड़ित होने पर बालक कभी अचेतन तथा कभी सचेतन हो जाता, कभी उन्मत्तकी भांति हस्त-पाद चलाता, मलमूत्र गिराता, शब्दके सहकार जृम्भण लगाता और मुखमें फेन लाता है।

शकुनीग्रह-पीड़ित बालकका लक्षण—अङ्गकी शिथिलता, भयसे चौंक पड़ना, शरीरमें पक्षीका गन्ध और स्रावविशिष्ट व्रण एवं दाहपाक विशिष्टस्फोट द्वारा सर्वाङ्ग पीड़ा है।

रेवतीग्रह-कर्तृक पीड़ित होनेपर बालकका मुख रक्तवर्ण पड़ जाता, मल हरित्वर्ण आता, शरीर अतिशय पाण्डुवर्ण वा श्यामवर्ण दिखाता, ज्वर सताता, मुखमें शुष्कता तथा सर्वशरीरमें वेदनाका वेग बढ़ आता और वह सर्वदा नासिका एवं कर्ण खुजलाता है।

पूतनाग्रहकी पीड़ामें अङ्गकी शिथिलता, दिन किंवा रात्रिको स्वच्छन्द निद्राका अभाव, तरल मलका निःसरण, देहमें काकका गन्ध, वमन, लोमहर्षण और अतिशय तृष्णाका लक्षण प्रकाशित होता है।

अन्धपूतनाग्रहकर्तृक पीड़ित होने पर बालक अतिसार, कास, हिक्का, स्तन्यपानमें अनिच्छा, वमन, ज्वर, शरीरकी विवर्णता और रक्तके गन्धसे कष्ट पाता है।

शीतपूतनाग्रहकी पीड़ामें शिशु मध्य मध्य चौंक उठता, अतिशय कांपता, बहुत रोदन करता, अवसन्नभावसे सो रहता, गलदेशसे अव्यक्त शब्द निकाला करता, अङ्ग शिथिल रहता और अतीसारका कष्ट सहता है।

मुखमण्डिकाग्रह-पीड़ित होने पर शरीरकी म्लानता, हस्त, पद एवं मुखकी रक्तवर्णता, अधिक आहार, उदरका कलुषित शिरा द्वारा आवृत होना और देहमें मूत्रगन्ध लक्षण प्रकाशित होता है।

नैगमेयग्रहकी पीड़ामें फेनवमन, देहके मध्यभागका विनमितभाव, उद्वेग, विलाप, ऊर्ध्वदृष्टि, ज्वर,

शरीरमें वसागन्ध और मध्य मध्य संज्ञाहीनताका लक्षण बालकमें देख पड़ता है।

बालकके स्तब्धभावापन्न, स्तन्यपानमें अनिच्छुक एवं मध्य मध्य संज्ञाहीन होने किंवा रोगका सम्पूर्ण लक्षण लग जानेसे रोग असाध्य होता है। रोगका सम्पूर्ण लक्षण देख न पड़ते ही सावधान हो चिकित्सा करना उचित है।

स्कन्दग्रहपीड़ित शिशुको देवदारु, रास्ना तथा मधुवृक्ष सकलका क्वाथ और दुग्धके साथ घृत पाक कर खिलानेसे प्रतीकार पहुंचता है। स्कन्दापस्मार रोगाक्रान्त बालकको क्षीरवृक्ष तथा काकोल्यादिगणके क्वाथके साथ घृत वा दुग्ध पिलाना और वचा एवं हिङ्गु मिला उसके अङ्ग पर प्रलेप लगाना चाहिये। उससे बालक अचिर ही आरोग्यलाभ कर सकता है।

शकुनीग्रहाक्रान्त बालकके लिये यष्टिमधु, वेणामूल, वाला, शैलज, श्यामालता, उत्पल, पद्मकाष्ठ, लोध्र प्रियङ्गु एवं मञ्जिष्ठाका प्रलेप अत्यन्त उपकारी है। फिर उक्त रोगमें व्रणरोगका विहित चूर्ण और पथ्य प्रयोग करना चाहिये।

यव, अश्वगन्धा, अर्जुन, धातकी, तिन्दुक, कुष्ठ वा सर्जरसके साथ पाक कर तेल लगाने और काकोल्यादिगणके साथ पाक किया हुवा घृत पिलानेसे रेवतीग्रह पीड़ित बालक प्रतीकार पाता है। कुलत्थ, शङ्खचूर्ण और सर्वगन्ध सकल द्रव्यका प्रलेप उसपर विशेष उपकारी है।

वचा, हरीतकी, गोलोमी, हरिताल, मनःशिला, कुष्ठ वा सर्जरसके साथ पाक कर तेल और तुगाक्षीर, मधुरक, कुष्ठ, तालिश, खदिर एवं चन्दन समस्त द्रव्यके साथ पाक कर घृत व्यवहार करनेसे पूतनारोग अच्छा हो जाता है।

सुरा, काञ्जी, कुष्ठ, हरिताल, मनःशिला तथा धूनक सकल द्रव्यके सहयोगमें पाक कर तेल लगाने और पिप्पलीमूल, मधुरवर्ग, मधु, शालपर्णी एवं वृहतीके साथ पाक कर घृत खिलानेसे अन्धपूतना-रोग-पीड़ित बालक अचिर ही प्रतीकारलाभ करता है।

'बालकको शीतपूतना-ग्रहाक्रान्त होने पर कपित्थ सुवहा, विम्बीफल, विल्व, प्रचीवल, नन्दी और भल्लातकका परिषेचन देना चाहिये। छागमूत्र, गोमूत्र, मुस्ता, देवदारु, कुष्ठ और सर्वगन्धा सकल द्रव्यके योगसे तैल पाक कर बालकके शरीर पर मलनेसे प्रतीकार पहुंचता है।

भृङ्गराज, अश्वगन्धा एवं हरिगन्धके रसमें पाक किया हुवा तेल और मधुरिका, दुग्ध, तुगाक्षीर, अञ्जना, मधुर तथा स्वल्प पञ्चमूल सकल द्रव्यके साथ पाक किया हुवा घृत मुखमण्डिका रोग पर विशेष उपकारी एवं फलप्रद है।

बालक नैगमेयरोगाक्रान्त होनेसे प्रियङ्गु, सरलकाष्ठ, अनन्तमूल, शुलफा, कुटन्नट, गोमूत्र, दधिमण्ड और अम्लकाञ्जी सकलके योगसे पाक किया हुवा तेल व्यवहार कराते हैं। दशमूलका क्वाथ, दुग्ध, मधुरगण और खर्जुरमस्तक सकलके योगसे पाक किया घृत खिलाना चाहिये। वचा और हिङ्गुको मिलाकर प्रलेप देनेसे विशेष उपकार होता है।

(सुश्रुत, उत्तरतन्त्र, २७-३६ अ०)

कुमारमणिभट्ट—व्रज-गोकुलके एक भाट। १७४६ ई० को इन्होंने जन्म लिया था। यह हिन्दीके सुकवि रहे। इन्होंने रसिक-रसाल नामक साहित्य ग्रन्थ लिखा है।

कुमारमित्र—ऋक्-प्रातिशाख्यभाष्य-रचयिता। उनका अपर नाम विष्णुमित्र था। वव्वटके पुत्र उवटने कुमारमित्रका भाष्य देख संक्षिप्त ऋक्-प्रातिशाख्यकी रचना किया है।

कुमारयु (सं० पु०) कुमारं याति, कुमार-या-मृगय्वादित्वात् कु। मृगय्वादयश्च। उण् १।३८। राजपुत्र, शाहजादा।

कुमाररक्षण (सं० क्ली०) कुमाराणां रक्षणं जन्मावधि लालनपोषणादिकम्, ६-तत्। सन्तानका लालन-पालन, बच्चेका बचाव। सन्तानके भूमिष्ठ होनेके समयसे ही कितने ही शास्त्रविहित कार्य करना पड़ते हैं। चरकके मतानुसार—जन्ममात्रसे ही कर्णमूल घिसना या मुखमें जलसेक करना चाहिये। उससे निश्वास-प्रश्वास आरम्भ होता है। निश्वास चलने पर शिशुका तालु, ओष्ठ, कण्ठ और जिह्वा परिष्कार कर देना

चाहिये। परिष्कारकालका अङ्गुलिमें रुई लपेट लेते हैं। अङ्गुलिमें नख रहना न चाहिये। क्योंकि उससे किसी स्थान पर क्षत हो जानेकी सम्भावना है। उससे पीछे शिशुका मस्तक और तालु रुईसे आच्छादन कर देते हैं। मधु, घृत, अनन्त, ब्राह्मीरस और सुवर्णचूर्ण अनामिका अङ्गुलि द्वारा अल्प परिमाणमें उसे चटाना चाहिये। शुष्क निरापद एवं मूषिकरहित गृहमें प्रसूतिको और परिष्कार शय्या पर बालकको सुलाते हैं, दुर्गन्ध अथवा अशुचि स्थानमें उन्हें रखना उचित नहीं। प्रसूतिको सर्वदा सावधान रहना चाहिये, जिसमें बालक निद्रित अवस्थामें स्तन्यपान न करे। बालकको तर्जन गर्जन करके भय नहीं दिखाते। बालकके हाथमें कोई ऐसा खिलौना नहीं देना चाहिये, जिसे वह अपने मुखमें डाल सके। दीपशिखासे बालकको सर्वदा सावधान रखते हैं। वयस बढ़नेके साथ साथ उसे नीति, विनय प्रभृति सिखाते हैं। ग्रहोंके अत्याचारसे बालकको बचानेमें सर्वदा यत्नवान् रहना चाहिये। (चरक, शारीरस्थान, ८म अ०)

कुमारराम—विजयनगर-निकटवर्ती होसदुर्गके राजा काम्पिलरायके पुत्र। मुसलमानोंका इतिहास फरिश्ता पढ़नेसे समझ पड़ता है कि १३३८ ई० को श्य मुहम्मदने कर्णाटक जयके समय 'कम्पूला' नामक किसी राजाको आक्रमण किया था। ज्ञात होता है कि उन्हींका प्रकृत नाम काम्पिलराय रहा। ननगन्द कवि-रचित कुमारराम-चरित्रमें कहा है—

कर्णाटकी वनभूमिमें शृङ्गेरिनायक नामक एक जमीन्दार रहते थे। उन्होंने देवगिरिराज रामरायकी सभामें जाकर उनके अधीन कर्मको स्वीकार किया। रामरायने वासस्थान निर्माणार्थ उन्हें एक सनद दी थी। उस के पीछे रामराजके दिल्लीके सुलतानसे परास्त होने पर शृङ्गेरिनायक जन्मभूमिको लौट गये। वहां मल्लराजके निःसन्तानावस्थामें इहलोक परित्याग करने पर शृङ्गेरिनायक राजा हुवे। उन्हींके औरससे काम्पिलरायने जन्म लिया था। उन्होंने अनेक सामन्त परास्त कर कर्णाटका अधिकांश अधिकार किया। काम्पिलरायके ही पुत्र कुमारराम रहे।

कुमाररामने द्वादशवर्ष वयःक्रमकाल पिता-कर्तृक प्रेरित हो ससैन्य गुतिराजको पराजय कर पकड़ लिया था। जयलब्ध द्रव्यसमूहके मध्य उन्होंने केवल १० घोड़े अपने लिये रखे। उन घोड़ोंपर उनके वैमातेय भ्रातृगणको लोभ लगा था। घोड़ा मांगने पर कुमारराम कहते रहे—'भाई! आपभी मेरी भांति घोड़ ला सकते हैं।' उक्त कथासे दुःखित हो उन्होंने अपनी माताके निकट कुमारके विपक्षमें अभियोग लगाया था। विमातावोंके कौशलसे राजाने उन्हें सङ्कटमय स्थानको भेजना चाहा। कुमारने प्रतिज्ञा की '७० राजावोंको पराजय न कर मैं राज्यको न लौटूंगा'। अनन्तर वह वरङ्गलके राजा प्रतापरुद्रकी सभामें पहुंचे थे। वहां लिङ्गन्श्रेष्ठिके साथ उनको बन्धुता हो गयी। उन्हीं बन्धुके यत्नसे वह प्रतापरुद्रके निकट परिचित हुवे। किन्तु कुमारके वीरत्वकी बात सुन प्रतापरुद्रको विद्वेष लगा था। कुमारने लिङ्गन्श्रेष्ठिको साथ ले वरङ्गल राज्य परित्याग किया। उनको पकड़नेके लिये प्रतापरुद्रने सैन्य भेजा था। बहुसंख्यक सैन्यने कुमारके बाहुबलसे रणमें पीठ दिखायी। उसके पीछे वह कोण्डपिल्लीके रेड्डी और मुद्गलके राजा प्रभृतिको जय करके पिताके निकट जा उपस्थित हुवे। उनकी वीरगाथा चारो ओर गायी जाने लगी। एकदिन कुण्डब्रह्म देवताने उन्हें स्वप्नमें दर्शन दिया था। उन्होंने उक्त देवताके आदेशसे महासमारोहमें 'शूलोत्सव' किया। दाक्षिणात्यके राजा और सामन्त उस उत्सवमें सम्मिलित हुवे। उसी समय काम्पिलरायकी कनिष्ठा रानी रत्नाङ्गी वातायन (झरोखे)-से कुमारका अनुपम रूप देख काम-पीड़ित हुयीं। एक दिन खेलते समय कुमारका गेंद रानी रत्नाङ्गीके घर जाकर गिरा था। वह किसी अनुचरको न भेज स्वयं गेंद लेने चले गये। अपने घरमें पाकर रत्नाङ्गीने उनका हाथ पकड़ प्रवृत्ति चरितार्थ करनेके लिये अभिप्रायको प्रकाश किया। कुमार उनकी कथामें असम्मत हो हाथ छोड़ा कर चल दिये। उससे रत्नाङ्गीके मनको बड़ा ही आघात लगा। उन्होंने राजासे जाकर कहाकि 'कुमार उनका सतीत्व नष्ट करने गये थे।' राजाने छोटी रानी

को बातपर विश्वास कर साथियोंके साथ उनको वध करनेका आदेश दिया। राजमन्त्रीने कुमार प्रभृतिको छिपा कई कैदियोंके मुण्ड राजाके निकट भेजे थे। उसी समय दिल्लीके सुलतानने उनका राज्य आक्रमण करनेके लिये सैन्य रवाना किया था। राजसैन्य मुसलमानोंसे परास्त हो गया। फिर राजा अपने वीरपुत्र के लिये अनेक प्रकार विलाप करने लगे। समय देख कर कुमारने रणक्षेत्रमें पहुंच मुसलमानोंको पराजय किया। राजा मन्त्रीके मुखसे प्रियपुत्र द्वारा उक्त कार्य होनेकी बात सुन बार बार उनकी प्रशंसा करने लगे। रत्नाङ्गीने लज्जा और खेदसे आत्महत्या की उसके पीछे दिल्लीश्वरने मातङ्गी नाम्नी किसी स्त्रीको युद्धमें भेजा था। स्त्रियोंसे लड़ना वीरका धर्म नहीं। उसीसे कुमारने मातङ्गीके साथ युद्ध नहीं किया। मातङ्गीके राजसैन्यको परास्त करने पर राजा भगे थे। शेषको मातङ्गीने बन्दी बना कुमारका मस्तक दो टुकड़े कर डाला।

कुमारललिता (सं० स्त्री०) १ छन्दोविशेष, कोई बहार। प्रथम एक ह्रस्व एवं एक दीर्घ और उसके पीछे तीन ह्रस्व तथा दो दीर्घ, सप्त मात्रामें उक्त छन्द होता है। उसमें चार पाद लगते हैं।

"कुमारललिता ज्सगाः" (वृत्तरत्नाकर)

२ बालककी क्रीड़ा, बच्चेका खेल।

कुमारलसिता (सं० स्त्री०) छन्दोविशेष, एक बहर। उसमें आठ-आठ मात्राके चार पाद होते हैं।

कुमारवन (सं० क्ली०) कुमारस्य कार्तिकेयस्य वनं विहारभूमिः, ६-तत्। कार्तिकेयका विहारवन।

कुमारवाही (सं० पु०) कुमारं वहति, कुमार-वह पौनःपुन्ये णिनि। बहुलमाभीक्ष्ण्ये। पा ३।२।८१। मयूर, कार्तिकेयका वाहन मोर।

कुमारसम्भव (सं० क्ली०) कुमारस्य कार्तिकेयस्य सम्भवो वर्णितो यत्र। महाकवि कालिदास-प्रणीत एक उत्कृष्ट काव्य।

कुमारसम्भव एक महाकाव्य है। उसका स्थूल वृत्तान्त इस प्रकार है—तारक नामक कोई दुर्दान्त असुर रहा। उसने ब्रह्मा प्रदत्त वरके प्रभावसे अति गर्वित हो देवतावोंको स्व स्व अधिकारसे हटा कर स्वर्गराज्य पर अधिकार किया। देवता दुर्दशाग्रस्त हो ब्रह्माके शरणापन्न हुवे। उन्होंने देवतावोंको यह कह कर आश्वास दिया कि वह असुर कार्तिकेयसे पराजित होगा और उस समय उनकी दुर्दशा मिट जायेगी। तदनुसार देवताओंने उद्योग किया था। हरगौरीका परिणय सम्पादित होने पर कार्तिकेयने जन्म लिया। अनन्तर उन्होंने देवसैन्यके साथ समरमें अवतीर्ण हो दुर्वृत्त तारकासुरका प्राण संहार किया। कुमारसम्भवमें उक्त वृत्तान्त सविस्तर वर्णित है।

कुमारसम्भव सप्तदश सर्गमें विभक्त है। उनमेंसे प्रथम सात सर्गका इस देशमें अनुशीलन है। (दाक्षिणात्यमें अष्टम सर्गयुक्त पुस्तक मिला है) अवशिष्ट दश सर्ग एकबारगी ही अप्रचलित हैं। उक्त दश सर्ग कालिदासकी अलौकिक कवित्वशक्तिके लक्षणाक्रान्त होते भी देख नहीं पड़ते। उसका कारण अष्टमसर्गमें हरगौरीके विहारकी वर्णना है। वह अत्यन्त अश्लील है। सामान्य नायक-नायिकाकी भांति उक्त विषय वर्णित हुवा है। नवममें हरगौरीके कैलासगमन और दशममें कार्तिकेयके जन्मवृत्तान्तका वर्णन है। उक्त दोनों सर्गोंमें भी हरगौरीघटित अनेक अश्लील वर्णना मिलती है। भारतवर्षीय लोग हरगौरीको जगत्पिता और जगन्माता मानते हैं। जगत्पिता और जगन्माता-संक्रान्त अश्लील वर्णना पाठ करना अत्यन्त अनुचित समझ कुमारसम्भवके शेष दश सर्गोंको अनुशीलनरहित कर दिया गया है। आलङ्कारिकोंने भी हरगौरीके विहारकी वर्णनाको अत्यन्त अनुचित निर्देश किया है। एकादश अवधि सप्तदश पर्यन्त सात सर्गमें कार्तिकेयकी बाल्यलीला, सैनापत्यग्रहण, तारकासुरके साथ संग्राम और तारकासुरका निपात समस्त वृत्तान्त वर्णित हुवा है। उक्त सात सर्गोंमें अश्लील वर्णनाका लेशमात्र भी नहीं। किन्तु मालूम पड़ता है कि अष्टम, नवम और दशम तीन सर्गके दोषसे ही अवशिष्ट सर्ग भी अप्रचलित हो गये हैं।

सुननेमें आता है कि एक कुम्भकार कालिदासका परम मित्र था। कालिदास कुमारसम्भव रचना कर उसको दिखानेके लिये ले गये। कुम्भकारने पढ़ कर उसको सम्मुखवर्ती अपक्व शराव पर रख दिया। उससे कालिदासने समझा कि उक्त पुस्तक कच्चा रहा था। उन्होंने तत्क्षणात् ग्रन्थको हाथमें उठा फाड़ कर खण्ड खण्ड कर डाला। कुम्भकार उक्त व्यापार देख सातिशय सङ्कुचित हुवा और बड़ी चेष्टासे सात सर्ग मात्र सङ्कलन कर सका। अवशिष्ट दश सर्ग विलुप्त हो गये।

कुमारसम्भवका शेषभाग इस देशमें नहीं मिलता। बङ्गालमें कुमारसम्भवका अन्यविध शेषभाग देख पड़ता है। उसके पढ़नेसे प्रतीति होती की वह कालिदासका रचित नहीं। किसी आधुनिक कविने उसे बनाया है।

कुमारसम्भवका वर्णित वृत्तान्त शिवपुराणमें भी पाया जाता है। उक्त दोनों ग्रन्थोंके इतिवृत्तकी भांति अनेक श्लोकोंका भी ऐक्य है। शिवमहापुराण, ज्ञानसंहिता, १०-१९ अध्याय और शिवउपपुराण, उत्तरखण्ड द्रष्टव्य है। योगवाशिष्ठका भी कोई कोई श्लोक कुमारसम्भवके श्लोकसे मिल जाता है—

"......आकाशभवा सरस्वती। शफरीं ह्रदशोषविह्वलां प्रथमाऽऽवृष्टिरिवान्वकम्पयत्॥" (कुमारसम्भव ४। ३९, योगवाशिष्ठ ५। ३१)

कुमारसम्भवके प्रथम सप्त अध्यायकी अनेक टीका हैं। उनमें निम्नलिखित कई प्रधान हैं—

१ श्रीकण्ठपति रचित अन्वयलापिका। (इस टीकामें पूर्ववर्ती जगद्धर और दिवाकरकी दो टीका उद्धृत हुयी है।

२ गोपालनन्दनकृत सारावली।

३ गोविन्दरामकृत धीररञ्जनिका।

४ चरित्रवर्धनरचित शिशुहितैषिणी।

५ जिनभद्रसूरिकृत बालबोधिनी।

६ भरतमल्लिक रचित सुबोधा।

७ भीष्मिश्र--मैथिल--रचित सरला।

८ मल्लिनाथ-विरचित सञ्जीवनी।

९ मुनि मणिरत्नकृत अवचुरि।

१० रघुपतिकृत व्याख्यासुधा।

११ विन्ध्येश्वरी--प्रसादकृत कथम्भूतिका।

१२ व्यासवल्लभकृत शिशुहितैषिणी।

१३ हरिचरणदासकृत देवसेना।

एतद्भिन्न नरहरि, नारायण, प्रभाकर, बृहस्पति, वल्लभदेव प्रभृति विरचित भी कुमारसम्भवकी टीका मिलता है।

कुमारसम्भवके अनुकरणमें जैनाचार्य जयशेखर-सूरिने 'कुमारसम्भव' नामक एक काव्य बनाया है। उसमें प्रथम जैन-तीर्थङ्कर ऋषभदेवकी लीला वर्णित है। उक्त काव्यकी वर्णना ठीक कालिदासके कुमारसम्भवसे मिलती है। चोक्कण कविने तञ्जोरराज शरभोजीकी परितुष्टिके लिये 'कुमारसम्भवचम्पू' नामक एक चम्पूकाव्य रचना किया है।

कुमारसू (सं० पु०) कुमार सूते, कुमार-सू-क्किप्। १ कार्तिकेयके पिता अग्नि। (स्त्री०) २ कार्तिकेयकी माता, दुर्गा। ३ गङ्गा।

कुमारसेन (सं० पु०) उत्तर-भारतकी शतद्रु नदीके पूर्व उपकूलमें अवस्थित एक राज्य। उसके उत्तर--पश्चिम शतद्रु, पूर्व बसाहिर और दक्षिण-पश्चिम भिरजी है। उसका प्रधान नगर कुमारसेन अक्षा० ३१° १९´ उ० और देशा० ७७° २६´ पू० पर समुद्रतटसे ५७८४ फीट ऊंचे अवस्थित है। वहां नदीके किनारे लोगोंकी बसती अधिक है। उनमें बहुतसे नदीसे स्वर्णकणाकी आहरण करते हैं। वहां ३००० फीट ऊंचेसे नदी नीचे पतित होती है। कुमारसेन राजपूतोंके अधीन है। १८१६ ई०को ७ वीं फरवरीको स्थानीय राजा कीर-सिंह ठाकुरने अंगरेज गवर्नमेण्टसे सनद पायी थी।

कुमारस्मृति—एक प्राचीन धर्मशास्त्र। नृसिंह, नीलकण्ठ प्रभृति स्मार्तगणने कुमारस्मृतिका वचन उद्धृत किया है।

कुमारस्वामी (सं० पु०) १ कुमारिलभट्ट। २ मल्लिनाथ-के पुत्र। उन्होंने 'प्रतापरुद्रभूषण' नामक ग्रन्थकी रत्नापण टीका रचना की थी। ३ भास्करमिश्रके पिता।

कुमारहट्ट—बङ्गालका एक गण्डग्राम (कसबा) उसका अपर नाम हालिसहर या हवेली शहर है। वह

कलकत्तेसे १२ कोस उत्तर अवस्थित है। दिल्लीश्वर अकबरके समय हालीसहर परगनेके विद्यमान रहनेका प्रमाण मिलता है। अकबरके पहले भी उक्त स्थान कुमारहट्ट नामसे प्रसिद्ध था। महाप्रभु चैतन्यदेवके दीक्षागुरु महात्मा ईश्वरपुरीने वहीं जन्मग्रहण किया। फिर महाप्रभुके प्रिय पारिषद श्रीनिवास भी वहीं प्रादुर्भूत हुवे।

वङ्गविख्यात बलराम तर्कसिद्धान्त, कामदेव न्यायवाचस्पति प्रभृति पण्डितोंने कुमारहट्टमें ही जन्म लिया था। किसी समय वहां संस्कृत भाषाका बड़ा अनुशीलन हुवा। प्रवाद है—एक दिन नवद्वीपाधिपति राजा कृष्णचन्द्र कलकत्ता जाते कुमारहट्टके नीचे नौका लगा प्रातःस्नान करते थे। उन्होंने देखा कोई व्यक्ति नारिकेलकी मालासे विशुद्ध भावमें मन्त्रोच्चारण कर तर्पण करता था। राजाने विशेष कौतुकाविष्ट हो उससे पूछा—'इस स्थानका क्या नाम है? उसने कहा—'कुमारहट्ट'। कुछदिन पीछे यह कृष्णचन्द्रके हाथ लगा था। उन्होंने रजकके वासस्थानका नाम खासवाटी रखदिया। रजकके वंशधर आज भी कुमारहट्टमें राजा कृष्णचन्द्र प्रदत्त प्रसाद भोग करते हैं। कुमारहट्टसे अनतिदूरवर्ती जगद्दल ग्राममें एक अरण्यमय स्थान राजमहल कहलाता है। उसमें राजापुकर नामक एक पुष्करिणी भी दृष्ट होती है। कहते है वह राजा प्रतापादित्यके गङ्गावासकी अन्तःपुरस्थित पुष्करिणी रही। साधकोत्तम कविरञ्जन रामप्रसाद सेनका भी जन्म कुमारहट्टमें ही हुवा था। रामप्रसाद सेनके घरके पास आजूगोसाईं नामक एक हास्यरसोद्दीपक कवि रहते थे।

कुमारहट्टके मध्य अति प्राचीन दो शक्तिमूर्ति हैं। उनमें सिद्धेश्वरी सावर्णचौधरी वंश और श्यामासुन्दरी तान्त्रिक कुलाचारी एक अकिञ्चन ब्रह्मचारीकी प्रतिष्ठित हैं। वहां सुप्रसिद्ध चांचड़ा राजवंशके रहनेका भी चिह्न मिलता है। उसके निकटवर्ती कोला नामक ग्राममें नवाबकी हस्तीशालाके अध्यक्षके दुर्गमय प्रासादका भग्नावशेष देख पड़ता है। पहले कुमारहट्टके पार्श्वसे भागीरथी प्रवाहित होती थीं। किन्तु वर्तमान ग्रामकी दुर्दशा देख मानो वह हट गयी हैं।

कुमारहारित (सं० पु०) १ कोई व्याकरणकार। २ यजुर्वेद सम्प्रदायप्रवर्तक ऋषिविशेष।

(शतपथब्राह्मण १४।५।५।२२)

कुमारा (सं० स्त्री०) त्रिसन्धिपुष्प वृक्ष, एक फूलदार पेड़।

कुमाराभिषेक (सं० पु०) कुमाराणामभिषेकोऽभिषेचनम् ६-तत्। राजपुत्रोंका अभिषेक कार्य, शाहजादोंकी तख्तनशीनी।

कुमारिका (सं० स्त्री०) कुमारी-ठन्-टाप्। व्रीह्यादिभ्यश्च। पा ५।२।११६। १ अविवाहिता बालिका, अनव्याही लड़की। २ अनागतार्तव कन्या, जिस लड़कीको हैज आता न हो। ३ कुमारी, लड़की। ४ नवमल्लिका, चमेली। ५ स्थूलैला, बड़ी इलायची। ६ घृतकुमारी, घीकुवार। ७ चक्षुका अभ्यन्तर गोलक, आंखका भीतरी ढेला। ८ कीटविशेष, कोई कीड़ा। ९ तीर्थविशेष। (महाभारत ३।८२।७७) ११ सेवती। १२ आयुर्वेदोक्त वर्तिविशेष। वह नेत्ररोगका औषध है। उसका ८० तिलपुष्प, ६० पिप्पली तथा तण्डुल, ५० जातीपुष्प और १६ मरिच एकत्र मर्दन कर बत्ती-जैसा बना लेते हैं। (भैषज्यरत्नावली) १३ भारतखण्ड।

"वर्षव्यवस्थितिरिहैव कुमारिकाख्ये
शेषेषु चान्त्यजजना निवसन्ति सर्वे।" (सिद्धान्त शिरोमणि, गोलाध्याय)

१४ शतशृङ्ग राजाकी कन्या। उन्हींके नाम पर भारतवर्षका कितना ही अंश कुमारिकाखण्ड कहलाता है।

स्कन्दपुराणके कुमारिकाखण्डमें 'कुमारिका' नामके सम्बन्ध पर विस्तृत विवरण दिया है—

'नारदने कहा—ऋषभकर्तृक नानाविध पाषण्ड कल्पनाकी सृष्टि की गयी थी। हे पार्थ! वही समस्त कल्पना कलिकालमें सबको मोहित करेगी। उनके पुत्रका नाम भरत था। भरतके पुत्र शतशृङ्ग रहे। शतशृङ्गके आठ पुत्र और एक कन्या हुयी। उक्त आठ पुत्रोंका नाम इन्द्रद्वीप, कसेरु, ताम्रद्वीप, गभस्तिमान्, याम्य, सौम्य, गान्धर्व तथा वारुण और कन्याका नाम कुमारिका था। कुमारिकाके मुखकी आकृति मेष-

शावकके मुख-जैसो रही। हे पार्थ! तुम इसका कारण सुनो, वह अतिशय आश्चर्यजनक है।

'नानाविध वृक्षराजि-परिशोभित और जालको भांति लता तथा गुल्म द्वारा वेष्टित महीसागरसङ्गममें स्तम्भ नामक एक तीर्थ है। एकदा कोई मेषी यूथभ्रष्ट हो इसी दुर्गम देशमें जा पहुंची। वह श्रान्त हो इतस्ततः भ्रमण करते करते जालके मध्य गिर पड़ी, फिर उसे निकलनेको शक्ति न रही। क्रमशः क्षुधातृष्णासे अत्यन्त व्याकुल हो उसने जालके मध्य ही प्राण त्याग किया। दैव क्रमसे कुछ दिन पीछे मस्तक भिन्न उसका समस्त शरीर उक्त महीसागरसङ्गममें पतित हुवा, मस्तक जालगुल्म-आबद्ध रहनेसे वहां पहुंच न सका। महीसागरसङ्गम तीर्थके माहात्म्यसे उस मेषीने सिंहलेश्वर शतशृङ्गके कन्यारूपमें जन्म ग्रहण किया था। उसका मुख मेषीके मुखकी भांति रहा। अन्य सकल अवयव अनुपम स्वर्गीय कामिनीको भांति सुन्दर थे। अपुत्रक राजाके कन्या होनेसे सब लोग आनन्दित हुवे। किन्तु पुरवासी कुमारीका मुख मेषीके मुख जैसा देख विस्मयमें पड़ गये। राजा कुमारीका मुख अवलोकन कर अत्यन्त दुःखित हुवे। सकल अन्तःपुरवासी कहने लगे—क्या ही आश्चर्य है! ऐसा कभी देखा नहीं गया। राजकुमारीने क्रम क्रम बाल्य काल अतिक्रम कर यौवनमें पदार्पण किया था। देवकन्याकी भांति उनका अलौकिक सौन्दर्य दिन दिन बढ़ने लगा। एक दिन दर्पणमें अपना मुख अवलोकन करते समय पूर्व वृत्तान्त स्मरण राजकुमारीको आ गया। उन्होंने माता पिताको सम्बोधन कर कहा था,—मातः! आप भी हमारे लिये शोक न कीजिये, यह हमारा पूर्वजन्मार्जित कर्मफल है। फिर राजकुमारीने अपना पूर्व वृत्तान्त सुना दिया। उन्होंने पूर्वजन्मका शरीर देख उसी तीर्थ देशको जानेके लिये पिता मातासे कहा था—"तात! हम महीसागर-सङ्गमको जायेंगी और वहीं वास करेंगी, आप उसका विधान कर दीजिये।" राजा कुमारीके प्रस्तावमें सम्मत हो गये। राजकुमारी बहुविध रत्नयुक्त अर्णवपोत पर आरोहण कर स्तम्भतीर्थमें उपस्थित हुयीं। उस तीर्थमें उन्होंने बहुविध दान कर दक्षिणा दी थी। जाल गुल्मके मध्य अन्वेषण करनेसे अस्थिचर्मावशिष्ट अपना मस्तक उन्हें देख पड़ा। अनन्तर उक्त मस्तक महीसागर सङ्गमके निकट दग्ध कर सकल अस्थि सागरमें उन्होंने निक्षेप किये। उक्त तीर्थके प्रभावसे उनका मुख चन्द्रमा की भांति मनोहर बन गया। मर्त्यलोकको किसी रमणीके मुखसे उनके मुखकी उपमा लगती न थी। सुरासुर मनुष्य सभी रूपसे मोहित हो उनकी प्रार्थना करने लगे। किन्तु वह किसीको चाहती न थी। फिर राजकन्याने दुष्कर तपस्या करना आरम्भ किया। एक वत्सर पूर्ण होने पर देवदेव महादेव उन्हें वर देनेके लिये उपस्थित हुवे और कहने लगे—हम तुम्हें वर देनेको आये हैं। राजकुमारी यथा विधि उनकी पूजा कर बोल उठीं—देवेश! यदि आप सन्तुष्ट हुये हैं और हमें वर देना अपना कर्तव्य समझते हैं, तो आप इस स्थान पर सकल समय अपने रहनेका विधान कीजिये। महादेव उसी बात पर सम्मत हो गये। राजकुमारी भी सन्तुष्ट हुयीं। हे कुरुश्रेष्ठ! उन्हीं राजकुमारीने वर्करेश नामक शिवको स्थापन किया था। हमारे मुखसे उक्त वृत्तान्त सुन स्वस्तिक नामक नागेन्द्र उन्हें देखने गये।

मस्तक द्वारा गमन करते करते जो स्थान स्वस्तिक-कर्तृक उच्छिन्न हुवा था, वर्करेश्वर शिवके ईशान कोण उसी स्थानमें स्वस्तिक नामक एक कूप बन गया। उक्त कूप गङ्गाजलसे परिपूर्ण है। जो उस कूपको अवलोकन करता, उसको सर्वतीर्थदर्शनका फल मिलता है।

महादेवने शिवलिङ्ग स्थापित हुवा देख सन्तुष्ट हो वर दिया था—जिसका मृत शरीर यहां जलाया और अस्थि सञ्चय कर सागर जलमें बहाया जावेगा, वह अक्षय गति और बहुकाल स्वर्गमें वास कर सम्पूर्ण प्रतापशाली राजा हो मर्त्यलोकमें जन्म पावेगा। जो भक्तिपूर्वक वर्करेश्वरकी पूजा कर महीसागरसङ्गममें स्नान करेगा, उसका सकल मनोरथ पूर्ण पड़ेगा। कार्तिक मासकी कृष्ण चतुर्दशी तिथिको जो उक्त कूपमें स्नान कर भक्तिपूर्वक पितृलोकको तर्पण और वर्क-

रेश्वरको अर्चन करेगा, वह सकल पापसे मुक्त रहेगा। राजकुमारीने इसप्रकार वर लाभ कर सिंहलको गमन और सकल वृत्तान्त पिताको निवेदन किया। उनका वृत्तान्त सुन राजा और पुरवासी सभी विस्मयाविष्ट हो तीर्थको प्रशंसा करने लगे। अनन्तर सब लोग उस महातीर्थमें जा उपस्थित हुये और स्नानादि तथा वर्करेश्वर शिवको अर्चन कर पुनर्वार सिंहल लौट पड़े। सिंहलेश्वरने भारतवर्षको नव भागोंमें विभक्त कर अपने सन्तानोंको एक एक भाग दिया था। उन्हींमें एक भाग कुमारीखण्ड भी है। सकल देशोंके मध्य कुमारीखण्ड ही श्रेष्ठ है। उसमें चतुर्वर्ग सिद्ध होता है। कुमारीखण्डके मध्य गुप्तक्षेत्र ही प्रशस्त है। उक्त गुप्तक्षेत्रमें अवस्थान कर कुमारिका कुमारेश शिवको अर्चन और स्वस्तिक ृदमें प्रति दिन स्नान करती थीं। कालक्रमसे स्कन्द-निर्मित शिवमन्दिर जीर्ण हो गया था। कुमारिकाने पुनर्वार एक स्वर्णमय शिवमन्दिर बनवा दिया। महादेवने उनको भक्ति पर सन्तुष्ट हो कुमारलिङ्गसे निकल कर कहा था—भद्रे ! हम तुम्हारी भक्ति और दिव्यज्ञानसे सन्तुष्ट हुये हैं। तुमने यह जीर्ण मन्दिर पुनरुद्धार किया है, अतएव हम तुम्हारे नामसे विख्यात होंगे। मन्दिर निर्माण और उद्धार करनेवाला दोनों समान फलभागी हैं। अतएव आजसे कुमारेश और कुमारीश हमारे दो नाम हुये। हे वरवर्णिनि ! तुम्हारा शेष समय प्रायः आ पहुंचा है। किन्तु अभर्तृका नारीको मरनेसे स्वर्ग और मोक्ष दोमें एक भी नहीं मिलता। हमारे आदेशसे तुम महाकालको पतित्वमें वरण करो। कुमारिकाने रुद्रके वाक्यसे महाकालको पतित्वमें वरण किया था। फिर वह महाकालके साथ रुद्रलोकको चली गयीं। पार्वतीने उन्हें आलिङ्गन कर कहा था—भद्रे ! तुमने पटमें अतिसुन्दर प्रतिमूर्तिको चित्रित किया है। तुम्हीं पृथिवीको श्रेष्ठ ललना हो। आजसे तुम हमारी सखी बनो। तुम्हारा नाम चित्रलेखा होगा। वह महाकालको वल्लभा और सकल योगिनीके मध्य श्रेष्ठा हैं। हे पार्थ ! कुमारीने इसी प्रकार शिवलिङ्गको स्थापन किया था। उसी शिवलिङ्गको वर्करेश्वर कहते हैं।'

कुमारिकाखण्ड वर्णित महीसागरसङ्गमके निकट काम्बे नगर अवस्थित है। उसीका प्राचीन नाम स्तम्भतीर्थ है। काम्बे देखो। उसको गुप्तक्षेत्र वा कुमारीतीर्थ भी कहते हैं। प्राचीन पाश्चात्य भौगोलिक पेरिप्लासने उक्त स्थानको ही पुण्यतीर्थ 'कोमार' बताया है। भारतखण्डकी दक्षिण सीमा कुमारिका है। यथा—

"अयन्तु नवमस्तेषां द्वीपः सागरसंवृतः।
योजनानां सहस्रन्तु द्वीपोऽयं दक्षिणोत्तरम्॥
आयतो ह्याकुमारिक्यादागङ्गाप्रभवाच्च वै।"

(ब्रह्माण्डपुराण ४७ अ०)

ब्रह्माण्डपुराण-वर्णित उक्त कुमारिका भारतके दक्षिण प्रान्तमें अवस्थित कुमारिका अन्तरीप समझ पड़ती है। पाश्चात्य प्राचीन भौगोलिक टलेमि और पेरिप्लासने लिखा है कि वारिगजसे कुमारी अन्तरीप पर्यन्त 'कोमारिया' स्थान है। वारिगजका वर्तमान नाम भडोंच है। वह काम्बे नगरसे दक्षिण काम्बे सागरके तटपर अवस्थित है। इससे अनुमान करते हैं कि स्कन्दपुराण-वर्णित महीसागरसंगमसे ब्रह्माण्डपुराण वर्णित कुमारी अन्तरीप पर्यन्त विस्तृत भूभाग ही कुमारिका खण्ड है।

कुमारिकाक्षेत्र (सं० क्लो०) तीर्थविशेष।

कुमारिकाखण्ड (सं० क्लो०) १ स्कन्दपुराणका अंशविशेष।

दानप्रशंसा, दानमाहात्म्य, स्वर्गादिकी अवस्थिति, पृथिवीकी उत्पत्ति, गृध्र तथा उलूकका उपाख्यान, इन्द्रद्युम्न राजाका विवरण, महीसागरका विवरण एवं माहात्म्य, तारकासुरकी उत्पत्ति, तपस्या और ब्रह्मासे वरलाभ, तारकासुरकर्तृक देवतागणका पराजय, तारकासुरकर्तृक स्वर्गाधिकार, शिवका विवाह, कार्तिकेयकी उत्पत्ति, कार्तिकेय-कर्तृक तारकासुरका संहार तथा कुमारेश्वर शिवका स्थापन, कुमारेश्वर शिवका माहात्म्य, पञ्चलिङ्गोपाख्यान, भुवनस्थिति, ज्योतिर्निर्णय, भुवनकोष, वर्करेश्वर-माहात्म्य, महाकाल-प्रादुर्भाव एवं माहात्म्य, युगव्यवस्था, वासुदेवमाहात्म्य, आदित्यमाहात्म्य, दिव्यवर्णन, नन्दभद्रादित्य-माहात्म्य, देव्युपाख्यान, हाटकेश्वर-माहात्म्य, प्रेतकल्प, जयादित्य

माहात्म्य, महाविद्यासाधन, वर्क्करिकोपाख्यान, कार्य-सिद्धि, कोशलेश्वरी वत्सेश्वरीका उपाख्यान, गुप्तक्षेत्रका माहात्म्य आदि कुमारिका खण्डमें वर्णित है। (पु०) २ देशविशेष। कुमारिका देखो।

कुमारिकावर्त्ति (सं० पु०) नेत्ररोगमें रोपिणी वर्त्ति, आंखकी बीमारीकी एक सलाई। कुमारिका देखो।

कुमारिल भट्ट—ख्यातनामा मीमांसावार्त्तिकप्रणेता। वह तूतात, तौतातित, भट्ट, भट्टपाद और कुमारिल स्वामी प्रभृति नामसे भी प्रसिद्ध हैं। उन्होंने आश्वला-यनगृह्यपद्धतिकारिका, मीमांसातन्त्रवार्त्तिक, मानव श्रौतसूत्रभाष्य, श्लोकवार्त्तिक, लघुवार्त्तिक वा टुप्टीका, बृहट्टीका प्रभृति ग्रन्थ रचना किये हैं।

कुमारिलने जैमिनिसूत्रके शवरभाष्यमें प्रथम अध्यायके प्रथम पादका जो वार्त्तिक बनाया, वही श्लोकवार्त्तिक कहाया है। उक्त श्लोकवार्त्तिककी अनेक टीका हैं। यथा—पार्थसारथिमिश्ररचित 'न्यायरत्ना-कर', विश्वेश्वर-कृत 'शिवार्कोदय', सुचरितमिश्र-रचित 'काशिका, इत्यादि।

शवरभाष्यके १म अध्यायके २य पादसे ४र्थ अध्याय पर्यन्त जो वार्त्तिक लिखा गया, उसीका नाम तन्त्रवार्त्तिक वा मीमांसातन्त्रवार्त्तिक पड़ा है। पार्थ-सारथि मिश्र, कमलाकर, कवीन्द्राचार्य, गोपालभट्ट, भवदेव, सोमेश्वर प्रभृति पण्डितोंने तन्त्रवार्त्तिककी टीका रचना की है।

जैमिनिसूत्रके पञ्चमसे १२ श अध्याय पर्यन्त कुमारिलकी प्रणयन की हुयी संक्षिप्त टीकाको टुप्टीका टुव्टूषी वा लघुवार्त्तिक कहते हैं। वेङ्कटेश्वर दीक्षितने 'वार्त्तिकाभरण' नाम्नी लघुवार्त्तिककी एक टीका लिखी है।

अब लोग पूछ सकते हैं—कुमारिल भट्ट किस समय और कहां विद्यमान थे, उनकी जीवनीके सम्ब-न्धमें कुछ मालूम हुवा है या नहीं।

आनन्दगिरिका शङ्करविजय और माधवाचार्यकृत संक्षेप शङ्करजय पढ़नेसे समझते कि कुमारिल शङ्क-राचार्यके समसामयिक रहे। शङ्करविजयमें* लिखा है—कि शङ्कराचार्य मल्लिकार्जुनकी देवीके दर्शनार्थ गये थे। वहां एक मास रह वह रुद्रपुरभट्टसे साक्षात् करने पहुंचे। इतिपूर्व ही भट्टने जैनगुरुसे उपदेश लाभ कर उनका मत अवलम्बन किया। अन्तको शङ्क-राचार्यने जैन गुरुको दवा वेदमार्ग चला दिया। उन्होंने जाकर देखा कि भट्ट अपने गुरुवध-प्रायश्चित्तके लिये होमाग्निमें जलते थे। कुमारिल भट्ट सर्वशास्त्र-विद् मण्डनमिश्रके भगिनीपति (बहनोई) थे।

संक्षेप-शङ्कर विजयमें* माधवाचार्यने लिखा है—

"पुण्यतीर्थ प्रयागमें शङ्कराचार्यको भट्टपादका दर्शन मिला। उस समय मीमांसक-प्रधान अपने किये पापका प्रायश्चित्त करनेको तुषानलके मध्य अवस्थान करते और उनके प्रभाकरादि प्रिय शिष्य अश्रुपूर्णनयन पार्श्वमें खड़े थे। शङ्कराचार्य उनके निकट उपस्थित हुये। उन्होंने इस प्रकार अपना परिचय प्रदान किया है—

"बौद्धोंके जगत्को आक्रमण करनेसे वैदिक मार्ग एक काल विरलप्रचार हो गया। वेदमार्गरक्षा और बौद्धपराजय करनेको हम पहले आगे बढ़े। उस समय सशिष्य बौद्ध राजावोंके गृहमें प्रवेश कर कहने लगे—राजन्! हमारा शास्त्ररूप विषय आश्रय कीजिये,—वेदपथको कभी न पकड़ियेगा।' हमने बौद्धोंसे विवाद किया था सही, किन्तु उनका सिद्धान्त समझा न रहने से हम उन्हें हरा न सके। शेषको उनका आश्रय ग्रहण कर बौद्ध सिद्धान्त समझनेको हम बाध्य हुवे। एक दिन किसी तीक्ष्णबुद्धि बौद्धने वैदिक मार्ग पर दोषारोपण किया था उसको बात सुन हमारी आंखोंसे आंसू टपक पड़े। पार्श्वस्थ सभी लोग हमें ताड़ गये। शेषको कृतनिश्चय अहिंसावादी बौद्धोंने हमें उच्चतर प्रासा-दसे नीचे गिरा दिया। हमने कहा—'यदि वेद सकल सत्य हैं, तो निश्चय इस पतनसे हम न मरेंगे।' उस पतनसे केवल हमारी एक आंख फूट गयी है।"

शङ्कराचार्य भट्टपादसे बातचीत करने लगे—"हम आपको अपना शारीरिक भाष्य दिखाने आये

* शङ्कर विजय, ५५ प्रकरण।

* संक्षेप शङ्कर जय ७ अध्याय, श्लोक ७३-१२६।

हैं। आप इसका एक वार्तिक प्रणयन कर दीजिये।" भट्टपादने उत्तर दिया—"शङ्कर! बहुकाल हुवा हम पञ्चत्व पा चुके हैं। आप विश्वरूप मण्डनमिश्रके निकट गमन कीजिये। वह आपके भाष्यका वार्तिक बना देंगे।"

उसके पीछे शङ्कराचार्यने भट्टपादको तारक ब्रह्म नाम सुनाया था। उन्होंने भी संसारके सकल बन्धनसे मुक्त हो वैष्णव धाम लाभ किया।

आनन्दगिरि और माधवाचार्यकी वर्णनासे कुमारिल-भट्टके सम्बन्धमें इतना ही पता लगता है। किन्तु इस विषयमें कितना ही सन्देह है—उभयने जो लिखा वह ठीक है या नहीं। प्रथमतः उक्त दोनों ग्रन्थ शङ्कराचार्य-का कई शताब्दी पीछे लिखे गये हैं। द्वितीयतः दोनों ग्रन्थोंमें ऐसी अनेक घटनावों और व्यक्तियोंका उल्लेख मिलता, जो किसी प्रकार शङ्कराचार्यका समसामयिक माना जा नहीं सकता। शङ्कराचार्य शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

मध्य-भारतके अन्तर्गत इन्दौरमें मालतीमाधवकी एक हस्तलिपि मिली हैं। उसके तृतीय अङ्कके शेषमें 'इति कुमारिलशिष्यकृते' और षष्ठ अङ्कके शेषमें 'इति कुमारिल स्वामीप्रसादप्राप्तवाग्वैभवश्रीमदुम्बेकाचार्यविरचिते मालतीमाधवे षष्ठोऽङ्कः' लिखा है। फिर दशमके शेषमें 'इति भवभूतिविरचिते मालती-माधवे दशमोऽङ्कः' पाया जाता है। इससे किसी किसी पण्डितने भवभूतिको कुमारिलका शिष्य मान लिया है।* किन्तु भवभूतिका अपर नाम उम्बेकाचार्य किसी ग्रन्थ द्वारा प्रमाणित नहीं होता। कुमारिलके भगिनीपति मण्डनमिश्रका एक नाम उम्बे-काचार्य भी था। मण्डनमिश्र देखो। सुतरां एक अप्राचीन पुस्तक पर निर्भर कर भवभूतिको कुमारिका शिष्य कैसे मान सकते हैं।

शङ्कराचार्यने शारीरकभाष्य (१।१।३ सूत्रके शेष) में कुमारिलका मत उद्धृत किया है।†

पाश्चात्य पण्डितोंके मतसे ‡ "तिब्बतीय तारनाथने अपने 'भारतीय बौद्धधर्मके इतिहास' में कहा है कि कुमारलील (कुमारिल) प्रसिद्ध बौद्ध नैयायिक धर्म-कीर्तिके समसामयिक रहे। धर्मकीर्ति भोटमें 'स्रोन्-सन्-गम्-पो' राजाके राजत्वकाल विद्यमान थे। उक्त राजाने ६२९-६९८ ई० को राज्य शासन किया। सुतरां कुमारिल भी उसी समयके लोग रहे। उसके पूर्ववर्ती वह हो नहीं सकते।"

तिब्बतीय देशीय तारनाथ ई० १६ वें शताब्दके लोग थे। उन्होंने अपने ग्रन्थमें जो ऐतिहासिक कथा लिखी, वह भ्रमसे भरी है। विशेषतः उनसे बहु शताब्द पूर्व कुमारिल आविर्भूत हुये थे। तारनाथ देखो। फिर इस पक्षमें भी घोरतर सन्देह है—उनके वर्णित 'कुमारलील' और 'कुमारिल' एकही व्यक्ति थे या नहीं। ऐसे स्थलमें तारनाथ और उक्त मतानुवर्ती पाश्चात्य विद्वानोंका मत भ्रमशून्य कैसे माना जा सकता है।

शङ्कराचार्य जब कुमारिलभट्टका मत उद्धृत करते, तब शङ्कराचार्यसे पहले उनके विद्यमान रहनेमें हम कोई सन्देह नहीं समझते।

शङ्कराचार्य-विरचित माण्डुक्य-कारिका-भाष्य पढ़-नेसे समझते कि गौड़पाद उनके परमगुरु अर्थात् गुरुके गुरु रहे। उन्हीं गौड़पादने 'सांख्यकारिका-भाष्य' प्रणयन किया था। छन वंशवाले चीनसम्राटके राजत्वकाल (५५७-५८९ ई०)के बीच परमार्थ (चनृति) नामा किसी पण्डितने चीन भाषामें (गौड़पादके) सांख्यकारिका-भाष्यका अनुवाद उतारा। ऐसे स्थलमें अनुमान किया जा सकता है कि अनुवादित होनेसे अन्ततः शतवर्ष पूर्व मूलग्रन्थ बना था, सम्भवतः गौड़-पाद कोई ४५७ ई० को विद्यमान रहे। गौड़पाद देखो।

उसी समय अथवा उसके कुछ पीछे कुमारिल आविर्भूत हुवे। कुमारिलका मीमांसावार्तिक पढ़नेसे अनुमित हो जाता कि उन्होंने दक्षिणापथमें वास किया था।* केरलोत्पत्ति नामक ग्रन्थमें कहा है—

---

* S. Pandurang's Gaudavaho, Intro. p. 206

† उक्त सूतके टीकाकार आनन्दने भी यही स्वीकार कर लिखा है—"भाट्टमतमुपसंहरति।"

‡ Dr. Burnell's Samavidhana-Brahmana, Vol. I. p. VIN; Max Muller's India, what can it teach us? p. 308N; Weber's Sanskrit Literature, p. 68N.

* (१) तद्यथा द्राविड़ादिभाषायामेव। ...... तद्यदा द्राविड़ादि भाषा-यामीदृशी स्वच्छन्दकल्पना।" (मीमांसावार्तिक १।३।९) (२) "दक्षिण

"कुमारिलभट्ट नामक एक उत्तर देशवासी ब्राह्मणने मलयवर जाकर वहांके बौद्धोंको पराजय किया।" महिसुरके प्रवादानुसार कुमारिल ई० ५ वें शताब्दके लोग थे। शङ्कराचार्य पूर्ववर्ती कुमारिलके गौड़पाद-का समकालीन होनेसे महिसुरका प्रवाद प्रकृत माना जा सकता है।

भारतप्रसिद्ध बौद्ध-जैनमतोच्छेदकारी मीमांसावा-र्तिककार भट्ट कुमारिलने समन्तभद्ररचित आप्त-मीमांसामें प्रतिष्ठापित स्याद्वाद मतका खण्डन किया है। उसके उत्तरमें परवर्ती दिगम्बराचार्योंने जैनश्लोक-वार्तिक और अपरापर विस्तर ग्रन्थ लिखके कुमारिल पर यथेष्ट आक्रमण लगाया। इनसकल प्रतिवादका-रियोंके मध्य आप्तमीमांसाकी अष्टसहस्री नाम्नी टीका बनानेवाले विद्यानन्दका नाम प्रथम मिलता है। प्रसिद्ध जैन पट्टधर माणिक्यनन्दीने अपने 'परीक्षामुख' नामक ग्रन्थमें आप्तमीमांसाके टीकाकार अकलङ्क और विद्यानन्दका नाम उद्धृत किया है। फिर प्रसिद्ध जैन कवि और दिगम्बराचार्य प्रभाचन्द्रने भी 'प्रमेयकमल-मार्तण्ड' नामक परीक्षामुखटीकामें अकलङ्क, विद्या-नन्द और माणिक्यनन्दीका प्रसङ्ग डाल दिया है।

दिगम्बरोंके सरस्वतीगच्छकी पट्टावली देखते माणिक्यनन्दी ५८५ विक्रम-संवत् अर्थात् ५२८ ई०का पट्टधर हुये। पट्टधर बननेसे पहले अर्थात् ६४ शता-ब्दके प्रथम भाग माणिक्यनन्दीने 'परीक्षामुख' बनाया था। हम पूर्व ही बता चुके हैं कि माणिक्यनन्दीने विद्यानन्द पात्रकेशरीका नाम और उनकी आप्तमीमांसा टीका उद्धृत की है। ऐसे स्थल पर विद्यानन्द माणिक्यनन्दिके पूर्ववर्ती और ५म शताब्दीमें किसी समयके लोग ठहरते हैं।

प्रभाचन्द्र और जैन श्लोकवार्तिककार विद्यानन्द दोनोंने कुमारिलभट्टका मत खण्डन किया है।

कुमारिलने वेद-मन्त्र, ब्राह्मण, स्मृति, महाभारत और पुराण व्यतीत निम्नलिखित ग्रन्थों और ग्रन्थ-कारोंका नाम भी उद्धृत किया है—पूर्वाचार्य, वृद्धा-चार्य, भाष्यकार (सम्भवतः शबरस्वामी), ब्राह्मणभाष्य-कार, चरितभाष्यकृत्, सूत्रकार,* यजुर्भाष्यकार, वेदभाष्यकार इत्यादि।

भारतवर्ष बौद्ध धर्मसे प्लावित होने पर वेदोक्त क्रियाकाण्ड एक प्रकार विलुप्त हो गया था उसी, दारुण समयमें कुमारिल, गौड़पाद प्रभृति महात्माओंने जन्म ग्रहण किया।

माधवाचार्यने कुमारिलके सम्बन्धमें लिखा है—

"गिरिरवमृत्य गतिः सतां यः प्रामाण्यमाम्नाय गिरामवादीत्।
तस्य प्रसादात् त्रिदिवौकसोऽपि प्रपेदिरे प्राक्तनयज्ञभागान्॥
अयं ह्यधीताखिलवेदमन्त्रः कृतक्षपालोडितसर्वतन्त्रः।
नितान्तदूरीकृतदुष्टतन्त्रस्त्रैलोक्यविभासितकीर्तितन्त्रः॥ ७६॥"

(संक्षेप शङ्करजय, ८ अ०)

जिन्होंने गिरिसे अवतीर्ण हो वेदवचनको प्रामाण्य ठहराया और जिनके प्रसादसे स्वर्गवासी देवताओंने भी प्राक्तन यज्ञभाग पाया, उन्होंने निखिल वेदमंत्रको पढ़ा-पढ़ाया है। नदीकी भांति समग्र शास्त्र अवगाहन कर उन्होंने दुष्टतंत्रको निकाल डाला है। वही महापुरुष त्रैलोक्य परिभ्रमणशील कीर्तिस्वरूप हैं।

वास्तविक कुमारिल भट्ट ही प्रथम बौद्धोंको उच्छेद करनेकी इच्छासे उनका धर्म निराकरण कर वैदिक धर्म प्रचारमें यत्नवान् हुये थे। उनके अक्षय कीर्ति-स्व-रूप तंत्रवार्तिकपाठसे उक्त सम्बन्धमें विस्तर प्रमाण मिलता है। संक्षेपमें उसका कुछ परिचय दिया जाता है उन्होंने किस प्रकार बौद्धादिका मत निराकरण किया था। पूर्वपक्षमें उन्होंने कहा है—

"अकर्तृकतया नापि कर्तृदोषेण दुष्यति।
वेदवद्बुद्धवाक्यादिकर्तृस्मरणवर्जनात्॥
बुद्धवाक्यसमाख्यापि प्रवक्तृत्वनिबन्धना।
तद्दृष्टत्वनिमित्ता वा काठकाङ्गिरसादिवत्॥
यावद्वेदोदितं किञ्चिद्वेद प्रामाण्यमिष्यते।
तत्सर्वं बुद्धवाक्यानामपि देशे न गम्यते॥
तेन प्रयोगशास्त्रत्वं यथा वेदस्य सम्मतम्।
तथैव बुद्धशास्त्रादेर्वक्तुं मीमांसकोऽर्हति॥"

(तन्त्रवार्तिक, १।३।१०)

दाक्षिणात्यानां लोहिताचादि कल्पाते: अन्येषामपि हृष्ट तत्सदमाचरता-मपि॥" (वार्तिक १।३। पा० इत्यादि)

* कुमारिलके मानवश्रौतसूत्रभाष्यमें यह सब नाम उद्धृत हुये हैं।

"वेदका कोई कर्ता नहीं कहनेसे ही कर्तृदोषमें वेद दुष्ट हो नहीं सकते। उसी प्रकार बुद्धवाक्य भी कर्ता न कहनेसे अदुष्ट हैं। काठक और आङ्गिरस प्रभृतिकी भांति बुद्धवाक्योंका भी धर्मोपदेश ही निमित्त है और वह प्रत्यक्षसिद्ध हैं। वेदकी प्रामाण्य सिद्धिके लिये जो कहा गया है, बुद्धवाक्यका प्रामाण्य भी उस समस्तके द्वारा हो सकता है। अतएव जिस प्रकार वेदका प्रयोग शास्त्रत्व सब लोग स्वीकार करते, बुद्धशास्त्रको भी उसी प्रकार स्वीकार करना मीमांसकका कर्तव्य है।

"यैश्च मानवादिस्मृतीनामप्युत्सन्नवेदमूलत्वमुपगतम्। तान् प्रति सुतरां शाक्यादिभिरपि शक्यं तन्मूलत्वमेव वक्तुं को हि शक्नुयादुत्सन्नानां वाक्यविषये इयत्तानियमं कर्तुं ततश्च यावत् किञ्चित् कियन्तमपि कालं केषिचदाक्रियमाणं प्रसिद्धिगतं तत् प्रत्यक्षशाखाविसंवादेऽप्युत्सन्नशाखामूलत्वावस्थानमनुभयतुल्यकक्षतया प्रतिभासीति।" (१।३)

जो मानवादि स्मृतिका भी लुप्त वेदमूलकत्व स्वीकार करते, उनके निकट सुतरां शाक्यादि सभी अपने स्मृतिको वेदमूलक प्रमाणित कर सकते हैं। कोई व्यक्ति लुप्तशाखाके वाक्यमें इयत्तानिरूपण कर नहीं सका है। ऐसा होने पर कोई विषय किसी व्यक्ति-कर्तृक संकलित हो कुछ कालके लिये प्रसिद्ध होनेसे प्रत्यक्ष शाखाके विरुद्ध रहते भी प्रलीनशाखामूलक प्रमाणित हो सकता है। दोनों पक्षमें अनुभव तुल्य रहता है।' (तन्त्रवार्तिक १।३।१०)

अपर पक्षमें कुमारिलने इस प्रकार प्रतिवाद किया है—

"यदि तु प्रलीनशाखामूलता कल्प्येत ततः सर्वासां बुद्धादिस्मृतीनामपि तद्द्वारं प्रामाण्यं प्रसज्यते। यस्यैव च यदभिप्रेतं स एव तत्प्रलीनशाखामस्तके निक्षिप्य प्रमाणीकुर्यात्। अथ विद्यमानशाखागता एव तेऽर्थास्तथापि मन्वादय एव सर्वे पुरुषास्तान् एवोपलप्स्यन्ते ......मन्वादीनां चाप्रत्यक्षत्वाद्विज्ञानमूलमदृष्टं किञ्चिदवश्यं कल्पनीयम्। ....सर्वत्रैव चादृष्टकल्पनायां तादृशमदृष्टं कल्पयितव्यं यत् दृष्टं न विरुणद्धि न चादृष्टान्तरमासञ्जयति। तत्र भ्रान्तिः तावत् सम्यङ् निबद्धशास्त्रदर्शनविरोधापत्तिः। सर्वलोकाभ्युपगततद्दृढप्रामाण्यबाधश्च तदानीन्तनैश्च पुरुषैरपि भ्रान्तिर्मन्वादीनामित्यनेकादृष्टकल्पना।"

"लुप्तशाखामूलक स्मृतिकल्पना करनेसे बुद्धादिप्रणीत स्मृतिसमूहका भी प्रामाण्य हो सकता और प्रत्येक ग्रन्थकार अपने अभिप्रेतको प्राचीन शाखामूलक जैसा प्रमाण कर सकता है। यदि कहिये जो समस्त शाखा विद्यमान है, उन्हींमें यह समस्त विषय निरूपित है, तो मनु प्रभृतिकी भांति सभी उन शाखाओंसे यह समस्त विषय समझ सके होंगे। मनु प्रभृतिका सकल विषय प्रत्यक्ष असम्भव है। अतएव तादृश विज्ञानका कारण किसीप्रकार अदृष्ट मानना पड़ता है। यदि सर्वत्र अदृष्टकल्पना करना पड़े, तो ऐसी अदृष्ट कल्पना करना चाहिये जिसमें किसी दृष्ट विषयके साथ विरोध न हो और दूसरे अदृष्टान्तर उसका कारण न ठहरे। उस विषयमें भ्रान्ति स्वीकार करनेसे जो शास्त्र सम्यक् निबद्ध प्रतीयमान होते, उनपर भी विप्रतिपत्ति उपस्थित हो सकती और सबलोग जिसका प्रामाण्य मानते, उसमें भी बाधा लग सकती है। तदानीन्तन पुरुषोंने भी मनुप्रभृतिकी भ्रान्तिका अनुवर्तन किया है। फिर उसका परिहार भी मनुप्रभृतिको मानना पड़ता है। अतएव अनेक अदृष्टकल्पना न करनेसे काम बिगड़ जाता है।

"मृतसाक्षिकव्यवहारवच्च प्रलीनशाखामूलत्व-कल्पनायां यस्मै यद्रोचते स तत् प्रमाणी कुर्यात्। ये तावन्मन्वादिभ्योऽर्वाञ्चः पुरुषास्तेषां यज्ज्ञानं तत्तावदनवगतपूर्वार्थत्वान्न स्मृतिः। मन्वादीनामपि यदि प्रथमं किञ्चित् प्रमाणं सम्भवेत् ततः स्मरणं भवेन्नान्यथा। कस्मात् पुनः पुत्रं दुहितरं व्यतिक्रम्य वन्ध्यादौहित्रोदाहरणं कृतम्। स्थानतुल्यत्वात् पुत्रादिस्थानीयं हि मन्वादेः पूर्वं विज्ञानं दौहित्रस्थानीयस्मरणमतश्च यथा दुहितुरभावं परामृश्य दौहित्रस्मृतिं भ्रान्तिं मन्यते तथा मन्वादिभिः प्रत्यक्षाद्यसम्भवपरामर्शाद्दृष्टकादिस्मरणं मिथ्येति मन्तव्यम्।"

मृत साक्षीका साक्ष्य यथार्थ समझ जिस प्रकार कोई विचार हो नहीं सकता, उसी प्रकार लुप्त शाखामूलक स्मृतिकल्पना भी युक्तिसङ्गत नहीं ठहरती। ऐसा होनेसे जो जिसे चाहेगा, उसीको वह वेदमूलकता प्रमाण कर सकेगा। जिन्होंने मनुप्रभृतिके पीछे जन्म लिया है, उनकी स्मृति हो नहीं सकती। कारण वह पूर्व वृत्तान्त नहीं जानते। मनुप्रभृतिके भी प्रथम यदि कोई प्रमाण सम्भव हो, तो स्मरण आ सकता है। किन्तु न होनेसे कैसे हो सकेगा! किस कारणसे पुत्र और दुहिताको छोड़ वन्ध्यादौहित्रका उदाहरण दिया गया है? मनुप्रभृतिका पुत्रादिस्थानीय पूर्वज्ञान और

दौहित्रस्थानीय स्मरण रहा। अतएव जिसप्रकार दुहिताके अभावको हेतु बना दौहित्र स्मृति भ्रान्ति ठहरती, उसी प्रकार मनुप्रभृतिका प्रत्यक्ष असम्भव होनेसे अष्टकादिकी स्मृति मिथ्या पड़ती है।"

कुमारिल भट्टने कहा है—बुद्धशास्त्र सकल मानव कल्पित है। उसे बौद्ध स्वयं स्वीकार करते हैं। सुतरां वेदकी भांति बौद्धशास्त्र नित्य हो नहीं सकता। इस सम्बन्धमें उन्होंने इस प्रकार युक्तिको उत्थापन किया है—

"पारतन्त्र्यं तावदेषां स्मर्यमाणपुरुषविशेषप्रणीतत्वात् तैरेव प्रतिपन्नम्। शब्दकृतकत्वादि प्रतिपादनाच्च पार्श्वस्थैरपि ज्ञायते। वेदमूलत्वं पुनस्ते तुल्यकक्षमूलत्वाच्चमयैव लज्जया च मातापितृद्वेषिदुष्टपुत्रवन्नाभ्युपगच्छन्ति। अन्यच्च स्मृतिवाक्यमेकमेकेन श्रुतिवचनेन विरुध्यते शाक्यादिवचनानि तु कतिपयदमदानादिवर्जं सर्वाण्येव समस्तचतुर्दशविद्यास्थानविरुद्धानि त्रयीमार्गव्युत्थितविरुद्धाचरणैश्च बुद्धादिभिः प्रणीतानि त्रयी बाह्येभ्यश्चतुर्थवर्णनिरवसितप्रायेभ्यो व्यामूढेभ्यः समर्पितानीति न वेदमूलत्वेन सम्भाव्यन्ते। स्वधर्मातिक्रमेण च येन क्षत्रियेण सता प्रवक्तृत्वप्रतिग्रहौ प्रतिपन्नौ स धर्ममविप्लुतमुपदेक्ष्यतीति कः समाश्वासः। उक्तञ्च परलोकविरुद्धानि कुर्वाणं दूरतस्त्यजेत्। आत्मानं योऽभिसन्धत्ते सोऽन्यस्मै स्यात् कथं हितः इति। बुद्धादेः पुनरयमेवातिक्रमोऽलङ्कारबुद्धौ स्थितः।.....येनैवमाह-कलिकलुषकृतानि यानि लोके मयि निपतन्तु विमुच्यतान्तु लोक इति। स किल लोकहितार्थं क्षत्रियधर्ममतिक्रम्य ब्राह्मणवृत्तं प्रवक्तृत्वं प्रतिपद्य प्रतिषेधातिक्रमासमर्थैर्ब्राह्मणैरननुशिष्टं धर्मं बाह्यजनानशासत् धर्मपीडां यथात्मनोऽङ्गीकृत्य परानुग्रहं कृतवानित्येवं विधैरेव गुणैः स्तूयते।"......

"न च शाखान्तरोच्छेदः कदाचिदपि विद्यते।
प्रागुक्ताद्वेदनित्यत्वान्न चैषां दृष्टमूलता॥"

"न ह्येषां पूर्वोक्तेन न्यायेन श्रुतिप्रतिबद्धानां स्वमूलश्रुत्यनुमानसामर्थ्यमस्ति।"

'इनका अप्राधान्य उन्होंने ही स्वीकार किया है। कारण यह सकल स्मर्यमाण पुरुष-कर्तृक प्रणीत हैं। उन्होंने शब्दकी अनित्यता मानी है। सुतरां इनका अप्राधान्य अन्य भी अनायास समझ सकते हैं। किन्तु लज्जावशतः उन्होंने पितृ-मातृ-द्वेषी पुत्रकी भांति इनका वेदमूलत्व अङ्गीकार नहीं किया। दूसरोंका कहना है कि सम्भवतः एक स्मृतिवाक्य किसी श्रुतिवाक्यके विरुद्ध हो सकता है। किन्तु दमदानादि कतिपयको छोड़ शाक्यादि सकल वाक्य चतुर्दश विद्यास्थानोंके विरुद्ध हैं। वेदविरुद्धाचारी बुद्धादिप्रणीत शास्त्रकलाप शूद्रजातिसे भी निकृष्ट मूढ़तम व्यक्तियोंको समर्पित हुवा है। अतएव उस सारे शास्त्रके वेदमूलत्वकी सम्भावना भी नहीं। जिस क्षत्रियने अपना धर्म परित्याग कर धर्मोपदेष्टृत्व और दूसरेका प्रतिग्रह स्वीकार किया है, उसके यथार्थ उपदेश देनेका विश्वास किसके हृदयमें आ सकता है। अतएव जो परलोकविरुद्ध कार्य अनुष्ठान करते, उनको दूरसे ही परित्याग करना उचित है। कारण जो अपना ही अनिष्ट आचरण कर सकते हैं, उनको दूसरेका मङ्गलाकाङ्क्षी होना किसी प्रकार सम्भव नहीं। बुद्ध प्रभृति सब लोग इस प्रकारके परलोकविरुद्ध कार्यानुष्ठानको ही अलङ्कार समझते हैं। अतएव बुद्ध कहा करते थे—'जो समस्त कर्म कलिमें कलुषित हुवा है, वह सब हममें उपस्थित हो जावे। संसारमें अन्य सकल लोग उसे परित्याग करें।' बुद्धदेवने लोकहितके लिये ही अपना प्रशंसित क्षत्रियधर्म छोड़ ब्राह्मणवृत्ति धर्मोपदेष्टृत्व अवलम्बन कर प्रतिषेध अतिक्रम कर न सकनेवाले ब्राह्मणोंकर्तृक अप्रकाशित धर्म साधारणको उपदेश किया है। उन्होंने स्वीय धर्मका उत्पीड़न करके भी दूसरे पर अनुग्रह रखा है। ऐसे ही नानाविध वाक्यद्वारा बौद्ध उनका स्तव करते हैं।...शाखान्तरका उच्छेद कदाचित् हो नहीं सकता। कारण पहले ही प्रतिपादित हो चुका है कि वह नित्य हैं। अतएव इन की दुष्टमूलता भी सम्भव नहीं होती।... प्रतिविरुद्ध रहनेसे बौद्ध शास्त्र द्वारा श्रुतिको अनुमान कैसे हो सकता है।

"त्रयी विपरीतासम्बद्धदृष्टशोभादि प्रत्यक्षानुमानोपमानार्थापत्तिप्राययुक्तिमूलनिबद्धानि सांख्ययोगपाञ्चरात्रपाशुपतशाक्यनिर्ग्रन्थपरिगृहीतधर्माधर्मनिबन्धनानि विषचिकित्सावशीकरणोच्चाटनोन्मादनादिसमर्थकतिपयमन्त्रौषधिकादाचित्कसिद्धिनिदर्शनबलेनाहिंसासत्यवचनदमदानदयादिश्रुतिस्मृतिसंवादिस्तोकार्थगन्धवासितजीविकाप्रायार्थान्तरोपदेशीनि यानि च बाह्यतराणि म्लेच्छाचारमिश्रकभोजनाचरणनिबन्धनानि तेषामेवैतच्छ्रुतिविरोधहेतुदर्शनाभ्यामनपेक्षणीयत्वं प्रतिपाद्यते न चैतत् चिदधिकरणान्तरे निरूपितं न चावक्तव्यमेव गाव्यादिशब्दवाचकत्वबुद्धिवदतिप्रसिद्धत्वात्।

यदि ह्यनादरेणैषां न कथ्येताप्रमाणता।
अशक्यैवेति मत्वान्ये भवेयुः समदृष्टयः।
शोभाणै कार्यहेतूक्तिकलिकालवशेन वा।
यथोक्तपशुहिंसादित्यागभ्रान्तिमवाप्नुयुः।

ब्राह्मणक्षत्रियप्रणीतत्वाविशेषेण च मानवादिवद्वेदश्रुतिमूलत्वमाश्रित्य सचेतसोऽपि श्रुतिस्मृतिविहितैः सह विकल्पमेव प्रतिपद्येरन्।

"तेन यद्यपि लभ्येत स्मृतिः काचिद्विरोधिनि।
मन्वाद्युक्ता तथाप्यस्मिन् तदेवोपयुज्यते।
तयोर्मार्गस्य सिद्धस्य ये ह्यत्यन्तविरोधिनः।
अनिराकृत्य तान् सर्वान् धर्मशुद्धिर्न लभ्यते।"

"विरुद्ध प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, अर्थापत्ति और बहुतर युक्ति द्वारा निरुद्ध सांख्य, योग, पञ्चरात्र, पाशुपत तथा शाक्य निर्ग्रन्थ प्रभृति जो समस्त धर्माधर्मके निमित्त परिगृहीत और विषचिकित्सा, वशीकरण, उच्चाटन, उन्मादादिके कारण जो समस्त औषध एवं मन्त्र निरूपित हुये हैं, उनकी कभी कभी सिद्धि देख पड़ती है। अहिंसा, सत्यवाक्य, दम, दान और दया प्रभृति जो दो-एक विषय श्रुतिस्मृतिके अविरुद्ध प्रतिपादित हुये हैं, वह भी जीविकानिर्वाहके निमित्त ही कल्पना किये गये हैं। म्लेच्छाचार, मिश्रक भोजन और आचरणके पथ जो निरूपित हुवा है, वह क्या अमूलक नहीं! श्रुतिके विरोध हेतु यह समस्त अनादरणीय हैं। ऐसा भी कह नहीं सकते, किस अधिकरणमें निमित्त निरूपित हुवा है। प्रसिद्ध पदार्थवाचक बुद्धिकी भांति अतिप्रसिद्ध जैसा कुछ भी कहा जा नहीं सकता। यदि अनादर कर इनकी अप्रमाणता न बतायी जाये, तो सभी समझ सकते हैं कि उनका अप्रामाण्य स्थिर करना असाध्य है। ऐसा होनेसे वह समदृष्टि भी रह सकते हैं। शोभा, सौकर्य, हेतुकथन और कलिकालवशतः यज्ञके विहित पशुहिंसादिको भी अवैधेय स्थिर कर छोड़ सकते हैं। ब्राह्मण किंवा क्षत्रियप्रणीत कह विशेष स्थिर न कर मानवादिकी भांति इन्हें भी भ्रान्तिमूलक मान पण्डित श्रुतिस्मृतिविषयमें सन्दिहान हो सकते हैं। यदि मन्वादि प्रणीत कोई स्मृति वेदविरोधिनी हो, तो उसका मत छोड़ इस (वेद) में जो विहित है, उसीको अवलम्बन करना चाहिये। प्रसिद्ध वैदिक मतके विरुद्ध जो समस्त धर्म है, उसे न छोड़नेसे कैसे धर्म शुद्धि हो सकती है।'

कुमारिलके मतमें बौद्ध शास्त्र एककाल ही शास्त्रकी भांति प्रतिपन्न हो नहीं सकता। उन्होंने लिखा है—

"असाधुशब्दभूयिष्ठाः शाक्यजैनागमादयः।
असन्निबन्धनत्वाच्च शास्त्रत्वं न प्रतीयते॥"

"शाक्य और जैनागम प्रभृतिमें अनेक अपभ्रंश शब्द हैं और समस्त ही विपरीत हैं। अतएव वह शास्त्र जैसा समझ नहीं पड़ता।"

यदि कहिये—किसी किसी स्मृतिशास्त्रमें भी बौद्धशास्त्रादिकी भांति वेदविरुद्ध कथा है, तो उसके उत्तरमें कुमारिल भट्टने लिखा है—

"तेन वेदविरुद्धानां स्मृतीनामप्रमाणता।
बद्धश्रुत्यनुमानत्वान्न्यूला हि ता यतः॥"

"वेदविरुद्ध स्मृतिका प्रामाण्य नहीं। अपने विरुद्ध श्रुति रहनेसे वह श्रुतिमूलक हो सकती है।"

"वेदे यथोपलभ्यन्ते नैवं शाक्यादिभाषिते।
प्रयोग नियमाभावादतोपास्य न शास्त्रता॥"

वेदमें जो प्रकार [illegible] उपलक्षित होता, शाक्यादि-वर्णित ग्रन्थमें वह देख नहीं पड़ता। अतएव उसका शास्त्रत्व कैसे माना जा सकता है!

कुमारिलके समयमें भी बौद्धोंके प्रबल रहनेका प्रमाण मिलता है—

"शाक्यादयश्च सर्वत्र कुर्वाणा धर्मदेशनाम्।
हेतुजालविनिर्मुक्तां न कदाचन कुर्वते॥
न च तैर्वेदमूलत्वमुच्यते गौतमादिवत्।
हेतवश्चाभिधीयन्ते धर्माद् दूरतरं स्थिताः॥"

"शाक्य सर्वत्र धर्मोपदेश प्रदान करते हैं। वह जो उपदेश देते, उसके भी अनेक हेतु दिखलाते हैं। शाक्य लोग गौतमादिकी भांति अपने शास्त्रको वेदमूलक नहीं कहते और धर्मविरुद्ध हेतुसमूहका उल्लेख करते हैं।"

कुमारिलके समय बौद्ध और वैशेषिक प्रभृति सभी मीमांसकसे डरते थे—

"यथा मीमांसकास्त्रस्ताः शाक्यवैशेषिकादयः।"

उनके समय अनेक बौद्धोंने वेदमार्ग अवलम्बन किया था—

"तत्र शाक्यैः प्रसिद्धाऽपि सर्वक्षणिकवादिता।
त्यज्यते वेदसिद्धान्ताज्जल्पद्भिर्नित्यमागमम्॥"

शाक्योंने प्रसिद्ध क्षणिकवाद छोड़ा है और वह

वेदके सिद्धान्तसे आगमको नित्यता मानने लगे हैं।

कुमारिलके मतमें वेद हो नित्य और अपौरुषेय है। वेदमूलक शास्त्र ही प्रकृत शास्त्रपदवाच्य होता है। अन्यथा उसे अशास्त्र समझना चाहिये। वे कहते हैं—

"वेद: पुन: सविशेष: प्रत्यक्षगम्य:। तत्र घटादिवदेव पुरुषान्तरस्थमुपलभ्य स्मरन्ति तैरपि स स्मृतमुपलभ्यान्येऽपि स्मरन्तोऽन्ये भारतार्थं व समर्थयन्तीत्यनादिता। सर्वस्य चात्मीयस्मरणात् पूर्वमुपलब्धि: सम्भवतीति न निर्मूलता शब्दसम्बन्धव्युत्पत्तिमात्रमेव चेह वृद्धव्यवहाराधीनम्। प्रागपि हि वेदशब्दादन्यवस्तुविलक्षणं वेदान्तरविलक्षणं चाध्येतृस्थमृग्वेदादि रूपं मन्त्रब्राह्मणादिरूपाणि चान्यविलक्षणानुपुपलभ्यन्ते सर्वेषां चानादय: संज्ञा:।'

वेद प्रत्यक्षगम्य है। घटादिको भांति पुरुषान्तरस्थ वेद श्रवण कर सभी पुनर्वार उसका स्मरण करते हैं। उनकर्तृक स्मृत वेद श्रवण कर दूसरे स्मरण कर सके और उनसे श्रवण कर अन्य लोग भी वेद स्मरण कर सकते हैं। इसी प्रकार सभीके स्मरण पूर्व अनुभव सम्भव होता है। अतएव निर्मूलता नहीं हुयी। शब्दके सम्बन्धमें व्युत्पत्तिमात्र वृद्ध व्यवहारके अधीन है। पहले भी वेद शब्दसे अन्य वस्तुविलक्षण वेदान्तरविलक्षण अध्ययनकारोके मुखस्थित ऋग्वेदादि रूप पदार्थ और अन्य वस्तुविलक्षण मन्त्रब्राह्मणस्वरूप पदार्थ ही समझ पड़ता था। सभीको संज्ञा अनादि है।"

"अपि च वेदोऽखिलो धर्ममूलम्। न सर्वोऽभिहितो वेद इति च स्वयमेवार्थं भिरात्मा वक्ता समर्पितसत्त्वे तन्नियोगतस्तत्कालि: कर्तृ भिर्बुद्धिपूर्वकारित्वादुपलभ्यमत: सिद्धं वेदद्वारं प्रामाण्यम्।"

दूसरी जगह भी उन्होंने कहा है—"समस्त वेद धर्मका मूल हैं और स्मृतिमें समस्त वेद कथित हुये हैं। इसे स्मृतिकर्ताओंने स्वयं कहा है। अतएव उनके वाक्यानुसार भी कर्ताका बुद्धिपूर्वक निर्माण करना प्रतीत होता है। इस प्रकार वेदद्वारा ही उसका प्रामाण्य निश्चित हुवा।'

यदि कोई किसी मिथ्या ग्रन्थको बना वेदकी किसी लुप्त शाखाको भांति प्रचार करे, तो उसका निरूपण किस प्रकार किया जा सके—इस सम्बन्धमें कुमारिल भट्टने कहा है कि—'केवल वाक्यको देख उसका वेदत्व मान नहीं सकते। उसे ऋग्वेदादि त्रयीग्रन्थसे मिलाना पड़ेगा। यदि त्रयीसे न मिले और उसमें लौकिक वाक्यका प्रयोग रहे, तो वह कब और कैसे वेद हो सकता है। जैसे—

"यावद्दूरस्थानाद्वै दृष्यं न दृश्यते।
ऋक्सामादिस्वरूपे तु दृष्टे भ्रान्तिर्निवर्तते॥
आदिमात्रमपि श्रुत्वा वेदानां पौरुषेयता।
न शक्याध्यवसातुं हि मनागपि सचेतनै:॥
दृष्टार्थव्यवहारेषु वाक्यैर्लोकानुसारिभि:।
पदैश्च तद्विधैरेव नर: काव्यानि कुर्वते॥"

"जबतक दूर अवस्थान कर वेद अवलोकन नहीं करते, तब तक भ्रान्ति रहती है। ऋक्, साम प्रभृति वेद अवलोकन करनेसे भ्रान्ति छूट जाती है। कोई सचेतन व्यक्ति केवल आदिको श्रवण कर वेदको पौरुषेयता अवधारण कर नहीं सकता। मनुष्य लोकानुसार वाक्य और पदसमूह द्वारा ही लोगोंके प्रत्यक्ष व्यवहारोपयोगी काव्यकी रचना करते हैं।"

कुमारिलके मतमें ऋक्, यजुः इत्यादि वेदका ही भेद है। प्रत्येक वेदको भिन्न भिन्न मुनि-प्रचारित शाखा होते भी सकल शाखा मूल ग्रन्थसे मिल जायेंगी और अनैक्य न लायेंगी। उन्होंने स्पष्ट ही कहा है—

"यदि प्रतिशाखं कर्मभेद: स्यात् तत् एकमूलाभावादित एवारभ्य भिद्यमानत्वात् समस्तकर्माख्यफलान्तरत्वात् वृक्षान्तरवद्वेदान्तराण्येवोच्येरन् न शाखान्तराणि।"

यदि प्रत्येक शाखामें कर्मभेद हो, तो एक मूलके अभावमें प्रथमसे भिन्न हो समस्त कर्मफल अलग अलग हो सकता है। वृक्षान्तरको भांति वेदका भेद भी कथित होता था, शाखाभेद कहा जाता न था।

उनके मतसे जो जिस शाखाका अवलम्बी रहता वह उसी शाखाको अध्ययन करनेसे समस्त वेदका पढ़नेवाला हो सकता है। उसे भिन्न शाखा पढ़ना आवश्यक नहीं। कारण शाखान्तर नाममात्रको है। उसमें वस्तुभेद वा कर्मभेद लक्षित नहीं होता। इसीसे कुमारिलने भिन्न शाखापाठेच्छुओंके प्रति विद्रूप कर लिखा है—

"स्वशाखाविहितैश्चापि शाखान्तरगतान्विधीन्।
कल्पकारा निबध्नन्ति सर्व एव विकल्पितान्॥
सर्वशाखोपसंहारो जैमिनेश्चापि सम्मत:।"

"न च सूत्रकाराणामपि कश्चित् स्वशाखोपसंहारमात्रे व्यवस्थित:।"

"शाखान्तराध्ययनं तावदेकस्य पुंसो नैवेष्यते। किं कारणम्। स्वाध्यायग्रहणेनैका शाखा हि परिगृह्यते। ततश्च यो नामातिमेधावित्वादेकवेदगतानि शाखान्तराण्यधीयीत स समृद्धः सन् व्रीहियवैरपि मिश्रैर्यजेत।"

एक पुरुषका शाखान्तर अध्ययन अर्थात् विभिन्न शाखाका अभ्यास सम्मत नहीं। इसका क्या कारण है? जिसने अध्ययन कर एक शाखाका परिग्रह किया है, यदि मेधावी होनेसे उसी वेदकी अन्य शाखा पढ़ता, तो समृद्धिशाली रहते भी वह व्रीहि और यव मिलाकर यज्ञ कर सकता है।

पुराणादिका कौन अंश वेदमूलक है और कौन अंश वेदमूलक नहीं—इस सम्बन्धमें कुमारिलने निम्न लिखित मत प्रकाश किया है—

"तेन सर्वस्मृतीनां प्रयोजनवत्वप्रामाण्ययोः सिद्धिः। तत्र तु यावद्धर्ममोक्षसम्बन्धि तद्वेदप्रभवं यत्वर्थसुखविषयं तल्लोकव्यवहारमिति विवेक्तव्यम्। एषैवेतिहासपुराणयोरप्युपदेशवाक्यानां गतिः। उपाख्यानानि त्वर्थवादेषु व्याख्यातानि। यत्तु पृथिवीविभागकथनं तद्धर्माधर्मसाधनफलोपभोगप्रदेशविवेकाय किञ्चिद्दर्शनपूर्वकं किञ्चिद्वेदमूलम्। वंशानुक्रमणमपि ब्राह्मणक्षत्रियजातिगोत्रज्ञानार्थं दर्शनस्मरणमूलम् देशकालपरिमाणमपि लोकज्योतिःशास्त्रव्यवहारसिद्धार्थं दर्शनगणितसम्प्रदायानुमानपूर्वकम्। भविष्यत् कथनमपि त्वनादिकालप्रवृत्तयुगस्य धर्माधर्मानुष्ठानफलविपाकवैचित्र्यज्ञानद्वारेण वेदमूलम्। अङ्गविद्यानामपि क्रत्वर्थपुरुषार्थप्रतिपादनं लोकवेदपूर्वत्वेन विवेक्तव्यम्। तत्र शिक्षायां तावद्वर्णकरणस्वरकालादिप्रविभागकथनं तत् प्रत्यक्षपूर्वकम्। यत्तु तथा विज्ञानात् प्रयोगे फलविशेषस्मरणं 'मन्त्रो हीनः स्वरतो वर्णतो वेति' च प्रत्यवाय स्मृतिस्तद्वेदमूलकम्।......कल्पसूत्रेष्वर्थवादादिमिश्रशाखान्तर-विप्रकीर्णन्यायलभ्यविध्युपसंहारफलमर्थं निरूपणकरं-तत्तत् प्रमाणमङ्गीकृत्य कृतं लोकव्यवहारपूर्वकाश्च केचित् ऋत्विगादिव्यवहाराः सुखार्थहेतुत्वेनाश्रिताः। व्याकरणेऽपि शब्दोऽपशब्दविभागज्ञानं शाखावृक्षादिविभागवत् प्रत्यक्षनिमित्तम्। साधुशब्दप्रयोगात् फलसिद्धिः अपशब्दे न तु फलवैगुण्यं भवतीति वैदिकम्। छन्दोविचित्यामपि गायत्र्यादिविवेको लोकवेदयोः पूर्ववदेव प्रत्यक्षः। तत्ज्ञानपूर्वकप्रयोगात्तु फलमिति श्रौतम्। तथा चानिष्टं श्रूयते योह वा विदितार्षेयच्छन्दोदैवतब्राह्मणेन मन्त्रेण यजति याजयति वा इत्यादि। ज्योतिःशास्त्रेऽपि युगपरिवर्तपरिमाणद्वारेण चन्द्रादित्यादिगतिविभागज्ञानेन तिथिनक्षत्रज्ञानमविच्छिन्नसम्प्रदायगणितानुमानमूलं ग्रहसौस्थ्यदौस्थ्यनिमित्तपूर्वकृतशुभाशुभकर्मफलविपाकसूचनन्तु तद्गतशान्त्यादिविधानद्वारेण वेदमूलम्। एतेन सामुद्रवास्तुविद्यादिर्व्याख्यातम्। ईदृशा वा विषयः सर्वत्रानुमातव्याः। ईदृशे गृहशरीरादिसन्निवेशे सत्येतदेतच्च प्रतिपत्तव्यमिति मीमांसा तु लोकादेव प्रत्यक्षानुमानादिभिरविच्छिन्नसम्प्रदायपण्डितव्यवहारैः प्रवृत्ता। नहि कश्चिदपि प्रथममेतावन्तं युक्तिकलापमुपसंहर्तुं क्षमः। एतेन न्यायविस्तरं व्याचक्षीत।

"विषयो वेदवाक्यानां पदार्थैः प्रतिपाद्यते
ते च जात्यादिभेदेन सङ्कीर्णा लोकवर्त्मनि॥
स्वलक्षणा विविक्तैस्तैः प्रत्यक्षादिभिरक्षमा।
परीक्षकार्पितैः शक्याः परिवेत्तुं न तु स्वतः॥
वेदोऽपि विप्रकीर्णात्माप्रत्यक्षाद्यवधारितः।
स्वार्थं साधयतीत्येवं ज्ञेयः स न्यायविस्तरात्॥"

इसके द्वारा सकल स्मृतिके प्रामाण्यका भी प्रयोजन है, यह निश्चित हुवा। किन्तु जो समस्त विषय धर्म और मुक्तिका उपयोगी है, वही वेदसे बहिर्गत हुवा है। जो केवल अर्थ और ऐहिक सुखका कारण है, उसका मूल लोकव्यवहार है, वह वेदसे नहीं निकला। ऐतिहासिक और पौराणिक उपदेश वाक्यको भी इसी प्रकार सङ्गति करना पड़ेगी। अर्थवादके प्रस्तावमें उपाख्यान व्याख्यात हुवा है। धर्म तथा अधर्मका साधन और फलभोगका स्थान निर्देश करनेको पृथिवीके विभाग निरूपित हुवे हैं। उसका कोई अंश प्रत्यक्षसिद्ध और कोई अंश वेदमूलक है। ब्राह्मणों और क्षत्रियोंको जाति तथा गोत्र बतानेके लिये वंशका अनुक्रम कहा गया है, यह प्रत्यक्षसिद्ध और स्मृतिमूलक है। लौकिक और ज्योतिःशास्त्रके व्यवहारकी निष्पत्तिको देश और कालका परिमाण बंधा है, यह प्रत्यक्ष और गणित सम्प्रदायके अनुमानसे सिद्ध है। अनादि कालप्रवृत्त युगभेदसे धर्म और अधर्मके अनुष्ठानमें नानाविध फल होता है, यह वेदमें निरूपित हुवा है। अतएव भविष्यत्कालको वर्णनाको भी वेदमूलक हो कहना पड़ेगा। व्याकरण प्रभृति वेदाङ्ग क्रतुसम्पादक और पुरुषार्थसाधक प्रतिपादित हुवा है, यह लोकसिद्ध और वेदमूलक है। वेदका प्रथम अङ्ग शिक्षा है। इसमें वर्णकी उत्पत्ति, स्वर और कालविभाग कहा है। यह प्रत्यक्षसिद्ध है। ज्ञात हो यथाविधि उच्चारण करनेसे फलाधिक्य और अयथा वर्णोच्चारण करनेसे प्रत्यवाय बताया गया है, यह वेदमूलक है।......कल्पसूत्रमें वही प्रमाण अङ्गीकार कर अर्थवादादिमिश्रित शाखान्तर-प्रकीर्ण न्यायलभ्य विधि और उपसंहार निरूपित हुवा है, यह लौकिक, व्यवहारसिद्ध और अनायास बोधगम्य होनेसे अनेक ऋत्विक्-व्यवहार भी कहे गये हैं। व्याकरणमें *

* "पाणिनीयादिषु हि वेदस्वरूपवर्जितानि पदान्येव संस्कृत्य [illegible]

साधु शब्द और अपभ्रंश शब्दका विभाग निरूपित हुवा है। यह वृच्च शाखादिके विभागकी भांति प्रत्यक्ष सिद्ध है। साधु शब्द प्रयोग करनेसे फल सिद्ध होता है। अपशब्द प्रयोग करनेसे फलवैगुण्य लगता है। यह वेदमूलक है। छन्दःशास्त्रमें लौकिक और वैदिक गायत्री प्रभृति छन्दः कहे गये हैं। यह भी व्याकरण की भांति प्रत्यक्षसिद्ध है। इसका ज्ञानपूर्वक प्रयोग करनेसे फल मिलता है। यह श्रुतिसिद्ध है। अतएव श्रुतिने सुना दिया है—'ऋषि, छन्दः, देवता और ब्राह्मणको न समझ जो यज्ञ करता या कराता, वह कोई फल नहीं पाता। ज्योतिःशास्त्रमें युगपरिवर्तन और परिमाण द्वारा तथा चन्द्र सूर्य प्रभृति ग्रहगति-के विभाग द्वारा तिथिनक्षत्रका ज्ञानोपाय बताया गया है। यह अविच्छिन्न गणित सम्प्रदायका अनु-मान सिद्ध है। इसी प्रकार ग्रहका सौख्य और दौस्थ निमित्त पूर्व-अनुष्ठित धर्म तथा अधर्मका फल कहा गया है। वेदमें ग्रहकी शान्ति निरूपित होनेसे यह वेदमूलक है। इसीके द्वारा सामुद्रिक और वास्तुविद्या भी व्याख्यात होती है। इस प्रकार विधिकी सर्वत्र अनु-मान करना पड़ेगा। ग्रह और शरीरादिका ऐसा सन्नि-वेश रहनेसे ऐसा ही फल मिलेगा। मीमांसा लौकिक प्रत्यक्ष और अनुमान तथा अविच्छिन्न पण्डित-सम्प्र-दायके व्यवहार द्वारा संगृहीत हुवा है। कोई व्यक्ति यह समस्त युक्तिकलाप प्रथम संग्रह कर न सका था। इसीके द्वारा न्यायविस्तरकी व्याख्या करना चाहिये। पदार्थ द्वारा वेदवाक्यका विषय प्रतिपादित हुवा है। जात्यादिभेदमें बहु प्रकार पदार्थ ही लोकव्यवहार सम्पन्न करता है। परीक्षकोंने प्रत्यक्षादि द्वारा विभिन्न लक्षण स्थिर किये हैं। इसीसे समस्त पदार्थ पृथक् पृथक् रूपमें समझा जा सकता है। ऐसा न होनेसे कोई व्यक्ति स्वयं कुछ समझ न सकता। अति विप्र-कीर्ण वेद भी प्रत्यक्षादि प्रमाण द्वारा अवधारित होने पर ही स्वार्थ साधन करनेको समर्थ होता है। यह न्याय विस्तरसे सम्पन्न हुवा करता है।

"सर्गप्रलयोपवर्णनमपि दैवपुरुषकारप्रभावपरिभागप्रदर्शनार्थं सर्वत्र हि तल्लीन तत्प्रवर्तते तदुपरमे चोपरमतीति। विज्ञानमात्रक्षणभङ्गनैरा-त्म्यादिवादानामप्युपनिषदर्थवादप्रभवत्वं विषयेष्वात्यन्तिकं रागं निवर्तयितु-मित्युपपन्नं सर्वेषां प्रामाण्यम्। सर्वत्र च यत्र कालान्तरफलत्वादिदानीमनु-भवासम्भवस्तत्र श्रुतिमूलता। सांदृष्टिकफले तु वृश्चिकविद्यादौ पुरुषान्तरव्यव-हारदर्शनादेव प्रामाण्यमिति विवेकसिद्धिः॥"

सर्ग और प्रलयकी वर्णना भी अदृष्ट एवं पुरुष-कारका नानाविध प्रभाव दिखानेके लिये निरूपित हुई है। सर्वत्र दैव और पुरुषकारवशतः सृष्टि होती है। फिर उसका अभाव होनेसे प्रलय पड़ जाता है। विज्ञानवाद, क्षणभङ्गुरवाद और नैरात्म्यवाद प्रभृति सकल मत उपनिषद्के अर्थवादसे निकले हैं। यही समस्त मत विषयका आत्यन्तिक अभिलाष निवर्तित करते हैं। इसके द्वारा इन समस्त मतोंका प्रामाण्य स्थापित होता है। सर्वत्र कालान्तरमें जो समस्त फल मिलता, वर्तमान समयमें उसका होना असम्भव रहनेसे श्रुति ही उसका प्रमाण है। जिसका फल तत्-क्षणात् देख पड़ता, इस प्रकारके वृश्चिक तथा सर्पादि-निवारक मन्त्रादिका प्रामाण्य, पुरुषान्तर अर्थात् विष-वैद्य-प्रभृतिका व्यवहार देखनेसे ही समझ पर पड़ता है।

जिनका चरित्र हिन्दू धर्मका आदर्श रहा, जिनके वाक्यका विश्वास कर हिन्दू धर्म चलता था, बौद्धादि हिन्दू धर्म विद्वेषी उन्हीं समस्त देवताओं और मुनि-योंके चरित्र पर दोषारोपण करते थे। वह जो समस्त कुतर्क उपस्थित करते, कुमारिलने उनको भी शास्त्रीय युक्तिसे खण्डन किया है। उस समय हिन्दू धर्मविद्वेषी यह समस्त कूटतर्क उपस्थित करते थे—

"सदाचारेषु दृष्टो धर्मव्यतिक्रमः साहसं च महतां प्रजापतीन्द्र-वशिष्ठ-विश्वामित्र-युधिष्ठिर-कृष्णद्वैपायन-भीष्मधृतराष्ट्र-वासुदेवार्जुनप्रभृतीनां बहूना-मद्यतनाश्च। प्रजापतेस्तावत् 'प्रजापतिरुषसमभ्यैत् स्वां दुहितरं' इति अगम्यागम-नरूपादधर्माचरणाद् धर्मव्यतिक्रमः तत्पदस्थस्य च नहुषस्य पर-दाराभियोगाद् धर्मव्यतिक्रमः। वशिष्ठस्य पुत्रशोकार्तस्य जलप्रवेशात्मत्यागः

त्यन्ते। प्रातिशाख्यैः पुनर्वेदसंहिताध्यायानुगतस्वरसन्धिप्रकृति-विकृतिपूर्वाङ्ग-पराङ्गाद्यनुसरणाद् वेदाङ्गत्वमाविष्कृतम्।" (तन्त्रवार्तिक, १।३।२१)

पाणिनीयादि ग्रन्थमें जिन समस्त पदोंका प्रयोग वेदमें नहीं, उनका भी संस्कार निरूपित हुवा है। किन्तु प्रातिशाख्यसमूहमें केवल वेदसंहिताके अध्ययनोपयोगी स्वर, सन्धि, प्रकृति, विकृति, पूर्वाङ्ग और पराङ्गका निरूपण किया गया है। अतएव वही वेदका अङ्ग है।

साहसं विश्वामित्रस्य चाण्डालयाजनम् । वशिष्ठवत् पुरूरवः प्रयोगः कृष्णद्वैपायनस्य......विचित्रवीर्यदारेषु पुत्रोत्पादनम्। भीष्मस्य सर्वधर्मव्यतिक्रमेणावस्थानं अपत्नीकस्य च रामवत् क्रतुप्रयोगः । अन्धस्य धृतराष्ट्रस्य इज्या। युधिष्ठिरस्य कनीयोर्जितभ्रातृजायापरिणयनं आचार्यब्राह्मणवधार्थं अनृतभाषणञ्च । कृष्णार्जुनयोः प्रसिद्धमातुल-दुहितृ-रुक्मिणी-सुभद्रापरिणयनं सुरापानञ्च ।”

जो सदाचारी कहे गये, उन्होंने भी धर्मका अतिक्रम और हिन्दू-शास्त्रनिषिद्ध दुष्कर्म किया है। प्रजापति, इन्द्र, वशिष्ठ, विश्वामित्र, युधिष्ठिर, कृष्णद्वैपायन, भीष्म, धृतराष्ट्र, वासुदेव, अर्जुन प्रभृति प्राचीन और इदानीन्तन हिन्दुवों सबका धर्मातिक्रम लक्षित होता है ब्रह्माने कन्यागमन किया। वह इसी शास्त्रीय वाक्यसे प्रमाणित होता—ब्रह्माने प्रत्यूषमें कन्यागमन किया था। वशिष्ठ मुनि पुत्रशोकसे कातर हो आत्महत्या करनेको जलमें पैठ पड़े। इस प्रकारका साहस शास्त्रनिषिद्ध है। इन्द्रकागुरुपत्नीगमन, इन्द्रपद पर प्रतिष्ठित नहुषका परदाराभियोग, विश्वामित्रका चाण्डाल याजन, वशिष्ठकी भांति पुरूरवाका भी व्यवहार, कृष्णद्वैपायनका विचित्रवीर्यकी भार्यासे पुत्रोत्पादन, भीष्मका सर्वधर्म परित्यागकर अवस्थान, रामका पत्नीव्यतीत यज्ञानुष्ठान, अन्ध धृतराष्ट्रका यज्ञानुष्ठान, आचार्य द्रोणके वधके निमित्त युधिष्ठिरका मिथ्या व्यवहार एवं कनिष्ठ भ्राताकर्तृक अर्जित भार्याका परिणय, कृष्ण तथा अर्जुनका मातुलकन्या रुक्मिणी एवं सुभद्राका विवाह और सुरापान सभी शास्त्रविरुद्ध है।

कुमारिलने इसके उत्तरमें कहा है—प्रजापतिने अपनी कन्याको गमन किया है, इन्द्र ‘अहल्याजार’ हैं—इन सब वाक्योंका तात्पर्य दूसरा है। इससे ब्रह्मा किंवा देवराजका परस्त्रीगमनरूप व्यभिचार प्रतिपादित नहीं होता।

“प्रजापतिस्तावत् प्रजापालनाधिकारादादित्य इवोच्यते। स चारुणोदयवेलायामुषसमुद्यन्नभ्येति सा तदागमनादेवोपजायत इति तद्दुहितृत्वेन व्यपदिश्यते। तस्यां चारुणकिरणाख्यबीजनिक्षेपणात् स्त्रीपुरुषसंयोगवदुपचारः। एवं समस्ततेजः परमेश्वरत्वनिमित्तेन्द्रशब्दवाच्यं सवितैवाहनि लीयमानतया रात्रेरहल्याशब्दवाच्याया: क्षयात्मकजरणहेतुत्वाज्जीर्यत्यस्मादनेन वोदितेनेत्यहल्याजारः इत्युच्यते न परस्त्रीव्यभिचारात्।”

प्रजापालनका अधिकार रहनेसे प्रजापति शब्द आदित्यका ही बोधक है। वह अरुणोदयकाल दिनके प्रारम्भमें उदित हो क्रमशः गमन किया करते हैं। उनके आगमनसे क्रमशः बढ़ने पर वेला उनकी दुहिता कहलाती है। उसी वेलामें अरुणका किरणस्वरूप बीज निक्षिप्त होता है। वही स्त्रीपुरुषके संयोगकी भांति वर्णन किया गया है। समस्त तेजः पदार्थ ऐश्वर्य है। अतएव तेजःपुञ्जको ही इन्द्र नामसे उल्लेख करते हैं। दिनमें लीन हो जानेसे अहल्या शब्दका अर्थ रात्रि है। सूर्य ही रात्रिके क्षयस्वरूप जरणका कारण है। अहल्या रात्रि जिनसे जीर्ण होती किंवा जिनके उदित होनेसे अहल्या जीर्ण हो जाती, उन्हें ही अहल्याजार कहते हैं अर्थात् अहल्याजार शब्दका अर्थ सूर्य है। परस्त्रीव्यभिचार दोषसे वह अहल्याजार नहीं कहाये हैं।

“नहुषेण पुनः परस्त्रीप्रार्थननिमित्तानन्तकालाजगरत्व-प्राप्त्यैवात्मनो दुराचारत्वं प्रख्यापितम्।... ...

वशिष्ठस्यापि यत् पुत्रशोकव्यामोहचेष्टितम्।
तस्याप्यन्यनिमित्तत्वान्नैव धर्मत्वसंशयः॥

योहि सदाचारः पुण्यबुद्ध्या क्रियते स धर्मादृष्टत्वं प्रतिपद्येत। यस्तु कामक्रोधलोभमोहभयशोकादिहेतुत्वेन उपलभ्यते स न्याय्यार्थविधिप्रतिषेधं वक्ष्यते।........द्वैपायनस्यापि गुरुनियोगात् ‘अपतिरपत्यलिप्सुर्देवराद्गुरुप्रेरितादृतुमतीयात्’ इत्येवमागमान्मातृसम्बन्धभ्रातृजायापुत्रजननम्।.......रामभीष्मयोस्तु स्नेहपितृभक्तिवशात्।......धृतराष्ट्रोऽपि व्यासानुग्रहाद्राजर्षिपर्वणि पुत्रदर्शनवत् क्रतुकालेऽपि दृष्टवान्।......

या चोक्ता पाण्डुपुत्राणामेकपत्नीविरुद्धता।
सापि द्वैपायनेनैव व्युत्पाद्य प्रतिपादिता॥
यौवनस्थैव कृष्णा हि वेदिमध्यात् समुत्थिता।
सा च श्रीः श्रीश्च भूयोभिर्भुज्यमाना न दुष्यति॥

द्रोणवधाङ्गभूतानृतवादप्रायश्चित्तं......अन्तेऽपि अश्वमेधः प्रायश्चित्तत्वेन कृत एवेति न तस्य सदाचारत्वाभ्युपगमः।......यत्तु वासुदेवार्जुनयोर्मद्यपानमातुलदुहितृगमनं स्मृतिविरुद्धं [तत्राप्न विकारसुराभावस्य त्रैवर्णिकानां प्रतिषेधः मधुसीध्वोस्तु वैश्यक्षत्रिययोर्न प्रतिषेधः।

वसुदेवाङ्गजाता च कौन्तेयस्य विरुध्यते।
न तु व्यवेत सम्बन्धप्रभवे तद्विरुद्धता॥

......एतेन रुक्मिणीपरिणयनं व्याख्यातम्।”

‘नहुषने परपत्नी-व्यभिचार पापका अनुष्ठान कर बहुकाल पर्यन्त अजगर हो पापका फल भोग किया था इसके द्वारा उनका वह दुराचार ही प्रतिपादित हुआ है।

वशिष्ठने भी पुत्रशोकमें मोहित हो जो अनुष्ठान किया था, उसका कारण मोह रहा। इसलिये वह धर्म जैसा परिगृहीत नहीं होता। जो सदाचार पुण्य समझकर अनुष्ठान किया जाता, वही धर्मादर्श कहाता है। मान, क्रोध, लोभ, मोह वा शोक प्रभृति जिस आचरणका कारण ठहरता, उसे विद्वान् सदाचार कब समझता है। शास्त्रविहित रहनेसे वह भी अनुष्ठेय होता है। 'पुत्रहीना पुत्राभिलाषिणी रमणी ऋतुमती होनेसे गुरुकर्तृक आदिष्ट देवरसे पुत्रग्रहण कर सकती है—आगमके इस विधिके अनुसार कृष्णद्वैपायनने गुरुके आदेशसे मातृरूप भ्रातृजायासे पुत्रोत्पादन किया था। राम और भीष्मने स्नेह तथा पितृभक्ति वशत: विरुद्धाचरण किया है। वह सदाचार जैसा माना नहीं जाता। धृतराष्ट्र व्यासके अनुग्रहसे यज्ञका समय देख सकते थे, जिस प्रकार आश्चर्य पर्वमें उन्होंने अपने पुत्रोंको व्यासके अनुग्रहसे ही देखा था।

पञ्च पाण्डवकी एक पत्नी पर विरुद्धाचरणका जो उल्लेख हुवा है, कृष्णद्वैपायनने स्वयं उसका विरोध भञ्जन कर दिया है। पूर्णयौवना कृष्णा वेदिमध्यसे उत्थित हुयी थीं। मानुषीसे यह किसी प्रकार बनना सम्भव नहीं। वह मूर्तिमती लक्ष्मी थीं। लक्ष्मीको बहुत लोगोंके उपभोग करनेसे किसी प्रकारका दोष लग नहीं सकता।...युधिष्ठिरने द्रोणवधके निमित्त जो अनृत व्यवहार किया था, उसका उसी समय उन्होंने प्रायश्चित्त कर डाला। युधिष्ठिरने पीछे भी प्रायश्चित्त करनेके मनसे अश्वमेधका अनुष्ठान किया।

वासुदेव तथा अर्जुनके मद्यपान और मातुलदुहिता के विवाहको विरुद्धाचरण कहा गया है। इसका उत्तर यह है कि सुरा—गौड़ी, पैष्टी और माध्वी तीन प्रकारकी होती है। इसमें पैष्टी पीना ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यके लिये निषिद्ध है। गौड़ी तथा माध्वी क्षत्रिय एवं वैश्यकेलिये निषिद्ध नहीं।......सुभद्रा यदि वसुदेवकी कन्या रहतीं तो उनसे विवाह करने पर अर्जुनको दोष लगता। किन्तु वैसा नहीं है।...सुभद्रा ज्ञातिसम्पर्कसे बलरामकी भगिनी थीं। वह वसुदेवकी औरसजाता कन्या न रहीं। इसके द्वारा रुक्मिणीका परिणय शास्त्रविरुद्ध प्रतिपादित नहीं होता।'

अवशेषको यह बात आती है, कुमारिल ईश्वर मानते थे या नहीं। संक्षेपशङ्करजयप्रणेता माधवाचार्यके मतमें कुमारिलने वेदप्रचारक होते भी मीमांसावार्तिकमें ईश्वरका नास्तित्व प्रमाण किया है।*

किन्तु उनका वार्तिक और टुपटीका पढ़नेसे ऐसा बोध नहीं होता कि उन्होंने नास्तिकताका प्रचार किया था। उन्होंने तन्त्रवार्तिकमें लिखा है—

"नहि येन प्रमाणत्वं लब्धपूर्वं कदाचन।
तेन तत् सर्वदा लभ्यमित्याज्ञापयतीश्वरः॥"

जिसके द्वारा कभी प्रामाण्य मिला है, सर्वदा उसीके द्वारा प्रमाण करना पड़ेगा—ईश्वरने इस प्रकार आदेश नहीं किया है।

"प्रधानपुरुषेश्वरपरमाणुकारणादिप्रक्रियाः सृष्टिप्रलयादिरूपेण प्रतीतात्मा: सर्वा मन्त्रार्थवादज्ञानादेव दृश्यमानसूक्ष्मस्थूलद्रव्यप्रभृतिविकारभावदर्शनेन च द्रष्टव्याः।"

प्रकृति, पुरुष, ईश्वर, परमाणु और कारणादि प्रक्रिया, सृष्टि-प्रलय द्वारा प्रतीयमान होती है। यह समस्त विषय मन्त्र, अर्थवाद स्थूल तथा सूक्ष्म द्रव्य प्रभृति और विकार देख कर समझना पड़ेगा।

तन्त्रवार्तिकके उक्त दोनों स्थानोंमें स्पष्ट ही ईश्वरका अस्तित्व स्वीकृत हुवा है।

कुमारी (सं० त्रि०) कुमारो विद्यतेऽस्य, कुमार-इनि। व्रीह्यादिभ्यश्च। पा ५।२।११६। प्राय: षोड़शवर्षीय पुत्रयुक्त, जिसके कोई १६ सालका लड़का रहे।

"पुत्रिणा ता कुमारिणा विश्वमायुर्व्यश्नुतः।" (ऋक्, ८।३१।८)

कुमारी (सं० स्त्री०) कुमार स्त्रियां ङीप्। वयसि प्रथमे। पा ४।१।२०। १ अविवाहिता कन्या, बेब्याही लड़की। २ कन्या, लड़की। ३ परीक्षित्पुत्र भीमसेनकी पत्नी ४ सीता। ५ दुर्गाका नामभेद। ६ श्यामापक्षी। ७ द्वादश वर्षीया कन्या, बारह सालकी लड़की। ८ नवमल्लिका, चमेली। ९ घृतकुमारी। १० मोदिनीपुष्प, कोई फूल। ११ अपराजिता। १२ स्थूलैला, बड़ी इलायची। १३ वन्ध्याकर्कोटकी। १४ तरुणीपुष्प, कोई फूल। १५ वर्तमान कुमारिका अन्तरीप।

* "जैमिन्युपज्ञे ऽभिनिविष्टचेता: शास्त्रे निरास्थं परमेश्वरञ्च।"
(संक्षेपशङ्करजय, ७।१०१)

वह भारतके दक्षिण प्रान्त-सीमापर समुद्रके उपकूल अक्षा० ८° ५´ उ० और देशा० ७७° ३७´ पू० में अवस्थित है। १२९५ ई० को मार्कपालो उक्त स्थान देखने गये थे। कुमारिका देखो।

१६ द्वीप, जजोरा टापू। पृथिवीका मध्य भाग, जमीन्‌का दरमियानी हिस्सा। भारतखण्डको कुमारी कहते हैं। १७ शाकद्वीपानन्तर्गत सप्तनदी मध्य एक नदी। (विष्णुपुराण, २।४।६५) १८ छन्दोविशेष, एक बहर। वह षोड़शाक्षरसे बनती और ४ पाद रखती है। १९ वैद्यक वटिकाविशेष, किसी किस्मकी गोलियां। वह स्नायुरोगकी महौषध है। कुमारीवटिका खानेसे अग्नि बढ़ता है।

कुमारीवटिका इस प्रकार बनती है—स्वर्ण, रौप्य हरिताल तथा स्वर्णमाक्षिक समभाग ले १०० भावना देना चाहिये। फिर १ रत्ती प्रमाण वटिका बना लेते हैं। अनुपान आमलकीका रस है।

कुमारीकन्द (सं० पु०) कुमारीका कन्द, घीकुवारकी जड़।

कुमारीक्रीड़नक (सं० क्ली०) कुमारीभिः क्रीडातेऽनेन, कुमारी क्रीड़ करणे ल्युट् स्वार्थे कन्। यावादिभ्यः। पा ५।४।२९। कुमारीका क्रीड़ाद्रव्य, लड़कीका खिलौना।

कुमारीतन्त्र (सं० क्ली०) कुमार्याः पूजादिप्रकाशकं तन्त्रम्, ६-तत्। एक तन्त्र। उसमें कुमारी पूजा प्रभृति की कथा लिखी है।

कुमारीपाल (सं० पु०) कुमार्या पालः पालकः, ६-तत्। अविवाहिता कन्या अथवा वाग्दत्ता कन्याका अभिभावक, लड़कीकी परवरिश करनेवाला।

कुमारीपुत्र (सं० पु०) कुमार्याः अपरिणीतायाः पुत्रः विवाहात् प्रागेव जातः इत्यर्थः,। ६-तत्। १ कन्याकालकी उत्पन्न पुत्र, बेब्याही लड़कीका लड़का। २ पुत्रंजीव, एक पेड़। उसका संस्कृत पर्याय—गर्भकरी, षष्ठीपुत्र और अर्थसाधक है।

कुमारीपुत्री (सं० स्त्री०) पुत्रंजीव, एक पेड़।

कुमारीपुर (सं० क्ली०) कुमारीणां पुरमवस्थानगृहम्, ६-तत्। अन्तःपुर, जनानखाना, लड़कियोंके रहनेकी जगह।

कुमारीपूजन (सं० क्ली०) कुमारी पूजा देखो।

कुमारीपूजा (सं० स्त्री०) कुमार्याः पूजनं पूजा, ६-तत्। कन्याकी पूजा, लड़कीकी परस्तिश। तन्त्रमतसे ऋतुमती न होते षोड़श वर्ष पर्यन्त अविवाहित कन्याकी पूजा कर सकते हैं।

तन्त्रमें एक वत्सर वयस्का कन्याको सन्ध्या, द्विवर्षाको सरस्वती, तीन वत्सर वयस्काको त्रिधामूर्ति, चतुर्थवर्षाको कालिका, पञ्चवर्षीयाको सुभगा, छह वत्सर वयस्काको उमा, सप्तवर्षीयाको मालिनी, अष्टवर्षवयस्काको कुब्जका, नववर्षवालीको कालसङ्कर्षा, दशवर्षवालीको अपराजिता, ग्यारह वर्षवालीको रुद्राणी, बारह वर्षवालीको भैरवी, त्रयोदशवर्षीयाको महालक्ष्मी, चतुर्दशवर्षीयाको पीठनायिका, पञ्चदश वर्षवालीको क्षेत्रज्ञा और षोड़शवर्षीयाको पीठनायिका कहते हैं। कुमारीपूजाके लिये वह सभी प्रशस्त हैं।

"एकवर्षा भवेत् सन्ध्या द्विवर्षा सा सरस्वती।
त्रिवर्षं च त्रिधामूर्तिश्चतुर्वर्षा च कालिका॥
सुभगा पञ्चवर्षा तु षड्वर्षा च उमा भवेत्।
सप्तभिर्मालिनी साक्षादष्टवर्षा तु कुब्जिका॥
नवभिः कालसङ्कर्षा दशभिश्चापराजिता।
एकादशे च रुद्राणी द्वादशब्दा च भैरवी॥
त्रयोदशे महालक्ष्मी द्विसप्ता पीठनायिका।
क्षेत्रज्ञा पञ्चदशभिः षोड़शे चाम्बिका तथा॥
एवं क्रमेण सम्पूज्या यावत् पुष्पं न विद्यते।" (यामल)

कुमारीपूजाप्रयोग इस प्रकार है—सुन्दरी कुमारीको आनयन कर नानाविध अलङ्कारसे सजाना चाहिये। भक्तिपूर्वक वाग्भव बीजयुक्त कुमारीके सन्ध्यादि नाम उच्चारण कर प्रथम जलप्रदान करते हैं। अनन्तर उसको देवी भावना कर भक्तिभावमें पाद्य अर्घ्य प्रभृति उपचार द्वारा पूजा करना चाहिये। कुमारीके सन्ध्यादि नामोंमें मायावीज योगसे पाद्य, लक्ष्मीवीज योगसे अर्घ्य, कूर्चवीज योगसे चन्दन, मायावीज योगसे पुष्प और सदाशिवमन्त्रसे धूप एवं दीप प्रदान कर षडङ्गन्यास करते हैं। उसका विधान है—प्रथम तेजोमय शुभ्रवर्ण मन्त्र चिन्ता कर षड़ङ्गन्यास करना चाहिये। मन्त्र यह है—ऐं क्लीं श्रीं ह्सौ कुमारिके हृदयाय नमः, ह्रं ह्रुं वें टें श्रीं क्लीं ऐं स्वाहा शिरसे स्वाहा, ऐं कुलवागीश्वरकवचाय हूं ऐं भूरिकल्पेश्वरि नेत्रत्रयाय वौषट् क्लीं अस्त्राय फट्। तदनन्तर "ऐं सिप्रजयाय पूर्ववक्त्राय नमः, ऐं जयाय उत्तरवक्त्राय नमः"

मन्त्र पढ़ परिवार पूजा करते हैं। परिवार देवताका नाम—भास्कर, चन्द्र, दशदिक्‌पाल, सप्तर्ष्यादि, वीरभद्रा, कौलिनी, अष्टादशभुजा, काली और चण्डदुर्गा है। परिवारपूजा समापन कर नानाविध नैवेद्य, दुग्ध, क्षीर, पक्वान्न, सुरस पक्वफल और समय समय पर प्राप्त उत्कृष्ट द्रव्य चढ़ाना चाहिये। भक्तिपूर्वक पञ्चतत्त्व और कुलद्रव्य प्रदान कर यथाशक्ति महामन्त्र जपते हैं। कुमारीप्रणामका मन्त्र है—

"नमामि कुलकामिनीं परमभाग्यसन्दायिनीं
कुमाररतिचातुरीं सकलसिद्धिमानन्दिनीम्।
प्रवालगुटिकास्रजं रजतरागवस्त्रान्वितां
हिरण्यतुल्यभूषणां भुवनवाक्‌ कुमारीं भजे।"

उक्त मन्त्र पाठ कर नमस्कार करना और कुमारीको दक्षिणा देना चाहिये। कुमारीपूजासे निम्नलिखित फल मिलता है—

"कुमारीपूजनफलं वक्तुं नार्हामि सुन्दरि।
जिह्वाकोटिसहस्रैश्च वक्त्रकोटिशतैरपि॥
तस्मात्तां पूजयेद्वालां सर्वजातिसमुद्भवाम्।
जातिभेदो न कर्तव्यः कुमारीपूजने शिवे॥" (तन्त्रसार)

शतकोटि वत्सरमें सहस्रकोटि जिह्वा द्वारा भी कुमारीपूजाका फल कहा जा नहीं सकता। सब जातिकी कुमारी पूजनीय हैं। कुमारीपूजामें जाति भेद नहीं करना चाहिये।

कुमारीभोजन (सं० क्ली०) कुमार्याः भोजनम्। कुमारी कन्याओंको पूजन कर आहार करानेका विधान।

कुमारीश्वशुर (सं० पु०) कुमार्या श्वशुरः, ६-तत्। कन्याकाल उपभुक्ता स्त्रीके स्वामीका पिता।

कुमार्ग (सं० पु०) कुत्सितो मार्गः, कर्मधा०। कुपथ, नीतिविरुद्ध कार्य, बुरी चाल।

कुमार्गगामी (सं० त्रि०) कुपथ जानेवाला, जो बुरी राह चलता हो।

कुमार्गी, कुमार्गगामी देखो।

कुमालक (सं० पु०) कुमार संज्ञायां कन् रस्य ल, वा। १ सौवीर जनपद। २ सौवीर जनपदके अधिवासी।

कुमाला (हिं० पु०) वृक्ष विशेष, एक पेड़। कुमाला प्रायः युक्तप्रदेश, बम्बई, दक्षिणभारत और छोटानागपुरमें उत्पन्न होता है। उच्चता प्रायः १० फीट रहती है, पत्र चार-पांच इञ्च लम्बे लगते हैं। पुष्पित होनेका समय ज्येष्ठ आषाढ़ मास है। कुमालाका फल लोग खाते हैं।

कुमि—आराकानवासी एक जाति। कुमि लोग ब्रह्मजातिकी ही भिन्न शाखायुक्त हैं। वह देखनेमें सुन्दर, सुमुख, खर्वाकृति और परिश्रमी होते हैं। कुमि प्रधानतः दो भागोंमें विभक्त हैं—कमि और कुमि। आराकानी उन्हें आवाकुमि और आफकुमि कहते हैं। उनकी संख्या प्रायः १२००० है। कुमियोंकी भाषा कुछ कुछ ब्रह्मभाषासे मिलती है। वह कहते हैं—आजकल जहां ख्येन लोग रहते हैं, पहले उसी पहाड़ पर वह भी वास करते थे।

कुमित्र (सं० क्ली०) कुत्सितं मित्रम्। अपकारी बन्धु, खराब दोस्त। "अस कुमित्र परिहरे भलाई।" (तुलसी)

कुमिल्ला—त्रिपुरा जिलेका एक नगर। वह अक्षा० २३° २८´ ३० और देशा० ९०° ४३´ पू० में ढाकासे २६ कोस दूर अवस्थित है। कुमिल्लासे तीन कोस पश्चिम बृहत् राजप्रासाद और दुर्गादिका भग्नावशेष दृष्ट होता है। किसी समय उक्त सकल प्रासादमें त्रिपुराके राजा रहते थे। त्रिपुरा देखो।

कुमुख (सं० पु०) कुत्सितं मुखं यस्य। १ शूकर, सूवर। २ रावणका दुर्मुख नामक कोई योद्धा। (त्रि०) ३ कुत्सित मुखविशिष्ट, बुरे मुंहवाला।

कुमुत् (सं० क्ली०) कौ पृथिव्यां मोदते कु-मुद-क्विप्। १ कैरव, कोका, कुईं। २ रक्तोत्पल, लाल कमल। (त्रि०) ३ कृपण, कञ्जूस। ४ अप्रीत, नाराज। ५ निर्दय, बेरहम।

कुमुद (सं० पु०-क्ली०) कौ पृथिव्यां मोदते, कु-मुद मूलविभुजादित्वात् कः। कप्रकरणे लवभुजादभ्य उपसंख्यानम्। पा ३।२।४। (वार्तिक) १ कैरव, कोका, कुईं। कुमुदका संस्कृत पर्याय—कैरव, चन्द्रकांत, गर्दभ, कुमुत्, धवलोत्पल, कह्लार, शीतलक, शशिकान्त, इन्दुकमल, चन्द्रिकाम्बुज, गन्धसोम और श्वेतकुवलय है। भावप्रकाशके मतमें वह पिच्छिल, स्निग्ध, मधुर, आह्लादजनक और शीतल होता है। २ रक्तपद्म, लाल कंवल। ३ रौप्य, चांदी।

४ पद्म, कंवल। ५ कर्पूर, काफूर। ६ शाल्मलि द्वीपस्थ वर्षपर्वतभेद। ७ दक्षिणदिग्गज। ८ विष्णु। ९ वानरभेद। १० विष्णुके कोई पारिषद।

"ते विष्णुपार्षदाः सर्वे सुनन्दकुमुदादयः।" (भागवत, ७।८।३९)

११ मेरुके उपष्टम्भका पर्वतभेद। १२ सर्पराज विशेष। १३ दैत्यभेद। १४ कृष्णके कनिष्ठ भ्राता गदके पुत्र। १५ राजा उन्मत्तावन्तिके कोई विश्वस्त बन्धु। १६ कोई क्षुद्र द्वीप। १७ किसी प्रकार गुग्गुल। १८ वाद्यका तालभेद।

"एकविंशतिवर्णाङ्कि, भवेत् शृङ्गारके रसे।
कुमुदोऽभौढ़दर्श्चैव ताखी तुरङ्गलीलके॥" (सङ्गीतदामोदर)

१९ गाम्भारी वृक्ष। २० कुमुदकन्द। २१ कुम्भिका। २२ कट्फल वृक्ष। २३ कोई केतु। वह कुमुदाकार रहता और एक ही रात पश्चिममें निकलता है। कुमुदकी शिखा पूर्वको पड़ती है। उसके उदित होनेसे दश वर्ष पर्यन्त दुर्भिक्ष चलता है।

कुमुदक (सं० पु०) प्रपौण्डरीक, पुंडरिया।

कुमुदखण्ड (सं० क्लो०) कुमुदानां समूहः, कुमुदकमलादित्वात् खण्डः। कमलादिभ्यः खण्डः। पा ४।२।५१। (काशिका)

१ कुमुद समूह। २ कुमुदांश।

कुमुदगन्धा (सं० स्त्री०) कुमुदगन्धयुक्ता स्त्री।

कुमुदघ्नी (सं० स्त्री०) १ स्थावर विष विशेष, किसी किस्मका जहर। २ सविष क्षीरयुक्त वृक्ष, जहरीले दूधवाला पेड़।

कुमुदचन्द्र—एक जैन ग्रन्थकार। उन्होंने कल्याणमन्दिर-(पार्श्वनाथ) स्तोत्र प्रभृतिकी रचना किया है।

कुमुदचन्द्र—एक दिगम्बर जैनाचार्य। चालुक्यराज सिद्धराज जयसिंहने (१०९४-११४३ ई०) इनका और श्वेताम्बर जैनाचार्य भट्टारक देवसूरिका शास्त्रार्थ सुननेको एक सभाको आह्वान किया था। यह कर्णाटकसे अहमदाबाद पहुंचे। परन्तु देवसूरिने इनसे कहा कि आप पाटन चलिये, वहां हमारा और आपका वाद होगा। नग्नावस्थामें पाटन पहुंचने पर सिद्धराजने इनका बड़ा आदर किया। परन्तु सभामें इनके यह कहने पर कि 'कोई स्त्री मुक्ति नहीं पा सकती' महारानाका अपमान हुवा और मन्त्री भी इनको इस बातसे अपमानित हुए कि कपड़े पहननेवाले जैन मुनि मुक्तिसे वञ्चित रहते हैं। अतएव शास्त्रार्थमें इनको पराजित और इनके प्रतिपक्षी देवसूरिको विजयी स्वीकार किया गया।

कुमुदनाथ (सं० पु०) चन्द्र, चांद।

कुमुदपाल—बङ्गराज देवपालके पुत्र।

(भविष्यब्रह्मखण्ड, २०।४०)

कुमुदप्रिय (सं० पु०) चन्द्र, चांद।

कुमुदबन्धु, कुमुदप्रिय देखो।

कुमुदबान्धव कुमुदप्रिय देखो।

कुमुदरागा (सं० स्त्री०) धातकी वृक्ष, एक पेड़।

कुमुदवती (सं० स्त्री०) कुमुदानि सन्ति अस्याम् कुमुद-मतुप् मस्य वः। १ कुमुदिनी, कोईं। २ अनेक कुमुद-युक्त स्थान, कोकासे भरी हुयी जगह।

कुमुदवीज (सं० क्लो०) उत्पलवीज, कोकाका तुखम्। कुमुदवीजको लाई बनानेकी प्रणालीसे भूनने पर अच्छी लाई निकलती है। बहुतसे लोग निरम्बु उपवासमें असमर्थ होनेसे उसको (रविरश्मि-जात न होनेके कारण) खाया करते हैं। कुमुदवीजका संस्कृत पर्याय—कुमुद्वतीवीज और कैरविणीफल है। भावप्रकाशके मतमें वह स्वादु, रूक्ष, हिम और गुरु होता है।

कुमुदा (सं० स्त्री०) कुमुद-टाप्। १ कुम्भिका, जलकुम्भी। २ गाम्भारी वृक्ष। ३ शालपर्णी। ४ धातकी वृक्ष। ५ कट्फल। ६ देवी विशेष।

कुमुदाकर (सं० पु०) कुमुदानां आकरः, ६ तत्। अनेक कुमुदका उत्पत्तिस्थान, बहुतसे बघोले पैदा होनेकी जगह।

कुमुदाक्ष (सं० पु०) १ नागविशेष। २ विष्णुके कोई पार्षद।

कुमुदादि (सं० पु०) कुमुद आदी येषाम्, बहुव्री०। पाणिनिका कहा हुवा एक शब्दगण। उसमें कुमुद, शर्करा, न्यग्रोध, इत्कट, सङ्कट, कङ्कट, गर्त, गर्तवीज, परिवाप, निर्यास शकट, कच, मधु, शिरीष, अश्व, अश्वत्थ, वल्वज, यवास, कूप, विकङ्कट और दशग्राम शब्द सम्मिलित हैं। उक्त शब्दोंके उत्तर ठक् प्रत्यय आता है।

कुमुदानन्द—एक ख्यातनामा पण्डित। इन्होंने भट्टि काव्यको सुबोधिनी नाम्नी एक सुन्दर टीका बनायी है।

कुमुदाभिख्य (सं० क्लो०) कुमुदस्येवाभिख्या शोभा यस्या। रौप्य, चांदी।

कुमुदाली (सं० पु०) महर्षि पथ्यके शिष्य। इन्होंने अथर्व वेदको कोई शाखा प्रचार की है।

कुमुदावास (सं० पु०) कुमुदानामावासः, ६-तत्। १ कुमुदप्राय देश, कोकासे भरा हुवा मुल्क। २ कुमुदाधारस्थान, कोकाके रहनेकी जगह।

कुमुदिका (सं० स्त्री०) कुमुद-ठच्-टाप्। १ कट्फल। उसका संस्कृत पर्याय—कट्फल, सोमवल्क, कैटर्य, कुम्भिका, श्रीपर्णी, भद्रा और भद्रवती है। २ क्षुद्र वृक्ष विशेष, कोई छोटा पेड़। उसका वीज सुगन्धयुक्त होता है। ३ कुमुदिनी, कोई।

कुमुदिनी (सं० स्त्री०) कुमुदानि सन्त्यत्र देशे, कुमुद-पुष्करादित्वात् इनि-ङीप्। पुष्करादिभ्यो देशे। पा ५।२।१३५। १ कुमुदयुक्त पुष्करिण्यादि, कोकाका तलाव। २ कुमुद-समूह, कोकाका ढेर। ३ कुमुद पुष्प, कोकाका फूल। उसका संस्कृत पर्याय—कुमुदलता, कुमुद्वती और उत्पलिनी है।

"अलिरसौ नलिनीकुलवल्लभः कुमुदिनीकुलकेलिकलारसः।" (अमराष्टक)

४ रघुदेवकी माता। ५ चन्द्रप्रिया, चांदनी।

कुमुदिनीनायक (सं० पु०) चन्द्र, चांद।

कुमुदिनीपति, कुमुदिनीनायक देखो।

कुमुदिनीवनिता (सं० स्त्री०) सुन्दरी स्त्री, खूबसूरत औरत।

कुमुदिनीवीज, कुमुदवीज देखो।

कुमुदी (सं० स्त्री०) १ कट्फलवृक्ष, एक पेड़। २ गाम्भारी वृक्ष।

कुमुदेश, कुमुदनायक देखो।

कुमुदेश्वररस (सं० पु०) यक्ष्माधिकारका रसविशेष, तपेदिककी एक दवा। मृत ताम्र २ भाग और वङ्ग भस्म १ भाग यष्टीमधुके क्वाथसे भावना दे और शोषण कर माषार्ध सेवन करना चाहिये। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

कुमुद्वत् (सं० त्रि०) कुमुदानि सन्त्यस्मिन् कुमुदैर्निर्वृत्तो वा, कुमुदानां भव इति वा, कुमुद-ड्मतुप् मस्य वः कुमुदनड्वेतसेभ्यो ड्मतुप्। पा ४।२।८७। कुमुदयुक्त, कोकासे भरा हुवा।

"हंसश्रेणीषु तारासु कुमुद्वत्सु च वारिषु।" (रघुवंश)

कुमुद्वती (सं० स्त्री०) कुमुद्वत् स्त्रियां ङीप्। १ बहुपद्मयुक्त जलाशय, कंवलसे भरा हुवा तलाव। २ कुमुदिनी, कोका।

"म्लपयति यथा शशाङ्को कुमुद्वतीं न तथाहि दिवसः।" (शाकुन्तल)

३ पद्मका वृक्ष। ४ वृक्ष विशेष, कोई पेड़। उसका फल विषाक्त होता है। ५ नागराज कुमुदकी भगिनी और कुशकी पत्नी। ६ विमर्षणकी पत्नी। ७ कोई नदी। ८ षड्ज स्वरकी चारमें द्वितीय श्रुति।

कुमुद्वतीश (सं० पु०) कुमुद्वतीनां ईशः पतिः, ६ तत्। चन्द्र, चांद।

कुमुद्वतीवीज, कुमुदवीज देखो।

कुमेड़िया (सं० पु०) क्षुद्र हस्ति विशेष, एक छोटा हाथी।

कुमेध (सं० पु०) कुत्सिता ईषत् मेधा यस्य, कुमेधा असिच्। नित्यमसिच् प्रजामेधयोः। पा ५।४।१२। मन्दमेधायुक्त, बदतमोज।

"अति सम्भाव्य विश्रम्भात् पर्यपृच्छन् कुमेधसः।" (भागवत, ३।२०।१३)

कुमेरु (सं० पु०) पृथिवीका दक्षिण प्रान्त, ध्रुव ताराके ठीक नीचेकी जगह। पौराणिक मतमें पाताल वा दैत्योंके वासस्थानको कुमेरु कहते हैं।

कुमेरुसमुद्र (सं० पु०) दक्षिणमेरुका पार्श्ववर्ती समुद्र, कुतुब-जनूबीकी बगलका बहर।

कुमेड़ (हिं० पु०) प्रतारण, धोका।

कुमेड़िया (हिं० वि०) प्रतारक, धोकाबाज।

कुमोद (हिं०) कुमुद देखो।

कुमोदक (सं० पु०) कुं पृथिवीं मोदयति तस्या भारविनाशनेनेत्यर्थः, कु-मुद्-णिच्-ण्वुल्। विष्णु।

कुम्प (सं० पु०) कुपि अच्। बाहुकुण्ठ, काठकी मोंगरी।

कुम्फा—चीनावोंकी एक आराध्य देवी। सन्तान कामनासे चीना रमणी उनकी पूजा करती हैं।

१४६५ ई० को चीनके कान्‌ठम नगरमें कुम्-फा नाम्नी एक धार्मिक रमणी आविर्भूत हुयी थीं। वह सदा मन्दिर जाती और देवार्चना कर आती

थीं। लोगोंके विश्वासानुसार कुम्फा प्रेतात्माओंसे कथा वार्ता कर सकती थीं। एक समय उन्होंने संसारको असार समझ जलमग्न हो प्राण त्याग किया। पीछे शवदेहको तैर आने पर लोगोंने उठाकर पवित्र भावसे रखा किया और उसके बदले चन्दनकाष्ठकी मूर्तिको बना कर जला दिया। कान्ठनके पार्श्वस्थ हैनाना नामक स्थानमें कुम्फाका प्रधान मन्दिर विद्यमान है।

कुम्ब (सं० पु०) १ बाहुकुण्ठ, मोंगरी। २ मस्तकका आच्छादन वस्त्र, सर ढांकनेका कपड़ा।

"कुरीरमस्य शीर्षं णि कुम्बं चाधिनिदधमसि।" (अथर्ववेद. ६।१३८।३)

कुम्बा (सं० स्त्री०) कुवि वेष्टने अङ्-टाप्। चिन्तिपूजिकथिकुम्बिचर्चश्च। पा ३।३।१०५। १ उत्तमरूप आच्छादन, उम्दा तौरका परदा। जिस वेष्टनके लगानेसे अस्पृश्य वा अयज्ञीय यज्ञको देख नहीं सकते, उसे कुम्बा कहते हैं।

"तस्मिन् दीक्षीतकुम्बां शस्यां निदधाति।" (तैत्तिरीयसंहिता)

२ स्थूलशाकट, स्थूल अङ्गरक्षिणी, मोटी अंगरखी।

कुम्बिक (सं० पु०) जनपदविशेष, एक मुल्क।

कुम्बिया (सं० स्त्री०) वृक्षविशेष, एक पेड़।

कुम्बो—पञ्जाबवासी जातिविशेष, एक पञ्जाबी कोम। कुम्बो लोग प्राचीन कम्बोज जातिकी एक शाखा समझ पड़ते हैं।

कुम्या (सं० स्त्री०) कुवि-यत्-टाप्। एकार्थप्रतिपादक विध्यर्थयुक्त वैदिक ब्राह्मणका वाक्यभेद।

"साम वा गाथां वा कुम्यां वा अभिव्याहारे दुव्रतस्वाध्यायव्यवच्छेदाय।"

(शतपथब्राह्मण, ११।५।७।१०)

कुम्भ (सं० पु०-क्ली०) कुं भूमिं उम्भति, कु-उन्भ पूरणे अच् शकन्ध्वादिवत् साधुः। १ त्रिवृत् वृक्ष। २ गुग्गुलु। ३ मृत्तिकानिर्मित जलपात्रविशेष, मट्टीका घड़ा।

"शतं कुम्भा असिञ्चतं सुरायाः।" (ऋक्. १।११६।७)

४ मृतव्यक्तिके अस्थिसंग्रहका पात्र, मुर्देकी हड्डियां इकट्ठा करनेका बरतन। ५ मेषादि द्वादश राशिके मध्य एकादश राशि। (Aquaruis) धनिष्ठाका शेषार्ध और शतभिषा तथा पूर्व भाद्रपदका पादत्रय उसके रहनेका स्थान है। राशिचक्रके ३०० अंशोंके पीछे ३० अंश कुम्भके हैं। उसकी अधिष्ठात्री देवता कलसधारी पुरुष हैं। कुम्भ चरणरहित, कर्वुरवर्ण, वायुपित्त कफप्रकृति, शूद्रवर्णा, स्निग्ध, उष्ण, अर्धस्वर और पश्चिमदिक्‌स्वामी है। वह स्थिर राशि और शनिका क्षेत्र है। कुम्भराशि द्विपद है। उसके बाहुका मूल त्रिकोण है। उसके उदरमें कुम्भ नामक लग्न रहता है। कुम्भ लग्नमें जन्म लेनेसे मनुष्य चञ्चलचित्त, धनवान्, अलस, परदाररत, महाबलशाली और सुखी होता है। कुम्भराशिका मान ३ दण्ड ५८ पल है।

६ परिमाणभेद, कोई तौल। दो द्रोण अथवा ६४ सेरमें एक कुम्भ होता है। ७ हस्तीके मस्तकका सम्मुख भाग, हाथीके सरका सामनेवाला हिस्सा। कुम्भ स्थानसे ही हस्तीका मस्तक दोनों ओर विभिन्न हो ऊर्ध्वको उत्थित होता है।

"मध्ये न तनुमध्या मे मध्यं जितवतीत्ययम्।
इभकुम्भा भिनक्त्यस्याः कुचकुम्भनिभो हरिः॥"

(साहित्यदर्पण, १० प०)

८ योगकी कोई प्रक्रिया। ९ वृक्षमूल विशेष, किसी पेड़की जड़। वह औषधार्थ व्यवहृत होता है। १० वेश्याका पति, रण्डीका खाविन्द। ११ अगस्त्य मुनिके पिता। १२ कोई दैत्य। वह दानवश्रेष्ठ प्रह्लादके पुत्र और निकुम्भके भ्राता थे। १३ राक्षसविशेष, कुम्भकर्णके पुत्र। १४ वर्तमान अवसर्पिणीके १९श अर्हत्। १५ वानरभेद। १६ बुद्धके २४ जन्मोंमें कोई एक जन्म। १७ कोई रागिणी। सरस्वती और धानश्रीके योगसे उक्त रागिनी उत्पन्न हुयी है। (सङ्गीतदामोदर) १८ मेवाड़के एक राणा। कुम्भ राणा देखो। १९ जैपालवृक्ष, जायफलका पेड़। २० कट्‌फल वृक्ष। २१ पृश्निपर्णी। २२ पाटला वृक्ष।

कुम्भक (सं० पु०) कुम्भ इव कायति प्रकाशते निश्चलत्वात् वायुरोधात् स्फीतोदरत्वात् वा, कुम्भ-कै-क। प्राणायामका एक अङ्ग। कुम्भक करनेका नियम निम्नलिखित है—

दक्षिण हस्तके अङ्गुष्ठ द्वारा दक्षिण नासापुट धारण करके वाम नासापुट द्वारा वायु पूरण करनेका

नाम पूरक है। फिर दक्षिण हस्तके अङ्गुष्ठ द्वारा दक्षिण नासापुट और अनामिका तथा कनिष्ठा द्वारा वाम नासापुट धारण करनेको धारक वा कुम्भक कहते हैं। अनन्तर अनामिका तथा कनिष्ठासे वाम नासापुटको धारण करके दक्षिणनासापुट द्वारा वायु-के निःसारणसे रेचक होता है। यह साधारण विधि है। ऋग्‌वेदीको अङ्गुष्ठ एवं तर्जनी द्वारा, सामवेदीको अङ्गुष्ठ तथा अनामिका द्वारा, यजुर्वेदीको अङ्गुष्ठ एवं अनामिका द्वारा और अथर्ववेदीको सकल अङ्गुलि द्वारा प्राणायाम करना चाहिये।

"कुम्भकः पूरको रेचः प्राणायामस्त्रिलक्षणः।
पूरकं पूरणं वायोः कुम्भकं स्थापनं क्वचित्॥
बहिर्निःसारणं तस्य रेचकः परिकीर्तितः।
दक्षिणे रेचयेद्वायुं वामेन पूरितोदरः॥
कुम्भेन धारयेन्नित्यं प्राणायामं विदुर्बुधाः।
अङ्गुष्ठेन पुटं ग्राह्यं नासाया दक्षिणं पुनः॥
कनिष्ठानामिकाभ्याञ्च वामं प्राणस्य संग्रहे।
अङ्गुष्ठतर्जनीभ्यान्तु ऋगवेदी सामगायनः॥
अङ्गुष्ठानामिकाभ्याञ्च याह्यं सव रयर्वभिः।" (याज्ञवल्क्य)

जितने क्षण पर्यन्त वायु पूरण करते, उसका चतुर्गुण समय कुम्भकमें रखते हैं। फिर कुम्भकके अर्ध समयमें रेचक करना उचित है।

पतञ्जलिके मतमें श्वास-प्रश्वासके गतिविच्छेदको प्राणायाम कहते हैं। आसनसिद्ध होने पीछे प्राणायाम करना चाहिये—

"तस्मिन् सति श्वासप्रश्वासयोर्गतिविच्छेदः प्राणायामः।"
(योगसूत्र, साधन ४९)

बाह्य वायुके आचमन अर्थात् वाम नासापुट द्वारा आकर्षण करनेका नाम श्वास और कोष्ठस्थित वायुके नासापुटसे निःसारणका नाम प्रश्वास है। इसी श्वास-प्रश्वासके गतिविच्छेदको प्राणायाम कहते हैं। यह प्राणायामका सामान्य लक्षण है। कोष्ठस्थित वायुको निःसारण कर धारणा करते समय, बाह्य वायुको पूरण कर धारणा करते समय और धारणारूप कुम्भकमें श्वासप्रश्वासका गतिविच्छेद पड़ता है। उपरि-उक्त सूत्रके व्याख्यावसरमें भाष्यकार और भाष्यव्याख्यानमें वाचस्पतिने इस प्रकार प्रतिपादन किया है—

"सत्यासनजये बाह्यस्य वायोराचमनं श्वासः कोष्ठस्य वायोर्निःसारणं प्रश्वासः तयोर्गतिविच्छेद उभयाभावः प्राणायामः। रेचकपूरककुम्भकेष्वस्ति श्वासप्रश्वासयोर्गतिविच्छेद इति प्राणायाम सामान्यलक्षणमेतदिति। तथाहि यत्र बाह्यवायुराचम्य अन्तर्धार्यते पूरके तत्रापि श्वासप्रश्वासयोर्गतिविच्छेदः। यत्रापि कोष्ठवायुर्विरेच्य बहिः धार्यते रेचके तत्रास्ति श्वासप्रश्वासयोर्गतिविच्छेदः एवं कुम्भकेऽपि इति।"

प्राणायाम त्रयका विशेष लक्षण भी पातञ्जलमें उक्त हुवा है—

"बाह्याभ्यन्तरस्तम्भवृत्तिर्देशकालसंख्याभिः परिदृष्टो दीर्घसूक्ष्मः।"
(योगसूत्र, साधन० ५०)

प्रश्वास पूर्वक गतिके अभावको बाह्यवृत्ति अर्थात् रेचक, श्वासपूर्वक गतिके अभावको आभ्यन्तर अर्थात् पूरक और श्वास तथा प्रश्वास उभयके अभावको स्तम्भ-वृत्ति अर्थात् कुम्भक कहते हैं। अमृतबिन्दूपनिषद्‌में दो प्रकारका कुम्भक कहा है—

"वक्त्रेणोत्पलनालेन वायुं कृत्वा निराश्रयम्।
एवं वायुर्ग्रहीतव्यः कुम्भकस्येति लक्षणम्॥" (अमृतबिन्दूपनिषत्, १२)

मुख पद्मनालके तुल्य बना वायुको निःसारण करके अवरोध करना चाहिये। इसको एक प्रकारका कुम्भक कहते हैं। इसी प्रकार वायुको आकर्षण करके अवरोध करनेका नामभी कुम्भक हो है। प्राणायाम शब्द देखो

प्राणवायुको आकर्षण पूर्वक स्तम्भनस्वरूप स्तम्भ-वृत्तिको कुम्भक कहते हैं। कुम्भक कहनेका कारण यह है कि कुम्भमें जलके निश्चल रहनेको भांति कुम्भक-में भी प्राण वायु स्थिरभाव अवलम्बन करता है—

"आन्तरस्तम्भकवृत्तिः कुम्भकः। तस्मिन् जलमिव कुम्भे निश्चलतया प्राणा अवस्थाप्यन्ते इति कुम्भकः।" (भोजवृत्ति)

कुम्भकभट्ट—श्राद्धसागर नामक स्मृतिसंग्रहकार।

कुम्भकरेचना (सं० स्त्री०) जेपालवृक्ष, जायफलका पेड़।

कुम्भकर्ण (सं० पु०) कुम्भौ इव कर्णौ अस्य, बहुव्री०। १ राक्षसविशेष। कुम्भकर्ण रावणका मध्यम भ्राता रहा। विश्रवा मुनिके औरससे राक्षसकी कन्या कैकसी-के गर्भमें उसने जन्म लिया था। रामायणमें इस प्रकार वर्णित हुवा है—

महामुनि विश्रवा तपस्या करते थे। पिताके आदेशसे कैकसी जाकर उनके निकट उपस्थित हुयी। मुनिने उसे देख कर कहा था—

'भद्रे! तुम किसकी कन्या हो? फिर हमारे निकट

किस कारण आकर उपस्थित हुयी हो।' केकसीने अधोमुखी होकर उत्तर दिया—'मेरे पिताका नाम सुमाली है। उनके आदेश प्रतिपालन करनेको हो मैं आपके निकट आयी हूं। आप अन्तर्यामी हैं। आप अपने आप समझ जायेंगे—मैं किस कारण आयी हूं।' कियत् काल पीछे मुनि बोल उठे—'तुम्हारे तीन पुत्र और एक कन्या होगी। प्रथम दो पुत्र अतिशय दुश्चरित्र निकलेंगे, केवल कनिष्ठ पुत्रको धर्ममें मति रहेगी।' राक्षसी वर पाकर चली गयी! क्रमश: उसके तीन पुत्र और एक कन्या हुई। उसीके द्वितीय पुत्रका नाम कुम्भकर्ण था। कुम्भकर्ण बाल्यकालमें ही अतिशय दुर्वृत्त हो गया। उसके अमित पराक्रमसे सकल देवता सर्वदा सशङ्कित रहते थे। मातामहके उपदेशसे उक्त तीनों भ्रातावोंने घोरतर तपस्या आरम्भ की। उनकी तपस्यासे सन्तुष्ट हो ब्रह्मा वर देने चले थे। उस समय देवगण भीत होकर उनसे कहने लगे—'वर न पाने पर भी कुम्भकर्ण अत्यन्त दुर्दान्त हो गया है। यदि उसे आपने वर दे दिया, तो फिर त्रिभुवनका निस्तार नहीं।' ब्रह्माने चिन्ताकर सरस्वतीको कुम्भकर्णके निकट भेजा था। पीछे ब्रह्मा उपस्थित हो कर कहने लगे—'राक्षस! हम वर देने को आये हैं। जो अभीष्ट हो, प्रार्थना करो।' कुम्भकर्णने कहा—'आप ऐसा विधान कीजिये, जिससे मैं सर्वदा निद्रामें अचेतन रह सकूं।' ब्रह्मा 'तथास्तु' कह कर चले गये। अनन्तर रावणने उक्त संवाद सुना था। उसने जाकर ब्रह्मासे बहुत प्रार्थना की उन्होंने सन्तुष्ट होकर कहा था—'छह मास पीछे एक दिन कुम्भकर्ण जागरित होगा। किन्तु अकाल निद्रा भङ्ग होनेसे निश्चय उसका मृत्यु आ जायगा।' पीछे दुष्टमति रावणने श्रीरामचन्द्रजीके साथ प्रथमवार युद्धमें पराजित हो कुम्भकर्णको अकाल जगाया था। इसीसे कुम्भकर्णने श्रीरामचन्द्रजीके साथ युद्ध करके प्राण परित्याग किया। (रामायण, उत्तरकाण्ड)

जैन पद्मपुराणमें लिखा है—

कौतुकमंगल नगरके राजा व्योमबिन्दुके नंदवती नामक रानीके गर्भसे कौशिकी और केकसी ये दो कन्या उत्पन्न हुई। जिसमें पहली यक्षपुरके अधिपति राजा विश्रवको व्याही गई और उसके वैश्रवण पुत्र हुआ। दूसरी केकसी, पाताल लंकाके स्वामी सुमालीका पुत्र रत्नश्रवा जब विद्या सिद्ध करने पुष्पक नामा वनमें गया तब उसकी परिचर्या करने पिताने रख दी और जब विद्या सिद्ध हो गई तब उसके साथ व्याही गई।

एक दिन केकसीने रात्रिके अंतिम प्रहरमें तीन स्वप्न देखे—गर्जता हुआ सिंह, चमकता सूर्य, और पूर्ण चंद्रमा। फल स्वरूप उसके यथाक्रमसे मानी रावण, तेजस्वी कुम्भकर्ण और शांतस्वभाव विभीषण ये तीन पुत्र हुवे। तीनो भाईयोंने भीमनामक वनमें जाकर मंत्र जाप द्वारा अनेक विद्यायें सिद्ध कीं। और उनमें कुम्भकर्णको सर्वहारिणी, अतिसंवर्धिनी जृंभिनी, व्योमगामिनी और निद्राणी ये पांच विद्या हाथ लगीं। कुम्भकर्ण धार्मिक, शूरवीर, जैनशास्त्रज्ञ व्यक्ति था और उसका गोत्र राक्षस था। विजयार्ध पर्वत पर जो मनुष्य रहते हैं, वे विद्याधर कहलाते हैं और विद्या द्वारा वे आकाशमें चल फिर सकते हैं। उनहीमेंसे एक कुम्भकर्ण था। (सातवां पर्व)

महाभारतके मतानुसार पुष्पोत्कटाके गर्भसे कुम्भकर्णने जन्म लिया और रामानुज लक्ष्मणसे युद्ध करके प्राण त्याग दिया था। (भारत, वनपर्व)

कृत्तिवास-रामायणमें कुम्भकर्णकी माताका नाम निकषा उक्त हुवा है। उसके कुम्भ और निकुम्भ नामक दो पुत्र रहे।

२ मेदपाटके राजा। वह प्रसिद्ध वास्तुशास्त्रकार मण्डनके प्रतिपालक थे। कुम्भराणा देखो।

३ 'पाठरत्नकोष' नामक ग्रन्थके रचयिता।

कुम्भकर्ण महेन्द्र—एक विख्यात सङ्गीतशास्त्रज्ञ। उन्होंने संस्कृत भाषामें सङ्गीतमीमांसा, सङ्गीतराज और गीतगोविन्दकी 'रसिकप्रिया' नाम्नी टीका रचना की है।

कुम्भकामला (सं० स्त्री०) १ कामलाभेद, किसी प्रकारका पाण्डुरोग। कालाधिक्यसे खरीभूता कामला कुम्भकामलामें परिणत हो जाती है। वमि, अरोचक,

और ज्वरादिक रहनेसे कुम्भकामला असाध्य है।
(माधवनिदान)

कुम्भकामलाका मुष्टियोग यह है—बहेड़े काष्ठके अग्निसे मण्डूरको जला क्रमश: ८बार गोमूत्रमें निक्षेप करते हैं। पीछे उसे चूर्ण कर मधुके साथ सेवन करना चाहिये। पाण्डुरोग देखो।

कुम्भकार (सं० पु०) जातिविशेष, एक कौम। ब्रह्मवैवर्त-पुराणके मतमें—

"विश्वकर्मा च शूद्रायां वीर्याधानं चकार सः।
ततो बभूवुः पुत्राश्च नवैते शिल्पकारिणः॥ १९॥
मालाकारकर्मकारशङ्खकारकुविन्दकाः।
कुम्भकारः कांस्यकारः षडेते शिल्पिनां वराः॥ २०॥"
(ब्रह्मखण्ड, १०म अध्याय)

विश्वकर्माके शूद्रस्त्रीमें वीर्याधान करनेसे नौ प्रकार-के शिल्पकारी उत्पन्न हुवे थे। मालाकार, कर्मकार (लोहार), शङ्खकार, कुम्भकार और कांस्यकार (कसेरा) छह श्रेणी अपर शिल्पियोंमें श्रेष्ठ हैं।
कसेरा देखो।

भार्गवरामोक्त जातिमालाका देखते—
"पट्टिकात् गोपकन्यायां कुलालो जायते ततः।"

पट्टिकसे गोपकन्याके गर्भमें कुम्भकार जातिकी उत्पत्ति है।

परशुरामपद्धतिमें भी कुम्भकार जातिकी उत्पत्ति इसी प्रकार लिखित हुयी है। रुद्रयामलोक्त जाति-मालाके मतमें—
"पट्टकाराच्च तैलक्यां कुम्भकारो बभूव ह।"

पट्टकारसे तैलकी (तेलन)के गर्भमें कुम्भकार उत्पन्न हुवा है। फिर निम्नलिखित वचन भी मिलता है—
"वैश्यायां विप्रतश्चौरात् कुम्भकार स उच्यते।"

वैश्याके गर्भमें विप्रसे उत्पन्न होनेवाली जातिको कुम्भकार कहते हैं। किन्तु उक्त विषय पर मतभेद दृष्ट होता है।

युक्तप्रदेशमें ऐसे भी पृथक् मत मिलता है कि ब्राह्मणसे क्षत्रियाके गर्भमें कुम्भकार उत्पन्न हुवा है।

प्राचीन ग्रन्थादिमें इन सकल जातियोंके उत्पत्ति-सम्बन्ध पर एक मत प्रायः देख नहीं पड़ता।

इन जातियोंके उत्पत्ति-सम्बन्ध पर एक अच्छा प्रवाद प्रचलित है। कुम्भकारोंके कथनानुसार महा-देवके विवाह-समय कुम्भका प्रयोजन पड़ा। किन्तु उस समय कुम्भ बनाना कोई जानता न था। उसी अभावमें पड़ महादेवने अपने गलदेशकी रुद्राक्ष-मालासे दो रुद्राक्ष निकाल एकसे एक पुरुष और दूसरेसे एक स्त्री को बनाया था। उन्होंने महादेवके विवाहका घट प्रस्तुत कर दिया। उक्त स्त्रीपुरुषसे ही कुम्भकार जाति चली है। इसीसे बोध होता कि कुम्भकार अपने चक्र पर महादेवकी मूर्ति प्रतिष्ठा कर पूजा करते और अपना उपाधि 'रुद्रपाल' लिखते हैं। जातिविभागके मध्य वह नव शाखाके ही अन्तर्गत कहे जाते हैं।

कुम्भकार मृत्तिकाके जलपात्र, रन्धनपात्र, पुत्तल प्रभृति बनाते और उन्हींको बेच कर अपनी जीविका चलाते हैं। स्थानभेदसे उनके भिन्न भिन्न सम्प्रदाय पाये जाते हैं। उनकी उपासना, आचार-व्यवहार और सामाजिक अवस्था भी स्थान भेदसे भिन्न भिन्न हो गयी है।

युक्तप्रदेश और भारतके अन्यान्य स्थानमें कनौ-जिया, हथेलिया, सुवारिया, बरधिया, गदहिया, कस्तूर और चौहानी कुम्हार मिलते हैं। उनमें बरधिया बैल और गदहिया गधे पर मट्टी लादते हैं। चौहानी अपनेको ब्राह्मण और क्षत्रिय उभय जातिके सम्मिश्रणसे उत्पन्न बताते हैं। युक्तप्रदेशमें प्रायः ५ लक्ष कुम्भकार रहते हैं। अकेले गोरखपुर अञ्चलमें ही ढाई लाखसे कम कुम्हार न मिलेंगे।

दाक्षिणात्यके बम्बई प्रभृति स्थानमें भी कुम्भकार जातिका वास है। हिन्दी भाषामें उन्हें कुम्हार कहते है। उनका आचार-व्यवहार भी कुछ स्वतन्त्र है।

वङ्गदेशके भिन्न भिन्न स्थानोंमें २० प्रकारकी विभि-न्न कौमोंके कुम्भकार मिलते हैं। उसमें बड़भगिया, काले और छोटभगिया लाल रंगके बरतन बनाते है। राजमहलियोंकी भाषा बंगला और हिंदी मिश्रित है। ढाकामें बहुतसे नानकशाही कुम्हार रहते हैं। कुम्भकारोंमें वैशाखमास महादेवकी पूजा होती है।

श्राद्ध एकादश दिवस किया जाता है। मगहिया कुम्हार अन्यान्य हिन्दू कुम्भकारोंसे पृथक् हैं।

पावना अञ्चलमें चौरासी कुम्भार रहते हैं। उनका जल ब्राह्मण व्यवहार नहीं करते। चौरासी श्रेणीके सम्बन्धमें एक प्रवाद प्रचलित है। किसी दिन मुर्शिदावादके नवाब उनके निवासस्थानको घूमने गये थे। उसी समय कुम्भकारोंने उन्हें मृत्तिकाके कितने ही फल और पुष्प उपहार दिये। वह ऐसे सुन्दर बने थे, कि नवाबने प्रीत हो कुम्भारोंको ८४ ग्राम पुरस्कार दे डाले। तदवधि वह चौरासी नामसे ख्यात हैं।

कहते हैं कि मुर्शिदावाद और हुगलीके वारेन्द्र कुम्भकार आदि रुद्रपालके पुत्रोंमें किसी एकसे उत्पन्न हुवे हैं। किन्तु वह व्यक्ति अपनी भगिनीके साथ कुकार्यमें लिप्त था। मुर्शिदावादमें दासपाड़ा श्रेणीके भी कुम्हार रहते है। प्रवादानुसार वह रुद्रपालके दासीगर्भ-सम्भूत पुत्रसे उत्पन्न हैं। कह नहीं सकते—उक्त प्रवाद कहां तक सत्य है।

उड़ीसाके जगन्नाथी कुम्हार अपने गोत्रके अद्भुत अद्भुत नामोंके सम्बन्धमें पूछने पर बताते हैं—"हमारे गोत्रके सकल आदिपुरुष मुनि रहे। उन्होंने दक्षयज्ञमें जाकर महादेवके भयसे यही समस्त रूप धारण कर पलायन किया।" वह स्व स्व गोत्रके नामानुसारी जीवके प्रति प्रभूत दया तथा भक्तिप्रकाश करते और उनका वध अथवा कोई अनिष्ट करनेसे सदा दूर रहते हैं।

पूर्व बङ्गके कुम्भकार स्वगोत्रमें विवाह करते हैं। किन्तु मगहियों और विहारके अधिकांश अन्यान्य कुम्हारोंके मध्य स्वगोत्र, मातुलगोत्र, पितृमातुल गोत्र अथवा मातृ-मातुल गोत्रमें विवाह प्रचलित नहीं।

जगन्नाथी कुम्हार परस्पर आदान प्रदान करते हैं। उनमें शाल मत्स्यकी पूजा भी होती है।

धर्म सम्बन्धमें प्रवादानुसार महादेवसे उत्पन्न होते भी अनेक कुम्भकार वैष्णव सम्प्रदायभुक्त हैं। बङ्गालके कुम्हार अपर शिल्पकारोंकी भांति विश्वकर्माको पूजते हैं। जगन्नाथियोंमें राधाकृष्ण और जगन्नाथकी पूजा होती है। नानकपन्थी गुरु नानक साहबकी अर्चना करते हैं। जगन्नाथी कुम्हार अपना आदिपुरुष होनेसे रुद्रपालकी मूर्ति निर्माण कर पूजा करते हैं। वह रुद्रपालकी मूर्तिको राधा और कृष्णकी मूर्तिके मध्यस्थलमें रख देते हैं। अग्रहायण मासकी शुक्ला षष्ठीको उक्त देवताकी पूजा होती है। चैत्र मासमें कुछ कुम्भकार विन्ध्यवासिनीको पूजते हैं। विहारके कुम्भकारोंमें सर्पोंके देवतावोंकी पूजा प्रचलित है। छोटा नागपुरके कुम्भकार आर्य और अनार्य देवतावोंको पूजते हैं।

सकल कुम्भकार मृत व्यक्तिका दाह करते हैं। कहीं एक मास, कहीं दश दिन और बारह दिन अशौच रह पीछे श्राद्ध किया जाता है।

लखनऊवाले कुम्हार मट्टीके अच्छे अच्छे बरतन और खिलौने बनाते हैं।

कुम्भकार (सं० पु०) १ सर्प विशेष, कोई सांप। २ कुक्कुभपक्षी, किसी किस्मका जंगली मुरगा। ३ कोई प्राचीन कवि। क्षेमेन्द्रने औचित्यविचारचर्चामें कुम्भकारके नामसे उनकी कविता उद्धृत की है।

कुम्भकारक (सं० पु०) कुक्कुभपक्षी, एक जङ्गली मुरगा।

कुम्भकारकुक्कुट (सं० पु०) क्षुद्रकुक्कुट विशेष, एक छोटा मुरगा।

कुम्भकारिका (सं० स्त्री०) १ कुलत्थाञ्जन, काला सुरमा। २ वनकुलत्था, जङ्गली कुलथी। ३ मनःशिला, मैनसिल।

कुम्भकारी (सं० स्त्री०) कुम्भकार-ङीप्। टिड्ढाणञ् द्वयसज्द०। पा ४।१।१५। १ कुम्भकारपत्नी, कुम्हारिन। २ कुलत्थाञ्जन, काला सुरमा। ३ वनकुलत्था, जङ्गली कुलथी। ४ मनःशिला, मैनसिल।

कुम्भकालुक (सं० क्ली०) घोल, मट्ठा।

कुम्भकेतु (सं० पु०) एक असुर। कुम्भकेतु सम्बरासुरके शत पुत्रोंके मध्य एक पुत्र रहे। सम्बरासुरके युद्धमें कृष्णपुत्र प्रद्युम्नने उन्हें मार डाला।

(हरिवंश, विष्णुपर्व, १६१ अ०)

कुम्भकोण (सं० पु०) १ कुम्भका कोण, घड़ेका कोना। २ जनपद विशेष, कोई मुल्क। कुम्भकोण कुम्भघोणम् नामसे विख्यात है। कुम्भघोणम् देखो।

कुम्भघोणम्—मन्द्राजके अन्तर्गत एक तीर्थ। उक्त तीर्थ कावेरी नदीके तीर तञ्जाधुर (तञ्जोर) से उत्तरपूर्व २३ मील दूर अवस्थित है। प्रसिद्ध चिदम्बर तीर्थसे रेलपथ पर जानेमें पांच घण्टेसे कुछ कम समय लगता है। कुम्भघोणम् बराबर तञ्जापुरवाले राजावोंके अधीन था। स्कन्दपुराणके मतमें "प्रलयके समय शिक्य (शिकहर)में रख एक कुम्भ (घड़ा) अमृत महामेरु पर लटका करके रख दिया गया था। प्रलयका जल बढते बढते शिक्य पर्यन्त पहुंचा और कुम्भ डूब गया। फिर वह बहते बहते दक्षिण दिक्को चला था। शेषको प्रलयान्तमें इसी स्थान पर वह आ गिरा और उसकी नाक्षा (टोंटी) टूट जानेसे अमृत निकल पड़ा। भगवान् शङ्करने देखा कि अमृत गिरनेसे उक्त स्थल पवित्र हो गया था। वह इस स्थानको तीर्थभूमि समझ लिङ्गरूपसे आविर्भूत हुवे। यही लिङ्गदेव इस स्थानके प्रधान देवता कुम्भेश्वर हैं।* कुम्भको नाक्षा (टोंटी) से तीर्थका नाम कुम्भघोण पड़ा है।

कुम्भघोण किसी समय चोल राजावोंकी राजधानी था। करिकाल राजा उक्त स्थानके शासनकर्ता रहे। चिदम्बरके ब्राह्मण दीक्षित कहलाते और संख्यामें तीन सहस्रमात्र पाये जाते थे। चेत्रमाहात्म्यके मतानुसार उक्त तीन सहस्र दीक्षित पद्मयोनिके आदेशसे वाराणसीमें जाकर रहे। स्थलपुराणको देखते जब पञ्चम मनुके पुत्र गौड़राज श्वेतवर्ण वा हिरण्यवर्ण चिदम्बरमें थे, तब वह चिदम्बरके आकाशरूपी शङ्कर चिदम्बररहस्य देवके आदेशसे उक्त तीन सहस्र दीक्षित स्वदेशको ले गये। उनमें प्रत्येक स्वतन्त्र शकट पर बैठ वहां पहुंचा था। उनके समवेत होनेके स्थानको कनकसभा कहते हैं। स्थलपुराणोक्त मधुराके सुन्दर पाराक्य उक्त कनकसभामें उपस्थित होते समय कुम्भकोण देख गये। फिर किसीके मतमें ई० दशम शताब्दके मध्यकाल चोलराज वीरचोल रायने कनकसभाको निर्माण किया।

कुम्भघोणमें छह प्रसिद्ध मन्दिर हैं—१म कुम्भेश्वर, २य सोमेश्वरस्वामी, ३य नागेश्वरस्वामी, ४र्थ शार्ङ्गपाणिस्वामी, ५म चक्रपाणिस्वामी, और ६ष्ठ रामस्वामी।

अष्टादश खृष्टाब्दके शेषभागमें तञ्जापुरके नायकवंशीय शिवप्पा नायकके पौत्र रघुनाथ नायकने रामस्वामीका मन्दिर बनवाया था। नायक राजा वैष्णव रहे। सुतरां अनुमान होता है कि शार्ङ्गपाणि और चक्रपाणिका मन्दिर भी उन्होंके हाथ बना था। चोलराजा शैव रहे। इसलिये सम्भव है कि खृष्टीय सप्तम शताब्दको उन्होंने दूसरे ३ शिवमन्दिर बनवाये हों। न्यूनाधिक ५ शत वत्सर पूर्व लक्ष्मीनारायणस्वामी नामक एक व्यक्तिने शिवमन्दिरोंका संस्कार तथा परिवर्धन कराया और सेवानिर्वाहके लिये निष्कर भूसम्पत्तिको क्रय करके लगाया था। स्वर्गीय लक्ष्मीनारायणस्वामीकी प्रस्तरमूर्ति अद्यापि देवालयमें विद्यमान है। पूजक प्रत्यह उसकी भी पूजा करते हैं।

भगवान् शङ्कराचार्यके प्रसिद्ध शृङ्गेरि मठका एक शाखामठ कुम्भकोणमें वर्तमान है। मठाध्यक्ष भी शङ्कराचार्य ही कहाते हैं।

कुम्भघोणका सुबृहत् गोपुर भारत विख्यात है। उसमें शिल्प और कारुकार्यकी पराकाष्ठा प्रदर्शित हुयी है।

कुम्भघोण नगर अधिक जनाकीर्ण है। उसमें ५० हजारसे कम लोग नहीं रहते। हिन्दुवोंमें सैकड़े पीछे २० ब्राह्मण हैं। प्रति वर्ष देवालयमें अनेक उत्सव होते हैं—मेषमासमें चैत्रोत्सव, २ ऋषभ मासमें १० दिन पर्यन्त वसन्तोत्सव (इस समय भगवान् वसन्त वायुके सेवनको वहिर्गत होते हैं), ३ कर्कटमास ७ दिन तक पवित्रोत्सव, ४ कन्यामास नवरात्रोत्सव, ५ तुलामास १० दिनतक झूलनोत्सव, ६ धनुमास २० दिन पर्यन्त वेदाध्ययन एवं रथोत्सव, मकरमास जलक्रीडोत्सव (तेप्पन) और मीनमास पुष्पोत्सव। एतद्व्यतीत प्रति १२श वर्ष माघ मासको महाकुम्भका मेला लगता है।

* नेपाली बौद्धोंके स्वयम्भूपुराणमें उक्त कुम्भेश्वर देवका उल्लेख मिलता है। फिर कुम्भघोण स्थान भी कुम्भतीर्थ नामसे वर्णित हुवा है। (स्वयम्भू पुराण, ४९ अ०)

कुम्भेश्वर शिव लिङ्गाकार हैं। चक्रपाणि दण्डाय-मान विष्णुकी मूर्ति हैं। शार्ङ्गपाणि शेषनागको शय्या पर अर्धशायित विष्णु हैं। उनकी नाभिसे ब्रह्म उत्थित हुवा है। रामस्वामीके मन्दिरमें धनुर्बाण-हस्त श्रीराम, लक्ष्मण और सीताकी मूर्ति विराजित है।

कुम्भघोणमें एक कालेज और अनेक संस्कृत विद्यालय विद्यमान हैं। एतद्भिन्न जेलखाना और पान्थ-निवास (सराय) भी बना है।

कुम्भचक्र (सं० पु०) एक चक्र। चक्र देखो।

कुम्भज (सं० पु०) कुम्भे जायते, कुम्भ-जन्-ड। १ अगस्त्य मुनि। "कहं कुम्भज कहं सिंधु अपारा।" (तुलसी) २ द्रोणाचार्य। ३ वकवृक्ष, अगस्त्यका पेड़। (त्रि०) ४ कुम्भजात, घड़ेसे पैदा।

कुम्भजन्मा (सं० पु०) कुम्भ जन्म उत्पत्तिर्यस्य। अगस्त्य मुनि।

कुम्भड़िका (सं०स्त्री०) कुष्माण्डशालि, किसी किस्मका धान।

कुम्भतुम्बी (सं०स्त्री०) कुम्भ इव तुम्बी, कर्मधा०। १ वृहत् तुम्बी, गलकद्दू। उसका संस्कृत पर्याय—कुम्भालावु, गोरक्षतुम्बी, गोरक्षी, नागालावु, घटाभिधा और घटालावु है। वैद्यक निघण्टुके मतमें—वह मधुर, शीतल, तर्पण, गुरु, रुच्य, पुष्टिकर, शुक्र-वर्धन, वलप्रद, पित्तनाशक और गर्भपोषक होती है।

कुम्भदासी (सं० स्त्री०) कुम्भस्य वेश्यापतेर्दासी, ६-तत्। १ कुट्टनी, कुटनी। २ कुम्भिका।

कुम्भनदास—हिन्दी भाषाके एक व्रजवासी कवि। १५५० ई० को यह विद्यमान रहे। कुम्भनदास वल्लभाचार्यके शिष्य थे। कविताका नमूना यह है—

"यमुने रस खानिको सीस नवाऊं।
ऐसी महिमा जानि भक्तिकी सुखदानि जोइ मांगूं सोइ पाऊं॥
पतितपावन करण नाम लीन्हें तरण दृढ़ करि गहे चरण कहूं न जाऊं।
कुम्भनदास गिरिधरण मुख निरखति यही चाहत नहीं पलक लगाऊं॥
"तुम नीके दुहि जानत गैया
चलिये कुंवर रसिक नंदनबन लागौं तिहारी पैया॥"
तुमहि जानिकर कनकदो हिनी घरसे पठई मैया।
निकटहि है यह खरकि हमारी नागर लेउ बलैया॥
देखियत परम सुदेश लरकई चित चुहट्यो सुंदरैया॥
कुम्भनदास प्रभु मान लई रति गिरि गोवर्धन रैया॥"

कुम्भनाभ (सं० पु०) कुम्भइव नाभिरस्य, कुम्भ-नाभि-अच्। दैत्यराज वलिके पुत्र।

कुम्भपतिया—उपासक सम्प्रदाय-भेद। सम्बलपुर जिलेमें उक्त सम्प्रदायका प्रधान अड्डा है। इसको छोड़ मध्य-प्रदेशके भी ३० गांवोंमें कुम्भपतिया लोग रहते हैं। वह कहते कि (प्रायः १८६४ ई०) अलेखस्वामी नामक एक देवपुरुषने उनके मतको प्रवर्तन किया था। उनके रूपको वर्णना लिखकर को जा नहीं सकती। वह हिमालयकी भांति उच्च रहे। अलेखस्वामीने ही प्रथम ६४ व्यक्तियोंको दीक्षित करके अपना मत सिखाया था।

कुम्भपतिया अलेखस्वामीकी भांति उक्त ६४ व्यक्तियोंको भी देवभावसे पूजते हैं।

वह सकल हिन्दू देवतावोंको विश्वास करते, किन्तु किसीकी मूर्तिका अस्तित्व नहीं मानते। और मूर्तिको नहीं पूजते। कुम्भपतिया कहते कि सकल देवता ईश्वर-स्वरूप हैं। किन्तु किसीने ईश्वरके स्वरूपको नहीं देखा। विना देखे कोई कैसे उस मूर्तिकी कल्पना कर सकता है!

रोग होनेसे कुम्भपतिया औषध सेवन न करके ईश्वर पर निर्भर करते हैं। रुग्णावस्थामें केवलमात्र जल और मृत्तिकाको ग्रहण किया जाता है।

उनमें ३ शाखा हैं। तन्मध्य २ शाखा तो एककाल ही संसारनिर्लिप्त वैरागी हैं। केवल एक शाखा गृहस्थ देख पड़ती है।

कुम्भपतिया वैरागी नग्न रहते, केवल कटिमें वल्कल परिधान करते हैं। दूसरे सम्प्रदायका उनको बड़ा आक्रोश रहता है। एक बार कुम्भपतियोंके कोई प्रधान गुरु अपनी सुन्दरी शिष्या पर आसक्त हुवे। उसमें किसी किसीने उनसे ग्लानि की थी। गुरुने उक्त संवाद पाकर कहा—'तुम लोगोंके लिये कोई भावना नहीं। विधर्मी लोगोंको दमन करनेके लिये इस रमणीके गर्भसे महावीर अर्जुन जन्मग्रहण करेंगे।' यथाकाल उस रमणीके एक कन्या हुयी थी। प्रथम घृणा करके किसीने उस शिशुको ग्रहण न किया। गुरुने सबको पुकार कर कहा था—'तुम्हारे लिये चिन्ता

करनेकी कोई बात नहीं। यही बालिका मन्त्रबलसे विधर्मी लोगोंको ध्वस्त करेगी। इसको ले लो।' गुरुकी बातसे सब ठण्डे पड़े। किन्तु उनके दुर्भाग्य क्रमसे बालिकाने इहलोक परित्याग किया। फिरभी उसके ऊपर कुम्भपतियोंको जो विश्वास हुवा था, वह कम न पड़ा। गुरु जहां प्रणयिनोके साथ बैठते थे, वहीं एक वेदी बनायी गयी। उनके शिष्य प्रत्यह प्रातःकाल उभको देव-देवी समझ पूजने लगे।

उसी समय किसी दूसरे दलने अपर गुरुका आश्रय लिया था। उनमें अतिकठोर नियम निकाला गया—जो व्यक्ति अपने धर्म प्रतिपालनसे विमुख होगा और जो मिथ्याभाषा किंवा कोई गुरुतर अपराध करेगा, उसको शिरश्छेदका दण्ड मिलेगा।

कई वर्ष हुवे, उक्त समाजके १२ पुरुष १५ स्त्रियोंके साथ जगन्नाथ देवको मूर्ति जला देनेके लिये पुरी पहुंचे थे। शेषको दूसरे यात्रियोंने मालूम होने पर उनका गतिरोध किया। उस समय एक कुम्भपतिया मारा गया और दूसरे धृत हो ३ मासके लिये कारागारको भेज दिये गये। महिमाधर्मी देखो।

कुम्भपद्यादि (सं० पु०) पाणिनि उक्त शब्दगण विशेष। इसमें निम्नलिखित शब्द सम्मिलित हैं—कुम्भपदी, एकपदी, जालपदी, मुनिपदी, शूलपदी, गुणपदी, सूत्रपदी, गोधापदी, कलशीपदी, विपदी, द्विपदी, त्रिपदी, षट्पदी, दासीपदी, तृणपदी, शितिपदी, विष्णुपदी, सुपदी, निष्पदी आर्द्रपदो, कुणिपदी, कृष्णपदी, शुचिपदी, द्रोणीपदी (द्रोणपदी), द्रुपदी, शूकरपदी, शकृत्पदी, अष्टापदी, स्थूणापदी, अपदी और सूचीपदी इत्यादि।

कुम्भपर्णी (सं० स्त्री०) कुष्माण्डीलता, कुम्हड़ेकी बेल।

कुम्भपाद (सं० त्रि०) कुम्भ इव मध्यस्थलः स्फोतः पादो यस्य, बहुव्री०। स्फोतपाद, मोटे पैरोंवाला।

कुम्भपुटा (सं० स्त्री०) श्वेतत्रिवृता, सफेद निसोत।

कुम्भपुष्पी (सं० स्त्री०) रक्तपाटलवृक्ष, एक पेड़।

कुम्भफला (सं० स्त्री०) महाकुष्माण्डी, बड़ा कुम्हड़ा।

कुम्भमण्डूक (सं० पु०) कुम्भे मण्डूकः, पात्रे समितादित्वात् सत्पुरुषनिपातः। पात्रे समितादयः। पा २।१।४८। कूपमण्डूक, स्वल्प ज्ञानविशिष्ट, अदूरदर्शी, कुयेंका मेंड़क, कम-अक्ल, नादान्। कुम्भस्थित भेक जिस प्रकार कुम्भातिरिक्त स्थानको जा नहीं सकता, उसी प्रकार क्षुद्र आयतनमें संबद्ध ज्ञानवाला व्यक्ति उससे अतिरिक्त विषयको धारण करनेमें असमर्थ रहता है। इसीसे कुम्भमण्डूकका अर्थ स्वल्पज्ञानविशिष्ट है।

कुम्भमुष्क (सं० पु०) कुम्भ इव मुष्कोऽण्डो यस्य। एक वैदिक दैत्य। उसका अण्ड कुम्भकी भांति बृहत् रहा।

कुम्भमुद्रा (सं० स्त्री०) एक तान्त्रिक मुद्रा।

कुम्भमूर्धा (सं० पु०) हरिवंशवर्णित एक दानव।

कुम्भमेला—कुम्भ वा पुष्कर योगके उपलक्षमें लगनेवाला मेला। कुम्भयोगका अपर नाम पुष्करयोग है। स्थानविशेषमें १२ वर्षके अन्तरसे उक्त योग आता है। स्कन्दपुराणमें लिखा है—

"मकरस्थो यदा भानुस्तदादेव गुरुर्यदि।
पूर्णिमायां भानुवारे गङ्गा पुष्कर ईरिता।
गङ्गाद्वारे प्रयागे च कोटिसूर्यग्रहैः समः॥"

मकर राशिमें बृहस्पति और सूर्य मिलित होने पर यदि पूर्णिमातिथि पड़ती, तो प्रयाग और गङ्गाद्वार (गङ्गोत्तरी) में गङ्गा पुष्कर तुल्य हो जाती हैं। वह कोटिसूर्य ग्रहणके समान है।

"सिंहस्थे दिनकरे तथा जीवेन संयुते।
पूर्णिमायां गुरोर्वारे गोदावर्यास्तु पुष्करः॥
मेषस्थे दिवानाथे देवानाञ्च पुरोहिते।
सोमवारे सिताष्टम्यां कावेरी पुष्करो मतः॥
कर्कटस्थे दिवानाथे तथा जीवेन्दुवासरे।
अमायां पूर्णिमायां वा कृष्णा पुष्कर उच्यते॥"
(स्कन्दपुराण, पुष्करखण्ड)

सूर्य और बृहस्पति सिंह राशिमें मिलित होने पर बृहस्पति वारको यदि पूर्णिमा तिथि पड़ती, तो गोदावरीमें पुष्करयोग लगता है। इसी प्रकार शुक्लपक्षीय अष्टमी तिथिको मेषराशि पर सूर्य एवं बृहस्पतिके मिलित होनेपर कावेरीमें और श्रावण मास बृहस्पति किंवा सोमवारको अमावस्या वा पूर्णिमाके दिन कृष्णा नदीमें पुष्करयोग होता है।

कुम्भयोनि (सं० पु०) कुम्भो योनिरुत्पत्तिस्थानं यस्य, बहुव्री०। १ अगस्त्य मुनि।

२ वशिष्ठ मुनि। ३ द्रोणाचार्य। ४ द्रोणपुष्पी वृक्ष (स्त्री०) ५ एक अप्सरा। (महाभारत, ३।४३। ३०) ६ वक वृक्ष, अगस्तका पेड़।

कुम्भयोनिका (सं० स्त्री०) १ द्रोणपुष्पी क्षुप, एक झाड़। २ वक वृक्ष, अगस्तका पेड़।

कुम्भ राणा—चित्तौरके एक राजा। वह मुकुलजीके पुत्र रहे। कुम्भ राणाने १४१८ ई०को अपने मातुल मारवाड़के राजाकी विशेष सहानुभूति मिलनेपर पैतृक सिंहासन पर आरोहण किया। मेवाड़का अदृष्ट बदला था। धर्मविद्वेषी शत्रु उनके पराक्रमसे पराहत हो क्रमशः अवनत हुये। परिणामदर्शी कुम्भ राणाने अपनी असाधारण प्रतिभाके बल घोर विपद् पड़नेकी संभावना समझ पूर्वसे ही तदुपयोगी आयोजन लगा रखा था। उसी समय मालव और गुर्जर राज्यके दोनों नृपति दिन दिन चित्तौरकी समधिक श्रीवृद्धि देख ईर्ष्यापरतन्त्र हो कुम्भको पराजय करनेके अभिप्रायसे प्रतिज्ञासूत्रमें आवद्ध हुवे और १४४० ई० को ससैन्य चित्तौर नगरको आक्रमण करने लगे। महाराज कुम्भने लक्ष अश्व एवं पदातिक और चतुर्दश शत हस्ती ले प्रबल प्रतापसे उभयको पराजय किया और अवशेषमें मालवराज मुहम्मद खिलजीको बांध लिया।

अबुल फजलने अपने प्रसिद्ध इतिहास ग्रन्थमें उक्त घोर संग्रामकी वर्णना की है। उन्होंने विजातीय होते भी कुम्भको उदारताकी प्रशंसा कर लिखा है—'कुम्भको मुहम्मदने निष्कृति दान की थी। किन्तु उन्होंने मुक्तिके विनिमयमें कुछ भी ग्रहण नहीं किया वरन् मालवराजको विपुल उपढौकन दे सम्मान सहकारसे उनके राज्यमें पहुंचा दिया। भट्ट ग्रन्थमें लिखा है कि मुहम्मद खिलजी छह मासकाल चित्तौरमें अवरुद्ध रहे राणाने विजित मुहम्मदके मुकुट और जयलब्ध अन्यान्य द्रव्यको जयनिदर्शनस्वरूप अपनी राजधानीमें रखा था। बाबरने आत्मजीवनके वृत्तान्तमें उल्लेख किया है कि उक्त मुकुट उन्हें राणा सांगाके पुत्रने उपहार दिया।

विजयलाभके ११ वर्ष पीछे राणा कुम्भने एक विजयस्तम्भ बनाया था। उसमें विजयलाभका समस्त विषय लिखा है। भट्टग्रन्थ पाठसे यह बात समझ पड़ती कि मालवराजने परिशेषको कुम्भराणाके साथ बन्धुता संस्थापन की थी।

कुम्भ नगर अधिकार कर हनूमान् देवकी प्रतिमूर्तिके साथ कई विशाल कपाट ले गये थे। हनूमान् देवकी उक्त प्रतिमूर्ति चित्तौरके एक द्वार पर अवस्थित है। चित्तौरका वह वृहत् द्वार 'हनूमान्-द्वार' कहलाता है। मेवाड़की रक्षाके लिये जो ४० दुर्ग स्थान स्थान पर विराजमान् थे, उनमें बत्तीस कुम्भराणाके बनवाये रहे।

आबू पर्वतके शिखरदेशपर परमारोंका एक दुर्ग था। कुम्भ राणाने जीर्ण संस्कार करा उसमें दूसरा एक कोष्ट बनवा दिया। उक्त दुर्ग उनको अतिशय प्रीतिप्रद था। वह अनेक समय उसमें रहा करते थे। उक्त दुर्गमें कई प्रस्तरमन्दिर हैं। एक मन्दिरके अन्तर्भागमें कुम्भ और उनके पिताकी पाषाणनिर्मित दो प्रतिमूर्ति हैं। जिस स्थान पर वर्तमान सिरोही अवस्थित है, वहीं राणाने वासन्ती नामक दुर्ग बनाया था। तद्भिन्न शिरोनल और देवगढ़ सुरक्षित रखनेको उन्होंने माचिन नामक दूसरा दुर्ग भी निर्माण कराया।

इसको छोड़ करके अपर दो कीर्तियोंका भी विवरण मिलता है। उनमें एकका नाम कुम्भश्याम है। वह आबू पर्वत पर संस्थापित है। दूसरी कीर्ति मेवाड़के उच्च प्रदेशसमूहके पश्चिम प्रान्तमें सद्रि-गिरिपथके मध्य अवस्थित है। कहा जाता है कि उक्त कीर्तिनिकेतन निर्माण करनेमें १० करोड़से अधिक रुपया लगा था। कुम्भने अपने कोषागारसे ८ लाख रुपया दिया, अवशिष्ट प्रजाने साहाय्य किया।

कुम्भराणा एक सुकवि रहे। उनकी कविता सकल आध्यात्मिक भावोंसे परिपूर्ण है। उन्होंने गीतगोविन्दका एक परिशिष्ट बनाया था।

मालवराजके जनैक राठोर-सामन्तकी कन्या मीरा बाईके साथ राणाका विवाह हुवा। मीरा बाईने कुम्भसे कविता-रचना सीखी और धर्मविषयिणी बहुत सी कविता रचना भी की थी। मीराबाई देखो।

झालावाड़के सरदारकी एक दुहिताके साथ मारवाड़के राजाका विवाह-सम्बन्ध स्थिर हुवा था। किन्तु विवाहसे पहले ही कुम्भराणा उसे हर ले गये। उससे राठोरों और सिसोदियोंका प्रशमित विद्रोहानल उमड़ उठा था। किन्तु किसी प्रकार कोई राणाका कुछ बना न सका। कुम्भने प्रबल प्रतापसे ५० वर्ष राजत्व रखा था। कालकी कुटिल गति अचिन्तनीय है। उनके पुत्र ऊदाने गुप्तभावमें छुरिकाप्रहारसे उनका प्राण संहार किया।

कुम्भराशि (सं० पु०) द्वादश राशिके मध्य एकादश राशि। कुम्भ देखो।

कुम्भरी (सं० स्त्री०) दुर्गा, पार्वती।

कुम्भरेता (सं० पु०) कुम्भे रेताः कारणमस्य, बहुव्री०। १ अगस्त्य। २ अग्नि।

"हविषा यो द्वितीयेन सोमेन सह पूज्यते।
रथप्रभु रथाध्वा च कुम्भरेताः स उच्यते॥"
(भारत, वन, २१८ अ०)

कुम्भलग्न (सं० क्लो०) कुम्भस्य कुम्भराशेर्लग्नमुदयकालः, ६-तत्। कुम्भराशिका उदय काल।

कुम्भला (सं० स्त्री०) मुण्डिरी, गोरखमुण्डी।

कुम्भवारुणी (सं० स्त्री०) मुण्डिरि भेद, कोई एक मुण्डी।

कुम्भवीज, कुम्भवीजक देखो।

कुम्भवीजक (सं० पु०) कुम्भ इव वीजमस्य, कुम्भ-वीज स्वार्थे कः। अरिष्टफल वृक्ष, रीठेका पेड़।

कुम्भशाला (सं० स्त्री०) कुम्भस्य शाला निर्माणगृहम्। ६-तत्। कुम्भनिर्माणस्थान, मट्टीके घड़े बननेकी जगह।

कुम्भशालि (सं० पु०) स्वनाम-ख्यात धान्यविशेष, एक धान। वह मधुर, स्निग्ध और वातपित्तघ्न होता है। (राजनिघण्टु)

कुम्भसन्धि (सं० पु०) कुम्भयोः सन्धिर्मिलनस्थानम्, ६-तत्। हस्तीके कुम्भद्वयका मिलनस्थान।

कुम्भसंभव (सं० पु०) कुम्भः सम्भवोऽस्य, कुम्भ सं-भू अपादाने अप्। १ अगस्त्य मुनि। २ वशिष्ठ मुनि। ३ द्रोणाचार्य। ४ विष्णु।

"आपवः स विभुर्भूत्वा कारयामास वै तपः।
छादयित्वात्मनो देहमात्मना कुम्भसम्भवः॥" (हरिवंश, २०१।१)

कुम्भसर्पिः (सं० क्लो०) एकादशोत्तर शतवार्षिक पुराण घृत, १११ सालका पुराना घी। वह रक्षोघ्न होता है। (सुश्रुत)

कुम्भहनु (सं० पु०) एक राक्षस। (रामायण, ६।३२।१५)

कुम्भा (सं० स्त्री०) कुत्सितवृत्त्या कुम्भा उदरपूर्तिर्यस्या। १ वेश्या, रण्डी। २ उखा, भरतिया, बटलोई। ३ कटफल वृक्ष। ४ पृश्निपर्णी। ५ पाटला वृक्ष। ६ द्रोणपुष्पी। ७ श्वेत त्रिवृता। ८ तुम्बी, तोंबी।

कुम्भाख्या (सं० स्त्री०) रक्तपाटल, एक पेड़।

कुम्भाट (सं० पु०) कुम्हडेका पेड़।

कुम्भाण्ड (सं० पु०) कुम्भ इव अण्डोऽस्य, बहुव्री०। १ दैत्यजातिविशेष। उनका अण्डकोष कुम्भकी भांति बृहत् रहा। २ बाणासुरके कोई मन्त्री। (हरिवंश, १७५ अ०) (क्लो०) ३ कुष्माण्ड, कुम्हड़ा।

कुम्भाण्डक (सं० क्लो०) कुम्भाण्डा एव, कुम्भाण्ड-कन्। कुष्माण्ड, कुम्हड़ा।

कुम्भाण्डी (सं० स्त्री०) कुष्माण्डी, कुम्हड़ा।

कुम्भाधिप (सं० पु०) कुम्भस्याधिपः, ६-तत्। कुम्भलग्नका अधिपति, शनिग्रह।

कुम्भारी (सं० स्त्री०) कुष्माण्डी, कुम्हड़ेका पेड़।

कुम्भाद्री, कुभारी देखो।

कुम्भालाबु (सं० स्त्री०) कुम्भकारमलाबुः। महा-दुग्धालाबु, गोल कद्दू।

कुम्भासिचेत्र—दक्षिण कनाड़ाका एक पुण्य स्थान। वह कोण्डपुरके उत्तर अवस्थित है। कोटीश्वर लिङ्गके कारण कुम्भासिक्षेत्र दक्षिणापथमें पवित्र तीर्थ माना जाता है। कुम्भासिक्षेत्रमाहात्म्य नामक संस्कृत ग्रन्थमें उसका विस्तृत विवरण द्रष्टव्य है।

कुम्भाह्वय (सं० पु०) कुम्भकामला, यरकान, कंवलबाई।

कुम्भिक, कुम्भीक देखो।

कुम्भिका (सं० स्त्री०) १ वारिपर्णी, उसका संस्कृत पर्याय—वारिपर्णी, श्वेतपर्णी, अश्वकुम्भी, पानीय, पृषक, आकाशमूली, कुवेण, जलवल्कल, कुम्भी, वारिमूली,

खमूलिका, पर्णी, पृश्नी, खमूलि, खमूली, वारिकर्णिका कुमुदा और दलाढ़क है। २ रक्तपाटला। ३ नेत्रवर्त्मज रोगविशेष, आंखकी पलकमें पैदा होनेवाली एक बीमारी। वह कुम्भीका वीजके सदृशाकार रहनेसे उक्त नाम द्वारा पुकारी जाती है। कुम्भिका प्रान्तज एवं विदीर्ण रहती और बहती तथा फिर भरती है। माधवनिदानमें लिखा है—'वर्त्मके अन्तमें जो पिड़का पड़ कर फूटती और बहती है, वही कुम्भिका है। कुम्भिका कुम्भीक वीज सदृश और सन्निपातज होती है।' ४ पाटल वृक्ष। ५ द्रोणपुष्पी। ६ गुग्गुलु। ७ शूकदोषविशेष, एक बीमारी।

कुम्भिकाद्यतैल (सं० क्ली०) नाड़ीव्रणाधिकारका तैल विशेष, जखम पर लगाया जानेवाला एक तैल। तैल ४ शरावक, क्वाथार्थ कुम्भीका (जलकुम्भीकी जड़), खर्जूरी, कपित्थ, विल्व तथा उदुम्बरादि पुष्पफल वृक्षोंका फल शलाटु (कच्चे फल) कल्क ४ शरावक और वारि ३२ शरावक मट्टीके कोरे बरतनमें भली भांति उबाल ८ शरावक बचनेसे उतार लेना चाहिये। वस्त्रसे छान कर उक्त क्वाथको मुस्तक, सरलकाष्ठ, प्रियङ्गु, त्वक्, एलापत्र, नागकेशर, मोचरस, जातीकोष, लोध्र और धातकीपुष्पका १ शरावक कल्क डाल करके फिर तैलको पकाते हैं। (रसरत्नाकर

कुम्भितित्तिर (सं० पु०) तित्तिरपक्षिभेद, एक प्रकार का तीतर।

कुम्भिनरक (सं० क्ली०) कुम्भीपाक नरक।

कुम्भिनी (सं० स्त्री०) मृगेर्वारुवृक्ष, सौधिनी, खुशबूदार कचेलिया। २ जैपाल वृक्ष, जायफलका पेड़। ३ पृथिवी, जमीन्।

"गौरिला कुम्भिनी क्षमा।" (मल्लिनाथ, माघटीका, २०।५४)

४ कुम्भयुक्तस्त्री, घड़ेवाली औरत। "तास्ते विषं विजभिर उदकं कुम्भिनीरिव।" (ऋक् १।१९१।१४)

कुम्भिनीफल, कुम्भिनीवीज देखो।

कुम्भिनीवीज (सं० क्ली०) कुम्भिन्या वीजम्, ६ तत्। जैपाल, जायफल।

कुम्भिपाकी (सं० स्त्री०) कट्फलवृक्ष, एक पेड़।

कुम्भिमद (सं० पु०) कुम्भिनो हस्तिनो मदः, ६-तत्। हस्तीका मद।

कुम्भिल (सं० पु०) १ लिपिचौर, सखुन चुरानेवाला। २ श्यालक, साला। ३ अपूर्ण गर्भका सन्तान, नामुकम्मिल उम्र या हमलका लड़का। ४ शालमत्स्य, एक मछली।

कुम्भी (सं० पु०) कुम्भोऽस्यास्ति, कुम्भ-इनि। १ हस्ती, हाथी। २ बालकोंका ग्रह, उपदेवताविशेष। ३ कुम्भीर, मगर, घड़ियाल। ४ मत्स्यविशेष, कोई मछली। ५ सविष पतङ्गभेद, कोई उड़नेवाला जहरीला कीड़ा। ६ अग्निप्रकृति कीटभेद, कोई जहरीला कीड़ा। ७ गुग्गुलु अथवा गुग्गुलुवृक्ष, गूगुल या गूगुलका पेड़।

कुम्भी (सं० स्त्री०) कुम्भ अल्पार्थे ङीप्। १ क्षुद्रकुम्भ, छोटा घड़ा। २ पाटला वृक्ष। ३ वारिपर्णी, जलकुम्भी। ४ कट्फल वृक्ष। ५ दन्तीवृक्ष। ६ शल्लकी, कोई खुशबूदार चीज। ७ कुन्तीपुष्पवृक्ष, कोई फूलदार पेड़। वह कोङ्कणमें प्रसिद्ध है। उसका संस्कृत पर्याय—रोमालु, विटपी, रोमश और पर्पटद्रुम है। भावप्रकाशके मतानुसार कुम्भी कटु, कषाय, उष्ण, ग्राही और वात तथा कफनाशक है। ८ गणिकारी वृक्ष। ९ अग्निप्रकृति कीटभेद, एक जहरीला कीड़ा। उसके काटनेसे पित्तज रोग उत्पन्न होते हैं। (सुश्रुत)

कुम्भीक (सं० पु०) कुम्भीव कायते प्रकाशते, कुम्भी-कै कः। १ पुन्नागपुष्पवृक्ष। २ कुम्भिका, जलकुम्भी। ३ सप्तपर्णवृक्ष। ४ भूर्जवृक्ष। ५ पाटलवृक्ष। ६ षण्ढविशेष, हिजड़ा। विकृत मैथुनकारीको कुम्भीक कहते हैं।

कुम्भीकपिडका (सं० स्त्री०) एक वैदिक दैत्यजाति।

कुम्भीका (सं० स्त्री०) शूकरोगका उपद्रवभेद। वह रक्त पित्तसे उत्पन्न होता है। २ नेत्ररोगविशेष, आंखकी कोई बीमारी।

कुम्भीको (सं० पु०) कुम्भीक वीज सदृश एक वीज।

कुम्भीधान्य (सं० क्ली०) कुम्भीपरिमितं धान्यमस्य। कुम्भसञ्चित धान्य, घड़ेमें रखा हुवा अनाज। मनु, याज्ञवल्क्य प्रभृति संहिताकारोंके मतानुसार आत्मीय कुटुम्बको पालन करनेके लिये अन्ततः एक

वर्षका धान्य सञ्चय कर रखना उचित है। धान्यागार अथवा कुम्भमें धान्य भर कर रखनेका विधि मनुसंहितामें देख पड़ता है। (मनु, ४।७) मेधातिथिने भाष्य में लिखा है—

"कुम्भी उष्ट्रिका। षाण्मासिकी निचय एतेन प्रतिपाद्यते इति वदन्ति।"

कुम्भी एक मृद्भाण्ड है। उसमें छह मासके उपयुक्त धान्य सञ्चय किया जा सकता है। इसलिये कुम्भीधान्य ६ मासका आहारोपयोगी सञ्चित धान्यादि है। किन्तु कुल्लूकभट्ट कहते हैं—

'वर्ष निर्वाहोचितधान्यादि धनं कुम्भीधान्यम्।'

जो एक वर्षके व्यवहारको उचित रहता, वही सञ्चित धान्यादि कुम्भीधान्य है। कुल्लूकने अपने कथनके प्रमाणमें याज्ञवल्क्यका वचन उद्धृत किया है। (मनुभाष्य और टीका, ४।७)

कुम्भीनस (सं० पु०) कुम्भीव नासिकास्य, कुम्भीनासिका-अच् नसादेशः। अच् नासिकायाः संज्ञायां नसम्। पा ५।४।११८। १ क्रूरसर्प, खौफनाक सांप। २ वातप्रकृति कीटभेद, एक जहरीला कीड़ा। उसके काटनेसे वातनिमित्तज रोग उत्पन्न होते हैं। (सुश्रुत)

कुम्भीनस नाथ—एक संस्कृत ग्रन्थकार। उन्होंने शब्ददीपिका नामक एक अभिधान और एक संस्कृत व्याकरण रचना किया है।

कुम्भीनसी (सं० स्त्री०) कुम्भीनस स्त्रियां ङीष्। १ अङ्गारपर्ण गन्धर्वकी पत्नी। २ रावणकी भगनी और लवण दैत्यकी माता।

कुम्भीपाक (सं० पु०) १ नरकभेद।

"करम्भवालुकातापान् कुम्भीपाकांश्च दारुणान्।" (मनु १२।७६)

जो व्यक्ति स्वदेह परिपोषणके निमित्त पशुपक्षी मारके खाता, वह यमदूतों द्वारा कुम्भीपाकके तप्त तैलमें डाला जाता है। (भागवत, ५।२६।१३) २ सन्निपात ज्वरभेद। कुम्भीपाक ज्वरमें नाकसे लोहितवर्ण घन रक्त गिरता और मस्तक घूमा करता है। (भावप्रकाश)

कुम्भीपुट (सं० पु०) गजपुट। गजपुट देखो।

कुम्भीफल (सं० पु० क्ली०) १ जैपाल वृक्ष, जायफलका पेड़। २ जैपालवीज, जायफल।

कुम्भीमुख (सं० पु०) कुम्भीव स्थूलमध्यं मुखं यस्य। चरकोक्त एक व्रणरोग।

कुम्भीर (सं० पु०) कुम्भः सौत्रः कुम्भीरके जले उभ्यते मनीषादित्वात् कस्य को वलोपे कुम्भः स इव आचरति कुम्भ-ईरन्। (उणादिकोषे रामशर्मा १।२७१) १ जलजन्तुविशेष, मगर, घड़ियाल। उसका संस्कृत पर्याय—नक्र, कुम्भील, गिलग्राह, महाबल, वार्भट, अम्बुकिरात, अम्बुकण्टक, कुम्भी, जलशूकर, तालुजिह्व, द्विधागति, पिङ्गमुख, महामुख, शङ्कुमुख और जलजिह्व है।

प्राणितत्त्वविदोंके मतानुसार कुम्भीर सरीसृप श्रेणीमें गण्य है। वह देखनेमें अधिकतर बृहदाकार गोह-जैसा होता है। फिर गोहको भांति कुम्भीर जलचर और भूमिचर भी है। उसके गात्रमें एक प्रकारका अस्थिमय शल्क (खाल) रहता है। वह इतना कठिन पड़ता कि तीर, बरछी या बन्दूकको गोलीसे भी नहीं छिदता। गात्रका उपरि भाग ईषत् रक्ताभ कृष्ण वर्ण होता है। उदर और उसके दोनों पार्श्वका चर्म श्वेतवर्ण रहता है। उसपर घन काल विन्दूके चिह्न पड़ जाते हैं। कुम्भीर चतुष्पद है। सम्मुखके दोनों पाद मनुष्यके दोनों जुड़े हाथों—जैसे होते हैं। किन्तु पीछेके पाद अपेक्षाकृत खर्व रहते हैं। सम्मुखके पादोंमें चार और पश्चात्के पादोंमें पांच अङ्गुलि रहती हैं। किन्तु प्रत्येक पादको तीन ही अङ्गुलियोंमें नखर (पञ्जे) होते हैं। उक्त अङ्गुलि एक खण्ड सूक्ष्म चर्मसे कुछ दूरतक जुड़ी रहती हैं। उसकी जिह्वा मांसल होती है। वह कपोलके मध्य निम्न दिकको प्रायः समस्त जुड़ी रहती है। इसलिये वह जिह्वा हिला डुला करके कुछ खा नहीं सकता। कुम्भीर प्रथम खाद्य वस्तुको दांतसे पकड़ ऊपरकी ओर फेंक देता है। शेषको मुख फैला इस प्रकार उसे उठा लेनेकी वह चेष्टा करता, जिसमें उक्त वस्तु ठीक उसके मुंहमें जा पहुंचे। कुम्भीर खाद्यको निगल जाता है, चबाता नहीं। मुखके दोनों पार्श्व चमड़ेसे जुड़े नहीं होते। इसीसे विशाल तीक्ष्ण दन्तपंक्ति सर्वदा देख पड़ती है। उसके दन्त करपत्र

(आरा)के दन्तके भांति होते हैं। वह इस प्रकार बनते कि नीचेके दो दांतोंके बीच ऊपरका एक दांत बैठ सकता है। दांत सीधे, किन्तु तीक्ष्णाग्र होते हैं। प्रत्येक दन्तका मूलदेश गह्वरविशिष्ट रहता है। उक्त गह्वरकी मेड़ पर छोटे दांतोंकी एक ढकनी-जैसी लगी होती है। यदि किसी कारण बड़े दांत गिर पड़ते या टूट जाते, तो उक्त क्षुद्र दन्त उनका स्थान अधिकार करते बढ़ आते और उनके मूलमें दूसरे क्षुद्र दन्त निकलते देखाते हैं। कुम्भीरका पुच्छ दोनों पार्श्वपर चपटा होता है। पुच्छके प्रति ग्रन्थि पर एक बृहत् मांसपिण्ड रहता है। उसका मध्य स्थान उच्च हो कर ठीक कांटा जैसा बन जाता है। स्थलसे किसी जीवजन्तुको जलमें फेकनेके लिये कुम्भीर जब पुच्छसे झपट्टा मारता तो उक्त कांटा उसके कार्यमें बड़ा साहाय्य लगाता है। कुम्भीरके गात्रमें भी मांसके बड़े बड़े चतुष्कोण पिण्ड रहते हैं। वह भी मध्य स्थलमें ईषत् उच्चताविशिष्ट (अनन्नासकी ऊपरी आंखकी भांति) होते हैं। उदरका शल्क चतुष्कोण, किन्तु अपेक्षाकृत कोमल और मसृण रहता है। कुम्भीरके कर्णका अधिक अंश मस्तककरोटीके गह्वरमें अवस्थित होता है। फिर कर्णका जो अंश बाहर रहता वह अतिरिक्त दो खण्ड चर्मसे इच्छानुसार ढंक सकता है। मालूम पड़ता है कि कुमभीर जलमें घूमते समय कर्णको उक्त अतिरिक्त चर्मखण्डसे ढांक लेता है। चक्षु उज्ज्वल, वृहत् और गोलाकार होते हैं। उनमें क्रोध भरा रहता है। चक्षुको पलकें तीन होती हैं। गलदेश-के नीचे स्तनके कुड्मलकी भांति दो क्षुद्र मांसखण्ड निकलते हैं। वह सच्छिद्र रहते हैं। उनसे कस्तूरीगन्ध-विशिष्ट रस निर्गत होता है। यही कुम्भीरके यौवनका लक्षण है। अपने घाट (कण्ठका पश्चात् देश) की गठनभङ्गीके कारण वह शीघ्र देह घुमा दिक्‌परिवर्तन करके दौड़ नहीं सकता। कुम्भीरसे खदेरे जाने पर घूम-फिर तिरछा चलने पर रक्षा मिलना सम्भव है। अन्यान्य सरीसृपकी भांति उसका श्वासयन्त्र (फुस-फुस, फेफड़ा) उदरपर्यन्त विस्तृत नहीं होता। इस-लिये उसका रक्त भी सरीसृपकी भांति शीतल कैसे होगा! कुम्भीरका शरीर मुखाग्रसे लाङ्गलाग्र पर्यन्त २० हाथ लम्बा और ३।४ हाथ चौड़ा होता है। उक्त जन्तु अतिशय हिंस्रस्वभाव और भयानक है।

पुष्करणी, नदी, नाले प्रभृतिमें, जिन स्थानोंमें स्रोतः प्रबल नहीं होता, कुम्भीर वास करता और तीर पर जा धूप लेता है। जलके मध्य और तीर पर भी कुछ दूरतक वह प्रायः आखेट (शिकार)-की चेष्टामें घूमा करता है। स्थल पर घूमते समय वा धूप लेते समय मनुष्य अथवा व्याघ्रादि पशुको, जल पीने जानेपर, कुम्भीर पकड़के जलमें प्रवेश करता है। उसका बल असीम है। एक पूर्णवयस्क कुम्भीर स्वच्छन्द वृहत्‌काय महिषको भी जलमें खींच करके ले जा सकता है। जब वह जलमें रहता, तो मनुष्यको जलमें उतरते देख जलके मध्यसे जाकर उसे भली-भांति पकड़ता है। यदि दैवात् आखेटको पकड़ नहीं पाता, तो लाङ्गल द्वारा जल आलोड़ित कर कुम्भीर महा आस्फालन लगाता है। कभी कभी नौकाकी ओर मुँह डुबा वह चुपके छिप जाता और जलमें किसीके हाथ डालने पर उसको पकड़ जलमें डुबकी लगाता है। इसी प्रकार कुम्भीर अपने शिकारको जलके मध्य किसी स्थल पर रख देता और शेषको कुछ सड़ने पर उसे खा लेता है। जब मनुष्य वा पशु नहीं पाता, तब वह मत्स्य पकड़ पकड़ खाता है। खानेको कुछ न मिलने पर भी कुम्भीर अनेक दिन जी सकता है। वह स्थल पर जा एककाल ही दो सौ डिम्ब प्रसव करता और उन्हें मट्टीमें दबा कर रखता है। उन्हें सेना नहीं पड़ता। सूर्यके उत्तापसे यथाकाल डिम्ब फूटने पर शावक निकलते हैं। कुम्भीरके डिम्ब नकुल-शकुनि, मूषक और शृगाल नाश किया करते हैं। शावक होने पर कुम्भीरिणी भी अपने आप कित-नोंको खा जाती है। फिर भी कुम्भीरको संख्या कम नहीं पड़ती।

प्राणितत्त्वविदोंके मतमें कुम्भीर जातीय जीव प्रधा-नत: दो भागमें विभक्त हैं—साधारण कुम्भीर (Crocodilidæ) और आलीगेटरादि (Alligatoridae)।

१ कुम्भीरादिके नीची मेड़के खादन्तके लिये

ऊपरी मेड़में प्रविष्ट होनेको गर्त रहता और पिछले पैरोंकी पिछली ओर कुछ शल्कमय कठिन मांस निकलता है। अन्यान्य दन्त एक प्रकार आकारविशिष्ट होते हैं। पुरुष जातीय कुम्भीरकी नाक बहुत बड़ी और चपटी रहती है। ऊपरका नवम और एकादश संख्यक दन्त श्वादन्तकी भांति दीर्घ होता है।

कुम्भीरादिके निम्नलिखित कई श्रेणीविभाग हैं।

(क) नक्र जातीय (Gavialis)—की चौं बहुत दीर्घ तथा अर्धगोलाकार होती है। घाट और पृष्ठके मध्य कोई अन्तर नहीं। नक्र (Gavialis Gangeticus) की नाकपर कुछ गोलाकार मास उभर आता हैं।

(ख) मेसिष्टोप्स (Mecistops)की चौं आयताकार सरल तथा चपटी और पीछेके पैरकी अंगुली हंसकी भांति जुड़ी रहती है। घाट उपर्युक्त प्रकारका ही होता है।

(ग) सामान्य कुम्भीर (Crocodilis) कीचौं मेसिष्टोपसकी चौं -जैसी होती है। घाट और पृष्ठके मध्य अल्प शल्कयुक्त स्थान रहता है।

(घ) मेसिष्टोपीय नक्र (Mecistops gavialis)-के सकल दन्त समान नहीं होते। अङ्गुलि नखपर्यन्त जुड़ी रहती हैं। नाक पर मांस नहीं भरता। अवशिष्ट समस्त अङ्ग प्रत्यङ्ग, मिसिष्टोपससे मिलते हैं।

(च) मेसिष्टोपीय बेनेट (M. Bennettii)

(छ) मेसिष्टोपीय काटाफाक्टस (M. Cataphractus) कृत्रिम नक्र नामसे ख्यात हैं।

(ज) भारतीय कुम्भीर (Crocodilus porosus)

(झ) हृहन्मुख भारतीय कुम्भीर (C. Bombifrons)

(ट) एकुइ पलिन कुम्भीर (C rhom bifer—the Aquel palin.)।

(ठ) आमेरिकाका कुम्भीर (C. Americanus)।

(ड) लम्बित मांस कुमभीर (C-marginatus—the margined crocodile)

(ढ) मिसरीय कुम्भीर (C. vulgaris)।

(त) मगर (C. Pulustris, the Maggur or Goa crocodile)।

(थ) चपटे मुंहवाला कुम्भीर (C. Trigonops—Wideaced crocodile)।

(द) गवका आविष्कृत कुम्भीर (C. Planiros' tris Graves, crocodile)।

(ध) श्यामदेशीय कुम्भीर (C. Siamensis.)

२ आलिगेटरादिकी निम्न मेड़के श्वादन्त ऊपरी मेड़में प्रविष्ट होनेके लिये गर्त रहता और मुखमण्डलका तलभाग कुछ विस्तृत पड़ता है। वह अमेरिकाका जीव है। प्रधानतः आलीगेटर तीन भागमें विभक्त है—(क) जाकार (Jacare), (ख) आलिगेटर (Alligator) और (ग) केमान (Caiman)।

(क) जाकारका मस्तक आयताकार और चपटा होता है। चक्षुके सम्मुख मुखकी चारो ओर एक गोलाकार चिह्न रहता है। दन्त असमान होते हैं। पैरकी अङ्गुलि प्रायः जुड़ी नहीं रहतीं। भ्रूस्थान मांसल और क्षुद्र अस्थिविशिष्ट होता है। नाकके दोनों छिद्र केवल मांस द्वारा विभिन्न रहते हैं। विस्तृतमस्तक जाकार (J. Flissipes—the broad headed Jacare), साधारण जाकार (J. sclerops—common Jacare), काला जाकार (J. nigra— the black Jacare), कबरा जाकार (J. punctulata—the spotted Jacare) और नाटररका जाकार (J. vallifrons—natiercr's gacare.) कई श्रेणी हैं।

(ख) आलिगेटरकी—चौं आयताकार और बहुत चपटी होती है। दन्तपंक्ति प्रायः समान्तराल रहती है। सम्मुखका भाग गोलाकार होता है। कपालमें तिरछा गोलाकार चिह्न पड़ जाता है। दन्त असमान रहते हैं। पैरोंके पीछे शल्कमय मांसकी झालर-जैसी उंगलियोंके मध्य जोड़ होता है। मुखमण्डल वयोवृद्धिके साथ लम्बा पड़ते जाता है। उसकी दो श्रेणी हैं—मिसिसिपीका आलिगेटर (A. missisipensis) और साधारण (A. Lucius, the common.)।

(ग) केमान—की चौं आयताकार, चपटी और कोणाकार होती है। फिर वह मुखके अग्र भागमें

जाकर मिल जाती है। कपाल चपटा और समतल रहता है। भ्रूद्वय तीन अस्थिखण्डसे आच्छादित हो जाता है। उंगलियां प्राय: जुड़ी नहीं रहतीं। केमान मध्य अमेरिकामें रहता है। उसमें विस्तृतमुख (C. Trigonatus) दीर्घभ्रू (C. palpebrosus—eyebrowed) और चपटे मस्तवाला (C. gilbbiceps—swollenheaded.) इत्यादि भेद हैं।

एतद्भिन्न बहु कालके प्राचीन मृत्तिका निहत कुम्भीरास्थिके मध्य C. Steneosaurus, C. Teleosaurus, C. Toliapicus, C. Champsoides, C. Hastingsœ, A. Hantoniensis, Gavialis Dixoni प्रभृति श्रेणियो का अस्तित्व मिलता है। उनका अस्थि इङ्गलेण्डके ब्रटिश म्युजियममें रखा है।

युरोप और अष्ट्रेलियामें आज भी कुम्भीर देख नहीं पड़ता। अफरीकामें अलीगेटर या घड़ियालका अभाव है, किन्तु साधारण कुम्भीरको कमी नहीं। नीलनदका कुम्भीर बहुत भयानक होता है। सुतरां अंगरेजोंमें हिंस्र वा उग्र स्वभावको उपमा देनेको Crocodile of the Nile (नीलनदका कुम्भीर) कहा जाता है। अमेरिकामें एशियाको अपेक्षा बहु श्रेणीके कुम्भीर मिलते हैं। C. acutus (क्षुद्रकाय कुम्भीर) सेण्ट डोमिनो द्वीपमें और C. rhombifer क्यूबा द्वीपमें पाया जाता है। अमेरिकाके द्वीप व्यतीत महादेशमें प्रकृत कुम्भीर देख नहीं पड़ता। महादेशमें ५।६ प्रकारके अलीगेटर होते हैं। अलीगेटरका मस्तक कुम्भीरको भांति चतुष्कोण नहीं रहता। फिर उसके मुखमें तीन वृहद् दन्त भी होते हैं। कुम्भीर वैशाख-ज्येष्ठ मास डिम्ब (अण्डे) देता है। समस्त डिम्ब एक ही दिन प्रसव किये नहीं जाते। फिर सकल कुम्भीर डिम्बोंको ढांक कर भी नहीं रखते। डिम्बसे प्राय: ४० दिन पीछे शावक निकलते हैं। वह डिम्बसे निकलने पर अपने आप आहार करना सीख जाते हैं। कुम्भीरियो उन्हें अल्प जलमें ले जाकर अर्ध जीर्ण खाद्य उद्गार करके खिलाती है।

भारतको प्रत्येक वृहत् नदीमें कुम्भीर विद्यमान है। फिर सिंहल, फिलिपाइन और मलयद्वीपमें भी वह पाया जाता है। मलयद्वीपवासी कुम्भीर को प्रधानत: तीन श्रेणियोंमें विभाग करते हैं—लाबु (कद्दू), कुटक (मेंढक) और ताम्बागा (ताम्रगात्र)। सुन्दरवनको प्रत्येक नदी, नाले और झीलमें १ बित्तेसे २५।२६ फीट तक लम्बे कुम्भीर सर्वदा देख पड़ते हैं। वह प्राय: कृष्णवर्ण कर्दमके ऊपर लेट धूपमें सोया करते हैं। वह जब सोते हैं, तो अपनेसे डेढ़ हाथ दूर किसी जहाजके सीटी बजा कर चले जाते भी नहीं जागते। दर्शक की दृष्टिमें दूरसे वह कर्दमाक्त काष्ठकी वृहद् कुदाल-जैसे लगते हैं। किन्तु शेषको जब कठिन चतुष्कोण शल्क और कण्टकविशिष्ट लाङ्गुल रौद्रमें चमकने लगता, तब उनकी भीषणताका परिचय मिलता है।

सुन्दरवनमें गांग्य घड़ियाल नहीं होते। उनको स्थलविशेषमें 'नाकू' (नक्र) कहते हैं। कारण उनका मुखभाग अतिशय दीर्घ और ढालू होता है। अन्यान्य कुम्भीरोंकी भांति उनका मस्तक और मुख चपटा और कुछ कुछ महिष मुख-जैसा नहीं रहता। घड़ियालका मस्तक पक्षीके मस्तक-जैसा रहता और चक्षुके पार्श्वसे समस्त मुखमण्डल लम्बा पड़ता है। घड़ियालको निर्मल जल और बालूकामय स्थानमें रहना अच्छा लगता है। वह प्राय: रेतमें निकल कर मुख फैला धूप सेवन करता है। मुख फैला कर धूप लेनेका एक आश्चर्यजनक कारण है। उसके दांतोंको जड़ और गलेमें एक प्रकार रक्तवर्ण सूत्रवत् कोड़ा रहता है। वह धूप लगनेसे अपने आप नीचे उतर और तप्त बालुकामें पड़ मर जाता है। कभी कभी एक जातीय क्षुद्र पक्षी जाकर निद्रित कुम्भीरके मुख पर बैठता और उसके गलेमें अपनी चोंच डाल कीड़ेको निकाल कर खा लेता है। मीठे पानीके कुम्भीरसे खारे पानीका कुम्भीर अधिक भयानक और उग्रस्वभाव होता है।

गङ्गाके व द्वीपको नदियोंमें ग्रामके प्रत्येक घाटके दोनों पार्श्व खूंटे गाड़ कुम्भीरका पथ रोक दिया जाता है। किन्तु कुम्भीर आखेट (शिकार)-का अभाव होने पर स्वल्पायाससे खूंटे उखाड़ डाल घाटमें जाकर छिप रहता और लोगोंको स्नानादि करनेके लिये उतरते ही पकड़कर चलते बनता है।

कुम्भीर पालनेसे कुछ कुछ हिल जाता है। पाण्डुआमें पोरपुकुर नाम्नी एक बड़ी पुष्करिणी है। वह ४० फीट गभीर और प्राय: ५०० वत्सरकी प्राचीन है। उसमें एक बड़ा पालतू कुम्भीर है। उसको फतेहखान् कहते हैं। उक्त स्थानके अधिवासी एक फकीरके फतेहखान् नाम लेकर पुकारते ही वह जल पर तैर आता था। कराची नगरकी एक पुष्करिणीमें किसी फकीरने ३० कुम्भीर पाले थे। फकीरके पुकारते ही वह जलसे निकल उसके पैरोंके पास कुत्तेकी तरह कतार लगा कर बैठ जाते रहे। उदयपुर और जगन्नाथमें भी ऐसे ही पालतू कुम्भीर हैं। वह यात्रीके निकट जाकर खाद्य ग्रहण करते हैं। काशीको मणिकर्णिकामें एक कुम्भीर है। वह प्रति मङ्गलवारको उतराते घूमता और मध्य मध्य मस्तक उठा तीरको ओर टकटकी बांध कर देखता है। प्रवादानुसार उक्त कुम्भीर पापग्रस्त कोई राजा है। वह प्रति मङ्गलवार निकल करके विश्वनाथके दर्शन करता है। हिन्दुस्थानमें क्षुद्र कुम्भीरको 'गोह' कहते हैं।

शिवालिक पर्वत और ब्रह्मदेशको मट्टीमें कुम्भीरका अस्थिपञ्जर देख पड़ता है।

मिसरमें कुम्भीर टाइगन और पेपरेमिस नामक देवताका प्रिय होनेसे सम्मानित हुवा करता है। किन्तु स्थान स्थान पर मिसरीय कुम्भीरमांस खाते हैं। खानेवाले उतना सम्मान नहीं दिखाते। श्यामदेशके बाजारोंमें कुम्भीरमांस विक्रीत होता है। सिंहलमें ग्रीष्मकालको किसी जलाशयका जल सूखनेपर कुम्भीर रात्रिकाल राह राह अन्य जलाशयमें जा पहुंचते हैं। पथरीली और कंकरीली जगहमें चलनेसे उसको विशेष कष्ट पड़ता, यहां तक कि बहुतोंका प्राण भी निकलता है। कुम्भीरमात्र क्रीडास्थल वा आखेटको आयत्त न कर सकने पर पिछले पैरोंसे पत्थर या ढेले फेंकते हैं। वह बड़ी दूर तक पहुंचते और मनुष्य, छागल वा गौको लगनेसे बहुत आहत करते हैं।

कुम्भीर समय समय पर दल बांध करके आखेटको चेष्टामें घूमते और क्षुद्र नौका मिलने पर उनके मल्लाहोंको आक्रमण करते हैं। जो एक बार उसके हाथ लग जाता, वह किसी प्रकार अव्याहति नहीं पाता।

भावप्रकाशके मतसे कुम्भीरका मांस पाकमें स्वादु, वायुघ्न, स्निग्ध, शीतल, पित्तनाशक, मलवर्द्धकारक और श्लेष्मवृद्धिकारक है।

महाभारतके मतानुसार जो पुत्र पिता अथवा माताको अवमानित करता, उसे मृत्युके पीछे दश वर्ष गर्दभ और एक वर्ष कुम्भीरयोनिमें जन्म लेना पड़ता है। (भारत, अनुशासन, १११। ५८)

२ कीटभेद, कोई कीड़ा। ३ यक्षविशेष। ४ कुम्भीवृक्ष, कोई पेड़।

कुम्भीरक (सं० पु०) चौर, चोर।

कुम्भीरमक्षिका (सं० स्त्री०) कुम्भीरोपपदयुक्ता मक्षिका, शाकपार्थिवसमा०। कणा, एक मक्खी।

कुम्भीरवल्क (सं० पु०) कायफलवृक्ष, कायफरका पेड़।

कुम्भीरासन (सं० क्ली०) योगाङ्गका एक आसन। मट्टी पर सट करके समानभावसे लेट एक पैर दूसरे पर चढ़ा दोनों हाथ मत्थे पर रखनेसे कुम्भीरासन लगता है।

कुम्भीक (सं० पु०) सुरपुन्नाग, एक पेड़।

कुम्भील (सं० पु०) कुम्भीर, मगर, घड़ियाल।

कुम्भीलक (सं० पु०) कुम्भीर संज्ञायां कन् रस्य लः। चौर, चोर।

कुम्भीवीज (सं० क्ली०) कुम्भ्या वीजम्, ६-तत्। जैपालवीज, जायफल।

कुम्भीवल्कफल (सं० क्ली०) कायफल, कायफर।

कुम्भीस्वेद (सं० पु०) स्वेद विशेष, एक भपारा। वह घटस्थित वातहर क्वाथ वा काञ्जिक आदिसे लिया जाता है।

कुम्भेश्वर (सं० पु०) एक तीर्थ। कुम्भघोणा देखो।

कुम्भोजी (प्रथम)—१ काठियावाड़के देशीय राज्य गोंडलके प्रतिष्ठाता। इन्हें अपने पिता मेरामानजीसे अरडोई और दूसरे गांव मिले थे। २ जाड़ेजावंशके चौथे ठाकुर साहब। इन्होंने गोंडल राज्यको धोराजी, उपलेटा और सरसई आदि परगने ले वर्तमान अवस्था पर पहुंचाया था।

कुम्भोदर (सं० पु०) कुम्भ इव उदरमस्य, बहुव्रो०।

१ शिवके अनुचर विशेष। (त्रि०) २ कुम्भकी भांति वृहद् उदर विशिष्ट, बड़े जैसे बड़े पेट वाला।

कुम्भोद्भवतरु (सं० पु०) कुम्भादुद्भवो यस्य स चासौ तरुश्च, बहुव्री० कर्मधा०। अगस्तिवृक्ष, अगस्तका पेड़।

कुम्भोलु (सं० पु०) पेचकभेद, एक उल्लू।

कुम्भोलूक (सं० पु०) उलूक भेद, एक उल्लू।

"हृत्वा पिष्टमयं पूपं कुम्भोलूकः प्रजायते"। (महाभारत, अनुशासन)

कुम्भोलूखलक (सं० पु०) गुग्गुलु।

कुम्मैत (हिं० पु०) १ कुमैत, लाखो, घोड़ेका कालापन लिये लाल रंग। २ कृष्णाभ रक्तवर्ण अश्व, स्याही लिये लाल रंगका घोड़ा। (वि०) ३ कृष्णाभ रक्तवर्ण, स्याही लिये लाल।

कुम्मेद, कुमैत देखो।

कुम्हड़ा (हिं० पु०) १ कुष्माण्ड लता, कोई फैलनेवाली बेल। उसके पत्र वृहत्, गोलाकार और लोमश होते हैं। उनके डण्ठल बड़े और पोले रहते हैं। पुष्प वृहत् और पीतवर्ण आते हैं। कुष्माण्ड लता बहुत दूरतक फैल पड़ती हैं। फल गोल और अतिशय वृहत् होते हैं। एक एक फल परिमाणमें ७। ८ सेर तक निकलता है। श्वेत और पीत भेदसे कुष्माण्ड दो प्रकारका है। श्वेत कुष्माण्डको हिन्दीमें 'पेठा' कहते हैं। वह खानमें कुछ कुछ पिच्छल (पनकुट) लगता है। कुम्हड़ेका मुरब्बा तैयार किया जाता है। फिर उसके सूक्ष्म खण्डोंको पीठीमें मिला कर बरी भी बनाते हैं। उनका नाम 'कुम्हड़ौरी' है। पीतवर्ण कुष्माण्डका सार रक्त वर्ण और मधुर होता है। वह ग्रीष्म और वर्षा काल वर्षमें दो बार फूलता-फलता है। ग्रीष्मवाली भूमि और वर्षावाला छप्पर आदिपर फैलाया जाता है। कुम्हड़ेका शाक बहुत अच्छा बनता है। उसमें मेथीकी बघार लगती है। कुष्माण्ड देखो।

२ कुष्माण्ड फल।

कुम्हड़ौरी (हिं० स्त्री०) कुम्हड़ेकी बरी। कुम्हड़ा देखो।

कुम्हलाना (हिं० क्रि०) १ सरसताका जाता रहना, ताजगीका चला जाना, मुरझाना, पीलापन आना। २ शुष्कता आने लगना, खुश्की दौड़ना। २ म्लान पड़ना, प्रफुल्लता न रहना।

कुम्हार (हिं० पु०) १ कुम्भकार, मट्टीके बरतन बनानेवाला।

"मट्टी कहै कुम्हारसे तू क्या रूंधे मोहिं।
इक दिन ऐसा होयगा मैं रूंधोंगी तोहिं॥"

२ कुम्भकारजाति, मट्टीके बरतन बनानेवाली कौम।

दाक्षिणात्यके कुम्हारोंमें कई श्रेणी रहती हैं। महाराष्ट्र कुम्भकार कुम्भजन्म अगस्त्य ऋषिको अपनी जातिका प्रवर्तक बताते हैं। उनकी अनेक पदवी हैं। एक पदवीका कुम्हार अन्य पदवीके कुम्हारसे विवाह-सम्बन्ध कर सकता है। किन्तु दोनों एक ही पदवीके होनेसे विवाह बनना असम्भव है। सितारा जिलेके अन्तर्गत सिङ्गनापुरमें महादेव और सितारेके पुरातन दुर्गमें जगदम्बाका मन्दिर विद्यमान है। उक्त दोनों स्थानोंके देव और देवी पर महाराष्ट्र कुम्भकारोंकी प्रगाढ़ भक्ति लक्षित होती है। ग्रामस्थ जोशी उनका पौरोहित्य करते हैं। सन्तान भूमिष्ठ होनेसे प्रसूति ७ दिनमात्र अशुचि रहती है। धात्री व्यतीत कोई उसे स्पर्श नहीं करता। पुत्रसन्तान जन्म लेनेसे द्वादश वा त्रयोदश दिवस सधवा रमणी एक मुट्ठी ज्वार वा परिधेय वस्त्रादिसे शिशुको आशीर्वाद देती है। उसके पीछे नामकरण किया जाता है। किसी किसी स्थान पर पुत्र जन्म लेनेसे पञ्चम और नामकरणके दिन षष्ठी देवीके उद्देश छागबलि करते हैं। द्वादश वा त्रयोदश मास नापित जाकर शिशुके मस्तकके बाल बना डालता है। इसी प्रकार चूड़ाकरण करनेकी रीति है। मराठा कुम्हारोंमें बाल्यविवाह और वयस्का कन्याका विवाह—दोनों प्रचलित हैं। कन्याके पिता अथवा वरपक्षको पात्र स्थिर करना पड़ता है। स्थानभेदसे विवाहका नाना प्रकार कुलाचार प्रचलित है। विवाहकाल ब्राह्मण-पुरोहित वर कन्याका वस्त्राञ्चल ले ग्रन्थिबन्धन करता है। विवाहके अन्तमें अभ्यागत वर कन्याके मस्तक पर खीलें निक्षेप करते और मराठे भाट सुस्वर वंशावली पढ़ते हैं। विवाहके उत्सवमें हरिद्राका प्रयोग अधिक किया जाता है। विवाहके दूसरे दिन भी स्त्रियां पानीमें हलदी और चूना घोल और उसमें मट्टी मिला आत्मीय कुटुम्बके गात्र पर

छिड़क देती हैं। मराठे कुम्हारोंमें कोई शव दाह करता और कोई उसको समाधि देता है। प्रत्येक ग्राममें उनका जो एक प्रधान रहता, उसे सब कोई 'मेहतर' कहता है। वही प्रधान सबका जाति-सम्बन्धीय विवाद मिटाता है।

गोरे मराठे कुम्हार एक स्थान पर स्थायी भावसे नहीं रहते, गांव-गांव घूमा करते हैं। वह अपने साथ डेरा-ताम्बू रखते, जिसमें रातको बसते हैं। मद्य-मांस ग्रहणमें उनको कोई आपत्ति नहीं।

कर्णाटकके कुम्हार अपर सकल श्रेणियोंसे अपनेको श्रेष्ठ समझते हैं। दूसरी किसी श्रेणीके साथ उनका आहार-व्यवहार प्रचलित नहीं। वह मद्यमांससे दूर रहते हैं। उनमें विधवा विवाह प्रचलित है। लिङ्गायत उनके गुरु हैं।

परदेशी कुम्हार युक्तप्रदेशसे वहां गये हैं। उनका आचार व्यवहार अधिकांश युक्तप्रदेशके कुम्हारों-जैसा ही है। परदेशी कुम्हारोंकी भाषा हिन्दी है।

तिलंगी कुम्हारोंका प्रधान निवास तेलङ्ग है। किन्तु आजकल दाक्षिणात्यके नाना देशोंमें वह पाये जाते हैं।

लिङ्गायत कुम्हार दृढ़काय और घोर कृष्णवर्ण होते हैं। वह अधिकांश बीजापुर, शोलापुर और धारवाड़ जिलेमें रहते हैं। किसी उत्सव वा कर्मोपलक्ष व्यतीत लिङ्गायत अन्न आहार नहीं करते। उन्हें मिर्च, प्याज और इमली खाना बहुत अच्छा लगता है। मद्यमांस उनमें निषिद्ध है। उसको खानेसे लिङ्गायतोंको जातिच्युत होना पड़ता है। उनकी रमणी भी स्वामीके कार्यमें साहाय्य करती हैं। उक्त रीति अन्य श्रेणीमें देख नहीं पड़ती। वह अति धर्मभीरु होते और अपनेको पञ्चमशालि लिङ्गायतके समकक्ष समझते हैं। जङ्गम उनके पुरोहित हैं। जङ्गम देखो। फिर भी समय समय पर शुभ दिन स्थिर करनेको लिङ्गायत देवज्ञ ब्राह्मणका आश्रय लेते हैं। श्रीशैलके मल्लिकार्जुनादि उनके उपास्य देवता हैं। लिङ्गायतोंका जातकर्मादि दूसरी श्रेणियोंसे मिलते भी विवाहकी पद्धति कुछ स्वतन्त्र है। विवाहसे कई दिन पहले वर कन्याके गात्रमें हरिद्रा लगायी जाती है। विवाहके दिन वरकन्याको स्नान करा एक वयस्था सधवा रमणी (अमङ्गल दूर करनेके अभिप्रायसे) उभयकी भ्रूका स्पर्श करती है। युवती वरकन्याके निकट बत्तीका प्रकाश भुका वरण करती और पीछे उभयको अन्तःपुर ले जाती है। वहां कन्या हलदी लगी हुयी श्वेत वस्त्र परिधान करती है। उसके पीछे वरकन्या दोनों एक वृषभ पर आरोहण कर ग्रामस्थ मारुतिको पूजने जाते हैं।

तत्पूर्व देवालयमें पञ्चकलसकी पूजा हुवा करती है। वर कन्या दोनों वहां पहुंच उक्त पञ्चकलसके सम्मुख उपवेशन करते हैं। जङ्गम कन्याके कण्ठमें मङ्गलसूत्र लपेट देते और दोनोंके मस्तक पर धान्य द्वारा आशीर्वाद पढ़ते हैं। उस समय वाद्यकर बाजा बजाते और आत्मीय कुटुम्ब चावल छोड़ते जाते हैं। सन्ध्या कालको वर अश्व पर चढ़ कन्याको अपने आगे बैठा आत्मीय कुटुम्बके साथ ग्रामस्थ देवमन्दिर पहुंचता है। वाद्यकर आगे-आगे बाजा बजाते चलते हैं। मन्दिरमें पहुंचने पर देवपुरोहित एक नारिकेल तोड़ देवताको उत्सर्ग और कर्पूर जला आरति करते हैं। निकटस्थ धूप सुलगा कर वरकन्याके कपाल पर भस्मको एक टिप्पी लगा दी जाती है। फिर वर नववधूके साथ घोड़े पर बैठ घर आता है। उस समय अनेक स्त्रियां पूर्ण कुम्भ और दीपक ले वरकन्याको उतारने जाती हैं। प्रथम वर कन्याको वह आलोकसे वरण करतीं, फिर घोटकके पैरों पर उक्त पूर्ण कुम्भ ढाल देती हैं। उसके पीछे वह वरकन्याको गृहके मध्य ले जाकर दोनोंको एक आसन पर बैठालती हैं। उस समय वरकन्या उभय एक पात्रमें आहार करते हैं। वर कन्याको और कन्या वरको खिला देती है। आहारके पीछे सुगन्धलेपन किया जाता है। कन्या वरके गात्रमें चन्दन लगाती और एक पान वरको खिलाती है। पीछे वह गलेमें वस्त्र डाल और हाथ जोड़ वरको नमस्कार करती है। वर भी कन्याको नाम लेकर बुलाता, अपने वाम पार्श्व पर बैठाता और उसके सीमन्तमें सिन्दूर चढ़ा गण्डस्थल पर चन्दन

लगाता है। फिर कन्याको माता वरको माताको कन्याका हाथ पकड़ा कहती है—"आजसे यह कन्या तुम्हारी हो गयी।" विवाहका सकल व्यय वरके पिताको वहन करना पड़ता है। विवाहका अनुष्ठान सम्पन्न हो जाने पर कन्या पित्रालयको चली जाती है। उसके पीछे कन्याको बड़ी होने पर श्वसुर अपने घर बुलाता है। कन्या वरके घर बसनेको जाती है। ऋतुमती होनेसे वह एक आलिम्पनयुक्त पीठ पर बैठायी जाती है। हिन्दुस्थानका पुष्पोत्सव लिङ्गायतों में 'फलशोभन' कहाता है। फलशोभन होनेसे पहले जड़ा रमणी भिन्न दूसरा कोई उसे स्पर्श कर नहीं सकता। सप्तम, एकादश, पञ्चदशके मध्य जो दिन शुभ आता, उसी दिन गर्भाधान किया जाता है। फिर उसी दिन ऋतुमतीको उत्तम वसन पहनाते, आत्मीय कुटुम्ब उसके साथ आमोद लगाते और जङ्गम जाकर आशीर्वाद सुनाते हैं—'तुम अष्ट पुत्रोंको माता हो।' किसीके मरने पर लिङ्गायत कुम्भकार मृत देहको धोकर वस्त्रालङ्कारसे सुसज्जित करते हैं। फिर उसे खूंटेमें रस्सीसे बांध बैठा देते हैं। मठपति कपालमें भस्म लगा मृत व्यक्तिके निकट जाते हैं। मठपति देखो। पीछे सब लोग तख्ते पर रख या कम्बलमें लपेट मृतदेह समाधिस्थान पहुंचाते हैं। समाधिस्थान मृत व्यक्तिके पैरको नापसे ९ पाद दीर्घ, ७ पाद विस्तृत और ७ पाद गभीर बनाया जाता है। उसमें नवीन पत्र बिछा मृत व्यक्तिको लिटा मट्टीसे दबा देते हैं। गर्तके मुख पर एक पत्थर लगा रहता है। समाधिकार्य शेष होने पर मठपति उक्त पत्थर पर खड़े हो जाते हैं। उस समय मृतके आत्मीय मठपतिको कुछ अर्थ दे पूजा करते हैं। पञ्चम दिवस अशौचान्तपर जङ्गम लोगोंको बुला खिलाना पड़ता है। लिङ्गायत कुम्हारोंमें विधवाविवाह और पुरुषके पक्षमें बहुविवाह प्रचलित है। कुम्भकार देखो।

कुम्ही (हिं० स्त्री०) कुम्भी, पानी पर फैलनेवाला एक पौदा।

कुम्हेर—राजपूताना-भरतपुर राज्यको कुम्हेर तहसीलका सदर मुकाम। यह भरतपुर नगरसे ११ मील उत्तर-पश्चिम अक्षा० २७° १९´ उ० और देशा० ७७° २२´ पू० में अवस्थित है। शहर मट्टीकी चहारदीवारी और खाईसे घिरा है। कुम्हेरमें डाकखाना, तारघर, अस्पताल और देशभाषाकी पाठशाला है। इस स्थानका नामकरण इसके स्थापयिता सिनसिनी ग्रामके जाट कुम्भके नामपर हुवा है। लोकसंख्या प्रायः ६२४० है। १७२४ ई० के लगभग महाराज बदनसिंहने यहां राजप्रासाद और दुर्ग बनाया था। ३० वर्ष पीछे मराठोंने असफलरूपसे दुर्गको अवरोध किया, जब मल्हारराबके पुत्र खण्डेराव होलकर निहत हुवे। उनकी विधवा रानी अहल्याबाईने इस नगरसे १ मील उत्तर उनकी छतरी खड़ी करायी थी, जो आज भी इन्दोरराज्यके अधिकारमें है।

कुयज्वी (सं० पु०) कुत्सितो यज्वी यज्ञकर्ता, कु-यज्-ङ्वनिप् इनि सुयजोर्ङ्वनिप्। पा ३।२।१०३। कुयाज्ञिक, अच्छा यज्ञ न करनेवाला व्यक्ति।

कुयव (वै० पु०) एक असुर।

"कुत्साय शुष्णमशुषं निबर्हीः प्रपित्वे अह्नः कुयवं सहस्रा।" (ऋक् ४।१६।१२)

'कुयवं कुयवनामानमसुरः।' (सायण)

इन्द्रने उक्त असुरको विनाश किया था।

२ कुत्सित यव, खराब जौ।

कुयवाच् (वै० पु०) कुयं मिथ्या वाच वाक्यम् यस्य। १ मिथ्यावादी, झूठ बोलनेवाला। २ असुरविशेष। वह इन्द्रकर्तृक निहत हुवा था। (ऋक् १।१७४।७)

कुयाजी (सं० पु०) कुत्सितो याजी, कु-यज-णिनि, कुगति समा०। कुयाज्ञिक, निन्द्ययज्ञकर्ता।

कुयोग (सं० पु०) कुत्सितो योगः। ग्रहनक्षत्रादिका अनिष्टकर संयोग, कुलग्न।

कुयोनि (सं० स्त्री०) कुत्सित योनि, नीच स्त्रीकी योनि, कमीना औरतका रेहम या बच्चादान।

कुर (कुरकु)—कोलों जैसी एक जाति। दाक्षिणात्यमें बहुसंख्यक कुर लोग रहते हैं। अकेले बरारमें ही प्रायः २९ सहस्र कुरोंका वास है। वह देखनेमें अधिकतर गोंडों जैसे होते हैं। दाक्षिणात्यमें स्थानभेदसे उनकी भाषा कुछ बदलते भी आकार-गठनादि सकल स्थानोंमें एक ही प्रकारका है। अधिकांश कुरकु जिस

भाषामें बात चीत करते, उसके साथ सन्तालो भाषाका विशेष संस्रव है। गोंड़ लोग उत्सवके समय गोमांस भक्षण करते हैं। किन्तु कुर गोवधको महापाप समझते, विशेषत: गोमांससे बड़ी घृणा रखते हैं। इसके अतिरिक्त कोलोंकी भांति मांसादि आहार करनेमें कुर भी बहुत पटु हैं। कुरोंमें कुछ प्रधान लोगोंके पास मुगलबादशाहोंके दिये परवाने मौजूद हैं। उनमें कुरोंको राजपूत कहा है। कोल देखो।

कुरकनी (हिं० स्त्री०) घोटक वा गर्दभके चर्मका अग्रभाग, घोड़े या गदहेके चमड़ेका अगला हिस्सा। कुरकनीका कीमुख्त नहीं बनता।

कुरका (सं० स्त्री०) १ सल्लकी वृक्ष, सलई, चीड़। २ जनपदविशेष, कोई मुल्क। वह दाक्षिणात्यमें रहा। कुरकाका वर्तमान नाम कुररा है। ३ नगरविशेष, कोई शहर। वह कुररा देशमें ताम्रपर्णी नदी तीर पर विद्यमान थी। वैष्णवाचार्य शठकोपका जन्म कुरकामें ही हुवा था।

कुरकी, कुर्की देखो।

कुरकु, कुर देखो।

कुरकुट (हिं० पु०) क्षुद्र खण्ड, छोटा टुकड़ा।

कुरकुटा (हिं० पु०) १ क्षुद्र खण्ड, छोटा टुकड़ा, कूटा हुवा रवा। २ रोटीका टुकड़ा।

कुरकुण्ड (हिं० पु०) तृणविशेष, रोहा या कनखुश घास। वह आसाम और बङ्गालमें उत्पन्न होता है। उसका तन्तु अत्यन्त दृढ़ और सूक्ष्म होता है। कुरकुण्डको जाल, वस्त्र आदिके निर्माणकार्यमें व्यवहार करते हैं।

कुरकुर (हिं० पु०) अव्यक्त शब्दविशेष, एक आवाज। खरी चीजके दब कर टूटनेसे 'कुरकुर' शब्द निकलता है।

कुरकुरा (हिं० वि०) कुरकुरानेवाला, खरा और करारा।

कुरकुराहट (हिं० स्त्री०) कुरकुर शब्द निकलनेका भाव, कुरकुर होनेकी हालत।

कुरकुरी (हिं० स्त्री०) १ अश्वरोगविशेष, घोड़ेकी कोई बीमारी। उससे अश्वका मलमूत्र रुकता और उदर फूल उठता है। २ मृदुसूक्ष्म अस्थि, जो हड्डी कड़ी और सख्त न हो। ३ कुरकुराहट, कुरकुरकी आवाज। ४ कुरकुर करनेवाली।

कुरगरा (हिं० पु०) एक थापी। वह छोटी रहती और दर्जबन्दी, वारनिस वगैरहके बारीक काममें चलती है।

कुरङ्कर (सं० पु०) कुरमित्यव्यक्तशब्दं करोतीति, कुर-कृ-ट। १ सारसपक्षी। सारस देखो। २ क्रौञ्चपक्षी।

कुरङ्कुर, कुरङ्कर देखो।

कुरङ्ग (सं० पु०) कृ विक्षेपे अंगच् यद्वा कुर शब्दे पतादित्वात् अङ्ग:। बिड़ादिभ्य: कित्। उण् १।१२०। १ हरिण, हिरन। २ मृगभेद, किसी किस्मका हिरन। ताम्र अथवा कृष्णवर्ण हरिण, कुरङ्ग नहीं कहाता। किन्तु किसी-किसीके मतमें वह ईषत् ताम्रवर्ण होता है। ३ पर्वतविशेष, कोई पहाड़। वह मेरुके कर्णिकादेशमें अवस्थित है। (भागवत, ५।१६।२६) ४ तीर्थभेद, कुरङ्ग तीर्थमें त्रिरात्र उपवासपूर्वक स्नान करनेसे अश्वमेध यज्ञका फल प्राप्त होता है। (महाभारत, अनुशासन) ५ तारलौह, साफ लोहा। ६ अककरा। ७ छन्दोविशेष।

कुरङ्ग (हिं० पु०) १ अशुभ लक्षण, बुरा हाल। २ घोड़ेका लखौरी रङ्ग। ३ लखौरी घोड़ा।

कुरङ्गक (सं० पु०) कुरङ्ग स्वार्थे कन्। १ हरिण, हिरन। २ अककरा।

कुरङ्गजातक—एक बौद्धजातक। जातक देखो।

कुरङ्गनयना (सं० स्त्री०) कुरङ्ग नयने इव नयन यस्या:, बहुव्री०। मृगनेत्रा स्त्री, आहूचश्म औरत।

कुरङ्गनाभि (सं० पु०) कुरङ्गस्य नाभि:, ६-तत्। कस्तूरी, मुश्क।

कुरङ्गम (सं० पु०) कुरं-गम्-खच्। गमश्च। पा ३।२।४१। हरिणविशेष, एक हिरन।

कुरङ्गमांस (सं० क्ली०) मृगविशेषका मांस, हिरनका गोश्त। वह रक्तपित्तमें हित, कफघ्न, मधुर, पित्तघ्न और मांसवर्धक होता है। (सिद्धयोग।)

कुरङ्गलाञ्छन (सं० पु०) चन्द्र, चांद।

कुरङ्गाक्षी (सं० स्त्री०) कुरङ्गस्य अक्षिणीव अक्षिणी यस्या:, कुरङ्ग-अक्षि-षच्-ङीप्। बहुव्रीहौ सक्थ्यक्ष्णो: स्वाङ्गात् षच्। पा ५।४।११२। मृगनयना स्त्री, आहूचश्म औरत।

कुरङ्गिका (सं० स्त्री०) कुरङ्ग-क-टाप्। मुद्गपर्णी, मोठ।

कुरङ्गिन (हिं० स्त्री०) कुरङ्गी, हिरनी।

कुरङ्गिनी, कुरङ्गिका देखो।

कुरङ्गी (सं० स्त्री०) कुरङ्गपत्नी, हिरनी।

कुरच (हिं० पु०) क्रौञ्चपक्षी, कराकुल।

कुरचिल्ल (सं० पु०) कर्कट, केकड़ा।

कुरट (सं० पु०) १ चर्मकार, चमार। २ जनपद-विशेष, कोई मुल्क। ३ जनपदविशेषका अधिवासी, किसी मुल्कका बाशिन्दा।

कुरड़ा (हिं० पु०) घोटकविशेष, एक घोड़ा। वह अरबी और तुर्की घोड़ोंके सहवाससे उत्पन्न होता और दोगला कहलाता है। अरबमें कुरडा घोड़ा पाया जाता है।

कुरण्ट (सं० पु०) १ सितिवारवृक्ष, सिरिवारीका पेड़। २ श्वेतझिण्टी, सफेद कटसरैया। ३ कुटज-वृक्ष, मकोय।

कुरण्टक (सं० पु०) १ पीतझिण्टी क्षुप, पीली कट-सरैया। उसका संस्कृत पर्याय—सैरेयक, सैरेय, श्वेतपुष्प, कुरण्टिका, कटसारिका, सहाचर और सहचर है। भावप्रकाशके मतमें वह तिक्त, उष्ण, मधुर, दन्तोपका-रक, सुस्निग्ध और केशरञ्जनकारी है। उससे कुष्ठ, वात, कफ, कण्डु, विष और रक्तदोष विनष्ट होता है। औषधके प्रस्तुतकाल उक्त वृक्षका समस्त अङ्ग ग्रहण किया जाता है। २ रक्तझिण्टी, लाल कटसरैया।

कुरण्टमूल (सं० क्ली०) पीतपुष्प-झिण्टीमूल, पीली कटसरैयाकी जड़।

कुरण्टिका (सं० स्त्री०) १ कुटजवृक्ष, मकोयका पेड़। २ सकरण्डवृक्ष, कोई पौदा। ३ सुनिषण्णकशाक, सिरियारी।

कुरण्टी (सं० स्त्री०) सिंहपिप्पली, सिंहलकी पीपल।

कुरण्ड (सं० पु०) १ साकुरुण्डवृक्ष, एक पौदा। वह गुर्जरदेशमें प्रसिद्ध है। २ अक्षोटवृक्ष, अखरोटका पेड़। ३ मुष्कवृद्धिरोग, फोता बढ़नेकी बीमारी। (Hydro-cele) उक्त रोग अन्त्रवृद्धिका एक प्रकारभेद है। इसका लक्षण और चिकित्सा समस्त अन्त्रवृद्धि रोगके लक्षण एवं चिकित्साके तुल्य है। अन्त्रवृद्धि देखो

कुरण्ड (हिं० पु०) कुरुविन्द, एक खनिज पदार्थ। वह किसी प्रकारका मूर्छित अलमोनम है। उसे चम-कीली मिसरीकी डलीकी तरह खानोंमें पाते हैं। कुरण्ड हीरेसे किञ्चित् ही न्यून कठिन है। उसके बुरादेको लाह वगैरहमें लपेट कर हथियार पैनानेका द्रव्य बनाया जाता है। चुम्बक प्रभृतिमें मिले हुये कुरण्डको 'मानिक-रेत' कहते हैं। उससे स्वर्णकार चांदी सोनेके आभूषण उज्ज्वल करते हैं। ज्यादा चमक-दार कुरण्ड रत्न समझा जाता है।

कुरण्डक (सं० पु०) कुरण्टकवृक्ष, कटसरैया।

कुरण्डका (सं० स्त्री०) वृक्षविशेष, एक पौदा। वह सारक, रुच्य, गुरु, अग्निप्रदीपन और कफवातनाशन है। वृहत् कुरण्डिका शीत, कटु, तिक्त, क्षार, रुच्य, सारक, वृष्य, जड़, वातल, पित्तल वस्तिमें वातकर, कफापह और रक्त तथा मूत्रकृच्छ्र नाशक होती है।

(वैद्यकनिघण्टु)

कुरता (तु० पु०) परिच्छदविशेष, पहननेका एक कपड़ा, उसमें शिर प्रवेशके लिये ऊपर स्थान रहता है, वक्षःस्थल पर कोई परदा या जोड़ नहीं लगता। आजकल भारतमें उसे लोग बहुत पहनते हैं।

कुरती (हिं० स्त्री०) १ छोटा कुरता। उसे स्त्रियां पह-नती हैं। कुरती फतुही-जैसी होती है। २ स्त्री, औरत (सोनारोंकी भाषामें)।

कुरथी (हिं० स्त्री०) कुलत्थ, कुलथी।

कुरन (हिं०) कुरण्ड देखो।

कुरना (हिं० क्रि०) १ एकत्र होना, ढेर लगना। २ मधुरध्वनि करना, चिड़ियोंका मीठा बोलना।

कुरवनही (हिं० स्त्री०) कोण बनानेका अस्त्र, कोना सुधारनेका एक औजार। उससे बढ़ई काठकी किसी चीजका कोना छील छाल कर सुधारते हैं। कुरवनही रुखानी जैसी होती है। उसमें दस्ता नहीं लगता।

कुरवान (अ० वि०) वलि चढ़ा हुवा, जो न्योछावर हो गया हो।

कुरवानी (अ० स्त्री०) वलिप्रदान, चढ़ावा।

कुरवाइक (सं० पु०) पक्षिविशेष, एक चिड़िया।

कुरम—एक नदी। वह सफेदकोह नामक गिरिसे निकल सिन्धुनदमें मिलित हुई है। ऋग्वेदमें 'क्रमु'

नामसे उसका वर्णन किया गया है। उक्त नदी-तटस्थ प्रदेश भी कुरम कहाता है। राजतरङ्गिणीमें उसे 'क्रमुक' कहा है। (राजतरङ्गिणी, ४।१५९) कुरम समुद्रपृष्ठसे ४८०० फीट ऊंचा है। वहां ग्रीष्मकालको अधिक जल नहीं रहता, परन्तु शीतकालको बहुत बर्फ पड़ता है। वर्षमें दो बार शस्य उत्पन्न होता है—प्रथम यव तथा गेहूं और उसके पीछे धान, ज्वार बाजरा वगैरह। नानाजातीय वृक्ष भी उत्पन्न होते हैं। कुरममें प्रधानतः मिङ्गल, याजी, बांगन और तूरी लोग रहते हैं।

कुरमा (हिं० पु०) कुटुम्ब, कुनबा, घराना। जहाजके निम्नभागमें अभ्यन्तरकी ओर शहतीरोंके मध्य उनको आबद्ध रखनेके लिये लगनेवाली लकड़ियां 'कुरमाका बांक' कहाती हैं।

कुरमी, कुनबी देखो।

कुरर (सं० पु०) कुशब्दे क्रूरच्। कुवः क्रूरच्। उण् ३।१३३। १ प्लवजातीय पक्षिविशेष, कराकुल। उसका संस्कृत पर्याय—उत्क्रोश, खरमञ्ज, क्रौञ्च, पंक्तिचर, खर और कुरल है। कुररका मांस रक्तपित्तघ्न, शीतल, स्निग्ध, वृष्य, वातघ्न और रस तथा पाकमें मधुर होता है। (सुश्रुत)

२ जलचर पक्षिविशेष, पानीकी कोई चिड़िया।

"कुररबकमकराः कङ्कचटकपिकभङ्गसारसाः।" (हारीत, १।११)

३ पर्वतविशेष, कोई पहाड़। (भागवत, ५।१६।२६)

कुररव (सं० पु०) पारावत, कबूतर।

कुररा (हिं०) कुरर देखो।

कुरराङ्घ्रि (सं० पु०) १ देवसर्षप, किसी किस्मका सरसों। २ रक्तमूलक, लाल मूली।

कुरराव (सं० क्ली०) कुरराः सन्त्यत्र, कुररवः अकारस्य दीर्घः। बाहुलकात् अन्येभ्योऽपि दृश्यते इति वक्तव्यम्। (महाभाष्य ५।२।१०९) कुररपूर्ण स्थान, करांकुलोंसे भरी हुयी जगह।

कुररी (सं० स्त्री०) कुरर स्त्रियां ङीप्। १ मेषी, भेड़ी। २ कुरर पक्षिस्त्री, मादा कराकुल।

"शुशोच विलपं कुररीव सुस्वरम्।" (भागवत, ६।१४।५१)

३ आर्या छन्दोभेद। उसमें ४ गुरु और ४९ लघु-वर्ण रहते हैं।

कुररीरुता (सं० स्त्री०) छन्दोविशेष, एक बहर। उसका लक्षण है—"कुररीरुतानजभजैर्लगयुक्" अर्थात् प्रथम ४ ह्रस्व १ दीर्घ, फिर १ ह्रस्व १ दीर्घ, उसके पीछे ३ ह्रस्व १ दीर्घ और अन्तको २ ह्रस्व १ दीर्घ सब मिलाकर १४ अक्षरोंसे उक्त छन्द ग्रथित होता है। कुररीरुतामें ४ चरण पड़ते हैं। यथा—

"अनतिचिरोज्झितस्य जलदेन चिरस्थित-बहुबुद्बुदस्य पयसोनुकृतिम्।"

(माघ, ४।४१।)

कुरल (सं० पु०) १ उत्क्रोशपक्षी, कराकुल। २ चूर्ण-कुन्तल, काकुल, जुल्फा। ३ तिरुवल्लुवर-प्रणीत कोई तामिल काव्य। किसी किसी पण्डितके मतमें वही तामिल भाषाका आदिग्रन्थ है। तिरुवल्लुवर देखो। ४ धरणी, जमीन्।

कुरलना (हिं० क्रि०) मधुर स्वरसे कलरव करना, चेहकना।

कुरला (हिं० पु०) १ कुल्ला, गरारा। २ कुन्तल, काकुल, पट्टा। कुल्ला देखो।

कुरव (सं० पु०) १ श्वेतार्क, सफेद मदार। २ रक्त-म्लान-पुष्पवृक्ष, लाल फूलकी कटसरैया। हिन्दीमें उसे लाल कुरैया और मदुवा भी कहते हैं। ३ झिण्टी-शाक, कटसरैयाकी सब्जी। ४ पीतझिण्टी, पीले फूल-की कटसरैया। ५ षष्टिकधान्य जातिभेद, कोई धान। वह कङ्गुकवत् गुणविशिष्ट होता है। ६ केश, बाल। ७ तिलकवृक्ष, तिलका पेड़।

"मन्दारकुन्दकुरवोत्पलचम्पकार्ण।" (भागवत, ३।१५।९१)

८ शृगाल, सियार। ९ कुत्सितरव, बुरी बोली। (त्रि०) १० कुत्सितरवयुक्त, बुरी बोली बोलनेवाला।

कुरवक (सं० पु०-क्ली०) कुरव स्वार्थे कन्। १ रक्त-झिण्टी, लाल कुरयरा। २ कुटज, मकोय। ३ कुरवक-पुष्प, कटसरैयाका फूल। कुरव देखो।

"आलोकितः कुरवकः कुरुते विकाशम्।" (कुमारसम्भव, ३।२६)

कुरवा (हिं० पु०) १ कुरवक, कटसरैया। २ एक सेर-की नापका बरतन। वह लकड़ीका बनता है। ३ पुरवा, सिकोरा।

कुरवारना (हिं० क्रि०) कतर करना, खरोंचना।

कुरविरामशास्त्री—भारतवर्ष नामक ग्रन्थके प्रणेता।

कुरवी (सं० स्त्री०) सिंहपिप्पली।

कुरस (सं० पु०) कुत्सितो रसः, कुगतिसमा०। ण्ही स्वर्गलाभ
अपक्क औषध-सिद्ध मद्य। २ मद्यविशेष, कोई शराब। ३ कुत्सितरस, खराब अर्क। (त्रि०) ४ कुरसयुक्त, बुरे अर्कवाला।

कुरसथ (हिं० पु०) मलिन शर्करामेद, एक मैली खांड़।

कुरसा (सं० स्त्री०) गोजिह्वालता, गोभी।

कुरसा (हिं० पु०) १ वृक्षविशेष, कोई पेड़। वह अति शीघ्र वृद्धिको प्राप्त होता और बड़ी शोभा देता है। उसका काष्ठ दृढ़ और रक्तवर्ण रहता है। उसे गृह और सेतु निर्माणमें व्यवहार करते हैं। कुरसाका उत्पत्तिस्थान आसाम, बङ्गाल, मन्द्राज, नीलगिरि, अवध और कुमायूं है।

कुरसी (अ० स्त्री०) १ विष्टर, बैठनेकी एक चौकी उसमें कुछ ऊंचे पाये लगाते हैं। पीछे सहारा लेनेको भी पटरी या वैसी ही कोई दूसरी चीज लगती है। अच्छी कुरसीमें हाथ रखनेके लिये दोनों ओर लकड़ियां जड़ दी जाती हैं। उस पर एक व्यक्ति बैठ सकता है। अंगरेजीमें कुरसीका नाम चेयर (Chair) है।

कुरसीको प्रायः लकड़ीसे बनाते और उसमें नीचे बैठने और पीछे सहारा लेनेकी जगह बेतकी बुनी हुयी जाली लगाते हैं। कभी कभी उसे पत्थर, लोहे, पीतल या दूसरे धातुसे भी बना लेते हैं। लेटने या सोनेकी कुरसीको आराम-कुरसी कहते हैं।

२ कोई ऊंचा चबूतरा। उसके ऊपर गृहादि निर्माण करते हैं। ३ पुश्त, पीढ़ी। ४ चौकी, तरखती। वह एक चतुष्कोण यन्त्र (तावीज) है। उसे डुमेलके बीच डाल कर गलेमें पहनते हैं। ५ नावके किनारेकी तख्तावन्दी। उसी पर नीचेका पाल बांधा जाता है। ६ जहाजके मस्तूलकी ऊपरी आड़ी-तिरछी लकड़ियां। कुरसी पर खड़े हो करके ही मलाह पालकी रस्सियां खींचते हैं।

कुरसीनामा (फा० पु०) कुलग्रन्थ, वंशवृक्ष, शजरा, पुश्तनामा।

कुरा (हिं० पु०) १ कुरह, पुराने जखममें पड़नेवाली गांठ। उसमें पीब जम जानेसे नासूर निकल आता है। २ कुरव, कटसरैया।

"पुरा च राजर्षिवरेण धीमता, बहूनि वर्षाण्यमितेन तेजसा।
प्रकृष्टमेतत् कुरुणा महात्मना, ततः कुरुक्षेत्रमितीह पप्रथे॥"
(भारत, शल्य, ५३।२)

राज॰ महाभारतमें यह भी लिखा है—

कुराज्य (सं० ण्मने कहा,—'हे तपोधन! यह श्रवण करनेके
निन्द्यराज्य, बुरी सल॰ है क्योंकि कुरुराजने यह क्षेत्र कर्षण
ण्रके मुझे बतला दीजिये।'

कुरान (अ० पु०) मुसलमानोंके॰ ण्सके इस क्षेत्रका
भाषामें लिखा है। मुसलमानोंके विश्व॰ ण्नके समीप
ने कुरानकी आयतों (वाक्यों)-को विभिन्न ण्भ-
जिबरीलके जरिये (द्वारा) मुहम्मद साहबके निकट प्रेरण किया था। उसमें ३० भाग (पारा) हैं। कुरानके माननेवालेको 'कुरानी' (मुसलमान) कहते हैं।

अरबी भाषामें कुरान शब्दका अर्थ ग्रन्थ, पुस्तक वा पाठ है। इसको फुरकान या मसहफ भी कहते हैं। इसी कुरानके प्रवर्तित धर्मका नाम इसलाम है। कुरानका मुख्य उद्देश्य इस तत्त्वको प्रकाश करना है कि जगदीश्वर एक और अद्वितीय है। परन्तु इसमें ईश्वरकी उपासना, ध्यान, धारणा तथा योगतपस्यादिके नानाप्रकार तत्त्व और मनुष्यके आचार-व्यवहार, रीति-नीति प्रभृति एवं भूत भविष्यत् कालकी बहुविध उपदेशपूर्ण बातें भी कही हैं। इसलाम धर्मावलम्बी विद्वानोंने कुरानके अध्याय, श्लोक, शब्द और अक्षर वा वर्ण पर्यन्त संख्याभुक्त करके निर्देश किये हैं। कुरान प्रथमतः ३० पारावों या अध्यायोंमें विभक्त है। इसमें ११४ सूरे (परिच्छेद), ६६६६ आयतें (श्लोक), ७९४३६ कलमे (शब्द) और ३२३७४१ हर्फ (अक्षर) हैं। उसमें ४८८७२ अलिफ, ११४२८ बे, १०१९९ ते, २०२७६से, ३२९३ जीम, ३९९३ हे, २४१६ खे, ५६७२ दाल, ४६९७ ज़ाल, ११७९३ रे, १५९० जे, ५८९१ छोटेशीन, २२५३ बड़ेशीन, १२०१३ स्वाद, २६१७ ज़ाद, १२७४ तो, ८४२ ज़ो, ९२२० ऐन, २२१८ गेन, ८४९९ फे, ६८१३ बड़े काफ, ९५९० छोटे काफ, १३०४३२ लाम, २६१३५ मीम, २६५६० नून, २५५३६ वाव, १००७० छोटे हे, ४७२० लाम-अलिफ और २५९१९ ए हैं।

अरब देशान्तर्गत मक्का नामक स्थानमें कुरेश-वंशजात मुहम्मद नामक किसी महात्माने इस कुरान-

ग्रन्थका प्रकाश और प्रचार किया था। मुसलमान कहते कि मुहम्मद अपने आप इस किताबके बनानेवाले नहीं, ईश्वरके निकटसे आये हुए किसी स्वर्गीय दूतके मुंह उन्होंने इसे सुना। ५०२ शक या ५७० ई० १० नवम्बरको मक्का नगरमें मुहम्मदका जन्म हुवा।

मुहम्मदके पिताका अबदुल्ला, माताका जहरित और पितामहका नाम अबदुल मतालिब था। इनके पूर्वपुरुष सम्भ्रान्त एवं राजवंशोद्भव रहे। मक्केका मशहूर काबा नामक देवालय बहुदिनसे उनके कर्तृत्वाधीन था। प्रवाद है—मुहम्मदने यद्यपि लड़कपनमें लिखना पढ़ना कुछ नहीं सीखा, वह उसी समयसे ही विशेष बुद्धिजीवी और धर्मजिज्ञासु रहे। उन्होंने देखा, उस समय अरब आदि नाना स्थानोंमें जिन सकल धर्मोंका अनुष्ठान तथा आचरण होता था, नितान्त कुत्सित, कदर्य और अहितकर था। उस समय अरब आदि स्थानोंमें केवल पौत्तलिकता, पशुहिंसा और नरबलि प्रभृति कदाचार प्रबलरूपसे प्रचलित थे। ग्रन्थादिमें लिखा है कि एक बार मुहम्मदके दादा अबदुल मतालिबको काबेमें नरबलि देनेका उद्योग हुवा। किन्तु उन्होंने १०० उष्ट्री बलि प्रदान करके उक्त दायित्वसे अव्याहति पायी। स्वदेशकी ऐसी दुर्दशा देख मुहम्मद हमेशा कोई विशुद्ध धर्म चलानेके लिये ईश्वरसे प्रार्थना और निर्जनमें उसकी उपासना किया करते थे। वह अपने ४० वर्ष वयःक्रमके समय मनमाने निर्जन स्थान जन्मभूमिके निकट हिरार नामक पर्वतकी गुहामें जाकर एकान्त चित्तसे ध्यान धारणा लगाने लगे। एकदा ध्यानमग्नावस्थामें उन्होंने देखा, किसी प्रशान्तमूर्ति पवित्र पुरुषने उनके निकट उपस्थित हो आदेश किया था—'पाठ करो'। मुहम्मदने उत्तर दिया—'मैं मूर्ख हूं, पढ़ना नहीं जानता; कैसे पाठ करूंगा।' इस पर उस पुरुषने फिर अपनी वही बात कही थी। मुहम्मदने भी कहा—मैं पाठ नहीं जानता, कैसे करूंगा।' उस समय स्वर्गीय पुरुष तीसरी बार मुहम्मदसे 'पाठ करो' कह 'एकरा व एसम रब्बेका' से 'मालमइयालम' तक पढ़ कर अन्तर्हित हो गया। इस प्रकारकी आश्चर्य घटनासे विस्मयाविष्ट हो मुहम्मदने घर लौट कर अपनी पत्नी खदीजासे आनुपूर्विक समस्त वृत्तान्त बताया था। खदिजाने भी अचंभेमें पड़ अपने भाई वराकरके पास उन्हें ले जाकर सारी घटनाका परिचय दिया। बीबी खदीजाके भ्राताने यह वृत्तान्त सुनके कहा था—

'सावधान! जिन महापुरुषने आविर्भूत हो मुहम्मदको उपदेश किया है, स्वर्गीय दूत हैं। उनका नाम जिबरील है। वह समय समय पैगम्बरोंको ऐसे ही धर्मका उपदेश देते हैं।' फिर छह महीने तक उक्त स्वर्गीय दूत मुहम्मदको देख न पड़े। उसके बाद जब तब महापुरुषने पूर्वोक्त प्रकारसे मुहम्मदके निकट उपस्थित हो क्रमशः समस्त धर्मका उपदेश दिया। कहते हैं—इसी तरह तेरह सालोंमें मुहम्मदने सारे कुरानका उपदेश पाया था। यह उपदेश वह समय समय पर शिष्यों तथा उपदेश्योंको सुनाते और वह इसे खजूरके पत्ते, पत्थर या भेड़की हड्डी पर लिखते जाते थे। इसी प्रकार सारा उपदेश लिखा जाने पर उनकी किसी औरतके पास रखा गया और उनके मरनेसे दो साल पीछे उनके शिष्य और मित्र अबूबकरने उसकी किताब बना डाली। हिजरी सनके ३० वर्ष बाद खलीफा उमरने इसका संशोधन किया। मुहम्मदने पहले पहल अपनी सबसे प्यारी पत्नी खदीजाको इस धर्मकी दीक्षा दी थी। उसके बाद उनके आत्मीय अबूबकर और अली नामके एक लड़केने उनके चलाये धर्मको पकड़ा। धीरे धीरे अरबके बहुतसे दूसरे आदमी भी उनके धर्मको मानने लगे। मुहम्मदके कुरान चलानेसे पहले अरब वगैरहमें तरह तरहके दूसरे मतोंका भी प्रचार था और उनके माननेवाले अपने अपने धर्मप्रवर्तकोंको सिद्ध-पुरुष और अलौकिक मनुष्य जैसा समझते थे। कुरानमें उनकी बात लिखी और यथा-सम्भव भक्ति श्रद्धा कही है। अरब आदि देशोंके पुराने लोगोंमें किसी किसीके मतानुसार अट्ठारह हजार सिद्ध पुरुष और किसीके मतसे ३१३ पैगम्बर निर्दिष्ट हुए हैं। फिर १०४ धर्मपुस्तकोंमें प्रचारकी कथा है। परन्तु मूसा, दाऊद और ईसाकी बनाई इञ्जील और तौरेत यानी बाइ-

बिल धर्मपुस्तकका नाया टेष्टामेण्ट (अहद-जदीद) और पुराना टेष्टामेण्ट (अहद इतीक) बहुत प्रसिद्ध और प्रबल है। मुहम्मद प्रचारित कुरानके मतावलम्बी निर्देश करते कि पूर्वोक्त धर्मावलम्बियोंको भटकते देख उन्हें उद्धार करनेके लिये ईश्वरने मुहम्मदके द्वारा कुरान भेजा है। यद्यपि जगदीश्वर समय समय और सभी समय जीवोंके निस्तारको एक न एक पैगम्बर यानी धर्मप्रचारक पहुंचाया करता है, किन्तु मुहम्मदका एक दूसरा नाम मुस्तफा यानी आखिरी पैगम्बर है। मुसलमान बताया करते हैं—कुरानसे पहले अरब अञ्चलमें दूसरे जितने धर्मपुस्तक प्रकाशित और प्रचारित हुवे थे, उनमें कुरानकी तरह किसी दूसरे पुस्तकमें ईश्वरका एकत्व और अद्वितीयत्व सफाईके साथ बताया और समझाया नहीं गया है। कहते हैं—मुहम्मदने एक हाथमें कुरान दूसरे हाथमें पैनी तलवार ले इसलाम धर्म चलाया था। परन्तु किताब वगैरह पढ़नेसे समझ पड़ता कि सब जगह मुहम्मदको अपना मत चलानेमें ऐसा नहीं करना पड़ा, बहुतोंने धर्मपुस्तकके विशुद्ध उपदेशसे आकृष्ट हो इच्छापूर्वक उनका मत अवलम्बन कर लिया था। कुरानमें बड़े गहरे ज्ञानका उपदेश और गहरे तत्त्वोंकी बातें देख पड़ती हैं। शम, दम, उपरति, तितिक्षा आदि जो समस्त साधन सर्वदेशप्रचलित तथा सकल प्रकार विशुद्ध धर्मानुमोदित हैं, कुरानमें उन सबका उपदेश मिलता है। फिर भी जो लोग अरब आदि देश-प्रचलित प्राचीन पौत्तलिक धर्मके सहारे कालयापन और स्वार्थ साधन करते थे, कुरानके प्रचारमें अपने स्वार्थ पर व्याघात पड़नेसे सर्व प्रथम मक्कामें मुहम्मद पर अत्याचार आरम्भ किया और जब उन अत्याचारियोंके दलने खूब जोर पकड़ा, मुहम्मदको प्राणरक्षाके लिये मक्कासे मदीना जाना पड़ा। जिस दिन मुहम्मद मक्कासे मदीना गये थे, मुसलमानोंका हिजरी सन गिना जाता है। मदीनेके लोग पहलेसे ही मुहम्मदकी बात समझते थे, बहुतसे उनके मतावलम्बी भी हो गये थे। मुहम्मदके मदीना पहुंचते ही उन्होंने बड़ी इज्जतके साथ उनकी अगवानी की। मुहम्मद उसी जगह रह धीरे धीरे भूमण्डलके प्रधान प्रधान स्थानोंमें नाना कौशलोंसे अपना मत फैलाने लगे। किसी समय युरोपके पश्चिम प्रान्तमें स्पेन देश पर्यन्त कुरानका मत पहुंचा और वहां बड़ी बड़ी मसजिदोंमें ऊंची आवाजसे कुरानका कलमा पढ़ा जाता था।

मुसलमान कहते कि रमजान महीनेकी २७ वीं रातको स्वर्गसे कुरान उतारा था। इसीसे कुरानका दूसरा नाम 'लैलतुल कद्र' अर्थात् निशाकी शक्ति भी है। इस रातको धार्मिक मुसलमान अतिपवित्र भावसे रहते हैं।

कुरानकी बहुतसी टीकायें हैं। उनमें अलवेदवी, मालिक, हनीफ, सफी और हनबलीकी टीका ही प्रधान है। टीकाकारोंमें हनीफने ८० हिजरीको कूफा नगरमें जन्म लिया और १५० हिजरीको बुगदादके कैदखानेमें उनका मृत्यु हुवा। सफीने १५० हिजरीको पालेस्टाइनके गजा नगरमें जन्म लिया। मिसर देशमें २०४ हिजरीको देहत्याग किया था। मालिक ८५ हिजरीको मदीना नगरमें आविर्भूत हुवे और वहीं मरते दम तक बने रहे। टीकाओंके सिवा फारसी, तुर्की, हिन्दी, तामिल, ब्राह्मी, मलय, बंगला, अंगरेजी, लाटिन, इटालीय, जर्मन, फरासीसी, स्पेनिश वगैरह कई जबानोंमें कुरानका तरजुमा हुवा है। धार्मिक मुसलमान अनुवाद पर बिलकुल भरोसा नहीं करते। वह आज प्रायः तेरह सौ वर्षसे बराबर इसी मूल ग्रन्थकी भक्ति और इज्जत करते पाये हैं। फिर मुसलमान अशुचि अवस्थामें कभी कुरान नहीं छूते और न कोई दूसरी किताब उस पर रखते हैं। लड़कपनसे ही निष्ठावान् मुसलमानोंके लड़के कुरान पढ़नेका मश्क किया करते हैं। मुहम्मद शब्दमें विवरण देखो।

कुरानके बारेमें एक अपूर्व अनोखी कहानी सुन पड़ती है। दिल्लीके बादशाह अकबरके समय उनके अन्यतम मन्त्री प्रसिद्ध विद्वान् फैजीने ख्याल किया—अच्छा हो, यदि किसी न किसी तरह मुहम्मदके चलाये कुरानका मत तबदील किया जा सके। यही मन्त्रणा करके वह विशेष भजनगर्भ गभीर तत्त्वके आदेश एवं

उपदेशसे पूर्ण एक ग्रन्थ बना किसी अरण्यके मध्य एक वृक्षके कोटरमें यत्नपूर्वक रख आये और एक दिन प्रसङ्गक्रममें अकबर बादशाहसे कहने लगे—"जहान्-पनाह! कल रातको मैंने ख्वाबमें एक अनोखी बात देखी है। किसी स्वर्गीय दूतने आकर मुझसे कहा—'मैं ईश्वरका दूत हूं'। मेरा नाम जिबरील है। अकबर बादशाहके जरिये धर्मपुस्तक प्रचारित करनेको जगदीश्वरने मुझे भेजा है। मैं वही किताब उस जङ्गलके उस पेड़की खोहमें रख जाता हूं। तुम अकबरसे कह कर उसे मंगा लो। उस किताबकी खास बात यह है कि उसमें कहीं नुकता नहीं।' अकबर फैजीके कहनेसे अच्छा दिन देख यथोचित मङ्गलाचरणपूर्वक सब आत्मीयों और अमात्योंको साथ लेकर कुरान लेने चले और निर्दिष्ट वृक्षकोटरसे अतिभक्तिभावसे उस किताबको अपने हाथों निकाल शिरसे छूवाया और छातीसे लगाये राजधानी लौट आये। उन्होंने यथासमय मुल्लावोंको वह भक्तिग्रन्थ पढनेको दिया था। उसके सभी मधुर उपदेशोंको सुन कर लोगोंमें अनिर्वचनीय श्रद्धा और भक्तिका उदय हुवा, साथ ही जगह जगह मौजूदा कुरानके खिलाफ बहुतसे मत देख किसी किसीके मनमें सन्देह भी उठ खड़ा हुवा; किन्तु अकबरकी अचला भक्ति सन्दर्शन करके किसीको कुछ कहनेकी हिम्मत न पड़ी। फिर सबने सोचा कि वह सब फैजीकी चालाकी थी। एक दिन उर्फी उस किताबको शुरूसे अखीर तक पढ़ने पर भी किसी जगह कोई गलती निकाल न सके। पीछे उन्होंने किताबका ऊपरी हिस्सा उलट कर देखा तो उसमें बिसमिल्ला शब्द लिखा था। यह देख वह सोचने लगे—फैजीने तो इस किताबको बेनुकता कहा था, परन्तु बे अक्षरके नीचे नुकता लगा है। उन्होंने अकबरको यह ऐब बता उसका प्रचार बन्द करा दिया।

कुराल (सं० पु०) कुलाह घोटक, दरयायी घोड़ा। उसका जङ्घादय कृष्णवर्ण और अपर अङ्ग पाण्डुवर्ण होता है।

कुराल (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। वह हिमालयके उत्तर विभागके शिमला, गढ़वाल और कुमायूं प्रभृति स्थानोंमें उत्पन्न होता है। कुरालमें फलियां आती हैं।

कुराह, कुराल देखो।

कुराह (हिं० स्त्री०) कुत्सित मार्ग, खराब रास्ता।

कुराहर (हिं० पु०) कोलाहल, गुलगपाड़ा।

कुराही (हिं० वि०) १ कुमार्गी, बुरी राह चलनेवाला। (स्त्री०) २ दुराचारिता, बदचलनी।

कुरिया (हिं० स्त्री०) १ कुटी, मड़ैया, झोपड़ी। २ अति क्षुद्र ग्राम, बहुत छोटा गांव। ३ गांज, ढेर। ४ रावके बोरोंको जूसी निकालनेके लिये नीचे-ऊपर रखनेका काम।

कुरियाल (हिं० स्त्री०) पंखोंका संवार, परोंका बनाव। पक्षी आनन्दमें जब रहते, तब कुरियाल किया करते हैं।

कुरिल (हिं० पु०) चमार।

कुरी (सं० स्त्री०) यमुनातीर-प्रसिद्ध तृणधान्यविशेष, चेना। वह मधुर, बलप्रद और हरित, पक्व वा तुच्छ होते भी वाजिपुष्टिदायक है। (राजनिघण्ट)

कुरी (हिं० स्त्री०) १ वंश, खानदान, घराना। २ कोल्हू। ३ विभाग, कूरा।

कुरीति (सं० स्त्री०) १ कुप्रथा, बुरी रस्म। २ कदाचार, कुचाल।

कुरीर (वै० क्लो०) १ स्त्रियोंके मस्तकका आच्छादनवस्त्रविशेष, औरतोंके मत्था ढांपनेका कोई कपड़ा।

"कुरीरमस्य शीर्षं यि कुम्बं चाधिनिदध्मसि।" (अथर्व ६।१३८।३)

२ वैदिक छन्द।

"सोमा आसन् प्रतिधय: कुरीरं छन्द ओपश:।" (ऋक् १०।८५।८)

कुरीर (सं० क्लो०) कृञ्-ईरन् उकारादेशश्च। कञ उच्च। उण् ४।३३। मैथुन, जुफती।

कुरीरिन् (वै० त्रि०) कुरीरयुक्त। (अथर्व ६।१३८।२, ५।३१।२)

कुरु (सं० पु०-स्त्री) कृञ्-कु: उकारादेशश्च। कुर्योश्च। उण् १।२४। १ अग्नीध्र राजाके पुत्र। उनके पितामहका नाम प्रियव्रत रहा। २ सम्बरणराजाके पुत्र। सूर्यकन्या तपतीके गर्भसे उन्होंने जन्मग्रहण किया था। कुरु धार्तराष्ट्रों और पाण्डवोंके पूर्वपुरुष रहे। उन्होंने इस अभिप्रायसे समस्तपञ्चकको भूमिको कर्षण किया

जो व्यक्ति इस स्थानमें कलेवर छोड़ेगा, वही स्वर्गलाभ कर सकेगा। (महाभारत, आदिपर्व, १२४ अ०)

३ जनपदविशेष, एक मुल्क।

"कुरून् स्वपिति।" (सिद्धान्तकौमुदी)

शक्तिसङ्गमतन्त्रके मतानुसार कुरुक्षेत्रके दक्षिण और पश्चालके पूर्वभागमें हस्तिनापुर पर्यन्त उक्त जनपद अवस्थित है।

"हस्तिनापुरमारभ्य कुरुक्षेत्रस्य दक्षिणे।
पश्चालपूर्वभागे तु कुरुदेशः प्रकीर्तितः॥"

किन्तु यह ठीक नहीं। कुरुजाङ्गल देखो।

४ जम्बुद्वीपके अन्तर्गत एक वर्ष।

"नाभिस्तु प्रथमं वर्षं ततः किंपुरुषं स्मृतम्।
हरिवर्षं तथैवान्यत् मेरोर्दक्षिणतः स्थितम्।
रम्यकं चोत्तरं वर्षं तथैवानु हिरण्मयम्।
उत्तराः कुरवश्चैव यथा वै भारतं तथा।
इलावृतस्तु तन्मध्ये सौवर्णो मेरुरुत्तमः।"

५ उत्तरकुरु नामक जनपद। उत्तरकुरु देखो।

६ भक्त, अन्न, भात। ७ कण्टकारिका, कटैया। ८ पुरोहित। ९ कुरुजनपदवासी।

"उवाच पार्थ! पश्यैतान् समवेतान् कुरूनिति।" (गीता १ अध्याय)

कुरुआ, कुरवा देखो।

कुरुई (हिं० स्त्री०) मौनी, बांस या मंजकी छोटी डालिया।

कुरुक (सं० पु०) राजविशेष, एक राजा।

कुरुकट (सं० पु०) कुरवश्च कटश्च, द्वन्द्वः। कुरु और कटदेशवासी।

कुरुकन्दक (सं० क्ली०) मूलक, मूली।

कुरुकुल्ला (सं० स्त्री०) १ काली देवी।

"कालीकपालिनी कुल्ला कुरुकुल्ला विरोधिनी।" (श्यामाकवच)

२ बौद्धदेवताभेद।

कुरुकुरुक्षेत्र (सं० क्ली०) कुरव कुरुक्षेत्रञ्च, एकवत् द्वन्द्वः। विभिष्टलिङ्गो नदीदेशोऽग्रामाः। पा २।४।७। कुरुदेश और कुरुक्षेत्र।

कुरुक्षेत्र (सं० क्ली०) कुरुकृष्टं क्षेत्रम्, मध्यपदलो०। एक अति प्राचीन पुण्यस्थान। पूर्वकाल कुरु नामक राजर्षिने उक्त क्षेत्रको कर्षण किया था, इसीसे उसका कुरुक्षेत्र नाम पड़ गया।

"पुरा च राजर्षिवरेण धीमता, बहूनि वर्षाण्यमितेन तेजसा।
प्रकृष्टमेतत् कुरुणा महात्मना, ततः कुरुक्षेत्रमितीह पप्रथे॥"
(भारत, शल्य, ५३।२)

महाभारतमें यह भी लिखा है—

"बलरामने कहा,—'हे तपोधन! यह श्रवण करनेके लिये मेरी वासना है क्योंकि कुरुराजने यह क्षेत्र कर्षण किया था। आप अनुग्रह करके मुझे बतला दीजिये।'

महर्षिने कहा—'पूर्वकाल कुरुके इस क्षेत्रका कर्षण आरम्भ करनेसे देवराज इन्द्रने उनके समीप उपस्थित हो करके पूछा—राजन्! आप किस अभिप्रायसे यत्नके साथ इस भूमिको कर्षण करते हैं।' कुरुराजने उत्तर दिया—'हे पुरन्दर! हमारे भूमि कर्षणका यही उद्देश है—जो व्यक्ति इस क्षेत्रमें कलेवर परित्याग करेंगे, वह अनायास स्वर्गलोक पहुंच सकेंगे।' सुरराज उनको उपहास कर चले गये। इधर कुरुराज इन्द्रके उपहाससे अणुमात्र भी दुःखित न हो एकान्त मनसे भूमिकर्षणमें लगे रहे। परिशेषमें सुरराज भूपतिके दृढ़तर अध्यवसाय दर्शनसे भीत हो देवोंको उनकी वासना कह सुनायी। फिर वह देवोंके वाक्यानुसार कुरुराजके निकट उपस्थित हो कहने लगे—'राजर्षे! अब तुम्हें कष्ट करनेका प्रयोजन नहीं; जो इस स्थानमें आलस्यशून्य हो अनाहार प्राण परित्याग करेगा अथवा युद्धमें वीरतापूर्वक मरेगा, वह निश्चय स्वर्ग पहुंच रहेगा।' कुरुराज इन्द्रके वाक्यसे सन्तुष्ट हो शान्त पड़े और सुरपति भी सुरलोकको चलते बने।" (भारत, शल्य, ५३ अ०)

कुरुक्षेत्र भारतीयोंका एक प्राचीनतम तीर्थस्थान है। ऋग्वेदीय ऐतरेय-ब्राह्मण (७।३०), शुक्लयजुर्वेदीय शतपथब्राह्मण (११।५।१।४), कात्यायन-श्रौतसूत्र (२४।६।३४), पञ्चविंशब्राह्मण, शाङ्ख्यायनब्राह्मण (१५।१६।१२), तैत्तिरीय आरण्यक (५।१) प्रभृति वैदिक ग्रन्थमें भी कुरुक्षेत्रका उल्लेख मिलता है।

शतपथब्राह्मणके मतसे उक्त स्थानमें देव यज्ञ करते थे—

"कुरुक्षेत्रेऽमी देवा यज्ञं तन्वते।" (शतपथब्राह्मण ४।१।५।१३

जाबालोपनिषद्में भी कुरुक्षेत्र—अविमुक्तक्षेत्र, ब्रह्म-

सदन और देवतावोंकी यज्ञभूमि जैसा वर्णित हुवा है—

"अविमुक्तं वै कुरुक्षेत्रं देवानां देवयजनं सर्वेषां भूतानां ब्रह्मसदनम्।"

इसका अपर नाम समन्तपञ्चक है। महाभारतमें लिखा है :—

"प्रजापतेरुत्तरवेदिरुच्यते सनातनी राम समन्तपञ्चकम्।
समीजिरे यत्र पुरा दिवौकसो वरेण सत्रेण महावरप्रदाः।"
(शल्यपर्व, ५३।१)

हे राम! समन्तपञ्चक ब्रह्माकी उत्तरवेदि कहाता है। वहां पहले महावरप्रद देवगणने यज्ञ किया था। सीमा—"उत्तरेण दृषद्वत्या दक्षिणेन सरस्वतीम्।
ये वसन्ति कुरुक्षेत्रे ते वसन्ति त्रिविष्टपे॥
ब्रह्मवेदी कुरुक्षेत्रं पुण्यं ब्रह्मर्षिसेवितम्।
तरन्तुकारन्तुकयो यदन्तरं रामह्रदानाञ्च मचक्रुकस्य च।
एतत् कुरुक्षेत्रसमन्तपञ्चकम्।" (वनपर्व, ८३।२०५,२०८)

दृषद्वतीके उत्तर और सरस्वती नदीके दक्षिण पुण्यप्रद राजर्षिसेवित ब्रह्मवेदी कुरुक्षेत्र है। कुरुक्षेत्रमें रहनेवाला स्वर्गवास करता है। तरन्तुक, अरन्तुक, रामह्रद और मचक्रुक समुदायका मध्यवर्ती स्थान ही कुरुक्षेत्र—समन्तपञ्चक है।

किसी किसी प्रत्नतत्त्वविद्के मतमें ब्रह्मवेदी कुरुक्षेत्र मनुप्रोक्त ब्रह्मावर्त देश है। (Cunningham's Arch. Sur. Repts, Vols. II. p. 215; XIV. p. 87.) किन्तु यह भूल है। मनुसंहितामें स्पष्ट उल्लेख है कि ब्रह्मावर्त और कुरुक्षेत्र एक नहीं। यथा—"सरस्वती दृषद्वत्यो र्देवनद्यो र्यदन्तरम्।
तं देवनिर्मितं देशं ब्रह्मावर्तं प्रचक्षते॥
कुरुक्षेत्रञ्च मत्स्याश्च पाञ्चालाः शूरसेनकाः।
एष ब्रह्मर्षिदेशो वै ब्रह्मावर्तादनन्तरम्॥"
(मनु, २ अ०, १७-१९ श्लो०)

सरस्वती और दृषद्वती देवनदीका जो अन्तर आता वह ब्रह्मावर्त कहाता है। ब्रह्मावर्त देवनिर्मित देश है। फिर कुरुक्षेत्र, मत्स्य, पञ्चाल और शूरसेनक ब्रह्मर्षिदेश हैं। ब्रह्मर्षिदेश ब्रह्मावर्तसे कुछ भिन्न होता है।*

महाभारत (वन, ८३।५२ श्लो०)-में कुरुक्षेत्रके अन्तर्गत ब्रह्मावर्त तीर्थका उल्लेख होते भी दूसरे अध्यायमें कुरुक्षेत्रसे ब्रह्मावर्तको भिन्न कह दिया है। पहले ब्रह्मावर्त अतिक्रम करके यमुनाप्रभव नामक पुष्करतीर्थको जाते थे।* (वन, ८४।४३ श्लो०) महाभारतका शेषोक्त ब्रह्मावर्त ही मनुप्रोक्त ब्रह्मावर्तसे मिलता है। वह कुरुक्षेत्रके आगे उत्तरको ओर अवस्थित है।

कुरुक्षेत्रका परिमाण द्वादशयोजन (४८ कोस) है :—

"धर्मक्षेत्रं कुरुक्षेत्रं द्वादशयोजनावधि।" (हेमचन्द्र ४।१६)

कुरुक्षेत्र-तीर्थ-निर्णयके मतसे—कुरुक्षेत्रके ईशानकोणमें तरन्तुक † वा रत्नयक्ष, वायुकोणमें अरन्तुक, नैर्ऋतकोणमें कपिल (उसीके निकट रामह्रद) और अग्निकोणमें मचक्रुक अवस्थित है। महाभारतोक्त तरन्तुकका वर्तमान नाम 'रतनयख' है। वह सरस्वती नदीके तीर पिप्पली नामक स्थानके निकट पड़ता है।

अरन्तुकको आज कल 'बहेर' कहते हैं। वह कैथल ग्रामके उत्तर-पश्चिम अवस्थित है।

रामह्रद और कपिलातीर्थ झींदसे ढाई कोस वर्तमान रामराय नामक स्थानमें है।

मचक्रुक—वर्तमान सींख नामक स्थानका नाम है। वह पानीपथ और झींदके मध्यस्थलमें पड़ता है।

उपरोक्त स्थाननिर्देशके अनुसार कुरुक्षेत्रका भूपरिमाण इस प्रकार निर्णीत होता है :—

पूर्वमें तरन्तुकसे मचक्रुक	...	२७ कोस
पश्चिममें रामह्रदसे अरन्तुक	...	२० कोस
उत्तरमें अरन्तुकसे तरन्तुक	...	२० कोस
दक्षिणमें मचक्रुकसे रामह्रद	...	१२॥ कोस

* हेमचन्द्रने भी ब्रह्मावर्त और कुरुक्षेत्रको भिन्न ही कहा है।
(अभिधानचिन्तामणि, ४। १५-१६)

* "ब्रह्मावर्तं ततो गच्छेद् ब्रह्मचारी समाहितः।
अश्वमेधमवाप्नोति स्वर्गलोकञ्च गच्छति॥
यमुनाप्रभवं गत्वा समुपस्पृश्य यामुनम्।" (वन, ८४।४३-४४)

† कोई कोई इस प्रकार पाठ करता है—
"तद्रत्नकारत्नकयोर्यदन्तरं रामह्रदानाञ्च मचक्रुकस्य च।"
Cunninghm's Arch. Snr. Repts. Vol. II. p. 218.
किन्तु महाभारतके किसी मुद्रित पुस्तक वा हस्तलेखमें उक्त पाठ नहीं मिलता।

कुरुक्षेत्रमाहात्म्यके मतानुसार उक्त सीमाके मध्य ३६५ तीर्थ अवस्थित हैं।

महाभारतमें भी कुरुक्षेत्रके अनेक तीर्थों और पुण्यस्थानोंका विवरण लिखित हुवा है। अकारादि-क्रमसे उनका संक्षिप्त वर्णन नीचे दिया जाता है:—

अग्नितीर्थ—आजकल अग्निकुण्ड कहाता है। वह थानेश्वरसे ७ कोस पश्चिम पृथूदक नामक प्राचीन नगरके पार्श्वमें अवस्थित है। हुताशन भृगुके शापसे भीत हो वहाँ समोगर्भमें जाकर छिपे थे। अग्नितीर्थमें स्नान करनेसे अग्निलोक मिलता है।

(शल्य, ४७। १६-२२, वन, ८३। १३८)

अमरह्रद—थानेश्वरसे ५ कोस दक्षिण-पश्चिम चन्द्लान ग्राममें अवस्थित है। आजकल उसे अमरकूप कहते हैं। वहां स्नान और इन्द्रकी पूजा करनेसे स्वर्गलोक मिलता है। (वन, ८३। १०५।)

अम्बाजन्म—कुरुक्षेत्रमाहात्म्यमें 'धन्यजन्म' नामसे वर्णित हुवा है वह सकर-तीर्थके पूर्व है, अम्बाजन्मका वर्तमान नाम दोरखेरी है। वहां स्नान और प्राण-त्याग करने पर तीर्थयात्रियोंको नारदेवके आदेशसे उत्तम लोक प्राप्त होता है। (वन, ८३। ८१)

अंशुमती—एक क्षुद्र नदी है। वह वृद्ध-यमुनाकी एक शाखा होती है। कुरुक्षेत्रप्रदीपमें उसे अंशुमती कहा है। सम्भवतः वही ऋग्वेदोक्त अंशुमती भी है। यथा— "अव द्रप्सो अंशुमतीमतिष्ठदियानः कृष्णो दशभिः सहस्रैः।"

(ऋक्‌संहिता ८। ९६। १३, साम १। ४। १। ४। १)

दशसहस्र सैन्य सह द्रुतगमनकारी कृष्ण अंशुमती नदीतीर अवस्थान करते थे।

बृहद्देवतामें लिखा गया है:—

"अपक्रम्य तु देवेभ्यः सोमो वृत्रभयादितः।

नदीमंशुमतीं नामाभ्यतिष्ठत् कुरून् प्रति॥" (६। ११८)

रामानुजने रामायण-टीकामें 'अंशुमती'का सूर्य-तनयाके अर्थमें प्रयोग किया है। (रामायण, २। ५५। ६) सूर्यतनया यमुनाका एक नाम है। सम्भवतः बूढ़ी यमुनाकी एक शाखा रहनेसे अंशुमती भी यमुनातुल्य विवेचित होती थी। ऋक् और सामवेदके मतमें इन्द्रने वहां कृष्णासुरको विनाश किया है। उसीके तीर महाभारतोक्त सुतीर्थक तीर्थ है। (वन, ८३। ५५)

अरन्तुक—कुरुक्षेत्रके एक द्वारकी भांति विख्यात है। उसका वर्तमान नाम वाहिर है। वह थानेश्वरसे १८ कोस पश्चिम सरस्वती नदीके तीर अवस्थित है। वहीं यक्षकुण्ड भी है। अरन्तुकतीर्थमें स्नान करनेसे अग्निष्टोमका फल प्राप्त होता है। (वन, ८३। ५१)

अरुणातीर्थ वा अरुणासङ्गम—अरुणा और सरस्वती नदीके सङ्गमस्थान पर पेहवा नगरसे डेढ़ कोस उत्तर-पूर्व उच्चस्तूपके पास अवस्थित है। नमुचिका शिरश्छेदन करनेसे इन्द्र ब्रह्महत्यामें लिप्त हुये थे। ब्रह्माके आदेशसे वह अरुणा-सरस्वतीसङ्गममें यज्ञानुष्ठानपूर्वक स्नान और दान करके पापसे छूट गये। (शल्य, ४३। ३७।४५) वहां स्नान करने पर तीर्थयात्री ब्रह्महत्याके पापसे मुक्त होते हैं। (वन, ८३। १५०)

अर्धकील—अरुणातीर्थके निकट है। उसका वर्तमान नाम सामुद्रकतीर्थ है। दर्भिने विप्रगणके मङ्गलार्थ चार सागरोंका जल मंगा अर्धकीलतीर्थ निर्माण किया था। (वन, ८३। १५३)

अश्विनीतीर्थ—वर्तमान असनीपुरमें थानेश्वरसे आध कोस पश्चिम ओजसघाटके निकट अवस्थित है। इस तीर्थमें अवस्थान करनेसे रूपवान् होते हैं।

(वन, ८३। १७)

अहस्तीर्थ—आपगाका विवरण देखो।

आदित्यतीर्थ—सारस्वततीर्थके निकट है। वहां जैगीषव्य और देवलने यज्ञानुष्ठान करके महाप्रभाव लाभ किया था। (शल्य, ५० अध्याय) आदित्यतीर्थमें स्नान करके सूर्यदेवकी अर्चना करनेसे कुल उद्धार और आदित्यलोक लाभ करते हैं। (वन, ८३। १८४)

आपगा—वर्तमान कुटंग नदीकी एक शाखा है। ऋग्वेदमें आपगा नदी 'आपया' नामसे वर्णित हुयी है:—

"नि त्वा दधे वर आ पृथिव्या इळायास्पदे सुदिनत्वे अह्नां।

दृषद्वत्यां मानुष आपयायां सरस्वत्यां रेवदग्ने दिदीहि।" (ऋक् ३। २३। ४)

हे अग्नि! सुदिन लाभके लिये इलारूप पृथिवीके उत्कृष्ट स्थानमें तुम्हें रखते हैं। तुम दृषद्वती, आपया और सरस्वतीतीरस्थ मनुष्योंके गृहमें धनशाली हो दीप्ति प्रदान करो।

आश्चर्यका विषय है कि उक्त मन्त्रमें 'पृथिवी',

'इलास्पद', 'सुदिन', 'अह:', 'दृषद्वती', 'मानुष', 'आपगा' और 'सरस्वती' जो कई शब्द हैं, महाभारतमें उनके प्रत्येक नाम पर एक एक स्वतन्त्र तीर्थ वर्णित हुवा है। यथा—

"ततो गच्छेत राजेन्द्र ! मानुषं लोकविश्रुतम्।
यत्र कृष्णमृगा राजन्! व्याधेन शरपीड़िताः ॥ ६४ ॥
विगाह्य तस्मिन् सरसि मानुषत्वमुपागताः।
तस्मिन् तीर्थे नरः स्नात्वा ब्रह्मचारी समाहितः ॥ ६५ ॥
सर्वपापविशुद्धात्मा स्वर्गलोके महीयते।
मानुषस्य तु पूर्वेण क्रोशमात्रे महीपते ! ॥ ६६ ॥
आपगा नाम विख्याता नदी सिद्धनिषेविता।"
"रुद्रकोट्यां तथा कूपे ह्रदेषु च महीपते ! ।
इलास्पदञ्च तत्रैव तीर्थं भारतसत्तम ! ॥ ७६ ॥
तत्र स्नात्वार्चयित्वा च दैवतानि पितृंस्तथा।
न दुर्गतिमवाप्नोति वाजपेयञ्च विन्दति ।" ७७ ॥
"अहश्च सुदिनञ्चैव द्वे तीर्थे लोकविश्रुते।
तयोः स्नात्वा नरव्याघ्र ! सूर्यलोकमवाप्नुयात् ॥" ९९ ॥

(वनपर्व, ८३ अध्याय)

उसके अनन्तर लोकप्रसिद्ध 'मानुष' तीर्थको जाना चाहिये। कितने ही कृष्णमृग व्याधके शरसे पीड़ित हो वहां स्नान करनेको गये और स्नान करते ही मानुषत्वको प्राप्त हुवे। मानुषतीर्थमें स्नान करनेसे मनुष्य विशुद्धात्मा और सर्वपापविमुक्त हो स्वर्गलोकमें प्रशंसा पाता है। मानुषतीर्थसे एक कोस पूर्व सिद्धसेवित 'आपगा नदी' है। फिर रुद्रकोटी, रुद्रकूप और रुद्रह्रदमें 'इलास्पद तीर्थ' अवस्थित है। वहां स्नान करके देवता और पितृगणको अर्चना करनेसे मनुष्य कभी दुर्गतिमें नहीं पड़ता और वाजपेययज्ञका फल लाभ करता है। 'अह:' और 'सुदिन' दोनों लोकप्रसिद्ध तीर्थ हैं। वहां स्नान करनेसे सूर्यलोक प्राप्त होता है। (वर्तमान पेहवा नगरके पूर्व और आपगा नदीके पश्चिम मानुषतीर्थ है। पेहवाके पास शेरगढ़ नामक स्थानमें इलास्पदतीर्थ और सोहन नामक स्थानमें सुदिन तथा अहस्तीर्थ अवस्थित है।)

इन्द्रतीर्थ—थानेश्वर और पेहवाके ठीक मध्यस्थलमें सरस्वती नदीके तीर पड़ता है। उसका वर्तमान नाम इन्द्रवारि है। देवराज इन्द्रने वहां यज्ञानुष्ठान किया था। इसीसे उसे इन्द्रतीर्थ कहते हैं। वह सर्व पापनाशक है। उक्त तीर्थमें इन्द्रने भरद्वाजकन्या श्रुवावतीकी भक्ति परीक्षा की थी। (शल्य. ४८। १८)

इलास्पद—आपगाका विवरण देखो।

एकरात्रतीर्थ—थानेश्वरके निकट है। वहां नियत सत्यवादी हो एक रात्रि यापन करनेसे ब्रह्मलोक लाभ करते हैं। (वन, ८१। १८१)

एकहंसतीर्थ—किसी किसीके मतानुसार वर्तमान ढण्डिग्राममें अवस्थित है। वहां स्नान करनेसे सहस्र-गोदानका फल मिलता है। (वन, ८३ अ०)

ओघवती—प्रत्नतत्वविद् कनिङ्गहामके मतसे आपगा नदीका अपर नाम है। उसे आजकल कुटंग कहते हैं। किन्तु महाभारतमें आपगा और ओघवती दोनों भिन्न नदीकी भांति वर्णित हुई हैं।

(वन, ८३। ९७, शल्य, ३८। २८)

"कुरोश्च यजमानस्य कुरुक्षेत्रे महात्मनः।
आजगाम महाभागा सरित्श्रेष्ठा सरस्वती॥
ओघवत्यपि राजेन्द्र वशिष्ठेन महात्मना।
समाहूता कुरुक्षेत्रे दिव्यतोया सरस्वती॥"

(शल्य, ३८। २७-२८)

कुरुराजने कुरुक्षेत्रमें यज्ञ किया था। उस यज्ञमें सरस्वती महर्षि वशिष्ठ-कर्तृक समाहूत हुई। उन्होंने उक्त पवित्रस्थानमें जाकर ओघवती नाम धारण किया था।

औशनसतीर्थ—सरस्वतीके उत्तरकूल पेहवा नगरसे थोड़ी दूर पड़ता है। उसका अपर नाम कपालमोचन है। उक्त तीर्थमें दैत्यगुरु शुक्रने तपस्या की थी, इसीसे उसे औशनसतीर्थ कहते हैं। पूर्वकाल रामचन्द्रने एक राक्षसका मस्तक छेदन किया था। वही छिन्नमस्तक महर्षि महोदरकी जङ्घामें संलग्न हुवा। महर्षिके उस तीर्थको जाकर अवगाहन करते ही जङ्घालग्न मस्तक स्खलित हो सलिलमें छिप गया। राक्षसका कपाल विमुक्त होनेसे ही उसका नाम 'कपाल-मोचन' पड़ा है। वहां आर्ष्टिषेणने कठोर तप उठाया और सिन्धुद्वीप, देवापि तथा विश्वामित्रने ब्राह्मणत्व पाया। (शल्य, ४०-४१ अ०)

वर्तमान कुरुक्षेत्रमाहात्म्यमें आर्ष्टिषेण प्रभृति उक्त महर्षियोंके नामानुसार एक एक विभिन्न तीर्थ

वर्णित हुआ है। कपालमोचनकी चारो ओर ही उक्त सकल तीर्थ अवस्थित हैं।

कन्यातीर्थ—'छुड़कन्यकतीर्थ' कहाता है।

कन्याश्रम—सन्निहतीतीर्थके निकट है। वहां ब्रह्मचारी हो तीन रात्रि उपवास करनेसे तीर्थयात्री शत कन्या पाते और स्वर्ग जाते हैं। (वन, ८३। १९०)

कपालमोचन—औशनस देखो।

कपिलातीर्थ—सूर्यतीर्थ और श्रीतीर्थके निकट है। उसको आज कल 'कैलत' कहते हैं। वहां स्नान करके देवता और पितृगणको अर्चना करनेसे सहस्र कपिलादानका फल प्राप्त होता है। (वन, ८३। ४६)

कलसीतीर्थ—आज भी कलसी ही नामसे प्रसिद्ध है। उसका जल स्पर्श करनेसे अग्निष्टोम यागका फल पाया जाता है। (वन, ८३। ७९)

काम्यकवन—कामोद ग्रामके निकट है। उसे आजकल 'कामवन' कहते हैं। काम्यकवनसे अनतिदूर सरस्वती प्रवाहित हैं। साधारण लोग उसे 'द्रौपदीका भाण्डार' कहते हैं। प्रवाद है कि द्रौपदी वहां पञ्चपाण्डवको रन्धन करके खिलाती थीं।

महाभारतमें लिखा है:—

"पाण्डवास्तु वने वासमुद्दिश्य भरतर्षभा:।
प्रययुर्जाह्नवीकूलात् कुरुक्षेत्रं सहानुगा:॥
सरस्वतीदृषद्वत्यौ यमुनाञ्च निषेव्य ते।
ययुर्वनेनैव वनं सततं पश्चिमां दिशम्॥
तत: सरस्वतीकूले समेषु मरुधन्वसु।
काम्यकं नाम ददृशुर्वनं मुनिजनप्रियम्॥" (वन, ५। १-४)

काम्यकवनमें कामेश्वर महादेवका भी मन्दिर बना है।

कायशोधन—आजकल 'कासोयन' कहाता है। वहां स्नान करनेसे शरीर शुद्ध होता है। फिर देहान्तको उत्तम लोक गमन करते हैं। (वन, ८३। ५२)

कारवपन—प्लक्षप्रस्रवणसे थोड़ी दूर पड़ता है। बलराम सरस्वतीका प्रवाह और प्लक्षप्रस्रवणतीर्थ दर्शन करके कारवपन गये थे। वहां उन्होंने स्नान-दान एवं देवता तथा पितृगणको तर्पणपूर्वक ब्राह्मणों सहित एकरात्रि वास किया। (शल्य. ५४। ११—१२)

काशीश्वरतीर्थ—आजकल 'कासान' कहाता है। उक्त तीर्थमें स्नान करनेसे शरीर नीरोग हो जाता और देहान्तमें मनुष्य ब्रह्मलोक पाता है। (वन, ८३। ५६)

किन्दत्तकूप—वर्तमान वास्थली नामक ग्रामके पार्श्वमें अवस्थित है। उक्त कूपमें तिलप्रस्थ प्रदान करनेसे ऋणमुक्त होते और परमा सिद्धि लाभ करते हैं। (वन, ८३। ९७)

किन्दान—कलसीतीर्थके निकट है। उसीके पार्श्वमें किंजप्यतीर्थ अवस्थित है। उभय तीर्थमें दान और जप करनेसे अशेष पुण्य प्राप्त होता है। (वन, ८३। ७८)

कुरुतीर्थ—आजकल 'कुरुध्वज' कहाता है। वह तैजसतीर्थके पूर्व अवस्थित है। वहां ब्रह्मचारी और जितेन्द्रिय हो स्नान करने पर सब पापोंसे छूट ब्रह्मलोक जाते हैं। (वन, ८३। १६७)

कुब्जतीर्थ—वर्तमान वनपुर नामक स्थानमें अवस्थित है। उक्त तीर्थमें स्नान करनेसे अग्निष्टोमका फल मिलता है। (वन, ८३। १०९)

कुलम्पुन—कैथल ग्रामसे २ कोस उत्तर करान नामक ग्राममें अवस्थित है। उसका वर्तमान नाम 'कुलतारण तीर्थ' है। (कैथल और किमांव ग्रामके निकट कुलोड़ार नामक दूसरे भी दो तीर्थ हैं।) कुलम्पुनमें स्नान करनेसे स्नानकारीका कुल पवित्र होता है। (वन, ८३। १०२)

कृतशौच—एकहंसतीर्थके निकट है। उसमें स्नान दान करनेसे अनन्त फल पाते हैं। (वन, ८३। २०)

कपिलकेदारतीर्थ—ओघवती नदीके तीर थानेश्वरसे ५॥ कोस दक्षिण-पश्चिम अवस्थित है। आजकल 'कपिलमुनितीर्थ' कहाता है। उसमें स्नान करनेसे ब्रह्मलोक मिलता है। (वन, ८३। ७२)

कोटितीर्थ—दो हैं। प्रथम पञ्चनदके अन्तर्गत है। उसमें स्नान करनेसे अश्वमेधके समान फल प्राप्त होता है। द्वितीय गङ्गाह्रदके निकट है। उसमें स्नान करनेसे बहुसुवर्ण लाभ करते हैं। (वन, ८३। १७, २०१)

कौबेरतीर्थ—थानेश्वरके निकट है। उसका वर्तमान नाम 'कुवेर' है। महात्मा कुवेरने वहां तपस्या की थी। फिर वहीं वह धनाधिपति और महादेवके सखा भी हुवे। कौबेरमें कुवेरका एक मनोहर कानन विद्यमान है। समस्त देवगणने वहां कुवेरको अभिषेक

करके पुष्पकरथ प्रदान किया था। (शल्य, ३७।२२-२४)

कौशिकीसङ्गम—कौशिकी और दृषद्वतीका सङ्गम स्थान है। वह करनालसे ४॥ कोस पश्चिम वर्तमान बालू नामक ग्राममें अवस्थित है। कौशिकीसङ्गममें स्नान करने पर मनुष्य सकल पापसे मुक्त होता है। (वन, ८३।९४)

गङ्गाह्रद—नागदूसे २ कोस दक्षिण-पश्चिम दुसेन नामक ग्राममें अवस्थित है। उसको आजकल 'गङ्गा-तीर्थ' कहते हैं। वहां स्नान करनेसे स्वर्गलोक प्राप्त होता है। (वन, ८३।१७७)

गोभवन—आजकल 'गोहन' कहलाता है। वहां यथाक्रम स्नानदानादि करनेसे सहस्र गोदानका फल मिलता है।

जयन्ती—झींदको कहते हैं। वहां सोमतीर्थ अवस्थित है। सोमतीर्थमें स्नान और दान करनेसे अनन्त-फल पाते हैं। (वन, ८३।६४)

तैजसतीर्थ—आज कल 'औजसघाट' कहाता है। वह थानेश्वरसे आध कोस पश्चिम अवस्थित है। उक्त तीर्थमें ब्रह्माने देव और ऋषिगण सहित मिलित हो कार्तिकेयको देव सेनापतिके पद पर अभिषिक्त किया था। वहां स्नानदानसे अनन्त फल पाते हैं।

(वन, ८३।६४)

त्रिविष्टप—वर्तमान थोधाग्राममें अवस्थित है। वहां पुण्यसलिला वैतरणी नदी प्रवाहित है। उसमें स्नान करके वृषभध्वजको अर्चना करनेसे सकल पाप विनष्ट होते हैं। फिर परिणाममें सद्गति मिलती है।

(वन, ८३)

दधीचतीर्थ—थानेश्वरके निकट है। उक्त तीर्थ अति पवित्र और पवित्रकारी है। वहां तपोनिधि अङ्गिराने जन्मग्रहण किया था। वहां स्नान और दान करनेसे अश्वमेध यज्ञके समान फल मिलता है। फिर सरस्वती लोक भी प्राप्त होता है। (वन, ८३।१८७।१८८)

दधीचतीर्थ ही वेदोक्त शर्यणावत् सरोवर समझ पड़ता है। ऋक्संहितामें लिखा है:—

"इन्द्रो दधीचो अस्थभि वृत्राण्यप्रतिष्कुतः।
जघान नवतीर्नव।" (ऋक् १।८४।१३)

"इच्छन्नश्वस्य यच्छिरः पर्वतेष्वपश्रितं।
तद्विदच्छर्यणावति।" (ऋक् १।८४।१४)

प्रतिद्वन्द्विरहित इन्द्रने दधीचि ऋषिके अश्वाकृति मस्तकके अस्थि द्वारा वृत्रगणको ८९ बार वध किया था। गिरिगह्वरमें लुक्कायित दधीचिके अश्वमस्तकको ढूंढ़ने पर इन्द्रने शर्यणावत्में * पाया था। शर्यणावत् देखो।

महाभारतके पाठसे समझते कि दधीचके ही निकट सोमतीर्थ है:—

"सोमतीर्थे नरः स्नात्वा तीर्थसेवी नराधिप।
सोमलोकमवाप्नोति नरो नास्त्यत्र संशयः॥
ततो गच्छेत धर्मज्ञ दधीचस्य महात्मनः।
तीर्थं पुण्यतमं राजन् पावनं लोकविश्रुतम्॥"

(वन, ८३ : १८६—१८७)

तीर्थयात्री सोमतीर्थमें स्नान करनेसे सोमलोक पाते हैं। उसके आगे महात्मा दधीचिका पुण्यतम तीर्थ है।

ऋग्वेदमें भी वर्णित हुवा है—

"ये सोमासः परावति ये अर्वावति सुन्विरे॥
ये वादः शर्यणावति।" (ऋक् ९।६५।२२)

जो सकल सोमरस अतिदूर वा अतिनिकट अथवा शर्यणावत्में प्रस्तुत हुये हैं।

"शर्यणावति सोममिन्द्रः पिबतु वृत्रहा।" (ऋक् ९।११३।१)

शर्यणावत्में जो सोम है, उसे वृत्रसंहारकारी इन्द्र पान करें।

सम्भवतः शर्यणावत्के निकट जिस स्थानमें सोम रहा अथवा जहां इन्द्रने सोमपान किया, महाभारतमें वही स्थान सोमतीर्थकी भांति वर्णित हुआ है।

दशाश्वमेधतीर्थ—सकोन नामक ग्रामके निकट है। उसमें स्नान करनेसे सहस्र गोदानका फल प्राप्त होता है। (वन, ८३।१४)

दृषद्वती नदी—आज कल 'राखी' कहाती है। उसमें स्नान तथा देवता एवं पितृलोककी अर्चना करनेसे अग्निष्टोम और अतिरात्र यज्ञका फल मिलता है।

(वन, ८३।८६)

देवीतीर्थ—मधुवटीका विवरण देखो।

---

* "शर्यणा नाम कुरुक्षेत्रवर्तिनो देशाः। तेषामदूरभवं सरः शर्यणावत्।" (सायणाचार्य, ८।६।३९ ऋग्भाष्य)

शाट्यायनब्राह्मणमें भी कहा है—

"शर्यणावद्ध वै नाम कुरुक्षेत्रस्य जघनार्धे सरः स्यन्दते।"

नरकतीर्थ—थानेश्वरसे एक कोस दक्षिण सरस्वती नदीके तीर वर्तमान है। उसको आज कल 'नरकतारी' वा 'अनरक' कहते हैं। ब्रह्मा नारायण प्रभृति देवगणके सहित वहां अवस्थिति करते हैं। तीर्थसेवी नरकतीर्थमें स्नान करके दुर्गतिसे मुक्त होते हैं। वहां विश्वेश्वर, नारायण और रुद्रपत्नीकी अर्चना करनेसे विष्णुलोक पाते हैं। (वन, ८३। ७१-७२)

नागतीर्थ—पृथूदकसे थोड़ी दूर सपिदान ग्राममें अवस्थित है। उसमें स्नान तथा अर्चना करनेसे नागलोक एवं अग्निष्टोम यज्ञके समान फल मिलता है। (वन, ८३। १४)

नागोद्भेद—थानेश्वरसे ५॥ कोस दक्षिण अवस्थित है। उसका वर्तमान नाम 'नागदू' है। नागोद्भेदके लोग कहते कि वहां भीष्मका सत्कार हुवा था। उसमें स्नानदान करनेसे नागलोक पाते हैं। (वन, ८२। ११३)

पञ्चनदतीर्थ—वर्तमान हाट नामक ग्राममें अवस्थित है। उक्त तीर्थमें उपस्थित हो यथानियम स्नानादि करनेसे अश्वमेध यज्ञ समान फल प्राप्त होता है। (वन, ८३। २६)

पञ्चवटी—वर्तमान कापर नामक ग्राममें थानेश्वरसे १ कोस दक्षिण-पश्चिम अवस्थित है। इन्द्रियसंयम और ब्रह्मचर्य अवलम्बन करके पञ्चवटीमें वास करनेसे ब्रह्मादि उत्कृष्ट लोक मिलते हैं। वहां योगेश्वर नामक एक शिव हैं। उनकी अर्चना करनेसे अभिलाष पूर्ण होता है। (वन, ८३। ६१-६२)

पवनह्रद—कुटंग नदीके तीर है। उसको आजकल 'पवनाव' कहते हैं। उक्त ह्रदमें यथानियम स्नान करनेसे वायुलोक पाते और उसका अनिर्वचनीय सुख उठाते हैं। (वन, ८३।१४)

पाणिखात—कुटंग नदीके तीर फरल ग्राममें अवस्थित है। उक्त तीर्थमें स्नान करके पितृलोकका तर्पण और देवतागणकी अर्चना करनेसे अग्निष्टोम एवं अतिरात्रयागका फल मिलता है। इसको छोड़ राजसूय यज्ञका फल प्राप्त होकर तीर्थयात्री ऋषिलोकको गमन कर सकता है। (वन, ८३।८८-८९)

परीवाह—कुरुक्षेत्रके अन्तर्गत एक अति प्राचीन पुण्यस्थान है। कात्यायनश्रौतसूत्रमें उसका उल्लेख मिलता है।

पारिप्लव—मङ्कणसे दक्षिण थोड़ी दूर पड़ता है। वह त्रिभुवन-विख्यात है। उसमें स्नान दान करनेसे अग्निष्टोम और अतिरात्रका फल पाते हैं। (वन, ८३।२१)

पुण्डरीकतीर्थ—फरल ग्रामसे ३ कोस दक्षिण अवस्थित है। उसका वर्तमान नाम 'पुण्डरी' है। शुद्धचित्त होकर उसमें स्नान करनेसे अन्तरात्मा पवित्र होता है। (वन, ८३। २१)

पुष्करतीर्थ—पृथूदकके निकट है। आजकल उसे 'पुष्करवेदी' कहते हैं। उक्त तीर्थमें स्नान करके पितृलोक और देवतागणकी अर्चना करनेसे तीर्थयात्री चरितार्थ हो अश्वमेध यज्ञका फल लाभ कर सकता है। महात्मा परशुरामने पुष्करतीर्थ बनाया था। (वन, ८३। २५)

पृथिवीतीर्थ—पारिप्लव तीर्थके निकट है। उसमें स्नान करनेसे सहस्र गोदानका फल मिलता है। (वन, ८३। १२)

पृथूदक—आजकल 'पोहवा' कहाता है। उक्त तीर्थ सर्वलोक-विख्यात है। उसमें स्नान करके पितृलोक और देवतागणकी अर्चना करना चाहिये। स्त्री किंवा पुरुषने अज्ञान वा ज्ञानपूर्वक जन्मजन्मान्तरमें जिस किसी पापकार्यका अनुष्ठान किया है, उक्त तीर्थमें गमन वा स्नान करनेसे वह विनष्ट होता और अश्वमेधका फल लाभ कर तीर्थयात्री स्वर्गलोक जा सकता है। इस महीमण्डलमें कुरुक्षेत्र अतिशय पुण्यमय स्थान है। सरस्वती कुरुक्षेत्रसे अधिक पुण्यमयी है। सरस्वतीका तीर्थ सरस्वती नदीसे भी अधिक पुण्यजनक है। पृथूदक समस्त तीर्थोंके मध्य श्रेष्ठतम है। उसमें शरीरत्याग करनेसे प्राणीका फिर जन्म वा मरण नहीं होता। सनत्कुमार और व्यासदेवने कहा है कि पृथूदकके समान कोई तीर्थ नहीं। भूमण्डलमें वह पवित्र और पुण्यमय है। नितान्त दुराचार व्यक्ति भी स्नानमात्रसे स्वर्गको गमन कर सकते हैं।

(वन, ८३। ४०-४७) पृथूदक शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

फलकीवन—आजकल 'फरल' कहाता है। वह

देवताओंका तपस्यास्थान है। (वन, ८३। ८५)

मङ्कणक—आजकल 'मङ्गना' कहलाता है। वहां सप्तसारस्वत तीर्थ विद्यमान है।

मधुवटी—फरल गांवसे २ कोस दक्षिण अवस्थित है। उसे आजकल मधुवन वा मोहन कहते हैं। उक्त स्थानमें देवीतीर्थ विद्यमान है। उसमें स्नान करनेसे देवी यात्री पर सन्तुष्ट होती हैं। फिर उसे सहस्र गो दान करनेका फल मिलता है। (वन, ८२। ९२-९४)

कूर्मपुराणके मतमें मधुवनतीर्थको गमन करनेसे इन्द्रका अर्धासन प्राप्त होता है। (कूर्मपुराण, २। ३५। ८)

मधुस्रवतीर्थ—पृथूदकके निकट अवस्थित है। उसमें स्नान करनेसे सहस्र गोदानका फल मिलता है। (वन, ८३। ४०)

मातृतीर्थ—नहानेसे सन्तति और श्री बढती है। (वन ८३। ५७)

मानुषतीर्थ—आपगाका विवरण देखो।

मिश्रकतीर्थ—पाणिखातसे अनतिदूर अवस्थित है। व्यासदेवने ब्राह्मणोंके उपकारार्थ उक्त स्थानमें समस्त तीर्थ मिश्रण किये गये हैं। इसीसे उसका नाम मिश्रक पड़ गया। अकेले मिश्रकतीर्थमें स्नान करनेसे सकल तीर्थोंके स्नानका फल प्राप्त होता है। (वन, ८३। ९०-९१)

मुञ्जवट—वर्तमान थानेश्वर है। वहां यक्षिणी-कुण्ड विद्यमान है। मुञ्जवट महादेवका आवासस्थान है। वहां उपवास करके एक रात्रि रहनेसे गाणपत्य मिलता है। उक्त तीर्थमें एक यक्षिणी वास करती है। उसकी आराधना करनेसे कामना सिद्ध होती हैं। मुञ्जवट कुरुक्षेत्रका द्वार कहाता है। (वन, ८३।२२-२४)

मृगधूम—हुसैन ग्रामके निकट है। वहां जाकर गङ्गातीर्थमें स्नान और महादेवकी अर्चना करनेसे सहस्र गोदानके समान फल प्राप्त होता है। (वन, ८३। १००)

यमुनातीर्थ—लुप्तप्राय समझ पड़ता है। कारण उसका कोई सन्धान पाया नहीं जाता। महर्षियोंने उक्त तीर्थको स्वर्गद्वार बताया है। महाराज भरतने वहां अश्वमेध यज्ञका अनुष्ठान किया था। उससे उन्होंने ससागरा पृथिवीका आधिपत्य पाया। मरु राजाने भी वहीं यज्ञ किया। यमुनातीर्थमें स्नान करनेसे सकल पापोंसे छूट जाते और परिणाममें सद्गति पाते हैं। यमुनातीर्थमें जलाधिपति वरुणने समस्त देवगण-के साथ मिलित हो एक वृहत् यज्ञका अनुष्ठान किया था। उसी समय देवगणके साथ असुरकुलका संग्राम भी हुवा। (वन, १२९। १३-१७)

ययाततीर्थ—पृथूदकपरिक्रमणका शेष तीर्थ है। आजकल उसे ययातितीर्थ कहते हैं। राजा ययातिने वहां एक वृहत् यज्ञ किया था। सरस्वतीने मूर्तिमती बन महाराजका सकल यज्ञीय द्रव्य जोड़ा था। इस लिये उक्त तीर्थ यायात नामसे प्रसिद्ध हुवा। उक्त स्थानमें स्नानदान करनेसे अक्षय पुण्य मिलता है। (शल्य, ४१। ३०-३२)

यायाततीर्थ भी कुरुक्षेत्रका द्वार कहाता है। (वन, १२९। १२)

वकाश्रम—वक नामक एक प्रसिद्ध महर्षि रहे। नैमिषारण्यवासी महर्षियोंके द्वादश वार्षिक यज्ञानुष्ठान काल वक महर्षिने अपना गोवत्स सकल उनको अर्पण किया। उन्होंने महाराज धृतराष्ट्रके निकट उपस्थित हो गोको मांगा था। धनान्ध धृतराष्ट्रने कटु वाक्य प्रयोग कर कई मृत गो प्रदान करनेको अनुमति की। महर्षि उनके असद्व्यवहारसे रोषाविष्ट हुवे। उन्होंने धृतराष्ट्रका राज्य विनाश करनेके अभिप्रायसे उक्त स्थानमें एक आभिचारिक यज्ञका अनुष्ठान किया। पीछे धृतराष्ट्रने बहुविध विनय कर मुनिको रिझा लिया। इसीसे वह वकाश्रम नामसे प्रसिद्ध है। (शल्य, ४१ अ०)

रामतीर्थ—थानेश्वरके निकट इन्द्रतीर्थसे अनतिदूर अवस्थित है। महात्मा परशुरामने एकविंशतिवार पृथिवी निःक्षत्रिय कर उक्त स्थानमें शत अश्वमेधयज्ञ समापन किये थे। इसीसे उसे रामतीर्थ कहते हैं। रामतीर्थमें स्नान-दानका अनन्त फल है। (शल्य, ४९।७८)

रामह्रद—पांच हैं। उनमें भौंदसे २॥ कोस दक्षिण-पश्चिम रामराय नामक स्थानमें एक है। दूसरा थानेश्वरके निकट है। परशुरामने क्षत्रिय राजावोंको निधन कर पांच ह्रद उनके शोणितसे भरे थे। फिर

उसी शोणितसे उन्होंने पितृपितामहगणका तर्पण किया। पूर्वपुरुष सातिशय सन्तुष्ट हो उनके पास पहुंचे थे। परशुरामने उनसे प्रार्थना की कि वह पांचो ह्रद तीर्थस्थान हो जांय। उन्होंने वही स्वीकार किया था। ह्रद तीर्थ बन गये। जो रामह्रदमें स्नान कर पितृलोकको तर्पण करता, उसके मनका अभिलाष पूर्ण होता और चरमको स्वर्ग मिलता है। (वन, ८३।२६-४९)

रैणुकातीर्थ--थानेश्वरसे थोड़ी दूर उर्णायस नामक स्थानमें अवस्थित है। उसमें स्नान, दान और पितृलोक तथा देवगणको अर्चना करने पर सर्वपापसे मुक्ति पाते, अग्निष्टोमका फल उठाते और प्रतिग्रहके समस्त दोष नष्ट हो जाते हैं। (वन, ८३।१५९)

लोकोद्धारतीर्थ--आजकल लोधर कहाता है। वह लोधर ग्राममें ही अवस्थित भी है। वह प्रधानतीर्थ है। उसमें स्नान करनेसे पितृलोकका उद्धार होता है। (वन, ८३।४४)

वटतीर्थ वा वटाश्रम—सोमतीर्थमें एक वटवृक्षके तलमें देवगणने कार्तिकेयको अभिषिक्त करके सेनापति पदपर नियुक्त किया था। वही स्थान वटतीर्थ वा वटाश्रम कहाता है। (शल्य ४३।४९; वन ९०।११)

बदरीपाचनतीर्थ--थानेश्वरसे १८ कोस और पृथूदकसे ११ कोस पश्चिम बेर नामक ग्राममें सरस्वतीके तीर अवस्थित है। वहां अद्यापि विस्तर बदरीवन दृष्ट होता है। महर्षि भरद्वाजकी श्रुवावती नाम्नी एक कन्या रही। उसने इन्द्रको पतित्वमें वरण करनेके लिये घोरतर तपस्या की थी। उसको तपस्यासे सन्तुष्ट हो देवराज वशिष्ठकी मूर्ति धारण कर उसके निकट उपस्थित हुवे और कहने लगे—'सुन्दरि! हम तुम्हें यह पांच बदरीफल प्रदान करते हैं, तुम पाक कर इन्हें प्रस्तुत करो; हम आते हैं।' श्रुवावतीने उनके आदेशसे बदर पाक करना आरम्भ किया था। दिवा अवसान हुवा, किन्तु बदर किसी प्रकार सिद्ध न हो सका। श्रुवावतीने जो काष्ठ संग्रह किया था, वह सब जल गया। श्रुवावती चिन्तित हुयी थी। परिशेषको उसने अपने हस्तपद ही काष्ठ बना पाक करना आरम्भ कर दिया। इन्द्र सातिशय सन्तुष्ट हो पुनर्वार अपनी मूर्तिसे उपस्थित हुये और कहने लगे–'श्रुवावति! हम तुम्हारे प्रति सन्तुष्ट हुये हैं। यह तीर्थ बदरीपाचन कहायेगा और तुम्हारा अभीष्ट भी सिद्ध हो जायेगा।' इन्द्रने वहांसे प्रस्थान किया और थोड़ी देरमें ही श्रुवावतीका पाणिग्रहण कर लिया।

(शल्य ४८ अ०)

वराहतीर्थ—वर्तमान बारा नामक ग्राममें अवस्थित है। भगवान्‌ने वराहमूर्ति धारण कर वहां अवस्थान किया था। वराहतीर्थमें स्नान करनेसे अग्निष्टोमका फल मिलता है। (वन ८३।१८)

वशिष्ठापवाहतीर्थ—थानेश्वरके निकट है। वह स्थाणुतीर्थका भी निकटवर्ती है। वशिष्ठापवाहतीर्थका प्रवाह अति भीषण है। वशिष्ठ और विश्वामित्रमें परस्पर वैरभाव रहा। एकदिन विश्वामित्रने वशिष्ठको अपने पास उपस्थित करनेके लिये सरस्वतीको अनुमति की थी। सरस्वतीने देखा कि विषम सङ्कट पड़ गया। महाक्रोधी विश्वामित्रका आदेश पालन न करनेसे निस्तार कहां था। वह महर्षि वशिष्ठको किस प्रकार ले जातीं। परिशेषको उन्होंने वशिष्ठके पास उपस्थित हो कातरस्वरसे आद्योपान्त सकल वृत्तान्त निवेदन किया। वशिष्ठने कहा—'भद्रे! तुम हमको ले चलो, नहीं तो विश्वामित्रके हाथसे तुम्हारा निस्तार कैसे होगा।' सरस्वतीके तीर विश्वामित्र तपस्या करते थे। सरस्वतीने उसी समय ले जाकर विश्वामित्रके समीप वशिष्ठको उपस्थित कर दिया। विश्वामित्रके उनको विनाशको अस्त्रानुसन्धानमें प्रवृत्त होने पर उन्होंने पुनर्वार वशिष्ठको यथास्थानमें पहुंचाया था। विश्वामित्रने सरस्वतीको चातुरी देख शाप दिया। उसी शापसे एकवर्ष तक सरस्वतीका जल शोणित रहा। इसी प्रकार वशिष्ठापवाहतीर्थ बन गया।

(शल्य ४२ अध्याय)

वंशमूल—वर्तमान बरशोला ग्राममें है। वहां स्नान और दान करनेसे वंशका उद्धार होता है। (वन ८३।४०)

वामनक—स्थानमें विष्णुपदह्रद विद्यमान है। वहां स्नान करके वामनको अर्चना करनेसे अनन्त फल मिलता है। (वन ८३।१०२)

विश्वामित्रतीर्थ—पृथूदकके निकट सरस्वतीके दक्षिण कूल ४० फीट ऊंचे स्तूप पर अवस्थित है। वहां शिल्प और कारुकार्यविशिष्ट एक सुन्दर मन्दिर का ध्वंसावशेष देख पड़ता है। मन्दिरमें ऐरावत-परिवृत इन्द्रमूर्ति और उसीके पार्श्वमें नवग्रह तथा अष्टनायिका मूर्ति शोभित है। नीच जाति भी उसमें स्नान करनेसे ब्राह्मण-जन्म ग्रहण कर शुचि और पवित्रात्मा हो जाते हैं। चरममें उन्हें ब्रह्मलोक मिलता और उनका सप्तम कुल पर्यन्त पवित्र होता है।

(वन, ८३। १७-१९)

विष्णुपद वा विष्णुस्थान—आजकल 'थान' कहाता है। वह पारिप्लवतीर्थका निकटवर्ती है। विष्णुपदमें भगवान् विष्णु सर्वदा सन्निहित रहते हैं। उक्त स्थानमें स्नान करके विष्णुको नमस्कार करनेसे अश्वमेधका फल पाते और परिणाममें स्वर्गको जाते हैं।

(वन, ८३। ११-१३)

वेदवती—वर्तमान शीतलामठके पार्श्वमें है। उसका अपर नाम वेदीतीर्थ है। वेदवती किन्दत्त कूपसे अनतिदूर अवस्थित है। उसमें स्नान करनेसे सहस्र गोदानका फल प्राप्त होता है। (वन ८३। ९७)

वैतरणी—वर्तमान धोधा ग्रामके पार्श्वमें प्रवाहित छूटंग नदी है। सकल पापविनाशिनी वैतरणीमें स्नान करके पितृलोक और महादेवको अर्चना करनेसे लोगोंके सब पाप छूट जाते और वह परिणाममें मुक्ति पाते हैं। (वन ८३। ८३)

वृद्धकन्यकतीर्थ—थानेश्वरके निकट है। कुणिगर्ग नामक किसी महर्षिने तपोबलसे एक मानसी कन्याकी सृष्टि की थी। वह अपने अनुरूप पतिके अभावमें उक्त स्थान पर तपस्या करने लगी। क्रमशः उसका वार्धक्य उपस्थित हुवा, चलने-फिरनेकी शक्ति जाती रही। फिर परलोक गमन करनेकी इच्छासे वह कलेवर परित्याग करने पर कृतसङ्कल्प हुयी। उसी समय नारदने उपस्थित हो कर कहा था—'कल्याणि! अनूढ़ा कन्याकी सद्गति मिलनेकी सम्भावना नहीं, तुम कैसे परलोक गमन करोगी!' वृद्धकन्या चिन्तित हुयी और कहने लगी—'यदि कोई हमारा पाणिग्रहण करना स्वीकार करे, तो हम उसको अपने तपस्याका अर्धांश प्रदान करेंगी।' शृङ्गवान्ने वृद्धकन्याका पाणिग्रहण किया था। वृद्धकन्याने एकरात्रि उनका सहवास करके कलेवर छोड़ दिया। इसीसे उक्त तीर्थका नाम वृद्धकन्यक पड़ गया है। (शल्य ४२ अध्याय)

व्यासवन—वर्तमान वासथलो ग्रामको दक्षिणपार्श्वस्थ भूमि है। उसमें मनोज्ञ नामक ह्रद विद्यमान है। उसमें स्नान करनेसे सहस्र गोदानका फल मिलता है। (वन ८३। ९२)

व्यासस्थली—वर्तमान वासथलो ग्राम है। वह करनालसे ८ कोस पश्चिम अवस्थित है। व्यासदेव पुत्रशोकसे कातर हो उक्त स्थानमें प्राणत्याग करने चले थे। वहां जानेसे सहस्र गोदानका फल प्राप्त होता है। व्यासस्थली कौशिकीसङ्गमके निकट अवस्थित है। (वन, ८३। ९५-९६)

ब्रह्मतीर्थ—वर्तमान रसालू ग्राममें अवस्थित है। वह कन्यातीर्थसे अधिक दूर नहीं। उसमें स्नान करनेसे नीचवर्ण भी ब्राह्मणत्व पाता है। ब्राह्मणको स्नान करनेसे सद्गति मिला करती है। (वन, ८३। ११२)

ब्रह्मयोनि—पृथूदकतीर्थके निकट है। ब्रह्माने उक्त तीर्थको निर्माण किया था। उसमें स्नान करनेसे ब्रह्मलोक मिलता और सप्तकुलका उद्धार भी होता है। (वन, ८३। ३८-३९)

ब्रह्मावर्त—आजकल 'ब्रह्मदत' कहा जाता है। उसमें स्नान करनेसे ब्रह्मलोक प्राप्त होता है। (वन, ८३। ५२)

शङ्खिनी—गोभवनमें अवस्थित है। उसमें स्नानदान करनेसे अनन्तफल मिलता है। (वन, ८३। ५३)

शक्रावर्त—वर्तमान समय 'शकरा' कहाता है। वह पृथूदकसे थोड़ी दूर पड़ता है। उसमें स्नान करके देवता और पितृलोककी अर्चना करनेसे उत्कृष्ट लोकको गमन कर सकते हैं। (वन, ८४। २९)

शतसहस्र—साहस्रक नामक एक अपर तीर्थके निकट है। उक्त दोनों तीर्थोंमें स्नान करनेसे सहस्र गोदानका फल प्राप्त होता है। शतसहस्रतीर्थमें दान उपवास प्रभृति जो अनुष्ठान किया जाता, उसका सहस्रगुण फल आता है। (वन, ८३। १५६-५७)

शालिहोत्र—थानेश्वरके निकट है। उक्त स्थानमें स्नान करनेसे सहस्र गोदानका फल मिलता है। (वन, ८३। १०६)

शीतवन—आजकल 'सिवन' नामसे प्रसिद्ध है। उक्त स्थानमें अनेक तीर्थ विद्यमान हैं। एकवार शीतवन अवलोकन किंवा अवगाहन करनेसे तीर्थसेवी परम पवित्रता लाभ करता है। (वन, ८३। ५८)

शौतीर्थ—स्थानमें स्नान, पितृ अर्चना किंवा देवपूजा करनेसे उत्कृष्ट कान्ति और विपुल धन पाते हैं। (वन, ८३। ४५)

श्वाविल्लोमापह वा श्वाविल्लोमापनयन—शीतवन-मध्यवर्ती है। उसमें प्राणायाम करके प्रयागकी भांति गात्रलोम परित्याग करना पड़ता है। इसके फलमें अतिशय पवित्रता और परिणाममें मुक्ति मिलती है। (वन, ८३। ६०-६२)

सन्निहती—थानेश्वरसे ४॥ कोस दक्षिण अवस्थित है। उसका वर्तमान नाम 'सनवत' है। ब्रह्मादि देव, ऋषि और तपोधन प्रति मास उक्त स्थानमें उपस्थित होते हैं। सूर्यग्रहणको उक्त स्थानमें स्नान करनेसे शत अश्वमेधयज्ञका फल मिलता है। मुनियोंके कथनानुसार पृथिवी किंवा अन्तरीक्षके सकल पवित्र नद, नदी, ह्रद, तड़ाग, प्रस्रवण, वापी प्रभृति प्रति मासको अमावस्याको वहां सन्निहित होते हैं। सूर्यग्रहण वा अमावस्याको सन्निहतीमें श्राद्ध करनेसे शत अश्वमेध यज्ञका फल प्राप्त होता है। परिणाममें तीर्थसेवी पद्मवर्ण रथ पर आरोहण कर ब्रह्मलोकको गमन करता है। समस्त तीर्थ सन्निहित होनेसे ही उसका नाम सन्निहती पड़ा है। (वन, ८३। ९१-१००)

सप्तसारस्वततीर्थ—वर्तमान मंगना नामक स्थानमें अवस्थित है। वह सोमतीर्थका निकटवर्ती है। मङ्कण नामक एक प्रसिद्ध महर्षि रहे। उन्होंने एकदा अपने हस्तके क्षत स्थानसे शाकरस निःसृत होते देख आनन्दमें नृत्य करना आरम्भ किया। उनके विशाल नृत्यसे चराचर मोहित और एकान्त विचलित हो गये। देवगणने महादेवके निकट जा उसकी सूचना दी थी। रुद्रदेव मङ्कणके निकट उपस्थित हो कहने लगे-'तपोधन! तुम किस निमित्त नृत्य करते हो? तुम्हारे इस प्रकारके हर्षका कारण क्या है?' महर्षिने उत्तर दिया 'अपने हस्तसे शाकरस निःसृत होते देख हम आह्लाद और विस्मयमें नृत्य करते हैं।' शूलपाणिने हास्य करके कहा 'यह आश्चर्यका कारण नहीं।' फिर महादेवने नखाग्रसे अङ्गुष्ठ पर आघात लगाया था। अङ्गुष्ठसे तुषार सदृश धवल भस्म निर्गत हुवा। मङ्कण उसे देख लज्जित हुवे और विस्मितचित्तसे देव-देव पिनाकपाणिका स्तव करने लगे। रुद्र सन्तुष्ट हो कर बोले थे—'आजसे यह स्थान तीर्थ हो गया। हम तुम्हारे साथ सर्वदा यहां अवस्थान करेंगे'। सप्तसारस्वतमें स्नान करके महादेवकी अर्चना करनेसे अभीष्ट सिद्ध होता और चरममें सारस्वतलोक मिलता है।

(शल्य, ३८ अ०; वन, ८३।११४।१३१)

सरस्वतीसङ्गम—स्थानको चैत्रमासकी शुक्ल चतुर्दशीके दिन ब्रह्मादि देव, तपोधन और महर्षि गमन करते हैं। सरस्वतीसङ्गममें स्नान करनेसे तीर्थसेवी बहुतर सुवर्ण पाते और सकल पापसे मुक्त हो ब्रह्मलोक जाते हैं। (वन, ८३।२५-२७)

सरक—आजकल 'सेरगढ़' कहाता है। कृष्णपक्षीय चतुर्दशी तिथिको उक्त स्थानमें उपस्थित हो महादेवकी अर्चना करनेसे सकल कामना पूर्ण होती हैं। फिर तीर्थयात्री उससे स्वर्गलाभ भी करता है। उक्त स्थानमें अनेक तीर्थ हैं। उनमें इलास्पद तीर्थ ही सर्वप्रधान है। (वन, ८३।३४-३६)

सर्पदेवी—वर्तमान समय 'सपिदान' नामसे ख्यात है। उनका अपर नाम नागतीर्थ है। नागतीर्थमें स्नान करनेसे नागलोक और अग्निष्टोमके समान फल प्राप्त होता है। (वन, ८३।१४-१५)

सर्वदेवतीर्थ—फलकीवनका मध्यवर्ती एक तीर्थ है। उसमें स्नान करनेसे सहस्र गोदानका फल मिलता है। देवगणके इस स्थानमें यज्ञका अनुष्ठान करनेसे सर्वदेवतीर्थ नाम पड़ा है। (वन, ८३।८७)

सुतीर्थ—ब्रह्मावर्तका निकटवर्ती है। वहां देवगण और पितृगण सर्वदा उपस्थित रहते हैं। सुतीर्थमें देवगण और पितृगणकी अर्चना करनेसे अश्वमेध

यज्ञका फल और पितृलोक प्राप्त होता है।

(वन, ८३।५३।५४)

सुदिन—आपगाका विवरण देखो।

सूर्यतीर्थ—कपिलातीर्थका निकटवर्ती है। वहां उपस्थित हो कर उपवास करना चाहिये। सूर्यतीर्थमें भक्तिपूर्वक देवता और पितृलोककी अर्चना करनेसे अग्निष्टोमका फल तथा सूर्यलोक मिलता है।

(वन, ८३।४७-४८)

सोमतीर्थ—दो हैं। एक सप्तसारस्वतका निकटवर्ती और दूसरा दधीचतीर्थसे अनतिदूर अवस्थित है। उभयतीर्थमें स्नान करनेसे ही चन्द्रलोक मिल जाता है।

सोमतीर्थमें द्विजराज चन्द्रने राजसूय यज्ञका अनुष्ठान किया था। यज्ञके अवसानमें देवगणके साथ राक्षसगणका घोरतर संग्राम हुवा। उसी युद्धमें कार्तिकेयने सेनापतिके पद पर नियुक्त हो समस्त राक्षस और तारासुरका विनाश किया था। सोमतीर्थमें एक वटवृक्ष है। सेनापति कार्तिकेय उसके तलपर निरन्तर अवस्थान करते थे। (शल्य, ४३ अ०; वन,८३।११३-११६)

स्थाणुतीर्थ—वर्तमान समयमें 'थानेश्वर' नामसे विख्यात है। उसका अपर नाम मुञ्जवट है।

(वन, ८३। २२) मुञ्जवटका विवरण देखो।

पञ्चवटीके अन्तर्गत किसी स्थान पर योगेश्वर नामक एक स्थाणु (शिव) हैं। उन्हें भी स्थाणुतीर्थ कहा जाता है। (वन, ८३। १६१) पञ्चवटीका विवरण देखो।

स्थाणुवट—बदरीपाचनतीर्थका निकटवर्ती है। उक्त स्थानमें यथानियम स्नान करके एकरात्रि वास करनेसे रुद्रलोक मिलता है। (वन, ८३। १८०)

स्वर्गद्वार—थानेश्वरसे अनतिदूर अवस्थित है। आजकल लोग उसे 'स्वर्गद्वारी' कहते हैं। वह नरकतीर्थका निकटवर्ती है। संयतेन्द्रिय हो उक्त स्थानको गमन करनेसे स्वर्गलोक किंवा ब्रह्मलोक पाया जाता हैं। (वन, ८३। ६८)

हस्तिपुर—आजकल 'अस्तिपुर' कहाता है। किसी किसीके मतानुसार कुरुक्षेत्र महासमरके निहत वीरगणका अस्थि वहां रक्षित होनेसे ही उसका अस्थिपुर नाम पड़ा है। किन्तु कुरुपाण्डवपक्षीय वीरगणके मृतदेहका केवल उसी क्षुद्र ग्राममें सञ्चित होना किसी प्रकार प्रमाणित नहीं होता। हस्तिपुरमें स्नान और प्रदक्षिण करनेसे सहस्र गोदानका फल मिलता है। (वन, ८३। १७५)

उपर्युक्त तीर्थ और पुण्यस्थान व्यतीत नारदपुराणोपरिभागखण्डके ६४ तथा ६५ अध्याय, माधवाचार्य विरचित कुरुक्षेत्रमाहात्म्य, रामचन्द्रसरस्वती-प्रणीत कुरुक्षेत्रतीर्थनिर्णय, कुरुक्षेत्ररत्नाकर और भट्टोजिदीक्षितके शिष्य कृष्णदत्तरचित कुरुक्षेत्रप्रदीप प्रभृति ग्रन्थमें दूसरे भी अनेक तीर्थका विवरण लिखा है। उनके मध्य कुरुक्षेत्रयुद्धमें निहत वीरगणके नामानुसार वर्तमान अनेक तीर्थोंका नामकरण किया गया है। आज भी कुरुक्षेत्रकी सीमामें उक्त सकल तीर्थ विद्यमान हैं।

महाभारतोक्त तीर्थनामोंके अपभ्रंश पर आजकल कई ग्रामोंका नाम चल गया है।

महाभारतके नानास्थानोंमें कुरुक्षेत्रका माहात्म्य वर्णित हुवा है। महाभारत और पूर्वकथित नारदपुराणादि ग्रन्थ व्यतीत कूर्म, अग्नि, नृसिंह प्रभृति पुराणोंमें भी कुरुक्षेत्र परम पवित्र स्थान जैसा विवृत हुवा है—

"कुरुक्षेत्रं गमिष्यामि कुरुक्षेत्रे वसाम्यहम्।
य एवं सततं ब्रूयात् सोऽमलः प्राप्नुयाद्दिवम्॥
तत्र विष्ण्वादयो देवास्तत्र वासाद्धरिं व्रजेत्।
सरस्वत्यां सन्निहितः स्नानकृद् ब्रह्मलोकभाक्॥
पांशवोऽपि कुरुक्षेत्रे नयन्ति परमां गतिम्।"

(अग्निपुराण, १०९। १४-१५)

इतिहास—जगत्के आदि ग्रन्थ ऋग्वेदके प्रमाण द्वारा निर्णीत हुवा कि कुरुपाण्डवकी युद्धघटनासे बहुपूर्व कुरुक्षेत्रने प्रसिद्धि लाभ की थी।

भागवतके मतानुसार सम्बरणके औरससे सूर्यतनया तपतीके गर्भमें कुरु नामक एक राजाने जन्म ग्रहण किया था। वही कुरुक्षेत्रपतिकी* भांति प्रथम वर्णित हुवे हैं। उसके पीछे सम्भवतः कुरुक्षेत्र तद्वंशीय राजगणके अधिकारमें रहा। महायुद्धके अनन्तर

* "तपत्यां सूर्यकन्यायां कुरुक्षेत्रपतिः कुरुः।" (भागवत, ९। २२। ४)

कौरवाधिकृत विपुल जनपदोंके साथ उक्त स्थान भी पाण्डवोंका अधिकृत हो गया। सम्भवतः क्षेमक अवधि कुरुक्षेत्र चन्द्रवंशीय राजगणका अधिकारभुक्त था यह समझनेका प्रकृत उपाय नहीं, उसके पीछे कुरुक्षेत्र किसके हाथ लगा। मकदुनियाके वीर अलकसेन्दर (सिकन्दर) घर्घरा नदीके तट पर्यन्त पहुंचे थे। उस समय घर्घरानदीके पूर्वतटसे समस्त पूर्वभारत मगधराजगणके अधिकारमें रहा। कुरुक्षेत्र भी उसीके अन्तर्गत था। मगधके बौद्धराजावोंका प्रभाव खर्व होने पर कुरुक्षेत्र और उसका निकटवर्ती समस्त प्रदेश कान्यकुब्जके हिन्दूराजगणका अधिकारभुक्त हो गया।

वाणभट्टके श्रीहर्षचरितपाठसे समझते हैं कि हर्षदेवके पिता प्रभाकर-वर्धन स्थाण्वीश्वरमें और उनके जामाता (दामाद) ग्रहवर्मा कान्यकुब्जमें राजत्व करते थे।

मधुवनसे प्राप्त हर्षवर्धनके प्रदत्त (२५ संवत्) ताम्रशासनमें उनके वृद्ध पितामह (परदादा) नरवाहनसे राजावोंके नाम मिलते हैं। * सम्भवतः उक्त नरवाहन (ई० पञ्चम शताब्दीके शेष भागमें) से श्रीहर्ष पर्यन्त छह राजावोंने कुरुक्षेत्रमें राजत्व रखा।

श्रीहर्षचरित और चीन-परिव्राजक युएनचुआङ्गके भ्रमण वृत्तान्तमें लिखा है कि हर्षदेवके ज्येष्ठभ्राता (स्थाण्वीश्वरराज) राज्यवर्धनने मालवराज देवगुप्तको पराजय करके कान्यकुब्ज अधिकार किया था। उनके मरने पर हर्ष स्थाण्वीश्वर और कान्यकुब्जके राजचक्रवर्ती हुवे।

हर्षके राज्यकाल (ई० षष्ठ शताब्दीके शेष भाग) चीन-परिव्राजक युएन-चुयाङ्ग कुरुक्षेत्रस्थ स्थाण्वीश्वर (स-त-नि-श-फ-लो) देखने आये थे। † उस समय स्थाण्वीश्वर राज्य (सम्भवतः कुरुक्षेत्र) ५०० कोससे अधिक (७००० लि) विस्तृत रहा। उसमें ३ बौद्ध सङ्घाराम, हीनयानमतावलम्बी ७०० बौद्ध याजक और प्रायः शताधिक (हिन्दू) मन्दिर थे। चीन-परिव्राजकके समय भी थानेश्वरका चतुःपार्श्वस्थ १६ कोस स्थान (२०० लि) 'धर्मक्षेत्र' नामसे अभिहित होता था। *

चीन-परिव्राजकको वर्णनासे समझा जाता है कि उस समय भी धर्मक्षेत्र कुरुक्षेत्रमें मृत वीरगणका अस्थिराशि विद्यमान रहा। उन्होंने थानेश्वरसे उत्तर-पश्चिम अनतिदूर बौद्धराज अशोक-निर्मित ३०० फीट ऊंचा एक स्तूप देखा था।

उसके पीछे बराबर कुरुक्षेत्र कान्यकुब्जके राजगणका अधिकारभुक्त रहा। कान्यकुब्जके राजगणके समयमें पृथूदकसे प्राप्त खोदित शिलाफलकादि द्वारा उक्त विषय समझा जा सकता है। †

महमूद-गजनवीने थानेश्वरको आक्रमण करके कुरुक्षेत्रको चक्रस्वामी नामक विष्णुमूर्तिको ध्वंस किया था। उसके पीछे १०४३ ई० में दिल्लीके राजा पृथ्वीराजने मुसलमानके कवलसे पुण्यक्षेत्र कुरुक्षेत्रको छुड़ा लिया। ११९२ ई० को दिल्लीश्वर पृथ्वीराजका गौरवरवि अस्तमित होने पर कुरुक्षेत्र और सरस्वती-प्रवाहित विस्तीर्ण भूभाग मुसलमानोंके अधिकारमें पड़ गया। हिन्दू-विद्वेषी मुसलमानोंके आधिपत्य काल कुरुक्षेत्रके अनेक पुण्यतीर्थ लुप्त और अधिकांश देवालय विध्वस्त हुवे। किन्तु धर्मप्राण हिन्दू कुरुक्षेत्रका माहात्म्य भूल न सके। उस दारुण सङ्कटके समय भी शत सहस्र (लाखों) तीर्थयात्री जीवनको तुच्छ समझ बहु दूर देशसे कुरुक्षेत्रके सकल पवित्र तीर्थ दर्शन करने जाते थे। 'तारीख-दाऊदी' नामक मुसलमान इतिहासमें लिखा है—'सिकन्दर-लोदीके सिंहासनलाभसे पूर्व कुरुक्षेत्रमें स्नान करनेके लिये एक बार विस्तर यात्रियोंका समागम हुवा। सिकन्दरने उनमें सकलको विनाश करनेका सङ्कल्प किया था।' तबकात-अकबरीके पाठसे समझ पड़ता है—'बादशाह (अकबर) थानेश्वरमें जा पहुंचे। उस

* Epigraphia Indica, Vol. I. p. 68.

† La Vie de Hiouen-Thsang, per Stanislas Julien; p. 64.

* Beal's Si-yu-Ki, Vol. I. p. 184.

† Epigraphia Indica vol. I. p. 106, 244.

समय कुरुक्षेत्रके सरोवर तट पर ग्रहणके उपलक्षमें स्नानार्थ विस्तर योगी और संन्यासी उपस्थित थे। तीर्थयात्री स्वर्ण और मणिरत्नादि ब्राह्मणोंको दान करने लगे। संन्यासी और योगी दोनों दलमें विवाद रहा। बादशाहको अनुमति मांग कर उन्होंके समक्ष उभय दलमें घोरतर युद्ध हुवा। शेषको संन्यासियोंने जय पाया।'

हिन्दूविद्वेषी औरङ्गजेबने कुरुक्षेत्रमें उक्त सरोवरके * मध्यवर्ती द्वीपाकार स्थान पर मुगलपाड़ा नामक एक दुर्ग बनाया था। उसी दुर्गसे मुसलमान समागत तीर्थयात्रियोंको गोलीसे मार देते थे।

सिखोंके अभ्युदयमें हिन्दुवोंके तीर्थों और प्राचीन देवमन्दिरोंका मुसलमानोंके कवलसे उद्धार हुवा। पूर्वकालको भांति फिर सहस्र सहस्र तीर्थयात्री कुरुक्षेत्रके दर्शनको गमन करने लगे। आजकल भी सकल समय भारतके नाना स्थानोंसे तीर्थयात्री कुरुक्षेत्र पहुंचा करते हैं।

कुरुक्षेत्रीयोग (सं० पु०) १ किसी सावन दिनको तीन तिथि, तीन नक्षत्र और ३ योगका स्पर्श। २ कुरुक्षेत्रमें मृत्युसूचक ग्रहयोग विशेष। जन्मकालको मृत्युस्थानमें पांच ग्रह, तथा लग्नमें बृहस्पति रहने और जन्मलग्नका अधिपति चन्द्र होनेसे कुरुक्षेत्रमें मरते हैं, इसीका नाम कुरुक्षेत्रीयोग है। (जातकामृत संग्रह)

कुरुख (हिं० वि०) क्रुद्ध, कुपित, नाराज, मुंह बनाये हुवा, बुरे रुखवाला।

कुरुखेत (हिं०) कुरुक्षेत्र देखो।

कुरुचिल्ल (सं० पु०) कर्कट, केंकड़ा।

* उक्त बृहत् सरोवर थानेश्वरके निकट अवस्थित है वह दैर्घ्यमें ३५४१ फीट और प्रस्थमें १९०० फीट है। एक समय उस सरोवरका प्रायः द्विगुण आयतन रहा। वह महाभारतोक्त दधीचतीर्थ और ऋग्वेदोक्त शर्यणावत् अनुमित होता है। उसके मध्य ५०० फीट परिमित एक द्वीप है। सरोवरसे द्वीपको जानेके लिये उत्तर और दक्षिण अंशमें दो सेतु हैं। कुरुक्षेत्र-माहात्म्य वर्णित चन्द्रकूप उसी द्वीपके मध्य पश्चिम अंशमें अवस्थित है। द्वीप और सरोवर चारो ओर इष्टक-प्राचीरसे वेष्टित हैं। प्राचीर और सेतु दोनों अकबरके प्रिय वयस्य राजा वीरबरके व्ययसे निर्मित हुये हैं।

कुरुजाङ्गल (सं० क्ली०) कुरवश्च जाङ्गलश्च, एकवत् द्वन्द्वः। विशिष्टलिङ्गो नदीदेशोऽग्रामः पा २।४।७। जनपद विशेष, एक मुल्क। राजा सम्बरणके पुत्र कुरुके नामानुसार उक्त स्थान 'कुरुजाङ्गल' नामसे विख्यात है—

"ततः सम्बरणात् सौरी तपती सुषुवे कुरुम्।
तस्य नाम्नाभिविख्यातं पृथिव्यां कुरुजाङ्गलम्॥"
(महाभारत, आदिपर्व, ९४।४९)

वामनपुराणमें लिखा है—

"कुरुक्षेत्रं समाभ्यागाद यष्टुं वैरोचनिः बलिः।" (४९।१)

बलि कुरुक्षेत्रमें यज्ञ करनेको गये थे।

फिर अन्यस्थलमें—

"विलासलीलागमनो गिरीन्द्रात् समभ्यागच्छत कुरुजाङ्गलं हि।"
(५०।१७)

(वामनरूपी विष्णुने) उस पर्वतवरसे विलास गमन पर कुरुजाङ्गलमें बलिके यज्ञको गमन किया।

वामनपुराणके उक्त दोनों स्थानोंके पाठसे कुरुक्षेत्र और कुरुजाङ्गल एक ही जनपद समझ पड़ता है।

किन्तु उक्त पुराणमें फिर देवस्थानके उल्लेखकाल कुरुक्षेत्र, कुरुजाङ्गल और कुरुचत्वर तीनों स्थान पृथक् पृथक् वर्णित हुवे हैं। यथा—

"रूपधारमिरावत्यां कुरुक्षेत्रे जनार्दनम्।" (५०।५)
"महालये स्मृतं रौद्रं चत्वरेषु कुरुष्वथ।
पद्मनाभं मुनिश्रेष्ठ सर्वसौख्यप्रदायिनम्॥" (५०।२२)
"तेजसे शम्भुमनघं स्थाणुश्च कुरुजाङ्गले।" (५०।१७)

वामनपुराणके उक्त शेष चरणके मतसे कुरुजाङ्गलमें स्थाणु देव विराज करते हैं। वर्तमान थानेश्वरका प्राचीन नाम स्थाणुतीर्थ है। स्थाणुतीर्थ स्थाण्वीश्वर महादेवके नामके अपभ्रंशसे थानेश्वर कहाता है। थानेश्वर देखो। वामनपुराणके मतसे थानेश्वर और उसको चारो ओरका विस्तीर्ण भूखण्ड 'कुरुजाङ्गल' है। पाश्चात्य प्राचीन भौगोलिक टलेमिने उसे 'करङ्गकलै' (Korangkolai) नामसे उल्लेख किया है। उसका अपरनाम कुरुदेश है। कुरुदेश देखो। शक्तिसङ्गमतन्त्रके मतमें पाञ्चालके पूर्व हस्तिनापुरसे कुरुक्षेत्रके दक्षिण भाग पर्यन्त कुरुदेश है, किन्तु वह वर्णना ठीक नहीं। रामायणादिके मतमें हस्तिनापुर और पाञ्चालके पश्चिम कुरुजाङ्गल पड़ता है।

कुरुक्षेत्र शब्दमें विस्तारित विवरण देखो।

दशरथके मरने पीछे भरतको केकयराज्यसे लानेके लिये कई दूत भेजे गये थे। उन्होंने अयोध्याके पीछे नाना स्थान अतिक्रम करके हस्तिनापुरमें गङ्गाको पार किया। फिर वह पश्चिमाभिमुख पाञ्चाल और पीछे कुरुजाङ्गलके मध्य उपस्थित हुवे। वाल्मीकिकी वर्णना-से समझ सकते हैं कि उस समय भी वहां कमल-शोभित सरोवर और पुष्पकूल-भूषित स्वच्छजला नदी वर्तमान रही।—

"ते हास्तिनपुरे गङ्गां तीर्त्वा प्रत्यङ्मुखा ययुः।
पाञ्चालदेशमासाद्य मध्ये न कुरुजाङ्गलम्॥
सरांसि च सफुल्लानि नदीश्च विमलोदकाः।
निरीक्षमाणा जग्मुस्ते दूताः कार्यवशाद् द्रुतम्॥"

(अयोध्याकाण्ड, ६४। १३-१४)

कुरट (सं॰ पु॰) सितावर-शाकक्षुप, शिरियारी।

कुरटी (सं॰ पु॰) अश्व, घोड़ा।

कुरण्ट (सं॰ पु॰) १ पीतझिण्टी, पीली कटसरैया। २ दारुपत्नी, कोई घास। ३ अम्लान वृक्षभेद, किसी किस्मकी कटसरैया। ४ कुटजवृक्ष, मकोय।

कुरण्टक (सं॰ पु॰) कुरण्ट स्वार्थे कः। कुरण्ट देखो।

कुरण्टका (सं॰ स्त्री॰) पीतझिण्टी, पीले फूलकी कट-सरैया।

कुरण्टिका (सं॰ स्त्री॰) १ साकुरुण्ड वृक्ष, कोई पेड़। २ झिण्टी, कटसरैया। ३ हस्तिशुण्डी, कोई पेड़। ४ शैलालिकाभेद, सिहरू।

कुरण्टी (सं॰ स्त्री॰) १ काष्ठपुत्तलिका, कठपुतली। २ ब्राह्मणपत्नी अथवा शिक्षकपत्नी, उस्तादकी बीबी।

कुरण्टी कई वृक्षोंका भी नाम है। कुरण्टिका देखो।

कुरण्ड (सं॰ पु॰) कुरण्टकवृक्ष, किसी किस्मकी कट-सरैया।

कुरत (सं॰ पु॰) वंशनिर्मित वृहदाकार पात्र, बांसका बना हुवा बड़ा बरतन।

कुरतीर्थ (सं॰ क्ली॰) कुरुक्षेत्रके अन्तर्गत एक तीर्थ।

कुरनदिका (सं॰ स्त्री॰) कुनदिका, क्षुद्रनदी, छोटा दरया।

"अथाल्पिका नदिका कुरनदिकेत्याचक्षते।"

(लाट्यायन-श्रौतसूत्रभाष्य, ८। ११। १८)

कुरनन्दन (सं॰ पु॰) कुरो राज्ञः नन्दनः, ६-तत्। कुरु-वंशीय युधिष्ठिरादि नृपति।

कुरनाग (सं॰ पु॰) १ उष्ट्र, ऊंट। २ पीतझिण्टी, पीले फूलकी कटसरैया।

कुरपञ्चाल (सं॰ पु॰) कुरवः पञ्चालाश्च, द्वन्द्वः। कुरु तथा पञ्चाल देशवासी लोग।

कुरपिशङ्गिला (सं॰ स्त्री॰) पिशान् तृणलताद्यवयवान् गिलति अधः करोति, पिश-गिल-क-टाप्। तृणादि भोजन और कुरु शब्दका अनुकरण करनेवाली, जो घास वगैरह खाती और कुरु-कुरु आवाज लगाती हो।

" अजावि पिशङ्गिला श्वावित् कुरपिशङ्गिला।"

(वाजसनेयस, २३। ५६)

'कुरुपिशङ्गिला कुरु इति शब्दानुकुर्वाणा। पिश अवयवे कप्रत्ययः। पिशान् मूलाद्यवयवान् गिलति पिशङ्गिला मूलानां शतं भक्षयतीति महीधर)

कुरमार—दाक्षिणात्य और राजपूतानेकी एक जाति। राजपूताने और युक्तप्रदेशमें इन्हें सिकलीगर भी कहते हैं। इनका काम चाकू, कैंची, छुरी, तलवार आदि हथियारों पर धार या शान चढ़ाना है। कुरमार अपना परिचय क्षत्रिय-जैसा देते हैं। परन्तु कुछ विद्वान् ऐसा नहीं मानते।

कुरम्ब (सं॰ पु॰-क्ली॰) कुलपालक, नारङ्गी।

कुरम्बर—दाक्षिणात्यकी एक जाति। पूर्वकाल कुरम्बर लोग अति प्रबल रहे। प्रवादानुसार समस्त द्राविड़ देशमें उनका आधिपत्य था। दाक्षिणात्यमें अनेक जन-पद उनके प्रतिष्ठित किये हुये हैं। चोल राजगणके समय आर्काट प्रभृति स्थानोंमें कुरम्बर रहते थे। आज कल दाक्षिणात्यके नाना स्थानोंमें वह देख पड़ते हैं।

कुरम्बरोंमें अधिकांश लोग असभ्य हैं। उन्हें जङ्गलमें छोटे छोटे कुटीर (झोपड़े) बना वास करना अच्छा लगता है। फिर कोई वृक्ष पर, कोई गिरि-गुहामें और कोई वृक्षकोटरमें रहता है। कुरम्बर अधिक बुद्धिमान् न होते भी प्रायः नम्र और निरीह हैं। उत्तरमें वास करनेवाले अपेक्षाकृत उच्च नहीं। किन्तु गोदावरीके दक्षिण-प्रान्तसे कुमारिका-अन्तरीप पर्यन्त जो पशु चराते फिरते, वह अधिकतर उच्च, कृश और कृष्णवर्ण होते हैं। मेषपाल अर्ध अनावृत रहते हैं। उनका आच्छादन केवल एक गाढ़ कम्बल है।

दाक्षिणात्यके वेनाद नामक स्थानमें कुरम्बरोंके

मध्य दो श्रेणीभेद हैं—जनी और गुल्ली। जनी लोग केवल वनमें वास करते हैं। कुठार (कुल्हाड़ा) से वृक्ष काटना ही इनकी उपजीविका है।

अपरापर कुरुम्बरोंकी अपेक्षा नीलगिरिके कुरुम्बर कुछ सभ्य हैं। नीलगिरिके साधारण लोगोंको विश्वास है कि वह इन्द्रजाल जानते हैं। इसीसे बहुतोंको उनसे बड़ा भय रहता है। कुरुम्बरके वासस्थानके निकट यदि कोई मर जाता, तो उस पर इन्द्रजाल द्वारा मृत व्यक्तिको संहार करनेका सन्देह आता है। यहां तक कि अनेक समय मृत व्यक्तिके आत्मीय दलबद्ध हो उक्त कुरुम्बरको जाकर विनाश करते हैं। इसीसे कुरुम्बर लोकालय (लोगोंके घर) में रहनेका साहस नहीं रखते। फिर भी यदि कोई रह जाता और सुन पाता कि अमुक व्यक्ति मर गया तथा मृत व्यक्तिके आत्मीयोंकी दृष्टि उस पर पड़ी है, तो वह अविलम्ब गृहद्वार एवं गोमिषादि छोड़ निविड़ वनको पलायन करता है।

कुरुम्बा (सं० स्त्री०) द्रोणपुष्पी, गूमा।

कुरुम्बिका, कुरुम्बा देखो।

कुरुम्बी (सं० स्त्री०) सैंहलीवृक्ष, एक प्रकारके पीपलका पेड़।

कुररी (सं० स्त्री०) कुररी, स्त्री श्येन पक्षी, बहरी। २ मेषी, मेढ़ी।

कुररी (सं० पु०) १ कुररपक्षी, शिकरा, बाज़। २ भालस्थ चूर्णकुन्त, मत्थेकी जुल्फ। उसका संस्कृत पर्याय भ्रमरक और भ्रमरालक है।

कुरुल (सं० पु०) कुररी देखो।

कुरुला (सं० स्त्री०) गानेकी एक गमक।

कुरुवक (सं० पु०) १ रक्तझिण्टी, लाल कटसरैया। (क्ली०) २ कुरुवक शाक वा कुरुवकपुष्प, कटसरैयाकी सब्जी या फूल।

कुरुवत्स (सं० पु०) राजपुत्रविशेष, एक शाहजादा वह ज्यामघ-वंशीय अनवरथ राजाके पुत्र थे।

कुरुवर्ष (सं० क्ली०) कुरुसंज्ञकं वर्षम्, कर्मधा०। वर्षविशेष, एक मुल्क। जम्बूद्वीपके उत्तर कुरुवर्ष अवस्थित है। उत्तरकुरु देखो।

कुरुवश (सं० पु०) नृपतिविशेष, एक राजा। वह विदर्भवंशीय मधुके पुत्र थे। (भागवत, ९। २४। ५)

कुरुवाजपेय (सं० पु०) वाजपेय यज्ञका प्रकारविशेष, एक छोटा वाजपेय यज्ञ।

कुरुवार—युक्तप्रदेशकी एक वैश्यजाति। यह लोग एटा, बरेली, बदाऊं, सीतापुर, मुरादाबाद आदि जिलोंमें रहते है। कुछ लोगोंके कथनानुसार कुरुवार 'कारबाहर' शब्दसे निकला है, जिसका अर्थ नियमविरुद्ध कार्यकारी है।

कुरुविन्द (सं० पु०) १ व्रीहिभेद, कोई कुधान्य। २ कुलत्थ, कुरथी। ३ भद्रमुस्ता, नागरमोथा ४ मुस्ता, मोथा। ५ माष, उड़द। (क्ली०) ६ पद्मरागमणि, मानिक। ७ काचलवण, काला नमक। ८ रत्नभेद, कोई जवाहिर। ९ दर्पण, आईना।

कुरुविन्दक (सं० पु०) कुरुविन्द स्वार्थे कन्। १ वन कुलत्थक, जङ्गली कुलथी। २ भद्रमुस्तक, नागरमोथा।

कुरुविन्दाख्या (सं० स्त्री०) कुरुविन्देति आख्या यस्याः, बहुव्री०। कुरुविन्दक देखो।

कुरुविल, कुरुविल्व देखो।

कुरुविल्व (सं० पु०) १ नागरमुस्ता, नागरमोथा। २ पद्मरागमणि, मानिक। ३ वनकुलत्थ, जङ्गली कुलथी। ४ कुलत्थाञ्जन।

कुरुविल्वक, कुरुविल्व देखो।

कुरुविस्त (सं० पु०) सुवर्णपल, ४ तोला सोना।

कुरुवीरक (सं० पु०) अर्जुनवृक्ष, एक पेड़।

कुरुवृद्ध (सं० पु०) कुरुषु वृद्धः, ७-तत्। भीष्म।

कुरुश्रवण (सं० पु०) कुरवो यज्ञकर्तारः तेषां श्रवणः श्रोता, कुरु-श्रु-युच्। अनुदात्तेतश्च हलादेः। पा ३। २। १४९। एक वेदप्रसिद्ध नृपति। उन्होंने त्रसदस्युके पुत्र याज्ञिक गणकी स्तुति सुनी।

"कुरुश्रवणमावृणि राजानं त्रासदस्यवं।" (ऋक् १०। ३३। ४)

'कुरुश्रवणं कुरव ऋत्विजः तदीयानां स्तुतीनां श्रोतारं तन्नामकं राजानम्।' (सायण)

कुरुसुति, कुरुस्तुति देखो।

कुरुस्तुति (सं० पु०) वैदिक मन्त्रप्रकाशक एक ऋषि।

कुरुटिनी (वै० स्त्री०) किरीटधारी सैन्यदल।

"वाहिनी विश्वरूपा कुरुटिनी।" (अथर्व, १०। १। १५)

कुरूप (सं० त्रि०) कुत्सितं रूपमस्य, बहुव्री०। १ कुश्री, बदसूरत। (क्ली०) कुत्सितं रूपम्, कुगति समा०। २ निन्द्यरूप, खराब सूरत।

कुरूपता (सं० स्त्री०) कुत्सितरूपविशिष्टता, बदसूरती, बेढङ्गापन।

कुरूप्य (सं० क्ली०) कु ईषत् रूप्यं रजतं तत् सादृश्यात्, कुगतिसमा०। रङ्ग, रांगा।

कुरूरु (वै० पु०) कीटविशेष, एक कीड़ा।

(अथर्व २।३१।२, ९।२।२२)

कुरेदना (हिं० क्रि०) कर्तन करना, करोदना, खुरचना।

कुरेदनी (सं० स्त्री०) लकड़ी या लोहे वगैरहका एक औजार। वह लम्बी, नुकीली और छड़-जैसी होती है। उससे भट्ठीकी आगको कुरेदते हैं।

कुरेभा (हिं० पु०) वर्षमें दो बार व्यानेवाली गाय।

कुरेर (हिं० स्त्री०) कल्लोल, हंसी खुशी, खेल कूद।

कुरेलना (हिं० क्रि०) खनन करना, खोदना, कुरेदना।

कुरेलनी (हिं० स्त्री०) कुरेदनी, भट्ठीकी आग कुरेदने की एक छड़।

कुरेत (हिं० पु०) साझी, हिस्सेदार।

कुरैना (हिं० पु०) राशि, ढेर।

कुरैया (हिं० स्त्री०) कुटजवृक्ष, एक पेड़। वह वनमें उत्पन्न होती है। उसके पत्र दीर्घ और तरङ्गी (लहरिया) रहते हैं। कुरैयामें दीर्घ और सुगन्धि पुष्प आते हैं। वह श्वेत, रक्त, पीत, कृष्ण वा नीलवर्ण होते हैं। उसका फल इन्द्रयव कहाता है। इन्द्रयव देखो।

कुरौना (हिं० क्रि०) राशि लगाना, ढेर या कूरा करना।

कुरौनी (हिं० क्रि०) राशि, ढेर, कूरा।

कुर्क (तु० वि०) राजापहृत, जब्त,

कुर्क अमीन (तु० पु०) न्यायालयकी आज्ञासे सम्पत्ति अपहरण करनेवाला राजकर्मचारी, जो सरकारी मुलाजम अदालतके हुक्मसे जायदाद जब्त करता हो।

कुर्कनामा (तु० पु०) अपहरणपत्र, जब्तीका परवाना। कुर्कनामेके मुताबिक हो कुर्क अमीन जायदाद जब्त करते हैं।

कुर्की (हिं० स्त्री०) अपहरण, जब्ती। कर्तृपक्ष पलायित अपराधीके न्यायालयमें उपस्थित होने या अधमर्णका ऋण परिशोध करनेके लिये उसकी सम्पत्तिकी कुर्की करता है। कच्ची कुर्की वह है जिसके अनुसार फैसला या डिगरी होनेसे पहले ही अधमर्णकी सम्पत्ति अपहरण कर ली जाती है।

कुर्कुट (सं० पु०) कुक्कुट, मुरगा। कुर्कुट स्पर्श करना निषिद्ध है। कुक्कुर और चण्डालके स्पर्शमें जो दोष लगता, कुक्कुट स्पर्श करनेसे ही भी उसी दोषका भागी बनना पड़ता है।

कुर्कुटाहि (सं० पु०) कुर्कुट-तुल्यं अहति अह-इनि। १ पक्षिविशेष, कोई चिड़िया। उसका रव और वर्ण कुर्कुटके तुल्य होता है। कुर्कुट इवाहिः। २ सर्पविशेष, कोई सांप।

कुर्कुर (सं० पु०) कुरित्यव्यक्तशब्दं कुरति शब्दायते, कुर् कुर-क। ग्राम्यमृग, कुत्ता।

"कुर्कुराविव कूजन्ती।" (अथर्व ७।९५।२)

कुर्ग—दक्षिण-भारतका एक छोटा अंगरेजी प्रान्त। वह अक्षा० ११° ५६´ तथा १२° ५०´ उ० और देशा० ७५° २२´ एवं ७६° १२´ पू०के मध्य पश्चिम घाट पर्वतकी चोटियों और ढालों पर महिसुर राज्यसे पश्चिम अवस्थित है। कुर्ग ऊंचा और विचित्र देश है। भूमिका परिमाण १५८२ वर्गमील लगता है। वह उत्तर-दक्षिण ६० मील लम्बा और पूर्व-पश्चिम ४० मील चौड़ा है। कुर्गके उत्तर एवं पूर्व महिसुरका हसन तथा महिसुर जिला और दक्षिण-पश्चिम मन्द्राजका मलवार एवं दक्षिण कनाड़ा जिला है।

विशुद्ध नाम 'कोड़गु' है। उसीसे अंगरेजोंने 'कुर्ग' बना लिया है! वह कनाड़ी शब्द 'कुड्ड' (ढालू या पथरीला) से निकला है। कुर्गके लोगोंको 'कोड़ग' कहते हैं। कुर्ग भाषामें देशको 'कोड़वु' और उसके अधिवासियोंको 'कोड़व' कहा जाता है।

हत्ती या हारङ्गी नदीके दक्षिण प्रधान कुर्ग प्रान्तमें जङ्गल बहुत है। वहां गांव वा नगर देख नहीं पड़ते। कुर्गके अधिवासियोंको अपने खेतोंके पास ही झोपड़े डाल रहना अच्छा लगता है। जङ्गलमें हरे-

भरे पेड़ लहराते और नदी-नाले बहते चले जाते हैं। जमीन घाससे ढंकी रहती है।

सुब्रह्मण्यसे ब्रह्मगिरि तक कोई ६० मील पश्चिमघाटकी प्रधान पर्वतश्रेणी चली गयी है। सुब्रह्मण्यके वृहत् पर्वत पुष्पगिरिका शिखर समुद्रपृष्ठसे ५६२७ फीट ऊंचा है। मरकारासे ८ मील उत्तर ५३७५ फीट ऊंचा कोटवत्त गिरिशिखर है। बेंगू नाद पर्वत पश्चिमको घाटकी ओर चला गया है। उसी स्थल पर कावेरी नदीका उत्पत्तिस्थान ब्रह्मगिरि है। ब्रह्मगिरिसे उत्तर सम्पाकी उपत्यका है। उत्तर-पूर्वके पर्वतोंमें तुमविमल दुग्गुतप्प, दुग्गुतप्पकुन्दु तदियनदमल और सोममल प्रधान हे। दक्षिण-पश्चिम छोर पर मारनाद पहाड़ है।

कुर्गकी प्रधान नदी कावेरी है। वह पश्चिमघाटके ब्रह्मगिरिसे निकलती और पूर्वसे दक्षिण सिद्दपुरकी बहती हे। हेमावती और लक्ष्मणतीर्थ नदी उसकी सहायक हैं। बारापोल पश्चिमको जाता हे। सारत नदी ४३४ फीट ऊंचेसे भूमि पर पतित होती हे।

कुर्गमें कोई बड़ी झील नहीं। नञ्जराजपत्तन तालुकमें कुछ सरोवर विद्यमान हैं।

कुर्गके पहाड़ोंमें मरकाराके निकट क्लेस्लेट (चिकनीमट्टीकी पत्थर-जैसी कड़ी तखती) मिलती है। फ्रेसरपेटके पास बोल्लुरमें पत्थरका चूना बहुत है। उसके साथ ही सफेद मट्टीकी डलियां भी पायी जाती हैं। ईंट-जैसा पत्थर प्रत्येक प्रान्तमें वर्तमान है। लोहेकी भी कोई कमी नहीं। दक्षिण-पश्चिम कुर्गमें नीले रंगका चमकीला पत्थर बहुत है।

समग्र वन्य भागमें हाथी पाये जाते हैं। प्रधानतः पूर्व प्रान्तकी ओर उनकी संख्या अधिक है। किन्तु पहलेकी भांति उनकी बढ़ती देख नहीं पड़ती। अन्तिम कुर्गराजके एक शिलाफलकमें लिखा है कि १८२२ ई०के जुलाई माससे १८२४ ई० के अपरेल मास तक उन्होंने २३३ हाथी मारे और १८१ हाथी पकड़े थे। आजकल कमिश्नरका बिना लैसन्स लिये कोई उन्हें मार नहीं सकता। १६०२ ई० से हाथी पकड़नेका नियमित प्रबन्ध किया गया है। प्रधानतः मारेनाद और होरमलनादके बहुत घने जङ्गलोंमें जङ्गली भैंसे देख पड़ते हैं। शेर, चीते और भालू भी बहुत हैं। कई प्रकारकी बिल्लियां मिलती हैं। इसी और दूसरी नदियोंके किनारे ऊदबिलाव रहते हैं। जङ्गली कुत्ते झुण्ड बांध बांध कर शिकार करते हैं। वनमें कई प्रकारके हरिण पाये जाते हैं। लङ्गूरों और भूरे बन्दरोंकी भी संख्या अधिक है। भूरे बन्दरोंको लोग पकड़ करके मार खाते हैं। गीध, चीलें और दूसरी शिकारी चिड़ियां प्रायः पायी जाती हैं। तोतों, कबूतरों और जलचर पक्षियोंकी बहुतायत है। जङ्गली मुरगोंके परोंका बड़ा मोल होता है। सांपोंकी कोई कमी नहीं। बांसकी कोठियोंमें अजगर रहते हैं। घने जङ्गलोंमें विषैला काला सांप मिलता है। रामस्वामी कनावेके निकट कावेरीमें प्रायः घड़ियाल देख पड़ते हैं। नदियोंमें कई प्रकारकी छोटी बड़ी मछलियां मिलती हैं। कीड़े मकोड़ोंकी कोई संख्या नहीं लगा सकता। बरसातके पहले तितलियोंका दृश्य अपूर्व होता है।

कुर्गका जलवायु न अधिक उष्ण और न अधिक शीतल है।

कावेरी-माहात्म्यमें कुर्गकी पौराणिक वर्णना मिलती है। कावेरी कवेर मुनिकी कन्या रहीं। उन्होंने अपने पिता और जगत्के कल्याणार्थ नदी रूप धारण करना चाहा था। किन्तु अगस्त्यने उन्हें देख अपनी पत्नी बननेको कहा। इस पर वह इस शर्त पर सम्मत हुईं—यदि अगस्त्य उन्हें अकेली कभी छोड़ेंगे तो वह भी चली जानेके लिये स्वाधीन रहेंगी। एक दिन नारद अपना वचन भूल उन्हें अकेली छोड़के कनका नदीको स्नान करने गये थे। उसी बीच कावेरी घरसे निकल उनके पवित्र ह्रदमें कूद पड़ी और सुन्दर नदीके रूपमें बहने लगीं। अगस्त्यके अपने साथ रहनेको बहुत अनुनय विनय करने पर उन्होंने दो रूप धारण किये थे। एक रूपसे वह नदी होकर बहीं और दूसरे रूपसे मुनिके साथ रहीं।

उक्त कावेरी-माहात्म्यको देखते कुर्गवासी क्षत्रिय पिताके औरस और शूद्र माताके गर्भसे उत्पन्न हुये हैं।

उन क्षत्रियका नाम चन्द्रवर्मा था। वह मत्स्यदेशके राजा सिद्धार्थके कनिष्ठ पुत्र रहे। चन्द्रवर्मा तीर्थयात्रा करते करते ब्रह्मगिरि पहुंचे थे। वहां उन्होंने पार्वतीको आराधना की। पार्वतीने सन्तुष्ट हो उन्हें कुर्गका राज्य प्रदान किया और उनका विवाह किसी शूद्रासे कर दिया। पार्वतीने कावेरीका रूप धारण करनेको भी कहा था। उसी शूद्रा पत्नीसे चन्द्रवर्माके ११ पुत्र हुवे। वह विदर्भराजकी शूद्रा-जात १०० कन्यावोंके साथ व्याहे गये थे। चन्द्रवर्मा अपने ज्येष्ठपुत्र देवकान्तको राज्यभार सौंप यह कहते हुवे ईश्वरोपासनाके लिये वनको चलते बने कि पार्वती शीघ्र ही नदीका रूप धारण कर आविर्भूत होंगी। प्रत्येक राजकुमारके एक शतसे भी अधिक पुत्र हुवे, जो कुर्गमें चारो ओर फैल पड़े। उन्होंने वन्य शूकरोंकी भांति कृषिकर्मके लिये भूमिको विदीर्ण किया था। इससे उक्त प्रान्तका नाम 'क्रोड़देश' पड़ गया। उसीसे कोड़गु नाम निकला है।

तुला-सङ्क्रमणसे दो दिन पहले पार्वतीने स्वप्नमें देवकान्तको दर्शन दे कहा था वह अपनी समस्त प्रजाको वलम्बूरिके निकट एकत्र करते। तदनुसार वहां सब लोग जा पहुंचे। फिर नदी उपत्यकासे कोलाहल करती हुई नीचेको बह चली। समवेत कुर्गवासियोंने उसके सद्योजात जलमें स्नान किया था। उसी समयसे बराबर तुला सङ्क्रान्तिके समय कावेरीके उपलक्षमें प्रति वर्ष मेला लगता है।

शिलाफलकोंके पाठसे विदित होता है कि ई० ८म और १०म शतकको कुर्ग गङ्गराजावोंके राज्यमें सम्मिलित रहा। उनकी राजधानी महिसुरके दक्षिण-पूर्व कावेरी तटस्थ तलकाड़में थी। उन्होंने महिसुरमें ई० द्वितीय शतकसे एकादश शतक पर्यन्त राजत्व किया।

गङ्गराजावोंके अधीन चङ्गनादके चङ्गालव नृपति रहे, जो अपनेको पीछे नञ्जरापत्तनके अधीश्वर कहने लगे। नञ्जरापत्तन कुर्गमें कावेरीके उत्तर अवस्थित है। उसी स्थान पर कावेरी कुर्ग और महिसुरके सीमा रूपसे प्रवाहित है। पहले चङ्गालवोंका पनसोगों या इनसोगोंसे सम्बन्ध था। वह कावेरीसे दक्षिण महिसुरके एदतोर तालुकमें रहते थे। उनके राज्यमें महिसुरका हुनसुर तालुक और पूर्व कुर्ग तथा उत्तर कुर्गका कुछ भाग लगता था। एदवनाद और बेत्तिएतनादमें उनके शिलाफलक मिले हैं। वह असलमें जैन थे।

ई० एकादश शताब्दके आरम्भ काल तामिलके चोलोंने गङ्ग नरेशोंको पराजय करके तलकाड़ अधिकार किया था। वह कुर्ग प्रान्त जीतनेका भी दावा करते हैं। फिर चङ्गालव चोलोंके करद राजा बने और उनके चोल नाम रखे गये।

ई० एकादश शताब्दको चङ्गालवोंके उत्तर महिसुरके अरकलगूद तालुक और कुर्गके उत्तर येलूसाविर प्रान्तमें कोङ्गालवोंका राज्य रहा। वह भी जैन थे। उनकी राजधानी कोङ्गलनादमें रही होगी।

ई० १२श शताब्दके लगते ही पोयसलों या होयसलोंने महिसुरसे चोलोंको निकाल तलकाड़ अधिकार किया था। उनकी राजधानी दोर-समुद्रमें रही। किन्तु वास्तवमें वह पश्चिम घाटके मुदगीर तालुकसे महिसुर पहुंचे थे। इनका उपाधि 'मलपावोर' (पहाड़ी राजावोंके बहादुर) रहा। कुर्गमें ९८७ ई० का एक शिलाफलक मिला है, जिसमें चार मलपोंका नाम लिखा है।

११४५ ई० को होयसलराज नरसिंहने चङ्गालव-राजको युद्धमें विनाश किया और उनके हाथियों, घोड़ों, सोना और जवाहिरातको लूट लिया था। फिर चङ्गालव सम्भवतः कुर्गको पीछे हट गये। कारण ११७४ ई० को २य बल्लालने पालपारेको उनके विरुद्ध अपना सेनापति बेत्तरस भेजा था। वहां एक दुर्ग रहा, जिसका ध्वंसावशेष किग्गतनादके हतगतनादमें पड़ा है। महादेव चङ्गालव मारे गये। बेत्तरसने वहां अपनी राजधानीके लिये एक नगर निर्माण किया था। किन्तु चङ्गालव पेम्म विरप्पा बूदगन्द, नन्दिदेव, कुराचेके उदयादित्य और दूसरों (सब नादोंके कौड़गों)-के साथ पालपारेके विरुद्ध अग्रसर हुवे और बेत्तरस पर टूट पड़े। बेत्तरस पहले तो घबराये, किन्तु अंतको जीत गये। इसके पीछे सम्भवतः चङ्गालव पूर्णरूपसे पराभूत

हुवे। १२५२ ई० को होयसलराज सोमेश्वर रामनाथपुरमें (अरकलगूद तालुकमें कावेरीकी उत्तर ओर) उनसे मिले थे। उस समय चङ्गालवोंकी राजधानी कावेरीसे दक्षिण सिद्दपुरके निकट श्रीरङ्गपत्तन (कोड़गु श्रीरङ्गपत्तन) में रही। उस समय चङ्गालवों ने दूसरे पुराने जैन राजावोंकी भांति अपना धर्म परिवर्तन और द्वादश शताब्दका लिङ्गायत मत अवलम्बन किया था। उनके कुलदेवता बेत्तदपुर पर्वतके अन्नदानी मल्लिकार्ज्जुन हो गये। उक्त पर्वतको चङ्गालव श्रीगिरि कहते थे।

ई० १४ शताब्दको होयसलोंका उत्तराधिकार विजयनगरराजको मिला और चङ्गालवोंको उनके अधीन होना पड़ा था। ई० १६श शताब्दके प्रारम्भ काल नञ्जराजने अपनी नयी राजधानी नञ्जराजपत्तनको स्थापित किया। १५८८ ई० को प्रिय राजा वा रुद्रगणने शृङ्गपत्तनको पुनः निर्माण करके अपने नामानुसार प्रियपत्तन नाम रखा था। १५६५ ई० को मुसलमानोंने जब विजयनगरका अधिकार किया, तब राजप्रतिनिधिकी शक्तिका भी ह्रास होने लगा। १६०७ ई०को राजप्रतिनिधिने मलवाड़ी देश (हुनसूर तालुक) रुद्रगणको प्रदान किया था, जिसमें चङ्गलव राजवंशके रहते अन्नदानी मल्लिकार्जुन देवका पूजार्चन न उठता। किन्तु १६१० ई० को वह महिसुरराजके लिये पीछे हट गये। महिसुरराजने श्रीरङ्गपत्तनको अधिकार करके अपनी राजधानी बनाया था। फिर १६४४ ई० को महिसुरने बेत्तदपुर और प्रियपत्तनको भी अधिकार किया। ननजुदराजने जगत्‌से अपना सम्बन्ध तोड़ा था। किन्तु उनके पुत्र वीरराज अपनी राजधानी रक्षामें धराशायी हुवे। उन्होंने अपना सङ्कटापन्न स्थिति और चङ्गालव शासनका अन्त देख पहले ही अपनी महिषी और अपने पुत्रोंको मार डाला था।

'फिरिश्ता' लिखता है—ई० १६श शताब्दके शेष भाग प्रधान कुर्ग प्रदेश अपने ही राजावों द्वारा शासित होता था। उनका उपाधि 'नायक' रहा। वह विजयनगरको वश्यता मानते थे। किन्तु उनमें परस्पर प्रायः विरोध लगा रहता था। कुर्ग देश १२ कोम्बुवों और ३५ नाडोंमें विभक्त था। महिसुरने चङ्गलवोंको जीत कुर्गको अपने राज्यमें मिलाया न था। कुर्गके जातीय इतिहासके अनुसार महिसुरको सेना पालपारेको बढ़ी और हार गयी। उसके अनेक सैनिक धराशायी हुवे थे। जो हो, परन्तु महिसुरको बदनूरके नायक शिवप्पाके विरुद्ध अपनी रक्षा करनी थी। शिवप्पा महिसुरका सम्पूर्ण पश्चिम प्रान्त उजाड़ रहे थे। १६४६ ई० को उन्होंने श्रीरङ्गपत्तनको घेर लिया और विजयनगरके पलायित राजाको पुनर्वार अधिकार दिलानेको प्रयत्न किया। इस प्रकार भूतपूर्व चङ्गालव राज्यको राह किसीके लिये अधिकार करनेको खुली थी।

इक्केरी या बदनूर राजवंशके किसी राजकुमारने वह कार्य सम्पादन किया। वह मरकराके उत्तर हालेरीमें लिङ्गायत पुरोहित वा जङ्गमको पोशाक पहन बसे थे। उन्होंने समग्र देशको अपने अधीन बना लिया। १८३४ ई० तक उनके वंशज कुर्गमें राज्य करते रहे। १८०७ ई० तक उनका इतिहास 'राजेन्द्रनामा' में मिलता है। उक्त इतिहास महापराक्रमशाली वीर-राजेन्द्रके आदेशसे कनाड़ी भाषामें लिखा गया था।

मुद्दु राजा राजधानीको उठा कर मदिकेरी या मरकारा ले गये। १६८१ ई० को उन्होंने वहां दुर्ग और राजप्रासाद बनाया था। उनके तीन पुत्रोंमें ज्येष्ठ पुत्र डोड्ड वीरप्पको मरकाराका उत्तराधिकार मिला। राजा अप्पाजी तथा नन्दराज, द्वितीय एवं तृतीय पुत्र, हालेरी और होरमलेमें बस गये। १६९० ई० को जब महिसुरने चिक्कदेवरायके अधीन बेलूर प्रान्त आक्रमण किया, तब डोड्ड वीरप्पने कुर्गके लिये एलुसाविर प्रान्त छीन लिया। उन्हें उक्त प्रान्त अपने अधीन रखनेको आज्ञा इस शर्त पर मिली कि वह आधी मालगुजारी महिसुरको देते। उन्होंने चिरकल राजाको बदनूरके नायक सोमशेखरके विरुद्ध साहाय्य करनेसे उत्तर-पश्चिम अमरसुल्यका जिला भी पाया था। १७३६ ई० को ७८ वर्षको अवस्थामें उनका मृत्यु हुवा। फिर उनके पौत्र चिक्क वीरप्पको सिंहासन सौंपा गया। चिक्क वीरप्पके शासनकाल महिसुरमें हैदरअलीका बल वैभव बढ़ा था। १७६३ ई० को उन

ने बदनूर और उसका राज्य जय किया। फिर वह अपनेको कुर्गका महाप्रभु समझने लगे। पहले उन्होंने एलूसाविर पानेका दावा किया था। पीछे ३ लाख पागोडाके बदले उचिङ्गि कुर्गको दे डाली।

चिक्कवीरप्पका कोई उत्तराधिकारी न रहा। इसलिये मुद्दू और मुद्दप्प दो अन्य शाखावोंको कुर्ग राज्य प्राप्त हुवा। उन्होंने परस्पर मिलजुल राज्यशासन किया था। अपने वचनानुसार उचिङ्गि न देनेसे उसके बदले हैदरअलीको पांजि और बेल्लार स्थान देने पड़े। पूर्वोक्त दोनों राजावोंने १७७० ई०को इहलोक परित्याग किया। मुद्दू राजा अप्पाजी नामक अपना उत्तराधिकारी छोड गये थे। मुद्दूके पिताके भ्राताने उसे सिंहासन पर बैठाना चाहा। किन्तु मुद्दप्पाके पुत्र मल्लप्पाने अपने बेटे देवप्पा राजाको आगे कर दिया जो कुर्ग राज्यका उत्तराधिकारी मान लिया गया। इस पर लिङ्ग राजाने हैदरअलीके निकट साहाय्यके लिये पलायन किया। वह साथमें अपने पुत्र वीर राजा और भ्रातुष्पुत्र (भतीजे) अप्पाजीको भी ले गये। किन्तु हैदर अली उस समय मराठोंसे लड़ रहे थे। इसलिये वह शीघ्र कुछ कर न सके। मराठोंके हट जाने पर लिङ्ग राजा एक सेनाके साथ भेजे गये। राहमें बहुतसे कुर्ग भी उनसे आ मिले। इसलिये वह विना किसी रोकटोकके राजधानी मरकाराको ओर अग्रसर हुवे। देवप्प राजाने कोतेके चिरक्कल राजाके निकट जाकर शरण लिया था, किन्तु वहां अपना अच्छा स्वागत होते न देख वह केवल ४ अनुचरोंके साथ वेश बदल कर उत्तरको ओर भागे, हरिहरमें पकड़े जाने पर वह श्रीरङ्गपत्तन भेजे गये। वहां उनके बाल बच्चे कैद खानेमें पड़े सड़ रहे थे। उनके साथ देवप्पाको भी प्राणदण्ड मिला। यही होरमेल शाखाका अवसान था। फिर हैदर अलीने लिङ्ग राजाको इस शर्त पर कुर्ग प्रदान किया कि वह कर देते रहेंगे। विनादके एक बार अधिकार कर लेनेको भी उन्हें आज्ञा मिली थी। किन्तु साथ ही उनके अधिकारसे अमर सुल्य, पञ्जे, बेल्लारे और एलूसाविर निकाल लिया गया। १७८० ई० को लिङ्ग राजाके मरने पर हैदर अलीने इस बहाने सम्पूर्ण कुर्ग राज्य अधिकार किया कि वह लिङ्ग राजाके अबोधबालकोंकी अभिभावकता करेंगे। फिर उन बालकोंको महिसुर जिलेके अरकलगूद तालुकमें कावेरी पर गोरूर किलेमें रहनेकी आज्ञा दी गयी। कुर्गके एक पूर्वतन ब्राह्मण कोषाध्यक्ष शासक हुवे और मरकारा किलेकी रक्षाको मुसलमान सिपाही नियुक्त रहे।

कुर्ग इससे बहुत बिगड़े कि उनके शासक ब्राह्मण बने और उनके राजकुमार सिंहासन छोड़ चले थे। सुतरां १७८२ ई० को उन्होंने बलवा कर दिया और मुसलमानोंको निकाल बहार किया। हैदर करनाटकमें उस समय अंगरेजोंसे लड़ रहे थे। उनके मर जानेसे शीघ्र कोई प्रतिकार हो न सका। किन्तु उनके पुत्र टीपू सुलतान कुर्गको पुनर्वार जय करने पर तुले थे। उन्होंने कुर्ग राजावोंके वंशको प्रियपत्तन पहुंचाया और १७८४ ई० को नगर पुनर्वार अधिकार और मङ्गलोर विध्वंस करने पर कुर्गके मध्य श्रीरङ्गपत्तनको अग्रसर हुवे। उन्होंने घोषणा की थी—'कुर्गों पर यह अपराध प्रमाणित है कि उन्होंने अपने बहुतसे स्वामी बना लिये हैं। फिर विद्रोह भी उन्होंका फैलाया हुवा है, किन्तु इस बार हम उन्हें क्षमा कर देंगे। यदि दूसरी बार फिर उन्होंने उपद्रव उठाया, तो समझना होगा कि उनका काल आया है। फिर कोई कुर्ग देशमें रहने न पावेगा और बिलकुल मुसलमानी शासन हो जावेगा।' टीपू कुर्ग छोड़ करके गये ही थे कि १७८५ ई० को कुर्गोंने फिर अस्त्र धारण करके अपनी पहाड़ियां मुसलमानोंके हाथसे छीन लीं। जो सेना दमन करनेके लिये भेजी गयी थी, वह विद्रोहियोंके भीषण आक्रमणसे पीछे हटी। फिर टीपू अपने आप फौजके साथ कुर्गको अग्रसर हुवे। उन्होंने कुर्गोंको प्रलोभन दिया कि तलेकावेरी जाकर उनसे शान्तिपूर्वक मिलते और अपने अभाव अभियोगको प्रकाश करते। किन्तु कुर्गोंके वहां पहुंचने पर टीपूने उन्हें धोकेसे पकड़ लिया और उनके बाल-बच्चोंको रगेदने पीछे ७०००० लोगोंको भेड़ोंकी भांति श्रीरङ्गपत्तन खदेर दिया। वहां उनको मुसलमानी की गयी। कुर्ग

मुसलमान जमीन्दारोंमें विभक्त हुवा। इन नये जमीन्दारोंसे टीपूने यही कहा—यदि कोई हमारे हाथका छूटा कुर्ग मिले, तो उसे जानसे मार डालो; हम उनके विनाश पर तुले हुवे हैं। मरकारा (जाफराबाद), फ्रेसरपेट (कुशलनगर), भागमण्डल और बेप्पु नादके किलेमें रक्षकसैन्य रहता था।

१७८८ ई० को वीर राजा ६ वर्ष कारारुद्ध रहनेके पीछे अपनी पत्नी और अपने दो भाई लिङ्गराज तथा अप्पाजीके साथ प्रियपत्तनसे गुप्त भावमें भागे थे। कुर्ग लोग दल दल उनसे जा मिले और थोड़े ही दिनमें वह समस्त प्रान्तके राजा बन गये। टीपूने उनसे लड़नेको बड़ी फौज भेजी थी। किन्तु मलयालम्- राजावोंके उपद्रव उठाने पर वह पश्चिम तटको ओर चली गयी। फिर वीर राजा और अंगरेजोंमें एक सन्धि हुयी। टीपूने उन्हें पीछे फुसलानेकी व्यर्थ चेष्टा की थी। १७८९ ई० को फरवरी मास बम्बईसे जो फौज श्रीरङ्गपत्तनको अग्रसर हुयी, उसे निकटस्थ देशको पूर्ण रूपसे लूट करके वीर राजाने रसद दी। लार्ड कार्नवालिसने टीपूको पीछे श्रीरङ्गपत्तन भगा द्दीपको अधिकार किया था। इसी युद्धविग्रहमें टीपू जिन १२००० लोगोंको पकड़ ले गये थे, वह भी छूट करके अपने देश आ पहुंचे। टीपूको अंगरेजों की शर्त्त माननी पड़ीं। उनमें एक शर्त यह भी थी, कि टीपूको कम्पनीके अधिकारसे लगा हुवा अपना आधा राज्य अंगरेजोंको सौंपना पड़ेगा। टीपूके बदलेसे वीर राजाको बचानेके लिये कुर्ग भी मांग लिया गया; जिस स्थान पर वीर राजा अंगरेजी सेनानायक अबरक्रोम्बीसे पहले मिले, वहीं उन्होंने वीरराजेन्द्रपेट नामक नगरको स्थापन किया, जो आज कल कुर्गमें द्वितीय नगर है। टीपूने वीर राजाके वधकी दो बार व्यर्थ चेष्टा की थी। टीपूके साथ अन्तिम युद्धमें राजाने फिर बम्बईको फौजको रसद वगैरह पहुंचायी। १७९९ ई० को श्रीरङ्गपत्तनके पतनकाल उन्हें युद्धके कुछ जयचिह्न (अस्त्र शस्त्र आदि) मिले थे। परन्तु प्रियपत्तन प्रान्त अपने अधिकारमें न रख सकनेसे वह हताश हो गये। फिर भी उन्हें दक्षिण कनाड़ामें पाजी और बेल्लारि मिला था। दूसरे विवाह की लड़कियां तो उनके रहीं, किन्तु लड़का कोई न था। १८०७ ई० को महिषीके परलोक जाने और उत्तराधिकारी होनेकी आशा न पानेसे वह पागल पड़ गये और क्रोधके आवेशमें लोगोंके वधकी आज्ञा देने लगे। अफरीकाके सीदी उनके शरीररक्षक रहे। वह आदेश मिलते ही लोगोंको मार डालते थे। परन्तु राजप्रासादके रक्षक और सेनाके पदाधिकारी कुर्ग रहे। उन्होंने अन्याय अत्याचार असह्य होनेसे राजाको मार डालनेके लिये साजिश की। अन्तको संवाद मिलने पर वह बड़ी सावधानताके साथ शय्यामें रत्नाक्ष कम्बलके नीचे एक तकिया रख भाग गये। साजिश करनेवाले उन्हें ढूंढनेको बाहर-भीतर दौड़ पड़े। परन्तु उनके हाथ न आने पर हताश हुवे। फिर उन्होंने उसी समय अपने सीदियोंको बुलाया और किलेके फाटकोंको बन्द कराया था। इसमें ३०० कुर्ग फंसे जो सबके सब वध किये गये। राजाने अपने आप ३०० कुर्गोंको गोलीसे मारा था। पीछे उन्हें अंगरेजोंके अप्रसन्न होनेका डर लगा। उन्होंने गवर्मेंट-जनरलको लिखा था,—'हमारी रानी मर गयी हैं। हम चाहते हैं कि हमारे राज्यका उत्तराधिकार बड़ाईके अनुसार हमारी चारो लड़कियों या उनके, लड़कोंको दिया जावे।' किन्तु बहुत दिन तक उसका कोई उत्तर मिला न था। उन्होंने अपना मृत्यु आता देख और उस अवस्थामें लड़कियोंकी रक्षाके लिये चिन्तित हो अपने दोनों भाइयोंको मार डालनेके लिये जल्लाद भेज दिये। किन्तु जब वह सचेत हुवे, तो उक्त आदेश रहित करनेके लिये हरकारे प्रेरण किये गये। हरकारोंके पहुंचते पहुंचते अप्पाजी तो मर चुके थे, लिङ्गराज बचे रहे। अन्तमें १८०९ ई० को ९ वीं जूनको राजाने अपनी बड़ी लड़की देवम्माजीको बुला करके अपनी मुहर-छाप सौंप दी और आखिरी सांस ली। देवम्माजी कुर्गकी रानी बनी थीं। स्वर्गीय राजाके बड़े जामाता सोदे राजा दिवान्‌का काम करते रहे।

उसी बीच कुर्गोंने लिङ्गराजको राज्यका उत्तराधिकारी बनाना चाहा। सोदे राजासे उनके देश लौट

जानेको कहा गया। लिङ्गराजने अपने लिये रानीसे भी सिंहासन छोड़नेको कहा था। १८११ ई० को उन्होंने अपने राजा होनेकी घोषणा की। बम्बई और मन्द्राजमें देवम्माजीके लिये उनके पिता जी बहुत सा रुपया जमा कर गये थे, उसे भी लिङ्गराजने उठा लेना चाहा। किन्तु वह १८२० ई० को ४५ वर्ष की अवस्थामें स्वर्गवासी हुवे। उनकी स्त्रीने भी भविष्यत्के भयसे आत्महत्या कर डाली।

लिङ्गराजके पीछे उनके पुत्र वीर राजा, जिनका वयस बीस वत्सर रहा, सिंहासन पर बैठे। राजा होते ही पहले उन्होंने उन लोगोंको फांसी पर चढ़ाया, जिन्होंने उन्हें उनके पिताके वर्तमान रहते चिढ़ाया या सताया था। उनका शासन बहुत कठोर रहा। १८३२ ई० को चन्नबसव नामक एक कुर्ग भाग कर महिसुरके रसीडण्टके पास पहुंचा और उनसे जाकर निवेदन किया—'आप वीर राजाके अत्याचारसे हमें बचाइये।' राजाने रसीडण्टको लिखा कि अभियुक्त उनको सौंप दिये जाते। किन्तु उनकी बात मानी न गयी। रसीडण्ट फिर कुर्ग गये और राजाको समझाया कि अंगरेज सरकारकी आज्ञा न माननेपर उनके सिंहासनसे उतारे जानेका भय था। किन्तु राजा न सुधरे। वीरराजेन्द्रकी लड़की देवम्माजी अपने अवशिष्ट परिवारके साथ मार डाली गयीं। फिर राजाने मन्द्राजके गवर्नर और गवर्नर जनरलको कड़ी कड़ी चिट्ठियां लिख कर और भी बात बिगाड़ दी। १८३४ ई० को लार्ड विलियम बेनटिङ्कने उन्हें सिंहासनसे उतारनेके लिये फौज भेजी थी। उसका किसीने सामना न किया और उसने मरकारामें जा कर अङ्गरेजी झण्डा उड़ा दिया। राजा अपना कोष और कुटुम्ब लेकर नलकनाद भाग गये।

उक्त वर्षकी ११वीं अपरेलको पोलिटिकल एजण्ट कारनल फ्रेजरने ढिंढोरा पिटाया कि कुर्गमें राजा वीरराजेन्द्रने उदयपुरका शासन और राज्य नियत रूपसे उठाया था। फिर ७वीं मईको कुर्ग अंगरेजी राज्यमें मिलाया गया। राजा वेल्लोरके निर्वासित हुवे। अन्तको उन्हें बनारसमें जाकर रहनेकी आज्ञा दी गयी थी।

१८३३ ई० को वीरप्पा नामक एक व्यक्तिने अपनेको राजवंशका उत्तराधिकारी बताया और कुर्गके अंगरेजी राज्यमें मिलाये जाने पीछे संन्यासीके वेशमें राज्य पानेको बड़ा षड्यन्त्र रचाया। विद्रोहके समय वह पकड़ कर मङ्गलोरके जेलमें रखा गया। फिर १८८० ई० को उक्त संन्यासी जेलमें ही मरा था।

१८३७ ई० को पश्चिमढालके गोद बिगड़ उठे। उनकी आपत्ति यह रही—अमरसुल्य, पुत्तूर और बन्तपाल जिला कनाड़ेमें मिल जानेसे राजस्व रुपयोंमें देना पड़ता था, जिसमें वह महाजनसे ऋण लेने पर वाध्य होते थे; कुर्गके नियमानुसार उन्हें राजस्वमें उत्पन्न द्रव्यादि देनेका अभ्यास था। मङ्गलोरमें उपद्रव उठा। विद्रोहियोंने जेलके कैदियोंको छोड़ दिया और दफतरों तथा कुछ सिविलियनोंके घरोंको लूट लिया और जला कर भस्म किया। किन्तु कुर्गोंने अपने आप उक्त विद्रोहको दबाया था, जिसके लिये उन्होंने पुरस्कार और पदक पाया। १८६१ ई० को सिपाही-विद्रोहके पीछे कुर्ग अपनी राजभक्तिके कारण हथियार लेलिये जानेसे बचे रहे।

१८५४ ई० को पहले पहल कुर्गके मरकारा स्थानमें अंगरेजोंने कहवेका बाग लगाया था। फिर १८६५ ई० तक कितने ही दूसरे बाग लग गये।

कुर्गोंके घरोंके पास एक छोटा चौकोर स्थान बना रहता है। उसमें वह अपनी चांदीकी थाली रखते जिनमें कुर्गके स्त्रीपुरुषोंके चित्र बने होते हैं। उक्त स्थानको कैमद मन्दिर कहते हैं। १८०९ और १८२१ ई० को मरकाराके निकट राजाका सुप्रसिद्ध समाधिमन्दिर बना था। मरकाराका राजप्रासाद भी दर्शनीय है।

कुर्गका प्रधान नगर मरकारा, वीरराजेन्द्रपेट, सोमवारपेट, फ्रेसरपेट और कोदलीपेट है। लोकसंख्या प्राय: १८०६०७ है।

कुर्गोंमें कर्णाट (कनाड़ी) भाषा प्रचलित है। उसके नीचे कोड़गु या कुर्गोंकी बोली है। कुर्गोंकी बोली पुरानी कनाड़ी और मलयालमके संयोगसे बनी है। उसमें लिखनेके अक्षर नहीं। वह कनाड़ी अक्षरोंमें ही लिखी जाती है। फिर भी कुर्गोंकी बोलीमें वीर-

रसके कुछ गीत मिलते हैं। इसके अतिरिक्त कुर्गमें एरव, तुलु, हिन्दी, तामिल, तेलगु, मराठी और कोङ्कनी भाषा भी चलती रहती है। जङ्गली लोग कुरुम्ब बोली बोलते हैं।

कुर्ग सनातनधर्मावलम्बी हैं। वह महादेव और सुब्रह्मण्यदेवको इग्गुतप्प नामसे पूजते हैं। कावेरी नदीकी भी पूजा अर्चना की जाती है। कुछ लोग भूत प्रेतोंको भी मानते हैं। अयप्पदेवके लिये देवरुकाडु एक लम्बा चौड़ा जङ्गल सुरक्षित रहता है। उसमें कोई मनुष्य जाने नहीं पाता।

तक्का नामक वृद्धोंकी मण्डली कुर्गोंके समाजका प्रबन्ध करती है। नियम भङ्ग करनेवालेका अभियोग अम्बल (हरेभरे मैदान) पर सुना जाता है। अपराधी-को तक्का सभापति १०) रु० तक अर्थदण्ड कर सकते हैं। दण्ड न देनेवाला जातिसे निकाल दिया जाता है। परन्तु युरोपीयोंके सहवाससे कुर्गोंमें लोग अधिक मदिरा पीने लगे हैं। १८८३ ई० को संयमका आन्दो-लन उठा था, किन्तु उसका कुछ फल न हुवा।

पुत्रके हाथमें भूमिष्ठ होते ही रणका धनुर्वाण पकड़ा दिया जाता है, जिसमें वह शिकारी और लड़ाका हो। मरने पर युवकोंको भूमिमें गाड और वृद्धोंको जला देते हैं।

कुर्गोंमें कावेरी, हुत्तरी (फसल-पूजा), भगवती और केल मुहूर्त (हथियार-पूजा) का जलसा बड़ी धूमधामसे होता है। उस समय यह बहुत गाते बजाते और आनन्द उड़ाते हैं। कुर्गमें दूसरे रहनेवाले यरव, होलेय गोंद, तीय, नायर, तामिल, मराठा, मोपला, सिख और ईसाई हैं।

सैकड़े पीछे ८८ कुर्ग खेती करते हैं। यहां चावल बहुत होता है। पानी अधिक बरसने और नदी नाले भरे रहनेसे सींचनेके लिये नहरोंकी आवश्यकता नहीं पड़ती। पहले इलायचीके जङ्गलसे भी लोगोंको बड़ी आमदनी रही। किन्तु अब जङ्गलोंका पट्टा हो जानेसे इलायचीका मोल घट गया है। कहवेकी बात पहले ही लिख चुके हैं। सिनकोना (कुनैनके पेड़) और चायकी खेती अङ्गरेजोंने आरम्भ की थी, परन्तु सफ-लता न मिलनेसे छोड़ दी। कहवा मरकारा, घाटके पहाड़ों और बांसके जिलेमें बोया जाता है। कुर्गमें केला और नारङ्गीकी उपज भी अधिक है।

कुर्गका जलवायु पशुवोंके लिये अच्छा नहीं केवल भैंसे और सूवर जीते जागते हैं।

वनविभाग डिपटी कनसर्वेटरके अधीन है। घाटका जङ्गल मालेकाडु कहलाता है। जङ्गल ऐसा घना कंटीला है, कि विना राह बनाये चलना असम्भव है। पूर्वके जङ्गलको कनवेकाडु कहते हैं। उसमें बांसकी कोठियां बहुत हैं। इमलीका पेड़ फ्रेसरपेट और सोमवारपेटके बीच कावेरीतीर कहीं कहीं मिलता है। सुरक्षित वनकी लकड़ी काट कर महि-सुरमें बेची जाती है। कुर्गमें कङ्कड़ और मट्टीको छोड़ कर दूसरे धातुकी खानि कहीं नहीं।

कुर्ग प्रान्तमें व्यापारकी कोई चीज भी नहीं बनती, केवल बढ़िया बढिया चाकू तैयार होते हैं। उत्तर कुर्गमें मोटा और शनिवारसान्तेमें बारीक कपड़ा बुना जाता है।

गेहूं, चना, दाल, पशु, चीनी, नमक, तेल और कपड़ा कुर्गमें बाहरसे आता तथा इलायची, चावल, नारङ्गी, लकड़ी, चन्दन और चमड़ा चालान किया जाता है।

चीफ कमिश्नर कुर्गका प्रबन्ध करते हैं। कुर्गके बड़े अफसर कमिश्नर साहब मरकारामें रहते हैं।

कुर्चिका (सं० स्त्री०) १ सूची, सूई। २ कूर्चिका, बिगड़ा हुवा दूध। कूर्चिका देखो।

कुर्णक (सं० पु०) पटोललता, परवलकी बेल।

कुर्णज (सं० पु०) कुलिञ्जन वृक्ष, गन्धमूल, कुलींजन-का पेड़।

कुर्दन (सं० क्ली०) कुर्द भावे ल्युट्। क्रीड़ा कार्य, खेल कूद।

कुर्दमी (हिं० स्त्री०) मौरञ्ज, जहाजी रस्सा।

कुर्दस्थान—कुर्द जातिकी वासभूमि, कुर्द लोगोंके रह-नेका मुल्क। वह पारस्यका पूर्वभागस्थ एक प्रदेश है। फिर टाइग्रिस नदीसे उत्तर पूर्ववर्ती असीरिया-का एक जनपद निम्न कुर्दस्थान कहाता है।

कुर्दस्थानके उत्तर प्रान्तमें वाणह्रद है। उक्त प्रान्त भाग समुद्रपृष्ठसे ५२०० फीट ऊंचा है। वहां अधिकांश कुर्द लोग रहते हैं। वाण ह्रदके निकटवर्ती गिरि शृङ्ग अति उच्च हैं। उनमें कोई कोई प्रायः १५००० फीट ऊंचा निकलेगा। फिर किसी किसीकी उच्चता इतनी आती, कि सर्वदा उस तुषार (वर्फ) की शोभा दिखाती है। कुर्दस्थानके पर्वत पूर्व सीमासे उत्तरको मेसोपोटेमिया विस्तृत हैं। उक्त पर्वत कुर्दस्थानके अभेद्य दुर्गरूपसे अवस्थित हैं। उन्हें जय न करनेसे कुर्दस्थान या एशियाके तुरुष्क (तुर्क) राज्यके मध्यप्रदेश कैसे जीत सकते हैं? कई शतवर्ष गत हुवे—मिद, पारसिक, ग्रीक, रोमक, सरासेन, रूस, तुर्क प्रभृति लोगोंने कितनी ही चेष्टा की थी, किन्तु कुर्दस्थान कोई सहजमें जीत न सका। अल्पकाल हुवा, कुर्दस्थान दूसरे लोगोंका अधिकृत हो गया है। परन्तु सहस्राधिक वर्ष पूर्वसे कुर्दजाति उक्त पर्वतोंके कठिन अङ्कमें आश्रयलाभ करके आज भी स्वाधीनभावसे कालयापन करती है। कुर्दस्थानका जलवायु विशुद्ध, स्वास्थ्यकर और शीतप्रधान है। वहां शीतकालको बहुत वर्फ गिरता है। यहां तक—किसी किसी स्थानमें चार-पांच मास पर्यन्त वह नहीं गलता।

कुर्दस्थानमें कुर्द और गोन दो जातियोंका वास है। उनमें कुर्द लोग ही अधिक देख पड़ते हैं।

कुर्द लोग मुसलमान् सुन्नीमतावलम्बी, कृषिजीवी और अधिकांश मेषपालक होते हैं। वही पाश्चात्य ऐतिहासिक जेनाफेन-वर्णित कर्दुकि (Carduchi), गोर्दियारि (Gordiari) और किर्ति (Cyrtic) नामक प्राचीन जाति हैं। जेनाफेनके समय आरमेनिया, लरिस्थान प्रभृति जिन जिन स्थानोंमें वास करते, आज भी उन्हीं उन्हीं प्रदेशोंमें वह रहते देख पड़ते हैं। पूर्वकालको टाइग्रीस नदीके दक्षिणकूलमें सेर्त और विन्तिस (देशा० ४२°) से वरन्दूज (देशा० ४२° ५०) पर्यन्त कुर्दस्थान जनपद कहलाता था। आज कल कुर्द लोग यूफ्रेटिस नदीके पश्चिमसे टरास पर्वतके दक्षिण और बुखारासे पूर्व अफगानस्थान तथा कच्छगन्धव पर्यन्त फैल गये हैं। किसी किसीके मतमें वर्तमान समय कुर्द जातिकी संख्या ५० लाख होगी।

कुर्दस्थान, तुरुष्क और पारस्य राज्यके अधिकृत होनेसे पहले क्षुद्र क्षुद्र अंशोंमें विभक्त रहा। प्रत्येक अंश किसी न किसी सामन्तके तत्त्वावधानमें रहता था। जो व्यक्ति वंशमर्यादामें श्रेष्ठ, सुशील, बलशाली और साहसी ठहरता, वही कुर्द लोगोंमें सामन्त बन सकता था। सामन्तको वह 'वे' कहते हैं। वे यदि अधिक क्षमताशाली हो जाते, तो अपने बाहुबलसे अपरापर सामन्तोंको वशीभूत बनाते थे। आज भी स्थानविशेषमें कुर्द लोगोंके बीच एक एक दलपति रहता है। उसे दस्युदलपति भी कह सकते हैं। अति पूर्वकालसे वर्तमान समय पर्यन्त वे डाकू कहलाते हैं। मध्य मध्यमें दो-एक कुर्द गिरिपथ पर उपस्थित हो वाणिज्यद्रव्यादिका आना-जाना रोक देते और सुविधा लगनेसे माल असबाब लूट पर्वतको गुहामें जाकर शरण लेते हैं।

पूर्वकी भांति आज भी वह गोमेषादि पालन और सामान्य कृषि द्वारा जीविका निर्वाह करते हैं। कुर्द शारीरिक परिश्रम द्वारा अर्थोपार्जन करना नहीं चाहते। रूस-तुरुष्कके युद्धकाल तुरुष्काधिपतिने अनेक कष्टमें कुर्द दलपतियोंके साथ प्रबन्ध बांध कुर्द सैन्य पाया था। कुर्द सिपाही जय पराजय पर अधिक लक्ष्य नहीं रखते। उन्हें शत्रुपक्षीयों पर घोरतर अत्याचार करके लूटमार मचाना अच्छा लगता है। अपरापर सभ्य जातियोंकी भांति वह विपन्नों वा पराजितोंके प्रति कुछ भी ममता नहीं दिखाते। शत्रु सबल हो या दुर्बल और चाहे वह प्राणभिक्षा भी मांगे, कुर्द किसी ओर भ्रूक्षेप न कर उसका शिरश्छेद किया करते हैं। इसमें उन्हें विपुल आमोद आता और उत्साह बढ़ जाता है।

कुर्दोंमें बहुतसे लोग एक स्थानमें ही रहना चाहते हैं। उन्हें पर्वतकी भिन्न भिन्न उपत्यकावोंमें घूमना-फिरना अच्छा लगता है। मूसाताग नामक शैलके उत्तर-पश्चिम दस्तवदौलत उपत्यकामें भ्रमणशील कुर्दोंका अधिक वास है। वसन्त कालको उक्त उपत्यकाका

दृश्य अति प्रीतिकर लगता है। उस समय चारो ओर तृणक्षेत्र विविध कुसुमभूषणसे विभूषित होता है। कुर्द लोग भी फूल तोड़ करके नाना सज्जासे सजते और उत्साहमें उन्मत्त हो इधर उधर घूमा करते हैं। यदि अभागी पथिक उनके सामने पड़ जाते, तो अपना यथासर्वस्व गंवाते हैं। उस समय सैकड़ों पथिक कुर्दों-के कराल कवलमें पड़ प्राणत्याग करते हैं।

कुर्दोंमें सदल्, करचेरचुल, एजिदी, शिरकेरा, रुदनी, मिकरी प्रभृति श्रेणीभेद विद्यमान है।

सदल्, करचेरचुल और एजिदी खुरासानमें वास करते हैं। उनके पूर्वपुरुषोंको तुरुष्क सैन्यके गति रोधार्थ पारस्यराज शाह इसमाइल कुर्दस्थानसे वहां ले गये थे। उनकी कोई कोई शाखा अफगानस्थान और बेलूचिस्थानमें भी फैल पड़ी है। शिरकेरा सहरबान, रुदनी दस्तवदौलत और मिकरी आजर-बिजानके दक्षिणांशमें रहते हैं। मिकरी कुर्द अच्छे अश्वारोही हैं। एक समय उन्होंने रूसके घुड़सवारोंको रणक्षेत्रमें पराजय कर देशसे निकाल दिया था।

शेरवानी और बेसानी नामक दूसरी भी दो श्रेणियों-का नाम सुन पड़ता है। बेलूचिस्थानका कच्छगन्धव और दस्तवदौलत आज भी कुर्दोंके अधिकारमें हैं।

कुर्पर (सं० पु०) १ कफोनि, कुहनी। २ जानु, घुटना।

कुर्पास (सं० पु०) स्त्रियोंका स्तनाच्छादन-वस्त्र, चोली।

कुर्पासक (सं० पु०) कुर्पास स्वार्थे कन्। अर्धचोलक, अंगिया।

"मनोज्ञकुर्पासकपीड़ितस्तना।" (रत्नावली)

कुर्वत् (सं० त्रि०) करोति इति, कृ-शतृ। १ कर्ता, करनेवाला। २ भृत्य, नौकर।

कुर्वादि—पाणिनि-कथित एक गण। कुरु, गर्गर, मङ्गुष, अजमार, रथकार, वावदूक, सम्राज (क्षत्रियजाति होनेसे), कवि, मिति, कापिञ्जलादि, वाक्, वामरथ, पितृमत, इन्द्रलाजी, एजि, वातकि, दामोष्णीषि, गणकारि, कैशोरि, कुट, शलाका (शालाका), मुर, पुर, एरका, शुभ्र, अभ्र, दर्भ, केशिनी, वेणा (छन्दोबोधक होनेसे), शूपर्णाय, श्यावनाय, श्यावरथ, श्यावपुत्र, सत्यङ्कार, वड़भीकार, पथिकार, मूढ़, शकन्धु, शङ्कु, शाक, शाकिन्, शालीन, कर्त्रु, हर्त्रु, इन और पिण्डी शब्द कुर्वादिगणमें पड़ता है। कुर्वादिभ्यो ण्यः। पा ४।१।१५१। उक्त सकल शब्दोंके उत्तर अपत्य अर्थमें ण्य प्रत्यय लगता है।

कुर्मी, कुनबी देखो।

कुर्मुक (हिं०) कुमुक देखो।

कुर्री (हिं० स्त्री०) १ सुहागा। २ कुरकुरी हड्डी।

कुर्वा—युक्तप्रदेशकी एक जाति। यह लोग मिर्जापुर जिलेमें अधिक देख पड़ते हैं। कुक साहबने इन्हें १२ वीं श्रेणीको जाति माना है। इनमें पुरुषोंसे स्त्रियों-की संख्या अधिक है।

कुर्स (अ० पु०) १ मुद्राविशेष, कोई सिक्का। वह अरब में चलता और डेढ़ आनि मूल्यका रहता है। २ चीन की एक मुद्रा। वह सोने या चांदीसे नौकाकार बनाया जाता है। उसका परिमाण ५० या १०० तोले रहता और कभी कभी घटता बढ़ता है। ३ गोल टिकिया।

कुर्स (हिं० पु०) तृणविशेष, एक घास। उसका मूल दीर्घ, मृदु एवं दृढ़ रहता और रस्सी तथा चटाई बनानेके कार्यमें लगता है। कुर्स केवल अपने मूलके लिये ही लगाया जाता है।

कुर्सी—युक्तप्रदेशके लखनऊ जिलेका एक नगर। वह अक्षा० २७° ८' उ० और देशा० ८१° ९' पू० पर अव-स्थित है। वहां प्राचीन केशरीगढ़का भग्नावशेष पड़ा है। शाहजहान्के समय शेराज-उद्-दीन नामक किसी व्यक्तिने एक खूबसूरत मसजिद बनायी थी। उक्त मसजिद देखने योग्य है।

कुल (सं० क्ली०) कुल-क। इगुपधज्ञाप्रीकिरः कः। पा ३।१।१३५। १ वंश, खानदान, घराना।

"कन्यामनेनकुमुदः कुलभूषणेन।" (रघुवंश, १६।८६)

शास्त्रके मतमें निम्नलिखित कर्म करनेसे कुल नष्ट होता है—

"गोभिश्च घोटकैर्विप्र! कृष्या राजोपसेवया।
कुलान्यकुलतां यान्ति यानि हीनानि वृत्तितः॥ १९॥
कुविवाहैः क्रियालोपै वेदानध्ययनेन च।
कुलान्यकुलतां यान्ति ब्राह्मणातिक्रमेण च॥ २०॥
अनृतात् पारदार्याच्च तथा ऽभक्ष्यस्य भक्षणात्।

अश्रौतधर्माचरणात् क्षिप्रं नश्यति वै कुलम् ॥ २१ ॥
अश्रोत्रियेषु वै दानात् वृषलेषु तथैव च।
विहिताचारहीनेषु क्षिप्रं नश्यति वै कुलम् ॥ २२ ॥"
(कूर्मपुराण, उपरिभाग, १६ अ०)

कूर्मपुराणके मतमें—गो अथवा घोटकके व्यवसाय, कृषिकर्मके अनुष्ठान, राजसेवा, कुलवृत्तिके विरुद्ध कार्यके सम्पादन, कुविवाह, कर्तव्यकर्मकी उपेक्षा, ब्राह्मणके अतिक्रम, मिथ्यावाक्य, परदाराभिलाष अभक्ष्य भक्षण, अश्रौत धर्मके आचरण और अश्रोत्रिय, वृषल तथा विहिताचारविहीन व्यक्तिको दान करनेसे कुल बिगड़ जाता है।

मनुके मतानुसार—कुलाङ्गनावोंको सुखसे रखना चाहिये। कारण उनको कष्ट मिलनेसे अचिर ही कुल नष्ट होता है। उन्हें सुखमें रखनेसे कुल बढ़ा करता है। भगिनी, पत्नी, दुहिता, पुत्रवधू प्रभृति स्त्री यदि किसी कारण अवमानित होने पर अभिसम्पात करतीं, तो धन, पशु आदिके साथ कुल बिगड़ जाता है। अतएव यत्नपूर्वक अलङ्कारवस्त्रादि द्वारा उनको सन्तुष्ट रखना चाहिये। दम्पतीमें सद्भाव रहनेसे कुल बनता और असद्भावसे बिगड़ता है। कुविवाह, विहित कर्म तथा वेदादि अध्ययन एवं ब्राह्मणकी पूजाके अभाव, अविहित चित्र प्रभृति शिल्पकर्म, गो, अश्व, रथ आदिके क्रय विक्रय, कृषिकर्म, राजसेवा, अविहितकर्मके अनुष्ठान और विहितकर्मके परित्यागसे कुल नष्ट होता है। (मनु, ३। ४७-६५)

कुं भूमिं लाति गृह्लाति, कु-ला-क। २ जनपद, मुल्क, बसती। ३ जाति, कौम। ४ गृह, घर। ५ देह, जिस्म। ६ मध्यम हलद्वयसे कर्षित भूमि, दो मंझोले हलोंसे जोती हुई जमीन।

"दश कुलन्तु भुञ्जीत विंशी पञ्चकुलानि च।" (मनु ७। ११९)

'गवं मध्यमं हलमिति तथाविधहलद्वयेन यावती भूमिः कृष्यते तावद्भूमिं कुलमित्युच्यते।' (कुल्लूक)

७ वंशीय, घरानेवाले। ८ सजातीय समूह, हमकौमोंका जमाव। ९ समूह, झुण्ड। १० शक्ति।

"अकुलं शिवभावश्च कुलं शक्तिः प्रकीर्तितम्।
कुलाकुलानुसन्धाना निपुणाः कौलिकाः प्रिये ॥"
(कुलार्णवतन्त्र, १७ श उल्लास)

११ तन्त्रके मतमें—प्रकृति, दिक्, काल, आकाश, क्षिति, जल, तेज, और वायु सकल पदार्थ समूह।

"जीवःप्रकृतितत्त्वञ्च दिक्कालाकाशमेव च।
क्षित्यप्तेजोवायवश्च कुलमित्यभिधीयते ॥" (महानिर्वाण)

१२ वंशमर्यादा, घरानेकी इज्जत। कुलीन देखो।

आचार, विनय, विद्या, प्रतिष्ठा, तीर्थदर्शन, धर्मनिष्ठा, अवृत्ति, तपस्या और दान कुलके नौ लक्षण हैं।

"आचारो विनयो विद्या प्रतिष्ठा तीर्थदर्शनम्।
निष्ठावृत्तिस्तपोदानं नवधा कुललक्षणम् ॥" (कुलराम)

१३ बदर, बेर। १४ कृष्णाञ्जन। १५ सङ्गीततालविशेष। (त्रि०) १६ श्रेष्ठ, बड़ा।

कुल (अ० वि०) सम्पूर्ण, पूरा, सब।

कुलक (सं० पु०-क्ली०) कुल संज्ञायां कन्। १ मरुवकवृक्ष, महुवेका पेड़। २ काकतिन्दुक, मकरतेंदुवा। ३ कुपीलु, कुचिला। ४ पटोललता, परवलकी बेल। ५ हरित्सर्प, हरा सांप। ६ वल्मीक, दीमककी निकाली हुयी मट्टी। ७ कुलश्रेष्ठ। ८ शिल्पिप्रधान। ९ समूह, ढेर। १० परस्पर सम्बद्ध ५ श्लोक।

"कलापकं चतुर्भिश्च पञ्चभिः कुलकं मतम्।" (साहित्यदर्पण)

११ गद्य लिखनेकी कोई रीति। १२ भोग्यवस्तु, काममें आनेवाली चीज।

कुलकज्जल (सं० पु०) कुलस्य वंशस्य कज्जलं कालिमा इव वंशगौरव-नाशनादित्यर्थः, ६-तत्। कुकार्य करके वंशका गौरव नाश करनेवाला व्यक्ति, जो शख्स बुरे काम करके खान्दानकी इज्जत बिगाड़ता हो।

कुलकण्टक (सं० पु०) कुलस्य कण्टक इव कण्टकवत् कुलवेधनत्वात्। वंशका कण्टकस्वरूप व्यक्ति, जो शख्स अपने खानदानका कांटा हो।

कुलकना (हिं० क्रि०) प्रसन्न होना, खुशीसे हसना बोलना।

कुलकन्या (सं० स्त्री०) कुले श्रेष्ठवंशे उत्पन्ना कन्या, मध्यपदलो०। सद्वंशजाता कन्या, अच्छे घरानेकी लड़की।

कुलकर (सं० पु०) कुलं करोति, कुल-कृ हेतौ टः। कृञो हेतुताच्छील्यानुलोम्येषु। पा ३। २। २०। वंशप्रवर्तक, घराना चलानेवाला।

कुलककंटी (सं० स्त्री०) चीनककंटी, चीना ककड़ी।

कुलकर्ता (सं० पु०) कुलस्य कर्ता, ६-तत्। वंशस्थापक, खानदान चलानेवाला।

कुलकर्म (सं० क्लो०) कुलस्य कर्म विभिन्नकुलस्य निर्दिष्टं विभिन्नमनुष्ठेयम्, ६-तत्। वंशका कर्म, खानदानी चाल। भिन्न भिन्न वंशके विवाहादि काल पृथक् पृथक् अनुष्ठेय कार्य 'कुलकर्म' कहलाता है।

कुलकलङ्क (सं० पु०) कुलस्य कलङ्कः कुत्सितकार्यादिना तद्गौरवनाशकः, ६-तत्। वंशमें कलङ्क लगानेवाला व्यक्ति, जो शख्स अपनी बुरी चालसे खानदानमें धब्बा लगाता हो।

कुलकलङ्किनी (सं० स्त्री०) कुलस्य कलङ्किनी, ६-तत्। व्यभिचारादि द्वारा पितृ वा श्वशुर कुलकी अवमानना करनेवाली स्त्री, जो औरत छिनाला वगैरहसे अपने बाप या ससुरके घरानेको बदनाम करती हो।

कुलका (सं० स्त्री०) १ पटोललतिका, परवलकी बेल। २ मनःशिला, मैनसिल।

कुलकानि (हिं० स्त्री०) वंशमर्यादा, खानदानकी इज्जत।

कुलकुण्डलिनी (सं० स्त्री०) कुलचक्रे कुण्डलाकारेण वेष्टयित्वा तिष्ठति, कुलकुण्डलिन्-ङीष् यद्वा कौ पृथिवीतत्वाधारे मूलाधारे लीयते, कु-ली-ड। कुलाचारियोंकी उपास्य कुण्डलिनी। तन्त्रशास्त्रप्रसिद्ध मूलाधारस्थ सर्पीतुल्या एक शक्ति। उसका स्वरूप प्रभृति शारदातिलकमें इस प्रकार वर्णित हुवा है—

कुलकुण्डलिनी चैतन्यस्वरूपा और सर्वगामिनी है। विश्वसंसार उसीका एक अंश है। वह शिवके सन्निधानमें रह सर्वदा आनन्द उठाती और साधकका भी आनन्द बढ़ाती है। कुलकुण्डलिनी दिक्काल प्रभृति द्वारा अनवच्छिन्ना रहती अर्थात् किसी देश और किसी समयमें उसकी अनुपस्थिति नहीं पड़ती। वेदमें कुण्डलिनी ही परा और अपर नामसे वर्णित हुयी है। योगियोंके हृदयपद्ममें उपस्थित हो वही नृत्य करती और योगियोंको परमानन्दसे भरती है। वह प्राणिमात्रके मूलाधारमें विद्युत्की भांति दीप्ति कर रही है। कुण्डलिनीशक्ति शङ्खावर्तनिभा है। वह सकल स्थानमें व्याप्त हो अवस्थिति करती है। कुण्डलीकृत सर्पकी भांति उसकी आकृति है। इसीसे कुण्डलिनी नाम पड़ा है। वही विश्वस्वरूपिणी प्रबुद्ध हो सकल जगत्को प्रसव करती है। सकल देवता उसके अंश हैं। वह सर्वमन्त्रमयी और सर्वतत्वस्वरूपिणी है। कुण्डलिनी देवी सूक्ष्मा, व्यापिका, चन्द्र-सूर्याग्नि-स्वरूपा, विशाल ब्रह्माण्डकी सृष्टिकर्त्री और शब्द-ब्रह्ममयी है। शैवसिद्धान्तके शक्ति शब्दमें कुलकुण्डलिनीका उल्लेख किया जा चुका है। वह सत्व, रजः और तमोगुणमयी है। सांख्यशास्त्रमें 'सत्वरजस्तमसां साम्यावस्था प्रकृतिः' इत्यादि सूत्रसमूह द्वारा प्रकृतिके नामसे उक्त कुण्डलिनी देवी ही निरूपित हुई है। शक्तिमान् शिव आत्मा और शक्ति प्रकृति है। शक्तिमान् और शक्तिकी अभेद कल्पना करके तन्त्रशास्त्रमें कुण्डलिनीको चैतन्यस्वरूपा कहा गया है। भगवान्ने अर्जुनसे—

"भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनो बुद्धिरेव च।
अहङ्कार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा॥
अपरेयमितस्त्वन्यां प्रकृतिं विद्धि मे पराम्।"

इत्यादि आडम्बर करके परा और अपरा प्रकृतिकी जो वर्णना की, उसके द्वारा भी कुलकुण्डलिनी ही वर्णित हुई है। "विकारं जननीं मायामष्टरूपामजां ध्रुवाम्।" श्रुतिने तारस्वरसे कुण्डलिनीका ही निरूपण किया है। वेदान्तिक उसीको मायाकी भांति वर्णना करते हैं। वह सकलको बोधगम्या नहीं।

मूलाधारमें कुण्डलिनीको ध्यान करके पूजना चाहिये। कुण्डलिनीका ध्यान करनेसे साधक शीघ्र योगी हो सकता है। ध्यान इस प्रकार है—

"प्रसुप्तभुजगाकारां स्वयम्भूलिङ्गमाश्रिताम्।
विद्युत्कोटिप्रभां देवीं विचित्रवसनान्विताम्।
शृङ्गारादिरसोल्लासां सर्वदा कारणप्रियाम्।
एवं ध्यात्वा कुण्डलिनीं ततो यजेत् समाहितः।"

'कुण्डलिनी देवीकी निद्रित भुजङ्गी-जैसी आकृति है। वह स्वयम्भूलिङ्गको वेष्टन किये हुये है। कुण्डलिनी कोटि विद्युत्की भांति दीप्तिमती, नाना वसन द्वारा विभूषिता, शृङ्गारादि रसभावयुक्ता और सर्वदा कारणप्रिया है।' इसी प्रकार कुलकुण्डलिनीको ध्यान करके पूजना पड़ता है। पूजा समापन करके वाग्भव

मन्त्र (ऐं) जपना चाहिये। फिर नानाविध स्तव द्वारा देवीको सन्तुष्ट करते हैं।

रुद्रयामलमें प्रकारान्तरसे कुलकुण्डलिनीकी उपासना निरूपित हुई है। प्रातःकाल गात्रोत्थान करके मङ्गलमय श्रीगुरुके चरणकमलकी सहस्रदलपद्ममें चिन्ता करना पड़ता है। पीछे हृत्पद्ममें श्रीपदकी चिन्ता करके विविध उपचारसे पूजापूर्वक नमस्कार करना चाहिये। फिर त्रैलोक्यव्यापिनी, चिन्मयी, स्वयम्भूलिङ्ग वेष्टिता, द्वादशाङ्गुलप्रमाणा और मूलाधारमें कुण्डली भूता सर्पोकी भांति अवस्थिता कुलकुण्डलिनीको जागरित करके मस्तकस्थित सुधाब्धिमें निविष्ट कराते हैं। उस स्थान पर उसे सुधा पिला करके पुनर्वार मूलाधारको आनयन करना चाहिये। आनयनकाल सुषुम्ना नाड़ीकी मध्यगत चित्रिनी नाड़ीके बीचसे उसे ले चलते हैं। ऊर्ध्वगमनकाल कुलकुण्डलिनीको तेजोमयी और पुनर्वार घूम कर मूलाधारको जाते समय अमृतमयी चिन्ता करना चाहिये। इसी प्रकार बार बार चिन्ता करके साधक सर्वसिद्धिका अधीश्वर हो सकता है। पीछे देवीको मानसोपचारसे पूज मायाबीज (ह्रीं), कामबीज (क्लीं) और पञ्चाशत् वर्णमाला अनुलोम तथा विलोमसे यथाशक्ति जप करना चाहिये।

कुलकुलाना (हिं॰ क्रि॰) १ कुल कुल करना, धीरे धीरे बोलना। २ कुलकना, खुश होना।

कुलकेतन—दाक्षिणात्य-प्रसिद्ध कलिङ्गके एक पूर्व-तन राजा।

कुलकृत् (सं॰ पु॰) कर्कर, अकरकरा।

कुलक (सं॰ पु॰) करताली, हाथकी थपेडी।

कुलक्रिया (सं॰ स्त्री॰) कुलस्य क्रिया निर्दिष्टमनुष्ठेयम्, ६-तत्। १ भिन्न भिन्न वंशका विभिन्न आचार, अपने अपने घरानेको चाल। २ कुलकार्य, घरानेका काम।

कुलक्षण (सं॰ क्ली॰) कुत्सितं लक्षणं कुगतिस॰। १ निन्द्य लक्षण, बुरी अलामत। २ कुरीति, बुरी चाल। (त्रि॰) ३ निन्द्य लक्षणयुक्त, बुरी अलामतवाला। ४ दुराचार, बदचलन।

कुलक्षणी (सं॰ त्रि॰) निन्द्यलक्षणविशिष्ट, बुरी अलामतवाला।

कुलक्षय (सं॰ पु॰) कुलस्य वंशस्य क्षयो ध्वंसः, ६-तत्। पुत्रपौत्र आत्मीय स्वजन प्रभृतिके विनाशसे वंशका अधःपतन और ध्वंस, घरानेका बिगाड़।

कुलक्षयके पीछे जो घटना आती, वह गीतामें वर्णित दिखाती है—कुलक्षय होनेसे सनातन कुलधर्म विलुप्त हो जाता है। कुलधर्मके अभावमें घोरतर अधर्म कुलको आक्रमण करना और कुलस्त्रियोंका आचरण बिगडता है। कुलकामिनियोंके दूषित होनेसे वर्णसङ्करोंकी उत्पत्ति होती है। जिस वंशमें सङ्करोंकी उत्पत्ति देख पड़ती, उस वंशके कुलनाशक व्यक्तियोंकी अधम गति मिलती है। उस वंशमें फिर पूर्वपुरुषोंके श्राद्धके अधिकारी नहीं रहते। श्राद्धपिण्डदान एकबारगी ही विलुप्त हो जाता है। श्राद्धादि क्रिया विलुप्त होनेसे पूर्वपुरुष नरकगामी होते हैं जो कुलनाशक ठहरते, उनके सङ्कर प्रभृति समस्त दोषोंसे जातिधर्म उत्सन्न हो जाता है। जातिधर्म उत्सन्न होनेसे मनुष्योंको निश्चय नरकमें रहना पड़ता है।

(भगवद्गीता, १ अध्याय)

कुलक्षया (सं॰ स्त्री॰) १ कर्पूरशटी, किसी किस्मकी जङ्गली अदरक। २ कपिकच्छू, केवांच।

कुलगरिमा (सं॰ पु॰) कुलस्य गरिमा गौरवम्, ६-तत्। वंशगौरव, घरानेका बड़प्पन।

कुलगिरि (सं॰ पु॰) कुलपर्वत, हिन्दुस्थानके सात बड़े पहाड़ोंमें एक पहाड़।

"यस्य नाभ्यामवस्थितः सर्वतः सौवर्णः।
कुलगिरिराजो मेरुर्द्वीपायाम समुन्नाहः॥" (भागवत, ५। १६। ७)

कुलगृह (सं॰ क्ली॰) कुलस्य गृहम्, ६-तत्। वासगृह, रहनेका घर।

कुलगोप (वै॰ पु॰) कुलं गोपयति रक्षति, कुल-गुप्-घञ्। वंश और गृहका रक्षक, खानदान और मकानका मुहाफिज।

"एष वै व्याघ्रः कुलगोपी यदग्नि।" (तैत्तिरीयसंहिता ६। २। ५। ५)

कुलघ्न (सं॰ त्रि॰) कुलं हन्ति, कुल-हन्-टक्। वंशनाशक, खानदान बिगाड़नेवाला। जो व्यक्ति कुकर्माचरणसे वंशके लोपका कारण ठहरता, उसीका नाम कुलघ्न पड़ता है—

"दोषैरेतैः कुलघ्नानां वर्णसङ्करकारकैः।

उत्साद्यन्ते जातिधर्माः कुलधर्माश्च शाश्वताः॥" (गीता)

कुलङ्ग (सं० पु०) कृष्णसर्पविशेष, एक काला सांप।

कुलङ्ग (फा० पु०) १ पक्षिविशेष, कोई चिड़िया। उसका शिर रक्तवर्ण और अवशिष्ट गात्र धूसरवर्ण होता है। कुलङ्गका कण्ठ दीर्घाकार रहता है। वह बकलकसे बड़ा और जलके निकट निवास करनेवाला है। २ कुक्कुट, मुरगा।

३ व्यंग्यसे लम्बी टांगोंवाले आदमीको भी 'कुलङ्ग' कहते हैं।

कुलङ्गी (सं० स्त्री०) मेषशृङ्गी, ककड़ासींगी।

कुलचण्डी (सं० स्त्री०) कुले शत्रुसमूहे चण्डी कोपना तेषां विनाशिकेत्यर्थः। देवीभेद।

कुलचन्द्र—१ कलापव्याकरणके दुर्गावाक्यप्रबोधक नामक जनैक टीकाकार। २ मणिपुरके अन्तिम स्वाधीन राजा। वृटिश गवर्नमेण्टने उनको राज्यच्युत करके द्वीपान्तरमें निर्वासित किया था। मणिपुर देखो।

कुलचा (हिं० पु०) १ किसी किस्मकी रोटी। वह खमीरसे बनती और खूब फूली हुई रहती है। २ कोई गोल लट्टू। वह तम्बू या खेमेके डण्डे पर लगता है। ३ गुप्तभावसे संगृहीत धन, पोशीदा तौरसे जमा किया हुवा रुपया।

कुलचा शब्द फारसीके 'कलीचा' का अपभ्रंश है।

कुलचूड़ामणि (सं० पु०) १ घटक, बिचवानी, विवाहका सम्बन्ध स्थिर करनेवाला। २ कोई प्राचीन तन्त्र। तन्त्रसार, शक्तिरत्नाकर, शाक्तानन्दतरङ्गिणी प्रभृति ग्रन्थोंमें उससे प्रमाण उद्धृत हुवे हैं। कुलचूड़ामणि तन्त्रमें कुलप्रशंसा, कौलकर्तव्यता, कुलशक्तिपूजा, कौलिकानुष्ठान, महिषमर्दिनीस्तव प्रभृतिको वर्णन किया गया है। सदाशिव शुक्लने उक्त तन्त्रको एक टीका लिखी है।

३ कोई पाण्ड्यराज। वह सोमचूड़ामणि पाण्ड्यके पुत्र थे।

कुलच्युत (सं० त्रि०) कुलात् च्युतः परिभ्रष्टः, ५-तत्। जातिच्युत अथवा समाजच्युत, कौम या जमातसे निकाला हुवा। जो व्यक्ति अकार्यानुष्ठान करने पर जाति वंश वा समाजसे बहिष्कार किया जाता वही 'कुलच्युत' कहाता है।

कुलज (सं० पु०) कुले सत्कुले जायते, कुल-जन-ड। सप्तम्यां जनेर्डः। पा ३।२।९७। १ सत्कुलोद्भव व्यक्ति, अच्छे घरानेका आदमी।

"कुलजे वित्तसम्पन्ने धर्मज्ञे सत्यवादिनि।

महापक्षे धनिन्यार्ये निक्षेपं निक्षिपेद्बुधः॥" (मनु ८।१७९)

२ पटोल, परवल।

कुलजन (सं० पु०) कुले सत्कुले जातो जनः, मध्यपदलो०। महद्वंशोद्भव, बड़े घरानेका आदमी।

कुलजा (सं० स्त्री०) कुलज-टाप्। कुलपालिका, सद्वंशोत्पन्ना गुणवती सती स्त्री, खान्दानी औरत।

कुलजा (हिं० स्त्री०) वन्यमेष-भेद, किसी किस्मकी जङ्गली भेड़, वह पामीर और गिलगिटमें मिलती है।

कुलजात (सं० त्रि०) कुले सत्कुले जात; सम्भूतः, ७-तत्। सत्कुलोद्भूत, खानदानी, अच्छे घरानेवाला।

कुलज्ञ (सं० पु०) कुलं जानाति, कुल-ज्ञा कः। घटक, कुलका वृत्तान्त जाननेवाला व्यक्ति।

कुलञ्ज (सं० पु०) कुं पृथिवीं रञ्जयति, कु-रञ्ज-णिच्-अल्, रस्याने लकारः। गन्धमूलत्वच, कुलञ्जन।

कुलञ्जन (सं० पु० क्ली०) १ गन्धमूलक, खुशबूदार जड़का एक पेड़। वह आर्द्रकसे मिलता और श्याम, मलयद्वीप तथा चीन प्रभृति देशोंमें उपजता है। कुलञ्जनकी मूलको बाहर भेजते हैं। २ महाभरवी वचा, सफेद बच। वह कटु, तिक्त, उष्ण, अग्निदीपन, रुच्य, स्वर्य, हृद्य, मुख तथा कण्ठका विशुद्धकारी और मुखदोष, कफ, कास, वातकफ एवं बृहत् कुष्ठनाशक है। (वैद्यकनिघण्ट) कुलञ्जनको संस्कृतमें कुलञ्ज गन्धमूल और कुलञ्ज भी कहते हैं।

कुलट (सं० पु०) कुलात् कुलान्तरमटति, पचाद्यच् पश्चात् कुल-अट् शकन्ध्वादिवत् साधुः। १ निजकुलको परित्याग करके अन्यकुलका आश्रय लेनेवाला, जो अपने घरानेको छोड़ दूसरेके घरानेका सहारा पकड़े हो। औरस और दत्तकपुत्र व्यतीत पणक्रीत तथा क्षेत्रज प्रभृति पुत्रोंको कुलट कहा जाता है। २ व्यभिचारी, ऐयाश, रण्डीबाज़।

कुलटा (सं० स्त्री०) कुलात् कुलान्तरमटति व्यभिचाराय, अट पचाद्यच् पश्चात् कुल-अटा शकन्ध्वादिवत् साधुः। शकन्ध्वादिषु च। पा ६।१।९४। वार्तिक "शकन्ध्वादिषु पररूपं वक्तव्यम्।" (महाभाष्य) 'अटति इत्यटा पचाद्यच पश्चात् कुलेन सम्बन्धः अन्यथा कर्मण्यण् नित्यण् प्रसङ्गः।' (कैयटभाष्यप्रदीप)

१ व्यभिचारके विचारसे अपने कुलको परित्याग करके अन्यकुलमें गमन करनेवाली स्त्री, छिनालेके खयालसे अपने घरानेको छोड़ दूसरे घरानेमें मिल जानेवाली औरत।

"परपतिनिर्दयकुलटा शोषित शठ! नेर्ष्या न कोपेन।
दग्धममतोपतप्ता रोदिमि तव तानवं वीचार॥"

(आर्यासप्तशती, ३९३)

कुलटाका संस्कृत पर्याय—पुंश्चली, धर्षिणी, बन्धकी, असती, इत्वरी, स्वैरिणी, धर्षणी, पांसुला, भ्रष्टा, दुष्टा, धर्षिता, निशाचरी, लङ्का और लपारण्डा है।

२ परकीया नायिकाभेद।

"कोऊ कहो कुलटा कुलीन अकुलीन कहो।" (देव)

संहिताकारोंके मतमें कुलटाका अन्न खानेसे प्रायश्चित्त करना पड़ता है। प्रायश्चित्त देखो।

कुलटी (सं० स्त्री०) मनःशिला, मैनसिल।

कुलतत्त्ववित् (सं० पु०) कुलस्य वंशस्य तत्त्वं वेत्ति, कुल-तत्त्व-विद्-क्विप्। कुलतत्त्वज्ञ, कुलवृत्तान्त जाननेवाला व्यक्ति।

कुलतन्तु (सं० पु०) कुलस्य तन्तुरिव तस्य कुलवर्धकत्वादित्यर्थः, ६-तत्। वंशका सूत, खानदानका डोरा। जो वंशका सूत्रस्वरूप रहता और जिससे वंश बढ़ता, उसीका नाम कुलसूत्र पड़ता है। कुलसूत्र सन्तान वा अपत्यको कहते हैं।

कुलतारन (हिं० वि०) वंशपवित्रकारी, जो घरानेको तारता हो।

कुलतिथि (सं० स्त्री०) कुलानां कुलाचारिणां तिथिः देवताराधनाय प्रशस्तेत्यर्थः ६-तत्। तन्त्रके मतमें—चतुर्थी, अष्टमी, द्वादशी और चतुर्दशी।

कुलतिलक (सं० पु०) कुलस्य वंशस्य तिलक इव, उपमितस०। वंशश्रेष्ठ, अच्छे कामोंसे घरानेकी इज्जत बढ़ानेवाला आदमी।

कुलत्थ (सं० क्ली०) दमनक, दोना।

कुलत्ति—३य कोङ्गुराज माधवके वंशधर। उनका अपर नाम परिकुलत्ति राय था।

कुलत्थ (सं० पु०) १ शस्यविशेष, कोई अनाज, कुलथी। उसका संस्कृत पर्याय—कालवृन्तक(?), ताम्रबीज, सितेतर और कुलत्थिका है। वह कृष्ण और वन्यभेदसे दो प्रकारका होता है।

भावप्रकाशके मतमें कुलत्थ कषाय, पाचक, कटु, पित्त तथा रक्तजनक, लघु, विदाही, उष्णवीर्य और स्वेदरोधक है। उससे श्वास, कास, कफ, वायु, हिक्का, अश्मरी, शुक्रदाह, आनाह, पीनस, स्वेद, ज्वर और कृमि विनष्ट होता है। उसका यूष वायु, शर्करा तथा अश्मरी विनाशक है। कुलथी देखो।

२ जनपदविशेष, कोई बसती या मुल्क। (महाभारत, भीष्म, ९ अध्याय) कुलूत देखो।

कुलत्थगुड़ (सं० पु०) हिक्का और श्वासका औषधविशेष, हिचकी और दमाकी एक दवा। कुलत्थ १०० पल, दशमूल (सब मिलाकर) १०० पल और भार्गी १०० पल ६४ शरावक वारिमें एकत्र वा पृथक् पृथक् क्वाथ करते और पादावशिष्ट रहनेसे उतार रखते हैं। फिर ५० पल गुड़को पाक कर लेह जैसा बना लेते और उसमें मधु ८ पल, वंशरोचना ६ पल, पिप्पली २ पल तथा गुड़त्वक्, तेजपत्र एवं एला २ तोला पीस कर डाल देते हैं। (चक्रदत्त)

कुलत्थयूष (सं० पु०) आमकुलत्थसाधित क्वाथ, कच्ची कुलथीका रसा। वह उष्णवीर्य, मधुर, अग्निप्रदीपन, कषाय और गुल्म, कफ, वायु, अर्शः, श्वास, कास, तथा मेहनाशक होता है। (वैद्यकनिघण्टु)

कुलत्थषट्पलघृत (सं० क्ली०) हिक्का और श्वासका घृत, विशेष, हिचकी और दमाका एक घी। कुलत्थ २ शरावक, मिलित दशमूल २ शरावक क्वाथके लिये ६४ शरावक जलमें डाल पाक करते हैं। फिर १६ शरावक जलशेष रहनेसे उक्त क्वाथ उतार लिया जाता है। पीछेको उसमें घृत ४ शरावक, गव्यदुग्ध ४ शरावक और कल्कार्थ पञ्चकोल तथा यवक्षार एक एक पल डाल करके यथानियम पाक करनेसे उक्त घृत प्रस्तुत होता हैं। (रसरत्नाकर)

कुलत्थसूप (सं० पु०) भ्रष्टकुलत्थ सिद्धयूष, भूनी हुयी कुलथीका रसा। कुलत्थसूप वातघ्न, कटु, पाकमें कषाय, पित्त, शुक्र तथा अस्रकर और श्वास, कास एवं अश्मरीनाशक है। (वैद्यकनिघण्टु)

कुलत्था (सं० स्त्री०) १ कुलत्थाञ्जन, काला सुरमा। २ वनकुलत्थिका, जङ्गली कुलथी। उसका संस्कृत पर्याय—दृक्प्रसादा, अरण्यकुलत्थिका, लोचनहिता, चक्षुष्या, कुम्भकारिका, कुलत्थिका, कुलाली और प्रलापघ्ना है। वह कटु, चक्षुष्य, व्रणरोपण, तिक्त और अर्शः, शूल, विबन्ध तथा आध्माननाशक होती है। (राजनिघण्टु)

कुलत्थाञ्जन (सं० क्लो०) कुलत्थया जातमञ्जनम्, मध्यपदलो०। अञ्जनविशेष, काला सुरमा। उसका संस्कृत पर्याय—कुम्भकारी और प्रलापघ्ना है। वह चक्षुष्य, कषाय, कटु, शीतल और विष, विस्फोटक, कण्डू तथा अतिव्रणदोषनाशक है। (राजनिघण्टु)

कुलत्थादिलेप (सं० पु०) कर्णमूलके शोथका लेपविशेष। कुलत्थ, कट्फल, शुण्ठी और कृष्णजीरक समभाग जलमें पीस ईषत् उष्ण करके उक्त लेप बनाया जाता है। (भावप्रकाश)

कुलत्थाद्यघृत (सं० क्लो०) अश्मरीरोगका घृतविशेष। पथरीकी बीमारी पर लगाया जानेवाला एक घी। घृत ४ शरावक और वरुणत्वक् १२॥ (मतान्तरमें ८) शरावक ६४ शरावक जलमें डाल पाक करते हैं। १६ शरावक जल शेष रहनेसे उक्त क्वाथको उतार लिया जाता है। फिर उसमें कुलत्थादि कल्क एकत्र पाच्य है। मतान्तरमें—घृत ४ शरावक, वरुणकी छाल ४ शरावक और जल १६ शरावक एकत्र पाककर ४ शरावक शेष रहने पर उतार लेते हैं। फिर उसमें कल्कार्थ कुलत्थ, सैन्धव, विड़ङ्ग, शर्करा (चीनी), शेफालिकी छाल, यवक्षार, कुष्माण्डवीज और गोक्षुरवीज प्रत्येक आठ आठ तोले पड़ता है।

कुलत्थान्न (सं० क्लो०) कुलत्थकृत भक्त, कुलथीका भात। वह मधुर, कषाय, रुक्ष, उष्ण, लघु, तृप्तिकर, पाकमें कटु, अग्निदीपन और कफ, वात, क्रमि तथा श्वासनाशन होता है। (वैद्यकनिघण्टु)

कुलत्थिका (सं० स्त्री०) १ कुलत्थाञ्जन, काला सुर्मा। २ कुलत्थ, कुलथी। ३ वनकुलत्थ, वनकुलथी। ४ रक्तकुलत्थ, लाल कुलथी। ५ शीतलादेवी।

कुलथी, कुलत्था देखो।

कुलथ, कुलथी देखो।

कुलथी (हिं० स्त्री०) कुलत्थिका, उड़द जैसा मोटा अन्न। उसको संस्कृतमें कुलत्थ वा कुलत्थिका बङ्गलामें कुर्तिकलाय, सन्तालीमें होरेक, कुमायूं प्रान्तकी भाषामें गहत या कल्थ, सिन्धमें कोल, मध्यप्रान्तकी बोलीमें काटकी, बम्बईमें कुलग, दक्षिणी तथा मारवाड़ीमें कुलिथ, गुजरातीमें कलथि, तामिलमें कोल्लु, तेलगुमें वुलवलि, कनाड़ीमें कुरली और मलयमें मूथेर कहते हैं। (Dolichos uniflorus)

भारतमें कुलथी दो प्रकारकी होती है। सीधी और जोड़दार। हिमालय, सिंहल और ब्रह्मदेशमें वह पायी जाता है। कभी कभी उसको बो भी देते हैं। पहाड़ी और देशी कुलथीमें बड़ा भेद है। बङ्गाल और मन्द्राजमें काली भूरी दोनों प्रकारकी कुलथी बोयी जाती है। भूरे वीजकी कुलथीका पेड़ सीधा होता है। उसकी शाखा जुड़ी रहती हैं। वह दो-तीन फीट तक बढ़ती है। खेतीको छोड़ कर कुलथी वन्य अवस्थामें कम देख पड़ती है। भारतके सागरतट पर भूरी कुलथी बहुत बोयी जाती है। उसके लिये सूखी हलकी, और उपजाऊ भूमि आवश्यक है। अक्तोबर और नवम्बर वीज डालनेका समय है।

कुलथीको हरी खाद या चारा और अनाजके लिये बोते हैं। कुलथीको खाद खेतमें बहुत लगती है। उसको घास भी कम नहीं हाती। वह प्रत्येक ऋतुमें उत्पादन की जासकती है। हर एक फसल विगड़ते भी कुलथी बनी रहती है। उसके उगनेके लिये एक ही पानी पर्याप्त होता है। बिलकुल पानी न पाते भी कुलथीके वीज महीनों भूमिमें गड़े जीते रहते और वर्षा गिरते ही झटसे निकल पड़ते हैं। रबी काट कर उसे बो देने पर एक महीनेमें चारा आने लगता है, खाद देनेकी कोई आवश्यकता नहीं। अंकुरा निकल आने पीछे एक ही पानी मिलनेसे काम चल

जाता है। कुलथीको जड़से उखाड़ ढेर लगाते और उस पर बैल चलाते हैं।

कुलथीको पत्तियां और डालियां गाय बैलों और घोड़ोंको खिलायी जाती हैं। विशेषत: मन्द्राजमें उसे घोड़ोंको बहुत देते हैं। कुलथीको भूसी भी मवेशी खाते हैं।

कुलथीके बीजसे एक प्रकार तैल निकलनेकी बात सुन पड़ती है। परन्तु उसका हाल किसीको मालूम नहीं। गरीब हिन्दुस्थानी कुलथी खाते हैं। कुलत्थ देखो।

कुलदत्त—एक नेपाली बौद्ध ग्रन्थकार। उन्होंने क्रियासंग्रहपञ्जिका नामक किसी बौद्ध ग्रन्थकी रचना किया है। कुलदत्तने अपने ग्रन्थमें इस बातका परिचय दिया कि वह तन्त्र शास्त्रके अनुकरण पर लिखा गया है। यथा—"निरीक्ष्य तन्त्रं निखिलं समेयं संघृता चारुतरा विशुद्धा।"

उक्त ग्रन्थमें तान्त्रिक कथा-व्यतीत, विहार और बौद्धदेवदेवीकी मूर्तिकी निर्माण प्रणाली लिखी है।

कुलदमन (सं० पु०) कुलस्य दमन: शासयिता कुल-दम नन्द्यादित्वात् ल्यु। कुलशासक, घरानेको दबाकर रखनेवाला।

कुलदान—आराकानमें प्रवाहित एक नदी। वह यमगिरिसे निकल अकयाब नगरके निकट वङ्गोपसागरसे मिलित हुयी है। युरोपीय उसको आराकान नदी कहते हैं।

कुलदीप (सं० पु०) कुले कुलाचारे पूजार्थं विहितो दीप:, मध्यपदलो०। १ तन्त्रसारोक्त कुलाचारका अङ्गस्वरूप कोई दीप, घरानेका चराग या दीया। मन्दार, कर्पूर और वाय्यालक रूईसे वर्ति प्रस्तुत कर प्रदीप लगाना चाहिये। इस प्रकारसे बना हुवा दीप ही कुलदीप कहाता है। अस्त्रमन्त्रसे कुलदीपकी पूजा करना पड़ती है। कुलदीप सहसा निवारण हो जानेसे नानाविध विघ्न उपस्थित होते हैं। (तन्त्रसार)

कुलं दीपयति उज्ज्वलीकरोति, कुल-दीप-णिच्-अण्। २ कुलश्रेष्ठ, खानदानमें सबसे बड़ा।

कुलदुहिता (सं० स्त्री०) कुले स्वकीये सत्कुले वा दुहिता। १ स्ववंशीया कन्या, अपने घरानेकी लड़की। २ सद्वंशीया कन्या, भले घरानेकी लड़की।

कुलदूषक (सं० त्रि०) कुलस्य वंशस्य दूषक:, कुल दुष-ण्वुल्। वंशमें दोष लगाने वाला, जो मनुष्य व्यभिचार आदिसे घरानेमें बुराई पैदा करता या उसे भलाबुरा कहता है।

कुलदूषण (सं० त्रि०) कुलस्य दूषण:, कुल-दुष-णिच् नन्द्यादित्वात् ल्यु। १ कुलाङ्गार, घराना बिगाड़नेवाला। (क्ली०) २ वंशदोष, घरानेका ऐब।

कुलदेवता (सं० स्त्री०) कुले आराध्या देवता, मध्यपदलो०। १ वंशकी आराध्य देवता। २ गौर्य्यादि षोड़श मातृकाके मध्य एक।

"शान्ति: पुष्टिर्धृतिस्तुष्टिरात्मदेवतया सह।
आदौ विनायक: पूज्योऽन्ते च कुलदेवता॥" (गृह्यपरिशिष्ट)

कुलदेवी (सं० स्त्री०) कुलै: कुलाचारैरुपास्या देवी। १ तन्त्रसारके मतमें—त्रिपुरा, त्रिपुरेशी, सुन्दरी और पुरसुन्दरी प्रभृति कई देवता। २ वंशपरम्परापूजिता देवी।

कुलदैव (सं० क्ली०) कुलस्य दैवं मङ्गलम्, ६-तत्। १ वंशका कुशल, घरानेकी भलाई।

"विप्रस्य चाश्मत् कुलदैवहेतवे विधे हि भद्रं तदनुग्रहो हि न:।"
(भागवत, ६।५।६)

२ कुलदेवता।

"नमे ब्रह्मकुलात् प्राणा: कुलदैवान्न चात्मजा:।" (भागवत, ६।६।४४)

कुलद्रव्य (सं० क्ली०) मद्य, शराब। तान्त्रिक मद्यको कुलद्रव्य कहते हैं। मद्य देखो।

कुलद्रुम (सं० पु०) कुल: द्रुम:, नित्यस०। वृक्षविशेष, कोई पेड़। श्लेष्मान्तक, करञ्ज, विल्व, अश्वत्थ, कदम्ब, निम्ब, वट, उडुम्बर, धात्री और तिन्तिड़ी दश कुलद्रुम हैं।

कुलधर, कुलधारक देखो।

कुलधर्म (सं० पु०) कुलविशेषाश्रितो धर्म:, मध्यपदलो०। वंशधर्म, घरानेका काम।

"जातिजानपदान् धर्मान् श्रेणीधर्मांश्च धर्मवित्।
समीक्ष्य कुलधर्मांश्च स्वधर्मं प्रतिपादयेत्॥" (मनु ८।४१)

कुलधारक (सं० पु०) कुलं धारयति, कुल-धृ-णिच्-ण्वुल्। कुलको धारण करनेवाला, पिसर, बेटा।

कुलधुर्य्य (सं० त्रि०) कुलेषु धुर्य्य: श्रेष्ठ:, ७-तत्। वंश-

श्रेष्ठ, खानदानका खिलापिला और बचा सकनेवाला शख्स।

कुलध्वज—दाक्षिणात्यके एक पाण्ड्यराज। वह पाण्ड्येश्वर पाण्ड्यके पुत्र थे।

कुलन (हिं० स्त्री०) पीड़ा, दर्द, कलाहट।

कुलनक्षत्र (सं० क्ली०) नक्षत्रभेद। भरणी, रोहिणी, पुष्या, मघा, उत्तरफल्गुनी, चित्रा, विशाखा, ज्येष्ठा, पूर्वाषाढ़ा, श्रवणा, और उत्तरभाद्रपदको कुलनक्षत्र कहते हैं।

कुलनन्दन (सं० पु०) कुलं नन्दयति, कुल-नन्द-णिच्-नन्द्यादित्वात् ल्यु। सत्कार्य सम्पादनपूर्वक वंशको आनन्द देनेवाला व्यक्ति, जो शख्स भले कामोंसे अपने घरानेको खुश करता हो।

कुलना (हिं० क्रि०) पीड़ित होना, दर्द करना, दुखना, टीसना।

कुलनाथ—एक विख्यात टीकाकार। उनकी कृत रावणवधटीका और हालप्रणीत सप्तशती की टीका मिली है।

कुलनायिका (सं० स्त्री०) कौलिकों की पूजनीया नायिका। कौलिक यथोक्त विधानसे कुलनायिकाकी उपासना करके सिद्धिलाभ कर सकते हैं। निरुत्तर तन्त्रमें लिखा है—

"निर्लोभा कामहीना च निर्लज्जा द्वन्द्ववर्जिता।
शिवरूपगता साध्वी स्वेच्छया विपरीतगा॥"
"एवं सा कुलजा देवी त्रिषु लोकेषु पूजिता (गोदिता)।"
(५म पटल)

जो साध्वी कुलरमणी लोभशून्य एवं कामहीन रहती, जिसके हृदयमें लज्जा तथा सुख दुःख उभय नहीं, जो सर्वदा आनन्दमयी होती, योगबल किंवा अन्य किसी उपायसे जिसका सत्वगुण रजः और तमोगुणको अभिभूत कर अतिप्रबल पड़ा और जो इच्छा करते ही विपरीत दिक्को गमन कर सकती अर्थात् जो किसी विषयमें आसक्ति नहीं रखती, वह कुलनायिका त्रिभुवनमें पूजनीय ठहरती है। कौलिकोंको उसका अवलम्बन कर उपासना करना चाहिये।

"माता च भगिनी चैव दुहिता च स्नुषा तथा।
गुरुपत्नी च पञ्चैता राजचक्रे प्रपूजयेत्॥
वस्त्रालङ्कारभूषाद्यैर्गन्धमाल्यानुलेपनैः।
पूजयेत् परया भक्त्या देवताभ्यो निवेदयेत्॥
भक्ष्यं नानाविधं द्रव्यं नानावस्त्रसमन्वितम्।
आसवं शुद्धिसंयुक्तं ताभ्यो दद्यात् पुनः पुनः॥
प्रणम्य प्रजपेन्मन्त्रं दृष्ट्वा तासु सहस्रकम्।
अङ्गं नैव स्पृशेत् तासां स्पृशेच्चेत् नरकं व्रजेत्॥"

माता, भगिनी, दुहिता, पुत्रवधू, वीरपत्नी वा गुरुपत्नी कुलनायिकाकी राजचक्रमें पूजा करना चाहिये। वस्त्र, अलङ्कार, अङ्गराग, गन्ध, माल्य और अनुलेपन प्रभृति द्वारा परम भक्ति सहकार उनकी अर्चना करनेका विधान है। उनको देवता मान कर नानाविध भक्ष्य और वस्त्रालङ्कार निवेदन करना चाहिये। नायिकागणको बार बार शुद्धियुक्त आसव प्रदान करते हैं। उनको प्रणाम करके अवलोकन करते करते सहस्र जप किया जाता है। कुअभिप्रायसे उनका अङ्ग कभी स्पर्श करना न चाहिये। कारण उससे नरकगामी होना पड़ता है। (निरुत्तर, १०म पटल)

"माता भग्नी स्नुषा कन्या वीरपत्नी कुलेश्वरि।
महाचक्रे यजेदेताः पञ्च शक्तीः पुनः पुनः॥
द्रव्यदाने तु संपूज्या न शक्तौ लिङ्गयोजनम्।
योजयेत् सिद्धिहानिः स्यात् रौरवं नरकं व्रजेत॥
महाव्याधिर्भवेद्देवि धनहानिः प्रजायते।
सर्वदा दुःखमाप्नोति सर्वं तस्य विनश्यति॥"

माता, भगिनी, पुत्रवधू, कन्या, वीरपत्नी वा गुरुपत्नी—पांचों शक्तियोंकी महाचक्रमें बार बार अर्चना करना चाहिये। नानाविध द्रव्यदान द्वारा उनकी पूजा करना पड़ती है। शक्तियोंमें कभी लिङ्ग योजन करना न चाहिये। कारण उससे सिद्धिहानि आती, परिणाममें रौरव नरककी गति दिखाती और महारोग तथा धननाशकी बारी पड़ जाती है। पाषण्ड सर्वदा दुःख अनुभव करता और उसका समस्त धर्मकर्म बिगड़ता है।

"पञ्चकन्या यजेच्चक्रे नातिरिक्तां कदाचन।
लोभाद्वा मोहतो वापि छलाद्वा वरवर्णिनि॥
यदि स्यात् सङ्गमस्तासां रौरवं नरकं व्रजेत्॥"

पूर्वोक्त पञ्चशक्तिको चक्रमें अर्चना करना चाहिये। यदि कोई व्यक्ति लोभ, मोह किंवा छल करके शक्तियोंके साथ सङ्गम करता, तो वह अवश्य रौरव नरकमें पड़ता है। (निरुत्तर, १० पटल)

"नटी कापालिकी वेश्या रजकी नापिताङ्गना।
योगिनी श्वपची शौण्डी भूमीन्द्रतनया तथा॥
गोपिनी मालिका रम्या श्वासां कार्यविभेदतः।
चतुर्वर्णोद्भवा रम्या कापाली सा प्रकीर्तिता॥
पूजाद्रव्यं समालोक्य नृत्यगीतपरायणा।
चतुर्वर्णोद्भवा रम्या सा नटी परिकीर्तिता॥
पूजाद्रव्यं समालोक्य वेशाचरणमिच्छति।
चतुर्वर्णोद्भवा रम्या सा वेश्या परिकीर्तिता॥
पूजाद्रव्यं समालोक्य रजोऽवस्थां प्रकाशयेत्।
सर्ववर्णोद्भवा रम्या रजकी सा प्रकीर्तिता॥
पूजाद्रव्यं समालोक्य कुलजा वीरमाश्रयेत्।
सन्त्यज्य पशुभर्तारं क्रमं चाण्डालिनी स्मृता॥
शिवशक्तिसमायोगात् योगिनी सा प्रकीर्तिता
विपरीतरता पत्यौ पात्रं या परिपृच्छति।
चतुर्वर्णोद्भवा रम्या सा शौण्डी परिकीर्तिता॥
सर्वदा यन्त्रसंस्कारो यस्याश्च परिजायते।
सैव भूमीन्द्रजा रम्या चतुर्वर्णोद्भवा प्रिये॥
अथान्यं गोपयेद्यस्तु सर्वदा पशुसङ्कटे।
चतुर्वर्णोद्भवा रम्या गोपिनी सा प्रकीर्तिता॥
पूजाद्रव्यं समालोक्य या मालां परिकीर्तयेत्।
चतुर्वर्णोद्भवा रम्या मालिनी सा प्रकीर्तिता॥"

नटी, कापालिकी, वेश्या, रजकी, नापिताङ्गना, योगिनी, चाण्डाली, शौण्डी, रजककन्या, गोपिनी और मालिनी समस्त नायिका पूजनीया हैं। वह सभी चतुर्वर्णोद्भवा हैं। केवल कार्यभेदसे उनके नटी, कापालिकी प्रभृति नामोंका उल्लेख किया गया है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र चारों वर्णोंकी कोई जातीया सुन्दरी मनोहरा नायिका कापालिका है। जो नायिका पूजाद्रव्य देख आनन्दसे नृत्यगीत आरम्भ करती, उसकी संज्ञा नटी पड़ती है। पूजा द्रव्यको अवलोकन कर वेश विन्यास करनेके लिये अभिलाषिणी होनेवाली नायिका वेश्या कहाती है। जो नायिका पूजाका आयोजन दर्शन करके अपनी रजोऽवस्था प्रकाश करती, वही रजकी ठहरती है। जो कुलपूजाके आयोजनसे उत्साहित हो अपने पशुभर्ताको छोड़ करके वीराचारीको आश्रय करती, उसकी आख्या चाण्डाली पड़ती है। शिव एवं शक्ति युक्तको योगिनी और अपने अपने पतिसे विपरीतरता हो पात्र पहंचाननेकी इच्छा रखनेवाली नायिकाको शौण्डी कहते हैं। जो सर्वदा यन्त्र संस्कारमें नियुक्त रहती, उसको विद्वन्मण्डली भूमीन्द्रकन्या कहती है। जो पूजाद्रव्यसे सन्तुष्ट हो माला बनाती, वह मालिनी कहाती है। स्थानान्तरमें माता प्रभृति पांचो शक्तियोंको भी भूमीन्द्रकन्यादि कहा है। यथा—

"भूमीन्द्रकन्यका माता दुहिता रजकी सुता।
श्वपची च स्वसा ज्ञेया कापाली च स्नुषा मता॥
योगिनी निजशक्तिः स्यात् पञ्चकन्याः प्रकीर्तिताः।"
(निरुत्तर, १० म पटल)

पूर्वप्रदर्शित भूमीन्द्रकन्या माता, रजकी दुहिता, चाण्डाली भगिनी, कापालिका पुत्रवधू और अपनी स्त्री योगिनीकी भांति कीर्तित हुई है।

कुलनार (हिं॰ पु॰) खनिज पदार्थ वा प्रस्तरविशेष, एक धातु या पत्थर। वह श्वेतवर्ण वा नीलाभ होता है। उसका अपर नाम सिलखड़ी, सङ्गजराहत, सफेद सुरमा और कर्पूरशिलासित है। कुलनारको जला कारके गच तैयार करते हैं। उसका जला हुवा चूर्ण पानी पड़नेसे चिपचिपाता और सूखनेसे सुदृढ़ प्रस्तर जैसा कठोर पड़ जाता है। कुलनारसे मूर्ति, खिलौना, बिजलीके छापेके सांचे और बहुत सी दूसरी चीजें बनायी जाती हैं। उससे शीशेमें जोड़ भी लगता है। वह भारतवर्षके मन्द्राज, पञ्जाब, राजपूताना और दूसरे भी कई भागोंमें मिलता है। योधपुर और बीकानेरमें कुलनारकी बड़ी बड़ी खानें हैं। उससे खिड़कीकी जालियां गढ़ गढ कर बनाते हैं। गोल कुलनार (गच) की दो समान पट्टियों पर एक ही नक्शोंकी जालियां काटी जाती हैं। फिर एक पट्टीकी जाली पर रङ्ग रङ्गका शीशा लगा करके ऊपरसे दूसरी पट्टी भी मिलाकर बांध देते हैं। इसलिये दोनों पट्टियां एक जैसी लगती हैं। कटावके बीचसे रङ्गदार शीशे चमका करते हैं। आगरे, लाहौर, अजमेर वगैरहके प्राचीन राजप्रासाद कुलनारके प्रयोगसे ही निर्मित हुये हैं। उसका चूर्ण खेतोंमें भी खादकी भांति पड़ता है। कुलनारकी खाद डालनेसे नील बहुत पनपता है। मूर्छी रोगके लिये भी उसका चूर्ण दुग्धके साथ खिलाया जाता है।

कुलनारी (सं० स्त्री०) कुले सत्कुले संस्कृता नारी, मध्यपदलो०। १ सत्कुलोद्भूता स्त्री, अच्छे घरानेकी औरत। २ उच्च वंशजाता सती गुणवती स्त्री, ऊंचे खानदानकी पाकदामन औरत।

कुलनाश (सं० पु०) कुलस्य नाशो ध्वंसः, ६-तत्। १ वंशलोप, कुलध्वंस, घरानेकी बरबादी। २ कौलीन्य नाश, बड़प्पनका खातिमा। जिनके साथ आदान प्रदान नहीं चलता अथवा जिनके वंशका गौरव निम्न स्थानीय रहता, उनके वंशकी कन्या अथवा भगिनी सम्प्रदान करनेसे कुल नष्ट हो जाता है।

कुलं भूमिलग्नं न अश्नाति, कुल-नञ्-अश-अच्, सुप्सुपस०। ३ उष्ट्र, ऊंट।

कुलनाशन (सं० क्लो०) कुलं नाशयत्यनेन, कुल-नश-णिच् करणे ल्युट्। करणाधिकरणयोश्च। पा। ३। ३। ११८। वंशनाशका कारण, घरानेकी बरबादीका सबब।

कुलन्धर (सं० पु०) कुलं वंशं धारयति रक्षति, कुल-धृ-णिच्-बाहुलकात् खच्। संज्ञायां भृतृवृजिधारिसहितपिदमः। पा ३। २। ४६। पुत्र, वंशधर, बेटा, घरानेको रखनेवाला।

कुलप (व० पु०) कुलं पाति रक्षति,। कुलश्रेष्ठ, खानदानकी हिफाजत करनेवाला।

"परिलासते निधिभिः सखायः कुलपा न व्राजपतिं चरन्तम्।"

(ऋक् १०। १७०। २)

'कुलपाः कुलस्य वंशस्य रक्षकाः पुत्राः।' (सायण)

कुलपति (सं० पु०) कुलस्य वंशस्य पतिः स्वामी, ६-तत्। वंशश्रेष्ठ अथवा गोत्रश्रेष्ठ, बड़े घरानेवाला। २ गृहस्वामी, घरानेका मालिक। ३ अध्यापकभेद, कोई उस्ताद।

"मुनीनां दशसाहस्रं योऽन्नदानादिपोषणात्।
अध्यापयति विप्रर्षिरसौ कुलपतिः स्मृतः॥"

जो दश हजार मुनियोंको अन्न दानादि पोषण पूर्वक पढ़ाता, वही कुलपति कहाता है।

कुलपति मिश्र—हिन्दी भाषाके एक कवि। इन्होंने १६५७ ई० को जन्मग्रहण किया था। बनारसके सुप्रसिद्ध सरदार कवि और कृष्णानन्द व्यासदेवने इनकी कविता उद्धृत की है।

कुलपत्र (सं० पु०) दमनक वृक्ष, दौनेका पेड़।

कुलपत्रक, कुलपत्र देखो।

कुलपति (सं० पु०) भारतवर्षके सात प्रधान पर्वतोंके मध्य एक पर्वत। उसको कुलगिरि, कुलभूभृत्, कुलाचल और कुलाद्रि भी कहते हैं।

कुलपहाड़, कुलपाहाड़ देखो।

कुलपा (वै० स्त्री०) कुलश्रेष्ठा, घरानेकी बड़ी औरत।

"एषा ते कुलपा राजन्।" अथर्व १। १४। ३।

कुलपांसुका (सं० स्त्री०) कुलं पांसुमिव कायति प्रकाशयति, कुल-पांसु-कै-क-टाप्। असती स्त्री, व्यभिचार आदिसे वंशको कलङ्क लगानेवाली स्त्री, खानदानमें धब्बा देनेवाली औरत।

कुलपालक (सं० त्रि०) कुलं पालयति, कुलपाल रक्षणे ण्वुल्। १ वंश प्रतिपालक, घरानेकी परवरिश करनेवाला। (क्लो०) २ कुरम्भ, नारङ्गी।

कुलपालि (सं० स्त्री०) कुलवती स्त्री, सती, साध्वी, नेक औरत।

कुलपालिका, कुलपालि देखो।

कुलपाली, कुलपालि, देखो।

कुलपाहाड़—युक्तप्रदेशके अन्तर्गत हमीरपुरसे ३० कोस दक्षिण-पश्चिम अवस्थित एक तहसील। वहां पर्वत पर अनेक देवमन्दिरों, मसजिदों और राजप्रासादोंका भग्नावशेष दृष्ट होता है।

कुलपहाड़से ३ कोस दक्षिण-पूर्व सेटमहोट ग्राम है। वहां एक विष्णुमन्दिर और १२०० संवत्का प्राचीन एक जैनमन्दिर विद्यमान है। उसके निकट प्राचीन इष्टक और शिल्पकार्यका स्तूपीकृत भग्नावशेष पड़ा है। चंदेलराज मदनवर्माने (११२९—११६५ ई०) वहां मदनपुर नामक एक नगर स्थापन किया था।

कुलपुत्र (सं० पु०) कुले सत्कुले जातः पुत्रः, मध्यपदलो०। १ सद्वंशजात पुत्र, अच्छे घरानेका लड़का। २ दमनक वृक्ष, दौनेका पेड़।

कुलपुत्रक (सं० पु०) कुलपुत्र स्वार्थे कन्। दमनक-वृक्ष, दौनेका पेड़।

कुलपुत्री (सं० स्त्री) कुलस्य पुत्री दुहिता, दुहित्

स्थाने पुवट् आदेशस्ततो ङीष्। सुतीयराजभोजकुलमेरुभ्यो दुहितुः पुवट् वा। पा ६।३।७०। सद्वंशोद्भवा कन्या, भले घरानेकी लड़की।

कुलपुरुष (सं० पु०) कुले सत्कुले जातः पुरुषः। १ सद्वंशोद्भव व्यक्ति, अच्छे घरानेका आदमी। २ पितृपुरुष, पूर्वपुरुष, पुरखा।

कुलपुरोहित (सं० पु०) कुलक्रमागतः पुरोहितः। एक वंशमें बहु दिन पौरोहित्य करनेवाला व्यक्ति, घरानेका पुरोहित।

कुलपूज्य (सं० त्रि०) कुलमें पूजा जानेवाला, जो घरानेमें पुजता चला आया हो।

"गुरु वशिष्ठ कुलपूज्य हमारे।" (तुलसी)

कुलपूर्वग (सं० पु०) कुलस्य पूर्वगः, कुल-पूर्व-गम-ड, ६-तत्। पूर्वपुरुष, पुरखा।

कुलफ, क़ुफ़ुल देखो।

कुलफा (हिं० पु०) शाक विशेष, खुर्फा। इसकी पत्ती मोटी, नीचे नुकीली और ऊपर चौड़ी होती है। लम्बाईमें वह दो अङ्गुल रहती और डण्ठलमें एक एक जोड़ी आमने सामने निकलती है। कुलफाका फूल पीला होता है। उसके गिर जानेसे छोटासा कंगूरा निकल आता है। उसमें काला, गोल और चपटा दाना पड़ जाता है। वह बहुत छोटा रहता और औषधमें पड़ता है। कुलफेका दाना ठण्डाईमें भी प्रायः छोड़ते हैं। वृक्ष एक बित्तेसे डेढ़ बित्ते तक बढ़ता और ठण्डी जगहमें पनपता है। कुलफा वसन्त ऋतुमें बोते हैं। ग्रीष्मकालको वह तैयार हो जाता है। कुलफाके बढ़नेमें देर नहीं लगती। वर्षा ऋतुको वह अपने आप खेतोंमें उगता है। कुलफेकी भाजी बनायी जाती है। लोनी, अमलोनी या नोनिया भी उसीकी एक छोटी जाति है।

कुलफी (हिं० स्त्री०) १ टीन या किसी दूसरी धातुका छोटा चोंगा। इसमें दूध वगैरह डाल कर बरफके सहारे जमाया जाता है। पहले कुलफीमें दूध और शक्कर वगैरह भर कर उसका मुंह आटेसे बन्द कर देते हैं। फिर उसे एक बड़े बरतनमें डाल ऊपरसे बरफके छोटे छोटे टुकड़े नमकके साथ दिये जाते हैं। थोड़ी देरमें कुलफीके भीतरका दूध वगैरह बर्फकी ठण्डक पाकर जम जाता है। इस प्रकारके जमे हुवे पदार्थको भी कुलफी ही कहते हैं।

२ पेंच, छोटा क़ुफ़ुल। ३ नारियलमें नैचा बांधनेके लिये लगायी जानेवाली पीतल या तांबे वगैरहकी झुकी हुई एक नली।

कुलवधू (सं० स्त्री०) कुले श्रेष्ठे स्थिता वधूः। लज्जाशीला साध्वी स्त्री, भले घरानेकी औरत।

कुलवधूरस (सं० पु०) सन्निपातज्वरका रसविशेष, सरशामकी एक दवा। पारद, शोधक, ताम्र, मनःशिला और तुत्थकको समभाग इन्द्रवारुणी रसमें खरल करके चणकके बराबर वटी बना लेना चाहिये। (वैद्यकरत्नावली)

कुलवांसा (हिं० पु०) करघेका एक बांस। उसमें जुलाहे कंघी बांधते हैं।

कुलवाचस्पति—"सप्तशती" ग्रन्थके एक टीकाकार।

कुलवाला (सं० स्त्री०) कुले सत्कुले जाता वाला बालिका। सद्वंशोद्भवा सती स्त्री, अच्छे घरानेकी लड़की।

कुलबालिका, कुलवाला देखो।

कुलबुल (हिं० पु०) क्षुद्र क्षुद्र जीवोंकी गतिका शब्द, छोटे छोटे कीड़ोंके सरकनेकी आवाज।

कुलबुलाना (हिं० क्रि०) धीरे धीरे हिलाना डुलाना, छोटे छोटे जीवोंका सरकना। २ बच्चेका सोतेमें हाथ पैर चलाना।

कुलबुलाहट (हिं० स्त्री०) सरकीसरका, चलफिर, हिलाव डुलाव।

कुलबोरन (हिं० वि०) कुलकलङ्क, घरानेको डुबानेवाला।

कुलब्राह्मण (सं० पु०) कुलपुरोहित, घरानेका पुरोहित।

कुलभ (सं० पु०) वलिराजके सैन्यका एक दैत्य। (हरिवंश)

कुलभङ्ग (सं० पु०) कुलस्य भङ्गः, ६-तत्। कौलीन्यनाश, घरानेकी इज्जतका बिगाड़।

कुलभार्या (सं० स्त्री०) कुले श्रेष्ठे स्थिता भार्या, मध्यपदलो०। धार्मिका सुशीला अथवा सत्कुलोद्भवा पत्नी, भले घरकी औरत।

कुलभूभृत् (सं० पु०) कुलपर्वत। अपर नाम—कुलाचल, कुलाद्रि और कुलगिरि है।

(भागवत ५।१६।१७)

कुलभूषण (सं० त्रि०) कुलस्य वंशस्य भूषणमिव, उपमित स०। कुलतिलक, घरानेकी खूबसूरती।

२ एक जैन मुनि। सिद्धार्थनगरके राजा क्षेमंकर और रानी विमलासे इनका जन्म हुआ था। इनके बड़े भाईका नाम देशभूषण था। ये दोनों ही बाल्य अवस्थामें सदा संसारसे विरक्त रहा करते थे। युवावस्थाके प्रारम्भ होने पर कन्यायें इनके विवाहार्थ मंगाई गईं और उनको देखने ये उद्यानकी तरफ चले। रास्तेमें झरोखेसे इनकी वहिन भी यह सब उत्सव देख रही थी। अचानक इनकी दृष्टि वहिन पर पड़ी और उसे ही अपने लिये विवाहार्थ आई जान विकार भाव किया। इतनेमें साथके भाटोंने उच्चस्वरसे स्तुति करते हुये कहा—'क्षेमंकरके ये दोनों पुत्र और झरोखेमें बैठी हुई कमलोत्सवा कन्या जयवंत रहो।' बस अब क्या था यह सुनतेही दोनों भाई अपनी बार २ निन्दा कर घर बार छोड़ दीक्षित हो गये। विहार करते २ ये वंशस्थल (कुंथल) गिरि पर आये और वहां ध्यानारूढ़ हो विराजे।

इनके पूर्वजन्मका एक वैरि अग्निप्रभनामका ज्योतिषी देव हुआ था। उसने कुअवधिज्ञानसे क्रुद्ध हो इन पर सांप विछू आदि विषैले जंतु छोड़े एवं अन्य भी भयावह नाना उपसर्ग किये। इस प्रकार करते कई दिन जब हो गये तो पिताकी आज्ञासे वन२ फिरनेवाले रामचंद्रजी भी वहां आनिकले और तब वह दुष्ट इनको बलभद्र और लक्ष्मणको नारायण जान भयसे भाग गया एवं उपसर्ग दूर होते ही उक्त दोनों मुनियोंको केवलज्ञान प्राप्त हुआ। (जैन पद्मपुराण ३९ पर्व)

कुलभूषण पाण्ड्य—दाक्षिणात्यके एक पाण्ड्य राजा।

कुलभृत्या (सं० स्त्री०) कुलैः कुलभवैर्भृत्या भरणम्, कुल-भृ भावे क्यप् तुगागमश्च स्त्रियां टाप्। १ गर्भिणी पर्युपासना, हमलवाली औरतकी खिदमतगारी। २ वंशका प्रतिपालन, घरानेकी परवरिश।

कुलभ्रष्ट (सं० त्रि०) कुलात् वंशात् जातेर्वा भ्रष्टः, ५-तत्। वंशच्युत अथवा जातिच्युत, कौम या खानदानसे निकाला हुवा।

कुलमार्ग (सं० पु०) कुलैः सत्कुलोद्भूतैराश्रितो मार्गः पन्थाः। सुपथ, सदुपाय, भली राह, घरानेकी चाल।

कुलमित्र (सं० क्ली०) कुलस्य मित्रम्, ६-तत्। कुलसुहृद्, वंश परम्परागत बन्धु, खानदानका दोस्त, घरानेका साथी।

कुलमणि शुक्ल—एक विख्यात स्मृतिटीकाकार। आह्निकस्मृतिटीका, आह्निकचन्द्रिकाटीका, कर्पूरस्तवदीपिका, गौतमस्मृतिटीका, तन्त्रामृत, मातङ्गीकर्म, याज्ञवल्क्यस्मृतिटीका, योगकल्पद्रुम, रामार्चनचन्द्रिका और सत्कर्मदीपिका नामक उनका बनाया ग्रन्थ मिलता है।

कुलमुनि—एक विख्यात संस्कृत ग्रन्थकार। उनका बनाया हुवा नीतिप्रकाश धर्मशास्त्र, समासार्णव व्याकरण और सांख्यकारिकावृत्ति नामक ग्रन्थ मिलता है।

कुलम्पुन (सं० क्ली०) कुलं पुनाति, कुल-पु-खश् मुमागमश्च बाहुलकात् साधुः। कुरुक्षेत्रका एक तीर्थ।

"कुलम्पुने नरः स्नात्वा पुनाति स्वकुलं ततः।" (भारत, वन, ८३ अ०)

कुलम्पुना (सं० स्त्री०) नदीविशेष, एक दरया।

कुलम्भर (सं० पु०) कुलं बिभर्ति पालयति, कुल-भृ-खच्। संज्ञायां भृतृवृजिधारि। पा ३।२।४६। १ वंशपालन कर सकनेवाला पुत्र, जो लड़का घरानेकी परवरिश कर सकता हो। २ कुलभिन् चोर, सेंध लगानेवाला चोर।

कुलयी (सं० स्त्री०) वृक्षविशेष, एक पेड़। वह शीतल, स्वादु, वातल, कफकृत् और गुरु होती है।

(वैद्यकनिघण्टु)

कुलयोषित् (सं० स्त्री०) कुले सत्कुले उत्पन्ना योषित् स्त्री। कुलस्त्री, सद्वंशोद्भवा साध्वी स्त्री, अच्छे घरानेकी औरत।

"असंस्कृतप्रमीतानां त्यागिनां कुलयोषिताम्।
उच्छिष्टं भागधेयं स्याद्दर्भेषु विकिरश्च यः॥" (मनु, ३।२४५)

कुलर (सं० त्रि०) कुल अश्मादित्वात् रः। वुञ्छणकठजिलसेनिरढञण्यययफक्। पा ४।२।८०। कुलसन्निकृष्ट देशादि।

कुलरक्षक (सं० पु०) कुलस्य रक्षकः, ६-तत्। १ वंशका

रक्षाकर्ता, घरानेकी हिफाजत करनेवाला। २ कन्या को ग्रहण करके दूसरेके कौलीन्यकी रक्षा करनेवाला।

कुलराह (सं० पु०) पीयूषवर्ण अश्व, एक तरहका घोड़ा। संस्कृत पर्याय—कुलाह, सेराह और सुरवाहक। (जयदत्त)

कुलराहक, कुलराह देखो।

कुलर्क (सं० पु०) तालमर्दन।

कुलवन्त, कुलवान् देखो।

कुलवर्गा—हैदराबाद राज्यका एक नगर। खृष्टीय १४श शताब्दको दाक्षिणात्यके प्रथम मुसलमान राजा अला-उद्-दीन हुसेन बहमानीने उस नगरको स्थापन किया था। बहमानी राजा कुलवर्गामें ही राजत्व करते थे।

कुलवर्णा (सं० स्त्री०) रक्तमूल त्रिवृत्, लाल निसोत।

कुलवर्धन (सं० पु०) कुलं वंशं वर्धयति, कुल-वृध-णिच् नन्द्यादित्वात् ल्युः। वंशवर्धक, घरानेको तरक्की देनेवाला।

कुलवान् (सं० त्रि०) कुलं प्रशस्तं कुलमस्त्यस्य, कुल मतुप् मस्य वः। बलादिभ्यो मतुवन्यतरस्याम्। पा ५।२।१३६। कुलीन खानदानी।

कुलवार (सं० पु०) १ तन्त्रशास्त्रके मतमें—मङ्गलवार और शुक्रवार। २ कुलीन।

कुलविद्या (सं० स्त्री०) कुलपरम्परागता विद्या। १ वंशानुगत शिक्षणीय विद्या, खानदानी इल्म। २ आन्वीक्षिकी प्रभृति विद्या।

कुलविप्र (सं० पु०) कुलक्रमागतो विप्रः पुरोहितः। कुलपरम्परागत पुरोहित।

कुलवृद्ध (सं० पु०) कुलेषु वृद्धः, ७-तत्। वंशके मध्य प्राचीन, घरानेमें बुजर्ग।

"ब्राह्मणैः कुलवृद्धैश्च पर्यस्तोऽमात्य बन्धुभिः।" (भागवत, ४।९।२९)

कुलव्रत (सं० क्ली०) कुले कुलविशेषे आचरणीयं व्रतम्। कुलधर्म, वंश परम्परा क्रमसे आचरणीय कार्य, खानदानी काम।

कुलव्रीडा (सं० स्त्री०) कुलोचिता सत्कुलोचिता व्रीड़ा। कुलकामिनियोंकी लज्जा, खानदानी औरतोंकी शर्म।

कुलशेखर—आश्चर्यमाला नामक ग्रन्थके रचयिता। सूक्ति-कर्णामृत और सूक्तिमुक्तावलीमें कुलशेखरका ग्रन्थ उद्धृत हुवा है। २ नीलाचलके कोई परम वैष्णव राजा। (भक्तिमाहात्म्य, ११।१२) ३ मदुराराज्य-प्रतिष्ठाता दाक्षिणात्य-के प्रथम पाण्ड्य राजा।

कुलशेखर अर्वार—दाक्षिणात्यवाले केरल राज्यके एक अति प्राचीन राजा। प्रवादानुसार १८६० कल्यब्द अर्थात् ई०से १२४२ वर्ष पूर्व उन्होंने राज्य परित्याग करके संन्यास धर्म अवलम्बन किया था।

कुलशेखरदेव—एक पाण्ड्य राजा। अनुमानतः १२०० से १२१३ ई० तक उन्होंने मदुराराज्य शासन किया। किसीके मतमें वह सिंहलराज पराक्रमबाहुके समसामयिक रहे। २ दक्षिणाञ्चलके कोई सात्विक हिन्दू राजा। उन्होंने मुकुन्दमालास्तोत्र नामक संस्कृत ग्रन्थ बनाया था।

कुलश्रेष्ठी (सं० त्रि०) १ श्रेष्ठकुलसम्भूत, अच्छे घरानेमें पैदा होनेवाला। २ वंशके मध्य श्रेष्ठ, घरानेमें सबसे बड़ा। (पु०) ३ शिल्पिकुलप्रधान, कारीगरों-के घरानेका मुखिया। उसका संस्कृत पर्याय—कुलिक, कुलक और कुल है।

कुलसङ्कुल (सं० पु०) नरकविशेष, एक दोजख।

कुलसङ्ख्या (सं० स्त्री०) कुलस्य वंशस्य संख्या कीर्तिः, ६-तत्। कुलकीर्ति, वंशकी श्रेष्ठता, खानदानकी बड़ाई, घरानेकी गिनती।

कुलसञ्चय (सं० क्ली०) परिपेलवृक्ष, पानीमें पैदा होने-वाली एक खुशबूदार घास।

कुलसत्र (सं० क्ली०) कुलैः कुलजनैरनुष्ठेयं सत्रम्, मध्य-पदलो०। सहस्र वत्सरसाध्य यज्ञविशेष, हजार वर्षमें पूरा होनेवाला एक यज्ञ।

कार्ष्णाजिनि मुनिके मतसे उक्त कुलसत्र नामक यज्ञ सहस्रवत्सरमें परिपूर्ण होता है। पिता, पुत्र, पौत्र, प्रपौत्र और उनके पुत्रादिको ही कुल कहते हैं। उन सकलके अनुष्ठान करनेसे ही उक्त यज्ञका नाम कुलसत्र पड़ा है। ऐसा दीर्घजीवी कोई नहीं, जो अकेले कुलसत्र यज्ञको आरम्भ और समापन कर सके। मनुष्योंका एकमात्र नियम यह रहता है कि आरम्भ कर-के कार्यको समापन करना पड़ता है। जिस कार्यके

एक व्यक्ति समापन नहीं कर सकता, उसे बहुत लोगोंको एकत्र होकरके अथवा भिन्न क्रमसे अनुष्ठान करके समापन करना चाहिये। अतएव कुलसत्र यज्ञको कोई व्यक्ति यथाविधि अनुष्ठान करता और फिर तद्वंशीय अपर कोई व्यक्ति समापन करता है। ऐसा करनेसे ही कुलसत्र यज्ञ सम्पन्न हो सकता है।

(कात्यायन-श्रौतसूत्र ११६।३०)

कुलसन (हिं॰ पु॰) पक्षिविशेष, एक चिड़िया।

कुलसन्तति (सं॰ स्त्री॰) कुलस्य वंशस्य सन्ततिर्विस्तारः, ६-तत्। वंशवृद्धि, पुत्रोत्पादन, खानदानकी बढ़ती।

"दिवं गतानि विप्राणामकृत्वा कुलसन्ततिम्।" (मनु ५। १५९)

कुलसन्निधि (सं॰ स्त्री॰) कुलानां कुलजानां सन्निधिः सान्निध्यम्, ६-तत्। साक्षी अथवा सद्वंशीय व्यक्तिको उपस्थिति, खानदानी लोगोंकी मौजूदगी।

"निक्षेपो यः कृतो येन यावांश्च कुलसन्निधौ।
तावानेव स विज्ञेयो विब्रुवन् दण्डमर्हति॥" (मनु ८। १९४)

कुलसमुद्भव (सं॰ त्रि॰) कुलात् सत्कुलात् समुद्भव उत्पत्तिर्यस्य, बहुव्री॰। सद्वंशजात, अच्छे घरानेका पैदा।

कुलसम्भव (सं॰ त्रि॰) कुलात् सत्कुलात् सम्भव उत्पत्तिर्यस्य, बहुव्री॰। सत्कुलसम्भूत, अच्छे घरानेका पैदा।

कुलसाधक (सं॰ पु॰) कुलस्य कुलाचारस्य साधकः, ६-तत्। तन्त्रमतानुयायी एक साधक।

कुलसुन्दरी (सं॰ स्त्री॰) कुलैः कुलाचारराध्या सुन्दरी तन्नाम्नी देवीत्यर्थः। एक देवी।

कुलसेवक (सं॰ पु॰) कुलक्रमागतः सेवको भृत्यः। वंशपरम्परागत भृत्य, खानदानी नौकर।

कुलसौरभ (सं॰ क्ली॰) कुलं श्रेष्ठं सौरभमस्य। मरुवकवृक्ष, मरवाका पेड़।

कुलस्त्री (सं॰ स्त्री॰) कुले स्थिता स्त्री, मध्यपदलो॰। १ कुलयोषित्, अनन्यगामिनी साध्वी स्त्री, नेक औरत।

"असन्तुष्टा द्विजा नष्टाः सन्तुष्टाश्च महीभृतः।
सलज्जा गणिका नष्टा निर्लज्जाश्च कुलस्त्रियः॥" (चाणक्य)

२ कुलकुण्डलिनी शक्ति।

"कुलस्त्री ज्ञानमात्रेण जीवन्मुक्तो भवेन्नरः।" (कुलार्णवतन्त्र)

कुलस्थिति (सं॰ स्त्री॰) कुलस्य वंशस्य स्थितिः स्थायित्वम्, ६-तत्। वंशस्थिति, खानदानका ठहराव, घरानेकी बढ़ती।

कुलह (हिं॰ स्त्री॰) १ कुलाह, टोपी। २ शिकारी, आखेट करनेवाला। ३ अंधियारी, ढक्कन।

कुलहकण्ड, कुलहण्डक देखो।

कुलहण्डक (सं॰ पु॰) जलावर्त, पानीका भंवर।

कुलहल (सं॰ पु॰) १ मुण्डहल, किसी किस्मकी मुण्डी। २ महाश्रावणिका, गोरखमुण्डी।

कुलहला (सं॰ स्त्री॰) गोरखमुण्डी क्षुप, गोरखमुण्डी।

कुलहवरा (हिं॰ पु॰) कुलाहवाला टोपा। उसे बच्चे पहनते हैं। कुलहवरामें पीछे एक लम्बा कपड़ा लगता जो नीचे पैरों तक लटकता है।

कुलहा (हिं॰ पु॰) १ कुलाह, टोपी। २ ढोका, शिकारी चिड़ियोंकी आंखें ढाकनेवाली अंधियारी।

कुलही (हिं॰ स्त्री॰) छोटा कुलाह, कनटोप, बच्चोंकी टोपी।

कुला (सं॰ स्त्री॰) १ मनःशिला, मैनसिल। २ शुकशिम्बी, केंवाच।

कुलांच (हिं॰ स्त्री॰) १ कुलाच, दोनों हाथोंके बीचका फर्क। २ उछाल, छलांग, चौकड़ी।

कुलांट (हिं॰ स्त्री॰) कुलाच, चौकड़ी, उछलकूद।

कुलाकुल (सं॰ पु॰) तन्त्रशास्त्रके अनुसार कुछ तिथि, वार तथा नक्षत्र। उनके मध्य बुध कुलाकुल-वार, द्वितीया, द्वादशी तथा षष्ठी कुलाकुल तिथि और आर्द्रा, मूला, अभिजित् एवं शतभिषा कुलाकुल नक्षत्र हैं।

कुलाकुलचक्र (सं॰ क्ली॰) कुलस्य अकुलस्य कुलाकुले तयोर्विचारार्थं चक्रम्। किये जानेवाले मन्त्रके शुभाशुभका एक चक्र। तन्त्रशास्त्रमें इस प्रकार लिखा है—

पञ्चाशत मातृकाक्षर पांच भागोंमें विभक्त करना चाहिये। उक्त पांचो भाग यथाक्रम मारुत, आग्नेय, पार्थिव, वारुण और नाभस कहे गये हैं।

अ आ ए क च ट त प य ष मारुत।

इ ई ऐ ख छ ठ थ फ र क्ष आग्नेय।

उ ऊ ओ ग ज ड द ब ल ळ पार्थिव।

ऋ ॠ औ घ झ ढ ध भ व स वारुण।

ऌ ॡ अं ङ ञ ण न म श ह नाभस।

पार्थिव अक्षरोंका वारुण और आग्नेय अक्षरोंका मारुत अक्षरसमूह मित्र है। पार्थिव अक्षरोंका मारुत और वारुणका आग्नेय शत्रु है। फिर पार्थिव अक्षरोंका मित्र वारुण और शत्रु आग्नेय है। नाभस अक्षर सबके मित्र हैं। साधकके नामका आद्य अक्षर और मन्त्रका आद्य अक्षर परस्पर शत्रु रहनेसे साधकको वह मन्त्र ग्रहण करना न चाहिये। साधकके नाम और मन्त्रका आद्य अक्षर परस्पर मित्र रहनेसे मन्त्र लिया जाता है। साधकके नाम और मन्त्रका आद्य अक्षर एक रहनेसे स्वकुल ठहरता है। स्वकुल मन्त्र ग्रहण करनेसे सिद्धि मिलती है। यथा—

"कुलाकुलस्य भेदं हि वक्ष्यामि मन्त्रिणामिह।
वाय्वग्निभूजलाकाशाः पञ्चाशल्लिपयः क्रमात्॥
पञ्चह्रस्वाः पञ्चदीर्घा बिन्द्वन्ताः सन्धिसम्भवाः।
कादयः पञ्चशः ष च ल स ह्यान्ताः प्रकीर्तिताः॥
साधकस्याक्षरं पूर्वं मन्त्रस्यापि तदक्षरम्।
यद्येकभूतदैवत्यं जानीयात् स्वकुलं हि तत्॥
भौमस्य वारुणं मित्रं आग्नेयस्यापि मारुतम्।
मारुतं पार्थिवानाञ्च शत्रुराग्नेयमम्भसाम्।
नाभसं सर्वमित्रस्याद्विरुद्धं नैवशीलयेत॥" (तन्त्रसार)

कुलाच्युता (सं० स्त्री०) कुक्करी, कुतिया।

कुलाङ्गना (सं० स्त्री०) कुले सत्कुले जाता अङ्गना स्त्री। कुलस्त्री, सत्कुलोद्भवा साध्वी स्त्री, अच्छे घरानेकी औरत।

कुलाङ्गार (सं० पु०-क्ली०) कुलस्य अङ्गारमिव, उपमितस०। कुलमें अङ्गारस्वरूप व्यक्ति, कुलगौरव नाश करनेवाला, घरानेकी इज्जत बिगाड़नेवाला शख्स।

"दह्यति स्म कुलाङ्गारं चोदितो मे ततद्रुहम्।" (भागवत, १। १८।३७)

कुलाचल (सं० पु०) १ पर्वतविशेष, कोई पहाड़। भारत प्रभृति प्रत्येक वर्षमें सात-सात प्रधान पर्वत हैं। उन्हें कुलाचल कहते हैं। भारतवर्षमें महेन्द्र, मलय, सह्य, शुक्तिमान, ऋक्ष, विन्ध्य एवं पारिपात्र सात; भद्राश्ववर्षमें सौवल, वर्णमालाग्र, कोरञ्ज, श्वेतवर्ण तथा नील पांच; केतुमालवर्षमें विशाल, कम्बल, कृष्ण, जयन्त, हरिपर्वत, अशोक एवं वर्धमान सात; प्लक्षद्वीपमें गोमेदक, चन्द्र, नारद, दुन्दुभि, सोमक, सुमना तथा वैभ्राज सात; शाल्मलद्वीपमें कुमुद, उन्नत, बलाहक, द्रोण, कङ्क, महिष, ककुद्मान् सात; कुशद्वीपमें विद्रुमोच्चय, हेमपर्वत, द्युतिमान्, पुष्पवान्, कुशेशय, हरिगिरि, मन्दर सात; क्रौञ्चद्वीपमें क्रौञ्च, वामनक, अन्धकारक, दिवावृत, द्विविन्द, पुण्डरीक, दुन्दुभिस्वन सात; शाकद्वीपमें उदय, जलधार, रैवतक, श्याम, अस्तमय, आम्बिकेय, वायु सात, और पुष्करद्वीपमें एकमात्र मानस कुलाचल नामसे अभिहित हुवा है। (ब्रह्माण्डपुराण, ५२ अ०)

जैनधर्मानुसार मध्यलोकमें असंख्यात द्वीप समुद्र हैं। उनमें केवल जम्बू, धातकी और आधे पुष्कर द्वीपमें ही मनुष्य रहते हैं। प्रत्येक द्वीपमें भरत ऐरावत आदि क्षेत्रोंका विभाग करनेवाले पूर्वसे पश्चिम समुद्र तक लम्बे पहाड़ हैं। उनको ही कुलाचल कहते हैं। जम्बूद्वीपमें हिमवान्, महाहिमवान्, निषध, नील, रुक्मी और शिखरी नामके छह कुलाचल हैं। धातकी और आधे पुष्करमें बारह बारह हैं। इस तरह कुल ३० कुलाचल हैं। (तत्त्वार्थसूत्र ३। ११।)

२ दानवविशेष, कोई राक्षस। उसका अपर नाम कुलाकुल था।

कुलाचार (सं० पु०) कुलस्य आचारः, ६-तत्। १ कुलोचित धर्म, घरानेकी चाल। २ तन्त्रोक्त ज्ञानभेद। जीवात्मा, प्रकृति, दिक्, काल, आकाश, क्षिति, जल, तेजः और वायुको कुल कहते हैं। ब्रह्मदृष्टिसे अर्थात् ब्रह्मसे वह भिन्न नहीं—चिन्ता करके व्यवहार करना कुलाचार कहाता है।

३ तन्त्रोक्त आचारविशेष। तन्त्रसारके मतमें—समस्त काम्यकर्म परित्याग करके नित्यकर्मके अनुष्ठानमें तत्पर होना चाहिये। कर्मफल अपने इष्टदेवताको अर्पण करते हैं। अन्य मन्त्रकी अर्चना, अथवा किंवा अन्य मन्त्रकी पूजा करना उचित नहीं। कुलस्त्री किंवा वीराचारीकी निन्दा करना सर्वदा गर्हित है। स्त्रीके प्रति रोषको परित्याग करते हैं। सकल संसारको स्त्रीमय समझना चाहिये। पेय, चर्व्य, चोष्य, भक्ष्य, लेह्य प्रभृति सभी पदार्थोंको युवतीमय चिन्ता करते हैं। कुलजा युवतीको अवलोकन करके समाहित चित्तसे नमस्कार करना चाहिये। यदि साधकको भाग्यक्रमसे कुलस्थान देख पड़े, तो भगिनी, भगचिन्ता,

भगास्था, भगमालिनी, भगनासा, भगस्तनी, भगस्था और भगसर्पिणी देवताकी पूजा करे। बाला, युवती, वृद्धा, सुन्दरी अथवा कुत्सिता—किसी प्रकारकी क्यों न हो, स्त्रीका देखते ही नमस्कार करना चाहिये, स्त्रियोंके प्रति प्रहार, निन्दा अथवा किसी प्रकारकी दूसरी कुटिलता नहीं करते। क्योंकि वैसा करनेसे साधकको सिद्धि मिलना कठिन है। स्त्रीसङ्गी साधकको भावना करना चाहिये—स्त्री ही देवता, स्त्री ही प्राण और स्त्री ही अलङ्कार है। स्त्रियोंके हस्तरचित पुष्प, जल एवं अन्य द्रव्य देवताको निवेदन करना चाहिये। जपस्थानमें महाशङ्ख स्थापन करके कुलजा युवतीके साथ विहार करते करते अथवा उसको स्पर्श किंवा अवलोकन करके जप करनेका विधान है। फिर स्त्रीका भुक्तावशिष्ट ताम्बूल प्रभृति भक्षण करके जप करते हैं। इस आचारमें दिक्काल किंवा अवस्थानका कोई नियम नहीं। उपासक अपनी इच्छाके अनुसार उपासना कर सकता है। वस्त्र, आसन, स्थान, शरीर, गृह, पुष्प, जल प्रभृतिकी शुद्धिका भी प्रयोजन नहीं पड़ता।

कुलार्णवतन्त्रमें कथित हुवा है—

"कुलाचारगृहं गत्वा भक्त्या पापविशुद्धये।
याचयेदमृतं कौलं तदभावे जलं पिबेत्॥
कुलाचारिण यद्दत्तं कृत्वा पात्रेण भक्तितः।
नमस्कृत्वा च गृह्णीयादन्यथा नरकं व्रजेत्॥"

कुलाचार-गृहमें गमन करके पापकी विशुद्धिके निमित्त कौल अर्थात् कुलाचारीसे अमृत प्रार्थना करना चाहिये। अमृत न मिलनेसे जलपान कर लेते हैं। कुलाचारी जो कुछ दे, उसे ही भक्तिपूर्वक नमस्कार करके ग्रहण कर ले। तन्त्रसारमें भी उक्त हुवा है—

"न वृथा गमयेत् कालं द्यूतक्रीड़ादिना सुधीः।
गमयेत् देवता पूजाजपयागादिना सदा॥
वीराणां जपयज्ञस्तु सर्वकाले प्रशस्यते।
सर्वदेशे सर्वपीठे कर्तव्यो नात्र संशयः॥"

साधकको द्यूतक्रीड़ादि द्वारा वृथा काल अतिवाहन करना न चाहिये। देवतापूजा जपयागादि करके कालयापन करते हैं। वीराचारियोंका जपरूप यज्ञ सर्वकालको ही प्रशस्त है। सकल स्थान और सकल आसन पर जप करना आवश्यक है।

"शक्तिः शिवः शिवः शक्तिः शक्तिर्ब्रह्मा जनार्दन
शक्तिरिन्द्रो रविः शक्तिः शक्तिश्चंद्रो ग्रहा ध्रुवम्॥
शक्तिरूपं जगत् सर्वं यो न जानाति नारकी।" (शिवागम)

शिव, ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, चन्द्र, सूर्य एवं अन्य ग्रह सर्व ही शक्तिमय हैं। जो इसप्रकार नहीं समझता, वह नारकी ठहरता है।

"स्नानादि मानसं शौचं मानसः प्रवरो जपः।
मानसं पूजनं दिव्यं मानसं तर्पणादिकम्॥
सर्व एव शुभः कालो नाशुभो विद्यते क्वचित्।
न विशेषो दिवारात्रौ न सन्ध्यायां तथा निशि॥
सर्वदा पूजयेद्देवीमस्नातः कृतभोजनः।
महानिश्यशुचौ देशे बलिं मन्त्रेण दीपयेत्॥" (वीरतन्त्र)

स्नानादि रूप मानस शौच, मानसिक जप, मानस-पूजा एवं मानसिक तर्पणादि सर्वश्रेष्ठ है। वह सर्वकालको ही शुभ है। उसके लिये कोई काल अशुभ नहीं होता। दिवा, रात्रि, सन्ध्या किंवा महानिशाका विशेष नियम क्या लगता है! अस्नात वा भोजन करके भी देवीकी पूजा करना चाहिये। महानिशाको अशुचि देशमें मन्त्रपूर्वक बलिप्रदान करते हैं।

गन्धर्वतन्त्रमें लिखा है—

"पृथ्वीमृतुमतीं वीक्ष्य सहस्रं यदि नित्यशः।
तदा वादी स्वसिद्धान्तहतः क्षितितलं विशेत्॥
पर्वते हस्तमारोप्य निर्भयो यतमानसः।
कविता लभते सोऽपि अमरत्वञ्चापि गच्छति॥"

स्त्रीको ऋतुमती देख षोड़श दिन पर्यन्त प्रतिदिन सहस्र संख्यक जप करनेसे वादी अपने सिद्धान्तपर पराजित हो क्षितितलमें प्रवेश करता अर्थात् नितान्त लज्जित रहता है। भयशून्य एवं स्थिरचित्त हो करके स्तनमण्डल पर हस्तप्रदानपूर्वक षोड़श दिन पर्यन्त प्रतिदिन सहस्रवार जप करनेसे साधक कवित्वशक्ति और अमरत्व लाभ कर सकता है।

"पद्मं दृष्ट्वा तथा बिम्बं खञ्जनं शिखरं तथा।
चामरं रविबिम्बञ्च तिलपुष्पं सरोरुहम्॥
त्रिशूलं वीक्ष्य जप्त्वा च शतशः शुद्धभावनः।
सुखप्रसादं सुमुखं सुलोचनं सुहास्यकम्।
सुवेशं सुगतिं गन्धं सुगन्धं सुखमेव च।
लभते च यथासंख्यं श्रृणु पार्वति सादरम्।" (नीलतन्त्र)

मुख, अधर, चक्षु, मस्तक केश, कपोलका सिन्दूर, नासिका, नाभि एवं त्रिवली अवलोकन करके शत-संख्यक जप करनेसे यथाक्रम प्रसाद, सुन्दर मुख, सुन्दर लोचन, सुन्दर हास्य, सुवेश, सुगति, गन्ध, और सुगन्ध पाते हैं।

"एकाकी निर्जने देशे श्मशाने विजने वने।
शून्यागारे नदीतीरे निःशङ्को विहरेत् सदा॥
महाचीनद्रुमे देवीं ध्यात्वा तत्र प्रपूजयेत्।
तद्द्रुमोद्भवपुष्पेण पूजयेत् भक्तिभावतः॥
स भवेत् कुलदेवश्च कुलद्रुमगतः शुचिः।" (भावचूड़ामणि)

निर्जनदेश, श्मशान, वन, शून्यगृह किंवा नदीके तीरमें निःशङ्क हो सर्वदा विचरण करना चाहिये। महाचीनद्रुममें देवीको ध्यान करके पूजा करते हैं। महाचीनद्रुमके पुष्प द्वारा भक्तिभावसे पूजा करने पर साधक कुलदेव हो सकता है।

कुलचूड़ामणिमें और भी कथित हुवा है—

"शृणु पुत्र! रहस्यं मे समयाचारसम्भवम्।
येन हीना न सिद्ध्यन्ति जन्मकोटिसहस्रतः॥
मानवः कुलशास्त्राणां कुलचर्यानुसारिणाम्।
उदारचित्तः सर्वत्र वैष्णवाचारतत्परः॥
परनिन्दासहिष्णुः स्यादुपकाररतः सदा।
पर्वते विपिने वापि निर्जने शून्यमण्डपे॥
चतुष्पथे कलामध्ये यदि दैवात् गतिर्भवेत्।
चणं स्थित्वा मन्त्रं जप्त्वा नत्वा गच्छेद् यथासुखम्॥"

कुलाचारका रहस्य श्रवण करो। उसको न समझनेसे कोटिसहस्र जन्ममें भी सिद्धि मिलना कठिन है। कुलशास्त्र और कुलाचारीके प्रति श्रद्धावान् हो वैष्णवाचारतत्पर रहना चाहिये। किसी मन्द-मतिके कुलाचारकी निन्दा करने पर दुःखित नहीं होते, सर्वदा परोपकारनिरत रहते हैं। पर्वत, विजनकानन, शून्यगृह, चतुष्पथ अथवा नृत्यगीता-दिके मध्य किसी कार्यसे उपस्थित होने पर कुछ काल अवस्थान करके मन्त्र जप करना चाहिये। उसके पीछे नमस्कार करके यथाभिलषित स्थानको गमन करते हैं।

कुलाचारी गृध्र, शेमङ्करी, जम्बुकी, काक, श्येन-पक्षी, नीलवर्ण कपोत और कृष्णवर्ण मार्जार अव-लोकन करके निम्नलिखित मन्त्रपाठपूर्वक महा-कालीको नमस्कार करते हैं—

"कृशोदरी महाचण्डे मुक्तकेशि बलिप्रिये।
कुलाचारप्रसन्नास्ये नमस्ते शङ्करप्रिये॥"

श्मशान और शवको देख निम्नलिखित मन्त्र पढ़के नमस्कार किया जाता है—

"घोरदंष्ट्रे करालास्ये किटिशब्दनिनादिनि।
घोरघोररवास्फाले नमस्ते चितिवासिनि॥"

इसीप्रकार रक्तवस्त्र एवं पुष्प देख त्रिपुरसुन्दरी और कृष्णवर्ण पुष्प, राजा, राजपुरुष, अश्विष, हस्ती, अश्व, रथ, अस्त्र, वीरपुरुष तथा कुलदेवताको अव-लोकन करके जयदुर्गा किंवा महिषमर्दिनीको अर्चना करना चाहिये।

कुलार्णवतन्त्रके एकादश उल्लासमें कुलाचारका कर्तव्याकर्तव्य इस प्रकार निर्णीत हुवा है—दीक्षित ज्येष्ठके कुलपूजादि-वर्जित होने पर क्रमशः कनिष्ठ ही कुलपूजाका अधिकारी है। पूजाके समय ज्येष्ठ, गुरु किंवा कनिष्ठ समागत होनेसे उनके साथ सादर सम्भाषण करके उन्हींकी अनुमतिके अनुसार पूजादि-कार्य करना चाहिये। कौलिक दिनको नित्यपूजा, रात्रिकालको नैमित्तिक और रात्रिदिन दोनों समय काम्यकर्मका अनुष्ठान करते हैं। कुलाचारियोंको अस्नात, अङ्गनस्थ किंवा भुक्त; गन्धपुष्प, वस्त्र तथा अलङ्कार द्वारा भूषित न होने पर किंवा अविन्यस्त शरीर सर्वदा कुलपूजासे अलग रहना चाहिये। विना मांस किंवा विना मद्य कुलपूजा करनेसे क्या फल मिलता है? कुलाचारीको शक्तिरहित हो करके मद्य-पान करना न चाहिये। एकाकी श्रीचक्रका अनुष्ठान, एकपात्र किंवा एकहस्तसे अर्चना, एक हस्तसे जलपान और मद्यमांस द्वारा पशुके सन्निधानमें देवीको अर्चना इत्यादि कुलाचारीके लिये एकान्त निषिद्ध है। कौलिकको प्रणाम करके श्रीचक्रमें प्रवेश करना और प्रणाम करके श्रीचक्रसे बाहर निकलना चाहिये। श्रीचक्र दर्शन करनेसे सकल पाप विनष्ट होते हैं। श्रीचक्रमें उपविष्ट शक्तिको गौरी और कौलिकको साक्षात् शिव समझना चाहिये। अस्नात, भुक्त अथवा अभुक्त होके कुल-द्रव्य (मद्य) सेवन नहीं करते अर्थात् भोजनके समय मद्य पीते हैं। उष्णीषधारी, कञ्चुकी,

नग्न, मुक्तकेश, दिगम्बर, व्यग्र, रुष्ट और विवादीको कभी कुलामृत पीना न चाहिये। मद्यपानके पीछे निष्ठीवन, मद्यभाण्डका परिभ्रमण, ऊर्ध्वनालमें मद्यपान, दूसरेके साथ आसन पर उपविष्ट हो एकपात्रमें भोजन, किंवा एकपात्रमें मद्यपान कुलाचारमें एकान्त अकर्तव्य है। गुरु, तत्पुत्र किंवा तद्वंशीय कोई व्यक्ति अथवा कौलिक ज्येष्ठ यदि एकग्रामवासी हो, तो उस को अनुमति ग्रहण न करके एकाकी कुलद्रव्यका सेवन करनेसे अलग हो रहना चाहिये। हस्तप्रक्षालनपूर्वक कुल-द्रव्यका अर्पण, मधुभाण्ड उत्तोलन करके पात्रपूरण, सुधाकुण्डमें भोगपात्रका निःक्षेप, चक्रके मध्य अशुचिमनसे करादि प्रक्षालन, निष्ठीवन, मलमूत्रपरित्याग किंवा पायुवायु निःसारण नहीं करते। चक्रके मध्य दैवात् घटभङ्ग, पात्रस्खलन किंवा दीपनिर्वाण होनेसे दोषशान्तिके निमित्त पुनर्वार चक्र बनाना चाहिये। भ्रमण, गर्जन, हास्य, विवाद, वाद प्रतिवाद, ज्ञानीकी निन्दा, परिहास, प्रलाप, वितण्डा, बहुभाषण, औदासीन्य, भय और क्रोध चक्रके मध्य एकान्त वर्जनीय है। पात्रहस्त चक्रके मध्य भ्रमण, पूर्णपात्र हाथमें ले करके अनेकक्षण अवस्थान, पात्रहस्त आलाप, पद द्वारा पात्रस्पर्श, भूमितल पर विन्दुपात, मुद्राशून्य एक हस्तसे प्रदान, एकस्थानसे अन्य स्थानको पात्रको चालना, पात्रसङ्कर, सशब्द पान किंवा शब्द करके पात्रपूरण करना कुलाचारियोंके लिये नितान्त अकर्तव्य है। पात्रके साथ पात्रका सङ्घट्टन, मृत्तिकामें स्थापन, आधारके साथ पात्र उत्तोलन किंवा रिक्त पात्र दर्शन करना न चाहिये। पात्रको प्रक्षालन करके गोपन करना चाहिये। कौलिक कुलद्रव्य पानसे उल्लासित हो यदि पशुको देखे, तो पशु शास्त्र पाठ करके उसको पशुभाव दिखलावे। फिर पशुके प्रसङ्ग और पशुके कार्यका अनुष्ठान करना चाहिये। स्वेच्छा किंवा धनलोभसे अथवा किसी प्रकार भीत हो करके भी श्रीचक्रस्थ कुलद्रव्य पश्वाचारीको अर्पण करना न चाहिये। क्योंकि वैसा करनेवालेका धन, आयु और यश विनष्ट होता है। चक्रके मध्य रह करके शत्रुसे भी विरोध नहीं करते। चक्रस्थित कौलिकोंको पितृ तुल्य और शक्तियोंको माताके समान मानना चाहिये। इस प्रकारकी चिन्ता करना ही कौलिकोंका प्रधान कार्य है—ब्रह्मासे स्तम्ब पर्यन्त सकल गुरुके सन्तान हैं, मैं सभीका शिष्य हूं और सब मेरे पूज्य हैं। जपकाल भिन्न गुरुका नाम लेना न चाहिये। गुरु, कुलशास्त्र और पूजास्थानको अवलोकन करके नमस्कार करते हैं। कौलिकको अपनी पत्नीको भांति कुलशास्त्र सर्वदा सेवन करना चाहिये। परदारवत् पशुशास्त्रको परित्याग करते हैं। पशुसे कुलधर्मको कोई कथा सुनना न चाहिये। गुरुपत्नी, गुरुकन्या, कुमारी, व्रतधारिणी, वक्राङ्गी, विकृताङ्गी, कुब्जा, अपनी कन्या, भगिनी, पौत्री और पुत्रवधू अलङ्घनीया होती है। कौलिकोंको कभी उनकी कामना करना न चाहिये। गुरुसे कोई बात गोपन करना अकर्तव्य है। कृष्णवस्त्रपरिधारिणी, कृष्णवर्णा, कृशोदरी और युवती कुमारीको देवता समझ करके पूजा करते हैं। आममांस, सुराकुम्भ, मत्तगज, सिद्धिसूचक चिह्नविशिष्ट व्यक्ति, सहकारवृक्ष, अशोकवृक्ष, क्रीड़ाकुला कुमारी, श्रीफल वृक्ष, श्मशान, शक्तिसमूह किंवा रक्ताम्बरधारिणी कुलकामिनीको अवलोकन करके भक्तिपूर्वक नमस्कार करना चाहिये। कुलद्रव्य और कौलिक कुलधर्मके सूचक, शिक्षक अथवा बोधक मनुष्यको देख भक्तिभावसे नमस्कार करना कुलाचारीका कर्तव्य है। स्त्रीजातिकी निन्दा, उनके अप्रिय कार्यका अनुष्ठान, किंवा अवमानना, भक्तकी परीक्षा, वीरका कर्तव्याकर्तव्य विचार; अनावृतस्तनी, उलङ्गिनी एवं उन्मत्ता कामिनीका अवलोकन और दिनको स्त्रीसम्भोग वा स्त्रीयोनिका अवलोकन कुलाचारमें निषिद्ध है। सकल स्त्रियां मातृकुलसे उत्पन्न हैं। उनको किसी प्रकार अवमानना करनेसे कुलयोगिनी असन्तुष्ट होती है। शत शत अपराध करने पर भी किसी प्रकार उनका अप्रिय आचरण करना न चाहिये। कुलवृक्ष किंवा अर्कके पत्रमें भोजन, कुलवृक्षके तल पर शयन अथवा कुलवृक्ष पर किसी प्रकार उपद्रव करना निषिद्ध है। कुलवृक्षको देख अथवा उसका नाम सुनके नमस्कार करते हैं। कभी कुलवृक्षको छेदन करना न चाहिये। श्लेष्मातक,

करञ्ज, निम्ब, अश्वत्थ, कदम्ब, विल्व, वट और उडुम्बर तन्त्रशास्त्रमें कुलवृक्षके नामसे अभिहित हुवा है। कौलिकोंको प्रायश्चित्त, भृगुपात, सन्न्यास, व्रतधारण और तीर्थयात्रा पांच कार्य परित्याग करना चाहिये। वीरहत्या, चक्रभिन्न मद्यपान, वीरपत्नीमें अभिगमन, वीरद्रव्यका अपहरण और उक्त समस्त कर्मके अनुष्ठान-कारीका संसर्ग पांच महापातक तन्त्रशास्त्रमें अभिहित हुवे हैं। कुलशास्त्रमें अविश्वास अथवा कुलगुरुका विद्रोह आचरण करना न चाहिये। माता, पिता, भार्या, भाई, बन्धु किंवा कुलधर्मको निन्दा करनेवाले अन्य व्यक्तिको बध करते हैं। अशक्त होने पर उनके प्रति शत्रुता प्रकाश करके स्वयं प्राण परित्याग करना चाहिये। कुलधर्म, कुलदेवता, कौलिक और कुलशास्त्रकी रक्षाके निमित्त प्राणिहत्या करनेसे पाप नहीं लगता। शूद्रके समक्ष जैसे वेदपाठ अविधेय है, वैसे ही पश्वाचारीके निकट कुलाचारका प्रसङ्ग छेड़ना भी कर्तव्य नहीं। प्रकृत कुलाचारियोंको अन्तरमें कुलाचार, वाहर शैवभाव और सभामें वैष्णवमत अवलम्बन करना चाहिये। कुलाचारको कभी प्रकाश नहीं करते। कारण मन्त्र प्रकाश करनेसे सम्पद् बिगाड़ती और अवस्था घटती है। शास्त्रमें महापातकीकी निष्कृति निरूपित हुई है। किन्तु कुलाचार-परिभ्रष्ट कौलिकका कोई उपाय बताया नहीं गया। इस प्रकार कुलाचारको प्रतिपालन करनेसे साधक सर्वसम्पत्तिशाली हो पीछे परमात्मामें लीन हो सकता है। सकल धर्म परित्याग करके मंत्र, तंत्र और अभिषेक न करते भी केवल कुलाचारके प्रतिपालनसे ही कुलाचारियोंको सिद्धि मिल जाती है।

निरुक्त तन्त्रमें कुलाचारका विषय इस प्रकार लिखा गया है—

"कुलाचारश्च भो वत्स सुगोप्यं कुरु यत्नतः।
स्वशक्तिं कौलिकीं कृत्वा तव पूजां प्रकल्पयेत्॥
सिद्धमन्त्री यजेच्छक्तिं कायेन मनसापि वा।
परयोषां विशेषेण सिद्धमन्त्री प्रपूजयेत्॥
एतानि कुलधर्माणि गुरुभिरुदितानि च।
यावन्नैव सिद्धमन्त्री तावच्च स्वकुलं व्रजेत्॥" (निरुक्ततन्त्र, दश पटल)

हे वत्स! कुलाचार बलपूर्वक गोपन करना उचित है। अपनी शक्ति (स्त्री) को कौलिकी करके पूजा करना चाहिये। सिद्धमंत्री मन और प्राणमें सर्वदा शक्तिकी अर्चना किया करते हैं। फिर जो सिद्धमंत्री हो नहीं सके हैं अर्थात् जिनका मंत्र सिद्ध नहीं, उनको अपनी शक्तिकी ही पूजा कर्तव्य है, परस्त्री अवलम्बन करना सर्वदा निषिद्ध है। परम गुरुने उक्त प्रकारसे ही कुलधर्म कथन किया है।

कुलाचारी को मंत्रसिद्धिप्रणाली निरुक्ततन्त्रके नवम पटलमें इस प्रकार कथित हुई है :—

शुभकर अथच मनोरम्य समस्त कुलद्रव्य भक्तिपूर्वक आनयन करना चाहिये। उसके पीछे चक्र बनाके शक्तिकपालके वीरकोणमें कामकलामन्त्र और मध्यमें कामवीज युक्त मूलमन्त्र लिखते हैं। फिर उसी शक्तिको कुलदेवीका आह्वान और ध्यान करके पूजा करना चाहिये। उसके पीछे साधक स्थिरचित्तहोके लक्ष जप करता है। जप समाप्त होने पर शक्तिके वामकर्णमें ऋषिछन्दःयुक्त मूलमन्त्र तीन बार कहके निम्नलिखित मन्त्र पाठ करना चाहिये—

"अद्य प्रभृति शक्तिस्त्वं कुलदेवार्चनं चर।
गुरोराज्ञां समादाय घृणालज्जाविवर्जिता॥
शिवोक्तविधिना देव करिष्यामि कुलार्चनम्।
वाहि नाथ कुलाचारकामिनीकामनायकः॥
तत्पादाम्भोरुहच्छायां देहि मे कुलवर्त्मनि।"

इसी प्रकार रात्रिका प्रथम प्रहर अतीत होनेपर शक्तिको नाना आभरणसे विभूषित करके अपने वामभागमें बैठा उसके कपालपर नामयुक्त मन्त्र लिखते हैं। साधकको ताम्बूल भक्षण करके कुलाकुल मन्त्र जप करना चाहिये। इसी प्रकार साधना करनेसे मंत्र सिद्ध होता है। जबतक सिद्धि नहीं पाते, तबतक इसी प्रकार अनुष्ठान उठाते हैं। मंत्र सिद्ध होने पर कुलाचारमें परस्त्रीको अवलम्बन करते किंवा श्मशानमें परस्त्रीको पूजा करते हैं। इसके पीछे देवकन्याको आकर्षण करना चाहिये। फिर देवताको आकर्षण करके साधक शिवतुल्य हो सकता है। मन्त्रसिद्धि विषय पर नाना तन्त्रोंमें नाना मत लक्षित होते हैं। उनका विस्तार समझनेके लिये कालीतन्त्र, गन्धर्व तन्त्र, भावचूड़ामणि प्रभृति ग्रन्थ द्रष्टव्य हैं।

कुलाचार्य (सं० पु०) १ कुलक्रमागत आचार्य। कुल-गुरु, कुलपुरोहित। २ घटक। घटक देखो।

कुलाट (सं० पु०) कुलेन समूहेन अटति, कुल-अट्-अच्। क्षुद्रमत्स्य-विशेष, एक छोटी मछली।

कुलाद्य (सं० पु०) जनपद विशेष, एक आबाद मुल्क। (भारत, भीष्म, ९ अ०)

कुलाद्रि (सं० पु०) कुलपर्वत। उसका अपर नाम कुलाचल और कुलगिरि है।

कुलाधारक (सं० पु०) कुलं धरति रक्षति, कुल-धृ-कर्तरि ण्वुल्। पुत्र, बेटा, घरानेकी हिफाजत करनेवाला लड़का।

कुलाधि (हिं० स्त्री०) पाप, दोष, गुनाह, ऐब।

कुलान्वित (सं० त्रि०) कुलेन सत्कुलेनान्वितः, ३-तत्। सत्कुलोत्पन्न, अच्छे खान्दनमें पैदा होनेवाला।

कुलाबा (अ० पु०) १ लोहेका जमुरका, पायजा। उससे किवाड़ बाजूमें जकड़ा रहता है। २ मछली पकड़नेका कांटा। ३ चकवेके बीचकी लकड़ी। ४ पानी निकलनेकी नली, मोरी।

कुलाभि (सं० पु०) धनभाण्डार, खजाना।

कुलाभिमान (सं० पु०) कुलस्य वंशस्य अभिमानः, ६-तत्। वंशाभिमान, खानदानका गरूर।

कुलाभिमानी (सं० पु०) कुलाभिमानोऽस्यास्ति, कुलाभिमान-इनि। अपने वंशका गौरव करनेवाला व्यक्ति, जो शख्स अपने घरानेकी बड़ाई करता हो।

कुलाय (सं० क्लो०) कौ पृथिव्यां लायो लयोऽस्य। १शरीर, जिस्म, मट्टीमें मिल जानेवाला बदन। (पु०) कुलं पक्षिसमूहः अयतेऽत्र, कुल-अय्-घञ्। २ पक्षि-नीड़, घोंसला,। ३ जर्णनाभिगृह, मकड़ीका जाल। ३ कुक्कुरादि जन्तुका वासस्थान, कुत्ते वगैरह जानवरके रहनेकी जगह। ५ स्थान मात्र, कोई जगह।

कुलायन (सं० पु०) गोत्रप्रवर्तक ऋषिभेद।

कुलाययत् (वै० त्रि०) कुलाय निर्माण करनेवाला, जो जगह बनाता हो।

"कुलाययद्विश्ययन्वा न आगन्।" (ऋक् ७।५०।१)
'कुलाययत् कुलायं स्थानं तत् कुर्वत्।' (सायण)

कुलायस्थ (सं० पु०) कुलाये नीड़े तिष्ठति कुलाय-स्था-कः। पक्षी, चिड़िया, घोंसले या खोंतेमें रहनेवाला।

कुलायिका (सं० स्त्री०) कुलायो विद्यतेऽस्याम्, कुलाय-ठन्-टाप्। पक्षिशाला, चिड़िया-खाना।

कुलायिनी (सं० स्त्री०) कुलायो विद्यतेऽस्याम्, कुलाय-इनि-ङीप्। १ विष्टुतिविशेष। पक्षियोंके वासस्थानको कुलाय कहते हैं। कुलाय जैसे विपर्यस्त तृणसमूहसे बनाया जाता, वैसे ही विपर्यय करके पाठ किया जानेवाला मन्त्र समूह कुलाय कहाता है। उक्त कुलाय अर्थात् मन्त्रसमूह जिसमें रहता, उस विष्टुतिका नाम कुलायिनी पड़ता है।

"कुलायिनी कुलायो नीडं पक्षिणां निवासस्थानं तद्यथा व्यस्तदृणादिनिर्मितं एवं व्यत्यासयुक्ता ऋचः कुलायः तेसहती कुलायिनी एतत् संज्ञा त्रिवृत्स्तोमस्य विष्टुतिरियम्।" (ताण्ड्यब्राह्मण, ३ अध्याय, माधवभाष्य)

"तिसृभ्यो हिङ्करोति स पराचीभिः। तिसृभ्यो-हिङ्करोति या मध्यमा सा प्रथमा योत्तमा सा मध्यमा या प्रथमा सोत्तमा। तिसृभ्यो हिङ्करोति। योत्तमा सा प्रथमा या प्रथमा सा मध्यमा या मध्यमा सोत्तमा कुलायिनी त्रिवृतो-विष्टुतिः।" (ताण्ड्यब्राह्मण, ३ अ०)

त्रिवृत्स्तोमकी विष्टुतिको कुलायिनी कहते हैं। उसका प्रथम पर्याय परिवर्तिनी सदृश होता है। द्वितीय पर्यायमें तृचकी प्रथमा ऋक्को उत्तमा, द्वितीयाकी प्रथमा और उत्तमा ऋक्को मध्यमा बनाना पड़ता है। फिर तृतीय पर्यायमें उत्तमाको प्रथमा, प्रथमाको मध्यमा और मध्यमाको उत्तमा कर देते हैं। इसी विष्टुतिका नाम कुलायिनी है।

कुलायिनीका अधिकारी भी ताण्ड्यब्राह्मणमें निरूपित हुआ है:—

"प्रजाकामो वा पशुकामो वा स्तुवीत प्रजा वै कुलायं
पशवः कुलायं कुलायमेव भवति।" (ताण्ड्यब्राह्मण)

प्रजाकामी वा पशुकामीको कुलायिनी द्वारा स्तुति करना चाहिये। प्रजा और पशुको कुलाय समझते हैं। कुलायिनी द्वारा स्तुति करनेवाला प्रजा और पशुका आश्रय बनता है।

"एतामेवनुजावराय कुर्यादेव तासामेवाय परियतीनां प्रजानां मन्त्र पर्येति।" (ताण्ड्यब्राह्मण)

अतिशय निकृष्ट यजमानके मङ्गलको कुलायिनी विधान करना चाहिये। जिसके निमित्त कुलायिनीका

अनुष्ठान किया जाता, वह श्रेष्ठ पदपर प्रतिष्ठित मनुष्योंके मध्य भी प्रतिष्ठा पाता है।

"एतामेव बहुभ्यो यजमानेभ्यः कुर्यात्। यत् सर्वा अग्रिया भवन्ति सर्वा मध्याः सर्वा उत्तमाः। सर्वानेवैतान् समावद्भाज्यः करोति नानीन्यमपघ्नतें सर्वे समावदिंद्रिया भवन्ति।" (ताण्ड्यब्राह्मण)

उद्गाताको बहु यजमानोंकी मङ्गलकामनाके लिये कुलायिनी अनुष्ठान करना चाहिये। कारण कुलायिनीकी तृच्में सकल ऋक् समान होती हैं। पूर्व ही प्रदर्शित हो चुका है कि प्रथम पर्यायमें व्यतिक्रम नहीं पड़ता। द्वितीय पर्यायमें मध्यमा ऋक् प्रथमा, उत्तमा ऋक् मध्यमा तथा प्रथमा ऋक् उत्तमा और तृतीय पर्यायमें उत्तमा ऋक् प्रथमा, प्रथमा ऋक् मध्यमा और मध्यमा ऋक् उत्तमा करके पाठ करना पड़ती है। अतएव प्रथम पर्यायमें जो ऋक् प्रथमा रहती, वही द्वितीय पर्यायमें मध्यमा और तृतीय पर्यायमें उत्तमा बनती है। इसी प्रकार प्रथम पर्यायकी मध्यमा ऋक्, द्वितीय तथा तृतीय पर्यायमें प्रथमा एवं उत्तमा लगती है। फिर प्रथम पर्यायकी उत्तमा ऋक् द्वितीय एवं तृतीय पर्यायमें मध्यमा तथा प्रथमा निकलती है। कुलायिनीमें तृचके सकल मन्त्र समान होते हैं। कुलायिनी द्वारा सकल यजमान समान फलभागी हो सकते हैं। सकल यजमान समान फलभागी होनेसे फिर परस्पर कोई एक दूसरेको हिंसा नहीं करता और सबका वीर्य समान रहता है।

"वर्षुकः पर्जन्यो भवति इमे हि लोका स्वचसान् हिङ्कारेण व्यतिषजति।" (ताण्ड्यब्राह्मण)

प्रथम एक हिङ्कार द्वारा लोकत्रयस्थानीय तीनों ऋक् सम्मिलन जैसा करती हैं। इससे तीनों लोक (स्वर्ग, मर्त्य, रसातल) का परस्पर उपकार्य और उपकारक भाव वाधित नहीं होता। अत एव मेघ यथासमय वर्षण करता है।

(त्रि०) २ कुलाय विशिष्ट।

"अग्ने विश्वेभिः स्वनीकदेवैरूर्णावन्तं प्रथमः सीद योनिम्।
कुलायिनं घृतवन्तं सवित्रे यज्ञं नय यजमानाय साधु।"
(ऋक् ६।१५।१६)

'कुलायिनं' कुलायी नीडं तत् सदृशं गुग्गुल्वादिसम्भरणोपेतम्।' (सायण)

कुलायी (वै० त्रि०) गृहनिर्माणकारी, घर बनानेवाला।

"योनिं कुलायिनं घृतवन्तं। (ऋक् ६।१५।१६)

कुलार्णव—एक प्राचीन तन्त्र। तन्त्रसार, शक्तिरत्नाकर, आगमतत्त्वविलास, प्राणतोषिणी प्रभृति तान्त्रिक ग्रन्थोंमें कुलार्णव तन्त्र उद्धृत हुवा है। फिर पूर्णानन्द गौरीकान्त प्रभृतिने भी उसका प्रमाण उल्लेख किया है। उक्त तन्त्रमें जीवस्थिति, कुलमाहात्म्य, श्रीप्रसाद-परामन्त्र, महाषोढ़ा कुलद्रव्यादिका संस्कार, वटुक शक्त्यादि पूजन, त्रितयतत्त्व, पानादि भेद, योगसंस्थापन, दिन विशेषकी विशेष पूजा, कुलाचार, पादुका, गुरु तथा शिष्यका लक्षण, दीक्षाभेद, पुरश्चरण, काम्यकर्मविधि और कुलादि पदार्थका लक्षण समस्त वर्णित हुवा है।

कुलाल (सं० पु०) कुलसंख्याने कालन्। तमिविशिविडि मृणिकुलिकपिपलि पञ्चिभ्यः कालन्। उण् १।११७। १ कुम्भकार, कुम्हार। २ कक्कुभपक्षी, जङ्गली मुर्गा। ३ पेचक, उल्लू। ४ कुम्भीर, घड़ियाल।

कुलालादि (सं० पु०) कुलालः आदौ यस्य, बहुव्री०। पाणिन्युक्त गणविशेष, कुछ लफ्जोंका जखीरा। उसमें कुलाल, वरुड़, चण्डाल, निषाद, कर्मार, सेना, सिरिंध्र, सैरिन्ध्र, देवराज, पर्षत, वधू, मधु, रुरु, रुद्र, अनडुह, ब्रह्मन्, कुम्भकार और श्वपाक शब्द रहता है। उक्त शब्दोंके उत्तर कृत अर्थमें संज्ञाका बोध होनेसे वुञ् आता है। (पा ४।३।११८)

कुलालिका, कुलाली देखो।

कुलाली (सं० स्त्री०) कुलाल-ङीप्। १ कुलालपत्नी, कुम्हारिन। २ कुलत्थाञ्जन प्रस्तरविशेष, सुरमेका कोई पत्थर। ३ वनकुलत्थिका, जङ्गली कुलथी।

कुलाली (हिं० स्त्री०) दूरवीक्षणयन्त्र, दूरबीन।

कुलासक (सं० पु०) दुरालभा, जवासा।

कुलाह (सं० पु०) ईषत् पीतवर्ण कृष्णजानु अश्व, कुछ पीला और काले घुटनोंवाला घोड़ा। २ रक्त कोकिलाक्ष, लाल तालमखाना। उसका संस्कृत पर्याय—कोकिलाक्ष, काकेक्षु, इक्षुर, क्षुर, भिक्षु, काण्डेक्षु, इक्षुवालिका और इक्षुगन्धा है। भावप्रकाशके मतमें वह शीतल, बलकारक, स्वादु, अम्ल, पित्तवर्धक और

तिक्त है। उससे आमशोथ, अश्मरी, तृष्णा, अरुचि तथा वातरक्तदोष मिटता और नित्य आहार करनेसे रक्त बढ़ता है।

कुलाह (फा० स्त्री०) एक टोपी। वह ऊंची रहती और तुर्कस्थान तथा अफगानस्थानके पठनावेमें चलती है।

कुलाहक (सं०) कुलाह देखो।

कुलाहल (सं० पु०) क्षुद्र वृक्षविशेष, एक छोटा पेड़।

कुलाहल (हिं०) कोलाहल देखो।

कुलि (सं० पु०) १ हस्त, हाथ। २ चटकपक्षी, चिड़ा। ३ काञ्चनार भेद, लाल कचनार।

कुलि (सं० स्त्री०) १ चविका, चव्य। २ कण्टकारी, कटैया।

कुलि (हिं० क्रि० वि०) १ अधिक, बहुत, ज्यादा। २ सम्पूर्ण, तमाम, सब।

कुलिक (सं० त्रि०) कुलमस्त्यस्य, कुल-ठन्। १ शिल्पि-कुलप्रधान, कारीगरोंमें मुखिया। २ सत्कुलसम्पन्न, अच्छे घरानेवाला। (पु०) ३ अष्ट महानागान्तर्गत एक नाग। (भागवत, ५। २४।) ४ काकादनी वृक्ष, एक पेड़। ५ कोकिलाक्ष, तालमखाना। ६ कर्कट, केकड़ा। ७ यात्रादि शुभकर्ममें निषिद्ध मुहूर्त, दुष्ट समय।

"शक्रार्कदिग्वसुरसाब्ध्यग्नित्य: कुलिका रवे:।
रात्रौ निरेकास्तिथ्यंशा: शनौ चान्त्योऽपि निन्दित:॥"
(मुहूर्तचिन्तामणि)

कुलिक सकल वारको दिन और रात्रिमें होता है। उसमें किसी शुभकर्मका अनुष्ठान करना न चाहिये। कारण कुलिकमें शुभकर्म करनेसे अमङ्गल किंवा कार्य-नाश होता है। रविवारके दिनमें १४ मुहूर्त एवं रात्रिमें १३ मुहूर्त, सोमवारके दिनमें १२ तथा रात्रिमें ११ मुहूर्त, मङ्गल वारके दिनमें १० एवं रात्रिमें ९ मुहूर्त, बुधवारके दिनमें ८ तथा रात्रिमें ७ मुहूर्त, वृहस्पतिवारके दिनमें ६ एवं रात्रिमें ५ मुहूर्त, शुक्र वारके दिनमें ४, तथा रात्रिमें ३ मुहूर्त और शनिवारके दिनमें २ एवं रात्रिमें १ मुहूर्तको कुलिकवेला तथा कुलिकरात्रि कहते हैं। किसी किसीने शनिवारके १५। १० मुहूर्तको भी कुलिक निर्देश किया है।

"वारेशेसबले वापि बलाढ्ये लग्नगे शुभे।
कुलिकोद्भवदोषस्तु विनश्यति न संशय:॥
शुभे केंद्रगते चन्द्रे शुभांशे वा शुभान्विते।
लग्नगे सबले वापि कुलिकस्तु प्रलीयते॥" (वृहस्पति)

यदि वारका अधिपति बलवान्, अन्य बलवान् ग्रह युक्त, शुभ किंवा लग्नगत अथवा शुभचन्द्र केन्द्र वा शुभांशगत किंवा शुभग्रहकर्तृक दृष्ट किंवा लग्नगत वा बलवान् रहता, तो कुलिकका दोष नहीं लगता।

"कुलिके सर्वनाश: स्यात् रात्रावेते न दोषदा:।" (वशिष्ठ)

वशिष्ठके कथनानुसार कुलिकमें कोई कार्य करनेसे सर्वनाश होता है। किन्तु रात्रिको कुलिक दोषावह नहीं।

"काश्मीरे कुलिकं दुष्टमर्धयामस्तु सर्वत:।" (गर्ग)

गर्ग मुनिके मतसे काश्मीर देशमें ही कुलिक अनिष्टकारक है। अन्य देशोंमें वह अशुभप्रद नहीं होता।

शारदातिलकमें 'नवदुर्गाभिचार कर्म' को कुलिक-वेलामें करनेका विधान है।

"जपित्वा सितगुञ्जानां-कुड़िकं कुलिकोदये।" (सारदातिलक)

कुलिकच्छ (सं० पु०) नन्दी वृक्ष, तुनका पेड़।

कुलिकवेला (सं० स्त्री०) शुभकर्ममें निषिद्ध काल। कुलिक देखो।

कुलिका (सं० स्त्री०) मेषशृङ्गी, मेढ़ासींगी।

कुलिकाख्य (सं० पु०) कुलिका इत्याख्या यस्य, बहु-व्री०। कोलिवृक्ष, बेरी।

कुलिङ्ग (सं० पु०) कौ पृथिव्यां लिङ्गति आहारार्थं चरति, कु-लिगि-अच् नुमागम:। १ चटक, चिड़ा। गृहकुलिङ्गका मांस रक्तपित्तहर और अति शीतल होता है। (राजनिघण्टु) २ सविषमूषिकविशेष, कोई जहरीला चूहा। उसके दंशनसे दंशमण्डल पर रुज और शोफ हो जाता है। (सुश्रुत) ३ फिङ्गकपक्षी, गौरा चिड़िया। उसका मांस मधुर, स्निग्ध और कफ तथा शुक्रविवर्धन है। (सुश्रुत) ४ पचीमार, कोई चिड़िया। (क्लो०) ५ कुत्सित लिङ्ग। (त्रि०) ६ कुत्सित-लिङ्गयुक्त।

कुलिङ्गक (सं॰ पु॰) कुलिङ्ग स्वार्थे कन्। कुलिङ्ग देखो।

कुलिङ्गा (सं॰ स्त्री॰) १ कुलिङ्गपक्षीकी स्त्री। मादा चिड़ा। २ कर्कटशृङ्गी वृक्ष, ककड़ासींगीका पेड़। ३ गढ़वालका निकटवर्ती कोई नगर।

कुलिङ्गाक्षी (सं॰ स्त्री॰) १ पेटिकावृक्ष, रसभरीका पेड़।

कुलिङ्गी (सं॰ स्त्री॰) कुलिङ्ग-ङीष्। १ कर्कटशृङ्गी, ककड़ासींगी। २ फिङ्गक, गौरा।

कुलिचुरि—एक प्राचीन संस्कृत कवि। हरिहारावली ग्रन्थमें उनकी कविता उद्धृत हुई है।

कुलिज (सं॰ पु॰ क्ली॰) कुली हस्ते जायते, कुलि-जन-ड। १ नख, नाखून।

"कुलिजकुष्टे दक्षिणतोऽग्नेः सम्भारमाहरति।" (गृह्यसूत्र)

२ परिमाणविशेष, कोई तौल।

कुलित्था (सं॰ स्त्री॰) रक्तकुलत्थ, लाल कुलथी।

कुलित्थिका (सं॰ स्त्री॰) १ वनकुलत्थ, जङ्गली कुलथी। २ त्रिवृत्, निसोत। ३ मसूरिका, मसूर।

कुलिन्द (सं॰ पु॰) कुल-इन्दः। १ जनपदविशेष, एक बसा हुवा मुल्क। (भारत, वन) कुनिन्द देखो। २ कुलिन्द-जनाधिप, कुलिन्द देशके राजा। (भारत, सभा)

कुलिर (सं॰ पु॰) कुल-इरन् बाहुलकात् साधुः। कर्कट, केकड़ा।

कुलिश (सं॰ पु॰ क्ली॰) कुली हस्ते शेते, कुलि-शी-ड: यद्वा कुलिनः पर्वतान् श्यति, कुल-शो-डः। १ वज्र, कहर, बिजली। २ कुठार, कुल्हाड़ा, फरसा।

"स्कन्धांसीव कुलिशेनाविवृक्णाहिः।" (ऋक् १। ३२। ५)

'कुलिशेन कुठारेण।' (सायण)

३ हीरकप्रभ मत्स्यविशेष, हीरेकी तरह चमकने-वाली कोई मछली। उसे संस्कृतमें कण्टकाष्ठील भी कहते हैं। ४ अस्थिसंहार वृक्ष, हड़फोड़का पेड़। ५ लताशाल, बेलदार साल। ६ खण्डकर्ण वृक्ष, सकरकन्दका पेड़। ७ हीरक, हीरा।

कुलिशतरु (सं॰ पु॰) अश्वकर्णशाललता, एक बेलदार पेड़।

कुलिशद्रुम (सं॰ पु॰) स्नुहीवृक्ष, थूहर।

कुलिशधर (सं॰ पु॰) कुलिशं धरति, कुलिश-धृ अच्। कुलिशधारी, इन्द्र।

कुलिशनायक (सं॰ पु॰) एक शृङ्गारबन्ध। (रतिमंजरी)

कुलिशपाणि (सं॰ पु॰) कुलिशः पाणावस्य बहुव्री॰। वज्रधर, इन्द्र।

कुलिशमत्स्य (सं॰ पु॰) कुड़िशमत्स्य, एक मछली।

कुलिशाङ्कुशा (सं॰ स्त्री॰) बौद्धोंकी सोलह विद्या-देवियोंमें एकका नाम।

कुलिशासन (सं॰ पु॰) कुलिशमिव दृढ़मासनमस्य, बहुव्री॰। बुद्धका नामान्तर।

कुलिशी (सं॰ स्त्री॰) कुलिश स्त्रियां ङीष्। एक वेदोक्त नदी। "अंजसी कुलिशी वीरपत्नी।" (ऋक् १। १०४। ४)

'अंजसी कुलिशी वीरपत्नी एतत् संज्ञिकास्तिस्रो नद्यः।' (सायण)

कुली (सं॰ पु॰) कुलमस्त्यस्य, कुल-इन्। बलादिभ्यो मतु-बन्यतरस्याम्। पा ५। २। १३६। १ पर्वत, पहाड़। (त्रि॰) २ सत्कुलयुक्त, खानदानी, अच्छे घरानेवाला।

कुली (सं॰ स्त्री॰) कुलि-ङीष्। १ कण्टकारी वृक्ष, कटैयेका पेड़। २ वृहती, बड़ी कटैया। ३ कोकिलाक्ष, तालमखाना। ४ पत्नीकी ज्येष्ठाभगिनी, बड़ी साली।

कुली (तु॰ पु॰) भारवाहक, मजदूर, पल्लेदार, मुटिया।

कुलींजन (हिं॰) कुलंजन देखो।

कुलीक (सं॰ पु॰) पक्षी, चिड़िया।

कुली कुतुब शाह (१म)—दक्षिणापथमें गोलकुण्डा राज्यके प्रतिष्ठाता। वह सुलतान कुली कहलाते थे। उनके पिताका नाम कुतुब्-उल्-मुल्क रहा। कुतुब्-उल्-मुल्कके मरने पीछे कुली कुतुब शाहको तैलङ्गकी तरफदारी (एक पद) और गोलकुण्डा तथा तैलङ्गके कुछ अंशमें जागीर मिली थी। बहमानी वंशका अधः-पतन होने पर जब आदिल शाह प्रभृति राजकीय क्षमता प्रकाश करते थे, उसी समय १५१२ ई॰ को कुली कुतुबशाह भी तैलङ्ग राज्य अधिकार करके एक स्वाधीन राजा बन बैठे। उन्होंने अपना उक्त नाम रखा था। कुली कुतुब शाहने स्वाधीन भावसे ३२ चान्द्र वर्ष राजत्व किया। कोई कोई बताता है कि उत्तराधि-कारी जमशेद कुतुब शाहने एक तुर्की क्रीतदास (गुलाम) को उत्कोच (रिशवत) देके गुप्तभावसे उनका वध कराया था। १५४३ ई॰ को २री सित-म्बर रविवारको कुली कुतुबशाह मर गये।

कुली कुतुब शाह (२य)—मुहम्मद कुली कुतुब। अपने पिता इब्राहीम कुतुब शाहके मरने पर १५८१ ई०के जून मास द्वादश वर्ष वयःक्रम कालको वह गोलकुण्डाके सिंहासन पर बैठे थे। राज्यलाभके आरम्भमें ही उनसे बीजापुरके नवाब आदिल शाहका घोरतर युद्ध हुवा। १५८७ई० को उन्होंने आदिल शाहको सन्धि करके अपनी भगिनी प्रदान की। वह राजधानी गोलकुण्डामें बहुत रहते न थे। भागमती नाम्नी एक वेश्या उन्हें अधिक प्यारी थी। उसीके नामानुसार गोलकुण्डासे ४ कोस दूर उन्होंने भागनगर स्थापन किया। कुली कुतुब शाह उसी नूतन नगरमें सर्वदा वास करते थे। शेषको उक्त वेश्यासे विरक्त हो उन्होंने भागनगर हैदराबादको दे डाला।

पारस्यराज शाह अब्बासने कुली कुतुबको एक कन्याके साथ अपने पुत्रका विवाह करने के लिये प्रस्ताव उठाया था। उन्होंने अपने को कृतार्थ समझके पारस्य राजपुत्रको कन्या प्रदान की। उससे मुसलमानोंके समाजमें उनका सम्मान और भी बढ़ गया।

कुली कुतुब विद्याका बड़ा आदर करते थे। तत्कालीन अनेक विज्ञ पण्डित उनकी सभामें अवस्थित रहे। उन्होंने अपने आप भी 'कुल्लियात कुतुब शाह' नामक हिन्दी, दक्षिणी और फारसी कविता मिश्रित एक वृहद् ग्रन्थ रचना किया है। १६१२ ई०के जनवरी मासमें वह मर गये।

कुलीच खान्—हैदराबादके विख्यात अधिपति निजाम-उल्-मुल्क आसफ जाहके पितामह (दादा)। बादशाह शाहजहांके राजत्वकाल वह भारतमें आये थे। फिर बादशाहने उन्हें 'चार हजारी' पद प्रदान किया। १६८६ ई०को ८ वीं फरवरीको गोलकुण्डाके अवरोधकाल तोपका गोला लगनेसे उनका प्राण वहिर्गत हो गया।

कुलीन (सं० त्रि०) १ सद्‌वंश जात, खानदानी, अच्छे घरानेवाला। वेद, स्मृति प्रभृति अति प्राचीन ग्रन्थोंमें विद्वान् और सत्कुलोत्पन्न व्यक्तिको ही कुलीन कहा है।

"श्वेतकेतो वस वह्मचर्यं न वै सोम्याऽस्मत् कुलीनोऽननूच्य ब्रह्मबन्धुरिव भवतीति।" (छान्दोग्योपनिषत् ६।१।१)

वत्स श्वेतकेतो! तुम अनुरूप गुरुके निकट अवस्थान करके ब्रह्मचर्य अवलम्बन करो। कुलीन होते भी अध्ययन न करनेसे कोई कैसे ब्राह्मण हो सकता है!

मनुसंहिताके अनेक स्थल पर कुलीन शब्दका उल्लेख है। मेधातिथिने कुलीन शब्दकी इस प्रकार व्याख्या की है।

"सत्कुले जाता विद्यादिगुणयोगिनः कुलीनाः।'

(मनुभाष्य, मेधातिथि ८, २२३)

सत्कुलमें जन्मग्रहण करनेवाला और विद्यादि बहुगुणसम्पन्न व्यक्ति ही कुलीन है।

'महाकुलीनः ख्यातिधनविद्याशौर्यादिगुणे जातः।'

(मेधातिथि ८।१९५)

कीर्ति, धन, विद्या और शौर्यादि भूषित कुलमें जो जन्म पाता, वही महाकुलीन कहलाता है।

याज्ञवल्क्यस्मृतिके अनेक स्थलोंमें कुलीन शब्दका प्रयोग विद्यमान है। विज्ञानेश्वर प्रभृति विख्यात टीकाकारोंने उसका इस प्रकार अर्थ लगाया है।

'कुलीनाः महाकुलप्रसूताः।' (२।६८)

'मातृतः पितृतश्चाभिजनवान् कुलीनः।' (मिताक्षरा १।३०८)

मातापितासे कौलीन्य लाभ करनेवाले अर्थात् सत्वंशोत्पन्न माता पिताके पुत्रको कुलीन कहते हैं।

रामायणमें मान्य सत्कुलोद्भव व्यक्ति ही कुलीन कहा गया है।

रामायणके टीकाकार रामानुजने लिखा है:—

'चारित्र' वेदानुमताचारः तत्सम्पन्नः सन् कुलीनत्वादि ख्यातिं ख्यापयति असम्पन्नश्चाकुलीनत्वादीति भावः।'

(रामायणटीका, २।१०९।४)

चरित्र शब्दका अर्थ वेदविहित आचार है। जो वह आचार अवलम्बन करता, उसीको सब कोई प्रतिष्ठित कुलीन कहता है। फिर वेदविहित धर्मका अनुष्ठान न करनेवाला अकुलीन है।

महाभारत और पुराणमें अनेक स्थान पर ऋषि तथा सम्भ्रान्त क्षत्रिय वीरगणको कुलीन कहा गया है।

(भारत, उद्योग और अनुशासन पर्व, सह्याद्रिखण्ड, पूर्वार्ध २७।२४)

शास्त्रकारों, भाष्यकारों और टीकाकारोंकी भांति धन, मान, कुल तथा शीलमें श्रेष्ठ व्यक्तिको ही परवर्ती कालको कुलाचार्यकारिकामें भी कुलीन कहा है—

"आचारो विनयो विद्या प्रतिष्ठा तीर्थदर्शनम्।
निष्ठा*शान्तिस्तपोदानं नवधा कुललक्षणम्।"

आचार, विनय, विद्या, प्रतिष्ठा, तीर्थदर्शन, निष्ठा, शान्ति, तपः, तथा दान नव-प्रकार गुणविशिष्ट व्यक्ति ही कुलीन माना गया है।

२ भूमिलग्न, जमीनसे लगा हुवा।

(पु०) ३ वङ्गदेशीय ब्राह्मण और कायस्थविशेष। ई० ८म शताब्दके आरम्भको राज्यमें साग्निक ब्राह्मण न होनेके कारण पञ्चगौड़के महाराज आदिशूर पांच ब्राह्मण कनौजसे ले गये थे। कुलीन उन्हीं पांच ब्राह्मणोंके सन्तान हैं।

४ कुनख नामक क्षुद्ररोग, नाखूनकी एक बीमारी। कुनख देखो। ५ श्वेतघोटक, सफेद घोड़ा। ६ तान्त्रिक कुलाचारी शक्तिपूजक।

कुलीनक (सं० त्रि०) कुलीन स्वार्थे कन्। १ कौलीन्ययुक्त, खानदानी। (पु०) २ वनमुद्ग, जङ्गली मोठ। ३ कर्कट, केकड़ा।

कुलीनस (सं० क्ली०) कुलीनं भूमिलग्नं द्रव्यं स्यति, कुलीन सो-कः। जल, पानी।

कुलीना (सं० स्त्री०) कुलीन स्त्रियां टाप्। कई प्रकारके आर्याछन्दोंका नाम।

कुलीपय (वै० पु०) जलचर, जलज।

"मित्राय कुलीपयान् वरुणाय नाक्रान्।" (शुक्लयजुर्वेद २४।२१)

कुलीयक (सं० क्ली०) नेत्रसन्धि, आंखोंका जोड़।

कुलीर (सं० पु०) कुल ईरन्-किच्च कपिलादित्वात् लत्वे कुलीरः (उज्ज्वलदत्त ४।३३। यद्वा कुजज्व'धसंद्दलोः ईरः। (रामवर्मा, उणादिकोष, १।२०१) १ कर्कटशृङ्गी, ककड़ासींगी

२ कर्कट, केकड़ा। ३ क्षुद्रकर्कट, छोटा केकड़ा। कुलीरका मांस शीतल, धातुविवर्धक, हृद्य, और स्त्रियोंका रक्तप्रवाह शमनकारी है। (वैद्यकनिघण्टु)

कुलीरक (सं० पु०) क्षुद्रः कुलीरः, अल्पार्थे कन्। क्षुद्र कर्कट, छोटा केकड़ा।

कुलीरविषाणिका (सं० स्त्री०) कर्कटशृङ्गी, ककड़ासींगी।

कुलीरविषाणी, कुलीरविषाणिका देखो।

कुलीरशृङ्गी (सं० स्त्री०) कुलीरः कुलीरावयव इव शृङ्गं यस्याः, कुलीर-शृङ्ग-ङीष्। षिद्गौरादिभ्यश्च। पा ४।१।४१। कर्कटशृङ्गी, ककड़ासींगी।

कुलीरा, कुलीरशृङ्गी देखो।

कुलीराद् (सं० पु०) कुलीर-अद्-क्विप्। कर्कटशिशु, केंकड़ेका बच्चा। लोग बताते हैं कि केंकड़ेके बच्चे मातृगर्भमें रहते ही माताके शरीरका अभ्यन्तर भाग खा जाते हैं। माताके मरने और समस्त शरीर आहारकर चुकनेपर वह वहिर्गत होते हैं। कुलीरादका पर्याय स्येगवि है।

कुलीश (सं० पु०-क्ली०) कुली हस्ते शेते, कुलि-शीङ् पृषोदरादित्वात् दीर्घः। वज्र, बिजली।

कुलुक (सं० क्ली०) कुल बाहुलकात् उलच् लस्य कः किच्च। जिह्वामल, जीभका मैला।

कुलुकगुञ्जा (सं० स्त्री०) की पृथिव्यां लुक्का लुक्कायिता गुञ्जेव उल्काग्निः। तारा टूटनेके वक्त देख पड़नेवाली आग।

कुलुङ्ग (वै० पु०) कुरङ्ग, हिरन।

"सोमाय कुलुङ्ग आरण्योऽजो नकुलः शकाः।"
(वाजसनेयसं २४।३२)

कुलुञ्च (वै० पु०) चौरभेद, एकतरहका चोर।

'कुं भूमिं च बगल्हादिरूपां लुञ्चन्ति हरन्ति कुलुञ्चाः कुत्सितं लुञ्चति वा।'
(वेददीपे, महीधर १६।२२)

कुलुफ (हिं०) कुफ्ल देखो।

कुलुस (हिं० पु०) मत्स्य, कुरसा मछली। वह सिन्धु, युक्तप्रान्त, वङ्गदेश और आसाममें मिलता है। उसका दैर्घ्य ५ फीट तक रहता है। कुलुस तालाबोंमें पाला जाता है

कुलू (हिं० पु०) १ कुलूत, कांगड़ेके पासका कुलू मुल्क। कुलू देखो।

२ वृक्ष विशेष, कोई पेड़। उसके मृदु वल्कलमें स्तर वहिर्गत होते हैं। पत्र दश बारह इञ्च दीर्घ रहते और टेहनीके छोरपर गुच्छाकार निकलते हैं। पुष्प

---

* "निष्ठावृत्ति" भी पाठान्तर है।

क्षुद्र तथा पीतवर्ण होते हैं। कुलू नेपालकी तराई, बुंदेलखण्ड और बङ्गालमें पाया जाता है। उसका निर्यास 'कतीरा' कहलाता है।

कुलूत (सं० पु०) जनपद विशेष, एक बसती। कुलू देखो।

कुलूल (सं० क्लो०) तुषानल, भूसीकी आग।

कुलेचर (सं० पु०) कुले चरति, कुले-चर-अन् अलुक् समा०। क्षत्रक भेद, एक छोटी सब्जी।

कुलेय (सं० त्रि०) कुले भवः, कुल-टः बाहुलकात् साधुः। कुलीन, खानदानी।

"बभूव तत् कुलेयानां द्रव्यकार्यमुपस्थितम्।" (महाभारत, १।१७८ अः)

कुलेल (हिं० स्त्री०) कल्लोल, खेल कूद, हंसी खुशी।

कुलेलना (हिं० क्रि०) कल्लोल करना, खेलना कूदना।

कुलेश्वर (सं० पु०) कुलस्य जगत्समूहस्य ईश्वरः, ६-तत्। १ शिव, महादेव। २ कुलपति, घरानेका मालिक।

कुलेश्वरी (सं० स्त्री०) कुलेश्वर टित्वात् ङीप्। दुर्गा।

कुलोत्कट (सं० पु०) कुलेन उत्कटः उग्रः। १ सत्कुलजात घोटक, जाती घोड़ा। (त्रि०) २ सत्कुलोद्भव, अच्छे खानदानमें पैदा।

कुलोत्थिका (सं० स्त्री०) कुलत्थ, कुरथी।

कुलोद्गत (सं० त्रि०) कुलात् सत्कुलात् उद्गत उत्पन्नः। सत्कुलजात, अच्छे घरानेका पैदा।

"मौलान् शास्त्रविदः शूरान् लब्धलक्षान् कुलोद्गतान्।" (मनु ७।५४)

कुलोदह (सं० त्रि०) कुलं वंशं उद्वहति पालयति, श्राद्धादिना पितृपुरुषान् ऊर्ध्वं नयति वा। कुलश्रेष्ठ, वंशप्रतिपालक, खानदानकी परवरिश करनेवाला।

कुल्टू (हिं० पु०) कोटू, कुटू।

कुल्थी, कुलथी देखो।

कुल्फ (सं० पु०) कल संख्याने फक्। कलिगलिभ्यां फगस्योच। उण् ५।२६। १ गुल्फ, पिंडली।

"यहिमामन् पवषि वन्दनं भुवदष्ठीवन्तौ परिकुल्फौ च देहत्।"

(ऋक् ७।५०।२)

२ रोग, बीमारी।

कुलफ (हिं० पु०) ताला, कुलुफ।

कुल्फा (सं० स्त्री०) कुल्फ स्त्रियां टाप्। रोगविशेष, एक बीमारी।

कुल्फी, कुलफी देखो।

कुल्मल (सं० क्लो०) कुष् कलन् लस्यान्तादेशः। कुषेर्लश्च। उण् ४।१८७। १ पाप, गुनाह,।

कुल्मल (वै० पु०) बाण वा बरछेका वह अंश, जिसमें दण्ड संलग्न कर दिया जाता है।

"तत मे गच्छताद्धवं शल्य इव कुल्मलं यथा।" (अथर्व २।३०।२)

कुल्मलबर्हिष (सं० पु०) एक वैदिक ऋषि।

कुल्माष (सं० पु० क्लो०) कुलः अर्धस्विन्नो माषोऽस्मिन्, बहुव्री०। १ अर्धस्विन्नधान्य-गोधूमादि, घुंघनी, कोहरी। भावप्रकाशके मतमें वह गुरु, रूक्ष, वायु-नाशक और मलभेदक है। २ खिचड़ी। ३ कीटदष्टमाष, कोड़ेका खाया हुवा उड़द। ४ राजमाष, लोबिया। ५ यावक, कुनुने पानीमें पकाया हुवा चावल। ६ सूर्यका पारिपार्श्विकभेद। ७ शूकधान्य, शृङ्गादिसमन्वित व्रीह्यादि धान्य, तृणधान्य। ८ काश्मीरका तुलसीभेद। ९ काञ्जिक, कांजी। १० रोगविशेष, एक बीमारी। ११ वनकुलत्थ, वनकुलथी। १२ मसोपरिणाम। १३ कुलत्थ, कुलथी। १४ गन्धशालि, खुशबूदार चावल। १५ वंश, बांस। १६ जटामांसी। १७ धान्यविशेष, बोरो धान। १८ यवौदन, जौका दलिया। १९ यवपिष्टमाष।

कुल्माषाभिभव कुल्माषाभिषुत देखो।

कुलमाषाभिषुत (सं० क्लो०) कुलमाषैरभिषुतम्, ३-तत्। काञ्जिक, कांजी।

कुल्माषी (सं० स्त्री०) कुल्माष स्त्रियां ङीप्। एक नदी। (हरिवंश)

कुल्मास (सं० पु० क्लो०) कुल्माष,।

कुल्य (सं० त्रि०) कुलं कौलीन्यमस्त्यस्मिन् कुल बलादित्वात् यः। तुल छण्-कठ०। पा ४।२।८०। यद्वा कुल अपत्यर्थे यत्। अपूर्वपदादन्यतरस्यां यड्ढकञौ। पा ४।१।१४०। १ सत्कुलोद्भव, अच्छे घरानेवाला। २ कुलपरम्परागत, खानदानी चालमें दाखिल।

"गृहान् मनोज्ञोरुपरिच्छदांश्च हत्तीश्च कुल्याः पशुभृत्यवर्गान्।"

(भागवत ७।६।१२)

२ माननीय, इज्जतदार। (क्लो०) ४ अस्थि, हड्डी। ५ आमिष, मांस, गोश्त। ६ सूर्प, सूप। ७ अष्टद्रोण परिमाण, चौंसठ सेरकी तौल। ८ कोकस, पञ्जर, ठठरी।

कुल्य (वै० त्रि०) कुल्याभव, कृत्रिम सरित्‌जात, नहरसे पैदा। "नमः कुल्याय च सरस्याय च नमो नादेयाय च। (शुक्लयजुः १६।३७) 'कुल्या कृत्रिमा सरित्तत्र भवः कुल्यः। (महीधर,)

कुल्या (सं० स्त्री०) कुल्य-टाप्। १ कृत्रिम नदी, नहर, बम्बा, बम्बी। २ पयःप्रणाली, पनारा। ३ महाभारतोक्त ऋषिकुल्या, देवकुल्या प्रभृति कई नदियोंका नाम। ४ जीवन्ती, कोई सब्जी। ५ नदामात्र, कोई दरया। ६ स्थूल वार्ताकी, बड़ा बैंगन या भांटा। ७ कुलस्त्री, खानदानी औरत। ८ द्रोणाष्टकमान, ६४ सेरकी तौल।

कुल्या (वै० स्त्री०) क्षुद्र नदी, छोटा दरया।

"स्यन्दन्तां कुल्या विषिताः।" (ऋक् ५।८३।८)

कुल्यासन (सं० क्ली०) कुलाय कुलाचाराय हितमासनम्। रुद्रयामलतन्त्रमें कहा हुवा एक आसन।

कुल्ला (हिं० पु०) १ गरारा, कुरला, मुंह साफ करनेके लिये उसमें पानी भरकर चारो ओर हिलाते हुए बाहर फेकनेका काम। २ मुखपूर्ण जल, एक बार मुहमें आ सकनेवाला पानी। उपर्युक्त दोनों अर्थोंमें 'कुल्ला' संस्कृतके कवल शब्दका अपभ्रंश है।

३ इक्षुक्षेत्रसिञ्चन-विशेष, ऊखके खेतकी कोई सिंचाई। कुल्ला ईखमें अङ्कुर निकलने पर किया जाता है।

४ घोटकवर्ण भेद, घोड़ेका कोई रंग। मेरुदण्ड (पीठकी रीढ़) पर कृष्णवर्ण रेखा रहनेसे कुल्ला रंग कहाता है। ५ कुन्तल, काकुल, बाल।

कुल्ली (हिं० स्त्री०) छोटा कुल्ला। कुल्ला देखो।

कुल्लुक (हिं० पु०) वंशभेद, किसी किस्मका बांस।

कुल्लू (कुलू) पञ्जाब प्रदेशके अन्तर्गत कांगड़ा जिलेका एक विस्तीर्ण उपविभाग। वह हिमालयकी उपत्यकामें अक्षा० ३१° २०´ से ३२° २६´ उ० और देशा० ७६° ५८´ ३०´´ से ७७° ४८´ ४५´ पू० पर्यन्त विस्तृत है। उसके मध्य शतद्रु नदीका पश्चिम तट और विपाशा नदीकी खण्डित अववाहिका विद्यमान है।

उक्त कुलू जनपद महाभारत, रामायण तथा पुराणादिमें उलूत, कुलूत, कौलूत और कौलूक नामसे वर्णित हुवा है। चीनपरिव्राजक युएन चुआङ्गने उसका नाम कउ-लू-तो लिखा है। उन्होंने वहां जा और उक्त स्थान पर्यटन करके कहा है—'यह राज्य ३००० लि (प्रायः ५०० मील) विस्तृत है। इसकी चारो ओर पर्वतमाला लगी है। राजधानी प्रायः १४।१५ लि (ढाई मील) होगी। यहां भूमि विशेष शस्यशाली और उर्वरा है। नानाविध लता, तरु और फलफूल प्रचुर परिमाणमें उत्पन्न होते हैं। विशेषतः यहां मूल्यवान् वृक्षमूल अधिक निकलते हैं। स्वर्ण, रौप्य और ताम्र प्रभृति धातु स्थान स्थान पर मिलता है। यहां चिरकाल शीत रहता, सर्वदा तुषार गिरता है। अधिवासियोंको प्रायः गलगण्ड और अर्बुद रोग लग जाता है। वह अतिशय उग्रप्रकृति और वीरत्व तथा न्यायके पक्षपाती हैं।' उस समय कुलूमें २० बौद्ध सङ्घाराम, सहस्राधिक बौद्ध याजक, एतद्भिन्न १५ हिन्दू देवालय थे। पर्वतके भृगुपातकी चारो ओर पत्थरके घर रहे। अर्हत् और ऋषि उन्हींमें वास करते थे। कुलू राज्यके मध्यभागमें बौद्धराज अशोक-प्रतिष्ठित एक स्तूप रहा।

प्रायः सार्ध द्वादश शत (१२५०) वर्ष पूर्व चीनपरिव्राजक जो लिख गये हैं, कुलू राज्यमें आज भी उसके अनेक निदर्शन मिलते हैं। अधिवासियोंका स्वभाव प्रायः पूर्ववत् है। उनमें साहस और शारीरिक बल विशेष विद्यमान है। किन्तु सब लोग दरिद्र हैं। उनके पास एकमात्र कम्बल परिधेय है। स्त्रियों और पुरुषोंका परिच्छद प्रायः एकही प्रकारका रहता है। स्त्रियां सुदीर्घ केश चूड़ा करके बांधती हैं। बसाहिर, सुकेत, मण्डी, कोहिस्थान और कुलू कई स्थानोंके अधिवासी एक जातीय समझ पड़ते हैं। सामान्य खेती बारी करनेवाले गूजर और महिष, छाग प्रभृति प्रतिपालन करनेवाले गड्डी कहलाते हैं। कुनैत और डगी लोगोंका ही यहां प्राधान्य है। इस समय भी शिवराज नामक स्थानमें स्त्रियोंके मध्य बहुविवाहकी प्रथा दृष्ट होती है। कई भाई मिलके बहुतसी स्त्रियोंसे विवाह कर लेते हैं। वह सब स्त्रियां उनकी साधारण सम्पत्ति समझी जाती हैं। कुलूराज्यके कुछ दूसरे

स्थानोंमें उक्त प्रथा अधिक प्रचलित नहीं। वहां स्त्रियां अधिक परिश्रमी होतीं और खेतमें जाके काम करती हैं। कामपर जानेके समय वह अपने अपने शिशु सन्तानको किसी न किसी वृक्षके पास छोड़ जाती हैं। सुवास्तु (नदी) प्रभृति स्थानोंको कृषिकार्यके लिये जाते समय युवतियां अपने अपने सन्तान आपाद-मस्तक कम्बलमें लपेट झरनेके पास ऐसे भावसे डाल देती, कि उनके मस्तक पर सहज ही पानीके बूंद टपका करते हैं। लोगोंको विश्वास है कि शैशवकाल-उस भावमें रखनेसे वह भविष्यत्में अधिक परिश्रमी, वीर्यवान् तथा बलवान् निकलते और उदरामय प्रभृति सकल प्रकार रोग नहीं लगते। साधारणतः डाइनका बड़ा भय रहता है। किसीको पीड़ा पड़ने अथवा गोमेषादि अकस्मात् मरनेसे सब लोग डाइन अर्थात् सन्दिग्ध वृद्धा स्त्रीको पकड़के विशेष कष्ट देते हैं। पूर्वकाल उक्त वृद्धा स्त्रीको लोग मिल जुलके जला डालते थे। आजकल वृटिश राजत्वमें वैसा नृशंस व्यवहार किया जा नहीं सकता। फिर डाइन समझी जानेवाली वृद्धा स्त्री समाजच्युत करके देशसे निकाल दी जाती है। उससे अभागिनी शीघ्र ही मृत्युके मुखमें पतित होती है। कुलिन्द और कांगड़ा देखो।

कुल्लूक (सं० पु०) मनुसंहिताके एक विख्यात टीकाकार। वह वारेन्द्र श्रेणीके नन्दनावासीग्रामी दिवाकर भट्टके पुत्र और वारेन्द्र-समाजमें परिवर्त-मर्यादा प्रतिष्ठाता उदयनाचार्य भादुड़ीके समसामयिक थे।

कुल्व (वै० क्ली०) १ लोमहीनता, गंजापन।

> "चातिकृष्णां चातिकुल्वं चातिलोमशं च।" (शुक्लयजुः ३०।२२)
>
> 'अतिकुल्वं लोमरहितम्।' (महीधर)

(त्रि०) २ लोमहीनतायुक्त, गञ्जा।

कुल्वक (सं० क्ली०) जिह्वामल, जीभका मैला।

कुल्हड़ (हिं० पु०) पुरवा, सिकोरा कुरवा, चुक्कड़।

कुल्हाड़ा (हिं० पु०) कुठार, लोहेका एक औजार। उससे लकड़ी काटी और चीरी जाती है। कुल्हाड़ा १२।१४ अङ्गुल लम्बा और ४।६ अङ्गुल चौड़ा होता है। उसमें दो सिरे रहते हैं। ऊपरी सिरा ३।४ अङ्गुल मोटा होता है। उसमें एक लम्बा गोल छेद आरपार जाता है। उसी छेदमें लकड़ीका बेंट डालते हैं। कुल्हाड़ेका दूसरा सिरा पतला और धारदार रहता है।

कुल्हाड़ी (हिं० स्त्री०) १ क्षुद्र कुठार, छोटा कुल्हाड़ा, टांगी। २ बसूला।

कुल्हिया (हिं० स्त्री०) छोटा कुल्हड़।

कुल्ह (हिं० पु०) कुलूत, कुलू, कांगड़ेके पासका एक देश। कुलू देखो।

कुव (सं० क्ली०) कुं भूमिं वाति गच्छति तत्र जन्मग्रहणात् इत्यर्थः, कु-व-क। १ उत्पल, कमल। २ वारिज पुष्प मात्र, पानीका कोई फूल।

कुवकालुका (सं० स्त्री०) कुवमिव कायति प्रकाशते, कुव-कै-कः। घोली शाक, एक सबजी।

कुवङ्ग (सं० क्ली०) कु ईषत् वङ्गमिव गुणसादृश्या दित्यर्थः उपमितस०। शीषक, सीसा।

कुवचः (सं० क्ली०) कुत्सितं वचो वाक्यम्, कुगतिस०। १ कुत्सित वाक्य, निन्दा, बुरी बात, गालीगलौज। (त्रि०) कुत्सितं वचोऽस्य, बहुव्री०। २ निन्दक, बुरी बात कहने या दूसरेकी बुराई करनेवाला।

कुवज (सं० पु०) पद्मयोनि, ब्रह्मा।

कुवज्रक (सं० क्ली०) कुत्सितं वज्रं हीरकमिव कायति प्रकाशते, कु-वज्र-कै-कः। वैक्रान्त मणि, एक तरहकी चुन्नी।

कुवद (सं० क्ली०) कुत्सितं वदं वाक्यम्, कु-वद्-अच्। १ कुत्सित वाक्य, निन्दा, बुरी बात, बुराई। (त्रि०) कुत्सितं वदं वाक्यमस्य, बहुव्री०। २ निन्दाकारी, बुराई करनेवाला।

कुवम (सं० पु०) कौ पृथिव्यां वमति वर्षति जलमित्यर्थः, कु-वम्-अच्। १ सूर्य, सूरज।

> "कुलं कुलश्च कुवमः कुवमः कश्यपो द्विजः।" (महाभारत, अनुशासन, ९३ अ०)

(त्रि०) कुत्सितं वमति। २ निन्दित वमनकारक।

कुवर (सं० पु०) कुत्सितं वृणाति आह्लाति रसमित्यर्थः। कु-वृ-अप्। ऋदोरप्। पा ३।३।५७। १ तुवररस, कसैलापन। (त्रि०) २ कषायरसयुक्त, कसैला।

कुवर्ष (सं० पु०) कुत्सितो वर्षो वृष्टिः, कु-वृष-अच्। अजस्र वर्षण, अत्यन्त वृष्टि, बड़ी बारिश।

"भारोद्वहेन खिन्नाश्च तथैमे रथवाजिनः।
दीना घर्मपरिश्रान्ताः कुवर्षोपहता इव॥" (रामायण ६।८८।१५)

कुवल (सं० पु०) कौ वलति, कु-वल् पचादित्वादच्। १ बदरीवृक्ष, बेरका पेड़, बेरी। (क्ली०) २ बदरीफल, बेर। ३ मुक्ताफल, हरफली। ४ उत्पल, कोका। ५ पद्म। ६ जल, पानी। ७ सर्पोदर, सांपका पेट। ८ बृहत् बदर, बड़ा बेर।

कुवलकी (सं० पु०) शल्लकी वृक्ष, सलईका पेड़।

कुवलकुण (सं० पु०) कुवलानां पाकः, कुवल-पीलवादित्वात् कुणप्। तस्य पाकमूले पीलवादिकर्णादिभ्यः कुणपजाऽचौ। पा ५।२।२४। कोलिफलकाल, बेरका मौसम।

कुवलप्रस्थ (सं० पु०) नगर विशेष, एक शहर। कुवल शब्द कर्क्यादिगणान्तर्गत होनेसे उदात्त स्वर नहीं लगता। (पा ६।२।८७)

कुवलय (सं० क्ली०) कोः पृथिव्या वलयमिव तस्या शोभोत्पादकत्वात्, उपमितस०। १ उत्पल, कोका, बघोला। २ नीलोत्पल, नीली कोई। ३ श्वेतपद्म, सफेद कंवल। ४ नीलपद्म, नीला कंवल। ५ श्वेतकुमुद, सफेद बघोला।

"ज्योतिर्लेखावलयि गलितं यस्य बर्हं भवानी
पुत्रप्रेम्णा कुवलयदलप्रापि कर्णे करोति।" (मेघदूत, ४६)

कोः पृथिव्या वलयम्, ६-तत्। ६ भूमण्डल।

"शीवा अयं द्वीपः कुवलयकमलकोशाभ्यान्तरकोशः।" (भागवत, ५।१।६५)

(पु०) ७ कुवलयाश्व, राजाके घोड़ेका नाम। ८ असुर भेद।

कुवलयपुर (सं० क्ली०) नगरविशेष, एक शहर।

कुवलयादित्य (सं० पु०) नृपतिविशेष, एक राजा। कुवलयापीड़ देखो।

कुवलयानन्द (सं० पु०) कुवलयं भूमण्डलं आनन्दयति, कुवलय-आ-नन्द-अच्। १ अलङ्कार ग्रन्थविशेष। वह चन्द्रालोकके टीका रूपसे लिखा गया है। २ कुमुदका आनन्दजनक चन्द्र, चांद।

कुवलयापीड़ (सं० पु०) कुवलयमापीड़ं भूषणं यस्य। १ काश्मीरके कोई राजा। उनका अपर नाम कुवलयादित्य था। वह ललितादित्यके पीछे काश्मीरके सिंहासन पर बैठे। राज्ञी कमलादेवीके गर्भसे इन्होंने जन्म लिया था। उनके राजत्वका बहुतसा समय भ्राताओंके साथ युद्ध विग्रहमें अतीत हुवा। पीछे किसी कारणसे उनको वैराग्य आ गया था। इसीसे उन्होंने राज्य परित्याग करके प्लक्ष-प्रस्रवण नामक वनको गमन किया। भूपतिके वन जाने पर सश्लोक मन्त्रिवर मित्रशर्माने वितस्ताके जलमें डूब प्राण छोड़ा। क्योंकि उनका वाक्य और कार्य ही भूपतिके वनगमनका प्रधान कारण था।

२ दैत्यविशेष। उक्त दैत्य हस्तीका रूप धारण करके कृष्ण और बलरामको विनाश-कामनासे कंसके द्वारदेश पर उपस्थित रहा। कंसालयमें प्रवेश करते समय द्वारदेश पर कुवलयापीड़ने कृष्णको आक्रमण किया था। किन्तु कृष्णने उसे मार डाला।

(हरिवंश ८५ अ०)

कुवलयावली (सं० स्त्री०) श्रीकण्ठदेशाधिप आदित्यप्रभकी महिषी। वह डाकिनीसिद्ध रहीं। पति भी उनके उपदेशसे डाकिनीमन्त्रमें दीक्षित हुवे। एकदा रानीने फलभूति नामक किसी ब्राह्मणको भोजन करना चाहा था। फिर उनके आदेशसे एक घातक रन्धनशालामें उपस्थित रहा। उसे आज्ञा थी—जो व्यक्ति रन्धनशालामें आये, वह जीता लौटने न पाये। महाराजने छलना करके फलभूतिको पाकगृहमें जानेके लिये अनुमति दी। दैवक्रमसे फलभूतिके परिवर्तमें राजकुमार वहां जाके उपस्थित हुवे। घातकने उनको वध किया था। इसी प्रकार राजकुमारको पितामाताने खा डाला। पीछे फलभूतिके मुखसे समस्त विवरण सुनके राजाने गृह परित्याग किया था। रानी कुवलयावली भी पति और पुत्रके शोकसे हुताशनमें जल मरीं।

(कथासरित्सागर)

कुवलयाश्व (सं० पु०) १ नृपतिविशेष, कोई राजा। उनका अपर नाम धुन्धुमार था। (भागवत, ९।६।१८)

२ शत्रुजित् राजाके पुत्र। उन्हें ऋतुध्वज भी कहते थे। किसी दिन एक तपस्वी कोई अश्व ले राजसभामें उपस्थित हुये और कहने लगे—"महाराज! कोई दानव पशुका रूप धारण करके प्रतिदिन यज्ञ भङ्ग करनेकी चेष्टा करता है। हमने उसके व्यवहारसे अत्यन्त

दुःखित हो ईश्वरकी आराधना की थी। पीछे अकस्मात् एक दिन आकाशमण्डलसे यह अश्व पतित हुवा और हमने इस देववाणीको सुना—'वीरश्रेष्ठ राजपुत्र इस तुरङ्ग-को आरोहण करके अनायास दैत्यसंहार कर सकेंगे। इस पृथिवी मण्डल पर कहीं गति प्रतिहत न होनेसे यह घोटक कुवलयाश्व कहाता है।' अनन्तर ऋतुध्वज पिताके आदेशसे घोटक पर चढ़के मुनिके आश्रमको गये। (कुवलय नामक अश्व मिलनेसे ही ऋतुध्वजका नाम कुवलयाश्व पड़ा था) यथासमय यज्ञविघ्नकारी दानव बराहका रूप धारण करके उक्त आश्रममें उप-स्थित हुवा था। राजकुमारने उसको लक्ष्य करके वाण निक्षेप किया। दानव वाणाघातसे बहुत घबड़ाके भागा था। राजकुमार भी अप्रतिहत गतिसे अश्व पर चढ़के उसके पश्चात् धावित हुवे। उन्होंने दानवके अनुसरणमें पुरी प्रवेश करके गन्धर्वराज विश्वावसुकी कन्या मदा-लसाको विवाह किया था। पातालपुरीमें गन्धर्व-कुमारीके मुखसे उन्होंने सुना—जो दानव पशुरूप धारण करके यज्ञमें विघ्न डालता था, वह राजकुमारके वाणा-घातसे मर गया। राजपुत्र मदालसाको लेकर घर आये। दिन दिन मदालसा उनको प्राणसे भी प्रियतमा होने लगीं। पातालकेतुके भ्राता तालकेतुने भ्रातृहन्ता-को अनिष्ट कामनासे मुनिवेश धारण करके राजधानी अदूरवर्ती यमुनातट पर एक आश्रममें कपट तपस्या-को आरम्भ किया। राजकुमार कुवलय नामक घोटक पर आरोहण करके दैवक्रमसे उक्त कपट संन्यासीके आश्रम पहुंचे थे। संन्यासी वेशधारी तालकेतुने राज-पुत्रको कहा—"यदि आप अनुग्रह पूर्वक अपना शिरो-भूषण हमें प्रदान करते, तो हमारे बहु दिनके परिश्रम-में फल लगते।" ऋतुध्वजने उसे शिरोभूषण दे डाला। दानवने शिरोभूषण लेके और राजपुत्रको आश्रमरक्षा-का भार देके गमन किया था। वह मुहूर्तमध्य राज-प्रासादमें उपस्थित होके कहने लगा—"राजपुत्रने दुष्ट दानवके युद्धमें प्राणपरित्याग किया और मृत्युसे पहले अपना शिरोभूषण हमको दे दिया है। हम भिक्षुक हैं। हमें शिरोभूषणसे कोई प्रयोजन नहीं।" फिर शिरोभूषणको वहीं रखके दानवने प्रस्थान किया।

पतिप्राणा मदालसाने पतिका निधन सुनके शोक-में प्राण छोड़ा। पीछे कुवलयाश्वने भवनमें जाकर देखा कि प्राणाधिका प्रियतमाने उन्हें परित्याग किया था। उन्होंने प्रतिज्ञा की—"हम अब दारपरिग्रह न करेंगे जिससे जन्मान्तरमें गन्धर्वकुमारीको लाभ कर सकें।" राजपुत्रने ऐसा ही स्थिर करके संसारधर्म प्रायः छोड़ दिया। दैवक्रमसे नागराज अश्वतरके पुत्रद्वयसे उनकी बन्धुता बढ़ी थी। अश्वतर पुत्रोंके मुखसे राजपुत्रका विवरण सुनके एक मनसे सरस्वतीकी आराधना करने लगे। सरस्वतीके प्रसादसे उन्होंने अद्वितीय सङ्गीत-विद्याका अभ्यास किया था। नागराजने तदनन्तर सङ्गीतद्वारा महादेवकी उपासना की। महादेवके सन्तुष्ट हो वर देनेको उपस्थित होने पर उन्होंने कहा था—"प्रभो! हम को यही प्रार्थनीय है कि कुवलयाश्व राजकुमारकी प्राणोपमा गन्धर्वकुमारी हमारे कन्या रूपमें जन्मग्रहण करें।" महादेव बोले—"श्राद्ध करके स्वयं ही मध्यम पिण्ड भक्षण कीजिये। अनन्तर तुम्हारी मध्यम फणासे वही गन्धर्वकुमारी मदालसा बहि-र्गत होंगी।" नागराजने शिवके कहनेसे वही किया था। फिर उनकी फणासे मदालसा निकल पड़ीं। नाग-राजने मदालसाको छिपाके अन्तःपुरमें रखा था। अनन्तर उनके आदेशसे पाताल पहुंचने पर चिर विरहिणी मदालसासे कुवलयाश्व मिल गये।

(मार्कण्डेयपुराण, २०-२४ अः)

२ कोई अश्व या घोड़ा। मुनियोंके यज्ञ-विघ्नकारी पातालकेतुको विनाश करनेके लिये सूर्यदेवने आकाश-से उसे भूतल पर अर्पण किया था। कुवलय (भूमण्डल) में किसी स्थान पर गति प्रतिहत न होनेसे उसका नाम कुवलयाश्व पड़ा था

"अश्रान्तः सकलं भूमेर्वलयं तुरगोत्तमः।
समर्थः क्रान्तुमर्केण तवार्यं प्रतिपादितः॥ ४९॥
यतो भूवलयं सर्वं मश्रान्तोऽयं चरिष्यति।
अतः कुवलयो नाम्ना ख्यातिं लोके प्रयास्यति॥ ५१"

(मार्कण्डेयपुराण, २० अध्याय)

कुवलयाश्वीय (सं० क्लो०) कुवलयाश्व-छः। कुवलयाश्व नृपसम्बन्धीय गल्प, कुवलयाश्व राजाकी कहानी।

कुवलयित (सं० त्रि०) कुवलयानि सञ्जातान्यस्य, कुवल-तारकादित्वादिमच्। तदस्य सञ्जातं तारकादिभ्य इतच्। पा।५।२६। कुवलयपूर्ण स्थान, कोकासे भरी हुई जगह, जहां बहुतसे बघोले खिलें।

"पुरमविशदयोध्यां मैथिली दर्शनीनां कुवलयितगवाक्षां लोचनैरङ्गनानाम्।"

(रघुवंश, ११। ९३)

कुवलयिनी (सं० स्त्री०) कुवलयानां सङ्घः, कुवलय-इनि स्त्रियां ङीप्। उत्पलिनी, कोके या बघोलेकी बहुतायत।

कुवलयेश (सं० पु०) कुवलयस्य भूमण्डलस्य ईशः पतिः, ६-तत्। पृथिवीपति, राजा, बादशाह।

कुवला (सं० स्त्री०) मुक्ताविशेष, एक मोती।

कुवलाश्व ((सं० पु०) कुवलयाश्व, धुन्धुमार राजाका नामान्तर। (महाभारत, वनपर्व)

कुवली (सं० स्त्री०) कुवल स्त्रियां गौरादित्वात् ङीष्। कोलिवृक्ष, बेरी, बेरका पेड़।

कुवलेशय (सं० पु०) कुवले उत्पले शेते, कुवले-शी-अच्, अलुक्समा०। कुवलय पर सोनेवाले विष्णु।

कुवां (हिं० पु०) कूप, चाह, कुआं।

कुवांट (हिं० पु०) जङ्गली गुलाब।

कुवाक्य (सं० क्ली०) कुत्सितं वाक्यम्, कुगतिसमा०। कुत्सित कथा, निन्दा, क्षतिकर वाक्य, बुरी बात, गाली-गलौज।

कुवाच् (सं० क्ली०) कुत्सितं वाक् वाक्यम्। कुत्सित वाक्य, बुरी बात।

"संश्चारिते मर्मभिदः कुवागिषून्।" (भागवत, ४।३।१५)

कुवाच्य (सं० त्रि०) १ कहा न जाने योग्य, जो कहने लायक न हो, गन्दा। (क्ली०) २ दुर्वचन, बुरी बात।

कुवाट (सं० पु०) कुत्सितमशुभं चौरप्रवेशादिकं वटति निवारयति, कु-वट-अण्। कवाट, कपाट, द्वार, किवाड़, दरवाजा।

कुवाण (हिं० पु०) धनुष, कमान।

कुवाद (सं० त्रि०) कुत्सितं वदति, कु-वद-अण्। १ परदोषकथनशील, दूसरेके ऐब कहनेवाला। (पु०) २ परीवाद, कुत्सितवाक्य, बदकलामी, बुरी बात।

कुवार (हिं० पु०) आश्विन मास, आसोजका महीना।

कुवारी (हिं० वि०) आश्विन-सम्बन्धीय, कुवारवाला।

कुवासना (सं० स्त्री०) कुत्सित अभिप्राय, बुरी ख्वाहिश।

कुवाहुल (सं० पु०) कुत्सितं वहति, कु-वह-उलच्, बाहुलकात् साधुः। क्रमेलक, उष्ट्र, ऊंट।

कुविक (सं० पु०) जनपद विशेष, एक बसती।

कुविचार (सं० त्रि०) मन्द विचारयुक्त, बुरे खयालवाला।

कुविड़ (सं० क्ली०) विड़लवण, एक नमक।

कुवित् (वै० अव्य०) १ बहुवार, कई मरतबा बार बार।

"कुविन्नो अग्निरुचथस्य वीरसत्।" (ऋक् १। १४३। ६)

'कुवित् बहुवारं' (सायण)

२ धन्य धन्य! वाह वाह! क्या खूब!

कुवित्स (वै० पु०) किसी व्यक्तिका नाम।

"कुवित्सस्य प्रहिव्रजं गोमन्तं दस्युहागमत्।" (ऋक् ६। ४५। २४)

'कुविद् बहुशः स्यति हिनस्तीति कुवित्सो नाम कश्चित्।' (सायण)

कुविन्द (सं० पु०) कुषक्रोधे-किन्दच् वा वकारोऽन्त्यादेशः। (कुपेर्वाव। उण् ४। ८६) तन्तुवाय, जुलाहा, कोरी।

कुविन्दक (सं० पु०) कुविन्द स्वार्थे कन्। कंसकार, कंसेरा।

कुविम्ब (सं० पु०-क्ली०) कुत्सित विम्बम, कुगतिसमा०। १ निन्दित मण्डल, जमीन्।

कुविवाह (सं० पु०) कुत्सितो विवाहः, कुगतिस०। अशास्त्रीय विवाह, बुरी शादी।

"कुविवाहैः क्रियालोपैर्वेदानध्ययनेन च।
कुलान्यकुलतां यान्ति ब्रह्मणातिक्रमेण च॥" (मनु ३। ६३)

'कुविवाहैरासुरादिविवाहैः।', (कुल्लूक ३।८)

कुवीणा (सं० स्त्री०) कुत्सितानां नीचजातीयानां वीणा। चण्डालकी वीणा।

कुवीरा (सं० स्त्री०) एक नदी, कोई दरया।

कुवृत्ति (सं० स्त्री०) कुत्सिता वृत्तिः, कुगतिस०। १ निन्दित आचरण, कुत्सित जीविका, कुव्यवहार, बुरी चाल, खराब पेशा, बुरा बरताव। (त्रि०) २ कुवृत्तियुक्त, बुरे चालचलन या पेशेवाला।

कुवृत्तिकृत् (सं० पु०) कुवृत्तिं फलग्रहणकाले कण्टकाघातरूपं निन्दिताचरणं करोति, कु-क्विप् तुगागमश्च। १ पूतिका, करञ्ज भेद, कंटीला करौंदा। (त्रि०) २ निन्दित चेष्टाकारक, बुरी हरकत करनेवाला।

कुवेणा (सं॰ स्त्री॰) ईषत्, वेणन्ति गच्छन्ति मत्स्या यत्र, कु-वेण-अच् स्त्रियां टाप्। नदीविशेष, कोई दरया। २ मत्स्याधानी, मछलीकी टोकरी।

कुवेणी (सं॰ स्त्री॰) कु ईषत् वेणन्ते गच्छन्ति मत्स्या अस्मिन्, कु-वेण-इन्। १ मत्स्याधानिका, मछलीकी टोकरी। २ सिंहलाधीश्वरी कोई यक्षिणी। उनके साथ निर्वासित राढ़कुमार विजयका विवाह हुवा था। (महावंश) विजय और सिंहल देखो।

कुवेर (सं॰पु॰) अन्यैश्वर्यं कुम्बति आच्छादयति, कुवि आच्छादने एरक् नलोपश्च। कुम्बेर्नलोपश्च। उण् १।६०। यद्वा कुत्सितं वेरं शरीरं यस्य, बहुव्री॰। १ यक्षाधिपति, इन्द्रवाले नवनिधिके भण्डारी और महादेवके मित्र।

"कुत्सायां क्विति शब्दोऽयं शरीरं वेरमुच्यते।
कुवेरः कुशरीरत्वात् नाम्ना तेनैव सोऽङ्कितः॥" (मार्कण्डेयपुराण)

कुवेरका संस्कृत पर्याय—त्र्यम्बकसख, यक्षराट्, गुह्यकेश्वर मनुष्यधर्मा, धनद, यक्षराज, धनाधिप, किन्नरेश, वैश्रवण, पौलस्त्य, नरवाहन, यक्ष, एकपिङ्ग, ऐलविल, श्रीद, पुण्यजनेश्वर, हर्यक्ष और अलकाधिप है। कुवेर देखो। २ वर्तमान अवसर्पिणीके १८ वें अर्हत्के कोई उपासक। ३ देवराष्ट्र नामक कोई राजकुमार। ४ कादम्बरी-रचयिता वाणभट्टके प्रपितामह (परदादा)। ५ तुन्नवृक्ष, शहतूतका पेड़। (त्रि॰) ६ विकट, अद्भुत, अस्वाभाविक, अनोखा, निराला। ७ मन्द, अलस, धीमा, सुस्त।

कुवेरक (सं॰ पु॰) कुवेर स्वार्थे कन्। १ कुवेर। २ तुन्न वृक्ष, शहतूतका पेड़।

कुवेरनलिनी (सं॰ स्त्री॰) एक तीर्थ।

कुवेरबान्धव (सं॰ पु॰) कुवेरस्य बान्धवो मित्रः, ६-तत्। शिव। कुवेरके सखा होनेसे महादेवका एक नाम कुवेरबान्धव भी है।

कुवेरवन (सं॰ क्ली॰) कुवेरस्य वनम्, ६-तत्। कुवेरका अधिष्ठित वन।

कुवेरवल्लभ (सं॰ पु॰) कुवेरो वल्लभः प्रियोऽस्य, बहुव्री॰। वैश्यभेद, एक बनिया।

कुवेराक्षी (सं॰ स्त्री॰) कुवेरस्याक्षीव पिङ्गलवर्णं पुष्पमस्याः, कुवेर-अक्षि-ङीष्। १ पाटला वृक्ष, पाड़री। २ लताकरञ्ज, बेलदार करौंदा। ३ सितपाटलिका, सफेद पाड़री। ४ पेटिका, रसभरीका पेड़।

कुवेराचल (सं॰ पु॰) कैलास पर्वतका नामान्तर।

कुवेराद्रि, कुवेराचल देखो।

कुवेल (सं॰ क्ली॰) कुवेषु जलजपुष्पेषु ई शोभां लाति गृह्णाति, कुव-ई-ला-कः। कुवलय, लाल कोईं।

कुवैद्य (सं॰ पु॰) कुत्सितो वैद्यः, कुगतिस॰। कुत्सित वैद्य, खराब हकीम या डाक्टर।

कुव्र (सं॰ क्ली॰) अरण्य, वन जङ्गल,।

कुश (सं॰ पु॰) कुं पापं स्यति विनाशयति, कु-शो-ड यद्वा कौ भूमौ शेते वायुनावनमितः सन्नित्यर्थः कु-शी-कः। १ स्वनामख्यात तृण विशेष, एक घास। (Poacynosuroides) उसका संस्कृत पर्याय—कुथ, दर्भ, पवित्र, याज्ञिक, ह्रस्वगर्भ, और यज्ञभूषण है। समस्त वैदिक कर्ममें कुश लगता है। वह वैदिक क्रियाकलापका एक प्रधान अङ्ग है। भागवतमें उसकी उत्पत्तिके सम्बन्ध पर इस प्रकार लिखा है—यज्ञके अपना शरीर फटकारने पर कितने ही लोम बर्हिष्मतीपुरीमें गिरे थे। उन्हींसे कुश उत्पन्न हुवे। ऋषियोंने उन्हीं कुशोंसे यज्ञ करके यज्ञ विघ्नकारियोंको विनाश कर डाला।

"बर्हिष्मती नाम पुरी सर्वसम्पत्समन्विता।
न्यपतन् यत्र रोमाणि यज्ञस्याङ्गं विधुन्वतः॥ २७॥
कुशाः काशास्त एवासन् शश्वद्धरित वर्चसः।
ऋषयो यैः पराभाव्य यज्ञघ्नान् यज्ञमीजिरे॥ २८॥"
(भागवत ३।२२ अ॰)

"सपिञ्जलाश्च हरिताः पुष्टाः स्निग्धाः समाहिताः।
गोकर्णमात्राश्च कुशाः सकृच्छिन्नाः समूलकाः॥" (ब्रह्मपुराण)

यज्ञादि कर्ममें अग्रयुक्त, हरिद्वर्ण, अकर्कश, पुष्ट, दोषरहित, गोकर्ण परिमित और मूलयुक्त कुश प्रशस्त होते हैं। कुशको एक बार मात्र छेदन करना उचित है।

"चितौ दर्भाः पथि दर्भा ये दर्भा यज्ञभूमिषु।
स्तरणासनपिण्डेषु षड् दर्भान् परिवर्जयेत्॥" (हारीत)

चितास्थान जात, पथजात और यज्ञभूमि जात कुश परित्याग करना चाहिये। उनसे आस्तरण, आसन और पिण्डदान करना अनुचित है।

"घृते: कृते च विण्मूत्रे त्यागस्तेषां विधीयते।
नीवी मध्ये च ये दर्भा ब्रह्मसूत्रे च ये धृता:।
पवित्रांस्तान् विजानीयात् यथा कायस्तथा कुश:॥"
(छन्दोगपरिशिष्ट)

कुश धारण करके मल किंवा मूत्र परित्याग करने से वह अपवित्र हो जाता है। किन्तु नीवीके मध्य वा यज्ञसूत्रमें रख लेनेसे कुश अशुद्ध नहीं होता, शरीरकी भांति पवित्र रहता है। दिवसके द्वितीय यामार्धमें कुशसंग्रह करना पड़ता है—

"समित् पुष्पकुशादीनां द्वितीय: परिकीर्तितः।" (दक्ष)

यमने भी कहा है—

"समूलस्तु भवेद् दर्भ: पितॄणां श्राद्धकर्मणि।
मूलेन लोकान् जयति शक्रस्य सुमहात्मन:॥" (यम)

पितृगणके श्राद्धकार्यमें मूलयुक्त कुश लेना चाहिये। वह उक्त कुशमूल द्वारा इन्द्रलोक जय किया करते हैं।

कुश ग्रहण करनेका मन्त्र यह है—

"विरिञ्चिना सहोत्पन्न परमेष्ठिनिसर्गज।
नुद सर्वाणि पापानि दर्भ स्वस्तिकरो भव॥" (शङ्ख)

कुशके छेदनका नियम है—

"दक्षिणाभिमुखश्छिन्द्यात् प्राचीनावीतिको द्विज:।
प्रेतक्रियार्थं पित्रर्थमभिचारार्थमेव च॥" (भरद्वाज)

ब्राह्मणको यज्ञोपवीत वामकक्ष तलमें लम्बित कर दक्षिणमुखी होके प्रेतकार्य, पितृकार्य और अभिचारके लिये कुश तोड़ना चाहिये।

वरदातन्त्रके १म पटलमें लिखा है—कि पूजाकालको सर्वदा हाथमें कुश रखना उचित है। कारण कुश हाथमें न रहनेसे पूजा विफल हो जाती है। यज्ञादि कार्यमें कुशका विस्तर विभिन्न प्रकार व्यवहार है। दर्भ देखो। हलायुधने अपने ब्राह्मणसर्वस्वमें सधवा स्त्रियोंको कुशस्पर्श करनेका निषेध किया है।

भावप्रकाशके मतमें साधारण कुशसे विभिन्न प्रकार दूसरा कुश भी होता है। उसका संस्कृत-पर्याय—दीर्घपत्र और क्षुरपत्र है। साधारण कुश और दीर्घपत्र उभयविध दर्भ त्रिदोषघ्न और शैत्यगुणविशिष्ट है। उसके मूलसे मूत्रकृच्छ्र अश्मरी, तृष्णा, वस्ति और प्रदर रोगको लाभ पहुंचता है।

कुश कांसके समान तृण है। उसके पत्रका एक अग्र भाग सूक्ष्म, तीक्ष्ण और कठिन रहता है। कुशकी रज्जु जलानेकी लकड़ी लपेटने और जुवा बांधने वगैरहके काममें लगती है।

२ रामचन्द्रके ज्येष्ठपुत्र। उन्होंने सीताके गर्भसे जन्म लिया और महर्षि वाल्मीकिके निकट शस्त्रविद्या प्रभृति शिक्षा करके अद्वितीय वीरकी भांति त्रिभुवनमें यशो लाभ किया था। युद्धके कौशलमें स्वयं रामचन्द्रको भी उनसे पराजित होना पड़ा। कुशने रामचन्द्र को सभामें रामायणगान किया था। उन्होंने रामचन्द्रकी प्रतिष्ठित कुशावती नगरीमें अपनी राजधानी स्थापन की। (रामायण) उनके कुशावती परित्याग करके अयोध्या जानेकी कथा रघुवंशमें वर्णित हुई है। कुशके पुत्रका नाम अतिथि था।

३ कुशनिर्मित एकप्रकार रज्जु, कुशकी रस्सी। ४ वसु उपरिचरके किसी पुत्रका नाम। ५ बलाकके पौत्र। वह बलाकाश्वके पुत्र और कुशाश्व तथा कुशनाभके पिता थे। ६ सुहोत्रके किसी पुत्रका नाम। ७ विदर्भराजके किसी पुत्रका नाम। ८ पुरुरववंशीय वामके पुत्र और भानुके पिता (सह्याद्रिखण्ड १।३०।१५) ९ काश्मीरराज लवके किसी पुत्रका नाम। १० सप्तद्वीपके मध्य घृतसमुद्रवेष्टित कोई द्वीप। (भागवत ५।१।३२) (त्रि०) कुत्सिते अनाचरणीये कर्मणि शेते तिष्ठति, कु-शी-क:। १४ पापिष्ठ, पापी। १५ मत्त, मतवाला। (क्ली०) १६ जल, पानी। १७ सर्पोदर, सांपका पेट।

कुशकण्डिका (सं० स्त्री०) कुशै: कण्डिकेव। एक वैदिक संस्कार। कुशण्डिका देखो।

कुशकाश (सं० क्ली०) कुशश्च काशश्च तृणवाचकत्वात् समाहारद्वन्द्व:। विभाषा वृक्षमृगतृणधान्यव्यंजनपशुशकुन्यश्ववडवपूर्वापराधरोत्तराणाम्। पा २।४।१२। कुश और काश।

"कुशकाशा विराजन्ते वटव: सामगा इव।" (विष्णुपुराण)

कुशकेतु (सं० पु०) १ ब्रह्मा। २ कुशध्वज राजा।

कुशचीर (सं० क्ली०) कुशनिर्मितं चीरम्, मध्यपदलोपी०। कुशनिर्मित वस्त्र, घासका कपड़ा।

कुशचीरा (सं० स्त्री०) कुश-चीर स्त्रियां टाप्। एक नदी। (भारत)

कुशज (सं० पु०) जनपदविशेष, एक बसती।

कुशट्ट (सं० पु०) जनपद विशेष, एक बसती। (भारत)

कुशण्डिका (सं० स्त्री०) कुशं डीयते प्राप्नोति, कुश-डीङ्-क्विप् क्विपो लोपः अलुक्। वैरप्रकाश पा ६।२।६७। कुण्ड अथवा स्थण्डिलमें विधि अनुसार अग्निस्थापनके अनुष्ठानको क्रिया।

हिन्दुस्थानी पण्डित उसे कुशकण्डिका कहते हैं। उनको पद्धतिमें भी "कुशकण्डिका" ही लिखा है। किन्तु भवदेवने स्वकृत पद्धतिमें कुशण्डिका शब्द लिखा है—

"तत्र सर्वेषामाहुतियुक्तकर्माणां कुशण्डिका संस्कृताग्निसाध्यत्वात् कुशण्डिकैव प्रथममभिधीयते।" इति सकर्म साधारणी कुशण्डिका समाप्ता।

कुशण्डिका वेदोक्त क्रिया है। वह वेदोंके अनुसार विभक्त भी हुई है। सामवेदको कुशण्डिका इस प्रकार है—

१ हाथ ऊंची, १ हाथ लम्बी और १ हाथ चौड़ी वेदी निर्माण करके उसके ऊपर कुशण्डिका करना पड़ती है। उक्त वेदिका नाम स्थण्डिल है। यथोक्त वेदिनिर्माण करके भली भांति परिष्कार करते हैं, जिससे शर्करा (कंकर), अङ्गार (कोयला), केश और तुष प्रभृति किसी प्रकारका अपवित्र द्रव्य उस पर रह न जावे। मण्डप और वेदिको अच्छे प्रकारसे गोमय द्वारा लेपन करना चाहिये। होमकर्ता नित्य कार्य समापन करके पूर्वमुखी हो कुशासनपर उपवेशन करते और स्थण्डिलको उत्तर दिक् कुश तथा पुष्पके साथ एक जलपात्र रखते हैं। तदनन्तर होमकर्ताको भूमिमें दक्षिण जानु संलग्न करके उत्तराग्र कुशके ऊपर वामहस्तका प्रादेश उत्तानभावसे (चितकरके) रख दक्षिण हस्तको अनामिका तथा अङ्गुष्ठ द्वारा कुश ग्रहण और गृहीत कुशके मूलद्वारा स्थण्डिलके दक्षिण प्रान्तमें १२ अङ्गुलिप्रमाण पूर्वमुखी एक रेखा अङ्कित करके उसका ध्यान करना चाहिये। उक्त रेखा पीतवर्णा और उसको अधिष्ठात्री देवता पृथिवी रहती है। उस रेखाके मूलसे २१ अङ्गुलिप्रमाण उत्तरमुखी दूसरी रेखा अङ्कित करके उसको रक्तवर्णा चिन्ता करते हैं। इस रेखाको देवता अग्नि हैं।। प्रथम रेखासे उत्तर ७ अङ्गुलि दूर प्रादेशप्रमाण पूर्वमुखी तीसरी रेखा अङ्कित करना चाहिये। उसको अधिष्ठात्री देवता प्रजापति हैं। फिर उसको रक्तवर्णा चिन्ता करते हैं। इस रेखासे ७ अङ्गुलि दूर उत्तरदिक् प्रादेशप्रमाण पूर्वमुखी चौथी रेखा अङ्कित करके चिन्ता करना चाहिये कि वह नीलवर्णा है और उसको देवता इन्द्र हैं। इस रेखासे ७ अङ्गुलि दूर अर्थात् २१ अङ्गुलिप्रमाण रेखाके उत्तर अग्रभागमें प्रादेश प्रमाण पूर्वमुखी पांचवीं रेखा खींचके उसे शुक्लवर्णा और उसको देवता चन्द्रको ध्यान करते हैं। तदनन्तर सकल रेखाका उत्कर (रेखा अङ्कित करनेको उत्कीर्ण धूलि) दक्षिण हस्तके अङ्गुष्ठ और अनामिका अङ्गुली द्वारा ग्रहण करके निम्नलिखित मन्त्रपाठपूर्वक ईशानकोणमें थोड़ी दूर निक्षेप करना चाहिये।

"प्रजापतिऋषिरनुष्टुप् छन्दोऽग्निर्देवता रेखासूत्करनिरसने विनियोगः। ओं निरस्तः परावसुः॥"

अनन्तर पूर्वस्थापित जलद्वारा समस्त रेखा अभ्युक्षण करते हैं। दक्षिण दिक् कांस्यपात्र किंवा नूतन शरावमें स्थापित अग्निसे ज्वलन्त इन्धन (काष्ठ) ग्रहण करके निम्नलिखित मन्त्र पढ़ दक्षिण-पश्चिम कोणमें निक्षेप करना चाहिये—"प्रजापति ऋषिरनुष्टुप् छन्दोऽग्निर्देवताग्निसंस्कारे विनियोगः। ओं क्रव्यादमग्निं प्रहिणोमि दूरं यमराज्यं गच्छतु रिप्रवाहः।" पीछे अग्नि ग्रहण करके निम्नलिखित मन्त्र द्वारा तृतीय रेखाके ऊपर उसका स्वीय अभिमुखी करके अग्निस्थापन करते हैं:—"ओं भूर्भुवः स्वरोम्।" अनन्तर वाम हस्तसे उत्तोलन करके यह मन्त्र पढ़ना पड़ता है—"ओं इहैवायमितरो जातवेदा देवेभ्यो हव्यं वहतु प्रजानन्।"

भवदेवभट्टकृत पद्धतिमें यह द्रष्टव्य है कि प्रत्येक वेदमन्त्रके पूर्व उसके ऋषि, छन्दः, देवता और कार्यके विनियोगका उल्लेख करना चाहिये।

फिर "अग्ने त्वं विश्वरूपनामोसि" कह अग्निका नाम स्थिर करके ध्यान और आवाहन करते हैं। पीछे "विश्वरूपनाम्ने अग्नये नमः" मन्त्रसे पाद्यादि द्वारा अग्निको पूजा करके निम्नलिखित मन्त्र पढ़ना चाहिये—

"ओं सर्वतः पाणिपादान्तः सर्वतोऽक्षिशिरोमुखः।
विश्वरूपो महानग्निः प्रणीतः सर्वकर्मसु॥"

अनन्तर प्रादेशप्रमाण एक घृताक्त समिध् अग्निमें विना मन्त्र आहुति प्रदान करके अग्निस्थापन करते हैं

पश्चात् कुशपत्रका अग्रभाग समान करके दर्भमय ब्राह्मण निर्माण करना पड़ता है। दर्भमय ब्राह्मणको किंवा वेदज्ञ सदाचारी ब्राह्मण छत्र वा उत्तरीय वस्त्रको ब्रह्मकी भांति कल्पना करना चाहिये। अनन्तर एक जलपात्र ग्रहण करके अग्निके उत्तरसे दक्षिणावर्त दक्षिण दिकको जा अरत्निसे दूर पूर्वाभिमुखी एक वारिधारा छोड़ उसके ऊपर प्रागग्र कुश फेला पश्चिममुखी होके खड़े होते हैं। वामहस्तको अनामिका और अङ्गुष्ठ द्वारा एक आस्तीर्ण कुशपत्र ग्रहण करके निम्नलिखित मन्त्र द्वारा दक्षिण-पश्चिम कोणमें निक्षेप करना चाहिये—"ओं निरस्तः परावसुः।" पीछे दक्षिण पद द्वारा वाम पाद अवष्टम्भ (वेष्टन) करके उत्तरमुखी आस्तीर्ण कुश सकल जल द्वारा अभ्युक्षण करते हैं। "आवसोः सदने सीद" इत्यादि मन्त्र पाठ करके कुशके ऊपर पूर्वमुखी करके दर्भमय ब्राह्मण स्थापन करना चाहिये। ब्राह्मणके पक्षमें (यथोक्त ब्राह्मण ब्रह्मरूपसे कल्पित होने पर) ब्राह्मण "सीदामि" कहके प्रत्युत्तर करते और उसको उत्तरमुख करके रखते हैं। ब्राह्मणके ऊपर कुश प्रदान करके जल द्वारा अभ्युक्षण और कुश एवं कुसुमद्वारा ब्राह्मणको अर्चना करना चाहिये। पीछे उसी पथको लौटके आसन पर पूर्वाभिमुखी हो उपवेशन करते और "ओं इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदं। समूढ़मस्य पांसुले।" (साम १।२।१३।८) मन्त्र जपते हैं। ब्राह्मणके पक्षमें उक्त मंत्र ब्राह्मणका ही पाठ्य है। प्रकृत कर्ममें चरुहोम रहनेसे उसी समय चरुपाक करके उसको ऊपरसे घृत छोड़ अग्निकी उत्तरदिक् कुशपर स्थापन करना पड़ता है।

दक्षिण जानु भूमि संलग्न करके दाहना हाथ ऊपर रख हस्तद्वय अधोमुख करके निम्नलिखित मन्त्र पढ़ भूमि पर स्थापन करना चाहिये—"ओं इदं भूमेर्भजामहे इदं भद्रं सुमङ्गलं परासपत्नान् बाधस्वान्येषां विन्दते धनम्।" रात्रिको कर्म करने पर 'धन' के स्थान पर 'वसु' पढ़ना पड़ता है। दक्षिण हस्तमें कुशग्रहण करके अग्निके उत्तरसे दक्षिणावर्तको "ओं इदं स्तोममर्हते जातवेदसे रथमिव सं महेमा मनीषया।" (साम १।१।२२।४) इत्यादि मन्त्र द्वारा क्षेत्र शोधन करके ईशान कोणमें निक्षेप करना चाहिये। अनन्तर अग्निकी पूर्वदिक् उत्तरान्तसे दक्षिणान्त पर्यन्त मूलके समीप छिन्न एकपत्रयुक्त कुशके अग्रभाग द्वारा मूल आच्छादन करके वारत्रय आस्तरण करते हैं। इसीप्रकार दक्षिणदिक् पूर्वान्तसे पश्चिमान्तपर्यन्त, पश्चिमदिक् दक्षिणान्तसे उत्तरान्त पर्यन्त और उत्तरदिक् पश्चिमान्तसे पूर्वान्त पर्यन्त यथोक्त क्रममें आस्तरण करना पड़ता है। "ओं इन्द्राय दिक्पालाय स्वाहा।" इत्यादि मन्त्र पढ़के पूर्वदिक्से क्रमान्वयमें दशदिक्में घृताक्त स्वस्तिक प्रदान करना चाहिये। अनन्तर दो प्रादेश-प्रमाण धव, खदिर, पलाश और यज्ञडुमुरके अन्यतम २० काष्ठके मध्य घृतधारा प्रदान करके प्रजापतिको मन ही मन भावना करके विना मन्त्र अग्निमें आहुति छोड़ते हैं। पीछे आस्तरण कुशसे अग्रयुक्त कुशपत्रद्वय ग्रहण करके "ओं पवित्रे स्थो वैष्णव्यौ" मन्त्र उच्चारण करके प्रादेश-प्रमाण कुशान्तर द्वारा वेष्टन करके नख व्यतिरेक छेदन करना चाहिये। "ओं विष्णोर्मनसा पूते स्थ" मन्त्र द्वारा अभ्युक्षण करके ताम्रादिपात्रमें उत्तराग्र करके पवित्र स्थापन करते और उसी पात्रमें होमके निमित्त घृत रखते हैं। उक्त कुशपत्रद्वयका अग्रभाग दक्षिण हस्तको अनामिका तथा अङ्गुष्ठ द्वारा और मूलभाग वाम हस्तके अङ्गुष्ठ एवं अनामिका द्वारा ग्रहण करके दक्षिण हस्तके ऊपर रख हस्तद्वय अधोमुख करके कुशपत्रद्वयके मध्य द्वारा "ओं देवस्त्वा सवितोत्पुनात्वच्छिद्रेण पवित्रेण वसोः सूर्यस्य रश्मिभिः स्वाहा" मन्त्रके उच्चारणसे एकबार घृतकी आहुति प्रदान करना चाहिये। उसके पीछे अमन्त्रक आहुति दो बार देना पड़ती है। अनन्तर वही कुशपत्रद्वय जल द्वारा अभ्युक्षण करके अग्निमें निक्षेप करते हैं। फिर आज्यपात्रके जल द्वारा उन्मार्जन, अग्निके ऊपर और उत्तर दिक् उतार रखना चाहिये। इसी प्रकार वारत्रय किया करते हैं। इसका नाम आज्यसंस्कार है। पीछे धव, खदिर, पलाश और यज्ञडुमुरका अन्यतम मुष्टिहस्त प्रमाण काष्ठ लेके स्रुव संस्कार करना पड़ता है। इसी प्रकार स्रुक् और मेक्षण प्रभृतिका भी संस्कार करते हैं। अनन्तर दक्षिण जानु भूमि पर डालके उदकाञ्जलि ले "ओं अदिते अनुमन्यस्व"

मन्त्रद्वारा अग्निकी दक्षिणदिक् पश्चिमान्तसे पूर्वान्त पर्यन्त प्रदान करना पड़ती है। इसी प्रकार "ओं अनुमते अनुमन्यस्व" मंत्र द्वारा अग्निकी पश्चिमदिक् दक्षिणान्तसे उत्तरान्त पर्यन्त और "ओं सरस्वत्यनुमन्यस्व" मंत्र द्वारा अग्निकी उत्तरदिक् पश्चिमान्तसे पूर्वान्त पर्यन्त उदकाञ्जलि द्वारा सेचन करना चाहिये। अनन्तर "ओं देव सवित: प्रसुव यज्ञं प्रसुव यज्ञपतिं भगाय दिव्यो गन्धर्व: केतपू: केतन्न: पुनातु वाचस्पतिर्वाचन्न स्वदतु।" मंत्र उच्चारण करके उदकाञ्जलि द्वारा दक्षिणावर्तमें अग्नि वेष्टन करते हैं। अनन्तर दक्षिण जानु उठाके उपर्यधोभावमें स्थित दक्षिण एवं वाममुष्टि द्वारा फल, पुष्प और कुश ग्रहण करके विरूपाक्ष जप करना चाहिये। विरूपाक्ष जप समापन करके पूर्वगृहीत कुश पूर्वउत्तर दिक्में निक्षेप करते और फल तथा पुष्प ब्राह्मणको दे देते हैं। काम्य कर्मके लिये कुशण्डिका करनेमें प्रथम ही प्राणायामपूर्वक बद्धाञ्जलि होके "ओं तपश्च तेजश्च श्रद्धा च ह्रीश्च सत्यञ्चाक्रोधश्च त्यागश्च धृतिश्च धर्मश्च सत्वञ्च वाक्च मनश्च आत्मा च ब्रह्म च तानि प्रपद्ये मा मवन्तु।" मंत्र जप करके पीछे विरूपाक्ष जप करना पड़ेगा। सामवेदियोंकी सर्व कर्म साधारणी कुशण्डिका इसी प्रकार की जाती है। कुशण्डिकाके पीछे प्रकृत कर्म करते हैं। प्रथम घृताक्त प्रादेशप्रमाण समिध् अमंत्रक अग्निमें निक्षेप करके महाव्याहृति होम करना चाहिये। यदि प्रकृत कर्ममें चरुहोम रहे, तो प्रथम व्याहृति होम न करे। कारण प्रकृत कर्म समापन करके महाव्याहृति होम करनेका विधान है। इसी प्रकार प्रकृत कर्म समापन करके पुनर्वार महाव्याहृति होम करना चाहिये। अनन्तर प्रादेशप्रमाण समिध् अमंत्रक अग्निमें निक्षेप करके शाट्यायनहोम करते हैं। प्रकृत कार्य, किसी प्रकार अङ्गहीन होने किंवा किसी प्रकारका वैगुण्य पड़नेसे, शाट्यायनहोम द्वारा पूर्ण होता है। शाट्यायनहोमके पीछे प्रायश्चित्त-होम, नवग्रह-होम, लोकपाल-होम और प्रत्यक्ष देवताका होम करना चाहिये। इसके पीछे उदकाञ्जलि सेचन और दर्भ तृणाभ्यञ्जन किया जाता है। अनन्तर पूर्ण होम करना चाहिये। ब्राह्मणको पूर्णपात्र और दक्षिणा प्रदान करके होमकी दक्षिणा करते हैं। पीछे प्रदक्षिण करके दक्षिण दिक् गमनपूर्वक ब्रह्मग्रन्थिमोचन करना चाहिये। लौटके आनेसे आसन पर उपवेशन करते हैं। कुश और पुष्पके साथ जलपात्रके ऊपर हस्त स्थापन करके शान्ति करना पड़ती है। फिर दक्षिणा प्रदानपूर्वक अच्छिद्रावधारण करना चाहिये।

कालेसि-कृत पद्धतिमें ऋग्वेदिकुशण्डिका इस प्रकार लिखी गयी है—

होमकर्ताको नित्य क्रियाके समापनान्त पूर्वमुखी हो आचमन और तीन बार प्राणायाम करके स्वस्तिवाचन तथा सङ्कल्प करना चाहिये। अनन्तर इषु प्रमाण अर्थात् १ हाथ ऊंची, १ हाथ लम्बी और १ हाथ चौड़ी एक वेदी प्रस्तुत करके गोमय द्वारा लेपन करते हैं। फिर वज्राकृति काष्ठ द्वारा किंवा कुशमूल द्वारा उत्तराग्र एक रेखा, और इस रेखाके आदि तथा अन्तभागमें दो एवं मध्यमें प्रादेशप्रमाण तीन रेखा अङ्कित करते हैं। पीछे कुश वा खड्गाकृति काष्ठ स्थण्डिलमें रखके जलद्वारा अभ्युक्षणपूर्वक निक्षेप करना चाहिये। अनन्तर आचमन करके कांस्यपात्र किंवा अन्य शुद्धपात्रमें अग्नि आनयन करते हैं। अग्निसे एक ज्वलन्त काष्ठग्रहण करके "प्रजापतिर्ऋषिरनुष्टुप्छन्दोऽग्निर्देवता अग्निसंस्कारे विनियोग:। ओं क्रव्यादमग्निं प्रहिणोमि दूरं यमराज्यं गच्छतु रिप्रवाह:" मन्त्रपाठपूर्वक दक्षिण-पश्चिमदिक् निक्षेप करना चाहिये। अग्नि प्रज्वलित करके "प्रजापतिर्ऋषिरनुष्टुप्छन्दो बृहस्पतिर्देवता अग्निप्रतिष्ठापने विनियोग:। ओं भूर्भुव: स्वरोऽम्" मन्त्रद्वारा आत्माभिमुखी करके अग्निस्थापन और अग्निध्यान करते हैं। "ओं इहैवायमितरो जातवेदा देवेभ्यो हव्यं वहतु प्रजानन्" मन्त्रपाठ करना चाहिये। इसी समय यथोक्त कार्यके अनुसार अग्निका नामकरण करना पड़ता है, "ओं अग्ने त्वं अमुकनामासि।" अनन्तर दक्षिण जानु झुकाके प्रादेश-प्रमाण घृताक्त ३ समिध् अमन्त्रक अग्निमें निक्षेप करना चाहिये। पीछे "अद्येत्यादि—अमुकशाखाककर्मणि तदङ्गमन्वाधानं चाहं करिष्ये। तत्र च देवतापरिग्रहार्थं अस्मिन्नन्वाहितेऽग्नौ अग्निं जातवेदसमिध्मेन प्रजापतिं चापरदेवते आज्येनाग्नीषोमौ चक्षुषी आज्येनाग्निं पवमानञ्च प्रजापतिं। एता: प्रधानदेवता: चरुद्रव्येण अनुयाजसन्नहनाभ्यां रुद्रं पशुपतिं चरुशेषेण स्विष्टिकृतं हुतशेषेण अग्निश्यमसं देवान् विष्णुमग्निं वायुं सूर्यं प्रजापतिञ्च सर्वप्रायश्चित्तदेवता आज्येन विश्वान् देवान् संस्रवेण साङ्गेन कर्मणा सद्योऽहं यक्ष्ये।"

उच्चारण करके व्याहृति द्वारा ईशानकोणसे उत्तर दिक् पर्यन्त अन्वाधार, तीन बार अमन्त्रक परिस्तरण और उत्तराग्र वा पूर्वाग्र कुशका प्रोक्षण करते हैं। इसी प्रकार अग्निके पूर्वसे दक्षिणावर्तमें उत्तरदिक् पर्यन्त तीन बार प्रोक्षण करना चाहिये। इसको परिसमूहन कहते हैं। अनन्तर पूर्वसे दक्षिणावर्तमें उत्तर पर्यन्त अग्निका पर्युक्षण और होमीय द्रव्यका प्रोक्षण करते हैं। फिर अग्निकी उत्तर दिक् उपवेशन करके ब्रह्माके दक्षिण हस्तका अङ्गुष्ठ ग्रहणपूर्वक "ओं अद्येत्यादि मत्कर्तव्यामुककर्मणि कृताकृतावेक्षकरूपब्रह्मत्वे नामुकगोत्रममुकप्रवरं श्रीअमुकदेव शर्माणं त्वामहं वृणे" मन्त्रपाठ करना चाहिये। ब्रह्मा "ओं वृतोऽस्मि" कहके प्रत्युत्तर करते हैं। फिर ब्रह्माको अग्निको पूर्वदिक्से उत्तर आनयन करके ब्रह्मासन कुश-विष्टरसे वामहस्तके अङ्गुष्ठ एवं अनामिका द्वारा एक कुश ग्रहण करके "ओं निरस्तः परावसुः" मन्त्र द्वारा नैऋर्तकोणमें निक्षेप करना चाहिये। अनन्तर आचमन करके "ओं इदमहो मर्वागवसोः सदने सीद" मन्त्र द्वारा उत्तरमुखी करके ब्रह्माको उपवेशन कराते हैं। ब्रह्माको "सीदामि" कहके प्रत्युत्तर करना चाहिये।

ब्रह्माको स्पर्शकरके निम्नलिखित मन्त्रपाठ करते हैं—"ओं बृहस्पतिर्ब्रह्मा ब्रह्मसदने आशिष्यते बृहस्पते यज्ञं गोपाय स यज्ञं पाहि स यज्ञपतिं पाहि समां पाहिर्भूर्भुवः स्वः बृहस्पति..............प्रसूत" अनन्तर उत्तराग्र कुशके ऊपर होमीय द्रव्य स्थापन करना चाहिये। चरुहोममें पवित्र छेदनदर्भ ३, एवं पवित्र २ प्रणीत, प्रोक्षणी, स्रुक्, स्रुव, इध्म, बर्हिः, सम्मार्जनार्थ कुश ६, उपयमन कुश७, कुला, कृष्णसारचर्म, उदूखल, मुषल, घृत, तण्डुल, मेक्षण, कमण्डलु, पुष्प चन्दन प्रभृति और पूर्णपात्र रखते हैं। आज्यहोममें स्रुक्, कुला, कृष्णसारचर्म, मेक्षण, उदूखल और मुषल आनयन करना नहीं पड़ता। प्रोक्षणीपात्र पद्मपत्राकृति १२ अङ्गुलि दीर्घ एवं करतलतुल्य खातविशिष्ट, आज्यस्थाली तैजस अथवा मृत्तिका निर्मित, स्रुव खदिर काष्ठनिर्मित १ हस्तपरिमाण तथा अङ्गुष्ठपरिमाण,खातविशिष्ट,और स्रुवका मुख वर्तुलाकार करना पड़ता है। हस्तपरिमित हस्ताकृति खदिरकाष्ठकी स्रुक् बनाते हैं। कुला नलनिर्मित, १ हस्त विस्तीर्ण होती है। वह मुष्टिहस्त वा २ प्रादेश प्रमाण २१ वा १५ पलाश, खदिर किंवा वटके काष्ठसे निर्माण की जाती है। कुशमुष्टिको वर्हिः कहते हैं। अनन्तर पूर्वस्थापित कुशपत्रद्वय ग्रहण करके अग्रयुक्त प्रादेश प्रमाण मूल छेदन करना चाहिये। पीछे पवित्र द्वारा सकल पात्र प्रोक्षण करते हैं। इसके उत्तर प्रणीत पात्र, उसके पीछे पवित्रद्वय प्रोक्षणी पात्रमें स्थापन करके उसमें जल और पुष्प प्रदान करना चाहिये। गन्ध, पुष्प और जलपूर्ण पवित्रयुक्त प्रोक्षणीपात्र वामहस्तके ऊपर रखके दक्षिण हस्तद्वारा आच्छादनपूर्वक "ओं ब्रह्मन्नपः प्रणेष्यामि" कहते हैं। ब्रह्माको "ओं प्रणय" उच्चारणपूर्वक प्रत्युत्तर करना चाहिये। पीछे कर्ता "ओं भूर्भुवः स्वर्बृहस्पति प्रसूत" मन्त्र पाठपूर्वक प्रोक्षणीपात्र अपनी नासिकाके समीप आनयन करके अग्नि और प्रणीतपात्रके मध्य स्थापन करके कुश द्वारा आच्छादन करते हैं। इसका नाम पूर्णपात्र है। अनन्तर पूर्णपात्रस्थ पवित्रद्वय कुला पर रखके उसमें धान्यमुष्टि भाग करना चाहिये। "ओं अग्नये त्वा जुष्टं गृह्णामि" कहके धान्यमुष्टि ग्रहण करते और "अग्नये त्वा जुष्टं निर्वपामि" कहके कुला पर रखते हैं। इसी प्रकार "अग्नीषोमाभ्यां" इत्यादि उच्चारणपूर्वक अपर अपर भाग स्थापन करना चाहिये। पीछे कृष्णाजिन पर उदूखल स्थापन करके उसमें पूर्वविभक्त धान्य निक्षेप करते और मुषलके आघातसे तण्डुल प्रस्तुत करके कुला द्वारा निस्तुष करते हैं। इस तण्डुलका घृत द्वारा पाक करना चाहिये। फिर सूर्पस्थ पवित्रद्वय आज्यस्थालीमें स्थापन करके घृत डालते और अग्निकी उत्तर दिक्से अङ्गार लाके घृत पिघलाते हैं। घृतके ऊपर दर्भाग्रद्वय तीन बार निक्षेप करके ज्वलन्त काष्ठ उसके ऊपर तीन बार घुमाना चाहिये। हस्तद्वय उत्तान करके अनामिका और अङ्गुष्ठ द्वारा पवित्रद्वय ग्रहणपूर्वक "ओं सवितुस्त्वा प्रसव" इत्यादि मन्त्र पढ़ किञ्चित् घृत उत्तोलन करते तथा अमन्त्रक दो बार उत्तोलन करके पवित्रद्वय अग्निमें डाल देते हैं। (सकल मन्त्रोंके पूर्व ऋषि, छन्दः, देवता और कार्यके विनियोगका उल्लेख करना पड़ता है) पूर्वसंगृहीत कुशमुष्टि विस्तीर्ण करके आज्यपात्र स्थापन

करना चाहिये। अनन्तर स्रुक् एवं स्रुव अधोमुख करके अग्निमें उत्तापित और स्रुक् भूमिपर स्थापन करके स्रुवको वामहस्तमें धारण करते हैं। सम्मार्जन कुश द्वारा स्रुवके मूलसे रन्ध्र मार्जन करके पुनर्वार उत्तप्त करना और सम्मार्जन कुशके मूलसे रन्ध्रके शेषभाग पर्यन्त तीन बार मार्जन एवं प्रणीत पात्रस्थ जल द्वारा तीन बार प्रोक्षण तथा पुनर्वार उत्तप्त करके वह्निमें स्थापन करना चाहिये। अनन्तर इसी प्रकार स्रुकसंस्कार भी करना पड़ता है। फिर उन कुशोंको प्रोक्षित करके अग्निमें निक्षेप करते हैं। चरुमें घृत मिलाके आज्य पात्रको दक्षिण दिक् घृत और अग्निके मध्य उसे रखना चाहिये। कृताञ्जलि हो के "विश्वानि नो दुर्गहा" (ऋक ५। ४। ९)। "यस्त्वा हृदा कीरिणा" (ऋक ५। ४। १०)। "अग्ने त्वं सुकृते जातवेद" (ऋक् ५। ४। ११) तीन पूर्ण ऋङ्मन्त्र द्वारा अग्नि अलङ्कृत करके "ओं अयन्त इध्म आत्मा जातवेद" मन्त्र द्वारा इध्म स्थापन करते हैं। फिर वायुकोणसे अग्निकोण पर्यन्त "ओं प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये" कहके स्रुवसे घृतधारा प्रदान करना चाहिये। स्रुव-लग्न घृत प्रोक्षणी पात्रमें निक्षेप करना पड़ता है। इसी प्रकार "ओं प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये" मन्त्र द्वारा नैऋत कोणसे ईशान कोण पर्यन्त घृत धारा छोड़ना चाहिये। इन दोनों आहुतिको आघार कहते हैं। उपविष्ट होके "ओं अग्नये स्वाहा इदमग्नये" कहके दक्षिण दिक्में नैऋत कोणसे अग्निकोण पर्यन्त और उत्तर दिक्में पश्चिमको शेष सीमासे पूर्वके शेष पर्यन्त घृतका धारा दिया करते हैं। इसका नाम आज्यभाग है। प्रथममें अग्निका दक्षिणलोचन और द्वितीयमें वामलोचन चिन्ता करना पड़ता है। इसके पीछे प्रकृत होम है। इसके अर्धभागमें "इदमग्नये", इदमग्नीषोमाभ्यां" कहके भाग कर एक रेखा लगाना चाहिये। स्रुवसे हव्यमें घी निकाल चरुमें घृतस्रुव डालते हैं। मेक्षण द्वारा चरुके मध्यसे अङ्गुष्ठपर्व-परिमाण चरु दो बार लेके उसके ऊपर घृतस्रुव प्रदान और पात्रस्थ चरु द्वारा होम करना चाहिये। अग्निके मध्य वा पश्चिम "अग्नये स्वाहा। इदमग्नये" पढ़के आहुति देते हैं। इसीप्रकार पूर्वदिक् किंवा उत्तरदिक् "अग्नीषोमाभ्यां स्वाहा। इदमग्नीषोमाभ्यां" उच्चारणपूर्वक आहुति देना चाहिये। "ओं यदस्य कर्मणो ह्यत्यरीरिच" बोलके आहुति दी जाती है। पूर्व दिक्में एक आहुति देना चाहिये। इसको स्विष्टकृत् होम कहते हैं। अनन्तर इध्मसन्धनी रज्जु खोलके स्रुव और स्रुकका लेप निकाल "ओं रुद्राय स्वाहा" कहके अग्निमें फेंक देना चाहिये। परिस्तरण कुशको भी अग्निमें निक्षेप किया करते हैं। फिर यथाक्रम निम्नलिखित सात मन्त्र उच्चारण करके ७ आहुति देना चाहिये। यथा—

(१) "ओं अयश्चाग्ने स्यनभिशस्तिपाश्च......।"

(२) "ओं अतो देवा अवन्तु नो......।" (ऋक् १।२२।१६)

(३) "ओं इदं विष्णुर्विचक्रमे...।" (ऋक् १।२२।१७)

(४) "ओं भूः स्वाहा। इदमग्नये।"

(५) "ओं भुवः स्वाहा। इदं वायवे नमः।"

(६) "ओं स्वः स्वाहा। इदं सूर्याय नमः।"

(७) "ओं भूर्भुवः स्वः स्वाहा। इदं प्रजापतये।"

प्रायश्चित्तका होम इस प्रकार है—"ओं विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा" मन्त्रसे एक आहुति देते हैं। पीछे निम्नलिखित पांच मंत्र पढ़के ५ आहुति देना चाहिये—

(१) "ओं अनज्ञातं यदज्ञातं यज्ञस्य क्रियते मिथः।"......

(२) "ओं पुरुषसम्मितो यज्ञो यज्ञः पुरुषसम्मितः...... ।"

(३) "ओं यत् पाकत्रा मनसा दीन दक्षा न.......।" (ऋक् १०।२।५)

(४) "ओं त्वं नोऽग्ने वरुणस्य विद्वान्...।" (ऋक् ४।१।४)

(५) 'ओं सत्वं नो अग्नेऽवमो भवोती...।" (ऋक ४।१।५।)

फिर स्वर अक्षर पदछुत्त वर्णलोपके पापका प्रायश्चित्त करनेको "ओं यदो देवासकृम" इत्यादि (ऋक् ४।१०।५) मंत्रसे एक आहुति प्रदान करते हैं।

कुशके ऊपर पूर्णपात्र स्थापन करके उसे जल द्वारा पूर्ण कर देना चाहिये। पीछे "ओं धामन्ते विश्व" इत्यादि (ऋक् ४।५८।११) मंत्र पाठ करके घृत, पुष्प और फलयुक्त पूर्ण आहुति छोड़ते हैं। बैठे बैठे पूर्णाहुति देना निषिद्ध है। फिर दक्षिणा प्रदान करना चाहिये। अनन्तर पूर्णपात्र कुशके ऊपर रखके "ओं आपो अस्मान्मातरः" इत्यादि (ऋक् १०।१७।१०) "ओं इदं आपः प्रवहत" इत्यादि (ऋक् १।२३।२२), "ओं सुमित्रियान आप ओषधयः" इत्यादि तीन मंत्रोंसे यजमानको मार्जन करते हैं। पुंसवनादिमें पत्नीका भी मार्जन करना पड़ता है।

पशुपति-संगृहीत दशकर्मपद्धतिमें यजुर्वेदीय कुशण्डिका इस प्रकार लिखित हुई है—

एकहस्त-परिमित चतुरस्र स्थण्डिल कुशपत्र द्वारा तीन बार मार्जन करके गोमयसे भली भांति लेपन करना चाहिये। पीछे खड्गाकृति काष्ठ द्वारा (यही काष्ठ पद्धतिमें 'स्फ' नामसे अभिहित हुवा है) किंवा कुशमूल द्वारा स्थण्डिलके मध्य ७ अङ्गुलि अन्तरसे (प्रत्येक दूसरीसे ७ अङ्गुलि दूर रहना चाहिये) प्रादेश-प्रमाण तीन रेखा अङ्कित करते हैं। अनन्तर दक्षिण हस्तकी तर्जनी और अङ्गुष्ठ द्वारा रेखा अङ्कनके समय उत्थित धूलि ग्रहण करके दूरको निक्षेपपूर्वक जलसे रेखा अभ्युक्षण करके अपनी दक्षिणदिक् कांस्यपात्रमें अग्नि स्थापन करना चाहिये। फिर अग्निसे एक ज्वलन्त काष्ठ लेके "ओं क्रव्यादमग्निं प्रहिणोमि दूरं यमराज्यं गच्छतु रिप्रवाहः" (शुक्लयजुः ३५।१९) मन्त्र उच्चारण पूर्वक काष्ठको दक्षिण-पश्चिम कोणमें निक्षेप करते हैं। यजुर्वेदीय मंत्रपाठके पूर्व ऋषि, छन्दः, देवता और अपना विनियोग उल्लेख करना नहीं पड़ता। 'इहैवायमितरो जातवेदा देवेभ्यो हव्यं वहतु प्रजानन्' (शुक्लयजुः ३५।१९) मंत्र द्वारा अपने अभिमुखी करके पूर्वोल्लिखित तृतीय रेखा पर अग्नि स्थापन करके "अग्ने त्वं सूर्यनामासि" पढ़के अग्निका नामकरण करना चाहिये। अग्निकी दक्षिणदिक् ब्रह्मस्थापनके लिये पूर्वाग्र कुश-पत्रत्रयके साथ आसन रखके उस पर ब्रह्मस्थापन करते हैं। ब्रह्माको "ओं अद्य देविसवरो ददस्विष्ठामि" इत्यादि मंत्र पाठ करके अग्निप्रदक्षिणपूर्वक उसी स्थानपर उपस्थित हो ब्रह्मासन अवलोकन करना चाहिये। उसी आसनसे वामहस्तकी अनामिका और अङ्गुष्ठ द्वारा एक कुशपत्र ग्रहण करके "ओं निरस्तः पाप्मा सहतेन" इत्यादि मंत्र द्वारा दूर फेंक देते हैं। "ओं इदं अहं बृहस्पते सदसि सीदामि" इत्यादि मंत्र पढ़के अग्निके अभिमुखी हो उपवेशन करना चाहिये। अग्निकी उत्तरदिक् आस्तरणके निमित्त कितना ही स्थान परित्यागपूर्वक कुश-पत्र विस्तीर्ण करके उसके ऊपर यज्ञपात्र काष्ठनिर्मित हत्या (६ अङ्गुलि चौड़ा, २० अङ्गुलि लम्बा, ४ अङ्गुलि गहरा और ४ अङ्गुलिके दण्डवाला हत्या यज्ञ करनेके लिये वारुण काष्ठ द्वारा निर्माण करना पड़ता है) अथवा मृण्मयपात्र जलपूर्ण करके कुशपत्र द्वारा आच्छादन और ब्रह्माका मुख अवलोकन करके स्थापन करते हैं। अनन्तर मूलसमीप छिन्न वर्हिसमूह द्वारा अग्निकी पूर्वदिक्में अग्निकोणसे ईशानदिक् पर्यन्त, दक्षिणदिक्में ब्रह्मासे अग्निकोण पर्यन्त, पश्चिम दिक्में नैर्ऋतसे वायुकोण पर्यन्त और उत्तरदिक्में अग्निसे पूर्वस्थापित जलपर्यन्त परिस्तरण करना चाहिये। फिर अग्निकी उत्तरदिक् अपने समीपसे आरम्भ करके समस्त यज्ञीय द्रव्य स्थापन करते हैं। यज्ञीय द्रव्य यह है—पवित्र छेदनके निमित्त तीन कुशपत्र, पवित्रके निमित्त अग्रयुक्त गर्भरहित दो कुशपत्र, प्रोक्षणीपात्र, धान्य, यव, काष्ठनिर्मित उदूखल, मुषल, दृषदुपल, घृत रखनेका पात्र, मार्जन करनेके लिये ६ कुशपत्र, उपयमनके निमित्त १३ कुशपत्र, तीन समिध, स्रुव, घृत और दुग्ध। अनन्तर प्रादेश प्रमाण दो कुशपत्र-ग्रहण करके "ओं पवित्रे स्थो वैष्णव्यौ" (शुक्लयजुः १।१२) मन्त्र द्वारा छेदन करके (नख द्वारा छेदन करना निषिद्ध है) "ओं विष्णोर्मनसा पूते स्थः" (काठक १५।५४) मन्त्र उच्चारण करके जल द्वारा अभ्युक्षण करना चाहिये। यह कुशपत्र द्वय प्रोक्षणीपात्रमें रखके उसमें पूर्वस्थापित जल प्रदान करते है। अनन्तर वामहस्तकी अनामिका एवं अङ्गुष्ठ द्वारा अग्रभाग और दक्षिण हस्तकी अनामिका तथा अंगुष्ठ द्वारा मूल पकड़के पवित्रके मध्यसे किञ्चित् जल उठाके भूमिपर निक्षेप करना चाहिये। इसी प्रकार तीन बार करना पड़ता है। फिर वामहस्तके तल पर प्रोक्षणीपात्र स्थापन करके दक्षिणहस्तस्थित पवित्रसे किञ्चित् जल वारत्रय उत्तोलन करके पवित्रको प्रोक्षणी पात्रमें स्थापन करते हैं। उसी जलसे यज्ञीय सकल द्रव्य प्रोक्षण करना चाहिये। पवित्रके साथ प्रोक्षणीपात्र वामभागमें रखा जाता है। आज्यस्थालीमें घृत रखके पूर्वस्थापित धान्यसे "ओं अग्नये त्वा जुष्टं" इत्यादि मंत्र द्वारा एक मुष्टि धान्य ग्रहण करके "ओं अग्नये त्वा जुष्टं निर्वपामि" मंत्र द्वारा निर्वपन (भाग) करके "ओं अग्नये त्वा जुष्टं प्रोक्षयामि" मंत्र उच्चारण करके प्रोक्षण करना चाहिये। इसी प्रकार "ओं रुद्राय त्वा जुष्टं गृह्णामि" इत्यादि मंत्र द्वारा

धान्यमुष्टि पूर्ववत् ग्रहण, निर्वपण, प्रोक्षण और "ओं प्रजापतये त्वा जुष्टं गृह्णामि" इत्यादि मंत्र द्वारा यथाक्रम ग्रहण, निर्वपण और प्रोक्षण करके अमंत्रक भी तीन बार ग्रहणादि करते हैं। अनन्तर "ओं उदूखलमुषले" इत्यादि मंत्र पाठ करके मुषल द्वारा आघात करना और "ओं वातीवावी मनोवा" इत्यादि मंत्र द्वारा सूपमें उठाके फटकार डालना चाहिये। इसी प्रकार धान्य और यवसे तण्डुल प्रस्तुत करना पड़ता है। पीछे पूर्वस्थापित दृषद् और उपल द्वारा तण्डुल पेषण करके चरुस्थालीमें स्थापन करते हैं। प्रोक्षणीपात्रसे जल और दुग्ध डालके चरु पाक करना चाहिये। चरु पाक होनेसे घृत और चरुके ऊपर एकखण्ड काष्ठ घुमाके उसे अग्निमें डाल देते हैं। फिर स्रुव ग्रहण करके अग्निमें उत्तापित करना चाहिये। कुशके पत्रसे उसका मूल और अग्र मार्जन करके कुशपत्र अग्निमें फेंक देते हैं।

अनन्तर प्रणीत जल द्वारा अभ्युक्षण और अग्निमें उत्तापित करके आस्तरणके ऊपर रख देना चाहिये। पवित्र द्वारा "ओं सवितु स्त्वा" (शुक्लयजुः १।३१) इत्यादि मंत्र पाठ करके घृत, "ओं सवितुर्वः" (शुक्लयजुः १।३१) इत्यादि मंत्र द्वारा प्रोक्षणीसे जल उत्तोलन करके पुनर्वार निक्षेप करते हैं। फिर दो हाथसे घी चरुके मध्यमें डाल मला जाता है। पुनर्वार इसी प्रकार घी डालके अग्निकी उत्तरदिक् चरु स्थापन करना चाहिये। होमकी समाप्ति तक उपयमन-कुशपत्र वामहस्तमें धारण किये रहते हैं। खड़े होके तीन घृताक्त समिध् पूर्वाग्र करके अमंत्रक अग्निमें निक्षेप करना चाहिये। फिर उपविष्ट होके प्रोक्षणी जल द्वारा दक्षिणावर्त अग्निको वेष्टन करके जलधारा प्रदान करते हैं। धारा विच्छेद होना निषिद्ध है। "ओं देवसवितः" इत्यादि मंत्रसे प्रोक्षणीपात्रस्थित पवित्र प्रणीत पर स्थापन करके प्रोक्षणीपात्रको यथास्थान रख देना चाहिये। अनन्तर दक्षिण जानुको भूमिसंलग्न करके ब्रह्माके अन्वारम्भपूर्वक हाथसे दो बार घृतकी आहुति छोड़ी जाती है। प्रजापतिको मनमें चिन्ता करके वायुकोणसे लगाके अग्निकोण पर्यन्त घृत द्वारा आहुति प्रदान करते हैं। "ओं प्रजापतये स्वाहा इदं प्रजापतये" मंत्र उच्चारण करके पूर्वोक्त कार्य करना पड़ता है। नैऋतकोणसे ईशानकोण पर्यन्त "ओं इन्द्राय स्वाहा इदं इन्द्राय" मंत्रोच्चारण करके धारा प्रदान करनेका विधान है। इसी प्रकार दक्षिणदिक्‌में पूर्वान्तसे आरम्भ करके पश्चिमान्त पर्यन्त और उत्तरमें पश्चिमान्तसे आरम्भ करके पूर्वान्त पर्यन्त घृत धारा छोड़के स्रुक् पात्रमें स्थापन करना चाहिये। अनन्तर घृत द्वारा अन्वारम्भ करके "ओं इह रमते स्वाहा इदमग्नये" इत्यादि प्रत्येक मंत्र द्वारा आहुति प्रदान करते हैं। फिर चरुमें घृत स्रुव डालके पूर्वार्धमें मेक्षण द्वारा चरु ग्रहण करके उसके ऊपर घृतस्रुव छोड़ चरुके क्षतस्थान पर (जिस स्थानसे आहुतिका चरु उठाया गया है) घृतस्रुव प्रदान करना चाहिये। "ओं अग्नये स्वाहा इदमग्नये" मंत्र द्वारा दो समिध् और जुहू अग्निमें निक्षेप करते हैं। इसी प्रकार "रुद्राय स्वाहा इदं रुद्राय" इत्यादि मंत्र द्वारा भी आहुति प्रदान करना चाहिये। अनन्तर ब्रह्माके अन्वारम्भपूर्वक जुहूमें घृत स्रुव प्रदान करके चरुमें घृतस्रुव प्रदान करते हैं। चरुके पश्चिमांशसे अवदानद्वय ग्रहण करके जुहूमें स्थापन करना चाहिये। उसके ऊपर और चरुमें घृतस्रुव प्रदान किया जाता है। अनन्तर घृत द्वारा महाव्याहृति होम करते हैं। प्रकृत कर्ममें चरुहोम रहनेसे जो प्रक्रिया करना पड़ती, वही इस स्थान पर लिखी गयी है। चरुहोम न रहनेसे चरुकी प्रक्रिया भिन्न दूसरा सकल कर्म करना चाहिये। सूर्यको धान्यतण्डुलके चरुसे आहुति प्रदान करना निषिद्ध है। पद्धतिमें जिस स्थानपर सूर्यको आहुतिका उल्लेख है, उस स्थल पर यवतण्डुलके चरु द्वारा आहुति प्रदान करना चाहिये। इस चरुको पौष्णचरु कहते हैं। प्रकृत कर्म करके प्रायश्चित्तहोम प्रभृति किया जाता है।

अथर्ववेदियों और तान्त्रिकोंको भी कुशण्डिकापद्धति मिलती है। होम देखो।

कुशदह—बङ्गालके यशोहर जिलेको इच्छामती नदीतीरका एक महाग्राम। (भविष्य ब्रह्मखण्ड, ११।१४) नवद्वीपाधिपति कृष्णचन्द्रके समय कुशदह बड़ी उन्नति पर था।

कुशद्वय (सं० क्ली०) कुशानां द्वयम्, ६-तत्। कुश-द्वि-असच्। द्विविभ्यां तयस्यायज्वा। पा ५।२।४३। स्थूल-सूक्ष्म दर्भद्वय, मोटा और पतला दोनों प्रकारका कुश।

कुशद्वीप (सं० पु०) कुशेन विख्यातो द्वीपः, मध्यपद-लो०। १ सप्तप्रधान द्वीपोंके अन्तर्गत कोई द्वीप। विष्णुपुराणके मतमें वह चतुर्थ द्वीप है। उसका विस्तार शाल्मली-द्वीपसे द्विगुण पड़ता है। कुशद्वीप द्वारा सुरासमुद्र और कुशद्वीप घृतसमुद्र द्वारा परि-वेष्टित है। उसमें एक सुवृहत् कुशस्तम्ब है। उसीके अनुसार कुशद्वीप नाम पड़ा है। कुशद्वीपमें उद्भिद्, वेणुमान्, वैरथ, लम्बन, धृति, प्रभाकर और कपिल नामक वर्ष है। उसके पर्वतोंका नाम विद्रुम, हेम-शैल, द्युतिमान्, पुष्पवान्, कुशेशय, हविः और मन्दर है। उसमें धूतपापा, शिवा, पवित्रा, सम्मति, विद्युद्दम्भा और मही नामक नदी प्रवाहित हैं। फिर कुश-द्वीपमें दैत्य, दानव, देव, गन्धर्व, यक्ष, रक्ष, और मनुष्य रहते हैं। मनुष्योंमें चातुर्वर्ण्य व्यवस्था भी विद्यमान है। कुशद्वीपवासी ब्रह्मरूप जनार्दनकी उपासना करते हैं। (विष्णुपुराण, २।४।३५-३४)

भागवतमें कुशद्वीप अन्य प्रकार वर्णित हुवा है— सुरासमुद्रसे बाहर उससे द्विगुण समान परिमाण घृतसमुद्र द्वारा परिवेष्टित कुशद्वीप है। उसमें एक कुशस्तम्ब विद्यमान है। उसीके अनुसार कुशद्वीप नाम हुवा है। कुशद्वीपके अधिपति प्रियव्रतपुत्र हिरण्यरेता-ने अपने वसु, दान, दृढ़रुचि, नाभिगुप्त, सत्यगुप्त, देव-नाथ और प्रियनाथ सातपुत्रोंको उक्त द्वीप बांट दिया था। उसीसे कुशद्वीपमें सात वर्ष हैं। फिर हिरण्यरेता के उक्त पुत्रोंके नामानुसार ही वर्षोंका भी नाम चला है। इन सकल वर्षोंमें वभ्रु, चतुःशृङ्ग, कपिल, चित्र-कूट, देवानीक, ऊर्ध्वरोमा तथा द्रविण नामक सात सीमापर्वत और रसकुल्या, मधुकुल्या, मित्रविन्दा, श्रुत-विन्दा, देवगर्भा, घृतच्युता एवं मन्दमाला नामक सात नदी हैं।

२ पीठस्थानविशेष। (देवीभागवत, ७।३०।८०)

कुशधारा (सं० स्त्री०) एक नदी।

कुशध्वज (सं० पु०) १ ह्रस्वरोमराजाके पुत्र। वह सीरध्वज जनकके कनिष्ठ भ्राता और भरत तथा शत्रुघ्नपत्नी माण्डवी एवं श्रुतकीर्तिके पिता थे। २ ह्रस्व-रोमाके पौत्र। ३ वृषध्वजके कोई पौत्र। ४ ऋषिविशेष, वेदवतीके पिता।

कुशनाभ (सं० पु०) अयोध्याधिपति कुशके पुत्र।

कुशनामा (सं० पु०) उष्ट्र, ऊंट।

कुशनेत्र (सं० पु०) मरीचिपुत्र, एक दैत्य। (हरिवंश, २४० अ०)

कुशप (सं० पु०) कुशि दीप्तौ अपः। दलादिभ्योऽपः स्यात्। रामशर्मकृत उणादिकोषटीका १।७५। पानपात्रविशेष, पीने-का एक बरतन।

कुशपत्र, कुशपत्रक देखो।

कुशपत्रक (सं० क्ली०) कुशपत्रमिव, कुशपत्र-कन्। कुश-पत्राकार पत्रास्त्रविशेष, एक नश्तर। उसे विस्रावणमें प्रयोग करना चाहिये। कुशपत्रकका फला दो अङ्गुल रहता है। (सुश्रुत)

कुशपुर—गोमती नदीतीरवर्ती एक अति प्राचीन नगर। उसका अपर नाम कुशभवनपुर है। प्रवादानुसार राम-के पुत्र कुशने उक्त स्थानमें थोड़े दिन वास किया था। उन्हींके नामानुसार कुशपुर नाम पड़ा है। वह कोसाम-से ११७ मील उत्तरपूर्व अवस्थित है। चीनपरिव्राजक युएनचुयाङ्ग ई० सप्तम शताब्दीके प्रथम भागमें कुश-पुर (कि-अ-सि-पो-लो) देखने आये थे। उस समय वहां एक पुरातन बौद्धसङ्घाराम रहा। चीनपरि-व्राजकने लिखा है कि उसी पुरातन सङ्घाराममें पर-कालको धर्मपाल बोधिसत्वने विधर्मियोंके साथ शास्त्रीय तर्क किया था। वहां बौद्धराज अशोक-प्रतिष्ठित एक भग्नस्तूप है। धनवान् और सुखी प्रजा उस नगरमें रहती है। मुसलमानोंने जब युक्तप्रदेश अधिकार किया, कुशपुरमें नन्दकुमार नामक एक भार-राजाका राजत्व रहा। सुलतान अला-उद्-दीनने उन्हें पराजय करके उसे अधिकार किया और कुशपुर नाम बदलके सुल-तानपुर रख दिया। आजकल कुशपुरको सुलतानपुर ही कहते हैं।

कुशपुष्प (सं० क्ली०) कुशाकारं पुष्पमस्य। १ ग्रन्थिपर्ण, गांठपत्ता। कुशाश्च पुष्पाणि च, समाहारद्वन्द्व०। २ कुश और पुष्प।

कुशप्लवन (सं॰ क्ली॰) एक तीर्थं। ब्रह्मचारी व्यक्ति समाहित होके विरात्रि उपवासपूर्वक इस तीर्थमें स्नान करनेसे अश्वमेधका फल पाता है। (भारतवन, ८५ अ॰)

कुशमुत्तोली (सं॰ स्त्री॰) एक कुशमय रचना विशेष, कुशकी अंगूठी।

कुशमुद्रिका (सं॰ स्त्री॰) पवित्र, पैंती, कुशकी एक अंगूठी।

कुशमुष्टि (सं॰ त्रि॰) कुशा मुष्टौ यस्य, बहुव्री॰। १ मुट्ठीमें कुश लिये हुवा, जो मुट्ठी भर कुश रखता हो। (पु॰) २ मुष्टिपरिमित कुश, मुट्ठी भर कुश।

कुशमूल (सं॰ क्ली॰) दर्भमूल, कुशकी जड़। वह शीतल, रुच्य, मधुर और पित्त, रक्त, ज्वर, तृष्णा, श्वास तथा कामला रोगनाशक है। (वाभट)

कुशर (वै॰ पु॰) कुत्सितः शरः, कुगतिस॰। शरकी भांति एक मध्यछिद्र तृण।

"शरासः कुशरासो दर्भा सः सैर्य उत।" (ऋक् १।१९१।३)

'शरासः कुत्सितशराः' (सायण)

कुशरीर (सं॰ पु॰) १ महाशालवृक्ष। (त्रि॰) २ कुत्सित शरीर, बुरे जिस्मवाला।

कुशल (सं॰ क्ली॰) कुश सिध्मादित्वात् लच्। सिध्मादिभ्यश्च। पा ५।२।९७। १ कल्याण, मङ्गल, खैरियत।

"पप्रच्छ कुशलं राज्ञो राज्याश्रममुनिं मुनिः।" (रघुवंश, १।५८)

मनुने कुशल शब्दको व्यवहार करनेका निर्दिष्ट नियम रखा है। कुशल शब्द केवल ब्राह्मणको मङ्गल प्रश्न करनेमें व्यवहृत होता है। क्षत्रियसे अनामय, वैश्यसे क्षेम और शूद्रसे आरोग्य शब्द व्यवहार करके मङ्गल-प्रश्न करना चाहिये।

"ब्राह्मणं कुशलं पृच्छेत् क्षत्रबन्धुमनामयम्।
वैश्यं क्षेमं समागम्य शूद्रमारोग्यमेव च॥" (मनु २।१२७)

२ पुण्य, सवाब।

"न द्वेष्ट्यकुशलं कर्म कुशले नानुषज्जते।" (गीता १८।१०)

(पु॰) ३ जनपद-विशेष, कोई बसती या मुल्क। ४ कुशद्वीपवासी। ५ शिवका कोई नाम। ६ कोई राजपुत्र। ७ कोई वैयाकरणिक। उन्होंने पञ्जिकाप्रदीप नामक ग्रन्थ रचना किया है। ८ क्षेमङ्करके पौत्र। वह घटकर्परटीकाके रचयिता रहे। ९ कुक्कुर, कुत्ता। १० महाजलवेतस, कोई बेंत। ११ मत्स्यभेद, किसी किस्मकी मछली।

(त्रि॰) १२ कुशयुक्त, कुश लिये हुवा। १३ पुण्यशील, नेक। १४ कुशग्रहण करनेमें समर्थ, कुश तोड़ सकनेवाला। कुशग्रहण करनेमें हाथ कट जानेकी विशेष सम्भावना रहती है। जो व्यक्ति चतुर रहता, उसीका हाथ बचता है। १५ चतुर, शिक्षित, होशियार, तालीमयाफता।

"समुद्रयानकुशला देशकालार्थदर्शिनः।" (मनु ८।१५७)

१६ कुशग्राहक, कुश लानेवाला।

कुशलक्षेम (सं॰ क्ली॰) कुशलमङ्गल, खैर आफियत, राजी खुशी।

कुशलता (सं॰ स्त्री॰) कौशल, निपुणता, होशियारी, चालाकी।

कुशलप्रश्न (सं॰ पु॰) कुशलः प्रश्नः, मध्यपदलो॰। कुशल जिज्ञासा, खैर आफियतका सवाल, राजी खुशीकी पूछताछ।

कुशलबुद्धि (सं॰ त्रि॰) कुशला बुद्धिर्यस्य, बहुव्री॰। शिक्षित, चतुर, होशियार, समझदार।

कुशलव (सं॰ पु॰) पुष्पवतोरिव एकशब्दया रामपुत्रयोरेव बोधकत्वं कुशश्च लवश्च तौ मित्रावरुणादिवत्, द्वन्द्वः। रामचन्द्रके पुत्रद्वय, कुश और लव।

कुशलसागर (सं॰ पु॰) एक ग्रन्थकार। वह लावण्यरत्नके शिष्य थे।

कुशलाई (हिं॰ स्त्री॰) कुशल, खैर, अमन-चैन।

कुशलात, कुशलाई देखो।

कुशली (सं॰ त्रि॰) कुशलमस्त्यस्य, कुशल-इनि। कल्याणयुक्त, खुश, राजी।

कुशली (सं॰ स्त्री॰) कुशल-ङीष्। १ अश्मन्तक वृक्ष, आबुटा, अमलोट। २ क्षुद्राम्लिका, छोटी अमलोनी। ३ चाङ्गेरी, चौपतिया। ४ कुमारी, घीकुवार।

कुशलोदर (सं॰ क्ली॰) कुशलमुदरमस्य, बहुव्री॰। भव्य, चालता।

कुशवती (सं॰ स्त्री॰) एक नगर, कोई शहर। कुशावती नामसे भी उसका उल्लेख है। (महाभारत, वनपर्व) कुशावती देखो।

कुशवन (सं० क्लो०) एक वन या जङ्गल। वह व्रजमें गोकुलके पास विद्यमान है।

कुशविन्दु (सं० पु०) एक जनपद, कोई बसती या मुल्क। (महाभारत ६।९अ०)

कुशवीरा (सं० स्त्री०) एक नदी या दरया। कुशचीरा प्रभृति विभिन्न नामसे उसका उल्लेख देख पड़ता है। (महाभारत, ६।९ अध्याय)

कुशस्तम्ब (सं० पु०) कुशानां स्तम्बो गुच्छः, ६-तत्। १ कुशका गुच्छा। २ कोई तीर्थ। (महाभारत, १३।२५ अध्याय) ३ कोई राजपुत्र।

कुशस्तरण (सं० क्लो०) कुशोंका फैलाव, वेदिको चारो ओर कुश बिछानेका काम।

कुशस्त्र (सं० क्लो०) कुत्सित् अस्त्र, खराब नश्तर। कुशस्त्र लगनेसे विकार उत्पन्न होता है। (सुश्रुत)

कुशस्थल (सं० क्लो०) कुशप्रधानं स्थलम्। कान्यकुब्ज-का नामान्तर।

कुशस्थली (सं० स्त्री०) कुशस्थल-ङीष्। एक अति प्राचीन नगरी। श्रीकृष्ण प्रभृति यादवोंने जरासन्धके भयसे उत्कण्ठित हो रैवतक गिरिके निकट कुश-स्थलीमें जाकर दुर्गसंस्कार करा अवस्थान किया था। (महाभारत सभा, १३ अ०) हरिवंशमें लिखा है—

'कुशस्थली आनर्तको राजधानी है। पूर्वको वह रैवतके अधिकारमें रही। यादवोंने वहां जाके रमणीया द्वारका नगरी स्थापन की।' (१० अध्याय) 'कुशस्थली पुरलक्षणोपयोगी अति रमणीय स्थान है। वह चारो दिक् सागरवेष्टित रहनेसे देवगणके लिये भी दुर्भेद्य है। उसके मध्य मध्य सागरजल प्रविष्ट और सजल-स्थान सन्निविष्ट है। उसमें नानाविध फल, पुष्प और सर्वप्रकार रत्नके आकर हैं। उसका सर्वत्र लोकाकीर्ण है। चतुर्दिक् स प्राकार और परिखापरिवृत हैं। अत्युच्च अट्टालिका, विचित्र प्राङ्गण, मनोहर राजपथ, विपुल तोरणद्वार, रमणीय गोपुर, विचित्र यन्त्र और अर्गल शोभित हैं। कुशस्थली मनुष्य, हस्ती, अश्व और रथचक्रके घर्घरध्वनिसे निरन्तर समाकीर्ण रहती है। वह नानादिग्देशजात पण्यद्रव्यसे परिपूर्ण है। वृहत् वृहत् प्रासादश्रेणी ध्वजपताकासे सुशोभित हैं। पुरद्वारसे अनतिदूर भूषणस्वरूप रैवतगिरि विराज करता है।' (हरिवंश, ११२-११३ अ०)

विष्णुपुराण और भागवतके मतसे भी कुशस्थली आनर्तविषयके अन्तर्गत है। उसे द्वारका भी कहते हैं। (विष्णुपुराण ४।१।३४, भागवत ९।३।२८)

सह्याद्रिखण्डके मतानुसार परशुरामने दश-गोत्रीय ब्राह्मण ले जाके वहां स्थापन किये थे—

"पश्चात् परशुरामेण ह्यानीता मुनयो दश।
त्रिहोत्रवासिनश्चैव पञ्चगौड़ान्तरस्तथा॥
गोमाचले स्थापितास्ते पञ्चक्रोश्यां कुशस्थल्याम्।
भारद्वाजः कौशिकश्च वत्सकौण्डिन्यकश्यपाः॥
वशिष्ठो जामदग्निश्च विश्वामित्रश्च गौतमः।
अत्रिश्च दशऋषयः स्थापितास्तत्र एव हि॥"

(सह्याद्रिखण्ड २।१।४७-५०)

कुशस्थली—एक सारस्वत ब्राह्मण वंश। यह कारवार, कुमता, होनावर और सिरसोमें मिलते और गोआ तथा मलवारके मध्य समग्र समुद्रतट पर अल्प अल्प देख पड़ते हैं। गाआद्वीपके ३० ग्रामोंमें कुशस्थली नामक एक ग्रामके नाम पर इनका नामकरण हुवा है। कुशस्थली साधारणतः शेनवी जातीय जैसे परिचित हैं। परन्तु यह इस नामसे घृणा करते और सारस्वत कहे जाने पर सन्तुष्ट रहते हैं। कहते हैं, १५८० ई० को गोआमें धर्मविचारसभा (Inquisition) प्रतिष्ठित होने पर यह कनाड़ा चले गये। परन्तु कुशस्थली अथवा इनमें कुछ १५१० ई० को गोआके पोर्तगीजोंके हाथ पड़ने या १४६७ ई० को दक्षिणी मुसलमानोंके उसको अधि-कार करने पर १५८० ई० से पहले ही कनाड़ा पहुंच गये। यह अपने आप कहा करते कि हम कनाड़ा आनेसे बहुत पीछे शेनवियोंसे अलग हुए। पार्थक्यका कारण दो प्रधान वंशोंके मध्य सम्पत्तिविषयक कोई विवाद बताते हैं। दूसरोंके कथनानुसार प्रायः १९० वर्ष हुए किसी दीक्षागुरुके मरण पर धार्मिक झगड़ा लगा था। कारण पहले गुरुके दो शिष्य रहे, जिनमें वह किसीको अपना उत्तराधिकारी ठहरा न सके। समग्र शेनवी लोग एक या दूसरी ओर खड़े हो गये और इतना वैरभाव बढ़ा कि वह गङ्गावली नदीके

उत्तर-दक्षिण पृथक् रूपसे रहने को सम्मत हुए। सरकारी नौकरीके लिये इन दोनों दलोंमें आज भी बड़ी स्पर्धा है। इनका गोत्र वात्स्य, कौशिक, कौण्डिन्य, भारद्वाज और अत्रि है। मङ्गेश, शान्ता, दुर्गा, महालक्ष्मी और लक्ष्मीनारायण कुलदेवता-जैसे पूजे जाते हैं। कुलकरणी, नादकरणी, मने, वारटे, चिक्कर मने और उगरांदवरू आदि कुशस्थलियोंके उपाधि हैं। पीछेके तीन उपाधि महिसूरके बदनूर वा इक्केरी राजावोंके समय (१५६०-१७६३ ई०)-से चले हैं। पहले यह बागले, पण्डित, वैद्य, तैलङ्ग और दूसरे शेनवी उपाधि धारण करते थे। किन्तु आज कल पण्डित भिन्न दूसरे उपाधि कम प्रचलित हैं। भारद्वाज और अत्रि नामक दो वंश शाष्टकार कहलाते हैं, जो कुशस्थलियोंमें मिल गये हैं। इनकी कुलदेवता महालसा हैं। कौण्डिन्य, वात्स्य और कौशिक गोत्रीयोंके कुलदेव मङ्गेश और कुलदेवी शान्तादुर्गाके मन्दिर गोआमें बने हैं। महालसाका भी मन्दिर गोआ ही में है। कुछ कुशस्थली अङ्कोला-हनमोत्ताके लक्ष्मीनारायणकी भी उपासना करते हैं। वह इनके मन्दिरमें अपनी अविवाहिता कन्यायें ले जाते समय उनका शिरोमुण्डन करा डालते हैं। पुरुषोंके शेषगिरि राव, विट्ठल राव, वेङ्कट राव, लक्ष्मण राव, सुबराव, रामचन्द्र राव, पद्मनाभय्या, शान्ततप्पय्या, गणपय्या, शेषगिरिअप्पा तथा वेङ्कप्पा; बालकोंके प्यारके पुत्तू, बालू एवं चेरटू और बालिकाओंके नाम अम्मनी, बालि और दुग्ग जैसे हैं। पहले नामके अन्तमें कनाड़ी अप्पा (बाप) और अय्या (महाशय) लगा दिया जाता था, किन्तु अब मराठी शब्द रावने उनका स्थान अधिकार कर लिया है। इसी प्रकार स्त्रियोंके नाममें कनाड़ी अम्माके स्थान पर मराठी बाई शब्द आया करता है। परन्तु स्त्रियोंके नामसे अभी अम्मा शब्द निकला नहीं है। जैसे-दुर्गाम्मा, कालम्मा, देवम्मा इत्यादि। एक ही गोत्र या उपाधिमें विवाह करना निषिद्ध है और कुशस्थली सारस्वतोंकी दूसरी श्रेणियोंके साथ न तो आदानप्रदान और न खाना-पीना ही रखते हैं। सिवा स्त्रियोंमें शरीरस्थूलता और परिच्छदकी तड़क भड़क तथा सफाईकी प्रीतिके शेनवियोंसे कुशस्थली कुछ अधिक विभिन्न नहीं। यद्यपि इनकी मातृभाषा कोङ्कणी है, यह कनाड़ी और मराठी लिखते पढ़ते और इनमें बहुतसे अंगरेजी और हिन्दी भी समझते हैं। इनके पास शेनवियोंसे अधिक गायें, भैंसें और नौकर चाकर रहते हैं। कुशस्थलियोंका प्रधान खाद्य चावल, नारियल, घी, दूध, गुड़, अचार, दाल और मसाला है। शाक्त लोग शेनवियोंकी भांति जो शाक्त हैं दुर्गा पूजाके समय पक्षियों और भेड़का मांस खाते और मद्यपान करते हैं। परन्तु बहुतसे दाल, भात, तरकारी और चटनी खा कर भी उपवास भङ्ग कर लेते हैं। पूजा आदिके समय यह शेनवियोंसे अच्छा खाद्य व्यवहार करते हैं। पुरुष नस्य संवते और स्त्री पुरुष दोनों पान सुपारी खाते हैं। कुशस्थली शेनवियोंसे भड़कीली पोशाक और उम्दा गहने पहनते हैं। यह साफ सुथरे, परिश्रमी, चालाक और बुद्धिमान हैं। पश्चिम भारतमें कोई जाति ऐसी मुहर्रिरी, वकालत और सरकारी नौकरी नहीं कर सकती। बहुतसे पुरुष सरकारी नौकरीमें मुंशी और दीवानी तथा माली अफसर हैं। कुछ वकील, कुछ जमीन्दार, गांवके मुखिये और मीर मुंशी और कुछ व्यवसायी तथा दलाल हैं, जो रुई, चावल और दूसरे अनाजका काम करते हैं, यह अपने जिलेमें बड़े प्रभावशाली हैं, यद्यपि हालमें इनका दबदबा कुछ घट गया है। कुशस्थली सामाजिक विषयमें हैविगों और कोङ्कणस्थोंके समकक्ष समझे जाते हैं।

इनके गुरु होनावरके शिराली स्थानमें रहते हैं। बालकोंकी शिक्षा स्कूलोंमें अच्छी तरह होती है। गुरुदेव विवाह नहीं करते।

कुशस्थलियोंमें विवाहके दिन सवेरे यज्ञोपवीत होता है। जब बालक काशीकी विद्या पढ़नेके लिये जानेका आग्रह करता, तो कन्याका पिता उसे आकर मनाता और अपनी पुत्रीसे विवाह कर देनेको कहता है। कन्यापक्षीय वरके घर सब प्रकारका खाद्य बड़े समारोहसे पहुंचाते हैं। वर जब अपने घरमें सबको खिला पिला कर ससुराल वापस आता, तो उसे रातको अपनी स्त्री ढूंढना पड़ती है। दूल्हनके स्थानमें

एक लड़केको जनाना पोशाक पहना कर बैठा देते हैं। स्त्रीके मिल जाने पर वरकनया दोनों ऐपनके बने नागोंकी पूजा करते हैं। विवाहोत्सव आठ दिन तक रहता है। परन्तु जब किसी पुरुषका पुनर्विवाह होता, तो एक ही दो दिनमें सब काम निबट जाता है।

कुशहस्त (सं० त्रि०) कुशाः हस्ते यस्य, बहुव्री०। हाथमें कुश लिये हुवा, जिसके हाथमें कुश रहे। श्राद्ध वा दान आदिके कार्यकाल हाथमें कुश ग्रहण करके ठहरना पड़ता है। इस प्रकारकी अवस्थामें कार्यकर्ताको कुशहस्त कहते हैं।

कुशा (सं० स्त्री०) कुश स्त्रियां टाप्। १ रज्जु, रस्सी। २ मधुककर्कटी, किसी किस्मका मीठा नीबू। ३ वल्गा, लगाम। ४ कुशतृण।

कुशाकार (सं० पु०) कुशैराकीर्यते समन्तात् वेष्ट्यतेऽत्र यज्ञकाले इत्यर्थः। कुश-आ-कृ अधिकरणे अप्। १ अग्नि, आग। कुशां रज्जुं करोतीति, कुशा-कृ-टः। २ रज्जुकारक, रस्सा बनानेवाला।

कुशाक्ष (सं० पु०) कुश इव सूक्ष्मं अक्षि यस्य, कुश-अक्षि समासान्त अच्। अक्ष्णोऽदर्शनात्। पा ५।४।७६। वानर, बन्दर।

कुशाग्र (सं० क्ली०) कुशस्याग्रम, ६-तत्। १ कुशका अग्रभाग।

"कुशाग्रे यापि कौन्तेय न द्रष्टव्यो महोदधिः।" (भारत, वनपर्व)

(पु०) २ बृहद्रथके पुत्र। (भागवत, ९।२२।६)

(त्रि०) ३ कुशाग्रतुल्य सूक्ष्म, कुशकी नोक जैसा पतला या पैना।

कुशाग्रपुर—मगधकी प्राचीन राजधानी राजगृहका नामान्तर। (अरिष्टनेमिपुराणान्तर्गत जैन हरिवंश, ११।६४)

कुशाग्रीय (सं० त्रि०) कुशाग्रमिव, कुशाग्र-छ। कुशाग्राच्छः। पा ५।३।१०५। कुशाग्रतुल्य, कुशकी नोक-जैसा।

"कुरु बुद्धिं कुशाग्रीयामनुकामीनतां त्यज।" (भट्टि)

कुशाङ्गुरीय (सं० पु०-क्ली०) कुशेन निर्मितोऽङ्गुरीयः, मध्यपदलो०। पवित्र, पैंती, श्राद्धादिके कार्यकाल हाथमें धारण की जानेवाली कुशकी अंगूठी।

कुशादगी (फा० स्त्री०) विस्तार, फैलाव, चौड़ाई।

कुशादा (फा० वि०) १ अनाहृत, खुला हुआ। २ विस्तृत, लम्बा-चौड़ा।

कुशादितैल (सं० क्ली०) कुश, गणिकारिका, नील-झिण्टी, नल, दर्भ, इक्षु, गोक्षुर, काइई, वक, सूर्यावर्त, शतमूली, शरा, धातकी, श्योणाक, वृक्षरुहा (बांदा), कर्णपुर तथा हिमसागर समस्त द्रव्योंके कषाय और कल्क द्वारा तैल पाक करना चाहिये। इसका नाम कुशादितैल है। इस तैलको पान, अभ्यङ्ग, वस्ति (पिचकारी) और उत्तरवस्तिमें प्रयोग करनेसे शर्करा, अश्मरी, मूत्रकृच्छ्र, प्रदर, योनिशूल और शुक्रदोष रोगका प्रतीकार पड़ता है। फिर कुशादितैलसे वन्ध्याका गर्भसञ्चार भी होता है। (भावप्रकाश)

कुशादिशालिपर्ण्य (सं० क्ली०) १ तृणपञ्चकमूल। २ विदारि गन्धादि गण।

कुशाद्यघृत (सं० क्ली०) १ अश्मरी रोगका घृतविशेष, पथरीका कोई घी। कुशादि क्वाथद्रव्योंका समष्टि १२॥ शरावक, ६४ शरावक जलमें क्वाथ करके १६ शरावक रहनेसे उतार लेना चाहिये। फिर शिला-जतु आदिका १ शरावक कल्क और ४ प्रस्थ घृत डालके निम्नलिखित द्रव्योंके क्वाथको पकानेसे कुशाद्य घृत प्रस्तुत होता है—कुशमूल, काशमूल, इक्षुमूल, पाषाणभेद, उलुमूल, भूमिकुष्माण्ड, वाराहीकन्द, वराह-क्रान्ता, वा शालिधान्यमूल, गोक्षुर, श्योणाक, पाटला, पाठा, शालिपशाक, पीतझिण्टी, श्वेतपुनर्नवा और शिरीष। कल्कद्रव्य निम्नलिखित हैं—शिलाजतु, यष्टिमधु, इन्दीवरवीज, त्रपुषवीज और कर्कटीवीज। (चक्रदत्त)

२ दूधका घृत। कुशाद्यतैल देखो।

कुशाद्यतैल (सं० क्ली०) दाहाधिकारका तैलविशेष, जलनका एक तेल। ४ शरावक तिलतैल वा घृत और क्वाथ द्रव्योंका १०० पल समष्टि ६४ शरावक जलमें क्वाथ करके १६ शरावक रह जानेसे उतार लेना चाहिये। फिर जीवकादिका ८ पल मिलित कल्क उसमें पाक करनेसे उक्त कुशाद्यतैल वा घृत प्रस्तुत होता है। क्वाथद्रव्य यह है—कुश, काश, शर, इक्षु, उसीर और शालपर्णी। (रत्नाकर)

कुशाध्य (सं० पु०) जनपदविशेष, एक बसती या मुल्क। इसका कुलाड्य और कुशाख्ड प्रभृति पाठान्तर मिलता है।

कुशाम्ब (सं० पु०) १ वसु उपरिचरके कोई पुत्र। (भागवत, ९।२२।६) २ निमिवंशीय कुशनामक नरपतिके पुत्र। वह भागवतमें कुशाम्ब और विष्णुपुराणमें कुशाम्ब नामसे अभिहित हुए हैं। (भागवत ९।१५।४, विष्णुपुराण ४।७ अ०)

कुशाम्ब नृपतिने पिताके आदेशसे कौशाम्बी नामक पुरी स्थापन की थी। कौशाम्बी देखो।

कुशाम्बु (सं० क्ली०) १ कुशका जल। (पु०) २ कुशाम्ब राजा।

कुशारणि (सं० पु०) कुशं शापदानार्थं जलं अरणिरिवास्य। दुर्वासा मुनि। दुर्वासा कोपनस्वभावप्रयुक्त सर्वदा शाप प्रदान करते थे। इसीसे उनका नाम कुशारणि पड़ गया।

कुशालगढ़—राजपूताना बांसवाड़ाके दक्षिण पूर्वका एक क्षुद्र देशीय राज्य। इसका भूमिपरिमाण ३४० वर्गमील है। इसमें २५७ ग्राम लगते हैं। लोकसंख्या १६२२२ है। इसमें सैकड़े पीछे ७१ भील निकलेंगे। कुशालगढ़की वार्षिक आय प्रायः ३५०००) रु० है। कुशालगढ़ ग्राम वा नगरमें डाकखाना, पाठशाला और औषधालय बना है। कुशालगढ़के राजा राठोर राजपूत हैं और योधपुरनगर प्रतिष्ठाता योधसिंहके वंशज होनेका दावा करते हैं। पहले वह पूर्वको गये और रतलामके शासक रहे, जहां आज भी उनके ६० गांव हैं और ६००) रु० वार्षिक उनका करस्वरूप वह रतलामके राजाको देते हैं। ई० १७ वें शताब्दके पिछले भाग उन्होंने कुशालगढ़प्रान्त अधिकार किया। बांसवाड़ा-वासियोंके कथनानुसार बांसवाड़ाके राजा कुशालसिंहने भीलोंसे इस प्रान्तको छीन अपने नाम पर नामकरण करके अखय राजको उनकी सेवाके पुरस्कारमें दे डाला था। परन्तु कुशालगढ़-वंशका कहना है कि अखय राजने स्वयं उसे भीलोंसे ले लिया फिर वंशने अखय राजको पराजय किया। इसका नामकरण भील-सरदार कुशलके नाम पर ही हुआ था। जो हो, परन्तु उत्तर-पश्चिममें राज्यका एक भागस्वरूप तांबेसड़ा जिला बांसवाड़ेके किसी राजाने जागीरकी भांति दिया था और कुशालगढ़के राव ५५०) रु० करस्वरूप बांसवाड़ाको पहुंचाते हैं। राव अब पूर्ण रूपसे स्वाधीन हैं। केवल उन्हें बांसवाड़ाको कर देना और महारावलके राज्याभिषेक तथा विवाहादिके समय बांसवाड़ामें उपस्थित होना पड़ता है। वह अपने राज्यमें दीवानी और फौजदारी दोनों महकमोंका अधिकार रखते हैं, फांसी देने या कालापानी करनेमें राजपूताना गवर्नर जनरलके एजेण्टसे अनुमति लेना पड़ती है।

कुशालसिंह—बांसवाड़ाके एक राजा। इन्होंने प्रायः ई० १७ वीं शताब्दीके अन्तको भीलोंसे दक्षिणपूर्व देश छीना और अपने नामपर उसका कुशालगढ़ नामकरण किया था। कुशालगढ़ देखो।

कुशालसिंह—सगरवंशीय एक राजा। चेतनचन्द्र नामक किसी कविने (जन्म १५५९ ई०) इनके लिये शालिहोत्रपर एक निबन्ध लिखा था।

कुशाल्मलि (सं० पु०) कुत्सितः शाल्मलिः, कुगतिस०। १ रक्तरोहीतक, लाल रोहीतक। २ रोहीतक वृक्ष, एक पेड़।

कुशाल्मली (सं० स्त्री०) कुशाल्मलि देखो।

कुशावती (सं० स्त्री०) नगरविशेष, एक शहर। वह रामपुत्र कुशकी राजधानी रही। (रघुवंश १५।९७, १६।२५) रामचन्द्रने कुशावती नगरी स्थापन की थी—

"कुशस्य नगरी रम्या विन्ध्यपर्वतरोधसि।
कुशावतीति नाम्ना सा कृता रामेण धीमता॥" (रामायण ७।१२१।४)

कुशावर्त (सं० पु०) कुशस्य जलस्य आवर्तो यत्र, बहुव्री०। १ तीर्थविशेष।

"गङ्गाद्वारे कुशावर्ते विल्वके नीलपर्वते।
तथा कनखले स्नात्वा धूतपाप्मा दिवं व्रजेत्॥"
(महाभारत, १३।२५ अ०)

२ ऋषभ नृपतिके शतपुत्रके मध्य भरतके कनिष्ठ। (भागवत ५।४।१०)

कुशावलेह (सं० पु०) प्रमेहाधिकारका औषधविशेष, जिरियान्‌की एक दवा। वीरणमूल (खसकी जड़), कुशमूल, काशमूल, कण्टकतृणमूल और खग्गड़ मूलका

१० पल प्रस्थ ६४ शरावक जलमें क्वाथ करके ८ शरावक जल बचनेसे उतार लेना चाहिये। फिर उसे २ शरावक खण्ड मिला पकाते और लेहभूत होनेपर उसमें निम्नलिखित द्रव्योंका २ तोले प्रक्षेप मिलाते हैं— यष्टीमधुक, कर्कटीवीज, कुष्माण्डवीज, त्रपुषवीज, वंशलोचना, आमलकपत्र, एलात्वक् (दालचीनी), नागकेशरपुष्प, वरुणत्वक, गुड़ूची और प्रियङ्गु। (चक्रदत्त)

कुशाश्व (सं० पु०) सूर्यवंशीय एक राजा। (रामायण १।४७।१६) उनकी राजधानी विशाला रही। कुशाश्व सहदेवके पुत्र और सोमदत्तके पिता थे।

कुशासन (सं० पु०) कुशैर्निर्मितमासनम्, मध्यपदलो०। १ कुशतृणनिर्मित आसन। दान, यज्ञ, श्राद्ध, उपासना प्रभृति समस्त कार्यकालको कुशनिर्मित आसनपर बैठनेका विधि प्रचलित है। कुशासनपर उपवेशन न करके किसी कार्यके करनेका कहां विधान है? किसी उत्तम आसनके नीचे थोड़ेसे कुश डालके भी बैठ जाते हैं। श्राद्धके समय पितृपुरुषोंको आवाहन करके आसनके निमित्त कुश ही देनेका विधि है। कुश देखो।

कुशिंशपा (सं० स्त्री०) कुत्सिता शिंशपा, कुगतिस०। कपिलवर्ण शिंशपा, काली शीशम।

कुशि (सं० पु०) पेचक, उल्लू।

कुशिक (सं० पु०) कुशः कुशनामा नृपोजनकत्वे नास्त्यस्य, कुश-ठन्। १ विश्वामित्रके पितामह, गाधिके पिता। महाभारतके मतानुसार महातेजस्वी च्यवन महर्षिने ध्यानबलसे समझ लिया था कि कुशिकवंशसे उनके वंशमें क्षत्रियधर्मका सञ्चार होते ही उसकी अवनति होगी। वह कुशिकवंश आगे ही भस्मसात् करनेके अभिलाषसे महाराज कुशिकके निकट उपस्थित होके कहने लगे—"महाराज! हम आपके साथ एकत्र वास करना चाहते हैं। आपका जो अभिप्राय हो, प्रकाश कर दीजिये।" महाराज कुशिकने विनीतभावसे कहा—"विधान ऐसा है कि केवल पत्नी ही स्वामीके साथ एकत्र वास करेगी। महर्षे! आप जो अभिलाष प्रकट करते हैं, वह धर्मशास्त्र-सम्मत नहीं। फिर भी आप जब हमारे साथ एकत्र वास करना चाहते हैं, तो अवश्य हम उसमें सम्मत हैं।" कुशिकने महर्षिको यथानियम पूजा की थी। फिर राजाने कहा— "भगवन्! हम और हमारी महिषी दोनों आपके सम्पूर्ण अधीन हैं। अनुमति कीजिये, हम आपका क्या काम करेंगे।" मुनिने उत्तर दिया—"हम कोई प्रार्थना न करेंगे। तुम्हारा और तुम्हारी महिषीका यदि अभिप्रेत हो, तो हम किसी कार्यका अनुष्ठान करें। इस नियमके अनुष्ठानमें तुम दोनोंको हमारी परिचर्या करनी पड़ेगी।" महाराज और राजमहिषीने पुलकित मन स्वीकार किया—"हम अवश्य ही आपकी अनुमति प्रतिपालन करेंगे।" फिर वह महर्षिको एक उत्कृष्ट गृहके मध्य ले गये और कहने लगे—"आपका व्यवहारोपयोगी समस्त ही प्रस्तुत है। आप स्वेच्छानुसार इस स्थानमें अवस्थिति कीजिये।" क्रमसे सन्ध्या उपस्थित हुई। महर्षि च्यवनने आहारादि क्रिया समापन कर राजाको सम्बोधन करके कहा था— "हमारी निद्राका समय उपस्थित है। हमारे सो जानेसे हमको मत जगावो, तुम दोनों अविश्रान्त रूपसे हमारी परिचर्यामें नियुक्त रहो"। राजा और रानीने वही स्वीकार किया।

कियत्क्षण पीछे महर्षि निद्रित हुवे। राजा और रानी दोनों अविश्रान्त भावसे उनकी परिचर्या करने लगे। एकविंशति दिवस अतीत हो गये, तथापि मुनिकी निद्रा न टूटी। राजा और रानी दोनोंने आहार निद्रा परित्याग करके हृष्टान्तःकरणसे उनकी परिचर्या की थी। एकविंशति दिवस अतिवाहित होनेपर च्यवन स्वयं जागरित हुये और राजा तथा रानीसे कोई बात न कर गृहसे बाहर निकल गये। राजा और महिषी क्षुधा-तृष्णासे अत्यन्त आतुर होते भी उनका अनुगमन करने लगीं। कियत्दूर गमन करके महर्षि अन्तर्हित हुये। उन्होंने महर्षिके अलौकिक व्यापारसे विस्मित हो प्रत्यागमन किया था। गृहमें प्रवेश करके उन्होंने देखा कि महर्षि पूर्ववत् निद्रित हैं। उस समय उनके विस्मयको परिसीमा बहुत बढ़ी, राजा और महिषीने पुनर्वार उनकी चरणसेवा करना आरम्भ किया। पुनरपि एकविंशति दिन अतीत हो गये। महर्षि च्यवनने जागरित होके

कहा था—"हम स्नान करेंगे। तुम हमारे अङ्गमें भली भांति तेल मर्दन करो।" राजा और महिषीने तेल मल दिया। महर्षि स्नान-शालामें पहुंचके अन्तर्हित हुये। कियत्क्षण पीछे राजा और रानीने देखा कि मुनि स्नान करके सिंहासन पर बैठे थे। उन्होंने समस्त आहारीय आयोजन किया। उस समय महर्षि च्यवनने शय्या, आसन और बहुमूल्य समस्त वस्त्रादि एकत्र करके जला दिये। राजा और रानीको इससे अणुमात्र भी क्षोभ न लगा। कियत्क्षण पीछे ही महर्षि फिर अन्तर्हित हुवे। अनन्तर एक दिन उन्होंने कहा था—'राजन्! तुम और तुम्हारी पत्नी दोनों मिल हमारा रथ वहन करके ले चलो और इसका भी विधान करो कि पथिमध्य हमारे समक्ष जो उपस्थित होंगे हम उनको इच्छानुसार द्रव्यादि प्रदान करेंगे।" राजा सम्मत हो गये। राजा और रानीने महर्षिका रथ वहन करना आरम्भ किया था। कियत्क्षण पीछे महर्षि एक चाबुकसे दम्पतीको निदारुण प्रहार करने लगे। किन्तु उससे वह अणुमात्र भी दुःखित न हुये। महर्षि कल्पवृक्षकी भांति अजस्र दान करते रहे। राजा और रानीमें उससे कोई विकार लक्षित न हुवा। च्यवनने कहा था—"हम इस रम्य काननमें अवस्थिति करेंगे। तुम इस समय जावो। प्रभातको फिर आगमन करना।" राजा और रानी दोनों उस समय लौट पड़े। परदिन प्रातको तपोवनमें उपस्थित होके उन्होंने देखा कि उसने अमरावतीसे भी उत्कृष्ट शोभा धारण की थी। महाराज कुशिकने विस्मयाविष्ट हो इतस्ततः भ्रमण करते करते एक रत्नमय आसन पर उपविष्ट महर्षिको देख लिया। महर्षि उसी समय अन्तर्हित हो गये। कियत्क्षण पीछे काननके मध्य वह फिर एक कुशासन पर उपविष्ट देख पड़े। राजाने समझा कि वह समस्त महर्षिके तपोबलसे होता था। राजा विस्मित हो महिषीको सम्बोधन करके कहने लगे—"प्रिये! तपोबल विश्वका राज्य लाभ करनेसे भी श्रेयस्कर है।" फिर राजाने महर्षि च्यवनके निकट जाके इस समस्त अलौकिक घटनाका कारण जिज्ञासा किया। महर्षि कह चले—"महाराज! हमने ब्रह्माके मुखसे सुना है कि तुम्हारे वंशसे हमारे वंशमें क्षत्रिय-धर्मका सञ्चार होगा और तुम्हारे पौत्रको ब्राह्मणत्व मिलेगा। हमने यह बात सुन तुम्हारा वंशविनाश करनेकी कामनासे तुम्हारे गृहमें आगमन किया था। किन्तु हमने किसी बातमें तुम्हारा छिद्र न देखा कि अभिशाप देके भस्म करते। तुम्हारे व्यवहारसे हम अत्यन्त सन्तुष्ट हुए हैं। वर प्रार्थना करो।" राजाने कहा—"हमारी यही प्रार्थना है कि आपका वाक्य सत्य हो और हमारे वंशीयोंको ब्राह्मणत्व मिल सके।" महर्षिने तथास्तु कहके वर दे दिया। (भारत, अनुशासन, ५२-५३ अ०)

२ कुशिकस्यापत्यादि, कुशिक-अञ् तस्य लोपः। इञ्जोप। पा २।४।६४। कुशिकगोत्रीय। "गौर्भो रथं कुशिकासो हवामहे।" (ऋक् ३।२६।१) 'कुशिकासः कुशिकगोत्रोत्पन्नाः।' (सायण)

३ जनपदविशेष, कोई बस्ती या मुल्क। ४ फाल, फारी। ५ तैलशेष, तेलका तलछट। ६ सर्जवृक्ष, धूनेका पेड़। ७ विभीतकवृक्ष, बहेड़ेका पेड़। ८ अश्वकर्णवृक्ष, सालका कोई पेड़। ९ भल्लातकवृक्ष, भिलावेंका पेड़। १० बदर, बेर। (त्रि०) ११ वक्रदृष्टि, कैया, ढेड़का।

कुशिकन्धर (सं० पु०) एक मुनि। (लिङ्गपुराण, ७।४७)

कुशिका (सं० स्त्री०) कुशी स्वार्थे कन्-टाप्। फाल, हलकी कुसी।

कुशिग्रामक (सं० पु०) मल्लराज्यके अन्तर्गत बुद्धदेवका निर्वाणस्थान। उसका अपर नाम कुशिनगर है।

कुशित (सं० क्ली०) कुश-इतः। "कुशादिभ्य इतः स्यात्।" (रामशर्मकृत उणादिकोषटीका, १।२९७।) १ जलमिश्रित वस्तु, पानी मिली हुई चीज। (त्रि०) २ जलमिश्रित, पानी मिला हुवा।

कुशिनगर (सं० क्ली०) बौद्धशास्त्र-वर्णित बुद्धदेवका निर्वाणस्थान। वर्तमान नाम कुशिया है। वह युक्तप्रदेशमें गोरखपुरसे ३५ मील पूर्व अवस्थित है। प्राचीन कालमें उक्त स्थान बौद्धोंके एक प्रधानतम तीर्थ जैसा प्रसिद्ध था। अति दूरसे सहस्र सहस्र बौद्ध-तीर्थयात्री उसके दर्शनको आगमन करते थे। ४००ई० को चीनपरिव्राजक फाहियान वहां बौद्धराजनिर्मित

विस्तर स्तूप और विहार देख गये। फिर ई० सप्तम शताब्दको चीनपरिव्राजक युएनचुयाङ्ग कुशिनगर (किउ-शि-न-कि ए लो) पहुंचे। उन्होंने उसका दर्शन करके अपने भ्रमण-वृत्तान्तमें इस प्रकार लिखा है।

'कुशिनगर राजधानी आज कल विध्वस्त है। ग्राम नगर आदि जनशून्य मरुप्राय हो गये हैं। प्राचीन राजधानीका इष्टक-निर्मित प्राचीर प्राय: एक कोस (१२ लि) विस्तृत है। तोरणद्वारके ईशान कोणमें अशोकराजस्थापित स्तूप और चन्द्रभवन है। नगरके वायुकोणमें अजितावती (वा हिरण्यवती) नदीके पश्चिम तटसे अनतिदूर सालवन लहराता है। इसी स्थानमें बुद्धदेव निर्वाणप्राप्त हुए। निकट ही विहारके मध्य उनकी मूर्ति प्रतिष्ठित है। विहारके पार्श्वमें अशोकराजका बनाया हुआ स्तूप है। वहां एक प्रस्तरस्तम्भपर बुद्धदेवके निर्वाणकी कथा खोदित है। उससे थोड़ी दूर सुभद्र और वज्रपाणिके स्मरणार्थ भी स्तूप बना है। नगरके उत्तर नदीपारसे कुछ दूर तीसरा स्तूप है। वहां बुद्धदेवके मृतदेहका सत्कार किया गया था। उसीके निकट अशोकराज स्थापित कोई दूसरा स्तूप है। वहां बुद्धदेवने प्रियशिष्योंको भी श्रीपद देखाया था। उक्त स्तूपमें उनके पूतदेहका भस्मावशेष ८ भागोंमें विभक्त हुवा।'

ई० सप्तम शताब्दको चीनपरिव्राजकने जो देखा था, वर्तमान कुशिया ग्राममें वह कुछ भी नहीं रहा। चीन-परिव्राजक वर्णित जिस सालवनमें बुद्धने निर्वाण पाया, आजकल वही स्थान 'माताकुंवर का-कोट' (मृत कुमारका गढ़) कहाया है। अल्प दिन हुए वहां प्राय: १४ हाथ ऊंची बुद्धदेवकी एक प्रतिमूर्ति मिली थी। मूर्तिका अङ्ग नानारंगसे चित्रित है। उक्त सुवृहत् बुद्धमूर्ति कुशिनगरके ही एक हिन्दू देवमन्दिरमें रक्षित हुई है। उसको छोड़ दूसरी ८ हाथकी ऊंची नीलप्रस्तरकी बुद्धमूर्ति भी है। गांवके लोग उसे "माता कुंवर" (मृत कुमार) कहते और पूजा किया करते हैं। यही बुद्धकी निर्वाण-मूर्ति-जैसी अनुमित होती है। कुशिनगरमें देवीस्थान वा रामभारटोला नामक एक वृहत् स्तूप गिरा पड़ा है। पहले वहां रामभार-भवानीदेवीका मन्दिर रहा।

कुशिम्बि (सं० स्त्री०) कुत्सिता शिम्बी पृषोदरादित्वात् ह्रस्वः। शिम्बीविशेष, किसी किस्मकी सेम। वह विपाक तथा रसमें मधुर, बलप्रद और पित्तनिवर्हण होती हैं। (वैद्यकनिघण्टु)

कुशिम्बी, कुशिम्बि देखो।

कुशी (सं० त्रि०) कुशाः सन्त्यस्य, कुश-इनि। १ कुश-युक्त, कुशवाला।

"दण्डी सण्डी कुशी चीरी घृताक्तो खेलीकृतः।" (भारत १३। १५ अ०)

(पु०) २ वाल्मीकि मुनि।

कुशी (सं० स्त्री०) कुश स्त्रियां ङीष्। जानपदकुण्ड-गोणस्थलभाजनागकाल-नील-कुश......। पा ४।१।४२। १ लौह विकार, लोहेको चीज। २ फाल, फरी।

कुशीद (सं० क्ली०) कु-सद्-श: पृषोदरादित्वात् सस्य वा शत्वम्। १ रक्तचन्दन, लालचन्दन। २ वृद्धिजीविका, सूदखोरी। ३ फाल, हलका फल। ४ मुण्डमालातन्त्र।

कुशीनार—कसिया। कुशिनगर देखो।

कुशीपु (सं० पु०) अन्न, चारा, अनाज।

कुशीरक (सं० पु०) कुत्सितः शीरको यत्र कर्षण इत्यर्थः। क्षेत्रविशेष, एक कड़ी जमीनवाला खेत। जिस क्षेत्रमें कर्षणकाल लाङ्गलका फाल टेढ़ा पड़ जाता, वही कुशीरक कहाता है।

कुशील (सं० त्रि०) कुत्सितं शीलमस्य, बहुव्री०। मन्दस्वभावयुक्त, नाशायस्ता, बदमिजाज।

कुशीलव (सं० पु०) कुत्सितं शीलं तदस्त्यस्य, कु-शील-व:।

"वप्रकरणे अन्येभ्योऽपि दृश्यते।" (महाभाष्य, पा ५। २। १०९)

१ नट, कलाबाज।

"यन्नाट्यवस्तुनः पूर्वं रङ्गविघ्नोपशान्तये कुशीलवाः प्रकुर्वन्ति"

(साहित्यदर्पण, ६४ परिच्छेद)

मनुके मतमें नटोंका व्यवसाय निन्दित है। वह एक पंक्तिमें बैठके भोजन करनेके अयोग्य होते हैं।

(मनु, ३। १५५-१५७)

२ चारण, भाट। ३ गायक, गानेवाला। ४ कथक, कहनेवाला। ५ वाल्मीकि मुनि। ६ रामचन्द्रके लव और कुश दोनों पुत्र।

कुशीवश (सं० पु०) कुशीव कुशवान् सन् शेते अवतिष्ठते, कुशव-शी ड: । वाल्मीकि मुनि ।

कुशुम्भ (सं० पु०) कौ पृथिव्यां शुम्भति शोभते जलपरिपूर्ण: सन्नित्यर्थ:, कु-शुम्भ-अच् । १ पात्रविशेष, कोई बरतन । २ तपस्वीका जलपात्र, फकीरके पानीका बरतन ।

कुशूल (सं० पु०) कुस-ऊलच् पश्चात् पृषोदरादित्वात् सस्य शत्वम् । खर्जिपिञ्जादिभ्य ऊरोलचौ । (उण् ४।९०) १ धान्यागार, अनाजकी बखारी या खत्ती । उसे हिन्दीमें कोठला और देहरी भी कहते हैं । संस्कृत पर्याय—अन्नकोष्ठक और ब्रीह्यागार है । २ तुषाग्नि, भूसीकी आग । ३ स्थान, जगह । ४ कटाह, कड़ाह । ५ कोई दानव । ६ कुत्सित शूल, बुरा दर्द ।

कुशूलधान्य (सं० क्लो०) कुशूलपरिमितं धान्यम्, मध्यपदलो० । तीन वर्षके लिये आहारोपयोगी सञ्चित धान्य, कुठलेका अनाज ।

कुशूलधान्यक (सं० क्लो०) कुशूलमितं धान्यमस्य, बहुव्री० कप् । तीन वर्षके लिये आहारोपयोगी धान्य सञ्चित रखनेवाला गृहस्थ, जिसके घरमें तीन सालके लिये खानेको अनाज रक्खा हो ।

"कुशूलधान्यकोवासात् कुम्भीधान्यक एव वा ।" (मनु ४।७)

कुशेलय (सं० क्लो०) कुशे जले लीयते जलं श्लिष्यतीत्यर्थ:, कुशे-ली-अच्, अलुक्स० । पद्म, कंवल ।

कुशेशय (सं० क्लो०) कुशे जले शेते, कुशे-शी-अच्, अलुक्स० । १ पद्म, कमल ।

"कुशेशयाताम्रतलेन कश्चित् करेण रेखाध्वजलाञ्छनेन ।"

(रघुवंश, ६-१८)

२ सारसपक्षी । (पु०) ३ कर्णिकारवृक्ष, कनियारी । ४ कुशद्वीपका कोई पर्वत । (विष्णुपुराण, २।४।४१)

कुशेशयकर (सं० पु०) कुशेशयं पद्मं करे यस्य, बहुव्री० । विष्णु ।

कुशोदक (सं० क्लो०) कुशसंस्पृष्टमुदकम् । दानार्थ कुशसहित जल ।

कुशोदका (सं० स्त्री०) एक देवी ।

कुश्ता (फा० पु०) धातुको रासायनिक क्रिया द्वारा जारण करके बनाया हुआ भस्म ।

कुश्ती (फा० स्त्री०) मल्लयुद्ध, पकड़, जोड़, पहलवानोंकी लड़न्त ।

कुश्तीबाज (फा० वि०) मल्लयुद्धमें अभ्यस्त, कुश्ती लड़नेवाला ।

कुश्रि (सं० पु०) एक आचार्यका नाम ।

कुश्रुत (सं० त्रि०) कु ईषत् श्रुतम्, कुगतिस० । अपरिस्फुट भावसे श्रुत, कम सुना हुवा, जो साफ साफ सुन न पड़ा हो ।

कुश्वभ्र (सं० क्लो०) कु ईषत् श्वभ्रं छिद्रम्, कुगतिस० । क्षुद्र छिद्र, छोटा छेद ।

कुषक (सं० पु०) विभीतकवृक्ष, बहेड़ेका पेड़ ।

कुषण्ड (सं० पु०) एक पुरोहित ।

कुषल (सं० त्रि०) कुश-ला-क बाहुलकात् शस्य षत्वम् । चतुर, दक्ष, पटु, होशियार, चालाक ।

कुषवा (वै० स्त्री०) एक राक्षसी ।

"ममचन त्वा युवति: परास ममचन त्वा कुषवा जगार ।"

(ऋक् ४।१८।८) 'कुषवानाम्नी काचित् राक्षसी ।' (सायण)

कुषाकु (सं० पु०) कुष-काकु: । कठि कु (क) शिभ्यां काकु: । (उण् ३।७७) १ अग्नि, आग । २ वानर, बन्दर । ३ सूर्य, सूरज । (त्रि०) ४ उत्तापक, तपानेवाला ।

कुषान (कुषन, गुषन) एक युएची राजवंश । पहले यह वंश पांच श्रेणियोंमें विभक्त था, किन्तु पीछे मिल कर एक हो गया । यह लोग अपना पूर्व अनिश्चित वास छोड़ सभ्य बने थे । इनके राज्य बाकट्रियामें कहते हैं हजारों शहर रहे । यह बात शायद बढ़ा कर कही गयी हो । परन्तु सम्भवत: बाकट्रिया ईरान और यूनानकी सभ्यताका मिलनस्थान था । इसके राजावों देमेत्रिअस (Demetrius) और यूक्रेतिदसने (Yukretedus) भारतको आक्रमण किया था । इस लिये कोई आश्चर्यकी बात नहीं कि युद्धप्रिय युएची जातिके कुषानोंने यूनानियों और ईरानियोंका अनुसरण किया हो और अपने साथ उनको सभ्यताका कुछ अंश लेते आये हों ।

इस आक्रमणका विवरण और भारतके कुषानोंका इतिहास ठीक समझा जा नहीं सकता, यद्यपि हमें राजावोंके नाम विदित हैं । भारतीय साहित्यमें इस समयका अल्प उल्लेख है । कुषानोंकी सब बातें चीना

कहानियों, शिलाफलकों और सिक्कोंसे ली गयी है। इस साक्ष्यसे यह आशय निकलता है कि कोजूल-कदफिस, कुजूलाकस् या क्यिउ-चिउ-किओ नामक किसी राजाने (४५-८५? ई०) युएची जातिकी पांच विभिन्न श्रेणियोंको एकमें मिला दिया, काबुल उपत्यकाको जय किया और यूनानी राज्यका अवशिष्ट अंश दबा लिया। सम्भवत: कुछ दिन पीछे विमोकदफिस्, हिमकसिस् या एन-काव-चिन-ताई उनके उत्तराधिकारी हुए और उन्होंने उत्तर भारतको पूर्णरूपसे विजय किया। फिर कनिष्कका राजत्व (१२३-५३? ई०) हुआ, जो पूर्व एशियाके भीतर बाहर बौद्धधर्मके संरक्षक और तृतीय बौद्धसङ्घके आह्वानकारी-जैसे प्रसिद्ध हैं। कहते हैं उन्होंने भी काशगर, यारकन्द और खुतन जय किया था। उनके उत्तराधिकारी हुविष्क और फिर वासुदेव हुए, जो २२५ ई०को अवश्य मर गये होंगे। वासुदेवके राजत्व पीछे कुषानोंकी शक्ति क्रमश: क्षीण पड़ी और सिन्धुकी उपत्यका और उत्तर-पूर्व अफगानस्थानको खदेर दिये गये। चीना ग्रन्थकारोंकी वर्णनाके अनुसार यहां उनका राजपरिवार किदार जाति कर्तृक दूरीभूत हुआ। किदार भी युएची जातिके ही वंशधर थे। कुषानोंके भारतको अग्रसर होते समय वह बाकट्रियामें ही रह गये थे। पीछेको किदारी हिन्दूकुशके दक्षिण हट गये ; कारण चीना सीमाप्रान्तसे युआङ्ग-युआङ्ग पश्चिमको बढ़े थे। ४३० ई० के समय कन्दाहारमें कुषानोंका एक क्षुद्र राज्य फूलाफला था, परन्तु हूणोंके आक्रमणोंसे विध्वस्त हुआ।

कुछ ग्रन्थकार कुषान-वंशकी उपर्युक्त वंशावली स्वीकार नहीं करते और सोचते हैं—कनिष्कको ईसासे आगे यहां तक कि उनसे ५८ वर्ष पहलेके व्यक्ति मानना चाहिये और हुविष्कके पहले या पीछे वसुष्क नाम जैसे कोई दूसरे भी राजा रहे। किसी प्रकार ई० सन्‌से बहुत पहले या पीछे युएचियोंका भारत आक्रमण नहीं हुवा और भारतकी सभ्यता पर उसका बड़ा प्रभाव पड़ा। उनके सिक्कोंमें आचरणोंका अपूर्व तारतम्य है, जो बहुतसी जातियोंसे लिया गया है। साधारण रूप और आकृति रोमक है। लेख यूनानी या खरोष्टी भाषामें लिखा है। मुद्राके पृष्ठ पर ईरानी, यूनानी या हिन्दुस्थानी देवता (शिव वा कार्तिकेयदेव)-का चित्र है। अग्रभागमें राजाकी तसवीर बनी है, जो लम्बा खुला कोट, घुटने तक जूते और लंबी टोपी पहने हैं। गन्धारकी चित्रशालिका जिसके नमूने कनिष्कको राजधानी पुरुषपुर (वर्तमान पेशावर)-से गये, एक यूनानी रोमक-कलाकी शाखा थी जो पूर्वीय धार्मिक विषयोंके लिये उपयुक्त बनी। युएची लोग ही प्रधानत: उसे भारतमें लाये। उसके भारत आगमनका कारण ई० से १८०-१३० वर्ष पहले यूनान और बाकट्रिया कर्तृक भारत विजय भी था। भारत और बौद्ध एशिया पर गान्धार-प्रभावकी आवश्यकता मानी हुई बात है। कनिष्क और दूसरे राजा स्वहास्पद थे, परन्तु किसी प्रकार निषेधक बौद्ध न थे। फिर खुतन और काशगरकी जीतसे चीनमें बौद्धमत फैलनेकी अवश्य सुविधा हुई होगी। पीछेको ईरानी उपाधि कुषान राजाओंका अपना-जैसा बन गया। सिक्कोंकी मूर्ति विशाल नासायुक्त, दीर्घचक्षु, श्मश्रु पूर्ण और मोटे होठोंकी है। इससे युएची लोग मङ्गोलों या उगरो-फिनिकोंकी अपेक्षा तुर्कोंसे अधिक मिलते जुलते देख पड़ते हैं। फिर संस्कृतमें तुर्कोंको 'तुरुष्क' लिखते हैं। इससे युएचियोंका और भी तुर्कोंके साथ घनिष्ठ सम्बन्ध प्रमाणित होता है। मुसलमान-ग्रन्थकार अलबेरूनीका कहना है कि पहले भारतके राजा तुर्क (जैसे कनिष्क) रहे। कुछ ग्रन्थकारोंके कथनानुसार युएची शब्द 'युत'-का अपभ्रंश है, जिसका अर्थ 'जाट' होता है।

कुषार (सं० पु०) एक व्यक्ति।

कुषित (सं० त्रि०) कुष्-क्त। १ जलमिश्रित, पानी मिला। २ प्रसन्न, खुश।

कुषीतक (वै० पु०) १ पक्षिजातिविशेष, किसी किस्मकी चिड़िया। २ ऋषिभेद, कोई महात्मा। ३ कुषीतकके पुत्रपौत्रादि।

कुषीद (सं० क्ली०) कुस्-ईद पश्चात् पृषोदरादित्वात् सस्य षत्वम्। कुषेरक्तोभेदैताः। (उण ४। १०६) १ वृद्धिके अर्थ

धन प्रदान, सूदखोरी। (त्रि०) २ उदासीन, निश्चेष्ट, गमगीन, निठल्ला। ३ कुषीदिक, सूदखोर।

कुषीदी (सं० पु०) एक अध्यापक। वह महामुनि पौष्यिञ्जिके शिष्य थे। (विष्णुपुराण, ३।६।६)

कुषुम्भ (वै० पु०) कीटविशेषको विषथली, किसी कीड़ेके जहरकी थैली।

"भिनद्मि ते कुषुम्भं यस्ते विषधानः" (अथर्व १।३२।६)

कुषुम्भक (वै० पु०) नकुल, नेवला।

"कुषुम्भकस्तद् ब्रवीद्गिरे प्रवर्तमानकः।" (ऋक् १।१९१।१६)

कुष्ठ (सं० पु०-क्लो०) कुष्-क्थन्। इनि-कुषि-नीर-मि-काशिभ्यः क्थन्। उण्‌ २।२। यद्वा कुत्सितं तिष्ठति, कु स्था-कः पश्चात् सस्य षत्वम्। अम्बा म्बगोभूमिसव्यापद्विवि कु……। पा ८। ३।९७। १ ओषधिविशेष, एक जड़ीबूटी। उसे चलती हिन्दीमें कुट कहते हैं। (Costus Specious or Arabicus) कुष्ठका संस्कृत पर्याय—कदाख्य, दुष्ट, व्याधि, परिभाव्य, वाप्य, उत्पल, आप्य, जरण, गदाख्य, गदाह्व, गदाह्वय, कौवेर, भासुर, काकल, नीरुज, कुठिक, रुजा, गद, आमय, पारिभद्रक, राम, वाणीरज, पावन, कुत्सित, पाकल और पद्मक है। भावप्रकाशके मतानुसार वह उष्ण, कटु, स्वादु, शुक्रजनक, तिक्त और लघु होता है। वह वातरक्त, वीसर्प, कास, कुष्ठ, वायु और कफरोगको नाश करता है।

कुष्ठका प्रकार भेद भी होता है। पुष्करमूल एक प्रकारका कुष्ठ ही है। उसका संस्कृत पर्याय पौष्कर, पुष्कर, पद्मपत्र और काश्मीर है। भावप्रकाशके मतमें पुष्करमूल कुष्ठ, कटु, तिक्त और वातश्लेष्मिकज्वर, शोथ, अरुचि तथा श्वासरोगनाशक है। पार्श्वशूल रोग पर वह बड़ा उपकार करता है।

२ विषभेद, कोई जहर।

३ रोगविशेष, कोढ़की बीमारी। वैद्यशास्त्रके मतानुसार सातप्रकारका महाकुष्ठ और ग्यारह प्रकारका क्षुद्र कुष्ठ होता है।

संहिताकारोंके मतमें कोई कुष्ठ महापातक और कोई अतिपातकका चिह्न है। भविष्यपुराणमें लिखा है कि विचर्चिका, दुश्चर्मा, चर्चरीय, विकर्चु, व्रणताम्र और कृष्ण तथा श्वेत कुष्ठोंमें जिस व्यक्तिके गण्डदेश, कपाल, नासिका एवं सर्वगात्रमें कुष्ठव्रण रहता, वह देवकार्य, पितृकार्य प्रभृति समस्त कार्यके अयोग्य ठहरता है। उसके मरने पर उसे तीर्थ अथवा वृक्षमूलमें प्रोथित करना चाहिये। उसका पिण्डदान, तर्पण अथवा दाहकार्य करना अनुचित है। यदि छह मास अथवा तीन मासके कुष्ठरोगीको कोई दाह करता, तो उसे दाहान्तर चान्द्रायण प्रायश्चित्त करना पड़ता है। विष्णुसंहितामें कुष्ठरोगको पूर्वजन्माचरित अतिपातकका चिह्नप्रकाश बताया है। शातातपने अपने कर्मविपाकमें कुष्ठरोगको महापातकके लक्षण जैसा निर्देश किया है। कुष्ठरोग देखो।

४ कुलिञ्जनवृक्ष, कुलींजनका पेड़।

कुष्ठकण्टक (सं० पु०) खदिर वृक्ष, खैरका पेड़।

कुष्ठकालानलरस (सं० पु०) कुष्ठाधिकारका रसविशेष, कोढ़की एक दवा। गन्धक, पारद, टङ्कण, ताम्र और लौहको पिप्पलीके साथ भस्म करके पञ्चाङ्ग निम्ब, फलत्रय तथा राजतरुकी भावना देना चाहिये। इस रसकी एक गुञ्जा परिमित मात्रा सेवन करनेसे सर्वप्रकार कुष्ठरोग आरोग्य होता है। (रसेन्द्रचिन्तामणि)

कुष्ठकुठाररस (सं० पु०) कुष्ठाधिकारका रसविशेष, कोढ़की एक दवा। १ भाग सूतभस्म, १ भाग गन्धक; मृत लौह, ताम्र, गुग्गुलु, त्रिफला, महानिम्ब, चित्रक तथा शिलाजतुमें १६ भाग प्रत्येक, ६४ भाग करञ्जवीजचूर्ण और ६४ भाग अभ्रके चूर्णानुरूप घृत तथा मधुसे विलोड़न करने पर यह औषध प्रस्तुत होता है। (रसरत्नाकर)

कुष्ठकेतु (सं० पु०) कुष्ठनाशनः केतुश्चिह्नं यस्य। भूम्याहुल्यक्षुप, एक झाड़।

कुष्ठगन्धा (सं० स्त्री०) अश्वगन्धा, असगंध।

कुष्ठगन्धि (सं० क्लो०) कुष्ठस्येव गन्धोऽस्य इकारान्तादेशश्च। उपमानाच्च। पा ५।४।१३७। एलवालुक, एलुवा।

कुष्ठगन्धिनी (सं० स्त्री०) कुष्ठस्येव गन्धोऽस्त्यस्याः, कुष्ठगन्ध-इनि स्त्रियां ङीप्। अश्वगन्धा, असगंध।

कुष्ठघ्न (सं० त्रि०) कुष्ठं हन्ति, कुष्ठ-हन्-टक्। १ कुष्ठनाशक, कोढ़ मिटानेवाला। (पु०) २ हितावली, कोई लता। ३ खदिरवृक्ष, खैरका पेड़। ४ पटोललता, परवलकी बेल।

कुष्ठघ्नी (सं० स्त्री०) कुष्ठघ्न स्त्रियां ङीप्। १ काकोदुम्बरिका, कठगूलर। २ काकमाची। ३ वाकुची। ४ छितावली।

कुष्ठतोदन (सं० पु०) रक्तखदिरवृक्ष, लाल खैरका पेड़।

कुष्ठदलनरस (सं० पु०) कुष्ठाधिकारका रसविशेष, कोढ़की एक दवा। गन्धक, पारद, वाकुची, पलाशवीज, चित्रक और शुण्ठी प्रत्येकका समभाग चूर्ण मिलानेसे उक्त रस प्रस्तुत होता है। (रसरत्नाकर)

कुष्ठदोषापहा (सं० स्त्री०) वाकुची, सोमराजी।

कुष्ठनाशन (सं० पु०) कुष्ठं नाशयति, कुष्ठ-नश्-णिच्-ल्यु:। १ चीरीशवृक्ष, कोई पेड़। २ श्वेतसर्षप, सफेद सरसों। ३ वाराहीकन्द। ४ रक्तखदिरवृक्ष, लाल खैरका पेड़। ५ आरग्वधवृक्ष, अमिलतासका पेड़। ६ कुष्ठहरवृक्षमात्र, कोढ़के लिये मुफीद कोई दरख्त। (त्रि०) ७ कुष्ठनाशक, कोढ़ मिटानेवाला।

कुष्ठनाशिनी (सं स्त्री०) कुष्ठ-नश्-णिच्-इनि-ङीप्। १ वाकुची, सोमराजी। २ काकमाची।

कुष्ठनोदन (सं० पु०) कुष्ठं नोदयति, कुष्ठ-नुद्-णिच्-ल्युट्। रक्तखदिरवृक्ष, लाल खैरका पेड़।

कुष्ठरोग (सं० पु०) महाव्याधि नामका रोगविशेष, कोढ़की बीमारी। आयुर्वेदीय वैद्यकग्रन्थोंके मतमें मिथ्या आहार, मिथ्या आचरण; विरुद्ध अन्न, पानीय एवं अत्यन्त तरल, स्निग्ध तथा गुरुपाक द्रव्योंके सेवन, वमन वेग एवं मलमूत्र वेगधारण, अतिरिक्त परिश्रम, अत्यन्त रौद्र वा अग्निके ताप ग्रहण, आहारान्त अतिरिक्त परिश्रम; रौद्र-सन्तप्त, भयार्त वा परिश्रान्त व्यक्तिके विश्राम न करते शीतल जलपान वा स्नान, शीत, उष्ण, उपवास, अनियमित आहार, भुक्तद्रव्य जीर्ण न होते पुनर्वारके आहार, वमन विरेचन प्रभृति पञ्चकर्मके अन्त कुपथ्यसेवन; अत्यधिक नवान्न, दधि, मत्स्य, लवण, अम्ल, माषकलाय, मूलक, पिष्टक, तिल, दुग्ध किंवा गुड़ भक्षण, भुक्तद्रव्यकी विदग्धाजीर्णावस्थामें मैथुन, दिवानिद्रा और ब्राह्मण किंवा गुरुजनके अभिभव एवं गुरुतर पापकर्मके अनुष्ठानसे वात, पित्त और कफ एक समय कुपित होके त्वक्, रक्त मांस तथा अम्बुको बिगाड़ते और कुष्ठरोग उभाड़ते हैं। अतएव कुष्ठरोगका साक्षात् कारण सात प्रकारका है—दूषित वात, पित्त, कफ, त्वक्, रक्त, मांस और अम्बु (मांस और त्वक्के मध्यका एक प्रकार रस)।

कुष्ठरोग अष्टादश प्रकार है। उसमें सात प्रकारका कुष्ठ महाकुष्ठ और एकादश प्रकारका क्षुद्रकुष्ठ कहाता है। कापाल, उदुम्बर, मण्डल, सिध्म, काकणक, पुण्डरीक और ऋक्षजिह्वका नाम महाकुष्ठ है। एककुष्ठ, गजचर्म, चर्मदल, विचर्चिका, विपादिका, पामा, कच्छु, दद्रु, विस्फोट, किटिम और अलसक ग्यारहको क्षुद्र कुष्ठ कहते हैं। सर्वप्रकार कुष्ठ त्रिदोषसे उत्पन्न होता है। किन्तु दोषकी उल्वणताके अनुसार वातज, पित्तज, कफज, वातपैत्तिक, वातश्लैष्मिक, पित्तश्लैष्मिक और सान्निपातिक सात ही भेद कहे हैं।

कुष्ठरोग लगनेसे पूर्व चर्म मसृण, खरस्पर्श; घर्मकी अधिकता वा हीनता, विवर्णता और स्पर्शज्ञानरहित हो जाता और दाह, कण्डु तथा सूचीविद्धवत् वेदनाका वेग बढ़ आता है। व्रण शीघ्र निकलता, दीर्घकाल ठहरता और अत्यन्त वेदना करता है। व्रणके अङ्कुरकी रूक्षता, अल्प कारणसे ही उसकी वृद्धि, रोगीकी क्लान्ति, रोमाञ्च और रक्त कृष्णवर्ण होना कुष्ठका पूर्वरूप है। वाताधिक्यसे कापाल, पित्ताधिक्यसे उदुम्बर, कफाधिक्यसे मण्डल एवं विचर्चिका, वातपित्ताधिक्यसे ऋक्षजिह्व, वातश्लेष्माधिक्यसे चर्मकुष्ठ, एककुष्ठ, किटिम, सिध्म, अलसक तथा विपादिका, पित्तश्लेष्माके आधिक्यसे दद्रु, शतारुषी, पुण्डरीक, विस्फोट, पामा एवं चर्मदल और त्रिदोषके आधिक्यसे काकण कुष्ठ उत्पन्न होता है।

चर्मका उपरिभाग खपड़े-जैसा ईषत् रक्त एवं कृष्णवर्णयुक्त, रूक्ष, कर्कश और अत्यन्त वेदनायुक्त रहनेसे कापालकुष्ठ कहाता है।

उदुम्बर कुष्ठमें चर्म यज्ञडुमुरकी भांति काला पड़ जाता, दाह सताता, वेदनाका वेग बढ़ आता और देह खुजलाता है। फिर उसके उपरिस्थित रोम कपिलवर्ण धारण करते हैं।

जो कुष्ठ किञ्चित् श्वेतवर्ण तथा ईषत् रक्तवर्ण, स्थिर

आर्द्रभावापन्न, स्निग्ध और उच्च मण्डलाकारमें उत्थित होके परस्पर मिलित रहता, उसे चिकित्सक मण्डल-कुष्ठ कहता है। वह कष्टसाध्य है।

सिध्म कुष्ठमें चर्म अलाबुपत्रकी भांति श्वेतवर्ण तथा ईषत् रक्तवर्ण हो जाता और घर्षण करनेसे धूलि-जैसा निकल आता है।

जिस कुष्ठका वर्ण गुञ्जाफलकी भांति रक्त तथा पार्श्वमें कृष्ण किंवा मध्यमें कृष्ण एवं पार्श्वमें रक्तवर्ण रहता, वेदनाका वेग अत्यन्त बढ़ता और व्रण नहीं पकता, उसका नाम काकणकुष्ठ पड़ता है।

रक्तपद्मके पत्रकी भांति रक्त और श्वेतवर्ण कुष्ठको पुण्डरीक कुष्ठ कहते हैं।

ऋष्यजिह्वके मण्डलसमूहकी आकृति भल्लूककी जिह्वाके सदृश होती है। वह सब ओर रक्त-वर्ण और मध्यमें कृष्णवर्ण, कर्कश और वेदनायुक्त रहता है।

जो कुष्ठ अनेक स्थानमें व्याप्त होके मत्स्यके मांस जैसा उठ आता, वह एककुष्ठ कहाता है। एककुष्ठ रोगमें घर्मावरोध हुवा करता है। गजचर्म-जैसे अति-शय स्थूल, रूक्ष और कृष्णवर्ण कुष्ठको गजचर्म कहते हैं।

चर्मदल कुष्ठ रक्तवर्ण वेदनायुक्त और कण्डुयुक्त होता है। उसमें स्पर्शासह स्फोटक निकलता और चर्म विदीर्ण हुवा करता है।

जिस कुष्ठमें कृष्णवर्ण, कण्डु युक्त और बहु स्राव-शील पीड़का निकल आती, उसको वैद्यमण्डली विचर्चिका बताती है।

पामा कुष्ठमें कण्डु और दाहयुक्त स्रावशील क्षुद्र पीड़का उत्पन्न होती है।

जिसमें हस्तद्वय और नितम्ब पर पामाकी भांति अथच अत्यन्त वेदनायुक्त स्फोटक निकलते, उसे कच्छु कहते हैं।

दद्रुकुष्ठमें रक्तवर्ण एवं कण्डुयुक्त पीड़का मण्डला-कार उठती है। जिस कुष्ठमें चर्म बहुत पतला पड़ जाता और स्फोटक श्याव वा रक्तवर्ण दिखता, वह विस्फोटक कहाता है। किटिमकुष्ठ श्याववर्ण, खरस्पर्श और शुष्कव्रणकी भांति कर्कश होता है।

जिस कुष्ठमें रक्तवर्ण, कण्डुयुक्त और वृहत् स्फोटक निकलता, उसका नाम अलसक पड़ता है। शताक कुष्ठमें दाहयुक्त और रक्त वा श्याववर्ण बहुतर व्रण उत्पन्न होते हैं।

रसधातुगत कुष्ठमें देहकी विवर्णता, रूक्षता, रोमाञ्च, अधिक घर्म और त्वक्का स्पर्शज्ञानराहित्य देखते हैं।

रक्ताश्रित कुष्ठमें कण्डुका प्राबल्य और अत्यन्त पूय-सञ्चय होता है। मांसगत कुष्ठमें कुष्ठाधिक्य रहता, मुखशोष लगता, शरीर कर्कश पड़ता, क्षुद्र पीड़का उद्भव लगता और सूचीविद्धवत् वेदनायुक्त स्थिर भावापन्न स्फोटक उठता है। मेदगत कुष्ठमें हस्तक्षय, गमनशक्ति-का अभाव, सर्वाङ्गमें वेदना तथा क्षत और रक्तमांसगत कुष्ठका समस्त लक्षण प्रकाशित होता है। अस्थि एवं मज्जागत कुष्ठमें नाशाभङ्ग, चक्षुरक्तवर्ण, स्वरभङ्ग, वेदना और क्षतस्थानपर कीड़ा देखते हैं। वाताधिक्य-से कुष्ठ रक्तवर्ण वा कृष्णवर्ण, खरस्पर्श, रूक्ष, और वेदनायुक्त होता है। इसी प्रकार पित्ताधिक्यसे कुष्ठरोग रक्तवर्ण एवं दाह तथा स्रावयुक्त और कफाधिक्यसे कण्डु एवं गाढ़ क्लेदयुक्त, स्निग्ध, गुरु और शीतल रहता है। त्रिदोषजकुष्ठमें द्विदोष और सान्निपातिकमें त्रिदोषका लक्षण प्रकाशित होता हैं। त्वक्, मांस वा रक्तगत और वातश्लेष्माधिक्य कुष्ठसाध्य होता है। मेदोगत और द्वन्द्वज कुष्ठ याप्य है। फिर मज्जा वा अस्थिगत; क्रिमि, दाह एवं मन्दाग्नियुक्त और त्रिदोषज कुष्ठ असाध्य होता है। कुष्ठरोगमें अङ्ग विदीर्ण होके पूयादिस्राव, चक्षु रक्तवर्ण, स्वरभङ्ग और वमन विरेचनादि पञ्च कर्म द्वारा उपकार न होनेसे रोगी अचिर ही मर जाता है। गुह्यदेश, शिश्न, योनि, हस्तपदतल किंवा ओष्ठगत किलास होनेसे आरोग्य मिलना कठिन है। कुष्ठरोगी-के साथ मैथुन, एकत्र भोजन, शय्यामें शयन, उपवेशन किंवा उसका गात्रस्पर्श और निश्वास ग्रहण अथवा उसका व्यवहृत पुष्प, फल, अनुलेपन प्रभृति व्यवहार करनेसे कुष्ठरोग लग जाता है। वातोल्वण कुष्ठमें घृत-प्रयोग, कफोल्वण कुष्ठमें वमन और पित्ताधिक्य कुष्ठमें प्रलेप, परिषेक और रक्तमोक्षण कर्तव्य है। हरीतकी,

निम्नभूमिजात करञ्ज, श्वेतसर्षप, हरिद्रा, सोमराजी, सैन्धव और विड़ङ्ग समस्त द्रव्य समभागमें गोमूत्र द्वारा पेषण करके प्रलेप लगानेसे कुष्ठ नष्ट होता है। सोमराजी और शुण्ठीका चूर्ण समभागमें मिलाके उद्वर्त्तन करनेसे वर्धित कुष्ठ घट जाता है। निम्बके पुष्पित होनेके समय फूल और फलित होनेके समय फल ग्रहण तथा उसका वल्कल, मूल एवं पत्र आहरण करके चूर्ण करना चाहिये। फिर उसके चारमें दो भागोंको भृङ्गराजके रसको सात दिन भावना देते हैं। अनन्तर त्रिफला, त्रिकटु, ब्राह्मी, गोक्षुर, भल्लातक, चित्रक, विड़ङ्गसार, वाराहीकन्द, लौह, गुलेचीन, हरिद्रा, दारुहरिद्रा, सोमराजी श्योणाक, दालचीनी, कुष्ठ, इन्द्रयव और आकनादि सकल समभागमें चूर्ण करके निम्बचूर्णके अर्धांशमें मिलाना और खदिर, पीतशाल तथा निम्बके क्वाथ द्वारा सात दिन भावना लगाना चाहिये। उक्त औषधको मधु, तिक्तघृत वा खदिर और शालके क्वाथ सहित लेहन करनेसे विचर्चिका, उदुम्बर, पुण्डरीक, कापाल, दद्रु एवं किटिभ प्रभृति कुष्ठका प्रतीकार पड़ता है। औषधकी मात्रा प्रथम दिन १ तोला रहती और दूसरे दिनसे एक एक तोले बढ़ पल पर्यन्त पहुंचती है। औषध जीर्ण होने पर स्निग्ध अथच लघुद्रव्य आहार करना चाहिये। ५ पल सोमराजी, ५ पल शिलाजतु, १० पल गुग्गुल, ३ पल स्वर्णमाक्षिक एवं २ पल लौह तथा शुण्ठी और त्रिफला, करञ्ज, तेजपत्र, खदिर, गुलेचीन, त्रिवृत् (निसोत), दन्ती, मुस्ता, विड़ङ्ग, हरिद्रा, कुटज, दालचीनी, निम्ब, चित्रक एवं श्योणाक २५।२५ पल लेके मधुके सहयोगसे वटिका बनाना चाहिये। उक्त औषधकी एक वटिका प्रातःकाल गोमूत्रके साथ निगल कर खानेसे कुष्ठ अच्छा हो जाता है। इसके व्यतीत एकविंशतिक गुग्गुलु, अमृतभल्लातक अवलेह, महाभल्लातक, लघुमञ्जिष्ठादि क्वाथ, मध्यमञ्जिष्ठादि क्वाथ, बृहन्मञ्जिष्ठादि क्वाथ, लघुमरिचादि तैल, महामरिचाद्यतैल, तालकेश्वरस और गलितकुष्ठारिरस सेवन करनेसे कुष्ठरोग मिट जाता है।

कुष्ठ, मूलाका बीज, प्रियङ्गु, सर्षप, हरिद्रा और नागकेशर सकल समभाग चूर्ण करके सेवन करनेसे बहुकालका सिध्म नामक कुष्ठ आरोग्य होता है।

मूलाका बीज अपामार्ग रसके साथ अथवा कदलीके क्षार सहित हरिद्रा पेषण करके प्रलेप लगानेसे भी सिध्म नष्ट हो जाता है। दारुहरिद्रा, मूलाका बीज, हरिताल, देवदारु तथा ताम्बूलपत्र प्रत्येक २ तोला और शङ्खचूर्ण आध तोला सकल एकत्र जल द्वारा पेषण करके प्रलेप देनेसे सिध्म अच्छा होता है।

किञ्चित् जलकी आम्रपेशी (अमचूर) जलके साथ ताम्रपात्रमें पेषण करके प्रलेप चढ़ानेसे चर्मदल मिट जाता है। शुष्क आमलकी जलके साथ हस्त द्वारा घर्षण करनेसे चर्मदल-रोगाक्रान्त व्यक्तिका प्रतिकार पड़ता है।

८ तोला जीरक और ४ तोला सिन्दूर डाल आध सेर तैल पाक करके प्रयोग करनेसे पामा नष्ट होती है। मञ्जिष्ठा, त्रिफला, लाक्षा, विषलाङ्गला, हरिद्रा और गन्धकके चूर्ण द्वारा रौद्रके उत्तापमें तैल पाक करके सेवन करनेसे भी पामा अच्छी हो जाती है। सैन्धव, चक्रमर्द, सर्षप और पिप्पली काञ्जिक द्वारा पेषण करके प्रयोग करनेसे पामाकच्छु विनष्ट होती है।

४ सेर सर्षपतैल, कल्कार्थ १ सेर हरिद्रा और १६ सेर आकनादिपत्रका रस एकत्र पाक करके सेवन करनेसे पामा, कच्छु तथा विचर्चिका रोग प्रशमित हो जाता है। आरग्वधपत्र, निम्नभूमि जात करञ्जपत्र, पलाश, सर्षप, श्वेतसर्षप, हरिद्रा, कुटज, यष्टिमधु, मुस्ता, शुण्ठी, रक्तचन्दन, आमलकी, यवानी और देवदारु समभागमें चूर्ण करके सर्षप तैलके सहयोगसे मर्दन करने पर पामा रोग छूटता है। कुष्ठ, विड़ङ्ग, चक्रमर्द, हरिद्रा, सैन्धव तथा सर्षप सकल द्रव्य काञ्जिकके साथ अथवा दूर्वा, मरी, सैन्धव, चक्रमर्द एवं नन्दीवृक्ष समभागमें काञ्जिक तथा तक्रके साथ पेषण करके प्रलेप देनेसे अल्पकालके मध्य ही दद्रुरोग अच्छा होता है।

गण्डिलकाष्ठ, श्वेतसर्षप तथा स्नुहीपत्र तीनो समभाग और समस्त द्रव्यसे द्विगुण चक्रमर्दपत्र अष्टगुण

गव्यघृतमें डुबोके रख छोड़ना चाहिये। तीन दिन पीछे समस्तको एकत्र पेषण करते हैं। पीछे वन्योपल (बिनुवाकण्डा)-से दद्रुस्थान घर्षण करके उसका लेप लगा देना चाहिये। उक्त प्रलेपके प्रयोगसे सात दिनके मध्य दद्रुरोग निश्चय नष्ट हो जावेगा। (भावप्रकाश)

युरोपीय चिकित्सकोंके मतमें कुष्ठरोग सर्वाङ्गव्यापी है। उनमें कोई कोई इसको संक्रामक कहता है। किन्तु अनेक युरोपिय इसे संक्रामक न मानते भी पुरुषानुक्रमिक बताते हैं। उन्होंने श्लीपद प्रभृति रोगोंको भी कुष्ठरोगके ही अन्तर्निविष्ट किया है। श्लीपद देखो। दूसरे चिकित्सक कुष्ठरोग पर पारद व्यवहार करते हैं। किन्तु इस देशके वैद्योंके मतमें पारदका व्यवहार प्रशस्त नहीं। कोई कोई युरोपीय कुष्ठपर चावलमोगरा और गर्जनका तेल व्यवहार करता है।

अतिपूर्वकाल मिसर और भारतवर्षके लोग कुष्ठरोगको विशेष संक्रामक और पुरुषानुक्रमिक समझ कुष्ठरोगीसे अति घृणा करते थे। प्राचीन ऐतिहासिक मनेथोने लिखा है—'रमिशके पुत्र मिसरराज मेनफ्थाने राज्यके सकल कुष्ठरोगियोंको एकत्र करके अरबको मरुभूमिके निकट निम्नमिसर पहुंचाया और जनमानवविहीन अवरोश नगरमें रहनेको आदेश सुनाया था। पीछे उन्होंने पैलेष्टाइनवासियोंसे मिल धर्मयुद्धकी घोषणा की। उससे मिसरराज मेनफ्थाने इथिवोपियको पलायन किया।'

भारतके बङ्गालप्रान्त और चीनराज्यमें कुष्ठरोगियोंकी संख्या अधिक है। चीनदेशमें वह रस्सो बेचनेके सिवा दूसरा कोई काम करने नहीं पाते। भारतके नाना स्थानोंमें कोढ़ी रोगमुक्त होनेके लिये नागराजको पूजा करते हैं।

कुष्ठल (सं० क्लो०) कुत्सितं स्थलम् अम्बष्ठादित्वात् षत्वम्। १ कुत्सितस्थान, खराब जगह। कोः पृथिव्याः स्थलम्। २ पृथिवीका उपरिभाग, जमीनका ऊपरी हिस्सा।

कुष्ठविद् (सं० स्त्री०) कुष्ठस्य तत्स्वरूपादेः विद् विद्या कुष्ठ-विद्-क्विप्। १ कुष्ठविद्या, कुष्ठके स्वरूप आदिका ज्ञान, कोढ़की पहचान। (त्रि०) २ कुष्ठरोगको लक्षणादि द्वारा समझनेवाला, जो कोढ़को पहचानता हो।

कुष्ठवैरी (सं० पु०) कुष्ठस्य वैरी तन्नाशक इत्यर्थः, ६-तत्। वृक्षविशेष, चावलमोगरा। इसका संस्कृत पर्याय—शैलरोही, महागद और वैवस्वत है। भावप्रकाशके मतमें कुष्ठवैरी बलकारक और रसायन होता है। पामा, विचर्चिका, कण्डू, सिध्म, उदर्द, विपादिका, आमवात, वातरक्त और कुष्ठरोगपर बहु उपकारक है। कुष्ठरोग में उसे दीर्घकाल व्यवहार करनेसे विशेष फल मिलता है। उसके फलका वीज और वीजका तेल ग्रहणीय है।

कुष्ठशैलेन्द्रवज्ररस (सं० पु०) कुष्ठाधिकारका रसविशेष, कोढ़की एक दवा। हरिताल, मरिच, कुष्ठ, काचलवण, टङ्कण (सोहागा), हरिद्रा, वचा, निर्गुण्डी और निम्ब तथा कारवेल्लके वीज वा पत्र प्रत्येक १ तोला, सर्वचूर्णसम गुग्गुलचूर्ण, सोमराजीचूर्ण ८ तोला, पारद एवं गन्धकका मिलित चूर्ण १६ तोला और त्रिफलाशुद्ध लौह १६ तालाको एकत्र गोमूत्रमें मिला ६-६ माषाको वटी बना लेना चाहिये। यह रस कुष्ठरोगोके लिये अमृतोपम होता है। (रसरत्नाकर)

कुष्ठसूदन (सं० पु०) कुष्ठं सूदयति नाशयति, कुष्ठ-सूद णिच्-ल्यु। आरग्वध, अमिलतास।

कुष्ठहन्ता (सं० पु०) कुष्ठं हन्ति, कुष्ठ-हन्-तृच्। १ हस्तिकन्दनाम महाकन्दशाक। (त्रि०) २ कुष्ठनाशक, कोढ़ मिटानेवाला।

कुष्ठहन्त्री (सं० स्त्री०) कुष्ठ-हन्तृ स्त्रियां ऋदन्तात् ङीप्। वाकुची, सोमराजी।

कुष्ठहर (सं० पु०) कुष्ठं हरति, कुष्ठ-हृ-अच्। हरतेरनुद्यमनेऽच्। पा ३।२।९। १ विट्खदिरवृक्ष। (त्रि०) २ कुष्ठनाशक, कोढ़ मिटानेवाला।

कुष्ठहरतालेश्वर (सं० पु०) कुष्ठाधिकारका रसविशेष, कोढ़की एक दवा। शुद्ध हरिताल १२ भाग, गन्धक १६ भाग, पारद ७ भाग और कृष्णाभ्रभस्म ७ भाग एकत्र पहाटकाथ, सेहुण्डक्षीर, अर्कक्षीर, करवीरक्वाथ तथा उदुम्बरक्वाथसे मर्दन करना चाहिये। फिर

ताम्रकोटरमें समस्त रखके पुटपाक विधिसे ६ प्रहर पाक करते हैं। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

कुष्ठहा (सं० पु०) कुष्ठं हन्ति, कुष्ठ-हन्-क्विप्। १ पटोल वृक्ष, परवलका पौदा। २ सप्तपर्ण। ३ कुष्ठनाशक।

कुष्ठहृत् (सं० पु०) कुष्ठं हरति, कुष्ठ-हृ-क्विप् तुगागमश्च। १ खदिरवृक्ष, खैरका पेड़। २ विट्खदिर। (त्रि०) ३ कुष्ठनाशक, कोढ़ दूर करनेवाला।

कुष्ठाङ्ग (सं० त्रि०) कुष्ठं अङ्गे यस्य, बहुव्री०। कुष्ठ-व्याधियुक्त, कोढ़ी।

कुष्ठादिचूर्ण (सं० पु०-क्लो०) कुष्ठाधिकारका चूर्णविशेष, कोढ़की एक बुकनी। कुष्ठ, दन्ती, यवक्षार, त्रिकटु, सोचर लवण, सैन्धवलवण, विट्लवण, वच, कृष्णजीरा, यवानी, हिङ्गु, सर्जिकाक्षार, चविका, चित्रक और शुण्ठी सबको चूर्ण करके मिश्रित करना चाहिये। इसे कुष्ठादिचूर्ण कहते हैं। इसको जलके साथ सेवन करनेसे वातोदर नष्ट होता है। (भावप्रकाश)

कुष्ठाद्यतैल (सं० क्लो०) जरुस्तम्भका तैलविशेष, जांघके जकड़नेकी एक दवा। सर्षपतैल ४ सेर और कल्कार्थ कुष्ठ, सरल निर्यास, वाला, सरलकाष्ठ, देवदारु, नागकेशर, वनयवानी तथा अश्वगन्धा सकल एकत्र १ सेर यथाविधान पाक करके मधुके साथ यथामात्रा पान करनेसे जरुस्तम्भ खुल जाता है। (भावप्रकाश)

कुष्ठाद्युद्वर्तन (सं० क्लो०) कुष्ठरोगका उद्वर्तन-विशेष, कोढ़ पर मली जानेवाली एक दवा। कुष्ठ, हरिद्रा, तुलसी, पटोल, निम्ब, अश्वगन्धा, देवदारु, शिग्रु, सर्षप, तुम्बुरुधान्य, कैवर्त-मुस्तक और चोरपुष्पी, समभागमें तक्रके साथ पीसकें तेल लगाने पीछे शरीर पर मर्दन करनेसे कुष्ठरोग मिट जाता है। (चक्रदत्त)

कुष्ठान्तकरस (सं० पु०) कुष्ठाधिकारका रसविशेष, कोढ़की एक दवा। शुद्धपारद एक भाग और गन्धक २ भाग, निर्गुण्डी तथा वाकुचीके रसमें एक दिन मर्दन करना चाहिये। फिर इसे एक याम लवणाक यन्त्रमें पाक करते हैं। अनन्तर तुल्य त्रिफला तथा वकुच फलके साथ इसको चूर्ण करके सबके बराबर भृङ्गराजका चूर्ण डाल यह औषध लौहभाजनमें पलाश एवं खदिर-क्वाथ और गोमूत्रसे पाक किया जाता है। एक दिन पीछे निष्कप्रमाण वटी बनाके प्रतिदिन सेवन करनेसे कुष्ठ और विस्फोटक नष्ट होता है। (रसरत्नाकर)

कुष्ठारि (सं० पु०) कुष्ठस्य अरिः तन्नाशक इत्यर्थः, ६-तत्। १ खदिर, खैर। २ विट्खदिर। ३ पटोल, परवल। ४ आदित्यपत्र-वृक्ष, मदार। ५ भ्रमरारिपुष्पवृक्ष, एक पेड़। यह मालव देशमें प्रसिद्ध है। ६ गन्धक। ७ कुष्ठनाशक, कोढ़ दूर करनेवाला।

कुष्ठारिरस (सं० पु०) कुष्ठाधिकारका रसविशेष, कोढ़की एक दवा। श्वेतवला, पीतवला, नागवला, ब्रह्मदण्डी, काकडुमुर, ब्राह्मणयष्टिकामूल, श्वेतवाट्यालक, पीतवाटयालक और गोरक्षचाकुल्या समभाग मधुके साथ सेवन करनेसे कुष्ठरोग दब जाता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

कुष्ठिक (सं० क्लो०) अश्वके किणाधका मध्यभाग, घोड़ेके दोनों अगले पैरोंके बीचकी जगहका दरमियानी हिस्सा।

कुष्ठिका (वै० स्त्री०) कुष्ठीव कायति, कुष्ठी-कै-कः। यज्ञीय पशुके पाददेशका एक अंश। यह अंश यज्ञ कर्ममें परित्यज्य है।

"यास्ते जङ्घा याः कुष्ठिका ऋच्छरा ये च ते शफाः।"

(अथर्व १०।९।२३)

कुष्ठित (सं० त्रि०) कुष्ठं जातमस्य, कुष्ठ-इतच्। जातकुष्ठ, कुष्ठरोगयुक्त स्त्रीपुरुषके शुक्रशोणितसे उत्पन्न, कोढ़ीसे पैदा।

कुष्ठी (सं० त्रि०) कुष्ठ मत्वर्थे इनिः। द्वन्द्वोपतापगर्ह्यात् प्राणिस्थादिनिः। पा ५।२।१२८। कुष्ठरोगयुक्त, कोढ़ी।

कुष्णोष (सं० पु०) सरीसृपज्वर, सांप वगैरहके काटनेसे आनेवाला बुखार।

कुष्मल (सं० क्लो०) कुष्-कलन्। कुटिकुषिभ्यां क्मलन्। उण ४।१८६। १ पत्र, पत्ता। २ छेदन, कटाई। ३ मुकुल, कली।

कुष्माण्ड (सं० पु०) कु ईषत् उष्मा अण्डेषु वीजेषु यस्य। फललताविशेष, एक फलदार बेल। इसको हिन्दीमें कुम्हड़ा, सीताफल या रामकोला, बंगलामें कुमड़ा और उड़ियामें पानीकखारु कहते हैं। (Benincasa cerifera.) कुष्माण्डका संस्कृत पर्याय—घृणावास, तिमिष,

ग्राम्यकर्कटी, पुष्पफल, कुष्माण्डक, कर्कारु, शिखिवर्धक, कुष्माण्डी, कर्कोटिका, बृहत्फला, सुफला, नागपुष्पफला, कुम्भफला और शुनी है। भावप्रकाशके मतानुसार कुष्माण्डफल बाल, मध्यम और उत्तम भेदसे तीन प्रकारका होता है। बाल कूष्माण्ड वातघ्न तथा रोचक, मध्यम कुष्माण्ड त्रिदोषघ्न और उत्तम नातिहिम, स्वादु, सक्षार, दीपन, लघु, वस्तिशोधक और चेतोरोगनाशक है। इसकी लता और शाक मधुर, चाररस, गुरु, रुच, रुचिकर और वात, कफ, अश्मरी तथा शर्कराहारी होता है। कुष्माण्डको मज्जा शुक्रल, पित्तघ्न और वस्तिशोधन है। कुम्हड़ा देखो।

कुष्माण्डक (सं० पु०) १ कुष्माण्ड, कुम्हड़ा। २ नागविशेष। (महाभारत, १।२५।११) ३ शिवके कोई पारिषद।

कुष्माण्डकघृत (सं० क्लो०) अपस्माराधिकारका घृतविशेष, मिरगीका घी। घृत ४ शरावक, यष्टिमधुका कल्क १ शरावक और कुष्माण्डरस ३२ शरावक एकत्र पाक करनेसे यह घृत प्रस्तुत होता है। (चक्रदत्त)

कुष्माण्डकरसायन (सं० क्लो०) औषधविशेष, एक दवा। उत्तम रूपसे १०० पल शुष्क कुष्माण्ड निष्कासित करना चाहिये। पीछे किसी ताम्रपात्रमें एक प्रस्थ परिमाण घृत डाल आग पर चढ़ाते हैं। घृत उत्तप्त होने पर उसमें कुष्माण्ड निक्षेप करना चाहिये। कुष्माण्डके मधु-जैसा हो जाने पर उसमें सुरानामक गन्धद्रव्य डाला जाता है। फिर २ पल परिमित पिप्पली, आद्रक तथा जीरकचूर्ण और अर्धपल परिमित दालचीनी, इलायची, मरिच एवं धान्यकचूर्ण छोड़ देते हैं। अनन्तर हल्येसे उसे भली भांति घोंटना चाहिये। पक्क होनेपर घृतसे आधा मधु डालके पात्रमें इसे स्थापन करते हैं। इसका नाम कुष्माण्ड-रसायन है। अग्निमान्द्य न होनेसे इसको सेवन करने पर रक्तपित्त, चत, चय, कास, श्वास और मूर्छा प्रभृति रोग आरोग्य होते हैं। (चक्रदत्त)

कुष्माण्डकशिफा (सं० स्त्री०) कुष्माण्डमूल, कुम्हड़ेकी जड़।

कुष्माण्डखण्ड (सं० क्लो०) रक्तपित्ताधिकारका घृतविशेष, एक घी। शुष्क कुष्माण्ड ५० पल, घृत १ प्रस्थ और आढ़क परिमित खण्ड तथा वासकका क्वाथ एकत्र पाक करना चाहिये। साथ हो उसमें एक कर्ष-परिमित मुस्ता, आमलकी, वंशलोचन, ब्राह्मणयष्टिका, इलायची, दालचीनी तथा तेजपत्र और एक पल परिमित एलवालुक, शुण्ठो एवं धान्यक छोड़ देते हैं। फिर पाक हो आनेपर आध सेर पिप्पली और १ सेर मधु भी डालना चाहिये। इसका नाम कुष्माण्डखण्ड है। यह कास, श्वास, चय, हिक्का, रक्तपित्त, हृद्रोग और अम्लपित्त रोगमें सेवनीय है। (चक्रदत्त)

कुष्माण्डगुड़कल्याण (सं० क्लो०) ग्रहणी अधिकारका औषधविशेष, दस्तकी एक दवा। वत्सरातीत और वृक्षबीज तथा वल्कलरहित कुष्माण्डको स्तोकजल (पानीके छीटे)-से पीस और निचोड़के नीरस बनाते और धूपमें सुखाते हैं। फिर उक्त कुष्माण्ड १०० पल, घृत ३२ पल और तिलतैल ८ पल एकत्र भूना जाता है। अनन्तर पुरातन गुड़ २५ पल, और १०० पल आमलकीरससे सनी हुई शर्करा भर्जितकुष्माण्डके साथ तब तक पाक करना चाहिये, जब तक पाक दर्वीलिप्त न हो। पाकशेषमें यमानी, जीरक, पिप्पली, पिप्पलीमूल, चित्रकमूल, गजपिप्पली, धान्यक, विड़ङ्ग, मरिच, त्रिफला, वनयवानी, इन्द्रयव तथा सैन्धव प्रत्येकका चूर्ण ८ तोला और त्रिवृन्मूल चूर्ण ८ पल डालनेसे यह औषध प्रस्तुत होता है। (चक्रदत्त)

कुष्माण्डग्रह (सं० पु०) एक भूतग्रह। बहुप्रलाप, कृष्णास्य और प्रलम्बवृषण कुष्माण्डग्रहका लक्षण है। (वाभट)

कुष्माण्डतैल (सं० क्लो०) कुष्माण्डबीजतैल, कुम्हड़ेके बीजोंका तेल। यह वातपित्तघ्न, श्लेष्मल, गुरु और शीतल होता है। (वाभट)

कुष्माण्डनाड़िका (सं० स्त्री०) कुष्माण्डका नाल, कुम्हड़ेका डण्ठल। यह गुरु और शर्करा तथा अश्मरिनाशक होती है। (राजवल्लभ)

कुष्माण्डनाड़ी, कुष्माण्डनाड़िका देखो।

कुष्माण्डवटक (सं० पु०) कुष्माण्डकृत वटक, कुम्हड़ौरी, कुम्हड़ेको बड़ी। कुष्माण्डको पेषण करके उसका जल भली भांति निकाल डालना चाहिये। फिर उसमें

कुस्तुम्बुरु (हरीधनिया), हरिद्रा तथा माषचूर्ण, तिल एवं सैन्धव डालके वटी बनाते और धूपमें सुखाते हैं। तिलके तैलमें उक्त वटी भली भांति पाक करनेसे रुचिकर और वातघ्न होती है। (वैद्यकनिघण्टु)

कुष्माण्डवटी (सं० स्त्री०) कुष्माण्डवटक देखो।

कुष्माण्डशालि (सं० पु०-स्त्री०) शालिधान्यविशेष, किसी किस्मका धान। यह मधुर, गुरु, सुगन्ध, पीत, दुर्जर, स्थूलतण्डुल और कोमल होता है। (राजनिघण्टु)

कुष्माण्डसुरा (सं० स्त्री०) कुष्माण्डकृत सुराविशेष, कुम्हड़ेकी शराब। यह गुरु, धातुवर्धक, अग्निमान्द्य-कर, वृष्य और दृष्टिप्रद है। (वैद्यकनिघण्टु)

कुष्माण्डिका (सं० स्त्री०) कुष्माण्डक स्त्रियां टाप्। अकारस्ये कारश्च। पा ७।३।४४। कुष्माण्डी, विलायती कुम्हड़ा।

कुष्माण्डी (सं० स्त्री०) कुष्माण्ड स्त्रियां जातित्वात् ङीष्। १ कुष्माण्डलता, कुम्हड़ा, सीताफल। यह अति लघु, ग्राही, शीतल और रक्तपित्तशान्तिकारक है। पकने पर कुम्हड़ा तिक्त, अग्निजनक, क्षारविशिष्ट और कफ-वातनाशक हो जाता है। पीतकुष्माण्ड (विलायती कुम्हड़ा) गुरु, पित्तवृद्धिकारक, अग्निमान्द्यकर, श्लेषघ्न और वायुप्रकोपक है। २ कुष्माण्डभेद, किसी किस्मका कुम्हड़ा। ३ कर्कोटिका। ४ योगक्रियाविशेष। ५ यजुर्वेदके बीसवें अध्यायका अग्नि, वायु तथा सूर्यसम्ब-न्धीय १४ वां, १५ वां और १६ वां अनुष्टुभ श्लोक।

"अग्निवायुसूर्यदैवत्याखिस्रोऽनुष्टुभः कुष्माण्डी संज्ञाः।"

(वेददीप, महीधर, २०।१४)

६ प्रायश्चित्तविशेष। ७ दुर्गाका नामान्तर।

(हरिवंश, १७८)

कुष्माण्डोन्माद (सं० पु०) भूतोन्मादभेद, एक तरहका पागलपन। यह कुष्माण्डग्रहजात होता है। (शार्ङ्गधर)

कुसंस्कार (सं० पु०) कुत्सित संस्कार, बुरा लगाव।

कुसगुन (हिं० पु०) कुलक्षण, बुरे आसार।

कुसङ्ग (सं० पु०) कुत्सितो सङ्गः। कुत्सित सङ्ग, बुरी सोहबत, खराब साथ। "बसि कुसङ्ग चाहत कुशल।" (तुलसी)

कुसङ्गति (सं० स्त्री०) कुत्सित सङ्गति, बुरी सोहबत।

कुसचिव (सं० पु०) कुत्सितः सचिवो मन्त्री, कुगतिस०। अनुपयुक्त अथवा कुमन्त्रणादाता मन्त्री, नाकिस वजीर।

कुसमय (सं० पु०) कुत्सित समय, बुरा जमाना, खराब वक्त।

कुसर (हिं० पु०) एक जलजात लताका मूल, पानी-बेल या मूसलकी जड़। कुसर औषधमें व्यवहृत होता है।

कुसरित् (सं० स्त्री०) कुत्सिता सरित्। अगभीर नदी, खराब दरया। अल्पजलविशिष्ट वा जलशून्य नदीको कुसरित् कहते हैं।

"अर्थेन तु विहीनस्य पुरुषस्याल्पमेधसः।
उच्छिद्यन्ते क्रियाः सर्वा ग्रीष्मे कुसरितो यथा॥" (पञ्चतन्त्र, ११।९२)

कुसल (सं० क्ली०) कुस्-कलच्। १ कुशल, खैर आफि-यत। २ कुशल-युक्त, अच्छा, मजेमें।

कुसलई (हिं० स्त्री०) १ नैपुण्य, होशियारी। क्षेम, मङ्गल, खैर आफियत।

कुसलक्षेम (हिं० स्त्री०) कुशलक्षेम, खैर आफियत।

कुसली (हिं० स्त्री०) १ आमकी गुठली। २ पिराक गोझा। वह एक पकवान है। पहले गेहूंके आटेकी छोटी छोटी गोल पूरी बेलते हैं। फिर उसके बीचमें कोई मीठा चूरा रखके चारो ओरसे लपेट दिया जाता है। इसे घी या तेलमें अच्छी तरह भूननेसे कुसली बन जाती है। कुसलीमें प्रायः गुड़ ही भरा जाता है। जिस कुसलीमें बरफीका चूरा या चीनी मावा भरते, उसे गोझा या गोझिमा कहते हैं। चीनी और चावलके आटेकी भरी कुसली पिराक कहलाती है।

कुसवा (हिं० पु०) जड़हनमें लगनेवाला एक रोग। इसके कारण जड़हनके पत्र पीतवर्ण पड़ जाते हैं।

कुसवारी (हिं० पु०) १ कोशकार, किरिमपिल्ला, रेश-मका जङ्गली कीड़ा। वह बेर और पियासाल वगैरह-के पेड़ों पर कोया बनाके रहता है। इसकी चार अवस्था हैं। सर्व-प्रथम कुसवारी डिम्ब रूपमें अवस्थान करता है। डिम्बसे निर्गत होने पर वह कमला कीट-की भांति देख पड़ता है। अनन्तर पक्षावरण आता और कुसवारी धागा बनाता हैं। अन्तमें वह कोयेसे बहिर्गत हो पतङ्गकी भांति उड़ता, मैथुन करता और मरता है।

२ रेशमका कोया। ३ रेशम।

कुसहाय (सं० पु०) कुत्सितः सहायः, कुगतिस०। कुत्सित सङ्गी, बुरा साथी।

कुसाइत (हिं० स्त्री०) कुमुहूर्त, बुरा वक्त।

कुसाखी (हिं० पु०) १ कुत्सित वृक्ष, खराब पेड़। २ कुत्सित साक्षी, बुरा गवाह।

कुसाटी—दाक्षिणात्यकी एक जाति। इनका दूसरा भेद उंवारी है। यह लोग नटोंकी तरह कलाबाजी करके अपनी जीविका चलाते हैं।

कुसारथि (सं० पु०) कुत्सितः सारथिः। मन्दसारथि, खराब गाड़ीवान्, बुरा कोचवान्।

कुसारी, कुसवारी देखो।

कुसित (सं० पु०) कुस् श्लेषणे इतः। कुसिकभोमेदेताः। उण् ४।१०६। १ जनपद, बसती। २ देशविशेष, कोई मुल्क। ३ कुसीदिक, सूदखोर, व्याज पर रुपया उधार देनेवाला।

कुसितायी (सं० स्त्री०) कुसितस्य स्त्री, कुसित-ङीप् ऐकारादेशश्च। वृषाकप्यग्निकुसितकुसीदानामुदात्तः। पा ४।१।३०। कुसीदव्यवसायीकी पत्नी, सूदखोरकी बीवी, व्याज खानेवालेकी जोड़ू।

कुसिदायी, कुसितायी देखो।

कुसिन्ध (वै० क्ली०) कवन्ध, मस्तकहीन देह, सरकटा जिस्म। "यामां कुसिन्धं सुदृढं बभूव।" (अथर्व, १०।२।३।५)

कुसिम्बा (सं० स्त्री०) कुत्सिता सिम्बा त्वक् यस्याः। कुसिम्बी, सेम।

कुसिम्बा (सं० स्त्री०) कौ पृथिव्यां सिम्बीति ख्याता। रक्तशिम्बीलता, लाल सेमकी वेल।

कुसिया, कुसी देखो।

कुसियार (हिं० पु०) इक्षुभेद, थून, एक प्रकारकी ईख। वह स्थूल, श्वेतवर्ण और मृदु होता है। कुसियारमें रस अधिक रहता है। वह अधिकतर चूसने लिये लगाया जाता है। उससे गुड़ नहीं बनता।

कुसी (हिं० स्त्री०) कुशी, हलका फार।

कुसीद (वै० त्रि०) उदासीन, अलस, काहिल, एक ही जगह बहुत देर तक बैठनेवाला।

"शरीरं यज्ञशमलं कुसीदं।" (तैत्तिरीयसंहिता ७।३।११।१)

कुसीद (सं० क्ली०) कुस-ईदः। वृद्ध्यर्थं धनप्रयोग, सूदखोरी, व्याजके लिये रुपया उधार देनेका काम। इसका संस्कृत पर्याय—अर्थप्रयोग और वृद्धिजीविका है। पुराणादिमें कुसीद व्यवसायकी यथेष्ट प्रशंसा देख पड़ती है। गरुड़पुराणके १२५ वें अध्यायमें इसकी विस्तर प्रशंसा वर्णित हुई है—ब्राह्मणोंको कुसीद, वाणिज्य और कृषिकार्य स्वयं करना न चाहिये। यदि नितान्त विपत्तिकाल आ पहुंचता, तो स्वयं उसके करनेमें भी कोई पाप नहीं पड़ता। ऋषियोंने जीवनके बहुतर उपाय निर्णय किये हैं। उनमें कुसीद ही उत्कृष्ट ठहरता है। अनावृष्टि, राजभय और मूषिकादि द्वारा कृष्यादि कार्यमें विघ्न उपस्थित हो सकता है। कुसीदमें ऐसा विघ्न होनेकी कोई सम्भावना नहीं। देशविशेषके वाणिज्यमें ह्रास-वृद्धि लगी रहती हैं। किन्तु कुसीद सभी देशोंमें समान है। कुसीदमें जो लाभ हो, उससे पितृलोक, देवता और ब्राह्मणकी पूजा करना चाहिये। वह सन्तुष्ट हो कर कुसीदका दोष दूर करते हैं। इस व्यवसायके आयका चतुर्थ भाग सञ्चय और अर्ध भाग द्वारा नित्य नैमित्तिक कार्य तथा आत्मभरण करना चाहिये। अपर चतुर्थ भाग भिक्षुकोंको दान कर देते हैं। विद्या, शिल्पकर्म, वेतन, सेवा, गोपालन, दूकानदारी, कृषिकर्म, व्यवसाय, भिक्षा और कुसीदके मध्य मनुष्य किसी उपायसे जीविका-निर्वाह कर सकता है। (गारुड़, २१५ अध्याय)

मनु कहते हैं—शतकार्षापण कपर्दिका मूलधन रहने पर उसके अस्सी भागोंमें एक भाग अथवा दो पण मासिक व्याज ग्रहण करना चाहिये। इस प्रकार व्यवहार करनेसे ब्राह्मणको भी प्रायश्चित्त करना नहीं पड़ता। फिर आपद्‌काल अधिक भी लिया जा सकता है। आपद्‌काल उपस्थित न होनेसे जो ब्राह्मण यह नियम उल्लङ्घन करता, उसे प्रायश्चित्त करना पड़ता है।

गोतम, बृहस्पति सबने अल्प-विस्तर कुसीद व्यवसायकी अनिन्दनीयता दिखायी है। उनके मतमें कुसीद व्यवसायसे लब्धधनका षष्ठांश राजाको, किञ्चित् देवताको और किञ्चित् ब्राह्मणको दान कर देनेसे फिर कोई दोष नहीं रहता। ब्राह्मण भी कुसीद व्यवसाय

कर सकता है। किन्तु मुसलमान लोगोंमें कुसीद व्यवसाय अत्यन्त विगर्हित कार्य समझा जाता है। धर्मप्रिय सच्चे मुसलमान उसीसे विना व्याजके कर्ज दिया करते हैं।

२ वृद्धिके साथ पुनःप्राप्तिके लिये उधार दिया जानेवाला रुपया अथवा वस्तु, जो रुपया या अनाज वगैरह सूदके साथ फिर मिलनेके लिये कर्ज दिया जाता हो।

(पु०) ३ वृद्धिजीवी, सूदखोर, व्याजके लिये कर्ज देनेवाला।

कुसीदपथ (सं० पु०) कुसीदानां कुसीदजीविनां पन्थाः, ६-तत्। शास्त्रनियमके अतिरिक्त वृद्धिग्रहण, मुनासिवसे ज्यादा सूदखोरी,। पांच रुपये सैकड़ेसे ज्यादा सूद लेना। "कृतानुसारादधिका व्यतिरिक्तं न सिध्यति। कुसीदपथमाहुस्तं पञ्चकं शतमर्हति॥" (मनु ८। २५२)

कुसीदवृद्धि (सं० स्त्री०) कुसीदरूपा वृद्धिः, मध्यपदलो०। कुसीद व्यवसायमें धनकी वृद्धि, सूदसे दौलतकी बढ़ोती।

कुसीदायी (सं० स्त्री०) कुसीदस्य कुसीदजीविनः पत्नी, कुसीद-ऐङ्च। "वृषाकप्यग्निमनुपूतक्रतुकुसित-कुसीदादैङ्च।" (पा, स्त्रीत्व २५) कुसीद व्यवसायीकी पत्नी, सूदखोरकी बीबी, व्याज खानेवालेकी जोड़ू।

कुसीदिक (सं० पु०) कुसीदद्रव्यं प्रयच्छति, कुसीद ठन्। कुसीददशैकादशात् ष्ठन्। पा ४।४।३१। कुसीदजीवी, सूदखोर, महाजन।

कुसीदी (सं० त्रि०) कुसीदं ऋणदानव्यवसायोऽस्त्यस्य, कुसीद-इनि। १ कुसीदजीवी, सूद पर कर्ज देनेवाला। इसका संस्कृत पर्याय—वार्द्धुषिक, वृद्ध्याजीव, वार्द्धुषि, कुसीद और कुसीदिक है। (पु०) २ कण्ववंशीय कोई ऋषि। उन्होंने ऋग्वेदके अनेक मन्त्र प्रकाश किये हैं।

कुसुम (सं० पु०-क्ली०) कुस्-उमः। १ पुष्प, प्रसूना, फूल। "गुच्छाबिचबिच कुसुमकलीके।" (तुलसी)

वृहत्संहिताके २९ वें अध्यायमें लिखा है कि कोई कोई पुष्प अधिक आनेसे कोई कोई शस्य भी अधिक परिमाणमें उत्पन्न होता है। जैसे—शालपुष्प अधिक परिमाणसे उत्पन्न होने पर कलमशालि, रक्ताशोक अधिक आनेसे रक्तशालि और नीलाशोकसे मसूरकी उपज बढ़ती है।

२ स्त्रीरजः रज।

"यदा नार्याः पितुर्गेहे कुसुमस्तनसम्भवः।" (ज्योतिष)

३ फल, मेवा। ४ नेत्ररोगविशेष, आंखकी कोई बीमारी। ५ देवेश्वरप्रणीत कविकल्पलताका अपेक्षाकृत एक क्षुद्र खण्ड। उसके अवशिष्ट वृहत् खण्डका नाम स्तवक है। ६ स्वाहाकार विषयमें पञ्चप्रकार वह्निके मध्य एक वह्नि।

"ते जातवेदसः सर्वे कल्माषः कुसुमस्तथा।
दहनः शोषणश्चैव तपनश्च महाबलः॥
स्वाहाकारस्य विषये प्रख्याताः पञ्चवह्नयः।" (हरिवंश, १६० अ०)

७ वर्तमान अवसर्पिणीके षष्ठ अर्हतके कोई पार्षद। ८ छन्दोविशेष।

कुसुम (हिं०) कुसुम्भ देखो।

कुसुमकार्मुक (सं० पु०) कुसुमं कार्मुकमस्य, बहुव्री०। कन्दर्प, कामदेव।

कुसुमकेतु (सं० पु०) एक किन्नर।

कुसुमचाप (सं० पु०) कुसुमं चापमस्य। कन्दर्प, काम।

"कुसुमचापमतेजयदंशुभिः।" (माघ)

कुसुमदेव (सं० पु०) एक ग्रन्थकर्ता। उन्होंने दृष्टान्तशतक रचना किया है।

कुसुमधन्वा (सं० पु०) कुसुमं धन्व धनुरस्य। कन्दर्प, कामदेव।

कुसुमनग (सं० पु०) कुसुमबहुलो नगः, मध्यपदलो०। एक पर्वत।

कुसुमपञ्चक (सं० क्ली०) कुसुमानां पञ्चकम्, ६-तत्। अरविन्द प्रभृति कन्दर्पके पांच वाण वा पुष्प।

"न कुसुमपञ्चकमप्यलं विसोढुम्।" (माघ)

कुसुमपुर (सं० क्ली०) कुसुमाख्यं पुरम्, मध्यपदलो०। पाटलिपुत्र, पटना। पाटलिपुत्र और पटना देखो।

"सखे! विराधगुप्त! वर्णयेदानीं कुसुमपुरवृत्तान्तशेषम्" (मुद्राराक्षस)

कुसुमफल (सं० क्ली०) जातीफल, जायफल।

कुसुममध्य (सं० क्ली०) कुसुमं पुष्पं मध्ये अभ्यन्तरे यस्य। भव्यफल, चालता। चालताका फूल पहले गोल होके खिला रहता है। पीछे चारो ओरसे सिमटके वही फलका रूप धारण करता है। फूल बीचमें ही

रह जाता है। इसीसे चालताका नाम कुसुमसेध्य पड़ा है। चालता देखो।

कुसुममय (सं० त्रि०) कुसुमात्मकं कुसुमप्रचुरं वा, कुसुम-मयट्। १ पुष्पमय, फूलोंका बना हुवा। २ पुष्पप्रचुर, फूलोंसे भरा हुवा।

कुसुमरेणु (सं० पु०) कुसुमका रेणु, पराग, फूलकी धूल।

कुसुमवती (सं० स्त्री०) कुसुममार्तवं सञ्जातमस्याः, कुसुम-मतुप् स्त्रियां ङीप् मस्य वः। १ ऋतुमती स्त्री, रजःस्वला, जो औरत कपड़ोंसे हो। २ पाटलिपुत्र नगर। ३ पुष्पवतीलता, फूली हुई बेल।

कुसुमवाण (सं० पु०) कुसुमानि पुष्पाणि वाणा यस्य, बहुव्री०। १ कन्दर्प, कामदेव। कुसुमस्य वाणः, ६-तत्। २ कन्दर्पके पञ्च पुष्पवाण।

अरविन्द, अशोक, चूत, नवमल्लिका और नीलोत्पल—कामदेवके पांच पुष्पवाण हैं।

कुसुमविचित्रा (सं० स्त्री०) कुसुममिव विचित्रा उपमि०। एक छन्द। प्रथम चार ह्रस्व एवं दो दीर्घ और फिर चार ह्रस्व तथा दो दीर्घ द्वादश अक्षरोंसे कुसुमविचित्रा बनती है।

'नय-सहितौ न्यौ-कुसुमविचित्रा।'

"विपिनविहारे कुसुमविचित्रा कृतकितगोपी महितचरित्रा।

सुररिपुमूर्तिर्सुखरितवंशा चिरमवताद्वस्तरल-वतंसा॥" (छन्दोमञ्जरी)

कुसुमशयन (सं० क्ली०) कुसुमनिर्मितं शयनं शय्या, मध्यपदलो०। पुष्पनिर्मित शय्या, फूलोंका बिछौना।

कुसुमशर (सं० पु०) कुसुमानि शरो यस्य, बहुव्री०। १ कन्दर्प, कामदेव। कुसुमनिर्मितः शरः। २ कन्दर्पका पुष्पवाण।

कुसुमसार (सं० पु०) मधु, शहद, फूलोंका निचोड़।

कुसुमस्तवक (सं० पु०) कुसुमानां स्तवको गुच्छः, ६-तत्। १ पुष्पगुच्छा, फूलोंका गुच्छा या तुर्रा। २ दण्डकजातीय कोई छन्द। प्रथम २ ह्रस्व और फिर एक दीर्घ, इसी प्रकार २७ अक्षरोंसे यह छन्द बनता है। इसमें चार चरण लगते हैं।

'सगणः सकलः खलु यत्र भवेत्तमिह प्रवदन्ति बुधाः कुसुमस्तवकम्।'

"विरराज यदीयकरः कनकद्युतिवन्धुरवामदृशः कुचकुड्मलगः

भ्रमरप्रकरो यथाद्भुतमूर्तिरशोकलताविलसत्कुसुमस्तवकः।

स नवीनतमालदलप्रतिमच्छवि बिभ्रदतीव विलोचनहारिवपुः

चपलाकचिरांशुकवल्लिधरो हरिरस्तु मदीयहृदम्बुजमध्यगतः॥"

(छन्दोमञ्जरी ४थ स्तवक)

कुसुमा (सं० स्त्री०) कुसुम-स्त्रियां टाप्। १ मालीपुष्पवृक्ष। २ रक्तपाटला, लाल पांड़री। ३ जातीफलवृक्ष, जायफरका पेड़। ४ शङ्खपुष्पी, सखौली।

कुसुमाकर (सं० पु०) कुसुमानां आकरः खनिः, ६-तत्। १ उद्यान, कुञ्ज, बाग, फूलोंसे भरी जगह। २ वसन्तकाल, बहार, बहुतसे फूलोंके खिलनेका वक्त।

"मासानां मार्गशीर्षोऽस्मि ऋतूनां कुसुमाकरः।" (गीता, १० अ०)

कुसुमागम (सं० पु०) कुसुमानामागमो यत्र। वसन्तकाल, मौसम-बहार।

कुसुमाञ्जन (सं० क्ली०) कुसुमाकारमञ्जनम्, शाकपार्थिववत् समा०। पुष्पाकार रीतिमल-सम्भव अञ्जन, पीतलकी कालिखसे बना हुवा फूल जैसा अञ्जन।

कुसुमाञ्जलि (सं० पु०) कुसुमपूर्णोऽञ्जलिः, मध्यपदलो०। पुष्पाञ्जलि, पुष्पपूर्ण अञ्जलि।

कुसुमात्मक (सं० क्ली०) कुसुममेव आत्मास्वरूपं यस्य कुसुम-आत्मन्-कप्। १ कुङ्कुम, जाफरान, केसर। (पु०) २ केश, बाल।

कुसुमाधिप (सं० पु०) कुसुमेषु कुसुमप्रधान-वृक्षेषु अधिपः श्रेष्ठः। चम्पकवृक्ष, चम्पाका पेड़।

कुसुमाधिराट् (सं० पु०) कुसुमेषु कुसुमप्रधानवृक्षेषु अधिराजते कुसुम-अधि-राज-क्विप्। महानागकेशर चम्पकवृक्ष, नागेश्वर चम्पा।

कुसुमायुध (सं० पु०) कुसुमानि आयुधान्यस्य, बहुव्री०। कन्दर्प, कामदेव। "कुसुमायुधपत्नि! दुर्लभस्तव भर्ता न चिराद्भविष्यति।" (कुमार ४।४०)

कुसुमाल (सं० पु०) कुसुमानि कुसुमवत् लोभनीयानि द्रव्याणि आलाति अगोचरेण गृह्णाति कुसुम-आला-कः। चौर, चोर।

कुसुमावचय (सं० पु०) कुसुमानामवचयश्चयनम्, ६-तत्। पुष्प-चयन, फूलोंको तोड़ाई।

कुसुमावली (सं० स्त्री०) १ कुसुमश्रेणी, फूलोंकी लड़ी २ वृन्दकृत सिद्धयोगटीका, एक वैद्यक ग्रन्थ।

कुसुमासव (सं० पु०-क्लो) कुसुमरसानामासवः, ६-तत्। मधु, शहद।

कुसुमास्त्र (सं० पु०) कुसुमानि अस्त्राण्यस्य, बहुव्रो०। १ कन्दर्प, कामदेव। (क्लो०) २ कामशर, कामदेवका बाण।

कुसुमित (सं० त्रि०) कुसुमं सञ्जातमस्य कुसुम-इतच्। पुष्पित, शिगुफता, खिला हुवा जो फूला हो।

"गृहोद्यानं कुसुमितैरम्यं बह्वमरद्रुमैः।
कूजद्विहङ्गमिथुनं गायन्मत्तमधुव्रतः॥" (भागवत, ३।२३।१८)

कुसुमितलतावेल्लिता (सं० स्त्री०) एक छन्द। प्रथम ५ दीर्घ एवं ५ ह्रस्व, फिर २ दीर्घ तथा १ ह्रस्व और फिरसे २ दीर्घ १ ह्रस्व और २ दीर्घ—इस प्रकारके १८ अक्षरोंसे कुसुमितलतावेल्लिता बनेगी। उसमें ४ चरण रहते हैं—

"स्याद्भूतर्त्वश्वैः कुसुमितवेल्लितामतौ नयौ यौ।" (छन्दोमञ्जरी)

कुसुमितलतावेल्लिताको 'कुसुमितलता' भी कहते हैं।

कुसुमेषु (सं० पु०) कुसुमानि इषवोऽस्य, बहुव्रो०। कन्दर्प, कामदेव।

"नाकल्पी यदि कुसुमेषुणा न शून्यः।" (माघ ४।७०)

कुसुमोदर (सं० क्लो०) भव्यफल, चालता।

कुसुमोद्यान (सं० क्लो०) कुसुमाय निर्मितमुद्यानम्, मध्यपदलो०। पुष्पोद्यान, गुलिस्तान्, फुलवाड़ी।

कुसुम्ब, कुसुम्भ देखो।

कुसुम्बिया (हिं० स्त्री०) कुसुम्भ देखो।

कुसुम्भ (सं० पु०) कुस-उम्भः। १ पुष्पविशेष, कोई फल। चलती हिन्दीमें उसे कुसुम कहते हैं। कुसुम्भका संस्कृत पर्याय—लट्वा, महारजन, कमलोत्तर, कमलोत्तम, ग्राम्यकुङ्कुम, वह्निशिख, कुक्कुटशिख, पावक, पीत, पद्मोत्तर, रक्त, लोहित, वस्त्ररञ्जन और अग्निशिख है। वह हिन्दीमें कुसुम, तामिलमें सेन्दुरकम्, बंगलामें कुसुमफूल, तेलङ्गीमें कुसुम्बचेट्टु, अरबीमें उसफर, ब्राह्मीमें हसु, मिसरीमें कोर्तम और इंराजीमें सेफ्फ्लावर कहलाता है। (Carthamus Tinctorius)

भारत, चीन और ब्रह्मदेशमें कुसुम्भ विस्तर उत्पन्न होता है। अधिकांश स्थलमें प्रथम उसका बीज वपन किया जाता है। फिर छोटे छोटे पौदोंको खोद एक हाथके अनन्तर रोपण करते हैं। जमीन् अच्छी रहनेसे पौदा शीघ्र बढ़ता और सुन्दर सुन्दर फूल लगता है। छोटे छोटे फूलोंको तोड़ कर छायामें अति सावधानीसे सुखाते हैं। उन्हीं सूखे फूलोंसे कुसुम्भो रंग निकलता है। देश विदेशमें रंगके लिये ही कुसुम्भका आदर है। उससे जो पीतरस निर्गत होता, वह रंगके लिये उत्कृष्ट नहीं। क्यों कि वह जलमें डालनेसे गल जाता है। उसमें कपड़ा वगैरह रंगनेसे धोते समय रंग छूटने लगता है। कुसुमके फूलसे जो रंग निकलता, वही उत्कृष्ट ठहरता है। परन्तु वह लाल रंग सहजमें नहीं निकलता। पीत अंश निर्गत होने पीछे सूखे फूल जलीय लवणद्रावकमें गला कर प्रस्तुत करने पड़ते हैं। केवल जल वा सुरासारमें कुसुम्भ नहीं गलता। उसके लवणांशको जमा कर दानेदार बना सकते हैं। एवं उसमें कोई वर्ण नहीं रहता। उसके साथ अम्लयोग करनेसे कुसुमाम्लक्षार प्रस्तुत होता है। इसे अधिक परिमाणसे बनानेको पीतरस निकाल कर सोडाके पानीमें नीबूका रस डाल सूखे फूल भिगोने पड़ते हैं। कुछ क्षण पीछे फूलोंसे कुसुमाम्लक्षार स्वतन्त्र हो पात्रके तल पर जम जाता है। शेषको धीरे धीरे जल और अन्य पदार्थ निकाल उसे ईषत् अग्निके उत्तापसे सुखा लेते हैं। सूती और रेशमी कपड़े पर उसका रंग बहुत अच्छा आता है। मनुष्यके गात्रवर्णसे मिलाके रेशम पर रंग चढ़ानेको एक पाव कुसुम फूलकी टिकिया और एक छटांक सोड़ा सात सेर पानीमें गलाते हैं। उसके पीछे डेढ़ सेर खड़िया मट्टीकी छनी बुकनी उसमें डालनी पड़ती है। फिर नीबूका रस या टार्टरिक एसिड् मिलानेसे जो रंग नीचे बैठ रहता, वही सबसे अच्छा निकलता है। मिश्रित कुसुमाम्लक्षारसे ईषत् पीताभ लाल रंग भी प्राप्त होता है। चीनावोंके तैयार किये हुये सोडा-मिश्रित कुसुमाम्लक्षारसे एक दूसरे प्रकारका रंग निकलता है। उसको देखने या रगड़नेसे कोई रंग मालूम नहीं पड़ता। किन्तु उसमें गात्रका पसीना लगनेसे लवणांश नष्ट होने पर अति सुन्दर नयनतृप्तिकर गुलाबी रंग झलकने लगता है।

कुसुम्भपुष्पके बीजसे यथेष्ट तैल उत्पन्न होता है। उसे पक्षाघात रोगमें मर्दन करनेसे उपकार पहुंचता है। सड़े घाव पर भी कुसुमका तेल लगानेसे लाभ है। कुसुम्भपुष्पको ही एक श्रेणीको चीना 'कङ्गह्वा' कहते हैं। इसका रंग उन्हें बहुत प्यारा है। क्रेप, साटिन इत्यादि पर रंग चढ़ानेको यही व्यवहृत होता है। निङ्गपो प्रदेशके चिक्कियाङ्ग नामक स्थानमें कुसुमके फूलको अलग खेती है। भारतवर्षमें अवधका कुसुम सबसे अच्छा होता है।

कुसुमके फूलका रंग सात प्रकार होता है। उसमें पियाजी-गुलाबी, उजला गुलाबी और गहरा लाल खालिस है। उसमें सेंहुड़के फूल मिलानेसे सुनहला और नारंगी रंग आ जाता है। फिर कुसुमके फूलोंमें हलदी डालनेसे सुन्दर पीताभ गहरा लाल और नील मिलानेसे नाना प्रकारका बैंजनी रंग तैयार होता है। यह सब मिले रंग देखनेमें अति सुन्दर और मनोरम लगते हैं। परन्तु धुलाई पड़नेसे इनमें कोई नहीं ठहरता।

कुसुम्भका काष्ठ कठिन और दृढ़ होता है। उसे कोल्हूको जाट और गाड़ी बनानेमें लगाते हैं। उसको लाख बहुत अच्छी रहती और ऊंचे दाम पर बिकती है। कुसुम्भके पत्र ८। १० अङ्गुलि दीर्घ रहते और सोकमें जोड़े जोड़े आमने सामने लगते हैं। फूल चम्पेके फूल जैसा रंगदार होता है। कुसुम्भमें २ अङ्गुलि दीर्घ, तीक्ष्णाग्र और चिक्कण फल आते हैं। बहुत होने पर कुसुमकी पत्ती ग्रीष्मऋतुमें चौपायोंको भी खिलायी जाती है।

वह तीन प्रकारका होता है—महाकुसुम्भ, क्षुद्रकुसुम्भ और वनकुसुम्भ। कुसुम्भ वातल, रुक्ष, विदाही, कटु और मूत्रकृच्छ्र, कफ एवं रक्तपित्त विनाशक है। उसका पुष्प सुस्वादु, भेदक, रुक्ष, उष्ण, पित्तल, केशरंजनकारक, लघु और कफ तथा त्रिदोषघ्न होता है। (वैद्यकनिघण्टु) कुसुम्भका शाक मधुर, रुक्ष, कटु, उष्ण, मलमूत्रदोषनाशक, दृष्टिप्रसादक, रुचिकारक, अग्निवर्धक, कृमिघ्न, पित्तजनक, वायुवृद्धिकारक, रक्तपित्तनाशक और श्लेष्मशान्तिकारक है। उसका तैल कटु, उष्ण, त्रिदोषकारक, गुरु, स्वादु, विदाहक, मलनाशक और तेजोबलवृद्धिकर होता है। (भावप्रकाश)

उसके घर्षण करनेसे त्रिदोष उपजता, पुष्टि एवं बल घटता और कण्डू रोग बढ़ता है। कुसुम्भका शाक-भक्षण निषिद्ध है—

"कुसुम्भं ललिताशाकं वृन्ताकं पूतिकां तथा।
भक्षयन् पतितस्तु स्यादपि वेदान्तगोद्विजः॥" (तिथितत्त्व)

२ कुङ्कुम, जायफर, केशर। ३ स्वर्ण, सोना। ४ कमण्डलु। ५ पूर्वरागका प्रकार भेद।

"नीलीकुसुम्भमञ्जिष्ठाः पूर्वरागोऽपि च त्रिधा।
कुसुम्भरागं च प्राहुर्यदपैति च शोभते॥" (साहित्यदर्पण)

६ पर्वतविशेष, कोई पहाड़। (भागवत, ५।१६।२७)

कुसुम्भतैल (सं० क्ली०) कुसुम्भबीजस्नेह, कुसुमके फलका तेल। कुसुम्भ देखो।

कुसुम्भपत्र (सं० क्ली०) कुसुम्भशाक, कुसुमकी पत्ती। कुसुम्भ देखो।

कुसुम्भला (सं० स्त्री०) दारुहरिद्रा।

कुसुम्भवान् (सं० त्रि०) कुसुम्भ-मतुप् मस्य वः। कमण्डलुधारी।

"कृप्तकेशनखश्मश्रुः पात्री दण्डी कुसुम्भवान्।" (मनु ६।५२)

कुसुम्भबीज (सं० क्ली०) कुसुम्भस्य बीजम्, ६-तत्। कुसुम्भवृक्षका फल वा बीज। उसका संस्कृत पर्याय—वरटा और वरटिका है। वह मधुर, स्निग्ध, कषाय, शीतल, गुरु, वृष्य और रक्तपित्त, कफ तथा वातघ्न होता है। (भावप्रकाश)

कुसुम्भा (सं० स्त्री०) आषाढ़ शुक्ला षष्ठी, आषाढ़ सुदी छठ।

कुसुम्भा (हिं० पु०) १ कुसुम्भवर्णक, कुसुमका रंग। २ अहिफेन और विजयाके सहयोगसे प्रस्तुत एक मादकद्रव्य। ३ झुली और मोटे कपड़ेसे छनी हुई अफीम।

कुसुम्भी (हिं० वि०) कुसुम्भवर्णविशिष्ट, रक्तवर्ण, लाल।

कुसुरुविन्द (सं० पु०) उद्दालकवंशीय एक व्यक्ति।

कुसुरुबिन्दु (सं० पु०) एक ऋषि। उन्होंने शुक्लयजुर्वेदके अनेक मन्त्र प्रकाश किये हैं।

कुसू (सं० पु०) कुस-कूः। किञ्चुलुक, गण्डूपद, केंचुवा।

कुसूत (हिं० पु०) मन्दसूत, बुरा सूत या धागा।

कुसूल (वै० पु०) कुस-ऊलच्। १ दैवयोनिविशेष। (अथर्व ४।६।१०) २ तुषानल, भूसीकी आग। ३ धान्यागार, कोठला।

कुसृति (सं० स्त्री०) कुत्सिता सृतिरुपायो व्यवहारो वा, कुगतिस०। १ शठता, पाजीपन। २ हस्तलघुता, इन्द्रजालविद्या, हाथकी सफाई, बाजीगरी। (त्रि०) कुत्सिता सृतिराचारोऽस्य, बहुव्री०। ३ कुत्सिताचारी, बुरा काम करनेवाला।

"यत् पादपद्ममकरन्दनिषेवणेन ब्रह्मादयः शरणादाश्नुवते विभूतिः।
कस्मादयं कुसृतयः खलयोनयस्ते दाक्षिण्यदृष्टिपदवीं भवतः प्रणीताः॥"
(भागवत, ८।२३।७)

कुस्तुभ (सं० पु०) कुं पृथिवीं स्तुभ्नोति वराहरूपेणेत्यर्थः, कु-स्तुन्भ-कः। १ विष्णु, वराहरूप भगवान्। २ समुद्र, बहर।

कुस्तुम्बरी (सं० स्त्री०) कुत्सिता तुम्बरी पृषोदरादिवत् साधुः। धन्याक, धनिया।

कुस्तुम्बरु (सं० पु०) १ यक्षराज कुवेरके कोई पार्षद। (स्त्री०) २ धन्याक, धनिया।

कुस्तुम्बुरु (सं० पु०-स्त्री०) कुत्सितस्तुम्बुरुः, जातौ सुडागमः। कुस्तुम्बुरुणि जातिः। पा ६।१।१४३। १ आर्द्र धन्याक, हरा धनिया। वह स्वादु, दौर्गन्ध्यनाशक, हृद्य, मधुरपाक, स्निग्ध, कटु, किञ्चित् तिक्त, स्रोतोविशोधन और तृट्, दाह तथा दोषघ्न होता है। (सुश्रुत)

कुस्तुम्बुरुका संस्कृत पर्याय—धन्याक, धानाक, धाना, धनीयक, धनगा और कुस्तुम्बरी है। २ कोई यक्ष। (भारत २।१०।१५)

कुस्त्री (सं० स्त्री०) कुत्सिता स्त्री, कुगतिस०। मन्द स्त्री, बुरी औरत, छिनाल।

कुस्वप्न (सं० पु०) कुत्सितः स्वप्नः। मन्द स्वप्न, दुःस्वप्न, बुरा ख्वाब।

कुस्वामी (सं० पु०) कुत्सितः स्वामी। कुत्सित प्रभु वा पति, खराब मालिक या खाविन्द।

कुस्सा (हिं० पु०) कुदाल, कुदाली।

कुह (वै० अव्य०) किम्-ह पश्चात् किमः कुः। कुत्र, कहां, किस स्थान पर।

"यं स्मा पृच्छन्ति कुह सेति घोरम्।" (ऋक् २।१२।५)

(पु०) कुहयति विस्मापयति ऐश्वर्यप्रभावेन, कुह-णिच्-अच्। २ कुवेर। ३ विस्मापक, प्रतारक। ४ राजबदरवृक्ष, बड़े बेरका पेड़। ५ नीलपद्म, आसमानी कंवल।

कुहक (सं० त्रि०) कुह क्वुन्। १ दाम्भिक, प्रतारक, ऐन्द्रजालिक, मक्कार, धोका देनेवाला।

"तद्दे धनुस्त इषवः स रथोहयास्ते सोऽहं रथी नृपतयो यत आनमन्ति।
सर्वं क्षणेन तदभूदसदीशरिक्तं भस्मन् हुतं कुहकराद्धमिवोप्तमुष्याम्॥"
(भागवत, १।१५।२१)

(पु०) २ भेक, मेंड़क। ३ सर्पराजविशेष, सांपोंका कोई राजा। (विष्णुपुराण, १।१७।३८ ; भागवत, ११।९।१५) ४ मण्डूकजातीय कीटभेद, मेंड़कको नस्लका कोई कीड़ा। ५ ग्रन्थिपर्णवृक्ष, गांठपत्ता। (स्त्री०) ६ इन्द्रजालविद्या, हस्तलघुता, प्रतारणा, बाजीगरी, हथकण्डा, नजरबन्दी।

कुहककार (सं० त्रि०) कुहकं इन्द्रजालं करोति, कुहक-कृ-अण्, उपपदस०। ऐन्द्रजालिक, प्रतारक, बाजीगर, धोका देनेवाला।

कुहकचकित (सं० त्रि०) कुहकेन मायया चकितो विस्मितः, ३-तत्। इन्द्रजालविद्याके प्रभावसे विस्मित, बाजीगरीके जोरसे चकराया हुवा।

कुहकजीवी (सं० त्रि०) कुहकेन इन्द्रजालविद्यया जीवति, कुहक-जीव-णिनिः। मायाजीवी, बाजीगर, सवेरा।

कुहकना (हिं० क्रि०) मधुरध्वनि करना, मीठे बोलना पीकना। यह शब्द केवल मोर और कोयलकी बोलीके लिये आता है।

कुहकवृत्ति (सं० स्त्री०) कुहकस्य वृत्तिः ६-तत्। इन्द्रजालविद्या, हस्तलघुता, बाजीगरी, हाथकी सफाई।

कुहकस्वन (सं० पु०) कुहको विस्मापकः स्वनः शब्दोऽस्य; वनकुक्कुट, जङ्गली मुरगा।

कुहकस्वर, कुहकस्वन देखो।

कुहका (सं० स्त्री०) कुहक स्त्रियां टाप्। इन्द्रजाल, माया, बाजीगरी, धोकाधड़ी।

कुहकी (सं० त्रि०) कुहकोऽस्त्यस्य, कुहक-इनि।

१ ऐन्द्रजालिक, बाजीगर। २ प्रतारक, धोकाबाज। ३ मायावी, मक्कार।

कुहकुह (हिं० पु०) कुङ्कुम, जाफरान, केसर।

कुहक (सं० पु०) एक ताल। दो द्रुत और दो लघु ताल लगनेसे कुहक्क होता है—"द्रुतद्वन्द्वं लघुद्वन्द्वं ताले कुहक्कसंज्ञके।" (सङ्गीतदामोदर)

कुहचिद्विद् (वै० त्रि०) किसी स्थानमें विद्यमान, कहीं हाजिर। "शिचियमिन्महयते दिवे दिवे राय आ कुहचिद्विदे।" (ऋक् ७।३२।१९) 'कुहचिद्विद्यमानः कुहचिद्विदे।' (सायण)

कुहन (सं० पु०) कुं भूमिं हन्ति खनति, कु-हन्-अच्। १ मूषिक, चूहा। कुत्सितं हन्ति दंशति। २ सर्प, सांप। ३ महाभारतोक्त कोई व्यक्ति। (भारत, वन)

(क्ली०) कु ईषत् प्रयत्नेन हन्यते, कु-हन् कर्मणि अप्। ४ मृद्भाण्डविशेष, मट्टीका कोई बरतन। ५ काचपात्र, शीशेका बरतन। (त्रि०) ६ ईर्षालु, हसदी, डाह करनेवाला।

कुहना (सं० स्त्री०) कुह-युच्। प्रतारणा, धोकाबाजी, फरेब।

कुहना (हिं० क्रि०) मारना पीटना, मार मारके कचूमर निकालना।

कुहनिका (सं० स्त्री०) कुहन स्वार्थे कः स्त्रियां टाप् अकारस्येकारः। कुहना, प्रतारणा, धोकाबाजी।

कुहनी (हिं० स्त्री०) कफोणि, हाथ और बांहका जोड़। २ कोई टेढ़ी नली। वह तांबे या पीतलकी बनती और हुक्केकी निगालीमें लगती है।

कुहनी उड़ान (हिं० पु०) मल्लयुद्धका एक हस्तलाघव, कुश्तीका कोई पेंच इसमें कुहनीके सहारे झटपट अपनी जोड़के हाथ पकड़ रद्दा लगाते हैं। कुहनीउड़ान तब चलता, जब अपनी गर्दन पर दूसरे लड़नेवालेके दोनों हाथ रहनेका मौका लगता है। कुहनी उड़ानकी टांग भी मारी जाती है।

कुहप (हिं० पु०) राक्षस, रजनीचर।

कुहया (वै० स्त्री०) कहां रहनेकी जिज्ञासाका समय, वह वक्त जिसमें कहां रहनेका सवाल करें।

"यत्वा पृच्छादीजानः कुहया कुहयाकृते।" (ऋक् ८।२४।३०)
'कुहया क्व तिष्ठतीति यदा पृच्छति तदानीम्।' (सायण)

कुहयाकृति (वै० स्त्री०) कहां है जाननेके लिये सम्मान किया जानेवाला, जिसकी इज्जत कहां है मालूम करनेके लिये करें। (ऋक् ८।२४।३०)

'कुहयाकृते कुह क्व तिष्ठतीत्येवं तदिच्छया जिज्ञासुभिः पुरस्कृते।' (सायण)

कुहर (सं० पु०) कुह विस्मापने कः, कुहं भयं राति ददाति, कुह-रा-कः। यद्वा कुह-अरः। १ क्रोधवशवंशीय नागविशेष, कोई सांप। २ कर्ण, कान। ३ कण्ठ, गला। ४ कण्ठशब्द, गलेकी आवाज। (क्ली०) ५ छिद्र, छेद। ६ गर्त, गड्ढा। ७ समीप, पास। ८ रतिक्रिया। ९ भृष्टान्न, भूना हुआ अनाज, बहुरी।

कुहर (हिं० स्त्री०) बहरी, चिड़ियोंको पकड़नेवाला एक शिकरा।

कुहरा (हिं० पु०) कुहेड़िका, गलीज बोखारात, कोहासा, धुंध। शीतलता पाकर आकाशमें भाप जमनेसे जलके अत्यन्त सूक्ष्म कण उत्पन्न हो जाते हैं। फिर धीरे-धीरे वह भूमिपर उतरते और पत्तियों पर बड़े बड़े बूंद बन बैठते हैं। इन्हीं कणोंके गिरनेका नाम कुहरा है। कुहरा प्रातःकाल ही पड़ता है।

कुहराम (हिं० पु०) १ कहर-आम, आर्तनाद, हाय हाय। २ उपद्रव, हलचल।

कुहरित (सं० क्ली०) कुहरयति कण्ठशब्दं करोति, कुहर क्रतौ णिच् भावे क्तः। १ कण्ठशब्द, गलेकी आवाज। २ पिकालाप, कोकिलध्वनि, कोयलकी बोली। ३ रतिध्वनि।

कुहलि (सं० पु०) १ सज्जित ताम्बूल, लगाया हुआ पान। २ पूगपुष्पिका, पान।

कुहा (सं० स्त्री०) कुह-क-टाप्। १ कटुकी, कुटकी। २ बदरवृक्ष, बेरी, बेरका पेड़। ३ गोपघोण्टा, झड़बेरी।

कुहाना (हिं० क्रि०) मनही मन क्रुद्ध होना, रूठना, बुरा मानना।

कुहारा (हिं० पु०) कुठार, कुल्हाड़ा।

कुहावती (सं० स्त्री०) दुर्गाका नामान्तर।

कुहासा (हिं० पु०) कुज्झटिका, कुहरा।

कुही (हिं० स्त्री०) १ पक्षिविशेष, कुहर, बहरी। (पु०) २ टांगन घोड़ा।

कुहु (सं० स्त्री०) कुह विस्मापने कु। १ अमावस्या। २ कुहूशब्दार्थ। ३ कोकिलध्वनि, कोयलको बोली।

"कोकिलानां कुहरवैः सुखैः श्रुतिमनोहरैः" (भारत, १५।२७ अ०)

४ कोई नदी।

कुहुक (सं० क्ली०) ग्रन्थिपर्ण, गांठपत्ता।

कुहुक (हिं० स्त्री०) पक्षियोंका मधुर कूजन, पीक, कूक।

कुहुकना (हिं० क्रि०) मधुरध्वनि करना, मीठे मीठे बोलना।

कुहुकबान (हिं० पु०) मधुरध्वनिकारी वाण, कुहुकनेवाला तीर। वह बांसकी खपाचोंको जोड़कर निर्माण किया जाता है।

कुहू (सं० स्त्री०) कुह-उ। १ कोकिलध्वनि, कोयलको पुकार।

"उन्मीलन्ति कुहूः कुहूरिति कलोत्तालाः पिकानां गिरः।"

२ अमावस्या, जिस तिथिको चन्द्र देख न पड़ता हो।

"हे ह वा अमावस्या या पूर्वामावस्या सा सिनीवाली योत्तरा सा कुहूः।" (श्रुति)

अमावस्या दो प्रकारकी होती है—सिनीवाली और कुहू। जिस अमावस्यामें कुछ भी चन्द्रकला देख नहीं पड़ती उसको कुहू और जिसमें कुछ देख पड़ती है उसको सिनीवाली कहते हैं—

"दृष्टचन्द्रा सिनीवाली नष्टचन्द्रा कुहूर्मता।"

मतान्तरमें तिथिक्षय होनेसे अमावस्या सिनीवाली और वृद्धि होनेसे कुहू कहाती है।

"तिथिक्षये सिनीवाली नष्टचंद्रा कुहूर्मता।
बाहुल्येऽपि कुहूश्च या वेदवेदान्तवेदिभिः।
सिनीवाली द्विजैः कार्या साग्निकैः पितृकर्मणि।
स्त्रीभिः शूद्रैः कुहूः कार्या तथानाग्निकैर्द्विजैः।" (लौगाक्षि)

अमावस्या यदि अपराह्णद्वयव्यापिनी हो तो आहिताग्नि व्यक्तियोंको सिनीवालीमें श्राद्ध करना चाहिये। निरग्नि ब्राह्मणों, स्त्रियों और शूद्रोंके लिये कुहूमें श्राद्ध करनेका विधान है।

३ अमावस्याकी अधिष्ठात्री अङ्गिराकी कन्या।

"सिनीवाली कुहूरिति देवपत्न्यौ।" (निरुक्त)

अङ्गिरा ऋषिकी श्रद्धानाम्नी भार्याके गर्भसे कुहूने जन्मग्रहण किया था—

"श्रद्धात्वङ्गिरसः पत्नी चतस्रोऽसूतकन्यकाः।
सिनीवाली कुहू राका चतुर्थ्यनुमतिस्तथा॥" (भागवत, ४।१।३४)

"कुहूं देवीं सुकृतं विद्मना।" (अथर्व, ७। ४७।१)

४ कोकिलालाप, कोयलकी कूज।

"केनाद्यापि पिकानां कुहूं विहायेतरः शब्दः।" (आर्यासप्तशती, ६३०)

कुहूक (सं० पु०) कुहूरिति शब्दं करोति, कुहू-कृ-अ। कोकिल, कोयल।

कुहूकण्ठ (सं० पु०) कुहूरिति शब्दः कण्ठे यस्य, बहुव्री०। कोकिल, कोयल।

कुहूजाल (सं० पु०) कच्छप, कछुवा।

कुहूमुख (सं० पु०) कुहूरिति शब्दो मुखे यस्य, बहुव्री०। कोकिल, कोयल।

कुहूरव (सं० पु०) कुहूरिति रवो यस्य, बहुव्री०। कोकिल, कोयल।

कुहूल (सं० क्ली०) कुहू-जलक्। शल्ययुक्त गर्त, सांपकी बांबी।

कुहेड़िका (सं० स्त्री०) कु ईषत् हेड़ति वेष्टते दृष्टिसञ्चारोऽत्र, कु-हेड़ वेष्टने स्वार्थ कन् स्त्रियां टाप्। कुज्झटिका, कुहरा।

कुहेड़ी (सं० स्त्री०) कु-हेड़-इन् स्त्रियां ङीष। कुज्झटिका, कुहरा।

कुहेलिका (सं० स्त्री०) कु-हेड़-इन् स्वार्थे कन्-टाप् डस्य लत्वम्। कुहेड़िका, कुहरा।

कुह्वान (सं० क्ली०) कुत्सितं ह्वानम्, कुगतिस०, कु-ह्वे भावे ल्युट्। कुत्सित शब्द, बुरा लगनेवाली बात।

कू (सं० स्त्री०) कूनाति शब्दायते, कू-क्विप्। पिशाची, डाइन, चुड़ैल।

कू (हिं० स्त्री०) लड़कोंके कानमें मुंह लगाके निकाला जानेवाला एक शब्द। कू शब्द कानमें फूंकनेसे लड़के हंसने लगते हैं।

कूंख (हिं० स्त्री०) कुक्षि, कोख।

कूंखना (हिं० क्रि०) कांखना, पीड़ित अवस्थामें करुणजनक शब्द निकालना।

कूंग (हिं० पु०) खराद, चरख। कूंग एक यन्त्र है। कसेरे उस पर ताम्र वा पित्तलपात्र खरादा करते हैं।

कूंगा (हिं॰ पु॰) कषायविशेष, बबूलकी छालका काढ़ा। कूंगामें डुबोकर चमड़ा सिझाया जाता है।

कूंच (हिं॰ स्त्री॰) १ आवर्षणीविशेष, एक बड़ा बुरुश। कूंच खस या नारियलके रेशेसे बनती और हाथ डेढ़ हाथ लम्बी रहती है। जुलाहे उससे तानेका सूत साफ करते हैं।

२ सन्दंशविशेष, लोहारकी बड़ी संड़सी। ३ घोड़ नस, पै। कूंच एक मोटी नस है। वह मनुष्योंकी एड़ीके ऊपर और पशुवोंके टखनेके नीचे रहती है।

कूंचना (हिं॰ क्रि॰) तोड़ना, फोड़ना, टुकड़े टुकड़े करना, कुचलना, मारना-पीटना।

कूंचा (हिं॰ पु॰) १ छोटा झाड़ू। कूंचा किसी रेशेदार लकड़ी या मूंज वगैरहको कूट कर बनाया जाता है। वह चीजोंको झाड़ने और साफ करनेमें काम आता है। २ भग्न नौखण्ड, जहाजका टूटा टुकड़ा। ३ करछा।

कूंची (हिं॰ स्त्री॰) १ छोटा कूंचा। २ बालों या कुटी हुई मूंजके रेशोंका गुच्छा। कूंचीसे चीजें साफ करते या उनमें रंग भरते हैं। ३ तूलिका, बालोंका कलम। कूंचीसे चित्रकार चित्रों पर रंग चढ़ाते हैं। ४ कूजा, मिसरी जमानेकी कुलिहया। ५ मृण्मयपात्र विशेष, मट्टीका एक बरतन। कूंचीमें कोल्हूसे निकलनेवाला रस टपकाया जाता है। ६ तालिका, चाबी।

कूंज (हिं॰ पु॰) क्रौञ्चपक्षी, कराकुल चिड़िया।

कूंजड़ा—एक हिन्दूजाति। आजकल कूंजड़े अधिकांश मुसलमान हो गये हैं। परन्तु पहले यह हिन्दू रहे। कहते हैं, अजमेरके युद्धमें जब क्षत्रिय हारे और मीर साहब जीते, तब उन्होंने लड़नेवाले हिन्दुओंके हाथोंमें बेड़ियां डाल दीं। इस पर हिन्दू वीर 'हुजूर हमें क्यों जड़ा, हुजूर हमें क्यों जड़ा' कह कर बार बार चिल्लाने लगे। उनमें जो मुसलमान हुए, उन्होंने साग भाजी और फल आदि बेचनेका कार्य अङ्गीकार किया। इन्हींका नाम कूंजड़ा है।

कूंजड़ी (हिं॰ स्त्री॰) कूंजड़ेकी औरत, कबाड़िन।

कूंड (हिं॰ पु॰) १ लौहनिर्मित शिरस्त्राणविशेष, लोहेकी कोई टोपी, खोद। पहले लड़ाईमें लोग कूंड़ लगाते थे। २ पात्रविशेष, कोई बरतन। कूंड़ मट्टी या लोहेसे बनाया जाता और चोगोशिया टोपी सा आता हैं। उसे ढेंकुलमें लगाकर खेत सींचनेके लिये कुवेंसे पानी निकालते हैं। ३ क्षेत्ररेखाविशेष, खेतकी कोई लकीर। कूंड़ हल जोतनेसे बन जाता है।

कूंडा (हिं॰ पु॰) १ मृण्मय पात्र विशेष, मट्टीका कोई गहरा और चौड़े मुंहका बरतन। कूंड़ेमें प्रायः पानी भर कर रखते हैं। २ गमला, छोटे छोटे पौदे लगानेका बरतन। ३ डोल, रोशनी करनेकी बड़ी हांडी। ४ कठौता, मट्टी या लकड़ीका बड़ा बरतन। कूंडामें आटा मांड़ा जाता है।

कूंड़ी (हिं॰ स्त्री॰) १ पथरी, पथरौटी, पत्थरकी कटोरी। २ छोटी नांद। ३ कोल्हूके बीचका गड्ढा। कूंड़ीमें जाट रहती है। ४ एंडुरी, कोई छोटीसी गद्दी।

कूंथना (हिं॰ क्रि॰) १ कांखना, कराहना। २ गुटरगूं करना।

कूईं (हिं॰ स्त्री॰) कुमुदिनी, कोका, बघोला।

कूईं जलमें उत्पन्न होनेवाला कमल-जैसा एक पौदा है। उसके पत्र कमलके पत्रोंसे मिलते, परन्तु ईषत् दीर्घ और कटेहुए रहते हैं। जिन सरोवरोंमें वर्षाका जल सिमट आता, इन्हींमें कुईंका पौदा होते दिखाता है। वह वर्षाके प्रारम्भमें बीज वा पुरातन मूलसे निकलती है। उसके पत्र जलके ऊपर और डण्ठल जलके भीतर रहते हैं। आश्विन-कार्तिक मास कूईं फूलती है। उसके पुष्प श्वेतवर्ण और सुन्दर होते हैं। कूईंका डण्ठल चिकना रहता है, उस पर कमलकी भांति गड़नेवाला रूयां नहीं निकलता। उसका फूल रातको फूलता और चांदनीमें बहुत खिलता है। यही कारण है कि कवि लोग चन्द्रको कुमुदबन्धु कहते हैं। श्वेत पुष्पकी कूईं अधिक होती है। किन्तु कहीं कहीं उसमें रक्त वा पीतवर्ण पुष्प भी आते हैं। कमलकी भांति कूईं फूलके भीतर छत्ता नहीं लगता। उसमें

एक कर्णिकामण्डल रहता, जो अपने निम्नदेशमें नालकी घुण्डी रखता है। उक्त ग्रन्थि ही वर्धित हो कर मोदकका आकार धारण करती और वीजोंमें भर रहती है। कूईके वीज काले सरसों-जैसे आते और वेरा कहलाते हैं। भूननेसे वह सफेद लावे हो जाते हैं। व्रतके दिन उनको व्यवहार किया करते हैं। कूई-का मूल भी भक्षण किया जाता है।

कूक (हिं० स्त्री०) १ कूजन, मोर या कोयलकी मीठी बोली। २ रोदन, रोना। ३ घड़ी या बाजे वगैरहमें चावी लगानेका काम।

कूकना (हिं० क्रि०) १ लंबी और मीठी आवाज लगाना, कूजना। २ चावी लगाना, घड़ी या बाजेकी कमानीको चावी देकर कसना।

कूकर (हिं० पु०) कुक्कुर, कुत्ता।

कूकरकौर (हिं० पु०) १ श्वानको दिये जानेवाले उच्छिष्ट भोजनका क्षुद्र अंश, टुकड़ा, कुत्तेका हिस्सा। २ तुच्छ वस्तु, छोटी चीज।

कूकरचन्दी (हिं० स्त्री०) ओषधिविशेष, एक जंगली जड़ी। कूकरचन्दीकी पत्ती पीसकर कुत्तेके दष्टस्थान पर लगायी जाती है।

कूकरनिंदिया (हिं० स्त्री०) श्वाननिद्रा, कुत्तेकी नींद, हलकी नींद।

कूकरबसेरा (हिं० पु०) अल्प विश्राम, थोड़ा आराम।

कूका—एक नानकपन्थी सम्प्रदाय। कूका श्वेतवस्त्र धारण करते, झूठ कम कहते, दिनमें तीन बार नहाते और ऊन या सूतकी माला रखते हैं। अपनी सभा लगने पर कूका नानकके शब्द उच्चारण करके उच्चैःस्वरसे कू कू पुकारने लगते हैं। इसीसे इनका नाम कूका पड़ गया है। यह सबके सब गृहस्थ हैं। सिखधर्मके अनुसार इनका विवाह होता है। कूका सम्प्रदायके आदिगुरु रामसिंह खाती (बढ़ई) थे। इन्होंने पटियाला-मालेर और कोटलेके राज्योंमें विद्रोह उपस्थित किया था। अतएव अंगरेज सरकारने इनके आचार्य रामसिंह खातीको कालेपानीकी सजा दी। वहीं १८३० ई० को उनका मृत्यु हुवा। इनका गुरुद्वार लुधियानाके तहणी गांवमें है।

कूकी (हिं० स्त्री०) कृमिभेद, एक कीड़ा। कूकी जाड़ेकी फसल बिगाड़ा करती है।

कूकुद (सं० पु०) कुशब्दे भावे क्विप् कुव: शब्दस्य ख्यातेः कुं भूमिं ददाति, कू-कु-दा-क। यथाविधि नियमानुसार अलङ्कृता कन्या दान करनेवाला, जो बाकायदे लड़कीकी शादी करता हो।

कूकुर (सं० पु०) कुक्कुर, कुत्ता।

कूच (सं० पु०) कुशब्दे चट् दीर्घश्च। कुवचट् दीर्घश्च। उण ४।९१। नवोदित स्तन, नये उभरे हुए पिस्तान्।

कूच (तु० पु०) १ प्रस्थान, रवानगी, चला चली। २ कुश्तीका एक पेंच। प्रतिद्वन्द्वीका एक पर पकड़कर खींच लेना कुश्तीमें 'कूच' कहलाता है।

कूचका (सं० स्त्री०) कूच-कः स्त्रियां टाप्। वृक्ष विशेषका दुग्धवत् रस, एक पेड़का दूध-जैसा रस।

कूचक्र (वै० पु०-क्ली०) पृथिवीवलय, जमीनका घेरा।

"पीप्याना कूचक्रेणेव सिञ्चन्।" (ऋक् १०।१०२।११)

'कुः पृथिवी तस्याश्चक्री वलयः कूचक्रः।' (सायण)

कूचवार (सं० पु०) कूचं तृणोत्पत्तिमन्देशे कूच-वृ अधिकरणे घञ्। १ कोई देश। २ कोई व्यक्ति।

कूचा (फा० पु०) क्षुद्रमार्ग, तङ्ग गली, छोटा रास्ता। २ कूंचा।

कूचिका (सं० स्त्री०) कूच स्वार्थे कन् स्त्रियां टाप् अकारस्येकारः। १ अन्धाहिमत्स्य, किसी किस्मकी मछली। २ क्षुद्रकुञ्चिका, छोटी चावी। ३ दुग्धपाचित कृतभर्जित तण्डुल, दूधमें पकाकर भूने हुवे चावल। ४ तूलिका, मुसव्वरका कलम।

कूचिदर्थी (वै० त्रि०) कहीं मांगनेवाला।

"चित्रं समं त्वं गुहा हितं सुवेदं कूचिदर्थिनम्।" (ऋक् ४।७।६)

'कूचिदर्थिनं क्वापि हविष्यर्थिनं क इत्यत्र वकारस्य छान्दसे सम्प्रसारणे परपूर्वत्वे च हल इति दीर्घत्वम्।' (सायण)

कूची (सं० स्त्री०) कूच स्त्रियां ङीष्। १ तन्त्र कूर्चिका। २ दुग्धकूर्चिका। ३ चित्रलेखनिका, तसवीर बनानेका कलम।

कूची (हिं० स्त्री०) कूंची, छोटा झाड़ू।

कूचीकान्त (सं० क्ली०) एक वृक्ष।

कूच्छलिङ्ग (सं० पु०) कुकुन्दरवृक्ष, कुकरमुत्ता।

कूज (हिं० स्त्री०) ध्वनि, बोली।

कूज (सं० पु०) कूजतीति, कूज-अच्। शब्दकारी, बोलनेवाला।

"रामशोकाभिभूतं तन्निष्कूजमिवकाननम्।" (रामायण २।५९।१०)

कूजक (सं० त्रि०) कूजतीति, कूज-ण्वुल्। अव्यक्त शब्दकारी, अपनी बोली बोलनेवाला।

कूजन (सं० क्ली०) कूज भावे ल्युट्। १ पक्षिध्वनि, चिड़ियोंकी बोली। २ उदरध्वनि, पेटकी गुड़ गुड़ाहट। ३ अव्यक्तध्वनि, समझमें न आनेवाली बोली। ४ रथचक्रध्वनि, गाड़ीके पहियेके घरघराहट।

कूजना (हिं० क्रि०) कूकना, पीकना, चहकना, मीठी मीठी बोली बोलना।

कूजा (फा० पु०) १ कुल्हड़, मट्टीका प्याले-जैसा बरतन। २ कूजेमें जमी हुई मिसरी।

कूजा (हिं० पु०) कुब्जक, बेले या मोतियेका फूल।

कूजित (सं० क्ली०) कूज भावे क्त। १ पक्षिध्वनि, चिड़ियोंकी चहचहाहट। (वि०) २ ध्वनित, पीका या कूका हुवा।

"ललितलवङ्गलतापरिशीलनकोमलमलयसमीरे।
मधुकरनिकरकरम्बितकोकिलकूजितकुञ्जकुटीरे॥"
(गीतगोविन्द १।७।२)

कूजी (सं० त्रि०) कूज-इनि। अव्यक्त शब्दयुक्त, मधुरध्वनिकारी, पीकने या कूकनेवाला।

कूट (सं० पु०-क्ली०) कूट-अच्। १ शृङ्ग, कंगूर।

"उग्रो इदमपि वज्रहस्ताः कूटं स्म द'हदभिमातिमेति।"
(ऋक् १०।१०२।४)। "कूटं पर्वतशृङ्गम्।" (सायण)

२ मुकुट, ताज। ३ अग्रभाग, अगला हिस्सा।

"किरीटकूटैर्ज्वलितं शृङ्गारं दीप्तकुण्डलम्।" (रामायण)

४ पर्वताग्रभाग, पहाड़का अगला हिस्सा।

"तुषारगिरि-कूटाभं शिताभ्रशिखरोपमम्।" (महाभारत, १२। १४ अ०)

५ ऊर्ध्व, प्रधान, बड़ा। ६ समूह, जखीरा। ७ यन्त्रभेद, कोई औजार। ८ लौहमुद्गर, लोहेको मुगरी।

"एते त्वां संप्रतीचन्ते चरन्तो वैशसं तव।
संपरेतमवः कूटै म्छिन्दन्तात्यितमन्यवः॥" (भागवत, ३।२५।८)

९ फाल, लाङ्गलावयव। १० जाल, हिरनोंके पकड़नेका फन्दा।

"वागुराभिश्च पाशैश्च कूटैश्च विविधैर्नराः।
प्रतिच्छन्नाश्च दृश्याश्च निघ्नन्तिस्म बहून्मृगान्॥" (रामायण, ३।१८।३७)

'कूटे तृणाच्छन्नश्वभ्रादिसम्पादनरूपैः।' (रामानुज)

११ गुप्तास्त्र, गुप्ती, काठकी छड़ीमें छिपा हुवा हथियार।

"न कूटैरायुधैर्हन्यात् युध्यमानो रणे रिपून्।" (मनु ७।९०)
"कूटानि यानि बहिःकाष्ठमयान्यन्तर्निहितशस्त्राणि॥" (मेधातिथि)

१२ कैतव, मिथ्या, झूठ।

"वाचः कूटन्तु देवर्षिः स्वयं विमृश्यर्षिर्या।" (भागवत ६।५।१०)

१३ तुच्छ, छोटा। १४ भग्नशृङ्ग, टूटा सींग। १५ पुरद्वार, शहरका दरवाज़ा। १६ जलपात्र, पानीका बर्तन। १७ क्षुद्र वृक्षविशेष, कोई छोटा पेड़। १८ गृह, घर। १९ अगस्त्य मुनिका नामान्तर। २० भग्नशृङ्ग वृष, टूटे सींगका बैल। २१ लौहसार। २२ पित्तल, पीतल। (त्रि०) २३ निश्चल, ठहरा हुवा। २४ कपटतायुक्त, धोकेसे भरा हुवा।

"द्विगुणावाक्ष्यथा ब्रूयुः कूटाः स्युः पूर्वसाक्षिणः।" (याज्ञवल्क्य १।८०)

२५ असम्मानित, भ्रष्टीकृत, जो बिगाड़ डाला गया हो।

कूट (हिं० पु०) १ कुष्ठ नामक ओषधि, कुट। २ कुटीर, झोपड़ा। (स्त्री०) ३ कुटाई, कूटनेकी क्रिया।

कूटक (सं० पु०-क्ली०) कूट-ण्वुल्। १ वृद्धि, बढ़ती। २ फाल, हलकी खोपी। ३ कपट, धोका। ४ मिथ्या, झूठ। ५ पर्वतविशेष, कोई पहाड़। (भागवत ५।१९।१६) ६ कबरी, काकुल। ७ गन्धद्रव्यविशेष, एक खुशबूदार चीज। मुरा देखो।

कूटकर्म (सं० क्ली०) छल, धोका, छिपा कर किया हुवा काम।

कूटकर्मा (सं० पु०) छली, मक्कार।

कूटकार (सं० त्रि०) कूटं करोति, कूट-कृ-अण्। दुष्ट, प्रवञ्चक, झूठी गवाही देनेवाला।

कूटकारक (सं० त्रि०) कूट-कृ-ण्वुल्। दुष्ट, प्रवञ्चक, मिथ्या साक्षी, झूठ बोलनेवाला।

"समुद्रयायी वन्दी च तैलिकः कूटकारकः।" (मनु ३।१५।८)
'कूटकारकः साक्षीव्यनृतवादी।' (मेधातिथि)

कूटकृत् (सं० त्रि०) कूट-कृ-क्विप्। १ कितव, झूठ बोलनेवाला।

"तुलाशासनमानानां कूटकृन्नाणकस्य च।" (याज्ञवल्क्य, २।२४१)
२ कृत्रिम अभिमानादिकारक, झूठी डींग मारनेवाला। (पु०) ३ कायस्थ। ४ शिव।

कूटखड्ग (सं० पु०) कूटः खड्गः कर्मधा०। गुप्तखड्ग, छिपी तलवार।

कूटगृह (सं० क्ली०) जेन्ताकगृह, भपारा लेनेका घर, जिस मकानमें बैठ कर पसीना निकाला जाये।

कूटछद्मा (सं० पु०) कूटं माया छद्म आच्छादनं यस्य, बहुव्री०। धूर्त, प्रवञ्चक, धोखा देनेवाला।

कूटज (सं० पु०) कूटाज्जायते। १ कुटजवृक्ष। २ श्वेत-कूटज।

कूटजीव (सं० पु०) पुत्रजीववृक्ष।

कूटता (सं० स्त्री०) १ काठिन्य, कड़ाई। २ असत्य, झूठापन।

कूटतुला (सं० स्त्री०) कूटा मिथ्या प्रवञ्चका तुला तुला-दण्डः, कर्मधा०। कुत्सित तुला, खराब तराजू, बट्टेकी डण्डी, पसंगीका पल्ला।

कूटधर्म्म (सं० त्रि०) कूटो मिथ्या धर्मो यस्य यस्मिन्देशे गृहे वा, बहुव्री०। कूट-धर्म समासे अनिच्। धर्मादनिच् केवलात्। पा ५।४।१२४। मिथ्याव्यवहारको धर्मकार्य परि-गणित करनेवाला, झूठ बातों पर ईमान लानेवाला।

कूटना (हिं० क्रि०) १ ऊपरसे धड़ाधड़ पीटना, चोट मारना। २ ठोंकना, मारना-पीटना। ३ पत्थरके सिल वगैरहको टांकीसे दांतदार बनाना। ४ बधिया करना।

कूटनीति (सं० स्त्री०) कपटनीति, धोकेकी चाल।

कूटपर्व (सं० पु०) हस्ती आदिका त्रिदोषज ज्वर, हाथी वगैरह जानवरोंका सरसामी बुखार।

कूटपाक (सं० पु०) १ सन्निपात, सरसाम। २ पैत्तिक-ज्वर, पित्तका बुखार।

कूटपाकल (सं० पु०) १ हस्तीका पैत्तिकज्वर, पित्तसे आनेवाला हाथीका बुखार। २ दोषीत्वण सन्निपात-ज्वर, कोई सरसामी बुखार। उससे उच्छ्वास बढ़ता, अङ्ग स्तब्ध पड़ता, लोचन नहीं चलता और तीन रात-में जन्तुका प्राण निकलता है। (भावप्रकाश)

कूटपाठ (सं० पु०) सङ्गीतमें मृदङ्गका एक वर्ण।

कूटपालक (सं० पु०) कूटं मृत्तिकाराशिं पालयति, कूट-पालि-ण्वुल्। १ कुम्भकारका पवन। २ पित्तज्वर।

कूटपाश (सं० पु०) कूटः कपटः पाशः, कर्मधा०। गुप्तपाश, पशुपक्षी प्रभृति पकड़नेका एक यन्त्र।

कूटपूर्व, कूटपर्व देखो।

कूटबन्ध (सं० पु०) कूटः कपटः जालादिरूपो बन्धः, कर्मधा०। पाश, पशुपक्षी पकड़नेका फन्दा।

कूटमान (सं० क्ली०) कूटं मिथ्यामानं परिमाणम्, कर्मधा०। मिथ्या परिमाण, बट्टेका बांट या पसंगीको तराजू। "भूयिष्ठं कूटमानैश्च पण्यं विक्रीयते जनाः।" (भारत, वनपर्व)

कूटमुद्गर (सं० पु०) कूटः अप्रकाशितस्वरूपो मुद्गरः, कर्मधा०। गुप्तमुद्गर, लोहेका वह मुदगर जो देखनेमें काठका बना मालूम पड़ता हो।

"कूटमुद्गरहस्तस्तु मृत्युस्तं वै समन्वगात्।" (भारत, १३।२ अ०)

कूटमोहन (सं० पु०) कार्तिकेयका एक नाम।
(भारत वनपर्व)

कूटयन्त्र (सं० क्ली०) कूटं कपटं यन्त्रम्, कर्मधा०। उन्माथ, पशुपक्षी पकड़नेका एक यन्त्र, फन्दा, जाल।

कूटयुद्ध (सं० पु०) कूटं कपटं युद्धम्, कर्मधा०। १ कपटयुद्ध, धोकेकी लड़ाई। असमग्रस्त वा असम-प्रतिद्वन्द्वीके साथ अथवा न्यायविगर्हित जो युद्ध किया जाता, वह कूटयुद्ध कहाता है।

"कूटयुद्धविधिज्ञोऽपि तस्मिन् सम्मागयोधिनि।" (रघुवंश, १७।६९)

(त्रि०) कूटयुद्धयुक्त, धोकेसे लड़नेवाला।

"कूटयुद्धा हि राक्षसाः" (रामायण ६।२२।७)

कूटयोधी (सं० त्रि०) कूटेन मायया शाठ्येन वा युध्यते, कूट-युध-णिनि। कपटयुद्धकारी, छिप छिपके लड़ने-वाला।

कूटरचना (सं० स्त्री०) कूटा शाठ्यपूर्णा रचना यस्याः, बहुव्री०। विस्तृत वागुरा, जानवर वगैरह पकड़नेके लिये लंबा चौड़ा फन्दा या जाल।

"स्थिता पाशमपास्य कूटरचनां भंक्त्वा बलाद्वागुराम्।"
(पञ्चतन्त्र, २।८६)

कूटलमस्तक (सं० पु०) चविका, चव्य।

कूटलेख (सं० पु०) कपटलेख, झूठी तहरीर। २ सम-झमें न आनेवाली इबारत।

कूटलेखक (सं० पु०) १ कपटलेखक, झूठी तहरीर करनेवाला। २ वह लेखक जिसका लेख समझ न पड़े।

कूटशः (सं० अव्य०) कूट बहुलार्थे शस्। बह्वल्पार्थाच्छस् कारकादन्यतरस्याम्। पा ५।४।४२। बहुपरिमाणमें, राशि राशि, बहुतायतके साथ, ढेरों।

कूटशाल्मलि (सं० पु०-स्त्री०) कूटः शाल्मलिः, कर्मधा। १ शाल्मलिभेद, किसी प्रकारका शाल्मलि। इसका संस्कृत पर्याय—रोचना और कुत्सितशाल्मलि है। भावप्रकाशके मतानुसार कूटशाल्मलि तिक्त, कटु, भेदी, उष्ण और कफ, वायु, प्लीहा, यकृत्, गुल्म, विष, विबन्ध, अस्र, मेद और शूलनाशक है।

२ रक्तरोहितकवृक्ष। ३ यमकी गदा।

"अयः शङ्कुचितां रक्षः शतघ्नीमथ शत्रवे।
हृतां वैवस्वतस्येव कूटशाल्मलिमक्षिपत्॥" (रघु, १२।९५)

४ नरकका कण्टकमय लौहनिर्मित शाल्मलिवृक्ष।

(भारत, १८।३।४)

कूटशाल्मलिक (सं० पु०) कूटशाल्मलि स्वार्थे कन्। कूटशाल्मलिवृक्ष।

कूटशासन (सं० क्ली०) कूटं मिथ्या शासनं दण्डो विचारो वा, कर्मधा०। मिथ्याशासन, अविचार, झूठा हुक्म, धोकेका राज।

कूटशैल (सं० पु०) कूटबहुलः शृङ्गबहुलः शैलः, कर्मधा०। पर्वतविशेष, एक पहाड़।

कूटसंक्रान्ति (सं० स्त्री०) सूर्यसंक्रमणका प्रकारभेद। अर्धरात्रिके पीछे सूर्यका अन्यराशिमें संक्रमण आनेसे वह संक्रान्ति कूटसंक्रान्ति कहाती है।

(विद्यानिधिकृत ज्योतिःसागरसार)

कूटसाक्षी (सं० त्रि०) कूटः अनृतवादी साक्षी, कर्मधा०। मिथ्यावादी साक्षी, झूठ बोलनेवाला गवाह।

"न ददाति च यः साक्ष्यं जानन्नपि नराधमः।
स कूटसाक्षिणां पापैस्तुल्यो दण्डेन चैव हि॥" (याज्ञवल्क्य २।७९)

कूटस्थ (सं० त्रि०) कूटवदयो घनवत् निर्विकारो निश्चलः सन् तिष्ठति, कूट-स्था-क। १ परिणामादि-शून्य और सर्वकालमें एकरूपसे अवस्थित।

"तस्यापि द्रष्टुरीशस्य कूटस्थस्याखिलात्मनः।" (भागवत, ३।३।१७)

२ श्रेष्ठ, सर्वोपरिस्थित, बड़ा, सबसे ऊपर रहनेवाला।

"ज्ञानविज्ञानतृप्तात्मा कूटस्थो विजितेन्द्रियः।
युक्तइत्युच्यते योगी समलोष्टाश्मकाञ्चनः॥" (गीता, ६।८)

कूटो लौहमुद्गरः पर्वतशृङ्गं वा तद्वन्निश्चलतया अविकारितया तिष्ठति। ३ निश्चल, अविकार और सर्वकाल समान, हमेशा एक-जैसा।

"अधिष्ठानतया देहद्वयावच्छिन्नचेतनः।
कूटवन्निर्विकारेण स्थितः कूटस्थ उच्यते॥
कूटस्थे कल्पिता बुद्धिस्तत्र चित् प्रतिबिम्बकः।
प्राणानां धारणाज्जीवः संसारेण स युज्यते॥" (पञ्चदशी, ६।२५-२६)

वेदान्तिक मतसे निम्नलिखित व्युत्पत्ति भी हो सकती है—"कूटः कैतवं मिथ्या मायेति यावत् तस्मिन् तिष्ठति।"

सांख्यमतसे जिसका किसी समयमें परिणाम नहीं, जो सर्वदा एकरूप रहता और जो जाग्रत, स्वप्न तथा सुषुप्ति अवस्थात्रयमें एक रूपसे ही अवस्थान करता, उसी आत्मा पुरुषको विद्वान् कूटस्थ कहता है—

"अक्षरः सर्वाणि भूतानि कूटस्थोऽक्षर उच्यते।" (गीता, १५।१६)

नैयायिकोंके कथनानुसार जन्य विशेष गुण न रखनेवालेको ही कूटस्थ कहते हैं। वह ईश्वरमें जन्यविशेष गुण स्वीकार नहीं करते।

४ समूहस्थित, जो बहुतोंके बीचमें हो।

"स एष नरलोकेऽस्मिन्नवतीर्णः स्वमायया।
रेमे स्त्रीरत्नकूटस्थो भगवान् प्राकृतो यथा॥" (भागवत १।११।३५)

(क्ली०) ५ व्याघ्रनख, एक खुशबूदार चीज।

कूटस्वर्ण (सं० क्ली०) कूटं मिथ्याभूतं स्वर्णम्, कर्मधा०। कृत्रिमस्वर्ण, खोटा या बनावटी सोना।

"कूटस्वर्णव्यवहारी विमांसस्य च विक्रयी।" (याज्ञवल्क्य २।३००)

कूटा—युक्तप्रदेशकी एक जाति। इनका काम धान कूट कर चावल निकालना है। इसीसे कूटा नाम भी पड़ गया है। यह अपनेको क्षत्रियवर्ण बतलाते, परन्तु दूसरे लोग उस बात पर विश्वास नहीं लाते। इन्हें कूटामाली भी कहते हैं। युक्तप्रदेशमें इनकी संख्या पांच सहस्रसे अधिक नहीं है।

कूटाक्ष (सं० पु०) कूटः अक्षः, कर्मधा०। मिथ्या पाशा, जाली पासा, बंधी कौड़ी।

कूटागार (सं० क्ली०) कूटमागारम्, कर्मधा०। १ अट्टा-

परिस्थित मण्डप, घरको ऊपरी मंड़ैया। कूटागारका संस्कृत पर्याय—वड़भी और चित्रशालिका है।

"कूटागारशतैर्युक्तां गन्धर्वां नगरीपमा।" (रामायण, ५।१२।४५)

२ क्रीड़ागृह, खेलनेका घर।

कूटायु (सं० पु०) गुग्गुलु, गूगल।

कूटार्थभाषा (सं० स्त्री०) कूटार्थस्य कल्पितार्थस्य भाषा कथा, ६-तत्। कल्पित प्रबन्ध, बनावटी किस्सा।

कूटार्थभाषिता (सं० स्त्री०) कूटार्थस्य कल्पितार्थस्य भाषिता भाषा कथा। प्रबन्धकल्पनाकथा, झूठी किस्सेबाज़ी।

कूटार्थसिद्धिकृत् (सं० पु०) पुत्रञ्जीववृक्ष।

कूटू (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। कूटू हिमालय पर्वत, बङ्गाल, आसाम, ब्रह्म, दाक्षिणात्य, मध्यप्रान्त और युक्तप्रदेशमें बोया जाता है। जुलाईमें बीज पड़ता है। फसल अक्तूबरमें तैयार हो जाती है। कूटूका पौदा डेढ़ या दो फुट तक बढ़ता और अपने सिरे पर नीले फूलोंका गुच्छा रखता है। पुष्प अति सुन्दर देख पड़ते हैं। फूल झड़ आनेसे फल आता, जिसको पकने पर डण्ठलसे मल कर बीज निकाला जाता है। कूटूका बीज तिकोना, लम्बा और नुकीला होता है। बीजकी भूसी निकाल कर आटा पीसा जाता, जो फलाहारमें व्रतके दिन काम आता है।

कूड़ा (हिं० पु०) १ मैल, झाड़न। २ व्यर्थवस्तु, बेकाम चीज।

कूड़ाखाना (हिं० पु०) कूड़ा डालनेकी जगह, घूरा।

कूड्य (सं० क्ली०) कूड़ति घनीभवति मृदादिना, कूड़-ण्यत्। भित्ति, दीवार।

कूढ़ (हिं० पु०) १ जांघा, परिहत, हलपत, हलका वह हिस्सा जिसमें एक ओर मुठिया और दूसरी ओर खोंपी होती है। २ हलकी गरारीमें बीज डालकर बोनेकी चाल। (वि०) ३ अज्ञान, नासमझ, बेवकूफ।

कूढ़मग़ज़ (हिं० पु०) मन्दबुद्धि, कुन्दज़िहन, बात न समझनेवाला।

कूणकुच्छ (सं० पु०) शिवके एक अनुचर।

कूणि (सं० त्रि०) कूण-इन्। सङ्कुचितहस्त, वक्रहस्त, हथटुट्टा, टेढ़े हाथवाला।

कूणिका (सं० स्त्री०) कूण-ण्वुल्-टाप् च अकारस्येकारः। १ कलिका, वीणाको मध्यस्थित वंशशलाका, बाजेकी खूंटी। उसीको मरोड़ कर तार चढ़ाया उतारा जाता है। २ शृङ्ग, सींग।

कूणितेक्षण (सं० पु०) कूणितमीक्षणं चक्षुर्यस्य, बहुव्री०। श्येनपक्षी, बाज चिड़िया।

कूत (हिं० स्त्री०) अनुमान, अन्दाज, किसी वस्तुकी संख्या, मूल्य वा परिमाणका विना गिने या नापे-जोखे ठहराव।

कूतना (हिं० क्रि०) १ अनुमान लगाना, अन्दाज बांधना। २ अटकलसे किसी चीजका दाम या नाप-जोख बताना।

कूथन (सं० क्ली०) कुन्थन।

कूद (हिं० स्त्री०) कूदनेकी क्रिया, कुदाई।

कूदना (हिं० क्रि०) १ उछलना, फांदना, छलांग मारना। २ गिरना पड़ना। ३ हस्तक्षेप करना, दखल देना। ४ क्रम भङ्ग करना, सिलसिला तोड़ना। ५ अत्यन्त आह्लादित होना, बहुत खुशी जाहिर करना। ६ शेखी बघारना, बातें मारना। ७ उल्लङ्घन करना, लांघना।

कूदर (सं० पु०) कुत्सितमुदरं मातृगर्भो यस्य। ऋतुके प्रथम दिवस ब्राह्मणीसे उत्पन्न ऋषिपुत्र।

"ब्राह्मण्यामृषिवीर्येण ऋतोः प्रथमवासरे।
कुत्सिते चोदरे जातः कूदरस्तेन कीर्तितः॥" (ब्रह्मवैवर्तपुराण)

कूदा (हिं० पु०) कूद कूद कर जमीन नापनेका एक तरीका।

कूदी (वै० स्त्री०) बदरी, बेर।

"कूदीप्रान्तानि स सूत्राणि।" (कौशिकसूत्र, २५।२४)
'कूदीप्रान्तानि एकविंशतिमेव बदरशाखाणि।' (दारिल)

कूद्दाल (सं० पु०) कुद्दालकवृक्ष, लाल कचनारका पेड़।

कूनी (हिं० स्त्री०) कूंड़ी, पेरनेको ऊख डालनेके लिये कोल्हूका गड्ढा।

कूप (सं० पु०) कुवन्ति मण्डूका अस्मिन्, कु शब्दे पः धातोर्दीर्घत्वञ्च। कुयुभ्याञ्च। उण् ३।२७। १ गर्त, चाह, कूंवा, इनारा। कूपका वैदिक पर्याय—अन्धु, ऋष्टि,

उदपान, अवट, कोट्टार, कात्त, कर्त, वव्र, काट, खात, अवत, क्रिवि, सूद, उत्स, ऋश्यदात्, कारोतरात्, कुशोष और केवट है।

"वित: कूपे इवहित:।" (ऋक् १।१०५।१७)

कूपका जल स्वादु रहनेसे त्रिदोषघ्न, हिम और लघु होता है। कूपका चारजल कफ तथा वातघ्न एवं दीपन और पित्तकृत् है। (भावप्रकाश)

२ गुणवृक्ष, मस्तूल। ३ नदीमध्यस्थित वृक्ष अथवा पर्वत, दरयाके बीचका पेड़ या पहाड़। ४ कूपक, गड्ढा।

कूपक (सं० पु०) कूप स्वार्थे कन्। १ कूप, कूंवा, इनारा। २ गुणवृक्ष, मस्तूल। ३ नौबन्धनस्तम्भ, नाव बांधनेका खूंटा। ४ कुकुन्दर, नितम्बस्थित गर्त। ५ चिता। ६ चिताके निम्नदेशका गर्त। ७ शुष्क नदी आदिमें जलके लिये बनाया हुआ गड्ढा। ८ तैलादिका आधार, कुपिया। ९ नदीमध्यस्थित वृक्ष अथवा पर्वत, दरयाके बीचका पेड़ या पहाड़।

कूपकच्छप (सं० पु०) कूपे एवानग्रत सञ्चारशून्यः कच्छप इव, पात्रे समितादिवत् समा०। कूपस्थित कच्छप, कूंएका मेंढ़क।

कूपकार (सं० पु०) कूपं करोति, कूप-कृ-अण्। कूपखनक, कूवां खोदनेवाला।

कूपखा (वै० त्रि०) कूप-खन वेदे विट् डाच्। जनसनखनक्रमगमोविट्। पा ३।२।६७। कूपखनक, कूंवा खोदनेवाला।

कूपज (सं० पु०) कूप-जन-ड। लोम, केश, बाल।

कूपजल (सं० क्लो०) कूपसलिल, कूवेंका पानी।

कूपत् (सं० अव्य०) १ क्यों, क्या (प्रश्न)। २ धन्य धन्य! वाह वाह, क्या खूब (प्रशंसा)।

कूपद (सं० पु०) कुकुद।

कूपदर्दुर (सं० पु०) कूपे एवानग्रत सञ्चारशून्यः दर्दुर इव। पात्रे समितादिवत् साधुः। पा २।१।४१। १ कूपमध्यस्थित भेक, कूवेंका मेंढ़क। २ अनभिज्ञ, अनजान, थोड़ो समझवाला।

कूपन (अं० पु० = Coupon.) मनी-आर्डरके फार्मका वह हिस्सा जिस पर रुपया भेजनेवाला पानेवालेके नाम कुछ लिख सकता हो। कूपन मनी-आर्डर पानेवालेके पास ही रह जाता है।

कूपमण्डूक, कूपदर्दुर देखो।

कूपराज्य (सं० क्लो०) कूपबहुलं तृष्णातुराणां पथिकानां पानाय खनितकूपमित्यर्थः राज्यम्, मध्यपदलो०। देशविशेष, एक मुल्क।

कूपाङ्ग, कूपाङ्ग देखो।

कूपाङ्ग (सं० पु०) रोमाञ्च, रोंगटे खड़े होनेकी हालत।

कूपार (सं० पु०) कुत्सितः पारस्तरणमस्मिन् तस्या-पारत्वादित्यर्थः। समुद्र, बहर।

कूपिक (सं० क्लो०) कूप कुमुदादित्वात् ठच्। योनि।

कूपिका (सं० स्त्री०) नदीजलगतोपल, दरयाके पानीका पत्थर।

कूपी (सं० त्रि०) कूप प्रेक्षादित्वात् चतुरर्थे इनि। कूपसन्निकटस्थ देशादि, कूवेंके पासका मुल्क वगैरह।

कूपी (सं० स्त्री०) कूप-इन् स्त्रियां ङीष्। १ क्षुद्र कूप, छोटा कूवां। २ नाभि, नाफ, तोंदी। ३ पात्रविशेष, कोई बरतन। ४ कपिकच्छु, केवांच।

कूपुष (सं० क्लो०) मूत्राशय, पेशाबके रहनेकी जगह।

कूपोदक (सं० क्लो०) कूपजल, कूवेंका पानी।

कूप देखो।

कूप्य (सं० त्रि०) कूप-यत्। १ कूपजात, कूवेंसे पैदा। "नमः कूप्याय चावट्याय च।" (शुक्लयजुः, १६।३८)

(क्लो०) २ रौप्य, चांदी। ३ माणिक्य, मानिक।

कूबड़ (हिं० पु०) १ कूबर, पीठका टेढ़ापन। २ वक्रभाव, टेढ़ापन।

कूबर (सं० पु०-क्लो०) कुशब्दे वरच्। १ युगन्धर, कूबड़।

"मनोरथिर्बुद्धिसूतोहृन्नीड़ोद्वन्दकूबरः।
पञ्चेन्द्रियार्थ प्रक्षेपः सप्तधातुवरूथकः॥" (भागवत, ४।२९।१८)

२ कुब्ज, कुबड़ा। ३ रथिकस्थान।

"पश्चात् कूबरवाकूरावमभिमृषेत्।" (गोभिलसूत्र)

'कूबरं रथिकस्थानं' (रघुनन्दन)

(त्रि०) ४ मनोहर, दिलफरेब, सुहावना।

कूबरी (सं० पु०) रथ, शकट, गाड़ी।

कूबरी (सं० स्त्री०) वस्त्राच्छादित रथ, कपड़ेसे ढकी गाड़ी।

कूबरी (हिं० स्त्री०) कुब्जा, कुबरी।

कूबा (हिं० पु०) १ युगन्धर, कूबड़। २ बंड़ेरा रखनेकी टेढ़ी लकड़ी। ३ यन्त्रविशेष, कोई औजार। कूबा सोसेसे गोल-गोल टुकड़ी बराबर बनता है। वह टेकुरीके नीचे चिपकाया जाता है।

कूम (सं० क्लो०) कोः पृथिव्या उमा कान्तिर्यस्मात्, बहुव्री०। सरोवर, तालाब।

कूम (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। कूमका काष्ठ अधिक सुदृढ़ होता है। गढ़वाल तथा चट्टग्राममें उसको उपज यथेष्ट है। कूमका काष्ठ गृहनिर्माणादिमें व्यवहृत होता है। कहीं कहीं उसे जलाते भी हैं।

कूमटा (हिं० पु०) १ वृक्षविशेष, कोई पेड़। कूमटा राजपूताने और सिन्धुप्रदेशमें उत्पन्न होता है।

(स्त्री०) २ कार्पासभेद, किसी किस्मको कपास। कूमटा धारवाड़में उत्पन्न होती है।

कूर (सं० पु०) अन्न, भक्त, भात।

कूर (हिं० पु०) १ लगानकी कमी, महसूलमें रिआयत, कूर बड़े कृषकोंको हलवाहा रखनेके लिये मुजरा दिया जाता है। २ चूर, चूरा। ३ पिल्लेको पुकारनेकी बोली। (वि०) ४ क्रूर। क्रूर देखो।

कूरता (हिं०) क्रूरता देखो।

कूरपन (हिं० पु०) क्रूरता देखो।

कूरनारायण—यमकरत्नाकर नामक ग्रन्थके प्रणेता।

कूरा (हिं० पु०) १ राशि, जखीरा, ढेर। २ भाग, हिस्सा।

कूरी (हिं० स्त्री०) १ तृणभेद, चपरेला, मोतिया, किसी किस्मकी घास। २ क्षुद्र राशि, छोटा ढेर। (वि०) ३ निकम्मा, काम न करनेवाला।

कूरेश—पञ्चस्तवरचयिता एक ग्रन्थकार।

कूर्कुर (सं० पु०) बालकोंका अनिष्टकारी एक दैत्य।

कूर्च (सं० पु०-क्लो०) कूर्यते इति, कूर-चट् दीर्घश्च बाहुलकात् मन्धुः अर्धर्चादित्वात् क्लीवे पुंसि च। अर्धर्चाः पुंसि च। पा २।४।३१। १ मुष्टिपरिमाण कुश, मुट्ठी भर कुश।

"कृष्णाजिनञ्च सुभगे सलिलं वाससान्वितम्।
आदर्शश्चैव कूर्चश्च तथाजिनमनिन्दिते॥" (हरिवंश, १२८ अ०)

२ भ्रूद्वयका मध्यस्थान, दोनों भौंके बीचकी जगह। ३ चिह्नका उपरिभाग, हाथ और पैरके अंगूठे तथा अंगूठेकी पासवाली उंगलीके बीचकी ऊपरी जगह। ४ मुष्टिपरिमाण मयूरपुच्छ, मुट्ठी भर मोरपंख। ५ श्मश्रु, दाढ़ी, मूंछ। ६ कैतव, फरेब, धोका। ७ विकत्थन, दरोगगोई, झूठी बात। ८ दम्भ, घमण्ड। ९ आसन भेद। १० काठिन्य, कड़ापन। ११ हुं बीज मन्त्र।

"वर्गाद्यं वह्निसंस्थं विधुरतिवलितं तत्त्वयं कूर्चयुग्मम्।" (कर्पूरादिस्तव)

१२ मलापकर्षणार्थ केशादिगुच्छ, मैल झाड़नेके लिये बाल वगैरहकी कुंची।

"उशीरकूर्चकं दत्वा सर्व पापः प्रमुच्यते।" (हरिभक्तिविलास, ६।४८)

१३ मस्तक, सर, मत्था। १४ भाण्डार, गुदाम।

कूर्चक (सं० पु०) कूर्च स्वार्थे कन्। १ केशादिकृत् मार्जनी, बालकी कूंची या कलम। २ ध्वजके उपरिभाग और अधोभागका वस्त्रखण्ड, झण्डेके ऊपरी हिस्से और निचले हिस्सेका कपड़ा। ३ जीवकवृक्ष। ४ जाङ्गलपक्षिविशेष, कोई जंगली चिड़िया। ५ भ्रूमध्यादि देहांश। (क्लो०) ६ दन्तधावनकुञ्चिका, दांत साफ करनेकी कुंची।

कूर्चकी (सं० त्रि०) कूर्चकमस्त्यस्य, कूर्चक-इनि। पूर्ण, स्थूल, भरा पूरा, मोटा ताज़ा।

कूर्चपर्णी (सं० स्त्री०) मेषशृङ्गी, मेढ़ासींगी।

कूर्चभाक् (सं० क्लो०) भूर्जपत्र, भोजपत्र।

कूर्चमर्म (सं० क्लो०) तन्नामक स्नायुमर्मषट्क। कूर्चमर्म अंगुष्ठ और अंगुलिके मध्य उपरिभागमें रहता है।

कूर्चल (सं० पु०) कूर्च-लच्। प्राणियोंका पुनर्दन्तोद्गमकाल, दूसरी बार दांत आनेका वक्त।

कूर्चशिरः (सं० क्लो०) कूर्चस्य शिरः, ६-तत्। १ हस्त और पादतलका उपरिभाग, हाथ और पैरका ऊपरी हिस्सा। २ अङ्घ्रिस्कन्ध, पिंडरी। ३ तन्नामक रुजाकरस्नायुमर्मचतुष्टय। कूर्चशिरःका स्थान गुल्फसन्धिके अधोभागमें दोनों ओर होता है। (सुश्रुत)

कूर्चशीर्ष (सं० पु०) कूर्च श्मश्रु तद्वत् शीर्षमस्य, बहुव्री०। १ नारिकेलवृक्ष, नारियलका पेड़। २ जीवकओषधि।

कूर्चशीर्षक, कूर्चशीर्ष देखो।

कूर्चशेखर (सं० पु०) कूर्च श्मश्रु तद्वत् शेखरमस्य, बहुव्री०। नारिकेलवृक्ष, नारियलका पेड़।

कूर्चामुख (सं० पु०) विश्वामित्र-वंशजात एक ऋषि। (भारत, १३। ४ अ:)

कूर्चिक (सं० पु०) कूर्चिका देखो।

कूर्चिका (सं० स्त्री०) कूर्चक स्त्रियां टाप् इकारादेशश्च। प्रत्ययस्थात् कात् पूर्वं स्यादिदाप्य सुपः। पा ७। ३। ४४। १ तूलिका, बालका कलम। २ कुञ्चिका, चाबो, कुंजो। ३ सूचिका, सूई। ४ पुष्पकलिका, फूलको कली। ५ क्षीर-विकृति, फटा दूध। कूर्चिका दधिकूर्चिका और तक्रकूर्चिका भेदसे दो प्रकारकी होती है। दधिके साथ चीर पाक करनेसे दधिकूर्चिका और तक्रके साथ चीर पाक करनेसे तक्रकूर्चिका बनती है। (भरत)

कूर्चिकापगड (सं० पु०) किलाट, छेना, फटे दूधका मावा।

कूर्द (सं० पु०) कूर्दते इति, कूर्द-अच्। १ लम्फ, छलांग, कूदफांद। २ सामभेद।

कूर्दन (सं० क्लो०) कूर्द भावे ल्युट्। शिशुक्रीडा, लड़कोंका खेल, उछल-कूद।

कूर्दनी (सं० स्त्री०) कूर्द्यतेऽस्याम्, कूर्द अधिकरणे ल्युट् ङीप् च। चैत्रमासकी पूर्णिमा तिथि, चैतकी पूरन-मासी। कूर्दनीको कामदेवका उत्सव करते हैं।

कूर्प (सं० क्लो०) कूरं पाति, कूर-पा-क दीर्घश्च। कूर्च, भ्रूदयका मध्यस्थान, दोनों भौंके बीचको जगह।

कूर्पर (सं० पु०) १ कफोणि, कुहनी। कूर्परका संस्कृत पर्याय—कफोणि, भुजामध्य और कफणि है। २ जानु देश, घुटना।

कूर्परमर्म (सं० क्लो०) कूर्पर स्थानस्थित मर्मद्वय, कुहनीको दो नाजुक जगहें।

कूर्परा (सं० स्त्री०) कूर्पर देखो।

कूर्पास (सं० पु०) कूर्परे शरीरे अस्यते आस्ते वा, कूर्पर-अस-घञ्, पृषोदरादिवत् रकारलोपे दीर्घ च साधुः। १ स्त्रियोंकी कञ्चुलिका, अंगिया, चोली। कूर्पासका संस्कृत पर्याय—निचोलक, वारवाण और कञ्चुक है २ अर्धतोलक, पाध तोला। ३ चोल, वस्त्र, कपड़ा।

कूर्पासक (सं० पु०) कूर्पास स्वार्थे कन्। कञ्चुक, चोली।

"प्रश्ने दवारिसविशेषविषिक्तमङ्गे
कूर्पासकं चतनखचतमुत्‌चिपन्ती।" (माघ, ५।२३)

कूर्म (सं० पु०) कु ईषदूर्मिवेगोयस्य, पृषोदरादिवत् साधुः। १ कच्छप, कछुवा।

"द्यावापृथिवीयः कूर्मः।" (शुक्लयजुः २४।३४)

कूर्मका संस्कृत पर्याय—पञ्चनख, जलगुल्म, गुह्य, कच्छप, कमठ, क्रोड़पाद, चतुर्गति, पञ्चाङ्गगुप्त, दोलेय, जीवथ, पीवर और पञ्चगुप्त है।

वृहत्संहिताके ६४ अध्यायमें राजावोंका कूर्म-पालन और कूर्मलक्षण इस प्रकार लिखा है—

"स्फटिकरजतवर्णो नीलराजीवचित्रः कलशसदृशमूर्तिश्चारुवंशश्च कूर्मः।
अरुणसमवपुर्वा सर्षपाकारचित्रः सकलनृपमहत्वं मन्दिरस्थः करोति॥
अञ्जनभृङ्गश्यामवपुर्वा बिन्दुविचित्रोऽव्यङ्गशरीरः।
सर्पशिरा वा स्थूलगलो यः सोऽपि नृपाणां राष्ट्रविवृद्धः॥
वैदूर्यत्विट् स्थूलकण्ठस्त्रिकोणो गूढ़च्छिद्रश्चारुवंशश्च शस्तः।
क्रीडावाप्यां तोयपूर्णे मणौ वा कार्यः कूर्मो मङ्गलार्थं नरेन्द्रैः॥"

'स्फटिक अथवा रजतकी भांति वर्णविशिष्ट, नील-पद्मचिह्नयुक्त, विचित्र, सुन्दर कलश जैसा तथा सुन्दर पृष्ठदण्डवाला अथवा अरुणकी भांति रक्तवर्ण और सर्षपचिह्नसे चिह्नित कूर्म गृहमें रहनेसे राजावोंका महत्व वृद्धि करता है।

'अञ्जन किंवा भृङ्गकी भांति श्यामवर्ण, बिन्दु बिन्दु चिह्नसे चिह्नित अविकलाङ्ग, सर्पकी भांति मस्तक-विशिष्ट अथवा स्थूलकण्ठ कूर्म राजावोंका राज्यका वृद्धिकारक है।

'वैदूर्यमणिके समान कान्तिविशिष्ट, स्थूलकण्ठ, त्रिकोणाकार, गूढ़च्छिद्र और सुन्दर पृष्ठदण्डयुक्त कूर्म ही प्रशस्त है। राजावोंकी क्रीड़ा-वापी अथवा जलपूर्ण वृहत् पात्रमें मङ्गल लाभके लिये कूर्मपालन विधेय है।'

२ पृथिवी, जमीन्। ३ प्रजापतिका कोई अवतार।

"स यत् कूर्मो नाम एतद्वै रूपं कृत्वा प्रजापतिः प्रजा असृजत, यदसृजताकरोत्तद यदकरोत तस्मात् कूर्मः कश्यपो वै कूर्मस्तस्मादाहुः।" (शतपथब्राह्मण ७।५।१।५।)

४ देहस्थित नागादि पञ्चवायुके मध्य द्वितीय वायु। कूर्म वायु नेत्रोंमें अवस्थान करता है। इसीके कारण पलके खुला और बन्द हुवा करती हैं।

"उन्मीलने स्मृत; कूर्मो भिन्नांजनसमप्रभः।" (शारदातिलकटीका)

५ कद्रूके कोई पुत्र, नाग। (भारत, १।३५।४१)

६ गृत्समदके किसी पुत्रका नाम। उन्होंने ऋग्वेदके २य मण्डलका २७, २८ और २९ इत्यादि सूक्त प्रकाशित किया है।

७ विष्णुका द्वितीय अवतार। समुद्रके मन्थन काल भगवान् विष्णुने कूर्मरूप धारण करके मन्दरपर्वतको पृष्ठपर रखा था।

८ तन्त्रशास्त्रप्रसिद्ध कोई मुद्रा। तन्त्रसारमें कूर्ममुद्राकी प्रक्रिया इस प्रकार लिखी है—

"वामहस्तस्य तर्जन्यां दक्षिणस्य कनिष्ठया।
तथा दक्षिणतर्जन्यां वामाङ्गुष्ठे न योजयेत॥
उन्नतं दक्षिणाङ्गुष्ठं वामस्य मध्यमादिकाः।
अङ्गुलीर्योजयेत पृष्ठे दक्षिणस्य करस्य च॥
वामस्य पितृतीर्थेन मध्यमानामिके तथा।
अधोमुखे च ते कुर्याद्दक्षिणस्य करस्य च॥
कूर्मपृष्ठसमं कुर्याद्दक्षपाणिञ्च सर्वतः।
कूर्ममुद्रेयमाख्याता देवताध्यानकर्मणि॥"

वामहस्त चित्त करके उसके ऊपर दक्षिणहस्त रखना चाहिये। फिर वामहस्तकी तर्जनीके साथ दक्षिणहस्तकी कनिष्ठा और दक्षिण हस्तकी तर्जनीके साथ वाम हस्तकी वृद्धाङ्गुलि मिला देते हैं। किन्तु दक्षिणहस्तका अङ्गुष्ठ उन्नत रखना पड़ता है। अनन्तर वामहस्तकी मध्यमादि अवशिष्ट तीनों अङ्गुलि दक्षिणहस्तके पृष्ठदेशसे मिला देना चाहिये। दक्षिणहस्तकी मध्यमा और अनामिकाको वामहस्तका पितृतीर्थ अर्थात् अङ्गुष्ठ तथा तर्जनीके मध्यसे अधोमुख करते और दक्षिणहस्तका पृष्ठदेश कूर्मपृष्ठको भांति सर्वप्रकार उन्नत रखते हैं। इसीका नाम कूर्ममुद्रा है। कूर्ममुद्रा देवताके ध्यानकार्यमें अनुष्ठेय होती है। ९ आसनविशेष, एक बैठक। हठयोगप्रदीपिकामें लिखा है:—

"गुदं निरुध्य गुल्फाभ्यां व्युत्क्रमेण समाहितः।
कूर्मासनं भवेदेतदिति योगविदो विदुः॥"

गुल्फद्वय द्वारा गुह्यदेशको दबाके क्रमविपर्ययसे अवस्थित होना चाहिये। इसीका नाम कूर्मासन है।

कूर्मचक्र (सं॰ क्ली॰) कूर्माकारं चक्रम्, मध्यपदलो॰। १ ग्रहणीय मन्त्रका शुभाशुभसूचक कोई कूर्माकार चक्र। रुद्रयामलमें उक्त चक्रका विषय इस प्रकार लिखित है:—कूर्मचक्र शुभाशुभ फलबोधक है। इस चक्रका विषय अवगत होनेसे सर्वशास्त्रार्थ समझ पड़ता है। प्रथम चतुष्पाद-समावृत कूर्माकार महाचक्र अङ्कित करना चाहिये। उसके मुखदेशमें स्वरवर्ण, सम्मुखके दक्षिणपाद पर कवर्ग, वामपाद पर चवर्ग, पश्चात्के दक्षिणपाद पर टवर्ग, वामपाद पर तवर्ग, उदरमें पवर्ग, हृदयमें य र ल व, पृष्ठके मध्यस्थलमें श ष स ह, पुच्छमें शक्रवीज अर्थात् ल और लिङ्गके मध्य क्षकार सन्निवेशित करते हैं। उसके पीछे मन्त्रविद् व्यक्तिको गणना करना चाहिये। गणनामें स्वरवर्ण होनेसे लाभ, कवर्गसे श्री, चवर्गसे विवेक, टवर्गसे राजपदवी, तवर्गसे धनवान् है। उदरमें लिखित वर्ण आनेसे सर्वनाश, हृदयमें पड़नेसे बहु दुःख, पृष्ठस्थित वर्णमें सर्वप्रकार सन्ताप और लाङ्गुलस्थित वर्ण होनेसे निश्चित मरण होता है।

२ तन्त्रसार-वर्णित जपयज्ञादिका शुभाशुभ सूचक कोई चक्र। तन्त्रसारमें इसका विषय इस प्रकार लिखित है:—चतुरस्र भूमिभेद करके ९ कोष्ठ अङ्कित करना चाहिये। पूर्व कोष्ठसे यथाक्रम सात वर्ग बनाये जाते हैं। ईशान कोणमें लक्ष और मध्य कोष्ठमें स्वरवर्ण युग्मक्रमसे लिखना चाहिये। पूर्वादि दिक्के मध्य जिस कोष्ठमें क्षेत्रादि रहते, उसे मुख, उसके उभय पार्श्वस्थित दोनों कोष्ठोंको हस्त, उसके परवर्ती दोको कुक्षि और अवशिष्ट दोको पाद तथा पुच्छ समझते हैं। फल—मुखमें सिद्धिलाभ, हस्तमें अल्पजीवन, कुक्षिमें उदासीनता, पदमें दुःख और पुच्छमें पीड़ा, बन्धन तथा उच्चाटन है। कूर्मचक्र न जाननेसे जप यज्ञ करनेमें क्या फल मिलता है? चक्र देखो।

कूर्मपित्त (सं॰ क्ली॰) कूर्मस्य पित्तम्, ६-तत्। कूर्मका शरीरस्थ पित्त धातु।

कूर्मपुराण (सं॰ क्ली॰) कूर्मरूपी भगवान् कथित पुराण,

व्यास-प्रणीत अष्टादश पुराणके मध्य पञ्चदश पुराण। इस पुराणमें निम्नलिखित विषय वर्णित है:—'पूर्व भाग'में विष्णुका कूर्मशरीरधारण, धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्षका माहात्म्य, इन्द्रद्युम्नराजप्रसङ्गमें दयाका आधिक्य, लक्ष्मीप्रद्युम्न-संवाद, वर्णाश्रमका आचार, जगत्की उत्पत्ति, कालसंख्या प्रलयके समय प्रभुका स्तव, सृष्टिविवरण, शङ्करचरित, पार्वती-सहस्रनाम, योगनिरूपण, भृगुवंशवर्णन, स्वायम्भुव मनुका विवरण, देवतागणकी उत्पत्ति, दक्षयज्ञभङ्ग, दक्षसृष्टि, कश्यपवंशवर्णन, आत्रेयवंशवर्णन, कृष्णचरित, मार्कण्डेय-कृष्णसंवाद, व्यासपाण्डव-संवाद, युगधर्म, व्यास-जैमिनि संवाद, काशीमाहात्म्य, प्रयागमाहात्म्य, त्रैलोक्यवर्णन और वेदशाखानिरूपण। उसके "उत्तर भाग"में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्रका वृत्ति-निरूपण, सङ्करजातिकी वृत्ति, काम्यकर्मका विधान, षट्कर्म सिद्धि, मुक्ति, मोक्षका उपाय और पुराण श्रवणकी फलश्रुति है।

कूर्मपृष्ठ (सं० क्ली०) कूर्मस्य पृष्ठम्, ६-तत्। १ कच्छपका पृष्ठदेश, कछुएकी पीठ।

"कूर्मपृष्ठोन्नतौ चापि शोभेते किङ्किणीकिणौ।" (भारत, ३।४६।११)

(पु०) कूर्मस्य पृष्ठमिव तद्वत् कठोरत्वादित्यर्थः। २ अम्लानवृक्ष।

कूर्मपृष्ठक (सं० क्ली०) कूर्मपृष्ठमिव कायते प्रकाशते कूर्मपृष्ठ-कै-क। शराव।

कूर्मपृष्ठास्थि (सं० क्ली०) कूर्मस्य पृष्ठास्थि, ६-तत्। कूर्मके पृष्ठदेशका अस्थि, कछुवेकी पीठकी हड्डी।

कूर्मप्रस्थ—कुरुक्षेत्रके वह्निकोणमें अवस्थित एक नगर।

(भविष्य ब्रह्मखण्ड, ५७।११५)

कूर्मभट्ट—बालभागवतके रचयिता।

कूर्मराज (सं० पु०) कूर्माणां राजा श्रेष्ठत्वात् कूर्मराजन्-टच्। राजाहःसखिभ्यष्टच्। पा ५।४।९१। कच्छपराज, कूर्मरूपी विष्णु। उन्होंने पृथिवीको पृष्ठपर वहन किया था।

"पृथ्वि! स्थिरा भव भुजङ्गम! धारयैनां
त्वं कूर्मराज! तदिदं द्वितयं दधीथाः।" (महानाटक)

कूर्मविभाग (सं० पु०) कूर्मस्य तद्रूपभगवदवयवस्य विभागोऽत्र। १ वराहमिहिरप्रणीत बृहत्संहिताका १४वां अध्याय। इस अध्यायमें नक्षत्रानुसार देशका शुभाशुभ निरूपित हुआ है—

अश्विनी प्रभृति २७ नक्षत्रोंको ९ भागमें विभक्त करके तीनमें एक वर्ग बनाते हैं। १म—मध्यभागमें कृत्तिका, रोहिणी तथा मृगशिरा तीन नक्षत्रों पर भद्र, अरिमेद, माण्डव्य, साल्व, नीप, उज्जिहान, संख्यात, मरु, वत्स, घोष, यामुन, सारस्वत, मत्स्य, माध्यमिक, माथुरक, उपज्योतिष, धर्मारण्य, शूरसेन, गौरग्रीव, उद्देहिक, पाण्डु, गुड़, अश्वत्थ, पाञ्चाल, साकेत, कङ्क, कुरु, कालकोटि, कुकुर, पारिपात्र, औदुम्बर, कापिष्ठल और हस्तिना अवस्थित है। २य पूर्वदिक्‌को आर्द्रा, पुनर्वसु और पुष्या नक्षत्रमें अञ्जन, वृषभध्वज, पद्म, माल्यवान्, व्याघ्रमुख, सुह्म, कर्वट, चान्द्रपुर, शूर्पकर्ण, खस, मगध, शिशिरगिरि, मिथिला, समतट, उड्र, अश्वमुख, दन्तुरक, प्राग्ज्योतिष, लौहित्य, क्षीरोदसमुद्र, पुरुषाद, उदयगिरि, भद्र, गौड़क, पौण्ड्रक, उत्कल, काशी, मेकल, अम्बष्ठ, एकपद, ताम्रलिप्ति, कोशलक और वर्धमान पड़ता है। ३य अग्निकोणमें अश्लेषा, मघा तथा पूर्वफल्गुनी नक्षत्रमें कोशल, कलिङ्ग, वङ्ग, उपवङ्ग, जठर, अङ्ग, शौलिक, विदर्भ, वत्स, अन्ध्र, चेदि, ऊर्ध्वकण्ठ, वृषद्वीप, नारिकेलद्वीप, चर्मद्वीप, विन्ध्यान्तवासी, त्रिपुरा, श्मश्रुधर, हेमकुण्ड्य, व्यालग्रीव, महाग्रीव, किष्किन्ध्य, कण्टकस्थल, निषाद, पुरिक, दशार्ण, नग्न और पर्णशवर है। ४र्थ उत्तरफल्गुनी, हस्ता तथा चित्रा नक्षत्रमें दक्षिणदिक् लङ्का, कालाजिन, सौरि, कीर्ण, तालिकट, गिरिनगर, मलय, दर्दुर, महेन्द्र, मालिन्द्य, भरु, कच्छ, कङ्कट, टङ्कन, वनवासी, शिविक, फणिकार, कोङ्कण, आभीर, आकर, वेना, आवन्तक, दशपुर, गोनर्द, केरल, कर्णाट, महाटवी, चित्रकूट, नासिक्य, कोल्लगिरि, चोल, क्रौञ्चद्वीप, जटाधर, कावेरी, ऋष्यमूक, वैदूर्य, शङ्ख, मुक्ता, अत्रि, आश्रम, वारिचर, धर्म (यम), पट्टन, द्वीप, गणराज्य, कृष्णवेल्लर, पिशिक, शूर्पाद्रि, कुसुमगिरि, तुम्बर, कार्मणेयक, दक्षिणसमुद्र, तापसाश्रम, ऋषिक, काञ्ची, मरचीपट्टन, चेरी, आर्यक, सिंहल, ऋषभ, बलदेव पट्टन, दण्डकारण्य, तिमिङ्गिलाशन, भद्र,

कच्छ, कुञ्जरदरी, और ताम्रपर्णी नदी है। ५म नैर्ऋतकोणमें स्वाती, विशाखा तथा अनुराधा नक्षत्र पर पह्लव, काम्बोज, सिन्धुसौवीर, वड़वामुख, आरव, अम्बष्ठ, कपिल, नारीमुख, आनर्त, फेणगिरि, यवन, माकर, कर्णप्रावेय, पारसव, शूद्र, बर्बर, किरात, खण्ड, क्रव्याद, आभीर, चञ्चुक, हेमगिरि, सिन्धु, कालक, रैवतक, सुराष्ट्र, बादर और द्रविड़ पड़ता है। ६ष्ठ पश्चिमदिक्‌को ज्येष्ठा, मूला तथा पूर्वाषाढ़ा नक्षत्रमें—मणिमान्, मेघवान्, वनौघ, क्षुरार्पण, अस्ताचल, अपरान्तक, शान्तिक, हैहय, प्रशस्ताद्रि, वोक्काण, पञ्चनद, रमठ, पार, तत्तार, क्षिति, जङ्ग, वैश्य, कनक और शक आता है। ७म वायुकोणमें उत्तराषाढ़ा, श्रवणा तथा धनिष्ठा नक्षत्र पर माण्डव्य, तुषार, ताल, हल, मद्र, अश्मक, कुलूत, लहड़, स्त्रीराज्य, नृसिंहवन, खस्थ, वेणुमती, फल्गुलुका, गुरुहा, मरुकुच्च, चर्मरङ्ग, एकविलोचन, शूलिक, दीर्घग्रीव, दीर्घास्य और कुश है। ८म उत्तरदिक्‌को शतभिषा, पूर्वभाद्रपद तथा उत्तरभाद्रपद नक्षत्र पर कैलास, हिमालय, वसुमान् एवं धनुष्मान् पर्वत, क्रौञ्च, मेरु, कुरु, क्षुद्रमीन, कैकय, वसाति, यामुन, भोगप्रस्थ, आर्जुनायन, आग्नीध्र, आदर्श, अन्तर्द्वीप, त्रिगर्त, तुरगानन, अश्वमुख, केशधर, चिपिट-नासिक, दासेरक, वाटधान, शरधान, तक्षशिला, पुष्कलावत, कैलावत, कण्ठधान, अम्बर, मद्रक, मालव, पौरव, कच्छार, दण्डपिङ्गलक, मानहल, कूण, कोहल, शीतक, माण्डव्य, भूतपुर, गान्धार, यशोवति, हेमताल, राजन्य, खचर, गव्य, यौधेय, दासमेय, श्यामाक और क्षेमधूर्त पड़ता है। ९म ईशानकोणमें रेवती, अश्विनी और भरणी नक्षत्र पर मेरुक, नष्टराज्य, पशुपाल, कीर, काश्मीर, अभिसार, दरद, तङ्गण, कुलूत, सैरिन्ध्र, वनराष्ट्र, ब्रह्मपुर, दार्व, डामर, वनराज्य, किरात, चीन, कौणिन्द, भल्ल, पलोल, जटासुर, कुनठ, खस, घोष, कुचिक, एकचरण, अनुविश्व, सुवर्णभू, वसुवन, दिविष्ठ, पौरव, चीरनिवसन, त्रिनेत्र, मुञ्जाद्रि और गन्धर्व देश अवस्थित है।

जिस नक्षत्रमें जो जो देश निरूपित हुये हैं, उसमें क्रूरग्रहका योग होनेसे उन देशोंके राजा और प्रजागणका अमङ्गल होता है। (बृहत्संहिता, १४ अ०)

कूर्मशीर्षक (सं० पु०) जीवकवृक्ष, एक पेड़।

कूर्मा (सं० स्त्री०) वीणाभेद, एक बाजा।

कूर्माङ्गन्याय (सं० पु०) कूर्माङ्गदृष्टान्तमूलको न्यायः, मध्यपदलो०। कूर्माङ्गदृष्टान्तमूलक एक लौकिक न्याय। कूर्म जिस प्रकार स्वेच्छाक्रमसे स्वीय अङ्ग सङ्कुचित और प्रसारित कर सकता, उसी प्रकार कोई कार्य क्रिया जानेसे उक्त न्याय लगता है।

कूर्मावतार (सं० पु०) कूर्मः कूर्मरूपे अवतारोऽवतरणं, कूर्मदेहधारणमित्यर्थः। विष्णुका कूर्म देह धारण, द्वितीय अवतार।

कूर्मासन (सं० क्ली०) कूर्म देखो।

कूर्मि (वै० त्रि०) तुविकूर्मि देखो।

कूर्मिका (सं० स्त्री०) पुरातन वाद्यविशेष, एक पुराना बाजा। उसमें तार चढ़ते थे।

कूर्मी, कूर्मिका देखो।

कूर्मोन्नता (सं० स्त्री०) योनिभेद।

"कूर्मोन्नता भवेद्योनिः कूर्मपृष्ठमिवोन्नता" (लोकप्रकाश)

कूल (सं० क्ली०) कूलति आवृणोति जलप्रवाहम्, कूल-अच्। १ नद्यादिका तीर, नदी वगैरहका किनारा।

"तुकूल कूले कलहंसमण्डली।" (नैषध)

कूलका संस्कृत पर्याय—रोधः, तीर, प्रतीर, तट, तटी, वेला, प्रयात और कच्छ है। २ स्तूप, खम्भा। ३ तड़ाग, तालाव। ४ सैन्यपृष्ठ, फौजका पिछला हिस्सा। ५ अन्तिक, समीप, पास।

"कूलाय कूलेषु विलुठ्य ते सुताः।" (नैषध)

'कूलायकूलेषु नीडान्तिकेषु।' (मल्लिनाथ)

कूलक (सं० पु० क्ली०) कूल स्वार्थे कन्। १ तीर, किनारा। २ स्तूप, ऊंचा खम्भा। ३ कृमिपर्वत, दीमकको पहाड़ी। ४ क्षुद्र वृक्षविशेष, एक छोटा पेड़। ५ पटोलपत्र, परवलका पत्ता। ६ पटोल, परवल।

कूलङ्कष (सं० त्रि०) कूलं कषति व्याप्नोति भिनत्ति, कूल-कष-खच्-मुम्। सर्वकूलाभ्रकरीषेषु कषः। पा ३।२।४२। १ कूलव्यापक, किनारेमें भरा हुआ। (पु०) २ समुद्र।

कूलङ्कषा (सं० स्त्री०) कूलङ्कष स्त्रियां टाप्। नदी, दरया।

"कूलङ्कषेव सिंधुः प्रसन्नमम्भस्तटतरुं च।" (शकुन्तला ५ अङ्क)

कूलचर (सं० त्रि०) कूले नद्यादीनां तीरे चरति, कूल-चर-ट। १ नदीतीर विचरण करनेवाला, जो दरयाके किनारे घूमता हो। (पु०) २ नदीतीर विचरण करने वाला पशु, जो जानवर दरयाके किनारे घूमता हो। सुश्रुतके मतमें गज, गवय, महिष, रुरुजातीय मृग, चमर, बालमृग, रोहितजातीय मृग, वराह, गण्डार, गोहरिण, कालपुच्छ, कोन्द्र, बहुशृङ्गविशिष्ट न्यङ्कु-जातीय मृग और अरण्यगवय प्रभृति कूलचर पशु हैं।

कूलचर पशुका मांस वायुपित्तनाशक, वृष्य, बलकारक, मधुर, शीतल, स्निग्ध, मूत्रजनक और कफ वृद्धिकारक होता है। (भावप्रकाश)

कूलन्धय (सं० त्रि०) कूलं धयति, कूल-धेट्-खश्-मुम्। (लोप) कूलस्पर्शी, किनारेको छूनेवाला।

कूलभू (सं० स्त्री०) कूलस्य तीरस्य भूर्भूमिः, ६-तत्। तीरभूमि, किनारेकी जमीन्।

कूलमुद्रुज (सं० त्रि०) कूलमुद्रुजयति, कूल-उत्-रुज खश्-मुम्। उदिकूले रुजिवहोः। पा ३।२।३१। कूलभेदक, किनारेको फाड़नेवाला।

"धामाद्रितौ कथं नूरं न गजैः कूलमुद्रुजैः।" (भट्टि)

कूलमुद्वह (सं० त्रि०) कूलं उद्वहति, कूल-उद्-वह-खश्-मुम्। कूलभेदक, किनारेको तोड़ फोड़ डालनेवाला। "वनीर्यां वा कथं भीमाः सरितः कूलमुद्वहाः।" (भट्टि)

कूलवती (सं० स्त्री०) कूलमस्त्यस्याः, कूल बलादित्वात् मतुप् मस्य वः स्त्रियां ङीप्। नदी, दरया।

कूलहण्डक (सं० पु०) तड़ागादौ हुण्डते संघो भवति, कूल-हुड़ मुमागमश्च पृषोदरादित्वात् उकार लोपे साधुः। जलावर्त, गिर्दाब, पानीका भंवर।

कूला (हिं० पु०) १ क्षुद्र कृत्रिम जलप्रवाहविशेष, बम्बी, नाली। २ कूल्हा।

कूलास (सं० त्रि०) कूलं अस्यति क्षिपति, कूल-अस-अण्। कूलक्षेपक।

कूलिक (सं० पु०) इक्ष्वाकु-वंशीय एक राजा। वह प्रसेनजित्के पौत्र और क्षुद्रकके पुत्र रहे। (मत्स्य २७१।१२) हेमचन्द्र-कृत महावीर-चरित्रमें लिखा है कि मगधराज प्रसेनजित्के पुत्र श्रेणिक और श्रेणिकके पुत्र कुलिक थे। बौद्धशास्त्रके अनुसार श्रेणिक शाक्य-सिंहके समसामयिक रहे। विष्णुपुराणमें कुण्डक, ब्रह्माण्डपुराणमें कुलिक और किसी किसी हस्तलिपिमें 'कुलक' पाठान्तर दृष्ट होता है।

कूलिका (सं० स्त्री०) कूलिक-टाप्। वीणाका तल देश, वीन या सितारके नीचेका हिस्सा।

कूलिनी (सं० स्त्री०) कूलमस्त्यस्याः, कूल-इनि स्त्रियां ङीप्। नदी, दरया।

"देशः प्रबलतोयोऽयं महापद्मसरोजलैः।
कूलिनीभिश्च प्रबलः स्वल्पोत्पत्तिः सदाभवत्॥" (राजतरङ्गिणी, ५।७२)

कूली (सं० त्रि०) कूलमस्त्यस्य, कूल-इनि। कूलयुक्त किनारादार।

कूली (हिं० स्त्री०) १ मत्स्यविशेष, कोई छोटी मछली। वह दक्षिणभारतकी नदियोंमें पायी जाती है। २ कूला।

कूलेचर (सं० पु०) कूले चरति, अलुक् स०। नद्यादि तीरविहारी पशु, नदी वगैरहके किनारे घूमने फिरने-वाला जानवर। कूलचर देखो।

कूल्हना (हिं० क्रि०) कांखना, कराहना, आह भरना।

कूल्हा (हिं० पु०) १ अस्थिविशेष, पेड़ूकी दोनों तर्फ उभरी हुई हड्डियां। कूल्हा कोखके नीचे कमरमें होता है। २ कुश्तीका एक पेंच। अपनी जोड़को कूल्हे पर लाद कर चित फेंकनेका नाम कूल्हा है।

कूल्ही (हिं० स्त्री०) पित्तल, पीतल।

कूवत (अ० स्त्री०) शक्ति, ताकत।

कूवर, कूबर देखो।

कूवार (सं० पु०) कुं पृथिवीमावृणोति कु-वृ-अण् पृषोदरादिवत् दीर्घं साधुः। समुद्र, बहर।

कूश्म (वै० पु०) हवनीय देवताभेद।

"प्रदरान् पायुना कूश्मांश्चकपिण्डैः।" (शुक्लयजुः २५।७)
'कूश्मान् देवान् प्रीणामि' (महीधर)

कूष्माण्ड (सं० पु०) कु-ईषदूष्मा अन्तेषु वीजेषु यस्य। १ कुष्माण्डलता, कुम्हड़ेकी बेल। २ गणदेवताभेद। ३ यजुर्वेदोक्त मन्त्रविशेष।

"कूष्माण्डैर्वापि जुहुयाद्घृतमग्नौ यथाविधि।" (मनु ८।१०६)

'कूष्माण्डा नाम मन्त्रा यजुर्वेदे पठ्यन्ते।' (मेधातिथि)

४ ऋषिभेद। (याज्ञवल्क्य १।२८५) कुष्माण्ड देखो।

कूष्माण्डक, कुष्माण्डक देखो।

कूष्माण्डकी (सं० स्त्री०) १ भूमिकुष्माण्ड, भुइँकुम्हड़ा। २ कुष्माण्डलता, कुम्हड़ेकी बेल।

कुष्माण्डवटिका (सं० स्त्री०) कलायकुष्माण्डशस्यकृत वटीविशेष, कुम्हड़ेकी बड़ी, कुम्हड़ौरी। वह पित्तरक्तघ्न और लघु होती है। (वैद्यकनिघण्टु)

कूष्माण्डिका (सं० स्त्री०) पीतालाबु, पीली लौकी।

कूष्माण्डिकी, कूष्माण्डिका देखो।

कूष्माण्डिनी (सं० स्त्री०) एक देवी।

कूष्माण्डी, कुष्माण्डी देखो।

कूसल (हिं० पु०) तृणविशेष, एक घास। उसके डण्ठलोंका झाड़ू बनाते हैं।

कूह (हिं० स्त्री०) १ चिग्घाड़, हाथीकी बोली। २ चिल्लाहट, चीख।

कूहा (सं० स्त्री०) कुज्झटिका, कुहरा।

कूही (हिं० स्त्री०) पक्षिविशेष, एक शिकारी चिड़िया। वह बाज-जैसी होती है।

कृक (सं० पु०) कृ-कक्। गलदेश, कण्ठ, गला।

कृकण (सं० पु०) कृ इति कणति शब्दं करोति, कृ-कण्-अच्। १ क्रकरपक्षी, कोई चिड़िया। २ कृमि, कीट, कीड़ा। ३ सात्वतवंशीय भजमान राजपुत्रभेद। (विष्णुपुराण, ४।१३।२) ४ स्थानविशेष, कोई जगह।

कृकणेयु (सं० पु०) पुरुवंशीय रौद्राश्वके एक पुत्र। (हरिवंश, ३१ अध्याय)

कृकदाशु (वै० पु०) हिंसाकारक, शत्रु।

"सर्वं परिक्रोशं जहि जंभया कृकदाश्वम्।" (ऋक् १।२९।७)

'कृकदाश्वं अस्मद्विषये हिंसाप्रदं शत्रुम्।' (सायण)

कृकर (सं० पु०) कृ करणं जगत् सृष्टिसंहारादिकार्यं करोति, कृ-कृ-ट। १ शिव। २ छुत्कर शरीरस्थ वायु, छींक लानेवाली हवा।

"कृकरस्तु क्षुते चैव जपाकुसुमसन्निभः।" (शारदातिलकटीका)

३ क्रकचपक्षी, कोई चिड़िया। ४ चव्यक। वह लघु और कामाग्निवर्धन होती है। (अत्रिसंहिता)

५ करवीरवृक्ष, कनेरका पेड़।

कृकरा, कृकला देखो।

कृकल, ककर देखो।

कृकला (सं० स्त्री०) कृकाकारं गलदेशाकृतिं लाति गृह्णाति कृक-ला-क स्त्रियां टाप्। १ पिप्पली, पीपल। २ कृकलासस्त्री, मादा गिरगिट।

"सर्पदन्तं गृहीत्वा तु कृष्णवृश्चिककण्टकम्।

कृकलालारसंयुक्तं सूक्ष्मचूर्णन्तु कारयेत्॥" (इन्द्रजाल)

कृकलाश (सं० पु०) कृकं कण्ठदेशं लासयति शोभायुक्तं करोति, कृक-लस-णिच्-अच। कृकलास, गिरगिट।

कृकलास (सं० पु०) सरीसृपजातीय एक जन्तु, गिरगिट। उसका संस्कृत पर्याय—सरट, वेदार, क्रकचपात्, तृणाञ्जन, प्रतिसूर्य, प्रतिसूर्यकयानक, वृत्तिस्थ, कण्टकागार, दुरारोह, द्रुमाश्रय और भयानक है।

"कृकलासः पिप्पका शकुनिस्ते।" (वाजसनेयसंहिता २४।४०)

कृकलासक (सं० पु०) कृकलास स्वार्थे कन्। कृकलास, गिरगिट।

कृकवाकु (सं० पु०) कृकेन गलदेशेन वक्ति कृक-वच्-ञुण् कश्चान्तादेशः। कृकेवचः कश्च। उण् १।६। १ कुक्कुट, मुरगा। "कृकवाकुः सावित्रो हंसो वातस्य।" (शुक्लयजुः २४।३५)

'कृकवाकुः ताम्रचूडः।' (महीधर)

२ मयूर, मोर।

"लताकण्टकसङ्कीर्णाः कृकवाकूपनादिताः।" (रघुवंश, ३।१८)

३ कृकलास, गिरगिट।

कृकवाकु (सं० स्त्री०) गृहगोधिका, छिपकली।

कृकवाकुध्वज (सं० पु०) कृकवाकुर्मयूरोध्वजोऽस्य, बहुव्री०। कार्तिकेयका एक नाम।

कृकणा (सं० स्त्री०) कृ इति शब्दं कणति, कृ-कण-अच् स्त्रियां टाप्। कङ्कणहारिक पक्षी, चिड़ियेकी एक खास किस्म।

"कृकणाया आयुःकामस्य।" (पारस्करगृह्यसूत्र १।१९)

कृकाट (वै० क्ली०) कृकं गलदेशमटति, कृक-अट्-अण्। गलदेशका सन्धिस्थल, हलक, गलेका जोड़।

"इन्द्रः शिरोऽग्निर्ललाटं यमः कृकाटम्।" (अथर्व ९।४।१)

कृकाटक (सं० क्ली०) कृकाट स्वार्थे कन्। १ गलदेश, हलक। २ स्तम्भांश, खंभका हिस्सा।

क्रकाटिका (सं० स्त्री०) क्रकाट स्त्रियां टाप् अकारस्ये-कारश्च। १ ग्रीवापश्चात्भाग, गर्दनका पिछला हिस्सा। २ ग्रीवाका वैकल्यकार मर्मद्वय, गर्दनकी दो नाजुक जगहें।

क्रकालिका (सं० स्त्री०) एक प्रकारकी चिड़िया।

क्रकी (सं० पु०) बौद्धशास्त्रोक्त एक पुराने राजा।

क्रकुलास (सं० पु०) क्रकलास पृषोदरादित्वात् साधुः। गिरगिट।

क्रकुवृत्स्या (सं० स्त्री०) बन्दर।

क्रकर (सं० पु०) करीर।

कृच्छ्र (सं० पु०-क्ली०) कृन्तति सुखम्, कृति छेदने रक्, ऋकारान्तादेशश्च। कृतेश्छक्रू च। उण् २।२१। १ दुःख, तकलीफ। "तथा त्यजन्निमं देहं कृच्छ्राद्ग्राहाद्विमुच्यते।" (मनु ६।७८)

कृन्तत्यऽनेन पापम्। २ सान्तपनादि व्रत। संहिताकारोंने अनेक प्रकार कृच्छ्रका विधान किया है। याज्ञवल्क्य कहते हैं:—

"गोमूत्रं गोमयं चीरं दधि सर्पिः कुशोदकम्।
जग्ध्वापरेऽह्नि उपवसेत् कृच्छ्रं सान्तपनञ्चरन्॥"

पूर्व दिवस आहार परित्यागपूर्वक गोमय, गोमूत्र, चीर, दधि और घृत पञ्चगव्य कुशोदकके साथ पीकर दूसरे दिन उपवास करना चाहिये। पीछे सप्तम दिवस भी उपवास करते हैं। इसका नाम द्विरात्रिक सान्तपन कृच्छ्र है।

"गोमूत्रं गोमयं चीरं दधि सर्पिः कुशोदकम्।
एकैकं प्रत्यहं पीत्वा त्वहोरात्रमभोजनम्॥" (जाबाल)

कुछ दिन आहार परित्याग-पूर्वक प्रत्येक दिन गोमूत्र प्रभृति पञ्चगव्य और कुशोदक यथाक्रम एक एक पीना चाहिये। पीछे सप्तम दिवस उपवास करते हैं। इसका नाम सप्ताहसाध्य कृच्छ्रसान्तपन है। याज्ञवल्क्यने इसे महासान्तपनकृच्छ्र कहा है। (३।३१५)

एतद्भिन्न प्राजापत्यकृच्छ्र है। उसे प्राकृतकृच्छ्र भी कहते हैं। (मनु ११।२११) तप्तकृच्छ्र (मनु ११।२१५), चान्द्रायणकृच्छ्र (मनु ११।१७८-२१७) (याज्ञवल्क्य ३।३२५), पराककृच्छ्र (मनु ११।२१६), कृच्छ्र (मनु ११।२०१), अतिकृच्छ्र (मनु ११।२१४), पर्णकृच्छ्र (याज्ञवल्क्य ३।३१६), पादकृच्छ्र (याज्ञवल्क्य ३।३१८), कृच्छ्रातिकृच्छ्र (याज्ञवल्क्य ३।३२०), सौम्यकृच्छ्र (याज्ञवल्क्य ३।३२०) और तुलापुरुष (याज्ञवल्क्य ३।३२१) प्रभृति कई प्रकारके दूसरे कृच्छ्र भी होते हैं। मार्कण्डेयने पत्रकृच्छ्र, फलकृच्छ्र और मूलकृच्छ्र, इत्यादि एकादश प्रकारके कृच्छ्रोंकी बात कही है।

३ पाप, गुनाह। ४ मूत्रकृच्छ्र रोग, कम पेशाब आनेकी बीमारी। ५ कष्टसाधक, तकलीफ देनेवाला। ६ कष्टयुक्त, तकलीफमें पड़ा हुआ। ७ कष्टसाध्य, मुश्किलसे होनेवाला।

कृच्छ्रकर्म (सं० क्ली०) कृच्छ्रं कष्टसाध्यं कर्म, कर्मधा०। कष्टसाध्यकर्म, मिहनतसे होनेवाला काम।

कृच्छ्रप्राण (सं० त्रि०) कृच्छ्रं कष्टं विपदं गताः प्राणा यस्य। विपद्ग्रस्त, मुश्किलमें पड़ा हुवा।

"देवेऽवर्षत्यसौ देवो नरदेववपुर्हरिः।
कृच्छ्रप्राणाः प्रजा ह्येष रक्षिष्यत्यंजसेन्द्रवत्॥" (भागवत, ४।१६।८)

कृच्छ्रमूत्रपुरीषत्व (सं० क्ली०) मूत्रं च पुरीषञ्च, समाहारद्वन्द; कृच्छ्रं कष्टसाध्यं मूत्रपुरीषं तत्त्याग इत्यर्थः यस्य, बहुव्री० तस्य भावः, कृच्छ्र-मूत्र-पुरीषत्व। मलमूत्र परित्यागके समय मलकाठिन्य और मूत्रावरोध-जन्य यन्त्रणा, दस्त और पेशाब उतरनेकी तकलीफ।

कृच्छ्रसाध्य (सं० त्रि०) कष्टसाध्य, मुश्किलसे अच्छा होनेवाला।

कृच्छ्रसान्तपन (सं० पु०-क्ली०) कृच्छ्रं सान्तपनम्, कर्मधा०। एक व्रत। कृच्छ्र देखो।

कृच्छ्रहर (सं० पु०) पाषाणभेद, एक पत्थर।

कृच्छ्रातिकृच्छ्र (सं० पु०) कृच्छ्रादपि अतिकृच्छ्रः। एक कृच्छ्रव्रत।

"कृच्छ्रातिकृच्छ्रः पयसा दिवसानेकविंशतिम्" (याज्ञवल्क्य ३।३२०)

एकविंशति दिवस केवलमात्र दुग्ध पान करके कृच्छ्रातिकृच्छ्र व्रत आचरण करना पड़ता है। वशिष्ठ कहते हैं:—

"अबुचस्तृतीयःकृच्छ्रातिकृच्छ्रो यावत् सकृदादीत यावदेकवारमदकं हस्तेन गृहीतुं शक्नोति तावन्नवसु दिवसेषु भक्षयित्वा त्र्यहमुपवासः कृच्छ्रातिकृच्छ्रः।"

एक अञ्जलिमें जितना जल आ सके, उतना ही प्रत्यह एक बार मात्र पी कर ९ दिन रहना चाहिये।

उसके पीछे ३ दिवस उपवास करते हैं। इसीका नाम कृच्छ्रातिकृच्छ्र है। सुमन्तके मतमें—

"द्वादशरात्रं निराहारः स कृच्छ्रातिकृच्छ्रः तत् कृच्छ्रातिकृच्छ्रद्वयं द्वादशाहसाध्यमशक्तविषयम्।"

द्वादश रात्र निराहार रह कर कृच्छ्रातिकृच्छ्र व्रत पालन करना चाहिये। यह द्वादशाहसाध्य कृच्छ्रातिकृच्छ्र अक्षम व्यक्तिके प्रति विधेय है। ब्रह्मपुराणमें निम्नलिखित वचन देख पड़ता है—

'चरेत् कृच्छ्रातिकृच्छ्रं च दिवित्तोयं च शीतलम्।
एकविंशतिरात्रं तु कालेष्वे तेषु संयतः॥"

इक्कीस दिन प्रातः, मध्याह्न और सायङ्काल तीन-बार मात्र शीतल जल पान करके कृच्छ्रातिकृच्छ्र-व्रत आचरण करना चाहिये।

कृच्छ्रान्मुक्त (सं० त्रि०) कृच्छ्रात् कष्टात् मुक्तम्, अलुक्स०। पञ्चम्याः स्तोकादिभ्यः। पा ६।३।२। कष्टमुक्त, मुश्किलसे छूटा हुवा।

कृच्छ्रारि (सं० पु०) कृच्छ्रस्य कष्टस्य कष्टदायकरोगस्य वा अरिर्नाशकः, ६-तत्। विल्वान्तरवृक्ष, किसी किस्मके बेलका पेड़।

कृच्छ्रार्ध (सं० पु०) कृच्छ्रस्य व्रतविशेषस्य अर्धः अर्धांशः, ६-तत्। छह दिन साध्य एक व्रत। यह द्वादश दिन साध्य कृच्छ्रव्रतका अर्धांश होता है—

"सायं प्रातस्तथैकैकं दिनद्वयमयाचितम्।
दिनद्वयं च नाश्नीयात् कृच्छ्रार्धः सोऽभिधीयते॥" (प्रायश्चित्तविवेक)

एक दिन प्रातःकाल और एक दिन रात्रिको एक बार आहार करके रह जाना चाहिये। फिर दो दिन प्रार्थना करके आहार नहीं करते और दो दिन उपवास रखते हैं। इसीका नाम कृच्छ्रार्धव्रत है।

कृच्छ्री (सं० त्रि०) कृच्छ्रं कष्टमस्त्यस्य, कृच्छ्रसुखादित्वात् इनि। सुखादिभ्यश्च। पा ५।२।१६। १ विपदापन्न, तकलीफ पानेवाला। २ क्रुद्ध, नाराज।

कृच्छ्रेश्रित् (वे० त्रि०) १ विपद्ग्रस्त। २ विपद्के नाशमें सचेष्ट।

"स्वादुषंसदः पितरो वयोधाः कृच्छ्रेश्रितः शक्तीवन्तो गभीराः।" (ऋक् ६।७५।९)

'कृच्छ्रेश्रितः आपदि श्रयन्तः।' (सायण)

कृच्छ्रोन्मील (सं० पु०) कृच्छ्रादुन्मीलः उन्मीलनं नेत्रयोरित्यर्थः यस्मिन्। चक्षुरोगविशेष, आंखका एक बीमारी।

कृच्छ्रोन्मीलन (सं० पु०) कृच्छ्रादुन्मीलनं नेत्रयोरित्यर्थः यस्मिन्। चक्षुरोगविशेष, मुश्किलसे आंख खुलनेकी बीमारी। वाग्भटने इस रोगका लक्षण इस प्रकार लगाया है—

"चलस्तु गरलस्तत्र प्राप्य वर्त्माश्रयाः शिराः।
सुप्तोत्थितस्य कुरुते वर्त्म स्तम्भः सवेदनम्॥
पांशुपूर्णाभनेत्रत्वं कृच्छ्रोन्मीलनमस्तु च।
विमर्दनात् स्याच्च समं कृच्छ्रोन्मीलं वदन्ति तम्॥"

कृणञ्ज (सं० पु०) कृषञ्जर देखो।

कृणु (सं० पु०) कृ बाहुलकात् नुः णत्वञ्च। चित्रकर-जाति, मुसव्वर, चितेरा।

कृत् (सं० त्रि०) करोति, कृ-क्विप् तुगागमश्च। १ करनेवाला, जो करता हो। कृत् शब्दका व्यवहार पृथक् नहीं होता। कोई शब्द उपपदमें रहनेसे यह अर्थ प्रकाश कर सकता है। (पु०) २ पाणिन्यादि व्याकरणका प्रत्ययभेद, धातुके उत्तर तिङादि भिन्न आनेवाला समस्त प्रत्यय। कृदतिङ्। पा ३।१।९३। "अथापि भाषिकेभ्यो धातुभ्यो नैगमाः कृतो भाष्यन्ते। (निरुक्त २।२)

कृत (सं० त्रि०) क्रियते कृ कर्मणि क्तः। १ विहित, सम्पादित।

"कत्वा कृतः सुकृतः कर्तृभिर्भूत्।" (ऋक् ७।९९।१)

२ प्रस्तुत, तैयार।

"कृते योनौ वपतेह बीजं।" (ऋक् १०।१०१।३)

३ प्राप्त, हासिल, लिया हुवा।

"कृतस्य कार्यस्य चेह स्फातिं।" (अथर्व ३।२४।५)

४ यथेष्ट, ठीक।

"इतरं तु कृततरम्।" (शतपथब्राह्मण ४।६।९।११)

५ निकटस्थित, नजदीक रहनेवाला। ६ अभ्यस्त, महावरा रखनेवाला। ७ पर्याप्त, काफी। ८ हिंसित। (अव्य०) ९ अलम्, बस।

(क्ली०) कृ भावे क्तः। १० वीर्यकर्म, बड़ा काम।

"प्रेन्द्रस्य वोचं प्रथमा कृतानि।" (ऋक् ७।९८।५)

११ कृत उपकार, इहसान।

"मित्रद्रोही कृतघ्नश्च ये च विश्वासघातकाः ।
ते नरा नरकं यान्ति यावच्चन्द्रदिवाकरौ ॥" (उद्भट)

१२ फल, फायदा। १३ लक्ष्य, ख़्वाहिश की हुई चीज। १४ क्रीड़ाका निर्धारित पण, दांव पर लगा हुवा पैसा। १५ लुण्ठन द्रव्य, लूटका रुपया। १६ सत्ययुग।

"कृतत्रेतादिसर्गेण युगाख्या ह्येकसप्ततिः।" (विष्णुपुराण २।१।४३)

१७ ओदन शक्त्वादि द्रव्यकी संज्ञा।

"कृतमोदनशक्त्वादि तण्डुलादि कृताकृतम्।
व्रीह्यादि चाकृतं प्रोक्तमिति द्रव्यं त्रिधा बुधैः॥" (कात्यायन २८।३)

(पु०) १८ कोई विश्वदेव। (भारत १३।९१ अध्याय) १९ वसुदेवके कोई पुत्र। (भागवत ९।२४।४६) २० सुमतिके पौत्र और सन्नतिके पुत्र। वह कौशल्य हिरण्यनाभके शिष्य रहे। (हरिवंश, २० अ०) २१ कृतरथके पुत्र और विवुधके पिता। (विष्णुपुराण ४।५।१२) २२ जयके पुत्र और हर्यवलके पिता। (भागवत ९।१७।१६) २३ च्यवनके पुत्र और उपरिचर वसुके पिता।

(विष्णुपुराण ४।१९।१९)

कृतक (सं० त्रि०) कृती छेदने कृन्। १ कृत्रिम, बनावटी।

"आर्यरूपसमाचारं चरन्तं कृतके पथि।" (भारत, १३।४८ अ०)

(क्ली०) २ विड्लवण। इसका संस्कृत पर्याय—विड़, पाक्य, द्राविड़ और आसुर है। ३ रसाञ्जन। (पु०) ४ मदिरागर्भजात वसुदेवके कोई पुत्र।

(भागवत, ९।२४।४७)

कृतकर्तव्य (सं० त्रि०) कृतं निष्पादितं कर्तव्यं येन, बहुव्री०। अपना कर्तव्य कर्म सम्पन्न करनेवाला, जो अपना फर्ज अदा कर चुका हो।

कृतकर्मा (सं० त्रि०) कृतं कर्म येन, बहुव्री०। १ दक्ष, होशियार।

"अद्य वाप्यहमेवैनं हनिष्यामि वृकोदर।
कृतकर्मा परिश्रान्तः साधु तावदुपारम॥" (भारत, १३।१४९)

२ स्वकार्य निष्पन्न करनेवाला, जो अपना काम कर चुका हो।

"यावदस्तं न यात्येष कृतकर्मा दिवाकरः।" (रामायण, ६।८५।११)

३ परमेश्वर, कर्तव्यकर्म न रखनेवाला। जिसका शुक्लाशुक्लादि कर्म सम्पन्न हो जाता, वही कृतकर्मा कहलाता है। (योगशास्त्र)

कृतकल्प (सं० त्रि०) कृतः निष्पादितः परिज्ञातः कल्पो लोकव्यवहारो येन, बहुव्री०। लौकिक व्यवहारादिमें अभिज्ञ, दुनियाका कामकाज समझनेवाला।

"लौकिके समयाचारे कृतकल्पो विशारदः।" (रामायण, २।१।१६)

कृतकाम (सं० त्रि०) कृतः सिद्धः कामोऽभिलाषो यस्य, बहुव्री०। अभिलषित पदार्थ पानेवाला, जो अपनी मुराद पूरी कर चुका हो।

कृतकार्य (सं० क्ली०) कृतं निष्पादितं कार्यम्, कर्मधा०। १ निष्पादित कर्म, किया हुआ काम। (त्रि०) कृतं निष्पादितं कार्यं येन, बहुव्री०। २ कार्यसाधन करनेवाला, जो काम कर चुका हो।

"समूहकार्य आयातान् कृतकार्यान् विसर्जयेत्।" (याज्ञवल्क्य, २।१९२)

कृतकाल (सं० पु०) कृतो निर्धारितः कालः। १ निर्धारित समय, मुकर्रर वक्त। "कृतशिल्पोऽपि निवसेत् कृतकालं गुरोर्गृहे।" (याज्ञवल्क्य १। १८७)

(त्रि०) कृतो निर्धारितः प्राप्तः अपेक्षितो वा कालो येन, बहुव्री०। २ नियत, मुकर्रर। ३ भेजा हुआ। ४ समय पूरा करनेवाला।

"ततस्ता द्वारपालैस्ते प्रोच्यन्ते राजशासनम्।
कृतकालाः सुवलयस्ततो द्वारमवाप्स्यथ॥" (भारत, सभापर्व)

कृतकीर्ति (सं० त्रि०) कृता प्राप्ता कीर्तिर्यशो येन, बहुव्री०। यशोलाभ करनेवाला, जो नामवरी पा चुका हो।

कृतकूर्च (सं० त्रि०) छोटी गठरी या कूचीकी तरह बंधा हुआ।

कृतकृत्य (सं० त्रि०) कृतमनुष्ठितं कृत्यं कर्तव्यं येन, बहुव्री०। १ सम्पूर्णरूप स्वकार्य साधन करनेवाला, जो पूरी तौर पर अपना काम कर चुका हो। २ चतुर, होशियार। ३ सन्तुष्ट, आसूदा।

"कृतकृत्यो विधिर्मन्ये न वर्धयति तस्य ताम्।" (माघ, २। ३२)

४ मुक्त, समाप्तपुरुषार्थ, सब काम कर चुकनेवाला।

"प्राप्यैतत् कृतकृत्यो हि द्विजो भवति नान्यथा।" (मनु, १२। ९३)

(क्ली०) कृतमनुष्ठितं कृत्यं कार्यम्, कर्मधा०। ५ निष्पादित कर्म, किया हुआ काम।

कृतकृत्यता (सं० स्त्री०) सफलता, कामयाबी।

कृतकोटि (सं० पु०) कृता लब्धा कोटिः श्रेष्ठता येन, बहुव्री०। १ काश्यपमुनि। २ उपवर्ष मुनिका नामान्तर।

कृतकोप (सं० त्रि०) क्रुद्ध, नाराज।

कृतकौतुक (सं० त्रि०) खेलाड़ी, खेलनेवाला।

कृतक्रय (सं० पु०) क्रेता, खरीददार।

कृतक्रिय (सं० त्रि०) कृता क्रिया कार्यं येन, बहुव्री०। १ कृतकार्य, जो काम कर चुका हो। २ शास्त्रविहित कार्य करनेवाला।

"विप्रः शुध्यत्यपः स्पृष्ट्वा क्षत्रियो वाहनायुधः।
वैश्यः प्रतोदं रश्मीन् वा यष्टिं शूद्रः कृतक्रियः॥" (मनु ५।९९)

कृतक्रुध (सं० त्रि०) कृतकोप, नाराज।

कृतक्षण (सं० त्रि०) कृतः क्षणः समयो येन, बहुव्री० १ कृतावकाश, मौका निकालनेवाला।

"कृतक्षण एवास्मि शीघ्रमिच्छामि।" (भारत, आदिपर्व)

कृतः निष्पादितः क्षणः पर्वः उत्सवो येन। २ कृतोत्सव, जलसा कर चुकनेवाला।

"उदास्थितं विश्वमिदं तदासीत् यन्निद्रया मीलितदृङ्न्यमीलयत्।
अहीन्द्रतल्पे ऽधिशयान एकः कृतक्षणः स्वात्मरतौ निरीहः॥"
(भागवत, ३।८।११)

(पु०) ३ कोई राजपुत्र। (भारत, २।४।२७।)

कृतघातयत्न (सं० त्रि०) घातका यत्न करनेवाला। जो मार डालनेकी कोशिश करता हो।

कृतघ्न (सं० त्रि०) कृतं कृतोपकारादिकं हन्ति, कृत-हन्-टक्। पूर्वकृत उपकार भूल जानेवाला, इहसान-फरामोश। उपकारका प्रत्युपकार न करने या उपकारीका अपकार करनेवालेको भी कृतघ्न ही कहते हैं। प्रायश्चित्तविवेकमें लिखा है—

"भर्तृपिण्डापहर्ता च पितृपिण्डापहारकः।
यस्मात् गृहीत्वा विद्यां च दक्षिणां न प्रयच्छति॥
पुत्रान् स्त्रियश्च यो द्वेष्टि यश्च तान् घातयेन्नरः।
कृतस्य दोषं वदति सकामान्न करोति यः॥
न स्मरेच्च कृतं यस्तु आश्रमान् यस्तु दूषयेत्।
सर्वांस्तानृषिभिः सार्धं कृतघ्नानब्रवीन्मनुः॥"

प्रभु अथवा पितृपिण्ड अपहरण करनेवाला, विद्याशिक्षा करके दक्षिणा न देनेवाला, पुत्र वा स्त्रीको द्वेष अथवा वध करनेवाला, उपकारीकी निन्दा अथवा उसका अभिलाष पूर्ण न करनेवाला किंवा कृत उपकार भूल जानेवाला और सकल आश्रम दूषित करनेवाला व्यक्ति कृतघ्न कहलाता है। कृतघ्नका अन्न भक्षण निषिद्ध है। "शैलूषतन्तुवायान्नं कृतघ्नस्यान्नमेव च।" (मनु ४।२१४)

कृतघ्नके पापका प्रायश्चित्त नहीं होता।

"कृतघ्ने च सुरापे च चौरे च गुरुतल्पगे।
निष्कृतिर्विहिता सद्भिः कृतघ्ने नास्ति निष्कृतिः॥" (भारत, अनुशासन)

ब्रह्मघाती, मद्यपायी, चोर और गुरुपत्नीगामीकी निष्कृतिका उपाय विद्यमान है। किन्तु कृतघ्नकी निष्कृति नहीं।

कृतघ्नता (सं० त्रि०) उपकार विस्मृत हो जानेकी अवस्था, एहसान फरामोशी।

कृतघ्नोपाख्यान (सं० क्ली०) कृतघ्नस्य उपाख्यानं कथा, ६-तत्। महाभारतोक्त एक उपाख्यान। अति प्राचीनकालको मध्यदेशीय एक दरिद्र ब्राह्मणने उत्तर दिशामें जो समस्त म्लेच्छदेश है, उसके मध्य समृद्धिसम्पन्न तथा ब्राह्मण-वर्जित किसी ग्राममें भिक्षा-लाभकी आशासे प्रवेश किया। उस ग्राममें विभव-सम्पन्न सत्यवादी दाता एक दस्यु वास करता था। ब्राह्मणने उसके निकट भिक्षा प्रार्थना की। दस्युने ब्राह्मणको एक वर्षके उपयुक्त आहार्य, वासोपयोगी गृह और वस्त्रादि दान किया तथा वयःप्राप्ता एक युवतीके साथ उसका विवाह करा दिया था। ब्राह्मणका नाम गौतम रहा। गौतम उक्त समस्त विभव प्राप्त होकर हृष्टचित्तसे उसी दस्युप्रदत्त गृहमें रहने लगे। उक्त दस्यु व्याधोंसे वाणशिक्षा करता और प्रत्यह उनके साथ वनके मध्य प्रवेश करके उन्होंकी भांति पशुपक्षी मारता फिरता था। वह प्रत्यह प्राणिवधमें नियुक्त रह हिंसाप्रिय और व्याधोंके साथ रहते रहते व्याध बन गया। उसी समय उसके किसी परिचित ब्राह्मणने जाकर उसका तिरस्कार किया था। इससे वह उत्तर-मुख जाकर समुद्रके तीर उपस्थित हुवा। वहां किसी बकके साथ उसकी मित्रता हो गयी। गौतमको बकके मित्र एक राक्षससे बहुतर धन मिला था। किन्तु उसने घर लौटते समय निद्रित बकको मांसके

लोभसे मार डाला। इस कृतघ्नताके निमित्त मृत्युके पीछे उसे अनन्त नरकभोग करना पड़ा था। क्योंकि ब्रह्मघाती, सुरापायी प्रभृति महापापी व्यक्ति भी प्रायश्चित्तादि करके मुक्ति पा सकते हैं। किन्तु कृतघ्नके पापका प्रायश्चित्त नहीं। (भारत, शान्तिपर्व)

कृतचूड़ (सं० पु०) कृता निष्पादिता चूड़ा संस्कारविशेषो यस्य, बहुव्री०। चूड़ा-संस्कार सम्पन्न।

"दन्तजातेऽनुजाते च कृतचूड़े च संस्थिते।" (मनु ५।५८)

कृतच्छाया (सं० स्त्री०) श्वेतकोषातकी।

कृतच्छिद्रा (सं० स्त्री०) कोषातकीलता, कड़ुई तरोई।

कृतजन्म (सं० त्रि०) उत्पादित, पैदा किया हुवा।

कृतज्ञ (सं० त्रि०) कृतं कृतोपकारं जानाति स्मरति, कृत-ज्ञा-क। आतोऽनुपसर्गे कः। पा ३।२।३। १ कृत उपकारको स्मरण अथवा उपकारीका प्रत्युपकार करनेवाला, एहसानमन्द, कियेको माननेवाला।

(पु०) २ शिव। ३ कुत्ता।

कृतज्ञता (सं० त्रि०) किये को माननेका भाव, एहसानमन्दी।

कृतज्वर (सं० पु०) कृतः सृष्टः ज्वरो येन, बहुव्री०। शिवका एक नाम।

कृतञ्जय (सं० पु०) १ सप्तदश व्यासका नाम। (विष्णुपुराण, ३।३।१५) २ इक्ष्वाकुवंशीय बर्हिराजाके पुत्र। (भागवत, ९।१२।१२) ३ कोई ऋषि। (लिङ्गपुराण ७।१९)

कृततनुत्राण (सं० स्त्री०) कवच धारण करनेवाला, जो बख्तर पहने हो।

कृततीर्थ (सं० पु०) कृतं निष्पादितं तीर्थं तीर्थकार्यं येन, बहुव्री०। १ अनेक तीर्थ भ्रमण कर चुकनेवाला। २ उपदेष्टा, परिचालक।

कृतत्रा (सं० स्त्री०) कृतं त्रायते, कृत-त्रै-कः अजादित्वात् टाप्। त्रायमाणा, एक जड़ी बूटी।

कृतत्राणा, कृतत्रा देखो।

कृतदण्ड (सं० पु०) यमराज।

कृतदार (सं० पु०) कृताः गृहीता दारा येन, बहुव्री०। विवाहित, जो दार परिग्रह कर चुका।

"द्वितीयमायुषो भागं कृतदारो गृहे वसेत्।" (मनु ४।१)

मनुष्योंको जीवनके द्वितीय भाग पर दारपरिग्रह करके गृहमें बसना चाहिये।

कृतदास (सं० पु०) कृतः विहितः कृतनियमो दासः, कर्मधा०। समय निर्दिष्ट करके दासत्व स्वीकार करनेवाला, जो वक्त मुकर्रर करके नौकर बना हो। दास देखो।

कृतद्युति (सं० स्त्री०) चित्रकेतु राजाकी पत्नी। (भागवत, ६।१४।२८)

कृतद्विष्ट (वै० त्रि०) दूसरेके कार्यपर क्रुद्ध।

"यथा कृतद्विष्टासोऽमुष्मै शेष्यावते।" (अथर्व, ७।११३।१)

कृतधन्वा (सं० पु०) कनकके एक पुत्र। (हरिवंश)

कृतधी (सं० त्रि०) कृता स्थिरीकृता धीर्येन, बहुव्री०। १ कृतसङ्कल्प, कामयाबीके बारेमें शक न रखनेवाला। कृता उत्पादिता धीः शास्त्रसंस्कृता बुद्धिर्येन। २ शिक्षित, शास्त्रादिके विचारसे बुद्धिको ठहरानेवाला।

कृतध्वंस (सं० त्रि०) १ विजित, शिकस्त, जो हार गया हो। २ आहत, जो बरबाद हो गया हो।

कृतध्वज (वै० त्रि०) उच्छ्रित ध्वजा। (सायण)

"यत्रानरः समयं ते कृतध्वजः।" (ऋक् ७।८३।२)

कृतध्वज (सं० पु०) शीरध्वज जनकके प्रपौत्र और धर्मध्वजके पुत्र। (भागवत, ९।१३।१९; विष्णुपुराण, ४।५।७)

कृतध्वस्त (सं० त्रि०) मिलकर गया हुआ, जो हाथमें आकर निकल गया हो।

कृतनख (सं० त्रि०) नख परिष्कार करनेवाला, जो अपने नाखून साफ कर चुका हो।

कृतनाशक (सं० त्रि०) कृतस्य कृतोपकारस्य नाशकः, ६-तत्। कृतघ्न, एहसान-फरामोश।

कृतनित्यक्रिय (सं० पु० त्रि०) कृता सम्पादिता नित्यक्रिया येन, बहुव्री०। सन्ध्यावन्दनादि नित्यक्रिया सम्पन्न कर चुकनेवाला।

कृतनिन्दक (सं० त्रि०) कियेकी निन्दा करनेवाला, जो एहसानको न मानता हो।

कृतनिर्णेजन (सं० त्रि०) कृतं निर्णेजनं यस्य येन वा। १ धौत, धोया हुवा। २ धो डालनेवाला। ३ पापमुक्तिके लिये प्रायश्चित्त कर चुकनेवाला।

कृतनिश्चय (सं० त्रि०) कृतो निश्चयो येन, बहुव्री०। १ कृतसङ्कल्प, इरादा बांध लेनेवाला। २ निःसन्देह, कोई शक न रखनेवाला।

कृतपर्व (सं० क्ली०) कृताख्यं पर्व, मध्यपदलो०। कृत-युग, सत्ययुग।

कृतपश्चात्ताप (सं० त्रि०) पश्चात्ताप करनेवाला, जो पछताता हो।

कृतपिण्डीत (सं० पु०) शिलारस।

कृतपुङ्ख (सं० त्रि०) कृतोऽभ्यस्तः पुङ्खः पुङ्खयुक्तो वाणो येन, बहुव्री०। शराभ्यासनिपुण, तीर चलानेमें होशियार।

कृतपुण्य (सं० त्रि०) पुण्य कार्य कर चुकनेवाला, जो भले काम खूब कर चुका हो।

कृतपूर्व (सं० त्रि०) पहले किया हुआ, जो पेश्तर किया जा चुका हो।

कृतपूर्वनाशन (सं० त्रि०) कृतपूर्वस्य पूर्वं कृतोपकारस्य नाशनो नाशकः, ६-तत्। कृतघ्न, पहले किये एहसानको भूल जानेवाला।

कृतपूर्वी (सं० त्रि०) कृतं पूर्वमनेन, कृतपूर्व इनि। सपूर्वाच। पा ५.२।८७। निष्पन्नकर्मा, पहले हो कर डालनेवाला।

कृतप्रणाम (सं० त्रि०) प्रणाम करनेवाला, जो बन्दगी बजाता हो।

कृतप्रतिकृत (सं० क्ली०) कृतस्य प्रतिकृतं प्रतीकारः। १ आक्रमणका प्रत्याक्रमण, हमलेके जवाबमें हमला। २ आघातकी प्रतिक्रिया, हमलेकी रोक।

"ततो रामोऽतिसंक्रुद्धः चापमाकृष्य वीर्यवान्।
कृतप्रतिकृतं कर्तुं मनसा संप्रचक्रमे॥" (रामायण, ६।९१।१०)

(त्रि०) कृतं प्रतिकृतं येन, बहुव्री०। ३ प्रतीकार करनेवाला, जो बचाव कर रहा हो।

कृतप्रतिज्ञ (सं० त्रि०) प्रतिज्ञाको पूरा करनेवाला, जो इकरार पूरा करता हो।

कृतप्रयत्न (सं० त्रि०) चेष्टा करनेवाला, जो कोशिश करनेमें लगा हो।

कृतफल (सं० क्ली०) कृतं फलमस्य। १ कक्कोल, शीतलचीनी। (त्रि०) कृतमुपार्जितं फलं येन, बहुव्री०। २ कृतकार्यलब्ध फल, कियेका नतीजा हासिल कर चुकनेवाला।

कृतफला (सं० स्त्री०) कोलशिम्बी, एकफली।

कृतबंधन (सं० क्ली०) कोशातकफल।

कृतबन्धु (सं० पु०) एक राजपुत्र। (भारत, १।२३१ अ:)

कृतबाहु (सं० त्रि०) हाथ फेरनेवाला, जो छू रहा हो।

कृतबुद्धि (सं० त्रि०) कृता स्थिरीकृता बुद्धिर्येन। १ कृतनिश्चय, इरादा बांध लेनेवाला।

"कृतबुद्धी स्थिरामर्षौ चक्रतुर्युद्धमुत्तमम्।" (रामायण, ६।८१।१६)

२ पण्डित, ज्ञानी, शास्त्रवेत्ता।

"ब्राह्मणेषु च विद्वांसो विद्वत्सु कृतबुद्धयः।
कृतबुद्धिषु कर्तारः कर्तृषु ब्रह्मवेदिनः॥" (मनु, १।९७)

कृतबोध (सं० पु०) कृत उपार्जितो बोधो येन, बहुव्री०। तपोदेव नामक ब्राह्मणके पुत्र। उन्होंने पितामाताको परित्याग करके कुछ काल तपस्या की थी। एक दिन तपस्या करते ही समय किसी पक्षीने इनके मस्तक पर मलत्याग किया। इनके क्रोधदृष्टिसे उसको ओर देखते ही पक्षी भस्म हो गया। यह देख इन्होंने अपनेको सिद्धपुरुष विवेचना किया और तपस्याको छोड़ दिया था। एक दिन यह किसी ब्राह्मणके घर आतिथ्य ग्रहण करने गये। ब्राह्मण उस समय निद्रित रहा। ब्राह्मणका पुत्र पिताकी पदसेवा करता था। इसीसे उसने कृतबोधकी अभ्यर्थना न की। उस पर उन्होंने क्रुद्ध हो बककी भांति ब्राह्मणपुत्रको भस्म करनेकी चेष्टा की थी। ब्राह्मणपुत्र उनकी क्रोधदृष्टि देख कर कहने लगा—'हमें बक न समझिये। हमने तुम्हारा कोई अपकार नहीं किया है। इस स्थान पर वृथा अहङ्कार प्रकाश उपयुक्त नहीं।' इस पर कृत-बोधने विस्मित हो ब्राह्मणपुत्रसे बकवधवृत्तान्त जाननेका उपाय पूछा था। उसने कहा—'तुम काशीस्थित तुलाधार नामक व्यक्तिसे जाकर मिलो।' कृतबोध तुलाधारसे जाकर मिले थे। उसने कृतबोधको समझा दिया कि तपस्यासे पितृसेवा कहीं श्रेष्ठ थी। इससे कृतबोध फिर घर लौट कर पितामाताको सेवामें लग गये। पितामाताके सेवाकार्यमें स्थिरबुद्धि होनेसे ही कृतबोध नाम पड़ा है। (बृहद्धर्मपुराण)

कृतब्रह्मा (वै० त्रि०) ब्रह्मस्तोत्र करनेवाला।

"कृतब्रह्मा शूशुवद्रातहव्य इत्।" (ऋक् २।२५।१)
'कृतब्रह्मा ब्रह्मस्तोत्रं कृतं येन सः।' (सायण)

कृतभय (सं० त्रि०) डरनेवाला, जो भयभीत हुवा हो।

कृतभाव (सं० त्रि०) कृतः स्थिरीकृतो भावः कश्चिदाशयो येन, बहुव्री०। किसी विषयमें मतिको स्थिर करनेवाला, जो अपना इरादा बांध चुका हो।

"तौ परस्परमभ्येत्य सर्वगात्रेषु धन्विनौ।
घोरैर्विव्यधतुर्बाणैः कृतभावावुभौ जये॥" (रामायण ६।७०।१२)

कृतभूतमैत्र (सं० त्रि०) सबसे मित्रभाव रखनेवाला।

कृतभोजन (सं० त्रि०) भोजन कर चुकनेवाला, जो खा चुका हो।

कृतमङ्गल (सं० त्रि०) शुभ, मुबारक।

कृतमति (सं० त्रि०) कृता स्थिरीकृता मतिर्बुद्धिर्येन, बहुव्री०। कृतनिश्चय, इरादा बांध चुकनेवाला।

"इत्युक्ता सा कृतमतिरभवच्चारुहासिनी।
स्त्रीदोषाच्छाश्वतान् सत्यान् भाषितुं सम्प्रचक्रमे।" (भारत, १३।३८ अ०)

कृतमन्यु (सं० त्रि०) क्रुद्ध, नाराज।

कृतमार्ग (सं० त्रि०) मार्ग बना चुकनेवाला, जो राह तैयार कर चुका हो।

कृतमार्गा (सं० स्त्री०) कृतो मार्गः पन्था यया, बहुव्री०। एक नदी।

कृतमाल (सं० पु०) कृता माला अस्य मालावदुत्पन्नपुष्पत्वात् बहुव्री०। १ वृक्ष आरग्वध, कर्णिकार। २ सङ्घातचारिपक्षिविशेष, एक चिड़िया। ३ सङ्घातचारिमृग, एक जानवर।

कृतमालक, कृतमाल देखो।

कृतमाला (सं० स्त्री०) कृता माला मालाकारेण वेष्टनमनया, बहुव्री०। मलयपर्वतसे उद्भूत एक नदी। (विष्णुपुराण, २।३।१२)

कृतमुख (सं० त्रि०) कृतं संस्कृतं मुखं यस्य, बहुव्री०। पण्डित, होशियार।

कृतमैत्र (सं० त्रि०) कृतं मैत्रं मित्रता येन, बहुव्री०। मित्रता करनेवाला, जो दोस्ती दिखा चुका हो।

कृतयजुः (सं० त्रि०) कृतमभ्यस्तं यजुर्यजुर्वेदमन्त्रा येन। यजुर्वेदके मन्त्रोंका अभ्यास कर चुकनेवाला।

"कृतयजुः सम्भृतसम्भारः।" (तैत्तिरीयसंहिता १।५।२।४)

कृतयज्ञ (सं० पु०) कृतो यज्ञो येन, बहुव्री०। १ च्यवनके पुत्र और चैद्य उपरिचर वसुके पिता। (हरिवंश, ३२ अ०) इनका अपर नाम कृतक था। (विष्णुपु० ४।१९।१९)

(त्रि०) २ यज्ञ कर चुकनेवाला।

कृतयशाः (सं० पु०) १ अङ्गिरस्-वंशीय कोई व्यक्ति।

(त्रि०) कृतं लब्धं यशो येन, बहुव्री०। २ यशोलाभ कर चुकनेवाला, जो नामवरी पा चुका हो।

कृतयुग (सं० क्ली०) कृतमेव युगम्। सत्ययुग।

"अन्ये कृतयुगे धर्मास्त्रेतायां द्वापरे परे।
अन्ये कलियुगे नृणां युगह्रासानुरूपतः॥" (मनु, १। ८५)

कृतयूष (सं० पु०) प्रमथरा।

कृतरथ (सं० पु०) १ निमिवंशीय मरुके पौत्र। (भागवत ९। १३। १६, विष्णुपुराण, ४।५।१२) (त्रि०) कृतो रथो येन, बहुव्री०। रथकार, गाड़ी बनानेवाला।

कृतरव (सं० त्रि०) शब्दकारी, गानेवाला।

कृतरस (सं० पु०) स्नेहशुण्ठ्यादियुक्त कृत मांसरस, तेल और सोंठ वगैरह डालकर बनाया हुआ गोश्तका शोरवा।

कृतरुक् (सं० त्रि०) दीप्तिमान्, चमकदार।

कृतरुष (सं० त्रि०) क्रुद्ध, नाराज।

कृतलक्षण (सं० त्रि०) कृतानि लक्षणान्यस्य, बहुव्री०। १ गुणप्रतीत, बहादुरी वगैरहके लिये मशहूर। २ कृतचिह्न, निशानदार।

"ज्ञातिसम्बन्धिभिस्त्वेते त्यक्तव्याः कृतलक्षणाः।
निर्दया निर्नमस्कारास्तन्मनोरनुशासनम्॥" (मनु, ९।२३९)

(पु०) ३ विश्वक्सेनके पुत्र। विश्वक्सेनने उन्हें दूसरे कई पुत्रोंके साथ गण्डूषको प्रदान किया था। (हरिवंश, ३५ अ०)

कृतवर्मा (सं० पु०) १ यदुवंशीय कनकके पुत्र। (हरिवंश, ३३ अ०) २ भोजके पौत्र और हृदिकके पुत्र। (विष्णुपुराण, ४। १४। ७) ३ वर्तमान अवसर्पिणीके त्रयोदश अर्हत्के पिताका नाम।

कृतवान् (सं० त्रि०) कर चुकनेवाला।

कृतवाप (सं० पु०) कृतो निष्पादितो वापः क्षौरकार्यं यस्य, बहुव्री०। क्षौरकार्य करा चुकनेवाला व्यक्ति, जो आदमी बाल बनवा चुका हो।

कृतविद्य (सं० त्रि०) कृता लब्धा विद्या येन, बहुव्री०। ज्ञानी, पण्डित, इल्मदार।

"सुवर्णपुष्पितां पृथ्वीं विचिन्वन्ति नरास्त्रयः।
शूरश्च कृतविद्यश्च यश्च जानाति सेवितुम्॥" (पञ्चतन्त्र, १।५१)

कृतविवाह (सं० त्रि०) विवाहित, शादी कर चुकनेवाला।

कृतवीर्य (सं० त्रि०) कृतमुपार्जितं वीर्यं येन, बहुव्री०। १ वीर्यवान्, ताकतवर। (अथर्व ७।१।२७) (पु०) २ यदुवंशीय कनकके पुत्र। (हरिवंश, ३३ अ०)

कृतवेग (सं० पु०) राजपुत्रविशेष, राजाके एक लड़के। (भारत, सभापर्व)

कृतवेतन (सं० त्रि०) कृतं स्थिरीकृतं वेतनं भृतिर्यस्य, बहुव्री०। नियमित वेतन पर नियुक्त, बंधी तनख्वाह पानेवाला।

"यथार्पितान् पशून् गोपः सायं प्रत्यर्पयेत् तथा।
प्रमादमृतनष्टांश्च प्रदाप्य कृतवेतनः॥" (याज्ञवल्क्य २।१६७)

कृतवेदी (सं० त्रि०) कृतस्य कृतोपकारस्य वेदी विज्ञाता, ६-तत्। कृतज्ञ, एहसानमन्द, कियेको समझनेवाला।

कृतवेध, कृतवेधक देखो।

कृतवेधक (सं० पु०) कृतो वेधः छिद्रमस्मिन्, बहुव्री०। कोषातकी लता, कड़ुई तरोई।

कृतवेधन (सं० पु०) कृतं वेधनं यस्मिन्, बहुव्री०। १ कोषातकी लता, सफेद फूलकी एक बेल। २ आरग्वधवृक्ष, अमिलतास। १ ज्योत्स्निका, रतनजोत।

कृतवेधना (सं० स्त्री०) कृतवेधन स्त्रियां टाप्। १ राजकोषातकीलता। २ श्वेतघोषा, कटुघोषा।

कृतवेश (सं० स्त्री०) कृतो निष्पादितो वेशो येन, बहुव्री०। अलङ्कृत, जो सज चुका हो।

कृतव्यधन (सं० त्रि०) अस्त्रयुक्त, सशस्त्र, हथियारबन्द। (अथर्व, ५।१४।९)

कृतव्रत (सं० पु०) कृतं गृहीतं अध्ययनादिरूपं व्रतं येन, बहुव्री०। लोमहर्षण मुनिके एक छात्र।

कृतशिल्प (सं० त्रि०) कृतं अभ्यस्तं शिल्पं येन, बहुव्री०। अभ्यस्त शिल्प, कारीगर।

"कृतशिल्पोऽपि निवसेत् कृतकालं गुरोर्गृहे।" (याज्ञवल्क्य)

कृतश्रम (सं० त्रि०) कृतः श्रमो येन, बहुव्री०। १ महोत्साहान्वित, मिहनत कर चुकनेवाला। (पु०) २ कोई मुनि। (भारत २।४।१४)

कृतसंज्ञ (सं० त्रि०) कृता संज्ञा यस्मै, बहुव्री०। १ कृतसङ्केत, माना हुआ।

"गुल्मांश्च स्थापयेदाप्तान् कृतसंज्ञान् समन्ततः।" (मनु ८।१९९)

कृतसंङ्केत (सं० त्रि०) कृतः स्थिरीकृतः सङ्केतः समयनिर्देशः स्थाननिर्देशो वा यस्मै, बहुव्री०। सङ्केत किया हुआ, जो ठहराया जा चुका हो। २ इङ्गित द्वारा अपना मनोभाव बतानेवाला, इशारा कर चुकनेवाला।

कृतसापत्निका (सं० स्त्री०) कृतं सापत्न्यं यस्याः, कृतसापत्न्यं समां कप् स्त्रियां टाप् अकारस्य इकारे यलोपश्च। सपत्नी की हुई स्त्री, जिस औरतका खाविन्द उसके जीते जी दूसरी शादी कर चुका हो।

कृतसापत्नी, कृतसापत्नीका और कृतसापत्नका आदि कई शब्द भी इस अर्थमें व्यवहृत होते हैं।

कृतस्थिति (सं० त्रि०) ठहरा हुआ।

कृतस्नेह (सं० त्रि०) प्यार करनेवाला।

कृतस्मर (सं० पु०) पर्वतविशेष, एक पहाड़।

कृतस्वस्त्ययन (सं० त्रि०) स्वस्त्ययन कर चुकनेवाला, जो किसी कामके पहले देवताको मना चुका हो।

कृतस्वेच्छाहार (सं० त्रि०) स्वेच्छापूर्वक आहार कर चुकनेवाला, जो अपने दिलसे खा चुका हो।

कृतस्वर (सं० पु०) १ स्वर्णखनि, सोनेकी खान। (त्रि०) कृतः स्वरः शब्दो येन, बहुव्री०। २ कृतशब्द, आवाज लगा चुकनेवाला।

कृतहस्त (सं० त्रि०) कृतोऽभ्यस्तः हस्तो शरपरित्यागलाघवरूपा हस्तशिक्षा येन, बहुव्री०। १ शरक्षेपमें निपुण, जो सफाईसे तीर मारता हो।

"अप्राप्तांश्चैव तान् पार्थश्चिच्छेद कृतहस्तवत्।" (भारत, ४।५६।२०)

२ दक्ष, हथचला।

कृतहस्तता (सं० स्त्री०) निपुणता, हथियारी, हाथकी सफाई।

कृताकृत (सं० त्रि०) कृतं तदकृतं च। क्तेन नञ्विशिष्टेनानञ्। पा २।१।६०। १ कृत और अकृत, किया न किया

(क्लो०) कृतं चाकृतं च, समा० द्वन्द्व। २ कृत और अकृत कर्म, किया और न किया हुवा काम।

"शान्तं नो अस्तु कृताकृतम्।" (अथर्व १९।९।२)

३ कार्य और कारण। ४ स्वर्ण तथा रजत, सोना चांदी।

"कृताकृतञ्च कनकं गजेंद्राश्चत्तोमदा:।" (भारत, १३।५३ अ०)

५ तण्डुलादि हव्यभेद।

"कृतमोदनशक्कादि तण्डुलादि कृताकृतम्।
व्रीह्यादि चाकृतं प्रोक्तमिति हव्यं त्रिधा बुधैः॥"

हव्यद्रव्य तीन प्रकारका होता है। उसमें अन्न तथा शक्तु प्रभृति द्रव्य कृत, अपक्व तण्डुलादि कृताकृत और व्रीह्यादि अकृत है।

"कृताकृतां स्तण्डुलांश्च पलालौदनमेव च।" (याज्ञवल्क्य १।२८७)

कृतं करणं चाकृतमकरणञ्च, द्वन्द्वः। ६ करण और अकरण, करणकी असमाप्ति।

"कृताकृतमित्यत्र कदेशे करणाकरणभ्यां करणस्य समाप्तिर्गम्यते।" (कैयट)

कृताख्ययूष (सं० पु०) लवणस्नेहकटुकादिकृत यूष, नमक, तेल और कड़वी चीजोंका शोरवा। यह गुरु होता है। (वैद्यकनिघण्टु)

कृतागम (सं० त्रि०) कृत आगम उपार्जनमुन्नतिर्वा येन, बहुव्री०। उन्नति करनेवाला, जो तरक्की कर चुका हो। (पु०) कृत आगमो वेदशास्त्रं येन, बहुव्री०। २ परमेश्वर, वेद बनानेवाला ईश्वर।

कृतागाः (सं० त्रि०) कृतं आगः अपराधो येन, बहुव्री०। अपराधी, दोषी, पापी। (अथर्व १२।५।६०)

कृताग्नि (सं० पु०) राजपुत्रविशेष, राजाके एक लड़के। वह कनकके पुत्र और कृतवीर्यके भ्राता थे।

[कृतवीर्य देखो]

कृताग्निकार्य (सं०) अग्निका कार्य कर चुकनेवाला ब्राह्मण।

कृताङ्क (सं० त्रि०) कृताङ्कश्चिह्नं यस्मिन्, बहुव्री०। चिह्नित, निशान् किया हुवा।

"सहासनमभिप्रेप्सुरुत्कृष्टस्यापकृष्टजः।
कट्यां कृताङ्को निर्वास्यः स्फिचं वास्यावकर्तयेत्॥" (मनु, ८।२८१)

कृताञ्जलि (सं० त्रि०) कृतोऽञ्जलि येन, बहुव्री०। १ बद्धांजलि, हाथ जोड़े हुवा।

"अभिवादयेद्वृद्धांश्च दद्याच्चैवासनं स्वकम्।
कृतांजलिरुपासीत गच्छतः पृष्ठतोऽन्वियात्॥" (मनु, ४।१५४)

(पु०) कृतोऽञ्जलिरिव पत्रसङ्कोचो येन। २ औषधिभेद, वराहक्रान्ता। (स्त्री०) ३ लज्जावतीलता। लाल सूतसे लपेट कर बांधने पर कृतांजलि एकांतरेको जीत लेती है। (भैषज्यरत्नावली)

कृताञ्जलिपुट (सं० त्रि०) कृतोऽञ्जलिपुटो येन, बहुव्री०। अञ्जलिका पुट बनाये हुवा, जो अंजुरी बांधे हो।

"तं दृष्ट्वा प्रणतं पार्श्वे कृताञ्जलिपुटं नृपः।" (रामायण, १।३।३३)

कृतात्मा (सं० त्रि०) कृतः संस्कृत आत्मा अन्तःकरणं येन यस्य वा, बहुव्री०। १ शुद्धचित्त, साफदिल।

"गृहे गृहवतान्नित्यमागच्छन्ति कृतात्मनाम्।"

२ शिक्षित बुद्धि, अच्छे काममें लगे हुवा। ३ कृतकृत्य, पहुंचा हुवा।

"पर्याप्तकामस्य कृतात्मनस्तु इहैव सर्वे प्रविलीयन्ति कामाः।"

(मुण्डकोपनिषत् ३।२।२)

कृतात्यय (सं० पु०) कृतस्य कर्मणोऽत्ययो भोगेनावसानम्। भोग द्वारा कर्मका नाश। सांख्यदर्शनके मतमें एकबार कर्म उत्पन्न होने पर भोग व्यतीत उसका नाश नहीं होता। विवेक ज्ञान उत्पन्न होने पर कर्म समाप्त हो जाता है। उससे दूसरा नूतन कर्म उत्पन्न नहीं होता। किन्तु पूर्वकृत भोगव्यतीत सब नहीं छूटता है। इसीसे मुक्तपुरुषकी अवस्था दो प्रकारकी होती है—जीवन्मुक्ति और विदेहकैवल्य। विवेकज्ञानकी उत्पत्तिसे आत्मा मुक्त होते भी ज्ञानोत्पत्तिसे पहले अर्जित फलारम्भ-रहित कर्मसमूहका नाश होता है। किन्तु प्रारब्ध कर्म बना रहता है। जिस कर्मने फल देना आरम्भ किया है, उसीका नाम प्रारब्ध कर्म है। इसी हेतुसे कर्म फलजन्य देह और तत्स्थित कुष्ठादि विद्यमान रहता है। यथा—

"क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन् दृष्टे परावरे।"

"आभ्यमान्द्यापटुत्वादि भाजनेनेन्द्रियग्रामेण अशनायापिपासाशोकमोहादिभाजनेन च............भुज्यमानानि ज्ञानाविरुद्धान्यारब्धफलानि च पश्यन्नपीत्यादि।" (वेदान्तसार)

कर्मके भेदसे अवसानके लिये मुक्त पुरुषको भी देह धारण करके रहना पड़ता है। अवशेषको कर्मका

अवसान आने पर विदेहकैवल्य मिलता है। इसी कर्मावसानका नाम कृतात्यय है।

कृतानति (सं त्रि०) झुकनेवाला, जो अदबके लिये झुक गया हो।

कृतानुकर (सं० त्रि०) कृतकार्यका अनुकरण करनेवाला, जो कियेको नकल करता है।

कृतानुकूल्य (सं० त्रि०) दयालु, मिहरबान्।

कृतानुकृत (सं० क्लो०) कृतानुकृतमनुकरणम्, ६-तत्। कृतका अनुकरण, कियेको नकल, पहले और पीछे किया हुवा काम।

"...कृतानुकृतकारिणौ। परस्पर वधे वीरौ यतमानौ परन्तपौ।" (रामायण, ६।९१।२८)

कृतानुव्याध (सं० त्रि०) संयुक्त, बंधा हुवा।

कृतानुसार (सं० पु०) नियत अभ्यास, चाल।

कृतान्त (सं० त्रि०) कृतो निष्पादितोऽन्तः समाप्तिर्येन, बहुव्री०। १ समाप्तिकारक, खतम करनेवाला।

"कृतान्त आसीत् समरो देवानां सह दानवैः।" (भागवत, ६।६।१२)

(पु०) पूर्वजन्मार्जित फलोन्मुख कर्म, क़िस्मत।

"क्रूरस्तस्मिन्नपि न सहते सङ्गमं नौ कृतान्तः।" (मेघदूत, २।१०५)

३ यम।

"रज्ज्वेव पुरुषो बद्धा कृतान्तेनोपनीयते।" (रामायण, ५।३४।३)

४ सिद्धान्त।

"सांख्ये कृतान्ते प्रोक्तानि सिद्धये सर्वकर्मणाम्।" (गीता, १८।१३)

५ मृत्यु, मौत। ६ पाप, गुनाह। ७ शनिवार, सनीचरका दिन। ८ देवमात्र। ९ शनि।

"कृतान्ते कुजयोर्वारे यस्य जन्मदिनं भवेत्।" (ज्योतिष)

१० यमदेवताधिष्ठित भरणी नक्षत्र। ११ अङ्कगणनामें दो की संख्या।

कृतान्तजनक (सं० पु०) कृतान्तस्य जनको जन्मदाता, ६-तत्। सूर्य, सूरज।

कृतान्ता (सं० स्त्री०) कृतान्त स्त्रियां टाप्। रेणुका नामक गन्धद्रव्य, एक खुशबूदार चीज।

कृतान्न (सं० क्लो०) कृतं पक्कं तदन्नं च, कर्मधा०। १ पक्कान्न, लड्डू वगैरह।

"वस्त्रं पत्रमलङ्कारं कृतान्नमुदकं स्त्रियः।
योगक्षेमं प्रचारं च न विभाज्यं प्रचक्षते॥" (मनु, ९।२१९)

२ सिद्ध अन्न, पका हुवा खाना। (त्रि०) कृतं सिद्धमन्नं येन, बहुव्री०। ३ अन्नपाक करनेवाला, जिसने खाना पकाया हो।

कृतापकार (सं० त्रि०) १ आहत, जखमी। २ पराभूत, दबा हुवा। ३ अपकार करनेवाला, जो बुराई करता हो।

कृतापकृत (सं० त्रि०) कृतं च तदपकृतं च।

"कृतापकृतादीनां चोपसंख्यानं कर्तव्यम्।" (पा २।१।६० सूत्रका वार्तिक)

आनुकूल्य और प्रातिकूल्यमें किया हुवा, जो किसीके मुताबिक और खिलाफ किया गया हो।

'कृतापकृतमित्यत्रापि असमाप्तिर्गम्यते, यत् कृतं तदेव वापकृतं विरूपं कृतमित्यर्थावगमात्।' (कैयट)

कृतापदान (सं० त्रि०) कृतं अपदानं महत्कार्यं येन, बहुव्री०। महत्कार्य करनेवाला, जो बड़ा काम कर चुका हो।

कृतापराध (सं० त्रि०) कृतोऽपराधो येन, बहु दोषी, मुजरिम।

कृताभय (सं० त्रि०) भयसे बचाया हुवा, जो बेखौफ बना दिया गया हो।

कृताभरण (सं० त्रि०) अलङ्कृत, सजा हुवा।

कृताभिषेक (सं० त्रि०) कृतोऽभिषेकोऽभिषेचनं यस्य, बहुव्री०। १ अभिषेक किया हुवा, जो गद्दीपर बैठ चुका हो। (पु०) २ अभिषिक्त राजपुत्र, गद्दीपर बिठाया हुवा शाहजादा।

कृताभ्यास (सं० त्रि०) अभ्यस्त, महावरा रखनेवाला।

कृताय (सं० पु०) कृतं कृतसंज्ञोऽयः पाशकः। पाशकभेद, किसी किस्मका पांसा।

कृतायास (सं० त्रि०) परिश्रम करनेवाला, जो मिहनत उठा रहा हो।

कृतार्घ (सं० पु०) कृतो दत्तोऽर्घः पूजोपचारविशेषो यस्मै, बहुव्री०। अतीत अवसर्पिणीके १९वें अर्हत्का नाम।

कृतार्तनाद (सं० त्रि०) आर्तनाद करनेवाला, जो दर्दभरी आवाज लगा रहा हो।

कृतार्थ (सं० त्रि०) कृतो निष्पादितोऽर्थः प्रयोजनं येन, बहुव्री०। १ कृतकार्य, अपना काम कर चुकनेवाला। "कृतः कृतार्थोऽस्मि निवर्हितांहसा।" (माघ, १।९)

२ सन्तुष्ट, आसूदा। ३ दक्ष, होशियार। ४ मुक्त, जो आत्माका स्वरूप प्राप्तिरूप महान् कार्य साधित कर चुका हो। (श्वेताश्वतरोपनिषत् २।१४)

कृतार्थता (सं॰ स्त्री॰) सफलता, कामयाबी।

कृतार्थीभूत (सं॰ त्रि॰) कृतार्थ हो चुकनेवाला, जो कामयाब हो चुका हो।

कृतालक (सं॰ पु॰) कृता अलका तन्नामपुरी येन, बहुव्री॰। शिवके एक अनुचर।

कृतालय (सं॰ त्रि॰) कृत आलयो येन। १ कृतावास, अपना मकान बना लेनेवाला।

"यत्र मे दयिता भार्या तनयश्च कृतालयाः।" (रामायण ४।६३।२१)

(पु॰) कृतो गृहीतोऽन्यकृतः स्वकीयत्वेन इत्यर्थः आलयो येन, बहुव्री॰। २ भेक, मेंढ़क।

कृतालोक (सं॰ पु॰) आलोक दिया हुवा, जो रोशन किया गया हो।

कृतावधान (सं॰ त्रि॰) सावधान, होशियार।

कृतावधि (सं॰ त्रि॰) १ नियत, मुकर्रर, माना हुवा। २ सीमाबद्ध, महदूद, घिरा हुवा।

कृतावमर्ष (सं॰ त्रि॰) १ विस्मृत, भूला हुवा। २ असहनशील, बरदाश्त न कर सकनेवाला।

कृतावश्यक (सं॰ पु॰) आवश्यकतानुसार किया हुवा, जो जरूरी समझ कर कर डाला गया हो।

कृतावसक्थिक (सं॰ त्रि॰) कृता अवसक्थिका येन, बहुव्री॰। वस्त्र द्वारा अपने पृष्ठके साथ जानु और जङ्घा बांधनेवाला।

कृतावस्थ (सं॰ त्रि॰) कृता अवस्था स्थितिः राजद्वारेऽभियुक्तरूपावस्थाविशेषो वा यस्य, बहुव्री॰। १ निर्धारित, ठहराया हुवा। २ आहूत, जो अदालतमें तलब किया गया हो।

"पृष्टोऽपव्ययमानस्तु कृतावस्थो धनैषिणा।" (मनु ८।६०)

'कृतावस्थ आहूतोऽभियुक्तो गृहीतप्रतिभूश्च।' (मेधातिथि)

कृतावास (सं॰ पु॰) १ गृह, मकान। (त्रि॰) २ रहनेवाला।

कृताशन (सं॰ त्रि॰) आहार करनेवाला, जो खा चुका हो।

कृतासनपरिग्रह (सं॰ त्रि॰) उपविष्ट, बैठा हुवा।

कृतास्कन्दन (सं॰ त्रि॰) १ आक्रमणकारी, हमला करनेवाला। २ विस्मृत हो जानेवाला, जो याद न रहता हो।

कृतास्त्र (सं॰ त्रि॰) कृतं शिक्षितं अस्त्रं येन, बहुव्री॰। १ अस्त्रशिक्षा करनेवाला, जो हथियार चलाना सीख चुका हो।

"अन्येषां क्षत्रियाणां च कृतास्त्राणामनेकशः।" (भारत, १४।६० अ॰)

२ अस्त्रयुक्त, हथियारबन्द। (पु॰) ३ किसी वीरका नाम।

कृतास्त्रता (सं॰ स्त्री॰) अस्त्रप्रयोगकी निपुणता, हथियार चलानेका हुनर।

कृतास्पद (सं॰ त्रि॰) १ शासित, अधीन। २ सहारा लेनेवाला। ३ रहनेवाला।

कृताह्नक (सं॰ त्रि॰) नित्यनैमित्तिक कर्म कर चुकनेवाला।

कृताहार (सं॰ त्रि॰) भोजन कर चुकनेवाला, जो खा चुका हो।

कृताह्निक (सं॰ त्रि॰) कृतमाह्निकं सन्ध्यावन्दनादिरूपं प्रात्यहिकं कर्म येन, बहुव्री॰। सन्ध्यावन्दनादि कार्य सम्पन्न करनेवाला।

कृताह्वान (सं॰ त्रि॰) आहूत, जो बुलाया गया हो।

कृति (सं॰ स्त्री॰) कृ भावे क्तिन्। १ क्रिया, काम।

"विचित्रा जगतः कृतिर्हरेर्हरिणा वा।" (सिद्धान्तकौमुदी)

२ हिंसा, मार काट। ३ पुरुषप्रयत्न, करनेवालेकी चाल। ४ माया, बाजीगरी।

"कृत्यामाथर्वणीं सृजत् प्रभुः।" (भारत १३।४० अ॰)

५ मायाविनी, डाकिनी। ६ छन्दोविशेष।

"कृतिर्द्वौ द्वादशाक्षरावेकश्चाष्टाक्षरः पादः।" (ऋक् प्रातिशाख्य १६।२७)

यह अनुष्टुप् जातीय छन्द है, इसमें द्वादश अक्षरके दो चरण और अष्टाक्षरका एकचरण लगाते हैं। ७ कोई अन्य छन्द। यह २४ अक्षरके ४ पादमें ग्रथित होता है। ८ वर्गसंख्या, समान अङ्कका घात।

"समोद्विघातः कृतिरुच्यतेऽथ।" (लीलावती)

९ विंशति संख्या, बीसकी अदद। १० हिरण्यकशिपुके पुत्र संह्लादकी पत्नी। (वे॰) ११ अस्त्रभेद, कटारी।

"हस्ते षु खादिश्च कृतिश्च सन्दधे।" (ऋक् १।१६८।३)

(पु॰) १२ विष्णु। (भारत १३।२४०।२१)

कृतिकर (सं० पु०) कृतिसंख्या विंशतिसंख्याः कराः यस्य, बहुव्री०। विंशति हस्तयुक्त रावण।

कृतिमान् (सं० त्रि०) कृतिरस्यास्ति, कृति-मतुप्। १ अनेक सत्कार्य कर चुकनेवाला, जो बहुतसे भले काम कर चुका हो।

"नानादेशकृतिमतां नानादेशनिवासिनाम्।" (भारत १४।६० अ०)

२ वंशस्थापनकर्ता, घराना चलानेवाला।

कृतिरात (सं० पु०) विदेहवंशीय विश्रुतके पुत्र। (भागवत ६।१३।१७ ; विष्णुपुराण, ४।५।२२)

कृतिरोमा (सं० पु०) कृतिरातके एक पुत्रका नाम।

कृतिसाध्यत्व (सं० क्ली०) चेष्टासे सफल होनेकी अवस्था, जिस हालतमें कोशिशसे कामयाब हों।

कृती (सं० त्रि०) कृतं कर्म प्रशस्तमस्यास्ति, कृत-इनि। १ शिक्षित, पढ़ालिखा। २ साधु, सीधा। ३ पुण्यवान्, भला काम करनेवाला। ४ कोई उद्देश्य साधन करनेवाला, जो काम पूरा कर चुका हो।

"न खल्वनिर्जित्य रघुं कृती भवान्।" (रघुवंश, ३।५१)

५ कुशल, होशियार। (पु०) ६ च्यवनके पुत्र, उपरिचर वसुके पिता। भागवत ६।२२।५। ७ सन्नति-मानके एक पुत्र। (भागवत ६।२१।२८)

कृते (सं० अव्य०) कृ-क्विप् एदन्त निपातनम्। निमित्त, वास्ते, लिये।

"संभ्रमं जनयिष्यामि सीतायाः मानुषः कृते।" (रामायण, ३।६८।११)

कृतेयुक (सं० पु०) रौद्राश्वके एक पुत्र।

कृत्त (सं० त्रि०) कृती छेदने क्त। छिन्न, कटा हुआ।

कृत्ति (सं० स्त्री०) कृत्-क्तिन्। १ कृष्णसारादि चर्म। २ त्वक्, खाल। ३ भूर्ज, भोजपत्र।

कृत्तिका (सं० स्त्री०) कृत्-तिकन् किच्च। १ तृतीय नक्षत्र, चन्द्रकी पत्नी। एक दिन भरणी, कृत्तिका, आर्द्रा, अश्लेषा, मघा, उत्तरफल्गुनी, विशाखा, उत्तराषाढ़ा और उत्तरभाद्रपदाने चन्द्रके निकट उपस्थित हो चन्द्र और रोहिणीकी अतिशय भर्त्सना की थी। चन्द्रने नितान्त क्रुद्ध हो अभिशाप दिया—'तुमने हमको कटु वाक्य कहे हैं, इस लिये तुम उग्र और तीक्ष्ण कहलावोगी और तुम्हारे नीके भोग्यदिन भी यात्राके उपयुक्त न होंगे।' चन्द्र द्वारा इस प्रकार अभिशप्त हो सबकी सब पिताके घर चली गयीं। उन्होंने दक्षके सामने पहुंच गिड़ गिड़ा कर कहा था—'पितः! द्विजराज हमें देख नहीं सकते, रोहिणीके साथ आमोद-प्रमोद किया करते हैं। हमको अपनी ओर आते देख वह आंख फेर लेते हैं, फिर घूम कर हमारी ओर नहीं देखते। हमने बहुत दुःखित हो उनका अनुरोध किया था, उन्होंने क्रोध कर शाप दे दिया 'तुम अयात्रिक होगी।' दक्षप्रजापति कन्यावोंके दुःखकी बात सुन बहुत घबरा उठे और चन्द्रके पास जाकर कहने लगे—'वत्स! तुम्हारा अविधेय आचरण सुन हम बहुत दुःखित हुए हैं। तुम इस अविधेय आचरणको छोड़ सबको बराबर समझो। एकको सोहागिनी बना कर सबको दुःखित करना अच्छा नहीं।' द्विजराजने भय और लज्जासे उन्होंकी बात मान ली परन्तु भय और लज्जा कब तक रह सकती है। दक्षने प्रस्थान किया था। कुछ देर पीछे भय लज्जा भी चली गयी। चन्द्र पहलेकी भांति रोहिणीको ही प्यार करते रहे। भरणी प्रभृति रमणियोंने फिर पिताके पास पहुंच कर कहा था—'पितः! हमारा दुरदृष्ट किसी प्रकार दूर नहीं हो सकता। द्विजराज कभी हमको न अपनावेंगे।' दक्षने फिर चन्द्रसे जाकर कहा और उन्होंने 'हां हां' कर दिया, किन्तु कोई फल न निकला। चन्द्र पहलेकी भांति रोहिणीसे ही प्रेमाकाङ्क्षी बने रहे। इसमें विशेषता यह आ गयी कि वह भरणी आदिको पहलेसे भी अधिक बुरा समझने लगे। उन्होंने दक्षके समीप उपस्थित हो कर कहा—'तात! हमें चन्द्रसे अब कोई प्रयोजन नहीं, आप हमें तपस्याका उपदेश प्रदान कीजिये। हम तपस्विनी बनेंगी।' यह सुन कर दक्ष बहुत क्रुद्ध हुए थे। उनकी नाकके अग्रभागसे कामिनी-सम्भोगलोलुप राजयक्ष्मा निकल पड़ा। फिर दक्षने उस रोगसे कहा था—'तुम शीघ्र चन्द्रके शरीरमें प्रवेश करो और चन्द्रको खा डालनेके लिये उनके शरीरमें जा कर रहने लगो।' यक्ष्माने चन्द्रके शरीरमें प्रवेश किया। द्विजराज दिन दिन घटते जाते थे। अन्तको एक कला मात्र बचनेसे देवोंने चन्द्रको यह अवस्था देख

ब्रह्माको बताया। पीछे ब्रह्माके आदेशानुसार देवोंने दक्षके घर पहुंच बहुतसा स्तव कर कहा था—'आप रजनीनायकके प्रति सन्तुष्ट हो उनको दुर्दशा दूर कीजिये। उनकी दुरवस्था देख हम सब दुःखित हुए हैं।' प्रजापति देवोंके स्तवसे सन्तुष्ट हो कहने लगे—'हमने जो शाप दिया है, किसी प्रकार अन्यथा हो नहीं सकता। चन्द्र यदि अपना दुराचार छोड़ सब पत्नियोंके साथ समान व्यवहार करें, तो एक पक्ष क्षय और एक पक्ष वृद्धिलाभ कर सकते हैं।' देवोंने चन्द्रको जाकर सब वृत्तान्त बताया था। दक्षके वाक्यसे चन्द्र एक पक्ष घटने और दूसरे पक्ष बढ़ने लगे। (कालिकापुराण, २०-२१ अ०)

भरणी प्रभृतिके साथ कृत्तिकाको भी चन्द्रने शाप दिया था। इसीसे कृत्तिका नक्षत्र यात्रामें वर्जनीय है। कृत्तिकाने कार्तिकेयको पालन किया था। उसको अधिष्ठात्री देवता अग्नि हैं। कृत्तिकामें ६ तारा हैं।

"क्षुधाधिकः सत्यधनैर्विहीनो वृथाटनोत्पन्नमतिकृतघ्नः।
कठोरवाक् चाहितकर्मकृत् स्यात् चेत् कृत्तिकायां मनुजः प्रसूतः॥"
(कोष्ठीप्रदीप)

कृत्तिका नक्षत्रमें जन्म लेनेसे मनुष्य क्षुधित, मिथ्यावादी, वृथा पर्यटनशील, कृतघ्न, कठोरवादी और अहितकारी होता है। उसके आद्यपादमें जन्मग्रहण करनेसे जात व्यक्तिका मेषराशि और अवशिष्ट पादत्रयमें जन्म लेनेसे उसका वृषराशि होगा।

२ शकट, गाड़ी। ३ मृगचर्म। ४ खाल। ५ भूर्जपत्र।

कृत्तिकाञ्जि (सं० त्रि०) कृत्तिका शकटं अञ्जिश्चिह्नं यस्य, बहुव्री०। शकटचिह्नचिह्नित, गाड़ीका निशान रखनेवाला। अश्वमेधयज्ञमें अश्वके शकटाकार तिलक लगाया जाता है। (शतपथब्राह्मण १३।४।२।४)

कृत्तिकाभव (सं० पु०) कृत्तिकायां कृत्तिकानक्षत्रे भव उत्पत्तिरस्य। चन्द्र, चांद।

कृत्तिकासुत (सं० पु०) कृत्तिकायाः सुतः पुत्रः, ६-तत्। कार्तिकेय। कृत्तिकाने कार्तिकेयको पालन किया था। इससे उनका नाम कृत्तिकासुत भी है। कार्तिकेय देखो।

कृत्तिवास (सं० पु०) कृत्या चर्मणा गजासुरस्येति शेषः वस्ते कटिदेशमाच्छादयति, कृत्ति-वस्-अण्। १ शिव। २ बंगलाभाषाके कोई बहुत पुराने कवि।

"कृत्तिवासी रामायण" या बंगलाभाषाका रामायण उनकी अक्षय कीर्ति है। शान्तिपुरके निकट फुलिया ग्राममें वह रहते थे। उनके पितामहका नाम मुरारी ओझा और पिताका नाम वनमाली था।

कृत्तिवासाः (सं० पु०) कृत्तिर्गजासुरस्य चर्म वासोऽस्य, बहुव्री०। १ शिव। महादेवने गजासुरको मार उसका चर्म परिधान किया था, इसीसे उनका नाम कृत्तिवासाः पड़ गया। काशीखण्डके ६८वें अध्यायमें लिखा है—पार्वतीने जिस समय महादेवसे रत्नेश्वर लिङ्गका माहात्म्य सुना, उसी समय महिषासुरका पुत्र गजासुर अपने बलवीर्यमें प्रमत्त हो महादेवके अनुचरोंको निपीड़न करते करते उन्हींकी ओर चला था। प्रमथ गजासुरके भयसे घबरा कर महादेवके पास पहुंच गये। गजासुरने इससे पहले तपस्या करके ब्रह्मासे यह वर पाया था—कन्दर्पवशीभूत किसी व्यक्तिके हाथ उसका मृत्यु न होगा। वह सारे जगत्‌को कन्दर्पके वशीभूत समझ किसीसे डरता न था। परन्तु जब वह कन्दर्पदर्पहारी महादेवके सामने पहुंचा, तो उन्होंने त्रिशूलसे छेद एकबारगी ही उठा कर उसे शून्यमें टांग दिया। गजासुरने शून्यमें महादेवके मस्तक पर छत्रकी भांति अपना देह फैलाया था। गजासुरने शून्यमें उसी प्रकार रह महादेवकी बड़ी स्तुति की; महादेवने प्रसन्न हो उसे वर देना चाहा था। उस पर गजासुरने प्रार्थना की, 'हे! दिगम्बर महादेव! यदि आप मेरे ऊपर प्रसन्न हैं, तो आप मेरे शरीरका चमड़ा लेकर पहन लीजिये और आजसे अपना नाम कृत्तिवास रखिये।' महादेवने गजासुरकी यह प्रार्थना मान ली। उसी समयसे महादेवको कृत्तिवास कहते हैं।

शुक्लयजुर्वेदमें महादेवका एक नाम कृत्तिवासाः भी देख पड़ता है—

"अवततधन्वा पिनाकावसः कृत्तिवासा अहिंसन्नः शिवोऽतीहि।"
(वाजसनेयसंहिता ३।६१)

'हे रुद्र! त्वं कृत्तिवासाः चर्माम्बरः।' (महीधर)

(स्त्री०) २ दुर्गा।

कृत्नु (सं० त्रि०) १ कर्तनशील, तेज, काटनेवाला।

"स्वप्नीव कृत्नु र्विज आमिनाना।" (ऋक् १।९२।१०)

'कृत्नुः कर्तनशीलः।' (सायण)

कृ-क्नु। कृहनिभ्यां क्नुः उण् ३।३०। २ शिल्पी, कारीगर।

कृत्य (सं० त्रि०) क्रियते, कृ-क्यप् तुगागमश्च। विभाषा कृवृषोः। पा ३।१।१२०। १ कर्तव्य, किया जानेवाला। २ विहित, बहकाया हुआ, उत्कोच (रिशवत) द्वारा वशीभूत अथवा किसीको विनाश करनेके लिये नियुक्त किया जा सकनेवाला।

(पु०) ४ व्याकरणमें तव्य, अनीयर्, तवत्, यत्, क्यप्, ण्यत्, केलिमर् प्रभृति प्रत्यय। वोपदेवने उक्त प्रत्ययकी त्य संज्ञा की है। कृत्य प्रत्यय कर्म और भाववाच्यमें आता, कहीं कहीं कर्तृवाच्यमें भी लग जाता है। ५ अभिचारदेवता, जादूटोनाके देव।

(क्ली०) ६ कार्य, फर्ज।

कृत्यक (सं० पु०) कृत्य स्वार्थे कन्। विद्वेषक, नुकसान करनेवाला।

कृत्यका (सं० स्त्री०) कृत्यक स्त्रियां टाप्। मायाविनी, डाकिनी, चुड़ैल, जानमालका नुकसान करनेवाली औरत।

"लोष्टुभिः पांशुभिश्चैव तृणैः काष्ठैश्च मुष्टितः।
अवश्यमेव हन्याम सार्थस्य किल कृत्यकाम्॥"
(भारत, नलोपाख्यान १३।२९)

कृत्यवान् (सं० त्रि०) कृत्यमस्त्यस्य, कृत्य-मतुप् मस्य वः। १ कृत्ययुक्त, फर्ज अदा करनेवाला।

"तेऽपश्यन् ब्राह्मणं श्याममापन्नं पलितं कृशम्।
कृत्यवन्तमदूरस्थमग्निहोत्रपुरस्कृतम्॥" (भारत, आदिपर्व)

२ कार्यवान्, कामवाला।

कृत्यवित् (सं० त्रि०) कृत्यं कर्तव्यं वेत्ति, कृत्य-विद्-क्विप्। कार्यज्ञ, कामको समझनेवाला।

कृत्यविधि (सं० पु०) कृत्यस्य कर्तव्यस्य विधिर्नियमः, ६-तत्। कर्तव्यकार्यका नियम, कामका तरीका।

कृत्या (सं० स्त्री०) कृ भावे क्यप् तुगागमः टाप् च। १ क्रिया, काम।

"ब्राह्मणस्य रुजः कृत्या जातिरघ्रेयमद्ययोः।" (मनु ११।६८)

२ अभिचारादि कार्य, जादूटोना।

"उत्कृत्यां किरामि।" (वाजसनेयसंहिता ५।२३)

'उत्कृत्या शत्रुभिरभिचरद्भिः सम्पादिता वलगरूपा।' (महीधर)

३ अभिचारकार्यके लिये आराधित कोई देवता, जादूके देव।

"सगीव कृत्या कर्तारमच्छतु।" (अथर्ववेद ५।१४।११)

अभिचार क्रियामें कृत्याकी उत्पत्ति होती है। फिर जिसके विनाशको अभिचार क्रियाका अनुष्ठान किया जाता, उसके मरने पर ही कृत्याका विनाश देखनेमें आता है।

महाभारतमें कृत्या उत्पत्तिकी एक कथा लिखी है। नरपति वृषादर्भि मुनियोंसे दानकी बड़ाई सुन उन्हें प्रतिदिन उडुम्बर फल (गूलर) दिया करते थे। सुवर्ण दानमें अधिक फल है। परन्तु देख सकने पर मुनि उसे ग्रहण न करते। इसीसे उन्होंने फलमें छिपाकर सोना दिया था। मुनियोंने समझने पर वह फल ग्रहण न कर स्थानान्तरको प्रस्थान किया। इस पर वृषादर्भि कुपित हो मुनियोंको विनाश करनेके लिये अभिचार करने लगे। यथाविधि क्रिया समाप्त हुई और एक राक्षसी (कृत्या) लोगोंके देखते देखते निकल पड़ी। नरपतिने कहा—'यातुधानि! तुम अत्रि आदि मुनियोंको मार डालो। किन्तु उन्हें मारनेसे पहले उनके नामका अर्थ हृदयङ्गम कर लिजियेगा।' यातुधानी मुनियोंके पास जा पहुंची। देवराज इन्द्र, राक्षसीको मारनेके लिये एक संन्यासीकी मूर्ति धारण करके पहले ही मुनियोंमें मिल गये थे। राक्षसीने जाकर मुनियोंका परिचय पूछा। मुनियोंने यथाक्रम अपने नामका अर्थ और परिचय बताया था। परन्तु राक्षसी कुछ समझ न सकी, अन्तको उसने संन्यासी वेशधारी इन्द्रके निकट जाकर पूछताछ की। इन्द्रके परिचय देते भी वह कुछ समझ न सकी और कहने लगी—'मैं कुछ नहीं समझी, आप अपना परिचय फिर प्रदान कीजिये।' संन्यासीने कहा, 'तुमने एकबार हमारा परिचय नहीं पाया। इस लिये हम इस त्रिदण्डके आघातसे तुम्हें मार डालेंगे।' ऐसा कह

कर इन्द्रने विदण्ड फटकारा और राक्षसोंको मारा था। उसने भूतल पर गिर प्राण छोड़ दिया।

(भारत, अनुशासन, ८३ अ०)

किसी दूसरे समय महाराज अम्बरीष राज्याश्रम छोड़के यमुनातीर विष्णुकी अर्चना करते थे। उसी समय महामुनि दुर्वासा उनके अतिथि हुए। महाराजने आहारके लिये शुद्ध जल दिया था। इस पर क्रुद्ध हो उन्हें विनाश करनेके लिये अपनी जटासे दुर्वासाने कालानल सदृश प्रज्वलित देहधारिणी असिहस्ता (तलवार हाथमें लिये) कृत्याकी सृष्टि किया।

(भागवत, ९।४ अ०)

विष्णुपुराणमें लिखा है—कृष्णने काशिराज पौण्ड्रकको मार डाला था। इस पर उनके पुत्रने तपस्यासे महादेवको सन्तुष्ट किया और विद्वेषवत् कृष्णको मारनेके लिये उनसे कृत्याको वर मांग लिया। उसी समय दक्षिणाग्निसे ज्वाला करालवदना प्रज्वलित केशकलापा कृत्या निकली थी। उसका ध्यान इस प्रकार किया जाता है—

"क्रोधाज्ज्वलन्तीं ज्वलनं वमन्तीं दृष्टिं दहन्तीं दितिजं ग्रसन्तीम्।
भीमं नदन्तीं प्रणमामि कृत्यां रोदयमाणां क्षुधयोग्रकालीम्॥"

क्रोधसे कृत्याका देह प्रज्वलित हो रहा है। वह अग्निवमन और दृष्टिदाह करती है। उसका नाद भीम है। क्षुधासे वह उच्च चीत्कार करती है।

कृत्याकी शान्ति अथर्ववेद (५।१३।१४) में लिखी है। सुश्रुतमें भी कृत्याकी शान्तिका मन्त्र विद्यमान है।

"ततोऽसुरा एषु लोकेषु कृत्यां वलगानिव खुवते वं चिद्देवानभिभवेमेति।"

(शतपथब्राह्मण ३।५।४।२)

४ कोई नदी। (भारत, भीष्म ९।१८)

कृत्याकृत् (वै० त्रि०) कृत्यां अभिचारक्रियां करोति, कृत्या-कृ-क्विप् तुगागमश्च। अभिचार कार्यकारी, जादूटोना करनेवाला।

"कृत्यां कृत्याकृते देवा निष्कमिव प्रति मुञ्चत।" (अथर्व ५।१४।३)

कृत्यादूषण (सं० पु०) कृत्याया अभिचारक्रियाया दूषणः, कृत्या-दूष-ल्युट्। १ अभिचार कार्यके प्रतिकारके लिये कोई देवक्रिया, जादूटोना रोकनेका एक काम। अथर्ववेद (५।१३।१४) और शतपथ-ब्राह्मण (३।५।४।३) में कृत्याके विनाशकी कथा लिखी है। २ कृत्याविनाशक कोई ओषधि, जादूटोना झूठा करनेवाली कोई जड़ी बूटी। (अथर्व ८।७।१०) ३ अङ्गिरसवंशीय कृत्याविनाशक कोई अङ्गिरा ऋषि। (अथर्व १९।३४।१) कृत्यादूषणी शब्द भी इस अर्थमें व्यवहृत होता है।

कृत्यादूषी (सं० त्रि०) कृत्याया अभिचारक्रियाया दूषी दूषकः, कृत्या-दुष्-इनि। कृत्याविनाशक, जादूटोना न चलने देनेवाला।

"कृत्यादूषिरयं मणिरथो अरातिदूषिः।" (अथर्व २।४।६)

कृत्योन्माद (सं० पु०) कृत्याजात भूतोन्मादरोग, जादूसे पैदा होनेवाला पागलपन।

कृत्रिम (सं० क्ली०) कृ-क्त्रि-मप्। १ विड़लवण। २ काचलवण, कचिया नोन। ३ रसाञ्जन, कोई सुरमा। ४ ज्वरादिनाशक गन्धद्रव्य, बुखार वगैरह मिटानेवाली कोई खुशबूदार चीज। ५ चीनकर्पूर, चीना काफूर। ६ गन्धराज। ७ कस्तूरिका, मुश्क। ८ सिह्लक, एक खुशबूदार चीज। ९ पीतचन्दन। १० द्वादशविध पुत्रान्तर्गत कोई पुत्र।

"सदृशन्तु प्रकुर्याद् यं गुणदोषविचक्षणम्।
पुत्रं पुत्रगुणैर्युक्तं स विज्ञेयश्च कृत्रिमः॥" (मनु ९।१६९)

(त्रि०) ११ मिथ्याभूत, मसनूयी, बनावटी। १२ कार्यजात, कामसे निकला हुवा।

कृत्रिमक (सं० पु०) कृत्रिम स्वार्थे कन्। कृत्रिम देखो।

कृत्रिमधूप (सं० पु०) कृत्रिमेन गन्धद्रव्य विशेषेण कल्पितो धूपः, मध्यपदलो०। नाना सुगन्धि द्रव्यनिर्मित दशाङ्ग धूप, तरह तरहकी खुशबूदार चीजोंका एक धूना। इसका संस्कृत पर्याय—पायस, वृक्षधूप, श्रीवास और सरलद्रव है।

कृत्रिमधूपक (सं० पु०) कृत्रिमधूप स्वार्थे कन्।

कृत्रिमधूप देखो।

कृत्रिमपुत्र (सं० पु०) कृत्रिमश्चासौ पुत्रश्च, कर्मधा०। बारह पुत्रोंमें एक पुत्र, धनके लोभसे बेटा बनाया हुवा अनाथ लड़का। पुत्र देखो।

कृत्रिमपुत्रक (सं० पु०) कृत्रिमपुत्र अल्पार्थे कन्। क्रीड़ापुत्तलिका, खेलकी पुतली।

कृत्रिमभूमि (सं० स्त्री०) कृत्रिमा चासौ भूमिश्च, कर्मधा०। रचितभूमि, कुर्सी।

कृत्रिममित्र (सं० पु०) कृत्रिमं मित्रं इति समासात् पुंलिङ्गत्वम्। मित्रभेद, एक दोस्त। नीतिशास्त्रके मतमें मित्र दो प्रकारका होता है—सहज और कृत्रिम। उसमें जिसके साथ उपकार आदिसे मित्रता करते, उसे कृत्रिम मित्र कहते हैं। कृत्रिम मित्र दोनों प्रकारके मित्रोंमें श्रेष्ठ है।

कृत्रिमरत्न (सं० क्लो०) काच, शीशा।

कृत्रिमवन (सं० क्लो०) कृत्रिमञ्च तद्‌वनञ्च, कर्मधा०। उपवन, बाग, फुलवाड़ी।

कृत्रिमविष (सं० क्लो०) विषदोष, जहरकी बुराई।

कृत्रिमोदासीन (सं० पु०) कृत्रिमश्चासौ उदासीनश्च, कर्मधा०। उदासीनता दिखानेवाला व्यक्ति, जो उदासीनताका ढोंग बतलाता हो।

कृत्वरी (सं० स्त्री०) कृत्वन् स्त्रियां ङीप् रश्चान्तादेशः। कार्यकारिणी, काम करनेवाली।

"महासिवैषः सङ्कृत्वरी बहुम्।" (नैषध)

कृत्वा (वै० त्रि०) करोतेरन्येभ्योऽपि दृश्यन्त इति क्वनिप्। १ कार्यकारी, काम करनेवाला।

"तदिन्द्राव आ भर येना कृत्वने।" (ऋक् ८।२४।२५)

'कृत्वने कर्मणां कर्त्रे।' (सायण)

कृत्वा (सं० अव्य०) कार्यसम्पादनान्तर, काम करनेके पीछे, करके। "कृत्वावकाशे रुचिसंप्रक्त मम।" (भट्टि)

कृत्वी (सं० स्त्री०) व्यासके पुत्र शुकदेवकी कन्या। वह अणुहकी पत्नी और ब्रह्मदत्तकी माता थीं। (भागवत, ९।२१।२५)

कृत्व्य (वै० त्रि०) १ कर्तव्य, किया जानेवाला।

"ध्वर्ता दिवः पचते कृत्व्यः।" (ऋक् ९।७६।१)

२ युद्धकर्मकुशल, लड़नेमें होशियार।

"उतोत् कृत्व्यानां नवाहसा।" (ऋक् ८।२५।२३)

'कृत्व्यानां युद्धकर्मणि कुशलानाम्' (सायण)

कृत्स (सं० क्लो०) कृ-सः क्रिच। सुवश्चिकृत्य विभाः कित्। उण् ३।६६। १ जल, पानी। २ समुदाय, ढेर। ३ कुक्षि, कोख।

कृत्स्न (सं० त्रि०) कृती वेष्टने क्स्नः। कृत्यधूभ्यां क्स्नः। उण् ३।१७। १ सम्पूर्ण, सब।

"वेदः कृत्स्नोऽधिगन्तव्यः सरहस्यो द्विजन्मना।" (मनु २।१६५)

(क्लो०) २ जल, पानी। ३ समुदाय, ढेर।

"तत्रैकस्थं जगत् कृत्स्नं प्रविभक्तमनेकधा।" (गीता, ११।१३)

४ कुक्षि, कोख।

कृत्स्नक (सं० त्रि०) कृत्स्न स्वार्थे कन्। समुदाय, सब।

"तमेवैतत् कृत्स्नकं ब्रह्मवन्धौ।" (शाङ्खायन-श्रौतसूत्र १६।२८।१९)

कृत्स्नवित् (सं० त्रि०) कृत्स्नं वेत्ति, कृत्स्न-विद्-क्विप्। सर्वज्ञ, सब समझनेवाला।

कृत्स्नशः (सं० अव्य०) कृत्स्न वीप्सायां शस्। सम्पूर्णरूपसे, पूरी तौर पर।

"विलोक्यन्ते तदा क्लेशाः संसुप्तस्येव कृत्स्नशः।" (भागवत ३।७।१३)

कृत्स्नहृदय (सं० क्लो०) कृत्स्नञ्च तत् हृदयञ्च, कर्मधा०। समग्र हृदय, पूरा दिल।

"पशुपतिं कृत्स्नहृदयेन।" (शुक्लयजुः ३९।८)

'समग्रहृदयेन पशुपतिं देवं प्रीणामि।' (महीधर)

कृत्स्नायत (वै० त्रि०) कृत्स्नं समग्रमायतं विस्तृतं यस्य। सम्पूर्णरूपसे विस्तृत, पूरी तौरपर फैला हुवा।

"नमः कृत्स्नायतया धावते।" (शुक्लयजुः १६।२०)

कृदन्त (सं० पु०) कृत् प्रत्ययके योगसे निष्पन्न शब्द।

कृदर (सं० क्लो०) कृ-अच् निपातनात् साधुः। कृदरादयश्च। उण् ५।४१। १ गृह, घर। २ उदर, पेट।

"समिद्धो अञ्जन् कृदरं मतीनां।" (शुक्लयजुः २९।१)

'मतीनां कृदरं बुद्धीनामुदरं गर्भम्।' (महीधर)

३ कोई पात्र, किसी किस्मका बरतन। (पु०) ४ कुशूल, कुठिला।

कृधु (वै० त्रि०) अल्प, क्षुद्र, ह्रस्व, छोटा, कम।

"कृध्विति ह्रस्वनाम निकृत्तं भवति।" (निरुक्त ६।३)

"यदस्या अंहुभेद्याः कृधु स्थूलमुपातसत्।" (शुक्लयजुः २३।२८)

कृधुक (सं० त्रि०) कृधु स्वार्थे कन्। अल्प, ह्रस्व, छोटा, कम।

कृधुकर्ण (सं० त्रि०) कृधु ह्रस्वौ कर्णौ यस्य, बहुव्रीं०। ह्रस्वकर्ण, छोटे कानोंवाला। (अथर्व ११।९।७) कृधुह्रस्वः कर्णः कर्णाभ्यन्तरस्थिता ढक्का यस्य। २ कर्णाभ्यन्तरस्थित क्षुद्र ढक्कावाला, जो कम सुनता हो।

"मम स्थानात् कृधुकर्णो भयाते।" (ऋक् १०।२७।५)

कृन्तत्र (वै० क्ली०) १ भाग, हिस्सा, टुकड़ा। (ऋक् १०।१०७।२१) कृती छेदने कत्रन् नुमागमश्च। कृतेर्नुम् च। उण् ३।१०९। २ लाङ्गल, हल।

कृन्तन (सं० क्ली०) कृत्-ल्युट् नुम् च। छेदन, काट।

कृन्तनिका (सं० स्त्री०) कृन्तन-कन् ततः स्त्रियां टाप् इकारागमश्च। छुरिका, चाकू।

कृन्तविचक्षणा (सं० स्त्री०) कृन्त छिन्धि विचक्षण इत्युच्यते यस्यां क्रियायाम्, मयूरव्यं। 'हे विचक्षण! तुम छेदन करो' निर्देश की जानेवाली क्रिया, जिस काममें कहा जाय कि तुम उसे काट डालो।

कृप् (वै० स्त्री०) कृप् कृपतेर्वा कल्पतेर्वा। (निरुक्त ६।८) १ सुन्दर आकृति, अच्छी सूरत। (ऋक् ६।२।६) २ कल्पना, अन्दाज। (यजुः ३।२५)

कृप (सं० पु०) कृप्-अच्। १ देवराज इन्द्रके एक बन्धु। (ऋक् ८।३।१२) २ गौतमके पौत्र, भरद्वाज ऋषिके पुत्र। शरस्तम्बमें उनका जन्म हुवा था। शान्तनुने उन्हें पालन किया। द्रोणाचार्य उनकी भगिनी कृपीको ब्याहे थे। द्रोणाचार्यकी भांति वह भी कौरव और पाण्डवको अस्त्रशिक्षा देते रहे। इसीसे उनका नाम कृपाचार्य हुवा। कुरुक्षेत्रके युद्धमें उन्होंने दुर्योधनका पक्ष अवलम्बन किया था। युद्धके अन्तपर वह पाण्डवकी ओर हो युधिष्ठिरके आश्रयमें रहने लगे। सबसे पीछे उन्होंने परीक्षित्‌को भी धनुर्विद्या सिखायी। (महाभारत)

३ ब्रह्मक्षत्रिय ऐलराजके पुत्र। उनके पुत्रका नाम हरिवर्ष था।

कृपण (सं० त्रि०) कृप्-क्युन्। (कृपेरो लः। पा ८।२।१८) "कृपणादीनां प्रतिषेधो वक्तव्यः।" (महाभाष्य) १ व्यसनप्राप्त, पाजी। २ व्ययकुण्ठ, कंजूस। ३ अदाता, न देनेवाला। (पञ्चतन्त्र २।१५) ४ क्षुद्र, छोटा। ५ कदर्य, खराब। (हेम, ३।३१) (क्ली०) ६ दैन्य, कंजूसी। ७ अनुकम्पा, रहम। (मनु ४।१८६) (पु०) ८ कृमि, कीड़ा।

कृपणकाशी (वै० त्रि०) अपने अभिप्राय-जैसा भाव प्रकाश करनेवाला, जो अपना मतलब जाहिर करता हो। (तैत्तिरीयसंहिता ३।४।७।३)

कृपणता (सं० स्त्री०) व्ययकुण्ठता, कंजूसी।

कृपणधी (सं० त्रि०) कृपणा दीना धीर्बुद्धिर्यस्य, बहुव्री०। क्षुद्रमनाः, छोटे दिलवाला। कृपणबुद्धि प्रभृति शब्दभी उक्त अर्थमें व्यवहृत होते हैं।

कृपणवत्सल (सं० त्रि०) कृपणेषु दीनेषु वत्सलः, ७-तत्। दयालु, गरीबपरवर।

कृपणा (सं० स्त्री०) सविषकीटविशेष, एक जहरीला कीड़ा।

कृपणी (सं० त्रि०) कृपणं दैन्यमस्यास्तीति, कृपण सुखादित्वात् इनि। सुखादिभ्यश्च। पा ५।२।१३१। दैन्यग्रस्त, कंजूस।

कृपण्यु (वै० पु०) स्तोता, स्तव वा गुणगान करनेवाला। (निघण्टु ३।१६)

कृपनील (वै० त्रि०) कर्मस्थान। (ऋक् १०।२०।२)

कृपया (सं० अव्य०) कृपा करके, मिहरबानीसे।

कृपा (सं० स्त्री०) कृप् स्त्रियां भिदादित्वादङ्, सम्प्रसारणं टाप् च। षिद्भिदादिभ्योऽङ्। पा ३।३।१०४। १ दया, मिहरबानी। २ नदीविशेष, कोई दरया। (मार्कण्डेयपुराण ५७।३०)

कृपाकर (सं० त्रि०) कृपां करोति, कृपा-कृ-अच्, उपपद०। दयालु, मिहरबान्।

कृपाचार्य, कृप देखो।

कृपाण (सं० पु०) कृप-आनच्। बाहुलकात् कृपेरप्यानच्। (उज्ज्वलदत्त २।९०) १ खड्ग, तलवार। २ कोई छन्द। वह दण्डक वृत्तका एक भेद है। उसमें ३२ वर्ण लगते हैं। ८ वर्णों पर यति डालते हैं। कृपाणमें ३१वां वर्ण गुरु और ३२वां वर्ण लघु रहता है। यति पर अनुप्रास मिलता और अन्तमें नकार लगता है।

कृपाणक (सं० पु०) कृपाण स्वार्थे कन्। खड्ग, तलवार।

कृपाणिका (सं० स्त्री०) कृपाणक स्त्रियां टाप् अकारस्येकारः। १ छुरिका, चाकू। (हेम, ३।४४८) २ कतरी, कटारी।

कृपाणी (सं० स्त्री०) कृपाण स्त्रियां ङीष्। कृपाणिका देखो।

कृपाद्वैत (सं० पु०) कृपायां कृपाप्रदाने अद्वैतः द्वितीय-रहितः। बुद्धभेद। (त्रिकाण्ड०)

कृपानिधि (सं० पु०) कृपाया निधिराधारः, ६-तत्। दयावान्, मिहरबान्।

कृपापात्र (सं० पु०) १ दयाभाजन, जिस पर मिहरबानी की जाये। २ केवलाद्वैतवाद-कुलिश नामक वेदान्तिक ग्रन्थ बनानेवाले।

कृपायतन (सं० पु०) कृपानिधि, मिहरबान्।

कृपाराम—१ कोई विख्यात संस्कृत ग्रन्थकार। काशीमाहात्म्यसंग्रह, बीजगणितोदाहरण, मुद्राप्रकाश (योग), वास्तुचन्द्रिका, पञ्चपक्षीटीका, मकरन्दोदाहरण, मुहूर्त्ततत्त्वटीका, यन्त्रचिन्तामण्युदाहरण और सर्वार्थचिन्तामणिग्रन्थ कृपाराम रचित हैं।

२ विवादभङ्गार्णव नामक धर्मशास्त्रके अन्यतम संग्रहकार।

३ जयपुरके एक कवि। (१७२० ई०) बनारसके सरदार कविने अपने 'शृङ्गार संग्रहमें' इनकी कविता उद्धृत की है।

४ गोंड़ा जिला नारायणपुरके एक हिन्दी कवि। इन्होंने भागवतको दोहा चौपाइयोंमें अनुवाद किया।

कृपालकवि—हिन्दीके एक पुराने कवि। इन्होंने शृङ्गाररसकी हो कविता लिखी है।

कृपालु (सं० त्रि०) कृपां लाति आदत्ते, कृपा-ला-डु यद्वा कृपा विद्यतेऽस्मिन्, कृपा-आलुच्। दयालु, मिहरबान्।

कृपालुता (सं० स्त्री०) दयालुता, मिहरबानी।

कृपावलोकन (सं० क्ली०) कृपया अवलोकनम्, ३-तत्। कृपादृष्टि, मिहरबानीको नजर।

कृपावान् (सं० त्रि०) कृपा अस्त्यस्य, कृपा-मतुप् मस्य वः। कृपायुक्त, मिहरबान्।

कृपाशङ्कर—ज्योतिषकेदार नामक संस्कृत ग्रन्थ बनानेवाले।

कृपासिन्धु (सं० पु०) कृपायाः सिन्धुरिव। दयासागर, मिहरबान्।

कृपी (सं० स्त्री०) कृप-ङीष्। द्रोणाचार्यकी पत्नी, कृपाचार्यकी भगिनी, अश्वत्थामाकी माता। उनके जन्मका विवरण इस प्रकार लिखा है—

एक समय शरद्वान् ऋषि कठोर तपस्या करते थे। उनकी तपस्यासे इन्द्रने डरकर तपमें विघ्न डालनेके अभिप्रायसे जानपदी नाम्नी अप्सराको उनके निकट भेजा। स्वर्गवेश्याके अपूर्व रूपज्योतिसे ऋषिका चित्त मोहित हो गया। उससे ऋषिका रेतः स्खलित हो शरके गुच्छामें गिरा था। वहां अमिततेजाः महर्षिके रेतःने दो भागमें विभक्त हो एक पुत्र और एक कन्याको उत्पादन किया। महाराज शान्तनु मृगयाको गये थे। उन्होंने उक्त पुत्र और कन्याको देख अपने राजप्रासादमें ले जाकर लालनपालन किया। राजाकी कृपासे वर्धित होनेके कारण हो उनका नाम कृप और कृपी हुवा। (महाभारत)

कृपीट (सं० क्ली०) कृप कीटन् च प्रतिषेधः। कृतॄकृपिभ्यः कीटन्। उण् ४।१८४। १ उदर, पेट। (चरक १०।१८।८) २ जल, पानी। (निघण्टु १।१२) ३ इन्धन, जलानेकी लकड़ी। ४ विपिन, जंगल।

कृपीटपाल (सं० पु०) कृपीट-पालि-अण्। १ समुद्र। २ केनिपात, नावका डांड। ३ पवन, हवा।

कृपीटयोनि (सं० पु०) कृपीटं काष्ठं योनिरुत्पत्तिस्थानमस्य, बहुव्री०। अग्नि, आग।

कृपीपति (सं० पु०) कृप्याः कृपभगिन्याः पतिर्भर्ता, ६-तत्। द्रोणाचार्य।

कृपीसुत (सं० पु०) कृप्याः सुतः पुत्रः, ६-तत्। अश्वत्थामा।

कृमि (सं० पु०) क्रामतीति, क्रम-इन्। क्रमितमिशतिसम्भ्रामत इत्र। उण् ४।१२१। १ कीट, कीड़ा। २ पतङ्गमात्र, उड़नेवाला कोई कीड़ा। ३ पिपीलिका, चींटी। ४ लाक्षा, लाह। ५ ऊर्णनाभ, मकड़ा। ६ गर्दभ, गधा। ७ कृमिल, किरमिजी या हिरमिजी। ८ रोगविशेष, पेटमें पैदा होनेवाले कीड़ोंकी बीमारी।

भुक्तद्रव्य परिपाकके पूर्व आहार; अजीर्णकारी, अनभ्यस्त, विरुद्ध वा मलिन द्रव्यके भोजन, परिश्रमके अभाव; गुरुपाक, अतिशय स्निग्ध एवं शीतल द्रव्यके भोजन, दिवानिद्रा; माषकलाय, पिष्टान्न, विदल, मृणाल, शालुक, केशुर, पर्ण, शाक, सुरा, पिण्याक, चिपिटक और मधुराम्लपानीय सकल द्रव्य द्वारा श्लेष्मा तथा पित्त कुपित होता है। उसीसे कृमिकी

उत्पत्ति है। आमाशय और पक्वाशय ही क्रमिको उत्पत्तिका स्थान है।

सुश्रुतके मतमें देहस्थ क्रमि विंशतिजातीय होता है। पुरीष, रक्त और कफ उसकी उत्पत्तिका कारण है। अयवा, वियवा, किप्या, चिप्या, गण्डुपदा, चुरव और द्विमुख सात प्रकारका क्रमि पुरीषसे उपजता है। वह श्वेतवर्ण और सूक्ष्म रहते तथा मलके निर्गमनपथमें सञ्चरण करते हैं। पुरीषजात उक्त सात प्रकारके क्रमिसे शूल, अग्निमांद्य, पाण्डुता, विष्टम्भ, बलक्षय, लालास्राव, अरुचि, हृद्रोग और मलभेद सकल उपसर्ग उठ खड़ा होता है।

रक्त, गण्डुपद, दीर्घा, दर्भपुष्पा, प्रलूना, चिपिटा और पिपीलिका क्रमिकी उत्पत्तिका कारण कफप्रकोप है। उक्त क्रमि उत्पन्न होनेसे शूल, आटोप, मलभेद, अजीर्ण इत्यादि उपसर्ग उठ खड़े होते हैं।

रोमशा, रोममूर्धा, सपुच्छा, श्यावमण्डल, किक्किश और कुष्ठज छह प्रकारके क्रमिका कारण रक्त है। इनमें प्रथम चार प्रकारके क्रमि धान्यके अङ्कुरकी भांति आकृतिविशिष्ट, शुक्लवर्ण और सूक्ष्म होते हैं। वह मज्जा, नेत्र, तालु तथा श्रोत्रदेशसे निकलते और केश, नख एवं रोम भक्षण करते हैं। इस प्रकारके क्रमि उत्पन्न होनेसे शिरोरोग, हृद्रोग, वमन, प्रतिश्याय प्रभृति उपद्रव उठते हैं। माषकलाय, पिष्टान्न, लवण, गुड़, शाकके आहारसे पुरीषजात क्रमि उत्पन्न होते हैं। मांस, माषकलाय, गुड़, क्षीर, दधि और बहुकालका विकृत इक्षुरस इत्यादि खानेसे कफजात क्रमिकी उत्पत्ति है। विरुद्ध किंवा अजीर्णकारी शाक प्रभृति खा लेनेसे रक्तजन्य क्रमि पड़ जाते हैं। इस रोगमें ज्वर, विवर्णता, शूल, हृद्रोग, अवसाद, भ्रम, अरुचि और अतिसार समस्त उपद्रव उठ खड़े होते हैं। प्रथम त्रयोदश प्रकार क्रमि स्पष्ट दृश्य हैं। केशजात प्रभृति अदृश्य होते हैं। सर्व प्रथमोक्त दो प्रकारके क्रमि असाध्य हैं।

क्रमिरोगकी चिकित्सा—रोगीको प्रथम सुरसादिगणके क्वाथसे पाक किये घृतद्वारा वमन कराना चाहिये। पीछे तीक्ष्ण विरेचन प्रयोग करके यव, कोल, कुलत्थ, सुरसादिगणके क्वाथ, विड़ङ्ग, तैल और सैन्धव लवणके साथ आस्थापन प्रयोग करते हैं। रोगीको अच्छे जलसे स्नान कराके क्रमिनाशक आहार देना चाहिये। अश्वके पुरीषका चूर्ण और वारिभङ्गचूर्ण मधुके साथ पान करनेसे क्रमिका उपशम होता है। छोटे करौंदेका रस मधुके साथ सेवन करनेसे भी क्रमि मर जाते हैं। पुरीषजात वा कफजात क्रमिकी भी चिकित्सा इसी प्रकार करनी पड़ती है।

मस्तक, हृदय, मुख, नासिका और चक्षु सकल स्थानोंमें जो क्रमि उत्पन्न होते हैं, उनके लिये अञ्जन, नस्य तथा अवपीड़न प्रयोग करना चाहिये। रोमजात क्रमिकी चिकित्सा इन्द्रलुप्तके अनुसार की जाती है। दन्तजात क्रमिकी मुखरोगकी भांति और रक्तजात क्रमिकी कुष्ठरोगकी भांति चिकित्सा कर्तव्य है।

क्रमिरोगमें तिक्त और कटु रस भोजन करना हितकर है। दुग्धपान भी प्रशस्त होता है। घनपाक दुग्ध, मांस, घृत, दधि, शाक, अम्ल, मधुर और हिम क्रमिरोगमें परित्याग करते हैं। (सुश्रुत, उत्तरतन्त्र, ५४ अ०)

बेर और छोटे करैलेका मूल गुड़ और घृतके साथ सिद्ध करके खानेसे सकल प्रकारके क्रमि नष्ट हो जाते हैं। (गरुड़पुराण, १९१ अ०) क्रमि-रोगमें क्रमिकालानल, क्रिमि-विलास, लाक्षावटी, विड़ङ्गलौह प्रभृति सेवन करते हैं। शेषको उपकार न होनेसे विड़ङ्ग वा क्रिमिघातिनी गुड़िका प्रयोज्य है। क्रिमि देखो।

युरोपीय चिकित्सकोंके मतमें—अन्त्रमें पांच प्रकारके क्रमि (Vermes or worms) उत्पन्न हो जाते हैं। यथा—बड़े और गोलाकार क्रमि (Ascaris lumbricoides), सूत-जैसे छोटे छोटे कीड़े (Ascaris Vermicularis), सूत-जैसे लम्बे कीड़े (Tricocephalus dispar), लम्बे और फीते-जैसे क्रमि (Tœnia lata) और चौड़े तथा फीते-जैसे कीड़े (Tœnia lata) इन पांच प्रकारके कीड़ोंके बीच (१) बड़े और गोल कीड़े केंचुवे जैसे गोल, १२ इञ्च तक लम्बे और दोनों ओर ढालू होते हैं। वह छोटी आंतमें उपजते, परन्तु कभी कभी पाकाशय, मुख और बड़ी आंतमें भी देख पड़ते हैं। (२) सूत-जैसे छोटे कीड़े ठीक

रुईके धागेके समान होते हैं। प्रधानतः सीधी आंतमें ही उनका वास है। (३) सूत-जैसे बड़े कीड़े २ इञ्च तक लम्बे होते हैं। उनके अगले भागका १-२ अंश घोड़े के बाल-जैसा सीधा रहता है। किन्तु पश्चात्‌भाग अपेक्षाकृत मोटा पड़ता है। वह प्रधानतः सीधी आंतमें ही रहते हैं। (४) फीते-जैसे लम्बे कीड़े कभी कभी १०।१५ फीट तक बढ़ जाते हैं। उनकी दोनों कोरें सीधी होती हैं। मस्तक बड़ा और गोल रहता है। वह २ इञ्चसे ४ इञ्च तक टुकड़े टुकड़े हो बाहर निकलते हैं। (५) चौड़े फीते-जैसे कीड़े बहुत चौड़े और अन्तमें कहे कीड़ेकी भांति लंबे होते हैं। उनका मत्था बहुत छोटा रहता है। वह टुकड़े टुकड़े हो बाहर निकलते हैं। यह पांचों प्रकारके कीड़े मनुष्योंके होते हैं। अन्तमें कहे २ प्रकारके कीड़े प्रायः बालकोंके निकल आते हैं।

पहले प्रकारके कृमिरोगमें पेटकी पीड़ा, भूखका घटना, जी मिचलाना, पेट फूलना, व्यथायुक्त अन्त्र-शूल, कभी कोष्ठबद्ध, कभी भेद, नाकका खुजलाना और दांतोंका दुखना इत्यादि लक्षण प्रकाशित होते हैं। दोनों प्रकारके छोटे कीड़े होनेसे मलद्वारमें बड़ी खुजली चलती है। बच्चोंके यह रोग होनेसे वह सोते सोते मलद्वारको हाथसे खुजलाने लगते हैं। कभी कभी उन्हें आक्षेपयुक्त मूर्छा भी आ जाती है। इस प्रकारके कृमि अज्ञातसार या पहननेके कपड़ेमें निकल पड़ते हैं।

बड़े और गोल कीड़ेके लिये सैण्टोनाइन बढ़िया औषध है। सैण्टोनाइनके साथ उससे ६ गुण बाइकार्बनेट अव सोडा मिलाकर प्रति दिन सवेरे और तिसरे पहर २।३ बार खिलाने पीछे जुलाब देनेसे कीड़े निकल जाते हैं। सैण्टोनाइन-जैसा ही कीड़ोंके बहुत मारता, वैसेही उसके सेवनसे पाण्डु, कामला इत्यादि भयङ्कर रोग लगने की सम्भावना भी रहती है। इसी लिये सैण्टोनाइन व्यवहार करनेसे उसके साथ चीनी मिलाकर दिनमें २।३ बार खाकर जुलाब लेनेसे एक दिनमें ही सब कीड़े निकल जाते हैं। छोटे और सूत-जैसे कीड़े होने पर चीनी पड़े दूधमें २० बूंद टिञ्चर एलोस एटमार मिला कर प्रति दिन ३ बार खिलाना चाहिये। बच्चोंके ऐसी अवस्थामें मलद्वार पर चूनेके पानीकी पिचकारी लगानेसे शीघ्र ही उपकार होता है।

मुष्टियोग—कांजी, ललिताकी पत्तीका जल, चिरायतेका पानी, सोमराज, मधुके साथ विड़ङ्गका चूर्ण, वनवन—यह सब द्रव्य कीड़ोंको बहुत मारते हैं।

कृमिक (सं० पु०) कृमि स्वार्थे कन्। यावादिभ्यः कन्। पा ५।४।२९। १ क्षुद्र कृमि, छोटा कीड़ा। २ काला सांप। (स्त्री०) ३ सुपारी।

कृमिकण्टक (सं० क्ली०) कृमौ कृमिरोगे कण्टकमिव तन्नाशकत्वात्। १ विड़ङ्ग। २ गूलर। ३ चीत।

कृमिकर (सं० पु०) कृमिं करोति, कृमि कृ-ट। एक विषैला कीड़ा।

कृमिकर्ण (सं० पु०) कृमियुक्तः कर्णो यत्र, बहुव्री०। कृमिरोगविशेष, कानकी एक बीमारी। कानके छेदमें किसी प्रकारका कीड़ा लगने या मक्खीका बच्चा पड़नेसे सुननेकी शक्ति रुक जाती है। इसीका नाम कृमिकर्ण है। कृमिकर्ण मिटानेके लिये कीड़े मारनेवाला औषध प्रयोग करना चाहिये। (सुश्रुत)

कृमिका (सं० स्त्री०) १ ग्रन्थिपर्णी। २ राई। ३ सूजन।

कृमिकालानलरस (सं० पु०) कृमिरोगका एक औषध। २ पल विड़ङ्ग, १ पल विषचूर्ण, ४ तोले लौह, २ तोला पारद और २ तोला गन्धक बकरीके दूधमें घोंटनेसे यह औषध बनता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

कृमिकुम्भा (सं० स्त्री०) महाकाललता।

कृमिकोश (सं० पु०) १ माजूफल। इसका संस्कृत पर्याय—संग्राही, पूगफल, पत्रफल, काषायी और अक्षरोधक है। यह संग्राही, तिक्त, रक्तरोधक और ज्वर, अर्श, प्रदर, अतीसार तथा कण्ठामयनिवारक होता है। (वैद्यकचन्द्रिका) २ कीड़ेका कोया।

कृमिकोशोत्थ (सं० त्रि०) कृमिनिर्मितः कोशः, तस्मादुत्तिष्ठति कृमिकोश-उद्-स्था-क। रेशमी कपड़ा।

कृमिकोष्ठक (सं० पु०) घोड़ेका एक रोग। इस रोगमें घोड़ेको भिन्न पुरीष उतरता है। (जयदत्त)

कृमिगुहा (सं० स्त्री०) ककड़ीकी बेल।

कृमिग्रन्थि (सं० पु०) आंखके जोड़का एक रोग।

क्रमिग्रन्थि रोगसे आंखकी पलकों और बिरनियोंमें खुजलानेवाली गांठ निकल आती है। उन्हीं सब जोड़ोंमें उत्पन्न होनेवाले कीड़े वर्त्म और शुक्लके सन्धि-स्थानमें विचरण करके आंखका अभ्यन्तर बिगाड़ देते हैं। (सुश्रुत)

क्रमिघातिनी (सं० स्त्री०) कीड़ा मारनेवाली एक गोली। १ भाग पारा, २ भाग गन्धक, ३ भाग वन-यमानी, ४ भाग विड़ङ्ग, ५ भाग ब्रह्मबीज और ६ भाग तिन्दुके बीज मधुके साथ घोंट कर यह गोली बनायी जाती है। (रसेंद्रचिन्तामणि)

क्रमिघाती (सं० पु०) १ विड़ङ्ग। (त्रि) २ कीड़े मारनेवाला।

क्रमिघ्न (सं० पु०) क्रमिं हन्तीति, क्रमि-हन्-टक् न णत्वम्। १ विड़ङ्ग। २ पियाज। ३ कोलकन्द। ४ पारिभद्र। ५ कड़वी नीम। ६ भिलावा। ७ हलदी। (त्रि०) ८ कीड़े मारनेवाला।

क्रमिघ्नरस (सं० पु०) कीड़ोंका एक औषध। विड़ङ्ग, पलाशबीज, नीमके बीज और रससिन्दूरका चूर्ण बराबर बराबर मिलानेसे यह औषध प्रस्तुत होता है। (रसेंद्रसारसंग्रह)

क्रमिघ्ना (सं० स्त्री०) १ हलदी। २ लाह। ३ विड़ङ्ग। ४ तमाखू। ५ सोमराजी।

क्रमिघ्नी, क्रमिघ्ना देखो।

क्रमिज (सं० क्ली०) क्रमिभ्यो जायते, क्रमि-जन ड। १ अगुरुकाष्ठ। २ लाह। (त्रि०) ३ कीड़ेसे उत्पन्न होनेवाला।

क्रमिजग्ध (सं० क्ली०) क्रमिभिर्जग्धम्, ३-तत्। अगुरु-काष्ठ।

क्रमिजलज (सं० पु०) क्रमिशङ्ख।

क्रमिजा (सं० स्त्री०) १ लाह। २ रेशम। ३ हिर-मिजी। ४ अगर।

क्रमिजाग्ध, क्रमिजा देखो।

क्रमिजित् (सं० क्ली०) विड़ङ्ग।

क्रमिण (सं० त्रि०) क्रमिरस्त्यस्य, क्रमि-न णत्वञ्च। कीड़ेवाला।

क्रमिदन्त, क्रमिदन्तक देखो।

क्रमिदन्तक (सं० पु०) दांतकी पीड़ा।

क्रमिद्रव (सं० पु०) लाह।

क्रमिनाशन (सं० क्ली०) १ विड़ङ्ग। (त्रि०) २ कीड़े मारनेवाला।

क्रमिनाशिनी (सं० स्त्री०) अजमोदा।

क्रमिपर्वत (सं० पु०) क्रमीणां पर्वत इव; वल्मीक, दीमकका पहाड़।

क्रमिपाना (सं० स्त्री०) लाह।

क्रमिपामा (सं० स्त्री०) लाह।

क्रमिफल (सं० पु०) क्रमयः फलेऽस्य, बहुव्री०। गूलर।

क्रमिभक्ष (सं० पु०) क्रमिभिर्भक्ष्यतेऽत्र आधारे अप, ३ तत्। एक नरक। क्रमिभोजन देखो।

क्रमिभोजन (सं० पु०) क्रमिभिर्भुज्यतेऽत्र, भुज आधारे ल्युट्, ३-तत्। एक नरक। भागवतमें लिखा है—

गृहस्थको जो वस्तु मिले, वह सबको बांट देना चाहिये। यही शास्त्रका विधि है। यदि कोई गृही किसी दूसरेको न दे या पञ्चयज्ञका अनुष्ठान न कर केवल स्वयं उसे भोग करता, तो वह गृहस्थ क्रमि-भोजन नामक अति निकृष्ट नरकमें पड़ता है। उस नरकमें लाख योजन लंबा चौड़ा एक क्रमिकुण्ड है। यह व्यक्ति उसी कुण्डमें कीड़ा हो जन्म लेता है। फिर कीड़े सदा इसे काटा करते हैं। लाख वर्ष इसी प्रकार क्रमिकुण्डमें रहना पड़ता है। (भागवत, ५।२६।१८)

क्रमिमक्षिका (सं० स्त्री०) कीड़े-जैसी मक्खी।

क्रमिमत् (सं० त्रि०) क्रमि अस्त्यर्थे मतुप्। तदस्यास्त्यस्मि-न्निति वा मतुप्। पा ५।२।९४। कीड़ेवाला।

क्रमिमुद्गर (सं० पु०) क्रमिरोगका एक रस। १ भाग पारा, २ भाग गन्धक, ३ भाग वनयमानी, ४ भाग विड़ङ्ग, ५ भाग कुचिला या नीमका बीज और ६ भाग पलाशबीज एक साथ कूट पीस कर मिलानेसे यह औषध प्रस्तुत होता है। मात्रा ४ माषा है। (भैषज्यरत्नावली)

क्रमिरिपु (सं० पु०) क्रमीणां रिपुः, ६-तत्। विड़ङ्ग।

क्रमिरोग (सं० पु०) क्रमिभिर्जातो रोगः, मध्यपदलो०। पेटके कीड़ोंसे होनेवाला रोग। क्रमि देखो।

क्रमिल (सं० त्रि०) क्रमिरस्त्यत्र, क्रमि अस्त्यर्थे ल।

१ क्रमियुक्त। (पु०) २ कोई पुरानी बसती। किसीके मतमें वह मुंगेरके पास है।

क्रमिला (सं० स्त्री०) क्रमिं लाति, क्रमि-ला-क-टाप्। बहुत लड़के उत्पन्न करनेवाली स्त्री। २ कीड़ेवाली।

क्रमिलाश्व (सं० पु०) अजमीढ़-वंशके एक राजा। अजमीढ़के पुत्र सुशान्ति, सुशान्तिके पुत्र पुरुजाति, पुरुजातिके पुत्र वाह्याश्व और वाह्याश्वके पञ्चम पुत्र क्रमिलाश्व थे। यह बहुत ही प्रजारञ्जक रहे। (हरिवंश, ३२ अ०)

क्रमिलिका (सं० स्त्री०) लाल रंगका रेशमी कपड़ा।

क्रमिवारिरुह (सं० पु०) क्रमिशङ्ख।

क्रमिविनाशरस (सं० पु०) क्रमिरोगका एक औषध। पारा, गन्धक, अभ्रक, लोहा, मनःशिला, धातकी, त्रिफला, लोध्र, विड़ङ्ग, हरिद्रा और दारुहरिद्राको बराबर बराबर ले अदरकके रसमें तीन बार भावना देना चाहिये। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

क्रमिवृक्ष (सं० पु०) कोषाम्र, कौसंभ।

क्रमिशङ्ख (सं० पु०) क्रमिमिव शङ्खः, उपमितस०। एक शङ्ख। इसका संस्कृत पर्याय—जीवशङ्ख, क्रमिजलज, क्रमिवारिरुह और जन्तुकम्बु है। यह शङ्ख ही-जैसा होता है। शङ्ख देखो।

क्रमिशत्रु (सं० पु०) क्रमीणां शत्रुर्नाशकत्वात्। १ विड़ङ्ग। २ पारिजातवृक्ष।

क्रमिशात्रव (सं० पु०) क्रमीणां शत्रुरेव। १ विड़ङ्ग। २ रक्तपुष्पक। ३ विट्खदिर।

क्रमिशुक्ति (सं० स्त्री०) क्रमिरिव शुक्तिः। १ जलशुक्ति। २ किसी प्रकारकी मछली।

क्रमिशैल (सं० पु०) क्रमिनिर्मितः शैल इव। वल्मीक, दीमककी बांबी।

क्रमिशैलक, क्रमिशैल देखो।

क्रमिसरारी (सं० स्त्री०) एक विषैला कीड़ा। उसके काटनेसे पित्तके रोग लग जाते हैं। (सुश्रुत)

क्रमिसेन (सं० पु०) एक प्रकारका यक्ष।

क्रमिहन्त्री (सं० स्त्री०) विड़ङ्ग।

क्रमिहर (सं० पु०) क्रमिं हरति नाशयतीति, क्रमि-हृ-अच्। १ विड़ङ्ग। २ विड़लवण। ३ काली मिर्च। (त्रि०) ४ कीड़े दूर करनेवाला।

क्रमिहररस (सं० पु०) क्रमिरोगका एक औषध। पारा, गन्धक, इन्द्रयव, यमानी, मनःशिला और पलाशबीज बराबर बराबर हस्तिशोषाफलके रसमें दिन भर घोंटनेसे यह रस बनता है। अनुपान शाल-पर्णीका रस है।

क्रमिहा (सं० पु०) विड़ङ्ग।

क्रमी (सं० त्रि०) कीड़ोंवाला।

क्रमीलक (सं० पु०) जंगली मूंग।

क्रमीश (सं० पु०) क्रमीणां ईशः, ६-तत्। एक नरक।

क्रमुक (सं० पु०) गुवाकवृक्ष, सुपारी। (शतपथब्राह्मण)

क्रवि (सं० पु०) क्रियते वस्त्रादिमनेन, कृ-क्विन्। कृविघृष्विच्छविस्थविकिकीदिवि। उण् ४।५६। कपड़ा बुननेका यन्त्र, करघा।

क्रश (सं० त्रि०) क्रश धातोः क्त निपातनात् साधुः। १ थोड़ा। २ पतला। ३ अधूरा। ४ धीमा। ५ दरिद्र। ६ दुबला। (पु०) ७ विष्णु। ८ कोई ऋषिकुमार। शमीकके पुत्र शृङ्गीसे इनका बन्धुत्व रहा। शृङ्गी देखो। धीरे धीरे यह एक बड़े ऋषि बन गये। इन्होंने महाराज वीरद्युम्नको अनेक उपदेश दिये। (भारत, आदि और शान्ति०) ९ ऐरावतके कुलका कोई नाग।

क्रशक (सं० पु०) क्रश स्वार्थे कन्। क्रश, दुबला पतला।

क्रशगु (सं० त्रि०) क्रशा गौर्यस्य, बहुव्री०। दुबली पतली गाय रखनेवाला।

क्रशता (सं० स्त्री०) क्रशस्य भावः, क्रश भावार्थे तल्। क्षीणता, दुबलापन।

क्रशन (सं० क्ली०) १ सोना। (त्रि०) २ सोनेका बना हुआ।

क्रशनावत् (सं० त्रि०) सोनेके बहुतसे गहने पहने हुवा।

क्रशनी (सं० त्रि०) क्रशन अस्त्यर्थ इनि। सोनेके गहने पहने हुवा।

क्रशर (सं० पु०) क्रशं अल्पमात्रं रातीति, क्रश-रा-क। तिलमिश्रित अन्न, खिचड़ी।

"तिलतण्डुलसंमिश्रः कृशरः परिकीर्त्तितः।" (स्मृति)

ग्रहपूजामें शनैश्चरको क्रशर दिया जाता है।

"शनैश्चराय कृशरम्।" (मत्स्यपुराण)

कृशरा (सं० स्त्री०) कृशर-टाप्। खिचड़ी। चावल और दाल मिलाके नमक, अदरक और हींग डालकर खिचड़ी पकाना चाहिये। दूसरा नियम अन्नादि पाकके समान है। भावप्रकाशके मतमें कृशरा शुक्र तथा बलवृद्धिकर, गुरुपाक, कफ एवं पित्तवर्धक और मल तथा मूत्रवृद्धिकारक है।

कृशरान्न (सं० क्ली०) खिचड़ी।

कृशरोमा (सं० स्त्री०) शूकशिम्बी, खजोहरा।

कृशला (सं० स्त्री०) कृशं कार्श्यं लाति कृश-ला-क-टाप्। शिरके बाल।

कृशशाक, कृशशाख देखो।

कृशशाख (सं० पु०) कृशा शाखा यस्य, बहुव्री०। १ पर्पटक, पापड़ा। (त्रि०) २ छोटी डालोंवाला।

कृशाकु (सं० पु०) उष्णकरण, तपाई।

कृशाक्ष (सं० पु०) कृशे अक्षिणी यस्य, बहुव्री०। जर्णनाभ, मकड़ा।

कृशाङ्गी (सं० स्त्री०) कृशानि अङ्गानि यस्य, बहुव्री०। १ प्रियङ्गुलता। (पु०) २ मकड़ा। (त्रि०) ३ दुबला-पतला।

कृशानु (सं० पु०) कृश्यति तनूकरोति तृणकाष्ठादि वस्तुजातम्, कृश-आनुक्। ऋतन्यञ्जि कृशिभाः। उण् ४।२। १ आग। २ चीत। ३ सोमकी रक्षा करनेवाला। (ऋक् ४।२७।३) ४ वामपार्श्वस्थ रश्मिधारक। (ताण्ड्यब्राह्मण)

कृशानुक (सं० त्रि०) कृशानु अस्त्यर्थे वुन्। गोषदादिभ्यो वुन्। पा ५।२।६२। जलता हुवा।

कृशानुरेता (सं० पु०) कृशानौ अग्नौ पतितं रेतोऽस्य, बहुव्री०। १ महादेव। दुर्गाने शिवका वीर्य धारण न कर सकनेसे आगमें डाल दिया था। उसीसे कार्तिकेयकी उत्पत्ति हुई। कार्तिकेय देखो। (क्ली०) २ आगकी लपट।

कृशाश्व (सं० त्रि०) कृशोऽश्वो यस्य, बहुव्री०। १ छोटा घोड़ा रखनेवाला। (पु०) २ तृणविन्दु-राजवंशके कोई राजर्षि। यह तृणविन्दु-राजवंशीय संयमके पुत्र रहे। इनके छोटे भाईका नाम महादेव था। (भागवत ९।२।३४) ३ दक्षके दामाद। इन्होंने दक्षकी अर्चिः और धीषणा नामकी दो कन्यावोंसे विवाह किया था। इनके औरससे अर्चिके गर्भमें धूमकेश और धीषणाके गर्भमें देवलकी उत्पत्ति हुई। (भागवत, ६।६।२४) रामायणके मतसे—राजर्षि कृशाश्वने दक्षकी जया और सुप्रभा नाम्नी दो कन्यावोंके साथ विवाह किया था। उनकी पहली स्त्री जयाने शस्त्रस्वरूप महातेजस्वी ५० पुत्र प्रसव किये थे। फिर सुप्रभाके गर्भसे संहार नामके शस्त्रस्वरूप ५० पुत्रोंने जन्म लिया। यही जृम्भकास्त्र नामसे प्रसिद्ध हैं। ४ धुन्धुमार-वंशके कोई राजा। (हरिवंश, १२अ०)

कृशाश्वी (सं० पु०) कृशाश्वेन धुन्धुमारवंश्यनृपतिना प्रोक्तं नाट्यसूत्रादिकं अधीते वेत्ति वा, कृशाश्व-इनि कर्मन्दकृशाश्वादिनिः। पा ४।३।१११। नट, नाचने-गानेवाला।

कृशिका (सं० स्त्री०) कृशाएव स्वार्थे कन् इत्वंच। आखुकर्णीलता, एक बेल।

कृशित (सं० त्रि०) दुबला-पतला।

कृशीवल (सं० पु०) काकजङ्घागुल्म, एक झाड़।

कृशोदरी (सं० स्त्री०) कृशं उदरं यस्याः, बहुव्री०। १ पतली कमरकी स्त्री। २ श्वेतसारिवा, अनन्तमूल।

कृश्नोरा—गुजरात प्रान्तके एक प्रकारके नागर ब्राह्मण। इन्हें कृष्णपुरे भी कहते हैं। पहले यह तीनों वेद पढ़ते थे, किन्तु अब तो नाममात्रको ऋग् वेदी, यजुर्वेदी और सामवेदी रह गये।

कृष (सं० पु०) जंगल।

कृषक (सं० त्रि०) कृषति भूमिं यः, कृष क्वुन्। कृषेर्वृद्धिश्चोदीचाम्। उण् २।३८। १ किसान। कृषति भूमिमनेन, कृष करणे क्वुन्। २ हलका फाल। ३ बेल।

कृषर (सं० पु०) कृशर, खिचड़ी।

कृषाण (सं० त्रि०) किसान।

कृषाणु (सं० पु०) कृश-आनुक् पृषोदरादिवत् षत्वम्। आग।

कृषि (सं० स्त्री०) कृष-इन्-किञ्च। १ खेती। यह वैश्योंकी वृत्ति है। खेतीके विषय पर 'कृषिपाराशर' नामके कृषिग्रन्थमें इस प्रकार लिखा है—साधारण मनुष्यसे लेकर ब्रह्मा पर्यन्त सबको कभी कभी कृपये-

पैसेका अभाव हो सकता है। रुपया-पैसा न रहनेसे उन्हें दूसरेसे मांगना और मांगनेके लिये अपना छोटा-पन मानना पड़ता है। जो खेती करता, उसको कभी घाटा नहीं लगता और इसीसे उसको किसीसे मांगना नहीं पड़ता।

"कण्ठे हस्ते च कर्णे च सुवर्णं यदि विद्यते।
उपवासस्तथापि स्यादन्नाभावेन देहिनाम्॥
अन्नं प्राणा बलं चान्नमन्नं सर्वार्थसाधकम्।
देवासुरमनुष्याश्च सर्वे चान्नोपजीविनः॥
अन्नन्तु धान्यसम्भूतं धान्यं कृष्या विना नर।
तस्मात् सर्वं परित्यज्य कृषिं यत्नेन कारयेत्॥
कृषिर्धन्या कृषिर्मेध्या जन्तूनां जीवनं कृषिः।
हिंसादिदोषयुक्तोऽपि मुच्यते ऽतिथिपूजनात्॥" (कृषिपाराशर)

अन्न न रहनेसे जिसके गले, हाथ या कानमें अनेक प्रकार सोनेका गहना रहता, उसे भी उपवास करना पड़ता है। शरीरधारीका अन्न ही प्राण और बल है। ऐसा कोई काम नहीं जो अन्नके अभावमें हो सके। देवता, राक्षस अथवा मनुष्य सभी अकेले अन्नके सहारे जीते हैं। एक पल भी विना अन्नके संसारका काम-काज बन्द हो जाता है। धान्य आदिसे उसकी उत्पत्ति है। खेती न करनेसे धान्य होना असम्भव है। इस लिये दूसरा काम छोड़के खेती करना चाहिये। जन्तुमात्रका जीवन कृषि है। खेती न होनेसे एक पल भी कैसे जी सकते हैं। मुनिलोग कहते हैं कि खेतीके काममें हिंसा आदि दोष रहते भी अतिथि पूजा करनेसे कृषकको मुक्ति मिलती है।

अपने आप खेतीको देखना भालना चाहिये। नौकर या किसी दूसरेको देखभालका काम सौंप कृषकको निश्चिन्त होना उचित नहीं। यथानियम रक्षा करनेसे खेती सोना उपजाती है। किन्तु टाल-मटोल करनेसे बड़ी दरिद्रता आ जाती है। ऋषियोंने कहा है कि पिताको अन्तःपुर, माताको पाकगृह और अपने-जैसे किसी व्यक्तिको गोरक्षाका भार सौंप अपने आपको सदा खेती करना चाहिये। इस उपदेशको कभी भूलना उचित नहीं कि थोड़ी देर भी खेती न देखनेसे बड़ी हानि होती है। सबको अपने सामर्थ्य पर विशेष लक्ष्य लगा खेतीका काम करना पड़ता है। सामर्थ्यसे अधिक काम करनेसे निश्चय कोई फल नहीं मिलता। जो किसान सदा पशुवोंका भला चाहता और यथानियम उन्हें खिलाता पिलाता और सदा आलस्य छोड़के खेती देखने भालनेके लिये खेत पर जाता, उसको खेती कभी नहीं बिगड़ती। (कृषिपाराशर)

कृषितत्त्व अर्थात् किससमय कौन शस्य लगाना अच्छा होता है इत्यादि कृषकको अवश्य ही समझ लेना चाहिये।

"कृषिञ्च तादृशीं कुर्यात् यथा वाहान्न पीड़येत्।
वाहपीड़ाजितं शस्यं गर्हितं सर्वकर्मसु॥
वाहपीड़ाजितं शस्यं फलितञ्च चतुर्गुणम्।
वाहनिश्वासविफलः कृषको निःस्वतां व्रजेत्॥
गुच्छकैर्यवसैर्धूनैस्तथान्यैरपि पोषणैः।
वाहाः क्वचिन्न सीदन्ति सायं प्रातश्च चारणात्॥" (कृषिपाराशर)

वाह अर्थात् गो, महिषको दुःख न दे खेतीका काम करना चाहिये। बैल या भैंसेको दुःख होनेसे वह अनाज सब कामोंके लिये निन्दनीय है। बैल, भैंसा आदि यदि पीड़ित होता, तो अनाज चौगुना होते भी किसान पीड़ित गोमहिषके निश्वाससे निर्धन हो जाता है। नानाविध उपायोंसे गोमहिषकी रक्षा करना चाहिये—जैसे घास आदि खिलाना और मशक आदि निवारणके लिये धूवां करना।

गोशाला बहुत सुदृढ़ बनाना पड़ती है, जिसमें कोई हिंस्र जन्तु गोको मार न सके। सदा गोशालाका गोवर और गोमूत्र उठा डालना चाहिये। गोगृह २५ हाथ लंबा चौड़ा होनेसे गोवृद्धि होती है।* गोगृहमें चावलका धोया हुआ पानी, भातका मांड़, मछलीका पानी, कपास, हड्डी और भूसी न रखना चाहिये। गोशालामें झाड़ू, मूसर, जूठन और बकरी रखनेसे गोविनाश होता है। गोमूत्रसे गोशालाका मैला झाड़ना कभी ठीक नहीं। रवि, मङ्गल अथवा शनिवारके दिन किसीको गोवर देना न चाहिये। इन तीन वारोंमें गोवर देनेसे शीघ्र ही गोविनाश होता है। थूक, मूत, मला, कीचड़ और धूल निकाल

* "पञ्चपञ्चायता शाला गवां वृद्धिकरी मता।" (कृषिपाराशर)

कर सदा गोशाला परिष्कार रखना पड़ती है। सन्ध्याको गोष्ठमें दीपक जलानेसे लक्ष्मी सन्तुष्ट रहती हैं। दीपक न जलानेसे लक्ष्मी उस घरको छोड़कर भाग जाती हैं और गोकुल ऊंचे स्वरमें रोया करते हैं।

"हलमष्टागवं धर्म्यं षड्गवं व्यवसायिनाम्।
चतुर्गवं नृशंसानां द्विगवञ्च गवाशिनाम्॥
नित्यं दशहले लक्ष्मीर्नित्यं पञ्चहले धनम्।
नित्यञ्च त्रिहले भक्तं नित्यमेकहले ऋणम्॥" (कृषिपाराशर)

धर्मशास्त्रके अनुसार ८ बैलोंका हल अच्छा होता है। व्यवसायी लोग ६ बैलोंका भी हल चला सकते हैं। जो ४ बैलका हल चलाता उसे नृशंस और जो २ बैलके हलसे खेती करता उसे गोखादक समझना चाहिये। जिसके १० हल चलते, उसके घरमें लक्ष्मी सदा टिकी रहती है। ५ हल चलनेसे धन मिलता और ३ हलसे केवल अन्नका सुभीता पड़ता है। १ हल चलानेसे कोई फल नहीं निकलता, केवल ऋणमें फंसना पड़ता है।

कार्तिक मासमें लगुड़ प्रतिपत् तिथिको गोपूजा करना पड़ती है। ग्वालोंको इस दिन कंधेमें श्यामालता बांध तेल और हलदी लगा नहाना और कुङ्कुम तथा चन्दनसे शरीर सजाना चाहिये। फिर एक बड़े बैलको नाना प्रकारके गहनों और कपड़ोंसे सजा नाचते गाते बजाते गांवमें सर्वत्र घुमाते हैं। कार्तिक मासके पहले दिन गोके शरीरमें हलदी और कुङ्कुम मिलाकर तेल लगाना चाहिये। उसी दिन तपाया हुवा लोहा आदि गोके अङ्गमें प्रदान करना उचित है। गोकी पूंछके बालोंका अगला भाग भी काट डालते हैं। यह काम करनेसे वर्षमें गोको कोई विघ्न नहीं होता। इसका नाम गोपर्व है। पूर्वफल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वभाद्रपद, धनिष्ठा और कृत्तिका नक्षत्रमें गोयात्रा तथा गोप्रवेश अच्छा होता है। उत्तरफल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तरभाद्रपद, रोहिणी, पुष्या, श्रवणा, हस्ता और चित्रा नक्षत्रमें, सिनीवाली, अमावास्या, चतुर्दशी तथा अष्टमी तिथिको गोयात्रा और गोप्रवेश निषिद्ध है। निषिद्ध नक्षत्र और तिथिमें गोयात्रा किंवा गोप्रवेश करानेसे गो तथा गृहस्थका विनाश होता है।

माघ मासमें गोमयकूटको भक्तिपूर्वक अर्चन करके फावड़ेसे उठाना चाहिये। फिर सब गोबरको धूपमें सुखा करके भली भांति चूरकर डालते हैं। यही गोबर फाल्गुन मासको प्रत्येक क्यारीमें गड्ढा खोदके गाड़ देना चाहिये। पीछे बीज बोनेका समय आने पर गड्ढेसे यह खाद निकाल कर खेतमें डालते हैं। खाद न देनेसे खेती बिगड़ जाती है।*

हल बनानेमें ८ वस्तु लगते हैं—हरस, जुवा, खूंटा, निर्योल, रस्सी, अड्डचल्ल, शोल और पच्चनी। हरस ५ हाथ और खूंटा २॥ हाथ लम्बा बनाना पड़ता है। निर्योल आध हाथ और जुवा कानके समान बनाते हैं। निर्योलपाशिका १२ अंगुल और शोलकी मुंड़े हाथकी बराबर रखना चाहिये। पच्चनीको बांससे और उसका अगला भाग लोहेसे निर्माण किया जाता है। इसकी नाप १२॥ मूठ या ९ मूठ है। आबन्ध (जोतकी रस्सी) गोल और १५ अंगुल रहता है। जुवा ४ हाथ और उसकी रस्सी ५ हाथ और फाल १ हाथ ५ अंगुल या १ ही हाथका बनाना पड़ता है। २१ शलाकाका बना विन्धक और ९ हाथकी मई खेतीके लिये अच्छी होती है। कृषकको यत्नपूर्वक सब सामग्री बहुत दृढ़ रखना चाहिये। यह सामग्री अच्छी न होनेसे खेतीके समय पदपद पर विघ्न पड़ सकता है।

स्वाती, उत्तरफल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तरभाद्रपद, रोहिणी, मृगशिरा, मूला, पुनर्वसु, पुष्या किंवा श्रवणा नक्षत्रमें शुक्र, सोम, वृहस्पति तथा बुधवारको हल चलाना अच्छा है। मङ्गल, रवि किंवा शनिवारको खेतीका काम आरम्भ करनेसे राजोपद्रव उठ

---

* माघे गोमयकूटन्तु संपूज्य श्रद्धयान्वितः।
सारं शुभदिनं प्राप्य कुद्दालैस्तोलयेत्ततः॥
रौद्रे: संशोष्य तत्सर्वं कृत्वा गुण्डकरूपिणम्।
फाल्गुने प्रति केदारे गर्तं कृत्वा निधापयेत्॥
ततो वपनकाले तु कुर्यात् सारविमोचनम्।
विना सारेण यद्धान्यं वर्धते न फलत्यपि॥" (कृषिपाराशर)

खड़ा होता है। दशमी, एकादशी, द्वितीया, पञ्चमी, त्रयोदशी, तृतीया और सप्तमी तिथि खेतीके लिये अच्छी है। प्रतिपत्‌को शस्यक्षय, द्वादशीको वध तथा बन्धनका भय, षष्ठीको विघ्न और अमावस्याको खेतीका काम लगानेसे किसान मर जाता है। अष्टमीको गोका विनाश और नवमीको शस्यक्षय होता है। चतुर्थीको कृषिकर्म आरम्भ करनेसे कीड़े सब अनाज बिगाड़ देते हैं और चतुर्दशीको शस्य विनष्ट होता है। वृष, मीन, कन्या, मिथुन, धनु और वृश्चिक लग्न कृषि-कर्मके लिये प्रशस्त हैं। मेषमें पशुनाश, कर्कटमें मेघभय, सिंहमें चोरभय, कुम्भमें सर्पभय, मकरमें शस्यक्षय और तुला लग्नमें कृषिकर्म आरम्भ करनेसे कृषकका प्राण नाश होता है। चन्द्र संयुक्त रवि शुद्ध होनेसे हल चलाया जाता है। हल चलानेसे पहले दो खण्ड शुक्ल वस्त्र, शुक्लपुष्प तथा गन्धादिसे हलयुक्त पृथिवी, पृथु और प्रजापतिको अर्चना करते हैं। अग्निका प्रदक्षिण करके बहुत प्रकारका दान और उसकी ठीक दक्षिणा भी देना चाहिये। फालके अगले भागमें सोना लगा और मधु चढ़ा नागके वामपार्श्वमें हल चलाना चाहिये। अग्नि, द्विज और देवताको यथाविधि पूजा करके वासव, व्यास, पृथु, राम और पराशरको स्मरण करते हैं। काला, लाल वा कालालाल बैल ही हलमें जोतनेको अच्छा होता है। दोनों बैलोंका मुंह और पार्श्व मक्खन या घी लगा कर प्रतिदिन भली भांति धुलवा डालना चाहिये। कृषक उत्तरमुखी हो निम्न लिखित मन्त्र पढ़के इन्द्रको अर्घ्य प्रदान करते हैं—

"शुक्लपुष्पसमायुक्तं दधिचौरसमन्वितम्।
सुवृष्टिं कुरु देवेश! गृहाणार्घ्यं शचीपते॥"

फिर विष्टर पर बैठ और दोनों घुटने भूमिसे लगा इन्द्रको नमस्कार करना चाहिये।

वह बैल हलके कामका नहीं, जिसका कटिदेश बहुत मोटा हो, जिसकी पूंछ या कान कटा हो अथवा जिसका रङ्ग बहुत उजला हो। किसान और बैल नीरोग न होनेसे हल चलाना अनुचित है। पराशरके मतमें एक, तीन या पांच बार खेतको जोतना चाहिये। हलकी रेखा काटना ठीक नहीं। एक रेखा जयकरी होती है। फिर तीन रेखायें अर्थसाधनी और पांच बहुत अनाज देनेवाली हैं। हल चलनेके समय कूर्म (वास्तु) उखड़ जानेसे गृहस्थ मरता या अग्नि लगता है। फाल उखड़ या टूट जानेसे देश छुटता, हल टूटनेसे स्वामी मरता, ईश टूटनेसे किसानका प्राण जाता और जोत टूटनेसे किसानके भाईका मृत्यु आता है। इसी प्रकार शौल टूटनेसे बैल मरता, जोत टूटनेसे रोग लगता तथा अनाज कम पड़ता और किसान गिर जानेसे राजमन्दिरमें कष्ट मिलता है। हल जोतते समय एकाएक एक बैलके बोलनेसे चौगुना अनाज उपजता है। रीतिके अनुसार हल न लगानेसे क्या फल मिलता है? खेतीमें हल चलाना ही बड़ा काम है।

"मृत्सुवर्णसमा माघे कुम्भे रजतसन्निभा।
चैत्रे ताम्रसमा ख्याता धान्यतुल्या च माधवे॥
ज्यैष्ठे मृदेव विज्ञेया आषाढ़े कर्दमाह्वया:।
निष्फला कर्कटे चैव हलैरुत्पाटिता तु या॥"

माघ मास ही जोतनेके लिये अच्छा समय है। माघ मासमें मट्टी सोने-जैसी होती है, सहजमें ही खेती की जा सकती है और चौगुना अनाज उपजता है। फाल्गुनमें कर्षण करनेसे मिट्टी चान्दी-जैसी निकलती है। चैत्रमें वह तांबे-जैसी रहती है। वैशाख मास अधम काल है। इसमें खेती करनेसे धान्यके समान फल होता अर्थात् बहुत थोड़ा अनाज उपजता है। ज्यैष्ठ और आषाढ़में खेती करनेसे अनाजका न होना ही सम्भव है। यदि होता भी है, तो मट्टी और कीचड़के बराबर। श्रावण मासमें कर्षण करनेसे निश्चय कोई फल नहीं मिलता।

माघ या फाल्गुन मास सब प्रकारका बीज संग्रह करना चाहिये। बीजको इकट्ठा करके भली भांति धूपमें सुखाते हैं। उसे अच्छे प्रकार सुखाके ओसमें रख देना चाहिये। फिर पुटक बनाके बीजका निधान शोधन करते हैं। बीज निधान मिला रहनेसे फल बिगड़ जाता है। बीज एक जातीय होनेसे अच्छा फल लगता है। इसलिये यत्नके साथ ऐसा ही बीज संग्रह करना चाहिये। सुदृढ़ पुटक बनाके उसमें निकले हुए अंकुरेको तोड़ डालते हैं। बीजका अंकुवा

न तोड़नेसे खेती घास फूससे भर जाती है। दीमककी बांबीके पास, गोशालामें अथवा जिस घरमें वन्ध्या या प्रसूता स्त्री रहती हो, कभी बीज न रखना चाहिये। जूठे मुंह, रजस्वला, वन्ध्या या गुर्विणी स्त्रीको बीज छूने नहीं देते। घी, तेल, मट्ठा, नमक या दीपककी भूल कर भी बीजके ऊपर रखना न चाहिये। बीज अच्छा होनेसे ही खेती आशानुरूप फल देती है। बीज पर विशेष ध्यान रखना पड़ता है।

"वपनं रोपणञ्चैव बीजं स्यादुभयात्मकम्।
वपनं मर्दनिर्मुक्तं रोपणं समर्दं विदुः॥"

बीजकी दो प्रक्रिया हैं—बोना और लगाना। बीज बोनेसे फिर कोई विघ्न होनेकी सम्भावना नहीं। किन्तु लगानेमें अड़चन पड़ सकती है। खेतको यथानियम बनाके उसमें बीज डालना पड़ता है। धीरे धीरे पौदा बढ़ने पर यथानियम घास फूस निकाल डालते, किन्तु पौदेको दूसरे स्थान पर नहीं ले जाते। फल पकनेके समय तक वह उसी स्थान पर रहता है। इसीका नाम वपन या बोना है। लगानेमें भी इसी प्रकार बीज डालते हैं। परन्तु पौदा बढ़नेसे उसे उखाड़ कर दूसरे स्थान पर लगा देते हैं।

वैशाख मास ही बीज बोनेका अच्छा समय है। फिर ज्येष्ठ मध्यम, आषाढ़ अधम और श्रावण मास अधमाधम अर्थात् बहुत ही निकृष्ट काल है। लगानेको जो बीज बोया जाता, उसके लिये आषाढ़ उत्तम, श्रावण मध्यम और भाद्रपद अधम समय होता है। उत्तरफल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तरभाद्रपद, मूला, धनिष्ठा, रोहिणी, हस्ता और रेवती कई नक्षत्र बीज डालनेके लिये अच्छे हैं। पूर्वाषाढ़ा, पूर्वफल्गुनी, पूर्वभाद्रपद, विशाखा, भरणी, आर्द्रा, स्वाती और अश्लेषा बीज बोनेके लिये मध्यम नक्षत्र हैं। मङ्गल और शनिवारको बीज डालनेसे चूहे और टिड्डोंका डर रहता है। रिक्तातिथि वा क्षीण चन्द्रमें खेत न बोना चाहिये। ज्येष्ठ मासके अन्तिम ३॥ दिन और आषाढ़के प्रथम ३॥ दिन—७ दिन बीज वपनके लिये निषिद्ध हैं। अम्बुवाची* दिनोंमें बीज डालना बहुत मना है।

"हिमेन वारिणा सिक्तं बीजं शान्तमनाः शुचिः।
इन्द्रं चित्ते समाधाय स्वयं मुष्टित्रयं वपेत्॥"

जिस दिन बोनेको होता, उसके पहले दिन रातको ओसका पानी न मिलनेसे परिष्कार ठण्डे पानीमें बीजको भिंगोकर रखना पड़ता है। दूसरे दिन सवेरे पवित्र और शान्तचित्त हो मन ही मन इन्द्रको ध्यान कर अपने आप ३ मूठ बोना चाहिये। इस प्रकार धान्यका पुण्याह समापन करके हृष्टचित्तसे पूर्वमुखी हो निम्नलिखित मन्त्र पढ़के प्रणाम करते हैं—

"वसुधे हेमगर्भासि बहुशस्यफलप्रदे।
वसुपूजिते! नमस्तुभ्यं वसुपूर्णास्तु मे कृषिः॥
रोपयिष्यामि धान्यानां प्रचबीजानि प्राकृषि।
सुखा भवन्तु कृषका धनधान्यसमृद्धिभिः॥
वासवो नित्यवर्षी स्यान्नित्यवर्षास्तु तोयदाः।
शस्यसम्पत्तयः सर्वाः सफलाः सन्तु नीरुजाः॥"

वसुधाको नमस्कार करके किसानोंको घी, खीर आदि बहुत प्रकारके उपहारोंसे भोजन कराना चाहिये। ऐसा अनुष्ठान करनेसे खेती नहीं बिगड़ती।

"बीजस्य वपनं कुला मदिकां तत्र दापयेत्।
विना मदिकदानेन शस्यजन्म न जायते॥"

खेतमें बीज डालकर उस पर मई देना पड़ती है। बोने पीछे मई न देनेसे अनाज नहीं उपजता है। पहले कहे नियमसे बीज बोनेपर जब धान्यका पेड़ होगा, तब उसे उखाड़ कर यथास्थान लगाना पड़ेगा। किन्तु धानकी जड़ दृढ़ होनेसे उसे उखाड़ कर दूसरे स्थान पर लगाना न चाहिये।

"हस्तान्तरं कर्कटे च सिंहे हस्तार्धमेव च।
रोपणं सर्वधान्यानां कन्यायां चतुरङ्गुलम्॥"

श्रावण मासमें १ हाथ, भाद्रमें आध हाथ और आश्विनमें ४ अंगुलके अन्तरसे पौदा लगाते हैं। सब प्रकारके धान्यरोपणका यही विधान है।

* आषाढ़ कृष्ण १०, ११, १२ और १३ तिथिका नाम अम्बुवाची है।

"आषाढ़े श्रावणे चैव धान्यमाकर्षयेद् बुधः।
अनाकृष्टं तु यद्धान्यं यथावीजं तथैव हि॥
भाद्रे च कर्षयेद् धान्यमदृष्टी कृषितत्परः।
भाद्रे चार्धफलप्राप्तिः फलाशा नैव चाश्विने॥
न विलभूमौ धान्यानां कुर्यात् कर्षणरोपणे।
न च सारप्रदानन्तु तृणमात्रन्तु शोधयेत्॥"

धानको न कपटनेसे अच्छी फसल नहीं होती। और धानका पौदा भी नहीं बढ़ता। इसी लिये आषाढ़ या श्रावण मासमें धान कपटना पड़ता है। पानी न बरसने पर भाद्र मासमें भी कर्षण कर सकते हैं। भाद्रमासमें कपटनेसे आधे फलकी आशा की जा सकती है। परन्तु, आश्विनमें कर्षण करनेसे फिर फलकी आशा कहां? जो नियम दिखाया गया है, उसे ऊंची भूमि पर करना चाहिये। नीची भूमिमें धान बोना बोते, लगाते नहीं। नीची भूमिमें खाद देना या कपटना भी अच्छा नहीं। धान बोकर केवल घास फूस निकाल डालना चाहिये।

"निष्पन्नमपि यद्धान्यं अकृत्वा तृणवर्जितम्।
न सम्यक् फलमाप्नोति तृणचीणकृषिर्भवेत्॥
कुबीरभाद्रयोर्मध्ये यद्धान्यं निस्तृणं भवेत्।
तृणैरपि तु सम्पूर्णं तद्धान्यं द्विगुणं भवेत्॥
द्विवारमाश्विने मासि कृत्वा धान्यं तु निस्तृणम्।
अथ पाकविहीनं हि धान्यं फलति माषवत्॥
तस्मात् सर्वप्रयत्नेन निस्तृणां कारयेत् कृषिम्।
निस्तृणा हि कृषाणानां कृषिः कामदुघा भवेत्॥"

धान्य यथानियम निकलते भी यदि निराया नहीं जाता, तो अच्छा फल कहां आता है? घास धीरे धीरे बढ़कर धानको बिगाड़ देती है। श्रावण और भाद्र मासके बीच धान निराना चाहिये। पहले बहुत घास फूस रहते भी पीछे धान दूना बढ़ जाता है। आश्विन मास दो बार निरा देनेसे धान उड़द जैसा फलता है। किसानको यत्नसे खेती निराना चाहिये। खेती निस्तृण होनेसे अभीष्ट फल देती है।

"नीरुजार्थं हि धान्यानां जलं भाद्रे विमोचयेत्।
मूलमात्रन्तु संस्थाप्य कारयेज्जलमोचणम्॥
भाद्रे च जलसम्पूर्णं धान्यं विविधबाधकैः।
अपीड़ितं कृषाणानां न धत्ते फलमुत्तमम्॥"

भाद्रमास धानमें पानी भरा रहनेसे वह नाना विघ्नोंसे नष्ट हो जाता है। इसलिये धानका यह रोग छुड़ानेके लिये पानी निकाल डालना चाहिये। परन्तु सब पानी नहीं निकालते। खेतमें इतना पानी रहना चाहिये जिसमें धानकी जड़ डूबी रहे। एकबारगी ही पानी न रहनेसे धानका पेड़ सूख कर मर जाता है।

धान्यका व्याधिनाशक मन्त्र यह है—

"ओं सिद्धिः गुरुपादेभ्यो नमः। स्वस्ति हिमगिरिशिखरात् शङ्खकुन्देन्दुधवलशिखरतटात् नन्दनवनसङ्काशात् परमेश्वरपरमभट्टारक महाराजाधिराज श्रीमद्रामभद्रपादाः विजयिनः समुद्रतटावस्थितनानाद्देशागतवानरकोटिलचाग्रगण्यं खरतरनखरातितीक्ष्णहस्तं ऊर्ध्वलाङ्गूलं लीलागमनसमुद्भूतवातवेगावधूतपर्वतशतं परचक्रप्रमथनं पवनसुतं श्रीहनुमन्तमाज्ञापयन्ति अमुकग्रामे अमुकगोत्रस्य श्रीमतोऽमुकस्य अखण्डक्षेत्रे रात। भोम्माऽदा गान्धिया भोम्भी गान्धी द्रोढ़ी पाण्डरमुखी महिषामुण्डी धूलिशङ्का मण्डूका इत्यादयः सर्वे शस्योपघातिनो यदित्वदीय वचनेन न त्यजन्ति तदा तान् वज्रलाङ्गूलेन ताड़यिष्यसीति। ओं आं श्रीं ह्रीं नमः।"

बेलके कांटेसे केलेके पत्ते पर यह मन्त्र भक्तिभावसे लिखना चाहिये। रविवारको बाल खोलकर खेतके ईशान कोणमें अनाजकी मञ्जरीसे इसको बांध देते हैं। इस अनुष्ठानसे धान्यका सब विघ्न छूट जाता है।

मतान्तरमें धान्यका व्याधिनाशक मन्त्र इस प्रकार है—

"ओं सिद्धिः गुरुचरणेभ्यो नमः। श्रीरामचन्द्रचरणेभ्यो नमः। स्वस्ति हिमगिरिशिखरात् शंखकुन्देन्दुधवलशिलातटात् नन्दनवनसंकाशात् परमेश्वर परमभट्टारक महाराजाधिराज श्रीमद्रामभद्रपादाः कुशलिनः, समुद्रतटावस्थितनानादेशागतवानरकोटिलचाग्रगण्यं खरतरनखरातितीक्ष्णहस्तं ऊर्ध्वलाङ्गूलं लीलागमनसमुद्भूतवातवेगावधूतपर्वतशतं परचक्रप्रमथनं पवनसुतं श्रीमन्तं हनुमन्तमाज्ञापयन्त्यादः। अमुकग्रामे अमुकगोत्रस्य श्रीअमुकस्य अखण्डक्षेत्रे भोम्भा भोम्भी पाण्डरमुखी गान्धी लशिष्काादिरोगच्छलेन त्रिपुटी नाम राक्षसी सपुत्रानादाय विविधविघ्नं समाचरन्त्यवतिष्ठते। इदं मदीयशासनलिखनमवगम्य तां पापराक्षसीं सपुत्रबान्धवां वज्रदण्डाधिकलाङ्गूलदण्डैः खरतरनखैश्च विदार्य दक्षिणसमुद्रे लवणाम्बुधौ खण्डशः प्रक्षिपेहि। यद्यत्र त्वयाक्षणमपि विलम्ब्यते तर्हि त्वं केशरिणा पित्रा पवनेन मात्रा चाञ्जनया शप्तोऽसीत्यनाथा नाहं प्रभुर्न त्वं भृत्य इति ओं ह्रां ह्रीं ह्रः।"

इस मन्त्रको महावरसे लिख कर अनाजमें बांधने पर कीड़े आदि मर जाते हैं।

"आश्विने कार्तिके चैव धान्यस्य जलरक्षणम्।
न कृतं येन मूर्खेण तस्य का शस्यवासना॥"

आश्विन और कार्तिक मास धानका पानी बचाना पड़ता है। जो मूर्ख किसान पानीको नहीं बचाता, वह अनाज होनेकी बात क्यों उठाता है?

"घटप्रवेश-संक्रान्त्यां रोपयेत् नलं तथा।
केदारैशानकोणे च सदलं कृषकः शुचिः॥
गन्धैः पुष्पैश्च धूपैश्च शुक्लवस्त्रै विशेषतः।
पूजयित्वा नलं तत्र पूजयेद्धान्यवृक्षकान्॥
दधिभक्तञ्च नैवेद्यं पायसञ्च विशेषतः।
ततोदद्यात् प्रयत्नेन तालाष्टिशस्यमेव च॥"

कार्तिक संक्रान्तिको खेतके ईशानकोणमें एक पत्तेवाला नल लगाना चाहिये। किसान पवित्रभावमें गन्धपुष्पादि द्वारा नलकी पूजा करके धानके पेड़को पूजते हैं। दही, भात, नैवेद्य और पायस (खीर) चढ़ानेका विधान है।

नलरोपणका मन्त्र यह है—

"बालकास्तरुणा वृद्धाः सन्ति ये धान्यवृक्षकाः।
ज्येष्ठाश्चापि कनिष्ठा वा सगदा निर्गदाश्च ये॥
आज्ञया भीमसेनस्य रामस्य च पृथ्वोपरि।
ताड़िता नलदण्डेन सर्वे स्युः समपुष्पिताः॥
समपुष्पत्वमासाद्य फलस्त्वाशु च निर्भरम्।
सुस्था भवन्तु कृषका धनधान्यसमन्विताः॥"

अग्रहायणमास मूठ लेना पड़ती है। मूठ न लेकर नियमके विरुद्ध धान काटनेसे किसान अड़चनमें आ जाता है। अग्रहायण मासके शुभ दिनको खेत पर पहुंच भक्तिके साथ गन्धपुष्प आदिसे धान्यवृक्षका पूजा करके ईशानकोणमें २॥ मूठि धान्य छेदन करना चाहिये। वहां २॥ मूठ धान अगला भाग सामनेकी ओर करके मस्थे पर उठाकर रख लेते हैं। फिर किसीसे कोई बात न कर घर आ बड़े स्थान पर धान्य रखना और गन्धपुष्प आदिसे उसकी पूजा करना चाहिये। कार्तिक और पौष मासमें मुष्टिग्रहण एक बारगी ही निषिद्ध है। आर्द्रा, मघा, मृगशिरा, पुष्या, हस्ता, स्वाती, उत्तरात्रय, मूला और श्रवणा नक्षत्र ये धान काटनेके लिये अच्छे होते हैं। वैधृति, व्यतीपात, भद्रा, रिक्ता, मङ्गल, शनि और बुधवारको मूठ न लेना चाहिये।

"कृत्वा तु खलकं मार्गे समं गोमयलेपितम्।
रोपणीया प्रयत्नेन तत्र मेधिः शुभेऽहनि॥"

अग्रहायण मास खलयान बराबर करके गोबरसे लीपते हैं। उसमें किसी शुभ दिनको यत्नके साथ खंबा गाड़ना पड़ता है।

बड़, सप्तपर्ण, गाम्भारी, सेमर, गूलर या किसी दूसरे दूधिया पेड़का खंबा बनाना चाहिये। इसके न मिलने पर स्त्रीनामधारी किसी वृक्षका खंबा बन सकता है। धानके अग्रभाग, घास, मर्कट (एक अनाज) नोम या सरसोंसे खंबेको बांधना चाहिये। उसमें एक पताका भी लगाना पड़ती है। फिर भक्तिभावसे चन्दन-फूलसे उसको पूजते हैं। यह अनुष्ठान करनेसे अनाज बढ़ जाता है।

"पौषे मेधिनं चारोप्या क्रूराहे श्रवणे तथा।
शस्यवृद्धिकरी मार्गे पौषे शस्यक्षयङ्करी॥
कपित्थबिल्ववंशानां तृणराज्ञां तथैव च।
मेधिः कार्या परैर्नैव यदीच्छेदात्मनः शुभम्॥"

पौष मास, क्रूर दिन और श्रवणा नक्षत्र खंबा गाड़नेके लिये अच्छा नहीं। अग्रहायणमें मेधि आरोपणसे शस्य बढ़ता और पौषमें आरोपण करनेसे घटता है। कैथ, बेल, बांस, नारियल और ताड़के पेड़का खंबा लगाना अशुभ होता है।

"अखण्डिते ततो धान्ये पौषे मासि शुभे दिने।
पुष्पयात्रां जनाः कुर्युरन्योन्यं च वसन्निधौ॥"

पौष मासमें धान काटनेसे पहले सबको मिलकर एक दूसरेके खेतोंके पास पुष्पयात्रा करना चाहिये। यह शुभ दिन और शुभ नक्षत्रमें की जाती है।

खीर, मछली, मांस, निरामिष, दही, दूध, घी, नानाप्रकारके फल, मीठा पकवान आदि बहुतसे उपहारोंके साथ केलेके पत्ते पर भोजन करना चाहिये। भोजनके पीछे चन्दन, केशर आदि सुगन्धि द्रव्य परस्पर एक दूसरेके अङ्गमें लगाते हैं। लौंग, कपूर आदि डालकर मुंह भर पान खाना चाहिये। उस दिन सबको नये कपड़े पहनने पड़ते हैं। फिर पुष्पमाल्य,

पुष्पाभरण बनाके शचीपतिको भक्तिके साथ नमस्कार करते हैं। गा बजा और नाच कर महोत्सव करना चाहिये। हर्षितचित्तसे हाथ जोड़ निम्नलिखित मन्त्र पढ़ते हैं।

"शिवे चाखण्डिते धान्ये तव देवप्रसादतः।
पुष्यन्तु मिलिताः सर्वे शस्यानि शुभकारकाः॥
मनसा कर्मणा वाचा ये चास्माकं विरोधिनः।
ते सर्वे प्रशमं यान्तु पुष्ययात्रा प्रसादतः॥
धनाद्वृद्धिर्यशोवृद्धिः प्रवृद्धिः पुत्रदारयोः।
राजसम्मानवृद्धिश्च गवां वृद्धिस्तथैव च॥
मन्त्रशासनवृद्धिश्च लक्ष्मीवृद्धिरहर्निशम्।
अस्माकमस्तु सततं यावत् पूर्णो न वत्सरः॥"

यह सकल आमोद खेतके निकट करना पड़ते हैं। उसके पीछे सबको प्रसन्नचित्त अपने अपने घर जाना चाहिये। उस दिन फिर आहार करना ठीक नहीं।

"पुष्ययात्रां न कुर्वन्ति ये जना धनगर्विताः।
न विघ्नोपशमस्तेषां कुतस्तद्वत्सरे सुखम्॥"

जो धनके अभिमानमें पुष्ययात्रा नहीं करते, उनके विघ्न बढ़ते ही रहते हैं, उस संवत्सरमें सुखकी सम्भावना कहां?

पौष मास धान्य काटना पड़ता है। काटनेके दो तीन दिन पीछे धान्यमर्दन करना चाहिये। पौषमें इस धानको काममें लानेका निषेध है। प्राण जाते भी पूसमें नया धान उठाना न चाहिये।

"मापनं सर्वशस्यानां वामावर्तं न कीर्तितम्।
धान्यानां दक्षिणावर्तं मापनं क्षयकारकम्।
वामावर्तं न सुखदं धान्यवृद्धिकरं परम्॥"

सब अनाज बाईं ओरसे नापना पड़ता है। दाहनी ओरसे धान तौलने पर क्षय होता है। वामावर्तसे नापने पर सुख और शस्य बढ़ता है।

"द्वादशाङ्गुलकेनैव आढ़कः परिकीर्तितः।
श्लेष्मातकाम्रपुन्नागकृतमाढ़कमुत्तमम्।
कपित्थपर्कटीनिम्बजनितं दैन्यवर्धकम्॥"

आढ़क १२ अंगुलका होता है। श्लेष्मातक, आम और नागकेशरका आढ़क अच्छा है। कैथे, पाकर और नीमके आढ़कसे दरिद्रता बढ़ती है।

हस्ता, स्वाति, पुष्या, रेवती, रोहिणी, भरणी, मूला, तीनों उत्तरा, मृगशिरा, मघा तथा पुनर्वसु नक्षत्र और बृहस्पति, सोम किंवा शुक्रवारको, तथा अष्टम स्थानमें क्रूर ग्रह न रहनेसे धान्यस्थापन करना चाहिये।

ऊपर वही बातें बतायी गयी हैं, जो कृषिपाराशर नामक कृषिशास्त्रमें लिखी हैं।

वराहमिहिरने भी बृहत्संहितामें कृषिके सम्बन्ध पर लिखा है—कृषी कर्म करनेवाले ब्राह्मणोंको खेतीका काम पकड़ लेना चाहिये। अङ्गहीन, दुर्बल, भूखे, प्यासे और थके मांदे बैलसे खेती करना अच्छा नहीं। दिनको दोपहर तक खेतीका काम करना चाहिये। फिर नहा धोकर भोजन करते हैं। बुरे बैलसे खेती करना मना है। किसानको बड़े यत्नके साथ अच्छे बैल और बछड़े इकट्ठे करने चाहिये।

तीसरे या चौथे दिन बैल नाथा जाता है। बहुत दुबला या मोटा बैल होनेसे नाथना न चाहिये। शीशम या खैरके पेड़से १२ अंगुलकी मेख बना नासिका भेद किया जाता है। दक्षिणद्वार गोशाला प्रशस्त है। उत्तरको गोगृहका द्वार रखना न चाहिये। पशुशालामें प्रवेशके समय यथाविधि देवता और ब्राह्मणोंकी पूजा करते हैं।

हल ४८ अंगुलका बनाना पड़ता है। उसका नीचेवाला भाग १६ अंगुल, ऊपरीभाग २६ अंगुल और वेधस्थान ६ अंगुल रहता है। उरःस्थान ८ अंगुल, वेधके ऊपरकी ग्रीवा १० अंगुल और उसके ऊपर हस्तग्राह (मुठिया) ८ अंगुलका बनाते हैं। उसके नीचे ४ अंगुलका प्रतिहार और ४ अंगुलका वेध रखा जाता है। प्रतिहार अच्छा बनानेमें वेध ३ अंगुल और उरःस्थान ५ अंगुल ही रखना चाहिये। शिरोभाग करतलकी भांति फैला रहेगा। उरःस्थानका विस्तार ८ अंगुल होता है। बन्धके बाहर प्रतिहार २६ अंगुल रखते हैं। लोहपाल्यका सुतीक्ष्ण हामादि विदारक प्रतिहार करना उचित है। नीम, बेल या दूसरे दूधिया पेड़का हल नहीं बनाते। खुले समहस्त प्रमाण ईशा बनाना पड़ती है। उसमें ४॥ हाथके पीछे वेध रखना चाहिये। बहेड़े और पाकर-

की ईषा बनानेसे शस्य और गृहोंका विनाश होता है। बैलकी नापके अनुसार ईषा नीची ऊंची रखनी पड़ती है। जोत ४ हाथकी और स्कन्धस्थानमें अर्ध चन्द्राकृति बनाते हैं। मेढ़ासींगी, कदम, साल और धव वृक्षकी १० अङ्गुल सम्या (सामी) वेधके बाहर तैयार करना चाहिये। इसीके बराबर और इससे १० अंगुल पर प्रयाली बनायी जाती है। बांसकी ४ हाथ चाबुक-जैसी छोटा बड़ी गांठोंवाली छड़ी लेना चाहिये; उसका अग्रभाग लोहेसे जो जैसा बनाते हैं। जो प्रमाण और प्रणाली कही गयी है, उसका उलटना न चाहिये। खेती इस प्रकार की जाती है, जिसमें बैलोंको दुःख न हो।

गृही ब्राह्मणको शुभदिन शुभ नक्षत्रमें मातृश्राद्ध करके द्रव्य, काल और देशके अनुसार खेतीका काम लगाना चाहिये। एक घेरा खींचके पुष्प, धूप, दीप आदिसे उसके ऊपर इन्द्र, अश्विनीकुमार, मरुत् प्रभृतिकी पूजा करते हैं। पीछे पानी इकट्ठा करनेके लिये सीता, कुमारी और अनुमतिकी पूजा की जाती है। देवताके नाममें 'नमः स्वाहा' लगाके पूजा करनी पड़ती है। बैलोंको भी भक्तिभावसे नाना प्रकारके आहार देना चाहिये। सीर और फालके अगले भागको सोने या चांदीसे घिस कर मधु और घृत लगाया जाता है। अग्नि और वृषकी प्रदक्षिण करके हल चलाना चाहिये। पराशर ऋषिको स्मरण करके "कल्याणाय नमः" मन्त्र पढ़ सीताके ऊपर फूल चढ़ाते है। "सीतां युञ्जीत" इत्यादि मन्त्र द्वारा हल चलाना पड़ता है। दही, दूर्वा, आतप चावल, फूल, शमीपत्र आदिसे सीताकी पूजा करना चाहिये। फिर सात धान्य प्रोक्षित करके पूर्वमुखी हो क्षेत्रमें अर्पण करते हैं। पीछे खेत जोतना चाहिये। ब्राह्मण, यव और तिलको छोड़के यदि दूसरे अनाजके लिये हल चलाता, तो पितृलोक तथा देवतागण उससे बहुत बिगड़ जाते है। देवता, मेघ, भूमि, हल और पुरुष व्यापार कृषिका कारण है। इनमें एकका भी अभाव होनेसे कृषि नहीं बनती। शालि, शण, कपास, भांटा आदि सबका बीज लगाना चाहिये। जो सब प्रकारकी खेती कर सकता, उसे कभी घाटा नहीं लगता। अमावस्याको कर्षण करना नितान्त निषिद्ध है।

"सीते सौम्ये कुमारि त्वं देवि देवार्चिते प्रिये।
सत्कृताहि यथा सिद्धा तथा मे वरदा भव॥"

इसी मन्त्रसे सीताको नमस्कार करना पड़ता है। सीताका स्थापन, हनूमान्‌का नामोच्चारण और अभ्युक्षण न करनेसे सब अनाज बिगड़ जाता है। बोने, काटने, खेतमें जाने, हल चलाने और धान लाने आदिका भी यही नियम समझना चाहिये। देवस्थान, उद्यान (बाग), लड़ाईका स्थान, गोचारणस्थान, सीमा, श्मशानभूमि, पेड़के तल, यूपके निखनके स्थान, पथ और न जोतनेयोग्य स्थानमें हल नहीं चलाते। ऊपर तथा मैले और कांकड़ पत्थरसे भरे स्थान और नदीके रेतीले तटको जोतना मना है, न माननेसे वंशनाश होता है। प्रवञ्चना करके दूसरेकी भूमिमें खेती करनेसे किसान अनन्त नरकमें पड़ता है।

कृषिपाराशर और बृहत्संहितामें जो नियम लिखे हैं, पहले भारतमें नानास्थानों पर उन्हींके अनुसार खेती की जाती थी। आजकल वह समय नहीं। अब बहुतसे लोग नई प्रणालीसे खेती करते हैं। खेतीके सुभीतेके लिये आजकल नानाप्रकारके यन्त्र बनाये गये हैं। अनेक स्थानोंमें मोटरसे खेत जोते जाते हैं। भारतके स्थानविशेषमें इस प्रणालीने प्रवेश किया है। किन्तु दुःखकी बात है कि पहले नियमसे जैसा फल मिलता था, वैसा अब नहीं देख पड़ता।

कृषिक (सं॰ पु॰) कृष्यतेऽनेन, कृष-किकन्। इषिकृषिभ्यः किकन्। उण् २।४०। १ फाल। (त्रि॰) २ किसान।

कृषिकर्म (सं॰ क्ली॰) १ खेतीका काम। (त्रि॰) २ खेती करनेवाला।

कृषिजीवि (सं॰ त्रि॰) कृष्या जीवति, कृष-जीव-णिनि। किसान, खेतीके सहारे जीनेवाला।

कृषिलोह (सं॰ क्ली॰) मुण्डलोह, एक प्रकारका लोहा।

कृषी (सं॰ त्रि॰) कृषिरस्य अस्ति, कृषि-इनि। किसान, जिसके खेती हो।

कृषीवल (सं॰ त्रि॰) कृषिरस्यास्ति वृत्तित्वेन, कृषि-वलच् दीर्घश्च। रजःकृष्यासुति परिषदो वलच्। पा ५।२।११२ किसान। (महाभारत २।५।७७)

कृष्कर (सं॰ पु॰) कृषं करोति सृष्टिस्थितिप्रभृति-शक्तियोगात् सम्पादयति, कृष-कृ-टक् पृषोदरादित्वात् निपातः। शिव।

कृष्ट (सं॰ त्रि॰) कृष कर्मणि क्त। १ कर्षित, जोता हुवा। (मनु ११।१४४) इसका संस्कृत पर्याय—सीत्य और हल्य है। (क्ली॰) २ कर्षण, जोताई।

कृष्टज (सं॰ त्रि॰) कृष्टे जायते, कृष्ट-जन-ड। जोतनेसे उत्पन्न होनेवाला। (मनु ११।१४५)

कृष्टपच्य (सं॰ त्रि॰) कृष्टे स्वयमेव पच्यते, कृष्ट-पच्-क्यप्। राजसूयसूर्यमृषोद्यरुच्यकुप्यकृष्टपच्याव्यथ्याः। पा ३।१।११४। व्रीहिधान्य, एक अनाज। (भागवत ३।१२।१८)

कृष्टपाक्य (सं॰ त्रि॰) कृष्टे पच्यते, कृष्ट-पच्-ण्यत्। चस्य कुत्वम्। चजोः कुघिण्ण्यतोः। पा ७।३।५२। व्रीहि धान्य।

कृष्टराधि (वै॰ त्रि॰) खेतीके काममें उन्नति पा चुकने-वाला।

कृष्टि (सं॰ पु॰) कृष् कर्तरि बाहुलकात् क्तिच् ति वा। १ पण्डित, विद्वान्। २ मनुष्य आदि। (ऋक् ६।१८।२) (स्त्री॰) ३ कर्षण, जोताई। ४ आकर्षण, खिंचाई।

कृष्टिप्रा (वै॰ त्रि॰) कृष्टीनां मनुष्याणां पूरकः, पृ-घच् निपातः। मनुष्यपूरक। (ऋक् ४।३८।९)

कृष्टिमा (सं॰ पु॰) कृष्टि भावे इमनिच्। १ पाण्डित्य, पण्डिताई। २ मनुष्यत्व, आदमीयत।

कृष्टिहा (सं॰ त्रि॰) कृष्टिं हन्ति, कृष्टि-हन्-क्विप्। १ मनुष्यको मारनेवाला योद्धा। २ पण्डितको बिगाड़ने-वाला अभिमान। (ऋक् ९.७१।२)

कृष्टोप्त (सं॰ त्रि॰) कृष्टे कृतकर्षणे क्षेत्रे उप्तः, ७-तत्। जोते हुए खेतमें लगाया हुवा। (भारत, आदि॰ ९८ अ॰)

कृष्ट्योजाः (वै॰ त्रि॰) अतिशय बलशाली। (ऋक् ७।८२।९)

कृष्ण (सं॰ पु॰) कृष नक् णत्वञ्च बाहुलकात् वर्णं विनापि नक् प्रत्ययः। कृषेर्वर्णे। उण् ३।४। अथवा कृष्ण-वर्णयोगात् कृष्ण अर्शआदित्यदच्। भवेत् कृष्णोऽर्जुने हरौ। (उज्ज्वलदत्त) पुराणकारोंने कृष्ण नामकी इस प्रकार निरुक्ति की है—

> "कृषिर्भूवाचकः शब्दः णश्च निर्वृतिवाचकः।
> तयोरैक्यात् परब्रह्म कृष्ण इत्यभिधीयते॥" (श्रीधरस्वामी)

कृषि शब्दका अर्थ संसार और ण शब्दका अर्थ निर्वृति अर्थात् छुड़ाना है। इन दोनों शब्दोंमें पञ्चमी-तत्पुरुष समास लगता है। इसलिये जो संसारसे जीवोंको छुड़ाता, वही परब्रह्म कृष्ण कहलाता है।

१ विष्णुका कोई अवतार। कोई कोई कहता कि भगवान्‌के १० अवतारोंमें कृष्णका अवतार आठवां है। किन्तु बहुतसे स्थलों पर बलरामको ही अष्टम अवतार लिखा गया है। भागवतके मतमें कृष्ण भगवान्‌का बीसवां अवतार है। (भागवत १।३।२३) कृष्णका वृत्तान्त महाभारत, हरिवंश, विष्णुपुराण, पद्मपुराण, ब्रह्मपुराण, ब्रह्माण्डपुराण, श्रीमद्भागवत, देवीभागवत, गरुड़-पुराण, ब्रह्मवैवर्तपुराण, स्कन्दपुराण, कूर्मपुराण, आदि पुराणों और दूसरे पुराने ग्रन्थोंमें मिलता है। लगभग सभी ग्रन्थकारोंने अपनी बातको रखा है, दूसरेके मत पर विशेष ध्यान नहीं दिया। इसी लिये अकेले कृष्ण-का जीवन-वृत्तान्त नाना भावोंमें वर्णित हुवा है।

ऊपर लिखे ग्रन्थोंके बीच विष्णुपुराणमें कृष्णकी बाल्यक्रीड़ा आदि सभी वर्णित हैं। भागवत और हरिवंशमें भी उसीकी वर्णना है, किन्तु कुछ अधिक मात्रामें। विष्णुपुराणके मतमें वसुदेवने भोज-वंशके देवककी कन्या देवकीका पाणिग्रहण किया था। विवाहके पीछे वसुदेव देवकीको जब घर लिये जाते थे, कंसने प्रीतिके साथ उनका रथ हांका। उसी समय देववाणी हुई कि इस देवकीके आठवें गर्भसे जन्म लेनेवाला पुत्र ही कंसको मारेगा। कंस डर गये और आपद मिटानेके लिये तत्क्षण तलवार उठाकर देवकीका मारनेके लिये खड़े हो गये। वसुदेवने उन्हें बहुत कह सुनके ठण्ढा किया और यह मान लिया कि देवकीके गर्भसे जितने सन्तान होंगे, उन्हें वह अपने आप कंसके पास पहुंचा देंगे। इससे अन्तको देवकीके प्राण बच गये। किन्तु कंसने वसुदेव और देवकीको कारागारमें डाल दिया।

इधर पृथिवी दुरात्मा दैत्योंके अत्याचारसे अत्यन्त पीड़ित हो सुमेरुपर्वत पर देवगणकी सभामें जा पहुंची। उसने गिड़ गिड़ा कर कहा था—'हे सुरगण! आप मेरे लिये कोई उपाय कीजिये। दुरात्माओंका

अत्याचार अब मैं सह नहीं सकती।' देवगणके हृदयमें यह बात बैठ गयी। परन्तु वह यह स्थिर कर न सके, क्या उपाय किया जायेगा। इसी लिये सब बात पितामहसे कहना पड़ी। ब्रह्मा बहुत सोच विचार देवगणके साथ क्षीरोदसमुद्रके तीर जा पहुंचे और मन लगा कर विष्णुकी स्तुति करने लगे। भगवान् विष्णुने ब्रह्माके स्तवसे सन्तुष्ट हो कहा था—'बतलाइये, आप लोग किस लिये आये हैं। हम निश्चय आपकी मनस्कामना पूरी करेंगे।' ब्रह्माने उत्तर दिया—'आप जगत्के पालनेवाले हैं। हम लोग दुःखमें पड़नेसे ही आपके पास आ पहुंचते हैं। आज कल पृथिवी भारसे बहुत आक्रान्त हो रसातल जाना चाहती है। आप इस पृथिवीको बचाइये।' विष्णुने ब्रह्माकी बात पर सन्तुष्ट हो अपने शिरसे दो बाल उखाड़े थे। उनमें एक काला और दूसरा उजला था। दोनों बाल ले उन्होंने देवगणको सम्बोधन कर कहा—'हमारे यह दोनों बाल पृथिवी पर अवतीर्ण हो समस्त भार हरण करेंगे। तुम भी पृथिवी पर अवतीर्ण हो इनको साथ दो।' इस लिये विष्णुपुराणके मतमें स्थिर हुवा कि कृष्ण विष्णुका पूर्ण अवतार नहीं, एक केशमात्र हैं श्रीधरस्वामीने इस बातको असङ्गत समझ कर कहा है—'यह ठीक नहीं कि विष्णुका केश कृष्णरूपमें अवतीर्ण हुवा था। फिर भी बाल लेकर विष्णुने जो कहा था, उसका तात्पर्य यह है कि उक्त सामान्य कार्य उनका केश भी कर सकता था। कृष्ण विष्णुका पूर्णावतार है।' (विष्णुपुराण ५।१।६०की टीका)

कृष्णावतार होनेसे पहले देवकी और वसुदेवने विष्णुकी आराधना कर प्रार्थना की थी कि विष्णु उनके पुत्ररूपसे जन्मग्रहण करते। विष्णुने भी इस बातको मान लिया था। देवकीने अष्टम गर्भमें कृष्ण को धारण किया। भाद्र-मासकी कृष्णाष्टमी रात्रिको दूसरे पहर कृष्णने जन्म लिया था। अपने जन्मके समय यह चतुर्भुज रहे। वसुदेवने ईश्वरावतार समझ उनकी बहुत प्रकारसे स्तुति की। वसुदेवने कंसके भयसे भीत हो प्रार्थना करते हुए कहा कि वह अपनी दिव्य मूर्ति छिपा लेते। इस पर कृष्णने उसे गोपन कर मनुष्यकी मूर्ति धारण की। कृष्णके कहनेसे वसुदेव उन्हें लेकर व्रज पहुंचे। जिस दिन कृष्णने जन्म लिया, उसी दिन गोपराज नन्दकी पत्नीने भी एक कन्या को प्रसव किया था। महामाया देवगणकी स्तुति और विष्णुकी अनुमतिसे नन्दरानीके गर्भमें प्रादुर्भूत हुईं। उनकी मायासे सभी व्रजवासी गहरी नींदमें अचेतन थे। वसुदेव अपने बालकको यशोदाके पास छोड़ उनकी कन्याको लेकर मथुरा लौट आये। यथासमय कंसने कन्याको वध करनेके लिये पत्थर पर पटका था। परन्तु वह कन्या देखनेवालोंको अचंभेमें डाल आकाश पर चढ़ गयी और हंस हंस कर कहने लगी—'दुष्ट कंस! तेरे मारनेवालेने जन्म ले लिया है।' यह सुन कर कंस बहुत डरे थे। फिर उन्होंने देवकी और वसुदेवको छोड़ दिया। गोपराज नन्द जब वार्षिक कर देने कंसकी राजधानीमें पंहुचे, तब वसुदेवने उनको समझाया—'आप शीघ्र राजधानी छोड़ कर चले जाइये। हमारे कहनेसे आप बालकको बड़े यत्नसे प्रतिपालन कीजिये और यह भी प्रार्थना है कि रोहिणीके बालकको भी देखते भालते रहिये।

इधर कंसने महामायाकी बातपर अपने मारनेवाले बालकके वधार्थ चारो ओर असुरोंको भेजा था। पूतना नन्दके घर पंहुची। उसकी दृष्टि पड़ते ही लड़कोंको अपने प्राण खोना पड़ते थे। राक्षसी श्रीकृष्णको स्तन्यपान कराने लगी। कृष्णने इसप्रकार निचोड़ कर दूध पीया था, कि उसका प्राण निकल गया।

एक बार यशोदा शिशु कृष्णको किसी शकट (गाड़ी)-के नीचे सुला यमुना तीर चली गयीं। इधर कृष्णचन्द्रने पैरकी ठेलसे गाड़ी उलटा दी। यशोदाने घर लौटने पर देखा कि गाड़ा उलटी पड़ी थी। यह देख कर वह सन्तानकी अमङ्गल आशङ्कासे रो उठीं, परन्तु पीछे सन्तानको अछूता पा ठण्ढी पड़ीं। वसुदेवके भेजे गर्ग बराबर व्रजपुरमें रहते थे। उन्होंने रामकृष्णका जातकर्म आदि सब संस्कार सम्पन्न किया। कृष्णका स्वभाव बहुत चूलबुला हो गया। एक दिन यशोदाने किसी प्रकार कृष्णको स्थिर न रख

थकनेपर उदूखलके बीच बांध दिया था। परन्तु चञ्चल बालक फिर भी अवरुद्ध न रहा और घुटनोंके बल चलते चलते यमलार्जुन नामक दो पेड़ोंके बीच पहुंच गया। उदूखल तिरछा हो दोनों पेड़ोंके बीच अटका था। परन्तु लड़का इसकी चिन्ता न कर बलपूर्वक उदूखल खींचने लगा। उसी समय दोनों पेड़ फट पड़े। परन्तु इससे बालकका कुछ बिगड़ा न था। देखने सुननेवाले बड़े अचम्भेमें आ गये। इस समय कृष्ण दाम (रस्सी) से बांधे गये थे। इससे उनका नाम दामोदर भी है। फिर एक दिन बुड्ढे गोपोंने इकट्ठे हो स्थिर किया कि पहले पूतनावध, दूसरे शकट-विपर्यय और तीसरे यमलार्जुन भङ्ग जैसी अलौकिक घटनाओंसे विदित होता है कि व्रजपुरमें रहनेसे निश्चय हमलोगोंका अमङ्गल होगा। परामर्श करने पीछे गोप लोग व्रजको छोड़ वृन्दावन चले गये। वृन्दावनमें ७ वर्ष हंसते खेलते बीते थे। कृष्णबलराम दूसरे गोपाल बालकोंके साथ जंगलमें गायें चराते रहे।

एक दिन कृष्णबलराम दूसरे साथियोंके साथ कालिन्दीतीर पर उपस्थित हुये और किसीसे कुछ न कह एक झीलमें कूद पड़े। वह देखते देखते गहरे जलमें डूबे थे। साथके अबोध बालक फूट फूट कर रोने लगे और उनमें कुछ नन्दके घर यह संवाद पहुंचानेको चल दिये। उक्त ह्रदमें कालिय नामका एक सांप रहता था। कृष्णके कूदनेकी खटक पाते ही वह आ पहुंचा। कृष्ण उससे लड़ने लगे। थोड़ी देरमें ही कालिय हार गया। कृष्णने उसके शिरपर चढ़के नाचना आरम्भ किया था। फिर कृष्णने झीलसे निकल सबको सान्त्वना दी।

वर्ष बीतने पर गोप लोग एक इन्द्रयज्ञ करते थे। यह इन्द्रयज्ञ शरत्कालमें ही होता था। शरत्काल आने पर इन्द्रयज्ञका आयोजन होने लगा। यह देख कर कृष्णने पूछा था—'क्यों यह आयोजन किया जा रहा है?' इस पर नन्दने कहा—'इंद्र पानी बरसाते हैं। वृष्टिसे अन्न उत्पन्न होता है। अन्न खाकर हम और गोप लोग जीते हैं और गायें दूध देती है। इसीसे उनके लिये यह यज्ञ किया जाता है।' कृष्णने उन्हें रोकके गिरियज्ञ करनेके लिये परामर्श दिया। उस वर्ष इन्द्रयज्ञ हुवा न था, गोपोंने गिरियज्ञका ही अनुष्ठान किया। इससे इन्द्रदेव बहुत क्रुद्ध हो वर्षण करने लगे। कृष्णने गोवर्धन-पर्वत धारण करके समस्त वृन्दावनको बचाया था। इन्द्र किसीका कुछ कर न सके। अन्तको उन्होंने कृष्णके निकट अपना पराजय स्वीकार किया।

पीछे निर्मल आकाश, शारदीय चन्द्रिका और फूली हुई कुमुदिनीके गन्धसे दशदिशा आमोदित देख कृष्णबलरामने गोपियोंके साथ रासक्रीड़ा करना चाहा था। वह दोनों कुञ्जमें उपस्थित हो गाना गाने लगे। गोपियां घरका काम काज छोड़ कुंजमें जा पहुंचीं। कृष्ण और बलरामने उनके साथ रास क्रीड़ाको समापन किया। परन्तु इससे पहले ही वह गोपियोंकी प्रेमदृष्टिमें पड़ गये थे। एक दिन कृष्ण सन्ध्याके समय गोपियोंके साथ हंस खेल रहे थे। उसी समय अरिष्ट नामके एक दुष्ट वृषभने गोष्ठमें प्रवेश किया और भयङ्कर उत्पात मचाने लगा। परन्तु कृष्णने जब उसके दोनों सींग उखाड़ डाले, तो उसने प्राण छोड़ दिया। कृष्णके अद्भुत बलवीर्यकी बात सुन कंस बड़े सोचमें पड़े थे। उसी समय नारदने जाकर उनको छिपी बातें बता दीं। देवकीके आठवें गर्भका अदल बदल सुन उनका भय बहुत बड़ा था। कंसने कृष्णबलरामको मथुरा बुला कर मार डालनेका सङ्कल्प किया। इसी लिये उन्होंने एक धनुर्यज्ञका अनुष्ठान किया और कृष्णबलरामको लानेके लिये अक्रूरको वृन्दावन भेज दिया था।

उसी समय कंसका भेजा हुवा मनुष्यका मांस खानेवाला घोड़े-जैसा केशी दैत्य कृष्णको मारनेके लिये वृन्दावन पहुंचा और भयानक उत्पात करने लगा। जब कृष्ण उसके पास गये, केशी मुंह फाड़ कर कृष्णको खा डालनेके लिये उद्यत हुवा। कृष्णने उसके मुंहमें हाथ डाल दांत उखाड़ लिये और उसे मार डाला। उसी समय नारदने आकाशसे कहा

था—दुष्ट केशीका वध करनेसे आपका नाम 'केशव' विख्यात होगा।

अक्रूर कृष्णभक्त थे। वह वृन्दावन पहुंचे और भक्तिभरसे झुकके कृष्णसे अपने आनेका कारण बताने लगे। सभी व्रजवासियोंने मथुरा जानेको उद्योग किया था। परन्तु उपढौकन आदि संग्रह करनेमें उन्हें कुछ देर लग गयी। कृष्ण और बलराम अक्रूरके रथ पर बैठ आगे आगे मथुराको चल दिये।

राहमें अक्रूरने कृष्णकी विश्वम्भरमूर्ति दर्शन करके बड़ा आनन्द लाभ किया। रामकृष्ण दोनों गोप-वेशधारी थे। उसी वेशसे राजसभामें जाना उन्हें अच्छा न लगा। कंसका धोबी सड़क सड़क जाता था। उन्होंने उससे बढ़िया कपड़े मांगे। परन्तु रजकने कपड़े देना अस्वीकार किया था। रामकृष्णने एक थप्पड़ लगाके उसे मार डाला और कपड़े ले लिये। फिर उन्होंने सुदाम नामके मालीके घर जा बढ़िया माल्य और चन्दनसे अपनेको सजाया था। राहमें कुब्जाके हाथसे अनुलेपन कर कृष्णने उसके कूबरमें अपना हाथ लगा दिया; कृष्णका हाथ लगते ही कुबरी परमा सुन्दरी बन गयी। इन घटनाओंके पीछे वह धनुःशालामें घुसे। जिस बड़े धनुःका याग होता था, उसे उन्होंने बातकी बातमें तोड़ डाला। कंसने यह सब बातें सुन कुवलया-पीड़ नामक मतवाले हाथी और चाणुर तथा मुष्टिक नामक दो मल्लोंको कृष्णवधके लिये नियुक्त किया था। कृष्ण और बलरामने राजद्वारमें पहुंच कुवलयापीड़को मार डाला। मल्लयुद्धमें कृष्णने चाणुर और बल-रामने मुष्टिक मल्लको संहार किया। फिर तोसलक नामक मल्ल भी थोड़ी देर लड़ने पर कृष्णके हाथसे मारा गया। उस समय कंसने गोपोंको राज्यसे निकालने और वसुदेव तथा उग्रसेनको मार डालनेको अनुमति दी थी। परन्तु कृष्ण छलांग मार उनके मञ्च पर चढ़ गये और कंसको उन्होंने मार डाला। शत्रुको मार कर दोनों भाई पितामाताके चरणों पर गिर पड़े और उन्होंने लड़कपनमें उनकी जो सेवाशुश्रूषा नहीं की थी, उसके लिये दुःख प्रकाश करने लगे। कंसकी पत्नियां कृष्णको घेर फूट फूट कर रोती थीं। इस पर उन्होंने अश्रुपूर्ण नेत्रोंसे उन्हें सान्त्वना प्रदान की। कंसके पिता उग्रसेनने कृष्णके पास पहुंच सब राज्य-ऐश्वर्य ले लेनेको कहा था। परन्तु कृष्णने उत्तर दिया—'आपका लड़का बहुत दुर्वृत्त था। इसीसे हमने उसे मार डाला है। हम राज्य लेना नहीं चाहते।'

कृष्णने राज्य ग्रहण किया न था, कंसके राज-सिंहासन पर उग्रसेनको ही बैठा दिया। कुछ दिन पीछे कृष्ण और बलराम सान्दीपनि मुनिके पास पढ़नेके लिये काशी गये* और ६४ दिनके बीच शस्त्रविद्यामें शिक्षित हो पूछने लगे—'आपको क्या दक्षिणा हमसे मिलनी चाहिये।' सान्दीपनि मुनिने उन्हें अमिततेजा देख कहा था—'तुम हमारे अपहृत पुत्रको ला दो।' कृष्ण-बलरामने समुद्रमें रहनेवाले मुनिपुत्रापहारक ५ लोगोंको मारके गुरुके पुत्रको छुड़ाया और जयके चिह्नकी भांति वह एक शङ्ख ले आये। इस शङ्खको पाञ्चजन्य कहते हैं। विष्णुपुराणमें लिखा है कि वह शङ्ख पञ्च-जन नामके असुरका अस्थि था।

प्रबलपराक्रम जरासन्धकी अस्ति और प्राप्ति नामक दो कन्याओंके साथ कंसने अपना विवाह किया था। कंसवधके पीछे उनकी पत्नियां जरासन्धके पास जाकर पतिके मारनेवालेको दबानेके लिये रोने लगीं। जरासन्धने कृष्णको मारनेके लिये ससैन्य जाकर मथुरा घेरी थी। श्रीकृष्णके सेनापतित्व-प्रभावसे यादवोंने जरा-सन्धको हरा दिया। परन्तु जरासन्ध इससे चुप होकर न बैठे। वह बार बार मथुरा पर चढ़ाई करने लगे। उन्होंने १८ बार मथुराको आक्रमण किया था, परन्तु कृष्णके युद्धकौशलसे उन्हें प्रत्येक बार हारना पड़ा। इधर कालयवन नामक एक यवनराज यादवोंकी बढ़तीकी बात सुन मथुरा पर चढ़नेका उद्योग करने लगे। कृष्णने दोनों प्रबल शत्रुओंसे यादवोंको आने वाली विपद्‌की आशङ्का कर समुद्रके बीच एक दुर्ग बनाया था। उक्त दुर्ग १२ योजन लम्बा चौड़ा रहा।

* छान्दोग्योपनिषद्‌में लिखा है कि देवकीके लड़के कृष्ण घोर आङ्गिरस नामक ऋषिके शिष्य थे। (छान्दोग्य ३।१।१६)

उसका नाम द्वारका है। कृष्ण परिवारके साथ यादवोंको दुर्गमें रख अपने आप शत्रुवोंसे लड़नेके लिये मथुरामें रहने लगे। जब कालयवन मथुरा पर चढ़े, वह निरस्त्र हो बाहर निकल पड़े। कृष्ण आगे आगे चले, उनके पीछे कालयवन भी लगे थे। कृष्ण पहाड़की एक बड़ी गुहामें घुस गये। कालयवनने वहां जाकर देखा कि एक व्यक्ति पड़े सोता था। कालयवनने उसे कृष्ण समझ लात मार दी। परन्तु उसके जागते ही आंखोंसे ऐसी आग निकली, कि कालयवन जल कर भस्म हो गये। पुराणमें लिखा है कि राजा मुचुकुन्द देवगणके लिये बड़ी लड़ाई लड़ गिरिकी गुहामें विश्राम करते थे। उधर देवगणका आदेश रहा, जो व्यक्ति उन्हें जागायेगा, उनकी आंखोंसे निकली आगमें जलकर भस्म हो जायेगा। कालयवनके मरने पीछे कृष्णने उनके हाथी घोड़े आदि ले लिये और द्वारका जाकर सब उग्रसेनको अर्पण किये।

विदर्भराज्यके अधिपति भीष्मककी कन्या बहुत गुणवती और रूपवती रहीं। उनकी प्रशंसा सुन कृष्णने भीष्मकसे प्रार्थना की कि, उनके साथ वह रुक्मिणीका विवाह कर देते। रुक्मिणी पहलेसे ही कृष्णको चाहती थीं। भीष्मक अपने पुत्र रुक्मीके कहनेसे कृष्णको कन्यादान करने पर असम्मत हुए। जरासन्धकी बात पर शिशुपालके साथ रुक्मिणीका विवाह पक्का हो गया। कृष्णने बलराम आदि यादवोंके साथ विवाहके स्थान पर पहुंच रुक्मिणीका हरण किया था। उस समय दन्तवक्र शिशुपाल आदिसे यादवोंका युद्ध हुवा। लड़ाई यादव लोग जीते थे। कृष्णके साथ लड़नेमें रुक्मीको प्राणोंकी पड़ गयी। परन्तु रुक्मिणीने प्रार्थना करके भाईके प्राण बचाये। कृष्णने द्वारका जाके यथानियम रुक्मिणीसे विवाह किया था। रुक्मिणीसे प्रद्युम्न, चारुदेष्ण, सुदेष्ण, चारुदेह, सुषेण, चारुगुप्त, भद्रचारु, चारुविन्द, सुचारु और चारु नामक दश पुत्रों और चारुमती नाम्नी एक कन्याने जन्म लिया। कालिन्दी, मित्रविन्दा, नग्नजित्की सुता सत्या, जाम्बवती, मद्रराजकी सुता सुशीला, सत्राजित्की लड़की सत्यभामा और लक्षणा भी कृष्णकी पत्नी थीं। सिवा इसके लिखा है कि कृष्णके १६ हजार पत्नियां रहीं।

नरकासुर नामक एक पृथिवीका पुत्र था। उसकी राजधानी प्राग्ज्योतिषमें रही। वह बड़ा कड़ा था। इन्द्रने द्वारका जाके उसके दौरात्म्यकी बात कृष्णसे कही। कृष्ण नरकको मारनेके लिये प्रतिश्रुत हुए। उन्होंने नरकको मार उसकी राजधानीसे १६ हजार कई सौ कन्यायें ग्रहण कीं। इससे पहले नरक दितिके कुण्डल छीन चुके थे। नरकके मरने पर पृथिवीने वही कुण्डल कृष्णको भेंट किये और कहा—'आपने जब वराह अवतार धारण किया था; उस समय मेरे उद्धारके लिये जो वराहका स्पर्श हुवा, उसी स्पर्शसे गर्भवती हो मैंने नरकको जन्म दिया।' कृष्ण कुण्डल ले दितिको देनेके लिये सत्यभामाके साथ इन्द्रालय गये थे। वहां सत्यभामा पारिजात मांग बैठीं। इस लिये इन्द्र और कृष्णसे लड़ाई होने लगी। इन्द्रको साथ दूसरे देवोंने भी दिया था। परन्तु थोड़ी ही देरमें सब हार गये। कृष्ण पारिजात वृक्ष ले द्वारका चले आये।

कृष्णके प्रथम पुत्र प्रद्युम्न थे। प्रद्युम्नके पुत्र अनिरुद्धने वाण राजाकी कन्या उषासे विवाह किया। उषाने एकदिन स्वप्नमें अनिरुद्धको देखा था। वह अनुरागिणी बन गयीं और अपनी सखी चित्रलेखाको भेज अनिरुद्धको उन्होंने उठा मंगाया। छिप कर विवाह हुवा था। दूल्हा दूल्हनने सुखसे अन्तःपुरमें रहना आरम्भ किया। रक्षियोंके मुंहसे यह बात सुन वाणराजने अनिरुद्धको घेरा था। यह संवाद द्वारका पहुंच गया। कृष्ण परिवारके साथ वाणपुरीमें उपस्थित हुये। प्रथम रुद्रसे युद्ध छिड़ा था। उसी युद्धमें ज्वरकी उत्पत्ति हुई। रुद्रके हारने पर कृष्णने चक्रसे वाणके सहस्र बाहु काटे थे। (पहले वाणराजाके हजार हाथ रहे) शिवने बात बिगड़ते देख अपने आप युद्धक्षेत्रमें जाके लड़ाई मिटा दी। कृष्ण अनिरुद्ध और उषाको ले द्वारका चले आये।

पौण्ड्र नगरमें वासुदेव नामका एक दुर्वृत्त राजा था। उसने डंका उड़ा दिया कि द्वारकाके रहनेवाले वासुदेव सच्चे न थे, वह अपने आप ईश्वरका अवतार

था। उसने कृष्णको यह भी कहला भेजा कि कृष्ण उसके पास जाते और शङ्ख चक्र गदा पद्म आदि चिह्न उसे दे आते, जिनपर उसका ही प्रकृत अधिकार था। कृष्णने बहुत अच्छा कहके पौण्ड्रराज्यको गमन किया और चक्र आदि अस्त्र चला पौण्ड्रक वासुदेवको मार दिया। काशीके राजासे पौण्ड्रककी बन्धुता थी। वह मित्रहन्ता कृष्णसे लड़ने लगे, परन्तु थोड़ी ही देरमें मारे गये। काशीराजके पुत्रने पितृहन्तासे बदला लेनेको एक आभिचारिक यज्ञ किया था। यज्ञसे एक कृत्या निकली और कृष्णको मारनेके लिये द्वारका पहुंची। कृष्णने कृत्याको मारनेके लिये चक्र फेंका था। उसने कृत्याके पीछे पीछे वाराणसी जा वाराणसी-के साथ कृत्याको जला डाला।

विष्णुपुराणमें यह कहीं नहीं लिखा कि कृष्णने भारतयुद्धमें सहायता दी या पाण्डवोंसे सख्यता की। केवल इतना कहा है कि कृष्णने अर्जुनकी सहाय-तासे दुर्वृत्तोंको दबाया था। फिर यदुवंशके मिटने पर अर्जुनने कृष्णबलराम आदिका अन्त्येष्टिकार्य किया। विष्णुपुराणके ५म अंशमें कृष्णके जन्मसे उनके स्वर्ग जाने तक सब वर्णित हुवा है। परन्तु उसमें स्यमन्तकोपाख्यान नहीं मिलता। हां विष्णु पुराणके ४र्थ अंशके १३ वें अध्याय, भागवत और हरिवंशमें वह लिखा है। उपाख्यान इस प्रकार है—वृष्णिवंशके राजा सत्राजित्ने सूर्यकी आराधना करके उनके गलेका स्यमन्तक मणि मांग लिया था। विष्णुपुराणकार लिखते, जब सत्राजित् मणिको गलेमें पहन द्वारका पहुंचे, तब लोग उन्हें सूर्य सम-झने लगे। भागवतके मतमें केवल लड़के भूल गये, बुड्ढोंको वैसा भ्रम होना असम्भव था। कृष्णने उस मणिको देख विचारा कि वह यादवाधिपति उग्रसेनके योग्य रहा, परन्तु ज्ञातिविरोधके भयसे मांग न सके। सत्राजित्ने सोचा—यदि कृष्ण लेना चाहेंगे, तो हम किसी प्रकार मणि रख न सकेंगे। इसी भयसे उन्होंने मणि अपने भाई प्रसेनको दे दिया। एकबार प्रसेन शिकार खेलने जंगल गये थे। वहां एक सिंहने उन्हें मार डाला और मणि लेकर झांफता हुवा अपने घरको चल पड़ा। फिर किसी बुड्ढे भालूने सिंहको मारके मणि छीना था। इधर लोग कहने लगे कि कृष्णने ही मणिके लोभसे प्रसेनको मार डाला है। कृष्ण अपवाद दूर करनेको मणि ढूंढ़ते ढूंढ़ते एक गिरिगुहामें पहुंचे थे। वहां भल्लूक-कुमारको धात्रीके मुंह मणिको बात सुन पड़ी। जब उन्होंने मणि मांगा, तो भालू उनसे लड़ने लगा। भल्लूकका नाम जाम्बुवान् था। वह रावणके युद्धमें रामका प्रधान मन्त्री रहा। इसीसे लड़ाई बहुत बढ़ी। अनेक दिन लड़ने पीछे वह हार गया और कृष्णको जय मिला। परस्पर परिचित होने पर भालूने अपनी कन्या जाम्बवती कृष्णको सौंप विवाहके यौतुक (दहेज) की भांति स्यमन्तक दिया था। कृष्णने द्वारका जाके दूसरे यादवोंकी बातमें न पड़ उसे सत्राजित्के सामने रखा। सत्राजित्ने लज्जित हो अपनी कन्या देना चाहा था। पीछे यादवोंने सत्राजित्को मार मणि ले लिया। उस समय कृष्ण वारणावतमें रहे। पिताके मरने पर शोकातुरा सत्यभामाने वारणावत जा कृष्णसे नालिश की।

कृष्ण बलरामको साथ ले शतधन्वाको मारने चले थे। शतधन्वा अक्रूरको मणि सौंप भाग गये। कृष्णने पीछे पीछे जा मिथिलाके निकटवर्ती वनमें उन्हें मारा था। परन्तु उनके पास मणि न निकला। कृष्णने लौट कर बलरामको सब वृत्तान्त बताया था। परन्तु बलरामको उन पर सन्देह आया और वह चिरपरि-चित भ्रातृवात्सल्य छोड़ कहीं चले गये। पीछे बड़ा यत्न करने पर वह द्वारका लौटे। अक्रूर भी थोड़े दिनसे यज्ञानुष्ठानका ढोंग करके द्वारका रहते थे। पीछे मणि लेकर कई यादवोंके साथ उन्होंने द्वारका छोड़ दी। बहुत दिन पीछे कृष्णके यत्नसे द्वारका आने पर उन्हीके पास मणि मिला था। मणि देख कर बल-राम आदिको लालच लगा। सत्यभामाने भी उसे पिता का धन बता हाथ बढ़ाया था। परन्तु कृष्णने किसीको मणि नहीं दिया, फिर अक्रूरको ही प्रत्यर्पण किया। (भागवत १०। ५६-५७अ०, विष्णुपुराण ४। १३ अ०, हरिवंश ३८। ३९ अ०)

कृष्णने अपना लड़कपन वृन्दावनमें बिताया था।

उस समय पाण्डवोंके इनके विशेष आलाप परिचयका प्रमाण नहीं मिलता। विष्णुपुराणमें लिखा है—गिरियज्ञके पीछे जब इन्द्र वृन्दावन गये, उन्होंने अर्जुनको रक्षाके लिये कृष्णसे कहा था। कृष्णने भी उनकी बात मान ली। (विष्णुपुराण ५।१२ अ०)

कृष्णने कंसवधके पीछे पाण्डवोंका भेद लेने अक्रूरको हस्तिनापुर भेजा था। वहां जाकर अक्रूरने सब संवाद ला कृष्णको सुना दिया। दुरात्मा कौरवोंने भीमसेनको मारनेकी चेष्टा की थी। कुन्तीदेवीने उनसे रो रो कहा—"कृष्ण आकर हमारा दुःख दूर करें, हमारे लिये दूसरा उपाय नहीं है।" अक्रूरने यह बात भी कृष्णसे कही थी। इसके पीछे ही जरासन्धका उत्पात और कालयवन आदिका बध है। उस समय कृष्ण पाण्डवोंके पास पहुंच न सके। (भागवत, १०।४९ अ०)

जतुगृहदाहके पीछे श्रीकृष्ण और पाण्डवोंकी दूसरी कोई बात नहीं मिलती। थोड़े दिन पीछे कृष्ण बलरामके साथ द्रौपदीके स्वयम्बरमें पाञ्चाल गये थे। अर्जुनने लक्ष्य विद्ध करके द्रौपदीको लाभ किया। इस पर आये हुए राजा पाण्डवोंसे लड़ने लगे। पाण्डवोंने रणमें असाधारण कौशल दिखाया था। उसी समय कृष्णने उनकी बात बलरामसे कही। श्रीकृष्णने झगड़ा करनेवाले राजावोंको यह कहकर हटा दिया था—जिस व्यक्तिने धर्मबलसे द्रौपदीको लाभ किया है, उससे लड़ना ठीक नहीं। कृष्णके कहनेसे लड़ाई रुक गयी, पाण्डव द्रौपदीको लेकर चलते हुए। कृष्ण बलरामके साथ जाकर उनसे वहां मिले थे। पाण्डवोंका मिलना छिपानेके लिये दोनों रातको ही अपने डेरे पर लौट आये। द्रौपदीके साथ पाण्डवोंका विवाह हो जाने पर कृष्णने मणिरत्न और महार्घ वसनभूषण आदि उपहार पहुंचाया था। इसके पीछे धृतराष्ट्रने पाण्डवोंको लानेके लिये विदुरको भेजा। इस समय पर कृष्ण वहां उपस्थित रहे। उन्होंने पाण्डवोंके हस्तिनापुर जानेके लिये परामर्श दिया। पाण्डव धृतराष्ट्रके कहनेसे कृष्णके साथ खाण्डव-प्रस्थ चले गये और वहां एक विचित्रपुरी बना रहने लगे। पुरी बन जानेपर पाण्डवोंको खाण्डवप्रस्थमें रख कृष्ण बलरामके साथ द्वारका लौट आये। अर्जुन नियम तोड़ द्रौपदीके घर चले गये थे। इसीसे उन्हें १२ वर्ष वन वन तीर्थोंमें घूमना पड़ा। नाना तीर्थ घूम फिर अर्जुन प्रभासक्षेत्र पहुंचे थे। वहां श्रीकृष्ण उनसे मिले। उन्होंने पहले ही अर्जुनको सादर लेनेके लिये रैवतक पर्वत पर सब आयोजन लगा रखा था। वहां भोजन, शयन और विश्राम करके श्रीकृष्ण अर्जुनको द्वारका ले गये। द्वारकामें कई दिन रह वह फिर रैवतकको लौट पड़े। यहीं अर्जुनने पहले सुभद्राको देखा था। सुभद्राके परिणयका यही सूत्रपात है। पीछे श्रीकृष्णने ही अर्जुनको परामर्श दिया कि वह सुभद्राको हरण करते। जब अर्जुन सुभद्राको भगा ले गये, वृष्णिलोग कन्याको छीन लेने और अर्जुनको समुचित दण्ड देनेपर कृतसङ्कल्प हुवे। बलदेव आदि सब लोग कृष्णसे अनुमति लेनेके लिये उनके पास गये थे। कृष्णने कहा—"अर्जुनने हमारे कुलका अपमान नहीं किया, वरं सम्मान ही बढ़ाया है। पार्थ ही सुभद्राके लिये उपयुक्त वर हैं। सुभद्रा पहलेसे ही अर्जुनको चाहती हैं।" कृष्णकी बातसे सब ठण्डे पड़ गये। अर्जुन सुभद्राको लेकर खाण्डवप्रस्थ पहुंचे थे। कृष्ण बलराम आदिके साथ वहां गये। उन्होंने विवाहका समुचित यौतुक प्रदान किया था। आत्मीय स्वजन कुछ दिन खाण्डव-प्रस्थमें रह द्वारका आये, कृष्ण अर्जुनके साथ वहीं रह गये।

कृष्ण और अर्जुनने अग्निके कहने पर खाण्डव जलानेमें सहायता की। बड़ा खाण्डववन बहुतसे जंगली जन्तुवोंसे भरा था। खाण्डववनके दाह समय देवोंके साथ अर्जुन और कृष्णका युद्ध हुवा। कहते हैं अर्जुन और कृष्णसे लड़ाईमें हारे हुए इन्द्र आदि देव उनसे वर मांगनेको कहने लगे। कृष्णने कहा—"हम यही मांगते हैं कि हमारा और अर्जुनका साथ कभी न छूटे।" देव वर दे कर चले गये, वह भी कार्यसिद्ध करके बड़ी प्रसन्नतासे लौट पड़े।" (भारत, आदिपर्व)

राजा युधिष्ठिरने राजसूययज्ञ करना चाहा था। इसीसे उन्होंने सत्परामर्शके लिये द्वारकासे कृष्णको बुला लिया। कृष्णने देखा—विना प्रबल पराक्रान्त जरासन्धको मारे निर्विघ्न राजसूययज्ञ सम्पन्न नहीं हो

सकता। इसीसे वह अर्जुन और भीमसेनको साथ ले स्नातकके वेशमें जरासन्धकी राजधानी पहुंचे। जब भीमसेनने जरासन्धको मार डाला, बन्दी राजा कारामुक्त हुये। कृष्ण कारामुक्त राजावोंके साथ इन्द्रप्रस्थ पहुंचे और युधिष्ठिरके कहनेसे उन्हें अपनी अपनी राजधानी जानेकी अनुमति दी, अपने आप भी द्वारका चले गये।

राजा युधिष्ठिरने राजसूययज्ञका उद्योग किया था। कृष्ण वसुदेवको पुरी रचाका काम सौंप सैन्यके साथ अपरिमित धनरत्न लेकर इन्द्रप्रस्थ जा पहुंचे। कृष्णकी अनुमति ले युधिष्ठिर राजसूययज्ञमें लगे थे। भीष्म द्रोण आदिको एक एक काम सौंपा गया। श्रीकृष्णने अपनी इच्छासे ब्राह्मणोंके पैर धोनेका भार अपने लिया था। बात उठी—पहले अर्घ किसको मिलेगा। भीष्मके कहनेसे युधिष्ठिरने कृष्णको अर्घ दिया था। प्रबलपराक्रान्त शिशुपाल इसे सह न सके। शिशुपालने कृष्णको बहुतसी कड़ी बातें कहीं, जो सभाके धार्मिक राजावोंसे सही न गयीं। शिशुपालने लड़नेके लिये कृष्णको ललकारा था। कृष्णने शिशुपालकी पुकार सुन सभाके राजावोंसे उनके दुश्चरित्रको बात कही। इसपर सभी शिशुपालकी निन्दा करने लगी। अघोर हो युद्धमें प्रवृत्त होने पर कृष्णने चक्रके आघातसे उन्हें मार डाला। राजसूययज्ञ समाप्त हो गया। श्रीकृष्ण बन्धुवोंको सम्भाषण करके द्वारका चले गये।

जब दुर्योधनके कूटचक्रसे पाण्डव निर्वासित हुए, कृष्ण द्वारकामें उपस्थित न थे। पीछे पाण्डवोंके वनवासकी बात सुन वह बहुत सन्तापित हुए और जिस वनमें पाण्डव रहते थे, वहीं जा पहुंचे। उनकी दुर्दशा देख क्रोधसे अधीर होकर कृष्णने कहा था—'दुर्योधन, कर्ण, शकुनि और दुःशासन—चार दुरात्मावोंके रक्तसे शीघ्र ही पृथिवी डूब जायेगी। जो ऐसा असदाचरण करता, उसको वध करना ही सनातन धर्म है। हम अपने आप इन लोगोंको नौकरों चाकरोंके साथ मार युधिष्ठिरको राजा बनाते हैं।' अर्जुनके बहुत समझाने बुझाने पर उनके क्रोधकी शान्ति हुई। द्रौपदीने बहुत रो रो कर अपने दुःखकी बात कही थी। कृष्णने सभीको समझा बुझाकर सान्त्वना की। कृष्णने कहा—'आपके वन आते समय हम राजधानीमें उपस्थित न थे। इसीसे कौरव आपके साथ कपटताकी चाल चलसके हैं।' युधिष्ठिरने पूछा—क्यों वह राजधानीमें न थे। कृष्णने उत्तर दिया—'सौभपति शाल्वको यह संवाद मिला कि हमने राजसूययज्ञमें शिशुपालको वध किया था। इसीसे उन्होंने हमारे न रहते द्वारकाको आकर घेर लिया। परन्तु युद्धनिपुण प्रद्युम्नकी मारसे घबरा वह भाग गये हैं। हमने यह बात सुन और द्वारकाकी दुरवस्था देख शाल्वको मार डालनेका निश्चय कर लिया था। वह सौभपुरसे समुद्रकूलको चले गये। हमने वहां जाकर उनको आक्रमण किया था। मायावी शाल्वने लड़ाईमें बड़ी माया दिखायी, किन्तु हम उससे कुछ भी न डरे। फिर सुदर्शनचक्रसे हमने उनको मार डाला।' कृष्णने पाण्डवोंको समझा बुझा कर देखा कि जंगलमें बालक अभिमन्युको भली भांति खिलाना पिलाना और सिखाना पढ़ाना असम्भव था। इसीसे वह सुभद्रा और अभिमन्युको अपने साथ ले द्वारका चले गये। (वनपर्व)

शाल्व राजाके वध पीछे उनके सखा प्रबलपराक्रान्त दन्तवक्रने गदा ले कृष्णको आक्रमण किया था। श्रीकृष्ण सम्बन्धमें उसके मामाके लड़के रहे। दन्तवक्रने कृष्णको ताक करके वेगके साथ गदा चला दी। परन्तु इससे उनका कुछ न बिगड़ा। फिर श्रीकृष्णने उसके गदा मारी थी। दन्तवक्रकी छाती फट गयी और रुधिर वमन करके उसने प्राण छोड़ दिया। दन्तवक्रके भाई विदूरथसे भी श्रीकृष्ण लड़े थे। वह कृष्णके सुदर्शनाघातसे मारे गये। कहते हैं कि दन्तवक्रके मरने पीछे उनका तेजः कृष्णके शरीरमें प्रविष्ट हुवा था। (भागवत १०।७८ अ०)

अर्जुन जब तपस्या करनेको चले गये, युधिष्ठिर मनमें बहुत घबरा उठे और काम्यकवन छोड़ प्रभासतीर्थको चलते हुए। कृष्ण वृष्णिलोगोंको लेके युधिष्ठिरसे सम्भाषण करने गये थे। सात्यकि आदि पराक्रान्त यादव युधिष्ठिरके दुःखसे दुःखित हो उसी समय

लड़नेका उद्योग लगाने लगे। कृष्णने सबको रोका था। फिर उन्होंने युधिष्ठिर आदिको सान्त्वना दे सैन्यके साथ द्वारकाके लिये प्रस्थान किया। (वनपर्व ११७—११८ अ०)

इसके थोड़े दिन पीछे कृष्ण सत्यभामाको लेकर फिर काम्यकवनमें पाण्डवोंके पास पहुंचे और इस प्रकार नाना उपदेश देकर द्वारकाको लौट पड़े कि धर्मपथ पर रहनेसे उन्हें बहुत शीघ्र राज्य मिलेगा। (वनपर्व २३४ अ०)

दुर्वासा नामक एक मुनि रहे। वह अग्निकल्प मुनि उस समय बात बात पर अभिसन्ताप करते थे। एकदिन वह अपने शिष्योंके साथ दुर्योधनके घर जाकर अतिथि हुए। दुर्योधनने यथेष्ट सेवा शुश्रूषा करके कई दिन पीछे उनसे पाण्डवोंके पास जानेको कहा था। दुर्वासा दिनके तीसरे प्रहर पाण्डवोंके पास जा पहुंचे। युधिष्ठिरने उनको यथोचित अभ्यर्थना करके कहा—'आह्निक समापन करके आ जाइये।' इधर पाकशालामें द्रौपदी बैठे रो रही थीं। ऐसी सम्भावना न थी कि सशिष्य मुनिका आहार बनाया जा सकता। द्रौपदी दूसरा कोई उपाय न देख श्रीकृष्णको स्मरण करने लगीं। कृष्ण द्वारकामें बैठे ही बैठे समझ गये कि द्रौपदी पर कोई विपद् पड़ी थी। वह रुक्मिणीको शय्या पर छोड़ द्रौपदीके पास पहुंचे। उन्होंने वहां पहुंचते ही कहा था—'हमें बड़ी भूख प्यास लगी है, शीघ्र हमें कुछ भोजन दे दो।' द्रौपदी इस बात पर घबरा रही थीं, दुर्वासाको क्या खिलाया जायेगा। फिर उन्होंने कृष्णको इस लिये पुकारा था कि वह जाकर उनको खाने पीनेका कोई उपाय करेंगे। परन्तु कृष्णने जाकर द्रौपदीका दुःख दूना बढ़ा दिया। द्रौपदी एकबारगी ही फूट फूट कर रोने लगीं। कृष्णने उन्हें सान्त्वना करके स्थाली लानेको कहा था। अगत्या पाकस्थाली कृष्णके समीप पहुंचायी गयी। कहते हैं कि पाकस्थाली सूर्यकी दी हुई थी और द्रौपदीके खानेसे पहले भरी ही रहती थी। लाखों लोगोंके पहुंचने पर वह अनायास उनका पेट भर सकती थी। परन्तु द्रौपदीके खा लेने पर उसमें कुछ न बचता था। कृष्णको बहुत ढूंढने पर उसके कण्ठमें लगी शाकका एक कणा मिल गयी। उन्होंने प्रीतिके साथ वह शाककणा खा मुनियोंको आहारके लिये बुलानेको कहा था। इधर मुनि लोग पानीमें उतर अघमर्षण करते रहे। एकाएक उन्हें डकार आने लगी और भूख भी मिट गयी। मुनि एक दूसरेका मुंह देखने लगे। बहुतोंने कहने पर भी खाना स्वीकार न किया। कृष्ण और द्रौपदीको छोड़ किसीने यह बात समझ भी न पायी। दुर्वासाऋषि फिर लौटे न थे। कृष्ण यथोचित पाण्डवोंसे बातचीत कर द्वारका चले गये। (वनपर्व २६२ अ०) ऐसी ही अद्भुत घटनाओंसे श्रीकृष्णका ईश्वरत्व प्रमाणित होता है।

पाण्डवोंके अज्ञातवास पीछे अभिमन्युके साथ विराटको लड़की उत्तराका विवाह पक्का हुवा। युधिष्ठिरने जब समाचार भेजा, कृष्ण अभिमन्युको लेकर विराटनगर पहुंच गये। विवाहके दूसरे दिन द्रुपद आदि राजा विराटकी सभामें बैठे थे। कृष्ण उनको सम्बोधन करके कहने लगे—'आप लोग जानते हैं कि दुर्योधन आदिने पाण्डवोंके साथ कैसा बुरा व्यवहार किया है। युधिष्ठिर अनायास उन्हे ठीक कर सकते थे, फिर भी वह सत्य प्रतिपालनके लिये १३ वर्ष जंगल जंगल घूमे हैं। हम ठीक नहीं जानते दुर्योधनने क्या ठहरा लिया है। हम आपसे पूछते हैं—अब क्या करना चाहिये। हमारी समझमें यहांसे एक दूत भेज दिया जावे। वह जाके कहे, यदि दुर्योधन युधिष्ठिरको आधा राज्य भी दे दें, तो झगड़ा मिट जायेगा।' सभामें बैठे सभी लोगोंने एक साथ अनुमोदन किया था। दूत भेजा गया। कृष्ण द्वारकाको चल दिए। (उद्योग, १ अ०)

द्रुपदका पुरोहित दुर्योधनको राजधानीसे लौटा था। इधर सञ्जय नामक धृतराष्ट्रका दूत कृष्ण और पाण्डवोंके पास आ पहुंचा। कृष्णने समझ लिया कि दुर्योधन बड़ा दुष्ट था और लड़ना ही चाहता था। तथापि शान्तिकी चेष्टामें वह दुर्योधनकी राजधानी गये। उन्होंने बड़ा उपदेश दिया था, जिस पर दुर्योधन उनका अपमान करने पर आ गया। कृष्ण इससे कुछ

भी न हिले डुले और वहांसे लौट पड़े। किसी प्रकार शान्ति होते न देख उन्होंने पाण्डवोंको लड़ जानेके लिये कहा था।

लड़ाईकी तैयारी होने लगी। देश देश दूतोंको भेज कर कौरवों और पाण्डवोंने आत्मीय स्वजन बुलाये थे। अर्जुन द्वारका गये और दुर्योधन भी वहां जा पहुंचे। कृष्ण उस समय सोते थे। दुर्योधन कृष्णके सिरहाने ऊंचे आसन पर बैठ गये, अर्जुन पैताने हो रहे। आंख खुलने पर श्रीकृष्णने पहले अर्जुनको ही देखा था। पीछे दोनोंने युद्धके लिये सहायता मांगी। कृष्णने अर्जुनका ही पक्ष लिया, क्योंकि वह पहले देख पड़े थे। अर्जुनके कहने पर उन्होंने उनका रथ हांकना स्वीकार किया। कृष्णने सुना कि दुर्योधन अर्जुनसे पहले आये थे। इसलिये उन्होंने दुर्योधनको मुंह मांगी नारायणी सेना दे दी। लड़ाईके खेतमें दोनों ओरकी सेना और आत्मीय स्वजनको देख अर्जुन डावांडोल हुए थे। कृष्णने उन्हें नाना प्रकारकी दार्शनिक युक्तियों और भक्तिरसके उपदेशोंसे समझा बुझा समरमें प्रवृत्त किया। गीता देखो।

कृष्णही अकेले पाण्डवोंके मन्त्री थे। उन्हींकी मन्त्रणाके बल पर पाण्डव अन्धाधुन्ध लड़ाईमें जीत गये। कहते हैं कि भारतका युद्ध बन्द होने पर अश्वत्थामाने पाण्डवोंके ५ पुत्र मार डाले थे। फिर अर्जुनके साथ अश्वत्थामाकी लड़ाई हुई। इस युद्धमें अश्वत्थामाके ब्रह्मास्त्रसे उत्तराके पेटका लड़का मरा था, परन्तु कृष्णने उसे फिर जिला दिया। युधिष्ठिरके गद्दीपर बैठने पीछे कृष्ण अपने परिवारके साथ द्वारका आ गये। (उद्योग—अश्वमेधपर्व)

धर्मका राज्य संस्थापित हुवा, धर्म प्रचारित हुवा। कृष्णने प्रबलपराक्रान्त यदुकुल ध्वंस करके पृथिवी छोड़ी थी। उसकी बात इस प्रकार बतायी जाती है—देवदूतने आकर कहा था—'देव चाहते हैं, अब आप अधिक दिन मर्त्यलोकमें न रहें।' कृष्णने देवोंकी बात मान ली। इधर यादव दिन दिन बहुत बिगड़ रहे थे। एक बार विश्वामित्र, कण्व और नारद—तीनों लोकविश्रुत ऋषि द्वारका गये। दुष्ट यादव कृष्णके लड़के शाम्बको स्त्रीका रूप बना ऋषियोंके पास गये और उनसे पूछने लगे, इसके पेटसे क्या होगा। महर्षियोंने कहा कि लोहेका मुसल होगा और उसी मुसलसे कृष्णबलरामको छोड़ सारा यदुवंश ध्वंस हो जायेगा। कृष्णको यह बात विदित हो गयी। उन्होंने कहा—"मुनियोंने जो कहा है, वह अवश्य होगा।" शाप निवारणके लिये कोई उपाय किया न गया। शाम्बने लोहेका एक मुसल प्रसव किया था। यादवोंके राजाने उसे चूर कर डालनेकी आज्ञा दी। मुसल चूर कर डाला गया और सब चूर्ण समुद्रमें फेंक दिया गया। धीरे धीरे यादवोंने भी सब धर्मकर्म छोड़ दिया था। उस समय श्रीकृष्णने उनके विनाशकी वासनामें उन सबसे प्रभासतीर्थ चलनेको कहा। प्रभासमें जा यादव सुरापान करके हंसने खेलने लगे। अन्तको आपसमें लड़ाई हुई। कुरुक्षेत्रके महारथी सात्यकिने पहले झगड़ा उठाया था। जब वह कृतवर्मासे लड़ने लगे, प्रद्युम्न उनकी ओर हो गये। सात्यकिने कृतवर्माका शिर काटा था। फिर कृतवर्माके भाईबन्दोंने सात्यकि और प्रद्युम्नको मार डाला। कृष्णने भी एक मूठ एरका (एक घास) तोड़के उसके आघातसे बहुतसे यादवोंको गिराया था। कहते हैं कि समुद्रमें फेंके हुए मुसलके चूर्णसे ही एरका घास निकली थी। इस युद्धमें सारा यदुवंश ध्वंस हो गया। उस समय कृष्णके सारथि दारुक उन्हें बलदेवके पास लेकर पहुंचे। फिर कृष्णने दारुकको अर्जुनके पास हस्तिनापुर भेजा था। कृष्णने बलरामको योगासन पर बैठे देखा। उनके मुंहसे सहस्रमस्तक सर्पने निकलके समुद्रमें प्रवेश किया था। बलरामके प्राण छूट गये। उस समय कृष्ण मर्त्यलोक छोड़नेकी वासनासे महायोग अवलम्बन करके भूतल पर सोये थे। जरा नामके व्याधने भूलसे हिरन समझ उनके पादपद्ममें वाण मार दिया। पीछे जब उसे अपना अपराध विदित हुवा, वह श्रीकृष्णके चरण पर जा गिरा। कृष्ण उसे आश्वासित करके स्वर्ग गये थे।

(महाभारत मौसलपर्व, विष्णुपुराण ५।३७ अ०)

श्रीकृष्णके साथ व्रजकी गोपियोंने जो व्यवहार

किया, वह भक्तिरसका चरम दृष्टान्त है। विष्णुपुराण, भागवत, हरिवंश और ब्रह्मवैवर्त आदि जिस जिस ग्रन्थमें कृष्णचरित कहा गया है, उसमें थोड़ी बहुत गोपियोंकी बात अवश्य मिलती है। गोपियां कृष्णको बहुत चाहती थीं। शाण्डिल्यने भक्तिकी मीमांसा करनेमें अनेक सूत्र बनाये हैं। उसमें उन्होंने कहा है कि गोपियोंको ज्ञान न था, वह कृष्णकी भक्तिसे ही मुक्त हुई। (शाण्डिल्य १४ सूत्र) भागवतमें लिखा है कि गोपियां पति, पुत्र, आत्मीयस्वजन, भय-लज्जा आदि छोड़के श्रीकृष्णके ही शरणमें जा पहुंची थीं। वह सदा कृष्णको परब्रह्म समझती रहीं। भागवतमें रासलीला बहुत बढ़कर लिखी गयी है। उससे समझ पड़ता है कि गोपियोंने कृष्णको अपना मन, प्राण सब कुछ सौंप रखा था, संसारसे उन्हें कोई काम न रहा। वह कृष्ण छोड़ दूसरेको जानती न थीं, उनके लिये सारा जगत् कृष्णमय हो रहा था। एक दिन कृष्ण फुलवारीमें थे। गोपियां सुयोग पाकर उनके पास पहुंच गयीं। कृष्णने उन्हें उपदेश दिया था—

'रजन्येषा घोररूपा घोरसत्वनिषेविता।
प्रतियात व्रजं नेह स्थेयं स्त्रीभिः सुमध्यमाः ॥१९
मातरःपितरः पुत्रा भ्रातरः पतयश्च वः।
विचिन्वन्ति ह्यपश्यन्तो मा कृध्वं बन्धुसाध्वसम् ॥२०
तद्यातमाचिरं गोष्ठं शुश्रूषध्वं पतीन् सतीः।
क्रन्दन्ति वत्सा बालाश्च तान् पाययत दुह्यत ॥२१
अथवा मदभिस्नेहाद् भवत्यो यन्त्रिताशयाः।
आगता ह्युपपन्नं वः प्रीयन्ते मयि जन्तवः ॥२२
भर्तुः शुश्रूषणं स्त्रीणां परोधर्मो ह्यमायया।
तद्बन्धूनाञ्च कल्याण्यः प्रजानाञ्चानुपोषणम् ॥२३
दुःशीलो दुर्भगो वृद्धो जड़ो रोग्यधनोऽपि च।
पतिः स्त्रीभिर्न हातव्यो लोकेप्सुभिरपातकी ॥२४
अस्वर्ग्यमयशस्यञ्च फल्गु कृच्छ्रं भयावहम्।
जुगुप्सितञ्च सर्वत्र औपपत्यं कुलस्त्रियाः ॥२५
श्रवणाद्दर्शनाद्ध्यानान्मयि भावोऽनुकीर्तनात्।
न तथा सन्निकर्षेण प्रतियात ततो गृहान् ॥"२६

(भागवत १०।२९ अः)

यह रात डरावनी है। इसमें भयङ्कर प्राणी घूमा करते हैं। इस लिये व्रजको लौट जावो। हे सुमध्यमाओ! यहां स्त्रियोंका रहना ठीक नहीं। तुम्हारे पिता, माता, भ्राता, पुत्र और स्वामी तुमको न देख ढूंढ़ रहे हैं। उनको खटकेमें न डालो। इस लिये तुम घर लौट जावो, देर न लगावो। हे सतियो! घर जाके अपने अपने पतिकी सेवा करो। लड़के बच्चे रो रहे हैं, उनको जाकर दूध पिलावो। यदि तुम हमारे स्नेहके वशीभूत होनेसे ही आया करती हो, तो यह बात भी तुम्हारे लिये ठीक ही हुई है। क्योंकि सभी प्राणी हमसे प्रसन्न हुवा करते हैं। हे कल्याणियो! निष्कपटरूपसे स्वामी तथा स्वामीके बन्धुओंकी सेवा और सन्तानोंका प्रतिपालन करना ही स्त्रियोंका प्रधान धर्म है। सद्गति चाहनेवाली स्त्रियोंको उचित नहीं कि वह अपने स्वामीको छोड़ दें; चाहे वह दुःशील, अभागा, बुड्ढा, जड़, रोगी या निर्धन ही क्यों न हो। कुलकामिनियोंकी स्वर्गच्युतिका प्रधान कारण उपपति सेवन ही है। यह काम अयशस्कर, तुच्छ, दुःखजनक, भयङ्कर और सर्वत्र निन्दित है। हमारा नाम सुनने, हमें देखने और हमारा ध्यान तथा कीर्तन करनेसे हममें जैसी प्रीति बढ़ती है, वैसी हमारे पास आनेसे नहीं होती। इस लिये तुम घर चली जावो।

आकाश निर्मल है। शरच्चन्द्रकी चांदनी छिटक रही है। कमलिनी फूली है। चारो ओर सुगन्ध उड़ रहा है। भौंरोंके झुण्ड गूंज रहे हैं। ऐसे ही समय जंगलमें पूर्णयौवन कृष्ण अकेले बैठे हैं। पूर्णयौवना गोपियां उनके प्रेममें अनुरागिणी बन रही हैं। वह संसार, लज्जाभय, पतिपुत्र छोड़के उनके पास पहुंची हैं। किन्तु इसमें कृष्ण कुछ भी न हिले डुले। उलटे उनको प्रत्याख्यान करने लगे। यही भगवान् कृष्णचन्द्रकी ठीक वर्णना है। पारदारिक लाम्पट्य तो वर्णना प्रेमिक कविकी कल्पनासे निकली समझ पड़ती है। प्राचीनकालको भारतवर्षमें यह नियम रहा कि स्त्री-पुरुष एकसाथ मिलकर नाचते थे और समाजमें इसकी निन्दा न होती थी। कृष्णने भी वृन्दावनमें यही किया था। विष्णुपुराण (५ अंश १३ अध्याय)-में रासलीला लिखी है। परन्तु उसमें किसी प्रकारके छिनालेकी बात नहीं। भागवतमें बताया है—

"एवं शशाङ्कांशुविराजिता निशाः स सत्यकामोऽनुरतावलागणः ।
सिषेव आत्मन्यवरुद्धसौरतः सर्वाः शरत्काव्यकथारसाश्रयाः ॥"

(भागवत १० । ३३ । २५)

'अनुरागिणो रमणियोंसे घिरे हुए सत्यसङ्कल्प श्रीकृष्णने अपनेमें ही वीर्यको रोकके सारी चांदनी रात प्रेमकी बातोंमें बिता डाली।' इससे स्पष्ट ही समझ पड़ता कि रासलीलामें श्रीकृष्णने किसी प्रकारका निन्दित पारदारिक कार्य नहीं किया।

ब्रह्मवैवर्तपुराणमें कृष्णके लड़कपनसे लेकर सारा वृत्तान्त लिखा है। उसको देखनेसे समझ पड़ता है कि राधिकाको सांख्यसिद्ध प्रकृति और कृष्णको निर्लेप, निर्विकार और निर्मम आत्मारूप बताना ही ब्रह्मवैवर्तका प्रधान उद्देश्य है। ब्रह्मवैवर्तके मतसे विष्णुकी शक्तिने सुदामके शापसे गोपकुलमें जन्म लिया था। उसीका नाम राधिका है। विष्णुके अंशसम्भूत रायाणगोपके साथ उनका विवाह तो हो गया, परन्तु वह नपुंसक रहे। पीछे ब्रह्माने जाके कृष्णके साथ राधिकाका विवाह करा दिया। (ब्रह्मवैवर्त, जन्मखण्ड ३ अ०) राधिका देखो।

इस बारेमें बहुतसे लोगोंने बहुतसी बातें कही हैं—कितने समयसे कृष्ण देवावतार माने गये हैं। आजकल किसी किसी पाश्चात्य और देशीय विचक्षण व्यक्तिको विश्वास है, पहले लोग कृष्णको देवावतार न समझते थे। महाभारतमें कहीं शिशुपाल, दुर्योधन, दुःशासन, कर्ण और शकुनीका व्यवहार तथा वाक्य देखनेसे ही यह बात निकल आती है। विष्णुपुराण, भागवत, हरिवंश और महाभारतके भी जिस अंशमें कृष्णके ईश्वरत्वकी बात मिलती है वह आधुनिक और प्रक्षिप्त है।* वह जिस प्रकार कृष्णका देवावतार होना नहीं मानते और जिस प्रकार महाभारतकी आलोचना करके कृष्णकी जीवनीके सम्बन्धमें प्रक्षिप्त वचन उद्धृत करनेकी चेष्टा करते हैं, वह समीचीन नहीं समझ पड़ता। कृष्णके शत्रु दुर्योधन आदिकी बात पर विश्वास करके कृष्णके अवतारत्व वा देवभाव सम्बन्धमें सन्देह नहीं कर सकते। कारण उसी व्यक्ति की मित्रप्रशंसा और शत्रुनिन्दा किया करते हैं। कुरुपितामह प्राज्ञ भीष्मने युधिष्ठिरको सम्बोधन करके कहा था—

"तुरीयार्धं न तस्यै मं विद्धि केशवमच्युतम् ।
तुरीयार्धेन लोकांस्त्रीन् भावयत्ये व बुद्धिमान् ॥"

(शान्तिपर्व २८१ । ६४)

यह महात्मा केशव ईश्वरके ८वें अंशसे समुत्पन्न हैं। उक्त वचनसे समझ पड़ता है कि कृष्ण उस समय पूर्णावतार न माने जाते थे, लोग उन्हें महापुरुष और ईश्वरांशसम्भूत ही समझते थे। भीष्मने अपने आप युधिष्ठिरका दिया हुआ अर्घ्य न लेके कृष्णको समर्पण करनेका आदेश दिया था। (सभापर्व)

कालिदासके मेघदूत (१ । १५), बौद्धोंके पुराने ग्रन्थ ललितविस्तर (११ अ०) और खृष्टीय ४र्थ शताब्दीके खोदित लेख* और उससे बहुत पहले पतञ्जलिके महाभाष्य (१ । ४ । ९२, ४ । १ । १४, ५ । ३ । ९९) में कृष्णको देवावतार माना गया है। इसको छोड़के बुद्धदेवसे भी बहुत पहलेके पाणिनिसूत्र (४।३।९८) और कृष्णयजुर्वेदीय तैत्तिरीय आरण्यक-में भी कृष्णका प्रसङ्ग आया है। यहां तक कि ऋग्-वेदके खिल सूक्त (१० । १)में† लिखा है—

"कृष्ण विष्णो हृषीकेश वासुदेव नमोऽस्तुते।"

इस मन्त्रसे कृष्णका महत्व स्वीकृत हुवा है। गीता शब्दमें कृष्णका धर्ममत देखो।

२ परब्रह्म। कृष्णवर्णोऽस्यास्ति, कृष्ण अर्शादित्वादच्। ३ वेदव्यास। ४ अर्जुन। ५ कोयल। ६ कौवा। ७ करौंदा। ८ नीला रंग। इसका संस्कृत पर्याय—नील, असित, श्याम, काल, श्यामल, मेचक, बहुल, राम और शिति है। (त्रि०) ९ काला। (क्ली०) १० काली मिर्च। ११ लोहा। १२ काला अगर। १३ नीला अञ्जन। १४ नीलका पेड़। १५ पीपल। १६ दाख। १७ नील पुनर्नवा। १८ काला जीरा। १९ गाम्भारी। २० कुटकी। २१ एक प्रकारका अनन्तमूल।

* अक्षयकुमार दत्तके उपासकसम्प्रदायका २रा भाग। (उपक्रमणिका)।

* Journal of the Royal Asiatic Society, N. S. Vol. I.

† मोक्षमूलरकी छपाई हुई ऋग्वेदसंहिता (२य संस्करण)के ४र्थ भागका ५२८वां पृष्ठ द्रष्टव्य है।

२२ राई। २३ पर्पटी। २४ काकोली। २५ सोमराजी। २६ धनविशेष। कृष्णाधन देखो। २७ महीनेका काला पाख। (पु०) २८ कृष्णपक्षाभिमानी देवता: वह कृष्णपक्षको अपना (अहं) समझते हैं। पितृयानमें कृष्णपक्षाभिमानी देवताका वास रहता है। २९ काला हिरन। ३० अशुभ काम। ३१ कोई वेदोक्त असुर। देवराज इन्द्रने उसे सवंश मार डाला था। ३२ कोई ऋषि। वह ऋग्वेदके ८ वें मण्डलके ४२-४४ सूक्तके ऋषि हैं। ३३ अथर्ववेदकी कोई उपनिषत्। (मुक्तिकोपनिषत्)

३४ बौद्धशास्त्रोक्त कोई नागराज। (दिव्यावदान, पूर्णावदान) ३५ सितोदके पश्चिमका एक पर्वत। (लिङ्गपुराण ४९।५०, ५०।१२) ३५ तिरुमलयके पुत्र। इन्होंने जयतीर्थकी प्रमेयदीपिका पर भावप्रकाश नामको टीका लिखी है। ३७ कोई ग्रन्थकार। यह युधिष्ठिरके पुत्र थे। १६४६ ई०को इन्होंने लघुबोधव्याकरण बनाया। ३८ किसी संस्कृत ग्रन्थकारका नाम। पक्षिज्योतिष, साहित्यतरङ्गिणी, नलोदयटीका, भगवद्गीताटीका, शुद्धिविवेकटीका, सांख्यकारिकाव्याख्या, सांख्यसूत्रप्रदीपिका, सांख्यसूत्रविवरण आदि ग्रन्थ बनानेवालोंका नाम भी कृष्ण ही है। ३९ कई राजावोंका नाम। कृष्णराज देखो। ४० हिन्दीके कोई कवि। इनका जन्म १६८३ ई०को हुआ। यह औरङ्गजेबके दरबारमें (१६५४-१७०७ ई०) उपस्थित रहे। सम्भवत: जयपुरके कृष्ण कवि भी यही थे।

४१ जयपुरके एक हिन्दी कवि। (१७२० ई०) यह व्रजवासी विहारीलाल चौबेके चेले थे और इन्होंने राजा जयसिंह सवाईकी नौकरी इख्तयार की। इन्होंने विहारी सतसईकी एक टीका लिखी है।

४२ हिन्दीके एक कवि। इनका जन्म १८३१ ई०को हुवा था। नीति पर इन्होंने फुटकर कविता की है।

४३ आन्ध्रभृत्यके द्वितीय नृपति। इनके उत्तराधिकारी सातकर्णि हुए। (वायु और विष्णुपुराण) परन्तु भागवतने कृष्णके उत्तराधिकारीका शान्तकर्ण नाम लिखा है। मत्स्यके मतमें कृष्ण और सातकर्णिके बीच तीन या उससे भी अधिक राजा हो गये।

नासिकके २२वें शिलाफलकमें लिखा है कि कृष्ण सातवाहनवंशीय नृपति थे। इनका समय ईसासे दो शताब्द पूर्व था। क्योंकि शिलाफलकके अक्षर बहुत प्राचीन हैं।

४४ दाक्षिणात्यमें कलचुरि राजवंशीय कल्याण शाखाके प्रतिष्ठाता। बेलगांवके दानपत्रोंमें लिखा है कि वह विष्णुका अवतार दूसरे कृष्ण थे और इन्होंने लड़कपनमें आश्चर्यजनक कार्य कर दिखाये। इनके पुत्र योगम उत्तराधिकारी हुवे और योगमके पीछे उनके पुत्र परमार्दी राज्याभिषिक्त किये गये। परमार्दीके पुत्रका नाम विजुन था।

जनार्दनके पुत्र लक्ष्मीदेवने कृष्णको राज्य अधिकार करनेमें बड़ा साहाय्य दिया था। इन्होंने बहुतसे यागयज्ञ किये और इस प्रकार वैदिक क्रियाको उत्तेजन दिया। इनकी अनुमतिसे बागवाड़ी ग्राममें बत्तीस ब्राह्मणोंको निष्कर भूमि मिली थी। कृष्णने प्राचीन संस्कृत कवियोंके श्लोकोंका सूक्तिमुक्तावली नामक एक संग्रह किया। इन्हींके शासनकाल अमलानन्दने वाचस्पति मिश्रकी भामतीपर वेदान्तकल्पतरु नामकी एक टीका लिखी थी। ११८२ शक या १२६० ई० को इनके भाई महादेवने राज्यका उत्तराधिकार पाया।

कहते हैं कृष्णने शिवके औरस और किसी ब्राह्मणीके गर्भसे जन्म लिया था। नापितके वेशमें जाकर राक्षसराज कालञ्जरका इन्होंने विनाश किया। इस प्रकार यह मध्यभारतमें नौ लाखका चेदिदेश पा गये।

१२४७-६० ई० को सिंहाना राजाका उत्तराधिकार कृष्णने पाया था।

४५ राष्ट्रकूट-नृपति कृष्णने एलोरामें चट्टानोंको काटकर शिवका आश्चर्यजनक मन्दिर बनाया।

राष्ट्रकूट-राज २य कृष्ण (८७७-९१५ ई०) कलिङ्ग और पूर्वचालुक्योंके विरुद्ध लड़े थे। परन्तु देखनेमें कोई सफलता न मिली।

राष्ट्रकूट-नृपति ३य कृष्णने (९४०-७१ ई०) चोलदेशमें बड़ी सफलता पायी थी। वहांकी शिलालिपिसे विदित होता है कि ३य कृष्ण उक्त देशके भागों पर पूर्ण राजत्व रखते थे। उत्तरअरकाट, तञ्जोर और

त्रिचिनापल्ली चोलोंके हाथसे निकल राष्ट्रकूटोंके अधिकारमें पहुंच गये। ९४९-५० ई० का अटकूर और महिसूरमें जो शिलाफलक मिला है, उसमें लिखा है—जब १म परान्तकके पुत्र राजादित्य चोलसे ३य कृष्ण लड रहे थे, इनके मित्र तलवाड़वाले पश्चिम गांगोंके २य बूतुगने (जिन्होंने कृष्णकी बहनसे व्याह कर लिया था) वर्त्तमान मन्द्राजसे अनतिदूर तक्कोल नामक स्थानमें धोखे से चोलराजको वध किया। इस काममें राष्ट्रकूट इतने प्रसन्न हुये, कि महिसुरके उत्तर कृष्णने बूतुगको बहुतसी भूमि जागीर दे डाली, जिसमें वनवासी और कई दूसरे जिले सम्मिलित थे। दूसरे शिलाफलकोंसे भी यह बात ठीक उतरती है।

४६ नागवंशीय एक राजा। यह सोपार पर ५०० नागोंके साथ जा चढ़े थे। परन्तु बुद्धने आगे जाकर सब नागोंको अपना धर्मावलम्बी बना डाला।

कृष्णक (सं० पु०) कृष्ण स्थूलादित्वात् कन्। स्थूलादिभ्यः प्रकारवचने कन्। पा ५।४।३। १ कृष्णसर्षप, लाही। २ कृष्ण मुद्ग, भटवांस। ३ कृष्णतण्डुला। (क्लो०) अनुकम्पितं कृष्णाजिनम् कृष्णाजिन-कन् अजिनस्य लोपः। ४ कृष्ण सार चर्म, काले हरिनका चमड़ा।

कृष्णकञ्चुक (सं० पु०) कृष्णचणक, काला चना।

कृष्णकदली (सं० स्त्री) महाराष्ट्रदेशका एक प्रसिद्ध केला। यह रुचि उत्पन्न करनेवाली, कसेली, हलकी, वात तथा धातु बढ़ानेवाली और प्रमेह, पित्त एवं प्यास मिटानेवाली है। (वैद्यकनिघण्टु)

कृष्णकन्द (सं० क्लो०) लाल कमल।

कृष्णकरवीर (सं० पु०) काले फूलका कनेर।

कृष्णकर्कट (सं० पु०) नित्यकर्मधा०। काला केकड़ा यह बल देनेवाला, कुछ गर्म और वातनाशक है। (सुश्रुत)

कृष्णकर्ण (सं० त्रि०) कालेकानवाला।

कृष्णकर्म (सं० क्लो०) १ पापका काम हिंसा आदि। २ घवकी चिकित्साकी कोई प्रक्रिया। (सुश्रुत) कृष्णे परब्रह्मणि अर्पितं कर्म, मध्यपदलोपी कर्मधा०। ३ फलकी कामना छोड़ ईश्वरके लिये किया जानेवाला काम। (त्रि०) कृष्णं मलिनं हिंसादिरूपं कर्म यस्य, बहुव्री०। ४ बुरा काम करनेवाला।

कृष्णकलि (सं० पु०) गुलअब्बास या गुलाबासका फूल और पेड़। कहीं कहीं इसे सन्ध्यामणि भी कहते हैं। इसका अरबी नाम जहर-उल् अजल, मिसरी जिब्बुल अजल, मलयी रब्बुत पलु कम्पत, तामिली वद्राच और सिंहली सेन्द्रिका हैं। इसकी शाखा गांठदार होती है। पत्ता छोटे पान-जैसा रहता है। फूल काला, सफेद और गुलाबी लगता है। फूलके ५ दल में ६ केशर आते हैं; गन्ध बहुत मन्द नहीं होता। सन्ध्याके समय फूल खिलता है। वीज मिर्च जैसा होता है। यह फूल सब ऋतुओंमें फूला करता है। परन्तु वर्षाकालको बहुत फूल उतरते हैं। इसके बीज और मूलसे पेड़ उपजता है। पत्ती और जड़ पीस कर लगा देनेसे फोड़ा फूट जाता है। (वैद्यकनिघण्टु)

कृष्णकवि—१ ताराशशाङ्क नामक संस्कृत काव्य बनानेवाले। यह नारायणके पुत्र थे। २ भागवत कृष्ण कवि नामसे प्रसिद्ध एक ग्रन्थकार। इन्होंने शर्मिष्ठा-ययाति नामक एक संस्कृत नाटक बनाया है। ३ शेष-कृष्ण कहलानेवाले कोई संस्कृत ग्रन्थकार। यह नृसिंहके पुत्र रहे। इनके रचित उषापरिणय चम्पू, कंसवध-नाटक, क्रियागोपनकाव्य, पारिजातहरणचम्पू, मुरारी-विजयनाटक, सत्यभामापरिणय, सत्यभामाविलास नाटक आदि ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं।

कृष्णकवीन्द्र—यमकशिखामणि व्याख्या नामका संस्कृत ग्रन्थ बनानेवाले।

कृष्णका (सं० स्त्री०) राई।

कृष्णकाक (सं० पु०) काला कौवा।

कृष्णकातरा (सं० स्त्री०) लाल घुंघची।

कृष्णकान्तन्यायरत्न—एक विख्यात नैयायिक और वेदान्तिक पण्डित। इन्होंने ब्रह्मानन्दसरस्वतीके रचित न्यायरत्नावली पर न्यायरत्नप्रकाशिका और शब्दशक्ति-प्रकाशिका नामकी टीका लिखी है।

कृष्णकान्त भादुड़ी (रससागर)—एक बङ्गाली कवि। बंगला सन् ११९८ को इन्होंने नदिया जिलेके वाड़ेबांका गांमें जन्म लिया था। संस्कृत, हिन्दी, फारसी और उर्दू इनकी पढ़ी थी। कृष्णनगरके राजा गिरीशचन्द्रके यह एक सभासद और वेतनभोगी रहे। इन्हें समस्या

पूर्तिमें भी अच्छी योग्यता थी। राजाने इनकी कवित्व शक्तिसे सन्तुष्ट हो 'रससागर' उपाधि दिया था। कृष्णनगरमें ही इनका विवाह हुवा। बंगला सन् १२५१ को ५३ वर्षकी अवस्था पर शान्तिपुरमें दामादके घर कृष्णकान्त कालग्रासमें पड़ गये।

कृष्णकान्तवसु—रङ्गपुरके डेविड स्काट साहबके तहसीलदार। १८१५ ई० को भूटानी और अंगरेजी प्रदेशका किसी सीमा पर झगड़ा उठ खड़ा हुवा। सीमानिर्धारणके लिये स्काट साहबने गवर्नमेण्टके कहनेसे कृष्णकान्तको दूत बना कर भूटान भेजा था। कृष्णकान्त भूटान राज्यका विवरण संग्रह कर लिखते रहे; स्काट साहबने उसीको अंगरेजीमें अनुवाद करके भूटान राज्यके इतिहास नामसे छपा दिया।

(Asiatic Researches, Vol. XV.)

कृष्णकापोती (सं० स्त्री०) एक महौषधि। यह मधुर रस, दूधिया, रुयेंदार और मृदु होती है। (सुश्रुत)

कृष्णकाय (सं० पु०) कृष्णः कायोऽस्य, बहुव्री०। १ भैंसा। कृष्णस्य कायः, ६-तत्। २ कृष्णका शरीर। कृष्णश्चासौ कायश्चेति, कर्मधा०। ३ काला शरीर।

कृष्णकाष्ठ (सं० क्ली०) कृष्णं काष्ठमस्य, बहुव्री०। काला अगर।

कृष्णकीर्तन (सं० क्ली०) कृष्णस्य कीर्तनम्, ६-तत्। कृष्णके यशका गान। साधारणतः इसे कीर्तन ही कहा करते हैं। अच्छे लय और राग तथा स्वरके संयोगसे सङ्गीतालाप द्वारा देवदेवीकी लीला वर्णना भी कीर्तन कहाती है। परन्तु प्रति दिनकी बोल चालमें कीर्तनसे कृष्णकीर्तनका ही बोध होता है। कीर्तनके कई भेद हैं—(१) असली कीर्तन, ढप*, सङ्कीर्तन और नगरकीर्तन। प्रायः सब प्रकारके कीर्तनोंमें कृष्णलीलाके भी गीत गाये जाते हैं। असली और ढपके कीर्तनमें मान, माथुर और गोष्ठ आदि पालेका नियम बंधा है।† परन्तु कीर्तन और नगरकीर्तनका वैसा नियम नहीं। सङ्कीर्तन और नगरकीर्तन गानेमें साधारणतः कृष्णलीला-घटित भक्ति और रसादिका वर्णन बहुत है। उसमें भी भक्तिरसके ही गीत अधिक हैं।‡ कीर्तनमें जितने प्रकारका गान रहता, उसमें असली कीर्तन सबसे कठिन, मधुर और प्राचीन लगता है। ढप उससे सीधा और अप्राचीन है। सङ्कीर्तन और नगरकीर्तन यद्यपि अप्राचीन हीं हैं, उसमें कवित्वभाव और रागस्वरका गुण अल्प ही मिलता है। ऊपर लिखे कीर्तनके कई विभागोंको छोड़ एक टहल नामका भी गाना है। उसका वृन्दावन आदि तीर्थोंमें अधिक प्रचार है।

* ढपका अर्थ प्रकार अर्थात् ठीक कीर्तन नहीं निकलती, परन्तु उससे मिलता-जुलता है। ढपमें असली कीर्तनकी भांति दान मान आदिकी बारी रहती है।

† व्रजकी लीलामें एकबार श्रीकृष्णने कालिन्दीके कूलपर अपने आप नावके मझाह बन गोपियोंको पार ले जानेमें जो क्रीड़ाकौतुक किया था। उसको कीर्तन करनेवाले दानखण्ड कहते हैं। दानखण्डका संक्षेपवाचक शब्द दान है। दूसरे महारानी राधा एकबार रातको अभिसारिका हो श्रीकृष्णसे मिलनेकी कामनामें निकुञ्ज पहुंच कर वासकसज्जा हुईं। कृष्ण वहां जाते रहे थे। परन्तु राहमें चन्द्रावलीने उन्हें रोक लिया और निकुञ्जमें ले जाकर निशियापन किया। इधर राधा महारानी कृष्णके विरहमें उत्कण्ठिता और विप्रलब्धा हो धराशायिनी थीं। ऐसेही समय सबेरे कृष्ण रातमें जागनेसे आंखें लाल किये और अपना वेश बिगाड़े उनके कुञ्जमें जा पहुंचे। राधिका पहले अधीरा और पीछे खण्डिता हो दुर्जय मान करके बैठ गयी। श्रीकृष्णने उसी मानको तोड़नेके लिये चिकनी चुपड़ी बातें कही थीं और अन्तमें काम न निकलने पर वहांसे प्रस्थान किया था। फिर महारानीने कलहन्तारिता हो योगीवेश धारण करके आर्तनाद, विलाप और अनुताप लगाया। इसके पीछे कृष्णने योगीवेशमें कौशल और छलसे उनके मानकी भिक्षा मांगी थी। ऊपर लिखी बातोंके सविस्तार वर्णनका नाम ही "मान" है।

मथुराके राजा कंसको मार श्रीकृष्ण पितामाताको छुड़ानेके लिये मधुपुर गये, परन्तु व्रजको पीछे न फिरे इससे व्रजकी स्त्रियां विरहसे बहुत जल उठीं और विरहके कारण राधिकाकी दशप्रकारकी अवस्था देख उनकी सहचरियां मथुरा पहुंच आत्मनिवेदन तथा भर्त्सना करने लगी। ऊपर लिखी वर्णनाको ही कृष्णकीर्तनमें माथुर कहते हैं। कीर्तनमें माथुरकी भांति गाढ़े रससे भरा पाला दूसरा नहीं। माथुरमें सखियोंकी बात और श्रीकृष्णकी गिड़ गिड़ाहट बहुत अच्छी प्रकार लिखी गयी है। सन्देह है—किसी दूसरी भाषामें ऐसा भावयुक्त रसपूर्ण कवित्व प्रकाशित हुवा है या नहीं।

‡ गोष्ठमें यह बात लिखी है—कैसे वृन्दावनमें रखवालेके वेशसे श्रीकृष्णने गायें चरायीं, कंसके भेजे दूत अघासुर आदि असुरोंको मारा और कालिय-दमन आदि लीलायें कीं। गोष्ठमें वात्सल्य और करुण रसके पद बहुत हैं। शान्त, दास्य, सख्य, वात्सल्य और मधुर—पांच भावोंसे भक्त श्रीकृष्णकी व्रजलीला और व्रजविहार गाया करते हैं। उसमें अक्रूर संवाद और प्रभासादि नानाप्रकार करुणरसपूर्ण अङ्ग हैं।

नहीं कह सकते—कितने दिनसे कीर्तनके गीत भारतमें चल पड़े हैं। परन्तु दिल्ली आदि राजदरबारों-के प्रसिद्ध ध्रुवपद गानेवालोंने असली कीर्तन सुनके कई बार बड़ी प्रशंसा की है। विदित होता है कि असली कीर्तनकी भांति मधुर सङ्गीत और दूसरा नहीं। उसमें सङ्गीत और साहित्य दोनों रस एकमें ही मिले हैं। रसकी ऐसी मधुरता उर्दू, फारसी या अंगरेजी किसी भाषामें मिलना कठिन है। कीर्तनको सुनके गाना बजाना न जाननेवाला भी पिघल उठता है।

कृष्णकुटज (सं० पु०) काले फूलकी कुटकीका पेड़।

कृष्णकुमारी—राजपूतानेके अन्तर्गत मेवाड़के राणा भीमसिंह की कन्या। १७७८ ई० को भीमसिंह मेवाड़के सिंहासन पर बैठे थे। अनहिलवाड़के पुराने राजवंशीय चौहानोंकी कन्या उनकी रानी रहीं। उन्हींके गर्भसे कृष्णकुमारीने जन्म लिया। कृष्ण-कुमारीका रूप बहुत सुन्दर था। उनके रूपने जवानीमें खिलके उन्हें और भी शोभाका घर बना दिया था। इसीसे लोग उन्हें राजपूतानेमें 'फुल्लनलिनी' कहते थे। कन्या विवाहके योग्य हो गयी। राणाने जयपुरके राजा जगत्‌सिंहके साथ उनका विवाह करना विचारा था। राजा जगत्‌सिंहने भी यह बात मान ली। उन्होंने भीमसिंहके पास भेंट भेजी थी। फिर वह अपने आप भी सहस्र सैन्य ले जयपुरके पास शाहपुरमें आकर रहने लगे। भीमसिंहने भी भेंटके बदलेमें बहु-मूल्य द्रव्यादि उनके पास पहुंचाये थे। इसी प्रकार विवाह पक्का हो गया।

कृष्णकुमारीके रूपलावण्यकी बात राजपूतानेके सभी लोग सुन चुके थे। देशके दूसरे दूसरे राजावोंके भी मनमें उन्हें लाभ करनेकी वासना रही। किन्तु उन्हें अपने मनकी बात कहनेका सुयोग न मिला। जयपुरके राजा जगत्‌सिंह विवाहके लिये शाहपुरामें जाकर रहने ही लगे थे। इससे ईर्षापर-वश हो मारवाड़के राजा मानसिंह कृष्णकुमारीको पानेके लिये घबरा उठे। मारवाड़के भूतपूर्व राजाके साथ इससे पहले एक बार कृष्णकुमारीका विवाह पक्का हो चुका था; इस समय मानसिंह उसी राज्यके अधी-श्वर रहे। इस लिये कुमारी उन्हींको प्राप्य थीं। इसी प्रकार हेतुवाद दिखा कर भीमसिंहको उन्होंने लिखा भेजा—'यदि आप हमें कन्या न देंगे, तो हम जय-पुरके राजा जगत्‌सिंहके साथ विवाह करनेमें बड़ा झगड़ा लगायेंगे।' इधर भीमसिंह मानसिंहको कन्या देना चाहते न थे।

मारवाड़के सरदारोंने अपनी स्वार्थसिद्धिके लिये मानसिंहको और भी उभारा था। इधर चन्द्रावत् स्थानके सरदार अजितसिंहको उत्कोच (रिशवत) दे राणाको भी भड़काने लगे। किन्तु भीमसिंहने किसी प्रकार मानसिंहकी बात न मानी। महा-राष्ट्रोंके नेता सेंधियाने जयपुरके राजा जगत्‌सिंहसे रुपया मांगा भेजा था, किन्तु उन्होंने देना अस्वीकार किया। इस पर सेंधियाने क्रोधसे आग बबूला हो विवाहमें बाधा डालनेकी ठान ली। उन्होंने राणा भीम-सिंहको कहला भेजा था—'जयपुरराजके दूतको विदा कर मारवाड़के राजा मानसिंहके साथ अपनी कन्याका विवाह कर दीजिये।' भीमसिंह बलहीन रहते भी सेंधियाके प्रस्ताव पर सम्मत न हुए। फिर सेंधिया ८ सहस्र सैन्य ले जयपुर पहुंचे थे। पहाड़ी राहमें मेवाड़ और जयपुरकी सेनाने मिलकर उन्हें रोका। परन्तु सेंधिया उस सारी सेनाको अतिक्रम करके जयपुरके पास पहुंच अपनी छावनी डाल दी। एका-एक भीमसिंहने जयपुरके दूतको विदा किया।

इधर जयपुरके राजा जगत्‌सिंहने भग्नमनोरथ और अपमानित हो असंख्य सैन्यसंग्रह किया था। मारवाड़के राजा ही इस अनर्थके मूल थे। इसीसे पहले जगत्‌सिंहने वह बड़ी सेना मानसिंहके विरुद्ध मारवाड़को चलायी थी। परन्तु अन्तमें हारके उन्हें भागना पड़ा। मानसिंहने अपनी पहली टेक उस समय भी छोड़ी न थी। उन्होंने नृशंस नवाब अमीर-खान्‌को भीमसिंहके पास भेज दिया। अमीरखान्‌के ससैन्य उदयपुर जानेमें अजितसिंह उनके साथ हो गये। अमीरखान्‌ने मारवाड़के राजा मानसिंहके साथ कृष्णकुमारीके विवाह करनेकी बात कही थी।

राणा भीमसिंहके उस पर असम्मत होने पर उनके भाईबन्धोंने उन्हें समझाया—'यदि आप ऐसा करना नहीं चाहते तो यही अच्छा है कि कृष्णाकुमारीको मार डालिये।' भीमसिंहने सोचा—यदि हम मारवाड़के राजाको कन्या नहीं देते, तो मुसलमान सैन्य हमारा राज्य बिगाड़ देंगे। इसीसे उन्होंने अन्तमें कन्याको मार डालना ही ठहरा लिया।

पहले राणा भीमसिंहके पितामहके भाईके वंशके महाराज दौलतसिंहको कृष्णाकुमारीके मारनेका काम सौंपा गया था। परन्तु दौलतसिंहकी इच्छा न देख वह काम कृष्णाकुमारीके भाई जवानदासके हाथ लगा। जवानदाससे कहा गया था—'राजकुमारीके मारनेका काम किसी साधारण घातक (जल्लाद)-के हाथ कराना ठीक नहीं। जब मार डालनेको छोड़ दूसरी कोई गति नहीं, तब यह काम किसी घरवालेको ही करना पड़ेगा। जवानसिंहने अगत्या स्वीकार कर लिया। वह तलवार हाथमें लिये कन्याको मारने चले थे। किन्तु कृष्णाकुमारीको देखते ही वह रो उठे और तलवार हाथसे गिर पड़ी। वह यह देख कर सन्तुष्ट हुए कि बहनके प्राण बच गये। परन्तु काम पूरा न होनेसे उन्हें बड़ा दुःख हुवा और वहांसे भागना पड़ा। उस समय महारानी सब बातें समझ बूझ कन्याके प्राणकी भिक्षा मांगती हुई फूट फूट कर रोने लगी। उस हृदयभेदी स्वरसे राजप्रासाद मानो फटा जाता था। उस समय हथियारसे मारनेकी बात छोड़ दी गयी और विष देनेका उद्योग होने लगा। परन्तु विष कौन खिलाता पिलाता! भीमसिंहकी बहन चांदबाईसे सब बात समझा कर बतायी गयी। चांदबाईने विषका प्याला ले कृष्णाको दिया और कहा था—'बेटी! अपने बापके सम्मानकी रक्षा करो। अपने वंशकी मर्यादा बचाओ। मानकी चालसे राणा जिस घोर सङ्कटमें पड़ गये हैं, उससे उन्हें छुड़ाओ।' कृष्णाने यह सुनके विषको ले लिया कि उनके पिताने भेजा था। भगवान्‌से पिताके मङ्गलकी कामना करके वह विष पी गयीं। उनकी माता रोने लगीं। उस समय उन्होंने माताको समझा कर कहा था—'माता! जीवन तो दुःखमय होता है। उसी जीवनके मिटने पर क्या दुःख है। तुम्हारी लड़की होकर क्या मैं मरनेसे डरूंगी? जन्म लेने पीछे ही हमे बलि चढ़ाया जाता है। मैं तो बहुत दिन बची।' कृष्णा इसीप्रकार मातासे बात चीत करने लगीं। परन्तु हलाहलने मानो उनके शरीरमें अपना स्वभाव भर दिया था। विषसे कोई फल न निकला। यह संवाद अमीरखान् पाठान् और राजपूत-कलङ्क अजित्‌ने सुना था। उन्होंने कुसुम्भा नामक एक पानीय बनवाया। कई फूलों और पेड़ोंसे बने एक प्रकारके शर्बतमें अफीम मिलानेसे कुसुम्भा तैयार होता है। वही शर्बत कृष्णाके पास भेजा गया। उन्होंने हंसते हंसते उसे पीकर कहा था—'भगवान्‌ने हमारे भाग्यमें यही विवाह लिखा है।' थोड़ी देर पीछे ही गाढ़ी नींदने आकर उन्हें अवसन्न कर दिया और इस जन्ममें उन्हें फिर उठने न दिया। १८१० ई० को यह घटना हुई थी। उस समय कृष्णाकी अवस्था १६ वर्षकी रही।

कृष्णाके विष पीकर मरनेकी बात विना विलम्बके उदयपुरमें चारो ओर फैल गयी। नगरमें हा हाकार पड़ा था। सबकी श्रद्धा राणा परसे उठ गयी और लोग गालियोंकी बौछार करने लगे। यहां तक कि नृशंस अमीरखान् भी घबराये थे। अजितसिंहने जब यह संवाद उनको सुनाया, अमीरखान् कहने लगे—'क्या यही तुम्हारा राजपूत वीरत्व है।' फिर अमीरखान्‌ने अपने सामनेसे उन्हें हटा दिया और शीघ्र उदयपुर छोड़ प्रस्थान किया था।

इस घटनाके ४ दिन पीछे करादरके सामन्त संग्रामसिंह उदयपुर जा पहुंचे। वह एकबारगी घोड़े परसे उतरते ही भीमसिंहके सामने गये और उनसे पूछने लगे—'राजकुमारी जीती हैं या मर गयीं'? अजित्‌सिंहने संग्रामको उत्तर दिया था—'मरी लड़कीकी बात छेड़ कर फिर बापको कष्ट देनेसे क्या मिलना है?' उस समय संग्रामसिंह अपनी तलवार कमरसे निकाल और म्यानके साथ उसे भीमसिंहके चरणोंपर रख कहने लगे—'हमारे पुरखोंने ३० पीढ़ी तक आपके राजसंसारके लिये तलवार पकड़ी है। हम

खोल कर कह नहीं सकते, हमारे मनमें क्या आती जाती है। इस तलवारको लीजिये। आपकी सेवाके लिये अब यह न चलेगी।' इसके पीछे उन्होंने अजित्सिंहकी ओर देख कर कहा था—'पापिष्ठ! सैकड़ों वर्षके पवित्र सिसोदिया वंशमें आज तूने कालिख लगा दी। जन्मकी भांति सिसोदिया घरानेका मुंह लटक गया। इस पापका प्रायश्चित्त नहीं है। अब स्पष्ट समझ पड़ता है कि बप्पारावका घराना शेष हो गया।' भीमसिंह हाथसे मुंह मूंद रोने लगे। संग्रामसिंहने फिर कहा—'सिसोदिया वंशके कलङ्कस्वरूप राजपूत-कुलग्लानि तूने हमें बड़े कलङ्कमें डाल दिया। निर्वंश हो जा, तेरा नाम मिटसा जाये। अपने स्वार्थके लिये इतना यत्न! पठान क्या नगर पर चढ़ आये थे? उन्होंने घरके भीतरकी स्त्रियोंको उठा ले जानेका उद्योग तो नहीं किया था? फिर यदि वही होता, तो तेरे पुरखे जिस प्रकार मरे थे, तू भी क्यों न मरा? हमारा वंश शेष हो गया है।' राणा मुंह लटकाये बैठे रहे। इस घटनाके ८ वर्ष पीछे संग्रामसिंह स्वर्गवासी हुए। परन्तु उनकी भविष्यद्वाणी मिथ्या न निकली। कृष्णाकी माता कन्याके शोकमें खाना पीना छोड़ थोड़े दिन पीछे ही मर गयीं। भीमसिंहके ९६ बेटी बेटोंमें केवल कृष्णाकुमारीके भाईको छोड़ कोई बचा न था। १८२१ ई० को मेजर जनरल मैलकलमने उदयपुर जा कृष्णाके भाई जवानसिंहको देखा भाला। उन्होंने सुना कि युवराजका रूप रंग कृष्णासे बहुत मिलता जुलता था। साहबने युवराजके रूपकी बड़ी प्रशंसा की। कृष्णा कुमारीके मरने पर एक मास पीछे अजितसिंहकी स्त्री और २ पुत्र मर गये। अन्तमें अजित संसार छोड़ ईश्वरका नाम लेते तीर्थोंमें घूमने लगे।

कृष्णाकुलत्थ (सं० पु०) काली कुलथी। यह ग्राही, रक्त-पित्तकर, रसमें कषाय, पाकमें कटु, वातहर तथा वात, शुक्र, अश्मरी, गुल्म, पीनस, श्वास एवं कासको जीतने और आनाह, गुदकील, अर्श तथा मेद धातुको नाश करनेवाला है। (वैद्यकनिघण्ट)

कृष्णकुलत्थिका (सं० स्त्री०) जंगली कुलथी।

कृष्णाकुसुम (सं० पु०) काला कनेर।

कृष्णकेलि (सं० पु०) गुलाबासका पेड़।

कृष्णकोहल (सं० पु०) कृष्णं कोह-ला-क। जुआरी।

कृष्णगङ्गा (सं० स्त्री०) नित्यकर्मधा०। कृष्णा नदी।

कृष्णगञ्ज—१ बङ्गालके नदिया जिलेका एक थाना और नगर। वह अक्षा० २३° २५´ उ० और देशा० ८८° ४५´ पू० पर माथाभांगा नदीके बायें कूलपर अवस्थित है। यहां वाणिज्य बहुत चलता है। राजा कृष्णचन्द्रने यह नगर बसाया था। २ पुरनिया जिलेके कृष्णगञ्ज उपविभागका प्रधान नगर। वह अक्षा० २६° ६´ २८´ उ० और देशा० ८७° ५८´ १३´´ पू० पर दारजिलिङ्ग जानेके बड़े रास्तेके किनारे अवस्थित है। यहां डाक घर, थाना और स्कूल बना है। ३ विहारके भागलपुर जिलेके अन्तर्गत छोई परगनेके बीचका एक नगर। वह अक्षा० २५° ४१´ १०´´ उ० और देशा० ८६° ५८´ २०´´ पू० में भागलपुर शहरसे १६॥ कोस उत्तर पड़ता है। यहां अधिकांश व्यवसायी बणिकोंका बास है। बड़ा बाजार और थाना विद्यमान हैं।

कृष्णगढ़—राजपूतानेका एक राज्य। वह अक्षा० २५° ४९´ से २६°५८´ उ० और देशा० ७०° ४´ से ७५°११´ पू० तक विस्तृत है। क्षेत्रफल ८५८ वर्गमील है। लोकसंख्या प्रायः १०५००० होगी। यह राज्य अंगरेजोंकी राजपूताना एजेन्सीके अधीन है। कृष्णगढ़ ही इसका प्रधान नगर है।

कृष्णसिंहसे इस राज्यका नाम कृष्णगढ़ पड़ा है। कृष्णसिंह योधपुर-महाराज उदयसिंहके दूसरे लड़के थे। उन्होंने बापका राज्य छोड़ इस प्रदेशको ले लिया। कृष्णसिंहने १५९४ ई० को बादशाह अकबरसे अपने नामकी सनद पायी थी। उस समयसे उन्हींका वंश कृष्णगढ़ राजत्व करते चला आता है। १८१८ ई० को जब अंगरेज सरकारने पिण्डारी लुटेरोंको दबानेकी ठानी थी, इस वंशके राजा कल्याणसिंहके साथ एक सन्धि की गयी। उससे राज्यकी रक्षाका भार गवर्नमेण्टने अपने हाथमें ले लिया। यह ठहर गया था कि विना गवर्नमेण्टके कहे महाराज किसीको राज्यके सम्बन्धमें चिट्ठी पत्री लिख न सकेंगे। १८२५ ई० को राजाके मनमें आया कि राज्यके भीतरी कामोंमें अंगरेज

सरकार हस्तक्षेप करती है। इसी बात पर वह दिल्ली गये। परन्तु जब उनको समझा कर बता दिया गया कि अंगरेज सरकारका वह उद्देश्य न था, महाराज वहांसे लौट आये। लोगोंने उन्हें सनकी समझा था। राज्यमें उनके दो नौकर बहुत बढ़ निकले। उनको दबानेके लिये सैन्य भेज महाराजने फिर दिल्लीको यात्रा की थी। इधर राज्यमें विशृङ्खला बढ़ गयी और अन्तको विद्रोहियोंका दल अंगरेजी अधिकारमें जाकर लूट मार करने लगा। इस पर गवर्नमेण्टको हस्तक्षेप करना पड़ा था। विद्रोहियोंको कहला भेजा गया कि अंगरेजोंसे झगड़ेका कारण बताने पर वह मीमांसा कर देंगे। महाराज कल्याणसिंहसे भी राज्यको लौट जानेके लिये कहा गया था। दूसरे यह कि यदि वह लौट न जायेंगे, तो गवर्नमेण्ट पहली सन्धि रद करके विद्रोही ठाकुरोंसे नयी सन्धि कर लेगी। महाराज भयसे कृष्णगढ़ जा राजत्व करने लगे। किन्तु राज्यकी भीतरी अवस्था देख उनका मन डावांडोल हो गया। उन्होंने अपना राज्य गवर्नमेण्टको बन्दोबस्तके लिये देना चाहा था। इसमें गवर्नमेण्ट सम्मत न हुई। महाराज कृष्णगढ़ छोड़ अजमेर चले गये। राज्यके बड़े बड़े लोगोंने मिल कर उनके लड़केको राजा बनाया था। अन्तको अंगरेज सरकारके पोलिटिकल एजण्टने बीचमें पड़ झगड़ा मिटा दिया। परन्तु कल्याणसिंह राज्यका काम कर न सकते थे। १८३२ ई० को अपने लड़के मखदूमसिंहको राज्यका भार सौंप और ३६०००) रु० वार्षिक वृत्ति ले वह अंगरेजी राज्यमें रहने लगे। महाराज मखदूमसिंहने पृथ्वीसिंह बहादुरको गोद लिया था। १८३५ ई०को पृथ्वीसिंहका जन्म हुवा और १८४० ई०को उन्हें राज्य मिला। कृष्णगढ़के राजाका लड़का गोद लेनेका अधिकार है। १८७९ ई०को उनकी मृत्यु हुई और उनके ज्येष्ठपुत्र शार्दूलसिंह गद्दीनशीन हुए। १९०० ई०का शार्दूलसिंहको भी मृत्यु हो गई। उनके एकमात्र पुत्र वर्तमानकालीन Lt-Col. महाराजाधिराज महाराज सर मदनसिंहजी बहादुर K. C. S. I., K. C. I. E., राजा हैं। उन्हें अंगरेज गवर्नमेण्टसे १५ तोपकी सलामी मिलती है।

कृष्णगढ़में अनाज आदि अच्छा नहीं उपजता। पहाड़ी जमीनके बीच बीच ऊंचे पहाड़ हैं और उनमें जंगल बहुत हैं। इस राज्यकी आमदनी ४ लाख रुपया थी। कृष्णगढ़ राज्यकी ओरसे राजपूताना ष्टेट रेलवे निकली है। रेलवे चलने और आमदनी तथा रफतनीका महसूल उठ जानेसे राजत्वको बड़ी क्षति पहुंची है। गवर्नमेण्ट वर्षमें २५०००) रु० दिया करती है। यह कर राजाको देना नहीं पड़ता। महाराजके पास स्थायी ८४ सवार, १२६ पैदल, ६५ तोप और २५ गोलन्दाज हैं और अस्थायी ८३६ सवार, ९०३ पैदल हैं।

कृष्णागतरोग (सं० पु०) आंखका एक रोग। इस रोग पर सुश्रुतमें इस प्रकार लिखा है—चक्षुमें कृष्णगत सव्रणशुक्र, अव्रणशुक्र, पाकात्यय और अजका चार प्रकारका विकार अर्थात् रोग उत्पन्न होता है। कालीपुतलीमें सूई जैसी चुभने, गर्म ढलका बहने और अतिशय वेदना उठनेसे सव्रणशुक्र कहाता है। यह रोग यदि दृष्टिके निकटवर्ती स्थान पर नहीं होता, हलका रहता और ढलका नहीं बहता या थोड़ा नहीं करता एवं युग्मशुक्र नहीं पड़ता तो आरोग्य होनेकी आशा पर पानी फिरता है।

कालीपुतलीमें सफेद, बहनेवाला, थोड़ा थोड़ा दुखनेवाला और आंसू लानेवाला बादलके टुकड़े जैसा शुक्र निकलनेसे अव्रणशुक्र कहाता है। अव्रणशुक्र गम्भीर रहनेसे कष्टसाध्य है। शुक्र मांससे घिरा, बीचमें फटा, चञ्चल, सिरासे लगा हुवा, दृष्टिको रोकनेवाला, दोनों खालोंको काट डालनेवाला, बीचमें लाल और थोड़ा थोड़ा उभरनेवाला होने पर भी असाध्य है, इसका प्रतीकार नहीं कर सकते। कालीपुतलीमें कभी कभी मटर—जैसा कीचड़ निकल आता और उसमें फोड़ा उठनेसे उष्ण अश्रुपात लग जाता है। इसको भी असाध्य ही समझना चाहिये। शुक्रको तीतरके परों जैसा होनेसे कोई कोई असाध्य बताया करता है। कालीपुतली सफेदीसे घिर जाने पर अधि-

पाकात्यय कहते हैं। यह तीव्ररोग नेत्रके कोपसे उत्पन्न होता है। पीड़ा होने और बकरीकी मिंगनी जैसी लाल गांठ कालीपुतलीको फोड़ कर निकलनेसे अजका रोग समझा जाता है। (सुश्रुत)

कृष्णगति (सं० पु०) अग्नि। (महाभारत, अनु० ८५ अ०)

कृष्णगन्धा (सं० स्त्री०) शोभाञ्जनवृक्ष, सैंजनका पेड़। इसको परिसर्प (छलके कोढ़) श्वाथ अपररोग पर लगाना चाहिये। (चरक)

कृष्णगन्धिका (सं० स्त्री०) शोभाञ्जन, सैंजन।

कृष्णगर्भ (सं० पु०) कट्फलवृक्ष, कायफल।

कृष्णगर्भा (सं० स्त्री०) कृष्णा नामक असुरकी भार्या। (ऋक् १।१०१।१)

कृष्णगल (सं० पु०) कुक्कुभपक्षी, जंगली मुर्गा।

कृष्णगिरि—मन्द्राज प्रदेशस्थ सालेम जिलेके कृष्णगिरि तालुकका प्रधान नगर। यह अक्षा० १२° ३१′ उ० तथा देशा० ७८° १३′ पू० पर अवस्थित और नये एवं पुराने दो भागोंमें विभक्त है। नये कृष्णगिरिका दूसरा नाम दौलताबाद है। दोनों स्थानोंमें अच्छी पक्की सड़कें और मकान हैं। उत्तरको ओर ७०० फोट ऊंचा दुर्गका पहाड़ है। यहां टूटा फूटा प्राकार और सैन्यके रहनेका स्थान पड़ा है। कृष्णगिरिका पुराना दुर्ग सहजमें टूटनेवाला न था। १७६७ और १७९१ ई० को अंगरेजो सैन्यने कई बार दुर्ग ले लेनेकी चेष्टा की थी, परन्तु उसके दांत खट्टे हो गये।

कृष्णगुरु—मणिभावप्रकाश नामक वेदान्तिक ग्रन्थकार।

कृष्णगुप्त—गुप्तवंशके एक राजा। यह गुप्तराज आदित्यसेनके ८वें पूर्वपुरुष थे। किसी किसीके मतमें ४७५ और ५०० ई० के बीच कृष्णगुप्त विद्यमान रहे। सिन्धुनदके पश्चिम पार इसमथार नामक स्थानमें गुहाके बीच कृष्णगुप्तकी खोदी लिपि निकली है।

कृष्णगोकर्णी (सं० स्त्री०) काले फूलकी मूर्वालता, काला मुरहरा। यह तीतो, चिकनी, शीतवीर्य और त्रिदोष, वात, पित्त, ज्वर, दाह, भ्रम, कास, श्वास, कफ, कुष्ठ, क्षय, रक्तातिसार, उन्माद और पिशाचकी बाधा दूर करनेवाली है। (वैद्यकनिघण्टु)

कृष्णगोधा (सं० स्त्री०) एक विषैला सौम्य कीड़ा। इसके काटनेसे श्लेष्माका रोग उठ खड़ा होता है। (सुश्रुत)

कृष्णग्रीव (सं० पु०) १ नीलकण्ठ, महादेव। (त्रि०) २ काले गलेवाला। (शुक्लयजुः, २४।१) काले गलेका पशु अश्वमेध यज्ञमें काम आता है।

कृष्णचन्द्रवर्ती—ज्योतिःसूत्र नामक संस्कृत ग्रन्थके प्रणेता। इस ग्रन्थमें राशि, लग्न, नक्षत्रविभाग, ग्रहदृष्टि, गोचरशुद्धि, यात्रिकलग्न और भूमिकम्प आदि निरूपित हुवा है।

कृष्णचञ्चुक (सं० पु०) काला चना।

कृष्णचणक (सं० पु०) काले चनेका पेड़। यह मधुर, बल्य, रसायन और कास, पित्त तथा पित्तातिसारको दूर करनेवाला है। (राजनिघण्टु)

कृष्णचतुर्दशी (सं० स्त्री०) कृष्णा कृष्णपक्षीया चतुर्दशी। काले पाखकी चौदस।

कृष्णचन्दन (सं० क्ली०) कृष्णप्रियं चन्दनम्, शाकपार्थिववत् कर्मधा०। १ हरिचन्दन। कृष्णं चन्दनञ्चेति, कर्मधा०। २ काला चन्दन।

कृष्णचन्द्र—१ वासुदेव। [कृष्ण देखो] २ नवद्वीपके राजा रघुरामके लड़के। १७१० ई० (१६३२ शक) को कृष्णचन्द्रने जन्म लिया था। अपने लड़कपनमें शङ्करतरङ्गके कहनेसे उन्हें कालिदाससिद्धान्तके पास संस्कृत पढ़ना पड़ा। फारसी और बंगला वह समझते थे। उन्होंने विसरामखान् कलांवतसे गाना बजाना और मुजफ्फर हुसेनसे तीर चलाना भी सीखा था। कहते हैं कि रघुरामने मरते समय अपने सौतेले भाई रामगोपालको उत्तराधिकारी बनाना चाहा। अन्तको रामगोपाल और कृष्णचन्द्र दोनोंने चकलेदारीका पद पानेके लिये नवाबके पास दावा किया था। कृष्णचन्द्रने कौशलसे नवाबको बता दिया कि रामगोपाल तमाखू बहुत पीते थे और पीछे 'राजा' उपाधि और चकलेदारीका पद लाभ किया।

राजा कृष्णचन्द्रको जब राज्य मिला, सरकारी आमदनी और नजराना बहुत देना था। राजस्वके १० लाख और नजरानेके १२ लाख रुपये बाकी रहे।

उस समय अलीवर्दीखान् बङ्गालके नवाब थे। बरगियों (महाराष्ट्रोंने उनका राज्य लूट लिया। प्रजा बड़ी दुरवस्थामें पड़ी थी। उन्होंने कृष्णचन्द्रको अवरुद्ध किया। इस विपद्‌से छुड़ानेके लिये कोई कुछ भी उपाय कर न सका। रघुनन्दनमित्र नामक एक कायस्थ उस समय नदिया राजके दीवान रहे। उन्होंने कुछ दिनके लिये राजा कृष्णचन्द्रसे पूरा अधिकार ले लिया और राजाके दामाद, घराने तथा पोष्यवर्गका खर्च घटा दिया था यहां तक कि कुटम्ब, कर्मचारी और प्रजासे बाकी आमदनी खूब वसूल करने लगे। इससे वह सबके अप्रिय बन गये। परन्तु राजाका देना बहुतसा चुकता हुवा।

कृष्णचन्द्र मुरशिदाबादमें अवरुद्ध तो रहे परन्तु प्रतिदिन नवाबसे भेंट कर सकते थे। इस सुयोगसे दोनोंमें मित्रता स्थापित हुई। राजा कृष्णचन्द्र प्रतिदिन सन्ध्या कालको नवाबके पास जाते और उर्दूमें उन्हें महाभारत उलथा करके सुनाते थे। इतना मेल-जोल बढ़ते भी नवाब बाकी आमदनीको बात न भूले। अन्तको किसी दिन राजा कृष्णचन्द्र नवाबके साथ नाव पर बैठ कर चले थे। नवाबकी नाव पलासीके पास पहुंची। पलासी परगनेमें उससमय खेती बारी कुछ न थी। राजा कृष्णचन्द्र उंगली उठा कर कहने लगे—'हमारे सारे परगने ऐसे ही हैं। किसीमें पानी नहीं, किसीमें खेती नहीं, कोई जंगलसे भरा है और किसीकी भूमि अच्छी नहीं इसीसे हम राजस्व चुका न सके। फिर कृष्णचन्द्र पूर्वतटकी अवस्था भी उन्हें दिखाने लगे। यह देख कर अलीवर्दीखा(न)ने बाकी आमदनी माफ कर दी।

कृष्णचन्द्र महाराष्ट्रोंके उपद्रवन बचे रहनेको कृष्णनगरसे ६ कोस दूर इच्छामतीके पास एक स्थान चुनके वहांका जंगल कटवा 'शिवनिवास' नामक एक नगर बसाके वहां रहने लगे। उसके पीछे उन्होंने कृष्णगञ्ज, हरधाम और आनन्दधाम आदि कई दूसरे नगर भी स्थापन किये थे।

नवाब शीराज-उद्-दौलाका सर्वनाश करनेके लिये मीरजाफर आदिने जो अभिसन्धि लगायी, उसमें कृष्णचन्द्रने भी योग दिया था। उस समय वह कालीजीके दर्शनके बहाने कालीघाट गये और वहां क्लाइवसे मिले। फिर उन्होंने शीराजको राज्यसे हटानेके सम्बन्धमें बात चीत की थी। कृष्णचन्द्र नवाबी राजविप्लवके प्रवर्तक मन्त्री और प्रधान उद्योगी एक व्यक्ति रहे। इसीसे नवद्वीपमें उन्हें कोई कोई 'नमकहराम' कहता है।

जब मीरकासिमके साथ अंगरेजोंके युद्ध होनेका उपक्रम लगा, कासिमने कृष्णचन्द्रको अंगरेजोंका साथी समझ उनके पुत्र शिवचन्द्रके साथ मुंगेरके दुर्गमें बन्द किया था। उस समय उनके मरनेमें कोई बात बाकी न रही। परन्तु सप्ताहको शेष रात्रीको अन्नपूर्णादेवीने मातृरूप धारण करके उनसे स्वप्नमें कहा था—'कृष्णचन्द्र तुम्हें किसी बातका डर नहीं, तुम शीघ्र ही छूट जावोगे। परन्तु चैत्र सुदी अष्टमीको अन्नपूर्णाकी पूजा करना।' कहते हैं, बङ्गालमें उन्होंने सबसे पहले जगद्धात्रीपूजा चलायी है।

राजा कृष्णचन्द्र आत्मगौरव-वर्जित न रहे। बीच बीचमें सुयोग लगने पर वह दूसरेकी जमिन्दारी भी छीनके अपने कब्जे कर लेते थे। वह एक ओर तान्त्रिक और चैतन्यद्वेषी रहे। सुननेमें आया है कि समय समय पर अपने इष्टदेवताकी तुष्टिके लिये महाबलि भी चढ़ाते थे। कृष्णचन्द्र बहुतसे भले काम भी कर गये हैं। उन्होंने काशीकी प्रसिद्ध ज्ञानवापीका सोपान बनाया और शिवनिवासमें प्रायः १६ हाथ ऊंची शिवमूर्तिकी प्रतिष्ठा किया। वह अपने राज्यका चौथाईसे भी अधिक भाग ब्राह्मणोंको बेलगान दे डाला। इसका छोड़ उन्होंने अग्निहोत्री और बाजपेयी यज्ञ भी किया था। वह बड़े विद्योत्साही रहे। उनकी सभामें वाणीश्वरविद्यालङ्कार, कवि भारतचन्द्र राय, मुक्ताराम मुखोपाध्याय, गोपालभाँड़, हास्यार्णव आदि प्रसिद्ध व्यक्ति सर्वदा उपस्थित रहते थे। उस समय कृष्णचन्द्र बङ्ग-समाजमें सबसे बड़े गिने जाते थे।

उनके दो पत्नी रहीं। पहलीके गर्भसे शिवचन्द्र, भैरवचन्द्र, हरचन्द्र, महेशचन्द्र, ईशानचन्द्र और

दूसरीके गर्भसे शम्भुचन्द्रने जन्म लिया। १७८२ ई० को ७३ वर्षकी अवस्थामें कृष्णचन्द्र परलोक चले गये। अग्रद्वीप, भारतचन्द्र, कविरञ्जन, गोपालभाँड़, नवद्वीप आदि शब्दमें दूसरी बातें देखना चाहिये।

कृष्णचन्द्रका राज्य—नवद्वीप, अग्रद्वीप, चक्रद्वीप (चाकदह) और कुशद्वीप (कुशदह) चार भागोंमें विभक्त था।

राजा कृष्णचन्द्रके कहनेसे 'कृत्यराज' नामक धर्म-शास्त्र, काशीनाथकी लिखी हुई ताराभक्तितरङ्गिणी (संस्कृत), रामानन्दका आह्निकाचारराज (धर्मशास्त्र), भारतचन्द्र कर्तृक बंगला अन्नदामङ्गल आदि बहुतसे ग्रन्थ बने।

राजा कृष्णचन्द्रके समयके कागजपत्र पढ़नेसे मालूम होता है—कपिलमुनि और गङ्गासागर तक कृष्णचन्द्रका अधिकार रहा। उन्हींके अधिकारस्थ कलकत्ता शहरमें प्रसिद्ध हालवेल आदि साहब रहते थे और बीच बीचमें सलामी पर उनसे उनका झगड़ा लग जाता था।

३ कोई पुराने कवि। कविचन्द्रोदयने इनका नाम उद्धृत किया है। ४ ब्रह्मास्त्रपद्धति और भुवनेश्वरीरहस्य आदि ग्रन्थोंके रचयिता। ५ व्रतविवेकभास्करके प्रणेता। ६ राक्षसकाव्यके टीकाकार। ७ विवादभङ्गार्णवके सङ्कलन करनेवालोंमें कोई व्यक्ति।

कृष्णचांद—अचलदास क्षत्रियके लड़के। अचलदास धार्मिक हिन्दू रहे। उनका घर दिल्लीमें था। वहां सदा बड़े बड़े पण्डित नानास्थानोंसे जा पहुंचते थे। उनको देखकर कृष्णचांदको लड़कपनसे ही विद्याका अनुराग लग गया। वह संस्कृत और फारसी अच्छी पढ़े थे। १७२३ ई०को उन्होंने फारसीमें "हमेश बहार" नामका एक बढ़िया जीवनी ग्रन्थ लिखा। उसमें बादशाह जहांगीरसे लेकर मुहम्मदशाहके समय तक कोई २०० कवियोंकी जीवनी है। आलमगीरने उनकी विद्याबुद्धिसे परितुष्ट हो "इखलासखान् इखलास केश" उपाधि दिया था। सम्राट् फरुखसियारके समय यह ७००० सैन्यके अधिनायक हुए। "बादशाह-नमा" सम्राट् फरुखसियारका इतिहास कृष्णचांदने ही लिखा है।

कृष्णचूड़ा (सं० स्त्री०) कृष्णस्य चूडेव पुष्पचूड़ा यस्य, बहुव्री०। १ लाल घुंघची। २ कोई कटीला फूलदार पेड़, गुलतुर्रा। इसका फूल गोला और लाल होता है। छोटे बड़े सब १० दल लगते हैं। फूलका वृन्त कुछ लम्बा पड़ता है। इसमें १० दीर्घ केशर आते हैं। फल सेम-जैसा रहता और कुछ कुछ महकता है। इसका फूल सभी ऋतुवोंमें खिलता है। परन्तु बरसातमें बहुत फूल उतरते हैं। कृष्णचूड़ाके मूल और वीजसे वृक्ष उत्पन्न होता है।

कृष्णचूड़िका (सं० स्त्री०) कृष्णा चूड़ा अग्रं यस्याः, ततः कप्-टाप् अत इत्वञ्च। गुञ्जालता, घुंघची।

कृष्णचूरक (सं० पु०) चनेका पेड़।

कृष्णचूर्ण (सं० क्ली०) कृष्णस्य लोहस्य चूर्णम्, ६-तत्। लोहमल, मुरचा।

कृष्णचेदी—बघेलखण्डके एक राजा। कहते हैं इन्होंने कालिञ्जरके राक्षस राजाको मार डाला था।

कृष्णचैतन्य (सं० पु०) चैतन्यदेवका दूसरा नाम। चैतन्यदेव देखो।

कृष्णच्छवि (सं० पु०) कृष्णस्येव छविर्यस्य, बहुव्री०। १ भाग। २ कृष्णकी जैसी कान्ति।

कृष्णजंहाः (सं० पु०) पुनः पुनः गम्यते, हन्-यङ्-कर्मणि असुन् कुत्वाभावश्छान्दसः जंहा-मार्गः ततः कर्मधा०। १ बुरी राह। (त्रि०) २ राह बिगाड़ कर चलनेवाला। (ऋक् १।१४१।७)

कृष्णजटा (सं० स्त्री०) कृष्णा जटा यस्याः, बहुव्री०। जटामांसी, महकनेवाली जटामासी।

कृष्णजन्माष्टमी (सं० स्त्री०) भादों बदी अष्टमी। इसी तिथिको कृष्णने जन्म लिया था। जन्माष्टमी देखो।

कृष्णजयन्ती (सं० स्त्री०) काली जयन्तीका पेड़। वह रसायनी होती है। (राजनिघण्ट)

कृष्णजिह्व (सं० पु०) काली जीभका अशुभ घोड़ा।

कृष्णजीरक (सं० पु०) नित्यकर्मधा०। १ काला जीरा। इसे संस्कृतमें सुषवी, कारवी, पृथ्वी, पृथु, काला, उपकुञ्चिका, सुशवी, कुञ्चिका, उपकुञ्चि, कृष्णा, जरणा, शाली, बहुगन्धा, पृथुका, पार्थिवी और भेषज भी कहते हैं। भावप्रकाशके मतमें यह रूखा, कड़वा,

उष्ण, दीपन, लघुपाक, ग्राही, पित्तवर्धक, गर्भाशय-परिष्कारक, ज्वरघ्न, पाचक, बलकारक और वायु, आध्मान, गुल्म, अतिसार तथा छर्दिनाशक है। काला जीरा मोटा और पतला दो प्रकारका होता है। २ जीराका कोई भेद।

कृष्णजीवन लच्छीराम—हिन्दीके एक पुराने कवि। इनकी कविता बहुत अच्छी होती थी—

१। "खेलन आये नन्द गांवते रंगभीने बरसाने।
चगमद रंग अरगजा चोवा नरनारी सब साने॥
बिन काजर कजरारी अंखियां चढ़ीं मदन खरसाने।
कृष्णजीवन लच्छीरामके प्रभु प्यारे जी थर थर थरसाने॥"

२। "कान्ह तोहे ऐसी मति कौन दई।
देख पराई नारी सलोनी छोरी करत नई॥
डार गुलाल आंज आंखनमें भुजा भर अङ्क लई।
केसरकी पिचकार मारके बहियां पकर लई॥
कृष्णजीवन अबलाकी यह गति देखो कहुं न भई॥"

३। "भली भई जा होरी आई घर आये घनश्याम।
लोग कहैं टोनवा पढ़ डारो ए राधाको काम॥
धन्य तेरी भाग्य सुहाग भावती और न दूजी वाम।
कृष्णजीवन लच्छीरामकी इच्छा पूजिय बेगही श्याम॥"

४ 'दूजी न बोलि री दैन दे वाहे गारी।
है लबारजी भारीजगतकी तुम ही सुलखन नागरी नारी॥
वाके मनभावे सो ही गावे तुम कहा करिहो लाजकी मारी।
या होरीमें कौन बिगोई कृष्णजीवन लच्छीराम जंजारी॥"

कृष्णज्योतिर्विद—ताजकतिलक नामक ज्योतिषका एक ग्रन्थ बनानेवाले।

कृष्णतर्कालङ्कार भट्टाचार्य—एक प्रसिद्ध नैयायिक। इन्होंने तर्कसंग्रह और साहित्यविचार नामक न्यायके ग्रन्थ बनाये हैं।

कृष्णतण्डुला (सं० स्त्री०) १ विडङ्ग। २ कर्णस्फोटा-लता। ३ पीपल।

कृष्णताताचार्य—एक प्रसिद्ध दार्शनिक। संस्कृत भाषामें इनके लिखे बहुतसे दार्शनिक ग्रन्थ मिलते हैं—

अव्यापकविषयता-शून्यत्व, पक्षचन्द्रिका, पक्षता-क्रोड़, पञ्चभूतवादार्थ, परमुखचपेटिका (वेदान्त), प्रमात्वचिन्ह, ब्रह्मशब्दार्थविचार (वेदान्त), वादकल्पक, वादकुतूहल, घटकोटिखण्डन, सजातीयविशिष्टा-न्तराघटितत्व, सत्प्रतिपक्षविचार आदि।

कृष्णताम्बूलवल्ली (सं० स्त्री०) कृष्णनागवल्ली, काला पान। यह तीती, उष्ण, कड़वी, कसैली, मल-थामनेवाली, दाह उत्पन्न करनेवाली और मुंहको जड़ बना देनेवाली है। (वैद्यकनिघण्टु)

कृष्णताम्र (सं० क्ली०) गोशीर्षचन्दन।

कृष्णतार (सं० पु०) १ काला हिरन। २ कोई हिरन।

कृष्णतारा (सं० स्त्री०) आंखका काला तिल।

कृष्णतिल (सं० पु०) काला तिल।

कृष्णतीक्ष्णा (सं० स्त्री०) काला जीरा।

कृष्णतीर्थ—रामतीर्थके गुरु। यह जगन्नाथके समसाम-यिक रहे। वेदान्तसारपर "विद्वन्मनोरञ्जनी" टीका कृष्णतीर्थकी लिखी बतलायी जाती है।

कृष्णतुण्ड (सं० पु०) एक विषैला कीड़ा। इसके काट-नेसे पित्तके रोग लग जाते हैं। (सुश्रुत)

कृष्णतुलसी (सं० स्त्री०) काली तुलसी। यह खांसी, वात, कोड़े, वमि और भूत बाधाको दूर करती है। (राजनिघण्टु)

कृष्णत्रिवृता (सं० स्त्री०) कृष्णा त्रिवृता, कर्मधा०। काली जड़की त्रिवृता, काला निसोत। इसका संस्कृत पर्याय—श्यामा, पालिन्दी, कालमेषिका, काला, मसुर-विदला, अर्धचन्द्रा और सुषेणिका है। चरकके मतानुसार यह कसैली, मधुर, रूखी, पकने पर कड़वी, कफ तथा पित्तको दबानेवाली और वायुको भड़काने-वाली है। (चरक) परन्तु श्वेतत्रिवृतासे इसमें कुछ हीन गुण रहता है। (भावप्रकाश)

कृष्णत्वक् (सं० पु०) मौलसिरी।

कृष्णदत्त—१ कोई सङ्गीतशास्त्र बनानेवाले। सङ्गीत-नारायणमें कृष्णदत्तका मत उद्धृत हुवा है। २ कर्म-कौमुदी नामक धर्मशास्त्र-संग्रह करनेवाले। ३ कोई वैद्यक ग्रन्थकार। इनकी बनायी द्रव्यगुणदीपिका और शतश्लोकीटीका युक्तप्रदेशमें प्रचलित है। ४ शास्त्र-संग्रह नामक वैष्णव ग्रन्थ बनानेवाले। इन्होंने अपने शास्त्रसंग्रहमें सांख्य, नैयायिक, वैशेषिक, मीमांसा, शैव, बौद्ध, जैन, चार्वाक और शाङ्कर प्रभृति बहुतसे मतोंको काटके वैष्णव शास्त्रको बड़ाई ठहरायी है। ५ न्यायसिद्धान्त-मुक्तावलीकी मनोरमा टीका बनाने-

वाले। ६ ब्रह्मदत्तके लड़के और चरणव्यूहभाष्यके प्रणेता। ७ कोई पुराने कवि। इन्होंने ८०८ संवत् (?) में राजा धर्मवर्माको प्रसन्न करनेके लिये 'मान्द्रकुतूहलप्रहसन' और फिर 'राधारहस्यकाव्य' बनाया, इनके पिताका नाम सदाराम और माताका नाम आनन्ददेवी था। ८ महेशमिश्रके पुत्र और भट्टोजिके चेले। इनका दूसरा नाम वनमालीमिश्र था। इन्होंने कुरुक्षेत्रप्रदीप रचना किया। ९ कोई मैथिल कवि। यह मैथिल कृष्णदत्त कहलाते थे। इन्होंने संस्कृत भाषामें कुवलयाश्वीयनाटक, पुरञ्जनचरित-नाटक, चण्डीचरित, चण्डीटीका और गीतगोविन्द-टीकाको लिखा है। पुरञ्जनचरित उड़ीसेके राजा पुरुषोत्तमकी सभामें खेला गया। १० भिनगाके कोई राजपूत राजा। यह अपने आप हिन्दीके सुकवि थे। और काव्यसे बहुत प्रसन्न हुवा करते थे। इन्होंने १८५२ ई०को जन्म लिया था।

कृष्णदन्त (सं० त्रि०) १ काले दांतवाला।

कृष्णदन्ता (सं० स्त्री०) कृष्णो दन्तः शिखरदेशोऽस्याः, बहुव्री०। काश्मरीवृक्ष, गंभारी।

कृष्णदर्शन (सं० पु०) शङ्कराचार्यके एक शिष्य।

कृष्णदशन (सं० त्रि०) काले दांतोंवाला। मद्य आदि पीनेसे दांत काले पड़ जाते हैं।

कृष्णदास—१ कोई संस्कृत अभिधान-रचयिता। अमरकोषकी टीकामें रामनाथने इनका वचन उद्धृत किया है। २ कोई ज्योतिर्विद्। इनका बनाया 'अश्वारूढ़ी' नामक संस्कृत ग्रन्थ युक्तप्रदेशमें मिलता है। ३ कर्णानन्द नामक संस्कृत ग्रन्थके रचयिता। ४ गीतगोविन्द और मेघदूतको टीका लिखनेवाले। ५ कोई विख्यात नैयायिक, इनकी बनायी तत्त्वचिन्तामणि-दीधितिको नव्यादिटिप्पनी और प्रसारिणी टीका मिलती है। ६ कोई ग्रन्थकार। अकबर बादशाहके अनुग्रहसे इन्होंने 'पारसीप्रकाश' अर्थात् फारसी-कोष लिखा। इस ग्रन्थमें फारसी शब्दोंका अर्थ संस्कृत भाषामें दिया गया है। ग्रन्थकार विहारीकृष्णदास कहलाते थे। ७ समव्यक्ति नामक संस्कृत ग्रन्थके रचयिता। इनका उपाधि मिश्र था। ८ रामकृष्ण-काव्यके टीकाकार। ९ सूक्तिसंग्रह नामक संस्कृत ग्रन्थ रचना करनेवाले। यह वङ्गदेशके रहनेवाले कायस्थ थे। १० मध्यप्रदेशके जबुवा नामक स्थानके सरदार। पहले इनके बाप भनजो दिल्लीके बादशाहके नीचे ४०० सैन्यके अधिनायक थे। उसी समय कृष्णदास युवराज अला उद्दीन्की सुदृष्टिमें पड़ गये। ढाकाके शासनकर्ता जब बिगड़ उठे, कृष्णदासने उन्हें जीत ढाका उद्धार किया था। इससे बादशाहने प्रसन्न हो उन्हें ५ जिले हिन्दुस्थान और १० जिले मालवामें दे डाले। गुजरात-शासनकर्ताको सुखनायक और चन्द्रभानु नामक दो सरदारोंने मार डाला। सुखनायक जबुवाके भीलोंके राजा थे। कृष्णदासने जबुवा पहुंच कलाकौशलसे सुखनायक और राजपूत सरदार चन्द्रभानुका विनाश किया। इस पर बादशाहने उन्हें जबुवा जागीरमें दिया था। ११ चमत्कारचन्द्रिकाके रचयिता। १२ प्रेततत्त्वनिरूपण नामका ग्रन्थ बनानेवाले। १३ हर्षके पुत्र और विमलनाथपुराणके रचयिता। १४ राजा राजवल्लभके पुत्र। कोई कोई उन्हें कृष्णवल्लभ भी कहता है। धन्वन्तरिगोत्रके वैदगर्भसेनगुप्त नामके कोई वैद्य यशोहरके इतना ग्रामसे ढाका जिलेके राजनगरमें जाकर रहे थे। इन्हीं वैदगर्भसेनके वंशमें राजा राजवल्लभने जन्म लिया। राजवल्लभके ७ लड़कोंमें कृष्णदास दूसरे थे। १८०० ई० को मुहम्मद अलीखान्ने फारसी भाषामें 'तारीख मुजफ्फरी' नामक इतिहास बनाया, उसमें कृष्णदासको 'कृष्णवल्लभ' लिखा है। राजवल्लभके बड़े लड़केका नाम रामदास और तीसरेका नाम गङ्गादास था। इस लिये मंझलेका नाम कृष्णवल्लभ नहीं, कृष्णदासही होना अधिक सम्भव है। हुसेन कुलीखान्के मरने पर राजा राजवल्लभ नवाज मुहम्मदके दीवान बनाये गये। नवाज मुहम्मदके मृत्यु पीछे वह घसीटी बेगमके सब बातोंमें परामर्शदाता रहे। नवाब अलीवर्दीको मरते देख घसीटी बेगमने अकरामुद्दौला-को बंगालकी गद्दी पर बैठानेकी चेष्टा की। इधर अलीवर्दीने अपने गोद लिये लड़के शीराजुद्दौलाको सम्पत्ति और राज्यका उत्तराधिकारी बना रखा था।

उस समय घसीटी बेगमने १०००० सैन्यके साथ मुर्शिदाबाद छोड़ एक कोस दक्षिण मतिझीलके बागमें अपनी छावनी डाली। युद्धमें हारना जीतना लगाही रहता है। इसीसे पहले ही सावधान होनेके लिये राजा राजवल्लभने अपने लड़के कृष्णदासके हाथ सारी सम्पत्ति कलकत्ते भेज दी। वहानेके लिये लोगोंसे कहा गया कि कृष्णदास पुरुषोत्तम गये थे। राजा राजवल्लभके कहनेसे कासिम-बाजारकी कोठीके मालिक वाटसन साहबने कृष्णदासको कलकत्तेमें सहारा देनेके लिये गवर्नर ड्रेक साहबके नाम एक चिट्ठी लिखी। चिट्ठी कलकत्ते पहुंच गयी। उस समय ड्रेक साहब बालेश्वरमें थे। उनके न रहते दूसरे बड़े अंगरेज कर्मचारियोंने परामर्श करके कृष्णदासको आश्रय देनेकी ठहरा ली। पीछे जब कृष्णचन्द्र जा पहुंचे, अमीरचांदने उन्हें अपने घरमें रख लिया। यह संवाद सीराजुद्दौलाको मिला था। उस समय भी अलीवर्दीखान् जीते थे। कुछ दिन पीछे वह मर गये और सीराजुद्दौला सिंहासन पर बैठे। उन्होंने मेदनीपुरके राजाके भाईको एक चिट्ठी दे कलकत्ते ड्रेक साहबके पास भेजा। चिट्ठीमें लिखा था कि विना विलम्ब कृष्णदासको साहब चिट्ठी ले जानेवालेके हाथ सौंप देवें। कलकत्तेके अंगरेजोंने यह बात न मानी। सीराजुद्दौलाने इससे अपना बड़ा अपमान समझा था। उसी अपमानका बदला लेनेके लिये उन्होंने कलकत्ते जाकर नगर आक्रमण किया और कृष्णदास तथा अमीरचांदको सामने बुलाके भलमंसीके साथ अपने पास बैठा लिया। मीरजाफरने नवाब होकर राजा राजवल्लभको अपना मन्त्री बनाया और कृष्णदासको ढाकेके शासनकार्यमें लगाया था। कम्पनीके उस समयके कागज पत्रोंमें कृष्णदास ढाकेके नवाब लिखे गये हैं। इसके पीछे राजा राजवल्लभ मुंगेरके सूबेदार हो गये। मीरजाफरने कृष्णदासको "राजा बहादुर" उपाधि दे अपना मन्त्री बनाया। मीरकासिमके समय भी यह लोग नवाबी सरकारकी नौकरी करते थे। मीरकासिम जब मुंगेरसे भागे, उन्होंने राजवल्लभ, कृष्णदास और दूसरे अवरुद्ध लोगोंके गलेमें बालूसे भरी थैली बांध मुंगेरके पास नदीमें डुबा कर उन्हें मार डालनेकी आज्ञा दी। ई० सन् १७६३ के सावनमें सोमवारकी सन्ध्या समय यह घटना हुई थी। राजवल्लभ देखो। १५ हिन्दीभाषाके एक पुराने कवि। इन्होंने शृङ्गाररस पर अनूठी कविता की है—

१। "बङ्क चितवनि चिते रसिक तन गुपत प्रीतिको भेद जनायो।
सुखकी छुवाई कैसे घटत है हियको प्रेम नहीं दुरत दुरायो॥
सगबगी अलक बदन पर बिथुरे यहि विध लाल रहचटे लायो।
कृष्णदास प्रभु गिरिधर नागर नवनिकुंज अपनो करि पायो॥"

२। "भली रतियां सखियां आज सुन्दर अङ्गनीं अङ्ग जुरे यदुराई।
मनमोहन बड़ भागन पाये आज रंगीलो रास सोहाई॥
सब विध आस पूजी मोरे मनकी अखिललोकपति पीतम पाई।
कृष्णदासको इच्छा पूजी छतियां हरि की हाथ छुवाई॥"

३। "रासरस गोविन्द करत विहार।
सुरसुताके पुलिन रम्यमें फूले कुन्दमंदार॥
फुल्ल शतदल विकसित कोमल मुकुलित कुमुद कह्लार।
मलय पवन बहै शारद पूरण चन्द्र मधुप झङ्कार॥
सुघराई सङ्गीत कलानिधि मोहन नन्दकुमार।
ब्रजभामिनि सङ्ग प्रमुदित नाचत तन चर्चित घनसार॥
उमय स्वरूप शुभगता सीमा कोककला सुखसार।
कृष्णदास स्वामी गिरिधर प्रिय पहरे रसमय हार॥"

४। "इह मन वैसीके रही राखो।
जेहि मधुव्रत हो गिरिधर प्रियको बदन-कमल-रस चाखो॥
जो कछु मैं कीन्हीं परवश हो इतनी ही सत् साखो।
बार बार बहुविधि समुझावो ऊंचो नीचो भाषो॥
केहु न मानति महा हठीलो कहो तुम्हारो आखो।
कहे कृष्णदास कहा लौं बरजों पांच चोर मिलि काखो॥"

कृष्णदास कविराज—बंगला चैतन्यचरितामृतके रचयिता एक प्रसिद्ध वैष्णव कवि। वर्धमान जिलेके झामटपुर छोटे गांवके वैद्यवंशमें इन्होंने जन्म लिया था। अपने घरका काम करनेके लिये लड़कपनमें कृष्णदासने संस्कृत भाषा पढ़ी और उस समयके नियमानुसार कुछ फारसी भी सीख ली। किन्तु शैशवसे ही वह धर्मानुरागी बन गये। उनके माता-पिता चैतन्य-धर्मावलम्बी थे। वह भी लड़कपनमें चैतन्यके गुणोंको सुन एक कट्टर चैतन्यभक्त हो गये। धीरे धीरे जब उन्होंने यौवनमें पैर रखा, उनका धर्मानुराग और विषयविराग बहुत बढ़ा। भजनभावमें रात दिन

बीत जाता था। उनके भाई घरका काम करने लगे। कहते हैं, एक दिन कृष्णदासने स्वप्नमें नित्यानन्दको देखा था। नित्यानन्द प्रभुने उन्हें संसाराश्रम छोड़नेकी अनुमति दी। कृष्णदास इसके पीछे वृन्दावनकी ओर चल पड़े।

कृष्णदासके जन्म लेनेसे पहले चैतन्यदेवने इहलोक छोड़ दिया था। कृष्णदास वृन्दावनमें चैतन्यके प्रिय शिष्य रूप और रघुनाथदास गोस्वामीसे जाकर मिले और उनके शरणापन्न हुए। पीछे वह रघुनाथदाससे दीक्षा ले अपना अवशिष्ट जीवन प्रेमभक्तिशिक्षा, शास्त्रकी आलोचना, महाप्रभुके चरित्रके अनुशीलन और साधनभजनमें बिताने लगे। नीलाचल पर चैतन्य महाप्रभुकी शेष अवस्थामें उनके पास स्वरूप और रघुनाथदास रहते और उनकी महाभावकी अवस्थामें शरीररक्षा तथा सेवा-शुश्रूषा किया करते थे। स्वरूप महाप्रभुके मनकी सब छिपी बातें समझते थे। उन्होंने वही सब बातें रघुनाथको बता दीं। फिर कृष्णदासने अपने दीक्षागुरु रघुनाथसे सब कुछ सुन लिया। इससे पहले गोविन्द-दासने महाप्रभुकी बाल्यलीला आदि विस्तृत भावसे लिखके चैतन्यमङ्गल बनाया था। परन्तु उन्होंने अन्तलीलाके सम्बन्धमें कुछ अधिक नहीं कहा। इसीसे वृन्दावनवासी चैतन्यकी शेष लीला जाननेके लिये सदा आग्रह दिखलाया करते थे। उनको सन्तोष देने और चैतन्यकी जीवनी पूरी करनेके लिये राधाकुण्डके तीर वृद्ध अवस्थामें कृष्णदासने चैतन्यचरितामृत बनाया। १५७३ शकको यह सुन्दर ग्रन्थ पूरा हुवा फिर बुड्ढे कविराजने अपना ग्रन्थ जीवगोस्वामीको दिखाया। जीवने देखा कि चैतन्यचरितामृत बंगला-भाषाके सुललित छन्दोंमें लिखा गया था। उसमें वैष्णवधर्मका गूढ़रहस्य और चैतन्यका उपदेश विवृत था। अवलीलाक्रमसे साधारण लोग उसे समझ सकते थे। किन्तु रूपसनातनके संस्कृत ग्रन्थका वैसा आदर होनेवाला न था। ऐसीही आशङ्का करके जीवने कृष्णदासके हृदयका धन उनके हाथकी पोथी यमुना जलमें फेंक दी। कृष्णदास मर्माहत हो मथुरा चले गये और आहारनिद्रा छोड़ रातदिन हायहाय करने लगे। पीछे उन्होंने एक दिन सुना, जब वह चैतन्य-चरितामृतका कोई परिच्छेद पूरा करते, उनके प्रिय शिष्य मुकुन्द उसकी एक नकल उतार रखते थे। शिष्यने गुरुके पास वही पोथी पहुंचा दी। खोया हुवा धन मिलनेसे कृष्णदास फूले न समाये। उन्होंने उस पुस्तककी आद्योपान्त संशोधन करके गुप्तस्थानमें रख दिया।

इधर जीवगोस्वामीने कृष्णदासके हाथकी लिखी जो पोथी यमुनाके स्रोतमें फेंक दी थी, वह बहते बहते मदनमोहनघाटमें जा लगी। फिर जीव उसे निकाल कर अपने घर ले गये और गोस्वामीके दूसरे ग्रन्थोंके साथ एक कोठरीमें रख आये।

जब कविकर्णपुर वृन्दावन पहुंचे, कृष्णदासने उन-को चैतन्यचरितामृतकी बात बताया थी। फिर कर्ण-पुरने वही बात जीवसे कही। उस समय जीवगोस्वा-मीने कविकर्णपुरके कहने पर कोठरीसे चैतन्यचरिता-मृत निकाल अपना अनुमोदन स्वाक्षर करके दे दिया था। पहले प्रति परिच्छेदके अन्तमें चैतन्यचरितामृत लिखा था। जीवने उसको काटकर 'कहे कृष्णदास' बना दिया। फिर वृन्दावनवासियोंने इस ग्रन्थको उतार लिया था।

इसी प्रकार चैतन्यचरितामृत व्रजभूमिमें प्रकाशित हुवा। जीवने यह ग्रन्थ बङ्गाल भेजनेके लिये सम्मति न दी। परन्तु कृष्णदासने मुकुन्दकी नकल की हुई पोथी उन्हींके साथ गुप्तभावमें नवद्वीपको भेजी थी। उनके अपने हाथकी लिखी चैतन्यचरितामृत पोथी वृन्दावनके राधादामोदर मन्दिरमें देवताकी भांति पूजी जाती है।

चैतन्यचरितामृतमें कृष्णदासके संस्कृत शास्त्रका असाधारण पाण्डित्य झलक पड़ा है। उन्होंने चैतन्यके चलाये वैष्णवधर्मकी सब छिपी हुई बातें चलती और सीधी बंगलाभाषामें लिखी हैं। उन्हें मन लगा कर पढ़नेसे उनकी बनावटके ढंगकी अशेष प्रशंसा करनी पड़ती है। इसलिये बङ्गालमें बड़े बड़े वैष्णव इस ग्रन्थको दूसरी सारी पोथियोंसे अधिक मानते हैं। यह

उनको भक्तिका वस्तु है। कृष्णदासने चैतन्यचरितामृतको छोड़के वैष्णवाष्टक, गोविन्दलीलामृत, कृष्णकर्णामृतकी सारङ्गरङ्गदा टीका आदि कई संस्कृत ग्रन्थ बनाये थे।

कृष्णदीचित—१ रघुनाथभूपालीय नामक अलङ्कारके रचयिता। २ रूपावतार नामक व्याकरण बनानेवाले। ३ यज्ञेश्वरके पुत्र। इन्होंने और्ध्वदैहिकप्रयोग नामक संस्कृत ग्रन्थ लिखा था। ४ मीमांसापरिभाषाके प्रणेता। इनका दूसरा नाम कृष्णयज्वा था।

कृष्णदेव—१ उड़ीसाके खुर्दाके राजा द्रव्यसिंहके पुत्र। श्रीक्षेत्रकी मादलापञ्जीके मतमें इन्होंने १६३७से १६४२ शक तक राज्य किया। दूसरे मतमें इनका एक नाम हरेकृष्णदेव भी था। १७१५ ई०का यह गद्दी पर बैठे। (Starling's Orissa.) २ रामाचार्यके लड़के। इन्होंने तन्त्रचूड़ामणि वा धर्ममीमांसासंग्रह नामक एक मीमांसाग्रन्थ बनाया था। ३ मिथिलामें रहनेवाले प्रसिद्ध भवदेवभट्टके पिता। ४ वैष्णवानुष्ठानपद्धति नामक ग्रन्थके रचयिता। ५ प्रस्तारपत्तन नामसे छन्दका एक ग्रन्थ बनानेवाले।

कृष्णदेवराय—विजयनगरके एक प्रबलपराक्रान्त राजा। इन्हें लोग कृष्णरायालु कहा करते थे। इनके पिताका नाम राजा नरसिंह और माताका नाम नागलादेवी या नागाम्मा था। विजयनगरके राजावोंके दिये अनुशासन और खोदित लिपि पढ़नेसे समझ पड़ता है कि कृष्णदेवकी माता राजा नरसिंहकी महिषी न थीं, एक नर्तकी मात्र रहीं।

राजा कृष्णदेव १५०९ ई०को गद्दी पर बैठे थे। (Arch. Sur. Southern India, Vol. I. p. 107.) पहले यह काञ्चीपुरके निकट द्राविड़ राज्यमें घुसे, पीछे उम्मातुरके गङ्गवंशीय राजाको हरा उनके अधिकृत शिवसमुद्र दुर्ग और श्रीरङ्गपत्तन नगर पर चढ़े। इसके अनन्तर सारा महिसुर राज्य कृष्णदेवके वशीभूत हो गया। १५१३ ई०में इन्होंने राजा वीरभद्रको हराके नेलूर और दुर्गके साथ उदयगिरि जीत लिया और वहांसे कृष्णस्वामीकी मूर्तिको लाके विजयनगरमें एक बड़ा मन्दिर निर्माण किया और उसीमें उसको बैठा दिया। १५१५ ई०में कृष्णदेवने प्रतापरुद्र-गजपति-राजको हराया, पीछे कृष्णा नदीके दक्षिणतीरवाले कोण्डवीड़, कोण्डपल्ली और राजमहेन्द्री पर अपना अधिकार जमाया। उदयगिरि जीतने पीछे इन्होंने उड़ीसा जाके गजपति राजाकी कन्यासे विवाह किया था। फिर दाक्षिणात्यके पूर्व उपकूलवाले सारे राज्य इनके अधिकारमें आ गये। यवनोंके दिये अनुशासनमें कृष्णदेव उनके राज्य-सीमानिर्देशक बताये गये हैं। १५२१ ई०को इन्होंने कोण्डवीड़ नगरमें एक बड़ा देवालय बनाया था। इसके पीछे १५२९ ई०को पितामाताके पारत्रिक उद्धारके लिये पत्थरकी बहुत बड़ी नरसिंह मूर्ति कृष्णदेवने विजयनगरमें स्थापन की। इनकी पटरानीका नाम चित्रदेवाम्मा था। कृष्णदेवके दिये ताम्रशासन आदि पढ़नेसे समझ पड़ता है कि वह बड़े देवद्विजभक्त थे और उन्होंने ब्राह्मणोंको बहुतसा ब्रह्मोत्तर दान किया था।

२ दाक्षिणात्यके बीचवाले जयपुरके राजा। यह विश्वम्भरदेवके पुत्र थे। इन्हें लोग लाला कृष्णदेव कहा करते थे। विजयनगरके राजा सीतारामके उत्पीड़नसे १७६० ई०को यह राज्यच्युत हुए। फिर उन्होंने अनुग्रह करके इनके भाई विक्रमदेवको राजा बनाया था। उसी समयसे जयपुर विजयनगरका करद राज्य हो गया।

कृष्णदेवस्मार्तवागीश—एक विख्यात बङ्गाली पण्डित। यह वन्द्यघटीय नारायणके लड़के थे। इन्होंने संस्कृत भाषामें कृत्यतत्त्व वा प्रयोगसार, शुद्धिसार, प्रायश्चित्तकौमुदी आदि कई स्मृतिसंग्रह बनाये।

कृष्णदेह (सं० पु०) कृष्णोदेहो यस्य, बहुव्री०। भौंरा।

कृष्णदैवज्ञ (सं० पु०) १ कोई प्रसिद्ध ज्योतिःशास्त्रविद्। यह विख्यात ज्योतिर्ग्रन्थकार नृसिंहके पिता और दिवाकरके पितामह थे। २ बल्लालदैवज्ञके लड़के और रङ्गनाथके भाई। यह दिल्लीके बादशाह जहांगीरके अधीन काम करते थे। इनके बनाये छादकनिर्णय, पञ्चपक्षी, परमेश्वरीय, प्रश्नकृष्णीय, (भास्करकी) लीलावतीकी बीजविहृतिकल्पलतावतार नामकी टीका, बीजाङ्कुर नाम्नी बीजगणितकी टीका,

श्रीपतिटोका, सिद्धान्तसार और सूर्यसिद्धान्तोदाहरण नामक कई ज्योतिर्ग्रन्थ प्रचलित हैं।

कृष्णद्विवेदी—काव्यप्रकाशकी मधुरसा नाम्नी टीका बनानेवाले।

कृष्णद्वैपायन (सं० पु०) द्वीपे भवः, द्वीप-अण् निपातः यद्वा द्वीपं अयनं आश्रयो यस्य, ततोऽण्। वेदव्यास। यमुनाद्वीपमें वेदव्यास उत्पन्न हुए थे। द्वीपमें जन्म लेनेसे ही उन्हें द्वैपायन कहते हैं।

एक मल्लाहने धर्मके लिये लोगोंके पार आने जानेको नदीमें नाव रखी थी। उसकी बेटी किसी दिन अपने बापके कहनेसे नावमें उपस्थित रही। दैवक्रमसे पराशरमुनि नदी पार जानेके लिये पहुंच गये। नाव जब यमुनाके बीच पहुंची, महर्षिने कन्याके रूपमें मुग्ध हो अपना अभिप्राय कहा था। मल्लाहकी लड़कीने मुंह लटका लिया, कोई उत्तर न दिया। मुनिने आदरके साथ बात चीत करके कहा—'शोभनाङ्गि! हम तुम्हारे रूपमें मुग्ध हो गये हैं। तुम हमारी आशा न तोड़ो।' मल्लाहकी लड़कीने कहा—'महाभाग! यह नदी खुला स्थान है। नावमें किसी प्रकारकी आड़ नहीं। लाखों नौकायात्री सम्भवतः यहां आ पहुंचेंगे। ऐसे स्थान पर किस प्रकार आपका अभिप्राय पूरा हो सकता है? विशेषतः मेरे शरीरमें जो दुर्गन्ध है, उससे निश्चय आप मेरे पास आ न सकेंगे'। महर्षिने योगबलसे कुहरा बनाया था। चारो ओर अंधेरा छा गया। कन्या भी सम्मत हो गयी। महर्षिने अपना अभिलाष पूरा किया था। उनके कहनेसे मल्लाहकी बेटी वह गर्भ यमुनाद्वीपमें छोड़ घर चली गयी। उसका कन्याभाव न बिगड़ा। द्वीपमें उसी गर्भसे व्यासकी उत्पत्ति हुई। (भारत, आदि १०५ अ०) व्यास देखो।

कृष्णधत्तूरक (सं० पु०) काला धतूरा।

कृष्णधन (सं० क्ली०) कृष्णं कुत्सितं धनम्, कर्मधा०। निन्दित धन, जुआ आदि बुरा काम करके कमाया हुवा रुपया-पैसा।

"पार्श्विकद्यूतचौर्य्याप्तं प्रतिरूपकसाहसैः।
व्याजेनोपार्जितं यच्च तत् कृष्णं समुदाहृतम्॥" (विष्णुसंहिता)

अपात्रको पात्र मानके जुवा, चोरी, प्रतिनिधि, साहस, छलआदि धर्मनाशक उपायोंसे कमाया हुवा रुपया पैसा कृष्णधन कहलाता है।

कृष्णधान्य (सं० क्ली०) १ काला धान। २ श्यामाक, घासमें होनेवाला एक धान।

कृष्णधौर—दरभङ्गेका एक बड़ा गांव। भविष्य ब्रह्मखण्डमें लिखा है—हरिभक्तिपरायण कृष्णधौरके नाम पर ग्रामका नाम कृष्णधौर रखा गया। (४७।१२)

कृष्णधुस्तूरक (सं० पु०) काले फूलका धतूरा। इसका संस्कृत पर्याय—सिद्ध, कनक, सचिव, शिव, कृष्णपुष्प, विषाराति और क्रूरधूर्त है। यह कड़वा, उष्ण, शरीरका लावण्य बढ़ानेवाला और व्रणरोग, त्वक्, इन्द्रियका ढीलापन, खुजली, अतिज्वर तथा भ्रमको नाश करनेवाला है। (राजनिघण्टु)

कृष्णधूर्जटिदीक्षित—कोयम्बुरीके रहनेवाले वेङ्कटेश दीक्षितके पुत्र। शेषीके गर्भसे इनकी उत्पत्ति हुई। ४८७५ कल्यब्द (१६९६ शक) को इन्होंने उज्जैनके राजा गजसिंहके पुत्र महाराज राजसिंहके लिये तर्कसंग्रहकी 'सिद्धान्तचन्द्रोदय' नामसे एक बढ़िया टीका बनायी थी।

कृष्णनगर—नदिया जिलेका कृष्णनगर नामक एक विभाग और उसका बड़ा नगर। यह जलंगी नदीके तीर अक्षा० २३° १७´। तथा २३° ४९´ उ० और देशा० ८८° ९´ और ८८° ४८´ पू० मध्य अवस्थित है। कृष्णनगरको म्युनिसपालिटीका अधिकार प्रायः ७ वर्गमील है। उसमें लगभग ७००० घर बने और २६७५० लोग बसे हैं। अदालत और कालेज विद्यमान है। यहां व्यवसाय बहुत होता है। कृष्णनगरके कुम्हार खिलौने अच्छे बनाते हैं। भूमिपरिमाण ७०१ वर्गमील है। पलासीका सुप्रसिद्ध युद्धक्षेत्र इस विभागकी बिलकुल उत्तरसीमा पर पड़ता है।

कृष्णनाथ—स्मृतिके कोई विख्यात टीकाकार। इनकी बनायी अत्रिसंहिताटीका, दक्षसंहिताटीका, मनुस्मृतिटीका, व्याससमृतिटीका, संस्कारतत्त्वटीका, स्नानदीपिकाटीका, स्मृतिकौमुदीटीका और स्मृतिसारटीका मिलती है। २ कोई संस्कृत कवि। इन्होंने आनन्द-

लतिका, कालिकोपनिषद्दीपिका, चण्डिकार्चनक्रम, प्रत्यङ्गिरातत्त्व, प्रत्यङ्गिरासूक्तभाष्य, मुद्रालक्षण, योगदर्शन-टीका, रामगीताटीका, रामायणसार, वनदुर्गातत्त्व, वामनतत्त्व, शिवार्चनक्रम आदि संस्कृत ग्रन्थोंकी रचना की। ३ न्यायग्रंथ जागदीशीके कोई टीकाकार। ४ भावकल्पलता नामक ज्योतिर्ग्रंथकी टीका लिखनेवाले।

कृष्णपक्ष (सं० पु०) कर्मधा०। प्रतिपद्‌से अमावस्या पर्यन्तका समय, चन्द्रक्षयका पक्ष, अंधियारा पाख।

कृष्णपण्डित—१ कोई संस्कृत ग्रंथकार। इनके पिताका नाम नरसिंह था। इन्होंने पदचन्द्रिका नाम पर एक व्याकरण तथा उसकी वृत्ति, राजा कल्याणके कहनेसे प्राकृतकौमुदीटीका और प्राकृतचन्द्रिकाको बनाया था। २ सन्ध्यावन्दनभाष्य और मन्त्रभाष्य बनानेवाले। ३ जातकपद्धत्युदाहरण नामक ज्योतिर्ग्रंथके रचयिता। ४ विल्वमङ्गल कृत कृष्णकर्णामृतके कोई टीकाकार। ५ कर्पूरादिस्तवटीकाके प्रणेता। यह वैद्यक-ग्रंथकार नागनाथ और नारायणके पिता थे।

कृष्णपतिशर्मा—एक टीकाकार। इन्होंने कुमारसम्भव और रघुवंशकी अन्वयलापिका टीका लिखी थी। उसमें कृष्णपण्डितने अपनेको मैथिल शङ्कराढ़ीवंशोद्भूत बताया है।

कृष्णपदी (सं० स्त्री०) कृष्णौ पादौ यस्याः अकारलोपः पदादेशश्च ङीष्। कुम्भपदीषु च। पा ८।४।१२९। काले पैरोंवाली स्त्री।

कृष्णपर्णी (सं० स्त्री०) काली तुलसी।

कृष्णपल्लवा (सं० स्त्री०) काली करेमू।

कृष्णपवि (वे० त्रि०) अंधेरी राह जानेवाला। (ऋक् ७।८।२) 'कृष्णपविः कृष्णमार्गः' (सायण)

कृष्णपक्षी (हिं० स्त्री०) एक गानेवाली चिड़िया। यह एक बित्ता लम्बी रहती, काश्मीरसे भूटान तक मिलती और जाड़ेमें नीचे उतरती है। पेड़की जड़में इसका घोंसला बनता है। कृष्णपक्षी एक बारमें ४ अण्डे देती है।

कृष्णपाक (सं० पु०) करौंदा।

कृष्णपाकफल, कृष्णपाक देखो।

कृष्णपिङ्गल (सं० त्रि०) काला और भूरा।

कृष्णपिङ्गला (सं० स्त्री०) दुर्गा।

कृष्णपिण्डार (सं० पु०) विडो, पियारा, सफरी।

कृष्णपिण्डीतक (सं० पु०) नित्यकर्मधा०। १ सफरी, पियारा। २ काला मैनफल।

कृष्णपिण्डीर, कृष्णपिण्डीतक देखो।

कृष्णपिपीलिका (सं० स्त्री०) कृष्णा पिपीली, कर्मधा०। काली चींटी। इसको संस्कृतमें स्थूला और दृश्चक्षा भी कहते हैं। यह पेड़ पर चढ़ा करती है।

कृष्णपिपीली, कृष्णपिपीलिका देखो।

कृष्णपुच्छ (सं० पु०) १ रोहू मछली। २ लोमड़ी।

कृष्णपुर—त्रिवाङ्कुर राज्यके करानागपल्ली जिलेका एक नगर। यह अक्षा० ९° ९´ उ० और देशा० ७६° ३३´ पू० पर अवस्थित है। यहां राजप्रासाद, पुराना दुर्ग और जजका न्यायालय विद्यमान है। किसी समय समुद्रका वाणिज्य यहां बहुत चलता था।

कृष्णपुष्प (सं० पु०) काला धतूरा।

कृष्णपुष्पी (सं० स्त्री०) प्रियङ्गुका पेड़।

कृष्णपूतिफला (सं० स्त्री०) सोमराजी।

कृष्णप्रभु—हिन्दीभाषाके कोई कवि। इनकी कविता विरल है—

"बरसानेमें खेलत होरी श्रीवृषभानुकिशोरी।
चन्दन बन्दन अतर अरगजा अबिर गुलाल लिये भर झोरी॥
कोउ गावत कोउ मृदंग बजावत धूम मचाय नन्दकी पोरी।
उतते सखा सङ्ग ले कृष्णप्रभु पिचकारिन भर रङ्ग रचोरी॥"

कृष्णप्रिय (सं० पु०) कदम्बका पेड़।

कृष्णप्रुत् (वे० त्रि०) १ काला पड़ा हुवा। २ काला कर डालनेवाला। (ऋक् १।१४०।३) 'कृष्णप्रुतौ अग्निसम्पर्कात् कृष्णवर्णतां प्राप्नुवत्यौ प्रापयन्त्यौ वा।' (सायण)

कृष्णफल (सं० पु०) करौंदा।

कृष्णफलपाक (सं० पु०) करौंदा।

कृष्णफला (सं० स्त्री०) १ सोमराजी। २ छोटी जामुन। इसका संस्कृत पर्याय—सूक्ष्मफला, कृष्णफला, जम्बु, दीर्घपत्रा, मध्यमा, कोलशिम्बि और पर्यङ्कपट्टिका है। ३ छोटा करौंदा।

कृष्णबर्बर (सं० पु०) काली बबई।

कृष्णवलक्ष (सं० पु०) कृष्ण: वलक्षम्, कर्मधा०। १ काला सफेद रंग। (त्रि०) २ काला।

कृष्णवार—काश्मीरका एक नगर। यह समुद्रकी पृष्ठसे ३३३२ हाथ ऊंचे अक्षा० ३३° १८' उ० और देशा० ७५° ४८' पू० पर अवस्थित है। चन्द्रभागा नदीकी बाईं ओर इस स्थानकी भूमि कितनी ही बराबर है। नदीकी दोनों ओर प्राय: ६६७ हाथ ऊंचे पहाड़ खड़े हैं। हिन्दू और मुसलमान सभी अधिवासी दरिद्र हैं। घर भी बहुत ही साधारण बने हैं। लोग पश्मीने और शालदुशाले तैयार कर अपना काम चलाते हैं। पहले यहां काश्मीरके राजा गुलाबसिंहका अधिकार था। परन्तु सिखोंने पुराने राजाको निकाल बाहर किया। सिखोंके अत्याचारसे ही लोग धनहीन और दुर्दशाग्रस्त हो गये हैं। यहां एक बाजार और किला है।

कृष्णबालुक (सं० क्लो०) एकप्रकारकी पहाड़ी मट्टी।

कृष्णभट्ट—१ औषधप्रकार नामक वैद्यकग्रन्थके प्रणेता। २ विद्याधिराजतीर्थका दूसरा नाम। १३३३ ई०को वह स्वर्गवासी हुए। ३ पूर्व और अपर-पक्षीयप्रयोग नामका संस्कृत ग्रन्थ बनानेवाले। ४ कर्मतत्त्वप्रदीपिका नामक स्मृतिके संग्रहकार। ५ कविरहस्य, कालचन्द्रिका, कालनिर्णयदीपिका, सरोजसुन्दर आदि धर्मशास्त्र संग्रह करनेवाले। ६ किरणावलीटीकाके रचयिता। ७ कृष्णभक्तिचन्द्रिका नामक ग्रंथके प्रणेता। ८ बौधायनीय चातुर्मास्यप्रयोग और श्राद्धपद्धति बनानेवाले। ९ जीवत्पितृकर्तव्यसंक्षय नामक ग्रंथके रचयिता। १० तर्कचन्द्रिका नामक न्यायग्रंथ बनानेवाले। ११ भागवतपुराणके कोई टीकाकार। १२ मुक्तिवादटीकाके कोई प्रणेता। १३ आपस्तम्ब-श्रौतप्रायश्चित्तके टीकाकार। १४ समयमयूख बनानेवाले। १५ वेदान्तका सिद्धान्तचिन्तामणि नामक ग्रंथ लिखनेवाले। १६ स्मृतिसारसंग्रह नामक धर्मशास्त्रके सङ्कलनकर्ता। १७ रघुनाथके बेटे और नारायणके छोटे भाई। इन्हें लोग कृष्णभट्ट या कृष्णभट्ट आर्डे कहा करते थे। यह काशीवासी एक प्रसिद्ध नैयायिक रहे। इन्होंने काशिका वा गादाधरी-विवृति, केवलव्यतिरेकिग्रंथरहस्यटीका, मञ्जूषा वा जागदीशीतोषिणी, सिद्धान्तलक्षण, निर्णयसिन्धुदीपिका, वाक्यचन्द्रिका, कृष्णभट्टीय, वाधपूर्वपक्षग्रंथरहस्यलह्टीका आदि ग्रंथोंकी रचना की। १८ होसिङ्ग रामेश्वरके पुत्र और शास्त्रोद्धार तथा दुष्टदमन नामक संस्कृत काव्यके रचयिता। १९ पटवर्धनवंशीय विष्णुभट्टके लड़के और गदाधरके भतीजे। इन्होंने पदार्थचन्द्रिकाविलास, पदार्थरत्नमञ्जुषा और माथुरी टीका ग्रंथ लिखा था। पदार्थचन्द्रिकामें कृष्णभट्टने माधवसरस्वतीके मितभाषिणी ग्रंथकी बड़ी निन्दा की है।

कृष्णभट्ट मौनी—रघुनाथभट्टके पुत्र और गोवर्धनभट्टके पौत्र। इनका प्रकृत नाम जयकृष्ण था। परन्तु अपने ग्रंथमें बहुतसे स्थलोंपर इन्होंने कृष्ण नामसे ही परिचय दिया है। कृष्णभट्टने कारकवाद, लघुकौमुदीटीका, विभक्त्यर्थनिर्णय, वृत्तिदीपिका, शब्दार्थतर्कामृत, शब्दार्थसारमञ्जरी, शुद्धिचन्द्रिका, सिद्धान्तकौमुदीकी वैदिकप्रक्रियाकी सुबोधिनी नाम्नी टीका और स्फोटचन्द्रिका आदि संस्कृत ग्रंथ बनाये।

कृष्णभस्म (सं० क्लो०) पारेका काला भस्म। इसके बनानेकी रीति यह है—१ पल धान्याभ्रक और १ पल पारा ले मारकद्रव्यके साथ एक दिन तक घोंटना चाहिये। फिर मारकद्रव्यके कल्कसे कपड़ेका एक टुकड़ा लपेट बत्ती बना लेते हैं। इसके पीछे बत्तीको रेंड़ीके तेलमें बार बार डुबा जलाना चाहिये। बत्तीके बीचमें पारा रख देते हैं। बत्ती जलते समय जो पारा धीरे धीरे गिरता, उसे घीके भरे एक बर्तनमें टपकाते जाते हैं। इसीका नाम कृष्णभस्म है। उसको नियामक गणोंसे घोंटके कन्दुकाख्य यन्त्रमें एकदिन पाक करनेसे कृष्णभस्म शुद्ध हो जाता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह) पारद देखो।

कृष्णभूकुष्माण्ड (सं० पु०) काली पत्ती और बोंड़ीका भूइंकुम्हड़ा।

कृष्णभूभवा (सं० स्त्री०) करेली।

कृष्णभूम (सं० पु०) कृष्णा भूमि: मृत्तिका यत्र, बहुव्रीहि समासे अच्। १ काली मट्टीका देश। (त्रि०) २ काली मट्टीवाला।

कृष्णभूमि (सं० स्त्री०) काली मट्टीका देश।

कृष्णभूमिजा (सं० स्त्री०) गोमूत्रिका तृण, एक घास।

कृष्णभूषण (सं० क्ली०) काली मिर्च।

कृष्णभेदा (सं० स्त्री०) कुटकी। इसको संस्कृतमें कट्वी, कटुका, तिक्ता, कटुम्भरा, अशोका, मत्स्यशकला, चक्राङ्गी, शकुलादनी, मत्स्यपित्ता, काण्डरुहा, रोहिणी और कटुरोहिणी भी कहते हैं।

कृष्णभेदिका, कृष्णभेदी, कृष्णभेदा देखो।

कृष्णभोगी (सं० पु०) नित्यकर्मधा०। काला सांप।

कृष्णमणि (सं० पु०) राजावर्तमणि, नीलम।

कृष्णमण्डल (सं० क्ली०) कृष्णञ्च तत् मण्डलञ्चेति, कर्मधा०। आंखकी काली पुतली।

"नेत्रायामविभागात्तु कृष्णमण्डलमुच्यते।" (सुश्रुत)

कृष्णमत्स्य (सं० पु०) नित्यकर्मधा०। कांटेदार एक काली मछली। यह ३ हाथ तक लम्बा होता है। इसमें कांटे बहुत होते हैं, किन्तु छोटे छोटे। सुश्रुतके मतमें यह नदीसे उपजता है। कृष्णमत्स्य मधुर, पकनेमें भारी, वायुनाशक, रक्तपित्त बढ़ानेवाला, उष्ण, बलकारक, चिकना और थोड़ा तेजस्कर है। (सुश्रुत)

कृष्णमदन (सं० पु०) काला मैनफल। यह ठण्ढा, मधुर, कड़वा, तीता, कसैला, वान्तिकर, पित्त तथा कफनाशक और पक्व आमाशयको शुद्ध करनेवाला है। (वैद्यकनिघण्टु)

कृष्णमधुरज्वर (सं० पु०) एक प्रकारका हलका ज्वर।

कृष्णमल्लिका (सं० स्त्री०) १ काली पत्तीकी छोटी तुलसी। २ बबई। ३ जङ्गली बबई।

कृष्णमक्षिका (सं० स्त्री०) काली मक्खी।

कृष्णमालुक (सं० पु०) कृष्णार्जक, काली तुलसी।

कृष्णमाष (सं० पु०) काला उड़द। यह बलकर, रुच्य और तीनों दोषोंको मारनेवाला है। (वैद्यकनिघण्टु)

कृष्णमित्र आचार्य—नानाशास्त्र जाननेवाले एक विख्यात पण्डित। यह रामसेवकके लड़के और देवदत्तके नाती थे। इन्होंने अनुमितिपरामर्श, प्रौढ़मनोरमाकी कल्पलतानाम्नी टीका, कारकवाद, कालमार्तण्ड, काव्यप्रकाशटीका, वैयाकरणसिद्धान्तमञ्जुषाकी कुञ्चिकाटीका, कुमारसम्भवटीका, कृत्यप्रदीप, गादाधरीटीका, तत्त्वचिन्तामणिदीधितिप्रकाश, बृहत्तर्कतरङ्गिणी, तर्कप्रतिबन्धरहस्य, लघुतर्कसुधा, तर्कसुधाप्रकाश, तिथिनिर्णयमार्तण्ड, त्रिंशच्छ्लोकीभाष्य, नानार्थवादटीका, लघुन्यायसुधा, पदार्थखण्डनटिप्पनीव्याख्या, पदार्थपारिजात, प्रेतप्रदीप, बाधबुद्धिप्रतिबन्धकताविचार, भवानन्दीप्रदीप, भावप्रदीप, शब्दकौस्तुभटीका, सिद्धान्तकौमुदीकी रत्नार्णवटीका, रत्नावलीवादसुधाटीका, वादसंग्रह, वादसुधाकर, वायुप्रत्यक्षतावाद, वैयाकरणसिद्धान्तभूषणटीका, श्राद्धप्रदीप, सामग्रीवादार्थ, लघुसामग्रीव्याप्ति, सिद्धान्तरहस्य, सुबन्तवाद, सुबन्तसंग्रह आदि संस्कृत ग्रन्थोंकी रचना किया।

कृष्णमिश्र—१ प्रबोधचन्द्रोदय नामक प्रसिद्ध दार्शनिक नाटक बनानेवाले। इन्होंने उक्त नाटक चंदेलराज कीर्तिवर्माको प्रसन्न करनेके लिये लिखा था। कीर्तिवर्मा देखो। २ प्रायश्चित्तमनोहर नामका संस्कृत ग्रंथ लिखनेवाले। ३ वीरविजय नामक एक ईहामृगके रचयिता। ४ सर्वतोभद्रादिचक्रावलि नामक ज्योतिर्ग्रन्थके प्रणेता। ५ चिन्तामणि नामक न्यायग्रंथके रचयिता। ६ विष्णुके लड़के और नित्यानन्दके पंती। यह कात्यायनश्राद्धसूत्रके श्राद्धकाशिका नामक भाष्यके रचयिता थे।

कृष्णमुख (सं० त्रि०) कृष्णं मुखं वदनं अग्रं वा यस्य, बहुव्री०। १ कलमुहां। २ जिसका अगला भाग काला हो। (पु०) ३ लङ्गूर, काले मुंहका बन्दर। ४ कोई दानव। (हरिवंश २४० अ०)

कृष्णमुखा (सं० स्त्री०) काला अनन्तमूल।

कृष्णमुखी (सं० स्त्री०) विषैली जोंक।

कृष्णमुद्ग (सं० पु०) नित्यकर्मधा०। काली मूंग। इसका संस्कृत पर्याय—वासन्त, माधव और सुराष्ट्रज है। भावप्रकाशके मतमें यह त्रिदोष तथा दाह मिटानेवाला, मधुर, दीपन, पकानेमें हलका, पथ्य, बलकारक, वीर्य बढ़ानेवाला और अङ्गकी पुष्टि करनेवाला है। पुराने समय केवल सुराष्ट्रदेशमें वसन्त कालको कालीमूंग उपजती थी। इसीसे उसके सुराष्ट्रज और वासन्त दो नाम पड़े हैं। आजकल भारतवर्षके नानास्थानोंमें और प्रायः सभी ऋतुवोंमें कृष्णमुद्ग उत्पन्न होता है।

कृष्णमुष्क (सं० पु०) कृष्णवर्णा पाटलिका, कालो मोखा।

कृष्णमूला, कृष्णमूली देखो।

कृष्णमूली (सं० स्त्री०) काली जड़का अनन्तमूल।

कृष्णमूषिक (सं० पु०) एक प्रकारका चूहा।

कृष्णमृग (सं० पु०) काला हिरन।

(महाभारत, वनपर्व ५३ अ०)

कृष्णमृत् (सं० स्त्री०) कर्मधा०। १ महकनेवाली काली मट्टी। यह मूत्रकृच्छ्र, कफ और पित्तको नाश करती है। (वैद्यकनिघण्टु) २ काली भूमि।

कृष्णमृत्तिक (सं० पु०) काली भूमि।

कृष्णमृत्स्ना, कृष्णमृत् देखो।

कृष्णमृत्तिका, कृष्णमृत् देखो।

कृष्णमेह (सं० पु०) काला प्रमेह।

कृष्णयजुर्वेद—यजुर्वेदका एक भाग। यजुर्वेद कृष्ण और शुक्ल दो भागोंमें बंटा है। कृष्णयजुर्वेदका दूसरा नाम तैत्तिरीय है। यजुर्वेद शब्दमें बड़ा विवरण देखो।

कृष्णयाम (वै० त्रि०) कृष्णोयामो गमनमार्गो यस्य, बहुव्री०। अंधेरी राह जानेवाला। (ऋक् ६।६।१) 'कृष्णयामं कृष्णवर्त्मानम्' (सायण)

कृष्णयोनि (वै० त्रि०) कृष्णा मलिना निकृष्टा योनिरुत्पत्तिर्यस्य, बहुव्री०। छोटी जातिवाला। (ऋक् २।२०।७)

कृष्णरक्त (सं० पु०) कृष्णोरक्तः, कर्मधा०। १ कालापन लिये हुवा लाल रंग, बैंजनी रंग। (त्रि०) २ बैंजनी, काला लाल।

कृष्णरङ्ग (सं० क्ली०) सीसा, जस्ता।

कृष्णरङ्ग—एक प्राचीन हिन्दी कवि। इनका पद्य नीचे उद्धृत किया जाता है—

"कृष्ण लाल शरणागत तेरी राख लाज अपने जनकेरी।
अशरण शरण तोकों जग जाने नित दीनदयाल दया कर हेरी॥
दूजो और कौन समरथ है जाके नाम कटै भव बेरी।
कृष्णरङ्ग प्रभु प्रणतिपाल सुनि तरिय कटाच कमल दृगफेरी॥"

कृष्णरम्भा (सं० स्त्री०) काला केला।

कृष्णरस (सं० पु०) पारेका काला भस्म। इसके बनानेकी प्रणाली यह है—लोहे या तांबेके बरतनमें १ पल शोधित गन्धक रखके धीमी आंच लगाना चाहिये। गन्धक गल जाने पर उसमें ३ पल शोधा हुवा पारा डाल लोहेके हत्थेसे बार बार चलाते हैं। पीछे गोबर पर केलेका पत्ता रखके उसपर औषधको ढाल देना चाहिये। इसप्रकार गन्धकसे मिले हुए पारेको सब रोगों पर देना चाहिये। (अत्रिसंहिता)

कृष्णरसिक—एक विख्यात हिन्दी कवि। इनकी कविता बहुत भावपूर्ण है—

१। "लालकी लगन कैसे छूटे।
लाख जतन कर मन समझाऊं पै बालिपनकी प्रीत लगी कैसे छूटे।
कृष्णरसिक नेंक नहीं मानत बरबस हिलमिल जटे॥"

२। "सांवरेके साथमें चली जइहूं सजनी।
कहा करेंगे दुरजन पुरजन निशदिन वाहीके शरण रमि रहिहूं सजनी॥
घरी पल छिन मोहि कल न परत है तन मन रसवस भइ हौं सजनी।
कृष्णरसिकके हाथ बिकानी मन माने सो करिहूं सजनी॥"

३। "मैं तो ठाढ़ीरी अंगनआ हो सैयांको आवन सुनवा।
कागा बोलेरे सखी सगुन भइलवा दरक दरक म्हारे उठल जोबनवा।
बिन देखे मोहि कल न परत है कृष्णरसिक कल मनको हरवा॥"

४। सैयां मोरीरे गगरिया छलकाई राम।
मैं जो गयी थी पनियां भरनको कुवत लाज नहीं आई राम।
कृष्णरसिक रसवस कर डारी बरबस कण्ठ लगाई राम॥"

५। "हिंडोलना मैं ना झूलूं मेरी जान।
जिय धड़कत यहि बात सखीरो देवराको मन बेमान॥
सासके आंगन केवरारे कहीं ननदीके आंगन डान।
जामें उरझी आचरारे सैयांसे कहियो कुढ़ान॥
कासों कहीं यह भेद सखीरी बिसर गयो कुलकान।
कृष्णरसिक रसबस कर लीनो वह मधुरी मुसकान॥"

६। "लागी गइलो हमरा जियरा।
पगवा ऐसी पातरीरे गज गतकोसी चाल।
कृष्णरसिक तिरछी चितवनसों फेंकत है वह जाल॥
नहीं माने मेरी एकपल हियरा॥"

७। "ना बसो बेईमानकी नगरिया।
आप न आवे वारी ना लिख भेजे जोवत हूं पिया तोरी डगरिया।
कृष्णरसिक कासों यह कहिये काउ न लागत मोरी गोहरिया॥"

८। "जोबनवा तू ना जइयोरे तेरे रहेसे मेरा मान।
जो तू चला वारी बे जान न देशां मौला राखे तेरी आन।
कृष्णरसिक यह बात मान ले अब समुझि नादान॥"

९। "मोरी भोली परोसिन वृन्दावन गैल देखाय देरे।
वृन्दावनमें कान्ह बसत है मुरलीकी टेर सुनाय देरे।
कृष्णरसिकसों लगन लगी है मेरो मन समुझाय देरे॥"

कृष्णराज (सं० पु०) काला संजन।

कृष्णराज—दक्षिणापथके एक पराक्रान्त राष्ट्रकूट-वंशीय राजा। इन्हें शुभतुङ्ग और वैरमेघ भी कहते थे। प्रसिद्ध जैनगुरु अकलङ्क और निष्कलङ्क इन्हींके दो पुत्र रहे। २ राष्ट्रकूटराज अमोघवर्षके पुत्र। इनका दूसरा नाम अकालवर्ष था। इन्होंने कलचुरि राज वंशके कोक्कलकी कन्या महादेवीका पाणिग्रहण किया। ८७५ और ९११ ई०के बीच इनके राज्यके आरम्भका समय था। मतान्तरमें ९४५ से ९५७ ई० तक इन्होंने राज्य किया। ३ राष्ट्रकूटराज जगत्तुङ्गके लड़के। ४ ओरङ्गलके कोई गणपति राजा। १२२२ ई०को इनके पिता प्रतापरुद्रके स्वर्गवासी होनेपर यह राजा बने। उसी समय अलाउद्दीनने ओरङ्गल आक्रमण किया था। ५ महाराष्ट्रके कोई राजा। यह गोविन्दके पुत्र और राघवके पौत्र थे। कृष्णराजने वर्णाश्रम-धर्मप्रदीप नामक संस्कृत धर्मशास्त्र लिखा।

कृष्णराज—मालखेडके एक राष्ट्रकूट राजा। बड़ोदा राज्यके बागुमड़ा स्थानमें एक ताम्रफलक मिला है, उसमें लिखा है कि गुजरातके महासामन्ताधिप अकालवर्ष कृष्णराजने भागवततीर्थ पर नर्मदामें स्नान और दो ब्राह्मणोंको कोङ्कण विषयमें वरिआवीका कर्वठसाढ़ि नामक ग्राम दान किया था। यह भूमि-दान ८१० शक संवत्‌की चैत्र शुक्ल द्वितीयाके दिन (१५ अपरेल ८८८ ई०) सूर्यग्रहणके उपलक्षमें हुआ। उस समय कृष्णराज अङ्कूलेश्वरमें रहते थे। अङ्कूलेश्वर आजकल भड़ोंच जिलेका एक प्रधान नगर, वरिआवी बड़ोदा राज्यका तापती पर बसा वर्तमान वरिआव और कर्वठसाढ़ि सूरत जिलेका नया कोसाड़ था।

और भी दो प्राचीन शिलालेखोंमें लिखित हुआ है कि १०५७ और १०६७ ई०के बीच परमार-वंशके महाराजाधिराज कृष्णराज भिनमाल शासन करते थे। उनके पिताका नाम ढण्ढुक और पितामहका नाम देवराज रहा।

कृष्णराज उदेयर (सार्वभौम)—महिसुरराज चाम-राज उदेयरके पुत्र। १७९५ ई०को चामराजके मरने पर टीपू सुलतानने राजभवनको लूट रानियोंको बन्द करके रखा था। उस समय उनके साथ चाम-राजका एक लड़का था। उसकी अवस्था २ वर्षकी थी और टीपूको यह भेद समझा न था। यदि वह जानते तो बोध होता है, उसे भी मार डालते। उसी बच्चेका नाम कृष्णराज है। टीपूके मरने पर दूसरे दिन पुरनिया नामक एक ब्राह्मण मन्त्री उसको लेकर अंगरेज सेनापति हेरिसके डेरे पर पहुंचे और जाकर निवेदन किया कि वही राजपुत्र महिसुरराज्यके अकेले उत्तराधिकारी थे। अंगरेज सेनापतिने उनकी बात पर विश्वास करके १७९९ ई० को उसी ३ वर्षके राजकुमारको राजा और पुरनियाको मन्त्री बना दिया। पीछे राजकुमारका नाम, महाराज कृष्ण-रायालु उदेयर पड़ा था। मन्त्री पुरनियाने श्रीरङ्ग-पत्तनको बदल महिसुरमें राजधानीको स्थापन किया और टीपू सुलतानका मकान तोड़ उसीके साज-सामानसे कृष्णराजका बहुत बड़ा राजप्रासाद बनवा दिया। १८१४ ई०को कृष्णराज बालिग हो अपने आप राज्य शासन करने लगे। उन्हें ब्रिटिश गवर्नमेण्टसे K. G. C. S. I. उपाधि मिला था। १८६८ ई०को ७२ वर्षकी अवस्थामें इन्होंने परलोक गमन किया। इनके समय मन्त्रिवर पुरनियाके सुशासन-गुणसे महि-सुर राज्यकी यथेष्ट उन्नति साधित हुई। कृष्णराजके नामपर उनके आश्रित पण्डितोंने कई संस्कृत ग्रन्थ बनाये थे। जैसे—कृष्णाष्टक, गणपतिस्तोत्र, गणेश-नवरत्नमालिका, ग्रहणदर्पण (ज्योतिष), चामुण्डा-लघुनिघण्टु, चामुण्डानक्षत्रमालिका, देवतानाम कुसुममञ्जरी, रामकृष्णस्तोत्र, शकपुरुष-विवरण, शिव-नक्षत्रमालिका, शिवमङ्गलाष्टक, श्रीतत्त्वनिधि, सांख्य-रत्नकोष, सूर्यचन्द्रस्तोत्र, सौगन्धिकापरिणय इत्यादि।

कृष्णराजिका (सं० स्त्री०) काला सरसों।

कृष्णराम—१ कोई प्रसिद्ध नैयायिक। यह अनुमान-मणिदीधितिप्रसारिणी नामसे नव्यन्यायकी टीकाके रचयिता थे। २ कोई स्मार्त पण्डित। इन्होंने उत्सर्ग-निर्णय, दानोद्योत, प्रायश्चित्त-कुतूहल आदि संस्कृत ग्रंथ बनाये। ३ कोई स्मार्त पण्डित और विख्यात टीकाकार। इन्होंने कर्मकालप्रकाशिका नामक धर्म-

शास्त्र, छन्दःसुधाकर, वृत्तदीपिका तथा वृत्तमुक्तावली नामसे छन्दोग्रंथ एवं छन्दःकौस्तुभटीका, छन्दोदीपिकाटीका, छन्दोमञ्जरीटीका, भर्तृहरिशतकटीका, रामार्यटीका, वृत्तमुक्तावलीटीका, वृत्तरत्नाकरटीका आदि संस्कृत ग्रंथोंकी रचना की। ४ कोई नव्य संस्कृत कवि। इन्होंने सारशतक, सुक्तकमुक्तावली और जयपुरविलास काव्यको प्रणयन किया।

कृष्णराम—बङ्गालप्रान्तीय यशोर जिलेके एक राजा। इन्हें प्रायः १७०५ ई०को मनोहररायका उत्तराधिकार मिला था। कृष्णरामके पीछे सुखदेव राय गद्दी बैठे (१७२९-४२)। यशोर देखो।

कृष्णराम वसु—दयाराम वसुके पुत्र। इनका आदि निवास हुगली जिलेका तड़ा था। १६५५ शक (१७३३ ई०)को ११ पौषके दिन कृष्णरामका जन्म हुवा। उनके पिता दयाराम वराज झगड़ोंसे घबरा तड़ा छोड़ कर बालीमें जा कुछ दिन रहे थे। कृष्णरामकी अवस्था उस समय १४।१५ वर्षकी थी। उनके पिता उदासीन रहते थे। उनका जी बहलाने और ठण्डा करनेके लिये कृष्णराम उसी अवस्थामें पुराणोंकी कथा सुनाते थे। कभी कभी वह शास्त्रके श्लोक और अच्छी अच्छी बातें भी कहा करते थे। फिर कृष्णरामने एक संन्यासीसे दीक्षा ली। इस घटनाके कुछ काल पीछे वह लोग कलकत्तेमें आकर रहने लगे। कृष्णरामने बापसे कुछ रुपये ले अपने आप व्यवसाय किया था। एकबार उन्होंने सुफस्सिलका नमक अपने आप अकेले लिया और उसे बेचकर ४० हजार रुपया कमाया। इस रुपयेको लगा और काम बढ़ा उन्होंने बहुत रुपया उपार्जन किया था। इसके पीछे व्यवसाय बन्द करके उन्होंने नौकरी करनी चाही। २ हजार रुपये मासिक पर वह हुगलीमें ईष्ट इण्डिया कम्पनीके दीवान हो गये। इसीसे लोग इन्हें कृष्णराम दीवान कहते थे। फिर उसी वर्ष वह नौकरी छोड़ कलकत्तेके बागबजारमें रहने लगे। उन्होंने यशोर, वीरभूम और हुगली जिलेमें बहुतसी जमीन्दारी खरीदी थी।

१८११ ई०को ७८ वर्षकी अवस्थामें कृष्णराम स्वर्गवासी हुए। वह बङ्गालमें दाताके नामसे विख्यात थे। उनका दान भी सामान्य न रहा। कहते हैं कि उन्होंने एकबार १ लाख रुपयेके चावल मोल लिये थे। उसके पीछे देशमें दुर्भिक्ष पड़ा। यदि वह चाहते, तो उस समय चावल बेच बहुतसा रुपया कमा लेते। परन्तु उन्होंने लाभ की परवा न करके उसी चावलसे अन्नसत्र खोल दिया। इस आत्मत्यागसे उनका यश चारो ओर फैल गया। घरमें दुर्गोत्सवके उपलक्ष पर वह बड़ा दान करते थे। कहा जाता है कि प्रतिमाविसर्जन करके घर लौटते समय जो कोई भरा घड़ा दिखा सकता, उसी को रुपया मिलता था। इसीलिये गङ्गातीरसे उनके लौटते समय राहके दोनों ओर सैकड़ों लोग भरे घडे रखे बैठे रहते थे।

धर्मपरायण कृष्णरामकी अनेक कीर्तियां हैं। श्रीरामपुरके निकट माहेशका रथ उन्हींकी कीर्ति है। यशोरमें मदनगोपालजी और वीरभूममें राधावल्लभजीको स्थापन करके सेवाके लिये यथेष्ट परिमाण भूमि और पुजारी ब्राह्मणोंकी वृत्ति वह लगा गये हैं। काशीके नानास्थानोंमें उन्होंने शिवको स्थापन किया। कृष्णराम भागलपुर जिलेके जहंगीरा नामक स्थानमें गङ्गागर्भके किसी पहाड़ पर महादेवका अच्छासा बड़ा मन्दिर बनवा गये हैं। तड़ासे मथुरावाटी तक उन्होंने जो राह बनायी, वह कृष्णजङ्गल कहायी है। गयाके रामशिला पहाड़की उन्होंने सीढ़ियां भी निकलवायी थीं। उन्हींके रुपये और यत्नसे यात्रियोंके सुभीतेको कटकसे पूरी तक प्रायः २० कोस राहकी दोनों ओर आमके पेड़ लगाये गये। जगन्नाथ, बलराम और सुभद्राके लिये उन्होंने ३ रथ बनवा दिये और उसके व्यय आदिको यथेष्ट भूसम्पत्ति दे रखी है। यात्रियोंकी सुविधाके लिये पुरीके बाहर उन्होंने एक बड़ा तलाव खुदवाया। उनके मदनगोपाल और गुरुप्रसाद दो लड़के रहे।

कृष्णरामदास—एक बंगाली कवि। यह निमताके रहनेवाले और जातिके कायस्थ थे। इनके पिताका नाम भगवतीदास था। इनके बनाये बंगलाके २ पुस्तक मिलते हैं। उनमें एकका नाम कालिकामङ्गल और

दूसरेका नाम रायमङ्गल है। रायमङ्गल—खासपुर परगनेके बड़िशया गांवमें १६०८ शकको लिखा गया। एक दिन कवि उस गांव किसी कार्यके उपलक्षमें गये थे। उस दिन सोमवार भाद्रमास था। किसी गोपालकी गोशालामें उन्हें रहना पड़ा। उन्होंने बीती रातको स्वप्न देखा कि सिंह पर चढ़के उनके पास किसीने जाकर कहा था—'हम दक्षिणराय हैं। माधवाचार्यने हमारे मङ्गलगीत बनाये हैं। परन्तु वह गीत हमें अच्छे नहीं लगते। माधवाचार्य हमारा माहात्म्य नहीं समझते। इसलिये तुम 'रायमङ्गल' गीत बनावो। जो तुम्हारे बनाये गीत न सुनेगा, हमारा सिंह उसको सवंश मार डालेगा। इसी स्वप्नको देखके कृष्णरामने रायमङ्गल लिख डाला।

कृष्णरामका कालिकामङ्गल विद्यासुन्दरके गल्पके आधार पर लिखा गया है, परन्तु उसमें वर्धमानका नाम और गन्ध कुछ भी नहीं है। भारतचन्द्रका विद्यासुन्दर लिखा जानेसे बहुत पहले कवि रामकृष्णने अपना कालिकामङ्गल लिखा था। दोनों पुस्तक पढ़नेसे कई बार ऐसा समझ पड़ता कि भारतचन्द्रने कृष्णरामका अनुकरण किया है। भारतचन्द्रने उससे पहलेके किसी विद्यासुन्दरके लेखकका नाम नहीं निकाला। परन्तु विद्यासुन्दरके सहारे भारतचन्द्रके पीछे भी बङ्गालके जिन कवियोंने ग्रंथ बनाये, उन्होंने अपने पुस्तकमें रामकृष्णकी विशेष प्रशंसा की है। बङ्गालके इन कविका नाम प्राणराम है।

कवि कृष्णरामकी जन्मभूमि निमता ईष्टर्न बङ्गाल ष्टेट रेलवेके बेलघरिया ष्टेशनसे आध कोस दूर है। अब उनके वंशमें कोई नहीं रहा।

कृष्णरामराय—वर्धमानके एक राजा। वह कपूरवंशीय क्षत्रिय घनश्यामके उत्तराधिकारी थे। कृष्णराय अपने नामकी सनद दिल्लीके बादशाहसे ले आये थे। सम्भवतः इसीसे राजा उपाधि इस वंशमें पहली पहले चला होगा। १६९६ ई०को इन्होंने प्रबलपराक्रान्त हो वर्धमानके निकटवर्ती चेतुयाके राजा शोभासिंहकी राजधानी आक्रमण की थी। तालुकदार शोभासिंहने राजा कृष्णरायके अन्यायाचरणसे बिगड़ विद्रोह उठाया और अफगानयोद्धा रहीमखान्‌के सहारे गुप्तभावमें राजधानी आक्रमण करके कृष्णरामको मार डाला। राजाके घरानेके सभी लोग कारागारमें पड़े थे। केवल राजपुत्र जगत्‌राम ढाका भाग जानेसे बच गये। चितीशवंशावलीमें लिखा है कि कृष्णरामके लड़के जगत्‌रामने स्त्रीके वेशमें वर्धमानसे भाग कृष्णनगरके राजा रामकृष्णका आश्रय लिया था।

कृष्णराय—१ दक्षिणापथवाले वीरराज्यके कोई गङ्गवंशीय राजा। यह वीररायके पुत्र थे। २ विजयनगरके प्रसिद्ध राजा। कृष्णदेवराय देखो। ३ जाम्बुवतीकल्याण नामका संस्कृत नाटक बनानेवाले। ४ सिद्धान्तसंग्रह नामक ज्योतिर्ग्रन्थके प्रणेता।

कृष्णरुहा (सं० स्त्री०) कृष्णा सती रोहति, कृष्ण-रुह-क-टाप्। जतुकालता।

कृष्णरूप—हिन्दीके कोई कवि। इनकी कविता अधिक प्रचलित नहीं—

"री ग्वालिनी खेलतमें मेरी गेंद क्यों लई है चोराई।
ग्वालबाल संग खेल मच्यो तैं अङ्गियामें डराई॥
लपट झपट बहियां गहे लीन्हीं एक गई दो पाई।
अबीर गुलाल मलो मुखरोरी पिचकारिनसों भिजाई।
कृष्णरूप हो गई री ग्वारन सुधबुध सब बिसराई॥"

कृष्णरूप्य (सं० त्रि०) कृष्णस्य भूतपूर्वः, कृष्ण-रूप्य। षष्ठ्या रूप्य च। पा ५।३।५४। कृष्णसे पहले सम्बन्ध रखनेवाला।

कृष्णल (सं० पु०) कृष्णं कृष्णवर्णं लाति। १ घुंघची। २ रत्ती (तौल)। ३ काली घुंघची।

कृष्णलक, कृष्णल देखो।

कृष्णलवण (सं० क्ली०) कृष्णं लवणम्, कर्मधा०। काला नमक। इसका संस्कृत पर्याय—रुचक, अक्ष और सौवर्चल है।

कृष्णला (सं० स्त्री०) कृष्ण अस्त्यर्थे लच्-टाप्। १ सफेद घुंघची। २ घुंघची ३ काली घुंघची। ४ रत्ती (तौल)। इसका संस्कृतमें साङ्गुष्ठा, गुञ्जा, रक्तिका, काकशल्किका, काकादनी, काकतिक्ता, काकजङ्घा और शिखण्डनी भी कहते हैं।

कृष्णलोह (सं० क्ली०) नित्यकर्मधा०। १ कान्तलोह। २ तीक्ष्णलोह।

कृष्णलोहित (सं० त्रि०) कृष्णः सन् लोहितः, कर्मधा०। काला लाल, बैंजनी।

कृष्णलोह, कृष्णलोह देखो।

कृष्णवक्त्र (सं० पु०) कृष्णं वक्त्रं यस्य, बहुव्री०। काले मुंहका बन्दर।

कृष्णवनालुक (सं० क्ली०) एक जङ्गली आलु। यह रुचि उत्पन्न करनेवाला, महासिद्धिकर और जाड्यहर है। (वैद्यकनिघण्टु)

कृष्णवर्ण (सं० पु०) कृष्णो वर्णो ऽस्य, बहुव्री०। १ राहु। कृष्णो ऽशुद्धो वर्णः। २ शूद्र। ३ काला रंग। ४ काला मैनफल। ५ कस्तूरी। ६ मुस्ता। ७ रीठा। ८ करेमू। ९ कोई मछली। (क्ली०) १० पानी। ११ लौंग। १२ काला अगर। (त्रि०) १३ काले रंगवाला।

कृष्णवर्तनि (वै० त्रि०) कृष्णो वर्तनिर्मार्गो यस्य, बहुव्री०। काली राहवाला। (ऋक् ८।२३।१९)

कृष्णवर्त्मा (सं० पु०) कृष्णं वर्त्म धूम्रप्रसाररूप गतिस्था यस्य, बहुव्री०। १ आग। २ चीता। ३ भिलावां। ४ राहुग्रह। (क्ली०) ५ कृष्णस्वरूप गति। (त्रि०) ६ बुरा काम करनेवाला।

कृष्णवर्मा—एक कदम्बराज। देवगिरिके एक दानपत्रमें लिखा है कि उनके पुत्रका नाम देववर्मा था। उन्होंने एक अश्वमेधयज्ञ किया।

कृष्णवर्वर (सं० पु०) नित्यकर्मधा०। काली तुलसी।

कृष्णवल्मीक (सं० पु०-क्ली०) काली बांबी।

कृष्णवल्लिका (सं० स्त्री०) कृष्णा वल्लिका, कर्मधा०। मालवेमें उत्पन्न होनेवाली जतुका लता।

कृष्णवल्ली (सं० स्त्री०) १ काली तुलसी। २ लकड़ी। ३ काला अनन्तमूल।

कृष्णवानर (सं० पु०) काले मुंहका बन्दर। इसका संस्कृत पर्याय—गोलाङ्गूल, गौरास्य, कपि और कृष्णमुख है।

कृष्णवार्ताकु (सं० पु०) काला बैंगन या भांटा।

कृष्णविषाणा (सं० स्त्री०) कृष्णस्य कृष्णसारमृगस्य विषाणा, ६-तत्। यज्ञमें दीक्षित यजमानके कण्डूयनको काले हिरनके सींगका बना एक द्रव्य। कात्यायनश्रौतसूत्रमें लिखा है :—

"कृष्णविषाणां त्रिवलिं पञ्चवलिं वोसानां दशायां बध्नीत।"

तीन या पांच गांठोली कृष्णविषाणायें ऊर्ध्व मुखी करके कपड़ेके खूंटमें बांध देनी चाहिये। परिशिष्टकारके मतमें कृष्णविषाणाको एक बित्तेको बराबर रखते और दाहनी ओर बांधते हैं।

"त्रिवलिः पञ्चवलिर्वा दक्षिणाहद भवति। सव्याहदित्येके।" (कर्क)
"तया कण्डूयनम्।" (कात्यायनश्रौतसूत्र) "दीक्षितेन कर्तव्यम्।" (कर्क)

तीन या पांच गांठवाली कृष्णविषाणा दाहिनी ओर बांधनी पड़ती है। किसी किसीने बाईं ओर बांधनेकी बात भी कही है। यज्ञमें दीक्षित यजमानको उसी कृष्णविषाणासे कण्डूयन करना चाहिये।

कृष्णमृगो विषाणं योनिर्यस्याः, बहुव्री०। २ दीक्षित यजमानके धारण करने योग्य काले हिरनका चमड़ा।

कृष्णवीज (सं० क्ली०) कृष्णं वीजं यस्य, बहुव्री०। १ कलींदा, तरबूज। इसे संस्कृतमें कालिन्द और सुवर्तुल भी कहते हैं। यह ग्राही, शुक्र बिगाड़नेवाला, शीतल, पकानेमें भारी, उष्ण, खारा, पित्तवर्धक और वायु तथा श्लेष्मानाशक है। (भावप्रकाश)

(पु०) कृष्णं उग्रं वीजं यस्य, बहुव्री०। २ लाल सैजन।

कृष्णवृन्ता (सं० स्त्री०) कृष्णं वृन्तं यस्य, बहुव्री०। १ पाटलावृक्ष, पांडरी। इसका संस्कृत पर्याय—पाटलि, पाटला, मोघा, मधुदूती, फलेरुहा, कुबेराक्षी, कालस्थाली, अलिवल्लभा और ताम्रपुष्पी है। २ माषपर्णी। संस्कृतमें सिंहपुच्छी, ऋषिप्रोक्ता, माषपर्णी, महासहा, काम्बोजी और पाण्डुलोमशपर्णिनी है। ३ गम्भारीवृक्ष। इसका पर्याय—गाम्भारी, भद्रपर्णी, श्रीपर्णी, मधुपर्णिका, काश्मरी, काश्मीरी, हीरा, पीतरोहिणी, मधुरसा और महाकुसुमिका है। (भावप्रकाश) ४ रसभरी।

कृष्णवृन्तिका, कृष्णवृन्ता देखो।

कृष्णवेणा (सं० स्त्री०) दाक्षिणात्यकी एक प्रसिद्ध नदी। इस नदीसे देवह्रद और जातिस्मरह्रद नामक २ ह्रद उत्पन्न हुए हैं। इसका चलता नाम कृष्णा है। (भारत, वन, ८५ अ०)

कृष्णवेणी (सं० स्त्री०) कृष्णवेणा नदी। सह्य-पर्वतकी जड़से निकल यह समुद्रमें जा गिरी है।

इसी नदीको महाभारतमें कृष्णवेखा और हरिवंशमें (२३६।४२) कृष्णवेणा कहा है। कृष्णानदी देखो।

कृष्णवेत (सं० क्लो०) कृष्णं कृष्णवर्णं वेतम्, कर्मधा० १ काला बेंत। २ एक बेल।

कृष्णवेल्लूर—दक्षिणापथकी एक बसती। (बृहत्संहिता १४।१९) वेल्लूर देखो।

कृष्णवोल (सं० पु०) कृष्णच्छवि वोलभेद, सुमल्वर। यह कड़वा, ठण्डा, भेदक, रसशोधन और शूल, आध्मान, कफ, वात, कृमि और गुल्मको दूर करनेवाला है। (वैद्यकनिघण्टु)

कृष्णव्यथिः (वै० त्रि०) कांटोंको जला देनेवाला।

"कृष्णव्यथिरस्वदयन्नभूम।" (ऋक् २।४।७)

'कृष्णव्यथिः कृष्णव" प्राप्ता दग्धा व्यथकरा कण्टकादयः येन।' (सायण)

कृष्णव्रीहि (सं० पु०) नित्यकर्मधा०। कालाधान। यह रसका कसैला और पकनेमें हलका होता है। सुश्रुतने इसे सब धानोंमें अच्छा कहा है।

"कृष्णव्रीहीणां नखनिर्भिन्नानाम्।" (कात्यायनश्रौतसूत्र १५।३।१४)

कृष्णश (सं० क्लो०) काले रंगका कपड़ा। (कात्यायनश्रौ० २२।४।१२)

कृष्णशकुनि (सं० पु० स्त्री०) कौवा।

"स्त्रीशूद्रश्वकृष्णशकुनिशुनकादर्शनम्।" (पारस्करगृह्य०)

कृष्णशङ्कर शर्मा—एक राजा। यह कवि राजशेखरके समसामयिक थे।

कृष्णशठ (सं० पु०) अशुभ घोड़ा।

कृष्णशण (सं० पु०) काले फूलका सन।

कृष्णशर्मा—पदमञ्जरी नामक संस्कृतपद्यरचयिता। इस ग्रन्थमें कृष्ण और गोपियोंका प्रशंसावाद है।

कृष्णशार (सं० पु०) काला हिरन।

कृष्णशारिवा (सं० स्त्री०) काला अनन्तमूल।

कृष्णशालि (सं० पु०) काला धान। इसका संस्कृत पर्याय—कालशालि, श्यामशालि और सितेतर है। यह त्रिदोष तथा दाहनाशक, मधुर, पुष्टि एवं वीर्यवर्धक और वर्णकान्ति तथा बलकारक है। (राजनिघण्टु)

कृष्णशिंशपा (सं० स्त्री०) काली शीशम। यह तीती, कड़वी, दीपनी और कफ, वात, शोथ तथा अतीसारको दूर करनेवाली है। (राजनिघण्टु)

कृष्णशिखिक (सं० क्लो०) अगरकी लकड़ी।

कृष्णशिग्रु (सं० पु०) काला सैंजन।

कृष्णशिम्बा (सं० स्त्री०) काली कुरथी।

कृष्णशिम्बिका (सं० स्त्री०) कृष्णा कृष्णवर्णा कुत्सिता शिम्बिका वा, कर्मधा०। काली सेम।

कृष्णशृङ्ग (सं० पु०) कृष्णं शृङ्गमस्य, बहुव्री०। भैंसा।

कृष्णशेष—स्फोटतत्त्व नामक संस्कृत ग्रन्थ बनानेवाला।

कृष्णशैरीयक (सं० पु०) काली कटसरैया।

कृष्णश्वेता (सं० स्त्री०) १ पाडरी। २ गंभारी।

कृष्णसंज्ञक (सं० क्लो०) काला नमक।

कृष्णसख (सं० पु०) कृष्णस्य सखा, टच्। १ मध्यम-पाण्डव, अर्जुन। २ अर्जुनवृक्ष।

कृष्णसखी (सं० स्त्री०) जीरा।

कृष्णसनेही—हिन्दी भाषाके एक कवि। इनकी कविता भक्तिभावसे भरी है—

"तुम पार लगाय देहो कन्हैया मोरी नैया हो।
तुमही ठाकुर तुमही परमेश्वर तुमही राम रमैया हो॥
तुम हो जगत उधारन तारन विनती करूं पर्‌ यां हो।
तुम हो तुम दौलत सब औरे तुम बिन कौन रखैया हो।
कृष्णसनेही मैं तेरो बल जाऊं भवसागर पार करैया हो॥"

कृष्णसमुद्भवा (सं० स्त्री०) कृष्णा सती समुद्भवति, कृष्णा-सं-भू-अच्। १ कृष्णानदी।

कृष्णसर्ज्ज (सं० पु०) अश्वकर्णशालवृक्ष, किसी प्रकारका ढ़ाक।

कृष्णसर्प (सं० पु०) काला सांप।

कृष्णसर्पी (सं० स्त्री०) काली पिड़की या कुमरी।

कृष्णसर्षप (सं० पु०) राई। इसका संस्कृत पर्याय—चव क्षताभिजनक और कृमिकृत् है। यह बहुत कड़ुवा होता है। (भावप्रकाश)

कृष्णसार (सं० पु०) १ थूहर। २ शीशम। ३ खैर। ४ काला हिरन।

'कृष्णसारस्तु चरति मृगो यत्र स्वभावतः।
स ज्ञेयो यज्ञीयो देशो म्लेच्छदेशस्ततः परः॥" (मनु २।२३)

काले हिरनको संस्कृतमें कृष्णसार और कृष्ण-सारङ्ग भी कहते हैं। वह चट्टग्राममें और सिलहटके

पहाड़ोंमें अधिक देख पड़ता है। मलय और सुमात्रा द्वीपमें काले हिरनोंका दल बंधा रहता है। मलयके रहनेवाले उसे 'कसोइतम्' कहते हैं। दूसरे हिरनोंसे वह आकारमें कुछ बड़ा होता है। रंग कितना ही काला रहता है। जन्मसे २ वर्षके बीच उसकी टुड्डी और गलेमें लम्बे लम्बे बाल आ जाते हैं। दूसरोंके ऐसे बाल नहीं निकलते। घोड़ेसे काला हिरन कुछ कुछ मिलता है। इसीसे ग्रीक-विद्वान् आरिस्तलने उसका नाम 'हिपिलेफास' रखा है। कानके पास और पूंछमें दूसरे हिरनोंसे बाल कुछ अधिक रहते हैं। काले हिरनोंमें नरके सींग होते, स्त्रीके नहीं। मादा काले हिरनके गलेमें बाल कुछ छोटे आते हैं। समय समय पर काले हिरन दल बाँध कर घूमा करते, किसी किसी समय वयसकालके अनुसार जोड़े जोड़े अलग देख पड़ते हैं। स्थानविशेषमें आकृतिका वैलक्षण्य लगता है। जहां भली भांति खानेको मिलता और बाघ आदिका डर नहीं रहता, काला हिरन कुछ कुछ अधिक बढ़ता है। फिर खानेकी सामग्री यथेष्ट न पाने और हिंस्र जन्तुसे सताये जानेपर उसका आकार प्रायः छोटा होता है। बोरनियो और यवद्वीपमें भी कृष्णसार देख पड़ता है। वैद्यकमतमें काले हिरनका मांस— ग्राही, रुचिकर, बलकर और ज्वरनाशक है।

कृष्णसारका (सं० स्त्री०) काला शीशम।

कृष्णसारङ्ग (सं० पु०) कृष्णः सारङ्गो मृगः, कर्मधा०। १ करसायल, काला हिरन।

"कृष्णसारङ्ग मेध्यमभावे लोहितसारङ्गम्।"

(कात्यायनश्रौतसूत्र ७।६।२१)

कृष्णसारथि (सं० पु०) कृष्णः सारथिर्यस्य, बहुव्री०। १ मंझले पाण्डव अर्जुन। भारतके महायुद्धमें अर्जुनके कहनेसे कृष्णने उनका सारथि होना स्वीकार किया था। २ अर्जुनवृक्ष।

कृष्णसारमांस (सं० क्ली०) काले हिरनका मांस। कृष्णसार देखो।

कृष्णसारा (सं० स्त्री०) काला शीशम।

कृष्णसारिवा (सं० स्त्री०) १ श्यामालता, सावां। यह ठण्डी, बल बढ़ानेवाली, मधुर और कफको दूर करनेवाली है। (वैद्यकनिघण्टु)

कृष्णसिंह—कृष्णगढ़के एक कछवाह राजा। यह सूर्यसिंहके बड़े भाई थे। सूर्यसिंहने १६१५ ई०को इन्हें मार डाला। बादशाह जहांगीरने कृष्णसिंहकी बहनसे विवाह किया था। उन्हींके गर्भसे सम्राट् शाहजहान्ने जन्म लिया।

कृष्णसीता (वै० त्रि०) कृष्णमार्ग, अंधेरी राह चलनेवाला। (ऋक् १।१४०।४)

कृष्णसुन्दर (सं० पु०) कृष्णवर्णोऽपि सुन्दरः। १ श्रीकृष्ण। २ काला होते भी अच्छा लगनेवाला पुरुष।

कृष्णसूक्ष्मफला (सं० स्त्री०) शारिवाभेद, एक प्रकारका अनन्तमूल। यह वीर्य बढ़ानेवाली और अग्निमान्द्य, अरुचि, श्वास, कास, आम, विष, दोषत्रय, रक्तदोष, प्रदर, ज्वर तथा अतीसार दूरकरनेवाली है। (वैद्यकनिघण्टु)

कृष्णस्कन्ध (सं० पु०) तमालवृक्ष, तमाखूका पेड़।

कृष्णस्रोत (सं० पु०) रसाञ्जन, रसोत।

कृष्णस्वसा (सं० स्त्री०) कृष्णस्य स्वसा भगिनी, ६-तत्। दुर्गा।

कृष्णा (सं० स्त्री०) कृषेर्नक् यत्वं ततष्टाप्। १ द्रौपदी। द्रौपदी देखो। २ पुराणकी कही हुई एक नदी। कृष्णानदी देखो। ३ नीलका पेड़। ४ किशमिश। ५ दाख। ६ काला पुनर्नवा। ७ काला जीरा। ८ गंभारी। ९ कुटकी। १० अनन्तमूल। ११ राई। १२ श्यामा, चिड़िया। १३ पर्पटी, पपड़ी। १४ काकोली। १५ सोमराजी। १६ विषैली जोंक। यह काली और मोटी होती है। (सुश्रुत) १७ मिर्च। १८ पीपल। १९ इन्द्रयव। २० काली तुलसी। २१ सिरिष। २२ परवल। २३ सेवती। २४ जटामांसी। २५ दूर्वा। २६ काली निर्गुण्डी। २७ वनकुरथी। २८ कस्तूरी।

कृष्णा—मन्द्राजप्रान्तके उत्तरपूर्व सागरतटका एक जिला। यह अक्षा० १५° ३७′ एवं १७° ९′ उ० और देशा० ७९° १४′ तथा ८१° ३३′ पू०के बीच पड़ता है। इसका क्षेत्रफल ८४९८ वर्गमील है।

कृष्णा जिलेके पूर्व बङ्गालकी खाड़ी, पश्चिम

निजामका राज्य तथा कारनूल जिला और उत्तर एवं दक्षिण क्रमशः गोदावरी तथा नेल्लूरका जिला लगा है। कृष्णा नदी इसकी पश्चिम सीमा पर बहती है। इसीसे लोग जिलेको भी कृष्णा ही कहते हैं। पश्चिमका देश पथरीला है। बीचमें और उत्तरकी ओर काली मट्टीका मैदान है। पूर्वमें कृष्णाके पानीसे घिरी हुई तीखूंटी भूमिमें धानकी खेती बहुत है। इस जिलेमें पेड़ अधिक नहीं होते। पालनाद और विनुकोंड़ जंगलमें चीते तथा सांभर हिरन मिलते हैं। भीतरी तालुकोंमें तेंदू और भालू भी कहीं पहाड़ोंकी खोहमें छिपे रहते हैं। चिड़ियां अधिक हैं। कोलेर झीलमें पानीके सभी पखेरू देख पड़ते हैं। उसमें मछलियां भी बहुत हैं।

कृष्णाका जलवायु स्वास्थ्यकर है। पर कहीं कहीं ग्रीष्मकी प्रबलता रहती है। ज्वर लोगोंको बहुत कम आता है। वर्षमें प्रायः ३३ इञ्च पानी बरसता है। खेत सींचनेके लिये कृष्णा नदीसे नहर निकली है। परन्तु बाढ़ प्रायः आया करती है। १७७९ ई०को मसूली-पटममें समुद्रको लहर १२ फीट चढ़ गयी थी। उसमें २० हजार लोग डूब मरे। १८६४ ई०को इससे भी बुरी दुर्दशा हुई। समुद्रने १७ मील तक इस जिलेको भूमि डुबा दीथी। उसमें ३०००० मनुष्योंने अपने प्राण गंवाये।

जहां तक विदित हुवा है, पहले अन्ध्रवंशके बौद्ध राजा कृष्णामें राजत्व करते थे। उन्होंने अमरावतीमें एक स्तूप बनाया। उनके पीछे ई० १७ वीं शताब्दी-के आरम्भमें पूर्वसे ब्राह्मण मतावलम्बी चालुक्य आये। उन्होंने उण्डवेल्ल और दूसरे स्थानोंकी चटानों-को तोड़ तोड़ कर उनके भीतर मन्दिर बनाये थे। प्रायः ९९९ ई०को उनका स्थान चोल राजावोंने ले लिया। फिर २ शताब्दी पीछे वरङ्गलके गणपतियोंका दबदबा बढ़ा। उन्होंके राज्यकालको मोतुपल्ल जिलेमें मार्कोपोलो जाकर उतरे थे। उस समय यह जिला दो अधिकारोंमें चला गया। उड़ीसाके राजा उत्तर-भाग और रेड्डि लोग दक्षिणभाग पर राजत्व करते थे। उनके दुर्गोंका ध्वंसावशेष कोंडवीड, बेल्लि-यमकोड और कोंडपल्लिमें आज भी देख सकते हैं। १५१५ ई०को विजयनगरके कृष्णदेवने जिलेका उत्तर-भाग उड़ीसाके गणपति राजावोंसे छीन लिया था। १५६५ ई०को जब विजयनगर साम्राज्य पतित हुवा, कृष्णाजिला गोलकुण्डेको कुतुबशाहोमें लगने लगा और अन्तको औरङ्गजेबको बादशाहीमें मिल गया।

१६११ ई०को मसूलीपटम्में अंगरेजोंने अपना दूसरा उपनिवेश स्थापन किया था। जबतक (१६४१ ई०) वह मन्द्राज नहीं पहुंचे, मसूलीपटम् भी उनका बड़ा अड्डा रहा। इसके तीन वर्ष पीछे डच और १६०८ ई०को फ्रेंच भी आ पहुंचे। परन्तु १७५० ई० तक किसी यूरोपीय शक्तिने राजनीतिक प्रभाव नहीं दिखाया। दो वर्ष पीछे दक्षिणके सूबेदारने फ्रेंचोंको सबका सब उत्तर सरकार दे डाला, जिनसे वह अङ्ग-रेजोंके हाथ आया। १७५८ ई०को अंगरेजों और फ्रेंचोंमें लड़ाई छिड़ी थी। लार्ड क्लाइवने बङ्गालसे कर्नेल फोर्डको फ्रेंचों पर धावा करनेको भेजा। उन्होंने कोंदोरमें फ्रेंचोंको हराया और मसूलीपटम् तक उन्हें भगाया था। फिर कर्नेल फोर्डने वहां उन्हें घेर लिया। अन्तको रातमें उन्होंने दुर्ग आक्रमण करके अधिकार किया था। इस जीतका फल यह हुवा कि दक्षिणके सूबेदारने सारा सरकार अंगरेजोंको दे डाला।

१७९६ ई०को सत्तनपल्ले तालुकके अन्तर्गत अमरा-वतीका स्तूप आविष्कृत हुवा था। बौद्धोंकी यह बड़ी कीर्त्ति थी। इसका कुछभाग लन्दन, कलकत्ता और मन्द्राजके सरकारी अजायबघरोंमें रखा है। कहते हैं, पहले अमरेश्वरका मन्दिर भी बौद्ध वा जैनस्थान था। तेनालि तालुकमें एक बड़े पुराने स्थान चन्द्वो-लुका ध्वंसावशेष पड़ा है। उसमें बौद्ध मन्दिर और समाधि विद्यमान है। जग्गय्यपेट और गुडिवाड़में भी बौद्धस्तूप हैं। चन्द्वोलुमें सोनेके सिक्के मिले हैं। १८७४ ई०को मजदूरोंने कितनी ही सोनेकी ईंटें पायीं। भट्टिप्रोलुमें पहले एक बढ़िया बौद्धस्तूप था। विनुकोंडमें शिलालेख बहुत हैं।

कृष्णाजिला १२ तालुकोंमें बंटा है—बेजवाड़ा,

तिरुवूर, नूजवीद, नन्दीग्राम, गुदिवाड, बन्दर, गण्टूर, सत्तनपल्ले, तेनालि, नरसरावपेट, पलनाद, विनुकोंड और बापतल। इस जिलेकी लोकसंख्या २१५४८०३ है। सैकड़े पीछे ८६ हिन्दू, ६ मुसलमान और ५ ईसाई हैं। सौमें ५ मनुष्य हिन्दी बोलते हैं। अवशिष्ट लोगोंकी तेलगु भाषा है। हिन्दुवोंमें ब्राह्मणोंकी संख्या अधिक है। साधारणतः लोग खेतीबारी करके अपना काम चलाते हैं। धानकी फसल बड़ी होती है। सफेद धानको सींचना और एक स्थानसे उखाड़ कर दूसरे स्थान पर लगाना पड़ता है। काला धान बरसातके पानीमें ही हो आता है। पालनाद और सत्तनपल्लेमें रूई बहुत उपजती है। तम्बाकू यहांसे ब्रह्मदेशको अधिक भेजी जाती है।

ऊंचे भूमि गोचारण स्थानकी कोई कमी नहीं। नेल्लूरके अच्छे अच्छे पशु यहां मिलते हैं। भेड़ें बहुत हैं। जंगलकी कमी है। सिवा पत्थरके दूसरी धातु इस जिलेमें नहीं मिलता। कहीं कहीं थोड़ा लोहा और विनुकोंडमें तांबा पाया जाता है। अंगरेजोंका अधिकार होनेसे पहले कृष्णा जिलेमें हीरा ढूंढ़नेके लिये खान खोदनेका बड़ा काम लगा था। फ्रेंच जौहरी टेवरनियरने लिखा है कि कृष्णा जिलेमें ९०० करट (रत्ती)-का जो हीरा मिला था, वह औरङ्गजेबको भेजा गया। कुछ ग्रन्थकार इसी हीरेको कोहनूर समझते हैं।

भेड़ और बकरीके रूयेंका मोटा कम्बल इस जिलेमें कई स्थानों पर बनता है। पलंगोंके लिये निमाड़ पालनाद और विनुकोंड तालुकमें तैयार की जाती है। विनुकोंडमें मोटे गलीचे और ऐनवोलुमें चटाइयां बनाते हैं। पहले मसूलीपटम्‌से बढ़िया गलीचे इङ्गलैण्ड भेजे जाते थे। आज कल यह काम बिगड़ गया है। पहले जग्गय्यपेटमें रेशमका अच्छा कपड़ा बनता था, परन्तु अब वह भी न रहा। कोंडपल्लिमें लकड़ीके खिलोने अच्छे बनते हैं। पहले कोंडवीडमें कागज तैयार किया था। परन्तु १८५७ ई० से जब सरकारी दफतरोंने उसको लेना बन्द किया, सब काम चौपट हो गया। मसूलीपटम् और निजामपटम् कृष्णा जिलेके २ बन्दर हैं। रेलवेसे रूई बाहर बहुत भेजी जाती है। बेजवाड़ेमें चमड़ेका काम बहुत है। मन्द्राज रेलवेकी ईष्ट कोष्ट लाइन कृष्णा जिलेसे निकल गयी है। निजामकी गारण्टीड ष्टेट रेलवे और साउदर्न महरठा रेलवे बेजवाडेमें जाकर समाप्त हुई है। कृष्णा जिलेमें ७०९ मील पक्की और ४४९ मील कच्ची सड़क है। तेनालि और बापतल तालुकमें पक्की सड़ककी बड़ी आवश्यकता है। १८३३ ई०को कृष्णा जिलेमें घोर दुर्भिक्ष पड़ा था। उस समय १५०००० मनुष्य भूखों मर गये। गण्टूर, मसूलीपटम् और बेजवाडेमें म्युनिसपालिटी है। इस जिलेमें कोई बड़ा जेल नहीं। अपराधी राजमहेन्द्री भेज दिये जाते हैं। छोटे छोटे प्रायः २० जेल बने हैं, जिनमें ३४१ कैदी रह सकते हैं।

बन्दरमें शिक्षाका अच्छा प्रचार है। मसूलीपटम् और गण्टूरमें कला सम्बन्धीय विद्यालय बना है। कृष्णा जिलेमें १४ अस्पताल और ८ औषधालय सरकारी हैं।

कृष्णाख्या (सं० स्त्री०) काली पुनर्नवा।

कृष्णागुरु (सं० क्ली०) कृष्णं अगुरु, कर्मधा०। काला अगर। इसका संस्कृत पर्याय—शृङ्गार, विश्वरूपक, शीर्ष, कालागुरु, केश्य, वसुक, कृष्णकाष्ठ, धूपार्ह, वल्लर, मिश्रवर्ण और गन्ध है। राजनिघण्टुके मतमें यह कड़ुवा, उष्ण, तीता लगानेमें ठण्ढा और पीनेसे पित्तनाशक है। कोई कोई इसे त्रिदोषघ्न भी बतलाता है। अगुरु देखो।

कृष्णाङ्ग (सं० स्त्री०) जीरकभेद, कलौंजी।

कृष्णाचल (सं० पु०) १ रैवतक पर्वत। इसी पर्वतके पास द्वारिकापुरी थी। श्रीकृष्णका क्रीड़ास्थान भी कृष्णाचल हो रहा। कृष्णोऽचलः, कर्मधा०। २ नीलगिरि।

कृष्णाचार्य—१ नृसिंहाचार्यके छोटे लड़के। यह सर्वशास्त्रविशारद रहे। रामराजके आदेशसे कृष्णाचार्यने सूत्र-वृत्ति प्रकाश की थी। इनके नृसिंहाचार्य और रामचन्द्राचार्य दो पुत्र थे। २ कोई व्यक्ति। इनका दूसरा नाम विद्यानिधितीर्थ था। १३८५ ई०को कृष्णाचार्य स्वर्गवासी हुए। ३ किसी विख्यात पुरुषका नाम।

पीछे लोग इन्हें सत्यवरतीर्थं कहने लगे थे। यह १७९८ ई० को चल बसे।

कृष्णाजटा (सं० स्त्री०) पिप्पलीमूल, पिपरामूल।

कृष्णाजाजी (सं० स्त्री०) कृष्णजीरक, काला जीरा।

कृष्णाजिन (सं० क्ली०) कृष्णस्य कृष्णसारमृगस्य अजिनम्, ६-तत्। १ काले हिरनका चमड़ा। २ किसी ऋषिका नाम।

कृष्णाजिनी (सं० त्रि०) कृष्णाजिनमस्यास्ति, अस्त्यर्थे इनि। काले हिरनका चमड़ा रखनेवाला।

कृष्णाञ्जन (सं० क्ली०) स्रोतोञ्जन, काला सुरमा।

कृष्णाञ्जनी (सं० स्त्री०) अज्यतेऽनया, अञ्ज करणे ल्युट् ततो ङीप्, कृष्णा कृष्णवर्णा अंजनी, कर्मधा०। कालांजनी क्षुप, काली कपास।

कृष्णाञ्जि (वै० त्रि०) कृष्णं कृष्णवर्णं अंजि पुण्ड्ं तिलकं यस्य, बहुव्री०। काले तिलकका हिरन।
(वाजसनेयसंहिता २४। ४)

कृष्णाढ़की (सं० स्त्री०) कृष्णपुष्पाढ़की, काले फूलकी अड़हर। यह कसैली, बल बढ़ानेवाली, अग्निदीपिकर और पित्त तथा दाहको दबानेवाली है। (वैद्यकनिघण्टु)

कृष्णातण्डुल (सं० क्ली०) पिप्पलीवीज, पीपलका कन।

कृष्णात्रेय (सं० पु०) वैद्यकसंहिताके प्रणेता एक महर्षि।

कृष्णादिगण (सं० पु०) पीपल आदि द्रव्य। इसमें पीपल, चीत, अड़ूसा, मजीठ, ग्रन्थिपर्णी, इलायची, अतिविषा, संभालूका बीज, कटुत्रिक (सोंठ-मिर्च-पीपल), अजवायन, दाख, मदार, चिरायता, बेल, चन्दन, भांगरा, तुलसी, सोंठ, आंवला, काकोली, मूर्वा और जीरा आदि द्रव्य रहते हैं। (वाभट)

कृष्णाद्यतैल (सं० क्ली०) आंखके रोगका एक तेल। पीपल, विड़ङ्ग, मुलहटी, सैन्धव और सोंठ सब १ शरावक बराबर, १ शरावक तिलोंका तेल, ४ शरावक पानी और १ शरावक बकरीका दूध यथारीति साथ साथ पकाने पर यह तेल बन जाता है। इसे नासकी भांति सूंघते हैं। (चक्रदत्त)

कृष्णाद्यमोदक (सं० पु०) पेट सूजनेका एक औषध। पिपरामूलका चूर्ण २ तोला, चीतकी जड़का चूर्ण ४ तोला, दन्तीकी जड़का चूर्ण ८ तोला और हर्रका चूर्ण २० तोला ले २ पल गुड़ डाल लड्डू बना लेना चाहिये। यह औषध मधुके साथ खाया जाता है।
(रसरत्नाकर)

कृष्णाद्यलौह (सं० क्ली०) शूलरोग पर दिया जानेवाला लौह। पीपल, हर और शुद्धलौहचूर्ण मधु और घीके साथ खानेसे सब प्रकारका शूलरोग दूर होता है।
(रसरत्नाकर)

कृष्णाध्वा (वै० पु०) कृष्णोऽध्वा गमनपथो यस्य, बहुव्री०। अग्नि। (ऋक् २। ४। ६)

कृष्णानदी—दाक्षिणात्यकी एक महानदी। यह अरब सागरसे ४० मील दूर पश्चिमघाटमें अक्षा० १७° ५९´ उ० और देशा० ७३° ३८´ पू० से निकली और दक्षिणको बही है। इसकी पूरी लम्बाई ४०० मील है। कोइना, सांगली, वर्णा, पञ्चगङ्गा, घाटप्रभा, मालप्रभा और मूसी कृष्णाकी सहायक नदियां हैं। यह कराड़, कुरुन्दवाड़, बेलगांव जिला, दक्षिण महाराष्ट्र एजेंसीके राज्य, बीजापुर निजामके राज्य और कृष्णा तथा गण्टूर होती हुई समुद्रमें जा गिरी है। पहाड़के पास इस नदीमें चटानें बहुत हैं और धारा इतने द्रुतवेगसे बहती है कि नाव चल नहीं सकती। परन्तु सतारा जिले और दक्षिण पूर्वके खुले देशमें इसका पानी सींचके काम आता है। बेलगांव और बीजापुरमें काली मट्टीका इसका किनारा २० से २५ फीट तक ऊंचा है और कितने ही टापू पड़ गये हैं। जिनमें बबूल बहुत हैं। निजामके राज्यमें कृष्णा शोरापुर और रायचूरके मैदान पर नीचे उतर पड़ी है। लगभग ३ मील तक पानी ४०८ हाथ ऊंचे-से गिरता है। शोरापुरमें भीमा और रायचूरमें तुङ्गभद्रा कृष्णासे मिली हैं। बेजवाड़ेमें जहां यह पहाड़ोंके बीचसे निकली है, एक बांध बनाकर सींचनेके लिये नहर चलायी गयी है। बांधके नीचे मन्द्राज रेलवेके लिये इस पर पक्का पुल बंधा है।

कृष्णाको संस्कृतमें कृष्णसमुद्भवा, कृष्णवेण्या, कृष्णावेणा और कृष्णवेणी भी कहते हैं। इसके उत्पत्तिस्थान पर एक ऊंचे पहाड़के नीचे महादेवका मन्दिर है। एक गोमुखाकार झरनेसे पानीका स्रोत बहा करता

है। कृष्णादेवी इस स्थानकी अधिष्ठात्री देवता हैं। घने पेड़ पत्तोंसे कृष्णाका उत्पत्तिस्थान घिरा है। वह एक महातीर्थ समझा जाता है। स्कन्दपुराणके कृष्णामाहात्म्यमें लिखा है कि वहां नहानेसे गङ्गास्नानका फल मिलता है। इसीसे इस नदीका एक नाम कृष्णगङ्गा भी है। नानादेशोंसे तीर्थयात्री कृष्णास्नान करने आया करते हैं। वैद्यकमतमें कृष्णाका जल स्वच्छ, रुचिकर, दीपन और पाचक है।

कृष्णानन्द—१ तत्त्वबोधिनी नामक संस्कृतग्रन्थ बनानेवाले। इस ग्रन्थमें शाक्तोंका कर्तव्याकर्तव्य निरूपित हुआ है। २ तन्त्रसारके रचयिता। इनके सुविख्यात ग्रन्थमें तान्त्रिकोंका अनुष्ठेय विधि बताया गया है। ३ मानसोल्लास नामक ग्रन्थ बनानेवाले। ४ वैदिकसर्वस्व नामक संस्कृत ग्रन्थके रचयिता। यह ग्रन्थ १८५६ ई०को बनाया गया। ५ सहृदयानन्द नामक संस्कृत काव्य लिखनेवाले। ६ सिद्धान्तसिद्धाञ्जन नामक संस्कृत ग्रन्थके प्रणेता। ७ कोई दार्शनिक। इन्होंने भी एक सांख्यकारिका रची थी। ८ विष्णुसहस्रनामके भाष्यकार। ९ बालकृष्णानन्द कहलानेवाले कोई द्राविड़ पण्डित। इन्होंने ईश, केन, कठ, छान्दोग्य, तैत्तिरीय आदि उपनिषदोंकी व्याख्या, भिक्षुसूत्रभाष्यके वार्तिक और प्रणवार्थनिर्णय नामक संस्कृत ग्रन्थको प्रणयन किया। बालकृष्ण देखो।

कृष्णानन्द विद्यासागर—बङ्गालके नदिया जिलेके महेशपुरके एक विख्यात पण्डित। इन्होंने कृष्णलीलामृत व्याकरण प्रणयन किया। इस ग्रन्थमें भांति भांतिके छन्दोंसे उत्कृष्ट कविताके द्वारा व्याकरणसूत्र और उसमें कृष्णगुणानुवाद कहा गया है।

कृष्णानन्द व्यासदेव रागसागर—रागकल्पद्रुम नामक बहुत बड़े सङ्गीतकोषके प्रणेता। कृष्णानन्द अपने आप एक उस्ताद और अच्छे गानेवाले थे। उन्होंने राजा राधाकान्त देवके शब्दकल्पद्रुमको देख वैसी ही बड़ी एक बहुत सौ रागरागिनियोंसे मिली देश देशको गीतावली संग्रह करके एकत्र प्रकाश करनी चाही थी। उसीके अनुसार बंगला, हिन्दी, कर्णाटी, मराठी, तैलङ्गी, गुजराती, उड़िया, फारसी, अरबी, संस्कृत और अंगरेजी आदि भाषाओंसे नाना स्वरोंके पुराने और उस समयके प्रचलित गाने संग्रह करके चार खण्डोंमें विभक्त बहुत बड़ा रागकल्पद्रुम कृष्णानन्दने प्रकाश किया। यह अपूर्व सङ्गीतभाण्डार १९०० विक्रमाब्द (१८४३ ई०) को पूरा हुवा था। कोई कोई कहता जिस जिस भाषामें उन्होंने गान संग्रह किया, उसको थोड़ा बहुत पढ़ा था। राजा राधाकान्त देव उनका बड़ा सम्मान करते थे। राजाके घरमें सङ्गीतके संग्रामस्थल पर कृष्णानन्द मध्यस्थ रहते थे।

कृष्णाभा (सं० स्त्री०) कृष्णा सती आभाति, कृष्णा-आ-भा-क-टाप्। कालांजनी, काली कपास।

कृष्णाभिसारिका (सं० स्त्री०) नायिकाभेद। अंधेरी रातको अपने प्यारेके पास जानेवाली स्त्री कृष्णाभिसारिका कहलाती है।

कृष्णाभ्र (सं० क्ली०) १ नीलाभ्र, काला अवरक। २ काला बादल।

कृष्णामिष (सं० क्ली०) कृष्णं कृष्णवर्णं वा आमिषति स्पर्धते वर्णेन, कृष्ण-आमिष-क। लोहा।

कृष्णामूल (सं० क्ली०) पिप्पलीमूल, पिपरामूल।

कृष्णाय (सं० क्ली०) कर्मधा०। कान्तलौह, ईसपात।

कृष्णायस (सं० क्ली०) कृष्ण आयसम्, स्वार्थे अण्। १ कृष्णवर्ण लौह, ईसपात। २ तीक्ष्णलौह, खेड़ी। ३ मुण्डलौह।

कृष्णार्चि (सं० पु०) कृष्णं कृष्णवर्णं अर्चिर्यस्य, बहुव्री०। १ अग्नि। २ चीत।

कृष्णार्जक (सं० पु०) काली पत्तीकी छोटी तुलसी। इसका संस्कृत पर्याय—कृष्णमाल, मालूक, कृष्णमालूक, कृष्णमल्लिका, गरघ्न, वनवर्बर, वर्वरी, जाति, कृष्णवल्ली और करालक है। यह कड़ुवा, उष्ण, कफवातकी पीड़ा दूर करनेवाला, नेत्ररोगनाशक, रुचिकर और सुप्रसवकारक होता है। (राजनिघण्ट)

कृष्णालु (सं० पु०) कृष्णः कृष्णवर्ण आलुः, कर्मधा०। १ काला आलू। २ तेंदूका पेड़।

कृष्णालुक (सं० पु०-क्ली०) नीलालु, काला आलू। यह मधुर, शीतवीर्य, श्रम मिटानेवाला, बल्य, रुचिकर और पित्त, दाह तथा मुखकी जड़ता दूर करनेवाला है। (राजनिघण्ट)

कृष्णावतार (सं० पु०) अवतारभेद। कृष्ण देखो।

कृष्णावास (सं० पु०) आवसत्यस्मिन्, कृष्ण-आ-वस अधिकरणे घञ्। १ अश्वत्थवृक्ष, पीपल। २ द्वारकापुरी।

कृष्णाष्टमी (सं० स्त्री०) भादों बदी अष्टमी, कृष्णका जन्मदिन। जन्माष्टमी देखो।

कृष्णाह्वा (सं० स्त्री०) कृष्णा आह्वा नाम यस्याः, बहुव्री०। पिप्पली, पीपल।

कृष्णिका (सं० स्त्री०) कृष्णः कृष्णवर्णोऽभूमाऽस्त्यस्याः कृष्ण-ठन्-टाप्। १ राजिका, राई। २ श्यामापक्षी। इसका दूसरा नाम वराही, शकुनी, कुमारी, श्यामा, दुर्गा, देवी, चण्डिका, उमा, पोतकी, पक्षविका, मितपक्षिणी, ब्रह्मपुत्री, धनुर्धरी और पान्थमाता भी है। (वसन्तराजशाकुन)

कृष्णिमा (सं० पु०) कृष्णस्य भावः कृष्ण भावे इमनिच्। कृष्णत्व, कालापन।

कृष्णिय (वै० पु०) एक वेदोक्त व्यक्ति। इनके पिताका नाम कृष्ण था। (ऋक् १।११६।२३)

कृष्णी (सं० स्त्री०) रात।

कृष्णीकरण (सं० क्ली०) काली रंगाई।

कृष्णेक्षु (सं० पु०) कृष्णः इक्षुः, कर्मधा०। श्यामेक्षु काली ऊख। यह स्वाभाविक तिक्त, पाकमें मधुर, स्वादु, हृद्य, कटुरसयुक्त, त्रिदोषघ्न, कान्तिप्रद और वीर्यवर्धक है। (राजनिघण्टु) इसकी शक्कर बल बढ़ानेवाली, तृप्ति करनेवाली, वीर्यवर्धक, श्रम मिटानेवाली और जीवनको बनाये रखनेवाली है। (चक्रदत्त) काली ऊखकी जड़ ठण्ढी, मूत्रकारक, पित्तनाशक और मेध्य तथा दाह कृच्छ्र दबा देनेवाली होती है। (अत्रिसंहिता)

कृष्णेन्द्रिय (सं० पु०) कदम्ब।

कृष्णोयक (सं० क्ली०) पद्मपुष्प, कम्बलका फूल।

कृष्णैत (वै० त्रि०) कृष्णाधिक एतः कर्वुरः, कर्मधा०। १ कर्वुरवर्णविशिष्ट, बहुत काला। (पु०) २ कृष्णवर्ण हरिण, करसायल। (तैत्तिरीयसंहिता ५।६।१८)

कृष्णोदर (सं० पु०) दर्वीकर सर्प, फनदार सांप।

कृष्णोदुम्बर (सं० पु०) कृष्णोदुम्बरिका देखो।

कृष्णोदुम्बरिका (सं० स्त्री०) काकोदुम्बरिका, कठगूलर।

कृष्य (सं० त्रि०) कृष कर्मणि अर्हार्थे क्यप्। कर्षणके उपयुक्त, जोतने लायक।

कृसर (सं० पु०) डुकृञ् करणे कृ-सरन्-कित् बाहुलकात्र षत्वम्। कृष्‌मादिभ्यः कित्। उण् ३।७३। तुल्य तिलान्न बराबर बराबर तिल और चावलकी खीचड़ी।

कृसरा (सं० स्त्री०) यवागूभेद, एक प्रकारकी दलिया। तिल, चावल और उड़द या तिल और चावलसे छह गुना पानी डालके दलिया पकाना चाहिये। यह बल बढ़ानेवाली, मद तथा पुष्टिप्रद एवं कफ, पित्त, मल, स्तम्भ तथा वीर्य उत्पन्न करनेवाली और वातको मिटानेवाली है। (वैद्यक निघण्टु)

कॢप्त (सं० त्रि०) कॢप-क्त। १ रचित, बनाया हुवा। २ नियत, ठहराया हुवा। "कॢप्तेन सोपानपथेन।" (रघु०) ३ छिन्न, काटा हुवा। "कॢप्तकेशनखश्मश्रुः।" (मनु०)

कॢप्तकीला (सं० स्त्री०) कॢप्तं कीलयति, कॢप्त-कील-अण्। स्त्रियां बाहुलकात् टाप्। व्यवस्थापत्र, कानूनी चिट्ठी।

कॢप्तधूप (सं० पु०) कॢप्तो धूपो येन, बहुव्री०। सिह्लक, एक द्रव्य।

कॢप्ति (सं० स्त्री०) कॢप भावे क्तिन्। १ रचना, बनाव। २ अवधारण, धराव। ३ नियम। (शतपथब्राह्मण १२।१।१।१७)

कॢप्तिक (सं० त्रि०) कॢप्तं मूल्यदानेन सत्वं देयत्वेनास्त्यस्य, कॢप्ति-ठन्। क्रीत, खरीदा हुवा।

के (हिं० प्रत्य०) सम्बन्धीय, मुतालिक। यह सम्बन्धसूचक "का" का बहुवचन है। (सर्व०) २ कौन, किसने। ३ कितने।

एक ही वाक्यमें सम्बन्धसूचक शब्द 'का' और 'के' लगाना बहुत कठिन है। अच्छे अच्छे लेखक इसमें भूल जाते हैं।

कें कें (हिं० स्त्री०) १ चें चें, चिड़ियोंके दुःखका शब्द। २ चायं चायं, झगड़ेकी बोली।

केंचुल (हिं० स्त्री०) सांपकी अपने आप गिर जानेवाली खाल।

केंचुली (हिं० वि०) १ कञ्चुकसदृश, केंचुल जैसा। (स्त्री०) २ केंचुल। आकर्षण करनेसे सर्पकी भांति वर्धित होनेवाला लचका 'केंचुली लचका' या 'केंचुलीका लचका' कहलाता है।

केंचुवा (हिं० पु०) वर्षा ऋतुका एक क्रमि। यह एक बित्ते या इससे भी अधिक दीर्घ होता है। इसके देहमें अस्थि नहीं रहता। यह अपना देह सिकोड़ और फैला सकता है। मृत्तिका ही इसका खाद्य है। केंचुवेके मुंहसे कोई पीतवर्ण वस्तु निकलता, जो रातको चमकता है। प्रायः बहुतसे केंचुवे एक ही स्थान पर रहा करते हैं। जैनमतानुसार इसके स्पर्शन और रसना ये दोही इंद्रियां होती हैं और मट्टीसे ही विना वीर्य और रजके स्वयं पैदा हो जाते हैं। २ पेटमें पड़ जानेवाला एक सफेद कीड़ा। यह केंचुवेके ही आकारका रहता और मलके साथ बाहर निकलता है।

केंत (हिं० पु०) कोई मोटा बेंत। इसकी छड़ी बनायी जाती है।

केंदू (हिं० पु०) केन्दुवृक्ष, तेंदू।

केउंआ (हिं० पु०) १ घुइया। २ चुकन्दर। ३ शलगम।

केउटा (हिं० पु०) एक विषधर सर्प। इस सर्पके विषसे औषध प्रस्तुत होता है। यह मैदान, बांबी और पुराने टूटे घरोंमें रहता है। नर केउटाका शरीर अपेक्षाकृत दीर्घ, स्थूल और गोल होता है। उसका फन भी गोल और बड़ा रहता है। आंख लाल और ऊपरको उठी होती है। स्त्रीजातिका शरीर कुछ कुछ छोटा, ढालू और चपटा रहता है। फिर उसकी फणा भी लम्बी, ढालू और छोटी लगती है। स्वजाति न मिलनेसे केउटा दूसरी जातिकी नागिनसे भी सङ्गम कर लेता है। वह एक बारगीही १६से ५० तक अण्डे देता है। जब तक अण्डा नहीं फटता, नागिन उसको गोदमें लिये बांबीके भीतर बैठी रहती है। सांप जब तब पास आता जाता है। अण्डा फटने पर बच्चा निकलनेसे स्त्रीपुरुष दोनों उसे खा डालते हैं।

केकड़ा (हिं० पु०) कर्कट, पानीमें रहनेवाला एक जन्तु। इसके ८ पैर और २ पंजे आते हैं। यह छोटे तलावसे लेकर समुद्र तकमें मिलता और कितने ही छोटे बड़े आकार तथा रंग रखता है। केकड़ा अण्डज क्रमि है। कहते हैं इसकी माता अण्डे देनेसे पहले ही कालकवलित हो जाती है। अण्ड परिपक्क होने पर उससे छोटे छोटे बच्चे निकल पड़ते हैं। लोगोंके कथनानुसार पांच खोलें बढ़ने पर केकड़ा अपने असली स्वरूपको पहुंचता है। यह भूमि पर भी गमन कर सकता है। ग्रीष्मकालको केकड़ा अगभीर जलमें किनारे पर वास करता और शीत कालको गभीर जलमें जा पहुंचता है। बड़ा केकड़ा छोटे छोटे केकड़ोंका आहार करता है। कर्कट देखो।

केकय—१जनपदविशेष, कोई बसती। कूर्म-विभागमें उत्तर ओर केकय देशका अवस्थान बताया गया है। रामायणमें लिखा है—भरतको बुलानेके लिये जो दूत भेजा गया था, वह वाह्लीक, सुदामापर्वत, विष्णुपद, विपाशा और शाल्मलीनदी दर्शन करके केकयके राजाकी राजधानी गिरिव्रज वा राजगृहमें उपस्थित हुवा। (अयोध्याकाण्ड, ६८ अध्याय)

फिर जब भरत ननानिसे अयोध्याकी ओर आने लगे, वाल्मीकिने उनकी वर्णनामें कहा है—भरत पूर्वाभिमुख राजगृहसे बाहर निकल सुदामा नदी उतरे थे। फिर वह बहुत बड़ी तरङ्गसमाकुल पश्चिमको बहनेवाली ह्लादिनी नदी पार करके शतद्रु नदीके उस पार पहुंचे। (अयोध्याकाण्ड ७१। १—२)

यह विवरण देखनेसे कह सकते कि केकयकी राजधानी गिरिव्रज शतद्रु नदीसे पश्चिम और विपाशा तथा शाल्मली नदीके आगे ही अवस्थित है। शतद्रुको आजकल सतलज और विपाशाको बियास कहते हैं। यह दोनों नदियां काश्मीरराज्य और पंजाबमें प्रवाहित हैं। वर्तमान काश्मीरराज्यके सीमान्त पीरपञ्चाल गिरिसे दक्षिण राजौरी नामका एक छोटा राज्य है। उसीके बीच राजौरी नामक एक बहुत पुराना नगर भी है। काश्मीरकी राजतरङ्गिणी (७। ११ ५५) में राजपुरी नामक किसी देश और उसीके अन्तर्गत पहाड़ोंसे घिरे किसी सुदृढ़ नगरकी बात लिखा है। वही राजपुरी वर्तमान राजौरी है। उसका वर्तमान अवस्थान देखनेसे इसीको रामायणमें कही केकयकी राजधानी गिरिव्रज वा राजगृह माना जा सकता है। राजगृह देखो।

महाभारतके वनपर्वके १२८ अध्यायमें लिखा है—(रामायणोक्त) विष्णुपदतीर्थके आगे विपाशा नदी और

उसीके आगे काश्मीरमण्डल है। इससे समझ पड़ता है कि वर्तमान राजौरीको चारों ओर काश्मीर तक जो पथरीला देश है, वही पूर्वकालको केकय कहलाता था। रामायणमें सैकड़ों देशोंको बात रहते भी काश्मीरका नाम नहीं लिखा है। इससे भी अनुमान किया जाता है कि वाल्मीकिके समय काश्मीर देश या उसका कुछ अंश केकय नामसे प्रसिद्ध था। रामायणमें भरतके नाना (मातामह) केकयराज अश्वपति और उनके पुत्र युधाजित्‌का उल्लेख विद्यमान है। आज कल केकय देश और उसके अधिवासियोंको कक्का कहते हैं।

केकयानां राजा, केकय-अण् तस्य लोपः। २ सूर्यवंशीय कोई राजा। ये दशरथके श्वशुर थे।

(रामायण १।१३।२३)

केकयी (सं० स्त्री०) केकयस्य अपत्यं स्त्री, केकय-अण् ङीष्। केकयराजाकी कन्या। यह दशरथकी मंझली पत्नी और भरतकी माता थीं।

केकर (सं० त्रि०) मूर्ध्नि नेत्रतारां कर्तुं शीलमस्य, क-अच्, अलुक्समा०। १ वक्राक्षि, कैंचा। (क्ली०) २ वक्रचक्षु, टेढ़ी आंख। पूर्व जन्ममें तरक्षु, (तेंदू) मारनेसे आंख टेढ़ी पड़ जाती है। (शातातप) (पु०) ३ विश्वसारतन्त्रमें कहा हुवा ४ अक्षरोंका एक मन्त्र। मन्त्र देखो।

केकरी—अजमेर मेवाड़-प्रान्तका एक नगर। यह अक्षा० २५° २५´ उ० और देशा० ७५° १३´ पू०में अवस्थित है। यहां एकस्ट्रा असिष्टण्ट कमिशनरके हेडक्वार्टर बने हैं। लोकसंख्या (१९०१) में ७०५३ है। पहले यह एक अच्छा तिजारती शहर था, परन्तु कुछ सालोंसे यह बात नहीं रही। यहां रूईकी गांठि बांधने और साफ करनेके कई कारखाने हैं।

केकल (सं० पु०) नर्तक, नाचनेवाला। केलक देखो।

केका (सं० स्त्री०) के मूर्ध्नि कायते, के-कै-ड अलुक्समा०। मयूरवाणी, मोरकी बोली।

केकाण (सं० पु०) एक प्रकारका घोड़ा।

केकावल (सं० पु०) केका अस्त्यर्थे बाहुलकात् वलच्। मयूर, मोर।

केकिक (सं० पु०) केका अस्त्यर्थे ठन्। (व्रीह्यादिभ्यश्च। पा ५।२।११६) मयूर, मोर।

केकिशिखा (सं० स्त्री०) मयूरशिखा, मोरपंख।

केकी (सं० पु०) मयूर, मोर।

केकैयी, केकयी देखो।

केङ्गरू—एक चतुष्पद जन्तु। इसके भी सब प्राणियोंकी भांति ही उदर रहता है। परन्तु विशेषता यह है कि पेटके बाहर एक थैली लटका करती है। यह उसीमें अपने शावकको रख चरता फिरता है। इसीसे केङ्गरूको हिमर्भ (Marsupiata) कहते हैं। लंबाई चौड़ाईमें यह बिलार जैसा होता है। तौलमें एक एक केङ्गरू डेढ़ या दो मनसे कम नहीं बैठता। इसका मांस और मुखका आकार हरिणसे कितनाही मिलता है। पूंछ लम्बी होती है। शरीरका रूयां घना, छोटा और नरम रहता है। फिर शरीरका सम्मुखभाग थोड़ा ही चौड़ा होता है। पीछेकी ओर क्रमशः स्थूल पड़ती जाती है। सम्मुखके दोनों पद छोटे और पीछेके दोनों पद कितने ही बड़े लगते हैं। सम्मुखके पदोंमें पांच और पीछेके पदोंमें चार नखरसमेत अङ्गुलि होती हैं। नखर वक्र, कठिन और तीक्ष्ण रहते हैं। जब यह वृक्षके ऊपर अवस्थान करता, तो अपनी लंबी पूंछ किसी शाखामें लपेट निश्चिन्त हो कर निद्रा लेता है। पूंछ और पिछले दोनों पैरोंके सहारे केङ्गरू सीधा बैठ और कभी कभी दोनों पिछले पैरोंसे सीधा चला जाता है। यह देखनेमें शान्तमूर्ति है। यत्न करनेसे केङ्गरू हिल जाता है। जब यह दौड़ने लगता, तो शीघ्र भागनेवाला शिकारी कुत्ता भी उसे पकड़ नहीं सकता। राहमें ५। ६ हाथ ऊंची कोई बाधा पड़नेसे यह स्वच्छन्द उसे लांघकर चला जाता है। शिकारी कुत्ता यदि पास पहुंच कर पकड़नेको करता तो केङ्गरू पीछेके पैरोंसे उसे ऐसा मारता कि नखर द्वारा कुक्कुरका उदर फट जाता है। यह अधिकांश घास पात खाते हैं। कोई कोई मांसभोजी भी होता है। केङ्गरू रोमन्थन (जुगाली घगुट) भी करते हैं। पेड़के ऊपर दोनों पैरोंके बीचमें एक थैली रहती है। शावक उसके भीतर

बैठ स्तन्यपान करता और निद्रा लेता है। कुछ बढ़ने पर वह थैलीसे मुंह निकाल सामनेको घास पात खाने लगता है। माता जब चरती रहती, शिशु कभी इधर उधर निकल कर घूमा करता है। हठात् भयभीत होने पर वह दौड़ कर इसी थैलीमें घुस रहता है। दलवद्ध हो कर चरनेके समय उनमेंसे एक दूर खड़ा हो प्रहरीका काम करता है। प्रहरीका सङ्केत पाते ही दलके सभी केङ्गरू वनके मध्य भाग जाते हैं।

एक प्रकारके केङ्गरू बहुत छोटे होते हैं। उनका नाम केङ्गरू चूहा (Kangaroo rat) है। वह देखनेमें कितने ही शशक (खरगोश) जैसे होते हैं। वर्ण हिरणसे बहुत कुछ मिलता है।

केङ्गरू कई प्रकारके होते हैं। सबसे बड़े मुखसे पूंछ तक ४ हाथ लम्बे बैठते और ऊंचाईमें २॥ या २॥। हाथ निकलते हैं। सामनेके पैरों पर खड़े होनेसे केङ्गरू मनुष्यसे बड़े लगते हैं। कहते हैं कि १७७० ई० को २२ वीं जूनको प्रसिद्ध भ्रमणकारियोंने इन्हें पहले आविष्कार किया था। नवगीनिया और नवजीलैण्डमें इनका अधिक वास है। इङ्गलैण्डमें कई केङ्गरू मंगाकर रखे गये थे। उनके बच्चे भी हुए। परन्तु वहां इनके अधिक बढ़नेकी आशा नहीं। मनुष्य केङ्गरूओंका मांस आहार करके धीरे धीरे उनके वंशको मिटा रहा है।

केचन, केचित् देखो।

केचित् (सं० अव्य०) के अनिश्चितार्थे चित् वा चन। कोई कोई व्यक्ति, कोई।

केचुक (सं० क्ली०) कचु स्वार्थे कन् पृषोदरादित्वात् साधुः। १ कचू। २ कोई शाक। ३ करेमू।

कचुकाकन्द (सं० पु०) कचू, घुइया।

केजा (हिं० पु०) कोना, साग पात मोल लेनेको दिया जानेवाला थोड़ासा अन्न।

केड़वारी (हिं० स्त्री०) १ शाक, फल आदि बोनेका बाग। २ नवीन वृक्षोंका बाग।

केड़ा (हिं० पु०) १ नवाङ्कुर, कोपल, कल्ला। २ नया जवान्। ३ गट्टा।

केणिक, केणिका देखो।

केणिका (सं० स्त्री०) वस्त्रनिर्मित गृह, खीमा, डेरा।

केत (सं० पु०) कित निवासे आधारे घञ्। १ घर। भावे घञ्। २ बसती। ३ बुद्धि। ४ सङ्कल्प। ५ मन्त्रणा, सलाह। ६ ध्वज, पताका। ७ अन्न। (त्रि०) ८ प्रज्ञाता, अच्छी तरह समझनेवाला।

केतक (सं० पु०) कित-ण्वुल्। १ केतकीका पेड़। (क्ली०) २ केतकीका फूल।

केतकफल (सं० क्ली०) १ कुचेलक, कुचिला। २ केतकी फल। वह त्रिदोष और विषको नाश करनेवाला है।

केतकादास, क्षेमानन्द देखो।

केतकाद्यतैल (सं० क्ली०) वातव्याधिका एक तैल। केतकीमूल, वात्यालक और अतिबला सब ४२ पल २ कर्ष ३ माषा, १२८ शरावक (शेष १६ शरावक) और काञ्जिक १६ शरावकमें तैलको यथाविधि पाक करनेसे यह औषध प्रस्तुत होता है। (चक्रदत्त)

केतकी (सं० स्त्री०) केतक गौरादित्वात् ङीष्। पुष्पवृक्षविशेष, एक फूलदार पेड़। चलती बोलीमें इसे केवड़ा कहते हैं। इसका संस्कृत पर्याय—सूचीपुष्प, हलीन, जम्बुल, केतक, सूचिकापुष्प, जम्बुक, क्रकच्छद, तीक्ष्णपुष्पा, विफला, धूलिपुष्पिका, मेध्या, कण्टदला, शिवद्विष्टा, नृपप्रिया, क्रकचा, दीर्घपत्रा, स्थिरगन्धा, गन्धपुष्पा, इन्दुकलिका, दलपुष्पा और पांसुला है। केतकीको हिन्दीमें केवड़ा कहते हैं। (Pandanus Odoratissimus)

केतकी बहुत बड़ी नहीं होती। इसके पत्र दीर्घ, श्वेतवर्ण, कोमल और चिक्कण रहते हैं। पत्तेके बीचमें फूल आता है। वह श्वेतवर्ण और सुगन्धि होता है। इससे अतर और अरक बनाते हैं। केवड़ेमें कत्था बसानेसे खुशबूदार हो जाता है। बरसातमें जब फूल खिलता, उसकी खुशबूसे निकटका स्थान महकने लगता है। केतकीके पत्तोंसे चटाई, छतरी और साहबोंकी टोपी बनती है। इससे कागज भी तैयार किया जाता है। दुर्भिक्षके समय इसकी पत्तियोंका कोमल कोमल अंश खाते दरिद्र लोगोंको देखा भी गया है। इस वृक्षका काण्ड (तना) बहुत मुलायम

होता है। इसीसे उससे बोतलके काग और चिप्पियां बनायी जाती हैं। मरिच द्वीपमें थोड़ा कहवा, चीनी आदि रखनेके लिये केतकीके पत्रके छोटे छोटे दोने तैयार होते हैं। तामिल उससे भद्दे छाते बनाते जो उनकी भाषामें 'ताले-इले-केदरि' कहलाते हैं। गञ्जाम प्रदेशमें लोगोंको विश्वास है कि केवड़ेके फूलमें काला सांप छिपकर जा बैठता है। केतकीके फूलसे शिवकी पूजा नहीं करते।

केतकी सफेद और पीली दो प्रकारकी होती है। वैद्यकके मतमें वह मधुर, तिक्त, कफनाशक, कटु और लघुपाक है। उसका फूल वर्णकर और केश-दुर्गन्धनाशक है। पीली केतकी कामवर्धक, बलवर्धक और सौख्यकारी होती है। केतकीकी जड़ बहुत ठण्डी, कड़वी, पित्तकफनाशक, रसायन और वर्ण तथा शरीरको दृढ़ करनेवाली है। (राजनिघण्टु) २ एक रागिणी।

केतन (सं० क्ली०) कित-ल्युट्। १ निमन्त्रण, बुलावा। २ ध्वज, झण्डा। ३ चिह्न, निशान। ४ घर। ५ स्थान, जगह। ६ कृत्य।

केतपू (वै० त्रि०) केतं अन्नं पुनाति, केत-पू-क्विप्। अन्न पवित्र करनेवाला। (वाजसनेयसंहिता ९। १)

केतरस—एक राजा। विक्रति संवत्के जो शकसंवत् १००३ और ११७०-७१ ई० से मिलता है, एक लेखप्रमाण इनको महामण्डलेश्वर बतलाता है। साथ ही कादम्ब और उच्छङ्गीगिरियोंका अधीश्वर भी कहा गया है। यह महामण्डलेश्वर पाण्ड्य विजय-पाण्ड्यके जागीरदार थे।

केती—बम्बईप्रान्तीय कराची जिलेके घोड़ावाड़ी तालुकका एक बन्दर। यह अक्षा० २४° ८´ उ० और देशा० ६७° ३०´ पू० में सिन्धुकी हजामरी शाखा पर समुद्रके पास ही बसा है। लोकसंख्या १९११ ई० को २१२७ थी। यह सिन्धुके दोआबका बड़ा बन्दर है। यहां नदियों और समुद्रकी बहुतसे जहाज आते जाते हैं। बम्बई, मन्द्राज, सोनमियानी और मकरानको केतीसे अनाज, दाल, तेलहन, ऊन, रुई, किराना, रङ्ग, शोरा और जलानेकी लकड़ी भेजी जाती है। वाहर आनेवाली चीजोंमें नारियल, सूती कपड़ा, धातु, चीनी, मशाला, रस्सी और कौड़ी है। बरसातमें तूफानके कारण समुद्रसे जहाज यहां नहीं आ सकते। इस लिये कामकाज बन्द रहता है। तत्ता, मीरपुर सकरो और घोड़ावाड़ीको पक्की सड़क लगी है। शहरमें म्युनिसपालिटी, शफाखाना और मदरसा मौजूद है।

केतु (सं० पु०) चाय-तुधातोः क्यादेशश्च। चायः कि: । उण् १। ७४। १ गमनागमन प्रभृति क्रिया, चलने फिरने आदिका काम। (ऋक् १। १२४। ५) २ प्रज्ञा, समझ। ३ दीप्ति, चमक। ४ पताका, झण्डा। ५ चिह्न, निशान्। ६ अग्निमन्थ। ७ रोग। ८ पीड़ा, दर्द। ९ उत्पात। १० नवग्रहके अन्तर्गत एक ग्रह।

फलितज्योतिषके मतमें जन्मराशिसे गोचरके ग्यारहवें, तीसरे, दशवें या छठें स्थान पर केतु रहनेसे मनुष्य सम्मान, भोग, राजपूजा, सुख और धन पाता तथा आज्ञाकारी पुरुष और स्त्रीसे सुखभोग एवं पुण्य-सञ्चय होता है।

अष्टोत्तरीके मतमें केतुकी दशा निर्णीत नहीं हुई हैं परन्तु विंशोत्तरीके मतमें केतुकी दशा ७ वर्ष रहती है। केतुकी दशाके पहले बुधकी दशा आती और पीछे शुक्रकी दशा आती है। मघा, मूला वा अश्विनी नक्षत्रमें जन्म होनेसे प्रथम केतुकी दशा लगेगी। केतुकी दशाका फल इस प्रकार है—

लग्नमें पड़े केतुकी दशामें भार्या एवं पुत्रका विनाश, राजभय, कष्ट, विद्या-बन्धु-धनप्राप्ति, मित्र-विच्छेद, रोग, अग्नि तथा शत्रुभय, यानसे पतन, विष-जल, शस्त्रभय, विदेशगमन और कलहका डर होता है। केन्द्रस्थ केतुकी दशामें क्रियाका वैकल्य और राज्य, अर्थ, सुत तथा भार्याका नाश एवं विपद् है। लग्नके केन्द्रमें पड़े केतुकी दशामें महद्भय, ज्वर, अतीसार, प्रमेह और विसूचिका होती है। द्वितीय लग्नगत केतुकी दशाका फल धनक्षय, वाक्पारुष्य, मनोदुःख, कुत्सितान्न और मनःपीड़ा है। तृतीयस्थानस्थित केतुकी दशा बड़ा सुख देती, मनकी विकलता बढ़ाती और भाईसे लड़ाई कराती है। चतुर्थस्थानमें सुखक्षय, भार्या तथा पुत्र आदिका विरोध और धान्यवृद्धि है।

पञ्चमस्थ केतुकी दशामें लड़का मरता, बुद्धि बिगड़ती, राजा कोप करता और धन घटता है। षष्ठ केतुकी दशाका फल महाभय, चोर और अग्नि तथा विषभय है। सप्तमस्थ केतुकी दशामें महद्भय रहता और भार्या, पुत्र तथा अर्थका नाश होता एवं मूत्रकृच्छ्र और मनःपीड़ाका रोग लगता है। अष्टम केतुकी दशाका फल महद्भय, पितृवियोग और श्वास, कास, ग्रहणी तथा क्षयरोग है। नवम केतुकी दशामें पितासे वियोग होता गुरुजनोंको विपद्‌का सामना करना पड़ता, दुःख रहता और शुभकर्म बिगड़ता है। दशम केतुकी दशामें प्रथम तो सुख मिलता, परन्तु पीछे मानहानि, मनोजाड्य, अपकीर्ति और मनःपीड़ाको सहना पड़ता है। एकादश केतु अपनी दशामें मनुष्यको सुख देता, भ्रातृवर्गको प्रसन्न रखता और यशवृद्धि तथा भार्यावृद्धि करता है। व्ययगत केतुकी दशा कष्ट, स्थानच्युति, प्रवास, राजपीड़ा और चक्षुनाश करनेवाली है। केतुकी दशाके आदिमें दुःख, मध्यमें राजपीड़ा तथा देहजाड्य होता है। जन्मकालीन केतुको यदि शुभग्रह देखता, तो उसकी दशामें मनुष्यको सौख्य, राज्य, ग्रहशान्ति और राजसम्मान मिलता है। परन्तु पापग्रह यदि उसे देखता या उसके साथ जा पड़ता, तो दुःख, ज्वरातीसार, प्रमेह, त्वग्दोष और राजपीड़ाका वेग बढ़ता है। केतुकी दशामें पहले ४ मास २७ दिन केतुकी अन्तर्दशा रहती है। उसके पीछे १ वर्ष १ मास शुक्रकी, ४ मास ६ दिन रविकी, ७ मास चन्द्रकी, ४ मास २७ दिन मङ्गलकी, १ वर्ष १८ दिन राहुकी, ११ मास ६ दिन वृहस्पतिकी, १ वर्ष १ मास ८ दिन शनिकी और ११ मास २७ दिनके लिये बुधकी अन्तर्दशा आती है। दशा देखा।

केतुकी अन्तर्दशाका फल इसप्रकार है—चतुर्थ केतुकी अन्तर्दशामें मानभङ्ग, महाद्वेष और नृप, चोर तथा अग्निकी पीड़ा है। त्रिकोणराशिस्थित केतुकी अन्तर्दशा मनस्ताप लाती, विविध आपद् लगाती, पुत्रनाश करती, पितामातासे छुड़ाती और भृत्य तथा बन्धुके साथ विरोध बढ़ाती है। यह फल पापग्रहकी दशाकी अन्तर्दशाका है। शुभग्रहकी दशाकी अन्तर्दशामें कृषि, गो, भूमि मिलती, बन्धु समागम होता और विद्या प्रभृतिकी प्राप्ति होती है। षष्ठ अष्टम और व्ययगत केतुकी पापग्रह दशामें अन्तर्दशा होनेसे मरण विदेश गमन प्रमेह मूत्ररोग और गुल्म आदि होते हैं। बादको कुछ सुख होता है। शुभग्रहकी दशाकी अन्तर्दशामें स्त्री पुत्र वृद्धि और धान्य वस्त्र आदिका लाभ तृतीय और लाभगत केतुकी पापग्रह दशाकी अंतर्दशामें पाप कर्म बन्धु वियोग आदि शुभग्रहकी दशाकी अंतर्दशामें केतु धन दिलाता और बन्धुसम्मान बढ़ाता है। अंतर्दशामें केतु पापयुक्त होनेसे मंदफल और शुभयुक्त रहनेसे शुभफल मिलता है। पापग्रह वा शुभग्रहकी दृष्टि रहनेसे भी इसीप्रकार फल समझ लेना चाहिये। (सर्वार्थचिन्तामणि)

किसी किसीके मतमें केतु एक ग्रह है। परन्तु कोई इसे ग्रह ही नहीं एक उत्पात भी मानता है। वराहमिहिरने वृहत्संहितामें लिखा है—

'केतुका उदय अस्त गणित द्वारा नहीं समझ सकते। क्योंकि दिव्य, आन्तरीक्ष और भौम भेदसे केतु तीन प्रकारका होता है। विविध प्रकार रहनेसेही इसके उदय किंवा अस्तको कोई स्थिरता नहीं। खद्योत, पिशाच, चन्द्रकान्त आदि मणि, मारकत प्रभृति रत्न किंवा काष्ठविशेषके तेजको छोड़के अग्निशून्य स्थानमें जो तेजस्वरूप पदार्थ पड़ता, वही केतुका रूप ठहरता है। ध्वज, शस्त्र, गृह, वृक्ष, अश्व, हस्ती और अन्य चतुष्पदमें जो केतु रहता वह आन्तरीक्ष, नक्षत्रस्थ केतु दिव्य और इसको छोड़ दूसरा केतु भौम कहलाता है।'

गर्ग आदि ज्योतिर्विदोंने १००० केतु निरूपण किये हैं। परन्तु पराशर आदिके मतमें १०१ केतुसे अधिक नहीं। नारदका कहना है कि वास्तविक केतु एक ही है। उसीके अवस्था भेदसे नाना रूप देख पड़ते हैं। (वृहत्संहिता ११ अ०)

केतु जितने दिन या जितने मास तक देख पड़ता, उतनेही दिन वा मास तक उसके फलदानका काल रहता है। जिस दिन प्रथम केतु देखनेमें आता, उस दिनसे १५ दिन पीछे उसका शुभ या अशुभ फल पाया

जाता है जो नियमित काल तक चला करता है।

शुभाशुभ केतुका लक्षण इस प्रकार है—जो केतु क्षुद्र, प्रसन्न, स्निग्ध, अवक्र और श्वेतवर्ण होता, अल्प कालके मध्य ही जो अस्त हो जाता और उदय होतेही देख पड़ता, उसे शुभकेतु कहते हैं। इससे विपरीत लक्षणविशिष्ट धूमकेतु कहाता है। धूमकेतु अतिशय अमङ्गलजनक है। इन्द्रायुधसदृश अथवा दो या तीन शाखाविशिष्ट केतुभी अहितकर होता है। यह दोनों बहुत बड़ा पापफल प्रदान करते हैं। हार, मणि और सुवर्ण सदृश वर्णविशिष्ट शिखायुक्त किरण नामक २५ केतु सूर्यसे उत्पन्न हुए हैं। यह पूर्व और पश्चिमकी ओर देख पड़ते हैं। किरणकेतु उदित होनेसे राजकलह होता है। शुक पक्षीको भांति नील और पीतवर्ण अथवा अग्नि, बन्धुजीवक, लाक्षा वा रक्त जैसे वर्णविशिष्ट शिखायुक्त २५ केतु अग्निसे निकले हैं। यह अग्निकोणमें देखे जाते हैं। इनका फल अग्निभय है। कृष्णवर्ण, अस्निग्ध और अस्पष्ट शिखावाले २५ केतु मृत्युसुत कहलाते हैं। दक्षिण दिशामें ही इनका उदय होता है। यह केतु उदित होनेसे बहुतसे लोग मर जाते हैं। दर्पणको भांति वर्तुलाकार रश्मियुक्त शिखाशून्य जल और तैलको भांति कान्तिविशिष्ट २२ केतुओंका नाम भूपुत्र है। ईशानकोणमें इनका उदय होता है। फल दुर्भिक्ष है। चन्द्रकिरण, हिम, रौप्य, कुमुद वा कुन्दकुसुमको भांति वर्णविशिष्ट शिखायुक्त तीन केतु चन्द्रसे उत्पन्न हैं। उत्तर ओर इनका उदय होता है। फल सुभिक्ष है। तीन शिखावाले सित, पीत और रक्तवर्ण ब्रह्मदण्ड नामक केतुके उदयका कोई निर्णय नहीं किस ओर होगा। इनका उदय सभी दिशाओंमें हो सकता है। फल सर्वक्षय है। शुक्रसुतकेतु ८४ हैं। यह स्निग्ध होते हैं। इनकी तारका अपेक्षाकृत विस्तीर्ण और शुक्लवर्ण रहती है। यह उत्तर और ईशान कोणमें देख पड़ते हैं। फल अनिष्ट है। शनिसे उत्पन्न होनेवाले ६० केतु हैं। वह स्निग्ध प्रभायुक्त, दो शिखाविशिष्ट और कनक नामसे अभिहित हैं। सभी ओर इनका उदय होता है। फल अनिष्ट है। वृहस्पतिसे ६५ केतु, उत्पन्न हुए हैं। शिखाशून्य, श्वेतवर्ण तारकायुक्त और विकचा नामसे अभिहित हैं। दक्षिण दिशामें यह निकलते हैं। फल अनिष्ट है। बुधसे ५० केतु निकले हैं। यह सूक्ष्म दीर्घ श्वेतवर्ण और अस्पष्टरूपसे उदित होते हैं। इनके उदयको किसी दिशाका ठिकाना नहीं। फल अनिष्ट है। मङ्गलसे कौङ्कुम नामक ६० केतु उत्पन्न होते हैं। यह अग्नि और रक्त सदृश लोहित वर्णविशिष्ट होंगे। इनके ३ शिखायें रहती हैं। उदयमें किसी दिशाका निर्णय नहीं। फल अमङ्गल है। राहुसे तामसकीलक नामक ३३ केतु निकलते हैं। यह सूर्य और चन्द्रमण्डलके निकट देख पड़ते हैं। फल सूर्याचारमें द्रष्टव्य है। विश्वरूप नामक १२० केतु अग्निसे उत्पन्न हैं। इनमें कितनों ही के पूंछ (शिखा) होती है। फल घोर अग्निभय है। वायुसे अरुण नामक, कृष्णलोहितवर्ण, रूक्ष, तारकाशून्य चामर जैसे ७७ केतु निकलते हैं। यह सभी दिशाओंमें देख पड़ते हैं। फल अनिष्ट है। तारापुञ्जाकार गणक नामक ८ केतु प्रजापति और चतुरस्र नामक २०४ केतु ब्रह्मासे उत्पन्न हैं। यह अग्निकोणमें देख पड़ते हैं। फल अनिष्ट है। वंशगुल्मकी भांति आकृतिविशिष्ट, चन्द्रकी भांति प्रभायुक्त, कङ्क नामक ३२ केतु वरुणसे उत्पन्न हैं। इनके उदयका किसी दिक्‌में निर्णय नहीं। फल अमङ्गल निकलता है। कबन्ध शरीरको भांति आकृतिविशिष्ट, तारकाशून्य, शिखायुक्त, कबन्ध नामक ९६ केतु कालपुत्र कहलाते हैं। इनके उदयसे केवल पुण्ड्र देशका मङ्गल और अपर देशोंका अमङ्गल होता है। इनके उदयका दिक्‌निर्णय कोई नहीं। इसको छोड़के शुक्लवर्ण तारकायुक्त ९ केतु विदिक्‌से निकले हैं। जिन समस्त केतुवोंकी बात कही गयी है, उनमें कई दृश्य और कई अदृश्य हैं। उत्तर दिक्‌में आयत, स्निग्धमूर्ति और अतिशय वृहत् जो केतु पश्चिमदिक्‌में देखा जाता, वसाकेतु कहलाता है। जिस दिन यह निकलता है मरण होने लगता और राज्यमें अतिशय दुर्भिक्ष पड़ता है। इसी वसाकेतुकी भांति लक्षणयुक्त केवल औज्ज्वल्यविहीन केतुको अस्थिकेतु कहते हैं। इसके उदयमें दुर्भिक्ष होता है। वसाकेतुको भांति

पूर्व दिशामें देख पड़नेवाला केतु शस्त्रकेतु कहलाता है। इसके उदयका फल कलह और दुर्भिक्ष है। अमावस्याको जो धूम्रवर्ण केतु पूर्वमें दृष्ट होता, उसका नाम कपालकेतु है। यह आकाशके अर्धभाग पर्यन्त विचरण करता है। इसके उदयमें दुर्भिक्ष, मरक, अनावृष्टि और रोग होता है। पूर्व दिक्‌को अग्निवीथीमें रौद्र नामक केतु देख पड़ता है। यह शूलकी भांति आकारविशिष्ट, कपिश, रूक्ष, ताम्रवर्ण-प्रभायुक्त और तीन शिखायुक्त रहता और आकाशके ३ भाग तक सञ्चरण कर सकता है। इसका फल कपालकेतुके ही समान है। पश्चिम दिक्‌में चल-केतुका उदय होता है। इसकी दक्षिणाग्र एकाङ्गुलि उच्छ्रित एक शिखा रहती हैं। चलकेतु निकलते ही उत्तर दिक्‌को जा सकता और इसकी शिखा भी धीरे धीरे बढ़ा करती है। यह सप्तर्षिमण्डल, ध्रुव नक्षत्र और अभिजित्‌को स्पर्श करके पुनर्वार प्रत्याग-मन करता और दक्षिण दिशामें ही अस्त होता है। इस केतुके निकलने पर प्रयागसे अवन्तीपुर पर्यन्त पुष्करारण्य नामक स्थान और उत्तरदिक्‌में देविका नदी पर्यन्त स्थान बिगड़ता, मध्यदेशमें भयानक उत्पात उठता और दूसरे देशोंमें दुर्भिक्ष तथा रोग बढ़ता है। यह केतु जिस दिन देख पड़ता, उससे १५ दिन पीछे १० मास पर्यन्त ऐसा ही अशुभ फल मिला करता है। श्वेतकेतु पूर्व दिशामें अर्धरात्रिके समय दृष्ट होता है। इसकी शिखाका अग्रभाग दक्षिण दिक्‌को अवनत रहता और पश्चिम दिशामें भी दुर्गकी भांति आकृति विशिष्ट कोई अपर केतु निकलता, जिसका नाम ककेतु पड़ता है। यह दोनों ही एक काल उदित होते और ७ दिन पीछे अदृष्ट हो जाते हैं। फल सुभिक्ष और मङ्गल है। परन्तु ७ दिन पीछे भी यदि ककेतु देखनेमें आता, तो घोरतर शस्त्रयुद्धसे समस्त लोकका अमङ्गल लाता है। किसी दूसरे केतुको श्वेत कहते हैं। यह जटा जैसा तथा कृष्णवर्ण रहता और आकाशके ३ भाग पर्यन्त चल करके वाम भागको प्रत्यागमन करता एवं अस्तमित होता है। इसके उदयमें भया-नक मरक पड़ता और प्रजाका तृतीयांश मात्र बचता है। रश्मिकेतुकी शिखा ईषत् धूम्रवर्ण रहती है। यह केतु कृत्तिका नक्षत्रके निकट देख पड़ता है। इसका फल श्वेतके ही समान है। ध्रुवकेतु देखनेमें स्थूल, सूक्ष्म और मध्याकृति होता है। इसकी गति और उदयका कोई ठिकाना नहीं। यह दिव्य, आन्तरीक्ष और भौम भेदसे तीन प्रकारका होता है। कभी कभी इसका नानाविध आकार देख पड़ता है। फल शुभ है। परन्तु जिस राजाके सेनाङ्गमें यह देखा जाता, वह अचिर ही मृत्यु पाता है। फिर जो देश शीघ्र मिटनेवाला होता उसके वृक्ष, पर्वत और गृहमें यह दीखता है। इसी प्रकार जिस गृहस्थको गृह सामग्री किंवा गृहतरु प्रभृतिमें यह केतु देख पड़ता, वह मर मिटता है। कुमुदकेतु श्वेतवर्ण और पूर्वाग्र पश्चिमको रखनेवाला है। यह एक रात्रि मात्र दिखाई देता है। इसके दर्शन पीछे १० वत्सर पर्यन्त सुभिक्ष रहता है। मणिकेतु रात्रिको १ प्रहर काल पर्यन्त पश्चिम दिशामें देख पड़ता है। इसको एक सूक्ष्म तारा और शुक्लशिखा रहती है। शिखा देखनेमें स्तनसे पतित ठीक दुग्धधारा जैसी होती है। इसके उदय दिन से ४१ मास पर्यन्त सुभिक्ष रहता है। जलकेतु—स्निग्ध उन्नत शिखाविशिष्ट और पश्चिम दिशामें देख पड़ने-वाला है। इसके उदयमें ९ मास पर्यन्त सुभिक्ष और प्रजाका मङ्गल होता है। भवकेतु—एक सूक्ष्म तारका-विशिष्ट, सिंहके लाङ्गुल-जैसी शिखा द्वारा वेष्टित पूर्वमें एक रात्र मात्र देख पड़ता है। यह स्निग्ध रूपमें जितने मुहूर्त पर्यन्त देखा जाता, उतने मास सुभिक्ष रहता और रूक्ष रहनेसे प्राणान्तिक रोग लगता है।

पद्मकेतु—मृणालकी भांति श्वेतवर्ण रहता और पश्चिम दिशामें एकरात्र मात्र देख पड़ता है। इसके उदयसे ७ वत्सर पर्यन्त सुभिक्ष होता है। आवर्तकेतु अरुणतुल्य और स्निग्ध रहता और अर्धरात्रको पश्चिम दिक्‌में देख पड़ता है। यह केतु जितने क्षण देखनेमें आता, उतने वर्ष पर्यन्त सुभिक्ष होता और जगत् नित्य यज्ञोत्सवसे आनन्दित रहता है। संवर्तकेतु अतिशय भयानक, धूम्र और ताम्रवर्ण शिखायुक्त होता और संध्या कालको पश्चिम दिक्‌में देखा जाता है। यह केतु

नभोमण्डलका त्रिभाग अतिक्रम करके जितने मुहूर्त्त अवस्थिति करता, उतने वर्ष शस्त्रयुद्धसे भूपतियोंका विनाश लगा रहता है। संवर्तकेतु जिस नक्षत्र पर उदित होता किंवा जिन समस्त नक्षत्रोंको आश्रय करता, वह सब नक्षत्र और तदाश्रित देश पीड़ित होते हैं। अश्विनीनक्षत्र अशुभ केतुके साथ युक्त वा धूपित होनेसे अश्मक देशीय नृपति मर मिटता है। इसी प्रकार भरणीनक्षत्रमें किरातराज, कृत्तिकानक्षत्रमें कलिङ्गेश्वर और रोहिणीनक्षत्रमें शूरसेनाधिपतिका विनाश होता है। पूर्वफल्गुनी नक्षत्रमें उशीनरेश्वर, उत्तरफल्गुनीमें उज्जयनीपति, हस्तामें दण्डकारण्यके राजा, अश्लेषामें असिकाधिपति, चित्रा नक्षत्रमें कुरुक्षेत्रेश्वर, स्वाती नक्षत्रमें काश्मीर तथा काम्बोजके अधिपति, विशाखा नक्षत्रमें इक्ष्वाकुराज एवं अलका नगरीके अधीश्वर, अनुराधा नक्षत्रमें पुण्ड्राधिपति और ज्येष्ठानक्षत्रमें किसी एक सार्वभौम नरपति अथवा कान्यकुब्जाधिपतिका विनाश है। इसी प्रकार मूलामें मद्रकपति, पूर्वाषाढ़ामें काशीराज, उत्तराषाढ़ामें यौधेयक, आर्जुनायन, शिवि तथा चैद्य नृपति और श्रवणासे ६ नक्षत्रोंमें यथाक्रम कैकयनाथ, पञ्चनदाधिपति, सिंहलाधिप, वङ्गेश्वर, नैमिषराज एवं किराताधिपका विनाश होता है। शिखा उल्का द्वारा अभिहित होने और उदय होते ही देख पड़नेसे सकल प्रकार केतु शुभफल प्रदान करते हैं। परन्तु ऐसा केतु भी चोल, वङ्ग, सित और हूण देशके लिये अमङ्गलकारी है। केतुकी शिखा जिस दिशामें वक्रभावसे अवस्थिति करती किंवा जिस दिशाको चलने लगती उसी दिशामें अवस्थित देश समूह और जिस नक्षत्रको स्पर्श करती उस नक्षत्रका कथित दिक्समूह—राजा विपुल पराक्रमसे जय करके भोग करते हैं।

(भट्टोत्पलविरचित संहितावृत्तिकेतुचाराध्याय)

केतूत्पात होने पर शान्तिके लिये राजाको पृथिवी दान करना चाहिये और दूसरे गृहस्थोंको भी प्रभूत धन दान करना विधेय है। हठात् उदय वा अस्तकालको केतु देख पड़ने पर पित्तज्वरसे राजाका मृत्यु होता है। (नयु रानाथकृत समयामृत)

पाश्चात्य युरोपीय ज्योतिर्विदोंके मतमें केतु कोई ग्रह नहीं। चन्द्रकक्ष और क्रान्तिरेखा दोनों जिस विन्दुमें सम्मिलित हैं उन्हीं दोनोंमें जिससे चन्द्र ऊपर चढ़ता उसको ऊर्ध्वगपात और जिस विन्दुसे नीचे उतरता उसको अधोगपात कहते हैं। भारतवर्षके किसी सिद्धान्तवेत्ताने अधोगपात स्थानका नाम केतु और ऊर्ध्वगपातका नाम राहु रखा हैं। चन्द्र पृथिवीका उपग्रहस्वरूप है। उसको भ्रमण करनेमें चन्द्रका कक्ष क्रांतिरेखाके दोनों स्थलों पर संयुक्त हो जाता है। इसी प्रकार बुधशुक्रादि ग्रह सूर्यको प्रदक्षिण करते और उनके भी कक्ष क्रान्ति पर पड़ते हैं। उनमें प्रत्येकके दो दो संक्रामित स्थानोंको ऊर्ध्व और अधः अनुसार उनको राहु और केतु कहना असङ्गत नहीं। ज्योतिर्गण जिस प्रकार जड़पदार्थ होनेसे ग्रह और तारका कहाते हैं, वैसे राहु और केतु जड़ पदार्थ नहीं—आकाशमार्गके निर्णीत चिह्नमात्र हैं। ग्रहोंके साथ उनका यही सादृश्य है—जैसे ग्रहोंकी भिन्न भिन्न परिमित गति रहती है, वैसे ही नाना कारणोंसे क्रान्ति और कक्ष सकलके अल्प अल्प व्यतिक्रममें यह सभी सम्पातस्थान किञ्चित् किञ्चित् सरका करते हैं। इसका नाम पातगति है। इस गतिके अनुसार राहु-केतु नामक चिह्न स्थल पर कक्ष तिर्यक् भावमें जिस कोणको झुक पड़ता, वह कुछ कुछ घटता बढ़ता है।

चन्द्रके दो पातस्थानों अर्थात् राहुकेतुको जो गति है, वह चन्द्रके एक एक बार भूप्रदक्षिण समयका अधिकांश प्रतिसरण है। अग्रसरण उसकी अपेक्षा अति अल्प होता है। किसी नक्षत्रको लक्ष्य करके राहुकेतुका स्थान ठहरा गणना द्वारा स्थिर हुवा है कि उक्त गति द्वारा इस स्थानसे अलग हो फिर इसी स्थान पर उपस्थित होनेमें ६७९३ दिन ८ घण्टे २३ मिनट ८·३ सेकेण्ड समय लगता है। उसीसे इससमय बीती हुई पूर्णिमा और अमावस्या आदि पूर्वको जिस जिस दिन हुई, उसी उसी दिन फिर हुआ करती हैं।

ग्रहण, पात, चन्द्र, सूर्य आदि शब्द देखो।

हिन्दीमें केतुको पुच्छलतारा, बढ़नी और झाड़ू भी कहते हैं।

केतुकुण्डली (सं० स्त्री०) चक्रविशेष, एक कुण्डली। इसके द्वारा जन्मप्रभृति एक एक वर्षका अधिपति ग्रह निकाला जा सकता है। प्रजापतिदासने लिखा है— १२ प्रकोष्ठ अङ्कित करके प्रथममें रवि, द्वितीयमें केतु, तृतीयमें बुध, चतुर्थमें मङ्गल, पञ्चममें केतु, षष्ठमें बृहस्पति, सप्तममें चन्द्र, अष्टममें केतु, नवममें शुक्र, दशममें राहु, एकादशमें केतु और द्वादश प्रकोष्ठमें शनिको स्थापन करना चाहिये। फिर प्रथम प्रकोष्ठमें रविके साथ उत्तरभाद्र, रेवती, अश्विनी तीन नक्षत्र और द्वितीय प्रकोष्ठमें केवल भरणी स्थापन करते हैं। इसी प्रकार कृत्तिकासे यथाक्रम दूसरे ग्रहके प्रकोष्ठमें तीन तीन और केतुके प्रकोष्ठमें एक एक नक्षत्र रखनेका नियम है।

केतुकुण्डली चक्र।
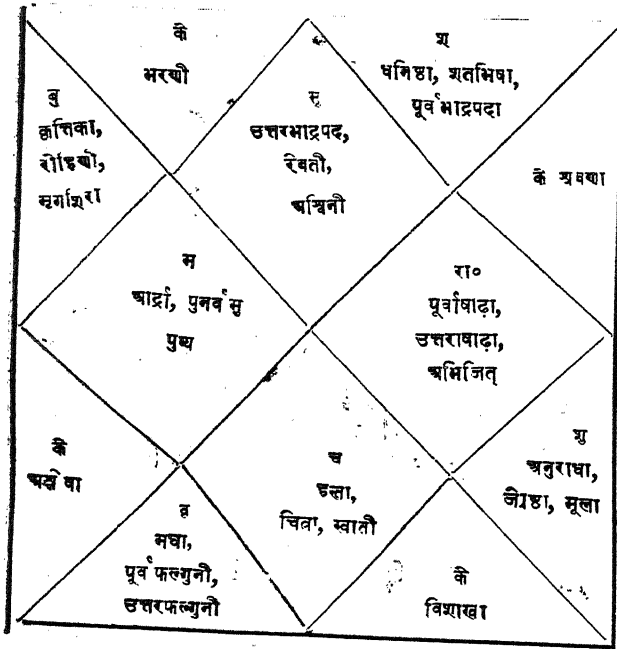
यदि बालक उत्तरभाद्रपद, रेवती वा अश्विनीमेंसे किसी नक्षत्र पर जन्म लेता, तो उसका प्रथम रवि, द्वितीय केतु, तृतीय बुध, चतुर्थ मङ्गल, पञ्चम केतु, षष्ठ बृहस्पति, सप्तम चन्द्र, अष्टम केतु, नवम शुक्र, दशम राहु, एकादश केतु और द्वादश वर्ष शनिके अधीन समझना चाहिये। इसी प्रकार दूसरे स्थानोंसे भी गणना की जाती है। रवि आदि वर्षाधिपतियोंका फल केतुपताकाचक्रकी भांति होता है। इस चक्रमें केतुके प्रकोष्ठ अधिक हैं। इसीसे इसका नाम केतुकुण्डली रखा गया है। (पञ्चस्वरा)

केतुग्रह (सं० पु०) नवग्रहके अन्तर्गत एक ग्रह। केतु देखो।

केतुग्रहवल्लभ (सं० क्ली०) वैदूर्यमणि, लहसुनिया।

केतुतारा (सं० स्त्री०) केतुः शिखा तद्युक्ता तारा, मध्यपदलोपी कर्मधा०। धूमकेतु। यह एक नक्षत्रविशेष है। इसकी एक शिखा धूम्रवर्ण होती है। केतु ताराके उदयसे नानाविध उत्पात उठा करते हैं।

केतुधर्मा (सं० पु०) एक राजा। यह त्रिगर्तके अधिपति सूर्यवर्माके अनुज थे।

केतुपताका (सं० स्त्री०) केतोः पताका इव। एक चक्र। इसके द्वारा जन्मसे प्रत्येक वर्षका अधिपति ग्रह समझा जा सकता है। पञ्चस्वरामें लिखते हैं—

'केतुपताकामें रवि, चन्द्र, मङ्गल, बुध, शनि, बृहस्पति, राहु, केतु और शुक्र यथाक्रम स्थापन करना चाहिये। पीछे रवि आदि प्रत्येक ग्रहके साथ कृत्तिका प्रभृति तीन तीन नक्षत्र रखते हैं। जन्म नक्षत्र जिस ग्रहके साथ केतुपताकामें रहता, वही ग्रह प्रथम वर्षका अधिपति ठहरता है। फिर दूसरे वर्षका अधिपति उसके आगेका ग्रह होगा। केतुपताकामें रविके साथ शनि, सोमके साथ बृहस्पति, मङ्गलके साथ राहु और बुधके साथ शुक्रका वेध लगता है। परन्तु केतुके साथ किसी ग्रहका वेध नहीं।

केतुपताकाका चक्र।
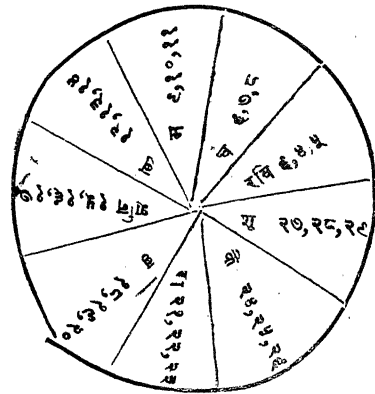
अधिपति ग्रहके अनुसार वर्षका फल इस प्रकार कहा गया है—

'रवि जिस वर्षका अधिपति रहता, उसमें कोई

लाभ नहीं मिलता, शिर:पीड़ा, ज्वररोग, गृहदाह और पद पद पर विघ्नका भय रहता है। चन्द्रके वत्सरमें रौप्य तथा सुवर्णका आभरण पाते और कृषि-कार्य करनेसे विशेष फल उठाते हैं। मङ्गलके वर्षमें मृत्युभय, गृहदाह, धनहानि, चोरका डर और राजभय रहता है। बुधके वत्सरका फल उत्कृष्ट शय्यालाभ, रौप्य प्रभृति धनप्राप्ति, दान और मानसिक पुण्यकर्म है। शनिके वर्षमें दाह, बन्धन, नानाविध पीड़ा, धनहानि, प्रहार और आत्मीय स्वजनके साथ कलह होता है। बृहस्पतिके वर्षका फल नानाविध सम्पत्ति, कृष्ण लोहित छत्रप्राप्ति और बहुविध सम्मान है। राहुके वर्षमें बन्धन, नौकाविप्लव अर्थात् पानीमें नाव डूब जाना, हाथ पैर और सारे शरीरमें व्रण तथा सर्वदा अशान्ति रहती है। केतु ग्रहका फल भी ऐसा ही होता है। शुक्रके वर्षमें विपुल सम्पत्तिलाभ, हस्ती, अश्व प्रभृति वाहन प्राप्ति और उत्साह होता है।

प्रत्येक ग्रहके वर्षमें दूसरे ग्रहोंका अन्तर्दिन आता है। उसीके अनुसार फलाफल समझ लेते हैं। वर्षको ९ भागोंमें बांटना पड़ता है। प्रथम भागमें २० दिन, दूसरेमें ५० दिन, तीसरेमें २८ दिन, चौथेमें ५६ दिन, पांचवेंमें ३३ दिन, छठेंमें ६३ दिन, सातवेंमें २० दिन, आठवेंमें ७० दिन और नवेंमें २० दिन वर्षके अधिपतिका अन्तर्दिन प्रथमभाग अर्थात् २० दिन रहता है। उस ग्रहका जो फल कहा गया है। वह इन्हीं २० दिनमें मिलजाता है। पताकाके स्थापनानुसार वर्षाधिपतिके परवर्ती ग्रहका द्वितीय भाग और उसके परवर्ती ग्रहका तृतीय भागमें अन्तर्दिन आता जाता है। इसीप्रकार सब ग्रहोंका अन्तर्दिन देखना चाहिये। शुभ अथवा अशुभ ग्रहका फल जो कहा गया है, अंतर्दिनमें भी उसका वही फल होता है।

केतुभ (सं० पु०) केतु ग्रहस्येव भा दीप्तिर्यस्य, बहुव्री०। मेघ, बादल।

केतुभूत (सं० त्रि०) पताका बना हुआ, जो झण्डा बन गया हो।

केतुमती (सं० स्त्री०) १ सुमाली राक्षसकी स्त्री। यह अकम्पन, धूम्राक्ष आदिकी माता थीं। २ कोई छन्द, अर्धसमवृत्त। जिसके प्रथम चरण तथा तृतीय चरणमें पहले २ ह्रस्व, १ गुरु, १ ह्रस्व, १ गुरु, ३ ह्रस्व और २ गुरु आते और द्वितीय एवं चतुर्थ चरणमें पहला, चौथा, छठां, दशवां और ग्यारहवां अक्षर गुरु लगाते, उसे केतुमती छन्द ठहराते हैं।

केतुमान् (सं० त्रि०) केतुरस्त्यस्य, केतु-मतुप्। १ चिह्नयुक्त, निशान्दार। २ प्रज्ञायुक्त, समझदार। (ऋक् ६।४७।३१) (पु०) ३ काशीराज दिवोदासके वंशवाले कोई राजा। (हरिवंश २ अ०) ४ श्रीकृष्णकी पत्नी सुनन्दाका निवासगृह। (हरिवंश) ५ धन्वन्तरिके पुत्र। ६ कोई दानव। (भागवत ९। १७। ५)

केतुमाल (सं० पु०) १ अग्नीध्रराजाके एक पुत्र। २ जम्बुद्वीपके अन्तर्गत नौमें एक वर्ष। यह वर्ष निषधाचलके पश्चिम अवस्थित है। इस वर्षमें विशाल, कम्बल, कृष्ण, जयन्त, हरिपर्वत, अशोक और वर्धमान नामक ७ कुलपर्वत हैं और वन्य जन्तु अधिक रहते हैं। सुवप्रा आदि अनेक नदी और नद वर्तमान हैं। देवर्षियों, सिद्धों और चारणोंको इन समस्त नदियोंके जलमें स्नान करना अच्छा लगता है। (ब्रह्माण्डपुराण)

केतुमाली (सं० पु०) शम्बरदैत्यके एक सेनापति।

केतुयष्टि (सं० स्त्री०) पताकाका दण्ड, झण्डेका बांस।

केतुरत्न (सं० क्लो०) वैदूर्यमणि, लहसुनिया।

केतुवीर्य (सं० पु०) एक दानव। (हरिवंश ३ अ०)

केतुवृक्ष (सं० पु०) मेरुके चतुर्दिक्स्थित मन्दर प्रभृति पर्वतोंके चिह्नस्वरूप वृक्ष। मन्दर पर्वतमें कदम्ब, गन्धमादनमें जम्बु, विपुलमें वट, एवं सुपार्श्व पर्वत पर पिप्पल केतुवृक्ष कहलाता है। (सिद्धान्तशिरोमणि)

विष्णुपुराणके मतमें मेरुके पूर्व मन्दरमें कदम्ब, दक्षिणदिकस्थ गन्धमादनमें जम्बु, पश्चिमस्थ विपुलमें पिप्पल और उत्तर सुपार्श्व पर्वतमें वटवृक्ष ही केतुवृक्ष है।

केतुशृङ्ग (सं० पु०) पौरववंशीय एक राजा। (भारत आदि १० अ०)

केतो (हिं० पु०) अमेरिका खण्ड देशका एक जन्तु। यह लोमड़ी जैसा लगता और ईखके खेतको चरता है।

केदगांव—बम्बईप्रान्तीय पूना जिलेका एक गांव।

सूपासे यह १२ मील उत्तर पड़ता है। यहां पेनिन-सुला रेलवेका एक ष्टेशन है।

केदर (सं० पु०) के दृणाति केदीर्यते वा, के-दृ-अच् अथवा अप्। १ वनस्पतिविशेष, कोई पेड़। (त्रि०) २ काण, काना। ३ टेरक, टेरा, केंचा।

केदार (सं० पु० क्ली०) के शिरसि दारोऽस्य केन जलेन वा दारोऽस्य, बहुव्री०। १ हिमालयके अन्तर्गत कोई पर्वत और महापुण्यभूमि। (हिमवत्खण्ड ८।१०) काशी-खण्डमें कहा है—

केदार दर्शन करनेका निश्चय करनेवालेके आजन्म अर्ज्जित पाप उसी समय विनष्ट हो जाते हैं। जानेका निश्चय करके घरसे निकलते ही दो जन्मके अर्जित पाप शरीरसे दूरीभूत होते हैं। पथके मध्यभागमें पहुंचने पर तीन जन्मके पाप नष्ट हो जाते हैं। सायंकालको केदार नाम तीन बार बोलनेसे घरमें बैठे रहते भी केदारयात्राका फल मिल सकता है। केदारपर्वत अवलोकन और वहांका जलपान करनेसे जन्मजन्मान्तर के पाप कटते हैं। उसी स्थान पर हरपाद नामक एक ह्रद है, उसमें स्नान करके केदारेश्वरकी पूजा करने-से कोटिजन्मके अर्जित पाप विनष्ट होते हैं। जो हरपापह्रदके तीर श्राद्ध करते, उनके सप्त पुरुष स्वर्ग पहुंचते हैं। हिमाचल पर चढ़के केदार अवलोकन करनेसे काशीदर्शनका सप्तगुण फल होता है। २ कामरूपका कोई पवित्र तीर्थ। कामरूप देखो। ३ नर्मदातीरस्थ कोई तीर्थ। यह पुराणमें मतङ्गकेदार नामसे वर्णित है। (वायुपुराण, रेवामाहात्मा) ४ केदार पर्वतस्थ शिवलिङ्ग। ५ काशीका कोई शिवलिङ्ग। काशी देखो। ६ बदरिकाश्रमका निकटवर्ती कोई क्षेत्र। (देवीगीता।) ७ जल निवारणके निमित्त चारो पार्श्वको सेतुबन्धयुक्त क्षेत्र, चारो ओरसे घिरा हुआ खेत। ८ आलबाल। ९ मालभूमिविशेष, कोई उपजाऊ जमीन। १० केदारशालि, एक प्रकारका धान। ११ अब्धि नामक धर्मशास्त्र बनानेवाले। श्रीधर स्वामीने इनका मत उद्धृत किया है। १२ कोई सम्पूर्ण जातिका राग। यह मेघरागका चौथा पुत्र है और रातके दूसरे प्रहर गाया जाता है।

केदारक (सं० पु०) षष्टिकधान्यविशेष, साठी धान। यह मधुर, वात तथा पित्तनाशक, पुष्टिकर और कफ एवं शुक्रवृद्धिकारक होता है। (सुश्रुत)

केदारकटुका (सं० स्त्री०) केदारस्य क्षेत्रस्य कटुकेव। कटुकी।

केदार कवि (कदर?) हिन्दी भाषाके एक कवि। शिव-सिंहसरोजमें लिखा है कि वह अलाउद्दीन खिल-जीके दरबारमें आते जाते रहे। इसलिये केदार कविके अभ्युदयका समय ११५० ई० था। इनकी कविता विरल है।

केदारकान्त—युक्तप्रदेशके गढ़वाल प्रान्तका एक गिरि शृङ्ग। यह अक्षा० ३१° १' उ० और देशा० ७८° १४ पू० पर अवस्थित और समुद्रपृष्ठसे ८३६० हाथ ऊंचा है। हिमालयमें यमुना और तमसा नदीकी जहां उत्पत्ति हुई, ठीक उसीके मध्यस्थल पर केदारकान्त विद्यमान है। इसकी चारो ओर पर्वत ढालू है। इसी-से इस पर चढ़नेका बड़ा सुभीता है। निम्नभागमें घसिमका भाग अधिक है और उपरिभाग अभ्रयुक्त है। भूमिसे ६६६६ हाथ ऊंचे तक इसमें वृक्षादि देख पड़ते हैं। उससे ऊपर तृण और छोटे छोटे गुल्ममात्र उत्पन्न होते हैं। शीतकालको शिखरदेशमें बरफ जमता, जो ज्यैष्ठ आषाढ़ मास गलता है। कई महीने बरफ देख नहीं पड़ता। पहले यह पैमायशके केन्द्रस्थानकी भांति व्यवहृत होता था। स्कन्दपुराणके हिमवत्खण्डमें इसीको 'केदारशैल' कहा है।

केदारखण्ड (सं० पु०) स्कन्दपुराणका एक अंश। जिसमें केदारमाहात्म्य विशदरूपसे वर्णित हुआ है। २ बांध, पुश्ता।

केदारगङ्गा—युक्तप्रदेशके गढ़वालप्रान्तकी एक नदी। यह अक्षा० ३०° ४४' १५" उ० और देशा० ७९° ५' पू० से निकली और पांच-छह कोस पथ चलके गङ्गो-त्तरीके निम्नभागमें अक्षा० ३०° ५९' उ० और देशा० ७८° ५९' पू० पर भागीरथीसे जा मिली है। बर्फ गल जानेसे इसका जल अधिक परिमाण और प्रबल वेगमें बहता है। दूसरे समय अधिक जल नहीं रहता।

केदारज (सं० त्रि०) केदारात् जायते, केदार-जन-ड।

१ चेत्रजात, खेतका पैदा। (क्लो॰) २ पद्मकाष्ठ।

केदारजल (सं॰ क्लो॰) चेत्रका जल, खेतका पानी। यह मधुर, गुरुपाक और दोषकारक होता है। फिर चेत्रबद्ध जल मुक्त होने पर अतिशय दोषकारक है। (राजनिघण्ट)

केदारनट—केदार और नट रागके योगसे उत्पन्न एक राग। इसमें ऋषभ और धैवत वर्जित केवल ५ स्वरग्राम हैं। (सङ्गीतपारिजात) केदारनटको रात्रिके दूसरे पहर गाते हैं। कोई कोई इसे नटनारायणका छठा पुत्र मानता है।

केदारनाथ—हिमालयप्रदेशस्थ गढ़वालकी एक पुण्यभूमि। यह अक्षा॰ ३०° ४४' उ॰ और देशा॰ ७९° पू॰ पर महापथ नामक तुषारशृङ्गके नीचे समुद्रपृष्ठसे ७२३३ हाथ ऊंचे अवस्थित है।

इस स्थानमें केदारनाथ नामक शिवलिङ्ग विद्यमान है, इसीसे हिन्दुवोंके वास्ते यह स्थान अतीव पुण्य भूमि है। केदार देखो।

अति प्राचीनकालसे केदार एक महापुण्यस्थान कहलाता है। महाभारत, मात्स्य (२२।११), कूर्मपुराण (६१।२१) स्कन्दपुराण और नन्दीपुराणमें केदारनाथको महापुण्यस्थान बताया है।

यहांके केदारनाथ शिवके नामानुसार समस्त गढ़वाल प्रदेश प्राचीनकालको केदारभूमि कहलाता था। यह बात गढ़वालराज अनेकमल्ल आदि राजावोंके प्रदत्त प्राचीन अनुशासनपत्र पढ़नेसे समझ पड़ती है। गढ़वाल देखो।

स्कन्दपुराणके केदारखण्डमें लिखा है—यह स्थान महादेवको अतिप्रिय है। यहांकी धूलि स्पर्श करनेसे भी महापुण्य होता है। जिसने महापाप किया है, केदारनाथके दर्शनसे उसका सब छूट जाता है। तीर्थयात्रियोंको यहां आके केदार, तुङ्गनाथ, रुद्रालय, मध्यमेश्वर और कल्पेश्वर पञ्चकेदार दर्शन करना चाहिये।

पुण्यधाम केदारनाथके मन्दिरको छोड़के यहां दूसरे भी अनेक तीर्थ विद्यमान हैं। उनमें स्वर्गारोहिणी, भृगुपतन, रेतकुण्ड, हंसकुण्ड, सिन्धुसागर, त्रिवेणीतीर्थ, महापथ, मन्दाकिनी नदीका निकटस्थ शिवकुण्ड आदि प्रधान हैं। केदारखण्डमें इन सकल तीर्थोंका विस्तृत माहात्म्य लिखा है। महापथ नामक पुण्यस्थानमें भैरवझम्प एक गिरिशृङ्ग है। पहले अनेक मुमुक्षु तीर्थयात्री यहां आके देवके प्रसादकी लाभाशामें इसी महोच्च गिरिशृङ्गसे नीचे कूद पड़ते थे। नन्दीपुराणके केदारकल्पमें लिखा है कि केदारनाथ जाके झम्प प्रदान करनेसे महादेव उसी समय मोक्ष प्रदान करते हैं।

पहले बहुतसे लोग यहां प्राणत्याग करते थे। आज कल अंगरेज गवर्नमेण्टके शासन गुणसे कोई बहुत गहरे कूद नहीं सकता।

वैशाख मासकी अक्षय-तृतीयासे कार्तिक-संक्रान्ति पर्यन्त छहमास काल तीर्थयात्री यहां आते हैं। अर्धमार्गशीर्ष उपक्रान्तिके दिन यहां महासमारोह होता है। केदारखण्डमें लिखा है—उस दिनको देवदेवी यहां उपस्थित होती हैं। बहुतसे लोग कहते कि उसीदिन उच्च गिरिशृङ्गसे नानाजातीय कुसुमोंका सौरभ और उसीके साथ सुमधुर ध्वनि निकल कर आगन्तुकोंका कर्णकुहर पवित्र करता है।

केदारनाथका प्राचीन मन्दिर टूट गया है। वर्तमान मन्दिर अधिक दिनका बना नहीं। मन्दिरको चारो ओर तीर्थयात्रियोंके ठहरनेके लिये देशीय राजावोंके व्ययसे निर्मित बहुतसे घर खड़े हैं।

केदारनाथके प्रधान महन्तका उपाधि रावल है। वह यहांका पौरोहित्य नहीं करते, गुप्तकाशी और उखीमठमें सर्वदा बने रहते हैं। उनके चेले केदारनाथमें रह कार्य करते हैं। रावलजी दाक्षिणात्यको जङ्गम श्रेणीके ब्राह्मण हैं। यहांके बड़े बड़े पण्डे भी दाक्षिणात्यको नम्बूरी श्रेणीके ब्राह्मण हैं। प्रति वर्ष सहस्र सहस्र तीर्थयात्री केदारनाथ दर्शन किया करते हैं। गढ़वाल देखो।

केदारभट्ट (सं॰ पु॰) १ वृत्तरत्नाकर नामक संस्कृत ग्रन्थके रचयिता। यह पव्वेकके पुत्र थे। मल्लिनाथ, शिवराम, पद्मनाभ प्रभृति पण्डितोंने इनका मत उद्धृत किया है। २ कोई अलङ्कारप्रणेता।

केदारभूमि (सं० स्त्री०) मालक्षेत्र, आबाद जमीन्।

केदारमल्ल—राजा मदनपालका उपाधि। मदनपाल देखो।

केदारराय—सन्दीपके निकट श्रीपुरके राजा। १६९२ ई०को यह राजत्व करते थे। उसी समय मुगलोंने जब बङ्गाल देशको अधिकार किया, सन्दीप केदाररायका अधिकृत रहा। किन्तु मुगलोंने उसको बलपूर्वक ले लिया। उस समय पोर्तगोज इस प्रदेशमें वाणिज्य करने आते थे। उन्होंने भी सुभीतेके अनुसार उसका कितना ही अंश अधिकार किया। आराकानके राजाने पोर्तगोजोंको निकाल बाहर करनेके लिये एक दल नौसेना भेजी थी। इधर केदाररायने भी श्रीपुरसे लड़ाईको कई नावें पहुंचा दीं। मिलित नौसेनाके जीतने पर पोर्तगोज सन्धिकरके श्रीपुरमें अपनी टूटी नावें मरम्मत करने गये थे। उसी समय मुगल सेनापति मन्द्ररायने उनको आक्रमण किया और केदाररायका पराक्रम खर्व हुआ।

केदारशालि (सं० पु०) केदारक्षेत्रज शालिधान्य, साठी धान।

केदारा, केदारी देखो।

केदारी (सं० स्त्री०) ऋषभ और धैवत वर्जित षोड़व रागिणी। इसका ग्रह अंश मार्गी, मूर्छना और निवय-युक्त है—

नि स ग म प नि नि।

केदारीका ध्यान इस प्रकार किया जाता है—जटाधारिणी केदारी रागिणी योगपट्ट और नागोत्तरीय धारण करके एकान्त मनसे शिवका ध्यान करती है। इसका मस्तक शुक्लपक्षीय शशधर द्वारा परिशोभित है। (सङ्गीतदर्पण)

रागविबोधकार सोमेश्वरके मतमें यह सम्पूर्ण जातिकी रागिणी है। इसको सायंकाल वीर और शृङ्गार रसमें गाना चाहिये।

केदारेश्वर (सं० पु०) १ काशीस्थ कोई शिवलिङ्ग। (काशीखण्ड) २ एकाम्र काननके अन्तर्गत कोई प्राचीन शिवमन्दिर। कपिलसंहितामें इनका माहात्म्य विस्तृत भावसे कहा है।

केदिवारि—सिन्धुनदके समुद्रमें गिरनेका एक मुख। यह अक्षा० २४° २′ उ० और देशा० ६७° २१′ पू० पर अवस्थित है। पहले सिन्धुनदके मुखमें घुसनेको यही बड़ी राह थी। उस समय इसमें दश बारह हाथ पानी रहता था। आज कल हाजामरोव शाखामें अधिक जल रहनेसे वही बड़ा मुंहाना गिनी जाती है।

केन (सं० अव्य०) किससे, क्यों, कहांसे।

केन (सं० पु०) एक उपनिषत्। इसका पहला मन्त्र 'केन' शब्दसे आरम्भ होता है। यह सामवेदकी उपनिषद् है और ४ खण्डमें ३४ मन्त्र लिखे गये हैं।

केन—युक्तप्रदेशकी एक नदी। इसका दूसरा नाम कयान भी है। संस्कृतमें इसे कर्णवती और ग्रीकमें कैन्स कहते हैं। यह नदी भूपालराज्यके बीच विन्ध्याचल पर्वतके उत्तर-पश्चिम भागके ढाल प्रदेशसे निकली है। उत्पत्तिस्थान अक्षा० २३° ५४′ उ० और देशा० ८° १०′ पू० पर अवस्थित है। वहांसे आगे सत्रह अट्ठारह कोस जाके पिपरियाघाट नामक स्थानके निकट बन्देर नामक गिरिमालाके ऊपरसे इस नदीका जल एकबारगीही बहुत नीचे गिरनेपर वहां एक जलप्रपात बन गया है। उसके आगे पश्चिममुख जानेसे पटना और सुनार नदी आकर इसमें मिली है। फिर बांदा जिलाके बिलहड़का ग्राममें कोयल, गर्वेन चन्द्रावाल नामक छोटी छोटी नदियां भी इसीमें गिरी हैं। यह सब मिली हुई नदियां चिल्ला नामक ग्राममें यमुनासे जा मिली हैं। उक्त स्थानका अक्षा० २५° ४७′ उ० और देशा० ८०° ३१′ पू० है। नदीकी लम्बाई उत्पत्तिस्थानसे ११५ कोस है। इसका कहीं स्रोत बड़ा और कहीं इसमें पहाड़ आ पड़ा है। इसीसे केनमें नाव चलनेका सुभीता नहीं। वर्षाकालको यमुनाजीसे बांदा तक १७।१८ कोसमें छोटी छोटी नावें चला करती हैं। इस नदीमें मछलियां बहुत हैं। फिर इसके तलसे अनेक मूल्यवान् प्रस्तर भी निकल आते हैं। लोग केनका पानी स्वास्थ्यकर नहीं समझते। अब इससे कई नहरें निकाली गयी हैं।

केनती (सं० स्त्री०) के सुखार्थे नतिः वा ङीप् अलुक्। १ कामलीला। २ रति।

केना (सं० स्त्री०) पत्रशाकविशेष, एक सब्जी। यह

मधुर, शीतल, रुच्य और स्तन्यवर्धिनी होती है ।

(वैद्यकनिघण्टु)

केना (हिं० पु०) १ शाकभाजी लेनेके लिये दिया जानेवाला थोड़ासा अनाज। २ शाक, भाजी।

केनार (सं० पु०) के मूर्धिनारः, अलुक् समा०। १ कुम्भिनरक। २ मस्तक और कपोलकी सन्धि, शिर और गालका जोड़।

केनिप (सं० पु०) के सुखे निपतति, के-नि पत-ड अलुक् समा०। मेधावी, समझदार। (ऋक् १०।४४।४)

निघण्टु में केनिपके स्थल पर आकेनिप पाठ भी देख पड़ता है।

केनिपात (सं० पु०) के जले निपात्यतेऽसौ, नि-पत-णिच् कर्मणि अच्। अरित्र, बहना, नाव चलानेका डांड या बल्ली।

केनिपातक (सं० पु०) केनिपात स्वार्थे कन्। अरित्र, नाव चलानेका डांड।

केनी (सं०) केना देखो।

केनेषितोपनिषद् (सं० स्त्री०) केनोपनिषद्।

केन्दु (सं० पु०) ईषत् इन्दुः, कोः कादेशः। तिन्दुक-वृक्ष, तेंदू।

केन्दुक (सं० पु०) केन्दु संज्ञायां कन्। १ गालवृक्ष, एक प्रकारका शीशम जिससे राल निकलती है। २ कोई ताल

"लघु द्वयं विरामान्तं तालेकेन्दुकसंज्ञके।" (सङ्गीतदामोदर)

केन्दुली (केन्दुविल्व)—वङ्गदेशके वीरभूम जिलेकी अजय नदीके तीरका एक बड़ा गांव। यह अक्षा० २३° ३८´ उ० और देशा० ८७° २६´ पू० पर अवस्थित है। प्रसिद्ध वैष्णव कवि जयदेवने यहीं जन्म लिया था। उक्त कविके स्मरणार्थं प्रतिवर्ष संक्रान्तिको यहां एक बड़ा मेला लगता है। उसमें प्रायः ५० हजार लोग इकट्ठे हुआ करते हैं।

केन्दुवाल (सं० पु०) के जले इन्दोरिव अर्धेन्दोरिव वाल-स्खलनमस्य, बहुव्री०। अरित्र, नावकी बल्ली।

केन्दुविल्व (सं० पु०) वीरभूम जिलाके अन्तर्गत वर्तमान केन्दुली नामक मध्यग्राम। यह विख्यात जयदेव कविकी जन्मभूमि है। जयदेव देखो।

केन्द्र (सं० क्ली०) वृत्तक्षेत्रका मध्यस्थान, घेरेके बीचकी जगह। ग्रीक भाषामें इसे केनट्रोन (Kentron) कहते हैं। २ कोई लग्न। लग्नके १म, ४र्थ, ७म, और १०म स्थानका नाम केन्द्र है। केन्द्रस्थानमें जाके ग्रह जो आकर्षण करता, वह प्रबल होता है।

(वृहत्संहिता)

केन्द्रका (सं० स्त्री०) केन्दू, तेंदू।

केन्द्रमुखबल (सं० क्ली०) वह बल जिससे सकल वस्तु केन्द्रके अभिमुखसे अन्तरित होता है।

केन्द्रस्रोत (सं० क्ली०) मेरुके निकटसे आया हुआ स्रोत।

केन्द्रापसारिणी (सं० स्त्री०) शक्तिविशेष, एक ताकत। इस शक्तिके प्रभावसे द्रव्यको केन्द्र छोड़के जाना पड़ता है।

केन्द्रापाड़ा—उड़ीसेके कटक जिलाका एक उपविभाग। इसका प्रधान नगर भी केन्द्रापाड़ा है। वह महानदीकी शाखा चितरतला नदीके तीर अक्षा० २०° १८´ और २०° ४८´ उ० और देशा० ८६° १५´ और ८७° १´ पू० पर अवस्थित है। पहले कुजङ्गके राजा यहां सर्वदा लूट मार किया करते थे। इसीसे मराठोंने वहां एक फौजदार रख दिया। केन्द्रापाड़ामें एक म्युनिसपालिटी, कई अदालतें और डाकवंगला है।

केन्द्राभिकर्षणीशक्ति (सं० स्त्री०) एक प्रकारकी शक्ति, जिसके प्रभावसे द्रव्य केन्द्रके अभिमुख चलता है।

केन्द्राभिमुखबल (सं० क्ली०) वह बल जिससे सकल वस्तु केन्द्रके अभिमुख आकृष्ट होता है।

केपि (सं० त्रि०) कुत्सित कर्मकारी। (ऋक् १०।४४।६)

केमद्रुम (सं० पु०) जन्मकालीन एक ग्रहयोग। जन्मकालको जिन ग्रहोंके जिन लग्नमें रहनेसे सुनफा, अनफा और दुरधुरा योग होता, उससे अन्य लग्नमें ग्रह पड़नेसे केमद्रुमयोग लगता है। केमद्रुम योगमें जातव्यक्ति दरिद्र तथा दुःखी रहता और पीछे उसे दासत्व करके जीविकानिर्वाह करना पड़ता है। केमद्रुम जातव्यक्ति राजवंशीय होते भी दरिद्र, मलिन, दुःखित और दूसरेका वेतनग्राही होता है। चन्द्र केन्द्रगत, अपर ग्रहयुक्त वा अपर सकल ग्रह दृष्ट होनेसे

केमद्रुमयोग नहीं लगता। ग्रीसमें इसे केनोड्रोमस् कहते हैं। (ज्योतिस्तत्त्व)

केमुक (सं० पु०) के शिरसि अमयति, के-अम-उक्। १ वृक्षविशेष, केवुककन्द, केउआं, बंड़ा। इसका संस्कृत पर्याय—पेिचुल, पेचुनी, पेचु, पेचिका, दलसारिणी और केवुक है। केमुकका मूल कफनाशक, पित्तघ्न, रोचक और अग्निदीपनकारक है। (राजनिघण्टु)

२ राढ़ देशका एक ग्राम। वृषेश्वर शिवलिङ्गके लिये यह ग्राम प्रसिद्ध है। (दिग्विजयप्रकाश)

केम्पेगोड—एक एलहङ्क राजा। १५३७ ई०को इन्होंने मङ्गलोर नगर स्थापन किया था। इनके पुत्रने मागडी और सायनदुर्गको अधिकार किया था।

केम्पदेव—महिसुरके एक प्रवल राजा। इन्होंने मदुराके नायकको पराजय करके एरोद नामक स्थान जीता था। वेदनोरके शिवाप्पा नायक भी इनसे परास्त हुए। इन्होंने दोड्डदेवराज उपाधि ग्रहण किया था। राज्यकाल १६५८-१६७२ ई० रहा।

केम्बुक (सं० क्ली०) पूग, सुपारी।

केयदेवपण्डित—एक वैद्यक ग्रन्थकार। इनके पिताका नाम सारङ्ग और पितामहका नाम पद्मनाभ था। इन्होंने मणिरत्नाकर और पथ्यापथ्यविवेक नामक वैद्यकग्रंथ रचना किया।

केयूर (सं० क्ली०) के बाहुशिरसि याति के-या-ऊर-किच्च अलुक् समा०। १ बाहुभूषण, बजुल्ला,। २ कोई रतिबन्ध।

"स्त्रीजङ्घे चैव संपीड्य दोर्भ्यामालिङ्ग्य सुन्दरीम्।
कारयेत् स्थापनं कामो बन्धः केयूरसंज्ञितः॥" (स्मरदीपिका)

रतिमञ्जरीमें प्रकारान्तरसे केयूरबन्ध निर्णीत हुआ है।

"स्त्रीणां जङ्घान्तराविष्टो गाढ़मालिङ्ग्य सुन्दरीम्।
कामयेद्विपुलं कामी बन्धः केयूरसंज्ञितः॥" (रतिमञ्जरी)

केयूरक (सं० पु०) १ कोई गन्धर्व। वाणभट्टने इन्हें गन्धर्वकुमारी कादम्बरीका अनुचर बताया है। २ अङ्गद, बहुंटा।

केयूरबन्ध (सं० पु०) बध्यतेऽत्र, बन्ध-घञ्, केयूरस्य बन्धः, ६-तत्। अङ्गद परिधानका स्थान, बजुल्ला बांधनेकी जगह।

केयूरबल (सं० पु०) बौद्धशास्त्रोक्त देवताभेद। (ललितविस्तर)

केयूरी (सं० त्रि०) केयूरमस्यास्ति, केयूर-इनि। बाहुभूषणयुक्त, बजुल्ला बांधे हुआ।

केरक (सं० पु०) १ जनपदविशेष, कोई देश। (महाभारत, सभा ३० अ०) २ केरकके रहनेवाले।

केरट्टपर्याय—एक प्राचीन कवि। श्रीधरदासके सूक्तिकर्णामृतमें इनकी कविता उद्धृत हुई है।

केरल (सं० पु०) १ क्षत्रियविशेष। सूर्यवंशीय सगरराजाने इन्हें धर्मच्युत कर डाला था। (हरिवंश)

२ दक्षिणापथके अन्तर्गत कोई अति प्राचीन जनपद, दक्षिण भारतका एक बहुत पुराना प्रान्त। रामायण (४।४१ अ०), महाभारत (६।९ अ०), ब्रह्माण्डपुराण (४८।५२), मार्कण्डेय (५७। ४८), मत्स्य (११३।४६), वामन (१३।४६) और बृहत्संहिता आदि ग्रन्थोंमें इस जनपदका उल्लेख मिलता है। वर्तमान गोकर्णसे कुमारिका अन्तरीप पर्यन्त समुद्रतीरवर्ती विस्तीर्ण प्रान्त केरल कहलाता था। शक्तिसङ्गमतन्त्रके मतमें सुब्रह्मण्य (दक्षिण कानाड़ेके सीमान्त)से जनार्दन तक केरल देश रहा। इसीके बीचमें शिवकेरल, रामेश्वरसे वेङ्कटाद्रि पर्यन्त हंसकेरल और अनन्तशैलसे अव्यय तक समग्र देश केरल नामसे प्रसिद्ध था।

यहांके पुराने राजावोंने जो अनुशासन दिये हैं, उनको देखनेसे समझ पड़ता है कि मलयवार, चेरराज्य, कोइम्बातुर और सालेमभूभागके सब स्थानोंमें पहले केरल राज्य फैला था। मलयवार, चेर आदि शब्द देखो। आजकल केरल कहनेसे समुद्रतीरवर्ती केरल मलयवार उपकूलका बोध होता है। किसीके मतमें पाश्चात्य भौगोलिक टलेमिने परलिया (Paralia) नामक जिस जनपदका उल्लेख किया है, वह वास्तवमें करलिया (Karalia) होगा। करलिया केरल शब्दका ही रूपान्तर है। (Wilson's Introduction to the Mackenzie collection, p. 56.) फिर कोई कहता है कि पुराने युनानियोंने इसी केरलका नाम 'लिमारिक' या 'डिमारिक' लिखा है। (Col. Yule's Glossary, p. 4I)

ई० से पहले ३य शताब्दीको अशोकराजाके अनुशासनमें केरलपुत्र नामक यहांके किसी राजाका नाम आया है। प्लिनिने 'केलोबोत्रस' (Kelobotras), टलेमिने 'केरबोथ्रस' (Kerabothrus), और पेरिप्लासने 'केप्रोबोथ्रस' (Ceprobothrus) नामसे केरलको वर्णना की है। मलयालम् भाषाके केरलोत्पत्ति नामक ग्रन्थमें लिखा है कि क्षत्रियोंके वैरी परशुरामने समुद्रसे केरल देशको उद्धार कर उसमें श्रेष्ठ ब्राह्मणोंको ले जाकर स्थापन किया। इसके बहुकाल पीछे आर्यपुरसे आये पेरुमाल नामक किसी राजाने केरलराज्य तुलुव (गोकर्णसे पेरुम्पुर), मूषिक (पेरुम्पुरसे पदुपट्टन), केरल (पदुपट्टनसे कन्नेति) और कूप (कन्नेतिसे कुमारी अन्तरीप) ४ भागोंमें बांटा था।

मलवार देखो।

२ गढ़वालका एक गिरिशृङ्ग। यह काली नदीके निकट अवस्थित है। केरलमें देवीमूर्ति विद्यमान है।

केरलतन्त्र—एक पुराना तन्त्र। सुन्दरदेवने इस तन्त्रका मत उद्धृत किया है।

केरलपुराण—केरल वा वर्तमान मलवारके तीर्थोंका विवरणमूलक एक उपपुराण।

केरलाचार्य—दिव्यचूड़ामणि नामक ज्योतिर्ग्रन्थके प्रणेता।

केरली (सं० स्त्री०) एक ज्योतिःशास्त्र। केरलदेशमें प्रकाशित होनेसे ही इसका नाम केरली पड़ा है। गर्गसंहितामें बताया है—

अ क च ट त प य श—आठ वर्ग हैं। अ वर्गको संख्या १ और इसके वर्णोंकी संख्या १६ है, यथा—अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः। क-वर्गकी संख्या २ और उसकी वर्णसंख्या ५ है, जैसे—क ख ग घ ङ। च वर्गकी संख्या ३ और उसके वर्णोंकी संख्या पांच है,—च छ ज झ ञ। ट वर्ग ४था है और उसमें ट ठ ड ढ ण ५ वर्ण आते हैं। तवर्गकी संख्या ५ और उसकी वर्णसंख्या भी ५ ही है—त थ द ध न। पवर्ग ६ठां पड़ता; जिसमें प फ ब भ म ५ वर्णोंका समावेश रहता है। ७म यवगमें य र ल व ४ वर्ण हैं। शवर्गकी संख्या ८ और उसकी वर्णसंख्या श ष स ह ४ है। यदि कोई दाड़िम फलके नाम पर प्रश्न करे, तो दकारकी वर्गसंख्या ५, वर्णसंख्या ३; इकारको वर्गसंख्या ४, वर्णसंख्या ३; मकारकी वर्गसंख्या ६, वर्ण संख्या ५; दकारके अकारकी वर्ग संख्या १, वर्णसंख्या २, डकारके इकारकी वर्गसंख्या १, वर्णसंख्या ३ और मकारके अकारको वर्गसंख्या १ तथा वर्णसंख्या १—सब मिलकर बड़ी संख्या ३५ आती है। इसीका नाम पिण्डसंख्या है। गणक प्रश्नकर्ता वा किसी दूसरे व्यक्तिसे एक फलका नाम लेनेको कहता है। जिस फलका नाम लिया जायेगा, उसको पूर्व प्रदर्शित नियमके अनुसार पिण्डसंख्या बनाना पड़ेगी। इसके पीछे फलाफल समझा जा सकता है। किसी किसीके मतमें स्वरसंख्याको छोड़ केवल व्यञ्जनसंख्यासे ही गणना करना चाहिये। ऐसे लोग ४ वर्ग मानते हैं—कवर्ग, टवर्ग, पवर्ग और यवर्ग। ककारकी १, खकारकी २, गकारकी ३ सब मिलाकर कवर्गकी संख्या १० है। इसी प्रकार टवर्गकी १०, पवर्गकी ५ और यवर्गकी संख्या ८ है। किन्तु ङकार और नकारकी कोई संख्या नहीं, इनके स्थान पर शून्य ग्रहण करना पड़ता है।

प्रश्नके शब्दमें जितने अक्षर रहेंगे, उनकी इसी प्रकार संख्या लेकर गणना करते हैं। किन्तु पहले नियमकी भांति इसमें अङ्कोंका योग नहीं करना होता। अङ्कोंको यथास्थान रख देते हैं। जैसे प्रश्नशब्द पाताल होनेसे पकी संख्या १, तकी संख्या ६ और लकी ३ है। सभी अक्षरोंकी वामागति रहनेसे इसमें पिण्डसंख्या ३६१ आती है। ऐसे ही प्रश्नके शब्दकी पिण्डसंख्या निकाल कर गणना करते हैं।

केरलजातक, केरलचिन्तामणि, गर्गाचार्यकृत केरलप्रश्नावली, केरलप्रश्न, केरलसिद्धान्त, केरलीयद्वादशभाव आदि ग्रन्थोंमें इसका विस्तृत विवरण द्रष्टव्य है।

२ केरलदेशकी स्त्री। (राजेन्द्रकर्णपुर)

केरा (हिं० स्त्री०) पक्षिविशेष, पतारी बत्तक।

कैराकत (किराकत) युक्तप्रदेशके जौनपुर जिलेकी पूर्वी तहसील। यह अक्षा० २५° ३२′ तथा २५° ४६′ उ० और देशा० ८२° ४७′ और ८३° ५′ पू० बीच पड़ती है। इसका क्षेत्रफल २४४ वर्गमील है।

केराकतकी लोकसंख्या प्राय: १८७१२८ है। इस तह सीलके प्रधान नगरको भी किराकत ही कहते हैं। गोमती नदी इसके बीचसे बही है। तालाब या झील यहां थोड़े हैं। खेत कूवेंके पानीसे ही सींचे जाते हैं।

केराना (हिं० क्रि०) १ अनाजका छोटा और बड़ा दाना सूपसे हिला हिलाकर अलग करना। (पु०) २ हलदी, धनिया, मिर्चा आदि मसाला।

केरानी (हिं० पु०) १ युरेशियन, किरण्टा, भारतवासियोंके संसर्गसे उत्पन्न दोगला युरोपियन। २ लेखक।

केराव (हिं० पु०) कलाय, मटर।

केरी (हिं० स्त्री०) अंबिया, आमका कच्चा छोटा फल।

केरूर—बम्बई प्रदेशके बीजापुर जिलेका एक गढ़वन्द गांव। यह शोलापुर हुबली सड़क पर बादामीसे ११ मील उत्तर-पश्चिम पड़ता है। पहले यहां जङ्गल था। सड़क चलती देख एक चमार केरूरके पास रहने लगा और मुसाफिरोंके जूते गांठ गांठ खूब रुपया कमा लिया। एक दिन सलामतखान् नामक कोई धनी पठान उसके पास पहुंचा और पीनेको पानी मांगा। फिर दोनोंने बात चीत कर केरूर गांव बसा दिया। किलेके उत्तरी बुर्जमें आज भी उक्त चर्मकारकी प्रस्तरमयी प्रतिकृति विद्यमान है। किलेमें छपरदप्पा, मारुती और विठोवा और बाजारमें दुर्गवा, व्यामव, गणपति, कलव, मारुति, नगरेश्वर, रक्कोतेश्वर और वेङ्कटपति का मन्दिर है। नये बाजारमें वाग्रंकरीका मन्दिर बना है। कुछ मन्दिरोंके मण्डप गिर गये हैं। वाग्रङ्करी, कालव, नगरेश्वर और वेङ्कटपति मन्दिरोंमें मीनार हैं। नगरेश्वर मन्दिरका मीनार अठपहलू है। कुछ मन्दिरोंमें काठके खम्भे लगे हैं। नगरेश्वर मन्दिरमें लिङ्ग तथा नन्दीमूर्ति प्रतिष्ठित है। लिङ्गके दक्षिण नागोव और वामको गणपति और पृष्ठकी ओर शक्ति तथा सूर्यमूर्ति है। वेङ्कटपति मन्दिरकी दीवारों पर सिंह और हाथी खिंचे हैं।

केरोसिन (अं० पु० Kerosine) मट्टीका तेल। यह खनिसे निकलता है। यूनानी भाषामें केरस मोमको कहते हैं। फिर जलानेके लिये मोम प्रयोजनीय होता है। इससे केरोसिनका अर्थ जलानेका द्रव्य है। परन्तु आज कल इस शब्दसे जलानेके साधारण द्रव्यका बोध नहीं होता—मट्टीका तेल ही समझा जाता है। मट्टीसे पेट्रोलियम् नामक एक प्रकारका तेल निकलता, जिससे केरोसिन बना करता है। ब्रह्मदेश और बहुतसे दूसरे देशोंमें भी मट्टीके तेलकी खानें पायी गयी हैं। १८५९ ई०को अमेरिकाके यूनाइटेड ष्टेटसके ओर हिवो प्रदेशमें एक कूप खोदते समय उसके भीतरसे प्रति दिन सहस्र सहस्र मन तेल निकलने लगा। उसी समय वहां तेलके कारण एक नया ज्वर भी फैल पड़ा। फिर व्यवसायके एक नये लाभका उपाय पाकर लोग चारो ओर सैकड़ों कूप खोदने लगे।

अमेरिकाके नाना स्थानोंमें पेट्रोलियम मिलता है। इसी पेट्रोलियमको टपका कर सुपरिष्कृत पेट्रोलियम तेल प्रस्तुत होता है। आज कल भारतवर्षमें जिस केरोसिन तेलका व्यवहार किया जाता, वह अधिकांश अमेरिकासे ही आता है। आविष्कारके समय पहले पहल जलानेके लिये अच्छा दीपाधार न रहनेसे अनेक दुर्घटनायें हुई थीं। यह अभी तक ठीक नहीं समझ पड़ा—किस किस द्रव्यसे यह तेल बनता है। सर विलियम लोगान साहब कहते हैं कि सामुद्रिक जन्तु भूमिके मध्य प्रोथित रहनेसे यह तेल उत्पन्न होता है। वातरोग और हठात् किसी स्थानके कट जानेसे रक्त निकलने पर यह बड़ा उपकार करता है। नलीके क्षत और दद्रुरोगके लिये भी केरोसिन एक उत्तम औषध है। परन्तु इस तेलके जलनेसे जो धूआं उठता, उससे मनुष्यको बड़ी हानि पहुंचती है। इसका दुर्गन्ध भी असह्य है।

थोड़े दिन हुए ईरानमें भी मट्टीके तेलकी बड़ी बड़ी खानें निकली हैं।

केल (हिं० पु०) एक वृक्ष। यह हिमालयमें ६००० से ११००० फीट ऊंचे तक मिलता है। केल बहुत बड़ा और सीधा पेड़ है। इसका काष्ठ गृह निर्माणादि कार्यमें लगता है। केलसे चीड़की भांति तेल निकलता और इसके कोयलेसे लोहा तक पिघलता है। इसकी त्वक् दृढ़ रहती और उससे छत पटती है। केलकी पत्तियों और डालियोंकी बिचाली बनाते हैं।

केलक (सं० पु०) नर्तक, नाचनेवाला। केलक हाथमें खड्ग आदि धारण करके नाचते हैं इसका पर्याय—प्लवक है।

केलट (सं० क्ली०) कुसुम्भका बीज।

केलटक (सं० क्ली०) केमुककन्द, केउवां।

केलनपुर—बड़ोदा राज्यका एक गांव और रेलवे ष्टेशन। खण्डेराव गायकवाड़ने यहां एक धर्मशाला और शिकारगाह बनायी थी। मकरपुराका जङ्गल जहां कोई हिरन मारने नहीं पाता केलनपुरसे कुछही मील दूर है।

केला (हिं० पु०) कदलीवृक्ष। कदली देखो।

केलापुर—मध्यप्रदेशके एवतमाल जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० १९° ५०´ तथा २०° २९´ उ० और देशा० ७८° २´ और ७८° ५१´ पू० के मध्य अवस्थित है। भूपरिमाण १०८० वर्गमील आता है। लोकसंख्या प्रायः १०३६५७ है। पांढर कवाड़में हेडक्वार्टर है। यहां गोंड बहुत रहते हैं। इसकी उत्तर और दक्षिण सीमापर पानगङ्गा नदी बहती है।

केलास (सं० पु०) केला विलासः सीदत्यस्मिन्, केला-सद् आधारे बाहुलकात् डः। १ स्फटिकमणि, बिल्लोरी पत्थर। २ कैलास।

केलि (सं० पु०-स्त्री०) केल-इन्। १ परिहास, हंसी। इसका पर्याय—द्रव, क्रीड़ा, लीला और नर्म है। २ नायिकाका एक अलङ्कार। नायकके साथ विहार करते समय नायिका जो क्रीड़ा करती, उसीका नाम केलि है। (साहित्यदर्पण) ३ पृथिवी। ४ मधुवर्णन नामका संस्कृत काव्य बनानेवाले।

केलिक (सं० पु०) केलिः प्रयोजनमस्य ठन्। अशोकवृक्ष।

केलिकदम्ब (सं० पु०) केलेः क्रीड़ार्थं कदम्बम्, ६-तत्। एक प्रकारका कदम्ब। कदम्ब देखो।

केलिकला (सं० स्त्री०) केलिरूपा कला, शाकपार्थिवादित्वात् साधुः। १ रतिक्रीड़ा। २ सरस्वतीकी वीणा।

केलिकिण, केलिकीर्ण देखो।

केलिकिल (सं० पु०) केलिना किलति, किल क्रीड़ायां कः। १ शिवके कुष्माण्डक नामक अनुचर। २ विदूषक, हंसोड़ा। इसका पर्याय—विदूषक, वासन्तिक, वैहासिक, प्रहासी और प्रीतिद है। ३ अशोकवृक्ष।

केलिकिला (सं० स्त्री०) कामकी पत्नी रति।

केलिकिलावती, केलिकिला देखो।

केलिकीर्ण (सं० पु०) केलिनिमित्तकैः पांशुभिः कीर्णः। ऊंट।

केलिकुञ्चिका (सं० स्त्री०) केलीनां कुञ्चिकेव। श्यालिका, साली।

केलिकोष (सं० पु०) केलीनां कोष इव। नट, खिलाड़ी।

केलिगृह (सं० क्ली०) केलेर्गृहम्, ६-तत्। १ केलिमन्दिर, खेलका घर। २ रत्यादि गृह।

केलिनागर (सं० पु०) केलेः प्रधानो नागरः, मध्यपदलोपी कर्मधा०। विलासी, हंसने खेलनेवाला।

केलिपिक (सं० पु०) कोकिल।

केलिप्रिय—विहारिप्रताप नामक संस्कृत काव्यके रचयिता।

केलिमण्डप (सं० पु०) केलिगृह, खेलघर।

केलिमुख (सं० पु०) केलिः मुखं प्रधानमस्य, बहुव्री०। परिहास, हंसी ठट्ठा।

केलिमन्दिर, केलिमण्डप देखो।

केलिरैवतक (सं० क्ली०) हल्लीशलक्षणयुक्त एक नाटक। साहित्यदर्पणमें इसका उदाहरण उद्धृत हुआ है।

केलिवृक्ष (सं० पु०) केलिकदम्ब।

केलिशयन (सं० क्ली०) सुखमय शय्या, आरामका पलंग।

केलिशुषि (सं० स्त्री०) केलिना शुष्यति, केलि-शुषकि। पृथिवी।

केलिसचिव (सं० पु०) केली सचिवः सहायः, ७-तत्। विदूषक, हंसोड़ा, खेलका मन्त्री।

केलिसदन, केलिगृह देखो।

केलिस्थली (सं० स्त्री०) क्रीड़ाभूमि, खेलका स्थान।

केली (हिं० स्त्री०) छोटा केला।

केलीपिक (सं० पु०) क्रीड़ाकोकिल।

केलीवनो (सं० स्त्री०) आनन्दकानन, अच्छी फुलवारी।

केलु (सं० पु०) निर्दिष्ट संख्या, ठहरायी हुई गिनती।

केलूट (सं० पु०-स्त्री०) १ कन्दशाकविशेष, केउरी। २ जलोदुम्बर।

केलूटक, केलूट देखो।

केलूराव (हिं० पु०) केलका पेड़।

केलो (हिं० पु०) केल नामक वृक्ष।

केलोद—मध्यप्रदेशके नागपुर जिलेका एक नगर। यह अक्षा० २१° २७´ उ० और देशा० ७८° ५२´ पू० में सातपुरा गिरिके पाददेशपर छिन्दवाड़ेकी राहके पास अवस्थित है। लोकसंख्या ५१४१ है। यहां उत्कृष्ट पीतल और तांबेके वर्तन बनते और अमरावती तथा रायपुरमें जाकर अधिक बिकते हैं। इसको छोड़ कांचके बहुतसे गहने भी केलोदमें बनते हैं। कहते है—वर्तमान मालगुजारोंके पूर्वपुरुषोंने यह नगर स्थापन किया था। फिर उन्होंने निकटवर्ती गौखिसामन्त नगरके पास जाटघरमें एक बहुत बड़ा सरोवर भी खनन कराया। यहां प्राचीन दुर्गका भग्नावशेष पड़ा है।

केलोमेल—एक प्रकारका पारा। यह भारतके रसकर्पूरसे कुछ स्वतन्त्र है। रसकर्पूरको अंगरेजोमें 'बाईक्लोराइड ओफ मरक्यूरो' (Bichloride of Mercury) कहते हैं, परन्तु केलोमेल शुद्ध क्लोराइड ओफ मरक्यूरो, (Choride of Mercury) हैं। यह पारेसे बनता है। इसका रंग सफेद और वजन भारी रहता और खानेमें स्वादहीन लगता है। केलोमेल पानी या स्पिरिटमें नहीं मिलता और अधिक उत्ताप या खुली बोतलमें रखनेसे उड़ चलता है। यह प्रदाहनाशक, अतिविरेचक और पित्तनिःसारक है। फिर अल्पमात्रामें सेवन करनेसे केलोमेल धातुपरिवर्तक, लालानिःसारक और कृमिनाशक होता है। भारी सूजन या ज्वर पर इसका प्रयोग किया जाता है। केलोमेलका व्यवहार जैसा पहले रहा, वैसा अब देख नहीं पड़ता। वमन, पाण्डुरोग, पित्तको पीड़ा, आमाशय, उदरी, स्नायविक वेदना, धनुष्टङ्कार, शिरःपीड़ा, वधिरता आदि रोगों पर यह बड़ा उपकार करता है। चर्मरोग किसीसे भी न मिटने पर केलोमेलसे अच्छा हो जाता है। उपदंश रोग पर भी इसे व्यवहार करते हैं। धातुपरिवर्तनके लिये १ या २ ग्रेन और अतिविरेचनके लिये २से ६ ग्रेन तक केलोमेल दिया जाता है। भपारा लेनेमें यह २०से ३० ग्रेन तक लगता है।

केल्झर—मध्यप्रदेशके वर्धा जिलेका एक नगर। यह वर्धा नगरसे ८ कोस उत्तरपूर्व अक्षा० २०° ५१´ उ० और देशा० ७८° ५१´ पू० पर अवस्थित है। केल्झर बहुत पुराना नगर है। यहां लोगोंमें प्रवाद है कि केल् झर ही महाभारतोक्त वकराक्षसको उपद्रुत एकचक्रानगरी है। परन्तु यह प्रवाद प्रकृत समझ नहीं पड़ता। [एकचक्रा देखो]। यहां एक सुरम्य दुर्गका भग्नावशेष पड़ा है। दुर्गके प्राकारमें गणेशको एक बहुत बड़ी मूर्ति प्रतिष्ठित है। प्रतिवर्ष माघ मासकी शुक्ला पञ्चमीको गणनाथके महोत्सव उपलक्षमें मेला लगता है।

केल्टिक—एक प्राचीन जाति। इस जातिके लोग सेल्ट और केल्ट दो नामोंसे अभिहित होते हैं। कोई कोई कहता है कि यूरोपके मध्यभाग और पश्चिमके अधिवासी ही केल्टिक कहाते थे। भाषाका विचार करके आधुनिक प्रत्नतत्त्वविदोंने इन्हें २ भागोंमें बांटा है। एक भाग यूरोपके पश्चिम रहता था। दूसरे भागमें सिम्ब्राई हैं। उनका आदिवास एशियाखण्ड था। वहांसे वह जर्मनी आदि राज्योंमें फैल पड़े। केल्टिकोंमें एशियासे जर्मनी आदि देशोंको जानेवाले ही केल्ट कहलाते हैं।

केल्व माहिम—बम्बई प्रान्तस्थ थाना जिलेके माहिम तालुकका हेडक्वार्टर। यह अक्षा० १९° ३६ उ० और देशा० ७२° ४४´ पू० को पालघर ष्टेशनसे साढ़े ५ मील पश्चिम अवस्थित है। १९०१ ई०को संख्या ५६९९ थी। केल्वगांव माहिमसे ढाई मील दक्षिणको है। बन्दरके समुद्रका किनारा खूब पथरीला है और २ मीलतक साहिल कोह चला गया है। केल्व गांवके सामने एक छोटा टापू पड़ा है और पोर्तगीजोंके बनाये दो किले खड़े हैं। यहां बाग बहुत हैं और केले, गन्ने, अदरक और पानकी खासी बिक्री होती है। १३५० ई० को दिल्लीके मुसलमानोंने माहिम अधिकार किया था। १५३२ ई० को यह पोर्तगीजोंका

अधिकृत हुआ। इस नगरमें अस्पताल और कई स्कूल हैं।

केलसी—बम्बई प्रदेशके रत्नगिरि जिलेका एक बन्दर। यह रत्नगिरिसे ३२ कोस दूर अक्षा० १७° ५५´ उ० और देशा० ७३° ६´ पू० पर अवस्थित है। यहां प्रतिवर्ष २०से ५० हजार रुपये तकका माल आया जाया करता है।

केवका (हिं० पु०) प्रसूतिको दिया जानेवाला मसाला।

केवकी (हिं० स्त्री०) केवटी, एक बहुत छोटा कीड़ा।

केवट (वै० पु०) के जलार्थमवटः। जलाधार गर्त, कूवां। (ऋक् ६। ५४। ७)

केवट (हिं० पु०) नाव चलानेवाली एक जाति। इसे स्थानभेदसे कैवर्त, खेवट और मल्लाह भी कहते हैं। कैवर्त देखो।

केवटी, केवकी देखो।

केवटीदाल (हिं० स्त्री०) दो प्रकारकी एकहीमें मिली हुई दाल।

केवटीमोंथा (हिं० पु०) मुस्ताविशेष, किसी प्रकारका मोथा। यह मालवदेशमें उपजता और बहुत महकता है। कैवर्तमुस्ता देखो।

केवड़ई (हिं० पु०) १ किसी प्रकारका रंग। यह केवड़ेकी भांति हलका पीला और हरा मिला हुआ सफेद रंग है और गुलाब, खटाई तथा तुनके फूल मिला कर बनाया जाता है। (वि०) २ केवडा-जैसा रंगदार।

केवड़ा (हिं० पु०) श्वेतकेतकीवृक्ष। केवड़ेका पौदा केतकीसे कुछ बड़ा रहता है। इसके पत्र और पुष्प भी उससे बड़े आते हैं। केवड़ेकी पत्तियोंसे चटाई तैयार की जाती है। इसका फूल अतर और खुशबूदार जल बनाने तथा कत्था बसानेमें व्यवहृत होता है। २ केवड़ेका फूल। ३ केवड़ेका अतर। ४ केवड़ा जल। ५ वृक्षविशेष, कोई पेड़। यह हरिद्वार और ब्रह्मदेशके जङ्गलोंमें पाया जाता और ग्रीष्मके समय फूल आता है। इसका काष्ठ सुदृढ़ रहता और मेज, कुरसी, सन्दूक वगैरह बनानेमें लगता है। केतकी देखो।

केवर्त (सं० पु०) के जले वर्तते, के-वृत-अच् अलुक्समा०। कैवर्तजाति, मछुवा। (वाजसनेयसंहिता ३०। १६)

केवल (सं० त्रि०) केव सेवने कल यद्वा के शिरसि वलयति, के-वल-अच्। १ एकमात्र, अकेला। (ऋक् १०। १७३।६) २ निर्णीत। ३ शुद्ध। (अव्य०) ४ सिर्फ, अकेले। (क्ली०) ५ भ्रान्तिशून्य विशुद्धज्ञान।

"अविपर्ययाविशुद्धं केवलमुत्पद्यते ज्ञानम्।" (सांख्यकारिका)

६ अवधारणा (पु०) ७ कुहन, कुम्भीका ऊपरी ढांचा।

केवलज्ञान (सं० क्ली०) केवलं असहायं ज्ञानं, कर्मधा०। इंद्रियोंकी सहायताके विना केवल आत्मासे उत्पन्न होनेवाला ज्ञान। जैनमतानुसार संसारी आत्माके ज्ञानको ज्ञानावरणीय कर्मने आच्छादित कर हीन कर रक्खा है। तपस्या और ध्यान द्वारा जिस समय वह ज्ञानावरणीय कर्म नष्ट कर दिया जाता है उसी समय आत्माके सम्पूर्ण ज्ञान विकसित हो निकलता है। इन्द्रिय आदि पर पदार्थोंकी सहायताके विना ही यह आत्मा भूत भविष्यत् और वर्तमान तीनो कालोंकी समस्त द्रव्योंकी समस्त पर्यायोंको एक साथ जानने लगता है। इसी ज्ञानका नाम केवलज्ञान है। (तत्त्वार्थसूत्र टीका)

केवलज्ञानी (सं० पु०) केवलं शुद्धं ज्ञानमस्त्यस्य, केवलज्ञान-इनि। १ शुद्धज्ञानी, तत्त्वज्ञानी। २ अर्हत्।

केवलदर्शन (सं० क्ली०) केवलज्ञानके साथ होनेवाला दर्शन। वस्तुके सामान्य सत्तावलोकनको दर्शन कहते हैं, और वह छद्मस्थों (अल्पज्ञानियों)के ज्ञानसे पूर्वक्षणवर्ती होता है परन्तु सर्वज्ञ (केवलज्ञानी) के वह ज्ञानके साथ ही साथ होता है। यह दर्शनावरणीय कर्मके नष्ट कर देनेसे पैदा होता है। (तत्त्वार्थसूत्र टीका)

केवलद्रव्य (सं० क्ली०) मिर्च।

केवलराम—१ रेखाप्रदीप नामक गणित-शास्त्रके रचयिता। २ व्रजभाषाके कोई प्रसिद्ध कवि। भक्तिमालामें इनका प्रशंसावाद विद्यमान है। यह ई० षोड़श शताब्दीके प्रसिद्ध कवि गोकुलनिवासी दूध ही पीनेवाले कृष्णदासके शिष्य थे। कृष्णानन्दव्यासदेवने इनकी कविता उद्धृत की है।

केवलव्यतिरेकि (सं० क्ली०) एक अनुमान। इसका सपक्ष नहीं रहता और यह अनुमान केवल व्यतिरेक व्याप्ति द्वारा चलता है।

केवलाघ (सं० त्रि०) केवलपापविशिष्ट ।

(ऋक् १० । ११७ । ६)

केवलात्मा (सं० पु०) केवलः पुण्यपापरहित आत्मा, कर्मधा० । १ ईश्वर, जो पुण्यपापसे अलग है । (त्रि०) २ शुद्धस्वभाव, सीधासादा । (कुमारसम्भव २ । ४)

केवलादी (सं० त्रि०) केवलाघ । (ऋक् १० । ११७ । ६)

केवलान्वयि (सं० क्ली०) १ कोई अनुमान । अनुमान तीन प्रकारका होता है—केवलान्वयि, केवलव्यतिरेकि और अन्वयव्यतिरेकि । जिसका विपक्ष नहीं पड़ता और जो केवल अन्वयव्याप्ति द्वारा चलता, वही केवलान्वयि अनुमान ठहरता है । प्रमेयत्व केवलान्वयि है और उसको साधक अनुमिति भी केवलान्वयि है ।

(अनुमानचिन्तामणि)

२ कोई पदार्थ जो सर्वत्र सत्ता रखता और जिसका कहीं अभाव नहीं पड़ता । प्रमेयत्व, अभिधेयत्व, ज्ञेयत्व आदिके स्वरूप सम्बन्धमें कहीं भी अभाव नहीं आता । किसीके मतमें कई अत्यन्ताभाव भी केवलान्वयि होते हैं । सौन्दरमत-सिद्ध व्यधिकरण-धर्मावच्छिन्न अभाव केवलान्वयी है ।

केवली (सं० स्त्री०) केवल-ङीष् । १ ज्ञान, समझ । (पु०) २ केवलज्ञानयुक्त जिन ।

केवा (सं० स्त्री०) पुष्पवृक्ष-विशेष, एक फूलदार पेड़ । कोङ्कणदेशमें इसे केवार कहते हैं । यह मधुर, शीतल और दाह, पित्त, श्रम, वात, श्लेष्मा तथा छर्दिको नाश करनेवाली है । (राजनिघण्टु)

केविका (सं० स्त्री०) केव गतिचालनयो खुल्-टाप्-अत इत्वम् । केवा देखो ।

केवी, केवा देखो ।

केवु, केवुक देखो ।

केवुक (सं० पु०) १ पत्तूर, शालिञ्चशाक । २ केमुक, केउवां ।

केवुका (स्त्री) केवुक देखो ।

केवूक, केवुक देखो ।

केवूका (स्त्री०) केवुक देखो ।

केश (सं० पु०) क्लिश्यते क्लिश्नाति वा, क्लिश-अच् ललोपश्च । १ बन्धन, बंधाव । २ ह्रीवेर । ३ कोई दैत्य ४ विष्णु । काशते काश-अच् पृषोदरादित्वात् साधुः । ५ सूर्य और अग्नि आदिका किरण । केशी देखो । ६ परब्रह्मको शक्ति—ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र । केशव देखो । ७ कुन्तल, जुल्फ । के शिरसि शेते, शी-ड । ८ मज्जाजात उपधातुविशेष, बाल । इसका पर्याय—चिकुर, कुन्तल, बाल, कच, शिरोरुह, शिरसिज, मूर्धज, अस्र और वृजिन है । गर्भस्थ बालकके अष्टम मास केश आता है । सन्तानका केश पितासे उत्पन्न होता और सर्वदा बढ़ा करता है । भावप्रकाशमें बताया गया है, केशकी उत्पत्ति कैसे होती है—फिर भुक्तद्रव्य कोष्ठस्थित अग्नि द्वारा पक्व हुआ करता है । पांच अहोरात्रके पीछे डेढ़ घड़ी तक वह अग्निकोष्ठमें ही अवस्थिति करता है । उसके पीछे मल निकलता है । यह मल व्यानवायु द्वारा परिचालित होकर शिरापथसे गमन करता और अङ्गुलीमें नखरूप तथा शरीरमें लोमरूपसे परिणत होता है ।

सुश्रुतके मतमें केश शुक्ल होनेका कारण यह है—क्रोध, शोक और अधिक श्रमसे शारीरिक उष्मा मस्तकमें प्रविष्ट हो जाती है । फिर उष्मा-उत्तप्त पित्त केशको पका देता है । किसी रोगसे गिर जाने पर पुनर्वार केश उत्पन्न करनेका उपाय यह है—महुवा, इन्दीवर, मूर्वा, तिल, घृत, गोदुग्ध और भृङ्गराज मिलाके प्रलेप लगानेसे केश घन, दृढ़मूल, आयत और सरल हो जाता है ।

सफेद बाल इस प्रकार काले किये जाते हैं—अल्प पके नारियलमें त्रिफलाचूर्ण, लौहचूर्ण और भृङ्गराजका रस भर कर रख छोड़ते हैं । इसी अवस्थामें उसको एक मासतक रखना चाहिये । फिर मस्तक मुंडाके उस पर नारिकेलस्थ प्रलेप लगाते और ढांकनेके लिये केलेका पत्ता चढ़ाते हैं । छह दिन तक इसी भावमें रखना चाहिये । सातवें दिन आवरण निकालके त्रिफलाके क्वाथसे मस्तक धोया जाता है । इसमें दग्धमांस प्रभृति आहार करना पड़ता है । ऐसा करने पर सफेद बाल काले पड़ जाते हैं । इसका नाम कलापरञ्जन है ।

(चक्रपाणि)

केशके पीछे पाश, रचना, भार, उच्चय, हस्त, पक्ष

और कलाप शब्द लगनेसे समूहवाची अर्थ निकलता है। (हेमचन्द्र)

केशक (सं० त्रि०) केशेषु प्रसितः तत्परः कन्। स्वाङ्गेभ्यः प्रसिते। पा ५।२।६६। केशरचनातत्पर, बाल संवारनेवाला।

केशकर्म (सं० क्ली०) केशानां कर्म रचनादि, ६-तत्। १ केशरचनादिकरण, बालोंका बनाव। २ केशान्त कर्मसंस्कार।

केशकलाप (सं० पु०) केशानां कलापः, ६-तत्। केशसमूह, बालोंका गुच्छा।

केशकार (सं० पु०) केशं केशाकारं करोति केश-कृ-अण्। १ केशसंस्कारक, बाल बनानेवाला। २ कुसियारी ऊख। यह गुरु, शीत और रक्त, पित्त तथा क्षयघ्न है।

केशकारी (सं० त्रि०) केशं केशरचनां करोति, केश-कृ-णिनि। केशरचनाकारक, बाल संवारनेवाला। (स्त्री०) २ रोहिणी।

केशकीट (सं० पु०) उकुण, जूं। कफ, रक्त और क्रमिके प्रकोपसे बालोंमें जूं पड़ जाते हैं। (सुश्रुत)

केशगर्भ (सं० पु०) केशो गर्भोऽस्य, बहुव्री०। कवरी, जुल्फ।

केशगर्भक (सं० पु०) केशो गर्भोऽस्य, बहुव्री० कप्। १ कवरी, जुल्फ। २ श्योनाकवृक्ष। ३ छागल, बकरा। ४ उकुण, जूं।

केशग्रह (सं० पु०) केशानां ग्रहः, ६-तत्। बलपूर्वक बालोंका ग्रहण, लटाझोटी। २ सुरत-व्यापारमें केशग्रहण। (मनु ४।८३)

केशग्रहण (सं० क्ली०) केशस्य ग्रहणम्, ६-तत्। लटाझोटी।

केशग्रहम् (सं० अव्य०) केशान् गृहीत्वा। केश-ग्रह-णमुल्। स्वाङ्गेऽध्रुवे। पा ३।४।५४। केश-ग्रहणान्तर, बाल पकड़के।

केशघ्न (सं० क्ली०) केशान् हन्ति, केश-हन्-टक्। इन्द्रलुप्तरोग, गंज, बालखोर।

केशचैत्य—नेपालकी वाग्मती नदीके तीरका एक बौद्ध पीठ। यह शिवपुरी पर्वत पर अवस्थित है।

केशच्छिद् (सं० पु०) केशान् छिनत्ति, केश-छिद-क्विप्। १ नापित, नाई। (त्रि०) २ बाल काटनेवाला।

केशजाह (सं० क्ली०) केशस्य मूलं कर्ण-जाहच्। तस्य पाकमूले कुणप् जाहचौ। पा ५।२।२४। कर्णमूल।

केशट (सं० पु०) को ब्रह्मा ईशो महादेवः तौ अटतः प्रणये लीनौ भवतो यत्र यद्वा केशो जलेशोऽटति जानाति यम्, केश-अट शकन्ध्वादिवत् साधुः। १ विष्णु। केशेषु तृणादिषु अटति चरति। २ छाग, बकरा। केशेषु मूर्धजेषु चरति। ३ उकुण, जूं। ४ भ्राता, भाई। ५ कामदेवका शोषण नामक बाण। ६ श्योनाक वृक्ष, टेंटू। ७ कोई प्राचीन कवि। सूक्तिकर्णामृतमें इनकी कविता उद्धृत हुई है। ८ शाहाबाद जिलेका एक नगर।

केशधर (सं० त्रि०) केशान् धरति, केश-धृ-अच्। केशग्राहक, बाल पकड़नेवाला। (पु०) २ कोई देश और उसके अधिवासी। बृहत्संहितामें कूर्मविभागकी उत्तर दिक्‌की इस जनपदका उल्लेख है। फिर मार्कण्डेयपुराणमें (५८।४३) यह केशधारी नामसे वर्णित हुआ है।

केशधारिणी (सं० स्त्री०) दुर्गपुष्पी, केशपुष्टा।

केशधृत् (सं० पु०) केशमिव धरति, केश-धृ-क्विप्। १ मस्तक, मत्था। २ भूतकेश नामकी कोई घास।

केशनाम (सं० पु०) केशस्य नामेव नाम यस्य। ह्रीवेर, सुगन्धवाला।

केशपक्ष (सं० पु०) केशानां पक्षः, ६-तत्। केशसमूह, जुल्फ।

केशपर्णी (सं० स्त्री०) अपामार्ग, लटजीरा।

केशपाश (सं० पु०) केशानां पाशः समूहः। केशभार, जुल्फ।

केशपाशी (सं० स्त्री०) शिरोमध्यस्थ शिखा, चोटी।

केशपीठ (सं० पु०) एक पीठस्थान।

(राधातन्त्र ८) प्रयाग देखो।

केशपुष्टा (सं० स्त्री०) दुर्गपुष्पी।

केशप्रसाधनी (सं० स्त्री०) केशः प्रसाध्यते संस्क्रियतेऽनया, प्रसाध करणे ल्युट्-ङीप् ६-तत्। कङ्कतिका, कंघी।

केशबन्ध (सं० पु०) १ कवरी, बालोंकी लट। २ नाचमें

हाथीकी एक चाल। इसमें हाथीको कन्धेसे मोड़ते हुए कटि पर ले जाते और फिर उन्हें शिरकी ओर ऊपर पहुंचाते हैं।

केशभू (सं० स्त्री०) केशानां भूरुत्पत्तिस्थानम्। मस्तक, सर।

केशभूमि, केशभू देखो।

केशभृत् (सं० पु०) केशभू देखो।

केशमथनी (सं० स्त्री०) केशो मथ्यते ऽनया, मथ करणे ल्युट् पश्चात् ङीप्। शमीवृक्ष।

केशमार्जक (सं० क्ली०) केशान् मार्ष्टि, मृज-ण्वुल्। कङ्कतिका, कंघी, ककई।

केशमार्जन (सं० क्ली०) केशो मृज्यते ऽनेन, मृज करणे ल्युट्। कङ्कतिका, कंघा। भावे ल्युट्। २ केशसंस्कार, बालोंकी सफाई।

केशमार्जनी (सं० स्त्री०) कङ्कतिका, कंघी।

केशमुष्टि (सं० पु०) केशानां मुष्टिरिव। १ विषमुष्टि, बकाइन।

केशमुष्टिक, केशमुष्टि देखो।

केशमूल्य (सं० पु०) चमरपशु।

केशयन्त्र (सं० क्ली०) उपविष आदि शोधनेके लिये एक यन्त्र। धान और मूंजसे भरी हंडी पर नारियलकी माला रखके दूधसे विषको रगड़ना चाहिये। इसीका नाम केशयन्त्र है। (रसचन्द्रिका)

केशर (सं० पु०-क्ली०) के जले शिरसि वा शीर्यति, शृ-अच्, अलुक् समा०। १ किञ्जल्क, फूलोंके बीचके पतले पतले सींके। २ नागकेशर। ३ वकुलवृक्ष, मौलसिरी। ४ पुन्नागवृक्ष। ५ सिंहजटा, शेर या घोड़ेकी अयाल। ६ हिङ्गुवृक्ष, हींगका पेड़। ७ कुङ्कुम, केसर। ८ नीप, कदम्ब। ९ विषभेद।

केशरङ्ग (सं० पु०) १ केशराज, कोई शाक। २ भृङ्गराज।

केशरङ्गिनी (सं० स्त्री०) सहदेवीलता।

केशरचना (सं० स्त्री०) केशानां रचना, ६-तत्। १ केशविन्यास, बालोंका संवार। २ केशसमूह, काकुल।

केशरञ्जन (सं० पु०) केशान् रञ्जयति, रञ्ज-णिच्-ल्यु। १ भृङ्गराज, घमिरा। २ नीलझिण्टी, कालेफूलकी कटसरैया।

केशरपाक (सं० पु०) वाजीकरणका एक पाक।

केशरा (सं० स्त्री०) नागरमुस्ता।

केशराग (सं० पु०) भृङ्गराजवृक्ष, भंगरैया।

केशराज (सं० पु०) केशो राजते ऽनेन, राज करणे घञ्। भृङ्गराज, भंगरैया। इसका पर्याय—भृङ्गराज, भृङ्गपतङ्ग, मार्कर, नागमार, पवन, भृङ्गसोदर, केशरञ्जन, केश्य, कुन्तलवर्धन, अङ्गारक, एकरज, करञ्जक, भृङ्गरज, भृङ्गार, अजागर, भृङ्गरजः और मकर है। भावप्रकाशके मतमें यह कड़ुवा, तीता, रूखा, उष्ण, केश तथा त्वक्‌का उपकारी और कृमि, श्वास, कास, शोथ, आमय एवं कफवातका नाश करनेवाला है। फिर केशराज दांतका हितकर, रसायन, बलकारक और कुष्ठरोग, नेत्ररोग तथा शिरोरोगका प्रतीकारक होता है।

केश(स)राम्ल (सं० पु०) केशरे तदवच्छेदेऽम्लो रसो यस्य, बहुव्री०। १ मातुलुङ्गवृक्ष, बिजौरा नीबू। २ दाड़िम्ब, अनार।

केशरिया—विहारके चम्पारन जिलेका एक गांव और थाना। यह अक्षा० २६° २१´ उ० और देशा० ८४° ५२´ पू० पर अवस्थित है। लोकसंख्या ४४६६ है। इस ग्रामसे १ कोस दक्षिण सत्तरघाट पर प्रायः ९२॥ हाथ ऊंचे डेढ़ हजार वर्षसे अधिक पुराना मट्टीका एक बौद्धस्तूप विद्यमान है। साधारण लोग, इस स्तूपको 'राजा वेणका धरहरा' कहते हैं। इससे थोड़ी दूर पर उक्त राजाके नामकी एक बृहत् पुष्करिणी भी है। २ मलवार प्रदेशका कोई छोटा राज्य।

केश(स)रिसुत (सं० पु०) केशरिणः सुतः, ६-तत्। हनुमान्। केशरीकी पत्नी अञ्जनाके गर्भमें पवनके औरससे हनुमान्‌का जन्म हुआ था।

केश(स)री (सं० पु०) केशराः सन्त्यस्य, केशर-इनि। १ सिंह। २ घोड़ा। ३ पुन्नागवृक्ष। ४ नागकेशर। ५ बिजौरा नीबू। ६ वानरभेद। ७ हनुमान्‌के पिता। (रामायण) ८ कोई जलचर पक्षी। ९ रक्तशिग्रु, लाल सैंजन। १० उड़ीसेका पुराना राजवंश। उत्कल देखो।

केशरीन्द्रसिंह—उड़ीसेके एक केशरीवंशीय राजा।

उत्कल देखो।

केशरीपृथ्विपति—महिसुरके एक गङ्गवंशीय राजा।

केशरुहा (सं० स्त्री०) केश इव रोहति, रुह-कः। १ भद्रदन्ती। २ महाबला। ३ महानीली।

केशरूढ़क (सं० पु०) कासमर्द।

केशरूपा (सं० स्त्री०) केशस्येव रूपमस्याः, बहुव्री०। बन्दाक, वांदा।

केशलुञ्च (सं० पु०) केशान् लुञ्चति अपनयति, लुञ्च-अण् ण्वुल् वा। १ कोई जैन आचार्य। (प्रबोधचन्द्रोदय) २ केशमुण्डनकारी। ३ जैनमतानुसार साधु होते समय अपने हाथोंसे केश उपाड़ने पड़ते हैं। उसे केश-लुञ्च कहते हैं। (अनगार धर्मामृत)

केशव (सं० पु०) को ब्रह्मा ईशो रुद्रस्तौ वातः प्रलये उपाधिरूपं मुक्तिं परित्यज्य तिष्ठतो यत्र, केश-वा-ड। १ परमात्मा। केशं केशिनामानमसुरं वाति हन्ति, केश-वा-क। २ विष्णु। केशीनामक दैत्यको मार डालनेसे विष्णुका नाम केशव पड़ा है। (हरिवंश ८०।६६) यद्वा प्रलयकालको चीरोदसमुद्रमें शयन करनेसे विष्णु केशव कहलाते हैं। ३ विष्णुकी कोई मूर्ति। ४ पुन्नाग वृक्ष। ५ नागकेशर। ६ वायस, कौवा। ७ जलस्थित शव, पानीमें पड़ा हुआ मुर्दा।

"केशवं पतितं दृष्ट्वा द्रोणो हर्षमुपागतः।
वदन्ति पाण्डवाः सर्वे हा हा केशव केशव॥" (विदग्धमुखमण्डन)

८ कोई संस्कृत वैयाकरण। इन्होंने केशरी व्याकरण बनाया था। ९ कोई प्राचीन कवि। श्रीधरदासने इनकी कविताको उद्धृत किया है। १० कल्पद्रुम-नाममाला और लघुनिघण्टुसार नामक संस्कृत अभि-धानके रचयिता। इनका अभिधान मल्लिनाथ और हेमाद्रिकर्तृक उद्धृत है। ११ केशवार्णव नामक धर्म-शास्त्र बनानेवाले। १२ न्यायतरङ्गिणी नामक संस्कृत ग्रन्थके प्रणेता। १३ पुण्यस्तम्भवासी लोगाचीकुलसम्भूत अनन्तके पुत्र। इन्होंने आनन्दवृन्दावनचम्पू, नृसिंह-चम्पू और राजा उमापति दलपतिके अनुरोधसे प्रह्लाद-चम्पू आदि संस्कृत ग्रंथोंकी रचना की। १४ दिवाकरके पुत्र और नृसिंहके खुल्लतात (चचा)। इन्होंने १५६४ शकको 'ज्योतिषमणिमाला' नामक संस्कृत ग्रन्थ बनाया था। १५ रसिकसञ्जीवनी नामक संस्कृत अल-ङ्कारके प्रणेता। इनके पिताका नाम हरिवंश और गुरुका नाम विट्ठलेश्वर था। १६ कर्णाटदेशके कोई पुराने पण्डित। ई० द्वादश शताब्दीको इन्होंने सर्व-प्रथम कर्णाटी भाषामें एक अच्छासा व्याकरण लिखा था। केशवभट्ट देखो। १७ केशवीपद्धतिरचयिता। विश्व-नाथने केशवीपद्धतिकी टीका की है। केशवदैवज्ञ देखो। १८ हिन्दी भाषाके एक मैथिल कवि। (१७७५ ई०) यह मिथिलाराज राजा प्रतापसिंहकी जिनका उप-नाम मोदनारायण रहा, सभाके एक सभ्य थे।

(त्रि०) १९ प्रशस्तकेशयुक्त, बालदार।

केशवकवीन्द्र—त्रिहुतके एक पण्डित। इन्होंने संख्या-परिमाणनिबन्ध नामक संस्कृत ग्रन्थ रचना किया।

केशवकीर्तिन्यास (सं० पु०) विष्णुकी पूजाका एक अङ्ग-न्यास। तन्त्रसारमें इसका विधान लिखा है—

केशवकीर्तिन्यास करनेसे, इसमें सन्देह नहीं कि, लोग मुक्ति पा सकते हैं। प्रथम मातृकावर्ण अकार आदिका एक उच्चारण करके 'केशवाय कीर्त्यै नमः' मंत्र पढ़ते और नियमानुसार न्यास करते हैं। न्यासकी प्रणाली यह है—'अं केशवाय कीर्त्यै नमः' उच्चारण करके ललाटमें न्यास करना चाहिये। इसी प्रकार मुखमें 'आं नारायणाय कान्त्यै नमः,' दक्षिण चक्षुमें 'इं माधवाय तुष्ट्यै नमः', वाम चक्षुमें 'ईं गोविन्दाय पुष्ट्यै नमः', दक्षिण कर्णमें 'उं विष्णवे धृत्यै नमः', वाम कर्णमें 'ऊं मधुसूदनाय शान्त्यै नमः', दक्षिण नासा-पुटमें 'ऋं त्रिविक्रमाय क्रियायै नमः', वाम नासापुटमें 'ॠं वामनाय दयायै नमः', दक्षिण गण्डमें 'ऌं श्रीधराय मेधायै नमः', वाम गण्डमें 'ॡं हृषीकेशाय हर्षायै नमः', ओष्ठमें 'एं पद्मनाभाय श्रद्धायै नमः', अधरमें 'ऐं दामोदराय लज्जायै नमः', ऊर्ध्व दन्त-पंक्तिमें 'ओं वासुदेवाय लक्ष्म्यै नमः', अधोदन्तपंक्तिमें 'औं सङ्कर्षणाय सरस्वत्यै नमः', मस्तकमें 'अं प्रद्युम्नाय प्रीत्यै नमः', मुखमें 'अः अनिरुद्धाय रत्यै नमः', दक्षिण बाहुकरमूल तथा सन्ध्यग्रमें 'कं चक्रिणे जयाय नमः', 'खं गदिने दुर्गायै नमः', 'गं शार्ङ्गिणे प्रभायै

नमः', 'घं खड्गिणे सत्यायै नमः', एवं 'ङं शङ्खिने चण्डायै नमः', वामबाहु तथा करमूल सन्ध्यग्रमें 'चं हलिने वाण्यै नमः', 'छं मुषलिने विलासिन्यै नमः', 'जं शूलिने विजयाय नमः', 'झं पाशिने विरजायै नमः', एवं 'ञं अङ्कुशिने विश्वायै नमः', दक्षिण पादमूल तथा सन्ध्यग्रमें 'टं मुकुन्दाय विनदायै नमः', 'ठं नन्दजाय सुनन्दायै नमः', 'डं नन्दिने स्मृत्यै नमः', 'ढं नराय ऋद्ध्यै नमः', एवं 'णं नरकजिते समृद्ध्यै नमः', वाम पादमूल तथा सन्ध्यग्रमें 'तं सुरये शुद्ध्यै नमः', 'थं कृष्णाय बुद्ध्यै नमः,' 'दं सत्याय भुक्त्यै नमः', 'धं सत्वाय मत्यै नमः', एवं 'नं सौराय क्षमायै नमः', दक्षिण पार्श्वमें 'पं शूराय रमायै नमः', वामपार्श्वमें 'फं जनार्दनाय उमायै नमः', पृष्ठमें 'बं भूधराय क्लिदिन्यै नमः', नाभिमें 'भं विश्वमूर्तये क्लिन्नायै नमः', उदरमें 'मं वैकुण्ठाय वसुदायै नमः', हृदयमें 'यं त्वगात्मने पुरुषोत्तमाय वसुधायै नमः', दक्षिण स्कन्धमें 'रं असृगात्मने बलिने परायै नमः', गर्दनमें 'लं मांसात्मने बलानुजाय परायणायै नमः', वाम स्कन्धमें 'वं मेदात्मने बलाय सूक्ष्मायै नमः', हृदयादि दक्षिण करमें 'शं अस्थ्यात्मने वृषघ्नाय सन्ध्यायै नमः', हृदयादि वाम करमें 'षं मज्जात्मने प्रज्ञायै नमः', हृदयादि दक्षिण पादमें 'सं शुक्रात्मने हंसाय प्रभायै नमः', हृदयादि वाम पादमें 'हं प्राणात्मने वराहाय निशायै नमः', हृदयादि उदरमें 'ळं जीवात्मने विमलाय अमोघायै नमः' और हृदयादि मुखमें 'क्षं क्रोधात्मने नृसिंहाय विद्युतायै नमः', उच्चारण करके न्यास किया जाता है।

यह केशवकीर्तिन्यास लक्ष्मीबीज मिलाके करनेसे स्मृति, धैर्य तथा सर्वसम्पत्ति पाते और अन्तको वैकुण्ठ धाम जाते हैं। उपर्युक्त प्रत्येक मन्त्रके पहले 'श्रीं' लगा लेनेसे लक्ष्मीबीजयोग होता है। (तन्त्रसार)

केशवचन्द्रसेन—बङ्गालके ब्राह्मधर्मप्रचारक विख्यात वाग्मी। चौबीस परगनेके अन्तर्गत हुगलीके उस पार गङ्गातीरपर गरिफा गांवके विख्यात वैद्य सेनवंशमें इनका जन्म हुवा था। इनके पितामह रामकमल सेन पहले १०) रु० महीनेकी कम्पोजीटरी करते थे, परन्तु पीछेको टकसाल तथा बङ्गाल बेङ्कके दीवान और एशियाटिक सोसाइटीके सेक्रेटरी तक हो गये। साहित्यका उन्हें बड़ा अनुराग रहा। रामकमल सेनके चार पुत्र थे। द्वितीय पुत्र प्यारीमोहन सेन केशवके पिता रहे। १८३८ ई० की १९वीं नवम्बरको केशवने कलकत्तेमें जन्म लिया था। यह प्यारीमोहनके द्वितीय पुत्र रहे। बाल्यकालको केशव प्रत्यह प्रातःस्नान करके, तिलक लगा और पट्टवस्त्र पहन शुद्धाचारसे रहते थे। इन्होंने इतिहास, पाश्चात्य न्याय, मनोविज्ञान और प्राणिवृत्तान्त की शिक्षा बड़े बड़े स्कूलोंमें पायी थी।

केशव बहुत सुश्री, प्रियदर्शन और प्रियम्वद रहे। सभी लोग इन्हें चाहते थे। लड़कपनसे ही इनके मनमें धर्मभाव जगा था। यह आत्माभिमानी, गम्भीरप्रकृति और निर्जनप्रिय रहे। निर्जनमें बैठ केशव धर्मचिन्ता किया करते थे। चौदह वर्षकी अवस्थामें इन्होंने मत्स्याहार परित्याग कर दिया। केशव अपने आप जो समझते, उसे दूसरेको भी समझानेकी चेष्टा करते थे। विद्या और ज्ञानके विस्तारको यह अल्पवयससे ही यत्नवान् रहे।

१८५६ ई० को २७वीं अप्रेलको बालीग्रामके वैद्यवंशीय चन्द्रकुमार मजुमदारकी कन्याके साथ इनका विवाह हुआ। किन्तु उसी समयसे केशवके मनमें वैराग्य बढ़ आया। वह ४ वर्ष तक अकेले धर्मचिन्तामें रत रहे। इन्होंने सच्चा धर्म ढूंढ़नेको नाना प्रकारके धर्मग्रन्थ पढ़े थे। फिर इन्होंने वक्ता बननेके लिये कठोर अभ्यास किया। इसी समय कभी कभी केशव घरके किवाड़ बन्द कर अपने आप वक्तृता दिया करते थे। १८५७ ई० को इन्होने 'गुडविल फ्रेटर्निटी' और 'ब्रिटिश इण्डियन सोसाइटी' नामक दो सभायें स्थापित कीं। पहलीका उद्देश्य धर्मालोचना और दूसरीका उद्देश्य विज्ञान तथा साहित्यकी आलोचना था।

इसी समय रेवरेण्ड डल साहबने राममोहनरायको एकेश्वरवादी ईसाई प्रतिपन्न करनेके लिये इनका बनाया 'ईश्वरनीति' नामक ग्रन्थ मुद्रित करके प्रचार किया। केशवने उसे पढ़के वैसा ही एकेश्वरवादी ईसाई होना चाहा था। फिर इन्होंने राममोहनके लिखे बहुत से पुस्तक पढ़के देखा कि वह एकेश्वरवादी ईसाई

नहीं—प्रकृत ब्रह्मज्ञानी रहे। उसी समयसे ब्राह्मधर्म पर केशवकी श्रद्धा बढ़ चली। नवीनकृष्ण वन्द्योपाध्यायने इन्हें उक्त धर्मकी शिक्षा दी ही थी। यह घटना १८५७ ई० को हुई। परन्तु जब इन्होंने अपने कुलके वैष्णव धर्मकी दीक्षा लेनेपर अस्वीकृत हुए, तब घरके सब लोग इनसे विरक्त हो गये। एक बार कृष्णनगरमें इन्होंने धर्म सम्बन्ध पर डाइसन साहबको हराया था। इससे नवद्वीपके ब्राह्मण पण्डित केशव पर बहुत सन्तुष्ट हुए। फिर इन्होंने इण्डियन मिरर (Indian Mirror) नामक संवादपत्र प्रकाश किया।

१८६२ ई० को १३वीं अपरेलको केशव कलकत्ता ब्राह्म-समाजके आचार्य बनाये गये और इन्हें 'ब्रह्मानन्द' उपाधि तथा सनद भी मिली।

१८६२ ई० के दिसम्बर मास इनके ज्येष्ठ पुत्रने जन्म लिया था। उसका जातकर्म ब्राह्म-धर्मके अनुसार होता देख घरके लोग बाहिर चले गये, परन्तु माताने इन्हें न छोड़ा। फिर इन्होंने अपने घरमें 'सङ्गत सभा' स्थापन की। धर्ममत और जीवन एक बनानेके लिये यह सभा स्थापित हुई थी।

उस समय बहुतसे बड़े बड़े बङ्गाली ब्राह्मधर्मकी ओर चले गये। परन्तु वह काम हिन्दुओं जैसे ही करते थे। इसीसे केशवचन्द्रने, 'ब्राह्मधर्मेर अनुष्ठान' नामक एक पुस्तक लिखा। इसके अनुसार कितने ही ब्राह्मणोंको यज्ञोपवीत परित्याग करना पड़ा। 'सङ्गत-सभासे' 'धर्मसाधन' और 'वामाबोधिनी' नाम्नी दो पत्रिकायें भी निकलने लगी। केशवके यत्नसे ब्राह्मधर्म फैलने पर ईसाई पादरियोंका धर्म प्रचार बहुत कुछ रुक गया।

१८६४ ई०को यह मन्द्राज पहुंचे थे। वहां इनकी यथोचित अभ्यर्थना हुई। नानास्थानोंमें ब्राह्मधर्मका उपदेश दे मन्द्राजसे केशव बम्बई गये। वहां टाउन हालमें इनकी मौखिक वक्तृता सुन सब लोग चमत्कृत हुए।

१८६५ ई० को मतभेदके कारण इन्हें कलकत्तेका आदि ब्राह्मसमाज छोड़ना पड़ा और १८६६ ई०को इन्होंने 'भारतवर्षी ब्राह्मसमाज' नामक नयी संस्थाको स्थापन किया।

थोड़े दिन पीछे ही केशव ढाका, फरीदपुर, मैमनसिंह अञ्चलमें धर्म प्रचार करने गये थे। दूसरे वर्ष फिर केशव युक्तप्रदेश पहुंचे। इङ्गलैण्ड भी जाकर इन्होंने खूब वक्तृता की थी। इङ्गलैण्डसे लौटने पर पहले इन्होंने भारतसंस्कारक सभाको स्थापन किया। उसका उद्देश्य—सुलभ साहित्यप्रचार, दान, श्रमजीवियोंकी शिक्षा, स्त्रीविद्यालयप्रतिष्ठा और मद्यपाननिवारण था। उसी समय एक पैसे मूल्यका, 'सुलभ समाचार' निकला और १८६१ ई० को १ली जनवरीसे इण्डियनमिरर दैनिक हो गया। १८७२ ई० को भारत-आश्रमकी प्रतिष्ठा हुई। फिर युवकोंके लिये 'ब्राह्मनिकेतन' स्थापन किया गया और १८७२ ई० को १९ वीं मार्चको ब्राह्मविवाहका कानून पास हुआ। उसके अनुसार १४ वर्षसे न्यून अवस्थाकी कन्या और १८ वर्षसे न्यन पुत्रका विवाह हो नहीं सकता। केशवने १८७६ ई० को चन्दा करके अलबर्ट-हाल स्थापन किया था।

१८७८ ई० को ६ ठीं मार्चको इन्होंने अपनी कन्याका विवाह कोचविहार-महाराजके साथ कर दिया। इससे इनकी बड़ी निन्दा हुई। लोग कहने लगे कि केशवने रुपयेके लालचमें पड़ धर्मको चौपट कर दिया।

फिर इन्होंने अपने धर्मका नाम 'नवविधान' रखा था। इसका गूढ़ अर्थ मनुष्यके साथ ईश्वरका व्यवहार है। विलायतसे लौटने पर केशवचन्द्र जितने दिन जिये, केवल धर्मप्रचार और धर्मविस्तारका कार्यही करते रहे। यह ढोल और करताल लिये घर घर धर्मगीत गाते फिरते थे। कोई इन्हें आचार्य और कोई अवतार समझता था। केशव अनेक प्रकारके रूप बना अपने मतानुयायियोंको मोहित और विमुग्ध किया करते थे। इनका मत किसी धर्मकी निन्दा न करना और सबका सार ले लेना था। इसमें सन्देह नहीं कि यह बङ्गालके असाधारण और क्षणजन्मा पुरुष थे। इसी प्रकार थोड़े दिन जीवनयात्रा निर्वाह करके १८८४ ई० को ८ वीं जनवरीको ४६ वर्षके वयसमें केशवचन्द्रने अपनी मानवलीला संवरण की।

केशवजीवानन्द—एक स्मार्त पण्डित। यह श्राद्धकारिका नामक संस्कृत ग्रन्थके प्रणेता थे।

केशवदत्त—श्रीमद्भागवतकी प्रश्नमञ्जूषा टीका बनानेवाले।

केशवदास (केसूदास) १ जयमल्लके पुत्र और राजा गिरिधरके पिता। (बादशाहनामा) २ काश्मीरके रहनेवाले एक विख्यात पण्डित। प्रायः १५४१ ई० को यह ब्रजधाम गये और कृष्णचैतन्यसे तर्कमें परास्त हुए। इनकी बनाई बहुतसी हिन्दी कविता विद्यमान है।

केशवदास—हिन्दीके एक सुप्रसिद्ध कवि। यह बुंदेलखण्डके रहनेवाले थे। प्रायः १५८० ई०को इनका अभ्युदय हुआ। इनके बनाये ग्रन्थ कविप्रिया और रसिकप्रियाका हिन्दी भाषामें बड़ा आदर है। केशवदासके दो सुयोग्य उत्तराधिकारी रहे—कानपुर जिलेके चिन्तामणि त्रिपाठी (१६८०) और बांदाके पद्माकर भट्ट (१८१५ ई०)।

केशवदास—मालव प्रान्तीय बदनावरके एक राजा। यह भीम सिंहके पुत्र और शाहजादे सलीमके साथ चलनेवाले एक सरदार रहे। जब सलीम् जहांगीर नामसे तख्त नशीन् हुए, केशवदास मालवेके दक्षिणपश्चिम जिलोंमें लुटेरोंको दवानेको नियुक्त किये गये। केशवदासने उन्हें दमन करके उनकी भूमि अधिकार की थी। १६०७ ई० को बादशाहने इन्हें उमराका खिताब दिया, परन्तु उसी वर्ष इनके उत्तराधिकारी पुत्रके विषप्रयोगसे इन्हें इहलोक छोड़ना पड़ा।

केशवदास खुसाली—जीवनरामके पुत्र और लक्ष्मीनाथके भ्राता। इनका दूसरा नाम रामराय था। इन्होंने एक संस्कृत धर्मशास्त्रसंग्रह और श्रीधरस्वामीकी भागवतार्थदीपिकाकी टिप्पणीकी रचना किया।

केशवदास सनाढ्य (मिश्र) बुंदेलखण्डके एक प्रसिद्ध हिन्दी कवि। इन्होंने टेहरी नामक गांवमें जन्म लिया था। वहांसे ओर्छाके राजा मधुकर शाहकी सभामें गये। राजाने इनका बड़ा सम्मान किया था। राजा मधुकरके पुत्र इन्द्रजित्ने राजा होने पर केशवदासको पाण्डित्य और कवित्वसे मुग्ध हो रहने और खाने पीनेके लिये ओर्छा राज्यके बीच २१ ग्राम दिये। हिन्दी भाषाके कवियोंमें इन्होंने सबसे पहले 'कविप्रिया' नामक अपने ग्रन्थमें काव्यका दशाङ्ग प्रकाश किया था। राजा मधुकर शाहको प्रसन्न करनेके लिये केशवदासने हिन्दी भाषामें 'विज्ञानगीता,' प्रवीणराय वेश्याके लिये 'कविप्रिया', राजा इन्द्रजित्के नाम पर 'रामचन्द्रिका' और पीछे 'रसिकप्रिया' लिखी। इसको छोड़ कर इन्होंने हिन्दी साहित्य और अलङ्कार पर दूसरे भी कई पुस्तक बनाये हैं। उक्त ग्रन्थोंके मध्य फलका राय, सरदार और हरिराय नामक कई व्यक्तियोंने कविप्रियाकी हिन्दी टीका, जानकीप्रसाद और धनीरामने रामचन्द्रिकाकी हिन्दी टीका और यूसुफ खान्, याकूब खान्, सरदार, सुरति मिश्र और हरिजनने रसिकप्रियाकी हिन्दी टीका लिखी। केशवदास १५८० ई०को विद्यमान थे। किसी कविने एक दोहेमें कहा है—

> "सूरसूर तुलसी शशी उड़गण केशवदास।
> अबके कवि खद्योत सम जहं तहं करत प्रकाश॥"

केशवदास राठौर राजा—बादशाह जहांगीरके श्वशुर। इन्होंने अपनी कन्याका विवाह बादशाह जहांगीरके साथ किया था। उनका नाम पीछे बहार बानो बेगम पड़ा।

केशवदीक्षित—प्रयोगरत्न और केशवदीक्षितीय नामक संस्कृत धर्मशास्त्र बनानेवाले। इनके पिताका नाम सदाशिव था।

केशवदेव—१ मुलतानके राजा। इनके पुत्रका नाम ताराचन्द्र था। केशवदेव राजाके चरित्रको अवलम्बन करके वैद्यनाथ नामक किसी मैथिल पण्डितने केशवचरित्र नामक एक संस्कृत काव्य बनाया था। २ कोई वैयाकरण। इन्होंने व्याकरणदुर्घटोद्घात नामक गोपीचन्द्र कृत संक्षिप्तसार टीकाकी एक टिप्पनी लिखी है।

केशवदैवज्ञ—एक विख्यात ज्योतिर्विद्। यह दक्षिणापथके नन्दीग्रामवासी कमलाकरके पुत्र और अनन्तदैवज्ञके पिता थे। इनके बनाये ज्योतिर्ग्रन्थोंमें ग्रहकौतुक, मुहूर्तमार्तण्ड, और सिद्धान्तलघुखमनि, तथा ताजककर्मपद्धतिका टीका मिलती है। ग्रहकौतुक

पढ़नेसे समझ पड़ता कि वह १४१८ ई०को विद्यमान थे। भरद्वाजगोत्रीय राणिगके पुत्र किसी केशवदैवज्ञ-काभी नाम सुननेमें आता है। उन्होंने एक फलित ज्योतिष बनाया था। गणेशदैवज्ञने उसकी टीका लिखी। केशवार्क देखो।

केशवनगर (गड़वाल समस्थान) हैदराबाद राज्यके रायचूर जिलेका एक करदराज्य। इसकी लोक-संख्या प्राय ८६८४९१ है। राज्यकी पूरी आमदनी ३ लाख है, जिसमें ८६८४०) रु० वार्षिक निजामको कररूप देना पड़ता है। इसका प्रधान नगर निजाम राज्यकी स्थापनासे पहलेका बसा है। पूर्वकाल केशव-नगरका अपना सिक्का बनता जो रायचूर जिलेमें आज भी चलता है। गड़वालका किला राजा समताद्रिने १७०३से आरम्भ कर १७१० ई० को बनाकर पूरा किया था। इस राज्यके उत्तर और दक्षिणभागमें कृष्णा तथा तुङ्गभद्रा नदी प्रवाहित है। नदियोंके किनारेकी जमीन् बहुत उपजाऊ होती है। तलाव बहुत कम हैं। सूखी खेती की जाती है। गड़वाल नगरमें रेशमी साड़ियां, दुपट्टे, पगड़ियां और धोतियां बनतीं जिनमें जरीकी किनारियां लगती हैं।

केशवनाथ—गोदापरिणय नामक संस्कृत नाटकके रच-यिता।

केशवनायक—कोई राजा। यह कोण्डपनायकके पुत्र और विष्णुस्मृतिकी वैजयन्ती टीका बनानेवाले नन्द पण्डितके प्रतिपालक थे।

केशवपण्डित—लौगाक्षिकुलोद्भव अनन्तके पुत्र और प्रसिद्ध चम्पूकाव्यके रचयिता।

केशवती—नेपालकी एक नदी। नेपाली बौद्धोंके स्वयम्भू-पुराणमें लिखा है कि मञ्जुश्री बोधिसत्वके मरने पर क्रकुच्छन्द नेपाल गये थे। वहां उन्होंने चारो वर्णके लोगोंको दीक्षित किया। जहां उनके केश वायुसे उड़ कर गिरे थे, एक नदी बन गयी। उसी नदीको केश-वती कहते हैं। यह नेपाल क्षेत्रकी पूर्वसीमा है। आजकल इसका नाम विषसमती है।

केशवपनीय—एक अतिरात्र याग। कात्यायनश्रौत-सूत्रमें लिखा है—पञ्चबन्धके अन्तमें केशवपनीय नामक अतिरात्र याग करना पड़ता है। यह यज्ञ ज्येष्ठ मास-की पूर्णिमा तिथिको करना चाहिये।

शतपथब्राह्मणमें केशवपनीय यागका विधि इस प्रकार कहा है—दोनों पशुओंको बांधने पीछे केश-वपनीय नामक अतिरात्र यज्ञ करना पड़ता है अभिषेचनीय सोमयज्ञ करके संवत्सर पर्यन्त बाल न बनवाना चाहिये। इसी व्रतके उद्यापनको पौर्णमासी मुख्य सोमयाग करना पड़ता है। उसीका नाम केशवपनीय अतिरात्र है। वीर्यमय जलरस सबसे पहले केशको अवलम्बन करके अवस्थान करता है बाल मुंडानेसे यह वीर्यसम्पद् बिगड़ जाती और मनु-ष्यको बलहीन बनाती है। इसलिये संवत्सरपर्यन्त केशवपन न करना चाहिये। संवत्सरमें यह व्रत आच-रण करना पड़ता है। इसीसे उस समय केशमुण्डन करना अनुचित है। इसयज्ञमें प्रातःकाल २१, मध्याह्न-को १७ और अपराह्णमें १५ सवन करने पड़ते हैं। यज्ञ-के अवसानको केशवपन होता है। बाल मुंडाना न चाहिये। बाल न मुंडानेसे वीर्यरूप जलरस सञ्चित होता है और उसीसे इस व्यक्तिका अभिषेक किया जाता है। यज्ञके अवसानमें बाल कटा डालना चाहिये केश कर्तन करनेसे वीर्य नहीं बिगड़ता, उसीमें बना रहता है। इसी कारण मुण्डन नहीं, वपन करना चाहिये। इसी प्रकार व्रतका अनुष्ठान करना पड़ता है। इस व्रतकी प्रतिष्ठा नहीं होती, यावज्जीवन अनु-ष्ठान चलता है। इस व्रतमें यजमानको सदा जूता पहने रहना चाहिये, किसी स्थानमें जूता खोलनेको आवश्यकता नहीं, अवरोहण कालमें जूता नहीं उता-रते। किसी स्थानको जानेमें रथ या दूसरा कोई यान आरोहण करना कर्तव्य है। (शतपथब्राह्मण)

केशवपुर—बङ्गालके यशोर जिलेका एक नगर। यह अक्षा० २२° ५५' उ० और देशा० ८९° १३' पू० का यशोर नगरसे ९ कोस दक्षिण हरिहर नदीतीर पर अवस्थित है। केशवपुर वाणिज्यप्रधान स्थान है। यहां चीनीके बहुतसे कार्यालय हैं। इसके पास नदीके दूसरे पार श्रीपुर नामक उपनगरमें भी चीनीके बहुतसे कार-खाने हैं। चावल, पीतल और मट्टीकी चीजें या कपड़े

आदिकी भी बड़ी आमदनी होती है। इसको छोड़ २ बड़े बाजार हैं।

केशवप्रिया (सं० स्त्री०) केशवस्य प्रिया, ६-तत्। १ राधिका। २ गोरोचना।

केशवविश्वरूप—दक्षिणापथके तुङ्गभद्रा तटवासी एक विख्यात तान्त्रिक। इन्होंने आगमतत्त्वसारसंग्रह नामक एक तन्त्रशास्त्र रचना किया।

केशवभट्ट—१ कोई ग्रन्थकार। इन्होंने सांख्यार्थतत्त्वप्रदीपिका नामक सांख्यदर्शन सम्बन्धीय एक संस्कृत ग्रन्थ लिखा। इनके पिताका नाम सदानन्द था। २ हिरण्यकेशी-सूत्रीय अन्त्येष्टिप्रयोगके रचयिता। ३ संस्कृत भाषामें आचारदीप, कृत्यप्रदीप, प्रायश्चित्तप्रदीप और शुद्धिप्रदीप नामक स्मृतिग्रन्थ बनानेवाले। इन्हें लोग भट्टकेशव कहते थे। ४ आनन्दलहरीके कोई टीकाकार। ५ गोस्वामी उपाधिधारी कोई वैष्णव ग्रन्थकार। इन्होंने क्रमदीपिका नामक कृष्णपूजाका एक संस्कृत ग्रन्थ और उसकी उत्कृष्ट टीकाकी रचना किया। ६ कोई विख्यात दार्शनिक पण्डित। इन्होंने संस्कृत भाषामें न्यायग्रन्थ और पदार्थचन्द्रिका नामसे वैशेषिक तत्त्व लिखा है। ७ प्रस्तावसुक्तावली नामक संस्कृत ग्रन्थके रचयिता। ८ रामशतकके प्रणेता। ९ अनन्तभट्टके पुत्र। इन्होंने तर्कभाषाकी तर्कदीपिका नाम्नी एक उत्कृष्ट टीका बनायी। १० निम्बार्क सम्प्रदायभुक्त एक काश्मीरी पण्डित। यह श्रीमङ्गलके पुत्र और श्रीनिवासके शिष्य थे। इनकी रचित तत्त्वप्रकाशिका नाम्नी भगवद्गीताटीका, भागवतके १० स्कन्धकी तत्त्वप्रकाशिका वेदस्तुतिटीका और निम्बार्क मतके अनुसार वेदान्तसूत्रका वेदान्तकौस्तुभप्रभा नामक भाष्य आदि मिलता है। ११ (भट्टाचार्य) पद्यावलीधृत एक प्राचीन कवि।

केशवभारती—चैतन्यदेवके एक गुरु। चैतन्यदेव देखो।

केशवमिश्र—१ कोई पुराने ज्योतिषी। विश्वनाथ और केशवार्कके बनाये जातकपद्धति ग्रन्थमें इनका मत उद्धृत हुवा है। २ कोई प्रसिद्ध आलङ्कारिक। इन्होंने धर्मचन्द्रके पुत्र राजा माणिक्यचन्द्रके आदेशसे संस्कृत भाषामें अलङ्कारशेखर आदि कई अलङ्कारग्रन्थ लिखे। ३ छन्दोगपरिशिष्ट-रचयिता। ४ तर्कपरिभाषा-प्रणेता कोई नैयायिक। ५ प्रसिद्ध धर्मशास्त्रविद् वाचस्पतिमिश्रके प्रशिष्य। इन्होंने द्वैतपरिशिष्ट बनाया। ६ धर्मभाषा नामक स्मृतिग्रन्थ बनानेवाले।

केशवराम भट्ट—एक हिन्दी कवि। इन्होंने 'सज्जाद सम्बुल' और 'शमशाद सोसन' नामक दो नाटक लिखे।

केशवराय—हिन्दी भाषाके एक कवि। प्रायः १६८२ ई० को यह विद्यमान थे।

केशवराय पाटन—राजपूतानेके बूंदी राज्यकी एक तहसील और शहर। यह अक्षा० २५° १७´ उ० देशा० ७५° ५७´ पू० में चम्बलके उत्तर तटपर अवस्थित है। यहांसे कोटा १२ मील नीचे और बूंदी २२ मील दक्षिणपूर्व है। लोकसंख्या प्रायः ३३७३ है। यह स्थान महाभारतका समकालीन बतलाया जाता है। पहले यहां बिलकुल जङ्गल था। नगरका असली नाम रन्तिदेवपाटन है। राजा रन्तिदेव माहिष्मतीके अधिपति और हस्तिनापुर-प्रतिष्ठता राजा हस्तिके भतीजे थे। प्राचीनतम शिलालिपियां २ सतीमन्दिरोंमें मिली हैं। उनमें अनुमानतः सन् ३५ और ८३ ई० पड़ा है। यह भी कहा जाता है कि उक्त समयसे बहुत पीछे परशु नामक किसी व्यक्तिने जम्बुमार्गेश्वर नामक शिवमन्दिर बनाया था। धीरे धीरे यह मन्दिर गिर गया और (१६३१—५८) राव राजा छत्रसालने उसका संस्कार किया और केशवरायका भी बड़ा मन्दिर बनवा दिया, जिसके लिये यह नगर प्रसिद्ध हुआ है। केशवराय मन्दिरमें विष्णुकी एक मूर्ति है और प्रतिवर्ष बहुतसे भक्त पूजा करने आया करते हैं।

केशवर्धिनी (सं० स्त्री०) केशान् वर्धयति, केश-वृध-णिच्-णिनि स्त्रियां ङीप्। महावलालता, सहदेवी। (अथर्व ६।२१।३)

केशवशर्मा—एक पण्डित। इन्होंने स्मृतिसार और भाषारत्न नामक वैशेषिक तत्त्व रचना किया।

केशवशेष—ब्रह्मसूत्रका वेदान्तसूत्रार्थचन्द्रिका नामक भाष्य बनानेवाले।

केशवसेन देव—सेनवंशीय एक राजा। यह महाराज बल्लालसेन देवके पौत्र और लक्ष्मणसेनदेवके पुत्र थे।

हरिमिश्ररचित प्राचीन कुलाचार्यकारिकामें लिखा है कि राजा केशव यवनोंके भयसे गौड़राज्य छोड़ पूर्व-वङ्गको भागे और यवनोंके भयसे सदा व्यस्त रहने पर पितामहके प्रतिष्ठित कुलविधिसंस्कारमें यत्न कर न सके। एड़ूमिश्र नामक प्राचीन कुलाचार्यके मतानुसार केशव किसी राजाकी सभामें जाकर पहुंचे थे। राजाने प्रसङ्गक्रममें केशवसे उनके पितामहके चलाये कुलविधिकी बात पूछी। उनके सहचर एड़ूमिश्रने कुलकी कथा बतायी थी।

१८३८ ई० को जनवरी मास प्रिन्सप साहबने एशियाटिक सोसाइटीकी पत्रिकामें केशवसेनके नामसे ताम्रशासनकी एक प्रतिलिपि छपायी थी। कहते हैं उसमें इनके बड़े भाई माधवसेनका नाम मिटाकर केशवसेन लिख दिया गया है। (Journal of the Asiatic Society of Bengal, Vol. VII. pt. p. 42.) परन्तु यह युक्ति ठीक नहीं समझ पड़ती। फरीदपुर जिलेके कोटालोपाड़से दूसरा एक ताम्र-शासन निकला है। इसके सब श्लोक पूर्वोक्त ताम्र-शासनसे बराबर मिलते हैं। परन्तु प्रिन्सेप साहबका प्रकाशित पाठ विशुद्ध न होनेसे ऐतिहासिक अन्वेषणमें बड़ा गड़बड़ पड़ गया है। उनके पाठमें महाराज लक्ष्मणसेनके वर्णन पीछे लिखा है—

> 'एतस्मात् कथमन्यथा रिपुवध वैधव्यवल्लव्रती।
> विख्यात: चितिपालमौलिरभवत् श्रीविश्ववन्द्यो नृप: ॥' १०

(J. A. S. Bengal, Vol. VII. pt I. p. 44.)

उक्त पाठ ठीक नहीं लगता। कोटालोपाड़ ताम्र-शासनमें प्रकृत पाठ इसप्रकार है—

> "एतस्मात् कथमन्यथा रिपुवधू वैधव्यवद्व्रती।
> विख्यातचितिपालमौलिरभवत् श्रीविश्वरूपो नृप: ॥"

केशवसेन और ताम्रशासनवर्णित प्रबल पराक्रान्त विश्वरूप दोनों ही लक्ष्मणसेनके पुत्र थे।

केशवस्वामी—१ कोई वैयाकरण। माधवीय धातुवृत्ति, दिनकर और हेमाद्रि प्रभृति ग्रन्थोंमें केशवस्वामीका मत उद्धृत हुआ है। २ कोई धर्मशास्त्रवित् प्राचीन पण्डित। इन्होंने अग्निष्टोमपद्धति, बौधायनीय नक्षत्रेष्टिप्रयोग, बौधायनश्राद्धपद्धति, बौधायनश्रौतसूत्रका प्रयोगसार नामक भाष्य, पञ्चकाठकप्रयोगवृत्ति और आपस्तम्बसावित्रादि प्रयोगवृत्ति आदिकी रचना किया। त्रिकाण्डमण्डनने इनकी सावित्रादि प्रयोग-वृत्ति उद्धृत की है। इससे समझ पड़ता है कि केशव-स्वामी ई० १२ वीं शताब्दीमें विद्यमान थे।

केशवाचार्य—हारितगोत्रीय एक बड़े पण्डित। किसीके मतमें यह रामानुजस्वामीके पिता थे।

केशवादित्य—१ काशीके आदिकेशवकी उत्तर ओर अव-स्थित एक सूर्यमूर्ति। काशीखण्डमें कहा है—दिवा-करने आकाशमण्डलमें घूमते घूमते देखा था कि आदिकेशव मन लगाकर ईश्वरकी उपासना करते हैं। केशवकी पूजा समाप्त होने पर दिवाकरने उनके पास जाकर कहा—'प्रभो! सकल जगत् आपसे उत्पन्न होता और प्रलयको आपमें ही लीन हो जाता है। आपही सबके आराध्य ईश्वर हैं। हमें यह जाननेकी बड़ा कौतूहल है कि आप किसकी आराधना करते हैं, कृपा कर हमको यह भेद बतला दीजिये।' केशवने सङ्केत करके उनको कहा था—'आदित्य! हम देवादि-देव महादेवकी उपासना करते हैं। यही त्रिभुवनके सृष्टिकर्ता और सबके आराध्य हैं। जो व्यक्ति मोहवश त्रिलोचनको छोड़के दूसरे देवकी आराधना करता, वह लोचन रहते भी अंधा ठहरता है। मृत्युञ्जयरूपसे शिवकी आराधना करनेवालेको मृत्युका भय नहीं रहता।' दिवाकर आदिकेशवकी बात सुन काशीमें शिवकी आराधना करने लगे। उस दिनसे यह आदि-केशवके उत्तर अवस्थान करते हैं। इन्होंका नाम केशवादित्य है। जो व्यक्ति काशी जाकर केशवादित्यका दर्शन करता, उसको दिव्यज्ञान मिलता है। पादोदक-तीर्थमें स्नान करके केशवादित्यकी अर्चना करनेसे सब पाप छूट जाते हैं। रविवारको सप्तमी तिथि होनेसे पादोदक-तीर्थका स्नान और केशवादित्यका दर्शन बहुत ही प्रशस्त है। (काशीखण्ड)

२ स्मृतिचन्द्रिका नामक संस्कृत धर्मशास्त्रके संग्रह-कार। ३ नलोदय टीकाके रचयिता।

केशवाबन्दर—त्रिपुरा जिलेका एक पुराना बड़ा गांव।

यह अग्रतलासे ८ कोस दूर पड़ता है। केशवाबन्दर कालीसुखदा देवीमूर्तिके लिये प्रसिद्ध है। (देशावली)

केशवायुध (सं० क्लो०) केशवस्यायुधम्, ६-तत्। १ विष्णु का हथियार (पु०) २ आमका पेड़।

केशवार्क (केशवादित्य)—एक विख्यात ज्योतिर्विद्। यह राणिगके पुत्र, श्रियादित्यके पौत्र, जयादित्य तथा कृष्णदेवज्ञके भ्राता और प्रसिद्ध गणेशदेवज्ञके पिता थे। इनके रचित निम्नलिखित कई ग्रन्थ मिलते हैं—जातकपद्धति, बृहत्केशरी, ताजिकपद्धति, नावप्रदीप, ब्रह्मतुल्यगणितसार, मुहूर्तकल्पद्रुम, मुहूर्ततत्त्व, वर्षपद्धति, वर्षफल, विवाहवृन्दावन, श्रीपतिपद्धति, षड़्विधयोगफल, सन्तानदीपिका और कृष्णक्रीड़ितकाव्य।

केशवालय (सं० पु०) केशवस्य आलयः, ६-तत्। १ अश्वत्थवृक्ष, पीपल। २ विष्णुमन्दिर।

केशवावास, केशवालय देखो।

केशविन्यास (सं० पु०) केशस्य विन्यासः, ६-तत्। कबरी, बालोंकी सजावट।

केशवेन्द्रस्वामी—हरिसाधनचन्द्रिका नामक संस्कृत भक्तिग्रन्थके प्रणेता।

केशवेश (सं० पु०) केशस्य वेशः बन्धनरूपवेष्टादिभिर्विन्यासः, ६-तत्। बालोंका बनाव। (भावप्रकाश० ११।७।१७)

केशशौक्ल्य (सं० क्लो०) पलित, बालोंकी सफेदी।

केशसीमन्तकज्वर (सं० पु०) केशानां सीमन्तकृत, ६-तत् ततः कर्मधा०। एक असाध्यज्वर।

केशहन्तृफला (सं० स्त्री०) केशहन्तृ फलमस्याः, बहुव्री०, ततः टाप्। महाशमीवृक्ष।

केशहन्त्री (सं० स्त्री०) शमीवृक्ष।

केशहस्त (सं० पु०) केशानां हस्तः समूहः, ६-तत्। केशसमूह, बालोंका गुच्छा।

केशा (सं० स्त्री०) जटामांसी।

केशाकेशि (सं० क्लो०) केशेषु केशेषु गृहीत्वा प्रवृत्तं युद्धम्, पूर्वपदस्याकार इच। लटाभोंटी, एक दूसरेके बालोंको पकड़कर होनेवाली लड़ाई।

केशाख्य (सं० क्लो०) ह्रीवेर, सुगन्धवाला।

केशाद (सं० पु०) केशान् अत्ति, केश-अद-अण्। कृमि, कीड़ा।

केशान्त (सं० पु०) केशान् अन्तयति छेदनात् हन्ति, केश-अन्ति-अण्। १ केशच्छेदनरूप संस्कारविशेष। इसका दूसरा नाम गोदानकर्म है। ब्राह्मणका १६ वें, क्षत्रियका २२ वें और वैश्यका २४ वें वर्ष केशान्त संस्कार करना चाहिये। (मनु) २ केशका अग्रभाग, बालका सिरा। (कुमार)

केशान्तिक (सं० त्रि०) केशान्तः केशपर्यन्तः परिमाणमस्य, केशान्त-ठन् बाहुलकात् साधुः। केशान्तपर्यन्त परिमाणविशिष्ट, चोटी तक पहुंचनेवाला। (मनु २।४६)

केशापहा (सं० स्त्री०) शमीवृक्ष।

केशारि (सं० पु०) नागकेशर।

केशारुहा (सं० स्त्री०) महाबलाक्षुप, सहदेवी।

केशार्हा (सं० स्त्री०) केशं केशवपनं अर्हति, केश-अर्ह-अण्, उपमितस०। महानीली क्षुप, बड़े नीलका पेड़।

केशालि (सं० पु०) भृङ्गराज, भांगरा।

केशाम्बु (सं० क्लो०) बालक, सुगन्धबाला।

केशि (सं० पु०) एक दानव।

केशिक (सं० पु०) १ कशेरु, कसेरू। २ कोई जनपद। (मार्कण्डेयपुराण ५८। ४५) (त्रि०) प्रशस्तः केशः अस्त्यस्य, केश-ठन्। ३ प्रशस्त केशयुक्त, बालदार।

केशिका (सं० स्त्री०) केशीव कायते, कै-क। शतावरी, सतावर।

केशिध्वज (सं० पु०) निमिवंशके एक राजा। यह कृतध्वजके पुत्र थे। (भागवत, ९। १३। १२)

केशिनिसूदन (सं० पु०) केशिनं निसूदयति, नि-सूद-ल्यु। कृष्ण। कृष्णकर्तृक केशिके संहारकी कथा हरिवंशमें इस प्रकार लिखी है—

कंसराजाने कृष्णको वधकामनासे केशिदैत्यको वृन्दावन भेजा था। केशी कंसके कहनेसे वृन्दावन पहुंच वृन्दावनवासियों पर अत्याचार करने लगा। थोड़े दिनमें ही वृन्दावन जनप्राणीविहीन श्मशानतुल्य वन गया। एक बार केशीदैत्य श्रीकृष्णको ढूंढते गोपालभवन पहुंचा और श्रीकृष्णसे उसका युद्ध हुआ। केशी कई बार लड़नेके पीछे मारा गया। (हरिवंश)

केशिनी (सं० स्त्री०) केशास्तदाकारा जटाः सन्त्यस्याः, केश-इनि ङीप्। १ जटामांसी। २ चोरपुष्पी।

३ प्रशस्त केशयुक्त स्त्री, जिस स्त्रीके बहुत बाल रहें। ४ दमयन्तीकी दूती। कल्लिदेवके आने पर नलके पास यह दूती भेजी गयी थी। (भारत, वन ७४ अ०)

५ कोई अप्सरा। कश्यपकी पत्नी प्रधाके गर्भसे इसका जन्म हुवा। (महाभारत, आदि ६५ अ०) ६ पार्वतीकी एक सहेली। (भारत, वन २३० अ०)

७ अजमीढ़ राजाकी अन्यतमा पत्नी। ८ सुहोत्र नृपतिकी पत्नी। ९ सगरराजाकी अन्यतमा पत्नी। १० रावणकी माता। ११ वन्ध्या, बाँझ।

केशिपुर—एक प्राचीन नगर। (योगिनीतन्त्र २४)

केशी (सं० त्रि०) केश प्राशस्त्ये भूम्नि वा इनि। १ प्रशस्त बहुकेशयुक्त, बालदार। २ केशकी भांति कृष्णवर्णयुक्त, बाल जैसा काला। (ऋक् १। १४०। ८)

(पु०) ३ केशिविद्याप्रकाशक कोई गृहपति, स्वामी। (शतपथब्राह्मण) ४ कोई दैत्य। द्वापरयुगमें कृष्णने इसे संहार किया था। केशिनिसूदन देखो। ५ घोड़ा। ६ सिंह।

केशी (सं० स्त्री०) केश गौरादित्वात् ङीष्। १ शुकशिम्बी, केवांच। २ जटामांसी। ३ महाशतावरी। ४ आम्रातक, आमड़ा। ५ नीलीवृक्ष। ६ चोरपुष्पी।

केशोच्चय (सं० पु०) केशानां उच्चयः, ६-तत्। केशसमूह, बालोंकी लट।

केश्य (सं० क्ली०) केशाय हितम्, केश-यत्। १ कृष्णागुरु, काला अगर। २ ह्रीवेर, सुगन्धवाला। (पु०) ३ मार्कवक्षुप, भांगरा। ४ असनशाल। (त्रि०) ५ केशहितकारक।

केसर (सं० पु०-क्ली०) के जले सरति, सृ-अच्। १ नागकेशर फूल। २ किञ्जल्क। ३ वकुलवृक्ष, मौलसिरी। ४ कासीस। ५ सोना। ६ पुन्नागवृक्ष। ७ मातुलुङ्गवृक्ष, नीबूका पेड़। ८ हींग। ९ सिंहच्छटा, अयाल।

केसरक्षेत्र—कनाड़ा प्रदेशके सौंदीका एक पुण्यस्थान। इसका अपर नाम वालुकाक्षेत्र है।

केसरवर (सं० क्ली०) केसरेण किञ्जल्केन वृणाति, वृ-अच्। कुङ्कुम, जाफरान।

केसराचल (सं० पु०) केसरस्थितोऽचलः। सुमेरुपर्वत। पृथिवीरूप पद्मका कर्णिकास्थानीय होनेसे सुमेरु केसराचल कहाता है। (विष्णुपुराण)

केसराम्ल (सं० पु०) के जलनिमित्तकः सरः पश्चो रसोऽस्य। १ वीजपुर, बिजौरा नीबू। २ दाड़िम्ब, अनार।

केसरिका (सं० स्त्री०) महाबला क्षुप, सहदेवी।

केसरिया (हिं० वि०) पीतवर्ण, पीला, केसरका रङ्ग रखनेवाला। २ जिसमें केसर मिली या पड़ी हो।

केसरिया—उदयपुर (मेवाड़) रियासतका एक शहर। इसको धुलेव ग्राम भी कहते हैं। यहां एक नदी, एक तलाव, चार वावडी, चार धर्मशाला, चार कुंड और एक दिगम्बर जैन-मंदिर है। इस मंदिरमें प्रथम तीर्थंकर आदिनाथ स्वामीकी श्यामवर्ण मूर्ति बहुत बड़ी और मनोहर है। मंदिर एक मीलके घेरेमें है। समस्त जैन अजैन यहां आकर पूजा करते हैं। राज्यकी तरफसे सब प्रबन्ध है। केसर अधिक चढ़नेसे मूर्तिका नाम केसरिया वा केसरियानाथ पड़ गया है।

केसरिसुत (सं० पु०) हनूमान्।

केसरी (सं० पु०) १ सिंह। २ घोटक, घोड़ा। (रघुवंश) ३ पुन्नागवृक्ष। ४ नागकेशरवृक्ष। ५ रक्तशिग्रु, लाल सहिंजन। ६ वानरभेद, हनूमानके पिता। (रामायण)

केसरी (हिं०) केसरिया देखो।

केसरीच्छटा (सं० स्त्री०) १ मुस्ता।

केसवराम—हिन्दीके एक कवि। कोई कोई कहता की 'भ्रमरगीत' उन्होंने ही लिखा था।

केसारी (हिं० स्त्री०) कसर, दुबिया मटर। इसका वीज क्षुद्र, चपटा, चतुष्कोण और धूसरित होता है। पत्तियां लम्बी और पतली रहती है। इसकी छोटी और पतली फलियों पर कभी कभी धब्बे भी था जाते हैं। केसरीका दूसरा नाम कसारी, खेसारी या लतरी है।

केसू (हिं० पु०) किंशुक, टेसू।

केहरि—हिन्दी भाषाके एक कवि। यह राजा रत्नसिंहकी सभाके एक राजकवि थे। सम्भवत: १५७९ ई० उक्त राजाका अभ्युदयकाल रहा। वह नीमार जिलेके बुरहानपुरमें राजत्व करते थे।

केहरी (हिं० पु०) १ केसरी, शेर। २ घोड़ा।

केहरी (हिं० स्त्री०) कोसा, छोटी थैली। इसमें दरजी या मोची सोनेकी चीजें रखते हैं।

केहा (हिं० पु०) १ मयूर, मोर। २ कोई जङ्गली चिड़िया। यह बटेर-जैसा छोटा होता है।

केहि (हिं० वि०) किस।

'केहि हित लागि रहै तन माहीं'।" (तुलसी)

केहुनी (हिं० स्त्री०) १ कफोणी, कुहनी। २ पीतल या तांबेकी एक टेढ़ी नली। यह नैचेमें लगती है।

केहूं (हिं० क्रि० वि०) किसी प्रकार, कैसे ही।

कैंचा (हिं० वि०) ऐंचाताना, भेंगा, टेढ़ी आंखवाला। (पु०) २ एक प्रकारका बैल। इसका एक सींग सीधा खड़ा रहता और दूसरा आंखके ऊपर होता हुआ नीचेको झुकता है। ३ बड़ी कैंची।

कैंची (तु० स्त्री०) १ कर्त्री, कतरनी, बाल और कपड़े वगैरह काटनेका एक औजार। इसमें बराबरके दो लम्बे फल लगते जो एक कीलसे जुड़ते हैं। २ कैंचीकी तरह जुड़ी हुई दो सीधी तीलियां या लकड़ियां। ३ कुश्तीका कोई पेंच। इसमें जोड़की दोनो टांगोंमें अपने पैर डाल कर उसे पटकते हैं। ४ मालखम्भकी कोई कसरत। इसमें खिलाड़ी दौड़ या उड़कर विना हाथके सहारे मालखम्भको बांधता है।

कैंडल (हिं० पु०) जङ्गली तीतर।

कैंड़ा (हिं० पु०) १ यन्त्रविशेष, एक औजार। इससे किसी चीजका नक्शा दुरुस्त किया जाता है। २ पैमान, नाप। ३ ढंग, बनावटा। ४ चाल, होशियारी।

कैंता (हिं० पु०) पत्थरकी एक तख्ती। यह दीवारमें फरकीकी दोनों ओर चौड़ाईके बल लगती है।

कैंप (अं० पु० Camp) पड़ाव, छावनी, कंपू।

कै (हिं० वि०) १ कितने। (अव्य०) २ अथवा, या। (पु०) ३ जड़हन धान। (अ० स्त्री०) ४ वमन, उलटी, फटकार।

कैंशुक (सं० क्ली०) किंशुकस्येदम्, किंशुक-अण्। किंशुकपुष्प, टेसू।

कैकय (सं० पु०) केकय स्वार्थे अण् बाहुलकात् न यादेरियादेशः। केकय देश। केकय देखो।

कैकयी (सं० स्त्री०) केकयस्यापत्यं स्त्री, केकय-अण्-ङीप्। केकयराजकन्या, कैकेयी।

कैकस (सं० पु०) कीकसमस्थि सारतया अस्यस्य, कीकस-अण्। राक्षस।

कैकसी (सं० स्त्री०) कैकस-ङीप्। शार्ङ्गरवादयो ङीन्। पा ४।१।७३। सुमाली राक्षसकी कन्या और रावणकी माता। (रामायण, लिङ्गपुराण)

कैकादि—दाक्षिणात्यकी एक जाति। कैकादि लोग बम्बई प्रदेशमें ही अधिक रहते हैं। यह एक स्थानमें स्थिर होकर कभी नहीं ठहरते। बम्बई प्रदेशमें मराठा और कुचिकर २ श्रेणी हैं। परन्तु परस्पर आदान प्रदान और आहारादि प्रचलित नहीं। यह काले, दुबले और बहुत मैले होते हैं। पुरुष मस्तक पर चूड़ा बांधते और मूछ ठोड़ी रखते हैं। यह सामान्य झोपड़े या कच्चे घरमें वास करते हैं। सभी कैकादि मछली खाते और भैंस, बकरे, हिरन, सूअर आदिका मांस खानेमें भी कोई आपत्ति नहीं उठाते। मादक द्रव्यके सेवनमें अनेक पटु होते हैं। इनमें बहुतसे चोर हैं। सुभीता लगने पर किसीका द्रव्य चुरा कर स्थानान्तरको चले जाते हैं। इसी लिये इन पर सदा पुलिसकी दृष्टि रहती है। कोई कोई बांसकी टोकरी या चिड़ियोंका पिंजड़ा बनाता और कोई सांप नचाते घूमा करता है। बहुतसे पल्लेदारी और मजदूरी करते हैं। इनके स्त्रीपुत्र भी इन सब कामोंमें साहाय्य किया करते हैं।

कैकादि हिन्दू हैं और सभी हिन्दू देवदेवियोंको मानते हैं। देशस्थ-ब्राह्मण इनका पौरोहित्य करते हैं। दाक्षिणात्यके वैष्णव गोस्वामी इनके गुरु हैं। गुरुके प्रति इन्हें बड़ी भक्ति श्रद्धा रहती है। सन्तान भूमिष्ठ होने पर ५वें दिन कैकादि षष्ठी देवीके उद्देशसे छाग बलि देते हैं। १२श दिन ब्राह्मण जा कर नवप्रसूत शिशुका नामकरण करता है। यह १४से १६ वर्षके बीच कन्या और ३० वर्ष वयसके मध्य पुत्रका विवाह कर देते हैं। विवाहसे ५ दिन पहले गात्रमें हरिद्रा लगायी जाती है। वर घोड़े पर चढ़ विवाह करने जाता है। कन्याके घर पहुंचनेसे पहले स्थानभेदसे नानाविध अनुष्ठान चलता है। देशस्थ-ब्राह्मण जब मन्त्र पढ़के मस्तक पर चावल छोड़ आशीर्वाद देते हैं, तब विवाह पक्का होता है। हिन्दुस्थानकी भांति विवाहके पीछे इनमें भी गांठ खोलनेकी चाल है। कन्याका पिता कङ्कणमें गांठ लगा देता है। फिर कन्याकर्ता

वरको सम्बोधन करके कहता है—'इतने दिन यह लड़की हमारी रही, परन्तु आजसे आपकी हो गयी।' कन्याके घरमें दूसरे अनुष्ठानके पूरे हो जानेसे वर और कन्या दोनों घोड़े पर चढ़ वरके घर पहुंचते हैं। विजयपुर आदि किसी किसी जिलेमें वरकर्ताको ही पात्रीका अनुसन्धान करना पड़ता है। किसी किसी स्थानमें विवाहके पीछे वर श्वशुरके घर रहकर काम काज करता और जब तक २ सन्तान नहीं होते, उसीमें लगा रहता है। यदि कोई अपनी या पत्नीकी इच्छासे ससुरालसे चला आता, तो वह सास ससुरको खुराक या खर्च चलाता है। ऋतुमती होने पर कन्याको ५ दिन निराले घरमें रखते और अच्छी अच्छी सामग्री खिलाते हैं। ५वें दिन उसे नयी साड़ी पहना उसके कांछमें ५ गांठ हलदी, सुपारी, छुहारा और नीबू डालते हैं। किसीके मरने पर शवको समाधि देते या दाह करते हैं और ५, ८ या १२ दिन अशौच रखते हैं; परन्तु श्राद्ध कोई नहीं करता। फिर भी १२ वें दिन एक बकरा काट बन्धुबान्धवोंको खिलाया जाता है।

कैकेय (सं० पु०) केकयस्यापत्यम्, केकय-अण् यादेरियादेशः। केकयमित्रयुप्रलयानां यादेरियः। पा ७।३।२। १ केकयराजाके लड़के। २ संस्कृतसे बिगड़ कर बनी हुई एक भाषा। (मार्कण्डेय कवीन्द्र कृत प्राकृतसर्वस्व)

कैकेयी (सं० स्त्री०) केकयस्यापत्यं स्त्री, केकय-अण् यादेरियादेशः ततो ङीप्। केकयराजाकी कन्या। यह दशरथकी बहुत प्यारी पत्नी रहीं। इनके पुत्रका नाम भरत था। इन्होंने मन्थराके बहकानेसे दशरथको सत्यके पाशमें बांध रामचन्द्रको वनवासी बनाया था। (रामायण)

कैकोबाद (कैकुबाद)—दिल्लीके एक बादशाह। यह गयास-उद्-दीन बलवनके पौत्र और नासिर-उद्-दीनके पुत्र थे। १२८६ ई०को गयास-उद्-दीन बलवनके मरनेपर यह दिल्लीके सिंहासनपर बैठे। पिता नासिर-उद्-दीन उस समय बङ्गालमें रहे। बलवनके मृत्यु समय नासिर निकट न थे। इसीसे वह महमूदके पुत्र खुशरूको राज्यपर अभिषिक्त कर गये। खुशरूके पितासे राज्यके फौजदार नाराज थे। इसीसे उन्होंने ऐसा दौरात्म्य आरम्भ किया कि खुशरूको एकाएक सिंहासन छोड़ मूलतान भाग जाना पड़ा। फिर कैकोबादने सिंहासन पर आरोहण किया था। उस समय इनका वयस १८ वर्ष मात्र रहा। परन्तु यह देखनेमें बहुत ही सुश्री थे। इनमें भद्रता नम्रता प्रभृति बहुतसे गुण रहे। उसी वर्ष इनकी विद्याबुद्धिकी सुख्याति हुई। इन्होंने पिताके शासनमें रह यह सब गुण लाभ किये थे। परन्तु अपने आप प्रभुत्व पाने पर वह भाव बदल गया। यह किसीको कुछ समझते न थे। थोड़े दिनोंमें ही कैकोबाद घोर विलासी बन गये। इनके कर्मचारियोंने इनका दृष्टान्त पकड़ा और सभी आमोद प्रमोदमें समय बिताने लगे।

कैकोबादके नाजिम्-उद्-दीन नामक एक उच्च कर्मचारी थे। वह सम्राट्की चल ढाल देख अपने आप सिंहासन अधिकार करनेकी कल्पना लगाने लगे। इसी उद्देश्यसे उन्होंने प्रधान अन्तराय खुशरूको अनुचरसे मरवा डाला। फिर राजाके बड़े कर्मचारी धीरे धीरे मारे जाने लगे। किन्तु कोई समझ न सका, यह हत्याकाण्ड कौन करता है। अन्यान्य अन्तराय अन्तर्हित होने पर नाजिम उद्-दीनने सोचा कि मुगल सिपाही कैकोबादका पक्ष ले सकते हैं, इसलिये पहले उन्हें विनाश करना उचित है। यही सोच कैकोबादको समझाया था कि इन मुगल सिपाहियोंका बिलकुल भरोसा न करना चाहिये। किसी दिन यह अपने दलमें मिल सिंहासन अधिकार करेंगे। उसी समय स्थिर हुवा कि एक समय उनको इकट्ठा कर मारा जायेगा। पीछे सेनापति कहीं अड़चन न डालें, इसलिये पहलेही वह कारागारमें डाल दिये गये।

कैकोबादके पिताने बङ्गदेशमें इस शोचनीय अवस्थाकी बात सुन पुत्रको सावधान कर एक पत्र लिखा था। उससे कोई फल न निकला देख वह अपने आप ससैन्य दिल्लीको चल पड़े। कैकोबाद भी फौज ले पितासे लड़नेको आगे बढ़े थे। उन्होंने देखा कि लड़केसे लड़ने लायक अपनी फौज नहीं। उन्होंने सन्धिका प्रस्ताव करके भेजा था। पुत्रके असम्मति

प्रकाश करने पर पिताने एक स्नेहमय पत्र लिख एक बार पुत्रका मुख देखना चाहा। चिट्ठी पढ़नेसे कैकोवादका कठोर हृदय पिघल गया। पितापुत्रसे साक्षात् हुवा। दोनों प्रेमाश्रु बहाने लगे। खुशरू कविने 'शुभ-संयोग' नामक अपने काव्यमें उक्त पितापुत्रका मिलन अति सुन्दरभावसे वर्णन किया है।

जो हो, पिताके उपदेशसे कैकोवादने अपनी अवस्था देख भाल नाजिम-उद्-दीनको विषप्रयोगसे विनाश किया था। थोड़े दिन यह अपनी कुप्रवृत्ति छोड़ प्रजापालन करने लगे, परन्तु पीछे फिर विलासमें डूब पक्षाघात रोगसे आक्रान्त हुए। राज्यके मध्य उस समय दो चक्रान्त चल पड़े। खिलजी जातीय मलिक जलाल-उद्-दीन फीरोज एक दलके नेता थे। इस दलमें सबके सब खिलजी जा मिले। इधर मुगल कैकोवादके ३ वर्षके लड़केको सिंहासन पर बैठानेकी चेष्टा करने लगे। कैकोवादके जीते भी मुगलोंने शिशुको सिंहासन पर बैठाना चाहा था। राज्यमें विशृङ्खलाकी सीमा न रही। दोनों पक्ष परस्पर दलके लोगोंको मारने काटने लगे। उस समय कैकोवाद अकेले प्रासादमें मृतप्राय पड़े थे। नौकर चाकर जहां तहां भाग गये। जलाल-उद्-दीनके अनुचरोंने सुभीता देख लठके आघातसे असहाय बादशाहका मस्तक फोड़ डाला और उनकी लाश बिछौनेमें लपेट खिरकीसे नदीमें फेंक दी। शिशु राजकुमार भी थोड़े दिन पीछे निहत हुये। १२८८ ई० को यह घटना हुई थी। उस समय जलाल-उद्-दीन फीरोज सिंहासन दबा कर बैठ गये।

कैखुशरो—२ मूलतानवाले शासक मुहम्मद खान्के पुत्र और दिल्लीवाले सम्राट् ग़यास-उद्-दीन बलबनके पौत्र। १२८५ ई०को अपने पिताके मरने पीछे इन्हें मूलतान्के शासकका पद मिला था। किन्तु १२८६ ई० को कैकुवादके वजीर मलिक निजामुद्दीनने इन्हें वध किया।

कैंगर (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह ऊंचा और सुथरा होता है।

कैङ्करायण (सं० पु०) किङ्करस्यापत्यम्, किङ्कर-फक्। किङ्करवंशीय, किङ्करके पुत्र।

कैङ्कर्य (सं० क्ली०) सेवकार्य, खिदमतगारी।

कैङ्कलायन (सं० त्रि०) किङ्कल नड़ादित्वात् फक्। सात्वतवंशीय किङ्कल नामक नरपतिके वंशोत्पन्न।

कैङ्गुक (सं० पु०) गरगच्छ नामक वृक्ष।

कैट (सं० त्रि०) कीटस्येदम्, कीट-अण्। कीटसम्बन्धी, किरमी।

कैटज (सं० पु०) कूटज एव, कूटज स्वार्थे अण् पृषोदरादित्वादुकारस्यैकारः। कूटजवृक्ष।

कैटभ (सं० पु०) कीट इव भाति, कीट-भा-ड-अण्। दैत्यविशेष। (कालिकापुराण)

मार्कण्डेयपुराणमें लिखा है—विष्णु जब एकार्णवमें सोते थे, उनके कर्णमूलसे बलवान् असुर निकल पड़े। उन्होंमें एकका नाम कैटभ था। यह विष्णुके नाभिकमलस्थित कमलयोनिको वध करने पर उद्यत हुए। ब्रह्माके स्तवसे सन्तुष्ट हो विष्णु इनसे लड़ने लगे थे। कहते हैं—५००० वर्ष उनके साथ विष्णुका बाहु-युद्ध चला, किन्तु दोनों असुर किसी प्रकार परास्त न हुए। अन्तमें दूसरी गति न देख महामाया उनके गलेको दबाकर बैठ गयीं। उन्होंने विष्णुसे वर मांगनेको कहा था। विष्णुने सुयोग देख यही मांग लिया कि तुम हमारे हाथों मारे जावो। दोनों असुरोंने वीरत्वका परिचय दे वही स्वीकार किया था। विष्णुने उन्हें मार डाला। (मार्कण्डेयपुराण चण्डी) हरिवंशके मतमें ब्रह्माने मट्टीके २ खिलौने बनाये थे। पीछे ब्रह्माके आदेशसे उनमें वायुने प्रवेश किया और २ प्रकाण्ड असुर हो गये। उन्होंमें एकका नाम कैटभ था।

(हरिवंश ५२ अ०)

कैटभजित् (सं० पु०) कैटभं स्वनामख्यातमसुरं जितवान्, कैटभ-जि भूते क्विप् तुगागमश्च। कैटभहन्, कैटभारि।

कैटभा (सं० स्त्री०) कूटा गुणास्तत् कार्यं सृष्ट्यादिकं कैटं तेन भाति प्रकाशते। दुर्गा। (त्रिकाण्डशेष)

कैटभी (सं० स्त्री०) कैटं कार्यजातं तेन भाति, कैटभा-ड-ङीप्। १ दुर्गा। २ म[illegible]ली, योगनिद्रा। मधुकैटभके वधकाल ब्रह्माने इनका स्तव किया था।

(मार्कण्डेयचण्डी)

कैटभेश्वरी (सं० स्त्री०) कैटभपुरस्य ईश्वरी अधिष्ठात्री

पदे कैटभस्य तमसः ईश्वरी नियन्त्री। दुर्गा। कैटभके मरने पीछे उसको पुरी अधिकार करनेसे दुर्गाका यह नाम पड़ा है। (देवीपुराण ४५ अ०)

कैटर्य (सं० पु०) किट त्रासे घञ् केटं राति अतिरिक्तत्वात्, केट-रा-क स्वार्थे ष्यञ्। १ कट्फल, कायफल। २ कोई महानिम्ब, नीम। यह कटु, तिक्त, कषाय, शीतल, लघु, और ताप, शोष, कुष्ठ, रक्त, क्रमि तथा भूतविषघ्न होता है। (राजनिघण्ट) ३ मदनवृक्ष, मयनी। ४ पूतीकरञ्ज। ५ कटभीवृक्ष। ६ कामुक। ७ लघुकाश्मर्य।

कैड्यं कैटर्य देखो।

कैतक (सं० क्ली०) केतक्या इदम्, केतकी-अण्। १ केतकीपुष्प, केवड़ेका फूल। २ शृगालकोली, झड़बेरी। (त्रि०) ३ केतकीसम्बन्धीय, केवड़ेवाला।

कैतव (सं० पु०-क्ली०) कितवस्य भावः कर्म वा कितव-अण्। १ शठता, धोखेबाजी, बदमाशी। २ द्यूतक्रीड़ा, जुवा। ३ वैदूर्यमणि, लहसुनियां। ४ कुमुद, कोका। ५ राजिका, राई। ६ कितव, धोखेबाज। ७ शठ, पाजी। ८ द्यूतकारक, जुआरी। ९ धुस्तूर, धतूरा।

कैतवप्रयोग (सं० पु०) कैतवस्य प्रयोगः, ६-तत्। कूट व्यवहार, टेढ़ी चाल।

कैतवापह्नुति (सं० स्त्री०) एक शब्दालङ्कार। इसमें असली बात खुले शब्दोंमें नहीं, व्याजसे छिपायी या मिटायी जाती है।

कैतवायन (सं० त्रि०) कितव-फञ्। अश्वादिभ्यः फञ्। पा ४।१।११०। कितववंशीय।

कैतवायनि (सं० त्रि०) कितवस्यापत्यम्, कितव-फिञ्। तिकादिभ्यः फिञ्। पा ४।१।१५४। कितवके अपत्य।

कैतवेय (सं० पु०) कितवाया अपत्यं, कितवा-ढक्। स्त्रीभ्यो ढक्। पा ४।१।१२०। उलूक नामक एक क्षत्रिय। यह अंशुमान् राजाके लड़के थे। (हरिवंश ९९ अ०)

कैतव्य (सं० पु०) कितवायाः अपत्यम्, कितवा बाहुलकात् ण्य। अंशुमान् नृपतिके पुत्र उलूक।

कैतायन (सं० त्रि०) कित-फञ्। कितवंशीय।

कैति—नीलगिरि पर्वतके ऊपर बसा हुआ एक नगर। यह अक्षा० ११° २२′ ३०″ उ० और देशा० ७६° ४६′ ३०″ पू० पर उतकामन्दसे ३ मील दूर अवस्थित है। कैति उपत्यका और नीलगिरि पर्वत पर सर्वप्रथम अंगरेज जा इसी शहरमें रहे थे। १८३१ ई० को यहां अंगरेजोंकी कोठी बनी। इस उपत्यकामें यव, गेहूं और आलूकी उपज अधिक है। १८३५ ई० को लार्ड एलफिनष्टोनने यहां जमीन् किराये पर ले एक सुन्दर घर बनाया था।

कैतून (अ० स्त्री०) कपड़ोंके किनारे किनारे लगाया जानेवाला बारीक गोटा। यह सुनहले और रेशमसे तैयार होती या खालिस ऊन या रेशमसे भी बनती है।

कैथ (हिं०) कैथा देखो।

कैथल—पंजाबके करनाल जिलेकी पश्चिम तहसील और उसका प्रधान नगर। कैथल नगर अक्षा० २९° ४८′ उ० और देशा० ७६° २४′ पू० पर अवस्थित है। लोकसंख्या १४४०८ है। इसमें प्रधानतः हिन्दुवोंका वास है। एक कृत्रिम ह्रद प्रायः इसका अर्धांश घेरे है। देखनेमें यह बहुत अच्छा लगता है। इस ह्रदमें बड़े बड़े घाट बने जिनमें सिढ़ियां लगी हैं। कैथल करनालसे १९ कोस पश्चिम पड़ता है। कहते हैं युधिष्ठिर इस ह्रद और नगरके प्रतिष्ठाता थे। फिर कोई कोई हनूमान्को उनका प्रतिष्ठाता बनाता है। कैथलका संस्कृत नाम कपिस्थल वा कपिष्ठल है। इसमें अकबरका बनाया दुर्ग विद्यमान है। १७६७ ई० को सिख सरदार भाई देशूसिंहने यह स्थान अधिकार किया था। उनके वंशधर 'कैथलके भाई' कहलाते और शतद्रु तीरवर्ती देशीय सामन्तोंमें बड़ी प्रतिष्ठा पाते हैं। १८४३ ई० को यह सर्दार अङ्गरेजोंके अधीन हुये। बीचमें १८४९ ई०को कैथल थानेश्वर जिलेमें लगा था, परन्तु १८६२ ई० को फिर करनालमें मिला दिया गया। ह्रदके तीर भाइयोंके दुर्ग और बड़े प्रासादका भग्नावशेष पड़ा है। शहरके सामने मट्टीका एक बृहत् प्राचीर है। यहां शोरा साफ और कम्बल और लाखका गहना और खिलौना तैयार किया जाता है। नगरका दृश्य अति सुन्दर और मनोरम है। यहां हनुमानकी माता अञ्जनाका मन्दिर है।

कैथा (हिं० पु०) कपित्थ, एक कँटीला पेड़। यह बेल जैसा होता और इसमें बेल-जैसा फल भी आया करता है। कैथेकी पत्तियां छोटी, नीचेकी लम्बी, आगे गोल और एक सींकेमें लगी होती हैं। फल खानेमें कसैला और खटमिट्ठा रहता और चटनी तथा अचारमें पड़ता है। प्रवादानुसार हाथी कैथेको सीधा निगल जाता जो पीछे लीदके साथ जैसाका तैसा निकल आता है, परन्तु उसके भीतर लीदके सिवा और कुछ नहीं दिखाता। इसीका नाम 'गजकपित्थ' न्याय है। कैथेकी लकड़ी मजबूत और सफेद रहती जिसमें पीली भाईं पड़ती है। बहुतसे लोग कैथा खाना अच्छा नहीं समझते। लोकोक्तिमें कहा जाता है—

"बेल खाय बैकुण्ठे जाय। कैथा खाय सो नरके जाय॥"

कैथिन (हिं० स्त्री०) कायस्थ जातिकी स्त्री, लालाइन।

कैथी (हिं० स्त्री०) क्षुद्रकपित्थ, छोटे फलका कैथा। २ एक पुरानी लिपि। यह नागरी या हिन्दीसे बहुत कुछ मिलती है। परन्तु इसमें अक्षरोंका माथा नहीं बांधा जाता। कैथीमें ऋ, ॠ, ऌ और ॡ स्वर तथा ङ, ञ, ण, श और ष व्यञ्जनका अभाव है। विहारमें चिट्ठी पत्री और हिसाब किताब इसी लिपिसे लिखते हैं।

कैद (अ० स्त्री०) १ बन्धन, जकड़। २ दण्ड, सजा। यह राजाकी आज्ञासे मिलती है। आज कल कैद तीन प्रकारकी होती है—सादी, सख्त और तनहाई या कालकोठरी। ३ प्रतिबन्ध, शर्त, अटका।

कैदखाना (फा० पु०) कारागार, जेल, कैदियोंके रखनेकी जगह।

कैदतनहाई (अ० स्त्री०) कालकोठरी, कैदीको बहुत ही छोटी और तंग जगहमें रखनेकी सजा।

कैदसहज (अ० स्त्री०) सादी कैद, साधारण दण्ड। इसमें कैदीको कोई काम करना नहीं पड़ता।

कैदसख्त (अ० स्त्री०) कठोर दण्ड, कड़ी सजा। इसमें कैदीको कड़ी मिहनत करनी पड़ती है।

कैदार (सं० पु०-क्ली०) केदाराणां क्षेत्राणां समूहः केदार-अण्। १ क्षेत्रसमूह, हार। २ पद्मकाष्ठ, पद्माख। ३ केदारस्थित जल, खेतका पानी। केदारजल देखो। ४ शालिधान्य। ५ षष्टिकधान्य। यह मधुर, वृष्य, बल्य, पित्तनिवर्हण, कुछ कुछ कसैला और खट्टा, गुरु और कफ एवं शुक्र बढ़ानेवाला है। (सुश्रुत)

कैदारक (सं० क्ली०) केदाराणां समूहः, केदार-वुञ्। केदारसमूह, हार।

कैदारिक (सं० क्ली०) केदाराणां समूहः, केदार-ठञ्। केदारसमूह, बहुतसे खेत।

कैदार्य (सं० क्ली०) केदार-यञ्। केदाराद् यञ् च। पा४।२।४०। केदारसमूह, हार।

कैदी (अ० पु०) कारावासका दण्डप्राप्त, जिसको कैदकी सजा हुई हो।

कैदेव—एक वैद्य। इन्होंने संस्कृत भाषामें द्रव्यतत्त्व नामक ग्रन्थ लिखा है।

कैधौं (हिं० अव्य०) अथवा, या।

कैनिङ्ग—१ इङ्गलेण्डके एक प्रसिद्ध कवि, वाग्मी, लेखक राजनैतिक और मन्त्री। इनका पूरा नाम जार्ज कैनिङ्ग था। १७७० ई० की ११ वीं अपरेलको कैनिङ्गका जन्म और १८२७ ई० की ८ वीं अगस्तको मृत्यु हुवा। १८२२ ई० को यह भारतके गवर्नर जनरल मनोनीत हुए थे। बन्धुओंसे विदा होके भारत आनेका उद्योग ही कर रहे थे, कि इङ्गलेण्डके परराष्ट्रसचिवके मर जानेसे इन्हें वह पद ग्रहण करना पड़ा और भारत आना हो न सका। इन्होंने जनरल स्काट नामक किसी धनी सैनिककी कन्यासे विवाह किया था। उसी पत्नीको अपने पिताके मरने पर करोड़ रुपयेकी सम्पत्ति मिल गयी।

२ भारतके एक प्रसिद्ध गवर्नर जनरल और इङ्गलेण्डके राजप्रतिनिधि। इनका प्रकृत नाम चार्लस जान कैनिङ्ग था। भारतमें यह लार्ड कैनिङ्ग नामसे प्रसिद्ध थे। लार्ड कैनिङ्ग पूर्वोक्त जार्ज कैनिङ्गके पुत्र रहे। १८१२ ई० की १० वीं दिसम्बरको इनका जन्म हुआ था। १८२८ ई० को माताका मृत्यु होने पर उत्तराधिकारसूत्रसे इन्हें भाइकाउण्ट (Viscount) उपाधि मिला। १८३५ ई० की ५वीं सितम्बरको इन्होंने सालट ष्टुआर्ट नाम्नी रमणीका पाणिग्रहण किया था। यह रमणी लेडी कैनिङ्ग नामसे प्रसिद्ध

रहीं। १८३६ ई० के अगस्त मास कैनिङ्ग पारलियामेण्टके सभ्य निर्वाचित हुए। प्रसिद्ध सर रावर्ट पीलने इनके साथ एक मन्त्रिसभा की। लार्ड एलेनवराने भारतके शासनकर्ता बन कर आते समय इन्हें अपना प्राइवेट सेक्रेटरी बनाना चाहा था। किन्तु अपने सम्मानकी ओर देख लार्ड कैनिङ्ग उसमें सम्मत न हुए। पारलियामेण्टमें रह कर पहले इन्होंने वनविभाग और पीछे डाकविभागके मन्त्रीका काम किया था।

१८५५ ई० को भारतके गवर्नर जनरल लार्ड डालहाउसीके पद त्याग करके भारतसे चले जानेकी बात उठी। उस समय इङ्गलेण्डको ईष्ट इण्डिया कम्पनीने लार्ड कैनिङ्गको भारतका गवर्नर जनरल स्थिर कर दिया। १८५६ ई० को १ली फरवरीको लार्ड डालहाउसीने पद त्याग तो किया, परन्तु एक मासका अधिक समय ले लिया था। २९वीं फरवरीको लार्ड कैनिङ्गने कलकत्ते पहुंचते ही गवर्नर जनरलका कार्यभार ग्रहण किया।

इन्होंने जब भारतका शासनभार लिया, माननीय जज एनसन भारतके प्रधान सेनापति रहे। लार्ड कैनिङ्ग राज्यभार ग्रहण करते ही सकल विषय रत्ती रत्ती समझने लगे। प्रथम कई दिनों तक इन्होंने ऐसा परिश्रम किया कि एकवार भी घरसे बाहर न निकले। भूतपूर्व गवर्नर जनरल डालहाउसी अयोध्या राज्य अंगरेजोंके शासनाधीन कर गये थे। यह पहले उसीका बन्दोबस्त करने लगे। नवाब वाजिद अलीशाह अवधसे कलकत्ते आकर रहे थे। उनकी माता महारानीसे अपना दुःख कहने छिपकर विलायत चली गयीं। इन्होंने विलायतकी ईष्ट इण्डिया कम्पनीको पत्र लिखा था कि सम्मानके साथ बूढ़ी रानीकी अभ्यर्थना की जावे।

उसी समय पारस्य (ईरान) के साथ अंगरेजोंकी लड़ाई होनेवाली थी। उस अभियानका कितना ही भार लार्ड कैनिङ्ग पर डाला गया। १८५७ ई० के जनवरी मास अफगानस्थानके अमीर दोस्त मुहम्मदसे सन्धि हुई थी। इस व्यापारमें लार्ड कैनिङ्गको विशेष व्यस्त रहना पड़ा। इन्होंने साथही देशकी आभ्यन्तरिक उन्नतिमें भी मन लगाया था। देशमें रेल फैलाने, राह घाट बनाने और देशीयोंकी सामाजिक उन्नतिका विधान करनेमें लार्ड कैनिङ्ग विशेष यत्नवान् हुए।

विद्यासागर महाशय विधवाविवाह विधिवद्ध करनेके लिये पूर्वसे ही चेष्टा लगा रहे थे। लार्ड डालहाउसीके समय उसको कानूनमें लानेकी व्यवस्था भी हुई थी। फिर लार्ड कैनिङ्गके समयको वह विधिवद्ध होकर चल पड़ा।

इससे पहलेही ब्रह्मदेशके अन्तर्गत पेगू राज्य अंगरेजोंके अधिकारमें आ गया था। लार्ड कैनिङ्गने आकर देखा कि वहां कुछ कालके लिये स्थायी सैन्य रखना आवश्यक था। इन्होंने भारतीय सिपाहियोंकी फौज भेजना चाही, परन्तु वह जहाज पर बैठ किसी प्रकार समुद्र पार जाने पर सम्मत न हुए। डालहाउसीके समय भी ऐसा ही हुआ था। दो बार गवर्नर जनरल तक उन्हें समुद्रयात्रा करने पर वाध्य कर न सके।

लार्ड कैनिङ्ग परास्त होनेवाले लोग न थे। उन्होंने नियम कर दिया—अतःपर सैनिक विभागमें जो लोग नियुक्त होंगे, उन्हें गवर्नमेण्ट इच्छा करने पर समुद्र पार पर्यन्त ले जा सकेगी, नौकरी करनेसे पहले सिपाहियोंको इसी मर्मके स्वीकारपत्र पर स्वाक्षर करना पड़ेगा। यह नियम निकालके लार्ड कैनिङ्गने विलायतको चिट्ठी लिखी थी कि सिपाहियोंने इस नये नियम पर असन्तोष प्रकाश नहीं किया। परन्तु यह बात छिपी नहीं कि वह भीतर ही भीतर विलक्षण चिन्तित हुए थे। कम्पनीकी नौकरी उस समय पुत्रपौत्रादिक्रमसे रहती थी। पुरातन नियममें नियुक्त सिपाहियोंने समझा—चाहे हमें समुद्र पार जाना न पड़े, परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि भविष्यत्में हमारे पुत्रपौत्रोंको समुद्रयात्रासे बचना कठिन होगा। भारतके प्रकृतवीर राजपूत फिर सिपाहियोंके दलमें प्रविष्ट होनेसे हट गये। सिपाहियोंके मनमें यह धारणा हुई—अब कम्पनी हमारी जाति नष्ट करना चाहती है।

१८५७ ई०के अपरेल महीने देशीय सैन्यका भावगतिक देखके लार्ड कैनिङ्गने विलायतको लिख भेजा

था—युरोपीय सेनामें चार चार और भारतीय सेना दलमें दो दो अतिरिक्त अङ्गरेज सेना-नायकोंका प्रयोजन है। किन्तु विलायतसे इस प्रस्तावके विरुद्ध यह उत्तर मिला कि नायकोंकी संख्या बढ़ानेसे वह स्वतन्त्र दल बन जायेंगे और साधारण सेनाके साथ सद्भाव न रहेगा। इनका प्रस्ताव कार्यमें परिणत न हुवा।

लार्ड कैनिङ्गने भारत आनेसे पहले भोजके उपलक्षमें जो वक्तृता की, उसमें कहा था—मैं शान्तिप्रिय हूं, परन्तु यह स्मरण रखके कार्य करना पड़ेगा कि भारतके आकाशसे एक हस्तपरिमित बादलका टुकड़ा उठ कर समुदाय देशको डुबा सकता है। लार्ड कैनिङ्गकी यह आशङ्का कार्यमें परिणत हो गयी। उनके शासनग्रहणके ठीक एक वर्ष पीछे भारतमें सिपाहियोंका विद्रोह आरम्भ हुवा। सिपाहीविद्रोह देखो।

किसी समय अम्बाला नगरमें सेनादलसे कुछ लोग नये कारतूस ले क़वायद सीखने गये थे। प्रधान सेनापति जनरल एनसन वहीं उपस्थित रहे। सिपाहियोंने नये कारतूस व्यवहार करने पर घोर आपत्ति उठायी थी। जेनरल एनसनने ऐसा गतिक देख लार्ड कैनिङ्गको लिख भेजा—सिपाहियोंका जैसा रंगढंग है, उसको देख उन्हें समझाना बुझाना कुछ सरल नहीं; ऐसी अवस्थामें शिक्षार्थी सिपाहियोंको अपने अपने रेजिमेण्ट लौट जाने देना चाहिये। लार्ड कैनिङ्गने यह प्रस्ताव अग्राह्य कर कहा था—इस प्रकार सिपाहियोंकी जिद चलानेसे हमारा प्रभुत्व कहां रहेगा? सिपाही क़वायद तो करने लगे, परन्तु असन्तोषके चिह्न चारो ओर झलक पड़े। बारिकपुरमें ३४वें पदातिक दलके जिन दो सिपाहियोंने प्रथम विद्रोहाचरण किया, उन्हें फांसीका दण्ड दिया गया। फिर यह बात उठी बाकी सेनाका किस प्रकार शास्तिविधान होगा। लार्ड कैनिङ्गने अवशेषमें उनको दलच्युत करनेका हुक्म दिया था। ऐसे गुरुतर अपराधमें इस प्रकारका सामान्य शास्तिविधान देख अंगरेजोंमें इनकी बड़ी ही निन्दा हुई। उनके मतमें ऐसे सदय व्यवहारसे ही सिपाहियांको बलवा करनेकी हिम्मत पड़ी थी। लार्ड कैनिङ्गने उनकी बातके जवाबमें कह दिया—'न्यायकी दृष्टिसे जो शास्ति दी गयी है, वह नितान्त सामान्य नहीं। संयुक्तप्रान्तमें पीछे बलवा हुआ है। मैं इस बात पर विश्वास नहीं करता कि वङ्गदेशमें इस शास्तिसे कोई फल नहीं निकला। जहां विद्रोह होगा, वहीं हमारी कर्तव्यनीति है कि दलपतियोंको शास्ति देकर दलस्थ लोगोंको पदच्युत किया जावे। फिर भी जिनकी निर्दोषिता प्रमाणित होगी, उन्हें कोई शास्ति न मिलेगी।' इस सम्बन्धमें तर्क वितर्क चलही रहा था, कि १२ वीं मईको मेरठसे विद्रोहका संवाद आ गया। क्रम क्रमसे विद्रोह दिल्ली तक फैल पड़ा और देखते देखते अयोध्या, रुहेलखण्ड, कानपुर, अलीगढ़, इटावा, मैनपुरी तथा बुलन्दशहरमें भी जा उपस्थित हुआ। जालन्धरके बागियोंने लुधियाना लूटा था। झांसीकी रानी विद्रोहियोंसे मिल अंगरेज सिपाहियोंको विनाश करने लगीं। ग्वालियरके सेंधियाने अंगरेजोंके साहाय्यार्थ सेना भेजी थी। परन्तु अखीरको वह भी बिगड़ गयी। राजपुताना, सागर, जबलपुर, दक्षिण-हैदराबाद और कोल्हापुरमें भी विद्रोहके लक्षण देख पड़े। चारों ओरोंसे जितने ही विद्रोह और अंगरेजोंके मारे जानेके संवाद आने लगे, अंगरेज लोग भी उतने ही भड़कने लगे। देशीयों पर उनका बड़ा ही आक्रोश बढ़ा था। वह सदय व्यवहारके लिये लार्ड कैनिङ्गकी घोर निन्दा करने लगे। इन्होंने देखा, चारों ओर विपद् ही विपद् थी। लार्ड कैनिङ्ग इस विपज्जालमें पड़ कर भी अचल तथा अटल भावसे अपना कार्य करते रहे।

इन्होंने देखा—'सिपाहियोंकी फौजमें ही बलवा फूटा है, देशी अधिवासियोंकी उसमें कोई सहानुभूति नहीं, वह विद्रोहसे अलग हैं। अंगरेजोंके प्रति उनकी विलक्षण सहानुभूति भी है। अब यदि अंगरेज उन पर घृणा प्रकाश कर उनको उत्तेजित कर डालेंगे, तो भारतवासियों और अंगरेजोंमें सङ्घर्ष उपस्थित होने पर समग्र देशमें वह विद्रोहानल प्रज्वलित होगा, जो किसीका बुझाया न बुझेगा।' लार्ड कैनिङ्गका मस्तिष्क इन दो विषम चिन्ताओंसे पीड़ित होने लगा—सिपाहियोंका बलवा मिटाऊं या अंगरेजोंको समझाऊं। सन्देह है—कैनिङ्गका छोड़ कर दूसरा

कोई आदमी ऐसा भार उठा सकता या नहीं। भारतके अंगरेजोंकी बात इन्होंने सुनी न थी। यह सब बातें अंगरेजोंसे खोलकर कह न सके ऐसी विपद्के समय इनकी शान्तमूर्ति देख वह और भी भड़क उठे। उनकी इच्छा थी कि कलकत्तेकी सेना युक्तप्रदेशको विद्रोह दमन करनेके लिये भेजी जाती और साहब लोग वालिण्टियर (स्वेच्छासेवक) बन कर कलकत्तेकी रक्षा करते। लार्ड कैनिङ्ग इस पर असम्मत हुए। साहबोंने देशकी रक्षाके लिये जो प्रस्ताव किये, इन्होंने सुने न थे। क्या अंगरेजी क्या देशी सभी संवादपत्रोंकी स्वाधीन समालोचना थोड़े दिनोंके लिये बन्द करा दी गयी। अंगरेजोंने इसमें अपना अपमान समझा था। अस्त्र-आईन दोनोंके प्रति समान भावसे लिपिबद्ध हुवा। साहबोंका आक्रोश इस बात पर भी बढ़ा था कि उनके लिये कोई खास रियायत रखी न गयी। साहबोंके रहते भी एक मुसलमान पटनेका डिपटी कमिश्नर बना था। इससे साहबोंके दुःखकी सीमा न रही। यही सब बातें लिखकर १८५७ ई०के शेष भागको कलकत्तेके साहबोंने इङ्गलेण्डकी रानीके पास एक आवेदन भेजा। उसमें लिखा था—'लार्ड कैनिङ्गकी दुर्बलता और निर्बुद्धितासे ही देशकी यह दुरवस्था हुई है। अतएव आप इन्हें देशको वापस बुला लें"। आवेदन लार्ड कैनिङ्गके हाथों ही रवाना हुआ। इन्होंने उसको कोर्ट अव डिरेक्टर्सके निकट भेजा और टीका टिप्पणीमें अपना हाल भी लिख दिया। आवेदनसे लार्ड कैनिङ्गका कुछ विशेष अनिष्ट न हुवा, केवल वही धन्यवाद न मिला, जो विद्रोह दमन होने पर पारलियामेण्टकी ओरसे सभी कर्मचारियोंको दिया गया था।

दिन दिन विद्रोहियोंद्वारा साहबोंके मारे जानेका जितना संवाद आता, उनकी चिन्ता उतनी ही बढ़ती जाती थी। लार्ड कैनिङ्ग भी समय समय उत्तेजित हो प्रतिहिंसापरायण बने थे। परन्तु यह भी समझ पड़ता है कि अल्पकाल पीछे ही यह प्रकृतिस्थ हो जाते थे। इनकी दया देखकर साहबोंने हंसीमें इनका नाम क्लिमेन्सी (करुणामय) कैनिङ्ग रख दिया। विलायतके संवादपत्र भी भारतके साहबोंका स्वर पकड़ कर लेख लिखने लगे। १८५७ ई० के सितम्बर मास लार्ड कैनिङ्गने महारानीको जो पत्र लिखा, उसमें दुःखपूर्वक कहा था—'बाहरी लोगोंके मनमें प्रतिहिंसा इतनी प्रबल है, कि वह दोषी और निर्दोषमें प्रभेद लगा नहीं सके। जो समाजके अग्रणी हैं, और जिन्हें देख कर लोग शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं, उनके मनका भाव ऐसा होना प्रार्थनीय नहीं। ४० या ५० हजार लोगोंको एकबारगी ही फांसी देना या गोलीसे मार डालना क्या सम्भव वा विवेचनाका कार्य हो सकता है?'

१८५७ ई० की १५ वीं धाराके अनुसार मुद्रायन्त्रकी स्वाधीनता एक वर्षके लिये लोप हो गयी। १४वीं जुलाईको इन्होंने इस सम्बन्धमें विलायतके कोर्ट अव डिरेक्टर्सके पास जो पत्र भेजा, उसमें लिखा था—देशियों और युरोपीयोंके मध्य कोई इतर विशेष करना उचित नहीं, इसलिये यह कानून सब पर समान भावसे प्रयोग किया जावेगा।

१५ वीं धाराका मर्म ऐसा था—'बिना गवर्नमेण्टकी अनुमतिके कोई छापाखाना रख न सकेगा। सबको लाइसेन्स लेना आवश्यक है। लाइसेन्स न लेनेसे गवर्नमेण्ट मुद्रायन्त्रको कुर्क करेगी। गवर्नमेण्टके आदेशसे प्रत्येक प्रेसके लिये कई नियम बनेंगे। वह नियम समय समय पर बदले जा सकेंगे। पुस्तकादि पर मुद्रक और प्रचारकका नाम रहेगा और उसका एक अङ्क मजिष्ट्रेटके पास भेजना पड़ेगा। १८५७ ई० की १३ वीं जूनसे एक वर्ष तक यह कानून चलेगा।' देशियों और अंगरेजोंको इस कानूनमें समान रखनेसे साहब लोग जल उठे।

एक ओर कानून बनता और दूसरी ओर विद्रोहकी शान्तिका प्रबन्ध चलता था। अल्पसंख्यक जो अंगरेज सेना दिल्लीका घेरे थी, उनकी अवस्था दिन दिन बिगड़ने लगी। सर जान लारेन्सका मत था—पञ्जाबसे फौज बुला और पेशावरकी रक्षाका भार दोस्त मुहम्मद पर डाल उस सेनाको दिल्लीके अवरोधमें नियुक्त करना

उचित है, क्योंकि दिल्लीके बलवायी निकल पड़ने पर देशमें महा अनिष्ट होगा, परन्तु लार्ड कैनिङ्ग पेशावर छोड़ने पर किसी प्रकार सम्मत न हुवे। इन्होंने लिखा था—पेशावर छोड़नेमें दूसरे कोई विशेष क्षति नहीं है, किन्तु इससे हमारे बलपर भारतवासियोंकी आस्था घट जायेगी; ऐसे समय वह प्रार्थनीय नहीं।

इसी प्रकार लार्ड कैनिङ्ग विद्रोहदमन व्यापारमें जैसे मग्न थे, वैसेही आभ्यन्तरिक असन्तोष निवारणमें भी व्यस्त हो कार्य करने लगे। एङ्गलो-इण्डियन साहब इनके मनका भाव न समझ इन्हें नाना प्रकार विरक्त करते थे। लार्ड कैनिङ्गने विलायतके लार्ड ग्रिनविलको निम्नलिखित पत्र भेज दिया—'एक बार भारतका कोई मानचित्र देखिये। समग्र बङ्गाल देशमें विद्रोहसे पूर्व जितनी अंगरेज सेना रही, आज कल उससे अतिरिक्त नहीं है। २३ हजार लोगोंके रहते भी हमें देशीय लोगोंके अनुग्रह पर निर्भर करके चलना पड़ता है। वह आज भी अंगरेजभक्त हैं। उनको ऐसा हो रखनेकी चेष्टा करते रहना उचित है। भगवान् न करे कि हमारे बलका ह्रास हो। परन्तु वैसा होने पर हमें देशीयों पर हो निर्भर करना पड़ेगा। किन्तु क्रमागत गाली देनेसे क्या वह ऐसे राजभक्त रहेंगे? मेरा विशेष अनुरोध है कि आप इसके निवारणकी चेष्टा करें। अपनी राजनीतिसे मैं पीछे न हटूंगा। मैं क्रोधसे कोई कार्य कैसे कर सकता हूं। मैं न्यायविचार करूंगा। उसमें जितना काठिन्य अवलम्बन करना पड़ेगा, उससे मुंह न मोड़ूंगा। किन्तु जितने दिनों भारतका शासन मेरे ऊपर अर्पित है, उतने दिनों राग वा अविवेचनाका काम न होने पावेगा। क्या इङ्गलेण्ड क्या भारत किसी संवादपत्रके अपवाद पर मैं दृक्पात नहीं करता। नहीं जानता—मैं क्यों ऐसा करनेसे अलग रहता हूं। या तो इन बातोंपर दृक्पात करनेका समय नहीं मिलता अथवा इससे बड़े व्यापारमें चित्त नियुक्त रहता है। मेरे प्रति यदि अयथा आक्रमण हो, तो आप उसका प्रतिवाद करें। मेरी नीति है—जहां विद्रोह लक्षित होगा, वहां निष्ठुर भावसे उसका प्रतिविधान किया जायेगा। विद्रोहियोंके शासित हो जानेपर शान्त भावसे न्याय विचार करूंगा। क्रोधके आवेशमें दलके दल लोगोंको फांसी न दूंगा अथवा जला न डालूंगा। जाति वा धर्मको देखकर कोई इतर विशेष करनेसे दूर रहूंगा।'

इसी समय जगह जगह अंगरेज कर्मचारियों पर विद्रोहियोंका विचारभार अर्पित हुवा। कोई कोई विचारक अत्यन्त निर्दय भावसे शास्तिविधान करता था। किसी दिन बङ्गालके छोटे लाट हालिडे साहब इनसे मिलने आये थे। लार्ड कैनिङ्गने उन्हें ऐसेही विचारका एक कागज दिखाया। हालिडेने कहा था—'लोग आपको अत्यन्त दयावान् बता निन्दा करते हैं। इसको देख कर उन्हें धारणा होगी—आपके शासनमें कैसा निष्ठुराचरण होता है। इसको संवादपत्रोंमें प्रकाश करा दीजिये। निन्दाकारियोंका इससे मुंह बन्द हो जावेगा।' लार्ड कैनिङ्गने उत्तर दिया—'हमारा शत शत निन्दावाद क्यों न हो, किन्तु अंगरेजोंके कलङ्ककी ऐसी बात फैलाना अनुचित है। मैंने प्रबन्ध कर दिया है, जिससे भविष्यत्में फिर ऐसा न हो। यही बात कहके इन्होंने मेजकी दराजमें कागज बन्द करके रख दिया था। इससे समझ पड़ता है—लार्ड कैनिङ्ग स्वजातिको कितना चाहते थे। देशीय लोगोंके इन्हें 'कैनिङ्ग दी जष्ट' (न्यायवान् कैनिङ्ग) उपाधि देनेका भी यही कारण था।

१८५८ ई० का प्रारम्भ है। इस समय बङ्गदेशमें विद्रोह नहीं। नाना प्रकारकी गड़बड़ीसे युक्तप्रदेशके अनेक स्थान अराजक हो गये हैं। प्रधान सेनापतिके निकट रहनेसे कार्यमें कितनी हो सुविधा लगती है। ऐसी ही सब बातें विवेचना करके लार्ड कैनिङ्ग इलाहाबाद जाकर रहने लगे। अतिरिक्त परिश्रम और चिन्तासे इनका शरीर टूटता जाता था। इनकी पत्नी लेडी कैनिङ्गने इनसे कर्मत्याग करनेका अनुरोध किया। परन्तु यह उसमें सम्मत न हुए। कार्नल ट्रुआर्टने लिखा है—'काम पर बैठनेसे वह न समझते थे—दिन रात्रि कहां आती जाती है। १० वीं जनवरीको रात २ बजेसे दिनको एक बजे तक बिना कुछ

खाये पीये अनवरत परिश्रम करके लार्ड कैनिङ्ग अवसन्न हो गये। मस्तिष्कका कार्य एकबारगी ही रुका था। किन्तु उन्होंने शीघ्र ही आरोग्य लाभ किया। ऐसा ही और भी दो एकबार हो गया था। परन्तु लार्ड कैनिङ्ग फिर भी परिश्रमसे श्रान्त न हुवे।' पत्नी लेडी कैनिङ्ग इनके साथ रात्रिजागरण करके यथासाध्य साहाय्य देती और राज्यके गोपनीय पत्रादि अपने आप नकल कर देती थीं।

१८५८ ई० के जनवरी मासको लार्ड पामरष्टनने विलायती पारलियामेण्टमें प्रस्ताव किया कि भारतका शासनकार्य कम्पनीके हाथसे निकाल इङ्गलैण्डराजके कर्तृत्वाधीन करना आवश्यक था। इसके थोड़े दिन पीछे लार्ड कैनिङ्ग सोचने लगे—पदत्याग करें या न करें किन्तु विलायती लार्ड सभाके सभ्योंने जब इनसे कार्य करते रहनेका अनुरोध किया, इन्होंने अपना पद न छोड़ा। भारतमें अंगरेजोंका दुःख-रवि अस्तमित हो गया।

१८५८ ई० के मार्च मास लखनऊ अंगरेजोंके अधिकृत होने पर लार्ड कैनिङ्गने घोषणा की थी—'जो अंगरेजोंके पक्षपाती रहे, उनकी जमीन छोड़ दूसरी सब जमीन ब्रटिश गवर्नमेण्ट जप्त कर लेगी। विद्रोहियोंमें जो अविलम्ब शरणागत होंगे, उन्हें—यदि उन्होंने अंगरेजोंका वध नहीं किया हो—अपने जीवनकी कोई आशङ्का नहीं। जो अंगरेजी राज्य स्थापनमें सहायता देंगे, उनके पूर्व अधिकार प्रत्यर्पण विषयमें गवर्नमेण्ट विशेष विवेचना करेगी।' इस घोषणामें कितना ही सुफल मिला था। किन्तु विलायतके मन्त्रिवर एलेनबराने इसका घोर प्रतिवाद किया।

इसी समय भारतराज्य कम्पनीके हाथसे निकाल इङ्गलैण्डराजके अधीन करनेको पारलियामेण्टमें नाना तर्क वितर्क होने लगे। लार्ड एलेनबराने कहा—पहले देशमें शान्ति स्थापित होने दीजिये, फिर इन सकल विषयों पर विचार किया जावेगा। परन्तु उनकी बात न चली। १८५८ ई० को २ री अगस्तको भारतराज्य गवर्नमेण्टके अधीन करनेका कानून निकल गया। इङ्गलैण्डमें भारतसचिव नामक स्वतन्त्र मन्त्री पर समस्त भार पड़ा था। निम्नलिखित नियम लिपिबद्ध हुआ—भारतसचिव पारलियामेण्टके सभ्य रहेंगे और उनके नीचे भारतमें एक वायसराय (Viceroy) अर्थात् राजप्रतिनिधि नियुक्त होंगे। यही बात भारतवासियोंको बतानेके लिये घोषणापत्र भारतको प्रेरित हुवा।

कम्पनी देखो।

१८५८ ई० के अक्तूबर मास यह घोषणापत्र लार्ड कैनिङ्गके पास पहुंचा था, साथ ही महारानीका एक पत्र भी मिला। उसमें यह राजप्रतिनिधि मनोनीत हुए थे। १ली नवम्बरको यह घोषणापत्र भारतकी नाना भाषाओंमें अनुवादित कर भारतमें बांटा गया कि महारानीने अपने हाथमें भारतराज्य लिया था। अङ्गरेजोंके वधसम्बन्धीय अपराधियोंको छोड़ कर घोषणापत्रमें दूसरे सभी विद्रोहियोंका अपराध क्षमा कर दिया गया। १८५९ ई० के जनवरी महीने इन्होंने अपने आप और एक घोषणापत्र निकाला था। उसमें विद्रोहियोंको आत्मसमर्पण करनेका समय मिला।

सिपाहियोंका विद्रोह उस समय एक प्रकार रुका था। परन्तु इधर दूसरा ही झगड़ा लग गया। जिन पर निर्भर करके सिपाही विद्रोहकी शान्ति हुई थी, वही अंगरेज सैनिक बिगड़ उठे। भारतका शासन कम्पनीके हाथसे इङ्गलैण्डकी महारानीके हाथ तो चला गया, परन्तु उससे कोई विशेष परिवर्तन न हुवा। जो व्यक्ति जिस काममें लगा था, वह उसीको करता रहा। कम्पनीकी सेना राजसेना बन गयी। उस समय सेनादलने कहा था—'हम लोग कम्पनीके नौकर हैं। हमारी सम्मति लिये बिना ही हमें राजाके अधीन कर दिया गया है। इसलिये या तो हमें अलग कर दिया जावे, नहीं तो नूतन नियोगके लिये नया पारितोषिक मिले।' इलाहाबाद, मेरठ आदि स्थानोंमें गोरे बिगड़े थे। गवर्नमेण्टको अगत्या दश सहस्र सेना छोड़ देना पड़ी। इससे गोरोंका विद्रोह एक प्रकार शान्त हुवा।

फिर लार्ड कैनिङ्गने कलकत्ते आ आभ्यन्तरिक व्यापारमें मन लगाया था। विद्रोह-व्यापारमें कितना

ही अर्थ व्यय हुआ। उस समय राजकोष शून्यप्राय था। इन्हें इस बातकी विषम चिन्ता पड़ गयी—किस उपायसे अर्थागम होगा, कैसे शासन चलेगा। लार्ड कैनिङ्गने एक अच्छे राजस्वकर्मचारीके लिये विलायत को लिखा था। विलायतसे जेम्स विलसन साहब भारत भेजे गये, उसी समय सर बरटल् फ्रियार नामक कौंसिलके दूसरे सभ्य भी प्रेरित हुये। फ्रियार साहबने कैनिङ्गको विशेष सहायता दी थी। इन्हींके गुणसे भारतके साहब लोग कैनिङ्गके प्रति वीतराग हुवे।

उनके आनेसे पहले लार्ड कैनिङ्ग युक्तप्रदेश गये थे। मई मासको विद्रोहकी पूर्ण शान्तिका समाचार मिला। जिन राजावोंने विद्रोहके दमनमें सहायता पहुंचायी थी, उनको पुरस्कार इत्यादि देनेके लिये लार्ड कैनिङ्गने जगह जगह दरबार किया। अयोध्या, कानपुर, दिल्ली, अम्बाला, पेशावर, खैबरपास प्रभृति स्थानोंमें दरबार हुआ। इससे पहले देशीय राजावोंको उत्तराधिकारी न रहने पर दत्तकग्रहणकी अनुमति न थी। अब अनुमति मिल जानेसे देशीय राजाओंको विश्वास आ गया, कि अंगरेजोंने उनका अधिकार छीन लेनेका सङ्कल्प परित्याग कर दिया था। १८६० ई० को २१ वीं मईको यह कलकत्ते लौट आये।

उसी समय नीलवाले साहबोंके साथ प्रजाका विवाद उपस्थित हुवा। अस्त्र-आईन पर साहबोंमें घोरतर आन्दोलन चला करता था। फिर महारानी-की सेनाके साथ भारतीय सेनाके सम्मेलनका भी सारा बन्दोबस्त इसी समय करना पड़ा। इन सकल विषयों की यथायथ मीमांसा करके १८६० ई० के शरत्काल बड़े लाटको दोबारा युक्तप्रदेश जाना पड़ा। पटनाके कई राजाओंसे साक्षात्कार करके इन्होंने जबलपूर पहुंच एक दरबार किया था। ग्वालियरके सेंधिया और इन्दौरके होलकर प्रभृति महाराष्ट्र राजा वहां लार्ड कैनिङ्गसे जाकर मिले। १८६१ ई० के फरवरी मास यह कलकत्ते वापस पहुंचे थे। इसी समय पुरानी सदर दीवानी और सुपरिम कोर्ट एकत्र करके हाई-कोर्ट नाम रखा गया। बड़े लाटकी व्यवस्थापक सभा-का भी कितना ही परिवर्तन हुआ। १८६१ ई० को इण्डिया-कौंसिल-एक्ट कानूनके अनुसार भारतके गवर्नर जनरल कुछ क्षमतायें मिली थीं। तदनुसार इन्होंने राजकार्यके कई स्वतन्त्र विभाग कर डाले। होम डिपार्टमेण्ट, राजस्व एवं कृषिविभाग, धन तथा वाणिज्य-विभाग, समर-विभाग, पूर्त-विभाग सभी विभागों-का भार भिन्न भिन्न सभ्योंको सौंपा गया। फारिन वा वैदेशिक विभाग बड़े लाटके अपने ही तत्त्वावधानमें रहा। इस विभागमें देशीय राजावोंका कार्य कलाप आलोचित होता था।

लार्ड कैनिङ्गने देशीय और युरोपीय सेनाओंका ऐसा अनुपात लगाया था कि दो देशीय और एक युरो-पीय सेनादलका हिसाब रहे। उससे युरोपीय सैन्य-संख्या ७०००० और देशीय सैन्यसंख्या १२५००० हो गयी। पूर्वको भारतमें जो युरोपीय सैन्यसंग्रह होता था, वह बन्द हुआ।

पूर्वसे गवर्नमेण्टका ऋण क्रमशः बढ़ रहा था। विद्रोहके पीछे वह और भी बढ़ चला। नूतन राजस्व-सचिव विलसन साहब आयवृद्धिके नाना उपाय करने लगे। इनकम टैक्स (आयकर) स्थापित हो गया। मन्द्राज और बम्बई गवर्नमेण्टने उस पर आपत्ति उठा कर कहा था—इन प्रदेशोंमें जब विद्रोह नहीं हुआ, तो लोग क्यों कर देंगे? किन्तु उनकी बात न चल सकी। विलसन साहबके बाद १८६१ ई० को लेङ्ग साहब भारत-सचिव हुए। उन्होंने नाना विषयोंमें नाना व्यय-सङ्कोच करके राजस्वके आय व्ययका सामञ्जस्य लगा दिया।

अवधके राजपूतोंमें उस समय शिशुहत्या होती थी। लार्ड कैनिङ्गने उसके निवारण पर कृतसङ्कल्प होके १८६१ ई०के अक्तूबर महीने लखनऊमें दरबार किया और एक अच्छीसी वक्तृता देके यह प्रथा उठा-देनेके लिये सबसे कहा सुना। तालुकदार उसमें सम्मत हो गये। १० वीं नवम्बरको यह कलकत्ते लौटे। लार्ड कैनिङ्गके युक्त प्रदेश जाने पर लेडी कैनिङ्ग दारजि-लिङ्ग घूमने गयी थीं। प्रत्यागमनके समय राहमें उन्हें ज्वर चढ़ा। कलकत्ते पहुंचने पर मालूम हुआ कि ज्वर सामान्य न था। १८ वीं नवम्बरको प्रातःकाल उनका

प्राय छूट गया। सुख दुःखकी सङ्गिनी प्रियतमा पत्नीके वियोगसे इनका हृदय टूटा था। १८६१ ई०को १२ वीं मार्चको लार्ड एलगिन नये गवर्नर जनरल हो कर आ पहुंचे। एक सम्राट् पीछे न्यायवान्, दयालु, उदार-प्रकृति लार्ड कैनिङ्गने विलायतकी यात्रा की थी। जाते समय क्या भारतवासियों और क्या साहबों सभीने एक वाक्यसे प्रशंसापूर्वक इन्हें विदा किया। जिस शोकसे लार्ड कैनिङ्गका दिल टूटा था, उसीमें पड़ कर इन्होंने १८६२ ई०को १७ वीं जनवरीको इहलोक परित्याग किया।

कैनित (हिं० स्त्री०) खनिजद्रव्यविशेष, खानसे निकलनेवाली एक चीज। यह खादके काम आती है। इसमें लवाखार या पोटाश अधिक रहता है।

कैन्दर्भ (सं० त्रि०) किन्दर्भस्य गोत्रापत्यम्, किन्दर्भ-अञ्। अनृष्यानन्तर्ये विदादिभ्योऽञ्। पा ४।१।१०४। किन्दर्भवंशीय।

कैन्दास (सं० त्रि०) किन्दासस्य गोत्रापत्यम्, किन्दास-अञ्। किन्दासवंशीय।

कैन्दासायन (सं० पु०) किन्दासस्य युवापत्यम्, किन्दास-फक्। निन्दित दासका युवा सन्तान।

कैन्नर (सं० त्रि०) किन्नरः तन्नामवर्ष अभिजनः पित्रादिक्रमेण निवासस्थानं अस्य, किन्नर-अञ्। वंशपरम्पराक्रमसे किन्नर वर्षमें रहनेवाला। किन्नरस्येदम्, किन्नर-अण्। २ किम्पुरुषसम्बन्धीय।

कैपीला (सं० स्त्री०) कृष्णत्रिवृत्, काला निसोत।

कैफ (अ० पु०) १ मद, नशा। २ बुलबुलको लड़ानेसे पहले खिलाया जानेवाला एक चारा। इसमें कोई न कोई नशेकी चीज मिला देते हैं।

कैफियत (फा० स्त्री०) १ वर्णन, बयान। २ विवरण, हाल। ३ अनोखी घटना, अनहोनी बात।

कैफी (अ० वि०) १ उन्मत्त, मतवाला। २ नशाबाज।

कैबर (हिं० पु०) गांसी, तीर।

कैबिनेट (अ० पु०—Cabinet) १ धीसचिवसभा, दीवानखास। २ छोटा कमरा। ३ काष्ठनिर्मित द्रव्य, लकड़ीका सामान। ४ फोटोका कार्डसे दूना आकार।

कैमगञ्ज (कायमगञ्ज) युक्तप्रदेशके फरुखाबाद जिलेकी एक तहसील और उसी तहसीलका हेड-क्वार्टर। यह तहसील अक्षा० २७° २१′ तथा २७° ४३′ उ० और देशा० ७९° ८′ एवं ७९° ३७′ पू०के बीच पड़ती है। १९०१ ई० को इसकी लोकसंख्या १६८६०६ थी। इसमें ३९७ गांव और २ शहर आबाद हैं। इसके दक्षिण अञ्चलमें बगार नदी घूम घूम कर बहती है। यहां ऊख और तम्बाकूकी खेती बहुत होती है। खेत नहर और कूएंसे सींचे जाते हैं।

कायमगञ्ज नगर अपनी तहसीलका हेड-क्वार्टर है। यह अक्षा० २७° ३०′ उ० और देशा० ७९° २१ पू० में पड़ता है। १७१३ ई० को फरुखाबादके पहले नवाब मुहम्मद खान्‌ने अपने बेटे कायम-खान्‌के नाम पर इसको बसाया था। इसकी चारों ओर बहुतसे पठान रहते, जो ई० १७ शताब्दको यहां आकर बसे थे। कायमगञ्जसे १ मील उत्तर मजरसीदाबाद गांव है, जहां तम्बाकू बहुत उपजती है। इसके आस पास पठान फौजमें खूब भरती होते हैं। १८५७ ई०को कालपीके भगोड़े बलवाइयोंने कायमगञ्ज तहसीलको पूरे तौर पर घेर लिया था। शहरमें एक लम्बा चौड़ा पक्का बाजार है, जिससे छोटी छोटी गलियां चारों ओर निकली हैं।

कैमा (हिं० पु०) कदम्बविशेष, किसी प्रकारका कदम। इसका पत्र कचनारकी भांति चौड़े सिरेका रहता और फूल छोटे कदम्बसा लगता है, जिसः पर सफेद जीरा नहीं पड़ता। काष्ठ पीतवर्ण और अति सुदृढ़ होता है।

कैमुतिक (सं० पु०) किमुत इत्यर्थादागतः, किमुत-ठक्। न्यायविशेष। न्याय देखो।

कैयट (कैय्यट) प्रसिद्ध वैयाकरण और महाभाष्यकी भाष्यप्रदीप-टीकाके रचयिता। यह जैयटके पुत्र और महेश्वरके शिष्य थे।

काश्मीरके पण्डित कहते कि कैयट काश्मीरके पाम-पुर नगरमें (किसीके मतसे येच ग्राममें) रहते थे। वह अति दरिद्र थे और बड़े कष्टसे अपना काम चलाते थे। ऐसी अवस्थामें भी उनके जीवनका प्रधान व्रत—महाभाष्य और व्याकरणपाठ था। महाभाष्यमें उनकी

ऐसी प्रगाढ़ व्युत्पत्ति रही कि स्वयं वररुचि भी जिन स्थानोंमें सन्देह कर कुण्डल लगा गये हैं, वह विना पुस्तक देखे छात्रोंको समझा सकते थे। किसी समय दक्षिणदेशसे कृष्णभट्ट नामक एक पण्डित कश्मीरमें उनसे मिलने गये थे। उन्होंने जाकर देखा—कैयट सामान्य नौकरकी भांति दैहिक परिश्रम करनेमें लगे हैं और साथ ही छात्रोंको भाष्यका अर्थ भी समझा देते हैं। वह कैयटका असाधारण पाण्डित्य और बहुत बुरी अवस्था देख विमुग्ध हो गये। फिर विदेशी पण्डित कश्मीरराजके निकट पंहुचे और कैयटके नाम एक ग्रामका शासन तथा जीविकाका उपयुक्त धान्यसंग्रह करके फिर उनके पास लौट पड़े। किन्तु तेजस्वी कैयटने राजाकी दी हुई भूमि ली न थी। अन्तको जन्मभूमि छोड़ वह काशी पैदल चले गये। यहां उन्होंने पण्डितसभामें विद्याके बलसे सबको हराया था। काशीमें ही सभापतिके अनुरोधसे उन्होंने सुप्रसिद्ध 'भाष्यप्रदीप' बनाया।*

भाष्यप्रदीपमें भर्तृहरिका वाक्यपदीय, हरिसेतु और काशिकावृत्तिको उद्धृत किया गया है। फिर सर्वदर्शनसंग्रह तथा माधवीयधातुवृत्तिमें माधवाचार्य, रघुवंशकी टीकामें मल्लिनाथ और श्रीनिवास दीक्षित आदिने कैयटका मत उद्धृत किया है। इससे कोई कोई अनुमान लगाता है कि कैयट खृष्टीय दशम और द्वादश शताब्दके मध्य किसी समय विद्यमान थे।

कैया (हिं० पु०) १ यन्त्रविशेष, एक औजार। इससे टीनवाले बर्तन रांजते हैं। यह करछी-जैसा लोहेका बनता और एक ओर लकड़ीका दस्ता लगता है। २ मापविशेष, आध पावकी एक नाप। इससे मध्य-भारतमें घृत, तेल आदि नापा जाता है।

कैरणक (सं० त्रि०) किरणेन निर्वृत्तम्, किरण-वुञ्। किरणनिर्वृत्त, किरणजन्य, किरनोंवाला।

कैरली (सं० स्त्री०) विड़ङ्ग।

कैरलेय (सं० पु०) केरलानां राजा, केरल-ढक्। केरल-देशाधिपति, केरलके राजा।

* (G. Buhler's Sanskrit Mss in Kashmir etc: p.72)

कैरव (सं० पु०-क्ली०) के जले रौति केरवः हंसः तस्य प्रियम्, केरव-अण्। १ कुमुद, बघोला। २ श्वेतवर्ण उत्पल, सफेद कंवल। (भारत १।१।८६) ३ विड़ङ्ग। ४ श्वेतकुमुद। कुत्सितो रवो यस्य कुरवः, स्वार्थे अण्। ५ शत्रु। ६ कितव, जुवारी।

कैरविका (सं० स्त्री०) कुमुदिनी, छोटा बघोला।

कैरविणी (सं० स्त्री०) कैरव पुष्करादित्वात् इनि। उत्पलिनी, कुमुदिनी।

कैरविणीखण्ड (सं० पु०) कैरविणी समूहार्थे खण्ड। कुमुदलता समूह।

कैरविणीफल (सं० क्ली०) कैरविण्याः फलम्, ६-तत्। कुमुदिनीका वीज।

कैरवी (सं० पु०) कैरवं प्रियत्वेन प्रकाश्यत्वेन वा अस्त्यस्य, कैरव-इनि। चन्द्र।

कैरवी (सं० स्त्री०) कैरवस्य प्रिया, कैरव-अण्-ङीप्। १ चन्द्रिका, चांदनी। २ मेथिका, मेथी।

कैरवीकन्द (सं० पु०) तैलकन्द।

कैरा (खेड़ा) कैरा जिलेका प्रधान नगर। यह अक्षा० २२° ४५´ उ० और देशा० ७२° ४१´ पू० पर मुहम्मदा-बाद रेलवे ष्टेशनसे ७ मील दक्षिण-पश्चिम और अमि-दावादसे २० मील दक्षिण-पश्चिम अवस्थित है। लोक-संख्या १०३८२ है। देशीय प्रवादके अनुसार यह नगर पाण्डवोंके समयमें भी मौजद था। यहां अनेक ताम्र-शासन मिले हैं। उनसे समझ पड़ता है कि कैरा खृष्टीय ५म शताब्दीको बहुत विख्यात था। वलभी राजावोंके समय इसको शोभासमृद्धि बहुत रही। १८श शता-ब्दीके प्रथम यह वाविवंशके हाथ लगा, अन्तमें १७५३ ई० को दामाजी गायकवाड़के अधीन हुवा और १८०३ ई० को आनन्दराव गायकवाड़ने अंगरेजोंको दे दिया। सीमावर्ती नगर होनेसे १८२० तक इसमें गोलन्दाजों, सवारों और पैदल फौजकी छावनी रही। पीछे छावनी दीसाको उठ गयी।

कैरा (हिं० पु०) १ धूमरितवर्ण, भूरा रंग। २ रक्ताभ शुक्लता, सुर्खीमायल सफेदी। ३ सोकना बैल। इसका चमड़ा लाल और बाल सफेद होता है। यह बहुत तेज पर सुकुमार रहता है। (वि०) ४ कैरा रंग-वाला। ५ कंजा।

कैराटक (सं॰ पु॰) किरं पर्यन्तभूमिं अटति, किराटक स्वार्थे अण्। स्थावरविषभेद। इसमें अफीम, कनेर, संखिया वगैरह शामिल हैं।

कैरात (सं॰ पु॰-क्ली॰) किरात इव शूरः, इवार्थे अण्। १ बलवान् पुरुष। इसका पर्याय—दोर्ग्रह और चाम है। किराते पर्यन्तदेशे भवः। २ भूनिम्ब, चिरायता। ३ शबरचन्दन। कैरातः किरातसम्बन्धी वेशोऽस्त्यस्य। ४ किरातवेशधारी महादेव। ५ जलपक्षिविशेष, पानीकी कोई चिड़ियां। (त्रि॰) किरातस्येदम। ६ किरातसम्बन्धीय।

कैरातक (सं॰ क्ली॰) कैरात स्वार्थे कन्। १ शबर चन्दन। (त्रि॰) २ किरातसम्बन्धीय। (महाभारत)

कैरातचन्दन (सं॰ पु॰-क्ली॰) चन्दन जो बहुत पीला न हो। कोङ्कण देशमें इसे शबरचन्दन कहते हैं। यह शीतल, तिक्त, कान्तिकर और विचर्चिका, कुष्ठ, कण्डू, कफ, दद्रु, विष, रक्तपित्त, क्रमि, तृषा, ज्वर और दाहको दूर करनेवाला है। (वैद्यकनिघण्ट)

कैरातिका (सं॰ स्त्री॰) कैरात स्वार्थे कन्-टाप् इत्वञ्च। १ किरातसम्बन्धिनी। २ किरात-रमणी। (अथर्व २०।४।१४)

कैरान—युक्तप्रान्तके मुजफ्फरनगर जिलेकी उत्तर-पश्चिम तहसील। यह साथ अपने ४६४ वर्गमील क्षेत्र फलके अक्षा॰ २९° १९´ तथा २९° ४२´ उ॰ और देशा॰ ७७° २´ एवं ७७° ३०´ पू॰ के बीच पड़ती है। इसमें ५ परगने हैं—कैरान, झिंझाना, शामली, थाना और बिदौली। कैरानकी लोकसंख्या अनुमानतः २२४६७९ है। इसमें पांच शहर कैरान, थानाभवन, शामली, जलालाबाद और झिंझान और २५६ गांव बसे हैं। पश्चिम सीमा पर यमुना बहती और झीलों तथा नदियोंकी कोई कमी नहीं पड़ती। पूर्व यमुनाकी नहर ऊंची जमीन सींचती है।

कैरान—युक्तप्रान्तके मुजफ्फरनगर जिलेकी कैरान तहसीलका हेड-क्वार्टर। यह अक्षा॰ २९´ २४´ उ॰ और देशा॰ ७७°१२´ पू॰ में पड़ता है। मुजफ्फरनगरसे पक्की सड़क आकर यहीं पूरी हो गयी है। १९०१ ई॰ को इस शहरकी आबादी १९३०४ थी। जहांगीर और शाह आलमके चिकित्सक मुकरव खान्‌को कैरान और उसके आस-पासका देश मुआफी मिला था। उन्होंने एक दरगाह बनायी और एक बड़े तालावके एक उम्दा फुलवाड़ी लगायी। नगरमें १६ और १७ शताब्दकी कई मसजिदें भी हैं। बाजार साफ और पोख्ता है। १८७४ ई॰ को इस शहरमें म्युनिसपालिटी हुई। रङ्गीन कपड़े पर शीशेके छोटे छोटे टुकड़े जड़ कर भड़कीले परदे तैयार किये जाते हैं। यहां अनाजका खासा कामकाज होता और कुछ छींटका कपड़ा भी छपता है। कैरानमें तहसीलको छोड़ कर मुनसफी भी है।

कैराल (सं॰ क्ली॰) किरं पर्यन्तभूमिं अलति पर्याप्नोति, किर-अल्-अण्। विड़ङ्ग, वायविड़ङ्ग।

कैराली (सं॰ स्त्री॰) कैराल गौरादित्वात् ङीष्। १ भूनिम्ब, चिरायता। २ विड़ङ्ग।

कैरी (हिं॰ स्त्री॰) १ धूसरितवर्णा, भूरी। २ लाली लिये सफेद।

कैर्मेदुर (सं॰ क्ली॰) १ किसी देशका नाम। (त्रि॰) २ कैर्मेदुरका रहनेवाला।

कैलकिल (सं॰ पु॰) किलकिलानगरी तत्र भवः, किलकिला-अण्। केलकिलानगरवासी यवन राजा।

डाक्टर भाऊदाजीका मतानुसार वाकेटकके सेन-राजा ही पुराणमें केलकिल यवन कहे गये हैं। विष्णु-पुराणके मतमें इस वंशके प्रथम राजा विन्ध्यशक्ति और फिर पुरञ्जय, रामचन्द्र, धर्म, वराङ्ग, क्षतनन्दन, सुषिनन्दि, नन्दियशः और शिशकप्रवारो इन ९ लोगोंने १०६ वर्ष राजत्व किया था। उसके पीछे इस वंशमें और १३ राजा हुए। (विष्णुपुराण ४। २४ अ॰)

प्रत्नतत्त्ववित् कनिंहम साहबने शेषोक्त १३ राजावोंमें कईके नाम शिलालिपिसे उद्धृत किये हैं, यथा—प्रवर-सेन, रुद्रसेन, पृथिवीसेन, २य रुद्रसेन, २य प्रवरसेन और देवसेन। उनके मतमें विन्ध्यशक्ति २९४ ई॰ और शेषोक्त देवसेन ५२५ ई॰ को राजत्व करते थे।* किन्तु वाकाटकके सेनराजावोंने अपनेको विष्णुरुद्र ऋषिका वंशधर बताया है। इसमें बड़ा सन्देह है कि वाकाटकके यह राजा यवन थे या नहीं।

* A. S. R. Vol. XVII, P. 87; Ind Ant. XII. P. 239 ff, Ep. Ind. III. P. 23.

कैलात (सं० वि०) किलातस्य गोत्रापत्यम्, किलात-विदादित्वात् अञ्। अनृष्यानन्तर्ये विदादिभ्योऽञ् पा। ४।१।१०४। किलातवंशीय।

कैलास (सं० पु०) के जले लासो लसनं दीप्तिरस्य केलसः स्फटिकः तस्येव शुभ्रः, केलस-अण्। यद्वा केलीनां समूहः कैलं तेन आस्यतेऽत्र, आस आधारे यञ्। स्वनामप्रसिद्ध पर्वत, महादेव और यक्षाधिप कुवेरका वासस्थान। वृहत्संहिताके कूर्मविभागमें उत्तर दिक्को कैलास-पर्वत निर्णीत हुआ है। कैलास-पर्वत दूरसे शुभ्र मेघ जैसा देख पड़ता है। यहां किन्नर और गन्धर्व देवकन्याओंके साथ मिलकर गाते बजाते देवदेवको रिझाते हैं। (हरिवंश २०२ अ०)

मत्स्यपुराणमें लिखा है—नाना रत्नमय शृङ्गयुक्त हिमशैलके पृष्ठ पर कैलास-पर्वत है। इसमें शिवजी वास करते हैं। इससे दक्षिण एलाश्रम, उत्तर सौगन्धिक पर्वत, दक्षिण-पूर्वकोणको शिवगिरि, पश्चिम उत्तर ककुद्मान् और पश्चिम अरुण नामक पर्वत अवस्थित है। कैलास-पर्वतके पाददेशसे शीतल जल परिपूर्ण मन्दोद नामक एक सरोवर निकला है। प्रसन्नसलिला भागीरथी उसी सरोवरसे प्रवाहित हुई हैं। इसके तीर मनोरम और पवित्र एक नन्दनवन है। यक्षाधिपति कुवेर यक्षों और अप्सराओंके साथ सर्वदा इस पर्वतमें रहते हैं। (मत्स्यपु० २१४ अ०)

वर्तमान तिब्बत देशमें मानसरोवरके निकट और कश्मीर राज्यके उत्तरपूर्व कैलास-पर्वत अवस्थित है। यह राक्षसताल वा रावणह्रदसे ५० मील दूर पड़ता है। इस पर्वतसे सिन्धु, शतद्रु और ब्रह्मपुत्र नद उत्पन्न हुए हैं। वर्तमान कैलासका दूसरा नाम गांगरी है। यह सिन्धुनदके उत्पत्ति स्थानसे शारक-सङ्गम तक चला गया है। इसके दक्षिण लाधक, वलति एवं रङ्गद और उत्तर रथोद, कुम्बा, शिखर और ह्रपशा नगर है। इस शैलमें १०००० से १२००० तक ऊंचे गिरिपथ विद्यमान हैं। भोट लोग इसे 'तिसि' कहते हैं। उनके मतसे पृथिवीमें कैलास ही सबसे ऊंचा पहाड़ है।

विष्णुपदपुराण, वराहपुराण आदि ग्रन्थोंमें कैलासका माहात्म्य वर्णित है। पुराणादिमें इसका अपर नाम गणपर्वत और रजताद्रि है। आजकल भी बहुतसे संन्यासी वर्फ तोड़ कर कैलास-पर्वत पहुंचते हैं।

जैन शास्त्रानुसार प्रथम तीर्थंकर श्रीऋषभदेवने कैलास पर्वतसे मुक्ति पाई थी। उसके पुत्र प्रथम चक्रवर्ती भरतने भूत, भविष्यत् और वर्तमानके चौवीस चौवीस तीर्थंकरोंके ७२ सुवर्णमय जैनमंदिर वहां बनवाये थे। (उत्तरपुराण)

२ छह कोनेका एक मन्दिर। इसमें ८ भूमि और बहुतसे शिखर रहते हैं। कैलास १८ हाथ लम्बा-चौड़ा होता है।

कैलासनाथ (सं० पु०) कैलासस्य नाथः, ६-तत्। १ शिव। २ कुवेर। (रघुवंश ५। २८ कैलासपति आदि शब्द भी इसी अर्थमें व्यवहृत होते हैं।

कैलासाचार्य—कैलगजमर्दन नामक संस्कृत तान्त्रिक ग्रन्थके रचयिता।

कैलासी (हिं० वि०) १ कैलाससम्बन्धीय। २ कैलास-का रहनेवाला।

कैलासौका: (सं० पु०) कैलास ओको यस्य, बहुव्री०। १ शिव। २ कुवेर।

कैलिञ्ज (सं० त्रि०) किलिञ्जस्येदम्, किलिञ्ज-अण्। किलिञ्जसम्बन्धीय, बारीक लकड़ीका बना हुआ। (सुश्रुत)

कैवर्त (सं० पु०) के जले वर्तते, वृत-अच्, अलुक् समास ततः स्वार्थे अण्। यद्वा कुत्सिता वृत्तिः किंवृत्तिः सा अस्त्यस्य, किं-वृत्ति-अच् पृषोदरादिवत् साधुः। एक जाति। चलती बोलीमें कैवर्तोंको केवट कहते हैं। आजकल इनमें प्रधानतः २ पृथक् श्रेणियां देख पड़ती हैं। एक हालिक कैवर्त और दूसरी जालिक कैवर्तके नामसे अभिहित है। हालिक कैवर्त कहते हैं कि हम जालिकोंसे कोई संस्रव नहीं रखते, हम मछुवों और दूसरे शूद्रोंसे ऊंचे हैं। वह अपने श्रेष्ठत्व प्रतिपादनके लिये ब्रह्मवैवर्त पुराण जन्मखण्डसे कैवर्त जातिसम्बन्धीय निम्नलिखित वचन उद्धृत किया करते हैं—

> "क्षत्रवीर्येण वैश्यायां कैवतः परिकीर्तितः।
> कलौ तीवरसंसर्गाद्धीवरः पतितो भुवि॥"

क्षत्रियके औरस और वैश्याके गर्भसे जिस जातिकी उत्पत्ति है, उसे कैवत (धीवर) कहते हैं, कलिकाल-

में तीवरोंके संसर्गसे धीवर (कैवर्त) गिर गये हैं।

किसी किसीने पद्मपुराणीय जातिमालाका नाम लेकर ऐसा ही वचन उद्धृत किया है। किन्तु पद्मपुराणकी ५। ६ पोथियोंके किसी खण्डमें इस प्रकारकी जातिमालाका अनुसन्धान नहीं मिलता। भार्गवराम, परशुराम प्रभृतिके नामसे कई जातिमालायें विद्यमान हैं। उनमें लिखा है कि स्वर्णकारके औरस और मोदकीके गर्भसे कैवर्त उत्पन्न होता है।

कैवर्त लोगोंकी उद्धृत बृहत्व्यासंहिता (३य खण्ड, २० अध्याय) में लिखा है—

कैवर्त दो प्रकारके होते हैं—हालिक और जालिक हल चलाकर जीविकानिर्वाह करनेवाले हालिक और मछली मारनेवाले जालिक कहाते हैं। क्षत्रियके औरस और वैश्याके गर्भसे कैवर्त उत्पन्न होते हैं। यह कर्मोंके अनुसार उत्तम और अधम हुए हैं। हालिक कैवर्त भोज्यान्न एवं उत्तम और मत्स्यजीवी जालिक अन्त्यज, पतित तथा नीचकर्मोंके अनुसार अभोज्यान्न बन गये हैं। यह हालिकोंके साथ कृषिमें प्रवृत्त हो कैवर्त कहाये और उन्हींके संसर्गसे शूद्रत्वको पहुंचे हैं। प्रत्येक ही युगमें संसर्गका दोष वा गुण लगा करता है। इसलिये वह भी कैवर्त कहलाये हैं।

फिर उक्त पुस्तकके ४र्थ खण्ड (७ म अध्याय) में यह भी बताया है—

वैश्याके गर्भ और क्षत्रियके औरससे मध्यम और अधम कैवर्त नामक पुत्रोंने जन्म लिया था। इनमें एक हालिक और दूसरा जालिक रहा। हालिक खेतीसे काम चलाता है। जालिक मत्स्यजीवी होता है। जालिक तीवरके संसर्गसे धीवर, नीच कार्यके अनुसार अधम और इसीसे पतित हो गया है।

उपर्युक्त वचन ठीक होनेसे मानना पड़ेगा कि क्षत्रियके औरस और वैश्याके गर्भसे कैवर्त-जाति उत्पन्न हुई है। याज्ञवल्क्यसंहितामें इस प्रकारकी अनुलोम सङ्कर-जाति 'माहिष्य' कही गयी है। इसीसे मालूम होता कि किसी किसी स्थानके कैवर्त अपनेको 'माहिष्य जाति' और वैश्यधर्मी बताते हैं। परन्तु अब बात यह है कि ब्रह्मवैवर्त और बृहत्व्यासके उक्त वचन ठीक हैं या नहीं। पहले तो ब्रह्मवैवर्तपुराणके ब्रह्मखण्डमें अति नीच जातिकी वर्णनाके साथ ही कैवर्त-जातिकी कथा है और उसके पीछे जोला आदि नीच मुसलमान जुलाहोंका उल्लेख है। 'जोला' शब्द ब्रह्मवैवर्त व्यतीत किसी प्राचीन संस्कृत ग्रन्थमें नहीं मिलता। मुसलमानोंके इस देशमें आने पर उनके और हिन्दू जुलाहोंके मिलनसे जोला (जुलहा) जाति निकली है। ऐसे स्थल पर ब्रह्मवैवर्तके जिस अध्यायमें जातिनिर्णय किया है, वह प्राचीन पुराणका अंश नहीं माना जा सकता। अतएव अप्राचीन समझनेसे इसके द्वारा पुरानी कैवर्त-जातिका प्रकृत तत्त्व निर्णीत हो नहीं सकता।

जोला और ब्रह्मवैवर्तपुराण देखो।

दूसरे काशीके संस्कृत विद्यालय और दूसरे भी नाना स्थानोंमें जो व्याससंहिता* विद्यमान है, उससे प्रथमोक्त बृहत्व्यासंहिता कुछ भी नहीं मिलती। उसको पढ़नेसे बोध होता है कि मानो किसी विशेष उद्देश्यसे अप्राचीन कालको ब्रह्मवैवर्त देखके वह बनायी गयी है। सुतरां जब उक्त बृहत्व्यासंहिताके प्राचीनत्व और मौलिकत्वमें घोर सन्देह रह जाता, तो उसी एक पुस्तक पर निर्भर करके कैवर्त-जातिकी उत्पत्ति ठहरायी नहीं जा सकती।

अब देखना चाहिये कि प्राचीन पुस्तकोंमें कैवर्तको क्या कहा है—

शुक्लयजुर्वेदमें दूसरी नीच जातियोंके साथ 'कैवर्त' शब्द सबसे पहले लिखा गया है। (वाजसनेय ३०। १६ भाष्यकारने इस स्थलपर कैवर्त शब्दका 'नौकाजीवी' अर्थ लगाया है।

मनुसंहितामें दो स्थानों (८। २६०, १०। ३४) पर कैवर्त शब्द आया है। प्रथम स्थल पर भाष्यकार मेधातिथिने कैवर्तके सम्बन्धमें लिखा है—'कैवर्तका अर्थ दास है। वह तड़ागखनन प्रभृति कार्योंसे जीविकानिर्वाह करते और जहां उपयुक्त काम पाते, चले जाते हैं।'

---

* Raja R. Mitra's Notices of Sanskrit Mss Vol. VII, p. 199 में भी बृहत्व्यासकी एक दूसरी सूची दी गयी है।

दूसरे स्थान (१०।३४) पर मनुने कहा है— 'निषादके औरस और आयोगवीके गर्भसे नौकर्मजीवी मार्गव उत्पन्न होते हैं। इनका नाम दास है। इन्हें ही आर्यावर्तवासी कैवर्त कहते हैं।'

यहां भी मेधातिथिने लिखा है—'प्रतिलोम प्रकरण रहनेसे ब्राह्मणके औरस और शूद्राके गर्भसे निकला पूर्वकथित निषाद इस स्थल पर नहीं गृहीत हुवा है। परन्तु दस्युकी भांति प्रतिलोममें आयोगवीके गर्भजात प्रतिलोम मार्गवकी ही जीविका नौकर्म है, जिसे आर्यावर्तमें दास वा कैवर्त कहते हैं।'

किसीके मतमें मनुप्रोक्त दास नामक आर्यावर्त-प्रसिद्ध कैवर्त गौण कैवर्त हैं, मूल कैवर्त जाति नहीं। किन्तु अष्टम अध्यायका मनुवचन और उसका मेधातिथिभाष्य पढ़नेसे यह सन्देह मिट जाता है। विशेषत: आज भी कैवर्तजातिमें बहुतसे अपनेको 'दास कैवर्त' कहते हैं। रामायण, महाभारत आदि बहुतसे प्राचीन ग्रन्थोंमें केवल नाव चलानेवाले कैवर्तका ही उल्लेख है। (रामायण, अयोध्या ८४।८, महाभारत, अनुशासन ५१।५) सिवा इसके प्रान्तिशतक (३।१६) हितोपदेश, कथासरित्सागर (२५।४८) आदि विस्तर ग्रन्थोंमें मत्स्यजीवी कैवर्तकी बात आयी है। अमर, हेमचन्द्र, हलायुध प्रभृति अभिधानरचयितावोंने कैवर्त शब्दका मुख्य अर्थ धीवर लिखा है। सुप्रसिद्ध वेदव्यासकी जीवनी पढ़नेसे समझ पड़ता कि पहले धीवर नौकर्मजीवी रहे। मूल भविष्यपुराणके मतमें भी (नौकर्मजीवी) कैवर्तकन्याके गर्भसे व्यासने जन्मग्रहण किया था।

(भविष्यपुराण ४१।२२)

महाभारत आदि पुराने ग्रन्थ पढ़नेसे समझ सकते कि पूर्वकालको नाव चलाना और जाल डाल कर मछलियां पकड़ना ही कैवर्तों की उपजीविका रही।

(अनुशासन ५०।१६)

इसीसे मालूम पड़ता कि जटाधर प्रभृतिके प्राचीन अभिधानोंमें कैवर्तका अपर नाम जालिक लिखा है।

अत्रिसंहिता (१९५ श्लो०) में धोबी, चमार, नट, बरुड़, कैवर्त, मेद और भिल्ल सात जातियोंको अन्त्यज कहा है।

अङ्गिरःस्मृति (३ श्लोक), आपस्तम्बसंहिता (५४ श्लोक) और रुद्रयामलोक्त जातिमालामें भी ठीक यही बात है। इससे बोध होता कि अत्रि, अङ्गिरा, आपस्तम्ब प्रभृति धर्मशास्त्रकारोंके समयमें केवल अन्त्यज कैवर्त ही रहे।

अत्रिसंहिताके दूसरे स्थल (१८२) पर चर्मक, रजक, वेण्य, धीवर और नटको छूकर ब्राह्मणको नहा डालनेको लिखा है।

अत्रिसंहिताके दोनों वचन पढ़नेसे कैवर्त और धीवर एक ही जाति समझ पड़ते हैं। अन्त्यज जाति प्रतिपाद्य अत्रि आदिके श्लोकोंसे मनुसंहिता मिलती है।

रामायण, महाभारत और प्राचीन धर्मशास्त्र पाठसे बोध होता कि पूर्वकालको धीवर वा जालिक कैवर्त ही विद्यमान था। फिर किसी प्राचीन ग्रन्थमें हालिक कैवर्तका नाम नहीं आया। मालूम होता है कि पुरानी कैवर्त जातिके मध्य कोई कोई कृषिवृत्तिको अवलम्बन करके हालिक वा हलवाह कैवर्तके नामसे प्रसिद्ध हुवा अथवा दूसरी किसी जातिने कैवर्त-प्रधान देशमें हल चलानेके काम पर नियुक्त रह हालिककैवर्त नाम पाया है। आज कल हालिक और जालिक कैवर्तोंमें परस्पर कोई संस्रव नहीं, यहां तक कि हालिक कैवर्तोंकी वर्तमान सामाजिक अवस्था देखनेसे वह निकृष्ट अन्त्यज जैसे समझ नहीं पड़ते। दूसरे हालिक कैवर्तोंमें दास नामक एक श्रेणी है। वह वासस्थानके भेदसे दास और ग्रेलपुत्र कहाते हैं। हालिकों और जालिकोंमें वैवाहिक सम्बन्ध न रहते भी एक ही पुरोहित दोनोंका यजन कराता है। कैवर्त या दूसरी जातिवाले इनका अन्न भिन्न जलादि ग्रहण किया करते हैं। हालिक कैवर्तोंके घरमें जालिक दासत्व करते हैं। इसी जातिके संस्रवसे क्या हालिक, हालिककैवर्त नामसे प्रसिद्ध हुये हैं? उक्त दास श्रेणीके मध्य जो कुण्डगोलक हैं, उनका जल अव्यवहार्य होता है।

पहले ही कहा जा चुका है कि हालिक कैवर्त अपनेको माहिष्य जाति बताते और अपने पक्ष समर्थनके लिये कुल्लूक भट्टोद्धृत उशनाका निम्नलिखित वचन दिखाते हैं—

'माहिष्य-जातिकी उपजीविका नृत्य, गीत, नक्षत्र-गणना और शस्यरचा है।' उनके मतमें 'शस्यरचा' शब्द हालिक कैवर्तोंका समर्थक है। हलवाहन वा कृषिकर्म करनेवाले ही हालिक कहाते हैं। किन्तु केवल 'शस्यरचा' कहनेसे शस्योत्पादन वा कृषिकर्मका बोध नहीं होता। स्कन्दपुराणके सह्याद्रिखण्ड (पूर्वभाग, २६। ४४-४६) में लिखा है—

'वैश्याके गर्भ और क्षत्रियके औरससे माहिष्यका जन्म है। यह अनुलोमज, अधिकारनिरत और चतुःषष्टि-कलाभिज्ञ होते हैं। इनमें व्रतबन्धादि सभी क्रियायें वैश्यके समान हैं। ज्योतिःशास्त्र, शाकुनशास्त्र और स्वर शास्त्र ही इनकी जीविका है।'

हालिक कैवर्तोंका जातीय इतिहास आलोचना करनेसे वह उपर्युक्त लक्षणाक्रान्त समझ नहीं पड़ते। ऐसे स्थल पर विशेषतः जब किसी प्राचीन ग्रन्थमें हालिक कैवर्तका विवरण नहीं मिलता, इसका कोई ठीरठीक नहीं लगता कि माहिष्य और हालिक कैवर्त एक ही जाति हैं या नहीं।

१८९१ ई० को लोकगणनाके समय हालिक-कैवर्त-समितिने मरदुमशुमारीके तत्त्वावधायकके पास अंगरेजीका एक छपा आवेदनपत्र भेजा था। उसके १२वें पृष्ठमें जो लिखा है, उससे समझ पड़ता है कि (अश्वमेधपर्व ८३ अ०) अर्जुनने दक्षिण समुद्रके तीर रहनेवाले जिन माहिषकोंसे युद्ध किया था, वही वर्तमान हालिक कैवर्तोंके आदिपुरुष रहे। किन्तु महाभारतके कर्णपर्व (४४ अध्याय) में माहिषक म्लेच्छ बताये गये हैं और हरिवंश (१४ अ०)में लिखा है कि इन माहिषक आदि जातियोंको वशिष्ठके आदेशसे सगर राजाने धर्मच्युत कर डाला था। सुतरां यह ठीक तौरसे नहीं कहा जा सकता कि समुद्रतीरवासी माहिषक ही वर्तमान हालिक कैवर्त हैं या नहीं।

कहीं कहीं कैवर्तोंकी अवस्था कितनी ही उन्नत है। बङ्गालके वरेंद्र, मेदिनीपुर, तमलुक, वालिसिता, तुर्का,सुजामुता, कुतबपुर आदि स्थानोंमें अति प्राचीन कालसे हालिक कैवर्त राजत्व करते हैं। गौड़राज्यमें जब आदिशूरका अभ्युदय न हुवा था, उससे भी बहुत पहले हालिक इस अञ्चलमें राजत्व करते रहे। उनमें तमलुक, मैनागढ़ और वेतालका राजवंश समधिक प्राचीन है। उड़ीसेके कमिश्नर साहबकी रिपोर्ट पढ़नेसे जान पड़ता कि तमलुकका कैवर्त राजवंश ४८ पीढ़ीतक स्वाधीन रहा। अन्तिम स्वाधीन राजा १६५४ ई० को सिंहासनसे उतारे गये। उन्हींके वंशधर वर्तमान तमलुकगढ़के अधिपति हैं।

वरेन्द्र, ताम्रलिप्त, मेदिनीपुर, मैनागढ़ प्रभृति शब्द द्रष्टव्य हैं।

हालिक कैवर्तोंमें प्रधानतः निम्नलिखित कई गोत्र देख पड़ते—हैंशाण्डिल्य, काश्यप, वात्स्य, सावर्ण्य, भरद्वाज, मौद्गल्य, पलासर (पराशर ?), नागेश्वर, विलास, वशिष्ठ, व्यास और आलम्यान। फिर हालिक कैवर्त आदि, मध्य और अन्त्य तीन भागोंमें विभक्त हैं। विवाह आदिके समय यह श्रेणी सबकी और दृष्टि रखके काम करती है।

हालिकोंमें भी कई समाज प्रचलित हैं। एक समाजके लोग दूसरे समाजमें जानेसे अपदस्थ हुवा करते हैं। कौलीन्यका परिचय उपाधि द्वारा नहीं, वंश द्वारा ही मिलता है। कुलीन, मौलिक आदि ऊंची श्रेणियोंमें अपने गोत्रका आदान प्रदान नहीं चलता, परन्तु निम्नश्रेणीमें इस नियमकी सर्वदा रक्षा कम होती है।

बङ्गालमें हालिक कैवर्तोंकी विवाह प्रथा उच्चश्रेणीके हिंदुवोंसे मिलती जुलती है। प्रथम तैलहरिद्रावितरण, सङ्कल्प, अधिवासर (मङ्गल्यादि द्रव्यस्पर्शन), गौर्यादि षोड़शमातृका पूजा, वसोधाराकी पूजा, आयुष्यमन्त्र, आभ्युदयिक श्राद्ध, समन्त्रक वर आह्वान, भवदेवके मतानुसार मन्त्रादि द्वारा विवाह एवं पाणिग्रहण और लाजहोम, दूसरे दिन जलसेक, तीसरे दिन वरको विदा तथा वरका स्वगृह प्रवेश, अक्षसूत्रपरित्याग, नववधूका गृहप्रवेश, कौलिकमाङ्गलिक पूजा एवं ब्राह्मणभोजन और चौथे दिन पाकस्पर्श होता है। कन्या ऋतुमती होनेसे पहले ही विवाह कर देनेका नियम है।

भारतवर्षके नाना स्थानोंमें जालिक कैवर्त रहते हैं। फिर नाना स्थानों पर कैवर्त जातिके सम्बन्धमें

नानाविध प्रवाद चलता है। जालिक कैवर्त अन्त्यज हैं। वर्णब्राह्मण उनका पौरोहित्य करते हैं। जालिकका जल शुद्ध नहीं होता। इनमें बहुतसे लोग वैष्णव हैं। जालिक सभी देवदेवियोंको मानते हैं। विवाहकी प्रणाली स्थानभेदसे निम्नश्रेणीके अपरापर हिन्दुवोंसे मिलती है। इनमें विधवाविवाह नहीं चलता। कहीं कहीं बाल्यकालको ही कन्याका विवाह कर देना अच्छा समझा जाता है, परन्तु किसी प्रकार कन्या ऋतुमती होने पर भी उसके विवाह करनेमें कोई दोष नहीं लगता। बाल्यविवाह सर्वत्र आदरणीय है।

कैवर्तोंमें कहीं ३०, कहीं १५ और कहीं १० दिन अशौच ग्रहण करते हैं।

बिहारके कैवर्तोंको केवट कहते हैं। मछली पकड़ना और खेती करना इनकी प्रधान उपजीविका है। ऊंची जातिके निकट यह नौकरी भी करते हैं। इसी नौकरीके अनुसार समाजमें इनका सम्मान होता है। इनकी ५ श्रेणियां हैं—

अयोध्यावासी, थिविहार, गर्भाइत, सघोर और मछुवा। अयोध्यावासी अवधसे आये हैं। इनमें अधिकांश खेती करते हैं। थिविहार या घृतपायी युक्तप्रदेशके लोग हैं। वहां पहले यह नाव चलाते और मछली पकड़ते थे। प्रभुका उच्छिष्ट भोजन करनेसे इनका ऐसा नाम पड़ गया है। दरभङ्गा महाराजके राजभवनमें पहले कुरमी जातिके लोग काम करते थे। किसी किसीके विश्वासघातकताका काम करनेसे राजाने उनको निकाल युक्तप्रदेशके केवटोंको रखा था। यह लोग जैसा काम करते थे, उसीके अनुसार इनके नाम भी रखे गये। राजाके पास रहनेवाला खवास, भाण्डारका कर्मचारी भाण्डारी, बन्धनका कामकरनेवाला डेरादार, वस्त्रादिका तत्त्वावधायक कापड़ और राजाकी अपनी जमीनका काम देखनेवाला कामत नामसे अभिहित था। पीछे क्रमक गर्भाइत और खास काम करनेवाले वहियावक नामसे अलग अलग श्रेणीबद्ध हुए। जो पहलेसे नौकाका व्यवसाय करते थे, वह मछुवा समझे गये। वर्तमान बिहारी कैवर्तोंमें भदौरिया, विश्वास, हाजरा, हतवार, कापड़, महरना, मरर, मुखिया, भाण्डारी, चौधरी, डेरादार, जानदार, कामत, खवास, महतो, मन्टर इत्यादि उपाधि हैं।

इनमें बाल्यविवाह ही प्रचलित है। ५से १० तक बालक और ३से १० वर्ष तक बालिकाके विवाहका समय है। वरकी अपेक्षा कन्याका वयस अधिक होनेमें कोई बड़ी अड़चन नहीं, परन्तु ऊंचाईमें वह बड़ी न होना चाहिये। वरसे कन्या यदि दीर्घ हो अथवा दोनों बराबर बैठें, तो उस विवाहमें मङ्गल नहीं। विवाहसे पहले दोनोंको नाप लेते हैं। वरकी अपेक्षा देखनेमें कन्या लम्बी लगनेसे विवाह नहीं होता। विवाहका सम्बन्ध स्थिर होने पर वरपक्षीय लोग कन्या देखने जाते हैं। पीछे तिलकके उपलक्षमें कन्याकर्ता वरके घर वस्त्र अर्थ आदि भेज देता है। तिलक चढ़ जाने पर मैथिल ब्राह्मण कोई शुभ दिन ठहराते हैं। विवाहके पूर्व दिन वर और कन्या दोनोंके घर 'मट-कोड़वा' हुआ करता है। इसके लिये घरकी स्त्रियां सदल गाते गाते ग्रामके बाहर पानी लेकर जाती हैं। वहां वर और कन्याको स्नान करा, वहांसे मृत्तिका ला और उससे घरमें एक चूल्हा बना गृहदेवताकी पूजाके उपलक्षमें घी तपाती और खीलें भूनती हैं। विवाहके समय इन खीलोंकी आवश्यकता पड़ती है। उसी समय एक बकरा भी बलि दिया जाता है। विवाहके दिन कन्याके घरकी स्त्रियां अपने बीच एकके मस्तक पर एक घड़ा पानी रख दलबद्ध होकर वरके घर जाकर गाती हैं, गालियां सुनाती हैं और हंसी ठट्ठा उड़ाती हैं। वरपक्षके उन्हें पान और रुपया देने पर वह निरस्त होकर चल देती हैं। पीछे कन्याकी भतीजी सम्पर्कीय कोई स्त्री आ वरके गलेमें डुपट्टा डाल उसे कन्याके घर ले जाती है। वहां उन्हें मण्डपकी चारो ओर घुमाते घुमाते खीलें छोड़ी जाती हैं। फिर वर और कन्याको बैठा पुरोहित सिन्दूर दान करता और उभयपक्षके पूर्वपुरुषोंका नाम आम्रपत्र पर लिख कर उसे वरकन्याके हाथमें बांध देता है। किसी एक घरमें परमान्न प्रस्तुत रहता है। वहां वर और कन्याके गात्रसे एक एक बिन्दु रक्त लेकर परमान्नमें मिलाया और दोनोंको खिलाया जाता है।

विधवा सगाई कर सकती हैं। विवाहके भङ्गका नियम नहीं चलता। स्वजातिके मध्य व्यभिचार लगानेसे उसका प्रायश्चित्त किया जाता है। परन्तु दूसरी जातिके साथ ऐसा होने पर स्त्रीको घरसे निकाल देते हैं।

भगवती ही इनकी आराध्य देवता हैं। कोई बिसहरको भी पूजता है। फिर बन्दी, गोरैया, नरसिंह और कालीकी उपासना भी की जाती है। विहारमें कैवर्तोंके हाथका पानी शुद्ध समझते हैं।

दाक्षिणात्यमें कैवर्तका नाम 'भोई' है। भोई देखो।

२ महानिम्ब।

कैवर्तक (सं० पु०) कैवर्त स्वार्थे कन्। कैवर्त, केवट। (रामायण २। ८३। १५)

कैवर्तमुस्त, कैवर्तमुस्तक देखो।

कैवर्तमुस्तक (सं० क्लो०) कैवर्तिका, पानीमें पैदा होनेवाला एक मोथा। यह ठण्डा, तीता, कसैला, कडुवा, कान्तिकर और कफ, पित्त, रक्तदोष, विसर्प, कुष्ठ तथा कण्डूघ्न होता है। कैवर्तमुस्तक वितुन्नक नामक वृक्षकी छाल है, जो देखनेमें मोथा-जैसी लगती है। (भावप्रकाश)

कैवर्तिका (सं० स्त्री०) कैवर्ती जलस्था इव, स्वार्थे कन् ह्रस्व। जलजमुस्ताविशेष, पानीमें पैदा होनेवाला एक मोथा। यह हलकी, वीर्य बढ़ानेवाली, कसैली और कफ, खांसी, श्वास तथा मन्दाग्नि मिटानेवाली है। (राजनिघण्टु) इसका संस्कृत पर्याय—सुरङ्गा, लता, वल्ली, रङ्गिणी, वस्त्ररङ्गा और सुभगा है।

कैवर्तिमुस्तक (सं० क्लो०) कैवर्त्याः कैवर्तपत्न्याः प्रियं मुस्तकम्, इ-तत् विकल्पे ह्रस्वः। ङ्यापोः। पा ६। ३।६३। कैवर्तिका, केवटी मोथा।

कैवर्ती (सं० स्त्री०) के जले वर्तते, वृत्-अच् अलुक् समा० स्वार्थे अण् ततो ङीप्। १ कैवर्तीमुस्त, केवटी मोथा। २ कैवर्तपत्नी, केवटी।

कैवर्तीमुस्त (सं० क्लो०) कैवर्तीनां कैवर्तपत्नीनां प्रियं मुस्तम्, इ-तत् विकल्पे ह्रस्वः। मुस्ताभेद, केवटी मोथा। किसी किसी देशमें इसे केसरिया मोथा भी कहते हैं। इसका संस्कृत पर्याय—कुटन्नट, दशपुर, वानेय, परिपेलव, प्लव, गोपुर, गोनर्द, दाशपुर, दाशपूर, परिपेल, पारिपेल, कैवर्तमुस्तक, कैवर्तिमुस्तक, वनस्थ, धानर, शीतपुष्प, जीर्णबुध्नक, वनर और सितपुष्प है।

कैवल (सं० क्लो०) केवलते, वल-अच् अलुक्स०। स्वार्थे अण्। विडङ्ग, वायविडङ्ग।

कैवल्य (सं० क्लो०) केवलस्य औपाधिक सुखदुःखादिरहितस्य चित्स्वरूपस्य भावः, केवल-ष्यञ्। १ मुक्तिविशेष, निर्वाण। विवेकका साक्षात्कार होनेसे अहङ्कार विनष्ट होता है। फिर ऐसा ज्ञान नहीं उठता कि मैं कर्ता, सुखी वा दुःखी हूं। अहङ्कार निवृत्त होने पर उसके कार्य राग, द्वेष, धर्म और अधर्म आदिकी उत्पत्ति भी होना सम्भव नहीं। प्रारब्ध कर्म अर्थात् जिससे शरीर धारण हुवा है, धीरे धीरे मिट जाता और अविद्यारूप सहकारिकारण न रहनेसे फिर संस्कार नहीं होता तथा संस्कारके अभावमें पुनर्वार जन्म लेना नहीं पड़ता। वर्तमान शरीरपात होनेसे आत्मा चित् स्वरूपमें अवस्थान करता है। इसी अवस्थाका नाम कैवल्य है। पातञ्जलसूत्रके कैवल्यपादमें इस विषय पर लिखा है—

विशेषदर्शिन आत्मभावभावनाविनिवृत्तिः। (योगसूत्र ४। २५)

पूर्वोक्त प्रकारसे चित्त और आत्माका भेद देख पड़ने पर जिस समय चित्त अपना तथा आत्माका विशेष दर्शन करता, उस समय कर्तृत्व, ज्ञातृत्व और भोक्तृत्व आदि ज्ञान निवृत्त हो एकताको पहुंचता है। 'मैं कर्ता हूं' 'मैं ज्ञाता हूं' और 'मैं भोक्ता हूं', इत्यादि ज्ञान तिरोहित होने पर फिर पुरुषको किसी कर्मकी चेष्टा नहीं रहती। चित्तके आत्माका स्वरूप पहंचान सकने पर आत्माकारको पा कैवल्यपद लाभ होता है। चित्तका कर्तृत्व आदि अभिमान छूटनेसे कर्म निवृत्ति हो जाती है। फिर उससे विवेकज्ञान आता है। विवेकज्ञान ही मुक्तिका प्रथम सूत्र है। (योगसूत्र ४।२५)

जब योगी समाधि आश्रय करते, उनकी इन्द्रियवृत्ति क्षीण होते भी व्याधि, स्त्यान, संशय, आलस्य, प्रमाद, अविरति, भ्रान्तदर्शन, अलब्धभूमिकत्व और अनवस्थितत्व नामप्रकारके विघ्न उठ खड़े होते हैं। इसमें फिर प्रत्ययान्तर अर्थात् मैं और मेरा इत्यादि ज्ञान

स्वरूप विघ्न समुत्पन्न हो समाधिका व्याघात करते हैं। अतएव चित्तवृत्तिका उच्छेद साधन करके इन सब विघ्नोंको निवारण करना चाहिये। (योगसूत्र ४। २६)

पातञ्जलके द्वितीय पादके दशम और एकादश सूत्र-में अविद्या आदि मिटानेके उपाय जैसे प्रदर्शित हुए हैं, वैसेही उपाय अवलम्बन करके संस्कारका क्षय करते हैं। संस्कार क्षीण होनेसे "मैं-मेरा" इत्यादि ज्ञान नहीं रहता। जैसे बीज अग्निमें जल जानेसे फिर अङ्कुर उत्पत्तिकी सम्भावना नहीं, वैसे ही ज्ञान अग्निके स्पर्शसे अविद्यादि क्लेश मिट जाने पर चित्तके क्षेत्रमें संस्कार नहीं लग सकता और ऐसा होने पर 'मैं मेरा' इत्यादि प्रत्ययान्त निवृत्त होता है। (योगसूत्र ४। २७)

बहुतसे विषयोंके तत्त्वोंको अलग अलग भावना करके भी जो सब प्रकारके फलोंकी कामना नहीं करता, उसीके पूर्वोक्त विघ्न तिरोहित होकर विवेककी उत्पत्ति होती है। विवेक उठने पर ही उससे समाधिसिद्ध होती है। यह समाधि सर्वदा परम पुरुषार्थ साधनका धर्मवारि सेचन करता है। इसीसे इसका नाम धर्म-मेघ है। यह धर्म तत्त्वज्ञान उत्पादन करता है।

(योगसूत्र ४। २८)

पूर्वोक्त धर्ममेघ अविद्या आदि सब क्लेशोंको निवा-रण करता है। फिर उसीसे संसार भ्रमणके कारण सब शुभाशुभ फल क्षीण होते और वासना निवृत्ति हो जाती है। (योगसूत्र ४। २९)

अविद्यादि क्लेश और शुभाशुभ कर्मफल चित्तके आवरणकारी मल जैसे होते हैं। जिसके चित्तसे यह सब मल निकल गया है, वही व्यक्ति समुदय ज्ञेय वस्तु समझ सकता है। चित्तके आवरणका मल विनष्ट होने पर ही सर्वविषयक ज्ञान उठता है। उस समय आकाश प्रभृति महत् पदार्थ भी अनायास समझ जा सकता है। फिर दूसरा कोई विषय अपरिज्ञात नहीं रहता। (योगसूत्र ४। ३०)

हृदयके आकाशमें धर्मका मेघ उदित होने पर उसके वर्षणसे क्लेशके कर्मका मल धौत हो जाता है। उससे सत्व, रजः और तमः तीनों गुण कृतार्थ होते अर्थात् पुरुषार्थ भोग और मोक्ष साधनके सब कर्म समाप्त हो जाते और इन सकल गुणोंके क्रमका परि-णाम नहीं होता। (योगसूत्र ४। ३१)

क्षणसे पल, पलसे दण्ड, और दण्डसे प्रहर इत्यादि प्रकारसे कालका परिणाम हुआ करता है। फिर पञ्चभूतसे जो सकल वस्तु उत्पन्न होते, वह भी उत्तरोत्तर परिणाम पाकर नानाप्रकार वस्तु उत्पा-दन करते हैं, इसीका नाम क्रमपरिणाम है। इन सकल परिणामोंका अन्त कोई समझ नहीं सकता। कारण परिणामकी कोई सीमा नहीं। मृत्तिकासे उद्भिद् आदि सकल वस्तु निकलते हैं और यह सकल उद्भिदादि फिर मृत्तिकाके रूपमें परिणत हो जाते हैं। इसी प्रकार पदार्थोंके उत्तरोत्तर नानाप्रकार परि-णामकी इयत्ता कोई कर नहीं सकता। (योगसूत्र ४।३२)

गुणोंका भोग और अपवर्गके लक्षण पुरुषार्थ शून्य हो जाने पर क्षणकालके लिये भी किसी प्रकारका विकार उपस्थित नहीं होता। अथच चित्शक्तिकी वृत्तिका स्वारूप्य उठ जाता है। आत्माके चित्स्वरूपमें जो अवस्थिति आती, वही कैवल्य कहाती है। (योगसूत्र ४। ३३) मुक्ति और विवेक शब्द देखो।

वेदान्तके मतसे परमात्मामें जीवात्माके लीन हो जानेका नाम कैवल्य है। न्यायके मतमें सकल अदृष्ट विनष्ट होने पर फिर आत्माके दुःखकी उत्पत्ति वा जन्म नहीं होता। नैयायिक शरीर छूटने पीछे आत्माको इसी अवस्थाको कैवल्य कहते हैं। (न्याय १। १। २)

जैनशास्त्रानुसार कैवल्य अवस्था मुक्ति प्राप्त करनेसे पहिले होती है। ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय और अंतराय इन चार घातिया कर्मोंके नष्ट हो जाने पर आत्माके केवलज्ञानकी प्राप्ति होती है और उस समय समस्त पदार्थोंकी समस्त पर्यायोंको एक साथ यह जीव जानने लगता है। (तत्त्वार्थसूत्र टीका)

२ मुक्ति, छुटकारा। मुक्ति देखो। ३ कृष्णयजुर्वेदके अन्तर्गत एक उपनिषद्। (त्रि०) ४ कैवल्यस्वरूप। ५ अद्वितीय।

कैवल्यानन्द—एक संस्कृत ग्रन्थकार। इन्होंने प्रणवार्थ-प्रकाशिकाव्याख्यान और महिम्नस्तवटीकाको रचना किया।

कैवल्यानन्द सरस्वती—भगवद्गीतासारके प्रणेता।

कैवल्याश्रम—गोविन्दाश्रमके शिष्य। इन्होंने त्रिपुरा-वरिवस्या नामक तान्त्रिक ग्रन्थ और आनन्दलहरीकी सौभाग्यवर्धिनी टीकाकी रचना की।

कैशव (सं० त्रि०) केशवस्येदम्, केशव-अण् वृद्धिश्च। केशवसम्बन्धीय। (रघु १०। २९)

कैशिक (सं० क्ली०) केशानां समूहः ठक्। १ केश-समूह, बालोंकी लट या गुच्छा। (पु०) केशेषु केश-विन्यासेषु साधुः। २ शृङ्गाररस। ३ नृपविशेष, कोई राजा। (हरिवंश ९९) ४ नाचकी एक चाल। इसमें नजाकतके साथ किसीकी नकल करते हैं।

कैशिकता (सं० स्त्री०) केशसदृश सूक्ष्म छिद्रविशिष्ट नलमें दृष्ट होनेवाला व्यापार।

कैशिकनिषाद (सं० पु०) सङ्गीतका एक बिगड़ा हुवा स्वर। यह तीव्र स्वरसे चलता और तीन श्रुतियों-का प्रयोग रखता है।

कैशिकपञ्चम (सं० स्त्री०) सन्दीपनी श्रुतिसे आरम्भ होनेवाला एक विकृत स्वर। इसमें चार श्रुतियां लगती हैं।

कैशिकाकर्षण (सं० क्ली०) जड़पदार्थकी एक शक्ति, नली खिंचाव। इससे सूक्ष्मछिद्रविशिष्ट नलमें जलादि उन्नत हो जाते हैं।

कैशिकानाड़ी (सं० स्त्री०) केश जैसी सूक्ष्म नाड़ी, बाल जैसी बारीक रग। इसी नाड़ीसे पहले शिरामें रक्त सञ्चालित होता है।

कैशिकावनति (सं० स्त्री०) कैशिक नलके अभ्यन्तरमें किसी तरल पदार्थकी अवनति, बाल-जैसी बारीक नलीमें किसी पतली चीजका गिराव।

कैशिकी (सं० स्त्री०) १ व्यधनउपयोगी अस्त्रधारा, छिदने लायक नश्तरकी बाढ़। २ नाटककी एक वृत्ति। शृङ्गार-रसमय नाटकोंमें यह वृत्ति रहती है। इसमें नाचने, गाने, बजाने और खेल कूदकी बातें बहुत होती हैं। कैशिकी नाटक अधिकांश स्त्रियों द्वारा अभिनीत होता है।

कैशिकोन्नति (सं० स्त्री०) कैशिक नलके अभ्यन्तर किसी तरल पदार्थकी उन्नति, बहुत पतली नलीमें किसी रकीक चीजके ऊपर उठनेकी हालत।

कैशिकोज, कौशिकोज देखो।

कैशिन (सं० त्रि०) केशिन इदम्, केशिन्-अण् वृद्धिश्च। १ केशिसम्बन्धीय (पु०) केशिनोऽपत्यम्। गाथिविदथि केशिगणिपणिनश्च। पा ४।१।१५। २ केशिका पुत्र।

कैशिन्य (सं० पु०) केशिनोऽपत्यम्, केशिन्-ष्य। केशिका-पुत्र।

कैशोर (सं० क्ली०) किशोरस्य भावः कर्म वा, किशोर-अञ्। प्राणभृज्जातिवयोवचनोद्गातादिभ्योऽञ्। पा ५।१।१२९। नवीन वयस, लड़कपन। ग्यारहसे पन्द्रह वर्ष तक यह अवस्था रहती है। पांच तक कौमार, दश तक पौगण्ड, पन्द्रह तक कैशोर और पोछे यौवन होता है। (श्रीधर)

कैशोरक (सं० क्ली०) कैशोर स्वार्थे कन्। १ कैशोरा-वस्था, लड़कपन। (हरिवंश ७७ अ०) (पु०) २ वातरक्त-को लाभ पहुंचानेवाला एक गुग्गुलु। पट्टोबद्ध गुग्गुलु दो शरावक, त्रिफला २ शरावक और गुड़ूची ४ शरा-वक एकत्र ९६ शरावक जलमें डाल अवशिष्ट क्वाथ बनाना चाहिये। क्वाथ वस्त्रपूत करके उससे घृत-मर्दित गुग्गुलुको गोल बना फिर पाक करते हैं। घनीभूत होने पर पाकको उतार उसमें ४ तोला त्रिफलाचूर्ण ४ तोला त्रिकटुचूर्ण ४ तोला विड़ङ्गचूर्ण, २ तोला त्रिवृच्चूर्ण, २ तोला दन्तीमूलचूर्ण और ८ तोला गुड़ूचीचूर्ण पड़ता है। (चक्रदत्त)

कैशोरि (सं० पु०-स्त्री०) किशोरस्यापत्यम्, किशोर-इञ्। किशोरापत्य, किशोरका लड़का या लड़की।

कैशोरिकेय (सं० पु०) किशोरिकाया अपत्यम्, किशो-रिका-ढक्। किशोरिकाका अपत्य।

कैशोर्य (सं० पु०) किशोरी-ष्य। किशोरीका अपत्य।

कैश्य (सं० क्ली०) केशानां समूहः, केश-यञ्। केशाश्वाभ्यां यञछावन्यतरस्याम्। पा ४।२।४८। केशसमूह, बालोंकी लट या गुच्छा।

कैषिका (सं० स्त्री०) १ आम्रातक, आमड़ा। २ किसी किसीके मतानुसार—शरमूल।

कैषो (सं० स्त्री०) १ पाठा, आकनादि।

कैष्किन्ध (सं० त्रि०) किष्किन्धा नगरी अभिजनोऽस्य, किष्किन्धा-अण्। सिन्धुतक्षशिलादिभ्योऽणञौ। पा ४।३।९३

किष्किन्धावासी, वंशक्रमसे किष्किन्धामें रहनेवाला।

कैसर (हिं० पु०) १ सम्राट्, बादशाह। २ जर्मन-सम्राट्का उपाधि, जर्मनोंके बादशाहका खिताब।

कैसरगञ्ज—युक्तप्रदेशके बहरायच जिलेकी दक्षिण-पश्चिम तहसील। यह अक्षा० २७° २६´ उ० और देशा० ८१° १६´ एवं ८१° ४६´ पू०के मध्य अवस्थित है। इसमें फखरपुर और हिसालपुर परगने लगते हैं। कैसरगञ्जकी लोकसंख्या प्राय: ३४८१७२ है। कैसरगञ्ज तहसीलमें ६४७ गांव बसे हैं। परन्तु शहर एक भी नहीं। यह तहसील घाघराकी प्रशस्त उपत्यकामें पड़ती और कई पुरानी नदीयां बहती हैं। सरयू और तिरही प्रधान स्रोतस्वती हैं।

कैसा (हिं० वि०) कीदृक्, किस तरहका। यह शब्द निषेधार्थक प्रश्नकी भांति भी व्यवहृत होता है।

कैसे (क्रि० वि०) १ किस प्रकारसे, कौनसे तरीकेमें। २ किस कारण, क्यों।

कोंचना (हिं० क्रि०) छेदना, गड़ाना, चुभाना।

कोंचफली (हिं० स्त्री०) कच्छू, कौंछ।

कोंचा (हिं० पु०) १ क्रौञ्च, पानीकी कोई चिड़िया। २ बहेलियेकी लम्बी लग्गी। इसके सिर पर लासा लगाया और उससे कोंच कर ऊंचे पेड़ या किसी दूसरी जगह पर बैठी चिड़ियाको फंसाया जाता है। ३ भड़भूंजेका बालू निकालनेवाला कलछा।

कोंछ (हिं० पु०) स्त्रियोंकी ओढ़नी या पिछोरीका एक कोना।

कोंछना (हिं० क्रि०) चुनना, कोंछियाना। यह क्रिया साड़ीके उस भागके चुननेमें आती, जो धारण करते समय पेटके आगे खोंसा जाता है।

कोंछियाना (हिं० क्रि०) १ कोंछना। २ कोंचमें डाल कर कोई चीज आगे कमरमें अटका देना।

कोंछी (हिं० स्त्री०) फुबती, तिन्नी, साड़ी या धोतीका एक भाग। इसे स्त्रियां चुन कर पेटके आगे खोंस लेती हैं।

कोंड़ई (हिं० स्त्री०) कण्टकाकीर्ण वृक्षविशेष, एक कंटीला झाड़। यह युक्तप्रदेश, बङ्गाल और दाक्षिणात्यमें उत्पन्न होता है। इसके पत्र ३।४ अङ्गुलि दीर्घ होते हैं। क्षुद्र क्षुद्र गुच्छोंमें पुष्प भी बहुत ही क्षुद्र लगते हैं। पत्रोंको पशु तथा फलोंको मनुष्य खाते और मूल तथा त्वक्से औषध बनाते हैं।

कोंड़रा (हिं० पु०) कुण्डल, गोंड़रा, मोटके सिरे पर लगनेवाला लोहेका एक कड़ा।

कोंड़री (हिं० स्त्री०) चमड़ेसे मढ़ी हुई छुड़क, बाजेकी लकड़ी।

कोंढ़ा (हिं० पु०) १ कुण्डल, जंजीर या कोई दूसरी चीज लगानेके लिये धातुका एक छल्ला या कड़ा। २ रुपयेका चांदीसे भरा छेद। (वि०) ३ कोंढेदार, कोंढ़ा लगा हुवा। यह शब्द रुपयेका विशेषण है। भारतमें रुपये छेद कर माला बनायी और स्त्रियों तथा बालकोंको पहनायी जाती है। फिर यह रुपये जब बाजारमें चलाने होते, तो पहले उनका छेद चांदी भर कर बन्द कर दिया जाता है। ऐसे ही रुपयोंको कोंढ़हा या कोंढा कहा जाता है।

कोंढी (हिं० स्त्री०) १ छोटा कोंढा। २ अस्फुटित मुकुल, बंधी हुई कली।

कोंथ (हिं० पु०) १ मृत्तिकाकी चक्र पर रखनेके पीछे बननेवाला पात्रका पूर्वरूप। २ कच्चा पुरानी दीवारके छेदोंमें सनी हुई मट्टीका भराव।

कोंथना (हिं० क्रि०) १ कराहना। २ कबूतरोंका बोलना। ३ दीवारके छेदोंमें सनी मट्टी भरना।

कोंपना (हिं० स्त्री०) कुचिआना, कोंपल देना।

कोंपल (सं० स्त्री०) अङ्कुर, पेड़की नयी और मुलायम पत्ती।

कोंहरा (हिं० पु०) घुघनी, उबाल कर तेलमें बघारे खड़े चने या मटर। यह नमक मिर्च लगा कर खाया जाता है।

कोआ (हिं० पु०) १ कोष, कुसियारी, रेशमके कीड़ेका घर। २ टसरका कीड़ा। ३ गोलैंदा, महुवेका पका फल। ४ कटहलका पका हुआ बीजकोष। ५ धुने हुए ऊनकी पीनी। इसे कात कर ऊर्णाका सूत्र प्रस्तुत किया जाता है। ६ अक्षिगोलक, आंखका डेला।

कोआर (हिं० पु०) वृक्षविशेष, कोरा।

कोआरी—१ दाक्षिणात्यके पूना जिलेका एक नगर।

इसके निकट गिरिसङ्कट विद्यमान है। पहले यह मराठाओंके अधीन रहा। बाजी राव पेशवाके साथ जब युद्ध हुवा, अंगरेजोंने (११ मार्च १८१८ ई०) इसे आक्रमण किया था। गङ्गा नामक एक निकटस्थ दुर्गके बारूदखानेमें आग लगनेसे बड़ा धड़ाका हुवा। फिर दुर्गस्थ मराठोंके अंगरेजोंके हाथ आत्मसमर्पण करने पर यह (१७ मार्च) अंगरेजोंके अधिकारमें चला गया।

२ विहारके सारन जिलेका कोई परगना। इसका पूरा नाम कल्याणपुर-कोआरी है। कोआरीसे उत्तर, दक्षिण तथा पश्चिम गोरखपुर जिला और पूर्व सिपा परगना है। हुसेपुर, बड़गांव, बथुआ और भागिपति मीरगंज इसके प्रधान नगर हैं। हुसेपुरमें एक पुराने दुर्गका भग्नावशेष दृष्ट होता है। मीरगञ्जमें अफीम-की कोठी है। आजकल कोआरी हथवा महाराजको जमींन्दारीमें लगती है।

कोइना—एक नदी। यह सिंहभूमसे निकली और कोयल नदीमें जा मिली है। कोइना १८ कोस लम्बी है। सारन्दा विभागमें ही इसका स्रोत चलता है।

कोइरी—कृषिजीवी जातिविशेष, एक काश्तकार कौम। छोटानागपुर और विहार अञ्चलमें कोइरी लोग मिलते हैं। उन्हें मुराव भी कहा जाता है। कुछ कोइरी अपनेको क्षत्रिय बताते हैं। कुर्मी लोगोंसे उनका बहुत सौसादृश्य है। १४० प्रकारके कोइरी पाये जाते हैं। उनमें सूर्यवंशी, बैसवार, कनौजिया, दांगी, बनाफर, भदौरिया, शाक्यवंशी और कछवाहा प्रधान हैं।

कोइरी अपने आप कहा करते हैं कि आदि कोइरी महादेव और पार्वतीके पुत्र हैं। जिस समय वह देव-देवीके आदेशसे उद्यान रक्षार्थ नियुक्त हुवे, उस समय नाना रमणी वहां फूल तोड़ने गयीं। वह निर्जनमें कोइरियोंका रूप देख कामपीड़ित हुई थीं। कोइरियोंने उनकी इच्छाको पूरण किया। फिर उनमें प्रत्येकके गर्भसे एक एक सन्तान हुवा। उसीसे श्रेणीभेद पड़ गया है। पादरी शेरिङ्ग साहबने लिखा है—"बहुतसी कृषिजीवी जातियोंके राजपूत नाम हैं। उक्त नाम उनको कुछ शाखावोंसे मिले हुवे हैं। वह राजपूतोंके तुल्य हैं और कुछ लोग राजपूतोंसे ही निकलते हैं। काछियोंकी भांति कोइरी भी कछवाहा वंश हैं। कछवाहा एक प्रसिद्ध और बलवान् राजपूत जाति है।*

छोटानागपूरके कोइरी अपना कच्छप (काश्यप ?) और नाग गोत्र होनेसे कभी कच्छप और नाग (सर्प) को नहीं मारते, वरन् भक्ति किया करते हैं।

उपरि उक्त श्रेणियोंके मध्य बड़कोदांगी भिन्न सकल श्रेणियोंमें विधवा-विवाह होता है, इसीसे कोइरियोंमें बड़को-दांगी श्रेणी श्रेष्ठ और अधिक सम्मानित है।

कोइरियोंमें १० वर्षके मध्य कन्याका विवाह कर देनेकी रीति है। किन्तु सम्पत्तिशाली दो तीन वत्र, यहां तक कि दन्तोद्गमके पीछे ही कन्याका विवाह कर देते हैं।

विवाहके प्रथम कोइरियोंमें वाग्दान-प्रथा प्रचलित है। वरपक्षीय बाजा बजाते एक कपड़ा ले ब्राह्मणके साथ पात्री देखने जाते हैं। वरकर्ता और कन्याकर्ता दोनों एक एक वस्त्रखण्ड भूमि पर फैला देते हैं। उसके पीछे वरकर्तासे धान्य ले पात्रीके हाथ पर दे ब्राह्मणके आशीर्वाद करने पर पात्री उक्त धान्यको भावी श्वशुरके फैलाये वस्त्र पर डाल देती है। फिर बार धान्यसे आशीर्वाद मिलने पर फिर वह उसे पिताके वस्त्र पर फेंकती है। इसी प्रकार वर और कन्याकर्ता दोनों प्रतिज्ञा-बद्ध होते हैं। उक्त प्रथा सम्पन्न होनेके ८ दिन पीछे विवाह होता है। उच्चश्रेणीके ब्राह्मण यथाचार विवाहकर्म सम्पन्न करते हैं। विवाहमें वरपक्षीयको अधिक व्यय तो करना पड़ता है, किन्तु वरको श्वशुरके घर जाने पर उससे अधिक धन मिलता है।

कोइरियोंमें बहुविवाह प्रचलित है। बड़कोदांगीको छोड़ अपर श्रेणीको विधवा सगाई कर सकती हैं। विधवाविवाहमें बहुत धूमधाम नहीं होती। केवल विधवायें ही उसमें योग देती हैं। फिर विवाहको

* Sherring's Tribes and Castes, Vol, III. p. 260.

रात्रिको पुरुष स्त्रीको एक नतन वस्त्रखण्ड देता, सस्तु-रालके लोगोंके खाने-पीनेका खर्च भी उठा लेता है। उक्त विवाह देवरके साथ करनेका नियम है। किन्तु पञ्चायतको अनुमतिसे विधवा दूसरेके साथ भी अपनी सगाई कर सकती है।

कोइरियोंमें शैव और शाक्त अधिक, वैष्णव अल्प हैं। मानभूममें वर्णब्राह्मण उनका पौरोहित्य कराते हैं। मरङ्गबुरु, बड़पाहाड़ी, सोखा, परमेश्वरी, महावीर, तथा हनूमान् कोइरियोंके प्रधान उपास्य देव हैं।

विहारके कोइरी बहुत उन्नत हैं। मैथिल और कहीं कहीं कान्यकुब्ज ब्राह्मण भी उनका पौरोहित्य करते हैं। उनमें समय समय पर कई ग्राम्य देवतावों-को पूजा होती हैं।

प्रसवके पीछे कोइरी-रमणी १२ दिन अशुचि रहती हैं।

शवको दक्षिणमुखी करके जलाते हैं। १०वें दिन शुद्धि, ११ वें दिन महापात्रको बिदाई, १२वें दिन सपिण्डीकरण और १३वें दिन ब्राह्मणभोजन होता है।

कोइरियोंको सामाजिक अवस्था अच्छी है। कुरमी और ग्वालोंकी भांति उन्हें सम्मान मिलता है। कृषि हो उनकी उपजीविका है। वह किसीका दासत्व स्वीकार नहीं करते।

कोइल—युक्तप्रदेशके अलीगढ़ जिलेकी एक तहसील। इसका क्षेत्रफल ३५६ वर्गमील है। कोइलका अधि-कांश शस्यशाली है। इसके भीतर नाना स्थानोंमें गङ्गा-जीकी नहर फैली और रेल निकली है। प्रधान नगर भी कोइल ही है। इसमें एक म्युनिसपालिटी विद्य-मान है।

कोइलपटम्—मन्द्राज विभागान्तर्गत त्रिनवल्ली जिलाके तेङ्कराई जिलेका एक नगर। यह अक्षा० ८° १०´ उ० और देशा० ७७° ५२´ पू० पर समुद्रके तीर अवस्थित है। लोकसंख्या ३४१५से अधिक है। यहां एक बन्दर भी है। लभय लोग वहां नानाविध व्यव-साय चलाते हैं। कोइलपटम्में नमक बनता है। कोर-कोइ नामक स्थानमें पहले विलक्षण वाणिज्य होता था। परन्तु वहां समुद्रके हट जानेसे समस्त वाणिज्य वहांसे उठ आया। आजकल कोइलपटम्‌की अवस्था बिगड़ी है और कामकाज तुतकुड़ी सरक गया है। प्रसिद्ध भ्रमणकारी मार्कोपोलोने 'केइल' नामसे इस नगरका उल्लेख किया है।

कोइलवा—राजपूतानेका एक क्षुद्र सामन्त राज्य। सामन्तवीर पुत्तूके नामसे यह स्थान प्रसिद्ध है। राणा उदयसिंहके राजत्वकाल दिल्लीश्वर अकबरने चित्तोर आक्रमण किया था। उस समय कोइलवाके सामन्त षोड़शवर्षीय पुत्तूने जो अद्भुत वीरत्व दिखाया वह उनके शत्रुमित्र सभीके लिये विस्मयकर है। राजस्थानके इति-वृत्तलेखक महात्मा टाडने कहा है—"जब सूर्यद्वार पर सालुम्बरापति निहत हुए, उस द्वारको रक्षाका कोयल-के पुत्तू पर डाला गया। उस समय इनका वयस षोड़शवर्ष मात्र रहा। गत समरमें पुत्तूके पिताका मृत्यु हुवा था, वीर जननीने इन्होंके लालन पालन करनेको जीवन धारण किया। वीर जननीने पुत्रको गैरिक वस्त्र पहना चित्तोरके लिये जीवन उत्सर्ग करनेमें लगा दिया। पीछे नव वधूके लिये कहीं पुत्र भग्नोत्साह न हो जाये, इसीसे वह इसे भी रणसज्जासे सुसज्जित कर और हाथमें भाला दे दुर्गशैल पर चढ़ गयी। चित्तोरके वीर पुत्रोंने देखा कि उस बालिकाने भी चित्तोरके लिये प्राण उत्सर्ग किया था। फिर किसीको जीनेकी लालसा न रही। सबने मिलकर भीषण जहरव्रतका आयोजन लगाया। जन्मभूमिके लिये (पुत्तू और जयमलकी भांति) सबने जीवन चढ़ा दिया। (Tod's Rajasthan, Vol. I. p. 327.)

इसके पीछे सम्राट् अकबर चित्तोर जीत जब दिल्ली लौट कर पहुंचे, उन्होंने (शत्रु होते भी) उक्त वीर-वर पुत्तू और जयमलके वीरत्वसे मुग्ध हो दोनोंकी प्रस्तरमूर्तियां बनवा कर दिल्लीके सिंहद्वार पर रखवा दीं।

उक्त घटनाके प्रायः १०० वर्ष पीछे (१६६३ ई० १ जुलाई) प्रसिद्ध भ्रमणकारी वर्णियारके दिल्ली प्रवेश करते समय कोयलवे और मेरतेके सामन्तोंकी मूर्तियां देख उनके हृदयमें भय और भक्तिका सञ्चार हुआ था।

कोड़लारो (हिं० स्त्री०) १ लकड़ीका कोई गोल कड़ा।

यह नटखट पशुओंके गरांवमें लगा दी जाती है। इससे वह गरांवमें झटका दे नहीं सकते। कारण वैसा करने पर कोइलारी उनका गला दबाती है। २ गरांवकी मुद्दी।

कोइली (हिं० स्त्री०) १ कोई कच्चा आम। इसमें किसी कारणसे चोट पहुंचने पर एक काला दाग लग जाता है। लोग समझते हैं कि आमके फल पर कोयलके बैठनेसे ही कोइली बनती है। यह खानेमें मीठी और अच्छी लगती है। २ आमकी गुठली। ३ कोयल।

कोइली—जूनागढ़ राज्यके वनथली महालका एक गांव। यह वनथलीसे ४॥ मील उत्तर-पूर्व पड़ता है। १८७८-७९ ई० को दुर्भिक्षके कारण इसकी लोकसंख्या घटी थी। यहां बागोंमें कोयल बहुत होती है। इसीसे 'कोइली' नाम पड़ गया है। १७२८ ई० (संवत् १७८४) को जूनागढ़के तत्कालीन फौजदारने तुलसीगिरि महन्तको यह दे डाला था। १८१३ ई० (१८६९ संवत्) को महन्त कृपालगिरिने दुर्भिक्ष पड़ने पर खूब दानपुण्य किया। १८३१ ई० को जूनागढ़के नवाब बहादुर खान् तर्नेतरके महन्त दामोदरगिरिसे जाकर मिले थे। महन्तने भक्तिपूर्वक उनका स्वागत किया। इससे प्रसन्न हो नवाब साहबने बोदकू तथा रङ्गपुर गांव, एक हाथी, एक पालकी और एक मशाल उनको भेंट किया था। महन्त लोग घोड़े पैदा करनेके बड़े शौकीन रहे हैं और आज भी उनके पास घोड़ों और घोड़ियोंकी कोई कमी नहीं। तरनेतर 'त्रिनेत्र' शब्दका अपभ्रंश है। १८११ ई० को गायकवाड़के दीवान् विट्ठलराव देवाजीने मन्दिरका संस्कार कराया। इसी अर्थका मन्दिरमें एक शिला-फलक लगा है। परन्तु मन्दिरके निर्माता भगवानाथ नामक साधु बतलाये जाते हैं। जो दूध ही पीते और १२६५ ई० को कच्छके अञ्जारसे यहां आ पहुंचे थे। आश्विन मासकी शुक्ला अष्टमीको यहां बड़ा मेला लगता जो २ दिन चलता है। मन्दिरके घेरेमें गणेशजीकी एक मूर्ति है। उसके दाहने पैरके अंगूठे पर बरका एक पेड़ उगा है। कहते हैं, उसमें सदा सर्वदा सात ही पत्तियां रहती और उसका आकार कभी नहीं घटता-बढ़ता।

कोई (हिं० सर्व० वि०) अज्ञात वस्तुविशेष, एक न जानी चीज़। २ अनिर्दिष्ट, अविशेष। ३ एक भी।

कोकंव (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक दरख्त। इसके सब अङ्ग खट्टे होते हैं।

कोक (सं० पु०) कोकते आदत्ते, कुक-अच्। १ चक्रवाक, चकवा चिड़िया।

"कोक शोकप्रद पङ्कजद्रोही।
अवगुण बहुत चंद्रमा तोही॥" (तुलसी)

२ खर्जूरी वृक्ष, खजूर। ३ भेक, मेंढ़क। ४ विष्णु। ५ वृक, भेड़ीया। ६ ज्येष्ठिका, छिपकली। ७ ईहामृग, हिरन मारनेवाला कोई जानवर। यह कुत्ते जैसा और कपिलवर्ण होता है। ८ कोई पण्डित। यह रतिशास्त्रके आचार्य माने जाते हैं। ९ षष्ठ सङ्गीत-भेद। इसमें नायक, नायिका, रसाभास, अलङ्कार, उद्दीपन, आलम्बन आदि अवश्य समझना चाहिये।

कोकई (हिं० त्रि०) १ गुलाबी नीला, कौड़ियाला। (पु०) २ कौड़ियाला रंग, गुलाबी लिये हुये नीला रंग।

कोकईरंग—शहाब, मजीठ और नील मिला कर बनाया जाता है।

कोककला (सं० स्त्री०) रतिविद्या, सम्भोगशास्त्र।

कोकड़ (सं० पु०) कोकं कोक-ल-क लस्य ड़त्वम्। चमर-पुच्छ विलेशय मृग, एक हिरन। इसका गात्र धूम्र-वर्ण और पुच्छ चमरकी भांति लोमयुक्त होता है। कोकड़का मांस श्वास, वायु तथा कफनाशक और पित्त एवं दाहकरी है। (राजनिघण्टु)

कोकदन्ता (सं० स्त्री०) हस्तरञ्जक, मेंहदीकी पत्ती

नखरञ्जक देखो।

कोकदेव (सं० पु०) कोकश्चक्रवाकः स इव दीव्यति, कोक-दिव-अच्। १ कपोत, कबूतर। २ कोकशास्त्र नामक रतिशास्त्रके प्रणेता।

कोकन (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक ऊंचा दरख्त। यह आसाम और पूर्ववङ्गमें उत्पन्न होता है। पत्र जाड़ेमें झड़ पड़ते हैं। काष्ठ अभ्यन्तरमें सफेद निक-लता है। उस पर पीतवर्ण रेखायें होती हैं। वह

देखनेमें मृदु रहते भी न फटता और न लचता है। कोकनकी लकड़ी चायकी सन्दूकों, नावों और मका-नोंमें काम आती है।

कोकनद (सं० क्लो०) कोकान् चक्रवाकान् नदति आत्म विकासेन, कोक-नद-अच् अन्तर्भूतणिजर्थः। १ रक्त कुमुद, लाल कोईं। २ रक्तपद्म, लाल कमल। यह कटु, तिक्त, मधुर, शीतल, सन्तर्पण, हृद्य और रक्तदोष, कफ, पित्त तथा वातशमन होता है। (राजनिघण्टु)

कोकनदच्छवि (सं० पु०) कोकनदस्य रक्तोत्पलस्य छवि रिव छविर्दीप्तिर्यस्य। १ रक्तवर्ण, लाल रंग। (त्रि०) २ रक्त वर्णविशिष्ट, लाल।

कोकना (हिं० क्रि०) कच्चा करना, लंगर डालना, बखिया करनेके लिये कपड़ेमें सूईसे दूर दूर पर धागा अटकाना।

कोकनाद (काकनाड़ा)—मंद्राज प्रांतके गोदावरी जिलेका एक बन्दर और नगर। यह अक्षा० १६° ५७´ उ० और देशा० ८२° १३´ पू० पर अवस्थित है। कोकनाद ही गोदा-वरी जिलेका प्रधाननगर है। यहां मजिष्ट्रेटकी अदालत जेल, डाकघर, तारघर और विद्यालय विद्यमान है। बन्दरगाह होनेसे कोकनादमें सामुद्रिक शुल्क वसूल करनेके लिये भी एक सरकारी कार्यालय है। जगन्नाथ पुर नामक ग्राम पहले ओलन्दाजोंके अधिकारमें रहा, १८२५ ई० में अंगरेजोंको सौंपा गया। आजकल वह इसी नगरकी म्युनिसपालिटीमें मिल गया है। रूई, चावल, चीनी, अलसी यहांसे बाहर बहुत भेजी जाती है। आनेवाली चीजोंमें लोहा, तांबा और शराब खास है। अंगरेज, फरासीसी आदि बहुतसी जातियां यहां व्यवसाय करती हैं। जहाजोंके रहनेको इसके पासका समुद्र बहुत उपयोगी और निरापद है। फिर भी इसका पानी धीरे धीरे घटता जाता है। १८६५ ई० को यहां समुद्रके कूलपर एक आलोकगृह बना था। परन्तु बीचमें रेत पड़ जाने पर उससे प्रयोजन सिद्ध न होते देख १८७९ ई० को दूसरा बनाया गया। कोकनादमें ४० या ४४ घर हैं। जगन्नाथपुरको लेकर इसकी लोक-संख्या कोई तीस हजार होगी। उसमें हिन्दू ही अधिक हैं।

कोकनामराठा—कारवार और अङ्कोलाके रहनेवाले कुछ मराठे। इनके नामसे मालूम पड़ता है कि वह कनाड़ाके उत्तर तटसे आये और सम्भवतः गोग्वाउनका घर था। यह क्षत्रिय होनेका दावा करते, परन्तु लोग इन्हें सच्छूद्र ही समझते हैं। इनके नामोंके पीछे प्रायः 'नायक' शब्द लगता और सावन्त, देशाई या सायल उपाधि पड़ता है। इनमें अधिकांश लोग साफ सुथरे, लम्बे और गेहुंवे रंगके होते हैं। पुरुषोंसे स्त्रियां सुन्दर और कोमल होती हैं। यह शेनवियोंकी तरह गोग्वानीज झटकेके साथ कोकनी भाषा बोलते हैं। इनका घर कच्चा रहता और उसपर छप्पर पड़ता है। छत नहीं रखी जाती। बहुतसे लोग एक ही साथ मिलजुल कर रहते और वृद्ध पुरुष तथा स्त्रियां घरका प्रबन्ध करती हैं। इनका साधारण भोजन चावल और मछली है। परन्तु बकरेका मांस, मुर्गी और शिकार भी खाया जाता है। निरङ्कार, महामाई, रौलनाथ, जतगा और खेतरी देवताको महालयाके दिन पितृ-उद्देश महिष बलि करते हैं। इनमें ताड़ी पीनेकी चाल है। मर्द तम्बाकू पीनेका शौक रखते और औरतें पान खाती हैं। पुरुषोंकी पोशाक लम्बा चपकन, सरका रूमाल और भूरा या काला कम्बल और गहना अंगूठी, छल्ला, बाली और चांदीकी करधनी है। वह चोटी और मूंछको छोड़ सब बाल बनवा डालते हैं। स्त्रियां साड़ियोंको पैरोंके बीचसे शिर पर ले जाकर ओढ़तीं और चोली नहीं बांधतीं। उनके जेवर नथ, बाली, हार, कांचकी चूड़ियां और अंगूठी-छल्ले हैं। धारवाड़के हुबली और बेलगांवके शापुरसे कपड़ा मंगाया जाता है। कोकने स्वच्छ, मितव्ययी, गम्भीर और ईमानदार होते, परन्तु सुस्त और निर्बल रहते हैं। स्त्रियां बहुत लड़ाका होती हैं। पुरुष किसानी, मजदूरी और चिट्ठी रसानी करते हैं। घरका काम करनेके सिवा स्त्रियां पुरुषोंको खाद इकट्ठा करने या खेतको पहुंचाने, पौदा लगाने, निराने, काटने, कूटने और पछोड़नेमें भी सहा-यता देती हैं। यह स्मार्त हैं और सब देवताओंको पूजते हैं। भूतों प्रेतों और जादू टोना पर लोगोंको बड़ा विश्वास है। रौलनाथ भोजके दिन कोमार पायक

अपने हाथकी हथेली छुरीसे चीर २ बूंद लहू भूमि-पर गिराता है। करहाढ़ ब्राह्मण इनका विवाह और अन्त्येष्टिक्रिया संस्कार कराते हैं। पुरोहितोंको बावा कहते जो कोकना जातिके ही रहते हैं। कारवारके सदाशिवगढ़के पास कृष्णपुरमें उनका निवास है। विवाहों, छठीके दिन, महालयाकी रातको और दूसरे अवसरों पर उन्हें पूजा करनी पड़ती है। वह विठोवा-की एक मूर्ति लाते, फूल फल धूप दीपसे उसकी पूजा करते और श्रोताओंको अर्थ समझा समझा कर तुका-रामके भजन गाते हैं। पूजा समाप्त होने पर उन्हें खिलाया पिलाया जाता है। कहते हैं कि पहले बावा एक पुण्यशरीर थे। अपनी स्त्रीके मरने पर वह बराबर सालमें एक बार लड़केको लेकर पण्ढरपुर विठोवा दर्शन करने जाते थे। बुड्ढे होने पर यह अन्धे हो गये और वार्षिक नियमसे विठोवाके दर्शनको न पहुंच सके परन्तु उनकी दर्शनेच्छा घटी न थी। विठोवाने यह देख और उनकी श्रद्धाभक्तिसे सन्तुष्ट हो एक बार स्वप्नमें दर्शन देकर उनको कहा था, यदि वह उनके लिये एक मन्दिर बना देते, वह उसीमें जाकर रहने लगते। फिर कृष्णपुरमें विठोवाका मन्दिर बनाया गया। कृष्णपुरकी विठोवा मूर्ति पत्थरकी बनी, कोई १॥ फुट ऊंची और मनुष्यकी भांति दो हाथ रखनेवाली है। वार्षिक महोत्सव और दूसरे अवसरों पर मूर्तिको कपड़ा पहना दक्षिणी पगड़ी बांधते हैं। जो मूर्तियां लोगोंके घर भजन भाव होनेके समय जातीं, वह ५ इञ्च ऊंची पीतलकी बनी होती हैं। इन्हीं विठोवा देवके सम्मानार्थ प्रतिवर्ष मार्गशीर्ष शुक्ला दशमीको एक मेला लगता जो ५ दिन चलता है। फिर प्रति तृतीय वर्षको किसी पालकी पर रखके पीतलकी एक मूर्ति पण्ढरपुर ले जाते और राहमें हरेक गांव पर सवारी ठहराते हैं। कार्तिकी एकादशीसे दो-एक दिन पहले वह पण्ढरपुर पहुंच रहते और एकादशीको चन्द्रभागामें मूर्ति-को स्नान कराते हैं। फिर मूर्तिको पण्ढरपुर मन्दिरके तीन प्रदक्षिण कराये जाते हैं। लड़कोंका १४से १८ तथा लड़कियोंका विवाह ८ से १२ वर्षकी अवस्थामें होता है। विधवाविवाह और बहुविवाह प्रचलित है। यह बच्चोंको छोड़ शवदाह करते हैं। ११ दिन मृता-शौच रहता है। बालककोंको मराठी लिखना पढ़ना सिखाया जाता है।

कोकनी (हिं० पु०) १ तितिरविशेष, किसी प्रकारका तीतर। २ दिल्ली और सहारनपुरका सन्तरा। ३ किसी प्रकारका रंग। यह शहाब, लाजवर्द और फिटकिरीसे बनता है। (वि०) ४ क्षुद्र, नन्हा। ५ तुच्छ, घटिया, कम कीमत।

कोकबन्धु (सं० पु०) सूर्य।

कोकम (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक सदाबहार पेड़। यह दाक्षिणात्यमें उपजता और छोटा रहता है।

कोकयातु (सं० पु०) कोकैः परिकरभूतै यातयति हिनस्ति याति गच्छति कोकरूपो याति वा कोक या बाहुलकात् तुक्। राक्षसविशेष। यह राक्षस चक्रवा-कोंसे वेष्टित हो गमन किंवा हिंसा करते अथवा चक्र-वाकका रूप बना हिंसामें लगते हैं। (ऋक् ७। १०४। २२)

कोकरक (सं० पु०) देशभेद। (भारत ६। ९ अ०)

कोकलहाट—गया जिलेकी साकरी उपत्यकाका एक जलप्रपात। यहां ६० हाथ ऊपरसे पानी नीचे गिर अपूर्व शोभा धारण करता है। माघ मासमें कोकलहाट झरनेपर बड़ा मेला लगता है।

कोकव (सं० पु०) रागविशेष। यह पूर्वी, बिलावल, केदारा, मारू और देवगिरीके योगसे बनता है।

कोकवा (हिं० पु०) वंशभेद, किसी प्रकारका बांस। यह ब्रह्मदेश और आसाममें अधिक उत्पन्न होता है। इससे टोकरे तैयार किये जाते हैं।

कोकवाच (सं० पु०) कोकस्य वाचेव वाचा वाक् रवो यस्य। कोकड़ हिरन।

कोकशास्त्र (सं० क्लो०) कोक नामक पण्डितका बनाया हुवा रतिशास्त्र। इसमें नायक नायिका लक्षण, रतिप्रसङ्गके आसन, वाजीकरण औषध, यन्त्र मन्त्र आदि अनेक विषयोंका वर्णन किया गया है।

कोकसम्भव—अमरुशतकके एक टीकाकार।

कोका (सं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह दक्षिण अमे-रिकामें उत्पन्न होता है। इसकी सूखी पत्ती चाय और कहवेकी भांति उत्तेजक है। उसके खानेसे थकावट

और भूख नहीं समझ पड़ती। दक्षिण अमेरिकाके पहाड़ी लोग पर्वत पर चढ़नेसे पहले थोड़ीसी सूखी पत्तियां चबा लिया करते हैं। उनमें एक प्रकारका नशा रहता है। अभ्यास पड़ जानेसे फिर इसे छोड़ना कठिन है। कोकेन कोकासे ही होती है।

कोका (तु० पु०·स्त्री०) धात्रीका सन्तान, धायका लड़का या लड़की।

कोका (हिं० पु०) १ कबूतर। (स्त्री०) २ कुमुदिनी।

कोकाग्र (सं० पु०) कोकः मल्लरोमुच: तद्वदग्रमस्य, बहुव्री०। समष्ठिलवृक्ष, एक पेड़।

कोकाबेली (हिं० स्त्री०) १ नीली कुमुदिनी। यह पुराने झीलों या तालाबोंमें लगती है। पुष्प नीलवर्ण, वृहत और शोभामय होता है। इसके बीजका आटा व्रतमें फलाहारकी भांति व्यवहार किया जाता है। बीज भूननेसे लावा बन जाते हैं। उन्हें चाशनीमें डाल कर लड्डू बनाते हैं। २ बघेला।

कोकामुख—भारतका एक प्रसिद्ध तीर्थ। ब्रह्मचर्य और व्रतको अवलम्बन करके कोकामुख तीर्थमें स्नान करनेसे अपने पूर्वजन्मकी जातिका स्मरण आ जाता है।

(भारत ३। ८४)

कोकाह (सं० पु०) कोका इव आहन्ति, आ-हन-ड। १ पाण्डुवर्णघोटक, पीला घोड़ा। २ शुक्लाश्व, सफेद घोड़ा।

कोकिल (सं० पु०) कुक आदाने इलच्। सलिकल्यनिमहि-भडिभण्डिपिण्डितुण्डिकुकिभूभ्यइलच्। उण् १।५५। १ पिक, कोयल।

(रामायण २।५२।२)

"बोलत कोकिल और चकोरा।
कूजत विहंग नचत कल मोरा।" (तुलसी)

इसका संस्कृत पर्याय वनप्रिय, परभृत, पिक, परपुष्ट, काल, वसन्तदूत, ताम्राक्ष, गन्धर्व, मधुगायन, वासन्त, कलकण्ठ, कामान्ध, काकलीरव, कुहुरव, अन्यपुष्ट, मत्त, मदनपाठक, काकपुच्छ, कलघोष, अलिम्बक, कामजाल, पञ्चमास्य, मधुस्वर, कुहकण्ठ, घोषयित्नु, कलध्वनि, गातु, अलिपक, अलिमक, अन्यभृत, अचक्षलिट्, मधुवन, कामताल, कुहूमुख, मधुकण्ठ, काकपुष्ट, आङ्गपुष्ट, मधुघोष और वसन्त है। इसे तेलगुमें कोकिलपिका, तामिलमें कौड़िचाया और अंगरेजीमें कुकू (Cuckoo) कहते हैं। (Eudynamys Orientalis) इसकी बोलीसे ही इसका नामकरण किया गया है। कोकिलके स्वरको संस्कृतमें कुहुरव कहते हैं। हिन्दीमें वही कूक समझा जाता है। इसके स्वर पर बहुतसी कविता बनी है। युरोप और भारतका कोकिल प्राय: एकजातीय ही है। यह दूसरे पक्षीके घोंसलेमें अपना अण्डा दे आता है। भारतका कोकिल कौवेके घोंसलेमें अपना अण्डा देता है। संस्कृतमें परभृत वा अन्यपुष्ट नाम इसीलिये रखा गया है कि उसके बच्चेको दूसरा प्रतिपालन करता है। कोकिल भारत, सिंहल, मलय और चीनमें देखा जाता है। वसन्त कालको इसकी बोली सुन पड़ती है। इसीसे कोकिल वसन्तका सहचर कहलाता है। भारतमें शस्यका संग्रह हो जाने पर यह बोलने लगता है। इङ्गलेण्डमें आज भी कोयलकी पहली कूक सुनने पर मजदूर एक दिन छुट्टी ले आमोद प्रमोदमें बिताते हैं। बहुतसे लोगोंका विश्वास है कि इसके बोलते समय हाथमें पैसा रहना अच्छा नहीं। वर्षाकालको कोयलका गला बिगड़ जाता है। यह देखनेमें काला और कौवेसे छोटा होता है। आंख लाल रहती है। कोकिल विभिन्न जातीय होता है, जैसे युरोपका कुकू (Cuculus Canorus), छोटा कोकिल (Cuculus poliocephalus), हिमालयका कोकिल (Cuculus Himalayanus), पाटल रेखायुक्त कोकिल (Cuculus Sonneratii), भारतीय कोकिल (Cuculus micropterus), पहाड़ी कोकिल (Cuculus striatus), राजकोकिल (Hierococcyx varius or Nisicolor or Sparverioides) और शोकोद्दीपक कोकिल (Polyphasianigra) इत्यादि। कोकिलका मांस स्नेहल और पित्तनाशक है। (हारीतसंहिता)

२ ज्वलन्त अङ्गार, जलता अंगार। ३ सविष सौम्य कीटविशेष, एक जहरीला कीड़ा। इसके काटनेसे कफके रोग उठ खड़े होते हैं। ४ कोई चूहा। इसके विषसे शरीरमें उग्रग्रन्थि पड़ती और अतिशय ज्वर तथा जलन उठती है। भेक और नीलवृक्षका क्वाथ

चोमें पाक करके व्यवहार करनेसे इसका प्रतीकार होता है। (सुश्रुत) ५ बदरीफल, बेर। ६ छन्दोविशेष। यह छप्पयका एक भेद है। इसमें ५२ गुरु, ४८ लघु और १५२ मात्रा लगते हैं।

कोकिलक (सं॰ क्लो॰) कोकिल संज्ञार्थे कन्। जलता हुआ अंगारा।

कोकिलनयन (सं॰ पु॰) कोकिलस्य नयनमिव रक्तपुष्पमस्य, बहुव्री॰। कोकिलाक्षक्षुप, तलामखानेका पौदा।

कोकिला (सं॰ स्त्री॰) १ काकोली। २ कोकिलस्त्री, मादा कोयल।

कोकिला—रसालु नामक राजाकी महिषी। रावलपिण्डसे ५ कोस दक्षिणपूर्व खयेरमूर्ति नामक स्थानमें रसालु रहते थे। अनुमान ई॰ शताब्दीसे २०० वर्ष पहले वह राजत्व करते थे; उसी समय पंजाबमें अटक नामक स्थानके निकट खैराबादमें जदी नामक कोई राजा रहे। रसालु जब वासस्थान छोड़ जुलना-कोङ्कण चले गये, जदी राजा उनकी पत्नी रानी कोकिलाके प्रणयमें आसक्त हुए। उन्होंने खयेरमूर्तिके भवनमें जा रानी कोकिलासे प्रेमालाप किया था। कहते हैं—रानीके एक शुकपक्षी रहा। उसने रानीका असदाचरण देख कितना ही रोका था। रानीको अपनी बात सुनते न देख उसने कहा—मुझे छोड़ दो। रानीने तोता उड़ा दिया था। पक्षी घरसे निकल जुलना-कोङ्कण पहुंचा और प्रत्यूषको रसालुके घर जा उनको जगा कर कहने लगा—आपके घरमें चोर घुसा है। रसालु तोतेकी बात सुन सत्वर घर पहुंचे थे। वह समस्त वृत्तान्त सुन उन्होंने रानीको परित्याग किया। परित्यक्त कोकिला पीछे दूसरे किसी व्यक्तिके प्रेममें फंस गयीं। उसके फलसे तेज, चेज और सेज नामक तीन सन्तान उत्पन्न हुए। बहुतसे लोग अनुमान करते कि इन्हीं तीनोंसे तुवान, चेवो और स्याल जाति उद्भूत हुई हैं। (Cunningham's Arch. Sur. Reports, Vol. V.)

कोकिलाक्ष (सं॰ पु॰) कोकिलस्याक्षीव पुष्पमस्य, कोकिलाक्षि समासे टच्। अक्ष्णोऽदर्शनात्। पा ५। ४। ७६। १ क्षुपविशेष, तालमखाना। इसका संस्कृत पर्याय—इक्षुगन्धा, काण्डेक्षु, इक्षुर, क्षुर, शृगाली, शृङ्खली, शूरक, शृगालघण्टी, वज्रास्थि, शृङ्खला, वज्रकण्टक, इक्षुरक, वज्र, शृङ्खलीका, पिकेक्षणा और पिच्छिला है। श्वेत कोकिलाक्षको वीरतरु, विक्षुर, क्षुरक, शुक्लपुष्प और कुलाहक कहते हैं। रक्तकोकिलाक्षका नाम छत्रक और अतिच्छत्र है। यह आमवात और रक्तदोषको दूर करता है। (राजनिघण्ट) कोकिलाक्षका वीज शीतल, स्वादु, कषाय, तिक्त, गुरु, वृष्य और गर्भस्थापन है। (वैद्यकनिघण्ट)

कोकिलाक्षक, कोकिलाक्ष देखो।

कोकिलाक्षी (सं॰ स्त्री॰) कोकिलाक्षवीज, तालमखाना।

कोकिलानन्द, कोकिलावास देखो।

कोकिलाप्रिय (सं॰ पु॰) सङ्गीतकी एक ताल। इसका दूसरा नाम परमलु है।

कोकिलारव (सं॰ पु॰) १ तालका कोई भेद। २ कोयलकी बोली।

कोकिलावर्ति (सं॰ स्त्री॰) नेत्ररोगका वर्तिविशेष, आंखमें लगायी जानेवाली एक सलाई। त्रिकटु, लोहेका चूर्ण, समुद्रफेन, त्रिफला और अञ्जनके संयोगसे बनी हुई गोली पानीमें घिस कर लगानेसे तिमिरको दूर करती है। इसीका नाम कोकिलावर्ती है। (चक्रदत्त)

कोकिलावास (सं॰ पु॰) कोकिलस्य आवासः, ६-तत्। राजाम्रवृक्ष, आमका पेड़।

कोकिलासन (सं॰ क्ली॰) रुद्रयामलोक्त एक आसन। वायुका सञ्चार निरोध करके दोनों हाथ ऊपर उठाने चाहिये। उसके आगे दोनो अंगूठे बांध स्थिर चित्तसे बैठते हैं। फिर पद्मासन लगा जानुके ऊपर अवस्थिति करनी पड़ती है। इसीका नाम कोकिलासन है। आसन देखो।

कोकिलेक्षु (सं॰ पु॰) कोकिल इव इक्षुः कृष्णवर्णत्वात्। कृष्णेक्षु, काली ऊख।

कोकिलेष्टा (सं॰ स्त्री॰) महाजम्बूवृक्ष, बड़े जामुनका पेड़।

कोकिलोत्सव (सं॰ पु॰) कोकिलानामुत्सवोऽत्र, बहुव्री॰। आम्रवृक्ष, आमका पेड़।

कोकुआ, कोकाश देखो।

कोकुयाखण्ड—उड़ीसा प्रान्तके कटक जिलेका एक परगना। इसका क्षेत्रफल केवल २०६ वर्गमील है। टांगी और हरिचण्टा इसके प्रधान नगर हैं।

कोकुर—कश्मीर राज्यका एक प्रस्रवण। यह पीर-पंजाल पर्वतको उत्तर और निम्नभागमें अक्षा० ३३° ३०´ उ० तथा देशा० ७५° १९´ पू० पर अवस्थित है। कोकुर झरना ६ मुखोंसे बाहर निकल एक छोटी नदीके आकारमें बहता और अन्तको वरिङ्ग नदीसे जा मिलता है। इस प्रस्रवणका पानी बहुत ही स्वास्थ्यकर है।

कोकुराह (सं० पु०) मुखपुण्ड्रकयुक्त अश्व, टीकेदार घोड़ा।

कोकेन (अं० स्त्री०) औषधविशेष, एक दवा। यह कोका नामक वृक्षके पत्तोंसे प्रस्तुत होती है। इसमें कोई गंध नहीं और वर्ण सफेद रहता है। कोकेन औषधकी भांति खायी और मरहमोंमें मिलायी जाती है। आंख-जैसे कोमल अङ्गोंपर भी इसे अस्त्रचिकित्सा करनेसे पहले लगा देते हैं, जिसमें वह सुन्न पड़ जायें। थोड़े दिन हुए भारतमें कोकेन लोग पानके साथ नशेकी तौर पर खाने लगे थे। परन्तु सरकारने कानून बना यह बात उठा दी। युरोप और अमेरिका-के नशेबाज इसे नस्यकी भांति सूंघते हैं। भारतमें अब भी कोकेन नशेके लिये छिपा छिपा कर बहुत बेची जाती है।

कोको (हिं० स्त्री०) काकस्त्री, मादा कौवा।

कोक्किलि—कलिङ्ग देशके एक चालुक्यवंशीय राजा। राजमहेन्द्रीमें इनकी राजधानी रही। इन्होंने ६ मास-मात्र राजत्व किया था।

कोख (हिं० स्त्री०) १ पेट। २ पेटको दोनों ओरका स्थान। ३ गर्भाशय, हमल। जिस स्त्रीके बच्चे होकर मर जाते, उसे कोखजली और बांझको कोखबन्द कहते हैं।

कोगी (हिं० पु०) पशुविशेष, एक जानवर। यह लोमड़ी-जेसा देख पड़ता, झुण्ड बांध कर रहता और कृषिको बड़ी हानि करता है। लोगोंके कथनानुसार कोगियोंका झुण्ड सिंहको भी आक्रमण करता और उसके टुकड़े टुकड़े कर डालता है। जिस वनमें यह पहुंचते, शेर निकल भगते हैं।

कोङ्क (सं० पु०) एक देश। (भागवत ५।६।८)

कोङ्कण (सं० पु०) जनपदविशेष, एक देश। कूर्मविभा-गमें दक्षिणदिक्‌को यह देश निरूपित हुवा है।

(वृहत्संहिता १४ अ०, भारत ६।९।५९)

पूर्वकाल कोङ्कण एक विस्तृत जनपद-जैसा गिना जाता था।

केरल, तुलम्ब, सौराष्ट्र, कोङ्कण, करहाट, करणाट और वर्वर—सात देशोंका नाम कोङ्कण है। इसे सप्त-कोङ्कण भी कहते हैं।' (सह्याद्रिखण्ड, उत्तरार्ध ६।४८)

सह्याद्रिखण्डमें लिखा है,—'सह्याद्रिके शिखरदेशमें १०४ योजन विस्तृत कोङ्कण नामक देश है। इस देश-में केवल नष्ट चण्डाल रहते हैं।' (सह्याद्रि० २।२।१८) शक्तिसङ्गमतन्त्रमें लिखा है कि अभ्यङ्गसे कोटिदेशके बीच समुद्रप्रान्तवर्ती जनपद कोङ्कण कहलाता है।

कोङ्कणदेश दाक्षिणात्यके पश्चिम अंशमें अवस्थित है। अरबसागर और पश्चिमघाट नामक पर्वतश्रेणीके अन्तर्गत जो भूभाग है, उसीको कोङ्कण कहते हैं। अपढ़ लोग कोङ्कण शब्दको बिगाड़ कर 'कोकन' कहने लगे हैं। साधारणतः समुद्रतटके इस प्रदेशमें दक्षिण पश्चिमसे वायु आ जलवृष्टि करती है। जहां ऐसा हुआ करता, उसी स्थानका नाम कोङ्कण है। जिस पार्श्ववर्ती स्थानमें ऐसा नहीं होता, उसे लोग 'देश' कहा करते हैं।

कोङ्कण प्रदेश पश्चिमघाट (सह्याद्रि)से क्रमशः ढालू हो समुद्र तक चला गया है। इसके भीतरसे कई एक सामान्य सामान्य नदियां प्रवाहित हो समुद्र-में जा गिरी हैं। इसमें बहुतसे बन्दरगाह हैं। एक ही जगह इतने बन्दरगाह और कहीं देख नहीं पड़ते। उपकूल उच्च और सरल रेखा-जैसा रहनेसे बहुत दूर तक दृष्टि पहुंचती है। यहां प्रतिदिन दो प्रकारका वायु चलता है। प्राच्यवायु भूभागसे समुद्रकी ओर जाता और पाश्चात्यवायु समुद्रसे भूमिकी ओर आता है। पुरवाईका वेग समुद्रमें २० कोस तक अनुभूत होता है।

कोङ्कणका दैर्घ्य ११० कोस और प्रस्थ १७।१८ कोस होगा। अधिकांश ही पार्वत्य है। बीच बीच जंगल भी देख पड़ता है। पर्वत प्रायः १३३२ हाथसे २६६६ हाथ तक ऊंचे हैं। गिरिपथ दुरारोह हैं, शकट आदि उन पर गमन कर नहीं सकते। उधित्यका भूमिके स्थान स्थान पर पर्वतोंकी शाखायें निकल पड़ी हैं।

आजकल कोङ्कण प्रदेश २ भागोंमें विभक्त है। एक भागको उत्तर कोङ्कण और दूसरेको दक्षिण कोङ्कण कहते हैं। दोनों ही विजयपुरके अन्तर्गत रहे। यहां सब प्रकारका शस्य उत्पन्न होता है। उसमें पाट और नारियल अति उत्कृष्ट रहता है।

पहले यहां लोग जहाजोंको लूट जीविका निर्वाह करते थे। १८ वीं शताब्दीको भी जो जहाज इस राह-में आते, कुछ कर देकर छुटकारा पाते थे। कर न देनेसे जहाज लूट लिया जाता था। कोङ्कणका अधि-कांश अंगिरिया वंशके अधिकारमें रहा। १७५६ ई० को क्लाइव और वाटसन साहबने जाकर उन्हें निकाल बाहर किया था। फिर इसका बहुतसा अंश पेशवाने अधिकार कर लिया। १८१८ ई० को यह स्थान अंग-रेजोंके अधिकारमें पहुंचा। उन्होंने इसे उत्तर और दक्षिण भागमें बांटा है। उत्तर भागमें पहाड़ों पर अनेक दुर्ग हैं। उनमें बेसिन, (बसर) आरनाला, केलवी, महिम, शिरिगम, तेरापुर, चिवोचन, धनु और उमर-गांव प्रधान हैं। गम्भीरगढ़, सेंगीयात, आसिवा, भूपति-गढ़ और पुरुभुल नामक गिरिशृङ्गों पर जो क़िले रहे, वे तोड़ डाले गये। गोतोरा, तुकमुक, गोज, विकटगढ़ या पाण्डव महुलि, मल्लङ्गगड़ और असुरि नामक कई दुर्ग मध्यके प्रदेशमें अवस्थित हैं। अंगरेजोंने बेकाम बता इनमें कई क़िलोंको तोड़ डाला है। सोमान्त-प्रदेशमें सह्याद्रिके ऊपर बहरामगढ़, गोरखगढ़, कोतलगढ़, और सिद्धगढ़ नामक कई दुर्ग खड़े हैं। दुरारोह रहनेसे इन पर चढ़नेके लिये राह बना दी गयी है।

अंगरेजोंकी अमलदारीमें कनाड़ा, रत्नगिरि, कोलाबा, बम्बई और थाना विभाग इसके अन्तर्गत आ गया है। आजकल कोङ्कणकी सीमा इस प्रकार है—उत्तरकी ओर गुजरात, पूर्व तथा दक्षिण मन्द्राज प्रदेश और पश्चिमको समुद्र।

कोङ्कणक (सं० पु०) कोङ्कण स्वार्थे कन्। कोङ्कण देश। (हरिवंश १४ अ०)

कोङ्कण कुनबी—बम्बईके कनाड़ा जिलेकी एक जाति। इसकी संख्या कोई १४८१२ होगी। हलीयालमें बहु-संख्यक और कारवाड़ तथा अङ्कोलामें अल्पसंख्यक काले (कोङ्कण) कुनबी पाये जाते हैं। दक्षिण-पश्चिम गोवाके कुनबियोंसे इनकी रिश्तेदारी है। रामलिङ्ग, नायकी, मोनाई, श्रीनाथ, भूतनाथ और भूतनाथ प्रधान देवता होते जिनके मन्दिर गांवोंमें बने हैं। सब लोग एक साथ खाते पीते हैं। इनका रङ्ग काला है। यह बांसकी बनी कच्ची झोपड़ियोंमें रहते हैं। स्त्रियां अपने बालोंको फूलोंसे सजाती हैं। हलदी, मिर्च और नमककी तरकारी बनती है। नशेसे इन्हें बड़ा परहेज है। यह झगड़ालू होते, परन्तु सच्चे और सादे रहते हैं और अपनी ईमान्दारीके लिये मशहूर हैं। इनका पुश्तैनी पेशा जङ्गली जमीन जोतना है, जिसके कम पड़ जानेसे इन्हें मिहनत मजदूरी करनी पड़ती है। स्त्रियां खाना पकानेके सिवा खजूरकी चटाइयां बनाती हैं। शिववाहन वृषभ वा नन्दीकी प्रधान रूपसे पूजा होती, जिनका मन्दिर सूपाउलवीमें बना है। बहुतसे लोग प्रति वर्ष उलवीकी तीर्थयात्रा करते, जब फरवरी मासको १० दिन तक वहां मेला लगता है। नारियलकी जटा निकाल करके उसको पूर्वपुरुषों-जैसा पूजते हैं। इनको विश्वास है—अकालमृत्यु होनेसे मनुष्य भूत होकर लोगोंको सताता है और गर्भवती मरनेसे चुड़ैल बनकर चढ़ती है। होलीको लोग उलवीके मन्दिरमें लड़ियां घुमा घुमा कर खड़काते और नाचते गाते हैं। बच्चेके पहले पहले ऊपरी दांत आना अशुभ समझा जाता है। विधवाविवाह और बहुविवाह प्रचलित है। वरकर्ता विवाहका प्रस्ताव करता है। मरणके पीछे ३ दिन तक अशौच रहता है। यह मुर्दोंको जमीनमें गाड़ते और मूछें मुंडा डालते हैं।

कोङ्कण कुम्हार—बम्बई कनाड़ा जिलेके कारवाड़ और एल्लापुरमें रहनेवाली एक कुम्हार जाति। इनकी संख्या कोई छहसौ होगी। यह गोवाके जसगांवसे आये हुए मालूम पड़ते हैं। कनाड़ामें ब्राह्मणोंके जानेसे पहले यह स्थानीय पुरोहित- जैसे रह चुके हैं और स्थानीय देवताओंके कुछ मन्दिरोंमें आज भी महन्ती करते हैं। कारवाड़के असनोटी स्थानमें रामनाथके उद्देश उत्सर्ग किया हुआ एक मन्दिर है। उसमें सिवा कोङ्कणी कुम्हारके दूसरा महन्त नहीं हो सकता। ग्राम्य देवताओंके लिये पत्थरकी मूर्तियां और पादबनानेकी इनका मौरूसी हक है। यह किसी किसमका नशा नहीं खाते पीते और खूब परिश्रमी, मितव्ययी और सुशील होते हैं। मट्टीके बर्तन और खपड़े बनाना इनका काम है। स्त्रियां पुरुषोंकी सहायता पहुंचाती हैं। यह ग्राम्य देवताओंको पूजते और जादूटोनामें दृढ़ विश्वास रखते हैं। इनकी कुलदेवता पुरोश हैं, जिनकी पीतलकी मूर्ति बनाकर बहुतसे लोग घरमें रखते हैं। लड़कियोंका ८से १२ और लड़कोंका १४से २० वर्षके बीच विवाह होता है। विधवाविवाह निषिद्ध है। यह अपढ़ लोग हैं।

कोङ्कण खारवी—बम्बईके कनाड़ा जिलेमें समुद्र किनारे रहनेवाली एक जाति। यह खम्बातके खारकियोंकी, जिनसे आचार व्यवहारमें बहुत मिलते जुलते, एक शाखा समझ पड़ते हैं। कांतरादेवी या वाघेश्वरी कुलदेवता हैं, जिनका मन्दिर अङ्कोलाके औरसामें बना हुआ है। खारवी बड़े परिश्रमी हैं। यह समुद्रमें मछली मारते और अच्छे मल्लाह होते हैं। स्त्रियां भोजन बनातीं, सन बटतीं और मछलियां बेचती हैं। शृङ्गेरी स्मार्त मठके प्रधान इनके गुरु होते हैं। लिखने पढ़नेकी चाल कम है।

कोङ्कणस्थ ब्राह्मण—दाक्षिणात्यके ब्राह्मणोंकी एक श्रेणी। यह चितपावन कहलाते हैं। मराठी ब्राह्मणोंमें यही प्रधान हैं। महाराष्ट्रराज पेशवा इसी श्रेणीके थे। उनके अभ्युदयसे यह जाति भी प्रबल पड़ गयी। कोङ्कण और पूना जिलेमें विशेषतः इनका वास है। पेशवाके अधिकारकाल यह नाना देशोंमें फैल पड़े। महाराष्ट्रमें कहीं इन्हें चितपावन, कहीं चितपोल और कहीं चिपलून कहते हैं।

चितपावन या चितपोल नामकी उत्पत्ति पर सह्याद्रिखण्डमें लिखा है—

इसके पीछे श्राद्ध और यज्ञोपलक्षमें समस्त ब्राह्मणों और ऋषियोंको निमन्त्रण किया गया, परन्तु किसीको आया हुआ न देखा भार्गव मन ही मन चिढ़ गये और सोचने लगे— 'हमने नया चेत्र निर्माण किया है। हम एक नूतन कर्ता हैं। ब्राह्मणोंके न आनेका क्या कारण है? अथवा उन्होंने अपना क्या उद्देश रखा है? जो हो, हम नूतन ब्राह्मण सृष्टि करेंगे।'

किन्तु कोङ्कणस्थ ब्राह्मण अपने आप कहा करते कि हमारा चित्त पवित्र है और हम दूसरेका चित्त पवित्र करते हैं, जिससे हमारा 'चितपावन' नाम पड़ा है। सह्याद्रिखण्डके अपर स्थानमें यह ब्राह्मणश्रेणी चित्तपुण्यात्मा नामसे भी वर्णित हुई है। (उत्तरार्ध ६।५९) १७१५ ई० को पेशवा बालाजी विश्वनाथके अभ्युदयमें यह समकोङ्कणके मध्य श्रेष्ठ समझे गये। कोङ्कणस्थ ब्राह्मण परशुरामशैलके निकटस्थ चिपलून ग्राममें प्रतिष्ठित परशुरामकी मूर्ति पूजते हैं। इसीसे और पूर्वोक्त प्रवाद पर विश्वास करके बहुतसे लोग इस ब्राह्मणश्रेणीको परशुरामकी सृष्टि कहा करते हैं।* चितपावन फिर कहा करते हैं कि हमारे पूर्वपुरुष निजाम राज्यके अम्बा जोगाई स्थानसे पूना जिलेमें आये थे। पहले वह देशस्थ ब्राह्मण रहे। परशुराम जिन १४ ब्राह्मणोंको आर्यावर्तसे लाये उनमें इनके एक पूर्वपुरुष भी थे। किसीके मतमें इनके पूर्वपुरुष भग्न-

*Asiatic Researches, Vol. IX. 239; Taylor's Oriental Manuscripts, III. 705; Moor's Hindu Pantheon, 351; Grant Duff s Marathas, Vol. I.; Wilk's History of the South of India, Vol. I. p. 157-158; Ancient Remains of Western India, 12; Burton's Goa and the Blue Mountains, 14-15; Journal of the Royal Asiatic Society, Bombay Gazetteer, Vol. XVIII. Pt. I; Sherring's Tribes and Castes.

तरी हो समुद्रके स्रोतमें बहते कोङ्कणमें जा लगे थे। बहुतसे लोग कहते कि ब्राह्मणवीर पेशवाके अभ्युत्थानसे पहले कोङ्कणके ब्राह्मणोंकी अवस्था बहुत अच्छी न रही, बहुतसे लोग उनसे शूद्रकी भांति घृणा करते थे। फिर कोई कोई इनका श्वेतवर्ण, पाण्डुर चक्षु और सुन्दर आकृति देख नाव टूटनेकी बात पर विश्वास करके बताते कि यह पारसिक सन्तान हैं, खुशरू परवीजके वंशमें इनका जन्म है। सह्याद्रिखण्डके मतमें कोङ्कणज ब्राह्मण—चण्डालसेवित दुष्टदेशसम्भूत, आचारहीन, सब कार्योंमें वर्जनीय और दुर्जन हैं।*

(उत्तरार्ध ४।४५)

जो हो, वर्तमान समयमें इनकी अवस्था बहुत उन्नत है। यह विद्वान्, बुद्धिमान्, मेधावी, दूरदर्शी, चतुर, स्वार्थपर, आत्माभिमानी और शारीरिक तथा मानसिक परिश्रममें विशेष पटु हैं। महाधनवान्से लेकर भिक्षुजीवी अत्यन्त दरिद्र पर्यन्त इनमें लोग होते हैं।

कोङ्कणस्थ ब्राह्मणोंमें कोई ऋग्वेदकी शाकलशाखाभुक्त और कोई कृष्णयजुर्वेदी हैं। ऋग्वेदी आश्वलायनसूत्र और कृष्ण-यजुर्वेदी हिरण्यकेशी सूत्रके अनुसार श्रौत तथा गृह्य कर्म करते हैं। इनमें अत्रि, कपि, काश्यप, कौण्डिन्य, कौशिक, गर्ग, जामदग्न्य, नित्युन्दन, भरद्वाज, वत्स, वाभ्रव्य, वासिष्ठ, विष्णुवृद्ध और शाण्डिल्य गोत्र लगता है।

उपाधि—अभ्यङ्कर, आगाशी, आठवले, बाल, बापत, भागवत, भाट, भावे, भिदे, चितले, दामले, डुगले, गादगिल, गरदे, योग, जोशी, कर्वे, कुण्ठे, लेले, लिमये, लोंधे, मेहेन्दले, मोदक, नेने, ओक, पटवर्धन, फड़के, रानाडे, साठे, व्यास इत्यादि हैं। स्वगोत्र वा एकप्रवरमें विवाह नहीं होता। इनका आचार व्यवहार आदि देशस्थ ब्राह्मणोंसे कितना ही भिन्न है। इनकी मातृभाषा कोङ्कणी वा मराठी है। परन्तु स्थानभेदसे कोई कोई कनाड़ी या तेलगुमें भी बात करता है।

कोङ्कणस्थ ब्राह्मण यागयज्ञ भिन्न मांस नहीं खाते, अधिकांश लोग निरामिषभोजी हैं; इनमें मद्यपान निषिद्ध तो है, किन्तु अङ्गरेजी सभ्यताके गुणसे आजकल बड़े लोगोंमें कितने ही शराब पीना सीख गये हैं। यह दाल भात खाते हैं। इन्हें मट्ठा खाना बहुत अच्छा लगता है, मट्ठा न मिलनेसे एक प्रकार खाना पीना रुक जाता है। सन्ध्या आह्निक और शयनकालको बहुतसे लोग चेली या रेशमी कपड़ा पहनते हैं।

पहले इन लोगोंमें देशकी पोशाक पर ही खींचतान थी, परन्तु आजकल अंगरेजी लिखना पढ़ना अधिक सीख बड़े लोग अपने घरोंमें अंगरेजी पोशाकका अनुकरण कर रहे हैं। पूर्वकी इनकी स्त्रियां देवद्विजों पर ही बड़ी निष्ठा रखती थीं, गहने पोशाक पर बड़ा कोई लक्ष्य न रहा। किन्तु अब वह समय चला गया, आजकल अलङ्कार और साज सज्जा पर ही निष्ठा बढ़ी है। इनकी सभी रमणियां अंगना व्यवहार करती हैं। फिर बड़े घरकी कामिनियां चद्दर ओढ़ बाहर निकलती हैं। सकल ही अति परिष्कार परिच्छन्न रहते हैं। स्वभाव चरित्र भी आश्चर्यजनक है। विद्या बुद्धि और शासन करनेकी क्षमता इनकी भांति दाक्षिणात्यकी किसी दूसरी जातिमें नहीं। १७२७ ई० को निजामने देखा कि सब प्रकारके राजकीय कर्मचारियोंका पद कोङ्कणस्थ ब्राह्मणोंने अधिकार किया था। अंगरेजोंके राजत्वमें इनकी शतवर्षव्यापी वही साधारण क्षमता नष्ट हो गयी है। आज भी क्या राजकीय क्या साधारण, इतना कि भिक्षावृत्ति पर्यन्त ऐसा कोई काम नहीं छूटा, जिसे यह करनेसे चूकें। सैकड़ों पण्डितोंने इस ब्राह्मण कुलमें जन्मग्रहण किया है। उनमें प्रसिद्ध ज्योतिर्विद् बापूदेव शास्त्रीका नाम उल्लेखयोग्य है।

चितपावन अपनी श्रेणीके ब्राह्मणको ही पौरोहित्यमें नियुक्त करते हैं। यही नहीं की पुरोहित केवल शान्तिस्वस्त्ययन और पूजादि करके निश्चिन्त हो जायेगा। उसे यजमानकी गृहणियोंका आदेश पालन करना, विवाहादिमें बिचवानी बनना और कभी कभी बाजारसे सौदा सुलफ भी लाना पड़ता है। फिर

* सह्याद्रिखण्डमें अपना ऐसा निन्दावाद रहनेसे कोङ्कणस्थ ब्राह्मण उसे देख पाते ही जला डालते हैं। बीच बीच इस पुस्तकको ध्वंस करनेके लिये वह भारतके नाना स्थानोंमें आदमी भी भेजा करते हैं।

समय समय पर वह दलाली भी करते हैं। इतने कामोंके सिवा पुरोहितको कुछ वेदान्त भी जानना चाहिये। क्योंकि कभी कभी यजमानोंको शङ्कराचार्यके मतानुसार कुछ उपदेश भी देना पड़ता है।

प्रसववेदना उपस्थित होते ही प्रसूतिको प्रसवगृहमें ले जाते हैं। इनका उक्त स्थान कागजसे खूब सटा और गर्म रहता है। सन्तान भूमिष्ठ होनेके पीछे मा और बच्चेको उष्ण जलसे स्नान कराया जाता है। माके सिरहाने किसी पशुका मस्तक रखते हैं। फिर पिता अथवा इनके अस्वस्थ रहनेसे कोई दूसरा गुरुजन स्नान आदिसे निवट सन्तानका जातकर्म सम्पन्न करता है। इसी समय पुण्याहवाचन, मातृकापूजा, नान्दीश्राद्ध और शान्तिपाठ होता है। पञ्चम और षष्ठ दिनको षष्ठीपूजा करते हैं। कितने ही फिर पांचवें दिन बन्धुवान्धवों और भिक्षुवोंको खिलाते पिलाते हैं। षष्ठ कालरात्रि है। गृहस्थ रमणियां सारी रात जागके आमोद प्रमोद गीत और शान्तिपाठ क्रिया करती हैं। १० वें दिन प्रसूति सोवरसे निकल नहा धो शुद्ध होती है। द्वादश दिवस शिशुका कर्णवेध क्रिया जाता है। पुत्र सन्तान उत्पन्न होनेसे चतुर्थ मास सूर्यावलोकन, पञ्चम मास भूम्यप्रवेशन और षष्ठ, अष्टम, दशम वा द्वादश मास अन्नप्राशन होता है। इसके पीछे जन्मतिथिके उपलक्षमें कुलदेवता, जन्मनक्षत्रदेवता, अश्वत्थामा, बलि, विभीषण, भानु, हनूमान्, परशुराम, कृपाचार्य, मार्कण्डेय, प्रजापति, प्रह्लाद, षष्ठी, गणेश और व्यासदेवको पूजा चढ़ाना पड़ती है। चौथेको छोड़ पहलेसे पांचवें वर्षके बीच बालकका चूड़ाकरण, सातवेंसे दशवें वर्षके बीच यज्ञोपवीत और फिर १२ दिन पीछे समावर्तन होता है।

चितपावन कन्याका छहसे दश और पुत्रका दशसे बीस वर्षके मध्य विवाह कर देते हैं। इनमें ब्राह्मविवाहकी प्रथा प्रचलित है। विवाहकालको दहेज भिन्न वर कन्या दोनों अनेक उपढौकन पाते हैं। बड़े घरोंमें वरकन्याकी जन्मकुण्डली मिला कर विवाह किया जाता है। आर्यावर्तके श्रेष्ठ कुलीन ब्राह्मणोंकी भांति विवाहका अनुष्ठान आदि सम्पन्न हुवा करता है। अवस्थाके अनुसार विवाहके दोसे २० दिन तक पहले विवाहमण्डप बनता है। हिन्दुस्थानकी तरह वहां भी विवाहमें खूब धूमधड़ाका रहता है।

विवाहके पीछे जब वर ससुरालके गांवसे बाहर निकलता, सीमान्तपूजा नामक एक क्रिया हुआ करती है। वरकन्याका वास एक ही ग्राममें रहनेसे विवाहके पहले या पिछले दिन ग्रामस्थ मन्दिर या वरके घरमें सीमान्तपूजा होती है। वरके घरमें सीमान्तपूजाके समय पहले कन्यापक्षीय एक वयोज्येष्ठा सधवा रमणी एक डलियामें नारियल, चावल, मट्ठा, दही, दूध, शहद, गुड़, शक्कर, हलदी, सिन्दूर, फल, चन्दन और किसी थैलीमें पान सुपारी रख २ दुपट्टे, २ पगड़ियां, फूलोंकी लड़ियां आदि कितनी ही चीजें और एक बड़ी चौकी पर बनात जड़ तांबेके कितने ही पैसे बिछा देती हैं। पुरोहितोंके साहाय्यसे द्रव्योंको उठा सधवा तथा कन्यापक्षीय पुरुष और रमणियां वरके घर पहुंचती हैं। उस समय वरके घरपर बाजे बजा करते हैं। वरकर्ता पुरुषोंकी अभ्यर्थना बाहरी कमरेमें और वरकी माता कन्याकी माता प्रभृति को सादर सम्भाषणपूर्वक अन्तःपुरमें ले जाकर बैठाती हैं।

फिर कन्याके पुरोहित लायी हुयी ऊंची चौकीके पार्श्वमें दो छोटी चौकियां रख उन पर बनात डाल देते हैं। वर उसी ऊंची चौकी और कन्याके पिता तथा माता उभय पार्श्वस्थ छोटी चौकियों पर उपवेशन करती हैं। कन्याके माता प्रथम गणनायको पूजते हैं। इसी समय कुलके पुरोहितको एक पगड़ी देना पड़ती है। उसके पीछे वरको पूजा होती है। कन्याकी माता पहले गर्म पानीसे वरका दक्षिण पद, पीछे वाम पद धौत करती हैं। कन्याका पिता वरके पैर पोंछ उसके कपाल पर चन्दन और चावल चढ़ाता है। फिर वह वरको एक नयी पगड़ी बांधनेके लिये देता है। वर अपनी पगड़ी खोल श्वशुरकी दी हुई पगड़ी पहनता है। उस समय कन्याका पिता वरके हाथमें एक सन्दूक देता, जिसे वह अपने स्कन्ध पर रख लेता है। ऐसे ही समय वरकी भगिनी पीछेसे उसकी पगड़ीमें फूलोंकी माला डालती है। फिर कन्याका पिता वरको पश्चा-

मृत पिलाता है। इस समय चारो ओरसे पुष्पवृष्टि और धान्यवृष्टि हुवा करती है। कुलपुरोहित बराबर मन्त्र पाठ करता रहता है। इसके पीछे कन्याकी माता वरकी बहनके पैर धोतीं, पीछे सबको अन्तःपुर ले जाकर वरकी माता और अपरापर महिलावोंके पैर धो उनके कोंछमें नारियल, चावल और चीनी डालनी पड़ती है। अन्तःपुरमें जिस समय यह सब काम होते रहते, बाहर कन्याके आत्मीय कुटुम्ब अभ्यागत लोगोंके मत्थे-चन्दनकी टिकली लगा और उन्हें पानसुपारी तथा नारियल दे अभ्यर्थना किया करते हैं। इसके पीछे कन्यापक्षीय सभी अपने अपने घर चले आते हैं।

उसी दिनकी सन्ध्याकाल कन्याके पिताके अतिरिक्त दूसरे सब सगे बन्धुबान्धव नाना प्रकार खाद्य द्रव्य साथ ले वरके घर जाते हैं। पहले वर समवयस्क बालकोंके साथ वह चीजें खाता है। उसके पीछे वरपक्षीय और कन्यापक्षीय आत्मीय कुटुम्बी आशीर्वाद करते हैं।

इधर कन्या पीतवस्त्र (पचिया) पहन हरगौरीके सम्मुख एक छोटी चौकी पर बैठ इस प्रकार प्रार्थना करती है—'हे गौरि! हमें सौभाग्य दो और हमारे द्वार पर जो आये हैं, उन्हें दीर्घायु करो।' पीछे कन्याका पिता पुरोहितको साथ ले वराह्वान करने जाता है। वह वरके घर जा वर और उसके पुरोहितको एक एक नारियल पकड़ा अपने घर आनेके लिये निमन्त्रण कर आता है।

विवाहके पहले सन्ध्याकालको वर प्रथम श्वशुरप्रदत्त पगड़ी और उत्तरीय (डुपट्टा) परिधान करता है। उसकी बहन फूलोंका एक बड़ा हार उसी पगड़ीमें बांध देती है। उस समय पुरोहित मन्त्र आदि पढ़ा करता है। वर प्रथम इष्टदेव, तत्पश्चात् गुरुजनोंको नमस्कार करके बाहर जा घोड़े पर चढ़ता है। इस समय सलामी दगती रहती और बाजे बजा करते हैं। वरके साथ उसकी माता, भगिनी और आत्मीय कुटुम्बी व्याहने जाते हैं। पथमें अनिष्ट निवारणके लिये नारियल बंटा करता है। वर जब कन्याके घर पहुंचता, उसके मत्थेमें भात छूवा कर दूर फेंक दिया जाता है। इसी समय कन्यापक्षीय कोई सधवा रमणी एक गड़वा पानी ला वरके घोड़े पर ढाल देती हैं। वरके घोड़ेसे उतरने पर सधवा रमणियां सामने दीपक रख वरण करती हैं। फिर कन्याका भाई वरका दाहना कान मल देता है। इसीलिये उसे एक पगड़ी उपहार मिलती है। उस समय कन्याकर्ता वरको विवाह-मण्डपमें ले जाकर यथारीति मधुपर्क प्रदान करता है। मधुपर्क देखो। मधुपर्कके पीछे पुरोहित इष्टदेवको स्मरण करके शुभकार्य सम्पन्न करनेके लिये अभ्यागत व्यक्तियोंकी अनुमति लेता है। उस समय एक सधवा रमणी आकर पुरोहित, वरकन्या और कन्याके पिता माताके कपालमें चन्दन लगाती है।

इस स्थान पर पुरोहित कुल विधिके अनुसार अनेक कार्य सम्पन्न करते हैं। फिर लग्नकङ्कण, सभापूजन, गृहप्रवेश और विवाहहोमके पीछे सप्तपदी गमन हुवा करता है। लग्नकङ्कण आदि शब्द देखो। स्त्री आचार और उसके पीछे वर कन्याका आहार होने पर पांसेका खेल होता है। इसी समय वरको कन्याका पैर पकड़ने और परस्पर चुम्बन करनेके लिये कहा जाता है। दोनों ओर हंसी दिल्लगी उड़ा करती है। इसी बीच वरकी आत्मीय रमणियां कुछ क्षुब्ध हो वरके घर चली जाती हैं। उस समय फिर कन्यापक्षीय रमणियां बड़ी बड़ी टोकरियां भर नाना प्रकार मिष्टान्न, दालमोठ, दही, गुड़, नारियल आदि लेजाकर वरके आत्मीयोंको देतीं और उन्हें अपने घर चलकर आहार करनेका अनुरोध करती हैं। इसी समय वरके श्यालक और श्वशुर एक घोड़ा सजा वरके दरवाजे लाकर उसे नाना प्रकार प्रलोभन दिखाते हैं। फिर वरपक्षीय रमणियां ठण्डी पड़ हंसते हंसते वरको ले कन्याके घर जा पहुंचती हैं। उसके पीछे सबका भोज होता है। इसके बाद बाहर पुरुषों और भीतर रमणियोंमें 'नकटा' की हंसी दिल्लगी चलती है। इसपर वर और कन्यापक्षीय मराठी भाषामें जिल्ला-जवानी बोलते हैं। इस रङ्गरहस्यके पीछे वरपक्षीय अलङ्कार दे नववधूका मुख देखते हैं। उसके अनन्तर स्नानोत्सव होता है। कन्याकी माता वरकी माता और ज्ञातिकी दूसरी रमणियोंको सयत्न बुला घरके पीछे मांडेके नीचे ले जाकर स्नान

कराती हैं। वहां छोटी छोटी घण्टियां लटका कराती हैं। स्नानके समय डोरी पकड़ उन घण्टियोंको बजाया जाता है।

विवाहके दिनसे ५ दिन तक इसी प्रकार नाना-प्रकारके आमोद आह्लादमें समय बीतता है। ५ वें दिन विदाका जुलूस निकलता है। वर कन्या दोनों मूल्यवान् वेशभूषा धारण करते हैं। वर घोड़े पर चढ़ कन्याको अपने आगे बैठाके गृहाभिमुख चलता है। साथ ही आत्मीय नरनारी, वाद्यकर और दासदासी गमन करते हैं। गृहके सम्मुख उपस्थित होने पर पुरकी स्त्रियां वरकन्याको वरण करके घर ले जाती हैं। बीचमें कितने ही कौलिक आचार होनेके पीछे वर-कन्याको सम्बोधन करके कहता है—मेरी बहन मेरी कन्याको चाहती है। उस समय कन्या प्रतिज्ञा करती है—मेरे सात पुत्रोंके पीछे भी कन्या होने पर मैं उसे ननदके लड़केके साथ व्याह दूंगी। इसके पीछे कन्या का नया नाम रखा जाता है। वर कन्याके कानमें चुपके से उसका नाम सुना देता है। फिर भोज, समाराधान और देवदेवकोत्थापन प्रभृति उत्सव होते हैं।

स्त्री प्रथम ऋतुमती होनेसे शुभदिनको गर्भाधान किया जाता है। इस उत्सवमें इनकी रमणी-मण्डलीके मध्य भी हलदीका रंग चलता है।

गर्भवती होने पर यथाकाल पुंसवन, सीमन्तोन्नयन और 'अनवलोभन' (साधभक्षण) संस्कार करते हैं।

चितपावनोंमें किसीका मृत्युकाल आ पहुंचने पर उसको तुलसीपत्र पर शयन करा वेद और भगवद्-गीता सुनाते और पुरोहित 'नारायण,' 'नारायण' शब्द उच्चारण किया करते हैं। मृत्यु होने पर उसके आत्मीय कुटुम्बियोंको संवाद दिया जाता है। वह सब आ मृतदेहको ले श्मशानमें सत्कार करने पहुंचते हैं। मृत व्यक्ति अग्निहोत्री होने पर रक्षित अग्निसे एक पात्रमें एक जलता अङ्गार उठाकर ले जाना पड़ता है। चितपावनोंको विश्वास है—त्रिपाद, नक्षत्रपञ्चक, धनिष्ठाके द्वितीयार्ध और अश्विनीके प्रथमार्धमें मृत्यु होनेसे बहुत अशुभ होता है। इस अशुभ निवारणके लिये अनेक शान्ति स्वस्त्ययन किया जाता है।

अन्त्येष्टिक्रिया यथानियम शास्त्रके अनुसार सम्पन्न होती है। अन्त्येष्टिक्रिया देखो।

साधारण ब्राह्मणोंकी तरह यह भी दश दिन अशौच ग्रहण करते हैं। इन १० दिनोंमें कोई अच्छी चीज काममें नहीं लायी जाती। पान, शक्कर यहां तक कि दूध भी इस दश दिनों ग्रहण करना निषिद्ध है। इस समय लोग गरुड़पुराण सुनते हैं। सन्ध्याकालको तारा न देखनेसे आहार नहीं किया जाता। इसीके मध्य अस्थिचयन है। हिन्दुस्थानमें यह प्रथा न रहते भी दाक्षिणात्यमें बराबर चलती है। तीसरे दिन मृत-व्यक्तिका श्राद्धाधिकारी जिस वेशसे शवदाह करने गया था, उसी वेशसे कर्त (कर्ता ?) नामक निकृष्ट ब्राह्मण-को साथ लेकर श्मशानको जाता है। वह पहले स्नान करके एक नया कपड़ा पहनता है। (उसे उत्तरीय और यज्ञसूत्रके साथ खींच कर बांधना पड़ता है।) फिर चिताके अङ्गार पर अल्प गोमूत्र छोड़ा जाता और नहीं जली हड्डियां पृथक् करके सञ्चय करते हैं। इसी प्रकार सब इकट्ठा करके एक टोकरीमें उठा लेते हैं। फिर उन्हें और वहांके सब अंगारे ले निकट-टस्थ नदी वा पुष्करिणीमें फेंक आते हैं। जहां मृत व्यक्तिके पैर रहते थे, वहां बैठकर एक त्रिकोण वेदी बनाना पड़ती है। श्राद्धाधिकारी इस वेदीके तीनों कोण पर तीन और बीचमें एक मट्टीकी जलपूर्ण कलसी रखता है। कलसीके भीतर थोड़े तिल छोड़ना पड़ते हैं। कल-सीयोंके पास अश्म नामक शिला रखी जाती है। चारों कलसीयोंके पार्श्वमें हरिद्रावर्णके ४ चिह्न और प्रत्येक कलसीके मुखमें एक एक पिंड स्थापित होता है। आटेकी सान उससे ८ गोले बनाके छत्र और पिष्टकके आकार-में परिणत कर कलसीके निकट रखते हैं। चितपाव-नोंका विश्वास है—'मध्य कलसीका जल और पिष्टक मृत व्यक्तिकी क्षुधा मिटावेगा। आटेका छाता धूपसे और पादुका स्वर्गको राहमें कांटे खोंचेसे उसके चरण-की रक्षा करेगी। पार्श्ववर्ती कलसियां और उनके साथके पिष्टकादि रुद्र, यम तथा पूर्वपुरुषोंके लिये रहते हैं। श्राद्धाधिकारी उसके पीछे पिण्डोंके साथ कलसी-योंमें तिल एवं जल डाल कज्जल तथा घृतके साथ स्पर्श

करता है। उसके पीछे चद्दरका एक खूंट पानीमें डुबा उससे एक एक बूंद पानी और एक एक पिण्ड देते हैं। फिर आघ्राण लेकर उक्त द्वारपिण्डोके सिवा दूसरे समस्त द्रव्य जलमें फेंके जाते हैं। दश दिन तक ऐसा ही प्रति दिन किया करते हैं। यह करनेसे सम्भवतः मृत व्यक्ति नव शरीर धारण करता है। पहले दिन उसका मस्तक, दूसरे दिन चक्षु, कर्ण एवं नासिका, तीसरे दिन गर्दन, पृष्ठ एवं हस्त, चौथे दिन निम्न अंशके साथ कटि, पांचवें दिन पदद्वय, छठें दिन जीवन, सातवें दिन अस्थि मज्जा, आठवें दिन केश तथा दन्त, नवें दिन शरीरमें बलसञ्चय और दशवें दिन नूतन देहमें क्षुधा तृष्णाका बोध होता है। १०म दिवस श्राद्धाधिकारी व्यक्ति एक त्रिकोणाकार वेदी प्रस्तुत करके उसको गोबर और जलसे लीपता तथा उस पर हलदीकी बुकनी छोड़ देता है। फिर पांच प्रकारके वर्णों पर मट्टीके जलपूर्ण पांच पात्र रखते हैं। उनमें तीन एक पंक्तिमें और दो पार्श्वमें रहते हैं। उनमें तिल डाल उसके ऊपर आटेका पिष्टक और चावलका पिण्ड रख देते हैं। फिर हरे रंगका चिह्न लगा और उसी स्थान पर द्वारपिण्डी रखके पूजा करते हैं। धूप दीप देकर मृतको उपकरण निवेदन कर दिये जाते हैं। उसी समय यदि एक काक आकर दक्षिण दिक्का पिण्ड उठाता, तो समझा जाता कि मृत व्यक्तिका मृत्यु सुखमें हुवा है। कौवेके न आनेसे समझना पड़ेगा कि उसके मनमें कष्ट है। श्राद्धकारी तब इस द्वारपिण्डीको नमस्कार करके मृत व्यक्तिके उद्देशसे कहता है—'आप निश्चिन्त रहें आपके परिवारवर्ग और इष्टदेवका यथारीति तत्त्वावधान किया जायेगा। फिर यदि अन्त्येष्टि क्रिया नियमानुसार सम्पन्न नहीं होती, तो उसका संशोधन करेंगे।' यह बात कहके दो घण्टा राह देखा करते हैं। इति मध्य काकके आ कर पिण्ड लेजानेसे अच्छा है। नहीं तो श्राद्ध करनेवाला निजमें एक घाससे पिण्ड स्पर्श करता है। फिर द्वारपिण्डीको उठाके उसमें तिलतेल लगाते हैं। उद्देश यह कि इससे मृतकी क्षुधातृष्णा निवारित होगी। फिर मृतके उद्देश पिण्ड और जल दे द्वारपिण्डी उठा कर पश्चात् दिक्को पानीमें फेंक दी जाती है। दशवें दिनका कार्य इसी प्रकार सम्पन्न होता है। एकादश दिवस घरका समस्त स्थान गोबरसे लीपपोत घरके सब लोग स्नान करते हैं। फिर पुरोहित वेदीमें अग्नि जला गोमूत्र, गोमय, दुग्ध, दधि और घृतसे होम करता है। उसमें अशौच छूट कर शुद्ध होता है। श्राद्धाधिकारी और दूसरे सब लोग तब पञ्चगव्य आहार करते हैं। फिर होमका भस्म लगा और होमाग्निमें चावल छोड़ निश्चिन्त होते हैं। आग अपने आप बुझ जाती है। मृत्युकालको यदि त्रिपाद वा पञ्चक नामक नक्षत्रदोष लगता, तो इसी शान्तिसे वह कटता है।

यथारीति शास्त्रोक्त विधिके अनुसार श्राद्धकार्य सम्पन्न होता है। फिर प्रति भाद्रपदमें महापक्षके दिन पितृ उद्देशसे तर्पण किया करते हैं।

कोङ्कणावती—परशुरामकी माता।

कोङ्कणासुत (सं० पु०) कोङ्कणदेशोद्भवा रेणुका तस्याः सुतः, ६-तत्। परशुराम।

कोङ्कणी—कोङ्कणमें प्रचलित एक भाषा। मराठीभाषाके साथ इसका कितना ही सादृश्य है। इसीसे भाषाविद् लोग इसको उसकी भगनी कहा करते हैं। आर्य और द्राविड़ भाषाके मिश्रणसे यह बनी और तीन प्रकारकी है। तुलु और कनाड़ी भाषाके अनेक शब्द इस कोङ्कणी भाषामें प्रवेश कर गये हैं। गोवासे उपि नामक स्थानके उत्तर तक असली कोङ्कणी चलती है। इसमें अनेक प्राचीन ग्रन्थ हैं। इन सब ग्रन्थोंका अधिकांश गोवामें पोर्तगीजोंके अभ्युदयकाल जेसुट ईसाईने लिखा था। प्रायः तीस हजार आदमी कोङ्कणी भाषा बोलते हैं।

कोङ्कणी—कोङ्कण सागरतटके अधिवासी। आदिम अवस्थामें यह सरस्वती नदी किनारे रहते थे। सह्याद्रि खण्डकी वर्णनाके अनुसार उनकी एक शाखा त्रिहुतमें बसती थी, जहांसे परशुराम १० घरानोंको गोमन्त (गोवा), पञ्चक्रोशी और कुशस्थली ले गये। वहां देशकी सुन्दरता और बढ़ती देख और भी लोग जा कर बसे थे। परन्तु जब पोर्तगीजोंने इनके धर्मपर हस्तक्षेप किया, बहुतसे कोङ्कणी कनाड़ा और तुलुको चले गये। वहांसे फिर यह भावङ्कुम और कोचिन पहुंचे और

हिन्दू राजाओंके राज्यमें सुखसे रहे थे। कोचिन और अलेप्पीमें इनको जैसी धनशाली धार्मिक संस्थाएं हैं, मलबारमें दूसरी जगह देख नहीं पड़तीं। कोङ्कणी ब्राह्मण स्वच्छवर्ण और लम्बे होते हैं। उनके होंठ छोटे और बाल घने रहते हैं साथ ही नाक ऊंची और छाती चौड़ी लगती है। स्त्रियां रेशमी किनारेके कपड़े खूब व्यवहार करती हैं। यह वैष्णव होनेसे लम्ब तिलक लगाते हैं। कोङ्कणी वैश्य शैव हैं। भारतमें पोर्तगीज आनेके समयसे यह व्यापार करते रहे हैं। त्रिरुपति मन्दिरके वेङ्कटरमणको बड़ी श्रद्धा भक्ति की जाती है। त्रावणकोरप्रान्तमें इनके कई बड़े मन्दिर बने हैं। कई स्थानोंमें लक्ष्मीनृसिंहको भी पूजा करते हैं। इनको विश्वास है कि सांप मारनेसे कोढ़ी और निर्वंश होना पड़ता है। कोङ्कणी वैश्य और शूद्र भी नागपूजक होते हैं। इनके प्रधान गोत्र कौण्डिन्य, कौशिक, भारद्वाज और गार्गि हैं। ५दिन विवाहकी धमधाम रहती है। उस समय दुलहा दुलहन दोनों एक ही कमरेमें खाते पीते और सोते बैठते हैं। विवाहके पीछे वर ३ मास तक कन्याके घर ठहरता और स्थालीपाक यज्ञ करता है। तलाक देनेकी चाल नहीं। पत्नी वन्ध्या और रोगिणी होने पर उससे पूछ कर दूसरी शादी की जा सकती है। सात और १० वर्षके बीच उपनयन संस्कार होता है। मृताशौच १० दिन माना जाता है। श्राद्धके अवसर पर केवल एक ही ब्राह्मणको खिलाते हैं। इनकी भाषा भी कोङ्कणी ही है। उसमें कई एक पोर्तगीज शब्द मिले हैं। अपने जातिवालोंको छोड़कर के दूसरोंसे यह मलयलम्‌में बातचीत करते हैं।

कोङ्कणी केलास—बम्बई प्रान्तके अङ्कोला, होनावाड़ और कारवाड़ जिलोंके गांवोंमें रहनेवाली एक जाति। इन्हें हजाम भी कहते हैं। इनकी संख्या प्रायः पांचसौ होगी। यह गोवासे आये हुए बतलाये जाते हैं। गोवाके निरङ्कार और अङ्कोलाके लक्ष्मीनारायणको देवता मानते हैं। इनमें पुरुष गेहुंए रंगके मंझोले कदवाले और मजबूत होते हैं। स्त्रियां उनसे छोटी और गोरी लगती हैं। घरमें यह कोङ्कणी भाषा बोलते, परन्तु हिन्दुस्थानी और कनाड़ीमें भी बात चीत कर सकते हैं। कोङ्कणी केलास किफायती, सफाईसे रहनेवाले, गम्भीर और भलेमानस हैं। सिवा अछूत लोगोंके यह सबके बाल बनाते हैं। कोई कोई फोड़े फुड़ियाकी चीर-फाड़ भी करते हैं। इनका आचरण और पद कनाड़ केलासियों और कनाड़ी नाइयोंसे मिलता है। कारवाड़वाले गोवाके निरङ्कार और होनावाड़वाले अङ्कोलाके लक्ष्मीनारायणको पूजते हैं। गोकर्ण, धर्मस्थल और पण्ढरपुर इनका तीर्थस्थान है। कन्याओंका आठसे बारह और बालकोंका बारहसे बीस वर्षके बीच विवाह होता है। विधवाविवाह विरल है। यह अपने शवको जलाते और १० दिन अशौच मानते हैं। पञ्चायतोंमें सामाजिक झगड़े मिटाये जाते हैं।

कोङ्कणी माडीवाल—बम्बई प्रदेशके कनाड़ा जिलेकी एक धोबी जाति। इनकी संख्या प्रायः २००० होगी। यह सिरसीमें और कारवाड़, अङ्कोला, कुमता और होनावाड़में सह्याद्रिके नीचे रहते हैं। इनके प्रधान कुलदेवता मङ्गेशका मन्दिर सालसीटमें है। यह दूसरे धोबियोंके साथ रोटी-बेटीका व्यवहार नहीं रखते। इनकी भाषा कोङ्कणी है। यह शराब नहीं पीते। और किफायत, मिहनती और शायस्ता होते हैं। बारह वर्षके पहले कन्याओंका विवाह कर देते हैं। विधवा विवाह और बहु-विवाह प्रचलित है।

कोङ्काण (सं० पु०) कोङ्कण देशज उत्तम अश्व, कोङ्कणका बढ़िया घोड़ा।

कोङ्कार (सं० पु०) कों इत्याकाराव्यक्त शब्दं करोति, कों-कृ-अण्। काकका शब्द, कौवेकी बोली।

कोङ्गणिवर्मा—१ दक्षिणापथवाले कोङ्गु राज्यके गङ्गवंशीय प्रथम राजा। यह काण्वयन-गोत्रीय रहे। अपर नाम माधव था। स्कन्दपुरमें यह अभिषिक्त हुए।

२ गङ्गवंशीय कोङ्गुराज विष्णुगोपवर्माके दौहित्र (लड़कीके लड़के)। लोग इन्हें कोङ्गणि महाधिराय कहते थे।

३ कोङ्गु राज्यके कोई प्रबल पराक्रान्त राजा। इनका दूसरा नाम नवकाम था। यह गजपति भूविक्रमके पुत्र रहे। इन्होंने अनेक स्थानोंके राजाओंको जीत अपना करद बनाया।

कोङ्गनोली—बम्बई बेलगांव जिलेके चिकोड़ी तालुकका एक गांव। यह अक्षा० १६° ३३´ उ० और देशा० ७४° ३०´ पू० में बेलगांव-कोल्हापुर सड़क पर पड़ता है लोकसंख्या ५५८७ है। इस गांवमें बड़ा व्यापार होता है। चावलकी रफ्तनी और कपड़े, छोहारे, नमक, मसाले और शक्करकी आमदनी लगी रहती है। वृहस्पति वारको सामाहिक बाजार लगता, जिसमें सूत, अनाज, गुड़, तम्बाकू और हजारों मवेशी बिकते हैं। यहां साड़ियां, दरियां और कम्बल बुने जाते हैं।

कोङ्गु—दक्षिणापथका एक विस्तृत प्राचीन राज्य। इसका पहला नाम चेर था। गङ्गवंशीय राजाओंने 'चेर' नाम बदल कर 'कोङ्गु' रख दिया। पहले चेर राज्यका उत्तरांश ही कोङ्गु नामसे प्रसिद्ध था। तामिल भाषाके 'कोङ्गुदेश राजकल' नामक ग्रन्थमें कोङ्गु राज्यका प्राचीन इतिहास लिखा है। केरल और चेर देखो।

कोच (सं० पु०) कुच-ण। ज्वलिति कसन्तेभ्यो णः। पा ३।१।१४०। १ सङ्कोचक, सङ्कुचित करनेवाला व्यक्ति। भावे घञ्। २ सङ्कोच, सिकुड़न।

कोच (हिं० पु०) १ कोई लम्बी छड़। इसके द्वारा भट्ठेमेंसे ढले हुए पात्र निकालते हैं। २ भग्न नौकाका कोई खण्ड, टूटे जहाजका टुकड़ा।

कोच (अं० पु०-Coach) १ घोड़ागाड़ी, बग्गी। २ गद्देदार पलंग या आरामकुरसी।

कोच—१ एक जाति। इस जातिकी पणिकोच श्रेणीका आचार व्यवहार आलोचना करनेसे स्थिर हुवा है कि वह वैदिक युगमें 'पणि', पौराणिक युगमें 'पणिकवच', तन्त्रमें 'कुवाच' और पाश्चात्य जगत्‌में 'फिनिक' (Phœnician) नामसे परिचित है।*

बङ्गालके उत्तरपूर्व प्रदेशमें कोच लोग रहते हैं। पाश्चात्यतत्त्वविद् इन्हें अनार्य जाति विवेचना करते हैं। उनमें कितनोंहीका सिद्धान्त है कि इस जातिमें मङ्गोलीय रक्त मिल गया है। इस जातिके लोग आजकल अपनेको कोच नहीं बतलाते। कोचविहार, रङ्गपुर, जलपाईगोड़ी आदि स्थानोंमें यह अपना परिचय राजवंशी या भङ्ग-क्षत्रियकी भांति देते हैं। परशुरामके क्रोधसे परित्राण पानेको जो सकल क्षत्रिय भागे थे, यह अपनेको उन्हींका एक सम्प्रदाय बतला अपना क्षत्रियत्व प्रतिपन्न करते हैं। इनकी एक श्रेणी ऐसी है, जो अपनेको राजा दशरथका वंश बतलाती है। सभी कोचोंका काश्यप गोत्र है। यह बङ्गालियोंकी भांति हिन्दूधर्मके अनुसार क्रियाकलाप करते हैं। ब्राह्मण इनके पुरोहित हैं। पाश्चात्य पण्डितोंका कहना है कि कोच पूर्वको अनार्य रहे। अन्तको क्रमशः हिन्दुवोंकी देखा देखी वह हिन्दूधर्मका आचार व्यवहार अवलम्बन करके हिन्दू बननेकी चेष्टा कर रहे हैं। आपाततः केवल एक गोत्र ग्रहण करते भी भविष्यत्‌में जब देखेंगे कि हिन्दू अपने गोत्रमें विवाह नहीं करते, तब धीरे धीरे गोत्रान्तर ग्रहण कर सकते हैं। कितने ही कोचोंका आदिवास द्राविड़ देश बतलाते हैं। राजवंशी स्त्रियां जिस भावसे वस्त्र परिधान करके घाटबाटमें निकलती हैं, द्राविड़ोंके अनुरूप है। वह मस्तक पर अवगुण्ठन नहीं लगातीं। असली बंगाली होनेसे किसी प्रकार स्त्रियां घूंघट उठा न सकतीं। उनका अलङ्कार आदि भी दाक्षिणात्यवासियोंसे मिलता है। इन्हीं सकल कारणोंसे अनुमित होता है, जब आर्योंने बङ्गालमें प्रवेश किया था, गाङ्गप्रदेशमें रहनेवाले द्राविड़ोंने दूरीभूत हो बङ्गालके उत्तर और उत्तर-पूर्व अञ्चल पर वनमय भागमें आश्रय लिया।

कोच जातिमें कितने ही श्रेणीविभाग हैं। प्रत्येक श्रेणीमें कोई विशेष पार्थक्य नहीं। फिर भी जो श्रेणी हिन्दुवोंका आचार शुद्ध भावसे पालन कर सकती, अधिक सम्मानार्ह ठहरती है। इसी हिसाबसे राजवंशियोंमें जो सर्वांश श्रेष्ठ हैं, अपनेको शिववंशी बताया करते हैं। मेच, कामरूप और कोचविहार देखो।

शिववंशी कोच अपनेको भङ्गक्षत्रिय, पतित क्षत्रिय, व्रात्यसङ्कोच्य और सूर्यवंशी भी कहते हैं। शिववंशियोंके पीछे पलिया नामक श्रेणी गण्य है। परशुरामके भयसे पलायन करने पर ही यह अपनेको 'पलिया' ठहराते हैं। डाक्टर बुकानन साहबके अनुमानसे पहले दिनाजपुर और रङ्गपुरमें जो पनिकोच कहलाते, आजकल पलिया समझे जाते हैं। यह साधू और बाबू दो

* Social History of Kâmrup, by N. Vasu नामक ग्रन्थमें बड़ा विवरण देखना चाहिये।

सम्प्रदायोंमें बंटे हैं। जिनसे कोचविहारके राजवंश और जलपाईगोड़ीके रायकत वंशका संश्रव लगा है अपना परिचय बाबू पलिया या केवल राजवंशीकी भांति दिया करते हैं। साधू पलिया बाबू पलियावोंकी अपेक्षा कुछ शुद्धाचारी हैं। बाबू पलिया शूकर, पक्षी कुक्कुर तथा गोधा जातीय जीवमांस खाते और अधिक परिमाणमें मद्यपान करते हैं। किन्तु साधू पलियाओंके मध्य उनमें कोई ग्राह्य नहीं। दीनाजपुरमें एक श्रेणीके कोच "देशी" नामसे ख्यात हैं। यह अपनेको पलियावोंसे ऊंचा समझते हैं। देशी कोच पलिया कोच पुरुषके हाथसे अन्न जल और मिष्टान्न ग्रहण कर सकते हैं, परन्तु उनकी कामिनियोंके हाथसे नहीं। इन दोनों श्रेणियोंमें विवाह भी नहीं होता। बैलोंद्वारा हल या कोल्ह न चलानेके कारण देशी अपनेको पलियावोंसे उच्चश्रेणीस्थ बतलाते हैं। जलपाईगोड़ीमें कोच राजवंशी ही कहलाते हैं। किन्तु इनमें दोभाषी, मोदासी और जालुया—तीन श्रेणी हैं। दोभाषी कोच सूवर और चिड़ियाका मांस खाते और शराब पीते हैं। मोदासी पक्षीमांस ग्रहण नहीं करते। जालुया मछलियां पकड़ते और बेचते हैं। दारजिलिङ्गमें रहनेवाले कोचोंकी भी तोंगिया, खोपरिया और गोवरिया तीन श्रेणियां हैं। तोंगिया हिमालयवासी मङ्गोलीयोंकी तरह लकड़ी पर वासगृह बनाते हैं। खोपरिया जमीन पर नीचे नीचे छोटे छोटे घर उठाते हैं। फिर गोवरिया गाय बछड़े आदि पशु के किसी मकानमें रहते हैं। आजकल इनमें भी अलगाव नहीं। गोवरिया क्रमशः साधू और बाबू पलियावोंकी भांति आहारादि अवलम्बन करके तत्तत् नामसे अपना परिचय देते हैं। कंटाई राजवंशी नामक श्रेणीके दूसरे कोच भी होते हैं। यह नाना स्थानोंमें फैल गये हैं। गुमाश्तागीरी, खेतीबारी और चिकित्सा ही इनका काम है। इनमें तीयार या दलई नामक एक श्रेणी है। वह मत्स्य पकड़ा करते हैं। तीयार जाल नहीं डालते, बंसीसे मछली मारते हैं।

निम्नश्रेणीके कोच लंगोटी लगाते हैं। तदपेक्षा उच्चश्रेणीके पुरुष ४ हाथकी धोती और स्त्रियां पतनी नामकी साड़ी पहनती हैं। दूसरे देशकी स्त्रियां जैसे कमरमें कपड़ा बांधतीं, यह छाती पर उसे लपेट परिधान करती हैं। साड़ी घुटनों तक लंबी होती है। यह मुंह पर घूंघट नहीं डालतीं। राहमें निकलनेसे वक्षःस्थलकी पतनी पर और एक खण्ड लगा दिया जाता है। ऊंचे दरजेके लोग हिन्दुवोंकी भांति वेशभूषा करते हैं। स्त्रियां बायें हाथमें शङ्ख बांधती हैं। बालिकायें पीतकी माला गलेमें डालती है।

राजवंशी जन्मकालको स्वतन्त्र सूतिका-गृह नहीं बनाते। इनमें जन्मका अशौच ३१ दिन रहता है। इस समय तक सूतिकागृहमें प्रवेश करनेवालेको नहाना पड़ता है। भूतोपद्रव निवारणके लिये यह सूतिकागृहकी खिड़की, दरवाजे और दीवार पर कंटीले पेड़की डालें काटकर रख देते हैं। सन्तान उत्पन्न होने पर कोई निकटस्थ आत्मीया वृद्धा बांसकी खपाचसे नाड़ीच्छेद करती हैं। बालक या बालिका बुड्ढीको आजीवन 'नाड़ी काटनेवाली मा' कहा करती है। १२वें दिन क्षौर होता और पुरोहित शान्तिजल छिड़कता है। निम्नश्रेणीके बीच १० दिनमें सन्तानका नामकरण करते हैं। किन्तु उच्चश्रेणीमें दैवज्ञकी व्यवस्थाके अनुसार ३रे, ७वें, १०वें या ३०वें दिन नवजात शिशुका नाम रखा जाता है।

७म, ९म वा ११श मासको अन्नप्राशन होता है। ऊंची श्रेणीके लोग इस समय आभ्युदयिक नान्दीमुख श्राद्ध करते हैं। अधिकारी वा पुरोहित यह सब कार्य कराते हैं। अन्नप्राशनमें कोई सधवा स्त्री बालकको सूप, दिया और मङ्गलकलस लेके वरण करती है। पितामही ही प्रथम ग्रास अन्न मुखमें डालती है।

छठें, बारहवें या अट्ठारहवें महीने घरके बाहर बालक बालिका दोनोंका मस्तक मूंडा जाता है। मुण्डन स्थानकी चारो ओर कागके घोड़े और छोटे छोटे निशान लगा देते हैं। मुण्डनके पीछे गर्भज केशराशि "बुड़ी माकेवामी" नामक देवीके मन्दिर लेजाना पड़ता है। क्योंकि वह प्रथमजात बालोंकी अधिष्ठात्री देवता हैं। कोई कोई बालोंको गाड़ भी देता है। कोचविहारके महाराजसे लेकर सामान्य दीन व्यक्ति तक इस संस्कारको यत्नसे पालन करता है।

उसके पीछे विवाहके पूर्व किसी समय हिन्दू आचारी कोच चूड़ाकरण किया करते हैं।

ढाका जिलेके उत्तरांश भावलके जङ्गलमें इनको कोचमन्दई नामक एक शाखा देख पड़ती है। ज्ञात होता है—बहुकाल पूर्व यह स्वदेश छोड़ उक्त अञ्चलके गारोवोंसे जा मिले थे। मन्दई (मनई) शब्द गारो भाषामें मनुष्यवाचक है। इसलिये कोच मन्दईका अर्थ कोच जातीय मनुष्य होता है। सम्भवतः गारोवोंने स्वजातिसे इन्हें अलग रखनेके लिये ही ऐसा नाम निकाला है। रामायणमें इस शाखाको 'मन्देह' लिखा है।

थोड़े दिन हुए कोचोंमें चारसे दश वर्षके वयस तक कन्या व्याहनेका नियम चल गया है। किन्तु कह नहीं सकते—कहां तक इसका प्रतिपालन करते हैं। रङ्गपुर, कोचविहार प्रभृति स्थानोंके राजवंशी विधवाविवाह अच्छा नहीं समझते, परन्तु तराई प्रदेशके कोचोंको उसमें कोई आपत्ति नहीं। फिर भी विधवा पूर्वस्वामीके किसी गुरुतर सम्पर्कीय व्यक्तिसे विवाह कर नहीं सकती। विधवावोंमें जो संसारकी सर्वमय कर्त्री है, निषिद्ध व्यक्ति व्यतीत एक पुरुषको अपने आप मनोनीत करके उसीके साथ स्वामी स्त्रीकी तरह रहती है, उसे फिर विवाह करनेकी आवश्यकता नहीं पड़ती। कोचोंमें पत्नी परित्याग प्रथा प्रचलित है। जिन सकल दोषोंसे पत्नीको परित्याग किया जाता, उनके सङ्घटित होने पर स्वामी पञ्चायतोंसे पत्नी छोड़नेकी बात बतलाता है। पञ्चायतमें पुरोहित और नापित उपस्थित रहता है। पञ्चायत लगने पर स्वामी स्त्रीके दोष व्यक्त करता है। फिर स्त्रीका वक्तव्य सुनते हैं। परन्तु प्रायः स्त्रीका दोष प्रमाणित करके उसके मस्तक मुण्डनकी व्यवस्था की जाती है। नाई बातकी बातमें उसके बाल जड़से उड़ा देता है। इसके पीछे स्वामी स्वजातिसे उसे निकालता है।

विधवाविवाहके कारण इनमें कितनी ही कौलीन्य प्रथा देख पड़ती है। जिनके वंशमें कभी विधवाविवाह नहीं हुवा, वही कुलीन हैं। इन्हें स्वजातिके लोग 'महत्' कहा करते हैं। इस वंशकी कन्या ग्रहण करनेमें दूसरेको कन्यापण देना पड़ता है। 'महत्' जहां चाहें कन्याका विवाह कर सकते हैं। इस बातकी कोई अड़चन नहीं कि बराबरीके घरमें ही विवाह करना पड़ेगा।

घटक (बिचवानी) पात्रपक्षसे नियुक्त हो पात्री स्थिर करने जाते हैं। पात्रीके घरमें ३ दिन रह वह विवाहके सम्बन्धमें बातचीत पक्की कर लेते हैं। पात्रीके गृहमें बिचवानीके अवस्थान काल यदि घरमें या पहने हुए कपड़ेमें एकाएक आग लग जाये या पानीका घड़ा या भातकी हंडी अचानक टूट जाय, तो उस पात्रपात्रीका विवाह नहीं हो सकता। क्योंकि कोचोंके मतमें यह विषम कुलक्षण हैं। कन्यापण २०) या २५) रु० ठहरता है। पात्री सुन्दरी और पात्रपक्ष धनी होनेसे ८०) ९०) रु० तक देना पड़ता है। पात्र अधिक वयस्क होने पर भी अधिक दहेज लगता, १०० रु० से कम नहीं हो सकता। कन्याका पिता चाहे, तो एक पैसा तक न ले। फिर बिचवानीकेवापस आने पर पात्रके आत्मीय कन्याके आत्मीयोंको दहीकी भेंट भेज देते हैं। यह भेंट पहुंच जानेसे कन्यापण लगता है। सब लोग पूरा रुपया दे नहीं सकते, आधा धोधा चुकाते हैं। इसके बाद शुभ दिनको वर कन्याके घर सन्ध्या समय पहुंचता है। वरको पहुंचने पर ४ सधवा स्त्रियां पालकीसे उतार ले जाती हैं। इन्हीं चार स्त्रियोंका नाम बराती है। वह वरको एक उच्चासन पर बैठा पान तम्बाकू खिलाती हैं। पात्रीके घरके चबूतरे पर केलोंका एक मण्डप (मंड़वा) बनाते हैं। वरके पैरके अंगूठेसे कान तक जितनी लम्बाई होती, एक केलेसे दूसरा केला उतनी ही दूर स्थापन किया जाता है। मण्डपके प्रत्येक केलेके नीचे एक एक जलपूर्ण कलसी रखते हैं। फिर वरके आसनकी वाम ओर चलनी और एक पूर्ण कलसी तथा दक्षिण ओर सूप और पूर्ण कलसी रखी जाती है। इस सबको कोच मड़वा कहते हैं। (इसका नकशा दूसरे पत्रमें देखिये)

फिर उक्त चारो स्त्रियां आगे वर और पीछे कन्याको कर मड़वाके पास पहुंचती और दूल्हा दुलहिनके साथ उसका पांच बार प्रदक्षिण करती हैं। एक एक बार प्रदक्षिण करके वर कन्या दोनों एक दूसरे पर कागकी कौड़ियां और चावल फेंकते हैं। कन्या जिस समय

कन्यासन

केलेका पेड़ † † केलेका पेड़

पूर्ण कलसी ० ० पूर्ण कलसी

† केलेका पेड़

० पूर्ण कलसी

केलेका पेड़ † † केलेका पेड़

पूर्ण कलसी ० ० पूर्ण कलसी

वरासन

पूर्ण कलसी ० ० पूर्ण कलसी

चलनी ‡ ‡ सूप

मारती, बराती स्त्रियां दोनोंके कपड़ोंकी ऐसी आड़ कर देतीं कि वरके देहमें दोही एक कौड़ियां या चावल लग सकते हैं, अधिक नहीं; परन्तु वरके वार करने पर कपड़े एकबारगी ही नीचे कर दिये जाते हैं।

फिर चलनी और सूप पर कपड़ा बिछा वरकन्याको बैठाती हैं। कन्याका वाम हस्त वरके दक्षिण हस्तमें कुशसे बांध दिया जाता है। इसीका नाम कन्या॰दान है। इस समय वर कन्याके हाथमें १ या १॥) रु॰ रखता है। यही वरके कन्यादानकी दक्षिणा है। पुरोहित बराबर मन्त्र पढ़ा करता है। उसके पीछे कन्याका पिता वरको एक गड़ुवा, कोई नया कपड़ा और अपनी सामर्थ्यके अनुसार गहना आदि देता है। इसी समय स्वामीप्रदक्षिण और शुभदृष्टि होती है। प्रदक्षिणके समय कन्या पीढ़े पर बैठाके घुमायी जाती है। नापित कन्याके शिर पर छतरी रखता है। कन्या॰का पिता मन्त्रपूत जल वरकन्याके मस्तक पर छिड़क देता है। पिता न रहनेसे जो यह काम करता, कन्या उसको आजीवन 'पानी बाप' कहती है।

फिर वर कन्याको खेलनेके लिये कौड़ियां देते हैं। कौड़ियोंके ढेरसे कन्या एक मुट्ठी उठा वरके हाथमें रखती है, वर उन्हें मट्टी पर फेंक देता है। बराती स्त्रियां फिर देखतीं, उनमें कितनी चित और कितनी पट पड़ी हैं। चित कौड़ी अधिक रहनेसे स्वामी स्त्रीके और पटकी संख्या अधिक आनेसे स्त्री स्वामीके वशी-भूत होनेका अनुमान किया जाता है। इसके पीछे वर कन्या परस्पर दही और बताशे एक दूसरेको खिलाते हैं। खाना पीना हो जानेसे वर अपने साथियों के पास घरसे बाहर निकल जाता और कन्या बराती स्त्रियोंके साथ चली जाती है। आहारादिके आमोदमें रात बीत जाती है। दूसरे दिन सवेरे वर कन्याके साथ अपने घर लौट आता है।

विवाहके दिन वर आनेसे पूर्व ही कन्याके गात्रमें हरिद्रा लगायी जाती और दो स्त्रियां उसके कपाल और मांगमें सिन्दूर चढ़ाती हैं। वर केवल कपालमें टिकली लगाता है।

जलपाइगुड़ीके राजवंशी मरुवेमें केलेके केवल चार पेड़ स्थापन करते हैं। पांचवें केलेके स्थानमें कोयलेकी तेज आग रखी जाती है। वर कन्या मरुवा प्रदक्षिण नहीं करते और न आगकी कौड़ियां चावल एक दूसरे पर फेंकते हैं। इसके बदले वह अग्नि-कुण्डकी दोनों ओर खड़े हो फूलोंकी मार करते हैं। फिर सात बार अग्नि प्रदक्षिण करना पड़ता है। कन्याका पिता तर्जनी और मध्यमा द्वारा वरका जानु स्पर्श करके कन्यादान करता है।

कोचोंमें एक प्रकारका गान्धर्व विवाह होता है। परन्तु इस विवाहको पात्रपात्री दोनोंके मातापिता या आत्मीय निर्वाचन करते हैं। केवल विवाहके समय चलनीमें कपड़ा तथा शङ्ख रखा और माल्य बदला जाता है। नवयौवनसम्पन्ना पतिप्रिया सधवा कामि-नियां ही इस चलनीको वरपक्षसे लेकर कन्यापक्षमें स्थापन करती हैं। इस प्रकारका विवाह उच्चश्रेणीमें होता है। इसमें पुरोहितका कोई प्रयोजन नहीं।

गर्भाधानको कोच 'दो कपड़ा' उत्सव कहते हैं। नव सधवायें ऋतुमतीके वक्षःस्थल पर एक वस्त्र बांध देती हैं। इसी दिनसे वह युवती समझी जाती है।

जन्म लेते ही इनके बालकोंके कानमें वैष्णव सम्प्रदायके अधिकारी राम राम (हरिनाम) सुना देते हैं। पीछे परिणत वयसमें वह गुरुमन्त्रसे दीक्षित होते हैं। वंशके अधिकारी पुरोहित ही दीक्षागुरु बनते हैं। स्नान करके आहारके पूर्व गुरुमन्त्र जपनेका नियम है।

रङ्गपुर तथा कोच विहारके कोच प्रायः वैष्णव और शैव होते हैं। दारजिलङ्गमें तान्त्रिक मतके शाक्त

अधिक हैं। ग्राम्य और गृहदेवतावोंमें कालो, विषहरी, वा मनसा, ग्रामो (ग्रामको अधिष्ठात्री तिष्ट्-बुड़ी, हनुमान्, विन्दुकी, तुलसी) हृषीकृष्णा, पेथानी, योगिनी, हुदुमदेव, वास्तुदेवता, वलीभद्र ठाकुर और कोराकुरी प्रधान हैं। जब अनावृष्टि होती, कोच रमणियां मट्टी या गोबरसे हुदुमदेवकी दो प्रतिमायें बना रातको मैदानमें ले जातीं और वहां नङ्गी हो अश्लील गीत गा गा कर प्रतिमावोंको चारो ओर नाचा करती हैं। उनका विश्वास है कि ऐसा करनेसे पानी बरसता है। वैशाख मासको प्रति दिन दो बार गृहस्थोंके घरमें वास्तुपूजा की जाती है। नये गृहके आरम्भ और प्रवेश काल भी वास्तुपूजा होती है। घरमें एक बांस गाड़ उसकी जड़ पर हथेली भर मट्टी गोमयसे लिप्त करके वास्तुदेवताकी प्रतिमा बनाते हैं। इसीको अन्नका भोग लगा गृहस्थ प्रसाद पाते हैं। ज्येष्ठ मास सत्यनारायणकी पूजा चढ़ती है। दो बैलोंको जोत हलके ऊपर वलिभद्र (वलीवर्द)-की पूजा होती और सबलोग दोनों बैलोंके सामने साष्टाङ्ग प्रणिपात करते हैं। कोचोंको विश्वास है कि इन देवताकी कृपासे अच्छी फसल लगती है। सन्तानके जन्म लेनेसे ७वें दिन और अन्नप्राशनके समय षष्ठी-पूजा करते हैं। माली अघारेके हंस पर अघारेकी देवीमूर्ति बनाते हैं। यही षष्ठीकी प्रतिमा है। पौष मासको केवल स्त्रियां घरके चबूतरे पर घट रखकर कोराकुरी पूजा करती हैं। पेथानी और योगिनी केवल स्त्रीपूज्य हैं। संन्यासी देवता बालकोंके पूज्य होते हैं।

रङ्गपुरमें कामरूपके ब्राह्मण इनका पौरोहित्य करते हैं। यह ब्राह्मण वर्णब्राह्मण समझे जाते हैं। दारजिलिङ्ग और जलपाईगुड़ीमें कोचोंका कोई स्वजातीय व्यक्ति हो पुरोहितका काम कर देता है।

कोच शवदाह करते हैं। कुष्ठरोगी, शिशु और सर्पदष्ट व्यक्ति मरनेसे गाड़ दिया जाता है। दाह वा समाधिस्थान पर कोई कोई सादे मलमलका चन्द्रातप वा पताका या तुलसी लगाता है। दारजिलिङ्गमें १३वें, जलपाईगुड़ीमें ११वें और रङ्गपुरमें रहनेवाले कोच ३१वें दिन श्राद्ध करते हैं। इस समय यह भीगे कपड़े पहने निरामिष (आतपान्न) खाते हैं। पान, नमक, मसूरकी दाल, मसाला वगैरह व्यवहारमें नहीं आता। प्रतिवर्ष भाद्र मासकी कृष्णा नवमीको नदीमें ऊर्ध्वतन ३ पुरुषोंका तर्पण और पिण्डदान किया जाता है।

कोच शब्दका अर्थ कोच देशवासी और देशविशेष भी है। कोचविहार देखो।

कोच—युक्तप्रदेशकी एक जाति।

कोचकी (हिं० पु०) १ वर्णविशेष, कोई रंग। यह मकोइयासे मिलता और लाल भूरा रहता है। इसके तैयार करनेकी कई रीतियां हैं। (वि०) २ रक्ताभ धूसर, लाल भूरा।

"कोचकी कपासी पियवासी सुखरासी खासी।" (ललित)

कोचना (हिं० क्रि०) चुभाना, गड़ाना, नोकदार चीजको किसी दूसरी मुलायम चीजमें धंसाना।

कोचनी (हिं० स्त्री०) १ क्षुद्र लौहयन्त्रविशेष, लोहका एक छोटा औजार। यह सूई-जैसा रहता और तलवारके म्यानका ऊपरी चमड़ा सीनेमें चलता है। २ अंगी, बैल हांकनेकी छड़।

कोचबकस (अं० पु०=Coachbox) बग्घीके हांकनेवालेकी बैठक। यह घोड़ागाड़ीमें सामने ऊंचे पर होता है।

कोचर—ओसवाल बनियोंकी एक श्रेणी। कहते हैं जब इनके आदिपुरुषने जन्म लिया, कोचर यानी उल्लू बोलता था। इसीसे 'कोचर' नाम पड़ गया।

कोचरा (हिं० पु०) लताविशेष, एक बेल। यह सघन लगता और पेड़ों पर चढ़ता है। पत्तियां १ अङ्गुलि दीर्घ और उभयदिक् नोकदार होती हैं। ज्यैष्ठ आषाढ़ मासको इसमें पीत पुष्पोंके गुच्छ निकलते और आगामी वैशाख तक फल पकते हैं। कोचरा युक्तप्रदेश, खसिया और भोटानमें उपजता है।

कोचरी (हिं० स्त्री०) पक्षिविशेष, कोई चिड़िया।

कोचवान (हिं० पु०) बग्घी हांकनेवाला। यह अंगरेजीके कोचमैन (Coachman) शब्दका अपभ्रंश है अथवा अंगरेजी कोच और फारसी 'वान' (वाला) शब्दको मिलाकर बनाया गया है।

कोचविहार—बङ्गाल प्रदेशका एक देशीय राज्य। यह अक्षा० २५° ५८´ एवं २६° ३२´ उ० और देशा० ८८° ४५´ तथा ८९° ५२´ पू० के मध्य अवस्थित है। आजकल कोचविहार राजशाही कमिश्नरके अधीन हुवा है। इसका क्षेत्रफल १३०७ वर्गमील है। कोचविहारके उत्तर जलपाईगुड़ी जिलेका पश्चिमद्वार, पूर्व आसामके ग्वालपाड़ा जिलेका पूर्वद्वार, रङ्गपुर, गदाधर तथा स्वर्णकोशी नदी, दक्षिण रङ्गपुर और पश्चिम जलपाईगुड़ी एवं रङ्गपुर है। यह राज्यस्थान समतल और त्रिकोणाकार है। भूमि अधिकांश उर्वरा और शस्यशाली है। आसामके पास जगह जगह जंगल लगा है। भूमि समतल होते भी उत्तर-पश्चिमसे दक्षिण पूर्वकी ओर कुछ ढल गयी है। इसीलिये दूसरी ओरकी भूमिका पानी इसी राहसे निकलता है। वर्षमें सभी समय भूमिसे ७। ८ हाथ नीचे पानी रहता है। फिर जमीनके २। ३ हाथ नीचे बालू मिलती है।

भूतत्त्वविदोंके मतमें पहले हिमालय पर्यन्त समुद्र था। समुद्रके तरङ्गका आघात पर्वतमें लगनेसे बालूकी कणा उत्पन्न होने पर यह प्रदेश बढ़ गया है। नदीमें रेत पड़नेसे उसके ऊपर उर्वरा भूमि हुई है। हिन्दुस्थानमें जैसे सब लोग मिल कर एक ग्राममें रहते और खेतीकी भूमि अलग रखते हैं, कोचविहारमें वैसा नहीं करते। यहां जिस जगह जिसका क्षेत्र रहता, वह वहीं बसता है। कृषक और क्षेत्रपतिके घरके निकट प्रायः बांसकी एक बोढ़ और केलेका बाग देख पड़ता है।

कोचविहार राज्यमें कालजानि, गदाधर, तिस्ता, तरसा, धरला या धवला और रैधकनामक छह बड़ी नदियां हैं। इन सब नदियोंमें सौ मन बोझ लादके नाव बारहो महीने आ जा सकती है। एतद्‌व्यतीत दूसरी भी सामान्य बीस नदियां हैं। वर्षाकालको प्रवाहित होते भी उनमें अन्य समय सामान्य जल रहता है। यह नदियां रेतीली जमीन पाकर जिस ओर चाहतीं, वह चलती हैं। इसीसे कोचविहारकी नदियां प्रायः स्थानपरिवर्तन किया करती हैं। प्रधान नदियोंका स्रोत विलक्षण है, परन्तु उसमें कोई पेंच लगानेका प्रयोजन साधित नहीं होता। सैकड़े पीछे २ आदमी जेलों या मलाहोंका काम करते हैं। तम्बाकू और सन नावसे बाहर बहुत भेजा जाता है।

यहां बाघ, जंगली भैंसे, गैंडे और भालू बहुत हैं। नाना प्रकारके हरिण भ्रमण किया करते हैं। परन्तु शिकारके लायक चिड़ियां कम देख पड़ती हैं।

गाय बैल, बछड़े, भैंस, बकरे, सूवर, कुत्ते, बिल्लियां वगैरह सभी जानवर कोचविहारमें मिलते हैं।

ग्रामोंकी १२०० और गृहोंकी संख्या ८१८२० होगी। मेखलीगंज, माताभांगा, लालबाजार, दिनहाटा, कोचविहार, तूफानगंज प्रभृति स्थानोंमें पुलिसका थाना है।

कोचविहारके अधिकांश अधिवासी राजवंशी या कोचजातीय हिन्दू हैं। प्राचीन अधिवासियोंकी ही संख्या अधिक है। मुसलमानोंकी भी कोई कमी नहीं। देशमें विवाहबन्धन दृढ़ न रहनेसे जारज सन्तान बहुत देख पड़ते हैं। बङ्गाल और हिमालयकी तराईसे बहुतसे लोग जाकर कोचविहारमें बस गये हैं।

प्राचीन अधिवासियोंकी संख्या ८६५ होगी। इसमें २२६ आदमी आसामके गारो पर्वतसे आये हैं। वह जङ्गलसे काष्ठ आहरण करते हैं; कछारी, मेच और मोरङ्ग जातिके भी घराने देख पड़ते हैं। मेच और मोरङ्ग लोग कृषक हैं। मेच बैहरेका काम भी करते हैं। तेलेंगा नामक जातिका निर्दिष्ट वासस्थान नहीं, वह बेड़ियावोंकी तरह घूमते फिरते हैं। हिन्दूवोंमें ब्राह्मण, राजपूत, क्षत्रिय, कायस्थ, कोलिता, वैद्य, माड़वारी, वणिक् वा गन्धवणिक्, नापित, कुम्हार, मछुवे, तेली, लोहार, बारी, माली, कैवर्त, काछी, ग्वाले, कुरमी, जुलाहे, बढ़ई, वैष्णव, स्वर्णकार, खेयेन, राजवंशी, कोच, कलवार, धोबी, कहार, धानुक, ध्वज, योगी, चण्डाल, मल्लाह, नालुया, दारी, गबोल, बगल, नोनिया, चमार या मोची, बहेलिये, बाजारी, बाग्दी, डोम, हाड़ी, मेहतर, भुइमाली, जल्लाद और बेड़िया सब लोग देख पड़ते हैं।

अन्यान्य स्थानोंकी भांति यहां भी दोबार धान्य उपजता है। उसमें एकका आशु वा बितारी और दूस-

रैका नाम हैमन्तिक वा आमन है। बितारीमें कितना ही पहले और कितना ही पीछे बोया जाता है। इसे माघ फाल्गुन मास बोके ज्येष्ठमें काटते हैं। आमन ज्येष्ठमास बोया जाता और भाद्र वा आश्विनको काटा जाता है। कोचविहारमें एक विशेष प्रथा यह है कि धान पकने पर पेड़को जड़से नहीं काटते। पहले बालें उत्तार ली जाती हैं, पेड़ वैसे ही खड़े रहते हैं। स्थानीय कृषकोंका कहना है कि पेड़ थोड़ दिन खेतमें लगा रहनेसे खुब कड़ा पड़ जाता और छानी छप्परका काम ठीक चलाता है। सिवा इसके पशु आदि कच्चा चारा अति आनन्दसे खा सकते हैं। सजल भूमिमें जिस समय बितारी धान बोते, आमनका बीज भी साथ ही छोड़ देते हैं। वह शस्य अग्रहायण वा पौषमास काट लिया जाता है। इससे जो मोटा चावल निकलता, सामान्य कृषकोंके व्यवहारमें लगता है। बितारी या आउस २७ और आमन धान ७६ प्रकारका होता है।

कोचविहारमें चावल ही अधिक उपजता है। गेहूं, मसूर, दुविया, सरसों वगैरह भी कम नहीं होता। राज्यके पश्चिम भागमें सन यथेष्ट निकलता है। सरसोंके कच्चे पत्ते कितने ही लोग खाते हैं। तम्बाकूकी खेती भी बहुत देख पड़ती है। यहां बड़े बड़े वृक्ष बहुत नहीं हैं। बांस प्रचुर होनेसे उसीको लोग जलाते और घर बनाने आदि सब कामोंमें लगाते हैं। थोड़े दिन हुए दूसरे पेड़ भी रोपित हुए हैं।

भूमिके अधिकार भेदसे जोतनेवालों, चुकानेवालों, बंटानेवालों, भाव करनेवालों आदिका विभाग है। जोतनेवालोंके लिये जमीनका बन्दोबस्त होता है। कोचविहारको सब भूमि राजाके अधिकारमें है।

कृषिकार्यके लिये इसी देशका हल, मई, पटहा प्रभृति व्यवहृत होता है। तौल और जमीनकी पैमाइशमें भी इसी देशका मन, बिस्वा, बीघा आदि प्रचलित है। मजदूर किसी स्वतन्त्र श्रेणीके लोग नहीं हैं। फिर भी प्रत्येक अपनी अपनी जमीनका सब काम करता है। ब्रह्मत्र, मुकररी भत्ता, बखशिश, देवत्र, पीरोंकी जमीन, जागीर नामक कई जमीनोंका लगान नहीं देना पड़ता।

इस देशमें नहर नहीं है। जहां पानी नहीं मिलता, कूवां खोदनेमें ६) ७) रु० लगता है। अच्छा कूवां बनानेमें ७०) ८०) रु० तक खर्च पड़ जाता है। यहां अतिवृष्टि अनावृष्टि प्रायः नहीं होती। इसीसे दुर्भिक्ष भी बहुत कम पड़ता है। १८२२ और १८४२ ई० को बाढ़में कितना ही गल्ला बह गया और गाय बैल बछड़े आदिका भी प्राण नष्ट हुवा। १८५४ ई० को अनावृष्टिसे जगह जगह दुर्भिक्ष पड़ा था। १८६३ ई०को टिड्डियोंने तम्बाकू और सरसोंको खा डाला, परन्तु धान्यको विशेष क्षति न पहुंचायी।

कोचविहारमें तीन बड़ी सड़कें हैं, जिनमें एक धुबड़ीको चली गयी है।

कोचविहारके अधिकांश लोग कृषिजीवी हैं। परन्तु अन्यान्य व्यवसाय भी चलते हैं। अंडी और मेखली नामक वस्त्र इसी देशमें प्रस्तुत होता है। एरण्ड वृक्षका गोल कीड़ा जो रेशम निकालता, उसीसे अण्डी बनती है। मेखली पटसनसे तयार की जाती है। इसका कपड़ा मोटा रहता, जो परदेमें लगता है।

कोचविहारका प्राचीनतम इतिहास गाढ़ तमसाच्छन्न है। पूर्वकालको इसका कितना ही अंश कामरूप और कितना ही प्राचीन गौड़ वा पौण्ड्र राज्यके अन्तर्गत था। पहले इस अञ्चलमें भगदत्तवंश, कायस्थवंश, आदि राजा राजत्व करते थे। वर्तमान कोचविहारके लालबाजार नामक नगरमें कायस्थवंशको राजधानी कामतापुरका भग्नावशेष पड़ा है।

कामतापुर और कामरूप देखो।

तबकात-इ-नासिरी नामक फारसी ग्रन्थ पढ़नेसे समझ पड़ता है—बख्तियार खिलजी जब तिब्बत पर चढ़े, कोचविहारमें कूंच, मेच और तिहारू लोग रहते थे। कूंचों (कोच) और मेचोंके बीच आलिमेच नामक एक सरदार रहे, उन्होंने मुसलमान धर्म ग्रहण किया और पहाड़ी राहसे बख्तियारको तिब्बत पहुंचा दिया। उनके प्रत्यागमन कालको कामरूपके राजाने नदीका सेतु तोड़ डाला था। इससे बख्तियार और विपदापन्न हुए। उनके प्राण बचनेकी आशा न रही

परन्तु उक्त कोच सरदार बड़े यत्न और क्लेशसे देव-कोट तक उन्हें ला सके थे।

कामरूप शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

मालूम होता कि तत्काल यह अञ्चल कामरूप राज्यके अन्तर्गत रहा, फिर थोड़े दिनों मुसलमानोंके अधिकारभुक्त हुवा। ई० १५ वीं शताब्दीके बीच मेच-जातिका अभ्युदय देख पड़ा। योगिनीतन्त्रमें लिखा है-

"कोचाख्याने च देशे च योनिगर्तसमीपतः।
साध्वी सती ब्रह्मिका हि रेवती जलविश्रुता॥
म्लेच्छदेहोद्भवा या तु योगिती सुन्दरी नमा।
भिक्षाचारप्रसङ्गेन गच्छामि च दिवानिशम्॥
अतस्तया रतिर्जाता मम कामिनी सर्वदा।
तस्याः पुत्रो विश्वसिंहो मदौरससमुद्भवः॥" (१३ पटल)

कोच देशमें योनिगर्त्तके निकट रेवती नामकी एक साध्वी स्त्री रहती थी। यह सुन्दरी म्लेच्छकी औरस-जाता होते भी सर्वदा योग किया करती थी। मैं (शिव) भी भिक्षा लेनेके लिये सर्वदा इसके पास जाता रहा। इस प्रकार मुझसे और इस कामिनीसे मेलजोल बढ़ा था। मेरे औरस और कोंच-रमणीके गर्भसे विश्वसिंह नामक एक पुत्रने जन्म लिया।

योगिनीतन्त्रके त्रयोदश पटलमें महादेवके कोच-नीपाड़ा जाने और विश्वकी मातासे मेल बढ़ाने पर कहा है—

'प्राणेश्वरि नगेन्द्रनन्दिनि! मैं इस साध्वीका वृत्तान्त कहता हूं' श्रवण करो। इस साध्वी रमणीने एकाम्र-काननमें हर्षके साथ केलि की थी। यही वेदाङ्गसम्भवा देवी सर्वदा योग करती रही। मेरे अनुष्ठानमें इसको परितृप्ति न मिलनेसे मुझे पानेके लिये इसने कठोर तपस्या की थी। एकाम्रकाननमें अनेक तीर्थ और पर्वत हैं। इस स्थानमें बैठ कर तपस्या करनेसे वासना पूर्ण होती है। दैवक्रमसे किसी ब्राह्मणने जाकर इस साध्वी-से भिक्षा मांगी थी। भिक्षा कहां, रमणीने उसे उत्तर तक न दिया। ब्राह्मण बिगड़ उठे और—दुर्मदे! तू म्लेच्छत्वको प्राप्त होगी—शाप देकर चले गये। योगि-नी म्लेच्छत्वको पहुंची थी। जो व्यक्ति दे सकते भी भिक्षुकको भिक्षा नहीं डालता, बड़ी दुर्गतिमें पड़ जाता है। ऐश्वर्यशाली होते भी विनयी रहना उचित है। रमणीने मुझे तपस्या करके मोल ले रखा था। इसीसे मेरा मेलजोल बढ़ा। मेरे औरस और कामिनी-के गर्भसे विश्वसिंह नामक एक पुत्रने जन्म लिया था। विश्व अल्प दिनोंमें ही कामरूप, सौमार और पञ्चगौड़के राजावोंका पराजय करके अद्वितीय समृद्धिशाली बन गये। उनके कितने ही पुत्र हुये थे। कोच लोग धार्मिक और उनके राजा पृथिवीपालक तथा युद्ध-विशारद हैं। विश्वसिंह योग अवलम्बन करके कल्पान्त पर्यन्त उसी ग्राममें अवस्थान करेंगे। कुछ दिन पीछे साध्वी देवी मेरे शरीरमें ही लय प्राप्त हुई। नन्दीकी माताकी भांति यह योगिनी मेरी जाया और विश्व नन्दीजैसे मेरे प्रियपुत्र हैं। विश्वसिंह भी कल्पान्तमें मुक्त होंगे। उनके वंशजात सभी महात्मा समृद्धिशाली और अन्तमें कैलासवासी बनेंगे। यह भैरवकी भांति रूप-यौवनसम्पन्ना देवकन्यावोंके साथ विहार और क्रीड़ा करते हैं। जब जब कामाख्यामें ब्रह्मशाप उपस्थित होगा, मैं भी अवतीर्ण हो कामरूपका प्रतिपालन करूंगा। इस वंशके सभी लोग कामरूपप्रतिपालक हैं, कल्पान्तको मुक्त हो जायेंगे। तब तक यही नियम रहेगा। कलिमें तीन सौ वर्षका एक कल्प होता है। उतने ही वर्षों तक शापका भोग चलेगा।'

अकबर-नामामें लिखते हैं—प्रायः ५ सौ वर्ष पहले किसी रमणीने शिवसदनमें पुत्रकामना की थी। उसकी प्रार्थना पूर्ण हुई। उन्हीं पुत्रका नाम विशा (विश्व) है। यह विशा क्रमशः कोचविहारके राजा बन गये।

राजा प्राणनारायणके समय बने कविरत्नके 'राज-खण्ड' और प्रायः ८० वर्ष पहले मुंशी यदुनाथ घोष-के लिखे 'राजोपाख्यान' नामक कोचविहारके इति-हासमें प्रथम कोचराज विश्वसिंहकी उत्पत्ति पर बहुत कुछ लिखा है। उसीका संक्षिप्त भावार्थ यह है—

'४५८१ कलग्रब्दको चिकना पहाड़ पर मेचके घर-में हीराने जन्म लिया था। हरिया (हरिदास) मेच नामक एक व्यक्तिके साथ हीरा और उसकी भगिनी जीराका विवाह हुवा। यथाकाल जीराके चन्दन और मदन नामक दो पुत्रोंने जन्म लिया था। किन्तु हीराके तब भी कोई पुत्र सन्तान न हुवा। वह सर्वदा मन ही

मन महादेवको पुकारा करती थीं। महादेवने भिक्षु-वेशमें आकर उनकी मनस्कामना पूर्ण कर दी। पहले शिशुसिंह और उसके पीछे १४२२ शकको महादेवके औरस तथा हीराके गर्भसे विश्वसिंहने जन्म लिया। १४३२ शकको विशुने मेचबालकोंके साथ खेलनेके समय भगवतीकी एक मूर्ति बना कर पूजी थी। बलिदानके समय उन्होंने एक मेचबालकका शिर उतार देवीके उद्देशसे उत्सर्ग किया। यह भीषण घटना देख मेचबालक इधर उधर भाग गये। आटग्रामके तुर्की कोतवालको इस भयङ्कर नरबलिका संवाद मिला था। उन्होंने अविलम्ब शिशु और विशुका मस्तक काट लानेकी आज्ञा निकाली। इधर यह वनमें जाकर छिप रहे। उसी दिन शेष रजनीको वनमध्य वृक्षके नीचे विशुने स्वप्नमें देवीके मुंह सुना था—"हम तुम्हारे प्रति सन्तुष्ट हुयी हैं, म्लेच्छयुद्धमें तुम जीतोगे और पीछे तुम्हीं राजा होगे"। दूसरे दिन दोनों भाई चन्दन और मदनके साथ कोतवालके लोगों पर टूट पड़े। इस क्षुद्र युद्धमें मदन और कोतवाल मारे गये। १४३२ शकमें विशुने निज बाहुबलसे वैमात्र (सौतेले) भ्राता चन्दनको राज्य पर अभिषिक्त किया। परन्तु कोचका शासनभार अपने ही हाथमें रखा। इसी अभिषेक दिनसे कोचविहारका प्रथम 'राजशाक' चल पड़ा। उक्त घटनासे कुछ ही पहले राजा कामतेश्वरके परलोक जानेसे कामपीठ अराजक बना था। विशुने अनायास सैन्यके साथ कामपीठ अधिकार करके कोचविहार राज्य बढ़ा दिया।'*

अंगरेज ऐतिहासिकोंके मतमें हाजो नामके कोई प्रबल पराक्रान्त कोच-सरदार रहे। रङ्गपुर और कामरूप जिले तक उनका अधिकार था। इनके हीरा और जीरा नामकी दो कन्यावोंने जन्म लिया। नीचजातीय हरिया मेचके साथ हीराका विवाह हुवा था। मालूम नहीं, जीरा किसको व्याही थीं। किन्तु जीराके गर्भसे (जलपाईगुड़ीके वर्तमान रायकत-वंशके आदिपुरुष) शिशु और हीराके गर्भसे विशुने जन्म ग्रहण किया। यही विशु मातामहके अधिकारी हुए।*

जो हो, परन्तु विशुसे मेचराजवंश प्रसिद्ध हुआ है। राजखण्ड और राजोपाख्यानके मतमें विशुसिंह १४४५ शकको २२ वर्षके वयःक्रमकाल सिंहासन पर बैठे थे। उनके सहोदर शिशुने रायकत अर्थात् सर्वप्रधान मन्त्री हो उनके शिरपर राजछत्र धारण किया। जलपाईगुड़ी शब्दमें रायकतका विवरण देखो। कामपीठके पूर्वतन म्लेच्छविजेता हिन्दूराजाके तीन कन्यायें थीं। इन्हीं तीनों कन्यावोंके साथ शिशु, विशु और चन्दनका विवाह हुवा। विशुने राजा होने पर सौमार राज्य, विजनी (विद्याग्राम) और विजयपुर अधिकार किया था। इसके पीछे शिशुसिंह वैकुण्ठपुरमें सुन्दर भवन बना वहीं जाकर रहने लगे।

पहले कोलिता लोग ही कोचविहारमें गुरु और पौरोहित्यका कार्य करते थे। राजा विशुसिंहने मैथिल और श्रीहट्टके वैदिक ब्राह्मणोंको बुला गुरु और पुरोहितका भार सौंप दिया। इन्होंने चिकना-पहाड़ छोड़ कोचविहारके समतलक्षेत्रमें राजधानी स्थापन किया और उसका नाम 'हिङ्गुलावास' रखा था, फिर १४७६ शक (१५५४ ई०) को राज्य परित्याग करके वानप्रस्थ ले लिया। राजखण्ड और राजोपाख्यान देखते विशुके तीन पुत्र हुये। ज्येष्ठका नृसिंह, मध्यमका नरनारायण और कनिष्ठका नाम चिलाराय या शुक्लध्वज था। विशुसिंहके संसारका आश्रम छोड़ने पर उनके मंझले बेटे नरनारायण ही राजा हुये। राजखण्डमें लिखा है—जेठे लड़के नृसिंहने नरनारायणके विवाहकाल नववधूको आशीर्वाद दिया था कि वह राजाकी रानी होंगी। किंतु विशुके बाद जब नृसिंहके अभिषेकका समस्त आयोजन किया गया, नरनारायणकी पत्नी सखियोंके साथ सभामें पहुंच सर्वसमक्ष नृसिंहको अभिवादन करके कहने लगीं—'आपने मेरे विवाहमें आशीर्वाद देकर कहा था कि मैं राजरानी होऊंगी। परन्तु अब आप राजा होते हैं। मैं किस प्रकार रानी बन सकूंगी? आपकी बात

---

* राज्योपाख्यान ग्रन्थमें उक्त विवरण योगिनीतन्त्रका मतानुयायी बताया गया है। परन्तु योगिनीतन्त्रकी २ पोथियोंमें ऐसा विवरण नहीं मिलता और विश्वसिंहको छोड़कर किसी दूसरेका नाम भी नहीं देख पड़ता।

* Hunter's Statistical Account of Bengal, X. 403.

भूठ समझ पड़ती है।' नृसिंहने स्नेहके साथ उत्तर दिया—'बेटी तूने ठीक कहा है। तूही रानी होगी।' उसी समय उन्होंने नरनारायणको अभिषेक करनेका आदेश किया था। चारो ओर जयध्वनि होने लगी। वैकुण्ठपुरसे समागत रायकतने राजछत्र धारण किया और नरनारायण सिंहासन पर अभिषिक्त हुए। उसी दिनसे नृसिंह संसारविरागी बन गये।

किन्तु राजा नरनारायणके समसामयिक पण्डित रामसरस्वतीने अपने ग्रन्थमें लिखा है कि विश्वसिंहके कोई पुत्र न था। उनकी कन्याके गर्भसे नरनारायणने जन्म लिया। महाराज नरनारायणका दूसरा नाम मल्लदेव वा मल्लनारायण था। कामरूप देखो।

राजा नरनारायणसे सर्वप्रथम कोचविहारमें 'नारायणी' मुद्रा (सिक्का) प्रचलित हुयी। उन्होंने भ्राता शुक्लध्वजके साथ सौमार और कामरूप अधिकार किया था। कहते हैं कि शुक्लध्वजके वीरत्वसे ही नरनारायण नानास्थान जीत सके। शुक्लध्वजने वीरमदमें उन्मत्त हो सोचा था—जब हमी राज्यरक्षा करते और विभिन्न जनपद कोचविहारके अधिकारमें जब हमारे ही कारण पड़ते, हम क्यों न अपने आप राजा होंगे। वह राजा नरनारायणके प्राणवधका सङ्कल्प कर तलवार हाथमें लिये आगे बढ़े। परन्तु राजाके पास पहुंचने पर वह फूट फूट कर रोने लगे और असि हाथसे छूट पड़ी।* क्रमशः राजा नरनारायणने शुक्लध्वजसे उनकी अवस्थाके परिवर्तनका कारण पूछा और प्रकृत तथ्य विदित होने पर उसी समय उन्हें कामरूपका राजा बना दिया।

राजा नरनारायणने ही कामरूप जिलेमें कामाख्या देवीका मन्दिर आदि शत शत मन्दिर निर्माण कराये थे। आज भी कामाख्याके मन्दिरमें नरनारायण और शुक्लध्वजकी मूर्ति विराज रही है।

महाराज नरनारायणने ३२ वर्ष राजत्व करके ७८ राज शाक (१५०९ शक) को देहत्याग किया था। फिर रायकत और मन्त्रियोंने उनके पुत्र लक्ष्मीनारायणको राजा बनाया। आसामबुरुञ्जीके मतमें १५०६ शकको लक्ष्मीनारायण राजा हुये थे।

अबुल फज़लके अकबरनामामें लिखा है—बालगोंसाई (नरनारायण) ने प्रथम विवाह न किया था। इसीसे उनके कोई लड़का भी न रहा। उन्होंने भ्रातुष्पुत्र पाटकुमारको युवराज ठहराया था। फिर उन्होंने भाई शुक्ल गोसाईके अनुरोधसे वृद्ध वयसमें विवाह कर लिया। इसी विवाहका फल लक्ष्मीनारायण थे। राजाके मरने पर लक्ष्मीनारायण राजा हुए। इसी समय उक्त पाटकुमारने राज्यलाभकी आशासे विद्रोह उठाया था। लक्ष्मीनारायणने घोर विपद्में पड़ अकबरकी अधीनता स्वीकार की और बङ्गालके सूबेदार मानसिंहको सानुरोध पत्र लिखा कि आप मेरा साहाय्य कीजिये। मानसिंह आनन्दपुर जाकर उनसे मिले थे। अनेक आमोद उत्सवोंके पीछे वह कोचविहारराजकी कन्याका पाणिग्रहण करके लौट पड़े।

राजखण्ड और राजोपाख्यानमें लिखा है कि राजा लक्ष्मीनारायणने मुकुन्द सार्वभौम नामक किसी ब्राह्मणका असम्मान किया था। उन्होंने दिल्लीके बादशाह जहांगीरके पास जाकर नालिश की। इसीसे दिल्लीश्वरने गौड़के सूबेदारको लक्ष्मीनारायणके विरुद्ध युद्धघोषणा करनेकी अनुमति दी थी। मुसलमानोंके उत्पातसे कोचराज्य ध्वंस-प्राय हो गया। महाराज लक्ष्मीनारायणने अपने व्रजनारायण और भीमनारायण नामक दो पुत्रोंको साथ लेकर दिल्ली यात्रा की थी। वहां बादशाह उनके असाधारण सामर्थ्यका परिचय पा लक्ष्मीनारायणसे मिले और दोनों सन्धिसूत्रमें आबद्ध हुये। प्रत्यागमनकालको कोच-राज दिल्लीसे अच्छे अच्छे कारीगर साथ लाये थे। उन्होंने १८ राजकुमारोंके लिये आठारकोटा बनाया था।

मुसलमानोंके किसी इतिहासमें नहीं लिखा—महाराज लक्ष्मीनारायण दिल्ली गये थे या नहीं। अकबरनामामें कहा है—प्रायः १००५ हिजरी (१५९६ ई०) को कोचाधिपति लक्ष्मीनारायणने बादशाहकी अधीनता मानी थी।

* राजोपाख्यानमें लिखा कि शुक्लध्वजने देखा था—मानों दशभुजा नरनारायणकी रक्षा कर रही हैं। उसीसे शुक्लध्वज इतने अनुतप्त हो गये। फिर भाईके मुंहसे दशभुजाकी कथा सुनकर ही राजा नरनारायणने दुर्गापूजाका प्रचलन किया।

आईन अकबरीमें पढ़ते हैं कि कोचराजाके पास १००० अश्वारोही और १००००० पदाति सैन्य था।

राजोपाख्यानके मतमें १५४३ शकको लक्ष्मीनारायण मरे और उनके लड़के वीरनारायण राजा हुये थे। उन्होंने आठारकोटामें राजधानी स्थापित की। एकजन मण्डलने 'मण्डलावास' नामक मनोरम मन्दिरशोभित राजप्रासाद निर्माण करके राजाको दिया था। वीरनारायणके अभिषेककाल रायकत न पहुंचे। उनके बदले उनके भ्राता नाजिर देव महीनारायण कुमारने राजछत्र पकड़ा था। इसीसे उन्हें छत्रनाजिर उपाधि दिया गया। इसी समय भोटानके देवराजने कर रोक रखा।

महाराज वीरनारायण अति विलासी, कामुक, विद्योत्साही और ब्राह्मणभक्त थे। राजोपाख्यानमें लिखते हैं कि उन्होंने अनेक विवाह किये। किसी स्त्रीके गर्भसे एक अनुपमा सुन्दरी कन्याने जन्म लिया था, परन्तु राजाने उसे कभी न देखा। वही बालिका जब षोड़शी हुयी, घटनाक्रमसे वीरनारायणको देख पड़ी। उसके रूप पर राजा मोहित हुये और अपना कु अभिप्राय उसके निकट कहला भेजा। राजकुमारीने घृणा लज्जासे फिर मुख न दिखाया। नदीके स्रोतमें डूब प्राण गंवाया था। उसी दिनसे इस स्रोतस्विनीका नाम 'कुमारी नदी' पड़ गया। राजा इस दारुण समाचारसे शोकसन्तप्त और अतिशय लज्जित हुये। उनका सुख, हर्ष, उत्साह, कौतुक न जाने कहां चला गया। अल्प दिन पीछे १५४८ शकको उन्होंने इहसंसार परित्याग किया था। छत्रनाजिर महीनारायणने वीरनारायणके पुत्र प्राणनारायणको राजसिंहासन पर बैठा दिया। प्राणनारायणने स्मृति, व्याकरण और सङ्गीतशास्त्रमें बहुत पाण्डित्य लाभ किया था। उन्होंने विक्रमादित्यका अनुकरण करके 'पञ्चरत्नसभा' बनायी। उन्हींके उत्साह और यत्नसे कविरत्नने "राजखण्ड" नामक कोचराज्यका विवरण लिखा था। फिर महाराज प्राणनारायणके ही उद्योगसे प्रसिद्ध जल्पीश, वाणेश्वर और षण्डेश्वर देवका इष्टक-मन्दिर, कामतेश्वरी देवीका मन्दिर तथा सुदृढ़ प्राचीर निर्मित हुवा। ३९ वर्ष राजत्व करनेके पीछे वह मृत्युशय्या पर सोये थे। उनके मृत्युका संवाद पा छत्रनाजिर महीनारायणने राज्यलाभकी आशासे चार पुत्र और सैन्य दल साथ ले राजधानी प्रवेश किया। पहले उनको इच्छा अपने ज्येष्ठपुत्रको कोचराज्य देनेकी थी। परन्तु उन्होंने अपने चारों पुत्रोंको सिंहासनलाभकी आशामें उत्तेजित देखा। सुतरां इच्छा न रहते भी उन्होंने प्राणनारायणके पुत्रके मस्तक पर ही छत्र धारण किया।

१५८७ शकको मोदनारायण अभिषिक्त हुये। इस समय छत्रनाजिर महीनारायण ही राज्यके सर्वमय कर्ता बने थे। महाराज मोदनारायणने देखा कि मैं कहनेका राजा हूं, मेरे लिये राजभोग विड़म्बना मात्र है। उस समय इन्होंने अनेक चेष्टावोंसे छत्रनाजिरके कितने ही बड़े सिपाहियोंको अपने दलमें मिला उनके विरुद्ध युद्धघोषणा की थी। छत्रनाजिर परास्त हो संन्यासीके वेशमें भागे और वैकुण्ठपुरकी राहमें रायकतके कर्मचारियोंने उन्हें मार डाला।

१६०२ शकको मोदनारायणने अपुत्रक अवस्थामें प्राणत्याग किया था। इसी समय महीनारायणके पुत्र दर्पनारायण भोटियोंके साहाय्यसे कोचराज्य पर चढ़े। जगदेव और भुजदेव रायकतने आकर विद्रोहियोंके हाथसे कोचविहार उद्धार किया और प्राणनारायणके तृतीय पुत्र वासुदेवनारायणको राजा बना दिया। इसी समय दर्पनारायणका मृत्यु हुआ।

इससे २ वर्ष पीछे जगत्‌नारायण प्रभृति महीनारायणके अपर पुत्रोंने फिर भोटिया सैन्यसंग्रह करके राजधानीको आक्रमण किया था। युद्धमें वासुदेव निहत हुये। रानियां वासुदेवके भतीजे माननारायणके शिशुपुत्र महेन्द्रनारायणको लेकर स्थानान्तरको चली गयीं। इसीके साथ महीनारायणके दूसरे लड़केने राजा बननेका आयोजन लगाया था। परन्तु रायकत वीर जगदेव और भुजदेवने आकर उनकी सब चेष्टायें निष्फल कर दीं। जगत्‌नारायणने राजधानीको एक बारगी ही श्मशान बना कर पृष्ठ प्रदर्शन किया था।

फिर रायकतके यत्नसे १६०४ शकको शिशु महेन्द्र-

नारायण* अभिषिक्त हुये। इस समय उनकी उम्र सिर्फ ५ वर्षकी थी। पीछे भी जगत्‌नारायण और उनके भाई यज्ञनारायण दोनोंने मिल कर अनेक उपद्रव किये। थोड़े दिनों बाद महाराज महेन्द्रनारायणने जगत्‌नारायणके मृत्युका संवाद सुना था। उसी समय कोचविहारमें अन्तर्विप्लव उठ खड़ा हुवा। कोचराजने यज्ञनारायण और उनके भतीजोंको राजधानीमें ला यज्ञनारायणको छत्रनाजिर और सैन्याध्यक्ष बनाया था। इसी समय कोचविहारके अन्तर्गत काकिना, टेपा, मनथना, काटपूर, काजिरहाट, बोदा, पाटग्राम और पूर्व भाग परगना मुसलमानोंने अधिकार किया। पाटग्राममें मुसलमानी सैन्यके साथ यज्ञनारायणका एक घोरतर युद्ध हुवा था। मुसलमानोंने यहां बहुतसे कोच सिपाहियोंका मुण्डपात किया। उसी लड़ाईसे इस स्थानका दूसरा नाम 'मुण्डमाला' पड़ा है। पूर्वभागकी सीमापर बहुतसे तुर्क मारे गये। आज भी उस जगहको "तुर्ककाट" कहते हैं।

१६१२ शकको यज्ञनारायणका अकस्मात् मृत्यु हुवा। इसी समय राजाकी अनिच्छामें दर्पनारायणके पुत्र शान्तनारायण छत्रनाजिर बन गये। ११ वर्ष मात्र राजत्वके पीछे महाराज महेन्द्रनारायणका मृत्यु हुवा। तरह तरहकी गड़बड़ीके बाद १६१६ शकको जगत्‌नारायणके पुत्र रूपनारायण राजा बने थे। हण्टर आदि अंगरेज ऐतिहासिकोंके मतमें राजा महेन्द्रनारायणके स्वर्गवासी होने पर भगीदेव और जगदेव रायकतने कोचविहारका सिंहासन अधिकार करनेकी चेष्टा की, परन्तु मुगल सिपाहियोंकी मददसे रूपनारायणने उन्हें नीचा दिखाया।†

परन्तु अंगरेज ऐतिहासिकोंकी बात पर रायकतवंश विश्वास स्थापन नहीं करता। राजोपाख्यानमें कहा है कि महेन्द्रनारायणके जीते-जी जगदेवका मृत्यु हुवा और भुजदेव रायकत पीड़ित पड़े। ऐसे स्थलमें यह असम्भव है कि उन्होंने कोचविहार आक्रमण किया था। यदि वह चाहते, तो बहुत पहले ही महेन्द्रनारायणको राजत्व न दे अपने आप कोचराज्य अधिकार कर लेते।

राजा रूपनारायणने तरसा नदीके पूर्वकूल गुड़ियाहाटी ग्राममें राजधानी स्थापन की। आजकल उसीका नाम कोचविहार है। राजा रूपनारायणके साथ ढाकाके नवाब जबर्दस्तखान्‌की एक सन्धि हुई। उससे महाराजको बोदा, पाटग्राम और पूर्वभाग कई चकले वापस मिले। किन्तु राजाको छत्रनाजिर शान्तनारायणके नामसे ढाका सूबेदारके पास कर भेजना पड़ता था। उन्होंने राजधानीमें मदनमोहन देव और पाटदेहरा देवीकी मूर्ति प्रतिष्ठा की। १६३६ शकको उनका मृत्यु हुवा। उनके ज्येष्ठपुत्र उपेन्द्रनारायण सिंहासन पर बैठे थे। टेपाके जमीन्दार महादेव राय राजाके खासनवीस हुये। राजा उपेन्द्रनारायणने बन्धुताके सूत्रमें दीनाजपुरराज प्राणनाथके साथ पगड़ी बदली थी। उन्होंने अपनी प्रिय नर्तकी लालबाईके नाम पर लालबाजार बसाया। इसी स्थान पर प्राचीन कामतापुर था। यथाकाल राजा उपेन्द्रनारायणके सन्तानादि न होनेसे उन्होंने दीवान देव सत्यनारायणके* पुत्र दीननारायणको गोद ले लिया।

वह दीननारायण पर बड़ा ही अनुग्रह रखते थे। एक दिन नाजिर रुद्रनारायण देवने दीननारायणको परामर्श दिया—'तुम्हें राजा बहुत चाहते हैं। इस समय उनसे एक सनद ले लो कि उनके मृत्यु पीछे तुम्हीं राजा होगे। ऐसा न करनेसे तुम्हारे राजा होनेकी आशा नहीं।' इसी परामर्शके अनुसार दीननारायणने राजासे सनद मांगी थी। राजाने उनकी बात न मानी। तब दीननारायणने अत्यन्त क्रुद्ध हो रङ्गपुर जाकर मुहम्मद अली खान् नामक फौजदारकी मददसे कोचविहार पर चढ़ाई की थी। इस समय गौरीप्रसाद

---

* महाराज प्राणनारायणके ज्येष्ठ पुत्रका नाम विष्णुनारायण था। वह माननारायण नामक एक पुत्र छोड़ अकाल कालग्रासमें पड़ गये। महेन्द्रनारायण इन्हीं माननारायणके लड़के रहे।

† W. W. Hunter's Statistical Account of Bengal, Vol. X. p, 414.

* सत्यनारायण दर्पनारायणके पुत्र और शान्तनारायणके भ्राता थे।

वक्शीके कौशलसे कोचराज्य दुश्मनके हाथसे मुश्किल-में छूटा। राजा उपेन्द्रनारायणने वक्शी पर खूब खुश हो कर उन्हें खासनवीसका ओहदा दिया था। फिर राजा शादीखान् नामक स्थानके गोस्वामीके निकट दीक्षित हुये। इसी समय उनकी छोटी रानीके गर्भसे देवेन्द्रनारायणने जन्मग्रहण किया। १६८५ शकको चलियाबाड़ी नामक स्थानमें राजा महेन्द्रनारायणका मृत्यु हुवा। बड़ी रानीकी कोशिशसे चार वर्षके कुमार देवेन्द्रनारायणने सिंहासन पर आरोहण किया। इसी समय नाजिर रुद्रनारायण सिपाहियोंकी तनखाहकी आड़में राज्यका बहुतसा रुपया डकार गये। राजगुरु रामानन्दगोस्वामीके निकट रतिशर्मा ब्राह्मण रहता था। किसी दिन जब बालक राजा देवेन्द्र खेल रहे थे, उस दुष्टने आकर इनका शिर काट डाला। थोड़ी ही देरमें राजाके मारे जानेकी बात चारो ओर चल पड़ी। राज्यमें सब जगह हाहाकार मच गया। भूटानके देव-राजने यह खबर पाकर रामनन्द गोसाईंको उक्त हत्याकाण्डका मूल समझ उन्हें अपने राज्यमें ले जाकर मार डाला। अनेक दुर्घटनावोंके पीछे दीवानदेव खड्ग-नारायणके* लड़के गोपाल जिनका दूसरा नाम धैर्येन्द्र नारायण था, राजा हुये। भोटियोंने जल्पेश्वर, मन्दुस और जलस नामक स्थान जीते थे। देवराजने पेनसतुमा नामक किसी प्रतिनिधिको कोचराजधानी भेज दिया। २६० राजशाकको देवराजने धैर्येन्द्रनारायणसे साहाय्य मांगा था। तदनुसार दीवानदेव रामनारायणने ससैन्य विजयपुर आक्रमण किया। देवराज इससे बहुत ही उप-कृत हुये। इस युद्धमें जयलाभ करके रामनारायण बहुतसी चीजें लूट लाये थे, किन्तु उन्होंने बहुत थोड़ी चीजोंके सिवा राजाको कुछ भी नहीं दिया। राजाके पात्र-मित्रोंने उनके कानमें बार बार यह बात डाल राजाका मन तोड़ा था। उसके पीछे सबने साजिश करके दिवान-देवका प्राणवध किया। पेनसतुमाने भूटानराजके निकट यह दारुण संवाद पहुंचाया था। देवराज हत्या-काण्डका संवाद पाकर कोचराज पर बहुत बिगड़े और कौशलक्रमसे उन्हें तथा उनके पात्रमित्रोंको अपने राज्यमें ले जाकर बन्दी बनाया। पुरमहिलावोंने यह खबर सुनके राजाके शिशुपुत्र धरेन्द्रनारायणको अन्तः-पुरमें छिपा रखा था।

* खड्गनारायण, राजारूपनारायणके लड़के और उपेन्द्रनारायणके छोटे भाई थे।

१६९३ शकको भोटियोंने रामनारायणके आश्रित राजेन्द्रनारायणका अभिषेक किया। राज्यकी रक्षाके लिये पेनसतुमा कोचविहारमें ही रहे। धीरे धीरे यहां भोटियोंका आधिपत्य बढ़ने लगा। दूसरे वर्षको महा-समारोहसे राजा राजेन्द्रनारायणका विवाह हुवा। इस विवाहमें देवराजने उन्हें बहुत भेंट दी थी। विवाहके पीछे पञ्चम दिवसको महाराज राजेन्द्रने इहलीला संवरण की। उन्हींके समय कोचविहारकी नारायणी मुद्रा पुष्पचिह्नित हुयी थी।

कुमार वैकुण्ठनारायणने पेनसतुमासे मिलकर राजा होनेकी चेष्टा की। उसी समय काशीनाथ लहो-ड़ीके यत्नसे कुमार धरेन्द्रनारायण सिंहासन पर बैठे थे। पेनसतुमा अपनी क्षमता चलते न देख देवराजके पास पहुंचे। देवराजने कोचविहारकी आभ्यन्तरिक अवस्था समझबूझ कर कोचराज्य आक्रमण करनेको बक्साद्वारसे ३८४० भोटिया सैन्य भेजा था। चेचा-खाता नामक स्थानमें नाजिरदेवने उन्हें परास्त किया। फिर देवराजने समस्त कोचविहार विध्वंस करनेके लिये जम्पे नामक सेनापतिके अधीन १८ द्वारसे १७२८० सिपाही रवाना कर दिये। बक्साद्वार, लक्ष्मी-पुरद्वार और हलदी बाड़ीद्वारसे भोटिया-सेनानायक संयामिनीपुरीमें आ उपस्थित हुये। इस बार कोच फौज हारी थी। भोटिया-सेनापति जिम्पेने रामनारा-यणके लड़के बीजेन्द्रनारायणको राजा बना चेचाखाता नामक स्थानमें ले जाकर रख दिया। वहां जलवायु असह्य होनेसे अल्पदिनोंमें ही राजा बीजेन्द्रनारायण कालग्रासमें पतित हुये। इसी समय भोटियोंने चितालदहा, बालाडांगा, नवामारी, मड़ाघाट, लक्ष्मी पुर आदि स्थानोंमें दुर्ग बना लिये और भोटिया-सेनापति जिम्पे दलबल लेकर कोचविहारके रङ्ग-मन्दिरमें रहने लगे। जो हो, समस्त कोचविहार-राज्य

भोटियोंके हाथमें चला गया। धैर्जेन्द्रनारायणके * स्वर्गवासी होने पर नाजिरदेव खगेन्द्रनारायण, धैर्येन्द्र-नारायणके बेटे कुमार धरेन्द्रनारायणको राजा देनेके लिये आ पहुंचे थे। भोटियोंने उनके विरोधी हो युद्ध घोषणा की। नाजिर हार गये। भोटियोंने राजा धैर्येन्द्रके बड़े भतीजे वच्चेन्द्रको सिंहासन पर अभिषिक्त किया था। नाजिरदेवने भाग कर अंगरेजी कम्पनीका आश्रय लिया। किसीके मतमें उस समय वैकुण्ठपुरके दर्पदेव रायकतने भोटियोंको साहाय्य दिया था। परन्तु यह बात विश्वासयोग्य नहीं।

१७७३ ई० को ५ वीं अपरैलको अंगरेजोंके साथ राजा धरेन्द्रनारायणको एक सन्धि हुई। उसके अनु-सार अंगरेज लोग ५० हजार रुपये लेकर कोचराजका साहाय्य करने पर सम्मत हो गये। फिर नाजिरदेवके साथ अंगरेज सैन्यने कोचविहारमें प्रवेश किया था। भोटिया-सेनापति जिम्पे असाधारण सामर्थ्य दिखा युद्धमें पराजित और निहत हुये।

अंगरेज-सेनानायक परलिङ्गने चेचाखाता पहुंच विजयघोषणा की थी। भूटानमें देवराजके पास कम्पनीका एक पत्र गया, जिसमें लिखा था आपको चाहिये कि महाराज धैर्येन्द्रनारायण और उनके लोगोंको छोड़ दें, नहीं तो युद्ध अनिवार्य है। देवराजने भीत हो ससम्मान महाराज धैर्येन्द्रनारायणको चेचा-खाता तक पहुंचा दिया। नाजिरदेव राहमें महा-राजसे मिलने आये। प्रथम साक्षात्कालको महाराज धैर्येन्द्रनारायणने उनसे कहा था—'नाजिर कम्पनीके हाथमें राजत्व क्यों सौंप दिया? जो राजा विदेशीको कर देता, छत्र धारणसे क्या फल उठा लेता है। मैं पूर्व-जन्मके पापसे देवराजके हाथ कैद हुवा। स्वाधीनता विक्रयकी अपेक्षा विश्वसिंहका वंशलोप होना अच्छा था।" महाराज जब कोचविहार नगरमें उपस्थित हुये, राज्यके सभी प्रधान व्यक्ति उनसे राज्यग्रहण करनेका अनुरोध करने लगे। उन्होंने अस्वीकार करके कहा था—धरेन्द्रनारायण राजा हैं उन्हींको राजत्व करने दो। फिर धैर्येन्द्रनारायण राज्यके किसी आदमीसे बहुत मिलते जुलते न रहे, सर्वदा देवीको आराधनामें लगे रहते थे। थोड़े दिन बाद राजा धरेन्द्रनारायणका मृत्यु हुवा। उस समय (१७७५ ई०) इच्छा न रहते भी सबके अनुरोधसे महाराज धैर्येन्द्र-नारायणने फिर सिंहासन ग्रहण किया। परन्तु वह शासनकार्य बहुत देखते न थे, सर्वदा दानध्यानमें ही लगे रहते। १७०० शकको वह व्याघ्र चर्म परिधान-पूर्वक पदव्रज हो तीर्थयात्राको वहिर्गत हुये। तीर्थ-यात्राके समय दीनाजपुरमें हीपिधर्मधारी महाराज धैर्येन्द्रके साथ राजा वैद्यनाथको मुलाकात हो गयी। वह कोचराजको विस्तर उपहार देने लगे। परन्तु उन्होंने किसी द्रव्यको हाथ न लगा कहा था—दीन दरिद्रको प्रदान कर दीजिये। फिर वह पैदल काशी प्रभृति नानास्थान घूम फिर स्वराज्यको लौट आये। उनका ऐसा वैराग्यभाव देख कोच लोग पागल राजा कहते थे। १७०२ शकको उनके हरेन्द्रनारायण नामक एक पुत्रने जन्म लिया। राजाके कोई कामकाज न देखनेसे सब भार रानीके ही हाथमें रहा। रानीके प्रियपात्र सर्वानन्द गोसाई और खासनवीस सर्वमय कर्ता बने थे। उन्होंने रङ्गपुरके कलक्टर साहबसे मिल-जुल नाजिर देवको पदमर्यादा हरण करनेके लिये चेष्टा की, परन्तु अन्तको अपने आप कैद कर लिये गये। १७०५ शकको राजा धैर्येन्द्रनारायणका मृत्यु होने पर कुमार हरेन्द्रनारायण अनेक कष्टोंसे राजा हुये। रानी राजाका इच्छापत्र दिखा अंगरेज सर-कारकी अनुमतिसे बालकराजाकी ओरसे राजकार्य चलाने लगीं। परन्तु नाजिरदेवका जोर जुल्म धीरे धीरे बढ़ता हो गया। सर्वानन्द और खासनवीस उस समय भी रङ्गपुरमें कैद थे। उन्होंने गुडलाड साहबको सूचना दी नाजिरदेव अपने आप राज्यशासन करनेकी चेष्टामें हैं, ऐसे स्थलमें आपको उनके ऊपर नजर रखना चाहिये। उस समय साहबके बाबूने नाजिर-देवसे रिश्वत ले उनके पक्षको बहुतसी बातें साहबको सुझायी थीं। बाबूकी बात पर विश्वास करके साहब

* हण्टर वगैरह अंगरेज ऐतिहासिकोंने 'राजेन्द्र' नामसे धैर्जेन्द्रका उल्लेख किया है। किन्तु मुंशी यदुनाथ आदिके लिखे देशीय इतिहासोंमें 'धैर्जेन्द्र' नाम ही मिलता है।

चुपके बैठ रहे। इधर नाजिरदेव राजपक्षीय कर्मचारियोंको विनाश करने लगे और राजा तथा राजमाताको कैद करके अपने आप सिंहासन पर बैठ गये। अन्य समय अभिषेकमें नाजिरदेव अभिषिक्त राजाके मस्तक पर छत्र लगाते थे। परन्तु इस वार उनने स्वयं अपने मस्तक पर ही छत्र धारण किया। जब यह वात रङ्गपुरके गुडलाड साहबके कानमें पड़ी थी, उन्होंने झटपट खासनवीस और सर्वानन्द गोसाईंको रिहा करके कोचविहार भेज दिया। उस समय नाजिरदेव भयसे समस्त धनरत्न लेकर बलरामपुर भाग गये। किन्तु शीघ्र ही साहबके आदमियोंने उन्हें पकड़ लिया था। सर्वानन्द गोसाईं और दीवानदेव सुन्दरनारायण पर राजस्व चुकानेका भार अर्पित हुवा। रानी पर राज्यशासनका भार रहनेसे दुष्ट कर्मचारी अपना पेट भरने लगे। १७१० शकको घटनाक्रमसे नाजिरदेव कारागारसे किसी प्रकार निकल भागे थे। उनके भाई भगवन्तनारायण आदि कितने ही लोग नागेश्वरी और पाथडांगाके संन्यासियोंसे मिल राजविद्रोही हुये और राजप्रासाद आक्रमण करके राजमाता तथा बालक राजाको बलरामपुर पकड़ ले गये। वहां नाजिरदेवने उन्हें कठोर रूपसे उत्पीड़ित किया था। सर्वानन्द गोसाईंने रङ्गपुरके कलक्टर साहबको कोचविहारकी दुरवस्थाका समाचार कहला भेजा। उन्होंने अविलम्ब एक दल फौज बलरामपुरको रवाना की थी। वहां एक सामान्य युद्ध हुवा। राजमाता और राजाको छुटकारा मिला था। विद्रोही कैद करके रंगपुर लाये गये। नाजिरदेव निरुद्देश रहे। उस समय कोचविहारकी समुदय अवस्थाके पर्यावेक्षणको दो कमिश्नर नियुक्त हुये। नाजिरदेवने उनके हाथों अपनेको सौंपा था। कोचविहार, मुगलहाट और रङ्गपुरमें प्रायः छह मास तक अनुसन्धान होता रहा। इसी समय नाजिरदेवने बोदा, पाटग्राम और पूर्वभाग परगनेको अपनी पितृसम्पत्ति बताया और कोचविहारके अर्धांश पर भी अपना दावा लगाया था। बड़ी गड़बड़में नाजिरदेवको कोचविहारकी सरकारसे ५००) रु० मासिक और बलरामपुरको चारो ओर दोकोस भूमि पर अधिकार मिल सका। परन्तु थोड़े दिनों बाद ही राजाने कम्पनीको कहा था—जब सन्धिके अनुसार अंगरेज हमारे राज्यकी रक्षा करनेको बाध्य हैं, वृथा कितना ही सैन्य रखके उसका व्यय उठाना युक्तिसिद्ध नहीं। सुतरां नाजिरदेवका इस सरकार पर कोई दावा रह नहीं सकता।

महाराज हरेन्द्रनारायणके साथ क्रमान्वयमें वैकुण्ठपुरके दर्पदेव रायकती दो पौत्रियोंका विवाह हुवा।

उनके समय आमहर्टो साहब कोचविहार कमिश्नर हो कर गये थे। उनने राजाके विपक्ष दलसे मिलित हो राजा और प्रजा पर बड़ा अत्याचार किया। धीरे धीरे उनके अत्याचारकी बात कलकत्तेकी कौंसिलमें पहुंची थी। १८०१ ई० को राजाके हाथ सम्पूर्ण भार अर्पण करनेको आदेश निकाला। फिर महाराजने बड़े ठाठवाटसे राज्यके शासनका भार लिया था। उनके सुयोग्य खासनवीस काशीनाथ लाहिड़ीके यत्नसे कोचराज्यमें कितनी ही उन्नति साधित हुई। राजाने विचक्षण बंगालियोंको प्रधान कर्मचारियोंका पद दिया था। इसी समय नारायणी मुद्राका प्रचलन उठ गया।

१८०७ ई० को महाराज हरेन्द्रनारायणने सागरदीघि नामक वृहत् सरोवर खनन कराके उनके तीर पर शिवमन्दिरकी प्रतिष्ठा की थी। १८१२ ई० को उन्होंने भितागुड़ी नामक स्थानमें अपनी राजधानी बसायी। इसी समय दीवानदेव पर राजाकी कुदृष्टि पड़ी थी। अन्याय आचरणके लिये दीवानदेवके मुख्तार राजाके आदेशसे निहत हुये। दीवानदेवने डर कर रंगपुरके कलक्टर साहबसे मदद मांगी थी। १८१३ ई० को अगस्त मास नरमान-माकलायड कोचविहार एक बन्दोवस्त करने पहुंचे। राजा उनसे बिगड़ उठे। साहब अंगरेजी नियम चलाने गये थे, राजा साहबकी बात पर सम्मत न हुये। अन्तको १८१६ ई० के फरवरी महीने वृटिश गवर्नमेण्टने फिर पुराना कायदा ही कायम रखा। फिर राजा धलियाबाड़ीमें राजप्रासाद निर्माण करके वहीं रहने लगे। इसीके पहलेही उन्हें राजकार्यसे विवृष्णा हो गयी थी। वह

केवल दान, ध्यान और धर्मशास्त्रके आलापमें लगी रहते थे।* १८३५ ई० को वह कुमार शिवेन्द्रनारायण और राजेन्द्रनारायण पर शासनभार डाल राज्य छोड़ के काशीधाम चले गये। ५६ वर्ष राजत्व करके काशीधामके मणिकर्णिका घाटमें १८३९ ई० को महाराज हरेन्द्रनारायणने इहलोक परित्याग किया।

१७६१ शकको उनके बड़े बेटे शिवेन्द्रनारायण राजा बने थे। राजा शिवेन्द्रनारायणके अधिकारकाल कोचविहारके राजकार्यकी विलक्षण उन्नति हुई। दीवानी और फौजदारीका काम कायदेसे चलानेके लिये उन्होंने पहले नायब अहलकार और सरदार अमीनका ओहदा निकाला था। फिर उनके यत्नसे विद्यालय भी स्थापित हुवा। सिवा इसके उन्होंने धर्मसभा और सर्वसाधारणके लिये धर्मशाला प्रभृति स्थापित करके देशका मङ्गल साधन किया। पहले अंगरेजोंका प्राप्य बहुतसा कर बाकी पड़ा था। राजा शिवेन्द्रनारायणने वह सब चुका दिया। अपने पुत्र सन्तान न रहनेसे उन्होंने चौथे भाई राजेन्द्रनारायणके लड़के कुमार नरेन्द्र वा नेत्रनारायणको दत्तक ग्रहण किया था। १८४७ ई० को उन्होंने पिताकी तरह काशीधाममें जीवन विसर्जन किया। उनके दत्तकपुत्र नरेन्द्रनारायण अभिषिक्त हुये। महाराज नरेन्द्रनारायणने कृष्णनगरके कालेजमें अंगरेजी पढ़ी थी। इनकी नाबालगीमें उनके जन्मदाता राजेन्द्रनारायण सरबराहकार या राज्यके कार्याध्यक्ष रहे। १८५० ई० को राजा नरेन्द्रनारायणने बालिग होने पर राज्यका भार उठाया था। १८५३ ई० को २२ वें वर्षके वयःक्रमकाल वह १० महीनेके अपने बच्चे नृपेन्द्रनारायणको छोड़ इहलोकसे चलते बने। प्रथम उनकी तीन रानियोंको राज्यशासनका भार मिला था। किन्तु उनमें विवाद विसंवाद लग जानेसे राजकुमारकी नाबालगीमें वृटिश गवर्नमेण्ट स्वयं शासनकार्य देखने लगी। १८६४ ई० को २९ वीं फरवरीको महाराज Colonel सर नृपेन्द्रनारायण भूप बहादुर G. C. I. E. C. B गद्दी बैठे और इटन साहब २०००) रु० की तनखाह पर कमिशनर नियुक्त हुये। इन्हीं कमिशनर साहबकी कोशिश पर १८६४ ई० को ७ वीं सितम्बरको कोचविहारसे कठोर दासत्व प्रथा उठ गयी।

राजा नृपेन्द्रनारायणने पटना-कालेजमें अंगरेजी पढ़ी थी। यह १८७७ ई० को दिल्ली दरबारमें उपस्थित रहे। १८७८ ई० को ६ ठीं मार्चको वाग्मीप्रवर केशवचन्द्र सेनकी बड़ी बेटीसे इनका विवाह हुवा। केशवचन्द्र सेन प्रसिद्ध ब्राह्म और कोचविहारका परिवार निष्ठावान् सनातनधर्मी था। केशवचन्द्र ब्राह्म मतसे विवाह करना चाहते थे, परन्तु राजपरिवारके अनुरोध पर ब्राह्मणोंने सनातनधर्मानुसार ही उसे सम्पन्न किया।* विवाहके पीछे वह विलायत चले गये। १८८० ई० को २३ वीं फरवरीको गवर्नमेण्टने उन्हें 'महाराजा' और पीछे जी० सी० आई० ई० उपाधि दिया। सिवा इसके भूपबहादुर बङ्गाल अश्वारोही सैन्यके अवैतनिक लेफटेनेण्ट कर्नल और प्रिन्स अव वेल्सके अवैतनिक मुसाहब (Aid-de-Camp) बन गये। आजकल उनके पुत्र हिज हाइनेस महाराज सर जीतेन्द्रनारायण भूप बहादूर K, C. S. I. कोचविहारके वर्तमान अधीश्वर हैं। बड़ोदा गायकवाड़की राजकुमारी महारानी इन्दिरादेवी इनकी महिषी हैं। कोचविहारके महाराज अंगरेज सरकारसे १३ तोपोंकी सलामी पाते हैं।

इस देशके अधिवासी वाणिज्य व्यवसायमें बहुत लिप्त नहीं। माड़वारी ही यह काम चलाते हैं। कोचविहार, बलरामपुर, चौड़ा, गोबराछड़ा, दीवानगञ्ज, चांगड़ाबांदा और लालकुटी नगर वाणिज्यके प्रधान स्थान हैं। तम्बाकू, पाट, सरसों, सरसोंका तेल, अंडी और मेखली कपड़ा तथा चावलकी रफ़्तनी ज्यादा होती है। बाहरसे शक्कर, गुड़, मसाला, नारियल, सुपारी, नमक, पीतल, कांसेके वर्तन और विलायती कपड़ा अधिक मंगाते हैं। देशमें जगह जगह बाजार लगता है। चैत्र मासको गदाधर नदीके दक्षिण भागमें

---

* इसी समय यदुनाथ घोष नामक राजाके किसी मुंशीने राजोपाख्यान नामक कोचविहारका इतिहास प्रणयन किया था। वह मुंशीका ग्रन्थ देख बहुत सन्तुष्ट हुये और पारितोषिक स्वरूप पांच ग्राम निष्कर दे दिये।

* Report on the Administration of Bengal, 1877-78.

कोचविहार शहरसे पांच छह कोस दूर तीन दिनतक एक बड़ा मेला लगता है।

पहले कोचविहारी अर्थसञ्चय करना जानते न थे। परन्तु आजकल अवस्था उन्नत होनेसे वह रुपया इकट्ठा करना सीख गये हैं। कोचविहारमें एक बड़ाकालेज विद्यमान है। राजाके दानसे अन्यान्य भी कई विद्यालय खुल गये हैं।

देशका राजकार्य राजाके कर्मचारी ही सम्पन्न करते हैं। अपीलका विचार करना राजवंशके ही हाथमें हैं। राज्यमें एक जेल और कई थाने हैं।

राजाकी खास जमीन खालसा कहलाती है। उसकी आमदनी दीवान वसूल करते हैं। राजाके आत्मीय लोग उसके इजारादार हैं। खालसाको छोड़ खानगी और खासवास जमीन भी होती है।

कोचविहारके राजा अपने राज्यके अधिकार और दण्डमुण्डके कर्ता हैं। उन्हें राज्यशासन, कर और व्यवस्था स्थापनकी सम्पूर्ण स्वाधीनता है। १८६४ ई० को राजाके शिशु रहनेसे अंगरेज गवर्नमेण्टने राज्यके तत्त्वावधानका भार अपने आप उठाया था। भूटानयुद्धके पीछे १८६६ ई० को दारजिलिङ्ग, जलपाइगुड़ी, ग्वालपाड़ा, गारो पहाड़ और कोचविहार लेकर एक कमिश्नरी बनायी गयी। परन्तु १८७५ ई० को आसाम स्वतन्त्र विभाग हो जानेसे राजशाही और कोचविहार अलग एक कमिश्नरके अधीन हुवा। राज्यमें अंगरेज सुपरिण्टेण्डेण्टका तत्त्वावधान रहनेसे बहुतसा परिवर्तन पड़ गया है। आमदनी वसूल करनेका नया कानून निकाला और कितना ही अंगरेजी ढंग चला है। स्कूलोंकी संख्या बहुत बढ़ गयी है। अच्छी अच्छी राहों, नदीके पुलों, डाकघरों और तारघरोंका इन्तजाम किया गया है।

१७७३ ई० को जो सन्धि हुयी थी, उसके अनुसार कोचविहारके राजा अंगरेज गवर्नमेण्टको आधी आमदनी देने पर स्वीकृत हुये थे। परन्तु १७८० ई० को वार्षिक ६७७००) रु० कर ठहराया गया।

कोचविहार बङ्गालके अन्यान्य स्थानोंकी भांति उष्ण नहीं है। मलेरिया ज्वर प्रबल रहता है। पुरवाई ही अधिक चलती है। वैशाखसे कार्तिक मास तक वृष्टि हुआ करती है। ग्रीष्मकालमें भी बहुत गरमी नहीं लगती। पीड़ाओंमें रक्तामाशय, ज्वर, प्लीहा, उपदंश और गलगण्ड रोग अधिक देख पड़ता है। किसी किसी नदीका जल पीनेसे ही गलगण्ड उपस्थित हो जाता है। देशमें कविराजी चिकित्सा अधिक प्रचलित है। औषधियां भी अनेक प्रकारकी यहां मिलती हैं। लोकसंख्या प्रायः ६ लाख है। राज्यका सर्वश्राय १८४१२७८) रु० है।

कोचहाजो—आसाम ग्वालपाड़ा जिलेके एक अंशका पुराना नाम। वामभागमें ब्रह्मपुत्रतीर और करंबाड़ी परगनेकी बीचवाली हाथशिलासे दक्षिण भागको भितरबन्द परगनेके उत्तरांश और पूर्वको कामरूप जिले तक यह प्रान्त विस्तृत था। धूबड़ी और रांगामाटी नगर इसीके अन्तर्गत रहे। पूर्वतन अंगरेज-भ्रमणकारियोंने अजो (Azo) नामसे इसका उल्लेख किया है।*

कोचा—(हिं० पु०) गड़ाव, चुभाव, कोंच।

कोचिंडा (हिं० पु०) वनय पियाजु, जंगली प्याज। यह हिमालयमें उपजता है।

कोचिका (सं० स्त्री०) कुचेलक, कुचिका।

कोची (हिं० पु०) वन्य वर्वरभेद, एक प्रकारका जंगली बबूल। यह पूर्व और दक्षिण भारतके वनमें बहुत उपजता है। इसकी सूखी पत्तियां पीस कर शिर पर मलनेके काम आती हैं। कोचीको बनरीठा और सीकाकाई भी कहते हैं।

कोचीन—मन्द्राज प्रेसीडेन्सीमें अंगरेजोंके अधीन एक देशीय राज्य। यह अक्षा० ९° ४८′ एवं १०° ४९′ उ० और देशा० ७६° तथा ७६° ५५′ पू० के मध्य अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल १३६१॥ वर्गमील है। पहले कोचीन नामक नगर इसकी राजधानी रहा। १७९५ ई० को जब ओलन्दाजोंने इसे आक्रमण किया, यह मलयवारके अन्तर्निविष्ट हो गया। कोचीन राज्यके पश्चिम अरब सागर, पूर्व तथा दक्षिण मलवार जिला और उत्तर

---

* Journal of Asiatic Society of Bengal, Vol XLI. pt. I. p. 56.

बम्बई प्रेसिडेन्सी है। दक्ष—कोचीन, कोणनर, मुकुन्द-पुरम्, त्रिचूड़, तलपली, चित्तर और कोदङ्गलुर ७ भागोंमें बंटा है।

कोचीनमें केवल झीलें और खाड़ियां हैं। उनमें पश्चिमघाट पर्वतकी सब नदियां जा गिरी हैं। नदियों में पानी घटने बढ़नेसे ह्रदादिका भी जल घटता बढ़ता है। आलवाई नदीकी खाड़ी जब सूख जाती, इधर उधर ६ इञ्चसे अधिक पानी नहीं रहता, परन्तु उसके भर आनेसे पानी ही पानी देख पड़ता है। इस राज्य में कोचीन, कोदङ्गलूर और चतवाई तीन बन्दर हैं। कोचीनसे कोदङ्गलर तक पानीकी राह बारहो महीने सवारी और मालकी नावें आया करती हैं। कोचीनसे आलेप्पि तक भी ऐसा ही होता है। वर्षा कालको सब स्थानोंमें चपटे पेंदेवाली नावें चल सकती हैं। यहां नारिकेल अपर्याप्त फलता है। जहां तहां निविड़ नारिकेलका वन खड़ा है। जहां बांध बंधे हैं, धानके खेत यथेष्ट देख पड़ते हैं।

कोचीनकी प्रधान नदियां—पोनानी, तत्त्वमङ्गलम्, करुवनूर और शलकुड़ी हैं। आलवाई नदी इस राज्य-में बहुत दूर तक चली गयी है।

लकड़ी कोचीनमें बहुत अच्छी होती है। साग-वनके पेड़ बढ़ते तो खूब हैं, परन्तु त्रिवाङ्कुड़की तरह अधिक दिन नहीं ठहरते। इसीसे कोचीनका साग-वन जहाजमें कम लगता है। पित्तन वृक्षका मस्तूल अच्छा आता है। पहले यहां लोहे और सोनेकी खानमें काम होता था, परन्तु आज कल रुक गया है। कोचीनमें नानाप्रकार उद्भिद और रंग तथा गोंद-के पेड़ भी मिलते हैं। दालचीनी काफी देख पड़ती है। वन्य जन्तुवोंमें हाथी, जंगली भैंसा, भाल, बाघ, चीता, सांभर आदि हिरन, हायना, भेड़िया, लोमड़ी और बन्दरोंकी कोई कमी नहीं। धान्य प्रायः ५० प्रकार-का होता है। अच्छी जमीन् पर वर्षमें तीन बार धान लगता है। जहां मट्टी हलकी है, वहीं नारियल उप-जता है। नारियलकी रस्सी और तेल वगैरह भी खूब होता है। यह सकल द्रव्य इतने आते, कि विदेश भी भेजे जाते हैं। सिवा इसके रूई, कहवा, नील, पान, सुपारी, सन, ईख, अदरक और मिर्चकी उपज भी अच्छी है।

कोचीन और कोणनूरमें धातुके बर्तनों, हाथी दांत और लकड़ी पर बहुत उम्दा नक्काशी की जाती है। गवर्नमेण्टके कारखानेमें नमक बनता है। नारियल, मिर्च, दालचीनी और बहादुरी लकड़ीकी रफ्तनी देश विदेशको होती है।

रेलवे राहके सिवा नहरें निकाल करके व्यवसाय-के लिये यथेष्ट सुविधा कर दी गयी है।

एर्णाकोलम् और त्रिचूड़ शहरमें राजाके साहाय्यसे पाठागार स्थापित हुये हैं। ईसाइयोंकी मददसे कई छापेखाने भी चलते हैं। जहां 'कोचीनका सरकारी गजट' नामक एक अंगरेजी संवादपत्र निकलता है। तीर्थभ्रमणकारी ब्राह्मणोंके लिये सकल देवालयोंमें अतिथिसेवाकी व्यवस्था है। स्थानीय ब्राह्मणोंके प्रति-पालनार्थ नानास्थानोंमें राजाका विस्तर दान लगा है। प्रति वत्सर देवालयोंमें दश दिन तक बराबर उत्सव होता है। कोदङ्गलूरका उत्सव सर्वप्रधान है।

देशके जलवायुकी अवस्था अस्वास्थ्यकर नहीं है। ग्रीष्मका विशेष प्रादुर्भाव नहीं देख पड़ता है। लगातार ३। ४ दिन ज्यादा गर्मी पड़ते ही एक दिन पानी बरस जाता है।

केरल, त्रिवाङ्कुड़ और मलबार आदि जब प्राचीन केरल राज्यके अन्तर्गत रहे तब (ई० नवम शताब्दीको) चेरुम परुमल नामक एक व्यक्ति इस सकल प्रदेशके शासनकर्ता थे। उन्होंने अन्तको स्वाधीन हो राजछत्र ग्रहण किया। कोचीनके वर्तमान महाराज उन्हीके वंशधर हैं। कोई कोई कोचीनके राजाको चेरुम पेरु-मलके भ्राताका वंशधर बताता है। भारतमें जब प्रथम पोर्तगीज आये, कालिकट प्रदेशमें जमोरिनके उपाधि-धारी एक राजा थे। उक्त समय कोचीनराजा उन्हींके प्रतिद्वन्द्वी रहे। कोचीन और कालिकटके बीच सदा युद्ध चला करता था। कभी कोचीन और कभी कालि-कटके राजा जीत जाते थे। यह झगड़ा महिसुरके टीपू सुलतानके समय तक रहा। केवल मध्यमें ई० १६ वीं शताब्दीको कोचीनका कुछ अंश पोर्तगीजोंके हाथ लगा।

१५०० ई० की २४ वीं दिसम्बरको पिड्रो अलवरज डि कावराल नामक पोर्तगीज नव आविष्कृत अमेरिका-में अपने नाम पर ब्रेजिलका नाम रखके कोचीनके निकट आ उपस्थित हुये। भास्को-डि-गामा जो कर न सके थे, इन्होंने वही करनेकी चेष्टा की। अन्तमें बहुत-सी चेष्टाके पीछे कालिकटके जमोरिनसे नानाविध प्रबन्ध करके कालिकटमें इन्होंने पोर्तगीज कोठी खोल दी। कई पोर्तगीजोंको इस कोठीका काम सौंप कावराल स्वीय नौसेनादल ले स्वदेश चले गये। उनके जानेके पीछे ही जमोरिनने कोठीको विध्वंस और उसमें रहनेवाले पोर्तगीजोंका विनाश किया। खबर धीरे धीरे पोर्तगाल पहुंची थी। वास्को-डि-गामा सैन्य ले अधिनायक बन कर भारताभिमुख चले थे। उनके साथ २० जहाज रहे। १५०२ ई०को कालिकट पहुंचते ही उन्होंने एकबारगी नगर घेर लिया और बन्दरमें जितने विदेशी जहाज थे, उन्हें तोड़ दिया। विदेशी वणिकोंकी यथेष्ट क्षति और विदेशी राजावोंके साथ विवादका सूत्रपात होते देख जमोरिनने उनसे सन्धिका प्रस्ताव किया था। परंतु उन्होंने कहा—हम निहत पोर्तगीजोंके मारनेवालोंको जबतक न पायेंगे, सन्धिकी बात कैसे चलायेंगे? तीन दिन युद्ध स्थगित रहा। फिर भास्कोडिगामा विना कारण ५० मलबारी मलाहोंको फाँसी चढ़ा कालिकट शहरको गोलेसे उड़ा देनेकी चेष्टा करने लगे। लगभग आधा शहर टट फूट गया, फिर भी जमोरिनने आत्मसमर्पण न किया। अन्तको डिगामाने जमोरिनके प्रतिद्वन्द्वी कोचीनराजसे मित्रता जोड़ उनको उखारना चाहा था। उन्होंने कोचीनराजको पोर्तगालके सैन्यका बलादि और विक्रम बता भय दिखा करके कोचीनकी खाड़ीके मुंहाने पर कोठी बनानेकी अनुमति ली। इसी कोठीसे कोचीनमें युरोपीय अधिकारका सूत्रपात हुवा था। फिर १५०३ ई० को २री सितम्बरको आलफनशो-डि-आलबुकार्क पोर्तगीज-अधिनायक बन कोचीनकी कोठी पहुंचे थे। उन्होंने आकर कोचीन-राजके साथ साथ जमोरिनसे युद्ध किया। लड़ाईमें कोचीनके राजा जीते थे। इसी सुयोगसे आलबुकार्कको कोचीनकी कोठीमें पोर्तगीज फौज रखनेका अधिकार मिल गया, जिससे इस राज्यके सर्वनाशका सूत्रपात हुवा। १५१५ ई०को गोआ, कन्नानूर, मलक्का द्वीपपुञ्ज और पारस्य उपसागरका निकटस्थ द्वीपपुञ्ज उनके हाथ लगा था। १५२४ ई०को पोर्तगालके राजाने वास्को-डि गामाको भारतीय अधिकारका प्रतिनिधिपद प्रदान करके भारत भेज दिया। वह १५२५ ई०को इस देशमें आकर मर गये। कोचीननगरके फ्रानसिसकान गिर-जेमें उनका देह समाहित हुवा। डिगामाके बाद हेनरिक मेनेजेज उनके आसन पर बैठे थे। वह कोचीनसे पोर्तगीज-राजधानी उठा गोआ ले गये।

इसी समय ओलन्दाजोंका बल सिंहलमें बढ़ रहा था। वह अपने व्यवसायकी क्षति लगते देख भारतमें स्थान अधिकार करनेकी चेष्टा करने लगे और पोर्त-गीजोंको अटकानेके लिये करमण्डल उपकूलमें निगा-पत्तन, कुइलन तथा कोदङ्गलूर अधिकार करके मल-बार उपकूलका कोचीन नगर (१६६२ ई०) आ घेरा। दोनों ओरसे बड़ी लड़ाई हुई। रानीप्रासादमें अति भयानक युद्ध होने पर इन्हें भागना पड़ा। परन्तु कुछ महीनों पीछे ही उन्होंने फिर अधिक संख्यक सैन्य लेकर कोचीन आक्रमण किया और १६६३ ई० को नगर पर्यन्त अधिकार किया। उनके अधीन कोचीन नगरकी यथेष्ट उन्नति हुई। अन्तको प्रायः एक शता-ब्दी पीछे कालीकटके जमोरिनने फिर कोचीन अधि-कार करनेकी चेष्टा की थी। परन्तु त्रिवाङ्कुड़के राजाने उन्हें परास्त करके कोचीनका किंयदंश ले लिया।

१७७६ ई० को महिसुरके राजा हैदरअलीने इस प्रदेशको अपने अधिकारमें आनयन करके कोचीन-राजको मित्रराजकी भांति उनके पद पर स्थापित किया था। उसके पीछे १७९० ई० को टीपूने इसकी यथेष्ट क्षति की और वीरपलाई तक जनपदादिका उच्छेद कर डाला। परन्तु श्रीरङ्गपत्तनकी रक्षाको लौट जानेसे वह एक काल ही सर्वनाश कर न सके। १७९२ ई० तक यह स्थान नाममात्रको टीपूके अधीन रहा।

१७९१ ई० को टीपूके भयसे कोचीनराज अंगरे-जोंके सहाय्यप्रार्थी हुये। लर्ड वेलेसलीकी उस समय

गवर्नर रहे। उन्होंने इस सुयोगमें कोचीनके राजाको बन्धुता जोड़ मित्रराज-जैसा माना था। लाख रुपया राजकर ठहर गया। १८०८ ई० को स्वाधीनता लाभकी आशामें त्रिवाङ्कुड़के राजाने रेसीडेण्टको बध करनेकी कल्पना लगायी थी। परन्तु भेद खुल जाने पर राजासे फिर नयी सन्धि को गयी। इस सन्धिके अनुसार ठहरा था—राजा अंगरेज गवर्नमेण्टसे बिना पूछे किसी विदेशी राजासे कोई बातचीत न कर सकेंगे और न किसी युरोपीयको अपने काममें ही लगा सकेंगे। राजकर २०००००) रु० स्थिर हुवा।

कोचीन राज्यमें आजकल ७ तहसीलें हैं। तहसीलदार ही पुलिस इन्सपेक्टर, कलक्टर और मजिष्ट्रेटका काम करते हैं। राजस्वके विषयमें वह राज्यके बड़े दीवान और शासनकार्यके सम्बन्धमें पेशकारके मातहत हैं। कोचीनराज अपनी प्रजाके सकल प्रकार दण्डमुण्ड करते हैं। एरनाकोलम् कोचीनकी राजधानी है। किन्तु राजा त्रिपुन्तोरा स्थानमें रहते हैं। इस राज्यका आय प्रायः १२२६४०) रु० है। १८८१ ई० को रविवर्माके पुत्र रामवर्मा राजा रहे। उन्होंने १८३५ को जन्म ग्रहण और १८६४ ई० को राज्यारोहण किया था। उन्हें १८७१ ई० को के० सी० एस० आई० उपाधि और सम्मानार्थ १७ तोपोंकी सलामी मिली। उनके मृत्यु पीछे १८८८ ई० को २३वीं जुलाईको वीर केरलवर्मा राज्याभिषिक्त हुवे। १८९५ ई० को वर्तमान राजा सर रामसिंह वर्मा गद्दी बैठे थे। १९०३ ई० को इन्हें जी० सी० एस० आई० उपाधि मिला। कोचीनकी लोकसंख्या आठलाखके ऊपर है।

कोचीनचीन (आनाम)—पूर्व उपद्वीपका पूर्व विभाग। मलयवासी इसको और भारतके कोचीनको भी 'कुचि' कहा करते हैं। फिर पूर्व उपद्वीपके कुचिको अलग करनेके लिये कुचिचीना कहा जाता है। ओलन्दाजों और अंगरेजोंने इसीसे कोचीन-चाइना नाम निकाला है। आनामवासी कुउचीं और चीनालोग किउचिङ्ग कहते हैं। खानहोया प्रदेशमें जहां हिउ नगर अवस्थित है, वह प्रदेश पहले इसी नामसे अभिहित होता था। ग्रीक भौगोलिक टलेमिने 'सिनहोया' नामक जिस देशको बात लिखी है उससे इसी स्थानका बोध होता है।

इसको पूर्वदिक्‌को समुद्र है। पूर्व कालको भारतका राज्य इसी समुद्र तक विस्तृत था। फिर महाभारतके समय कोचीनचीन किरातराज्यके अन्तर्गत रहा। आजकल भी यह प्रदेशका 'गङ्गाहीन भारत' या 'गङ्गाके बाहरका भारत' कहा जाता है। कोचीनचीन अक्षा० ८°८०' से २३° उ० और देशा० १०२° से १०९° पू०के मध्य अवस्थित है। इसका उत्तर दक्षिण दैर्घ्य ४९° कोस और पूर्व पश्चिम प्रस्थ कहीं १५० और कहो ५० कोस भी है। काम्बोजके दक्षिण भागका स्याम्पा नामक राज्य और चीन-समुद्रके कई द्वीप कोचीनचीनके अन्तर्भुक्त हैं। इसके उत्तर चीन राज्य, पूर्व टङ्किन राज्य तथा चीनसमुद्र, दक्षिण चीनसमुद्र और पश्चिम लेयस एवं श्यामराज्य लगता है। परन्तु असली कोचीनचीन अक्षा० ११° से १८° उ० पर्यन्त ही विस्तृत है।

समुद्र कूलके साथ साथ बराबर एक पर्वतश्रेणी इस देशमें चली गयी है। टङ्किन प्रदेशका उत्तरभाग समतल है। सङ्कका नदी इसके भीतरसे प्रवाहित हुई है। काम्बोज प्रदेशमें काम्बोड़िया नदी बहती है। मेकङ्ग या काम्बोड़िया नदी ही कोचीनचीनकी सबसे बड़ी नदी है। यह चीन देशके पर्वतोंसे निकल लेयस और केम्बोजके बीचसे प्रवाहित हो कई मुहानो पर चीन सागरमें गिरी है। इसकी लम्बाई ८०० कोस होगी। सेइगङ्ग या दोनाई नदीका मेकङ्गके साथ संश्रव लगा है। वह पूर्व दिक्‌को बहती है। उसका दैर्घ्य २०० कोस होगा। हिउ नदी असली कोचीनचीनके बीचसे निकली है। इसके पार्श्वमें उपत्यकाभूमिकी शोभा अति सुन्दर है।

काम्बोजकी आबहवा कितनी ही बङ्गाल-जैसी है। टङ्किनमें कभी सहसा गर्मी बढ़ आती, कभी गर्मीसे एकाएक सर्दी हो जाती है। खास कोचीन-चीनमें वर्षाकालको अत्यन्त वृष्टि होनेसे आश्विन कार्तिक मास वन्या (बाढ़) आ समस्त देश प्लावित कर देती है।

कोचीन-चीनमें धान्य यथेष्ट उपजता है। एतद्-

व्यतीत आलू, मटर, फूट, मकई, तम्बाकू, कपास, नील, चाय और ईख भी हुवा करती है। रेशमकी भी कोई कमी नहीं। अगुरु, आबनूस, नागकेश्वर, चन्दन, रंगके पेड़ आदि बहुविध काष्ठ कोचीन-चीनके पर्वतोंमें उत्पन्न होता है। निम्नभूमिमें ताड़ और बांस यथेष्ट लगता है। देशमें अनेक प्रकारके खनिज धातु मिलते हैं। परन्तु खानसे उन्हें निकालनेकी कोई बड़ी चेष्टा नहीं की जाती। टङ्किनमें सोना, चांदी, लोहा, तांबा और कोयला निकलता है। ग्राम्य पशुवोंके मध्य गाय, भैंस, सूवर, बकरी, बिल्ली और कुत्ते देख पड़ते हैं। हंस कबूतर सब जगह हैं।

जङ्गली जानवरोंमें बाघ, हाथी, चीता, भेड़िया, सूवर, गैंडा, बन्दर और लङ्गूर पर्वतों पर बहुत मिलते हैं। सांपों और रेंगनेवाले दूसरे कीड़ोंकी भी कोई कमी नहीं। मोर, चील, तीतर और छोटे तोते वगैरह अनेक प्रकारके पक्षी विद्यमान हैं। मछलियां भी बहुत देख पड़ती हैं।

अधिवासियोंकी आकृति मङ्गोलीय लोगोंसे कितनी ही मिलती है। यह प्रायः एक अक्षरकी बात करते हैं। इनमें सभी खर्वाकृति और बलिष्ठ होते हैं। चेहरे गोल, मुंह बड़े, होंठ मोटे और बाल काले रहते हैं। रङ्ग सुन्दर, लाल और पीलापन लिये होता है। साधारणतः लोग हंसमुख हैं। उच्च श्रेणीके व्यक्तियोंकी प्रकृति गम्भीर होती है। पुरुषोंकी अपेक्षा स्त्रियोंका रंग साफ रहता और देखनेमें भी ज्यादा अच्छा लगता है। स्त्रियों और पुरुषोंका परिधेय वस्त्र प्रायः एक ही प्रकारका होता है। सूती या रेशमी पायजामे पर एक एक बड़ा कुरता पहनते हैं। स्त्री और पुरुष दोनों बाल नहीं कटाते, वेणी बनाकर पीछे लगाते हैं। मर्द काली और औरतें आसमानी पगड़ी बांधती हैं। अनेक समय मत्थे पर रूमाल लपेट लेते हैं। सब लोग सुपारी खाते हैं। कितने ही तम्बाकू भी पीते हैं। पहले कोचीन-चीनके अधिवासी हिन्दू और बौद्धधर्मावलम्बी थे। कम्बोज देखो। चीनके समीपवर्ती होनेसे इन्होंने चीनका आचार व्यवहार और धर्म कितना ही अवलम्बन किया है। कनफुचि, ताओ और बौद्धधर्म ही यहां प्रचलित है। पूर्वपुरुषोंकी पूजा सभी किया करते हैं। कितनी ही विवेचनाके पीछे समाधिस्थान ठीक करना पड़ता है। इनको विश्वास है कि स्थानके निरूपण पर परिवारका सौभाग्य निर्भर करता है।

देशके लोगोंका अन्न ही प्रधान खाद्य है। लोनिया मछलीको बुकनी बना चटनी तैयार करते हैं। इसका नाम 'बालचियाम' है। यही अधिवासियोंका बड़ा उपादेय खाद्य है। चाय पीनेका बहुतोंको अभ्यास है। चावलसे एक प्रकारका मद्य बना करके पान करते हैं। साधारण लोग बांसोंके घरोंमें ही रहते हैं। बड़े बड़े लोगोंके मकान पक्के बने हैं।

स्त्रियां पुरुषोंके अधीन नहीं होतीं। वह निजमें अपना वाणिज्य और कृषिकार्य चलाती हैं। सन्तान सन्तति अधिक रहनेसे स्त्रीका गौरव भी बढ़ जाता है। दरिद्र और पालन करनेमें अक्षम रहनेसे लोग अपने लड़के बेच डालते हैं। घरके कर्ताकी सम्मति भिन्न किसीका विवाह नहीं होता। धनवान् विवाहित स्त्रीके अतिरिक्त दूसरी औरत भी रख सकते हैं। विवाहभङ्गकी व्यवस्था प्रचलित है। व्यभिचारके लिये विशेष दण्ड दिया जाता है, फिर भी अविवाहित स्त्रियोंके पक्षमें यह बड़े कलङ्ककी बात नहीं। रुपया परिशोध न कर सकने पर उत्तमर्ण अधमर्णकी सम्पत्ति, स्त्री और परिवारके दूसरे लोगोंको अटका सकता है।

टङ्किन और कोचीन-चीनमें एक ही जातिके लोग रहते हैं। श्याम और मलय जातिका भी आचार व्यवहार इनसे कितना ही मिलता है। यह त्वक्च्छेद करते हैं।

पार्वत्य प्रदेशमें असभ्य जातिका वास है। काम्बोजकी भाषा अलग है। पण्डितोंके बीच और अदालतमें चीना भाषा चलती है।

शासनकार्य कितना ही चीन राज्यके समान है। चीन देखो। राजाकी क्षमता यथेष्ट है, परन्तु उन्हें आईन मानना पड़ता है। राजाकी एक सभा है, जिसके सदस्य मान्दारीन या मन्त्री होते हैं। कर्मचारी फौजदारी या फौजी और दिवानी—दो भागोंमें विभक्त हैं। फौजी महकमेकी इज्जत ज्यादा है। इस देशकी

प्रथा है कि अपराधोका मुख भूमिको ओर करके उसे लेटाके दोनों पैर कुछ ऊंचे बांधके उस पर बांसकी मार देते हैं।

हुए वा हुया नगर कोचीनचीनकी राजधानी है। (ई० शताब्दीसे २१४ वर्ष पूर्व) चीनावोंने आनाम (अनम्) अधिकार किया था। अधिवासियोंने स्वाधीनता लाभके लिये क्रमागत चेष्टा करके १४२८ ई० को उसे पा लिया है। आज भी आनामके अधिपति चीनकी अधीनता स्वीकार करते हैं। किन्तु वह नाममात्र ही है। अष्टादश शताब्दीको फरासीसियोंने इस देशमें आकरके प्रभुत्व फैलाया और अपने अनुगत वियालङ्गको कोचीनचीनके सिंहासन पर बैठाया था। १७८७ ई० को फरासीसी राजा १६वें लुईके साथ एक सन्धि हुई। उसमें निर्दिष्ट हो गया कि फरासीसी राजा सैन्य दे साहाय्य करेंगे और वियालङ्ग फरासीसीयोंको राज्य दे देंगे। परन्तु फ्रान्सके गृहविवादसे यह बात न चल सकी।

१७९९ ई० को फरासीसीयोंके साहाय्यसे वियालङ्ग राजा हुये। १८०९ ई० को उन्होंने काम्बोज अधिकार किया था। १८१९ ई० को वियालङ्गका मृत्यु हुवा। मिशनरियोंने देशके बहुतसे लोगोंको ईसाई बना डाला। इस पर बहुतसे आदमी बिगड़ उठे और देशीय ईसाईयों और रोमन-काथलिक मिशनरियोंको वध करनेके लिये उनके गिरजा-घर और आश्रम आदि फूंक दिये। १८५८ ई० को प्रतिशोध लेनेको स्पेनीय और फरासीसी फौजने तुरान और सेईगङ्ग प्रभृति स्थान अधिकार किये।

१८६२ ई० को टुडक नामक राजाके साथ फरासीसीयोंकी एक सन्धि हुई थी। उसमें बियेनहोया, गियादिन और दिनतुयाङ्ग विभाग फरासीसीयोंको सौंपा गया। १८६७ ई० को इन सकल प्रदेशोंके फरासीसी गवर्नर आडमिराल ग्राण्डियेर विनलङ्ग चांदई और हातियान नामक विभाग अधिकार किया था। १८७४ ई० को फिर एक सन्धि हुई। उससे समुदाय देश फ्रान्सके कर्तृत्वमें पड़ा और टङ्किन फरासीसीयोंको दिया गया। चीनावोंने इस पर आपत्ति उठायी थी। परन्तु उसका कोई विशेष फल न निकला। हिउ नगर आजकल फरासीसी सेना द्वारा रक्षित है। १८८२ ई० को फिर फरासीसियोंने यहां फौज भेजी थी। परन्तु आज भी अनेक स्थानोंने उनकी वश्यता नहीं मानी है। १८८८ ई० को अपरेल मास फरासीसी मन्त्रिसभाने जो आदेश प्रचार किया था, उससे स्थिर हुवा यह सब राज्य एक गवर्नर जनरलके अधीन रहेगा। उनके नीचे दो रेसिडेण्ट जनरल काम करेंगे। एक आनाम और टङ्किनकी देख भाल रखेगा और हुए नगरमें रहेगा। दूसरा जो काम्बोजके लिये होगा, प्रोमनगरमें वास करेगा। सिवा इसके हानोई नगरमें एक प्रधान रेसिडेण्ट और कोचीनचीनका एक तत्त्वावधायक अवस्थिति करेगा। उसी समयसे आजतक फरासीसी कर्तृत्व चल रहा है।

राजा टुडकके मरने पर १८८९ ई०को ३०वीं जनवरीको तत्पुत्र बुनलान राजा हुये। उस समय इनका वयस दश वर्ष मात्र था। राजकार्य चलानेके लिये राजवंशीय होयाईडक पर भार डाला गया। इस राज्यमें प्रायः १२०० फरासीसी फौज है।

कोजागर (सं० पु०) को जागर्ति इति लक्ष्म्या उक्तिरत्र काले, पृषोदरादिवत् साधुः। आश्विन मासकी पूर्णिमा, सरदपूनो। इस दिन निशीथ समयको लक्ष्मी कहती हैं—"आज नारिकेल पान करके कौन जागता है? हम उसे सम्पत्ति प्रदान करेंगी।" इसीसे शरद्-पूर्णिमाको कोजागर कहते हैं। ब्रह्माण्डपुराणमें कोजागर विधान इस प्रकार निर्णीत हुवा है—आश्विन मासकी पूर्णिमाको निकुम्भ सिपाहियोंके साथ लड़ते लड़ते बालुकार्णवसे आकर उपस्थित होते हैं। अतएव इस दिनको गृहके निकटवर्ती सकल पथ परिष्कृत तथा सुशोभित और पुष्प, अर्घ्य, फल, मूल, अन्न, सर्षप आदि संग्रह करके गृह भूषित करना चाहिये। फिर कोजागरके दिन सभीको उपवास करके रहना उचित है। स्त्री, बालक, मूर्ख और वृद्ध क्षुधासे बहुत ही कातर होने पर देवतादिकी अर्चना करके खा सकते हैं। पुष्प, फल प्रभृति विविध उपहारसे द्वारकी ऊर्ध्व भित्तिको पूजना चाहिये। द्वारके उपान्तमें यव, घृत

और तण्डुल द्वारा हव्यवाहनकी पूजा की जाती है। इसी प्रकार यथोक्त विधानसे पूर्णेन्दु, स्कन्द, सभार्यरुद्र, नन्दीश्वरमुनि, गोमानके साथ सुरभि, छागवानके साथ हुताशन, उरभ्रवान सहित वरुण, गजवानके साथ विनायक और रेवन्तकी भी पूजा होती है। इसके पीछे तिलतण्डुल और कसरान्न (खिचड़ी) आदिसे निकुम्भकी यथासम्भव अर्चना कर्तव्य है।

लिङ्गपुराणमें लिखा है कि—आश्विन मासकी पूर्णिमाकी रातको अक्षक्रीड़ा करके जागरण, लक्ष्मीपूजा और इन्द्रकी भी पूजा करना चाहिये। नारियल और चिवड़ेसे पितृलोक तथा देवताकी अर्चना करते हैं। स्वयं नारियल चिवड़ा खाते और बन्धुवोंको भी वही खिलाना चाहिये। जिस दिनको प्रदोष और निशीथ उभयव्यापिनी पौर्णमासी आती, उसी दिन कोजागरकृत्य करना पड़ता है। पूर्वदिन निशीथव्यापिनी और पर दिन प्रदोषव्यापिनी होनेसे दूसरे दिन और पर दिन प्रदोष न मिलनेसे पूर्वदिन ही कोजागर कर्तव्य है।

(तिथितत्व)

कोट (सं० पु०) कुट भावे घञ्। १ कौटिल्य, टेढ़ापन। कुट्यते प्रतार्यते शत्रुर्यत्र, कुट आधारे घञ्। २ दुर्ग, किला। ३ कोढ़रोग, एक जिल्दी बीमारी। ४ गुवाक वृक्ष, सुपारीका पेड़।

कोट (अं० पु० = Coat) परिच्छदविशेष, पहननेका एक कपड़ा। इसे कुरते या कमीज पर पहनते और सामने कई बटन लगा रखते हैं।

"धारण करि कोट पतलून हैट हेड ऊपर।" (कालीचरण)

कोट—पञ्जाबके अटक जिलेकी फतहजङ्ग तहसीलका एक राज्य। इसका क्षेत्रफल ८८ वर्गमील है। घेवा लोग सिन्धु और सोहान नदियोंके बीच जङ्गली पहाड़ी देशमें बहुत दिनोंतक स्वाधीन रहे और नाम मात्रको उन्होंने सिखोंकी वश्यता मानी। १८३० ई०को घेवा सरदार राय मुहम्मदने हजारेके पागल मुसलमान-नेता सैयद अहमदके विरुद्ध रणजित्‌सिंहको बड़ा साहाय्य किया था। राज्यका आय ४४००) रु० है। यहां घोड़े बहुत पैदा किये जाते हैं।

कोट—बम्बई प्रदेशके कनाड़ा जिलेकी एक ब्राह्मण जाति। यह प्रधानतः होनावाड़, कुमता और सिरसी उपविभागोंमें मिलते हैं। इनकी संख्या काई ३८८ होगी। मङ्गलोरसे ६० मील कोटेश्वर ग्राम पर इनका नामकरण हुआ है। यह हवीगोंके साथ रोटी बेटीका व्यवहार रखते और उसे ही देवतायोंको पूजते हैं। कोट सुचतुर किसान हैं। यह अपने बालक कुछ दिनसे स्कूलोंमें भेजते और उन्नत होते समझ पड़ते हैं।

कोट-अरलू (हिं० पु०) मत्स्यविशेष, एक मछली। यह समुद्रमें रहती है।

कोटक (सं० पु०) जातिविशेष, घरामी। ब्रह्मवैवर्तके मतमें कुम्भकारीके गर्भ और अट्टालिकाकारके औरससे प्रथम कोटक लोग उत्पन्न हुये थे।

कोटकपूरा—पञ्जाब प्रदेशके फरीदकोट राज्यको कोटकपूरा तहसीलका सदर मुकाम। यह अक्षा० ३०° २५´ उ० और देशा० ७४° ५२´ पू०में फरीदकोट शहरसे ७ मील नार्थवेष्टर्न रेलवेको फीरोजपूर भटिण्डा शाखा और राजपूताना-मालवे रेलवे पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ८५१८ है। पहले यह एक गांव था। चौधरी कपूरसिंहने कोट-ईसा-खानके लोगोंको बसा इसे नगररूपमें परिणत किया। कपूरसिंहसे इस पर कोट-ईसा-खानके सरकारी सूबेदार चिढ़ गये और १७०८ ई० को उन्होंने इन्हें मार डाला। फिर यह चौधरी जोधसिंहको राजधानी बना, जिन्होंने १७६६ ई० को नगरके समीप एक दुर्ग निर्माण किया। परन्तु दूसरे ही साल पटियालाके राजा अमरसिंहसे लड़ते मारे गये। इसके बाद कोटकपूरा राजा रणजित् सिंहके हाथ लगा और १८४७ ई० को फिर फरीदकोट राज्यको सौंपा गया। यहां अनाजका बड़ा काम होता और अच्छा बाजार लगता है।

कोटगड़—मध्यप्रदेशका एक नगर। कोट और गड़ नामक दो स्वतन्त्र स्थानोंसे कोटगड़ नाम पड़ा है। यह बिलासपुरके बहुत ही निकट अवस्थित है। गड़ नामक स्थानमें एक चतुष्कोण दुर्ग है। वह २०।२२ हाथ ऊंची मृत्तिकाकी परिखा द्वारा वेष्टित है। पूर्व और पश्चिमको दो फाटक लगी हैं। पश्चिमी

फाटकको मेहराब अभीतक नहीं टूटी। मेहराब पर पुराने अक्षरोंमें क्या न क्या लिखा है। वह ई० दशम शताब्दीके अक्षरोंसे मिलते हैं। इससे मालूम पड़ता है पहले यह एक बड़ा स्थान था। कोई कहता है कि किलेको पांच सौ वर्ष पूर्व जयसिंह नामक एक स्थानीय सामन्तने निर्माण कराया था। किला बहुत छोटा है। परिखामें ही इसको अधिकांश भूमि आबद्ध हुई है। दुर्गके पार्श्वमें एक पहाड़ है। इसी पर्वतको उत्तर दिक्को कोट नामक स्थान पड़ता है।

कोटगड़ (कोटगुरु, गुरुकोट) पञ्जाब-प्रदेशका एक जिला और प्रधान गांव। यह शिमलासे २७ कोस उत्तरपूर्व शतद्रु नदीके तीर, भारतसे तिब्बत जानेकी राहमें पर्वत पर अवस्थित है। इस जिलेमें ४१ गांव लगते हैं। पर्वतसे शतद्रु पर्यन्त ढालू भूमि पर नानाविध शस्य उत्पन्न होता है। अधिकांश अधिवासी कुलू जातीय हैं। सामन्त लोग राजपूत होते हैं। यहां एक साधु रहते थे। उनका समाधिस्थान नानाविध पताकावोंसे शोभित है। कोटगड़में अन्यान्य देवदेवियोंके मन्दिर भी हैं। उनमें पहले पहले नरबलि चढ़ता था। अंगरेजोंकी अमलदारीमें यह बन्द हो गया है। परन्तु कई ग्रामोंमें आज भी बलिके लिये छागसंग्रह करते हैं। स्त्री विक्रयकी प्रथा चल रही है। कन्या उत्पन्न होते ही मार डाली जाती है। कहीं कहीं शिशुको भी जीते जी गाड़ देते हैं। १८४० ई० को इसी प्रकारकी चार घटनायें खुली थीं। विवाहके समय वरको ७) से २०) रु० तक दहेज देना पड़ता है। चार पांच भाई मिलकर एक कन्याको व्याह लेते हैं। एक व्यक्ति यदि रुपया संग्रह नहीं कर सकता, तो बहुतसे लोग चन्दा करके एक ही रमणीका पाणिग्रहण करते हैं। इस प्रकारके दृष्टान्त अंगरेजोंका अधिकार छोड़ने पर बहुत देख पड़ते हैं। यही, नहीं कि अर्थके अभावसे ऐसा किया जाता है। इस विवाहमें अधिक यत्न होनेका कारण यह है कि कई भ्रातावोंकी सम्पत्ति एकत्र रहती और कभी परस्पर विच्छेद नहीं पड़ता। पर्वतकी चूड़ा, गुहा, वन और प्रस्रवण मात्रमें एक एक अधिष्ठात्री देवताका आवास है। वहां पूजा और बलिदान आदि हुवा करता है। अधिवासी बलिदानके बाद पेड़की डाल लेकर नाचते हैं।

कोटगंधल (हिं० पु०) क्षुद्र वृक्षविशेष, एक छोटा पेड़। बङ्गाल, मध्यप्रदेश और मन्द्राजमें यह बहुत होता है। काष्ठ कठोर, चिक्कण तथा सुदृढ़ रहता और गृहनिर्माणादि कार्यमें लगता है।

कोटगार—एक जाति। बम्बई विभागके धारवाड़ प्रदेशमें ही यह देख पड़ते और ग्राम वा नगरसे बाहर रहते हैं। भाषा कर्णाटी है। कोटगार कृष्णवर्ण और बलिष्ठ होते हैं। सामान्य कुटीर ही इनके रहनेका स्थान है। यह नित्य कंगनीकी रोटी और मांड खाते हैं और भिक्षा करके जो उपार्जन कर लाते, उसीमें कष्टसे दिन बिताते हैं। परिधेय वस्त्र पर चद्दर और पगड़ीका व्यवहार है। विवाहके समय कोटगार पुरोहितको नहीं बुलाते। इन्द्रजाल विद्या और गणक पर इनको विशेष श्रद्धा रहती है। पीड़ा अथवा कोई अमङ्गल होनेसे कुटनाशगहल्लि नामक स्थानमें जा लिङ्गायत पुरोहितके निकट उपस्थित होते हैं। वह एक नीबू पढ़ कर खाने और थोड़ासा भस्म उठा कर गात्रमें लगानेको देते हैं। उससे पीड़ाका उपशम और दुःख दूर हो जाता है। विवाहके समय वर-कन्याको एक कंबल पर बैठाके उपस्थित कोटगार उच्चैःस्वरसे बोल उठते हैं—विवाह सम्पन्न हुवा। मृत्यु होनेसे शव भूमिमें गाड़ दिया जाता है।

कोटगिरि—मन्द्राज प्रादेशिक नीलगिरि जिलेके कूनूर तालूककी एक पहाड़ी जगह। यह अक्षा० ११° २६´ उ० देशा० ७६° ५२´ पू० में जटकामण्डसे १८ मील दूर पड़ता है। आबादी कोई ५१०० है। १८३० ई० को इसकी स्थापना हुई थी।

कोटचक्र (सं० क्ली०) कोटस्य चक्रम्, ६-तत्। दुर्गका शुभाशुभ जाननेके लिये अष्टविध चक्र।

(नरपतिजयचर्या) चक्र देखो।

कोटचांदपुर—बङ्गाल प्रान्तीय यशोर जिलेके झेंदिया उपविभागका एक नगर। यह अक्षा० २३° २५´ उ० और देशा० ८९° १´ पू० में कोबदक नदीके वाम तट पर पड़ता है। लोकसंख्या ८०६५ है। यहां चीनीका

बड़ा कारबार और कारखाना है। १८८६ ई० को यहां म्युनिसपालिटी हुई।

कोटज (सं० पु०) कुटजवृक्ष, कुरैया, कुरची।

कोटड़ा—बम्बईकी काठियावाड़ पोलिटिकल एजेन्सीका एक छोटा राज्य। यह अक्षा० २१° ५४´ तथा २२° ४´ उ० और देशा० ७०° ५१´ एवं ७१° ८´ पू० बीच अवस्थित है। इसकी आबादी ८८३५ और आमदनी ८१५००) रु० है। कोटड़ा काठियावाड़में चौथे दरजे-की रियासत गिनी जाती है। गोंडलके कुम्भोजीके लड़के सांगोजीने इसे स्थापन किया था। उनके पौत्रों जसोजी और सुरतानजीने १७५० ई०को कोठियोंसे कोटड़ा जीत लिया और अरडोईसे अपनी राजधानीको उठा यहां स्थापन कर दिया।

कोटद्वार—युक्तप्रदेशके गढ़वाल जिलेका एक नगर। यह अक्षा० २९° ४५´ उ० और देशा० ७८° ३२´ पू० में खोह नदी पर पहाड़ियोंके नीचे बसा है। आबादी लगभग १०२९ होगी। कोटद्वार अपने जिलेका सबसे बड़ा बाजार है। यहांसे लोग सूती कपड़ा, शक्कर, नमक, रसोईके बर्तन और दूसरी चीजें खरीद ले जाते हैं। तिब्बती व्यापारका केन्द्रभी कोटद्वार ही है। भोटिये सोहागा बेचने और दाल, शक्कर, तम्बाकू और कपड़ा खरीदने आते जाते हैं। हिन्दुस्थानकी जङ्गली पैदावार, सरसों, लाल मिर्च और हल्दीकी रफ़तनी होती है। यहां थाना और शफाखाना बना है।

कोट पूतली—राजपूताना जयपुर राज्यकी तोड़ावाटी निज़ामतका एक परगना और उसी परगनेका प्रधान नगर। यह अक्षा० २७° ४२´ उ० और देशा० ७६° १२´ पू० में जयपुर शहरसे प्रायः ६० मील उत्तरपूर्व और अलवर सीमाकी साहबी नदीके पास अवस्थित है। खेतरीके राजाका यहां अधिकार है। आबादी कोई ८४३९ होगी। कोट पूतलीमें एक किला बना है। पहले पहल १८०३ ई० को लार्ड लेकने खेतड़ीके राजा अभय-सिंहको २०००) रु० पर इसका इस्तमरारी पट्टा उन-की उस सहायताके लिये लिखा था, जो उन्होंने चम्बल नदी पर सेंधियाकी फौजसे अंगरेजोंका युद्ध होते समय दी थी। १८०६ ई० को कोट पूतली खेतड़ीके राजाने माफीके तौरपर हासिल की। १८५७ ई० को जयपुर-की सेनाने इसे अधिकार किया था, परन्तु अंगरेजोंने खेतड़ीके राजाको वापस दिला दी। इसका क्षेत्रफल २९० वर्गमील और वार्षिक आय १ लाख ४ हजार रुपया है। कोट पूतली नगरसे ८ मील दक्षिण-पश्चिम मैंसलानामें सङ्गमूसा निकलता है।

कोटभरिया (हिं० स्त्री०) नौकाके प्रान्तभागमें ऊपरको लगी हुई लकड़ी।

कोटमाले—सिंहलद्वीप मध्यवर्ती रामबोदीके निकट एक सुन्दर उपत्यका। इस पर एक अनोखा उत्स है। स्थानीय लोगोंको विश्वास है कि उसके जलमें स्नान करनेसे कुमारी तीन मासके मध्य पतिको पाती और सौभाग्यशालिनी तथा बहुपुत्रवती हो जाती है।

कोटर (सं० पु०-क्लो०) कोटं कौटिल्यं राति, कोट-रा-क। १ वृक्षगह्वर, पेड़की खोखली जगह। इसका संस्कृत पर्याय—निष्कुह, निर्गूढ़, प्रान्तर और तरु-विवर है। (भारत, आश्व. ४७ अ०)

२ दुर्गको रक्षा करनेके लिये उसकी चारो ओर लगाया हुवा जंगल। (त्रि०) कोटोऽस्ति अस्य, कोट अस्त्यर्थे र। ३ दुर्गसन्निहित, किलेसे लगा हुवा।

कोटरङ्ग (कोत्रङ्ग)—बङ्गाल-प्रान्तीय हुगली जिलेके श्रीरामपुर सबडिवीजनका एक नगर। यह अक्षा० २२° ४१´ उ० और देशा० ८८° २१´ पू० में भागीरथीके दक्षिण तटपर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ५८४४ है। यहां ईंट, सुर्खी और खपड़ा बहुत बनता और रस्सी और डोरी भी तैयार होती है। १८६९ ई० को यहां म्युनिसिपालिटी पड़ी।

कोटरपुष्पी (सं० स्त्री०) वृद्धदारकलता, एक बड़ी बेल।

कोटरा (सं० स्त्री०) बाणासुरकी माता।

कोटरा—राजपूताना उदयपुर राज्यकी छावनी। यह अक्षा० २४° २२´ उ० और देशा० ७३° ११´ पू० में उदयपुर नगरसे कोई ३८ मील दक्षिण-पश्चिम और राजपूताना मालवा-रेलवेके रोहरा ष्टेशनसे ३४ मील दक्षिणपूर्व अवस्थित है। मेवाड़ भील फौजकी २ कम्पनियां यहां रहती हैं। कोटरा बाकल और

साबरमतीके सङ्गम पर बसा और घने पेड़ोंके पहाड़ोंसे घिरा है। कोटरा जिलेमें २४२ गांव पड़ते, जिनमें १६७३८ लोग रहते हैं। यहां भीलोंकी संख्या अधिक है। उक्त ग्रामोंमें जड़ा, ओवना और पनरवाके ३ ग्रासिया सरदार राजत्व करते हैं।

कोटरादि (सं० पु०) गणपाठोक्त एक गण। कोटर, मिश्रक, सिध्रक, पुरग, शारिक कई शब्द कोटरादि गणके अन्तर्गत हैं। वनशब्द पीछे रहनेसे कोटरादि गणका स्वर दीर्घ हो जाता है।

कोटरावण (सं० क्ली०) कोटरान्वितानां तरूणां वनम्, ६-तत्। पूर्वस्वरदीर्घः णत्वम्। वनं पुरगामिश्रकासिध्रकाशारिका-कोटराग्रेभ्यः। पा ८।४।४। कोटरविशिष्टवृक्षयुक्त वन, किलेके दरख्तोंका जंगल।

कोटरि (कोतरी)—सिन्धुप्रदेशके कराची जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० २४° ५८´ एवं २६° २२´ उ० और देशा० ६७° ५५´ तथा ६८° २९´ के मध्य अवस्थित है। इसका परिमाण ६८४ वर्गमील है। इसमें ३ तप्पे (परगने) और २६ गांव लगते हैं। (दो-तीन गांवोंका एक तप्पा होता है। लोकसंख्या ७६१७ है।

२ कोटरि तालुकका प्रधान नगर। यह अक्षा० २५° २२´ उ० और देशा० ६८° २२´ पू० पर सिन्धु नदकी दक्षिण दिक्‌को हैदराबादके अन्तर्गत गिदुबन्दरके अपर पार अवस्थित है। समय समय पर वारण पर्वतसे जलराशि आकर नगर प्लावित करता है। इसीसे कोटरिको उत्तर दिक्‌को नाली बना अतिरिक्त जल निकालनेका प्रबंध किया गया है। नदीको राह ष्टीमर, नौका प्रभृति अनायास यातायात करते हैं। रेलवे भी यहां निकली है। आईन-अकबरीमें इसे मालवे सूबेके अन्तर्गत कहा है। उस समय ९ महल इसमें लगते थे।

कोटरी (सं० स्त्री०) कोटं कौटिल्यं रोणाति गच्छति, री गतौ क्विप्। १ विवस्त्र स्त्री, नंगी औरत। कोटं कुटिलस्वभावं राक्षसादिकं रीणाति हन्ति कोटरी-क्विप्। २ चण्डिका। ३ दुर्गा।

कोटवक्कल—बम्बईके कनाड़ा जिलेकी एक जाति। यह सह्याद्रि पर सिद्दापुर और सिरसीमें मिलते हैं। इनकी संख्या प्रायः १८२२ है। यह सुपारियोंको खजूरकी पत्तियोंके थैलोंमें भर कर उनको रक्षा करते हैं। इनकी मातृभाषा कनाड़ी है। यह शराब नहीं पीते और बागों और खेतोंमें मजदूरी करते हैं। इनमें विधवा-विवाह और बहुविवाहका निषेध है।

कोटवी (सं० स्त्री०) नग्न स्त्री, नंगी औरत।

कोटा—राजपूतानेके अन्तर्गत एक देशीय राज्य। यह अक्षा० २४° ७´ एवं २५° ५१´ उ० और देशा० ७५° ३७ तथा ७७° २६´ पू० के मध्य अवस्थित है। कोटा हरावतीका कियदंश है।

इसका प्रधान नगर कोटा अक्षा० २५° ११ उ० और देशा० ७५° ५१´ पू० में चम्बल नदीके दक्षिण कूलपर अवस्थित है।

कोटा राज्यके उत्तर जयपुर एवं अलीगढ़, उत्तर-पश्चिम चम्बल नदी, पूर्व ग्वालियर राज्य, टोंक और झालावाड़का कुछ अंश दक्षिण खिलचिपुर एवं राजगढ़, पश्चिम बुन्दी एवं उदयपुरराज्य और दक्षिण-पश्चिम रामपुर-भानपुर, झालावाड़ और आगरा है। परिमाण ५६८४ वर्गमील लगता है। लोकसंख्या लगभग ५४४८७९ है। यहां उर्दू और हिन्दी भाषा प्रचलित है।

राव देवसिंहने (१३४२ ई०) मीना लोगोंसे बुन्द उपत्यका ग्रहण करके बूंदी राज्य स्थापन किया था। फिर उनके पुत्र समरसिंह राजा हुवे। समरसिंहके तीसरे लड़के जैतसिंह किसी दिन केतुन प्रदेशको यात्रा करते समय राहके बीच गिरिसङ्कटवासी भीलोंके प्रदेशमें जा पहुंचे। यहां भीलोंको आक्रमण करके उन्होंने बहिर्दुर्ग अधिकार किया था। कोटिया नामक भीलोंको एक श्रेणीसे इस स्थानका नाम कोटा पड़ा है। जैतसिंहने अपना विजयचिन्ह स्थायी बनानेके लिये रणदेव भैरवके उद्देशसे पत्थरकी एक सुबृहत् हस्ती-मूर्तिको स्थापन किया। वही प्रस्तरमय मूर्ति कोटा राजधानीके चार-झोपड़ा नामक स्थानके दुर्गतोरणके निकट विराजित है।

जैतसिंहके बेटे सुरजनदेवने हो भीलोंके इस

प्रदेशका नाम कोटा रखा और राजधानीके चारो पार्श्व प्राकार बनवा दिया था। सुरजनके पुत्र धीरदेवने यहां १२ बड़े बड़े सरोवर खुदाये। उनमें किशोरसागर नामसे परिचित वर्तमान सरोवर प्रधान है। धीरसिंहके लड़के कण्डूल और तत्पुत्र भोनङ्ग थे। भोनङ्गसिंहके समय धाकुड़ और कासिरखान् नामक दो पठानोंने आकर कोटा आक्रमण किया। भोनङ्ग अफीमके नशेमें हमेशा चूर रहते थे, इसीसे राज्यकी रक्षा कर न सके। अन्तमें वह बूंदी राज्यको निर्वासित हुवे। उनकी वीररमणीने ससैन्य केतुन प्रदेश जाकर आश्रय लिया था। थोड़े दिन पीछे भोनङ्गका नशा छट गया। उन्होंने अपनी पत्नीको सानुनय कहला भेजा था कि अब हम नशा न लेंगे। उस समय वीरबालाने पतिको समादरसे ग्रहण किया। परन्तु उन्होंने देखा कि पठानोंके हाथसे कोटा उद्धार करनेके लिये हमारे पास यथेष्ट सैन्यबल नहीं, फिर भी किसी न किसी प्रकार राज्य उद्धार करके स्वामीको सिंहासन पर बैठाना पड़ेगा। राजपूतबालाने नूतन उपाय स्थिर करके कासिरखान्‌को कहला भेजा था कि कोटा राज्यकी पूर्वतन अधीश्वरी राजपूत-महिलावोंको लेकर आपके साथ होली खेलेंगी। पठान वीरोंका मन पिघल उठा। उन्होंने परम आनन्दसे भोनङ्गमहिषीको आह्वान किया था। इधर राजपूतबाला तीन सौहर जातीय सुश्री युवकोंको स्त्रीवेशमें सजा और अपने साथ लगा कोटा राजधानी पहुंचीं। होली होने लगी। स्त्रीवेशधारी भोनङ्ग कासिर खान्‌के मस्तक पर अबीर लगाने चले थे। उन्होंने अबीर लगवानेके लिये जैसे ही अपना शिर झुकाया, भोनङ्गने घाघरेसे तलवार निकाल उसके दो टुकड़े कर डाले। दूसरे राजपूतके युवकोंने भी भोनङ्गकी भांति किया था। अल्प समय मध्य ही रमणीके कौशलसे कोटा राज्यका पुनरुद्धार हो गया। भोनङ्गके मरने पीछे उनके पुत्र डुंगरसिंह अधिपति हुवे। इसी समय राव सूर्यमल्लने डूंगरको शासन करके कोटा राज्य बूंदीमें मिला लिया। (बूंदी देखो।)

कुछ दिनों कोटा बूंदीके अधीन रहा। फिर १६३४ संवत् (१५७९ ई०) को बूंदीके राजा रावरत्न, मधुसिंह और हरिसिंह नामक दो पुत्रोंको साथ लेकर बुरहानपुरके युद्धमें दिल्लीश्वरका साहाय्य करने गये थे। इस लड़ाईमें पितापुत्रके असीम वीरत्वसे मुग्ध हो बादशाहने रावरत्नको बुरहानपुरकी सूबेदारी और उनके दूसरे बेटे मधुसिंहको वर्तमान कोटा राज्यकी सनद दी। इसी समय हरवती राज्य दो हिस्सोंमें बंट गया।* पहले कोटाराज्य अधिक विस्तृत न था। परन्तु चतुर्दशवर्षीय वीर मधुसिंहके गद्दी पर बैठनेसे इसकी सीमा कितनी ही बढ़ गयी। पर पूर्व गोंड जातिके अधीन मङ्गरोली तथा राठोर राजपूतोंके नाहरगढ़, उत्तर चम्बल नदी तीरवर्ती सुलतानपुर और दक्षिणको गागरों एवं घाटोली तक चला गया है। इसके बीच ३६० नगर और विस्तर उर्वरा भूमि थी। राजा मधुसिंहके मरनेसे कुछ पहले मालव और हरवतीके सीमान्त पर्यन्त उनका अधीनस्थ हो गया। उन्होंने १६३१ ई० को पांच उपयुक्त पुत्र छोड़ इहलोक परित्याग किया था। तत्पश्चात् उनके ज्येष्ठ पुत्र मुकुन्दसिंहको कोटाके महाराव और दूसरे चार बेटोंको प्रधान सामन्तका पद मिला। मालव और हरवतीका मध्यवर्ती मुकुन्दद्वार नामक प्रसिद्ध गिरिपथ राजा मुकुन्दसिंहने ही निर्माण कराया था। इसी राहसे १८०४ ई० को अंगरेज सेनानायक मनसन साहब रण छोड़ कर ससैन्य भाग निकले।

जब दुर्वृत्त औरङ्गजेबने पितृहत्याका सङ्कल्प किया, राजा मुकुन्दसिंहने अनुजोंके साथ जी तोड़ कर शाहजहान्‌का पक्ष लिया था। इसीसे १६५८ ई० को उज्जयिनीके निकटवर्ती क्षेत्रमें औरङ्गजेबके विपक्ष लड़ते समय इन्होंने अपना प्राण विसर्जन कर दिया। फिर मुकुन्दके पुत्र जगत्‌सिंहने राजा हो दिल्लीश्वरके निकट दो हजार मनसबदारका पद पाया था। १६७० ई० को राजा जगत्‌सिंहका मृत्यु हुवा। उनके पुत्र सन्तानादि न रहनेसे राजा मधुसिंहके पौत्र कनीरामके पुत्र पायमसिंहको राज्य मिला था। किन्तु उन्हें पृष्ठ

* राजस्थानके इतिहासलेखक टाड साहबने लिखा है कि जहांगीरने मधुसिंहको कोटा राज्य दिया। परन्तु उस समय दिल्लीके सिंहासन पर अकबर बैठे थे।

कार्यों के कारण राज्यच्युत करके पञ्चायतने उनके पैतृक सामन्तराज्य कोयल पहुंचा दिया। वहां आज भी इनके वंशधर रहते हैं।

पायमसिंहके पीछे राजा मधुसिंहके प्रथम पुत्र वीरवर किशोरसिंह राजसिंहासनमें अभिषिक्त हुये। वह सम्राट् औरङ्गजेबको ओरसे दाक्षिणात्यमें मराठोंसे बड़े जोरों लड़े थे। उनकी देहमें अस्त्राघातके ५० चिह्न रहे। वह १७४२ संवत्को आर्कटगढ़के अधिकारकाल मारे गये। फिर किशोरसिंहके दूसरे बेटे रामसिंह गद्दी बैठे। पहले बड़े बेटे विष्णुसिंहके ही राजा होनेकी बात थी। परन्तु अपने पिताके साथ युद्ध करनेको न जानेके कारण वह राजपदसे वञ्चित हुये।

राजा रामसिंहके मनमें एक बड़ी ही आशा थी, कि हम बूंदीके राजाको शासन करेंगे। किन्तु वह कृतकार्य हो न सके। उनके अकाल कालग्रासमें पड़नेसे भीमसिंह राजा हुये थे। यह अतिशय चतुर और बुद्धिमान रहे। उस समय फरुखसियार दिल्लीके सम्राट् और दो सैयद राज्यके सर्वमय कर्ता थे। राजा भीमसिंह उन्हीं सैयदोंका पक्ष अवलम्बन करके पांच हजारी मनसबदार बन गये। इसी समय कोटा प्रथम श्रेणीका राज्य समझा गया। राजा भीमसिंहने बूंदीपति बुद्धसिंहके प्राणनाशकी चेष्टा लगायी थी। पीछे इन्होंने बूंदीके राजाका नकारा और सुप्रसिद्ध रणशङ्ख लूट लिया और दुर्वृत्त सैयदोंके साहाय्यकारी हो उनसे कोटासे अहीरवा तक समग्र पारिपात्र प्रदेशका शासनपत्र ग्रहण किया। हरवती राज्यकी दक्षिणसीमामें चक्रसेन नामक भीलोंके एक राजा पुरुषानुक्रम पर स्वाधीन भावसे राजत्व करते थे। राजा भीमसिंहने अकस्मात् उन्हें आक्रमण करके भील वंशको ध्वंस कर डाला।

दाक्षिणात्यमें निजाम राज्यके प्रतिष्ठाता खिजर खान् (पीछे निजाम-उल्-मुल्क) जब दिल्लीको अधीनता न मान दाक्षिणात्यके अभिमुख चले, भीमसिंह और नरवरके राजा गजसिंहको उन्हें रोक रखनेका आदेश मिला। उसी युद्धमें (१७२० ई०) गोलेकी चोटसे नरवरके राजा गजसिंह और भीमसिंह निहत हुये। हरजातिकी आदि वासभूमि गोलकुण्ड हैदराबादके अधीन हो गया।

राजा भीमसिंहके अर्जुन, श्याम और दुर्जनशाल तीन पुत्र थे। प्रथम अर्जुनसिंहको ही कोटाका "महाराव" पद मिला, परन्तु ४ वर्ष पीछे उनका मृत्यु होनेसे राजसिंहासनके लिये श्यामसिंह और दुर्जनशाल उभय भ्रातावोंमें घोरतर युद्ध हुवा। इस युद्धमें श्यामसिंह मारे गये। १७२४ ई० को दुर्जनशाल निर्विघ्न कोटाके सिंहासन पर बैठे थे। उन्हें दिल्लीके बादशाहने खिलअत दी और उन्हींके अनुरोधसे सम्राट् मुहम्मद शाहने आदेश प्रचार किया—हरजाति यमुनाके तीर जहां जहां रहती है, कोई मुसलमान अब गोहत्या कर न सकेगा। १७३९ ई०को हरजातिसे मराठे मिल गये। किन्तु अम्बरराज ईश्वरीसिंहने वह मित्रतामूल विच्छिन्न करके १७४४ ई० को महाराष्ट्र-नेता और जाटोंके स्वामी सूर्यमल्लके साहाय्यसे कोटा राज्य आक्रमण किया था। इस समय कोटाके सेनापति झालाजातीय वीर हिम्मतसिंहके वीरत्व और कौशलसे ईश्वरीसिंह परास्त हुवे और पेशवा बाजीराव भी सन्धिके सूत्रमें बंध गये। इसी सूत्रमें पेशवा बाजीरावने नाहरगढ़ नामक दुर्ग जय करके कोटाके राजा दुर्जनशालको सौंपा था। राजा दुर्जनशालने पैतृक विवाद विसंवाद भूल होलकरके साहाय्यसे बुधसिंहके पुत्र उम्मेदसिंहको बूंदी राज्यमें अभिषिक्त किया। इस उपलक्षमें उम्मेदसिंह और राजा दुर्जनशालको भी होलकरका करद होना पड़ा। १७५७ ई० को राजा दुर्जनशालका मृत्यु हुवा। उनके राजत्व कालमें मृगया-सहचरी राजपूत-महिलावोंने बन्दूक चलाना सीखा था।

कोटाके पूर्वराज रामसिंहके ज्येष्ठ पुत्र विष्णुसिंहके छत्रशाल नामक एक प्रपौत्र थे। दुर्जनने इन्हीं छत्रशालको गोद लिया। दुर्जनशालके मृत्यु पीछे हिम्मतसिंहके यत्नसे छत्रशालके जन्मदाता अजितसिंह ही प्रथम अभिषिक्त हुवे। ढाई वर्ष पीछे वृद्ध अजितसिंहके मरने पर छत्रशालने सिंहासन आरोहण किया था। १७६१ ई० को अम्बरपति मानसिंह असंख्य सैन्य ले कर कोटाराज्य पर चढ़ आये। उस समय हिम्मतसिंह

जीते न थे। उनके भतीजे फौजदार जालिमसिंहके अद्भुत कौशलसे कोटाराज्यका मुष्टिमेय हर-सैन्य अम्बर-पतिके असंख्य सैन्यको विध्वस्त करनेमें समर्थ हुवा। अल्पकाल पीछे ही छत्रशालने इहलोक छोड़ा था। १७६६ ई० को उनके मध्यम सहोदर गुमानसिंह गद्दी बैठे। इस समय कोटाराज्यके उद्धारकर्ता राजनीतिज्ञ जालिमसिंह पर सकल प्रभुत्व रहा। यह गुमान-सिंहको अच्छा न लगा। उन्होंने जालिमसिंहको खर्व करनेके लिये फौजदारका पद और जालिमसिंहका अधिकृत नन्दता प्रदेश उनके मातुल भूपतिसिंहको प्रदान किया था। जालिमसिंह अपमान और क्षोभसे मेवाड़ चले गये। महाराणाने उन असाधारण योद्धा और राजनीतिज्ञको सन्तुष्ट हो "राजराणा" उपाधि दिया था। मेवाड़ देखो। थोड़े दिन बाद महाराष्ट्र-समरमें आहत हो जालिम फिर कोटा लौट आये। इस बार राजा गुमानसिंहने अपना अन्याय आचरण समझ कर जालिमको फिर पूर्व पदमें नियुक्त किया था। १७७१ ई० को उन्होंने अपने १० वर्षके पुत्र उम्मेदसिंहको जालिमकी गोदमें रखके इहलोक छोड़ दिया। उम्मेद-सिंह राजा और जालिमसिंह बालक राजाके अभि-भावक हुये। जालिमकी कूटराजनीतिसे नरवर आदि कई राज्य कोटामें मिले थे। जालिमसिंह राज्यके प्रकृत मित्र थे, तो भी उनके अभ्युदयसे प्रधान प्रधान सामन्तोंको ईर्ष्या लगी। विपक्ष दलने जालिमके प्राण लेनेको १८ बार षड़यन्त्र लगाया था, परन्तु सौभाग्य क्रमसे उनका कोई अनिष्ट न हुवा। सामन्त लोग साजिश करके कुछ बना न सके। परन्तु इसी समय राजाके अन्तःपुरमें भी महिलावोंके बीच घोर षड़यन्त्र चलता था। किसी दिन कनिष्ठ राजकुमारकी माताने जालिमसिंहको अन्तःपुरमें आह्वान किया। वह जाकर रानीके पार्श्ववर्ती कक्षमें बैठे ही थे, कि हठात् कई एक राजपूत रमणियोंने हाथमें नङ्गी तलवारें लिये उनको आ घेरा। उन्होंने निश्चय कर लिया था कि जालिमसिंहसे गूढ़ राजनीतिक बातें सुन कर उन्हें मार डालेंगी। जालिमसिंह जीनेकी आशा छोड़ एका एक प्रश्नका उत्तर देने लगे। इसी समय एक एक महारानीकी अति वत्सला प्रधाना सहचरीने पहुंच कर उक्त दारुण विपद्से छोड़ा दिया।

उस समय जालिमसिंह शासनकर्ता और विधान-कर्ता, प्रकृत प्रस्तावमें राज्यके अधीश्वर भी कहा सकते थे। राजा उम्मेदसिंह उनके हाथके खिलौने हो रहे। वह ऐसा उच्चपद पाने पर भी अपने दुःसमयके उपकारी मेवाड़के महाराणाको भूल न सके थे। जालिमसिंह कोटाराज्यका स्वार्थत्याग करके मेवाड़को भलाई करनेमें विशेष तत्पर थे। उन्होंने राजनीतिक उच्चा-कांक्षा पूरी करनेमें कोटाराज्यका सर्वनाश किया और अतिरिक्त कर लगानेमें किसानोंको क्रतदास बना दिया। थोड़े दिनों पीछे उनकी आंखें खुलीं। वह राजप्रासाद छोड़ कोटाराज्यके दक्षिणप्रान्त पर एक दुर्भेद्य स्थानमें जाकर रहने लगे। यहां जालिम-सिंहने देशी और अंगरेजी प्रणालीसे एक एक नयी फौज बनायी थी। फिर उन्होंने करसंग्राहक पटे-लोंको पूर्व क्षमता घटा उन्हें सामान्य आय पर नियुक्त किया और अपने आप नाना स्थानोंमें घूम फिर प्रत्येक गांवकी चकबन्दी करायी। उस समय नये पटेल रखनेका आदेश निकलनेसे पहलेके पटे-लोंने अपना अपना पद पानेकी आशासे प्रायः १० लाख रुपया भेंट दिया था। जालिमसिंहने सब पटेलोंमें चार शिक्षित और चतुर पटेलोंको अपने पास रखा और एक समिति बनाके उन्हें सदस्य पद पर वरण किया। राजस्व, विचार और शान्तिरक्षाका काम उनको सौंपा गया। इधर नये पटेल नाना प्रकार किसानोंका मटियामेट करने लगे। उनके अत्याचार करने और उत्कोच लेनेकी बात जालिमसिंहके कानमें पड़ी थी। उन्होंने १८११ ई० को किसी दिन सब पटेलोंको कैदमें डाल दिया। विचारके पीछे उन्हें कड़ा जुर्माना हुवा। केवल एक व्यक्ति सात लाख रुपया स्थानान्तर कर सका था।

इधर राजराणाने देखा कि राजभाण्डार भरता तो था, परन्तु प्रजाका बड़ा अनिष्ट होता था। उस

समय सुचतुर जालिमसिंह कोटाराज्यमें जहां जितनी जंगली जमीन पड़ी थी, खेती कराने लगे। थोड़े दिनोंमें कोटाराज्य धनाजसे भर गया। कर्नल टाडने लिखा है कि १८२१ ई० को जालिमसिंहके अपने ही खेतोंमें ४ हजार हल चलते और उसमें १६ हजार बैल लगते थे।

अन्तको जालिमने नियम निकाला—जो विधवा फिरसे विवाह करेगी, उसको कर देना पड़ेगा। भीख मांग कर रुपया कमानेवाला संन्यासी भी कर देनेको वाध्य था। परन्तु उनके पुत्र माधवसिंहने यह जघन्य कर उठा दिया।

बहुतसे लोग कह सकते हैं, कोटाराज्यके उद्धारकर्ता जालिमसिंह क्यों ऐसा कड़ा नियम लगा प्रजावर्गका सर्वनाश करते थे। अवश्य इसका कारण था। उन्होंने राज्यका भार पाकर देखा-'राजाका धनागार शून्य था, उन्हें ३२ लाख रुपया देना था। वैदेशिक आक्रमणसे राज्य बचानेको वैसे सैन्य सामन्त भी न रहे, बहुतसे दुर्ग टूटे थे।' इसीसे उन्हें बहुतसा रुपया खींच करके दुर्ग सुधराने, चार हजार सवारोंकी जगह बीस हजार सीखे सिपाही रखने और १०० तोपें इकट्ठा करना पड़ी।

१८०३।४ ई० को जालिमसिंहके साथ वृटिश गवर्नमेण्टका सीधा सम्बन्ध हो गया। इसी समय जनरल मनसन एक दल अंगरेजी फौजके साथ होलकर पर चढ़ चले। कोटाराज्यके बीचसे जब वह निकले, जालिमसिंहने उन्हें खाने पीनेकी चीजें और नौकर चाकर दे विशेष साहाय्य पहुंचाया था। सेनापति मनसनके होलकरसे हार कर पीठ देखाने पर उन्होंने इन विगड़ कोटाराज्य आक्रमणका उद्योग किया। परन्तु सुचतुर जालिमके कौशलसे विना रक्तपात उन्हें अपने देश लौट जाना पड़ा। इनके साथ रह कर महाराव उम्मेदसिंह भी अनेक गुण पा गये। वह एक अच्छे सवार, बन्दूकका सच्चा निशाना लगानेवाले और खासे शिकारी थे। वयोवृद्धिके अनुसार उनका धर्मानुराग भी बढ़ गया। इसी धर्मानुरागके वशवर्ती हो वह पितृनियोजित जालिमसिंहका समधिक सम्मान करते थे। उन्होंने जालिमसे विना पूछे कभी कोई काम नहीं किया। जालिमसिंह भी बड़े राजभक्त थे।

इसी समय अंगरेजोंसे पिण्डारियोंकी घमासान लड़ाई हुई। जालिमसिंहने इस युद्धमें अंगरेज गवर्नमेण्टको यथेष्ट साहाय्य दिया था।

१८१७ ई० में २६ दिसम्बरको कोटाराज्यके साथ अंगरेजोंकी एक सन्धि हुई। इस सन्धिके अनुसार वृटिश गवर्नमेण्टने कोटाके राजाको सदाके लिये मित्रराज जैसा मान लिया और उन्हें वंशानुक्रममें शासनकी पूर्ण क्षमता मिल गयी। सन्धिपत्रमें यह भी लिखा है कि कोटाराज्यमें अंगरेजी दीवानी और फौजदारी कभी न चलेगी। दूसरे वर्ष २० फरवरीको फिर एक सन्धि की गयी। उसके अनुसार जालिमसिंह और उनके ज्येष्ठ पुत्र आदि क्रमसे वंशधरोंको कोटाराज्यके शासनकी क्षमता प्रदत्त हुई।

१८१९ ई० को महाराव उम्मेदसिंहने परलोक गमन किया था। उनके किशोरसिंह, विष्णुसिंह और पृथ्वीसिंह—तीन पुत्र रहे।

राजराणा जालिमसिंहके भी माधवसिंह और गोवर्धनदास—दो पुत्र थे। जालिमसिंहने माधवसिंहको सेनापति और गोवर्धनको कृषिविभागके 'प्रधान' पद पर नियुक्त किया।

महाराव उम्मेदसिंहके मरने पर कुमार पृथ्वीसिंह और गोवर्धनदासने इस बातकी विशेष चेष्टा की, कि जालिमको वंशपरम्परामें राज्यशासनकी क्षमता न रहे। महारावके मृत्युका संवाद पाते ही जालिमसिंह राजधानीमें आ पहुंचे, परन्तु कोई राजकुमार उनसे न मिले। कुमार पृथ्वीसिंह और गोवर्धनके भड़कानेसे युवराज किशोरसिंह भी जालिमसिंहसे विगड़ पड़े और राज्यके शासनकी क्षमता उद्धार करने को सभी चेष्टा करने लगे। किन्तु उनकी इच्छा पूरी न हुई। वृटिश गवर्नमेण्टके एजेण्ट टाड साहबके यत्नसे जालिमसिंहका ही हक कायम रहा। कुमार पृथ्वीसिंह और गोवर्धनदास महारावके पाससे हटाये गये और हरवती राज्यसे गोवर्धनदास निर्वासित हुये। फिर १८२० ई० में १७ अगस्तको महाराव किशोरसिंह सिंहासन पर

बैठे और फिर जालिमके साथ सद्भाव बढ़ गया। इस अभिषेकके उपलक्षमें किशोरसिंहने जालिमके बेटे माधवसिंहको खिलअतके साथ वंशानुक्रममें कोटाके सेनापति पदको सनद दे दी।

वृद्ध जालिमसिंह मृत्युसे पूर्व दो कार्य करके प्रजाके कृतज्ञताभाजन हुये—(१) उनका कोई उत्तराधिकारी यदि राजाके किसी कर्मचारीको पदच्युत करे, तो उस कर्मचारीको सम्पूर्ण स्वाधीनता देना पड़ेगी और पूर्व कार्यके लिये वह कर्मचारी दायी न होगा और (२) कोटाराज्यमें जो दण्डकर लगा है, एक काल ही उठ जावेगा।

१८२१ ई० को गोवर्धनदासके साथ झाबुआके अधीश्वरकी एक कन्याका विवाह पक्का हुवा था। इसी उपलक्षमें उन्हें मालव आनेकी अनुमति मिली। उन्होंने उक्त नगरमें पहुंचते पहुंचते चारो ओर हरजातीय वीरको भड़काके एक बड़ा षड़यन्त्र खड़ा कर दिया। जालिमसिंहके पक्षीय पुरातन सेनानायक सैफ अली महाराव किशोरसिंहसे मिल गये। थोड़े दिनोंमें ही जालिमसिंहके साथ कोटाराजका युद्ध छिड़ा था। स्वजातिके रक्तसे कोटाराज्य भर गया। अन्तको अंगरेजी सैन्यके साहाय्यसे जालिमसिंहने एककाल ही राजसैन्यका उच्छेदसाधन किया था। इस युद्धमें कुमार पृथ्वीसिंह शत्रुके हाथों मारे गये। फिर असहाय महाराव किशोरसिंहको जालिमसिंहके साथ सन्धि करना पड़ी और उनको माधवसिंहसे मित्रता भी स्थापित हुई। ८६वें वर्ष राजराणा जालिमसिंह मृत्युके मुखमें जा पड़े। उनके जैसे बुद्धिमान, चतुर, राजनीतिज्ञ और असाधारण मेधावी व्यक्तिने राजस्थानमें आज तक जन्म नहीं लिया है।

१८२४ ई० को जालिमसिंहका मृत्यु होने पर उनके पुत्र मधुसिंह उपयुक्त न रहते भी सन्धिपत्रके अनुसार कोटाके प्रधान मन्त्री और शासनकर्ता हो गये। १८२८ ई० को महाराव किशोरसिंहका मृत्यु हुवा। उनके भ्रातुष्पुत्र रामसिंह गद्दी बैठे थे। इसी समय मधुसिंहके कालग्रासमें पड़नेसे उनके पुत्र मदनसिंहने पितृपद अधिकार किया। परन्तु कोटाके अधिपति नव मन्त्रीके शासनकर्तृत्वसे अत्यन्त असन्तुष्ट हुये थे। १८३४ ई० को दोनो ओर लड़ाई छिड़ जानेका उपक्रम लग गया। इस बार वृटिश सरकारने जालिमसिंहके साथ की गयी सन्धिको भङ्ग करके कोटाराजको ही पूर्ण शासन-क्षमता अर्पण की। जालिमसिंहने पिण्डारियोंको दमन करनेमें वृटिश सरकारको जो साहाय्य पहुंचाया था, उसके लिये कोटाके अन्तर्गत १७ परगनेका नया झालावाड़ राज्य मदनसिंह को मिला। इस समयसे कोटा और झालावाड़ दोनों स्वतन्त्र राज्य समझे जाते हैं।

कोटाराज्यके तत्त्वावधानको एक अंगरेज पोलिटिकल एजेण्ट नियुक्त हुवे। १८५७ ई०को विद्रोहके समय कोटाके सिपाहियोंने एजेण्ट और उनके दोनों पुत्रोंको विनाश किया था। उस समय महारावके एजेण्टका साहाय्य न करनेसे वृटिश गवर्नमेण्टने सबहको जगह १३ तोपोंकी ही सलामी कर दी। १८६६ ई० में २७ मार्चको महाराव रामसिंहका मृत्यु हुवा और उनके पुत्र भीमसिंह (अपर नाम छत्रसिंह) को राज्य मिला। उस समय छत्रके नाबालिग रहनेसे राज्यके प्रधान कर्मचारियों पर ही राज्यशासनका भार पड़ा था। परन्तु उन सबके स्व स्व उदरपूरण करनेकी चेष्टा लगानेसे अल्प दिन मध्य ही राजकोष शून्य हो गया और राजसंसारमें ऋण बढ़ने लगा। इसी समय वृटिश गवर्नमेण्टने हाथ डाल १८७४ ई० को जयपुरके प्रधान मन्त्री फैज अलिखांको कोटाराज्य शासन करनेकी क्षमता दी थी। उक्त विज्ञ और सुचतुर कर्मचारीके यत्नसे राज्यकी कितनी ही उन्नति हुई। उन्होंने राजकोय विभागमें नाना प्रकारके नूतन नियम चलाये थे। समस्त कोटाराज्य ८ निजामतोंमें बांटा गया और उसमें फिर दीवानी और फौजदारीका महकमा बांधा तथा प्रत्येक विभागमें एक एक कर्मचारी नियुक्त हुवा। इन सकल कर्मचारियोंकी क्षमताके अतिरिक्त विषयका विचार करनेको राजधानीमें दीवानी, फौजदारी और तहसीलदारी अदालत खोली गयी। महाराव छत्रसिंहके समय फिर वृटिश गवर्नमेण्टने १७ तोपोंकी सलामी ठहरा दी। महाराव छत्रसिंहके पीछे वर्तमान

महाराजाधिराज महीमहेन्द्र महाराव राजा सर उमेद सिंहजी साहब बहादुरको राज्यका अधिकार मिला था। कोटाका वार्षिक राजस्व ३१०००००) रु० है।

कोटा-झालावाड़—दक्षिण-पूर्व राजपूतानेका पलिटिकल एजेन्सी। यह अक्षा० २३° ४५´ तथा २५° ५१´ उ० और देशा० ७५° २८´ एवं ७७° २६´ पू० के बीच पड़ती है। पलिटिकल एजण्टका सदर कोटामें है। लोकसंख्या ६३५०५४ निकलती है। क्षेत्रफल ६४९४ है। आकारको देखते यह एजेन्सी राजपूतानेमें पांचवीं और आबादीके हिसाबसे सातवीं ठहरती है।

कोटालीपाड़ा—बङ्गाल प्रदेशके फरीदपुर जिलेका एक परगना। इसमें ७२ गांव हैं। कोटालीपाड़ामें घर्घर नामक एक नद प्रवाहित है। इसके भूतत्त्वकी पर्यालोचना करनेसे समझ पड़ता है कि ५।६ सौ वर्ष पहले यह स्थान नदीमय रहा। आजकल कोटालीपाड़ाके पश्चिमांशमें घर्घर नदकी रेखा ही देख पड़ती है। घर्घर नदके उस पारसे फुल्लश्रीग्राम ४॥ कोस पूर्व है। इससे अनुमित होता है कि तत्कालको यह उसके गर्भमें पड़ा था। महाविषुव-संक्रान्तिके दिन उसके किनारे एक मेला लगता है। अनेक स्त्रियां आकर स्नान करती हैं। प्रवाद है कि एक संन्यासीने यह वर दिया था—जो अपुत्रक स्त्री महाविषुव-संक्रान्तिको यहां स्नान और गङ्गापूजा करेगी, उसके सन्तान होगी।

कोटि (सं० स्त्री०) कोट्यते छिद्यतेऽनया, कुट-इन् बाहुलकात् गुणः। १ खड्गादिका प्रान्त, तलवार वगैरहकी धार या नोक। २ अग्रभाग, अगला हिस्सा। ३ धनुषका अग्रभाग, कमानका गोशा। ४ उत्कर्ष, बड़ाई। ५ शतलक्ष संख्या, सौ लाखकी अदद, (१०००००००)।

"कोटि कोटि रणधीर"। (तुलसी)

प्रत्येक संख्याकी गणना एक, दश, शत, सहस्र, अयुत, लक्ष, नियुत, कोटि और अर्बुद क्रमसे की जाती है।

(वहशास्त्र)

६ स्पृक्का, एक खुशबूदार सब्जी। ७ संशयका आलम्बन। ८ पूर्वपक्ष। ९ त्रिभुज वा चतुर्भुज क्षेत्रकी भूमि और कर्णभिन्न रेखा। (लीलावती) १० राशिचक्रका तृतीय अंश। (सिद्धान्तशिरोमणि) ११ छाया निरूपणके लिये कल्पित क्षेत्रकी कोई अवयव रेखा।

"दिक्सूत्रसम्पातगतस्य शङ्कोर्म्छायाग्रपूर्वापरसूत्रमध्यम्।
दोर्दोः प्रभावर्गवियोगमूलं कोटिर्नरात् प्रागपरा ततः स्यात्॥"

(सिद्धान्तशिरोमणि)

१२ चन्द्रके शृङ्गको उन्नति निकालनेको कल्पित क्षेत्रका कोई अवयव। (सिद्धान्तशिरोमणि) १३ उदयास्त सूत्र द्वारा क्षेत्रका कल्पित अवयव। (सिद्धान्त-शिरोमणि) १४ श्रेणी, दरजा। १५ राशि, ढेर। (त्रि०) १६ कोटिसंख्याविशिष्ट।

कोटिक (सं० पु०) कोट्या बहुसंख्यया कायति प्रकाशते कोटि-कै-क। १ इन्द्रगोपकीट, बीरबहूटी। २ मण्डूकजातीयसविषकीटभेद, कोई जहरीला मेंढ़क। मण्डूक देखो।

कोटिक (हिं० वि०) करोड़ों, बेशुमार।

कोटिकास्य (सं० पु०) कोटिकस्येव आस्यमस्य। शिविवंशके एक राजा। इनके पिताका नाम सुरथ था।

(भारत, वन २६४ अ०)

कोटिजित् (सं० पु०) कोटिं कविकोटिं पणे कोटिमितं द्रव्यं वा जितवान्, जि भूते क्विप्। रघुवंश आदि काव्यके प्रणेता कालिदास।

कोटिज्या (सं० स्त्री०) ग्रहोंकी स्पष्टताके साधनका अङ्ग। धनुष-जैसा एक क्षेत्र। (सूर्यसिद्धान्त)
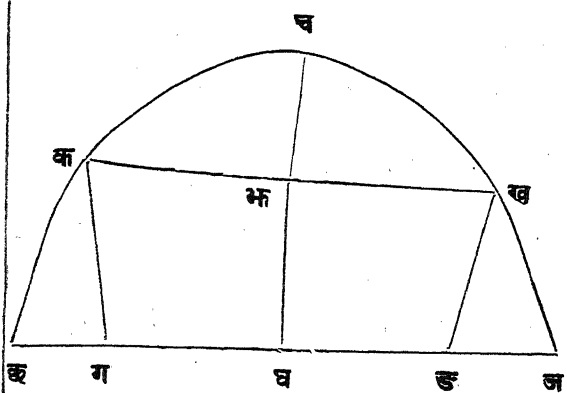
इस अङ्कित क्षेत्रमें क च ख भुज और क ङ तथा ख ज भुजकी कोटि हैं। इसके बीचमें क झ किंवा झ ख और क ग किंवा ख ङ अंशका नाम कोटिज्या है।

कोटितीर्थ (सं० क्ली०) कोटिस्तीर्थान्यत्र, बहुव्री०। १ महाकालका निकटवर्ती अवन्तिदेशीय कोई तीर्थ।

इस तीर्थमें स्नान करनेसे राजसूय और अश्वमेध यज्ञका फल मिलता है। (भारत, वन ८२ अ०) उज्जयिनी देखो।

२ पञ्चनदका मध्यवर्ती कोई तीर्थ। यहां स्नान करनेसे भी अश्वमेध यज्ञका फललाभ होता है। (भारत, वन ८२ अ०)

भारतमें नाना स्थानों पर कोटितीर्थ नामके तीर्थ विद्यमान हैं।

कोटनगर (सं० क्ली०) वाणराजाकी राजधानी। चित्रगुप्तने इसी स्थान पर चण्डिकाकी आराधना की थी। (भारत, शान्ति)

कोटिपात्र (सं० पु०) कोटिरग्रं पताकारं यस्य यद्वा कोटिरग्रं पात्रे जलांशोऽस्य जलक्षेपणात्। केनिपातक, पतवार, डांड।

कोटिपाल (सं० पु०) कोट्टपाल, किलादार।

कोटिफल (सं० क्ली०) कोटीनां फलम्, ६-तत्। त्रिभुज चतुर्भुज प्रभृति क्षेत्रोंके अवयव कोटिका फल। (सूर्यसिद्धान्त)

कोटिफली—गोदावरी नदी मुहानेके वाम कूलका एक प्रसिद्ध तीर्थ। यह विशाखपत्तनके अन्तर्गत और करिङ्ग बन्दरके निकट है। धवलेश्वरसे जहाज पर चढ़के यहां आते हैं। स्थानीय लोगोंका विश्वास है—कोटिफलीमें स्नान करके प्रायश्चित्त करनेसे कोटिगुण फल मिलता है। प्रति द्वादश वर्षको वृहस्पतिके सिंहराशि पर गमन करनेसे कोटिफलीमें पुष्करयोग होता है। इससे ३॥ कोस पूर्व दक्षाराम नामक दूसरा प्रसिद्ध स्नात तीर्थ है।

गौतमीमाहात्म्यमें लिखा है इन्द्रने अहल्यागमनके पापसे छूट कोटीश्वर, चन्द्रने गुरुपत्नी गमनके पापनाशको छायासोमेश्वर और कश्यपऋषिने कोटीफलीमें जनार्दनस्वामीकी प्रतिष्ठा की थी। इस तीर्थका अपर नाम मातृगमनापहारी है।

छायासोमेश्वरका मन्दिर अभी विद्यमान है। वह देखनेसे प्राचीन समझ पड़ता है। इसकी अपेक्षा कोटिलिङ्ग और जनार्दनस्वामीका मन्दिर छोटा है। मन्दिरके वहिर्भागमें एक छोटा गोपुर और गोपुरके सम्मुख सोमकुण्ड नामक एक वृहत् सरोवर है।

कोटिवालिका (सं० स्त्री०) सरट, गिरगिट।

कोटिमान् (सं० त्रि०) कोटिरस्त्यस्य। कोटिविशिष्ट, नोकदार।

कोटिर (सं० पु०) कोटिं उत्कर्षं राति, रा-क। १ इन्द्र। २ नकुल, नेवला। ३ इन्द्रगोपकीट, बीरबहूटी।

कोटिवर्ष (सं० क्ली०) कोटिसंख्यकानि अस्त्राणि उपस्थितान् शत्रून् प्रति वर्षन्त्यत्र, कोटि-वर्ष-अप्। वाणराजाकी राजधानी, कोटिनगर।

कोटिवर्षा (सं० स्त्री०) कोटिभिरग्रैर्वर्षति, वृष-अण्। पिडिङ्गशाक, एक सब्जी।

कोटिवृक्षक (सं० पु०) कुटजवृक्ष, कुरैया।

कोटिश (सं० पु०) कोट्या अग्रेण श्यति, नाशयति चूर्णीकरोति, शो-क। १ लोष्ट्रभेदक अस्त्र, मई। इसका संस्कृत पर्याय—लोष्टुभेदन, लोष्टुघ्न, लोष्टुभेदी, चूर्णदन्त, लोष्ट्रभङ्गार्थमुद्गर और लोष्टुघ्न है। (त्रि०) कोटिरस्यास्तीति, कोटि लोमादित्वात् श। २ कोटियुक्त, कमानदार।

कोटिश—वासुकि वंशीय एक नाग। (भारत, आदिपर्व ५७ अ०)

कोटिशः (सं० अव्य०) कोटि वारार्थे शस्। कोटि कोटि, करोड़ों। (रघुवंश, २ सर्ग)

कोटी (सं० स्त्री०) कुट-इन्-ङीप्। १ स्पृक्काशाक, पिडिङ्ग। २ कुटजवृक्ष, कुरैया। ३ अस्त्राग्रभाग, हथियारकी नोक।

कोटो—पञ्जाबके क्योंथल राज्यकी एक जागीर। यह अक्षा० ३१°२´ तथा ३१° ११´ उ० और देशा० ७७°१२´ एवं ७७° २१´ पू० के बीच पड़ती है। क्षेत्रफल ५० वर्गमील, लोकसंख्या ७९५९ और वार्षिक आय २५०००) रु० है। क्योंथल रियासतको ५००) रु० कर देना पड़ता है।

कोटीर (सं० पु०) कोटीभिरग्रैरीरयति पीड़यति, कोटिईर्-अण्। १ किरीट। २ जटा, रेशा। (नैषध)

कोटोला—इन्दोरका निकटवर्ती एक ग्राम। यह राजपूतानेके पूर्व अंशमें एक पर्वतपर अवस्थित है। इसमें एक दुर्ग रहनेसे ही कोटोला नाम पड़ा है। यह किला सुदृढ़ है। इसकी पूर्व दिक्को दाहार नामक ह्रद है।

यह झील पर्वतकी उपत्यकामें लगी है। पहले कोटीला-को चारो ओर मृत्तिका-निर्मित प्राकार रहा। उसका कुछ कुछ चिह्न आज भी देख पड़ता है। शत्रु के आने पर लोग ग्राम छोड़ कर पहाड़ पर चढ़ जाते थे। यहां खान्‌जादा घरानेके बहादुर खान् साहबकी राजधानी रही। इन्होंने तैमूरके भेजे दूतसे यहीं साक्षात् किया था। १३९० ई० को जब मुहम्मद फीरोज तुगलक कोटीला पर चढ़े, बहादुर नाहुर भाग गये। १४२१ ई० को खिज्रखान् सैयदने कोटीलाके किले पर चढ़ाई कर-के शेष ध्वंस कर डाला। कहीं कहीं अभी दुर्गका भाग खड़ा है। नगरके भीतर जुमा मसजिद नामक एक सुरम्य हर्म्य है। इसे फीरोजशाह तुगलकके बेटे मुह-म्मदशाह बनवाने लगे थे, परन्तु सम्पूर्ण करनेसे पहले ही मर गये। इसकी चारो ओर छज्जा और बीचमें गुम्बज है। सभी काम पत्थरका बना है। मसजिदके भीतर लाल पत्थरकी एक कब्र है। परन्तु उसका अधि-कांश टूट गया है।

कोटीश्वर (सं० पु०) करोड़पति।

कोटुर—एक ग्राम। यह अक्षा० १६° १´ उ० तथा देशा० ७५° २´ पू० पर बम्बई प्रेसिडेन्सी बेलगांव जिला प्रसाद-गढ़ तालुकके सौन्दत्ती नगरसे १० कोस उत्तर-पश्चिम अवस्थित है। यहां परमानन्द देवका मन्दिर है। मन्दिर-की दक्षिणदिक्‌को एक प्राचीन शिलालिपि खोदित है। इसमें परहित राजाका वृत्तान्त लिखा गया है।

कोटेशन (अं० पु०=Quotation) १ उद्धरण, नकल। २ सीसेका एक टुकड़ा। यह चौकोर तथा पोला रहता और सांचेमें ढलता है। कंपोज करनेमें इसे खाली जगह भरनेको लगाते हैं। क्वाड्रेटसे कोटेशन बड़ा, ४ एम पाइका चौड़ा और २, ४, ६ या ८ एम पाइका लम्बा होता है। ३ भाव, निर्ख।

कोटेश्वर (सं० पु०) दाक्षिणात्यमें कनाड़ा उपकूल पर कोण्डपुरसे उत्तर अवस्थित एक प्राचीन शिवस्थान। कोटेश्वरमाहात्म्यमें लिखा है—यहां शिवलिङ्गदर्शन करनेसे सर्व अभीष्ट सिद्धि होती है।

कोटोडुम्बर (सं० पु०) यज्ञोदुम्बर, एक प्रकारका गूलर।

कोट्ट (सं० पु०-क्ली०) कुट्ट-घञ् निपातनात् साधुः। १ दुर्ग, किला। २ पुरविशेष। ३ कोई राजधानी।

कोट्टपाल (सं० पु०) कोट्टं पुरं दुर्गं वा पालयति रक्षति, कोट्ट-पा-णिच्-अण्। पुररक्षक, कोतवाल। (पञ्चतन्त्र)

कोट्टवी (सं० स्त्री०) कोट्टं वाति, कोट्ट-वा-क गौरादि-त्वात् ङीष्। १ विवस्त्रा स्त्री, नंगी औरत। २ बाणा-सुरकी माता। हरिवंशमें वर्णित हुआ है कि बाणयुद्धके समय बाणमाता कोट्टवी अपने तनयको प्राणरक्षाके लिये नग्न हो कर समरक्षेत्रमें उतरी थीं। कृष्णने उनको वस्त्र पहननेका अनुरोध किया। परन्तु उन्होंने एक न सुनी। (हरिवंश १८५ अ०) ३ दुर्गा। ४ मुक्तकेशी नारी।

कोट्टवीपुर (सं० क्ली०) कोट्टव्याः पुरम्, ६-तत्। बाणपुर।

कोट्टायम—१ मन्द्राज-प्रान्तके उत्तर मलबार जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० ११° ४१´ तथा १२° ६´ उ० और देशा० ७५° २७´ एवं ७५° ५६´ पू० के मध्य अव-स्थित है। भूमि-परिमाण ४८१ वर्गमील, लोकसंख्या २०८५१६ और राजस्व १८७०००) रु० है। इसका सदर तेल्लिचेरि बड़ी जगह है। पूर्वको ओर पश्चिमघाट पर्वतने इस तालुकको बन्द कर रखा है।

२ मन्द्राजके त्रिवाङ्कुड़म् राज्यके कोट्टायम तालुकका सदर मुकाम। यह अक्षा० ९° ३६´ उ० और देशा० ७६° ३१´ पू० में मीनचिल किनारे पड़ता है। लोक-संख्या १७५५२ है।

कोट्टार (सं० पु०) कुट्ट-आरक् पृषोदरादिवत् साधुः। यद्वा कोट्टं कोटं दुर्गमित्यर्थः ऋच्छति गच्छति, कोट्ट-ऋ-अण्। १ कूप, कूआं। २ नागर, शहरका बाशिन्दा। ३ पुष्करिणी पाटक, तालाबकी सिढ़ियां। ४ दुर्गपुर, किलेका शहर। ५ लुच्चा।

कोट्यर्ध (सं० पु०) आधा करोड़, ५० लाख।

कोट्युद्वार (सं० पु०) चतुर्भुज वा त्रिभुज क्षेत्रकी कोटिका निकास।

कोठ (सं० पु०) कुठि-अच् निपातनात् नकारलोपः। चक्राकार कुष्ठरोग, चकत्ते-जैसा कोढ़। इसका पर्याय—मण्डलक, दुश्चर्मा, त्वग्दोष और चर्मदूषिका है।

कोठर (सं० पु०) कुठ्यते छिद्यतेऽसौ, कुठ-अर्। अङ्कोलवृक्ष।

कोठरपुष्पी (सं॰ स्त्री॰) कोठरस्य पुष्पमिव पुष्पं यस्याः, बहुव्री॰। वृद्धदारक, विधारा।

कोठरी (हिं॰ स्त्री॰) दीवारोंसे चारो ओर घिरा हुवा छोटा कमरा।

कोठा (हिं॰ पु॰) १ लम्बी-चौड़ी कोठरी, बड़ा कमरा। २ भाण्डार, इकट्ठा की हुई चीजें रखनेकी जगह। ३ अटारी, छतके ऊपरका कमरा। ४ उदर, पेट। ५ गर्भाशय, धरन। ६ घर, खाना।

कोठाकुचाल (हिं॰ पु॰) हाथियोंकी एक बीमारी। इसमें उनकी भूख घट जाती है।

कोठादार (हिं॰ पु॰) कोठारी, कोठेवाला।

कोठार (हिं॰ पु॰) भाण्डार, अनाज, रुपया पैसा वगैरह रखनेकी जगह।

कोठारिया—राजपूताना उदयपुरके क्षुद्रराज्य कोठारियाका प्रधान नगर। यह अक्षा॰ २४° ५८´ उ॰ और देशा॰ ७३° ५२´ पू॰ में बनास नदीके दाहने किनारे उदयपुर शहरसे ३० मील उत्तरपूर्व पड़ता है। लोकसंख्या प्रायः १५८६ है। यहांके राजा चौहान राजपूत हैं और रावत कहलाते हैं। कोठारिया राजवंशके प्रतिष्ठाता मानकचंद रहे जो १२०० ई॰को राणा संग्रामकी ओर बाबरसे लड़े थे।

कोठारी (हिं॰ पु॰) १ भाण्डारी, कोठादार। २ मारवाड़ी वैश्योंका एक उपाधि।

कोठारी—एक ओसवाल जाति। किसी समय सवलदास एक कोठारी राजा हुए थे। उन्हींकी औलादसे कोठारी नाम चल पड़ा।

कोठी (हिं॰ स्त्री॰) १ हर्म्य, हवेली। २ थोक विक्रीकी बड़ी दूकान। ३ कुठिला। ४ ईंट या पत्थरकी कोई जोड़ाई। यह कूयेंकी दीवार या पुलके खंभे पर पानीके भीतर चलती है। ५ बन्दूकमें बारूद ठहरनेकी जगह। ६ स्यानकी साम। ७ बांसकी बीड़।

कोठी—मध्यभारतका एक छोटा राज्य और नगर। यह बघेलखण्डके पोलिटिकल एजेण्टके अधीन है। क्षेत्रफल १६९ मील आता है। बघेल राजपूतोंका राज्य है। जगतराजसिंह नामक किसी बघेलेने यहांके भार राजाको निकाल अपना राजत्व जमाया था। १८वीं शताब्दीको बुंदेलोंका प्रभुत्व छत्रसालके नेतृत्वमें बढ़ने पर कोठीके राजा पन्नाको कर देने लगे, परन्तु अलीबहादुरके दौरदौरेमें अपनी स्वाधीनता अक्षुण्ण रख सके। अङ्गरेजोंका राज्य होने पर १८०७ ई॰में पन्नाको जो सनद मिली, कोठी उसका करदराज्य जैसी लिखी है। परन्तु १८१० ई॰ को यह अंगरेजोंके ही अधीन कर दी गयी। फिर कोठीके राजाको १८६२ ई॰ में दत्तक ग्रहण करनेकी भी सनद हासिल हुई। १८७८ ई॰ में अपनी राजभक्ति और उदारताके लिये कोठीके राजाने 'राजा बहादुर' उपाधि पाया था। लोकसंख्या प्रायः १९११२ है। कोठी राज्यमें ७५ गांव बसे हैं। राज्यकी भूमि उर्वरा है और सब मामूली अनाज खूब पैदा होता है। सालाना आमदनी २६०००) रु॰ है। कोठी राजधानी अक्षा॰ २४° ४६´ उ॰ और देशा॰ ८०° ४७´ पू॰ में जैतवार ष्टेशनसे ६ मील पश्चिम अवस्थित है। कोठीके राजा २२३ पैदल सिपाही और ३० सवार रखते हैं।

कोठीवाल (हिं॰ पु॰) १ महाजन, बड़ा साहुकार। २ मुड़िया।

कोठीवाली (हिं॰ स्त्री॰) १ महाजनी, साहुकारी। २ मुड़िया लिपि।

कोड़ग (कुर्ग)—दाक्षिणात्यका एक जिला। यह अक्षा॰ ११° ५६´ एवं १२° ५०´ उ॰ और देशा॰ ७५° २२´ तथा ७६° १२´ पू॰के मध्य अवस्थित है। परिमाण १५८२ वर्गमील है। इस जिलेके पश्चिम पश्चिमघाट है। यह पर्वतश्रेणी कुछ झुक कर कुर्गको उत्तर और दक्षिण सीमाके रूपमें खड़ी है। इस जिलेकी पूर्व और उत्तरदिक् महिसुरराज्य है। कुमारधारी और हैमवती नामक दो नदियोंने उत्तरदिकको प्रवाहित हो महिसुरसे इसको अलग कर दिया है। पूर्वदिकको थोड़े अंशमें कावेरी नदी प्रवाहित है। कुर्गका प्रधान नगर मेरकारा अक्षा॰ ७५° ४६´ और देशा॰ १२° २६´ पू॰ पर अवस्थित है।

यह राज्य पर्वतोंसे समाकीर्ण है। स्थान स्थान पर श्यामल तृणपूर्ण प्रकाण्ड समतलभूमि और बीच बीच शस्यपूर्ण उपत्यका है। पश्चिमघाट पर्वतश्रेणी

प्राय: ३० कोस फैली और भूमिसे ३८१८ हाथ उठी है। इससे छोटे छोटे पहाड़ फूट देशमें फैल पड़े हैं। पश्चिमघाटकी ही एक अधित्यका पर २३२ हाथ ऊंचा प्रधान नगर मेरकारा है। कुर्ग प्रदेशमें कावेरी और उसकी उपनदी लक्ष्मणतीर्थ तथा हेमवती प्रधान है। बारपोल और दूसरी भी कई छोटी छोटी नदियां हैं। परन्तु किसी नदीमें जहाज नहीं चलता। वृष्टि वायु, सूर्यके ताप और पेड़के पत्ते सड़नेसे पार्वतीय भूमि नव आकार धारण करके धीरे धीरे उर्वरा हो रही है। गृह आदि बनानेको पहाड़से पत्थर तोड़ कर लाते हैं। किसी अन्य मूल्यवान् धातुकी खानि नहीं है।

कुर्ग प्रदेशके वनसे यथेष्ट धनागम होता है। पश्चिमघाट प्रदेशके वनको यहां मेलकादु कहते हैं। इसमें पुन नामक वृक्ष उपजता है। पुन वृक्ष प्राय: ६२ हाथ बढ़ता है। इससे जहाजके मस्तूल बनाते हैं। सिवा इसके शीशम, कटहल, सर्व या सनौवर वगैरह पेड़ोंसे बहुत तरहकी लकड़ी निकलती है। वनभूमि नानाविध लतापत्र और पुष्पसे शोभित है। पूर्वदिक्के सकल अरण्य और छोटे छोटे पर्वत कानिवकादु कहते हैं। यहां सागवन और चन्दनके पेड़ बहुत होते हैं। बांस बढ़िया लगता है। एक एक बांस कोई ६०।६५ हाथ बढ़ जाता है। जगह जगह बड़े बड़े बांसोंका जंगल है। यहां सागवन और चन्दनकी लकड़ी सिवा गवर्नमेण्टके और कोई बेच नहीं सकता। कई प्रकारके दूसरे दरख्त भी उपजते, जिन्हें स्थानीय लोग मालती, होनि वा किनो दिन्दुल और इदेमरा कहते हैं।

वन्यभूमि बहुविध वन्य पशुवोंसे भरी है। देशवासी अधिकांश शिकारी हैं। वह जंगलसे स्वच्छन्द नानाप्रकार वृक्षनिर्यास, रेशमका सूत और राल लाया करते हैं। वनमें बाघ, भालू, हाथी, चीते, भैंसे, सांभर हिरन, जंगली बकरे और जंगली सूवर आदि देख पड़ते हैं। यहां गवर्नमेण्ट एक शेर मार सकनेसे ५) रु० और चीताके लिये ३) रु० पुरस्कार देती है। शेर बहुत हैं। हाथियोंकी संख्या कुछ घट गयी है।

कुर्ग प्रदेशमें कावेरी नदीकी उत्पत्तिका स्थान एक प्राचीन तीर्थ-जैसा गण्य है। स्कन्दपुराणके कावेरी-माहात्म्यमें उसकी महिमा वर्णित है। खृष्टीय षष्ठ शताब्दीको महिसुरकी उत्तर-पश्चिमदिक् कदम्ब नामक एक राजा रहे। उन्होंसे कोड़ग जातिका जन्म है। दक्षिण कुर्गमें एक शिलालिपि मिली है। उससे समझ पड़ता है कि ई० ८म शताब्दीको चेरवंशीय राजा राजत्व करते थे। मुसलमान ऐतिहासिक फरिस्ताने (षोड़श शताब्दीको) लिखा है कि कुर्गराज्य उस समय स्वाधीन और १२ कोम्ब या जिलोंमें विभक्त था। फिर हालेरी पालिगारोंने यहां आकर राज्य स्थापन किया। हालेरी लोग कुर्गके अधिवासियोंसे स्वतन्त्र और लिङ्गायत शैव थे। कुर्गके लोग भूतप्रेत और पूर्वपुरुषोंकी उपासना करते थे। उधर पालिगार निष्ठुर होते भी सबके श्रद्धाभाजन रहे। १६३३से १८०७ ई० तक इस देशमें, जो राजा हुवे, 'राजेन्द्रनामा' नामक पुस्तकमें उनका विवरण लिपिबद्ध है। दोड्डवीर राजेन्द्रनामक राजाको आज्ञासे १८०७ ई०को यह कर्णाटी भाषामें रचित हुवा

कुर्ग अधिवासी वीरत्वके लिये विख्यात हैं। हैदराबादके हैदरअलीने दाक्षिणात्यका समस्त राज्य जीतके कुर्ग देश आक्रमण तो किया, किन्तु उनके विषम आक्रमणसे विध्वस्त होते भी कुर्गको राजसेनाने पराजयको न माना। अवशेषमें एकबार हैदरअली आ राजाको पराजय करके राजवंशके सब लोगोंको कैद कर ले गये। फिर हैदर अलीके लड़के टीपू सुलतानने राज्यको मट्टीमें मिलानेके लिये कुर्गके ८५००० अधिवासियोंको श्रीरङ्गपत्तन पहुंचाके मुसलमानोंको जमीन दे डाली और आदेश लगाया—जहां जितने कोड़ग मिलेंगे, देख पड़ते ही मार डाले जावेंगे। महिसुरके कैदियोंमें कोड़गके राजवंशीय वीरराजेन्द्र नामक एक राजपुत्र थे वही किसी प्रकार महिसुरसे पलायन करके स्वराज्यके पर्वतोपरि अपनी स्वाधीनताका झण्डा उठा सैन्यसंग्रह करने लगे। अल्प काल मध्य ही अनेक कुर्गवासी उनके साथ हो गये। उन्होंने मुसलमानोंको निकाल कुर्गमें अपना राज्य स्थापन किया था। इसके बाद समय समय पर अप्रत्यक्ष भावसे टीपूकी फौज पहुंच उन्हें उत्यक्त करने लगी। शेषको भारतके गवर्नर जनरल कार्नवालिस्के कुर्गकी रक्षा करना स्वीकार करने पर युद्ध निवृत्त

हुवा। १७९९ ई०को टीपूके मरने पर राजग्रमें शान्ति स्थापित हुई। बहिर्विवादकी तो शान्ति हो गयी, किन्तु अन्तर्विवादसे देश बिगड़ने लगा। वीरराजेन्द्र और उनके परवर्ती राजावोंने राजग्रमें घोरतर निष्ठुराचरण किया था। महिसुरके अंगरेज रेसीडेण्टने कितना ही प्रतिवाद उठाया, परन्तु उससे कोई फल देखनेमें न आया। लार्ड वेण्टिकने अन्तको युद्धका उद्योग किया था। ६००० अंगरेजी फौज ४ दलोंमें कुर्ग पर चढ़ आयी। राजा निष्ठुर रहते भी कोड़ग-सेनादल अंगरेजोंकी दो फौजोंसे जी तोड़ कर लड़ने लगा। इसी अवसरमें अंगरेजोंके दूसरे दो सेनादलोंने मेरकारा नगरको झपटके अधिकार किया था। पोलिटिकल एजेण्ट कर्नल फ्रेजरके हाथों राजाने अपनेको सौंप दिया। १८३४ ई०में ७ मईको कर्नल फ्रेजरने घोषणा की—'देशके सब लोगोंकी ऐकान्तिक इच्छा वा एकमतसे कुर्ग राजग्र कम्पनीके शासनाधीन हुवा है। अधिवासियोंके धर्म और समाज-सम्बन्धीय आचार अनुष्ठानका यथेष्ट सम्मान किया जावेगा। फिर जिससे उनके सुख स्वच्छन्द और शान्तिकी वृद्धि हो, उसकी विशेष चेष्टा करनेको गवर्नमेण्ट वचन देती है।'

राजा ६०००) रु० वृत्ति पाकर काशीवासी हुये। १८५२ ई० को वह इङ्गलेण्ड गये और १८६२ ई० को वहीं स्वर्गवासी हुये। उनकी कन्याने ईसाई धर्म अवलम्बन किया था। महाराणी विक्टोरिया स्वयं उनकी धर्ममाता होनेसे उनका नाम विक्टोरिया गौड़াम्मा रखा गया। राजकुमारीने किसी अंगरेज सैनिकसे विवाह किया था। १८६४ ई० को वह मर गयीं। राजाका परिवार आज भी काशीमें रहता है। उन्हें कुर्गके राजस्वसे सामान्य वृत्ति मिलती है। कुर्ग राजग्र अंगरेजी अधिकारमें दिन दिन उन्नति लाभ करता है।

अधिवासियोंमें युरोपीय, मार्किन, अष्ट्रेलिक, फिरङ्गी, कोड़ग, मंद्राजी, महिसुरी, महाराष्ट्री, बंगाली, सिन्धुदेशीय, अरबी, कन्दहारी, हिन्दुस्थानी और अन्यान्य देशके लोग हैं। इनमें हिन्दुवोंकी संख्या सैकड़े पीछे ९५ पड़ती है।

शहरोंमें मेरकारा या महादेवपेट प्रधान है। इसीमें मुल्की और फौजी महकमेका बड़ा काम होता है। एतद्‌व्यतीत वीरराजेन्द्रपेट, मार्दे तथा फ्रेजरपेट नामक कई दूसरे भी नगर हैं। कुर्गराज्यमें अनेक प्राचीन कीर्तियां हैं और जगह जगह प्रस्तरस्तूप देख पड़ते हैं। कहीं दो एक और कहीं कतारके कतार स्तूप खड़े हैं। कितनेही स्तूप खोल कर देखा गया है कि उनके बीच २॥ हाथ ऊंचे कई प्रस्तरखण्ड लम्बभावसे लगे हैं। उनपर छतकी तरह एक बड़ा पत्थर रखा है। इस प्रकारकी छतके बीच मृत्‌पात्रमें भस्म, लौहमल और मालाआदि संरक्षित हैं। यह आजतक नहीं जाना गया, किस जातिने यह स्तूप बनाये हैं। इसको छोड़ पत्थरकी नक्‌शा की हुई मूर्तियां बहुत हैं। लोग उन्हें वीरकल्लु कहा करते हैं। युद्धमें निहत वीर पुरुषोंके स्मरणार्थ वीरकल्लु बनते थे। यहां कदङ्ग नामक एक प्रकारका दूसरा मृत्तिकास्तूप भी है। वह पर्वतके ऊपरसे निम्नभूमि पर्यन्त देशकी चारो ओर विस्तृत है। कहीं कहीं उसकी ऊंचाई २५।२६ हाथ है। जान पड़ता है, परिखा वा गड़का प्रयोजनसाधन अथवा देशके विभिन्न भागोंमें सीमा निर्देश करनेको यह बनाया गया होगा।

उपत्यकामें नदीके तीर जंगलके बीच जहां कर्षणोपयोगी भूमि है, खेती होती है। भूमिमें अनेक प्रकारका धान्य उपजता है। उसमें दोड्डावाट्टा चावलकी उपज अधिक है। ज्येष्ठमासके शेषको बीज डालते हैं। आषाढ़ श्रावण मास वह उखाड़ कर रोपण किया जाता है। पौषमें धान कटता है। एक मन बीजमें ५० मन धान आता है। सिवा इसके राई, ईख, तम्बाकू और कपासकी खेती भी कम नहीं। सब लोगोंके गृह प्राङ्गणमें कदली लगा करती है। साहबोंने आकर कहवे और इलायचीकी खेती आरम्भ की है। कार्तिक मासमें जलौका और सर्पके कारण इलायची संग्रह करना बहुत कठिन है। बहुतसे विलायती पेड़ स्थान स्थान पर रोपित होनेसे सुफल प्रदान कर रहे हैं।

इस देशमें अन्यान्य द्रव्य अधिक प्रस्तुत नहीं होते। कुर्गके चाकू और कमरबन्द बहुत अच्छे निकलते हैं।

जगह जगह बाजार लगता है। उसीसे अधिवासियोंका प्रयोजन साधित होता है। मङ्गलूर, तेल्लिचेरि, कन्ननूर और बङ्गलूर रपतनीकी बड़ी आढ़तें हैं।

कुर्गकी आबहवा ज्यादा गर्म नहीं, बल्कि ठण्डी है। तापमानयन्त्र (थरमोमीटर) अत्यन्त ग्रीष्मके समय ८२° डिगरी चढ़ता है। समुद्रके वाष्पसे मेघ बनता, जो पश्चिमघाट पर्यन्त बरसता है। बारहो मास प्रातः और सन्ध्या समय उपत्यकाभूमिके जंगल कुहरेसे आवृत हो जाते हैं। वर्षाकालको प्रचुर वृष्टि पड़ती, साथही साथ प्रबल वायु बहती है। कभी कभी कई सप्ताह सूर्यका मुख देख नहीं पड़ता। एक मासमें ४।५ हाथ जल गिरकर भर जाता है। परन्तु कहवेकी खेतीके लिये वन कट जानेसे अब पहलेकी भांति वृष्टिका पानी इकट्ठा हो नहीं सकता। आबहवा ठण्डी होते भी साहबों और अधिवासियोंके पक्षमें खूब स्वास्थ्यकर है। परन्तु भारतको समतलभूमिके अधिवासियोंके लिये सुविधाजनक नहीं। ग्रीष्मकालको उपत्यकाभूमिमें मलेरिया हो जाता है। हैजा बहुत कम होता है। शीतला रोग यहां बहुत ही प्रबल है, गोवीजके टीकासे कोई फल नहीं निकलता।

अंगरेज सरकारको अमलदारीमें यह राज्य महिसूर चीफ कमिश्नरके अधीन हो गया है। कुर्गमें एक सुपरिण्टेण्डेण्ट, उनके नीचे एक युरोपीय और एक कोड़ग सहकारी रहते हैं। राज्य छह तालुकोंमें बंटा है। प्रत्येक विभागमें एक एक सूबेदार रहते हैं। फिर हरेक तालुकमें बीस नाद या होबली होते हैं। परपट्टगार नामक कर्मचारी नादका तत्त्वावधान रखते हैं।

जमीन तीन तरहको होती है। कोड़ग पुरुषानुक्रमसे जम्मा नामको सीर जमीन भोग करते हैं। इस जमीनकी १०० भट्टियोंका सालाना लगान ५) रु० है। (६ बीघेकी १०० भट्टियां होती हैं।) सकू नामक अच्छी जमीनकी १०० भट्टियोंका लगान १०) रु० पड़ता है। कहवा लगनेको २ बीघा जमीन पर २) रु० साल आमदनी देते हैं।

मेरकारामें अंगरेजी छावनी है। कुर्गमें गुरुतर अपराधोंकी संख्या बहुत थोड़ी है। अधिवासी प्रायः बुद्धिमान् होते और विद्या पढ़नेका विशेष आग्रह रखते हैं। कितने ही विद्यालय यहां विद्यमान हैं।

कोड़ग—कुर्गमें रहनेवाली एक जाति। कह नहीं सकते, यह जाति कहांसे आयी है। यह लोग पार्वतीय और परस्पर सहानुभूति रखनेवाले हैं। इनमें उच्चश्रेणीके कोड़ग अम्माकोड़ग कहलाते हैं। उनकी संख्या २ सौसे अधिक न होगी। कोड़ग दृढ़काय, प्रशस्तवक्ष और प्रायः ४ हाथ लम्बे होते हैं। आकृति प्रकृतिसे समझ पड़ता है कि उनमें मनुष्यत्व और वीरत्व विद्यमान है। कोड़ग 'कुपस' पहनते हैं। कुपस चपकन जैसा घुटने तक लम्बा पहनावा है। लाल या नीले रंगके कमरबन्दमें हाथीदांतकी मूठका चांदीकी जंजीरसे बंधा हुवा एक छुरा रहता है। शिरमें एक लाल रूमाल और एक पगड़ी लपेट लेते हैं। गलेमें माला, कानमें बाली और हाथमें सोने या चांदीका बाजूबन्द या तावीज धारण किया जाता है। कोड़ग स्त्रियां परमा सुन्दरी हैं। उनका अङ्गसौष्ठव भी बहुत अच्छा होता है। कमरके ऊपर चोली रहती और साड़ी नीचेकी ओर पांव तक लटकती है। साड़ीको अंगके ऊपर घुमाके पश्चात्‌दिक् बांध देती हैं। स्त्रियां घरके सभी काम करती हैं। बीच बीच कृषिकर्ममें वह पुरुषोंको भी साहाय्य पहुंचाती हैं। पुरुषोंको जब दूसरा काम नहीं रहता, वह जंगल जंगल शिकार करते घूमा करते हैं। पहले कोई नौकरीको अच्छा नहीं समझता था। परन्तु आजकल कोई सरकारी नौकरी मिल जानेसे लोग अपनेको कृतार्थ मानते हैं। १६ वर्ष पीछे कोड़गोंका विवाह होता है। पहले पहल यह प्रथा रही कि स्त्री एकाधिक पतियोंको ग्रहण कर सकती थी, परन्तु आजकल वैसा कम देख पड़ता है। फिर भी विवाहके समय कन्याको वरके भाइयोंकी अधीनता मानना पड़ती है। ग्रामके ठक या वयोज्येष्ठ लोग आवश्यक होनेसे विवाहके विच्छेदको व्यवस्था कर देते हैं।

कोड़चाद्रि—महिसूर राज्यस्थ शिमोगा जिलेके नगर तालुकका एक पहाड़। यह अक्षा० १३° ५१´ उ० और देशा० ७४° ५२´ पू०में अवस्थित और ४४११ फुट ऊंचा है। इसका जंगल बहुत अच्छा है। पश्चिम-

को और यह प्रायः ४००० फुट खड़ा उतरता आता और नीचे कनाड़ाका जङ्गल फैला हुआ पाया जाता है। समुद्र बिलकुल इसके पास ही लगा है। पर्वत पर हुलीदेव (नृसिंह) का मन्दिर है और ३२ भुजाकी मूर्ति प्रतिष्ठित है।

कोड़ना (हिं० क्रि०) खेतकी मट्टी गहरी करके उलटना, गोड़ना।

कोड़ा (हिं० पु०) १ दुर्रा, सांटा, चाबुक। बेंतके एक छोटे डण्डे या दस्तेमें चमड़े या सूतकी बटकर लगानेसे यह तैयार होता है। इससे घोड़ेको हांकते हैं। युक्तप्रदेशके फतेहपुर नगरका कोड़ा बहुत अच्छा होता है। २ उत्तेजना, चपेट। ३ चेतावनी, आगाही। ४ बांसका एक भेद। यह दाक्षिणात्यमें उत्पन्न होता है। ५ कुश्तीका एक पेंच। इसमें जब अपनी जोड़दाहने पैतरे पर खड़ी होती, बायें हाथकी कलाईसे उसकी दाहनी रान दबा और दाहने हाथकी कलाईसे उसके दाहने परका गट्टा उठा दोनों हाथोंकी सम्मिलित शक्तिसे उसे चित्त मारते हैं।

कोड़ा—युक्तप्रदेशकी एक जाति। यह प्रधानतः शोरा बनाते या नमकका काम चलाते हैं। इनको 'बनिया' बतलाया जाता है।

कोड़ा—युक्तप्रदेशके फतेहपुर जिलेकी खजुहा तहसीलका पुराना नगर। यह अक्षा० २६° ७´ उ० और देशा० ८०° २२ पू० में आगरासे इलाहाबादको गयी हुई मुगल राह पर फतेहपुर शहरसे २९ मील दूर पड़ता है। आबादी २८०६ है। अरगलके गौतम राजाओंने सैकड़ों वर्ष यहां राजत्व किया और मुसलमानोंके एक प्रान्तका भी कोड़ा सदर रहा। अकबरके समय इलाहाबाद सूबेकी एक सरकारने इसमें अपनी राजधानी स्थापित की थी। आज भी यहां कितने ही बड़े बड़े मकान गिरे पड़े हैं। ई० १८ वीं शताब्दीकी बनी बड़े बागमें एक बढ़िया बारादरी देखने योग्य है। कोड़ाके पास ही जहानाबाद नामक दूसरा बड़ा नगर है। इसीसे लोग प्रायः दोनों नगरोंका नाम मिला कर 'कोड़ा-जहानाबाद' ही कहा करते हैं।

कोड़ा-जहानाबाद—युक्तप्रदेशके फतेहपुर जिलेका एक नगर। यहां मुसलमानी जमानेकी एक पुरानी बड़ी सराय बनी और रिन्द नदीका पुल बंधा है। कहते हैं—यह पुल फतेहचन्द नामक किसी व्यक्तिने बनवाया था। पहले जब पुल बन रहा था, कई बार नदीके वेगसे टूट गया। परन्तु फतेहचन्दने अपना उद्योग न छोड़ा और अन्तको उसे खड़ा ही करा दिया। अपने कृतकार्य न होने पर वह कहा करते थे— या तो रिन्द रिन्द ही नहीं, या फतेहचन्द ही नहीं।

कोड़ार (हिं० पु०) कुंडरा, बन्द, छल्ला। यह लोहेका बनता और कोल्हूकी लकड़ीमें लगता है।

कोड़िक—जातिविशेष। यह लोग सूअर पालते हैं।

कोड़ी (हिं० स्त्री०) १ बीसी, बीस चीजोंका समूह। २ पक्का ओना, पानीका निकास।

कोढ़ (हिं०) कुष्ठ देखो।

कोढ़—युक्तप्रदेशके मिर्जापुर जिलेकी उत्तर-पश्चिम तहसील। यह भदोईके पास अक्षा० २५° ९´ तथा २५° ३२´ उ० और देशा० ८२° १४´ एवं ८२° ४५´ पू०के बीच पड़ती है। इसका क्षेत्रफल ३०६ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः २८५२४० है। यह गङ्गाके उत्तर खूब घना बसा है।

कोढ़ा (हिं० पु०) खेतका बाड़ा। यहां गोबर इकट्ठा करनेको पशु रखे जाते हैं।

कोढ़िया (हिं० पु०) तम्बाकूके पत्तोंका एक रोग। इससे तम्बाकू पर चकता पड़ जाता है।

कोढ़ी (हिं० वि०) कुष्ठरोगसंक्रान्त, जिसके कोढ़ रहे।

कोण (सं० पु०) कुणति वादयत्यनेन कुणति वादयति वा कुण शब्दे करणे घञ् कर्तरि अच् वा। १ वीणादिवादन; मिजराब, कमानी, गज, चोब। २ अस्त्र आदिका अग्रभाग, नश्तर या हथियार वगैरहकी नोक। इसका संस्कृत पर्याय—पालि, अश्रि और कोटि है। ३ विदिक, दो दिशावोंके मध्यस्थ दिशा। जैसे—अग्नि, नैर्ऋत आदि। ४ गृहादिका एक देश, मकान वगैरहका एक हिस्सा। ५ लगुड़, लकड़ी, सेंटा। ६ मङ्गलग्रह। ७ शनि। ८ दो सरलरेखाओंके वक्रभावसे मिलनेका स्थान, कोना, गोशा।

"बिन्दुत्रिकोण-वसुकोण-दशारयुग्मम्।" (तन्त्रसार)

कोणकुण (सं० पु०) कोणे मस्तकदेशे कुणति वलति, कुण-क। १ उत्कुण, जूं। २ मत्कुण, खटमल, खटकीरा।

कोणवादी (सं० पु०) शिव।

कोणवृत्त (सं० क्लो०) देशान्तर वृत्तविशेष, कोनेका एक घेरा। यह उत्तरपूर्वसे दक्षिण-पश्चिम अथवा उत्तर-पश्चिमसे दक्षिण-पूर्वको चलता है।

कोणशङ्कु (सं० पु०) सूर्यका अवस्थानविशेष, सूरजका एक ठहराव। इसमें सूर्य कोणवृत्त और उन्मण्डल दोनोंसे अलग रहता है।

कोणस्पृग्वृत्त (सं० क्लो०) कोणस्पर्श करनेवाला वृत्त, जो घेरा कोनेसे मिला हो।

कोणाकोणि (सं० अव्य०) १ कोनेसे कोने तक, तिरछा।

कोणाघात (सं० पु०) वाद्यविशेष, एक बाजा। इसमें एक लाख ढक्का और दश सहस्र भेरी एककाल ही बजाते हैं।

कोणार्क (सं० पु०) उड़ीसाके पुरी जिलेका एक प्राचीन ग्राम और सूर्यक्षेत्र। यह अक्षा० १९° ५३´ उ० तथा देशा० ८६° ६´ पू० पर जगन्नाथपुरीसे ८॥ कोस उत्तर-पश्चिम समुद्रके तीर अवस्थित है।

इसका ब्रह्मपुराणमें 'कोणादित्य', साम्बपुराणमें 'मित्रवन', कपिलसंहितामें 'अर्कक्षेत्र', वा 'मैत्रेयवन', पुरुषोत्तमपद्धतिमें 'कोणार्क' और उत्कलकी मादला-पञ्जीमें 'पद्मक्षेत्र' नाम लिखा है।

साम्बपुराणमें कहते हैं-'किसी समय नारद द्वारका-पुरी गये थे। वहां सभी यदुकुमारोंने पाद्य-अर्घसे उनकी यथेष्ट पूजा की। परन्तु जाम्बवतीसुत साम्बने नारदका वैसा सम्मान न किया। इस पर देवर्षिने अत्यन्त क्रुद्ध हो कर श्रीकृष्णसे कहा था—"आपके पुत्र साम्ब अतिशय रूपगर्वित हैं, तुम्हारी सोलहो हजार पत्नियां उनके रूप पर विमोहित हो रही है। श्रीकृष्णने कहा यह कभी नहीं हो सकता कि मेरी पत्नियां मेरे पुत्र साम्बको अनुरागिणी हों।" नारदने उत्तर दिया कि 'मैं आपको किसी दिन यह कौतूहल दिखा दूंगा।' यही बात कह कर नारद चलते बने। किसी दिन श्रीकृष्ण रैवतक गिरि पर स्त्रियोंके साथ जल-क्रीड़ा करते थे। उसी समय नारदने द्वारका पहुंच साम्बसे कहा था—'इस समय अपने पिताके पास जावो और हमारा संवाद उन्हें सुनावो, विलम्ब न होने पावे।' साम्ब नारदके कहनेसे झटपट पिताके निकट खबर देने पहुंचे। उस समय श्रीकृष्णकी पत्नियां मद्य-पानमें उन्मत्त हो जलक्रीड़ा करती थीं। एकाएक मद-नोपम साम्बकी मनोहर मूर्ति देख क्षीणबुद्धि रमणियोंको कामेच्छा हो आयी। इधर साम्बके पीछे पीछे नारद भी जा पहुंचे। उनको देख कर जैसे हो सब कूल पर चढ़ने लगीं, श्रीकृष्णने देखा कि उन सभी रमणियोंका शुक्लवास भेद करके पद्मपत्र पर मद टपक रहा है। वासुदेवने क्रुद्ध हो तत्क्षणात् उन रमणियोंको शाप दिया था—निश्चय तुम दस्युके हाथ पड़ोगी, तुम्हें स्वर्गलाभ नहीं होगा। फिर श्रीकृष्णने साम्बको सम्बोधन करके कहा—तुम्हारे हो दारुण रूपमें रमणियां मुग्ध हुई हैं, इसलिये तुम भी कुष्ठरोग भोग करोगे। उस समय साम्बने नारदके उपदेशक्रमसे इस मित्रवन-में आकर सूर्यदेवकी तपस्या की। (साम्बपुराण)

कपिलसंहितामें लिखा है—थोड़े दिनों तपस्या करने पर सूर्यदेवने साम्बको स्वप्नमें दर्शन दिया था। दूसरे दिन सवेरे वह चन्द्रभागा नदीमें स्नान करने गये। वहां उन्हें जलके मध्य पद्मपत्र पर सूर्यको प्रतिमा देख पड़ी। फिर साम्बके आमोदका क्या ठिकाना था। महा-हर्षसे स्नान करके उक्त प्रतिमाको ले जाकर उन्होंने स्थापन कर दिया। उसकी पूजा करते ही साम्ब सब रोगोंसे मुक्त हो गये। (कपिलसंहिता ६।२३-३४)

साम्बपुराणके मतमें सूर्यदेवकी द्वादशी मूर्तिका नाम मित्र है। वह संसारकी भलाईके लिये चन्द्रनदी-के तीर रह केवल वायु आहार करके कठोर तपस्या करते, नानाविध वर देते और भक्तों पर अनुग्रह रखते हैं। यही सूर्यदेवका आदिस्थान था, जिसे साम्बने पीछे निर्माण किया। मित्रके रहनेसे ही यह स्थान मित्रवन कहलाता है। (साम्बपुराण, ४। २०-२२)

कपिलसंहिता कहती है—मैत्रेय नामक वन मैत्रेयको तपस्यासे मिला है। यहां आने पर मानव सत्वर महारोगसे मुक्त हो जाता। (कपिलसंहिता ६। ३७)

साम्बपुराणके २५वें अध्यायमें लिखा है—साम्बने चन्द्रभागा नदीमें स्नान करने जा जलके स्रोतमें सूर्यकी प्रभामयी प्रतिमा देखी थी। उसी प्रतिमाको मित्रवनमें ले जाकर उन्होंने यथाविधान स्थापन किया। फिर वह रविको प्रणाम करके पूछने लगे—प्रभो! आपकी यह मङ्गलमयी आकृति किसने बनायी है? प्रतिमाने उत्तर दिया—'पूर्वकालको हमारी एक तेजोमयी मूर्ति थी, जो देवतावोंके लिये असह्य रही। उन्होंने प्रार्थना की, कोई ऐसी मूर्ति होती, जिसे सभी आनन्दसे देख सकते। प्रथम महातपा विश्वकर्माने शाकद्वीपमें हमारी शान्तमूर्ति निर्माण की थी, पीछे हिमवान्‌के पृष्ठपर कल्पवृक्षसे यह मूर्ति निर्मित हुई। तुम्हारे ही उद्धारार्थ हमने चन्द्रभागा नदीमें, अवतरण किया है।' फिर साम्बने नारदसे पूछा था—आपके ही अनुग्रहसे मैंने भास्करदेवका प्रत्यक्ष दर्शनलाभ किया है, अब इस देवप्रतिमाकी किससे परिचर्या कराना चाहिये। नारदने कहा—आजकल अधिकांश ब्राह्मण देवल और लोभमोहित हैं, ऐसे ब्राह्मण सूर्यपूजाके लिये उपयुक्त नहीं। साम्ब विषम विपद्में पड़ गये और कुछ भी स्थिर कर न सके—किस पर देवसेवाका भार अर्पण किया जावे। उन्होंने फिर प्रतिमासे जिज्ञासा की—प्रभो! कौन ब्राह्मण आपकी परिचर्या करेंगे? सूर्यदेवने उत्तरमें कहा था—जम्बूद्वीपमें हमारी परिचर्या करनेको उपयुक्त लोग नहीं हैं। शाकद्वीपसे हमारे पूजापरायण व्यक्तियोंको ले आवो। शाकद्वीपमें मग, मामग, मानस और मन्दग चार जातियोंका वास है। उनमेंसे हमारी पूजाके लिये मग ब्राह्मणोंको यहां लाना चाहिये। कारण मग लोग ब्राह्मण, मामग क्षत्रिय, मानस वैश्य और मन्दग शूद्र हैं। उनमें कोई सङ्करवर्ण अथवा आश्रमविभाग नहीं है। पूर्वकालको हमारे तेजःसे वह निर्मित हुये हैं। हमने उन्हें सरहस्य चार वेद प्रदान किये हैं।

सूर्यके आदेशसे साम्ब गरुड़ पर चढ़ शाकद्वीप पहुंचे और वहांसे स्त्रीपुत्रोंके साथ १८ वेदवादी मग ब्राह्मण ले आये। यही मग ब्राह्मण सूर्यदेवकी परिचर्यामें लगे थे।

कपिलसंहितामें कहा है—साम्ब प्रासाद निर्माणपूर्वक उसमें सूर्यप्रतिमा स्थापन करके फिर द्वारका चले गये।

ब्रह्मपुराण (२६ अध्याय), साम्बपुराण और कपिलसंहितामें इस रविक्षेत्रका माहात्म्य विस्तृतभावसे वर्णित है।

साम्बपुराण (४२ अ०) के मतमें यह पुण्यस्थान सर्वपापहर, पुण्यप्रद, सर्वतीर्थमय और मङ्गलप्रद है। प्रातःकालको यहां जो व्यक्ति सूर्यका मुखकोर दर्शन करता, उसको कभी रोग, शोक और भय नहीं रहता।

कपिलसंहितामें लिखित है—रमणीय मैत्रेयवनमें जो देह परित्याग करता, वह सभी पापोंसे मुक्त हो ज्योतिर्लोक पहुंचता है। फिर रविवारको रविक्षेत्रमें समाहितचित्त एवं भक्तिभावसे रविकी प्रतिमा दर्शन करनेसे सूर्यलोक मिलता है।

रघुनन्दनको पुरुषोत्तम-पद्धतिमें निम्नलिखित पुराणोद्धृत वचन आया है—जो मुक्ति चाहते, उनके लिये विरजा, एकाम्र, कोणार्क और पुरुषोत्तमक्षेत्र—सिद्धिस्थानको सिद्धियां समझना चाहिये। इस कोणार्कक्षेत्रमें दूसरे भी बहुतसे प्राचीन तीर्थ रहे। उनके मध्य कपिलसंहितामें मङ्गलतीर्थ, शाम्भलोभाण्डतीर्थ, सूर्यगङ्गा, चन्द्रभागा, रामेश्वर और अर्कवटका उल्लेख मिलता है। कपिलसंहिताके मतमें इस क्षेत्रके सभी क्षेत्र पुण्यप्रद हैं, विशेषतः सागरतीर्थ सर्वापेक्षा श्रेष्ठ कहा गया है। (कपिलस० ६।४८)

पूर्वकालको अति पुण्यस्थान रहनेसे जहां सैकड़ों तीर्थयात्री आते और जिसको समुच्च मन्दिर चूड़ा सागरयात्रियोंके बहुत दूरसे नयन मन आकर्षण करती थी, आज उसी पवित्र स्थानके तीर्थ एक प्रकार विलुप्त हैं, समुच्च देवालय विध्वस्त हैं और जनाकीर्ण पुण्यभूमि हिंस्र जन्तुवों द्वारा अधिकृत है। परन्तु इस निर्जन पुण्यक्षेत्रके ध्वंसावशेषमें इस समय भी जो देख पड़ता, बहुत अल्प नहीं लगता। उसको देखते ही क्या पुराविद्, क्या शिल्पी, क्या स्थपति, क्या स्वधर्मी और क्या विधर्मी सभी मुक्तकण्ठसे भूयसी प्रशंसा

करने लगते हैं। प्राचीन शिल्पनैपुण्यसे सबका मन आकृष्ट हो जाता है। आज भी कोणार्क में सूर्यदेवका जो प्राचीन भग्न मन्दिर है, उसकी निर्माणप्रणाली और अवस्थिति परिदर्शन करनेसे ओडीशका सुवृहत् मन्दिर सामान्य-जैसा समझ पड़ता है। यदि कहीं भारतीय शिल्पनैपुण्यका उज्ज्वल उदाहरण है, तो इसी रविक्षेत्रमें झलकता है। सूर्यदेवका यह मन्दिर देख प्रधान प्रधान पाश्चात्य शिल्पी विस्मित हुये हैं। १२०० और १२०४ शककी गङ्गवंशीय उत्कलराज नरसिंहदेवने इसे बनवाया था। इस मन्दिरको देख कर प्रायः ३०० वर्ष पूर्व अबुलफजल लिख गये हैं—जगन्नाथके पास ही सूर्यमन्दिर है। इस मन्दिरको बनानेमें उड़ीसा राज्यके १२ वर्षोंका सब राजस्व खर्च हुवा था। ऐसा कौन है, जो सबड़ी इमारतको देख कर चौंक न उठेगा। इसके चारो ओरकी दीवार १५० हाथ ऊंची और १९ हाथ मोटी है। बड़े दरवाजेके सामने काले पत्थरका एक ५० हाथ ऊंचा खंभा है। इसकी ९ सिढ़ियां चढ़नेसे पत्थरके ऊपर खुदे सूरज और सितारे देख पड़ते हैं। मन्दिरकी दीवारों पर चारो ओर बहुतसी जातियोंके उपासकोंकी मूर्तियां हैं। उनमें कोई बैठा, कोई मत्थे पर हाथ रखके खड़ा, कोई रोता, कोई हंसता, कोई मानो होशमें, कोई बेहोश-जैसा, कोई गाता और कोई नाचता है। ऐसे भी कई जानवरोंकी मूरतें हैं जो खयालमें नहीं आते। इस बड़े मन्दिरके पास दूसरे भी २८ मन्दिर हैं। लोग कहते हैं कि सभी मन्दिरोंमें अनहोनी बातें हुवा करती हैं।
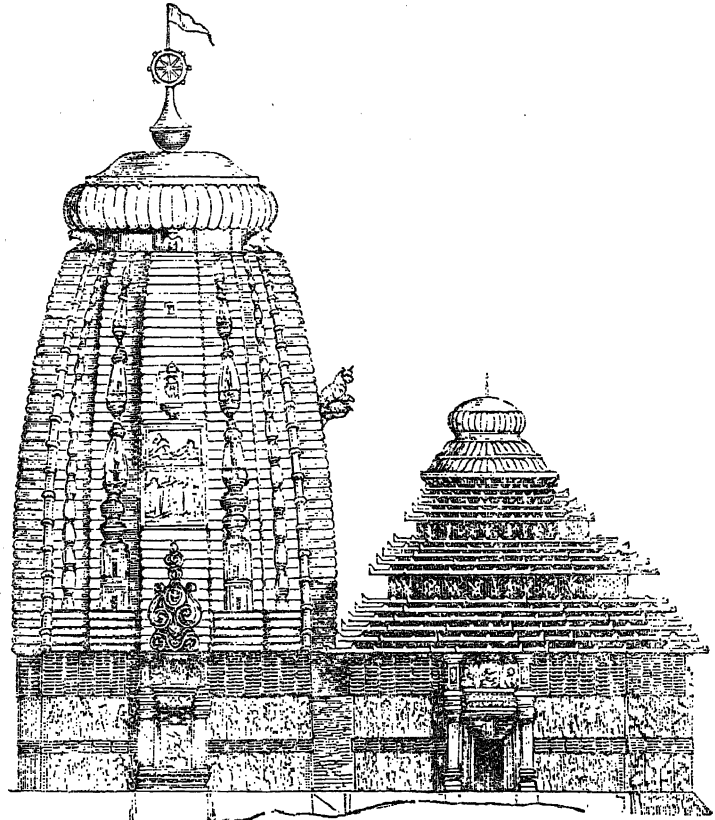
कोणार्कका मन्दिर।

आईन-अकबरीमें तीन सौ वर्ष पहले जो बातें लिखी गयी हैं, इस समय वह समस्त लुप्तप्राय हैं, केवल प्रधान मन्दिर सम्पूर्ण नष्ट नहीं हुवा है। ग्रामवासी बतलाया करते हैं—पहले इस मन्दिरकी चोटी पर 'कुम्भर-पाथर' नामक एक बहुत बड़ा पत्थर रहा। उसकी आकर्षणी शक्तिके प्रभावसे सैकड़ों अर्णवयान (जहाज या नाव) यहां टकरा कर विपर्यस्त हो गये हैं। घटनाक्रमसे एक मुसलमान या मन्दिर तोड़के वह

अपूर्व पत्थर निकाल ले गया। उसके पीछे यहांके पण्डे भी इस पुण्यभूमिको छोड़ देवमूर्ति उठा कर पुरीको चलते बने। वहां सूर्यमन्दिरमें उक्त विप्रतिमा विराजमान है। फिर मराठे यहांके प्राचीर आदि तोड़ श्रीक्षेत्रमें कई मन्दिर बनानेके लिये साज सामान उठा ले गये।

सब कुछ निकल जाते भी जो बचा है, हिन्दू-शिल्पियोंके एकान्त आदर और गौरवकी चीज है। बहुतसे लोग कहते हैं—हिन्दू कारीगर सजधजमें तो होशियार होते हैं, किन्तु शारीरविज्ञानमें अज्ञ रहनेसे प्रकृत देहका ठीक सौन्दर्य परिस्फुट करना नहीं जानते। हमारा अनुरोध है कि ऐसी बात कहनेवालोंको एक बार कोणार्कका टूटा मन्दिर आकर देख जाना चाहिये। यहां सजीव प्रतिमूर्तियोंका अभाव नहीं है। क्या मानव, क्या पशु सभीके अङ्ग प्रत्यङ्गका बेलाग काम यहां देख सकेंगे। राजचक्रवर्तीसे कुटीरवासी भिक्षु पर्यन्त सबकी अवस्था, सबका हावभाव, सबका वाह्य आचार व्यवहार जिस कौशल और सोच विचारसे अङ्कित हुवा है, उससे पुराने हिन्दू शिल्पियोंकी असाधारण चमता झलक रही है।

साम्बपुराणके ४१ वें अध्यायमें साम्बके सूर्यप्रतिमा प्रतिष्ठा करने पर नानाजाति मानव, देव, ऋषि, सिद्ध, गन्धर्व, यक्ष, रक्ष, दिक्पाल, लोकपाल, उरग, गुह्यक प्रभृतिके आगमनकी कथा लिखी है। यहां वह सभी मूर्तियां अङ्कित वा खोदित देख पड़ती हैं। नवग्रह, उपग्रह और भगवान्की ऐसी मूर्ति, सन्देह है, भारतमें किसी दूसरे स्थान पर मिलेगी या नहीं। *

कोणि (सं० त्रि०) कुण-इन बाहुलकात् गुणः। टेढ़े हाथवाला।

कोणी (सं० त्रि०) १ टेढ़े हाथवाला। २ कोणयुक्त, कोना रखनेवाला।

कोणेर आचार्य—हयग्रीवदण्डक नामक संस्कृत ग्रन्थके रचयिता।

कोणेरभट्ट—विष्णुके पुत्र और रुद्रभट्टके पिता।

कोणेरी—खेटबोध नामक ज्योतिःशास्त्रके रचयिता।

कोण्डपल्ली—मन्द्राज-प्रान्तके कृष्णा जिलेका बेजवाड़ा तालुकका एक प्राचीन नगर। मुसलमानोंके आधिपत्य कालको कोण्डपल्ली नामकी एक सरकार रही। यह उसीको प्रधान नगरी थी। कोण्डपल्ली अक्षा० १६° ३७' उ० और देशा० ८०° ३३' पू० पर अवस्थित है। लोकसंख्या लगभग ४७९८ है। पहले यहां हिन्दू राजावोंका अधिकार था। १४७१ ई० में मुहम्मदशाह बाह्मनीने इस स्थानको अधिकार किया। उसके पीछे १५१६ ई० को सुलतान अली-खान्ने यहां फिर हिन्दुवोंको हरा समस्त कृष्णा जिला ले लिया था। १७६५ ई० को कोण्डपल्ली अंगरेजोंको अधिकृत हुई।

कोण्डभट्ट—१ कोई विख्यात संस्कृत शास्त्रज्ञ पण्डित। यह रंगोजी भट्टके पुत्र और भट्टोजी दीक्षितके भ्रातुष्पुत्र रहे। इन्होंने तर्करत्न, न्यायपदार्थदीपिका, वैयाकरणसिद्धान्तभूषण, वैयाकरणसिद्धान्तभूषणसार, वैयाकरणसिद्धान्तदीपिका, स्फोटवाद और राजा वीरभद्रके आदेशसे तर्कप्रदीप रचना किया। २ व्रतराज नामक संस्कृत ग्रन्थ बनानेवाले।

कोण्डवीड़ु—मन्द्राज-प्रान्तके गुण्टूर जिलेका नरसरावपेट तालुकका एक गिरिदुर्ग और नगर। यह अक्षा० १६° १६' उ० और देशा० ८०° १६' पू० पर दाहने अवस्थित है। लोकसंख्या लगभग १९७५ है। १३२३ ई०को मुसलमानोंके हाथ ओरङ्गलके गणपतिराजके परास्त होने पर दाक्षिणात्यके पूर्व उपकूलस्थ रेड्डि उपाधिधारी मण्डलेश्वरोंने प्राधान्य लाभ किया था। उनमें कोण्डवीड़के रेड्डि श्रेष्ठ प्रधान रहे। उनके समय कोण्डवीड़ु एक स्वतन्त्र स्वाधीन राज्यमें परिणत हुवा। खृष्टीय चतुर्दश शताब्दीके प्रथम भागमें दोन्तअल्ला रेड्डिने सर्वप्रथम राज्य स्थापन किया था। फिर प्रलयवेम रेड्डिने कोण्डवीड़में पुख्त कोट बनाया। १४२७

---

* कोणार्कक्षेत्रकी वर्तमान अवस्था जो सुविशेष जानना चाहते हैं, निम्नलिखित ग्रन्थ पाठ करें—

Asiatic Researches, Vol. XV. 326-333; Hunter's Statistical Account of Bengal, Vol. XIX. 85-91; Hunter's Orissa, Vol II; Raja Rajendra Lal Mitra's Antquities of Orissa, Vol. II और कोणार्कमाहात्म्य।

ई० को मुसलमानोंके हाथों रेड्डिराज राचके जब परास्त हुये, यह स्थान गजपति-राजाके अधिकारमें चला गया। १५१५ ई० को विजयनगरके अधिपति कृष्णदेव-रायने वीरभद्र गजपतिको परास्त करके १५२१ ई० को यहां एक सुबृहत् देवमन्दिरकी प्रतिष्ठा की। विजयनगर-पति सदाशिव रायके राजत्वकाल काण्डनवोलि राम-राजके पौत्र विट्ठलदेव यहांके शासनकर्ता थे। १५८० ई० को स्थानीय सूबेदारकी विश्वासघातकतासे कोण्ड-वीडु गोलकुण्डाधिप इब्राहीम कुतुबशाहके अधीन हुवा।

कोतल (फा० पु०) १ सुसज्जित तथा आरोही-रहित अश्व, बेसवारका कसा हुवा घोड़ा। कोतल घोड़े किसी जुलूसमें देखावाके लिये निकाले जाते हैं। (वि०) २ बेकाम, निठल्ला।

कोतलगारद (अ० पु० Quarter Guard.) सेनावासका एक स्थान, छावनीकी कोई जगह। यहां सर्वदा गारद रहती और दलेलवालोंकी देखरेख चलती है।

कोतवार—युक्तप्रदेशकी एक जाति। मालूम पड़ता है कि यह कोतवालका अपभ्रंश है। यह लोग मिर्जापुर जिलेमें पाये जाते हैं।

कोतवाल (हिं० पु०) १ नगरपाल, शहरका बड़ा थाने-दार। नगरकी रक्षाका कार्य इसके अधीन रहता है। मुसलमानोंकी अमलदारी और अंगरेजी राजत्वके प्रारम्भ-में कोतवाल ही भारतके किसी नगरमें प्रधान पुलिस कर्मचारीका काम करता था। उसकी क्षमता भी बहुत रही। २ प्रबन्धक, सरबराहकार।

कोतवाली (हिं० स्त्री०) १ कोतवालके रहनेकी जगह, शहरका बड़ा थाना। २ कोतवालका काम या दरजा।

कोतवालेश्वर (हिं० पु०) युक्तप्रदेशके कानपुर नगरकी एक प्रसिद्ध शिवमूर्ति। इनका मन्दिर चौकमें बना है। पहले मन्दिरके पास कोतवाली रहनेसे ही यह नाम निकला है।

कोताही (फा० स्त्री०) कमी, घाटा।

कोतुनचगि—धारवाड़का एक बड़ा गांव। यह गदग नगरसे ७ कोस उत्तरपूर्व अवस्थित है। यहां एक भग्न-दुर्ग और सोमदेवका मन्दिर विद्यमान है। इस मन्दिर-में १०३४ और १०६४ शकको खोदित दो शिला-लिपियां लगी हैं।

कोतुल—बम्बई प्रान्तके अहमदनगर जिलेका एक शहर। यह अकोला उपविभागका द्वितीय नगर है लोकसंख्या प्राय: २२६० होगी। बुधवारको बड़ा साप्ता-हिक बाजार लगता है। माल आने जानेकी सुविधा रहनेसे कोतुलका व्यापार बढ़ रहा है।

कोत्तूरु—मन्द्राज प्रान्तीय बेल्लारी जिलेके कूदिगी तालुक-का एक शहर। लोकसंख्या प्राय: ६९८६ है। यह लिङ्गायतोंका केन्द्रस्थान है। यहां उनके गुरु बसवलिङ्ग स्वामी रहते थे। लम्बे कानाड़ी पुराण में उनकी पूरी कथा लिखी है। नगरको पूर्व ओर उनका समाधि है। नगरको चारो ओर पत्थरकी चहार दीवारी खिंची है। बड़े दरवाजेके पश्चिम गजलक्ष्मीकी आकृतिहीन प्रतिकृति है। कहते हैं—बसप्पाने यहांके जैनोंको शास्त्रार्थमें जीत लिङ्गायत बनाया और अपने प्रधान मन्दिरमें लिङ्ग लगाया था। यहां सूती कपड़े खूब बुने जाते हैं।

कोथ (सं० पु०) कुथ्यते पूतिस्त्वं गमयते अनेन, कुथ-घञ्। १ नेत्ररोगभेद, कुथुवा। यह आंखकी पलकके भीतर होता है। कुथयति गुदं चिणोति, कुथ कर्तरि अच्। २ भगन्दररोग। मांसलुब्ध व्यक्तिके अन्नके साथ अस्थि भक्षण करनेसे वह जीर्ण नहीं होता, पुरीषके साथ गुह्यदेशमें उत्तर वक्र भावसे अवस्थिति करता और बाहर नहीं निकलता और धीरे धीरे क्षत उठता है। फिर इसीसे भगन्दर हो जाता है। ३ पूतीभाव, पीब। ४ दुर्गन्धक्लेद, बदबूदार मवाद। ५ पाक, पकाई। (त्रि०) ६ गलित, बहनेवाला। ७ मथित, मथा हुवा। ८ शठित।

कोथमीर (हिं० पु०) हरा धनिया।

कोथरा—बम्बई प्रान्तके कच्छ जिलेका एक नगर। लोक-संख्या प्राय: ३६७३ है। यहांके लोगोंने बम्बई, जञ्जी-बार और व्यापारके दूसरे केन्द्रोंमें खूब रुपया कमाया है। कोथरामें अच्छे अच्छे मकान, मन्दिर और तलाव बने हैं। १८६१ ई० को यहां कच्छका सबसे उमदा मंदिर तैयार हुवा। शान्तिनाथका जैन-मन्दिर अहमदाबादके

मन्दिर जैसा बनाया गया है। इसी मन्दिरकी दालानके नीचे जमीन खोद कर भी एक छोटा मन्दिर निर्मित हुआ है। उसमें कोई सङ्गमरमरकी २५ मूर्तियां हैं, जिनकी आंखों, छातियों और हाथों पर बहुमूल्य रत्न जड़े हैं। सिवा इसके एक चोरखाना भी आपत्कालके लिये बना है।

कोथला (हिं० पु०) १ थैला। २ उदर, पेट।

कोथली (हिं० स्त्री०) लम्बी थैली। इसमें रुपये आदि भर कर कमरमें बांध लेते हैं।

कोथी (हिं० स्त्री०) मयानकी साम। यह धातुका एक छल्ला है, जो तलवारके मयानके सिरे पर लगता है।

कोद (हिं० स्त्री०) १ दिक्, तरफ। २ कोण, कोना।

कोद—बम्बई-प्रदेशके धारवाड़ जिलेका दक्षिण-पश्चिम सीमास्थ एक उपविभाग। यह अक्षा० १४° १७' तथा १४° ४३' उ० और देशा० ७५° १०' एवं ७५° ३८' पू०के बीच पड़ता है। इसके उत्तर हाङ्गल तथा करजगि, पूर्व रानीबेन्नुर और दक्षिण एवं पश्चिम महिसुर-राज्य है। भूमिका परिमाण ४०० वर्गमील, ग्रामसंख्या २०४, लोकसंख्या ८४४२७ और वार्षिक राजस्व २ लाख ३ हजार है।

कोद उपविभाग छोटे छोटे पर्वतों और सरोवरोंसे समाकीर्ण है। एक एक सरोवरका दैर्घ्य प्रायः कोस डेढ़ कोस होगा। आनगुण्डी राजावोंके समय यह सब तालाब बने थे। इस स्थानका अधिकांश सजल है। उसमें ईख और धानकी उपज बहुत है। यहांकी मट्टी लाल है। परन्तु पश्चिमांशमें कुछ सरस काली मट्टी भी मिलती है।

छोटे छोटे पहाड़ोंमें झाड़ी और घास भरी है। उसमें कोई हिंस्रजन्तु नहीं रहता। परन्तु कभी कभी झाड़ीमें शेर आ जाता है। पहाड़ोंमें मारावलि ही बड़ा और ४०० हाथ ऊंचा है। ग्रीष्म और वर्षाकालको यहांका जलवायु कुछ कुछ स्वास्थ्यकर होते भी शीतकालको ज्वरादिका अधिक प्रादुर्भाव होता है। पांच वर्षके अन्तरसे एक बार भयंकर हैजा फूटा करता और बहुतसे लोगोंको मरना पड़ता है।

कोदमें तुङ्गभद्रा, वरदा, और कुमुदती नदियां ही प्रधान हैं। तुङ्गभद्रा दक्षिण-पूर्वको और कुमुदती नदी महिसुरके मदक ह्रदसे निकल इस विभागके पूर्वांशको प्रवाहित है।

यहां लालमिर्च, बाजरा, जुवार, धान, गेहूं, मटर, मूंग, राई, तिल, ईख आदिकी उपज अधिक हैं।

२ कोद विभागका एक प्रधान ग्राम। यहां प्रति मास प्रायः दो हजारके चावल और लालमिर्चकी बिक्री होती है। स्थानीय हनुमान् मन्दिरमें प्राचीन कर्णाटी भाषाकी एक शिलालिपि लगी है।

कोददत (हिं० पु०) कोद्रव दलनेवाला।

कोदई (हिं०) कोद्रव देखो।

कोदईकानल—मन्द्राज-प्रान्तीय मदुरा जिलेका एक छोटा तालुक। कोदईकानलमें इसका सदर मुकाम है। लोकसंख्या १८६७७ और राजस्व ४२०००) रु० है। गेहूं, लहसुन, कहवा और इलायची यहां खब उपजती है। लोगोंमें शिक्षाका प्रचार कम है।

कोदईकानल—मन्द्राज-प्रान्तीय मदुरा जिलेके कोदईकानल तालुकका सदर मुकाम। यह अक्षा० १४° १४' उ० और देशा० ७७' २९' पू० में पालनी पर्वत पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः १९१२ है। परन्तु स्वास्थ्यकर स्थान होनेसे गर्मीमें इसकी आबादी बहुत बढ़ जाती है। १८९९ ई० को यहां म्युनिसपालिटी पड़ी थी। ७००० फुट ऊंचे सानिटोरियम खड़ा है। पहाड़ोंके बीच एक उमदा तालाब बना लिया गया है। यहांकी आबहवा भारतकी किसी भी जगहसे खराब नहीं। इसकी चारो ओर साफ जमीन हरी भरी है और बारामासी झरने बहा करते हैं। साउथ इण्डियन रेलवेके अम्मयनाद-कनूर ष्टेशनसे पर्वत ३३ मील पड़ता, जहांसे बैलगाड़ीमें बैठ कर यात्री आया जाया करते हैं। घोड़ेकी राह ११ मीलमें ६००० फुट ऊंचे चढ़ती, जिस पर किसी किस्मकी गाड़ी चल नहीं सकती। ष्टेशनके पास कोदईकानल आवसरवेटरी (वेधग्रहशाला) समुद्रपृष्ठसे ७७०० फुट ऊंचे स्थापित है।

कोदकार (सं० पु०) अश्वाकारमृगभेद, घोड़े-जैसा एक हिरन।

कोदङ्गल—हैदराबाद-राज्यके गुलबर्ग जिलेका पूर्वीय

तालुक। इसका क्षेत्रफल २११ वर्गमील और लोक-संख्या ६२०८१ है। तालाबोंको सींचसे धान बहुत होता है। इसमें तांदूर और कोसगी दो तालुक जागीरी हैं।

कोदङ्गल—हैदराबाद-राज्यस्थ गुलबर्ग जिलेके कोदङ्गल तालुकका सदरमुकाम। यह अक्षा० १७° ७´ उ० और द्राघि० ७७° ३८´ पू० में निजाम ष्टेट रेलवेके तांदूर ष्टेशनसे १२ मील दक्षिणको पड़ता है। आबादी ५०८८ है। इसमें एक मसजिद है जो ३०० वर्षकी पुरानी बतलायी जाती है।

कोदण्ड (सं० पु०-क्ली०) कु शब्दे विच् कोः शब्दायमानो दण्डो यस्य, बहुव्री०। १ धनुष, कमान। कोदण्डं धनुः तत्तुल्यं आकारो विद्यतेऽस्य, बहुव्री०। २ भ्रू, भौंह। ३ जनपदविशेष, कोई देश। ४ धनुराशि।

कोदमगि—बम्बई-प्रदेशके धारवाड़ जिलेका एक ग्राम। यह कोदगांवसे ५॥ कोस दक्षिण अवस्थित है। यहां बयला बसप्पा और सिद्धरामेश्वर देवका मन्दिर है। प्रथम मन्दिरमें १०१८ और शेषोक्तमें १००२ शककी खोदित शिलालिपि लगी है।

कोदरा (हिं०) कोद्रव देखो।

कोदरेता (हिं० पु०) कोद्रव दलनेकी चक्की। यह प्रायः चिक्कण मृत्तिका द्वारा निर्मित होता है।

कोदव (हिं०) कोद्रव देखो।

कोदवला (हिं० स्त्री०) तृणभेद, एक घास। यह कोद्रव जैसी होती है। इसके कोमल पत्र चौपाये रुचिपूर्वक भक्षण करते हैं।

कोदार (सं० पु०) ईषदुदारः कोः कादेशः। धान्यविशेष, एक अनाज। "न ग्राह्यं सर्वं श्यामाधवरकोदारकोद्रवम्।"

(कात्यायन ११६।८)

कोदीनार—बड़ोदा राज्यस्थ अमेरेली-प्रान्तके कोदीनार तालुकका सदर मुकाम। यह अक्षा० २०° ४७´ उ० और द्राघि० ७१° ४२´ पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ६६६४ है। कोदीनार एक प्राचीरवेष्टित नगर है और समुद्रसे लगभग ३ मील दूर सिङ्गवाड़ नदीके दक्षिणतट पर अवस्थित है। यहांकी म्युनिसपालिटीको राज्यसे सहायतार्थं १४००) रु० वार्षिक मिलता है। कोदीनारमें मुनसिफी, मजिष्ट्रेटी, अस्पताल, देशी भाषाका स्कूल और पबलिक आफिस, बने हैं। समुद्रकी राह बम्बई, कराची, पोरबन्दर और मंगरोलके साथ व्यापार करते हैं। रूई, अनाज और घीकी रफ्तनी और गेहूं, ज्वार, कपड़े, मसाले और सूखी चीजोंकी आमदनी होती है।

कोदु—नागपुरकी एक दुर्दान्त असभ्य जाति। यह लोग गिरिवासी होते हैं। कोई कोई इन्हें कन्धजातिका शाखा समझता है।

कोदुङ्गलूर—कोचीन-राज्यका एक नगर और बन्दर। इसका दूसरा नाम कोडुङ्गरोलूर है, परन्तु युरोपीय कङ्गानोर कहते हैं। यह अक्षा० १०° १३´ ५०´´ उ० तथा द्राघि० ७६° १४´ ५०´´ पू० पर कोचीन शहरसे ८ कोस उत्तर-पश्चिम अवस्थित है। ५२ ई०को प्रथम यहां सेण्ट-टोमस आये थे। ३४१ ई० को कोदुङ्गलूरमें चेरुमल पेरुमलको राजधानी रही। ई० चतुर्थ शताब्दीसे यहूदी और नवमसे ईसाई-सम्प्रदाय यहां रहता है। इस नगरमें १५२३ ई०को पोर्तगीजोंने एक दुर्ग निर्माण किया था, जो १६६१ ई०को ओलन्दाजोंके हाथ अष्टादश शताब्दीके शेषभागमें कोचीनके देशीय राजाको किला सौंप दिया। १७७६ ई०को वह टीपू-सुलतानके अधीन हो गया था। किन्तु कोचीनके राजाने फिर अधिकार कर लिया। १७८४ ई०को टीपूने फिर उसे लेकर त्रिवाङ्कुड़ महाराजके हाथ बेच डाला, परन्तु १७८९ ई० को फिर टीपूके अधिकारभुक्त हुवा। यह नगर प्राचीन ताम्रशासनमें मूयिरि नामसे वर्णित है। प्लिनिने Muziris primum emporium Indiæ लिखा है।

कोदो (हिं०) कोद्रव देखो।

कोद्दालक, कोद्रव देखो।

कोद्रव (सं० पु०) कु-विच कोः सन् द्रवति, द्रु-अच् ततः कर्मधा०। यद्वा वायुना द्रवति, पृषोदरादिवत् पूर्वस्य ओकारः। कुधान्यभेद, कोदो। यह भारतमें प्रायः सर्वत्र उत्पन्न होता है। वृक्ष दीर्घ तृण अथवा धान्यसे मिलता जुलता है। प्रथम वृष्टि पड़ते ही कोद्रवको वपन करते और भाद्रमास काट लेते हैं। इसके

लिये उत्तम भूमि अथवा कठिन परिश्रम आवश्यक नहीं। स्थानविशेषमें कोद्रव कार्पास वा अड़हरके खेतमें बो देते हैं। यह पकनेसे कुछ पहले ही खेतसे काट लिया जाता है, कारण ऐसा न करनेसे इसके बीज खेतमें झड़ पड़ते हैं। इसकी त्वक् अलग होने पर गोल गोल चावल निकलते जो आहारादिमें व्यवहृत होते हैं। अगिया नामक तृण कोद्रवका शत्रु है। इसके साथ उसके उत्पन्न होनेसे यह भस्मीभूत हो जाता है। कोद्रव कटनेसे पहले मेघ होने पर अन्नमें विष आता है। देशविशेषमें इसके नाना भेद किये गये हैं। राजवल्लभके मतानुसार कोद्रव वातल, ग्राही, शीतल और पित्तकफघ्न है। अत्रिसंहितामें इसे रुच, रुच्य और स्वादु भी लिखा है। फिर राजनिघण्टु देखते व्रणियोंके लिये कोद्रव पथ्य है। इसका संस्कृत पर्याय—कोरदूष, कुद्रव, कुद्दाल, मदनाग्रक, कोरदुष्क, कोद्दार और कोदाल है।

कोद्रवमण्ड (सं० पु०-क्ली०) कोद्रवकृतमण्ड, कोदोका मांड। यह मूर्च्छा और ग्लानि उत्पन्न करता है। (वैद्यकनिघण्ट)

कोद्रविक (सं० क्ली०) सौवर्चललवण, सौंचर नमक।

कोद्रुभक्त (सं० पु०-क्ली०) कोद्रवान्न, कोदोका भात या दलिया। कोदोका भात रुचिकर, मधुर और प्रमेह, मूत्रदोष, तृष्णा, छर्दि, कफ, वात, आम तथा दाह-नाशक है। (वैद्यकनिघण्टु)

कोन (हिं० पु०) १ कोण, कोना। २ नौकी संख्या। यह दलालोंकी बोली है। उन्नीसकी संख्याको दलाल 'कानलाय' कहते हैं।

कोनदाने—बम्बई प्रान्तका कुलाबा जिलेके गुजरात तालुकका एक गांव। अक्षा० १८° ४८´ उ० और देशा० ७३° २४´ पू० में राजमाची पहाड़के नीचे पड़ता है। लोकसंख्या १५८ है। यहां प्राचीन बौद्ध गुहायें बनी हैं। चैत्यको लेकर कुल ४ गुहायें हैं। ई० से पहलेकी २य शताब्दीकी एक शिलालिपि मिलती जिसमें लिखा है—कान्ह,(कृष्ण)-के शिष्य बालककर्तृक निर्मित। उक्त गुहायें ई० से २५० वर्ष पहले और १०० ई० को बनी समझ पड़ती है।

कोनफल (सं० क्ली०) रक्तालु, रतालू।

कोनसिला (हिं० पु०) एक मोटी लकड़ी। यह कोनिया के छाजनमें बंडेरके सिरेसे दीवारके कोने तक तिरछी पड़ती है। कोरी इसीके सहारे लगाते हैं।

कोना (वै० त्रि०) अभिलाषी। (सामसंहिता)

कोना (हिं० पु०) १ कोण, गोशा। २ नोक, अनी। ३ पल्ला, खूट। ४ निराली जगह। ५ दलालोंकी बोली-में—चौथाई।

"लोचनजल रह लोचनकोना। जैसे परम कृपण कर सोना॥"

कोनाल (सं० पु०) वर्तिकाख्य जलपक्षी, पानीकी एक चिड़िया। इसका पुच्छ कृष्णवर्ण और उदर श्वेतवर्ण होता है। (सुश्रुत)

कोनालक, कोनाल देखो।

कोनालि (सं० स्त्री०) औषधि लताभेद, एक बूटी। यह कुष्ठविहित भक्ष्यद्रव्य है। (सुश्रुत)

कोनिया (हिं० स्त्री०) एक छाजन। इसमें बंडेरके दोनों ओर पाखोंसे अलग धरनपर रहते, जिसे कोनीसे थोड़ा दूर रखते हैं। यहांसे दीवारके कोनों तक दो धरनें तिरछा लगती हैं। कानियामें पाखेकी जरूरत नहीं पड़ती। २ पटनी, काठकी एक पटरी या पत्थरकी पटिया। इसे दीवारके कोने पर द्रव्यादि स्थापन करने को लगा देते हैं।

कोनील, कोनाल देखो।

कोनेदंड (हिं० पु०) एक प्रकारका व्यायाम या कसरत। घरके किसी कोनेमें दोनों ओरकी दीवारों पर हाथ रख जो दंड मारा जाता, कोनेदंड कहलाता है।

कोन्तल (सं० पु०) कुन्तल देशका अधिवासी। (हरिवंश

कोन्नगर—बङ्गालके हुगली जिलेका एक बड़ा गांव। यहां म्युनिसपालिटी और रेलवे ष्टेशन विद्यमान है।

कोन्नूर—बम्बई प्रान्तीय बेलगांव जिलेका गोकाक तालुक-का एक गांव। यह अक्षा० १६° ११´ उ० और देशा० ७४° ४५´ पू० के मध्य घाटप्रभा नदीके तीर पर गोकाकसे ५ मील उत्तर-पश्चिम अवस्थित है। लोकसंख्या लगभग ५६६७ है। गोकाकके जलप्रपातके पास ११श शताब्दीके कई भग्न मन्दिर हैं।

कोन्वशिर (सं० पु०) एक क्षत्रिय जाति। यह लोग ब्राह्मण शापसे वृषलत्वको प्राप्त हुए हैं। (भारत, अनु० ३५ अ०)

कोप (सं० पु०) कुप्यते कुप भावे घञ्। १ क्रोध, गुस्सा। २ प्रणयकोप, नायिकाका नायकके प्रति बनावटी क्रोध। यह शृङ्गार रसका एक अङ्ग है।

"मानः कोपः स तु द्वेधा प्रणयेर्ष्या समुद्भवः।" (साहित्यदर्पण ३)

३ धातुवैषम्यकारी विकारविशेष, भड़क।

कोपक्रम (सं० क्ली०) उपक्रम्यते कर्मणि घञ्, कस्य ब्रह्मणः उपक्रमम्, ६-तत्। १ ब्रह्माकी सृष्टि। (त्रि०) कोपस्य उपक्रमोऽस्य, बहुव्री०। २ कोपयुक्त, नाराज।

कोपड़ (हिं० पु०) पहटा, सराव।

कोपन (सं० त्रि०) कुप ताच्छिल्ये युच्। १ कोपशील, गुस्सावर। (पु०) २ असुरविशेष, कोई राक्षस। (हरिवंश ४२ अ०) ३ ग्रन्थिपर्ण, गठिवन। (क्ली०) कुप-णिच् भावे ल्युट्। ४ कोपनिष्पादन, गुस्सा दिलानेकी बात।

कोपनक (सं० पु०) १ कोपनः कोपशील इव कायति, कै-क। १ चौराख्यगन्धद्रव्य, चोवा। (त्रि०) २ कोपशील, गुस्सावर।

कोपना (सं० स्त्री०) कुप्यति, कुप ताच्छील्ये युच्-टाप्। १ कोपवता। इसका पर्याय—भामिनी, चण्डी और भीमा है। २ रक्तकरवीर, लाल कनेर।

कोपनी (हिं० क्रि०) कोपान्वित होना, गुस्सा करना।

कोपनीय (सं० त्रि०) कुप कर्मणि अनीयर्। कोपका विषयीभूत, जिस पर गुस्सा की जाये।

कोपभवन (सं० क्ली०) गृहविशेष, एक घर। जहां गुस्सेमें आकर जा बैठते उसे कोपभवन कहते हैं।

कोपयिष्णु (सं० त्रि०) कुप-णिच् बाहुलकात् इष्णुच्। कोपकारक, नाराज करनेवाला।

कोपर (हिं० पु०) १ पात्रविशेष, एक प्रकारका थाल। यह पीतल या किसी दूसरे धातुका बनता और धरने-उठानेके लिये एक ओर कुण्डा लगता है। २ टपका, डालका पका आम।

कोपरगांव—बम्बई-प्रदेशके अहमदनगर जिलेका एक उपविभाग। यह अक्षा० १९° ३५´ एवं १९° ५९´ उ० तथा देशा० ७४° १५´ तथा ७४° ४५´ पू०के मध्य अवस्थित है। इसके उत्तर नासिक उपविभाग, पूर्व निजाम राज्य, दक्षिण-पूर्व नेवास, दक्षिण राहुरि तथा सङ्गमनेर और पश्चिम सङ्गमनेर एवं सिन्नर उपविभाग है। भूमिका परिमाण ५१९ वर्गमील है। लोकसंख्या प्रायः ७३५३९ है।

यहां मट्टी काली है और पहाड़ कहीं नहीं। गोदावरीके तटको छोड़ कर दूसरी जगह वैसे पेड़ भी नहीं देख पड़ते। यहां गोदावरी, गोदावरीकी शाखा गुई, अगस्ति, नरन्दि, कोल, जाम और काट नदी प्रवाहित है। ज्वार, बाजरा, कुलथी, मूंग, तिल, अलसी, ईख, गांजा, तम्बाकू और मकई बहुत होती है। धौंद और मनमांड ष्टेट रेलवे कोपरगांवसे निकल गयी है। महमदापुर, कोपरगांव और रहाटा प्रधान नगर हैं।

२ कोपरगांव उपविभागका प्रधान नगर। यह अक्षा० १९° ५४´ उ० तथा देशा० ७४° २३´ पु० पर गोदावरी नदीके उपकूल मालगांवकी सड़कके किनारे अवस्थित है। कोपरगांव नगर पेशवा रघुनाथ रावको बहुत अच्छा लगता था। उनके राजभवनमें आजकल गवर्नमेण्टका स्थानीय प्रधान कार्यालय खुल गया है। इस नगरसे डेढ़ कोस दूर हिङ्गनी नामक स्थानमें रघुनाथका अति सुन्दर समाधि-मन्दिर बना है। कोपरगांवके क्षुद्र द्वीपमें प्राचीन राजप्रासादके निकट कचेश्वर और शुक्रेश्वर देवका मन्दिर है। कच और शुक्रकी मूर्ति प्रस्तरमय तथा पास ही पास अवस्थित है। बहुतसे लोग इन दोनों मूर्तियोंकी पूजा किया करते हैं। कच और शुक्र देखो।

कोपल (हिं० स्त्री०) पल्लव, नयी पत्ती।

कोपलता (सं० स्त्री०) कर्णस्फोटालता, कनफोड़ी बेल।

कोपली (हिं० वि०) बैंगनी, कोपलका रंग रखनेवाला। (पु०) २ बैंगनी या काला-लाल रंग। यह मजीठ और नीलके मेलसे बनता है।

कोपवती (सं० स्त्री०) कोप अस्त्यर्थे मतुप् मस्य वः स्त्रियां ङीष्। कोपयुक्त स्त्री, नाराज औरत।

कोपवान् (सं० त्रि०) कोपयुक्त, नाराज।

कोपागञ्ज—युक्तप्रदेश-आजमगढ़ जिलेकी घोसी तहसीलका शहर। यह अक्षा० २६° १´ उ० और देशा० ८३° २४´ पू० पर गाजीपुरसे गोरखपुर जानेवाली पक्की राह पर अवस्थित है। वहां रेलवेका एक जङ्कशन है।

लोकसंख्या लगभग ७०३९ है। यह शहर आजमगढ़के राजा इरादत् खाननें अति पुराकालको बसाया था। इस शहरकी आमदनी १२००) रु० है। वहां चीनी और अनाजकी तिजारत चलती है।

कोपाल (सं० त्रि०) कोपयुक्त, नाराज।

कोपित (सं० त्रि०) कुप-णिच् क्त। क्रुद्ध, नाराज।

कोपिन (सं० पु०) जलकपोत, पानीके पास रहनेवाली एक चिड़िया।

कोपी (सं० पु०) अवश्यं कुप्यति, कुप आवश्यके णिनि। आवश्यकाधमर्ण्ययोर्णिनि। पा ३।३।१७०। १ जलपारावत, दरयायी कबूतर। (त्रि०) २ कोपविशिष्ट, नाराज। ३ कोपोत्पादक, भड़कानेवाला।

कोप्पकेशरी—कुलोत्तुङ्ग चोलका नामान्तर। कुलोतुङ्ग देखो।

कोप्पचोर—ब्रह्मपुत्र नदके उत्तर कूल पर रहनेवाली एक असभ्य जाति। यह लोग अका प्रभृति जातियोंके साथ बसते हैं। अका देखो।

कोप्पा—महिसुरके कदूर जिलेका पश्चिम तालुक। येदेहल्ली और श्रीङ्गेरि लेके यह अक्षा० १३° १५´ एवं १३° ४६´ उ० और देशा० ७५° ५´ तथा ७५° ४५´ पू०के मध्य अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल ७०१ वर्गमील है। लोकसंख्या लगभग ६५४८३ है। इस तालुकमें तीन शहर और ४२७ गांव हैं। उसकी पश्चिम सीमा पश्चिमघाट है। इसकी पश्चिम सीमासे तुङ्गा और पूर्व सीमासे भद्रा नदी बहती है। इसका दृश्य देखने लायक है। चावल यहांका एक मात्र शस्य है।

कोफ्त (फा० पु०) जर निशान्, लोहे पर सोने या चांदीकी पच्चीकारी। (स्त्री०) २ दुःख, रंज। ३ परेशानी, उलझन।

कोफ्तगरी (फा० स्त्री०) कोफ्तगरका काम।

कोबड़ी (हिं० स्त्री०) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह ब्रह्मदेश और नेपालमें बहुत होती है।

कोवतुर (कोयम्बतुर)—मन्द्राज-प्रदेशके दक्षिण अंशका एक बड़ा जिला। इसका परिमाण ७४३२ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः १८ लाख है। कोवतुरके उत्तर कोल्लिगाल, पश्चिम नीलगिरि और दक्षिण-पश्चिम उत्कृष्ट वन तथा हस्तिसमाकीर्ण अनमलय वा हस्तिगिरि है। यहां कृष्यशानरभोजी कादेर नामक जातिका वास है।

कोवतुर जिलेकी अवस्था दिन दिन सुधर रही है। यहां एक प्रकारका कोरण्डम् नामक उत्कृष्ट खनिज पदार्थ उत्पन्न होता है। मरकत मणि भी स्थान स्थान पर मिलता है।

इस जिलेके लोग कहते हैं—पञ्च पाण्डव वनवासकालको इसी कोवतुरके जङ्गलमें आकर थोड़े दिनों रहे थे। इसके अन्तर्गत धारापुर जिलेका परिचय प्राचीन 'विराटपुर'के नामसे दिया जाता है। लोगोंके कथनानुसार धारापुरमें ही पञ्च पाण्डवने एक वत्सरकाल अज्ञातवास किया। परन्तु विराटराज्य यहां न था। विराट देखो। कोवतुरके नाना स्थानोंमें पत्थरके पुराने समाधिस्थान विद्यमान हैं। देशीय उन्हें 'पाण्डवकुलि' कहते हैं। हरिकाण्डनेल्लूरके निकट पत्थरके ऐसे ही समाधि 'वालि राजाकी छावनी' कहलाते हैं।

अति पूर्वकालको यह अञ्चल चेर या केरल राजाओंके अधिकारमें रहा। ८७८ ई०को चोल-राजाओंने पूर्व राजाको परास्त करके कोङ्गु, कोङ्गु, कर्णाट और तलकाड़ अधिकार किया। फिर १०८० ई० को कोवतुर बल्लालवंशीय राजा विनयादित्यका अधिकारभुक्त हुवा। १३४८ ई०को विजयनगराधिप हरिहरने इसको अधिकार किया था। १५६५ ई०को विजयनगरके उत्पन्न होने पर कोवतुर मदुराके अधीन हुवा। १६२३ से १६७२ ई०को बीच महिसुरराज चिक्कदेवने इसे जय किया था। १७९९ ई०को कोवतुर ब्रिटिश शासनके अधीन हुआ।

इस जिलेका प्रधान नगर भी कोवतुर ही है। यह अक्षा० १०° ४९´ ४१´´ उ० और देशा० ७६° ५९´ ४६´´ पू०के मध्य अवस्थित है। जिस स्थान पर राजभवन बना, वह समुद्रपृष्ठसे ९०० हाथ ऊंचा है। आबहवा अच्छी होनेसे इस शहरमें सभी राजकीय प्रधान कार्यालय हैं। यहां औषधालय, चिकित्सालय, तारघर, डाकघर और छोटे बड़े सब प्रकारके अंगरेजी तथा देशी विद्यालय बने हैं। शहरसे २ कोस दूर पेरूर नामक स्थान पर मेलचिदम्बरतीर्थ है। इस तीर्थकी यहांके हिन्दू प्रगाढ़भक्ति करते हैं। वह कहते हैं—

यहांके देवता जाग्रत हैं, यहांतक कि टीपू सुलतानको भी देवसम्पत्ति वा देवालय पर हस्तक्षेप करनेका साहस न हुवा। चिदम्बरका मूल मन्दिर चेर-राजाने बनवाया था। मन्दिरके प्रवेशद्वार पर बृहत् गोपुर और पास ही बड़ा ध्वजस्तम्भ है। स्तम्भका शिल्पकार्य बहुत चमकीला है। इसके पश्चिम गात्रमें लिङ्ग पर स्तनदान करती हुई सुन्दर गोमूर्ति, दक्षिण त्रिशूलाकृति, पूर्व विनायक और उत्तर सुन्दरदेवकी मूर्ति है। ज्येष्ठमासको सुन्दरदेवके भूमिखननका उत्सव होता है। गोपुरके आगे दूसरे प्राकारमें पत्थरका कनकसभा-मण्डप है। इस सभामण्डपके प्रत्येक स्तम्भमें पौराणिक देवदेवियोंकी मूर्तियां पारिपाट्यके साथ खोदित हैं। यहां नट राजाका गृह है। दशभुज नटरूपी महादेव एक पादसे दण्डायमान हैं। मूलमन्दिर मरकत निर्मित है। उसको चारो ओर हिन्दू राजाओंके अनुशासन खोदित हैं। यहांके महादेव लिङ्गरूपी हैं। निकट ही देवीका मन्दिर है। देवी मरकतवल्ली नामसे अभिहित होती हैं। यहां बारो महीने एक एक उत्सव हुआ करता है। कोई बड़ा अंगरेज या हिन्दू कोयतूर जाकर विना मेलचिदम्बर देखे नहीं लौटता।

इस जिलेमें और भी कई एक तीर्थ तथा पुण्य-स्थान हैं। भवानी शहरमें कावेरी तथा भवानीसङ्गमके मध्यस्थलका सङ्गमेश्वर, पालनाद तालुकका पापनाशी और कोरूर शहरमें पशुपतीश्वर स्वामीका मन्दिर उल्लेखयोग्य है।

कोबा (फा० पु०) १ चमड़ा कूटनेकी मोंगरी। मुट। २ कोई मोंगरी।

कोबी (हिं० स्त्री०) गोभीका फूल।

कोम (सं० क्ली०) पिपासास्थान।

कोमता (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह बड़ा, कोकरसे मिलता-जुलता, सुहावना और सदाबहार पेड़ है। सिन्ध और अजमेरकी रेतीली जगहमें कोमता बहुत उपजता है। इसमें कांटे भरे रहते हैं।

कोमती—दाक्षिणात्यकी एक व्यवसायी जाति। कर्णाट और तैलङ्ग कोमतियोंकी आदि वासभूमि है। यह अपनेको प्रकृत वैश्य बतलाते हैं, परन्तु दाक्षिणात्यके ब्राह्मण उसे स्वीकार नहीं करते।

कोमतियोंके कथनानुसार पहले उनमें ६०० गोत्र थे, अब केवल १०१ रह गये हैं। अवशिष्ट गोत्रोंके लोप हो जाने पर निम्न लिखित गल्प सुना जाता है—

लाभपट्टि वंशमें कणिका नामकी एक परमासुन्दरी कोमती-कुमारीने जन्म लिया था। किसी नीच जातीय राजाने कणिकाके रूपमें मुग्ध हो उनसे विवाह करना चाहा। दारुण सङ्कटमें पड़ वह राजाके प्रस्तावसे सम्मत हो गयीं, परन्तु राजाको यह कहला भेजा कि विवाहसे पहले उन्हें कुलदेवताकी पूजा करना पड़ेगी। तदनुसार उनके आत्मीय कुटुम्बी आ पहुंचे। देवोद्देशमें अग्निकुण्ड जला कणिका प्रदक्षिण करके उसी जलते कुण्डमें कूद पड़ी, उनके घरके १०१ आत्मीय कुटम्बी भी उनके अनुगामी हुए। बाकी ४९९ लोग नीच राजाके साथ मिलकर अपनी जाति खो बैठे।

आजकल जो १०१ विभिन्न वंशीय कोमती हैं। सभी कणिकाको देवी समझ पूजा करते हैं। १०१ कुलोंमें बूवनकुल, चेट्टवल, धनकुल, गुंड्डकुल, मासटकुल, मिधनकुल, पगड़िकुल, और पेड्कुल, बम्बई प्रदेशके नानास्थानोंमें देख पड़ते हैं। यह परस्पर एक साथ आहार तो करते, परन्तु कन्याके आदान प्रदानमें हिचकते हैं। इनके पुरुषोंके नाम शेष पर 'अप्पा' (पिता) और स्त्रियोंके नाम शेषपर 'अम्मा' (माता) शब्द व्यवहृत होता है।

कोमती देखनेमें कदाकार और कृष्णवर्ण होते हैं। इनका शरीर काला और लम्बा रहता है। चोटी और गलमुच्छा रखते भी यह दाढ़ी कभी नहीं रखते। साजसज्जा दाक्षिणात्यके ब्राह्मणों-जैसी है। इनकी अवस्था नितान्त मन्द नहीं। सभी व्यवसाय करते हैं। जिनकी अवस्था उतनी अच्छी नहीं, उनके भी मोदीकी एक छोटीमोटी दुकान है। स्त्रीपुत्र दूकान पर बैठ क्रयविक्रयमें साहाय्य करते हैं। कोई महाजनी और नौकरी भी करता है। क्या पुरुष क्या स्त्री सबके सब परिश्रमी, क्लेशसहिष्णु, मितव्ययी और चतुर हैं। कोमती कहते कि रेल निकलनेसे ही इनका सर्वनाश हुवा है।

यह हिन्दू देवदेवियोंको ही मानते हैं। कणिका

देवी, बालाजी, नगरेश्वर, नरसीवा, राजेश्वर और वीरभद्र कोमतीको कुलदेवता हैं। तेलङ्गमें नाना स्थानों पर इन कुलदेवताओंके मन्दिर बने हैं। देशस्थ ब्राह्मण कोमतियोंका पौरोहित्य करते हैं। यह ब्राह्मण भिन्न दूसरी किसी जातिके हाथका अन्न ग्रहण नहीं करते। काशी, नासिक, पण्ढरपुर और तुलजापुर इनके प्रधान तीर्थस्थान हैं।

कोमतियोंके प्रधान गुरु शङ्कराचार्यस्वामी और कुलगुरु भास्कराचार्य हैं। सिवा इसके एक मोक्षगुरु भी होते हैं। गुरुकी सेवा और गुरुके पादोदकका पान परमार्थ-जैसा समझा जाता है।

इनमें कोई कोई लिङ्गधारी होता है। परन्तु लिङ्गायत ब्राह्मण कोमतियोंको लिङ्गायत नहीं मानते। जङ्गम लोग पिताकी अनुमतिसे पुत्रको लिङ्ग चिह्नित कर देते हैं। जङ्गम देखो। लिङ्गधारी यज्ञसूत्र नहीं रखते। उनका मृत्यु होनेसे जङ्गम उठाने आते हैं। परन्तु कितने ही समय सूत्रधारी कोमती उनका शवदाह करके यथारीति श्राद्ध किया करते हैं।

कोमतीयोंमें यज्ञसूत्रके धारणका कोई निर्दिष्ट नियम नहीं है। पिता अपनी इच्छासे पुत्रके गलेमें जनेऊ डाल सकता है। जनेऊ हो जाने पर बालक प्रथम अपनी भगिनीके घर जा भानजीसे भिक्षा ग्रहण करता है। फिर भगिनी और भगिनीपति हाथमें जल डाल उसे विदा करते हैं। आजकल विवाहके समय जनेऊ होता है। बहुत खर्च पड़नेसे दूसरे समय जनेऊ नहीं करते। कोमतियोंमें विवाहकी प्रथा बहुत ही अद्भुत है। मामा-भानजीका विवाह इन्हींमें होता है। भगिनीकी कन्या कितनी ही कुत्सित क्यों न हो, उसके साथ विवाह करना पड़ता है। इन्हें कड़ा दहेज लगता है। रीतिके अनुसार दहेज न मिलने पर वरपक्षके मुखियाका जी नहीं भरता। बालकका तेरहवें और बालिकाका बारहवें दिन नाम-करण होता है।

विवाहमें पांच सधवा रमणियां ही प्रधान होती हैं। उनकी यथारीति आदर-अभ्यर्थना करना पड़ती है। फिर वह भी विवाहके समस्त मङ्गल कार्य किया करती हैं। कुलकी प्रथाके अनुसार सम्प्रदानके पीछे वर तथा कन्याका मातुल यथाक्रम उन्हें कन्धे पर चढ़ा नाचते रहते और परस्पर कुङ्कुम निक्षेप करते हैं। फिर वर कन्याके साथ घोड़े पर बैठ अपने घर आता है।

कन्या प्रथम ऋतुमती होनेसे पुष्पोत्सवकी धूम पड़ जाती है। कन्याको साथ लेकर उसके पिता माता आत्मीय कुटुम्बी गाते बजाते और नाचते कूदते वरके घर पहुंचते हैं। वहां खूब हलदी चलती है। वरपक्षकी रमणियां स्थानभेद और कुलाचारके अनुसार कन्याकी आदर-अभ्यर्थना और पूजा करके फिर उसे पितृगृहको भेज देती हैं। प्रथम ऋतुमती तीन दिन अलग किसी कोठरीमें रहती और चौथे दिन स्नान करती है। उसी दिन वर महासमारोहसे श्वसुरालय जा गर्भाधानक्रिया सम्पन्न करता है। कन्या गर्भवती होनेसे तृतीय मास वस्त्रदान और सप्तम मास साधभक्षण उत्सव होता है। सधवा रमणियां प्रत्यह आकर गर्भवतीको मीठे मीठे गीत सुनाती हैं। प्रसव होनेसे उस घरमें दूसरी गर्भवती रहने नहीं पाती। उसे विना विलम्ब दूसरे स्थान पर पहुंचा देते हैं। सन्तान प्रसूत होने पर भी पञ्चम दिवस कोई विवाहित रमणी घरमें रहने नहीं पाती। उसे स्वामीके पास अथवा निकटस्थ आत्मीय कुटुम्बीके घर उस दिन और उस रातके लिये भेज देते हैं।

कोमती दश दिन अशौच ग्रहण करते हैं। द्वादश दिनको श्राद्ध होता है। श्राद्धादि अथवा किसी दूसरे गुरुतर कार्यमें आवश्यक होनेसे यह लोग शङ्कराचार्यके सहकारी भास्कराचार्यके मतानुसार कार्य करते हैं।

कोई दोष करने पर अर्थदण्ड लगता है। यह रुपया गुरुका प्राप्य है।

कोमर (हिं० पु०) कोणविशेष, खेतका एक कोना। यह एक तर्फ कुछ ज्यादा बढ़ जाता है।

कोमल (सं० त्रि०) कु-कलच् बाहुलकात् मुट् च, यद्वा कम्-कलच्। १ मृदुल, मुलायम, नर्म। इसका संस्कृत पर्याय—सुकुमार, मृदु, मृदुल और पेलव है। २ मनोहर, दिलकश। (क्ली०) ३ जल, पानी। ४ सूक्ष्म और मिष्ट स्वर, बारीक और मीठी आवाज। स्वर तीन प्रकारके हैं—शुद्ध, तीव्र और कोमल। षड्ज और पञ्चम शुद्ध

होते हैं, उनमें कोई विकार नहीं रहता। अवशिष्ट ऋषभ, गन्धार, मध्यम, धैवत और निषाद-कोमल एवं तीव्र भेदसे दो दो प्रकारके हैं। इनमें धीमे और कुछ उतरे स्वरको कोमल कहते हैं। भैरवीमें केवल शुद्ध और कोमल स्वर लगते हैं।

कोमलक (सं० त्रि०) कोमल स्वार्थे कन्। १ मृदु, मुलायम। (क्लो०) संज्ञायां कन्। २ मृणाल, कमलकी डण्डी। ३ पद्मकाष्ठ।

कोमलकदल (सं० क्लो०) बालकदलफल, कच्चा केला। यह शीत, मधुर, कषाय, रुच्य, अम्ल और पित्तघ्न होता है। (वैद्यकनिघण्टु)

कोमलता (सं० स्त्री०) कोमलस्य भावः, कोमल तल्। १ मार्दव, नरमी। २ सौकुमार्य, खूबसूरती। ३ माधुर्य, लालित्य। "कोमलता कुञ्ज तें गुलाब तें सुगन्ध लेकै।" (ठाकुर)

कोमलदल (सं० क्लो०) पद्म, कमल।

कोमलनारिकेल (सं० क्लो०) बालनारिकेल, डाभ।

कोमलपत्रक (सं० पु०) कोमलं पत्रमस्य, बहुव्री०। शिग्रु, सहिंजना।

कोमलप्रसव (सं० पु०) श्वेतझिण्टी, सफेद कटसरैया।

कोमलवल्कला (सं० स्त्री०) कोमलं वल्कलं यस्य, बहुव्री०। लवलीवृक्ष, हरफली।

कोमला (सं० स्त्री०) कोमल-टाप्। १ चीरिका, खिरनी। २ खर्जूरिका, खजूर। ३ आलङ्कारिक मतसिद्ध वृत्तिविशेष।

कोमलासन (सं० क्लो०) मृगचर्म-निर्मित आसन। आसन देखो।

कोमलेक्षु (सं० पु०) इक्षुविशेष, कची ईख। यह मेद, कफ और मेहकारी होता है। (वैद्यकनिघण्टु)

कोमारपायक—बम्बई-प्रान्तके कनाड़ा जिलेकी एक जाति। यह समुद्रके किनारे किनारे पाये जाते हैं। कारवाड़के सदाशिवगढ़, माजली, कारवाड़, भिङ्गी, अरगे, तोदुर और चंदिया, अङ्कोलाके असुर तथा अङ्कोला और कुमताके गोकर्ण और कुमतामें इनका केन्द्र है। कोमारपायक अपनेको निजाम राज्यके गुलबर्गेसे गया हुआ बतलाते हैं। इनके गुरु कलादगीके कुमारस्वामी रहे। कहते हैं, पहले कोमारपायक सोंडा-राज्यके सिपाहियोंमें भरती थे। १७६३ ई०को हैदर अलीके कनाड़ा जीतने पीछे यह लूटमार मचाने लगे, किन्तु १७९९ ई०को अङ्गरेजी होने पर शान्त और संयत हो गये। इनकी मातृभाषा विकृत कनाड़ी है। यह कोङ्कणी भी बोला करते हैं। कोमारपायकोंमें शराब पीनेकी चाल नहीं। विधवाओंको अलङ्कार पहननेका निषेध है। यह परिश्रमी, बलवान्, मितव्ययी और संयमी होते हैं। इनमें स्वांग करनेकी बड़ी मण्डलियां हैं। विधवाविवाह होता है। कुछ लोग कनाड़ी लिख पढ़ सकते और अपने लड़कोंको स्कूल भेजते हैं। वासव, वेङ्कटरमण, कालभैरव, महापुरुष और महासतियां देवता हैं। गोकर्ण, तिरुपति, पण्ढरपुर और काशी इनका तीर्थस्थान है।

कोमासिका (सं० स्त्री०) ईषत् उमा अतसीवृक्षः स इव आस्ते, आस-ण्वुल् टाप् अत इत्वम्। जालिका, फलका जाला।

कोम्पनी (अं० स्त्री०=Company) जनसमूह, जमात, मण्डली। बहुसंख्यक लोगोंके मिलकर कोई कामकाज करनेसे उनके समष्टिको कोम्पनी या कम्पनी कहते हैं। साधारणतः यह शब्द व्यवसाय वाणिज्यके लिये ही व्यवहृत होता है। इस देशमें मिलजुल कर किया जानेवाला काम बहुत है। परन्तु पहले उसे कम्पनी न कहते थे। आजकल बहुतसे व्यवसायी अपनी दूकानके नाममें कम्पनी या 'एण्ड को०' लगा देते हैं।

अंरेजोंको भारतमें आने पर कम्पनी, उनके रुपयेको कम्पनीका रुपया और उनकी भारतीय सेनाको कम्पनीकी फौज कहते थे। किन्तु कम्पनीका राजत्व अब उठ गया है। यह राजत्व भारतमें प्रायः १०० वर्ष चला।

पहले भारतको युरोपीय लोग ईष्ट इण्डिया और अमेरिकाको वेष्ट इण्डिया कहते थे। युरोपीय जानते थे कि हिन्दुस्थान नामक एक धनशाली देश पृथिवी पर विद्यमान है। परन्तु यह किसीको मालूम न था, वह देश कहां है। भारतको ढूंढने निकल स्पनके कोलम्बस अमेरिका आविष्कार कर बैठे। अपना भ्रम

समझके उन्होंने उसका नाम वेष्टइण्डिज या पश्चिम-भारत रखा था। फिर कोलम्बसके आविष्कार करनेसे अमेरिकाको लोग कोलम्बिया भी कहने लगे। पोर्तगीज पोताध्यक्ष भास्को-डि-गामा १४९८ ई०को २० वीं मईको प्रथम भारत पहुंचे थे। उसी समयसे पोर्तगीज इस देशमें वाणिज्य करने लगे, परन्तु उनके व्यवसायके लिये कोई निर्दिष्ट कम्पनी न रही। व्यवसायका लाभ राजकोषमें ही अर्पित होता था।

भारतमें वाणिज्य करनेके लिये अंगरेजोंने ही प्रथम 'ईष्ट-इण्डिया-कम्पनी' नामकी एक कम्पनी १५९९ ई०को भारतमें खोली थी। फिर फरासीसियोंने इस नामकी कितनी ही कम्पनियां बनायीं। उनमें पहली १६०४, दूसरी १६११, तीसरी १६१४, चौथी १६४२ और पांचवीं १६६४ ई०को स्थापित हुई। इसी प्रकार ओलन्दाजोंकी ईष्ट इण्डिया कम्पनी प्रथम १६०२ और द्वितीय १६१८ और दिनेमारोंकी पहली १६१२ तथा दूसरी १६७० ई०को खोली गयी। स्विस लोगोंकी भी इसी नाम पर कम्पनी रही। वह चीनमें वाणिज्य करते थे। अष्ट्रियामें भी 'वेष्टएण्ड ईष्ट इण्डिया' नामकी एक कम्पनी बनी थी, परन्तु अल्प दिन पीछे ही उठ गयी। परन्तु हमारा लक्ष्य अंगरेजोंकी ईष्ट इण्डिया कम्पनी ही है।

पोर्तगीजोंको भारतमें वाणिज्य करनेसे विलक्षण लाभ उठाते देख ओलन्दाजोंने भी यही चेष्टा की थी। १४९६ ई०में इङ्गलेण्डके राजा सप्तम हेनरीने जानुकावाट और उनके तीन पुत्रोंको दो जहाजोंके साथ भारत आविष्कार करने भेजा था। वह अमेरिकाके न्यूफाउण्डलेण्ड प्रभृति नानास्थान आविष्कार करके लौट गये। १५५३ ई०को सर हिउग्रुविलोवीने एक बार फिर चेष्टा की थी, परन्तु वह भी भारत पहुंच न सके। १५७९ ई०को ष्टिफिन नामक किसी अंगरेजने प्रथम भारतको देखभाल इसका विवरण इङ्गलेण्ड भेजा था। उसको देख कर वहांके लोगोंने भारत पहुंचनेका उद्योग किया। १५८३ ई०को रालफफिच्, जेम्स न्यवेरी और लिड्स नामक तीन वणिक भारत पहुंचे थे। परन्तु पोर्तगीजोंने ईर्षापरवश होके उन्हें गोआ नगरमें कैद कर दिया। अन्तको न्यूवेरीने गोआमें एक दूकान खोल जीविका चलायी और लिड्सने दिल्ली-सम्राट्के निकट एक नौकरी पायी। फिच साहब बङ्गाल, पेगू, श्याम, सिंहल और मलकाद्वीप भ्रमण करके इङ्गलेण्ड लौट गये।

पोर्तगीजोंके पीछे ही ओलन्दाज पूर्वदेशमें वाणिज्य करने लगे। वह अंगरेजोंके हाथ मिर्च बेचते थे। पहले मिर्चका भाव ३) रु० सेर रहा। परन्तु १५९९ ई०को वह भाव बढ़ा ६) रु० से ८) रु० सेर तक बेचने लगे। इस पर अंगरेज वणिक् विरक्त हो फाउण्डर्स-हाल नामक भवनमें १५९९ ई०को २२ वीं दिसम्बरको एक सभा करके भारतमें व्यवसाय करनेके लिये कृतसङ्कल्प हुये। कम्पनीके १२५ हिस्सेदार बने थे। उस समय रानी एलिजाबेथ इङ्गलेण्डके सिंहासनपर अधिष्ठित रहीं। कम्पनीके लोगोंने उन्नति साधनकी युक्ति देखा कर रानीके निकट एक आवेदन किया था। रानीने प्रस्तावमें सम्मत हो सर जान मिलडनहाल नामक साहबको दिल्लीसम्राट्के पास भेज दिया। सम्राट्से भारतमें वाणिज्य करनेकी अनुमति मांगना ही दूत-प्रेरणका प्रधान उद्देश्य रहा।

इधर कम्पनीका मूलधन तीन लाख और प्रत्येक अंश एक हजार ठहरा था। २५ सितम्बरको १६०००) रु० में 'सुसान' नामका एक जहाज और २६ वीं दिसम्बरको हेक्टर और एसेन्स नामक दो जहाज खरीदे गये। यह सब उद्योग हो ही रहा था कि राजस्वविषयक प्रधान कर्मचारी वरले साहबने कम्पनीको एक पत्र लिखा। उसमें कहा गया था कि आपको अपने वाणिज्य-कार्यमें सर एडवर्ड मिचेलको तत्त्वावधायक बनाना पड़ेगा। परन्तु कम्पनी इस पर सम्मत न हुई। उसने लिखा था—'व्यवसायका काम बड़े आदमियोंको रखनेसे चल न सकेगा। कारबारियोंकी समिति कारबारी आदमियोंसे ही बनेगी। बड़े आदमी अच्छे नाविक हो सकते और अच्छा हिसाब किताब कर सकते हैं। परन्तु जो भद्रवंशजात लोगोंके समाजमें आया जाया करते, व्यवसायका कोई काम उनसे चल न सकेगा। इस प्रकारके लोग होनेसे बहुत-

से, हिस्सेदार विगड़ पड़ेंगे। अपनी लिखापढ़ी मंजूर न होते भी कम्पनी साहसके साथ काम चलाने लगी। कम्पनीके १२५ साझी बने थे। १६०० ई०को ३१ वीं दिसम्बरको कम्पनीको राज्ञीका सम्मतिपत्र मिला। इसको चार्टर (Charter) कहते हैं। यह चार्टर बहुत बड़ा है। इसका नाम "The Governor and Company of the Merchants of London, trading into the East India." अर्थात् भारतमें वाणिज्य करनेवाले लन्दनके वणिकोंकी समिति और उसके अध्यक्ष नाम रखा गया। इस अनुमतिपत्रमें लिखा है—'स्वदेशको नाविकविद्या और वाणिज्य बढ़ानेके लिये यथोपयुक्त जहाज और नावें लेकर भारत, एशिया और अफरीकामें भी जहां कहीं व्यवसायोपयोगी द्वीप या बन्दर आविष्कृत होंगे, कम्पनी वाणिज्य कर सकेगी। कम्पनीका काम देखने भालनेको एक वर्ष एक गवर्नर और २४ सभ्य उपस्थित रहेंगे। छह मास वा एक वर्षके अन्तर नूतन सभ्योंका नियोग और उनका परिवर्तन किया जा सकेगा। इस समय १५ वर्षके लिये ही यह चार्टर दिया जाता है। फिर आवेदन करनेसे और भी समय बढ़ा दिया जावेगा। कम्पनीके लोगोंको छोड़ कर दूसरा कोई पूर्वोक्त स्थानोंका वाणिज्य कर न सकेगा। यदि कोई ऐसा काम करेगा, तो वह राजाके क्रोधका पात्र बनेगा। उसकी द्रव्यसामग्री और जहाज आदि जब्त कर लिये और कर्मचारी कारागारमें डाल दिये जावेंगे। सिवा इसके अपराधियोंको कम्पनीके क्षतिपूरण-स्वरूप दश हजार रुपये देना पड़ेगा। विना इस कम्पनीकी अनुमतिके किसीको नया अनुमतिपत्र न मिलेगा। कम्पनी अपने कारवारके लिये तीन लाख रुपया ले जा सकेगी। इसी प्रकारकी बहुतसी बातें चार्टरमें लिखी गयीं।

कम्पनीको सनद मिलने पीछे बुद्धिमती रानी एलिजाबेथकी आज्ञासे एक पत्र लिखा गया, परन्तु उसका सरनामा कम्पनीके लोगोंके लिखनेको खाली रहा। कारण जिस जिस देशमें वणिक जायेंगे, उसी देशके राजाका नाम लिख वह पत्र उन्हें दे देंगे। उक्त पत्र इस प्रकारका था—'ईश्वरके अनुग्रहसे अधिष्ठित इङ्गलेण्ड, फ्रान्स और आयर्लण्डकी रानी एलीजाबेथ—देशीय महापराक्रमशाली राजाको सादर सम्भाषण निवेदन करती हैं। ईश्वरने अपनी असीम करुणाके बल विधान किया है कि एक देशका उत्पन्न द्रव्य अपने देशका अभाव पूरा करे और उद्वृत्त अंश दूसरे देशमें, जहां उसका अभाव हो, बंटे जिसमें ईश्वरकी महिमा प्रचारित हो। इससे एक देशके साथ अन्यदेशकी सभ्यताका बन्धन दृढ़ होगा। यह सब विवेचना करके और इस विषयमें आपकी सुख्याति सुनके आश्वासित होके कि आप विदेशीयोंके लिये बड़ा यत्न किया करते हैं, इस वणिकदलको आपके राज्यमें व्यवसाय वाणिज्य करनेकी अनुमति दी है। यह लोग आपके देशमें रह, देशकी भाषा पढ़ और आपकी प्रजाके साथ बातचीत करके दोनों राज्योंकी सख्यता दृढ़ कर देंगे' इत्यादि।

इसी प्रकारके पत्र आदि लेकर १६०१ ई०को फरवरी मास वणिकोंका एक दल निकल पड़ा था। वह भारत न आ सुमात्रा, यव, मलक्का प्रभृति द्वीपोंके साथ वाणिज्य स्थापन करके लौट गये। १६०४ ई०को द्वितीय अभियान हुवा। तृतीय और चतुर्थ अभियानसे भी कोई विशेष फल न निकला। १६०८ ई०को कप्तान मिडलटनके कर्तृत्वाधीन पञ्चम अभियान लगा था। तृतीय अभियानमें कप्तान हकिन्स रहे। वह इङ्गलेण्डके राजा प्रथम जेमस और ईष्ट इण्डिया कम्पनीके दूत बन कर सम्राट् जहांगीरके पास आगरे पहुंचे थे। सम्राट्ने उनकी यथोचित अभ्यर्थना की और उनसे तुष्ट हो अंगरेज प्रतिनिधिकी भांति अपनी सभामें रहनेको अनुरोध किया और वात्सरिक ३२०००) रु० वेतन बांध दिया। परन्तु जेसुट पादरियोंने उनके विरुद्ध सम्राट्को उभाड़ कर कहा था—हम इनको विष देकर मार डालेंगे। परन्तु सम्राट्ने उनके साथ चतुरताको अवलम्बन कर हकिन्ससे बता दिया आप विवाह करके इसी स्थान पर रहिये, फिर विषप्रयोगका कोई भय न रहेगा। जहांगीरने उनके लिये एक ईसाई अरमनी रमणी मंगा दी थी।

हकिन्सने उसके साथ विवाह कर लिया। किन्तु जहांगीरने अपनी प्रतिज्ञाको पालन न किया था। उन्होंने न तो अंगरेजोंको वाणिज्य करनेका अधिकार और न हकिन्सका नियत किया हुवा वेतन हो दिया। हकिन्स किसी प्रकार पलायन करके जहाज पर चढ़ गये। १६११ ई०को कप्तान मिडलटनने काम्बे नगरमें उपनीत हो पोर्तगीजोंसे युद्ध किया और उक्त नगरमें वाणिज्य करनेका अधिकार पा लिया। सप्तम अभियानमें कप्तान हिपनने आकर मसलीपत्तन और श्यामदेशमें कोठी खोली थी। १६१२ ई०को गुजरातके शासनकर्ताके साथ कम्पनीकी एक सन्धि हुई, जिसके अनुसार सूरत, काम्बे, अहमदाबाद और गोगोमें उसे वाणिज्य करनेकी अनुमति मिली। १६१५ ई०को कप्तान वेष्टको नौसेना सूरतके निकट ताप्ती नदीके मुंहाने पर आनेसे पोर्तगीजोंने उसको आक्रमण किया था। बार बार लड़ाई हुई। उसमें पोर्तगीजोंने सम्पूर्णरूप पराजय स्वीकार किया। जयलाभ करके अंगरेजोंने गगरा, अहमदाबाद और काम्बे नगरमें कोठी खोली। सर्वप्रथम सूरतमें अंगरेजोंकी कोठी बनी थी। उसी समय इङ्गलेण्डके राजा प्रथम जेमसने सर टामस-रो साहबको सम्राट् जहांगीरके निकट प्रेरण किया। इस बार उन्होंने कम्पनीको भारतमें वाणिज्य करनेकी अनुमति दे दी। १६२० ई०को आगरे और पटनेमें कोठी स्थापित हुई। १६२५ ई०को भारतके पूर्व उपकूल मसलीपत्तनके निकट अमरगांव नगरमें भी एक कोठी खोली गयी। १६३२ ई०को गोलकुण्डेके राजासे सनद ले अंगरेजोंने मसलीपत्तनमें वाणिज्य स्थापन किया था। १६३४ ई०को फरवरी मास दिल्लीके सम्राट्ने अंगरेज कम्पनीको बङ्गालमें वाणिज्य करनेकी सनद दी। १६३९ ई०को फ्रान्सिस डे साहबने चन्द्रगिरिके राजासे चेन्नापत्तन वा मन्द्राज नामक स्थान क्रय करके वहां एक दुर्ग निर्माण किया और उसका नाम फोर्ट सेण्ट-जार्ज रखा। अमरगांवसे कोठी उठा कर यहीं लायी गयी थी। पूर्वोक्त सनदके अनुसार १६४० ई०को वङ्गके अन्तर्गत हुगली और १६४२ ई०को बालेश्वरमें कम्पनीकी कोठी खुली। तीन वर्ष पीछे होपवेल जहाजके डाक्टर बाउटन साहबने सम्राट शाहजहान्की कन्याकी चिकित्सा करके बादशाहसे कम्पनीके लिये कई अधिकार लाभ किये। दूसरे वर्ष बङ्गालके शासनकर्ताने भी उन्हें वैसे ही अधिकार दिये थे। १६५८ ई०को कासिमबजारमें कम्पनीकी कोठी खुली। १६६१ ई०को इङ्गलेण्डके राजाको विवाहसूत्रसे बम्बई नगर मिला था। २य चार्लसने यह कम्पनीको दे डाला। १६८७ ई०को सूरतकी कोठी बम्बई उठ आयी।

१६८१ ई०को मन्द्राज और बङ्गालका वाणिज्य स्वतन्त्र कर दिया गया। उस समय बङ्गालके अन्तर्गत हुगली, कासिमबजार, पटना, बालेश्वर, मालदह और ढाकामें कोठी रही। किन्तु १६८६ ई०को बङ्गालके नवाब शायस्ता खान् उन पर अत्याचार करने लगे। उसी समय हुगलीकी कोठी छोड़ अंगरेजोंने सुतानुटी या कलकत्तेमें उसको खोला था। कलकत्ता देखो। इसी समय मराठोंका भी नानारूप अत्याचार चल रहा था। कम्पनी पर बार बार इस प्रकार अत्याचार होनेसे उसी वर्ष विलायतमें कम्पनीकी एक सभा की गयी। उसमें स्थिर हुवा—कम्पनीका उद्देश केवल व्यवसाय करना हो नहीं है, साथ ही साथ राजत्व बढ़ाना, बहुतसी विपत्तियां रहते भी कम्पनीका अधिकार दृढ़ करना और भारतमें एक पराक्रान्त जाति बनना पड़ेगा। फिर इस देशमें शुद्ध वणिक्रूपसे नहीं, एक प्रबल पराक्रान्त जाति रूपसे कम्पनी दिखायी दी। इसके अनन्तर कम्पनीका वाणिज्य भारतके इतिहाससे संश्लिष्ट है। भारतवर्ष देखो। १८५८ ई०को कम्पनी उठ गयी।

पहली सनदके पीछे बीस बीस वर्षमें इस पर नयी अनुमति लेना पड़ती थी और नूतन अनुमतिपत्र मिलते समय कम्पनीकी कार्यावली देखी जाती थी। और भी दो एक कम्पनियां बनी थीं, जो इसीमें मिल गयीं। १८१३ ई०को पारलियामेण्टके तदन्तसे कम्पनीको भारतमें व्यवसाय करनेका जो एकाधिकार मिला था, बन्द हुवा। १८३३ ई०को चार्टर एक्ट (Charter Act) के अनुसार चीनके व्यवसायका अधिकार रोका गया और भारतवासियोंको कम्पनीकी नौकरी देने पर

अनुमति हुई। १७७३ ई०को रेगुलेटिङ्ग एक्ट (Regulating Act)के अनुसार बङ्गालके शासनकर्ता भारतके गवर्नर जनरल मनोनीत हुवे। १७७४ ई०को पिट साहबके इण्डिया बिलमें कितने ही नई काटछांट की गयी। शेषमें १८५८ ई०को सिपाहीविद्रोह (बलवा)-के पीछे भारत इङ्गलेण्ड-राजके अधीन हुवा और गवर्नर जनरलका नाम वाइसराय या राजप्रतिनिधि रखा गया। सिपाहीविद्रोह देखो।

पहले पहले यही ठहरा था कि कम्पनीके साझी भारतके राजस्वसे सैकड़े पीछे १०॥) रु० लाभांश पायेंगे और कम्पनीके नौकरोंको तनखाह दी जावेगी। लेडनहाल ष्ट्रीटमें कम्पनीका ईष्ट इण्डिया हाउस नामक जो मकान था, बिक गया और कम्पनीका प्रकाण्ड पुस्तकालय राजाके अधीन हुवा। अब भारत-शासनके परिदर्शनका भार सेक्रेटरी अव ष्टेट (Secretary of State)-को सौंपा गया है। कम्पनीकी इस समय स्मृतिमात्र शेष है। भारतवर्ष, बङ्गाल, मन्द्राज, कलकत्ता, उपनिवेश आदि शब्द देखो।

कोम्य (वै० त्रि०) कम कर्मणि यत् पृषोदरादिवत् साधुः। काम्य, चाहने योग्य। (ऋक् ११।१७१।३)

कोयर (हिं० पु०) १ शाक, भाजी, तरकारी। २ पशुवोंको दिया जानेवाला हरा चारा।

कोयल (हिं० स्त्री०) १ कोकिल। कोकिल देखो।

"कोला भई कोयल कुरङ्गवार कारे किये।" (व्रजचन्द्र)

२ लताविशेष, कोई बेल। इसकी पत्तियां गुलाबकी पत्तियोंसे कुछ छोटी होती हैं। फूल सफेद और नीले आते हैं। इसमें फलियां भी लगा करती हैं। पत्तियोंका रस पीनेसे सांपका विष मर जाता है। इसका संस्कृत पर्याय—अपराजिता है।

कोयलकुंतह—मन्द्राज प्रान्तके कर्नूल जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० १४° ५७´ एवं १५° २७´ ३० और ७७° २७´ तथा ७८° ३३´ पू०के मध्य अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल ५७२ वर्गमील है। लोकसंख्या प्रायः ८८१४७ है और ८५ गांव इससे लगते हैं। २१०००) इसका राजस्व है। कंडेरू नदी पूर्वांश पर बहती है। यहां की भूमि उपजाऊ हैं।

कोयलकोंडा—हैदराबाद-राज्यके महबूबनगरका पहला तालुक। इसका क्षेत्रफल ५४६ वर्गमील, लोकसंख्या ५८०३१ और मालगुजारी ६४०००) रु० है। १९०५ ई०को यह कोदङ्गल और पुरगी तथा महबूबनगरमें मिला दिया गया।

कोयलपट्टी—मन्द्राज-प्रान्तके तिन्नेवेली जिलेके सात्तूर तालुकमें साउथ इण्डियन रेलवेका एक ष्टेशन। यह एक इनामी गांव है और अक्षा० ९° १०´ उ० तथा देशा० ७७° ५२´ पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ३४१५ लगती है। इसका जलवायु सूखा तथा स्वास्थ्यकर है। सूत कातनेका एक पुतलीघर कोयलपट्टीमें चलता और गवर्नमेण्टकी खेती भी होती है।

कोयला (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह आसाममें उपजता और बहुत बढ़ता है। कोयलका काष्ठ चिक्कण, कठोर तथा सुदृढ़ रहता और गृहनिर्माणादि कार्यमें लगता है। पत्तियोंको रेशमके कीड़े खाते हैं। इसका दूसरा नाम सोम है।

कोयला (हिं० पु०) अङ्गार, किसी चीजका जला हुवा वह हिस्सा, जो पूरी तरह खाक न हो और काला पड़ जाय। वृक्ष आदिके दग्धावशिष्ट कृष्णवर्ण कठिन पदार्थको इस देशमें साधारणतः कोयला कहते हैं। आपाततः कोयला दो प्रकारका देख पड़ता है—१ अग्निदग्ध काष्ठ आदिका कोयला और २रा भूगर्भसे उत्तोलित खनिज कोयला। खनिज कोयलेको संस्कृत भाषामें मृदङ्गार और लकड़ीके कोयलेको अङ्गार ही कहते हैं। पत्थरका (खनिज) कोयला भी भूगर्भके आभ्यन्तर तापमें दग्धावशिष्ट रासायनिक क्रियासे उत्पन्न वृक्ष आदिका अवशिष्ट अंश है। जीवोंके शरीरसे भी कोयला निकलता है, किन्तु उसका परिमाण अल्प ही रहता है।

इसे बङ्गलामें आंगरा या कयला, दाक्षिणात्यमें कोलसा, तामिलमें सिमाइकरी, तेलगुमें बोग्गु, मलयमें करि, कर्णाटीमें इद्दालु, गुजरातीमें कोयलो, सैंहलीमें अङ्गूरु और ब्रह्मीमें मिसुए कहते हैं।

प्राकृतिक गठनप्रणालीके अनुसार पदार्थतत्त्ववेत्तावोंने कोयलेकी कई श्रेणियां निर्धारण की हैं। खनिजतत्त्ववेत्ता इसे दो भागोंमें बांटते हैं। उनमें एक

भाग शिलाजतुविशिष्ट रहता और दूसरेमें वह नहीं मिलता। शिलाजतुरहित कोयलेका ही नाम पत्थरका कोयला है। पत्थरका कोयला बहुत कड़ा होता है। इसको जलानेमें व्यवहार करते हैं। अमेरिकामें इस जातिके कोयलेसे दावात, सन्दूक आदि व्यवहार्य वस्तु भी प्रस्तुत होती हैं। शिलाजतुविशिष्ट कोयलेकी नानाविध श्रेणियां और उनके स्वतन्त्र नाम हैं। पत्थरके कोयलेसे यह कोयला बहुत कोमल होता है। इसका आपेक्षिक गुरुत्व भी उसकी अपेक्षा अल्प है।

पिच कोयला-का वर्ण ईषत् धूसर कृष्णवर्णके मखमल-जैसा होता है। यह अग्निमें डालनेसे चटख कर टूट पड़ता; किन्तु उसके पीछे यदि फिर उत्ताप मिलता, तो सबके सब गलकर ढेर हो रहता और बराबर जला करता है। जलनेके समय इस कोयलेकी लपट कुछ पीली लगती है। परन्तु बार बार इसे उलटाते न रहनेसे इसकी आग बुझ जाती है। इङ्गलैण्डके न्यूकासिल नामक स्थानकी खनिमें पिच कोयला बहुत मिलता है।

लाल कोयला—देखनेमें ठीक पिच कोयले जैसा ही रहता और उसीकी तरह यह भी आग लगते ही फूट कर छिटक पड़ता है, परन्तु गलते गलते जमता नहीं। लाल कोयला बहुत भङ्गप्रवण है, इसलिये खनिसे निकालनेमें यथेष्ट क्षति होती है। इससे जलते समय परिष्कार पीतवर्णकी शिखा उठा करती है। इङ्गलैण्डके ग्लास्गो नामक स्थानकी खानमें यही कोयला अधिक है। अंगरेजीमें इसे चेरी कोल (Cherry coal) कहते हैं।

बत्तीका कोयला—औज्ज्वल्य नहीं रखता। इसका गठन अधिक दृढ़ और मसृण है। अग्नि पानेसे यह भी चटख कर छिटक पड़ता और अति शीघ्र जलता है। इससे पीतवर्ण अग्निशिखा निर्गत होती है। बत्तीका कोयला आगमें नहीं लगता, जला ही करता है। इससे एक प्रकारकी बत्ती, दावात, नासदानी आदि व्यवहार्य वस्तु प्रस्तुत होते हैं।

काठ कोयला—उसे कहते हैं, जिसके काष्ठका अंश सम्पूर्ण रूपसे कोयला न बना हो। इसका रंग कुछ गुलाबी लिये काला रहता और जलानेसे अतिशय गन्ध निकलता है। अणुवीक्षण (खुर्दबीन) यन्त्रसे इसको गठनप्रणाली जांचने पर अपरिवर्तित काष्ठका अंश स्पष्ट देख पड़ता है। भारतवर्षके उपकूल भागमें काठ कोयला मिलता है। इसमें जलीयांश अधिक होता है; यहां तक कि अङ्गारसारसे उसका परिमाण प्रायः समान बैठता है। प्राचीनतम कोयलेके स्तरोंकी अपेक्षा इस कोयलेके स्तर आधुनिक जैसे अनुमित होते है।

मसीकृष्ण कोयला—भी एक प्रकारका शिलाजतु मिला कोयला है। यह वृक्षशाखाकी भांति आकृतिविशिष्ट होकर भूस्तरमें उपजता और कोमल तथा भङ्गप्रवण रहता है। इसका आपेक्षिक गुरुत्व पानीसे कुछ अधिक पड़ता और वर्ण गहरे काले मखमल-जैसा लगता है। इसमें रालकी तरह एक प्रकार औज्ज्वल्य दृष्टिगोचर होता है। दक्षिण-भारतमें यह मिलता है। इसमें जो उत्कृष्ट रहता, उससे कांचकी चूड़ियों जैसा एक गहना बनता और मन्दांश जलानेमें लगता है। इसके जलते समय हरी लपट उठती और मट्टीके तेल जैसी बदबू निकलती है। मसीकृष्ण कोयलेमें सैकड़े पीछे ३७ भाग दाह्य और वायवीय होता है।

भारतवर्षके प्रायः सभी प्रदेशोंमें कोयलेकी खनि हैं। इन खानोंमें जो कोयले मिलते, युरोपके कोयलोंकी तरह भूस्तर-सङ्गठनके अङ्गार-युगका वस्तु नहीं ठहरते। दाक्षिणात्यमें पाया जानेवाला कोयला गोण्डवन कोयला (Gondwana system) कहलाता है। भूस्तरसङ्गठनके द्वितीय युगमें उत्पन्न होनेवाले अङ्गारस्तरके गठनप्रकरणसे गोंडवन-कोयला मिलता है। दाक्षिणात्यके वहिर्भागमें मिलनेवाले कोयलेकी खानें भूस्तरसङ्गठनके तृतीय युगकी गठनभङ्गिमा रखती हैं।

यह कोयला उत्तरपूर्व अञ्चल और मध्यभारतमें भी मिलता है। भूस्तरगठनके तृतीय युगका उत्पन्न कोयला सैन्धवीय और गाङ्ग प्रदेशके वहिर्भाग सब स्थानोंमें होता है। दोनों प्रकारके कोयलेमें सर्वोत्कृष्ट जैसा विवेचित होनेवाला प्रायः सबसे अच्छे युरोपीय कोयले-जैसा निकलता हैं। गोंडवन कोयलेमें भस्मका भाग कुछ अधिक रहता है, फिर किसी स्थानके कोयलेमें जलीय

भाग भी कम नहीं पड़ता। तृतीय युगके कोयलेमें भस्म-भाग अपेक्षाकृत अल्प और दाह्य पदार्थका अंश अधिक रहता है। गोंडवन कोयलेसे यह हलका होता है। गोंडवन कोयलेमें बङ्गालका और तीसरे युगके कोयलेमें आसामका कोयला प्रधान समझा जाता है। बङ्गाल और आसामके कोयलेमें कितना दाह्य पदार्थ, कितना जलीयांश और कितना भस्म है—यह नीचे लिखे नक्शेसे समझिये—

	बङ्गालका कोयला		आसामका कोयला	
	साधारण	उत्कृष्ट	साधारण	उत्कृष्ट
भस्म ...	१६°१७	४°८०	३°६	°४
जलीयांश ...	४°८०	°६६	५°	
दाह्य पदार्थ (जलशून्य)	२५°८३	२८°१२	३४°६	३३°५
अङ्गारसार ...	५३°२०	६६°५२	५६°५	६६°१

बङ्गालके निम्नलिखित स्थानोंमें कोयलेकी खानें हैं-

रानीगञ्ज-क्षेत्र—ही भारतवर्षके उन सब स्थानोंसे बड़ा और प्रयोजनीय है, जहां कोयला आविष्कृत हुवा है। कलकत्तेके अति निकट भारतके प्रधान रेलपथ पर रहनेसे इसका व्यवसाय बहुत विस्तृत है। यह स्थान कलकत्तेसे १२० मील उत्तर-पश्चिम बङ्गालके पार्वत्य प्रदेशमें अवस्थित है। यहां प्रायः ५०० वर्गमील भूमिसे कोयला निकाला जाता है। किन्तु अनुमान लगाते हैं कि इससे दूनी जगहमें कोयला भरा है। कारण खान जितनी ही बढ़ती, पूर्वकी ओर उसकी गभीरता और कोयलेकी अधिकता देख पड़ती है। ऐसा अनुमित हुवा है—रानीगञ्जक्षेत्रमें नष्ट हो जानेवालेको छोड़ कर १४ करोड़ टन कोयला मौजूद है। यहां कोयलेके परतों (Seams)-में कोई कोई प्रायः ७०।८० फुट तक मोटा है। परन्तु परत अधिक मोटा होनेसे उसमें अच्छा कोयला नहीं रहता।

झरिया—रानीगञ्जके कोयलाक्षेत्रसे ८ कोस पश्चिम दामोदर नदीके निकट अवस्थित है। यह समस्त क्षेत्र मानभूम जिलेमें लगा और प्रायः २०० मील विस्तृत है। इसके परतमें होनेवाला कोयला रानीगञ्जके कोयलेसे अच्छा रहता और जलनेवाला अंश भी अधिक निकलता है। इस क्षेत्रके परत सब स्थानों पर बराबर मोटे नहीं होते। झरियासे ४६५०००००० टन कोयला निकलता है।

बोकारो—झरियासे २ मील पश्चिम दामोदरके निकट पड़ता और २२० मील विस्तृत लगता है। यहां मध्यविध कोयला होता है। परत बहुत लम्बे हैं। एक एक परत ८३ फुट तक मोटा बैठता है। यहां प्रायः १५०००००००० टन कोयला मिल सकता है।

रामगढ़—बोकारोक्षेत्रसे दक्षिण अवस्थित है। इसका कोयला बहुत अच्छा नहीं होता। यहां परत बहुत हैं, परन्तु वह थोड़ी ही दूरतक विस्तृत हैं। पश्चिम सीमामें हजारीबागसे रांची तक एक राह है। बहुतसे लोग अनुमान लगाते हैं—यहां अपने आप भूमिके उपरिभागमें कोयला निकल आता, जो देशीय लोगोंके हाथों संगृहीत हो रांची बिकने जाता है। रामगढ़क्षेत्र ४० वर्गमील विस्तृत है। यहां ५०००००००० टन कोयला निकाला जा सकता है।

उत्तर करणपुर—रामगढ़से पश्चिम दामोदरकी उत्पत्ति स्थानके निकट अवस्थित और प्रायः ४७२ वर्गमील विस्तृत है। इस क्षेत्रमें कोयला भी प्रायः ८७५००००००० टन विद्यमान है।

दक्षिण करणपुर—उत्तर करणपुरसे दक्षिण प्रायः ७२ वर्गमील विस्तृत है। यहां प्रायः ७५०००००० टन विशेष उत्तापजनक कोयला मौजूद है।

चोपक्षेत्र—केवल १ वर्गमील विस्तृत और हजारीबागकी उपजाऊ भूमि पर अवस्थित है।

इटकुरी—हजारीबागसे २५ मील उत्तर-पश्चिम विस्तृत है। यहां कोयलेके थोड़ेसे सामान्य परत मिले हैं।

औरङ्ग—लोहारडागा जिलेमें कोयल नदीके तीर अवस्थित है। कोयल शोण-नदकी एक उपनदी है। यह क्षेत्र प्रायः ८७ वर्गमील लम्बा चौड़ा है। इसमेंसे २०००००० टन कोयला निकल सकता है। यहां भी जो कोयला अपने आप मट्टीसे निकलता, बहुत अच्छा नहीं ठहरता।

हुतार—औरङ्गक्षेत्रसे पश्चिम ७८ वर्गमील विस्तृत है। इसकी खानका कोयला अच्छा होता है।

डालटनगञ्ज—कोयल नदीके तीर २०० वर्गमील

लम्बा चौड़ा क्षेत्र है। परत थोड़े और ६।६ फुट मोटे हैं। कोयला बहुत उम्दा निकलता है। यहां अनुमानत: ११६०००० टन कोयला निकाला जा सकता है।

करहारबारी—कलकत्तेसे २०० मील पश्चिम हजारीबाग जिलेमें अवस्थित और ८ वर्गमील विस्तृत है। यहां बहुत बढ़िया कोयला होता है। इस क्षेत्रमें ३ बड़े और १६ फुट मोटे परत हैं। प्राय: १३६०००००० टन कोयला विद्यमान है। अञ्जनके कामको रानीगञ्जसे यह कोयला अच्छा है।

देवघरमें—जयन्ती, शाहाजोरी और कश्चित कहैया नामक तीन क्षेत्र परस्पर अति निकट अवस्थित हैं। यहां कई तरहका कोयला निकलता है। जयन्तीका कोयला अति उत्कृष्ट, परन्तु शाहाजोरीका खराब है।

राजमहल—राजमहल पर्वतके पश्चिमांशमें यह पार्वत्य क्षेत्र बहुत दूर तक चला गया है, परन्तु अभी थोड़े ही स्थानमें काम लगा है। बीच बीच पर्वतके शिखरोंका व्यवधान पड़ जानेसे हुडा, चापारभिटा, पाचीयाड़ा, मीयूबुड़ी और ब्राह्मणी पांच विभाग किये गये हैं। इस स्थानका कोयला अच्छा नहीं, प्राय: पत्थर जैसा होता है। किसी भागमें परत बहुत नहीं बढ़े। पूर्व दिक्‌को यदि कोयलेके परत निकलें, तो यहांसे कोयला बाहर भेजनेमें बड़ा सुभीता पड़े, क्योंकि गङ्गानदी निकट ही है।

उड़ीसेकी ब्राह्मणी नदीके तीर तालचिरमें ७०० वर्गमील विस्तृत कोयलेका क्षेत्र है। परन्तु इसका कोयला अच्छा नहीं होता।

आसाममें जो कई एक क्षेत्र हैं, उनमें डलफा पहाड़के क्षेत्रसे गोंडवन कोयला मिलता है। परन्तु यहां कोयलेका स्तर ५।६ फुटसे अधिक मोटा न होनेसे सब काम रुका है।

खसिया और जयन्तीपहाड़के क्षेत्रमें—भूस्तरगठन-तृतीय युग और प्राणियुगके स्तर-जैसा कोयलेका स्तर देख पड़ता है। मियोबेलिकि नामक स्थानमें जो कोयला मिलता, पाइरिटीज नामक गन्धक-प्रधान धातुका भाग अधिक रहनेसे जलानेके काममें नहीं लगता, फिर भी शिलाङ्ग ष्टेशन पर व्यवहृत होता है। यहांके और लाङ्गयिन नामक स्थानके कोयलेका स्तर तृतीय युग और चेरापूंजीके कोयलेका स्तर प्राणियुगका है। जयन्तीपर्वतके अमीर, लाकाडोङ्ग, नरपुर, शाटिङ्गा और सेरमाङ्ग नामक स्थानोंके कोयलेमें अङ्गारसारका भाग यथेष्ट है। यहां एकमात्र लाकाडोङ्ग क्षेत्रसे ही १५०००००० टन कोयला निकल सकता है।

गारोपर्वतके—दरङ्गगिरि क्षेत्रमें प्राय: ७ फुट मोटे कोयलेका परत है। किन्तु वहां अंगरेजोंके कम पहुंचनेसे कोयला निकाला नहीं जाता।

उत्तर आसाम—माकुम नामक क्षेत्रमें कोयलेके कितने ही बड़े बड़े परत हैं। उनमें एक १०० और एक ७५ फुट मोटा है। यहां बहुत अच्छा कोयला होता और प्राय: १८०००००० टन मिल सकता है। जयपुर नामक क्षेत्रका कोयला वैसा अच्छा नहीं रहता। दो चार परतोंमें अच्छा कोयला भी मिलता है। इस क्षेत्रमें प्राय: १०००००० टन कोयला होगा। नाजिर नामक क्षेत्रमें कितने ही परत हैं। उनमें अधिकांश ३० फुट या इससे भी मोटा है। जांजी और डिसाई नामक और भी दो क्षेत्र यहां विद्यमान हैं।

ब्रह्मदेश और भारतके पूर्व अंशमें निम्नलिखित स्थानों पर कोयला होता है—

अरकान प्रदेशके अन्तर्गत अरङ्गा द्वीपमें तीन और पिनिकियङ्ग द्वीपमें एक कोयलेकी खान है। रामरी द्वीपमें जो खनि है, उसका एक परत प्राय: ६ फुट मोटा है। चेदुबाभूमिमें भी कोयलेकी खान है। पेगू प्रदेशमें १८५५ ई०को प्रथम थेयटमेयोकी खनि आविष्कृत हुई। किन्तु थोड़े दिनों पीछे यहां काम बन्द हो गया। सिवा इसके तेनासरिम और उत्तरब्रह्मके नाना स्थानोंमें कोयलेकी खानि निकली है।

युक्तप्रदेशमें तातापानी, हरिया और मोरन नामक तीनों क्षेत्र शोणनदके निकट हैं। यहां परतोंमें जो कोयला मिलता, उससे खूब काम चलता है। सिंगरावली नामक स्थानके कोटाक्षेत्रका कार्य सम्प्रति बन्द हो गया है। सोहागपुरक्षेत्रके परत तिरछे

लगी हैं; सुतरां यहां कोयला निकालनेका बड़ा सुभीता है। एतद्भिन्न जोड़िला, उमरिया, कोरर, झिलमिल, विश्रामपुर, लक्ष्मणपुर प्रभृति स्थानोंमें भी कोयलेके क्षेत्र हैं। इनमें उमरियाका क्षेत्र सबसे बड़ा है।

मध्यभारतमें महानदीके निकट रायगढ़, हिङ्गिर, उदयपुर और कोर्बाक्षेत्र है। इनमें कोर्बाक्षेत्रका कोयला बहुत अच्छा और परत मोटा है। नर्मदा नदी और सतपुरा पर्वतके बीच महापानीक्षेत्र बहुत बड़ा है। इसके कोयलेसे ग्रेट इण्डियन पेनिनसुला रेलवेका काम चलता है। सिवा इसके तोया उपत्यकाके शाहपुर या बिट्ठलक्षेत्र, पेंच उपत्यका और वर्धा-गोदावरी उपत्यकाके बन्दरक्षेत्रमें बहुत कोयला होता है।

बरारमें वर्धा या चण्डक्षेत्रकी खनि बहुत बड़ी है। यहां बरोरा, धूगुस, बुन और पापुर तथा बष्ठी एवं पौनोंमें कोयला होता है।

बम्बई विभागके कच्छ, सिन्धु, बोलन गिरिवर्त्मके माक नामक स्थान, हरणाई गिरिपथके शाहरिग, लोनी पठानराज्यके चमारलङ्ग, वजीरी राज्यके कानीगरम, लवणपर्वत, कुलाबा आदि स्थानोंमें कोयलेकी खानि है। पञ्जाब लवणपर्वतके अम्ब, सुंगेलवर, चम्मल, कुट, शोभाखान्, देवल, नूरपुर (नीलवन,) केहली, टांड़त, पोड़, भगवान बक्ष आदि स्थानोंमें कोयला मिलता है। पोड़ खानिका कोयला ही इस देशमें जलाया जाता है। भगवानबक्षके कोयलेमें पाइरिटोज नामक गन्धकप्रधान धातुका भाग अधिक और अति विच्छिन्न होता है। इसीलिये यह जलानेके काममें नहीं लगता।

हिमालय पर्वत पर पद्मनदीके तीरवर्ती डांडली सङ्करमार्ग पर्वतके उत्तर-पश्चिम भागमें प्राणीयुगके कोयलेका स्तर देख पड़ता है। शिवालिक पर्वतमें कोयले-जैसा पदार्थ और अपरिपुष्ट कोयला तो मिलता है, परन्तु उससे काम नहीं निकलता। शिकिमके डालिङ्कोट नामक स्थानोंमें गोण्डवनकी भांति छोटा छोटा कोयला होता है। यहां कोयलेकी एक बुकनी मिलती, जो पेनसिलके काले सीसे-जैसी ठहरती है।

मन्द्राजके बोड़ादानोल, मादवेरम, लिङ्गला, सिङ्गारेणी, कामारम, टांडूर, अन्तरगांव, बष्ठी और पौनी आदि स्थानोंमें कोयला निकलता है।

१७७४ ई० को सर्वप्रथम बङ्गालमें कोयला निकालनेका काम आरम्भ हुवा था। उस समय बङ्गाल सिविल-सरविसके हिटली और सामार नामक दो व्यक्ति इसका एकाधिकृत व्यवसाय करते थे। इन्होंने पहले रानीगञ्जमें काम लगाया था, परन्तु क्षतिग्रस्त होनेसे उसे बन्द कर दिया और १८१५ ई० तक इसका काम बन्द रहा। फिर जोन्स नामक एक व्यक्ति काम करने लगे, परन्तु कोई सुविधा न मिलने पर १८२० ई० तक छोड़ बैठे। अलेगजण्डर-एण्ड-कम्पनी नामक वणिकोंके एक दलने इसी वर्ष फिर कार्य आरम्भ किया था। इस वर्षसे १८५९ ई० के बीच इन लोगोंके हाथों ५० खानोंका काम चलता रहा। उस समय २७ एञ्जिन चलते और १६०० लोग काम करते थे। खानि १३० फुट पर्यन्त गभीर खोदी गयी थी। यह खान दामोदर नदीके तल पर्यन्त प्रायः ३ मील विस्तृत थी। १८४० ई० को यहां १५ लाख मन कोयला निकाला गया था। फिर धीरे धीरे परिमाण बढ़ने लगा और शेषको १८६० ई० में प्रायः चतुर्गुण हो गया।

भारतका कोयला प्रायः अधिकांश रेलवेके कार्यमें व्यवहृत होता है। रानीगञ्ज या बङ्गालका कोयला कलकत्तेके पुतलीघरों और जहाजोंमें लगता है। फिर छोटा छोटा कोयला ईंटोंके पजावेमें पड़ता और सबसे छोटा घरोंमें जलता है।

बङ्गालका करहारबारी क्षेत्र सर्वापेक्षा क्षुद्र रहते भी वहां उत्तोलन-प्रथाने सर्वापेक्षा उन्नतिलाभ किया है। बङ्गालके अन्यान्य क्षेत्रोंमें भी इसी स्थानके अनुकरणसे काम चलता है। कोयलेकी खानमें सवेरे ६ बजेसे सन्ध्याको ६ बजे तक काम होता है। आवश्यक होनेसे रात तक मजदूर नहीं छूटते। सप्ताहमें ४ दिन बड़े जोरसे काम चलता है। खननकार्यमें निम्नश्रेणीके हिन्दू और मुसलमान तथा सन्थाल कोल आदि नियुक्त होते हैं। प्रति रविवारको उन्हें वेतन मिलता है।

बङ्गालके बाउरी लोग खान खोदनेमें बड़े दक्ष हैं। खानके बीचसे पानी निकालनेको एञ्जिनके सहारे नल लगता और वायु आने जानेके लिये धूमनलकी भांति शून्यगर्भ स्तम्भ बनता है। परन्तु बहुतसी खानोंमें यह बात नहीं रहती। अन्धकारवशत: लोग पलीता जलाकर काम करते हैं। जिस खानमें तेल या गन्धकका परिमाण अधिक रहता, पलीतेकी आगसे समय समय बड़ी विपद् पड़ जाती है।

खनक खनिके निकट ही क्षुद्र क्षुद्र कुटीर बना वास करते हैं। प्रत्येक कुटीरमें एक क्षुद्र वासगृह, एक शस्यशाला और एक गोशाला रखते हैं। शीतकाल और ग्रीष्मकालको जब खानमें काम चला करता, यह लोग उसमें लगे रहते हैं, किन्तु वर्षाकालके तीन मास (जुलाई, अगस्त, सितम्बर) अपनी खेतीबारी देखते हैं। फिर बहुतसे लोग बारहो मास केवल खानमें ही काम किया करते हैं। सोमवारको खनक सप्ताहकी छुट्टी पाते हैं।

कोयलेका आना जाना लगा रहता है। जो जहाज इस देशसे बाहर जाते, उनमें खर्चके लिये भरा जानेवाला कोयला ही भारतके कोयलेकी रफ्तनी है। बम्बई कपड़ेके पुतलीघरोंके लिये बङ्गाल और निजामके राज्यसे कोयलेकी आमदनी होती है।

कोक-कोयला—वह है, जो गृहस्थोंके घरमें जला करता है। यह खानका सीधा निकला नहीं होता। इसे पेंचमें जला और तेल आदि निकाल करके तैयार करते हैं। खानका कोयला सामान्यतः कच्चा कोयला कहलाता है। कोक इस देशमें बनाया और अन्यान्य देशोंसे भी मंगाया जाता है। भारतका कोक कठिन और कोमल दो प्रकारका होता है। कठिन कोक लोहेके कारखानों और छोटे छोटे अञ्जनों तथा कोमल कोक जिससे जलते समय धूवां निकलता रन्धन आदि कार्योंमें व्यवहृत होता है।

बहुतसे विचक्षण डाक्टर कहा करते हैं कि कलकत्ते और तन्निकटवर्ती स्थानोंमें अधिकांश लोगोंको अम्लरोग लगनेका प्रधान कारण इसी कोयलेकी आगसे भोजन बनाकर खाना है। यह बात द्रव्यतत्त्वानुसन्धायी लोगोंका मनोयोग आकर्षण न कर सकते भी नितान्त अमूलक जैसी नहीं समझ पड़ती। कारण कोयलेकी आगसे बना हुवा भोजन खानेमें कम अच्छा लगता है।

कोयष्टि (सं० पु०) कं जलं यष्टिरिवास्य, बहुव्री० पृषादरादिवत् अकारस्योकारः। जलकुक्कुभ, एक छोटा सफेद सारस। (मनु ५।१२)

कोयष्टिक, कोयष्टि देखो।

कोया (हिं० पु०) १ अक्षिगोलक, आंखका डेला। २ कटहलका गूदेसे भरा हुवा बीजकोष।

कोया—एक धनवान् विदेशी वणिक्। त्रिवाङ्कुड़के इतिहासानुसार जब भास्कररविवर्मा वा (केरलविशेषमाहात्म्यके मतमें) चाण पेरुमल बौद्धोंके साथ मक्के गये, उसके कुछ दिन पीछे (गुजरातके अभिधानानुसार ३५ ई० और डा० बर्नेलके मतमें खृष्टीय अष्टम शताब्दीको) तलि नामक स्थानमें सामरिन-प्रासादके निकट किसी वर्धिष्णु वणिक्ने एक ग्राम स्थापन किया। यह वणिक् मक्केके अरब वणिकोंसे वाणिज्य व्यवसाय करके यथेष्ट धनवान् हुये थे। फिर जब पुन्तराकोन सामरी पद पर अधिष्ठित हुये, उपयुक्त ग्राममें कोया नामक एक विदेशी धनवान् वणिक् रहा करते थे। इन्होंके नामानुसार ग्राम 'कोइकोटु' कहलाया। इसी कोइकोटु शब्दका अपभ्रंश 'कालिकट' है। कोयाने परिशेषको सामरीको राज्यवृद्धि करनेमें यथेष्ट साहाय्य दिया था। बहुत थोड़े दिन पीछे ही पोर्तगीज इस देशमें आये।

कोर (सं० पु०) कुल संस्थाने अच् गुणः लस्य रः। १शरीरका सन्धिविशेष, जिस्मका कोई जोड़। अङ्गुली, मणिबन्ध, गुल्फ, जानु और कूर्पर स्थानोंके सन्धिका नाम कोरसन्धि है। (सुश्रुत)

कुल भावे घञ् लस्य रः। २ संस्थान, शरीरका अवयव।

कोर (हिं० स्त्री०) १ प्रान्तभाग, सिरा ह्राशिया। २ द्वेष, दुश्मनी। ३ दोष, बुराई। ४ अनी, नोक। ५ धार, बाढ़। ६ श्रेणी, दरजा। ७ रबी वर्ग रहकी पहली सींच। ८ चबेना, मजदूरोंको दी जानेवाली

पनपिलाई। ८ कोण, कोना।

"कोरनमें कमला करोरन लगी फिरें।" (देवकीनन्दन)

कोरई (हिं० स्त्री०) तृणविशेष, सुदरकटी नामकी एक घास। यह हिमालय पर कश्मीरसे ब्रह्मदेश पर्यन्त ६००० फुट ऊंची पहाड़ियों और तराइयोंमें जगती है। कोरईकी चटाइयां बहुत बनायी जाती हैं।

कोरंगा (हिं० पु०) एक प्रकारकी टोरी या टोकरी। इसको गोबर और मट्टीसे लपेट अनाज आदि रखनेमें व्यवहार करते हैं।

कोरंजा (हिं० पु०) मजदूरोंमें दिया जानेवाला अनाज।

कोरक (सं० पु०-क्ली०) कुल संस्थाने ख्वुल् लस्य रः। १ कुड्मल, फूलकी कटोरी। (माघ) २ मृणाल, कमलकी डंटी। ३ चकोरपक्षी। ४ चोरक नामक गन्ध-द्रव्य, चोवा। ५ काकोली, शीतलचीनी।

कोरक (हिं० पु०) एक प्रकारका बेंत। यह आसाम और ब्रह्मदेशमें उपजता तथा मोटा एवं सुदृढ़ रहता है। इसकी छड़ियां बना करती हैं।

कोरकवृक्ष (सं० पु०) इङ्गुदीवृक्ष, एक पेड़।

कोरकसर (हिं० स्त्री०) न्यूनता, कमी, काट छांट।

कोरकार (सं० त्रि०) कोरं अवयवं करोति, कोर-कृ-अण्। अवयवसंस्थानकारक, जोड़ लगानेवाला।

कोरकित (सं० त्रि०) कोरकं जातमस्य, तारकादित्वा-दितच्। मुकुलित, फूटा हुआ, जिसमें कली आ गयी हो।

कोरकू—मध्यप्रदेशकी एक आदिम जाति। इनकी संख्या प्रायः १४०००० है। इसमेंसे १००००० मध्यभारत और अवशिष्ट बरार तथा मध्यभारतमें रहते हैं। होशङ्गा-बाद, निमाड़ और बेतूल जिलेमें सतपुरा पहाड़के पश्चिम कोरकू पाये जाते हैं। 'कोरकू' शब्दका अर्थ आदमी (कोर=आदमी और कू=बहुवचनका चिह्न) है। यह छोटानागपुरके कोरवाओंसे मिलते जुलते हैं जो लोगोंके कथनानुसार अपना आदिम अधिवास पंचमढ़ी पर्वत रखते हैं। राज-कोरकू अब राजपूतोंके वंशधर होनेका दावा करते और कहते हैं कि उनके पूर्वपुरुष धारानगरी (उज्जैन)-से पंचमढ़ी पहुंचे थे। इनमें मोवासी और बावरिआ कुलीन तथा रूमा और बोंदोया नीचस्थ समझे जाते हैं।

कुछ कोरकू कन्याका विवाह करना अशुभ मानते और बिना किसी चाल ढालके उसे वरके हाथ सौंप देते हैं। शवको गाढ़ दिया जाता है। यह हिन्दू हैं और महादेवकी पूजा करते हैं, जिनका पञ्चमढ़ी पहाड़ पर मन्दिर है। कई ग्राम्यदेवताओंकी भी पूजा होती है। अपनी ईमानदारी और सादगीके लिये खेतोंकी नौकरी इन्हें बहुत मिलती है। इनकी भाषा भी कोरकू कहलाती है।

कोरगर—मङ्गलोरके निकट दक्षिण-कनाड़ामें रहनेवाला एक असभ्य जाति। इनकी तीन श्रेणियां हैं—अन्दि-कोरगर, वस्त्रकोरगर और सप्पकोरगर। पहले कोर-गरोंकी कुमरन्न, मुंगरन्न नामकी और भी दो श्रेणियां रहीं, परन्तु अब वह लोप हो गयी हैं। अन्दियोंकी संख्या बहुत थोड़ी है। इनके गलेमें एक बरतन लटका करता है। सप्पकोरगर वस्त्रके बदले वृक्षपत्र परिधान करते हैं। तीनों श्रेणियोंमें आदान प्रदान चलता है। विवाहके समय वरकन्याको स्नान कराके एक चटाई पर बैठाते हैं। फिर उन पर चावल छोड़े जाते हैं। कोर-गर पवित्र स्थानमें शवको प्रोथित करते और समाधि पर भातके चार गोले बना कर रख देते हैं। उपस्थित वयोज्येष्ठ ही इनका पुरोहित होता है। कशर्कन नामक वृक्षके तल पर देवता आदिको पूजते और केलेके पत्ते पर हलदी दिया हुआ भात देवताको निवेदन करते हैं। कमरके नीचे पेड़के पत्ते लपेट स्त्रियां अपनी लज्जा निवारण करती हैं। कोरगर कहते हैं—किसी हबशीने अनन्तपुरसे एक दल सेना संग्रह की थी, जिसमें हम-लोग प्रधान रहे। पहले तो हम युद्धमें जीते, परन्तु शेषको हार जाने पर वनमें आश्रय लेना पड़ा।

कोरगांव—बम्बई प्रदेशस्थ सतारा जिलेके मध्यस्थलका एक उपविभाग। यह अक्षा० १७° २८´ एवं १८° १´ उ० और देशा० ७४° तथा ७४° १८´ पू० पर अवस्थित है। इसके उत्तर खण्डाल और फलटन, पूर्व फलटन तथा खतव, दक्षिण कराड़ और पश्चिम सतारा एवं वाई है। कोर-गांवका परिमाण प्रायः ३४६ वर्गमील है।

इस उपविभागके चारो ओर पर्वतमाला लगी, केवल दक्षिण-पश्चिम कृष्णा नदी बही है। उत्तर और

उत्तर-पूर्वके पर्वत ही अधिक ऊंचे हैं। दक्षिणकी भूमि समतल है। पश्चिमांशकी उपत्यकामें आम्रवृक्षोंके सुन्दर सुन्दर कुञ्ज और कुमती ग्रामकी उद्यानावली विराजित है। पूर्वांशकी भूमि प्रायः अनुर्वरा है। कोरगांवका जलवायु स्वास्थ्यकर है। दक्षिण अंशमें ग्रीष्मका प्रादुर्भाव अधिक होता है। कृष्णा ही प्रधान नदी है। तद्भिन्न वासना नामक एक छोटी नदी भी है। इसी वासना नदीसे कोरगांवके १० मील उत्तर एक अच्छी सीनहर निकली है। यह नहर भी कोरगांवके भीतर प्रवाहित है। कृष्णा और वासनाके तीर जुवार, चना और अरहर उपजती है। अच्छी तरहसे सींचकर खेती करने पर ईख, तरकारी और अन्यान्य फलमूल भी होते हैं। पर्वतके अंशमें मोटी जुवार और बाजरेकी छोड़ कर दूसरी कोई चीज नहीं उपजती।

कोरगांव नगर अक्षा० १८° ३९´ उ० और देशा० ७४° ४´ पू० पर अवस्थित है। शहरमें एक उत्तर-दक्षिण और दूसरा पूर्वपश्चिमको विस्तृत दीर्घ राजपथ है। सतारा-रोड नामक राहमें शहरसे पौन कोस दक्षिण वासना पर एक सुन्दर प्रस्तरसेतु बना है। कोरगांव मानगङ्गा नामकी छोटी नदीके किनारे बसा है। मानगङ्गाके तीर आमका यथेष्ट जंगल है। यह सकल आम्रकुञ्ज स्वाभाविक सेनानिवासकी भांति अति स्वच्छन्द रूपसे व्यवहृत हो सकते हैं। १८१८ ई०को यहां मराठोंसे अंगरेजोंका एक युद्ध हुवा। जनरल स्मिथ पेशवा बाजीरावके अनुसरणको नियुक्त किये गये। स्मिथके सदल पंढरपुरके निकट पहुंचने पर बाजीराव जुन्नारको भागे थे। शेषको भीमा नदीके तीर १८१८ ई०में १वीं जनवरीके दिन कोरगांवमें उभय पक्षमें एक वृहत् युद्ध हुवा। पेशवा पराजित हो सतारेके अभिमुख भाग गये।

कोरङ्गी (सं० स्त्री०) कुरति कोरङ्गीत्याख्यां गच्छति, कुर-अङ्गच् गौरादित्वात् ङीष्। १ सूक्ष्मैला, छोटी इलायची। २ पिप्पली, पीपल।

कोरचर—बम्बई-प्रदेशकी एक जाति। यह देखनेमें प्रायः कोरबिया जैसे होते और तामिल भाषा बोलते हैं। गृहदेवताका नाम दुर्गाम्मा है। कोरचर भद्दी मट्टीके छोटे छोटे झोपड़ोंमें रहते और छतको ढालू नहीं रखते। इनका प्रधान खाद्य काकुनकी रोटी, दाल और भाजी है। यह भेड़, बकरा, शिकारकी हुई चिड़ियाका मांस और मछली खाते हैं। देशी विदेशी शराबको भी मिलने पर नहीं छोड़ते। अच्छे पहनावेमें मत्थे पर रूमाल, छोटा कुरता, फतुही, छोटी धोती और छोटी ओढ़नी है। स्त्रियां फतुही जैसी एक चोली पहनती हैं। कोरचर मराठोंको समश्रेणीमें ही गिने जाते और उनके साथ खाते पीते भी हैं, परन्तु परस्पर विवाह आदि नहीं होते। यह मजदूरी और शिकार करते हैं। सब लोग प्रायः कठिन परिश्रमी होते हैं। स्त्रियां गोदना गोद कर भी कुछ उपार्जन कर लेती हैं। कोरचर हिन्दू देवदेवियोंको पूजते और हिन्दुवोंके पर्वोंको मानते हैं। नित्य तथा नैमित्तिक कार्यमें ब्राह्मण लगाया जाता है। किसीका मृत्यु होनेसे शवको समाधि देते हैं। पंच लोग इनके घरका विवाद मिटाते हैं। कोई कोरचर लिखना पढ़ना नहीं सीखता।

कोरचरु—कर्णाटवासी एक जाति। यह पर्वत और वनमें रहते हैं। इनका साधारण नाम कोरचा है। यह बांसकी टोकरी, दौरी, डलिया, चटाई आदि प्रस्तुत करते और बेचते हैं। कोरचरु बाजारोंमें सुपारी बेचते घूमा करते हैं।

कोरञ्जी (सं० स्त्री०) सौराष्ट्रिका, सौराष्ट्र देशकी महकती मट्टी।

कोरट (अं० पु० = Court of Wards) राज-विभाग-विशेष, नाबालिगोंके सरपरस्तोंका महकमा। किसी राज्य या जमीन्दारीका प्रबन्ध जब सरकार अपने हाथमें लेती, तो उसे कोरट या कोर्ट अब वार्डस कहते हैं।

कोरणहल्ली—बम्बई-प्रदेशके धारवाड़ जिलेका एक ग्राम। यह मुन्दरगी नगरसे ६ मील दक्षिण गड़गके निकट तुङ्गभद्राके वाम तीर पर अवस्थित है। इस ग्राममें कंकड़ पत्थरसे बंधा हुवा तुङ्गभद्राका एक पुराना बांध है। यह बांध जलमध्यस्थ पर्वत पर बना और भाटेके समय १३।१४ हाथ पानीके ऊपर देख पड़ता है। इसका उपरिभाग भी १४ हाथ प्रशस्त है। यह नहीं कि बांधमें बड़े पत्थर नहीं हैं। एक एक पत्थर ८ हाथ

लम्बा, २ हाथ मोटा और १॥ हाथ चौड़ा निकलेगा। उपरि-भागमें बीच बीच ११ हाथ लम्बे भी बहुतसे पत्थर हैं। इसके मध्यस्थलमें आजकल १३३।२०० हाथ चौड़ी एक दराज पड़ गयी है, जिससे यह अव्यवहार्य है। विजयनगरके राजावोंने इस बांधको बनवाया था। मन्द्राजकी ओर इस बांधके पास 'मदल फाट्टा' नामक ग्राम है। इस शब्दका अर्थ 'पहला बांध' है। मालूम होता है कि विजयनगर-राजावोंके बनाये बांधमें वही पहला था।

कोरण्टी (सं० स्त्री०) बदरीवृक्ष, बेरी, बेरका पेड़।

कोरतल—हैदराबाद राज्यके करीमनगर जिलेके जगतिपाल ताल्लुकका एक शहर। यह अक्षा० १८° ४९' उ० और देशा० ७८° ४३' पू०में अवस्थित है। यहां मोटा कागज बनता जो पटवारियोंके खातोंमें बहुत लगता है।

कोरदूष (सं० पु०) कोरं संस्त्रानं दूषयति, कोर-दूष्-णिच्-अण्, लस्य रत्वम्। कोद्रव, कोदो। यह मधुर, शीतल, ग्राही, गुरु, तिक्त, व्रण्य, रुक्ष, जीर्ण होने पर लघु और कफ, पित्त, विष तथा मूत्रकृच्छ्रनाशक है। (वैद्यकनिघण्टु)

कारदूषक, कोरदूष देखो।

कोरदूष्य, कोरदूष देखो।

कोरनी (हिं० स्त्री०) पत्थरकी खुदाई, सङ्गतराशी।

कोरपुट—१ मन्द्राज-प्रान्तके विजगापटम् जिलेका एक उपविभाग। २ विजगापटम जिलेकी एजेन्सी तहसील। यह घाटी पर पड़ती और ६७१ वर्गमील क्षेत्रफल रखती है। लोकसंख्या प्रायः ७३८१८ है। देश पहाड़ी होते भी खूब जोता बोया जाता है। जयपुरके राजाका यहां अधिकार है। ३ कोरपुट तहसीलका सदर। यह अक्षा० १८° ४८' उ० और देशा० ८२° ४४' पू०में पड़ता है। यहां जयपुरके स्पेशल असिष्टण्ट एजेण्ट और पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट और बहुतसे जर्मन मिशनरी रहते हैं। आबादी लगभग १५६० है।

कोरव (कोड़व)—दाक्षिणात्यवासी एक उत्सन्नप्राय जाति। इनके वासस्थानकी स्थिरता नहीं। दाक्षिणात्यके प्रायः सभी देशोंमें यह देख पड़ते हैं। इनमें गांव कोरव या मोनाई कोलवुरु, किसान कोरव या कसबी कोरवा अथवा कुञ्चि कोरवा, कोल्ल कोरव और सोली कोरव नामके कई श्रेणीविभाग हैं। कुञ्चि कोरवे एक स्थानमें नहीं बसते, इधर उधर घूमा फिरा करते और जाल बिछाकर चिड़ियां पकड़ते रहते हैं। गायको छोड़ कर प्रायः सभी पशुवोंका मांस खाया जाता है। शवको दाह करते हैं। गोदावरी तीर पखल झीलके पास अपेक्षाकृत वन्य कोरव जातिका एक दल रहता है। कनाड़ा प्रदेशमें इनका नाम कोरवर्ण और कोरमारवण है। इनमें फल्ल कोरमार (व्यवसायी चोर), बलग कोरमार (गीतवाद्यकार) और हक्कि कोरमार (बांसके टोकरे बनानेवाले और व्याध) तीन श्रेणियां होती हैं। महिसुरके कोरवोंकी अपनी स्वतन्त्र भाषा है। और भी दक्षिणको जीरकेल कोरवार जातिके अन्तर्गत-जैसा गण्य हैं। यह शिकारमें मिले पशुपक्षीका मांस आहार करते हैं। जङ्गली फलमूल आदि भी खा जाते हैं। बहुतोंने भाग्यगणनाका व्यवसाय पकड़ लिया है। कोई कोई लकड़ीकी कंघियां भी बनाता है। यह बंधे घरमें नहीं रहते। तीन लंबी लकड़ियां गाड़ उनपर खजूरके पत्तोंकी चटाइयां डाल कर आवश्यक-जैसा घर खड़ा कर लेते और स्थान परिवर्तन करते समय चटाइयां उतार और लकड़ियां उखाड़ गधेकी पीठ पर लाद कर चल देते हैं। कोरव सूवर पालते और उसका मांस खाते हैं।

दक्षिण अरकाटमें उपु कोरवर नामक एक जाति है। उनकी बोली तामिल और तेलगुकी मध्यवर्ती एक बिगड़ी भाषा है। इनमें बहुतोंका एक गृहदेवता होता है। भ्रमणके समय इस देवताको अपने साथ ही रखते हैं। इस जातिमें बहुविवाहकी प्रथा प्रचलित है। प्रायः रविवारको ही विवाह होता है। पूर्व दिन शनिवारको देवपूजा करते हैं। हलदीसे रंगे चावल वरकन्याके मस्तकमें बांध कन्याके गलेमें 'परिणयसूत्र' डाल देनेसे ही विवाह हो जाता है। कोरव कितने ही निकट सम्बन्धोंमें विवाह नहीं करते। विधवाविवाह अप्रचलित है। इनमें वेश्याओंका भी अभाव है। कोरवोंकी जातीय रीति यह है किसी

वंशकी प्रथम दो कन्यायें अपने मातुलपुत्रोंके साथ विवाहित होती हैं। कन्यापण देना पड़ता है। मातुल अपने पुत्रोंके साथ विवाह करते समय प्रति भागिनेयीके लिये ४२) रु० देते हैं। फिर यदि मामाके लड़का नहीं होता, तो भानजियोंके विवाहकाल कन्याके ७०) रु० दहेजसे प्रति भागिनेयी उसे २४) रु० मिलता है। नेल्लूर प्रदेशमें जेकॅल कोरव कन्याओंको गहने रख देते हैं। महाजन इच्छा करनेसे गहने रखी हुई कन्याओंको अपने आप या अपने पुत्रोंके साथ व्याह सकता अथवा उन्हें निकाल बाहर भी कर सकता है। यदि कोई जेकॅल जाता और उस समय उसकी स्त्री अन्य सजातीय पुरुषके साथ उपरत होती और कोई सन्तान उपजता तो स्वामी छूटने पीछे सन्तानादि लेकर घर लौट आता है। इससे कोरवोंकी सामाजिक निन्दा नहीं होती। विङ्गलपटमें उपु कोरव स्त्रीको भी रिहन कर देते हैं। तञ्जोरमें स्त्री बन्धक रखनेसे उस अवस्थामें जो सन्तानादि होते, उनमें पुत्र महाजन और कन्या बन्धकरखनेवालेको सम्पत्ति ठहरती है। मदुरामें २५) रु० को स्त्री बिकती है। विक्रीत स्त्री फिर वापस नहीं होती। देना चुकाने पर रिहन स्त्री कन्या वापस मिल जाती है। कोरव एकान्नवर्ती और वंशगत उपाधिधारी होते हैं। इनके सकल विवादोंकी पंचायत मीमांसा करता है। अरकाटमें स्त्री-कन्या रिहन रखनेकी रीति नहीं है। इनके गृहदेवताका नाम शङ्खलाम्मा है। यह पशुपालन भी करते हैं। जलमें चावल पका कर खाया जाता है। दाल और तरकारीमें इमली डाल देते हैं। मद्यपानमें भी इन्हें कोई आपत्ति नहीं। पुरुष कानों, उंगलियों और कलाइयों पर पीतलके कड़े पहनते हैं। फिर स्त्रियां पीतलके बजुल्ले बांधती और नथनी लगाती हैं। स्त्रियोंकी अंगिया और धोती निम्नश्रेणीके हिन्दुवों जैसी रहती और पुरुषोंके ढाई हाथकी लंगोटी लगती है। इनमें एक असाधारण क्षमता यह है कि—पक्षी पकड़ते समय अपने आप उनकी तरह तरहकी बोलीका अनुकरण करते और पक्षी भी स्वजातीयका आह्वान समझके जालमें आ गिरते हैं। कोरव छिप कर महिष तक मार डालते हैं। वर्षमें उत्सवके चार समय हैं—ज्यैष्ठमासमें 'उगादि', भाद्रमें नागपञ्चमी, आश्विनमें दशहरा और कार्तिकमें दीवाली। प्रति मङ्गलवारको यह गृहदेवता शङ्खलाम्माकी मृण्मयी प्रतिमा पूजते, नारियल तथा केला चढ़ाते, धूप देते और आरती उतारते हैं। कोरव स्वधर्मपरायण हैं। इनके ब्राह्मण वा शैवगुरु नहीं होते। कोरवमात्र चुड़ैलों और भूतोंके उपद्रवको मानते और रोग होने पर दैवज्ञसे पूछ गृहदेवताकी मानता करते हैं—आरोग्य होने पर चांदीकी आंख और मोंछ चढ़ायेंगे। कभी कभी रोगदाता भूत स्वप्नमें आहार प्रार्थना करते हैं। उस समय यह तीन गोले भात लेकर तीन स्वतन्त्र मृत्पात्रोंमें रखते और उसमें थोड़ा पानी छिड़कते हैं। अन्तके तीनों गोलोंमें गर्त करके तेल और पलीतेसे जला देते, फिर हलदी लाई, चना, नीबू और केला प्रत्येक रोगीके मुखके निकट उतार कर वनमें फेंक आते हैं।

पुत्रकन्या उत्पन्न होने पर नाड़ोच्छेद करके रेड़ीका तेल चतके मुख पर लगाते और बच्चेको गर्म पानीसे स्नान कराते हैं। प्रसूति स्नान नहीं करती और पांच दिन तक पक्षीका मांस खाती है। ग्यारहवें दिन उसका स्नान होता है। तृतीय मास शिशुका मस्तक मुण्डन किया जाता है। विवाहके लिये शुभदिन आवश्यक नहीं, रविवार होनेसे ही काम निकाल लेते हैं। विवाहके पूर्वदिन शनिवारको शङ्खलाम्माकी पूजा होती है, उस दिन मांस रांधा नहीं जाता। वेदी पर बैठाके वरकन्याके मस्तक पर हलदीसे रंगे चावल छोड़ देते और वरकन्या दोनों हलदीका उबटन लगा नहा लेते हैं। वरकन्या दोनों कनिष्ठा उंगलियां परस्पर शृङ्खलवत् जुड़ी रखते हैं। ५ सधवा स्त्रियां विवाहगीति गाकर वरके मणिबन्ध और कन्याके कण्ठमें हरिद्राक्त 'मङ्गलसूत्र' बांध देती हैं। फिर वरकन्या दोनों इसी प्रकार हाथ रखे घरमें जाकर पानीके बीच हाथ डुबा कर एक दूसरेको छोड़ते हैं। उसके पीछे वरकन्या एकत्र आहार करते हैं। ४थे दिन उभयपक्षके आत्मीय स्वजनोंमें महासमारोहसे भोज निष्पन्न होता है। तत्-

पश्चात् स्त्री प्रथम ऋतुमती होनेसे आत्मीय स्वजन मद्यादि पी कर स्वामीस्त्रीको एकत्र अवस्थान करने देते हैं। कोरवोंमें व्यभिचारिणी होते भी पत्नी परित्याग करनेकी प्रथा नहीं है। कहीं कहीं विधवा विवाह चलता है।

कोरवर—एक जाति। महिसुर-प्रदेश और बम्बईके भीदो एक स्थलों पर कोरव जातिके लोगोंको कोरवर या कोरमान कहते हैं। कोरव देखो।

कोरवा (हिं० पु०) ताम्बूलकी कृषिका द्वितीय वर्ष, पानकी बोढ़का दूसरा साल। इसका पान बहुत अच्छा होता है। २ कुरवा, कुल्हड़।

कोरवाई—मध्यभारतकी भूपाल एजेन्सीका एक मंझोला राज्य। यह अक्षा० २४° १´ तथा २४° १४ ३० और देशा० ७८° २´ एवं ७८° ८ पूके बीच पड़ता है। क्षेत्रफल प्राय: १११ वर्गमील है। कोरवाईमें बेतवा नदी प्रवाहित है।

१७१३ ई०को तीराके एक अफगान मुहम्मद दिलेरखांने जो फीरोजखेलसे सम्बन्ध रखते थे, कोरवाईको साथ आसपासके कुछ गांवोंपर अधिकार किया। फिर अपनी सेवाओंके पुरस्कारमें बादशाहसे उन्होंने ३१ परगने पाये। मुगल-साम्राज्य बिगड़ते समय यह राज्य भूपालके बराबर रहा, किन्तु मराठोंके अभ्युदय कालको घट गया। १८१८ ई० को नवाब पर मुश्किल पड़ी थी, उन्होंने भूपालके पोलिटिकल एजण्टसे सेंधियाके विरुद्ध साहाय्य मांगा, जो दिया गया। १८२० ई०को अंगरेजी प्राधान्य स्थापित होनेपर अकबर खान्ने राज्य अधिकार किया था। किन्तु राज्यके प्रकृत अधिकारी इरादत मुहम्मदखान् थे, जिन्हें राज्यका दावा छोड़ने पर पेन्शन मिली। १८९५ ई०को मुहम्मद याकूब अलीखान्ने राज्यका उत्तराधिकार पाया था। १९०६ ई०को उनके मरने पर सवार अलीखान् नवाब बनाये गये।

कोरवाईकी लोकसंख्या प्राय: १३६३४ है। राजस्थानी मालवी भाषा प्रचलित है। राज्यका वार्षिक आय ३७०००) रु० है।

कोरवाई राजधानी बेतवाके दक्षिण तट पर बसी है। इसकी आबादी लगभग २२५६ है। नगरसे पूर्व एक छोटी पहाड़ी पर पत्थरका दुर्ग खड़ा है।

कोरसाकेन (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह युक्तप्रदेश, आसाम, बङ्गाल तथा मन्द्राजमें बहुत उपजता और विशाल एवं सुन्दर लगता है। इसके बढ़नेमें देर नहीं लगती और पत्तियोंकी अधिकतासे घनी छाया रहती है। कोरसाकेनका काष्ठ सुदृढ़ और बहुमूल्य होता है। इसे गृहनिर्माणादि कार्यमें व्यवहार करते हैं।

कोरहा (हिं० वि०) १ किनारोदार, नुकीला। २ लाडला, बहुत खिलाया जानेवाला।

कोरा (हिं० वि०) १ अव्यवहृत, काममें न लाया हुवा। २ चिह्नरहित, बेदाग। ३ निरक्षर, अपढ़। ४ दरिद्र, गरीब। ५ केवल, खाली। (पु०) ६ पक्षिविशेष, कोई चिड़िया। यह सरोवरके निकट अवस्थान करता, ज्येष्ठ आषाढ़को डिम्ब रखता और ऋतुके अनुकूल अपना वर्ण बदलता है। इसका चक्षु पीतवर्ण और पद रक्तवर्ण होते हैं। ७ वृक्षविशेष, कोई पेड़। यह गढ़वाल, आसाम, मध्यप्रदेश और बरारमें अधिक उपजता और क्षुद्राकार रहता है। आभ्यन्तरिक काष्ठ श्वेतवर्ण, चिक्कण और मृदु निकलता है। कोरे पर नक्काशी भी की जाती है। त्वक्, फल तथा पत्रको औषधमें डालते हैं। ८ कारचोबका कोई सलमा। ९ इक्षुक्षेत्रका प्रथम सिञ्चन।

कोरापन (हिं० पु०) नयापन, अछूती हालत।

कोरापुल—मन्द्राज-प्रदेशके मलबार जिलेकी एक नदी। यह ३२ मील लम्बी पड़ती, परन्तु उथली होनेसे व्यापारके काममें अधिक नहीं लगती। उत्तर मलबारकी स्त्रियां इसे पार करना अशुभ समझती हैं।

कोरार—बम्बई-प्रदेशके कनाड़ा जिलेकी एक जाति। कुमता, मोंकी, शिराली, भटकल, मुरदेश्वर और अन्य ग्रामों तथा नगरोंमें यह अल्पसंख्यक पाये जाते हैं। महिसुर और कोयम्बतुरमें इन्हें कोरग, कोरम, और कोरच कहते हैं। दक्षिण कनाड़ामें कोरार जङ्गलके बीच रहते हैं। दक्षिण कनाड़ाके कोरगारोंकी भाषा तेलगु और तुलु मिली है। यह निर्धन और ऋणग्रस्त

होते हैं। विधवाविवाह और बहुविवाह प्रचलित है।

कोरि (हिं०) कोटि देखो।

कोरि—सिन्धु नदीके मुंहानेकी एक निकटस्थ शाखा। पूर्व इसका अपर नाम सङ्कर (सङ्कीर्ण) है। कुछ ऊर्ध्व तन प्रदेशमें इसको फड़न या फर्ण कहते हैं। कहीं कहीं 'लाकपत' नदी भी कहा जाता है। इसीने कच्छ और सिन्धु-प्रदेशको बांट दिया है। १८१९ ई० तक इस नदीके साथ सिन्धुका योग रहा और पूर्व मुखसे सागर प्रवेशका यही द्वार भी रही, किन्तु उस वर्ष भूमिकम्पसे कच्छनगर उत्सन्न होने पर एक बांध लगा कर सिन्धसे यह अलग कर दी गयी है। आजकल यह सागरकी खाड़ी जैसी देख पड़ती है। जूकूनगरके उत्तर यह सागरमें जा मिली है। मुंहाना बहुत बड़ा है।

कोरिङ्ग—मन्द्राज-प्रदेशके गोदावरी जिलेके कोकनद तालुकका एक गांव। यह अक्षा० १६° ४८´ उ० और देशा० ८२° १४´ पू०में कोकनदसे ८ मील सड़ककी राह पड़ता है। पहले यह एक डच उपनिवेश और बड़ा बन्दर था। १८०२ ई०को यहां जहाजोंकी मरम्मत करनेकी एक डक खुली, परन्तु गोदावरी स्रोत रुक जानेसे १९००-१ ई०को एक भी जहाज न पहुंचा १८३२ ई०को यहां एक बड़े भारी झड़के आजानेसे बहुत बड़ी हानि हुई। फिर १७८७ ई० और १८३२ ई०में एक भयानक बाढ़ आई और उससे समस्त प्रदेश नष्ट भ्रष्ट हो गया। लोकसंख्या ४२५८ है।

कोरिञ्चो—सुमात्राद्वीप निकटवर्ती मेनाङ्गाबूद्वीपकी एक जाति। इनकी वर्णमालामें केवल २९ अक्षर हैं। उन्हें देखनेसे समझ पड़ता है, मानों कई तिरछा खींचे लगी हुये हैं।

कोरिमद (सं० पु०) कासमद, कसौंदी।

कोरिया—१ मध्यप्रदेशका एक करद-राज्य। यह अक्षा० २२° ५६´ तथा २३° ४८´ उ० और देशा० ८१° ५६´ एवं ४२° ४७´ पू०के बीच पड़ता है। इसका क्षेत्रफल १६३१ वर्गमील है। १९०५ ई० तक कोरिया बङ्गालके छोटानागपुर राज्योंमें सम्मिलित रहा। इसके उत्तर रीवा राज्य, पूर्व सरगुजा, दक्षिण बिलासपुर जिला और पश्चिमको चांगभखार और रीवा है। यह खुरखुरे पत्थरकी एक ऊंची अधित्यका है। निम्न अधित्यका साधारण तल समुद्रपृष्ठसे १८०० फुट ऊंचा पड़ता है। पश्चिमकी पहाड़ियोंमें देवगढ़की चोटी ३३७० फुट तक पहुंची है। हसदो कोरियाकी सबसे बड़ी महानदीमें जा गिरी है। किरवाहीमें उसका एक बढ़िया झरना है।

१८१८ ई०को यह राज्य अंगरेजोंके हाथ सौंपा गया था। राजा अपना परिचय चौहान राजपूत जैसा देते हैं। यह देश बहुत जङ्गली और उजाड़ है, प्रधानतः पर्यटनशील आदिम अधिवासी बसते हैं। लोकसंख्या प्रायः ३५११२ है। सोनहाट गांवमें राजा रहते हैं। अधिकांश लोगोंका काम खेती बारीसे चलता है।

कोरियाके जङ्गलमें साल और बांस बहुत उपजता है। जङ्गलकी छोटी मोटी चीजोंमें लाख और खैर है। लोहा सब स्थानोंमें मिलता, परन्तु खानों पर अंगरेज सरकारका अधिकार रहता है। इस राज्यमें पगडण्डियां लगी हैं, ठीक ठीक सड़क कहीं नहीं व्यापारी बैलों पर लादकर माल चालान करते हैं।

राज्यका अंगरेज सरकारके साथ १८९९ ई०का दी हुई सनदके मुताबिक बर्ताव होता है। राजा छत्तीसगढ़ कमिश्नरके अधीन हैं। उन्हें सोने, चांदी, हीरे या कोयले वगैरहकी खानोंका कोई अधिकार नहीं। छत्तीसगढ़के पोलिटिकल एजेण्ट सङ्गीन जुर्मोंका फैसला करते हैं।

राज्यका सम्पूर्ण आय प्रायः १८५००) रु० वार्षिक है। वृटिश गवर्नमेण्टको ५००) रु० सालाना कर दिया जाता है। राज्यमें पाठशालाओंका अभाव है।

२ एशियाका एक विस्तृत राज्य यह अक्षा० ३३° से ४३° उ० और देशा० १२४° से १३०° पू०के मध्य चीनके उत्तर-पूर्व अवस्थित है। कोरियाके उत्तर मञ्चूरिया एवं रूसराज्य, पूर्व पीतसागर और पश्चिम जापानसागर है। भूपरिमाण ८५००० वर्गमील और लोकसंख्या एक करोड़से ऊपर है।

चीना इस देशका 'कौली' और अधिवासी 'चोहसिन' वा 'चूसन' कहते हैं। कोरियाका प्रधान नगर होनियङ्ग वा सोउल है।

इस देशके उत्तरांशमें केवल यव उत्पन्न होता है।

दक्षिणांशकी भूमि बहुत उर्वरा है। वहां धान, गेहूं, काकुन, सन, रुई, मटर, तम्बाकू सभी उपजता है। कोरियाके पहाड़ोंमें स्थान स्थान पर सोना, लोहा, जस्ता और कोयला मिलता है। यहां शेर, चीता, भेड़िया, हिरन और गीदड़ बहुत हैं। कोरियाका व्याघ्रचर्म नाना देशों बिकनेको भेजा जाता है।

कोरियामें सन, रुई, घास, रेशम, चिकनी मट्टीके बरतनों, युद्धके नानाविध अस्त्रों और अच्छे कागजका व्यवसाय होता है। प्रधान बन्दर—सिओल, येमुदान, फूसन और युएनसन हैं। सिओलमें राजधानी है। इसकी लोकसंख्या प्रायः २२०००० है।

कोरियाके अधिवासी पूर्वकालको तातारमें रहते थे। उत्पन्न होने पर यहां आकर बस गये। मुगलवीर कबला खान्ने यह देश आक्रमण किया था। किन्तु वह सिगूर योरिटोमके हाथों पराजित हुए।

१५८० और १६१० ई०को प्रायः डेढ़ लाख काथलिक ईसाइयोंने कोरियाके विरुद्ध धर्मयुद्धकी घोषणा की थी। उन्होंने राज्यका प्रायः दश आना अंश अधिकार भी किया; परन्तु चीन-सम्राट् तैकसमा उन्हें असहाय अवस्थामें छोड़ गये, जिसमें वह चीनसैन्यके आक्रमणसे उत्पीड़ित हो पृष्ठप्रदर्शन करने पर बाध्य हुवे।

कोरियाके राजा चीन-सम्राट्को सामान्य कर दिया करते हैं। १८८८ ई०को यहां राजाज्ञा प्रचारित हुई— राज्यके किसी स्थानमें ईसाई न रहने पावेंगे, देख पड़ते ही भगा दिये जावेंगे। कोरियामें चीनको राजनीति चलती है। सभी अधिवासी प्रायः बौद्धमतावलम्बी हैं। कोई कोई कनफुचीके मतको भी मानता है।

कोरियाके रहनेवालेको कोरियन कहते हैं। इनका अङ्ग-प्रत्यङ्ग अच्छा हृष्टपुष्ट, मुंह चौरस, आंखें बांकी गाल चौड़े और दाढ़ी थोड़ी होती है। देखते ही मालूम पड़ जाता, मानो चीनाओं और जापानियोंके संमिश्रणसे बने हैं। खृष्टीय पञ्चम शताब्दीको एक चीना परिव्राजक अपना धर्मप्रचार करने गये थे, उन्हींसे कोरियनोंने प्रथमतः बौद्धधर्मको ग्रहण किया। इनकी भाषा जापानियों-जैसी और स्वरका साद्दश्य अर्वाचीन-को भाषा-जैसा है। कोरियाको भाषामें बहुतसे ग्रन्थ हैं।

कोरी—एक हिन्दू जाति। यह गजोगाढ़ा बुनते हैं। इनका दूसरा काम एक प्रकारका बाजा बजाना भी है। एक आदमी अपने गलेमें छोटीसी नगड़िया डोरीके सहारे लटका लकड़ीको दो छोटी छोटी डण्डियोंसे बजाता और दूसरा फूलको एक कटोरी हाथमें ले एक छोटी डंडीसे खटकाता जाता है। इसीका नाम कोरि-बजना है। यह बाजा विवाह, यज्ञोपवीत, मुण्डन, कर्णवेध, जन्मोत्सव आदि अनेक अवसरों पर बजा करता है। यह एक प्रकारका मङ्गलवाद्य है। स्त्रियां जब देवी पूजने जातीं, तो कोरि बजना अवश्य मंगाती हैं। द्विजाति कोरियोंके हाथका पानी नहीं पीते।

कोरी (हिं० स्त्री०) १ बीसका ढेर, बीसी। (वि०) २ नयी, काममें न आयी हुई। ३ सादी, बेरङ्ग।

कोरेश—हजाजकी एक अरब जाति। इसमाइलके वंशमें अल अरब-उल्-मस-तरेबा नामक एक सम्प्रदाय चला था। इसी सम्प्रदायसे कोरेशोंकी उत्पत्ति है। सुविख्यात धर्मवीर मुहम्मदने इसी जातिमें जन्म लिया था। भारतके सिन्धु-प्रदेशमें बहुतसे कोरेश रहते हैं। वह सीरिया, ईरान और ईराकसे इस देशमें आये हैं और अपनेको अली, अब्बास, अबूबकर वगैरहका वंशधर बताते हैं। इनमें बहुतसे जातीय उपाधि होते हैं।

कोरो (हिं० पु०) १ काष्ठविशेष, कोई लकड़ा। इससे तंबोली अपने भीट छाते हैं। २ खपरैलकी कांड़ी। ३ रेड़का सूखा पेड़।

कोरोया—छोटानागपुर अञ्चलकी एक जाति। पाश्चात्य मानवतत्त्वविदोंके मतमें यह कोलजाति-सम्भूत होते हैं। देखनेमें कृष्णकाय, मुंह चपटे और बलवान् हैं। सब लोगशिरपर चोटी रखते हैं। इनमें कई एक शाखायें हैं, यथा—पहाड़िया या बोर कोरोया, विरिञ्जिया कोरोया, विरहोर कोरोया, कोरक कोरोया कोरियामुण्ड, दण्डकोरोया या दिह कोरोया, और आगरिया कोरोया। इनमें केवल आगरिया कोरोया हिन्दी बोलते हैं। बाकी सबकी भाषा कोलों-जैसी है। पहाड़ पर रहनेवाले बकरा, सूअर, मुरगी और भैंस वगैरह खाते हैं, परन्तु सांप, मेंढ़क या छिपकली नहीं

छूते। सिर्फ बिरहोर कोरोया बन्दर पकड़ कर खा डालते हैं। वनवासी कोरोया अनेक प्रकारकी ओषधियोंका गुणागुण पहचानते और उससे कठिन रोग अच्छे कर सकते हैं।

यह अपनी जातिके बीचसे तीन प्रकारके याजक नियुक्त करते हैं। इनमें प्रधान पुरोहित वा गुरु 'पहन बैगा', दूसरे 'पूजार' और तीसरे 'देवर' कहलाते हैं। इनको छोड़ कर ओझा, डाइन वगैरह भी होते हैं। यह लोग सभी सूर्योपासक हैं। सूर्यके उद्देश यह सफेद मुरगी बलि देते हैं। समतलक्षेत्रके कोरोया कालीभक्त हैं। हठात् कोई विपद् आपद् आनेसे पहनबैगा दूधसे कालीपूजा करते हैं।

सन्तान भूमिष्ठ होने पर एक सप्ताह वा १० दिन प्रसूति अशुचि रहती है। कन्या उत्पन्न होनेसे पहले माता स्वप्न देखती है—मानो मेरी सासने आकर मेरे गर्भमें जन्म लिया है। फिर पुत्रके जन्मकाल श्वशुरका स्वप्न आता है। जन्मसे एक मास पीछे पितामहके नाम पर पुत्र और पितामहीके नाम पर कन्याका नामकरण होता है।

कोरोयाओंमें भी गोत्र है। एक गोत्रमें विवाह नहीं करते। विवाहके समय वर कन्याकर्ताको एक घड़ा महुवेकी शराब, ५) रु० और एक खस्सी (बकरा) देता है। वरके कन्याके मस्तक पर सिन्दूर चढ़ाते ही विवाह सिद्ध हो जाता है। उस समय सब लोग थोड़ी थोड़ी शराब पीते हैं।

इनमें विधवाविवाह और पत्नी-परित्यागकी प्रथा प्रचलित है। विवाह करनेवाली विधवाको 'बियाहुर' और पितामाताकी अनुमति लिये विना दूल्हा बननेवाले युवकको 'धुकू' कहते हैं। अविवाहित युवकोंके लिये प्रत्येक ग्राममें एक एक स्वतन्त्र गृह रहता है। इस घरको 'धुमकुड़िया' कहते हैं। धुमकुड़ियेके सामने नाचका मैदान होता है। अविवाहित कुमारियां वहीं जाकर नाचा गाया करती हैं। युवकको आंख लगने और भीतर ही भीतर मेल बढ़ने पर विवाहमें बाधा नहीं पड़ती।

साधारण लोग शवको समाधि देते हैं। परन्तु इनमें कोई प्रधान व्यक्तिके मरने पर नदी तीर जलाया जाता है।

कोकु—महादेव-पर्वतवासी कोल जातिकी एक शाखा। इनकी भाषा गोंड़ोंसे अलग है।

कोर्गी—खड़कसे २ मील उत्तरका एक द्वीप। यहां विख्यात जलदस्यु मोरमोहनका अड्डा था।

कोर्ट (अं० पु० = Court) १ न्यायालय, अदालत। २ ताशको एक जीत। यह सात जीतोंके बराबर होती है। आरम्भमें एक ओर बराबर सात हाथ बन जानेसे दूसरी ओर कोर्ट हो जाता है।

अदालतके दारोगाको कोर्ट-इन्सपेक्टर, अदालती रसूमको कोर्टफीस और फौजी अदालतको कोर्टमार्शल कहते हैं। फिर बड़ी अदालत हाईकोर्ट, छोटी अदालत स्मालकाजकोर्ट और पुलिसकी अदालत पुलिसकोर्ट कहलाती है। कोर्ट अव वार्डस वह सरकारी विभाग है, जो किसी अनाथ, विधवा वा अयोग्य व्यक्तिकी सम्पत्तिका प्रबन्ध करता है। ताशके कोर्टपीस खेलमें चार आदमी खेलते हैं। कोर्टशिप गान्धर्व विवाहका नाम है।

कोर्णिगल्लि (कुर्णाईगल्ल) सिंहलद्वीपका एक नगर। १३१९ से १३४७ ई० तक यहां सिंहलके राजाओंकी राजधानी रही। इस समयके मध्य द्वितीय भुवनैकबाहु, चतुर्थ पण्डित पराक्रमबाहु, तृतीय वन्नि भुवनैकबाहु और पञ्चम विजयबाहु राजा हुवे। उनके हाथों राज्यकी श्री मारी पड़ी।

कोर्दादसाल—पारसिक धर्मप्रवर्तक जरदस्तके जन्म दिनका उत्सव।

कोर्द्रव, कोद्रव देखो।

कोर्वा—छोटानागपुर प्रदेशवासी एक जाति। यह लोग आगरिया, दण्ड, डिह और पहाड़िया चार श्रेणियोंमें विभक्त हैं। पशुपक्षियों और फलोंके नाम पर इनमें कई गोत्र हैं, जैसे—आम, धान, बाघ, सांप, पशुवा, मूड़ी इत्यादि। मूड़ी गोत्रवाले कहते हैं कि उनके पूर्वपुरुषोंने चार मुर्दोंकी खोपड़ियोंका चूल्हा बना उसीमें अन्नपाक करके खाया था।

कोर्वा अपनेको ही इस अञ्चलका आदिम अधिवासी बताते हैं। इसीसे स्थानीय उपदेवताओंकी पूजा

करनेमें आज भी केवल उनके पुरोहित ही नियुक्त होते हैं।

पहाड़िया कोर्वाओंका कहना है—सरगुजामें जो व्यक्ति पहले धान बोने गये थे, उन्होंने अपरापर जीव जन्तुओंको भय दिखानेके लिये खेतके बीचमें एक मूर्ति खड़ी की। वह स्थानीय भूतकी बड़ी भक्ति करते थे। भूत महाशयने भक्त पर सन्तुष्ट हो ग्रस्यरचा करनेको उस मूर्तिमें जान डाल दी। वही मूर्ति कोर्वा जातिका आदिपुरुष है।

कोर्वाओंका आचार व्यवहार आकार प्रकार कितना ही कोरोयावा जैसा है। कोरोया देखो। कोई कोई इन्हें आदिम द्राविड़ जातिसे उत्पन्न बताता है। परन्तु कोर्वा और कोरोया दोनों जातियोंका हावभाव, रीतिनीति और विश्वास पर्यालोचना करनेसे कोई भेद नहीं मिलता। कोर्वापुरुष सभी साहसी, परिश्रमी, बलिष्ठ और परिपुष्ट हैं। परन्तु स्त्रियां गुरुतर परिश्रमके भारसे दिन दिन श्रीहीन और निर्बल पड़ती जाती हैं। खेतका काम और घरका काम सभी स्त्रियोंको देखना पड़ता है। पुरुष हाथमें तीरकमान उठा शिकार ढूंढ़ते घूमा करते हैं। यदि उनके अदृष्टसे आखेट नहीं मिलता, तो रमणियां जंगलसे कन्दमूलादि खोद लाती हैं। कोर्वा असाधारण तीरन्दाज होते हैं। यह तीर फेंकनेमें बड़े पटु हैं। इनकी कमानें बहुत मजबूत होती हैं। और तीरके आगे ८ इञ्चकी बड़ी अनी लगी रहती है कोर्वा अपने आप लोहा गला उससे बहुत तेज तलवार बना लेते हैं।

यह लोग जंगल काट जमीनको जोतते बोते हैं इस प्रकार नई जमीन ढूंढ़नेमें २।३ वर्ष पीछे घर बदलना पड़ता है। कोर्वा जंगलसे मधु, मोम, आरारोट, लाख, रजन, गोंद आदि लाकर भी बेचा करते हैं।

यह प्रधानतः पूर्व पुरुषोंके प्रेतोद्देश पूजा चढ़ाते हैं। यशपुरमें कोई कोई खुड़ियारानी और कालीदेवीको भी पूजता है। पहनवेगा पुरोहित होते हैं।

कावा (कोड़वी) दाक्षिणात्यवासी एक जाति। यह लोग आठ श्रेणियोंमें विभक्त हैं—सनाड़ी, घण्टेचोर, केकड़ी, अड़वी या काले केकड़ी, कुञ्ची, पातड़, सूली और मोदी।

सहनाई या रोशनचौका बजानेसे सनाड़ी नाम पड़ा है। सनाड़िये दूसरी श्रेणियोंसे अपनेको श्रेष्ठ समझते हैं। इसीसे अन्य श्रेणियोंसे आदान प्रदान नहीं करते। कहीं वह केकड़ियों और कुञ्चियोंके साथ खा लेते हैं। सनाड़ी क्षुद्रकाय, काले और कुछ मैले होते, शिरपर छोटे छोटे बाल रखते और देखनेमें असभ्य-जैसे मालूम नहीं पड़ते हैं।

घण्टेचोरोंकी संख्या अति अल्प है। चौर्यवृत्ति ही उनका व्यवसाय है। यह श्रेणी बहुत ज्यादा देखनेमें नहीं आती।

केकड़ी देख पड़ते ही नितान्त असभ्य-जैसे लगते हैं। भिक्षा, मजदूरी और कपासकी लकड़ीसे टोकरियां बना जीविका निर्वाह करते हैं।

अड़वी या काले केकड़ी कट्टर चोर हैं। दिनको झाड़ू और टोकरियां सरपर रख बेचनेके बहाने घूमा करते और पता लगाते रहते—किसके घरमें अच्छी अच्छी चीजें हैं, किसके घरमें पुरुष कम हैं। रातको उन्हीं घरोंमें जा जो पाते, चुरा लाते हैं। अड़वियोंकी औरतें पक्की चोर हैं। दिनको भिक्षाके छलसे गली गली घूमती हैं। थोड़ी ही दूर पर उनकी जमादारिन चाबीका गुच्छा लिये टहला करती है। जब देखतीं किसी घरमें कोई नहीं, ताला लगा है; झटपट जमादारनको खबर देती हैं। वह जाकर ताला खोलती है। फिर घरमें घुस सबको सब जो पातीं, उठा लाती हैं। अनेक समय वह दल बांध किसी गृहस्थके घर पहुंचतीं और सुविधा मिलते ही उसको आक्रमण करके उसका सर्वस्व हरण कर लेती हैं। कोई कोई बुढ़िया अदृष्टगणनाका बहाना करके लोगोंके घरमें घुस जाती है। मध्याह्नकाल है, घरमें कोई मर्द नहीं। एक सरला अबला अकेले घरमें बैठी है। बुड्ढीके फन्देमें पड़ वह अपनी अदृष्ट गणना कराने लगती है। सुभीतेके मुताबिक बुढ़िया उसको आंखों पर पट्टी बांध अट्ट सट्ट बका करती और उधर उसके साथवाली चुपकेसे कोठरीमें घुस चोरी करके चम्पत होती हैं। फिर बुढ़िया रमणी-

की आंखें खोल और उससे इनाम ले हंसते हंसते चल देती है।

कुत्ता कौवे मयर आदि नानाविध पक्षी पकड़ते और उन्हींको बेच दिनपात करते हैं। इनकी आकृति प्रकृति कितनी ही सनाड़ियों—जैसी है। विजयपुर आदि स्थानोंमें सनाड़ियोंके साथ इनका आदान प्रदान होता है।

पालड़ लोग उत्तर अरकाटके अन्तर्गत व्यङ्कट-गिरिमें रहते हैं। नाचना गाना ही इनका व्यवसाय है।

सूलो श्रेणीके सभी लोग भ्रष्टाचारी हैं। इनकी स्त्रियां प्रायः वेश्यायें होती हैं।

कोर्वियोंका प्रधान खाद्य काकुनकी रोटी, मट्ठा पड़ा सावांका भात और उड़दकी दाल है। यह सूअर-का बच्चा भी खाते हैं। इनमें कपाल पर 'नाम' अर्थात् तिलक लगानेवाले शनिवारको मारुतिदेवके सम्मानार्थ मांस स्पर्श नहीं करते। प्रायः सभी सन्ध्याको थोड़ीसी शराब पी लेते हैं।

पुरुष बालोंकी चोटी और दाढ़ी मूछ रखते हैं। विवाहिता स्त्रियां सीमन्तमें सिन्दूर, शिशेकी चड़ियां और कण्ठमें 'मङ्गलसूत्र' व्यवहार करती हैं।

कोर्वी लोगोंके कुल देवता—मारुति, कल्लोलाप्पा, मलेवा, यल्लम्मा, बसप्पा और मार्गव वा लक्ष्मी हैं। सर्वापेक्षा यह मारुतिके अधिक भक्त होते हैं। शनिवार मारुतिकी पूजाका दिन है। विजयपुर जिलेमें बहुतसे लोग पीरगाजीको भी पूजते हैं। इन्हीं पीरके उद्देश वहां कोर्वी बृहस्पतिवारको मांसाहार नहीं करते। वह सकल हिन्दू देवदेवियोंको भी मानते हैं। निजाम-राज्यके अन्तर्गत हुलिगोव, सांदत्ती, बेलगांवके परसगढ़ और कल्लोली प्रभृति स्थानोंमें उनके तीर्थ हैं। ब्राह्मण पुरोहित रखे नहीं जाते।

सन्तानको भूमिष्ठ होते ही धो डालते और प्रसूति-को भी नहलाते हैं। पांचवें दिन सूतिकाष्टकके साथ समस्त भवन गोबरसे लीपापोता जाता है। लड़केकी मा स्नान करके शुद्ध होती है। इसी दिन बन्धुबान्धवों-को मीठी रोटी खिलाते हैं। सन्ध्याकालको जीवती या षष्ठीदेवीकी पूजा होती है। बारहवें दिन बच्चेको दोला पर शयन कराके नामकरण करते हैं। फिर भाईबन्दों-को मांस खिलाना पड़ता है। रागपटीकन्या देवीके सामने लड़केका चूड़ाकरण करके पूजा चढ़ाते हैं।

कोर्वियोंको भी कन्यापण देना पड़ता है। जो दहेज मिलता, उसमें आधा कन्याके पिता और आधा कन्याके मातुलका भाग रहता है। शुक्रवारको हलदी उबटन लगा सोमवारको विवाह कर देते हैं। वर कन्याके घर पहुंचने पर गांठ जोड़ी जाती है। निम-न्त्रित बन्धुबान्धव चावल छोड़ आशीर्वाद करते और कन्याके गलेमें मङ्गलसूत्र पहनाते हैं। फिर सब लोग मीठी रोटी और भात खाते हैं। वर कन्याको लेकर लौटते समय ग्रामस्थ मारुतिके मन्दिरमें जाकर पूजा चढ़ाना पड़ती है।

अपने घरमें मारुति रखनेवाले या प्रसवके १० दिन पीछे मरनेवाली रमणीको ही केवल जलाते हैं। दूसरे शव जमीनमें गाड़ दिये जाते हैं। केवल पुत्र वा प्रधान आत्मीय १० दिन अशौच ग्रहण करते हैं, ग्यारहवें दिन भाईबन्दोंको खिला पिला शुद्ध हो जाते हैं।

बालविवाह, बहुविवाह किंवा विधवाविवाह सभी इन लोगोंमें अप्रचलित है। कोई नारी भ्रष्टा होने पर समाजच्युत कर दी जाती है। परन्तु अग्नि-परीक्षामें उत्तीर्ण होनेसे उसे फिर ग्रहण कर लेते हैं। इनमें अग्निपरीक्षा निम्नलिखित रीतिसे की जाती है—

चारो ओर काकुनके पेड़की सूखी लकड़ी लगा बीचमें स्त्रीको खड़ा करते हैं। फिर उस सखी लकड़ीमें आग लगा देते हैं। रमणी निर्भय उसमें खड़ी रहती है। फिर सोनेका एक टुकड़ा तपा उसकी जीभ दागी जाती है। इस प्रकारको परीक्षामें उत्तीर्ण होनेसे फिर उसकी निन्दा कोई नहीं करता।

प्रति ग्राममें कोर्वियोंका एक एक नायक रहता है। वही इनका विवाद विसंवाद मिटाया करता है।

कोहलि—बम्बई-प्रदेशके अहमदनगर जिलेका एक पुराना नगर। आजकल यह नगर विध्वस्त और जनहीन है। किन्तु किसी समय इसकी बड़ी समृद्धि रही। नगर-की चारो ओर हुलकरने सुदृढ़ प्राचीर बनवाया था, जो आज भी खड़ा है। महाराष्ट्रपति पेशवाने ३०

गांवोंके बदले हुलकरसे इसे प्राप्त किया। १८१८ ई०को अहमदनगरका कोषागार यहीं रहा। उसकी रक्षा-के लिये एक थानादार रखा गया था। १८३० ई०को थानेदारकी चालाकी खुलने पर वह निकाले गये और कोर्हाले नासिक सिन्नर उपविभागके अन्तर्भुक्त हुवा। निमोनका कार्य-विभाग उठ जाने पर यह नगर कोपरगांव उपविभागमें मिला दिया गया। १८६५ ई० तक यह स्थान होलकरके कर्तृत्वाधोन रहा, फिर ब्रटिश गवर्नमेण्टके हाथ लगा।

कोल (सं० पु०-क्लो०) कुल संस्त्याने अच्। १ शूकर, सूवर। २ प्लव, बेड़ा, घरनई। ३ क्रोड़, गोद। ४ शनिग्रह ५ चित्रक, चीत। ६ अङ्कपालि, लिपटानेमें दोनों हाथोंके बीचकी जगह। ७ आलिङ्गन, हमागोशी। ८ वस्त्र-विशेष। ९ मरिच, मिर्च। १० चव्य। ११ बदरफल, बेर। १२ कक्कोल, शीतलचीनी। १३ अङ्कोल। १४ गजपिप्पली। १५ पिप्पला। १६ राजबदर, पेंवदी। १७ नख, एक खुशबूदार चीज। १८ बदरवृक्ष, बेरका पेड़। १९ बदरास्थिमध्य, बेरकी गुठलीका गूदा। २० टङ्कद्वयपरिमाण, एक तोल। २१ कुलत्थ, कुरथी। २२ अङ्कोलवृक्ष। २३ बहुचारवृक्ष। २४ तोलकमान, एक तोलेकी तौल। २५ पुरुवंशीय आक्रीड़ नामक राजाके पुत्र। (हरिवंश ३२ अ०) २६ जनपदविशेष, कोल राज्य।

कोल (हिं० पु०) चबेना, बहुरी।

कोल—भारतकी एक प्राचीन जाति। ब्रह्मवैवर्तपुराणके ब्रह्मखण्डमें लिखा है—लेटके औरस और तीवरकन्याके गर्भसे मालु, मल्ल, मातर, भण्ड, कोल और कलन्दर छह मानवोंने जन्म लिया था। (१०।१०१) किन्तु वर्तमान कोल जातिका विवरण पढ़नेसे ऐसा नहीं समझ पड़ता—किसी समय इनके साथ लेटों या तीवरोंका कोई सम्बन्ध रहा या इस समय है।

अति पूर्वकालसे यह लोग भारतमें रहते हैं। स्कन्दपुराणमें कुमारिकाखण्ड (४५अ०, ५३अ०) और हिमवत्खण्ड (९।९) पाठ करनेसे इनका कितना ही आभास मिलता है। पाश्चात्य पुराविद् कहते हैं—कोल जाति आर्य जातिसे पूर्ववर्ती भारतको आदिम अधिवासी है। ऋग्वेदमें दस्यु, दास प्रभृति नामसे जो उक्त हुए, वे कोलजातिके पूर्वपुरुष थे।

वर्तमानकाल हो, मुण्डा, उरावं, भूमिज आदि कई जातियां ही कोल कहलाती हैं। इनमें हो या लड़का कोल प्रकृत कोल-जैसे देख पड़ते हैं।

लड़का कोल अधिकांश छोटानागपुर और सिंहभूम अञ्चलमें रहते हैं। हो, होरे या होरो शब्दका अर्थ मनुष्य है। अपर मनुष्यसे अपनेको श्रेष्ठ समझने पर हो नाम पड़ा है। किन्तु हो लोग अपनेको लड़का अर्थात् योद्धा बताते हैं। सम्भवतः अति पूर्वकाल मुण्डा, उरावं और हो तीन श्रेणियां एकत्र और एक परिवारभुक्त होकर रहती थीं। मालूम पड़ता है—छोटानागपुरमें कोलोंके संस्कृत "मुण्डा" नाम ग्रहण करनेसे पहले ही हो लोग पृथक् हो गये। मुण्डा आदि श्रेणियोंका आचार विचार कितना ही भ्रष्ट होते भी लड़का कोल प्राचीन रीति नीति बराबर समानभावसे पालन करते जाते हैं।

आज भी ठीक पता नहीं लगा—प्रथम कोल जाति कहांसे इस अञ्चलमें आयी थी। हिमवत्खण्डमें लिखा है कि कोल नामक म्लेच्छ हिमालयमें मृगया मारते घूमता था। इससे समझ पड़ता है कि पूर्वकालको किसी समय हिमालयमें कोल जातिका वास रहा।

इनके आनेसे पहले छोटानागपुर और सिंहभूम अञ्चलमें 'शरावक' नामक जाति रहती थी। श्वेताम्बर जैनोंके पुराने ग्रन्थोंमें लिखा है—महावीरस्वामी जब मुनिवेशमें तीर्थभ्रमणको निकले, वज्रभूमि नामक एक व्यक्ति कुत्ते और तीरकमान ले उनके रक्षक रहे। बहुतसे लोग समझते हैं वज्रभूमि ही भूमिज नामक कोल सम्प्रदायके आदिपुरुष थे। शरावक शब्द भी जैन 'श्रावक' भिन्न दूसरा क्या है! इसके अनेक प्रमाण पाये जाते हैं—आजकल मानभूम और सिंहभूममें जहां जहां कोलोंका वास है, जैन सम्प्रदाय भी वहां पहले रहता था। मानभूम, सिंहभूम, भूमिज प्रभृति शब्द देखो। सिंहभूममें जहां केवल कोल लोग रहते, उसे कोलहान कहते हैं।

लड़का कोलोंका कहना है—प्रथम अतिबोराम् और सिङ्गबोङ्गाने स्वयं जन्म लिया था। उन दोनोंने

मिलकर इस पृथिवी, प्रस्तर, जल, लता, नदी और फिर पशुको सृष्टि की। सब सृष्टि हुई, किन्तु कोई मेल न मिला। उस समय उन्होंने एक बालक और एक बालिकाको बनाया था। सिङ्गबोङ्गाने पर्वतके गर्भमें उनको छोड़ दिया और इसी प्रकार थोड़ा समय बीत गया। सिङ्गबोङ्गाने उनमें कामकी प्रवृत्ति न देख विचार किया—सन्तानोत्पत्ति कैसे होगी? उन्होंने दोनोंको धानकी शराब बनाना सिखाया था। शराब पीनेसे दोनोंको कामेच्छा हुई और उसी समय वंशवृद्धि होने लगी। इस प्रथम नरनारीके १२ पुत्र और १२ कन्याओंने जन्म लिया था। सिङ्गबोङ्गाने महिष, बैल, छाग, मेष, शूकरशावक, नाना पक्षियोंका मांस और शाकभाजी पृथक् पृथक् पका कर एक भोज दिया। उन्होंने एक एक भाई बहनको मिथुन करके एक एक मिथुनको एक एक चीज खिलायी थी। प्रथम और द्वितीय भाई बहनने बैल और महिषका मांस लिया। उन्हींसे कोल और भूमिज जातिकी उत्पत्ति है। शाकभाजी खानेवालोंसे ब्राह्मण-क्षत्रिय और छागमांसाहारियोंसे शूद्र-जाति निकली है। उसी समय एक जोड़ा सूअर-मांस खानेसे सन्ताल हो गया। कोल अपनी भांति युरोपीयोंको भी प्रथम मिथुनसे उत्पन्न बताते हैं।

लड़का कोल देखनेमें बहुत भद्दे नहीं होते भूमिज सन्ताल आदि जातियोंसे कितने ही अच्छे लगते हैं। चम्पा या गुलाबके फूल जैसा रूप न सही, जो है, रुचिकर है। मुंह, आंख, नाक आदि जिन जिन अङ्गोंके सुडौल होनेसे रूपवान् समझते, इनकी रमणियोंमें उनका अभाव नहीं देखते। सभी मस्थे पर बाल रखते हैं, केवल पुरुष ब्रह्मतल मुंडा डालते हैं।

क्या बड़े आदमी, क्या छोटे प्रायः अधिकांश नग्न रहते हैं, इसमें कोई लज्जाकी बात नहीं। स्त्रियोंको अधिक बनाव चुनाव अच्छा नहीं लगता। कोलहानमें अनेक स्थानों पर कोल लोग 'बटई' नामक छोटा कौपीन पहनते हैं। फिर भी यह नहीं कि कपड़े पहनते ही नहीं। लम्बी लंगोटी इनका जातीय परिच्छद है। यह किसी दूसरी जातिके साथ एकत्र रहना नहीं चाहते। और दूसरी सभी जातियां विशेषतः हिन्दुओंसे बड़ी घृणा करते हैं। पहले कोल दलबद्ध होकर एक एक पल्लीमें रहते थे। उस समय अपर कोई जाति उस ग्राममें रह न सकती थी। केवल ग्वाले, जुलाहे, लोहार आदि जिन लोगोंके न रहनेसे अपने अनेक विषयोंकी क्षति समझते, उन्हींको बहुत देख-भाल थोड़ासा स्थान दे देते थे। दूसरी किसी जातिका संस्रव न रहनेसे यह जातीयभाव पहले-जैसा ही रख सके हैं। परन्तु आजकल अंगरेजी राजत्वमें जहां अपर जाति जाकर इनके साथ रही है, कोल अच्छी तरह कपड़ा पहनने लगे हैं। जहां कुछ भी लज्जा न थी, अब उसका प्रवेश हो रहा है।

हिन्दुस्थानी रमणियोंकी भांति इनमें बाल बांधनेकी चाल नहीं है। बाल ऐंठ और गुच्छा बनाकर दाहने कानके पास लगा और अच्छे अच्छे फूलोंसे सजा दिये जाते हैं। अलङ्कारोंके बीच गलेमें काले रुद्राक्षकी माला, हाथमें कङ्कण तथा चूड़ा और पैरमें पीतलका नूपुर पहनना अच्छा समझते हैं। पैरमें नूपुर डालना कोई आसान बात नहीं। युवतियां लोहारकी दूकान पर नूपुर पहनने जाती हैं। लोहार पहले पैरकी एड़ीमें एक तह चमड़ा लगा देता है। फिर सब लोग पैर दबा कर नूपुर पहनाने लगते हैं। रमणी सहचरीके कंधे पर हाथ रख कर परित्राहि चीत्कार किया करती है। उसके चिल्लाने पर लोग इकट्ठे हो जाते हैं। अनेक कष्टोंमें एक एक कड़ा चढ़ाते हैं। पहनावा हो जाने पर युवतीकी दोनों आंखोंसे आंसुओंकी लड़ी और मुखकी हंसी नहीं रुकती।

लड़का कोल कभी किसीकी नौकरी करना नहीं चाहते और न किसीकी पल्लेदारी ही करते हैं, सब अपनी अपनी जमीन जोते बोते हैं। बहुतोंके क्षेत्रोत्पन्न द्रव्यादि लानेको एक एक गाड़ी रहती है। शकट चलानेमें सभी पटु हैं। कोल धनुर्विद्यामें विशेष पारदर्शी होते हैं। बालककालको तीर चलाना सीखा जाता है। प्रायः बालकमात्र हाथमें कमान उठा जङ्गलमें गवादि चराते घूमते और शस्त्रचर्चा करते हैं। चिड़ियाको उड़ते उड़ते मार देनेसे अपना वाणशिक्षा

सार्थक समझी जाती है। बहुतसे शिकरा भी पालते हैं। चैत्र मासको यह बड़े समारोहसे शिकार करने निकलते और निकटवर्ती पल्लीके लोग भी आकर मिलते हैं।

पानी पड़नेसे फिर घरमें किसीका मन नहीं लगता, खेतकी ओर धावित होते हैं। रमणियांभी पुरुषोंका साहाय्य करती हैं। केवल हलवाहनकार्य स्त्रियां करने नहीं पातीं। लड़का कोल अपने आप कृषिकर्मके अस्त्रादि प्रस्तुत और धान, गेहूं, चना, सरसों, तिल, काकुन, तम्बाकू, रुई आदि उत्पन्न करते हैं। कपड़ेका प्रयोजन पड़नेसे जुलाहेको रुई दे ले लेते हैं।

इनको भूत और डाइनका बड़ा भय रहता है। किसीको कोई पीड़ा होनेसे समझते किसी भूतका कोप हुआ और किसी डाइनकी दृष्टिसे रोग लगा है। भूत पर सन्देह आनेसे अनेक यत्नोंसे उसकी शान्ति की जाती है। इनमें ओखा नामक कितने ही लोग होते, जो चुड़ैलको झाड़ते हैं। झाड़नेमें एक पत्थर और तराजका एक पल्ला जरूरी है। पल्ले पर पत्थर रख और डाइन-लगे आदमीको बैठाल घुमाना शुरू करते हैं। फिर ओखा ग्रामके एक एक व्यक्तिका नाम लेकर मन्त्र पढ़ता है। जैसे ही एक नाम हो जाता, धान छोड़ कर रोगीको मारते हैं। ऐसा ही होते होते रोगी पत्थरको उलट भूमि पर चक्कर खाकर गिर जाता है। जिसके नाम पर पत्थर उलटता, उसीको सब कोई डाइन समझ पकड़ता है। उस डाइनका—पुरुष हो या स्त्री, फिर निस्तार नहीं। सब लोग उसको अलग करके उसकी सन्तानादिके साथ मार डालते हैं। कोलोंको विश्वास है कि डाइनके वंशधर भी डाइन ही होते हैं। आजकल अंगरेजोंके शासनमें डाइनें बहुत कम मारी जाती हैं। परन्तु डाइनें पहलेसे मालूम होने पर देश छोड़ भागती हैं। कभी कभी भयसे कोई आत्महत्या तक कर बैठता है। ओखाओंमें कोई कोई भूतसिद्ध होता है। वह भूत उतार कर उससे डाइन या जादूगरका नाम पूछ लेते हैं। यदि जादूगर निकलता, रोगीके पास उसको ले जाकर कहते हैं—यदि भला चाहो, शीघ्र अपने जादू या भूतको उतार लो। ऐसी अवस्थामें जो जादू नहीं भी जानता, मारके डरसे सभी बातें स्वीकार करता और कहता है—रोगीको कोई भय नहीं है, मेरे द्वारा कोई अनिष्ट न होगा। रोगीके अल्प अल्प अच्छा होनेमें ही मङ्गल है। नहीं तो उसको सब लोग बड़ी मार मारा करते हैं। किसी किसी समय रोगीके साथ उसको भी यमालय पहुंचना पड़ता है।

कोल साहसी, परिश्रमी, उत्साही, निर्भीक और विश्वासी हैं। यह बड़े ही सत्यप्रिय होते, प्राण जाते भी मिथ्या नहीं बोलते। फिर जैसे ही सत्यवादी, वैसे ही अभिमानी भी होते हैं। अति सामान्य विद्रूप या निन्दा कभी सह्य नहीं करते। निन्दा या अवज्ञा करनेवालेको भिन्न जाति होनेसे सुविधा लगते ही मार डालते हैं। इतना अभिमान! स्त्रियोंको तो बात बातमें अभिमान है। कहते हैं, किसीने अपनी कन्याको इस बात पर थोड़ी निन्दा की—वह रसोई ठीक बना न सकी। परन्तु मानिनीको यह भी सह्य न हुवा, उसी दिन वह कूपमें डूब कर मर गयी।

इस वीर जातिके मध्य प्रत्येक गांवमें एक एक मण्डल रहता है। कभी कभी भिन्न भिन्न पल्लियोंके साथ युद्ध छिड़ जाता है। उभय पक्षों पर अनेक लोगोंके न मरनेसे सहजमें वह विवाद नहीं मिटता। कितना ही विवाद क्यों न हो—जब किसी विजातीय दलको अपने ऊपर आक्रमण करनेके लिये आते सुनते, परस्परके विवाद विसंवादको छोड़ बैठते हैं। फिर वहां जितने कोल रहते, जातीय गौरवकी रक्षाके लिये एकत्र आ मिलते हैं। इसीलिये सहजमें इन्हें कोई पराजय कर नहीं सकता।

विवाहके समय पण देना पड़ता है। दहेज बहुत बड़ा है। सुतरां पण देनेकी अड़चनमें बहुतसी कन्याओंका विवाह रुक जाता है। जो विशेष धनवान् हैं, वह भी यथारीति दहेज न मिलनेसे पुत्रका विवाह करनेमें हिचकते हैं। कोल पण लेना आवश्यक समझते हैं। यह कौलिक रीति और सम्मानका चिह्न है। इस कुप्रथाके कारण कोलोंमें अनेक अनढ़ा दुहायें देख पड़ती हैं।

छोटी उम्रमें शादी न होनेसे कुमारी यौवनमें पदार्पण करने पर युवकोंका मन हरण करनेकी चेष्टा लगाती है। कभी युवकोंके साथ हाथ पकड़ कर नाचती, कभी फूल तोड़ कर सजाती, कभी मीठा मीठा गाती है। जिससे मन मिल जाता, युवक विवाह करनेकी अनेक चेष्टायें लगाता है। परन्तु भवकतेपणकी ज्वाला से सभी समय उसकी आशा नहीं फलती। पुत्र होनेसे ही पिता अपनेको भाग्यवान् और सम्पत्तिशाली समझने लगता है। सुतरां दहेजका लालच नहीं छूट सकता।

कोलोंके गांवमें प्रायः देखते युवक युवती परस्पर कंधे पर हाथ रख मिष्टालाप करते चले जाते हैं, दोनोंका मन परस्पर आसक्त है। नहीं समझ सकते—विवाहित होने पर वह कितने सुखी होंगे। कुमारीसे उसके मनका भाव पूछिये। सरलहृदया सरल भावसे कहेगी—अरे! मैं क्या करूंगी, खुली आंखें रहते भी दूसरे देख नहीं सकते। युवककी एकान्त इच्छा है—अपने साथ नाचनेवाली अमुक कुमारीसे विवाह करूंगा। उनसे सब ठीक ठाक कर लिया और पिताके पर पकड़ अपने मनकी बात कही। पुत्रवत्सल पिता भी उसमें सम्मत हो गया। किन्तु पंचोंने गोल बांध कर झगड़ा बढ़ा दिया। फिर पितामाता पुत्रसे पूछने लगे—उस कन्याका वयस क्या है, किस समय वह अच्छी लगी, देखनेमें कैसी है। पुत्र भी ठीक उसी समयकी निर्देश करता है। परन्तु उसके पीछे यदि दुर्लक्षण नहीं लगता और कन्याका पिता दहेज देनेको राजी रहता, विवाह हो जाता है। अनेक समय सब ठीकठाक हो जाने पर भी दहेजकी बात पर विवाह नहीं होता। पण चुक जाने पर फिर आमोदकी सीमा नहीं रहती। उस समय कन्या अपनी सहचरियोंके साथ नाचते गाते वरके घरकी ओर चलती है। इधर नाना स्थानोंसे निमन्त्रित बालक बालिकायें और युवक युवतियां आकर वरके साथ हो लेती हैं। वह सभी दल बद्ध हो कर कन्याको मध्यपथमें आह्वान करने जाते हैं। राहमें दोनों दल मिलकर पास ही किसी उपवनमें पहुंचते हैं। वहां धमधड़ाकेसे नाचगाना होता है। वर कन्याका हाथ पकड़ नाचा करता है। दोनों ठुमक ठुमकके नाचते नाचते एक एक रमणीकी गोदमें जा बैठते हैं। इसी प्रकार सब लोग पल्लीमें आ उपस्थित होते हैं। फिर भोज, नाच, गाना और खूब शराब चला करती है। विवाहमें दूसरा कोई कुलाचार या तन्त्रमन्त्र नहीं, एक एक प्याला शराब दूल्हा दूल्हनको दी जाती है। वर अपने प्यालेसे थोड़ीसी शराब कन्याके पात्रमें और कन्या अपने प्यालेसे थोड़ीसी शराब वरके पात्रमें टपका देती है। फिर उसीको दोनों बड़े आनन्दसे पीते हैं। यही विवाहका प्रधान अङ्ग है।

विवाहके बाद तीन दिन नव दम्पती एकत्र रहते हैं। उसके पीछे पत्नी चुपके चुपके पतिके गृहसे चली जाती है। फिर बन्धुबान्धवोंसे कहती फिरती है—मुझे ऐसे भर्तारसे कोई काम नहीं, मैं उसे अब देखना भी नहीं चाहती। पति अपनी आदरिणीको ढूंढने जाता और देख पड़ते ही पकड़ लेता है। उस समय नववधू मनका प्रकृत भाव गोपन कर कुछके रूखापन दिखाती है। सहजमें साथ चलते न देख विना विलम्ब उसे आलिङ्गन करके अथवा सामर्थ्य रहते कंधे पर उठा कर अपने घर ले आता है। इसमें दम्पती कुछ भी लज्जा नहीं समझते। अनेक समय देखनेमें आता पति नवीना भार्याको भरे बाजारसे खींच लाता, कन्या परित्राहि चिल्लाती है। किन्तु इस पर सब लोग हंसा करते हैं। यदि नववधूके शरीरमें अधिक शक्ति रहती, तो फिर क्या कहना है! कितनी ही धींगामुस्ती करके युवक म्लानमुख घर लौट आता या समयानुसार पत्नीका मन बहला अति यत्नसे उसे अपने साथ लाता है।

घर आने पर कोलरमणी स्वामीकी प्रकृत अर्धाङ्गिनी होती है। वह समझती है—पति भिन्न दूसरी गति नहीं, पति स्वर्ग और पति ही मोक्ष है। स्वामी भी पत्नीको गृहकी लक्ष्मी, उसके सुखमें सुखी और दुःखमें अपनेको दुःखी मानता है। उस समय मन ही मन प्रकृत मिलन होता है। सभी कार्य दोनों परामर्शके साथ करते हैं। कोलरमणियां स्वामीके

अधीन नहीं, स्वामी उन्हें अपनी जीवनसङ्गिनी समझते हैं। ज्ञात होता है-पति पत्नीके मध्य ऐसा विशुद्ध भाव जगत्‌में कहीं नहीं। पत्नीके प्रति एकान्त अनुराग देख कोई कोई कोल जातिको स्त्रैण समझते हैं।

कोलरमणियां मात्र पतिपरायणा रहती और पतिके लिये सब कुछ कर सकती हैं। पतिके रहते कोई परपुरुषको कामना नहीं करती। यह कहना कोई अत्युक्ति नहीं कि कोलोंमें असती स्त्रियां बहुत कम हैं। परन्तु घटनाक्रमसे किसीका चरित्रदोष लगने पर तत्क्षणात् उसे समाजच्युत और परित्यक्त कर देते हैं। जो पुरुष रमणीको बिगाड़ता वह उसके स्वामीको विवाहके पणका रुपया देने पर बाध्य है।

सन्तान भूमिष्ठ होनेसे पितामाता ८ दिन अशुचि रहते हैं। दूसरे सब लोग घर छोड़ जाते हैं। इसीसे स्वामीको स्त्रीके लिये रन्धन करना पड़ता है। ८ दिन पीछे फिर सब लोग घर वापस आ जाते हैं। फिर बन्धुबान्धवोंका भोज और नव शिशुका नामकरण होता है। पितामहके ही नाम पर उसका नाम रखते हैं। कभी कभी नामकरणके समय पूर्व पुरुषोंका नाम ले लेकर जलके किसी पात्रमें एक एक उड़द डालते जाते हैं। जो नाम लेते समय उड़द तैरने लगता, वही शिशुका नाम पड़ता है।

मृतोंके प्रति सभीको प्रगाढ़ भक्ति है। इनमें किसी प्रधान व्यक्तिका मृत्यु होनेसे बड़ी धूमधाम देख पड़ती है। घरके सामने जलानेको अच्छी अच्छी लकड़ी लाकर जमा करते और उसपर शवाधार रखते हैं। मृतदेह अति यत्नसे धोया और फिर तेल हलदी लगा रथी पर रखा जाता है। मरनेवालेके साथ उसका निजस्व भी जाना चाहिये, नहीं तो उसका मन क्षुब्ध हो सकता है यही समझ कर कोल लोग मृत व्यक्तिका रुपया पैसा, कपड़ा गहना और खेती बारीके अस्त्रशस्त्र जो रहता, देहके पास पंक्ति बार रख देते हैं। शवाधार थोड़ी देर बन्द रखते हैं। फिर ढक्कन खोल कर चारो पार्श्वके काष्ठमें अग्नि लगाया जाता है। मृत व्यक्तिके वासगृहके सम्मुख ही शवदाह करते हैं। दूसरे दिन आत्मीय जलसे आग बुझा देते और सब लोग उसकी हड्डियां खोज लेते हैं। छोटी छोटी हड्डियां गाड़ दी जाती हैं, केवल थोड़ीसी बड़ी हड्डियां किसी मट्टीके बरतनमें उठा कर रख छोड़ते हैं। फिर वही पात्र मृतकी माता वा पत्नीके घर कुछ दिन लटका करता है। जितने दिन यह घरमें रहता बड़ा रोना धोना मचता है। इसी बीच शेष अन्त्येष्टिक्रियाका आयोजन हुवा करता है। घरके पास ही एक बहुत बड़ा गर्त बनाते हैं। इसी गर्तके पास एक ऐसा प्रकाण्ड पत्थर रखते, जिसको २०।२५ लोग मिल कर उठा सकते हैं। गर्तमें अस्थि रखनेके लिये शुभलग्न स्थिर होता है। निर्दिष्ट समयको ४।५ निकट प्रतिवेशी और ८ बालिकायें आकर दरवाजे खड़ी हो जाती हैं। मृतकी माता वा स्त्री एक पात्रमें अस्थि रखती, फिर उसे अति यत्नसे छाती या मत्थे पर रख कर रोते रोते बाहर निकलती है। आगे अस्थिवाहिका और उसके पीछे बालिकाओंकी दो पंक्तियां रहती हैं। पहली कतारकी लड़कियां अपनी बगलमें फटा और खाली घड़ा रखती हैं। प्रतिवेशी लोग कंधे पर ढोल रख अग्रसर होते हैं। बालिकायें नाचतीं और पुरुष बाजा बजाते हैं। उस नाच और उस बाजेमें मानो शोक तथा विषाद भरा रहता है। जिस राहसे यह जाते, लोग बाजेकी आवाज सुन अपने अपने घरसे निकल आते हैं। प्रति द्वारके सम्मुख उक्त अस्थिपात्र उतारा जाता, गृहस्थ दीर्घनिश्वास और अश्रुसिक्त नयनसे मृतको बुलाता है। वन, उपवन, क्षेत्र, गृह, नाचघर आदि स्थानोंमें जहां मृत व्यक्ति पहले आता-जाता था, हड्डियां घुमाते हैं। मृतसे जिसका मन कभी मिला था, जिसने कभी उसको भ्रातृभावसे पुकारा था; वह आज अकपट भावसे चार आंसू बहा शेष कृतज्ञता दिखाता और उन हड्डियोंके सामने मस्तक अवनत करके अन्तिम अभिवादन करता है। अवशेषको सब घूम कर उसी गर्तके निकट उपस्थित होते हैं। पहले चावल और खाद्यादि उस गड्ढेमें रखे जाते, फिर समस्त अस्थि धीरे धीरे निक्षेप करके वही बड़ा पत्थर गर्तके मुखपर लगाते हैं। इसी स्थान पर अन्त्येष्टिक्रिया पूरी हो जाती है। कोलोंके गांवमें जगह जगह

ऐसे बहुतसे पत्थर हैं। उन्हें देखने पर अनायास ही समझ सकते—यहां किसीको समाधि दिया गया है।

वर्षमें लड़का कोलोंके ७ पर्व होते हैं। प्रथम और प्रधान उत्सवका नाम माघपर्व या 'देशौली बोंगा' है धान काट चुके हैं, घर घर धानकी खत्तियां भरी हैं लक्ष्मीदेवी मानों प्रत्येक गृहमें विराज कर रही हैं, चेलशून्य हैं, कृषिजीवी कोलोंको भी अब कोई शारीरिक परिश्रम करना नहीं पड़ता। इस समय पूर्ण अवकाश है, ऐसे अवकाश, ऐसे सुखके दिनों सभीका मन प्रफुल्ल है। सभी लोग समझते हैं—ऐसे दिनों स्त्रीपुरुषोंके हृदयमें मदनकी आग जलने लगती है। चिर दिन काम ही किया करते हैं। अन्य समय कब अवकाश मिलता है। जिसको भीतर ही भीतर चाहते, जिसको देख फूले नहीं समाते, जिसने मन हरण किया है। दिल ही दिलमें जिससे मेल बढ़ गया है—उसको साथ लेकर दो घड़ी आमोद करनेका समय वा सुयोग नहीं लगता। परन्तु इस माघ मासमें, इस पूर्णिमा रजनीको ऐसे पूर्ण अवकाश पर—उपयुक्त अवसर क्यों वृथा नष्ट करेंगे। यही विचार करके सभी मदनोत्सवमें उन्मत्त हो जाते हैं। इस समय पिता माता, भाई बहन, आत्मीय कुटुम्बी कोई किसीको देख कर लज्जा नहीं करता इस समय दास दासी अपना कर्तव्य कर्म भूल जाती हैं। प्रभु भृत्युका सम्बन्ध इस समय न मालुम कहां चला जाता है। सभी सुरापान और प्रेयसीके वदन सुधापानमें खब व्यस्त हैं। जो लोग कभी बुरी बात नहीं कहते, इस माघोत्सवमें अपना मुंह खोल बैठते हैं। पिता पुत्रको अकथ्य भाषामें सम्बोधन करता, पुत्र भी पिताके सम्मुख युवतीका गाढ़ आलिङ्गन चुम्बन करनेमें नहीं हिचकता। ज्योत्स्ना रजनी आनेसे मानो सब लोगोंकी मुट्ठीमें स्वर्ग आ पहुंचता है। युवक युवतियां मण्डलीमें पहुंच मनमानी रासक्रीड़ा किया करती हैं। विवाहित रमणियां अपने स्वामियोंके साथ मजे उड़ाती हैं, किन्तु अविवाहित युवक युवतियां चणकालके लिये काण्डज्ञान भूल जाती हैं। लड़का कोल स्थान स्थान पर माघ मासके शुक्लपक्षको यह उत्सव मनाते हैं किन्तु मुण्डारि नामक कोल सम्प्रदाय केवल माघी पूर्णिमाके दिन इस पर्वमें योग देता है। कोल जातिमें ऐसे आमोदका दिन दूसरा नहीं होता।

कोल लोगोंको विश्वास है कि उस समय भूतप्रेत निकला करते हैं। इसी लिये बालक बालिकायें युवक युवतियां हाथमें लठ ले नाचती गाती और तर्जन गर्जन करती गांवमें घूमती हैं। इनकी समझमें ऐसा करनेसे भूतप्रेत भाग जाते हैं।

उसके पीछे चैत्रमासको पुष्पोत्सव होता है। इस पर्वको लड़का कोल 'बहबोङ्गा' और मुण्डारि 'सरहुल' कहते हैं। मधुमासको चारो ओर नानाप्रकारके फूल खिलते हैं। बालिकायें डलियां भरके उन फूलोंको तोड़ लाती हैं। गृहद्वार फूलोंको मालावों, फूलोंके तोड़ों और फूलोंसे सजाये जाते हैं। अपने आप भी कोल लोग फूलोंसे सजकर दो दिन बराबर नाचा करते हैं। इस समयका नाच कई तरहका होता है। भावभङ्गिमा भी अनोखा आता है। इतने प्रकारका नाच बहुतोंने देखा न होगा, सभ्यसमाजमें भी सम्भवतः कोई नहीं समझता। नाचते नाचते जैसे ही क्लान्त पड़ जाते, एक गिलास शराब पी लेते हैं। इस पर्वपर प्रति गृहस्थ एक एक मुर्गा वलि देता है। फिर ग्रामके पुरोहित या मुखिया अपने देशौली देवके उद्देश एक मुर्गा और दो मुर्गियां वली चढ़ाते हैं। ढाकके फूल, चावलके आटेकी रोटियां और तिल उत्सर्ग करके देवताको पूजा चढ़ा प्रार्थना करते हैं:—भगवन् विपद् आपद् सभी समयों पर दृष्टि रखिये, जिसमें आगामी वर्ष यथाकाल वृष्टि हो और हमारे परिश्रमसे धन शस्य अच्छा उपजे।

तीसरा—ज्यैष्ठमासका डुमरिया नामक पर्व है। प्रथम धान बोनेके समय यह पर्व पड़ता है। बीजकी रक्षाके लिये पूर्वपुरुषों और भुतप्रेतोंकी पूजा चढ़ाना पड़ती है। इसमें कोल एक बकरे और एक मुर्गेको वलि देते हैं।

चौथा—आषाढ़मासमें हरिबोंगा या हरिहर उत्सव है। इस पर्व पर देशौली और 'जाहिरबुड़ी'के उद्देश पवित्र उपवनमें एक मुर्गी, एक घड़ा शराब और एक मुट्ठी चावल रख आते हैं। अभिप्राय यह कि उनके

आशीर्वादसे शस्य रक्षा होगी। दूसरे महिने 'बहतौली बोंगा' नामक उत्सव होता है। किसान एक मुर्गी मारते हैं। उसके पर एक बांसमें बांध खादके ढेर या अनाजके खेतमें गाड़ देते हैं। कोलोंके कथनानुसार इस पर्वकी उपेक्षा करनेसे शस्य नहीं पकता। इस दिन-की स्त्रियां अखाड़ेमें जाकर नृत्यगीत करती हैं। छोटा नागपुरके हिन्दू भी इस पर्वमें शामिल होते हैं।

फिर भाद्रमासको 'जुमनामा' नामक पर्व पड़ता है। इस समय 'गोराधान' पकते हैं। सिङ्गबोंगा अर्थात् सूर्यदेवको इन नये धानोंके चावल और एक सफेद मुर्गा चढ़ाया जाता है। कोल नये चावल सूर्यदेवको विना अर्पण किये नहीं खाते।

उसके बाद खेतसे धान काट कर लाते समय 'कलमबोंगा' नामक शेष पर्व होता है। इस पर्व पर देशौलीको एक मुर्गी चढ़ाना पड़ती है।

सिवा इसके 'पान' अर्थात् केवल पुरोहितोंका भी एक उत्सव आता है। इस उत्सवके निर्वाहार्थ उन्हें 'दालिकतारी' अर्थात् थोड़ीसी माफी जमीन दी गयी है। इस पर्वमें मरङ्गबुरूके उद्देश दो वर्ष पीछे एक मुर्गी, तीन वर्षके अन्तर एक भेड़ और चार वर्ष बाद एक महिष बलि देते हैं। मुण्डा, भूमिज आदि शब्द देखो।

१८२१ ई०को लड़का कोलोंसे ब्रटिश गवर्नमेण्टको एक घमासान लड़ाई हुई। अनेक कष्टोंमें अंगरेजी सेनाने कोलोंको परास्त किया था। शेषको कोलोंके साथ एक सन्धि हुई। उसमें इन्होंने ब्रटिश गवर्नमेण्ट-को कर देना स्वीकार किया था। १८५७ ई०को कोलहानके निकटवर्ती पुरहाटके चौहान-राजाकी ओरसे लड़का कोलोंने अंगरेज सरकारके विरुद्ध हथि-यार उठाये। परन्तु शेषको पुरहाट-राजाके शासित होने पर इन्होंने भी शान्तमूर्ति धारण की थी। धनुष, जहर बुझाये तीर, वर्छा और कुठार कोलोंके युद्धास्त्र है।

कोलहान देखो।

कोल जातिकी भाषा स्वतन्त्र है। आर्यावर्त अथवा दाक्षिणात्यकी द्राविड़ भाषासे उसका कोई संश्रव नहीं, इनकी मूल भाषाके सम्बन्धमें अभी तक कोई निश्चय नहीं हो पाया है। कोई गोंड़ जातिकी भाषाके साथ उसका कितना ही सौसादृश्य बताता, और कोई कुछ भी सादृश्य नहीं पाता। गोंड़ देखो।

प्रवाद है—बोधगयाके निकट विस्तर प्रस्तरमण्डल और गया जिलेके कोंचगांवका वृहत् मन्दिर कोलोंने बनाया था।

२ विहारके गोंडी लोगोंकी एक शाखा।

कोलक (सं० पु०-क्लो०) कुल-ख्वुल्। १ अङ्कोटवृक्ष, अखरोटका पेड़। २ बहुवारवृक्ष, चालता, लसोड़ा। ३ गन्धद्रव्यविशेष, एक खुशबूदार पेड़। ४ मरिच, मिर्च। ५ कक्कोल, शीतलचीनी।

कोलक (हिं० पु०) यन्त्रविशेष, एक छोटा औजार। इसमें दांत रहते और इसे रेती तथा आरी पैनानेमें व्यवहार करते हैं।

कोलकई—मन्द्राज-प्रदेशके तिन्नेवेली जिलेके श्रीवैकुण्ठम् तालूकका एक गांव। यह अक्षा० ८° ४०´ उ० और देशा० ७८° ५´ पू०में श्रीवैकुण्ठम् नगरसे १२ मील दूर पड़ता है। लोकसंख्या प्रायः २५१८ है। कहते हैं—कोलकई द्राविड़ सभ्यताका सबसे पुराना स्थान है। यहां चेर, चोल और पाण्ड्य राजाओंने राजत्व किया। प्राचीन युरोपीय भौगोलिक इसे भारतका सबसे बड़ा बाजार समझते थे। ८० ई०को पेरीप्लसके रचयिताने कोलकईको मोती निकालनेकी मशहूर जगह लिखा और १३० ई०को टलेमिने भी इसका परिचय दिया है। परन्तु ताम्रपर्णीकी रेत जमा हो जानेसे समुद्र धीरे धीरे पीछे हटा और यह उससे ५ मील दूर पड़ गया।

कोलकन्द (सं० पु०) कोल इव कन्दोऽस्य। स्वनामख्यात महाकन्द शाकविशेष, एक जमीकंद डला। काश्मीरमें इसका नाम पुटालु है। कोलकन्दका पर्याय—क्रिमिघ्न, पञ्जल, वस्त्रपञ्जल, पुटालु, सुपुट और पुटकन्द है। राजनिघण्टुमें इसको कटु, उष्ण और क्रमिदोष, वमन, छर्दि तथा विषनाशक कहा है।

कोलकर्कटिका (सं० स्त्री०) कोल इव कर्कटिका। मधु-खर्जुरिकावृक्ष, मीठो खजूरका पेड़।

कोलककर्टी, कोलकर्कटिका देखो।

कोलका (सं० स्त्री०) शुक्ल शुक्लशिम्बी, सफेद कोंचकी फली।

कोलकुण (सं० पु०) खटकुण, जूं, लीख।

कोलगजनी (सं० स्त्री०) गजपिप्पली, बड़ी पीपल।

कोलगांव—बम्बई प्रदेशस्थ अहमदनगर जिलेके श्रीगोंडे तालुकका एक नगर। यहां हेमाड़पंथियोंका कल्लेश्वर नामक एक बड़ा नवरत्न-मन्दिर और एक भग्न शिवालय है। मन्दिर पुराना-जैसा मालूम पड़ता है। इसके खम्भों और दीवारों पर अनेक चित्र और देवमूर्तियां बनी थीं। परन्तु नयी अस्तरकारी होनेसे कितनी ही मिट गयी हैं। कोलगांवमें प्रति बुधवारको बाजार लगता है।

कोलगिरि (सं० पु०) दक्षिणदिकको अवस्थित एक पर्वत। (भारत २।३०)

कोलाचल आदि शब्द इसी अर्थमें व्यवहृत होते हैं। प्रसिद्ध टीकाकार मल्लिनाथ कोलाचल पर्वतपर रहते थे। इसीसे कोलाचल शब्द मल्लिनाथके विशेषणरूपसे व्यवहृत होता है। कोल्लगिरि देखो।

कोलगङ्ग (कहलगांव) विहार-प्रान्तके भागलपुर जिलेका एक नगर। यह अक्षा० २५° १६´ उ० और देशा० ८७° १४´ पू०में गङ्गाके दक्षिण तट पर अवस्थित है। लोकसंख्या ५७३८ है। गौड़ विध्वंसके पीछे १५३८ ई०को बङ्गालके आखिरी मुदमुख्तार नवाब गयासउद्-दीनका यहां मृत्यु हुआ। कहलगांवमें चट्टानका एक अनोखा मन्दिर बना है। पहले उसमें कारु-कार्यके अच्छे आदर्श रहे। सम्भवतः चीनपरिव्राजक युयेनचुयङ्ग उसे देखने गये थे। यह नगर कभी ठगोंके लिये बदनाम था। १८६९ ई०को यहां म्युनिसिपालिटी हुई।

कालघोण्टा (सं० स्त्री०) एक प्रकार बदरी, किसी किस्मका बेर।

कोलङ्क (सं० पु०) आमलक वृक्ष, आंवलेका पेड़।

कोलचेल—मन्द्राज-प्रान्तके त्रिवाङ्कुड़म् राज्यके एरानील तालुकका एक बन्दर। यह अक्षा० ८° ११´ उ० और देशा० ७७° १८´ पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः १००० है। कितना ही माल जहाजोंके जरिये आता जाता है। बारटोलोमियोंने इसे एक महफूज बन्दर लिखा है। कुछ दिनोंतक डेन लोगोंका यहां अधिकार रहा। किन्तु १७४० ई०को त्रिवाङ्कुड़म् सेनापति रामअय्यन दलवने उन्हें पूर्णरूपसे पराजित किया और पश्चिम-तटसे उनका प्रभाव उठा दिया था।

कोलटा—मध्यप्रदेशके कृषकोंकी एक प्रधान जाति। यह लोग अधिकांश सम्बलपुर जिलेमें रहते हैं। इनके अपना परिचय क्षत्रियवर्ण जैसा देते भी लोगोंमें मतभेद है।

कोलतैल (सं० क्ली०) बदरीबीजतैल, बेरकी गुठलीका तेल।

कोलदल (सं० क्ली०) कोलं बदरीफलं तद्वद् दलमस्य, बहुव्री०। १ नखी नामक गन्धद्रव्य। २ बदरीपत्र, बेरीकी पत्ती।

कोलद्वय (सं० क्ली०) कर्ष, दो तोला।

कोलना (हिं० क्रि०) छेदना, बीचमें खोदकर पोला करना।

कोलनासिका (सं० स्त्री०) कोलस्य शूकरस्य नासिका इव। वह्निनीवृक्ष, एक पेड़। किसीके मतमें कोलनासिका भी लिखते हैं।

कोलपार (हिं० पु०) मध्याकृति वृक्षविशेष, एक मंझोला पेड़। यह बरार और दारजिलिङ्गकी तराईमें अपने-आप उपजता है। इसकी कलियोंका मुरब्बा डालते हैं। काष्ठ सुदृढ़ रहता और कृषियन्त्र तथा गृहनिर्माणादि कार्यमें लगता है। भीतरी लकड़ी गुलाबी निकलती परन्तु वायु लगनेसे काली पड़ती है। कोलपारका अपर नाम सोना है।

कोलपुच्छ (सं० पु०) कोलस्य शूकरस्येव पुच्छः। १ कङ्कपक्षी, सफेद चील। २ सूअरकी पूछ।

कोलवालुक (सं० पु०) कुकुष्ठ।

कोलब्रुक—एक अति प्रसिद्ध अंगरेज विद्वान्। इनके पिताका सर जार्ज कोलब्रुक और माताका नाम मेरी था। यह अपने बापके तीसरे लड़के रहे।

१७६५ ई०को १५ जूनको लन्दन नगरमें इन्होंने जन्म लिया था। यह कभी साधारण विद्यालयमें विद्या नहीं पढ़े, घर पर शिक्षक रखके विद्याभ्यास करते रहे। द्वादश वर्षके वयःक्रमकाल कोलब्रुक फ्रान्स भेजे गये, वहां षोड़शवर्ष पर्यन्त रहे। उसी समय इनके

मनमें धर्मका अनुराग बढ़ा था। इन्होंने धर्मकार्यमें नियुक्त होनेकी चेष्टा की, किन्तु इच्छा पूर्ण न हुई। इनके बाप ईष्ट इण्डिया कम्पनीके एक डिरेक्टर (तत्त्वावधायक) रहे। उन्होंने अपने लड़केको भी कम्पनीके काममें लगा भारतवर्ष भेजा था। कोलब्रुक पहले कलकत्ते आ बोर्ड ओफ् एकाउण्ट कार्यालयमें नियुक्त हुवे, फिर त्रिहुतके राजस्व-विभागमें सहकारी कलेक्टर हो चले गये। इसी समय इनके पिता इन्हें देशीय भाषा सीखनेको उपदेश देते और इनसे हिन्दू-धर्मका कोई विषय पूछ पत्र लिखा करते थे। इसी सूत्रसे इन्हें संस्कृत शिक्षाका अनुराग बढ़ा। कम्पनीके काममें लगी रहनेसे प्रथम यह अपनी तृष्णा मिटा न सके थे। १७८९ ई०को ये फिर पूर्णियाको बदल गये। इस समय कोलब्रुक अवकाशके अनुसार संस्कृत सीखते और वङ्गीय कृषकोंकी अवस्था देखते घूमते थे। १७९३ ई०को यह पुरनियासे नाटोर चले गये।

१७९४ ई०को सर विलियम जोन्स जिस व्रतके व्रती रहे, आज कोलब्रुक भी उसी मन्त्रमें दीक्षित हो गये। भारतवर्षकी प्राचीन रीति नीति, आचार व्यवहार और शास्त्रीय तत्त्व यह पुङ्खानुपुङ्ख रूपसे देखने लगे। प्राचीनतम भारतीयोंका असाधारण अध्यवसाय तथा अपूर्व तत्त्वज्ञान अवगत होने पर इनका मन क्रमशः उत्तेजित हो गभीर तत्त्वोंके अनुसन्धानमें प्रवृत्त हुवा। १७९४ ई०को इन्होंने एशियाटिक सोसाइटीकी पत्रिकामें सर्वप्रथम "साध्वी हिन्दू विधवाके कर्तव्य कर्म" पर अंगरेजी भाषामें एक अति उत्तम प्रबन्ध प्रकाश किया था। इसी समय गवर्नमेण्टने वङ्गालके उत्पन्न द्रव्यादिका इन्हें परिदर्शक बना दिया। इसी वर्ष लाम्बार्ट नामक एक कलकत्ताके वणिक्‌के साहाय्यसे वङ्गालकी कृषि तथा वाणिज्यकी वर्तमान अवस्था* पर एक पुस्तक छपा कर बन्धुवान्धवोंके निकट प्रचार किया था। इस पुस्तकमें कोलब्रुकने अति उत्तम भावसे बताया है—वङ्गीय कृषि और भारत तथा इङ्गलेण्डके स्वाधीन वाणिज्यकी अवस्था कैसी हो गयी है।

बड़े लाट वारन हेष्टिङ्गसके समय १७७२ ई०को जो कानून निकला, उसमें लिखा था—मौलवी और पण्डित अदालतमें धर्मशास्त्र वा आईनकी व्याख्या करेंगे और मुकद्दमे पर राय देनेके समय विचारकको साहाय्य देंगे। तदनुसार १७७६ ई०को वारन हेष्टिङ्गसके तत्त्वावधान पर ९ ब्राह्मण पण्डितोंने मिल कर संस्कृत भाषामें एक वृहत् धर्मशास्त्रसंग्रह प्रणयन किया था, जो Code of Gentoo Law नामसे अंगरेजीमें अनुवादित हो प्रकाशित हुवा। विचारपति इसी ग्रन्थको देख कर आवश्यक-जैसा मत देते थे। किन्तु सर विलियम जोन्सने इस ग्रन्थको देख कर गवर्नमेण्टसे कहा—यह सर्वाङ्ग सुन्दर नहीं हुवा है। गवर्नमेण्टने उन्हें भारतीय धर्मशास्त्र सङ्कलनका कार्य सौंपा था, परन्तु अकालको उनके मर जानेसे कोलब्रुक पर यह बड़ा भार डाला गया। इसी समय प्रसिद्ध पण्डित जगन्नाथ तर्कपञ्चाननने विवादभङ्गार्णव नामक धर्मशास्त्रको रचना किया था। १७९७ ई०को कोलब्रुकने वही ३ खण्डोंमें अंगरेजी भाषामें Digest of Hindu Law on Contracts and Successions, from the Original Sanskrit नाम पर छपा दिया। उस समय यह काशीके निकट मिर्जापुरमें विचारकके पद पर नियुक्त रहे। इन्होंने काशीके प्रधान प्रधान पण्डितोंके साथ हिन्दू धर्म पर कितनाही परामर्श किया था। कोलब्रुकने इस ग्रन्थमें जो टीका टिप्पनी लिखी, उससे हिन्दू धर्मशास्त्रमें इनकी असाधारण विद्वत्ता झलकती है। आजकल भी कानूनपेशा व्यक्तिमात्र बड़े सम्मानके साथ उसका मत उद्धृत किया करते हैं।

फोर्ट विलियम कालेज संस्थापित होने पर कोलब्रुक भी उसके एक अवैतनिक संस्कृताध्यापक बन गये। यह इस कालेजके छात्रोंकी समय समय पर संस्कृत, हिन्दी, बंगला और फारसी भाषामें परीक्षा लेते थे। फिर यह सदर दावानी अदालत और निजामतके प्रधान विचारपति हुये। थोड़े दिनों कोलब्रुक बोर्ड अव रेविन् (Board of Revenue)के प्रेसि-

* "Remarks on the Present State of the Husbandry and Commerce of Bengal, by a Civil Servant of the Company."

डेण्ट, बड़े लाटको सुप्रीम कौन्सिलके मेम्बर और एशियाटिक सोसाइटीके डाइरेक्टर भी रहे।

भारतवर्षमें रहते समय इन्होंने भारतका जाति-तत्त्व(१), भारतीय ब्राह्मणोंका धर्मानुष्ठान(२), संस्कृत एवं प्राकृत भाषा(३), वेदतत्त्व(४), जैनमत समालोचन (५), भारत और अरबी राशिचक्र विभाग(६), संस्कृत शिलालेख-युक्त प्राचीन कीर्तिस्तम्भोंका विवरण(७), संस्कृत और प्राकृत छन्दोशास्त्र(८), भारतीय ज्योतिर्विदोंके मतानुसार नक्षत्रोंकी गतिका निर्णय(९), फोर्ट विलियम कालेजके छात्रोंकी शिक्षाको संस्कृत पाठ(१०) संस्कृत व्याकरण(११), अमरकोष तथा उसका अंगरेजी अनुवाद(१२), हिन्दुओंके दायभाग पर दो प्रबन्ध(१३) आदिको अंगरेजी भाषामें प्रकाश किया।

पचास वर्षके वयःक्रमकाल १८१५ ई०को यह स्वदेश लौट गये, परन्तु विलायत पहुंच कर भी भारतका संस्कृत शास्त्र भूल न सके। १८२२ ई०को वहां इन्होंने रायल एशियाटिक सोसाइटीकी स्थापन किया था। विलायतमें रहते समय भी इन्होंने निम्नलिखित पुस्तक बना डाले—हिन्दूदर्शन (१४), ब्रह्मसिद्धान्त एवं भास्कराचार्यकी लीलावतीका अंगरेजी अनुवाद (१५), वैदेशिक शस्यकी आमदनीकी बात(१६), प्रबन्धमाला (१७) और सभाष्य सांख्यकारिकाका अंगरेजी अनुवाद(१८)।

अध्यापक मोक्षमूलरके मतमें कोलब्रुक ही—"the Founder and father of true Sanskrit Scholarship in Europe" अर्थात् युरोपमें प्रकृत संस्कृत-विद्याके प्रवर्तक और जन्मदाता थे। वस्तुतः पहले इनकी भांति कोई युरोपीय व्यक्ति संस्कृत शास्त्रमें गाढ़ प्रवेश कर न सका था। कोलब्रुकके प्रबन्ध पढ़नेसे इनकी असाधारण विद्वत्ताको देख भारतवासियोंको भी मुग्ध होना पड़ता है।

प्रसिद्ध ज्योतिर्विद् सर जान हर्सेलके मरने पर यही विलायतकी ज्योतिष सभाके नेता (President of the Astronomical Society.) हुवे थे।

ज्वररोगसे शय्यागत हो १८३७ ई०को १०वीं मार्चको विद्वद्वर कोलब्रुकने इहसंसार परित्याग किया।

---

1. "Examination of Indian Classes." (As. Res. Vol. V.)
2. "Essays on the Religious Ceremonies of the Hindus and of the Brahmans especially,"—(in As. Res. Vol. V. VII.)
3. "On the Sanskrit and Pracrit Languages" (VII.)
4. "On the Vedas, or Sacred Writings of the Hindus," (As. Res. VIII .)
5. Observations on the Sect of Jains.
6. On the Indian and Arabian Divisions of the Zodiac.
7. "On ancient Monuments containing Sanskrit Inscriptions"—As. Res. IX.
8. "On Sanskrit and Pracrit Prosody." As. Res. X.
9. "On the Notion of the Hindu Astromomers concerning the Precession of the Equinoxes and Motions of the Planets." As. Res. XII.
10. A Collection of Compositions in Sanskrit for the use of the Students of the College of Fort William, including the Hitopodesa, with Introductory Remarks. 4to.
11. Grammar of the Sanskrit Language, 1805.
12. Amera Cosha, or Dictionary of the Sanskri Language, by Amera Sinha, with an English Interpretation end annotation, 4to, Calcutta, 1808.
13. Two Treaties on the Hindu Law of Inheritance translated from the Sanskrit. 4to, 1810.
14. "On the Philosophy of the Hindus" (Trans. Roy, A. S. vol. II.)
15. Algebra with Arithmetic and Mensuration, from the Sanskrit of Brahmagupta and Bhascara, 4to, London 1817.
16. On the Import of Colonial Corn, 8vo. Lond. 1818.
17. Miscellaneous Essays or reprints of previously published papers and prefaces, 2 Vols. 8vo London, 1837.
18. Sankhya-Karika or Memorial Verses on the Sankhya Philosophy, also the Bhashya, etc. 4to Oxford, 1837.

कोलमज्जा (सं० स्त्री०) बदरास्थि मज्जा, बेरकी गुठलीका गूदा। यह मधुर और पित्त, छर्दि तथा पित्तनाशक है। (राजवल्लभ)

कोलमूल (सं० क्ली०) कोलं बदरीफलमिव मूलम् पिप्पलीमूल, पिपरा मूर।

कोलमूला (सं० स्त्री०) पिप्पलीमूल।

कोलम्बक (सं० पु०) कुल-अम्बच् संज्ञायां कन् तन्त्री भिन्न वीणाका समुदाय अवयव, तारोंको छोड़कर सितार वगैरहका सारा हिस्सा। कोलाम्ब देखो।

कोलरुण,—मन्द्राज-प्रदेशको कावेरी नदीका बड़ा मुंहाना। यह अक्षा० १०° ५२´ उ० तथा देशा० ७८° ५१´ पू० को श्रीरङ्गद्वीपकी प्रान्तसीमा पर त्रिचनापल्लीसे पांच कोस पश्चिम बड़ी खाड़ी छोड़ उत्तरपूर्व दिक् प्रायः ८४ मील प्रवाहित हो अक्षा० ११° २६´ उ० एवं देशा० ७९° ५२´ पू० में आचवरम् नामक स्थान पर वङ्गोपसागरमें मिल गया है। इसका देशीय नाम 'कोल्लिड़म्' और उसका अपभ्रंश 'कोलड़म्' है। कोलरुण नाम पोर्तगीजोंका रखा हुवा है।

पूर्वकालको कोलरुण शाखानदी न रही। टलेमिने इस अञ्चलकी अपरापर नदियोंका उल्लेख किया है, परन्तु इसका नाम कहीं नहीं लिया। १५५२ ई०को डि-वारसने 'कोलरन' नामक किसी समुद्र-कूलवर्ती स्थानकी बात कही थी। समय समय पर करमण्डल उपकूलमें भयानक जलप्लावन आता, जिसमें सैकड़ों लोगोंका प्राण जाता है। 'कोल्लिड़म्' शब्दका स्थानीय अर्थ वध्यभूमि है। मालूम पड़ता है—किसी समय कावेरी नदी जलप्लावनमें अपनी गति बदलके इस अञ्चल से बही थी, जिसमें बहुतसे लोगोंकी जान गयी। इसीसे स्रोतका नाम कोल्लिड़म् पड़ा होगा। पोर्तगीजोंने सम्भवतः निकटस्थ कोलरन नामक स्थानसे ही इसका नाम कोलरुण रखा है।

आजकल कोलरुण नदी वाम तट पर त्रिशिरापल्ली जिला एवं उत्तर अरकाट और दक्षिणकूल पर तञ्जोर-राज्य छोड़ मध्यस्थलमें सीमारूपसे प्रवाहित है। निकटवर्ती स्थानोंसे जलकी सुविधाके लिये कई नहर निकाली गयी हैं। इस नदीमें सभी समय नौका चला करती हैं।

किसीके मतानुसार खृष्टीय एकादश शताब्दीको तञ्जोरराज्यमें लहर पहुंचनेके समय कोलरुण नदी निकली थी।

कोलवल्लिका (सं० स्त्री०) १ गजपिप्पली। २ चव्य, शीतलचीनी। ३ शूकरपादिका।

कोलवल्ली, कोलवल्लिका देखो।

कोलशिम्बि (सं० स्त्री०) कोलपादाकारा शिम्बिरस्याः, बहुव्री०। १ कपिकच्छु, कौंचकी फली। इसका संस्कृत पर्याय—क्षतफला, खट्टा, शूकरपादिका, काकाण्डोला, दधिपुष्पा, काकाण्डा और पर्यङ्कपादिका है। २ सेमकी फली। यह वायुनाशक, गुरुपाक, उष्ण और कफ तथा पित्तवर्धक होती है।

कोलशिम्बी, कोलशिम्बि देखो।

कोलसा (हिं० पु०) इंगनी, एक धातु, अंगरेजीमें इसे मैंगनीज कहते हैं। यह एक प्रकारका धातुमल है, जो धातुवोंमें आक्सिजनके संमिश्रणसे उत्पन्न हो जाता है। कोलसा भारतवर्षके मध्यभारत, महिसुर, मन्द्राज और मध्यप्रान्तकी खनियोंसे निकलता है। इसे कांचकी हरेरी छोड़ाने और उस पर चमक लानेमें व्यवहार करते हैं। इससे एक श्वेत लौह और भी प्रस्तुत किया जाता है।

कोलहान—बङ्गाल-प्रदेशके सिंहभूम जिलेका एक विभाग। यह अक्षा० २१° ५८´ एवं २२° ४३´ उ० और देशा० ८५° २१´ तथा ८६° ३´ पू०के बीच पड़ता है। इसका परिमाण १९५५ वर्गमील है। कोलहानमें ८८३ गांव लगते हैं

यहां सर्वत्र हो नामक कोल लोग बसते हैं। इसीसे कोई कोई इसको 'होदेश' भी कहते है। इस विभागमें २० गांवोंका एक परगना होता है। प्रत्येक ग्राममें एक मण्डल वा प्रधान रहते हैं। राजस्व चुकाने और अपराधीका अनुसन्धान लगा देने पर प्रधान बाध्य हैं। इन प्रधानों पर प्रत्येक परगनेमें एक एक मांकी कर्तृत्व करता है। प्रधान लोग मांकीके पास अपराधीको ले जाते या राजस्व पहुंचाते हैं। सरकार मांकियोंसे सब बातें समझ लेती हैं। राजस्व वसूल करनेसे मांकी दशमांश और मण्डल षष्ठांश कमीशन पाते हैं।

कोलहानका पंचायती या जमीनी झगड़ा मांकी और मण्डल ही निबटाते हैं। कोल देखो।

कोलहार—बम्बई-प्रदेशके अहमदनगर जिलेका एक विस्तृतवाणिज्य प्रधान नगर। यह प्रवरा नदीके तीर अवस्थित है। यहां प्रतिवर्ष पौषमासको १५ दिन तक मेला लगा रहता है।

कोला (सं० स्त्री०) कुल ज्वलादित्वात् णः ततष्टाप्। १ बदरीवृक्ष, बेरी। २ पिप्पली, पीपल। ३ महाश्रावणी, गोरखमुण्डी। ४ चव्य।

कोला (हिं० पु०) शृगाल, गीदड़।

कोला (अं० पु० = Cola) वृक्ष-विशेष, एक पेड़। यह अफरीकाके उष्ण स्थानोंमें उपजता और फल अखरोट-जैसा लगता है। कोला फलके बीज श्रान्ति एवं क्लान्ति-को मिटाते, नशेकी आदत छुड़ाते और पानी साफ करनेमें भी काम आते हैं।

कोलाञ्च (सं० पु०) एक देश। आदिशूर इस देशसे पांच ब्राह्मण गौड़देशको ले गये थे। कान्यकुब्ज देखो।

कोलाती—दाक्षिणात्यकी एक ऐन्द्रजालिक जाति। इन बाजीगरोंको कोलहाति, कोलहाटी और डोंबरी भी कहते हैं। कोलातियोंका कहना है—'कोला नामक कोई नट र तेलीके औरस और क्षत्रिय-कन्याके गर्भसे उनका जन्म था। यही कोलनट कोलातियोंके आदिपुरुष थे।' पूना, सतारा, बेलगांव, शोलापुर, अहमदनगर आदि जिलोंमें यह लोग देख पड़ते हैं। पूना जिलेमें इनके मध्य दो श्रेणियां हैं—दूकर या पोतरी कोलहाती और पाल या काम-कोलहाती। इन दोनों श्रेणियोंमें आहार व्यवहार और विवाहका आदान प्रदान नहीं चलता। इनकी भाषा—कर्णाटी, मराठी, गुजराती और हिन्दुस्थानी मिश्रित है। यह झोपड़ोंमें वास करते हैं। दूकर कोल्हाती शूकर और गोमांस खाते हैं। दूसरे कोल्हाती मद्य एवं सकल प्रकार मांस भक्षण करते भी सूअर और गायका मांस नहीं छूते।

पूना और सतारा जिलेके कोलहाता देखनेमें बुरे नहीं। किसी किसीका रंग खूब साफ और चक्षु तथा बाल काले होते हैं। विशेषतः इनकी स्त्रियां बहुत सुश्री और हावभावविशिष्ट हैं। शोलापुर आदि स्थानोंके कोलाती देखनेमें काले, परन्तु चतुर और परिश्रमी होते हैं। कोलहाती रमणियां अधिकांश वेश्या हैं। कितनी ही नाचती गातीं और चिथड़ोंकी गुड़ियां बना कर बेचती हैं।

इनकी गृहस्थरमणियोंके अलङ्कार वैसे अधिक नहीं रहते। परन्तु जो वेश्यावृत्ति करतीं, उनके अलङ्कारों और बनाव चुनावकी कमी नहीं पड़ती। उन्हें रण्डियों-जैसी खूबसूरती बनाना कुछ अच्छा लगता है। इनके गुणोंमें दूसरोंकी कन्यायें चुराना थोड़ा भयानक है। कन्याओंको चुरा कर यह यथाकाल उन्हें वेश्यावृत्ति सिखाती हैं।

यह जाति बहुदिन एक स्थानमें नहीं रहती। कितने ही टट्टू और खच्चर रखते हैं। उनकी पीठ पर जरूरी चीजें लाद फांद कर जगह जगह घूमते फिरते हैं। राह घाटमें डेरे डाल उनमें भी रहा करते हैं। साथमें एक प्रकारकी चटाई रहती, जो बैठने और डेरे डालने दोनों कामोंमें लगती है। भ्रमणकालको रस्सीके नाचसे जीविका चलाते हैं। कोई किसीकी नौकरी नहीं करता। नौकरी करनेसे समाजच्युत होना अथवा अर्थदण्ड देना पड़ता है।

सभी हिन्दू देवदेवियों और मुसलमानोंके पीरोंको पूजते हैं। वीरदेव और मारी (हैजा)-देवी इस जातिके प्रधान उपास्य हैं। कोलाती प्रधानतः शैव होते हैं। देशस्थ ब्राह्मण इनके पुरोहित हैं। भूतप्रेत, जादू और मन्त्रतन्त्र पर सभीको विश्वास है। उत्सवके समय मद्य और मांस ही प्रधान खाद्य होता है। सन्तान भूमिष्ठ होने पर प्रसूति ४ दिन अशुचि अवस्थामें सौवर नहीं छोड़ती, पांचवें दिन षष्ठीपूजा और स्नान करके शुद्ध होती है। कहीं १२ दिन, कहीं जन्मसे ५ सप्ताह पीछे ब्राह्मण जाकर शिशुका नामकरण करता है। अहमदनगर आदि जिलोंमें बच्चेको कुछ बढ़ने पर जोशी ब्राह्मण कपाल पर सिन्दूरकी बिन्दी लगा जनेऊ पहनाता है। स्थान स्थान पर षष्ठीपूजा होती और नामकरण तथा जनेऊके दिन एक एक महिष बलि चढ़ता है।

कोलाती २५ वर्षके पूर्व पुत्र और ऋतुमती होनेसे पहले कन्याका विवाह कर देते हैं। पांच दिन विवाह-

का उत्सव होता है। वरका पिता प्रथम एक दोना शराब देकर कन्याका मुख देख जाता है। उसके साथ जो लोग रहते, कन्याका पिता उन्हें शराब पिलाता है। विवाहके प्रथम दिन ढोल बजाकर देवकपूजा, द्वितीय दिन गात्रमें हलदीका उबटन, तृतीय तथा चतुर्थ दिन केवल भोज एवं थोड़ा थोड़ा मद्यपान और पञ्चम दिन विवाह होता है। वरके विवाह करने जाने पर वर-कन्याको माड़के नीचे बैठाकर गांठ जोड़ देनेसे ही विवाह सिद्ध हो जाता है। कोलहापुर जिलेमें वर-कन्याको आमने सामने एक चौकी पर खड़ा करते हैं। ब्राह्मण मन्त्र पढ़के दोनोंको चावल छोड़ आशीर्वाद देता है। यह हो जाते ही पति पत्नीका सम्बन्ध दृढ़ पड़ जाता है। इनमें विधवाविवाह और बहुविवाह प्रचलित है।

कन्या प्रथम ऋतुमती होनेसे पांच दिन एक ही स्थान पर बैठी रहती है। छठें दिन वह स्नान करती और उसके कोंछमें पांच छोहारे, पांच गांठ हलदी, पांच टुकड़े नारियलकी गरी और पांच बरी डाली जाती हैं। उस समय कन्या चाहे तो वेश्या हो सकती अथवा स्वामीके घरकी शोभा बढ़ा सकती है। रण्डी बननेकी इच्छा रहनेसे आत्मीय कुटुम्बियोंको भोज देना और सबके सामने कहना पड़ता है—मैं वेश्या बनूंगी। वेश्याके पुत्र एक स्वतन्त्र श्रेणीभुक्त होते हैं। वेश्यावोंके साथ पिताके औरसजात पुत्रोंका विवाह नहीं होता।

कोलाती मृत व्यक्तिको गाड़ देते हैं। फिर तीसरे दिन कब्र पर उसके स्मरणार्थ एक स्तूप निर्माण करते और बन्धुबान्धवोंको खिला पिला कर शुद्ध होते हैं छह मास पीछे दूसरा भोज भी देना पड़ता है।

इनकी पञ्चायत होती है। सामाजिक कलह बिवाद पञ्च लोग मिटाते हैं।

कोलाम्लज (सं॰ पु॰) बदरफल, बेर।

कोलादिमण्डूर (सं॰ क्ली॰) परिणाम-शूलका एक औषध, अंतड़ियोंकी सूजन और दर्दकी कोई दवा। १० तोला शोधित मण्डूर (लोहा) तथा शुण्ठी, पिप्पली, चव्य, पिप्पलीमूल एवं यवक्षारका प्रत्येक २ तोला और गोमूत्र ८० तोला यथारीति खरल करनेसे यह औषध प्रस्तुत होता है।

कोलापुर (कोलहापुर)—बम्बई प्रेसिडेन्सीके अन्तर्गत एक देशीय राज्य। यह अक्षा॰ १५° ५०´ एवं १७° ११´ उ॰ और देशा॰ ७३° ४३´ तथा ७४° ४४´ पू॰में अवस्थित है। क्षेत्रफल ३१६५ वर्गमील है। लोकसंख्या ९१००११ है। इसका प्रधान नगर कोलहापुर अक्षा॰ १६° ४२´ उ॰ और देशा॰ ७४° १६´ पू॰ पर पड़ता है। इस राज्यके उत्तर एवं उत्तरपूर्व सतारा, पूर्व तथा दक्षिण दिक् बेलगांव जिला और पश्चिम सावन्तवाड़ी एवं रत्नगिरि है। उत्तर-पश्चिमसे दक्षिण-पूर्व सीमा दैर्घ्यमें ४८ कोस और प्रस्थमें प्रायः ३३ कोस होगी। पश्चिम-दिशाके घाटपर्वतसे इसकी भूमि क्रमशः ढलकर पूर्वकी ओर समतल बन गयी है। इसी कारण अनेक नदियां पर्वतोंसे निकल कोलहापुर होती हुई कृष्णानदीमें जा मिली हैं। उनमें जर्णा नदी ही प्रधान है। भूमि अधिकांश पर्वतमय है। जगह जगह उर्वरा भूमि भी आ गयी है। अधिवासी ज्यादातर मराठा, रामोसी और भील हैं।

पहले चालुक्य राजावोंके अधीन शिलाहार-वंशीय नरेश यह प्रदेश शासन करते थे। पीछे कोलहापुर मराठोंका अधिकृत हुआ। महाराष्ट्रवीर शिवाजीके पुत्र राजारामसे वर्तमान राजवंशकी उत्पत्ति है। शम्भुजीके लड़के शाहजी जब दिल्लीमें बन्दी हुये, राजाराम यहां राजत्व करते थे। उनके मरने पर तत्पुत्र शिवजी सिंहासन पर बैठे। थोड़े दिन पीछे शाहजीके छूट कर आनेसे शिवजीने उन्हें राज्य दे देने पर आपत्ति उठायी थी। दोनोंमें झगड़ा बढ़ गया। इसी बीच शिवजीका मृत्यु हुआ और उनके पुत्र शम्भुजीके साथ शाहजीका सिंहासन पर विवाद चलता रहा। कुछ दिन बाद मीमांसा हुई—शम्भुजी अपने लिये कोलहापुर और तदन्तर्गत प्रदेश रख कर महाराष्ट्र राज्यका अपर समस्त भाग शाहजीको सौंप देंगे। महाराष्ट्र राज्य इसी प्रकार दो भागोंमें बंट गया। शम्भुजीने राजा होकर कोलहापुर राज्य स्थापन किया था। १७६० ई॰को शम्भुजीका मृत्यु हुवा। शम्भुजीके निःसन्तान रहनेसे

उनकी विधवा रानी शिवजी नामक किसी दत्तक पुत्रको ग्रहण करके उसके नामसे अपने आप शासन करने लगीं। पहलेसे ही राज्यमें स्थल और जलपथ-पर दस्युओंका उत्पात बहुत बढ़ रहा था। राजा अपने आप लूटमार करनेवाले कितनेही जहाज रखते थे। समुद्रकी राह विदेशसे जहाज आने पर यह उन्हें लूट लेते थे। इस अस्यु दलको दमन करनेके लिये १७६५ ई०में अंगरेज गवर्नमेण्टने एक दल सैन्य बम्बई भेजा और मालवानका दुर्ग छीन ली। १७६६ ई०को १२वीं जनवरीको सन्धि स्थापित होने पर कोल्हापुरके राजाने अपना किला वापस पाया। १८०४ ई०को जब सर आर्थर वेलेसली दाक्षिणात्यका बन्दोवस्त करते थे, कोल्हापुरके राजा शिवजीने उनसे कहा—पेशवा हमारे राज्यका कितना ही अंश अधिकार किये हैं। उन्होंने कहा कि अंगरेज सरकार मध्यस्थ हो समझौता करा देगी। परन्तु कोल्हापुरके राजाने इसी बहाने पेशवाका राज्य आक्रमण किया था। वेलेस्लीने उसी सूत्रमें लुटेरे जहाजोंको दबानेकी विशेष चेष्टा की, परन्तु सफलता न मिल सकी। कितनी ही बार चेष्टा हुई, दस्युवोंने प्रतिज्ञा की—अब लूटमार न करेंगे; फिर भी वह अपने दुराचारसे निवृत्त न हुए। १८१२ ई०को कोल्हापुर-राज शिवजीका मृत्यु होनेसे उनके पुत्र शम्भुजी सिंहासन पर बैठे थे। यही शम्भुजी आप्पा नामसे विख्यात रहे। अंगरेज जब पेशवासे लड़े, इन्होंने अंगरेजोंका पक्षावलम्बन किया था। उसीके लिये अंगरेजोंने शम्भुजीको चिकोरी और मनोली नामक दो जिले दे डाले। १८२१ ई०को शम्भुजी हत हुये। उनके पुत्र अब्बासिंहने सिंहासन अधिकार किया था। किन्तु एक वत्सर बाद वह भी मारे गये। रानी हीराबाईके गर्भसे उनके एक शिशु सन्तान रहा। लोग उसे दीवान् कहते थे। अब्बासिंहके भाई बाबा साहब गद्दी दबा बैठे। थोड़े दिन पीछे ही शिशुसन्तानका मृत्यु होनेसे बाबा साहब राजा बने थे। अपने राज्यमें अत्याचार और पार्श्वस्थ सामन्तों पर आक्रमण होते देख अंगरेजोंको राजाके विरुद्ध फौज भेजना पड़ी। राजाके वश्यता स्वीकार करने पर एक सन्धि हो गयी। परन्तु अंगरेजी सैन्यके राज्य छोड़ कर जाते ही बाबा साहब फिर फौज इकट्ठी कर निकटस्थ सामंतों और सरदारों पर अत्याचार करने लगे। अंगरेजी सैन्य पुनर्वार प्रेरित हुवा और राजाने वश्यताको स्वीकार किया। १८२७ ई०को पहिली और १८२९ ई०को दूसरी सन्धि फिर हुई, जिससे राजाके कार्यको परीक्षा करनेको थोड़ी अंगरेजी फौज कोल्हापुरमें रखी गयी। अंगरेजोंने अपने एक आदमीको मन्त्री बना दिया था। किन्तु मन्त्रीके पुनर्वार राजाको अत्याचार करनेका परामर्श देने पर फिर अत्याचार होने लगा। अंगरेज मन्त्रीको निकाल और सुप्रबन्ध बांध अपनी फौज उठा लाये। १८३८ ई०के नवम्बर मास बाबा साहबका मृत्यु हुवा। दो स्त्रियोंके गर्भसे उनके छोटे छोटे दो पुत्र सन्तान रहे। उनमें ज्येष्ठ शिवजीको सिंहासन पर अभिषिक्त किया गया। इन्हें भी लोग बाबा साहब कहते थे। बाल्यावस्थामें इनकी माताने थोड़े दिन राजकार्य चलाया था। पीछे पूर्वोक्त दीवान-की माता और अब्बासिंहकी पत्नी हीराबाई पर अंगरेज गवर्नमेण्टने समस्त भार अर्पण किया। किन्तु उनके शासनमें भी कितना हा बखेड़ा बढ़नेसे १८४२ ई०को अंगरेज अपने तत्त्वावधानमें कृष्णपण्डितको मन्त्री नियुक्त करके राजाको नबालिगीमें राजकार्य चलाते रहे। १८४४ ई०को हीराबाईके कर्मचारी विद्रोही हो गये। अंगरेजोंने फौज भेज बागियोंको दबाया था।

अखीरमें अंगरेज सरकार अपने आप राज्यशासन करने लगी। इसी समय दुर्ग भूमिसात् किये गये। राजाके जो सैन्य आदि रहे, उन्हें भी जवाब मिला था।

१८६२ ई०को अंगरेजोंने शिवजी पर राज्यभार डाल दिया। सन्धि हुई—राजा अंगरेज गवर्नमेण्टके परामर्श व्यतीत कोई कार्य न करेंगे। १८६६ ई०को ४ठीं अगस्तको राजा शिवजीने इहलोक परित्याग किया था। उनके कोई पुत्रसन्तान न रहा। मृत्युसे पूर्व उन्होंने नागोजीराव पाटनकार नामक एक बालक-को गोद लिया था। शिवजीके मृत्यु पीछे यही बालक राजाराम नाम ग्रहण करके राजत्व करने लगा।

राजाराम १८७० ई०को इङ्गलेण्ड घूमने गये थे।

राह पर इटलीके अन्तर्गत फ्लोरेन्स नगरमें उनका मृत्यु हुवा। उनके पुत्र पञ्चम शिवजी सिंहासन बैठे थे। गवर्नमेण्टने उनके लिये एक अंगरेज शिक्षक नियुक्त कर दिया। १८७५ ई०को यह राजकुमार प्रिन्स अव वेलसकी अभ्यर्थना करने बम्बई गये थे, १८७७ ई०-की दिल्ली दरबारमें के० सी० एस० आई० उपाधिको प्राप्त हुवे। इनका पूरा नाम महाराज सर शिवजी राव भोंसले छत्रपतिमहाराज दामअलताफहू के० सी० एस० आई० है। पञ्चम शिवजी १८८३ ई०को २५ दिसम्बरको मर गये। उनका कोई पुत्रसन्तान नहीं रहा। उनके गोद लिये यशवन्त राव (बवा साहेव) ने साहु छत्रपति नामसे राज्यभार ग्रहण किया। इनका उपाधि एच० एच० कर्नल जी० सी० आई० ई० है। कोल्हापुर राजाके सम्मानार्थ १९ तोपोंकी सलामी दगती हैं। राज्यमें एक पोलिटिकल एजण्ट रहता है।

बरा, दातावाद, जुवाल, कुरन्धो, कागल (४अंश), कापसी, तोड़गल और विशालगढ़में एक एक सामन्त रहता है। यह सभी कोल्हापुरके राजाको कर दिया करते हैं।

भूमि चार प्रकारकी है—काली, तांबड़ी, माली और खारी या पन्धारी (सफेद)। ज्वार, धान, नाचनी और बाजरेकी उपज अच्छी है। दूसरी चीजोंमें जव, तम्बाकू, रुई, लालमिर्च, कुसुम्ब, और सुपारी हुआ करती है। कहवा और इलायचीके बागोंसे भी कुछ आमदनी आती है। सिंचाईका सुभीता कम है। नदी-गर्भमें कूआं या तालाब खोद करके खेत सींचे जाते हैं। जङ्गलमें साख, चन्दन, शीशम, आंवला, घास और शहद होता है।

कोल्हापुर राज्यमें तीन प्रकारका कच्चा लोहा मिलता है। खानसे निकलनेवाली दूसरी चीज पत्थर है। यह पत्थर घिसनेसे सङ्गमरमर-जैसा चमकने लगता है।

राज्यमें रोसा तेल तैयार होता है। यहां बनने-वाली दूसरी चीजोंमें मट्टीके बर्तन, लोहालक्कड़, मोटे सूती और ऊनी कपड़े, नमदा, अतर, लाह और कांचके गहने हैं। मोटीशकर, तम्बाकू, रुई और अनाजकी रफतनी और साफ की हुई चीनी, मसाले, नारियल, कपड़े, रेशम, नमक तथा गन्धककी आमदनी होती है। व्यापारके प्रधान केन्द्र कोल्हापुर नगर, शाहू-पुर, वाडगांव, इचलकरञ्जी और कागल हैं। दक्षिण मराठी रेलवे इस राज्यमें आयी है। राज्यमें कुछ सड़कें हैं, जिनमें पूनासे बेलगांव जानेवाली प्रधान है।

कोल्हापुर राज्य ६ पेठों (ताल्लुकों) और ३ मह-लोंमें बंटा है और पोलिटिकल एजेण्टकी अनुमतिसे महाराज इसका इन्तजाम किया करते हैं। उन्हें दीवानी और फौजदारीका पूरा अधिकार है। परन्तु वह अंगरेज प्रजाके बड़े अपराधोंकी जांच विना पोलिटि-कल एजेण्टकी अनुमतिके नहीं कर सकते। चोरी और मारपीट बहुत होती है।

१८८६ ई०को पहले पहल पैमायशका काम शुरू किया गया था। राज्यकी सारी आमदनी कोई ४४०००००) रु० है। १८४९ ई०को कोल्हापुरकी टकसाल बन्द होजानेसे अंगरेजी सिक्का चलने लगा है। महाराजकी फौजमें ७१० सिपाही रहते हैं। राज्य-में १५ पुस्तकालय हैं और ८ समाचारपत्र निकलते हैं।

कोलावा (कुलावा)—बम्बई-प्रेसिडेन्सीके कोङ्कण विभागका एक टापू और उसीसे मिला हुवा एक जिला। यह अक्षा० १७° ५१´ एवं १९° ८´ उ० और देशा० ७२° ५१´ तथा ७३° ४५´के बीच अवस्थित है। क्षेत्रफल २१३१ वर्गमील है। इसके उत्तर बम्बई, पूर्व भोरराज्य, पूना एवं सतारा जिला, दक्षिण रत्नगिरि और पश्चिम अरब-सागर है। लोकसंख्या ६०५५६६ है। पहले अनुर्वर पार्वतीय भूमि जैसा समझा जानेसे कोलावेका उतना आदर न रहा। १६६२ ई०को महाराष्ट्रवीर शिवजीने इसपर अधिकार किया। यहां जलदस्यु समुद्रकी राह जाने-वाले सभी जहाज लूट लेते थे। शिवजीके मृत्यु पीछे इसी स्थानसे अंगरिया वंशमें सामुद्रिक दस्युवृत्ति चलती रही। दस्युवृत्ति क्रमशः बढ़ने पर युरोपीय जहाजोंका इस प्रदेशमें आना बहुत ही विपद्सङ्कुल हो गया। व्यतिव्यस्त होने पर १७२२ ई०को अंगरेजी सेनाके तीन जहाजों और पोर्तगीज सेनाके एक दलने आ कर अंगरिया दुर्ग आक्रमण किया था। परन्तु उन सबको पराजित हो भागना पड़ा।

१८२२ ई०को रघुजी अंगरियाके साथ अंगरेजोंकी जो सन्धि हुई, उससे उन्होंने अंगरेजोंकी वश्यता स्वीकार की। अंगरेज भी उन्हें अन्यान्य शत्रुवोंसे बचाने पर स्वीकृत हुए। १८३८ ई०को रघुजी मर गये। उनकी एक पत्नी उस समय गर्भवती थी। कुछ दिन पीछे एक सन्तान हुवा। अल्प दिनके मध्य ही उसके मर जानेसे अंगरिया-वंशका कोई दूसरा उत्तराधिकारी न बचा। कई एक जारज पुत्रोंने राजा बननेकी चेष्टा की थी। किन्तु उनकी आशा फलवती न हुई। अंगरेज गवर्नमेण्टने राज्यको अपना बना लिया। सरकार अंगरियाके वंशीयोंको इस समय भी पेनशन दिया करती है।

कोलाबाकी अधिकांश भूमि उपजाऊ है। चावल खूब बोया जाता है। प्रधानतः यह लाल और सफेद दो तरहका होता है। छोटे अनाजोंमें नागली, वारी और हरीक होता जो ज्यादातर लोगोंके खानेमें आता है। सिवा इसके वाल, उड़द, मूंग, चना, तिल, सन, पान और सुपारी भी होती है। १७५५ और १७८० ई०के बीच अङ्गरियोंके अधीन अधिकांश बांध बने थे। कुछ व्यापारी और बड़े जमीन्दार गुजराती बैल रखते हैं। कोलाबेके भैंसे छोटे, काले और चिकने चमड़ेवाले होते हैं। भेड़ें दाक्षिणात्यसे मंगायी जाती हैं। धांगड़ और बञ्जारे दक्षिणसे टट्टू ले आते हैं। खेतोंको सिंचाई कूओं और तलाओंसे होती है। खारी पानीके कूओंमें नारियल सींचनेके लिये रंहटे लगी हैं।

कोलाबाके जङ्गलमें साखू और शीशमकी कीमती लकड़ी निकलती है। जङ्गलकी आमदनी लगभग ८३७५०) रु० साल है। आपताकी पत्तियां बीड़ी बनानेके काम आती हैं। यहां खानसे केवल लोहा निकलता है। माथेरानकी चारों ओर पहाड़ियोंमें एलूमिनियम भी पाया जाता है। इमारती पत्थर और बालूकी कोई कमी नहीं। सुखा सुखा कर बहुतसा नमक तैयार किया जाता है। कितने ही घरानोंका काम तिल, नारियल आदिका तेल निकालने और नारियलका रेशा तैयार करनेसे भी चलता है। पानवेलमें गाड़ियोंके पहिये बहुत बनते हैं।

इस जिलेमें व्यापारके प्रधान केन्द्र पेन, पानवेल, करजत, नागोथन, रेवदण्ड, रोहा, गोरेगांव और महाद हैं। खास कर चावल, नमक, जलानेकी लकड़ी, घास, लट्ठा, सब्जी और फलकी रफतनी की जाती है। मंगायी जानेवाली चीजोंमें मलवारी साखू, पूना तथा नासिकके बने पीतलके बर्तन, खजूर, अनाज, कपड़ा, तेल, घी, आलू, हलदी, शक्कर और गुड़ है। कोलाबा जिलेमें ५ बन्दर हैं। गुजराती और मारवाड़ी बनिये प्रधानतः दूकानदार और महाजन हैं। करजत तालुक और खालापुर-पेठसे होकर ग्रेट इण्डियन पेनिनसुला रेलवे निकली है। तीन बड़ी बड़ी सड़कें इस जिलेको भीतरी भागसे मिलाती हैं। मानगांवमें निजामपुर कालपर सबसे बड़ा पुल बना है। १५८० ई०को ३०००००) रु० की लागतसे नागोथनमें ईंटका पक्का पुल बांधा गया था।

कुलाबा जिला ७ तालुकोंमें बंटा है—अलीबाग, पेन, पानवेल, करजत, रोहा, मानगांव और महाड़। इस जिलेमें छोटी छोटी चोरियां बहुत होती हैं। दुर्भिक्षके समय दक्षिणके लाग जो यहां आकर बसे हैं, डाका भी डाल लेते हैं। पहले यह जिला रत्नगिरि और फिर थानेमें शामिल था, किन्तु १८६९ ई०को स्वतन्त्र कर दिया गया। १८८८ और १९०४ ई०को बाच दोबारा इसकी पैमायश हुई।

कोलाम्ब—त्रिवाङ्कुड़ राज्यके कुइलन तालुकका एक बहुत पुराना नगर और बन्दर। (देशीय तामिल नाम 'कोल्लम्' है। अंगरेज लोग कुइलन Quilon कहा करते हैं।)

पाश्चात्य प्राचीन भौगोलिक टलेमिने 'Elangkon Emporium', सिरीय भाषाके एक पुरातन ग्रन्थमें कौलम् (Kaulam) (१), ८५१ ई०को अरबियोंने कोलम्मलय, (२) ११६६ ई०को पैलेस्तिन-निवासी किसी भ्रमणकारीने चुलम, (३) १२८०-१२९८ ई०के

१. Land's Anecdota Syriaca. p. 27.

२. Relation des Voyages etc., par M. Reinaud, I. 15.

३. Benjamin of Tudela, in Early Travellers in Plestine, 114—115.

मध्य मार्कपोलोने कुउलन या कोइलम्, (४) समय समय पर मुसलमान ऐतिहासिकोंने कुलम् वा कौलम (५) और खृष्टीय चतुर्दश शताब्दीके प्रारम्भमें ईसाई मिशनारियोंने कलम्बिओ तथा कलम्बो (६) नाम देकर इसका वर्णन किया है।

किन्तु संस्कृत ग्रन्थोंमें और प्राचीन ताम्रशासनोंमें कोलम्ब वा कोलाम्ब नाम ही मिलता है। कवि लक्ष्मी-दास-रचित 'शुकसन्देश' नामक ग्रन्थमें कहा है—

"लोकवश्यामखिलतनुभृल्लोचनै कावलम्बे
कोलाम्बे ऽस्मिन् क च न भवतः कोऽपि मा भूद्विलम्बः।
अत्यौयस्यामपि परिचितावन्वदेशातिशायि-
न्याश्चर्याणामहमहमिका कस्य कर्षेन्न चेतः॥" (पूर्व सन्देश ५६ श्लोक)

इसका नाम 'कोलाम्ब' क्यों पड़ा? इसके बारेमें कोई अभी निश्चय नहीं कर सका है। स्कन्दपुराणके कुमारिकाखण्ड (४५अ०) और सह्याद्रिखण्ड (१।३३।६९)में कोलाम्बादेवीका नाम मिलता है। केरल अञ्चलमें आज भी कितने ही कोलाम्बा देवीको पूजा करते हैं। मालूम होता—इन्हीं कोलाम्बादेवीके नाम पर किसी समय 'कोलाम्ब' नगरका नाम रखा गया होगा।

८२५ ई०को २५वीं अगस्तसे त्रिवाङ्कुड़का कोलाम्ब अब्द प्रारम्भ हुवा (७) है। किसीके अनुमानमें इसी अब्दसे कोलाम्ब नगरकी उत्पत्ति है। किन्तु यह समीचीन नहीं समझ पड़ता। कोलाम्ब अति प्राचीनकालसे जनाकीर्ण नगर और वाणिज्यस्थान-जैसा प्रसिद्ध है। यह बात टलेमि आदि पुराने भौगोलिकों और भ्रमणकारियोंके ग्रन्थ पढ़नेसे समझी जा सकती है।

४. Chinese Annals quoted by Panthier. Marco Polo. II ch. 603; Yule's Marco Polo. Bk. III. ch. 22.

५. Elliot's Muhammadan Historians, Vols. 1 p. 68, III. 32.

६. Odorici Raynaldi Ann, Eccles. V 455; Friar Odoric in Cathey, p. 71.

(७) Journal of the Royal As, Soc. Vol. XVI. p. 402

कोई यह भी कहता है कि ८२४ ई०से कोलाम्ब अब्द चला है (Yule's Glossary, p. 569.)

डाक्टर हण्टरके मतमें १०१९ ई०से कोलाम्ब अब्द प्रथम आरम्भ हुआ है। (W. W. Hunter's Imperial Gazetteer; Vol. XI, p 339.)

प्राचीनकालको यहां सिरीयक ईसायोंका धर्ममन्दिर स्थापित हुवा। ६६० ई०को ईसाई-धर्मात्मा जेसुजबस (Jesujabus, Nestorion Patriarch of Adiabene) ने कोलाम्बमें ही प्राण छोड़ा था।

सिरीय भाषामें लिखा है कि ८२३ ई०को सिरीयाके मिशनरियोंने जा कर कोलाम्बके चक्रवर्ती राजाकी अनुमतिसे वहां गिर्जाघर बनाया था।

१०१९ ई०को यह नगर फिर निर्मित हुवा। प्रवाद है—ईसाई-धर्मप्रचारक सेण्ट टामसने कोलाम्बमें भी एक उपासना-मन्दिर स्थापन किया था। १३१० ई०को जोर्दनस यहांके प्रधान याजक (Bishop) रहे। उक्त समयसे बहुत पहले कोलाम्बमें हिन्दुओंके अनेक देवालय थे—इसका प्रमाण मिलता है। १५०३ ई०को पोर्तगोजोंने यहां एक कोठी और किला बनाया था। डेढ़सौ वर्ष पीछे ओलन्दाजोंने इस दुर्गको अधिकार किया। समय समय पर कोलाम्ब कोचीन, कलिकुद्दलन और त्रिवाङ्कुड़के अधीन हो गया। १७४१ ई०को त्रिवाङ्कुड़के राजाने नगर घेरा था। १७४५ ई०को कोलाम्बके राजा वशीभूत हुवे। १८०३ से १८३० ई० तक यहां अंगरेजो सेनाके कई दल रहे। आजकल केवल एक दल देशीय सैन्य पड़ा है।

खृष्टीय पूर्वाब्दसे यह बन्दर एक प्रधान वाणिज्य-स्थान-जैसा विख्यात है। पूर्वकालको इस बन्दरमें सबसे अधिक मिर्चको आमदनी और रफ्तनो होती थी। कोलाम्बके प्राचीन हिन्दू और विदेशीय वणिक् वङ्गाल, ब्रह्मदेश, पेगू, और भारत-महासागरीय द्वीपपुञ्जको वाणिज्य करने जाते थे। १३२८ ई०को पादरी जर्दनस (Friar Gordanus) लिख गये हैं-'मैं जब कोलाम्बमें था, वहां चिमगीदड़-जैसे परवाले दा चूहोंका देखा।' (Mirabilia Descripta, p. 29)

कोलाम्बा (कोलम्बा)—दाक्षिणात्यकी एक प्रसिद्ध देवी। स्कन्दपुराणके कुमारिकाखण्डमें लिखते हैं—मन्दादित्यके निकट गुप्तक्षेत्रमें विश्वमाता कोलाम्बादेवी विराजती हैं। देवर्षि नारदने आराधना करके भद्रादित्यके निकट कोलाम्बादेवीको स्थापन किया था।

(कुमारिकाखण्ड ४५ अ०)

सह्याद्रिखण्डके मतमें दक्षिणापथके प्रियर्षिगोत्रीय राजा कोलाम्बादेवीके भक्त थे। (पूर्वार्ध ३३।६९)

पूना जिलेकी भीमा उपत्यकामें कोतलगढ़से १ कोस दक्षिण कोलाम्बा नामक एक गिरिपथ है।

कोलार—१ बम्बई-प्रेसिडेन्सीके अन्तर्गत सतारा जिलेका एक नगर। यह अक्षा० १६° २६´ उ० और देशा० ७५° ४४´ पू०के मध्य विजयपुरसे १२ कोस दक्षिण अवस्थित है।

२ महिसुरके अन्तर्गत एक नगर। यह अक्षा० १२° ४६´ एवं १३° ५८´ उ० और देशा० ७७° २२´ तथा ७८° ३५´ पू० के मध्य बंगलूरसे उत्तरपूर्व अवस्थित है। क्षेत्रफल ३१८० वर्गमील है। लोकसंख्या ७२३६०० है। यहां कई जातियोंका वास है। जैन और लिङ्गायत सम्प्रदाय अधिक देख नहीं पड़ता।

इस बातका ठीक ठीक वर्णन मिलता कि कोलार जिलेके पूर्व भागमें सबसे पहले महावलियों या बाणोंका शासन रहा। वह अपना पूर्वपुरुष राजावलिको बतलाते, जिन्होंने दैत्य होते भी अपने तपोबलसे इन्द्रको पराजय किया था। उन्हें ही छलनेके लिये विष्णुने वामन अवतार रखा। वाण वा वाणासुर वलिका पुत्र था। उसके हजार भुजाएं रहीं। कृष्णके पौत्र अनिरुद्धको उसकी कन्या उषाने अपने घर चुपके चुपके दैत्योंको भेज पकड़ मंगाया था। उसी पर युद्ध आरम्भ हुआ। शिव अपने भक्त वाणासुरकी रखवाली करते थे। वलवलियोंका सम्बन्ध मन्द्राज सागर-तटके महावलिपुरसे हो सकता है। इनका राजत्व ई० १०वीं शताब्दी तक रहा। किन्तु बहुत दिन तक पल्लवोंने उन पर प्रभुत्व किया। इनकी पिछली राजधानी पदुविपुरी थी। उनके समय अवनि ब्राह्मण-समाजका पुण्यस्थान रहा। कुछ शिलाफलकोंमें उत्तरके वैदुम्बोंका भी नाम मिलता है। २रीसे ११वीं ई० शताब्दी तक कोलार जिलेका समग्र पश्चिमांश गङ्गोंके राज्यमें लगता रहा। ९९८ ई०को चोलोंने उनका स्थान ग्रहण करके इस जिलेका नाम निकरिलि चोलमण्डल रखा था। लगभग १११६ ई०के होयसलोंने महिसुरसे चोलोंको निकाल बाहर किया। ११५४ ई०को जब होयसल राज्यका बंटवारा सोमेश्वरके दो लड़कोंके बीच हुआ, कोलार जिला तामिल-प्रान्तके साथ रामनाथको मिला। किन्तु दूसरे राजा ३य वल्लालने फिर अपने समयमें राज्यको एकमें ही मिला दिया। १५वीं शताब्दीके अन्तको शालुवा नरसिंहने जो कर्णाट और तैलिङ्गके एक सरदार और विजयनगरके सेनापति थे, इस जिलेमें विजयनगर राज्यको आक्रमण करनेवाले बहमनी सुलतानकी गति रोकी। पीछेको विजयनगरके दूसरे दूसरे राजाओंने तम्मेगाद नामक अवनि-वंशके एक सरदारको उनकी सेवाके लिये कोलार जिलेका पूर्वांश दे डाला। ई० १७वीं शताब्दीको बीजापुरने कोलारको दबा शाहजीकी जागीरमें लगाया था। फिर ७० वर्ष तक यहां मुगलोंका अधिकार रहा। उन्होंने इसको सीर-प्रान्तमें मिलाया था। इस समय हैदर अलीके वालिद फतेह मुहम्मद कोलारमें फौजदार हुए। फिर यह मराठों, कड़प्पाके नवाब और निजामके भाई बसालत जङ्गके हाथ लगा। १७६१ ई०को हैदर अलीने इसको अंगरेजोंको सौंपा। अंगरेजोंने १७६८ ई० तक कोलारमें राजत्व किया था। १७७० ई०को मराठोंने फिर कोलार छीन लिया, परन्तु हैदर अलीने उद्धार किया। १७९१ ई०को अंगरेजोंने दोबारा इसको अधिकार किया था, किन्तु १७९२ ई०को महिसुरसे सुलह होने पर वापस दे दिया।

अवनि, बेतमङ्गल और टेकलमें प्राचीन स्मारक हैं। मालूरसे दक्षिण नोनमङ्गलमें १८९७ ई०को एक जैन-मन्दिरका भित्तिमूल आविष्कृत हुआ है। उसमें ४थी और ५वीं शताब्दीके उल्लिखित ताम्रफलक और बहुतसी मूर्तियां, सङ्गीतके बाजे और दूसरी चीजें पायी गयी हैं। कोलारमें नन्दीका प्राचीन नन्दीश्वर और कोलारका कोलारम्मा मन्दिर देखने योग्य है। यह मन्दिर ११वीं शताब्दीको चोल-राजाओंके समय बने थे। कोलारमें हैदर अलीके घरानेका इमामबाड़ा भी है। इस जिलेकी विभिन्न शिलालिपियां अनुवादित और प्रकाशित हुई हैं।

जिलेका सदर कोलार शहरमें है। कोलार गोल्ड फील्डमें २०००० आदमी रहते हैं।

यहां रागी, चावल, चना, तिलहन, जख और दूसरे अनाजकी खेती होती है। चिकवल्लपुर और सिदलघट्टमें आलू बहुत लगाये जाते हैं। नन्दी दुर्गमें कुछ कहवा और चिकवल्लपुर, सिदलघट्ट तथा कोलार तालुकमें अफ़ीम भी होती है।

बौरिङ्गपेटमें सोनेकी खानि है। प्रतिवर्ष लाखों रुपयेका सोना निकलता है। इमारतमें लगाने और सड़क पर विछानेका पत्थर भी मिलता है। रहमानगढ़में किसी मौसमको जमीनसे फूट कर तेल निकला करता है।

सोनेकी खानके कामको छोड़ करके गोरीविदनूरमें चीनीका एक कारखाना भी है। कोलार, सिदलघट्ट और चिकवल्लपुरके मुसलमान रेशमका काम करते हैं। सूती कपड़े, कम्बल और दूसरे रेजे भी तैयार होते हैं। लकड़ी, लोहे, पीतल, तांबे, तेल और गुड़ शक्करके कई कारखाने हैं। मुलवागल अपनी उम्दा शक्करके लिये मशहूर है। गोल्डफील्ड और बौरिङ्गपेट व्यापारके केन्द्र हैं। सोनेके सिवा रफ्तनीकी कीमती चीज शक्कर, मिसरी, गुड़, सूती कपड़ा और देशी कम्बल है। वाहरसे यहां कलपुरजा, सोनेकी खानिमें लगनेवाली चीजें, नमक, रस्सी, टोकरियां और कागज मंगाया जाता है।

मन्द्राज रेलवेकी बङ्गलोर शाखा इस जिलेमें ५६ मील तक चली गयी है। बौरिङ्गपेटसे गोलडफील्ड रेलवे निकल १० मील तक पूर्व और दक्षिण पहुंचती है।

कोलार जिला वागेपल्ली, बौरिङ्गपेट, चिकवल्लपुर, चिन्तामणि, गोरीविदनूर, कोलार, मालूर, मुलवागल, सिदलघट्ट और श्रीनिवासपुर नामक १० तालुकोंमें बंटा है। बड़े अफसर कमिश्नर और असिस्टण्ट कमिश्नर हैं।

कोलासुर—१ कोई असुर। योगिनीतन्त्रके १७वें पटलमें वर्णित हुवा है—किसी समय अन्याय आचरण करनेसे विष्णुको ब्रह्मशाप लगा था। ब्रह्मशापसे उनके शरीरमें पापने आश्रय लिया। उन्होंने उक्त पापसे बहुत घबराकर हिमालयके निकट अष्टाचरी कालीमन्त्र जपके कालीकी उपासना की थी। कालीके सन्तुष्ट होने पर विष्णुके हृदयसे वह पाप असुररूप धारण करके निकल पड़ा। वही असुर कोला नामसे विख्यात हुवा है। कोलासुर दिन दिन दुर्वृत्त बनता गया, धीरे धीरे ब्रह्मा विष्णु प्रभृति बड़े बड़े देवोंको भी उससे पराजित होना पड़ा। वह सब देवताओंको हरा कोलापुरमें जाकर रहा था। अन्तको कालीने ही कोलासुरको मारनेकी चेष्टा की। उन्होंने बालिकामूर्ति बना उसकी राजधानी पहुंच कर इस प्रकार आत्मपरिचय दिया था—मैं एक मातृपितृहीना बालिका हूं, क्षुधासे बहुत घबराकर आप (कोलासुर)-के पास आयी हूं। कोलासुर असहाया बालिकाको अन्तःपुरमें ले गया। लड़की आहार करने बैठी थी। असुर सकल खाद्य लाकर देने लगा। उसने जो कुछ दिया, बालिकाने उसे मुहूर्तके मध्य उदरसात् किया। कोला जब और खानेको ला न सका, बालिका उसका धानागार, अश्व, हस्ती, रथ और सैन्य खाने लगी और परिशेषको बन्धुबान्धव सहित कोलाको भी पेटमें डाल वहांसे चल दी।

२ छोटानागपुर अञ्चलके असुरोंकी एक श्रेणी। प्रधानतः सरगुजा और लोहारडगामें असुर जाति रहती है। उन्हें लोहा और अंगरिया भी कहते हैं। असुरोंमें पांच श्रेणियां और १३ गोत्र वा कुल हैं। श्रेणियोंके नाम-कोलासुर, लोहासुर वा लोहासुर, पहाड़ियासुर, बिरजिया तथा अगोरिया या अंगोरिया और कुलोंके नाम—अइन्द, कछुवा, केठोर, केकेंटा, नाग, मकरयार, तिरक, तोया रोटे, बरओ, बांसरियार, तथा बेलियार हैं। इनमें माझी और परजा—दो उपाधि देख पड़ते हैं।

पुराणोंमें विन्ध्याचलवासी जिन असुरोंका उल्लेख है, यह कितने हो उन-जैसे समझ पड़ते हैं। मुण्डा नामक कोल बताते कि सिंगबोंगाने असुरोंको ध्वंस किया था। वस्तुतः वर्तमान असुरजाति पहले जिन स्थानोंमें रहती, कोलोंने अधिकार कर लिये हैं। मुण्डावोंसे उत्पन्न हो इन्होंने पूर्वस्थान छोड़ दिया है,—यह बात असुर भी समय समय बताया करते हैं। मानवतत्त्वविदोंके मतमें यह भी भारतके आदिम अधिवासी और कोलदेवता संगबोंगाके पूजक हैं। असुर पहाड़ों और भूत-

प्रेतोंको भी समय समय पूजते हैं। यह खानसे लोहा निकाल बेचते हैं। कोई कोई लोहेकी चीजें भी बनाता है।

कोलासुर एक कुल या गोत्रमें विवाह नहीं करते। प्राय: वयस्था होने पर ही कन्याका विवाह होता है। इनमें बहुविवाह और पत्नीत्याग अधिक प्रचलित है। स्त्रियोंका स्वभाव-चरित्र वैसा अच्छा नहीं, बहुतसी नाच गा कर अर्थ उपार्जन करती हैं। बङ्गाल और विहारमें प्राय: तीन हजार असुरोंका वास है। सुण्डा देखो।

कोलाहट (सं० पु०) एक प्रवीण नर्तक। इसका अङ्ग-प्रत्यङ्ग बांसकी तरह लचकता है। कोलाहट तलवारकी धार पर नाचता और मुंहसे मोती पिरोता है।

कोलाहल (सं० पु०) कोल एकीभूताव्यक्तशब्दविशेषस्त' आहलति, कोल-हल-अच्। १ अनेक लोगोंका उच्च-शब्द, बहुतसे लोगोंकी ऊंची आवाज, कलकलध्वनि, हल्ला, चिल्लाहट। (रामायण, ३।२१४) २ भूकदम्ब।

कोलि (सं० पु०) बदरीवृक्ष, बेरी।

कोलि—बम्बई-प्रदेशकी उत्तर-पश्चिम अञ्चलवासी एक जाति। यह अपने आप कहा करते—कुल अर्थात् वंश-विभागके अनुसार जिनकी श्रेणी बंधी, वही कोलि हैं। कुनबीका अर्थ कुटुम्बी है, अर्थात् एक परिवारके अनुसार श्रेणीविभक्त होनेवाले कुनबी कहलाते हैं। कुनबियोंसे पार्थक्य निर्देशके लिये ही 'कोलि' नाम पड़ा है। दाक्षिणात्यके ब्राह्मणोंका कहना है—'वेणराजके बाहु मन्थनसे निषाद जाति उत्पन्न हुई थी। इसी निषाद जातिसे निकले किरातोंकी कथा पुराणोंमें देख पड़ती है। कोलि वही किरातजाति है। परन्तु यह अपनेको रामायणकार महर्षि वाल्मीकिका वंशोद्भव बताते हैं। पाश्चात्य विद्वानोंके अनुमानमें कोलि भी कोलजातिकी एक शाखा है। दायोनिशियास और इब्न खुरदादने अपने अपने ग्रन्थमें इनकी बात लिखी है। खुरदादने इन्हें उत्तर मलबारका रहनेवाला भी कहा है। स्थान-भेदसे इनका नाम कोङ्कनी कोलि, मराठी कोलि, बरोदा कोलि और तलवड़ा कोलि आता है।

शोलापुरमें कोलियोंके वास-सम्बन्ध पर 'मालुतारण' नामक ग्रन्थ कहता है—'पैठनसे राजा शालिवाहनने अपने मन्त्री रामचन्द्र उदावन्त सोनारके परामर्शानुसार ४ कोलि सरदारोंको डिण्डिर वन विद्रोह दमनार्थ भेजा था। बलवा मिटाने पर कोलि सरदारोंको उसी स्थानके वनभागमें रहनेकी अनुमति मिली। शालिवाहनने इन्हें नौकावाहन और शिवमन्दिरका पौरोहित्य करके जीविका चलानेका आदेश दिया था। फिर और भी दो सरदार और इन चारोंके पितामाता वहां जाकर रहे। पहले चारों सरदारोंका नाम अभनराव, अधलाव, नेहेराव और परचंदे था। इन्हींके नामसे वर्तमान कोलियोंका वंशोपाधि लगा है।

गुजरातमें भी कोलि लोग रहते हैं और नाना-स्थानों पर कृषिकार्य करते हैं। अट्ठवीसी प्रदेशमें इनकी संख्या अधिक है। बम्बई-प्रेसिडेन्सीके पूना, खान्देश, अहमदनगर, शोलापुर, बालाघाट, कोङ्कण आदि स्थानोंमें भी इनका वास है। अट्ठवीसी प्रदेशका थोड़ा अंश आज भी कोलवन नामसे वर्णित हुवा है। पाश्चात्य विद्वानोंके अनुमानमें कोलि जातीय लोगोंका आधिक्य ही उक्त स्थानके कोलवन नामसे प्रसिद्ध होनेका प्रधान कारण है।

यह नानाविध श्रेणियोंमें विभक्त हैं—राज कोलि, सलेसी कोलि, टंगकिर (टीकरी बनानेवाले) कोलि, धोर कोलि, डोंगरी कोलि। यह श्रेणियां प्राय: अट्ठवीसी, वुन, दन्तोरी और नासिक जिलोंमें रहती और हिन्दू देवता भैरव तथा भवानीको पूजती हैं। राज-कोलियोंका एक दल कोङ्कणप्रदेशमें वास करके महादेव कोलि, पानभरी (जलवाहक) कोलि, धर (पशुपालक) कोलि, आहीर कोलि, तलपाड़ी कोलि, सूर्वी कोलि, मेट्टा कोलि, चांची कोलि, पत्तनवाड़िया कोलि, खवेज कोलि, धांदर कोलि, भवड़िया कोलि, चुनवल कोलि, या जुगड़िया, किलीकतार कोलि, मंग कोलि, प्रभृति श्रेणियोंमें विभक्त हो गया है।

इनमें पानभरी या जलवाहक कोलि अपेक्षाकृत सम्मानार्ह हैं। वह अपनेको महारी वा मल्हार-पूजक कहते और खानदेश, हैदराबाद राज्यकी सीमा, बालाघाट, इन्दोर, नान्देर जिलके बोडिन, नलदुर्ग, पण्ढर-पुर तथा उसके चतुष्पार्श्व, पूनाके दक्षिणस्थ पुरन्दर,

सिंहगढ़, तोरण एवं राजगढ़ पर्वतमें रहते हैं। पानभरी ग्राम ग्राम और पाान्यनिवासोंमें पानी भरने तथा पण्ढरपुरके पास कितने ही ग्रामको द्वाररक्षा एवं चौकीदारीका काम करते हैं। खानदेश और अहमदनगरमें इनके थोड़े आदमी गांवोंके मुखिया हैं। पूनाके दक्षिणस्थ कोलि वंशानुक्रमसे पार्वत्य दुर्गोंकी रक्षकता करते चले आते हैं। इनके शिर पर पानीका घड़ा रखनेकी कपड़ेकी बुनी हुई एक गुंडरी रहती है। पानभरियोंका दूसरा नाम चुमली है। कुनबियोंके साथ आहार व्यवहार रखनेसे इन्हें कुमन-कोलि भी कहते हैं।

कोलि भैंसेकी पीठ पर मसकमें पानी भर लाते और गांव गांव उसको पहुंचाकर अधिवासियोंसे वार्षिक शस्य, सूखी घास या रुपया पैसा पाते हैं। यह कनफटे गोस्वामियोंके निकट दीक्षित होते हैं। दीक्षा-ग्रहीता स्नान करके गुरुके नीचे बैठ उनके पैर धोता और फूलोंकी माला पहना तथा सुगन्धि तैल लगा देता है। फिर गुरु १०८ दानेकी तुलसीकी माला शिष्यके कण्ठमें डाल कर्णमें मन्त्र सुनाता है। उन्हें सिर्फ १) रु० दक्षिणा मिलती है। कोलियोंके मध्य जो पण्ढरपुरमें बिठोबा-मन्दिरके कर्मचारी हैं, प्रायः तुलसीकी माला पहनते और मत्स्य मांस भक्षण नहीं करते।

महादेव-कोलि पूनाके दक्षिणपश्चिमभाग सह्याद्रिकी उपत्यकामें वास करते और उत्तर गोदावरीसे त्र्यम्बक पर्यन्त बराबर मिलते हैं। यह २४ कुलों या वंशोंमें विभक्त हैं। फिर इन २४ कुलोंमें प्रत्येक नाना भागोंमें बंट जानेसे २१८ श्रेणियां हो गयी हैं। इनके समान कुलमें स्त्रीपुरुषका विवाह नहीं होता। महादेव कोलियोंके मध्य अघासीमें ३, भगिवन्त (भाग्यवन्त)-में १४, भांसलमें १६, चवानमें २, दजईमें १२, दलभोमें १४, गायकवाड़में १२, मभलोमें २, जगतापमें १३, कदममें १६, केदारमें १५, खराड़में ११, चोरसागरमें १५, नामदेवमें १५, पवारमें १३, सागरमें १२, पोलवमें १२, सेइखाता सेषमें १२, शिवमें ८, शिरखोमें २, सूर्यवंशीमें १६, उतरचामें १३, वनकपालमें १६ और बुधिवन्त (बुद्धिमन्त) कुलमें १७ भाग हैं। एतद्भिन्न कई कुनबियोंने इनमें मिल कर नवीन कुल और नतन नूतन श्रेणियां उत्पन्न की हैं।

कोलियोंके मध्य जो सकल कुलनाम मराठोंके उपाधिके साथ एकरूप हैं, (अर्थात् चवान, दलभो, गायकवाड़, कदम, पोरव, भोंसले प्रभृति) पाश्चात्य विद्वानोंके मतानुसार अति पूर्वकालको प्रायः एक जाति थे। आकारमें भी मराठा और कोलि जातीय लोगोंकी विशेष भिन्नता नहीं पड़ती। पहले दाक्षिणात्य-वासी मराठा और कोलि आदि वीर जाति जब दस्युता करके जीवन चलाते रहे, इनकी श्रेणीयोंका नाम वंशगत वा जातिगत न था। मालूम पड़ता है, उस समय भिन्न जाति होते भी यह एक श्रेणीमें ही गण्य थे। इसका प्रमाण आजकल भी मिलता है। पूनाके जेबकतरे दस्यु 'उचला' जातीय लोगोंमें गायकवाड़ और यादव—दो ही श्रेणियां हैं। उनमें सकल जातीय लोग—ब्राह्मण, बनियां यहां तक कि मुसलमान भी हैं। किसी किसीके अनुमानमें 'सेखाज सेष' कुल कोलियोंके धर्मसम्प्रदायके नामसे गृहीत हुआ है। किन्तु कोई कोई उचलावोंका व्यापार देख कहते हैं शायद पूर्वकालको कोलियोंमें मुसलमानोंकी मिल जाने पर 'शेख'से सेखाज नामक स्वतन्त्र कुल बन गया है।

जो हो, परन्तु इनमें कुनबियोंके प्रवेश करनेसे जो स्वतन्त्र कुल चले, प्रायः एक एक करके विशेष विशेष स्थानोंमें बसे हैं। मूला नदीके उपकूल पर आलोकके अन्तर्गत कोतुलमें बरमल, बरमत्तो, भागवत, दिन्दले, घोड़े; राजुरके पश्चिम प्रवरा नदीके तीर भंड़े, घने, जड़े, कारे, खदाले, सकते, पिचर (इसी पिचर कुलसे राजुरका देशमुखवंश उत्पन्न है); अकोलाके उत्तर-पश्चिम यादव, गोड़े, सावले, चेतरो और खलपारे कुलोंका वास है।

महादेव कोलि साधारणतः देखनेमें कृष्णवर्ण, खर्वकाय, सबलदेह, दृढ़ तथा स्थूलपेशीविशिष्ट—किन्तु उत्साहहीन हैं। इनकी स्त्रियां नतो सुरूपा और न सुश्री हैं, परन्तु यह भी नहीं कि सर्वाङ्गकुरूपा हों। प्रायः सभी रमणियां मधुरस्वभावा, सुगठिता,

लज्जाशीला, पतिपरायणा, सती और परिष्कार-परिच्छन्ना होती हैं। महादेव कोलि टूटीफूटी मराठी भाषामें बोलते हैं। तृणाच्छादित कुटीरोंमें सामान्य लोगोंका वास है। यह कुटीर बहुत बड़े बड़े होते और प्रत्येकमें दो लम्बी चौड़ी कोठरियां और एक छोटा कमरा होते हैं। एक बड़ी कोठरी बाहर बैठने उठने और दूसरी भीतर चीजें रखनेके काम आती है। भीतरकी कोठरीमें ही शस्यादि रखा जाता है। धनियोंके गृहादि धनी कुनवियोंके घरों-जैसे होते हैं। धनी लोग पशुपक्षी प्रतिपालन करते और उन्हें अपने आवासमें ही रखते हैं। महादेव कोलि शूकर और गोमांस व्यतीत अपर सकल मांस भक्षण करते हैं। इनका साधारण खाद्य काकुनकी रोटी है। स्त्री पुरुष सभी प्रातःस्नान किया करते हैं। प्रत्येक परिवारमें वयोवृद्ध सवेरे नहा कर चन्दन पुष्पादि द्वारा गृहदेवताकी पूजते और प्रस्तुत खाद्यादिका भोग लगाते हैं। प्रत्येक व्यक्ति तुलसी प्रदक्षिण और प्रणाम करता है। उत्सवादिमें भात, बड़ी, रोटी पूरी आदिका भोग देवताको निवेदन किया जाता है। पौष मासकी शुक्ला षष्ठीको यह खंडोबा नामक देवताके सम्मुख छागबलि देते और उसी मांसको रन्धन करके अन्न तथा पिष्टकादि सहित भोग लगा लेते हैं। महादेव कोलि तम्बाकू, गांजा, भांग और देशी शराब भी खूब पीते हैं। स्त्रियां किसी प्रकारका मादकद्रव्य सेवन नहीं करतीं, केवल चूनेके साथ सुरती मिला पानमें खा लेती हैं। पुरुष शिखा व्यतीत समस्त मस्तक मुण्डन करते और दाढ़ी भी नहीं रखते। स्त्रियां बाल बांधतीं और सधवा सिन्दूर लगाती हैं। पुरुष स्नानके पीछे चन्दनका तिलक लगाते हैं। इनका पहनावा कुछ कुछ कुनबियों और रावलों-जैसा रहता है। गलेमें लाल और सफेद पोतकी पहने जानेवाली माला 'मङ्गलसूत्र' कहलाती है। प्रायः सभी लोग कर्मठ, बलिष्ठ और शीघ्रहस्त होते भी कुनबियों-जैसे परिश्रमी एवं बुद्धिमान् नहीं। यह कुछ अलस और भविष्यद्दृष्टिहीन हैं। परन्तु स्वजातिवत्सलता, साहाय्यकारिता और सत्यवादिताका इनमें अभाव नहीं। अति सरल होनेसे जो सिखाया जाता, सीख लेते हैं। विदेशियों और शत्रुओंके प्रति बहुत सन्देहचित्त रहते हैं। फिर भी विदेशियों पर बड़ी दया करते हैं। इनकी स्त्रियोंका साहस अपरिसीम है। वह पुरुषोंके परिच्छदमें आत्मगोपन करके अंगरेजी पुलिसके पहरावालोंका काम करते देखी गयी हैं।

सोन कोलियोंमें कितने ही मछली मारते और बहुतसे नाव चलाते हैं। यह देशीय लोगोंके जहाजों पर भी काम करते हैं, परन्तु युरोपीयोंसे अलग ही रहते हैं। क्योंकि वैसा करने पर इन्हें समाजच्युत होना पड़ता है। इनकी स्त्रियां बायें हाथमें कांचकी चूड़ियां पहनती और नदीतीरसे मछलियां ले जाकर बाजारमें रखती हैं। पुरुष वही मछलियां बेचा करते हैं। विवाहके समय इनकी स्त्रियोंके दाहने हाथका गहना या चूड़ियां उतार कर समुद्रमें फेंक दी जाती हैं। उद्देश्य यह है—मछलियां पकड़ने जाने पर जलदेवता पानीमें कन्याके स्वामीकी रक्षा करेंगे। महुवेकी शराब न होनेसे इनकी पञ्चायत नहीं बैठेगी। कोलाबा प्रदेशमें आंग्रियाके अधीन कितने ही सोन कोलि सैनिकोंका कार्य करते थे। इनमें अनेक धनी हैं। बम्बई, थाना, भेवंदी, कल्याण, बासिम, दमन प्रभृति स्थानोंमें पोर्तगीजोंने कितने ही सोन कोलियोंको ईसाई बना डाला था, परन्तु १८२०-२१ ई०को विसूचिका रोगसे आक्रान्त हो बहुतसे सोन ईसाइयोंने अपना पूर्व धर्म अवलम्बन कर लिया।

धोर कोलि अतिशय मद्यपायी हैं। यह स्वभावमृत पशुओंका मांस भी खा जाते हैं। इनकी भीलोंके साथ घनिष्ठता है। फिर कितने ही अपनेको भील भी बताया करते हैं।

आहीर कोलि खानदेशमें गीर्णा और तापती नदी किनारे रहते हैं। यह चौकीदारीके काममें नियुक्त हुवा करते हैं।

मूर्वी कोलि उत्तर-कोङ्कणके प्रत्येक ग्राममें वास करते हैं। बम्बईमें पीनसबरदारी ही इनका खास काम है।

चांची कोलि काठियावाड़के अन्तर्गत जूनागढ़से जाकर बम्बईमें रहे हैं। यह खेतीबारी और मजदूरी

किया करते हैं। मेहा कोलियोंका बम्बई-प्रदेशके नासिक जिलेमें कारबार है।

तुलांदा कोलियोंकी संख्या गुजरातमें अधिक है इनकी अपेक्षा खवेज, धांदर, भावरिया कोलि कम देख पड़ते हैं। महीकान्ता जिलेमें कई श्रेणोक्त श्रेणियां अधिक हैं। यह भी चौकीदारी और मजदूरी करते हैं। सेलोत्ता कोलि मामूली तिजारत चलाते हैं।

पत्तनवाड़िया गुजरातके महीकान्ता जिलेमें खेतीबारी और मजदूरी किया करते हैं।

बम्बई द्वीपवासी कोलि खेतीबारी करते, ताड़ी बनाते, शिकार करते और पशुपक्षी बेचते हैं।

तलपाड़ी कोलि निरीह कृषक हैं। परन्तु चम्बल जिलेके चुनवल कोलि बहुत अशान्त होते हैं।

टंगकिर कोलि बम्बईके निकट रहते हैं। स्पष्ट समझ नहीं पड़ता—इनकी कोई स्वतन्त्र श्रेणी है या इनके व्यवसायसे ही टंगकिर नाम पड़ा है। यह बांसकी डलियां, टोकरियां आदि बनाते हैं। कोलि जातिकी अन्यान्य श्रेणियोंमें भी यह व्यवसाय होता है। साफ साफ मालूम नहीं होता है—विभिन्न श्रेणियांके समव्यवसायी कोलियोंके बम्बईमें एक स्थान पर अवस्थान करनेसे इस प्रकारकी एक श्रेणी कल्पित और अभिहित हुई है या नहीं।

डांगरी कोलि पर्वतवासी हैं। यह पर्वतको डूंगर कहते हैं। किलिकताके कोलि महकपुरमें रहते और नौवाहनादि करते हैं।

मङ्ग कोलि किसी किसी जिलेमें युवती स्त्रियोंको देवताके नाम पर अविवाहिता रखते हैं।

धोर कोलि पशुपालन और नित्यप्रयोजनीय द्रव्यादिका व्यवसाय करते हैं।

कोलि जाति अधिकांश चौकीदार, पटैल, गांवके मुखिया और कुछ लोग वंशानुक्रममें देशमुख अर्थात् ग्राम्यविचारकका काम किया करते हैं। पूर्वकालको कोलि कृषकोंके स्वत्वादिकी रक्षाके लिये 'नायकवड़ी' होते थे। इन्हें स्वाधिकारके प्रत्येक ग्रामसे आध मन अनाज, एक मुर्गा, एक सेर घी और एक रुपया मिलता था।

साधारणतः कोलि लोग निर्धन हैं। सरकारी वन्यविभागकी सख्तियां पड़नेसे इनका कष्ट और भी बढ़ गया है। इनकी चारणभूमि घट गयी है, काष्ठसंग्रहका अभाव हो गया है और 'बचाव'की खेतीके लिये यह पत्ते भी इकट्ठा नहीं कर सकते।

कोलियोंसे कुनबियोंका सांसारिक जीवन नहीं मिलता। यह प्रतिदिन तीन बार आहार करते हैं—सवेरे ८ बजे, दोपहरको और रातमें। ग्रीष्मकालको इनके खेतका कार्य अल्प रहता है। उसी समय यह पुत्रादि साथ लेकर वनमें शिकार करने जाते हैं। जंगली सूअरका शिकार इन्हें बहुत अच्छा लगता है। यह बहुत स्थिरलक्ष्य होते हैं। शनिवार इनके गृहदेवताका अधिष्ठित वार है। इसीसे उस दिन कोई काम नहीं करते। इस दिनको कोलि धर्मराजका द्वितीय दिवस बताते हैं। यह मराठा कुनबियोंसे छोटे समझे जाते हैं। कोलि कहते—पूर्वकालको हम भी मराठे थे, शिवजीके पोछे कुछ गिर गये। इस बातके प्रमाणमें उनका कहना है—अहमदनगरके कोलि सोनारीके भैरवकी प्रतिमा, निजामराज्यके कोलि तुलजापुरकी देवीकी मूर्ति और पूनाके कोलि जेजुरीके खंडोबाकी मूर्ति अपने अपने घरमें रखते हैं। पूजाके दिन उपवासी रहते हैं। इसको छोड़कर हिन्दुओंके प्रति पर्व और व्रतादिके दिन भी उपवास करते हैं। एतद्भिन्न दरयाबाई, घोपरदेवी, गुणईवीरव, हीरो, कालसूबाई, म्हसवा, नवलाई प्रभृति देवतोंकी उपासना भी इनमें होती है। मुसलमान पीरोंको शीरीनी चढ़ाई जाती है। स्वजातिके मध्य वा स्ववंशमें जो व्यक्ति महत् कार्यके लिये भयानक रूपसे हत हुये हैं, उनके समाधिस्थलकी यह बड़ी भक्ति करते हैं। आजकल कोलि स्थानीय ब्राह्मणोंसे देवपूजादि कराया करते हैं। पहले लिङ्गायत रावल गोस्वामी इनके पुरोहित रहे, किन्तु तृतीय पेशवा बालाजी बाजीरावके राजत्वकाल (१७४०-६१) यह प्रथा रहित हो गयी। इनके मतमें पूनाके अन्तर्गत जेजुरी, नासिक, और शोलापुरके अन्तर्गत पण्ढरपुर प्रधान तीर्थस्थान है। माघकी द्वितीया इनके प्रधान उत्सवका दिन है।

श्रावणी सोमवार और शिवरात्रिको यह उपवास करते हैं। पशुपालक कोलि गायोंमें एकको गृहदेवताके नाम पर निर्दिष्ट कर रखते और उत्सवादिके दिन उस गायका दूध परिवारमें कोई नहीं पीता। उसके दूधसे घी प्रस्तुत करके सन्ध्याकालको देवगृहमें उसी घृतका दीप जलाते हैं। उपदेवताके उपद्रव या कुलोककी चेष्टासे इस घीके बिगड़नेकी बात है। इसीसे मन्थनदण्डके मस्तक मक्खन पर 'भूतखेत' वृक्षकी डाल रख देते हैं। यह समय समय पर्वत पर वा जलाशयके तीर स्थानीय उपदेवताकी सन्तुष्टिको घृत जलाते और प्रार्थना करते हैं—आप अन्यान्य उपदेवताओंके हाथसे हमारे पश्वादिकी रक्षा कीजिये।

यह लोग देवरोष वा उपदेवताके उपद्रवसे बहुत डरते हैं। इनमें बहुतसे शायद कुहुक-विद्याके पारदर्शी हैं। साधारण उनसे कुछ भय भक्ति रखते हैं। कोलियोंके विश्वास हैं—क्या पुरुष, क्या स्त्री, क्या शिशु, क्या पशुको जो रोग दुःख, विपद्, दुर्घटना प्रभृति झेलना पड़ता, देवताके क्रोध वा उपदेवताके उपद्रव का फल है। ऐसा होने पर यह कारण निरूपणार्थ 'देवरुषी' (ओझा, झाड़फूंक करनेवाला)-के निकट गमन करते हैं। पीड़ितके आत्मीय बन्धुबान्धव किसी देवरुषीको बुला लाते और उसे देखाते हैं। वह पहले पहले अनारका एक फूल और एक मुर्गा लेकर रोगीके मस्तकको चारो ओर घुमाते हैं। इससे रोग दूर न होने पर बड़े ठाट बाटसे शान्ति कार्यका अनुष्ठान किया जाता है। प्रथम दिन देवरुषी रोगीकी अवस्थाका पुङ्खानुपुङ्ख अनुसन्धान लगाते और दूसरे रोज आकर बताते हैं —कि भवानी, हीरोबा या खंडोबा तुमपर क्रुद्ध हुए हैं; अच्छे प्रकार उनको सन्तोष कर पूजादि दे दो। पीड़ितके घरवाले आयोजनके निमित्त सप्ताह वा पक्षकाल समय प्रार्थना करते हैं। देवरुषी रोगीकी अवस्था देखभाल अवसर देते हैं। फिर निर्दिष्ट दिनको ३ या ४ भेड़ लाकर रखते और सोमवारको सन्ध्याकाल दो-तीनको बलि करते हैं। यह बलि भैरव और खंडोबा देवताके उद्देश दिया जाता है। रातको 'गोंधाल' नृत्यगीतादि करते हैं। आत्मीय स्वजन उस दिवस बुलाये जाते और वही मांसादि खाते हैं। दूसरे रोज सवेरे देवरुषीके आदेशसे निर्दिष्ट मुहूर्त पर बाकी भेड़ हीरोबाके उद्देश्य बलि देते हैं। इस समय गांवके लोग दर्शक रूपसे उपस्थित होते हैं। स्त्रियोंको उस स्थान पर रहने नहीं देते। कोलियोंको विश्वास है कि स्त्रियोंकी छायासे बलिका द्रव्य अपवित्र हो जाता है। गृहदेवताके सम्मुख बैठ कर देवरुषी एक अग्निकुण्ड जलाते हैं। इस अग्निमें बलिमांसके थोड़े विच्छिन्न अंशसे नानाविध खाद्य प्रस्तुत किया जाता है। अवशिष्ट मांस अन्यत्र पका करता है। इतिमध्य ढोल बजनेके साथ साथ देवरुषी समस्त शरीर हिलाते, शिखाका ग्रन्थि खोल देते हैं। शेषको मानो अवसन्नताका रूप लाते हैं। इससे सब लोग समझते कि हीरोबा देवता उन पर भर किये है। यह अवस्था आने पर वाद्यादि बंद हो जाते, सकल दर्शक स्थिर भावसे टकटकी लगाते हैं। उसके बाद देवरुषी एक हाथमें हीरोबाकी प्रतिमा मयूर पुच्छ द्वारा सजा और हलदीकी बुकनी लेकर अग्निकी चारो ओर चक्कर लगाते और बीच बीच उसी कटाहमें हलदीकी बुकनी छोड़ते हैं। फिर वह कड़ाहका थोड़ा उष्ण तेल किसी बर्तनसे निकाल आगमें ढाल देते हैं। अवशिष्ट तेलमें मांसादि भून उपस्थित लोगोंको परिवेशन करते (परोसते) हैं। यदि देवरुषीके हाथमें तेलकी उष्णता अधिक लगती, तो यह बात समझ पड़ती कि देवताके रोषकी शान्ति नहीं हुई। ऐसे स्थलपर फिर आदिसे समस्त कार्य करना पड़ता है।

कोलि दुरस्थ आत्मीय हैं, पलायित गो और अपहृतद्रव्यका संवाद प्राप्त करनेको सर्वदा देवरुषीका साहाय्य लेते हैं। इनके कथनानुसार कृकलास (गिरगिट)-के लाङ्गूलमें अवर्ण्य गुण होता है। शुक्रवारको रातमें इस जीवको पकड़ शनिवारको प्रातःकाल मारकर लाङ्गूल ग्रहण करते हैं। इस लाङ्गूलका एक एक टुकड़ा प्रत्येक परिवारमें रख दिया जाता है। यात्राकालमें यदि कोई सामने हरिण, बिड़ाल वा काकको राह काट कर जाते देखता, लौटकर दो एक दिन घरमें रहने पीछे बाहर निकलता है। इसकी अपेक्षा कोई

सामान्य दुर्लक्षण देख पड़ने पर वाम पादकी पादुका (जूती) दक्षिण पादमें पहन कर चले जाते हैं। कोलि जलाशयके तीर जा हाथमें तुलसी वा विल्वपत्र, फाकुन और हलदीकी बुकनी उठा महादेवके नाम पर शपथ करते हैं।

इनके जन्म, विवाह और मृत्युमें तीन उत्सव होते हैं। शिशु जन्म लेनेसे नाड़ी छेदनेके पीछे धात्री सूतिकागृहमें एक गर्त खोद रखती है। फिर शिशुको तेल हलदी लगा प्रसूतिके साथ गर्म पानीसे नहला देते हैं। प्रसूति नववस्त्र पहना कर चारपायी पर लेटायी जाती है। खाटके नीचे बरोसीमें आग रखते हैं। चतुर्थ दिन वह शिशुको स्तन देना आरम्भ करती है। नव शिशुके दर्शनार्थी कई एक विन्दु गोमूत्र पांवमें लगा सोवरमें घुसते हैं। कोलि समझते हैं—ऐसा करने पर कोई उपदेवता उनके साथ उस घरमें जा नहीं सकते। चौथे दिन सवेरे शिशु और प्रसूति दोनों स्नान करते हैं। उसी दिन प्रसूतिको घी या तेलकी पूरियां खिलाते हैं। मध्याह्नको आत्मीय प्रतिवासिनियां शिशु देखने आती और सभी अपना पदधूलि ले शिशुकी चारो ओर घुमा कर प्रायः आधा फूंकसे उड़ा देतीं, फिर चुटकी बजा कर बैठ जाती हैं। यदि शिशु रोने लगता, तो धूप आदि सुगन्धि द्रव्य जलाती और भैरव तथा षष्ठीसे उसका मङ्गल मनाती है। पांचवें दिन एक वृद्धा सूतिकागृहमें किसी चौकी पर सिन्दूर और हलदी लगा रखती है। उस पर एक सुपारी, एक नारियल और निकट ही दूसरी चौकी पर फूलचन्दन रखा जाता है। अन्तको षष्ठी देवीकी पूजा होती और दाल, भात तथा व्यञ्जन आदिका भोग लगता है। पञ्चम दिनसे ही प्रसूति घृतान्न खानेको पाती है। दश रोज प्रसूति सोवरमें रहती है। ग्यारहवें दिन गृहादि गोबरसे लीपते पोतते और प्रसूति तथा शिशु नहाकर शुद्ध होते हैं। द्वादश दिनको सन्ध्याकाल शिशुका नामकरण होता है। इसी रोज पुरोहित आते हैं। उनको बच्चेके जन्मदिन और समयकी बात कही जाती है। वह पञ्चाङ्ग देख बालककी कोष्ठी प्रस्तुत करके नाम स्थिर कर देते हैं। फिर शिशुको दोलामें लेटाकर सब लोग नवनामसे आह्वान करते हैं। फिर अभ्यागतोंके हाथों पके चने और पान बांटे जाते हैं। फिर बालक या प्रसूति पर उपदेवताकी दृष्टि न पड़नेको दोनोंके काजल लगाते और शिशुके गलेमें काले सूतसे बजरवट्टूके दो काले दाने बांध लटका देते हैं।

पुरुष पचीससे पूर्व और स्त्रियां बारहसे १६ वर्षके मध्य विवाहित होती हैं। वरके पक्षसे विवाहका प्रस्ताव उठता और कन्यापण स्वरूप १५) से २०) रु० तक देना पड़ता है। बहुतसे गरीब कोलि इतना धन संग्रह न कर सकनेसे आजीवन अविवाहित रहते हैं। अविवाहित बालक मरजानेसे 'आटवय' (विवाहयोग्य वयसीय) कहलाता है। कोई विवाह होनेसे पहले इन आटवयोंके प्रेतात्माका तुष्टिसाधन करना पड़ता है। नहीं तो दुलहिन बन्ध्या हो जानेका प्रवाद है। इनके तुष्टिसाधनका आयोजन इस प्रकार है—कोई स्त्री एक थालमें हलदी, सुपारी, ज्वार और एक प्रदीप ले आगे चलती है। इसके मस्तक पर चंदोवा लगाया जाता है। इस स्त्रीके पश्चात् किसी व्यक्तिके स्कन्ध पर एक बालक नङ्गी तलवार ले चीत्कार करते करते चलता है। फिर यह लोग किसी प्रतिष्ठित पत्थरके पास पहुंच उसको सिन्दूरसे भूषित करते और उक्त सकल द्रव्य उसके सम्मुख रखते हैं। इसी प्रस्तरमें आटवयोंके प्रेतात्माका आविर्भाव और उपहार द्रव्योंका ग्रहण कल्पित होता है।

समान देवक या एक कुलमें कोलियोंका विवाह कम होता है। मातृपक्षके देवकसे कन्या वा वरका देवक मिलनेमें बाधा नहीं। सम्बन्ध स्थिर हो जाने पर वरके पिता किसी शुभ दिन एक वृद्धको भेज पूछ लेते हैं—इस विवाहमें कन्याके पिताकी सम्मति है या नहीं। सम्मति मिलने पर वरकन्या दोनोंके पिता मिल कर किसी दैवज्ञके पास पहुंच उनके पञ्चाङ्ग पर पान सुपारी रख कर प्रणाम करते हैं। वह पात्रपात्रीका नाम पूछ कर बता देते हैं—विवाह कर देनेसे शुभ होगा या अशुभ। दैवज्ञके सम्बन्धको दूषित बताने पर विवाह रुक जाता है। अन्यथा दोनों वर लौट जाते और किसी अन्य वृद्ध व्यक्ति द्वारा कन्यापणादि ठहराते हैं। उसके बाद किसी दिन मंगनी होती है। अर्थात्

पात्रके पिता, जितना द्रव्य देनेको स्वीकृत हुए, कन्याके पिताके निकट लेकर पहुंचते और उनको वह उपहार दे उनकी कन्याका वधूरूपमें प्रार्थना करते हैं। फिर उसी दिन वरके पिता आत्मीय स्वजनोंको लेकर कन्या देखने जाते और उसे नववस्त्र तथा अंगिया दिलाते हैं। वहां कन्यापक्षके भी कुछ लोग उपस्थित रहते हैं। कन्या नववस्त्र पहन गृहदेवताको सुपारी चढ़ा प्रणाम कर भावी श्वसुरके सम्मुख जाकर बैठती है। वरके पिता इसी समय उसके कपाल पर सिन्दूर चढ़ाते हैं। कन्या उन्हें प्रणाम कर उठ जाती है। वरपक्षीय कन्याके घरमें आहारादि करते हैं। फिर किसी दिन दैवज्ञके निकट जा विवाहका दिन ठहरा आते हैं। विवाहके दिन प्रातःकाल वरकन्या दोनोंके घर ५ सधवायें जा घरके ठीक सामने आटेसे एक चतुरस्र मण्डल चिह्नित कर उसके मध्यस्थल पर दो सिलवट्टे रखती हैं। उसके पीछे सुहागिनें एक कपड़ेमें हलदी और दूसरेमें एक सुपारी बांध सिलमें हलदी बंधा और लोढ़ेमें सुपारी बंधा कपड़ा लगा ऐपन बांटती हैं। इस एपनके नीबू-जैसे पांच गोले बनाये जाते, जो 'उन्दास' कहलाते हैं। फिर वर और कन्याको हलदीका उबटन लगा नहला प्रत्येक सुहागिन वरकन्याके हाथसे एक एक उन्दास ले चल देती है। इसके बाद दोनों घरोंसे एक एक पुरुष आम्रशाखा और एक एक स्त्री अन्नव्यञ्जनादिका थाल ले मारुतिदेवके मन्दिर जाती है। यात्राकालको इनके मस्तक पर श्वेतवस्त्रका चंदोवा लगा लेते हैं। चलते समय पुरोहित शाखावाही पुरुष और अन्नवाहिनी स्त्रीको गांठ जोड़ देते हैं। मारुतिके मन्दिरमें पहुंच आम्रशाखा एवं अन्नादि रख कर प्रणाम और नवदम्पतीकी कुशल प्रार्थना करते हैं। फिर देवताको सुपारी और पैसा भेंट कर आम्रशाखा उठा चले आते हैं। सकल वंशोंके लोग आम्रशाखा नहीं ले जाते। भिन्न भिन्न गोत्रमें भिन्न भिन्न वृक्षको शाखा चलती है। यह वृक्षशाखा ही कोलियोंका कुलचिह्न है। लौटते समय भी वाहकोंके शिर पर चंदोवा रहता है। साथमें बराबर बाजे बजा करते हैं। मन्दिरसे आ आम्रशाखाको मण्डल मध्यस्थ लोढ़ेके साथ बांध कर रख देते हैं। यही कोलि-विवाहके अधिष्ठातृ-देवता हैं। पुष्पचन्दनसे देवताकी पूजा होती और अन्नव्यञ्जनादि द्वारा भोग लगता है। उभय पक्षोंके आत्मीय स्वजन आहारादि करते हैं। सन्ध्याकालको वर मौर सिर पर रख घोड़े चढ़ कर बरातियोंके साथ कन्याके घर जाता है। वरकी भगिनी पीछे घोड़े पर बैठ उसके मस्तकपर पूर्ण घट रखती है। घटके पर एक नारिकेल रहता है। कन्याके ग्राम पहुंच वहांके मारुति-मन्दिरमें वर अपने दलके साथ अवतरण करता है। वरका अविवाहित भ्राता उसके अश्व पर बैठ कन्याके घर जाता है। इसी समय एक सधवा वरप्रदत्त कन्याका कपड़ा ले उसके घर पहुंचती है। वह कन्याका वेश परिवर्तन करके कपाल पर सिन्दूर चढ़ा देती है। वरका भ्राता वहांसे लौट आता और अपने साथ कन्याके पिताको भी लाता है। उस समय कन्याका पिता वरको एक पगड़ी देता है। वह उसे बांध गाजेबाजेके साथ बरातियोंको साथ लेकर कन्याके घर पहुंचता है। द्वार पर उपस्थित होनेसे कन्याकी माता निकल उसकी आरती उतार पैर धुला देती है। फिर उसको ले जाकर मण्डलके मध्य उसी सिलवट्टेके निकट मट्टीकी वेदीके पास चौकी पर पूर्वमुख खड़ा करते हैं। कन्याको वरके सम्मुख पश्चिममुख खड़ा होना पड़ता है। दोनोंके बीच श्वेतवस्त्रका एक अन्तराल (परदा) डाल दिया जाता है। पुरोहित विवाहके मन्त्रादि पढ़ा करते हैं। शुभ क्षणको वह वस्त्र बीचसे खींच लिया जाता है। उस समय बाजे बजने लगते और वरकन्याको स्वामी स्त्रीरूपमें गण्य करते हैं। फिर वेदीके निकट एक चटाई पर वरके वामभाग कन्याको बैठाल दोनोंके वस्त्रप्रान्तमें गांठ लगा देते हैं। उसके पीछे वेदिपर पुरोहित होम करते हैं। वरकन्या गृहदेवताको नारिकेल भेंट कर गुरुजनोंको प्रणाम करते हैं। फिर उनका गंठबन्धन खोल दिया जाता है। इस समय पुरोहितको उभय पक्षोंसे दो-दो तीन-तीन रुपये मिलते हैं। दूल्हा दुलहन आहार करके इसी घरमें रहते हैं। बराती आहारादिके पीछे जनवासे चले जाते हैं। दूसरे दिन सबेरे वरकन्या हलदीका उबटन लगा उष्ण जलसे स्नान करते हैं। सन्ध्या-

कालको फलदान होता है। जनाती बाजा बजाते और बरातियोंको खालय लानेके लिये बुलाने जाते हैं उसी समय वरके पिता वहूको नववस्त्रादि और अलङ्कारादि दिया करते हैं। फिर वरके बायें कन्याको बैठाल वरकी बहन दोवारा दोनोंके वस्त्राञ्चल बांध और वहूके गोदमें चावल, ५ नारियल, ५ पान, ५ सुपारी, ५ छोहारे और ५ गांठ हलदी डाल देती है। पुरोहित आकर दोनोंके कपाल पर सिन्दूर तथा धान चढ़ा आशीर्वाद करते हैं। फिर उभयपक्षीय उपस्थित आत्मीय इसी प्रकार रोचना और चावलसे आशीर्वाद करते तथा एक एक पैसा दोनों पर न्योछावर कर किसी दोनेमें रखते चलते हैं। इसके पीछे कन्यापक्षके मुखिया साध्य होनेसे सबको खिलाते पिलाते, नहीं तो केवल दूल्हा दूल्हनको भोजन करा जमाताको एक धोती पहना देते हैं। विवाहके पूर्व वरका जो मौर रहा, उसके बदले दूसरा मौर शिरपर रख वरकन्या अश्वारोहणसे दूल्हाके घरको चला करते हैं। घर पहुंचने पर वरकर्ता सबको खिलाते पिलाते हैं। दो व्यक्ति वरकन्याको स्कन्ध पर बैठाल युवनृत्य (झंडो नाच) किया करते हैं। इस नाचके पीछे मौर उतार लेनेसे विवाहकाण्ड समाप्त हो जाता है।

विधवाविवाहमें स्त्रियां स्वयं पतिनिर्वाचन करके आत्मीय स्वजनोंकी अनुमति लेती हैं। यदि वह सम्मत हो जाते, तो पुरोहित दिन स्थिर करके रातको अन्य सकलके निद्रित रहते विधवाके घर पहुंच पात्रपात्रीको चौकमें बैठाल विवाह कर आते हैं। पात्रके साथ कुटुम्बके दो एक पुरुष रहते हैं। पात्रीके पक्षकी भी दो एक स्त्रियां जागा करती हैं। पुरोहित सुपारीमें गणपति और पूर्ण कुम्भमें वरुणकी पूजा करके दूल्हादुल्हिनको गांठ जोड़ देते हैं। वर वधूकी गोदमें फल दान करता है। फिर पात्रपात्रीके प्रणाम करनेसे पात्रीके कपाल पर पुरोहित सिन्दूर लगाते हैं। विधवा विवाह हो जाने पर तीन दिन किसी सधवा स्त्रीको अपना मुख दिखाने नहीं पाती। इस विवाहके बाद यदि पात्रपात्रीमें कोई पीड़ित होता, तो वह दैवज्ञसे परामर्श लेता है। वह प्रायः कह देते कि उसके पूर्वस्वामीने विरक्त हो कर यह अनिष्ट लगाया है। इस पर विधवा आत्मीय स्वजनोंको भोज देती और पूर्व स्वामीको एक मूर्ति अङ्कित करके ताम्रपुटमें रख अपने कण्ठमें बांध लेती या गृहदेवतावोंमें रखा करती है।

कन्या प्रथम ऋतुमती होनेसे तीन दिन अशुचि रहती है। चौथे दिन वह नहाती, फिर उसकी गोदमें चावल और नारियलसे भरी जाती है।

कोलि शवदाह नहीं करते, वे उसको गाड़ देते हैं। अशौच काल १० दिन रहता है। मृत्युके आसन्नकाल पुत्र वा पत्नी पीड़ितके मुखमें तुलसीपत्रसे कई बूंद जल डाल देते हैं। रोगीके मरते ही स्त्रियां उच्चैःस्वरसे रोने लगतीं; आत्मीय स्वजन जा कर शोकप्रकाश करते हैं। घरके बाहर उसी समय मृत्पात्रमें अन्न और एक पात्रमें उष्ण जल प्रस्तुत किया जाता है। फिर लाशको घरसे बाहर निकालते और दक्षिणको पैर रखके लेटा देते हैं। इसके पीछे मस्तमें घी लगा पूर्वोक्त उष्णजलसे नहलाते और नूतन श्वेतवस्त्रसे देह आच्छादित करके उसको अरथी पर चढ़ा देते हैं। मृतका पुत्र गलेमें उत्तरीय लपेटता है। फिर आच्छादन वस्त्रपर रक्तवर्ण सुगन्धि द्रव्य छिड़क कपड़ेके एक कोणमें पूर्वोक्त अन्नका कियदंश बांध देते हैं। मृतका पुत्र वाम हस्तमें अवशिष्ट अन्न और दक्षिण हस्तमें जलती लकड़ी या कण्डेकी आग ले शवके साथ जाता है। चार निकट आत्मीय शवको वहन करके नदीके तीर समाधिक्षेत्रमें उपस्थित होते हैं। वहां जाकर मृतका पुत्र अन्नभाण्ड और अग्निभाण्ड तोड़फोड़ कर उसकी कालिख अपने मुखमें हस्तके पृष्ठभागसे लगा लेता है। राहमें एकस्थल पर ३ खण्ड प्रस्तर पर शवको उतार पीछेके लोग सामने आ कंधा बदलते हैं। समाधिस्थानमें गड्डा खोद शवको चित लेटा देते हैं। मृतका पुत्र स्नान कर एक घड़ा पानी लाता और शवके मुंहमें थोड़ा पानी डाल चारो ओर मट्टी छोड़ता है। दूसरे लोग गड्ढेको पूरते हैं। फिर मृतका पुत्र जलका कलस लेकर तीन बार समाधिप्रदक्षिण करता है। हर बार घूमते समय एक व्यक्ति घड़ेमें छेद कर देता, अखीरको तोड़ डालता है और लड़का घड़ेका बचा हुवा हिस्सा अपने पीछे

फेंक उलटे हाथ अपने मुंह पर चोट करता है। उसके बाद सब लोग नहा कर घर आते हैं। लाश बाहर हो जाने पर औरतें सारा मकान गोबरसे लीप डालती हैं। जहां मृतने देह छोड़ा, फर्श पर एक दीया जलाते और चावलका आटा फैलाते हैं दीपक एक टोकरासे ढांप दिया जाता है। मृतका पुत्र लौट आ कर ताम्र पात्रमें जल लेता और दूसरे शववाहकोंके हाथ पर डाल देता है। वह लोग उस पानीको लड़केके ऊपर छोड़ अपने अपने घर जाते हैं। इसके बाद लक्ष्य करके देखते हैं—उस दिन जहां चावलका आटा छोड़ा गया था, किसी जीवके पैरका निशान लगा है या नहीं। यदि किसी जानवरके पांवका दाग पाते, तो समझ जाते हैं—कि मृत व्यक्तिने देह छोड़के सूक्ष्म शरीर धारण किया है। फिर मृत व्यक्तिके परिवार एरण्डके डण्ठलमें गोमूत्र भर लेते और मृतके उद्देश चार गोधूम पिष्टक उठा समाधिक्षेत्रकी ओर अग्रसर होते हैं। राहमें जहां कंधा बदला था, दो पिष्टक और अवशिष्ट दो पिष्टक तथा गोमूत्र समाधि पर फेंक देते हैं एक पिष्टक पांवकी ओर दूसरी शिरकी ओर डाली जाती है। समाधिको कंटीले पेड़की डालसे ढांकते हैं, जिसमें शृगालादि शवको खोद कर निकाल न सकें। दशम दिन मृतका पुत्र नापित और पुरोहितको साथ लेकर समाधिक्षेत्र जाता है। वहां पहुंच वह स्नान करके चौरी होता और दोबारा फिर नहा कर ११ आटे और १२ चावलके पिण्ड बनाता और हलदी, तिल तथा सिन्दूरसे पिण्डपूजा करता और पिताके उद्देश प्रणाम करके उनकी तृप्तिके लिये काकोंको पुकार कर पिण्ड खिलाता है। काकके पिण्ड ग्रहण करनेसे समझते कि मृत व्यक्तिका पुनर्जन्म हुवा और वह सुखी है। यदि काक पिण्ड नहीं खाता, तो समझा जाता कि मृत-व्यक्ति प्रेतयोनिमें पड़ विरक्त और उद्विग्न हो रहा है। कौवेके न आनेसे यह कह कर मृतव्यक्तिके प्रेतात्माको सन्तुष्ट करनेकी चेष्टा की जाती कि आत्मीय स्वजन उसके परिवारके रक्षणावेक्षणका भार अपने ऊपर ले लेंगे। यदि किसी प्रकार कौवा पिण्ड ग्रहण नहीं करता, तो उन्हें गायको खिलाते या नदीमें फेंक सब लोग नहाकर घर चले आते हैं। उस दिन फिर मकान गोबरसे लीपापोता जाता है। त्रयोदश दिवस अनाहूत स्वजातिवर्गको खिलाते हैं। किसी अपुत्रकके मरने पर दशम दिन नहीं, मृत्युके पीछे प्रथम अमावास्याको दश पिण्ड देते हैं। सधवाका मृत देह हरे कपड़े और अंगिया आदिसे सजा हाथमें हरी रंगकी मोमी चूड़ियां पहना सिन्दूरसे मांग भर कर गोदमें चावल और नारियल डाल प्रोथित करते हैं। विधवाका देह पुरुष-देहकी भांति गाड़ देते हैं।

कोलियोंका सामाजिक विवाद पञ्चायतसे मीमांसित होता है। पहले महादेव कोलियोंकी गोचाधि नामक पञ्चायत रही। उसमें सभापति, सहकारी, बरकन्दाज, चोबदार, गवाक्षिबन्धक और मृतपात्रापहारक छह काम करनेवाले रहते थे। यह सभी पद वंशगत होते थे। जुन्नारके प्रधान कोलि नायकके नीचे काम करते थे। सभापति ही विचारकर्ता रहे। सहकारी विचार कार्यमें सहाय्य करता और सभापतिकी अनुपस्थितिमें स्वयं विचारक बनता था। बरकन्दाज गांव गांव लोगोंका आचार व्यवहार देखते घूमा करते थे और भ्रष्टाचारीको विचारकर्ताके सम्मुख पकड़ ले जाते थे। चोबदार अम्बर वृक्षकी डाल ले विचार अग्राह्यकारी लोगोंके द्वारपर रोपण कर देते थे। गवाक्षिबन्धक मरी गायकी हड्डियां ले अपराधीके दरवाजे पर बांधते थे, जिससे वह फिर स्वजातिकी सहानुभूति पा न सकता था। मृत्पात्रापहारक अपराधीके गृहादिकी पवित्रताके अभिधानका तत्त्वावधान करते और मृद्भाण्डादि लेकर चल पड़ते थे। यदि जारज सन्तानोंकी माताका स्वामी उनके लेने पर राजी हो ४०) ५०) रुपये खर्च करके स्वजातिके मध्य वृहद् भोज देता, तो वह इनको समाजमें मिला लिये जाते हैं। पूर्वोक्त सभापति, नायक या पटेलकी अनुज्ञासे अन्य जातीय स्त्रियां कोलि जातिमें गण्य हो सकती हैं। अहमदनगरमें इस प्रकारकी पञ्चायतका कोई प्रतिनिधि नहीं, किन्तु तदनुरूप कार्य होता है। यहां अपराधीको उसके अपराधके लिये अपने ग्राममें प्रत्येक गृहसे थोड़ा थोड़ा घी मांग लानेको कहते हैं। यह

न करनेवाला जाति बाहर कर दिया जाता है।

कोलि पुरुष 'नरली' नामक एक पूर्णिमाको समुद्रकी पूजा करके नारिकेल प्रदान करते हैं। नयी नाव चलाते समय स्त्रियां उसके पतवार पर नारियल तोड़ती हैं। स्त्रियां समुद्रपूजाके दिन गौरीपूजा करती हैं।

कोलि देशीयों और नायकोंके अधीन डाका डालते थे, पहले ऐसे डाकुओंका दल असंख्य रहा। शिवजीका प्रथम महाराष्ट्र-सैन्य ऐसे ही डाकुओंके दलसे संगृहीत हुवा था। १८७९ ई०कोभी उस दिन कृष्ण सबला और तत्पुत्र मारुति सबला नामक कोलिसरदारोंके डाकू दलने जेमरी, धमरी, मिरूर आदि स्थान एक-बारगी ही उत्सन्नप्राय कर डाले थे। अखीरमें मेजर डेनियल पूनासे अश्वारोही सैन्य ले जाकर बड़े कष्टमें अनेक बार लड़नेके पीछे इन्हें दमन कर सके।

पूना कोलियोंके कुलमें काम्बले, मोड़ और बाघले नामक ३ अतिरिक्त वंश देख पड़ते हैं। यह कोल देवदेवी व्यतीत कालके, जन्नी और जोके नामक देवताओंका पूजते और काशी दर्शनको भी जाते हैं। इनमें विवाहके समय दैवज्ञ द्वारा विवाहकी बातचीत और तिथि स्थिर होने पर २।३ दिन पीछे वरके घरकी स्त्रियां कन्याके घर गुड़, दाल, पान, और सुपारी लेकर पहुंचती हैं। इन चीजोंके कन्याके गृहदेवताके सम्मुख रखने पर कन्यापक्षसे उन्हें वंशमर्यादानुसार शक्कर और पान मिलता है। इनमें गात्रहरिद्रा और विवाह विभिन्न दिन होता है। गात्रहरिद्राके समय मण्डलमें वरके निकट उसकी भगिनी बैठती है। वह सम्मानपात्री कहलाती है। उसके बाद धानादरेती होती है और फिर मांड़ेकी दूसरी बगलमें कतारकी ३ चौकियां लगाते हैं। इन चौकियों पर वरकी माता, वरका पिता और वर बैठता है। उस समय वरके पिताको वरमावल और वरकी माताको वरमावली कहा जाता है। एक स्त्री उनके सामने दीया जला और थालमें रोली, पान, सुपारी, बदाम और चावल लगा रख देती है। यह सब वरके सामने रखना पड़ता है वरकी माताके ठीक सामने मांड़ेकी खूंटी पर सिकहरमें रख कर एक नारियलके साथ पूर्णकुम्भ लटकाते हैं। पुरोहित मन्त्रपाठ करके सबके मस्तकमें रोली और चावल लगा पिता और माताके वस्त्राञ्चलकी गांठ जोड़ देता है। एक स्त्री कोई कुल्हाड़ी, दालकी एक बड़ी और एक पापड़ लाकर कुठारके साथ एकत्र बांध वरके पिताके हाथ पर रखती है। वह इसे कंधे पर डाल मांड़ेसे बाहर निकलता, पीछे वरकी माता उस प्रज्वलित प्रदीपको थालमें ले गमन करती है। फिर वरका पिता इसी कुठारसे अम्बर पेड़की एक डाल काटता है। वही शाखा मांड़के मध्य रोपित होती है।। पुरोहित मन्त्रपाठ करके डालको हलदी और रोलीसे रंगते और वरके पिता भी इस काममें उनका साथ देते हैं। पीछे भोजनादि होता है। सन्ध्याकालको वरके घरसे पुरुष और स्त्रियां कन्याके लिये गहना, नारियल, सुपारी, ५ पान, छुहारा, बादाम, एक थालमें प्रज्वलित प्रदीप और एक कटोरीमें बंटी हलदी ले बाजा बजाते उसके घर जाते हैं। स्त्रियां भीतर जाकर बैठती हैं। फिर कन्याको यही हलदी लगा, मङ्गल-सूत्र पहना मण्डलमें ले जा कर बैठाती हैं। वरपक्षीय पुरुष उसको कुछ फलादि दान करते हैं। इसका नाम 'अतिभरण' है। वरपक्षीय चीनी और सुपारी खा कर चले जाते हैं। इसके दूसरे दिन प्रातःकाल वरके घरमें मांड़े पर एक चतुरस्र मण्डल बना उसके चारो कानों पर चार पूर्णकुम्भ स्थापन करते हैं। उसके बीचमें वर पीढे पर बैठता है। वरकी भगिनी उसके पीछे खड़ी हो हाथ चित करके उसके शिर पर रखती है। ४ या ५ सुहागनें गीत गाते गाते उनका प्रदक्षिण करतीं और पूर्णकुम्भका जल वरकी भगिनीके हाथ पर डाल वरके मस्तक पर छोड़ती है। चारो कलसियोंका पानी चुक जाने पर वर कपड़े उतार घरमें जाता है। गृहके मध्य ५ चतुरस्र मण्डल अङ्कित कर रखते हैं। वर पाटे पर बैठता है। भड़भूंचा ठोकरेमें फूलोंके हार लगा उसके सामने रखता है। एक मुट्ठी सन और पान किसी छड़में बांध ५ स्त्रियां उसको पकड़ कर गीत गातीं और उस छड़को तेलमें डुबा जलातीं और एक बार जमीन, एकबार टोकरे एक एक बार गृहदेवताके नाम पर कुछ चीजों और

अखोरको वरके मत्थे पर अटकाती हैं। फिर वर दूसरे चौकमें बैठ बाल बनवानेको तैयार होता है। नापित आकर स्त्रियोंसे कहता है—वरके मस्तकमें रोचनाचत लगा आशीर्वाद करो। स्त्रियोंके वैसा कर चुकने पर वह वरके बाल बना देता है। फिर उक्त चारो सधवायें वरके मत्थे पर एक पैसा उतार चार भरे घड़े ले गीत गाते गाते पानी भरने जाती हैं। इसी बीच वेदि पर एक स्त्री कोई चतुरस्र आलिम्पन करती है। सुहागिनें उक्त आलिम्पनके चारो कोणों पर जलकी चार कलसियां और उसके बीचमें एक सिल रखती हैं। पूर्णकुम्भोंके गलेको घेर कर लाल डोरा बांध दिया जाता है। स्त्रियां गीत गाते रहती हैं। वर स्वीय भगिनीके साथ जाकर पांच बार आलिम्पन प्रदक्षिण करता है। फिर सिल पर बैठ जाता है। इसके पीछे दोबार वरको नहलाते हैं। चोरी व्यतीत कन्याके घरमें भी सब ऐसा ही होता है। फिर वर पोशाक पहन घोड़े पर चढ़के विवाह करने जाता है। पूनामें बराती मन्दिरमें नहीं ठहरते, कन्याका गृह निकटवर्ती होने पर पुरोहित भेज कन्यापक्षको सतर्क होनेके लिये कहते हैं। पीछे कन्याका भाई नारियल हाथमें ले सबको अभ्यर्थना करता और शेषमें वरके निकट उपस्थित हो कान पकड़ता और परस्पर प्रेमालिङ्गन चलता है। कन्याके दरवाजे पर प्रवेश-पथ सूतसे रुका रहता है। वर छुरीसे सूतको काट प्रवेश करता है। कन्याका पिता आ वरके पावों पर तेल और पानी डाल वेदी पर ले जाकर उसे बैठाता है। फिर एक चौकमें कांसेकी थाली पर वरको खड़ा होना पड़ता है। उसके सामने कांसेकी दूसरी थाली रहती है। कोई दैवज्ञ पानी-घड़ी देखा करते हैं। (किसी पूर्ण जलपात्रमें मध्यविध आकारकी एक कटोरी तैरा देते हैं कटोरीके पेंदेमें बारीक छेद रहता है। इस छेद पानी पहुंचने पर जब कटोरी डूब जाती, शुभघड़ी आती है।) कन्याको लाकर उसी जगह खड़ा करते हैं। उभय पक्षीय व्यक्ति अक्षत हाथमें ले चारो ओर घेर कर खड़े हो जाते हैं। पुरोहित मन्त्र पढ़ा करते हैं। फिर पानी-घड़ीमें शुभक्षण निकलने पर पहले पुरोहित और पीछे आत्मीय अक्षत छोड़ आशीर्वाद करते हैं। दूसरे दिन वरकन्या सुपारी ले जना-पूरा खेलते और दोनों वरके घर पहुंचते हैं। दूल्हाकी बहन दरवाज़ा रोक कर खड़ी होती है। वह भीतर जानेकी इच्छा प्रकट करता है। बहन कहती है—अपनी कन्याके साथ यदि मेरे पुत्रका विवाह करनेको कहो, तो मैं तुम्हें भीतर घुसने दूंगी। वर स्वीकार करने पर प्रवेश करने पाता है। फिर वरकन्या परस्पर एक दूसरेका नाम लेकर पुकारते हैं। अन्तको भोज हो कर विवाहका व्यापार शेष हो जाता है।

पूना जिलेमें कोलि शवदाह करते हैं। अन्यान्य बातें अहमदनगर-जैसी ही हैं। शोलापुरके कोलियोंका विवाह व्यापार कुछ भिन्न होता है। इस प्रकारका पार्थक्य स्थानभेदसे ही पड़ता, नहीं तो सब कुछ प्रायः एकरूप ही रहता है।

कोलि (वा व्याघ्रपुर)—एक प्रसिद्ध स्थान, यह दोआबके अन्तर्गत गोरखपुरके पास बस्ती नगरसे ३॥ कोस उत्तर-पश्चिम कुनाव नदीके तीर अवस्थित है। यहां नदी पूर्वदिक्को मुड़ गयी है। वहीं वराहक्षेत्र भी है। नदी अपनी गतिसे इस जगह एक ह्रद-जैसी बन गयी है। दूसरी भी झील-जैसी एक खाड़ी है, परन्तु उसमें जल नहीं है। मालूम होता—पहले इन्हीं दोनोंके मिलित होनेसे एक ह्रद बना था। यह उत्तर-पूर्व और दक्षिण-पश्चिम प्रायः पावकोस और उत्तर-पश्चिम तथा दक्षिण-पूर्व प्रायः पावकोस होगा। इससे उत्तर और पश्चिम दिक् जङ्गलसे घिरो पार्वतीय भूमि है। उसके भीतर दो और तीन गांव बसे हैं। इसीको उत्तर-पश्चिम और पूर्वकालको व्याघ्रपुर था। आजकल उसका भग्नावशेष मात्र देख पड़ता है। टूटी ईंटें और खपड़े बिखरे पड़े हैं। इस समय भी स्थान स्थान पर जंगल काटनेसे कोलिका भग्नावशेष मिलता है।

यहां एक पुष्करिणी (तलाव) है। उसे वराहक्षेत्र कहते हैं। सरोवरके पार्श्वमें वराह अवतारका मन्दिर है। पुष्करिणी नदीके पार्श्वभागमें लगी है। नदीके साथ उसका योग रहना असम्भव नहीं। सरोवर

अत्यन्त गभीर है। यहां लोग उसे अतलस्पर्श कहते हैं। तलावका उपरिभाग गोलाकार है, तीन ओर ऊंची सिड्डियां हैं। पश्चिम ओर ऊंचा पहट नहीं, सिर्फ जमीन ढलवां हो कर घाट-जैसी बन गयी है। पुष्करिणी-के उपरिभागसे एक नाला निकल नदीमें जा गिरा है। इस सरोवरके उत्तर तीर किसी पुरातन गृहका चिह्नस्वरूप इष्टक राशि है। यहां बेंकतका चतुष्कोण एक भग्न मन्दिर पड़ा है। उसमें एक लिङ्गमूर्ति प्रतिष्ठित है। चतुष्कोण प्रस्तरका मध्यस्थल कटा है। स्तूपके उपरिभागमें इस प्रकारके प्रस्तरखण्ड देख पड़ते हैं। पुष्करिणीको दक्षिण ओर कतारोंमें वृक्षश्रेणी है। उसके भीतर इष्टक निर्मित एक आधुनिक मन्दिर विद्यमान है।

नदी जहां दक्षिणमुखी हुई, मृत्तिकानिर्मित अति उच्च चतुष्कोण दुर्ग खड़ा है। यह आजकल जंगलसे भर गया है। कहते हैं—बसतीके राजा लाल साहबने उसे बनवाया था। किलेसे पश्चिम कियद्दूर गमन करने पर एक गांव मिलता है। उसीके निकट एक उपवन और कई सरोवर हैं। इस जगह चूनेके कामके तीन टूटे घर पड़े हैं। सम्भवतः—वह सतीस्तम्भ होंगे। पुरातन व्याघ्रपुरका सम्भवतः इसी स्थान पर उपवन (बाग) रहा।

बुद्धदेवकी माता मायादेवीके पिता राजा सुप्रबुद्ध इसी कोलि वा व्याघ्रपुरमें अवस्थान करते थे। किसी समय मायादेवी पितासे साक्षात् करने जा रही थीं। पथिमध्य प्रसववेदना उठने पर लुम्बिनी काननमें शालवृक्षके मूल पर बुद्धदेवका जन्म हुवा। यह स्थान कपिलवास्तु और कोलिके बीचमें पड़ता है।

महावस्त्ववदानमें एक कोल ऋषिका उल्लेख है। मालूम पड़ता—उन्हींके नाम पर इस स्थानका नामकरण हुआ है। कोलिय देखो। यह स्थान वराहक्षेत्रके अन्तर्गत है। इसमें कोई सन्देह नहीं—पहले कोलिमें उपवन और सरोवर-शोभित एक नगर था। कुनाव नदीकी धारा बांध झीलका प्रयोजन साधित हुआ था, जिसमें प्रजावर्गको जलका अभाव न पड़े।

कोलिसे ५ कोस पश्चिमदिक्को भुइलादि वास्तु है। इसके आगे २॥ कोस दक्षिण-पश्चिम बुढ़पाड़ा तथा सरकुइयां नामक स्थान है। सम्भवतः इसी सरकुइयां का वर्णन चीन-परिव्राजक युयेनचुयाङ्गने 'शरकूप'-के नामसे लिखा है। उनकी वर्णना पर हिसाव लगा कर देखनेसे कोलि वा वराहक्षेत्रको शरकूप-जैसा अनुमान असङ्गत नहीं है।

देशके लोग कहा करते हैं—विष्णुके इस स्थानमें वराह अवतारूपमें जन्मग्रहण करनेसे इसका नाम वराहक्षेत्र हुवा है। इसी लिये कोलिमें प्रतिवर्ष चैत्र और कार्तिक मासको दो बार मेला लगता है। इस मेलेमें अनेक यात्री आते हैं।

कोलिकटु—मन्द्राज-प्रदेशके मलबार विभागका एक तालुक। तामिल भाषामें 'कोलि'-का कुक्कुट (मुर्गी) और 'कोटु' शब्दका अर्थ कोट वा गढ़ है। देशीय लोगोंमें कोई 'कोलिकुक्कुभ' और 'कोलिकोट्ट' कहता है। अंगरेजों और विदेशीयोंने उसका अपभ्रंश कालिकट (Calicut)* बना लिया है। इसकी भूमिका परिमाण ३२६ वर्गमील है। एक शहर और ३८ गांव इस तालुकके अन्तर्गत हैं। लोकसंख्या प्रायः डेढ़ लाख है। यहां तीन दीवानी और ४ फौजदारी अदालत हैं।

२ उक्त तालुकका प्रधान नगर और बन्दर। यह अक्षा० ११° १५´ उ० और देशा० ७५° ४८´ पू०के मध्य बेपुरसे ३ कोस उत्तर अवस्थित है। यहां हिन्दुवों और मोपला नामक मुसलमानोंकी ही संख्या अधिक है। कहना अनुचित न होगा कि इन्हीं मोपलोंने एक वर्षसे घोर विद्रोह उठा अंगरेजोंकी नाकमें दम कर रखा था। अब बलवा एक तरह दब जैसा गया है, परन्तु पूर्णशान्ति नहीं हुई। हिन्दुओं और मुसलमानोंके एक हो जानेकी बात जगह जगह सुन पड़ते भी उन्होंने सैकड़ों हिन्दुओंको लूट मारा और उजाड़ दिया है। कितने ही हिन्दू मन्दिर विध्वस्त हो गये हैं। मोपलोंने इसके सिवा बहुतसे हिन्दुवोंको बलपूर्वक मुसलमान भी बना डाला है।

अतिपूर्वकालसे कालिकट बन्दर एक प्रधान वाणिज्य

* फिर किसीके मतमें 'कोयिकोड़'से कालिकट शब्दकी उत्पत्ति हुई है। (Sewell's Dynasties of Southern India, p. 57)

स्थान-जैसा विख्यात है। प्रसिद्ध भ्रमणकारी इब्न बतूता प्रभृतिके ग्रन्थपाठसे समझ पड़ता है—चीन, यव, सिंहल, पारस्य (ईरान), मिसर, हवशीदेश आदि नानास्थानोंसे वणिक् कालिकट वाणिज्य करने आते थे। खृष्टीय नवम शताब्दीको इसलाम-धर्मावलम्बी कई सौदागर यहां कारबार करने पहुंचे। उन पर कालिकटके राजा चेरमान पेरुमालकी शुभदृष्टि पड़ी थी। उन्होंने तुर्कस्थानके सुलतानकी कन्यासे विवाह करनेकी आशामें मुसलमान बन अरबके अभिमुख यात्रा की। प्रवाद है—प्रात:कालको कालिकटके तालि-मन्दिरसे जहां तक कुक्कुटका ध्वनि सुन पड़ा था, मनविक्रम सामरीको* वह उतना स्थान देकर चले गये। तदवधि बहु दिन सामरी-राजा यहां स्वाधीनभावसे राजत्व करते रहे। १४८६ ई०को पोर्तगीज परिव्राजक कोबिलहाम् युरोपीयोंके मध्य सर्वप्रथम यहां आये थे। उसके पीछे १४९८ ई०को सुप्रसिद्ध भास्कोडिगामा आ उपस्थित हुये। उस समयके सामरी-राजाओंने प्रथम पोर्तगीज पोताध्यक्षको यहां कोठी बनाने न दी थी, अखीरको वाध्य हो १५१३ ई०में उन्हें कोठी खोलनेका अधिकार देना पड़ा। फिर १६१६ ई०को अंगरेजों, १७२२ ई०को फरासीसियों और १७५२ ई०को दिनेमोंको कोठी कालिकटमें स्थापित हुई।

१६९५ ई०को अंगरेजी सेनाके नायक कप्तान किडने यह नगर लूटा था। १७६६ ई०को हैदरअलीके मलवार आक्रमण करने पर सामरी-राज राजभवनमें आग लगा सपरिवार जल मरे। फिर १७७३ और १७८८ ई०को महिसुरके सिपाहियोंने आक्रमण करके इस नगरको यथेष्ट क्षति की थी। १७९० ई०को अंगरेजी फौज आ कालिकट दबा बैठी। १८१९ ई०को अंगरेजोंने यह नगर फरासीसियोंको सौंप दिया था। परन्तु पीछे फिर अंगरेजोंने उनसे छीन लिया।

* सामरी शब्दके अपभ्रंशसे युरोपीयोंने जमोरिन (Zamorin) निकाला है। 'सामुद्री' (समुद्रपति) शब्द मलयालम भाषामें अपने भाव पर 'तामातिरि' वा 'तामुरि' बन जाता है। इसी तामुरी वा सामुद्रीसे 'सामुरी' वा 'सामरी' नाम बना है।

बहुत दिन कालिकट 'कालिको' नामकी छींटके लिये मशहूर है। परन्तु अब यहां वह तैयार नहीं होती। फिर भी कालिकटचेके नामकी तरह तरहकी छींट बना करती है। सामरी-राज आजकल अंगरेज गवर्नमेण्टके वृत्तिभोगी हैं। कोलिकद्दु तालुकमें उनकी बहुतसी कीर्तियां खड़ी हैं। उनमें कालिकट नगरका वर्तमान सामरी-राजप्रासाद और 'तालि' मन्दिर उल्लेख योग्य है।

सामरी-राजवंशमें विवाह प्रथा नहीं है। राजकुमारीयोंका शैशव अवस्थामें वस्त्रखण्ड बन्धन (तालीजोड़) होता है। पीछे वयस्था होने पर वह 'गुणदोषकारण' सम्बन्ध* स्थिर करके किसी नम्बूत्तिरी ब्राह्मणके साथ सहवास करती हैं। उनका गर्भजात पुत्र बाल्यकालको मातृभवनमें स्त्रीधनसे प्रतिपालित होता है। १४ वर्षका होने पर वह माका घर छोड़ स्वतन्त्र पुरुषगृहमें रहा करता है। स्त्रीधनसे ही उनका भरणपोषण चलता है। किन्तु कुमारीके महलमें फिर जाने नहीं पाता। कुमारियां देवालय दर्शन भिन्न अन्य समय बाहर कम निकलती हैं। इनमें बहुतसी सुशिक्षिता हैं, कोई कोई संस्कृत भी खूब समझती हैं। इनमें वयोज्येष्ठा रमणी ही "रानी" पद पाती हैं। वही राजकुमारीके भरणपोषणकी वृत्ति दिया करती हैं। रानी एक होते भी आजकल तीन रानी-वंश हो गये हैं—'नूतन कोबिलवासी पुदिया', 'पश्चिम कोबिलवासी पतिनहरी' और 'पूर्व कोबिलवासी किशकी'। इन्हीं तीन रानीवंशोंसे सर्वज्येष्ठ राजकुमार 'मनविक्रम सामरी-प्रासाद' में शास्त्रोक्त विधिके अनुसार सामरी (जामरी) पद पर अभिषिक्त होते हैं।

कोलिका (सं० स्त्री०) घण्टाबदर, जङ्गली बेर।

* केरलप्रदेशमें अनेक स्थानों पर यह 'गुणदोषकारण' सम्बन्ध प्रचलित है। कन्या वयस्था होने पर गृहस्वामिनीकी अनुमतिसे किसी मनमाने पुरुषके साथ नियोग कर सकती है, किंवा बड़ी भातासे परामर्श करके किसी नम्बूत्तिरी ब्राह्मण अथवा स्वजातीय उत्कृष्ट वंशके किसी युवाके साथ शुभ लग्नमें सम्बन्ध स्थिर करती है, कन्या भी उसमें अपना मत दे देती है। इसी प्रकारके सम्बन्धका नाम गुणदोषकारण है। नाय्यर शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

कोलिता—१ एक जाति। छोटानागपुरके करदराज्यमें दक्षिणभाग पर इनका वास है। कहते हैं—रामचन्द्र के समय मिथिलासे कोलिता उक्त देशमें गये थे। यह गौरवर्ण हैं। कन्याओंका यौवनावस्थासे पूर्व विवाह नहीं होता। कृषिकार्यसे कोलिता जीविकानिर्वाह करते और अपनेको तासा कहते हैं। तासाका अर्थ किसान है।

२ आसामकी कोई जाति। यह लोग अपनेको कायस्थ भी कहते हैं। फिर इन्हें कुलता भी कहते हैं। इन्होंने एककाल विशेष उन्नतिलाभ किया था। उस समय एशियाखण्डमें इनके समकक्ष अति अल्प ही लोग रहे। (Asiatic Researches, Vol. XVI.) इस वंश के राजा आसाममें विशेष समृद्धिशाली थे।

पहले कोचविहार प्रभृति स्थानोंमें कुलता ही पौरोहित्य करते थे। परन्तु राजा विश्वसिंहके समयसे यह प्रथा कितनी ही उठती गयी। कामरूप देखो।

कोलिया (हिं० स्त्री०) १ गलीकूचा, सङ्कीर्ण मार्ग। २ छोटा और लम्बा खेत।

कोलियाना (हिं० क्रि०) १ कोलियासे जाना, तङ्गराह पकड़ना। २ कोरियाना, छातीसे लगाना। (पु०) ३ कोलियांके रहनेकी जगह।

कोलिसर्प (सं० पु०) क्षत्रियविशेष। सगरराजने इन्हें क्षत्रिय धर्मसे वहिष्कृत किया था। (हरिवंश) महाभारतमें भी लिखा है—

"कोलिसर्पा माहिषकास्तास्ताः क्षत्रियजातयः।
वृषलत्वं परिगता ब्राह्मणादर्शनेन च॥" (अनुशासन ३६)

कोली (सं० स्त्री०) कोलति पीनत्वेन जायते वर्धते वा, कुल-अच् गौरादित्वात् ङीष्। कोलिवृक्ष, बेरका पेड़।

कोली (हिं० स्त्री०) एक आलिङ्गन, हमागोशी, अंकवार। २ मेहदी लगनेकी कालिख। (पु०) ३ हिन्दू जुलाहा।

कोलीगौड़—ब्राह्मणोंकी एक श्रेणी। कोली या कोरी लोगोंका पौरोहित्य करनेसे ही यह नाम पड़ा है। कोलीगौड़ साधारण गौड़ ब्राह्मणोंसे निम्नश्रेणी माने जाते हैं, कुलीन गौड़ इनसे आदान-प्रदानका व्यवहार नहीं रखते।

कोलुर—बम्बई-प्रेसिडेन्सीके धारवाड़ जिलेका एक गांव। यह करजगिसे डेढ़ कोस पश्चिम पड़ता है। यहां वासवन्नदेवका एक प्राचीन मन्दिर है। उसकी गठनप्रणाली विचित्र है। मन्दिरके १२ स्तम्भोंमें दो खोदित लिपियां मिलती हैं। कहते हैं—यख्यनाचार्य नामक एक राजा ब्राह्मणवधके प्रायश्चित्तस्वरूप बीस वर्ष हिमालयसे कुमारिका पर्यन्त नानास्थानोंमें मन्दिर बनवाते घूमते रहे। कोलुरका मन्दिर उन्हींमेंसे एक है।

कोलूक, कुलूत देखो।

कोलेंदा, गोलेंदा देखो।

कोल्या (सं० स्त्री०) कोलमर्हति, कोल-यत्। पिप्पली, पीपल।

कोल्लगिरि (सं० पु०) भारतवर्षस्थ एक पर्वत। वृहत्संहिताके कूर्मविभागमें इसे दक्षिणदिककी निरूपण किया है। आजकल कोल्लमलय कहते हैं।

कोल्लङ्गोद—मन्द्राज प्रान्तके मलवार जिलेके पालघाट तालुकका एक नगर। यह अक्षा० १०° ३७´ उ० और देशा० ७६° ४१´ पू०में अवस्थित है। आबादी लगभग ८८०० होगी। यहां कोल्लङ्गोदको निम्बोदी रहते जो एक बहुत बड़े जमीन्दार हैं। इस नगरसे २ मील दक्षिण हिन्दुओंका कचनकुरिचि नामक देवमन्दिर है। कहवेके बाग जबसे लगे, कोल्लङ्गोदका व्यवसाय बढ़ गया है।

कोल्लमलय—मन्द्राज-प्रदेशके सालम् विभागका एक पहाड़। यह अक्षा० ११° १०´ से ११° २७´ उ० और देशा० ७८° १८´ से ७८° ३०´ ३०´´ पर्यन्त विस्तृत है। उच्चता १६५०-२३५० हाथ होगी। इसका उच्चशृङ्ग समुद्रपृष्ठसे ३१३० हाथ ऊंचा उठा है। यहां मलयाली नामक पहाड़ी लोग रहते हैं।

कोल्लेगाल—१ मन्द्राज प्रान्तके कोयम्बतूर जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० ११° ४६´ तथा १२° १८´ उ०और देशा० ७६° ५८´ एवं ७७° ४७´ पू० के मध्य पड़ता है। क्षेत्रफल १०७६ वर्गमील है। कावेरी नदी इसे तीन ओरसे घेरे है, जिससे उत्तर-पश्चिम कोणपर सुप्रसिद्ध शिवसमुद्रम् द्वीप और निर्झरकी उत्पत्ति हुई है। लोकसंख्या प्राय ८६५६२ है। पश्चिमको बिलिगिरि

रङ्गन पहाड़ो है। आधेसे अधिक तालुकमें सुरक्षित जङ्गल है, जो प्रधानत: मवेशियोंको चरागाह जैसा बरता जाता है। कारण स्थानीय प्रजा कृषिकर्मको अपेक्षा पशुपालन अधिक करती है। अलम्बादीके मशहूर मवेशो यहीं होते हैं।

२ मन्द्राज-प्रान्तके कोयम्बतोर जिलेके कोल्लेगाल तालुकका सदर। यह अक्षा० १२° १०´उ० तथा देशा० ७७° ७´पू०के बीच पड़ता है। आबादी कोई १३७२८ है। अपने जरीन् कपड़ों और रूमालोंके लिये यह प्रसिद्ध है।

कोल्हाड़ (हिं० पु०) ऐंधो, ऊख पेरने और उसके रसका गुड़ बनानेको जगह।

कोल्हुवा, कूल्हा और कोल्हू देखो।

कोल्हू (हिं० पु०) १ यन्त्रविशेष, तेल या ऊख पेरनेका पेंच। यह डमरू-जैसा बहुत बड़ा बनता और पत्थर, लकड़ो या लोहेका रहता है। कोल्हूके बीच खोखलो जगहका नाम हांड़ी या कूंड़ी है। पेंदा नालोदार होता है, जिससे रस निकल कर एक बर्तनमें गिरता है। कूंडीके बीच लगी मोटी लकड़ीका नाम जाट है। कोल्हूका बैल चलनेसे जाट घूमने लगता और कूंड़ीमें डाली हुई चीज पर दबाव पड़ता है। २ तैलिक जातिभेद।

कोल्हेना (हिं० पु०) धान्यविशेष, एक धान। यह पंजाबमें उपजता और मोटा चावल रखता है।

कोवलय (कुवलय)—आराकानके एक पराक्रान्त मग राजा। इन्होंने ५२१ मग अब्द (११५८ ई०) को सिंहासन आरोहण और श्याम, ब्रह्म तथा चीनका थोड़ा अंश अधिकार किया था। इनके पांच श्वेतहस्ती रहे। कोवलयने ही महती नामक प्रसिद्ध देवमन्दिर स्थापन किया। ५३० मग अब्दको यह स्वर्गवासी हुवे।

कोवारी (हिं० पु०) जलपक्षिविशेष, पानीको एक चिड़िया।

कोविद (सं० त्रि०) कुङ् शब्दे विच् कौर्वेदः तं वेत्ति, विद्-क। १ पण्डित, विद्वान्, वेदज्ञ।

"कवि कोविद कहि सकहिं कहांते।" (तुलसी)

(पु०) २ तिलकवृक्ष, मोठे तिलका पेड़।

कोविदार (सं० पु०) कुं भूमिं विदृणाति, कु-वि-दृ-अण् उपपदसमा०। १ रक्तकाञ्चनवृक्ष, कचनारका पेड़। इसका पर्याय—चमरिक, कुद्दाल, युगपत्रक, युगपत्र, काञ्चनाल, काञ्चनार, ताम्रपुष्प, कुदार, रक्तकाञ्चन, चम्प, विदल, कान्तपुष्प, करक, कान्तार, यमलच्छद, गण्डारि और शोणपुष्पक है। इसके वृक्षमें सुन्दर सुगन्धि पुष्प होता है। भारतके नाना स्थानोंमें कोविदार देख पड़ता है। इसका काष्ठ अति सारवान् है। परन्तु १० इञ्चसे ज्यादा चौड़ा तख्ता नहीं उतरता। गञ्जाम और गुमसुर प्रदेशमें यह वृक्ष बहुत उपजता है। वहां लोग रञ्जनादिमें इसका काष्ठ व्यवहार करते हैं। ब्रह्मदेश और अजमेरमें भी इसकी कोई कमी नहीं। इसका फूल खिलनेसे शोभा फूट पड़ती है। सुगन्ध चारो ओर फैल जाता है। इसकी कलियां बहुतसे लोग उपादेय समझ कर खाते हैं। इसका अंगरेजी वैज्ञानिक नाम Bauhinia purpurascens or Buahinia candida है। यह Bauhinia variegata विभागके अन्तर्गत है। वैद्यक मतमें कोविदार—कफघ्न, वातघ्न, कषाय, व्रणनाशक, संग्राही, दीपन और मूत्रकृच्छ्रनाशक है। इसका फूल धारक, रुचिकारक और रक्तपित्त रोगमें सुपथ्य होता है।

(राजवल्लभ)

कोविदारका तेल विभीतक-तेल-जैसा गुणविशिष्ट है। इसकी कलियोंको मठेमें उबाल कर मोठे तेलमें पकाने और हींगका बघार लगानेसे बहुत अच्छी तरकारी बनती है—

"कोविदारकलिकातिकोमला तक्रसिद्धतिलतैलपाचिता।
हिङ्गुवासकसुवासवासिता वैसवारलुलितातिलोभदा॥" (पाकशास्त्र)

२ पारिजात। (हरिवंश)

कोविराज केशरिवर्मा—एक प्रसिद्ध चोल राजा। यह कुलोत्तुङ्ग, वीर, राजेन्द्र कोप्प केशरिवर्मा प्रभृति नामोंसे भी अभिहित होते थे। इन्होंने १०६४ ई०को लोकमहादेवीसे विवाह किया। १०७८ ई०को यह राज्याभिषिक्त हुवे। पाण्ड्यराज वीरपाण्ड्य और तुङ्गभद्राके निकट चालुक्यराज सोमेश्वरदेवको परास्त करके इन्होंने दक्षिणापथमें बहुत दूरतक राज्य विस्तार किया था।

चोल इतिहासमें यह प्रथम कोलोत्तुङ्ग नामसे वर्णित हुए हैं। शिलालेखके पाठसे समझ पड़ता है कि उन्होंने अपने अनुज गङ्गकोण्डम चोलको मदुरा राज्यमें अभिषिक्त किया था। एक समय सिंहलराज मिहिन्दू भी इनसे परास्त हुवे। उसके कुछ दिन पीछे सिंहलराज विजयवाहुके साथ चोलसैन्यकी बड़ी लड़ाई चली। विजयवाहुने अनेक कष्टोंमें मातृभूमिको शत्रु-करसे उद्धार तो किया, परन्तु उसके बाद किसी समय राजसभामें श्यामके दूतको चोल-दूतको अपेक्षा अधिक सम्मान देने पर राजा कुलोत्तुङ्ग बहुत बिगड़े और सर्व समक्ष सिंहल दूतके नाक कान काट ससैन्य सिंहल पर जा चढ़े। इस युद्धमें सिंहली हारे और राजा विजयवाहु भागे थे। किसीके मतमें इनके शारङ्गधर नामक कोई भ्राता रहे; उन्हें लोग साधारणतः चुरङ्ग कहते थे। केशरिवंशके अधःपतन पर उत्कलके सामन्तोंने उनको ही कर्णाटसे आह्वान किया। उत्कलके इतिहासमें वह चोड़गङ्ग नामसे ख्यात हैं।

प्रवाद है—राजा कुलोत्तुङ्गने वङ्गदेश पर्यन्त आक्रमण किया था।

कोविलखण्डी (कोईलखण्डी, कुइलाण्ड)—मलबारका एक नगर। यह अक्षा० ११° २६′ २५″ उ० और देशा० ७५° ४४′ ११″ पू० पर अवस्थित है। लोकसंख्या कोई ११ हजार है। उनमें अधिकांश हिन्दू हैं। यह नगर मापलोंका एक प्रधान वाणिज्यस्थान है। कोविलखण्डी बन्दरमें सर्वप्रथम भास्को-डि-गामा ससैन्य उतरे थे। १७८३ ई०को यहां अंगरेजोंका एक जहाज बालूके टेकसे टकरा कर टूट गया। कोविलखण्डीमें मलिक इब्न दीनारकी बनायी एक मशहूर मसजिद है।

कोश (सं० पु०-क्लो०) कुश्यते संश्लिष्यते, कुश-घञ् कर्तरि अच् वा। १ अण्ड, अण्डा। आकरोत्थित विशुद्ध सुवर्ण वा रजत, खानसे निकाला हुवा खालिस सोना या चांदी। ३ कुड्मल, फूलकी बंधी कली। ४ खड्गपिधान, तलवारका म्यान। ५ समूह, ढेर। ६ दिव्यविशेष। कोषपान देखो। ७ चर्मकोष, खालको खोल। ८ पात्र, बर्तन। ९ जातिकोष, जावित्री। १० पेशी, पुट्ठा।

कोशक (सं० पु०) १ व्रणबन्धनविशेष, जखम पर बांधनेकी एक पट्टी। २ अण्ड, अण्डा।

कोशकार (सं० पु०) कोशं करोति, त्वक्पत्रादिभिरात्मानमाच्छादयति, कोश-कृ-अण्। १ इक्षु, ईख, कुसियार। २ खड्गादिका आवरणकारी, तलवार वगैरहका म्यान तैयार करनेवाला। ३ कीटविशेष, रेशमका कीड़ा। (महाभारत, शान्तिपर्व)

कोशकाली (सं० स्त्री०) जलचर पक्षिभेद, पानीकी एक चिड़िया।

कोशकृत् (सं० पु०) कोशं खड्गाद्यावरणं वेष्टनं वा करोति, कृ-क्विप्, ६-तत्। १ कृष्णेक्षु, काली ऊख। २ कोशकार, म्यान बनानेवाला।

कोशचञ्चु (सं० पु०) कोशं चञ्चौ यस्य, बहुव्री०। सारसपक्षी।

कोषनायक (सं० पु०) कोशाध्यक्ष, खजानची।

कोशपाल (सं० पु०) कोशं राज्याङ्गधनसञ्चयं पालयति, कोश-पालि-अण्। अर्थरक्षक, रुपयेकी हिफाजत करनेवाला। धर्मशास्त्रके मतमें—धातु, वस्त्र, चर्म और रत्न लक्षणाभिज्ञ तथा सारपदार्थके संग्राहकको कोशपाल कहते हैं। पवित्र, निपुण, अप्रमत्त, आयव्ययज्ञ, लोकज्ञ और कृताकृतज्ञ व्यक्तिको कोशपाल पद पर नियुक्त करना चाहिये। (हेमाद्रि—परिशिष्टखण्ड)

कोशपेटक (सं० पु०-क्लो०) अर्थ रखनेका पेटक। रुपयेकी थैली या डब्बी।

कोशफल (सं० क्लो०) कोशे फलमस्य, बहुव्री०। १ कक्कोलशीतल चीनी। २ त्रपुषी, खीरा। ३ देवदाली, कोई बेल। ४ घोण्टा, झड़बेरी। ५ बदर, बेर।

कोशफला (सं० स्त्री०) कोशे फलं यस्याः, बहुव्री०। १ महाकोशातकी, हाथीचिंघार। २ त्रपुषी, खीरा, फूट। ३ देवदालीलता। ४ पीतघोषा, पीले फूलकी एक बेल। ५ श्वेतत्रिवृता, कृष्णत्रिवृता, सफेद या काला निसोत।

कोशयी (सं० स्त्री०) कुश बाहुलकात् अयि ततो ङीष्। सुवर्णपूर्णकोश। ऋक् ६।४७।२२।

कोशल (सं० पु०) कुश-कलच् बाहुलकाद् गुणः। १ काशीके उत्तर अयोध्यासहित सरयूतीरवर्ती समस्त भूभाग।

कोशल उत्तर और दक्षिण दो भागोंमें विभक्त है। यह शब्द तालव्य, मूर्धन्य और दन्त्यसकारयुक्त व्यवहृत होता है। कोसल देखो। "प्रभु समर्थ कोशलपुरराजा" (तुलसी) २ क्षत्रिय जातिविशेष। ३ अयोध्या। ४ कोई राग। इसमें गन्धार तथा धैवत कोमल और बाकी शुद्ध स्वर लगते हैं।

कोशला (सं० स्त्री०) कुश वृषादित्वात् कलच्, बाहुलकाद् गुणः ततः स्त्रियां टाप्। अयोध्यानगरी, रामकी राजधानी। अयोध्या देखो।

कोशलात्मजा (सं० स्त्री०) कोशलस्य कोशलनृपतेरात्मजा, ६-तत्। कौशल्या, दशरथकी प्रधान महिषी और रामकी माता।

कोशलिक (सं० क्ली०) कुशलाय कर्मणे हितजनककार्यसिद्धार्थं दीयते यत्, कुशल-ठक् बाहुलकादुकारस्य ओकारः। उत्कोच, रिशवत, घूस। किसी किसी पुस्तकमें कौशलिक पाठान्तर है।

कोशवती (सं० स्त्री०) कोशो विद्यतेऽस्य, कोश-मतुप् मस्य वः। घोषा, कोषातकी।

कोशवान् (सं० त्रि०) कोशोऽस्त्यस्य, कोश-मतुप् मस्य वः। कोशयुक्त, खजानेवाला। (भारत, अनु० २० अ०)

कोशवासी (सं० पु०) कोशे वसति, वस-णिनि ७-तत्। १ शम्बूक, घोंघा। २ तन्तुकीट, रेशमका कीड़ा। ३ स्फटिकविशेष, एक प्रकारका बिल्लौरी पत्थर। कोशस्थ देखो।

कोशवृद्धि (सं० पु०) कोशस्य मुकुलस्य वृद्धिर्यत्र बहुव्री०। १ कुरण्डकवृच, कोरीका पेड़। (स्त्री०) २ अण्डकोषवृद्धि, फोता बढ़नेकी बीमारी। ३ धनसञ्चय, रुपयेकी बढ़ती।

कोशवेश्म (सं० क्ली०) कोषागार, खजाना।

कोशशायिका (सं० स्त्री०) कोशे पिधानमध्ये शेते, शी-ण्वुल् ७-तत्। छुरिका, एक सन्नी।

कोशस्कृत् (सं० पु०) कोशं करोति, कृ-क्विप् निपातनात् सुट्। कोशकारक जन्तुविशेष, रेशमका कीड़ा।

कोशस्थ (सं० पु०) कोशे तिष्ठति, स्था-क ७-तत्। शङ्खशुक्त्यादि, घोंघे वगैरह। सुश्रुतके मतमें आनुपवर्ग पञ्चविध होता है—कुलचर, प्लव, कोशस्थ, पादी और मत्स्य। इनमें शङ्ख, शङ्खनख, शुक्ति, शम्बूक, भल्लूक प्रभृति कोशस्थ प्राणी हैं। इनका मांस रस तथा पाकमें मधुर, वायुनाशक, शीतल, स्निग्धकर, पित्तका हितकर, तेजोवृद्धिकर और श्लेष्मवर्धक है।

कोशस्थमांस (सं० क्ली०) शङ्खशुक्त्यादिमांस, शङ्ख सीप वगैरहका गोश्त। कोशस्थ देखो।

कोशा (सं० स्त्री०) मद्य, शराब। २ नदीविशेष, कोई दरया। (भारत, भीष्म ९ अध्याय) ३ वृहत् नौका, बड़ी नाव। पहले भारतवासी इस नाव पर चढ़ कर जलयुद्ध करते थे। ३ पूजापात्रभेद, पूजा करनेका कोई बर्तन। इसमें जल रखके पूजा करते हैं।

कोशा—राजपूतानेकी एक मुसलमान जाति। राजपूतानेकी मरुभूमिके निकट एक सहराई जाति रहती है। वह लोग पहले हिन्दू रहे, अब मुसलमान बन गये हैं। कोशा या खोसा जाति सेहराइयोंकी श्रेणीमात्र है। यह दस्युवृत्तिसे जीवन यापन करते थे। कोई उष्ट्रोपरि और कोई अश्वोपरि आरूढ़ हो बरछा, ढाल, तलवार तथा बन्दूक लेकर लूटनेको निकल पड़ता था। कभी कभी यह योधपुर तक लूट ले जाते थे। मरुभूमिके दक्षिण अंश पर नवकोट, मिटी, बुलियारी प्रभृति स्थानोंमें इनका वास है। आजकल यह लूटमार तो नहीं करते, परन्तु कृषकोंसे 'करी' ले लेते हैं। प्रत्येक हलके लिये किसानको एक रुपया और १। मन अनाज देना पड़ता है। कोशा लोग कभी कभी उदयपुर, योधपुर प्रभृति राजवाड़ोंमें नौकरी भी करते हैं। राजपूत इन्हें विश्वासघातक और भीरु-जैसा समझते हैं।

कोशा—अफगान जातिकी एक श्रेणी। यह लोग डेरागाजीखान्के पर्वत और समतल भूमिपर रहते हैं। इनके सरदार कोराखाँ और गुलाम हैदर अंगरेजोंका पक्ष अवलम्बन करके मूलराजसे लड़े। कोराखाँ ४०० अश्वारोहियोंके साथ मेजर एडवर्डको साहाय्य करने गये थे। अंगरेज गवर्नमेण्टने इसी लिये उन्हें १०००) रु० आयकी एक जागीर दे डाली।

कोशागार (सं० क्ली०) कोशस्य आगारम्, ६-तत्। धनागार, खजाना। (भारत, वन १९७) कोशगृह प्रभृति

शब्द भी इसी अर्थमें व्यवहृत होते हैं।

कोशाङ्ग (सं० क्लो०) कोश इवाङ्गमस्य, बहुव्री०। इत्कट, एक झाड़ी।

कोशातक (सं० पु०) कोशमतति, कोश-अत-क्वुन्। १ कठ, यजुर्वेदकी एक शाखाका नाम। २ केश, बाल। ३ घोषक, एक लता।

कोशातकी (सं० स्त्री०) कोशमतति, कोश-अत क्वुन् गौरादित्वात् ङीष्। कडुई तरोई। यह श्वेत पीतभेद से दो प्रकारकी होती है। इसका फल कफ और अर्शोघ्न होता है। पक्की कोशातकी आमाशय शुद्धिकरी है। इसमें मूलीके तेलका गुण रहता है। (राजवल्लभ) २ अन्यविध फलशाकविशेष, तरोई, घोया। यह ठण्डी, कड़वी, कुछ कसैली, वात-पित्त-कफको दूरकरनेवाली और मलाशानशोधिनी है। (राजनिघण्टु) ३ महाकोषातकी, नेनुआ। यह स्निग्ध, सर और पित्त तथा वायुनाशक है। इसका फल स्वादु, मधुर, वातपित्तघ्न,पाकमें कफघ्न और ज्वरमें हितकर है। (अत्रिसंहिता) ४ तिक्तफललताविशेष, कड़ुवा परवल। ५ महाकाललता। ६ श्वेतघोषा। ७ पटोली, परवल। ८ अपामार्ग, लटजीरा।

कोशातकी (सं० पु०) कोशातकाऽस्यास्ति, कोशातक-इनि। १ व्यवसायी, सौदागर। २ वणिक्, बनिया। ३ वाड़वाग्नि।

कोशाध्यक्ष (सं० पु०) १ धनागारका कर्ता, खजानची। २ धनदाता, रुपया देनेवाला। ३ कुवेर।

कोशाम्बी, कौशाम्बी देखो।

कोशाम्र (सं० पु०) कोशे आम्र इव। क्षुद्राम्र, कोसम। इसका पर्याय—कोशाम्र, क्रमिवृक्ष, सुकोशक, घनस्कन्ध, वनाम्र, जन्तुपादप, क्षुद्राम्र, रक्ताम्र, लाक्षावृक्ष और सुरक्तक है। कोशाम्र—कुष्ठ, रक्तपित्त, शोथ, व्रण और कफनाशक है। इसका फल—ग्राही, वातघ्न, अम्ल, उष्ण, गुरु और पित्तवर्धक होता है। (भावप्रकाश) राजनिघण्टु इस फलको कफार्तिप्रद, दाहकारक और शोथनाशक बताता है। कोशाम्र पकनेसे मधुर एवं अम्लरस हो जाता है। वह लवण मिलानेसे दीपन, रुचिकर, पुष्टिकर तथा बलकारी है। कोशाम्रका तेल—सारक, क्रमि, कुष्ठ तथा व्रणनाशक, अम्लमधुर, वल्य, पथ्य, रोचन और पाचन होता है। सुश्रुतके मतमें यह तेल चतस्थान पर लगानेसे कुष्ठ अच्छा हो जाता है।

कोशाम्रतैल (सं० क्ली०) कोसमका तेल। कोशाम्र देखो।

कोशिका (सं० स्त्री०) कोशी, कोशासे छोटा वर्तन।

कोशिला (सं० स्त्री०) कोशः कोश इव पदार्थो वा अस्याः अस्ति, कोश पिच्छादित्वात् इलच् ततष्टाप्। १ मुद्गपर्णी, मोठ। २ कोई नदी।

कोशिश (फा० स्त्री०) चेष्टा, उद्योग।

कोशी (सं० स्त्री०) कुश संश्लेषे अच् गौरादित्वात् ङीष्। १ उपानत्, जूता। २ व्याघ्रनख, एक खुशबूदार चीज। ३ धान्यादिशूङ्गा, अनाज वगैरहकी बाल। (पु०) ४ आम्रवृक्ष, आमका पेड़। इसका पर्याय—पत्रन्धी, पादविरजाः और पादरथी है। ५ कोशिका, पूजाका एक पात्र। (त्रि०) कोशोऽस्त्यस्य, कोश-इनि। ६ कोशयुक्त, खोलवाला।

कोश्य (वै० पु०) कोशे हृदयकोशः तत्र वर्तते, कोश बाहुलकात् य। हृदयस्थ मांसपिण्ड। (वाजसनेय २५।८)

कोष (सं० पु०-क्लो०) कुष्यन्ते आकृष्यन्ते फलपुष्पोत्पादकमधुमयपरागादयो यस्मिन्, कुष अधिकरणे घञ्। १ कुड्मल, बंधी हुई कली। २ खड्गविधान, तलवारका म्यान। (महाभारत, ४।४०।१३) ३ अर्थसमूह, खजाना। (रघु० ५।१) ४ दिव्य। (राजतरङ्गिणी ५।३३५) ५ अण्ड, अण्डा। ६ आवर्तित वा आकरोत्थित स्वर्ण रौप्य, खानका ताजा सोना या चांदी। ७ पात्र, वर्तन। ८ जातीकोष, जायफल। ९ शब्दादि-संग्रह, अभिधान। १० भाण्डागार, भाण्डार। ११ पानपात्र, प्याला। १२ योनि। १३ शिम्बा, सेम। १४ कटहल आदि फलोंके बीचका हिस्सा, गूदा। १५ धन, दौलत। (मार्कण्डेयचण्डी) १६ त्वक् प्रभृतिका आवरक, खोल। १७ वृषण, फोता। १८ कोषकी भांति आवरणकारी वेदान्तप्रसिद्ध पञ्च-पदार्थ। वेदान्ती अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय और आनन्दमय—पांच कोषोंकी कल्पना करते हैं विवेकचूड़ामणिमें पञ्चकोषका विवरण इस प्रकार लिखा है—

देह अन्नसे उत्पन्न है, अन्न द्वारा ही जीवित रहता

और उसके अभावमें विगड़ता है; इसीसे देहका नाम अन्नमय कोष है।

वाक्, पाणि, पाद, पायु और उपस्थ पञ्च कर्मेन्द्रियोंके साथ मिलित प्राण, अपान, व्यान, उदान तथा समान पञ्चप्राणको प्राणमय कोष कहते हैं। इसी प्राणमय कोषसे मिलकर अन्नमय कोष देहकी सकल क्रियाओंमें प्रवृत्त होता है।

श्रोत्र, त्वक्, चक्षु, जिह्वा और घ्राण पांच ज्ञानेन्द्रियोंसे मिले मनका नाम मनोमय कोष है। यह मनोमय कोष ही 'मैं' 'मेरा' आदि विकल्पज्ञानोंका कारण है। यही मनोमय अग्नि बहु वासनारूप इन्धन द्वारा अतिशय प्रज्वलित हो इस प्रपञ्चको दग्ध करता है। मनके अतिरिक्त कोई अविद्या नहीं। मन ही अविद्या और संसाररूप बन्धका एकमात्र कारण है। मन विनष्ट होनेसे सब मिट जाता और मन कार्य करते रहनेसे सभी पदार्थोंका अस्तित्व देखनेमें आता है। स्वप्नकी अवस्थामें किसी बाह्य पदार्थसे कोई संबन्ध नहीं रहता। किन्तु मन अपनी अपनी शक्तिसे ही भोक्ता भोग्य प्रभृति सकल सृष्टि करता है। मनके अतिरिक्त कुछ भी वास्तविक नहीं। इसी प्रकार स्वप्न अवस्थाके दृष्टान्तसे जाग्रद् अवस्थामें भी जगत्प्रपञ्च मनोमय समझना पड़ेगा। सकल ही मनका विजृम्भण मात्र है। जैसे सुषुप्तिकालको मन विलीन होनेसे सब मिट जाता, सबलोग समझ सकते हैं, वैसेही मन नष्ट होनेसे किसी अवस्थामें कुछ नहीं देखाता।

श्रवण, त्वक्, चक्षु, जिह्वा और घ्राण पांच ज्ञानेन्द्रियोंसे मिलित बुद्धि विज्ञानमय कोष कहलाती है। यह विज्ञानमय कोष ही कर्तारूप कर्तृत्व, भोक्तृत्व, सुख और दुःख प्रभृति अभिमानविशिष्ट पुरुषके संसारका कारण है। सत्वगुणप्रधान अज्ञान परमात्माका आवरक जैसा रहनेसे आनन्दमय कोष कहा जाता है।

पूर्व शब्दान्तर युक्त होनेसे यह गोलकवाचक है।

कोषक (सं० पु०) कोष स्वार्थे कन्। १ अण्ड, अण्डा। २ अण्डकोष फोता।

कोषकार (सं० पु०) कोषं करोति स्वपत्रत्वगादिभिरात्मानं छादयति, कोष-क्र-अण्। १ इक्षु, ऊख। २ इक्षुविशेष, कुसियार। यह गुरु, शीत और रक्त, पित्त तथा क्षयनाशक है। (भावप्रकाश) कोषकार मूल और मध्यमें मधुर होता है। (सुश्रुत) कोषं स्ववेष्टनं स्वमुखनिःसृतलालारूपतन्तुभिः करोति। २ कीटभेद, रेशमका कीड़ा। (भारत १२।३२९।२९) ३ जनपदविशेष, कोई देश। यहां पहले बहुत तन्तुकीट उत्पन्न होते थे। रामायणमें उत्तरवर्ती जनपदके उल्लेख स्थल पर कहा है—

"मागधांश्च महाग्रामान् पुण्ड्रांस्त्वङ्गांस्तथैव च।
भूमिश्च कोषकाराणां भूमिश्च रजताकराम्॥" किष्किन्ध्या ४०।२३

यह कोषकार भूमि आसामराज्यके उत्तरस्थित चीनदेश जैसी अनुमित होती है। सम्भवतः इसी स्थानको पाश्चात्य प्राचीन भौगोलिक टलेमिने 'सेरिके' (Serike) नामसे उल्लेख किया है।

कोषं अर्थसहितशब्दसंयोजनरूपं ग्रन्थविशेषं करोति। ३ अभिधानकर्ता, लुगात बनानेवाला।

कोषकारज (सं० क्ली०) कौषेय, रेशम।

कोषकाव्य (सं० क्ली०) परस्पर निरपेक्ष श्लोकसमूह। (साहित्यदर्पण ६ परिच्छेद)

कोषचञ्चु (सं० पु०) कोषः खड्गकोष इव चञ्चुर्यस्य, बहुव्री०। सारसपक्षी।

कोषपान (सं० क्ली०) परीक्षाविशेषार्थं कोषस्य हस्तकोषपरिमितस्य जलस्य त्रिप्रसृतिरूपस्य पानम्, ६-तत्। परीक्षाविशेष, एक जांच। इसमें यह समझनेके लिये कि अमुक व्यक्ति पापी है या निष्पाप, तीन गण्डूष जल पिलाया जाता है। वीरमित्रोदय नामक स्मृतिग्रन्थमें कोषपानविधि इस प्रकार लिखा है—

जिस व्यक्तिकी परीक्षा लेते, उसे पूर्वाह्णमें उपवासी रहने देते हैं। फिर परीक्षाके समय स्नान करके आर्द्र वस्त्र पहने हो देव तथा ब्राह्मणमण्डलीके मध्य उसको कोषपान कराते हैं, पानकर्ता दिव्य करनेका अभिलाषी और श्रद्धायुक्त व्यसनशून्य हो तथा मिथ्या दिव्य करनेमें अनिष्टकी आशङ्का करे।

मद्यपायी, व्यसनासक्त, कितव, नास्तिक आचारी, महापातकी, आश्रमधर्मवर्जित, कृतघ्न, क्लीब, प्रतिलोमज, दास, नास्तिक और व्रात्य कोषपानके अनधि-कारी हैं।

विष्णुस्मृतिमें लिखते हैं—किसी उग्रदेवताकी अर्चना करके उसका स्नानोदक तीन गण्डूष पीना चाहिये। वही पानी हाथमें लेकर पूर्वाभिमुख कहना पड़ता है—जिसके लिये परीक्षा होती है, वह कार्य मैंने नहीं किया। उसके बाद पान करनेका नियम है।

जिसकी परीक्षा ली जायगी, उसके मस्तक पर व्यवस्थापत्र रखके ऊपर ऊपर दिव्यके साधारण विधिका अनुष्ठान करना चाहिये। फिर उसको देवतायतनके निकटवर्ती मण्डलमें पूर्वाभिमुखी बैठाल धर्मशास्त्रके मतसे मिथ्यादिव्य करनेमें जो समस्त अनिष्ट आता, वह भली भांति समझाया जाता है। प्राड्विवाकको उपवासी रह गन्धपुष्पादि द्वारा दुर्गा प्रभृति उग्रदेवताओंमेंसे किसी एककी पूजा करना चाहिये, उनका स्नानीय जल दिव्यस्थानमें स्थापन किया जाता है। जलविधानके अनुसार "तोय त्वं प्राणिनां प्राणः" इत्यादि मन्त्र द्वारा पूर्वस्थापित जलसे तीन गण्डूष जल अपराधी व्यक्तिको पिलाते हैं। उसको भी "सत्यान्तविभागस्य" इत्यादि मन्त्र उच्चारण करके वह पानी पी लेना चाहिये।

अपराधीको उसी देवताका स्नानीय जल पिलाते, जिस पर उसकी दृढ़ भक्ति पाते हैं। जो सभी देवताओंमें समान भाव रखता, उसको सूर्यका स्नानीय जल पिलाना पड़ता है। चोरों और शस्त्रोपजीवियोंको दुर्गाका स्नानीय जल पिलाना उचित है। ब्राह्मणको सूर्यका स्नानीय जल पिलाते हैं।

कात्यायनने कहा है—अल्प अपराधमें देवताके आयुधका जल पिलाना उचित है। जल पान करनेवाले व्यक्तिको किसी प्रकारका विकार उपस्थित होनेसे पापी समझते और पापानुसार उसका दण्डविधान करते हैं। यदि कोषपान करके उसको कोई विकार न लगे, तो वह निष्पाप माना जाता है।

कोषपान करनेवालेको तीन सप्ताहके मध्य कोई दैविक व्याधि लगनेसे पापी-जैसा समझना और यत्नपूर्वक उसका दण्डविधान करना चाहिये। परन्तु ग्रामवालों या निकटवर्ती सभी लोगोंको दैविक व्याधि उपस्थित होनेसे कोषपान करनेवाला पापी नहीं ठहरता।

पापी व्यक्तिको कोषपान करनेसे ज्वर, अतीसार, विस्फोटक, शूल, अस्थिपीड़ा, नेत्ररोग, कपालपीड़ा, उन्माद, शिरभङ्ग, ऊरुभङ्ग और भुजभङ्ग प्रभृति समस्त दैविक व्याधियोंमें कोई एक धर दबाती है। विष्णुस्मृतिके मतमें—दो या तीन सप्ताहके मध्य परीक्षितव्य व्यक्तिका दैवरोग, अग्निभय, ज्ञातिमरण वा राजदण्ड होनेसे पापी-जैसा निश्चय करते हैं। किन्तु ब्रह्माके मतमें तीन रात, सात रात या दो सप्ताहके बीच किसी प्रकारका विकार न पड़नेसे परीक्षितव्य निष्पाप प्रमाणित होता है। वीरमित्रोदयकारका कहना है—दो सप्ताहके पीछे तीसरे सप्ताह तक विकार उपस्थित होनेसे भी वह पापी ठहरता है। सम्प्रति हिन्दूराजाओंके अभावसे कोषपानविधि अप्रचलित हो गया है।

कोषफल (सं० पु०-क्ली०) कोषे फलमस्य, बहुव्री०। १ कक्कोल, कपूर-जैसी खुशबूदार एक मिर्च। २ घोषकलता, एक बेल।

कोषफला (सं० स्त्री०) कोषफल अजादित्वात् टाप्। १ पीतदेवताड़वृक्ष। २ पीतघोषा, घीया तरोई। ३ लिम्पाक, कागजी नीबू।

कोषवती (सं० स्त्री०) कोषातकी, तरोई।

कोषवृद्धि (सं० स्त्री०) १ कुरण्ड, कोरी। २ अर्थसञ्चय, रुपये पैसेकी बढ़ती। वृद्धि देखो।

कोषला, कोशला देखो।

कोषलाह्वा (सं० स्त्री०) जीवशाक, एक सब्जी।

कोषशायिका (सं० स्त्री०) कोषे पिधाने शेते तिष्ठति, कोष-शी कर्तरि ण्वुल् टाप्। छुरिका, तलवार, कटार।

कोषस्थ (सं० त्रि०) कोषवासिप्राणिमात्र, खोलमें रहनेवाले शङ्ख शुक्ति शङ्खनख शम्बूक कर्कट आदि सभी जीव। शङ्ख कूर्म आदि स्वादुरसपाक, वातघ्न, शीत, स्निग्ध, कफमें हित और श्लेष्मवर्धन होते हैं। [सुश्रुत]

कोषा (सं० स्त्री०) १ पादुका, जूता, खड़ाऊं। २ शृङ्ग, बाल। ३ आम्रवृक्ष।

कोषातक, कोशातक देखो।

कोषातकी, कोशातकी देखो।

कोषातक्यादितैल (सं० क्ली०) उपदंशका एक तैल, गर्मीकी बीमारीका कोई तेल। जिसके लिङ्गका मांस

क्रमिभक्षित होनेसे सड़ने लगता, उसको यह तैल उपकार करता है—४ शरावक तैल, १ शरावक तरोई, कड़वा लौकी, बीज तथा नागरका कल्क और १६ शरावक जल डाल कर एकमें यथाविधान पकानेसे कोषातक्यादितैल प्रस्तुत होता है। (रसरत्नाकर)

कोषाम्र, कोशाम्र देखो।

कोषी, कोशी देखो।

कोषीफला (सं० स्त्री०) पीतघोषा, तरोई।

कोष्टी (महरा)—छोटानागपुरकी एक जाति। कईसे कपड़ा बुनना और खेतीबारी करना ही इनकी उपजीविका है। यह लोग महरा-जैसा अपना परिचय देते हैं। किन्तु दूसरे लोग इन्हें कोष्टा कहते हैं। सम्भवतः यह मध्यप्रदेशके सम्बलपुर, रायजा और छत्तीसगढ़ अञ्चलसे आये होंगे। इनमें नाना श्रेणियां हैं-बाघल, बगुटिया, भात, भतपहाड़ा, चौधरी, चौर, गोहो, खंड़ा, कूरम, मानक, नाग, समा इत्यादि। कोष्टा दास उपाधि ग्रहण किया करते हैं। किसी वंशका एक एक प्राणी गृहदेवतास्वरूप रहता है। इनके बीच कुमारी अवस्थामें कन्याको व्याहना पुण्यका कार्य है। सम्पन्न लोग ही ऐसा विवाह कर सकते हैं। दरिद्रोंकी कन्यायें प्रायः यौवनावस्थामें व्याही जाती हैं। सीमन्तमें सिन्दूरदान ही विवाहका प्रधान अङ्ग है। विधवावोंका सगाई चलता है। स्वामीका भ्राता रहनेसे उसके साथ ही प्रायः सगाई होती है। विवाहविच्छेद भी लग जाता है। पुरुषोंके पञ्चोंसे कहने पर वह लोग विवाह भङ्ग कर देते हैं।

दुल्हादेव ही कोष्टाओंके उपास्य देवता हैं। यह कहते हैं कि विवाह करनेको चलते समय वह वीरकी भांति निहत हुए थे। उसी दिनसे वह देवता-जैसे पूजे जाते हैं। कोष्टाओंमें बहुतसे कबीरपन्थी हैं। मरनेसे कबीरपन्थी जमीनमें गाड़ दिये जाते हैं। अपरापर विषयोंमें इनका व्यवहार हिन्दुओं-जैसा ही है। यह ब्राह्मणों, राजपूतों आदिका अन्न आहार करते हैं। किन्तु गोंड़ प्रभृतिके साथ अन्न वा दालरोटी नहीं खाते।

कोष्टी—दाक्षिणात्यकी तन्तुवाय (जुलाहा) जाति। बम्बई-प्रदेशमें इस जातिके लोगोंकी संख्या पचास हजारसे ज्यादा है। स्थानभेदसे कोष्टियोंका श्रेणीभेद भी लग जाता है, जैसे—मराठा कोष्टी, कनाड़ा कोष्टी और लिङ्गायत कोष्टी या नीलकण्ठ लिङ्गायत।

पूनाके मराठा कोष्टी कहते हैं कि—पहले वह ब्राह्मण रहे। किसी समय जैनतीर्थङ्कर पार्श्वनाथ स्वामीने उनसे वस्त्र मांगे थे, परन्तु उन्होंने न दिये। इसीसे पार्श्वनाथने उन्हें अभिशाप किया था—तुम जुलाहेका काम करोगे और किसी समय उन्नत हो न सकोगे।

मराठा कोष्टिओंमें देवङ्गहलवे, हाटगर, जनरे और खतावन आदि कई शाखायें हैं। इनके उपाधि इस प्रकार हैं—ऐकाड़े, कलसे, कलटावने, कांवले, कुदल, कुकुंटे, कुहकंर, खाड़गे, खाने, खारबे, गलांदे, गुरसले, गुलबने, गोदवे, घाटे, घोड़के, चकरे, चिपाड़े, चारदे, जबरे, झाड़े, ढोले, तरके, तरलकर, तरवदे, ततपवक, तबरे, तांबे, तिपरे, दण्डवते, दहुरे, दिङ्गे, दिदे, दिवते, दुगम, दोईकोड़े, धगे, धवलसांख, धीमते, सोमाने, पदे, पंदारे, पाखले, पांदकर, पारखे, भालके, बड़दे, बहिरात, बावद, बिदे, रोतरे, बांवदे, भाकरे, भागवत, भालेसिंग, भंडारे, बिबरे, मकवते, मन्तरकर, मालगे, मालबंदे, मनाल, मुखवते, वंगारे, रहातड़े, रासिनकर, लकारे, लड़, वरादे, वाहल, वेदोर्दे, शीलवंत, सेवाले, सोपाड़े, महदे, और हरके हुले। एक उपाधि रहनेसे परस्परविवाह होता और नहीं भी होता है। किन्तु भिन्न उपाधिमें परस्पर आदान प्रदान बराबर चलता है। कोष्टियोंकी मातृभाषा मराठी है।

कनाड़ेके कोष्टिओंमें कुरनावल और पतमावल दो ही भाग हैं। इनकी अपनी बोली कर्णाटी है। फिर भी बम्बई-प्रदेशके नानास्थानोंमें यह अशुद्ध मराठी बोलते हैं।

लिङ्गायत या नीलकण्ठ कोष्टो बिलेजादर और पड़सलगिजादर दो श्रेणियोंमें विभक्त हैं। दोनोंमें परस्पर आदान प्रदान वा आहार व्यवहार नहीं चलता। इनके और भी ६० कुल या गोत्र हैं। जिरानो, बन्नी, बसवी, सिनस, हिवो, हींग, सर, कदिगा, बंकी, धर्म, गुंड़ प्रभृति गोत्र सचराचर प्रचलित हैं। एककुल वा एकगोत्रमें विवाह नहीं होता।

कोष्टी लोग देखनेमें प्रधानतः काले होते हैं।

आकार प्रकार मंझोला है। अधिक बलवान् भी यह नहीं होते। फिर भी सब लोग प्रायः परिश्रमी हैं। बनाव चुनाव दाक्षिणात्यके उच्चश्रेणीस्थ हिन्दुओं-जैसा रहता है।

यह रेशम और रूईका सूत तैयार करके कपड़ा बुनते हैं। प्रायः सभी लोगोंके घरमें करघा और चरखा रहता है। इनकी स्त्रियां सूत कात कर स्वामीका साहाय्य करती हैं। आजकल विलायती कपड़ेकी आमदनीसे इनका कामकाज बहुत बिगड़ गया है। मालूम पड़ता, इसीसे बहुतोंने जातीय व्यवसाय छोड़ कृषि कार्य और भिक्षावृत्तिको आरम्भ किया है।

कोष्टी सचराचर १०से २५ वर्षके बीच पुत्र और ५से ११ वर्षके बीच कन्याका विवाह करते हैं। कन्यादान, अग्न्याधान और वरकर्तृक कन्याका कुलदेवताहरण विवाहके प्रधान अङ्ग हैं। इनके विवाहकी एक अधिष्ठात्री देवी हैं। उनको 'जूपने' अर्थात् पञ्चपल्लव कहते हैं। कन्यादानकालको वरकन्या बांसके एक टोकरे पर आमनेसामने खड़े होते हैं। विवाहके अपरापर काण्ड कुनबियों और अधिकतर कोलियों-जैसे रहते हैं।

कोष्टी धर्मानुरागी और स्वजातिप्रिय हैं। यह सभी हिन्दू देवदेवियोंको मानते और व्रत उपवासादि करते हैं।

मराठा कोष्टी देवीभक्त और कनाड़ी कोष्टी शिवभक्त हैं। दाक्षिणात्यके नानास्थानोंमें देवदेवियोंके मन्दिर हैं। यह भी अपने अपने अभीष्ट देवके दर्शन और पूजा करने नाना स्थानोंको जाया करते हैं।

नीलकण्ठोंका आचार व्यवहार अपरापर लिङ्गायतों जैसा ही है। यह शाकान्नभोजी हैं। कोई मद्य मांस तो नहीं खाता, परन्तु विना प्याज और लहसुनके व्यञ्जनका प्रस्तुत होना रुक जाता है। सभी कोष्टी उत्सवके समय शक्करका मालपुवा उड़ाते हैं।

मराठे कोष्टिओंमें देवंग और हाटगरोंके एक एक मन्त्रगुरु होते हैं। किन्तु जूनरेओंका कोई गुरु नहीं।

नीलकण्ठोंके बीच आश्विनमासको दशहरा, कार्तिकमासको दीवाली, फाल्गुनमासको होली, चैत्रमासको नववर्षके प्रथमदिन, श्रावणमासको नागपञ्चमी और भाद्रमासको गणेशचतुर्थीके उपलक्षमें 'सेरा' उत्सव होता है। नितान्त दरिद्र होते भी विवाहके पीछे पुरुष मात्र 'लिङ्ग' और सभी स्त्रियां 'मङ्गलसूत्र' धारण करती हैं। नीलकण्ठ और श्रीशैलका मल्लिकार्जुनलिङ्ग इनके प्रधान उपास्य हैं। इनके गुरुको 'नीलकण्ठस्वामी' कहते हैं। वह आजीवन अविवाहित रहते हैं। मृत्यु होनेसे उनके प्रधान प्रिय शिष्यको 'नीलकण्ठस्वामी' पद मिलता है। (लिङ्गायत देखो।) सन्तान भूमिष्ठ होनेसे ५ दिन अशौच मानते हैं।

लिङ्गायत कोष्टिओंमें किसीके मरने पर जङ्गम कुछ रुपया लेकर मृतव्यक्तिको गाड़ते हैं। मराठे कोष्टी शवको जलाते और दश दिन तक अशौच चलाते हैं।

कोष्ठ (सं० पु०-क्ली०) कुष-थन्। उषिकुषिगतिभ्यस्थन्-उण् २।४। १ गृहमध्य, घरका भीतरी हिस्सा। २ उदरमध्य, पेटके बीचकी जगह। ३ कुशूल, खत्ती। (भारत २।५।६८) ४ उदरमध्यस्थित मलभाण्ड, पेटके बीच मल रहनेकी जगह।

"स्थानान्यामाग्निपक्वानां मूत्रस्य रुधिरस्य च।
हृदुण्डकः फुस फुसश्च कोष्ठ इत्यभिधीयते॥" (सुश्रुत)

यह मृदु, क्रूर तथा मध्यम भेदसे तीन प्रकारका होता है। बहुपित्तका मृदु, बहुवातश्लेष्म क्रूर और समदोष मध्यम कहलाता है। मृदुकोष्ठ दुग्धसे विरेच्य है। क्रूरकोष्ठ दुर्विरेच्य होता है। मध्यमकोष्ठको साधारण ही समझना चाहिये। मृदुको हलकी, क्रूरको तीक्ष्ण और मध्यको मात्रा मध्य ही रखना चाहिये। आमाशय, पक्वाशय, मूत्राशय और गर्भाशय आदिका नाम कोष्ठ है। हिन्दीमें इसीको कोठा कहते हैं। ५ उदर, पेट। (भागवत ६।१८।९२) ६ नाभिके ऊपरका मणिपुर पद्म। (भागवत ४।२३।१४) ७ प्राकार, चहारदीवारी। ८ कुष्ठ औषधि, कुड़। (कुष्ठ देखो।) ९ स्वकुक्षमें हृदयसे वस्ति पर्यन्त स्थान, कोखमें दिलसे पेशावकी जगह तक। १० एक चिह्न। अंगरेजीमें इसे ब्राकेट (Bracket) कहते हैं। (त्रि०) ११ आत्मीय।

कोष्ठक, कोष्ठ देखो।

कोष्ठपाल (सं० पु०) १ नगरपाल, चहारदीवारीका मुहाफिज। २ चीरमूर्वा, दूधिया मूरहर।

कोष्ठपुष्प (सं॰ पु॰) चीरमूर्वा, दूधिया मुरहर।

कोष्ठबद्ध (सं॰ क्ली॰) मलकी रुकावट, कब्जियत।

कोष्ठभेद (सं॰ पु॰) मलभेद, कोठेकी फूट।

कोष्ठशुद्धि (सं॰ स्त्री॰) कोष्ठस्य मलभाण्डस्य शुद्धिः, ६-तत्। मलभाण्डका उत्तम रूपसे परिष्कार, मलनिर्गम, कोठेकी सफाई।

कोष्ठसन्ताप (सं॰ पु॰) अन्तर्दाह, भीतरी जलन।

कोष्ठागार (सं॰ क्ली॰) कोष्ठमागारमिव। धान्यादि रखनेका गृह, गोला, खत्ती (भारत १।११९)

कोष्ठागारिक (सं॰ त्रि॰) कोष्ठागारे भवः तत्र नियुक्तो वा, कोष्ठागार-ठन्। कोष्ठागारमें उत्पन्न, गोलेका पैदा। २ कोष्ठागारमें नियुक्त, गोलेका नौकर।

कोष्ठागारिका (सं॰ स्त्री॰) मृत्तिकाविशेष, एक प्रकारकी मट्टी।

कोष्ठागारी (सं॰ पु॰) प्राणघातक कीटविशेष, जान ले लेनेवाला एक कीड़ा। इसके काटनेसे सान्निपातिक रोग उठ खड़े हो जाते हैं। (सुश्रुत)

कोष्ठाग्नि (सं॰ पु॰) जठरका पाचकाग्नि, कोठेको पचानेवाली गर्मी।

कोष्ठाङ्ग (सं॰ क्ली॰) नाभिहृदयादि पञ्चदशविधाङ्ग, तोंदी, दिल वगैरह पन्द्रह तरहके अजा।

कोष्ठाश्रित (सं॰ पु॰) अन्त्राध्मान, पेटका चढ़ाव।

कोष्ठिक (सं॰ क्ली॰) मट्टीको कुठाली।

कोष्ठिकयन्त्र (सं॰ क्ली॰) लौहकारका धमनयन्त्रविशेष, लोहारको एक धौंकनी। आत्रेयसंहिताके मतमें यह औजार १६ अङ्गुल विस्तृत और १ हाथके आयतका बनाना चाहिये।

कोष्ठिका (सं॰ स्त्री॰) कोष्ठिक देखो।

कोष्ठिकायन्त्र, कोष्ठिकयन्त्र देखो।

कोष्ठी (सं॰ स्त्री॰) जन्मपत्रिका। इसमें जन्मकालीन ग्रहनक्षत्रोंकी स्थिति और सञ्चारके अनुसार यावज्जीवनका शुभाशुभ लिखा रहता है।

कोष्ठीकी गणनामें सर्वप्रथम जन्म समयका निर्णय करना पड़ता है। समय स्थिर न होनेसे कोष्ठी बनाना कठिन है। घड़ी आदि यन्त्रोंसे अनेक बार सूक्ष्मरूपसे समय निर्णीत नहीं होता। इसीसे हमारे ऋषि द्वादशाङ्गुल शङ्कुच्छाया द्वारा जन्म समय स्थिर करते थे। शङ्कु और घटिका देखो। बहुतोंने फिर शङ्कुके परिवर्तमें दूसरे भी कई एक उपाय निर्देश किये हैं। सन्देह होनेसे उनके अनुसार समय ठहरा लिया जाता है।

सूतिकागृह और जनसंख्याके अनुसार लग्ननिर्णय इस प्रकार करते हैं—जन्मलग्न मेष, सिंह वा धनु रहनेसे सूतिकागृहकी चतुःसीमाकी पूर्व ओर ओर सूतिकागृहमें पांच उपसूतिकायें होंगी अर्थात् सूतिकागृह पूर्वदिक् होने और उसमें पांच उपसूतिकायें रहनेसे मेष, सिंह वा धनु लग्नका जन्म समझना चाहिये। इसी प्रकार दक्षिणदिक्‌को सूतिकागृह होने और उसमें चार उपसूतिकायें रहनेसे कन्या, वृष वा मकर, उत्तर दिशामें सूतिकागृह और दो उपसूतिका रहनेसे मिथुन, तुला वा कुम्भ और पश्चिमदिक् सूतिकागृह और दो उपसूतिकायें रहनेसे मीन, वृश्चिक अथवा कर्कट जन्मलग्न होता है।

वृहज्जातकमें अन्यप्रकार लग्ननिर्णयका उपाय प्रदर्शित हुवा है—जन्मकालको सूतिकागृहके पूर्व मेष तथा वृष, अग्निकोणको मिथुन, दक्षिण कर्कट एवं सिंह, नैर्ऋत कन्या, पश्चिम तुला तथा वृश्चिक, वायुकोणको धनुः, उत्तर मकर एवं कुम्भ और ईशानकोणको मीनराशि संस्थापन करना चाहिये। जिस ओर जात बालककी शय्या और शयन करानेमें उसका मस्तक रखते, उस ओरका लग्न हो जन्मलग्न समझते हैं। प्रसवकालको बालकका मस्तक पूर्वदिक् रहनेसे मेष, सिंह वा धनुः जन्मलग्न होता है। इसी प्रकार मस्तक दक्षिण दिक् रहनेसे कन्या, वृष वा मकर, पश्चिम दिक् रहनेसे कुम्भ, तुला वा मिथुन और उत्तरदिक् रहनेसे मीन, वृश्चिक अथवा कर्कट जन्मलग्न पड़ता है। किसी स्थान पर दिवा किंवा रात्रिकालको स्त्रियोंको प्रसव वेदना उपस्थित होनेसे किसी तैलपूर्ण प्रदीपमें बत्ती जलाकर रख देना चाहिये। इससे लग्नका भुक्त और भोग्य अंश निकल सकता है। जन्मकालको जिस राशिमें चन्द्र रहता, उसी राशिके तीस भागोंसे प्रथम दो वा तीन अंशोंके मध्य चन्द्र आनेसे जन्मकालको प्रदीपका तैल परिपूर्ण रहता है, फिर राशिके शेष अंशमें जन्म-

होनेसे प्रदीपका तैल देख नहीं पड़ता। यदि राशिके मध्य अर्थात् उसके १५ अंशोंमें चन्द्र रहता, तो प्रदीपका तेल अर्ध परिमाण जलता है। इसी प्रकारका प्रदीपका तैल जितना रहता किंवा जलता, राशिके उतने ही अंशोंमें चन्द्रका अवस्थान समझ पड़ता है।

जिस लग्नमें जन्म हुआ है, उसके तीस भागोंमें दो किंवा तीन अंशोंके मध्य जन्म होनेसे बत्तीके दो किंवा तीन अंश दग्ध होते हैं। उसी लग्नके १५ भागोंमें जन्म होनेसे बत्तीका आधा और शेषभागमें जन्म होनेसे उसका सम्पूर्ण परिमाण जलता है। इसी प्रकार बत्तीका जितना हिस्सा जलता, लग्नके उतने ही परिमाणमें जन्म समझ पड़ता है। यन्त्रादि द्वारा भी प्रदर्शित उपायोंमें अति सूक्ष्मरूपसे जन्म समय स्थिर करके कोष्ठी गणना की जाती है।

क्षेत्र, होरा, द्रेक्काण, नवांश, द्वादशांश और त्रिंशांश—छह प्रकारके भागोंका नाम षड्वर्ग है। मेष और वृश्चिक दो राशि मङ्गलका क्षेत्र हैं। वृष और तुलाको शुक्रका क्षेत्र कहते हैं। मिथुन और कन्या लग्न बुधका क्षेत्र है। कर्कटराशि चन्द्रका क्षेत्र होता है। धनु और मीन वृहस्पतिका क्षेत्र है। मकर और कुम्भराशिको शनिका क्षेत्र कहा है। सिंहराशि सूर्यका क्षेत्र है।

राशिके अर्धांशको होरा कहते हैं। मेष, मिथुन, सिंह, तुला, धनुः और कुम्भके प्रथम अर्धमें सूर्य और द्वितीयार्धमें चन्द्रकी होरा होती है। वृष, कर्कट, कन्या, वृश्चिक मकर और मीनके प्रथमार्धमें चन्द्र और द्वितीयार्धमें सूर्यकी होरा कही है।

राशिके तीन भागोंमें प्रत्येकका नाम द्रेक्काण है जो ग्रह जिस राशिका अधीश्वर रहता, वही उसी राशिके प्रथम द्रेक्काणका अधिपति ठहरता है। उसी राशिसे पञ्चम राशिका अधीश्वर ग्रह द्वितीय द्रेक्काणका अधिपति और उसके नवम राशिका अधीश्वर ग्रह तृतीय द्रेक्काणका अधिपति होता है। यथा—मेषके प्रथम द्रेक्काणका अधिपति मङ्गल, द्वितीय द्रेक्काणका अधिपति सूर्य और तृतीय द्रेक्काणका अधिपति शनि है। इसी प्रकार दूसरे राशिके द्रेक्काणके अधिपतियोंको भी समझ लेना चाहिये।

राशिके नव भागोंमें एक भागको नवांश कहते हैं। मेष, सिंह, धनु—तीन राशिके प्रथमका मङ्गल, द्वितीयका शुक्र, तृतीयका बुध, चतुर्थका चन्द्र, पञ्चमका रवि, षष्ठका बुध, सप्तमका शुक्र, अष्टमका मङ्गल और नवम अंशका अधिपति वृहस्पति है। मकर, वृष एवं कन्याके प्रथम तथा द्वितीयका शनि, तृतीयका वृहस्पति, चतुर्थका मङ्गल, पञ्चमका शुक्र, षष्ठका बुध, सप्तमका चन्द्र, अष्टमका रवि और नवम अंशका अधिपति बुध होता है। तुला, कुम्भ एवं मिथुन—तीन राशिके पहले अंशका शुक्र, दूसरेका मङ्गल, तीसरेका वृहस्पति, चौथे तथा पांचवेंका शनि, छठेका वृहस्पति, सातवेंका मङ्गल, आठवेंका शुक्र और नवें अंशका अधिपति बुध कहा है। कर्कट, वृश्चिक एवं मीन—तीन राशिके प्रथमका चन्द्र, द्वितीयका रवि, तृतीयका बुध, चतुर्थका शुक्र, पञ्चमका मङ्गल, षष्ठका वृहस्पति, सप्तम तथा अष्टमका शनि और नवम अंशका अधिपति वृहस्पति है।

राशिको १२ भाग करनेसे उसका एक एक अंश द्वादशांश कहलाता है। अपने राशिका अधिपति ग्रह ही प्रथम द्वादशांशका और तत्परवर्ती राशिका अधिपति ग्रह द्वितीय द्वादशांशका अधिपति माना है। इसी प्रकार पर पर राशिके अधिपति ग्रहको पर पर अंशका अधिपति समझना चाहिये। जैसे—मेषराशिके प्रथमका मङ्गल, द्वितीयका शुक्र, तृतीयका बुध, चतुर्थका चन्द्र, पञ्चमका रवि, षष्ठका बुध, सप्तमका शुक्र, अष्टमका मङ्गल, नवमका वृहस्पति, दशम तथा एकादशका शनि और द्वादश अंशका अधिपति वृहस्पति है। इसी प्रकार दूसरे राशिके द्वादशांशका अधिपति भी समझ लेना चाहिये।

राशिके तीस भागोंमें प्रत्येक भागका नाम त्रिंशांश है। मेष, मिथुन, सिंह, तुला, धनु और कुम्भ—छह राशिके प्रथम पांच अंशोंका मङ्गल, द्वितीय ५ अंशोंका शनि, फिर ८ अंशोंका वृहस्पति, ७ अंशोंका बुध और पिछले ५ अंशोंका अधिपति शुक्र होता है। वृष, कर्कट, कन्या, वृश्चिक, मकर और मीन छह राशिके प्रथम पांचका शुक्र, फिर ५का बुध, आठका वृहस्पति,

जातका शनि और पांच अंशोंका अधिपति मङ्गल है। जातव्यक्तिका षड़्वर्ग इसी प्रकार स्थिर करके तदनुसार फल भी स्थिर करना पड़ता है। (षड़्वर्ग देखो।)

पञ्चस्वरा मतमें शिशुका रिष्ट इस प्रकार होता है—यदि राहुग्रह कर्कटराशिमें रह कर चन्द्रसे मिलता, किंवा सिंह राशिमें सूर्यके साथ अवस्थान करता और जन्मलग्न पर यदि शनि तथा मङ्गलकी दृष्टि पड़ती, तो १५ दिनमें जात बालकका मृत्यु होता है। जन्मलग्नके नवम स्थानमें शनि, षष्ठ स्थानमें चन्द्र और सप्तम स्थानमें मङ्गल रहनेसे माताके साथ बालक मर जाता है। लग्नमें शनि, अष्टम स्थानमें चन्द्र और तृतीय स्थानमें वृहस्पति पड़नेसे बालकका मृत्यु अवश्यम्भावी है। जन्मलग्नके नवें स्थानमें रवि, सातवें शनि, ग्यारहवें वृहस्पति किंवा शुक्र आनेसे एक मासके मध्य बच्चा चल बसता है। जन्मलग्नमें शनि एवं मङ्गल, द्वादश स्थानमें बुध और पञ्चम स्थानमें चन्द्र पहुंचनेसे बालक एक माससे अधिक नहीं चलता। लग्नमें शनि तथा मङ्गल, आठवें घरमें चन्द्र और छठें वृहस्पति पड़नेसे बालकका जीवन निष्फल होता है। किसी किसी ज्योतिर्विद्‌के मतमें अष्टम स्थानमें वृहस्पति रहनेसे भी ऐसा ही फल मिलता है। रवि और चन्द्र षष्ठ स्थानमें पड़नेसे बालकका मृत्यु अचिर ही आ जाता है। अष्टम स्थानमें पापग्रह और द्वादश स्थानमें बुध रहनेसे फिर बालक नहीं जीता जागता। छठे या आठवें घरमें चन्द्र, सातवें मङ्गल और चौथे, सातवें या दशवें घरमें शनि रहनेसे एक महीनेके बीच ही पितामाताके साथ लड़का कालकवलित होता है। लग्नमें रवि, शुक्र तथा शनि और द्वादश राशि पर वृहस्पति पड़नेसे बच्चा ५ महीने बचता है। लग्नमें सूर्य, सप्तम स्थानमें मङ्गल और चतुर्थ, सप्तम किंवा दशम स्थानमें शनि आ जानेसे एकमासके मध्यमें ही बालक यमलोकयात्रा करता है। लग्नमें चन्द्र तथा शनि, द्वादश स्थानमें रवि एवं मङ्गल और जन्मलग्न पर शुभग्रहकी दृष्टि न पड़नेसे बालकका विनाश होता है। लग्नमें मङ्गल, द्वादश स्थानमें शनि और चतुर्थ स्थानमें राहु रहनेसे आठ महीनेके बीचमें बालक मर जाता है। इसको छोड़ कर वृहज्जातक, कोष्ठीसारावली, दीपिका आदि ग्रन्थोंमें भी नाना प्रकारके रिष्ट लिखे हैं। (रिष्ट देखो।)

राजमार्तण्डके मतमें—अश्विनी, मघा तथा मूला नक्षत्रोंके प्रथम तीन दण्ड और रेवती, अश्लेषा एवं ज्येष्ठा नक्षत्रोंके शेष पांच दण्ड गण्ड नामसे प्रसिद्ध हैं। ज्येष्ठा और मूला नक्षत्रोंके दिवस, मघा तथा अश्लेषा नक्षत्रोंकी रात्रि और रेवती एवं अश्विनी नक्षत्रोंकी उभय सन्ध्याओंको गण्ड लगता है। जिस बालक वा बालिकाका जन्म गण्डयोगमें हो, उसे परित्याग कर देना अथवा छह मास अतीत होने पर उसका मुख देखना चाहिये। किसी किसी ज्योतिर्विद्‌का कहना है—गण्डयोगकी दोषशान्तिके लिये दान एवं होम प्रभृति करके बच्चेको देखनेमें कोई बुराई नहीं। कोष्ठीसारावलीके मतमें अश्विनीके तीन, मघाके चार, मूलाके नौ, रेवतीके दो, ज्येष्ठाके ग्यारह और अश्लेषाके आठ दण्डोंका नाम गण्ड है। (गण्ड, पितृरिष्ट, मातृरिष्ट और रिष्टभङ्ग प्रभृति देखो।)

पञ्चस्वरा बताती है—बालकका जन्म होते ही पहले योगज रिष्ट समुदायको विचार करके देखना चाहिये। किन्तु चतुर्विंशति वत्सर अतीत न होनेसे आयुर्गणना करना अयोग्य है, क्योंकि चौबीस वर्षतक रिष्ट होनेकी सम्भावना रहती है। पताकीचक्र निरूपण करके भी रिष्ट विचारना पड़ता है। (पताकी देखो।)

लग्न, राशि, तिथि, नक्षत्र, मास, पक्ष, योग प्रभृतिका फल तत्तत् शब्द और जन्मकालकी मेष प्रभृति राशिस्थित रवि आदि ग्रहोंका फल ग्रह शब्दमें द्रष्टव्य है।

एक राशिचक्र खींचके उसमें जन्मकालीन ग्रहोंको स्थापन करना चाहिये। फिर ग्रहोंका स्फुट बनाके शयनादि द्वादश भाव गिनते हैं। सङ्केतकौमुदीमें शयन प्रभृति द्वादश भाव गणना करनेका यह नियम है—जन्मकालको जो ग्रह जिस नक्षत्रमें अवस्थिति करता, उस ग्रहको उसी नक्षत्रसे पूरण करना चाहिये और यह ग्रह अधिष्ठित-राशिके जिस नवांशमें अवस्थित हो, उसी नवांश परिमित अङ्क द्वारा पूर्वलब्ध अङ्कको पुनर्वार पूरण कर देना चाहिये। पीछे ग्रहोंका अपना अपना नक्षत्र इस अङ्कमें योग करके जन्मलग्नसंख्यक अङ्क और उदयावधि जात दण्ड उसमें मिलाते हैं। फिर

इन समस्त अङ्कोंको १२से भाग करने पर जो अवशिष्ट रहेगा, उसी अङ्कके अनुसार द्वादश भावको समझना पड़ेगा। १से शयन, २से उपवेशन, ३से नेत्रपाणि, ४से प्रकाशन, ५से गमनेच्छा, ६से गमन; ७से सभा वसति, ८से आगमन, ९से भोजन, १०से नृत्यलिप्सा, ११से कौतुक और १२से अवशिष्ट रहनेसे निद्राभाव समझा जाता है। रविके १६ विशाखा, चन्द्रके ३ कृत्तिका, मङ्गलके २० पूर्वाषाढ़ा, बुधके २२ श्रवणा, बृहस्पतिके ११ पूर्वफल्गुनी, शुक्रके ८ पुष्या, शनिके २७ रेवती, राहुके २ भरणी और केतुके ९ अश्लेषा नक्षत्र जन्मनक्षत्रोंके नामसे विख्यात हैं। इस विषयमें ज्योतिर्विदोंका नानाप्रकार मतभेद लक्षित होता है। उसमें सङ्केतकौमुदीका मत अच्छा समझ पड़नेसे नीचे लिखा जाता है—

प्रथम शुभ और अशुभ ग्रहोंका बलाबल निर्णय करना आवश्यक है। ग्रह स्वकीय उच्चस्थानमें रहनेसे अतिशय बलवान् होते हैं।

भावोंका फल इस प्रकार है—जन्मकालको रवि शयनभाव पर रहनेसे जात व्यक्ति मन्दाग्नि, पित्तशूल और गोद (मस्तक) तथा गुह्यदेशके रोगसे पीड़ित होता है। उपवेशनभावमें सूर्य आनेसे जातव्यक्ति शिल्पकर्मकारी, श्यामवर्ण, उत्तम विद्यारहित, दुःखयुक्त और परसेवानिरत रहता है। रवि नेत्रपाणिभावमें रह लग्नके पञ्चम, नवम, दशम वा सप्तम स्थानको जानेसे मनुष्य सर्वसुखयुक्त होता है। इसके सिवा अन्य स्थानमें रहनेसे क्रूरप्रकृति और जलदोष रोगयुक्त निकलता है। इसी प्रकार रविके तृतीय भावका फल चक्षुरोग, अतिशय क्रोध, परद्वेष, पुण्य कर्मानुष्ठान और धन है। चौथे भावका फल दानशक्ति, भोजनशक्ति, राजतुल्य सम्मान, पुत्रलाभ और विपुल धन कहा है। पञ्चम भावमें निद्राभिलाष, क्रोध, क्रूरप्रकृति, कुबुद्धि, दाम्भिकता, कृपणता और परदारको अभिरुचि होती है। छठे भावका फल प्रथम स्त्री तथा प्रथम पुत्रका विनाश, विदेशवास और पादरोग है। सातवें भावमें दया, सम्मान, विद्या और विनय आता है। रविके अष्टम भावमें पड़नेसे मूर्खता, मिथ्याकथा, कुत्सित विद्या, निर्दयता और परनिन्दा होती है। ९म भावका फल दाम्भिकता, मांसलोभ, सदाचार और पाण्डित्य आता है। दशवें भावका फल कर्णरोग, नाना विद्या, राजपूजा और पाण्डित्य है। एकादश भावमें रविके जानेसे उत्साह, दानशक्ति, भोजनशक्ति, और शिल्पकर्मका अनुष्ठान होता है। रविके द्वादश भावका फल अधिक निद्रा, व्याधि, प्रवास, चक्षु रक्तवर्ण, क्रोध और परनिन्दा है।

दूसरे ग्रहोंका भावफल 'भावफल' शब्दमें द्रष्टव्य है।

अपर ज्योतिर्विदोंने ग्रहोंके छह भाव निर्देश किये हैं—१ लज्जित, २ गर्वित, ३ क्षुधित, ४ तृषित, ५ मुदित और ६ क्षोभित।

जो ग्रह रवि किंवा मङ्गल अथवा शनिके साथ एक राशिमें अथवा लग्नसे पञ्चम स्थानमें राहुके साथ मिलित हो अवस्थिति करता, उसका नाम लज्जित पड़ता है। स्वीय तुङ्गस्थान अथवा स्वीय मूलत्रिकोणमें रहनेवाला ग्रह गर्वित कहलाता है।

शत्रुसे मिलकर जो रिपुके गृहमें जा पड़ता और रिपु उसको देखता रहता, उसको दैवज्ञ क्षुधित कहते हैं। शनिके साथ एक राशिमें अवस्थान करनेवाले ग्रहका भी नाम क्षुधित है।

जलराशि अर्थात् कर्कट, वृश्चिक वा मीनराशिमें रहनेवाला और रिपुग्रह दृष्टियुक्त तथा शुभग्रह दृष्टिविहीन ग्रह तृषित होता है।

जो ग्रह मित्रके साथ मित्रगृहमें अवस्थान करता और अपने पर मित्रग्रहको दृष्टि रखता, वह मुदित ठहरता है। बृहस्पतिके साथ एक राशिमें अवस्थित ग्रह भी मुदित ही है।

जो ग्रह रविके साथ एक राशिमें पड़ता और अपने पर पापग्रह तथा शत्रुकी दृष्टि नहीं रखता, उसका नाम क्षोभित पड़ता है।

लज्जित आदि छहो भावोंका फल इस प्रकार है—जिसके लग्नसे दशम स्थानमें लज्जित, तृषित, क्षुधित अथवा क्षोभित ग्रह पड़ जाता, वह व्यक्ति दुःख उठाता है। लग्नके पञ्चम स्थानमें कोई लज्जित ग्रह रहनेसे मनुष्यके सब सन्तानोंमें एकही बचता है। लग्नसे सप्तम स्थानमें कोई क्षुधित अथच क्षोभित ग्रह आनेसे स्त्रीका विनाश होता है।

दैवज्ञवल्लभामें ग्रहोंके १० भाग उक्त हुये हैं—१दीप्त, २ दीन, ३ सुस्थ, ४ मुदित, ५ सुप्त, ६ प्रपीड़ित, ७ मुषित, ८ हीनवीर्य, ९ प्रवृद्धवीर्य और १० अधिकवीर्य। स्वीय उच्च स्थानमें अवस्थित दीप्त तथा नीचस्थानमें स्थित दीन, स्वीय गृहस्थ सुस्थ, शत्रु गृहस्थ सुप्त, ग्रहयुद्धमें पराजित प्रपीड़ित और अस्तगत ग्रह मुषित होता है। अपने नीच गृहके अभिमुख गमन करनेवाला परिहीनवीर्य, स्वीय उच्च गृहकी ओर चलनेवाला प्रवृद्धवीर्य और शुभगृहके षड्वर्गमें अवस्थित ग्रह अधिकवीर्य कहलाता है।

ग्रहोंके उक्त १० भावोंका फल इस प्रकार है—ग्रहोंके दीप्तभावमें उत्तम कार्यसिद्धि, दीनभावमें दीनता, सुस्थभावमें धन, लक्ष्मी, कीर्ति तथा सुखलाभ, मुदितभावमें आमोद एवं वाञ्छित फलप्राप्ति, सुप्तभावमें विपद्, पीड़ितभावमें शत्रुपीड़ा, मुषितभावमें अर्थक्षय, हीनवीर्यमें वीर्यहानि, प्रवृद्धवीर्यमें हस्ती, अश्व, रत्न तथा भूमिलाभ और अधिक वीर्य भावमें राजसदृश सम्पद् पाते हैं। सारावली प्रभृति दूसरे दूसरे ग्रन्थोंमें अन्यप्रकार भावोंका उल्लेख है। परन्तु उनका आदर भारतवर्षमें अधिक नहीं है।

जिस लग्नमें जन्म होता, उसको प्रथम स्थान मानके गणना करना पड़ता है। दीपिकाकार श्रीनिवासने इन सभी स्थानोंको तन्वादि भावों-जैसा लिखा है। उनके मतमें प्रथम स्थान अर्थात् जन्मलग्न तनुभाव वा तनुस्थान, द्वितीय धनस्थान, तृतीय सहोदरस्थान, चतुर्थ बन्धुस्थान, पञ्चम पुत्रस्थान, षष्ठ रिपुस्थान, सप्तम भार्यास्थान, अष्टम मृत्युस्थान, नवम धर्मस्थान, दशम कर्मस्थान, एकादश आयस्थान और द्वादश व्ययस्थान है।

प्रथम स्थानमें शक्ति, शरीर भला बुरा और मङ्गल चिन्ता करना चाहिये। इसी प्रकार द्वितीयस्थानमें धन तथा कुटुम्बका विषय चिन्तनीय है। तृतीयस्थानमें विक्रम, सहोदर एवं युद्धका विषय, चतुर्थस्थानमें बन्धु, वाहन, सुख तथा गृहका विषय, पञ्चम स्थानमें बुद्धि, मन्त्रणा एवं पुत्रका विषय, षष्ठ स्थानमें क्षत तथा शत्रुका विषय और सप्तम स्थानमें काम, स्त्री एवं पथका विषय चिन्ता करते हैं। अष्टम स्थानमें आयु, अपवाद वा पापका विषय, नवम स्थानमें तपस्या, दशम स्थानमें सम्मान, आज्ञा तथा कर्मका विषय, एकादश स्थानमें प्राप्ति एवं आय और द्वादश स्थानमें सत्कौ तथा व्ययकी चिन्ता की जाती है।

प्रथम स्थानसे द्वादशस्थान पर्यन्त जो समस्त चिन्तायें उक्त हुई हैं, उनका फलाफल निर्णय करते समय भावापन्न राशियों और उनके अधिपति ग्रहोंका वर्ण, आकृति, खर्वता, दीर्घता आदि स्थिर करके ग्रहों और राशियोंका बलाबल देख और यह विवेचना करके कि ग्रह कहांतक फल दे सकता है—फल लगाना पड़ेगा। उक्त स्थानोंके ग्रह यदि शुभग्रह वा स्थानके अधिपति ग्रहसे युक्त वा दृष्ट होते, तो अधिक फल देते हैं। किन्तु उनसे पापग्रहकर्तृक दृष्ट वा युक्त होने और स्थानके अधिपति ग्रहकी दृष्टि न पड़नेसे फलकी हानि होती है। तनु प्रभृति जो द्वादश भाव उक्त हुए हैं, तत्तत् भावापन्न ग्रहोंकी स्फुट गणना व्यतीत फलाफल स्थिर किया नहीं जाता। इसीसे स्फुट करके भावफल विवेचना करना पड़ता है। सिवा इसके दशा, प्रत्यन्तर्दशा और उनका फलाफल भी कोष्ठीमें लिखनेका नियम है। रवि प्रभृति शब्द देखो।

योगिनी, वार्षिकी, नाक्षत्रिकी, लाग्निकी, मुकुन्दा, विंशोत्तरा, त्रिंशोत्तरा, पताकी, हरगौरी और दिनदशा—१० दशायें ज्योतिःशास्त्रमें निरूपित हुई हैं। कलिकालमें केवल नाक्षत्रिकी दशाके अनुसार ही फल मिलता है। इसीसे जन्मपत्रीमें नाक्षत्रिकी दशाही लिखी जाती है। यह नाक्षत्रिकी दशा अष्टोत्तरी, विंशोत्तरी और त्रिंशोत्तरी तीन रीतियोंसे गणना करते हैं। अष्टोत्तरीके मतमें केतुकी दशा नहीं लगती। परन्तु विंशोत्तरी और त्रिंशोत्तरामें उसे भी रख लेते हैं। दशा शब्दमें विस्तृत विवरण देखो। कोष्ठीमें एक जातचक्र अङ्कित करना पड़ता है। उसकी प्रणाली इस प्रकार है—जातककी एक प्रतिमूर्ति बना उसके मस्तक प्रभृति प्रत्येक अङ्गमें २७ नक्षत्र स्थापन करना चाहिये। जन्मकालको जिस नक्षत्रमें रवि होगा, उससे तीन नक्षत्र मस्तकमें और तत्परवर्ती तीन नक्षत्र मुखमें रखना पड़ते हैं। इसी प्रकार स्कन्धोंमें २, बाहुओंमें २, करतलोंमें २, वक्षःस्थल

में ५, नाभिमें १, गुह्यदेशमें १, जानुवोंमें ६ और पादतलोंमें ४ नक्षत्र रखे जाते हैं। इस प्रकार नक्षत्र स्थापन करनेमें जिस अङ्ग पर जन्मनक्षत्र पड़ता, उसीके अनुसार आयुः और अपर फलाफल जाना जा सकता है।

जन्मनक्षत्र जातचक्रके चरणमें लगनेसे अल्पायुः, जानुमें भ्रमण, गुह्यदेशमें परदारिक, नाभिमें अल्पधन, हृदयमें प्रचुर धनलाभ, हस्तमें चोर, बाहुमें दुःख, स्कन्धमें भोग, मुखमें धार्मिक और मस्तकमें पड़नेसे मनुष्य राजा होता है। जिसका जन्मनक्षत्र जातचक्रके मस्तक पर देख पड़ेगा, वह व्यक्ति एकशत वत्सर जीवित रहेगा। इसी प्रकार स्कन्धमें ८०, हृदयमें ८५, हस्तमें ७०, बाहु तथा गुह्यदेशमें ६६ और जानुमें पड़नेसे ५० वत्सर जीवित रहेगा। जातकाभरणकार ढुण्ढिराजने जातचक्रको डिम्भचक्र जैसा लिखा है। उनके मतमें फलका भी व्यतिक्रम देख पड़ता है। इसके सिवा प्रत्येक ग्रहका अष्टवर्ग और महाष्टवर्ग भी गणना करके कोष्ठीमें लिखते हैं। उसकी प्रणाली महाष्टवर्गमें द्रष्टव्य है। ग्रहोंकी स्थितिके अनुसार जारजयोग, राजयोग, नाभसयोग, चन्द्रप्रभायोग, वेत्रसिंहासनयोग, निशाखड्गयोग, धनवान्योग, जीवयोग, चतुःसागरयोग, सिंहासनयोग, कनकदण्डयोग, राजहंसयोग, दारिद्र्ययोग, तीर्थमरणयोग, वंशनाशयोग, रुद्रयोग, फणिमुखयोग, काकयोग, व्याघ्रतुण्डयोग, हुताशनयोग, केमद्रुमयोग, ललाटीयोग और श्रीयोग प्रभृति कई एक योग हुवा करते हैं। उनका फलाफल योग शब्द और आयुर्गणना-प्रणालीके पर आयुः शब्दमें देखो। केतुपताकी, केतुकुण्डली और गुरुकुण्डली—तीनों मतोंसे यदि पापग्रहका वर्ष आता, तो वह त्रिपाप वत्सर कहलाता है। यह समझनेके लिये कोष्ठीमें एक त्रिपापचक्र खींचना पड़ता है। त्रिपाप देखो।

पूर्वोक्त गणनाके अनुसार वर्षके अधिपति रवि प्रभृति ग्रहोंका फल खनाने इस प्रकार कहा है—

'रवि वत्सरका शून्यफल शिरःशूलज्वर होय।
भवन जरे मानुस मरे विघ्न सकल गिन कोय॥
बुध वत्सरके आवर्ते भ्रमण मरण ह्वै जात।
पीड़ा बनिता पुत्रकी रोग शोक अधिकात॥
धनचिंता लागो रहे अर्थहानि बुध देत।
शनि मङ्गल यमदूत हैं करते सदा अचेत॥
यह घरको हैं फूंकते चोर करें उत्पात।
राजा सब हरि लेत हैं सत्य खनाकी बात॥
राहु वर्ष वैरी पड़े नाना दुःख दिखात।
सुखको नाम न रहतु है मनुज बहुत बिलखात॥
शनिवत्सर नहिं भोगसुख बन्धुवियोग अपार।
रोग शोक बाढ़त बहुत ऊपर फटत पहार॥'

त्रिपाप वत्सर यदि सप्तशून्य पड़ता, तो मनुष्य उसी वत्सर मरा करता है। इसीसे जन्मपत्रीमें एक सप्तशून्यचक्र खींच लेते हैं। सप्तशून्यचक्रसे अनायास सप्तशून्य वर्ष निकाला जा सकता है। सप्तशून्य देखो।

खनाके मतमें आयुर्गणना इस प्रकार होती है—

'एक ऊन करि दून शक गुनि तिथि वार नक्षत्र।
षष्टीसरअतहरण कर शेष आयुको पत्र॥'

जन्मकालीन ग्रहोंका स्फुट करके तनु प्रभृति द्वादश भाव ठहराना पड़ते हैं। भावसाधन देखो।

ग्रहस्फुट और भावसाधन करके जिस प्रकार जन्मकुण्डली खींचना पड़ती, उसका उदाहरण स्वरूप एक चक्र नीचे दिया जाता है।

वृष २ अं०
मेष १२ अं०
मीन ८ अं० शनि ३ अं० चन्द्र १३ अं०
लग्न मिथुन १७ अं० ३६ क०
कुम्भ ८ अं०
कर्कट १२ अं० केतु १५ अं०
मकर १२ अं० राहु १५ अं० वृहस्पति १८ अं०
सिंह ८ अं०
कन्या ८ अं०
तुला १३ अं०
वृश्चिक ११ अं० मङ्गल १३ अं०
धनु १७ अं० २६ क० रवि १७ अं० बुध १ अं० शुक्र २५ अं०

१८०० शकाब्दके पौष मासको सूर्यके १७ अंश बीतने पर दिवा अपराह्न ५ बज कर १७ मिनट पर जिसका जन्म हुवा, उसीकी यह जन्मकुण्डली है।

जन्मकालको मिथुनके १७ अंश ३६ कला तक लग्नका तनुभाव है। उसके आगे कर्कटके १२ अंश पर्यन्त द्वितीय धनभाव है। उसके पीछे सिंहके ८ अंश पर्यन्त तृतीय सहोदरभाव है। इसी प्रकार कन्याके ८ अंश पर्यन्त चतुर्थ बन्धुभाव होता है। तुलाके १२ अंश पर्यन्त पञ्चम पुत्रभाव है। वृश्चिकके १६ अंशतक छठां रिपुभाव है। धनुके १७ अंश ३६ कला सातवां जाया-भाव आता है। मकरके १२ अंश पर्यन्त अष्टम निधन-भाव रहता है। कुम्भके ८ अंश तक नवम धर्मभाव, मीनके ८ अंश पर्यन्त दशम कर्मभाव, मेषके १२ अंश तक ग्यारहवां आयभाव और वृषके ६ अंश पर्यन्त द्वादश व्ययभाव है।

जन्मकालको रवि धनु:राशिके १७ अंश पर अव-स्थित है। इसी प्रकार चन्द्र मीनराशिके १६ अंश, मङ्गल वृश्चिकराशिके १२ अंश, बुध धनु:राशिके १ अंश वृहस्पति मकर राशिके १८ अंश, शुक्र धनुराशिके २५ अंश, शनि मीनराशिके ३ अंश, राहु मकरराशिके १५ अंश और केतु कर्कटराशिके १५ अंश पर पड़ा है। इन सभी ग्रहोंकी स्थितिके अनुसार भावोंका फल विचारना पड़ता है।

बहुकालसे भारतमें जन्मपत्रिका लिखनेका नियम प्रचलित है। भृगुसंहितामें राम कृष्ण प्रभृतिकी कोष्ठी भी देख पड़ती है। भारतीयोंका विश्वास है कि ग्रह-गण देवता मानवजन्मसे मृत्यु पर्यन्त किसी न किसी एक ग्रहके अधिकारमें अवस्थान करते हैं। ग्रह ही मानवके शुभाशुभ फलोंका कारण हैं। ग्रह मन्द होनेसे स्त्री, पुत्र, राज्य, ऐश्वर्य प्रभृति सभी विनष्ट हो सकता है। फिर शुभग्रह मानवके सकल प्रकार सुखके कारण हैं; यहां तक कि वह ससागरा पृथिवीका आधिपत्य भी दे सकते हैं।

भारतीयोंकी भांति मुसलमानों, यहूदियों आदिमें भी बहुकालसे जन्मपत्रिका आदर चला आता है। युरोपियोंमें भी कोई कोई जन्मकोष्ठी प्रस्तुत किया करता है। फिर कोई कोई वैज्ञानिक जन्मपत्री पर कुछ भी विश्वास नहीं रखता। उनका कहना है—ग्रहोंका अवस्थान जातकग्रन्थोंमें जिस प्रकार निर्णीत हुआ है, ठीक नहीं पड़ता; सुतरां उस पर निर्भर करके मान-वका शुभाशुभ कुछ भी ठीक किया जा नहीं सकता। जातक और ज्योतिष शब्दमें विस्तारित विवरण देखो।

युरोपीय जिस प्रकारकी जन्मपत्री बनाते, उसमें भी १२ प्रकोष्ठ दिखाते हैं। परन्तु वह भारतकी अङ्कित कुण्डलीसे कुछ भिन्न रहती है।

भारतमें बहुत दिनसे जन्मकोष्ठीका आदर है। इतना कि किसीकी जन्मपत्री न रहनेसे नष्टकोष्ठीका उद्धार भी हुआ करता है।

वराहमिहिरके वृहज्जातकमें नष्टजातकके उद्धार सम्बन्ध पर लिखा गया है—

जिसके जन्मकालका निश्चय नहीं, प्रश्नलग्नसे उसका जन्मसमय ठीक करना पड़ता है। लग्नकी प्रथम होरामें प्रश्न होनेसे उत्तरायण अर्थात् माघादि छमास और द्वितीय होरामें श्रावणादि छह महीनोंके बीच जन्म निश्चय करना चाहिये। प्रश्नलग्नको तीन भाग करके देखते हैं—किस द्रेक्काणमें प्रश्न किया गया है। प्रथम द्रेक्काणमें वृहस्पति प्रश्नलग्न पर, द्वितीय द्रेक्काण-में प्रश्नलग्नसे पञ्चम स्थान और तृतीय द्रेक्काणमें प्रश्न होनेसे जन्मकालको प्रश्नलग्नसे नवम स्थान पर वृहस्पतिका अवस्थान समझना चाहिये। प्रश्नलग्नसे जिस स्थान पर वृहस्पति वर्तमान रहते, उसी स्थान तक गिननेसे राशि आनेवाले संख्यक वत्सर प्रश्न-कर्ताके वयसके अतीत माने जाते हैं।

लग्नके प्रथम द्वादशांशमें प्रश्न होनेसे जन्मलग्नमें वृहस्पतिका अवस्थान ठहरता है। इसी प्रकार द्वितीय द्वादशांशमें दूसरे और तृतीयादिमें होनेसे तृतीयादि स्थानोंमें वृहस्पतिका अवस्थान समझते हैं। प्रश्नकर्ताका आकार देखके अनुमानसे वयस स्थिर करना चाहिये। पूर्वानुसार वृहस्पतिकी स्थिति निर्णय करके उसी राशिसे वर्तमानको वृहस्पति जिस स्थान पर रहते, वहां तक गिनके जितनी संख्या आती, प्रश्नकर्ताके वयसके उतने ही वर्ष ठहरते हैं। किन्तु प्रश्नकर्ताका वयस अनुमानमें

१२से २४ वर्षके बीच रहने पर निरूपित अङ्कमें १२ मिलाके वयस निर्णय करना चाहिये। २४ वत्सरसे अधिक ३६ वत्सरके मध्य वयस अनुमित होने पर २४ मिला देते हैं। इसी प्रकार जितना ही अधिक वयस समझ पड़े, १२के हिसाबसे बढ़ाते जाना चाहिये। १२० वर्षसे अधिक होने पर गणना करनेकी कोई आवश्यकता नहीं। यदि प्रश्न लग्नमें रवि रहे या रविके द्रेक्काणमें प्रश्न हो, तो ग्रीष्म ऋतुका जन्म स्थिर करते हैं। इसी प्रकार शनिसे शिशिर, शुक्रसे वसन्त, मङ्गलसे ग्रीष्म, चन्द्रसे वर्षा, बुधसे शरत् और वृहस्पतिसे हैमन्त ऋतु निकलता है। दो या उससे अधिक ग्रह लग्नमें रहनेसे जो ग्रह बलवान् हो, उसीसे ऋतु निर्णय करना चाहिये। लग्नमें एक भी ग्रह न रहनेसे द्रेक्काणके अनुसार ऋतु निकाला जाता है।

यदि अयन और ऋतु परस्पर विरुद्ध हों अर्थात् प्रथम होरामें प्रश्न होनेसे उत्तरायण—किन्तु प्रश्नलग्नमें बुध रहनेसे शरत् समझ पड़े, तो ऐसे स्थल पर परिवर्तन कर लेना चाहिये। अर्थात् चन्द्र, बुध तथा वृहस्पतिकी जगह पर शुक्र, मङ्गल एवं शनिको ग्रहण करते हैं। गणना ऐसी लगाना चाहिये, जिसमें अयन और ऋतुका विरोध न पड़े।

ऋतुके पीछे मास ठीक करते हैं। लग्नके प्रथम द्रेक्काणमें ऋतुका पहला मास, द्वितीय द्रेक्काणमें दूसरा और तृतीय द्रेक्काणमें ऋतुका पहला मास मान लेते हैं। मास और तिथिकी गणनामें सर्वत्र सौरमास ग्रहण करना चाहिये। प्रत्येक लग्नमें १८०० कलायें और उसके एक एक द्रेक्काणमें ६०० कलायें होती हैं। प्रथम ३०० कलावोंके मध्य प्रश्न होनेसे ऋतुके पहले मास और ३०० कलाओंके पीछे ६०० कलाओंके बीच प्रश्न किया जानेसे ऋतुके दूसरे महीनेका जन्म माना जाता है। उक्त ३०० कलावोंको दश दश कलावोंमें एक एक तिथि लगाते हैं। प्रथम १० कलाओंमें प्रश्न होनेसे प्रतिपत्, उसके बाद १० कलावोंमें द्वितीया ठहरती है। इसी प्रकार यथाक्रम तिथि निर्णय करना चाहिये।

मनित्थके मतानुसारा प्रश्नकालका लग्न दिव्य होनेसे रात्रिकाल और रात्रिसंज्ञक रहनेसे दिवाभागको प्रश्नकर्ताका जन्म ठहरता है।

अन्य प्रकार नियम भी है, यथा—कृत्तिका तथा रोहिणी नक्षत्रमें कार्तिक, मृगशिरा एवं आर्द्रामें अग्रहायण, पुनर्वसु तथा पुष्यामें पौष, अश्लेषा एवं मघामें माघ, पूर्वफल्गुनी, उत्तरफल्गुनी तथा हस्तामें फाल्गुन, चित्रा एवं स्वातीमें चैत्र, विशाखा तथा अनुराधामें वैशाख, ज्येष्ठा एवं मूलामें ज्यैष्ठ, पूर्वाषाढ़ा तथा उत्तराषाढ़ामें आषाढ़, श्रवणा एवं धनिष्ठामें श्रावण, शतभिषा, पूर्व भाद्रपद तथा उत्तरभाद्रपदमें भाद्र और रेवती एवं अश्विनी नक्षत्रमें प्रश्न होनेसे आश्विन मासका जन्म समझना चाहिये।

मेषके नवम नवांश अवधि वृषके सप्तम नवांश पर्यन्त किसी राशिके नवांशमें उक्त नवांशस्थित चन्द्र होनेसे कार्तिक, वृषके अष्टम नवांशसे मिथुनके षष्ठ नवांश पर्यन्त अग्रहायण, मिथुनके सातवें नवांशसे कर्कटके पांचवें नवांश तक पौष, कर्कटके षष्ठ नवांशसे सिंहके चतुर्थ नवांश पर्यन्त माघ, सिंहके पञ्चम नवांशसे कन्याके सप्तम नवांश पर्यन्त फाल्गुन, कन्याके आठवें नवांशसे तुलाके छठें नवांश तक चैत्र, तुलाके सातवें नवांशसे वृश्चिकके पांचवें नवांश तक वैशाख, वृश्चिकके छठें नवांशसे धनुःके चौथे नवांश तक ज्यैष्ठ, धनुःके पञ्चम नवांशसे मकरके तृतीय नवांश पर्यन्त आषाढ़, मकरके चतुर्थ नवांशसे कुम्भके द्वितीय नवांश पर्यन्त श्रावण, कुम्भके तीसरे नवांशसे मीनके पांचवें नवांश तक भाद्र और मीनके छठें नवांशसे मेषके आठवें नवांश तक आश्विन मास लगाया जाता है। इस गणनामें शुक्ल प्रतिपद्से मास ग्रहण करना चाहिये। यवनेश्वरका कहना है—प्रश्नकालको चन्द्र जिस राशिमें अवस्थित होगा, उतना संख्यक नवांश उसी राशिके जिस नक्षत्रका जो पाद सम्भव होगा, उसी नक्षत्रमें जो मास होगा, प्रश्नकर्ताका वही जन्ममास समझा जायेगा। जैसे प्रश्नकालको मेषका पञ्चम नवांश मिलनेसे नवांशचक्रमें सिंह पर चन्द्रकी स्थिति और सिंहके पञ्चम पादमें पूर्वफल्गुनीका प्रथमपाद हो, इसमें पूर्वफल्गुनी नक्षत्रमें फाल्गुन मास होनेसे, वही प्रश्नकर्ताका जन्ममास ठहरा।

प्रश्न लग्न, तत्पञ्चम और उसका नवम—इन

तीन राशियोंके मध्य जो राशि अधिक बलवान् रहता, वही प्रश्नकर्ताका जन्मराशि ठहरता है। अथवा प्रश्न कालको प्रश्नकर्ता जो अङ्ग स्पर्श करता रहेगा, उससे कालपुरुषके अङ्गविभाग पर पड़नेवाले राशिमें उसका जन्म ठहरेगा। किंवा प्रश्नकालको लग्नसे जिस राशि पर चन्द्र होगा, उसी चन्द्रगत राशिको राशिगणनाका उतना संख्यक राशि जन्मराशि ठहरेगा। जैसे—मीन लग्नमें प्रश्न होनेसे मीनराशि आता है। ऐसे हो दो तीन तरह गणना करनेसे यदि एक राशि न हो, तो उस समय जिस किसी जीवका देखते या जिसका स्वर सुनते, उसी प्राणीके अनुसार जन्मराशि स्थिर करते हैं। अर्थात् महिषादि स्थल पर वृषराशि और छागादि स्थल पर मेषराशि इत्यादि ठहराते हैं।

प्रश्न लग्नमें जो ग्रह हो, उसी ग्रहके स्फुट राश्यादि को अंश करके उसके अंशमें मिला देना चाहिये। इस अङ्क समष्टिको द्वादशाङ्गुल-परिमित शङ्कुको छायामें अङ्गुलि संख्या द्वारा पूरण करके जो आयेगा, उसमें १२से भाग लगाया जायेगा। इसमें जो बाकी बचता, मेषसे उतनाही संख्यक राशि प्रश्नकर्ताका जन्मलग्न ठहरता है। लग्नमें दो तीन या अधिक ग्रह रहनेसे जो ग्रह बलवान् होता, वही रखा जाता है। अथवा प्रश्नकालको जो नवांश आता, वही राशि प्रश्नकर्ताका जन्मलग्न कहलाता है।

नक्षत्रादि प्रश्नकालीन लग्नस्फुटके राश्यादि कला करके कलाके साथ जोड़ देना चाहिये। फिर उसी युताङ्कको राशिगुणक द्वारा गुण करते हैं। प्रश्नलग्नमें ग्रह रहने पर राशिगुणकसे गुण न करके ग्रह गुणकसे गुण किया जाता है। राशिगुणक ऐसा होता है—मेष-का ७, वृषका १०, मिथुनका ८, कर्कटका ४, सिंहका १०, कन्याका ५, तुलाका ७, वृश्चिकका ८, धनुःका ९, मकरका ५, कुम्भका ११ और मीनका १२। ग्रहगुणक यों है—रवि, चन्द्र, बुध और शनिका ५, मङ्गलका ८, वृहस्पतिका १० और शुक्रका ७। लग्नमें दो वा अधिक ग्रह रहनेसे जो जो ग्रह लग्नमें होते, उनका गुणकाङ्क मिला दिया जाता है। फिर जो योगफल आता है, उससे उतने को हो गुण किया करते हैं।

भट्टोत्पलके मतानुसार प्रथम द्रेक्काणमें प्रश्न होनेसे ९ और द्वितीय द्रेक्काणमें ९ वियोग करना पड़ता है, तृतीय द्रेक्काणमें योग वियोग कुछ भी नहीं होता। गृहीत अङ्कको २७से भाग करके जो भागशेष आता, उसके द्वारा नक्षत्र निर्णय किया जाता है। जैसे—१से अश्विनी और २से भरणी इत्यादि। इस प्रकार निकलनेवाला नक्षत्र ही जन्मनक्षत्र ठहरता है।

प्रश्नकर्ता यदि अपने लिये प्रश्न न करके पत्नी, भ्राता, पुत्र अथवा शत्रुके जन्मकालको पूछता हो, तो पत्नीके नष्टजातकके प्रश्नकालको प्रश्नलग्नका सप्तम राशि, भ्राताका तृतीय राशि, पुत्रका पञ्चम राशि और शत्रु-का षष्ठ राशि एवं उन्हीं उन्हीं राशिस्थ ग्रहोंको लेकर पूर्ववत् गणना करना चाहिये।

कोष्ठीगणक (सं० पु०) ज्योतिर्विद्, जन्मपत्री बनाने-वाला।

कोष्ठीगणना (सं० स्त्री०) जन्मकालीन ग्रहोंका स्फुट और लग्नादिके गणितानुसार स्थिरीकरण, जन्मपत्री बनानेकी रीति।

कोष्ठेक्षु (सं० पु०) श्वेतेक्षु, सफेद ऊख।

कोष्ण (सं० क्ली०) ईषदुष्णम्, कु-उष्ण कोः कादेशः। १ ईषदुष्ण, थोड़ी गर्मी। (त्रि०) ईषदुष्णविशिष्ट, थोड़ा गर्म, गुनगुना। (रघु १।९८)

कोस (हिं० पु०) क्रोश, २ मील। पहले यह ४००० या ८००० हाथका भी माना जाता था।

कोसगी—१ हैदराबाद-राज्यके अन्तर्गत गुलबर्ग जिलामें सलारजङ्ग घरानेके अधीन कोसगी राज्यका प्रधान शहर। यह अक्षा० १६° ५९' उ० और देशा० ७७° ४३' पू०में अवस्थित है। यहांकी जनसंख्या प्रायः ८ हजार है। इस शहरमें एक औषधालय, एक पुलिस स्टेशन और एक विद्यालय है। ये सब राज्यसे ही रक्षित हैं। रेशमी और सूती साड़ी यहां यथेष्ट परिमाणमें प्रस्तुत होती हैं। लगभग १५०० करघे चलते हैं।

२ मन्द्राजके अन्तर्गत विलारी जिलाके अदोनी तालुक-का एक शहर। यह अक्षा० १५° ५१' उ० और देशा० ७७° १५' पू० पर मन्द्राज रेलवे लाइनके उत्तर-पश्चिममें अवस्थित है। यहांकी जनसंख्या प्रायः ९ हजार है। यह

शहर एक पहाड़ीके निकट बनाया गया है। जिसकी ऊंचाई लगभग ४००।५०० फीट है। यह शहर छोटी २ पहाड़ियोंसे घिरा हुवा है जो देखनेमें बहुत सुन्दर लगते हैं। उन पहाड़ियोंमेंसे एक जो कोसगी स्टेशनसे ३ मील दक्षिण है, हिन्दुस्तानके दक्षिणभागमें सबसे सुन्दर ह। इस शहरमें चमड़ा रंगा जाता है और साधारण सूती कपड़े बुने जाते हैं, जिन्हें उसी जिलाकी स्त्रियां पहनती हैं। यहां १८७७ और १८८१ ई०में भीषण अकाल पड़ा था। जिसमें सैकड़े २७ मनुष्य १८७१ ई०की अपेक्षा घट गये थे। परन्तु फिर मनुष्योंकी संख्या बढ़ती गई और आजकल यह एक प्रभावशाली स्थान हो गया है।

कोसना (हिं० क्रि०) अभिशाप देना, गाली दे दे कर बुरा मनाना।

कोसम (हिं० पु०) कोशाम्र, एक पेड़। यह पञ्जाब मध्यभारत और मन्द्राजमें बहुत उपजता है। इसकी पत्तियां हर साल झड़ जाती हैं। कोसमकी भीतरी लकड़ी लाल भूरी, कड़ी और पोली रहती, घर बनानेमें लगती है। उससे खेती आदिके यन्त्र भी बनते हैं। कोसम एक बड़ा पेड़ है और इसमें लाख बहुत अच्छी आती है। कोशाम्र देखो।

कोसल—भारतवर्षके कई एक विस्तृत जनपद या देश।

"प्रभु समरथ कोसलपुर राजा।" (तुलसी)

रामायणमें जिस कोसलराज्यका उल्लेख है, उससे वर्तमान अवध प्रदेशका ही बोध होता था—

"कोसलो नाम मुदितः स्फीतो जनपदो महान्।
निविष्टः सरयूतीरे प्रभूत-धनधान्यवान्॥
अयोध्या नाम नगरी तत्रासील्लोकविश्रुता।" (आदि ५।६)

रामायणमें दूसरे किसी कोशलराज्यका उल्लेख नहीं है। उक्त कोशलको छोड़ कर महाभारतमें दूसरा कोई पूर्वकोशल भी लिखा है—

"दक्षिणा ये च पाञ्चालाः पूर्वाः कुन्तिषु कोशलाः।" (सभा ११ अ०)

महाभारत और कालिदासके रघुवंशमें पूर्वोक्त कोशल वा अयोध्याराज्य "उत्तर कोशल" नामसे वर्णित हुवा है—

"ततो गोपालकच्छं च सोत्तरामपि कोशलान्।" (सभा २९ अ०

"काकुत्स्थशब्दं यत उन्नतेच्छाः श्लाघ्यं दधत्युत्तरकोशलेन्द्राः।" (रघुवंश ६।७१

महाभारत और रघुवंशमें उत्तरकोशलका उल्लेख देखनेसे समझ पड़ता, कि उस समय दक्षिणकोशल नामका भी कोई राज्य रहा। किन्तु महाभारतादि प्राचीन ग्रन्थोंमें "दक्षिणकोशल" शब्द स्पष्ट नहीं लिखा है। महाभारतमें जिस पूर्वकोशलका उल्लेख है, वही दक्षिणकोशल-जैसा मालूम पड़ता है।

सभापर्वके ३०वें अध्यायमें लिखा है—

"कोसलाधिपतिं चैव तथा वेखातटाधिपम्।
कान्तारकांश्च समरे तथा प्राक्कोशलान् नृपान्॥"

(सहदेवने दक्षिणदिक् जा अवन्ति प्रभृति देशीय वीरोंको जय करके) कोसलाधिपति, वेखानदी-तीरवर्ती नरपति, कान्तारक और पूर्वकोसलराज्यके राजाओंको समरमें पराजय किया।

सहदेवने जो कोशल जीता, वही दक्षिणकोसल होगा। महाराज समुद्रगुप्तका खोदित शिलालेखमें* महाकान्तार† और केरलराज्यके साथ कोसलाधिप महेन्द्रका उल्लेख है। यही दक्षिणकोसल गुप्तवंशीय राजाओंको प्रदत्त शिलालेखमें "महाकोसल" नामसे वर्णित हुवा है।

सभापर्वके मतसे सहदेव नर्मदा और अवन्तिराज्य अतिक्रम करके दक्षिणकोसल गये थे। उसीके आगे वेखातट है। इस वेखा नदीको आजकल वेणगङ्गा कहते हैं। यह मध्यप्रदेश नागपुरके पूर्वांशसे निकल तिरछी होकर गोदावरी नदीमें जा गिरी है। वैणगङ्गा देखो। इससे अनुमान होता कि नर्मदा नदीके दक्षिणपूर्व और वर्तमान वेणगङ्गाके उत्तर दक्षिणकोसलराज्य अवस्थित था।

खृष्टीय सप्तम शताब्दीके प्रारम्भमें सुप्रसिद्ध चीन-परिव्राजक युयेनचुयाङ्ग कोसलराज्य पहुंचे थे। उन्होंने लिखा है—'कलिङ्गराज्यसे १८०० लि (कोई

---

* Fleet's Inscriptionum Indicarum, Vol. III. p. 7.

† यह महाकान्तार और सभापर्ववर्णित कान्तारकराज्य एक-जैसा मालूम पड़ता है। प्रत्नतत्त्वविद् कनिङ्गहाम् साहबने इस महाकान्तारको वर्तमान वरेन्द्रभूमि-जैसा प्रकाश किया है। (Cunningham's Archæological Survey Reports, Vol. XV. p. 112.) किन्तु यह बात समीचीन-जैसी नहीं मालूम पड़ती। महाकान्तार और वनवासी देखो।

डेढ़ सौ कोस) उत्तरपश्चिम चलनेसे कोसल जनपद मिलता है। इस देशका परिमाण ५००० लि (४१६॥ कोस) है। इसकी प्रान्तसीमाको चारों ओर पहाड़ और जङ्गल है। इसकी राजधानी लगभग ४० लि (प्रायः ३। कोस) होगी। इसकी भूमि उर्वरा और प्रभूत शस्यशालिनी है।' 'इससे ९०० लि (करीब ७५ कोस) दक्षिण अन्ध्रराज्य है।' (सि-यु-कि १०)

प्रत्नतत्त्वविद् कनिङ्‌हामके मतमें—महानदी और उसकी शाखाकी उत्तरवर्ती समुदाय उपत्यकाभूमि ही महाकोसल वा दक्षिणकोसल है। वह उत्तरमें नर्मदा-नदीके उत्पत्तिस्थान अमरकण्टकसे दक्षिणकाङ्केर तक और पूर्वको हासदा तथा जोंक नदीसे पश्चिम वेणगङ्गाकी उपत्यका भूमि तक विस्तृत है। जब तब मण्डल, बालाघाट, वेणगङ्गातट एवं महानदीका मध्य-विभाग, सम्बलपुर और शोणपुर तक दक्षिण कोसल माना जाता था। *

आजकल जिसे हम गोंडवन और छत्तीसगढ़ कहते हैं, महाभारतके समय वही देश दक्षिणकोसल नामसे विख्यात था। गुप्तराजावोंके अधिकारकालको यह और भी अधिक विस्तृत-जैसा रहनेसे "महाकोसल" कह-लाता था। महाकोसलाधिप भवगुप्तके समयकी खोदित शिलालिपि पढ़नेसे समझ पड़ता है कि उत्कल और कलिङ्ग पर्यन्त उनका अधिकारभुक्त था। उड़ीसेके केशरीराज उनको कर देते थे। निःसन्देह बतानेका कोई उपाय नहीं है—चीनपरिव्राजक-वर्णित राजधानी ठीक किस स्थान पर रही। किसीके मतानुसार प्राचीर-वेष्टित वर्तमान चन्दा नगरमें ही वह राजधानी थी। फिर कोई उसके वर्तमान वैरागढ़ वा भाण्डक नामक स्थानमें रहनेकी ही अधिक सम्भावना समझता है।†

पुराणोंके मतमें—कोसलमें ७ राजा राजत्व करेंगे। विष्णुपुराणमें लिखा है कि देवरक्षित नामक कोई परा-क्रान्त राजा कोशल, ओड्र, पुण्ड्रक और ताम्रलिप्त पर राजत्व रखेंगे। (४।२४ अ०) वायु और ब्रह्माण्डपुराणको देखते देवरक्षित अर्थात् देवरक्षितवंशीय राजा उक्त स्थानोंके राजा होंगे।

चीनपरिव्राजक युयेन चुयाङ्गने लिखा है कि कोस-लमें (खृष्टीय १म पूर्वाब्दको) सदवह (सात-वाहन ?) नामक कोई क्षत्रिय राजा राजत्व करते थे। नागार्जुन बोधिसत्वने उनको बहुतसा उप-देश दिया। चीना विद्वान् इत्सिङ्गने कहा है कि नागार्जुनने "सुहृल्लेख" नामक एक उपदेशपूर्ण काव्य बना कर दक्षिणकोसलके राजा सदवहको उत्सर्ग किया। राजा सदवहने वहां अनेक सङ्घाराम बनाये थे। उनमेंसे एक सङ्घाराममें सदवहके आदेशसे ब्राह्मण रहते थे। उन्हीं ब्राह्मणोंने पीछे बौद्धोंको निकाल बाहर करनेके लिये बौद्धसङ्घारामोंको तोड़फोड़ डाला।

चीनपरिव्राजकके समय यहां एक बौद्ध क्षत्रिय राजा राजत्व करते थे। उसके पीछे यह विस्तृत जनपद हैहयवंशीय हिन्दूराजावोंका अधिकारभुक्त हुवा।

छत्तीस-ढ़गदेखो।

ते अभिजनोऽस्य तेषां राजा वा, कोसल-अञ्। बहुत्वे तस्य लुक्। २ पितापितामहादिक्रमसे कोसल देशके रहनेवाले। ३ कोसलदेशके राजा।

कोसला (सं० स्त्री०) कोसलदेशकी राजधानी अयोध्या।

"कह कोसलाधीश रघुराया।" (तुलसी)

कोसली (सं० स्त्री०) एक रागिणी। इसमें ऋषभ नहीं लगता।

कोसा (हिं० पु०) १ एक प्रकारका मोटा रेशम। यह मध्यभारतमें अधिक उत्पन्न होता है। २ मट्टीका एक बड़ा सरवा। घटका मुख आच्छादन करने या द्रव्यादि रखनेको यह व्यवहृत होता है। ३ अभिशापरूप दुर्व-चन, कोसाई।

कोसाकाटी (हिं० स्त्री०) अभिशापरूप दुर्वचन, गाली दे दे कर कोसना।

कोसाम् कौशाम्बी देखो।

कोसिया (हिं० स्त्री०) १ मृत्पात्रविशेष, मट्टीका एक छोटा बर्तन। चूना रखनेका बर्तन।

कोसिली (हिं० स्त्री०) छोटी पिराक या गुझिया।

कोसी (हिं० स्त्री०) १ नदीविशेष। कौशिकी देखो। २ गूड़ी, चंचरी। कोसी—जुवार या मूंगके उन दानोंको कहते, जो दायके बाद भी बालमें लगे रहते हैं।

कोसी—युक्तप्रदेशस्थ मथुरा जिलेकी छाता तहसीलका

---

* Cunningham's Arch. Sur. Reports, Vol XVII p. 68.

† Jour. Roy. As. Soc. N. S. Vol. VI. p. 260.

एक शहर। यह अक्षा० २७° ४८' उ० और देशा० ७७° २६' में आगरा-दिल्लीकी राह पर अवस्थित है। लोक संख्या ८५६५ है। यहां अकबरके सूबेदार ख्वाजा एतबार खान्‌की बढ़िया सराय बनी है। बलवेके समय जिलेके अफसर कोसीमें जा कर छिपे थे, परन्तु भरतपुरकी फौज बिगड़ जानेसे उन्हें भागना पड़ा। यह नगर निम्नभूमिमें बसा है और चारो ओर गन्दा पानी भरा रहनेसे लोगोंके स्वास्थ्यको बड़ा धक्का पहुंचाता है। १८६७ ई०को यहां म्युनिसपालिटी हुई। कोसीसे मथराको अनाज और रूई बहुत भेजते हैं। रूई साफ करनेके कई पुतलीघर भी हैं। परन्तु प्रधानतः कोसी अपने पशु व्यवसायके लिये प्रसिद्ध है। प्रति वर्ष २०००० मवेशी बिका करते हैं। कोसीकी गायें बहुत अच्छी होती हैं।

कोसू (हिं० पु०) कोसनेवाला।

कोसों (हिं० क्रि० वि०) कई कोसके फासले पर, बहुत दूर।

कोहंडौरी (हिं० स्त्री०) कुम्हडौरी, कुम्हड़े और उड़द की बरी।

कोह (हिं० पु०) १ अर्जुनका पेड़। २ क्रोध, गुस्सा। (फा०) ३ पर्वत।

कोहकाफ (फा० पु०) एक पहाड़। यह युरोप और एशियाके मध्य अवस्थित है। इसके चतुःपार्श्वस्थ अधिवासी अति रूपवान् होते हैं। कहते हैं, इस पर परियां रहती हैं।

कोहड़ (सं० पु०) नाट्यशास्त्रके एक प्रणेता। कोहल देखो।

कोहना (हिं० क्रि०) क्रुद्ध होना, रिसियाना।

कोहनी (हिं० स्त्री०) कुहनी, किल्ली।

कोहनीय (सं० पु०) किसी ऋषिका नाम। (गोभिलगृह्यसूत्र)

कोहनूर (फा० पु०) जगद्विख्यात एवं इतिहासप्रसिद्ध एक हीरक। कोहका अर्थ पर्वत वा प्रस्तर और नूरका अर्थ आलोक वा चमत्कार है। अपनी बड़ी चमकके कारण ही इस हीरेका नाम कोहनूर पड़ा है।

यह मालूम करनेका कोई उपाय नहीं—सुबृहत् समुज्ज्वल कोहनूरको मिले कितने दिन हुए। किसी किसीके कथनानुसार पांच हजार वर्ष पहले मसलीपत्तनके निकट गोदावरीगर्भमें यह मिला था। फिर यह अङ्गराज कर्णके पास रहा। कोई कहता है कोहनूर वही कौस्तुभमणि है, जिसे श्रीकृष्ण व्यवहार करते थे। और किसीका मत है कि वह उज्जयिनीराज विक्रमादित्यके पास रहा। लोग जो चाहें कहें, परन्तु यह ठीक नहीं—प्रथम कोहनूर कब आविष्कृत हुवा और पूर्वकालको किसके पास रहा।

मुसलमानी इतिहास पढ़नेसे समझ पड़ता है—पहले यह हीरा मालवके हिन्दू राजाके पास था। अला-उद्दीन् जब मालवके राजा हुए, यह उनके हाथ लग गया। सम्राट् बाबरने आत्मजीवनीमें लिखा है—'हुमायून्‌के आगरा-दुर्ग अवरोध-कालको ग्वालियरके राजा विक्रमादित्य उसकी रक्षा करते थे। आखीरको जब उन्होंने देखा कि किला बच न सकता था, स्त्रीपुत्रोंको लेकर उनके प्राण बचानेके लिये भागनेकी चेष्टा की। इसी समय मुसलमानोंकी फौज उन पर टूट पड़ी। परन्तु हुमायून्‌ने उक्त प्राचीन राजवंशको यथेष्ट सम्मान प्रदर्शनपूर्वक बचाया था। ग्वालियरके राजाने अनुगृहीत हो हुमायून्‌को विस्तर मणिरत्न उपहार दिये। उन्हींमें कोहनूर भी था। परन्तु किसी इतिहासमें नहीं लिखा—ग्वालियरके राजाने मालवके मुसलमान अधिपतिसे किस प्रकार कोहनूर पाया था। राजस्थानका इतिवृत्त पढ़नेसे मालूम होता है—१४५५ ई०को अला-उद्दीन खिलजी मेवाड़के कुम्भराणासे पराजित हुए। उस समय ग्वालियरके राजा कीर्तिसिंहने कुम्भराणाको साहाय्य किया था। कुम्भराणा देखो। फरिश्तामें लिखा है—'इस भयानक युद्धमें अला-उद्-दीन्‌की विशेष क्षति हुई थी। शेषको उभयपक्षकी विशृङ्खला मिट गयी।' सम्भवतः उसी समय यह बहुमूल्य हीरा कुम्भराणाको मिला होगा। बाबरकी जीवनीमें कहा है,—१५१८ ई०को राणा सांगाने मालवराज मुहम्मदको छोड़ते समय राजमुकुट और स्वर्णमेखलाको अपने लिये रख लिया था। ऐसे स्थल पर मालवराजका बेशकीमत हीरा भी किसी समय मेवाड़के राणाको मिल गया होगा। राणा सांगाके एक कनिष्ठ पुत्रका नाम विक्रमादित्य वा विक्रमजित् था। उन्होंने बाबरको

अनेक मणिरत्न दिये थे। क्या यही विक्रमाजित् ग्वालियरके राजा थे। क्या इन्हींसे हुमायूनने महारत्न कोहनूर पाया था ?

उसके बाद कोहनूर बहुत दिन दिल्लीके मुगल बादशाहोंके हाथमें रहा। बादशाह मुहम्मद शाहके समय नादिर शाहने भारत आक्रमण किया। उस समय मुगल-साम्राज्यका पराक्रमसूर्य कितना ही निस्तेज हो रहा था। सुतरां दिल्लीश्वरने नादिर शाहकी गति न रोक उनके साथ मित्रताको स्थापन और विस्तर मणि माणिक्य दे उनका तुष्टिविधान किया। पहले उन्होंने कोहनूर दिया न था। नादिर शाहने किसी रमणीके मुखसे कोहनूरकी बात सुनके उनसे इसे मांग भेजा। उन्होंने अनिच्छासे अनेक कष्टोंमें नादिर शाहको हीरा दे दिया। नादिर शाहने इस हीरेका नाम 'कोहनूर' रखा था। नादिर शाहके बाद कोहनूर उनके लड़केके हाथ लगा। फिर काबुलके अमीर अहमद शाहने उत्तराधिकारसूत्रसे इसे पाया था। अहमद शाहके दो लड़के रहे—शाह शुजा और महमूद। पिताके न रहते शाह शुजा काबुलके सिंहासनके प्रकृत अधिकारी थे। परन्तु महमूदने बलपूर्वक उसको अधिकार किया। शाहशुजा कोहनूर साथ ले कश्मीर भाग आये। कश्मीर उस समय पठानोंके अधिकारमें रहा, आता मुहम्मद उसके शासनकर्ता थे। उन्होंने किसी बात पर शाह शुजाको कैद कर दिया। कुछ दिन पीछे रणजित् सिंहके सेनापति माखनचन्द काश्मीर आक्रमण करने चले थे। उसी समय शाह शुजाकी पत्नीने उनको कहला भेजा—यदि आप शाह शुजाको कैदसे छोड़ा सकेंगे, तो वह सुप्रसिद्ध कोहनूर मणि सिखराजको अर्पण करेंगी। सिखसेनापतिने कश्मीर जय करके शाह शुजाको कैदसे छोड़ाया था। शाह शुजा सस्त्रीक सिखराजके पास लाहोर आ पहुंचे। पञ्जाबकेशरी रणजित् सिंहने अति समादरसे उनकी अभ्यर्थना की थी। फिर कोहनूर देनेकी बात चली। किन्तु शाह शुजा और उनकी बेगमने जगत्‌का महारत्न कोहनूर देनेकी असम्मति प्रकाश की थी। सिख-इतिहास-लेखक माग्रिगर साहबने कहा है—शाह शुजा उस समय रणजित्‌के सम्पूर्ण आयत्ताधीन थे, किन्तु सिखराजने कोहनूर लेनेके लिये उन पर कोई अत्याचार नहीं किया। विताड़ित काबुलराज गभीर अन्धकारमय कारामें भी निक्षिप्त नहीं हुए, सिर्फ नजरबन्द कर दिये गये।*

कपतान कनिङ्हाम साहबने लिखा है—अन्तको महाराज रणजित् उनसे मिले और दोनों पगड़ियां बदल मित्रतापाशमें बद्ध हुए। शाह शुजाने अपने आप कोहनूर दे दिया था। उन्होंने अपने भरणपोषणके लिये पञ्जाबमें जागीर पायी और सिखराजने भी प्रतिज्ञा की कि वह काबुलराज्य उद्धारके लिये उनको साहाय्य करेंगे।† कितनों होने कहा है—महाराज रणजित्‌सिंहने शाह शुजासे बलपूर्वक कोहनूर छीन लिया था। परन्तु यह बात ठीक नहीं। पञ्जाबकेशरीने शाहशुजाको २००००) रु० की जागीर दे यह महारत्न ग्रहण किया था।‡

१८१३ ई०की १ली जूनको सिखराजने अपने हाथमें कोहनूर पाया था। इसके समुज्ज्वल दीप्तिदर्शनसे विमुग्ध हो उन्होंने शाह शुजासे पूछा—यह कैसी चीज है। शाह शुजाने उत्तरमें कहा था—जो समस्त शत्रुओंको दमन कर सका है, उसीको यह भोग्य महारत्न मिलता है, पानेवाला सौभाग्यशाली हो जाता है। उसी समयसे पञ्जाबकेशरी सर्वदा इसे अपने बाहु पर धारण करते रहे। किसी किसीने यह भी कहा—कोहनूर हीरा जिसके हाथमें रहता, वही शेषको दुर्दशामें पड़ता है, सुतरां इस मणिका धारण करना अच्छा नहीं। रणजित्‌सिंहने एक बार इस महामणिको पुरीस्थ जगन्नाथदेवके श्रीपादपद्म पर अर्पण करना चाहा था। किन्तु अपनी इच्छा पूर्ण न होते ही उन्होंने इहलोक परित्याग किया। उस समय दलीपसिंह शिशु रहे। रणजित्‌सिंहकी प्रियमहिषी महारानी झिन्दन अपने अञ्चलके निधि दलीपसिंहके बाहुमें इस महानिधिको बांध देती थीं। किन्तु हतभाग्य महाराज दलीपसिंहसे

---

* Macgror's History of the Sikhs, Vol. I. p. 281.

† Captain Cunningham's History of the Sikhs, 1849. p.162

‡ Shah Shooja's Autobiography, Chap. XXV.

पञ्जाबकी लक्ष्मी मचल पड़ी। अङ्गरेजोंने कलकौशल से पञ्जाब पर अपना आधिपत्य फैलाया था। झिन्दन, पञ्जाब, सिख प्रभृति शब्द देखो। उस समयके बड़ेलाट लार्ड हार्डिञ्ज बालकराज दलीपसिंहके अभिभावक बने। वह जितने दिन रहे, प्रकृत अभिभावककी भांति ही कार्य करते गये। उनके पीछे लार्ड डालहाउसी बड़ेलाट हो कर आये थे। परन्तु पञ्जाबके अभिभावक होते भी उन्होंने न्यायसङ्गत कार्य न किया।* उन्होंने पञ्जाबके राजकोषागार पर हाथ फेंका था। फिर कोहनूर अंगरेजोंके अधिकारमें आया। १८४९ ई०को २९वीं मार्चको यह महारत्न इङ्गलेण्डकी महारानीके निकट भेजा गया। तबसे बराबर कोहनूर वहीं पड़ा है।

कौन कहेगा—कोहनूरने कितने राज्योंकी श्रीवृद्धि और कितने राजावोंका अधःपतन देखा है? यही नहीं, कि यह महारत्न हाथों हाथ घूमा है, साथ ही कितना ही परिवर्तन भी हो गया है।

प्रसिद्ध भ्रमणकारी टेभार्नियार औरङ्गजेबकी सभामें आ कोहनूर देखकर वर्णना करते हैं—"यह हीरा तौलमें ३१९ रत्ती (279$\frac{9}{16}$carats) है। पहले जब यह हीरा कटा न था, ९०७ रत्ती (793 carats) रहा।" किन्तु मुगलसम्राट् बाबरकी जीवनीमें लिखा है—'कोहनूर वजनमें ८ मिष्काल अर्थात् ३२० रत्ती है। इसका मूल्य समस्त जगत्के आधे दिनका खर्च है।' रणजित्सिंहके निकट रहते कोहनूर वजनमें बहुत घटा न था। किन्तु इङ्गलेण्ड पहुंचनेसे यह दिन दिन घटता ही जाता है। १८५० ई०की ३री जूनको कोहनूर इङ्गलेण्डमें महारानी विक्टोरियाके पास पहुंचा था। उसके दूसरे वर्ष हाइड पार्कके बड़े मेलेमें इसका मूल्य १४ लाख रुपया स्थिर हुवा। उस समय इसका परिमाण१८६$\frac{१}{१६}$—कारट था। महारानीकी इच्छाके अनुसार आमष्टरडामसे किसी ओलन्दाजने आ ३८ दिन १२ घण्टे काम करके अधिक ज्योतिः निकालनेके लिये इसके तीन टुकड़े कर डाले। इस काट छांटमें ८० हजार रुपया लगा था। फिर गुलाबके फूल जैसा बनानेको यह तराशा गया। आजकल कितना ही घट कर कोहनूर १०६$\frac{१}{१६}$—कारट रह गया है। बड़े कोहनूरका कितना ही अंश नष्ट हो जानेसे पहलो चमक झमक भी बहुत कुछ उड़ गयी है। अब इससे बड़ा हीरा मिला है। किन्तु वह इतना मूल्यवान् नहीं। यदि यह काटा न जाता, तो हम कह सकते थे—क्या आकारमें क्या मूल्यमें कोहनूरसे बड़ा हीरा जगत्में दूसरा नहीं है। हीरक शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

कोहबर (हिं० पु०) स्थानविशेष, एक जगह। विवाहके समय यहां कुलदेवताको स्थापन करते हैं।

कोहरा (हिं० पु०) धूयेंके रूपमें प्रातःकालको गिरनेवाली ओस, कुहासा।

कोहरी (हिं० स्त्री०) घुंघनी, उबाले हुए गेहूं आदि। कोहरी प्रायः उबाले हुए गेहूं या जुआरकी ही कहते हैं। नागपञ्चमीके दिन कोहरी चबानेकी रीति है। नयी जुआर आने पर भी कोहरी बहुत बनती है।

कोहल (सं० पु०) कोहयति विस्मापयति, कुह बाहुलकात् कलच् गुणश्च। १ वाद्यविशेष, कोई बाजा। २ यवसंस्कृत मद्यविशेष, जौकी शराब। यह त्रिदोषघ्न, वृष्य और वदनप्रिय होता है। (सुश्रुत) ३ नाट्यशास्त्रप्रणेता कोई सङ्गीतज्ञ गन्धर्व। इन्होंने सामेश्वरसे सङ्गीत सीखा था। (सङ्गीतशास्त्र) इनका रचित 'ताललक्षण' नामक संस्कृत सङ्गीतग्रन्थ मिलता है।

कोहली (सं० स्त्री०) कुष्माण्डसुरा, कुम्हड़की शराब। यह वृंहण और गुरु होती है। (वैद्यकनिघण्टु)

कोहलू—बेलूचिस्तानके अन्तर्गत शिबि जिलाके शिबि सबडिवीजनकी एक तहसील। यह अक्षा० २९° ४३' तथा ३०° २' उ० और देशा ६८° ५४' एवं ६९° ३२' पू०में अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल प्रायः ३६२ वर्गमील और जनसंख्या १०४३ है। यह अधित्यका त्रिभुजके आकार की है जो समुद्रतलसे प्रायः ३८०० फीट

---

* Captain Cunningham's History of the Sikhs, p. 294-300; Punjab Papers 1849; Major Evans Bell's Retrospects and Prospects of the Indian Policy, p. 178-9; W.M. Torrens' Empire in Asia, p. 352-3 प्रभृति देखो।

ऊंची है इस लिये यहांकी आबहवा अच्छी है। यहां सिर्फ नौ ग्राम है और वार्षिक आय लगभग १४१५४) रु० की है।

कोहा (हिं० पु०) हृहदुदृहत्पात्रविशेष, मट्टीका एक बड़ा कूंड़ा। इसमें इक्षुरस वा काञ्जिक रखते हैं। २ खप्पर, खोपड़ी जैसा मट्टीका वर्तन।

कोहाट—पञ्जाब-प्रदेशका एक जिला। यह अक्षा० ३२° ४८´ तथा ३३° ४५´ उ० और देशा० ७०° ३०´ एवं ७२° १´ पू०के बीच मध्यप्रदेशके दक्षिण और दक्षिण-पश्चिम अवस्थित है। इस जिलाके उत्तरमें पेशावर जिला और पहाड़ी है—जहां जोवाकी और अफरीदी जाति वास करती है, उत्तर-पश्चिममें ओरकजाई तीरा दक्षिण-पश्चिममें काबूल-खिलराज्य, दक्षिण-पूर्वमें पंजाबके बन्नू और मियनवली जिला एवं पूर्वमें इन्दस या सिंधु है। इसकी लम्बाई १०४ मील और चौड़ाई ५० मील है। क्षेत्रफल २९७३ वर्गमील है। लोकसंख्या २१७८६५ है। यह प्राय: १८॥ कोस दीर्घ एक उपत्यका भूमि है। प्रस्थमें कोहाट कहीं २ कोस, कहीं ३ कोस तक निकलेगा। यहां सङ्कीर्ण गिरिपथसे होकर आते हैं।

कोहाटके मध्य समतल भूमि और हङ्गु नामक उपत्यकामें नानाविध शस्य उपजता है। यहां गेहूं, चना और जुआर बहुत होती है। जुंडरीके आटेकी रोटी स्थानीय अधिवासियोंका प्रधान आहारीय है। बीच बीच नदीका जल पहुंच जानेसे धान भी अच्छा लगता है। पत्थरका कोयला जगह जगह मिलता है। उत्तरदिक्के पर्वतसे गन्धक निकलता है। बहादुरखेल नामक उपत्यकामें लवणकी खनि है। यहां एक दुर्ग निर्मित हुआ है। तेरितय उपत्यकाके निकट ३० कोस लम्बा और आधा कोस चौड़ा नमकका एक पहाड़ है। यह पर्वत देखनेमें ईषत् नील आभायुक्त धूसरवर्ण और प्राय: १२२ हाथ ऊंचा है।

कोहाटके पहाड़में 'ममीयाई' नामक काले गोंद-जैसा एक चिपचिपा पदार्थ मिलता है। उससे पञ्जाबमें औषध प्रस्तुत करते हैं।

कोहाटके उत्तर-पश्चिम बरकजाई जातिका वास है। यह प्रयोजन पड़नेसे २० सहस्र योद्धा समवेत कर सकते हैं। शामिलजाई, हङ्गु, मीरान्जाई, शेखान, मिश्ती और रबियाखेल बरकजाई जातिके ही अन्तर्भूत हैं। बरकजाई पर्वतमें तेरा नामक एक सुन्दर सुशीतल उपत्यका है। ग्रीष्मकालको लोग वहां पश्वादि चराने ले जाते हैं। हङ्गु नामक उपत्यका प्राय: १० कोस लम्बी और १॥ कोस चौड़ी है। इसमें सात मढ़-बन्द गांव हैं। पहले प्रत्येक ग्राममें शासनका प्रबन्ध स्वतन्त्र रहा। आजकल वह अंगरेज गवर्नमेण्टके अधीन हैं।

अन्यान्य अधिवासियोंके मध्यो खटक और बङ्गश पठान ही प्रधान हैं। समस्त अधिवासियोंकी तुलनामें इनकी संख्या दश आना होगी। बङ्गश पठान कोहाटकी पश्चिमदिक् और खटक पूर्वदिक्को सिन्धुतीर पर्यन्त स्थान स्थान पर रहते हैं। खटक लोग देखनेमें दीर्घ-काय, सुश्री और वीरप्रकृति हैं। सिख, ब्राह्मण, अहीर, जाट और क्षत्रिय जातीय बहुतसे लोग कोहाटके वर्तमान अधिवासी हैं।

इस जिलाका प्रथम ऐतिहासिक विवरण अकबर बादशाहसे ही आरम्भ हुवा है। यह जिला आजकलकी तरह पहले भी पठानकुलके बङ्गश और खटक दो शाखाओंमें विभक्त था। बङ्गशके अधिकारमें मीरानजाई उपत्यका और कोहाटका पश्चिमोभाग था और खटकके अधिकारमें पूर्व्वीय देशके शेषभाग सिन्धुनदके किनारे तक। थोड़े समयके बाद बङ्गश गारदेजसे निकाल दिये गये और कूरम उपत्यकामें रहने लगे। वहींसे वे पूर्वकी ओर मीरानजाई और कोहाट प्रदेश तक फैल गये। ऐसा कहा जाता है कि खटक भी अपनी भूमिको छोड़ कर बन्नू आकर रहने लगे। बाबरने १५०५ ई०में इस जिला पर आक्रमण किया और कोहाट और हैङ्गु-प्रदेशको लूटा। १७०७ ई०में कोहाट दुरानी राज्यका एक अंश हो गया। लेकिन बैङ्गश और खटकके ही अधिकारमें रहा। उन्नीसवीं शताब्दीमें कोहाट और हैङ्गुने सर्दार सामद खां को गवर्नर बनाया। सर्दार सामद खांके लड़के पेशावरके सर्दार सुलतान मुहम्मदसे भगाये गये। इस तरह हमेशा सर्दारके अदल बदल होनेसे

अशान्ति फैली रहती थी। जब यह देश सिखोंके अधीन हुआ तो पहाड़ी आदमियोंसे कर वसूल करना असंभवसा दीख पड़ने लगा। रणजित्‌सिंहने सुलतान मुहम्मद खाँको पेशावरमें कर वसूल करनेके लिये नियुक्त किया और रसूल खाँको टेरीका प्रधान बनाया गया। सुलतान मुहम्मद खाँ भी जिलाके शेषभागमें शासन करने लगा। जब दूसरी लड़ाईमें सिख-सेना पेशावर पहुंची तो वृटिश कर्म्मचारी जार्ज लावरेन्स भागकर कोहाट चले गये, लेकिन सुलतान मुहम्मद खाँने उसे धोखा देकर कैदी बना लिया। इस लड़ाईमें अङ्गरेजोंकी जीत हुई और कोहाट एवं पञ्जाबका शेषभाग अङ्गरेजी राज्यमें मिला दिये गये। उसने आमदनी अदा करनेका काम हुङ्गरखान्‌को सौंप रखा था। किन्तु उनको किसी आत्मीयने मार डाला। फिर यह काम उनके लड़केको दिया गया। मोरानजाई पर्वतके अधिवासियोंने प्रार्थना की थी—हम कोहाटकी अंगरेजी सरकारके शासनाधीन रहना चाहते हैं। इसीसे वह प्रान्त भी १८५१ ई०को कोहाटका अन्तर्भुक्त हो गया।

यह जिला तीन तहसीलोंमें बांटा गया, हर एक तहसील तहसीलदार और नायब तहसीलदारके अधीन रखा गया। डिपटी कमिशनर मुकद्दमा जांच करनेके लिये नियत हुवे। उनके अधीन दो सहायक कमिश्नर रखे गये जिन्हें थल सबडिवीजन कार्यका भार सौंपा गया। पहले पहल कोहाट जिलामें मालगुजारी वसूल करनेकी संख्या ठीक नहीं थी। राजा अपनी अपनी जमींदारी को ठीका पर लगा दिया करते थे। लेकिन जबसे यह जिला अंगरेजी राज्यमें मिलाया गया तभीसे यहांका काम सुचारु रूपसे चलने लगा। जमीनकी मालगुजारी भी तीनआनेसे ६॥) रु० तक प्रति एकड़की नियत की गई। इस जिलामें सिर्फ एक म्युनिसिपालिटी है जिससे १४१०० रु०की आमदनी होती और १६३०० रु० खर्च होते हैं। पुलिसके ५२७ आदमी हैं जिसमेंसे ४४ म्यूनीसिपालिटीवाले हैं। ग्राम्य चौकीदारोंकी संख्या २६५ है। यहां १२ थाने, १६ रोडपोष्ट और ४ आउट पोष्ट हैं। पहले यहां शिक्षाका बहुत अभाव था, इसलिये सैकड़े ४२ मनुष्य पढ़े लिखे थे। किन्तु आजकल यहां बहुतसे विद्यालय हैं जिनमें लड़के और लड़कियां अलग अलग शिक्षा पाते हैं। पूर्व्व समयकी अपेक्षा आजकल यहां बहुत तरहकी उन्नति है।

२ कोहाट जिलेका प्रधान नगर। यह नगर चारों ओर प्राचीरवेष्टित है। इसमें एक बाजार और एक मसजिद विद्यमान है।

कोहाना (हिं० क्रि०) क्रुद्ध होना, गुस्सा खाना। २ रूठना, रिसाना।

कोहित (सं० पु०) किसी ऋषिका नाम। शिवादि गणान्तर्गत रहनेसे इस शब्दको अपत्यार्थमें अप् प्रत्यय होता है।

कोहिल (हिं० पु०) पक्षिविशेष, किसी किस्मका बाज।

कोहिस्तान (फा० पु०) १ पार्वत्यप्रदेश, पहाड़ी जगह। २ काश्मीर-प्रान्तमें गिलगिटके पासकी एक उपत्यका। इसे आवासीनका कोहिस्तान कहते हैं। इसका जल जाकर सिन्धुनदमें गिरता है। रोजा, जामुन, करमीन और दुमान नामक जातियां इस उपत्यकाकी अधिवासी हैं।

कोहिस्तान—सिन्धु-प्रदेशका एक तालुक। यह कराची कलक्टरीके अन्तर्भूत है। इसको उत्तर और पूर्व-दिक्‌के थोड़े अंशमें सेहवान विभाग है। पूर्वदिक्‌की शेष अंशमें जेरक नामक जिला और एक पर्वतश्रेणी है। कोहिस्तान उत्तर-दक्षिण ३० कोस और पूर्व-पश्चिम २०।२५ कोस होगा। इसका परिमाण प्रायः ५०५८ वर्गमील है। कोहिस्तान अधिकांश पर्वतमय है। दक्षिणदिक्‌की पर्वतश्रेणी, मध्य मध्य समतल भूमि है। वृष्टिके पीछे यहां प्रचुर तृणादि उत्पन्न होता है। उस समय चारों ओरोंसे पश्वादि आ यहां चरा करते हैं।

कोहिस्तानमें हुब्ब, बारन और मलीर नामक तीन नदियां हैं। हुब्ब नदी खिलातके पाससे निकल ५० कोस बहती हुई अरब सागरमें जा मिली है। वृष्टिके उपरान्त समय समय पर इसमें वन्या (बाढ़) आती है। किन्तु अल्पक्षणके मध्य ही जल घट जाता है। बारण नदी खीरखर पर्वतसे उत्थित हो ४४ कोस पथ

अतिक्रम करके सिन्धुमें जा गिरी है। वारण नदीके उत्पत्तिस्थानसे ही गजा नामक दूसरी नदी भी निकली है। वहां अति उच्च पर्वतको फाड़ कर मानो दो मुख बन गये हैं। देखनेसे ऐसा समझ पड़ता है—मानो किसी दैत्यने आकर पहाड़के बीचसे दो टुकड़े उड़ा दिये हैं। इस स्थानकी शोभामें बड़ा चमत्कार है। मन विस्मयके रससे आप्लुत हो जाता है। मलीर नदी कोहिस्तानकी पश्चिमदिक्‌के पर्वतसे निकल २० कोस राह चलके कराचीके निकट अरब सागरमें मिली है।

कोहिस्तानमें हायना, चीता, भेड़िया और बकरा आदि नाना जन्तु देख पड़ते हैं। गृध्र, चिल्ल, लवा और टिट्टिभ पक्षी बहुत हैं।

कोहिस्तानमें न्यूनाधिक १२८७७ लोगोंका वास है। उनमें मुसलमान ही अधिक, हिन्दू अल्प हैं। अधिवासी अधिकांश भ्रमणशील हैं। कोहिस्तानके मध्य केवल ६ ग्रामोंमें लोगोंका स्थायीवास है। बलूच, नुमारिया, जोकिया, बोंद और नोहानी नामक जातियां यहां रहती हैं। एतद्व्यतीत अन्यान्य अनेक जातियां भी पायी जाती हैं।

बलूच कोहिस्तानकी उत्तरदिक्, नुमारिया मध्यस्थल और जोकिया दक्षिणदिक्‌को रहते हैं। नुमारियोंके २४ विभाग हैं। जोकिया लोग राजपूत वंशोद्भव हैं। यह मेष और छागल चरा कर दिनयापन करते हैं। गबोल बलूच कृषिकार्यमें लगे रहते हैं। दूसरोंके मेषादि चुरानेमें कोहिस्तानके अधिवासी विशेष पटु हैं।

कोहिस्तानकी दक्षिण-पूर्वदिक्‌को लखमान नामक स्थानमें नोयाके पिता लामेकका कबरस्तान है। यहां एक पहाड़के ऊपरसे निम्न पाददेश पर्यन्त एक श्वेत-रेखा देख पड़ता है। कोहिस्तानके लोग कहते हैं—यह रेखा अनन्त है, इसके निम्नभागमें एक प्रकार शब्द सुन पड़ता है। इस स्थानके सम्बन्धमें बहुविध गल्प प्रचलित हैं। सुखेत, मान्दी और कूलूके अधिवासी दीर्घकाय और बलिष्ठ हैं। उनका रंग कुछ मैला रहता है। स्त्रियां सुश्री होती हैं, परन्तु २०।२५ वर्षके वयसमें ही उनकी कोमलता उड़ जाता है। स्त्रियों और पुरुषोंके पहनावेमें कोई विशेष भेद नहीं। लम्बा कुर्त्ता और पायजामा, काले रंगके पशमी कपड़ेकी टोपी और घासका जूता यह लोग पहनते हैं। स्त्रियां टोपीके बदले रङ्गीन रूमाल मस्थेमें लपेट लेती हैं। वह मस्तक पर बालोंकी वेणी बना उसके शेषभाग पर फीता बांधती हैं। कूलू अञ्चलकी स्त्रियां बड़ी अलङ्कारप्रिय हैं। वह सीपके नानाविध अलङ्कार प्रस्तुत करके परिधान करती हैं। पुरुषोंमें बहुविवाह चलता है, किन्तु स्त्रियोंमें देख नहीं पड़ता।

चांबा पर्वतमें गड्डी नामक जातिका वास है। यह खर्वकाय अथच बलवान् होते और अन्यान्य लोगोंकी अपेक्षा परिष्कार परिच्छन्न रहते हैं। गड्डी अपनेको राजपूत-जैसा समझते हैं। इनमें बहुतसे झाड़फूंकका काम करते और भूतोंको उतारते हैं। इनके भूत उतारनेकी प्रणाली बहुत चमत्कारी है। किसीके मरने पर लोग समझते कि उसे भूतने मार डाला है। यह ओझा ही आके निर्णय करते हैं—किस भूतने मारा है। वह एक ऐसी बुड्ढी स्त्रीको देखके चुन लेते, जिससे वह नाराज रहते हैं। फिर लोग उसे चारों ओरोंसे घेर कर बैठ जाते और ओझा घूम घूम कर नाचते, बीच बीच उसकी तर्फ देख प्रणाम करते हैं। इसी समय चारों ओर दर्शक भी शिर झुका नमस्कार करते हैं। ऐसा होनेसे ही वह स्त्री डायन-जैसी ठहर जाती और उसीने मारा है ऐसा प्रमाणित हो जाता है पुराने समयमें तो उस वृद्धाका प्राणविनाश किया जाता था। किन्तु इस देशमें जबसे अंगरेजोंका अधिकार हुआ डायनके प्राणविनाशकी प्रथा उठ गयी है। आजकल डायनको जातिच्युत करके उसका आहार आदि भी बन्द कर देते हैं। इसके पीछे डायनका कोई आत्मीय बधु यदि ओझाको मेष वा छागल भेंट कर सन्तुष्ट कर सकता है, तो वह उसका दोष किसी दूसरेके मत्थे मढ़ देते हैं। फिर उस व्यक्तिके भी कुछ उपहार दे देनेसे दोष किसी दूसरेके ही ऊपर जा पड़ता है।

लाहुली नामक और एक प्रकारकी जाति कोहिस्तानके लाहुल प्रदेशमें रहती है। यह खर्वाकृति, बलिष्ठ, किन्तु देखनेमें जैसे ही कुत्सित, आचार व्यवहारमें भी

अपरिष्कृत हैं। पुरुष पश्मी अंगरखा और पायजामा पहन, एक चादर लगा अङ्गके ऊपरसे कमरकी बगलमें उसका छोर खोंस लेते हैं। स्त्रियां कङ्घी चोटी करके बालमें तरह तरहकी रङ्गीन पट्टियां या फीते बांधती हैं। मत्थे पर टोपीके किनारे जञ्जीर या काचकी माला लटकाती हैं। पुरुष और स्त्री दोनों गलेमें सीपके पात फीरोजा वगैरह पहनती हैं। उन लोगोंको विश्वास है कि उक्त सकल द्रव्य साथ रहनेसे चुड़ैल चोट कर नहीं सकती। सभी गलदेश पर अग्निप्रज्वालनके उपयोगी चकमक आदि एक थैलीमें लटका रखते हैं। लाहुल प्रदेशमें शीत अत्यन्त पड़ता है। इसीसे लाहुली जाड़ेके समय कूल अञ्चलमें जा कर छह मास काल अवस्थिति करते हैं। यह समय सुरापान और नृत्य-गीतमें अतिवाहित होता है। उत्सवके समय आतिश बाजी छूटती है। स्त्रियां नाचा करतीं और मनमानी शराब पीती हैं। शेषको मतवाली हो नाच न सकने पर बैठ रहती हैं। नृत्यके समय वृद्धायें रंग रंगकी वेश-भूषासे सज्जित हो उत्सवमें योग देती हैं। लाहुली स्त्रियोंकी आंख बड़ी कटीली होती है। उसको देखते ही बहुतसे पुरुष उन्मत्त बन जाते हैं।

कोहिस्तानकी विविध जातियोंमें प्रायः विवाद उठ खड़ा होता है। एक जातीय व्यक्तिके मत्थेका टोपी यदि अपर जातीय व्यक्ति हाथसे उतार कर फेंक देता, तो अपराधीका प्राणनाश न होनेसे विवाद चला ही करता है। इसी प्रकार किसी जातिका एक व्यक्ति मारा जानेसे उस जातिके सभी लोग एकबारगी ही उभड़ उठते हैं। फिर उभय जातियोंमें विवाद आरम्भ होता है। यह विवाद बहुकाल तक चला करता है। आज-कल अंगरेज अनेक बार किसी जातिके दलपतिको कारारुद्ध करके अथवा अन्य जातिके दलपतिको ऊंट, रुपया या भेड़ बकरा दिलाके झगड़ा निबटाते हैं।

आजकल कोहिस्तानमें एक कोतवाल, कई सवार और थानेदार रहते हैं। वही शान्तिरक्षा किया करते हैं।

कोही (हिं० वि०) क्रोधी, गुस्सावर।

"बालब्रह्मचारी अति कोही।" (तुलसी)

कोहीर—१ हैदराबाद—राज्यके बिदर जिलेका एक तालुक। [बिदर देखो।] हैदराबाद-राज्यके अन्तर्गत बिदर तालुक और जिलाका एक शहर। यह अक्षा० १७° २६′ उ० और देशा० ७७° ४३′ पू० बिदर शहरसे २४ मील दक्षिण-पूर्वमें अवस्थित है। यहांकी जनसंख्या प्रायः ६३७९ है। यहां मुसलमानोंकी दो प्रसिद्ध समाधियां हैं। इनके अतिरिक्त बहुतसी मसजिदें हैं, जिनमेंसे जुमा मसजिद जो बाह्मनी राजाओंके शासन-कालमें बनायी गयी प्रसिद्ध है। इस शहरमें एक मिडिल-स्कूल, एक कन्या-पाठशाला, पोष्ट आफिस तथा पुलिस इन्स्पेक्टरके आफिस हैं। कोहीर आमके लिये प्रसिद्ध है।

कोहीबाबा—एक लम्बे पहाड़की पंक्ति। यह पूरबसे पश्चिम होती हुई अफगानस्तानके मध्य होकर गयी है। यह अक्षा० ३४° ४२′ से ३५° २०′ उ० और देशा० ६८° १५′ से ६१° १०′ पू०में अवस्थित है। यह हिन्दूकुस पहाड़की नाईं फैला हुवा है। इसमेंसे एक घाटी निकला है, जिसका नाम 'शीबरघाटी' है। इसी स्थानसे कोहीबाबा पश्चिम ओरसे दक्षिण याकवलङ्ग तक फैला हुवा है, जहां इसकी चार शाखा हो गई हैं। एक शाखा दक्षिणकी ओर गई है। जिसका नाम बनदी-हुमा खवन या वन्दीबैन है। यह दक्षिण हरिरूद तराईसे हीरत तक फैली है और वन्दीबोर नामसे मशहूर है। दूसरी शाखा सफेद—कोह कहलाती है। इस शाखाके उत्तरमें शाहबुबका वन्दीवाला, नामकी शाखा हरीरूद उपत्यकाके उत्तर तक फैली हुई है। चौथी शाखा उत्तर-पश्चिम तक विस्तृत है। एक दहिने और बांये ओर बहुत ऊंचा पहाड़ है जो अफगानिस्तानकी प्राकृतिक सीमा है। इसका पश्चिमी भाग यथार्थमें कोहीबाबा कहलाता है। जिसकी ऊंची घाटी १६००० फीट खड़ी है। कोहीबाबाके दक्षिण पहाड़ी प्रदेश हजारजन्के बेसूद जिला है। उत्तरमें अफगानिस्तानकी बड़ी अधित्यका है जो अक्षसको ओर १४० मील तक फैली है।

कौंकिर (हिं० स्त्री०) कर्कर देखो।

कौंच (हिं० स्त्री०) कपिकच्छु, खजोहरा। यह एक

प्रकारकी शिम्बी-जसी लता है। इसकी फलियां सेमसे अधिक वर्तुल वृहत्, ग्रन्थिसम्पन्न और लोमयुक्त रहती हैं। श्वेत, कृष्ण और धूसर भेदसे यह तीन प्रकारकी होती है। कृष्ण और धूसर फलियोंमें केश रहते हैं। श्वेत फलियां सफाचट होता हैं। कृष्ण और श्वेत फलियोंका शाक बनाते और भूरी फलियांको औषधके व्यवहारमें लाते हैं। इनके रूयें शरीरमें लगनेसे कण्डू उठने लगती है। इससे इसका दूसरा नाम खजोहरा भी है। कौंच बहुत वीर्य बढ़ानेवाला, ताकतवर, हलकी, मीठी और वातकी बीमारीको मारनेवाली है।

कौंची (हिं०) कमची देखो।

कौंध (हिं० स्त्री०) विजलीकी दूरकी चमक।

कौंधना (हिं० क्रि०) दूरसे बीजली चमकना।

कौंधा (हिं० पु०) कौंधा देखो।

कौंर (हिं० पु०) वृहद् वृक्षविशेष, एक बड़ा दरख्त वनखौर। यह पञ्जाब, नेपाल और नेपालकी तराईमें उत्पन्न होता है। काष्ठ भीतरसे ईषत् पाटलवर्ण निकलता और गृहनिर्माणादिमें लगता है। उससे वृहत् एवं क्षुद्र पात्र भी प्रस्तुत होते हैं। कौंरके फलके आटाको पार्वत्य प्रदेशके अधिवासी गेहूं आदिके आटेमें मिश्रण करके भक्षण करते हैं।

कौंरा (हिं० पु०-वि०) कांवर और कावरा देखो।

कौंरी, कंवरी देखो।

कौंसलर (अं० पु० Councellor) १ मन्त्री, वजीर। २ उपदेशक, नसीहत करनेवाला।

कौंसिल (अं० स्त्री० Council) सभा, परिषत्।

कौंहर (हिं० पु०) फलभेद। यह पक्वावस्थामें अति सुन्दर रक्तवर्ण हो जाता है। प्रवाद है—कौंहरमें सर्पको दूर रखनेका गुण है।

कौआना (हिं० क्रि०) १ बर्राना, अण्ड बण्ड बकने लगना। २ अकबकाना, निश्चेष्ट होना।

कौकाक्ष (सं० त्रि०) कोकाक्ष-अण्। कोकाक्षका दण्डनीय (मानव वा शिष्य)।

कौकिल (सं० पु०) कोकिलस्यापत्यम्, कोकिल-अण्। अण् कुच कोकिलात् स्मृतः। (पा ४।१।१३० भाष्य) कोकिलशावक, कोयलका नर बच्चा।

कौकिली (सं० स्त्री०) कौकिल-ङीष्। कोकिलका स्त्रीजाति शावक, कोयलका मादा बच्चा।

(लाट्यायन श्रौत० ५।४)

कौकिल्य (सं० पु०) कोकिलाक्षवृक्ष, तालमखानेका पेड़।

कौकुट्टक (सं० पु०) जनपदविशेष, एक देश।

"अथापरे जनपदाः कौकुट्टकास्तथा कोलाः।" (महाभारत, भीष्म ९)

कौकुर (सं० पु०) कुकुराणां देशः, कुकुर-अण्। १ देशविशेष, कोई मुल्क। यह वर्तमान राजपूतानेके मध्यमें रहा। "अम्बष्ठा कौकुरास्तार्क्ष्या वस्त्रपाः पह्नवैः सह।" (महाभारत २।५१)

कुकुरा यादवभेदा एव, कुकुर स्वार्थे अण्। २ यादववंशीय राजा। (भारत भीष्म ५ अ०)

कौकूस्त (सं० पु०) एक ऋषि। (शतपथब्राह्मण ४।६।१।१३)

कौकृत्य (सं० क्ली०) कुत्सितं कृत्यम्, स्वार्थे अण्। १ अनुताप, पछतावा। २ मन्दकार्य, बुरा काम।

कौक्कुट (सं० त्रि०) कुक्कुट-सम्बन्धी, मुर्गेके मुताल्लिक।

कौक्कुटपुट (सं० क्ली०) पुटविशेष, एक तह या गड्ढा। वितस्तिमात्रके खातको कौक्कुटपुट कहते हैं। कोई कोई उसे षोड़शांगुलक खात भी कहता है। (भावप्रकाश)

कौक्कुटिक (सं० पु०) कुक्कुटवद्दम्भेन विहरति यद्वा कुक्कुटीं मर्यां कापथ्यादिकं पादविक्षेपस्थानञ्च पश्यति, कुकुट-ठक्। (संज्ञायां ललाटकुक्कुट्यौ पश्यति। पा ४।४।४६)

१ दाम्भिक, मगरूर। २ अदूरप्रेरिताक्ष, जीवहत्याके भयसे दूसरी ओर न देख बड़े सावधानसे पैर रखनेवाला, कोई संन्यासी। ३ कुक्कुटविक्रेता, मुर्गफरोश। ४ पक्षिविशेष, कोई चिड़िया।

कौक्कुटिकन्दल (सं० पु०) कुक्कुटस्यायम्, कुक्कुट-इञ् कौक्कुटिः स इव कन्दलः। सर्पविशेष, किसी किस्मका अजदहा।

कौक्कुटिकन्दली (सं० स्त्री०) स्त्री जातीय अजगरसर्प, मादा अजदाहा।

कौक्ष (सं० त्रि०) कुक्षि इदमर्थे अण्। कुक्षिबद्ध, कोखसे सरोकार रखनेवाला।

कौक्षक (सं० त्रि०) कुक्षौ देशभेदे भवः, कुक्षि-वुञ्। धूमादिभ्यश्च। पा ४।२।१२७। कुक्षिदेशोत्पन्न, कोखसे निकला हुवा।

कौक्षेय (सं० त्रि०) कुक्षौ भवः, कुक्षि-ढञ्। इति-कुक्षि-कलशिवस्त्यस्त्यहेर्ढञ्। पा ४।२।९६। कुक्षिबद्ध, बगली। (भट्टि ४।२१)

कौक्षेयक (सं० पु०) कुक्षौ कोषे तिष्ठति, कुक्षि-ढकञ्। कुलकुक्षिग्रीवाभ्यः श्वास्यलङ्कारेषु। पा ४।२।९६। कुक्षिबद्ध खड्ग, तलवार।

कौङ्क (सं० पु०) कुङ्क एव स्वार्थे अण्। कौङ्कण देश। कौङ्कण देखो

कौङ्कण (सं० पु०) कोङ्कण एव स्वार्थे अण्। १ कोङ्कण-देश। "कौङ्कणा मालवानवा।" (भारत ६।९) २ कोङ्कण-देशके राजा।

कौङ्किण (सं० पु०) कोङ्कण स्वार्थे अण् पृषोदरादित्वा दकारस्य इकारः। कोङ्कणदेश।

कौङ्कुम (सं० त्रि०) कुङ्कुमसम्बन्धीय, केसरिया।

कौचवार (सं० पु०) कुचवारस्यापत्यम्, कुचवार-अञ्। कुचवारके लड़के।

कौजप (सं० त्रि०) कुजपस्येदम्, कुजप-अण्। कुजप-सम्बन्धी, कुजपसे सम्बन्ध रखनेवाला।

कौञ्च (सं० पु०) क्रुञ्च एव स्वार्थे अण् पृषोदरादित्वाद् रलोपः। क्रौञ्चपर्वत, एक पहाड़।

कौञ्जर (सं० त्रि०) कुञ्जर इदमर्थे अण्। कुञ्जरसम्बन्धी, हाथीसे ताल्लुक रखनेवाला।

कौञ्जायन (सं० पु०) कुञ्जस्य युमपत्यम्, कुञ्ज-फञ्। गोत्रे कुञ्जादिभ्यश्च। पा ४।१।९८। कुञ्जके वंशोत्पन्न सन्तानादि।

कौञ्जायनी (सं० स्त्री०) कुञ्जस्यापत्यं स्त्री, कुञ्ज-फञ्। कुञ्जकी वंशोत्पन्न स्त्री।

कौञ्जायन्य (सं० पु०) कौञ्जायन स्वार्थे ञ। व्रातच्फञोरस्त्रियाम्। पा ५।३।११३। कुञ्ज नामक ब्राह्मणके वंशोत्पन्न पुरुष।

कौञ्जि (सं० पु०) कुञ्जस्य ऋषेरनन्तरापत्यम्, कुञ्ज-इञ्। कुञ्ज नामक ऋषिके पुत्र।

कौञ्जी (सं० स्त्री०) कुञ्जस्य ऋषेरपत्यं स्त्री, कुञ्ज-इञ् ततः स्त्रियां ङीष्। कुञ्ज नामक ऋषिकी कन्या।

कौट (सं० पु०-त्रि०) कूटे गिरिशृङ्गे भवः, कूट-अण्। १ कूटजवृक्ष। कूटे मायायां भवः, कूट-अण्। २ कपट-साक्षी, बनावटी गवाह। कूट्यां वशीकृतमायायां भवः। ३ स्वाधीन, आजाद। ४ मिथ्याकथन, झूठ बात। ५ कूटसाक्ष्य, झूठी गवाही।

कौटकिक (सं० त्रि०) कूटमेव स्वार्थे कन् कूटकं मांसं पण्यमस्य, कूटक-ठञ्। मांसविक्रेता, गोश्तफरोश।

कौटज (सं० पु०) कौटे जायते, कौट-जन-ड। कुटजवृक्ष।

कौटजभारिक (सं० त्रि०) कुटजस्य भारं हरति वहति आवहति वा, कुटज-भार-ठञ्। १ कुटजभार वहन करनेवाला। २ कुटजभार हरण करनेवाला। ३ कुटज-भार उत्पादन करनेवाला।

कौटजलेह (सं० पु०) अर्शोधिकार पर लेह, बवासीर-की एक चटनी। १०० पल कुटजत्वक् ६४ शरावक जलमें पकाना चाहिये। ८ शरावक पानी शेष रहनेसे क्वाथको उतार लेते हैं। फिर उसको कपड़ेसे छान उसमें ३० पल पुराना गुड़ और ८ पल घी डाल गर्म करते हैं। चटनी जैसा बन जाने पर उसमें एक एक पल वच, व्योष, विडङ्ग, इन्द्रयव, त्रिफला, अग्नि, रसाञ्जन, भल्लात, अतिविषा और बिल्वका चूर्ण तथा ८ पल मधु डाल घी, शहद, मट्ठा, पानी या दूधके साथ खानेसे रक्तसमुद्भव अर्शोरोग शान्त हो जाता है। (सारकौमुदी)

कौटजबीज (सं० क्ली०) इन्द्रयव।

कौटजिक (सं० त्रि०) कुटजं भारभूतं हरति वहति आवहति वा, कुटज-ठञ्। वंशादिभ्य इत्यस्य व्याख्यान्तरं भारभूतेभ्य वंशादिभ्य इति। (पा ५।१।५० सिद्धान्तकौमुदी) कुटजभार हरण, वहन वा आवहन करनेवाला।

कौटतक्ष (सं० पु०) कौटः स्वाधीनः तक्षा, कर्मधा०। स्वाधीन सूत्रधर।

कौटभी (सं० स्त्री०) कैटभी, दुर्गा।

कौटल्य (सं० पु०) कुटो घटस्तं लान्ति कुटलाः कुल-धान्यास्तेषां अपत्यम्, बाहुलकात् यञ्। यद्वा कुट्-कलच् स्वार्थे ष्यञ्। वात्स्यायन मुनि।

कौटवी (सं० स्त्री०) कोट्टवी, एक नंगी औरत।

कौटसाक्षी (सं० पु०) कूटएव कौटः स्वार्थे अण् तादृशः साक्षी, कर्मधा०। मिथ्यासाक्षी, झूठा गवाह।

कौटसाक्ष्य (सं० क्ली०) कौटसाक्षिणो भावः कर्म वा, कौटसाक्षिन् ष्यञ्। मिथ्यासाक्ष्य, झूठी गवाही। मनुके मतमें—झूठी गवाही देनेसे सुरापानके समान अनुपातक लगता है। पीछे यदि समझ पड़े कि कौटसाक्ष्य

प्रकारसे कोई विवाद मीमांसा किया गया है, तो वह पूर्वकी भांति अकृत अर्थात् पुनर्वार विचारणीय है। लोभसे मिथ्यासाक्ष्य देने पर शत पण, मोहसे प्रथम साहस, भयसे मध्यम साहस, मित्रता तथा अनुरोधसे प्रथम साहसका चतुर्गुण, स्त्री कामनासे प्रथम साहसका दशगुण, क्रोधसे तीन गुण, अज्ञानसे २ शत पण और मूर्खतादोषसे झूठी गवाही देने पर एक शतपण दण्ड करना उचित है।

कौटायन (सं० पु०) कूटस्य गोत्रापत्यम्, कूट-फञ्। कूटवंशीय सन्तान।

कौटि (सं० पु०) कूटस्य अपत्यम्, कूट-इञ्। मिथ्यावादीका पुत्र, झूठे गवाहका लड़का।

कौटिक (सं० त्रि०) कूटेन मृगादिबन्धनयन्त्रेण चरति, कूट-ठक्। मांसविक्रेता, गोश्तफरोश। इसका संस्कृत पर्याय—वैतंसिक और मांसिक है। २ व्याध, बहेलिया।

कौटिलिक (सं० त्रि०) कुटिलिकया हरति मृगान् अङ्गारान् वा, कुटिलिका-अण्। १ व्याध, चिड़ीमार। २ लौहकार, लोहार।

कौटिल्य (सं० पु०-क्ली०) कुटिलस्य भावः, कुटिल-ष्यञ्। १ कुटिलता, क्रूरता, टेढ़ापन। (काव्यप्रकाश) २ चाणक्य। इनके क्रोधानलसे नन्द नृपति विनष्ट और इन्हींके चक्रान्तसे मुरापुत्र चन्द्रगुप्त सिंहासन पर अधिष्ठित हुए। कुटिलताके मूलस्वरूप रहने पर यह कौटिल्य नामसे विख्यात हैं। चाणक्य देखो। ३ चाणक्यमूलक, किसी किस्मकी मूली।

कौटिल्यक (सं० पु०) अग्निप्रकृति कीटविशेष, एक जहरीला कीड़ा। इसके काटनेसे वातनिमित्तज रोग उठ खड़े होते हैं। (सुश्रुत)

कौटी (सं० स्त्री०) कुटजवृक्ष, कुरैयाका पेड़।

कौटीगव (सं० त्रि०) कौटीगव्यस्य छात्रादिः, कौटीगव्य-अण्। अपत्यप्रत्ययस्य लोपः। कौटीगव्यके छात्र प्रभृति।

कौटीगव्य (सं० पु०) कुटिगोऋषिविशेषस्य गोत्रापत्यम्। कुटीगो नामक ऋषिवंशीय सन्तान।

कौटीय (सं० त्रि०) कूट-छण्। कूटसन्निकृष्ट देश, कूटका निकटवर्ती।

कौटीर (सं० त्रि०) कुटीरस्य अवयवो विकारो वा, कुटीर-अण्। १ कुटीरका अवयव। २ कुटीरका विकार।

कौटीर्य (सं० त्रि०) कुटीरः केवल एव, स्वार्थे ष्यञ्। १ केवल, असहाय, अकेला, बेचारा।

कौटीर्या (सं० स्त्री०) दुर्गा। (हरिवंश १६८)

कौटुम्ब (सं० त्रि०) कुटुम्बं तद्भरणं प्रयोजनमस्य, बहुव्री०। कुटुम्ब भरणोपयोगी द्रव्य, खानदानको परवरिश करने लायक। (आश्वलायनगृह्यसूत्र १।६।१०)

कौटुम्बिक (सं० त्रि०) कुटुम्बे तद्भरणे व्यापृतः, कुटुम्ब-ठक्। कुटुम्ब परिपालनमें व्यापृत रहनेवाला, जो खानदानकी परवरिशमें लगा रहता हो। (भागवत५।१।३८) कुटुम्बे भवः। २ कुटुम्बसम्बन्धीय, खानदानी। (भागवत ५।१४।३)

कौट्या (सं० स्त्री०) कुटस्यापत्यं स्त्री, कुट-ण्य। १ कूटवंशीय कन्या। (त्रि०) कुट-ण्य। २ कूटसन्निकृष्ट देशादि।

कौठार (सं० पु०) कुठारस्य तन्नामकस्य ऋषेरपत्यम्, कुठार-अण्। कुठार नामक ऋषिके पुत्र।

कौठारिकेय (सं० त्रि०) अल्पा कुठारी कुठारिका तस्या इदम्, कुठारिका-ढक्। क्षुद्र कुठारसम्बन्धीय, छोटी कुल्हाड़ीसे सरोकार रखनेवाला।

कौठारी (सं० स्त्री०) कौठार-ङीप्। कुठार नामक ऋषिकी कन्या।

कौठुम (सं० पु०) कौथुम शाखा।

कौड़विक (सं० त्रि०) कुड़वस्य वापः, कुड़व-ठञ्। (तस्य वापः। पा ।५।१।४५) १ कुड़व परिमित बीजवपनके उपयुक्त, एक कुड़व बीज डालने लायक। कुड़वं तत् परिमितमन्नं सम्भवति पचति अवहरति वा, कुडव-ठञ्। सम्भवत्यवहरति पचति। पा।५।१।५२। २ एक कुड़व अन्न रह सकने लायक। ३ एक कुड़व अन्न पाक करनेवाला। ४ एक कुड़व परिमित अन्न अवहरण करनेवाला। ५ कुड़व परिमित, बारह मुट्ठी।

कौड़ा (हिं० पु०) १ बृहत् कपर्दक, बड़ी कौड़ी। २ अलाव, तापनेके लिये रोज जलाया जानेवाला एक गड्ढा। जाड़ेमें इसको चारों तरफ बैठके लोग तापते और बातचीत करते हैं। ३ कोचिंड़ा, कोई जंगली प्याज।

कौड़िया (हिं० वि०) कपर्दक-जैसा, कौड़ीसे मिलता-जुलता।

कौड़ियाला (हिं० वि०) १ कोकई, हलका नीला, इसमें कुछ गुलाबीकी झलक रहती है। (पु०) २ कोकई रंग। ३ कोई सांप। यह जहरीला होता और शरीर पर कौड़ी-जैसा दाग रखता है। ४ कृपण, कंजूस। ५ एक पेड़। यह ऊसरमें उपजता और मटमैले रंगकी छोटी छोटी पत्तियां रखता है। कौड़ियालामें कुच्छो-जैसे छोटे छोटे फूल आते हैं। यह तीन प्रकारका होता है—सफेद, लाल और नीला। नीले फूलका कौड़ियाला विष्णुक्रान्ता भी कहलाता है। शङ्खपुष्पी देखो।

कौड़ियाही (हिं० स्त्री०) १ कौड़ियोंमें चुकाई जाने वाली मजदूरी। २ लालची, कौड़ियों पर काम करने-वाली।

कौड़ी (हिं० स्त्री०) कपर्दिका, यह एक समुद्री कीड़ा है। घोंघेकी भांति कौड़ी भी अस्थिकोशमें ही रहती है। इसका अस्थिकोश ऊंचा और चमकीला होता और उसके नीचे बड़ा लम्बा पतला छेद रहता है। इस छेदके दोनों किनारों पर दांत होते हैं। खुले मुखको बन्द करनेके लिये ढक्कन नहीं रहता। कौड़ीका शिर छिद्रके बाहर होता है। उसके दोनों कोने स्पर्शेन्द्रियका काम देते हैं। कन्दर्प देखो। २ द्रव्य, रुपया पैसा। ३ कर, खिराज। ४ अक्षिगोलक, आंखका डेला। ५ छातीकी एक हड्डी। यह छातीके बीचो बीच सबसे छोटी रहती है। सबसे नीचेकी दो पसलियां कौड़ी ही पर आके मिलती हैं। ६ कोई गिलटी। प्रायः जांघ, कांख और गलेको गिलटीको कौड़ी कहते हैं। ७ कटारकी अनी।

कौड़ी गुड़गुड़ (हिं० पु०) क्रीड़ाविशेष, एक खेल। बहुतसे लड़के दो पंक्तियोंमें आमने सामने बैठते हैं। दोनों पंक्तियोंमें एक एक सरदार रहता है। पैसा या जूता उछाल कर निर्णय करते, किस ओरसे खेल शुरु होगा। जिस पंक्तिसे खेल आरम्भ होता, उसका सरदार अपनी अंजुलीमें एक कौड़ी छिपा धूल भर लेता है। फिर वह थोड़ी थोड़ी धूल अंजुलीसे अपनी ओरके सब लड़कोंके हाथ पर डालता है। दूसरी ओरके लड़के इस बात पर ध्यान रखते हैं, कौड़ी किस लड़केके हाथ पर गिरी है। ठीक मालूम हो जाने पर जिसके हाथ पर कौड़ी गिरती, उसके चपत पड़ती है। इसको कौड़ी जगनमगन भी कहते हैं।

कौड़ीजूड़ा (हिं० पु०) अलङ्कारविशेष, एक गहना। इसे स्त्रियां मस्तक पर धारण करती हैं।

कौड़ेना (हिं० पु०) १ यन्त्रविशेष, कोई औजार। यह लोहेका होता है। कसेरे इससे बर्तनों पर नक्काशी करते हैं। कौड़ेना डेढ़ बालिश्त लंबा और नोक पर पतला तथा चपटा रहता है। २ कौड़ियाला जड़ी। (स्त्री०) ३ कौड़ियाही।

कौड़्यक (सं० त्रि०) कुड्यायां जातः, कुड्या-ढकञ्। कत्त्र्यादिभ्यो ढकञ्। पा ४।२।९५। कुड्याजात।

कौणकुत्स्य (सं० पु०) एक ऋषि। (भारत, आदि ८ अ०)

कौणप (सं० पु०) कुणपस्थिधातुकं शरीरं शवं वा भक्षयितुं शीलमस्य, कुणप-अण् यद्वा कुणपः भक्ष्यत्वेन अस्त्यस्य। १ राक्षस। (भारत, आदि १७० अ०।) २ वासुकि वंशीय कोई सर्प। (भारत १।५७।५ (त्रि०) ३ कुटपगन्धि, बदबूदार।

कौणपदण्ड (सं० पु०) कौणपस्य दण्डा इव दण्डो यस्य, बहुव्री०। भीष्म।

कौणपाशन (सं० पु०) कौणपानामशनमिवाशनं यस्य, बहुव्री०। एक सांप। (भारत, आदि ३५अ०)

कौणिन्द (सं० पु०) कुणिन्द-जनपदवासी। कुनिन्द देखो।

कौणेय (सं० पु०) रजनका प्रतिपालक। (तैत्तिरीयसं०)

कौण्डपायिन् (सं० क्ली०) कुण्डपायिनामिदम् कुण्डपायिन्-अण् निपातनात् साधुः। कुण्डपायियोंका कारणीय एक यज्ञ।

कौण्डपायी (सं० पु०) कुण्डमेव कौण्डं तेन पिबति, कौण्ड-पा-णिनि। सोमयागकारी एक यजमान।

कौण्डभट्ट, कोण्डभट्ट देखो।

कौण्डल (सं० त्रि०) कुण्डलमस्त्यस्य, कुण्डल-अण्, अण् प्रकरणे ज्योत्स्नादिभ्य उपसंख्यानम्। (पा ५।२।१०३। वार्तिक) कुण्डलयुक्त, बाला पहने हुआ।

कौण्डलिक (सं० त्रि०) कुण्डल-कुमुदादित्वात् ठक्। कुण्डल सन्निकृष्ट देशादि।

कौण्डाग्नक (सं० त्रि०) कुण्डाग्नौ भवः, कुण्डाग्नि-वुञ्। कन्थापलदनगरग्रामह्रदोत्तरपदात्। पा। ४।२।१२९। कुण्डाग्नि समुत्पन्न, कुण्डाग्नि-सम्बन्धीय, कुण्डकी आगसे निकला हुआ।

कौण्डायन (सं० त्रि०) कुण्डस्य अदूरवर्ती देशादि कुण्ड-पक्षादित्वात् फक्। कुण्डके निकटवर्ती देशादि।

कौण्डिनी (सं० स्त्री०) कौण्डिन्य-ङीप् यलोपश्च। कुण्डिन मुनिकी कन्या।

कौण्डिनेयक (सं० त्रि०) कुण्डिन-ढकञ्। कुण्डिन नगर-जात, कुण्डिननगरसम्बन्धीय।

कौण्डिन्य (सं० पु०) कुण्डिनस्य गोत्रापत्यम्, कुण्डिन-यञ्। १ कुण्डिन मुनिके पुत्र। किसी समय शिवके क्रोधसे विष्णुने इन्हें बचाया था। तदवधि इनका दूसरा नाम विष्णुगुप्त पड़ गया। (शतपथब्राह्मण १४।४।५।२०) यह एक धर्मशास्त्रकार थे। नीलकण्ठ और कमला-करने इनका मत उद्धृत किया है। २ दाक्षिणात्यके कोई विश्वामित्रगोत्रीय राजा। (सह्याद्रि खण्ड १।३२।२९) ३ गोत्रप्रवर्तक ऋषिभेद। ४ कोई प्रधान बौद्ध स्थविर। प्रथम यह आराढ़-कालामके निकट दीक्षित हुवे। श्यामदेशीय बुद्ध-जीवनीमें लिखा है—बुद्धदेवके जन्म-काल राजा शुद्धोदनने १०८ ब्राह्मणोंको बुलाया था। उनमें आठ लोग प्रधान रहे। इन्हीं प्रधानोंमें एक कौण्डिन्य भी थे। उस समय वयस अल्प रहते भी इन्होंने वेदवेदाङ्ग सीख लिये थे। इन्होंने शुद्धोदनसे सम्भाषण करके कहा—राजन्। आपका पुत्र संसारके सुखमें सुखी न होगा, राजराजेश्वरके पदको भी अग्राह्य करेगा; इसको सर्वज्ञ बुद्धपद मिलेगा। जिस समय बुद्ध-देव निर्जन अरण्यमें कठोर साधन करते थे, कौण्डिन्य भी उनके निकट रहे। बुद्धके शिष्योंमें यह सबसे वयो-ज्येष्ठ थे। भोटदेशके विनयसूत्रमें कहा है—बुद्धदेव जब कोई शास्त्रीय तत्त्व इनसे पूछते, यह अवलीला-क्रममें उसका उत्तर दे दिया करते थे। इसीसे लोग इन्हें 'अज्ञातकौण्डिन्य' कहते थे।

सुवर्णप्रभास नामक नेपालदेशीय बौद्धग्रन्थमें लिखा है—

शाक्य मुनिके निर्वाणलाभकी बात सुनके कौण्डि-न्यने बुद्धदेवके पदप्रान्तमें विलुण्ठित हो कर प्रार्थना की—प्रभो! आपने जो महाज्ञान लाभ किया है, उससे सर्षपका कणमात्र मुझे भी प्रदान कीजिये, मेरा यही शेष भिक्षा है।

तिब्बतके विनयसूत्रमें बताया है—बुद्धदेवके निर्वाण पीछे आनन्द जब महामण्डलके मध्य बुद्धदेवका महो-पदेशपूर्ण सूत्रान्त पढ़ा था, कौण्डिन्य उसे सुन कर मूर्छित हो गये। शेषको इन्होंने ज्ञानालोकसे उद्दीप्त हो कर संसार परित्याग किया।

कौण्डिन्य दीक्षित—एक प्रसिद्ध नैयायिक। यह मुरारि-भट्टके शिष्य रहे। इन्होंने तर्कभाषाप्रकाशिकाकी रचना किया।

कौण्डिन्या (सं० स्त्री०) मांसरोहिणी, एक खुशबूदार चीज।

कौण्डिन्यायन (सं० पु०) कुण्डिनस्य युवापत्यम्, कुण्डिन-गर्गादित्वात् यञ् ततः फक्। कुण्डिनका युवक अपत्य। (शतपथब्राह्मण १४।५।५।२०)

कौण्डिल्य, कौण्डिन्य देखो।

कौण्डिल्यक (सं० पु०) कीटविशेष, एक कीड़ा। इसकी विष्ठा और मूत्रमें विष होता है। (सुश्रुत)

कौण्डोपरथ (सं० पु०) कुण्डोपरथ-अण्। अस्त्रधारी जातिविशेष, एक लड़ाका कौम। (सिद्धान्तकौमुदी)

कौण्य (सं० त्रि०) १ विकलाङ्ग। (क्ली०) २ कुणित्व, हाथका टेढ़ापन।

कौतप (सं० त्रि०) कुतपमस्त्यस्य, कुतप-अण्। कुतप-विशिष्ट, अच्छी तपस्या न करनेवाला।

कौतुस्कुत (सं० त्रि०) कुतः कुतो भवः, कुतः कुतस् अण् टिलोपश्च विसर्गस्य सकारः। कस्कादिषु च। पा।८।३।४८ किस किस स्थानका जात, कौन कौन जगहमें पैदा होनेवाला।

कौतस्त (सं० त्रि०) किस स्थानका जात, कौनसी जगह पैदा होनेवाला।

कौतुक (सं० क्ली०) कुतुक प्रज्ञादित्वात् स्वार्थे अण् यद्वा कुतकस्य भावः, कुतुक युवादित्वात् अण्। १ कुतू-हल, किसी चीजको देखने या समझनेके लिये उत्साह।

२ माङ्गलिक हस्तसूत्र, राखिया। (कुमारसम्भव ७।२।) ३ उत्सव, जलसा। (भागवत ४।३।१३) ४ अभिलाष, खाहिश। (कथासरित्सागर) ५ परिहास, हंसी, ठठोली। ६ आनन्द, मजा। ७ परम्परागत मङ्गल। ८ नृत्य गीतादि, तमाशा। ९ भोगकाल, खानेका वक्त।

कौतुककर्ता (सं० पु०) कौतुक करनेवाला, जो तमाशा दिखाता हो।

कौतुकक्रिया (सं० स्त्री०) आमोदप्रमोद, हंसी खेल, स्वांग तमाशा।

कौतुकतोरण (सं० पु०-क्ली०) कौतुकेन निर्मितं तोरणम्, मध्यपदलो०। उत्सवनिर्मित तोरण, जलसेका साज।

कौतुकमङ्गल (सं० क्ली०) कौतुकेन कृतं मङ्गलम्, मध्य पदलो०। उत्सव मङ्गल, जलसेकी खुशी।

कौतुकागार (सं० क्ली०) कौतुकगृह, जलसे या तमाशेकी जगह।

कौतुकिनी (सं० स्त्री०) कौतुकमस्त्यस्याः, कौतुक-इनि स्त्रियां ङीप्। नायिकाविशेष, तमाशा करनेवाली औरत।

कौतुकिया (हिं० पु०) १ कौतुकी, तमाशा करनेवाला। २ विवाह सम्बन्ध स्थिर करनेवाले नापित, पुरोहित आदि।

कौतुकी (सं० त्रि०) कौतुकमस्त्यस्य, कौतुक-इनि। १ कौतुकविशिष्ट, तमाशेमें पड़ा हुआ। २ कौतुक करनेवाला, जो तमाशा करता हो।

कौतूहल (सं० क्ली०) कुतूहलस्य भावः कर्म वा, कुतूहल युवादित्वात् अण् यद्वा कूतूहल प्रज्ञादित्वात् स्वार्थे अण्। १ कुतूहल, किसी नये या अपरिज्ञात विषयके जानने, सुनने या देखनेका आग्रह। (मार्कण्डेय ८।१)

कौतूहल्य (सं० क्ली०) कुतूहल ब्राह्मणादित्वात् स्वार्थे ष्यञ्। गुणवचनब्राह्मणादिभ्यः कर्मणि। पा ५।१।१२४। कुतूहल, तमाशा।

कौतोमत (सं० पु०) कुतोमतस्यापत्यम्, कुतोमत अण्। एक ऋषि। (गोपथब्राह्मण)

कौत्स (सं० पु०) कुत्सस्य ऋषेरपत्यम्, कुत्स-अण्। कुत्स नामक ऋषिके पुत्र। यह महर्षि वरतन्तुके शिष्य और जैमिनिके आचार्य थे। (आश्वलायन श्रौतसूत्र १।२।५)

रघुवंशमें वर्णित हुआ है कि वशिष्ठके शिष्य कौत्सने गुरुके आदेशसे अयोध्यापुर पहुंचके इन्दुमतीके वियोगमें शोकविह्वल अज राजको नानाविध उपदेश दिया था। (रघु ५म सर्ग)

राजर्षि भगीरथने इनको हंसी नाम्नी कन्या सम्प्रदान की थी। (भारत, अनुशासन १३७ अ०)

यास्कने निरुक्तमें लिखा है—व्याकरण व्यतीत मन्त्रका अर्थ समझ नहीं पड़ता। फिर जिसका अर्थ समझमें नहीं आता, उसका स्वरसंस्कार भी असम्भव दिखाता है। अतएव व्याकरण ही विद्यास्थान है और इसका भी पड़ता है। कौत्स कहते हैं कि मन्त्रका अर्थ समझनेके लिये व्याकरणकी कोई जरूरत नहीं, मन्त्रका अर्थ कब होता है! पूर्वप्रदर्शित युक्तिके बलसे कौत्सका मत उपेक्षित हो गया। (निरुक्त १।१५)

(क्ली०) कुत्सेन दृष्टं साम, कुत्स-अण्। कुत्स नामक ऋषिकर्तृक दृष्ट सामविशेष। यह विकृत यज्ञमें गेय होता है। (सामवेद, गा० १६ प्र० २ अर्ध १० गान)

कौत्सायन (सं० पु०) कुत्स पक्षादित्वात् चातुरर्थिक फक्। कुत्स-सम्बन्धीय।

कौत्सी (सं० स्त्री०) कुत्सस्य अपत्यं स्त्री, कुत्स-अण् स्त्रियां ङीप्। कुत्स नामक ऋषिकी कन्या।

कौथ (हिं० स्त्री०) कौन तिथि, क्या तारीख। यह शब्द एक प्रकारका प्रश्नवाचक सर्वनाम है।

कौथुम (सं० त्रि०) कुथुमं वेदशाखाविशेषं अधीते वेत्ति वा कुथुम-अण्। तदधीते तद्वेद। पा ४।२।५९। १ कुथुम शाखाध्यायी। २ कौथुमि-सम्बन्धीय।

कौथुमी (सं० स्त्री०) कुथुमि मुनि प्रचारित सामवेदकी एक शाखा। ब्रह्माण्डपुराणमें लिखा है—वाराहकल्पके उनविंशति युगमें शिव जटामाली नाम ग्रहण करके अवतीर्ण हुये। हिमालयके अन्तर्गत जटायु पर्वतमें उनका वासस्थान रहा। जटामालीके चार पुत्र हुए। उनमें सर्व कनिष्ठका नाम कुथुमि था। कुथुमि महर्षि हिरण्यनाभके निकट प्राच्य सामवेद अध्ययन करके अद्वितीय वैदिक-जैसे विख्यात हुये। महर्षि कुथुमिने सामवेदकी जिस शाखाको प्रचार किया, उसीका नाम कौथुमी शाखा है। कुथुमिके पराशर, भागवित्ति और

तेजस्वी नामक तीन पुत्र हुवे। इन तीनोंने कुथुमिसे सामवेदको कौथुमी शाखा पढ़ी थी। इन्हीं तीनोंको कौथुम कहा करते हैं। कुथुमिके ज्येष्ठपुत्र पराशरने ६ संहिताओंको प्रचार किया था। आसुरायण, वैशाख्य, वेदवृद्ध, परायण, प्राचीनयोगपुत्र और पतञ्जलि—छह लोग पराशर-कौथुमके शिष्य रहे। इनके प्रशिष्यक्रमसे कौथुमी शाखा विस्तृत हुई है।

भारतवर्षके सामवेदी ब्राह्मण प्रायः कौथुमी-शाखाके अनुसार कार्य किया करते हैं।

कौथुमी (सं० पु०) कौथुम।

कौदालीक (सं० पु०) कुदारेण आचरति, कुदार-ईकन् रस्य लत्वम्। कुदालीकः ततः स्वार्थे अण्। एक जाति। तीवरके औरस और रजकीके गर्भसे यह लोग निकले हैं। (ब्रह्मवैवर्त पु०)

कौद्रविक (सं० क्ली०) कोद्रवो निमित्तमस्य, कोद्रव-ठञ्। सौवर्चलवण, सोंचर नोन।

कौद्रवीण (सं० स्त्री०) कोद्रवाणां भवनं उत्पत्तिस्थानम्, कोद्रव-खञ्। (धान्यानां भवने क्षेत्रे खञ्। पा ।५।२।१) क्षेत्रविशेष कोदवका खेत।

कौद्रायण (सं० पु०) कुद्रस्य ऋषेर्युवापत्यम्, कुद्र-इञ् ततः फक्। कुद्र नामक ऋषिके युवक पुत्र।

कौद्रायणक (सं० त्रि०) कौद्रायण चातुरर्थिक वुञ्। कौद्रायण सन्निकृष्ट देशादि।

कौद्रेय (सं० पु०) कुद्रि ढञ्। गृष्ट्यादिभ्यश्च। पा ।४।१।१३६। कुद्रिके पुत्र। (कात्यायन १०।२।२१)

कौद्रेयी (सं० स्त्री०) कौद्रेय-ङीष्। कुद्रिकी कन्या।

कौन (हिं० सर्व०) १ कः, को, कौनसा। यह एक प्रश्न-वाचक सर्वनाम है। इसके द्वारा अभिप्रेत व्यक्ति वा वस्तुको पूछते हैं।

'कौनको कलिक यौं करै या भयो काम।" (पद्माकर)

विभक्ति लगानेसे 'कौन' का 'किस' हो जाता है, जैसे—किसने, किसको, किसमें, किससे इत्यादि। (वि०) २ कैसा, किस प्रकारका।

कौनख्य (सं० क्ली०) कुनखिनो भावः, कुनखिन्-ष्यञ् टिलोपश्च। कुनखीरोग। ब्राह्मणको सोना चोरी करनेसे पापभोगके पीछे उसका चिह्नस्वरूप कुनखीरोग लग जाता है। (मनु ११।४९)

कौनामि (सं० पु०) कुनाम्निोऽपत्यम्, कुनामिन्-इञ्। कुत्सित नामधारीका अपत्य।

कौनामिक (सं० त्रि०) कुनामन्-ठञ्। कुनाम सम्बन्धीय, बदनामीके मुताल्लिक।

कौन्तायनि (सं० त्रि०) कुन्ती कर्णादित्वात् फिञ्। कुन्तीके निवास देशादि।

कौन्तिक (सं० पु०) कुन्तः प्रहरणमस्य, कुन्त-ठञ्। कुन्तास्त्र धारण करके लड़नेवाला, जो भालासे लड़ता हो।

कौन्ती (सं० स्त्री०) कुन्तिषु देशविशेषेषु भवा, कुन्ति-अण् ततो ङीष्। रेणुका नामक गन्धद्रव्य, एक खुशबूदार चीज। इसका संस्कृत पर्याय—रेणुका, राजपुत्री, नन्दिनी, कपिला, द्विजा, भस्मगन्धा, पाण्डुपुत्री, हरेणुका, ब्राह्मणी और हैमगन्धिनी है। रेणुका देखो।

कौन्तेय (सं० पु०) कुन्त्या अपत्यम्, कुन्ती-ढक्। १ कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर प्रभृति। (गीता) २ अर्जुनवृक्ष।

कौन्त्य (सं० पु०) कुन्ति-ञ्यङ्। कुन्तिदेशीय राजा। (सिद्धान्तकौमुदी।)

कौन्द (सं० त्रि०) कुन्दस्येदम्, कुन्द-अण्। कुन्दसम्बन्धीय।

कौन्द्रायण, कौद्रायण देखो।

कौन्द्रायणक, कौद्रायणक देखो।

कौप (सं० क्ली०) कूपे भवम्, कूप-अण्। १ कूपोदक, कूएका पानी। यह स्वादु, त्रिदोषघ्न, शीतल और लघु होता है। लवणयुक्त होनेसे कौप पित्तवर्धक, श्लेष्मघ्न, दीपन और लघु है। वसन्तकालको कूपका जल सेवनीय होता है। (सुश्रुत) (त्रि०) २ कूपसम्बन्धीय, कूवेके मुताल्लिक।

कौपजल, कौप देखो।

कौपादकी (सं० स्त्री०) कौमोदकी नाम्नी कृष्णकी गदा।

कौपिञ्जल (सं० पु०) कुपिञ्जलस्यापत्यम्, कुपिञ्जल-अण्। कुपिञ्जलके पुत्र।

कौपिञ्जली (सं० स्त्री०) कौपिञ्जल ङीप्। कुपिञ्जलकी कन्या।

कौपीन (सं० क्ली०) कूपे पतनमर्हति, कूप-खञ्, अकार्यार्थे निपातः। १ अकार्य, न करने लायक काम।

२ पाप, गुनाह । ३ गुह्यदेश । ४ उपस्थ, लिङ्ग । ५ मेखलाबद्ध परिधेय वस्त्रखण्ड, कफनी । इसका संस्कृत पर्याय—कच्छा, कच्छटिका, कचा और घटी है। (भागवत ७।१३।२)

कौपीनवान् (सं० त्रि०) कौपीनमस्त्यस्य, कौपीन-मतुप् मस्य वः। कौपीनविशिष्ट, कफनी पहने हुआ।

कौपुत्र (सं० क्ली०) कुपुत्रस्य भावः कर्म वा, कुपुत्र-वुञ्। द्वन्द्वमनोज्ञादिभ्यश्च। पा ५।१।१३३। १ कुपुत्रका धर्म, बुरे लड़केका काम।

कौपोदकी (सं० स्त्री०) कौमोदकी निपातनात् साधुः। कौमोदकी, विष्णुकी गदा।

कौप्य (सं० त्रि०) कूपे भवः, कूप-ष्यञ्। कूपजात, कूवेसे पैदा होनेवाला।

कौबीरा (सं० स्त्री०) भूम्यामलकी, भुइं आंवला।

कौबेर, कौवेर देखो।

कौबेरग्रह (सं० पु०) अश्वजातिका एक दुष्टग्रह खिवाङ्ग, वेपमान और जानुवोंके सहारे बैठनेवाले घोड़ेको कौबेरग्रह रहता है। (चक्रदत्त)

कौब्ज (सं० क्ली०) कुब्जस्य भावः, कुब्ज-ष्यञ्। शरीरका वक्रभाव, कुब्जत्व, जिस्मका टेढ़ापन।

कौम (सं० पु०-क्ली०) काठक।

कौम (अ० स्त्री०) जाति, नस्ल।

कौमार (सं० पु०) अपूर्वपतिं कुमारीं पतिरुपपन्नः निपातः। कौमारापूर्ववचने। पा ४।२।१३। १ कुमारीपति, लड़कीका स्वामी। २ कुमारावस्था, बचपन। यह जन्मावधि प्रथम वर्ष पर्यन्त रहता है। जातव्यक्ति जिस दिन प्रथम पृथ्वीपर आता उसी दिनसे पञ्चमवर्ष पर्यन्त कौमार ठहरता है। तन्त्रके मतमें कौमारावस्था षोड़श वर्ष पर्यन्त मानी गयी है। (गीता २।१३)

कुमारस्य सनत्कुमारस्यायम्, कुमार-अण्। ३ सनत्कुमारकृत सृष्टिभेद। (भागवत १।३।६) ४ कुमार, बच्चा। ५ अविवाहित पुत्र। (त्रि०) ६ कुमार-सम्बन्धीय, बच्चेसे सरोकार रखनेवाला। (भारत ३।२५ अ०)

कौमारक (सं० क्ली०) कौमारमेव, स्वार्थे कन्। कौमार।

कौमारभृत्य (सं० क्ली०) बालभृत्या, आयुर्वेदका एक तन्त्र। इसमें बालकका लालन पालन और चिकित्साका विषय बहुत अच्छी रीतिसे कहा गया है। कुमारभृत्या देखो।

कौमारराज्य (सं० क्ली०) यौवराज्य, लड़केकी रियासत।

कौमारायण (सं० पु०) कुमारस्य गोत्रापत्यम्, कुमार-फक्। कुमार नामक ऋषिवंशीय सन्तान।

कौमारायणी (सं० स्त्री०) कौमारायण-ङीप्। कुमार नामक ऋषिवंशीय स्त्री।

कौमारिक (सं० त्रि०) १ कुमारीसम्बन्धीय। (पु०) कोई राग।

कौमारिकेय (सं० पु०) कुमारिकाया अपत्यम्, कुमारिका ढक्। कुमारीका पुत्र, कानीन।

कौमारी (सं० स्त्री०) अपत्नीकं कुमारं पतिमुपपन्ना निपातनात् कौमारे ततो ङीष्। १ प्रथमा पत्नी, दारपरिग्रह न करनेवालेकी स्त्री। २ कुमारसम्बन्धीय चेष्टा, लड़केकी कोशिश। (भागवत ३।१२।२८) ३ कार्त्तिकेयशक्ति, मातृकाविशेष। (मार्कण्डेय चण्डी) ४ वाराहीकन्द। ५ वंशलोचनभेद। ६ घृतकुमारी।

कौमुद (सं० पु०) कौ पृथिव्यां मोदते जना यस्मिन्, मुद-क, अलुक्समा०। कार्त्तिक मास, कातिकका महीना।

कौमुदिक (सं० पु०) कुमुद-ठक्। कुमुद पर्वतका सन्निकृष्ट देश।

कौमुदिका (सं० स्त्री०) कौमुदी संज्ञार्थे कन् ततो ह्रस्वः टाप् च। १ दुर्गाकी कोई सखी। २ ज्योत्स्ना, चांदनी।

कौमुदी (सं० स्त्री०) कुमुदस्य इयं प्रकाशकत्वात्, कुमुद-अण् ततो ङीप्। १ ज्योत्स्ना, चांदनी। (कुमार ४।३३) २ कार्त्तिकी पूर्णिमा, कतकी। ३ आश्विनी पूर्णिमा, सरदपूनो। ४ दीपोत्सव तिथि। (रघुवंश) ५ उत्सव, धूमधाम। ६ कार्त्तिकोत्सव। ७ सिद्धान्तकौमुदी। ८ दाक्षिणात्यकी कोई नदी। ९ कुमुदिनी, बघवल।

कौमुदीचार (सं० पु०-क्ली०) कौमुद्या ज्योत्स्नायाश्चारः प्रायस्त्रामत्र, बहुव्री०। कोजागर पूर्णिमा, सरदपूनो।

कौमुदीजीवन (सं० पु०) चकोरपक्षी।

कौमुदीपति (सं० पु०) कौमुद्याः पतिः, ६-तत्। चन्द्र, चांद। कौमुदीनाथ प्रभृति शब्द भी इसी अर्थमें व्यवहृत होते हैं।

कौमुदीवृक्ष (सं० पु०) कौमुद्या इव प्रकाशिकायाः

दीपशिखायाः वृक्षः, ६-तत्। दीपवृक्ष। देवदारुका सीधा पेड़।

कौमुदतेय (सं॰ पु॰) कुमुदत्या अपत्यम्, कुमुदती-ढक्। कुमुदतीके पुत्र। (रघु १८।२)

कौमोदकी (सं॰ स्त्री॰) कोः पृथिव्याः पालकत्वात् मोदकः कुमोदको विष्णुः तस्येयम्, कुमोदक-अण्-ङीप्। कृष्णकी गदा। यह गदा खाण्डवदाहनकालको अग्निके निकट मिली थी। (हरिवंश ८२)

कौमोदी (सं॰ स्त्री॰) कुं पृथिवीं मोदयति कुमोदः विष्णुः तस्येयम्, कुमोद-अण्-ङीप्। विष्णुकी गदा।

कौम्भ (सं॰ त्रि॰) कुम्भ-अञ्। १ कुम्भसम्बन्धीय, मटके वाला। (क्ली॰) २ कुम्भमध्यस्थित एक शत वत्सरका पुराण घृत, मटकेमें रखा हुआ सौ वर्षका पुराना घी।

कौम्भकारक (सं॰ क्ली॰) कुम्भकारेण कृतम्, कुम्भकार-वुञ्। कुम्भकारनिर्मित एक मृत्तिकापात्र, कुम्हारका बनाया मट्टीका कोई बरतन।

कौम्भकारि (सं॰ पु॰-स्त्री॰) कुम्भकारस्यापत्यम्, कुम्भकार-इञ्। उदीचामिञ्। पा ४।१।१५३। कुम्भकारका पुत्र वा कन्या, कुम्हारका लड़का या लड़की। स्त्रीलिङ्गमें विकल्पसे ङीप् आता है।

कौम्भकारी (सं॰ स्त्री॰) कुम्भकार-इञ्, स्त्रियां वा ङीप्, कुम्भकारकी कन्या, कुम्हारकी लड़की।

कौम्भकार्य (सं॰ पु॰) कुम्भकारस्यापत्यम्, कौम्भकार-ण्य। सेनान्तलक्षणकारिभ्यश्च। पा ४।१।१५२। कुम्भकारका पुत्र, कुम्हारका लड़का।

कौम्भकार्या (सं॰ स्त्री॰) कुम्भकार-ण्य-टाप्। कुम्भकारकी कन्या, कुम्हारकी बेटी।

कौम्भघृत (सं॰ क्ली॰) शताब्दिक घृत, सौ वर्षका पुराना घी।

कौम्भसर्पिः, कौम्भघृत देखो।

कौम्भायन (सं॰ त्रि॰) कुम्भ-फक्। कुम्भके सन्निकृष्ट देशादि।

कौम्भायनि (सं॰ त्रि॰) कुम्भ चातुरर्थिक फिञ्। कुम्भके सन्निकृष्ट देशादि।

कौम्भीर (सं॰ पु॰) कुम्भीर तथा तत्सदृश जीव, घड़ियाल और उसके-जैसा जानवर।

कौम्भेयक (सं॰ त्रि॰) कुम्भी-ढकञ्। कुम्भीजात, घड़ियालसे पैदा होनेवाला।

कौम्भ्य (सं॰ त्रि॰) कम्भ-ण्य। कुम्भसन्निकृष्ट देशादि।

कौर (हिं॰ पु॰) १ कवल, निवाला, एक बार मुंहमें डाली जानेवाली खानेकी चीज। २ चक्कोमें एक बार पीसनेको डाला जानेवाला अन्न। ३ वृक्षविशेष, एक झाड़। यह छोटा और फैलनेवाला होता है। उत्तर-भारतकी पार्वत्य भूमिमें कौर उपजता है। ४ कोना, पाखा।

"असहु चितवै मितवै कौरे लागि।
लगिगे हाथ उपरिया रहिगे आगि॥"

कौरयाण (वै॰ पु॰) कुरयाणस्यायम्, कुरयाण-अण्। भत्तुके प्रति गमन करनेको उद्यत व्यक्तिका पुत्र। (ऋक् ८।३।२१)

कौरव (सं॰ पु॰) कुरोरपत्यम्, कुरु-अञ्। उत्सादिभ्योऽञ्। पा ४।१।८६। १ कुरुवंशीय। (भारत १।१३९।१६) २ कुरुराज सम्बन्धीय देश। (मेघदूत ५०) ३ तद्देशीय राजा। (त्रि॰) ४ कुरुसम्बन्धीय।

कौरवक (सं॰ त्रि॰) कुरोर्गोत्रापत्यम्, कुरु-वुञ्। १ कुरु-वंशोत्पन्न। २ कुरवक सम्बन्धीय, कटसरैयाके मुताल्लिक।

कौरवायणि (सं॰ पु॰-स्त्री॰) कुरोरपत्यम्, कुरु-फिञ्। कुरुवंशीय पुत्र वा कन्या।

कौरवी (सं॰ स्त्री॰) कौरव-ङीप्। कुरुसम्बन्धीया, कुरुसे सरोकार रखनेवाली। (भारत १।१२०।१५)

कौरवेय (सं॰ पु॰) कुरोर्गोत्रापत्यम्, कुरु बाहुलकात् ढक्। कुरुवंशीय, कुरुकुलजात। (भारत १।१४१)

कौरव्य (सं॰ पु॰) कुरोरपत्यम्, कुरु-ण्य। १ कुरुवंशीय, कौरव (भारत ३।२३२।५५) २ नागविशेष (भारत १।३५।२३)

कौरव्यायणि (सं॰ पु॰-स्त्री॰) कौरव्यस्यापत्यम्, कौरव्य-फिञ्, कौरव्यके सन्तान।

कौरव्यायणी (सं॰ स्त्री॰) कौरव्य-ष्फ-ङीष्। कौरव्यमाण्डूका च्च। पा ४।१।१९। कौरव्यवंशोत्पन्ना स्त्री।

कौरव्यायणीपुत्र (सं॰ पु॰) कौरव्यायण्याः पुत्रः, ६-तत्। एक वैदिक आचार्य।

कौरस्व (सं॰ पु॰) प्रवर ऋषिभेद। (प्रवराध्याय)

कौरा (हिं॰ पु॰) १ द्वारका एक भाग, दरवाजेका कोई

हिस्सा। किवाड़ खुलने पर इसमें भिड़ जाती हैं। २ कुत्ते वगैरहको दिया जानेवाला रोटीका टुकड़ा। ३ कौड़ा, अलाव।

कौरियाना (हिं॰ क्रि॰) दोनों हाथोंसे पकड़के छातीमें लगाना, मिलना भेंटना।

कौरी (हिं॰ स्त्री॰) १ क्रोड़, गोद। २ अनाजके कुछ कटे हुए पौदे। यह फसलके वक्त मजदूरोंको मजदूरीमें मिलती है। ३ गुवार।

कौरुकत्य (सं॰ पु॰) कुरुकतस्यापत्यम्, कुरुकत-यञ्। कुरुकत नामक ऋषिके पुत्र।

कौरुकत्यायनि (सं॰ पु॰) कुरुकतस्य युवापत्यम्, कुरुकत-यञ्-फिञ्। कुरुकत ऋषिके युवापत्य।

कौरुकुल्लक (सं॰ पु॰) बौद्धसम्प्रदायभेद।

कौरुजङ्गल (सं॰ त्रि॰) कुरुजङ्गल-चातुरर्थिक अ, वा वृद्धिश्च उत्तरपदस्य। कुरुजङ्गलका जात।

कौरुजाङ्गल, कौरुजङ्गल देखो।

कौरुपाञ्चाल (सं॰ त्रि॰) कुरुषु पञ्चालेषु च प्रसिद्धः, कुरु-पञ्चाल-अण् उभयपदवृद्धिः। कुरु और पञ्चाल देशप्रसिद्ध। (शतपथब्राह्मण १।७।२।८)

कौरुण्य (सं॰ पु॰) एक मुनि। (लिङ्गपुराण ७।५१)

कौरुसाधु—भागवतपुराणके एक टीकाकार।

कौर्पर (सं॰ त्रि॰) कूर्परस्यायम्, कूर्पर-अण्। कूर्पर-सम्बन्धीय, बाहोंके बिचले हिस्सेसे सरोकार रखनेवाला।

कौर्प्य (सं॰ पु॰) वृश्चिकराशि। (दीपिका) पाश्चात्य पण्डितोंके मतमें यह यूनानी शब्द है।

कौर्म (सं॰ क्ली॰) कूर्मं कूर्मावतारमधिकृत्य कृतो ग्रन्थः। १ कूर्मपुराण। २ विषभेद, किसी किस्मका जहर। (त्रि॰) ३ कूर्मसम्बन्धीय, कछुवेसे सरोकार रखनेवाला।

कौल (सं॰ त्रि॰) कुले सत्कुले भवः। १ सत्कुलोत्पन्न, खानदानी। २ कुलाचारपरायण, दिव्य भावरत, कौलिक। (कुलार्णव) ३ कुलाचारज्ञ, तान्त्रिक कुलाचार समझनेवाला। (महानीलतन्त्र) (पु॰) ४ कोई ग्रन्थ। कौलोपनिषद् प्रभृतिको कौल कहते हैं। इनमें कुलाचारका कर्तव्याकर्तव्य और साधनप्रणाली प्रभृति भलीभांति निर्णीत है। ५ कोलास्वा देवीभक्त प्रियर्षिगोत्रीय कोई राजा। यह करंजके पुत्र थे। (सह्याद्रिखण्ड १।३३।७१)

कौल (हिं॰ पु॰) गीतिविशेष, किसी किस्मका गाना। २ करावल, फौजकी छावनीका बिचला हिस्सा।

कौल (अ॰ पु॰) १ वाक्य, बात, कहन। २ प्रतिज्ञा, वादा।

कौलई (हिं॰ वि॰) नारङ्गी, लाल पीला।

कौलक (सं॰ त्रि॰) कुले भवः, कुल-वुञ्। कुलोत्पन्न, खानदानी।

कौलकि (सं॰ पु॰) प्रवर ऋषिभेद।

कौलकेय (सं॰ त्रि॰) कुले सत्कुले भवः, कुल ढक् कुक् च। १ सत्कुलोत्पन्न, खानदानी। (पु॰) २ असतीका पुत्र, छिनालका लड़का।

कौलटिनेय (सं॰ पु॰) कुलटाया अपत्यम्, कुलटा-ढक्, इनङ् आदेशश्च। कुलटाया वा। पा ४।१।१२७। १ असतीका पुत्र, छिनालका बेटा। इसका संस्कृत पर्याय कौलटेय और कौलटेर है। जो सती रमणी भिक्षाके लिये दूसरे घर जाती, वह भी कुलटा कहलाती है। २ भिक्षुकीका पुत्र, भिखारनका बेटा।

कौलटेय (सं॰ पु॰) कुलटाया असत्या अपत्यम्, ढक्। १ असतीका पुत्र, छिनालका लड़का। २ सती भिक्षुकीका पुत्र, भिखारिनका लड़का।

कौलटेर (सं॰ पु॰) कुलटाया अपत्यम्, कुलटा-ढ्रक्। चटकाभ्यां वा। पा ४।१।१२१। असतीका पुत्र, व्यभिचारिणाका गर्भजात। किसी किसी आभिधानिकके मतमें कौलटेर शब्दसे सती भिक्षुकी रमणीके पुत्रका भी ज्ञान होता है।

कौलत्थ (सं॰ त्रि॰) कुलत्थेन संस्कृतः, कुलत्थ-अण्। कुलत्थकोपधादण्। पा ४।४।४ कुलत्थ सम्बन्धी, कुरथीवाला।

कौलत्थीन (सं॰ त्रि॰) कुलत्थस्य कलायविशेषस्य भवनं क्षेत्रं वा, कुलत्थ-खञ्। धान्यानां भवने क्षेत्रे खञ्। पा ३।२।१। कुलत्थोत्पादक, कुरथी पैदा करनेवाला।

कौलदुमा (हिं॰ वि॰) लम्बी और कंवलकी पत्ती-जैसी छिछली पूछवाला कबूतर।

कौलपत (सं॰ त्रि॰) कुलपति-अण्। अश्वपत्यादिभ्यश्च। पा ४।१।८४। कुलपतिसम्बन्धीय।

कौलपुत्रक (सं॰ क्ली॰) कुलपुत्रस्य भावः, कुलपुत्र-वुञ्। कुलपुत्रका भाव, कुलपुत्रका धर्म, खानदानी लड़केकी चाल।

कौलव (सं० पु०) वव आदि एकादश करणोंके अन्तर्गत तृतीय करण। इस करणमें जन्म लेनेसे मनुष्य वक्ता, विनयी, स्वाधीन, प्रगल्भ, महाबलशाली, पण्डितप्रिय और कृतघ्न होता है। (कोष्ठीप्रदीप)

कौला (हिं० पु०) १ कमला, एक उमदा और मीठी नारंगी। २ क्रोड़, गोद। ३ कोना, पाखा।

कौलाल (वै० पु०) कुलाल एव, कुलाल-अण्। "अण् प्रकरणे कुलालवरुड़निषादचण्डालामित्रे भ्यश्छन्दसि।" (पा ५।४।३६ वार्तिक) कुलाल, कुम्हार।

कौलालक (सं० त्रि०) कुलालेन कृतम्, कुलाल संज्ञायां वुञ्। कुलालनिर्मित (मृत्तिकापात्र शराव प्रभृति), कुम्हारका बनाया हुवा।

कौलालचक्र (सं० क्ली०) कुलालस्येदम्, कुलाल-अण् ततः कर्मधा०। कुलालका चक्र, कुम्हारका चाक।

कौलास (सं० त्रि०) कुलास-अण्। सङ्कलादिभ्यश्च। पा ४।२।७५। कुलासके निकटवर्ती देशादि।

कौलिक (सं० त्रि०) कुलादागतः, कुल-ठक्। १ कुलपरम्परागत। आचार प्रभृति। खान्दानी (चाल)। २ कुलशास्त्रज्ञ, कुलतन्त्र समझनेवाला। ३ कुलधर्मप्रवर्तक, खानदानी चाल बढ़ानेवाला। ४ ब्रह्मतत्त्वज्ञ। ५ तन्तुवाय, जुलाहा। ६ पाषण्ड, ढोंगी।

कौलितर (सं० पु०) कुलितरस्यापत्यम्, कुलितर-अण्। शम्बरासुर (ऋक् ४।३०।१४)

कौलिन्द, कौणिन्द देखो।

कौलिया (हिं० पु०) बबुरभेद, एक छोटा बबूल। यह बरारमें बहुत होता है।

कौलिशायनि (सं० त्रि०) कुलिश-फिञ्। कुलिशके सन्निकृष्ट देश प्रभृति।

कौलिशिक (सं० त्रि०) कुलिशमिव, कुलिश-ठक्। अङ्गुल्यादिभ्यष्ठक्। पा ५।३।१०८। कुलिश-सदृश, वज्रतुल्य, बाज जैसा।

कौलीक (वै० पु०) एकप्रकारका पक्षी, कोई चिड़िया।

कौलीन (सं० त्रि०) कौ पृथिव्यां लीनः, अलुक्-समा०। १ भूमिलग्न, जमीनसे लगा हुवा। कुलादागतः, कुल-खञ्। २ कुलक्रमागत, खानदानी। (रामायण १।८७ अ०)

(क्ली०) कौ पृथिव्यां लीनं लयो यस्मात् व्यधिक० बहुव्री०। कुलीनं भूमिलीनमर्हति, कुलीन-अण् वा। ३ अपवाद, बदनामी, बुराई (रघु १४।८४) ४ गुह्य, गुदा। ५ उपस्थ, लिङ्ग। ६ युद्ध, लड़ाई। ७ कुकर्म, बुरा काम। ८ पशुओं, सर्पों और पक्षियोंका युद्ध, जानवरों, सांपों और चिड़ियोंकी लड़ाई। ९ कौलेयक, कुत्ता। १० कुलीनत्व, खानदानीपना।

कौलीन्य (सं० क्ली०) कुलीन-ष्यञ्। कुलीनत्व, वंशमर्यादा, खानदानी इज्जत।

कौलीय (कौलिय)—बौद्धशास्त्रवर्णित एक क्षत्रियजाति। महावस्त्वदानमें लिखा है—'राजा महासम्मतके पुत्र कल्याण, तत्पुत्र राव, तत्पुत्र उपोषध और उपोषधके पुत्र मान्धाता थे। मान्धाताके वंशमें अनेक राजाओंने जन्मग्रहण किया। उनमें इक्ष्वाकुवंशीय सुजात राजा भी थे। यह साकेत (अयोध्या) नगरीमें राजत्व करते थे। सुजातकी महिषीके गर्भसे ऊपर, निपुर, कलण्डक, उल्कामुख तथा हस्तिकशीर्ष नामक ५ पुत्रों और उनकी प्रिय वेश्या जेतीके गर्भसे जेत नामक एक लड़केने जन्म लिया। राजाने वेश्याके प्रेममें अपनेको भूल उस वेश्यापुत्रको राज्यमें अभिषिक्त किया था। उनके वंशधर पांच पुत्र स्वदेश छोड़के उत्तराभिमुख चल हुए। भक्त प्रजाने भी उनका अनुगमन किया था। वह हिमालयके एक गभीर वनमें जा पहुंचे। वहां महर्षि कपिलका आश्रम था। उन्होंने उसी वनके मध्य नगर पत्तन करके उसका नाम कपिलवास्तु रखा था। प्रथम ज्येष्ठ ऊपर राजा हुए। फिर निपुर, करण्डक और उल्कामुख क्रमान्वयमें अभिषिक्त किये गये। उल्कामुखके पीछे हस्तिकशीर्ष और उनके पौत्र सिंहतनु यथाक्रम राजा बने। सिंहतनुके चार पुत्र रहे—शुद्धोदन, धौतोदन, शुक्लोदन और अमृतोदन। शेषको उनके एक कन्या उत्पन्न हुई। उसका नाम अमिता था। दुर्भाग्यक्रमसे अमिताको कुष्ठरोग लगा, जिसे कोई अच्छा कर न सका। शेषको अमिता सबकी घृणापात्री बन गयीं। उनके भ्राता उन्हें उत्सङ्ग पर्वत पर छोड़ आये। अमिता उसी पर्वतकी गुहामें रहने लगीं, उनके पास केवल एक

वत्सरका खाद्य रहा। गुहाका मुंह बन्द था, बाहर निकलनेकी कोई आशा न थी। किन्तु इस दुर्गम स्थानमें अमिता का परिवर्तन हुवा, उनका दारुण रोग मिट गया। किसी दिन एक व्याघ्रका मनुष्यका गन्ध लगा था। वह गुहाके मुखका आवरण खोलनेकी चेष्टा कर रहा था, कि उसी समय कौल नामक एक ऋषि वहां जा उपस्थित हुए। उन्होंने तख्ता हटाकर देखा—भीतर एक अनुपमा रूपलावण्यमयी रमणी है। ऋषिका मन डावांडोल हो गया। उन्होंने अमिताके साथ अपना विवाह किया था। यथाकाल उनके ३२ पुत्र हुए। पितामाताने लड़कोंको कपिलवास्तु भेजा था। शाक्योंने अति समादरसे उन्हें ग्रहण किया कौल ऋषिके अपत्य जैसे रहने पर 'कौलीय' और व्याघ्रके उनको माताको दिखानेसे 'व्याघ्रपादीय' नामसे वह परिचित हुवे। कालक्रमसे कौलीय और शाक्य परस्पर विवाह-बन्धनमें आबद्ध हो गये।

कौलीरा (सं० स्त्री०) कुलीरः तच्छृङ्गाकारोस्त्यस्याः, बहुव्री०। कर्कटशृङ्गी, ककड़ासींगी।

कौलूत (सं० पु०) कुलूत देशके राजा। कुलू और कुलूत देखो।

कौलेय (सं० त्रि०) कुले सत्कुले भवः, कुल बाहुलकात् ढक्। सत्कुलोत्पन्न, खानदानी।

कौलेयक (सं० पु०) कुले भवः, कुल-ढकञ्। कुलकुक्षिग्रीवाभ्यः श्वास्यलङ्कारेषु। पा ४।२।९६। १ कुक्कुर, कुत्ता। (त्रि०) २ कुलीन, खानदानी।

कौलेशभैरवी (सं० स्त्री०) त्रिपुराभैरवी। (ज्ञानार्णव)

कौलोपनिषद् (सं० स्त्री०) एक उपनिषत्। इसमें कौल आचार वर्णित है।

कौल्मलबर्हिष (सं० क्ली०) सामविशेषका नाम। (लाट्यायन ४।५।२६)

कौल्माषिक (सं० त्रि०) कुल्माषे साधुः, कुल्माष-ठञ्। गुडादिभ्यष्ठञ् । पा। ४।४।१०३ कुल्माष (एक धान) रोपण करनेके उपयुक्त क्षेत्रादि।

कौल्माषी (सं० स्त्री०) कुल्माषाः प्रायेणान्नमस्याः, कुल्माष अञ्-ङीप्। कुल्माषादञ्। पा ४।२।८४। पूर्णिमाविशेष, एक पूरनमासी। इस पूर्णिमाको कुल्माष खानेका विधान है।

कौल्माषीण (सं० क्ली०) कुल्माषाणां भवनं क्षेत्रम्, कुल्माष-खञ्। १ कुल्माष धान्यकी उत्पत्तिके योग्य क्षेत्र। (त्रि०) २ कुल्माषोत्पादक।

कौल्य (सं० त्रि०) कुले सत्कुले भवः, कुल-ष्यञ्। सद्वंशजात, कुलीन।

कौवल (सं० क्ली०) कुवलमेव, कुवल स्वार्थे अण्। कोलिफल, बेर।

कौवा (हिं० पु०) काक, एक मशहूर चिड़िया। यह पृथिवीके सभी देशोंमें होता है। कौवा कई प्रकारका है, परन्तु भारतवर्षमें इसकी दोही जातियां मिलती हैं। मामूली कौवा कोई १८ अङ्गुल रहता है। उसका चञ्चु दीर्घ तथा कठिन, पाद बहुत दृढ़, अग्रभाग धूसरवर्ण और पश्चाद्देश कृष्णवर्ण होता है। उसकी नासा बिलकुल बीचमें नहीं पड़ती, किनारेको कुछ हटी रहती है। साधारण काक अकसर पेड़ोंकी डालों पर घोंसला रखता है। वह वैशाख अवधि भाद्रमास पर्यन्त डिम्ब देता है। अण्डोंकी संख्या चारसे छह तक होती है। डिम्ब हरित्वर्ण रहता और उस पर काले धब्बे पड़ जाते हैं। अन्यप्रकारका काक डीलडौलमें भारी और कोई एक हस्तपरिमित दीर्घ होता है। उसका सारा जिस्म काला ही काला रहता है। इसीसे उसे काला कौवा भी कहते हैं। काले कौवे परस्पर घोर युद्ध करते और मर मिटते हैं। पौषसे फाल्गुनमास पर्यन्त उनके अण्डे देनेका समय है। मामूली कौवे डिम्ब देनेके समय ही आवासस्थान निर्माण करते हैं। काक दिवसकालको आहारादिके अन्वेषणमें दश बारह कोस तक उड़ जाता है। पर भली बुरी सब चीजें खा डालता है। प्रवाद है—कौवेके एक ही आंख रहती, जो दोनों ओर घूमती फिरती है। काक देखो।

२ चालाक आदमी। ३ कौहा, ढंढेरीको आड़के लिये लगनेवाली लकड़ी। ४ एक खिलौना। ५ घांटो, कण्ठके अभ्यन्तर तालुके मध्यभागका मांसखण्ड।

कौवाठोंठी (हिं० स्त्री०) काकतुण्डी, एक बेल। इसके पुष्प श्वेत एवं नीलवर्ण रहते और आकृतिमें काकनासासे मिलते हैं। कौवाठोंठीको फलियोंके बीज लोबिये-जैसे होते हैं। यह अर्शोरोगनाशक है।

कौवापरी (हिं० स्त्री०) श्यामवर्ण कुरूपा स्त्री, काली बदसूरत औरत।

कौवारी (हिं० स्त्री०) १ पक्षिविशेष, कोई चिड़िया। २ पुष्पवृक्षविशेष, एक पेड़। आकृतिमें यह कचूरसे मिलती है। इसमें कितने ही रक्तवर्ण पुष्पोंका गुच्छ लगता है। कौवारीका मूल दवामें पड़ता है। ३ काकतुण्डी, कौवाठोंठी।

कौवाल (अ० पु०) कौवाली गानेवाला।

कौवाली (अ० स्त्री०) १ कोई गाना। यह पीरोंकी कब्रों या सूफियोंकी मजलिसोंमें गायी जाती है। कौवालीमें धर्मसम्बन्धी चर्चा वा आध्यात्मिक शिक्षा रहती है। इसके सुननेवाले प्रेमभावमें लीन हो झूमने लगते हैं। २ कोई ताल। ३ कौवालोंकी वृत्ति।

कौविद्यासाय, कौविद्यासीय देखो।

कौविदार्य (सं० त्रि०) कोविदार-ञ्य। कोविदारके निकटवर्ती देशादि।

कौविद्यासीय (सं० त्रि०) कुविद्यास-छण्। कुविद्यासके निकटवर्ती देशादि।

कौवेर (सं० त्रि०) कुवेरस्येदं कुवेरो देवतास्य इति वा, कुवेर-अण्। १ कुवेरसम्बन्धीय। २ कुवेरका उपासक। (क्ली०) ३ कुष्ठ, कुट।

कौवेरिकेय (सं० पु०) कुवेरिकाया अपत्यम्, कुवेरिका-ढक्। कुवेरिकाका सन्तान।

कौवेरी (सं० स्त्री०) कुवेरः अधिष्ठात्री देवता ऽस्याः, कुवेर-अण्-ङीप्। १ उत्तरदिक्। (तिथितत्त्व) २ कुवेरकी शक्ति।

कौश (सं० क्ली०) कुशा प्राचुर्येण भूम्ना वा सन्ति अत्र, कुश-अण्। १ कान्यकुब्जदेश, कन्नौज। २ कुशद्वीप। (सिद्धान्तशिरोमणि) ३ क्रमिकोशसे उत्पन्न पट्टवस्त्र, रेशमी कपड़ा। (भागवत ३।४।७) ४ गोत्रविशेष। (नागरखण्ड १०८।१७) (त्रि०) ५ कुशमय, कुशसम्बन्धीय। (भारत १३।१८।२९)

कौशल (सं० पु०-क्ली०) कुशलस्य भावः कर्म वा, कुशल-युवादित्वात् अण्। १ कुशलता, कारीगरी।

"क्वचाति कर्कशः शान्तः क्वचाति ललितः शुचिः।
एकत्र काव्ये व्याख्यातुस्तावद्धी कौशलं कवेः॥" अमरुशतकटीका।

२ मङ्गल, भलाई। (भागवत ३।१।१२) ३ चातुर्य, होशियारी। ४ कोशल जनपद, अवधप्रदेश। ज्योतिषके रोमकसिद्धान्त मतसे—वृषराशिमें कौशल जनपद अवस्थित है। ५ कौशलजनपदवासी, अवधके वाशिन्दे।

कौशलक, कौसलक देखो।

कौशलायन (सं० पु०) कुशलाया युवापत्यम्, कुशलावाह्वादित्वात् इञ्, युनश्पत्ये फञ्। कुशलाका युवापुत्र।

कौशलि (सं० पु०-स्त्री०) कुशलाया अपत्यम्, कुशला-इञ्। कुशला स्त्रीका पुत्र वा कन्या। स्त्रीलिङ्गमें विकल्पसे ङीप् लगता है।

कौशलिका (सं० स्त्री०) कुशलस्य पृच्छा, कुशल-ठक्। १ कुशलप्रश्न, खैर आफियतका सवाल। कुशलाय मङ्गलाय दीयते। २ उपढौकन, भेंट।

कौशली (सं० पु०) कौशलं नैपुण्यं अस्त्यस्य, कौशल-इनि। निपुण, दक्ष, होशियार, कारीगर।

कौशली (सं० स्त्री०) कुशलाय दीयते कुशलस्य पृच्छा वा कुशल-अण्-ङीप्। १ उपढौकन, भेंट। २ कुशलप्रश्न, खैर आफियतका सवाल। ३ कुशला स्त्रीकी कन्या।

कौशलेय (सं० पु०) कौशल्याया अपत्यम्, कौशल्या-ढक् यलोपश्च। श्रीराम, दशरथके ज्येष्ठ पुत्र।

"कौशलेयः प्रतापवान्।" रामायण।

कौशल्य (सं० पु०-क्ली०) कुशल भावे ष्यञ्। १ कुशलता, दक्षता। (भारत ३।१४३) २ कोशलराजके पुत्र। ३ कोई ऋषि। (रामायण ७।१।२) किसी किसी मुद्रित रामायणमें 'कौशिक' पाठान्तर है। (त्रि०) स्वार्थे ष्यञ्। ४ कुशल, होशियार।

कौशल्य आश्वलायण—प्रश्नोपनिषद् वर्णित एक ऋषि।

कौशल्या (सं० स्त्री०) कोशलस्य राज्ञोऽपत्यम्, कोशल-ष्यञ् ततः टाप्। १ कोशलराजकन्या, दशरथकी प्रधान महिषी, रामकी माता। कौशल्या देखो।

'कौशल्यामिदमब्रवीत्।' (रामायण १।१६।२६)

२ पुरुराजकी पत्नी, जनमेजयकी माता। (भारत, आदि) ३ सत्वान्की पत्नी और सात्वतोंकी माता। (त्रि०) ४ कोशलदेशवासी (भारत ६।९।४०)

कौशल्यानन्दन (सं० पु०) कौशल्याया नन्दनः, ६-तत्। रामचन्द्र। कौशल्यातनय प्रभृति शब्द भी इसी प्रकारके हैं।

कौशल्यायनि (सं० पु०) कौशल्याया अपत्यम्, कौशल्या-फिञ् । कौशल्यकार्मार्याभ्याञ्च। पा ४।१।१५५ कौशल्याके पुत्र रामचन्द्र। "कौशल्यायनिवक्षभाम्।" भट्टी ७।९०।

कौशाम्ब (सं० त्रि०) कुशाम्बेन निर्वृत्तः, अण्। कुशाम्ब नामक राजकर्तृक निर्मित, कुशाम्ब राजाका बनाया हुवा।

कौशाम्बी (सं० स्त्री०) कुशाम्बेन निर्वृत्ता, कुशाम्ब-अण्। नगरीविशेष, वर्तमान नाम कोसाम। इसका अपर नाम वत्सपत्तन है। (कथासरित्सागर ९। ५) रामायणके मतमें—कुशके पुत्र कौशाम्ब नरपतिने यह पुरी निर्माणकी थी। इसीसे कौशाम्बी नाम पड़ गया। (रामायण १। ३२। ५)

पूर्वकाल इस नगरको 'कौशाम्बी' नगर वा 'कौशाम्बीपुरी' और राज्यको 'कौशाम्बीमण्डल' कहते थे। शतपथब्राह्मण (१२।२।२।१३)में कौशाम्बेय कौसुरुविन्दिका उल्लेख देख कोई कोई उससे भी पूर्व कौशाम्बी नगरीका अस्तित्व स्वीकार करता है। हिन्दू, जैन, बौद्ध प्रभृतिके धर्मग्रन्थोंमें यह स्थान प्रसिद्ध है।

कौशाम्बी शहरका भग्नावशेष इस समय भी विद्यमान है। आज इस नगर तथा सन्निकटवर्ती स्थानोंके सौध और मन्दिरादिका भग्नावशेष इसके पूर्व गौरवका परिचय देता है। इलाहाबादसे १४ कोस पश्चिम करारी परगनेके बीच यमुनातीर यह भग्नावशेष देख पड़ता है। पूर्वको जैनोंके हाथ कौशाम्बी नगर विशेष समृद्धिशाली रहा।

(अरिष्टनेमिपुराणान्तर्गत हरिवंश १४।२)

कोसाम नगर आजकल यमुनाके तीर पर नहीं है। यमुना उससे बहुत दूर हट गयी हैं। किन्तु पूर्वकालको कौशाम्बी यमुनाके तीर ही अवस्थित था। चीना परिव्राजक युअन चुयाङ्ग अपने भ्रमणके विवरणमें लिख गये हैं—प्रयाग और कौशाम्बी (कि-श्री-शङ्ग-मि) के मध्य ३०० लि (२५ कोस) व्यवधान है।

इसमें कोई सन्देह नहीं कोसाम ही प्राचीन कौशाम्बी है। कारण स्थानीय भग्नावशेषके मध्य सर्वापेक्षा वृहत् स्तम्भके गात्र पर अकबरके समयको खोदित लिपिमें इसका यह नाम देख पड़ता है। फिर १०३५ ई०को खोदित खरा दुर्गकी भी एक लिपिमें इस स्थानका नाम 'कौशाम्बीमण्डल' लिखा है।

वर्तमान कोसाम दो भागोंमें विभक्त है—'कोसाम-इनाम' और 'कोशाम खिराज' या 'हशीमाबाद' अर्थात् करद और करशून्य कोसाम। पुराने टूटे किलेके पश्चिम कोसाम इनाम और पूर्व कोसामखिराज विभाग पड़ता है। यमुनातीरको दुर्गप्राकारके अभ्यन्तर 'बड़गड़वा' और 'छोटगड़वा' नामके दो क्षुद्र ग्राम हैं। कोसाम इनामके आगे 'पाली' नामक अपेक्षाकृत वृहत् ग्राम और कोसामखिराजको उस ओर 'गोपसाहस' नामका एक गण्ड ग्राम और उत्तरांशको 'अम्बाकूवां' नामका दूसरा क़सबा है। इस गांवमें आम्रकुञ्जके मध्य एक प्राचीन वृहत् कूप बना है। जिससे ग्रामका नाम हुवा है।

कौशाम्बीमण्डलको पश्चिम सीमा प्रभास वा 'पभोसा' पर्वत है। यह पहाड़ गड़वा गांवसे ३ मील उत्तर पश्चिम लगता है। प्रवाद है—प्रभास पर्वत पर किसी गुहामें एक वृहत् नाग वास करता है। उसका मस्तक यातीर और लाङ्गूल गुहाके मध्य (प्रायः ४४० गज विस्तृत) रहता है। परन्तु किसीने उसे कभी देखा नहीं है। सम्भवतः दीपमालिकाको सर्पराजके दर्शन होते हैं। गुहा स्वाभाविक नहीं—कृत्रिम है। उसकी छतके अवलम्बनार्थ एक स्तम्भ लगा है। स्तम्भके निकट गुहाके सम्मुख एक जैन मन्दिर है। यह मन्दिर आधुनिक है, केवल ५० वर्ष पूर्वका बना है। गुहामें दो गवाक्ष और एक प्रवेशद्वार है। उसमें चार आदमी चारपाई डाल कर सो सकते हैं। इसके ऊपर पूर्वदिक्को देवकुण्ड नामक एक पुष्करिणी और उसके तीर एक मन्दिर है। युअन चुयाङ्गने लिखा है कि यहां अशोकका प्रतिष्ठित १२८ हाथ ऊंचा एक स्तूप है। किन्तु उसका कोई चिन्ह पाया नहीं जाता। मालूम पड़ता है। कि वर्तमान जैन मन्दिरके स्थान पर ही वह विद्यमान था। तीर्थयात्री कहते हैं—'इस स्तूपके निकट बुद्धदेव साधना करते थे और दूसरे किसी क्षुद्र स्तूपमें उनके केश तथा नख रक्षित थे। पीड़ित व्यक्ति यहां रोगमुक्तिके लिये प्रार्थना करने पहुंचते हैं। पर्वत गात्र पर गुप्त राजाओंके समयके अक्षरोंमें कई भास्करोंका नाम दृष्ट

होता है। इससे समझ पड़ता कि गुप्तोंके समय ही यह गुहादि खोदे गये।

रत्नावलीमें वत्सराजकी राजधानीका नाम वत्सपत्तन लिखा है। किन्तु ललितविस्तर, महावंश, बृहत्कथा आदि ग्रन्थोंमें कौशाम्बीराज शतानिकके पुत्र उदयन वत्सका नाम मिलता है। ललितविस्तरके मतमें उदयनने बुद्धदेवके जन्मदिनको ही जन्मग्रहण किया था। सिंहली पुस्तकादिमें भारतको १९ बड़ी राजधानियोंके बीच कौशाम्बीका नाम आया है। भोटके बौद्धग्रन्थोंमें भी कौशाम्बीराज उदयनवत्सका नाम वर्णित है। ललितविस्तरमें कहा है कि बुद्धदेव बुद्धत्वप्राप्त होनेके बाद २ वत्सर यहां रहे। युअनचुयाङ्गका कहना है कि बुद्धकी जीवद्दशामें ही उदयनराजाने रक्तचन्दनकी बुद्धमूर्ति स्थापित की थी। यह मूर्ति आज भी उदयनप्रासादके भग्नावशेषके मध्य एक मन्दिरमें रखी है। बौद्ध इस प्रतिमाके कारण इस स्थानको अति पवित्र जैसा समझते हैं।

कौशाम्बी वा उदयनदुर्गका भग्नावशेष आज भी विद्यमान है। उसकी चहार-दीवारी और मुरचे कहीं नहीं गये। दुर्गका परिमाण प्रायः १५४०० हाथ और दुर्गप्राकार २०से २४ हाथ तक ऊंचा है। मुरचे इससे भी ऊंचे पड़ते हैं। उत्तर ओर ३४ हाथ ऊंचा मुरचा है। पहले चहार-दीवारीके नीचे खाई थी। परन्तु आजकल जगह जगह केवल खड्ड देख पड़ते हैं। दुर्गका आकार असमभुज आयत-जैसा है। किलेके एक बुर्जसे प्रभास पहाड़ २ कोस दूर बैठता है। किलेके भीतर एक छोटासा जङ्गल खड़ा है। इसमें ६ तोरण रहनेका अनुमान किया जाता है। नदीकी ओर कोई दरवाजा न रहा। दूसरी कई ओरों दो-दो द्वार लगे थे।

कौशाम्बीकी प्रधान कीर्ति रक्तचन्दन काष्ठ निर्मित बुद्धप्रतिमा है। युअनचुयाङ्ग कहते हैं—यह उदयन प्रासादके मध्यस्थल पर एक गुम्बजदार मन्दिरमें प्रतिष्ठित थी। वह कौशाम्बीपुरीके मध्यस्थलमें अवस्थित है। सम्भवतः इसी जगह पर १८३४ ई०को बना पार्श्वनाथका मन्दिर प्रतिष्ठित हुवा है। क्योंकि इस मन्दिरके पूर्व और पश्चिमपार्श्वको बृहदाकारको अट्टालिकाओंका भग्नावशेष विद्यमान है। बड़ गड़वा गांवमें दो बौद्धोंके खोदित स्तम्भ और छज्जेका भग्नावशेष है। पत्थरकी एक वेदी भी है। उसके गावमें बौद्धधर्मके 'ये धर्महेतुप्रभावा' इत्यादि श्लोकांश खोदित है। इसकी वर्णमाला अष्टम अथवा ९म शताब्दीकी वर्णमाला-जैसी समझ पड़ती है। छोट गड़वा गांवमें एक क्षुद्र स्तम्भ है। इसके गात्रमें स्तूपका आकार खोदित है। अनुमान होता है—यह सब एककालको बौद्ध-मन्दिरमें वहिःप्राचीरके अभ्यन्तर रहे। भेलसाके निकटवर्ती सांची स्तूपके शिल्पादिसे इन स्तम्भोंकी कारीगरी मिलती है। सुतरां इन्हें उनका समसामयिक कहनेमें कोई हानि नहीं।

किलेके भीतर बौद्ध चिह्नोंमें इलाहाबाद और दिल्लीके स्तम्भोंकी भांति एक प्रस्तरस्तम्भ है। इसके मूलदेशमें भग्न इष्टकराशि इतना इकट्ठा हो गया है, कि १०॥ हाथसे अधिक देख नहीं पड़ता। पास ही इसके दो भग्न खण्ड पड़े हैं। वह प्रायः १८॥ हाथ होंगे। यह स्तम्भ एक बृहत् निम्बवृक्षसे मिल गया है। किसी समय कुछ ग्वालोंने हठात् वृक्षके नीचे अग्नि जलाया था, उसी उत्तापसे स्तम्भका मस्तक टूट गया। अकबरके समयकी इस स्तम्भके गात्रमें खोदित विवरणसे समझ पड़ता है कि उस समय भी यह स्तम्भ इसी भावमें रहा। उसमें भी आगकी गर्मीसे मस्तक टूटनेकी बात लिखी है। गांवके लोग भी इस बारेमें ऐसा ही गल्प करते हैं। गुप्त कालसे वर्तमान काल पर्यन्त सभी समयकी बहुविध खोदित लिपियां इसके गात्रमें देखी जाती हैं। खृष्टजन्मके पूर्वकालसे वर्तमान समयावधि नाना समयोंकी रजत तथा ताम्रमुद्रायें मिली हैं। इसमें अकबरका नाम 'मुगलबादशाह अकबर पातशाह गाजी' लिखा है। उसके नीचे किसी स्वर्णकारकी वंशावली है। तन्मध्य वंशके आदि पुरुष आनन्दराम दास 'कौशाम्बीपुर'में स्वर्गगत हुवे। इससे अनुमित होता कि यह कोसाम ही प्राचीन कौशाम्बीपुर है। प्रवादानुसार यह स्तम्भ 'रामको छड़ी' या 'भीमको गदा' है। दुर्गके मध्य तक चतुःशिर शिवलिङ्ग भी है। उसके प्रत्येक मस्तकमें तीन तीन चक्षु बने हैं। युअनचुयाङ्गने लिखा है कि उनके समय ५० हिन्दू-मन्दिर कौशाम्बीमें खड़े थे। गांवके लोगोंका

कहना है कि यहां एक बृहत् उद्यान भी रहा। सिंहलके बौद्ध बतलाते हैं कि उस बागको 'गोशिख उद्यान' कहते थे। कोई इसका नाम गोशिर ठहराता है। फाहियान और युएनचुयाङ्ग इसको 'किउ-सि-लो' नामसे अभिहित कर गये हैं। इसका संस्कृत नाम 'गोशीर्ष' और पालि नाम 'गोशिष' है। इसी स्थल पर आजकल 'गोपसाहस' नामक एक ग्राम है। यह गांव छाट गड़वाके पास अवस्थित है। देशीय लोग 'गोपसस' कहते हैं। हमारी समझमें 'गोशीर्ष' शब्दके इस प्रकार रूपान्तर बन गये हैं। गांवके बीच सर्वत्र बड़े बड़े पत्थरों और अट्टालिकाओंका भग्नांश पड़ा है। कई एक खंभोंके जंगले भी दिखायी देते हैं। यह खंभे मथुराके जंगलों-जैसे हैं। नेपाली बौद्धोंके 'वसुन्धरा-व्रतोत्पत्यवदान' नामक ग्रन्थमें लिखा है—कौशाम्बीके उपनगर गोशीर्ष नामक स्थानमें बुद्धदेवने आनन्दको 'वसुन्धरा' व्रत सिखाया था।

कौशाम्बीमण्डलके उत्तरपश्चिम भाजघाटसे १॥ मील दूर दो मन्दिरोंका भग्नावशेष पड़ा है। इस स्थानका नाम रिठौरा है। रिठौराके दोनों मन्दिरोंका कारुकार्य विशेष प्रशंसाकी सामग्री है। उसको देखते ही मोहित होना पड़ता है। बड़े मन्दिरकी सिर्फ दालान बच गयी है। मन्दिरका अभ्यन्तर कुछ गिर जानेसे भीतरकी प्रतिमा पर्यन्त सम्भवतः चूर हो गयी है। मन्दिरके प्रवेशद्वारके सम्मुख कुम्भीरारोहिणी रमणियोंकी दो मूर्तियां हैं। इसीके निकट कालीकी एक प्रतिमा है। दालानके दोनों खंभे हिन्दुओंकी पुरानी धरनके हैं। छोटा मन्दिर भी ऐसा ही है। इसके मध्यमें हरगौरीमूर्ति और द्वार पर मकरवाहिनी गङ्गामूर्ति तथा कूर्मवासिनी यमुनामूर्ति है।

हरगौरी-मन्दिरमें अति प्राचीन खोदित शिलालिपि है। तन्मध्य एकमें लिखित है कि १२५ गुप्त-संवत्‌को राजा भीमवर्माने देवमूर्तिकी प्रतिष्ठा किया। यहां महाराज समुद्रगुप्तका कीर्तिस्तम्भ खड़ा है।

अर्जुनके दम अधस्तन पुरुष चक्रके समय कौशाम्बीने प्रसिद्धि लाभ किया था। चक्रने हस्तिना छोड़के इसी स्थानमें अपनी राजधानी बसायी। १०१५ ई०को खरा दुर्गके तोरणको खोदित लिपिसे समझ पड़ता है कि उस समय यह नगर कन्नौज राज्यके अधीन नहीं, स्वाधीन था।

कौशाम्बेय (सं० पु०) कुशाम्बस्य गोत्रापत्यम्, कुशाम्ब-ढक्। १ कुशाम्ब नृपति वंशीय। (त्रि०) कौशाम्ब्यां भवः। २ कौशाम्बीनगरीजात।

कौशाम्बेयी (सं० स्त्री०) कुशाम्बस्य गोत्रापत्यं स्त्री, कुशाम्ब-ढक्-ङीप्। कुशाम्ब राजवंशीया स्त्री।

कौशाम्ब्र (सं० पु०) कौशाम्बीनगरीके अधिपति। (हरिवंश ९२ अ०)

कौशारव, कौशारवि—कौषारव देखो।

कौशाम्बी (सं० स्त्री०) कुशाम्बेन राज्ञा निर्वृत्ता, कुशाम्ब-अण्-ङीप्। कुशाम्बराजाकी प्रतिष्ठित राजधानी।

कौशिक (सं० पु०) कुशिकस्यापत्यं यद्वा कुशिके तद्वंशे वा भवः, कुशिक-अण्। १ इन्द्र।

राजर्षि कुशिकके इन्द्रतुल्य पुत्रप्राप्तिकामनासे कठोर तपस्या आरम्भ करने पर देवराज इन्द्रने भीत हो उनके पुत्ररूपमें जन्म लिया था। इन्होंका नाम गाधि पड़ा। (हरिवंश १ अ०) यह एक गोत्रप्रवर्तक थे।

हरिवंशमें देवराजके कौशिक नामका एक अपर कारण भी लिखा है—

भगवान् जन्म लेते ही कुशद्वारा आवृत हुए थे। इसीसे देवराज इन्द्रका कौशिक नाम पड़ गया। (हरिवंश २७ अ०) इस मतमें निम्नलिखित व्युत्पत्ति लगाना पड़ती है—कुशेन वृतः, कुश-ठक्। २ पेचक, उल्लू। ३ गुग्गुलु। ४ अश्वकर्णवृक्ष, एक बेल। ५ नकुल, नेवला। ६ व्याल, सांप। ७ ग्राह, घड़ियाल, मगर। ८ कोशकार, रेशमका कीड़ा। ९ मज्जा, चरबी। १० कोषाध्यक्ष, खजाञ्ची। ११ शृङ्गार रस। १२ विश्वामित्र। "कौशिक मुनि यह तुरत पठावे।" (तुलसी) १३ पुरुवंशीय कोई राजा। इनकी माताका प्रतिष्ठा और ज्येष्ठ भ्राताका नाम पप्पलादि था। (हरिवंश) १४ जरासन्ध नृपतिके सेनापति। इनका दूसरा नाम हंस रहा। (भारत २।२१) १५ कोई असुर। (हरिवंश ४२ अ०) १६ कोई धर्मपरायण ब्राह्मण। महाभारतमें इनका चरित्र इस प्रकार वर्णित है—

कौशिक किसी दिन एक वृक्षतल पर बैठ तपस्या करते थे। उसी समय एक बकने उनके गात्र पर पुरीष छोड़ दिया। ब्राह्मणके क्रोधान्ध हो बकके प्रति दृष्टिपात करते ही वह तत्क्षणात् मृत्युको प्राप्त हुवा। कौशिक बकके मर जानेसे अधिक अनुताप करके भिक्षाके लिये पूर्वपरिचित किसी ब्राह्मणके घर गये। साध्वी ब्राह्मण-पत्नी पतिशुश्रूषाके अनुरोधसे यथासमय कौशिकको भिक्षा दे न सकीं। कौशिकके ब्राह्मणपत्नीके प्रति क्रोध दृष्टि निक्षेप करने पर उन्होंने कहा था—'ब्रह्मन्! आप मेरा यह अपराध मार्जना करें। मेरे लिये पतिकी शुश्रूषा ही सर्वापेक्षा प्रधान धर्म है। मैं बक नहीं हूं। आप क्रोध दृष्टिसे मेरा कुछ भी बिगाड़ न सकेंगे। यदि प्रकृत धर्मका मर्म समझना चाहें, तो मिथिलाके धर्म व्याधसे जा कर मिलें।' ब्राह्मण पतिव्रता रमणीकी अलौकिक क्षमता देख कर विस्मित हुए और उनको आत्मग्लानि आ गया। कौशिक थोड़े दिनों पीछे मिथिलामें धर्मव्याधके पास पहुंचे थे। उन्हें धर्मोपदेश प्रदान किया। (महाभारत, वन २०५—२१५)

१७ कोई अति प्राचीन वैयाकरण। १८ कोई प्राचीन स्मृतिकर्ता। हेमाद्रि, माधवाचार्य प्रभृतिने कौशिक स्मृतिको उद्धृत किया है। १९ कोई राग। हनूमान्‌ने इसे तोड़ी, गौरी, गुणकिरी, खम्बावती और ककुभाका पति कहा है। २० अथर्ववेदका सूत्रविशेष। कौशिकसूत्र देखो।

(त्रि०) कौशात् कृमिकोषाज्जातः, कोश-ठक्। २१ कृमिकोषसे उत्पन्न, रेशमी।

कौशिक—जातिविशेष। यह जाति युक्तप्रदेशके बलिया, बस्ती, आजमगढ़ और गोरखपुरमें रहती है। कौशिक ऋषिके नाम पर इस जातिका नाम पड़ा है। ये लोग अपनेको क्षत्रिय वंशीय मानते हैं। लेकिन बहुतोंका मत इसके विरुद्ध है। इनका आचार विचार तो उच्च दीख पड़ता है, परन्तु सर्वत्र ये लोग क्षत्रिय नहीं माने जाते।

कौशिकपुराण—कौशिक ऋषि—प्रोक्त एक उपपुराण।

कौशिकप्रिय (सं० पु०) कौशिकस्य कुशिकपौत्रस्य विश्वामित्रस्य प्रियः, ६-तत्। विश्वामित्रके प्यारे, रामचन्द्र।

कौशिकफल (सं० पु०) कौशिकं कोषगतं फलमस्य, बहुव्री०। नारिकेलवृक्ष, नारियलका पेड़।

कौशिकराम—धूर्तस्वामीके आपस्तम्बश्रौतसूत्रभाष्यकी टीका बनानेवाले।

कौशिकसूत्र—अथर्ववेदका एक सूत्र। इसमें अथर्ववेदियोंका करणीय श्रौत और गृह्यविधि संक्षेपसे लिखा तो गया है, परन्तु आलोचना करनेसे इसको श्रौत अथवा गृह्य सूत्र-जैसा ग्रहण करना कठिन है। फिर भी किसी किसी टीकाकारने इसे गृह्यसूत्र-जैसा ही माना है। कौशिकसूत्रमें निम्नलिखित विषय वर्णित हैं—आम्नाय-प्रत्यय, देवयज्ञ, पितृयज्ञ, पाकयज्ञ, परिभाषा, सायंप्रातर्होम, आज्यतन्त्र, सर्वकर्मार्थपरिभाषा, मन्त्रका गण, शान्त्युदकनिरूपण, मेधाजननकर्म, ब्रह्मचारीकी सम्पद्, ग्रामकी सम्पद्, सर्वाभीष्टसम्पद्, सांमनका अधिकार, वर्चविधि, सांग्रामिकका कर्म, राष्ट्रप्रवेशविधि, लघु अभिषेक, महाभिषेक, निऋति कर्म, गोष्टिकर्म, यात्राकालका पुष्टिकर्म, समुद्रकर्म, गवादिके पुष्टिसाधनकी शान्ति, मणिबन्धनशान्ति, अष्टकाकर्म, कृषिकर्म, गोशान्ति, वस्त्र प्राप्त करनेका कर्म, दायभाग, रसकर्म, अपनी समृद्धिके लिये नानाविध पुष्टिकर्मका विधि, गृहारम्भ, चित्रकर्म, कृषिमन्त्र, बीजवपन-कर्म, किसी स्थानको जानेसे पूर्व और आनेसे परका कृत्य, वृषोत्सर्ग, आग्रहायणी कर्म, भैषज्य, नानाविध स्त्रीकर्म (यथा—पुत्रप्राप्तिका उपाय, गर्भपात निवारण, पुंसवन, गर्भाधान, सीमन्तकर्म इत्यादि), विज्ञान कर्म (अर्थात् लाभालाभ, जय पराजय, सुख दुःख, उत्कर्ष अपकर्ष, सुभिक्ष दुर्भिक्ष, क्षेम अक्षेम, रोग अरोग प्रभृति), वज्र और वृष्टिनिवारणका मन्त्र, दृढ़कर्म तथा विवादमें जयलाभका मन्त्र, कृत्याकर्म, नदीको दूर प्रवाहित करनेका मन्त्र, अरणिसमारोपण कर्म, पुरुषकी वीर्यवृद्धि करनेका उपाय, वृष्टिप्राप्तिका मन्त्र, अर्थोपार्जनके विघ्न दूर करनेका मन्त्र, गोवत्स और अश्व-शान्ति, प्रवासमें निर्भय अर्थोपार्जनका उपाय, साम्य-विधि, वेदज्ञान लाभका मन्त्र, पापलक्षणा रमणीकी शान्ति, गृहप्रवेश, वास्तुसंस्कार, प्रायश्चित्त, अभिचार, नानाविध स्वस्त्ययन, आयुष्य कर्मविधि, गोदान,

चूड़ाकरण, उपनयन, कर्णवेध, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, काम्यकर्म, सवयज्ञ, आवसथ्याधान, बलि-हरण, नवान्न, विवाहविधि, पितृमेध और पिण्डपितृयज्ञ, मधुपर्क तथा अर्घ्यदानविधि, अद्भुतशान्ति, वेदारम्भ, इन्द्रमहोत्सव, वेदाध्ययनविधि इत्यादि।

कौशिकसूत्रकी अनेक टीका टिप्पणियां हैं। उनमें भट्टारिभट्ट, दारिल, केशवस्वामी और वासुदेवकी टीका वा पद्धति प्रचलित है।

कौशिका (सं० स्त्री०) कोश एव, कोश स्वार्थे अन् ततोऽण् ततष्टाप् अत इत्वञ्च। १ पानपात्र, पानी पीनेका बर्तन। २ ग्रन्थिपर्णीक्षुप, गंठवन। ३ सुरा, एक खुशबूदार चीज।

कौशिकाचार्य—'षड़शीतिकशौचप्रकरण' नामक धर्म-शास्त्रके रचयिता। इनका अपर नाम आदित्याचार्य था।

कौशिकात्मज (सं० पु०) कौशिकस्य इन्द्रस्य आत्मजः, ६-तत्। १ इन्द्रपुत्र, जयन्त। २ अर्जुन, कुन्तीके तीसरे लड़के। ३ विश्वामित्र मुनिके पुत्र।

कौशिकादित्य—श्रीमालक्षेत्रके अन्तर्गत एक पवित्र तीर्थ। श्रीमाल देखो।

कौशिकायनि (सं० पु०) कुशिकस्यापत्यम्, कुशिक-फिञ्। कौशिकवंशीय एक ऋषि। (शतपथब्राह्मण १४।५।५।२१)

कौशिकायुध (सं० क्ली०) कौशिकस्य इन्द्रस्य आयुधम्, ६-तत्। इन्द्रधनुः।

कौशिकार (सं० पु०) कोशकार निपातनात् साधुः। कोशकार, रेशमका कीड़ा।

कौशिकाराति (सं० पु०) कौशिकानां पेचकानां अरातिः, ६ तत्। उल्लुओंका शत्रु, काक, कौवा। काकोलूक देखो।

कौशिकारि, कौशिकाराति देखो।

कौशिकी (सं० पु०) कौशिकेन प्रोक्तमधीयते, कौशिक-णिनि। काश्यपकौशिकाभ्यामृषिभ्यां णिनिः। पा ४।३।१०३ विश्वा-मित्रकथित शास्त्र अध्ययन करनेवाला।

कौशिकी (सं० स्त्री०) कुशिकस्य गोत्रापत्यं स्त्री, कुशिक-अण्-ङीप्। १ चण्डिका। देवराज इन्द्रके कुशिकका पिता जैसा स्वीकार करने पर चण्डिका भी उनके कन्या रूपसे अवतीर्ण हुई। इसी कारण उनको कौशिकी कहते हैं। (हरिवंश ५७अ०)

कुशिक-अञ्। अनृष्यानन्तर्ये विदादिभ्योऽञ्। पा ४। १। १०४ २ कुशिक नरपतिकी पौत्री, ऋचीक मुनिकी पत्नी। ३ कोई नदी। रामायणमें इस नदीका विषय इस प्रकार वर्णित है। गाधिराजनन्दिनी सत्यवती जब अपने पति ऋचीक मुनिके साथ सशरीर स्वर्ग चली गयीं, तब इस नदीकी उत्पत्ति हुई। इसीसे उनके नामानुसार नदी-का नाम कौशिकी पड़ा। सत्यवतीका दूसरा नाम कौशिकी था। (रामायण १।३८ सर्ग)

कौशिकी नदी हिमालयके नेपालराज्यसे अक्षा० २८° २५´ उ० तथा देशा० ८६° ११´ पू०में उत्पन्न हो प्रायः ३० कोस दक्षिण-पश्चिम, तत्पर ८० कोस दक्षिण-पूर्व उत्पत्ति स्थानसे कुल १६२ कोस चल चम्पा नगरीके निकट गङ्गाके साथ मिल गयी है। इसका वर्तमान नाम कुशी नदी है। कौशिकीके स्रोतका वेग बहुत भयानक है। महाभारतके मतमें इस नदीके तीर पर एक मास वास करनेसे अश्वमेधका फल होता है। (भारत अ०३।१८ ब्रह्मपुराण १०४) ४ पार्वतीके शरीरसे निःसृत देवीमूर्ति। कौशिकी देखो। ५ कोई नाटकीय रचना। नाटक देखो। ६ पूरिया तथा अजयपाल अथवा वसन्त सायेरी और पञ्चमके योगसे उत्पन्न एक रागिणी। हनूमान्ने इसको मालकोशकी एक भार्या माना है।

कौशिकी कान्हड़ा (हिं० पु०) कौशिकी और कान्हड़ाके योगसे बनी हुई एक रागिणी। यह कोमल स्वरोंमें ही गायी जाती है।

कौशिकीपुत्र (सं० पु०) कौशिक्याः पुत्रः, ६-तत्। एक ऋषि। (बृहदारण्यक ६।५।१)

कौशिकीसङ्गम—कुरुक्षेत्रके अन्तर्गत एक पवित्र तीर्थ। कुरुक्षेत्र देखो।

कौशिक्य (सं० पु०) शाखोटवृक्ष, सहोरेका पेड़। यह पित्तल, उष्ण, तिक्त और वातातिनाशक है। (वैद्यकनि०)

कौशिक्या (सं० स्त्री०) कौशिक्य देखो।

कौशिक्योज (सं० पु०) कौशिक्या इव ओजो बलं यस्य, बहुव्री० पृषोदरादिवत् सकारलोपे साधुः। कौशिक देखो।

कौशिक्योन्य, कौशिक्य देखो।

कौशिज (सं० पु०) जनपदविशेष, एक मुल्क। (भारत, भीष्म ६अ०)

कौशिल्य—गोत्रकार ऋषिविशेष। (नागरखण्ड १०८। १८)

कौशीतकी, कौषीतकी देखो।

कौशीधान्य (सं० क्लो०) कोषजात धान्य, तिल प्रभृति। (कात्यायनश्रौतसूत्र २।१।१०)

कौशीर (सं० क्लो०-पु०) नखीनाम गन्धद्रव्य, एक खुशबूदार चीज।

कौशीरकेय (सं० त्रि०) कुशीरक-ढञ्। कुशीरकका निकटवर्ती देश।

कौशीलव (सं० क्लो०) कुशीलवस्य कर्म, कुशीलव-अण्। कुशीलवका व्यवसाय, खेलतमाशाका पेशा।

कौशीलव्य (सं० क्लो०) कुशीलवस्य कर्म, कुशीलव-घञ्। कुशीलवका व्यवसाय, नाटक अभिनय प्रभृति, खेलतमाशा।

कौशेय (सं० क्लो०) कोशादुत्थितम्, कोश-ढक्। १ कृमिकोषजात वस्त्र, रेशमी कपड़ा। (माघ ८।६) यह शब्द मूर्धन्य षकारयुक्त भी व्यवहृत होता है। २ काशतृण।

कौशेयक, कौशेय देखो।

कौश्य (सं० त्रि०) कुशस्येदम्, कुश-ष्यञ्। १ कुशनिर्मित, कुशसम्बन्धीय। (भारत, अनु ७१ अ०)

(पु०) कुशस्य गोत्रापत्यम्। २ कुशवंशीय कोई ऋषि (शतपथब्राह्मण १०।५।५।४)

कौष (सं० क्लो०) कमल।

कौषारव (सं० पु०) कुषारोरपत्यम्, कुषारु-अण्। कुषारु मुनिके पुत्र, मैत्रेय। किसी स्थल पर मूर्धन्य षकार, कहीं तालव्य शकार और किसी स्थान पर दन्त्य सकारयुक्त प्रयोग भी देखते हैं।

कौषिक (सं० पु०) कौशिक पृषोदरादिवत् शकारस्य षकारादेशः। १ कौशिक। कौशिक देखो। २ आहितुण्डिक।

कौषिकफल, कौशिक फल देखो।

कौषिकी (सं० स्त्री०) कौशिकी पृषोदरादिवत् साधुः। १ कौशिकी। कौशिकी देखो।

कोषे शरीरकोषे भवः, कोष-ठक्-ङीप्। २ कालीके कायकोषसे उत्पन्ना कोई देवी। कालिकापुराणमें इस प्रकार वर्णित हुवा है—कालीके कायकोषसे निःसृत होने कारण ही यह कौषिकी नाम पर विख्यात हैं। इनकी मूर्ति अतिशय मनोमुग्धकर है। मस्तक कवरीभारसे परिशोभित है। कपाल पर अ चन्द्र, मस्तक पर नानाविध रत्नखचित मुकुट, कर्णमें ज्योतिर्मय कर्णपूर और गलेमें सुवर्ण मणिमाणिक्य निर्मित नागहार तथा पुष्पमाला है। कौषिकी दशहस्ता हैं। दक्षिणहस्तोंमें यथाक्रम शूल, वज्र, वाण, खड्ग तथा शक्ति और वामहस्तोंमें गदा, घण्टा, धनुः, चर्म एवं शङ्ख धारण किये हैं। इनका वाहन सिंह और परिधान व्याघ्रचर्म है। ब्रह्माणी, महेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही, नारसिंही, ऐन्द्री और शिवदूती—इनकी आठ सखियां सर्वदा निकट ही अवस्थान करती हैं। (कालिकापुराण ६० अ०)

मार्कण्डेयपुराणके मतमें-शुम्भ निशुम्भके उत्पीड़नसे देवतागणके नितान्त व्याकुल हो देवीका स्तव आरम्भ करने पर देवी उनके स्तवसे सन्तुष्ट हो उनके निकट जाकर उपस्थित हुईं और पूछने लगीं—तुम किसका स्तव करते हो। उस समय देवीके शरीरसे एक दूसरा देवीने निकल कर कहा था—देवलोग मेरा स्तव करते हैं। इन्हीं देवीका नाम कौषिकी है। इन्होंने दैत्यवंशको समूल नाश कर डाला। (मार्कण्डेयपुराण, देवीमाहात्म्य) देवीपुराणको देखते—कौषेयवस्त्र धारण ही कौषिकी नामका कारण निर्णीत हुआ है। (देवीपुराण ४५ अ०)

कौषीतक (सं० पु०) कुषीतकस्यापत्यम्, कुषीतक-अण्। कुषीतक ऋषिके पुत्र। ऐतरेयब्राह्मणमें इनका नाम दृष्ट होता है। यह ऋग्वेदकी एक शाखाके प्रवर्तक थे। (आश्वलायन श्रौ० सू० ३।४।४।२२)

कौषीतकि (सं० पु०) कुषीतकस्यापत्यम्, कुषीतक-इञ्। १ कुषीतक ऋषिके पुत्र। २ ऋग्वेदान्तर्गत ब्राह्मणविशेष।

कौषीतकी (सं० पु०) कौषीतकेन प्रोक्तमधीयते, कौषीतक-णिनि। कौषीतक-प्रणीत शास्त्र पढ़नेवाले। (आश्व० गृ० १।२३।५)

कौषीतकी (सं० स्त्री०) कुषीतकस्य अपत्यं स्त्री, कुषीतक-अण्-ङीप्। १ अगस्त्यकी पत्नी। कुषीतकेन प्रोक्ता अधीता वा या शाखा। २ ऋग्वेदान्तर्गत ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषदका भेद। (मुक्तिकोपनिषद)

कौषीतकेय (सं० पु०) कुषीतक-ढक्। विकर्णकुषीतकात् काश्यपे। पा ४।१।१२४। कुषीतकके अपत्य।

(शतपथब्राह्मण १४।६।४।१)

कौषेय (सं० क्ली०) कौशेय पृषोदरादिवत् शकारस्य षकारादेशः। रेशमी कपड़ा। (मार्कण्डेयपुराण १५।२६)

कौष्ठ (सं० त्रि०) कोष्ठ वा भाण्डार सम्बन्धीय।

(शतपथब्राह्मण १ १।२।७)

कौष्ठवितक (सं० त्रि०) कुष्ठविदि कुष्ठविद्यायां साधुः, कुष्ठविद्-ठक्। दकारस्य तकारः ठस्य च कः। कथादिभ्यष्ठक्। पा ४।४।१०२। भली भांति कुष्ठविद्या जाननेवाला, जो कोढ़की पूरी जानकारी रखता हो। किसी किसी वैयाकरणके मतमें इस स्थल पर ठकारके स्थानमें ककार नहीं हो सकता। वह कौष्ठविदिक शब्द सिद्ध करते हैं।

कौष्ठिल—एक बौद्ध ग्रन्थकार।

कौष्ठ्य (सं० त्रि०) कोष्ठ वा उदर सम्बन्धीय, कोठे या पेटसे सरोकार रखनेवाला।

कौसल, कौशल देखो।

कौसलेय (सं० पु०) कौसल्याया अपत्यम्, कौसल्या-ढक्। कौसल्याके पुत्र रामचन्द्र।

कौसल्यायनी, कौशल्यायनि देखो।

कौसल्य (सं० पु०) कोसलस्यापत्यम्, कोसल-ञ्यङ्। वृद्धेत् कोसलाजादाञ्ञ्यङ्। पा ४।१।१७१। कोसलदेशीय राजाके पुत्र। (शतपथब्राह्मण ३।५।४।४)

कौसल्या (सं० स्त्री०) कोसल-ञ्यङ्-टाप। १ कोसलराजकी कन्या। यह दशरथ राजाकी प्रधान महिषी और रामकी माता थीं। २ पुत्रकी पत्नी। ३ सन्तानकी स्त्री। (हरिवंश) कौशल्या देखो।

कौसिद (सं० त्रि०) कुसीदसम्बन्धीय, कसीदेवाला।

(मनु ८।१४३)

कौसिला (हिं० स्त्री०) कौसल्या।

कौसीद (सं० त्रि०) कुसीदे साधुः, कुसीद-अण्। वृद्धिजीवी, सूदखोर।

कौसीद्य (सं० क्ली०) कुत्सितं सीदत्यस्मिन्, सद बाहुलकात् आधारे शः ततः स्वार्थे ष्यञ्। १ आलस्य, सुस्ती। २ तन्द्रा, तुन्दी। कुसीदस्य भावः। ३ वृद्धिजीविका, सूदखोरी।

कौसुम (सं० क्ली०) कुसुमेन निर्वृत्तम्, कुसुम-अण्। १ पुष्पाञ्जन, बनावटी सुरमा। (त्रि०) २ कुसुमसम्बन्धीय, फूलोंवाला।

कौसुमायुध (सं० पु०) कौसुमः कुसुमनिर्मितः आयुधः यस्य, बहुव्री०। कामदेव, पञ्चवाण।

कौसुम्भ (सं० पु०-क्ली०) कुसुम्भ स्वार्थे अण्। १ वनकुसुम्भ, जंगली कुसुम। २ पुष्पाञ्जन, फूलोंका सुरमा। ३ कोई शाक। यह अतिशय कोमल होता है। (त्रि०) कुसुम्भेन रक्तम्, कुसुम्भ-अण्। ४ कुसुम्भरागसे रञ्जित, कुसुम्भी।

कौसुम्भतैल (सं० क्ली०) कुसुम्भवीजोद्भव तैल, कुसुमके वीजका तेल। यह कटु, सक्षार और वात, कफ तथा पित्तहर होता है। (वाभटटीका) कुसुम्भतैल देखो।

कौसुम्भशाक (सं० क्ली०) कुसुम्भशाक, कुसुमकी सब्जी।

कुसुम्भपत्र देखो।

कौसुम्भशुण्डिक (सं० क्ली०) स्वनामख्यातशालि, किसी किस्मका चावल। यह लघुपाक और वातपित्तघ्न होता है। (राजनिघण्टु)

कौसुम्भीशालि, कौसुम्भशुण्डिक देखो।

कौसुरुविन्द (सं० पु०) दशरात्र-साध्य एक यज्ञ।

(कात्यायनश्रौत० २३।५।१८)

कौसुरुविन्दि (सं० पु०) कुसुरुविन्दस्यापत्यम् कुसुरुविन्द-इञ्। अत इञ्। पा ४।१।९५। कुसुरुविन्द मुनिके पुत्र उद्दालक ऋषि। (शतपथब्राह्मण १२।२।२।१३)

कौसृतिक (सं० त्रि०) कुसृत्या कुत्सितगत्या चरति, कुसृति-ठक्। चरति। पा ४।४।८। १ कुहकी, बाजीगर। २ शठ, पाजी।

कौस्त (सं० क्ली०) दशाब्दिक घृत, दश वर्षका पुराना घी।

कौस्तुभ (सं० पु०) कुं भूमिं स्तुभ्नाति व्याप्नोति कुस्तुभः समुद्रः तत्र भवः, यद्वा कुं भूमिं स्तुभ्नाति व्याप्नोति सर्वं आक्रम्य तिष्ठति कुस्तुभो विष्णुः तस्य अयम्, कुस्तुभ-अण्। १ विष्णुका हृदयभूषण मणि। यह समुद्रमन्थन काल समुद्रसे उत्पन्न हुआ था।

देवता विष्णुके साहाय्यसे जब समुद्र मथने लगे, उससे नानाविध बहुमूल्य पदार्थ निकल पड़े। विष्णुने उनमें केवल कौस्तुभ लिया था। (हरिवंश २३) भागवतके

सतमें—कौस्तुभ पद्मराग मणि-जैसा रक्तवर्ण और कोटि सूर्यों-जैसा किरणशाली है। २ मुद्राविशेष। दाहने हाथकी कनिष्ठ अङ्गुलि, अनामिका और अङ्गुष्ठको संलग्न करके वाम हस्तको कनिष्ठ अङ्गुलि और दाहने अङ्गुष्ठ मूलमें वामहस्तकी अनामिकाको दक्षिण हस्तकी तर्जनी अङ्गुलि द्वारा बद्ध करना चाहिये। फिर अङ्गुष्ठके मध्यभागमें अपर चारों अङ्गुलियोंका अग्रभाग सरल भावसे संयोजित करने पर कौस्तुभमुद्रा बनती है। (तन्त्रसार)

कौस्तुभलक्षक (सं० पु०) कौस्तुभः लक्षकः यस्य, बहुव्री०। विष्णु।

कौस्तुभलक्षण (सं० पु०) कौस्तुभः लक्षणं यस्य, बहुव्री०। विष्णु।

कौस्तुभवक्षाः (सं० पु०) कौस्तुभो वक्षसि यस्य, बहुव्री०। विष्णु।

कौस्त्र (सं० क्लो०) कुत्सिता स्त्री कुस्त्री तस्या भावः, कुस्त्री-अण्। हायनान्तयुवादिभ्योऽण्। पा ५।१।१३०। कुत्सिता स्त्रीका धर्म, खराब औरतका काम।

कौथलपुर (सं० क्लो०) शिलालिपिवर्णित एक प्राचीन नगर।

कौह (हिं० पु०) ककुभ, अर्जुनका पेड़।

कौहड़ (सं० पु०) कोहड़स्य अपत्यम्, कोहड़-अण्। शिवादिभ्योऽण्। पा ४।१।११२। कोहड़के लड़के।

कौहर (हिं० पु०) इन्द्राणी, एक बेल।

कौहल (सं० पु०) कोहलस्यापत्यम्, कोहल-इञ्। कोहलके पुत्र।

कौहलिय (सं० पु०) कोहलप्रवर्तित वेदशाखा।

(गोभिल ३।४।२९)

कौहली—अति प्राचीन एक वैदिक वैयाकरण।

(तैत्तिरीयप्रातिशाख्य २।५)

कौहलीय, कौहलीय देखो।

कौहा (हिं० पु०) कौवा, कहुंवां, बंडेरीकी आड़के लिये लगाया जानेवाली लकड़ी।

क्य (सं० त्रि०) कः प्रजापतिः तस्मै हितः, क-यत्। ब्रह्माका हितकारक, ब्रह्माको उपकार करनेवाला।

(शतपथब्राह्मण १०।३।४।२।४)

क्या (हिं० सर्व०) १ कोई प्रश्नवाचक शब्द, कौन चीज। यह 'किम्' शब्दका अपभ्रंश है। इसके द्वारा किसी विषयमें प्रश्न करते हैं। क्या सर्वनाम तो है, परन्तु इसमें कोई विभक्ति नहीं लगती। (वि०) २ कितना। ३ ऐसा, इतना। ४ कैसा, निराला, अनोखा। ५ अच्छा, बढ़िया। (क्रि० वि०) ६ क्यों, काहेको। ७ नहीं।

'क्या' केवल प्रश्नवाचक अव्ययकी भांति भी आता है।

क्याल्लानोर—मन्द्राज प्रान्तके मलबार जिलेका एक शहर और बन्दर। यह अक्षा० ११° ५२´ उ० और देशा० ७५° २२´ पू० में अवस्थित है। इसका देशीय नाम कन्नूर वा कण्णनूर अर्थात् कृष्णनगर है। यहां कोई २८ हजारसे अधिक मनुष्य रहते हैं। उनमें मुसलमानों और हिन्दुवोंकी ही संख्या अधिक है।

प्रवाद है—प्रथमको यह नगर चेरमान पेरुमाल-वंशीयोंके अधिकारमें रहा। उनके हाथसे मोपला राजावोंने इसे दखल कर लिया।

१४९८ ई०को भास्को डि-गामा यहां उतरे थे। उसके सात वर्ष पोछे क्याल्लानोरमें पोर्तगीजोंकी कोठी खुली। १५१० ई०को भ्रमणकारी वार्थेमा-लिखित विवरण पाठसे समझ पड़ता है कि उस समय यहां पोर्तगीजोंका एक दुर्ग बना था।*

१६५६ ई०को ओलन्दाजोंने यहां एक किला बनाया था। यह दुर्ग १७६६ ई० तक उन्होंके अधिकारमें रहा, उसके पीछे हैदरअलीके सिपाहियोंने दखल किया। १७८४ ई०को अंगरेजोंने आक्रमण मारा था। क्याल्लानोरको अधीश्वरीने उनको अधीनता स्वीकार की। सात वर्ष पीछे अंगरेजोंने इसे एकबारगी ही अधिकार कर लिया था। उस समयसे यहां मलबार जिलेके मध्य सर्वप्रधान सैनिक-निवास स्थापित हो गया। क्याल्लानोरमें अंगरेजी और देशी दोनों

* Travels of Lodovico de Varthema in 1510, published in Hack, Society.

प्रकारका सैन्यदल है। किलेसे कुछ दूर समुद्र किनारे मोपला राजा रहते हैं। सालाना आमदनी ३८०००) रु० है।

क्याम्बू (सं० स्त्री०) कं प्रजापतिहितं अम्बु यत्र, बहुव्री० तत ऊङ्। अल्पजलयुक्त पुष्करिणी प्रभृति, गड़ैया।

क्यारी (हिं० स्त्री०) कियारी।

क्यों (हिं० क्रि०) १ किस कारण, किस लिये, काहेको। यह शब्द व्यापारविशेषका कारण पूछता है। २ कैसे, किस प्रकार।

क्योंकि (हिं० अव्य०) कारण, इसलिये कि।

क्योंझर (केउंझर)—उत्कल-प्रान्तका एक करदराज्य। यह अक्षा० २१° १´ तथा २२° १०´ उ० और देशा० ८५° ११´ और ८६° २२´ पू०के बीच पड़ता है। भूपरिमाण ३०९६ वर्गमील है। इसके उत्तर सिंहभूम जिला, दक्षिण कटक जिला तथा ढेंकानालराज्य और पश्चिमको पाल-लहरा तथा बोनाईराज्य लगता है। यह उच्च और निम्न दो भागोंमें विभक्त है। उच्च विभागमें पहाड़ी ऊंची जमीन् और निम्नदेशमें उपत्यकाएं तथा मैदान हैं। प्रस्तरमय उत्तर-पश्चिमांशसे वैतरणी नदी निकलती है। प्रधान शिखर गन्धमादन (३४७९ फीट), ठाकुरानी (३००३ फीट), तोमाक (२५७७ फीट) और बोलात (१८१८) फीट है।

प्रथमत: केन्दुझरी वा क्योंझर मयूरभञ्जका एक अंश था। परन्तु २०० वर्ष हुए क्योंझरके अधिवासियोंने मयूर-भञ्जसे अलग हो राजाके एक भाईको अपना राजा चुना। उस समयसे बीसियों राजा राज्य कर गये। १८५७ ई०को क्योंझरराजने अंगरेज सरकारको बड़ी मदद दी थी। इसीसे राज्यका कर घटा दिया गया और 'महाराज' उपाधि भी मिला। १८६१ ई०को महा-राजके मरने पर कोई अपना औरसजात पुत्र न रहने-से राज्याभिषेक पर विवाद उठा और उसके परिणाम स्वरूप भुइयों तथा जुवांगोंने विद्रोह मचा दिया। परन्तु अंगरेजी फौजकी मददसे वह दबाया गया। १८९१ ई०को मन्त्रियोंके अत्याचार पर प्रतिवाद रूप फिर पहाड़ी लोगोंने विद्रोह खड़ा किया, जो विना अंगरेजी साहाय्यके दब न सका। राज्यका वार्षिक आय ३ लाख रुपया है। सरकारी कर १७१०) रु० लगता है। १९०१ ई०को इस राज्यकी लोकसंख्या २८५७५८ थी। इस राज्यका बड़ा गांव आनन्दपुर वैतरणी नदी पर बसा हुआ है। मेदिनीपुर-सम्बल-पुरकी पुरानी सड़क क्योंझर नगरके बीचसे निकली है। राज्यमें कई दातव्य औषधालय और विद्यालय विद्यमान हैं।

क्रकच (सं० पु०-क्ली०) क्र इति कचति शब्दायते, क्र-कच-अच्। १ ग्रन्थिलवृक्ष, गंठवन। २ करपत्र, आरा। ३ केतकी, केवड़ा। ४ प्रवृद्ध हीन मध्य वातादिजनित सन्निपातज्वर, एक तरहका सरसामी बुखार। इसमें प्रलाप, आयास, सम्मोह, कम्प, मूर्च्छा, रति तथा भ्रम बढ़ता और रोगी मन्यास्तम्भसे मरता है। (भावप्रकाश)

५ ज्योति:शास्त्रोक्त कोई योग। वार और तिथिकी संख्या मिलाने पर तेरह आनेसे क्रकच योग पड़ता है। (नारद) अर्थात् शनिवारको षष्ठी, शुक्रवारको सप्तमी, बृहस्पतिवारको अष्टमी, बुधको नवमी, मङ्गलको दशमी, सोमवारको एकादशी और रविवारको द्वादशी होनेसे यह योग आता है। इस योगमें कोई मङ्गलकार्य न करना चाहिये।

क्रकचच्छद (सं० पु०) क्रकच इव छदो यस्य, बहुव्री०। केतकीवृक्ष, केवड़ेका पेड़। क्रकचदल प्रभृति शब्द भी इसी अर्थमें व्यवहृत होते हैं।

क्रकचपत्र (सं० पु०) क्रकचमिव पत्रमस्य, बहुव्री०। शाकवृक्ष, सागवनका पेड़।

क्रकचपात् (सं० पु०) क्रकच इव पादो यस्य, बहुव्री० अन्त्यलोप:। कृकलास, गिरगिट।

क्रकचपाद (सं० पु०) विकल्पेन अन्त्यलोप:। कृकलास, गिरगिट।

क्रकचपृष्ठी (सं० स्त्री०) क्रकच इव पृष्ठं यस्या:, बहुव्री० तत: ङीष्। कवयी मत्स्य, कंटवा। इस मछलीकी पीठ पर आरा-जैसी एक चीज होती है। उसीसे इसका नाम क्रकचपृष्ठी पड़ा है।

क्रकचव्यवहार (सं० पु०) गणितविशेष, एक हिसाब। इसके द्वारा कार्यानुसार बढ़ईका वेतन निर्णय किया जाता है। चैत देखो।

क्रकचा (सं० स्त्री०) क्रकचस्येवाकारोऽस्त्यस्याः, क्रकच-अर्श आदित्वात् अच् ततष्टाप्। १ केतकीवृक्ष, केवड़ा। २ होगगलढण, आरे-जैसी एक लम्बी घास।

क्रकटोया—यवद्वीपका निकटवर्ती एक लुप्तद्वीप। यह स्थान पहिले समुद्रपृष्ठसे प्रायः २००० हाथ ऊंचा था। किन्तु १८८३ ई०की २६ वीं अगस्तको यवद्वीपके पर्वतसे अति भयङ्कर अग्न्युत्पात हुआ। ऐतिहासिक और भूतत्वविद् कहा करते हैं कि वैसा अग्न्युत्पात और कभी किसी स्थान पर नहीं उठा। उससे क्रकटोया द्वीप विस्तृत नगर कानन और शत शत प्राणी सह मालूम नहीं कहां अदृश्य हो गया। उसका चिह्न मात्र भी नहीं मिलता। वहां आजकल भारत महासागरका अतलस्पर्शी जल भरा है। यवद्वीप देखो।

क्रकण (सं० पु०) क्र इति कणति शब्दायते, कण-अच्। तित्तिरपक्षी, किलकिला चिड़िया। क्रकर देखो।

क्रकर (सं० पु०) क्र इति शब्दं कर्तुं शीलमस्य, क्र-कृ ताच्छील्ये अच्। १ करीरवृक्ष, करील। २ क्रकणपक्षी, किलकिला। इसका संस्कृत पर्याय—क्रकण, क्रकण, और क्रकर है। इसका मांस वातघ्न, पित्तनाशक, मेध्य, वृष्य, अग्नि तथा बलबुद्धिकारक, लघुपाक और रुचिकर होता है। (सुश्रुत)

३ करपत्र, आरा। ४ दरिद्र।

क्रकराट (सं० पु०) भरद्वाजपक्षी, एक चिड़िया।

क्रकुच्छन्द (सं० पु०) भद्रकल्पके ५ बुद्धोंमें प्रथम बुद्ध। स्वयम्भूपुराणमें लिखा है—विश्वभूके निर्वाण पीछे क्षेमवतीनगरमें क्रकुच्छन्द नामक किसी ब्राह्मणने जन्म लिया था। बाल्यकालसे ही उन्हें धर्मानुराग लग गया। वह शिरीष वृक्षके मूलमें तृणासन पर बैठ कठोर तपस्या किया करते थे। फिर तपोबलसे उन्होंने बोधिज्ञान पाया। उनके प्रधान शिष्यका नाम ज्योतिःपाल था।

बोधिज्ञान लाभ करनेके पीछे क्रकुच्छन्द नाना स्थानोंमें बहुतसे लोगोंके बीच सद्धर्म प्रचार करने लगे। वह थोड़े दिन नेपालके पद्मपुरमें रहे। वहांसे शिष्यों और भक्तोंके साथ दुर्गम शङ्खगिरि पर जा पहुंचे। इस शङ्खगिरिकी एक विस्तृत गुहामें उन्होंने शिष्योंको अनेक उपदेश दिये थे। इसी समय ब्राह्मणप्रवर गुणध्वज, क्षत्रियराज अभयनन्द प्रभृति महात्मा बोधिज्ञान लाभ करनेको क्रकुच्छन्दके शरणापन्न हुए। इस जगह भगवान् क्रकुच्छन्दने शिष्योंको प्रोषधव्रतके अनुष्ठानादिकी शिक्षा दी थी। उन्होंने कहा—'अदत्त वस्तु ग्रहण, ब्रह्मचर्यके विपरीत आचरण, मद्यपान, नृत्य, गीत, पुष्पमाला-सुगन्धि-अलङ्कारधारण, पर्यङ्कका शयन और असमय आहार भिक्षुके लिये एकान्त निषिद्ध है। जो यह नियम पालन नहीं करते, उनको विस्तर प्रत्यवाय उठाना पड़ते हैं। परन्तु जो मनसे पालन करते वह ऋद्धिसाक्षात्कार, देववाणीश्रवण, अन्यके मनका भाव जाननेकी क्षमता, पूर्वजन्मकी स्मृति और अलौकिक कार्यसाधनकी क्षमता पा जाते हैं। तत्पर उन्होंने ३७ धर्म प्रचार किये। उनमें स्मृतिलाभके ४, इन्द्रियके ५, बोधिधर्मलाभके ७, संप्रहाणके ४, अनेसर्गिक कार्य करनेके ४, शक्तिलाभके ५ और नाना प्रकार ज्ञान लाभके ८ उपाय थे।" स्वयम्भूपुराण ४ अ०।

अवदानशतकमें कहा है—क्रकुच्छन्दके निर्वाण पीछे राजा शोभितने शोभवती नगरमें उनके केशों और नखों पर एक वृहत् स्तूप निर्माण कराया था।

(अवदानशतक ८७ अ०)

खृष्टीय पञ्चम शताब्दीके प्रारम्भमें चीन-परिव्राजक फाहियान क्रकुच्छन्दका जन्मस्थान देखने गये थे। उनके मतमें इनके जन्मस्थानका नाम 'न-पि-क' था। वह श्रावन्ती नगरीसे १२ योजन दक्षिण-पूर्वमें अवस्थित रहा। जहां पितापुत्रका साक्षात् हुवा और जहां भगवान्को निर्वाण मिला, कितने ही स्तूप बनाये गये। (फो-की-कि ११) चीन-परिव्राजक युअनचुयाङ्ग भी आकर स्तूप और अशोकराज-प्रतिष्ठित २० हाथ ऊंचे स्तम्भ पर लिखी क्रकुच्छन्दके निर्वाणकी कहानी देख गये थे। (सि-यु-की ६) क्षेमवती केशवती देखो।

क्रकोच (सं० पु०) पक्षिविशेष, एक चिड़िया।

क्रतु (सं० पु०) क्रियते ऽसौ, क्र-कतु। कृञः कतुः। उण्, १।७८। १ सप्तऋषियोंमें एक ऋषि। यह ब्रह्माके मानस पुत्र रहे। ब्रह्माके हाथसे इनका जन्म हुवा था। (महाभारत १।६५।१०) कर्दम प्रजापतिकी कन्या क्रिया

इनकी पत्नी रहीं। क्रियाके गर्भ और इनके औरससे साठ हजार बालखिल्य मुनियोंने जन्म लिया था। (भागवत ४।१।३८) २ विश्वेदेवविशेष, ब्राह्मणके एक मानस पुत्र। (हरिवंश) (शतपथब्राह्मण १०।६।३।१) ३ सोमरस। साध्य यूपयज्ञ। ४ विष्णु। (विष्णुसंहिता) सङ्कल्प, ५ इरादा। ६ रुचिका आधिक्य, अतिशय अभिलाष। ७ स्तुति प्रभृति कर्म। (ऋक् ४।२१।१०) ८ प्रज्ञा, निश्चय, पहचान। (छान्दग्योपनिषत्) ९ आषाढ मास। इसमें चातुर्मास्य प्रभृति अनेक यज्ञोंका विधान रहनेसे क्रतु नाम पड़ा है। (वाजसनेयसंहिता। १८) १०. अश्वमेध यज्ञ। (मनु ७।७९) ११ इन्द्रिय। १२ कोई प्राचीन धर्म-शास्त्रकार। हेमाद्रि, माधवाचार्य, विज्ञानेश्वर प्रभृतिके ग्रन्थोंमें क्रतु स्मृतिका मत उद्धृत हुआ है।

क्रतुकर्म (सं० क्ली०) यागयज्ञ।

क्रतुजित् (सं० पु०) एक ऋषि। (काठकसूत्र)

क्रतुदोषनुत् (सं० पु०) क्रतूनां इन्द्रियाणां दोषं नुदति दूरीकरोति, क्रतु-दोष-नुद्-क्विप्। प्राणायाम। प्राणायाम करनेसे समस्त इन्द्रियोंका दोष नष्ट होता है।

क्रतुद्रुह (सं० पु०) क्रतवे द्रुह्यति, द्रुह-क्विप्। असुर, यज्ञको बुरा समझनेवाला।

क्रतुद्विट् (सं० पु०) क्रतवे द्वेष्टि, द्विष-क्विप्। सत्सुद्विष द्रुह-दुह-युविद-भिद-च्छिद-जि-नी-राजामुपसर्गेऽपि। पा ३।२।६१।१ असुर। २ नास्तिक।

क्रतुध्वंसी (सं० पु०) क्रतुं दक्षयज्ञं ध्वंसयति, क्रतु-ध्वंस-णिच्-णिनि। दक्षका यज्ञ ध्वंस करनेवाले शिव।

किसी यज्ञके उपलक्षमें देवोंका निमन्त्रण रहा। दक्ष सबके पीछे सभामें पहुंचे। उसको देख कर इन्द्र, चन्द्र, वरुण, वायु प्रभृति सभी उठ खड़े हुए। शिव भी उस सभामें थे। किन्तु वह न उठे। कनिष्ठ जामाता शिवकी यह असभ्यता देख दक्ष चिढ़े थे। वह फिर शिवकी अवमाननाके लिये चेष्टा करने लगे, किन्तु कुछ बना न सके। परिशेषको उन्होंने एक यज्ञका अनुष्ठान किया था। शिवका अपमान करना ही उसका प्रधान उद्देश रहा। बड़े धूमधड़ाकेसे यज्ञका अनुष्ठान होने लगा। भूचर, खेचर, स्वर्ग, मर्त्य, पाताल निमन्त्रित हुआ था, किन्तु कैलासको कोई संवाद भी भेजा न गया। शिव खबर पा कर मन ही मन हंसे थे। सतीके निकट भी दक्षयज्ञका संवाद पहुंचा। वह बापके घर यज्ञ देखनेको जानेके लिये विदा मांगने शङ्करके निकट उपस्थित हुईं। शिवने उन्हें यज्ञमें जानेसे रोका था। सती इस पर रोते रोते आकुल हो गयीं। अगत्या शिवने उन्हें जानेकी अनुमति दी थी। सती दक्षयज्ञमें गयीं, परन्तु वहां भूतपतिकी निन्दा सुनके अपना देह परित्याग कर बैठीं। शिवने सतीका मृत्युसंवाद पाकर क्रोधभरसे शिरकी जटा नोच डाली थी। उसी जटासे एक वीरपुरुष उत्पन्न हुवा। उसका नाम वीरभद्र था। त्रिलोचनने उसे दक्षयज्ञ भङ्ग करनेकी अनुमति दी। वीरभद्र शिवकी आज्ञा पाकर भूतप्रेत प्रभृति सैन्य-सामन्तोंके साथ यज्ञस्थल पर पहुंचे और मुहूर्त मध्य लूटमार मचा यज्ञ भङ्ग कर डाला। (काशीखण्ड ८८ अध्याय)

क्रतुपशु (सं० पु०) क्रतोरश्वमेधयज्ञस्य पशुः, ६-तत्। अश्व, घोड़ा।

क्रतुपति (सं० पु०) क्रतोः पतिः, ६-तत्। यज्ञेश्वर, विष्णु। (भागवत ४।१९.२९)

क्रतुपा (सं० त्रि०) क्रतु यज्ञं पाति रक्षति, क्रतु-पा-विच्। यज्ञरक्षक, प्रहरी रहकर यज्ञका विघ्न निवारण करनेवाला।

क्रतुपुरुष (सं० पु०) क्रतुः यज्ञः तदधिष्ठाता पुरुषः। १ विष्णु। क्रतुः पुरुष इव। २ वराहरूपधारी यज्ञपुरुष। हरिवंशमें इनकी वर्णना इस प्रकार लिखी है—चार वेद यज्ञपुरुषके चारो पांव हैं। इसी प्रकार यूपको दंष्ट्रा, यज्ञको हस्त, यज्ञकुण्डको मुख, अग्निको जिह्वा, कुशोंको रोम, ब्रह्माको मस्तक, दिन तथा रात्रिको दोनों चक्षु, छहो वेदाङ्गोंको कर्णके अलङ्कार, घृतको नासास्थल, स्रुवको होंठ और यज्ञमें किये जानेवाले सामध्वनिको उनका शब्द-जैसा समझना चाहिये। यज्ञपुरुष सत्य तथा धर्ममय, श्रीमान् और क्रमविक्रम-युक्त हैं। पशु उनका जानु, उद्गाता लोग उनकी नाड़ियां, वायु अन्तरात्मा, सत्र स्फिक्, सोमरस रक्त, वेदि स्कन्ध, हवि गन्ध, दक्षिणा हृदय, छाया पत्नी और मणि यज्ञपुरुषका शृङ्ग हैं। विष्णु ऐसी ही यज्ञ-

वराहमूर्ति बनाकर अधोदेशको गये थे। (हरिवंश २२४ अ०)

क्रतुप्रकरण, क्रतुप्रा देखो।

क्रतुप्रा (सं० पु०) क्रतून् कर्माणि प्राति पूरयति, क्रतु-प्रा-क्विप्। कर्मपूरक, कर्मोंका पूरण करनेवाला। (ऋक् ४।३९।२)

क्रतुफल (सं० क्ली०) क्रतोः फलम्, ६-तत्। १ यज्ञका फल स्वर्गादि। (पु०) क्रतुरेव यज्ञानुष्ठानमेव फलं प्रयोजनं यस्य, बहुव्री०। २ निष्काम हो यज्ञका अनुष्ठान करनेवाला, यज्ञके फलको न चाहनेवाला व्यक्ति।

क्रतुभुक् (सं० पु०) क्रतुं क्रतुदेयं हविः भुङ्क्ते, क्रतु-भुज्-क्विप्। देवता। यज्ञमें देवताओंके उद्देश जो सकल द्रव्य अर्पण किया जाता, देवता लोग मनुष्यकी भांति उसको भोग नहीं करते; किन्तु उसको देख कर तृप्त रहते हैं।

क्रतुभूषण—तत्त्वविवेकसार नामक वेदान्तग्रन्थके प्रणेता।

क्रतुमय (सं० त्रि०) अध्यवसायात्मक। (छान्दोग्य उपनिषद ३।१४।१) (पु०) २ क्रतुबहुल विष्णु।

क्रतुमान् (सं० त्रि०) क्रतुर्लोकरचणहेतु भूतकर्म अस्यास्ति, क्रतु-मतुप्। १ क्रतुयुक्त, यज्ञका अनुष्ठान करनेवाला। (ऋक् १।९२।१२) (पु०) २ विश्वामित्र के पुत्र। (भागवत ९।१६।३६)

क्रतुराज (सं० पु०) क्रतूनां राजा श्रेष्ठः समासान्त टच्। राजसूय यज्ञ।

क्रतुराट् (सं० पु०) क्रतुषु यज्ञेषु राजते, क्रतु-राज्-क्विप्। सत्सूद्विषेत्यादि। पा ३।२।६१। अश्वमेध यज्ञ। (मनु ११।२६१)

क्रतुविक्रयी (सं० त्रि०) क्रतुं तत्फलं विक्रीणाति, क्रतु-वि-क्री-णिनि। अपरके निकटसे धन लेकर उसको क्रतुफल बेंच डालनेवाला। (मनु ४।२१४)

क्रतुविद् (सं० त्रि०) क्रतुं वेत्ति जानाति, क्रतु-विद्-क्विप्। क्रतु कर्म जाननेवाला।

क्रतुस्थला (सं० स्त्री०) एक अप्सरा। यजुर्वेदमें इसका उल्लेख मिलता है। (वाजसनेयसं० १५।१५) ब्रह्माण्ड-पुराणके मतानुसार यह चैत्रमासको सूर्यके रथमें रहती है। (ब्रह्माण्ड, अनुषङ्गपाद)

क्रतुस्पृक् (सं० त्रि०) क्रतुमिन्द्रियं स्पृश-क्विन्। इन्द्रिय को स्पर्श करनेवाला। (आश्वलायन-गृह्यसू० ४।१०।५)

क्रतूत्तम (सं० पु०) क्रतुषूत्तमः, ७-तत्। राजसूय यज्ञ

क्रत्वर्थ (सं० त्रि०) क्रतवे इदम्, नित्य समा० विशेष्य-लिङ्गता च। किसी किसी व्याकरणके मतमें—क्रतुरर्थः प्रयोजनस्य—इस प्रकार बहुव्रीहि समाससे क्रत्वर्थ रूप साधित होता है। यज्ञका उपकारक, यज्ञका अङ्ग। वेदमें यज्ञादिका जो सकल फल विधि पाया जाता, वह पुरुषार्थ और अर्थवाद क्रत्वर्थ कहलाता है।

क्रत्वर्थ और पुरुषार्थका लक्षण निरूपण करनेको कहना पड़ेगा—जिसके अनुष्ठानसे जीवोंको सुख मिलता और फलके अनुसार जिसका चाव बढ़ता (शास्त्र द्वारा जिसकी लिप्सा नहीं होती), वही पुरुषार्थ ठहरता है। पुरुषार्थ प्रीतिके साथ अविभक्त है। जो जो अनुष्ठान करनेसे जीव सुखी हो सकते, उन्हींको पुरुषार्थ कहते हैं। इसके विपरीत अर्थात् जिसके अनुष्ठानसे किसी प्रकारका फल नहीं मिलता और केवल शास्त्र द्वारा हो जिसका चाव चढ़ता, उसीका नाम क्रत्वर्थ पड़ता है। जैसे—प्रजापति व्रत प्रभृतिको पुरुषार्थ और उसके अङ्ग जैसे समिदादि तथा उपवास प्रभृतिको भी क्रत्वर्थ समझना चाहिये।

क्रत्वादि (सं० पु०) पाणिनिके मतमें एक गण। क्रतु, दृशीक, प्रतीक, हव्य और भग—कई एक शब्द इसके अन्तर्गत हैं। सुपदके परवर्ती क्रत्वादि गणका आदि स्वर उदात्त होता है।

क्रत्वामघ (वै० त्रि०) क्रतुना कर्मणा मंहनीयः, क्रतु-मह-अच् निपातने साधुः। शीघ्र गमन प्रभृति द्वारा प्रशंसनीय। (ऋक् ५।३३।९)

क्रत्वीश्वर (सं० क्ली०) क्रतुना मुनिना स्थापितं ईश्वर-लिङ्गम्। क्रतुमुनि स्थापित काशीस्थ शिवलिङ्ग। (काशीखण्ड १८ अ०)

क्रथ (सं० पु०) १ यादवोंकी एक जाति। यह क्रथसे निकले हैं। २ विदर्भके पुत्र और कैशिकके भ्राता। ३ किसी असुरका नाम।

क्रथकैशिक (सं० पु०) एक देश। (रघुवंश)

क्रथकैशीक, क्रथकैशिक देखो।

क्रथन (सं० क्ली०) क्रथ्यते, क्रथ वधे भावे ल्युट्।

१ मारण, मारकाट। २ छेदन, कटाई। (प्रबोधचन्द्रोदय) (पु०) ३ कोई दानव। (भारत ११६७।२८) ४ कोई देवयोनि। (भारत ११२२।१८) धृतराष्ट्र पुत्रभेद। (भारत आदि) ६ शुक्ल अगुरु, सफेद अगर।

क्रथनक (सं० क्ली०) क्रथन स्वार्थे कन्। १ श्वेतागुरु-काष्ठ, सफेद अगरकी लकड़ी। (पु०) क्रथने दन्तकर-चरणच्छेदने प्रवृत्तः, क्रथन-कन्। २ उष्ट्र, ऊंट।

क्रन्द (सं० पु०) १ क्रेषारव, घोड़ेकी हिनहिनाहट। २ चीत्कार, चीख। (अथर्व ११।२।२)

क्रन्ददिष्टि (वै० त्रि०) गमनमें शब्दयुक्त, चलनेमें आवाज निकालनेवाला। (ऋक् १०।१००।२)

क्रन्दन (सं० क्ली०) क्रदि भावे ल्युट्। १ अश्रुविसर्जन, रुलाई। २ युद्धके समय वीरोंका आह्वान, ललकार। (पु०) ३ विड़ाल, बिल्ला।

क्रन्दनी (सं० स्त्री०) क्रन्दन जातित्वात् ङीष्। विड़ाली, बिल्ली।

क्रन्दनु (वै० पु०) पर्जन्य, मेघ। (ऋक् ७।४२।१)

क्रन्दस् (वै० क्ली०) शब्द करनेवाला, जिससे आवाज़ निकले। (ऋक् २।१२।८) २ द्यावा पृथिवी, भूलोक और अन्तरीक्ष लोक। (ऋक् १०।१२१।६)

क्रन्दित (सं० क्ली०) क्रदि भावे क्त। १ क्रन्दन, रुलाई। इसका संस्कृत पर्याय—रुदित, क्रुष्ट, रोदन और क्रन्दन है। २ आह्वान, पुकार। ३ युद्धके समय वीरोंका चात्काराध्वनि, लड़ाईमें बहादुरोंकी ललकार।

क्रन्द्य (सं० क्ली०) क्रन्द, क्रेषारव, हिनहिनाहट।

क्रम (सं० पु०) क्रम्यते प्राप्यते पाठभेदोऽनेन, क्रम घञ्। नोदात्तोपदेशस्य। पा ७।३।३४। १ वैदिक विधान, कल्पविधि, क्रम भावे घञ्। २ अनुक्रम, तरतीब। ३ शक्ति, ताकत। ४ चरण, कदम। ५ रुद्र। (भारत १३।१७।११९) ६ विष्णु। इन्होंने बलिराजको छलनेमें त्रिपादसे त्रिभुवन आक्रमण किया था। इसीसे विष्णुका नाम क्रम पड़ गया। ७ आक्रमण। ८ पदविक्षेप, पांव रखनेका काम। ९ पूर्वापर भावमें अवस्थान, आगे पीछे रहनेकी हालत।

एकाधिक कार्योंमें कौन पहले और कौन पीछे करने—जैसे पौर्वापर्य नियमको क्रम कहते हैं। वैदिक कार्यका पौर्वापर्य—श्रुति, अर्थ, पाठ, प्रवृत्ति, स्थान और मुख्यके अनुसार निर्णीत होता है। मीमांसादर्शन-के ५म अध्यायमें क्रमके नियमका उपाय इस प्रकार ठहरा है—

श्रुतिमें जो सकल विधान है, किसी स्थलमें श्रुतिके अनुसार ही उसका क्रम निश्चय करना चाहिये। मीमांसा ५।१।१। जैसे यज्ञमें दीक्षाक्रम श्रुतिके अनुसार ही कल्पित होता है। यथा—अध्वर्यु प्रथम गृहपतिको, उसके पीछे ब्रह्माको, फिर उद्गाताको और तत्पर होताको दीक्षित करता है। इत्यादि। (मीमांसा ५।१।११ शबरभाष्य) किसी स्थल पर अर्थके अनुसार अर्थात् कार्यका सामर्थ्य स्थिर करके श्रुतिका पाठक्रम लङ्घन करके भी अन्यरूप क्रम अवलम्बन करना पड़ता है। इसका नाम आर्थिक क्रम है। मीमांसा ५।१।२। भाष्य जिस प्रकार विधि है कि जन्मके पीछे वर देना, अञ्जलि करके उस-को लेना और अभिनन्दित करना चाहिये। ऐसे स्थल पर पाठक्रमको छोड़के प्रथम अभिनन्दन, उसके पीछे ग्रहण और फिर वरदान-जैसा क्रम पकड़ना पड़ता है। (मीमांसा ५।१।२। भाष्य) जैसे—प्रथम विधान अग्निहोत्र और पीछे चरुपाक करना चाहिये। किन्तु चरु न होने-से यज्ञ होना असम्भव है। इसलिये आर्थिक क्रम अवलम्बन करके प्रथम पाक, पीछे अग्निहोत्र करना पड़ता है। (मीमांसा ५।१।२ भाष्य)

किसी स्थल पर विधिवाक्यमें जैसा पौर्वापर्य रहता वैसा ही क्रम पकड़ना पड़ता है। इसको वाचनिक क्रम कहते हैं। जैसे दर्श पौर्णमास यज्ञमें समिध्यज्ञ, तनु-नपात यज्ञ, इड़यज्ञ, वर्हि यज्ञ और स्वाहाकार यज्ञका विधान हो। इस स्थल पर वाक्यानुसार ही प्रथम समिध् यज्ञ, तत्पर तनुनपात यज्ञ इत्यादि क्रमसे चलते हैं। (मीमांसा ५।१।४)

कहीं कहीं प्रथम प्रवृत्तिके अनुसार क्रम लगाना चाहिये। जैसे वाजपेययज्ञमें १७ पशु प्रजापति देव-ताके उद्देश बलि देने और प्रोक्षण प्रभृति करनेका विधान है। यहां प्रथम प्रवृत्तिके अनुसार ही क्रम रखना चाहिये। (मीमांसा ५।१।८)

किसी जगह स्थानानुसार क्रम बांधना पड़ता है। सन्तानकामनामें २१ अतिरात्र याग और बलकामनामें

२७ अतिरात्र याग करनेको कहा है। इस स्थल पर स्थानानुसार क्रमको अवलम्बन करना चाहिये। इसी प्रकार सोमयागविशेषमें तीन पशु बलि देनेका विधान है। किन्तु पहले अग्नीषोमीय पशु हिंसा करनेसे सवनीय स्थान नष्ट हो जाता है। इसीसे प्रथम वह न करके सवनीय को ही मारना पड़ता है।
(मीमांसा ५।१।१३)

किसी किसी स्थलमें गौणमुख्य विवेचना करके मुख्य कार्यको प्रथम कर्तव्यता ठहराना पड़ती है। इसका नाम मुख्यानुक्रम है। यथा—सरस्वती और सरस्वान् देवताओंके उद्देश्य दो सारस्वत याग करनेका विधान है। यहां स्त्री देवताके उद्देश किये जानेवाले यज्ञका प्राधान्य है। इसी लिये प्रथम सरस्वती देवताके लिये सारस्वत-याग, उसके पीछे सरस्वान्के उद्देश्य सारस्वत याग करना चाहिये। (मीमांसा भाष्य ५।१।१५)

१० विन्यास, बनाव। ११ वत्सप्रीके पुत्र। (मार्कण्डेय पुराण ११८।१) १२ परिपाटी, चाल।

क्रमक (सं॰ त्रि॰) क्रमं वेदपाठं अधीते वेत्ति वा, क्रम-वुन्। क्रमादिभ्यो वुन्। पा ४।२।६१। १ क्रम अध्ययन करनेवाला। २ क्रमज्ञ।

क्रमज (सं॰ त्रि॰) क्रमके नियमसे उत्पन्न।
(अथर्व प्रातिशाख्य १ ५८)

क्रमजटा (सं॰ स्त्री॰) वेदपाठका एक प्रकार। ऋग्वेद देखो।

क्रमजित् (सं॰ पु॰) एक नरपति। (भारत सभा १२३ अ॰)

क्रमज्या (सं॰ स्त्री॰) क्रान्तिज्या। (Sine of a planet, declination.)

क्रमण (सं॰ पु॰) क्राम्यत्यनेन, क्रम करणे ल्युट्। १ चरण, पांव। २ यदुवंशीय कोई राजा। (हरिवंश) (क्ली॰) ३ पादविक्षेप, पांव रखनेकी क्रिया।

क्रमणीय (सं॰ त्रि॰) क्रम-अनीयर्। आक्रमणयोग्य, जिस पर हमला होनेवाला हो।

क्रमत्रैराशिक (सं॰ पु॰) त्रैराशिकभेद। त्रैराशिक देखो।

क्रमदण्डक (सं॰ पु॰) वेदपाठका एक प्रकार। ऋग्वेद देखो।

क्रमदीपिका—एक तन्त्र। गणेशभट्ट, गोविन्दभट्ट विद्याविनोद और भैरव त्रिपाठीकृत इस तन्त्रकी टीका मिलती है। इस नामके बहुतसे संस्कृत ग्रन्थ भी हैं। केशवाचार्य प्रभृति शब्द देखो।

क्रमदीश्वर (सं॰ पु॰) संक्षिप्तसार व्याकरणप्रणेता। यह मुग्धबोध टीकाकार दुर्गादास और भरतमल्लिकके बहुत पूर्ववर्ती थे।

क्रमनिम्न (सं॰ त्रि॰) ढालू, ढलवां, ऊंचेसे नीचा होनेवाला।

क्रमपद (सं॰ पु॰) वेदपाठका एक प्रकार।

क्रमपाठ (सं॰ पु॰) प्रक्रम, वेदका क्रमानुसार अध्ययन। (महाभाष्ये कैयट ८।४।२८)

क्रमपार (सं॰ पु॰) वेदपाठका एक प्रकार।

क्रमपूरक (सं॰ पु॰) क्रमेण पूरयति वाजम्, क्रम-पूर, णिच्-ण्वुल्। १ वकवृक्ष, अगस्त्यका पेड़। २ वृन्त, बोंड़ी।

क्रमप्राप्त (सं॰ त्रि॰) क्रमेण प्राप्तः, ३-तत्। क्रमागत, सिलसिलेसे मिला हुवा।

क्रमभङ्ग (सं॰ पु॰) क्रमस्य भङ्गः, ६-तत्। नियम भङ्ग, कायदेका टूटना।

क्रममान (सं॰ त्रि॰) क्रम-शानच्। इतस्ततः भ्रमणशील, इधर उधर घूमनेवाला।

क्रमयोग (सं॰ पु॰) क्रमस्य योगः, ६-तत्। क्रमसम्बन्ध, सिलसिलेका जोड़।

क्रमराज्य (सं॰ क्ली॰) काश्मीर-राज्यका एक विभाग। राजतरङ्गिणीके नाना स्थानोंमें इसका उल्लेख है। आजकल इसे कमराज कहते हैं। इसमें पांच परगने हैं। वर्तमान समय यह विभाग बल्लूर ह्रद और झेलम नदीके उत्तर कूलसे बरामूल पर्यन्त विस्तृत है।

क्रमशः (सं॰ अव्य॰) क्रम वीप्सायां शस्। क्रमक्रम, धीरे धीरे। (मनु ३।१२)

क्रमशास्त्र (सं॰ क्ली॰) क्रमानुसार वेदपाठ करनेका एक शास्त्र। (ऋक् प्रातिशाख्य ११।३१)

क्रमागत (सं॰ त्रि॰) क्रमेण आगतम्, ३-तत्। १ क्रमसे आया हुवा, जो सिलसिलेसे मिला हो। २ पितृपितामहादि क्रमसे आगत, वंशपरम्परा क्रमसे प्राप्त।
(मनु २। १८)

क्रमादि (सं॰ पु॰) पाणिनिमतसिद्ध एक गण। इसके उत्तर समझने या पढ़नेके अर्थमें वुन् प्रत्यय होता है।

क्रमादित्य (सं॰ पु॰) गुप्तराज स्कन्दगुप्तका नामान्तर। स्कन्दगुप्त देखो।

क्रमाध्ययन (सं० क्लो०) क्रमेण अध्ययनम्, ३-तत्। १ क्रमानुसार अध्ययन, सिलसिलेवार पढ़ाई। क्रमस्य वेदपाठविशेषस्य अध्ययनम्, ६ तत्। २ क्रम नामक वेदपाठविशेषका अध्ययन।

क्रमानुभावकला (सं० स्त्री०) पर्यायज्ञानकी शक्ति।

क्रमानुयायी (सं० त्रि०) क्रमानुसारी, मुरत्तिब, सिलसिलेसे चलनेवाला।

क्रमानुसार (सं० पु०) क्रमस्य अनुसारः, ६-तत्। क्रमका अनुसरण, सिलसिलेकी चाल। हिन्दीमें यह शब्द क्रियाविशेषण-जैसा भी व्यवहृत होता है। ऐसे स्थल पर इसका अर्थ क्रमानुकूल या सिलसिलेवार है।

क्रमान्वय (सं० पु०) क्रमस्य अन्वयोऽनुसरणम्, ६-तत्। क्रमका अनुसरण, सिलसिलेकी चाल। (अव्य०) २ यथाक्रम, सिलसिलेवार, तरतीबसे।

क्रमि (सं० पु०) कृमि, कीड़ा। २ चुन्ना, पेटका छोटा सफेद कीड़ा। कृमि देखो।

क्रमिक (सं० त्रि०) क्रमादागतः, क्रम-ठन्। १ कुल-क्रमागत, खानदानी सिलसिलेसे मिला हुआ। भारत २१५ क्रमो विद्यतेऽस्य। २ क्रमवर्ती, मुरत्तिब।

क्रमिकण्टक (सं० क्लो०) क्रमौ कण्टकमिव तन्नाशक-त्वात्, ७-तत्। १ विड़ङ्ग, कटैया। २ उदुम्बर, गूलर। चित्राङ्ग, चीता।

क्रमिघ्न (सं० क्लो०) क्रमिं हन्ति, क्रमि-हन्-ट। १ विड़ङ्ग। (त्रि०) २ क्रमिनाशक, कीड़े मारनेवाला।

क्रमिज (सं० क्लो०) क्रमिभ्यो जायते, क्रमि-जन्-ड। अगुरुकाष्ठ, अगरकी लकड़ी।

क्रमिजा (सं० स्त्री०) क्रमिज-टाप्। लाचा, लाह।

क्रमिता (सं० पु०) क्रम-तृच्। पादविक्षेपकारी, सिल-सिला तोड़नेवाला।

क्रमिरिपु, क्रमिशत्रु देखो।

क्रमिशत्रु (सं० पु०) क्रमीणां शत्रुः, ६-तत्। विड़ङ्ग।

क्रमीलक (सं० पु०) वनमुद्ग, जङ्गली मोठ।

क्रमु (सं० पु०) क्रम बाहुलकात् उण्। १ गुवाकवृक्ष, सुपारीका पेड़। २ कोई प्राचीन जनपद, एक पुराना देश। क्रुरम देखो।

क्रमुक (सं० पु०-क्लो०) क्रम-उण् संज्ञायां कन्। १ पूगफल, सुपारी। २ गुवाकवृक्ष, सुपारीका पेड़। भद्रमुस्तक, नागरमोथा। ३ कार्पासी फल, कपासका बिनौला। सुश्रुतने सालसारादिगणके अन्तर्गत क्रमुक-को गिना है। यह कुष्ठ, मेह तथा पाण्डुरोगनाशक और कफ एवं मेदका शुष्ककारक है। (सुश्रुत) ४ पट्टिकालोध्र, पठानी लोध। ५ देवदारु। ६ रक्तलोध्र। ७ पारिशाश्वत्थ। ८ तूतफल, शहतूत। ९ तूतवृक्ष, शहतूतका पेड़। १० कोई प्राचीन जनपद, एक पुराना मुल्क। (राजतरङ्गिणी ४।१५९) सह्याद्रिखण्डके मतमें क्रमुकके ब्राह्मण भ्रष्ट होते हैं। क्रमु देखो।

क्रमुकप्रसून (सं० पु०) धूलीकदम्ब।

क्रमुकफल (सं० क्लो०) क्रमुक एव फलं यद्वा क्रमुकस्य गुवाकवृक्षस्य फलम्। गुवाक, सुपारी। सन्धि-बन्ध-विश्लेषकरलसे यह विकाशित होता है। (शार्ङ्गधर)

क्रमुकी (सं० स्त्री०) क्रमुक गौरादित्वात् ङीष्। गुवाक, सुपारी।

क्रमेतर (सं० त्रि०) क्रमात् वेदपाठप्रकारात् इतरः, ५-तत्। वेदपाठके क्रमसे भिन्न। यह शब्द उक्थादि गणके अन्तर्गत है। इसके उत्तर समझने या पढ़नेके अर्थमें ठक् प्रत्यय लगता है।

क्रमेल (सं० पु०) क्रममालम्ब्य एलति गच्छति, क्रम-एल-अच्। उष्ट्र, ऊंट। इसीसे अंगरेजी कैमेल (Camel) शब्द बना है।

क्रमेलक (सं० पु०) क्रममालम्ब्य एलति गच्छति, क्रम-एल-ण्वुल्, यद्वा क्रमेल स्वार्थे कन्। उष्ट्र, शुतुर।

क्रमोद्वेग (सं० पु०) क्रमेण उद्गतः उत्कृष्टो वा वेगो यस्य, बहुव्री०। वृष, बैल।

क्रय (सं० पु०) क्री भावे अच्। मूल्यसे वस्तु ग्रहण, खरीद।

क्रयके नक्षत्रमें विक्रय और विक्रयके नक्षत्रमें क्रय करना उचित नहीं। रेवती, शतभिषा, अश्विनी, स्वाती, श्रवणा और चित्रा नक्षत्र क्रयमें विहित हैं। (मुहूर्तचिन्ता-मणि) इस स्थल पर शङ्का उठ सकती है कि क्रय और विक्रय एक ही समयकी होता है। यदि क्रय-विहित नक्षत्रोंमें विक्रय और विक्रय-विहित नक्षत्रोंमें क्रय निषिद्ध ठहरता, तो क्रय विक्रय कैसे हो सकता है।

शास्त्रकारोंने इसकी निम्नलिखित मीमांसा की है—

'विक्रेताको विक्रयविहित शुभक्षणमें क्रेताकी अनुमतिसे विक्रेयवस्तु पृथक् करके रख देना चाहिये। इसीका नाम विक्रय है। फिर क्रय विहित शुभक्षण उपस्थित होने पर क्रेता मूल्य देकर उसे ले लेता है। इसीको क्रय कहा जाता है। ऐसी मीमांसा करनेसे फिर कोई झगड़ा नहीं लगता।' (मुहूर्त्तचिन्तामणि)

क्रयकर्ता (सं० पु०) क्रेता, खरीददार, मोल लेनेवाला।

क्रयण (सं० क्ली०) क्रय, खरीद। (कात्यायनश्रौतसूत्र १०।८।३०)

क्रयणीय (सं० त्रि०) क्रय किया जानेवाला, जिसे खरीदें।

क्रयनियम (सं० पु०) क्रये नियमः, ७-तत्। क्रेता और विक्रेताका नियमविशेष, खरीदका तरीका। ऋगवेद और उसके भाष्यमें यह नियम इस प्रकार लिखा है—

'यदि विक्रेता कोई महार्घ वस्तु अल्प मूल्यमें बेंच पुनर्वार क्रेताके निकट उपस्थित हो अपना क्षतिपूरण करना चाहे, तो खरीदारको उसे और दाम बढ़ाकर देना न चाहिये। कारण इसी अल्प मूल्यमें क्रय सिद्ध हो गया है। परन्तु विक्रयके समय उसकी पक्की बातचीत न होनेसे खरीद फरोख्त कच्ची रहती है। यदि कोई चीज मोल लेते समय कहा जाये कि अभी दामके तौर पर इतना ले लीजिये, पीछे जांच करके हिसाब कर लिया जावेगा, तो फिर कीमत बढ़ा देना पड़ती है। नहीं तो, खरीद कच्ची रहती है।'

(ऋक् ४।२४।९)

महानिर्वाणतन्त्रमें भी कहा है—

वस्तु और उसका मूल्य निरूपण करके उभयकी सम्मतिके मतसे परस्परकी अनुमति होनेपर क्रयसिद्धि होती है। परन्तु खराब चीज अच्छी बता कर बेचने पर पीछे यदि खरीददारको मालूम हो कि विक्रयके समय जैसी तारीफ की गयी थी, वह देख नहीं पड़ती तो बिक्री बिगड़ जाती है और बेचनेवालेको कीमत वापस देना पड़ती है।

क्रयलेख्य (सं० क्ली०) क्रयस्य क्रयमधिकृत्य वा लेख्यम्। भूमि प्रभृति क्रयकी लिखापढ़ी, कवाला।

"गृहक्षेत्रादिकं क्रीत्वा तुल्यमूल्याक्षरान्वितम्।
पत्रं कारयते यत्तु क्रयलेख्यं तदुच्यते॥" (बृहस्पति)

क्रयविक्रय (सं० पु०) क्रयश्च विक्रयश्च, द्वन्द्व। १ क्रय और विक्रय, खरीद फरोख्त। मनु कहते हैं—पण्यद्रव्यकी आमदनी रफ्तनी और व्यय वृद्धि भली भांति पर्यालोचना करके क्रयविक्रय आरम्भ करना पड़ता है। जिस पण्यका मूल्यादि अल्प दिनके मध्य ही बढ़ने या घटनेकी सम्भावना रहती, पांच दिन पीछे उसकी पर्यालोचना लगती है। अपरापर पण्यकी पर्यालोचना १५ दिन पीछे करनेसे भी काम चल सकता है।

(मनु ८।४०)

"क्रयेण सहितो विक्रयः" अर्थात् खरीदके साथ फरोख्त-जैसे मध्यपदलोपी समासमें सिद्ध क्रयविक्रय शब्द एकवचनान्त है। भारत, वन १४९

२ वाणिज्य, कारबार। गुरुके साथ शिष्यका एकत्र वाणिज्य करना तन्त्रके मतमें निषिद्ध है।

"ऋणदानं तथा दानं वस्तूनां क्रयविक्रयं।
न कुर्य्यात् गुरुणा सार्धं शिष्यो भूत्वा कथञ्चन॥" (तन्त्रसार)

क्रयविक्रयानुशय (सं० पु०) क्रये विक्रये च अनुशयः, ७-तत्। मनुके मतसिद्ध अष्टादश विवादोंमें एक विवाद, लेन देनका झगड़ा।

कोई वस्तु क्रय वा विक्रय करके जिस व्यक्तिको अनुताप पहुंचता, वह दश दिनके मध्य उक्त वस्तुको वापस दे या ले सकता है। अनुशय और क्रीतानुशय देखो।

क्रयविक्रयिक (सं० पु०) क्रयविक्रयाभ्यां जीवति, क्रयविक्रय-ठन्। वस्नक्रयविक्रयात् ठन्। पा ४।४।१३। "क्रयविक्रयग्रहणं संघातविगृहीतार्थं क्रयविक्रयिकः।" (सिद्धान्तकौमुदी,) १ वणिक्, सौदागर। (त्रि०) २ क्रयविक्रयसे जीविका निर्वाह करनेवाला, जो खरीद फरोख्तसे अपना काम चलाता हो।

क्रयविक्रयी (सं० पु०) क्रयो विक्रयश्च अस्य अस्ति, क्रयविक्रय इनि। क्रेता और विक्रेता, खरीदने और बेचनेवाला। मनुने इसे घातक लिखा है। (मनु ५।५१) गोविन्दराजके मतमें क्रय करके विक्रय करनेवालेका नाम क्रयविक्रयी है।

क्रयशीर्ष (सं० क्ली०) कपिशीर्ष पृषोदरादिवत् साधुः। कपिशीर्ष, शिंगरफ।

क्रयसद (सं० पु०) छाग, बकरा ।

क्रयाक्रयिका (सं० स्त्री०) क्रय सहितः अक्रयः शाक-पार्थिव० ततः स्वार्थे कन् अत इत्वम् । क्रय और अक्रय ।

क्रयारोह (सं० पु०) क्रयार्थं आरोहः समारोहः अत्र, बहुव्री० । हट्ट, बाजार, मण्डी, खरीद फरोख्तके लिये लोगोंका जमाव होनेकी जगह ।

क्रयिक (सं० पु०) क्रयः प्रयोजनमस्य, बहुव्री० । १ क्रयी, खरीददार । २ क्रयजीवी, खरीदसे अपना काम चलानेवाला । (माघ)

क्रयी (सं० त्रि०) क्रयोऽस्त्यस्य, क्रय-इनि । क्रेता, खरीदनेवाला ।

क्रय्य (सं० त्रि०) क्रयाय क्रेतारः क्रीणीयुरिति बुद्ध्या प्रसारितम्, क्री-यत् निपातने साधुः । क्रय्यस्तदर्थे । पा ६।१।८२। क्रेताओंके क्रयको हट्ट प्रभृति स्थानोंमें प्रसारित (पण्य-द्रव्य) बेचनेके लिये रखा हुआ, बिकनेवाला ।

(शतपथब्राह्मण ३।३।३।१)

क्रवण (वै० त्रि०) क्रुङ्-ल्यु । १ स्तुतिकारक, तारीफ करनेवाला । (ऋक् ५।५५।९)

क्रविष्णु (वै० त्रि०) क्रु बाहुलकात् इष्णुच् । क्रव्याद, मांस भक्षण करनेवाला । (ऋक् १।८७।४)

क्रविस् (वै० क्ली०) क्रव-इसुन् लस्य रः । मांस ।

(ऋक् । १।१६२।१०)

क्रव्य (सं० क्ली०) क्लव यत् रस्य लः । मांस गोश्त ।

(भागवत ४।१८।२४)

क्रव्यघातन (सं० पु०) क्रव्यस्य क्रव्यार्थं वा घात्यतेऽसौ, हन् स्वार्थ णिच् कर्मणि ल्युट् चतुर्थी अर्थे, ६-तत् । १ मांसके लिये मारा जानेवाला मृग । क्रव्यार्थं मांस-निमित्तं घातयन्ति, कर्तरि ल्युट् । २ रुरुमृग ।

(भागवत ५।२६।१५)

क्रव्यभुज (सं० पु०) क्रव्यं भुङ्क्ते, क्रव्य-भुज्-क्विन् । १ राक्षस, कच्चा गोश्त खानेवाला । २ रुरुमृग । (सुश्रुत) ३ मांसभोजी, गोश्तखोर ।

क्रव्यात् (सं० त्रि०) क्रव्यं मांसं अत्ति, क्रव्य-अद्-विट् । क्रव्ये च विट् । पा ३।२।६९ । मांसभोजी, गोश्तखोर । (पु०) २ रक्षः, शतान । ३ मांसाशी पशु । ४ शवदाहक अग्नि ।

(शतपथब्राह्मण १।२।१।४)

क्रव्याद (सं० पु०) क्रव्यं मांसं अत्ति, क्रव्य-अद्-अण । उपपदस० । १ राक्षस । २ सिंह, शेर । ३ श्येनपक्षी, बाज, शिकरा । ४ शवभक्षक अग्नि । अग्निके शवभक्षण विषय पर एक उपाख्यान है—किसी दिन एक असभ्य राक्षस भृगु मुनिकी स्त्री पुलोमाके प्रेममें आसक्त हो उन्हें ढूंढने लगा । राक्षस पुलोमाको पहचानता न था इसीसे उसको कृतकार्य होनेमें कठिनता पड़ी । अग्निको इसका कुछ भी हाल मालूम न था । हठात् राक्षस जा कर उनसे पुलोमाको पूछ बैठा । उन्होंने पुलोमाको दिखला दिया था । दुष्ट राक्षस पुलोमाको लेकर स्वस्थान चला गया । बहुत दिनों पीछे जब पुलोमाको पुनर्वार मिले, अपने मनका दुःख निवारण करनेको उनसे सब बातें पूछने लगे । पुलोमाने भी एक एक करके सब बातें बतायीं । उनमें यह बात भी आ गयी कि अग्निने उन्हें राक्षसको दिखा दिया था । भृगु उसे सुनते ही जल उठे और उन्होंने शाप दिया कि अग्नि सर्वभक्षक होंगे । अग्नि शापका वृत्तान्त मिलने पर लुक्कायित हुए । जगत् संसार अग्निशून्य हो गया । यज्ञ प्रभृति सकल क्रियायें रुकी थीं । ब्राह्मण और ऋषि देवताओंके साथ पितामहके पास पहुंचे । पितामहने अग्निको बुला कर समझाया कि भृगुका शाप मिथ्या होनेवाला न था, फिर भी यह उपाय रहा कि उनका सकल अंश सर्वभक्षक न बनते भी कोई अंश सर्वभक्षक होनेसे भृगुका शाप सत्य निकल सकता था । पितामहके नियमसे उनका एक अंश सर्वभक्षक हुआ । उसीको क्रव्याद कहते हैं । (भारत, आदि ६-७ अ०) ऋग्वेदके भी एक मन्त्रमें क्रव्याद अग्निकी कथा आयी है ।

(ऋक् १०।१६।९)

उक्त मन्त्रको पढ़कर सभी मङ्गलकार्योंमें अग्निका क्रव्याद अंश छोड़ना पड़ता है ।

क्रव्यं मांसं अत्ति, क्रव्य अद्-अण् । ५ रुरुमृग ।

क्रव्यादरस (सं० पु०) वैद्यकोक्त औषध विशेष, बद-हजमीकी एक दवा । १ पल पारा, २ पल गन्धक, ४ तोला ताम्र और ४ तोला लोहा चूर्ण करके सबको लौहपात्रमें मृदु अग्निसे गला जल्द एरण्डपत्र पर ढाल पर्पटीवत् बना लेना चाहिये । फिर इसे १०० पल जम्बीर

रससे धीरे धीरे लौहपात्रमें पकाते हैं। शुक्त रसमें पञ्चकोल क्वाथसे पचास और अम्लवेतससे भी पचास भावनायें दी जाती हैं। फिर सर्वचूर्ण सम अष्टटङ्कणचूर्ण (४ पल), इसके आधा विड़चूर्ण (२ पल) और सर्व द्रव्य सम मरिच चूर्ण (१० पल) पड़ता है। इसके पीछे चणक क्षार जलसे ७ भावनायें देनेसे यह रस तैयार होता है। भोजनान्तको २ माषा क्रव्यादरस सैन्धवतक्रके साथ सेवन किया जाता है। पञ्चकोलक्वाथ इस प्रकार बनता है—पिप्पलीमूल, चव्य, चित्रक और शुण्ठी बराबर अष्टगुण जलमें पाक करके चतुर्थांश अवशेष रखते हैं। (सारकौमुदी) यह रस अजीर्ण को मिटाता और बल बढ़ाता है।

क्रव्यादा (सं० स्त्री०) जटामांसी।

क्रव्यादी, क्रव्यादा देखो।

क्रशिमा (सं० पु०) कृश भावे इमनिच्। कृशता, कमजोरी।

क्रशिष्ठ (सं० त्रि०) अतिशयेन कृशः, कृश-इष्ठन्। अतिशय कृश, बहुत दुबला पतला।

क्रशीया (सं० त्रि०) कृश-ईयसुन्। क्रशिष्ठ देखो।

क्रष्टव्य (सं० त्रि०) कर्ष वा आक्रमणके योग्य, कर्षण किया जानेवाला। (कथासरित्सागर)

क्रा (सं० त्रि०) क्रम्-विट् मस्य आकारः। जन-सन-खन-क्रमगमो विट्। प ३।२।६७ अतिक्रमकारी, लांघ जानेवाला।

क्राकचिक (सं० त्रि०) क्रकचः करपत्रं तत् क्रियया जीवति, क्रकच-ठक्। करपत्रोपजीवी, आराकश, बढ़ई। (रामायण २।८३।१४)

क्राथ (सं० पु०) क्राथदेशानां राजा, क्राथ-अण्। १ दक्षिणापथके राजा, राहुग्रहका अवतार।

"ग्रहन्तु सुषुवे यन्तु सिंहिकार्केन्दुमर्दनम्।
स क्राथ इति विख्याती बभूव मनुजाधिपः॥"
(भारत १।६७ अ०)

२ कोई वानर। यह वानर राम-रावण युद्धमें रामके सेनापति पद पर नियुक्त थे। (भारत, ३।२८३ अ०) ३ नागविशेष। (भारत, मौ० ४ अ०) क्रथ हिंसायां भावे घञ्। ४ मारण, हिंसा, कत्ल।

क्रान्त (सं० पु०) क्रम्यते आक्रम्यते, क्रम-क्त। १ घोटक, घोड़ा। २ पादेन्द्रिय, पैर। (मनु १२।१२१) ३ वैक्रान्त मणि, चुन्नी। (क्ली०) भावे क्त। ४ आरोहण, आक्रमण, चढ़ाई। (शतपथब्राह्मण ५।५।२।६) (त्रि०) कर्मणि क्त। ५ आक्रान्त, दबा हुवा। ६ अतीत, गया बीता।

क्रान्तदर्शी (सं० त्रि०) क्रान्तं अस्माकं वाह्येन्द्रियविषयतामतिक्रान्तं वस्तु द्रष्टुं शीलमस्य, क्रान्त-दृश-णिनि। १ अतीत, अनागत और सूक्ष्म पदार्थ देख सकनेवाला, जो गयी बातें देख सकता हो। (क्ली०) २ सर्वज्ञ, परब्रह्म, ईश्वर।

क्रान्ता (सं० स्त्री०) क्रम कर्तरि क्त स्त्रियां जातित्वेऽपि संयोगोपोधत्वात् टाप्। १ वृहती, कटैया। २ स्थूलैला, बड़ी इलायची।

क्रान्ति (सं० स्त्री०) क्रम भावे क्तिन्। १ पादविक्षेप, पांव रखनेकी बात। २ नक्षत्रकी गति। ३ राशिचक्रकी मध्यरेखा। विषुवरेखासे उत्तर कर्कटक्रान्ति पर्यन्त अथवा दक्षिणको मकरक्रान्ति तक सूर्यके दूरत्वका नाम क्रान्ति है। यह खगोलके मध्यकी ईषद् वक्र गोल रेखा है, जहांसे सूर्य गमन करते हैं।

"अयनादयनं यावत् कक्षा तिर्यक् तथापरा।
क्रान्तिसंज्ञा तया सूर्यः सदापर्येति भासयन्॥" (सूर्यसिद्धान्त)
'नाड़ीमण्डलात् दक्षिणोत्तरं क्रान्तिमण्डलावधि यदन्तरं तत्।'
(नृसिंहविदाम्बर)

इसका नामान्तर—अपमण्डल, अपवृत्त, अपक्रम, अक्रान्त और अपम है।

४ परिवर्तन, हेरफेर।

क्रान्तिक्षेत्र (सं० क्ली०) क्रान्ति ज्ञानार्थं अङ्कित क्षेत्र, नक्षत्रकी गति निकालनेको खींचा हुआ क्षेत्र।

क्रान्तिज्या (सं० स्त्री०) क्रान्तिवृत्त क्षेत्रस्थित अक्षक्षेत्रका एक अवयव। (Sine of the declination or of the ecliptic.) अक्षक्षेत्र देखो।

क्रान्तिपात (सं० पु०) क्रान्तेः क्रान्त्यर्थं पातः, अश्वघासादिवत् तदर्थे ६-तत्। विषुवरेखा और अयनमण्डलका संयोगस्थल। इस स्थल पर पृथिवी आनेसे दिवारात्रि समान होते हैं।

क्रान्तिपातगति (सं० स्त्री०) क्रान्तिपातकी चलाचली या एकस्थानसे अन्यस्थानको सरकाव। (Precession of the equinox.)

क्रान्तिभाग (सं० पु०) क्रान्तिज्याका चिह्न।

क्रान्तिमण्डल, क्रान्तिवलय देखो।

क्रान्तिवलय (सं० पु०) क्रान्तिमण्डल, विषुवरेखा-जैसा अयनमण्डलके चतुर्विंशति भाग दक्षिण तथा उत्तरको विद्यमान वलयाकृति परिधि।

क्रान्तिवृत्त (सं० क्लो०) क्रान्तिवलय-जैसा गोलाकार क्षेत्र।

क्रान्तिसाम्य (सं० क्लो०) क्रान्तेः साम्यम्, ६-तत्। ग्रहोंकी तुल्य क्रान्ति। सभी ग्रहोंका क्रान्तिसाम्य होता है। चन्द्र और सूर्यकी तुल्यक्रान्ति आनेसे किसी मङ्गल-कार्यका अनुष्ठान करना न चाहिये। क्रान्ति साम्यमें ग्रहोंकी अवनतिका अभाव होता है।

क्रान्तिसूत्र (सं० क्लो०) सूत्रकी भांति क्रान्तिसमूहका एक योग। यह ध्रुवनक्षत्र पर्यन्त स्पर्श करता है।

क्रान्तु (सं० पु०-स्त्री०) क्रम तुन् वृद्धिश्च। पक्षी, चिड़िया।

क्रामक (सं० पु०) क्रमुकमूल, सुपारीकी जड़।

क्रामण (सं० पु०) टङ्कणक्षार, सोहागा।

क्रामेतरक (सं० पु०) क्रमेतरमधीते वेत्ति वा, क्रमेतर ढक्। क्रतूक्थादिसूत्रान्ताट्ठक्। पा ४।२।६०। क्रमेतर पढ़ने या समझनेवाला।

क्रायक (सं० पु०) क्रीणाति, क्री कर्तरि ण्वुल्। १ क्रेता, खरीददार। २ अमरकोष-टीकाकार भरतके मतमें—क्रयोपजीवी, खरीदसे अपना काम चलानेवाला। किन्तु व्याकरणके अनुसार इस अर्थमें क्रायक नहीं—क्रयिक होता है।

क्रायिष्ट (अं० पु०—Christ.) ईसा, मसीह, मसीहा

क्रावरी (सं० स्त्री०) क्रावन्-ङीप् रश्चान्तादेशः। अति-क्रमकारिणी स्त्री।

क्रावा (वै० पु०) क्रम-वनिप् मकारस्य अकारः। विड्वनो-रनुनासिकस्यात्। पा ६।४।४१। क्रान्ता, लांघ जानेवाला।

(वाजसनेयसंहिता २३।३२)

क्राउन (अं० पु०—Crown) १ मुकुट, ताज। २ राज्य, सलतनत। ३ राजा, बादशाह। ४ मौलि, चांद। ५ अग्र, सिरा। ६ माला, सेहरा। ७ रूप्यमुद्रा, अंगरेजी अशरफी। ८ कागजका १५ इञ्च विस्तृत और २० इञ्च दीर्घ परिमाण। छापेका ३० इञ्च चौड़ा और ४० इञ्च लम्बा कागज डबल क्राउन कहलाता है।

क्रिकेट (अं० पु०—Cricket) कन्दुकक्रीडाविशेष, गेंद बल्लेका खेल। यह एक अंगरेजी खेल है। इसको ग्यारह ग्यारह खिलाड़ियोंके दो दल परस्पर खेला करते हैं। एक ओर तीन लकड़ियां गाड़ी जाती हैं और दूसरी ओर टप्पेकी सीमा रहती है। एक दलका एक खिलाड़ी बल्ला लेकर उक्त तीनों गड़ी लकड़ियोंके पास गेंद मारनेको खड़ा होता है और दूसरे दलका एक खिलाड़ी टप्पेकी हदसे गेंद लकड़ियां गिरानेको फेंकता है। बाकी खिलाड़ी अपने अपने दलके सहायक रहते हैं। यदि गेंद उक्त तीनों गड़ी लकड़ियोंमें छू जाता या बल्लेसे मारा जाने पर विपक्ष दलके खिलाड़ी उसे जमीन पर गिरनेसे पहले ही हाथमें थाम लेते तो गेंद मारनेवाला खिलाड़ी 'आउट' हो यानी हार जाता है और उसका दूसरा साथी उसके स्थान पर आता है। इसी प्रकार ग्यारहो खिलाड़ी आउट हो जानेसे विपक्ष दल बल्ला लेता और हारा हुआ दल गेंद देता है। बल्लेसे गेंद मारने पर जब तक गेंद देनेवाला गेंद फेंके तब तक गेंद मारनेवाला गड़ी लकड़ियोंसे टप्पेकी हद तक जितने बार दौड़ कर आता जाता, उसका नाम 'रन' है। यह रन हार जीतमें गिने जाते हैं। इस खेलमें विपक्षियोंका झगड़ा मिटानेको सरपञ्च (अम्पायर) भी रहते हैं।

क्रिमि (सं० पु०) क्रम-इन्-कित् अत इच्च। क्रमितमिग्रति-तमिभ्यः इत। उण् ४।१२२। १ घुण, घुन। २ लाक्षा, लाख। ३ रोगविशेष, पुच्छेको बीमारी क्रमि देखो। क्रिमि दो प्रकारके होते हैं—बाह्य और अभ्यन्तर। बहिः, मल, कफ, असृग् और मलके जन्म भेदसे फिर वह चतुर्विध समझे जाते हैं। (वैद्यक)

क्रिमिकण्टक, क्रमिकण्टक देखो।

क्रिमिकर्णक (सं० पु०) कर्णस्रोतोगत रोगविशेष, कानकी एक बीमारी। कानके भीतर मांसशोणित सड़ जाने या मक्खियोंके अण्डा देनेसे क्रिमि उत्पन्न होते हैं। इसीका नाम क्रिमिकर्णक है। (माधवनिदान)

क्रिमिकर (सं० पु०) प्राणहर कीटभेद, जान ले डालनेवाला एक कीड़ा।

क्रिमिकालानलरस—वैद्यकोक्त औषधविशेष, एक दवा। १६ तोला विड़ङ्ग, ८ तोला विष और चार चार तोला पारा, लोहा तथा गन्धक छाग दुग्धमें पीसकर १६ रत्ती परिमाणकी गोलियां बना छायामें सुखा लेना चाहिये। अनुपान धनिया और जीरा है। इसको सेवन करनेसे सकल प्रकार उदरस्थ क्रिमि, शोथ, गुल्म, प्लीहा और उदरीरोग मिट जाता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

क्रिमिकाष्ठानल—वैद्यकोक्त एक औषध, कोई दवा। पारा गन्धक, वङ्ग, हरिताल, कौड़ी, मनःशिला, कृष्णकाच, सोमराजी, विड़ङ्ग, दन्तीवीज, जयपाल, सोहागा, चीत और शिलाजतु प्रत्येक दो२ तोले मनसाके गोंदमें सान मटर—जैसी गोली बना लेना चाहिये। यह औषध क्रिमि, कफ, कफपित्त और कफवातमें उपकारी है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

क्रिमिकोण्ड—चोलराजविशेष, चोल देशके एक राजा। यह अनन्य शिव भक्त थे। इन्होंने अपने देशके समस्त विद्वानोंसे लिखा लिया था—शिव सर्वोपरि देवता हैं। क्रिमिकोण्डका विचार था कि रामानुजस्वामीको बन्दी बनाते, परन्तु इसमें वह कृतकार्य न हुए।

क्रिमिग्रन्थि (सं० पु०) सन्धिज नेत्ररोग। क्रिमिग्रन्थि देखो।

क्रिमिघ्न (सं० पु०) क्रिमिं हन्ति नाशयति, क्रिमि-हन् टक्। अमनुष्यकर्तृकेऽपि च। पा ३।२।५३। १ कोलकन्द नाम महाकन्द शाक। क्रिमिघ्न देखो। (क्ली०) २ विड़ङ्ग। (त्रि०) क्रिमिनाशक।

क्रिमिघ्नरस—वैद्यकोक्त औषधविशेष, एक दवा। विड़ङ्ग पलाशवीज और तुलसीपत्रका भस्म समभाग इन्दुर कर्णीके रसमें सान तीन तीन रत्तीकी गोलियां बनाना चाहिये। इसके सेवनसे सभी प्रकारका क्रिमिरोग अच्छा हो जाता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

क्रिमिघ्ना, क्रिमिघ्नी देखो।

क्रिमिघ्नी (सं० स्त्री०) क्रिमिघ्न-ङीप्। १ विड़ङ्ग। २ हरिद्रा। ३ लाक्षा। ४ धूम्रपत्रा, तम्बाकू। ५ सोमराजी।

क्रिमिज (सं० क्ली०) क्रिमिभ्यो जायते, क्रिमि-जन-ड। अगुरुचन्दन।

क्रिमिजा (सं० स्त्री०) क्रिमिज स्त्रियां टाप्। लाचा, लाख।

क्रिमिदन्तक (सं० पु०) क्रिमिज दन्तरोगविशेष, दांतमें कीड़ा लगनेकी एक बीमारी। इससे दांतमें कृष्णछिद्र पड़ जाता, चलत्व आता, दन्तमूलमें शोथ दीखता, वेदनासे रहा नहीं जाता, लालास्राव बढ़ता और अकस्मात् पीड़ाका आधिक्य होता है। (माधवनिदान)

क्रिमिधूलिजलप्लवरस—वैद्यकोक्त औषधविशेष, एक दवा। पारा, गन्धक, वङ्ग तथा शङ्ख समभाग और हरीतकी चतुर्गुण पटोलरसमें मर्दन करके कार्पासके वीज जैसी वटियां बना लेना चाहिये। यह तीन गोलियां प्रातःकाल शीतल जल अनुपानमें सेवन करनेसे पित्त और वातपित्त क्रिमिशूल दूर होता है।

क्रिमिमर्दरस—वैद्यकोक्त औषधविशेष, एक दवा। १ भाग पारा, २ भाग गन्धक, ४ अजवायन, ८ भाग विड़ङ्ग, १६ भाग कुचिला और ३२ भाग ब्रह्मयष्टिकावीज बुकनी बना कर मधु या मोथेके रस किंवा उसके क्वाथके साथ सेवन करनेसे क्रिमि नष्ट होता है।

क्रिमिमुद्गरस—एक औषध। १ भाग पारा, २ भाग गन्धक, ३ भाग अजवायन, ४ भाग विड़ङ्ग, ५ भाग कुचिला, ६ भाग पलाशवीज और आध तोला मधु डाल मुस्ताका क्वाथ पान करना चाहिये। यह क्रिमिनाशक और अग्निदीपक है।

क्रिमिरिपु, क्रिमिशत्रु देखो।

क्रिमिरोगारिरस—एक दवा। पारा, गन्धक, लौह, मरिच, विष, धायके फूल, त्रिफला, सोंठ, मोथा, रसाञ्जन, आकनादि, त्रिकटु, गुवारका पाठा, ह्रीवेर और बेलसोंठको समभाग भृङ्गराजके रसमें भावना देना चाहिये। यह औषध कौड़ी बराबर खानेसे क्रिमिरोग नष्ट होता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

क्रिमिविनाशरस—एक औषध। पारा, गन्धक, अभ्र, लौह, मनःशिला, धायके फूल, त्रिफला, लोध, विड़ङ्ग, हरिद्रा, दारुहरिद्रा समभाग ७ बार भावना देके चणकप्रमाण वटी बनाना चाहिये। इसको सबेरे सेवन करनेसे वायु, पित्त, कफ और त्रिदोषज क्रिमिनाश होता है।

क्रिमिशत्रु (सं० पु०) क्रिमेः शत्रुरिव नाशकत्वात्। १ विड़ङ्ग। २ प्रवाल। ३ पालिधाद्रुच, लाल मदार।

क्रिमिशावव (सं० पु०) अल्प स्वार्थे अण् शावव: क्रिमि: शावव:, ६-तत्। विट्खदिर।

क्रिमिशिरोरोग (सं० पु०) क्रमिज शिरोरोग, कीड़ेसे सरमें पैदा होनेवाली बीमारी। शिरमें कांटा-जैसा चुभना, उसका अन्तर भाग इस प्रकार फड़कना मानो उसको कोई काटे खाता हो और नाकसे पीवके साथ पानी बहना। इस रोगका लक्षण है। (माधवनिदान)

क्रिमिशैल (सं० पु०) क्रिमिभिर्निर्मित: शैल इव। वल्मीक, दीमककी पहाड़ी।

क्रिमिहर (सं० पु०) १ विड़ङ्ग। २ मरिच। ३ कृष्णलवण, काला नमक। (त्रि०) ४ क्रमिघ्न, कीड़े मारनेवाला।

क्रिमिहा (सं० स्त्री०) क्रिमिं हन्ति, क्रिमि-हन्-ड बाहुलकात् टाप्। लाक्षा, लाह।

क्रिय (सं० पु०) क्रिया ग्रहाणामाद्यगतिर्विद्यतेऽत्र, क्रिया-अच्। मेषराशि। (नीलकण्ठताजक)

क्रियमाण (सं० त्रि०) कृ कर्मणि शानच्। उत्पाद्यमान, जो प्रस्तुत किया जा रहा हो।

क्रिया (सं० स्त्री०) क्रियतेऽनया असौ अस्यां वा, कृ-श-रिङ् आदेश: इयङ् च। रिङ् श-यगलिङ्क्षु। पा ७।४।२८। अचिश्नु-धातुभ्रुवां य्वोरियङुवङौ। पा ६।४।७७। १ आरम्भ, शुरू। २ निष्कृति, निपटारा। ३ शिक्षा, तालीम। ४ पूजा, इबादत। ५ सम्प्रधारण, ठहराव। ६ उपाय, तजवीज। ७ न्यायमत सिद्ध उत्क्षेपण, अवक्षेपण, आकुञ्चन, प्रसारण और गमन नामक पांच कर्म, उछाल, गिराव, सिकोड़, फैलाव और चाल पांचो काम। ८ चेष्टा, कोशिश। ९ चिकित्सा, इलाज। १० करण, अनुष्ठान, कराई। ११ श्राद्ध। १२ शौच, सफाई। १३ प्रयोग, इस्तामाल। १४ धातुका अर्थ। व्याकरणके मतमें धातुके अर्थको क्रिया कहते हैं। कर्ताका व्यापार ही क्रियापदवाच्य है। जैसे—चुल्लिका पर स्थाली चढ़ा देनेसे पुनर्वार उतारने तक कर्ता जो व्यापार निष्पन्न करता, उसीका नाम पाकक्रिया पड़ता है। व्याकरणके मतमें क्रिया दो प्रकारकी है—साध्य और सिद्ध। तिङ् निष्पन्न क्रियाको साध्य और घञ् प्रभृति निष्पन्नको सिद्ध कहते हैं। फिर क्रिया सकर्मक और अकर्मक भेदसे भी दो प्रकारकी होती है। जिसका कर्म रहता अर्थात् जिस कर्ताका व्यापार किसी अन्य पदार्थ पर जा कर पड़ता उसको सकर्मक और जिसका कर्म नहीं मिलता अर्थात् कर्ताका व्यापार उसी पर पूरा उतरता उसको अकर्मक कहते हैं। प्रत्येक क्रियाका एक फल और एक व्यापार है। जिस उद्देशसे क्रियाकी प्रवृत्ति होती उसका नाम फल और जो उस फलको निकालता उसका नाम व्यापार पड़ता है। अकर्मक क्रियाका फल और व्यापार कर्त्तामें ही रहता है। जैसे—वह हंसता है। इस स्थलपर हास्य क्रिया अकर्मक है। कारण इसका फल और व्यापार कर्त्तामें ही विद्यमान है।

जिस स्थलपर कर्त्ता भिन्न अन्य किसी पदार्थमें क्रियाका फल लगता, उस स्थलमें क्रियाका नाम सकर्मक पड़ता है। जैसे—राम भात बनाता है। इस स्थल पर चूल्हे पर हांडी चढ़ा देना आदि पाकक्रियाका व्यापार और पदार्थकी शिथिलता वा विक्लित्ति ही उसका फल है। वह विक्लित्ति वा शिथिलता कर्ता भिन्न अपर पदार्थ ओदन (भातमें) रहनेसे पाक क्रिया (बनाना) सकर्मक है।

"फलव्यापारयोरेकनिष्ठतायामकर्मक:।" (कलापटीका)

वक्ताओंका फल विवक्षा करनेसे सकर्मक और फल न करनेसे क्रिया अकर्मक होती है। एक ही क्रिया वक्ताकी इच्छानुसार सकर्मक वा अकर्मक बना करती है। जैसे—राम वनको जाते हैं। यहां गमन क्रिया सकर्मक है। क्योंकि उसके फलकी विवक्षा लगी है। फलकी विवक्षा न रहनेसे यही क्रिया अकर्मक भी होती है। यथा—राम वनमें जाते हैं। इस स्थल पर क्रियाके फलकी कोई विवक्षा नहीं है। सुतरां गति क्रिया अकर्मक ठहरती है।

"क्रियावच्छेदकं यत फलं कर्माविवक्षितम्।
ततैव कर्म धातोस्तु फलानुत्तावकर्मक:॥" (भर्तृहरि)

वैयाकरणोंने कई अकर्मक क्रियाओंकी गणना की है। यथा—होना, बचना, अभिमान करना, डरना, सोना, खेलना, रहना, गिरना, अव्यक्त ध्वनि करना, उड़ना, चलना, बसना, बुढ़ाना, शरमाना, प्रमाद करना, उठना, मतवाला बनना, भागना, घूमना, विख्यात

होना, घटना, टुबकना, मोड़ना, दौड़ना, युद्ध रहना, मतुवाना, श्रान्त पड़ना, बहना, डूबना, चमकना, जागना, जाना, उत्साहित होना, मरना, सन्दिग्ध रहना, विनाना, धीरे धीरे जाना, नाचना, गिरना, चेष्टा करना, बिगड़ना, रोना, बढ़ना, हावभाव प्रकाश करना, पकना, ठहरना, हर्ष करना, आदर करना, सेवा करना, कांपना, घबराना, झपकना, शङ्का लाना और खेद करना, यह सकल क्रियायें अकर्मक हैं। इन सभी अर्थोंमें कर्म नहीं रहता। जैसे—घड़ा होता है, मार्कण्डेय जीता है इत्यादि।

क्रिया समापिका और असमापिका भेदसे भी दो प्रकारकी है। जिस क्रियापदमें वाक्यकी समाप्ति हो जाती और अन्य किसी क्रियाकी आकाङ्क्षा नहीं आती, वह समापिका क्रिया कहलाती है। तिङन्त क्रिया ही समापिका क्रिया हुआ करती है। जैसे—वह चन्द्रको देखता है। इस स्थल पर देखना क्रिया समापिका है। कारण इसी क्रियामें वाक्यकी समाप्ति होती है; दूसरी किसी क्रियाकी अपेक्षा नहीं। जिस क्रियापदमें वाक्यशेष नहीं होता और किसी अपर क्रियाकी अपेक्षा रहती है, उसका नाम असमापिका क्रिया है। क्त्वाच् ल्यप् प्रभृति प्रत्ययसे निष्पन्न होनेवाला क्रियापद ही असमापिका है। जैसे—वह वनमें जाकर। इस क्रियापदमें वाक्य शेष नहीं होता, 'ठहरता है' प्रभृति अन्य क्रियापदकी अपेक्षा लगती है। सुतरां 'जाकर' असमापिका क्रिया है। प्राचीन संस्कृत व्याकरणमें समापिका वा असमापिका क्रिया-जैसा कोई भेद लक्षित नहीं होता।

१५ चार प्रकारके व्यवहारोंमें एक व्यवहार। यह दैवी और मानुषी दो प्रकारका होता है। रुई, अग्नि, जल, विष, कोषपान प्रभृति द्वारा प्रमाण करके जो विषय विचारा जाता वह दैवी व्यवहार कहलाता है। साक्ष्यग्रहण, बहस या निदर्शन और अनुमान द्वारा विचार निष्पत्ति करना मानुषी व्यवहार है।

१६ चिकित्साकार्य, इलाज। इस अनुष्ठानसे शरीरके वात, पित्त और कफ धातु समान होते हैं।

क्रियाकलाप (सं० पु०) क्रियाणां कलापः समूहः, ६-तत्। क्रियासमूह, अनुष्ठीयमान सकल क्रिया, काम काज।

क्रियाकल्प (सं० पु०) क्रियायां चिकित्सायां कल्पः विधिः चिकित्साका नियम, इलाजका कायदा। सुश्रुत उत्तर तन्त्रके १८वें अध्यायमें सभी क्रियाकल्प चिकित्साका नियम निर्णीत हुवा है।

क्रियाकार (सं० पु०) क्रियां शिक्षारम्भं करोति, क्रिया-कृ-अण्। १ नूतन छात्र, नया विद्यार्थी। (त्रि०) २ कर्मकारक, काम करनेवाला।

क्रियाक्रम (सं० पु०) चिकित्सोपक्रम, इलाजका सिलसिला।

क्रियाङ्ग (सं० पु०) यन्त्रमें हस्तादि द्वारा सम्पन्न किया जानेवाला किसी क्रियाका सिद्धांश; जैसे तबला सितार आदि बजाना। २ करण और उत्साहादियुक्त क्रिया।

क्रियातन्त्र (सं० पु०) क्रियायास्तन्त्रः अधीनः, ६-तत्। १ कर्माधिकारी, काममें लगा हुवा। (क्ली०) २ एक बौद्धतन्त्र।

क्रियातियोग (सं० पु०) वमन आदि अतियोग।

क्रियाद्वेषी (सं० क्ली०) क्रियां व्यवहाराङ्गसाधनं साक्षिलेख्यादिकं द्वेष्टि, क्रिया-द्विष-णिनि। १ विवाद आदिके स्थल पर दलीलको न माननेवाला, जो बहस कबूल न करे।

"लेख्यञ्च साक्षिणश्चैव क्रिया ज्ञेया मनीषिभिः।
तां क्रियां द्वेष्टि यो मोहात् क्रियाद्वेषी स उच्यते॥" (कात्यायन)

लिखने और देखनेवालेकी बात पर बिगड़नेवाला क्रियाद्वेषी कहलाता है। धर्मशास्त्रमें क्रियाद्वेषी हीनोंमें गिना गया है।

"अन्यवादी क्रियाद्वेषी नोपस्थायी निरुत्तरः।
आहूतप्रपलायी च हीनः पञ्चविधः स्मृतः॥" (कात्यायन)

२ कर्मद्वेष्टा, कर्मकाण्डसे द्वेष रखनेवाला।

क्रियान्वित (सं० त्रि०) क्रियया सत्क्रियया अन्वितः। सत्कर्मशाली, भला काम करनेवाला।

क्रियापटु (सं० त्रि०) क्रियायां पटुः कुशलः, ७-तत्। चतुर, कार्यदक्ष।

क्रियापथ (सं० क्ली०) क्रियाया चिकित्सायाः पन्थाः नियमः, ६-तत्। समासेटच्। चिकित्साका नियम, इलाजकी राह। (सुश्रुत)

क्रियापद (सं० क्लो०) क्रियावाक्य, क्रियाका सिद्ध रूप जैसे—होता है, पकाता है, करता है।

क्रियापन्थ (हिं० पु०) कर्मकाण्डमार्ग, कामको राह।

क्रियापर (सं० त्रि०) क्रियायाः परः अधीनः, ६-तत् क्रियाधीन, कामका पाबन्द।

क्रियापाट—संस्कृत देशावली वर्णित ब्राह्मणभूमिका एक गांव। यह फलीश्याससे २ योजन पर वायुकोणमें अवस्थित है।

क्रियापाद (सं० पु०) क्रिया विवादसाधनं पाद इव। चार भागोंमें विभक्त व्यवहारशास्त्रका तृतीय भाग, मुकदमेंकी तोसरी मद।

"पूर्वपक्षः स्मृतः पादः द्वितीयश्चोत्तरः स्मृतः।
क्रियापादस्तथा चान्यश्चतुर्थो निर्णयः स्मृतः॥" (बृहस्पति)

पूर्वपक्षका पाद, द्वितीयको उत्तर, अन्यको क्रियापाद और चतुर्थको निर्णय कहते हैं। विचार देखो।

क्रियाफल (सं० क्लो०) १ कर्मफल, कामका नतीजा। उत्पत्ति, प्राप्ति, विकृति और संस्कृतको क्रियाफल कहते हैं। (वेदान्तपरिभाषा)

२ यज्ञ आदिका पुण्य और पाप। ३ क्रियाजन्य स्वर्ग और तृप्ति प्रभृति, कामसे मिलनेवाला आराम वगैरह।

क्रियाभ्युपगम (सं० पु०) क्रियायाः कर्षणादिक्रियार्थं अभ्युपगमः तादर्थ्ये ६-तत्। अधिया बंटाई, खेतका अधिया बंटाई पर लिया जाने पर। यह नियम करके कृषिकर्मके लिये दूसरेका क्षेत्रग्रहण करना क्रियाभ्युपगम कहलाता है कि क्षेत्रमें जो शस्य उत्पन्न होगा, वह खेतके मालिक और किसान दोनोंमें बराबर बराबर बंट जायगा। इसमें सरकारी आमदनी जो लगती, खेतवालेको देना पड़ती है और जोतने बोनेका खर्च किसान उठाता है।

"क्रियाभ्युपगमात् चैव बीजार्थं यत् प्रदीयते।
तस्येह भागिनौ दृष्टौ बीजी क्षेत्रिक एव च॥" (मनु)

क्रियाभ्यावृत्ति (सं० स्त्री०) क्रियायाः अभ्यावृत्तिः, ६-तत्। क्रियाका पौनःपुन्य, किसी कामकी धुन।

क्रियायोग (सं० पु०) क्रिया एव योगो योगोपायः। १ पौराणिकगणकर्तृक उल्लिखित देवता-आराधन, देवमन्दिर निर्माण प्रभृति पुण्यकर्म। प्रायः सकल पुराणों और उपपुराणोंमें क्रियायोगका अल्प विस्तर प्रशंसा मिलती है। मत्स्यपुराणके मतमें क्रियायोग सहस्र सहस्र ज्ञानयोगसे भी प्रधान है। क्रियायोग ही ज्ञानयोगका प्रधान कारण है। क्रिया व्यतीत शत सहस्र जन्मोंमें भी ज्ञान नहीं आता। क्रियायोगसे चित्तकी शुद्धि होती है। चित्तशुद्धि होनेसे अनायास ही मुक्ति लाभ किया जा सकता है। समस्त पुण्यकर्मोंका मूलकारण वेद और आचार है। प्राणीमात्रके प्रति दया, सहिष्णुता, पीड़ित व्यक्तिका प्रतिपालन, गुणवान् व्यक्ति पर मिथ्यादोषारोप न करना, आभ्यन्तरीण तथा वाह्य पवित्रता, विघ्न होनेकी सम्भावना न रहनेवाले कार्यमें भी मङ्गलाचरण कृपणताशून्यता, और परद्रव्य वा परस्त्रोमें स्पृहा न रखना—आठ प्रधान प्रधान गुण हैं। इनमें एकका भी अभाव होनेसे क्रियायोग अवलम्बन कर नहीं सकते। वेदों और स्मृतियोंमें जो सकल पुण्यकर्म निरूपित हुए हैं, उनका अनुष्ठान ही क्रियायोग है। चूल्हा, सिल बट्टा, झाड़ू, ओखली, मूषल, घड़ा और पीढ़ा—पांच वस्तुओंकी सूना क्रियायोगी गृहस्थके लिये अपरिहार्य है। अर्थात् अन्यरूप हिंसा अनेक यत्नोंसे परित्याग की जा सकती है, किन्तु पाकके समय चूल्हे, मसाला बांटनेमें सिल बट्टे, झाड़नेमें झाड़ूके नीचे, कूटनेमें ओखली, पानी रखनेमें घड़े और बैठने उठनेमें पोढ़ेसे जो हिंसा होती, उसे गृहस्थ किसी प्रकार छोड़ नहीं सकता। इसी कारण उक्त पञ्चविध हिंसाके प्रतीकारको क्रियायोगमें पांच यज्ञोंका विधान किया गया है। यथा—देवयज्ञ, पितृयज्ञ, मनुष्ययज्ञ अर्थात् अतिथि सत्कार और स्वाध्याय तथा ज्ञानयज्ञ। इन पांचो यज्ञोंका अनुष्ठान करनेसे पञ्चसूना पाप विनष्ट होता है। जिनमें पूर्वोक्त दया आदि आठो गुण नहीं होते, वह यथाविहित संस्कारोंसे संस्कृत रहते भी क्रियायोग लाभ कैसे कर सकते हैं? उपार्जित अर्थ द्वारा गोब्राह्मणको प्रतिपालन, व्रत, उपवास और नानाविध उपहारसे ब्रह्मा, विष्णु, सूर्य, वसु तथा शिवकी अर्चना क्रियायोगीका एकान्त कर्तव्य है। (मत्स्यपुराण ५२ अ०)

गीतामें कर्मयोगके नामसे क्रियायोगका ही उल्लेख

किया गया है। पातञ्जलके मतमें तपस्या, मोक्षशास्त्रके अध्ययन और क्रियाफल ईश्वर अर्पण करके फलकामी न हो केवलमात्र कर्तव्यताबोधसे समस्त पुण्यकर्मोंके अनुष्ठानका नाम क्रियायोग है। (योगसूत्र २।१) कर्म देखो।

क्रियया योगः सम्बन्धः, ३-तत्। २ क्रियाके सहित सम्बन्ध।

"निपाताश्चादयो ज्ञेया उपसर्गास्तु प्रादयः।
द्योतकत्वात् क्रियायोगे लोकादवगता इमे॥" (कलापटीका-विलोचन)

क्रियार्थ (सं० पु०) क्रिया अनुष्ठानं यज्ञादिकं अर्थो ऽभिधेयो यस्य, बहुव्री०। यज्ञादि क्रियाका प्रतिपादक विधिवाक्य। मीमांसामतमें क्रियार्थ वाक्य ही प्रमाण है, क्रियार्थ भिन्न वाक्यका प्रामाण्य नहीं होता।

"आम्नायस्य क्रियार्थत्वादानर्थक्यं तदर्थानाम्।" (मीमांसासूत्र)

जो सकल अंश वेदका अर्थवाद हैं अर्थात् जिनमें किसी प्रकारका विधि नहीं केवल—देवता वा क्रियाकी प्रशंसा मात्र है, उनके साथ विधिवाक्योंकी एकवाक्यता लगा व्याख्या करनी पड़ती है। इससे अर्थवाद भी क्रियार्थ बन जाता है। उसका अप्रामाण्य हो नहीं सकता।

क्रियावश (सं० त्रि०) क्रियायाः वशः अधीनः। क्रियाके अधीन, कर्तव्य कर्म शेष न करनेवाला, कामसे मजबूर

क्रियावसन्न (सं० त्रि०) क्रियया अवसन्नः पराजितः, ३-तत्। साक्षी किंवा प्रमाण द्वारा अपना पक्ष प्रमाणित न कर सकनेसे पराजित होनेवाला, जो गवाह या सुबूतसे अपना मामला साबित न कर सकने पर मुकदमा हार गया हो।

"स्वयमभ्युपपन्नोऽपि स्वचर्यावसितोऽपि सन्।
क्रियावसन्नोऽभार्हेत परं सत्यावधारणम्॥" (नारद)

क्रियावस्ति (सं० स्त्री०) वमनादि पञ्च कर्मोंमें प्रयोज्य वस्ति।

क्रियावाचक (सं० क्ली०) क्रियापद। जिसका अर्थ क्रिया है, उसीको क्रियावाचक कहते हैं। जैसे पकाता है, जाता है इत्यादि।

क्रियावादी (सं० पु०) १ व्यवस्थापक, क्रियाको निरूपण करनेवाला, जो काम बताता हो। (त्रि०) २ प्रमाणवादी, कार्यवादी, फरयादी। (मिताक्षरा)

क्रियावान् (सं० त्रि०) क्रिया विद्यते ऽस्य, क्रिया-मतुप् मस्य वः। १ क्रियायुक्त, सत्क्रियान्वित, कामकाजी। २ क्रियानिरत, काममें पड़ा हुआ। (भारत वन ३) ३ कर्ता, करनेवाला।

क्रियाविदग्धा (सं० स्त्री०) नायिकाभेद। यह किसी क्रिया द्वारा नायकको अपना भाव बताती है।

क्रियाविशाल—जैन शास्त्रानुसार श्रुतज्ञानके दो भेद हैं-अंगबाह्य और अंगप्रविष्ट। अंगप्रविष्टके आचारांग आदि १२ भेद हैं। उनमें बारहवें दृष्टिप्रवाद नामक अंगका चौथा भेद पूर्वगत है और उस पूर्वगतके भी उत्पाद आदि १४ भेद हैं। उनमें यह क्रियाविशाल १३वां है। उसमें नौ करोड पद हैं और छन्दःशास्त्र, व्याकरण-शास्त्र आदिका वर्णन है। (जिनसेनाचार्यकृत हरिवंश १०।१२०)

क्रियाविशेषण (सं० क्ली०) क्रियायाः विशेषणम्, ६-तत्। क्रियाका विशेषण, क्रियाका भाव वा अवस्था प्रकाश करनेवाला पद। जैसे—वह शीघ्र जाता है, स्तोक पकाता है। पाणिनिके मतमें क्रियाविशेषणोंका एकत्व कर्मत्व और नपुंसकत्व है। इस विधानसे क्रियाविशेषण-के उत्तर क्लीवलिङ्गमें द्वितीयाके एकवचन भिन्न अन्य विभक्ति नहीं लगती। हिन्दीमें भी इसका रूप बराबर एक ही जैसा बना रहता है, कभी विकृत नहीं होता।

क्रियाशक्ति (सं० स्त्री०) क्रियैव शक्तिः। १ परमेश्वरकी एक शक्ति। ईश्वर इसी शक्तिके द्वारा अनन्त ब्रह्माण्डकी सृष्टि करता है। सांख्यमें प्रकृतिरूप और वेदान्तमें मायारूपसे क्रियाशक्ति वर्णित हुई है।

शारदातिलकमें भी सांख्यमत अवलम्बन करके इस शक्तिका तात्त्विक भावसे वर्णन किया है:—

नित्य, ज्ञान एवं आनन्दस्वरूप, सर्वमय परमेश्वर-से शक्तिकी उत्पत्ति होती है। शक्तिसे नाद और नादसे विन्दु उत्पन्न हुआ करता है। सर्वशक्तिमान् ईश्वर इसी प्रकार तीन रूपोंमें विभक्त होता है। विन्दु, नाद और वीज—उसके तीन भेद हैं। विन्दु शिवस्वरूप और वीज शक्ति है। इन्हीं दोनोंके मिलनको नाद कहते हैं। विन्दुसे रौद्री, नादसे ब्रह्माणी और वीजसे वामा शक्ति निकलती है। इन्हीं तीनों शक्तियोंसे रुद्र, ब्रह्मा

और विष्णुकी उत्पत्ति है। यह ज्ञानेच्छा तथा क्रिया-विशिष्ट और चन्द्र, सूर्य एवं अग्निस्वरूप हैं। (शारदा-तिलक) प्रयोगसार, पदार्थादर्श, पञ्चरात्र और वायुपुराण प्रभृतिमें भी ऐसा ही लिखा है।

क्रियासमभिहार (सं० पु०) क्रियायाः समभिहारः, क्रिया-सं-अभि-हृ-घञ्। क्रियाका पौनःपुन्य, कामका बार बार दुहराव। (माघ २ सर्ग)

क्रियासाधन (सं० क्लो०) चिकित्सासाधन, इलाजकी पाबन्दी।

क्रियास्नान (सं० क्लो०) क्रियाङ्गं स्नानम्, मध्यपदलोपी कर्मधा०। धर्मशास्त्रकार शङ्खप्रदर्शित स्नानविधि।

प्रथम मृत्तिका और जल द्वारा विधि अनुसार शौच कर्म करके पानीमें उतर डुबकी लगाना चाहिये। पीछे उठके आचमन करते हैं। फिर मन्त्रपाठ करके तीर्था-वाहन करना पड़ता है। यथा—

"प्रपद्ये वरुणं देवमम्भसां पतिमर्चितम्।
याचित देहि मे तीर्थं सर्वपापापनुत्तये
तीर्थमावाहयिष्यामि सर्वाघविनिसूदनम्।
सान्निध्यमस्मिन् तोये च क्रियतामदनुग्रहात्॥
रुद्रान् प्रपद्ये वरदान् सर्वानप्सु सदस्तथा।
सर्वानपसु सदश्चैव प्रपद्ये प्रयतः स्थितः॥
देवमंशसदं वह्निं प्रपद्येऽघनिसूदनम्।
आपः पुण्याः पवित्राश्च प्रपद्ये शरणं तथा॥
रुद्राश्चाग्निश्च सर्पश्च वरुणस्त्वाप एव च।
शमयन्त्वाशु मे पापं माञ्च रक्षन्तु सर्वदा॥"

इसके पीछे सन्ध्याविधि अनुसार अघमर्षण करना चाहिये। पुनर्वार डुब्बी मार तीर्थनाम जप करते हैं। इस प्रकार नहानेसे तीर्थस्नानका फल होता है।

क्रियेन्द्रिय (सं० क्लो०) क्रियायाः कर्मणः साधनं इन्द्रि-यम्। वाक्पाणि प्रभृति कर्मेन्द्रिय, हाथ पांव वगैरह काम करनेके औजार।

क्रिवि (वै० पु०) कृवि-इन् निपातः। १ कूप, कूवां। २ कर्त्ता, करनेवाला। ३ पञ्चाल देश। (शतपथब्राह्मण १३।५।४।७) ४ असुरविशेष। (ऋक्.२।२२।२) (त्रि०) ५ हिंसक। (वाजसनेयस० १०।२०)

क्रिविः (वै० त्रि०) कृविद्दसु निपातने साधुः। विक्षेपण-शील। (ऋक्.१।१६६।६)

क्रिश—अस्त्रविशेष, किरच। भारत और भारतमहा सागरीय द्वीपपुञ्जके सभी सभ्यजाति किरच व्यवहार करते हैं। मलयवासी उसको 'क्रिश' कहते हैं।

क्रिश्चियन (अं० पु०—Christian) ईसाई, किरानी।

क्रिष्टल (अं० पु०—Chrystal) १ स्फटिक, बिल्लौर। शीशे वगैरहका कलम। (वि०) २ स्फटिकाभ, बिल्लौर-जैसा चमकीला।

क्रीट (हिं० पु०) किरीट।

क्रीड़ (सं० पु०) क्रीड़-घञ्। १ क्रीड़ा, खेल। २ परि-हास, हंसी ठट्ठा।

क्रीड़क (सं० त्रि०) क्रीड़-ण्वुल्। १ क्रीड़ा करनेवाला, खेलाड़ी। २ द्वारस्थित सेवक, दरबान्।

क्रीड़चक्र (सं० क्लो०) छन्दोविशेष, कोई छन्द। इसके चारो चरण समान रहते और प्रत्येक चरणमें १८ स्वरवर्ण लगते हैं। उनमें १ला, ४था, ७वां, १०वां, १३वां और १६ वां अक्षर ह्रस्व होता है। इसको छोड़कर सब अक्षर गुरु आते हैं। (छन्दःशास्त्र)

क्रीड़न (सं० क्लो०) क्रीड़ भावे ल्युट। १ क्रीड़ा, खेल। (भारत १।१३८ अ०) २ क्रीड़ासाधन, खेलनेका औजार। (भागवत ३।१८।१४)

क्रीड़नक (सं० क्लो०) क्रीड़न स्वार्थे कन्। क्रीड़ासाधन, खेलनेका औजार। (भारत ३।१२ अ०)

क्रीड़निका (सं० स्त्री०) क्रीड़न स्वार्थे कन् स्त्रियां टाप् अत इत्वञ्च। धात्री, धाया, दायी।

क्रीड़नीय (सं० त्रि०) क्रीड़ करणे अनीयर्। १ क्रीड़ा-साधन, खेलमें मदद देनेवाला। (भारत, अनु० ८६) (क्लो०) भावे अनीयर्। २ क्रीड़ा, खेल।

क्रीड़नीयक (सं० त्रि०) क्रीड़नीय स्वार्थे कन्। क्रीड़ा-साधन, खेलानेवाला। (कथासरित् सागर)

क्रीड़ा (सं० स्त्री०) क्रीड़ भावे अ ततः टाप। १ परि-हास, हंसी दिल्लगी। २ क्रीड़न, खेलकूद। (कुमारसम्भव)

क्रीड़ाकानन (सं० क्लो०) क्रीड़ायाः क्रीड़ाय काननम्, अश्वघासादिवत् तादर्थ्ये ६-तत्। उपवन, बाग।

क्रीड़ाकोप (सं० पु०) क्रीड़ार्थं कोपः। क्रीड़ाके लिये प्रकाश किया जानेवाला कोप, खेलकी रिस।

क्रीड़ाकौतुक (सं० क्लो०) क्रीड़ार्थं कौतुकम्। क्रीड़ाके

लिये किया जानेवाला कौतुक, खेल तमाशा ।

क्रीड़ाखण्ड (सं० क्ली०) गणेशपुराणके द्वितीय भागका नाम ।

क्रीड़ागृह (सं० क्ली०) क्रीड़ार्थं गृहम् । क्रीड़ा करनेका गृह, खेलनेका मकान् । (साहित्यदर्पण १० प०)

क्रीड़ाचंक्रमण (सं० क्ली०) क्रीड़ास्थानविशेष, खेलनेकी एक जगह ।

क्रीड़ाचन्द्र—भोजप्रबन्ध-वर्णित एक कवि ।

क्रीड़ाताल (सं० पु०) एक ताल । इसमें एकमात्र प्लुत रहता है । (सङ्गीतदामोदर)

क्रीड़ानारी (सं० स्त्री०) क्रीड़ाया: क्रीड़ार्थं नारी, तादर्थ्ये तत् । आमोद प्रमोद करनेकी स्त्री, वेश्या, रण्डी । (हरिवंश १४७ अ०)

क्रीड़ामय (सं० त्रि०) क्रीड़ाप्रचुर, खेलमें लगा रहनेवाला ।

क्रीड़ामयूर (सं० पु०) खेलनेका मोर ।

क्रीड़ामृग (सं० पु०) क्रीड़ार्थो मृगः । खेलनेका हरिण ।

क्रीड़ायान (सं० क्ली०) क्रीड़ाया: यानम्, तादर्थ्ये ६-तत् । पुष्परथ, फूलोंकी गाड़ी ।

क्रीड़ारत्न (सं० क्ली०) क्रीड़ाया: रत्नमिव । रतिक्रिया, मैथुन ।

क्रीड़ारथ (सं० पु०) क्रीड़ाया: रथः, तादर्थ्ये ६-तत् । क्रीड़ायान, फूलोंकी बग्गी ।

"क्रीड़ारथो ऽस्तु भगवान् उत साङ्ग्रामिको रथः ।" (भागवत १।५३ अ०)

क्रीड़ारसातल (सं० क्ली०) एक उपरूपक, कोई दृश्यकाव्य (साहित्यदर्पण ६ प०)

क्रीड़ावेश्म (सं० क्ली०) क्रीड़ागृह, खेलका घर ।

क्रीड़ाशकुन्त (सं० पु०) खेलनेकी चिड़िया ।

क्रीड़ाशैल (सं० पु०) क्रीड़ापर्वत, खेलनेका पहाड़ ।

क्रीड़ासर: (सं० क्ली०) खेलनेका सरोवर ।

क्रीड़ास्थान (सं० क्ली०) खेलकी जगह ।

क्रीड़ि (वै० त्रि०) क्रीड़-इन । क्रीड़क, खेलाड़ा । (ऋक् १० । ६४ । १५)

क्रीड़िता (सं० त्रि०) क्रीड़-तृण् । क्रीड़क, खेलाड़ी । (भागवत १ । ११ । १४)

क्रीड़ी (वै० त्रि०) क्रीड़ बाहुलकात् तच्छील्ये इनि । १ वायुविशेष, अटखेलियां करनेवाली हवा । २ क्रीड़ाशील, खेलमें लगा रहनेवाला । (वाजसनेयसंहिता २४।१६)

क्रीड़ु (वै० त्रि०) क्रीड़-उन् । क्रीड़ाकारक, खेलाड़ा । (ऋक् ९।२०।७)

क्रीड़ोद्देश (सं० पु०) क्रीड़ाया: उद्देश: स्थानम्, ६-तत् । क्रीड़ास्थान, खेलकी जगह ।

क्रीड़ोपस्कार (सं० पु०) क्रीड़ाया उपस्कार:, ६-तत् । क्रीड़ासाधन, खिलौना । (भागवत, १।१।४३)

क्रीत (सं० त्रि०) क्री कर्मणि क्त । १ क्रय किया हुवा, जो मोल लिया गया हो । (क्ली०) २ क्रय, खरीद । (पु०) द्वादश प्रकारके पुत्रोंमें एक पुत्र । जनक और गर्भधारिणी धन लेकर जिस पुत्रको विक्रय करती, उसे क्रीत कहते हैं—

"ददात् माता पिता वा यं स पुत्रो दत्तक: स्मृतः ।
क्रीतश्च ताभ्यां विक्रीत: कृत्रिम: स्यात् स्वयं कृतः ॥" (याज्ञवल्क्य)

मनुके मतमें—क्रीत पुत्र केवल पिता माताकी सम्पत्तिका अधिकारी है । उसे बन्धुवर्गका दायाधिकार नहीं होता ।

"कानीनश्च सहोढ़श्च क्रीत: पौनर्भवस्तथा ।
स्वयंदत्तश्च शौद्रश्च षड्दायादबान्धवा: ॥" (मनु)

कानीन, सहोढ़, क्रीत, पौनर्भव, स्वयंदत्त और शूद्रागर्भजात—६ पुत्र बान्धवदायाधिकारी नहीं होते ।

दत्तकमीमांसा और दत्तकचन्द्रिकाके मतसे कलिकालमें क्रीतपुत्र रखनेका विधान नहीं है । पराशरने कलिधर्मप्रस्तावमें औरस, क्षेत्रज, दत्त और कृत्रिम केवल चार ही प्रकारके पुत्रोंका उल्लेख किया है ।

क्रीतक (सं० पु०) क्रीत स्वार्थे कन् । क्रीतपुत्र, खरीदा हुवा लड़का ।

"क्रीणीयाद य स्त्वपत्यार्थं मातापित्रोर्यमन्तिकात् ।
स क्रीतक: सुतस्तस्य सदृशोऽसदृशोऽपि वा ॥" (मनु ९।१७४)

वंशरक्षाके लिये पितामाताको मूल्य देकर क्रय किया जानेवाला पुत्र, क्रोताका क्रीतक पुत्र कहलाता है । वंशमर्यादा प्रभृतिमें बालक समान वा असमान होते भी क्रीतक पुत्र बनाया जा सकता है । परन्तु भिन्नजातीय कभी ग्रहण करना न चाहिये । दत्तक देखो ।

क्रीतदास (सं० पु०) क्रीतश्चासौ दासश्च, कर्मधा०। मोलका नौकर, गुलाम। दासशब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

क्रीतानुशय (सं० पु०) क्रीते क्रये अनुशयः, ७-तत्। कोई वस्तु क्रय करके पीछे होनेवाला अनुताप, माल लेनेके पीछेका पछतावा। धर्मशास्त्र-प्रणेताओंने इसको अष्टादश विवादोंके अन्तर्गत एक विवाद-जैसा लिखा है। वीरमित्रोदय नामक स्मृतिसंग्रहमें यह विषय वर्णित हुआ है—

"क्रीत्वा मूल्येन यत्पण्यं क्रेता न बहु मन्यते।
क्रीतानुशय इत्येतद् विवादपदमिव च॥" (नारद)

कोई वस्तु मूल्य देकर खरीदने पर यदि क्रेता अपनेको ठगा हुआ समझता, तो क्रीतानुशय ठहरता है। यह एक विवादपद-जैसा निरूपित हुवा है। कोई चीज जांच न करके खरीदने और पीछे परीक्षाके समय उसका कोई दोष निकलने पर क्रेता उसे विक्रेताको फेर दाम वापस ले सकता है। बेचनेवाला कीमत लौटा देने पर वाध्य है। किन्तु परीक्षा करके मोल लेने पर कोई वस्तु लौटाया जा नहीं सकता।

धर्मशास्त्रकार व्यासके मतमें—चमड़ा लकड़ी, ईंट, सूत, धान, शराब और रसको फौरन् जांच करना पड़ती है। धर्मशास्त्रविहित परीक्षाके कालमध्य जांच न लेनेसे पीछे परीक्षा करके दोष देखने पर खरीदी हुई चीज वापस हो नहीं सकता। चांदी, सीसे और सोनेकी भी सद्य ही परीक्षा करना चाहिये। दोह्य गो महिष प्रभृतिका परीक्षाकाल तीन दिन और वाहक बैल आदिका ५ दिन है। रत्न, हीरक और प्रवालकी परीक्षाके लिये ७ दिन नियत हैं। पुरुषकी १५ दिन और स्त्रीकी १ मासमें जांच होती है। धान आदि बीजोंकी १० दिन और लोहे तथा कपड़ेकी परीक्षाका काल १ दिन है। कात्यायनने गृह, खेत, भूमि प्रभृतिकी परीक्षाका काल १। दिन ठहराया है। परीक्षाकालकी कोई दोष देख न पड़ने और क्रेताके मतमें यह अनुताप उपस्थित होते भी खरीद मेरे लिये ठीक नहीं हुई है, चीज लौटायी जा सकती है। किन्तु ऐसे मौके पर खरीददार बेचनेवालेको कीमतका छठां हिस्सा देगा। विक्रेता भी मूल्यका षष्ठ भाग लेकर वस्तु वापस लेने पर वाध्य है।

नारदके मतमें मोल लेनेके दिन ही चीज लौटानेमें कुछ भी देना नहीं पड़ता। परन्तु दूसरे दिन ३०वां और तीसरे दिन लौटानेमें मूल्यका १५ वां भाग क्रेता विक्रेताको देगा। इसके पीछे खरीदी हुई चीज लौटायी जा नहीं सकती। फिर उस चीजको भी खरीद कर वापस कर नहीं सकते, जो काममें लानेसे बिगड़ गयी हो। परीक्षाकालके पीछे क्रीत वस्तु लौटानेसे राजा क्रेताको उपयुक्त दण्ड दे सकता है। (वीरमित्रोदय—व्यवहारपद)

क्रुङ् (सं० पु०) क्रुञ्च-क्विन्। निपातने साधुः। ऋत्विग्दधृक इति। पा ३।२।५९। १ बकपक्षी, बगला। २ हंस। (वाजसनेयसंहिता १९।७३)

क्रुञ्च (सं० पु०) क्रुन्च-अच्। १ क्रञ्चपर्वत। २ बकपक्षी। (वाजसनेयसंहिता २४।३१)

क्रुञ्चकीय (सं० त्रि०) क्रुञ्चा-अ कुक् छश्च। नड़ादीनां कुक् च। वीणाका निकटवर्ती (देशादि)।

क्रुञ्चा (सं० स्त्री०) क्रुञ्च-टाप्। एक वीणा।

क्रुञ्चामान् (सं० त्रि०) क्रुञ्चा वीणा वकी वा विद्यतेऽस्य, क्रुञ्चा-मतुप्। यवादि गणान्तर्गत रहनेसे यहां मतुप्‌के मकारस्थानमें व नहीं हुवा। १ वीणायुक्त। २ वकीयुक्त, मादा बगलाको लिये हुवा।

क्रुत् (सं० स्त्री०) क्रुध सम्पदादित्वात् भावे क्विप्। क्रोध, गुस्सा। क्रुध शब्दको प्रथमाके एकवचनमें क्रुत् और क्रुद् दो रूप होते हैं। किन्तु संक्षिप्तसार व्याकरणमें क्रुत्, क्रुद्, क्रुत्त और क्रुद्द चार रूप लिखे हैं।

क्रुद्ध (सं० त्रि०) क्रुध कर्तरि क्त। १ क्रुधयुक्त, नाराज।

"युद्ध विरुद्ध क्रुद्ध दोउ बन्दर।" (तुलसी)

(क्ली०) भावे क्त। क्रोध, गुस्सा।

क्रुधा (सं० स्त्री०) क्रुध्-क्विप् विकल्पे टाप्। क्रोध, गुस्सा।

क्रुधी (वै० त्रि०) क्रुध बाहुलकात् मिनि किच्च। क्रुधनशील, गुस्सावर। (ऋक् ७।५६।८)

क्रुमु (वै० त्रि०) सर्वत्र गमनशील, सब जगह पहुंचनेवाला। (ऋक् ५।५३।९) (स्त्री०) २ सिन्धु नदकी एक शाखा नदी। (ऋक् १०।७५।६) इसका वर्तमान नाम कुरम् है। कुरम् देखो।

क्रुमुक (वे० पु०) सुपारी। (तैत्तिरीयसंहिता ५।२।८।५)

क्रुश्वरी (सं० स्त्री०) क्रुश्वन्-ङाप् रश्चान्तादेशः शृगाली, मादा गीदड़।

क्रुष्वा (सं० पु०) क्रुश-क्वनिप्। लोङ् क्रुशिवह्नीति। उण्० ४।११३। शृगाल, गीदड़।

क्रुष्ट (सं० क्ली०) क्रुश् भावे क्त। १ रोदनध्वनि, चीख। (त्रि०) कर्मणि क्त। २ आहूत, बुलाया हुवा। ३ शब्दित, आवाज लगाया हुवा। ४ अभिशप्त, बद दुआ दिया हुवा। ५ कथित, कहा हुवा। ६ अप्रिय, नागवार

क्रूर (सं० त्रि०) कृत-रक् धातु स्थाने क्रू-आदेशश्च। कृतेश्छक्रू च। उण् २।२१। १ परद्रोहकारी, दूसरेसे बुग़ज रखनेवाला। (मेघदूत २) २ निर्दय, बेरहम। इसका संस्कृत पर्याय-नृशंस, घातुक और पाप है। "न क्रूरे प्रतिहतक्रिया:" (कुमारसम्भव २।४८) ३ कठिन, कड़ा। (रघुवंश १२।४) ४ घोर, भयानक। (पञ्चतन्त्र ३।२५) ५ उष्ण, गरम। (पु०) ६ विषम-राशि। द्वादश राशियोंमें १म, ३य, ५म, ७म, ९म और ११श राशि क्रूर है।

"ओजोऽथ युग्मं विषमः समश्च क्रूरोऽथ सौम्यः पुरुषोऽङ्गना च।
चरस्थिरद्व्यात्मकनामधेयाः मेषादयोऽपि क्रमशः प्रदिष्टाः॥"
(दीपिका)

७ पापग्रह। रवि, मङ्गल, शनि और क्षीणचन्द्रको क्रूरग्रह कहते हैं। पापग्रह और शुभग्रह एक ही राशिमें रहनेसे शुभग्रह भी क्रूर ही कहलाता है। जो तिथि, राशिका अंश और नक्षत्र क्रूरग्रह विद्ध हो, उसमें यात्रादि शुभकर्म न करना चाहिये। क्योंकि ऐसा करनेसे विवाहमें दम्पतीका विच्छेद आता और यात्रामें मनुष्य मर जाता है।

८ रक्तकरवीर, लाल कनेर। ९ भूताङ्कुशवृक्ष, गावज़ुवां। १० श्येनपक्षी, बाज, शिकरा। ११ दंश, मच्छड़। १२ कङ्कपक्षी। (क्ली०) १३ अन्न, भात। १२ क्षवकवृक्ष, छातिका पेड़। १३ कृष्णधुस्तूर, काला धतूरा। १४ श्वेतपुनर्नवा।

क्रूरक (सं० पु०) रक्तपुनर्नवा।

क्रूरकर्मा (सं० त्रि०) क्रूरं हिंसकं कर्म यस्य, बहुव्री०। १ हिंसा कर्मकारी, बेरहमीका काम करनेवाला।

"द्विजिह्वाः क्रूरकर्माणो निष्ठाच्छिद्रानुसारिणः।
दूरतोऽपि हि पश्यन्ति राजानो भुजगा इव॥" (पञ्चतन्त्र १।९०)

(पु०) २ कटुतुम्बिनी नाम महाक्षुप, कड़वी तूंबीका पेड़। ३ अर्कपुष्पी, सूरजमुखी। इसका संस्कृत पर्याय—अर्कपुष्पी और जलकामुका है।

(भावप्रकाश)

क्रूरकृत् (सं० त्रि०) क्रूरं करोति, क्रूर-कृ-क्विप् तुगागमश्च। नृशंसाचारी, बेरहमीका काम करनेवाला।

क्रूरकोष्ठ (सं० त्रि०) क्रूरं कठिनं कोष्ठं यस्य, बहुव्री०। बद्धकोष्ठाशय, कड़े कोठेवाला, जिसको दस्त साफ न उतरता हो। (सुश्रुत)

क्रूरगन्ध (सं० पु०) क्रूर उग्रो गन्धो यस्य, बहुव्री०। १ गन्धक, किबरीत। (त्रि०) २ तीक्ष्णगन्धयुक्त, कड़ी बूवाला।

क्रूरगन्धा (सं० स्त्री०) क्रूरो गन्ध एकदेशो यस्याः, बहुव्री० ततष्टाप्। कन्थारीवृक्ष।

क्रूरता (सं० स्त्री०) क्रूर भावे तल्। १ परद्रोह, दूसरे-की बुराई। २ निर्दयता, बेरहमी। ३ कठिनता, कड़ा-पन। ४ घोरता, सख्ती। ५ उष्णता, गर्मी। ६ तीक्ष्णता, तीखापन, तेजी।

क्रूरदन्ती (सं० स्त्री०) कड़े दांतोंवाली दुर्गादेवी।

क्रूरदर्शना (सं० स्त्री०) श्वेतकाकमाची, सफेद कौवा-टोंटी।

क्रूरदृक् (सं० पु०) क्रूरा दृक् यस्य, बहुव्री०। यद्वा क्रूरं पश्यति, दृश-क्विन् ततः, २-तत्। १ खल, पाजी। २ शनि-ग्रह। ३ मङ्गलग्रह। (ज्योतिस्तत्त्व) ४ ग्रहोंका कोई स्थान। नीलकण्ठताजकके मतमें—इस स्थानको क्षुताख्यदृष्टि वा रिपुदृष्टि कहते हैं। (स्त्री०) क्रूराणां ग्रहाणां दृक् दृष्टिः। ५ पापग्रहोंकी दृष्टि।

क्रूरधूर्त (सं० पु०) क्रूरः कृष्णत्वात् तत्सदृशो धूर्तः। कृष्णधुस्तूर, काला धतूरा।

क्रूरप्रसादन (सं० त्रि०) क्रूरमपि प्रसादयति, क्रूर-प्र-सद-णिच्-ल्युट्। क्रूर व्यक्तिको भी शुश्रूषादि द्वारा प्रसन्न करनेवाला, सेवक। (क्ली०) क्रूरस्य प्रसादनम्, ६-तत्। क्रूर व्यक्तिकी प्रसन्नता, पाजीकी रजामन्दी।

क्रूररव, क्रूररावी देखो।

क्रूराविणी (सं० स्त्री०) १ स्त्री द्रोणकाक, मादा काला कौवा। २ मादा कौवा। ३ स्त्री ककरेट।

क्रूररावी (सं० पु०) क्रूरं कर्कशं उग्रं वा रौति, क्रूर-रु-णिनि। १ काक, कांव कांव करनेवाला कौवा। २ कर्कट। ३ द्रोणकाक, काला कौवा।

क्रूरलोचन (सं० पु०) क्रूरं लोचनं यस्य, बहुव्री०। शनैश्चर, शनिग्रह। शनिकी दृष्टिसे लोगोंका अनिष्ट होता है। इसीसे उसको क्रूरलोचन कहते हैं।

क्रूरव (सं० पु०) शृगाल, हु हु करनेवाला गीदड़।

क्रूरसत्वौषधि (सं० स्त्री०) गन्धमादनको निकटवर्ती और कैलास पर्वतके दक्षिण अवस्थित एक पहाड़ी।

"कैलासाद्दक्षिणे पार्श्वे क्रूरसत्वौषधिं गिरिम्।
हवकायात् किलोत्पन्नमंजनं विककुम्मति॥"
(ब्रह्माण्डपुराण, अनुषङ्गपाद)

क्रूरस्वर (सं० त्रि०) क्रूरः कर्कशः स्वरो यस्य, बहुव्री०। कर्कशध्वनियुक्त, कड़ी आवाजवाला। काक, उलूक, घरट्ट (चक्कियां), उष्ट्र, अश्व और गर्दभ क्रूरस्वर होते हैं। (कविकल्पलता)

क्रूरा (सं० स्त्री०) क्रूर-टाप्। १ रक्तपुनर्नवा, लाल गदहपूर्ना। २ वराटक, कौड़ी।

क्रूराकृति (सं० त्रि०) क्रूरा आकृतिर्यस्य, बहुव्री०। १ अतिशय कर्कश मूर्तिवाला, जो डरावनी सूरत रखता हो। (पु०) २ रावण। (स्त्री०) कठिना मूर्तिः; कर्मधा०। ३ कठिन मूर्ति, डरावनी सूरत।

क्रूराक्ष (सं० पु०) क्रूरे अक्षिणी यस्य, बहुव्री० समासान्त टच्। अतिशय कर्कश चक्षुओंवाला, सख्त नजर।

क्रूरात्मा (सं० पु०) क्रूर आत्मा स्वभावो यस्य, बहुव्री०। अतिशय कुटिल स्वभावयुक्त, कड़े मिजाजवाला।

क्रूरालापी (सं० स्त्री०) द्रोणकाक, काला कौवा।

क्रूराशय (सं० त्रि०) क्रूर आशयोऽभिप्रायो यस्य, बहुव्री०। मन्दाशय, बुरा मतलब रखनेवाला।

क्रूर्च (सं० पु०) १ पक्षीविशेष, कोई चिड़िया। २ श्मश्रु, दाढ़ी।

क्रूस (अं० पु०—Cross) १ ईसाई मजहब, क्रिश्चानी धर्म। २ सलीब, सूली। ३ स्वस्तिक चिह्न, आड़ा निशान। जैसे—+, ×, †, ।। ४ ईसाई मजहबका निशान। ५ नापनेका आला।

क्रैणि (सं० त्रि०) क्री कर्तरि नि। १ क्रेता, खरीदनेवाला। (क्ली०) भावे नि। २ क्रय, खरीद।

क्रेतव्य (सं० त्रि०) क्री कर्मणि तव्य। १ क्रय करने योग्य, खरीदा जानेवाला। (क्ली०) भावे तव्य। २ क्रय, खरीद।

क्रेता (सं० त्रि०) क्री-तृच्। क्रय करनेवाला, खरीददार।

क्रेय (सं० त्रि०) क्री कर्मणि यत्। १ खरीदने लायक। (क्ली०) भावे यत्। २ खरीद।

कैलुलेन्दुपुर—युक्तप्रदेशके गाजीपुर जिलेका गङ्गातीरस्थ एक प्राचीन स्थान। इसका पूर्व नाम धनपुर और वर्तमान नाम मसौंदो है। यहां किसी समय गुप्तराजाओंकी राजधानी रही। प्राचीन मन्दिरादिके ध्वंसावशेष और खोदित शिलालिपि द्वारा इसका थोड़ा परिचय मिलता है। यहां गुप्तराजाओंकी कुछ मुद्रायें निकली हैं।

क्रैडिन (वै० त्रि०) क्रीडी मरुत् देवताऽस्य, क्रीडिन्-अण् बाहुलकात् न लोपाभावः। मरुत् देवता सम्बन्धीय (साकमेधीय एक हवि) । (शतपथब्राह्मण ११।५।२।१४)

क्रैडिनीया (सं० स्त्री०) क्रैडिनं हविः तदधिकृत्य इष्टिः, क्रीडिन-छ। एक यज्ञ। कात्यायनश्रौतसूत्रमें (५।७।१) सूत्रसे) इस यज्ञका नियम और प्रणाली प्रदर्शित हुई है।

क्रैव्य (सं० पु०) क्रिवीणां पञ्चालानां राजा, क्रिवि बाहुलकात् अत्र। पञ्चालदेशीय राजा। क्रिवि देखो।

क्रौञ्च (सं० पु०) क्रुञ्च-अच् बाहुलकात् गुणः। २ क्रौञ्च पर्वत।

"कैलासे धनदावासे क्रौञ्चः क्रौञ्चोऽभिधीयते।" (शब्दरत्नावली)

क्रौञ्चकुमारिका (सं० स्त्री०) एक राक्षसी। (दिव्यावदान)

क्रौञ्चदारण (सं० पु०) क्रौञ्चं क्रौञ्चपर्वतं दारयति, क्रौञ्च-दृ-णिच्-ल्यु। कार्तिकेय।

क्रौञ्चपदी, क्रौञ्चपदी देखो।

क्रोड़ (सं० पु०-क्ली०) क्रोड़ घनीभावे घञ्। १ शूकर, सूवर। (भारत, अनुशासन ५० अ०) २ बाहुओंका मध्यभाग, अंकवार, गोद। इसका संस्कृत पर्याय—भुजान्तर, उरः, वत्स, वक्षः, उत्सङ्ग, भोग और वपुषःप्राक् है। (वाजसनेयसं० २५।८) ३ वृक्षकोटर, पेड़की खोह। (उव्वट) ४ घोटकका उरःस्थल, घोड़ेका सीना। ५ वाराहीकन्द। ६ उत्तरदेशीय कोई ग्राम। ७ शनिग्रह।

क्रोड़कन्द (सं॰ पु॰) वाराहीकन्द।

क्रोड़कन्या (सं॰ स्त्री॰) क्रोड़स्य शूकरस्य कन्येव प्रियत्वात्। वाराहीकन्द।

क्रोड़कशेरु, क्रोड़कशेरुक देखो।

क्रोड़कशेरुक (सं॰ पु॰) भद्रमुस्ता, नागरमोथा।

क्रोड़चूड़ा (सं॰ स्त्री॰) क्रोड़े चूड़ा यस्याः, बहुव्री॰। मण्डूकपर्णी, बड़ी गोरखमुण्डी।

क्रोड़पत्र (सं॰ क्ली॰) क्रोड़े उपचारात् मध्ये स्थितं पत्रम्, ७-तत्। अतिरिक्त पत्र, जमीमा। (Suppliment) पुस्तक वा समाचारपत्रका कोई अंश परित्यक्त वा पतित होनेसे क्रोड़पत्र लिख या छाप कर उसमें लगा दिया जाता है।

क्रोड़पर्णी (सं॰ स्त्री॰) क्रोड़े कण्टकमध्ये पर्णं यस्याः, बहुव्री॰, ततो गौरादित्वात् ङीष्। कण्टकारिका, भटकटैया।

क्रोड़पात् (सं॰ पु॰) क्रोड़े पादोऽस्य, पादस्य पात् आदेशः। कच्छप, कछुवा।

क्रोड़पाद (सं॰ पु॰) विकल्पेन पात् आदेशः। कच्छप।

क्रोड़पुच्छी (सं॰ स्त्री॰) पृश्निपर्णी, पिठवन।

क्रोड़मल्लक (सं॰ पु॰) भिक्षुक, भिखारी। (दिव्यावदान)

क्रोड़ा (सं॰ स्त्री॰) १ शूकरी, मादा सुअर। २ बाहुवोंका मध्य, अंकवार। ३ वाराहीकन्द।

क्रोड़ाङ्ग (सं॰ पु॰) क्रोड़े अङ्गानि यस्य, बहुव्री॰। कच्छप, कछुआ।

क्रोड़ाङ्घ्रि (सं॰ पु॰) क्रोड़े अङ्घ्रिर्यस्य, बहुव्री॰। कच्छप, सङ्गपुश्त, बाखा।

क्रोड़ादि (सं॰ पु॰) क्रोड़ आदिर्यस्य गणस्य, बहुव्री॰। पाणिनिका एक गण। इस गणके उत्तर स्त्रीलिङ्गमें ङीष् नहीं होता। न क्रोडादिबह्वचः। पा ४।१।५६। क्रोड़, नख, खुर, गोखा, उखा, शिखा, वाल, शफ, शुक्र, भग, गल, घोण, नाल, भुज, गुद और कर—सकलको क्रोड़ादिगण कहते हैं।

क्रोड़ी (सं॰ स्त्री॰) क्रोड़जातौ गौरादित्वात् विकल्पे ङीष्। १ वराहजातीय स्त्री, मादा सूवर। २ वाराहीकन्द।

क्रोड़ीकन्या (सं॰ स्त्री॰) वाराहीकन्द।

क्रोड़ीकरण (सं॰ क्ली॰) क्रोड़-च्वि-कृ भावे क्तिन्। आलिङ्गन, हमागोशी, अंकवार।

क्रोड़ीकृति (सं॰ स्त्री॰) क्रोड़-च्वि-कृ-भावे क्तिन्। आलिङ्गन, हमागोशी।

क्रोड़ीमुख (सं॰ पु॰) क्रोड्याः शूकर्या मुखमिव मुखं यस्याः, बहुव्री॰। गण्डकपशु, गैंड़ा।

क्रोड़ीमुखी (सं॰ स्त्री॰) क्रोड़ी मुखजातित्वात् ङीष्। गण्डकपत्नी, मादा गैंड़ा।

क्रोड़ेष्टा (सं॰ स्त्री॰) क्रोड़स्य इष्टा प्रिया। मुस्ता, मोथा।

क्रोथ (सं॰ पु॰) क्रुथ हिंसायां भावे घञ्। हनन, मारकाट।

क्रोध (सं॰ पु॰) क्रुध भावे घञ्। १ द्वेष, कोप, गुस्सा, डाह। कोई प्रतिकूल घटना उपस्थित होने पर तीक्ष्णताके प्रादुर्भाव-जैसी किसी चित्तवृत्तिका नाम क्रोध है। (साहित्यदर्पण ३) साहित्यदर्पणके मतमें क्रोध रौद्ररसका स्थायिभाव है। भगवद्गीताको देखते—किसी कारणसे पूरण न होनेवाला अभिलाष ही क्रोध रूपमें परिणत होता है। क्रोध रजोगुणका कार्य है। प्रथम सङ्कल्प वासनासे अभिलाष उठता है। किसी कारणसे अभिलाष पूर्ण न होने पर क्रोधरूपमें परिणत होता है। क्रोधान्ध व्यक्ति युद्ध व्यतीत दूसरा कोई कार्य कर नहीं सकता। क्रोधी व्यक्ति अंधे और बहरेको भांति चेतन रहते भी अचेतनको तरह कोई भी कर्तव्य स्थिर करनेमें असमर्थ होता है। हितोपदेश उसके कानमें पहुंच नहीं सकता। क्रोधसे इसी प्रकार सम्मोह होता है। मोह होनेसे स्मृति बिगड़ जाती है। स्मृतिनाशसे बुद्धि नष्ट होती है। बुद्धिनाश होनेसे विनष्ट होना पड़ता है। सभीके लिये क्रोध परित्याग करना उचित है। क्रोध परित्याग करनेका प्रधान उपाय क्षमा ही है। (नीतिशास्त्र)

क्रोधका संस्कृत पर्याय कोप, अमर्ष, रोष, प्रतिघ, रुट, क्रोत्, आमर्ष, भीम, क्रोधा और क्रुधा है।

पुराणोंके मतमें सर्वप्रथम ब्रह्माको भ्रूसे क्रोध निकला है। शरीर मध्यस्थित दुष्ट रिपुवोंके अन्तर्गत यह भी एक रिपु है।

"काम क्रोध मद लोभ न जाके ।
तात निरन्तर वश मैं ताके ॥" (तुलसी)

हेल, हर, हृणि, त्यज, भाम, रह, ह्वर, तपुषी, जर्णि, मन्यु और व्यथि:—क्रोधके एकादश नाम हैं ।

२ वत्सरविशेष । ज्योतिःशास्त्र प्रसिद्ध षष्टिसंवत्सरोंमें एक वत्सर है । यह वत्सर आनेसे सकल जगत् आकुल हो जाता और प्राणियोंमें क्रोध अधिक दिखाता है ।

क्रोधकृत् (सं० त्रि०) क्रोधं करोति, क्रोध-कृ-क्विप् । १ क्रोधकारी, गुस्सा करनेवाला । २ परमेश्वर । (विष्णुपुराण)

ईश्वरके क्रोधका कारण न रहते भी जो व्यक्ति उसकी आज्ञाका प्रतिपालन अर्थात् अपना कर्तव्य कर्म नहीं करता, जगत्पिता परमेश्वरका उस पर क्रोध रहता है । यह प्राणियोंके अदृष्टानुसार ही हुआ करता है ।

क्रोधज (सं० पु०) क्रोधात् जायते, क्रोध-जन-ड । १ क्रोधसे उत्पन्न होनेवाला मोह । (त्रि०) २ क्रोधसे उत्पन्न, गुस्से से निकला हुवा । खलता, साहस, द्रोह, ईर्ष्या, असूया (गुणोंके प्रति दोषारोप,) अर्थदूषण (रुपये पैसेकी चोरी), वाक्यपारुष्य और दण्डपारुष्य इन आठोंका नाम क्रोधज गण है । (मनु ७।४८)

क्रोधज्वर (सं० पु०) क्रोधजन्य ज्वर, गुस्से का बुखार ।

क्रोधन (सं० त्रि०) क्रुध-युच् । क्रुध मण्डार्थे भाष । पा ३।२।१५१। २ क्रोधयुक्त, गुस्सासे भरा हुआ, आग-बबूला । इसका संस्कृत पर्याय—अमर्षण, कोपी, क्रोधी और रोषण है । (वैपोस'हार ३ अङ्क)

(पु०) २ कौशिकका एक पुत्र । यह गर्गमुनिके शिष्य थे । (हरिवंश २१३ अ०) ३ कोई कुरुवंशीय राजा । इनके पुत्रका नाम देवातिथि था । (भागवत ९।२२।११) ४ ज्योतिःशास्त्रके षष्टिसंवत्सरोंमेंसे एक । तन्त्रके मतानुसार इस वर्षमें रोग, मरण, दुर्भिक्ष, विरोध और प्राणियोंको नानाविध विपद् होती है । ५ एक तन्त्रोक्त भैरव ।

क्रोधना (सं० स्त्री०) क्रोध-युच् स्त्रियां टाप् । १ कोपवती । इसका संस्कृत पर्याय—भामिनी और चण्डी है । (रामायण २।७०।१०) २ ग्रन्थिपर्णीलता, गंठवना ।

क्रोधनीय (सं० त्रि०) क्रोध्यते ऽनेन, क्रोध करणे अनीयर् । क्रोधकारण, गुस्सा दिलानेवाला । (रामायण २।४१।३)

क्रोधमय (सं० त्रि०) क्रोधप्रचुर, अधिक क्रोधविशिष्ट, गुस्सावर ।

क्रोधमूर्च्छित (सं० त्रि०) क्रोधेन मूर्च्छितः, ३-तत् । यद्वा क्रोधो मूर्च्छितो बहुलीभूतो यस्य बहुव्री० । १ अतिक्रुद्ध, निहायत नाराज, गुस्से से बेहोश । (रामायण १।१।४९) (पु०) क्रोधः क्रोधमय इव मूर्च्छितः, । २ चोरानामक गन्धद्रव्य, एक खुशबूदार चीज, चोया ।

क्रोधवन्त (हिं० वि०) क्रोधमय, नाराज ।

क्रोधवर्धन (सं० त्रि०) क्रोधं वर्धयति, वृध-णिच्-ल्यु, २-तत् । १ कोपवर्धक, गुस्सा बढ़ानेवाला । (पु०) २ कोई असुर । (हरिवंश १६३ अ०) यह असुर भारतके युद्धकालको दण्डधार नृप नामसे अवतीर्ण हुआ था । (भारत, १।६७ अ०)

क्रोधवश (सं० पु०) क्रोधस्य वशोऽधीनत्वम् । १ क्रोधकी अधीनता, गुस्सेकी पाबन्दी । (मनु २।२१४)

२ महीतलमें अवस्थित अनेक फणाविशिष्ट काद्रवेय नामक एक सर्प । (भागवत ५।२४।२९)

हिन्दीमें यह शब्द क्रियाविशेषण जैसा भी व्यवहृत होता है ।

क्रोधवशा (सं० स्त्री०) कश्यपकी एक पत्नी (हरिवंश ३अ०) इनके गर्भसे दन्दशूक प्रभृति सर्पोंकी उत्पत्ति हुई । (भागवत ६।२८)

क्रोधसम्भव (सं० पु०) क्रोधः सम्भवोऽस्य, बहुव्री० । १ मोह । क्रोधस्य सम्भवः, ६-तत् । २ कोपकी उत्पत्ति, गुस्सेका उठान । (आह्निकतत्त्व रघुनन्दन)

क्रोधहन्ता (सं० पु०) एक असुर (हरिवंश ४२ अ०)

क्रोधहा (सं० पु०) क्रोधं हन्ति, हन्-क्विप् । १ विष्णु । (विष्णुपुराण) (त्रि०) २ कोपनाशक, गुस्सेको मिटानेवाला ।

क्रोधा (सं० स्त्री०) क्रोध स्त्रियां टाप् । दक्षराजकी एक कन्या । (भारत १।६५।१२)

क्रोधान्वित (सं० त्रि०) क्रोधेन अन्वितो युक्तः, ३-तत् । क्रोधयुक्त, नाराज ।

क्रोधालु (सं० त्रि०) क्रुध बाहुलकात् आलुच् । कोपशील, गुस्सावर, बिगड़ उठनेवाला । (सुश्रुत)

क्रोधित (हिं० वि०) क्रुद्ध, नाराज।

क्रोधी (सं० त्रि०) क्रोध-णिनि यद्वा क्रोध अस्त्यर्थे इनिः। १ अल्पमें ही जिसको क्रोध उत्पन्न हो, थोड़ेमें ही बिगड़ उठनेवाला, गुस्सावर। सुश्रुतके मतमें वायुप्रकृति लोग ही अधिक क्रोधी होते हैं। (पु०) २ महिष, भैंसा।

क्रोधेशभैरव (सं० पु०) भैरवतन्त्रकार।

क्रोश (सं० पु०) क्रुश भावे घञ्। १ रोदन, रुलाई। २ आह्वान, पुकार, बुलावा। क्रोशति यतः, अपादाने घञ्। ३ कोस, दो मील। लीलावतीके मतमें चार हाथका एक दण्ड और दो हजार दण्ड अर्थात् आठ हजार हाथोंका एक कोस होता है। मार्कण्डेय-पुराणके मतसे चार हाथका एक धनुः और हजार धनुःका एक कोस होता है—

"चतुर्हस्तो धनुर्दण्डो नालिका तद्युगेन च।
क्रोशो धनुःसहस्रे च॥" (हेमा० दा० मार्कण्डे०)

क्रोशशब्दका मूल अर्थ 'आह्वान' देखनेसे है और इसलिये ज्ञात होता है पहले किसो स्थानसे किसीको चीत्कार करके बुलाने पर वह शब्द जितनी दूर जाता, एक कोस कहलाता था। आज भी गुजरात और जनकपुर अञ्चलमें गायकी पुकार जितनी दूर जाती, वही कोस कहलाता है। साइबेरियामें स्थान स्थान पर इसी क्रोश शब्दका अपभ्रंश 'किवोसेस्' (Kiosses) व्यवहृत होता है। पश्चिममें कोस दो प्रकारका होता है—कच्चा कोस और पक्का कोस। परिमाणमें बड़ी गड़बड़ी रहनेसे अकबर बादशाहने ५००० इलाही गजोंका एक कोस बांध दिया था। (आईन-अकबरी) गज देखो।

४ मुहूर्त। (शक्तिसङ्गमतन्त्र ६ पटल)

क्रोशताल (सं० पु०) क्रोशं व्याप्य तालः शब्दो यस्य, बहुव्रो०। ढक्का, ढोल।

क्रोशध्वनि (सं० पु०) क्रोशं व्याप्य ध्वनिरस्य, बहुव्रो०। ढक्का, ढोल।

क्रोशन (सं० क्लो०) क्रोश-ल्युट्। १ क्रन्दन, कातरध्वनि। २ आह्वान, पुकार।

क्रोशयुग (सं० क्लो०) क्रोशस्य युगम्, ६-तत्। गव्यति, दो कोस।

क्रोशी (सं० त्रि०) क्रुशि-णिनि। शब्दकारक, आवाज लगानेवाला।

क्रोष्टपुच्छिका (सं० स्त्री०) पृश्निपर्णी, पिठवन।

क्रोष्टा, क्रोष्टुक देखो।

क्रोष्टु (सं० पु०) क्रोशति रौति, क्रुश-तुन्। सितनिगमिमसिसच्यविधाञ्क्रुशिभ्यस्तुन्। उण् १.७०। १ शृगाल, सियार। (वाजसनेयसं० २४।३२) २ यदुवंशीय नृपतिविशेष। गान्धारी और माद्री नाम्नी इनके दो पत्नियां रहीं। इसी वंशमें जगत्पावन भगवान् श्रीकृष्णने जन्म लिया था।

(हरिवंश २५ अ०)

क्रोष्टुक (सं० पु०) क्रोष्टु स्वार्थे कन्। १ शृगाल, गीदड़। (भारत १।१४०) २ शृगालकोली, झड़बेरी।

क्रोष्टुकर्ण (सं० पु०) किसी ग्रामका नाम। यह शब्द पाणिनिके तक्षशिलादि गणान्तर्गत है।

क्रोष्टुकपुच्छिका (सं० स्त्री०) क्रोष्टुकस्य शृगालस्य पुच्छमिव पुच्छमस्त्यस्याः, क्रोष्टुकपुच्छ-ठन्-टाप् अकारस्य इकारः। १ पृश्निपर्णी, पिठवन। २ गोलोमिका, पथरी।

क्रोष्टुकपुच्छी, क्रोष्टुकपुच्छिका देखो।

क्रोष्टुकमान (सं० पु०) किसी व्यक्तिका नाम। यह शब्द यस्कादि गणान्तर्गत है। इसके उत्तर अपत्यार्थमें जो प्रत्यय आता, पुंलिङ्ग और क्लीवलिङ्गके बहुवचनमें उसका लोप हो जाता है।

क्रोष्टुकमूलिका, क्रोष्टुकपुच्छिका देखो।

क्रोष्टुकमेखला, क्रोष्टुकपुच्छिका देखो।

क्रोष्टुकशिरः (सं० क्लो०) एक वातरक्तज रोग। जानुके मध्य वातरक्तजनित, अतिशय वेदनाविशिष्ट और शृगालके मस्तक-जैसा जो शोथ उठ आता, क्रोष्टुकशिरा कहलाता है। शिराविधकी प्रणालीसे गुल्फके चार अङ्गुल ऊपर शिर विद्ध कर देने पर क्रोष्टकशिरा रोगका प्रतीकार होता है। (सुश्रुत) इस रोगमें गुडूची, गुग्गुल और त्रिफला वा वृहद्दारकको पानी, दूध या अण्डीके तेलके साथ पीना चाहिये। (वैद्यकनिघण्टु)

क्रोष्टुकशीर्ष, क्रोष्टुकशिरः देखो।

क्रोष्टुघण्टिका (सं० स्त्री०) अस्थिसंहारक।

क्रोष्टुपाद (सं० पु०) एक ऋषि। यह शब्द पाणिनिके यस्क गणान्तर्गत है।

क्रोष्टुफल (सं० क्ली०) क्रोष्टोः प्रियं फलम्। इङ्गुदी-वृक्ष।

क्रोष्टुमान (सं० पु०) किसी ऋषिका नाम। यह शब्द यस्कादि गणके अन्तर्गत है।

क्रोष्टुमाय (सं० पु०) एक ऋषि। यह यस्कादिगणा-न्तर्गत एक शब्द है।

क्रोष्टुविन्ना (सं० स्त्री०) क्रोष्टुभिः विन्ना प्राप्ता इव। १ पृश्निपर्णी, पिठवन। इसका संस्कृत पर्याय—पृथक्-पर्णी, चित्रपर्णी, अङ्घिपर्णी और सिंहपुच्छी है। २ वृक्षविशेष, कोई पेड़।

क्रोष्टुशीर्ष, क्रोष्टुकशिरः देखो।

क्रोष्टुहित (सं० पु०)चोरा नामक गन्धद्रव्य, चोया।

क्रोष्टू (सं० स्त्री०) वृश्चिकाली, बिछुवा।

क्रोष्टेक्षु (सं० पु०) क्रोष्टोः प्रिय इक्षुः पृषोदरादिवत् साधुः। श्वेतेक्षु, सफेद गन्ना।

क्रोष्ट्री (सं० स्त्री०) क्रोष्टु-ङीप् कोष्टृ आदेशः। १ शुक्ल-भूमिकुष्माण्ड। २ लाङ्गलिका। ३ शृगाली। ४ पिप्पली। ५ वाराहीकन्द। ६ वृश्चिकाली।

क्रौञ्च (सं० पु०) क्रुञ्च स्वार्थे अण्। १ प्लवजातीय वकपक्षी करांकुल चिड़िया। (रामायण १।२।१५) इसका संस्कृत पर्याय—क्रुङ्, कुञ्च, क्रुञ्चा, क्रौञ्च, कालिक, कालाक और कलिक है। क्रौञ्चका मांस वृष्य, अतिशय रुचिकर, दीपन और अश्मरी, शोष, मूर्च्छा तथा कासरोगनाशक है। (हारीत) २ पद्मबीज, कमलगट्टा। ३ कुररपक्षी। ४ कोई पर्वत। (तैत्तिरीय आरण्यक १।३१।२) हरिवंशके मतमें यह पर्वत हिमालयका पौत्र और मैनाकका पुत्र है। क्रौञ्च अतिशय शुभ्रवर्ण है। इस पर्वतमें नानाविध रत्न मिलते हैं। (हरिवंश १८।१३—१४)

५ मयदानवका पुत्र, कोई असुर। यह असुर क्रौञ्च द्वीपमें रहता था, कार्तिकेयसे लड़ने पर निहत हुवा। क्रौञ्च दैत्य अपनी राजधानीके निकट किसी पर्वत पर अलौकिक कर्म करता था। दैत्यके नामानुसार उक्त पर्वतका भी नाम क्रौञ्च पड़ गया। (खगेन्द्रसंहिता) ६ शाक-पूणिके शिष्य। यह एक निरुक्तकार थे। (विष्णुपु० ३।४।२)

७ अर्हतोंकी कोई ध्वजा। ८ कोई राक्षस। ९ सप्त-द्वीपके अन्तर्गत एक द्वीप। इसका परिमाण सोलह लक्ष योजन है। क्रौञ्चद्वीपकी चारो ओर दधिमण्ड समुद्र लगा है। विष्णुपुराणके मतमें द्युतिमान् नामक कोई प्रबलपराक्रान्त नरपति इसके अधिपति थे। उनके सात पुत्र हुवे। राजाने क्रौञ्चद्वीप सात भाग करके अपने पुत्रोंको दिया था। जिस राजकुमारने जहां राजत्व किया, उसीके नामानुसार उस अंशका नाम रखा गया। यह सातो भाग सात वर्षों-जैसे विख्यात हैं। सातो वर्षोंके नाम—कुशल, मन्दग, उष्ण, पीवर, अन्धकारक, मुनि और दुन्दुभि हैं। क्रौञ्च, वामन, अन्ध-कारक, हरशैल, देवावृत्, पुण्डरीकवान् और दुन्दुभि-सात वर्ष पर्वत हैं। इनमें एक एक यथाक्रम एक एक वर्षमें अवस्थित है। क्रौञ्चद्वीपमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र चारवर्णोंका वास है। इस देशमें बहुत सी नदियां हैं। उनमें गौरी, कुमुद्वती, सन्ध्या, रात्रि, मनोजवा, ख्याति और पुण्डरीका—सात नदियां प्रधान हैं। क्रौञ्चद्वीपवासी जनार्दन और योगी रुद्रदेवको उपासना करते हैं। (विष्णुपुराण) भागवतके अनुसार क्रौञ्चद्वीपको चारो ओर क्षीरसमुद्र है। इस द्वीपमें क्रौञ्च नामक एक प्रधान पर्वत खड़ा है। उसीके नामानु-सार द्वीपका भी नाम क्रौञ्च पड़ा है। प्रियव्रतके पुत्र घृतपृष्ठ नामक नरपति इस द्वीपमें राजत्व करते थे। उनके सात पुत्र हुए। नरपतिने यथासमय द्वीपको सात भागोंमें विभक्त करके उन्हें अर्पण किया था। उन्हींके पुत्रों नामानुसार यह सातो अंश सात वर्ष—जैसे विख्यात हैं। वर्षोंके नाम—आम्र, मधुरुह, मेघपृष्ठ, सुधामा, भ्राजिष्ठ, लोहितवर्ण और वनस्पति है। इनके शुक्ल, वर्धमान, भोजन, उपबर्हण, नन्द, नन्दन और सर्वतोभद्र सात वर्ष पर्वत हैं। इनसे प्रत्येक यथाक्रम एक एक वर्षमें अवस्थित है। अभया, अमृतौघा, आर्यका, तीर्थवती, रूपवती, पवित्रवती और शुक्ला—सात प्रधान नदियां हैं। (भागवत ५।२०।१९-२२)

यह स्वीकार न करनेसे गड़बड़ी मिटनेकी कहां सम्भावना है कि कल्पभेदसे एक क्रौञ्चद्वीप ही नाना-प्रकार होता है।

(क्लो०) १० सामविशेष। सामगेय गानके १५ प्रपाठक—द्वितीयार्धका ८ और ९ गान। ११ महात्मा सारसका बसाया हुआ कोई नगर। यह सह्याद्रिके पश्चिम पार अवस्थित है। (हरिवंश)

क्रौञ्चक (सं० त्रि०) क्रुञ्चकीयायां भवः, क्रुञ्चकीया-अण् छप्रत्ययस्य लोपः। (बिल्वकादिभ्यश्छस्य लुक्। पा ६।४।१५३।) क्रुञ्चकीयासे उत्पन्न। क्रुञ्चकीया देखो।

क्रौञ्चदारण (सं० पु०) क्रौञ्चं असुरं पर्वतं वा दारयति, क्रौञ्च-दृ-णिच्-ल्यु। कार्तिकेयने क्रौञ्चपर्वत विदारण किया था। इसीसे उनका नाम क्रौञ्चदारण पड़ गया। उपाख्यान इस प्रकार है—किसी क्रममें क्रौञ्च पर्वत नितान्त दुर्वृत्त बन गया। उसके दौरात्म्यसे सभी द्वीपवासी उत्पीड़ित हो कार्तिकेयके शरणागत हुए। देवसेनापति कार्तिकेयने उसे दबानेकी प्रतिज्ञा की थी। उन्होंने श्वेतगिरिको लक्ष्य करके बाण मारा। उसी बाणसे क्रौञ्चका सकल शरीर क्षत विक्षत हो गया। वह घोरतर आर्तनाद करने लगा। उसके दुःखसे दुःखित हो दूसरे पर्वत भी रोये थे। हंस, गृध्र प्रभृति वनचर उसकी माया छोड़ सुमेरु पर्वतको चले गये। कार्तिकेय घबड़ानेवाले लड़के न थे। उन्होंने खड्ग उठा क्रौंच पर दारुण आघात किया था। उस चोटसे क्रौञ्चका शृङ्ग टूट पड़ा। क्रौञ्चने भीत हो पृथिवीको छोड़ा था। (भारत ९।२२४।३१-३६) मृगेन्द्रसंहिताको देखते उपाख्यान अन्यरूप है—क्रौञ्चद्वीपमें क्रौञ्च नामक कोई दुर्वृत्त असुर रहता था। उक्त पर्वत पर ही उसका दुर्ग भी रहा। क्रौञ्चद्वीपवासियोंने असुरका दौरात्म्य सह न सकने पर देवताओंसे कहा था। देवोंके समाजसे असुरको निकाल देनेके लिये कार्तिकेय भेजे गये। असुर सहजमें निकलना न चाहता था। उसके साथ कार्तिकेयका युद्ध हुवा। युद्धमें परास्त हो क्रौञ्चासुरने दुर्गका आश्रय लिया था। देवसेनापति कार्तिकेयने अपने असाधारण कौशलसे किला तोड़ असुरको मार डाला। (मृगेन्द्रसंहिता) किसी किसी पुराणके मतमें क्रौञ्चासुर तारकासुरका प्रधान सेनापति था।

क्रौञ्चद्वीप (सं० पु०) क्रौञ्चश्चासौ द्वीपश्चेति, कर्मधा०। सप्त द्वीपान्तर्गत एक द्वीप। क्रौञ्च देखो।

क्रौञ्चनायक (सं० पु०) पद्मबीज, कमलगट्टा।

क्रौञ्चपद्म (सं० पु०) घोटकविशेष, कोई घोड़ा।
(रामायण ५।१२।३५)

क्रौञ्चपदा (सं० स्त्री०) छन्दोविशेष। इसके चारो चरण समान होते हैं। प्रत्येक चरणमें पचीस-पचीस स्वरवर्ण रहेंगे। उनमें प्रथम, चतुर्थ, पञ्चम, षष्ठ, नवम, द्वादश और पञ्चविंशतितम अक्षर गुरु और अपर सकल ह्रस्व होते हैं। पञ्चम, दशम, सप्तदश और शेष अन्तिम अक्षरमें यति स्थान है। (वृत्तरत्नाकर)

क्रौञ्चपदी (सं० स्त्री०) एक तीर्थ। इस तीर्थमें स्नान करनेसे ब्रह्महत्याका पाप विनष्ट होता है।
(भारत, अनुशासन २५ अ०)

क्रौञ्चपुर (सं० क्लो०) यदुवंशीय सारस नृपति-निर्मित एक नगर। इस नगरमें चम्पक और अशोकके पेड़ ही अधिक हैं। क्रौञ्चपुरकी मृत्तिका ताम्रमय है। यह सह्याद्रि समीपस्थ दक्षिणापथके करवीरपुरके निकट अवस्थित है। खट्वाङ्गी नाम्नी नदी पार होके क्रौञ्चपुर पहुंचते हैं। इस नगरमें अनेक तपोधन मुनियोंका आश्रम था। (हरिवंश ६ और ९५ अ०)

क्रौञ्चबन्धम् (सं० अव्य०) क्रौञ्च-बन्ध-णमुल्। (संज्ञायाम् पा ३।४।४२।) बन्धविशेष, एक आसन। (सिद्धान्तकौमुदी)

क्रौञ्चरन्ध्र (सं० क्लो०) क्रौञ्चस्य क्रौञ्चपर्वतस्य रन्ध्रम्, ६-तत्। क्रौञ्चपर्वतका एक रन्ध्र या छेद। कवियोंके मतमें वर्षाकालको हंस आदि इस देशमें नहीं रह सकते, वह क्रौञ्चरन्ध्रकी राह मानस-सरोवर पहुंचते हैं। (मेघदूत १)

परशुरामने धूर्जटिके निकट अस्त्रविद्याका अभ्यास किया था। कार्तिकेयको गर्व हो गया—हमने क्रौञ्चपर्वत विदारण किया है। तेजस्वी परशुराम यह सह न सके। उन्होंने क्रौञ्चपर्वतको एक बाण मारा, जो उसे इस पारसे फोड़ कर उस पार निकल गया। प्राचीन कवियोंके मतमें उसी रन्ध्रकी राह हंस प्रभृति मानस-सरोवरको चले जाते हैं। (मेघदूतटीका, मल्लिनाथ)

क्रौञ्चलोहित (सं० त्रि०) हिङ्गुल, ईंगुर।

क्रौञ्चवधू (सं० स्त्री०) क्रौञ्चानां वधूः, ६-तत्। स्त्रीबक, मादा बगला।

क्रौञ्चवान् (सं० पु०) क्रौञ्चा वकभेदाः वाहुल्येन सन्त्यत्र क्रौञ्च-तुप् मस्य वः। १ पर्वतविशेष, एक पहाड़। (हरिवंश २०२) (त्रि०) २ क्रौञ्चयुक्त, क्रौञ्चपर्वत वा क्रौंचपक्षी रखनेवाला।

क्रौञ्चसूदन (सं० पु०) क्रौञ्चं मयदैत्यसुतं सूदयति नाशयति, क्रौंचसूद-णिच्-ल्यु। कार्तिकेय, मय दैत्यके पुत्र क्रौञ्च असुरको मारनेवाले। (सुश्रुत)

क्रौञ्चा (सं० स्त्री०) क्रौंच-टाप्। १ क्रौंचभार्या, मादा बगला। २ पद्मबीज, कमलगट्टा। किसी किसी आभिधानिकके मतमें क्रौञ्च शब्दके उत्तर टाप् नहीं आता, ङीप् लग कर क्रौंची शब्द बन जाता है। क्रौञ्चीशब्द देखो।

क्रौञ्चादन (सं० क्लो०) अद कर्मणि ल्युट् क्रौंचस्य अदनम्, ६-तत्। १ पिप्पली, पीपल। २ मृणाल, कमलकी डंडी। ३ घेंचली, घुंघची। ४ चिञ्चटक तृण, एक घास। यह गुरु, अजीर्णकारी और शीतल है।

(राजवल्लभ)

क्रौञ्चादनी (सं० स्त्री०) पद्मबीज, कमलगट्टा।

क्रौञ्चारण्य (सं० क्लो०) जनस्थानसे तीन कोस दूर और मतङ्गाश्रमसे तीन कोस पश्चिम अवस्थित एक वन।

(रामायण ३।६९ सं०)

क्रौञ्चाराति (सं० पु०) क्रौंचस्य अरातिः, ६-तत्। १ कार्तिकेय। २ परशुराम।

क्रौञ्चारि (सं० पु०) क्रौंचस्य अरिः, ६-तत्। १ कार्तिकेय। २ परशुराम। क्रौंचरिपु, क्रौंचशत्रु प्रभृति शब्द भी इसी अर्थमें व्यवहृत होते हैं।

क्रौञ्चारुण (सं० पु०) क्रौंचस्येवारुणः। व्यूहविशेष। क्रौंचवक-जैसे आकारविशिष्ट अरुणवर्ण व्यूहको क्रौञ्चारुण कहते हैं।

क्रौञ्चिक (सं० पु०) क्रौञ्चिकाके पुत्र एक ऋषि।

(शतपथब्रा० १४।९।४।३२)

क्रौंची (सं० स्त्री०) १ वकी, मादा बगला। २ कश्यपकी एक कन्या। कश्यपकी ताम्रा नाम्नी पत्नीसे यह उत्पन्न हुई थीं। पुराणानुसार क्रौंची उल्लुओंकी आदि माता रहीं।

क्रौड़ (सं० त्रि०) क्रोड़स्य इदम्, क्रोड़-अण्। शूकर-सम्बन्धीय, सूअरका।

क्रौड़ि (सं० पु०) एक ऋषि। (पाणिनि)

क्रौड्या (सं० स्त्री०) क्रौड़ेरपत्यं स्त्री, क्रौड़ि-अण् ष्यङ् आदेशश्च। क्रौड्यादिभ्यश्च। पा ४।१।८०। क्रौड़िकी कन्या।

क्रौर (सं० क्लो०) क्रूरस्य भावः क्रूर-ष्यञ्। क्रूरता, खलता, पाजीपन। (शाकुन्तल)

क्रौशशतिक (सं० त्रि०) क्रोशशतं गच्छति, क्रोश-शत-ठञ्। क्रोशशतयोजनशतयोरुपसंख्यानम्। पा ५।१।७४वा। १ शतक्रोश गमनकारी, सौ कोस जानेवाला। क्रोशशतादभिगमनमर्हति। २ शतक्रोश दूरसे आगत, सौ कोससे आया हुआ। स्त्रीलिङ्गमें ङीप् आनेसे क्रौशशतिकी बनता है।

क्रौष्टुकि (सं० पु० स्त्री०) क्रोष्टुकस्य ऋषेरपत्यम्। १ क्रोष्टुक ऋषिके अपत्य। २ कोई प्राचीन ऋषि और वैयाकरण। (निरुक्त ८।२) ३ गर्गके पुत्र। यह एक ज्योतिर्विद् थे। बृहत्संहिता (१।८) की टीकामें भट्टोत्पलने इनका मत उद्धृत किया है। ४ त्रिगर्तषष्ठोके अधीनस्थ क्षत्रियजातिविशेष। (पा ५।३।११६ कारिका)

क्रौष्टायण (सं० पु०) क्रोष्टोरपत्यम्, क्रोष्टु-फक् क्रोष्टु स्थाने क्रोष्टृ आदेशश्च। क्रोष्टुके अपत्य। स्त्रीलिङ्गमें ङीप् होता है।

क्रौष्टायणक (सं० त्रि०) क्रौष्टायणेन निर्वृत्तः, क्रौष्टायण-वुञ्। क्रौष्टायण द्वारा निर्मित, क्रोष्टुके लड़केका बनाया हुआ।

क्रौष्टायन्य (सं० पु०) क्रौष्ट्र्या गोत्रापत्यम्, क्रौष्ट्री-फक् ततः स्वार्थे ञ्य। क्रोष्टुके गोत्रोत्पन्न।

क्र्यादि (सं० पु०) क्री आदिर्यस्य, बहुव्री०। क्री आदि कई धातु।

क्लथन (वै० क्लो०) क्लथ वधे ल्युट्। हतके मध्य अपवतन। (वेददीपमें महीधर, ३९।५)

क्लदीवान् (वै० पु०) क्लेदविशिष्ट। (अथर्व ७।९०।३)

क्लन्द (सं० त्रि०) क्लन्द रोदने घञ् ततः अर्श आदित्वात् अच्। १ रोदनयुक्त, रोनेवाला। (पु०) २ रोदन, रुलाई।

क्लब (अं० पु० Club) समाज, सहभोजियोंका संसर्ग, अंजुमन, मजलिस।

क्लम (सं० पु०) क्लम भावे घञ्। नोदात्तोपदेशस्य पा ७।३।३४

उक्त सूत्रसे वृद्धि निषेध है। १ आयास, क्लान्ति, थकाहट। श्रम न करके भी देहमें श्रमबोध होने और दीर्घश्वास न चलनेसे क्लम कहलाता है। इसमें विषयज्ञानमें भी बाधा हो जाती है। (सुश्रुत शारीर ४ अ०)

२ खेद, सुस्ती, ढीलापन, सख्त मिहनतके पीछे आनेवाली थकाहट।

क्लमथ (सं० पु०) क्लमअथच्। आयास, मिहनत।

क्लमी (सं० त्रि०) क्लम-घिनुन्। क्लान्तियुक्त, थकामांदा।

क्लर्क (अ० पु०—Clerk) लिपिकार, लेखक, मुंशी।

क्लाइव—बङ्गालके एक शासनकर्ता (Governor)। (Lord Clive, Baron of Plassey.) यह साहसी तथा अध्यवसायी सैनिक पुरुष और भारतमें वृटिश साम्राज्यके भित्तिस्थापनकारी रहे।

१७२५ ई०को विलायतमें सर्पसायरके अन्तर्गत मार्केट ड्रेटनके निकटवर्ती ष्टिकी नामक स्थानमें इन्होंने जन्म लिया। यह रिचार्ड क्लाइवके सर्वज्येष्ठ पुत्र थे। इनकी माताका नाम रेबेका था। पितामाताकी अवस्था उतनी सङ्गतिपन्न न होनेसे बाल्यकालको क्लाइव अपने मौसा बेली साहबके घरमें रहते थे। बेली साहबने लिखा है सात वर्षके वयसमें ही क्लाइवको ज्यादा मारपीट अच्छी लगती थी। मौसाके घरसे यह लष्टकके स्कूलमें भरती हुए। इस विद्यालयके शिक्षक डाक्टर इटन साहबने भविष्यद्वाणी की थी—क्लाइव दुर्वृत्त होते भी यदि जी जायेंगे, तो अपनी योग्यताके प्रभावसे किसी समय एक बड़े आदमी कहलायेंगे। एकादश वर्षके वयसमें यह लष्टक विद्यालयसे मार्केट ड्रेटनके स्कूलमें गये और वहां अपने साहस और दुर्वृत्तताके लिये विशेष परिचित हुये। क्लाइव सभी समय विद्यालयके सहपाठियोंको अपनी निर्भीकता और प्रभुत्व देखाते थे। ओजस्विता, साहसिकता और मनका सतेजभाव इनमें इतना प्रबल रहा कि उस बाल्यकालके चरित्रकी श्रेष्ठतासे भविष्यत् आकाश निःसन्देह उज्ज्वल आलोकमय देख पड़ता था। महल्लेके अकर्मण्य दुर्वृत्त बालकोंको इकट्ठा कर क्लाइवने गुण्डोंका एक दल बनाया। यह ग्रामके फल विक्रताओं और दूसरे दूकानदारोंसे करस्वरूप फल और पैसे (Half-pence) वसूल करते और किसी की चोरी न होनेके दायी रहते थे। किसी दिन देखनेमें आया दुःसाहसिक 'बब' क्लाइव मार्केट-ड्रेटनके गिरजाकी चूड़ाके उपरिस्थित प्रस्तरचत्वर पर स्वच्छन्द बैठे हैं। फिर कई वर्ष लन्दनमें रह मर्चेण्ट टेलरके स्कूल और पीछे हार्टफार्डसायरके हेमेल हेमष्टेड स्कूलमें पढ़ कर इन्होंने विद्याका शेष कर दिया। इनका लिखना पढ़ना ठीक न हुवा। स्वभाव दोषसे क्रमशः यह एक विद्यालयसे दूसरे विद्यालयको पहुंचाये जाते थे। परन्तु पढ़नेके बदले प्रत्येक विद्यालयमें क्लाइव दुष्ट बालकोंके प्रधान दलपति बनते रहे। ऐसी मूर्खता, दाम्भिकता और यथेच्छकारिता देख इनके पितामाता अपने एकमात्र आशास्थल राबर्ट क्लाइवको परित्याग कर देनेसे कुण्ठित न हुए। १७४३ ई०को उन्होंने ईष्ट इण्डिया कम्पनीके अधीन एक मुहर्रिरीके लिये आवेदन किया था। तदनुसार क्लाइवको १८ वत्सर वयसमें मन्द्राज आना पड़ा। पितामाताकी इच्छा थी कि वहां जाकर लड़का अर्थोपार्जन करना सीखेगा।

ठीक एक वर्ष पीछे क्लाइव मन्द्राज आ पहुंचे। इस दीर्घयात्रामें युवा क्लाइवको बड़ा ही कष्ट मिला था। वेतन अल्प लगने और उससे हाथमें रुपया न रहनेसे इन्हें ऋणग्रस्त होना पड़ा। इनके पिताने किसी भले आदमीके नाम एक सिफारिशी चिट्ठी दी थी। किन्तु क्लाइवके मन्द्राज पहुंचनेसे कुछ ही पूर्व वह भद्र पुरुष इङ्गलेण्ड चले गये।

क्लाइव बहुत गर्वित रहे। इसीलिये मालूम पड़ता है, प्रथम किसी अपरिचित व्यक्तिके साथ इन्होंने आलाप नहीं किया। विशेषतः इनके—जैसे उद्यमशील और साहसिक व्यक्तिके लिये वैसे लेखकका कार्य अच्छा लगता न था। स्वदेशके लिये इन्होंने यहां जो दुःख प्रकाश किया, कोमल और हृदयग्राही रहा। मन्द्राजमें क्लाइवकी सान्त्वनाका एकमात्र विषय यह था कि मन्द्राज-शासनकर्ताके पुस्तकालयसे पढ़नेको पुस्तकादि मिल जाते थे। बाल्यकालमें एकबारगी ही जिसे पढ़ना अच्छा न लगे, युवावस्थामें उसका इतना परिश्रमी बन विद्यानुशीलनमें प्रवृत्त होना आश्चर्यका विषय है। विदेशका कष्ट पड़ने पर भी उनकी

ओजस्विताका कोई ह्रास न हुवा। बाल्यकालमें विद्यालयके शिक्षकोंसे यह जैसा व्यवहार करते, यहां भी अपने उच्चपदस्थ कर्मचारियोंके साथ वही चाल चलते थे। "लेखक-भवन" (Writer's Buildings) में रहते समय दो बार इन्होंने आत्महत्याकी चेष्टा की, परन्तु दोनों सरतबा पिस्तौलकी गोली इनके गलेके पाससे अछूती निकल गयी। इसी समय इन्हें अपना महत्त्व प्रकाश करनेका अवसर मिला था। युरोपमें अष्ट्रियाके सिंहासन पर गड़बड़ी पड़ी थी। मरिच शहरके गवर्नर लाबोर्डोन १७४६ ई०को मन्द्राजका सेण्ट जार्ज दुर्ग दखल कर बैठे। डुप्ले (Dupleix)ने रुपया लेकर किला न दिया था। उलटे वह भले आदमियों-को कैद करके युद्धजयके गौरव स्वरूप सेण्टजार्ज दुर्गसे पुंदिचेरी ले गये। इस विपद्‌के समय क्लाइवने मुसलमानी वेशसे भाग सेण्ट डेविड दुर्गमें जाकर आश्रय लिया था। लेखकका काम अच्छा न लगनेसे इन्होंने कम्पनीके अधीन सैनिक विभागमें कार्य करनेकी प्रार्थना की। इनका आवेदन ग्राह्य हो गया। उस समय क्लाइवकी उम्र २१ साल थी। १७४९ ई०को तञ्जोरके सिंहासन पर सैयदने प्रतापसिंहको बैठाया। प्रकृत उत्तराधिकारी सुजोजीने अङ्गरेज गवर्नमेण्टको कहा था। सुजोजीके साहाय्यको मेजर लारेन्सने देवीकोट घेर लिया। प्रतापने अंगरेजोंको दुर्बल देख आक्रमण किया था। क्लाइवने प्राण बचा पलायन करके किसी प्रकार परित्राण पाया। मुंशोगरीको हालतमें इन्होंने सेण्ट डेविड किलेमें एक दुर्दान्त सैनिकको सम्मुख-युद्धमें मार डाला। उस समय मेजर लारेन्स सैनिक विभागके अफसर थे। वह क्लाइवके ऐसे वीरत्व पर चमत्कृत हुवे। ग्रेट ब्रुटेन और फ्रान्समें सन्धि स्थापित होने पर डुप्लेने मन्द्राज अङ्गरेजोंको लौटा दिया था। क्लाइव फिर मुह-रिर हो गये। पीछे देशोयोंसे लड़नेके लिये मेजर लारे-न्सके साहाय्यार्थ पुनर्वार सैनिकके कार्यमें नियुक्त हुए।

१७४८ ई०को दाक्षिणात्यके शासनकर्ता निजा-मुल मुल्क मर गये। उनके पुत्र नासिरजङ्ग पर शासन-भार अर्पित हुवा। किन्तु दैववश निजामके दौहित्र मुजफ्फरजङ्ग शासनभार पानेको बिगड़े थे। उसी समय कर्णाट-शासनकर्ताके जामाता चांद साहबने कर्णाटको दखल करनेके लिये उपद्रव मचाया। मुजफ्-फरजङ्ग और चांद साहब दोनोंने अपना अपना स्थान लेनेके लिये फरासीसियोंसे साहाय्य मांगा था। तद-नुसार डुप्लेने ४०० फरासीसी और २००० शिक्षित सिपाही भेज दिये। युद्धमें कर्णाटके पूर्वतन शासनकर्ता अनवर-उद्‌दीनका मृत्यु हुवा। उनके पुत्र मुहम्मद अली अल्पमात्र सैन्य लेकर त्रिशिरापल्ली भाग गये। दक्षिणमें डुप्लेने फयताबादमें फरासीसी गौरवका जयस्तम्भ स्थापन किया था। उसकी चारों ओर चार प्रस्तरफलकों पर नासिरजङ्गका पतन, मुजफ्फरजङ्गका राज्यलाभ और फरासीसी शासनकर्ता डुप्लेका यशः कीर्तित हुवा। मुहम्मद अलीको कर्णाटका शासनभार सौंपने पर अंगरेजोंने यत्न लगाया था। मन्द्राजके सेना-नायक लारेन्स उस समय उपस्थित न रहे। चांद साह-बने फरासीसियोंके साहाय्यसे त्रिशिरापल्लीको अवरोध किया। इस बार अज्ञातवीर्य, कौशली और धीशक्ति-सम्पन्न युवा क्लाइवका अदृष्ट सुप्रसन्न हो गया। इन्होंने २५ वत्सरमें पदार्पण किया ही था कि यह कम्पनीके सेनानायक पद पर नियुक्त हुए। १७५१ ई०को चांद साहबके गोलकुण्डा घेरते समय क्लाइव कपतान गिन-जिनके साथ पराजित हो भाग आये थे। पीछे इन्होंने पिगट साहबके साथ वरदाचलका मन्दिर दखल किया। २४ साथियोंको लेकर क्लाइव लौट ही रहे थे, कि पलिगार सिपाहियोंने राहमें इन पर आक्रमण किया। अधिकांश साथी मारे गये। परन्तु सौभाग्यक्रमसे इन्होंने भाग कर आत्मरक्षा की। तत्पर यह एक दल सेना लेकर त्रिशिरापल्ली पहुंचे। राहमें फरासीसी सैन्यसे एक युद्ध होने पर फरासीसियोंने पराजय मान लिया। क्लाइव निर्विघ्न त्रिशिरापल्ली पहुंच गये। उस समय सभोंने कहा था—कर्णाट राजधानी आर्काट नगर आक्र-मण करनेके सिवा त्रिशिरापल्ली उद्धारका अन्य उपाय नहीं। परन्तु मन्द्राजको सैन्यसंख्या अति अल्प रही। तथापि क्लाइवने साहस पर खेल कर २०० अंगरेजों और ३०० सिपाहियोंके साथ आर्काट अधिकार किया। पलायित सैन्य दूर जा शिविर स्थापन करके फिर

दुर्ग लेनेका आयोजन कर हो रहा था, कि गभीर रात्रिको क्लाइवने ससैन्य वहां पहुंच छावनी जला उनका पीछा किया। यह संवाद चांद साहबको मिला था। उन्होंने अपने पुत्र राजासाहबको १००० सेनाका अध्यक्ष बना कर अंगरेजोंके विरुद्ध आर्काट भेज दिया। राजासाहबने फौजके साथ आकर आर्काट घेरा था। ५० दिन तक घेरा पड़ा रहा, तथापि क्लाइव कुछ भी भीत न हुए। इसी अल्प वयसमें सतर्कता, सहिष्णुता और दक्षता सहकारसे क्लाइवने अवरोधको बचाया था। महाराष्ट्र-सरदार मुरारी राव प्रथम मुहम्मद अलीको साहाय्य करेंगे-जैसे प्रतिश्रुत रहे, परन्तु फरासीसियोंका गौरव और अंगरेजोंको हीनवीर्य देख अग्रसर हो न सके। शेष पर क्लाइवको साहस और दृढ़ताके साथ दुर्ग रक्षा करते देख वह भी ६००० महाराष्ट्र सेना लेकर युद्धक्षेत्रमें उतर पड़े। राजासाहबने भीत होकर सन्धिका प्रस्ताव किया था। परन्तु क्लाइव किसी प्रकार सम्मत न हुये। फिर राजासाहब किला उड़ा देनेका उद्योग लगाने लगे। क्लाइव भी संवाद पाकर युद्ध करनेमें प्रवृत्त हो गये। घोरतर युद्ध हुवा, परन्तु एक आदमी तक किलेमें घुस न सका। शत्रु-पक्षके बहुतसे सिपाही मारे गये। राजासाहबने विपद् देख रणमें पृष्ठ प्रदर्शन किया था। कितनी ही तोपें और बारूद अंगरेजोंके हाथ लगीं। सेण्ट जार्ज दुर्गमें क्लाइवकी जयध्वनि प्रतिध्वनित हुई। मन्द्राजसे २०० अंगरेज और ७०० देशी सिपाही फिर इनके पास भेजे गये। इन्होंने नूतन सैन्य लेकर तिमोरीका दुर्ग अधिकार किया और राजासाहबको फिर परास्त करके उनका रुपया पैसा छीन लिया। क्लाइवने फरासीसियोंसे विना युद्ध काञ्चीपुर छीना था। आरनी जयके पीछे क्लाइवने पराजित सैन्यके पीछे धावित हो उनको आक्रमण किया और राजासाहबकी दौलतका सन्दूक और १०००००) रु० निकाल लिया। फिर इन्होंने आरनीके ६०० सिपाहियोंको अपनी फौजमें रखा था। आरनीके शासनकर्ता चांद साहबके बदले मुहम्मद अली नवाब-जैसे घोषित हुवे। जब क्लाइवने देखा कि राजा साहबके आर्काट उद्धार करनेकी चेष्टा वृथा है तो एक सेनादल लेकर कावेरीपाकके अभिमुख चल पड़े। राजा साहबका पलायित सैन्य और उनका साहाय्यकारी फरासीसी सेनादल कावेरीपाकके वनमें छिपा था। इन्होंने फरासीसी सिपाहियों पर सहसा वीरदर्पमें पीछेसे जा कर आक्रमण किया। सिपाही घबड़ा कर इधर उधर भाग खड़े हुए। क्लाइवने सहज ही (१७५२ ई०) कावेरीपाकका किला जीता था। इसके बाद समरसभासे आदेश आया—क्लाइवको एक दल सेना लेकर त्रिशिरापल्ली जाना पड़ेगा। फौज लेकर जाते समय इन्होंने नासिरजङ्गके मृत्युस्थान पर बना फरासीसी वीर डुप्लेका कीर्तिस्तम्भ लोप कर दिया था। चांद साहबने फिर त्रिशिरापल्लीको घेर लिया। क्लाइव और मेजर लारेन्सने एकत्र ४०० अंगरेज और ११०० सिपाहियोंके साथ त्रिशिरापल्ली उद्धारके अभिप्रायसे यात्रा की थी। शत्रु संख्या अधिक समझ कर लौटनेके समय ६०० सैन्य सह कपतान डालटन और मुहम्मद अलीकी फौज उनसे जा मिली। युद्धमें शत्रुओंने पलायन किया था। क्लाइव भी सायंकालको फौजके साथ त्रिशिरापल्लीमें घुस पड़े। इस सकल युद्धव्यापारसे कम्पनीकी विशेष क्षति होने लगी।

अवशेषको अंगरेजी सेनादल दो भागोंमें बांट दिया गया। एक दल कावेरी नदीके दक्षिण और अपर दल कोलरुणके उत्तर चला था। क्लाइव उत्तर-विभागके सेनानायक बने। इन्होंने श्रीरङ्ग अतिक्रम करके समयावरम् नामक स्थान जीता था। १७५२ ई०को यह फिर फरासीसी सैन्यके हाथों फंस गये। किन्तु इनके सुकौशलसे फरासीसियोंने भाग कर वोलकुण्डामें आश्रय लिया था। समयावरम्में जाकर २००० अश्वारोही और १५०० पदातिक क्लाइवसे मिलित हुए। युद्धके पीछे फरासीसी सेनापति दंतेल (M. d' Auteuil.) वोलकुण्डाके किलेमें पकड़े गये और क्लाइवसे अपना पराजय स्वीकार करने लगे। इसी वर्ष (१७५२ ई०) १० सितम्बरको क्लाइवने मन्द्राजसे २५ मील दक्षिण समुद्रतीर कोवलङ्गके अभिमुख यात्रा की।

कोवलङ्ग फरासीसियोंके अधिकारमें था। कोई आधी फौजके साथ सन्ध्याकालको लेफटीनेण्ट कूपर कोवलङ्ग

दुर्गके निकट एक बागमें पड़े थे। प्रभातको शत्रु के गोलोंको चोटसे वह ससैन्य निहत हुवे। उनके अधीनस्थ सिपाही भाग हो रहे थे, कि क्लाइव ससैन्य वहां पहुंच गये। यह उन सभी भग्नोद्यम सिपाहियोंको लौटा लाये और अपने आप असमसाहससे शत्रु को भीषण गोलावारीके बीच रह उन्हें उत्साहित करने लगे। क्लाइवको देख दुश्मन दिलमें डर कर भाग खड़े हुए। इन्होंने विना आयासके कोवलङ्ग किला जीता था। इसी समय चिङ्गलपुतके शासनकर्ताने कोवलङ्ग उद्धार करनेको नूतन सैन्य प्रेरण किया था। उसे कोवलङ्ग-दुर्गजयका कोई संवाद न रहा। वह निरापद अग्रसर होता था। हठात् गुप्तस्थानसे सिपाहियों पर गोलाबारी होनेसे उनमें १०० आदमी मर गये और बाकी सबको क्लाइवने कैद करके चलते चलते चिङ्गलपुत किला जा घेरा और उसे जीत भी लिया। इन सकल घटनाओंके पीछे क्लाइवका स्वास्थ्य भङ्ग हुवा। १७५३ ई०को शरीररक्षाके लिये यह इङ्गलैण्ड गये थे। वहां २८ वत्सर वयसमें इन्होंने 'मैसकेलिन' नाम्नी किसी युवतीका पाणिग्रहण किया। कम्पनीके डिरेक्टरोंने एक भोज दिया और सबने इन्हें 'जेनरल क्लाइव' नामसे सम्मानपूर्वक पुकारा था। ईष्ट इण्डिया कम्पनी कर्तृक क्लाइवको हीरेकी एक तलवार उपहार दी गयी। इन्होंने उसे लेना अस्वीकार किया और कहा था—जब तक ऐसी ही दूसरी तलवार मेरे साथी मेजर लारेन्सको न दी जायगी, मैं इस तलवारको कैसे ले सकता हूं? क्लाइवकी ऐसी उदारताका प्रमाण अनेक स्थलोंमें मिलता है। १७५४ ई०को इङ्गलैण्डमें पारलियामेण्ट सभाके सभ्यनिर्वाचन समय युद्धविभागके प्रधान (Secretary of war) हेनरी फक्सके साथ इनका आलाप हुआ। उन्होंने क्लाइवको सदस्य होनेके लिये अनुरोध किया था। उसमें इनका विस्तर व्यय हुवा। यह सभ्य बन न सके। सुतरां नौकरीके लिये इन्हें फिर भारत आना पड़ा। १७५५ ई०को क्लाइव सेण्ट डेविड दुर्गके गवर्नर और इङ्गलैण्ड-राजकी वृटिश सेनाके नायक (लेफटेनेण्ट कर्नेल) हो भारत लौटे थे। इस समय दाक्षिणात्यके उपकूलमें तुलजी अंगरियाकी क्षमता बहुत बढ़ी रही। यह दस्यु-दलपति अपने जहाजोंके जरिये पूर्वसमुद्रमें विटिशियोंके वाणिज्य-पोत प्रभृति लूट लेते थे। १७५६ ई०के फरवरी मासमें क्लाइव और नौसेनापति वाटसन १४ जहाजोंमें ८०० अंगरेज और १००० सिपाही चढ़ा जलपथसे चल पड़े। तुलजीके प्रायः सभी जहाज वाटसनका गोला लगनेसे जले थे। क्लाइवने स्थलपथसे अंगरियाका घेरिया नामक स्थान जाकर दखल किया। किन्तु फिर यह अंगरियाके हाथों पराजित हो २० जूनको डेविडदुर्ग लौट आये। इसी दिन बङ्गालके नवाब शीराज-उद्-दौलाने अंगरेजोंसे कलकत्ता ले लिया था। फिर अगस्त मासको अन्धकूपका लोमहर्षण संवाद मन्द्राज पहुंचा। वहां अंगरेज मात्र क्रोध, दुःख और भयसे अभिभूत हो गये। २० दिसम्बरको क्लाइव और नौसेनापति वाटसन फलता पहुंच कलकत्ताके अंगरेजोंसे मिले थे। क्लाइव और वाटसनने कलकत्तेके शासनकर्ता मानिकचंदको इस मर्मका एक पत्र लिखा—यदि शीराज-उद्-दौला अंगरेजों पर किये गये अत्याचारके लिये क्षतिपूरणस्वरूप कुछ न देंगे, तो अंगरेज नवाबसे लड़ कर कलकत्ता दखल कर लेंगे। भीरु मानिकचंदने यह बात नवाबको न कही थी। २७ दिसम्बरको फलतासे क्लाइव ससैन्य बजबज आ पहुंचे। मानिकचंद संवाद पाकर पूर्वसे ही २५०० सवार और २००० पैदल सिपाही लेकर बजबजको रक्षाको गये थे। रातको युद्ध आरम्भ हुवा। शेषको मानिकचंद भागे थे। अंगरेजी फौजने आकर बजबज दखल किया। १७५७ ई०को २ जनवरीको क्लाइव फलीगढ़ दुर्गसे स्थलपथ पर अग्रसर हो कलकत्ताके अभिमुख चलने और वाटसन लड़ाईके जहाज ले फोर्ट विलियम दुर्गके सामने पहुंच गोलाबारी करने लगे। कपतान कुट एक दल सैन्यके साथ किनारे पहुंचे थे। मुसलमानोंके अधिकारसे फिर कलकत्ता अंगरेज वणिकोंके हाथ पड़ा। इसी समय मन्द्राजसे संवाद मिला था—युरोपमें अंगरेजों और फरासीसियोंमें लड़ाई होनेवाली है। इसीसे क्लाइवको शीघ्र फौज लेकर लौटनेका आदेश हुवा। इधर क्लाइवने जगत्-

सेठको मध्यस्थ बना झगड़ा मिटा डालने पर पत्र लिखा था। नवाब भी सन्धि करनेको राजी हो गये। किन्तु अंगरेजोंके हुगली आक्रमण करनेसे वह एक बारगी हो जल उठे। २ फरवरीको उन्होंने सन्धि-प्रस्ताव-कारी वाट साहब और अमीचंदको कहला भेजा था—सन्धिके सम्बन्धमें हम दरबार करेंगे। ४थे मराठा-खातके किनारे अमीचंदके बागमें शोराजने जाकर डेरा डाला। क्लाइवने सहसा ६ बजेके समय नवाबका शिविर आक्रमण किया था। नवाब उस समय युद्धके लिये प्रस्तुत न रहे। खबर लगते हो वह भागे थे। आक्रमणके दूसरे दिन नवाबने रणजित्रायके द्वारा क्लाइवके निकट सन्धिका प्रस्ताव पहुंचाया। रणजित्राय और अमीचंदमें परस्पर कितनी हो लिखापढ़ी होनेके बाद ८ फरवरीको इस मर्मकी सन्धि हुई थी—'नवाबने अंगरेजोंका जो माल लूट लिया है, लौटा देंगे। अंगरेज जिस उपायसे चाहेंगे, कलकत्तेको किलाबन्दी कर सकेंगे। नवाब अंगरेजोंके व्यवसायका महसूल न ले सकेंगे और पहले उनकी जो क्षमता थी, बनी रहेगी।' क्लाइव और वाटसन ऐसी सन्धि पर राजी न हुए, उलटे भीतर हो भीतर युद्धका आयोजन करने लगे। शान्ति स्थापित होने पर क्लाइवने चन्दननगरमें फरासीसियोंके दमनको अमीचंदके द्वारा नवाबको सूचना दी और चन्दननगर आक्रमण करनेके लिये उनकी अनुमति मांगी। क्लाइवका उद्देश्य था—फरासीसियोंका काम काज बन्द हो जानेसे अंगरेजोंका बड़ा लाभ होगा; फिर यदि फरासीसी ढीले पड़ और अंगरेज बढ़ जायें, तो नवाबके भी उनके अधीन होनेमें कोई सन्देह न रहेगा। नवाबने चन्दननगर आक्रमण करनेकी सम्मति दे दी।

क्लाइवने १८ फरवरीको चन्दननगर यात्रा की थी। फरासीसी क्लाइवका भावगतिक समझ गये। उसी समय फरासीसी दूतने अग्रद्वीप जा नवाबका आश्रय मांगा और क्लाइवको दुरभिसन्धि को उनसे खोल कर कह दिया। नवाबने फरासीसियोंके साहाय्यार्थ १०००००) रु० देने और हुगलीके फौजदार नन्दकुमारसे सैन्य भेजनेको कहा था। इधर मीरजाफरके भी आधी फौज लेकर चन्दननगरमें रहनेका बन्दोबस्त किया गया। क्लाइवने देखा कि फरासीसियोंको हठात् दबानेकी सुविधा नहीं।

अहमद शाह अबदालीने जब दिल्लीको जय किया, उनके बङ्गाल जीतनेका भी समाचार प्रकाशित हुवा। इस समय शोराजने अंगरेजोंसे साहाय्य मांगा था। चतुर वाटसनने नवाबको लिख दिया—'आप पटना जाते हैं और हमको भी साथ हो चलनेका आदेश देते हैं। सुतरां किस प्रकार फरासीसी शत्रुओंको पीछे रख हम निरापद कलकत्ता और वाणिज्यको कोठी छोड़ चलें? यदि आप अनुमति करें, तो हम चन्दननगर दखल करके चल सकते हैं।' नवाब इस चातुर्यपूर्ण पत्र पर चिढ़ उठे। उसी समय बम्बई शहरसे कम्पनीके ३ दल पैदल, १ दल सवार और कम्बरलैण्ड नामक सेनादल बालेश्वर तक आ पहुंचा था। नूतन सैन्यके आगमनसे उत्साहित हो क्लाइवने नवाबको अनिच्छा रहते भी २४ मार्चको ६ बजे चन्दननगर आक्रमण किया। फरासीसियोंने यथासाध्य अपनेको बचाया था। ८ बजे सन्धिके लिये झण्डा उठाया गया। अपराह्नको ३ बजे उन्होंने अंगरेजोंको नगर और गढ़ समर्पण किया था। क्लाइवके इस कार्य पर नवाबने प्रकाश्यमें तो कोई रोष प्रदर्शन न किया, परन्तु फरासीसी सेनानायक बुसीको लिखे हुए उनके पत्रसे प्रकाशित होता है कि वह आन्तरिक रूपसे चिढ़ गये थे। थोड़े दिन पीछे नवाबने क्लाइवको लिख दिया—आपने सन्धिपत्रके विरुद्ध कार्य किया है, इसलिये सैन्य सामन्त लेकर फिर कलकत्ते चले जाइये। क्लाइवने नवाबका पत्र ग्राह्य न किया था। वह हुगलीके उत्तर छावनी डाल कर पड़े रहे।

इसी समय शोराजको राज्यच्युत करनेकी साजिश चलती थी। यार लतीफखान् नामक नवाबके एक सेनापति जगत्सेठके वेतनग्राही थे। उन्होंने वाट साहबको परामर्श दिया—'इस समय नवाब पटनामें अफगानोंसे लड़नेमें व्यस्त हैं। यदि अंगरेज आकर एकबारगी हो मुर्शिदाबाद राजधानी आक्रमण करें और हमें नवाब बना दें, तो सभी विषयोंमें साहाय्य पा सकते

हैं।' वाट साहबके अनुमोदन करने पर क्लाइव भी इस पर सम्मत हो गये। पिट्रास नामक किसी आरमनीने वाट साहबको मीरजाफरके साहाय्यका प्रस्ताव बताया था। वस्तुतसे प्रधान प्रधान कर्मचारियोंने भी मीराजको राज्यच्युत करनेके लिये अंगरेजोंको आह्वान किया। यार लतीफखांको छोड़ मीरजाफरको ही नवाब बनानेके लिये सबका अभिप्रेत हुवा। इस सम्बन्धमें मीरजाफरके साथ इकरारनामा लिखा गया। अंगरेजों ने भी मीरजाफरको लिख दिया कि हम सभी समय आपको साहाय्य करने पर प्रस्तुत हैं। मीरजाफर बङ्गाल, विहार और उड़ीसेके सूबेदार बनाये जायेंगे। इस सन्धिपत्र पर नौसेनापति वाटसन साहब, कलकत्तेके गवर्नर ड्रेक साहब, करनल क्लाइव, वाट साहब, मेजर किलपाट्रिक और बीचर साहबके दस्तखत थे। १० जूनको मीरजाफरके सन्धिपत्र पर दस्तखत करके कलकत्ता भेजने पर क्लाइव ससैन्य चन्दननगरसे अग्रसर हुए। अमीचंदने जब सुना कि उनकी अनुपस्थितिमें मीरजाफरके साथ लिखा पढ़ी हो गयी है और उसके अनुसार सबको कुछ न कुछ मिलेगा—किन्तु उनका अदृष्ट खाली है, तो उन्होंने नवाबसे इस साजिशको खोल देनेकी धमकी दी। क्लाइव मुशकिलमें पड़ गये। इन्होंने अमीचंदको भुलावा देनेके लिये छलना की थी। क्लाइवने दो चिट्ठियां लिखीं। एक सफेद कागज पर लिखी गयी। उसमें अमीचंदका नाम भी न था। दूसरी लाल कागज पर लिखित हुई। उसमें अमीचंदको दिये जानेवाले रुपये आदिका बात लिखी थी। सफेद कागजकी चिट्ठी ठीक थी और लाल चिट्ठी मूर्ख अमीचंदको प्रतारित करनेके लिये क्लाइवका कौशलमात्र था। न्यायवान् वाटसन साहबने लाल चिट्ठी पर सही करके अपने आप प्रतारक बनना न चाहा। इसीसे उस पर क्लाइवको वाटसन साहबके जाली दस्तखत बनाना पड़े। किसी किसीका कहना है कि कम्पनीके विख्यात लेखक स्क्राफटन साहबने यह जाल किया था।

नवाबके विरुद्ध सकल षड़्यन्त्र स्थिर हो गया। २१ जूनको क्लाइव कांटोआ दखल करके युद्धार्थ अग्रसर हुवे। नदी पार होके पलासीके निकट आम्रवनमें इन्होंने छावनी डाली थी। क्लाइवने मीरजाफरको चिट्ठी भेजी—यदि आप आ कर हमसे न मिलेंगे, तो हमें नवाबसे सन्धि कर लेना पड़ेगी। २३ जूनको प्रातःकाल नवावने आम्रवन आक्रमण किया था। घोरतर युद्ध होने लगा। सन्ध्याको मीरजाफरने पहली बात चीतके अनुसार सिपाहियोंको यह कह कर वापस जाने का आदेश दिया—अब लड़ाई रोक दो, सवेरे फिर लड़ेंगे। हुक्मके मुताबिक सिपाही लौट पड़े। क्लाइव पूर्व सङ्केतके अनुसार पीछेसे गोली मारने लगे। सैन्य छत्रभङ्ग हो गये। चारों ओर गड़बड़ मचा था। इसी सुयोगमें मीरजाफर क्लाइवसे आ मिले। नवाब यह खबर पा ऊंट पर चढ़ कर भागे थे। भविष्यत् युद्धके जयकी आशा हतभाग्य मीराजके हृदयसे अन्तर्हित हुई। क्लाइवने दाऊदपुर तक पीछा किया था। मीरजाफर उसी जगह जाकर इनसे मिले। क्लाइवने भी बङ्गाल विहार और उड़ीसेके नवाब जैसी उनकी अभ्यर्थना की थी। फिर दोनों मुर्शिदाबादके राजप्रासादाभिमुख अग्रसर हुए। मीराज-उद्-दौला देखो।

नवाबके धनागारमें सब मिलाकर १ करोड़ ५० लाख रुपया निकला था। उसमें क्लाइवको १६ लाख, वाट साहबको ८ लाख, किल पाट्रिकको ३ लाख और स्क्राफटनको २ लाख रुपया मिला। विशेष विवरण अमीचांद शब्दमें देखो। क्लाइवने प्रासादमें पहुंच २९ जूनके दिन मीरजाफरको नवाबके सिंहासन पर बैठाया था। राजकोषमें धनाभाव होनेसे मीरजाफर क्लाइवको कहा हुवा रुपया दे न सके। यह उन्हें जगत्‌सेठके पास ले गये। सेठजीके परामर्शसे आधा रुपया उसी समय दिया गया और आधेके लिये स्थिर हुवा कि तीन मासमें दे दिया जावेगा। इस रुपये पर सैनिक विभागके कर्मचारियोंमें गड़बड़ पड़ा था। उन्होंने इसी उद्देशसे एक सभा की और क्लाइवके मत विरुद्ध उन्होंने इस लभ्य धनका एक अंश मांगा। क्लाइव उन्हें अंश देने पर अस्वीकृत हुए। मीरजाफरके देय धन और उनके स्वेच्छादानसे इन्हें कुल २३ लाख ४० हजार रुपया मिला था। १४ सितम्बरको यह मुर्शिदाबादसे कलकत्ते आये। इसी अवसरमें

मीरनने शोराजके भ्रातुष्पुत्र मिर्जा मन्दीको मार डाला था। सुयोग देख कर पुरनियाके शासनकर्ता शोगल-सिंह और विहारके रामनारायणने विद्रोह मचा दिया। यह संवाद पाकर २५ नवम्बरको क्लाइव मुर्शिदावाद जा पहुंचे। ३० तारीखको यह षोगल सिंहके विरुद्ध अग्रसर हुवे और उन्हें बन्दी बना लाये। विहारमें राम-नारायणको दवानेके लिये मीरजाफरने क्लाइवसे मदद मांगी थी। इन्होंने लिखा कि सन्धिपत्रका लिखा बाकी रुपया मिलने पर हम पटने जा सकेंगे। नवाबने दीवान् रायदुर्लभको खुशामद करके रुपयाका पक्का इन्त-जाम कर दिया था। नवाबके साथ यह पटने गये और वहां रामनारायणको बुला करके बलवा मिटा दिया। रायदुर्लभके साथ रामनारायणकी बन्धुता हो गयी। नवाबको अनिच्छा पर भी रामनारायण विहारके शासनकर्ता बने रहे। १७५८ ई०को ५ मईको राय-दुर्लभके साथ क्लाइव मुर्शिदावाद लौट आये।

पलाशी युद्धजयके पीछे कम्पनीके विलायती अध्य-क्षोंने क्लाइवको बङ्गालके शासनकर्ता रूपसे नियुक्त किया था। सम्राट् शाह आलमने इसी समय पटने पर आक्रमण मारा। क्लाइव फौजके साथ उनके विरुद्ध चले थे। शाह आलमका सैन्य क्लाइवको देखते ही भाग खड़ा हुवा। शाह आलम भी नौ दो ग्यारह हुवे। क्लाइवके जयसे मीरजाफरको बड़ा आल्हाद मिला था। उन्होंने जमीन्दारी रहते भी कलकत्तेके दक्षिण जो जमीन २२२९५८) रु० लगान पर कम्पनीको सौंपी थी, क्लाइवको जागीरके तौर पर दे डाली। २३ नव-म्बरको ओलन्दाजोंसे लड़ाई हुई। क्लाइवने अपने आप करनेल फरडीसे चुंचुड़ा आक्रमण करनेको कहा था। ओलन्दाजोंने युद्धमें पराजय स्वीकार किया।

इसके बाद १७६० ई०को २५ फरवरीको क्लाइव स्वदेश चले गये। भारतवर्षमें रह कर इन्होंने जो रुपया रोजगारसे विलायत भेजा था, उसकी तालिका इस प्रकार मिलती है—ओलन्दाज वणिकों द्वारा १८ लाख, अंगरेज कम्पनीके जरिये ४ लाख और मन्द्राजसे २ लाख ५० हजार रुपयेके हीरे। एतद्व्यतीत इसका कोई हिसाब किताब नहीं। इन्होंने अन्यान्य बन्धुओंके द्वारा कितना रुपया भेजा था। मीरजाफरसे मिली जागीरका आय प्रायः २ लाख २३ हजार रुपया था। इसमेंसे १ लाख रुपया क्लाइवने अपनी बहनोंको दे डाला। भारतमें अवस्थानकाल पितामाताके खर्चको यह वात्सरिक ८०००) रु० भेज देते थे। मेजर लारे-न्सको वेतन स्वरूप वर्षमें ५०००) रु० क्लाइव पहुंचाते रहे। फिर अन्यान्य दरिद्र बन्धुवों और कुटिम्बियोंको उपर्युक्त रुपये समेत इन्होंने ५ लाख रुपया दान किया।

जागीर पर कम्पनीके चेयरमैन सुलिभानके साथ क्लाइवका विरोध हो गया। इन्होंने १७६३ ई०के समय डिरेक्टर निर्वाचनमें सुलिभानको पदच्युत करनेकी चेष्टा की थी। किन्तु इनकी चेष्टा विफल हुई। सुलि-भानने इनकी जागीर छीननेका उद्योग लगाया था। इसीसे क्लाइवको इङ्गलैण्डकी सबसे बड़ी अदालत (Chancery) में विषय रक्षार्थ दरखास्त देना पड़ा। जिस समय इङ्गलैण्डमें क्लाइव और डिरेक्टरोंके मध्य ऐसी गड़बड़ी थी, बङ्गालमें मीरकासिमने कई अंगरे-जोंको मार डाला। इस खबरसे डिरेक्टरोंका दिमाग चक्कर खा गया। मीरकासिमको दवानेके लिये क्लाइव-का प्रयोजन पड़ा था। कम्पनीके स्वत्वाधिकारी इनकी खुशामद करने लगे। क्लाइवने कहा—यदि कम्पनी मेरी जायदाद छोड़ दे, तो मैं फिर शासनभार लेकर बङ्गाल जा सकता हूं। तदनुसार उन्होंने इनकी बात पर राजी हो इन्हें बङ्गालका शासनकर्ता और सेनाध्यक्ष बना भारत भेजा। इसी समय सुलिभानके साथ क्लाइव-की मित्रता हो गयी थी। इन्हीं सकल घटनाओंके पीछे १७६५ ई०के मई मासमें यह तीसरी बार कलकत्ते आ पहुंचे। इन्होंने आते ही सैन्य-सम्प्रदायका संशोधन आरम्भ किया था। उस समय अंगरेजी सिपाही रिश-वत लेकर या जोर जुल्म दिखा कर जो काम करते थे, एक बारगी ही बन्द हो गये। इससे बङ्गालके अंगरे-जोंको अनेक असुविधायें और क्षतियां उठाना पड़ीं। जनष्टन नामक कोई सभ्य इनके शासन संशोधनके विरुद्ध रहे। इन्होंने विलायतके अध्यक्षोंको भारतके कर्म-चारियोंका वेतन बढ़ानेके लिये लिखा और सैन्य सम्प्र-दायका चोरी करके व्यवसाय चलाना रोक दिया। इस-

के बाद क्लाइवने दिल्लीके बादशाहसे बङ्गालकी दीवानी सनद मांगी थी। सम्राट्ने कम्पनी पर बङ्गाल, विहार और उड़ीसेकी मालगुजारी वसूल करने और शासन रखनेकी एक सनद क्लाइवके पास भेज दी। काशीके राजा और अवधके नवाबने इन्हें उपहारस्वरूप हीरे और जवाहरात देना चाहे थे, परन्तु यह लेने पर अस्वीकृत हुये। मीरजाफर मृत्यु कालको क्लाइवके नाम दानपत्रमें ५ लाख रुपया लिख गये थे। कम्पनीके कानूनसे मृत व्यक्तिका उक्त दान क्लाइवको न मिला। इसके लिये नीचे लिखा इन्तजाम किया गया था। कम्पनीके कर्मचारियों और सैनिकोंमें जो कार्य करनेमें अक्षम होगा, उसका इस रुपयेमेंसे थोड़ा बहुत माहवारको तौर पर मिला करेगा। फिर सैफ-उद्-दौलाने और भी ३ लाख रुपये दे डाले।

क्लाइवकी अनुपस्थितिमें मीरकासिम और समरूने अंगरेज-हत्या करके अवधके नवाब शुजा-उद्-दौलाके पास पहुंचकर आश्रय लिया था। शुजा-उद्-दौला मराठ और अफगान-सैन्य लेकर बङ्गाल आक्रमण करने विहारके सीमाप्रान्त पर्यन्त आ पहुंचे। क्लाइवने ससैन्य जा उन्हें पराजित किया और युद्धके व्ययस्वरूप ५० लक्ष रुपया ले लिया। फिर यह स्थिर हो गया—अवधके नवाब मीरकासिम और समरूको पुनराश्रय न देंगे और अंगरेज उनके राजत्वमें विना शुल्कवाणिज्य कर सकेंगे। मुहम्मद रेज़ाखान् नवाब नाजिम-उद्-दौलाके नायब रहे। उन्होंने कम्पनीके कौंसिलके मेम्बरोंको कोई उच्च पद पानेके अभिलाषमें २० लाख रुपया रिशवत दिया था। सन्धिके पीछे जब क्लाइव कलकत्ते लौटे, नाजिम-उद्-दौलाने घूसकी बात इनसे कह दी। क्लाइवने ऐसे घृणित व्यवहारके लिये कम्पनीके गवर्नर स्पेनसर साहब और अन्यान्य नौ उच्चपदस्थ कर्मचारियोंको निकाल बाहर किया था। माली इख्तियार रहते इन्होंने बङ्गाल, विहार और उड़ीसेमें कम्पनीके लिये नमक, सुपारी और खानेकी तम्बाकूके ठेकेका व्यवसाय आरम्भ किया। पलासी-युद्धके पीछे मीरजाफर सिपाहियोंको दूना भत्ता देते थे। इन्होंने उसको घटा दिया। इससे बांकीपुर और मुंगेरकी फौजोंमें बलवा फूट पड़ा। १७६६ ई०के मई मासमें इन्होंने वहां जा बलवा मिटा दिया और उसी समय उनका स्वास्थ्य भी भङ्ग हो गया। १ वर्ष ६ मास बङ्गालमें रह १७६७ ई०को २९ जनवरीको यह इङ्गलैण्डको ओर रवाना हुवे।

इस बार इङ्गलैण्डमें क्लाइवके लिये कोई विशेष आदर अभ्यर्थना न हुई। समाचारपत्रोंमें इनके कार्य और चरित्र पर अनेक विचार उठने लगे, मानो देशके सभी लोग क्लाइवका अपमान करनेको व्यस्त रहे। भारतके धनसे धनी होकर यह बारकलेसायरके किसी सुन्दर भवनमें रहने लगे। स्रपसायर और क्लेयरमण्टमें भी इनके दो प्रासाद निर्मित हुवे। क्लाइवकी ऐसी दौलतमन्दी देख लोगोंकी आंखें फूल गयीं। गरीब यदि बड़ा आदमी हो जाता, तो वह एकाएक नवाब कहलाता है। इसी प्रकार इङ्गलैण्डके लोग इनका ऐसा उच्च पद देख इन्हें 'नवाब साहब' कहने लगे। १७७० ई०को बङ्गालमें भयानक दुर्भिक्ष पड़ा था। लण्डनवासियोंने भारतीय प्रजाके दुःखसे दुःखित हो एकस्वरमें कहना आरम्भ किया—कम्पनीके नौकर बङ्गालमें चावल खरीद चौगुनी कीमत पर बेचते और इसीसे बङ्गाली दुर्भिक्ष-यन्त्रणा भोग करते हैं। ऐसे ही कानाफूसीसे क्लाइव लोगोंमें और भी अश्रद्धा तथा अनादरके पात्र बन गये। १७७२ ई०को पारलियामेण्ट महासभामें क्लाइवका विचार हुवा था। सभी दोष अभागे क्लाइवके मत्थे मढ़ा गया। स्वजन इनके विपक्षमें जाकर खड़े हुए। सभी लोग इन्हें पारलियामेण्टसे निकालनेकी चेष्टा करने लगे। परन्तु पारलियामेण्टके निर्वाचित सभ्योंके विचारसे क्लाइव निर्दोष निकले थे। फिर भी अपमान, घृणा और लज्जासे इनके हृदयमें मर्मान्तिक आघात लग गया। नाना भावनाओंसे इनका शरीर भग्न हुवा। १७७४ ई०को ४९ वर्षके वयसमें २२ नवम्बरके दिन क्लाइवने आत्महत्या करके इहलोक परित्याग किया।

क्लाउन (अं० पु०—Clown) विदूषक, नक्काल, भंडेला।

क्लाक (अं० स्त्री०—Clock) यामनाली, धरमघड़ी। यह काष्ठादिके ढांचेमें लगी रहती और लङ्गरके सहारे चलती है।

क्लान्त (सं० त्रि०) क्लम कर्तरि क्त। १ क्लान्तियुक्त, थकामांदा। २ म्लान, मुरझाया हुवा। (भारत ३।७३।१७)

क्लान्ति (सं० स्त्री०) क्लम-क्तिन्। क्लम, मिहनत, थकावट। (माघ)

क्लारनेट (अं० पु०—Clarinet) वेणु, वंशी, अलगोजा।

क्लास (अं० पु०—Class) श्रेणी, दरजा।

क्लिन्न (सं० त्रि०) क्लिद कर्तरि क्त। आर्द्र, तर, भीगा। (रामायण १।४२।१८)

क्लिन्नवर्त्म (सं० क्ली०) चक्षुरोगविशेष, आंखकी एक बीमारी। क्लिष्टवर्त्म देखो।

क्लिन्नवर्त्मा (सं० पु०) क्लिष्टवर्त्म देखो।

क्लिन्ना (सं० स्त्री०) श्वेतकण्टकारी, सफेद कटैया।

क्लिन्नाक्ष (सं० त्रि०) क्लिन्न अक्षिणी यस्य, बहुव्री०। क्लेदयुक्त चक्षुविशिष्ट, भीगी आंखोंवाला, जिसके आंखसे ढरका बहे।

क्लिन्नाक्षि (सं० क्ली०) क्लिन्नचक्षु, भीगी आंख।

क्लिप (अं० पु०—Clip) धातु आदिका पंजा। यह कमानीदार होता है। इसके पीछेके दोनों हिस्से दबानेसे पंजेका मुंह खुलता और छोड़ देनेसे बन्द हो जाता है। यह चिट्ठीपत्र आदि कागज दबाकर रखनेके काममें आता है।

क्लिव् (वै० पु०) क्लप्-क्विप् पृषोदरादिवत् साधुः। आदमी। (वाजसनेयसंहिता ४०।१५)

क्लिशित (सं० त्रि०) क्लिश कर्तरि क्त विकल्पे इट्। १ क्लेशयुक्त, तकलीफमें पड़ा हुवा। २ उपतापयुक्त।

क्लिष्ट (सं० त्रि०) क्लिश कर्तरि क्त विकल्पेन इट्। १ क्लेशयुक्त, तकलीफमें पड़ा हुवा। २ पीड़ित, बीमार। इसका पर्याय—सङ्कुल और परस्पर पराहत है। (मेघदूत) ३ विरुद्ध, बेमेल। ४ कठिन, कड़ा। (क्ली०) ५ पूर्वापर विरुद्ध वाक्य, एक दूसरेसे न मिलनेवाला जुमला। (भागवत १।९।१२)

क्लिष्टत्व (सं० क्ली०) क्लिष्ट भावे त्व। अलङ्कारशास्त्रोक्त एक दोष। यह दोष पदों और वाक्योंमें लगा करता है। जिस स्थल पर किसी एक क्षुद्र पद द्वारा अर्थ प्रकाश हो सकता, वहां उस पदका प्रयोग न करके अर्थप्रकाशके लिये कितने ही पदोंका समास बना एक पदरूपसे प्रयोग करने पर क्लिष्टत्व दोष लगता है। जैसे—'जल' क्षुद्र पदको प्रयोग न करके "क्षीरोदजावसतिजन्मभू" जैसे पदका प्रयोग।

जहां अतिशय व्यवहित दो वा उनसे अधिक पदोंका अन्वय करके अभीष्ट अर्थ लाना पड़ता, उसीको आलङ्कारिक वाक्यगत क्लिष्टत्व दोष कहते हैं। यह सचराचर दूरान्वय दोष जैसा व्यवहृत है। (साहित्यदर्पण ७)

क्लिष्टवर्त्म (सं० क्ली०) नेत्ररोगविशेष, आंखकी एक बीमारी। यह श्लेष्मज और रक्तज नेत्रवर्त्मका रोग है। दोनों पलकें एका एक कुछ दुखने लगतीं और तांबे जैसी लाल देख पड़ती हैं। (माधवनिदान)

क्लिष्टा (सं० स्त्री०) क्लिष्ट क्लेशः अस्त्यस्याम्, क्लिष्ट-अच्। पातञ्जलदर्शनके मतसे—एक चित्तवृत्ति। नैयायिकों और वैशेषिकोंने जिसे ज्ञान जैसा उल्लेख किया और हम भी जिसे चलती बोलीमें ज्ञान कहा करते, सांख्य पातञ्जल मतमें वही वृत्ति नामसे उल्लिखित होता है। यह वृत्ति वा ज्ञान दो प्रकारका है—क्लिष्ट और अक्लिष्ट। अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश—पांचको क्लेश कहते हैं। यह पञ्च क्लेश जिस वृत्ति वा ज्ञानप्रवृत्तिका कारण हैं, उसीका नाम क्लिष्टवृत्ति है। (योगसूत्र १) नैयायिक वा वैशेषिक मतानुसार ज्ञान आत्मामें होता है। सांख्यपातञ्जलने उसको अन्तःकरण (महत्तत्त्व)-का धर्म जैसा निरूपण किया है। अन्तःकरण सत्वमय, रजोमय और तमोमय—तीन प्रकारका होता है। सुतरां उसकी वृत्ति भी तीन प्रकारकी है—सत्वमयी, रजोमयी और तमोमयी। रजोमयी और तमोमयी वृत्ति क्लिष्टा कहलाती है। (वाचस्पति) हम इसी वृत्ति अर्थात् प्रमाण प्रभृति द्वारा विषय निरूपण करके किसी विषयसे अनुराग और किसी विषयसे द्वेष करते और तदनुसार कार्य करनेमें प्रवृत्त होते हैं। इसीसे धर्म और अधर्म उत्पन्न होता है। धर्माधर्म ही जन्म आदि घोरतर दुःखोंका कारण है। अतएव रजोमयी और तमोमयी वृत्ति ही सकल दुःखोंका मूल कारण ठहरती है। योग अनुष्ठानसे अन्तःकरणका रजः तथा तमोगुण दूरीभूत होने पर विवेकख्याति नाम्नी विशुद्ध सत्वमयी जो अन्तःकरण-वृत्ति उठ

आती, वही अक्लिष्टावृत्ति कहलाती है। इस अक्लिष्टा-वृत्ति वा विवेकख्याति द्वारा क्लिष्टा चित्तवृत्ति निरोध करके योगी लोग अनन्त परमसुख अनुभव कर सकते हैं। योगके अनुष्ठानका यही मुख्य उद्देश्य है। यह वृत्ति पांच प्रकारकी होती है—प्रमाण, विपर्यय, विकल्प, निद्रा और स्मृति। प्रमाण, विपर्यय प्रभृति देखो।

क्लिष्टि (सं० स्त्री०) क्लिश्-क्तिन्। १ क्लेश, तकलीफ। २ सेवा, खिदमत।

क्लीत (सं० पु०) अग्निप्रकृति कीट, एक जहरीला कीड़ा। यह उन्हीं हिंस्रक कीटोंके अन्तर्गत है, जो सर्पके शुक्र, विष्ठा, मूत्र, मृतदेह और पूति अण्डसे उत्पन्न होते हैं। इसके काटनेसे पित्तजन्य रोग लग जाते हैं।

(सुश्रुत कल्प ८ अ०)

क्लीतक (सं० क्ली०) क्लीव-क्विप् निपातनात् वकारलोपः, क्लियं तकति हसते अच्। १यष्टिमधु, मुलहटी, मौरेठी। २ नीलमूल यष्टिमधु, काली मौरेठी। (आश्वलायन गृह्यसूत्र ३।८।७।८) यह स्थावर विषान्तर्गत मूल विष है।

(सुश्रुतकल्प २अ०)

क्लीतका (सं० स्त्री०) १ नीलीवृक्ष, नीलका पेड़। २ पृश्निपर्णी, पिठवन।

क्लीतकिका (सं० स्त्री०) नीलीवृक्ष। नील देखो।

क्लीतनक (सं० क्ली०) क्लीतं कीटविशेषं नुदति, नुद बाहुलकात् ड संज्ञार्थे कन्। जलयष्टिमधुभेद, पानीमें पैदा होनेवाली मौरेठी। मुलहटी जल स्थल भेदसे दो प्रकारकी होती है। यह मधुर, वृष्य, बल्य, वृष्य, व्रणघ्न, शीतल, गुरु, चक्षुष्य और रक्तपित्तघ्न है। (राजनिघण्टु)

क्लीतनी, क्लीतका देखो।

क्लीतलक (सं० क्ली०) यष्टिमधु।

क्लीव (सं० पु०-क्ली०) क्लीव-क। १ पुरुष और स्त्री भिन्न, नपुंसक, नामर्द। इसका संस्कृत पर्याय—षण्ड, नपुंसक, तृतीयप्रकृति, शण्ड, पण्ड, मण्ड और शण्ढ है। जिसके मूत्रमें फेण नहीं होती और विष्ठा जलमें डूब जाती, मेढ़ शुक्रहीन रहता और ऊपरको नहीं उठता—उसीको क्लीव कहते हैं। (कात्यायन)

नारदके मतमें क्लीव १४ प्रकारके होते हैं—निसर्गषण्ड, अनषण्ड, पक्षषण्ड, गुरु-अभिशापजनित षण्ड, रोगजनित षण्ड, देवक्रोधजनित षण्ड, ईर्ष्याषण्ड, असेक्य, वातरेता, मुखेभग, आक्षिप्त, मोघवीज, शालीन और अन्यापति। माता और पिताके समान वीर्यसे निसर्ग-षण्डकी उत्पत्ति होती है। जिसके अण्ड नहीं रहता, उसीका नाम अनषण्ड पड़ता है। इन दो प्रकारके षण्ढोंकी कोई चिकित्सा नहीं, इनका प्रतीकार होना कठिन है। पक्षषण्ड एकपक्ष पर्यन्त चिकित्सा करनेसे आरोग्य हो जाता है। गुरुके अभिशाप, रोग वा देवकोपसे जो षण्ड बनते, उनकी चिकित्सा एक वत्सर पर्यन्त करते हैं। ईर्ष्याषण्ड, असेक्य, वातरेता और मुखेभग—चार प्रकारके षण्ड भी अचिकित्स्य हैं, इनका कोई प्रतीकार नहीं। जिन षण्ढोंका प्रतीकार असम्भव है, उनको पत्नियोंको क्षतयोनि होते भी पतितोंकी भांति उन्हें परित्याग करना चाहिये। दर्शन वा स्पर्शमात्रसे जिसका वीर्यस्खलित हो जाता, वह आक्षिप्त और जिसका वीर्य अपत्य उत्पादनके अयोग्य आता, वह मोघवीर्य कहलाता है। इस प्रकारके नपुंसक ६ मास चिकित्सा करनेसे सम्भवतः आरोग्य हो सकते हैं। पराशरसंहिताके "नष्टे मृते प्रव्रजिते क्लीवे च पतिते पतौ। पञ्चस्वापत्सु नारीणां पतिरन्यो विधीयते।" वचनानुसार कोई कोई कहता कि पति क्लीव होनेसे उसको परित्याग करके स्त्री अन्य पतिको ग्रहण कर सकती है। किन्तु टीकाकार माधवाचार्यका कहना है कि "दत्तायाश्चैव कन्यायाः पुनर्दानं वरस्य च" आदित्यपुराणके वचनानुसार कलिकालमें स्त्रियोंका दूसरा विवाह निषिद्ध है। (वाचस्पत्य)

याज्ञवल्क्य-संहिताके मतमें सम्पत्ति विभागसे पूर्व क्लीव होने पर किसी सम्पत्तिमें उसका अधिकार नहीं रहता। परन्तु विभागके पीछे यदि किसी औषध द्वारा क्लीवत्व नाश होता, तो उसका अंश उसको देना पड़ता है। क्लीवका क्षेत्रज पुत्र निर्दोष होने पर उक्त सम्पत्तिका अधिकारी ठहरता है। दायाधिकारियोंको क्लीवकी क्षेत्रज कन्याका विवाह पर्यन्त भरणपोषण करना चाहिये। उसके विवाहका व्यय भी इसी सम्पत्तिसे दिया जाता है। जिस क्लीवपत्नीका क्षेत्रज पुत्र नहीं रहता और जिसके चरित्रमें भी कोई दोष नहीं

मिलता उसको भी प्रतिपालन करना पड़ता है। परन्तु व्यभिचारिणी होनेसे क्लीवपत्नीको निकाल देना चाहिये (याज्ञवल्का) क्लैव्य देखो।

२ कर्तव्यकर्ममें निरुत्साह, काममें ढीला। ३ अधीर, बेसब्र। ४ विक्रमहीन, कमजोर। ५ शब्दका कोई चिह्न वा धर्म। ६ ऋ ॠ ऌ ॡ चारवर्ण। (तन्त्रसार)

क्लीवता (सं० स्त्री०) क्लीवस्य भावः, क्लीव-तल्। क्लीवका भाव, सन्तानोत्पादिका शक्तिका अभाव, नामर्दी। दो शिरायें शुक्रवहन करती हैं। स्तनद्वय और कोषद्वय उनका मूलस्थान है। यह शिरायें किसी प्रकार विद्ध होने पर क्लीवता आती है। (सुश्रुत शारीर ८ अ०)

क्लीवत्व (सं० क्ली०) क्लीवस्य भावः, क्लीव-त्वल्। क्लीवता, नामर्दी।

क्लृप्त (सं० त्रि०) क्लृप-क्त ऋकारस्य ऌकारादेशः। १ रचित, रचा हुवा। २ कल्पित, माना हुवा। ३ विहित, ठहराया हुवा। ४ निर्मित, बनाया हुवा। (रघुवंश) ५ वापित, काटा हुवा। (मनु)

क्लृप्तकीला (सं० स्त्री०) क्लृप्तं कीलमव, बहुव्री०। निर्दिष्ट करग्रहणके लिये भूम्यधिकारी-प्रदत्त पत्र-विशेष, पट्टा। (वाचस्पत्य)

क्लेद (सं० पु०) क्लिद भावे घञ्। १ शरीरार्द्रता, जिस्मकी तरी, पसीना। २ आर्द्रता, तरी, गीलापन। (उज्ज्वट) ३ मल, मैल। ३ कफ, क्लेदन नामक श्लेष्मा। क्लेदन देखो। ४ पूतीभाव, सड़ाव। (त्रि०) ५ आर्द्र, भीगा, गीला।

क्लेदक (सं० त्रि०) क्लेदयति, क्लिद-णिच्-ण्वुल् १ क्लेदकारक, तरी या पसीना लानेवाला। (क्ली०) २ दश प्रकारके शरीरस्थ अग्नियोंमें एक प्रकार अग्नि। अग्नि देखो। क्लेदकारक जैसे जलका नाम क्लेदक पड़ना उचित होते भी अग्निकी सहायता भिन्न जलसे क्लेद नहीं होता। इसीसे अग्नि क्लेदक कहलाता है।

क्लेदन (सं० पु०) क्लेदयति, क्लिद-णिच्-ल्यु। १ कफ-भेद, कोई शरीरस्थ श्लेष्मा। इसीसे क्लेद उत्पन्न होता है। भावप्रकाशके मतमें—क्लेदन ही स्थानभेद और कार्यभेदसे पांच प्रकार विभक्त है—क्लेदन, अवलम्बन, रसन, स्नेहन और श्लेष्मा। क्लेदन कफ आमाशयमें उत्पन्न हो वहीं रहता है। यह निज शक्ति द्वारा भक्षित द्रव्य जीर्ण किया करता है। क्लेदन कफ ही हृदय, कण्ठ, मस्तक और सन्धिस्थानमें पहुंच हृदया-वलम्बन, त्रिकसन्धारण, रसग्रहण, इन्द्रियतृप्ति तथा सन्धिके मिलन प्रभृति कार्योंमें सहायता लगाता है। इसकी सहायता व्यतीत अवलम्बन प्रभृति श्लेष्मा उक्त सकल कार्य कर नहीं सकते। (भावप्रकाश १।१ खण्ड) (त्रि०) २ क्लेदजनन, पसीना लानेवाला।

क्लेदवान् (सं० त्रि०) क्लेदयुक्त, पसीनेसे भरा हुआ। (सुश्रुत चिकित्सा)

क्लेदा (सं० पु०) क्लिद-कनिन् निपातनेसे साधुः। श्वन्नुक्षन् पूषन् प्लीहन् क्लेदन् स्नेहन् मूर्धन् मज्जन् अर्यमन् विश्वप्सन् परिज्मन् मात-रिश्वन् मघवन्निति। उण् १।१५८। १ चन्द्र, चांद। २ सन्निपात, सरशाम।

क्लेदु (सं० पु०) क्लिद्यति, क्लिद्-उन्। प्रसृ क्लिदिवधसि वसिहनिक्लिदिबन्धिमनिभ्यश्च। उण् १।११। १ चन्द्र। २ सन्निपात।

क्लेश (सं० पु०) क्लिश् भावे घञ्। १ दुःख, तकलीफ। इसका संस्कृत पर्याय—आदीनव और आस्रव है। (गीता १२।५)

क्लिश्नाति, क्लीश-अच्। २ पातञ्जलोक्त अविद्या, अस्मिता, राग-द्वेष और अभिनिवेश। (पातञ्जल २। ३)

अविद्या, अस्मिता प्रभृति ही सांसारिक पुरुषके विविध दुःखका कारण हैं। जब तक इनका सद्भाव रहता, मनुष्य किसी प्रकार सुखी नहीं हो सकता। इसीसे इनको क्लेश कहते हैं। विपरीत ज्ञानका नाम अविद्या है। अविद्या हो अस्मिता आदिका मूल कारण है। अविद्याका नाश होनेसे अस्मिता प्रभृतिका भी नाश हो जाता है। अहङ्कारको अस्मिता कहते हैं। सुख वा सुखसाधनकी इच्छाका नाम राग, दुःख वा दुःख कारणके दूर करनेकी इच्छाका नाम द्वेष और मरण त्रासका नाम अभिनिवेश है। क्लेशकी चार अवस्थाएं हैं। प्रसुप्त, तनु, विच्छिन्न और उदार। क्लेश जब अति सूक्ष्मरूपसे चित्तमें अवस्थिति करते और कोई कार्य करनेका सामर्थ्य नहीं रखते, उसी अवस्थाको प्रसुप्ति कहते हैं। प्रतिकूल भावना करते करते क्लेशोंका क्षीण हो जाना तनु अवस्था है। मध्य मध्य क्लेशोंका विच्छेद

विच्छिन्न अवस्था कहलाता है। प्रकाशभावापन्न कार्य-क्षम क्लेश जब अविरत अपना विषय ग्रहण करते, तब उन्हें उदार कहते हैं।

जो योगबलसे किसी तत्त्वमें लीन हो सके हैं, उनके अविद्यादि क्लेश सभी कार्य करनेसे वञ्चित रहते हैं। उन्हीं क्लेशोंका नाम प्रसुप्त है। जिन्होंने योग करना आरम्भ किया है, उनके क्लेशोंकी तनु अवस्था रहती है। फिर संसारमें निरतिशय अभिलाष रखनेवालोंके क्लेश विच्छिन्न और उदार कहलाते हैं। अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश देखो।

२ क्रोध, गुस्सा। ३ व्यवसाय, रोजगार। ४ पापेच्छा (दिव्यावदान)

क्लेशक (सं॰ त्रि॰) क्लिश-वुञ्। निन्दहिंसक्लिश-खादविनाश-परिक्षिपपरिरटपरिवादिव्याभाषासूयोवुञ्। पा ३।२।१४६ क्लेश शील, तकलीफदिह।

क्लेशकारी (सं॰ त्रि॰) क्लेशं करोति जनयति, क्लेश-कृ-णिनि। क्लेश उत्पन्न करनेवाला, जिससे तकलीफ मिले।

क्लेशमार (सं॰ त्रि॰) क्लेशं मारयति नाशयति, क्लेश-मृ-णिच्-अ। क्लेशनाशक, तकलीफ मिटानेवाला।

क्लेशवान् (सं॰ त्रि॰) क्लेशोऽस्त्यस्य, क्लेश-मतुप् मस्य वः। क्लेशविशिष्ट, तकलीफजदा।

क्लेशापह (सं॰ त्रि॰) क्लेशं अपहन्ति, क्लेश-अप-हन्-ड। अपे क्लेशतमसोः। पा ३।२।५०। क्लेशनाशक, तकलीफ दूर करनेवाला।

क्लेशित (सं॰ त्रि॰) क्लिश क्त क्लेशो जातोऽस्य, क्लेश-इतच् वा। क्लेशयुक्त, तकलीफजदा। (शृङ्गारतिलक)

क्लेशी (सं॰ त्रि॰) क्लिश् ताच्छील्ये णिनि। क्लेशशील, तकलीफ देनेवाला। (माघ)

क्लेष्टा (सं॰ त्रि॰) क्लिश कर्त्तरि तृच्। क्लेशकारक, तकलीफ देनेवाला।

क्लैतकिक (सं॰ क्ली॰) क्लीतकेन यष्टिमधुकया निर्वृत्तम्, क्लीतक-ठञ्। मद्यविशेष, मुलहटीकी शराब।

क्लैव्य (सं॰ क्ली॰) क्लीवस्य भावः, क्लीव-ष्यञ्। पुरुषकारहीनत्व, एक रोग। इससे सन्तानोत्पादिकाशक्ति नष्ट हो जाती है। सुश्रुतके मतमें क्लैव्यरोग छह प्रकारका है—मानसज, धातुक्षयज, शुक्रक्षयज, उपघातज, सहज और स्थिरशुक्रज। सङ्गमेच्छु व्यक्तिके मनमें किसी प्रकारका अप्रिय भाव उपस्थित किंवा अप्रिय स्त्रीके सम्भोगसे मनःक्षुण्ण होनेसे जो क्लीवत्व आता, वह मानसिक कहलाता है। कटु, अम्ल, उष्ण तथा लवण रस अधिक परिमाणमें भोजन करनेसे सौम्य धातुका क्षय होने पर लगनेवाला क्लैव्य रोग धातुक्षयज है। वाजीक्रिया न करके अतिशय स्त्री सेवनमें पड़नेसे ध्वजभङ्ग वा शुक्रक्षयज होता है। अतिशय मेढ़रोग अथवा मर्मच्छेदसे पुरुषशक्तिका जो व्याघात पड़ता, उसको वैद्य उपघातज क्लैव्य कहते हैं। जन्मसे ही पुरुषशक्तिहीन होना सहजक्लैव्य है। बलिष्ठ व्यक्ति यदि कामविकार उपस्थित होने पर शुक्रको रोक रखता, तो शुक्र स्थिर होकर रहता और क्लैव्य रोग लगता है, इसीका नाम स्थिरशुक्रज है।

इस छह प्रकारके क्लैव्यरोगमें सहज और उपघातज असाध्य होता है। अवशिष्ट चार प्रकारका क्लैव्य रोग जिस कारणसे लगता, उसके विपरीत प्रतिकार करना पड़ता है। क्लैव्य रोगमें वाजीकरण पथ्य है। (सुश्रुत चिकित्सित २६ अ॰)

चरकसंहिताके मतमें शीतल तथा रूक्ष अन्न आहार, अजीर्णमें भोजन, शोक, चिन्ता, भय, त्रास, अतिशय स्त्रीसेवन, अभिचार, वात, पित्त, कफके वैषम्य और अनाहारसे वीजका उपघात होता और क्लैव्य-रोग लगता है। (चरक) ध्वजभङ्ग देखो।

क्लोजपेट—महिसूरके अन्तर्गत बङ्गलूर जिलाके चेन्नपाटन तालुकका एक शहर। यह अक्षा॰ १२° ४३´ उ॰ और देशा॰ ७७° १७´ पू॰ पर बङ्गलूर शहरसे अठारह मील दूर आरकवती पर अवस्थित है। यहांकी जनसंख्या प्रायः ६०८९ है। यह शहर रेसिडेण्ट वेरीक्लोजने १८०० ई॰में निर्म्माण किया था। इसलिये इसका नाम क्लोजपेट पड़ा। यहांके मुसलमान रेशमी कीड़ाओंको पालते और उनसे रेशम तयार करते हैं। इस शहरकी आमदनी प्रायः साढ़ेतीन हजार रु॰ है।

क्लोम (सं॰ क्ली॰) क्लोमा देखो।

क्लोमतुण्डी (सं॰ स्त्री॰) प्राणिविशेष, कोई जानवर।

जिसका देहस्थ वायु क्लोमके मुखसे संलग्न रहता, उस प्राणीको विद्वान् क्लोमतुण्डी कहता है।

क्लोमश्वासी (सं० पु०) त्वक्कोष द्वारा श्वासकर्म निष्पन्न करनेवाला प्राणी, जो जानवर खालसे सांस लेता हो। क्लोमश्वासी प्राणियांके ६ या ८ चक्षु होते हैं। यथा—मकड़ा और केकड़ा।

क्लोमा (सं० पु०) १ पिपासास्थान, फुस्फुस, दाहना फेफड़ा। यह हृदयके अधोभागमें दक्षिण कुक्षिका एक मांसपिण्ड है। (याज्ञवल्क्य, मिताक्षरा) वैद्यलोग कहते हैं कि दोनों बाहुवोंके मध्य वक्षः, उसके मध्य हृदय और उसके पास पिपासास्थान क्लोम है। २ मस्तिष्क, सर।

क्लोरोफार्म (अं० पु०—Chloroform) निद्राजनक औषधविशेष, बेहोश करनेकी एक दवा। यह तरल होता और मीठा मीठा महकता है। इसको प्रायः नश्तर लगानेमें व्यवहार करते हैं। क्लोरोफार्म आघ्राण करते ही थोड़ासा नशा आता और फिर सूंघनेवाला गाढ़ी नींद सो जाता है। मात्रा अधिक होनेसे मरनेका डर है। यह शीशी खुली रखनेसे उड़ जाता है। चोर-बदमाश लोगोंको सोतेमें क्लोरोफार्म सुंघा बेहोश कर देते और उनका रुपया पैसा खींच बेखटके अपनी राह लेते हैं।

क्लोश (वै० पु०) भय, डर। (चरक ६।४६।१४)

क्व (सं० अव्य०) किम्-अत्। किमोऽत्। पा ५।३।१२। ततः किमः स्थाने कु आदेशः। कुतिः। पा ७।२।१०५। कहां, किस जगह। (सारदातिलक) दो पदार्थोंका मिलन वा सम्बन्ध नितान्त असम्भव होनेसे पण्डित लोग दो 'क्व' प्रयोग करते हैं। तथा—

"क्व सूर्यप्रभवो वंशः क्व चाल्पविषया मतिः।" (रघुवंश १)

क्वङ्ग (सं० पु०) कु-अगि-अण्। कङ्गु, चीना धान।

क्वचन (सं० अव्य०) १ किसी स्थान पर, कहीं। २ कहीं भी। ३ किसी अंशमें, किसी कदर। ४ कभी, किसी समयको। पाणिनिके मतमें क्व एक पद और चन दूसरा पद है। परन्तु मुग्धबोधमें क्वचनको एक ही पद माना है। क्वचित्, कुचन देखो।

क्वण (सं० पु०) क्वण् भावे अप्। १ शब्दविशेष, एक आवाज। चलती बोलीमें इसे कनकन कहते हैं। २ वीणाका शब्द, सितार वगैरह बाजेकी आवाज, झनझन, टिन टिन, छम छम। ३ शब्द, आवाज। क्वण कर्तरि अच्। ४ शब्दकारक आवाज करनेवाला।

क्वणन (सं० क्ली०) क्वण् भावे ल्युट्। १ कनकन। २ झनझन। ३ छमछम। ४ शब्द, आवाज। (पु०) कर्तरि अच। ५ जलाधारविशेष, छोटी हण्डी।

क्वणित (सं० त्रि०) १ क्वणन-शब्दयुक्त, कनकन, झनझन या छमछमकी आवाज निकालनेवाला। (क्ली०) २ क्वणन, झनझन, कनकन या छमछम।

क्वणितेक्षण (सं० पु०) गृध्र, गीध।

क्वथ (सं० पु०) क्वथ-अच्। विकल्पे न ण प्रत्ययः। ज्वलिति कसन्तिभ्यो णः। पा ३।१।१४०। क्वाथ, काढ़ा, जोशांदा।

क्वथन (सं० क्ली०) क्वाथकरण, काढ़ा बनानेकी क्रिया।
(सुश्रुत सूत्र ४५ अ०)

क्वथिका (सं० स्त्री०) क्वाथ, काढ़ा।

क्वथित (सं० त्रि०) क्वथ-क्त। १ पक्व, सृत, पकाया हुवा, उबाला हुवा। इसका संस्कृत पर्याय—निष्पक्व, कषाय, निर्यूह, क्वाथ और सृत है। (क्ली०) २ माधवीमद्य, महुवेकी शराब। २ क्वाथ, काढ़ा, जोशांदा।

क्वथितजल (सं० क्ली०) क्वथितञ्च तद्‌जलञ्चेति, कर्मधा०। उष्णोदक, गर्म पानी। इसका संस्कृत पर्याय—शृताम्बु, निष्पक्वाम्बु, कषायाम्बु इत्यादि है। यह पादावशेष, अर्धावशेष और त्रिपादावशेष—त्रिविध होता है। पादावशेष कफघ्न, लघु और आग्नेय है। अर्धावशेष पित्तघ्न और त्रिपादावशेष वातघ्न होता है। फिर पादावशेष वसन्तमें, अर्धावशेष शरत् तथा ग्रीष्ममें और त्रिपादावशेष हेमन्त एवं शिशिरमें प्रशस्त है। वर्षाके लिये अष्टभागावशेष अच्छा होता है। जो क्वथ्यमान जल निर्वेग, निष्फेन और निर्मल हो जाता, वही क्वथित कहलाता है। यह दोषघ्न, पाचन और लघु होता है।

क्वथितद्रव्य (सं० क्ली०) अरिष्ट। किसी चीजको उबाल कर निकाला हुवा रस।

क्वथिता (सं० स्त्री०) औषधविशेष, एक दवा। चलती बोलीमें इसे कढ़ी कहते हैं। इसको पाक करनेको

प्रणाली यह है—एक कड़ाहीमें तैल वा घृत द्वारा हरिद्रा और हिङ्गु को एकत्र भून लेना चाहिये। अच्छी तरह पक जाने पर उसमें चटनीके साथ मट्ठा छोड़ आँच लगाते हैं। हलदी और हींग सिद्ध हो जानेसे उसमें किञ्चित् परिमाण मरिच दे देना चाहिये। इसीका नाम क्वथिता है। यह पाचक, रुचिकर, लघु, अग्नि-वृद्धिकर, कफ तथा वायुप्रशमकारी और कुछ पित्त-वर्धक होती है। (भावप्रकाश)

क्वथःस्थ (वै० त्रि०) भूमिपर स्थित।

क्वल (वै० पु०) कु अल-अच्। अर्धपक्व बदरफल, अध पक्का बेर। (तैत्तिरीय० २।५।३।५)

क्वाचर (हिं० पु०) १ गरियार बैल, कंधा डाल देनेवाला बैल। (वि०) २ निर्बल, कम कुवत।

क्वाड्रेट (अं० पु० Quadrat) एक समचतुरस्र खण्ड, कोई चौपहलू टुकड़ा। यह टाइपके अक्षर मिलानेमें रिक्त स्थान पर व्यवहृत होता है। क्वाड्रेट सीसेसे ढलता, कम्पोजमें मिलता, स्पेस (वकफा, विच्छा) से बढ़ता और कोटेशनसे घटता है। क्वाड्रेट टाइपके बराबर चौड़ा और १ एमसे ४ एम तक लम्बा होता है। इसको क्वाड भी कहते हैं।

क्वाण (सं० पु०) क्वण भावे घञ्। १ शब्द, आवाज। (त्रि०) क्वण-ण। ज्वलितिकसन्तेभ्यो णः। पा ३।१।१४०। २ शब्द-कारक, आवाज निकालनेवाला।

क्वाथ (सं० पु०) क्वथ-घञ्। १ अतिशय दुःख, सख्त तक-लीफ। २ व्यसन, आदत। ३ निर्यास, दूध। ४ कषाय, काढ़ा। यह वैद्यकमतका एक पाकविशेष है। क्वाथकी प्रस्तुत-प्रणाली यह है—जिस द्रव्यका क्वाथ बनाना हो, उसको बुकनी बना लेना चाहिये। फिर एक पल परिमित बुकनी और उससे १६ गुण जल एक मृत्तिका पात्रमें डाल आँच लगाते हैं। आठ भागोंमें एक भाग रह जानेसे उतारना पड़ता है। कर्षपरिमित द्रव्यसे पलपरिमित द्रव्य पर्यन्त क्वाथ करनेका यही नियम है। कुड़वपरिमित द्रव्यका क्वाथ बनानेमें अष्टगुण और कुड़वसे अधिक परिमाणके द्रव्य क्वाथमें चतुर्गुण जल लगता है। (शार्ङ्गधर)

क्वाथ सात प्रकारका होता है-पाचन, शोधन, क्लेदन, संशमन, दीपन, तर्पण और शोषण। इनमें अर्धावशेष पाचन, द्वादशांशक शोधन, चतुरंशक क्लेदन, अष्टांशक संशमन, षडंशक दीपन, पञ्चमांशक तर्पण और षोड़-शांशक शोषण है।

जलक्वाथ तीन प्रकारका है—पादावशेष, अर्धावशेष और त्रिपादावशेष। पादावशेष जल कफनाशक, लघु और अग्निवर्धक होता है। यह वसन्तकालको प्रशस्त है। अर्धावशेष जलक्वाथ पित्तनाशक है और शरत् तथा ग्रीष्मकालमें पीना चाहिये। त्रिपादावशेष जल वायुनाशक होता और हेमन्त तथा शिशिर ऋतुमें उपकार करता है। वर्षाकालको अष्टमांश अवशिष्ट जल सेवनीय है। दिनका पका पानी रातको और रातका पानी दिनको गुरुपाक हो जानेसे पीना निषिद्ध है। (राजवल्लभ)

वात, पित्त और कफातङ्कपर क्वाथमें शर्करा क्रमशः चार, आठ और सोलह अंश डालना चाहिये। इससे उलटा अर्थात् वात, पित्त और कफ रोगके लिये सोलह, आठ और चार अंश मधु पड़ता है। यदि क्वाथमें जीरक, गुग्गुल, क्षार, लवण, शिलाजतु, हिङ्गु और त्रिकटु (सोंठ मिर्च पीपल) डालनेको कहा जाये तो उसे शाणमित (४ मासा) लेना चाहिये। पाचन दोषोंको पचाता, दीपनसे अग्नि बढ़ आता, शोधन मलशुद्धि लाता, शमन रोगोंको दबाता, तर्पण धातुओंको तृप्ति पहुंचाता, क्लेदी हृत्क्लेद लगाता और विशोषी शोष बढ़ाता है। क्वाथ सन्ध्याको शीघ्र बना लेना चाहिये। रातको दोषका बलाबल देख कर क्वाथ दिया जाता है। नवज्वरमें पीनेसे यह दोष मिटानेके बदले बढ़ाया हो करता है। क्वाथ पानसे यदि क्लम, मूर्च्छा, विह्वलता वा शिरोव्यथा उठे, तो शीघ्र रोगीको वमन करा देना चाहिये। (भावेयस०)

पूर्वाह्नको शमन, अपराह्नको दीपन, निशीथको शोषण और सूर्योदयसे पूर्व शोधनीय दिया जाता है। (सुश्रुत)

क्वाथि (सं० पु०) अगस्त्यका नामान्तर।

क्वाथोद्भव (सं क्लो०) उद्भवत्यस्मात्, उद्-भू अपादाने अप्। ततः क्वाथ उद्भवो यस्य, बहुव्री०। कर्परोतुत्थक, कृत्रिम रसाञ्जन, कुलत्थाञ्जन, रसौत।

क्वापि (सं० अव्य०) क्व-अपि। कहीं भी, किसी भी जगह।

क्वारण्टाइन (अं० पु०—Quarantine) गमनागमन संसर्ग निषेध, वबाई बीमारी रोकनेके लिये मुसाफिरोंको कुछ अरसेके लिये किसी खास जगहमें ठहराया जाना।

क्वारपन (हिं० पु०) अविवाहितावस्था, जिस हालतमें शादी न हुई हो।

क्वारापना, क्वारपन देखो।

क्वार्टरमाष्टर (अं० पु० Quartermaster.) १ पैर-खेमेका एक फौजी अफसर। यह रसदका इन्तजाम रखता है। इसे लेफटिनेण्टसे कम नहीं समझते। २ पतवार पर हाजिर रहनेवाला एक छोटा अफसर। यह झण्डियां, लालटेनें या दूसरे इशारे दिखा कर नाविकोंको पोत चलानेमें साहाय्य पहुंचाता और उन्हें समुद्रका गाम्भीर्य तथा दिशायें बताता है।

क्वासि—एक संस्कृत पद। यह 'क्व' और 'असि' के योगसे बनता है। 'क्व' का अर्थ कहां और 'असि'का अर्थ 'तू है' है। अर्थात् क्वासि—तू कहां है।

क्विनाइन (अं० पु०=Quinine) कुनैन देखो।

क्विल (अं० पु०=Quill) पर्णलेखनी, परका कलम।

क्वीन (अं० स्त्री०=Queen) राजमहिषी, महारानी, मलका।

क्वैलारी (हिं० स्त्री०) कोइलारी।

क्ष—क्षकार अक्षर। ककार और षकार योगमें उत्पन्न होनेसे शाब्दिक लोग इसको अतिरिक्त वर्ण-जैसे स्वीकार नहीं करते। किन्तु तन्त्रके मतसे क्षकार एक अतिरिक्त, चतुःत्रिंशत् व्यञ्जन, अष्टम वर्गका पञ्चम और एक पञ्चाशत् मातृकावर्णोंका अन्तिम वर्ण है।

"पञ्चाशल्लिपिभिर्माला विहिता सर्वकर्मसु।
अकारादि क्षकारान्ता वर्णमाला प्रकीर्तिता॥" (गौतमीय तन्त्र)

इसका उच्चारणस्थान कण्ठ है। (वरदातन्त्र १० पटल)

कामधेनुतन्त्रके मतमें क्षकार कुण्डलीत्रययुक्त, चतुर्वर्गमय, पञ्चदेवस्वरूप, तीन शक्तियों तथा तीन विन्दुवोंसे युक्त और शरच्चन्द्रके समान उज्ज्वलकान्ति-विशिष्ट है। इसके कई नाम हैं—क्रोध, तुम्बुक, काल, रूप, संवर्तक, नृसिंह, विद्युता, माया, महातेजा, युगान्तक, परात्मा, क्रोध, संहार, वलान्त, मेरु, सर्वाङ्ग, सागर, काम, संयोगान्त, त्रिपूरक, क्षेत्रपाल, महाक्षोभ, मातृकान्त, अमल, अचज, मुख, कव्यवहा, अनन्ता, कालजिह्वा, गणेश्वर, छायापुत्र, सङ्घात, मलयश्री और ललाटक। (वर्णाभिधानतन्त्र)

कोई कोई कहता है कि तन्त्र मतसे भी क्षकार कोई अतिरिक्त वर्ण नहीं ठहरता। मातृकावर्णके एक पञ्चाशत् संख्यापूरण मात्रको ही वह पृथक् रूपसे रख लिया गया है। वरदातन्त्रमें आदिवर्ण ककारके अनुसार क्षकारका उच्चारण-स्थान कण्ठ कहा है। अतएव प्रसिद्ध अभिधानादिमें क्षकारका कादि वर्णके मध्य रहना भी सङ्गत है। तन्त्रसारप्रणेता कृष्णानन्दने निम्न-लिखित प्रमाणके अनुसार उसको संयुक्तवर्ण-जैसा ही ग्रहण किया है—

"अकारादि लकारान्ता वर्णाः पञ्चाशदीरिताः।
संयोगात् कषयोरेव क्षकारो भेदरीरितः॥"

वाचस्पत्यमें लिखा है, कि मातृकावर्णोंके अन्तर्गत अन्तिम लकारकी भांति क और ष के संयोगसे उत्पन्न क्षकार भी अतिरिक्त नहीं। इसी कारण क्षकारका एक नाम संयोगान्त पड़ा है। किन्तु यह किसी प्रकार सङ्गत-जैसा ज्ञात नहीं होता। कारण अन्य शास्त्रोंमें क्षकारको अतिरिक्त वर्ण स्वीकार न करते भी तन्त्र-शास्त्रके मतानुसार उसको अतिरिक्त जैसा ही मानना पड़ेगा। वरदातन्त्रमें क्षकार कण्ठ्य-जैसा वर्णित हुवा है। यह वर्णना आदि वर्णके अनुसार की गयी है। ऐसा स्वीकार करने पर अन्त्यवर्ण मूर्धन्य षकारको क्यों नहीं कहा? इसका कोई कारण कहां निर्दिष्ट है। गौतमीय-तन्त्रमें भी "अकारादि क्षकारान्ता वर्णमाला प्रकीर्तिता" वचनसे क्षकार अतिरिक्त वर्ण समझा गया है। क्षकारका संयोगान्त नाम देख कर उसे अनतिरिक्त नहीं कह सकते। कारण संयोगान्तकी भांति इसका एक नाम वर्णान्त भी है। प्रथमके अनुसार अनतिरिक्त कहने पर वर्णान्तके अनुसार अतिरिक्त भी कहना पड़ेगा। मातृकावर्णोंके अन्तर्गत जो दो लकार हैं, वह भी एक नहीं। उनका उच्चारण भी

भिन्न है। उनमें एक ळ्ह और दूसरा ल है। पहलेका उच्चारणस्थान मूर्धा और दूसरेका दन्त है। "संयोगात् कषयोरेव चकारो भेदरीरित:" वचनमें क्षकारका अनतिरिक्त कहा जाना भी कहा जा नहीं सकता। दो वर्णोंके संयोगसे अनतिरिक्त ठहरता, तो ए, ओ, ऐ, औ, र और लको भी अनतिरिक्त वर्ण कहा जा सकता है। कारण स्वरवर्णोंको परस्पर सन्धिसे भी यह कई वर्ण बन सकते हैं।

क्ष (सं० पु०) क्षयति लोकान् प्रलयकाले सर्वाणि भूतानि महाकालोदरं प्रेरयति, क्षि-ड। १ प्रलय, कयामत। २ राक्षस। ३ नृसिंह। ४ विद्युत्, बिजली, गाज। ५ क्षेत्र, खेत। ६ क्षेत्रपाल, खेतका रखवाला। ७ नाश, बरबादी।

क्षण, क्षण देखो।

क्षण (सं० पु०) क्षणोति नाशयति सर्वं यथाकालम्, क्षण-अच्। १ काल, वक्त। सकल जन्य पदार्थ कालमें लय हो जाते हैं। इस कारण कालका नाम "क्षण" पड़ा है। २ कालका अंशविशेष, वक्तका एक हिस्सा। अमरके मतमें अठारह निमेषोंकी एक काष्ठा, तीस काष्ठाओंकी एक कला और तीस कलाओंका एक क्षण होता है। शब्दार्थचिन्तामणि कहता है कि चक्षुके एक बार निमेषमें जितना समय लगता, उसके चार भागोंका एक भाग क्षण ठहरता है। पातञ्जलभाष्यको देखते कालका जो शेष अंश बांटनेमें नहीं आता, वही क्षण कहलाता है। जैसे द्रव्यके और अवयव न रखनेवाले शेष अवयवको परमाणु कहते, वैसेही कालके शेष अंशको क्षण समझते हैं। न्यायके मतानुसार महाकाल नित्य द्रव्य है। उसका कोई अवयव वा अंश नहीं होता। उपाधिभेदसे क्षण, मुहूर्त प्रभृति शब्द व्यवहार किये जाते हैं। परन्तु वह कोई अतिरिक्त पदार्थ नहीं।

(दिनकरी ११२)

कोई कोई नैयायिक अन्यशब्दविशिष्ट कालको भी क्षण-जैसा निर्देश करता है। (पक्षता, जागदीशी)

जैन-शास्त्रानुसार काल एक द्रव्य है। रत्नोंकी राशिके समान अलोकाकाशके प्रत्येक प्रदेश पर काल-का एक २ अणु अवस्थित है। इसके दो भेद हैं—एक निश्चयकाल और दूसरा व्यवहारकाल। क्षण, समय आवली दिन रात आदि व्यवहार कालके भेद हैं और उस व्यवहारकालका उत्पादक निश्चयकाल है। संसारमें जितने भी पदार्थ पर्यायसे पर्यायांतर होते रहते हैं। उन सबका उदासीन कारण काल है। छोटा, बड़ा, नया, पुराना, आदि विशेषण जो पदार्थोंके लगते हैं उसमें कालही कारण है। (तत्त्वार्थसूत्रटीका)

३ प्रशस्त मुहूर्त, अच्छी साअत। (दीपिका) ४ मुहूर्त, दो दण्ड। (सिद्धान्तशिरोमणि) क्षणोति दुःखं नाशयति। ५ उत्सव, जलसा। (माघ १।१४) ६ व्यापारशून्य अवस्थिति, बेकारी। ७ पर्व, त्योहार। ८ अवसर, मौका। ९ पराधीनत्व, दूसरेकी मातहती। १० मध्य, बीच। ११ चूनक, लोबान।

क्षणकाल (सं० क्ली०) १ मुहूर्तकाल, जरा देर। २ उत्सवकाल, जलसेका वक्त।

क्षणक्षण (सं० अव्य०) बाहुलकात् प्रकारार्थे द्विवचन। बार बार, छिन छिन।

क्षणतु (सं० पु०) क्षण भावे अतु। क्षत, जखम। किसी किसी पुस्तकमें 'क्षणतु' के स्थल पर 'क्षणनु' पाठ देख पड़ता है।

क्षणद (सं० पु० क्ली०) क्षणं यात्रादिमुहूर्तं ददाति, क्षण-दा-क। १ मौहूर्तिक, गणक, जूमी। २ जल, पानी। ३ रात्र्यन्ध्य, क्षणदान्ध्य, रतौंधी।

क्षणदा (सं० स्त्री०) क्षणं उत्सवं ददाति, क्षण-दा-क-टाप्। १ रात्रि, रात। २ हरिद्रा, हलदी।

क्षणदाकर (सं० पु०) क्षणदां रात्रिं करोति, क्षणदा-कृ-ट। चन्द्र, चांद।

क्षणदाचर (सं० पु०) क्षणदायां चरति, क्षणदा-चर-ट। १ निशाचर, राक्षस। (भारत ३।५५ अ०) (त्रि०) २ रातको चलनेवाला।

क्षणदाचरी (सं० स्त्री०) राक्षसी, चुड़ैल।

क्षणदान्ध्य (सं० क्ली०) क्षणदायां आन्ध्यम्, ७-तत्। रात्र्यन्ध्यतारोग, रतौंधीकी बीमारी। इसका संस्कृत पर्याय—क्षणद, क्षपान्ध्य और नक्तान्ध्य है।

(सुश्रुत, उत्तर १७ अ०)

क्षणद्युति (सं० स्त्री०) क्षणं द्युतिर्यस्याः, बहुव्री०। विद्युत्, बिजली।

क्षणन (सं० क्लो०) क्षण भावे ल्युट्। १ हिंसा, वध, क़त्ल, मारकाट। २ चूर्णन, पिसाई।

क्षणनिःश्वास (सं० पु०) क्षणात् क्षणकालात् परं निःश्वासो यस्य, बहुव्री०। शिशुमार, सपादजलजन्तु-विशेष, सङ्गमाही, सूस।

क्षणनिःश्वासी (सं० स्त्री०) क्षणनिःश्वास जातित्वात् ङीप्। शिशुमार स्त्री, मादा सूस।

क्षणनु (सं० पु०) क्षत, घाव। किसी पुस्तकमें 'क्षणतु' और किसीमें 'क्षणानु' पाठ भी है।

क्षणप्रकाशा (सं० स्त्री०) क्षणं क्षणकालं प्रकाशो यस्याः, बहुव्री०। विद्युत्, बिजली।

क्षणप्रभा, क्षणप्रकाशा देखो।

क्षणभङ्ग (सं० पु०) क्षणात् परो भङ्गः, ५ तत्। उत्पत्तिके तृतीय क्षण विनाश। एकप्रकार बौद्धदार्शनिक सभी पदार्थोंका क्षणभङ्ग स्वीकार करते हैं। उनके दर्शनका प्रधान उद्देश्य यही है, 'उत्पत्तिके तीसरे क्षण सकल पदार्थोंका नाश होता है।' मेघ, दीपशिखा और जलबुद्बुद्का क्षणभङ्ग सब लोग प्रत्यक्ष कर सकते हैं। उनके क्षणभङ्गमें प्रत्यक्ष ही प्रमाण है। घट, पट, गृह आदि जो पदार्थ चिरकालस्थायी-जैसे समझ पड़ते, बौद्धदार्शनिक अनुमानसे उनका भी क्षणभङ्ग प्रमाण करते हैं। जैसे धूमको हेतु ठहराके पर्वत प्रभृति स्थानोंमें वह्निका अनुमान उठता, वैसे ही सत्वके हेतु पर गृहादिमें भी क्षणभङ्गका अनुमान लग सकता है। वह्निका अनुमान करनेसे पूर्व धूमसे वह्निकी व्याप्तिका ज्ञान आवश्यक है। अर्थात् ऐसा ज्ञान रहनेसे वह्निका अनुमान हुवा करता, जहां जहां धूम है वहीं वह्नि भी होता है। उसी प्रकार इस स्थान पर भी सत्वमें क्षणभङ्गकी व्याप्तिका ज्ञान है। अर्थात् जलधर बुद्बुद आदि जिन जिन स्थानोंमें सत्व है, वहां क्षणभङ्ग प्रत्यक्ष हुवा करता है। बौद्ध लोग ऐसे ही अनुमानवाक्य बनाते हैं। यथा—

"गृहादयः पदार्थाः क्षणभङ्गविशिष्टाः सत्वात्, यत् यत् सत् तत्तत्क्षणभङ्गविशिष्टम्, यथा—जलधरपटलं, सन्तश्चामी भावाः, तस्मात् क्षणभङ्गविशिष्टाः।"

गृहादि सभी पदार्थ क्षणभङ्गुर है। इसमें सत्व ही हेतु है। जिस जिस पदार्थमें सत्व रहता, वह क्षणभङ्गुर ठहरता है। जैसे जलधरपटल, गृहादि सभी पदार्थोंमें सत्व है, अतएव वह सबके सब क्षणभङ्गुर हैं। अपर दार्शनिक जिन जिन युक्तियों और प्रमाणोंके बल क्षणभङ्गवाद निराकरण करते, बौद्ध उनके प्रतिकूल भी अनेक युक्तियां देखाने लगते हैं। विस्तृत विवरण बौद्ध और क्षणिक शब्दमें द्रष्टव्य है।

क्षणभङ्गुर (सं० त्रि०) क्षणात् क्षणकालात् भङ्गुरः, ५-तत्। क्षणकालस्थायी, थोड़ी देरमें ही बिगड़ जानेवाला।

"यदि पुनरमी किमपि नाहमास्पदमस्ति, किञ्चिदपि वस्तु स्थिरं विश्वमेव क्षणभङ्गुरं अलीकं वेत्यवधारयेरन् न किञ्चिदपि कामयेरन् न चाकामयमानाः केचिदपि प्रवर्त्तेन्ते।" (बौद्धाधिकार—शिरोमणि)

क्षणरामी (सं० पु०) क्षणे क्षणे रमते, रम-णिनि। १ पारावत, कबूतर। २ किसी मतमें—चटक, चिरौंटा।

क्षणविध्वंसी (सं० त्रि०) क्षणात् क्षणकालात् विध्वंसते, वि-ध्वंस्-णिनि। १ क्षणिक, एक क्षणमें ध्वंस होनेवाला, जो थोड़ी देरमें मिट जाता हो। २ अल्पकालके मध्य ही ध्वंस हो सकनेवाला, अचिरस्थायी। (हितोपदेश) (पु०) ३ क्षणभङ्गुरवादी बौद्ध। इनके मतमें संसार क्षणस्थायी है।

क्षणिक (सं० त्रि०) क्षणः स्वसत्ता व्याप्यतया अस्त्यस्य, क्षण-ठन्। १ क्षणमात्रस्थायी, जरा देर ठहरनेवाला। (पु०) २ क्षणभङ्गवाद। कोई कोई बौद्धदार्शनिक उत्पत्तिके परक्षण ही पदार्थका विनाश स्वीकार करता है। उनके मतमें उत्पत्तिके परक्षण ही जिसका विनाश आता, वही क्षणिक कहलाता है। नैयायिक मतमें उत्पत्तिके परक्षण किसी पदार्थका विनाश नहीं हो सकता। उनके कथनानुसार प्रथम क्षणमें उत्पत्ति, द्वितीय क्षणमें स्थिति और तृतीय क्षणमें विनाश होना सम्भव है। तृतीय क्षणको विनष्ट होनेवाला पदार्थ न्याय वा वैशेषिक मतमें क्षणिक समझा जाता है। उनके मतमें ज्ञान, सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, यत्न, प्रभृति कई पदार्थ क्षणिक होते हैं।

"द्रव्यारम्भश्चतुर्षु स्यादथाकाशशरीरिणाम्।
अव्याप्यवृत्तिः क्षणिको विशेषगुण इष्यते॥" (भाषापरिच्छेद २७)

मुक्तावलीको देखते तृतीय क्षणमें ध्वंस होनेवालेका

नाम क्षणिक है। (भाषापरिच्छेद ३७ मुक्तावली) बौद्ध देखो।

क्षणिका (सं० स्त्री०) क्षणिक स्त्रियां टाप्। विद्युत्, विजली।

क्षणित (सं० त्रि०) क्षणः सञ्जातोऽस्य, क्षण-इतच्। जातक्षण, जिसका जलसा वगैरह हो चुके।

क्षणिनी (सं० स्त्री०) क्षणः उत्सवो ऽस्त्यस्याम्, क्षण-इनि ङीप्। रात्रि, रात।

क्षणी (सं० त्रि०) क्षणो विश्रान्तिकालः उत्सवो वा अस्त्यस्य, क्षण-इनि। १ विश्रान्त, थकामांदा। २ उत्सव युक्त, जलसेदार। (भारत २।१३।४४)

क्षणेपाक (सं० पु०) क्षणे पच्यते, पच् कर्मणि घञ् चकारस्य ककारः। चजादीनाञ्च। पा ७।३।५२। क्षणकालके मध्य पाक किया जानेवाला, जो थोड़ी ही देरमें पका लिया जाता हो।

क्षत् (सं० स्त्री०) क्षण भावे सम्पदादित्वात् क्विप्। १ हनन, मारकाट। २ विदारण, चीरफाड़। ३ पीड़न, तकलीफदिही।

क्षत (सं० त्रि०) क्षण-क्त। १ विदारित, चीराफाड़ा। २ पीड़ित, माराकूटा। ३ घर्षित, घिसा हुवा। (रघु ३।५३) ४ क्षतियुक्त, जिसे नुकसान लगा हो। (कुमार २।२६) (क्ली०) भावे क्त। विदारण, चीरफाड़। (साहित्यदर्पण ३) ६ घर्षण, घिसन। (माघ १ अ०) ७ दुःख, पीड़ा प्रभृति तकलीफ, दर्द वगैरह। (रघु०) क्षण्यते वध्यते अनेन, करणे क्त। ८ व्रण, ताजा जखम। जिससे रक्त और पीब बहता, उसे वैद्य क्षत वा सद्योव्रण कहता है। इसका संस्कृत पर्याय—व्रण, अरु, ईर्म और क्षणनु है।

धर्मशास्त्रकार व्याघ्र बताते हैं—क्षत न सूखते जिस व्यक्तिका मृत्यु आता, उसका अशौच दो प्रकार कहा जाता है। जिस दिन क्षत पड़ता, उस दिनसे सप्ताहके मध्य मृत्यु होनेसे ३ दिन और इसके पीछे मरनेसे सम्पूर्ण अशौच रहता है। (शुद्धतत्त्व) क्षतयुक्त व्यक्तिको किसी वैदिक वा स्मार्त कार्यका अधिकार नहीं। वह सर्वदा ही अशुचि है। पुलस्त्यके मतसे चन्द्र किंवा सूर्यग्रहणके समय, मृत व्यक्तिके पिण्डदानकाल और महातीर्थमें क्षतदोष नहीं लगता। इस समय उसको कार्यका अधिकार होता है। (प्रायश्चित्ततत्त्व)

९ रोगविशेष, कोई बीमारी। इस रोगका निदान, सम्प्राप्ति और लक्षण चरकमें इस प्रकार निर्णीत हुआ है—धनुः लेकर अधिक परिमाणमें व्यायाम, गुरुतर भारवहन, उच्चस्थानसे पतन, अधिक बलवान्के साथ युद्ध, दौड़ते हुये अश्व, वृष वा अन्य किसी जन्तुको बलपूर्वक धारण, काष्ठ प्रभृतिके आघात, उच्चैःस्वरमें अध्ययन, दूर गमन, वृहत् नदी उत्तरण, हस्तीके साथ द्रुतगमन, सहसा दूरके उत्पतन, अतिशय नृत्य और अन्य प्रकार क्रूरकर्म आदि सभी कारणोंसे हृदय क्षत होने पर क्षतरोग उठता है। यह रोग लगनेसे उरुभङ्ग, शरीरकी शुष्कता तथा अङ्गकम्प उपस्थित होता और दिन दिन वीर्य, बल, वर्ण, लावण्य, रुचि एवं अग्नि घटता है। क्रमसे ज्वर, व्यथा और मनोदैन्य आ उपस्थित होता, खांसीके साथ रक्त गिरता और कफ पीतवर्ण वा कृष्णपीतवर्ण निकलता है। वक्षःस्थलमें वेदना, शोणित छर्दि तथा कासका वेग बढता है। जब तक लक्षण अव्यक्त रहता, उसीको इसका पूर्वरूप समझना पड़ता है। लक्षण प्रकाश न होने और अग्नि दीप्त रहने तक यह रोग साध्य अर्थात् चिकित्सा करनेसे आरोग्य हो सकता है। एक वत्सर बीत जाने पर यह आरोग्य नहीं होता, फिर भी अच्छी चिकित्सा चलनेसे याप्य हुवा करता है। किन्तु सभी लक्षण देख पड़ने पर कोई चिकित्सा नहीं चलती। क्षतरोगमें अमृतप्राशघृत, षाड़व तथा शक्तुप्रयोग अतिशय उपकारी और आशुफलप्रद है। (चरक, चिकित्सित १६ अ०)

क्षतकास (सं० पु०) क्षतेन जातः कासः, मध्यपदलो०। पञ्च प्रकार कासरोगके अन्तर्गत एक भेद। कास देखो।

क्षतकृत् (सं० पु०) भल्लातकवृक्ष, भिलावेंका पेड़।

क्षतघ्न (सं० पु०) रक्त खदिर, लाल खैर।

क्षतक्षीण (सं० पु०) उरःक्षतरोग, छातीके फोड़ेकी बीमारी। क्षत देखो।

क्षतक्षीरी (सं० स्त्री०) तूलक, रुई।

क्षतक्षीरी (सं० पु०) अर्कवृक्ष, मदारका पेड़।

क्षतघ्न (सं० पु०) क्षतं हन्ति नाशयति, क्षत-हन्-टक्। अमनुष्यकर्तृके ऽपि च। पा ३।२।५३। भूकदम्ब, कुकरौंधा।

क्षतघ्नी (सं० स्त्री०) क्षतं हन्ति, क्षत-हन्-टक्-ङीप्।

लाक्षा, लाह। किसी किसी स्थल पर 'क्षतघ्न' पाठ भी है।

क्षतज (सं० पु-क्लो०) क्षतात् व्रणाद् जायते, क्षत-जन-ड। १ रक्त, लहू। (रघु) २ पूय, पीव। ३ कासविशेष, एक खांसी। कास देखो। ४ कुङ्कुम। (त्रि०) ५ क्षतसे उत्पन्न।

क्षततृष्णा (सं० स्त्री०) क्षतजा शस्त्रादिभिः क्षतात् जाता तृष्णा, कर्मधा०। अभिघातजन्य तृष्णा, जखम आनेसे पैदा होनेवाली प्यास।

तृष्णा सात प्रकारकी है—वातजा, पित्तजा, कफजा, क्षतजा, क्षयजा और अन्नजा। शस्त्रादि द्वारा वा अन्य प्रकार क्षत व्यक्तिको वेदना वा रक्त निर्गम—दो कारणोंसे लगनेवाली पिपासा क्षततृष्णा कहलाती है। ८ तोला खीलोंका चूर्ण ३२ तोला उष्ण जलमें भिगो कर रख छोड़ना चाहिये। परदिवस प्रातःकाल ४ मासा मधु, ४ मासा गुड़, ४ मासा गम्भारीफलचूर्ण और ४ मासा चीनी मिला कर उसको सेवनेसे तृष्णाका उपशम होता है। गीले कपड़े पर सोने और गीले कपड़ेसे शरीर आवृत करनेसे भी तृष्णा मिट जाती है।

(भावप्रकाश, तृष्णाधिकार) तृष्णा देखो।

क्षतविक्षत (सं० त्रि०) जखमोंसे भरा हुवा, जिसके बहुतसे घाव लगे हों।

क्षतविध्वंसी (सं० पु०) क्षतं विध्वंसयति, क्षत-वि-ध्वंस-णिनि, उपपदस०। वृद्धदारकलता, एक बेल।

क्षतव्रण (सं० पु०) क्षतजन्यः व्रणः, मध्यपदलो०। आघातजन्य व्रण, चोटसे आया हुवा जखम। यह छह प्रकार व्रणरोगोंके अन्तर्गत है। (भावप्रकाश) व्रण देखो।

क्षतव्रत (सं० त्रि०) क्षतं भ्रष्टं व्रतमस्य, बहुव्री०। अवकीर्ण, नष्टव्रत, जिसका नियम भङ्ग हो जाये।

याज्ञवल्क्यस्मृतिके मतमें स्त्रीसङ्ग करनेसे ब्रह्मचारीका नियम नष्ट हो जाता है। इसीका नाम क्षतव्रत है।

इसका प्रायश्चित अङ्गिराके मतानुसार ६ मास पर्यन्त गर्दभचर्म परिधान करके ब्रह्महत्याव्रतका आचरण है। (अङ्गिरा)

सङ्ग्रहकारोंका कहना है कि अनवधानतावशतः स्त्रीसङ्ग करने पर उक्त प्रायश्चित होता है। परन्तु किसी स्त्रीको उत्साहित करके प्रवृत्त होने पर गधेका चमड़ा पहन एक वर्ष रहना पड़ता है। वारंवार स्त्रीसङ्ग करनेसे एक वत्सर प्राजापत्यव्रत करते और गधेकी खाल पहनते हैं। (पैठीनसि)

स्वप्नमें रेतः स्खलित होनेसे सूर्यको पूजा करके "पुनर्भू" इत्यादि मन्त्र जपने पर प्रायश्चित्त हो जाता है। (मनु) प्रायश्चित्त देखो।

क्षतशुक्र (सं० पु०) नेत्ररोगभेद, आंखकी एक बीमारी।

क्षतहर (सं० क्लो०) क्षतं हरति, क्षत-हृ-ट। १ अगुरु, अगर। (त्रि०) २ क्षतनाश करनेवाला, जो जखमको मिटा देता हो।

क्षताशौच (सं० क्लो०) क्षतनिमित्तमशौचम्, मध्यपदलो०। क्षतनिमित्त अशौच, घायल या जखमीको छूत। जिसके किसी प्रकारका क्षत आता, वह सर्वदा अशुचि समझा जाता है। उसीके अशौचका नाम क्षताशौच है। क्षताशौचमें वैदिक वा स्मार्तकार्यका अधिकार नहीं रहता। क्षत देखो।

"सव्रणः सूतकी सूयी मत्तोन्मत्तरजस्वलाः।
क्षतवन्ध्रवस्तु वर्ज्यान्यष्टौ स्वकालतः॥" (देवल)

क्षति (सं० स्त्री०) क्षण-क्तिन्। १ हानि, नुकसान, घटी। २ अपचय, नाश। ३ क्षय, कमी। (भारत, ३।१७२ अ०)

"का क्षति लाभ जीर्ण धनु तोरे।" (तुलसी)

क्षतोत्थ (सं० त्रि०) क्षतज, जखमसे उठा हुवा।

(सुश्रुत उत्तर ५२)

क्षतोदर (सं० पु०) परिस्राव्युदर, पेटकी एक बीमारी।

उदर देखो

क्षतोद्भव (सं० त्रि०) क्षतमुद्भवं उत्पत्तिकारणं यस्य, बहुव्री०। १ क्षतज, जखमसे पैदा। (क्लो०) २ रक्त, खून। (भारत, १३।५२ अ०)

क्षत्ता (सं० पु०) क्षद् संवृतौ सौत्र धातुः। क्षद् संज्ञायां तृच् अनिट् च। तृणलचौ शंसिक्षदादिभ्यः संज्ञायां चानिटौ। उण् २।९४। १ सारथि, गाड़ीवान्, कोचवान्। २ द्वारपाल, दरबान्। ३ क्षत्रिय रमणीके गर्भसे और शूद्रके औरससे उत्पन्न वर्णसङ्कर।

"शूद्रादायोगवः क्षत्ता चण्डालश्चाधमो नृणाम्।
वैश्यराजन्यविप्रासु जायन्ते वर्णसङ्कराः॥" (मनु १०।१२)

४ दासीपुत्र, पासवान्का लड़का। (भारत १।२०११।७)

५ मत्स्य, मछली। ६ नियुक्त। ७ ब्रह्म। ८ कोषाध्यक्ष, खजांची। (शतपथब्रा० १३।५।२।८)

क्षत्र (सं० पु० क्ली०) क्षतस्त्रायते, त्र-क ५-तत्, क्षद् कर्तरि इति वा। १ क्षत्रिय, ठाकुर। (वाजसनेयसं० २०।२५) क्षत्रिय देखो।

क्षद्यते संव्रियते राज्ञा, क्षद् कर्मणि त्र। २ राष्ट्र, राज्य। (शतपथब्रा०) ३ शरीर, जिस्म। ४ नगर। ५ जल, पानी। ६ धन, दौलत। ७ बल, ताकत। (ऋक् ५।६२।६)

क्षत्रकर्म (सं० क्ली०) क्षत्रियोंका काम। शौर्य, तेजः, धैर्य, दक्षता, युद्धमें अपलायन, दान और ऐश्वर्यको क्षत्र कर्म कहते हैं। (गीता)

किसी किसी पुस्तकमें "क्षात्रकर्म" जैसा पाठ भी लक्षित होता है।

क्षत्रधर्म (सं० पु०) क्षत्रियस्य धर्मः, ६-तत्। क्षत्रियोंका धर्म। क्षत्रियोंका अवश्य पालनीय धर्म। क्षत्रिय देखो।

क्षत्रधर्मा (सं० पु०) क्षत्रस्य धर्मा, ६-तत्। १ क्षत्रियोंका युद्ध प्रभृति धर्म। २ अनेनावंशीय कोई राजा। इनके पिताका नाम संकृति था। (हरिवंश २९ अ०) (त्रि०) ३ क्षत्रियधर्मयुक्त। (मनु)

क्षत्रधर्मानुग (सं० त्रि०) क्षत्रियधर्मका अनुगमन करनेवाला।

क्षत्रधृति (सं० पु०) यज्ञविशेष। श्रावणमासकी पूर्णिमा तिथिको इस यज्ञका अनुष्ठान करना पड़ता है। (कात्यायन-श्रौतसूत्र १५।१।२४-२५)

क्षत्रप (सं० पु०) सौराष्ट्रका प्राचीन राजवंश। इसी क्षत्रपका अपभ्रंश सत्रप (Satrap) हुआ है। शकराजवंश देखो।

क्षत्रपति (सं० पु०) क्षत्राणां पतिः पालकः, ६-तत्। १ क्षत्रियोंका पालक। (वाजसनेयसं० १०।१७) २ क्षत्रप। क्षत्रप तथा छत्रपति देखो।

क्षत्रपादप (सं० पु०) क्षत्रवृक्ष देखो।

क्षत्रबन्धु (सं० पु०) क्षत्रियस्य बन्धुरिव। १ निन्दित क्षत्रिय। (मार्कण्डेय ८।७४) २ क्षत्रिय। (मनु २।३८)

क्षत्रभृत् (सं० पु०) क्षत्रं बिभर्ति, क्षत्र-भृ-क्विप्। क्षत्रियोंका प्रतिपालक अग्नि। (वाजसनेयसं० २७।७)

क्षत्रयोग (सं० पु०) अथर्ववेदोक्त राजयोगविशेष। (अथर्वसं० १०।५।२)

क्षत्रवनि (वै० त्रि०) क्षत्रं वनति, क्षत्र-वन्-इन्। (छन्दसि वनसन रक्षिमथम्। पा ३।२।२७) १ क्षत्रिय जातिभागी, क्षत्रिय जाति अवलम्बन करनेवाला। (वाजसनेयसं० ५।२७) २ पुरोडाश निष्पन्न करनेको क्षत्रियों द्वारा स्वीकार किया जानेवाला। (वाजसनेयसं० १।१७)

क्षत्रवर्धन (सं० त्रि०) क्षत्रं वर्धयति, क्षत्र-वृध्-णिच् ल्यु। धन तथा बल वृद्धिकारक, दौलत और ताकत बढ़ानेवाला। (अथर्व १०।६।२९)

क्षत्रवान् (सं० त्रि०) क्षत्रः प्रतिपाल्यत्वेनास्त्यस्य, क्षत्र-मतुप् मस्य वः। क्षत्रियप्रतिपालक। (आश्वलायनश्रौतसूत्र ४।१)

क्षत्रविद्या (सं० पु०) क्षत्रविद्याया व्याख्यानः, क्षत्रविद्या अण्, (अण् ऋगयनादिभ्यः। पा ४।३।७३) १ क्षत्रविद्याका व्याख्यान ग्रन्थ। २ क्षत्रविद्या अध्ययन कर चुकनेवाला, जो धनुर्वेद पढ़ा हो।

क्षत्रविद्या (सं० स्त्री०) क्षत्राणां विद्या, ६-तत्। क्षत्रियोंकी विद्या, धनुर्वेद। यह शब्द ऋगयणादिके अन्तर्गत है।

क्षत्रवृक्ष (सं० पु०) क्षत्रनामा वृक्षः। १ मुचुकुन्दवृक्ष, कोई पेड़। इसका संस्कृत पर्याय—चित्रक और प्रतिविष्णुक है। मुचुकुन्द देखो। २ क्षीरिणीवृक्ष, खिरनीका पेड़।

क्षत्रवृद्ध (सं० पु०) १ आयु वंशीय कोई राजा। २ त्रयोदश मनुके पुत्र। (हरिवंश ७ अ०) (त्रि०) क्षत्रेषु वृद्धः। ३ क्षत्रियश्रेष्ठ, ठाकुरोंमें बड़ा बूढ़ा।

क्षत्रवृद्धि (सं० पु०) त्रयोदश मनुके पुत्र। (हरिवंश ७ अ०) किसी किसी पुस्तकमें क्षत्रवृद्धिके स्थल पर 'क्षत्रवृद्ध' पाठ भी मिलता है।

क्षत्रवृध् (सं० पु०) क्षत्रवृद्ध राजाका नामान्तर। (भागवत ९।१७।२)

क्षत्रवेद (सं० पु०) धनुर्वेद, क्षत्रविद्या। (रामायण १।६५।२२)

क्षत्रश्री (सं० त्रि०) क्षत्राणि श्रयति, क्षत्र-श्रि-क्विप् दीर्घश्च। वचिप्रच्छ्यायतस्तुकटप्रुजुश्रीणां दीर्घश्च। पा ३।२।१७८। बलसेवी, बलवान्। (ऋक् ६।२५।५)

क्षत्रसव (सं० पु०) क्षत्रस्य सवः, ६-तत्। क्षत्रियोंके करनेका एक यज्ञ।

क्षत्रान्तक (सं० पु०) क्षत्रस्य अन्तकः, ६-तत्। परशु-राम। (भट्टि)

क्षत्रान्तकारी (सं० पु०) क्षत्रियोंका नाश कर सकने-वाला। (विष्णुपुराण)

क्षत्रि—पञ्जाब, बङ्गाल, विहार, युक्तप्रदेश और बम्बई प्रदेशवासी एक वणिक् सम्प्रदाय। इन्हें खत्री वा छेत्री कहते हैं। यह स्थिर किया जा नहीं सकता—पहले इनका प्रकृत देश कहां था। फिर भी अनुमानसे पञ्जाब-के अन्तर्गत मुलतान प्रदेश ही खत्रियोंका असली देश ठहरता है। आज भी अन्यान्य स्थानापेक्षा पञ्जाब, गुजरात और बम्बई प्रदेशके उत्तरांशमें ही इनकी संख्या अधिक है।

खत्री अपनेको "क्षत्रिय"-जैसा परिचय देते और 'खत्री' नामसे परिचित होना नहीं चाहते। विहारके खत्री अपनेको 'छत्री' लिखते हैं। पञ्जाबी खत्री अपने क्षत्रियत्वके प्रमाणार्थ अपने उपवीत धारण, वेदाध्य-यन, धर्मग्रन्थ पाठ प्रभृति व्यवहारोंका उल्लेख करते हैं। वास्तविक खत्रियोंका उपवीत होता है। यह वेद-मन्त्रादि भी उच्चारण करते और पंजावमें लुधियानाके खत्री अष्टम वर्षवयसको उपवीत धारण करके वेद पढ़ते हैं। सारस्वत ब्राह्मण इनके हाथको कच्ची रसोई खाते हैं। इनका गोत्रभेद ब्राह्मणोचित होता तो है, परन्तु उससे इनका कोई कार्य नहीं चलता। यह अपने गोत्रमें विवाह नहीं करते हैं सही, किन्तु ब्राह्मणोचित गोत्रसे उसका कोई सम्बन्ध नहीं है। वरकन्याका ब्राह्मणोचित गोत्र एक होते भी विवाह कर लिया जाता है। खत्रि-योंमें अगरवालोंका भांति एकप्रकार गोत्रभेद है। उन्हीं सकल गोत्रोंको लेकर स्वगोत्रादि निरूपित हुआ करते हैं।

खत्री प्रधानतः पूर्वदेशी और पश्चिमदेशी दो भागोंमें विभक्त हैं। पछहें पूरबियोंको कुछ हीन जैसा समझते हैं। उभय विभागोंके मध्य परस्पर सैकड़े पीछे एक भी विवाह होते देख नहीं पड़ता। बङ्गाल देशमें जितने खत्री वास करते, वह औरंजेबके समय लाहोरसे आकर यहां रहे थे। यह पञ्जाबी खत्रियोंकी रीतिनीतिको ही अपनी विधिबद्ध रीतिनीति जैसी आदरणीय समझते हैं। बङ्गालमें खत्री खूब सम्मानित जाति हैं। यह विशुद्ध क्षत्रियरूपसे परिचित हुए हैं।

बङ्गालके वर्धमान-महाराज इसी जातिके गोष्ठीपति हैं। क्षत्री प्रायः व्यवसाय वाणिज्य करते हैं। बहुतोंके मौरूसी खेत और जमीन्दारी है। यह अपने हाथसे कभी हल नहीं चलाते, किसानोंसे खेती करा लेते हैं। यह वैष्णव, शैव और शाक्त सभी सम्प्रदायभुक्त होते हैं। सारस्वत ब्राह्मण इनका पौरोहित्य करते हैं। खत्रियोंमें भिन्न भिन्न गोत्रोंके भिन्न भिन्न कुलदेवता हैं। पूर्वबङ्गमें चण्डिका देवी इनके मध्य सर्वापेक्षा पूज-नीया हैं। जब महाराज मानसिंह (१५९५ ई०) ढाका जीतने गये, उन्होंने उद्रू जङ्गलमें छावनी डाली थी। वनमें उन्हें दुर्गाजीकी एक मूर्ति मिली। प्रवाद है—यह मूर्ति आदिशूरकी परित्यक्ता पत्नी वेदवती कर्तृक प्रतिष्ठित हुई थी। जो हो, महाराज मानसिंहने उक्त मूर्तिको एक मन्दिरमें प्रतिष्ठित किया। यही ढाका शहरकी ढाकेश्वरी देवी हैं। ढाकेश्वरी मन्दिरका उपस्वत्व आज भी किसी खत्री और रमना अखाड़के ब्रह्मचारी महन्तको मिलता है।

ढाकाके पायकपाड़ा नामक स्थानमें बङ्गाली खत्रियोंकी एक शाखा है। यह अपनेको 'रणक्षत्रि' बताते हैं। यह खत्रियोंसे अति नीच-जैसे गण्य हैं। अपने इस प्रदेशके वास सम्बन्ध पर यह वल्लालसेन और मानसिंहका नाम लिया करते हैं। कनौजिया ब्राह्मण इनके पुरोहित और बङ्गाली ब्राह्मण दीक्षागुरु हैं। यह स्वजातीय गोत्र छोड़ बङ्गाली शूद्रोंके 'आलम्यान' गोत्रीय-जैसे परिचित होते और चक्रवर्ती प्रभृति उपाधि ग्रहण करते हैं। ढाकेके बङ्गाली शूद्र छिपकर इनके साथ खाते हैं। यह खेतीबारी और दूकानदारी किया करते हैं। इनमें ताल्लुकदार भी हैं। पुरबिहा और पछेहां खत्री फिर ४ उपविभागोंमें बंटे हैं—बुनयाही, सरिन, बाढ़ी और थोकरन। ऐसे श्रेणी विभागका कारण है। अला-उद्-दीन खिलजीने खत्रियोंमें विधवा-विवाह चलानेकी विशेष चेष्टा की थी। पछहें खत्रियोंने उसका प्रति-वाद करनेको ५२ ब्राह्मण दिल्ली भेज दिये। इसीसे उन्हें 'बुनयाही' कहते हैं। पुरबिहा उनसे अलग

रहने पर 'सरिन' (मुसलमानी चाल चलनेवाले) कहे गये। थकरजाति विद्रोही होने पर उनसे मिलनेवाले 'थोकरन' नामसे विख्यात हुए। इनसे दूसरे आदान प्रादान करनेमें आशङ्का रखते हैं। मह्रचंद, क्षणचंद और कपूरचंद तीन खत्री अकबरको राजपूत पत्नियोंके रक्षक बन कर दिल्ली गये थे। इसीसे वह भ्रष्ट हो गये। इनके वंशधर परस्पर विवाहादि करके स्वतन्त्र श्रेणीमें गण्य हुये। इन्हींको 'बाढ़ी' कहते हैं। मह्रचंदके वंशीय 'मह्रोत्र' वा 'मह्रा', क्षणचंदके वंशीय 'खन्ना' और कपूरचंदके वंशीयोंने 'कपूर' उपाधि धारण किया। यही मह्रा, खन्ना, कपूर और सेठी उपाधिधारी चत्रियोंमें विशेष गण्य और सम्मान भाजन हैं। यह चारो श्रेणियां फिर व्यवहार भेदसे पश्चिमाञ्चल और पूर्वाञ्चलको पांच समाजोंमें विभक्त हैं। पश्चिममें 'चारजाति' 'पांचजाति' तथा 'छहजाति' और पूर्वमें 'चारजाति' 'पांचजाति, 'छहजाति, 'बारहजाति' बावनजाति और 'विहवाल' हैं। इनका चारजाति समाज फिर 'ढाईघर' और 'चारघर' दो भागोंमें विभक्त है। 'ढाईघरका' अर्थ यह है कि उक्त समाजके लोग पितृवंश, मातृवंश और पितृमातृवन्धुवंशमें विवाह नहीं करते अर्थात् ढाई घर छोड़ कर उनका विवाह होता है। 'चारजातिसे यह अर्थ आता कि उक्त चत्रियोंका विवाह केवल ४ विशिष्ट गोत्रोंमें किया जाता है। इसी प्रकार विशेष विशेष सामाजिक नियमोंसे अन्यान्य श्रेणियोंका नामकरण हुआ है। पछेहां क्षत्रियोंमें सोधी, वेदी, कपूर, खन्ना, मह्रा, सेठ आदि कई गोत्र हैं। पुरबियोंमें निम्नलिखित गोत्र मिलते हैं—

चारजातिमें—कपूर, खन्ना मह्रा और सेठ; पांच जातिमें वेरी विरज, सेगल, सरवाल तथा वड़े; छह जातिमें भले, भवन, सुपत, तुलवर, भुरमन; 'बारह जाति' में चोपड़े, वोई, कक्कर, मेंहदीन, सोनी, टण्डन और 'बावन जाति' में बेहल, चल अग्गी, धंकावी, गढ़लपुरी, हन्दी, केवली, खशाली, कूचल, मरवाही, नेयर, नन्दी, सुरी प्रभृति शाखा हैं।

गोत्र—अङ्गिरस, वात्स्य, भरद्वाज, हंसऋषि, कौशल्य और लोमश होता है।

सिवा इसके युक्तप्रदेशमें विभिन्न श्रेणियां, शाखायें प्रचलित हैं।

बुनभाही उपविभागमें वेदी और गोत्रीय सर्वापेक्षा मान्यगण्य हैं। कारण वेदीगोत्रमें सिख धर्मप्रवर्तकबाबा नानक और सोधी गोत्रमें गुरु रामदास और गुरु हरिगोविन्द दासने जन्म लिया था। सिखोंके राजत्वमें सोधी लोग बहु प्रबल रहे। यह लाहोरपति कालरायके पुत्र सोधीरायके वंशधर-जैसा अपना परिचय देते हैं। फिर वेदी अपनेको लाहोरपति कालरायके भ्राता कसूरपति काहपतरायके पुत्र-जैसा अपनेको बताते हैं। यदी कालपत भ्रातुष्पुत्र कर्तृक राज्यच्युत होने पर काशी गये और वहां वेदाध्ययन करके वेदी आख्याको प्राप्त हुए। गुरुदासपुरके मध्य जहां बाबा नानकका मृत्यु हुवा आजकल उसी डेरानानक नामक स्थानको यह अपना प्रधान स्थान-जैसा विवेचना करते हैं। होशियारपुरके अन्तर्गत आनन्दपुर—निहङ्ग उपासकों और सोधियोंका केन्द्रस्थान है।

व्यवसाय वाणिज्य ही खत्री लोगोंको प्रधान उपजीविका है। पञ्जाब अञ्चलमें यही लिखने पढ़नेका सब काम करते हैं। सरकारी विचारादि विभागोंमें भी इन्हींका आधिक्य देख पड़ता है। स्वभावतः सैनिक बननेके उपयुक्त न होते भी खत्री आवश्यकतानुसार तलवार उठा सकते हैं। यह दृढ़विश्वासी हिन्दू हैं। देखनेमें खत्री सुन्दर, गौरवर्ण, सुगठित और सत्स्वभाव लगते हैं। इन्होंने समग्र पञ्जाब और अफगानिस्तानके वाणिज्यका प्रायः ठेका ले रखा है। यही वहांका हिसाब वगैरह देखने और व्यवसाय तथा क्रयविक्रयकी महाजनी करते हैं। अफगानिस्तानकी सीमा पर पेशावर और हजारा जिलेमें खत्री काबुलियोंके साथ सद्भावसे महाजनी चलाते, व्यवसायादिका हिसाब लगाते, और कारबारकी जगहमें दूकानदारी, गद्दीवाली और कोठीवालीका काम भी किया करते हैं। मध्य-एशिया और रूसमें भी यह देखे जाते हैं। तुर्कस्थानमें लोग इन्हें पीतमुख और भीतप्राण हिन्दू कहते हैं। कश्मीरकी खकर जातिको और कांगड़ा पर्वतको पशुपालक गद्दी जातिको

बहुतसे लोग खत्री जातिको एक शाखा-जैसा समझते हैं।

दाक्षिणात्यके चत्री भी कहा करते—हम 'खत्री नहीं, 'क्षत्रिय' हैं और भरद्वाज, जमदग्नि, काश्यप, कात्यायन, वाल्मीकि, वशिष्ठ तथा विश्वामित्र सप्तर्षि वंशमें उत्पन्न हुए हैं। इनके कौलिक देवता गणपति तथा महादेव और कौलिकदेवी तुलजाभवानी एवं येल्लाम्मा हैं। दक्षिणी चत्रियोंमें श्रेणी वा सामाजिक भेद देख नहीं पड़ता। यह मद्यमांसाहारी, कुटिल, क्रोधी, चतुर, परिश्रमी और शुद्धाचारी हैं। इस प्रदेशमें क्षत्री प्रधानतः कपड़े बुनने और रेशम रंगनेका काम करते हैं। सतारा जिलेमें तुलजापुरकी अम्बाबाई देवीका मन्दिर इनका प्रधान तीर्थस्थान है। यह शङ्कराचार्यको विशेष भक्ति करते और पिशाचादिमें विश्वास रखते हैं। इनके सन्तान जन्म लेनेसे नाड़ीच्छेदके पीछे उसके मुखमें दो एक बूंद शहद डाल दिया जाता है। फिर पञ्चमरात्रको जीवती और षष्ठीदेवीकी पूजा करते हैं। द्वादश दिनको बालकका नामकरण और दोलारोहण होता है। अष्टम वर्षको उसका उपवीत किया जाता है। स्मार्त ब्राह्मणोंकी भांति इनका भी विवाहादि होता है। विवाहके पूर्व गोंधाल नाचकी ठहरती है। यह शवको जलाते और ग्यारह दिन अशौच मानते हैं। अनुपवीत बालक और अविवाहिता बालिकाका शव प्रोथित किया जाता है। आश्विन मासके प्रथम दिन यह गृहदेवताके सम्मुख केलेके पत्ते पर थोड़ी मट्टी रखते और उसमें पञ्चशस्य वपन करते हैं। शुक्लाष्टमीके दिन दुर्गाके नाम पर मेषी बलि दी जाती है। दशमीके दिन उक्त केलेके पत्तेके चेत्रमें शस्याङ्कुर प्रायः २। या २॥ इञ्च बढ़ जाने पर स्त्रियां महासमारोहसे नदीतीर ले जाकर उक्त चेत्रको विसर्जन करती हैं। माघी पूर्णिमाको स्त्रियां गृहदेवताके भवनमें जाकर नङ्गी हो जातीं और कटिदेशमें निम्बशाखा बांध कर देवताको प्रदक्षिण करतीं, आरति उतारतीं तथा रक्तचन्दनके जलसे स्नान कराके साष्टाङ्ग प्रणाम लगाती हैं। इनका जात्यभिमान बहुत तीक्ष्ण है। यह शिक्षित होते हैं। सामाजिक अपराधी पंचायतके विचारसे जातिच्युत कर दिया जाता है।

पंजाबके चत्रियोंकी एक निम्नश्रेणी है। उनको विशुद्ध क्षत्री बड़ी घृणा करते और स्वजाति-जैसा स्वीकार करना नहीं चाहते। इनमें कोई कोई अपनेको चत्रीका औरस-जात-जैसा बताता है। यह भी चत्रियोंकी भांति व्यवसाय वाणिज्य करते और वाणिज्यमें वैसे ही सुनिपुण लगते हैं। यह 'रड़' नामसे ख्यात हैं। मालूम होता है कि इसी रड़ श्रेणीके लोग बङ्गालमें रह ढाकाके पायकपाड़ा अञ्चल पर रड़क्षत्रि कहाये हैं।

चत्रिणी (सं० स्त्री०) १ मञ्जिष्ठा, मजीठ। २ क्षत्रियस्त्री, छतरानी।

चत्रिदास—धारवाड़ जिलेके भिक्षुकोंकी एक श्रेणी। यह अपनेको देवदास भी कहते हैं। इनके पूर्वपुरुष मन्द्राजके अन्तर्गत कदपा जिलेसे जीविकार्जनको धारवाड़ गये थे। इनकी भाषा कर्णाटी है। मन्द्राजके अन्तर्गत तिरुपतिवाले वेङ्कटरमण, रानाबेन्नूरके अन्तर्गत कदरमण्डलीके 'मारुति' और कनाड़ाके अन्तर्गत उड़पिवाले 'मञ्जुनाथको' यह अपना प्रधान देवता मानते हैं। इनकी श्रेणी वा समाजमें कोई भेद नहीं और वंशगत उपाधिभेद भी देख नहीं पड़ता। यह नासिकाके अग्रभागसे कपालके मध्यस्थान पर्यन्त गोपीचन्दनका तिलक लगाते, भ्रूमध्य रोलीकी आड़ जमाते, कपड़ेके दो टुकड़े रस्सीकी तरह लपेट पगड़ी बांधते, शरीरमें अलखालक पहनते, घुटने तक लम्बा पायजामा रखते, कानमें पीतलकी मुरकी डालते, मणिबन्धमें पीतलका कड़ा चढ़ाते, तुलसीकी कण्ठी गलेमें झुलाते और वाम हस्तमें मयूरपुच्छका चामर तथा तान अंगोछे रखते हैं। गलेमें हनूमान्‌की मूर्तिसे अङ्कित पीतल वा तांबेका एक पदक, दक्षिण हस्तमें एक शङ्ख और कंधे पर चमड़ेकी झोली भीख मांगनेको रहती है। यह झांझ या शङ्ख बजा स्वीय उपास्य देवताके नामसे जयोच्चारण करके द्वार द्वार भिक्षा मांगते घूमते हैं। इनका कोई निरूपित वासस्थान नहीं। कोई ज्यादा नशा नहीं खाता पीता। किन्तु हरिण, मेष एवं पक्षीमांस तथा मत्स्य आहार करते

हैं। इनकी स्त्रियां हिन्दुस्थानियां-जैसी पोशाक पहनतीं, केवल कांछ नहीं मारतीं। यह ब्राह्मणों, वैश्यों और जैनोंसे भीख मांगते हैं। सकल ही क्षतिदास श्रीवैष्णवसम्प्रदायभुक्त हैं। काशीनिवासी तत्त्वाचार्य नामक एक यति इनके प्रधान आचार्य हैं। क्षतिदास बहुत ही मलिनवेशी होते हैं।

सन्तान उत्पन्न होने पर नाड़ीच्छेद करके यह छिन्न नाड़ीको मट्टीमें गाड़ देते हैं। रेंड़ीका तेल लगा गर्म पानीसे बालक नहलाया जाता है। दशवें दिनको शिशुका नामकरण होता है। क्षतिदास शवदाह करते हैं। रजःस्राव और मृत्युको ८, ३ और ५ दिन इनका अशौच रहता है।

क्षत्रिय (सं० पु०) द्विजातियोंके अन्तर्गत द्वितीय वर्ण, ऋक्, यजुः और अथर्ववेदमें कहा है—

"ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत॥"
(ऋग्वेद १०।९०।१२' शुक्लयजुः ३१।११, अथर्व १९।६।६)

इस (पुरुष)-के मुखसे ब्राह्मण, बाहुसे राजन्य वा क्षत्रिय, ऊरुसे वैश्य और पांवसे शूद्रने जन्म लिया है।

मनु और पुराणादिके मतमें भी विराट् पुरुषके बाहुसे क्षत्रिय वर्णकी उत्पत्ति हुई है। किन्तु महाभारतमें लिखा है—

'न' विशेषोऽस्ति वर्णानां सर्वं ब्राह्ममिदं जगत्।
ब्रह्मणा पूर्वसृष्टं हि कर्मभिर्वर्णतां गतम्॥ १०
कामभोगप्रियास्तीक्ष्णाः क्रोधनाः प्रियसाहसाः।
त्यक्तस्वधर्मा रक्ताङ्गास्ते द्विजाः क्षत्रतां गताः॥ ११
गोभ्यो वृत्तिं समास्थाय पीताः कृष्युपजीविनः।
स्वधर्मान्नानुतिष्ठन्ति ते द्विजा वैश्यतां गताः॥ १२
हिंसाऽनृतप्रिया लुब्धाः सर्वकर्मोपजीविनः।
कृष्णाः शौचपरिभ्रष्टास्ते द्विजाः शूद्रतां गताः॥ १३
इत्येतैः कर्मभिर्व्यस्ता द्विजा वर्णान्तरं गताः।
धर्मो यज्ञक्रिया तेषां नित्यः न प्रतिषिध्यते॥ १४ (शान्तिपर्व १८८अ०)

वास्तविक रूपसे इहलोकमें वर्णोंका इतर विशेष नहीं, यह सर्व जगत् ब्रह्ममय है। मनुष्य पहले ब्रह्मासे सृष्ट हुये, पीछे कर्मोंसे वर्णताको पहुंचे हैं। जो ब्राह्मण कामभोगप्रिय, तीक्ष्ण, क्रोधन, प्रियसाहस, त्यक्तस्वधर्म और रक्ताङ्ग बने, वह क्षत्रिय बन गये। जिन्होंने रजो और तमोगुणके प्रभावसे पशुपालन और कृषिकार्य अवलम्बन किया और अपने ब्राह्मण धर्मको छोड़ दिया, वही वैश्य हैं। फिर हिंसा और अनृतप्रिय, लुब्ध, सर्वकर्मोपजीवी, कृष्ण तथा शौचपरिभ्रष्ट ब्राह्मण शूद्रताको पहुंचे हैं। इसी प्रकार ब्राह्मणोंने विभिन्न कर्मोंसे पृथक् पृथक् वर्ण लाभ किया है। अतएव सभी वर्णोंको नित्यधर्म और नित्य यज्ञका अधिकार है।

फिर आदिपर्व (७५ अध्याय)-में कहा है—

विवस्वान् सूर्यसे मनु एवं मनुसे ब्राह्मण तथा क्षत्रियादिने जन्मग्रहण किया है। इसीसे उनको 'मानव' कहते हैं। "ब्रह्मक्षत्रादयस्तस्माद् मनोर्जातास्तु मानवाः।"

जगत्के आदिग्रन्थ ऋक्संहितामें ४६ बार 'क्षत्र' और ९ बार 'क्षत्रिय' शब्द आया है। वैदिकनिघण्टुमें क्षत्र शब्दका अर्थ 'जल' (१।१२) और 'धन' (२।१०) लिखित हुवा है।

सायणाचार्यने ऋक्संहिता (१।२४।६, १।२५।५, १।४०।८, १।५४।८; १।५४।११, १।१३६।१, १।१३६।३, १।१५७।६, १।१६०।५, ४।१७।१, ४।६४।६, ५।६६।२, ५।६७।१, ५।६८।३, ६।२५।८, ६।५०।३, ६।६७।५, ६।६७।६, ७।१८।२५, ७।३४।११, ७।६६।११, ८।१९।३३, ८।२५।८, ८।३७।६, ८।३७।७, १०।१८।९, १०।६०।५) के भाष्यमें क्षत्र शब्दका अर्थ 'बल' वा 'शरीर' लगाया है।

फिर १।११३।६, ३।३८।५, ४।४।८, ५।२७।६, ५।३४।९, ५।६२।६, ६।८।६, ७।२८।३ एवं ८।२२।७ 'धन'; १।१६२।२२ तथा ४।२१।१ 'बल वा तेजः'; ३।३८।३ में 'धन वा बल'; १०।१८।९ में 'प्रजापालनसमर्थ बल'; ७।३०।१ में 'शत्रुहिंसक'; ७।२१।७ में 'बल एवं हिंसा; १०।१४०।३ में क्षतात्त्रायक; १।१५७।२ में बल वा क्षत्रियजात और केवल ८।३५।१७ मन्त्रके भाष्यमें 'क्षत्र' का अर्थ 'क्षत्रिय' किया गया है।

इसी प्रकार 'क्षत्रिय' शब्दके अर्थ क्रमका ४।१२।३ में 'बल' ५।६९।२ में 'इन्द्र' ७।६४।२ में 'बलवान् युवा' ७।१०४।१३ में 'बल'; ८।२५।८ में 'बलवान्', १०।६६।८ में 'बलार्ह', १०।१०९।३ में 'राजा' ४।४२।१ में क्षत्रियजात्युत्पन्न, और ८।६७।१ मन्त्रके भाष्यमें सायणाचार्यने 'क्षत्रिय' का अर्थ क्षत्रियजाति लिखा है।

उपर्युक्त प्रमाणोंसे जान पड़ता कि 'क्षत्र' शब्द ३६ बार ऋग्वेदमें उक्त होते भी सायण कर्तृक केवल एक बार और मूल क्षत्रिय शब्द ९ बार प्रयुक्त होते भी निःसन्देह एक हो बार 'क्षत्रियजाति' अर्थमें व्यवहृत हुवा है।

प्रथमतः जहां सायणने क्षत्र शब्दका अर्थ 'क्षत्रिय' किया, वह मन्त्र नीचे दिया है—

"क्षत्रं जिन्वतमुत जिन्वतं नॄन्हतं रक्षांसि सेधतममीवाः।" ८।३५।१७।

इसका भाष्य है—

'क्षत्रं क्षत्रियं जिन्वतं च नॄन् योद्धॄन् जिन्वतम्।' (सायण)

अर्थात् आप क्षत्रियोंको जीतिये और (मानव) योद्धावोंको जय कीजिये। यहां भिन्न भावसे 'नॄन्' अर्थात् सायणके मतानुसार 'योद्धॄन्' रहने पर उन्होंने जो 'क्षत्रिय' अर्थ लगाया है, उसका भी बलवान् अर्थमें ग्रहण करनेसे कोई दोष नहीं आता।

द्वितीयतः—

"मम द्विता राष्ट्रं क्षत्रियस्य विश्वायोर्विश्वे अमृता यथा नः।
क्रतुं सचन्ते वरुणस्य देवा राजामि कृष्टेरुपमस्य वव्रेः॥"
(ऋक् ४।४२।१)

अर्थात् मैं बलवान् और समस्त विश्वका अधिपति हूं, मेरा राज्य द्विविध है। समस्त देव मेरे हैं। मैं रूपवान् और वरुणात्मक हूं। देव जिस प्रकार मेरी यज्ञसेवा करते हैं, मैं भी मनुष्योंका राजा हूं।

इस स्थलपर सायणने क्षत्रियका अर्थ 'क्षत्रियजात्युत्पन्न' लिखा है। किन्तु मन्त्रमें 'राजामि' रहनेसे फिर क्षत्रियजातीय-जैसा परिचय देनेका कोई कारण देख नहीं पड़ता। सुतरां सायणने सर्वत्र जो 'बलवान्' अर्थ ग्रहण किया है, यहां भी वही रखनेसे नितान्त अयौक्तिक नहीं होता। इसी प्रकार ८।६७।१ मन्त्रमें भी 'बलवान्' अर्थ लगाया जा सकता है। देशीय और विदेशीय अपरापर वेदशास्त्राध्यायियोंने भी ऐसा ही अर्थ रखा है, इसमें सायणके साथ कोई विरोध नहीं पड़ता। *

जब देखते हैं कि ऋक्संहितामें 'क्षत्र' और 'क्षत्रिय' शब्दोंका प्रयोग रहते भी वह जातिवाचक नहीं ठहरते तो ऋक्संहिताकी भांति आदिमकालको 'क्षत्रिय' नामसे कोई स्वतन्त्रवर्ण निर्णीत हुवा या नहीं? इस बात पर बड़ा सन्देह है। प्राचीनतम कालको जातिभेद न था। यदि होता, तो ऋक्संहिता जैसे सुबृहत् धर्मपुस्तकमें क्षत्रियोंका विशेष परिचय अवश्य मिलता। मालूम होता है—इसी लिये शान्तिपर्वमें पूर्वकालको वर्णभेद नहीं कहा गया है।

पूर्वकालको जो बलवान्, तेजस्वी, धनवान् और प्रजापालनके उपयुक्त रहे, वही क्षत्रिय जैसे परिचित हुवे। वर्ण देखो। इसी प्रकार गुणकर्मानुसार वर्णविभाग होने पीछे, समझ पड़ता कि ऋग्वेदका उक्त पुरुषसूक्त ऋषियोंने देखा था।

महाभारतके शान्तिपर्वमें लिखा है—

"क्षतजं सेवते कर्म वेदाध्ययनसङ्गतः।
दानादानरतिर्यस्तु स वै क्षत्रिय उच्यते॥" (१८९।५)

क्षत्रिय वेदाध्ययन-सङ्गत कर्म किया करते हैं। दान और करग्रहणमें अनुराग रखनेवालोंका ही नाम क्षत्रिय है।

हारीतके मतमें—धर्मानुसार प्रजापालन, अध्ययन, यथाविधि यज्ञका अनुष्ठान, दान, धर्मबुद्धि, अपनी स्त्रीमें अभिलाष, प्रजाके निकटसे उपयुक्त करग्रहण, नीतिशास्त्रकी अभिज्ञता, सन्धि तथा विग्रहकी कुशलता, देव और ब्राह्मणमें भक्ति, पितृकार्यका अनुष्ठान, अधर्मका अनुष्ठान न करना आदि क्षत्रधर्म है। जो यह सकल धर्म प्रतिपालन करते, वह उत्तम गतिको पहुंचते हैं।

वशिष्ठके कथनानुसार क्षत्रधर्म तीन है—अध्ययन, शस्त्रविद्याभ्यास और प्रजापालन।

"त्रीणि राजन्यस्याध्ययनं शस्त्रेण च प्रजापालनं स्वधर्मस्तेन जीवेत्।"
(वशिष्ठ)

पद्मपुराणके स्वर्गखण्डमें क्षत्रियोंका धर्म इसप्रकारसे निर्णीत हुआ है—क्षत्रियोंको सर्वदा दान और यज्ञ करना चाहिये। प्रजापालन, नित्योत्साह, दस्युहत्या और युद्धकालको पराक्रम प्रकाश ही क्षत्रियोंका धर्म है।

---

*अथर्ववेदमें भी स्थान स्थान पर क्षत्र (३।५।२, ४।१९।१, ६।५४।२, ७।८४।२ और क्षत्रिय शब्द (४।२२।१, ८।४।१३ आदि) बल, बलवान् अर्थमें व्यवहृत हुवा है।

अविक्षत शरीर युद्धसे प्रतिनिवृत्त होने पर इहलोक और परलोकमें क्षत्रियोंकी निन्दा होती है। क्षत्रियोंको धर्मानुसार लड़ना और प्रजावर्गको स्वधर्ममें रखना चाहिये।

क्षत्रियोंके लिये निम्नलिखित सकल कर्म निषिद्ध हैं—कर और विवाहके यौतुक व्यतीत अपर दानग्रहण, युद्धसे पलायन, प्रार्थियोंसे कातरता, प्रजाका अपालन, दान और धर्मसे विरक्ति, राज्यके प्रति दृष्टि न रखना, ब्राह्मणोंका अनादर, अमात्यवर्गका असम्मान, कार्यके प्रति अमनोयोग और भृत्यके साथ परिहास।

क्षत्रियोंको बाल्यकाल यथानियम वेद और राजनीति अध्ययन करना चाहिये। यौवनको राज्यभार ग्रहण करके धर्मानुसार प्रजापालन, राजसूय अश्वमेध प्रभृति यज्ञोंका अनुष्ठान, ब्राह्मणोंको दक्षिणादान और दुर्वृत्त राजाओंको युद्धमें पराजित करके राज्य निष्कण्टक बनानेका उनके लिये विधान है। पीछे स्वीय पुत्रके हस्तमें राज्यभार अर्पण करके श्राद्धादि द्वारा पितृलोक, यज्ञ द्वारा देवलोक और दानसे मुनियोंको रिझा अन्तकालका अन्तिम आश्रममें गमन करना चाहिये। जो क्षत्रिय इस नियमसे अन्तिमाश्रय ग्रहण कर सकता, वह कभी सिद्धिसे वञ्चित नहीं रहता। वानप्रस्थ अवलम्बन करनेसे क्षत्रियका नाम राजर्षि पड़ता है। उसको समस्त गृहधर्म छोड़के जीवनरक्षाके लिये केवल भिक्षावृत्ति पकड़ लेना चाहिये। सभी वर्णाश्रम धर्मोंसे क्षत्रियधर्म प्रधान है। क्षत्रियोंको धर्म परित्याग करनेसे पृथिवी धूलिमें मिल जाती और उनके अपने धर्ममें रहनेसे सभी लोगोंको बन आती है। प्राचीन पौराणिकों और वैदिकोंने क्षत्रियधर्मको जितनी प्रशंसा की है, उतनी किसी धर्मको देख नहीं पड़ती।

(पद्मपु० स्वर्गख० २६) राजधर्म देखो।

पद्मपुराणमें और भी कहा है—

"दद्याद्राजा न याचेत यजेत न च याजयेत्।
नाध्यापयेदधीयीत।" (स्वर्गखण्ड २६अ०)

'राजा वा क्षत्रियको दान करना, किन्तु कभ दूसरेसे याचना न चाहिये। यज्ञ करना उसका धर्म है, परन्तु अपने आप याजन (पौरोहित्य) करना निषिद्ध होता है। उसको अध्ययन करना, किन्तु अध्यापनासे दूर रहना चाहिये।' यही पौराणिक कालका नियम है। किन्तु वैदिक कालको इसका व्यतिक्रम देख पड़ता है। यास्कने निरुक्तमें कहा है—

कुरुवंशीय ऋष्टिषेणके पुत्र देवापि और शन्तनु दो भाई थे। जब छोटे भाई शन्तनु राजा हुए, देवापि तप करने लगे। शन्तनुके राज्यकालको देवताओंने बारह वर्ष जल वर्षण न किया था। ब्राह्मणोंने शन्तनुको सम्बोधन करके कहा—तुमने अधर्माचरण किया है, ज्येष्ठ भ्राताको राजा न बना अपने आप अभिषिक्त हुए, इससे देवता वर्षण नहीं करते। शन्तनुने देवापिको अभिषिक्त करनेके लिये प्रस्ताव उठाया था, किन्तु देवापिने उत्तर दिया—मैं तुम्हारा पुरोहित बनूंगा और तुम्हारे लिये यज्ञ करूंगा।

जगत्के आदिग्रन्थ ऋक्संहितामें भी लिखा है—ऋष्टिषेणके पुत्र देवापि देवताओंको कल्याणी स्तुति करके होम करने लगे। (ऋक् १०।९८।५)

"यद्देवापिः शन्तनवे पुरोहितो होत्राय वृतः कृपयन्नदीधेत्। देवश्रुतं वृष्टिवनिं रराणो बृहस्पतिर्वाचमस्मा अयच्छत्॥" (ऋक् १० ९८७) इत्यादि।

सभी लोग जानते हैं कि विश्वामित्रने क्षत्रिय हो कर ब्राह्मणत्व लाभ किया था। किन्तु इसका भी प्रमाण मिलता है कि सिवा विश्वामित्रके दूसरे भी अनेक क्षत्रिय ब्राह्मण बन गये।

महाभारतमें पृथूदकके निकटवर्ती किसी पवित्र तीर्थकी वर्णना पर लिखित हुआ है—

जहां उग्रतपा महायशा आर्ष्टिषेणने सिद्धि लाभ और सिन्धुद्वीप, राजर्षि देवापि तथा विश्वामित्रने ब्राह्मणत्व लाभ किया, वहीं बलराम जाकर उपस्थित हुए।

(शल्यपर्व ४० अ०)

सिन्धुद्वीप क्षत्रियराज अम्बरीषके पुत्र थे।

भागवतके मतमें मनुके पुत्र धृष्ट थे। उन्हींसे धार्ष्ट क्षत्रिय वंश निकला है। धार्ष्टोंने क्षत्रिय होते भी ब्राह्मणत्व लाभ किया। (८।२।१७ और श्रीधरटीका) मार्कण्डेयपुराणको देखते दिष्टके पुत्र नाभाग क्षत्रिय होकर भी वैश्यकन्यासे विवाह करके वैश्य बन गये। फिर हरिवंशमें लिखा है कि नाभागारिष्टके दो पुत्रोंने वैश्य होते भी ब्राह्मणत्व लाभ किया। (हरिवंश ११ अ०)

वायुपुराणके मतमें—युवनाश्वके पुत्र हरित थे। उनके वंशधर हारित नामसे प्रसिद्ध रहे। यह अङ्गिराके पुत्र और क्षत्रोपेत ब्राह्मण थे। (विष्णुपुराण। ४।३।५ की श्रीधरटीका देखो।)

हरिवंशको देखते—सुतहव्यके पुत्र शुनहोत्र और उनके लड़के काश, शल तथा गृत्समद थे। गृत्समदके पुत्रका नाम शुनक रहा। इन्हीं शुनकसे शौनक (ब्राह्मण)-का जन्म हुवा। (हरिवंश २९ अ०)

महाभारतमें लिखा है—वीतहव्यके पुत्रोंने काशीराज दिवोदासको आक्रमण किया था। उसी युद्धमें काशीराजके आत्मीय लोग मारे गये और राजा दिवोदास भरद्वाजके आश्रममें जा कर रहने लगे। भरद्वाजने दिवोदासके लिये एक यज्ञ किया था। उससे दिवोदासके प्रतर्दन नामक एक पुत्र हुवा। यथाकाल प्रतर्दनको पिताने वीतहव्यके विरुद्ध प्रेरण किया था। वीतहव्यने भाग कर महर्षि भृगुका आश्रय लिया। प्रतर्दन पता लगने पर भृगुके आश्रम जा पहुंचे और वीतहव्यको दिखा देनेके लिये कहने लगे। भृगुने झूठ ही कह दिया कि वहां कोई क्षत्रिय न था। प्रतर्दन अपनी राह चलते बने। भृगुकी कथा पर क्षत्रिय वीतहव्य उस दिनसे ब्राह्मण बन गये। वेदवित् गृत्समद इन्हीं वीतहव्यके पुत्र थे।

(अनुशासन पर्व ३० अ०)

विष्णुपुराणमें पढ़ते हैं—ययातिवंशीय क्षत्रियराज अप्रतिरथसे कण्वने जन्मग्रहण किया था। उनके पुत्र मेधातिथि रहे। यह ब्राह्मण हो गये थे। (विष्णुपुराण ४।१९अ०)

पूर्वोक्त ब्राह्मणोंके मध्य बहुतसे वेदसूक्तोंके ऋषि हैं। यहां तक कि ब्राह्मण-समाजमें जो गायत्री नित्य पठित होती, वह भी विश्वामित्र ऋषि दृष्ट है।

इसी प्रकार अनेक क्षत्रियोंके ब्राह्मणत्वलाभको कथा पुराणादिमें कही है।

देवापिकी भांति बहुतसे क्षत्रिय ब्राह्मणोंकी तरह पौरोहित्य करते थे। वैदिक कालको इसी पौरोहित्य पर ब्राह्मणों और क्षत्रियोंमें घोरतर विवाद उठ खड़ा होता था।

ऋकसंहिताका कोई कोई सूक्त पढ़नेसे समझ पड़ता है—पहले वशिष्ठ ऋषि सुदासके पुरोहित रहे, पीछे विश्वामित्रने सुदासके पुरोहित* बन कर वशिष्ठको अभिशाप दिया।

ऋग्वेदकी अनुक्रमणिकाके पाठसे जाना जाता कि सुदासके पुत्रोंने वशिष्ठपुत्र शक्तिको अग्निकुण्डमें डाला था। (अनुक्रमणिका ८।३२) कौषीतकीब्राह्मणके चतुर्थ अध्यायमें राजा सुदासके संश्रवसे वशिष्ठपुत्रके विनाशकी कथा लिखी है। सामवेदके पञ्चविंशब्राह्मणमें भी वशिष्ठ 'पुत्रहत' जैसे निर्दिष्ट हुए हैं। रामायणमें कहा है—वशिष्ठने विश्वामित्रके एक शत पुत्र मार डाले।

(रामायण १।५।५ सर्ग) वशिष्ठ, विश्वामित्र और सुदास देखो।

महाभारतके आदिपर्वमें देखा जाता है—राजा कृतवीर्यने वेदज्ञ भृगु पुत्रोंको पौरोहित्यके लिये वरण किया और यज्ञान्तमें सोमरस पान करके उनको बहुतसा धनधान्य दिया था। राजाके स्वर्गगमन करने पर उनके पुत्रोंको अर्थका प्रयोजन पड़ा। भृगुके पुत्रोंने मट्टीमें धन छिपा रखा था। किसी क्षत्रियने मट्टी खोद उसे खोज करके निकाला था। फिर क्षत्रियोंने जाकर भार्गवोंको विनाश किया। यहां तक कि भार्गव-रमणियोंके गर्भस्थ सन्तान भी बच न सके। (आदिपर्व १७८अ०) और्व देखो।

उक्त भृगुवंशमें ब्राह्मणवीर परशुरामने जन्म लिया था। उन्होंने कार्तवीर्य और क्षत्रिय राजाओंको संहार करके फिर ब्राह्मणोंका प्राधान्य स्थापन किया।

परशुराम देखो।

ऋग्वेदके ऐतरेयब्राह्मणमें कहते हैं—स्थापर्ण सौपर्ण विश्वन्तरके पुरोहित रहे। राजा विश्वन्तरने उनका अधिकार छीन अपने किसी ज्ञातिको यज्ञपुरोहित बना दिया। किन्तु (यज्ञकालको) राजाने देखा कि उनके यज्ञको वेदीके निकट स्थापर्ण पहुंचे थे।

---

* ऋग्वेदीय ३य मण्डलके ५३ सूक्तमें विश्वामित्रने वशिष्ठको अभिशाप देनेका आभास मिलता है। शौनकने इस सूक्त पर बृहद्देवतामें लिखा है—

"परास्तस्त्री यास्तत्र वशिष्ठद्वेषिणो विदुः।
विश्वामित्रेण ताः प्रोक्ता अभिशापा इति स्मृताः॥
द्वेषद्वेषास्तु ताः प्रोक्ता विद्याश्चैवाभिचारिकाः।
वशिष्ठास्तु न शृण्वन्ति तदाचार्यकसम्मतम्।
कीर्तनाच्छ्रवणाद्वापि महान् दोषः प्रजायते॥" (४।२३।२४)

उन्होंने चिढ़ कर कहा—दुष्ट ब्राह्मण आये हैं, शीघ्र वेदीके निकटसे हटा दो। भृत्योंने राजाज्ञा पालन की थी। श्यापर्णोंने ताड़ित होने पर कहा—हममें जो बलवान् है, वह शीघ्र इस यज्ञका सोमरस पी डाले। उस समय वेदविद् राममार्गवेयने* राजाको समझाया था—'जिसने समस्त वेद अध्ययन किया है, उसको भी क्या भगा दीजियेगा। सोमरसमें क्षत्रियका अधिकार नहीं, ब्राह्मणका ही अधिकार है। भ्रमक्रमसे ब्राह्मणका अंश ग्रहण (पान करने) पर उस क्षत्रियके वंशधर ब्राह्मण हो जाते हैं। हे राजन्! आपके वंशधर भी ब्राह्मण होंगे। (ऐतरेयब्रा० ७।२७-२९)

उक्त विवरण पढ़नेसे मालूम पड़ता है—पूर्वकालको जो क्षत्रिय यज्ञमें ब्राह्मणोंके साथ विशेष संश्लिष्ट रहते, उनके पुत्र ब्राह्मण-जैसे गृहीत हो सकते थे। परन्तु सम्भवत: परवर्ती कालको यह प्रथा उठ गयी।

बहुतसे लोग कहा करते हैं—परशुरामने एक काल को पृथिवी निःक्षत्रिय कर डाली थी। किन्तु इसका प्रमाण मिलता है कि परशुराम कर्तृक वसुन्धरा एक बारगी ही क्षत्रियशून्य नहीं हुई। महाभारतमें लिखा है—

'पृथिवी क्षत्रियशून्य बनाके परशुरामने ब्राह्मणोंको स्थापन किया था। किन्तु पृथिवी क्षत्रियशून्य बन अराजक होने पर शूद्र और वैश्य स्वेच्छाक्रमसे ब्राह्मण पत्नियोंके साथ गमन करने लगे। बलवानोंका दुर्बलों पर अत्याचार आरम्भ हुवा। पृथिवी नितान्त पीड़ित हो रसातलको चलने लगी। महर्षि कश्यपने पृथिवीको रसातल जाते देख जरु द्वारा अवरोध किया था। उस समय पृथिवीने प्रसन्न होकर कहा—"भगवन्! मैंने हैहय-वंशीय अनेक क्षत्रियरमणियोंके गर्भमें क्षत्रिय सन्तानोंको बचाया है। इस समय वही मेरी भी रक्षा करें। पौरवोंके ज्ञाति विदुरथके पुत्र वर्तमान हैं। वह ऋक्षवान् पर्वतमें भल्लूकोंके यत्नसे बच गये हैं। महर्षि पराशरने दया करके सौदासपुत्रकी रक्षा की। उन्होंने (ब्राह्मण होकर भी) स्वयं शूद्रकी भांति बालकके सब काम उठाये थे। इसी बालकका नाम सर्वकर्मा है। प्रतर्दनके लड़के महाबल पराक्रान्त वत्स भी मौजूद हैं। वह गोष्ठमें गोवत्सकर्तृक रक्षित हुए। महाराज शिविके पुत्र भी इसी प्रकार गोसमूहके यत्नसे बच गये। उनका नाम गोपति है। दिविरथके पुत्र और दधिवाहनके पौत्रको गङ्गातीरमें महर्षि गौतमने बचाया है। प्रभूत सम्पद्शाली बृहद्रथ गृध्रकूटमें गोलाङ्गुल कर्तृक रक्षित हुए और नदीपति समुद्रने मरुत्पति सदृश बहु वीर्यशाली मरुत्तवंशीय बहुसंख्यक क्षत्रियकुमार बचा लिये हैं। इन सभी राजकुमारोंने आजकल स्थपति और सुवर्णकारजातिका आश्रय ग्रहण किया है। इनके रक्षा करने पर ही मैं सुस्थिर हो सकती हूं।" इस पर महर्षि कश्यपने पृथिवीके निर्देशानुसार उक्त सकल क्षत्रियराजकुमारों और उनके भाई-बेटोंको बुला राज्यमें अभिषिक्त किया।' (शान्तिपर्व ४९ अध्याय)

राजा, युद्ध, कायस्थ, जाति, वर्ण प्रभृति शब्द देखो।

"क्षत्रिय तन धरि समर सकाना।" (तुलसी)

२ कलपक्षी, कराकुल चिड़िया। ३ क्षीरिणीवृक्ष, खिरनीका पेड़।

क्षत्रियका (सं० स्त्री०) क्षत्रिया-कन्-टाप् आकारस्य अकार:। केऽणः। पा ७।४।१३। विकल्पेन पूर्वस्य अकारस्य इकार:। उदीचामातः स्थाने यकपूर्वायाः। पा ७।३।४६। क्षत्रिय पत्नी, क्षत्रिया, छत्रानी।

क्षत्रियवरा (सं० स्त्री०) अलाबुभेद, किसी किस्मका कद्दू, मीठी लौकी।

क्षत्रियहण (सं० पु०) क्षत्रियं हन्ति, क्षत्रिय-हन्-अच्। परशुराम। (महाभारत ५।१।७५)

क्षत्रिया (सं० स्त्री०) क्षत्रियाणां स्त्रीजाति: क्षत्रिय-टाप्। अर्यक्षत्रियाभ्यां वा। पा ४।१।४९ वार्तिक। क्षत्रियजातीय स्त्री, छतरानी।

"शरः क्षत्रियया ग्राह्यः प्रतोदो वैश्यकन्यया।" (मनु ३।४४)

क्षत्रियाणी (सं० स्त्री०) क्षत्रियाणां स्त्रीजातिः, क्षत्रिय-ङीष् आनुक् आगमश्च। क्षत्रियपत्नी, ठकुरायन।

क्षत्रियासन (सं० क्ली०) योगाङ्ग आसनविशेष। केश द्वारा पादद्वय आबद्ध करके अधोमुख होकर रहना चाहिये। इसका नाम क्षत्रियासन है। इस आसनमें

* बम्बईके मुद्रित पुस्तकमें रामभार्गवेय पाठ है।

उपासना करनेसे मनुष्य धनवान् होता है। (रुद्रयामल)

चत्रियिका (सं० स्त्री०) चत्रिया-कन्-टाप् आकारस्य अकारः तस्य च इकारः। चत्रिया, क्षत्राणी।

चत्रियी (सं० स्त्री०) चत्रियस्य पत्नी, चत्रिय-ङीष्। (पुंयोगादाख्यायाम्। पा ४।१।४८) चत्रियपत्नी, ठकुरायन।

चत्री (हिं०) चत्रिय देखो।

चत्रोपचत्र (सं० पु०) अनमित्र वंशीय श्वफल्कके पुत्र। (विष्णुपुराण ४।१४।२)

चत्रौजाः (सं० पु०) वार्हद्रथवंशीय मगधके एक राजा। यह क्षेमधन्वाके पुत्र थे। (विष्णुपुराण ४।२४।३)

चदत् (सं० त्रि०) १ विभक्त, खण्डित, कटा हुआ। २ आहारके उपयोगी, खाने लायक।

चदन (वै० पु०-क्ली०) १ खण्डन, विभागकरण, बंटवारा। २ अशन, खाना।

चद्म (सं० क्ली०) चद् मनिन्। १ जल, पानी। (ऋक् १०।१०६।१७) २ अन्न। (निघण्टु)

चन्तव्य (सं० त्रि०) चम-तव्य। १ चमाके योग्य, चमा करनेके उपयुक्त, माफीके लायक, जो माफ किया जा सकता हो। (अपराधमंजनस्तव) (क्ली०) क्षम भावे तव्यत्। २ क्षमा, माफी। (मनु ८।३१२)

चन्तृ (सं० त्रि०) चम-तृच्। चमाशील, माफी देनेवाला। (महाभारत १३।१०२।३)

चप् (सं० स्त्री०) चप्-क्विप्। रात्रि, रात। (ऋक् ४।४१।३)

चप (सं० पु०) चप्-अप्। १ जल, पानी। (त्रि०) चप-अच्। २ चमाशील, माफ करनेवाला।

चपण (सं० पु०-क्ली०) चपयति विषयरागम्, चप्-णिच्-ल्यु। १ बौद्धसंन्यासी, भावे ल्युट्। २ क्षेपण, त्याग। ३ अशौच, नापाक हालत। (मनु ५।७१) ४ उपवास, फाका। (मनु ४।२।२२) ५ दूरीकरण, हटाव। (भारत, सभा) ६ चयकरण, मार। ७ दोषहरण। (त्रि०) निर्लज्ज, बेशर्म, बेहया, निवस्त्र। ८ क्षेपणकारी, हट देनेवाला।

चपणक (सं० पु०) क्षपण स्वार्थे कन्। १ कोई बौद्धसंन्यासी। (उद्भट) २ नास्तिकमतप्रचारक। ३ निर्लज्ज, बेहया। ४ कोई कवि। यह नवरत्नोंमें द्वितीय रत्न-जैसे ख्यात हैं। नवरत्न देखो। चपणक अनेकार्थध्वनि-मञ्जरी नामक संस्कृत अभिधान और उणादिसूत्रको चपणकवृत्तिके रचयिता थे।

चपणकता (सं० स्त्री०) चपणक-तल्-टाप्। चपणकका धर्म। (पञ्चतन्त्र)

चपणी (सं० स्त्री०) चप कर्मणि ल्युट्-ङीप्। क्षेपणी, एक जाल।

चपण्यु (सं० पु०) चप् बाहुलकात् अन्युः सत्वश्च। अपराध, जुर्म।

चपा (सं० स्त्री०) क्षपयति वारयति इन्द्रियचेष्टाम्, चप-अच्। १ रात्रि, रात। (ऋक् ३।५३।७) २ हरिद्रा, हलदी। ३ दारुहरिद्रा।

चपाकर (सं० पु०) चपां करोति, क्षपा-कृ-ट। १ चन्द्र, चांद। २ कर्पूर, कापूर।

चपाकृत् (सं० पु०) क्षपा-कृ-क्विप् तुगागमश्च। १ चन्द्र, चांद। २ कर्पूर, कपूर। (माघ)

चपाचर (सं० पु०) चपायां रात्रौ चरति, चपा-चर-ट। १ राचस, शैतान्। (महाभारत १।२८८।३३) (त्रि०) २ रात्रिकालको विचरण करनेवाला, जो रातको घूमता हो।

क्षपाचरी (सं० स्त्री०) राचसी, डाइन।

चपाट (सं० पु०) चपायां अटति, पा-अच्। राचस, आदमखोर। (भट्टि २।२०)

चपानाथ (सं० पु०) चपाया नाथः, ६-तत्। १ चन्द्र, चांद। २ कर्पूर, कपूर। (माघ)

चपान्ध्य (सं० क्ली०) रातान्ध्य, रतौंधो।

चपापति (सं० पु०) चपायाः पतिः, ६-तत्। १ निशापति, चन्द्रमा। २ कर्पूर।

चपावान् (सं० त्रि०) क्षिपति शत्रून् उदकं वा, निपातनात् साधुः। १ शत्रुओंको भगा देनेवाला, जो दुश्मनोंको हटा देता हो। २ जलक्षेपण करनेवाला, जो पानी फेंकता हो। ३ क्षपाविशिष्ट, रातवाला। (ऋक् ३।५५।१७)

क्षम (सं० त्रि०) चम्-अच्। १ युक्त, रखनेवाला। (शाकुन्तल) २ शक्त, सकनेवाला। (भट्टि) ३ हित, भला। ४ चमायुक्त, माफ करनेवाला। यह शब्द प्रायः यौगिक-रूपसे प्रयुक्त होता है। जैसे—कार्यक्षम इत्यादि।

(पु०) ५ गृहकर्ता पक्षी, बबई। ६ विष्णु।
(महाभारत १३।१४९।९०)

क्षमता (सं० स्त्री०) क्षमस्य भावः, क्षम-तल्-टाप्। १ योग्यता, सामर्थ्य, ताकत। २ शब्दके अर्थप्रकाश करनेका सामर्थ्य, लियाकत। (शब्दकारिका)

क्षमणीय (सं० त्रि०) क्षम-अनीयर्। क्षमा करनेके योग्य, माफ किया जानेवाला।

क्षमना (हिं० क्रि०) क्षमा करना, माफी देना।
"क्षमहु महामुनि धीर।" (तुलसी)

क्षमवान् (सं० त्रि०) क्षमावान्, माफ करनेवाला।

क्षमवाना (हिं० क्रि०) क्षमा कराना, माफ करनेको रगबत देना।

क्षमा (सं० स्त्री०) क्षम-अङ्। १ क्षान्ति, बुराईकी बरदाश्त। वाह्य, आध्यात्मिक वा आधिदैविक दुःख उत्पन्न होने पर कोप या निवारणकी चेष्टा न करनेका नाम क्षमा है। (वृहस्पति)

किसी व्यक्ति कर्त्तृक निन्दित वा अपमानित होते भी उसकी निन्दा वा हिंसा न करना और वाक्य, मन तथा शरीर निर्दोष रखकर सहना ही क्षमा कहलाता है। (मत्स्य पु० १२० अ०)

निन्दा, अतिक्रम, अनादर, द्वेष, बन्ध और वध समस्त परित्याग करनेका नाम ही क्षमा है। (कौर्मपु० १४ अ०)

महाराज युधिष्ठिरने द्रौपदीको सान्त्वना देनेके लिये यह कह कर क्षमाकी भूयसी प्रशंसा की है कि क्षमा ही गृहस्थके मङ्गलके एक मात्र कारण और क्षमा ही परिणामको स्वर्ग प्रभृति उत्कृष्ट लोकप्राप्तिका कारण है, इत्यादि। (महाभारत ३।२९।२५)
"क्षमा करहु शिव सेवक जानी।" (तुलसी)

जैनशास्त्रानुसार दशधर्मोंमेंसे पहला धर्म। इसको साधु सर्वथा और गृहस्थ एक देश पालता है। क्रोध कषाय-को पैदा न होने देना ही क्षमा है। (तत्त्वार्थसूत्र)

क्षमते सहते आत्मोपरिस्थितानां जीवानां अपराधम्, क्षम-अङ्-टाप्। २ पृथिवी, जमीन्। (भट्टि ३।२२) ३ दुर्गा। ४ खदिरवृक्ष, खैरका पेड़। ५ राधिकाकी कोई सखी। ब्रह्मवैवर्तपुराणके प्रकृतिखण्डमें कहा है—राधिका-की सखी क्षमाके साथ क्रीड़ा करके विष्णु उसीके साथ सो गये। राधिकाने जाने पर उन्हें देख कर जगाया था। उसी लज्जासे विष्णुका रंग काला पड़ गया। क्षमाने भी लज्जासे प्राणत्याग किया। भगवान् उसके शोकमें रोते रोते अस्थिर हुए। शेषमें उन्होंने क्षमाका मृत शरीर खण्ड खण्ड करके वैष्णवों, धार्मिकों, धर्मों, दुर्बलों, देवताओं और पण्डितोंको थोड़ा थोड़ा दे डाला।

क्षमाकल्याण—एक प्रसिद्ध जैन-ग्रन्थकार। यह अमृत-धर्मवाचकके शिष्य थे। इन्होंने संस्कृत भाषामें अक्षय तृतीयाव्याख्यान, अष्टाह्निकाख्यान, मेरुत्रयोदशी-व्याख्यान, श्रावकविधिप्रकाश, श्रीपालचरित्रकथा, साधु-विधिप्रकाश, सूक्तरत्नावली प्रभृति ग्रन्थ प्रणयन किये।

श्रावकविधिप्रकाशमें जैनगृहस्थोंके दैनिक, पाक्षिक, मासिक और षाण्मासिक कृत्यादि निरूपित हुए हैं।

साधुविधिप्रकाशमें जैन-साधुवोंका कर्तव्याकर्तव्य, अशन-शयन और वारतिथिके अनुसार नानाविध कृत्य वर्णित है।

सूक्तरत्नावली जैनोंके बड़े आदरका ग्रन्थ है। इसमें जैनतीर्थावली, जैनधर्मप्राप्तिका उपाय, स्याद्वादमाहात्म्य, आश्रवादि परिहार तथा उसका उपाय, जैनधर्मतत्त्व, कलिकालमाहात्म्य, इन्द्रिय और रिपुजयका उपाय, सन्तोष, आत्मस्वरूप, आत्मगति और आत्मज्ञानियोंकी प्रकृति सरलभावसे बतायी गयी है।

क्षमाचार (सं० त्रि०) क्षमायां भुवोऽधो भागे चरति, क्षमा-चर-ट। पातालवासी, जमीनके नीचे रहनेवाला।
(वाजसनेयसंहिता १६।५७)

क्षमादंश (सं० पु०) शोभाञ्जनवृक्ष, सहिंजनका दरख्त।

क्षमानन्द वाजपेयी—एक संस्कृत कवि। कवीन्द्रचन्द्रो-दयमें इनकी कविता उद्धृत हुई है।

क्षमाना (हिं० क्रि०) क्षमा कराना।

क्षमापति (सं० पु०) काश्मीरके एक राजा।

क्षमापन (हिं० पु०) १ क्षमा करनेका कार्य वा अभ्यास, माफ करनेकी आदत, माफीदिही।

क्षमाभुज् (सं० पु०) क्षमां भुनक्ति, क्षमा-भुज्-क्विप्। राजा। (माघ)

क्षमावनी (हिं० क्रि०) एक जैन पर्व। भाद्रपदमासकी

शुक्ला पंचमीसे चतुर्दशीतक पर्यूषण पर्वका अनुष्ठान होता है। उसके बाद कहीं पूर्णमासीको और कहीं प्रतिपदको समस्त जैन एकत्र होकर गतदिनोंमें किये गये अपराधोंको एक दूसरेसे क्षमा कराते हैं। उससमय बड़ेसे बड़ा मनुष्य भी छोटे आदमीसे 'क्षमा कीजिये' आदि वचन द्वारा और हाथ जोड़ने आदि शरीर द्वारा विनय कर विनम्रभावका परिचय देता है। उत्तरमें दूसरा व्यक्ति भी अपनी नम्रता दिखलाता है और इस तरह पहिलेके मनमुटावको दोनो भूल सगे ही बन जाते हैं। जैनलोग इस दिन यह गाथा कहा करते हैं---

"खम्मामि सव्वजीवाणि सव्वे जीवा खमंतु मे।
मित्ती मे सव्वभूदेसु वैरं मज्झ ण केण वि॥"

अर्थात् मैंने अपने मन वचन काय द्वारा सबके अपराधोंको क्षमा कर दिया है, अतः सवजीवोंसे मैं भी अपने अपराधोंकी क्षमा चाहता हूं। मेरी सब जीवोंसे मित्रता है और मैं कभी किसीके साथ वैर भाव नहीं करूंगा।

क्षमावान् (सं० त्रि०) क्षमा विद्यतेऽस्य, क्षमा-मतुप् मस्य वः। क्षमायुक्त, सहिष्णु, माफ करनेवाला, गमखोर। (गरुड़पु० १४४ अ०)

क्षमितव्य (सं० त्रि०) क्षमा करनेके योग्य, माफीके लायक।

क्षमिता (सं० त्रि०) क्षमाशील, माफ करनेवाला।

क्षमी (सं० त्रि०) क्षमा ताच्छील्ये घिणुन्। शमित्यष्टाभ्यो घिणुन्। पा ३।२।१४१। क्षमाशील, गमखोर। इसका संस्कृत पर्याय—सहिष्णु, सहन, क्षन्ता, तितिक्षु, क्षमिता, क्षम, शक्त, सह और प्रभुष्णु है। (भागवत ८।१५।४०)

क्षम्य (सं० त्रि०) क्षमायां पृथिव्यां भवः, क्षमा-य। १ पृथिवीसे उत्पन्न, पार्थिव, जमीनसे निकला हुवा। (ऋक् २।१४।११) २ क्षन्तव्य, माफ किया जानेवाला

क्षय (सं० पु०) क्षि-अच्। १ राजनीतिज्ञ राजाओंका त्रिवर्गके अन्तर्गत प्रथमवर्ग, अष्टवर्गका अपचय।

ऋषि, दृढ़, दुर्ग, सेतु, हस्तिबन्धन, धातुकी खनि, करग्रहण और सैन्यसंस्थापन सबको अष्टवर्ग कहते हैं। इसीके मिटनेका नाम क्षय है।

(अमरटीका—भरत)

२ प्रलय, क़यामत। इसका संस्कृत पर्याय—संवर्त, कल्प और कल्पान्त है। ३ अपचय, घटी। ४ गृह, घर। ५ निवासस्थान, ठिकाना। पाणिनिके मतसे निवासार्थमें क्षय शब्दका आदि स्वर उदात्त हो जाता है। क्षयो निवासे। पा ६।१।२०१। (रामायण २।६।२८)

६ राजयक्ष्मारोग, तपेदिक, सूखेकी बीमारी। इसका संस्कृत पर्याय—यक्ष्मा, शोष, राजयक्ष्मा, रोगराज, गदाग्रणी, उष्मा, अतिरोग, रोगाधीश और नृपराग है। यह रोग सब क्रियाओंका क्षय कर देता है। सुतरां इसको क्षय कहते हैं। (सुश्रुत उत्तरतन्त्र ४ अ०) यक्ष्मा देखो। ७ व्याधिविशेष, कोई बीमारी। यह अष्टादश प्रकारका होता है—वातादिका त्रिविध, रसादिका सप्तविध, मलमूत्रका द्विविध, पञ्चेन्द्रियमलका पञ्च और ओजःका एक विध। (चरक १७ अ०)

८ षष्टि संवत्के अन्तर्गत षष्टितम वर्ष। क्षयवर्षमें भयानक उपद्रव उठता है। भविष्यपुराणके मतसे क्षयवर्षमें देशनाश, दुर्भिक्ष और प्रजाक्षय होता है। इससे सौराष्ट्र, मालव तथा दक्षिण कोङ्कणमें घोरतर दुर्भिक्ष पड़ता और कौमुदी एवं नर्मदा-प्रवाहित देश, यमुना तथा नर्मदाका तीरस्थान और विन्ध्याचलका निकटवर्ती सैन्धव देश एक बारगी ही मर मिटता है। सिंहल, मध्यदेश और निकटवर्ती कालञ्जर देशका भी विनाश होता है। (ज्योतिस्तत्त्व)

९ ताण्ड्य-ब्राह्मणोक्त स्तोत्रसमूह। (ताण्ड्यब्राह्मण) १० देवतासमूह। (ताण्ड्यब्राह्मण) ११ ज्योतिःशास्त्रोक्त एक प्रकार मास। शुक्ल प्रतिपदसे अमावस्या पर्यन्त चान्द्रमास होता है। फिर जिस मासमें दो रविसंक्रान्तियां पड़तीं, उसीका नाम क्षयमास है। कार्तिक, अग्रहायण और पौष तीन ही मासोंमें यह आया करता है। इसको छोड़ कर दूसरे मासमें क्षयमास नहीं पड़ता।

जिस चान्द्रमासमें रविसंक्रान्ति नहीं होती, उसको अधिमास और दो रविसंक्रान्तिवाले मासको क्षयमास कहते हैं। यह क्षयमास बहुत कम देख पड़ता, कभी कभी हुवा करता है। कार्तिक, अग्रहायण और पौष मासको ही क्षयमास पड़ता है। अन्य मासमें यह नहीं

होता। जिस वत्सरमें क्षयमास आता, उसमें इसके पूर्व तीन मासोंके मध्य एक और परवर्ती तीन मासके मध्य और एक—दो अधिमास पड़ा करते हैं। (सिद्धान्तशिरोमणि) टीकाकारने इस विषयकी निम्नलिखित युक्ति देखा कर प्रमाण किया है—चान्द्रमासका मान २९ दिन २६ दण्ड ५० पल और सौरमासका परिमाण ३० दिन २६ घड़ी १७ पल है। रवि मध्यगतिके अनुसार ३० दिन २६ घड़ी १७ पलमें एक एक राशि पर गमन करते हैं। ६१ कला गति होनेसे २९ दिन ३० दण्डको वह एक राशि चलते हैं। उस समय चान्द्रमाससे सौरमास घट जाता है। अतएव एक चान्द्रमासमें दो रवि संक्रान्तियां पड़ सकती हैं। सूर्यकी ६१ कला गति कातिक, अगहन, और पूस तीन ही महीनोंमें होती है। अतएव इन तीन महीनोंको छोड़ कर दूसरा महीना क्षयमास नहीं ठहरता। (प्रमिताचरा) सिद्धान्तशिरोमणिमें लिखा कि ९७४ शकाब्दकी क्षयमास पड़ा था। उसके पीछे १११५, १२५६ और १३७८ शकाब्दको फिर तीन क्षयमास पड़े। सुतरां १४१ वा १९ वत्सरके अन्तर क्षयमास आता है। (सिद्धान्तशिरोमणि) किसी किसी ज्योतिःशास्त्रकारने इस मासका नाम अंहस्पति लिखा है—

"यस्मिन् मासि न संक्रान्तिः संक्रान्तिद्वयमेव वा।
संसर्पांहस्पती मासावधिमासश्च निन्दितः॥" (वार्हस्पत्यज्योतिः०)

क्षयमास और मलमासको सकल शुभ कार्य निषिद्ध है—

"तत्र ते त्रयोऽपि ज्योतिःशास्त्रप्रसिद्धा विवाहादौ निन्दिताः।"

(कालमाधवीय)

मुहूर्तचिन्तामणिके मतमें—गृहप्रवेश, गोदान, महोत्सव प्रभृति सकल मङ्गलकार्य क्षय मासको न करना चाहिये। मलमास देखो। १० नाश। (गीता)

क्षयकर (सं० त्रि०) क्षयं करोति, क्षय-कृ-अच्। नाशकारी, नाशक, मिटा डालनेवाला। (सुश्रुत, उत्तर ४ अ०)

क्षयकास (सं० पु०) धातुक्षयज कासरोग, तपेदिककी खांसी। कास देखो।

क्षयकृत् (सं० त्रि०) क्षय-कृ-क्विप्। क्षयकारक, मिटा डालनेवाला।

क्षयकेशरी (सं० पु०) क्षयरोगका एक औषध, तपेदिककी कोई दवा। इसकी प्रस्तुत प्रणाली नीचे लिखी है—त्रिकटु, त्रिफला, जायफल और लवङ्गका चूर्ण प्रत्येक एक भाग और लौह, पारद तथा सिन्दूर प्रत्येक तीन भाग अच्छी तरहसे मिला डालना चाहिये। इसीका नाम क्षयकेशरी है। मधुके अनुपानमें क्षयकेशरी सेवन करनेसे क्षयरोग छट जाता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

क्षयङ्कर (सं० त्रि०) क्षयं करोति, क्षय-कृ-ख। क्षयकारक, नाशक, दुश्मन। (महाभारत, आदि)

क्षयज (सं० पु०) क्षयात् जायते, क्षय-जन-ड। क्षयकास, एक प्रकारकी खांसी। कास देखो।

क्षयज्वर (सं० पु०) धातुक्षयजन्य ज्वर, तपेदिकका बुखार।

क्षयण (दे० त्रि०) क्षियन्ति निवसन्ति आपो यत्र क्षि अधिकरणे ल्युट। स्थिरजल (प्रदेश), जहां बंधा पानी भरा रहता हो। (वाजसनेयसंहिता १६।४३)

क्षयतरु (सं० पु०) क्षयस्य तरुः, तादर्थ्ये ६-तत्। नन्दीवृक्ष, बेलिया पीपल। इसका पर्याय—नन्दीवृक्ष, अश्वत्थभेद, प्ररोह, गजपादप और क्षीरी है। (भावप्रकाश, पूर्व १)

क्षयथु (सं० पु०) क्षि-अथुच्। क्षयरोग, कासादि, खांसी वगैरह बीमारियां।

क्षयनाशिनी (सं० स्त्री०) जीवन्तीलता, डोडीकी बेल।

क्षयनाशी (सं० त्रि०) क्षयरोगनाशक, क्षयी मिटानेवाला।

क्षयपक्ष (सं० पु०) कृष्णपक्ष, अंधेरा पाख।

क्षयमास (सं० पु०) एक चान्द्रमास। जिस चान्द्रमासमें दो रविसंक्रान्तियां पड़तीं, उसीका नाम क्षयमास है। क्षय देखो।

क्षयरोग (सं० पु०) यक्ष्मारोग, तपेदिककी बीमारी। यक्ष्मा देखो।

क्षयरोगी (सं० त्रि०) क्षयरोगोऽस्यास्ति, क्षयरोग-इनि। क्षयरोगवाला, तपेदिकका बीमार। धर्मशास्त्रके मतमें ब्रह्महत्या करके उसका प्रायश्चित न करनेसे नरकभोगके पीछे उक्त पापका चिह्नस्वरूप क्षयरोग लगता है।

"ब्रह्महा क्षयरोगी स्यात् सुरापः श्यावदन्तकः।"

शातातपने लिखा है—राजहत्या करनेसे नरकभोग-

के पीछे क्षयरोग होता है। गो, भूमि, सुवर्ण, मिष्टान्न, जल, वस्त्र, घृतधेनु और तिलधेनु ब्राह्मणको दान करने पर क्रमश: क्षयरोगसे निष्कृति पा सकते हैं।

क्षयवायु (सं० पु०) प्रलयकालका वायु। (भट्टि)

क्षयान्तकलौह (सं० पु० क्ली०) क्षयरोगका एक प्रकार औषध, तपेदिककी कोई दवा। जारित लौह और उसके समान परिमाण रास्ना, तालीशपत्र, कर्पूर, इन्दुरकर्णी, शिलाजतु और त्रिकटु भली भांति मिला डालना चाहिये। इसीका नाम क्षयान्तकलौह है। यह क्षयरोगमें सेवनीय होता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

क्षयित (सं० त्रि०) विनष्ट, बिगड़ा हुवा।

क्षयित्व (सं० क्ली०) क्षयिणो भाव:, क्षयिन्-त्व। क्षयीका धर्म, बरबादी।

क्षयिष्णु (सं० त्रि०) क्षि बाहुलकात् इष्णुच्। क्षयशील, बरबाद होनेवाला।

क्षयी (सं० त्रि०) क्षयो राजयक्ष्मा ऽस्त्यस्य, क्षय-इनि। १ राजयक्ष्मारोगयुक्त, तपेदिकका बीमार। २ क्षयशील, बरबाद होनेवाला। (रघु १७।७१) (पु०) ३ चन्द्र, चांद। दक्षशापसे चन्द्रको राजयक्ष्मारोग लगा था। तदवधि उनका क्षयी नाम पड़ गया। कृत्तिका देखो।

क्षयी (हिं० स्त्री०) क्षयरोग, तपेदिक। क्षय देखो।

क्षय्य (सं० त्रि०) क्षेतुं शक्यम्, क्षि-यत् निपातने साधुः। क्षय्यजय्यौ शक्यार्थे। पा ६।१।८१। क्षयरोग, जो बरबाद किया जा सकता हो।

क्षर (सं० पु०-क्ली०) क्षरति, क्षर-अच्। १ जल, पानी। २ मेघ, बादल। ३ जीवात्मा। उपाधि अन्त:करणके गमनागमनसे जीवात्माका भी गमनागमन होता है। इसीसे जीवात्माका नाम क्षर है। श्रीधरस्वामीके मतमें परमात्माके अतिरिक्त समस्त पदार्थ क्षर होता है। जिसका विनाश वा परिमाण है, उसीको क्षर कहते हैं। (गीता १५।१७)

जीवात्मा एक शरीर परित्याग करके शरीरान्तर ग्रहण करनेसे ही क्षर कहा जाता है। जीव देखो। ४ देह। ५ अज्ञान, नासमझी। (श्वेताश्वर उपनिषत्) ६ परमेश्वर। (विष्णुसंहिता) ७ कार्य वा कारण। (वाचस्पत्य) (त्रि०) ८ चल, एक जगहसे दूसरी जगह जा सकनेवाला।

क्षरज (सं० त्रि०) क्षरे जायते, क्षर-जन-ड। विकल्पे अलुक् स०। विभाषा वर्ष क्षरशरवरात्। पा ६।३।१६। मेघज, बादलोंमें पैदा होनेवाला। इसका दूसरा रूप 'क्षरेज' है।

क्षरण (सं० क्ली०) क्षर भावे ल्युट्। १ मोचन, छुटकारा। २ स्रवण, स्राव, टपकाव, चूआव। (रघु १९।११) (त्रि०) कर्तरि ल्यु। ३ क्षरणशील, चूने या टपकनेवाला।

क्षरपत्रा (सं० स्त्री०) द्रोणपुष्पी, गूमा।

क्षरित (सं० त्रि०) १ बहने या टपकनेवाला। २ नि:सृत, निकला हुआ। ३ चूवाया हुआ।

क्षरी (सं० पु०) क्षर: क्षरणमस्त्यस्मिन् काले, क्षर-इनि। १ वर्षाकाल, बारिसका मौसम। (त्रि०) २ क्षरणविशिष्ट, टपकने या चूनेवाला।

क्षल (सं० त्रि०) क्षल-अच्। १ शोधनकारी। २ चल, जो चल सकता हो।

क्षव (सं० पु०) क्षु-अप्। १ क्षुत, नकछिकनी। यह तीक्ष्णगन्ध, कषाय, उष्ण, कटु और भूतग्रह तथा कफवातघ्न होता है। (राजनिघण्टु) २ राजमाष नाम शिम्बीधान्य, लोबिया। यह कषाय, मधुर, शीतल, वृष्य, कफपित्तघ्न और वाताध्मानजनक है। (राजनिघण्टु) ३ रक्तसर्षप, लाल सरसों। ४ शिग्रुवृक्ष, सहिंजन। ५ श्वेतापामार्ग, सफेद लटजीरा। ८ कृष्णसर्षप, लाही।

क्षवक (सं० पु०) क्षव स्वार्थे कन्। क्षव देखो।

क्षवका (सं० स्त्री०) सर्षपवृक्ष, सरसोंका पेड़।

क्षवकृत् (सं० पु०) क्षव-कृ-क्विप्। क्षव देखो।

क्षवतरु (सं० पु०) नन्दिवृक्ष।

क्षवथु (सं० पु०) क्षु-अथुच्। (ट्वितोऽथुच्। पा ३।३।८९) १ कासरोग, खांसीकी बीमारी। २ नासारोगविशेष, नाककी कोई बीमारी। यह नासागत इकतीस प्रकारके रोगोंमें एक प्रकारका रोग है। सुश्रुतके मतानुसार नासारन्ध्रका मर्मस्थान दूषित होने पर नासारन्ध्रसे जो कफयुक्त वायु शब्दके साथ निकलता, उसीका नाम क्षवथु है। तीक्ष्ण शिरोविरेचन प्रयोग, कटु द्रव्यका अतिशय आघ्राण, सूर्यका निरीक्षण अथवा सूत्रादि द्वारा तरुणास्थि नामक मर्मस्थानका उद्घाटन करनेसे क्षवथु होता है।

(सुश्रुत उत्तर २२ अ०)

चिकित्सा यह है कि शिरोविरेचनीय द्रव्यकी बुकनी नलीसे प्रयोग करने पर क्षवथु रोग अच्छा हो जाता है। (सुश्रुत उत्तर २२ अध्याय)

छींक आने पर न छींक उसका वेग धारण करनेसे मस्तक, चक्षु, नासिका और कर्णमें रोग उत्पन्न होता है। (सुश्रुत उत्तर ५५ अ०)

क्षवपत्र (सं० क्ली०) क्षवकपत्र, नकछिकनीका पत्ता।

क्षवपत्रा (सं० स्त्री०) क्षवहेतुः पत्रमस्याः, बहुव्री०। द्रोणपुष्पी, गूमा। द्रोणपुष्पीका पत्र सूंघने पर छींक आनेसे ही क्षवपत्रा नाम पड़ा है। (राजनिघण्टु) किसी किसी स्थल पर 'क्षरपत्रा' पाठ भी देख पड़ता है।

क्षवपत्री, क्षवपत्रा देखो।

क्षवस्तम्भ (सं० पु०) क्षवथुनिग्रह, छींकको रोक।

क्षवा (सं० पु०) सर्षपवृक्ष, सरसोंका पेड़।

क्षविका (सं० स्त्री०) क्षवः क्षुतं साध्यतया अस्त्यस्य, क्षव-ठन्-टाप्। वृहती क्षुपभेद, एक प्रकारकी भटकटैया। वरहंटा। इसका संस्कृत पर्याय—सर्पतनु, पीततण्डुला, पुत्रप्रदा, बहुफला और गोधिना है। यह तिक्त, कटु, उष्ण और अपर गुणोंमें वृहतीके समान है।

(राजनिघण्टु)

क्षा (वै० स्त्री०) क्षयस्त्यत्र, क्षि बाहुलकात् अङ्-टाप्। १ पृथिवी, जमीन्। (ऋक् १०।२।६) (त्रि०) क्षि-णिच्-क्विप् यलोपे साधुः यद्वा क्षै-क्विप् क्विपो लोपः एकारस्य आकारः। आदेच उपदेशेऽशिति। पा ६।१।४५। २ स्थापयिता, दूसरेको स्थापन करनेवाला।

क्षाति (सं० स्त्री०) चीयन्ते दह्यन्ते ऽस्यामोषधिवनस्पतयः, क्षा अधिकरणे क्तिन्। १ ज्वाला, लपट। (ऋक् ६।६।५) २ दहनमार्ग। (निरुक्तटीका-दुर्ग०)

क्षात्र(सं० क्ली०) क्षत्रस्य कर्म भावो वा क्षत्र-अण्। १क्षत्रिय-कर्म, ठाकुरोंका काम। शौर्य, तेज, धृति, दक्षता, युद्धमें अपराङ्मुखता, दान और ऐश्वर्यको क्षात्रकर्म कहते हैं। (गीता) किसी किसी पुस्तकमें "क्षात्र" स्थल पर 'क्षत्र' पाठ भी मिलता है। २ क्षत्रियत्व, ठकुरई। क्षत्तॄणां समूहः, क्षत्-अण्। ३ क्षत्रियसमूह, ठाकुरोंकी भीड़। (शतपथब्राह्मण १३।४।२।५) (त्रि०) क्षत्तुस्य इदम्। ४ क्षत्रियसम्बन्धी। (रघुवंश १अ०)

क्षात्रविद्य (सं० त्रि०) क्षत्रविद्यां वेत्ति अधीते वा क्षत्रविद्या-अण्। क्षत्रविद्या पढ़ा हुवा, जो लड़नेभिड़नेका इल्म रखता हो।

क्षात्रि (सं० पु०) क्षत्रस्य अपत्यम्, क्षत्र-इञ्। क्षत्रियका पुत्र, ठाकुरका लड़का। जाति अर्थमें क्षत्रिय शब्द होता है। जातिका बोध न होनेसे क्षात्रि कहते हैं।

(सिद्धान्तकौमुदी)

क्षान्त (सं० त्रि०) क्षम कर्तरि क्त। १ सहिष्णु, गमखोर। इसका संस्कृत पर्याय—सोढ़, क्षमान्वित और तितिक्षित है। (हरि २१।२१) (पु०) २ इतिहासप्रसिद्ध सप्तव्याधोंके अन्तर्गत एक व्याध। यह पूर्वको ब्राह्मण रहे और गर्गमुनिके निकट अध्ययन करते थे। मुनिने इन्हें गोरक्षामें नियुक्त कर दिया। परिशेषको इन्होंने सब मवेशी मार डाले थे। मुनिको मालूम होने पर इन्हें शाप दिया। उसी शापसे इन्होंने दशार्ण देशमें व्याध हो जन्म लिया था। (हरिवंश २१ अ०) ३ किसी ऋषिका नाम।

क्षान्तायन (सं० पु०) क्षान्तस्य ऋषेरपत्यम्, क्षान्त-फञ्। अश्वादिभ्यः फञ्। पा ४।१।११०। १ क्षान्त नामक ऋषिके पुत्र। २ क्षान्त ऋषिके वंशीय।

क्षान्तायनी (सं० स्त्री०)क्षान्तस्य अपत्यं स्त्री, क्षान्त-फञ्-ङीप्। १ क्षान्त ऋषिकी कन्या। २ क्षान्त ऋषिके वंशकी स्त्री।

क्षान्ति (सं० स्त्री०) क्षम भावे क्तिन्। क्षमा, गमखोरी, सामर्थ्य रहते भी अपकारीको किसी प्रकारका अपकार न पहुंचानेकी इच्छा। इसका संस्कृत पर्याय—तितिक्षा, सहिष्णुता और क्षमा है। (गीता १८।४२)

क्षान्तिपारमिता (सं० स्त्री०) सहिष्णुता, बरदाश्त।

क्षान्तिमान् (सं० त्रि०) क्षान्तिरस्त्यस्य, क्षान्ति-मतुप्। क्षमाविशिष्ट, गमखोर। (राजतरङ्गिणी ५।५)

क्षान्तिवादी (सं० पु०)क्षान्तिं वदितुं शीलमस्य-क्षान्ति वद-णिनि। किसी मुनिका नाम।

क्षान्तीय (सं० त्रि०) क्षान्त चातुरर्थिक छ। उत्करादिभ्यश्छः। पा।४।२।९०। क्षान्त नामक ऋषिका निकटवर्ती (देश आदि)।

क्षान्तु (सं० त्रि०) क्षम-तुन् वृद्धिश्च। क्रमिगमिक्षमिभ्यस्तुन्

ह्रित्व। उण् ४।४२। १ क्षमाशील, गमखोर। (पु०) २ पिता, बाप।

क्षाम (सं० त्रि०) क्षै कर्तरि क्त, तकारस्य स्थाने मकारः। (क्षायो मः। पा ८।२।५३) १ कृश, क्षीण, कमजोर, गला हुआ। २ दुर्बल, दुबला, पतला। (भागवत ३।२१।४६) (पु०) ३ विष्णु। (विष्णुसहस्रनाम) ४ अबलवान् पुरुष, कमजोर आदमी। (क्ली०) ५ क्षय, बरबादी।

क्षामदंश (सं० पु०) शिग्रु, सहिंजन।

क्षामवती (सं० स्त्री०) क्षामं दोषक्षयः अस्त्यस्याः, क्षाम-मतुप् मस्य व ततो ङीप्। यागविशेष, एक यज्ञ। क्षामवती इष्टि करनेसे अनेक दोष एकबारगी ही विनष्ट होते हैं। (भविष्यपुराण)

क्षामवर्धन (सं० त्रि०) क्षामं दुर्बलतां वर्धयति, क्षाम-वृध-णिच्-ल्यु। दुर्बलता बढ़ानेवाला, जो कमजोरी लाता हो।

क्षामवान् (सं० पु०) क्षामं दोषक्षयः अस्त्यस्य, क्षाम-मतुप् मस्य वः। अग्निविशेष, एक आग।

(कात्यायन-श्रौतसूत्र २५।४।३६)

क्षामा (वै० त्रि०) क्षै-मनिन्। १ क्षयशील, घटनेवाला। (क्ली०) २ निवास, ठिकाना। (ऋक् ६।५१।११)

क्षामास्य (सं० क्ली०) क्षामस्य क्षयस्य आस्यं स्थानम्, ६-तत्। कुपथ्य, बदपरहेजी। किसी पुस्तकमें 'क्षमास्य' पाठ भी दृष्ट होता है।

क्षामी (सं० त्रि०) क्षामोऽस्यास्ति, क्षाम-इनि। क्षाम-युक्त, क्षयवाला।

क्षाम्य (सं० त्रि०) १ क्षमाके योग्य, माफीके लायक। (भारत सभा)

क्षार (सं० त्रि०) क्षर-ण। (ज्वलिति कसन्तेभ्यो णः। पा ३।१।१४०) १ क्षरणशील, चूआनेवाला। (पुं०) २ लवणरस, एक नमक। यह क्लेदजनक, मुखको स्वादु, उष्ण, विदाही, शूल, श्लेष्मा, अरुचि, तृष्णा तथा मूत्रवर्धक, शोषकारी, मूत्रपुरीषरोधक, आनाहरोगजनक और अग्निवृद्धिकर है। (हारीतसंहिता १६ अ०) ३ क्षार पलास काष्ठादिका दाहसम्भव एक लवणरस भस्म है। यह दो प्रकारका होता है— प्रतिसारणार्ह और पानार्ह। (सुश्रुत सूत्र ११ अ०) चक्र-दत्तने इसके बनानेकी प्रणाली इस प्रकार लिखी है— शुभदिन और शुभनक्षत्रको पलाशकाष्ठ लाके जला डालना चाहिये। उसको भली भांति जल जाने पर ८ सेर भस्म उठा कर ३२ सेर जलमें डाल आंच लगाते हैं। ८ सेर पानी बचने पर उतार कर कपड़ेसे छान लेना चाहिये। फिर उसमें ३२ तोले शङ्खचूर्ण मिला पुनर्वार आग पर चढ़ा देते हैं। धीमी धीमी आंचसे जब वह घन पड़ जाये, तब सज्जीमट्टी, शोरा, सोंठ, मिर्च, पीपल, बच, अतीस, हींग और चीतका अष्टभाग चूर्ण डालना चाहिये। हत्थेसे अच्छी तरह सबको चलाना पड़ता है। पीछेको उतार कर लौहनिर्मित घटमें रख लेते हैं। इसका नाम क्षार है। (चक्रदत्त)

(Alkali) एक प्रकार जान्तव तथा उद्भिज पदार्थसे उत्पन्न द्रव्य है। साधारणतः यह प्रस्तरखण्ड अथवा उद्भि-दादिसे उत्पन्न होता है। मैल साफ करनेमें क्षार विशेष-का प्रयोजन है। कदलिवृक्षको त्वक् जलानेसे जो क्षार निकलता, वह दरिद्र लोगोंके कपड़े धोनेमें लगता है। इस देशमें क्षारोंके मध्य सज्जी मट्टी ही प्रधान है। भारतके धोबी अधिकांश इसको व्यवहार करते, जिससे अंगरेज क्षारको धोबीकी मट्टी कहते हैं। विलायती सोडेमें बहुत क्षार होता है। सज्जीमट्टी देखो।

कदपा, मसलीपत्तन और नेल्लूर जिलेमें क्षार अधिक उत्पन्न होता है। बेल्लारी और हैदराबादमें नाइट्रेट अव सोडा मिलता है। खनिज लवण इसी जाति-का होता है। यह कदपा, महिसुर, बेल्लारी, हैद-राबाद, गण्टूर और नेल्लूर जिलेमें पाया जाता है। इसके दूसरे भी कई प्रकारके भेद हैं यथा—डला, नमक डला, खापुल, पापड़ी, मट्टीखार इत्यादि। क्षारपाक देखो। ४ धूर्त, धोकेबाज। ५ लवण, नमक। (रामायण २।७३।३) ६ काच, शीशा। ७ भस्म, खाक। ८ गुड़। ९ चन्द्र, चांद। १० टङ्कण, सोहागा। इसका गुण धातुद्रावक है। क्षारसे धातुद्रव्य गलाया जा सकता है। (भावप्रकाश, पूर्व १ भाग) ११ सर्जिक्षार, सज्जीमट्टी। (क्ली०) १२ विड्लवण। १२ यवक्षार, शोरा।

क्षारक (सं० पु०) क्षरतीति, क्षर-ण्वुल्। १ अचिर-जात फल। इसका संस्कृत पर्याय—जालक है। २ पक्षीका जाल, चिड़ियोंका फंदा। ३ मत्स्य पकड़नेका

डोरी। ४ रजक, धोबी। क्षार स्वार्थे कन्। ५ क्षार, सज्जी।

क्षारकर्दम (सं० पु०) एक नरक। (भागवत ५।२६।७)

क्षारकर्म (सं० क्ली०) क्षारदाहकर्म, सज्जीसे जलानेका काम।

क्षारकृत्य (सं० त्रि०) क्षार प्रयोगसे चिकित्सा किया जा सकनेवाला। जिसका इलाज सज्जीसे हो सके।

(सुश्रुत सूत्र ११ अ०)

क्षारगुड़ (सं० पु०) क्षारेण पक्वो गुड़ः, मध्यपदलो०। क्षारपक्व गुड़विशेष, सज्जीसे पकाया हुवा एक गुड़। चक्रदत्तने इसको प्रस्तुत करनेकी प्रणाली इस प्रकारसे लिखी है—पञ्चमूल, त्रिफला, आकनादिमूल, शतावरी, दन्ती, चीत, अपराजिता, रास्ना, आकनादि, गुलेचीन और शठी प्रत्येक ८० तोला परिमाणमें मिला जला डालना चाहिये। इसको २१ बार जला जला कर भस्म करना पड़ता है। पीछे इस भस्मको ३२ सेर जलमें डाल आंच लगाते हैं। एकचतुर्थांश शेष रहने पर १२॥ सेर गुड़ दिया जाता है। धीमी आंचसे जब गुड़ सिद्ध हो जाये, तब वृश्चिकाली, काकोली, क्षीरकाकोली शोरा और वच प्रत्येकका ४० तोला चूर्ण पृथक् रूपसे और हरीतकी, त्रिकटु, सज्जीमट्टी, चीत, वच, हिङ्गु, तथा अम्लवेतसका सोलह सोलह तोला चूर्ण मिलाकर डाल देना चाहिये। पीछे उतार कर गोली बना लेते हैं। इसीका नाम क्षारगुड़ है।

क्षारगुड़ अजीर्णनाशक, अग्निवृद्धिकारक और पाण्डु, प्लीहा, अर्श, शोथ, कफ, कास तथा अरुचिनाशक है। जिसका अग्नि मन्द वा विषम और कण्ठ तथा वक्षःस्थलमें कफ अधिक रहे, उसको क्षारगुड़ न खिलाना चाहिये, खिलानेसे कुष्ठ, प्रमेह वा गुल्मरोग उठ खड़ा होता है। (चक्रदत्त)

क्षारगुड़िका (सं० स्त्री०) औषधविशेष, एक दवा। रसेन्द्रसारसंग्रहमें क्षारगुड़िकाका प्रस्तुतप्रणाली इस प्रकार कही है—सर्जिक्षार, यवक्षार, विट्लवण, सैन्धव लवण, सामुद्र लवण, सौवर्चलवण, उद्भिदलवण, हरीतकी, आमलकी, बहेरा, सोंठ, पीपल, मिर्च, कान्त,वज्र, काञ्चि, पिपरामूल, विडङ्ग, मोथा, अजवायन, देवदारु, बेल, इन्द्रयव, चीत, आकनादि, यष्टिमधु, अतीस, पलाश और हिङ्गु प्रत्येकका दो तोला चूर्ण बनाना चाहिये। ३२ सेर मूली और सोंठका भस्म अष्टगुण जलमें उबाल कर क्षारजल ग्रहण करते हैं। इस पानीमें सब बुकनी मिला कर फिर आंच लगाना चाहिये। घन हो जाने पर उतार कर वटिका बना लेते हैं। इसके सेवनसे प्लीहोदर, खिल, हलीमक, अर्श, पाण्डु, आमय, अरुचि, शोथ, विसूचिका, गुल्म, अश्मरी, श्वास, कास, कुष्ठ इत्यादि रोग विनाश होते हैं।

क्षारण (सं० क्ली०) १ भस्मक्रिया। २ मैथुनके प्रति आक्रोश।

क्षारणा (सं० स्त्री०) मैथुनके प्रति आक्रोश, बदचलनीका इलजाम।

क्षारतैल (सं० क्ली०) वैद्यकोक्त तैलविशेष, किसी किस्मका तेल। चक्रदत्तने क्षारतैलको बनानेके लिये यह प्रणाली बतायी है—नारियल, मूली और सोंठका क्षार, हींग, मोथा, शतपुष्प, वच, घण्टाक, देवदारु, सहिंजन, रसाञ्जन, सौवर्चलवण, यवक्षार, सज्जीमट्टी, उद्भिद् लवण, भूर्जपत्र, भद्रमुस्त, विट्लवण, चतुर्गुण मधुशुक्त, तुरञ्ज नीबूका रस और कदलीरस सबसे तैलपाक करना चाहिये। इसको क्षारतैल कहते हैं। क्षारतैल सेवन करनेसे वधिरता, कर्णनाद, पूयस्राव और दारुण रोगका प्रतीकार होता है। यह तेल कानमें भर देनेसे सब प्रकारके कीड़े मर जाते हैं।

(चक्रदत्त)

क्षारत्रय (सं० क्ली०) क्षाराणां त्रयम्, ६-तत्। त्रिविध क्षार, तीनों खार। सज्जीमट्टी, शोरा और सोहागा तीनोंको क्षारत्रय, त्रिक्षार वा क्षारत्रितय कहते हैं। (राजनिघण्टु) क्षारत्रय छेदन अर्थात् श्लिष्ट कफादि दोषोन्मूलक है।

क्षारत्रितय, क्षारत्रय देखो।

क्षारदला (सं० स्त्री०) चिल्लीशाक, बथुई।

क्षारदशक (सं० क्ली०) क्षाराणां दशकम्, ६-तत्। दशविध क्षार, दश तरहका खार। सहिंजन, मूली, पलाश, चुक्रिका (चूका), चित्रक, अदरक, नीम,

ईख, लटजीरा और मोचा (केला) जला कर बनाया जानेवाला क्षार क्षारद्रवक कहलाता है।

क्षारदाह (सं० पु०) क्षारद्रव भस्मज क्षारसे दाह।

क्षारदेश (सं० पु०) क्षारप्रधानो देशः, मध्यपदलो०। क्षारप्रधान देश, खारी मुल्क। (वङ्गट)

क्षारद्रु (सं० पु०) क्षारप्रधानो द्रुः, मध्यपदलो०। घण्टापाटलिवृक्ष, मोखा।

क्षारद्वय (सं० क्ली०) दो क्षारोंका समूह, सर्जिक्षार और यवक्षार।

क्षारनदी (सं० स्त्री०) क्षारप्रधाना नदी, मध्यपदलो०। नरककी एक नदी। (मार्कण्डेयपुराण १४। ६९)

क्षारपञ्चक (सं० क्ली०) पञ्चक्षारसमूह, पांच खारी चीजें। यवक्षार, मोखा, सर्जिक्षार, पलाश और तिल-नालको समष्टिरूपसे क्षारपञ्चक कहते हैं। (राजनिघण्ट)

क्षारपत्र (सं० पु०) क्षारः पत्रे यस्य, बहुव्री०। १ वास्तूक-शाक, बथुवा। २ पालङ्कीशाक, पलांकी।

क्षारपत्रक (सं० पु०) क्षारः पत्रे यस्य, बहुव्री०, वा कप्। क्षारपत्र देखो।

क्षारपत्रा (सं० स्त्री०) चिल्लीशाक, बथुई।

क्षारपाक (सं० पु०) क्षारस्य पाकः, ६-तत्। क्षार-द्रव्यका एक पाक। सुश्रुतमें क्षारको पाक और प्रयोग करनेकी प्रणाली इस प्रकार लिखी है—

क्षार छेदन, भेदन एवं लेखन कार्य सम्पादन करता और विशेषरूपमें क्रियाका अवचारण होनेसे शस्त्र तथा शस्त्र सदृश सकल द्रव्योंकी अपेक्षा समधिक कार्यकारी ठहरता है। इससे रक्त पूय प्रभृति क्षरित अथवा व्रण एककाल ही विनष्ट होता है। इसी कारण प्राचीन भारतवासियोंने इसका नाम क्षार रखा है। नाना प्रकार औषधोंका संयोग रहनेसे यह वात, पित्त तथा श्लेष्मा त्रिदोषका शान्तिकारक है। श्वेत-वर्ण-जैसा सौम्य रहते भी क्षारमें दहन, पचन और विदारण करनेकी विलक्षण शक्ति है। उष्णवीर्यके औषध अधिक परिमाणमें पड़नेसे यह कटु, उष्ण और तीक्ष्ण गुणविशिष्ट होता है।

क्षार तीन प्रकारका है—मृदु, मध्यम और तीक्ष्ण। इसको प्रस्तुत करनेमें शरत्कालके प्रशस्त दिवस उप-वासी रह पवित्र भावसे पर्वतके सानुदेशजात, मध्यम-वयस, श्वेतवर्ण, वृहत् और अखण्ड घण्टापाटलि वृक्षको अधिवास करके रखना चाहिये। दूसरे दिन निम्नलिखित मन्त्र पढ़के उक्त वृक्षको उखाड़ लाते हैं—

"अग्निवीर्य महावीर्य मातिवीर्य प्रणश्यतु।
इहैव तिष्ठ कल्याण! मम कार्यं करिष्यसि॥
मम कार्ये कृते पश्चात् स्वर्गलोकं गमिष्यसि।"

घण्टाककी लाकर पीछे सहस्र रक्तपुष्प और सहस्र श्वेतपुष्पों द्वारा होम करना चाहिये। फिर उस वृक्ष-की टुकड़े टुकड़े करके वायुशून्य स्थानमें रख देते हैं। इसके ऊपर सुधाशर्करा (खड़िया) डाल तिल-वृक्षके काष्ठ अग्निसे फूंकना चाहिये। आग बुझ जाने पर गूमा वृक्ष और खड़ियाका भस्म पृथक् करके रख लेते हैं।

कुड़ची, पलाश, अश्वकर्ण, रखा हुआ मदार, बहेड़ा, सोंदाल, लोध, आकनादि, लटजीरा, पारुल, बड़ी कम-रख, वासक, कदली, चित्रक, छोटी कमरख, अर्जुन, काष्ठमल्लिका, करवीर, छत्रक, गणिकारी, घुंघची और घोषाका फल, मूल, पत्र तथा शाखाके सबको एकत्र करके पूर्वविधानके अनुसार जला देना चाहिये। ३२ सेर यह भस्म १९२ सेर जलमें डाल कर २१ वार छाना जाता है। फिर आंच पर चढ़ा कर कड़छीसे धीरे धीरे चलाते हैं। पानी निर्मल, रक्तवर्ण, तीक्ष्ण और पिच्छिल होने पर उतारना और असार भाग परित्याग करके पुनर्वार अग्नि पर पकाना चाहिये। शुक्ति और शङ्ख नाभिको आगमें जलाते और अग्निवर्ण होने पर यह दोनों द्रव्य, करीलबीज और पूर्वोक्त शर्करा-भस्म चारों चीजें बत्तीस बत्तीस तोले लौहपात्रमें रख आधसेर क्षारजलसे पेषण करते हैं। पिस जाने पर इसको २ द्रोण परिमाण क्षारजलमें डाल स्थिर चित्तसे पकाना चाहिये। इस क्षारजलको ऐसी अवस्थामें, जिसमें न तो अतिशय तरल और न अतिशय घन हो, उतार लौहपात्रमें रख उसका मुंह बन्द कर देते हैं। इसीका नाम मध्यमक्षार है। प्रक्षेप द्रव्य न देने और सम्यक् रूपसे सञ्चालित करके पाक करने पर मृदुक्षार होता है। दन्तीवृक्ष, थुलकुड़ी, चित्रक, विषलाङ्गली,

नाटाकरञ्ज, प्रवाल, सुरामांसी, विट्लवण, सज्जीमट्टी, स्वर्णचीरीलता, हींग, वच और शृङ्गीविष द्रव्योंमें जो जो मिले, उसे समभाग लेकर उत्तम रूपसे चूर्ण करना चाहिये। यह चूर्ण २ तोला मात्रसे क्षारजलमें प्रक्षेप करके पाक करने पर उक्त क्षार पाचक गुणविशिष्ट हो जाता है। व्याधिके अवस्थानुसार इसे सेवन करना चाहिये। क्षीणबल होने पर क्षारजलके सेवनसे बल बढ़ता है।

क्षार गुण—श्वेतवर्ण, निर्मल, पिच्छिल, द्रवकारी, बलकर और (शरीरके मध्य) शीघ्र प्रवेशकारी है। यह अतिशय तीक्ष्ण वा अतिशय मृदु न होनेसे ही अच्छा रहता है। अतिशय मृदुता, अतिशय शीतलता, अतिशय तीक्ष्णता, अतिशय प्रवेशकारिता, अतिशय घनत्व, अपक्वता वा द्रव्यहीनता--क्षारके आठ दोष हैं।

इसके सेवनसे क्रमि, आम, कुष्ठ, कफ और मेद क्षय होता है। अधिक परिमाणमें क्षार खानेसे पुरुषत्वको हानि पहुंचती है। कुष्ठ, किटिभ (ज़्), दद्रु, किलास, मण्डलाकार कुष्ठ, भगन्दर, आंव, दुष्टव्रण, चर्मकील (मुंहासा), तिल, मुखका विवर्णचिह्न, वाह्यव्रण क्रमि, विष और अर्श सकल रोगोंमें प्रतिसारणीय क्षार विधेय है। प्रतिसारणीय देखो।

आलजिह्वाका रोग, जिह्वाका रोग, उपकुश, दन्त-वैदर्भ, तीनों प्रकारकी रोहिणी सात प्रकारके रोगोंमें भी प्रतिसारणीय क्षार खिलाना उचित है। गरल, गुल्म, उदररोग, अग्निमांद्य, अजीर्ण, अरुचि, आनाह, शर्करा अश्मरी, अन्तर्व्रण, क्रमि, विषदोष और अर्शरोगमें पानीय क्षार व्यवहार करना चाहिये। मर्मस्थान, शिरा, स्नायु, धमनी, सन्धिस्थान, कोमल अस्थि, सेवनी, गल-देश, नाभि, नखमध्य और शोथ सभी स्थानोंके मांसका परिमाण अल्प है। इन सकल स्थानों पर क्षार प्रयोग न करना चाहिये। वर्त्मगत रोग व्यतीत अन्यप्रकार चक्षुरोगमें भी क्षार प्रयोग निषिद्ध है। जिसके समस्त शरीर वा अस्थिमें वेदना रहती, जिसको अन्नको रुचि नहीं लगती और जिसके हृदय वा सन्धि स्थानमें पीड़ा पड़ती; उसके लिये क्षारप्रयोग उपयोगी नहीं।

(सुश्रुत सूत्रस्थान ११ अ०)

क्षारपाणि (सं० पु०) एक आयुर्वेद तन्त्रकार।

क्षारपाल (सं० पु०) एक ऋषि।

क्षारभूमि (सं० स्त्री०) क्षारयुक्ता भूमिः, मध्यपदलो०। १ लवणमृत्तिकादेश, नोना मुल्क। क्षारस्य भूमिः, ६-तत्। २ लवणका स्थान, नमक निकलनेकी जगह।

क्षारमध्य (सं० पु०) क्षारो मध्ये यस्य, बहुव्री०। अपामार्ग वृक्ष, लटजीरा।

क्षारमृत् (सं० स्त्री०) ऊषरभूमि।

क्षारमृत्तिका (सं० स्त्री०) क्षारयुक्ता मृत्तिका। खारी-मट्टी, नोना। यह पित्तदाहकारक और पाण्डुरोग जनक है। (आत्रेयसंहिता)

क्षारमेलक (सं० पु०) क्षाराणां मेलः सङ्घः, स्वार्थे कन्। सर्वक्षार, साबुन।

क्षारमेह (सं० पु०) पित्तजन्य प्रमेहभेद, किसी किस्मका जिरियान्। इसमें स्रुतक्षारप्रतिम मेह आता है। (सुश्रुत निदान ६ अ०)

क्षारमेही (सं० त्रि०) क्षारमेहोऽस्यास्ति, क्षार-मेह-इनि। क्षारमेह रोगाक्रान्त, जिसके क्षारमेह रहे।

"क्षारमेहिनं त्रिफलाकषायम्।" (सुश्रुत चिकित्सित ११ अ०)

क्षारराज (सं० पु०) टङ्कणक्षार, सोहागा।

क्षारलवण (सं० क्लो०) लवणविशेष, खारी नमक। यह शैत्यप्रद, मूत्रवर्धक, मलभेदकारी और शूल, ज्वर तथा दाहनाशक है। (भावप्रकाश)

क्षारवर्ग (सं० पु०) सर्जिटङ्कणयवक्षार, सज्जीखार, सोहागा और शोरा। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

क्षारवस्ति (सं० पु०-स्त्री०) निरूह वस्तिभेद, एक पिच-कारी। सैन्धवाक्ष, शताह्वा, ८ पल गोमूत्र, २ पल अम्लीका और २ पल गुड़ सबको यत्नसे आलोड़न करके वस्त्रपूत मुखोष्ण वस्ति देना चाहिये। इससे शूल, विट्सङ्ग, आनाह, मूत्रकृच्छ्र, उदावर्त, गुल्म आदि रोग शीघ्र आरोग्य होते हैं। (चक्रपाणिदत्त)

क्षारवृक्ष (सं० पु०) क्षारप्रधानो वृक्षः, मध्यपदलो०। मुष्ककवृक्ष, घण्टापाटलि।

क्षारश्रेष्ठ (सं० क्लो०) क्षारेषु श्रेष्ठम्, ७-तत्। १ वज्र-क्षार। (पु०) क्षारं श्रेष्ठोऽत्र, बहुव्री०। २ पलाश। ३ मुष्ककवृक्ष, मोखा।

क्षारषट्क (सं० क्ली०) क्षाराणां षट्कम्, ६-तत्। धव, अपामार्ग, कोरैया, लाङ्गली, तिल और मोखाके पेड़ोंका नमक।

क्षारसप्तक (सं० क्ली०) सप्तक्षार, सात प्रकारका नमक। सर्जिक्षार, यवक्षार, टङ्कण, सुवर्चिका, पलाश, सौर्य और शिखरीके समूहको सप्तक्षार कहते हैं। (रावण)

क्षारसमुद्र (सं० पु०) क्षारप्रधानः समुद्रः, मध्यपदलो०। लवणसमुद्र।

"सीता तु ब्रह्मसदनात् केशराचलादि शिखरेभ्यो ऽधोऽधः प्रस्रवन्ती गन्धमादनमूर्धसु पतिलाऽन्तरेण भद्राश्ववर्षं प्राच्यां दिशि क्षारसमुद्रमभिप्रविशति।" (भागवत ५।१७।६)

क्षारसर्पि (सं० क्ली०) क्षारपक्वघृत, नमकमें तपा हुआ घी।

क्षारसिन्धु (सं० पु०) क्षारप्रधानः सिन्धुः, मध्यपदलो०। लवणसमुद्र। सिद्धान्तशिरोमणिके मतमें यह समुद्र जम्बूद्वीपसे दक्षिण और शाकद्वीपसे उत्तर अवस्थित है। (गोलाध्याय)

क्षारसूत्र (सं० क्ली०) मर्माश्रित नाड़ीके छेदनार्थ क्षारलिप्त सूत्र, नाजुक जगहकी नस चीरनेको नमक लगा हुवा डोरा।

क्षारागद (सं० पु०) सुश्रुतोक्त एक औषध, कोई दवा। इसकी प्रस्तुतप्रणाली यों है—लताशाल, तिनिश, पलाश, नीम, मोखा, देवदारु, आम्र, गूलर, मैनफल, चालता, धव, अंकोड़, आमलक, छोटा सोंदाल, साईबृक्ष, कपित्थ, अश्वकर्ण, अर्जुन, शाल, कपीतन, आमलकुचा, बड़ी कमरख, मनसा, भल्लातक, सोनापेड़, मधूर, लाल सहिंजन, सागवन, दरिया, मूर्वा, लोध, तालमखाना, झड़बेरी और दक्षिणी बबूल सबका भस्म गोमूत्रमें डाल क्षारपाक-प्रणालीसे कपड़ेमें छान कर पाक करना चाहिये। फिर उसमें पिप्पलीमूल, चौराई, अम्लवेतस, गुड़त्वक, मञ्जिष्ठा, खट्टी कमरख, गजपिप्पली, मरिच, उत्पल, श्यामालता, विट्लवण, अनन्तमूल, सोमलता, त्रिवृत्, कुङ्कुम, शालपर्णी, केवड़ा, श्वेतसर्षप, वरुणवृक्ष, सैन्धवलवण, पाकर, हिज्जल, शालवएरण्ड, वेतस, मूषिकपर्णी, छातेका डण्ठल, हस्तिशुण्डी, अतीस, पञ्चशिरा, हरीतकी, भद्रदारु, कुष्ठ, हरिद्रा, वच और लौहचूर्ण सब द्रव्य प्रक्षेप करते हैं। पाकशेष होने पर उतार कर लौहपात्रमें रख देना चाहिये। इसका पाक क्षीर-पाककी भांति अतिशय घन वा अतिशय तरल नहीं बनता। क्षारागदसे दुन्दुभि, पताका और तोरण प्रभृति लेपन करना चाहिये। इसके शब्दश्रवण और दर्शनसे विष नष्ट होता है। इसका नाम क्षार अगद है। यह शर्कराश्मरी, अर्श, वातजगुल्म, कास, शूल, उदरी, अजार्ण, ग्रहणी, अरुचि, सकल प्रकार शोथ और श्वास रोगमें भी सेवन किया जाता है। क्षारागद सब विषोंके प्रतिकारको उपकारी है। यहां तक कि यह तक्षक प्रभृति सर्पोंका विष भी निवारण कर सकता है। (सुश्रुत कल्प ७ अ०)

क्षाराच्छ (सं० क्ली०) क्षारेषु अच्छम्, ७-तत्। सामुद्रलवण, करकच।

क्षाराञ्जन (सं० क्ली०) एक अञ्जन। (सुश्रुत उत्तर १२ अ०)

क्षाराम्बु (सं० पु०) क्षारजल, खारा पानी।

क्षाराष्टक (सं० क्ली०) क्षाराणां अष्टकम्, ६-तत्। अष्टप्रकार क्षार, आठ तरहका नमक। पलाश, हड़जोड़, शिखरी, चिञ्चा, अर्क, तिल, यव और सज्जीको समष्टि रूपसे क्षाराष्टक कहते हैं। (भावप्रकाश)

क्षारिका (सं० स्त्री०) क्षर-ण्वुल्-टाप् अत इत्वम्। क्षुधा, भूख।

क्षारित (सं० त्रि०) क्षर-णिच्-क्त। १ अपवादग्रस्त, दूषित, बदनाम। (भारत १।५।१०५)

२ स्रावित, टपकाया हुआ। (क्ली०) ३ क्षार, नमक।

क्षारीय (सं० त्रि०) क्षार चातुरर्थिक छ। उत्कारादिभ्यश्छ पा ४।२।९०। क्षारका निकटवर्ती (देशादि)।

क्षारोत्तम (सं० पु०) घण्टापाटलिका, मोखा।

क्षारोद (सं० पु०) क्षारं उदकं यस्य, क्षारं उदकं यस्मिन्निति वा, बहुव्री० उदकस्य उदादेशः। लवणसमुद्र। (भागवत ५।१०।३५)

क्षारोदक (सं० क्ली०) क्षारजल, खारा पानी। क्षारसे षड्गुण जल डाल वस्त्रका दोलायन्त्र बना उसके नीचे पात्र रखके क्षारोदक ग्रहण करना चाहिये। इसी

प्रकार एकविंशति वार पुनः पुनः टपकाते हैं। मतान्तरमें क्षारसे चतुर्गुण जल दे चतुर्थांश अवशिष्ट रहने पर टपका लेना चाहिये। (परिभाषाप्रदीप)

क्षारोदधि (सं० पु०) क्षारसमुद्र, लवणसमुद्र।

क्षाल (सं० त्रि०) क्षल ज्वलादित्वात् णः। शोधनकारी, शोधक, साफ कर देनेवाला।

क्षालन (सं० क्ली०) क्षल-णिच् भावे ल्युट्। १ शोधन, शुद्धि, सफाई। २ प्रक्षालन, धौतकरण, धुलाई।

क्षालित (सं० त्रि०) क्षल-णिच् क्त। धौत, परिष्कृत, धुला हुआ, साफ। (माघ १०।१४)

क्षि (सं० स्त्री०) क्षि बाहुलकात् डि। १ निवास, मुकाम। २ गति, चाल। ३ क्षय, बरबादी।

क्षित (सं० त्रि०) क्षि कर्मणि क्त। १ हिंसित, बरबाद किया हुआ, (क्ली०) भावे क्त। २ हिंसा, कतल, मारपीट।

क्षिता (सं० स्त्री०) क्षिति। (भारत १३।३१।१०)

क्षितायु (वै० त्रि०) क्षितं आयुर्यस्य, बहुव्री०। क्षीणायु, गयी बीती उम्रवाला। (ऋक् १०।१६१।२)

क्षिति (सं० स्त्री०) क्षियति वसत्यस्याम्, क्षि निवासे क्तिन्। १ पृथिवी, जमीन्। ब्रह्मवैवर्तपुराणमें अन्यप्रकार व्युत्पत्ति प्रदर्शित हुयी है—

"महालये क्षयं याति क्षितिस्तेन प्रकीर्तिता।" (प्रकृति० ७ अ०)

महाप्रलयमें क्षय हो जानेसे पृथिवीका नाम क्षिति पड़ा है। (मनु ४।२।४।१)

"क्षिति जल पावक गगन समीरा।" (तुलसी)

२ वास, रहन। भावे क्तिन्। ३ क्षय, नाश। ४ गोरोचना नामक गन्धद्रव्य। ५ मनुष्य। (ऋक् ५।६।२८) ६ महाप्रलय। ७ खदिरवृक्ष, खैरका पेड़। (पु०) ८ किसी ऋषिका नाम। (प्रवराध्याय)

क्षितिकण (सं० पु०) क्षितेः कणः, ६-तत्। धूलि, गर्द।

क्षितिकणा (सं० स्त्री०) क्षितिकण देखो।

क्षितिकम्प (सं० पु०) क्षितेः कम्पः, ६-तत्। भूमिकम्प, जलजला।

क्षितिक्षम (सं० पु०) क्षितौ क्षमते, क्षिति-क्षम-अच्। खदिरवृक्ष, खैरका पेड़।

क्षितिक्षित् (सं० पु०) क्षितिं क्षयति, क्षिति-क्षि ऐश्वर्ये क्विप् तुगागमश्च। पृथिवीश्वर, राजा। (माघ)

क्षितिज (सं० पु०) क्षितेर्जायते, क्षिति-जन-ड। १ भूमिपुत्र, मङ्गलग्रह। (ज्योतिस्तत्त्व) २ भूनाग, केंचुवा। ३ महीरुह, वृक्ष। ४ नरकासुर। (क्ली०) ५ खगोलमें आकाशके मध्यसे नव्बे अंश दूरको अवस्थित तिर्यग्वृत्त। (गोलाध्याय) (त्रि०) ६ क्षितिजात, जमीनसे पैदा।

क्षितिजन्तु (सं० पु०) क्षितेर्जन्तुरिव। भूनाग, केंचुवा।

क्षितितलविधि (सं० पु०) पातालयन्त्र।

क्षितिदेव (सं० पु०) क्षितौ देव इव। ब्राह्मण।

(भागवत ३।१।११)

क्षितिदेवता (सं० स्त्री०) क्षितौ देवता इव। ब्राह्मण।

क्षितिधर (सं० पु०) क्षितिं पृथिवीं धरति, क्षिति-धृ-अच्। यद्वा क्षितिं धारयति, क्षिति-धृ-णिच् पूर्ववत्स्वश्च। १ पर्वत, पहाड़। (कुमार ७।९४) २ पृथिवीको धारण करनेवाला, कच्छप, हस्ती वा नाग। पौराणिक मतमें यही यथाक्रम पृथिवीको धारण किये हुये हैं। इसीसे कछुवा, हाथी और सांपको क्षितिधर कहते हैं। ३ राजा।

क्षितिनन्द—काश्मीरके एक राजा। यह वकके पुत्र थे। क्षितिनन्दने ३० वर्ष राजत्व किया। (राजतरङ्गिणी)

क्षितिनाग (सं० पु०) भूनाग, केंचुवा। इसका संस्कृत पर्याय—क्षितिज, क्षितिजन्तु, भूनाग और उपरस है। भूनाग देखो।

क्षितिनाथ (सं० पु०) क्षितेः पृथिव्याः नाथः सहायः। राजा।

क्षितिप (सं० पु०) क्षितिं पाति रक्षति, क्षिति-पा-ड। भूमिपाल, राजा। (माघ)

क्षितिपति (सं० पु०) क्षितेः पतिः पालकः, ६-तत्। क्षितिपाल, राजा। (रघु ३।८६)

क्षितिपाल (सं० पु०) क्षितिं पालयति, क्षिति-पा-णिच्-अण्। राजा। (प्रबोधचन्द्रोदय १अङ्क)

क्षितिपालभाक् (सं० पु०) क्षितिपालं भजते, क्षितिपाल-भज्-ण्वि। (भजोण्वि पा ३।२।६२) राजकर्तव्य दूतप्रेषणादि। (भट्टि ३।२१)

क्षितिपुत्र (सं० पु०) क्षितेः पृथिव्याः पुत्रः, ६-तत्। १ नरकराज, कोई असुर। नरकासुर देखो। २ मङ्गलग्रह। कुज देखो।

क्षितिबदरी (सं० स्त्री०) भूबदरी, झड़बेरी।

क्षितिभुक् (सं० पु०) क्षितिं भुनक्ति, क्षिति, भुज्-क्विप्। राजा।

क्षितिभृत् (सं० पु०) क्षितिं बिभर्ति, क्षिति-भृ-क्विप् तुगागमश्च। १ पर्वत, पहाड़। २ राजा। (किरात०)

क्षितिरन्ध्र (सं० क्ली०) क्षितेः रन्ध्रम्, ६-तत्। गर्त, गड्ढा।

क्षितिरुह (सं० पु०) क्षितौ रोहति, ७-तत्। वृक्ष, दरख्त। (विष्णुपुराण १।१५।६)

क्षितिलवभुक् (सं० पु०) भूम्यधिकारी, जमीन्के एक हिस्से या बहुत छोटे टुकड़ेका मालिक।

क्षितिवर्धन (सं० पु०) क्षितिं वर्धयति, क्षिति-वृध-णिच्-ल्यु। १ मृतदेह, शव, लाश। (भट्टि) (त्रि०) २ क्षिति वृद्धिकारी, जमीन्को बढ़ानेवाला।

क्षितिवृत्ति (सं० स्त्री०) क्षितेर्वृत्तिः, ६-तत्। सहिष्णुता, बरदाश्त, गमगीरी।

क्षितिवृत्तिमान् (सं० त्रि०) क्षितिवृत्तिरस्यास्ति, क्षिति-मतुप्। दूसरेका अहिताचरण सहन करनेवाला, जो औरोंकी बुराई सहता हो। (भागवत ४।१६।७)

क्षितिव्युदास (सं० पु०) क्षितिं व्युदस्यति, क्षिति-वि-उद्-अस-अण्, उपपदस०। गर्तस्थित गृह, गड्ढेका मकान।

क्षितिसुत (सं० पु०) क्षितेः सुतः, ६-तत्। १ मङ्गलग्रह। २ नरकासुर।

क्षितीश (सं० पु०) क्षितिमीष्टे, ईश-अण्। १ भूमिपति, जमीन्का मालिक। (रघु १।५) २ विष्णु। ३ वङ्गदेशीय शाण्डिल्यगोत्रवाले राढ़ी और वारेन्द्र ब्राह्मणोंके पूर्व-पुरुष। यह कनोजसे आदिशूरकी सभामें आये थे। इनके पुत्र सुविख्यात भट्टनारायण रहे। इन्हीं क्षितीशका उपलक्ष करके 'क्षितीशवंशावली चरित्र' नामक संस्कृत ग्रन्थ रचित हुआ है। उक्त ग्रन्थमें क्षितीशका जैसा परिचय मिलता, वह भ्रमपूर्ण और कल्पित है।

भट्टनारायणको भांति क्षितीश भी एक कवि थे। श्रीधरदासके सूक्तिकर्णामृतमें इनकी कविता उद्धृत हुई है।

क्षितीश्वर (सं० पु०) क्षितेरीश्वरः, ६-तत्। पृथिवीपति। (रघु ३।४)

क्षित्यदिति (सं० स्त्री०) क्षितौ अवतीर्णा अदितिः, मध्य-पदलो०। देवकी, वसुदेवकी पत्नी, कृष्णकी गर्भधारिणी। अदितिके देवकीरूप अवतारकी कथा इस प्रकार है—महर्षि कश्यपने एक बार किसी बृहत् यज्ञका अनुष्ठान किया। इस यज्ञमें दुग्ध और दधिके लिये जलाधिपति वरुणके निकटसे कई मवेशी मांग लाये थे। यज्ञ शेष होने पर कश्यपने मवेशी वापस करना चाहे। किन्तु कश्यपकी अदिति और सुरभि नामक पत्नियां मवेशियोंका ज्यादा दूध देख किसी प्रकार लौटाने पर राजी न हुईं। वरुणने मवेशी वापस करनेके लिये संवाद भेजा था। परन्तु कोई फल न निकला। वरुणको जब मालूम हुवा कि सहजमें मवेशी मिल न सकेंगी, तो वह पितामहसे नालिश करने गये और रो रो कर कहने लगे—यदि मवेशी न मिलेंगे, तो देशको कैसे जा सकूंगा। पितामह कश्यपके अन्याय आचरण पर बहुत चिढ़े थे। अन्तको विचार हुआ—'कश्यपने अपने जिस अंशसे वरुणके गवादि पशु हरण किये हैं, वही अपराधी है। इस लिये कश्यपका वह अंश महीतलको जाकर ग्वाला बन कर जन्मग्रहण करे। निर्दोष अपर अंश इसी स्थानमें रहेगा। फिर जिनकी इच्छासे ऐसी घटना हुई है, उन्हीं अदिति और सुरभिका सोला आना अपराध है। अतएव वह दोनों पूर्णरूपसे धरा-तल पर जन्मग्रहण करके कश्यपके साथ वास करें।' हुक्म निकल गया और वरुण सन्तुष्ट हुए। कश्यपने वसुदेवरूप, अदितिने देवकीरूप और सुरभिने रोहिणी-रूपसे पृथिवी पर जन्म लिया। (हरिवंश ५५ अ०)

क्ष्विला (सं० पु०) क्षि-क्विप्-तुक्-च। श्वेष्क्षिपवल्लिनिचि-रुहभ्यः क्विप् (उण् ४।११३) वायु, हवा।

क्षिद्र (सं० पु०) क्षिद्-रक्। १ रोग, बीमारी। २ सूर्य, सूरज। ३ विषाण, सींग। (संक्षिप्तसार उणादिवृत्ति)

क्षिप् (सं० स्त्री०) क्षिप-क्विप्। अङ्गुलि, उंगली। (ऋक् ३।२२।३)

क्षिप (सं० त्रि०) क्षिप्-कः। १ क्षेप्ता, फेंकनेवाला। (पु०) २ क्षेपण, फेंक, चलाव।

क्षिपक (सं० त्रि०) क्षिप स्वार्थे कन्। क्षेपक, फेंकनेवाला।

क्षिपकादि (सं० पु०) पाणिनिका एक गण। क्षिपका, ध्रुवका, चरका, सेवका, करका, चटका, अवका, लहका, अलका, कन्यका, ध्रुवका, एड़का आदि शब्द इस गणमें गिने जाते हैं। सिवा इनके दूसरे भी कई शब्द क्षिपकादि गणके अन्तर्गत हैं। उनकी गणना नहीं की गयी है। वह प्रयोगके अनुसार द्रष्टव्य है। क्षिपकादि शब्दोंमें अकारके स्थान पर इकार नहीं होता।

क्षिपकी (सं० त्रि०) क्षिपक चातुरर्थिक इनि। क्षिपकका निकटवर्ती (देशादि)।

क्षिपण (सं० क्ली०) क्षिप-क्युन्। क्षेपण, फेंकनेकी क्रिया, चलानेका काम।

क्षिपणि (सं० स्त्री०) क्षिप्यते ऽनया, क्षिप-अनि-किच्च (क्षिपेः किच्च। उण् २।१०८) १ नौकादण्ड, डांड, पतवार। २ कोई जाल। ३ आयुध, हथियार। ४ बंसी, मछली मारनेकी कंटिया। ५ अध्वर्यु, ऋत्विक्। भावे अनि ६ क्षेपण, फेंकाव। (ऋक् ४।४०।४)

क्षिपणु (सं० पु०) क्षिप-अनुङ्। (अनुङ् नदेश। उण् ३।४२) १ वायु, हवा। २ व्याध, बहेलिया, चिड़िमार। (ऋक् ४।५८।६)

क्षिपण्य (सं० पु०) क्षिप-कन्युच्। १ वसन्त, बहार। २ देह, जिस्म। ३ सुरभिगन्ध, खुशबू। (त्रि०) ४ सुरभिगन्धविशिष्ट, खुशबूदार।

क्षिपति (सं० पु०) क्षिप्यतेऽनेन, क्षिप करणे अति। बाहु, बाजू, हाथ।

क्षिपस्ति (सं० पु०) क्षिप-अस्ति। बाहु, बाजू, बांह।

क्षिपा (सं० स्त्री०) क्षिप्-अङ् ततः टाप्। षिद्भिदादिभ्योऽङ्। पा ३।३।१०४। १ क्षेपण, फेंकाई। २ रात्रि, रात।

क्षिप्त (सं० त्रि०) क्षिप-क्त। १ त्यक्त, छोड़ा हुआ। इसका संस्कृत पर्याय—नुन्न, नुत्त, अस्त, निष्ठ्यूत, विद्ध और ईरित हैं। २ विकीर्ण, फैलाया हुआ। ३ अवज्ञात, बेइज्जत किया हुआ। ४ वायुरोगग्रस्त, जिसको बाई लगी हो। (अथर्व ६।१०९।३) उद्गीर्ण, उगला हुआ। (माघ ७।३) ६ पतित, गिरा हुआ। (माघ १०।७७) ७ हत, मारा हुआ। (माघ २।५३) ८ विस्रस्त, ढीला किया हुआ। (मार्कण्डेयपुराण ८७।१९) ९ स्थापित, रखा हुआ।

क्षिप्तकुक्कुर (सं० पु०) क्षिप्तश्चासौ कुक्कुरश्चेति, कर्मधा०। अलर्क, पागल कुत्ता।

क्षिप्तचित्त (सं० त्रि०) क्षिप्तं चित्तं यस्य, बहुव्री०। १ चञ्चलचित्त, जिसका दिल ठिकाने पर न हो। (क्ली०) क्षिप्तञ्च तत् चित्तञ्चेति, कर्मधा०। २ विषयासक्त चित्त, डावांडोल दिल।

क्षिप्तनिवास (सं० पु०) क्षिप्त व्यक्तियोंके रहनेका स्थान, पागलखाना।

क्षिप्तभेषज (वै० त्रि०) निक्षिप्त अस्त्राघातका उपशमकारी। (अथर्ववेद ६।१०९।१)

क्षिप्तयोनि (वै० त्रि०) क्षिप्ता योनि र्मातृरूपोत्पत्तिस्थानं यस्य, बहुव्री०। जिसकी जननी अपर पुरुषके साथ आसक्त हुई हो। (आश्वलायन गृह्यसूत्र १।२३।१८)

क्षिप्ता (सं० स्त्री०) क्षिप्त-टाप्। रात्रि, रात।

क्षिप्ति (सं० स्त्री०) क्षिप-क्तिन्। क्षेपण, फेंकाई।

क्षिप्नु (सं० त्रि०) क्षिप्-क्नु। त्रसिगृधिधृषिक्षिपेः क्नुः। पा ३।२।१४०। १ क्षेपणशील, फेंकनेवाला। २ निराकरिष्णु, हटानेवाला।

क्षिप्र (सं० पु०-क्ली०) क्षिप-रक्। १ ज्योतिःशास्त्रोक्त कोई गण। पुष्या, अश्विनी, अभिजत् और हस्ता कई नक्षत्रोंका नाम क्षिप्रगण है। २ पादाङ्गुष्ठ और अङ्गुलिके मध्यभागका सक्थि मर्म। यह सुश्रुतोक्त १०७ मर्मोंके अन्तर्गत है। इसके आहत होने पर आक्षेपसे प्राणवियोग होता है। (सुश्रुत शारीर ६ अ०)

३ यदुवंशीय उपासङ्गके कनिष्ठ पुत्र। (हरिवंश १६२ अ०) (त्रि०) ४ द्रुत, तेज। (ऋक् ४।८।८) ५ क्षेपक, फेंकनेवाला। (ऋक् २।२४।५) (अव्य०) ६ जल्दीसे, शीघ्र शीघ्र।

क्षिप्रकारी (सं० त्रि०) क्षिप्रं करोति, क्षिप्र-कृ-णिनि। शीघ्र कार्य कर सकनेवाला, जल्द काम करनेवाला।

क्षिप्रजव (सं० त्रि०) क्षिप्रोतिशयो जवो वेगो यस्य, बहुव्री०। अतिवेगशाली, अति द्रुतगामी, तेजरफ्तार।

क्षिप्रपाकी (सं० पु०) क्षिप्रं पच्यते, क्षिप्र-पच् बाहुलकात् कर्मणि णिनुन्। गर्दभाण्ड, पारस पीपल।

क्षिप्रश्येन (वै० पु०) पक्षीविशेष, एक चिड़िया। (शतपथब्राह्मण १०।५।२।१०)

क्षिप्रसन्धि (सं० पु०) सन्धिभेद।

(शाङ्खायनश्रौ० सू० १२।१३।५) क्षैप्र देखो।

क्षिप्रहस्त (सं० त्रि०) लघुहस्त, जल्द जल्द हाथ चलानेवाला।

क्षिप्रहोम (सं० पु०) क्षिप्रं हूयते, क्षिप्र-हु-मन्। सायं और प्रातः कर्तव्य होम। संस्कारतत्त्वमें लिखा है— याज्ञिक प्रसिद्ध होम दो प्रकारका है—क्षिप्रहोम और तन्त्रहोम। शीघ्र आहुति पड़नेकी व्युत्पत्तिसे सायं और प्रातःको कर्तव्य होमका नाम क्षिप्रहोम है। व्यासके मतानुसार क्षिप्रहोममें परिसमूहन, आस्तरण और विरूपाक्षजप करना नहीं होता, प्रणव छोड़ देना चाहिये।

"दर्भे गृहे न कुर्वन्ति क्षिप्रहोमे त्रिदं द्वयम्।
विरूपाक्षञ्च न जपेत् प्रणवञ्च विवर्जयेत्॥" (व्यास)

क्षिप्रा (सं० स्त्री०) क्षि-अङ् ततः टाप्। (षिद्भिदादिभ्योऽङ्। पा ३।३।१०४) १ अपचय, बिगाड़, वकारवादी। २ धर्म-व्यतिक्रम। (सिद्धान्तकौमुदी)

क्षियाक—सूक्तिकर्णामृतधृत एक कवि।

क्षिल्लिका (सं० स्त्री०) चक्रवर्मा राजाका मातामही।

(राजतरङ्गिणी ५।२८४)

क्षीजन (सं० क्ली०) क्षीज भावे ल्युट्। झनझनानेवाले बांसका शब्द।

क्षीण (सं० त्रि०) क्षि-क्त इकारो दीर्घः। (निष्ठायामण्यदर्थे पा ६।४।६०) निष्ठा तकारस्य नकारश्च। (क्षियो दीर्घात्। पा ८।२।४६।) १ सूक्ष्म, बारीक। २ दुर्बल, कमजोर। ३ क्षयप्राप्त, मरा मिटा। ४ धात्वपचयवान्, जिसकी धात क्षीण हो गयी हो। दोषधातु और मलक्षयसे मनुष्य क्षीण हो जाता है। दोषधातु और मलक्षयका निदान—अस्वास्थ्यकर आहार, सर्वदा क्रोध, शोक, चिन्ता, भय, श्रम, अत्यन्त स्त्रीप्रसङ्ग, अनाहार, अतिरिक्त वमन प्रभृति, मल वा मूत्रका वेगधारण, साहसिक कार्य और अभिघात है। इन्हीं सकल कारणोंसे दोषधातु और मलसमूहका क्षय होता है। वायुक्षय होनेसे कार्यमें अनुत्साह, वाक्यकी अल्पता और संज्ञाहीनता रहती है। पित्तक्षयसे कफ-वृद्धि, अग्निमान्द्य और शरीरकी कान्तिका ह्रास लगता है। कफ बिगड़नेसे शरीरसन्धिकी शिथिलता, मूर्छा, रूक्षता और दाह उठता है। रसक्षय होनेसे हृदयमें वेदना, कण्ठशोष, पिपासा और चर्मकी रूक्षता दौड़ती है। रक्तक्षयसे शिरासमूहकी शिथिलता, शीतल तथा अम्लद्रव्यमें अभिलाष और चमड़े पर रूखापन आता है। मांसक्षय होनेसे गण्ड, ओष्ठ, कन्धरा, स्कन्ध, वक्षः-स्थल, उदर, सन्धि, मेढ्र और पिण्डी सकल स्थानोंमें शोथ उठता है। देह शुष्क और रूक्ष पड़ जाता है। धमनीसमूह वेदनायुक्त होता है। मेदक्षय लगनेसे प्लीहा-वृद्धि, सन्धिकी शून्यता, शरीरकी रूक्षता और स्निग्धद्रव्य तथा मांसमें स्पृहा लगती है। अस्थिक्षयसे अस्थिमें वेदना, शरीरमें रूक्षता और नख तथा दन्तकी हानि होती है। मज्जाक्षय होनेसे शुक्रकी अल्पता, सकल पर्वोंमें वेदना, शरीरमें सूईकी जैसी चुभन और सभी अस्थियोंकी शून्यता पड़ती है। शुक्रक्षयसे अधिक रति-शक्ति, मेढ्र तथा मुष्कदेशमें वेदना और विलम्बसे रक्तके साथ शुक्रस्खलन हुवा करता है। ओजःक्षय होनेसे भय, दुर्बलता, अतिशय चिन्ता, कान्तिका मालिन्य, मनका चाञ्चल्य, कातरता, समस्त इन्द्रियोंमें वेदना और शरीर-की रूक्षता रहती है। पुरीषक्षयमें पार्श्व तथा हृदयमें वेदना, शब्दके साथ वायुका ऊर्ध्वगमन और उदर सङ्कोच करता है। मूत्रक्षयमें मूत्रकी अल्पता आती और वस्ति-देश पर सूचीविद्ध-जैसी वेदना लगती है। घर्मक्षय होनेसे घर्मका ह्रास, चर्म तथा चक्षुकी रूक्षता और रोमकूपकी स्तब्धता पड़ती है। आर्तवके क्षयसे यथाकाल आर्तव नहीं आता अथवा अल्पपरिमाणमें आता और योनि-देशमें वेदना भी उठती है। स्तन्यक्षय होनेसे स्तनदुग्ध-की अल्पता, अथवा एक बारगी ही स्तन्यका अभाव और स्तन द्वयका सङ्कोच होता है। गर्भक्षयसे उदर फूलता और गर्भका स्पन्दन नहीं पड़ता।

दोष, धातु और मलके मध्य जिसका क्षय आता, उसको बढ़ानेवाला आहार विहारादि और औषधसेवन करनेसे ही क्षीणता जाती है। स्निग्ध तथा मधुरद्रव्य, अन्यान्य बलकारक पदार्थ, दुग्ध और मांसका रस खानेसे ओजःधातु वर्धित होता है। किसी किसी मतमें दोष, धातु, मल और ओजःके मध्य जिसका क्षय लगता, उसका वृद्धिकारक द्रव्य ही खानेको रोगी चाहता

है। अतएव धातुप्रभृतिकी क्षीणताके अनुसार रोगी जो जो द्रव्य स्पृहा करता, उन्हीं द्रव्योंको सेवन करनेसे क्षीणता रोग मिटता है।

वायुक्षय होनेसे कषाय, कटु तथा तिक्तरस, रूक्ष, शीतल एवं लघुद्रव्य, यव, मूंग और काकुन खानेको रोगीका अभिलाष उत्पन्न होता है। अतएव धातु प्रभृतिकी क्षीणताके अनुसार रोगीका अभिलाष उठता है। पित्तकी क्षीणतामें तिल, उड़द, पिष्टक, दहीकी मलाई, अम्लशाक, मट्ठा, कांजी, दही, लालमिर्च, लवणरस, और उष्ण, तीक्ष्ण एवं विदाही द्रव्य खानेको रोगीको स्पृहा दौड़ती और उष्णस्थान तथा उष्णकाल अच्छा लगता है। कफक्षीण होनेसे मधुर, लवण तथा अम्लरस, स्निग्ध, शीतल एवं गुरुद्रव्य, दधि और दुग्ध खानेको रोगीको इच्छा होती और दिवानिद्रा भी लगती है। रसक्षयमें बार बार शीतलजल पीनेकी इच्छा, रात्रि-निद्रा, हिम वा चन्द्रकिरण सेवनको अभिलाष और इक्षु, मांसरस, मद्य, मधु, घृत तथा गुड़का पना और गुड़मिश्रित जल पीनेकी स्पृहा बढ़ती है। रक्तक्षय होनेसे द्राक्षा, दाड़िम, मक्खन, स्नेहयुक्त लवण और रक्तसिद्ध मांस खानेको अभिलाष होता है। मांस क्षीण होने पर दधिसिद्ध अन्न, षाड़व और मांस सेवनको जी चाहता है। मेदक्षयमें मेदसिद्ध ग्राम्य, आनूप वा औदक मांस नमकके साथ खानेकी इच्छा होती है। अस्थिक्षय होनेसे स्नेहयुक्त मांस, मज्जा और अस्थिसेवनकी चाह होती है। मज्जाके क्षयमें मधुर और अम्लरसयुक्त द्रव्य व्यवहार करनेको मन मांगता है। शुक्रक्षय होनेसे मयूर, मुर्गा, हंस वा सारसका अण्डा और ग्राम्य, आनूप तथा औदक मांस खानेको रोगी छटपटाता है। मल क्षीण होने पर यवका अन्न, यावक, शाक, मसूर और उड़दका रसा खानेकी अभिरुचि लगती है। मूत्रक्षय होने पर इक्षु-रस, दूध तथा गुड़ मिला बेरकी पतली चटनी, खीरा और फूट रोगीको अच्छी लगती है। स्वेद क्षीण होने-से तैलमर्दन, गात्रमर्दन, मद्य, वायुरहित स्थानमें शयन तथा उपवेशन और मोटी चद्दर या दूसरा कोई गात्रा-वरण व्यवहार करनेको जी चाहता है। आर्तव क्षयमें लालमिर्च, खटाई और नमक, उष्ण, विदाही तथा गुरुद्रव्य, कुम्हड़ेका शाक खाने और अधिक परिमाणसे जल पीनेकी इच्छा होती है। स्तन्यदुग्ध घटनेसे मद्य, शालितण्डुलका भात, मांस, गायका दूध, शक्कर, दही और मुखरोचक द्रव्य खानेको अभिलाष बढ़ता है। गर्भक्षय होनेसे मुर्गी, छागी, मेषी तथा शूकरीका गर्भ पाक करके खानेकी इच्छा और वसा, शूल्य प्रभृति विविध प्रकार सामग्री सेवन करनेकी भी स्पृहा दौड़ती है। (भावप्रकाश पूर्व खण्ड २ भाग)

(पु०) ५ यक्ष्मारोगके अन्तर्गत एक प्रकार रोग। क्षीणरोगमें मूत्रके साथ रक्त निकलता और पार्श्व पृष्ठ तथा कटीदेशमें वेदना होती है। (चरकसू० १६ अ०)

राजयक्ष्मा देखो।

क्षीणकर (सं० त्रि०) कृशताजनक, कमजोर कर देने-वाला।

क्षीणचन्द्र (सं० पु०) क्षीणश्चासौ चन्द्रश्चेति, कर्मधा०। सातकलामात्र अवशिष्ट चन्द्र, जिस चन्द्रमामें सात या इससे भी कम कलायें हों। कृष्णपक्षकी अष्टमीके बाद शुक्लपक्षकी अष्टमीतक क्षीणचन्द्र रहता है। (ज्योतिस्तत्त्व)

क्षीणता (सं० स्त्री०) क्षीण-तल् ततः टाप्। १ कृशता, दौर्बल्य, कमजोरी। २ सूक्ष्मता, बारीकी।

क्षीणमध्य (सं० त्रि०) क्षीणं मध्यं यस्य, बहुव्री०। क्षीण कटिविशिष्ट, जिसकी कमर पतली हो।

क्षीणबल (सं० त्रि०) क्षीणं बलं यस्य, बहुव्री०। दुर्बल, वीर्यहीन, कमजोर, जिसकी ताकत घट गयी हो।

क्षीणवान् (सं० त्रि०) क्षि-क्त-वतु इकारो दीर्घः निष्ठा तकारस्य नकारश्च। क्षयविशिष्ट, क्षीण, कमजोर।

क्षीण देखो।

क्षीणवासी (सं० त्रि०) १ भग्नगृहवासी, टूटे फूटे मकानमें रहनेवाला। (पु०) २ कपोत, कबूतर।

क्षीणशक्ति (सं० त्रि०) क्षीणा शक्तिर्यस्य, बहुव्री०। वीर्य-हीन, कम ताकत।

क्षीणशरीर (सं० त्रि०) क्षीणं शरीरं यस्य, बहुव्री०। कृश, दुबला पतला, जिसका जिस्म टूट गया हो।

क्षीणाष्टकर्मा (सं० पु०) क्षीणानि अष्टकर्माणि यस्य, बहुव्री०। जिन। जैन मतमें ज्ञानावरण, दर्शनावरण,

मोहिनीय, अंतराय, वेदनीय, आयु, नाम और गोत्र नामक अष्टकर्म क्षय होनेसे ही मुक्ति मिलती है। कारण जीवके अनन्तज्ञान आदि गुणोंको प्रगट न होने देनेवाले ये ही कर्म हैं। जिन देव आठों कर्म क्षय करके मुक्त हुए थे। इसीसे उनका नाम क्षीणाष्टकर्मा है। जिन देखो।

क्षीव (सं० त्रि०) क्षीरक्त निपातने साधुः। मत्त, मतवाला। (रामायण ४।६०)

क्षीयमाण (सं० त्रि०) क्षि कर्मणि शानच्। अपचीयमान, जिसका क्षय हो रहा हो, जो घटता जा रहा हो।

जैनमतानुसार ज्ञानके ५ भेद हैं—मति, श्रुत, अवधि, मनःपर्यय और केवल। इसमें तीसरे अवधिज्ञानके छह भेदोंमेंसे एक भेद। जिस मुनिका अवधिज्ञान उत्पन्न होकर घटता ही रहता है उसे क्षीयमाण अवधिज्ञानी कहते हैं।

क्षीर (सं० पु०-क्ली०) घस्यते अद्यते, घस-ईरन् उपधालोपः घकारस्य स्थाने ककारः षत्वञ्च। १ दुग्ध, दूध। २ जल, पानी। ३ सरल द्रव, अर्क। ४ निर्यास, गोंद। ५ खीर। चीनी डालके गाढ़ा मोटा हुआ दूध बङ्गालमें क्षीर कहलाता है।

क्षीरक (सं० पु०) क्षीरमिव कायति, कै-क। क्षीरमोरटलता, एक बेल।

क्षीरकञ्चुकी (सं० स्त्री०) क्षीरप्रधानं कञ्चुकं प्रावरणं तदिव त्वग् यस्याः, बहुव्री०। क्षीरीशवृक्ष, एक पेड़।

क्षीरकण्ठ (सं० पु०) क्षीरं कण्ठे यस्य, बहुव्री०। शिशु, बच्चा, दुधमुंहा।

क्षीरकन्द (सं० पु०) क्षीरः क्षीरप्रधानः कन्दो यस्य, बहुव्री०। क्षीरविदारी। राजनिघण्टके मतमें यह दो प्रकारका होता है—विनाल और सनाल। नालवाला सनाल और विना नालका विनाल कहलाता है।

क्षीरकन्दा (सं० स्त्री०) क्षीरः क्षीरप्रधानः कन्दो यस्याः, बहुव्री०। क्षीरवल्ली, कृष्णभूमिकुष्माण्ड।

क्षीरकाकोलिका (सं० स्त्री०) क्षीरवत् शुभ्रा काकोली ततः स्वार्थे कन्-टाप् पूर्वह्रस्वश्च। क्षीरकाकोली, एक जड़ी।

क्षीरकाकोली (सं० स्त्री०) १ अष्टवर्गप्रसिद्ध औषधविशेष, एक जड़ी। इसका संस्कृत पर्याय—महावीरा, सुकोली, पयस्विनी, क्षीरशुक्ला, पयस्या, क्षीरविषाणिका, जीववल्ली और जीवशुक्ला है। (राजनिघण्टु) क्षीरकाकोलीका गुण काकोलीके समान है। (भावप्रकाश) काकोली देखो। इसके अभावमें अश्वगन्धका मूल पड़ता है।

चरकके मतमें क्षीरकाकोलीके सेवनसे शुक्रवृद्धि होती है। (चरक सू० ४४ अ०)

क्षीरकाण्डक (सं० पु०) क्षीरान्वितं काण्डं यस्य, बहुव्री०। १ स्नुहीवृक्ष, थूहर। २ अर्कवृक्ष, मदार।

क्षीरकाष्ठा (सं० स्त्री०) क्षीरप्रधानं काष्ठमस्याः, बहुव्री० ततः टाप्। १ वटीवृक्ष, पाकर। २ नदीवट, छोटा बरगद।

क्षीरकीट (सं० पु०) क्षीरस्य कीटम्, ६-तत्। दुग्धजात कीट, दूधका कीड़ा।

क्षीरक्षव (सं० पु०) दुग्धपाषाण, एक पेड़।

क्षीरखर्जूर (सं० पु०) क्षीरवत् स्वादुः खर्जूरः। पिण्डखजूर।

क्षीरघृत (सं० क्ली०) क्षीरजातं घृतम्। क्षीरोत्थ घृत, मथे दूधका घी। सुश्रुतके मतमें यह संग्राही (मलरोधक), रक्तपित्त, भ्रान्ति तथा मूर्छानाशक और नेत्ररोग पर हितकर है।

क्षीरज (सं० क्ली०) क्षीराद् जायते, क्षीर-जन-ड। १ दधि, दही। (त्रि०) २ दुग्धजात, दूधसे बना हुआ।

क्षीरजल (सं० क्ली०) क्षीरमिश्र जल, दूध मिला पानी।

क्षीरतुम्बी (सं० स्त्री०) अलाबुविशेष, मीठी लौकी। यह मधुर, स्निग्ध, पित्तघ्न, गर्भपोषण, हृद्य, वातल और बलपुष्टिकारक होती है। (राजनिघण्टु)

क्षीरतैल (सं० क्ली०) क्षीरपक्वं तैलम्, मध्यपदलो०। सुश्रुतोक्त एकप्रकार औषध, कोई तेल। इसकी प्रस्तुतप्रणाली यों है—ह्रस्वपञ्चमूल, महापञ्चमूली, काकोल्यादि तथा विदारिगन्धादिगण, जलजात मांस, जलीय देशजात मांस और जल-जात कन्दको आहरण करके ३२ सेर दूध और ६४ सेर पानीके साथ क्वाथ तैयार करना चाहिये। एकचतुर्थांश अवशिष्ट रहने पर आगसे नीचे उतार उक्त क्वाथको

कपड़ेमें भली भांति छान लेते हैं। फिर २ सेर तिल तैल उसमें मिलाकर पुनर्वार पाक किया जाता है। दूधके साथ तैल अच्छी तरह मिल जाने पर उतार लेना चाहिये। शीतल होनेसे उसको मन्थन करते हैं। मथनेसे जो तैल निकलता, वह दुग्ध व्यतीत मधुर द्रव्योंके साथ पाक किया जाता है। इसीका नाम क्षीरतैल है। अर्दित रोग यह तैल खाने और लगानेसे आरोग्य होता है। (सुश्रुत चिकित्सित ५ अ०)

क्षीरतोयधि (सं० पु०) क्षीरस्य तोयधिः, ६-तत्। क्षीर-समुद्र।

क्षीरद (सं० त्रि०) क्षीरोत्पादक, दुधार।

क्षीरदल (सं० पु०) क्षीरं दले यस्य बहुव्री० यद्वा क्षीरं क्षीरयुक्तं दलं यस्य बहुव्री०। क्षीरवृक्ष, मदार।

क्षीरदात्री (सं० स्त्री०) दुग्धवती या दुधार गाय।

क्षीरद्रुम (सं० पु०) क्षीरप्रधानो द्रुमः, मध्यपदलो०। अश्वत्थ-वृक्ष, पीपलका पेड़।

क्षीरधात्री (सं० स्त्री०) धात्रीभेद। अपने स्तनसे शिशु-पालन करनेवाली धात्री।

क्षीरधि (सं० पु०) क्षीरः धीयतेऽस्मिन्, धा आधारे कि क्षीरसमुद्र।

क्षीरधेनु (सं० स्त्री०) क्षीरेण निर्मिता धेनुः मध्य-पदलो०। दानके लिये कल्पित क्षीरनिर्मित एक गाय। स्कन्दपुराणमें क्षीरधेनुका विधान इस प्रकारसे लिखा है—जिस स्थानमें क्षीरधेनु बनाना हो, उसको गोबरसे भली भांति लीप कर गोचर्मपरिमित स्थानमें कुश बिछा देना चाहिये। इन कुशों पर कृष्णसारका एक चर्म रखके उस पर गोबरसे एक कुण्डली प्रस्तुत करते हैं। फिर उस पर क्षीरकुम्भ रखा जाता और उसका एक चतुर्थांश वत्सके लिये स्थापित होता है। क्षीरधेनुका मुखाग्र सुवर्ण द्वारा, दोनों कर्ण किसी प्रशस्त पत्रसे, मुख गुड़ द्वारा, जिह्वा शर्करासे, किसी प्रशस्त फल द्वारा दन्त, मुक्ताफलसे चक्षु, इक्षुसे पदद्वय, दर्भ द्वारा रोम, कम्बलसे गलकम्बल, ताम्रसे पृष्ठ और कांस्यसे देह निर्माण करना चाहिये। क्षीरधेनुका पुच्छ पट्टसूत्र और स्तन नवनीत द्वारा बनते हैं। शृङ्ग सुवर्णमय, खुर रजतमय और अपराङ्ग पञ्चरत्नमय प्रस्तुत होने पर उसको चारो ओर तिलपूर्ण चार पात्र स्थापन करके क्षीरधेनुको दो वस्त्रोंसे ढांक देना चाहिये। फिर गन्धपुष्प, धूप, दीप प्रभृति द्वारा अर्चना करके क्षीरधेनु ब्राह्मणको दी जाती है। इसके पीछे खड़ाऊं, जूता और छाता भी दान करना चाहिये। "या लक्ष्मीः सर्वभूतानां" इत्यादि मन्त्रसे कामधेनुका निर्माण और "आप्ययस्व" इत्यादि मन्त्रसे दान करना पड़ता है। प्रतिग्रहीता भी भक्ति-पूर्वक "गृह्णामि त्वां देवि" इत्यादि मन्त्र पढ़के ग्रहण करता है। क्षीरधेनु दान करके उस दिन केवल दूध ही पीकर रहते, दूसरी कोई चीज नहीं खाते। ब्राह्मणको तीन दिन तक दुग्धपान करना चाहिये। जो व्यक्ति यथा नियम क्षीरधेनु दान करता, वह दिव्य सहस्र वत्सर रुद्रलोकमें रह पितापितामहके साथ ब्रह्मलोक पहुंचता है। फिर वह ब्रह्मलोकमें बहुकाल पर्यन्त स्वर्गीय रथका आरोहण, स्वर्गीय माल्य, अनुलेपन प्रभृति नाना विध सुखभोग करके विष्णुलोकको चलता है। वहां वह राजा होकर विष्णुकी भांति अनन्तकाल अवस्थान किया करता है। (हेमाद्रि—दानखण्ड)

क्षीरनाश (सं० पु०) क्षीरं नाशयति, क्षीर-नश-णिच् अण्। १ आखोटवृक्ष। इस वृक्षके क्षीरसे दुग्ध नष्ट हो जाता है। इसीसे इसका यह नाम पड़ गया है। २ दुग्ध-क्षय, दूधकी बरबादी।

क्षीरनिधि (सं० पु०) क्षीरस्य निधिः समुद्रः, ६-तत्। क्षीरसमुद्र। (रघु १।१२)

क्षीरनीर (सं० क्ली०) क्षीरमिश्रं नीरमिव। १ आलिङ्गन, छमागोशी। क्षीरञ्च नीरञ्च तयोः समाहारः, समाहारद्वन्द्व। २ दुग्ध और जल, दूधपानी।

"क्षीरनीरसमं मित्रं अत्र सन्ति विचक्षणाः।" (वेताल १२।१८)

क्षीरप (सं० त्रि०) क्षीरं पिबति, क्षीर-पा-क। क्षीर-पायी बाल, शीरखारा। (भारत १३।१२५ अ०)

क्षीरपर्ण (पु०) क्षीरपर्णी देखो।

क्षीरपर्णी (न्) (सं० पु०) क्षीरपर्णमस्यास्ति, क्षीरपर्ण-इनि। अर्कवृक्ष, आक, अकोड़ा।

क्षीरपर्णी (सं० स्त्री०) क्षीरं पर्णेऽस्याः, बहुव्री० गौरा-दित्वात् ङीष्। १ अर्कवृक्ष, मदारका पेड़।

क्षीरपलाण्डु (सं० पु०) क्षीरवत् शुभ्रः पलाण्डुः। श्वेत-

पलाण्डु, सफेद प्याज। यह स्निग्ध, रुचिकर, धातुस्थैर्यकारी, बलकर, मेधा तथा कफवृद्धिकारी, पुष्टिकर, पिच्छिल, स्वादु, गुरुपाक और रक्तपित्तके लिये प्रशस्त है। (सुश्रुतसूत्र ४६ अ०)

क्षीरपाक (सं० त्रि०) क्षीरेण पाको यस्य, व्यधिकरण-बहुव्रो०। १ क्षीरपक्व, दूधमें पका हुआ। (चरक ८।७७।१०) (पु०) क्षीरस्य पाकः, ६-तत्। घृतादिका क्षीरावशेष पाक, द्रव्यान्तरके योगसे दूधका एक पाक। जिस द्रव्यके साथ क्षीरपाक करना हो, उससे अष्टगुण दुग्ध और दुग्धसे चतुर्गुण जल मिलाके पाँच देना चाहिये। जब जल शेष होकर दुग्धमात्र अवशिष्ट रहता, तब यह पाक उतार लेना पड़ता है। इसीका नाम क्षीरपाक है। २ जलशुक्ति।

क्षीरपाण (सं० त्रि०) क्षीरं पानं यस्य, बहुव्रो० णत्वञ्च। (पानं देशे । पा ८।४।९) १ उशीनर-देशवासी। यह अधिक परिमाणमें दूध पीनेसे क्षीरपाण कहलाते हैं। पीयते ऽनेनेति, पा करणे ल्युट्, क्षीरस्य पानम्, ६-तत् वा णत्वम्। वा भावकरणयोः। पा ८।४।१०। २ जिससे दूध पीया जाये। ३ दुग्धपान, दूधका पियाई।

क्षीरपाणी (सं० स्त्री०) क्षीरपाण-ङीष्। दुग्ध पान करनेका पात्र, जिस बर्तनमें डाल कर दूध पीया जाये।

क्षीरपायी (सं० त्रि०) क्षीरं पातुं शीलमस्य, क्षीर-पा-णिनि। १क्षीरपान करनेके स्वभाववाला, जिसे दूध पीनेकी आदत रहे। २ उशीनर देशवासी। (पु०) ३ ब्राह्मणभूमिका एक मण्डग्राम। (देशावली)

क्षीरपुष्पी (सं० स्त्री०) क्षीरकाकोली, एक जड़ी।

क्षीरभृत (सं० पु०) क्षीरेण भृतः। गोपालक भृत्यविशेष, एक ग्वाला। जिस भृत्यका अन्यरूप वेतन नहीं—गायका दुग्ध ही जो वेतन स्वरूप ग्रहण करता, उसीका नाम क्षीरभृत है। (मनु ८।२३१)

क्षीरमधुरा (सं० स्त्री०) क्षीरकाकोली, एक जड़ी।

क्षीरमय (सं० त्रि०) दुग्धमय, दूधिया। (भागवत ४।१८।८)

क्षीरमोचक (सं० पु०) वृक्षभेद, कोई पेड़।

क्षीरमोरट (सं० पु०) क्षीरवत् स्वादुः मोरटः। लताविशेष, एक बेल। इसका पर्याय—सितद्रु, सुदल और क्षीरक है। मोरट देखो।

क्षीरयष्टिक (सं० पु०) मादक और दुग्ध मिश्रित पात्र, जिस बरतनमें नशा और दूध मिलाकर रखा गया हो।

क्षीररस (सं० पु०) क्षीरसार, मलाई।

क्षीरलता (सं० स्त्री०) क्षीरप्रधाना लता, मध्यपदलो०। क्षीरविदारी, सफेद विदारी कन्द।

क्षीरवती (सं० स्त्री०) क्षीरवत्-ङीप्। भारतप्रसिद्ध एक नदी। (भारत, वन ८४ अ०)

क्षीरवर्ग, दुग्धवर्ग देखो।

क्षीरवल्ली (सं० स्त्री०) क्षीरा क्षीरवती वल्ली, कर्मधा०। क्षीरविदारी, सफेद विदारी कन्द।

क्षीरवान् (सं० पु०) क्षीरमिव निर्यासो ऽस्त्यस्य, क्षीर-मतुप् मस्य वः। १ क्षीरमोरट। २ क्षीर-जैसे निर्यासवाले क्षीरीवृक्ष अश्वत्थ प्रभृति, दूधिया पेड़। (त्रि०) ३ दुग्धयुक्त, दूधिया। (अथर्व १८।४।१६)

क्षीरवारि (सं० पु०) क्षीरमिव वारि यस्य, बहुव्रो०। क्षीरसमुद्र।

क्षीरवारिधि (सं० पु०) क्षीरमिव वारि धीयते ऽस्मिन्, धा आधारे कि। क्षीरसमुद्र।

क्षीरविकृति (सं० स्त्री०) क्षीरस्य विकृतिः, ६-तत्। कूर्चिका, छेना।

क्षीरविदारिका (सं० स्त्री०) क्षीरवत् शुभ्रा विदारिका। क्षीरविदारिका, दूधिया भुईं कुम्हड़ा।

क्षीरविदारी (सं० स्त्री०) क्षीरवत् शुभ्रा विदारी। १ स्वनामख्यात महाकन्दशाक, विदारीकन्द जैसा एक डला। इसका पर्याय—महाश्वेता, ऋक्षगन्धिका, इक्षुवल्लरी, इक्षुवल्ली, क्षीरकन्द, क्षीरवल्ली, पयस्विनी, क्षीरशुक्ला, क्षीरलता, पयःकन्दा, पयोलता और पयोविदारिका है। यह मधुर, अम्ल, कषाय, तिक्त और पित्तशूल तथा मूत्रमेह रोगनाशक होती है। विदारी देखो।

२ कृष्णा भूमिकुष्माण्ड। ३ समाल श्वेतभूमिकुष्माण्ड।

क्षीरविष (सं० क्ली०) निर्यासविष, दूधिया जहर। इसमें फेनागम, विड्भेद और जिह्मजिह्वता आती है। (सुश्रुत कल्प २ अ०)

क्षीरविषाणिका (सं० स्त्री०) क्षीरमिव विषाणमग्रमस्त्यस्य, क्षीर-विषाण-ठन्-टाप्। १ दुग्धिकालोलता, बिछुवा। २ क्षीरकाकोली।

क्षीरवृक्ष (सं० पु०) क्षीरप्रधानो वृक्षः। १ उदुम्बरवृक्ष, गूलरका पेड़। २ राजादनीवृक्ष, खिरनी। ३ अश्वत्थ-वृक्ष, पीपल। ४ क्षीरिकावृक्ष, पिण्ड खजूर। ५ न्यग्रोध। ६ मधूक, महुवा। ७ वटादिपञ्चवृक्ष, बरगद वगैरह पांच पेड़। न्यग्रोध, उदुम्बर, अश्वत्थ, पारीषत् और प्लक्ष पादपको क्षीरवृक्ष कहते हैं। यह हिम, वर्ण्य, योनिरोग व्रणापह, रूक्ष, कषाय, स्तन्य, भग्नास्थि-योजन और विसर्पामय, शोथ, कफ, पित्त, अस्र तथा मेदोघ्न हैं। (राजनिघण्टु) क्षीरिवृक्ष देखो।

क्षीरव्यापत् (सं० स्त्री०) अश्वका अतिमात्र क्षीरभोजन-जन्य विकार, बहुत ज्यादा दूध पीनेसे घोड़ेको होने-वाली एक बीमारी। क्षीरव्यापत्का मारा घोड़ा धीरे धीरे खाता पीता, निद्रामें डूब जाता और वेदनासे कष्ट पाता है। (जयदत्त)

क्षीरव्रत (सं० पु०) केवल दुग्धपान करके व्रताचरण, जिस व्रतमें सिर्फ दूध पीकर ही रहें।

क्षीरशर (सं० पु०) क्षीरं शीर्यतेऽत्र. शृ अधिकरणे अप्। दुग्धसर, आमिक्षा, मलाई। इसका संस्कृत पर्याय—आमिक्षा और पयस्या है।

क्षीरशाक (सं० क्ली०) नष्ट दुग्ध, बैठा दूध। अपक्व अवस्था-में जो दूध बिगड़ता, उसीका नाम क्षीरशाक है। (भावप्रकाश) यह शुक्रवर्धक, शरीरवृद्धिकारक, बलकर, गुरु, कफजनक, रुचिकर और वायु तथा पित्तनाशक है। जिनका अग्नि प्रदीप्त है अथच निद्रा नहीं आती अथवा जो अतिशय स्त्रीसेवनसे क्षीण हो गये हैं, उनके लिये क्षीरशाक बहुत उपकारी होता है।

क्षीरशीर्ष (सं० पु०) क्षीरमिव शीर्षमस्य, बहुव्री०। श्रीवेष्ट नामक गन्धद्रव्य, तारपीनका तेल।

क्षीरशुक्ला (सं० स्त्री०) क्षीरकाकोली।

क्षीरशुक्ल (सं० पु०) क्षीरवत् शुक्लः। १ राजादनवृक्ष, खिरनी। २ पानीयकफल, सिंघाड़ा। ३ भूमिकुष्माण्ड।

क्षीरशुक्ला (सं० स्त्री०) क्षीरवत् शुक्ला। १ क्षीरकाकोली। २ क्षीरविदारी। ३ शुक्लकुष्माण्ड, पेठा। ४ राजादनी, खिरनी।

क्षीरश्री (वै० त्रि०) क्षीरेण श्रीयते मिश्रीक्रियते, श्रि कर्मणि क्विप्। क्षीरमिश्रित, जिसमें दूध मिला हो। (वाजसनेयसंहिता ८।५७)

क्षीरषट्पलक (सं० क्ली०) क्षीरेण षण्णां पञ्चकोलानां पलमत्र, बहुव्री० कप्। एक प्रकार पक्वघृत, कोई पका हुआ घी। इसकी प्रस्तुत प्रणाली यों कही है—पञ्चकोल, सैन्धवलवण और दुग्ध प्रत्येक द्रव्य एक पल परिमित लेकर उसके साथ घृतपाक करना चाहिये। इसीका नाम क्षीरषट्पलकघृत है। यह घृत प्लीहा, विषमज्वर और गुल्मरोगमें सेवनीय है। (चक्रदत्त)

क्षीरषष्टिक (सं० क्ली०) क्षीरेण पक्वं षष्टिकम्। दुग्ध-पक्व साठी चावलका भात। ग्रहयज्ञमें बुधग्रहको क्षीर-षष्टिक अन्नसे पूजना पड़ता है। (याज्ञवल्क्य)

क्षीरस (सं० पु०) क्षीरं स्यति, क्षीर-सो-क। क्षीरशर, दूध या दहीकी मलाई।

क्षीरसन्तानिका (सं० स्त्री०) क्षीरस्य सन्तानोऽस्त्यस्याः, क्षीरसन्तान-ठन्। दुग्धविकार, छेना। यह वृष्य, स्निग्ध और पित्त तथा वायुनाशक है। (राजवल्लभ)

क्षीरसमुद्र (सं० पु०) क्षीरतुल्यः स्वादुरसः समुद्रः। दुग्धसागर, दूधका समुद्र।

क्षीरसर्पिः (सं० पु०) क्षीरेण पक्वं सर्पिः। क्षीरघृत, दूधमें पकाया हुआ एक घी। क्षीरतैलकी भांति इसका पाक करना पड़ता है। क्षीरतैलमें तेल डालते हैं, परन्तु इसमें उसीकी बराबर घी छोड़ा जाता है। यह चक्षुके लिये अतिशय उपकारी है।
(सुश्रुत चिकित्सित ५ अ०) क्षीरतैल देखो।

क्षीरसागर (सं० पु०) क्षीरोदसमुद्र। (भागवत ८।५।११)

जैनशास्त्रानुसार इस मध्य लोकमें असंख्यात द्वीप और समुद्र हैं। उनमें क्षीरसागर नामका भी एक समुद्र है। इसका जल दूधकी तरह सफेद है और जब तीर्थं-कर भगवान् जन्म लेते हैं तब स्वर्गसे इन्द्र सपरिवार आकर इसी क्षीरसागरके जलसे सुमेरुपर्वत पर ले जा-कर उनका अभिषेक करता है।

क्षीरसागर पण्डित—हिल्लाजदीपिका नामक ज्योति-र्ग्रन्थकार।

क्षीरसागरसुता (सं० स्त्री०) क्षीरसागरस्य सुता, ६-तत्। लक्ष्मी।

क्षीरसार (सं० पु०) क्षीरं सरति कारणत्वेन प्राप्नोति,

क्षीर-स्ट कर्मख्यण्, यद्वा क्षीरस्य सारः, ६-तत्। १ नवनीत, नैनूं। २ छेना। क्षीरसार ईषत् श्लेष्मकर, गौल्य, पित्तघ्न, तर्पण और गुरु होता है। (राजनिघण्टु) इसका पर्याय—क्षीरस है।

क्षीरस्फटिक (सं० पु०) क्षीरवत् शुभ्रः स्फटिकः। स्फटिकविशेष, किसी किस्मका बिल्लोरी पत्थर।

क्षीरस्वामी—एक पण्डित। यह भट्ट ईश्वरस्वामीके पुत्र थे। इन्होंने क्षीरतरङ्गिणी नाम्नी अष्टाध्यायिवृत्ति और अमरकोषकी अमरकोषोद्घाटन नाम्नी टीकाकी रचना किया। एतद्व्यतीत इनका बनाया धातुपाठ, निपाताव्ययोपसर्गपाठ और लिङ्गसूत्र भी प्रचलित है। राजतरङ्गिणीमें कहा है—क्षीरस्वामी काश्मीरराज जयादित्यके अध्यापक थे। (राजतरङ्गिणी ४।४८८)

क्षीरहिण्डीर (सं० पु०) क्षीरस्य हिण्डीरः, ६-तत्। दूधका झाग।

क्षीरह्रद (सं० पु०) क्षीरपूर्णो ह्रदः, मध्यपदलो०। दुग्धपूर्ण ह्रद, दूधका झील।

क्षीरा (सं० स्त्री०) क्षीरः क्षीरवर्णोऽस्त्यस्याः, क्षीर-अच्। (अर्शादिभ्यो ऽच्। पा ५।२।१२७) काकोली। काकोली देखो।

क्षाराङ्ग (सं० पु०) सरलद्रव, सरल पेड़का दूध।

क्षीरालिका (सं० स्त्री०) दुग्धिका, दूधी।

क्षीराद (सं० पु०) दुग्धपोष्य शिशु, शीरखारा, दुधमुंहा।

क्षीराब्धि (सं० पु०) क्षीरस्य क्षारतुल्यस्य जलस्य अब्धिः, ६-तत्। क्षीरसमुद्र।

क्षीराब्धिज (सं० क्लो०) क्षीराब्धेः जायते, क्षीराब्धि-जन-ड। १ सामुद्रलवण, करकच। २ मुक्ता, मोती। (पु०) ३ चन्द्र। (त्रि०) ४ क्षीराब्धिसे उत्पन्न।

क्षीराब्धिजा (सं० स्त्री०) क्षीराब्धिज-टाप्। लक्ष्मी।

क्षीराब्धितनय (सं० पु०) क्षीराब्धेस्तनयः, ६-तत्। चन्द्र, चांद। पञ्चम वार समुद्र मन्थनमें क्षीराब्धिसे चन्द्र निकले थे।

क्षीराब्धितनया (सं० स्त्री०) क्षीराब्धेस्तनया, ६-तत्। लक्ष्मी।

क्षीरामय (सं० पु०) स्तन्यदोष, दूधकी बीमारी।

क्षीराम्बुधि (सं० पु०) क्षीरस्य अम्बुधिः, ६-तत्। क्षीरसमुद्र।

क्षीरालसक (सं० पु०) बालरोगविशेष, बच्चोंकी एक बीमारी। इसमें बच्चेको बदबूदार पानी-जैसा दस्त आता, मूत्र पीला और गाढ़ा पड़ जाता और ज्वर, अरोचक, तृष्णा, वमन, शुष्क उद्गार, जृम्भिका, अङ्गभङ्ग, अङ्गविक्षेप, वेपथु एवं भ्रमका वेग देखाता और घ्राण, आंख तथा मुख पक जाता है। धात्रीको उचित है कि वह शीघ्र ही बालकको वमन करा डाले। (वाभट)

क्षीराविका (सं० स्त्री०) क्षीरं अवति, क्षीर-अव-अण ततः ङीप् ततः स्वार्थे कन्-टाप् पूर्वह्रस्वश्च। क्षीरावी देखो।

क्षीरावी (सं० स्त्री०) क्षीरं अवति, क्षीर-अव्-अण-ङीप्। उपपदस०। दुग्धिका, दूधी। इसका संस्कृत पर्याय—ग्राहिणी, कच्छुरा, ताम्रमूला और मधुस्रवा है। सुश्रुतके मतमें क्षारावीका पत्र बकुलके पत्र-जैसा होता है। इसकी लता तोड़नेसे दूध निकलने लगता है। दुग्धिका देखो।

क्षीराह्व (सं० पु०) सरलवृक्ष, सर्वका पेड़।

क्षीराह्वय, क्षीराह्व देखो।

क्षीरिकन्द (सं० पु०) भूमिकुष्माण्ड, भुइं कुम्हड़ा।

क्षीरकषाय (सं० पु०) वटादि क्षीरिवृक्षोंका कषाय, बड़ वगैरह दूधिया पेड़ोंका काढ़ा।

क्षीरिका (सं० स्त्री०) क्षीरमस्त्यस्याः, क्षीर-ठन्-टाप्। १ वंशलोचन। २ दुग्धादिकृत पायस, दूध वगैरहकी खीर। यह दूध, नारियल, गोधूम आदिसे कई प्रकारकी बनती है। ३ क्षारविदारी। ४ राजादनीवृक्ष, खिरनी। ५ पिण्डखजूर। इसका संस्कृत पर्याय—राजादन, फलाध्यक्ष, राजातन, राजादनफल, मध्वक्ष, मधुका, क्षीरवृक्ष, पलाशी, मर्कटप्रिय, गुच्छस्कन्ध, श्लेष्मला, अतिपत्नी, वृषा, मौलिकाजाली, क्षीरिवृक्ष, वानरप्रिय, राजन्य, प्रियदर्शन, दृढ़स्कन्ध, कपीठ, वरादन, क्षीरी और कोमला है। क्षीरिकाका फल वृष्य, बलकर, स्निग्ध, शीतल, गुरु और मूर्छा, तृष्णा, भ्रान्ति, मत्तता, क्षयदोष तथा रक्तदोषनाशक है। फिर पक्क फल गुरु, विष्टम्भि, शीतल, कषाय, मधुर, अम्ल और अल्प परिमाणमें वायुप्रकोपकारी है। राजादनी देखो। ६ अश्वका गण्डस्थलान्तरभाग। ७ अश्वखुर मांस, घोड़ेके सुमका गोश्त।

चीरिणी (सं० स्त्री०) चीरं चीरसदृशो निर्यासोऽस्त्यस्याः, चीर-इनि ङीप्। १ स्वनामख्यातवृक्ष, खिरनी। इसका संस्कृत पर्याय—काञ्चनक्षीरी, कर्षणी, पटुकर्णिका, तिक्तदुग्धा, हैमवती, हिमदुग्धा, हिमवती, हिमाद्रिजा, पीतदुग्धा, यवचिञ्ची, हिमोद्भवा, हैमी और हिमजा है। चीरिणी तिक्त, शीतल, रेचक, पित्तज्वरमें अतिशय उपकारी और शोथ, क्रमिदोष तथा कफघ्न होती है। (राजनिघण्टु) २ वराहक्रान्ता। ३ कुटुम्बिनी। ४ गाम्भारी वृक्ष। ५ दुग्धिका, दूधी। ६ क्षीरकाकोली। ७ श्वेत-शारिवा, अनन्तमूल।

क्षीरिणीवन—कावेरी नदीतीरस्थ एक पवित्र स्थान। इसका वर्तमान नाम 'तिरुवदतुर' है। स्कन्दपुराणके ब्रह्मोत्तरखण्डमें चीरिणीवनका माहात्म्य वर्णित हुवा है—पुराकालको यहां वसिष्ठने तपस्या की थी। चीरिणीवनमें देवादिदेव महादेव रहते हैं। आज भी यहां शिवमन्दिर बना है।

चीरिप्ररोह (सं० पु०) वटाश्वत्थाद्यङ्कुर, बड़ पीपल आदिको कोपल।

क्षीरिवृक्ष (सं० पु०) १ क्षीरप्रधान वृक्षवर्ग, दूधिया पेड़ोंका समूह। इस वर्गके अन्तर्गत वट, गूलर, अश्वत्थ, पाकर और पाड़स पीपल पड़ता है। चीरिवृक्षोंका फल शीतल, कफपित्तहर, संग्राही, रुक्ष, कषाय और मधुर होता है। (मदनपाल) इनकी त्वक् शीतल, ग्राही और व्रण, शोथ तथा विसर्पनाशक है। क्षीरिवृक्षका पत्ता शीतल, कषाय, लघु, उदराध्माननिवारक, विष्टम्भ और कफ तथा रक्तपित्तनाशक है। फिर चीरिवृक्ष शीतल, कान्तिकर, रुक्ष, कषाय, स्तन्यदुग्धवृद्धिकारक, भग्नास्थिसंयोगकारी और मेद, विसर्प, शोथ तथा रक्तपित्त-नाशक है। (राजनिघण्टु)

२ उदुम्बरवृक्ष, गूलर।

क्षीरिशुङ्गा (सं० स्त्री०) चीरिवृक्ष वटादिका अविकाशित प्रवाल, दूधिया पेड़ोंकी कोपल।

क्षीरी (सं० पु०) चीरं क्षीरतुल्यनिर्यासोऽस्त्यस्य चीर-इनि। १ क्षीरीवृक्ष, खिर्नी। २ अर्कवृक्ष, मदार। ३ स्नुही-वृक्ष। ४ नन्दिवृक्ष। ५ दुग्ध पाषाण, खड़िया। ६ गोधूम, गेहूं। ७ वटवृक्ष, बड़, बरगद। ८ पायस, पक्वान्न-विशेष, कोई मिठाई। नारियलको लच्छा बनाके गोदुग्ध, शर्करा और गव्यघृतके साथ धीमी आंचसे पकाना चाहिये। इसीका नाम चीरी वा क्षीरिका है। यह स्निग्ध, शीतल, अतिशय पुष्टिकारक, गुरु, मधुररस, शुक्रवृद्धिकर और रक्तपित्त तथा वायुनाशक होता है। (भावप्रकाश, पूर्वखण्ड, प्रथमभाग)

क्षीरी (सं० स्त्री०) क्षीर अस्त्यर्थे अच्-ङीष्। १ सोम-लता। २ क्षीरकाकोली। ३ वंशलोचना।

चीरीश (सं० पु०) चीरिणां वृक्षाणां ईशः, ६-तत्। चीरकञ्चुकी, एक छोटा पेड़। इसका संस्कृत पर्याय—वरपर्ण, सुकन्दद, कुष्ठनाशन, वल्य, मूलक, मूला, खस-कन्द और कञ्चुकी है।

क्षीरेयी (सं० स्त्री०) चीर बाहुलकात् ढञ्, ततः ङीप्, यद्वा चीरेण ईं शोभां याति, या-क-ङीष्। पायस, परमान्न, दुधबरी।

क्षीरोद (सं० पु०) क्षीरमिव स्वादु उदकं यस्य, बहुव्री०। उदकस्य उदादेशः। (उदकस्योदः संज्ञायाम्। पा ७।३।५७ वार्तिक।) दुग्धसमुद्र। देव और दैत्यगणने मिलकर इस समुद्रको मथा और नानाविध रत्नादि लाभ किया था।

समुद्रमन्थन देखो।

क्षीरोदतनय (सं० पु०) क्षीरोदस्य तनयः, ६-तत्। चन्द्र। क्षीरोदसुत प्रभृति शब्दोंका भी यही अर्थ है।

चीरोदतनया (सं० स्त्री०) चीरोदस्य तनया, ६-तत्। लक्ष्मी। चीरोदसुता आदि शब्द भी इसी अर्थमें प्रयुक्त होते हैं।

क्षीरोदधि (सं० पु०) क्षीरस्य उदधिः, ६-तत्। क्षीरसमुद्र। (भागवत २।७२।३)

चीरोर्मि (सं० पु०) चीरस्य ऊर्मिः, ६-तत्। चीरसमुद्रका तरङ्ग। (रघु ४।२)

क्षीरौदन (सं० क्ली०) क्षीरेण उपसिक्तः ओदनः। (अन्नेन व्यञ्जनम्। पा २।१।३४) क्षीरपक्वान्न, दूधमें पकाया हुआ भात। (सुश्रुत उत्तर ४७ अ०)

क्षीव (सं० त्रि०) चीव-अच्। उन्मत्त, मतवाला। (रामायण ५।६०।१२)

चीवता (सं० स्त्री०) चीवस्य भावः, क्षीव-तल्-टाप्। उन्मत्तता, मतवालापन, पागलपना।

क्षु (सं० पु०-क्ली०) क्षुद बाहुलकात् डु। १ अन्न। क्षुडु। २ शब्दकारक, आवाज देनेवाला। (ऋक् ८।८७।२२) क्षुणोति हिनस्ति जीवान् क्षण-डु। ३ सिंह, शेर।

क्षुज्जनिका (सं० स्त्री०) राजिका, राई।

क्षुण (सं० पु०) क्षु-नक्। रीठाकरञ्जवृक्ष, रीठा।

क्षुणि (सं० स्त्री०) क्षु-नि। पृथिवी।

क्षुणी (सं० स्त्री०) क्षु-नि विकल्प ङीप्। पृथिवी, जमीन्।

क्षुस (सं० त्रि०) क्षुद् कर्मणि क्त। १ प्रहत, चोट खाये हुवा। २ अभ्यस्त, महावरा रखनेवाला। (माघ १।३२) ३ चूर्णीकृत, चूर चूर किया हुआ। (मार्कण्डेयपु० ८३।२४)

क्षुसक (सं० पु०) एक प्रकारका ढोल। यह शवको श्मशान ले जाते समय बजता है।

क्षुसमना: (सं० त्रि०) क्षुसं विहितं मनो यस्य, बहुव्री०। व्याकुलितचित्त, किसी कारणसे जिसका दिल घबरा गया हो।

क्षुत् (सं० स्त्री०) क्षु-क्विप् तुगागमश्च। १ क्षुत, छींक। २ किसी किस्मका धान। इसका संस्कृत पर्याय—वुलच्च, गोजिह्वा, गुन्द्रा, गुल्मा और गवेधुका है।

क्षुत् (सं० स्त्री०) क्षुध् सम्पदादित्वात् भावे क्विप्। क्षुधा, भूख। (मार्कण्डेयपु० ८।३५)

क्षुत (सं० पु०-क्ली०) क्षु भावे क्त। १ छिक्का, छींक। इसका संस्कृत पर्याय—क्षुत्, क्षुव, क्षुता, छिक्का और हाञ्चि है। क्षवथु देखो। उदान तथा प्राणके योग और मौलिके कफ स्रावसे जो शब्द निकलता, उसे विद्वान् क्षुत कहते हैं। (शार्ङ्गधर)

वसन्तराज-शाकुनमें छींकका फलाफल इस प्रकार बताया है—किसी कार्यके आरम्भ वा गमनकालको यदि छींक आये, तो उस कार्य वा यात्रासे विरत होना उचित है। कितने ही शुभ चिह्न क्यों न देख पड़े, क्षुत उन सबको नष्ट कर देता है। सकल समय और सकल कालको यह विघ्नकारक है। इस नियमको न मान जो व्यक्ति कार्य वा गमन करनेको प्रवृत्त होता, उसके कार्यमें अमङ्गल और गमनमें मरण आता है। आगे या दाहने कानके पास छींक होनेसे धनक्षय होता है। किन्तु पीछेकी छींक अच्छी है, उससे धन वृद्धि होती है। इसी प्रकार वाम कणके निकट छींक हानेसे सुखभोग और जय होता है। छींक आनेसे यथाक्रम यात्रामें बाधा, विघ्न, कलह, समृद्धि, कठिन रोग, रोगक्षय, अर्थलाभ और दीप्तिनाश कई फल मिलते हैं। पूर्वमुखो होकर या किसी व्यक्तिके बार बार छींकनेसे कोई बाधा नहीं पड़ती। वृद्ध, शिशु और कफाक्रान्तकी छींक निर्दोष होती है। परन्तु वृद्ध वा कफाक्रान्तके छींकसे भी स्वजनोंके अनिष्टकी सूचना मिलती है। भोजनके प्रथम छींक प्रशस्त नहीं और भोजनके अन्तकी कथञ्चित् प्रशस्त होते भी पीछे उसमें विघ्न पड़ जाता है।

(वसन्तराजशाकुन ३ प्रकरण)

गरुड़पुराणके मतमें अग्निकोणकी छींक होनेसे शोक तथा सन्ताप, दक्षिणको हानि, नैऋतकी शोक-सन्ताप, वायुकोणकी अन्नलाभ, उत्तरकी कलह, पश्चिमकी मिष्टान्नप्राप्ति और ईशानकोणकी छींक होनेसे मृत्यु होता है। (गरुड़पु० ६० अ०)

वर्षकृत्यके मतानुसार ऊर्ध्व दिक्की कार्यसिद्धि, पूर्वदिक् तथा अग्निकोणकी भय, दक्षिणकी अग्निभय, नैऋतकोणकी विवाद, पश्चिमदिक्की अर्थलाभ, वायुकोणकी उत्तम वस्त्र, गन्ध और उत्तरकी छींक होनेसे सुन्दरी अङ्गनाका लाभ होता है। किन्तु ईशानकोणको छींक होनेसे मरना पड़ता है। (वर्षकृत्य)

छींक आनेसे दूसरे व्यक्तिको "जीव" कहना पड़ता हैं। ऐसा न कहनेसे ब्रह्महत्याका पाप लगता है।

(तिथितत्त्व)

दाक्षिणात्योंका कहना है कि उपवेशन, शयन, दान, भोजन, वस्त्रपरिधान, कलह और विवाहमें क्षुत दोषजनक नहीं होता।

मुखको ढांपकर छींकना चाहिये। असंवृत मुखसे छींकने पर पाप पड़ता है। (विष्णुधर्मोत्तर)

क्षुतक (सं० पु०) क्षुताय साधुः, क्षुत-कन्। राजिका, रक्तसर्षप, राई।

क्षुतकरी (सं० स्त्री०) सर्पकङ्कालिका, सांपकी केंचुल।

क्षुता (सं० स्त्री०) छिक्किका, छींक।

क्षुताभिजनन (सं० पु०) क्षुतं अभिजनयति, क्षुत-अभि-जन-णिच्-ल्यु। कृष्णसर्षप, राई।

क्षुति (सं॰ स्त्री॰) छिक्का, छींक।

क्षुत्करी, क्षुतकरी देखो।

क्षुत्क्षाम (सं॰ त्रि॰) क्षुधा क्षामः, ३-तत्। क्षुधासे क्षीण, भूखका मारा। (पञ्चतन्त्र)

क्षुत्पिपासा (सं॰ स्त्री॰) क्षुत् च पिपासा च, इतरेतर-द्वन्द्व। क्षुधा और तृष्णा, भूख प्यास।

क्षुद् (सं॰ स्त्री॰) क्षुध् सम्पदादित्वात् भावे क्विप्। क्षुधा, भूक। (विष्णुपु॰ १।५।३९)

क्षुद (सं॰ पु॰) क्षुद्-क। चावलकी कनकी।

क्षुद्र (सं॰ त्रि॰) क्षुद्-रक्। स्फायितञ्चिवञ्चिशकिक्षिपि-क्षुदि-सृपीत्यादि। उण् २।१३। १ कृपण, कंजूस। २ अधम, कमीना। (कुमार १।१२) ३ तुच्छ, नाचीज। (गीता २।३) ४ क्रूर, खोटा। ५ अल्प, थोड़ा। (भारत ३।१०।२४) ६ दरिद्र, गरीब। (पु॰) ७ कैटर्य, एक नींव। ८ रक्त पुनर्नवा। ९ तण्डुलावयव, चावलका कन। १० डड्डु, लुकाट। ११ कृमिशङ्ख, घोंघा।

क्षुद्रक (सं॰ त्रि॰) क्षुद्र एव स्वार्थे कन्। १क्षुद्र, छोटा, छोटा। (पु॰) २ कोलपरिमाण, एक तोलेकी तौल। ३ शाकविशेष, कोई सब्जी। ४ सूर्यवंशीय प्रसेनजित्के पुत्र। (भागवत ९।१२।१४) युद्धप्रिय क्षत्रियजातियविशेष। (भारत २।५२।१५) क्षुद्रक लोग जहां रहते उसको क्षौद्रक कहते हैं। टलेमिने इस जातिका क्षुद्रके (Oxydrakoi) नामसे उल्लेख किया है।

क्षुद्रकण्टकारी (सं॰ स्त्री॰) ह्रस्वकण्टकारी, छोटी कटैया।

क्षुद्रकण्टकी (सं॰ स्त्री॰) क्षुद्रं कण्टकं यस्याः, बहुव्री॰ गौरादित्वात् ङीष्। बृहती, भटकटैया।

क्षुद्रकण्टा (सं॰ स्त्री॰) कण्टकारी, कटैया।

क्षुद्रकण्टारिका (सं॰ स्त्री॰) अग्निदमनीवृक्ष।

क्षुद्रकण्टिका (सं॰ स्त्री॰) कण्टकारी, कटैया।

क्षुद्रकन्द (सं॰ पु॰) शृङ्गाटक, सिंघाड़ा।

क्षुद्रकमानस (सं॰ क्ली॰) काश्मीरका एक सरोवर। सुश्रुत लिखते हैं कि उस तलावके पास गायत्र, त्रैष्टुभ, पाङ्क्त, जागत और शाङ्कर कई प्रकारका सोम मिलता है। (सुश्रुत चि॰ २९ अ॰)

क्षुद्रकम्बु (सं॰ पु॰) क्षुद्रश्चासौ कम्बुश्चेति, कर्मधा॰। १ क्षुद्रकारवेल्ली, छोटो करेली। २ क्षुद्रशङ्ख, छोटा संख।

क्षुद्रकल्प (सं॰ पु॰) एक सामान्य वैदिकक्रिया।

क्षुद्रकारलिका (सं॰ स्त्री॰) क्षुद्रा चासौ कारलिकाचेति, कर्मधा॰। क्षुद्रकारवेल्ली, छोटो करेली।

क्षुद्रकारवेल्ली (सं॰ स्त्री॰) क्षुद्रा चासौ कारवेल्ली चेति, कर्मधा॰। १ ह्रस्व कारवेल्ल, छोटा करेला। इसका संस्कृत पर्याय—कुड़ड़ुची, स्थीफलिका, प्रतिपत्रफला, सुषवी, कारवी, बहुफला, क्षुद्रकारलिका और कन्दफला है। करेली कड़वी, गर्म, तीती, रुचिकर, दीपन, रक्तपित्त दोषनाशक और पथ्य होती है। इसकी जड़ अर्शरोग-नाशक, कोष्ठपरिष्कारक और विषापहारक है। (राजनिघण्ट)

क्षुद्रकारालिका, क्षुद्रकारवेल्ली देखो।

क्षुद्रकुलिश (सं॰ क्ली॰) वैक्रान्तमणि, एक कीमती पत्थर।

क्षुद्रकुष्ठ (सं॰ क्ली॰) क्षुद्रञ्च तत् कुष्ठञ्चेति, कर्मधा॰। स्वल्प कुष्ठरोग, हलकासा कोढ़। यह एकादशविध कुष्ठोंके अन्तर्गत एक कोढ़ है। यथा—स्थूला, रुचा, महाकुष्ठ, एककुष्ठ, चर्मदल, विसर्प, परिसर्प, सिध्म, विचर्चिका, किटिम, पामा और रकसा। (भावप्रकाश)

क्षुद्रक्षुर (सं॰ पु॰) क्षुद्रक्षुरस्येव आकारोऽस्यस्य, क्षुद्र-क्षुर-अच्। क्षुद्रगोक्षुर, छोटो गोखरू।

क्षुद्रखदिर (सं॰ पु॰) क्षुद्र खदिरवृक्ष, छोटे खैरका पेड़।

क्षुद्रखर्जूरी (सं॰ स्त्री॰) भूखर्जूरिका, छोटी खजूर।

क्षुद्रगुड़ (सं॰ पु॰) स्वल्पमल गुड़, थोड़ा मैला गुड़।

क्षुद्रगोक्षुरक (सं॰ पु॰) क्षुद्रश्चासौ गोक्षुरश्चेति, कर्मधा॰ ततः स्वार्थे कन्। ह्रस्वगोक्षुर, छोटो गोखरू। इसका संस्कृत पर्याय—त्रिकण्ट, कण्ट, षड़ङ्ग, बहुकण्टक, क्षुर, गोकण्टक, कण्टफल, पलङ्कषा, क्षुद्रक्षुर, भक्षटक, स्थलशृङ्गाटक, इक्षुगन्ध और स्वादुकण्ट है। क्षुद्रगोक्षुरक अतिशय शीतल, बलकारी, मधुर, बृंहण और कृच्छ्र, अश्मरी तथा मेहरोगनाशक होता है। (राजनिघण्ट)

क्षुद्रगोधूम (सं॰ पु॰) सूक्ष्मगोधूम, पतला गेहूं।

क्षुद्रघण्टिका (सं॰ स्त्री॰) क्षुद्रा घण्टिका, कर्मधा॰। अलङ्कारविशेष, एक गहना। यह एक प्रकारकी करधनी है, जिसमें छोटे छोटे घुंघरू लगे रहते हैं। पर्याय—

किङ्किणी, क्षुद्रघण्टी, प्रतिसरा, किङ्किनीका, कङ्कणी, कङ्कणिका, क्षुद्रिका, और घर्घरी है।

क्षुद्रघण्टी, क्षुद्रघण्टिका देखो।

क्षुद्रचोली (सं० स्त्री०) चिविल्लिका, चिल्लीशाक।

क्षुद्रचन्दन (सं० क्ली०) रक्तचन्दन, लालचन्दन। पर्याय—रक्ताङ्ग, तिलपर्ण, रक्तसार।

क्षुद्रचम्पक (सं० पु०) नागचम्पक, नागेश्वर चंपा।

क्षुद्रचिभंटा, क्षुद्रचिर्भिटा देखो।

क्षुद्रचिर्भिटा (सं० स्त्री०) क्षुद्रा चासौ चिर्भिटा चेति, कर्मधा०। गोपालककर्कटीलता, एक जंगली ककड़ी।

क्षुद्रक्षुप (सं० पु०) स्वनामख्यात ह्रस्व क्षुप, एक छोटी झाड़ी। यह—मधुर, कटु, उष्ण, कषाय, दीपन, शूल, गुल्म, अर्श तथा विवन्धघ्न होती है।

क्षुद्रचूड़ (सं० पु०) क्षुद्रा चूड़ा यस्य, बहुव्री०। सचूड़ क्षुद्रपक्षी, चोटीदार छोटी चिड़िया। पर्याय—शवमल्ल, गूथलक्त, साक्षिक है।

क्षुद्रजन्तु (सं० पु०) क्षुद्रश्चासौ जन्तुश्चेति, कर्मधा०। १ शतपदी, कनखजूरा। २ क्षुद्रप्राणिमात्र, कीड़ा-मकोड़ा। जिन सकल जन्तुवोंकी अस्थि नहीं होती अथवा जो सकल जन्तु अतिशय क्षुद्र हैं, उनका नाम क्षुद्रजन्तु होता है। किंवा जिस श्रेणीके एक शत जन्तुओंको अञ्जलिमें रख कर ले जा सकते, उन्हें क्षुद्रजन्तु कहते हैं। कोई कोई नकुल पर्यन्त छोटे जन्तुको क्षुद्रजन्तु बतलाते हैं।

क्षुद्रजम्बू (सं० स्त्री०) क्षुद्रा चासौ जम्बू चेति, कर्मधा०। जलजम्बू, जंगली जामान। यह—संग्रहिणी, रुक्ष, कफ, पित्त तथा अस्रदाहजित् होता है।

क्षुद्रजातीफल (सं० क्ली०) क्षुद्रञ्च तत् जातीफलञ्चेति, कर्मधा०। काष्ठामलक, कठऔंरा।

क्षुद्रजीर (सं० पु०) क्षुद्रश्चासौ जीरश्चेति, कर्मधा०। सूक्ष्मजीरक, छोटा जीरा।

क्षुद्रजीवा (सं० स्त्री०) क्षुद्रा चासौ जीवा चेति, कर्मधा०। जीवन्तीलता।

क्षुद्रज्ञान (सं० त्रि०) १ मन्दबुद्धि। (क्ली०) २ अल्पज्ञान।

क्षुद्रचर (सं० त्रि०) क्षुद्रं चरति क्षुद्र-चर-अच् अलुक्।

सं०। मन्दगामी, धीरे धीरे चलनेवाला। (भागवत ३।२८।१३)

क्षुद्रतण्डुल (सं० पु०) विड़ङ्ग, विड़ंग।

क्षुद्रता (सं० स्त्री०) क्षुद्रस्य भावः, क्षुद्र-तल्-टाप्। क्षुद्रत्व, ओछापन

क्षुद्रतुलसी (सं० स्त्री०) अर्जक, क्षुद्रपत्र तुलसीवृक्ष, बबुई तुलसी।

क्षुद्रत्व (सं० क्ली०) क्षुद्र त्व। १ अल्पता, ओछापन। २ क्रूरता, खोटाई। ३ अधमत्व, कमीनापन। ४ दरिद्रता, गरीबी।

क्षुद्रदंशिका (सं० स्त्री०) दंशी, छोटा मच्छड़।

क्षुद्रदंशी, क्षुद्रदंशिका देखो।

क्षुद्रदर्भ (सं० पु०) शुक्लदर्भ, सफेद कुश।

क्षुद्रदुरालभा (सं० स्त्री०) स्वल्पदुरालभाक्षुप, छोटा लटजीरा। पर्याय—मरुस्था, मरुसम्भवा, विशारदा, अजभक्ष्या, अजादनी, उष्ट्रभक्षिका, कषाया, फणिह्वत्, ग्राहिणी, करभप्रिया, करभादनिका है। यह—मधुर, अम्ल, पारदशोधनकारक; ज्वर, कुष्ठ, श्वास, कास तथा भ्रान्तिनाशक होता है।

क्षुद्रदुस्पर्शा (सं० स्त्री०) अग्निदमनीवृक्ष।

क्षुद्रदृष्टि (सं० स्त्री०) क्षुद्रा चासौ दृष्टिश्चेति, कर्मधा०। अल्पदर्शन, ओछी निगाह।

क्षुद्रद्रु (सं० पु०) कुमरिचवृक्ष, लालमिर्चका पेड़।

क्षुद्रधात्री (सं० स्त्री०) कर्कटवृक्ष, कांकरोल।

क्षुद्रधान्य (सं० क्ली०) कुधान्य अपरनाम तृणधान्य, घासका अनाज। गुण—ईषदुष्ण, कषाय, मधुर, कटुपाक, लघु, लेखन गुणयुक्त, रुक्ष, क्लेदशोषक, वायुवृद्धिकर, मल तथा मूत्र रुद्धकारी, पित्त-रक्त-कफनाशक। (भावप्रकाश)

क्षुद्रधान्यमण्ड (सं० पु०-क्ली०) कुधान्यकृत मण्ड, कांगनी, चेना या कोदा-जैसे कुधानका मांड़। गुण। वातहर।

कुधान्याम्ल (सं० क्ली०) क्षुद्रधान्यकृत काञ्जिकविशेष, कुधानकी कांजी। यह वातल, पित्तकारक, प्रतिश्याय आदिका कोपन, श्लीपद तथा गुल्म उठानेवाला होता है

क्षुद्रनासिक (सं० त्रि०) क्षुद्रा नासिका यस्य, बहुव्री०। नतनासिक, नकबैठा।

क्षुद्रपञ्चक (सं० पु०) स्वल्पपञ्चमूल।

क्षुद्रपति (सं० पु०) कुवेर।

क्षुद्रपत्र (सं० पु०) १ श्वेतपुनर्नवा। २ शुक्लदर्भ, सफेद कुस।

क्षुद्रपत्रा (सं० स्त्री०) क्षुद्रं पत्रं यस्याः, बहुव्री० ततः टाप्। १ चाङ्गेरी, अमलोनी। २ लघुब्राह्मी।

क्षुद्रपत्रिका (सं० स्त्री०) श्वेतपुनर्नवा।

क्षुद्रपत्री (सं० स्त्री०) क्षुद्रं पत्रं यस्याः, बहुव्री० ततः ङीष्। वचा, बच।

क्षुद्रपनस (सं० पु०) १ लकुचवृक्ष, लुकाठका पेड़। २ क्षुद्रपनस फल, छोटा कटहल।

क्षुद्रपर्ण (सं० पु०) क्षुद्रं पर्णं यस्य, बहुव्री०। १ अर्जकवृक्ष, बबुई तुलसी। (त्रि०) क्षुद्रपत्रयुक्त, छोटी पतियोंवाला।

क्षुद्रपाटला (सं० स्त्री०) मुष्ककवृक्ष, मोखेका पेड़।

क्षुद्रपाषाणभेद (सं० पु०) क्षुद्रपाषाणभेदा देखो।

क्षुद्रपाषाणभेदा (सं० स्त्री०) ह्रस्वपाषाणभेदक्षुप, छोटा पथरचटा। गुण—व्रणकृत्, अश्मरोघ्न।

क्षुद्रपिप्पली (सं० स्त्री०) वनपिप्पली, जङ्गली पीपल।

क्षुद्रपृषती (वै० स्त्री०) सूक्ष्मविचित्र विन्दुयुक्त मृगी। (वाजसनेयसंहिता २४.२)

क्षुद्रपोतिका (सं० स्त्री०) क्षुद्रोपोदकी, छोटी पोय।

क्षुद्रप्राण (सं० त्रि०) क्षुद्राः प्राणा यस्य, बहुव्री०। अल्पप्राण, बेदम, थोड़ेमें ही मर जानेवाला।

क्षुद्रफल (सं० पु०) क्षुद्रं फलमस्य, बहुव्री०। जीवनवृक्ष।

क्षुद्रफलक (सं० पु०) क्षुद्रं फलं यस्य, बहुव्री० ततः विकल्पे कप्। जीवनवृक्ष।

क्षुद्रफला (सं० स्त्री०) १ इन्द्रवारुणीलता, ककड़ी। २ गोपालकर्कटिका, जंगली ककड़ी। ३ कण्टकारी, कटैया। ४ अग्निदमनी। ५ भूमिजम्बू, कठ जामुन।

क्षुद्रफेनी (सं० स्त्री०) देशावली-वर्णित एक नदी। यह मेघना नदीसे दो योजन पूर्वको प्रवाहित है। आजकल इसको छोटीफेनी कहते हैं।

क्षुद्रबुद्धि (सं० त्रि०) क्षुद्रा बुद्धिर्यस्य, बहुव्री०। अल्पज्ञानविशिष्ट, कमसमझ।

क्षुद्रबृहती (सं० स्त्री०) क्षुद्रा चासौ बृहती चेति, कर्मधा० छोटी कटैया।

क्षुद्रभण्टाकी (सं० स्त्री०) बृहतीक्षुप, भटकटैया।

क्षुद्रमत्स्य (सं० पु०) क्षुद्रश्चासौ मत्स्यश्चेति। स्वल्पमत्स्य, सुरलादि, छोटी मछली। यह मधुर, त्रिदोषनाशक, लघुपाक, रुचिकारक और बलजनक है। (भावप्रकाश)

क्षुद्रमाता (सं० स्त्री०) १ श्वेतकण्टकारी, सफेद कटैया। २ क्षुद्रबृहती, छोटी कटैया।

क्षुद्रमीन (सं० पु०) जनपदविशेष, एक मुल्क। (बृहत्संहिता १४। २४) पुस्तकान्तरमें क्षुद्रमीन पाठ है।

क्षुद्रमुस्ता (सं० स्त्री०) कशेरुका, कसेरू।

क्षुद्रमूषिका (सं० स्त्री०) अञ्जनिका।

क्षुद्रमोटरक (सं० पु०) टङ्कद्वय, २ तोला।

क्षुद्रमोरट (सं० पु०) ह्रस्वमोरट, हलकी किदार।

क्षुद्ररस (सं० पु०) अल्परस, थोड़ा अर्क। (भागवत ५।१३।१०)

क्षुद्ररसा (सं० स्त्री०) तिक्त गुञ्जालता।

क्षुद्ररोग (सं० पु०) क्षुद्रश्चासौ रोगश्चेति, कर्मधा०। क्षुद्रव्याधि, छोटी बीमारी। सुश्रुतके मतमें क्षुद्ररोग चवालीस प्रकारका होता है—१ अजगल्लिका, २ यवप्रख्या, ३ अन्धालजी, ४ विवृता, ५ कच्छपिका, ६ वल्मीक, ७ इन्द्रवृद्धा, ८ पनसिका, ९ पाषाणगर्दभ, १० जालगर्दभ, ११ कक्षा, १२ विस्फोटक, १३ अग्निरोहिणी, १४ चिप्य, १५ कुनख, १६ अनुशयी, १७ विदारिका, १८ शर्करार्बुद, १९ पामा, २० विचर्चिका, २१ रकसा, २२ पाददारिका, २३ कदर, २४ अलस, २५ इन्द्रलुप्त, २६ दारुण, २७ अरुंषिका, २८ पलित, २९ मसूरिका, ३० यौवनपिड़का, ३१ पद्मिनीकण्टक, ३२ जतुमणि, ३३ मशक, ३४ चर्मकील, ३५ तिलकालक, ३६ न्यच्छ, ३७ व्यङ्ग, ३८ परिवर्तिका, ३९ अवपाटिका, ४० निरुद्धप्रकश, ४१ निरुद्धगुद, ४२ अहिपूतन, ४३ वृषणकच्छू, ४४ गुदभ्रंश।

१ अजगल्लिका—रोग बालकोंके शरीरमें हुवा करता है। कफ और वायुसे इसकी उत्पत्ति है। अजगल्लिका देखनेमें मुद्ग-जैसी चिक्कण ग्रन्थियुक्त होती है। इसका वर्ण चर्मके वर्णसे मिलता है। यह अतिशय यातनादायक नहीं है।

२ यवप्रख्या—क्षुद्र क्षुद्र व्रणविशेष हैं। इसकी आकृति यव जैसी अति कठिन तथा ग्रन्थियुक्त और शरीरस्थ मांसमें लिप्त होती है। कफ और वायुसे इसका जन्म है।

३ अन्धालजी—शरीरमें घन तथा सन्निविष्ट होकर उठता है। इसका आकार गोल रहता और इसमें अल्प-परिमाणसे पूय पड़ता है। कफ और वायु इसकी उत्पत्तिका कारण है।

४ विवृता—जातीय व्रणका मुख कुछ बड़ा होता और पक्के गूलर-जैसा आकार आता है। इसमें पपरी बहुत पड़ती है। इसका अवयव गोल और उत्पत्तिका कारण पित्त है।

५ कच्छपी—कफ तथा वायुसे उत्पन्न होती और कच्छपकी तरह धीरे धीरे उन्नत हो पांच या छह ग्रन्थियुक्त बनती है। यह अतिशय कष्टदायक है।

६ वल्मीकरोग—हस्त, पादतल, सन्धिस्थान, ग्रीवादेश तथा जत्रुके ऊर्ध्वभागमें वल्मीककी भांति क्रमशः बढ़ कर ग्रन्थियुक्त होता है। इसकी चारों ओर छोटे छोटे व्रण उठ आते हैं। उन व्रणोंसे अतिशय यातना, दाह, कण्डु और रस निर्गत होता है। वायु, पित्त और कफ इसकी उत्पत्तिका कारण है।

७ इन्द्रवृद्धा—इसकी आकृति पद्मबीज-जैसी और वायु तथा पित्तसे उत्पत्ति है। इसकी चारों ओर भी छोटी छोटी फुनसियां पड़ जाती हैं।

८ पनसिका—वायु तथा कफसे उठती और आकारमें शालूक-जैसी रहती है। इस प्रकारके फोड़े पीठ और कानकी चारों ओर होते हैं। पनसिका अतिशय यातनादायक है।

९ पाषाणगर्दभ—कफ तथा वायुसे उत्पन्न होता और हनुके सन्धिस्थानमें ही उठता है। यह अतिशय कठिन और अल्प वेदनादायक होता है।

१० जालगर्दभ—पित्त और कफसे उत्पन्न होता है। यह व्रण पकने नहीं आता और दाह तथा ज्वरको लाता है। अपेक्षाकृत जालगर्दभका आकार कुछ बड़ा होता है। यह अल्प परिमाणमें ही उपजता है।

११ कक्षा—पित्त बिगड़नेसे बाहु, पार्श्व, स्कन्ध-देश वा कक्षदेशमें कृष्णवर्ण वेदनायुक्त एक प्रकारका फोड़ा निकल आता है। इसीका नाम कक्षा है।

१२ विस्फोटक—कफ और वायु कुपित होने पर सर्व शरीर वा शरीरके किसी अवयवमें अग्निदग्ध-जैसा निकलनेवाला स्फोटक विस्फोटक कहलाता है। इससे ज्वर आया करता है।

१३ अग्निरोहिणी—मांसभेदक अग्निकी भांति अन्तर्दाहकर जो फोड़ा कक्षाप्रदेशमें उठ आता, वही अग्निरोहिणी कहा जाता है। इसकी उत्पत्ति सन्नि-पातसे है। इससे अतिशय ज्वर आता और सप्ताह वा १२ दिनके मध्य रोगी मर जाता है। अग्निरोहिणी असाध्य है।

१४ चिप्य—चलती बोलीमें बिसहरी कहलाता है। वायु तथा पित्त बिगड़नेसे नखके मांसमें यह रोग उत्पन्न होता है। चिप्य पक जाता और वेदना तथा दाह लगता है। इसको क्षतरोग वा उपनख भी कहते हैं।

१५ कुनख—किसी प्रकार आघात लगने पर कृष्ण-वर्ण, रूक्ष और खर पड़नेवाला नख कुनख कहलाता है। इसका अपर नाम कुलीन है।

१६ अनुशयी—जिस व्रणका अभ्यन्तरभाग गभीर और बाहरी भाग अल्पपरिमाण विस्तृत आता, वह अनुशयी कहलाता है। इसका वर्ण चर्मवर्ण सदृश होता है। अनुशयी उपरिभागमें तो समभाव रहता, किन्तु भीतर ही भीतर पक कर सूखने लगता है।

१७ विदारिका—कक्षादेशमें बगलके जोड़ पर लाल बिलारीकन्द-जैसा गोल गोल उठनेवाला गांठ विदा-रिका कहलाती है। यह वायु, पित्त और कफसे उत्पन्न होती है।

१८ शर्करार्बुद—श्लेष्मा, मेद और वायु मांस-शिरा वा स्नायुमें जाने पर एक ग्रन्थि उठता है। गांठ फूट जाने पर उससे मधु, घृत वा वसा-जैसा रस निक-लता है। इससे वायु बढ़ कर मांस सुखाता और ग्रन्थि-युक्त शर्करा उत्पादन करता है। शिरासे अधिक परि-माणमें नाना वर्ण दुर्गन्ध तथा क्लेदयुक्त रक्तस्राव होता है। इसीका नाम शर्करार्बुद है।

१८ पामा, २० विचर्चिका और २१ रकसा कुष्ठके मध्य परिगणित है। कुष्ठ देखो।

२२ पाददारिका—अतिशय भ्रमणशील व्यक्तिके दोनों पद अति रूक्ष होने पर वायुके प्रकोपसे पावोंके तलवे फट जाते हैं। इसीका नाम पाददारिका (बिवांई) है। इसमें बहुत ही दर्द उठा करता है।

२३ कदर, २४ अलस और २५ इन्द्रलुप्त है।

इनके लक्षण कदर, अलस और इन्द्रलुप्त शब्दमें देखो।

२६ दारुण—कफ और वायुके प्रकोपसे केशके स्थानमें व्रण उत्पन्न होता है। यह फोड़ा बहुत रूखा लगता है। इसीका नाम दारुण है।

२७ अरुंषिका—रक्त, कफ और क्रमि कुपित होने पर मनुष्यके मस्तक पर बहु क्लेद तथा बहु मुखयुक्त जो फोड़े उठते, उन्हें अरुंषिका कहते हैं।

२८ पलित—पित्त और शरीरकी उष्णता, क्रोध, शोक तथा परिश्रम द्वारा शिरस्थ हो कर बाल पका डालती है। इसीका नाम पलितरोग (गंज) है।

२९ मसूरिका—दाहज्वर तथा यातनादायक, ईषत् पीतयुक्त और ताम्रवर्ण जो सकल व्रण शरीर वा मुखमें उठते, उनको मसूरिका (मुहांसा) कहते हैं।

३० यौवनपिड़का—युवकोंके मुखमण्डलमें कील-दार जो फुनसियां निकल आतीं, यौवनपिड़का कह-लाती हैं। वायु, कफ और रक्तसे इसकी उत्पत्ति है। यौवनपिड़का मुखशोभाको हानि पहुंचाती है।

३१ पद्मिनीकण्टक—पद्मके कण्टक-जैसा गोलाकार होता है। इसका मण्डल पाण्डुवर्ण लगता है। कफ और वायुसे पद्मिनीकण्टक उठा करता है।

३२ जतुमणि—ईषत् रक्तवर्ण, गोलाकार तथा कोमल रहता है। इसमें किसी प्रकारकी यातना नहीं होती।

३३ मशक—मनुष्यके शरीरमें उड़द-जैसा काला, शरीरसे ईषत् उन्नत, वेदनाहीन और चिरस्थायी जो व्रण देख पड़ता वही मशक ठहरता है।

३४ चर्मकील—चर्मकील देखो।

३५ तिलकालक—शरीरके साथ समतल पर स्थित, वेदनाहीन और कृष्णवर्ण जो तिलचिह्न मनुष्यके शरीर-में देखा जाता, वही तिलकालक कहलाता है। वायु, पित्त और कफके उद्रेकसे इसकी उत्पत्ति है।

३६ न्यच्छ—छोटा या बड़ा, श्यामवर्ण वा शुक्लवर्ण, गोलाकार, वेदनाहीन और शरीरके साथ समकाल-जात जो चिह्न मनुष्यके शरीरमें देख पड़ता, उसीका नाम न्यच्छ है।

३७ व्यङ्ग—पित्तसे युक्त, वायु, क्रोध तथा परिश्रमसे कुपित हो कर मुखमण्डलमें गोलाकृति चिह्न उत्पादन करता है। इसीका नाम व्यङ्ग है। व्यङ्गका अवयव क्षुद्र और मुख कृष्णवर्ण होती है।

३८ परिवर्तिका—सकल शरीरसञ्चारी वायु मर्दन, पीड़न वा अत्यन्त अभिघातप्रयुक्त पुंचिह्नका चर्म आश्रय करने पर चर्म सिकुड़ते और मणिके नीचे तथा कोषके ऊपर ग्रन्थि जैसा बढ़ता जाता है। इसीको परि-वर्तिका कहते हैं। इसमें ज्वाला और वेदना उठती है। कभी कभी परिवर्तिका पक तक जाती है। यह दो प्रकारकी है—वायुजन्य और आगन्तुक। श्लेष्माजात परिवर्तिका कण्डुयुक्त और कठिन होती है।

३९ अवपाटिका—अप्रशस्तयोनि रमणी वा बालिका स्त्रीमें उपगत होने, हस्तादिके अभिघातसे बलपूर्वक पुंचिह्नका चर्म उठ जाने या मर्दन, पीड़न और शुक्र-वेगके आघात हेतु चमड़ा छिलनेसे अवपाटिका कह-लाती है।

४० निरुद्धप्रकश—जब पुंचिह्नका चर्म वायुयुक्त हो कर मणिस्थानको आश्रय करता, और मणिस्थान आच्छादित हो मूत्रस्रोत बन्द करता तब मणिस्थान विदीर्ण न होते मन्दधारामें प्रस्राव निर्गत होता है। इसीका नाम निरुद्धप्रकश है।

४१ निरुद्धगुद—मलवेग धारण करनेसे वायु प्रति-हत होकर गुह्यदेश आश्रय करता और मलनिर्गमका प्रधान स्रोत रुकता है। इसमें बड़े कष्टसे पुरीष उतरता है। इसीका नाम निरुद्धगुद है। निरुद्धगुद अतिशय कष्टकर होता है।

४२ अहिपूतन—अहिपूतन देखो।

४३ वृषणकच्छु—मुष्क धौत वा परिष्कृत न होनेसे उसमें मैल जमता है। पीछे घर्म आनेसे जब क्लेदयुक्त होता, कण्डू उठने लगती है। उसको खुजलानेसे फोड़ा

पड़ जाता और रक्त निकल आता है। इसीका नाम प्रषणकच्छ है। यह श्लेष्मा और वायुके प्रकोपसे उठती है।

४४ गुदभ्रंश—रुक्ष और दुर्बल व्यक्तिके गुदद्वारका मांस कांखाकूंखी और अतीसारसे बाहर निकल आता है। इसीका नाम गुदभ्रंश है। (सुश्रुत निदानस्थान १३ अ०)

क्षुद्रल (सं० त्रि०) क्षुद्राः क्षुद्ररोगाः सन्त्यस्य, क्षुद्र-लच्। सिध्मादिभ्यश्च। पा ५।२।९७। क्षुद्ररोगयुक्त, जिसके छोटीमोटी बीमारी रहे।

क्षुद्रव (सं० पु०) इक्ष्वाकुवंशीय प्रसेनजित्के पुत्र।

क्षुद्रवंश (सं० स्त्री०) वराहक्रान्ता।

क्षुद्रवज्रक (सं० क्ली०) वैक्रान्तमणि।

क्षुद्रवर्णा (सं० स्त्री०) वरटा।

क्षुद्रवर्षाभू (सं० स्त्री०) रक्तपुनर्नवा।

क्षुद्रवल्ली (सं० स्त्री०) मूलपोती, कच्ची मूली।

क्षुद्रवारुणी (सं० स्त्री०) तुषधान्यकृत वारुणीमद्य, एक शराब। कङ्गु आदि धान्यको यत्नसे कूटके और उसकी भूसी निकाल कर आकोट तक वा किसी अम्लमें डाल देना चाहिये। फिर उसका अर्क निकालनेसे क्षुद्रवारुणी बनती है। यह बल और क्षुधा आदिको बढ़ाती है। (अर्कप्रकाश चिकित्सा)

क्षुद्रवार्ताकिनी (सं० स्त्री०) श्वेतकण्टकारी, सफेद कटैया।

क्षुद्रवार्ताकी (सं० स्त्री०) वृहती, कटैया।

क्षुद्रवास्तूकी (सं० स्त्री०) क्षुद्र चिल्लीशाक।

क्षुद्रवीन—एक देश। (मार्कण्डेयपु० ५८।४२)

क्षुद्रशङ्ख (सं० पु०) शङ्खविशेष, एक छोटा संख। इसका पर्याय—शङ्खनख, शङ्खनक, क्षुल्लक, और शम्बूक है। यह कटु, तिक्त, दीपन और शूलनाशक होता है। (राजनिघण्टु)

क्षुद्रशणपुष्पिका (सं० स्त्री०) ह्रस्व शणपुष्पीविशेष, एक छोटी सनई। यह तिक्त, वम्य और रसनियामक है। (राजनिघण्टु)

क्षुद्रशर्करा (सं० स्त्री०) यावनाली शर्करा, जुआरकी चीनी। यह गौल्य, किञ्चित् उष्ण, अति तिक्त, अतिपिच्छल, स्निग्ध, रुच्य, सर, दाहघ्न और वात, पित्त तथा रक्तदोषकर होती है। (राजनिघण्टु)

क्षुद्रशर्करिका, क्षुद्रशर्करा देखो।

क्षुद्रशार्दूल (सं० पु०) चित्रकव्याघ्र, चीता।

क्षुद्रशीर्ष (सं० पु०) क्षुद्रं शीर्षं यस्य, बहुव्री०। १ मयूरशिखा नामक वृक्ष। (त्रि०) २ क्षुद्रशीर्षयुक्त।

क्षुद्रशुक्ति (सं० स्त्री०) ह्रस्वशुक्ति, छोटी सीप।

क्षुद्रशुक्तिका, क्षुद्रशुक्ति देखो।

क्षुद्रशृगाल (सं० पु०) लोमड़ी।

क्षुद्रश्यामा (सं० स्त्री०) कृष्ण कटभीवृक्ष। कटभी देखो।

क्षुद्रश्लेष्मान्तक (सं० पु०) ह्रस्वश्लेष्मान्तकवृक्ष, छोटा लसोड़ा।

क्षुद्रश्वास (सं० पु०) क्षुद्रश्चासौ श्वासश्चेति, कर्मधा०। श्वासरोगविशेष, दमेकी एक बीमारी। यह पञ्चविध श्वासके अन्तर्गत अन्यतम श्वासरोग है। सुश्रुतमें लिखते हैं—श्लेष्माजनक द्रव्य आहार, अधिक आहार, परिश्रमके अभाव और दिवानिद्रा सभी कारणोंसे मधुरतर अन्नरस उत्तम रूपसे परिपाक न होकर सर्व शरीरमें सञ्चारित होता है। इससे शरीरमें अतिशय स्नेह उत्पन्न होने लगता है। उसी स्नेह पदार्थके आधिक्यसे मेद बढ़ता और फिर शरीर अतिशय स्थूल पड़ जाता है। शरीर स्थूल पड़नेसे क्षुद्रश्वास उठता है। (सुश्रुत सूत्र १५अ०)

ब्राह्मणयष्टिका, गुड़त्वक्, त्रिकटु, हरिद्रा, कटुकी, पिप्पली,मरिच, वचा, गोमयरस और तलकोटका बीज सबको एकयोगमें मोदकपाक बना कर सेवन करनेसे श्वासकी शान्ति होता है। (सुश्रुत, उत्तर ५१ अ०) श्वास देखो

क्षुद्रश्वेता (सं० स्त्री०) १ रक्तापामार्ग, लाल लटजोरा। २ क्षुद्रकिणिही, छोटी सफेद अपराजिता।

क्षुद्रसहा (सं० स्त्री०) क्षुद्रा चासौ सहा चेति, कर्मधा०। १ मुद्गपर्णी, मोठ। इसका संस्कृत पर्याय—मुद्गपर्णी, काममुद्गा, सिंहपर्णिका, वन्या, मार्जारगन्धा और सूर्पपर्णी है। २ इन्द्रवारुणी, ककड़ी, कचलिया।

क्षुद्रसुवर्ण (सं० क्ली०) पित्तल, पीतल।

क्षुद्रस्फोटा (सं० स्त्री०) क्षुद्रस्फोटक, फुन्सी, फुड़िया।

क्षुद्रहा (सं० पु०) क्षुद्रं हन्ति, क्षुद्र-हन्-क्विप्। शिव, महादेव।

क्षुद्रहिङ्गुलिका (सं० स्त्री०) कण्टकारी। कण्टकारी देखो।

क्षुद्रहिङ्गुली, क्षुद्रहिङ्गुलिका देखो।

क्षुद्रा (सं० स्त्री०) क्षुद् रक्, ततः टाप्। क्षुद्र देखो। १ वेश्या, रण्डी। (कादम्बरी) २ कण्टकारी, कटैया। ३ मधुमक्षिकाविशेष, शहदकी कोई मक्खी। ४ मक्षिका, मक्खी। ५ चाङ्गेरी, अमलोनी। ६ हिंस्रा। ७ गवेधुका, कोड़ियाला। ८ वादरता, लड़ाका औरत। ९ मेड़की। १० वनपिप्पली, जंगली पीपल। ११ क्षुद्र उपोदकी, छोटी पोय। १२ यावनालीशर्करा, ज्वारकी चीनी। १३ हिक्का, हिचकी। १४ अश्वत्थिका, पाकर। १५ क्षुत्क्षुप। १६ सुरभा।

क्षुद्राग्निमन्थ (सं० पु०) क्षुद्रश्चासौ अग्निमन्थश्चेति, कर्मधा०। क्षुद्रगणिकारिका। इसका संस्कृत पर्याय—तपन, विजया, गणिकारिका, अरणि, लघुमन्थ, तेजोवृक्ष और तनुत्वचा है। यह अग्निमन्थके समान गुणविशिष्ट होता है। (राजनिघंटु) अग्निमन्थ देखो।

क्षुद्राञ्जन (सं० क्ली०) नेत्ररोगका एक अञ्जन, आंखकी बीमारीका कोई सुर्मा।

क्षुद्राण्डमत्स्यसङ्घात (सं० पु०) क्षुद्राणां अण्डमत्स्यानां अण्डादभिनवजातानां मत्स्यानामित्यर्थः समूहः, ६-तत्। पोताधान।

क्षुद्रादिकषाय (सं० पु०) कण्टकार्यादि द्रव्यचतुष्टयकृत कषाय, एक काढ़ा। प्रस्तुत-प्रणाली यों है—क्षुद्रा (कण्टकारी), अमृता (गुर्च), शुण्ठी और कुष्ठ सकल द्रव्य समभागमें लेकर कषाय बनाना चाहिये। इसीका नाम क्षुद्रादिकषाय है। यह श्वास, कास, अरुचि और पार्श्ववेदना, उपसर्गयुक्त वात, श्लेष्माज्वर तथा त्रिदोष ज्वरमें प्रयोज्य है। (चक्रदत्त)

क्षुद्रान्त्र (सं० क्ली०) क्षुद्रञ्च तत् अन्त्रञ्चेति, कर्मधा०। क्षुद्रान्त्ररूप कोष्ठाङ्ग, कलेजेकी एक छोटी रग। नाड़ी देखो।

क्षुद्रापामार्ग (सं० पु०) रक्तापामार्ग, लाल लटजीरा। रक्तापामार्ग देखो।

क्षुद्राफल (सं० क्ली०) बृहतीफल, भटकटैयेकी गोली।

क्षुद्रामलक (सं० क्ली०) काष्ठधात्री, जंगली आंवला।

क्षुद्रामलकसंज्ञ (सं० पु०) क्षुद्रामलकस्य संज्ञेव संज्ञा यस्य, बहुव्री०। कर्कटवृक्ष, कांकरोल।

क्षुद्राम्बुपनस (सं० पु०) लकुचफलवृक्ष, लुकाटका पेड़।

क्षुद्राम्र (सं० पु०) कोषाम्र, एक पेड़।

क्षुद्राम्ल (सं० पु०) कोषाम्र, एक पेड़।

क्षुद्राम्लपनस (सं० पु०) नित्यकर्मधा०। लकुचवृक्ष, लुकाटका पेड़।

क्षुद्राम्ला (सं० स्त्री०) क्षुद्रा चासौ अम्ला अम्लरसो चेति, कर्मधा०। १ चाङ्गेरी, अमलोनी। यह अम्ल, उष्ण, अग्निवर्धक, रुचिकर और ग्रहणी, अर्श तथा कफघ्न होती है। इसका संस्कृत पर्याय—चाङ्गेरी, चुक्राम्ला, चुक्रिका, लोणाम्ला, चतुःपत्रा, लोणा, बोढ़ा, अम्लपत्रिका, अम्बष्ठा, अम्लवती, अम्ला, दन्तशठा, शाखाम्ला और अम्लपत्री है। (राजनिघण्ट) २ शशाण्डुली, कचेलिया।

क्षुद्राम्लिका, क्षुद्राम्ला देखो।

क्षुद्रावली (सं० स्त्री०) क्षुद्रघण्टिका, घुंघरूदार करधनी।

क्षुद्राशय (सं० त्रि०) क्षुद्रः आशयो यस्य, बहुव्री०। नीचाशय, कमीना, सामान्य विषयमें जिसको लाभ लगे, जो अतिक्षुद्र विषयको माया छोड़ न सकता हो।

क्षुद्राशयता (सं० स्त्री०) क्षुद्राशयस्य भावः, क्षुद्राशयतल्-टाप्। नीचस्वभाव, क्षुद्रप्रकृति, कमीनापन, ओछापना।

क्षुद्रिका (सं० स्त्री०) क्षुद्रा संज्ञायां कन्-टाप् आकारस्य इकारः। एक प्रकारका हिक्कारोग, हिचकीकी कोई बीमारी। यह जत्रुमूलसे उठती है। (माधव निदान) हिक्का देखो। २ दंश, मच्छड़, डांस।

क्षुद्रीय (सं० त्रि०) क्षुद्र चातुरर्थिक छ। उत्करादिभ्यश्छः। पा ४।२।९०। क्षुद्रनिर्वृत्त, क्षुद्रसन्निहित (देशादि)।

क्षुद्रेङ्गुदी (सं० स्त्री०) यवासक्षुप, जवासा।

क्षुद्रेर्वारु (सं० पु०) क्षुद्रश्चासौ इर्वारुश्चेति, कर्मधा०। गोपालकर्कटी, जंगली ककड़ी।

क्षुद्रैला (सं० स्त्री०) क्षुद्रा चासौ एला चेति, कर्मधा०। सूक्ष्मैला, छोटी इलाची।

क्षुद्रोदुम्बरिका (सं० स्त्री०) क्षुद्रा चासौ उदुम्बरिका चेति, कर्मधा०। काकोदुम्बरिका, काठगूलर।

क्षुद्रोपोदकनाम्नी (सं० स्त्री०) क्षुद्रोपोदकी, छोटी पोय।

क्षुद्रोपोदकी (सं० स्त्री०) क्षुद्रा चासौ उपोदकी चेति,

कर्मधा०। क्षुद्रपत्रोपोदकी, छोटो पत्तीकी पोय, जंगली पोय। उपोदकी देखो।

क्षुद्रोलूक (सं० पु०) क्षुद्रपेचक, छोटा उल्लू।

क्षुद्विबोधन (सं० पु०) स्तवकवृक्ष, राईका पेड़।

क्षुध् (सं० स्त्री०) क्षुध सम्पदादित्वात् भावे क्विप्। १ भोजन करनेकी इच्छा, भूख। २ अन्न, खानेकी चीज।

क्षुधा (सं० स्त्री०) क्षुध भावे क्विप् ततः विकल्पे टाप्। बुभुक्षा, भूख।

जिस प्रकार पृथिवीस्थित जल सूर्य द्वारा सुखाया जाता, उसी प्रकार शरीरका धातु भी जठरानलके तेजसे सूखने लगता है। धातु शुष्क होनेसे भूख लगती है। अधिक परिमाणमें भूख लगनेसे श्रवणशक्ति, घ्राणशक्ति और दर्शनशक्ति तक नहीं रहती। शरीरमें दाह और कम्प उपस्थित होता है। किसी विषयमें बुद्धि नहीं चलती। दिन दिन शरीर सूखते जाता है। उपयुक्त समय आहार करके क्षुधा न हटानेसे वाक्शक्ति, श्रवणशक्ति, दर्शनशक्ति, घ्राणशक्ति और गमनशक्तिकी हानि होती है। (अग्निपुराण, प्रेतोपाख्यान)

क्षुधाकुशल (सं० पु०) क्षुधायां कुशलः, ७-तत्। बिल्वान्तरवृक्ष, किसी किस्मका बेल।

क्षुधातुर (सं० त्रि०) क्षुधया आतुरः कातरः ३-तत्। क्षुधार्त, भूखा।

क्षुधाभिजनन (सं० पु०) क्षुधामभिजनयति, क्षुधा-अभि जन-णिच्-ल्यु। १ राजिका, राई। २ राजमाषक, लोबिया।

क्षुधामार (सं० पु०) क्षुधां मारयति नाशयति, क्षुधा-मृ-णिच्-अण्। क्षुधानाशक, लटजीरा। (अथर्व ४।१७।६)

क्षुधार्त (सं० त्रि०) क्षुधया ऋतः, ३-तत्० ऋतकारस्य वृद्धिः। क्षुधातुर, भूखसे घबराया हुआ।

क्षुधालु (सं० त्रि०) क्षुध बाहुलकात् आलुच्। क्षुधायुक्त, भुक्खड़।

क्षुधावती (सं० स्त्री०) क्षुधा विद्यतेऽस्याम्, क्षुधा-मतुप् मकारस्य वकारः। १ क्षुधाजनक औषधविशेष, भूख बढ़ानेवाली कोई दवा। इसकी प्रस्तुत-प्रणाली यों है—रसायक, गन्धक, अभ्र, त्रिकटु, त्रिफला, बच, अजवायन, शतपुष्पा, चव्य, दोनों प्रकारका जीरा चार चार तोला, वराटाकर्ण, पुनर्नवा, माणक, पिप्पलीमूल, कुटज, केशर, पद्मगुलञ्च, दन्तोत्पल, तेवड़ी, दन्ती, गोड़हर, रक्तचन्दन, भृङ्गराज, अपामार्ग, कूलक और मण्डूक दो दो तोला कूट पीसके अदरकके रसमें गोली बना लेना चाहिये। सवेरेको उठके बदरास्थिके साथ क्षुधावती वटिका सेवन करने पीछे अन्न और जलपान करते हैं। यह सब प्रकारका अजीर्ण नाश करनेवाली, अग्नि बढ़ानेवाली, और अम्लपित्त तथा शूलको हटानेवाली है। इसके सेवनकाल कोई मिष्ट द्रव्य न खाना चाहिये। दूध और शक्कर नितान्त अहितकर है।

२ चिकित्सारत्ननिधिके मतानुसार कोई क्षुधाजनक औषध। इसको निम्नलिखित प्रणालीसे प्रस्तुत करते हैं—सोहागा ७ भाग, सज्जीखार ५ भाग, यवक्षार ४ भाग, पटु ३ भाग, मरीच २ भाग, चित्रक २ भाग, सोंठ २ भाग, और लौंग २ भाग सब द्रव्योंको अम्लरसकी भावना देकर गोली बना लेना चाहिये। इसीका नाम क्षुधावती वटिका है। यह आमशूल, अम्लपित्त, पित्तशूल, अर्श और ग्रहणीको नाश करती है। क्षुधावतीके सेवनसे भूख बहुत लगती है। (चिकित्सारत्ननिधि)

क्षुधावत् (हिं०) क्षुधावान् देखो।

क्षुधावान् (सं० त्रि०) क्षुधा विद्यतेऽस्य, क्षुधा-मतुप् मकारस्य वकारः। क्षुधायुक्त, भूखा।

क्षुधासागररस (सं० पु०) औषधविशेष, एक दवा। यह निम्नलिखित प्रणालीसे प्रस्तुत की जाती है—त्रिकटु, त्रिफला, पञ्चलवण, सज्जीक्षार, यवक्षार, सोहागा, पारा और गन्धक समस्त द्रव्य एक एक भाग और दो भाग विष डाल कर पञ्चवल्कके साथ वटिका बना लेना चाहिये। गोलियां एक एक रत्तीकी बनती हैं। इसका नाम क्षुधासागर रस है। इसके खानेसे भूख बढ़ती है। (भैषज्यरत्नावली)

क्षुधित (सं० त्रि०) क्षुध कर्तरि क्त यद्वा क्षुधा जाताऽस्य, क्षुधा तारकादित्वात् इतच्। जातक्षुध, भूखा, जिसे भूख लगी हो।

क्षुधुन (सं० पु०) क्षुध-उनन् किच्च। क्षुधिपिशिमिथः कित्। उण् ३।५५। म्लेच्छजातिविशेष, एक कौम।

क्षुन्निवृत्ति (सं० स्त्री०) क्षुधः क्षुधायाः निवृत्तिः, ६-तत्। क्षुधाकी निवृत्ति, आसूदगी, छकाहट।

क्षुप (सं० पु०) क्षुप-क:। १ गुल्म, छोटी डालियोंका पौदा, झाड़ी। (भारत १।१७२।२८) २ क्षुद्रवृक्ष, छोटा मोटा पेड़। ३ सत्यभामा-गर्भजात कृष्णके पुत्र। (हरिवंश १६२ अ०) ४ सूर्यवंशीय प्रसन्धिके पुत्र, इक्ष्वाकुके पिता। (भारत १४।४।२४) ५ द्वारकाके पश्चिमस्थ एक पर्वत। (हरिवंश १५७ अ०)

क्षुपक (सं० पु०) क्षुप स्वार्थे कन्। क्षुद्रक्षुप, छोटी झाड़ी।

क्षुपडोड़मुष्टि (सं० पु०) विषमुष्टि, एक नीम।

विषमुष्टि देखो।

क्षुपा (सं० स्त्री०) क्षुप्-टाप्। क्षुप, झाड़ी।

क्षुपालु (सं० पु०) क्षुप बाहुलकात् आलुच्। पानियालुक।

क्षुब्ध (सं० त्रि०) क्षुभ-क्त निपातने साधुः। क्षुब्धस्वान्तध्वान्त-लग्नेति। पा ७।२।१८। १ विमर्ष, घबराया हुवा, अधीर। (पु०) २ मन्थनदण्ड, मथानी। ३ सोलह प्रकारके रतिबन्धोंमें एकादश रतिबन्ध।

"पार्श्वोपरि पदौ कृत्वा योनौ लिङ्गेन ताड़येत्।
बाहुभ्यां धारणं गाढ़ं बंधो वै क्षुब्धसंज्ञकः॥" (रतिमंजरी)

क्षुभ (सं० त्रि०) क्षुभ-क। १ प्रवर्तक, लगानेवाला। (भारत ३।३।६८) २ क्षोभकारक, सञ्चालक, चलानेवाला।

क्षुभा (सं० स्त्री०) क्षुभ-टाप्। सूर्यकी निग्रहानुग्रह-कर्त्री एक पारिषद् देवता। (भारत ३।३।६६)

क्षुभ्नादि (सं० पु०) क्षुभ्न आदिर्यस्य, बहुव्री०। पाणिनिका एक गण। क्षुभ्न, नृनमन, नन्दिन्, नन्दननगर, हरिनन्दी, हरिनन्दन, गिरिनगर, यङन्त नृतधातु, नर्तन, गहन, निवेश, निवास, अग्नि और अनूप कई शब्द उत्तर पद होनेसे क्षुभ्नादिगण होता है। किसी किसीके मतमें क्षुभ्ना, तृप्नु, नृनमन, नरनगर, नन्दन, यङन्त नृती-धातु, गिरिनदी, गृहगमन, निवेश, निवास, अग्नि, अनूप, आचार्य, भोगीन, चतुर्हायन और वन शब्द परको रहनेसे हरिका, समीर, कुबेर, हरि तथा कुमार इत्यादि को क्षुभ्नादिगण कहते हैं। क्षुभ्नादिगणीय नकार मूर्धन्य नहीं होता।

क्षुमा (सं० स्त्री०) क्षु-मक्-टाप्। १ अतसीक्षुप, अलसी-का पौदा। २ शण, सनई। ३ नीलिनी, नील। ४अतसी-पुष्पवृक्ष, एक फूलदार पेड़। (त्रि०) क्ष्मायति शत्रून् कम्पयति, क्ष्माय-मन् पृषोदरादिवत् साधुः। ५ शत्रुओं-को कंपानेवाला। (वाजसनेयसंहिता १०।८)

क्षुमान् (वै० त्रि०) क्षु अस्त्यर्थे मतुप्। १ अन्नयुक्त। २ स्तुत्य, स्तुति करने योग्य। (ऋक् ८।७०।१)

क्षुर (सं० पु०) क्षुर-क। १ नापितास्त्रविशेष, नाईका कोई औजार, छुरा। (मनु ८।२९२) २ शफ, सुम, खुर। ३ कोकिलाक्षवृक्ष, तालमखानेका पेड़। ४ गोक्षुर, गोखुरू। ५ महापिण्डीतरु। ६ शर, रामसर। ७ वाण-विशेष, किसी किस्मका तीर। (रामायण ६।९२) ८ क्षुद्र-गोक्षुर, छोटी गोखुरू।

क्षुरक (सं० पु०) क्षुर-क्वन्। १ तिलकवृक्ष। २ कोकि-लाक्षक्षुप, तालमखानेका पौदा। श्वेतकोकिलाक्ष, सफेद तालमखाना। ४ क्षवकवृक्ष, लुकाटका पेड़। ५ गोक्षुर, गोखुरू।

क्षुरकर्म (सं० क्ली०) क्षुरेणोचितं क्षुरसाध्यं वा कर्म, मध्यपदलो०। चौर, हजामत, संवार। चौर देखो।

क्षुरकबीज (सं० क्ली०) कोकिलाक्षबीज, तालमखाना।

क्षुरक्षत (सं० त्रि०) क्षुर द्वारा कमाया हुवा, जो छुरेसे मूंडा गया हो।

क्षुरक्रिया (सं० स्त्री०) क्षुरेण क्रिया, ३-तत् क्षुरस्य क्रिया वा, ६-तत्। क्षुरकर्म, चौर, हजामत, संवार।

क्षुरधान (सं० क्ली०) क्षुरो धीयतेऽत्र, धा आधारे ल्युट्। नापितका अस्त्राधार, किसबत, छुरहरी।

(शतपथब्राह्मण १४।४।२।१६)

क्षुरधार (सं० त्रि०) क्षुरस्य धार: तीक्ष्णता इव धारा यस्य, बहुव्री०। १ क्षुरकी भांति तीक्ष्णताविशिष्ट, उस्तरे—जैसा तेज। (पु०) २ नरकविशेष, कोई दोजख। ३ अस्त्र-विशेष, एक हथियार। (भारत ४।६।२८)

क्षुरधारा (सं० स्त्री०) क्षुरस्य धारा, ६-तत्। क्षुरकी धार, उस्तरेकी बाढ़। (भारत १२।३७।२६)

क्षुरपत्र (सं० पु०) क्षुरस्य पत्रमिव पत्रं यस्य, बहुव्री०। १ स्थूलशर, रामसर। २ क्षुरधार वाण, उस्तरे जैसा पैना तीर। (त्रि०) ३ क्षुर सदृश पत्रविशिष्ट, उस्तरे जैसी पत्तियोंवाला।

क्षुरपत्रिका (सं० स्त्री०) क्षुर इव पत्रमस्याः, बहुव्री० ततः कप्-टाप् आकारस्य इकारः। पालङ्गशाक, पलांकी।

क्षुरपवि (वै० त्रि०) क्षुरवत् पविर्धाराऽस्य, बहुव्री०। जिसका अग्रभाग क्षुर-जैसा तीक्ष्ण हो।

(शतपथब्राह्मण ३।६।२।९)

क्षुरप्र (सं० पु०) क्षुर इव पृणाति छिनत्ति, पृ क: किन्वान्न गुणः। १ वाणविशेष, छुरे-जैसा पैना तीर। (भागवत ४।५।३।४६) २ घास छीलनेका एक औजार, खुरपी। किसी किसी पुस्तकमें 'खुरप्र' पाठ दृष्ट होता है।

क्षुरप्रग (सं० क्ली०) क्षुरप्रं गच्छति, क्षुरप्र-गम-ड। क्षुरप्र-सदृश अस्त्रविशेष, खुरपा-जैसा एक औजार।

क्षुरप्रप (सं० क्ली०) १ वाणविशेष, किसी किस्मका तीर। २ घास छीलनेका हथियार, खुरपा।

क्षुरभट्ट—तैत्तिरीय-संहिताके एक प्राचीन भाष्यकार।

(माधवीय-धातुवृत्ति)

क्षुरभाण्ड (सं० क्ली०) क्षुरस्य भाण्डम्, ६-तत्। क्षुरधान, छुरहरी। (पञ्चतन्त्र)

क्षुरमर्दी (सं० पु०) क्षुरं मृद्नाति घर्षयति, मृद-णिनि। नापित, नाई।

क्षुरमुण्डी (सं० पु०) क्षुरेण मुण्डयति, मुण्ड-णिनि। नापित, नाई।

क्षुरवीज (सं० क्ली०) कोकिलाक्षवीज, तालमखाना।

क्षुराङ्ग (सं० पु०) क्षुर इव अङ्गमस्य, बहुव्री०। गोक्षुरक, गोखुरू।

क्षुरापर्ण (सं० पु०) गिरिविशेष, एक पहाड़।

(बृहत्संहिता १४।२०)

क्षुरिका (सं० स्त्री०) क्षुर-ङीप् स्वार्थे कन् ततः टाप पूर्वह्रस्वश्च। १ पालङ्गशाक, पलांकी। २ मृत्तिकापात्र विशेष, मट्टीकी खोरिया। ३ छुरी, चाकू। ४ यजुर्वेदान्तर्गत कोई उपनिषत्। मुक्तिकोपनिषद्में इसका उल्लेख मिलता है।

क्षुरिकापत्र (सं० पु०) क्षुरिका इव पत्रमस्य, बहुव्री०। शर, रमसर।

क्षुरिणी (सं० स्त्री०) क्षुर अस्त्यर्थे इनि ततः ङीप्। १वराहक्रान्ता। २ नापितकी भार्या, नाइन।

क्षुरी (सं० पु०) क्षुद्र: क्षुरः, क्षुर-ङीप्। नापित, नाई, हज्जाम।

क्षुरी (सं० स्त्री०) छुरी।

क्षुल्ल (सं० त्रि०) क्षुदं लाति गृह्णाति, क्षुद-ला-क। १ अल्प, थोड़ा, कम। २ लघु, हलका। (भागवत ३।५।१०) ३ कनिष्ठ, छोटा।

क्षुल्लक (सं० त्रि०) क्षुल्ल स्वार्थे कन्। १ क्षुद्र, छकोर। २ अल्प, थोड़ा। ३ नीच, कमीना। ४ कनिष्ठ, छोटा। ५ दरिद्र, गरीब। ६ पामर। ७ दुःखित, दुखी। (भागवत ४।२०।२९) ८ खल, पाजी। शब्दरत्नावलीमें "क्षुल्लक" के स्थान पर 'खुल्लक' पाठ है। (पु०) संज्ञार्थे कन्। ९ क्षुद्रशङ्ख।

क्षुल्लतात (सं० पु०) नित्यकर्मधा०। पिताका कनिष्ठ भ्राता, चाचा, चचा।

क्षुल्लतातक (सं० पु०) क्षुल्लतात स्वार्थे कन्। पितृव्य, चचा।

क्षेड़कन्द (सं० पु०) करवीरवृक्ष, कनेरका पेड़।

क्षेत्र (सं० क्ली०) क्षि-त्रन्। दादिभ्यश्छन्दसि। उण् ४।१६९। १ केदार, खेत, शस्य उत्पत्तिका स्थान, अनाज बोनेकी जगह। इसका संस्कृत पर्याय—वप्र, केदार, वलज, निष्कुट, राजिका और पाटीर है। शस्य उत्पत्तिका क्षेत्र व्रैहेय, शालेय, यव्य प्रभृति नाना भागोंमें विभक्त है। २ शरीर, जिस्म। (गीता १३।१) ३ अन्तःकरण। ४ कलत्र, जोड़ू। ५ सिद्धस्थान। भारत प्रभृति प्राचीन इतिहासोंमें कई सिद्धस्थानोंको पुण्यक्षेत्र, कइयोंको सिद्धक्षेत्र और कइयोंको विष्णुक्षेत्र लिखा है। जैसे पुण्यक्षेत्र—कुरुक्षेत्र, गयाक्षेत्र, प्रयाग, पुलहाश्रम, नैमिष, फल्गुतीर, सेतुवन्ध, प्रभास, कुशस्थली, वाराणसी, मधुपुरी, पम्पा, विन्दुसर, वदरिकाश्रम, नन्दाक्षेत्र, सीताश्रम और सप्तकुलाचल। सिद्धक्षेत्र यथा—कामरूप, गङ्गातीर, नारायणक्षेत्र और पुरुषोत्तम। विष्णुक्षेत्र यथा—कोकामुख, मन्दर, कपिलद्वीप, प्रभास, माल्य, उदय, महेन्द्र, ऋषभ, द्वारका, पाण्डर, सह्य, वसुकुण्ड, वन्दीवन, चित्रकूट, नैमिष, गोनिष्क्रमण, शालग्राम, गन्धमादन, कुब्जाम्रक, गङ्गाद्वार, तोषक, हस्तिनापुर, वृन्दावन, मथुरा, केदार, वाराणसी, पुष्कर,

दृषद्वती, दृषविन्दुवन, सागरसङ्गम, तेजोवन, विशाख-सूर्य, वनवन, कोहाकुल, देवशाल, दशपुर, कुब्जक, वितस्ता, देवदारुवन, कावेरी, प्रयाग, पयोष्णी, कुमार, लौहित्य, उज्जयिनी, लिङ्गस्फोट, तुङ्गभद्रा, कुरुक्षेत्र, मणिकुण्ड, अयोध्या, कुण्डिन, भञ्जीर, चक्रतीर्थ, विष्णुपद, शूकर, मानस, दण्डक, त्रिकुट, मेरुपृष्ठ, पुष्पमती, चामीकर, विपाशा, माहिष्मती, क्षीरोद, विमला, शिवनदी और गया। (नारसिंहपुराण ६२ अ०) कुरुक्षेत्र प्रभृति शब्दोंमें इनका विस्तृत विवरण द्रष्टव्य है। ६ मेषादि द्वादश राशि। राशिका दूसरा नाम क्षेत्र है। ७ इच्छा, द्वेष, सुख, दुःख, संस्कार, चैतन्य और धैर्य। ८ समतलभूमि, चौरस जमीन। (लीलावतीटीका—मुनीश्वर) क्षेत्रव्यवहार देखो। ९ अश्व जातिका दशविध क्षेत्र। इसमें १ क्षेत्र अयनादि ललाट, २ क्षेत्र ललाटसे मस्तक पर्यन्त, ३ ग्रीवा स्कन्धावधि, ४ स्तन ककुदांशकाकसानि, ५ अंसक, ६ कटि, ७ त्रिकक्, ८ स्फुरक, ९ जङ्घा और १० कूर्चसन्धि तथा खुर है। (जयदत्त)

क्षेत्रकर (सं० त्रि०) क्षेत्रं करोति, क्षेत्र-कृ-ट। क्षेत्र प्रस्तुत करनेवाला, जो खेत बनाता हो।

क्षेत्रकर्कटी (सं० स्त्री०) क्षेत्रजाता कर्कटी, मध्यपदलो०। वालुका, फूट।

क्षेत्रकर्म (सं० क्ली०) क्षेत्रस्य कर्म, ६-तत्। क्षेत्रका कर्म, खेतका काम।

क्षेत्रकर्मकृत् (सं० त्रि०) क्षेत्रकर्म करोति, क्षेत्रकर्म-कृ-क्विप् तुगागमश्च। क्षेत्रकर्मकारी, खेतका काम करनेवाला।

क्षेत्रगणित (सं० क्ली०) क्षेत्रस्य गणितम्, ६-तत्। १ क्षेत्रविषयक अङ्कशास्त्र, पैमायश। २ क्षेत्रव्यवहार।

क्षेत्रव्यवहार देखो।

क्षेत्रगत (सं० त्रि०) क्षेत्रं गतः, २-तत्। १ क्षेत्रको गमन कर चुकनेवाला, जो खेत पर गया हो। २ क्षेत्रसम्बन्धीय, खेतसे सरोकार रखनेवाला।

क्षेत्रगतोपपत्ति (सं० स्त्री०) क्षेत्रगता चासौ उपपत्ति श्चेति, कर्मधा०। क्षेत्रसम्बन्धीय युक्ति, खेतकी तजवीज।

क्षेत्रचिर्भिटा (सं० स्त्री०) क्षेत्रजाता चिर्भिटा, मध्यपदलो०। १ चिर्भिटाककर्टी, फूट। २ चचेंडा।

क्षेत्रज (सं० पु०) क्षेत्रे स्त्रीरूपक्षेत्रे जायते, क्षेत्र-जन-ड। १ द्वादशप्रकारके पुत्रोंमें एक पुत्र। मनुके मतमें—मृत, नपुंसक वा राजयक्ष्मा प्रभृति व्याधिग्रस्त व्यक्तिकी स्त्री गुरुजनकर्तृक नियुक्त हो धर्मके अनुसार परपुरुष द्वारा जो पुत्र उत्पादन करती, वही उस स्त्रीके स्वामीका क्षेत्रजपुत्र कहलाता है। (मनु ९।१६७) क्षेत्रजपुत्र औरस पुत्रकी भांति पिताकी समस्त सम्पत्तिका अधिकारी है। किन्तु क्षेत्रज पुत्रका जन्म होने पर यदि उसी व्यक्तिके औरसपुत्र उत्पन्न हो, तो वह औरसपुत्र ही सम्पत्तिका अधिकारी होगा—क्षेत्रज नहीं। (मनु ९।१६२) कुल्लूकभट्टने ऐसा ही मत प्रकाश किया है। किन्तु स्मृतिसंग्रहकार रघुनन्दनके मतमें ऐसे स्थल पर क्षेत्रज और औरस दोनों अधिकारी होंगे। (उद्वाहतत्त्व) बृहस्पतिने क्षेत्रज पुत्रके उत्पत्ति विषय पर लिखा है—जिस स्त्रीके कोई सन्तान नहीं और निज स्वामी द्वारा पुत्रोत्पादनकी सम्भावना भी नहीं, वह देवर अथवा स्वामीके सपिण्ड किसी अन्य पुरुष द्वारा सन्तान उत्पादन कर सकती है। उसके देवर अथवा अन्य किसी सपिण्डको भी गुरुजनकर्तृक अनुज्ञात हो उसमें सङ्गत होने पर कोई पाप नहीं लगता। किन्तु गुरुजनकर्तृक किसी विधवाके पुत्रोत्पादनको नियुक्त होने पर सकल शरीरमें घी लगा और वाग्यत हो कर रात्रिकालमें सङ्गत होना चाहिये। ऐसे स्थलमें एक ही सन्तान उत्पादन कर सकते हैं। विधवा इस पुरुषको गुरु-जैसा देखेगी और पुरुष भी उस विधवाको अपनी पुत्रवधू-जैसी समझेगा। किसी प्रकार इन्द्रियपरतन्त्र न होकर केवल धर्मबुद्धिसे ही सन्तान उत्पादन करना चाहिये। जो इस नियमका उल्लङ्घन करते, वधूगामी और गुरुतल्पगकी तरह पतित ठहरते हैं। सपिण्ड और देवर भिन्न अन्य पुरुषमें विधवाको नियुक्त न करना चाहिये। क्योंकि इससे उसका धर्म बिगड़ता है। वाग्दानके पीछे ही जिसके पतिका मृत्यु हो गया है, वही स्त्री इस भावमें देवर द्वारा पुत्रोत्पादन कर सकती है। कलिकालमें क्षेत्रज पुत्र करनेका विधान नहीं है।

(त्रि०) क्षेत्रजात, खेतमें पैदा होनेवाला।

क्षेत्रजा (सं० स्त्री०) क्षेत्रज-टाप्। १ श्वेतकण्टकारी, सफेद

कटैया। २ शशाण्डुली, कचेलिया। ३ गोक्षुरिका तृण, एक घास। ४ चणिकातृण। ५ शिल्पिनीतृण।

क्षेत्रजात (सं० त्रि०) क्षेत्रे जातः, ७-तत्। क्षेत्रमें उत्पन्न होनेवाला, जो खेतमें पैदा हुवा हो।

क्षेत्रजेट् (वै० स्त्री०) क्षेत्रस्य जेट्, ६-तत्, क्षेत्र-जेष-क्विप्। क्षेत्रप्राप्ति, खेतका मिलना। (ऋक् १।३३।१५)

क्षेत्रज्ञ (सं० पु०) क्षेत्रं शरीरं जानाति मम इत्यभिमानेन गृह्णाति, क्षेत्र ज्ञा-क। १ शरीरका अधिष्ठाता, जीवात्मा। सांख्य मतानुसार—आत्मा निर्लेप, निर्गुण, क्रियाशून्य और केवल चैतन्यस्वरूप है। अविद्याके प्रभावसे पाञ्चभौतिक स्थूलशरीर वा सूक्ष्मशरीर बुद्धि, अहङ्कार तथा इन्द्रिय आदिको अपना शरीर-जैसा समझता है। इसी अभिमानयुक्त पुरुषको क्षेत्रज्ञ कह सकते हैं। नैयायिक और वैशेषिक मतमें जीवात्मा ही क्षेत्रज्ञ शब्द-वाच्य है। वेदान्तके मतानुसार आत्मा वा ब्रह्मको क्षेत्रज्ञ कहा नहीं जा सकता। कारण वह ज्ञानस्वरूप है, उसको किसी भेदभावका ज्ञान नहीं। इसीसे वेदान्तिक अविद्याविशिष्ट (अज्ञानोपहित) चैतन्यको क्षेत्रज्ञ कहा करते हैं। २ सर्वज्ञ, परमेश्वर। गीताके मतमें प्रकृति, महत्तत्त्व, अहङ्कार और इन्द्रिय प्रभृति समस्त जड़पदार्थको क्षेत्र कहते हैं। क्षेत्र अर्थात् समस्त जड़ पदार्थोंको जाननेवाला ही क्षेत्रज्ञ है। (गीता १३।१-२)

३ विष्णु। (विष्णुसहस्रनाम) ४ साक्षी, गवाह। ५ अन्तर्यामी, प्राणियोंके हृदयमें रह कर उनके समस्त कार्य अवलोकन करनेवाला। (भारत १ पर्व) ६ वटुकभैरव। (वटुकस्तव) ७ आत्मा। (त्रि०) ८ रसिक, विदग्ध। ९ कृषक, किसान। १० क्षेत्रका विषय समझनेवाला, जो खेतका हाल जानता हो। (छान्दोग्य उप० ७।३।२)

क्षेत्रद (सं० पु०) क्षेत्रं ददाति, क्षेत्र-दा-क। १ वटुकभैरव। (वटुकस्तव) (त्रि०) २ क्षेत्र दान करनेवाला, जो खेत देता हो।

क्षेत्रदूती (सं० स्त्री०) श्वेतकण्टकारी, सफेद कटैया।

क्षेत्रदेवता (सं० स्त्री०) क्षेत्रस्य देवता, ६-तत्। क्षेत्रको अधिष्ठात्री देवता। इनकी आराधना करनेसे खेतमें खूब अनाज उपजता और किसी दैव वा लौकिक कारणसे अनिष्ट नहीं पड़ता।

क्षेत्रप (सं० पु०) क्षेत्रं शरीरं पाति रक्षति क्षेत्र-पा-क। १ वटुकभैरव। (वटुकस्तव) २ ईश्वर। (त्रि०) क्षेत्रं शस्योत्पादनयोग्यां भूमिं पाति रक्षति। ३ क्षेत्ररक्षक, खेतका रखवाला।

क्षेत्रपति (सं० पु०) क्षेत्रस्य पतिः, ६-तत्। १ क्षेत्रपाल, खेतका रखवाला। २ कृषक, किसान। ३ परमात्मा। (तन्त्रसार)

क्षेत्रपद (सं० क्ली०) क्षेत्रस्य पदम्, ६-तत्। क्षेत्रस्थान, द्वार। (भागवत ९।४।२०)

क्षेत्रपर्पटी (सं० स्त्री०) क्षेत्रे पर्पटीव। पर्पटक, पित्त-पापड़ा।

क्षेत्रपाल (सं० त्रि०) क्षेत्रं पालयति रक्षति, क्षेत्र-पालि-अण्। १ क्षेत्ररक्षक, खेतका रखवाला। (पु०) २ देवताविशेष। प्रयोगसारमें क्षेत्रपालके ४९ भेद प्रदर्शित हुए हैं। उनके नाम इस प्रकार है—१ अजर, २ आपकुल्त, ३ इन्द्रस्तुति, ४ ईड़ाचार, ५ उक्त, ६ उन्माद, ७ ऋषिसूदन, ८ ऋमुक्त, ९ लृप्तकेश, १० लूपक, ११ एकदंष्ट्रक १२ ऐरावत, १३ ओघबन्धु, १४ औषधीश, १५ अञ्जन, १६ अस्त्रवार, १७ काल, १८ खण्डखानल, १९ गामुख्य, २० घण्टाद, २१ ङनः, २२ चण्डवारण, २३ छटाटोप, २४ जटाल, २५ झङ्कोवः, २६ ञरथर, २७ टङ्कपाणि, २८ ठाणबन्धु, २९ डामर, ३० ढक्कारव, ३१ णवर्ि, ३२ तड़िद्देह, ३३ स्थिर, ३४ दन्तुर, ३५ धनद, ३६ नतिक्कान्त, ३७ प्रचण्डक, ३८ फट्कार, ३९ वीरशङ्क, ४० भङ्ग, ४१ मेघासुर, ४२ युगान्तक, ४३ रौद्रक, ४४ लम्बोष्ठ, ४५ वसुगण, ४६ शुक्रनन्द, ४७ षड़ाल, ४८ सुनामा और ४९ हंबुक।

क्षेत्रपालकी पूजाका विधान—प्रातःकृत्य प्रभृति नित्यकार्योंका अनुष्ठान करके क्षेत्रपालकी पूजा करना चाहिये। प्रथम प्राणायाम और पीछे क्षेत्रपालको पूजा करके धर्मपीठादि स्थापन करते हैं। इनकी पूजामें इस प्रकार न्यास करना चाहिये। इसके ऋषि ब्रह्मा, छन्दः गायत्री, देवता क्षेत्रपाल, बीज क्षौं और शक्ति माया है। ऋष्यादि न्यास करके 'क्षां हृदयाय नमः' इत्यादि मन्त्रों द्वारा अङ्गन्यास और करन्यास करने पर क्षेत्रपालका ध्यान करना चाहिये। यथा—

"भ्राजच्चन्द्रजटाधरं त्रिनयनं नीलाञ्जनाद्रिप्रभं
दोर्दण्डात्तगदाकपालमरुणस्रग्गन्धवस्त्रोज्ज्वलम्।
घण्टामेखलघर्घरध्वनिमिलज्झङ्कारभीमं विभुं
वन्दे संहितसर्पकुण्डलधरं श्रीक्षेत्रपालं सदा॥"

क्षेत्रपालके तीन चक्षु हैं, वर्ण नीलगिरिके तुल्य, मस्तक पर उज्ज्वल चन्द्र और जटा है। इनके चारों हाथोंमें यथाक्रम गदा, कपाल, रक्तवर्ण पुष्पमाल्य और गन्धवस्त्र है। कटिमेखलामें बहुतसी घण्टियां लगी हैं। उनका घर्घरध्वनि और झङ्कार अतिशय भयङ्कर है। क्षेत्रपालके कर्णोंमें सर्पकुण्डल पड़े हैं। ऐसे क्षेत्रपालको मैं सर्वदा अभिवादन करता हूं। इसी प्रकारसे ध्यान करके प्रथम मानसपूजा करना चाहिये। अर्घ्यस्थापन और पूर्व धर्मपीठादिकी अर्चना करके पुनर्वार ध्यान तथा आवाहन करना पड़ता है। फिर 'क्षौं क्षेत्रपालाय नमः' मन्त्रसे पूजा करके पांच पुष्पाञ्जलियां देना चाहिये। इसके पीछे आवरण-पूजा होती है। क्षेत्र-पालका प्रथम आवरण अङ्ग द्वारा पूजना चाहिये। अनलाक्ष, अग्निकेश, कराल, घण्टारव, महाक्रोध, पिशिताशन, पिङ्गलाक्ष और ऊर्ध्वकेश द्वारा द्वितीय आवरण, इन्द्रादि द्वारा तृतीय आवरण और वज्रादि द्वारा चतुर्थ आवरणकी पूजा करना पड़ती है। क्षेत्र-पालका मन्त्र लक्ष जप करनेसे पुरश्चरण होता और घृत तथा चरुसे उसका दशांश होम किया जाता है।

इनके बलिका नियम-रात्रिकालको चबूतरे पर एक स्थण्डिल करके उस पर सकल परिवारके साथ क्षेत्र-पालकी पूजा करना चाहिये। बलिका मन्त्र उच्चारण करके क्षेत्रपालके हाथमें तीन बार उसे देते और परि-वार वर्गका नाम लेकर भी एक एक बार दिया करते हैं। बलिका मन्त्र यह है—

"एह्येहि विदुषि सुरु सुरु भुंजय भुंजय तर्जय तर्जय विघ्नपद विघ्न-पद महाभैरव क्षेत्रपाल बलिं गृह्ण गृह्ण स्वाहा।"

किसी किसी तन्त्रके मतमें क्षेत्रपालके बलिका मन्त्र अन्य प्रकार है—

"एह्येहि तुरु तुरु सुरु सुरु जम्भ जम्भ हन हन विघ्नं विनाशय विनाशय महाबलिं क्षेत्रपाल गृह्ण गृह्ण स्वाहा।"

क्षेत्रपालकी पूजा करनेसे कान्ति, मेधा, बल, आरोग्य, तेजः, पुष्टि, यशः, धन और सम्पत्ति वृद्धि होती है।

सभी प्रधान पुण्यक्षेत्रोंमें एक एक क्षेत्रपाल हैं। उनकी विधिसे पूजा होती है। हिमालयके कुमाऊं प्रदेशमें क्षेत्रपालको कहीं भूमिया और कहीं 'स्वयं' (स्वयम्) कहते हैं। इनके उद्देशसे छागबलि हुवा करता है।*

२ द्वारपाल भैरवविशेष। यह पश्चिम द्वारमें रहते हैं। (तन्त्रसार)

जैन शास्त्रानुसार—क्षेत्रपाल जिनशासनका भक्त है। बहुत बार जिनधर्मियोंको आपत्ति पड़ने पर इसने साहाय्य किया है। दि० जैनोंमें बहुतसे इनको पूजते और बहुतसे नहीं पूजते हैं।

क्षेत्रफल (सं० क्ली०) क्षेत्रस्य फलम्, ६-तत्। क्षेत्रान्तर्गत स्थानका परिमाण, भूमिके परिमाणका फल, रकबा। यह दैर्घ्य और प्रस्थके गुणनसे निकलता है।

क्षेत्रभक्ति (सं० स्त्री०) क्षेत्रका विभाग, जमीनका बंट-वारा।

क्षेत्रभूमि (सं० स्त्री०) कर्षित वा कर्षणयोग्यभूमि; खेतकी जमीन्।

क्षेत्रमालिका (सं० स्त्री०) क्षेत्रं मालयति, मल-णिच्-ण्वुल्। वचा, बच।

क्षेत्रयमानिका (सं० स्त्री०) क्षेत्रे जाता यमानिका, मध्यपदलो०। वनयमानिका, जंगली अजवायन।

क्षेत्ररुहा (सं० स्त्री०) क्षेत्रे रोहति उत्पद्यते, क्षेत्र-रुहक। वालुकी कर्कटी, फूट।

क्षेत्रवित् (सं० त्रि०) क्षेत्रं वेत्ति, क्षेत्र-विद्-क्विप्। १ मार्गज्ञ, राहका हाल जाननेवाला। (ऋक् ९।७०।९) (पु०) क्षेत्रं शरीरं अहमिति आत्मत्वेन वेत्ति जानाति, क्षेत्र-विद्-क्विप्। २ क्षेत्रज्ञ, जीवात्मा। (भागवत ४।२२।३७) ३ परमार्थतत्त्वज्ञान।

क्षेत्रव्यवहार (सं० पु०) क्षेत्रस्य व्यवहारः कर्णलम्ब-फलादिभिरियत्तानिर्णयः, ६-तत्। कर्ण और लम्बके फलादि द्वारा क्षेत्रपरिमाणका निर्णय।

---

* E. T. Atkinson's Notes on the History and Religion in the Himalaya of the N. W. P. p. 127.

ज्यामिति और परिमिति क्षेत्रतत्त्वके अन्तर्गत है। भली भांति ज्यामिति न समझनेसे क्षेत्रका तत्त्व कैसे हृदयङ्गम कर सकते हैं। ब्रह्मगुप्तका ब्रह्मसिद्धान्त और भास्कराचार्यकी लीलावती प्रभृति ग्रन्थ पाठ करनेसे इसका विशेष प्रमाण मिलता कि हमारे प्राचीन भारतीय ऋषियोंने क्षेत्रतत्त्वके विषयमें विशेष उन्नतिसाधन किया था।

बहुतसे लोग जानते हैं कि इसी भारतवर्षसे अङ्कशास्त्रको उत्पत्ति हुई है। भारतवासियोंसे अरबों और उनसे युरोपीयोंने यह शास्त्र पढ़ा है। अङ्क देखो।

किन्तु कोई कोई यह भी कहता है—प्रति पूर्वकालको क्षेत्रतत्त्वका मूल ज्यामितिशास्त्र भारतवासी जानते न थे, यह शास्त्र मिसर और यूनानसे निकला है। युरोपीय पुरातत्त्वविदों और अङ्कशास्त्रविदोंके कथनानुसार थेलस तथा उनके शिष्य पिथागोरासने (ई०से ५४० वर्ष पूर्व) प्रकृत ज्यामिति-शास्त्र प्रकाश किया। उसके पीछे अनाक्सागोरस, हिपक्रेटिस आदि पण्डितोंने इस शास्त्रकी उन्नति की। फिर ई०से ३०० वर्ष पूर्व असाधारण अङ्कशास्त्रविद् युक्लिडने पूर्ववर्ती पण्डितोंका मत सङ्कलन करके पूर्णाकार ज्यामिति-शास्त्र निकाल दिया। यह ग्रन्थ अद्यापि सर्वत्र आदृत और मान्य है।

हम कहते हैं—जिस भारतवर्षसे अङ्कशास्त्रको सृष्टि है, उसी भारतवर्षसे क्षेत्रतत्त्व वा ज्यामिति शास्त्रको भी उत्पत्ति हुई है।

जगत्के प्राचीन वेदिक ग्रन्थमें क्षेत्रतत्त्वका मूलसूत्र प्रकटित हुवा है। बौधायन, आपस्तम्ब, मानव, मैत्रायणीय और कात्यायन-शुल्वसूत्र विद्यमान हैं। यह शुल्वसूत्र वैदिक कल्पसूत्रोंके अन्तर्गत हैं। इन सकल शुल्वसूत्रोंमें इसका मूलतत्त्व वर्णित हुवा है—कैसे भूमि, क्षेत्र, भुज प्रभृति लाना पड़ते हैं।

भिन्नाकारकी यज्ञीय वेदी बनानेका नियम विधिबद्ध करनेके लिये शुल्वसूत्रकी सृष्टि है। फिर क्रमशः शुल्वसूत्रसे ही भारतवर्षीय क्षेत्रतत्त्व उद्भावित हुवा है।

डाक्टर बुर्नेलने लिखा है—

"We must look to the Sulva portions of the Kalpa-sutras for the earliest beginning of Geometry among the Brahmans"*

कृष्णयजुर्वेद (तैत्तिरीयसंहिता ५।४।११।१) में शुल्वसूत्रका वीज दृष्ट होता है। जो हो, किन्तु हम देखते हैं कि पिथागोरस आदिसे बहुत पहले वेदके कल्पसूत्रमें ज्यामितिका अनुशीलन लिपिबद्ध हुवा। ऐसी दशामें मानना पड़ेगा कि थेलस, पिथागोरस आदिसे पूर्व हमारे ऋषि ज्यामिति जानते थे। पिथागोरसको जीवनीमें लिखा है कि वह यूनानसे भारत घूमने गये। उनके जिन ज्यामितिसूत्रोंका प्रथम उद्भावन करना जैसा प्रसिद्ध है, हम उन सबको आपस्तम्ब, बौधायन प्रभृति शुल्वसूत्रोंमें देखते हैं। इससे मालूम पड़ता कि पिथागोरसने भारतसे क्षेत्रव्यवहार सीख यूनानमें प्रचार किया होगा। हम अनुमान करते हैं कि अङ्कशास्त्रको तरह क्षेत्रतत्त्व भी निरपेक्ष भावमें भारतवासियोंसे ही उद्भावित हुवा है। ज्यामिति, परिमिति, बीजगणित, गणित, जरीप आदि शब्दोंमें विस्तृत विवरण द्रष्टव्य है।

प्राचीन भारतवासियोंने क्षेत्रव्यवहारके जो उपाय स्थिर किये हैं, वही यहां प्रदर्शित किये जाते हैं—

लीलावती-टीकाकार मुनीश्वर गणकके मतमें समतल भूमिका नाम क्षेत्र है। यह प्रधानतः चार भागोंमें विभक्त है—त्रिकोण, चतुष्कोण, वर्तुल और चापाकार। (मुनीश्वर) भास्कराचार्य आदि प्राचीन ग्रन्थकारोंने त्रिकोण और चतुष्कोण क्षेत्रको त्र्यस्र तथा चतुरस्र नामसे उल्लेख किया है। जिस क्षेत्रमें तीन कोण अथवा कोणोत्पादक तीन रेखायें रहतीं, उसको त्रिकोण वा त्र्यस्र कहते हैं। इसी प्रकार चार कोण वा कोणसम्पादक चार रेखायें रहनेसे क्षेत्र चतुष्कोण वा चतुरस्र कहलाता है। गोलाकार क्षेत्रका वर्तुल और धनुष जैसेका नाम चापक्षेत्र है। इन चार प्रकारके क्षेत्रोंको छोड़ कर पञ्चकोण, षट्कोण प्रभृति भी क्षेत्र हैं। परन्तु वह त्रिकोण और चतुष्कोणके अन्तर्गत जैसे होते हैं। इसीसे प्राचीन ऋषियोंने उनको अलग नहीं लिखा।

(मुनीश्वर)

* Burnell's Catalogue of a Collection of Sanskrit Mss. p. 29. शुल्वसूत्र देखो।

त्रिकोण क्षेत्र जात्य और त्रिभुज दो प्रकारका होता है। जिस त्रिकोण क्षेत्रकी तीन रेखायें—भुज, कोटि और कर्ण कहलातीं, वही जात्यत्र्यस्र है। फिर जिस त्रिकोणकी तीनों रेखाओंके विशेष कोई नाम नहीं और भुज जैसी लिखी जाती हैं, उसको त्रिभुज कहते हैं। चतुष्कोण वा चतुरस्र क्षेत्र तीन भागोंमें विभक्त है—समचतुर्भुज, आयत और विषम चतुर्भुज। जिस क्षेत्रके चारों वाहु परिसर समान रहते, उसको समचतुर्भुज कहते हैं। दो आयत वाहुवाले चतुष्कोणका नाम आयत है। फिर परस्पर चारों असमान वाहुओंका क्षेत्र विषमचतुर्भुज कहलाता है।

क्षेत्रव्यवहारमें वाहु जैसी ऋजुप्रदेश वा सरल रेखा वाहु नामसे उल्लिखित होती है। (मुनीश्वर) त्र्यस्र क्षेत्रमें तीन और चतुरस्रमें चार वाहु रहते हैं। कोटि और कर्ण भुजकी पारिभाषिक संज्ञा है।

त्रिकोण वा चतुष्कोण क्षेत्रके एक वाहुको इष्ट कल्पना करना चाहिये। यही इष्ट वाहु अपने क्षेत्रका भुज कहलाता है। इष्टवाहु वा भुजकी प्रतिकूलदिक्‌को अर्थात् भुजके अग्रसे जो रेखा दूसरी ओर खिंचती उसीका नाम कोटि है। (लीलावती) कोटि और भुज प्रदर्शन करनेके लिये एक क्षेत्र अङ्कित होता है—
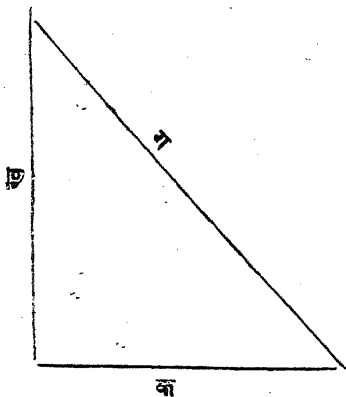
इस त्रिकोणक्षेत्रके क, ख और ग तीन वाहु हैं। उनमें यहां क वाहु इष्ट है। इस लिये वही इस क्षेत्रका भुज होता है। भुज वा क वाहुके अग्रसे जो ख रेखा ग रेखासे मिल गयी है, उसीको इस क्षेत्रकी कोटि समझना चाहिये।

चतुष्कोण वा त्रिकोण क्षेत्रके एकान्तर कोण पर अर्थात् एक कोणसे उसके विपरीत कोण तक तिर्यक्‌भावमें जो रेखा खींची जाती, कर्ण कहलाती है। (मुनीश्वर)
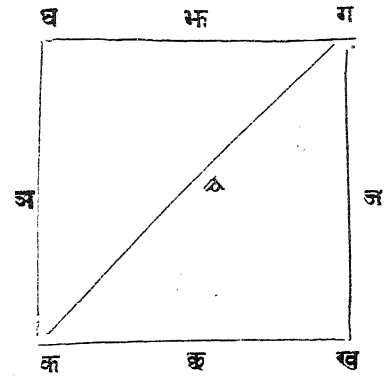
इस चतुष्कोण क्षेत्रके क, ख, ग और घ कोणोंमें क कोणसे ग कोण पर्यन्त जो च रेखा खिंची है। उसीका नाम कर्ण है। आयत चतुर्भुजमें भी ऐसा ही समझ लेना चाहिये। समचतुर्भुज और आयत चतुर्भुजमें कर्ण डालनेसे दो जात्यत्र्यस्र बनते हैं और वही एक कर्ण हुआ करता है। अङ्कित चतुर्भुज क्षेत्रको च रेखा कर्ण होनेसे झ ञ च और छ ज च दो त्रिभुज बन गये हैं। इन दोनों त्रिभुजोंकी च रेखा ही कर्ण है। अतएव सम वा आयत चतुर्भुजमें दो जात्यत्र्यस्र रहते हैं। (मुनीश्वर) लम्ब पीछे दिखलाया जावेगा।

भुज और कोटिका परिमाण अवगत रहनेसे कर्ण आनयन करनेका नियम लीलावतीमें इस प्रकार लिखा है—

पहला नियम—भुजवर्गके साथ कोटिका वर्ग योग करनेसे जो फल आयगा, उसका ही वर्गमूल अपने क्षेत्रके कर्णका परिमाण कहलायगा।

उदाहरण—जिस क्षेत्रके भुजका परिमाण ३ और कोटिका परिमाण ४ है, उसके कर्णका परिमाण कितना होगा ?
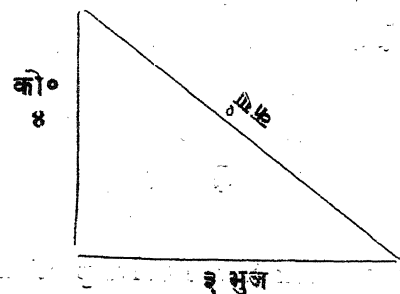
प्रक्रिया—अङ्कित क्षेत्रके भुज परिमाण ३का वर्ग ९ और कोटि ४का वर्ग १६ है। इन दोनोंका योगफल २५ आता है। इसीका नाम भुज और कोटिका वर्गयोग है। भुजकोटिके वर्गयोग २५ का वर्गमूल ५ निकलेगा। अतएव प्रथम नियमके अनुसार इस क्षेत्रका कर्ण ५ हुवा।

वर्गयोग करनेका सहज उपाय—जिन दो राशियोंका वर्गयोग करना हो, उनके घातका द्विगुण करके उसमें दोनों राशियोंका अन्तर (वियोगफल) मिला दो। यही वर्गयोग हो जावेगा। यथा—पूर्वप्रदर्शित क्षेत्रके भुज ३ और कोटि ४ का वर्गयोग करनेको ३ और ४के घात १२को द्विगुण करनेसे २४ फल आता है। उसमें ३ और ४का अन्तर १ मिलानेसे ३ और ४का वर्गयोग २५ निकल आवेगा।

दूसरा नियम—(कर्ण और भुज अवगत रहनेसे कोटि निकालनेका नियम) कर्णके वर्गसे भुजका वर्ग अन्तर करने पर जो अवशिष्ट रहेगा, उसका वर्गमूल अपने क्षेत्रकी कोटिका परिमाण ठहरेगा।

उदाहरण—जिस क्षेत्रके भुजका परिमाण ३ और कर्णका परिमाण ५ है, उसकी कोटिका क्या परिमाण होगा?
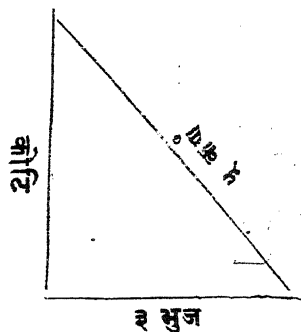
प्रक्रिया—अङ्कित क्षेत्रके भुज परिमाण ३ का वर्ग ९ और कर्ण ५ का वर्ग २५ है। वर्गद्वयका अन्तर १६ होता है। इसीका नाम भुजकर्णका वर्गान्तर है। भुजकर्णके वर्गान्तर १६का वर्गमूल ४ है। अतएव द्वितीय नियमके अनुसार इस क्षेत्रकी कोटि ४ निकली।

वर्गान्तर करनेका सीधा उपाय—जिन दो राशियोंका वर्गान्तर निकालना हो, उसके योगफलको उन्हींके अन्तर (वियोगफल) से गुण करो। यह गुणफल ही उक्त दोनों राशियोंका वर्गान्तर होगा। जैसे—पूर्वप्रदर्शित क्षेत्रके भुज और कर्णका वर्गान्तर करनेमें भुज ३ और कर्ण ५ के योगफल ८ को ३ और ५के अन्तर २ से गुण करने पर फल १६ होता है। अतएव ३ और ५ का वर्गान्तर १६ ही है।

तीसरा नियम—कोटि और कर्ण अवगत रहनेसे भुज ठहरानेका उपाय। कर्णके वर्गसे कोटिका वर्ग घटाने पर जो बचेगा, उसका वर्गमूल ही अपने क्षेत्रका भुज ठहरेगा।

उदाहरण—जिस क्षेत्रकी कोटिका परिमाण ४ और कर्णका परिमाण ५ है, उसके भुजका परिमाण कितना होगा?
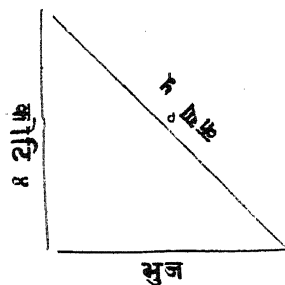
प्रक्रिया—अङ्कित क्षेत्रके कोटि-परिमाण ४का वर्ग १६ और कर्ण ५का वर्ग २५ है। इन दोनों वर्गोंका अन्तर ९ होता है। कर्णवर्ग २५से कोटिवर्ग १६ घटाने पर अवशिष्ट रहनेवाले ९का वर्गमूल ३ है। अतएव ३रे नियमके अनुसार इस क्षेत्रके भुजका परिमाण ३ हुवा।

इसी तृतीय नियमके अनुसार आयत वा चतुरस्र क्षेत्रका भुज, कोटि और कर्ण निकाला जा सकता है।

यदि किसी क्षेत्रके भुजवर्गमें कोटिवर्ग मिलानेसे आनेवाले राशिका वर्गमूल न मिले, तो उसका विशुद्ध कर्ण निर्णय करना कठिन है। ऐसा कर्ण अपने क्षेत्रका करणीगत कर्ण कहलाता है। ऐसे स्थल पर आसन्न कर्ण समझनेका उपाय लीलावतीमें इस प्रकारसे प्रदर्शित हुआ है—

चौथा नियम—जिस अङ्कका वर्गमूल निकालना हो, उसके छेद और अंश-गुणफलको कोई एक राशि इष्ट मानके उसीके वर्गद्वारा गुण करो। फिर गुणफलके

वर्गमूलको इष्टवर्गके मूलद्वारा गुणित छेदसे भाग करना चाहिये। इसमें जो लब्ध होगा, वही पूर्वराशिका आसन्न वर्गमूल माना जावेगा।

उदाहरण—जिस क्षेत्रकी कोटिका परिमाण $\frac{१३}{४}$ और भुजका भी परिमाण $\frac{१३}{४}$ है, उसके कर्णका क्या परिमाण होगा ?

प्रक्रिया—अङ्कित क्षेत्रका भुज $\frac{१३}{४}$ और कोटि $\frac{१३}{४}$ का वर्गयोग करनेसे पूर्वप्रदर्शित नियमके अनुसार $\frac{१६९}{८}$ आता है। इस राशिका शुद्ध वर्गमूल नहीं जैसा रहनेसे क्षेत्रका कर्ण करणीगत है। वर्गयोग $\frac{१६९}{८}$ का छेद ८ और अंश १६९के गुणफल १३५२को इष्टराशिके वर्ग १००००से गुण करनेसे गुणफल १३५२०००० होगा। इसका आसन्न मूल ३६७७ है। गुणमूल १००से छेद ८को गुण करने पर फल ८०० होता है। इससे ३६७७को भाग करने पर ४$\frac{४७७}{८००}$ लब्ध लगा। अतएव इस क्षेत्रका आसन्न कर्ण ४$\frac{४७७}{८००}$ निकला। शुद्ध कर्णकी अपेक्षा किञ्चित् न्यून वा अधिक परिमाण कर्णको आसन्न कर्ण कहते हैं।

भुजका परिमाण अवगत रहनेसे उसके क्षेत्रको कोटि और कर्णके प्रकारभेद जाननेका उपाय—

भुज एक प्रकारका रहते भी कोटि और कर्ण अनेक प्रकारका हो सकता है। यह बात केवल त्र्यस्रजात्य क्षेत्रमें ही सम्भव है।

पांचवां नियम—किसी एक राशिको इष्टकल्पना करना चाहिये। इष्टराशिको द्विगुण करके उससे भुजपरिमाणको गुण करने पर जो फल आता, वह एकस्थानमें रखा जाता है। फिर इष्टराशिके वर्गसे १ घटाने पर जो बचेगा, उससे पूर्वस्थापित राशिको बांटना पड़ेगा। इसमें जो लब्ध निकलता, वही अपने क्षेत्रका कोटि ठहरता है। फिर उक्त इष्टराशिसे गुण करने पर जो फल पाते, उससे भुजपरिमाणका घटाते हैं। इसमें अवशिष्ट अङ्क ही अपने क्षेत्रका कर्ण होगा।

उदाहरण—जिस क्षेत्रके भुजका परिमाण १२ है, स्थिर करो, उसको कोटि और कर्ण कितने प्रकारका होगा ?

इस स्थल पर इष्टकल्पनाके अनुसार कोटि और कर्णका परिमाण नानाप्रकार निकलेगा। २ इष्ट माननेसे ऐसा क्षेत्र बनता है—
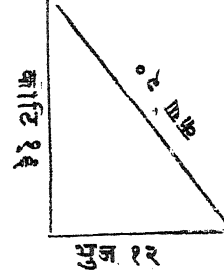
प्रक्रिया—इष्टराशि २को द्विगुण करनेसे ४ फल होता है। उससे भुज १२को गुण करने पर फल ४८ मिलेगा। इष्टराशि २के वर्ग ४से १ निकालने पर ३ अवशिष्ट रहता है। अवशिष्ट ३से पूर्वस्थापित ४८को भाग करने पर फल १६ होगा। अतएव पूर्वं नियमानुसार इस क्षेत्रकी कोटि १६ हुई। कोटि १६को इष्टराशि २से गुण करने पर फल ३२ आता है। उससे भुज १२ अन्तर करने पर २० बचेगा। अतएव पञ्चम नियमके अनुसार क्षेत्रका कर्ण २० पड़ा। भुज और कोटि स्थिर करके प्रथम नियमके अनुसार प्रक्रिया करनेसे भी ऐसा ही कर्ण होगा। इसी प्रकार २य और ३य नियमके अनुसार प्रक्रिया करनेसे भी कोटि और भुज ऐसा ही आता है। सकल उदाहरणोंमें इस प्रकार समझ लेना चाहिये।

इस स्थल पर ३ इष्ट माननेसे नीचे लिखे प्रकारका क्षेत्र उत्पन्न होता है—
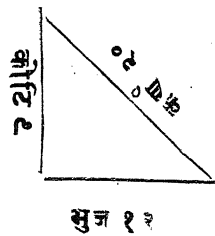
प्रक्रिया—अङ्कित क्षेत्रके भुजका परिमाण १२ है। इष्टराशि ३को द्विगुण करनेसे फल ६ होगा। इससे भुज १२को गुण करने पर ७२ आता है। इष्टराशि ३के वर्ग ९से १ निकाल डालने पर अवशिष्ट ८ बचेगा।

अवशिष्ट ८से पूर्वस्थापित ७२को भाग करने पर फल ९ होता है। अतएव ५वें नियमके अनुसार क्षेत्रका कोटि ९ हुई। कोटि ९को इष्टराशि ३से गुण करने पर फल २७ निकलता है। उसमें भुज १२ घटानेसे अवशिष्ट १५ रहेगा। अतएव पञ्चम नियमके अनुसार कर्ण १५ लगता है। इसी प्रकारसे ५इष्ट मानने पर कोटि ५ और कर्ण १३ होगा। अतएव इष्टके अनुसार कोटि और कर्ण नानाप्रकार बना करता है। इस स्थल पर इष्टराशि १ नहीं हो सकता। क्योंकि इष्ट १के वर्ग १से १ निकालने पर फल शून्य होता है। अतएव १ इष्ट कल्पना करनेसे कोटि शून्य जैसो होने पर १ इष्ट माना जा नहीं सकता। (मुनीश्वर)

भुज परिमाणके अनुसार जात्यत्र्यस्रकी कोटि और कर्ण लानेका उपाय अन्यप्रकारसे भी प्रदर्शित हुवा है।

छठां नियम—भुजके वर्गको किसी एक इष्टराशि द्वारा बांटने पर जो लब्ध होता, उसमें इष्टराशि मिला दिया जाता है। इस फलका अर्द्ध ही अपने क्षेत्रका कर्ण होगा। फिर इष्टगुणित भुजवर्गसे इष्टराशि अन्तर करने पर जो फल मिले, उसके अर्द्धको अपने क्षेत्रकी कोटि समझना चाहिये। उदाहरण ५म नियम-में बता दिया गया है।

२ इष्ट कल्पना करनेसे ६ठें नियमके अनुसार इस प्रकारका क्षेत्र बनता है।
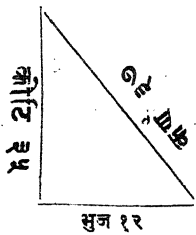
प्रक्रिया—अङ्कित क्षेत्रके भुज १२का वर्ग १४४ है। इष्ट २से भाग देने पर फल ७२ हुवा। फिर लब्ध ७२में इष्ट २ मिलानेसे फल ७४ आता है। इसका अर्ध ३७ है। अतएव ६ठे नियमके अनुसार क्षेत्रका कर्ण ३७ पड़ेगा। एवं लब्ध ७२से २ घटाने पर ७० अवशिष्ट रहता है। इसका आधा ३५ है। अतएव षष्ठ नियमके अनुसार क्षेत्रकी कोटि ३५ पड़ता है।

४ इष्ट माननेसे ऐसा क्षेत्र लगता है।
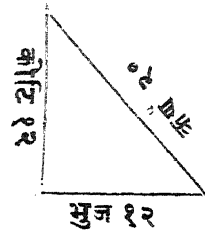
प्रक्रिया—अङ्कित क्षेत्र भुज १२के वर्ग १४४को इष्ट ४से बांटने पर फल ३६ आता है। लब्ध ३६के साथ इष्ट ४ योग करने पर ४० फल मिलेगा। इसका अर्द्ध २० है। अतएव ६ष्ठ नियमानुसार क्षेत्रका कर्ण २० बनेगा। फिर लब्ध ३६से इष्ट ४ निकाल डालने पर अव-शिष्ट ३२ बचता है। इसका आधा १६ है। अतएव ६ष्ठ नियमके अनुसार क्षेत्रकी कोटि १६ हो गयी। ५म नियमके अनुसार २ इष्ट मानके प्रक्रिया करनेसे भी ऐसा ही क्षेत्र उत्पन्न होता है। फिर ६ इष्ट रखनेसे क्षेत्रका कर्ण १५ और कोटि ९ होगी।

कर्णके परिमाणानुसार कोटि और भुजके परिमाण स्थिर करनेका उपाय लीलावतीमें इस प्रकारसे देखाया गया है—

सातवां नियम—कर्णके परिमाणको २से गुण करने पर जो फल आये, उसको इष्टराशि द्वारा गुण करके स्थापन करना चाहिये। इष्टवर्गके साथ १ योग करनेसे जो फल आता, उससे पूर्वस्थापित राशि बांट दिया जाता है। जो लब्ध निकलता, वही अपने क्षेत्रकी कोटि ठहरता है। फिर कोटिको इष्टराशि द्वारा गुण करने पर जो फल पाया जावेगा, उससे कर्ण अन्तर करने पर अवशिष्ट रहनेवाला राशि ही अपने क्षेत्रका भुज कहलावेगा।

उदाहरण—जिस क्षेत्रके कर्णका परिमाण ८५ हो, बतलावो, उसका भुज और कोटि कितने प्रकारका हो सकता है—

२ इष्ट कल्पना करनेसे ७वें नियमके अनुसार इस प्रकारका क्षेत्र उत्पन्न होता है—
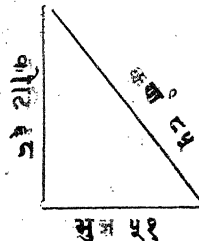
प्रक्रिया—अङ्कित क्षेत्रके कर्ण ८५को द्विगुण करनेसे १७० फल आता है। इसको २ इष्टसे गुण करने पर ३४० फल निकलेगा। २ इष्टका वर्ग ४ है। इसमें १ योग करनेसे ५ हुआ। इससे पूर्वस्थापित ३४०को भाग देने पर ६८ लब्ध होगा। अतएव ७म नियमके अनुसार इस क्षेत्रकी कोटि ६८ हुई। ६८ कोटिको २ इष्टसे गुण करने पर १३६ फल आता है। इससे ८५ कर्ण अन्तर करने पर ५१ अवशिष्ट रहता है। इसीसे ७वें नियमके अनुसार इस क्षेत्रका ५१ भुज पड़ेगा।

४ इष्ट कल्पना करनेसे सप्तम नियमके अनुसार ऐसा क्षेत्र उत्पन्न होगा—
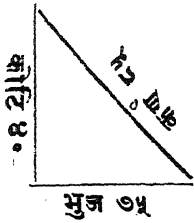
प्रक्रिया—अङ्कित क्षेत्रके ८५ कर्णको २से गुण करने पर १७० फल होगा। फिर इसको ४ इष्टसे गुण करने पर ६८० फल निकला। ४ इष्टका वर्ग १६ है। इसमें १ मिलानेसे १७ फल आता है। इसके द्वारा पूर्वस्थापित ६८० बांटने पर ४० लब्ध होगा। अतएव सप्तम नियमके अनुसार इस क्षेत्रकी ४० कोटि है। ४० कोटिको ४ इष्टसे गुण करने पर १६० फल मिलेगा। इससे ८५ कर्ण घटा देने पर ७५ अवशिष्ट रहता है। अतएव सातवें नियमानुसार क्षेत्रका ७५ भुज हुवा।

८वां नियम—कर्ण परिमाणको द्विगुणित करके स्थापन करना चाहिये। किसी एक अङ्कको इष्ट कल्पना करके उसके वर्गमें एक मिलानेसे जो लब्ध होगा उससे उससे पूर्वस्थापित अङ्कको बांटने पर जो लब्ध होगा उसको कर्णसे अन्तर करने पर बचनेवाला अङ्क क्षेत्रकी कोटि और लब्ध राशिको इष्ट राशिको गुण करने पर निकलनेवाला फल क्षेत्रका भुज ठहरेगा।

उदाहरण—सातवें नियममें उक्त है। २ इष्ट माननेसे आठवें नियममें इस प्रकारका क्षेत्र उत्पन्न होता है—
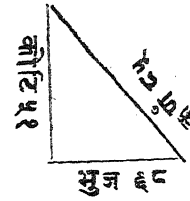
प्रक्रिया—अङ्कित क्षेत्रके ८५ कर्णको द्विगुण करनेसे १७० फल होता है। २ इष्टका वर्ग चार है। इसमें एक मिलानेसे पांच हो गया। इसके द्वारा पूर्वस्थापित १७० राशिको भाग देने पर ३४ लब्ध होगा। ३४ लब्धको ८५ कर्णसे अन्तर करने पर ५१ अवशिष्ट रहता है। अतएव अष्टम नियमसे ५१ कोटि हुई। फिर ३४ लब्धको २ इष्टसे गुण करने पर ६८ फल आयेगा। इस लिये ८वें नियमानुसार क्षेत्रका ६८ भुज है।

४ इष्ट लगानेसे आठवें नियममें ऐसा क्षेत्र बनता है—
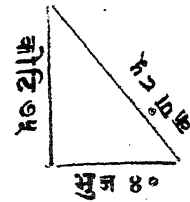
प्रक्रिया—अङ्कित क्षेत्रके ८५ कर्णको दुगनानेसे १७० फल आता है। ४ इष्टका वर्ग १६ है। इसमें १ मिलानेसे १७ हो जाता है। इससे पूर्वस्थापित राशिको बांटने पर १० लब्ध होगा। इसको ८५ कर्णसे घटाने पर ७५ बचता है। अतएव आठवें नियममें ७५ कोटि हुई। एवं १० लब्धको ४ इष्टसे गुण करने पर ४० फल मिलता है। अतएव अष्टम नियमके अनुसार ४० भुज हो गया।

२ इष्ट कल्पना करके त्रिकोण क्षेत्रकी कोटि, कर्ण और भुज निर्णय करनेका उपाय नीचे लिखते हैं—

नवम नियम—२ इष्ट मानके उनके घातको द्विगुण करनेसे आनेवाला फल कोटि, दोनोंका वर्गान्तर भुज और इष्ट राशिद्वयका वर्गयोग क्षेत्रका कर्ण होता है।

उदाहरण—कई त्र्यस्र क्षेत्रोंके कर्ण, कोटि और भुज निर्णय करो?

इस नियममें १ और २ दो राशियोंको इष्ट कल्पना करनसे ऐसा क्षेत्र होगा—
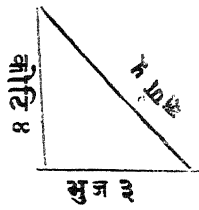
प्रक्रिया—१ और २ दो राशियोंको इष्ट मानके उभयके २ घातको दूना करनेसे ४ आता है । यही कोटि है । दोनों इष्ट राशियोंका वर्गान्तर ३ है। यही भुज है । फिर इष्टराशिद्वयका वर्गयोग ५ क्षेत्रका कर्ण हुवा।

२ और ३ इष्ट कल्पना करनेसे नवम नियमके अनुसार ऐसा क्षेत्र बनेगा—
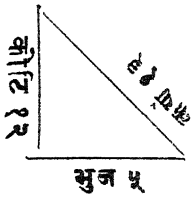
प्रक्रिया—२ और ३ इष्टराशिके घात ६को दुगनानेसे १२ होता है। यही कोटि है । इष्टराशियोंका वर्गान्तर ५ है। यह भुज हुवा। फिर इष्टराशिद्वयका १३ वर्गयोग क्षेत्रका कर्ण होता है।

प्रथम नियमके अनुसार इसका कोटिभुज लेकर प्रक्रिया करनेसे भी दूसरी बात नहीं। द्वितीयादि नियमोंमें भी ऐसा ही समझना चाहिये। इष्टको कल्पनाके अनुसार इस नियममें विभिन्न क्षेत्र बनते हैं। किन्तु दो समान राशियोंको इष्ट मान नहीं सकते। वैसा करनेसे कर्ण शून्य हो जाता है।

भुजका परिमाण और कोटि तथा कर्णका योगफल समझा रहनेसे कोटि और कर्ण पृथक् करनेका उपाय यह है—

१०वां नियम—भुजके वर्गसे कोटि और कर्णके योगफलको भाग करनेसे जो लब्ध आता, वह कोटि और कर्णके योगफलमें मिलाया जाता है । इसीका आधा कर्ण एवं लब्धको कोटि तथा कर्णके योगफलसे घटाने पर जो बचेगा, उसका आधा कोटिका परिमाण ठहरेगा।

उदाहरण—जिसकी कोटि और कर्णका योगफल ३२ और भुजका परिमाण १६ है, उसकी कोटि और कर्णको पृथक् रूपसे निर्देश करो।
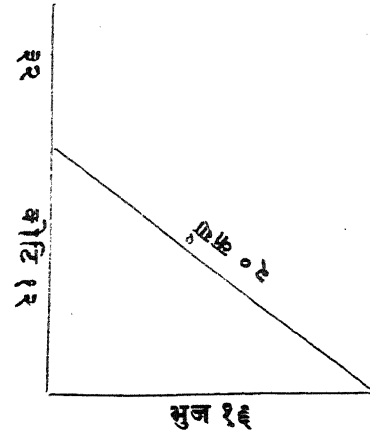
प्रक्रिया—भुज १६के वर्ग २५६को कोटि और कर्णके योगफल ३२से बांटने पर ८ लब्ध होगा। ८ लब्ध कोटि और कर्णके योगफल ३२में मिलानेसे ४० आता है। इसका अर्ध २० कर्ण है। एवं लब्ध ८को कोटि और कर्णके योगफल ३२से अन्तर करने पर २४ अवशिष्ट रहेगा। इसका अर्ध १२ कोटि है।

कोटिका परिमाण और भुज तथा कर्णका योगफल मालूम रहनेसे भुज तथा कर्ण अलग करनेका उपाय आगे लिखते हैं।

एकादश नियम—कोटिके वर्गको भुज और कर्णके योगफलसे भाग करने पर जो लब्ध होगा, उसको भुज तथा कर्णके योगफलसे घटाना पड़ेगा। फिर जो बाकी बचेगा, उसका अर्ध भुज ठहरेगा। भुज और कर्णके योगफलसे भुज अन्तर करने पर जो अवशिष्ट रहता, उसीको विद्वान् कर्णका परिमाण कहते है।
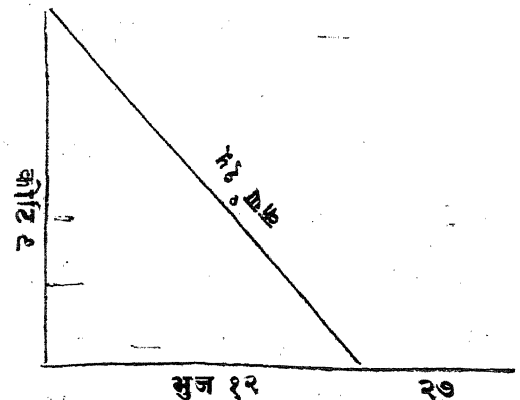
उदाहरण—जिस क्षेत्रके भुज और कर्णका योगफल २७ और कोटिका परिमाण ९ है। उसके भुज और कर्णको अलग अलग करके बतलावो।

प्रक्रिया—कोटि ९के वर्ग ८१को भुज और कर्णके योगफल २७से भाग करने पर ३ लब्ध हुवा। फिर कोटि और कर्णके योगफल २७से ३ लब्ध निकाल डालनेसे २४ अवशिष्ट रहता है। इसका आधा १२ कर्ण हुवा। भुज १२ योगफल २७से घटाने पर १५ बचता है। यही उक्त क्षेत्रका कर्ण है।

कोटि तथा कर्णका अन्तर और भुज समझा रहनेसे कोटि और कर्णका परिमाण इस उपायमें ठहराते हैं—

बारहवां नियम—भुजके वर्गको कोटि तथा कर्णके अन्तर द्वारा भाग करनेसे जो लब्ध आयेगा उसको कोटि और कर्णके अन्तरमें मिलानेसे निकलनेवाले फलका अर्ध कर्ण कहलायेगा। फिर लब्धको कोटि तथा कर्णके अन्तरसे घटाने पर जो बचता, वही भुजका परिमाण ठहरता है।

उदाहरण—जिस क्षेत्रकी कोटि और कर्णका अन्तर $\frac{1}{2}$ तथा भुज परिमाण २ है, उसकी कोटि और कर्णको निर्देश करो।
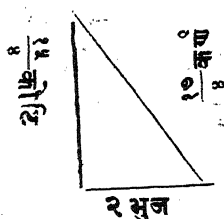
प्रक्रिया—अङ्कित क्षेत्रके २ भुजके वर्ग ४की कोटि और कर्णके अन्तर $\frac{1}{2}$से भाग करने पर ८ फल होता है। इससे कोटि और कर्णका अन्तर $\frac{1}{2}$ निकाल डालने पर $\frac{15}{2}$ फल मिलता है। इसका अर्ध $\frac{15}{4}$ उक्त क्षेत्रकी कोटि हुई। और भागफल ८के साथ $\frac{1}{2}$ योग करनेसे $\frac{17}{2}$ फल आता है। इसका अर्ध $\frac{17}{4}$ उक्त क्षेत्रका वर्ग है।

भुज परिमाण और कोटिका कियदंश ज्ञात होने और कोटिका अज्ञात अंश और भुजके योगफलके समान कर्ण रहनेसे कोटिके अज्ञात अंश जाननेका यह उपाय है—

तेरहवां नियम-कोटिके ज्ञात अंशको भुज परिमाण द्वारा गुण करके जो फल मिलेगा, उसको भुज-परिमाणके साथ मिले कोटिके ज्ञात द्विगुण अंशसे भाग करना चाहिये। इससे जो जो लब्ध होगा, वह कोटिका अविदित अंश ठहरेगा।

उदाहरण—जिस क्षेत्रकी कोटिके कियदंशका परिमाण १००, भुजका परिमाण २०० और कर्णका परिमाण कोटिके अविदित अंश तथा भुजके समान है, उसकी कोटिका अविदित अंश कितना है।
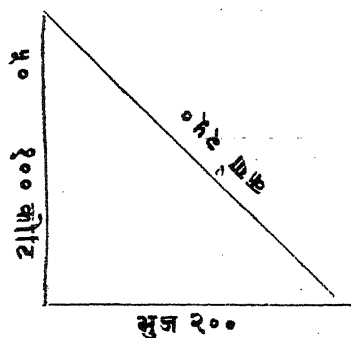
प्रक्रिया—कोटिके ज्ञात अंश १००को २०० भुजसे गुण करने पर २०००० होता है। फिर कोटिका ज्ञात अंश १०० दूना करने पर २०० हो गया। इसमें २०० भुज मिलानेसे ४०० फल आता है। इससे पूर्वस्थापित २००००को बांटने पर ५० लब्ध निकलता है। अतएव त्रयोदश नियमके अनुसार कोटिका अविदित अंश ५० ठहरा। फिर भुज और इस अंशका योग २५० कर्ण होता है।

कर्णका परिमाण और भुज तथा कोटिका योगफल मालूम रहनेसे भुज और कोटि अलग अलग करनेका यह उपाय है—

चतुर्दश नियम—कर्णके वर्गको द्विगुणित करके उससे भुज और कोटिके योगका वर्ग वियोग करना चाहिये। जो अवशिष्ट रहता, उसका वर्गमूल भुज और कोटिके योगफलमें मिलता है। इससे जो फल निकलता, उसका अर्ध कर्ण उक्त क्षेत्रकी कोटि ठह-

रता है। इसी प्रकार भुज और कोटिके योगफलसे उक्त वर्गमूलको अन्तरित करने पर जो बच जाता, उसका आधा भुज कहलाता है।

उदाहरण—जिस क्षेत्रके कर्णका परिमाण १७ और भुज तथा कोटिका योगफल २३ है, उसके भुज और कोटिको पृथक् करो।
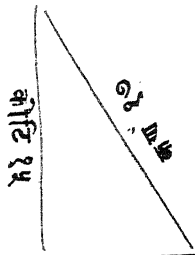
प्रक्रिया—कर्ण १७के वर्ग २८९को द्विगुण करनेसे ५७८ हुवा। इससे भुज और कोटिके योगफल २३का वर्ग ५२९ घटाने पर ४९ अवशिष्ट रहेगा। इसके वर्गमूल ७को भुज और कोटिके योगफल २३के साथ योग करने पर ३० आयेगा। इसका अर्ध १५ उक्त क्षेत्रकी कोटि है। एवं वर्गमूल ७को भुज और कोटिके योगफल २३से घटाने पर १६ अवशिष्ट रहेगा। इसका आधा ८ उक्त क्षेत्रका भुज है।

क्षेत्रका लम्ब निकालनेका उपाय—किसी चतुष्कोण क्षेत्रके मध्य एककोणान्तरित २ रेखायें अर्थात् २ कर्ण अङ्कित करनेसे जिस स्थान पर दोनों रेखायें परस्पर मिलतीं, उसी स्थानसे वाहु पर्यन्त खींचो जानेवाली एक सरल रेखाका नाम लम्ब है। लीलावतीमें उसके परिमाणको स्थिर करनेका उपाय इस प्रकारसे लिखा है—

पन्द्रहवां नियम—विपरीत वाहुद्वयके घातकको उनके योगफल द्वारा हरण करने पर जो लब्ध होता, वही उस क्षेत्रका लम्ब है।
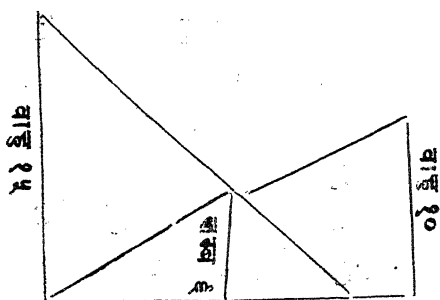
उदाहरण—जिस क्षेत्रका एक वाहु १५ और दूसरा वाहु १० है, उसका लम्ब कितना होगा?

प्रक्रिया—अङ्कित क्षेत्रमें वाहुद्वयके घात २५० को उनके योगफल २५से भाग देने पर ६ फल होगा। अतएव १६वें नियमके अनुसार इस क्षेत्रका लम्ब ६ निकला।

त्रिकोण वा चतुष्कोण क्षेत्र २ वाहुओंके योगफलसे और कोई एक वाहु वृहत् अथवा समान होनेसे अनुपपन्न क्षेत्र कहलाता है। गणितके अनुसार इस प्रकारका क्षेत्र नहीं होता और भुजपरिमाणकी सरल शलाका द्वारा भी देख पड़ता कि उसके सरल वाहु मिलनेसे क्षेत्र नहीं बन सकता।
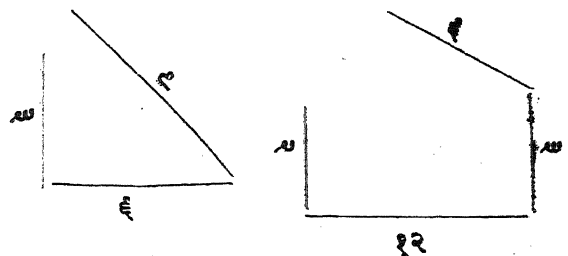
अङ्कित चतुर्भुजके १२ वाहुसे अपर दो वाहुओंका योगफल ८, ९ या ५ अल्प आता है। अतएव यह क्षेत्र अनुपपन्न क्षेत्र है अर्थात् ऐसे चार वाहु मिलनेसे चतुःसीमाबद्ध क्षेत्र नहीं बनता। अङ्कित वाहु अपने ३ और ६ का योगफल अपर वाहु ९के बराबर रहनेसे अङ्कित त्रिभुज भी अनुपपन्न क्षेत्र है।

त्रिभुज—जात्यत्रास्रमें जो ३ वाहुओंका नाम यथाक्रम भुज, कोटि और कर्ण रखा गया है, त्रिभुजमें उसका कोई नियम नहीं। इच्छानुसार किसी एक वाहुको भूमि और अपर दोको भुज कहा जा सकता है। त्रिभुजमें जिसको भूमि कल्पना करते, उसको छोड़ कर अपर दो वाहुओंके द्वारा उत्पन्न कोणसे भूमि पर्यन्त खींचो जानेवाली सरलरेखाको ही उक्त त्रिभुजका लम्ब कहते हैं। यह लम्ब भूमिके साथ मिश्रित होकर उसको दो भागोंमें विभक्त करता है। भूमिके यह दोनों खण्ड भुजद्वयकी आवाधायें कहलाते हैं। जो आवाधा जिस वाहुको निकटवर्ती रहती, वह उसकी आवाधा ठहरती है।
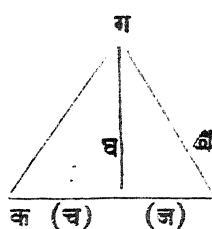
अङ्कित क्षेत्र क, ख और ग तीन भुज रहनेसे त्रिभुज कहलाता है। इच्छानुसार क बाहु इस क्षेत्रकी मही मान लिया गया है। ख और ग बाहुओंके योगसे जो कोण निकला है, उससे भूमि क रेखापर्यन्त घ सरल रेखा खिंची है। यही घ रेखा त्रिभुजका लम्ब है। इस घ रेखाने भूमिको दो टुकड़े करके च और ज दो आबाधायें बनायी हैं। इनमें च खण्ड ग बाहुकी आबाधा और ज खण्ड ख बाहुकी आबाधा है। आबाधाके अनुसार लम्ब और लम्बके अनुसार त्रिभुजका क्षेत्रफल निर्णीत होता है।

त्रिभुज क्षेत्रकी आबाधाओंको निर्णय करनेका उपाय—

सोलहवां नियम—त्रिभुज क्षेत्रके भुजद्वयका योगफल दोनोंके अन्तरसे गुण करना चाहिये। गुणफलको भूमिपरिमाण द्वारा भाग करनेसे जो लब्ध आता, वह भूमिके साथ मिलाया जाता है। योगफलका अर्ध ही बृहत् बाहुकी आबाधा है। फिर लब्धको भूमिसे अन्तरित करने पर जो अवशिष्ट रहता, उसीका आधा दूसरे बाहुकी आबाधा होता है।

उदाहरण—जिस त्रिभुजक्षेत्रकी भूमिका परिमाण १४ और दूसरे दोनों भुजोंका परिमाण १३ तथा १५ है, उसकी आबाधायें स्थिर करो।
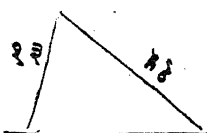
प्रक्रिया—अङ्कित क्षेत्रके भुजद्वय १३ और १५ हैं। इनके योगफल २८को इन्हींके २ अन्तरसे गुण करने पर ५६ फल हुवा। इसको भूमि १४से भाग करने पर ४ लब्ध आता है। भूमि १४में ४ लब्ध मिला देनेसे १८ फल निकलेगा। इसका अर्ध ९ है। अतएव षोड़श नियमके अनुसार बृहत् बाहुकी आबाधा ९ हुई और १४ भूमिसे ४ लब्ध निकाल डालने पर १० बचता है। इसका आधा ५ अपर बाहुकी आबाधा है।

लम्ब निर्णय करनेका उपाय यों बताया गया है—

सत्रहवां नियम—भुजके वर्गसे स्वीय आबाधाका वर्ग घटा देने पर जो बचेगा, उसका वर्गमूल अपने क्षेत्रका लम्ब ठहरेगा।

उदाहरण—पूर्वोक्त क्षेत्रका लम्ब स्थिर करो।
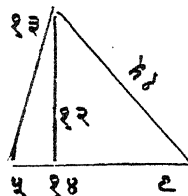
प्रक्रिया—बाहु १३के वर्ग १६९से आबाधा ५का वर्ग २५ घटाने पर १४४ अवशिष्ट रहता है। इसका वर्गमूल १२ है। अतएव १७वें नियमके अनुसार १२ लम्ब हुवा। बाहु १५ और आबाधा ९ द्वारा भी हिसाब लगाने पर लम्बा १२ होता है।

जिस स्थल पर लब्ध भूमिसे घटाया नहीं जा सकता उस स्थल पर ऋणगत आबाधा होती है।

त्रिभुजके क्षेत्रफलको निर्णय करनेका उपाय।

अट्ठारहवां नियम—भूमिके अर्धको लम्ब द्वारा गुण करने पर जो फल निकलेगा, वही त्रिभजका क्षेत्र फल ठहरेगा।

उदाहरण—पूर्वोक्त त्रिभुजका क्षेत्रफल कितना है?

प्रक्रिया—भूमि १४का आधा ७ है। इसको लम्ब १२से गुण करने पर ८४ फल निकलता है। अतएव १८वें नियमके अनुसार क्षेत्रफल ८४ आता है।

चतुर्भुजक्षेत्रके अस्फुटफल और त्रिभुजके स्फुटफल लानेका उपाय।

उन्नीसवां नियम—त्रिभुज वा चतुर्भुजके सकल बाहुओंके योगफलको २से भाग करने पर जो लब्ध हो, उसको ४ स्थानोंमें स्थापन करना चाहिये। फिर उसमें पृथक्‌रूपमें भुज अन्तरित करने पर जो अवशिष्ट रहेंगे, उसके घातका वर्गमूल चतुर्भुजक्षेत्रका अस्फुट फल और त्रिभुजका स्फुटफल ठहरेगा।

उदाहरण—जिस चतुर्भुज क्षेत्रका भूमि १४, मुख ८,* बाहु १३ और १२ और लम्ब १२, उसका अस्फुट-फल कितना होगा।
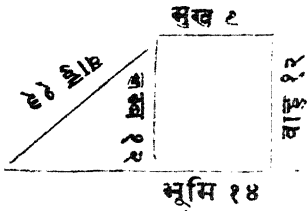
१९वें नियमके अनुसार प्रक्रिया करने पर १४१ अस्फुटफल निकलेगा स्फुट पीछे प्रदर्शित होगा।

द्वितीय उदाहरण—पूर्व प्रदर्शित त्रिभुजका क्षेत्र-फल स्थिर करो।
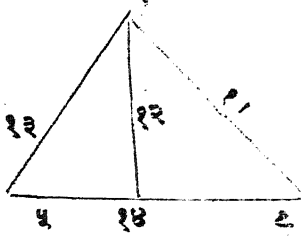
प्रक्रिया—बाहुत्रयका योगफल ४२ है। इसको २से बांटने पर २१ फल मिलता है। इसको चार जगह रख कर भुजत्रय निकाल डालने पर ८, ६, ७ और २१ अवशिष्ट रहता है। इनका घात ७०५६ ($८ \times ६ \times ७ \times २१ = ७०५६$) है। इसका वर्गमूल ८४ आता है। अतएव १९वें नियमके अनुसार ८४ फल हुवा। १८वें नियमसे प्रक्रिया करने पर भी ८४ ही फल निकलेगा।
अठारहवां नियम देखो।

समचतुर्भुजके सूक्ष्मफल निरूपण करनेका उपाय।

बीसवां नियम—समचतुर्भुज क्षेत्रमें इच्छानुसार एक कर्ण कल्पना करना चाहिये। फिर भुजवर्गको ४ द्वारा गुण करने पर जो लब्ध आता, वह कल्पित कर्णके वर्गसे घटाया जाता है। इसमें जो बचता, उसका वर्गमूल दूसरे कर्णका परिमाण ठहरता है। इसी प्रकार कर्णद्वयको स्थिर करके उनके घातको २से बांटने पर जो लब्ध हो, उसीको समचतुर्भुजक्षेत्र-का स्फुटफल समझना चाहिये। इस प्रकारके स्थल पर प्रथम कर्णको भुजके द्विगुणसे अधिक कल्पना नहीं करते।

उदाहरण—जिस समचतुर्भुज क्षेत्रके प्रत्येक बाहु-का परिमाण २५ है, उसके कर्णद्वयको स्थिर करके क्षेत्रफल निकालो।
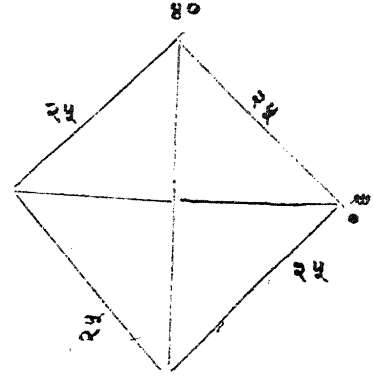
प्रक्रिया—अङ्कित क्षेत्रका प्रथम कर्ण इच्छानुसार ३० मान लिया गया है। कर्ण ३०का वर्ग ९०० है। भुज २५के वर्ग ६२५को ४से गुण करने पर २५०० फल होता है। इससे कल्पित कर्णका वर्ग ९०० निकालने पर १६०० बचेगा। इसका वर्गमूल ४० है। अतएव द्वितीय कर्ण ४० हुवा। दोनों कर्णोंका घात १२०० है। इसको २से भाग करने पर ६०० फल मिलता है। अतएव २०वें नियमके अनुसार क्षेत्रफल ६०० है।

इक्कीसवां नियम—समचतुर्भुज क्षेत्रके दोनों कर्ण समान रहनेसे बाहुद्वयका गुणफल ही क्षेत्रफल होता है।

उदाहरण—पूर्वप्रदर्शित चतुर्भुजके समान कर्ण और क्षेत्रफलको स्थिर करो।
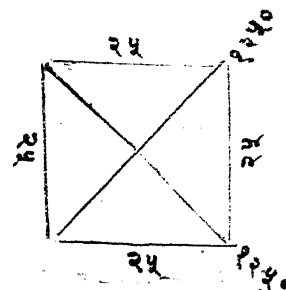
प्रक्रिया—प्रथम नियमके अनुसार प्रक्रिया करने

* अधःस्थित भुजको भूमि और भूमिके सम्मुखस्थित भुजको मुख कहते हैं। (मुनीश्वर)

पर कर्णद्वयका परिमाण करणीगत १२५० होगा। भुजद्वयका घात ६२५ है। अतएव क्षेत्रफल भी ६२५ ही होगा।

आयत चतुर्भुजके फल निरूपण करनेका उपाय।

बाईसवां नियम—आयत चतुर्भुजके एक आयत बाहु अर्थात् दैर्घ्यको स्वल्प बाहु विस्तृतिद्वारा गुण करने पर जो फल आये, वही क्षेत्रफल हो जायेगा।

उदाहरण—जिस आयत चतुर्भुजके आयत बाहुका परिमाण ८ और विस्तृति ६ है, उसका क्षेत्रफल क्या होगा ?
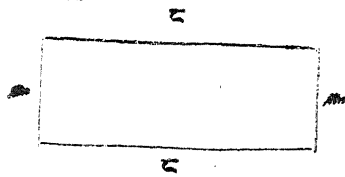
आयत बाहु वा दैर्घ्य ८को विस्तृति ६से गुण करने पर ४८ फल आता है। अतएव २२वें नियमके अनुसार क्षेत्रफल ४८ हो गया।

विषमचतुर्भुजके क्षेत्रफल स्थिर करनेका उपाय।

तेईसवां नियम—विषमचतुर्भुज क्षेत्रके लम्ब बराबर रहनेसे मुख और भूमिके योगफलको २से भाग करने पर जो लब्ध हो, उसको लम्बद्वारा गुण करना चाहिये। इसका फल ही क्षेत्रफल होगा।

उदाहरण—उस विषमचतुर्भुज क्षेत्रका क्षेत्रफल स्थिर करो; जिसका मुख ११, भूमि २२, लम्ब १२ और बाहुद्वय १३ तथा २० हो।
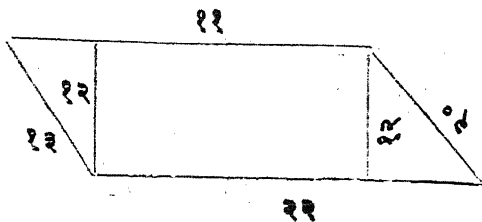
प्रक्रिया—मुख ११ और भूमि २२के योगफल ३३को २से भाग करने पर $\frac{३३}{२}$ और इसको लम्ब १२से गुण करने पर १९८ ($\frac{३३}{२} \times \frac{१२}{१} = १९८$) फल होता है। अतएव २३वें नियमसे क्षेत्रफल १९८ निकला। तीन क्षेत्र मानके हिसाब लगा कर देखनेसे भी यही फल आता है।

विषमचतुर्भुजके फल स्थिर करनेका उपाय।

चौबीसवां नियम—विषमचतुर्भुजका कर्ण स्थिर करके उसको भूमि मान लेने पर दो त्रिभुज बनेंगे। इन दोनों त्रिभुजोंका क्षेत्रफल मिलानेसे जो आता, वही विषमचतुर्भुज क्षेत्रका फल हो जाता है।

उदाहरण—जिस विषमचतुर्भुजके चारो बाहु यथाक्रम ४०, ५१, ६८ और ७५ हैं; उसका क्षेत्रफल कितना कितना होगा ?
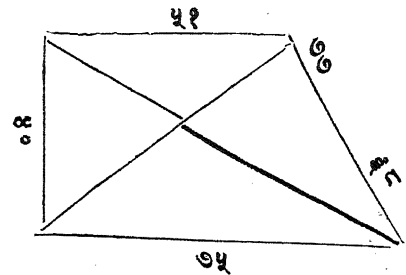
पूर्वप्रदर्शित २०वें नियमके अनुसार वृहत् कर्णको ७७ कल्पना करने पर अपर कर्ण ८५ होगा। फिर प्रथम कर्ण ७७को भूमि मान लेनेसे २ त्रिभुज उत्पन्न होते हैं—
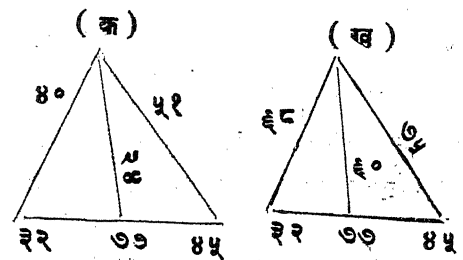
क त्रिभुजको भूमि ७७ और बाहुद्वय ४० तथा ५१ है। षोडश नियमसे प्रक्रिया करने पर आबाधाएं ३२ और ४५ निकलेंगी। आबाधाएं स्थिर करके १७वें नियमसे हिसाब लगाने पर लम्ब २४ पड़ता है। लम्ब निकल आने पर अष्टादश नियमके अनुसार क्षेत्रफल ९२४ होगा। ख त्रिभुजकी भूमि ७७ और बाहुद्वय ६८ तथा ७५ है। १६वें नियमसे इसकी आबाधायें ३२ और ४५ हुईं। फिर १७वें नियमसे हिसाब लगाने पर लम्ब ६० आयेगा। अन्तको १८वें नियमसे क्षेत्रफल २३१० ठहरता है। क त्रिभजके फल ९२४के साथ

त्रिभुजका फल २२१० योग करने पर ३२३४ फल होता है। अतएव २४वें नियममें क्षेत्रफल ३२३४ निकलता है।

सूचीक्षेत्र—विषमचतुर्भुज क्षेत्रके मुखलग्न बाहुद्वयका अग्रभाग सरलभावसे बढ़ाने पर उत्पन्न होनेवाला त्रिभुज सूची कहलाता है। (मुनीश्वर)

उदाहरण—इस विषमचतुर्भुज क्षेत्रका अङ्कित करो, जिसकी भूमि ३००, बाहुद्वयका परिमाण २६० तथा १९५, मुख १२५, कर्णोंका परिमाण २८० एवं ३१५ और लम्बद्वयका परिमाण १८९ और २२४ है। प्रथम प्रश्न—इस क्षेत्रमें कर्ण और लम्बके योगस्थानसे भूमि पर्यन्त अंशोंका परिमाण कितना है? द्वितीय प्रश्न—जिस स्थानमें दोनों कर्ण मिले हैं, वहांसे भूमि पर्यन्त एक लम्ब खींचने पर उसका परिमाण और उसके योगसे बननेवाली दो आबाधाओंका परिमाण क्या होगा? तृतीय प्रश्न—इस क्षेत्रके भुजद्वयका मुखलग्न अग्रभाग सरलभावमें वर्धित करने पर जो सूची क्षेत्र बनेगा; उसके लम्ब, आबाधा और भुजद्वयका परिमाण क्या लगेगा?
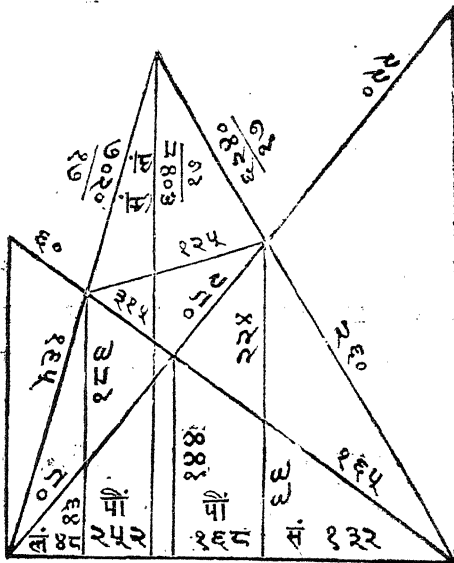
पच्चीसवां नियम—जिस लम्बके अधःखण्डको निरूपण करते, उस लम्ब और तदाश्रित बाहुके वर्गान्तर मूलको उसके सन्धि कहलाता और भूमिको सन्धि द्वारा हीन करने पर जो अवशिष्ट रहता उसको पीठ कहलाता है। सन्धिको दो स्थानोंमें स्थापन करके एकको अपर लम्ब और दूसरेको कर्ण द्वारा गुण करना चाहिये। इसमें प्रथमको पीठसे भाग करने पर जो आता वही लम्बका अधःखण्ड हो जाता है। फिर दूसरेको कर्ण द्वारा बांटने पर कर्णका अधःखण्ड निकलता है।

उक्त क्षेत्रके २८० कर्ण और २२४ लम्बका अधःखण्ड यह है—
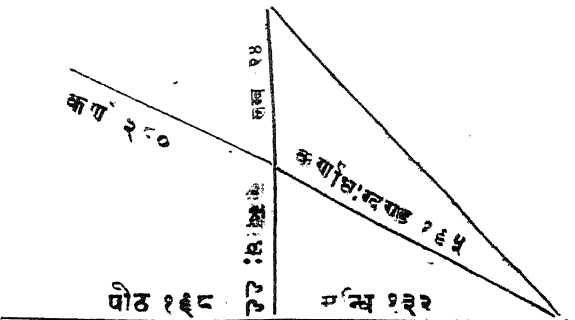
प्रक्रिया—लम्ब २२४ और तदाश्रित बाहु २६० है। इनका वर्गान्तर १७४२४ और उसका वर्गमूल १३२ होता है। अतएव सन्धि हुई १३२। भूमि ३००से सन्धि १३२ अन्तरित करने पर १६८ अवशिष्ट रहता है। यही पीठ हो गया। सन्धि १३२को पर लम्ब १८९ द्वारा गुण करके पीठमे बांटने पर ९९ फल निकलेगा वही लम्बका अधःखण्ड है। सन्धि १३२को पर कर्ण ३१५ द्वारा गुण करके पीठ द्वारा भाग करनेसे १६५ फल निकलेगा यही कर्णका अधःखण्ड है। इस हिसाबसे द्वितीय लम्बका सन्धि ४८, पीठ २५२, लम्बका अधःखण्ड ६४ और कर्णका अधःखण्ड ८० होगा।

छब्बीसवां नियम—उभय लम्बोंको भूमि द्वारा अलग अलग गुण करना चाहिये। गुणफलको स्व स्व पीठ द्वारा भाग करने पर दो राशि लब्ध होंगी। इन दोनों राशियोंको दो बाहु मानके १५वें नियमसे प्रक्रिया करने पर दूसरे सवालका जवाब आ जायेगा।

प्रक्रिया—१८९ और २२४ दोनों लम्बोंको भूमि ३००से गुण करने पर ५६७०० तथा ६७२०० फल निकलेगा। इन दोनों राशियोंको अपने अपने पीठ द्वारा भाग करने पर २२५ और ४०० लब्ध होगा। इन दोनों राशियोंको दो बाहु कल्पना करके १५वें नियमके

अनुसार प्रक्रिया करने पर लम्ब १४४ और आबाधायें १०८ तथा १९२ पड़ेगी।

सत्ताईसवां नियम—स्वीय सन्धिको पर लम्ब द्वारा गुण करके लम्ब द्वारा बांटने पर जो लब्ध आयेगा, वह सम कहलायेगा। सम और पर सन्धिके योगफलको हार कहते हैं। सम और पर सन्धिको पृथक् रूपमें भूमि द्वारा गुण करके हारसे बांटने पर दो राशि निकलेंगी। वही सूचीकी आबाधायें होंगी। परलम्बको भूमि द्वारा गुण करके हारसे बांटने पर जो लब्ध होता, वही सूचीका लम्ब है। भुजद्वयको सूचीके लम्ब द्वारा भाग करनेसे आनेवाले लब्ध सूचीके भुज होते हैं।

प्रक्रिया—प्रदर्शित सूचीक्षेत्रका एक लम्ब २२४ और उसका सन्धि १३२ है। १३२ सन्धिको परलम्ब १८९से गुण करके २२४ लम्ब द्वारा भाग देने पर $\frac{८९१}{८}$ लब्ध होगा। यही सम है। इसमें परसन्धि ४८ मिला दें पर $\frac{१२७५}{८}$ फल निकलेगा। इसीका नाम हार है। सम $\frac{८९१}{८}$को भूमि ३००से गुण करने पर $\frac{२६७३००}{८}$ फल हुवा। इसको हार $\frac{१२७५}{८}$से भाग करने पर $\frac{३५६४}{१७}$ फल निकलता है। परसन्धि ४८को भूमि ३००से गुण करने पर $\frac{१४४००}{१}$ फल लगता है। इसको हार $\frac{१२७५}{८}$से बांटने पर $\frac{१५३६}{१७}$ फल आयेगा। अतएव सूचीकी आबाधायें $\frac{१५३६}{१७}$ और $\frac{३५६४}{१७}$ हो गयीं। इस नियमसे प्रक्रिया करने पर द्वितीय सम $\frac{५१२}{९}$ और द्वितीय हार $\frac{१०००}{९}$ होगा। सम परसन्धिको भूमि ३००से गुण करके हार द्वारा भाग देने पर भी सूचीकी आबाधायें $\frac{१५३६}{१७}$ और $\frac{३५६४}{१७}$ होती हैं। परलम्ब २२४ को भूमि ३००से गुण करके हार $\frac{१७००}{९}$ द्वारा भाग देनेसे $\frac{६०४८}{१७}$ फल लगता है। अतएव सूचीका लम्ब $\frac{६०४८}{१७}$ हो गया। भुज १९५ और २६०को सूची लम्ब $\frac{६०४८}{१७}$ द्वारा गुण करके यथाक्रम लम्ब १८९ और २२४ द्वारा भाग करने पर $\frac{६२४०}{१७}$ और $\frac{७०२०}{१७}$ फल आता है। अतएव २७वें नियमके अनुसार सूचीके भुज $\frac{६२४०}{१७}$ और $\frac{७०२०}{१७}$ हो गये।

व्यासके परिमाण ठहरानेका उपाय।

अट्ठाईसवां नियम—व्यासके परिमाणको ३९२७ द्वारा गुण करके १२५०से भाग देनेसे जो लब्ध रहता, वही सूक्ष्म परिधि ठहरता है। व्यासके परिमाणको २२से गुण करके ७से बांटने पर जो कुछ लब्ध आता वही परिधिका स्थूल परिमाण माना जाता है। स्थूल-परिमाणके अनुसार ही कार्य किया करते हैं।

उदाहरण—जिस वृत्तक्षेत्रके व्यासका परिमाण ७ है, उसके सूक्ष्म और स्थूल परिधि-परिमाणको स्थिर करो।
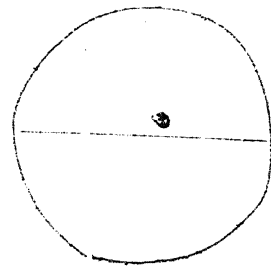
प्रक्रिया—अङ्कित वृत्तक्षेत्रके व्यास ७को ३९२७से गुण करने पर २७४८९ फल होता है। इसको १२५०से भाग करने पर २१ $\frac{१२३९}{१२५०}$ लब्ध निकलता है। अतएव २८वें नियमसे इस क्षेत्रका सूक्ष्म परिधि २१ $\frac{१२३९}{१२५०}$ ठहर गया। व्यास ७को २२से गुण करने पर १५४ फल होगा। इसको ७से बांटने पर लब्ध २२ आता है। इस लिये स्थूल परिधि २२ है।

परिधिके परिमाण अनुसार व्यास स्थिर करनेका उपाय।

उनतीसवां नियम—परिधिके परिमाणको १२५०से गुण करके ३९२७से भाग देने पर जो लब्ध होता, वही व्यासका सूक्ष्म परिमाण है। फिर ७ द्वारा गुण करके २२से भाग देने पर स्थूल परिमाण रूप फल मिलता है।

उदाहरण—जिस वृत्तका परिधि २२ है, उसके व्यासका सूक्ष्म और स्थूल परिमाण क्या होगा?
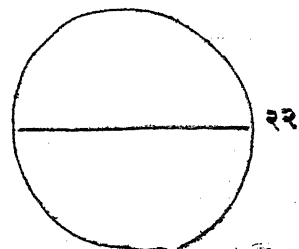
प्रक्रिया—परिधि २२को १२५०से गुण करने पर ७५२०० फल होता है। इसको ३९२७से भाग करनेपर ७$\frac{११}{३९२७}$ फल निकलेगा। अतएव व्यासका सूक्ष्म परिमाण ७$\frac{११}{३९२७}$ हो गया। फिर परिधि २२को ७से गुण करने पर १५४ फल आता है। इसमें २२का भाग लगानेसे ७ फल मिलेगा। अतएव स्थूल परिमाण ७ है।

वृत्तक्षेत्रके फल निकालनेका उपाय।

तीसवां नियम—वृत्तक्षेत्रके व्यासको ४से भाग करने पर जो लब्ध होगा, वह परिधिसे गुणा किया जावेगा। फिर यह गुणनफल ही वृत्तक्षेत्रका फल ठहरेगा।

उदाहरण—जिस वृत्तका व्यास परिमाण और परिधि २१$\frac{१२३९}{१२५०}$ है, उसका क्षेत्रफल क्या होगा?
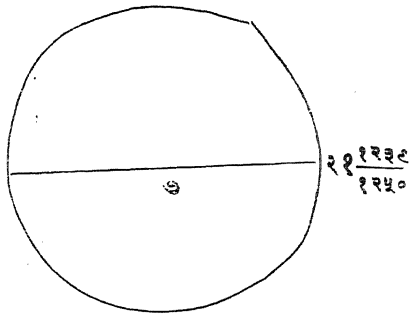
प्रक्रिया—व्यास ७को ४से भाग देने पर १$\frac{३}{४}$ लब्ध हुवा। इसका परिधि २१$\frac{१२३९}{१२५०}$से गुण करने पर ३८$\frac{२४२३}{५०००}$ फल आता है। अतएव वृत्तका फल ३८$\frac{२४२३}{५०००}$ हो गया।

गोलके पृष्ठफलका निर्णय।

इकतीसवां नियम—३०वें नियमके अनुसार वृत्तका फल स्थिर करके उसको ४से गुण करने पर जो आयेगा, वही गोलपृष्ठका फल कहलावेगा।
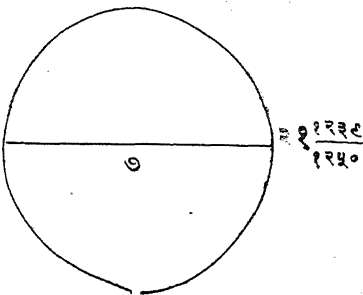
उदाहरण—जिस गोलका परिधि २१$\frac{१२३९}{१२५०}$ और व्यास ७ है, उसका पृष्ठफल स्थिर करो।

प्रक्रिया—३०वें नियमके अनुसार प्रक्रिया करने पर क्षेत्रफल ३८$\frac{२४२३}{५०००}$ होता है। इसको ४से गुण करने पर गोलपृष्ठफल १५३$\frac{११७३}{१२५००}$ आवेगा।

गोलान्तर्गत घनफल निर्णय।

बत्तीसवां नियम—गोलके पृष्ठफलको व्यास द्वारा गुण करनेसे जो फल आवे, उसको ६से बांट देना चाहिये। इसमें जो लब्ध आता, वही गोलान्तर्गत घनफल कहलाता है।

उदाहरण—पूर्वोक्त गोलका घनफल स्थिर करो।

प्रक्रिया—३१वें नियमसे हिसाब लगाने पर गोलका पृष्ठफल १५३$\frac{११७३}{१२५००}$ होता है। इसको व्याससे गुण करके ६से भाग देने पर गोलका घनफल १७९$\frac{२४८७}{२५०००}$ निकलेगा।

परिधिका धनुषके आकार-जैसा एक देश चाप कहलाता है। चापके एक अग्रभागसे अपर अग्र पर्यन्त जो सरलरेखा खींचते, उसको ज्या कहते हैं। चापके मध्यसे ज्याके मध्य तक जानेवाली सरल रेखाका नाम शर है। (सुनाम्बर)
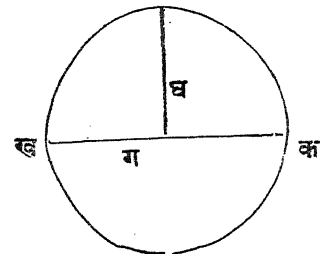
अङ्कित वृत्तके परिधिका क से ख पर्यन्त अंश चाप कहला सकता है। चापके अग्रभाग क से ख पर्यन्त सरल ग रेखा खिंची है। इसका नाम ज्या है। एवं चापके बीचसे ग रेखा तक जो सरल रेखा लगी है, उसको शर कहते हैं।

तेंतीसवां नियम—ज्या और व्यासके योगफलको उन्हींके अन्तरसे गुण करने पर जो लब्ध हो, उसके वर्गमूलको व्याससे घटा देना चाहिये। इससे जो बचता वही अर्ध शरका परिमाण ठहरता है। व्याससे शर वियोग करके अवशिष्टको शर द्वारा गुण करते हैं। इस गुणफलका वर्गमूल दुगना देनेसे ज्या निकलेगी। ज्याको २से बांटने पर जो लब्ध होता, उसके वर्गको शर द्वारा भाग किया जाता है। फिर लब्धके साथ शर योग करनेसे व्यास बनेगा।

उदाहरण—जिस वृत्तक्षेत्रका व्यास १० और ज्या ६ हो, उसका शरपरिमाण निर्णय करो।
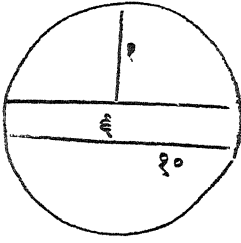
प्रक्रिया—व्यास १० और ज्या ६का योगफल १६ है। इनके अन्तर ४से योगफलको गुण करने पर ६४ फल होता है। इसका वर्गमूल ८ व्याससे अन्तरित करने पर २ अवशिष्ट रहेगा। उसका अर्ध १ शर है।

उदाहरण—जिस वृत्तका शर १ और व्यास १० है, उसकी ज्याका परिमाण स्थिर करो।

व्यास १०से शर १ घटाने पर ९ बचता है। इसको शर १से गुण करने पर भी ९ ही फल होगा। उसके वर्गमूल ३ को द्विगुण करें पर ६ आता है। सुतरां क्षेत्रकी ज्याका परिमाण ६ है।

उदाहरण—किसी वृत्तका शर १ और ज्या ६ रहने-से उसके व्यासका क्या परिमाण ठहरेगा ?

ज्या ६को दो भाग करनेसे फल ३ निकलता है। इसके वर्ग ९ में शर १ मिलानेसे फल १० हो जावेगा। अतएव व्यासका परिमाण १० ठहरा। व्यास देखो।

वृत्तक्षेत्रके मध्यवर्ती समवाहु त्रिभुजसे नवभुज पर्यन्त क्षेत्रके भुज परिमाण निकालनेका उपाय।

चौतीसवां नियम—वृत्तके व्यासको १०३९२३, ८४८५३, ७०५३४, ६००००, ५२०५५, ४५९२२ और ४१०३१ से अलग अलग गुण करके १२०००० द्वारा भाग देने पर क्रमशः त्रिभुजसे नवभुज तक भुजपरिमाण समझ सकते हैं।

उदाहरण—जिस वृत्तके व्यासका परिमाण २००० है, उसके बीचमें बने त्रिभुजसे नवभुज पर्यन्त भुजोंका परिमाण निर्णय करो। प्रत्येक भुज परिधि-संलग्न होगा।

त्रिभुज
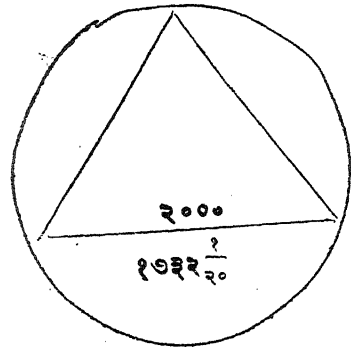
व्यास २०००को १०३९२३से गुण करने पर फल २०७८४६००० होता है। इसको १२००००से भाग करने पर प्रत्येक भुजका परिमाण $१७३२\frac{१}{२०}$ निकलेगा।

चतुर्भुज
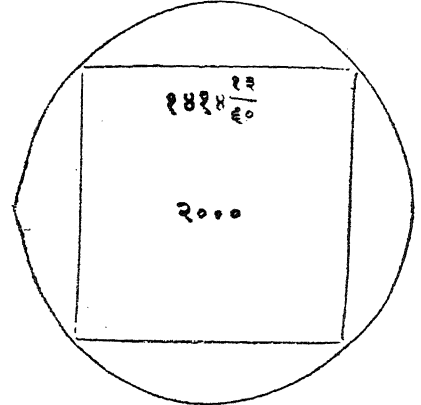
व्यास २००० को ८४८५३से गुण करने पर फल १६९७०६००० होता है। इसको १२०००० द्वारा भाग करने पर अङ्कित चतुर्भुजके प्रत्येक वाहुका परिमाण $१४१४\frac{१३}{६०}$ होगा।

पञ्चभुज
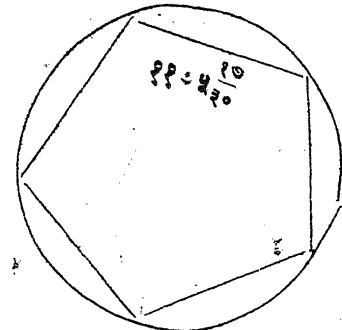
व्यास २००० को ७०५३४ द्वारा गुण करने पर १४१०६८००० फल हुवा। इसको १२००००से भाग करने पर वाहुका परिमाण $११७५\frac{१७}{३०}$ आता है।

षष्ठभुज
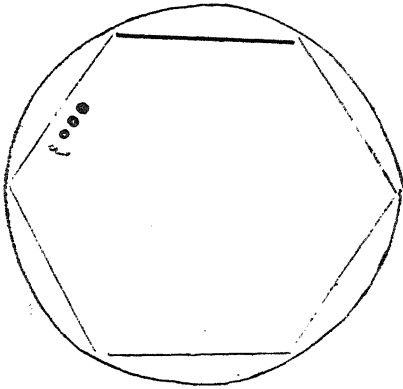
व्यास २०००को ६०००० द्वारा गुण करनेसे फल १२०००००००० होता है। इसको १२००००से बांटने पर प्रत्येक भुजका परिमाण १००० पड़ेगा।

सप्तभुज
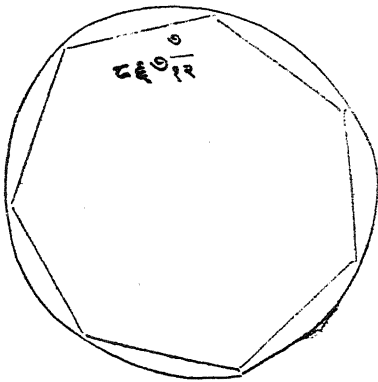
व्यास २०००को ५२०५५ द्वारा पूरण करने पर १०४११०००० फल निकला। इसको १२००००से भाग करने पर भुजका परिमाण $८६७\frac{७}{१२}$ आवेगा।

अष्टभुज
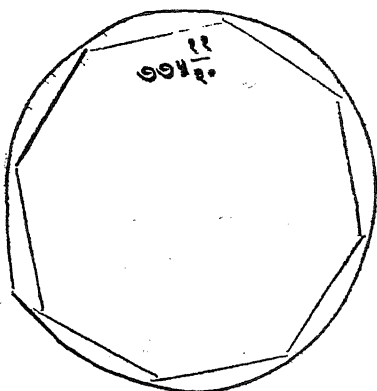
व्यास २०००को ४५९२२ द्वारा गुण करके १२००००से भाग देने पर भुजफल $७६५\frac{११}{३०}$ होता है।

नवभुज
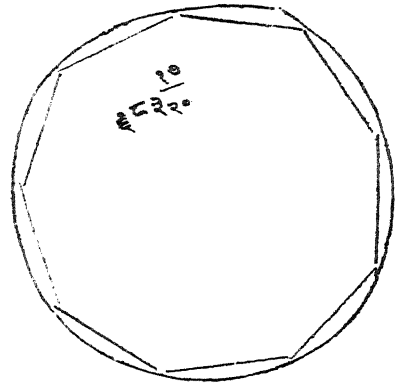
व्यास २०००को ४१०३१ द्वारा गुण करके गुणफलको १२००००से बांटने पर प्रत्येक भुजका परिमाण $६८३\frac{१०}{२०}$ होगा।

स्थूल ज्या निरूपण करनेका उपाय।

पैंतीसवां नियम—परिधिसे चाप अन्तरित करके अवशिष्टको चाप द्वारा पूरण करने पर जो फल आता वह प्रथम कहलाता है। परिधिके वर्गको ४से बांटने पर जो लब्ध हो, उसको ५से पूरण करना चाहिये। फिर गुणफलसे प्रथम घटाने पर जो अवशिष्ट रहेगा, उससे चतुर्गुणित व्यास द्वारा प्रथमको गुण करने पर जो राशि होगी वही ज्याका स्थूलपरिमाण है।

उदाहरण—जिस वृत्तका परिधि ७५४ और व्यास २४० हो, उसकी ९ ज्याओंका परिमाण स्थिर करो।
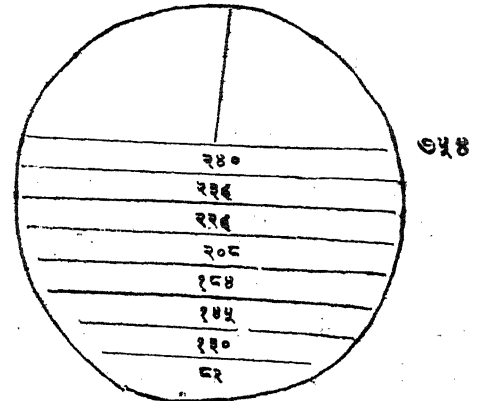
प्रक्रिया $४१\frac{८}{९}$को १से ९ तक पृथक् गुण करने पर आनेवाले ९ राशि ही ९ चापोंका परिमाण है। अतएव ३५वें नियमके अनुसार ज्याओंका स्थूल परिमाण यथाक्रम ४२, ८२, १२०, १५४, १८४, २०८, २२६, २३६ और २४० आता है।

ज्याके परिमाण अनुसार चापके परिमाणका निर्णय।

छत्तीसवां नियम—व्यासको ४ द्वारा पूरण करके व्यासमें मिलाते रखना चाहिये। फिर परिधिके वर्ग और व्यासके चतुर्थांश और ५से पूरण करते हैं। गुणफलको पूर्वस्थापित राशि द्वारा भाग करने पर जो लब्ध होगा वह परिधिवर्गके चतुर्थांशसे घटाया जाता है। फल जो अवशिष्ट रहता, उसके वर्गमूलको परिधिके अर्धांसे अन्तरित करना पड़ता है। अवशिष्टको चापका परिमाण समझना चाहिये।

उदाहरण—पूर्वोक्त क्षेत्रकी ज्याके अनुसार चापका परिमाण स्थिर करो।
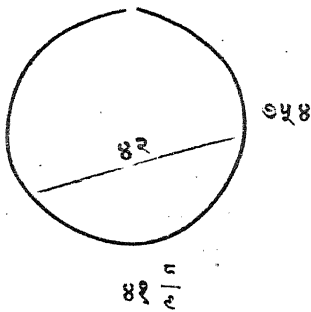
इसमें ३६वें नियमसे चापका परिमाण ४१$\frac{८}{९}$ होगा। इसको २ प्रभृति द्वारा गुण करने पर द्वितीयादि चापोंका परिमाण स्थिर होगा।

क्षेत्रसम्भव (सं० पु०) क्षेत्रे सम्भवति उत्पद्यते, क्षेत्र-सं भू-अच्। १ चञ्चुक्षुप, एक सली। २ भेण्डानाम क्षुप, भिण्डीका पेड़। (त्रि०) ३ भूमिजात, खेतसे पैदा।

क्षेत्रसम्भवा (सं० स्त्री०) क्षेत्रसम्भव-टाप्। शशाण्डुली, कचेलिया।

क्षेत्रसम्भूत (सं० पु०) क्षेत्रे सम्भूतः, ७-तत्। १ कुन्दुरु तृण, कुंदरू। (त्रि०) २ भूमिजात, जमीनमें पैदा।

क्षेत्रसाति (सं० स्त्री०) क्षेत्रस्य सातिः, ६-तत्। भूमिभजन, क्षेत्रका आश्रय। (ऋक् ७।१९।३)

क्षेत्रसाधाः (वै० त्रि०) क्षेत्रं साधयति, क्षेत्र-साधि-असुन्। क्षेत्रसाधक, यज्ञनिष्पादक। (ऋक् ८।३१।१४)

क्षेत्रसिंह—चित्तोर अधिपति महाराणा हमीरके पुत्र। हमीरके साथ मालदेवकी एक विधवा कन्याका विवाह हुआ था। उन्हींके गर्भसे इन्होंने जन्म लिया। हमीर देखो।

यह पिताके मृत्यु पीछे १४२१ संवत्‌को चित्तोरके सिंहासन पर बैठे थे। पिताकी भांति क्षेत्रसिंह भी एक विज्ञ, दक्ष और वीरपुरुष रहे। राज्याभिषेकके अल्पकाल पर ही इन्होंने लीलापत्तनसे अजमेर और जहाजपुर तक आत्मसात कर लिया था। फिर मण्डलगढ़, दशपुर और समस्त चम्पन प्रदेश मेवाड़का अधीनस्थ हो गया। कहते हैं—वीरवर क्षेत्रसिंहने बाकरोल नामक स्थानमें दिल्लीके बादशाह हुमायं तुगलकको पराजय किया था।

बनवेके एक हारवंशीय सामन्तसे इनका विवाद हुवा था। उसी अन्तर्विवादमें (प्रायः १३०९ संवत्‌को) वीराग्रणी क्षेत्रसिंहने इहलोक परित्याग किया।

क्षेत्रसीमा (सं० स्त्री०) क्षेत्रस्य भूमेः सीमा मर्यादा, ६-तत्। अङ्गार, तुष वा वृक्ष आदिसे चिह्नित भूमि-सीमा, खेत या जमीन्‌की हद। सीमाविवाद देखो।

क्षेत्राजीव (सं० त्रि०) क्षेत्रेण तदुत्पन्नशस्यादिना आजीवति जीविकां निर्वाहयति, आ-जीव कर्तरि अच्। क्षेत्रजीवी, कृषक, किसान, खेतसे जीनेवाला।

क्षेत्राधिदेवता (सं० स्त्री०) क्षेत्रस्य अधिदेवता, ६-तत्। सिद्धस्थान वा तीर्थस्थानकी अधिष्ठात्री देवता। इन देवताका नाम भी योग करके लेना चाहिये।

"देवं गुरुं गुरुस्थानं क्षेत्रं क्षेत्राधिदेवताम्।
सिद्धं सिद्धाधिकारांश्च श्रीपूर्वं समुदीरयेत्॥" (प्रयोगसार)

क्षेत्राधिप (सं० पु०) क्षेत्रस्य अधिपः, ६-तत्। १ मेष प्रभृति द्वादश राशिके अधिपति ग्रह। क्षेत्र देखो। २ क्षेत्र-स्वामी, खेतका मालिक।

क्षेत्रामलकी (सं० स्त्री०) क्षेत्रजाता आमलकी, मध्य-पदलो०। १ भूम्यामलकी, भुई आंवला। २ बुवली।

क्षेत्रिदास, चण्डिदास देखो।

क्षेत्रिय (सं० क्ली०) १ शाक, सब्जी। २ घास। ३ पर-देह-चिकित्सा, दूसरे जिस्मका इलाज। (पु०) पर-क्षेत्रे चिकित्स्यः, परक्षेत्रस्य क्षेत्रियच् आदेशः। क्षेत्रियच परक्षेत्रे चिकित्स्यः। पा ५।२।९२। ४ अन्य शरीरमें चिकित्सायोग्य रोग, जिस बीमारीका इलाज दूसरे शरीरमें हो सके। (त्रि०) क्षेत्र-घः। ५ क्षेत्रस्वामी, खेतवाला। ६ पर-दाररत, छिनरा।

क्षेत्री (सं० पु०) क्षेत्रं स्त्री अस्त्यस्य, क्षेत्र-इनि। १ स्वामी, खाविन्द। (मनु ९।३२) (त्रि०) २ कृषक, किसान।

क्षेत्रीकरण (सं० क्ली०) रसायन प्रयोगके योग्य बनानेका देहका पञ्चकर्मादिसे विशुद्धिकरण।

क्षेत्रेक्षु (सं० पु०) क्षेत्रे इक्षुरिव। यावनालधान्य, ज्वार, मकई, जोंड़री, जुण्डी। २ शिम्बीधान्यभेद।

क्षेत्रापेक्ष (सं० पु०) श्वफल्कके पुत्र। (भागवत ९।२४।१६)

क्षेप (सं० पु०) क्षिप्-घञ्। १ निन्दा, हिकारत, बुराई।
"क्षेपं करोति चेद्दण्ड्यःपणानर्धत्रयोदश।" (याज्ञवल्क्य २।२०७)
२ विक्षेप, ठोकर। ३ प्रेरण, पहुंचावा। ४ लेपन, लगाव, लिपाई। ५ हेला। ६ लङ्घन, फांकाकशी। ७ गर्व, घमण्ड। ८ विलम्ब, देर। ९ गुच्छ, गुच्छा। (मेघदूत ४८) १० क्षिप्यमाण, फेंका जानेवाला।

क्षेपक (सं० त्रि०) क्षिप-ण्वुल्। क्षेपणकर्ता, फेंकनेवाला। (पु०) क्षेप स्वार्थे कन्। २ ग्रन्थमध्य प्रक्षिप्त पाठ, किसी किताबमें ऊपरसे मिलाया हुवा पाठ। ३ गुच्छ, गुच्छा। ४ अङ्कविशेष, एक अदद।

क्षेपण (सं० क्ली०) क्षिप्-ल्युट्। १ लङ्घन, फांकाकशी। २ अपवाद, बदनामी। ३ मारण, कत्ल। ४ विक्षेप। ५ यापन, गुजर, गुजारा, बिताव। "आयुषः क्षेपणार्थं तु दातव्यं स्त्रीधनं सदा।" (हारीत) ६ रज्जुनिर्मित एकप्रकार शिकय, रस्सीका बना हुवा एक सिकहर। इससे प्रस्तर प्रभृति दूरदेशको भेजे जाते हैं। (भागवत ३।१९।१८) ७ परित्याग, छोड़, छोड़ाई। "उपाकर्मणि चोत्सर्गे त्रिरात्रं क्षेपणं स्मृतम्"। (मनु ४।११९)

८ मल्लोंका युद्धकौशलविशेष, पहलवानोंकी कुश्तीका एक पेंच, झटका।

क्षेपणि (सं० स्त्री०) क्षिप बाहुलकात् अनि वा ङीप्। १ नौकादण्ड, डांड़, बल्ली। २ जालविशेष, एक फन्दा। ३ क्षेपणीय अस्त्रविशेष, फेंक कर मारा जानेवाला हथियार। (रामायण ६।७।२४)

क्षेपणिक (सं० पु०) डांड़ चलानेवाला, जो बल्लीसे नाव खेता हो।

क्षेपणी (सं० स्त्री०) बन्दूककी गोली, गुल्ला, ढेला वगैरह। यह प्रक्षिप्त होनेसे वक्रपथमें गमन करती है। क्षेपणि देखो।

क्षेपणीय (सं० त्रि०) क्षिप्-अनीयर्। १ क्षेपणयोग्य, फेंकने लायक। (पु०) २ दीर्घ तथा वृहत् फलयुक्त खड्ग, लम्बे और बड़े फलकी तलवार। इसका पर्याय भिन्दिपाल है।

क्षेपदिन (सं० क्ली०) विंशति अंशयुक्त क्षयदण्ड। अहर्गण स्थिर करनेको इसका प्रयोजन पड़ता है।
(सिद्धान्तशिरोमणि, गणिताध्याय)

क्षेपपात (सं० पु०) ग्रहकक्षा और क्रान्तिमण्डलका योग। (गोलाध्याय)

क्षेपिमा (सं० पु०) क्षिप्रस्य भावः, क्षिप्र-इमनिच् अकारस्य च लोपः गुणश्च। पृथ्वादिभ्य इमनिज् वा। पा ५।१।१२२। क्षिप्रत्व, शीघ्रता, फुरती, जलदी।

क्षेपिष्ठ (सं० त्रि०) अतिशयेन क्षिप्रः, क्षिप्र-इष्ठन् अकारस्य रेफस्य च लोपः गुणश्च। स्थूलदूरयुवह्रस्वक्षिप्रक्षुद्राणां यणादिपरं पूर्वस्य च गुणः। पा ६।४।१५६। अतिशय शीघ्र, निहायत तेज या जलदबाज़।

क्षेपीयान् (सं० त्रि०) अतिशयेन क्षिप्रः, क्षिप्र-ईयसुन् पूर्ववत् साधुः। अतिशय क्षिप्र, बहुत तेज।

क्षेप्तव्य (सं० त्रि०) क्षिप्-तव्य। क्षेपणके योग्य, फेंका जानेवाला।

क्षेप्ता (सं० त्रि०) क्षिपति, क्षिप् कर्तरि तृच्। क्षेपणकारी, फेंकनेवाला। (रामायण ४।९।८४)

क्षेम (सं० पु०-क्ली०) क्षि-मन्। १ चोर नाम गन्धद्रव्य, चोवा। २ चण्डा नामक औषध। ३ कलिङ्गदेशके कोई राजा। (भारत १।६७।६५) ४ चन्द्रवंशीय शुचि राजाके पुत्र। (भागवत ९।२२।४७) ५ शान्तिके गर्भमें धर्मके औरससे उत्पन्न पुत्र। (विष्णुपुराण १।७।२८) ६ लब्धवस्तुका रक्षण, मिली हुई चीजकी हिफाजत। (वाजसनेयसंहिता १८।७) ७ प्लक्षद्वीपका एक वर्ष। प्लक्षद्वीप देखो। ८ कोई मठ। ९ मुक्ति, नजात, छुटकारा। १० कुशल, मङ्गल, खैर आफियत। ११ ज्योतिःशास्त्रमें जन्मनक्षत्रसे गणनाका चतुर्थ नक्षत्र। यह नक्षत्र शुद्ध और शुभकार्यमें प्रशस्त है। १२ कोई सम्बन्ध। (त्रि०) १३ मङ्गलयुक्त, भला।

क्षेमक (सं० पु०) क्षेम स्वार्थे कन्। १ चोरनाम गन्धद्रव्य, चोवा। २ कोई नाग। (भारत १।३५।११) ३ पाण्डुवंशीय शेष राजा। इनके पीछे ही पाण्डुवंशका लोप हो गया। (भागवत ९।२२।४३) ४ शिव। ५ कोई राक्षस। यह राक्षस वाराणसीमें रहता था। (हरिवंश २९ अध्याय) ६ प्लक्षद्वीपका एक वर्ष। (लिङ्गपुराण ४६।४३)

क्षेमकर (सं० त्रि०) क्षेमं करोति, कृ-अच्। मङ्गलकारक, भलाई करनेवाला। (भारत १४।३५।३७)

क्षेमकर्ण—१ अर्जुनके पौत्र और जनमेजयके सहचर। अवध प्रदेशमें प्रवाद है कि उन्होंने खेरी जिलेका खेरी नगर स्थापन किया था। खेरी देखो।

२ कोई सङ्गीतशास्त्रविद्। यह महेशपाठकके पुत्र रहे। इन्होंने १५७० ई०को रागमाला नामक एक सङ्गीतशास्त्र रचा था।

क्षेमकर्मा (सं० त्रि०) क्षेमं मङ्गलजनकं पालनरूपं कर्म येषाम्, बहुव्री०। पालनेवाला। (भागवत २।६।६)

क्षेमकल्याण, क्षमाकल्याण देखो।

क्षेमकाम (सं० त्रि०) क्षेमं मङ्गलं कामयति, क्षेमकामि-अण् उपपदस०। शुभाकांक्षी, खैरख्वाह। (ऋक् १०।६४।१२)

क्षेमकार (सं० त्रि०) क्षेमं करोति, क्षेम-कृ-अण्। मङ्गलकारक, भलाई करनेवाला। (भट्टि ५।७७)

क्षेमकृत् (सं० त्रि०) क्षेमं करोति, क्षेम-कृ-क्विप्। मङ्गलकारक, भला करनेवाला।

"दुर्लभं प्राकृतं वाक्यं दुर्लभः क्षेमकृत् सुतः।
दुर्लभा सदृशी भार्या दुर्लभः स्वजनः प्रियः॥" (चाणक्य ५४)

क्षेमगुप्त (सं० पु०) काश्मीरके एक राजा। यह अतिशय दुश्चरित थे। काश्मीर देखो।

क्षेमङ्कर (सं० त्रि०) क्षेमं करोति, क्षेम-कृ-खच्। क्षेमप्रियमद्रेऽण् च।पा ३।२।४४। १ मङ्गलकारक, भला करनेवाला। पर्याय—अरिष्टताति, शिवताति, शिवङ्कर, क्षेममार, भद्रङ्कर, शुभङ्कर। (पु०) २ बुद्धभेद। ३ कोई संस्कृत ग्रन्थकार। इन्होंने निर्णयसार और सारस्वतप्रक्रियाटीकाकी रचना किया। ४ सिंहासनद्वात्रिंशतिका नामक संस्कृत ग्रन्थरचयिता। इन्होंने उक्त ग्रन्थ सिंहासनबत्तीसीको मूल मराठी भाषासे संस्कृतमें अनुवाद किया।

क्षेमङ्करा (सं० स्त्री०) १ देवीविशेष, कोई देवता।

"क्षेमाण् देवेषु सा देवी कृत्वा दैत्यपतेः क्षयम्।
क्षेमङ्करी शिवेनोक्ता पूज्या लोके भविष्यति॥" (देवीपुराण ४७ अ०)

२ शङ्खचिल्ली, सफेद गलेकी एक चील। तान्त्रिक मतमें इसका देखके नमस्कार करनेका विधान है। नमस्कारका मन्त्र है—

"कुङ्कुमारुणसर्वाङ्गि! कुन्देन्दुधवलानने।
मत्स्यमांसप्रिये देवि क्षेमङ्करि नमोऽस्तु ते॥
कृशोदरि महाचण्डे मुक्तकेशि! बलिप्रिये।
कुलाचारप्रसन्नास्ये नमस्ते शङ्करप्रिये॥" (तन्त्रसार)

क्षेमजय—प्रबोधचन्द्रोदय नामक संस्कृत वैद्यक ग्रन्थ रचयिता।

क्षेमजित् (सं० पु०) मगधदेशीय एक राजा। इन्होंने ३६ वर्ष मगधमें राजत्व किया। यह क्षेमार्चि नामसे प्रसिद्ध थे। मगध देखो।

क्षेमतर (सं० त्रि०) अतिशयेन क्षेमः। अतिशय हितकर, बहुत भला। (गीता १।४५)

क्षेमदर्शी (सं० त्रि०) क्षेमं द्रष्टुं शीलमस्य, क्षेम-दृश-णिनि। १ मङ्गलदर्शी, भलाईको देखनेवाला। (पु०) २ चन्द्रवंशीय कोई राजा। इन्होंने कालकवृक्षीयके निकट योग सीखा था। (भारत १२।८२।१६)

क्षेमधन्वा (सं० पु०) क्षेमं लब्धरक्षणपटु धनुर्यस्य, बहुव्री०। १ पुण्डरीकके पुत्र सूर्यवंशीय कोई राजा। (हरिवंश १५।१७) २ सावर्ण मनुके पञ्चम पुत्र। (हरिवंश ४।८४) ३ षड्गुणा देवीभक्त मण्डनगोत्रीय कोई राजा। यह गविष्ठके पुत्र थे। (सह्याद्रिखण्ड १।३३।१५६)

क्षेमधर्मा (सं० पु०) क्षेमः हितकरः धर्मो व्यवहारो यस्य, बहुव्री०। एक राजा। यह शिशुनागवंशीय काकवर्णके पुत्र थे। (विष्णुपुराण ४।२४)

क्षेमधारी—अत्रिगोत्रीय एक राजा। यह वागीश्वरीदेवीके भक्त और गाधिके पुत्र थे। (सह्याद्रिखण्ड १।३२।१३)

क्षेमधूर्त (सं० पु०) एक जनपद, कोई मुल्क। यह कूर्म विभागकी उत्तरदिक्को अवस्थित है।

(मार्कण्डेयपुराण ५८।४७)

क्षेमधूर्ति (सं० पु०) एकजन राजा। यह भारतयुद्धमें दुर्योधनके पक्ष पर थे और महातेजस्वी बृहत्क्षेत्रके साथ घोरतर युद्ध करके निहत हुवे। (भारत ७।१०७ अ०)

क्षेमधृत्वा (सं० पु०) पौण्डरीकका नामान्तर।

(पञ्चविंशब्राह्मण)

क्षेमनन्दनाथ—सौभाग्यकल्पलता नाम तान्त्रिक ग्रन्थके रचयिता।

क्षेमपाल—कौण्डिन्यगोत्रीय एक राजा। यह कालिका-

के भक्त और सुतन्तुक पुत्र थे। (सह्याद्रिखण्ड १।३१।२३)

क्षेमफला (सं० स्त्री०) क्षेमं फलं यस्य, बहुव्री० ततः टाप्। उदुम्बरवृक्ष, गूलरका पेड़।

क्षेमसूर्ति (सं० पु०) कलष देशके एक राजा। (भारत १।६७ अ०)

क्षेमराज (सं० पु०) एक काश्यपगोत्रीय कामाक्षीदेवी-भक्त राजा। ऐरावतके वंशमें इनका जन्म हुवा था। इनके पुत्रका नाम दारि रहा। (सह्याद्रिखण्ड '११'२१) २ क्षेमवती नगरीके प्रतिष्ठाता। क्षेमवती देखो। ३ काश्मीर निवासी एक प्रसिद्ध ग्रन्थकार। इनको लोग राजानक क्षेमराज कहते थे। यह विख्यात दार्शनिक अभिनव-गुप्तके शिष्य रहे। इनके रचित अनेक संस्कृत ग्रन्थ मिलते हैं। उनमें यह कई एक प्रधान हैं—नेत्रोद्योत (तन्त्र), भैरवानुकरणस्तोत्र, वर्णोदयतन्त्र, शिवस्तोत्र, स्पन्दनिर्णय, स्पन्दसन्दोह और स्वच्छन्दोद्योत। सिवा इसके अभिनवगुप्तरचित ईश्वरप्रत्यभिज्ञासूत्रविमर्शिनी की 'प्रत्यभिज्ञाहृदय' नाम्नी टीका, अभिनवगुप्त रचित परमार्थसारकी 'परमार्थसारसंग्रहनिवृति', उत्पलदेव रचित परमेशस्तोत्रावलीकी विवृति, वसुगुप्तरचित शिव-सूत्रकी 'शिवसूत्रविमर्शिनी' टीका, साम्बपञ्चाशिका-टीका और नारायणरचित स्तवचिन्तामणिकी टीका भी पायी जाती है। यह ग्रन्थ ई० एकादश शताब्दके प्रारम्भमें लिखित हुए।

४ कोई संस्कृत ग्रन्थकार। साधारणतः यह क्षेम-शर्मा कहलाते थे। इनके पिताका नाम नरवैद्य मन्मथ रहा। इन्होंने संस्कृत भाषामें क्षेमकुतूहल और चिकि-त्सासारसंग्रह नामक वैद्यकग्रन्थ रचना किये।

क्षेमराजपुर—युक्तप्रान्तीय बसती जिलेके अमरोहा परग-नेका एक प्राचीन नगर। यह अक्षा० २६° ५६´ उ० और देशा० ८२° २३´ पूर्वमें अवस्थित है। घघरा नदीके कूलमें रामघाट या बलुआबाजारसे उत्तर-पूर्व क्षेमराज-पुर ५॥ कोस पड़ता है। यहां T जैसी आकृतिका एक ह्रद है। पुरातन बौद्धस्तूपका भग्नावशेष भी देख पड़ता है। पायर और आसोजपुरको देखनेसे मालूम होता कि दोनों ग्राम पुरातन भग्नावशेष परही बनाये गये हैं। सम्भवतः पूर्वोक्त ह्रदके उत्तर-पूर्व और दक्षिण-दिक्‌को प्राचीन क्षेमवती नगरी अवस्थित रही। क्षेम-राजपुरसे दक्षिण मघानवान नामक दो क्षुद्र ग्राम हैं। क्षेमराजपुरको पश्चिम और दक्षिणदिक्‌को मनोरा वा मनोरमा नदी प्रवाहित है।

क्षेमराम—एक स्मृतिशास्त्रसंग्रहकार। इनको रचित प्रेतमुक्तिदा, रामनिबन्ध और श्राद्धपद्धति मिलती है।

क्षेमवती—एक प्राचीन नगरी। बौद्धोंके ग्रन्थमें लिखा है कि क्रकुच्छन्द बुद्ध मेखलराज क्षेमके कुलपुरोहित थे। "समवुद्धस्तोत्र" में इसी मेखलाका नाम क्षेमवती लिखा गया है। क्रकुच्छन्द देखो। बहुतसे लोगोंको विश्वास है कि वही क्षेमवती आजकल क्षेमराजपुर-जैसी कहला सकती है। क्षेमवतीका थोड़ा अंश आधुनिक क्षेमराज-पुर और कुछ भाग पायर तथा आसोजपुर नामक ग्रामोंके मध्य अवस्थित था। क्षेमराजपुर देखो।

क्षेमवान् (सं० त्रि०) क्षेमं मङ्गलं अस्यास्ति, क्षेम अस्त्यर्थे मतुप् मस्य वः। मङ्गलयुक्त, भला, अच्छा।

क्षेमवृद्धि (सं० त्रि०) क्षेमस्य वृद्धिमस्त्यस्य, क्षेमवृद्ध-इनि। अतिशय मङ्गलयुक्त, बहुत भला या अच्छा।

क्षेमशर्मा, क्षेमराज देखो।

क्षेमसामन्त भोंसले—बम्बई-प्रान्तीय सावन्तवाड़ीके एक सामन्त। इन्होंने निज बाहुबल पर सावन्तवाड़ी प्रदेश मुसलमानोंके हाथसे उद्धार किया था। १६२७से १६४० ई० तक इनका राजत्व रहा। मरने पीछे इनके पुत्र लक्ष्मण सामन्त राजा हुवे। १६६५ ई०को लक्ष्मणने इहलोक परित्याग किया था। फिर उनके पुत्र फन्द सामन्त राजसिंहासन पर बैठे। १० वर्ष राजत्व करके वह भी परलोकवासी हुए और २य क्षेमसामन्त राजा बने। शिवजीके पौत्र साहूने उन्हें सालसी तहसीलका थोड़ा अंश दिया था। फिर १७५५ ई०को इसी वंशके ३य क्षेमसामन्तने सिंहासनारो-हण किया था। इन्होंने १७६३ ई०को जयाजी सेंधिया-की कन्या लक्ष्मीबाईको व्याह लिया। दिल्लीके बाद-शाहने इन्हें राजाका उपाधि दिया था। कोल्हापुरके सामन्तने ईर्षापरवश हो सामन्तवाड़ी आक्रमण करके कई एक पार्वतीय दुर्ग अधिकार किये। परन्तु

सेंधियाने मध्यस्थ बन किले वापस दिलाये थे। ३य क्षेमसामन्त एक असाधारण वीर रहे। जलपथमें भी उनकी दस्युवृत्ति चलती थी। इससे अंगरेज और पोर्तगीज उनके शत्रु हो गये। स्थलपथमें कोल्हापुर-राज और पेशवाके साथ युद्ध लगा था। एक ही साथ जमीन और समुद्र दोनों जगह लड़ाई होती रही। १८०३ ई०को ३य क्षेमसामन्तका मृत्यु हुआ। उनके सन्तानादि न थे। पत्नी लक्ष्मीबाईने ही राजकार्य परिचालन किया। लक्ष्मीबाईने प्रथमतः रामचन्द्र सामन्त (भाऊ साहब) और उनके मरने पर फ़न्द सामन्तको अपना पोष्यपुत्र बनाया थे। इन्हीं फन्द सामन्तके पुत्र ४र्थ क्षेमसामन्त रहे। इन्हें ८ वत्सरके वयसमें राज्यभार प्राप्त हुवा। परन्तु राजप्रमें नाना-प्रकार विभ्राट बढ़नेसे ४र्थ क्षेमसामन्तने १८३८ ई० को वृटिश गवर्नमेण्टके ऊपर राजभार डाल दिया।

क्षेमहंसगणि—कालिदासरचित मेघदूतके एक टीका-कार। यह जैनधर्मावलम्बी थे।

क्षेमा (सं० स्त्री०) क्षेम-टाप्। १ देवीमूर्तिविशेष, कात्यायनी।

"निस्त्रिंशे पूजयेत् च मां सर्वकामफलप्रदाम्।" (देवीपुराण ४७अ०)

२ कोई अप्सरा। (भारत १।१२३।१५९)

क्षेमाधि (सं० पु०) मिथिलाराज चित्ररथके पुत्र। (भागवत ९।१३।२३)

क्षेमानन्द—१ कोई संस्कृत ग्रंथकार। यह इष्टिकापुर-निवासी रघुनन्दनके पुत्र थे। इन्होंने न्यायरत्नाकर और तत्त्वसमासव्याख्याको रचना किया।

२ कायस्थवंशोद्भव कोई कवि। इन्होंने केतका-दास उपाधि योगसे 'मनसार भासान' नामक बंगला पद्यग्रंथ बनाया था। उक्त पुस्तक पढ़नेसे यह वर्धमान जिलेके वासी-जैसे समझ पड़ते हैं। क्षेमानन्द १४१७ शकसे पहले विद्यमान थे।

क्षेमाफला (सं० स्त्री०) क्षेमं मङ्गलकरं फलं यस्याः, बहुव्री० पृषोदरादित्वात् साधुः। उदुम्बरवृक्ष, गूलर-का पेड़। किसी स्थल पर 'क्षेमफला' पाठ भी दृष्ट होता है।

क्षेमारि (सं० पु०) निमिवंशीय सञ्जय वा संनयके पुत्र। (विष्णुपुराण ४।५ अ०)

क्षेमासन (सं० क्ली०) योगासनविशेष। दाहने हाथ पर दाहना पांव रख कर बैठनेसे क्षेमासन होता है। यह आसन लगा कर उपासना करनेसे साधक स्वर्गको जाता है। (रुद्रयामल)

क्षेमिका (सं० स्त्री०) हरिद्रा, हलदी।

क्षेमीन्द्र—कामशास्त्रप्रणेता एक प्राचीन ग्रन्थकार।

क्षेमीश्वर—एक प्राचीन संस्कृत कवि। यह कवि विजय-कोष्ठके प्रणेता थे। इनका बनाया नैषधानन्दकाव्य और चण्डकौशिक नाटक मिलता है।

क्षेमेन्द्र—१ मदनमहार्णव नामक संस्कृत ज्योतिःशास्त्र-कार। २ लोकप्रकाश नामक संस्कृतग्रन्थके रचयिता। इन्होंने व्यासके शिष्य-जैसा अपना परिचय दिया है। *

लोकप्रकाशमें नानाप्रकार लेखनप्रणाली और अदा-लती कागज लिखनेकी रीति विवृत हुई है।

३ हस्तिजनप्रकाश नामक संस्कृत ग्रन्थरचयिता। यह गुर्जरनिवासी यदुशर्माके पुत्र थे।

४ कोई ग्रन्थकार। यह राजनगरवासी नागर ब्राह्मण थे। इनके पिताका नाम भूधर रहा। पितलद-नरेश शङ्करलालके आदेशसे क्षेमेन्द्रने संस्कृतभाषामें लिपि-विवेक और मातृकाविवेकको रचना किया।

५ सारस्वतप्रक्रियाके कोई टीकाकार।

६ काश्मीरके कोई विख्यात कवि। इन्होंने व्यास-दास नामसे अपना परिचय दिया है। क्षेमेन्द्र व्यासदास देखो।

क्षेमेन्द्र व्यासदास—काश्मीरके एक प्रसिद्ध संस्कृतकवि। इन्होंने त्रिपुरश्लशिखर पर जन्मग्रहण किया था। इनके पिताका नाम प्रकाशेन्द्र और पितामहका नाम सिन्धु रहा। क्षेमेन्द्रने अभिनवगुप्तके निकट साहित्य तथा अलङ्कार और भागवताचार्य सोमपादके निकट धर्मशास्त्र अध्ययन किया। इनके उपाध्यायका नाम गङ्गक था।

कविवरक्षेमेन्द्रने बहुतसे संस्कृत ग्रन्थ रचना किये थे। उनमें इन २६ पुस्तकोंका अनुसन्धान मिलता है—अमृततरङ्ग, अवसरसार, औचित्यविचारचर्चा, कनक-

* Handscriften Uerzeichnisse der Koniglichen Bibliothek, von Weber p. 224.

जानकी, कलाविलासकाव्य, कविकण्ठाभरण, क्षेमेन्द्र-प्रकाश, चतुर्वर्गसंग्रह, चारुचर्या, चित्रभारतनाटक, दर्पदलन, दशावतारचरित, दानपारिजात, देशोपदेश, नीतिकल्पतरु, नीतिलता, पद्यकादम्बरी, पवमान-पञ्चाशिका, बुद्धचरित, बृहत्कथामञ्जरी, बोधिसत्वाव-दानकल्पलता, महाभारतमञ्जरी, मुक्तावलीकाव्य, मुनि-मतमीमांसा, राजावली (इतिहास), रामायणकथा-सार, ललितरत्नमाला, लावण्यवतीकाव्य, वात्स्यायन-सूत्रसार, विनयवल्ली, वेतालपञ्चविंशति, योगाष्टक, शशि-वंश, समयमातृका, सुवृत्ततिलक, सेव्यसेवकोपदेश।

इनकी ग्रन्थावली पाठ करनेसे समझ सकते कि क्षेमेन्द्र विद्या, बुद्धि तथा पाण्डित्यमें एक असाधारण पण्डित, ऐतिहासिक और महाकवि थे। इनकी रचित समयमातृकामें काश्मीरकी तात्कालिक अवस्था अति सुन्दरभावसे चित्रित हुई है। दूसरा एक विशेषत्व यह है कि क्षेमेन्द्र निरपेक्षभावसे शैव, वैष्णव और बौद्ध ग्रन्थोंकी आलोचना कर गये हैं। इनका रचित दशाव-तार, मुनिमतमीमांसा और बोधिसत्वावदानकल्पलता पढ़नेसे निर्णय करना कठिन पड़ता है—क्षेमेन्द्र हिन्दू या बौद्ध थे। वास्तविक यह हिन्दू रहे और हिन्दू होते भी बौद्धशास्त्रका समादर तथा बुद्धदेवको भगवदवतार जैसा स्वीकार करते थे।

क्षेमेन्द्रकी बोधिसत्वावदानकल्पलता तिब्बती भोट-भाषामें अनेकवार अनुवादित हुई है। इस ग्रन्थका मूल और भोट भाषामें उसका एक प्राचीन अनुवाद (Rtogs brjod dpag hkhri Sin) कलकत्तेकी एशियाटिक सोसाइटीने छापा है।

राजतरङ्गिणीके प्रणेता कह्लणने पण्डित क्षेमेन्द्र-प्रणीत राजावलीका उल्लेख करके कहा है—

"केनाप्यनवधानेन कविकर्मणि सत्यपि।
अंशोऽपि नास्ति निर्दोषः क्षेमेन्द्रस्य नृपावली॥" (१।१३)

क्षेमेन्द्र प्रकृत कवि तो थे, परन्तु अनवधानताप्रयुक्त उनकी राजावली निर्दोष नहीं। किन्तु क्षेमेन्द्र एक बहु-दर्शी और निरपेक्ष ग्रन्थकार थे। इससे उनको असाव-धानी जैसा मान नहीं सकते। काश्मीरराज अनन्तके समय २५ लौकिकाब्दको (१०५० ई०) समयमातृका और कलशराजके राजत्वकाल ४१ लौकिकाब्दको (१०६४ ई०) दशावतार क्षेमेन्द्रने लिखा था—

"दशाधिकाब्दे विहितचत्वारिंशे स कार्तिके।
राज्ञो कलशभूभर्तुः काश्मीरेष्वचयुत्तस्तवः॥" (दशावतार)

इनकी ग्रन्थावली पढ़नेसे समझ पड़ता कि उन्होंने कई ग्रन्थोंको रामयश नामक व्यक्तिके अनुरोध और बृहत्कथामञ्जरी देवधरके आदेशसे रचना की।

क्षेम्य (सं० त्रि०) क्षेमाय साधुः, क्षेम-यत्। प्रागघिताद्यत्। पा ४।४।७५। १ मङ्गलकर, हितकर, अच्छा।

"क्षेम्यां शस्यप्रदां नित्यं पशुवृद्धिकरीमपि।
परित्यजेत् नृपोभूमिमात्मार्थमविचारयन्॥" (मनु ७।११२)

(पु०) २ एक जन राजा। यह उग्रायुधके पुत्र थे।

क्षेय (सं० पु०) क्षेतुं योग्यम्, क्षि-यत्। क्षय करनेके योग्य, जो बरबाद किये जानेके लायक हो।

क्षैण्य (सं० क्ली०) क्षीणस्य भावः, क्षीण-ष्यञ्। क्षीणता, क्षय, बरबादी। (राजतरङ्गिणी ५।६७)

क्षैत (वै० त्रि०) क्षितौ भवः, क्षिति-अण्। १ पृथिवी सम्बन्धीय, जो पृथिवीमें उत्पन्न हो। (ऋक् ८।८०।३) (पु०) २ शुष्ककाष्ठ, सूखी लकड़ी। (ऋक् ६।२।१ भाष्य

क्षैतयत (सं० पु०) ऋषिविशेष। यह शब्द पाणिनीय तिकादि गणके अन्तर्गत है।

क्षैतवान् (वै० त्रि०) क्षैतमस्य अस्ति, क्षैत-मतुप् मस्य वः। १ शुष्क काष्ठयुक्त, सूखी लकड़ीवाला। २ हविवाला, जिसका हविः हो। (ऋक् ६।२।१)

क्षैत्र (वै० क्ली०) क्षेत्राणां समूहः, क्षेत्र-अण्। भिक्षादि-भ्योऽण्। पा ४।२।३८। १ क्षेत्रसमूह, हार। २ क्षेत्र, खेत। (वाजसनेयसंहिता २३।१०)

क्षैत्रज्ञ (सं० क्ली०) क्षेत्रज्ञस्य भावः, क्षेत्रज्ञ-अण्। हायनान्तादयुवादिभ्योऽण् पा ५।१।१३०। क्षेत्रज्ञता, किसानी।

क्षैत्रज्ञ्य (सं० क्ली०) क्षेत्रज्ञस्य भावः, क्षेत्रज्ञ-ष्यञ्। गुण-वचनब्राह्मणादिभ्यः कर्मणि च। पा ५।१।१२४। क्षेत्रज्ञका भाव, क्षेत्र-ज्ञता, किसानी।

क्षैत्रपत (सं० त्रि०) क्षेत्रपतेरपत्यम्, क्षेत्रपति-अण्। अश्वपत्यादिभ्यश्च। पा ४।१।८४। क्षेत्रपतिका अपत्य, जमीन्दारका लड़का। स्त्रीलिङ्गमें ङीप् आनेसे क्षैत्रपती रूप होता है।

क्षैमवृद्धि (सं० पु०-स्त्री०) क्षेमवृद्धिनोऽपत्यम्, क्षेमवृद्धिन्-

इञ्। बाह्वादिभ्यश्च। पा ४।१।९६। क्षेमवृद्ध ऋषिके पुत्र वा उनकी कन्या।

क्षैमिक (सं० त्रि०) क्षेम-ठञ्। क्षेमसम्बन्ध द्वारा सिद्ध। क्षेमसे सिद्ध पदार्थको क्षैमिक कहते हैं। जिन सकल दार्शनिकोंने दुःखके अत्यन्ताभावको ही मुक्ति जैसा स्थिर किया है, वह मुक्तिको क्षैमिकजन्यताको मान लेते हैं। मुक्ति देखो।

क्षैरकलम्भि—सामसूत्रप्रकाशक एक ऋषि।

क्षैरह्रद (सं० त्रि०) क्षीरह्रदस्येदम्, क्षीरह्रद-अण्। क्षीरह्रद सम्बन्धीय।

क्षैरेय (सं० त्रि०) क्षीरे संस्कृतम्, क्षीर-ढञ्। क्षीराड्ढञ्। पा ४।२।२०। १ क्षीरसंस्कृत, दूधसे बना हुवा। (क्ली०) २ परमान्न, खीर।

क्षैरेयी (सं० स्त्री०) क्षीरसंस्कृता, खीर।

क्षौड़ (सं० पु०) क्षौड्यते बध्यतेऽस्मिन्, क्षौड़ अधिकरणे घञ्। गजबन्धनी, आलान, हाथी बांधनेकी जंजीर या रस्सा।

क्षौण (सं० त्रि०) क्षयति निवसति एकस्मिन्नेव स्थाने, क्षि कर्तरि ल्युट्, पृषोदरादित्वात् साधुः। एकस्थानसे अन्य स्थान न जा सकनेवाला, जो एक जगहसे दूसरी जगह न पहुंच सकता हो। (ऋक् १।११७।८) (पु०) क्षु शब्दे न पत्वञ्च। २ कोई शब्दकारी वीणा। (ऋक् १।११७।८ भाष्य)

क्षौणि (सं० स्त्री०) क्षै बाहुलकात् डोनि वा ङीप्। १ पृथिवी, जमीन्। २ एकसंख्या, अदद १।

क्षौणिप (सं० पु०) पृथिवीपति, राजा।

क्षौणी, क्षौणि देखो।

क्षौणीपति, क्षौणिप देखो।

क्षौणीपाल—रत्नाधीदेवीभक्त एक भद्रगोत्रीय राजा। यह चक्रवर्तीके पुत्र और दमनके पिता थे। (सह्याद्रिखण्ड १।३३।८८)

क्षौणाश—मोहिनीदेवीभक्त शाल्मली मुनिगोत्रीय कोई राजा। यह धुन्धुमारके पुत्र थे। (सह्याद्रिखण्ड १।३४।१५)

क्षोत्ता (सं० त्रि०) क्षुद-तृच्। पेषणकर्ता, पीसनेवाला।

क्षोद (सं० पु०) क्षुद-घञ्। १ चूर्णन, पेषण, पिसाई। कर्मणि घञ्। २ चूर्ण, आटा, बुकनी। (काशीखण्ड ३३।९३) ३ धूलि, गर्द।

क्षोदः (वै० क्ली०) क्षुद-असुन्। जल, पानी। (ऋक् १।६५।५)

क्षोदक्षम (सं० त्रि०) क्षोदं क्षमते, क्षोद-क्षम-अच्। विचारयोग्य। (नैषधचरित)

क्षोदित (सं० क्ली०) क्षुद-णिच्-क्त। १ चूर्ण, आटा, बुकनी। (त्रि०) २ चूर्णित, पिसा या बुका हुवा। ३ खोदित, जो खोदा गया हो।

क्षोदिमा (सं० पु०) क्षुद्र-इमनिच्। पृथ्वादिभ्य इमनिच्। पा ५।१।१२२। अतिशय क्षुद्रता, बड़ा ही कमीनापन।

क्षोदिष्ठ (सं० त्रि०) अतिशयेन क्षुद्रः, क्षुद्र-इष्ठन्। अतिशय क्षुद्र, निहायत कमीना।

क्षोदीयान् (सं० त्रि०) क्षुद्र-ईयसुन्। क्षुद्रतर, कमीनेसे कमीना। (माघ २।१००)

क्षोद्य (सं० त्रि०) क्षोदितुं योग्यम्, क्षुद-ण्यत्। ऋहलोर्ण्यत्। पा ३।१।१२४। चूर्ण करने योग्य, पीसा जानेवाला। (रामायण २।८०।१०)

क्षोधुक (वै० त्रि०) क्षुधायुक्त, भूखा। (शतपथब्राह्मण १।५।२।७)

क्षोभ (सं० पु०) क्षुभ-घञ्। १ सञ्चलन, हलचल, खलबली। २ चित्तचाञ्चल्य, घबराहट। (उत्तरचरित ३ अङ्क) ३ विकार, बिगाड़। (माघ)

क्षोभक (सं० पु०) १ कामाख्यास्थित एक पर्वत।

"दुर्जयाख्यस्य पूर्वस्यां पुरं नाम वरासनम्।
तद्दक्षिणे महाशैलः क्षोभकोनाम नामतः॥" (कालिकापुराण ८१ अ०)

(त्रि०) २ क्षोभजनक, घबराहट पैदा करनेवाला।

क्षोभकृत् (सं० पु०) एक संवत्सर।

क्षोभन ((सं० त्रि०) क्षुभ-णिच्-ल्यु। १ क्षोभजनक, घबड़ा देनेवाला (क्ली०) भावे ल्युट्। २ सञ्चालन, सनसनी। (पु०) ३ कामके पांचमें एक बाण। (भारत १२।२३६ अ०) ४ विष्णु। (विष्णुसहस्रनाम)

क्षोम (सं० क्ली०) क्षु-मन्। १ चन्द्रशाला, अटारीके ऊपरका कमरा। २ अट्टालिका, अटारी। ३ अलसीवस्त्र, सनका कपड़ा। (पु०) ४ गणहासक, चोवा।

क्षोमक (सं० पु०) चोरनामक गन्धद्रव्य, चोवा।

क्षोणि (सं० स्त्री०) क्षु बाहुलकात् निः वृद्धिश्च। पृथिवी, जमीन्। ब्रह्मवैवर्तपुराणके मतमें लयकालको क्षोणजैसी हो जानेसे पृथिवी क्षोणि कहलाती है। इसमें

क्षोण शब्दके स्थानमें क्षोणि निपात होता है।
(ब्रह्मवैवर्त प्रकृतिखण्ड ७ अ०)

क्षौणी (सं० स्त्री०) क्षौणि-वा ङीप्। १ पृथिवी, ज़मीन्। (भागवत ३।१४।३) २ एक संख्या, अदद १।

क्षौणीध्रज (सं० क्ली०) शैलज, छरीला।

क्षौणीप्राचीर (सं० पु०) क्षौण्याः प्राचीर इव। समुद्र, सागर।

क्षौणीभुक् (सं० पु०) क्षौणीं भुनक्ति, क्षौणी-भुज्-क्विप्। क्षितिपालक, राजा।

क्षौणीमय (सं० त्रि०) क्षौणी-मयट्। मृण्मय, मट्टीका बना हुआ। (भागवत २।७।१२) "क्षौणीमय"के स्थल पर क्षौणिमय पाठ भी दृष्ट होता है।

क्षौद्र (सं० क्ली०) क्षुद्राभिः पिङ्गलवर्ण मक्षिकाभिर्निर्वृत्तम्, क्षुद्रा-अञ्। १ कपिलवर्ण मधुविशेष, किसी किस्मका शहद। पिङ्गलवर्ण छोटी छोटी एक प्रकारकी मक्खियां होती हैं। उन्हें क्षुद्रा कहते हैं। यह मक्षिकायें जो मधु आहरण करतीं, वह भी पिङ्गलवर्ण होता और क्षौद्र कहलाता है। (भावप्रकाश) यह अतिशय शीतल, लघु और क्लेदनाशक है। यह घी मिल जानेसे विषतुल्य हो जाता है। (राजवल्लभ)

२ मधु, शहद। यह लेखन होता और देहस्थ धातुमलोंको विशेषरूपसे छुड़ाता है। क्षौद्र मधुर रहते भी रूक्षवीर्यत्वसे श्लेष्माको शमन करता है। (सुश्रुत सू० ४० अ०)

३ जल, पानी। ४ धूलि, गर्द। क्षुद्रस्य भावः, क्षुद्र-अण्। ५ क्षुद्रता, ओछापन। (पु०) ६ मगधदेशजात कोई वर्णसङ्कर जाति। (भारत १३।४८।२२) ७ चम्पकवृक्ष, चम्पाका पेड़।

क्षौद्रक—एक पुराणोक्त जनपद या बसती। क्षुद्रक देखो।

क्षौद्रकमालवक (सं० त्रि०) क्षुद्रकमालवयोरिदम्, क्षुद्रकमालव-वुञ्। क्षुद्रक और मालवसे सम्बन्ध रखनेवाला। (पा ४।२।४५ भाष्य)

क्षौद्रकमालवी (सं० स्त्री०) क्षुद्रकमालवयोः सेना, क्षुद्रकमालव-अञ्। अत्र प्रकरणे क्षुद्रकमालवात् सेनासंज्ञायाम्। पा ४।२।४५। क्षुद्रक और मालवकी सेना या फौज।

क्षौद्रकी (सं० स्त्री०) क्षौद्रक्य-ङीप् यलोपश्च। वाहिकदेशीय आयुधजीवीसमूह, क्षुद्रकसमूह।
(सिद्धान्तकौमुदी ५।३।११४)

क्षौद्रक्य (सं० क्ली०) क्षुद्रकः वाहिकदेशीय आयुधजीविसमूहः, स्वार्थे ञ्यच्। वाहिकदेशीय समूह।
(पा ५।३।११४)

क्षौद्रज (सं० क्ली०) क्षौद्रात् जायते, क्षौद्र-जन्-ड। १ सिक्थ, मोम (त्रि०) २ मधुसे उत्पन्न होनेवाला, जो शहदसे निकला हो।

क्षौद्रजा (सं० स्त्री०) १ मधुशर्करा, शहदकी चानी। २ क्षौद्रनाम मधुज शर्करा, किसी शहदकी शक्कर।

क्षौद्रधातु (सं० पु०) क्षौद्रजातो धातुः, मध्यपदलो०। स्वर्णमाक्षिक, सोना मक्खी।

क्षौद्रप्रिय (सं० पु०) १ जलमधूकवृक्ष, पानीका महुवा। (त्रि०) २ मधुप्रिय, शहदको पसन्द करनेवाला।

क्षौद्रमेह (सं० पु०) वातजन्य प्रमेह, बाईका जिरियान्। इसमें रोगी मधुनिभ मेह छोड़ता है। (सुश्रुत) वैद्यकशास्त्रमें मधुमेह नामसे इसका उल्लेख है। प्रमेह देखो।

क्षौद्रमेही (सं० त्रि०) क्षौद्रमेहरोगयुक्त, जिसको मधुमेहकी बीमारी हो।

क्षौद्रशर्करा (सं० स्त्री०) क्षौद्र-मधुकृत शर्करा, एक तरहके शहदकी शक्कर। गुणमें यह क्षौद्र मधुतुल्य होती है। (राजनिघण्टु)

क्षौद्रसाह्वय (सं० क्ली०) वटमाक्षिक।

क्षौद्रेय (सं० क्ली०) क्षौद्रे भवः, क्षौद्र-ढञ्। सिक्थ, मोम।

क्षौम (सं० पु०-क्ली०) क्षु-मन्। अर्तिस्तुसुहुसृधृक्षिक्षि। उण् १।१३८। १ पट्टवस्त्र, रेशमी कपड़ा। (रघु १०।८) क्षुमायाः अतस्या विकारः, क्षुमा-अण्। २ शणसे उत्पन्न एक प्रकारका वस्त्र, सनका कपड़ा। क्षौमेण दुकूलेन परिवृतो रथः, क्षौम-अण्। ३ पट्टवस्त्र परिवृत रथ, वह गाड़ी जिस पर रेशमी परदा पड़ा हो। ४ प्रासादाग्रगृह, हवेलीके आगेका घर। ५ अट्टालिका, अटारी।

क्षौमक (सं० पु०) चोर नाम गन्धद्रव्य, चोरा।

क्षौमतैल (सं० क्ली०) अतसी तैल, अलसीका तैल। यह वातघ्न, मधुर, बलावह, कटुपाक, अचक्षुष्य (आंखके लिये खराब), गुरु और पित्तल होता है।
(सुश्रुत सूत्र ४५ अ०)

चौममसी (सं० स्त्री०) दग्धवस्त्रभस्म, जले कपड़ेकी खाक।

चौमिका (सं० स्त्री०) क्षुमानिर्मित मेखला, सन या अलसीके धागेकी करधनी।" "चौमिका वैखाय।"

(कौशिकसूत्र ५७।२)

चौमी (सं० स्त्री०) क्षुमा एव, क्षुमा स्वार्थे अण् ततः ङीप्। १ अलसी, अलसी। क्षुमा विकारः। क्षुमानिर्मित कन्था, सनकी कथरी।

चौर (सं० क्ली०) क्षुरस्य कार्यम्, क्षुर-अण्। १ मुण्डन कर्म, हजामत। केश श्मश्रु और नखादिका कर्त्तन सम्पसाधन होता है। (राजनिघण्टु) इसका संस्कृत पर्याय—मुण्डन, भद्रकरण, वपन और परिवापन है। वैद्यशास्त्रमें लिखा है कि—पांच दिनके अन्तर केश, नख, श्मश्रु और रोम कर्त्तन करना चाहिये। पांच पांच दिनमें हजामत करानेसे बालों, दाढ़ीमूछ और नाखून आदिकी शोभा तथा पुष्टि होती, धन और परमायु बढ़ता और शरीरमें पवित्रता तथा लावण्य आजाता है। क्षौरकर्म मानवको प्रति हितकर है। (भावप्रकाश)

ब्रह्मवैवर्त्तपुराणके मतमें व्रत, उपवास और श्राद्धादि संयमके दिनको बाल बनवाना पड़ता है। उस दिन क्षौरकर्म न करानेसे पवित्र होना कठिन है। जो व्यक्ति यह नियम प्रतिपालन नहीं करता उसको नरकके नखादि कुण्डमें रहकर बाल नाखून आदि खाना और यमदूतोंके दण्डप्रहारका घोर दुःख उठाना पड़ता है।

(ब्रह्मवैवर्त्त-प्रकृतिखण्ड २७ अ०)

राजमार्त्तण्डमें लिखा है—आदमियोंको रोज ही हजामत बनाना चाहिये। परन्तु स्नानके पीछे, आहारान्तको, यात्राकालमें, युद्धके समय या तेल लगाकर क्षौरकर्म नहीं करते। पूर्वमुखी हो बैठकर बाल बनवाना उचित है। शनिवार, रविवार वा मङ्गलवार, रिक्तातिथि और सन्ध्यावेला वा रात्रिको क्षौरकर्म निषिद्ध होता है। उत्तरफल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तरभाद्रपद, भरणी, कृत्तिका, रोहिणी, आर्द्रा, अश्लेषा और मघा आदि कई नक्षत्रोंमें बाल बनाना मना है। विवाह, मृताशौच, जातकाशौच, कारागारसे मुक्ति वा यज्ञदीक्षाके दिन और राजाज्ञा वा ब्राह्मणकी अनुमति होनेसे सभी नक्षत्रों सभी वारों और सभी समयों पर चौरकर्म कर सकते हैं। देवपूजा वा पितृश्राद्धके दिन, संक्रान्तिके दिवस, जन्ममास वा जन्म नक्षत्रको चौर न करना चाहिये। वराहपुराणमें प्रथम नख और उसके पीछे श्मश्रु काटनेका विधान है। (ज्योतिस्तत्त्व)

नापितके घरमें बैठ कर बाल बनवाना निषिद्ध है। ऐसा करनेसे धनहानि होती है। रविवारको दुःख, सोमवारको सुख, मङ्गलवारको मृत्यु, बुधवारको धनप्राप्ति, वृहस्पतिवारको मानहानि, शुक्रवारको शुक्रक्षय और शनिवारको चौरकर्म करनेसे सर्वनाश होता है।

(कर्मलोचन) चूड़ाकरण देखो।

चौरपव्य (सं० क्ली०) क्षुरं पविरिव स्वार्थे अण्। अतिशय तीक्ष्ण क्षुर, बहुत तेज उस्तरा।

क्षौरिक (सं० पु०) क्षौरं शिल्पत्वेनास्त्यस्य, क्षौर-ठन्। नापित, हजाम, नाई।

क्ष्णुत (सं० त्रि०) क्ष्णु-क्त। तीक्ष्णीकृत, शाणित, पैनाया हुआ, जो सान पर चढ़ाया गया हो।

क्ष्णोत्र (सं० क्ली०) क्ष्णु करणे त्रल्। तेजन, शाणयन्त्रविशेष, सान रखनेका औजार, जिससे अस्त्रादि शाणित किये जायें। (चरक २।३८।७)

क्ष्मा (सं० स्त्री०) क्षमते सहते भारम्, क्षम्-अच् उपधालोपश्च। १ पृथिवी, जमीन्। (भारत ३।१८८) २ एक संख्या, अदद १।

क्ष्माज (सं० पु०) क्ष्मायां जायते, क्ष्मा-जन-ड। १ मङ्गल। २ नरकासुर।

क्ष्मातल (सं० क्ली०) क्ष्मायास्तलम्, ६-तत्। पृथिवीतल, जमीन्की सतह। (मार्कण्डेयपुराण २३।४७)

क्ष्माधृति (सं० पु०) काश्मीरदेशीय एक राजा।

(राजतरङ्गिणी ५।४८२)

क्ष्माप (सं० पु०) क्ष्मां पाति, रक्षति, क्ष्मा-पा-क। राजा।

(राजतरङ्गिणी ५।४१८)

क्ष्मापति (सं० पु०) क्ष्मायाः पतिः, ६-तत्। राजा।

क्ष्मापाल (सं० पु०) क्ष्मां पालयति, क्ष्मा-पालि-अण्। राजा।

क्ष्माभुक् (सं० पु०) क्ष्मां भुनक्ति, क्ष्मा-भुज्-क्विप्। भूमिपाल, राजा।

क्ष्माभृत् (सं० पु०) क्ष्मां बिभर्ति धारयति पालयति वा, क्ष्मा-भृ-क्विप् तुगागमश्च । १ पर्वत, पहाड़ । २ राजा । (पञ्चतन्त्र ११६६)

क्ष्मायित (सं० त्रि०) क्ष्माय इतच् । कम्पित, जो कांप उठा हो ।

क्ष्मायिता (सं० त्रि०) कम्पक, कंपानेवाला ।

क्ष्विङ्का (वै० स्त्री०) १ शब्दकारिणी, आवाज उठानेवाली, जो चिल्लाती हो । २ पक्षिविशेष, कोई चिड़िया । (ऋक् १०।८७।७)

क्ष्वेड़ (सं० पु०) क्ष्विड़ भावादौ घञ् पचाद्यच् वा । १ अव्यक्तध्वनि, समझमें न आनेवाली आवाज । २ कर्ण-रोगविशेष, कानकी कोई बीमारी । इससे कानमें सन-सनाहट भर जाती है । ३ विष, जहर । (आनन्दलहरी) ४ पीतघोषालता । ५ कटुकोषातकी । ६ जीवक नामक औषधि । ७ स्नेह, चिकनाई । ८ मोचन, छोड़ । ९ त्याग । (क्लो०) १० लोहिताकपर्णफल । ११ वाषा-पुष्प । (त्रि०) १२ दुरासद, छिछोरा । १३ कुटिल, चालबाज ।

क्ष्वेड़न (सं० क्ली०) क्ष्विड़ भावे ल्युट् । १ मोचन, रिहाई । २ त्याग । (भारत ३।१७८।२६) ३ वेणुघोषतुल्य स्वर, चीं, चें चें ।

क्ष्वेड़ा (सं० स्त्री०) क्ष्विड़ भावे घञ् टाप् च । १ बांस-की छड़ । २ सिंहनाद, शेरकी गरज । ३ कोषातकी ।

क्ष्वेड़ित (सं० क्ली०) क्ष्विड़ भावे क्त । सिंहनाद, शेरकी दहाड़ । (भारत १।६९।१६)

क्ष्वेला (सं० स्त्री०) क्ष्वेल-अ । क्रीड़ा, खेल ।

क्ष्वेलिका (सं० स्त्री०) क्ष्वेला स्वार्थे कन् अत इत्वञ्च । क्रीड़ा, खेलकूद । (भागवत ५।८।१८)

क्ष्वेली (सं० स्त्री०) क्ष्वेल गौरादित्वात् ङीप् । क्रीड़ा, खेल । (भागवत)

ख

ख—व्यञ्जन वर्णोंका द्वितीय अक्षर । इसका उच्चारण-स्थान कण्ठ है । अ-कु-ह विसर्जनीयानां कण्ठः । (सिद्धान्तकौमुदी) शिक्षा ग्रन्थमें इसका उच्चारणस्थान जिह्वामूल-जैसा निरूपित हुवा है । यथा—"जिह्वामूलेतु कुः प्रोक्तः" (शिक्षा) शाब्दिक लोग शिक्षाके जिह्वामूल शब्दको कण्ठपर जैसा बतला दोनोंका विरोध भञ्जन करते हैं । खकार वर्गका युग्मवर्ण-जैसा रहनेसे महाप्राण कहलाता है ।

"अयुग्मावर्गयमगायणश्चाल्पासवः स्मृताः" (शिक्षा)

कामधेनुतन्त्रमें खकारका विषय इस प्रकारसे लिखा है—इसका वर्ण शङ्ख अथवा कुन्दकुसुमकी भांति शुभ्र और उज्ज्वल है । यह तीन कोणों और तीन बिन्दुओंसे युक्त, एक शून्यस्वरूप, त्रिगुणमय, पञ्चदेवात्मक और तीन शक्तिसम्पन्न है । तन्त्रशास्त्रमें खकारकी जो लिखन-प्रणाली कही है, उससे नागराक्षर मालाके अन्तर्गत खकार आकृति मिली जुली है । वर्णोद्धारतन्त्रके मतसे इसमें सर्वसङ्कत केवल पांच रेखायें रहती हैं । पहले वामदिकको एक रेखा लगा उसके ऊर्ध्वगामी अग्र-भागसे अधोमुखी दूसरी रेखा खींचना चाहिये । फिर दक्षिण दिकको एक सरल रेखा बना उसी रेखाके मध्यभागसे एक ओर कुण्डलाकाररेखा निकालते और मात्रा लगाते हैं । ऐसे ही अङ्कित वर्णका नाम ख है । इसकी वाम रेखा शिव, दक्षिण रेखा प्रजा-पति, अधोरेखा विष्णु, द्वितीय वामरेखा ब्रह्मा और मात्रा साक्षात् कुण्डलिनी होती है । इसको

अधिष्ठात्री देवताकी बन्धूक कुसुम-जैसा रक्तवर्ण, विविध अलङ्कारोंसे परिशोभित और सहास्यवदन चिन्ता करना चाहिये। वह वामहस्तमें वर और दक्षिण हस्तमें अभय लेकर सर्वदा साधकके मङ्गलकी कामना किया करती है। खकारके यह कई नामान्तर हैं—प्रचण्ड, कामरूपी, मुण्डि, ऋद्धि, वह्नि, सरस्वती, आकाश, इन्द्रिय, दुर्गा, चण्डी, सन्तापिनी, गुरु, शिखण्डी, दम्भ, जातीश, कफोणि, गरुड़, गदी, शून्य, कपाली, कल्याणी, सूर्पकर्ण, अजरामर, शुभाग्नेय, चण्डलिङ्ग, जन, भङ्गार और खड्गक। (वर्णाभिधान) मातृकान्यासमें खकारको बाहु पर न्यास करना पड़ता है। किसी ग्रन्थमें प्रथम श्लोकके आदिमें ख रहनेसे रचयिताकी श्रीवृद्धि होती है। (वृत्तरत्नाकरटीका)

ख (सं० पु०-क्ली०) खर्वति मनोऽस्मिन् खन्यते मनाऽनेन वा, खर्व-ड अथवा खन-ड। १ इन्द्रिय।

"विराचामेदपः पूर्वं द्विः प्रमृज्यात् ततो मुखम्।
खानि चैव स्पृशेदद्भिरात्मानं शिरएव च॥" (मनु २।६०)

२ पुर, शहर, गांव। ३ क्षेत्र, खेत। ४ शून्य, सिफर। ५ विन्दु, नुकता। (लीलावती, बीजव्यवहार) ६ आकाश, आसमान। (मनु १२।१२०) ७ संवेदन, हमदर्दी। ८ देवलोक। ९ सुख, आराम। १० कर्म, काम। ११ जन्मलग्नसे दशम राशि। १२ अभ्रक, अबरक। १३ चिदानन्दमय ब्रह्माकाश। (छान्दोग्यउपनिषत्) १४ निर्गमनमार्ग। (कठक० २।२५।१) १५ सूर्य।

खंक (हिं० वि०) खाली, खोखला, कमजोर।

खंख (हिं० वि०) १ रिक्त, छूछा। २ निर्जन, उजाड़।

खंखरा (हिं० पु०) १ पात्रविशेष, चावल पकानेका एक बड़ा बर्तन। (वि०) २ सूखा, खरा, कड़ा सेंका हुआ।

खंग (हिं० पु०) १ खड्ग, तलवार। २ गैंडा।

खंगड़ (हिं० वि०) लड़ाका, झगड़ालू, गंवार।

खंगना (हिं० क्रि०) अड़ना, पीछे न हटना, डटे रहना।

खंगर (हिं० पु०) १ एक साथ पका हुई कई ईंटें। (वि०) २ सूखा।

खंगहा (हिं० वि०) १ जिसके दांत निकले हुए हों। २ खांगनेवाला। (पु०) ३ गैंडा।

खंगालना (हिं० क्रि०) १ केवल जल डाल कर धोना, पानी साफ करना। २ चोरी करना, सब कुछ उठा ले जाना।

खंगी (हिं० स्त्री०) त्रुटि, कमी।

खंगैल (हिं० वि०) १ पके खुर्गेवाला। २ दंतैल। ३ खांगनेवाला। (पु०) ४ खड़रावन।

खंगौरिया (हिं० स्त्री०) अलङ्कारविशेष, हंसली।

खंघारना (हिं० क्रि०) खंगालना, थोड़े पानीसे धोना।

खंचना (हिं० क्रि०) खींच जाना, बनना।

खंजर (फा० पु०) तलवार, कटार।

खंजरी (हिं० स्त्री०) १ डफली, एक छोटा बाजा। इसका दायरा ४ या ५ अंगुल चौड़ा होता है। इसको एक ओर चमड़ेसे मढ़ देते हैं। फिर कोई कोई खंजरीमें घुंघरूका गुच्छा या छोटी छोटी पतली झांझें भी लगा लेता है। खंजरी बायें हाथसे पकड़ कर दाहने हाथकी थपकीसे बजायी जाती है। इस पर प्रायः लोग भजन गाते हैं।

खंडना (हिं० क्रि०) तोड़ना, टुकड़े टुकड़े करना। २ काटना, रद्द करना।

खंडपुरी (हिं० स्त्री०) एक प्रकारकी मिठी पूरी। इसमें शक्कर और मेवा भर देते हैं।

खंडर (हिं० पु०) खंड़हर, टूटा फूटा मकान।

खंडरा (हिं० पु०) १ किसी किस्मका बड़ा। २ टुकड़ा।

खंडरैचा (हिं० पु०) खञ्जनपक्षी।

खंडला (हिं० पु०) टुकड़ा।

खंडवानी (हिं० स्त्री०) शर्बत।

खंड़सार (हिं० स्त्री०) शक्कर तैयार करनेकी जगह।

खंड़हर (हिं० पु०) टूटा फूटा मकान।

खंडा (हिं० पु०) १ चावलका कन। २ छोटी तलवार।

खंडिया (हिं० पु०) १ गंडेरी काटनेवाला। (स्त्री०) २ टुकड़ा।

खंडी (हिं० स्त्री०) ग्रामके चतुःपार्श्वस्थ वृक्षसमूह, गांवकी चारो ओरके पेड़। २ मालगुजारी वगैरहकी किस्त।

खंडुवा (हिं० पु०) १ कूपविशेष, एक कूवां।

खंडौरा (हिं० पु०) मोदकभेद, शक्करका लड्डू।

खंडौरो (हिं० स्त्री०) चावलके बड़े बड़े कन।

खंतरा (हिं० पु०) १ छिद्र, दरार। २ कोण, कोना।

खंता (हिं० पु०) १ भूमि खनन करनेका कोई यन्त्र, बेलचा। २ कुम्हारोंके मट्टी लानेका गड्ढा।

खंदक (अ० पु०) १ परिखा, खाईं। २ बड़ा गड्ढा।

खंदा (हिं० पु०) खनक, खोदनेवाला।

खंधा (हिं० पु०) आर्यागीति छन्द।

खंबापची (हिं० स्त्री०) खम्माच रागिणी।

खंभ (हिं० पु०) १ स्तम्भ, सितून्। २ शरण, सहारा।

खंभा, खम्भ देखो।

खंभात (हिं० पु०) १ गुजरातका एक राज्य। २ खंभात राज्यका प्रधान नगर। काम्बे देखो।

खंभार (हिं० पु०) १ चिन्ता, फिक्र। २ व्याकुलत्व, परेशानी। ३ भय, डर। ४ शोक, अफसोस।

खंभारी (हिं०) गम्भारी देखो।

खंभावती (हिं० स्त्री०) एक रागिणी। यह मालकोस रागकी दूसरी स्त्री है। इसके गानेका समय अर्धरात है। खंभावती षाड़व होती है।

खंभिया (हिं० स्त्री०) क्षुद्रस्तम्भ, छोटा खंभा।

खंवं (हिं० स्त्री०) खत्ती, अनाज भरनेका गड्ढा।

खंवड़ा (हिं० पु०) बड़ी खत्ती।

खकक्षा (सं० स्त्री०) खस्य आकाशमण्डलस्य कक्षा परिधिः, ६-तत्। आकाशमण्डलका परिधि, आसमानका घेरा। आकाशमण्डल अनन्त है। उसकी सीमा वा परिधि होना नितान्त असम्भव है। परन्तु आकाशमण्डलमें जितनी दूर तक सूर्यरश्मियोंका प्रचार होता, ज्योतिर्विद् लोग उसीको खकक्षा वा आकाशपरिधि कहते हैं। इस परिधिनिर्णयके विषयमें प्राचीन ऋषियोंके बीच बहुतसा मतभेद लक्षित होता है। किसी ज्योतिर्विद्के कथनानुसार ब्रह्माण्डकटाहसम्पुट आकाशमण्डलमें वेष्टनाकार जो चिह्न पड़ गया है, उसीका नाम आकाशपरिधि है। फिर कोई लोकालोक पर्वत पर्यन्त ही आकाशपरिधि मानता है। ज्योतिर्विद् पण्डित सूर्यकिरण अवधि अर्थात् सूर्यरश्मिके प्रचार होने तक ही परिधिस्थान स्वीकार करते हैं। प्रसिद्ध भारतीय गणक भास्कराचार्यके मतमें कई प्रदर्शित मत भ्रान्तिपूर्ण हैं, उनमें कोई ठीक नहीं। उनका कहना है—ग्रह पूर्व गतिसे एक कल्पमें जितने योजन अतिक्रम करते, उसीको खकक्षा वा आकाशपरिधि समझते हैं। भास्कराचार्यने खकक्षाका परिमाण १८७१२०६९-८२०००००००० योजन लिखा है। (गणिताध्याय)

ग्रहकक्षा और खगोल देखो।

खकामिनी (सं० स्त्री०) खं सुखं आकाशं वा कामयते, ख-कम्-णिङ्-णिनि-ङीप्। १ चर्चिका, दुर्गाकी कोई मूर्ति। २ चिलल्हो, मादा चील।

खकुण्डल (सं० पु०) खं आकाशं कुण्डलमिव यस्य, बहुव्री०। शिव।

खकेररू—युक्तप्रदेश फतेहपुर जिलेके दक्षिण-पूर्व भागकी एक तहसील। यह यमुनाके कूल पर अवस्थित है। २ खकेररू तहसीलका एक गांव। यह फतेहपुरसे १४ कोस दक्षिण पड़ता है। यहां रूईका व्यवसाय होता है। खकेररूमें एक टूटा किला, थाना और डाकघर मौजूद है।

खक्खट (सं० पु०) खक्ख-अटन्। खड़िका, खड़िया मट्टी।

खक्खा (हिं० पु०) अट्टहास, जोरकी हंसी। २ पंजाबी सिपाही। ३ अनुभवी, तजर्बेकार। ३ बड़ा हाथी।

खखसाह (हिं० पु०) १ चतुर व्यापारी। २ लाट साहब, नवाब।

खखरा (हिं० पु०) १ देग, चावल पकानेका बड़ा वर्तन। २ बांसका टोकरा। (वि०) ३ सूखा।

खखरात—एक प्राचीन राजवंश। नासिक नगरमें मिली एक शिलालिपि पर लिखा है—शक, यवन और पह्लव वंशीय राजाओंने खखरातवंशके सब लोगोंको मार डाला था।*

खखरिया (हिं० स्त्री०) मैदे और बेसनकी पतली पूरी। इसमें नमक नहीं पड़ता। खखरियां प्रायः तिथित्योहारोंका बनती हैं।

खखसा (हिं० पु०) खेखसा, बनकरेला।

खखार (हिं० पु०) गाढ़ निष्ठीवन, कड़ा थूक। यह खखारनेसे गिरता है।

---

* Indian Antiquary, Vol. X, p. 225.

खखारना (हिं० क्रि०) १ गले पर जोर देकर खांसना, जोरसे थूकना। २ जोरसे खांसकर चेताना।

खखास (सं० पु०) वृक्षभेद, पोस्तका पेड़।

खखेटना (हिं० क्रि०) १ खदेरना, भगाना। २ आहत करना, मारना। ३ दबाना।

खखोंडर (हिं० पु०) १ उल्लूका घोंसला। २ पेड़की खोकका घोंसला।

खखोरना (हिं० क्रि०) खखोना, रत्ती रत्ती ढूंढना।

खखोल्क (सं० पु०) सूर्य, सूरज। (गरुड़ १६ अध्याय) २ काशीस्थित आदित्यमूर्ति विशेष। (काशीखण्ड)

खग (सं० पु०) खे आकाशे गच्छति, ख गम-ड। १ सूर्य। २ ग्रह। (नीलकण्ठ) ३ देव। ४ शर, वाण ५ पक्षी, चिड़िया। "खग जाने खगहीकी भाषा।" (तुलसी) ६ वायु, हवा। ७ शलभ, टिड्डी। ८ पातालस्थ भोगवतीतीर-वासी कोई नाग। (भारत ५।१०) ९ चक्रवाकपक्षी, चकई, चकवा। १० पारद, पारा। (त्रि०) ११ आकाशगामी, आसमान पर चलनेवाला।

खगकेतु (सं० पु०) गरुड़।

खगखान (सं० क्लो०) खन्यते, खन कर्मणि घञ्, खगानां खानम्। वृक्षकोटर, पेड़की खोह।

खगगति (सं० स्त्री०) खगानां पक्षिणां गतिः, ६-तत्। १ पक्षीकी गति, चिड़ियाकी चाल। महाभारतके कर्ण-पर्वमें १०१ प्रकार पक्षिगतिकी कथा लिखी है। टीका-कार नीलकण्ठने उसका विवरण इसप्रकार दिया है— १ ऊर्ध्वदिक्‌को गमनका नाम उड्डीन है। २ अधो-देशको गतिको अवडीन कहते हैं। ३ चतुर्दिक्‌को गमन प्रडीन कहलाता है। ४ गमन मात्रको डीन कहा जाता है। ५ धीरे धीरे उड़नेका नाम निडीन है। ६ ललितगमनको सण्डीन कहते हैं। ७ तिर्यक्‌डीन दिक्‌भेदसे ४ प्रकारका होता है। ११ मल्लगमनका अनुकरण विडीन कहलाता है। १२ सकल दिशाओंकी गति परिडीन है। १३ पराडीन वा पश्चाद्‌गति। १४ उड्डीनक वा स्वर्गगमन। १५ अभिडीन वा वारंवार गमन। १६ महाडीन अर्थात् साधी चाल। १७ निडीन अर्थात् धावेका उड़ाना। १८ प्रचण्डवेगसे उड़नेका नाम अतिडीनक है। १९ अवडीन अर्थात् नीचेको उतार। २० प्रडीन यानी मजेकी चाल। २१ संडीन यानी घूम कर गिराव। २२ डीनडीनक। २३ सण्डीनो-ड्डीन डीन वा ऊर्ध्वदिक्‌को सण्डीन। २४ गमन करके क्षणकालके मध्य घूमते हुए पक्षसम्पात करना डीन-विडीनक कहलाता है। २५ सम्पुड्डीन अर्थात् ऊर्ध्व और अधोगति। २६ पक्षगमन। इन छब्बीस प्रकारकी गतियोंमें महाडीनको छोड़कर पचीस प्रकारकी अव-शिष्ट गतियां गमन, आगमन और प्रत्यागमन भेदसे तीन तीन प्रकारकी हैं। इसप्रकार सब ७६ गतियां हुईं। फिर निकुलीनक २५ प्रकारका होता है।

(भारत, कर्णपर्व ८ अ०) निकुलीनक देखो।

२ ग्रहोंकी गति।

खगङ्गा (सं० स्त्री०) खस्य आकाशस्य गङ्गा, ६-तत्। आकाशगङ्गा, मन्दाकिनी।

खगना (हिं० क्रि०) १ बिंधना, लगना। २ अच्छा लगना, पसन्द आना। ३ डटना, चिपकना। ४ उतर आना, बन जाना। ५ हटाये न हटना, खड़े रहना।

खगपति (सं० पु०) खगानां पतिः, खग-पा-क। गरुड़। गरुड़के समस्त पक्षियों पर आधिपत्य पानेकी कथा महाभारतमें इसप्रकार लिखा है—

किसी समय प्रजापति कश्यपने पुत्रकामनासे एक बड़े यज्ञका आयोजन किया था। उनके यज्ञानुष्ठानका संवाद सुनकर देव, ऋषि, गन्धर्व प्रभृति सभी उपस्थित हो गये। कश्यप देख भाल कर सबको कोई न कोई कार्य सौंपने लगे। देवराज इन्द्र और अङ्गुष्ठप्रमाण बालखिल्य मुनि काष्ठ लानेको रखे गये थे। इन्द्रके साथ काष्ठ लेने वह सब चल दिये। बालखिल्य मुनि एकतो अतिशय क्षुद्र थे, उस पर कुछ खाया-पीया भी नहीं। इसीसे वह अलग अलग काष्ठ ले जानेमें असमर्थ हुए। सबने मिल कर किसी न किसी प्रकार मरते मिटते एक पलहन्त कंधों पर उठाकर रखा था। फिर वह अति कष्टसे चलने लगे। हां, इन्द्र अवश्य एक महत् काष्ठ ले गये। परन्तु बालखिल्य निर्विघ्न जा न सके थे। पथ पर चलते चलते किसी गोष्पदमें गिर गोते खाने लगे। इन्द्र यह घटना देख उनको उपहास करके चलते बने। आकारमें छोटे होते भी मुनियोंके क्रोधकी मात्रा कुछ

अधिक थी। उन्होंने चिढ़ कर दूसरे यज्ञका अनुष्ठान लगा दिया। यागका प्रधान उद्देश्य वर्तमान इन्द्रसे अधिक बलशाली द्वितीय इन्द्र बनानेको था। इन्द्र यह सुनते ही डर गये और कश्यपके निकट पहुंच विवरण कहने लगे। कश्यपने वालखिल्योंके यज्ञस्थान पर उप-स्थित हो उन्हें सान्त्वना दी और कहा था—'तुम्हारा आयोजन मिथ्या नहीं जाने देंगे। तुम्हारे यज्ञफलसे इन्द्रसे अधिक बलशाली कोई इन्द्र तो उत्पन्न हो जायेगा, परन्तु वह साधारण लोगोंका इन्द्रत्व न पा कर केवल पक्षियों पर ही आधिपत्य चलावेगा। कश्यपके कहनेसे वालखिल्य सन्तुष्ट हो गये। विनताके गर्भसे गरुड़ने जन्म लिया था। उन्होंने थोड़े दिनोंमें ही उसी यज्ञके फलसे सब पक्षियों पर अपना आधिपत्य स्थापन किया। (भारत १।३१ अ०) गरुड़ देखो।

खगपति—हिन्दीभाषाके एक प्राचीन कवि। इनकी कविताका एक उदाहरण नीचे उद्धृत हुआ है—

"जारि कुंवर टुक दरस दिखाय।
जो जनतो करिया कपटो है व्रज माखन नैं देती नखाय॥
कारे भंवर रस कदर न जाने सब फूलनमें रह्यो लुभाय॥
खगपति तोरी रीझ समझतो सब सखि लेतो कूंप बनाय॥"

खगम (सं० त्रि०) खे आकाशे गच्छति, ख-गम-अच्। १ आकाशगामी, आसमान पर चलनेवाला। (पु०) २ कोई सत्यवादी तपस्वी। एकदा इनके सखा सहस्रपादने इन्हें तृणनिर्मित सर्पद्वारा भय दिखाया था। प्रथम यह भयसे मूर्च्छित हो गये, पीछे शाप देकर उन्हें पनिहा सांप बना दिया। (भारत १।११ अ०) सहस्रपाद देखो। ३ पक्षी, चिड़िया।

खगरापाड़ा—आसाम अन्तर्गत दरङ्ग जिलेका एक गांव। यह दरङ्गके उत्तरभागमें भूटानी पहाड़के दक्षिण अव-स्थित है। प्रतिवर्ष यहां एक बड़ा मेला लगता है। इस मेलेमें भोटिये लवण, कम्बल, स्वर्ण और घोड़ा आदि नानाप्रकार द्रव्य विक्रय करके चावल, मछली, सूती कपड़ा, रेशम और बर्तन वगैरह खरीद ले जाते हैं।

खगरिया—विहार-प्रान्तके मुङ्गेर जिलेका एक नगर। यह अक्षा० २५° ३०´ उ० और देशा० ८६° २९´ पू०में गण्डक नदी किनारे अवस्थित है। लोकसंख्या लगभग ११४८२ है। यहां बङ्गाल और नार्थवेष्टर्न रेलवेका ष्टेशन बना और बड़ा व्यापार चलता है।

खगवक्त्र (सं० पु०) खगस्य वक्त्रमिव वक्त्रं यस्य, बहुव्री०। लकुचवृक्ष, लुकाटका पेड़।

खगवती (सं० स्त्री०) खग: खगसादृश्यं अस्त्यस्याः, खग-मतुप् मस्य वः ततो ङीप्। पृथिवी, जमीन्। पृथिवी शून्यमें अवस्थित रहनेसे खगका सादृश्य रखती है। सुतरां उसका नाम खगवती है। खगोल देखो।

खगशत्रु (सं० पु०) १ पृश्निपर्णी, पिठवन। २ श्येन, बाज। शिकरा।

खगस्थान (सं० क्ली०) खगस्य स्थानम्। वृक्षकोटर, पेड़की खोह।

खगहा (हिं० पु०) गैंड़ा।

खगाधिप (सं० पु०) खगानामधिपः, ६-तत्। गरुड़। खगपति देखो।

खगान्तक (सं० पु०) खगस्य अन्तकः, ६-तत्। श्येन-पक्षी, बाज, शिकरा। २ धूम्याटपक्षी।

खगासन (सं० पु०) खगो गरुड़ आसनं यस्य, बहुव्री०। १ विष्णु। विष्णुका वाहन गरुड़ रहनेसे उनको खगा-सन कहते हैं। खगराज गरुड़के विष्णुका वाहन होनेको कथा महाभारतमें इस प्रकारसे लिखी है—

विनतानन्दन गरुड़के समस्त पक्षियों पर अपना आधिपत्य स्थापित करने पर उनके असीम बलकी चर्चा देश देशमें फैल गयी। इन्द्रादि देव भी उनके बलकी कथा सुन कांप उठे और अमृतरक्षाके लिये उन्होंने बहुतसे प्रहरी नियुक्त किये तथा अपने आप भी अति सावधानसे अमृतकी देख भाल रखने लगे। किसी दिन गरुड़ स्वर्ग घूमने गये थे। देवताओंने देखते ही उनसे झगड़ा लगा दिया। गरुड़ भी डरे न थे। भयानक युद्ध हुवा। देवोंको दंशा बाकी न रही, वह अमृत लेकर चले गये। जाते समय राहमें उन्हें विष्णु मिले थे। विष्णु गरुड़को देखते ही कहने लगे—पक्षिराज! हम आपके बल और साहसकी बात सुन कर सन्तुष्ट हुए हैं, हमसे वर मांगो। गरुड़ने उत्तर दिया—यदि आप वर देना चाहते हैं, तो ऐसा विधान कीजिये, जिसमें हम सदा आपके ऊपर रह सकें। विष्णुने उनकी बात मान

ली। फिर गरुड़ मन ही मन सोचे थे—यह कुछ अच्छा न हुवा, विष्णुसे वर मांगने पर हमारी न्यूनता समझ पड़ती है। वह एकाएक कहने लगे। नारायण आप हमसे कोई वर लेलें। विष्णुने कहा—आप हमारे वाहन बन जायें। गरुड़ने अम्लान वदन उनकी बात स्वीकार की थी। बड़ी गड़बड़ी पड़ गयी। दोनों वर सत्य होना चाहिये। गरुड़को विष्णुका वाहन बनना और उनके ऊपर रहना भी था। परिशेषको स्थिर हुवा कि गरुड़ विष्णुके रथका ध्वज बन कर रहेंगे। दोनों बातें रह गयीं, गरुड़ वाहन भी हुए और ऊपर भी बैठ गये। (भारत १।३३ अ०)

"मदा मन्द जासन खगासन हवासन" (श्रीपति)

२ उदयपर्वत। (क्लो०) ३ रुद्रयामलोक्त कोई आसन। मस्तककी झुका अधोभागमें बांधके बैठनेका नाम खगासन है। यह आसन लगाकर उपवेशन करनेसे अति सत्वर श्रान्ति दूर होती है। (रुद्रयामल)

खगुण (सं० त्रि०) जिसका गुणक शून्य ही हो, सिफरसे जरब किया जानेवाला। (लीलावती)

खगेन्द्र (सं० पु०) १ गृध, गीध। २ गरुड़। खगपति देखो।

खगेन्द्रध्वज (सं० पु०) खगेन्द्रो गरुड़ाध्वजे यस्य, बहुव्री०। विष्णु। खगासन देखो।

खगेश्वर, खगपति देखो।

खगोड (सं० पु०) स्वनामख्यात तृणविशेष, एक घास।

खगोल (सं० पु०) खस्य-आकाशस्य गोलो मण्डलम्, ६-तत्। आकाशमण्डल, आसमानका चक्कर। किसी किसी ज्योतिर्विद्के मतमें सृष्टिके प्रथम एक वृहत् अण्ड उत्पन्न हुआ था। उसके मध्य पृथिवी, पर्वत, नक्षत्र, ग्रह, स्वर्ग और पाताल आदि विश्वसंसार अवस्थित है। इसी अण्डको ब्रह्माण्ड कहते हैं। ब्रह्माण्ड गोलाकार रहनेसे उसका मध्यवर्ती आकाश भी गोलाकार ही है। इसी गोलाकार आकाशका नाम खगोल है। पौराणिक लोग लोकालोक पर्वतके मध्यवर्ती अवकाशको खगोल कहते हैं। उनके मतमें इसका परिमाण १८७१२०६९२००००००० योजन है। प्रसिद्ध गणक भास्कराचार्यने खगोल वा खकक्षाका कोई परिमाण नहीं ठहराया। उनका कहना है ग्रह अपनी अपनी गतिके अनुसार एक कल्पमें जितने योजन तक अतिक्रम करते, इसीको खकक्षा कह सकते हैं; सिवा इसके ब्रह्माण्डका परिमाण निर्णीत होना कठिन है। (गोलाध्याय) सूर्यसिद्धान्तके मतमें भी ब्रह्माण्डके मध्यपरिधिका नाम खकक्षा और उसका परिमाण १८७१२०८०८६४००००० योजन है। वास्तविक आकाश गोलाकार हो नहीं सकता। कारण जिसका आकार वा अवयव रहता, वही गोलाकार, चतुष्कोण वा त्रिकोण बनता है। आकाशका आकार वा अवयव नहीं होता, उसको गोलाकार, चतुष्कोण वा त्रिकोण कैसे कह सकते हैं? किन्तु ग्रह प्रभृति सकल ज्योतिष्क अनवरत मण्डलाकार पथमें भ्रमण करते हैं। आकाशमें यह जितनी दूर तक पहुंचते, ज्योतिर्विद् उसीको खगोल कहते हैं।

खगोल—परमेश्वरकी सृष्टिका अपूर्व कौशल है। भारतीय ज्योतिर्विदोंने खगोल विषयमें जो सकल तत्त्व निर्णय किये हैं, उनमें भी मतभेद लक्षित होता है। ऐसे अनेक मत हैं, जो परस्पर एकबारगी ही विरुद्ध हैं और कई नितान्त विरुद्ध भी नहीं। सूर्यसिद्धान्त और भास्कराचार्यका मत परस्पर मिलता जैसा है। भारतमें आजकल यही मत चलता है।

यह न समझनेसे कि भूगोल कैसे अवस्थित होता है; नक्षत्रका उदय, अस्त, ग्रहयोग और ग्रहगति जान लेना कठिन है। इस लिये यहां संक्षेपमें लिखा जाता है—भास्कराचार्य प्रभृति भारतीय ज्योतिर्विदोंने भूगोलका कैसा अवस्थान ठहराया है। उनके मतमें पृथिवी गोलाकार है। यह किसी मूर्त पदार्थको अवलम्बन करके अवस्थित नहीं, अपनी शक्तिसे ही शून्यमें बनी रहती है। पृथिवी अचला है, इसकी कोई गति नहीं। ग्रह और नक्षत्र नियमितरूपसे इसीका चक्कर लगाया करते हैं। कदम्बके फूलमें गोली बोंड़ी जैसे चारो ओर केशर समूहसे परिवेष्टित रहती, वैसे ही इस भूगोलका चारो ओर भी पर्वत, चैत्य, मनुष्य और देव प्रभृतिकी शोभा देख पड़ती है।

(सि० शि० गोलाध्याय)

आर्यभटके मतमें पृथिवी अचला नहीं, बराबर

घूमा करती है। ग्रह प्रभृति ज्योतिष्क निश्चल हैं, पृथिवीकी गतिके अनुसार ही उनका दर्शन अदर्शन और उदय अस्त होता है। नदीमें प्रबलवेगसे नौका चलती रहने पर नौकास्थित दर्शकको बोध होता—मानो तीरके सकल वृक्ष उसके दृष्टिपथको अतिक्रम करके विपरीतदिक् दौड जाते हैं। किन्तु वास्तविक वैसा नहीं होता। इसी प्रकार पृथिवी भी प्रबलवेगसे घूम रही है। हम उसकी गतिको अनुभव कर नहीं सकते। हमको समझ पड़ता है, मानो ग्रह और नक्षत्र मण्डली ही पृथिवीका चक्कर काट रही है। (आर्यभट) युरोपीय ज्योतिर्विद् भी पृथिवीको स्थिर नहीं मानते उनके मतमें ज्योतिष्कोंके साथ पृथिवी भी सूर्यमण्डल वेष्टन करके घूमती है। पृथिवीकी यदि गति न होती, तो यथाकाल ऋतुपरिवर्तन कैसे पड़ता! पृथिवी देखो। परन्तु भास्कराचार्य और श्रीपति प्रभृति प्रधान ज्योतिर्वेत्ताओंने प्रमाण तथा युक्ति द्वारा इसका खण्डन किया है। भूगोल देखो।

किसी गोलकके ठीक मध्यभागको समभावसे एक कीलक द्वारा विद्ध करके रखने पर यह कीलक इसी गोलकका मेरुदण्ड कहलाता है। यह पृथिवी भी इसी प्रकार मेरुदण्ड द्वारा विद्ध है। भूगोलके बिलकुल बीचो बीच यह मेरु खड़ा है। मेरुका कुछ अंश पृथिवी-गोलकको भेद करके नीचेको जा निकला है। इसीको अधोभाग कहते हैं। फिर पृथिवीके ऊपर अर्थात् हमारे उत्तरको अवस्थित अंश मेरुका ऊर्ध्वभाग कल्पना किया जा सकता है। मेरुके ऊर्ध्वभागमें (उत्तरमेरु) रहनेवालोंको देवता, अधोभागवालों (दक्षिणमेरु) को असुर और मध्यभागवासियोंको मनुष्य कहते हैं। इन तीनों स्थानोंका नाम भी यथाक्रम स्वर्ग, पाताल और मर्त्य है। (सूर्यसिद्धान्त १२।४०) देवलोक और असुरलोकके मध्य समुद्रने मेखलाकी तरह वेष्टन करके पृथिवीको २ भागोंमें बांट दिया है। इसीके बीच सप्तद्वीप आदि अवस्थित हैं। भूगोल भेद करके दण्डाकार मेरु जिन दो स्थानोंमें जा निकला है, वहीसे सूत्र रख वर्तुलाकार लपेटके भूखण्डको दो भागोंमें बांटने पर चार खण्ड उतरेंगे। मेरुकी पूर्वदिक्को समुद्रके तीर यमकोटी नाम्नी पुरी, दक्षिण भागमें भारतवर्षसे दक्षिण समुद्र तीरको लङ्का, पश्चिमको केतुमालवर्षमें समुद्र-तीर रोमकपत्तन और उत्तरको कुरुवर्षमें सिद्धपुरी है। समुद्ररूप परिधिवेष्टित भूखण्डकी प्रान्तसीमा पर अवस्थित यह चारो देश निरक्षदेश कहलाते हैं। यम-कोटिस्थित लोग रोमकपत्तनके लोगोंको अधःस्थित और अपनेको पृथिवीके ऊपरका रहनेवाला समझते हैं। इसी प्रकार रोमकपत्तनके लोग भी उनको अधः-स्थित और अपनेको उपरिस्थित मानते हैं। वास्तविक किसी अंशको ऊर्ध्व वा अधःजैसा निर्णय कर नहीं सकते।

सूर्यसिद्धान्तके मतमें पृथिवीका परिधि ४९६७ योजन अर्थात् १९८६८ कोस और व्यास १५८१ योजन यानी ६३२४ कोस है। युरोपीय ज्योतिर्विदोंने पृथिवीका व्यास ८४४८ मील अर्थात् ४२२४ कोस माना है।

प्राचीन ऋषियोंने क्रियाभेदसे वायुका ७ भागोंमें विभक्त किया है। यथा—आवह, प्रवह, उद्वह, संवह, सुवह, परिवह और परावह। पृथिवीसे ऊर्ध्वको १२ योजन वा ४८ कोस तक व्याप्त होके जो वायु भूमण्डलका समस्त कार्य चलाता, जिनके मध्य हमारा अवस्थान पाया जाता और विद्युत् तथा मेघ जिसको अवलम्बन करके आकाशपथमें चक्कर लगाता, वही आवह वा भू-वायु कहलाता है।* इसकी गतिका नियम नहीं है। पूर्व, पश्चिम, उत्तर और दक्षिण दिक्को सीधी या बहुत तिरछी गति लगा करती और समय समय अति-शय ह्रास तथा वृद्धि भी देख पड़ती है। इस आवह वायुसे ऊपर अर्थात् पृथिवीसे ४८ कोस ऊंचे एक प्रकारका वायु है। वह सर्वदा पश्चिमको बहा करता है। उसकी चाल कभी नहीं घटती बढ़ती, सर्वदा समान रहती है। इसी वायुको प्रवह कहते हैं। पांच प्रकारके अपर वायुओंको उल्लेख करनेका यहां प्रयोजन नहीं। हम आकाशमण्डलके जिन समस्त ज्योतिष्कोंको देखते, वह इसी वायुमें अवस्थित हैं। प्रवह वायु निरन्तर

---

* पाश्चात्य ज्योतिर्विदोंके मतमें यह वायु ४५ मील ऊंचे तक व्याप्त है। उसके ऊपर फिर यह नहीं मिलता। वायु देखो।

मण्डलाकारमें पश्चिमाभिमुखको गमन करके पृथिवीका चक्कर लगाती है। इसके आघातसे आहत होके ज्योतिष्कमण्डल साथ ही साथ बराबर घूमा करता है।

हम जिन सकल ज्योतिष्कोंको देखते, उन्हें दो श्रेणियोंमें विभक्त कर सकते हैं। उनमें एक श्रेणीका नाम ग्रह (Planet) और अपर श्रेणीका नाम नक्षत्र (Fixed Star) है। सबके ऊपर राशिचक्र लगा है उसको समान द्वादश भागोंमें विभक्त करके उसमें एक एकको राशि कल्पना करते हैं। उन सकल भागोंके नाम यथाक्रम यह हैं—मेष (Aries), वृष (Taurus), मिथुन (Gemini), कर्कट (Cancer), सिंह (Leo), कन्या (Virgo), तुला (Libra), वृश्चिक (Scorpio), धनु (Sagittarius), मकर (Capricornus), कुम्भ (Aquarius) और मीन (Pisces) द्वादश राशियोंके यही बारह नाम रखते और इस राशिचक्रको २७ समान भागोंमें बांटके उनमें एक एक भागको नक्षत्र कहते हैं। जो समस्त ज्योतिष्क राशिचक्रके नक्षत्ररूप एक एक भागको सीमाबद्ध करनेमें काम आते, वह भी नक्षत्र ही कहलाते हैं। इन्हीं सकल ताराओंका नाम नक्षत्रमण्डल (Constellations) है। नक्षत्र सबके ऊपर अवस्थित हैं। पृथिवी पर उनका आलोक बहुत कम आता और अति दूर जैसे रहने पर पृथिवीसे उनका रूप भी अति क्षुद्र देखाता है। ग्रहों और नक्षत्रोंमें प्रत्येकको एक एक कक्षा है। नक्षत्रकक्षा सबके ऊपर पड़ती है। उसके नीचे यथाक्रम शनि, वृहस्पति, मङ्गल, सूर्य, बुध, शुक्र और चन्द्र अनवरत अपनी अपनी कक्षामें रह पृथिवीको भ्रमण करते हैं।* सिद्धान्तशिरोमणिको देखते पृथिवी, ग्रह और नक्षत्र अपनी अपनी आकृष्टिशक्तिसे ही शून्यमार्गमें अवस्थिति रखते हैं। (गोलाध्याय ३।२) राशिचक्रकी भांति ग्रहोंको कक्षा भी द्वादश भागोंमें विभक्त है और राशिचक्रके समसूत्रपातमें उसका प्रत्येक अंश भी मेषादि नामसे उल्लेख किया जा सकता है। राशिचक्र बराबर पश्चिमको घूमा करता है और उसके आघातसे ग्रह तथा नक्षत्रमण्डल भी पश्चिममुख चलता रहता है। ग्रहोंको अपेक्षा नक्षत्रमण्डलको गति अधिक होती है। नक्षत्र ग्रहोंको अतिक्रम करके शीघ्र चले जाते हैं। ग्रह उसकी अपेक्षा पूर्वदिक् अवलम्बन करते हैं। उनको सर्वदा पूर्वको गति पड़ती है। किन्तु राशिचक्रकी गतिके अनुसार हमें समझ पड़ता, मानो ग्रहमण्डल भी राशिचक्रकी तरह पश्चिमको जा रहा है। ग्रहोंकी अपेक्षा राशिचक्रकी गति अधिक-जैसी रहनेसे ही हम ग्रहोंको पूर्वगति अनुभव नहीं कर सकते। (वासनाभाष्य)

दिक्निर्णय न होनेसे ग्रहों वा राशिचक्रकी गति कैसे स्थिर की जा सकती है? इसीलिये हमारे प्राचीन ज्योतिर्विदोंने दिक् निकालनेका उपाय इस प्रकार स्थिर किया है—

किसी समप्रदेशमें एक वृत्त अङ्कित करके उसके केन्द्रविन्दु पर १२ अंगुलका एक शङ्कु (कीलक) सीधा गाड़ देना चाहिये। सूर्योदयके समय शङ्कुको छाया बहुत बड़ी रहती है। क्रमशः सूर्य जितना ही ऊपरको चढ़ता, शङ्कुको छायाका परिमाण भी उतना घटता रहता है। इसी प्रकार जब शङ्कुकी छायाका अग्रभाग वृत्तकी परिधि-रेखासे मिलता, तब परिधिरेखाके उसी स्थान पर एक विन्दुपात करना पड़ता है। इसीका नाम पूर्वविन्दु है। ठीक मध्याह्न समको शङ्कुकी छाया अतिशय क्षुद्र होके फिर बढ़ने लगती है। क्रमसे वर्द्धित होने पर छायाका अग्रभाग जब दोबरा परिधिरेखासे मिले तब उस स्थान पर दूसरा विन्दुपात कर दे। इसको अपरविन्दु कहते हैं। इन्हीं दोनों विन्दुओंके अन्तरालको व्यासार्ध और दोनों विन्दुओंको केन्द्र कल्पना करके दो वृत्त खींच लेना चाहिये। इसमें एक वृत्तके परिधिका कुछ अंश अपर वृत्तके परिधिको भेद करके उसके मध्य प्रवेश करता है। फिर दोनों परिधियोंमें दो संयोग उत्पन्न हो जाते हैं। इसमें एक संयोगस्थानसे दूसरे संयोगस्थान तक एक सरल रेखा खींचना चाहिये। पूर्व विन्दुके दक्षिण भागको रेखाका अग्र-

* युरोपीय ज्योतिर्विदोंके मतमें पृथिवी और ग्रह सूर्यको प्रदक्षिण करते हैं।

दक्षिणदिक् और अपर दक्षिणभागकी रेखाका अग्र उत्तरदिक् कहा जाता है। इस रेखाको भी दक्षिणोत्तररेखा नामसे उल्लेख कर सकते हैं। इसी दक्षिणोत्तर रेखाको व्यासार्ध और उसके दोनों अग्रविन्दुओंको केन्द्र कल्पना करके दो वृत्त बनाना और पूर्ववत् उसके एक संयोगस्थानसे दूसरे संयोगस्थान तक एक रेखा खींचना चाहिये। इसीको पूर्वपश्चिम रेखा कहते हैं। पूर्वविन्दुका निकटवर्ती रेखाग्र पूर्वदिक् और पश्चिम विन्दुका निकटवर्ती अग्रभाग पश्चिमदिक् कहलाता है। इसी प्रकार अपरदिक् (कोण) को भी साधन करना चाहिये। इस वृत्तके बाहर एक चतुष्कोण अङ्कित करते हैं। इससे उस समयकी छाया समझी जा सकती है। पूर्वोक्त पूर्वपश्चिम रेखाको सममण्डल, उन्मण्डल वा विषुवन्मण्डल भी लिखते हैं।

राशिचक्र ३६० भागोंमें बंटा है। इसमें एक एक भाग अंश कहलाता है। प्रत्येक अंश (Degree) फिर ६० भागोंमें विभक्त है। उसके प्रत्येक भागको कला कहते हैं। कलाका ६०वां भाग विकला कहलाता है। अतएव राशिचक्रके ३० अंशोंमें एक राशि बनता और राशिचक्रके प्रत्येक १३° अंश और २०´ कलाका एक नक्षत्र पड़ता है। अश्विनीसे* नक्षत्र गिने जाते हैं। अतएव अश्विनी ही राशिके प्रथम १३° अंश और २०´ कला कहला सकती है। इसके प्रत्येक नक्षत्रमें तारा देख पड़ता है। लोगोंको विश्वास है कि अश्विनीसे रेवती पर्यन्त केवल २७ गिने नक्षत्र हैं। किन्तु फलमें यह नहीं है। खगोलवेत्ताओंके मतमें ३ (किसी मतमें २) नक्षत्रोंसे (b, a, Arietis) अश्विनी नक्षत्र विरचित है। इन नक्षत्रोंके अवस्थानका भाव घोड़ेके मस्तक-जैसा है। इसीसे अश्विनी नाम रखा गया। अश्विनी नक्षत्र मेषराशिके अन्तर्गत है।

द्वितीय भरणी (35, 39, 41 Arietis) में भी ३ तारायें हैं और त्रिकोणाकारसे अवस्थित हैं। भरणी नक्षत्र भी मेषराशिके अन्तर्गत है।

तृतीय कृत्तिका (Pleiades. E. Tauri etc.) ६ नक्षत्रोंसे बनी है। इसका आकार फूसके झोपड़े-जैसा है। कृत्तिकाके चार भागोंमें एक भाग मेषराशिके अन्तर्गत और अपर ३ भाग वृषराशिभुक्त है।

चतुर्थ रोहिणी (a, i, g, d e. Tauri) ४ नक्षत्र विशिष्ट है। यह शकटाकार अवस्थित और वृषराशिभुक्त है। इन पांच ताराओंमें पूर्वदिक्की ताराको कृत्तिकाकी योगतारा कहते हैं।

पञ्चम मृगशिरा (i, f¹ f², Orionis) हुई है। यह ३ नक्षत्रोंसे रचित हुई है। इसका अवस्थान हरिणके मस्तक जैसा है। इसी कारण मृगशिरा नाम पड़ा है। इसका एक अंश वृषराशिके अन्तर्गत और दूसरा मिथुन राशिभुक्त है।

षष्ठ आर्द्रा (a Orionis) एक ही नक्षत्र है। इसका आकार प्रायः रत्नकी भांति लगता है। आर्द्रा मिथुनराशिमें पड़ती है।

सप्तम पुनर्वसु (b, a Geminorum) ६ नक्षत्रोंसे तैयार हुई है। इसका आकार प्रायः ग्रह जैसा है। इसके चारभागोंमें तीन भाग मिथुनराशि और एक भाग कर्कटराशिके अन्तर्गत हैं। इसकी पूर्वदिकस्थ तारा योगतारा कहलाती है।

अष्टम पुष्या (Hercules, i, d, g Cancri) ३ नक्षत्रोंसे बनी है। उसके मध्यकी ताराको योगतारा कहते हैं। पुष्या कर्कटराशिके अन्तर्गत है।

नवम अश्लेषा (e, d, s, E, r Hydrae) ५ नक्षत्रयुत है। इसका अवस्थान कुलालचक्र-जैसा है और पूर्वदिक्की तारा योगतारा कहलाती है। यह कर्कटराशिके अन्तर्गत है।

दशम मघा (a, E, g, z, m, a Leonis) ५ ताराओंसे बनी है। इसका आकार कल्पित घर जैसा है। दक्षिणकी तारा योगतारा कही जाती है। यह नक्षत्र सिंहराशिके अन्तर्गत है।

एकादश पूर्वफल्गुनी (d, i, Leonis) २ ताराओंसे युक्त, खट्वाकार और सिंहराशिके अन्तर्गत है। इसकी उत्तरदिकस्थ ताराको योगतारा कहते हैं।

द्वादश उत्तरफल्गुनी (93 Leonis) २ नक्षत्र-

* पूर्वकालको कृत्तिकासे नक्षत्र गणना होती थी। वेदाङ्ग ज्योतिषमें कृत्तिकासे ही प्रथम नक्षत्र गणित चला है।

युक्त और शय्याकार है। इसके चारभागोंमें एकभाग सिंहराशिके अन्तर्गत और तीनभाग कन्याराशिभुक्त हैं। इसकी उत्तर दिकस्थ तारा योगतारा कहलाती है।

त्रयोदश हस्ता (d, g, e, a, b, Corvi) ५ नक्षत्र रखती है। इसका आकार हाथकी पांच अंगुलीयोंके सन्निवेश जैसा है। यही कारण है कि उक्त नक्षत्रको हस्ता कहते हैं। इसके वायुकोणकी तारा योगतारा कहलाती है। हस्ता कन्याराशिमें लगती है।

चतुर्दश चित्रा (a Verginis) केवल एक ही नक्षत्र है। इसका आकार उज्ज्वल मुक्ता जैसा लगता है। चित्राका अर्धभाग कन्याराशिके अन्तर्गत और अपर अर्ध तुलाराशिभुक्त है।

पञ्चदश स्वाति (a Bootis) भी एक ही नक्षत्र है। यह प्रवाल जैसी देख पड़ती है। स्वाति नक्षत्र तुलाराशिमें लगता है।

षोड़श विशाखा (i, g, b, a Lilræ) ६ नक्षत्र रचित और पुष्पमालाकार है। इसके चारभागोंमें एक तुलाराशि और अपर ३ भाग वृश्चिकराशिके अन्तर्गत हैं।

सप्तदश अनुराधा (d, b, p, Scorpionis)में ७ नक्षत्र हैं। इसका आकार जलधारा सदृश होता है। अनुराधाकी मध्यताराका नाम योगतारा है। यह नक्षत्र वृश्चिकराशिके अन्तर्गत है।

अष्टादश ज्येष्ठा (a, s, t Scorpionis) ३ तारायुक्त और कर्णकुण्डलाकार है। इसकी मध्यताराको योगतारा कहते हैं। यह नक्षत्र वृश्चिकराशिमें पड़ता है।

एकोनविंश मूला (Scrop 1 &c.) ११ नक्षत्रयुक्त है। इसका सन्निवेश सिंहके लाङ्गूल जैसा है। पूर्वदिककी तारा योगतारा कहलाती है। मूला धनुराशिमें लगती है।

विंश पूर्वाषाढ़ा (d, e Sagittarii) ४ नक्षत्रयुक्त और हस्तिदन्ताकार है। इसकी उत्तरदिकस्थ ताराका नाम योगतारा है। यह नक्षत्र धनुराशिभुक्त है।

एकविंश उत्तराषाढ़ा ४ नक्षत्रोंसे बनी है। इसकी उत्तरदिकस्थ ताराकी योगतारा कहते हैं। इस नक्षत्रके ४ भागोंका एक भाग धनुराशि और तीन भाग मकरराशिभुक्त हैं।

द्वाविंश श्रवणा (a, b, g Aquilae) ३ नक्षत्रयुक्त तथा त्रिशूलाकार है। इसकी मध्य ताराका नाम योगतारा है। यह नक्षत्र मकरराशिके अन्तर्गत है।

त्रयोविंश धनिष्ठा (a, b, g d Delphini) ५ नक्षत्रयुक्त और ढकाकार है। इसकी पश्चिम दिकवाली योगतारा कहलाती है। इस नक्षत्रका अर्ध मकरराशि और अपर अर्ध कुम्भराशिभुक्त है।

चतुर्विंश शतभिषा (Aquarii 1 &.) वा शततारकामें १०० नक्षत्र होते हैं। यह मण्डलाकार अवस्थित है। इसमें अतिशय स्थूल देख पड़नेवाली तारा ही योगतारा नामसे अभिहित होती है। शततारका कुम्भराशिके अन्तर्गत है।

पञ्चविंश पूर्वभाद्रपद (a, b Pegasi) २ नक्षत्रविशिष्ट और घण्टाकार होती है। इसकी उत्तरदिकस्थ ताराका ही नाम योगतारा है। इसके ४ भागोंमें ३भाग कुम्भराशि और अपर भाग मीनराशिके अन्तर्गत है।

षड्विंश उत्तरभाद्रपद (g Pegasi, a Andromedae) २ नक्षत्रयुक्त और दो मस्तकविशिष्ट नराकार है। इसकी उत्तरस्थ ताराको योगतारा कहते हैं। उत्तरभाद्रपद मीनराशिमें लगता है।

सप्तविंश रेवती (Piscium, etc.) ३२ नक्षत्रयुक्त तथा मृदङ्गाकारसे अवस्थित है। दक्षिणदिककी तारा योगतारा कहलाती है। रेवती नक्षत्र मीनराशिके अन्तर्गत है। (सूर्यसिद्धान्त ८ अध्याय, रङ्गनाथ)

इसको छोड़कर अभिजित् नामक एक और नक्षत्रका उल्लेख देख पड़ता है। किन्तु वह इन २७ नक्षत्रोंसे अतिरिक्त नहीं होता। उत्तराषाढ़ा नक्षत्रके ४ भागोंमें शेष भाग और श्रवणाकी प्रथम ४ कलाओंको ही भारतीय ज्योतिर्विदोंने अभिजित् कहा है *

खकक्षाका परिमाण प्रथम ही बता चुके हैं। सूर्यसिद्धान्तके मतमें इस खकक्षाका व्यास ५८५३८४३८११-२०२०२७ योजन और पृथिवीसे उच्चता २८०६८२१८-

* पुराने अरब, ईरानी और युनानी इसी अभिजित्को मिलाके नक्षत्र मण्डलमें २८ नक्षत्र कल्पना करते थे।

५५६२६२६३ योजन है। खकक्षाके नीचेकी कक्षा नक्षत्रकक्षा कहलाती है। इसी नक्षत्रकक्षामें पूर्वस्थित नक्षत्रमण्डली अवस्थित है। नक्षत्रकक्षाका परिमाण २५९८९०००० योजन, व्यास ८२६९८२२७३ योजन और पृथिवीसे उच्चता ४१३४५३२६ योजन है। खकक्षाकी उच्चतासे नक्षत्रकक्षाकी उच्चता घटाने पर २९७६९८२१९१-१२९१०२७ अवशिष्ट रहेगा। सुतरां नक्षत्रकक्षा खकक्षासे इतने ही योजन परिमाण नीचे अवस्थित है। (सूर्यसिद्धान्त १२।८०) यह नक्षत्रमण्डल सर्वदा ही पृथिवीको समान अन्तरालमें रख भ्रमण करता है। नाक्षत्रिक ६० दण्डों अर्थात् एक दिन रातमें यह एक बार पृथिवीको घूम आता है। इसीका नाम नाक्षत्रिक अहोरात्र है। (सूर्यसिद्धान्त १।२५)

मेरुकी उभय दिशाओंको अर्थात् मेरुके दक्षिणाग्र तथा उत्तराग्रके उपरिभाग पर आकाशमें दो तारायें हैं। इन दोनों ताराओंको ध्रुवतारा (Polar star) कहते हैं। गाड़ीका पहिया जिस निश्चल लकड़ीको पकड़के घूमा करता, उसका नाम धुर वा अक्षदण्ड पड़ता है। इसी प्रकार उत्तर तथा दक्षिणाकाशस्थित इन दोनों ताराओंको अक्ष बनाके राशिचक्र बराबर घूमते रहता है। इसीसे ज्योतिर्विदोंने इन दोनों ताराओंका नाम ध्रुव लिखा है। आकाशकी ओर दृष्टि उठानेसे समझ पड़ता है, मानो हमारे मस्तकके ठीक ऊपरिभागकी स्थित आकाश अपेक्षाकृत उच्च है और उसी स्थानमें क्रमक्रम अवनत हो चारो ओर पृथिवीमें मिल गया है। आकाश जहां पृथिवीसे मिला, उसको दृष्टिपरिच्छेदक रेखा कहते हैं। इस दृष्टिपरिच्छेदक रेखाकी परिधि समझने पर भूखण्ड एक वृत्ताकारमें परिणत होगा। यही वृत्त क्षितिज कहलाता है। जो देशवासी अपने क्षितिज वृत्तसे ध्रुव नक्षत्रको जितना ऊपर देखते, उनका अक्षांश उतना ही ऊंचा हुआ करता है। क्षितिजवृत्तसे ध्रुवको उच्चता ही अक्षांश (Latitude) है। (सूर्यसिद्धान्त १२।४४ रङ्गनाथ)

पूर्वको जिन कई निरक्षदेशोंका उल्लेख किया गया है, उन देशोंके अधिवासी ध्रुव नक्षत्रको अपना क्षितिजवृत्तस्थ देखते हैं। इसीसे उन देशोंका अक्षांश नहीं होता। दक्षिण क्षितिज प्रदेशसे विषुवद्वृत्तका जितना अन्तर पड़ता, उसको लम्ब (Co latitude) कहते हैं। (सूर्यसिद्धान्त ३।१३ रङ्गनाथ) आकाशके मध्यसे ध्रुव-निकटवर्ती क्षितिज लम्बांश कहलाता है। जिस देशका अक्षांश ९० आता, उसका लम्बांश शून्य (०) देखा जाता है। फिर जिस देशका लम्बांश ९० पड़ता, उसका अक्षांश शून्य (०) लगता है। जैसे निरक्षदेशोंका अक्षांश शून्य है, तो उनका लम्बांश नव्वे होगा। इसी प्रकार मेरुका अक्षांश ९० है, उसका लम्बांश शून्य रहेगा अर्थात् मेरुका लम्बांश नहीं और यमकोटी प्रभृतियोंका अक्षांश नहीं। (सूर्यसिद्धान्त १२।४४ रङ्गनाथ)

हम जिस भूखण्डमें रहते हैं, उसको ज्योतिर्विद् जम्बूद्वीप नामसे लिखते हैं। पूर्वको ही कहा जा चुका है कि समुद्रने मेखलाकी तरह पृथिवीको लपेटके भूगोल दो भागोंमें बांट दिया है। उन्होंमें एक खण्डका नाम जम्बूद्वीप है। अतएव जम्बूद्वीपको चारों ओरों समुद्र भरा है।* मेरुका निकटवर्ती स्थान सब स्थानोंसे ऊंचा है। फिर वहांसे क्रमक्रम अवनत हो जो स्थान समुद्रसे मिलता, वही अतिशय नीच रहता है। समुद्र और भूखण्डकी सन्धिको भूवृत्तका परिधि कह सकते हैं। इसी परिधिवृत्तके समसूत्रमें किसी वृत्तको कल्पना करनेसे विषुवद्वृत्त कहा जाता है। विषुवद्वृत्तमें क्रान्तिवृत्तके दो स्थान (मेष और तुलाका आद्यस्थान) लग्न रहते हैं। क्रान्तिवृत्त प्रवह वायुसे आहत होकर सर्वदा विषुवद्वृत्तमार्गमें परिभ्रमण किया करता है। क्रान्तिवृत्तके मेषस्थानसे कर्कादि स्थान विषुवद्वृत्तके २४० अंश उत्तर और मकरादि स्थान २४० अंश दक्षिणको अवस्थित हैं। राशिचक्रके ठीक मध्य स्थानको विषुवस्थान (Equinox) कहते हैं। मेरुके उत्तराग्रवासियों और वड़वानलस्थित†

---

* युरोपीय भौगोलिक यह मत स्वीकार नहीं करते, वह समुद्रको भी पृथिवीमें ही समझते हैं। समुद्रको लेकर भी पृथिवी गोलाकार है। पृथिवी शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

† सूर्यसिद्धान्तके असुरभागको भास्कराचार्यने 'वड़वानल' कहा है। (गोलाध्याय ३।१८) वर्तमान ज्योतिर्विद इसी दक्षिणमेरु (South Pole) कहते हैं।

असुरोंको यह स्थान क्षितिजवृत्तके ऊपर देख पड़ता है। राशिचक्रका जो स्थान विषुव लिखा जाता उससे उत्तर मेषादि ६ राशियां उन्नत भाव और दक्षिणको तुला प्रभृति ६ राशियां अवनतरूपमें अवस्थित हैं। मेरुके उत्तराग्रवासी मेषादि ६ राशियां ही देख सकते हैं। तुलादि ६ राशि उनके लिये भूवृत्तमें आच्छादित जैसे रहने पर नहीं देख पड़ती। फिर बड़वानलमें जो रहते, वह भी तुलादि प्रभृति ६ राशियां देखते, मेषादि ६ राशि भूवृत्तमें आच्छादित रहनेसे नहीं देख पड़ते। इसी लिये सूर्य जिन ६ मासोंमें मेषसे कन्याराशिके शेषको अतिक्रम करता, मेरुके उत्तराग्रवासियोंको उन्हीं छह महीनों सर्वदा सूर्य देख पड़ता है और उतने दिनों अर्थात् इस देशके वैशाख, ज्यैष्ठ, आषाढ़, श्रावण, भाद्र और आश्विन मासको बराबर दिन रहता है। सूर्य जिन ६ मासोंमें तुलाराशिसे मीन पर्यन्त भोग करता, उन्हें सूर्य नहीं देख पड़ता अर्थात् कार्तिक, अग्रहायण, पौष, माघ, फाल्गुन और चैत्र कई महीनों रात होती है। बड़वानलवासियोंको भी कार्तिकसे ६ मास दिन और वैशाखके ६ महीने रात रहती है। यह दोनों वर्षमें ६ मास मात्र सूर्य देख सकते हैं।

(सूर्यसिद्धान्त १२।४५)

दक्षिणोत्तर अयनमण्डलके दो सम्पात स्थान होते हैं। इसी सम्पात-स्थानद्वयका नाम विषुवद् है। विषुवद्द्वय निरक्षदेशके ऊपर अवस्थित है। क्रान्ति और विषुवद्वृत्तका सम्पात क्रान्तिपात (Equinoctial points) कहाता है। सृष्टिकालको अयनमण्डल (Solstice) मिथुनराशिके अन्तमें रहता और मेषराशिके प्रथम अंशपर क्रान्तिपात लगता था। पहले लिख चुके हैं कि पूर्व और उत्तर आकाशमें दो ध्रुव अवस्थित हैं, राशिचक्र इन्हीं दोनोंका ध्रुव (अक्षदण्ड) बना पश्चिम गतिसे भ्रमण करता है। किन्तु ध्रुवतारा भी स्वस्थानसे थोड़े परिमाणमें पूर्वपश्चिम चलते रहती है। इससे राशिचक्र अपनी धुरके स्थानको छोड़ कर कुछ दूर सरक जाता है। सूर्यसिद्धान्तके मतमें राशिचक्र धुरके साथ २७ अंश पश्चिमको हटता और फिर अपने स्थानपर जा पहुंचता है। इसी प्रकार अपने स्थानसे २७ अंश पूर्वको भी जाके राशिचक्र लौट आया करता है। (सूर्यसिद्धान्त ३।९-१० रङ्गनाथ) अयनमण्डल ६६ वर्ष ८ मासको एक एक अंश चलता और राशिचक्र भी इसी नियमको पकड़ता है। इसी प्रकारकी गतिके अनुसार अयनमण्डल २१ अंश पश्चात् दिक्को हट जैसा जानेसे आजकल मिथुनके नवम अंशमें ही उत्तरायण और धनुराशिके नवम अंशमें दक्षिणायन शेष होता है। विषुवस्थानमें भी एक मीनराशि और दूसरा कन्याराशिका नवमांश लगा करता है। इसी कारणसे आजकल १० चैत्र और १० आश्विनको दिनरात बराबर होती है। पूर्वको वैशाख और कार्तिक मास यह समानता देख पड़ती थी। धनुके नवमांशसे मिथुनके नवमांशपर्यन्त उत्तरायण और मिथुनके नवमांशसे धनुके नवमांश तक दक्षिणायन रहता है। किसी चक्रमें शल्याकार एक अग्र चुभोकर दूसरे अग्रपर कोई एक क्षुद्र पदार्थ विद्ध करके रखनेसे चक्रकी गति भिन्न यह क्षुद्र पदार्थ चल नहीं सकता। केवल चक्रकी गतिके अनुसार ही क्षुद्रपदार्थ एक स्थानसे दूसरे स्थानको हट जाता है। इसी प्रकार घनीभूत वायुरूप शलाका द्वारा नक्षत्र भी राशिचक्रके सभी स्थानोंमें विद्ध हो रहे हैं। नक्षत्रोंको कोई गति नहीं। केवल राशिचक्रकी गतिके अनुसार ही वह एक आकाशसे अन्य आकाशको चले जाते हैं। हम रातको आकाशमण्डलमें जो सकल ज्योतिष्क देखते, वह रात की तरह दिनको भी हमारे मस्तकके ऊपर घूमा करते हैं। किन्तु प्रबल सूर्यकिरणसे अभिभूत-जैसे होने पर वह हमें देख नहीं पड़ते।* सूर्यग्रहण बहुकाल स्थायी होने पर कभी कभी दिनको भी नक्षत्रमण्डल चमक उठता है। मीनराशिके शेषसे जिस नक्षत्रको योगतारा जितनी दूर पड़ती, वह दूरी उसी नक्षत्रको ध्रुवक (Longitude) ठहरती है। अश्विनी नक्षत्रको योगतारा मीनराशिके शेषसे ८ अंश दूर अवस्थित जैसी रहने पर अश्विनीका ध्रुवक ८ अंश है। इसी प्रकार भरणीका २०°, कृत्तिका ३८° अंश २८ कला, रोहिणीका

* पाश्चात्य ज्योतिषी जमीनको बहुत नीचे तक खोद उस गर्तके अंधकारमय स्थानसे दूरवीक्षणद्वारा दिनको भी ज्योतिष्क देखा करते हैं।

५२° अंश २८' कला, मृगशिराका ६६°, आर्द्राका ६७° २०', पुनर्वसुका ९३०', पुष्याका १०६°, अश्लेषाका १०८°, मघाका १२९°, पूर्वफल्गुनीका १४७°, उत्तरफल्गुनीका १५५°, हस्ताका १७०°, चित्राका १८३°, स्वातिका १९९°, विशाखाका २१२° ५, अनुराधाका २२४° ५', ज्येष्ठाका २२९° ५', मूलाका २४१°, पूर्वाषाढ़ाका २५४°, उत्तराषाढ़ाका २६०°, अभिजित्का २६५', श्रवणाका २७८° धनिष्ठाका २९०', शतभिषाका ३२०, पूर्वभाद्रका ३२३' और उत्तरभाद्रका ३३७' अंश ध्रुवक है। रेवतीका ध्रुवक नहीं होता। नक्षत्रोंको स्व स्व क्रान्तिके अग्रभाग अर्थात् क्रान्तिवृत्तस्थित ध्रुवक स्थानसे विक्षेप (Celestial latitude) स्थिर होता है। किसी किसी नक्षत्रको दक्षिणदिक् और किसी किसीको उत्तरदिक्को विक्षेप गिना जाता है। अश्विनी, भरणी और कृत्तिकाकी उत्तरदिक्को यथाक्रम १०, १२ और ५ अंश विक्षेप है। इसी प्रकार रोहिणी, मृगशिरा और आर्द्राका विक्षेप दक्षिणदिक्को ५, १० और ९ अंश होता है। पुनर्वसुका विक्षेप उत्तरको ६ अंश है। पुष्याका विक्षेप नहीं। अश्लेषाका दक्षिणको ७ अंश विक्षेप बताते हैं। मघाके विक्षेपका अभाव है। उत्तरको पूर्वफल्गुनीका १२' और उत्तर फल्गुनीका १३ अंश विक्षेप पड़ता है। हस्ता और चित्राका विक्षेप दक्षिणको १३ तथा २ अंश है। स्वातिका विक्षेप ३७ अंश उत्तर पड़ता है। विशाखा प्रभृति ५ नक्षत्रोंका विक्षेप उत्तरको १' ३०', ३' ४', ९', ५' ३०' और ५ अंश है। उत्तरको ६० अंश पर अभिजित् और श्रवणा तथा धनिष्ठाका ३०' और ३६' अंश विक्षेप पड़ता है। शतभिषाका विक्षेप दक्षिणको ७' कला है। पूर्वभाद्रपद और उत्तरभाद्रपदका विक्षेप उत्तरदिक्को २४ तथा २६ अंश आता है। रेवती नक्षत्रका विक्षेप नहीं होता।

(सूर्यसिद्धान्त १२ अ०)

ग्रहोंकी गतिके अनुसार कभी कभी ग्रह और नक्षत्र मिल जाते हैं। सिवा इसके अगस्त्य प्रभृति कई एक नक्षत्रोंका विषय भी भारतीय ज्योतिर्विदोंने निरूपण किया है। उसको यथाक्रम नीचे लिखते हैं—

अगस्त्य नक्षत्र (Canopus)—उस ताराका नाम है, जो राशिचक्रवाले मिथुनराशिके अन्तमें ८० अंश दूर दक्षिण दिक्को चमकती है। इसका ध्रुवक ३ राशि और दक्षिण दिक्को विक्षेप ८० अंश है। (ब्रह्मगुप्त और भास्कराचार्यके मतमें अगस्त्यका ध्रुवक ८७ अंश और विक्षेप ७७ अंश पड़ता है।)

मृगव्याध (Sirius) मिथुनराशिके २० अंशों अर्थात् राशिचक्रके ८० अंशों पर अवस्थित है। इसका ध्रुवक २ राशि २० अंश और विक्षेप दक्षिण दिक्को ४० अंश है। (सिद्धान्तशिरोमणिको देखते—इसका ध्रुवक ८६ अंश और ग्रहलाघवके अनुसार ८१ अंश है।) भारतीय वृद्ध चलती बोलीमें उसको कालपुरुष कहते हैं।

अग्निनक्षत्र (B Tauri) वृषराशिके २२ अंशों पर अवस्थित है। इसका ध्रुवक १ राशि २२ अंश और उत्तरको विक्षेप ८ अंश है। (ग्रहलाघवने इसका ध्रुवक ५२ अंश बताया है।)

ब्रह्महृदय (a Aurigae or Capella) नक्षत्र भी वृषराशिके २२ अंशों पर अवस्थित है। इसका ध्रुवक अग्निनक्षत्रके समान रहता और विक्षेप उत्तरको ३० अंश लगता है।

रोहिणीशकट—वृषराशिके १७ अंश पर रहता है। इसका ध्रुवक १ राशि १७ अंश और २ अंश दक्षिणको विक्षेप है।

ब्रह्मनक्षत्र (Aurigae) वृषराशिके १७ अंशों पर रहता है। इसका ध्रुवक १ राशि २७ अंश और ३८ अंश उत्तरको विक्षेप है। (ग्रहलाघवके मतमें ब्रह्मनक्षत्रका ध्रुवक और भी ४ अंश अधिक होगा।)

अपांवत्स (Virginis) का ध्रुवक चित्रानक्षत्रके समान है और विक्षेप उत्तरदिक्को ७ अंश आता है।

आपनक्षत्र (Virginis का ध्रुवक भी चित्रानक्षत्रके समान है और विक्षेप उत्तरदिक्के १४ अंश लगता है।

इसके व्यतीत उत्तरदिक्को और भी २ नक्षत्र हैं—उन्हें सप्तर्षि (Ursa major) कहा जाता है। सूर्यसिद्धान्तमें इनके विक्षेपको बात नहीं लिखी। (सूर्यसिद्धान्त १२ अ०) नक्षत्र प्रभृति ज्योतिष्कोंसे सूर्यका तेज अधिक जैसा रहने पर सूर्यके निकटवर्ती ज्योतिष्क हमें देख नहीं पड़ते। फिर सूर्यसे जब वह दूर हट जाते, तब

सबके सब देखनेमें आते हैं। इसीका नाम उदय और अस्त है। सूर्यसिद्धान्तमें इसका निर्णय किया गया है—सूर्य कितना निकट रहनेसे किस नक्षत्रका अस्त होगा। यथा—स्वाति, अगस्त्य, मृगव्याध, चित्रा, अभिजित्, ज्येष्ठा, पुनर्वसु और ब्रह्महृदय कई नक्षत्रोंका कालांश १३ है। हस्ता, श्रवणा, पूर्वफल्गुनी, उत्तरफल्गुनी, धनिष्ठा, रोहिणी, मघा, विशाखा और अश्विनीका कालांश १४ लगता है। इसी प्रकार कृत्तिका, अनुराधा और मूलाका कालांश १५ है। अश्लेषा, आर्द्रा, पूर्वाषाढ़ा और उत्तराषाढ़ाका कालांश १५ आता है। भरणी, पुष्या और मृगशिराका कलांश २१ है। इसको छोड़ कर दूसरे नक्षत्रोंका कलांश १७ ही रहता है। नक्षत्रके कालांशको १८०० द्वारा गुण करके उदयास्त द्वारा बांटने पर जो लब्ध आता, क्रान्तिवृत्तके उतने ही अंशों पर नक्षत्रका उदय अस्त देखाता है। अल्पगति ग्रहोंका भांति नक्षत्र भी पूर्वदिक्‌को उदय और पश्चिमदिक्‌को अस्त होते हैं। परन्तु अभिजित्, ब्रह्महृदय, स्वाती, श्रवणा, धनिष्ठा और उत्तरभाद्रपद कई नक्षत्र सूर्यसे कितने ही उत्तरको अवस्थित जैसे रहने पर कभी सूर्यकिरणसे अभिभूत नहीं होते और न उनका अस्त ही होता है। (सूर्यसिद्धान्त ८।१८) नक्षत्रोंका अन्यविवरण नक्षत्र और अश्विनी प्रभृति शब्दोंमें द्रष्टव्य है। सूर्यसिद्धान्तके टीकाकार रङ्गनाथके मतमें ब्रह्मनक्षत्र भी कभी अस्त नहीं होता।

(सूर्यसिद्धान्त ८।१८ रङ्गनाथ)

नक्षत्रमण्डलकी उस ओर यथाक्रम सात ग्रहकक्षायें अवस्थित हैं। फलितज्योतिषमें ९ ग्रहोंका उल्लेख है। राहु और केतु इन्हीं नवग्रहोंमें गिन लिये गये हैं। फिर नीलकण्ठ-ताजकमें सिवा इसके मुन्था नामक एक दूसरा ग्रह भी लिखा है। किन्तु आर्यभट और भास्कराचार्य प्रभृति भूगोलवेत्ताओंने आकाशमण्डलमें इन तीन ग्रहोंकी कक्षायें निरूपण नहीं की हैं। इससे हम समझते कि वह इन तीनोंको ग्रह-जैसा स्वीकार न करते थे। राशिचक्रकी तरह सब ग्रहकक्षायें भी ३६० अंशोंमें विभक्त हैं। फिर राशिचक्रके समसूत्रको वह द्वादश भागोंमें बंट भी जाती हैं। उनके एक एक भागको भी यथाक्रम मेषादि नामोंसे उल्लेख करते हैं। ग्रह अपने क्रान्तिवृत्तके जिस अंशमें रहते और उसी अंश भागके अनुसार जिस राशिमें पड़ते, वह उस राशिके उतने ही अंशमें अवस्थित रहते हैं। उपरिस्थित कक्षाके परिमाणकी अपेक्षा अधःस्थित कक्षाका परिमाण कम है। ग्रहोंके मध्य सकलके उपरिस्थित शनिकी कक्षाका परिमाण दूसरे ग्रहोंकी कक्षासे बहुत ज्यादा सबसे अधःस्थित चन्द्रकक्षाका परिमाण थोड़ा है।* ग्रह जितने कालको मेषराशिसे घूमना आरम्भ करके मीनराशिके अन्त तक पहुंचते, उस समयको उनका भगण वा वत्सर कह सकते हैं। जिस ग्रहकी कक्षाका परिमाण जितना ही अधिक रहता, उसको उसके घूमनेमें भी उतना ही अधिक समय लगता है। फिर जिसकी कक्षा छोटी पड़ती, उस ग्रहको उसके घूमनेमें ज्यादा देर नहीं लगती। (सूर्यसिद्धान्त १२ अ०) ग्रहोंमें शनिकी कक्षा सर्वापेक्षा उच्च, अधिक और पृथिवीसे २१११००५८ योजन ऊंचे अवस्थित है। इसके व्यासका परिमाण ४०६२०२०७ योजन और मण्डल परिमाण १२७६६८२५५ योजन है। शनिकी मध्यभुक्ति (दैनिक गति) २ कला और २३ अनुकला है। यह १ वर्षमें अपनी कक्षाके १२ अंश, १२ कला, १२ विकला और ५४ अनुकला अतिक्रम करता है। एक युगमें २४६५६८ भगण होते हैं अर्थात् शनिग्रह एक युगमें २४६५६८ वार अपने चक्रको घूम आता है। शनिके नीचे बृहस्पतिकी कक्षा है। इसका परिमाण ५१३७५७६४ योजन, व्यास १६३४६८३४ योजन और पृथिवीसे उच्चता ८१७२२६१७ योजन लगाते हैं। बृहस्पतिकी दैनिक गति ४ कला, ५९ विकला और ९ अनुकला है। यह एक वत्सरको अपनी कक्षाके ३० अंश, २१ कला, ३ विकला और ३६ अनुकला लांघ जाता है। एक युगमें बृहस्पतिके ३६४२२० भगण होते हैं।

बृहस्पतिके नीचे चन्द्रोच्च† कक्षा है। उसका

* युरोपके वर्तमान ज्योतिर्विदोंने यूरेनस (Uranus) और नेपच्युन (Neptune) नामक दो स्वतन्त्र ग्रह आविष्कार करके उनकी ग्रहकक्षा स्थिर की है। यह शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

† युरोपीय चन्द्रको ग्रह-जैसा नहीं मानते। उनके मतमें चन्द्र पृथिवी ग्रहका उपग्रह (Satellite) है। चन्द्र देखो।

परिमाण ३८३२८४८४ योजन, व्यास १२७४२८०८ योजन और पृथिवीसे उच्चता ६३७०६१४ योजन ठहराते हैं। चन्द्रकी दैनिक गति ६ कला और ४१ विकला है। एक वर्षमें यह ४० अंश, ४० कला, ५९ विकला और ४२ अनुकला चलता है। चन्द्रके एक युगमें ४८८१०३ भगण लगते हैं।

चन्द्रके नीचे मङ्गलकी कक्षा है। उसका परिमाण ८१४६९०९ योजन, व्यास २५९२१९८ योजन और पृथिवीसे उच्चता १२९५२९९ योजन बताते हैं। मङ्गलकी दैनिक गति ३१ कला, २६ विकला और २८ अनुकला है। १ वर्षमें यह ६ राशि, ११ अंश, २४ कला, ९ विकला और ३६ अनुकला चलता है। एक युगमें इसके २२९५८३२ भगण पड़ते हैं।

मङ्गलके नीचे सूर्यकी कक्षा है। इसमें सभी ग्रहों और ज्योतिष्कोंकी अपेक्षा सूर्यका आलोक अधिक परिमाणमें मिलता है। सूर्यकी गतिके* अनुसार ही दिन रात्रि, मास, ऋतु, अयन और वत्सरकी व्यवस्था बंधती है। जिस स्थानके अधिवासी जब सूर्यको देख पाते, उसी समयसे वह अपना दिन लगाते हैं। फिर जब सूर्य पश्चिमाकाशमें पृथिवीके अन्तरालको हट जाता और देखनेमें नहीं आता, उसी समय दिन समाप्त होता और रात्रि पड़ती है। पुनर्वार जब पूर्व आकाशमें लोहितवर्ण सूर्यमण्डल चमकने लगता, फिर दिनका आरम्भ हो जाता है। सूर्य जितने समयमें स्वीय मण्डलके द्वादश भागोंमें एक भागको अतिक्रम करता, उसका नाम एक सौरमास पड़ता है। सूर्यके मेषराशि अर्थात् मण्डलके प्रथम ३० अंशोंके अतिक्रमणको वैशाख मास कहते हैं। इसी प्रकार ज्येष्ठ प्रभृतिको भी समझना चाहिये। भास्कराचार्यने निर्णय कर दिया है—सूर्यको किस राशिके अतिक्रम करनेमें कितना समय लगता है। यथा—सूर्य जब एक राशिसे अन्य राशिको जाता, तो वह समय रविसंक्रान्ति कहलाता है यह ३० दिन, ५५ दण्ड और ३३ पलमें मेषराशि अतिक्रम करता है। इसी प्रकार ३१ दिन २४ दण्ड ५६ पल सूर्यको वृषराशि, ३१ दिन ३७ दण्ड ३२ पल मिथुन, ३१ दिन २८ दण्ड ३५ पल कर्कट, ३१ दिन २ दण्ड ५२ पल सिंह, ३० दिन २९ दण्ड ४ पल कन्या, २९ दिन ५७ दण्ड २ पल तुला, २९ दिन २७ दण्ड ३९ पल वृश्चिक, २९ दिन १५ दण्ड ३ पल धनु, २९ दिन २४ दण्ड मकर, २९ दिन ४९ दण्ड ४३ पल कुम्भ और ३० दिन २३ दण्ड ३१ पल मीनराशि अतिक्रम करनेमें लगते हैं। सूर्यमण्डलका परिमाण ४३३१५०० योजन, व्यास १३७८२०४ योजन और पृथिवीसे उच्चता ६८८३०२ योजन है। सूर्यकी दैनिक गति ५९ कला ८ विकला और १ अनुकला होती है।

सूर्य १ वत्सरमें अपने मण्डलको एक बार परिभ्रमण करता है। एक युगमें इसके ४३२०००० भगण होते हैं। सभी ग्रहबिम्ब गोलाकार हैं। सूर्यका मध्यबिम्ब ६५२२ योजन है। आर्यभटके मतमें सूर्य व्यतीत दूसरे ग्रहोंमें द्युति नहीं होती। अपर ग्रहबिम्बका जो भाग सूर्याभिमुख रहता, वही भाग सूर्यकिरणसे चमक उठता और दूसरा भाग विवर्ण लगता है। (आर्यभट) सूर्यका आलोक सर्वदा ही समान है। परन्तु निकटवर्ती होनेसे वह अतिशय तीक्ष्ण और दूर हटजानेसे मृदु-जैसा समझ पड़ता है। दो मासोंमें एक ऋतु होता है। ऋतु छह हैं। नाना प्रकार ऋतु गणना करते हैं। प्राचीन कालको ऐसी गणना लगती थी—अग्रहायण और पौष हेमन्त, माघ और फाल्गुन शीत चैत्र और वैशाख वसन्त, ज्यैष्ठ और आषाढ़ ग्रीष्म, श्रावण और भाद्र वर्षा तथा आश्विन और कार्तिक शरत। ग्रीष्म ऋतुको सूर्य मेरुके उत्तरांशसे अतिशय निकटवर्ती जैसा रहने पर वहां किरण तीक्ष्ण पड़ जाता है और हेमन्त ऋतुको बड़वानलमें निकटवर्ती जैसा रहने पर सूर्यकिरण तीक्ष्ण आता है। अतएव हेमन्त ऋतुको उत्तरमेरु और ग्रीष्म ऋतुको दक्षिण मेरुमें सूर्यकिरणकी मृदुता मिलती है। (सूर्यसिद्धान्त १२।४६) मेरुके उत्तराग्रवर्ती और वड़वानलके अधिवासी विषुवत् कालको अपने क्षितिज वृत्त पर सूर्य देख पाते हैं। जब दक्षिणमेरुके उत्तर भागमें सूर्य अवस्थिति करता,

---

* युरोपीय ज्योतिर्विदोंके मतमें सूर्य एक स्थिर नक्षत्र है। उसकी कोई गति नहीं। पृथिवीकी गतिके अनुसार ही हम सूर्यकी गतिको अनुभव करते हैं। सूर्य देखो।

मेरुके उत्तराग्रवासियोंका दिन पड़ता है। फिर दक्षिण भागमें उसके रहनेसे उनकी रात होती है। इसी प्रकार मेरुके दक्षिण सूर्य रहनेसे मेरुके दक्षिणाग्रवासियोंका दिन और उत्तर जानेसे रात पड़ती है। जब सूर्य क्रान्तिवृत्तके रेवती नक्षत्रसे निकट मेषराशि पर उदित होता, तब मेरुके उत्तराग्रवासियोंका दिन, मिथुनराशिके शेषभाग पर जानेसे मध्याह्न और कन्याराशिके अन्तको आनेसे सायंकाल (सूर्यास्त) दिखाता है। मेरुका उत्तराग्र और दक्षिणाग्र (वड़वानल) बिलकुल विपरीत अर्थात् समसूत्रमें अवस्थित जैसा रहनेसे दक्षिणाग्रवासियोंका उपर्युक्त समय उलटा पड़ा करता है। उत्तर मेरुवासियोंका जब दिन लगता, तब दक्षिणमेरुवासियोंका सूर्य अस्ताचलको चलता है। फिर मेरुके उत्तराग्रवासियोंका मध्याह्न दक्षिणाग्रवासियोंकी मध्यरात्रि है। इसी प्रकारसे उत्तरमेरुके सूर्यास्त समयको वड़वानलमें दिन आरम्भ हुवा करता है।

पूर्वकी जिस राशिचक्रकी बात लिखी गयी है, वह मेरुके उत्तराग्रवासियोंके दक्षिण, वड़वानलवालोंके उत्तर और निरक्षदेशीयोंके मस्तक पर सर्वदा भ्रमण करता है। निरक्षदेशवासियोंका दिनरात्रि परिमाण सकल काल समान होता है, कभी नहीं घटता बढ़ता। कारण सूर्य बराबर उनके मस्थे पर घूमता रहता है। जम्बूद्वीप और समुद्रके दक्षिण देशमें दिन और रात्रिकी ह्रास वृद्धि होती है, किन्तु विषुवत् संक्रमणके दिवसको यहां भी उनमें कोई भेद नहीं पड़ता। जब जम्बूद्वीपमें दिन घटता और रात बढ़ती है, दक्षिण देशमें दिन बढ़ता और रात घटती है। सूर्यके मेषराशिसे कन्याराशि पर्यन्त अवस्थान कालको जम्बूद्वीपमें क्रमान्वयसे दिनकी वृद्धि और रात्रिका क्षय होता और इसके तुला राशिसे मीनराशि पर्यन्त अवस्थिति करते क्रमशः रात बढ़ा और दिन घटा करता है। समुद्रसे दक्षिण भागको इसके विपरीत पड़ता है। पृथिवी परिधिके चतुर्थांशसे क्रान्त्यंश अन्तरित करने पर जो अवशिष्ट रहता, निरक्ष देशसे उतने योजन पर अवस्थित देवभागके (अर्थात् उत्तरमेरुस्थ) देशोंमें धनु और मकरराशिस्थ सूर्य देख नहीं पड़ता अर्थात् पौष और माघ दो मास वहां रहनेवालोंकी सर्वदा रात्रि बनी रहती है। इसी प्रकार वड़वानल (दक्षिणमेरु) में निरक्षदेशोंसे उतने ही योजन दूर अवस्थित देशोंमें मिथुन और कर्कट राशिस्थ सूर्य दृष्ट नहीं होता अर्थात् आषाढ़ और श्रावण दो मास सर्वदा रात्रि देख पड़ती है। किन्तु निरक्ष देशसे इतने ही योजन उत्तर आषाढ़ श्रावण तथा उससे इतने ही योजन दक्षिण पौष और माघ दो दो महीने सर्वदा सूर्य दिखायी देता है। (सूर्यसिद्धान्त १२।६३-६४) क्रान्त्यंशसे भूपरिधिका चतुर्थांश निकाल डालने पर जो अवशिष्ट बचता, निरक्षदेशसे उतने ही योजन उत्तर अग्रहायण, पौष, माघ तथा फाल्गुन चार महीनों बराबर रात रहती और वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़ और श्रावण मासको सर्वदा सूर्य उदित रहता है। फिर निरक्षदेशसे इतने ही योजन दक्षिणको वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़ और श्रावण चार महीनों रात और अग्रहायण, पौष, माघ और फाल्गुन चार मास दिन होता है। (सूर्यसिद्धान्त १२।६६) सूर्यके भद्राश्ववर्षके ऊपर गमन करनेसे भारतवर्षमें सूर्यका उदय, केतुमाल पहुंचनेसे रात्रार्ध और कुरुवर्ष आनेसे भारतवर्षमें सूर्यका अस्त होता है। इसी नियमसे अन्य वर्षमें भी उदयास्तकी व्यवस्था लगा करती है। सूर्य और ग्रहण शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

सूर्यकक्षाके नीचे शुक्रकी शीघ्रोच्चकक्षा है। इसका परिमाण २६६४६३७ योजन, व्यास ८४७८२८ योजन और पृथिवीसे उच्चता ४२३११९ योजन है। शुक्रके नीचे बुधकी शीघ्रोच्चकक्षा है। उसका परिमाण १०४३-२०९ योजन, व्यास ३३१९३० योजन और पृथिवीसे उच्चता १६५१६५ योजन है।

बुध और शुक्रकक्षाका परिमाण ४३६१५० योजन, व्यास १३८७७५ योजन और पृथिवीसे उच्चता ६८५८८ योजन लगाते हैं। शुक्रकी दैनिक गति ९६ कला ७ विकला और ४२ अनुकला है; वार्षिक चाल ७ राशि १५ अंश ११ कला ४६ विकला और १२ अनुकला पड़ती है। एक युगमें ३०१२३७६ भगण होते हैं। बुधकी दैनिक गति २४५ कला ३२ विकला २१ अनुकला है। वार्षिक गति १ राशि २४ अंश ४५ कला २२ विकला

४८ अनुकला पड़ती है। एक युगमें इसके ७१८३७०६० भगण होते हैं। चन्द्र पृथिवीसे अतिशय निकटवर्ती है। उसकी कक्षा पृथिवीसे ५७४५ योजन मात्र ऊंचे अवस्थित है। चन्द्र कक्षाका परिमाण ३२४००० योजन और व्यास १६२४ योजन है। चन्द्रकी दैनिक गति ७९० कला ३४ विकला और ५२ अनुकला पड़ती है। फिर वार्षिक गति ४ राशि १२ अंश ४६ कला ४० विकला और ४८ अनुकला है। एक युगमें ५७७५३३३६ भगण बनते हैं।*

ग्रहोंमें सूर्य और चन्द्रकी गति सर्वदा ही एक प्रकार रहती, कभी नहीं घटती बढ़ती। (१) मङ्गल प्रभृति दूसरे ग्रहोंकी गति समान नहीं। प्राचीन ज्योतिर्विदोंने उनकी आठ प्रकार गति निरूपण की है। यथा—वक्र, अनुवक्र, कुटिल, मन्द, मन्दतर, सम, शीघ्र और अतिशीघ्र। इसमें मन्द, मन्दतर, सम, शीघ्र और अतिशीघ्र यह पांच प्रकारकी गति सरलपथमें लगती और अवशिष्ट तीन प्रकारकी गति वक्रभावमें जैसी होनेसे प्रथम पांच प्रकारवालोंको ऋजुगति और अपर तीन प्रकारवालोंको वक्रगति कह सकते हैं। (सूर्यसिद्धान्त २।१२-१३ रङ्गनाथ) पूर्वोक्त ग्रहादिकी जो गति लिखी गयी है, उसको ग्रहोंमें मध्यगति ग्रहकी स्वाभाविक गति भी कह देते हैं। ग्रहोंकी विभिन्न गतियोंका कारण सूर्यसिद्धान्तमें इस प्रकार निर्णीत हुआ है—राशिचक्रमें शीघ्रोच्च, मन्दोच्च और पात नामक तीन वायवीय शरीरधारी जीव वास करते हैं। उन्हींके आकर्षणसे ग्रहोंकी अलग अलग चाल पड़ती है। (सूर्यसिद्धान्त २।१) टीकाकार रङ्गनाथ उन तीनोंको जीव जैसा नहीं मानते। उनके मतमें स्थानविशेषको ही शीघ्रोच्च, मन्दोच्च और पात कह सकते हैं। (सूर्यसिद्धान्त २।३ रङ्गनाथ) ग्रहकक्षाके उच्च स्थानमें प्रवह वायुके अतिरिक्त कोई दूसरा वायु भी रहता है। वह सर्वदा एक स्थानमें ठहर हिला डुला करता है। इसी वायुरूप रज्जुमें ग्रहबिम्ब उभय दिक्को ग्रथित जैसा हो रहा है। अपनी शक्तिद्वारा स्वीय उच्च स्थानसे पूर्वदिक् चलने पर ग्रहबिम्बको यह वायु

* वर्तमान युरोपीय गणक उपर्युक्त मत नहीं मानते। उन्होंने उत्कृष्ट यन्त्रोंकी साहाय्यसे ग्रहादिका परिमाण, गति और सूर्यसे दूरत्व इस प्रकार निर्णय किया है—

ग्रहोंका नाम	व्यास—मील	सूर्यसे दूरत्व	सूर्य प्रदक्षिणकाल	आह्निक गति
बुध (Mercury)	३१४०	३५००००००	८८ दिन	२४ घण्टा ५ मिनट २८ से०
शुक्र (Venus)	७७०२	६६००००००	२२५ ,,	२३ घण्टा २१ मिनट ७ से०
पृथिवी	७९१२	९१००००००	३६५ $\frac{१}{४}$,,	२३ घण्टा ५६ मिनट
मङ्गल (Mars)	४१००	१३२००००००	६८७ ,,	२४ घण्टा ३९ मिनट २१से०
बृहस्पति (Jupiter)	९१०००	४७५००००००	४४३२ ,,	९ घण्टा ५५ मिनट
शनि (Saturn)	७९०००	८७१००००००	१०७५९ ,,	१० घण्टा १६ मिनट
यूरेनस †	३४२१७	१७५२००००००	३०६८७ ,,	
नेपचुन ‡		२७६००००००	६०१२७ ,,	

† १७८१ ई०को विलियम हरसेलने इसकी आविष्कार किया था।

‡ यह पेरिस नगरी जात प्रसिद्ध फरासीसी ज्योतिर्विद लावेरियर और अदामने १८४६ ई०को इसे आविष्कार किया।

(१) युरोपीय मतमें चन्द्र एक उपग्रह है। यह पृथिवीका पारिपार्श्विक है। इसका आकार पृथिवीके चतुर्दश भागोंमें एक भाग लगता है। सूक्ष्मरूपमें चन्द्र पृथिवीसे २३७८४० मील दूर है। इसको एक बार अपनी कक्षा घूमनेमें २७ दिन ७ घण्टा ४० मिनिट समय बीतता है।

युरोपीय सूर्यको एक स्थिर नक्षत्र मानते हैं। इसको कक्षाके परिभ्रमणमें २५ दिन ८ घण्टे १० मिनट जाते हैं।

एतद्भिन्न युरोपीय ज्योतिर्विदोंने दूरवीनके सहारे २२६ सामान्य ग्रह और उनमें किसी किसीकी गतिको भी निर्णय किया है। ग्रह प्रभृति शब्दोंमें विस्तृत विवरण देखो।

पश्चिमदिक् आकर्षण करता है। वायुके खिंचावसे ग्रह-बिम्बकी चाल घट जाती है। इसी प्रकार चलते चलते ग्रहबिम्ब जब उच्चस्थानसे ६ राशि दूरको पहुंचता, तब फिर यह वायु ग्रहको पूर्वदिक् अर्थात् उच्चस्थानके अभिमुख खींचने लगता है। ग्रहकी गति पूर्वदिक्को रहने और वायु द्वारा भी उसके पूर्वदिक्को जैसा खिंचनेसे ग्रहकी गति बढ़ जाती है। ग्रहस्थानसे पूर्व भागमें ६ राशि दूरको अवस्थित उच्च नामक जीव ग्रह-बिम्ब पूर्वकी ओर और ग्रहस्थानसे पश्चिम ६ राशि दूरको अवस्थित उच्च जीव उसे पश्चिमकी ओर आकर्षण करता है। (सूर्यसि० २।४) माध्याकर्षण शब्दमें युरोपीय मत द्रष्टव्य है।

सूर्य भिन्न सभी अपर ग्रहोंका पात होता है। क्रान्तिवृत्तस्थित ग्रहके भोगस्थानसे उत्तर और दक्षिण-को पात पड़ता है। यह अपनी शक्ति द्वारा चन्द्र प्रभृति-को क्रान्तिवृत्तसे विक्षिप्त कर देता है। इसीको अपनी शक्ति द्वारा ग्रहोंके स्वस्थान परित्याग करा जैसा देने पर राहु नामसे उल्लेख करते हैं। (सूर्यसिद्धान्त २।६) ग्रह-स्थानसे पश्चिम भागको ६ राशियों पर अवस्थित पात वा राहु ग्रहबिम्बको उत्तरकी ओर क्षिप्त करता अर्थात् ग्रहके भोगस्थानसे उत्तरकी ओर खींचता और ग्रहस्थान-से पूर्व भागमें ६ राशियोंके मध्य अवस्थित राहु वा पात ग्रहबिम्बको दक्षिणदिक् फेंकता है। इसीसे ग्रहबिम्बके दक्षिण और उत्तरको विक्षेप पड़ा करता है। इसमें बुध और शुक्रका कुछ विशेषत्व यह है कि उनके उच्चस्थानसे उनका पात पूर्वार्ध वा परार्धके मध्य अव-स्थित होने पर बुध और शुक्रका यथाक्रम दक्षिण और उत्तरको विक्षेप आता है। ग्रहोंका उच्चस्थान दूर चले जाने पर जब दोनों ओरोंका आकर्षण घट जाता, तब उनकी वक्रगति हुवा करती है। इसी प्रकारके आक-र्षणसे मङ्गल स्वीय १६० केन्द्रांश, बुध १४४ केन्द्रांश, बृहस्पति १३० केन्द्रांश, शुक्र १६३ केन्द्रांश और शनि ११५ केन्द्रांश पर तिरछा चलता है। फिर ग्रहोंके अपने अपने चक्र ३६० अंशोंसे उनका केन्द्रांश घटा देने पर जो अवशिष्ट रहता, उतने ही अंश ग्रहगण वक्रगतिको परित्याग करता है। अर्थात् शुक्र और बुध स्वीय स्वीय केन्द्रसे सप्तम राशि पर तिरछा नहीं चलते। इसी प्रकार स्वीय केन्द्रांशसे अष्टम राशिमें बृह-स्पति और बुध एवं नवम राशिमें शनि वक्रगतिको छोड़ देता है। (सूर्यसिद्धान्त २।५३-५५)

ग्रहोंका उदय-अस्त—ज्योतिष्क सकल समयको समान भावसे आकाशमण्डलमें अवस्थिति करते हैं। वास्तविक उनका कभी ह्रास वा वृद्धि नहीं होती। राशिचक्रके साथ चलके जब दृष्टिपरिच्छेदक रेखा द्वारा अन्तरित हो जाते, हम उनके अस्त हुवा बताते हैं और जब फिर घूमते घूमते दृष्टिपरिच्छेदक रेखा पर चढ़ आते और प्रथम उन्हें देख पाते, तब उनका उदय लगाते हैं। इसी प्रकार सूर्यको छोड़ अपर ग्रह और ज्योतिष्क सूर्यकिरणसे अभिभूत रहने और देख न पड़नेसे अस्तगत और सूर्यकिरणसे दूर चलने और प्रथम दर्शन मिलनेसे उदित कहलाते हैं। नक्षत्रोंका उदय और अस्त नक्षत्रप्रस्तावमें बताया गया है। अल्पगति ग्रह सूर्यसे न्यून रहने पर पूर्वदिक्को उदित और उससे अधिक लगने पर पश्चिम दिक्को अस्त होते हैं। बृहस्पति, मङ्गल और शनि सूर्यसे छोटे हैं। उनका पश्चिमदिक्को अस्त और वक्रगति बुध तथा शुक्रका पूर्वदिक्को उदय होता है। चन्द्र, बुध और शुक्र सूर्यसे अल्प रहने पर पूर्वदिक्को डूबते और पश्चिम दिक्को निकलते हैं। इसका विशेष विवरण स्फुट शब्दमें द्रष्टव्य है।

पहले ही बता चुके हैं कि ग्रहबिम्ब सूर्यकिरणसे आलोकित-जैसा होने पर हमें उज्ज्वल देख पड़ता है। मङ्गल प्रभृति ग्रहबिम्बोंके सभी अंश सूर्यकिरणसे चमकने और सकल स्थानोंमें उज्ज्वल लगते हैं। किन्तु चन्द्रमण्डलमें ऐसा नहीं होता। कभी कभी चन्द्रमण्डलको अल्पांश और जब तब सकलांश उज्ज्वल रहता है। सूर्यसिद्धान्तमें उसका कारण इस प्रकारसे निर्देश किया गया है—सूर्य और चन्द्र जब ६ राशियोंके अन्तर पर अर्थात् समसूत्रमें ऊर्ध्वाध: भावसे अवस्थान करते, उसी दिनको चन्द्रमण्डलके सभी अंशोंमें सूर्यकिरण प्रति-फलित जैसा होने पर चन्द्रमण्डलका सकल अंश हम शुक्ल और उज्ज्वल देख सकते हैं। चन्द्रमण्डलका हमारा दृश्य अर्थात् अर्ध अंश उज्ज्वल और शुक्लवर्ण देख पड़-

नेसे पूर्णिमा तिथि होती है। इसके परदिनसे चन्द्रमण्डल जितने परिमाण सूर्यका निकटवर्ती होते जाता, सूर्य-किरण भी उतने ही परिमाण चंद्रमें अपना प्रतिफलन नहीं दिखाता और चन्द्रका शुक्लत्व भी उसीके अनुसार घटता जाता है। फिर जिस दिनको चन्द्रमंडल सूर्यके साथ एक राशि पर रहता, उस दिन चन्द्रमण्डलमें सूर्यकिरण प्रतिफलित नहीं पड़ता। इसी तिथिका नाम अमावस्या है। पूर्णिमाके दूसरे दिनसे अमावस्या पर्यन्त १५ दिनोंको कृष्णपक्ष कहते हैं। अमावस्याके दूसरे दिनसे चन्द्र-मंडल सूर्यसे जितना ही हटते जाता, उतना ही सूर्य-किरण उसमें अपना प्रकाश अधिक पहुंचाता और दिन दिन उसकी शुक्लताको बढ़ाता है। अमावस्याके परदिनसे पूर्णिमा पर्यन्त शुक्लपक्ष है। द्वादश अंश पश्चिमको चन्द्रका उदय और द्वादश अंश पूर्वको अस्त होता है। (सूर्यसिद्धान्त १० अ०)

बृहत्संहिताके मतानुसार जैसे दर्पण पर सूर्य-किरण पड़नेसे उसका प्रतिविम्ब अन्धकारमय गृहके अभ्यन्तरमें प्रविष्ट होके अन्धकार विनाश करता, वैसे ही जलमय चन्द्रमें भी उसके प्रतिविम्बित होनेसे अंधेरा दूर रहता है। (बृहत्सं० ४।२) चंद्र देखो।

ग्रहोंको गतिके अनुसार एक ग्रहसे अपर ग्रहका योग होता है। ग्रहयोगको प्रधानतः दो भागोंमें विभक्त किया जा सकता है—ग्रहयुद्ध और ग्रहसमागम * चन्द्रके साथ मङ्गल प्रभृति पांच ग्रहोंका योग समागम कहलाता है। सूर्यसे कोई ग्रह मिलने पर अस्त हो जाता है। यही ग्रहका पूर्णास्त है। (सूर्यसिद्धान्त ८ अ०) मन्दगति ग्रहसे शीघ्रगति ग्रह अधिक रहते अल्पदिन पूर्व ही उनका योग लगा था। किन्तु शीघ्रगति ग्रहसे मन्दगति ग्रह यदि अधिक पड़ता, तो अल्पदिन पर ही उन दोनों ग्रहोंका योग हो रहता है। शीघ्रगति वक्री ग्रह मन्दगति वक्रीग्रहसे अधिक होने पर थोड़े ही दीनोंमें वे मिल जाते हैं। किन्तु वक्री मन्दगति ग्रह वक्री शीघ्रगति ग्रहसे अधिक पड़ने पर अल्पदिन पूर्व ही उनका योग हो गया था। मङ्गल प्रभृति पांच ग्रहोंको प्रतिविम्ब मात्र स्पर्श होनेसे उल्लेख युद्ध कहते हैं। परन्तु इसी प्रकार स्पर्श ग्रहमण्डलके अंश तथा ठिक भेद होने पर भेद नामक युद्ध कहलाता है। फिर दो ग्रहोंका किरणयोग अंशुविमर्द युद्ध है। यही किरणयोग दक्षिण वा उत्तर भागको एक अंशसे न्यून होने पर अपसव्य युद्ध और दक्षिण वा उत्तर भागको एक अंशसे अधिक पड़ने समागम ठहरता है। (सूर्य-सिद्धान्त ७।१८-१९) भास्कराचार्यने ग्रहयोगके दूसरे भी बहुत-से भेद निर्णय किये हैं, किन्तु मानवचक्षुओंसे अदृश्य जैसे रहने पर सूर्यसिद्धान्तके टीकाकार उन्हें नहीं मानते। (सूर्यसिद्धान्त ७.१९ रङ्गनाथ)

इस ग्रहयुद्धमें एक ग्रहका जय और दूसरेका पराजय होता है। ग्र युद्धके पीछे ग्रहोंको देख कर कह सकते कौन हारा और कौन जीता है। पूर्वको जिस अपसव्य युद्धकी बात बतायी गयी है, उसमें पराजित ग्रह अति-शय क्षुद्र, अव्यक्त, प्रभाहीन, रूक्ष और विवर्ण देख पड़ता और वही ग्रहके दक्षिण निकला करता है। जयी ग्रह दीप्तिमान्, स्थूल और पराजित ग्रहसे उत्तरदिकको उदित होता है। युद्धलक्षणाक्रान्त दो ग्रहोंका एक अंश मात्र दूर अवस्थित होने और उज्ज्वल रहने पर किरण योगरूप समागम समझा जाता है। फिर दोनों ग्रह सूक्ष्म अथच पराजयलक्षणविशिष्ट देख पड़ने पर कूट और विग्रह नामक युद्ध कहलाता है। ग्रहयुद्धमें शुक्र ग्रह अपर ग्रहसे दक्षिण वा उत्तरको रहनेसे प्रायः जीतता है। ग्रहयुद्धसे मानवमण्डलीका शुभाशुभ हुवा करता है।

इसका कोई विशेष उल्लेख नहीं मिलता—ग्रहोंका स्वाभाविक वर्ण क्या है। भास्कराचार्यके मतानुसार चंद्रके जिस अंशमें सूर्यकिरण प्रवेश करता, वही शुक्ल-वर्ण देख पड़ता—अपरांश कामिनी केशकलापकी भांति कृष्णवर्ण रहता है। सूर्यसिद्धान्त-टीकाकार रङ्ग-नाथ और आर्यभटके मतमें सूर्यकिरणसे ही दूसरे ग्रह भी आलोकित होते हैं। ऐसे स्थल पर कल्पना कर

* ग्रह अपनी कक्षामें रह कर ही अनवरत भ्रमण करते हैं। अपनी कक्षाको वे कभी नहीं छोड़ते। ग्रहकक्षा भी कितने ही अंतर पर अवस्थित है। इनका वास्तविक योग हो नहीं सकता। भूमण्डलसे सर्वोपरिस्थित राशिमण्डल पर्यन्त एक सरल सूत्रपात करनेसे ग्रथित मणिमालाको भांति ग्रहोंका एक सूत्रमें आना ही परस्पर योग कहलाता है।

सकते कि सूर्य व्यतीत अपर ग्रहोंका किरण नहीं होता और उनका रूप कृष्णवर्ण रहता है। प्राचीन कालमें ग्रहोंका जैसा ध्यान चला आता, उसमें सूर्य रक्तवर्ण, चन्द्र कुन्द अथवा शङ्खकी भांति धवलवर्ण, मङ्गल रक्तवर्ण, बुध प्रियङ्गु कुसुम-जैसा श्यामवर्ण, वृहस्पति सुवर्णवर्ण, शुक्र शुक्लवर्ण और शनि कृष्णवर्ण जैसा कहलाता है। प्राचीन हिन्दू ज्योतिर्विद जिस यन्त्रके साहाय्यसे ग्रह-गति निर्णय करते थे, उसको यन्त्र शब्दमें देखना चाहिये। गोलरचना-प्रणाली गोल शब्दमें देखो।

पुराणोंमें भी अल्पविस्तर खगोल-विवरण लिखित है। किन्तु भास्कराचार्य प्रभृति ज्योतिर्विदोंने प्रमाण और युक्ति द्वारा उसको खण्डन किया है। उनका कहना है—वर्तमान समयको जो पौराणिक खगोल वा भूगोल मिलता, वह ठीक नहीं पड़ता; खगोल वा भूगोलका लिखा हुवा विवरण कालवश लुप्त हो गया है। वैदिक वा पौराणिक मत ज्योतिष शब्दमें द्रष्टव्य है। खगोलका अपर विवरण ग्रह, राशि, नक्षत्र, सूर्य, चन्द्र प्रभृति शब्दोंमें देखो।

युरोपके प्रसिद्ध ज्योतिर्वेत्ता लापलासने सौरजगत्‌की गतिका सामञ्जस्य देख निर्देश किया है—आजकल जिस आकाशमें ग्रह और उपग्रह अवस्थित हैं, सौरजगत्‌की आदिम अवस्थाको वही आकाश केवलमात्र गोलाकार ज्वलन्त वाष्पराशिसे व्याप्त था। यह वाष्पराशि एक आवर्तन-शलाकाको आश्रय करके अपनी चारों ओर घूमता था। क्रम क्रम यही उत्तप्त वाष्पराशि शीतल पड़के केन्द्रके अभिमुख सङ्कुचित होने लगा। सङ्कोचनानुसार गतिका वेग बढ़ने पर उसकी केन्द्रातिगशक्ति भी बढ़ी। इसी प्रकार क्रमसे वाष्पीय गोलककी केन्द्रातिग शक्ति वृद्धि होने पर विषुवरेखा-सन्निहित स्थानने केन्द्रके आकर्षणको अतिक्रम करके मूलांशसे विच्छिन्न होते हुए एक स्वतन्त्र अङ्गुरीयककी तरह चक्ररूप धारण किया था। अवशिष्ट अंशसे फिर ऐसे ही विच्छिन्न होके धीरे धीरे यह विस्तृत वाष्पराशि कई स्वतन्त्र चक्रोंसे परिवेष्टित सुवृहत् गोलकमें परिणत हो गया। मध्यका सर्वापेक्षा बड़ा गोलक ही हमारा सूर्य है। प्रत्येक स्वतन्त्र चक्रके घन स्थान कर्षणसे चारों ओरके सकल लघुस्थान मिल कर क्रमशः फिर उन चक्रोंने एक एक ग्रहका रूप बना लिया। पूर्वोक्त प्रकार परित्यक्त अति विस्तृत चक्रके भीतरसे क्षुद्र क्षुद्र चक्र स्वतन्त्र हो कर जो सकल ज्योतिष्क निकले हैं, उन्होंको उपग्रह कहते हैं।

लापलासके इस मत पर युरोपमें हलचल पड़ गयी थी। अब बहुतसे लोग इस सिद्धान्त पर आ उपस्थित हुए हैं। युरोपीय ज्योतिर्विद् बताते हैं—हमें सूर्यसे जितना उत्ताप मिलता, सूर्य उससे २२७०००००० गुण उत्ताप शून्यमें छोड़ा करता है। सूर्यके आयतनमें सूर्यव्यास प्रति वर्ष २२० फीट सङ्कुचित होता है। इस नियमसे २५ वर्षमें १ मील और एक शताब्दको ४ मील सूर्यके सङ्कुचित होनेकी बात है। मालूम पड़ता है—जितने दिन सूर्यका अधिकांश वाष्पमय रहेगा, शीतलतावश सूर्य क्रमशः सङ्कुचित होके बाहरी उत्तापशक्तिको समभावमें रखेगा। सुतरां सूर्य एकशत वर्ष पूर्व ४ मील और दो सौ वर्ष पहले ८ मील बड़ा था। किसी समय सूर्यवाष्प बुधकी कक्षा पर्यन्त और उससे पहले पृथिवीकी कक्षा तक व्याप्त रहा।

ऐसी ही गणनासे युरोपीय ज्योतिर्विदोंने लापलासका मत स्वीकार करके अब ठहरा लिया है कि यह पृथिवी भी सूर्यपरित्यक्त एक वाष्पचक्र है। क्रमशः यह वाष्पचक्र शीतल होके जब घन अवस्थाको पहुंचा, तब सभी वाष्प तरल हुवा न था। जितना ही उसी अवस्थामें पृथिवीके ऊपर रह गया। आज भी उसका बहुतसा अंश पृथिवी पर बना है। उस समय पृथिवीका वाष्पावरण प्रायः चन्द्र पर्यन्त विस्तृत था। उसी तरल अवस्थाको पृथिवीका उत्ताप २००० सेण्टिग्रेड डीगरी रहा। इसी तीव्र तापसे तरल पृथिवी शीतल आकाशमें घूमने लगी। धीरे धीरे शीतलताके संस्पर्शसे जितना ही ताप घटा और मोटा तथा चिपचिपा होके अवशेषको वर्तमान आकार बना था।

निर्मल रजनीयोगको आकाशकी ओर ताकने पर हमें एक दिक्‌से अन्य दिक् पर्यन्त शुभ्र वर्त्म-जैसी एक आलोकमय श्रेणी देख पड़ती है। उसीका नाम छायापथ (Milky way) है। युरोपीय ज्योतिर्विदोंने दूर-

वीक्षणयन्त्र द्वारा छायापथ परीक्षा करके ठहराया है—इसमें असंख्य नक्षत्र एकत्र विद्यमान हैं। उसका कोई एक अंश पृथिवीसे छोटा नहीं। दूरबीनके सहारे उन्होंने प्रायः २०००००० नक्षत्र देखे हैं। इनसे छायापथमें प्रायः १८००००० नक्षत्र हैं।

दूरवीक्षणयन्त्र द्वारा आकाशमें ज्वलन्त वाष्पमय नीहारिकाराशि (Nebulae) देख पड़ता है। इस नीहारिकाके मध्य कई ज्योतिष्क, कई हीनप्रभ विशाल वाष्पराशि आज भी ज्योतिष्कोंमें परिणत नहीं हुए। फिर कई एकने अपेक्षाकृत उज्ज्वल और छोटे वाष्पराशिके मध्यसे इतनी दूर पर घनीभाव धारण करना आरम्भ किया है, कि वह शीघ्र ही ज्योतिष्क बन जावेंगे। युरोपीय गणकोंने ऐसे वाष्पराशिको ही भविष्य जगत्का उपादान ठहराया है। ज्वलन्त नीहारिका राशिसे ही जगत् प्रकाशित होता है।

खगोलविद्या (सं० स्त्री०) खगोलस्य विद्या, ६-तत्। ज्योतिष, नजूम। इस विद्यासे ग्रह नक्षत्र आदिका प्रकृत अवस्थान और गति प्रभृति निरूपित होता है।

जैन शास्त्रानुसार आकाश अनंत अमूर्तिक निराकार है। वह गोल या तिरछा नहीं कहा जा सकता। हां! उपाधि भेदसे उसके दो भेद कहे जा सकते हैं। एक लोकाकाश और दूसरा अलोकाकाश। जितने आकाशमें यह लोक (जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म और काल ये पांच द्रव्य) दृष्टिगोचर होता है, वह लोकाकाश है और उसके अतिरिक्त सब अलोकाकाश है। वहां किसी भी पदार्थकी सत्ता नहीं, सर्वत्र निराकार आकाश (पोल) ही आकाश है। लोकाकाश चौदह राजू (प्रमाणविशेष) प्रमाण लम्बा है और मूंढा या पैर पसार कर कमर पर हाथ रखे हुए खड़े पुरुषके आकार है। यह नीचे सात राजू, मध्यमें एक राजू, उपांतमें (पांचवें स्वर्गके पास) पांच राजू और अंतमें एक राजू प्रमाण है। इसका घन ३४३ राजू है। जिस पृथ्वीपर हम सब इस समय वास कर रहे हैं, वह एक राजू प्रमाण थालीके (गेंदके नहीं) समान चपटा गोल है। इसके समतल भूमिभागसे ७०९ योजन ऊंचे जाने पर तारका हैं। उससे दश योजन ऊंचे सूर्य है। उससे अस्सी योजन ऊंचे चन्द्रमा है। उससे तीन योजन ऊंचे नक्षत्र हैं। उससे तीन योजन ऊंचे बुध है। उससे तीन योजन ऊंचे शुक्र है। उससे तीन योजन ऊंचे वृहस्पति है। उससे चार योजन ऊंचे अंगारक है। उससे चार योजन ऊंचे शनीचर है। इस तरह यह समस्त ज्योतिर्मण्डल ११० योजनके बीचमें ऊंचा है और असंख्यात द्वीप समुद्रोंके प्रमाण लंबा विस्तृत है। इनमें अभिजित् सबके मध्यमें, मूल सबके अंतमें, भरणी सबसे नीचे और स्वाती सबसे ऊपर हैं।

जैन शास्त्रोंमें संसारी जीवकी चार पर्याय मानी गई हैं—मनुष्य, तिर्यंच, देव और नारकी। देव चार प्रकारके होते हैं—भवनवासी, व्यंतर, ज्योतिषी और वैमानिक। जिनमें ज्योतिषी देवोंके पांच भेद हैं—सूर्य, चंद्रमा, ग्रह, नक्षत्र और तारका। हमको जो आकाशमें ऊंचेकी ओर दृष्टिगोचर होते हैं वे ज्योतिषी देवोंके रहनेके विमान हैं। प्रत्येक विमान अपने अपने प्रमाणके अनुसार लंबाई चौड़ाईमें हीन अधिक हैं। ये विमान कोई उष्ण जातिके पुद्गल परमाणुओंके और कोई शीत जातिके पुद्गल परमाणुओंके हैं। इनमें चंद्रमा नामक विमानका स्वामी चंद्र है और वह इंद्र है। सूर्य उपेंद्र या प्रतींद्र है। शेष हीनाधिक ऋद्धिवाले ज्योतिषी देव हैं और चमकनेवाले या काले-जैसे दीख पड़नेवाले अपने अपने विमानोंमें ये वास करते हैं।

इनमें जंबूद्वीप, धातकीखंड और अर्द्ध पुष्करद्वीपकी बराबर आकाशमें रहनेवाले विमान भ्रमणशील हैं और उनको हाथी घोड़े आदिके आकार धारण करनेवाले देव वहन किया करते हैं एवं सुमेरु पर्वतकी प्रदक्षिणा दिया करते हैं। उक्त ढाई द्वीपके बादमें जो ज्योतिषी देवोंके जो विमान हैं, वे नहीं घूमते सदासे स्थिर ही हैं। सूर्य, चंद्रमा आदिमें विशेष विवरण देखो।

सूर्यके बारह हजार किरण उष्ण कठोर हैं, चंद्रमाके बारह हजार शीतल किरण हैं। शुक्रके ढाई हजार किरण प्रकाशशील हैं। अन्य ग्रहोंकी किरण मन्द प्रकाशवाली हैं। इस संसारमें असंख्य ज्योतिषी देवोंके विमान हैं और जंबूद्वीपमें दो सूर्य और दो चन्द्रमाके विमान हैं। चंद्रका विमान एक योजनके इकसठ

भागमेंसे छप्पन भाग प्रमाण है और सूर्यका अडतालीस भाग प्रमाण है। शुक्रके विमानका व्यास एक कोशका है, वृहस्पतिका कुछ कम एक कोशका, बुध, मंगल और शनैश्चरका आधा कोशका है। ताराओंमें सबसे छोटा तो चौथाई कोश प्रमाण है और सबसे बड़ा एक कोश तकका है। इन विमानोंका आकार लोहादिके गोलाके समान सब तरफसे घटता अर्थात् ऊपर विस्तृत और नीचे क्रमसे घटता है। ऊंचाई विस्तारसे आधी और परिधि कुछ अधिक तिगुणी है। राहुका विमान चंद्रमाके नीचे और केतुका सूर्यके नीचे गमन करता है। ये दोनों विमान कुछ कम एक योजन विस्तृत हैं। राहु और केतुके विमानकी ध्वजासे चार प्रमाणांगुल अंतर देकर क्रमसे सूर्य और चंद्रमाके विमान हैं। चंद्रमाका विमान प्रतिदिन अपने विस्तारसे षोड़शांश जो कृष्ण वा शुक्ल दीखता है वह राहुके विमानकी गतिसे होता है।

सूर्यके विमानका रंग तपाये सोनेकासा, चन्द्रका निर्मल कमलतन्तुकासा, शुक्रका चांदीकासा, वृहस्पतिका मोतीकासा, बुधका कनक जैसा, शनीचर और मङ्गलका तप्तायमान सुवर्णकासा रंग है।

इस ज्योतिर्मण्डलके गमन-क्षेत्रको चारक्षेत्र कहते हैं और वह कुछ अधिक पांचसौ दश योजन है। सूर्यके गमन करनेकी १८४ वीथी हैं। वे सब सूर्यके विमानकी समान चौड़ी हैं और प्रत्येक दो दो योजनके अंतरसे हैं। कुल १८३ अंतर हैं। जब सूर्य इनमें गमन करता हुवा जंबूद्वीपकी अभ्यन्तर परिधिमें गमन करता है तब तो दक्षिणायनका प्रारंभ और अंतर्वाह्य वीथीमें गमन करने पर उत्तरायणका प्रारम्भ होता है। कर्कराशि प्राप्त होने पर सूर्य अभ्यन्तर वीथीमें मंद मन्द और मकरराशिमें प्राप्त होने पर वाह्य वीथीमें शीघ्र भ्रमण करता है। अभ्यन्तर वीथीमें गमन करने पर अठारह मुहूर्त्तका दिन और वारह मुहूर्त्तकी रात्रि, एवं वाह्य वीथीमें गमन करने पर बारह मुहूर्त्तका दिन और अठारह मुहूर्त्तकी रात्रि होती है। यहां योजनका प्रमाण दो हजार कोशका समझना चाहिये। (तत्वार्थ राजवार्तिक)

खगोलविवरण (सं० क्लो०) आकाशमण्डल और उसके ग्रह, नक्षत्र, धूमकेतु प्रभृति यावतीय पदार्थोंकी प्रकृति, गति तथा अवस्थान आदि समस्त विषयोंका विवरण।

खगोल—पटना जिलेमें दानापुरके निकट अवस्थित एक नगर। यह अक्षा० २५° ३५´ उ० और देशा ८५° ३´ पू० पर अवस्थित है। यहां एक म्युनिसपालिटी विद्यमान है। पास ही दानापुर ष्टेशन रहनेसे खगौलका समृद्धि आरम्भ हो गयी है। लोकसंख्या ८१२६ है।

खग्ग (हिं० पु०) खड्ग तलवार।

खग्गट (सं० पु०) कोकिलाक्षवृक्ष, तालमखानेका पेड़।

खग्गड़ (सं० पु०) खे आकाशे गलति, गल-अच् पृषोदरादिवत् साधुः। तृणविशेष, खगड़ा घास। इसका संस्कृत पर्याय—पोटगल, वृहत्काश और काकेक्षु है।

खग्रास (सं० पु०) सम्पूर्ण ग्रहण, चन्द्र वा सूर्यका वह ग्रहण जिसमें उसका सारा अंश काला पड़ जावे और अंधेरा छा जावे।

खघोरिया—चट्टग्रामके प्रान्त्य प्रदेशकी मायानी नदीके तीरका एक ग्राम। इसके निकट बेढब जङ्गल है। अंगरेज सरकारने नेपालसे एकदल गुर्खा लाकर यहां बसानेकी चेष्टा की। सोचा गया था—उनके रहनेसे अपने आप जङ्गल काट डालेंगे। उनमें प्रत्येकको १००) रु०के हिसाबसे इस लिये दिया गया, कि वह हल आदि क्रय करके कृषिकार्य आरम्भ करेंगे। किन्तु यहां उन्हें नाना प्रकार पीड़ा होने लगी। १८७७ ई०को उपनिवेश उठा कर गुर्खा लोग रांगामट्टी भेजे गये।

खङ्कर (सं० पु०) खन्यते इति, खन-क्विप कार्यते क्ल-अप् ततः कर्मधा०। चूर्णकुन्तल, जुल्फ।

खङ्कर, खक्खर देखो।

खङ्ग (वै० पु०) मृगविशेष, एक हिरन। (वाजसनेयसं० २४।४०) कोई कोई 'खड्ग' स्थल पर 'खङ्ग' पाठ करता है।

खङ्गाह (सं० पु०) श्वेतपीताश्व, सफेद पीला घोड़ा।

खचना (हिं० क्रि०) १ जड़ना, लगना। २ बनना, उतरना। ३ रमना, टिकना। ४ रहना, विरमना।

खचमस (सं० पु०) खे आकाशे चम्यतेऽसौ, चम-असच् चन्द्र, चांद।

खचर (सं० पु०-क्लो०) खे आकाशे चरति, चर-ट।

चरेट्।। पा ३।२।१६। १ मेघ, बादल। २ वायु, हवा। ३ सूर्य। ४ राक्षस। स्त्रीलिङ्गमें ङीप् लगनेसे खचरी होता है—

"खचरस्य सुतस्य सुत: खचर: खचरस्य पिता न पुन: खचर:।
खचरस्य सुतेन हत: खचर: खचरी परिरोदिति हा खचर॥"
(महाभारत, द्रोणप०)

५ कोई रूपकताल। जिस रङ्गतालमें प्रथम गुरु और उसके पीछे लघु नियमसे १० अक्षर लगते, उस को खचर ताल कहते हैं। यह शान्त अथवा हास्यरसके अनुकूल है। (सङ्गीतदामोदर) ६ कसीस। ७ पक्षी, चिड़िया। (त्रि०) ८ आकाशगामी, आसमान पर चलनेवाला।

खचरा (हिं० वि०) १ दुष्ट, पाजी। वर्णसङ्कर, बदजात।

खचाखच (हिं० क्रि०-वि०) १ ठसाठस, तिल तिल, बिलकुल। २ भकाभक, जोरसे।

खचाना (हिं० क्रि०) खींचना, बनाना।

खचारी (सं० त्रि०) खे आकाशे चरति, चर-णिनि। १ आकाशगामी, आसमानकी राह चलनेवाला। (पु०) २ कार्तिकेय। (भारत ३।१३७)

खचावट (हिं० स्त्री०) खींचनेकी क्रिया, बनावट।

खचित (सं० त्रि०) खच-क्त। संयुक्त, खींचा हुआ। इसका पर्याय—करम्बित, रूषित, गुरुगुण्डित, करम्ब, कबर, मिश्र, संपृक्त, व्याप्त, गुण्ठित और छुरित है।

खचिया (हिं० स्त्री०) छोटी टोकरी, दौरी।

खचिल (सं० क्ली०) खे आकाशे चलति, चल-अच्। गोली, गोला।

खच्चर (हिं० पु०) अश्वतर, घोड़े और गधेके मिलानेसे पैदा एक जानवर। यह घोड़े-जैसा ही होता है। इसके कर्ण आदि अवयव गधेसे मिलते हैं, परन्तु शक्ति घोड़ेसे कम नहीं, अधिक ही पड़ती है। खच्चर बहुत दिन जीता, अधिक रुग्ण नहीं होता और खूब काम करता है। बहुतसे मौकोंपर इससे घोड़ेकी अपेक्षा अच्छा काम निकलता है। समझबूझमें भी खच्चर घोड़ेसे कम नहीं। उच्च नीच भूमि पर इसका पांव खूब मजबूत जमता है।

खज (सं० पु०) खजति मथ्नाति, खज-अच्। १ मन्थान दण्ड, मथानी। (भारत १२।२१४) २ दर्वी, हत्था। ३ युद्ध, लड़ाई। (ऋक् ८।१।७)

खज (हिं० वि०) खाद्य, खाने लायक।

खजक (सं० पु०) खज स्वार्थे कन्। १ दर्वी, हत्था। २ मन्थनदण्ड, मथानी।

खजकृत् (सं० त्रि०) खजं युद्धं करोति, कृ-क्विप् तुगागमश्च। युद्धकर्ता, लड़नेवाला।

खजङ्कर (सं० त्रि०) युद्धकर्ता, लड़नेवाला।
(ऋक् ३।१०२। ६)

खजप (सं० क्ली०) खज्यते मथ्यते, खज कर्मणि कपन्। उषि-कुटि-दलि-कचि-खजिभ्य: कपन्। उण् ३।१४२। घृत, घी।

खजल (सं० क्ली०) खे आकाशे सञ्चितं जलम्। १ नीहार, तुषार। २ आकाशजल, मेहका पानी। इसको अगस्त्योदयसे पहले सेवन करना चाहिये।
(राजवल्लभ)

खजला (हिं० पु०) पक्वान्नविशेष, खाजा नामकी मिठाई।

खजलिया (हिं० पु०) रोगविशेष, एक बीमारी। यह अंगूरके पौदोंको लगता है। इससे उसके पत्र और वृन्त कृष्णवर्ण धूलि-जैसे पदार्थसे आच्छादित हो सूखने लगते हैं।

खजा (सं० स्त्री०) खज भावे अप्-टाप्। १ मन्थ, भांज, मथाई। २ प्रहस्त, खुला हाथ, बित्ता। ३ चमस-जैसा कोई पाकसाधन द्रव्य, किसी किस्मकी करछी। (भारत ४।७।१) ४ मारण, कत्ल।

खजाक (सं० पु०) खज-आक। खजेराक:। उण् ४।१३। पक्षी, चिड़िया।

खजाका (सं० स्त्री०) खजा देखो।

खजानची (फा० पु०) कोषाध्यक्ष, खजानेका मालिक।

खजाना (अ० पु०) १ धनागार, रुपया पैसा रखनेकी जगह। २ भाण्डार। ३ कर।

खजिका, खजा देखो।

खजित् (सं० पु०) खेन शून्यभावनया जयति संसारम्, ख-जि-क्विप् तुगागमश्च। शून्यवादी बौद्ध। यह एक मात्र शून्य पदार्थको ही स्वीकार करते हैं। बौद्ध देखो।

खजुला (हिं० पु०) १ खाजा, खजला। २ भटवांस।

खजुना—उत्तर-पश्चिम सीमान्त प्रदेशके कथोपकथनकी एक भाषा। शीना, खजूना और अरनिया तीन भाषाओंमें परस्पर सौसादृश्य लगा है। आसतर, गिलगिट, चोलास, दरैल, कोहलो और पालस प्रभृति सिन्धुनदके उभय तीरवर्ती क्षुद्र प्रदेशोंमें शीना भाषा प्रचलित है। फिर हुनजा और नागर प्रदेशमें खजूना और यशन तथा चित्रालमें अरनिया भाषा चलती है। इसीके निकट वर्तमान दरद वा दर्दु देश है। प्राचीनकाल उसीको दारददेश कहते थे। वहां भी यही भाषा-बोली जाती है।

खजुरहट, खजुरहटी देखो।

खजुरहटी (हिं॰ स्त्री॰) किसी किस्मकी खजूर। यह नेपालकी तराईमें उपजती और हाथ डेढ़ हाथ ही बढ़ती है। इसके पत्ते मामूली खजूरसे कुछ छोटे पड़ते और चटाई वगैरह बनानेमें लगते हैं। खजुरहटीके फलमें सिवा बिजके गूदा नहीं होता।

खजुरा (हिं॰ पु॰) किसी किस्मका डोरा। यह दो या तीन लरें मिला कर बटा जाता है। इसको एक ओर फुंदना लगा देते हैं। खजुरासे स्त्रियां अपनी वेणी गूथती हैं।

खजुराहो (हिं॰ स्त्री॰) खजूरबहुलस्थान, खजूरका बाग या जंगल।

खजुराहु—प्राचीन कालञ्जर राज्यका एक पुराना नगर। इसका चलता नाम कुजरो है। यह नगर अक्षा॰ २४° ५१´ उ॰ और देशा॰ ७९° ५६´ पू॰में कियान (केन) नदी तीरवर्ती राजनगरसे ८ मील दूर विन्ध्यपर्वतकी पश्चिम दिक्को अवस्थित है। यहां चंदेल राजाओंकी राजधानी रही। संस्कृतमें इसको खजुरवाटिक कहते हैं। महमूद गजनवीके सहयात्री अबूरीहान् कालञ्जरजयकालको (१०२२ ई॰) यहां उपस्थित हुए थे। उन्होंने लिखा है—यह जुझौतियोंकी राजधानी है, और कजुराहु कहलाता है और कन्नौजसे ९० मील दूर पड़ता है। फिर १३३५ ई॰को इब्न-बतूताने भारत घूमते समय इसका नाम कजुरा लिपिबद्ध किया। उनके समयको यहां आध कोस लंबा चौड़ा एक सरोवर रहा और उसके तीर हिन्दुवोंके असंख्य देवमन्दिर खड़े थे।

युयनचुयाङ्ग इसको चि-चि तो (जुझौती) नामसे वर्णना कर गये हैं। उनके समय यह नगर २॥ कोस विस्तृत था। यहां १२ बौद्ध मठ और हिन्दुओंके १२ प्रधान मन्दिर बने और प्रायः सहस्र ब्राह्मण रहते थे। खजुराहुके राजा जातिके ब्राह्मण होते भी एक दृढ़विश्वासी बौद्ध थे। भूमि अतिशय उर्वरा रही। भारतके नाना स्थानोंसे विद्वान् सर्वदा यहां आया करते थे।

युयनचुयाङ्ग और अबूरेहान्के वर्णनानुसार यह यजहुति प्रदेश वर्तमान बुंदेलखण्ड-जैसा ही समझ पड़ता है। यहांके ब्राह्मण अपना यजहुति ब्राह्मणों जैसा ही परिचय देते हैं। यजहुतिका अर्थ यजुर्होता लगाते हैं। परन्तु जुझौतिया नामक एक जातीय वणिक् भी यहां रहते हैं। सुतरां पाश्चात्य विद्वान् अनुमान करते कि यजहुति (जुझौतिया) शब्द देशवाचक है। कनिङ्गहाम साहबको इसके निकटवर्ती ग्रामसे उत्तरपूर्व वामनदेव-मन्दिरके पास कीर्तिवर्मराजके समय किसी शिलालिपिमें जेजाख्य और जेजभुक्ति दो नाम मिले थे। इससे उनके अनुमानमें जेजभुक्ति शब्दसे ही यजहुति नाम निकला है। फिर उनके अनुमानमें टलेमिवर्णित सन्द्रबतिस वा सन्द्रबतिस नामक देश और तन्मध्यस्थ कुरपोरिन, एम्पलेथरा, नदुबन्दगर, और तमसिस नामक नगर यथाक्रम यजहुति देश, खजूरपुर, महरा, नलपुर तथा तपस्वी नामक नगरियोंका विकृत नामान्तर मात्र है। संस्कृत शास्त्रमें भी कालञ्जर प्रदेश तपस्वी स्थान-जैसा लिखा गया है। कालञ्जर देखो।

वर्तमान समयको खजुराहु एक सामान्य ग्राममात्रमें परिणत हो गया है। १२४२से अधिक अधिवासी देख नहीं पड़ते। कनौजिया और जिझौतिया दो ही श्रेणियोंके ब्राह्मण यहां मिलते हैं। ठाकुर कहलानेवाले कई चंदेल जमीन्दार भी मौजूद हैं।

यहां हिन्दुओंका विख्यात प्राचीन कीर्ति चौसठ योगिनीका मन्दिर है वह शिवसागर सरोवरसे दक्षिण-पश्चिम १६ हाथ ऊंचे एक छोटे पर्वत पर अवस्थित है। आज भी ६४ मन्दिर खड़े हैं। किसीकी चोटी और किसीकी सिर्फ दीवार गिर गयी है। समस्त मन्दिर श्रेणीबद्धरूपसे एक आयतक्षेत्र पर अवस्थित हैं। मध्य-

स्थलमें विस्तृत प्राङ्गण है। मन्दिर ग्रेनाइट पत्थरके बने हैं। मन्दिरका एक एक गृह डेढ़ हाथ लम्बा और ढाई हाथ चौड़ा है। जिस चतुरस्र क्षेत्र पर यह ६४ मन्दिर खड़े, उसकी चारों दिशायें प्राचीरसे घिरी हैं। घेरेके भीतर प्राचीरके गात्रमें मन्दिर पास ही पास निर्मित हुए हैं। प्राचीर उत्तर-दक्षिणको ४६ हाथ और पूर्व पश्चिमको ६८ हाथ दार्घ है। उस पर प्रत्येक मन्दिरकी चूड़ा स्वतन्त्ररूपसे अवस्थित है। उत्तरस्थ प्राचीरके मध्यस्थलमें मन्दिरके प्राङ्गणको जानेका प्रधान पथ है। फिर दक्षिण प्राचीरके मध्यस्थलका मन्दिर सर्वापेक्षा उच्च और प्रशस्त है। आजकल सब मन्दिरोंमें प्रतिमा नहीं है। दक्षिणदिक्‌के बड़ मन्दिरमें अष्टभुजा महिषमर्दिनीमूर्ति और माहेश्वरी तथा वाराहीमूर्ति अभी नहीं बिगड़ी। महिषमर्दिनीके वेदीगात्रमें हिङ्गलाज नाम खुदा हुवा है। इसके बीचमें हनूमान्‌का भी एक मन्दिर है।

इस हनूमान् मूर्तिकी वेदीके गात्रमें एक खोदित लिपि लगी है। उसमें लिखा है कि गोहिलके पुत्र गोल्लने (सम्भवतः) ८४० संवत्‌की माघ मासकी शुक्ला नवमीके दिन पवनात्मज गोल्लाक श्रीमान् हनूमन्मूर्ति प्रतिष्ठित की।

यहां "कुटिल" अक्षरोंमें खोदित हर्षदेव तथा श्रीक्षितितालदेवके नामकी एक शिलालिपि मिली है। यदि यही हर्षदेव यशोवर्माके पिता धङ्गराजके पितामह हर्षदेव हों, तो उक्त शिलालिपि ९०० ई०को मानी जा सकती है। इसकी अपेक्षा खजुराहुमें दूसरी प्राचीन शिलालिपि न मिलनेसे अनुमित होता ६४ योगिनियोंके मन्दिर अन्ततः ९०० ई०के पूर्व वा उसी समयको वर्तमान थे। चौंसठ योगिनियोंके मन्दिरकी निर्माणप्रणाली और शिल्पकार्यादि देखनेसे समझा जाता कि यह ई० अष्टम शताब्दको बना था।

शिवसागरके तीर कुछ ग्रेनाइट कुछ बलुवा पत्थरका बना और एक मन्दिर है। उसमें ब्रह्माकी मूर्तिका भग्नावशेष मिलता है। यह चौंसठ योगिनियोंके मन्दिरकी अपेक्षा आधुनिक, किन्तु अन्यान्य रेतीले पत्थरके बने मन्दिरोंसे प्राचीन है। चौंसठ योगिनी मन्दिरके प्रवेशद्वारसे सम्मुख पहाड़ पर कोई दूसरा भग्नावशिष्ट मन्दिर है। इस मन्दिरमें ४ हाथ ऊंची गणेश प्रतिमा है। चौंसठ योगिनीके मन्दिरकी द्वारदिक्‌को इस प्रतिमाका मुख पड़ता है। यह रेतीले पत्थरसे बनाया गया है। गणेशकी मूर्ति अति सुन्दर है।

खजुराहुमें जितने मन्दिर हैं, उनमें कन्दरीय महादेवका मन्दिर सर्वापेक्षा उच्च और बृहत् है। यह ७२ हाथ लम्बा, ४६ हाथ चौड़ा और प्रायः ७८ हाथ ऊंचा है। मन्दिर ५ भागोंमें विभक्त हुआ है। सोपानसे चढ़ते ही अर्धमण्डप, उसके पश्चात्‌को मण्डप, उसके आगे महामण्डप, उसके बाद अन्तराल, फिर गर्भगृह है। मन्दिरगात्रमें भीतर और बाहर नानाविध मूर्तियां बनी हैं। उनमें कितनी ही रतिकलाविषयक हैं। एतद्भिन्न देवदेवियोंकी मूर्तियां भी खुदी हैं। मन्दिरका कारुकार्य विशेष सुन्दर और शोभाका आधार है। इसमें महादेवकी लिङ्गमूर्ति विराजित है। गौरीपट्ट पर लिङ्गशरीरका परिधि प्रायः ३ हाथ पड़ता है। प्रतिमा सङ्गमरमरकी बनी है।

गर्भगृहद्वार उपरि भागके ठीक मध्यस्थलमें शिव उनके वाम विष्णु और दक्षिणको ब्रह्माकी मूर्ति है।

शिवमन्दिरसे ठीक उत्तरको एक छोटा अर्धभग्न मन्दिर है। छतरपुरके राजावोंने उसका जीर्णसंस्कार कराया है। यह एक शिवमन्दिर है। इसके द्वारपर भी ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वरकी मूर्ति प्रतिष्ठित हैं।

उक्त क्षुद्र मन्दिरके ठीक उत्तरको प्रायः ५१ हाथ लम्बा और ३३ हाथ चौड़ा एक और बड़ा मन्दिर है। वह देवी जगदम्बाका मन्दिर-जैसा विख्यात है। सम्भवतः प्रथमको यह विष्णुमन्दिर रहा, क्योंकि गर्भगृहके द्वार पर ठीक मध्यस्थलमें विष्णु और उभय पार्श्वको शिव तथा ब्रह्माकी मूर्ति अवस्थित है। गर्भगृहके मध्यस्थलमें चतुर्भुजा पद्महस्ता देवीमूर्ति है। वह लक्ष्मी देवीकी मूर्ति-जैसी अनुमित होती है। इस मन्दिरका शिल्पनैपुण्य कन्दरीय महादेवके मन्दिरसे अनेकांशमें श्रेष्ठ है। इसमें कितने ही पृथक् अक्षर खुदे हैं। उससे समझ पड़ता है कि मन्दिर चंदेलोंके प्रभाव समयको अर्थात् दशम और एकादश शताब्दके बीचका बना हुवा है।

जगदम्बा मन्दिरसे उत्तर और शिवसागरके प्राचीन गर्भसे पश्चिमको छत्रक-पत्रक नामक एक मन्दिर है। मन्दिरके अभ्यन्तरमें दानों हाथोंसे दो पद्म पकड़े एक पुरुष मूर्ति खड़ी है। मूर्ति सूर्यकी प्रतिमा-जैसी समझ पड़ती है। प्रतिमाके वेदीगात्रमें सूर्यका सप्ताश्वरथ खोदित है। इसकी गठन-प्रणाली बिलकुल जगदम्बाके मन्दिर-जैसी है। यह दैर्घ्यमें ५८ हाथ और प्रस्थमें ३८॥ हाथ पड़ता है। तोरणद्वार, अर्धमण्डप और मण्डप टूट गया है। महामंडप अष्टकोणी है, परन्तु छत सिर्फ चार स्तम्भों पर अवस्थित हो रही है। मन्दिरको तीन दिशाओंमें ब्रह्मा, सरस्वती, हरपार्वती और लक्ष्मीनारायणकी मूर्ति है।

शिवसागरके पाचीन गर्भसे पूर्व दिक्को विश्वनाथका मन्दिर है। कन्दरीय महादेवकी तरह इसकी गठन प्रणाली लगती है। परिमाणमें यह प्रायः छत्रकपत्रक मन्दिरके समान है। इसके चतुष्कोणोंमें और द्वारके सम्मुख दूसरे क्षुद्राकार ५ मन्दिर हैं। गर्भगृहके द्वार पर वृषारूढ शिवमूर्ति और उसके दक्षिण हंसारूढ़ ब्रह्मा तथा वामको गरुड़ारूढ विष्णुमूर्ति विद्यमान है। मन्दिरके मध्यमें एक शिवलिङ्ग प्रतिष्ठित हुवा है। इस मन्दिरके अर्धमंडपमें प्रवेश करनेसे दो खोदित लिपियां देख पड़ती हैं। एकमें १०५६ संवत् (वा ९९९ ई०) और दूसरीमें १०५८ संवत् (वा १००१ ई०) लिखित है। इनमें एक शिलालिपिसे मालूम पड़ता है कि चन्द्रात्रेय गोत्रीय राजा धङ्गने मरकत-मय शिवलिङ्गको शम्भु नामसे अभिहित करके उस मन्दिरमें प्रतिष्ठित किया था। धङ्गराजने यह शिला-लिपि खोदित होनेसे प्रायः एकशत वर्ष पूर्व ही जीव-लीलाको संवरण किया। पहले इसे प्रमथनाथका मन्दिर कहते थे।

इस मन्दिरमें कई शिलालिपियां पड़ी हैं। उनमें एक १०५६ संवत् (वा ९९९ ई०) की है। इसमें लिखा है—'राजा धङ्गने यह मन्दिर प्रतिष्ठित किया है। धङ्गराजके पुत्र गंडदेवने उनके पीछे ही राज्य पाया। धङ्गदेवका १०० वर्ष वयसको मृत्यु हुआ था।' अन्यान्य लिपिसे मालूम पड़ता है कि वह ९५४से ९९८ ई० तक विद्यमान रहे। उसके पीछे गंडदेव राजा हुए। इन्होंने ९९९ से १०२५ ई० तक राजत्व किया था। गंडदेव १०२० ई०को कन्नौज पर चढ़े और १०२१ ई० महमूद गजनवी कर्तृक आक्रान्त हुवे। इन शिलालिपियोंमें चंदेल राजाओंकी वंशावली दी गयी है।

विश्वनाथ मन्दिरके नाट्यमन्दिरमें एक दूसरी शिलालिपि अलग लगी है। इसमें १०५८ संवत् वा १००१ ई० लिखा हुवा है। इसमें एक भी चंदेल राजाका नाम नहीं। इसमें कक्कल नाम मिलता है। किन्तु ठीक कह नहीं सकते—यह किस राजाका नाम है। उस समयका कलचुरि वंशमें अलविरुनीके समसामयिक गाङ्गेयदेवके पिता कक्कल स्वराज्य शासन अवश्य करते थे।

उक्त मन्दिरके दक्षिण-पश्चिम कोणको उसीके चबू-तरे पर और एक छोटा शिवमन्दिर है। इसके द्वार पर भी ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश्वर मूर्ति और मन्दिरके मध्यमें अष्टभुजा त्रिशूलखर्परधारिणी उपविष्टा क्षुद्र दुर्गामूर्ति विद्यमान है। इसी चबूतरेके उत्तरपूर्व और दक्षिणपूर्व कोणको ऐसा ही दूसरा क्षुद्र मन्दिर था। वह अब नष्ट हो गया है।

विश्वनाथ-मन्दिरके बिलकुल सामने वृष मन्दिर है। वृषमूर्ति ४॥ हाथ दीर्घ और अति मसृण है। यह मन्दिर भी विश्वनाथ मन्दिरका समसामयिक है।

विश्वनाथ मन्दिरको दक्षिणदिक्को पार्वती-मन्दिर है। इसका गर्भगृह व्यतीत समस्त ही भग्न हो गया है। पहले यह भी विष्णुमन्दिर जैसा रहा समझ पड़ता है। कारण द्वार पर बिलकुल मध्यस्थलमें विष्णु-मूर्ति वर्तमान है। मन्दिरके मध्य चतुर्भुजा देवीमूर्ति दण्डायमाना है। यह ३॥ हाथ ऊंची है। कोई इसको पार्वतीमूर्ति और कोई लक्ष्मीमूर्ति बताता है। इस प्रतिमाके ठीक मस्तक पर एक विष्णुमूर्ति है। सुतरां इसका लक्ष्मीमूर्ति होना ही सम्भव है। मन्दिरमें शूकर, हस्ती, अश्व और अस्त्रधारी सैनिक दलकी मूर्तियां बनी हैं। मन्दिराभ्यन्तरमें २॥ हाथ ऊंची चतुर्भुज चतुःशिर एक पुरुषमूर्ति खड़ी है। इसका एक मुख मानवाकार और अन्य समस्त सिंहाकार है। सम्भवतः यह नृसिंहमूर्तिका प्रतिरूप है।

विश्वनाथके बिलकुल दक्षिण किसी क्षुद्र मन्दिरका गर्भमात्र अवशिष्ट है। लोग इसको पार्वतीमन्दिर कहते हैं। किन्तु द्वारके ऊपर विष्णुमूर्ति विद्यमान है। अभ्यन्तरमें २॥ हाथ ऊंची चतुर्भुजा देवी प्रतिमा विराज करती है। इस प्रतिमाको पार्वती कहा जाता है। इस प्रतिमाके ऊर्ध्व देशमें मध्यस्थल पर विष्णु और उसके दक्षिण ब्रह्मा तथा वामको शिवमूर्ति भी है।

शिवसागरके पूर्वतीरको ओर कई मन्दिर हैं। इनमें एक सबसे बड़ा और आकारमें विश्वनाथ-मन्दिर जैसा है। इसका लोग रामचन्द्र मन्दिर वा 'चतुर्भुज' मन्दिर कहते हैं। कनिङ्गहाम साहबने १८५८ ई०को इसीकी वर्णना लक्ष्मीजीके मन्दिर-जैसी की थी। शेष को १८६४-६५ ई०की विवरणीमें उन्होंने इसे चतुर्भुज मन्दिर-जैसा ही लिखा। किन्तु हम इसे नृसिंहमन्दिर कहना चाहते हैं। विश्वनाथ मन्दिरकी तरह इसके भी चारो कोनोंमें और सामने छोटे छोटे और पांच मन्दिर हैं। इस मन्दिरके गात्रमें भीतर और बाहर विश्वनाथके मन्दिरकी भांति यथेष्ट चित्र खुदे हैं। उसमें सूअरका शिकार, लोकयात्रा, सैन्यसमावेश, हाथी घोड़ेको प्रदर्शन आदि तसवीरें निहायत खूबसूरत हैं। इस मन्दिरमें २॥ हाथ ऊंची एक चतुर्भुज प्रतिमा है। उसके तीन मस्तक लगी हैं। उसमें मध्यस्थलका मस्तक मनुष्याकृति और दोनों पार्श्ववाले सिंहाकार हैं। सम्भवतः यह 'नृसिंह' मूर्तिकी प्रतिमा है। इसीसे हम भी इसको नृसिंह मन्दिर कहना चाहते हैं। इस मन्दिरमें एक शिलालेख है। उसमें चंदेल राजावोंकी वंशावली दी गयी है और नन्नूकदेवसे धङ्गदेव तक नाम मिलते हैं। उसीमें लिखा है कि-उक्त मन्दिरको राजा यशोवर्मा और उनके पुत्रने १०११ संवत् (९५४ ई०) में बनाया था। इसीसे समझ पड़ता है कि वह विश्वनाथ मन्दिरसे ४५ वर्ष पूर्वको गठित हुवा। क्षुद्र मन्दिरोंमें भी विष्णुकी मूर्ति रही। पश्चाद्दिकके दो मन्दिर पूर्व मुखको स्थापित हैं। प्रत्येक मन्दिरके सामने दो खम्भोंका बरामदा है।

चतुर्भुज मन्दिरके ठीक पूर्वको वराह-मन्दिर है। इसका द्वार चतुर्भुज मन्दिरद्वारके बिलकुल सामने पड़ता है। इसमें प्रस्तरका एक शूकर है। वह ८ फट ९ इञ्च लम्बा और साढ़े ५ फुट ऊंचा है। शूकर मूर्तिके वेदीगात्रमें एक सर्प बना है। इस सर्पकी पूंछ पर शूकर की पूंछ पड़ी और सर्पके मस्तक पर एक मनुष्य मूर्ति खड़ी है। इस मनुष्य मूर्तिके निकट किसी दूसरी प्रतिमाके दो टूटे पांव पड़े हैं। सम्भवतः इस मूर्तिके दोनों हाथ वराहके गलदेशमें रहे। क्योंकि उसके गलदेशमें दो हाथोंका भी भग्नावशेष मिलता है। शूकर-गात्रमें असंख्य मनुष्य मूर्तियां खुदी हैं।

वराहमन्दिरसे १०॥ हाथ उत्तरको एक क्षुद्र देवी-मन्दिर है। इसके बीच चतुर्भुजा देवीमूर्ति प्रतिष्ठित है। प्रवेशद्वार पर ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वरकी मूर्ति है। यह लक्ष्मीमन्दिर-जैसा समझ पड़ता है।

चतुर्भुजामन्दिरसे २० हाथ दक्षिणको मृत्युञ्जय महादेवका मन्दिर है। इसके मध्य मृत्युञ्जय नामकी ६ हाथ ऊंचा एक मोटी लिङ्गमूर्ति प्रतिष्ठित है। इसकी कोणाकार चूड़ाके अग्रभाग पर छत्रपुरके महाराजने मुलम्मा चढ़वा दिया है।

शिवसागरसे दक्षिण और सूर्यमन्दिरसे उत्तर भग्न-स्तूप पड़ा है।

उत्तरांशकी पश्चिमके मन्दिरादिसे पाव कोस दूर कई भग्नस्तूप हैं। सम्भवतः यह युयनचुयाङ्ग वर्णित बौद्धमठोंका भग्नावशेष है।

एक स्तूप १३३ हाथ लम्बा, १०६ हाथ चौड़ा और प्रायः १० हाथ ऊंचा है। इसको 'शतधार' स्तूप कहते हैं। इसको देखने पर स्वच्छन्दसे समझ पड़ता है कि वह एक वृहत् बौद्ध मठका भग्नावशेष है। इससे २०० हाथ दक्षिणको ओर एक छोटा स्तूप है। उसमें दीवार और खंभेका टूटा भाग मौजूद है। ३३३ हाथ उत्तरको ऐसा ही दूसरा कोई क्षुद्र स्तूप है। इन दोनोंके बीच १३३ हाथ लम्बी एक पुष्करिणी लगी है। शतधार स्तूपसे आध मील दूर एक वैष्णव-मन्दिरका भग्नावशेष और दो कूप हैं।

ग्रामके उत्तर प्रान्तको एक बड़ा मन्दिर है। यह पूर्वोक्त स्तूपोंके दक्षिण अवस्थित है। इसको वामनदेव-का मन्दिर कहते हैं। इसकी प्रतिमा ३ हाथ ऊंची है। मन्दिरके मध्य वामनमूर्ति रहते भी गर्भगृहके

द्वार पर मध्यस्थलमें शिवमूर्ति और उसके दक्षिण ब्रह्मा तथा वामको विष्णुमूर्ति है। मन्दिर ४० हाथ लम्बा और २६ हाथ चौड़ा है। पश्चिमांशके मन्दिरोंको तरह इसमें सुन्दर कारुकार्य नहीं है। मन्दिरके गात्रमें टेढ़े हरफोंसे इमारत बनानेवालेका नाम खुदा है। सुतरां ज्ञात होता कि वह ई० दशम वा एकादश शताब्दमें निर्मित हुवा है। इससे पश्चिम और दक्षिण-पश्चिमको ओर दो छोटे मन्दिरोंका भग्नावशेष है। यह समस्त भग्नावशेष प्रायः १० हाथ ऊंचा होगा। मन्दिरसे थोड़ी दूर एक भग्नशिलालिपि पायी गयी है। इसको सप्तम पंक्तिमें श्रीहर्षदेवका नाम है। यह यशोवर्माके पिता और धङ्गदेवके पितामह थे। दशम पंक्तिमें श्रीक्षितिपालदेव नामक दूसरा नाम एवं चन्देलराजाओंका भी नाममिलता है। परन्तु राजाका उल्लेख नहीं। मालूम होता कि उक्त व्यक्ति हर्षदेवके ज्येष्ठ पुत्र थे। अल्प दिन राजत्व करके अपुत्रक अवस्थामें मर जानेसे इनके कनिष्ठ भ्राता यशोवर्मा राजा हुए। सुतरां राजतालिकामें इनका नाम नहीं पाया है।

ग्रामके पूर्व पार्श्वको किसी स्तूप पर एक छोटा मन्दिर विद्यमान है। पहले इसको ठाकुरजो या लक्ष्मणजीका मन्दिर कहते थे, किन्तु आजकल किसी विशेष नामसे निर्देश नहीं करते। जुआर क्षेत्रके पास होता रहनेसे यह भी 'जुआर' ही कहलाता है। इसके मध्य चतुर्भुज विष्णुमूर्ति विद्यमान है।

खजूर सागरके पूर्वतीरको पुरानी ईंटों और पत्थरोंसे सम्प्रति एक मन्दिर निर्मित हुआ है। मन्दिरके बाहर ४॥ हाथ ऊंचो एक हनूमान् मूर्ति है। उसी हनूमान् प्रतिमासे इसको हनू मन्दिर कहते हैं। इसके निकट जो सकल भग्न प्रस्तरादि हैं, उनमें एक गदाधर और दूसरी अर्धसर्पदेह नागपुरुषको मूर्ति मिली है।

हनूमन्दिरसे अति निकट खजूर सागरके पूर्वतीर पर कोणाकार चूड़ाविशिष्ट कोई मन्दिर है। इसमें चतुर्मुख ब्रह्माको एक मूर्ति विराजित है। किन्तु द्वार पर गदाधर विष्णुको मूर्ति है। इसको गठनप्रणाली देख कर अनुमान किया गया है कि वह पश्चिमांशके मन्दिरादिसे भी प्राचीन और सम्भवतः ई० आठवें नवें शताब्दका बना हुवा होगा।

दक्षिण-पश्चिमको अधिकांश बौद्ध और जैन मन्दिरादिका भग्नावशेष पड़ा है।

इसके मध्य सर्वापेक्षा घण्टाई मन्दिर ही प्राचीन है। कोई नहीं जानता—घण्टाईके अर्थसे क्या समझ पड़ता है। इस मन्दिरका जो भग्नावशेष आजकल देखनेमें आता, उससे यह किसी बड़े मन्दिरका महामण्डप जैसा ही खयाल किया जाता है। इसकी लम्बाई २६ हाथ और चौड़ाई १३ हाथ है। नाट्यमन्दिरको भांति खंभेके ऊपर सिर्फ छत खड़ी है, परन्तु खंभेके बीच बीच प्राचीर जैसे रहनेका अनुमान किया जाता है। मध्यस्थलके खंभे रेतीले पत्थरसे बने हैं इसमें बहुत अच्छी नक्काशी है। बाहरी खंभे ग्रेनाइट पत्थरके बने हैं और उनमें कोई कारीगरी नहीं है। मालूम होता है, इन्हींमें प्राचीर संलग्न था। रेतीले पत्थरके चार खंभे अष्टकोणी वेदी पर लगे हैं। द्वारके ऊपर बीचों बीच एक चतुर्भुजा स्त्रीमूर्ति है। सम्भवतः यह बौद्धशास्त्रको धर्ममूर्ति होगी। बौद्धविरत्नके मध्य यह सृष्टिकारिणी शक्ति है। वेदी पर एक वृहदाकार उपविष्ट मूर्ति है। इसके नोचे "ये धर्महेतुप्रभवा" इत्यादि बौद्धमन्त्र लिखा है। यह ई० पञ्च षष्ठ शताब्दको वर्णमाला जैसा समझ पड़ता है। इसके निकट अनेक भग्न जैन मूर्तियोंका ढेर लगा है। उसमें किसीके गात्र पर आदिनाथ मूर्ति प्रतिष्ठाको कथा खुदी हुई है। जो वर्ष संख्या दी गयी है, उससे इस लिपिके ११४२ संवत् (१०८५ ई०) को खोदे जानेका अनुमान लगता है। आदिनाथके प्रतिष्ठाताका नाम श्रीविवत्सा और उनकी प्रधान स्त्रीका नाम गोठनी पद्मावती था। इससे भी समझ पड़ता है कि अष्टम शताब्दका प्राचीन बौद्धमंदिर एकादश शताब्दको जैनोंके अधिकारमें रहा।

घण्टाई मंदिरमें दो नाम खुदे हैं—एक 'नेमिचन्द्र' और दूसरा 'स्वतिश्री साधु'। इसके अक्षरादिसे अनुमान होता कि वह ११५० ई० या उससे पहले दशम शताब्दको खोदे गये होंगे।

घण्टाई मंदिरके निकट पार्श्वनाथका एक मंदिर है। पार्श्वनाथकी यह प्रतिमा आधुनिक है। किन्तु यह मंदिर किसी वृहत् प्राचीन मंदिरका गर्भगृह-जैसा

समझ पड़ता है। इसके द्वारपथ पर वामदिक्‌को एक नग्न पुरुषमूर्ति, दक्षिणको एक नग्न स्त्रीमूर्ति और द्वारके ऊपर तीन उपविष्टा रमणीमूर्तियां हैं। मन्दिरके मध्य दिगम्बर पार्श्वनाथको मूर्ति विद्यमान है और मन्दिरके गात्रमें कई तीर्थयात्रियोंका विवरण खुदा है। इसकी वर्णमाला ई० १०वें शताब्द जैसी लगती है। इससे ज्ञात होता है कि दशम शताब्दकी प्राचीन मंदिर वर्तमान था।

उक्त मन्दिरके निकट ही पार्श्वनाथका दूसरा और एक आदिनाथका मन्दिर है। दोनों मन्दिरोंके द्वारों पर एक एक क्षुद्र रमणीमूर्ति वर्तमान है।

उक्त दिक्‌कार मन्दिरोंके मध्य सबसे बड़े और अच्छे मन्दिरको जिननाथका मंदिर कहते हैं। यह २० हाथ लम्बा और बीस ही हाथ चौड़ा है। १८६० ई०को किसी जैन वणिक्‌ने इसका संस्कार कराया था। मन्दिर-मंडप, अन्तराल और गर्भगृह तीन भागोंमें विभक्त है। इसके नाट्यमन्दिरकी छत बहुत खूबसूरत है। उसका कारुकार्य और चित्रविचित्र पुत्तलिकादि इतना सुन्दर है कि लिखकर उसका ज्ञान करा नहीं सकते। जीनेकी सिढ़ियोंके सामने समुद्रमन्थनके चित्रका एक पत्थर पर नक्शा किया गया है। फिर मन्दिरके बायें बाजू पर खुदा है—धङ्गराजके राजत्वकाल १०११ संवत्‌की भव्य पाहिल नामक एक व्यक्तिने मन्दिरके लिये अनेक उद्यान समर्पण किये थे। दाहनी ओरके बाजू पर एक चौंतीसा यन्त्र खोदा गया है—

७	१२	१	१४
२	१३	८	११
१६	३	१०	५
९	६	१५	४

इसमें जिस दिक्‌से योग करके देखोगे, ३४ ही आयेगा। जिननाथके मन्दिरमें एक आध पंक्ति खोदितलिपि प्रायः सात आठ जगह मिलती है।

उसीके निकट 'शेठनाथ' वा शान्तिनाथ नामक एक जैन-मन्दिर है। यह अति सामान्य भग्नावशिष्ट इष्टकादि द्वारा निर्मित और अस्तरकारी किया हुवा है। इसके अभ्यन्तरको बड़ा अन्धकार है। उसमें ८हाथ ऊपर शान्तिनाथको प्रतिमा वर्तमान है। प्रतिमाकी वेदीमें एक खोदित लिपि है। उसके पाठसे समझा जाता कि १०८५ संवत् या १०२८ ई०को श्रीचन्द्रदेवने शान्तिनाथकी वह प्रतिमा बनायी थी।

इसके पास आदिनाथका दूसरा कोई छोटा प्राचीन मन्दिर है। इस मन्दिरमें विशेष कुछ उल्लेखयोग्य नहीं। किन्तु इसके निकट जो सकल भग्नावशिष्ट मूर्तियां, कारुकार्य विशिष्ट प्रस्तरखण्ड और स्तम्भांश पड़े हैं, उनसे कितनी ही बातें मालूम कर सकते हैं। उनमें कई खोदित लिपियां भी हैं। शम्भुनाथ नाम्नी किसी वेदीमें एक लिपि खुदी है। उससे मालूम पड़ता है कि मदनवर्मदेवके राजत्वकाल १२१५ संवत्‌के माघ मासको सूर्यवंशीय पाहिल्यपुत्र दण्डश्रेष्ठीने उस मूर्तिको प्रतिष्ठा किया था। इस मूर्तिके निर्माताका नाम रामदेव रहा।

घण्टाई मंदिरके दक्षिण और जैनमन्दिरोंसे पश्चिम १२ हाथसे १६॥ हाथ तक ऊंचा एक भग्नस्तूप है। यह २ हाथ लम्बा, ११० हाथ चौड़ा और उपरिभागमें प्रशस्त तथा समतल है। चारो दिशाओंमें प्राचीर देखनेसे समझ पड़ता है कि वह एक बौद्धमठका भग्नावशेष है। इससे इष्टकप्रस्तरादि संग्रह करके निकट ही एक जैन-मंदिर बनाया गया है। भग्नस्तूपके मध्यसे अनेक जैन-मूर्तियां आविष्कृत हुई हैं।

ग्रामसे दक्षिण पौन कोस कुवारनालेके पास दो बड़े मन्दिरोंका भग्नावशेष विद्यमान है। इसमें एक नीलकण्ठ महादेवका मंदिर और दूसरा कुनवारका मठ था। नीलकण्ठ मन्दिर बिलकुल गिर गया है, केवल गर्भगृहका प्राचीर दण्डायमान है। प्रकोष्ठके ऊपर मध्यस्थलमें शेष और उभयपार्श्वोंको ब्रह्मा तथा विष्णुकी मूर्ति है। मध्यस्थलमें लिङ्गमूर्ति नहीं, किन्तु उसका अर्घ्यस्थान (वेदी) बना है। नीलकण्ठ महादेव और

नामसे अभिहित हैं। यह मंदिर भी चंदेलोंके अधिकार समय दशम और एकादश शताब्दीके मध्यको निर्मित हुवा होगा। क्योंकि मंदिरगात्रमें ११७४ संवत् खोदित और किसी तीर्थयात्रीका नाम मिलता है।

कुनवार मठ भी एक शिवमंदिर है। इसके द्वारपर ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वरकी मूर्ति प्रतिष्ठित है। बहुतोंका कहना है कि कुनवार शब्द संस्कृत कुमार (कार्तिकेय) से निकला है। किन्तु कनिङ्गहामके अनुमानमें वह किसी चंदेल राजकुमारका प्रतिष्ठित होगा। पश्चिमांशके मन्दिरोंकी तरह यह भी एक परम सुन्दर मन्दिर है। इसका दैर्घ्य ४४ हाथ और प्रस्थ २२ हाथ है। कुनवारमठ भी उक्त सकल मंदिरोंकी भांति पांच भागोंमें विभक्त हुआ है।

खजूर-सागरके तीर भग्नावशेषमें एक कार्तिकेय मूर्ति मिली है। उसकी वेदीमें भी देवशीशमसिंहका नाम पाया जाता है।

खजुराहु ग्रामसे १॥ मील दक्षिण जाटकरी मौजेमें कई एक भग्नस्तूप और भग्नमूर्तियां पड़ी हैं। उत्तर दिक्को सङ्गमरमर पत्थरके बने शिवलिङ्गका एक मंदिर और उसके दक्षिण एक विष्णुमंदिर था। और भी थोड़ा दक्षिणको किसी दूसरे विष्णुमंदिरका भग्नावशेष विद्यमान है। उसका गर्भगृह खड़ा है। गर्भगृहके द्वार पर ब्रह्मा, विष्णु, शिवमूर्ति है। अभ्यन्तरमें भी २ हाथ ऊंची चतुर्भुजमूर्ति खड़ी है। कारुकार्य देखनेसे यह भी चंदेलोंका प्रतिष्ठित मंदिर मालूम पड़ता है।

खजूरसागर, शिवसागर आदि दीर्घिकाओंके तीर बड़े बड़े वृक्षोंके नीचे निकटस्थ अधिवासियों और जैन-तीर्थयात्रियोंने भग्नस्तूपके मध्यसे जो सकल मूर्तियां उद्धार करके स्थापन की हैं, उनमें बृहत्‌काय हनूमानकी एक मूर्ति उल्लेखयोग्य है। इसकी वेदीके गात्रमें ८२५ संवत् (८६८ ई०) खुदा हुवा है। क्या खजुराहु क्या महोबे कहीं भी इससे प्राचीन वर्षसंख्या नहीं मिलती। परन्तु कोई दूसरी बात लिखी न रहनेसे क्या प्रयोजन सिद्ध हो सकता है? वराह-मंदिरके निकट ऐसी ही कोई दूसरी चतुर्भुज शिवमूर्ति है। छत्रपुरके स्वर्गीय राजा प्रतापसिंहका समाधिमंदिर बनानेको प्रस्तरादि संग्रह करते समय यह मूर्ति निकली थी।

जब महमूद गजनवीने कालञ्जर आक्रमण किया, चंदेलवंशीय गंड या नंदराय कालञ्जरके राजा थे। खजुराहु ही उनकी राजधानी रहा। महमूद गजनवीके भयसे उन्होंने खजुराहु छोड़ कालञ्जर-दुर्गमें जाकर आश्रय लिया था। उसी समयसे खजुराहुकी अवनतिका सूत्रपात हुवा। परवर्ती चंदेलराजाओंने महोबा नामक स्थानमें राजधानी स्थापित की थी। त्रयोदश शताब्दीके प्रथम कुतुब्-उद्-दीनके महोबा और कालपी अधिकार करने पर चंदेल राजाओंने बराबर कालञ्जरमें आश्रय लिया। १३३१ ई०को जब इब्न बतूता इस देशमें आये, उन्होंने खजुराहुमें केवल योगी संन्यासी देख पाये थे। अकबरके समय यह धीरे धीरे जङ्गल हो गया। क्योंकि आईन अकबरीमें इसका उल्लेख नहीं मिलता। वर्तमान शताब्दीके प्रथम भी इसका पता किसीको न रहा। १८१८ ई०को फ्राङ्कलिनके मानचित्र पर ध्वंसावशिष्ट काजरी नामसे यह प्रथमतः चिन्हित हुवा। शिवरात्रिको आजकल भी यहां संन्यासियोंका बड़ा मेला लगता है।

खजुरिया (हिं० स्त्री०) १ खजुरिका, छोटी खजूर। २ कोई मिठाई। ३ किसी किस्मकी ऊख। यह सूरतमें बहुत होती है।

खजुरी—मध्यप्रदेशके भंडारा जिलेमें सकोली तहसीलकी एक जमींदारी। यह अर्जुनीसे ३ कोस उत्तर है। हलवा और गंद लोग यहां रहते हैं। हलवा जातीय कोई शख्स इसका जमींदार है।

खजुरी—मध्यभारतके अन्तर्गत भूपाल राज्यकी एक जमींदारी, इसको कजूरी अल्लादाद भी कहते हैं। पिंडारी-दलपति चित्तूके भाई राजनखान्‌को यह स्थान अंगरेजोंने दिया था। राजन्‌खान्‌के मरने पर उनके पुत्र इलाही बख्श खजुरीके अधिकारी हुवे। १८५८ ई०को इलाही बख्श जब मर गये, उनके लड़के करीम बख्श इसके जमींदार हुए। खजुरीके जमींदार अपने यहां नवाब कहलाते हैं।

खजुलाना (हिं॰ क्रि॰) खुजलाना, खजुआना।

खजुली (हिं॰ स्त्री॰) खाज, खुजली। २ किसी किस्मकी काई। इसके छूनेसे शरीर खुजलाने लगता है। ३ कोई मिठाई। इसको खाजेकी तरह ग्रकरमें पाग लेते हैं।

खजुहा—युक्तप्रदेशके फतेहपुर जिलेका एक नगर। यह अक्षा॰ २६° ३´ उ॰ और देशा॰ ८०° ३२´ ५०´´ पू॰ पर फतेहपुरसे १०॥ कोस दूर अवस्थित है। कोड़ासे फतेहपुर तक जो सड़क गयी खजुहा नगरी उसी पर बसी है। यहां पीतल तांबे कांसेके बर्तन बनते हैं। खजुहामें बड़े बड़े पुराने मन्दिरोंके अनेक अंश देखे जाते हैं। प्रकाण्ड प्राचीरवेष्टित यहां एक उद्यान है। उसे 'बाग बादशाही' कहते हैं। इसकी पूर्वदिक्‌को बारह द्वारी और गजगिरि पुष्करिणी है। नगरमें एक पुरानी सरायका फाटक लगा है। इसके भीतरसे आगरेसे इटावा तक मुगलोंकी अमलदारीका रास्ता गया है। 'रम्दनका तलाव' नामक एक पुष्करिणी और उसीके पास एक शिवमन्दिर भी बना है। प्रति वत्सर कार्तिक मासको यहां भक्तोंका मेला लगता है। खजुहामें विद्यालय, डाकघर, थाना और तहसील विद्यमान है। सप्ताहमें दो बार बाजार भरता है। लोकसंख्या प्रायः ३००० है। अधिवासी अनेकांश ब्राह्मण हैं।

खजूर (हिं॰ स्त्री॰) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह उष्ण देशोंमें समुद्रतीरको वा वालुकामय समतल भूमिमें उत्पन्न होता है। खजूरका वृक्ष सीधा खम्भे जैसा ऊपरको बढ़ते जाता और चोटी पर पत्तियोंका गुच्छा दिखाता है। इसकी पत्तियां अति कठिन, ४।६ अङ्गुल दीर्घ और नोकदार होती हैं। वह एक सीके या छड़की दोनों ओर एक एक करके आमने सामने आती हैं। यह छड़ दो तीन हस्त पर्यन्त दीर्घ होती है। खजूर खास कर दो तरहकी होती है—जङ्गली और देशी। जङ्गली खजूर सेंधी, खरक आदि भी कहलाती है। यह बहुत नहीं बढ़ती और भारतमें प्रायः सर्वत्र मिलती है। इसका फल किसी कामका नहीं होता। खजूरका वृक्ष ७।८ वर्षका होने पर उसमें पांछ लगा देनेसे रस निकलता है। इसको ताड़ी कहते हैं। यह अधिक सुस्वादु रहती और इससे गुड़ तथा चीनी बनती है। लगायी जानेवाली खजूर पिण्डखजूर कहलाती है। इसका वृक्ष ६०।७० हाथ तक बढ़ता और कुछ वर्षसे ऊपर उसके मूलके निकट क्षुद्र गुच्छ, रसमूह निकलता है। यह सिन्धु, पञ्जाब, गुजरात और दक्षिणमें अधिक उत्पन्न होता है। उक्त देशोंमें लोग इसकी कृषि किया करते हैं। वृक्षरोपणार्थं सब प्रकारकी भूमि उपयुक्त होती है, केवल उसमें चारका कुछ अंश रहना आवश्यक है। तीनसे छह वत्सर तकके अङ्कुर वृक्षके पाससे खोद लेते हैं। उनके दीर्घाकार पत्र काट डाले जाते हैं। फिर उन्हें ३ फुट लम्बे चौड़े गड्ढेमें दो ढाई सेर खली डाल लगा देते हैं। आठ वर्षसे अधिक पुराने पौदोंमें फल आ जाते हैं। माघ फाल्गुन मास मञ्जरियां आती हैं। यह मञ्जरियां पत्रावरणमें वेष्टित रहतीं और पीछे बढ़ कर फूलका गुच्छा बनती हैं। बड़े बड़े गुच्छोंमें फल आते हैं। फल अच्छी तरह न पकने तक सींचनेकी बड़ी जरूरत रहती है। फल पकते समय पीले लगते और फूल आने पर लाल निकलते हैं। पिण्डखजूरके फल छुहारे कहलाते हैं। छुहारे कई प्रकारके होते हैं। उनमें नूर वगैरह अच्छे समझे जाते हैं।

किसी किसी खजूरमें चार चार तक छतरियां होती हैं। खजूरका काष्ठ बड़ेरमें लगता और उससे अस्थायी सेतु भी बनता है। पत्तियोंके डण्ठलोंसे घर छाते और छड़ी भी बनाते हैं। पत्तियोंकी चटाइयां और पङ्खियां अच्छी होती हैं। इसका अन्तःसार सिद्ध करने पर कत्थे-जैसी एक प्रकारकी लाल बुकनी निकलती, जो चमड़ा रंगनेमें लगती है। खजूरकी छालसे चमड़ा भी सिझाया जाता है। खजूरका गोंद हुकुमबिल कहलाता और औषधके काम आता है। इसके कोमल पत्र सुखा कर रख लिये जाते और पीछे तरकारीके काम आते हैं। खजूरकी छालके रेशेसे रस्सी बटते हैं। अरबमें इसके फूलसे गुलाब-केवड़े जैसा एक प्रकारका अर्क उतारा जाता है। खर्जूर देखो।

२ कोई मिठाई। इसको आटेमें घी और चीनी डाल गूंध कर बनाते हैं। खजूर खानेमें खसखसी और जायकादार होती है।

खजूरकड़ी (हिं० स्त्री०) वस्त्रविशेष, एक रेशमी कपड़ा। इस पर खजूरकी पत्तियों जैसी धारियां रहती हैं।

खजूरा (हिं० पु०) मंगरा, खजूरकी बंडेर। २ कन खजूरा।

खजूरी (हिं० वि०) १ खजूर सम्बन्धीय, खजूरसे ताल्लुक रखनेवाला। २ तिलड़ा, तीन लड़ोंको गूंथ कर बनाया हुवा।

खजारा (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। इसकी फली रूयेंदार होती और शरीरमें छू जानेसे खुजली उठती है।

खज्योति (सं० पु०) खे आकाशे ज्योतिरस्य, बहुव्री०। खद्योत, जुगनू।

खञ्ज (सं० पु०) १ वायुरोगभेद, बाईकी एक बीमारी। २ विकलगति, लंगड़ा। इसका पर्याय—खोड़, खोल, खोर, खञ्जक और खोट है। भावप्रकाशके मतमें कटिदेशाश्रित वायु कुपित होके ऊरुदेशस्थ कण्डरा (महास्नायु) का आक्षेप लगता और मनुष्य खञ्ज पड़ जाता है। कर्मविपाककी देखते जो व्यक्ति अकारण हिरण मारता, परजन्ममें खञ्जका जन्म पाता है—

"हरिणे निहते खञ्जः शृगाली तु विपादकः।" (शातातप)

सुश्रुतके मतानुसार गर्भावस्थाकी गर्भिणीका अभिलाष पूर्ण न होनेसे गर्भस्थित सन्तान खञ्ज हो जाता है। (सुश्रुत, शारीरक ३ अ०) खञ्ज शब्द पाणिनीय कडारादि गणान्तर्गत है। कर्मधारय समासमें विकल्पसे इसका पूर्वनिपात होता है। जैसे—खञ्जवाहु और वायुखञ्ज।

खञ्जक (सं० त्रि०) खञ्जति, खजि कर्तरि खल्, यद्वा खञ्ज एव स्वार्थे कन्। खञ्ज, लंगड़ा।

खञ्जकारि (सं० पु०) खञ्जकस्य अरिः, ६ तत्। सुस्ना, खेसारी।

खञ्जखेट (सं० पु०) खञ्ज इव खेटति गच्छति, खिट्-अच्। खञ्जनपक्षी, ममोला।

खञ्जखेल (सं० पु०) खञ्ज इव खेलति, खेल-अच्। खञ्जनपक्षी, खंडरैचा।

खञ्जता (सं० स्त्री०) खञ्जस्य भावः, खञ्ज तल्-टाप्। खञ्जत्व, लंगड़ापन।

खञ्जन (सं० क्लो०) खजि भावे ल्युट्। १ विकलगति, लंगड़ापन। (पु०) कर्तरि ल्यु। २ स्वनामख्यात पक्षी, खड़रैचा, ममोला (Wagtail)। इसका संस्कृत पर्याय—खञ्जरोट, कणाटोन, काकच्छर्दि, खञ्जखेल, तातन, मुनिपुत्रक, भद्रनामा, रत्ननिधि, खञ्जखेट, गूढ़नीड़, तण्डक, चर, काकच्छद, नीलकण्ठ, कणाटोर और कणाटारक है। खञ्जनकी कई एक श्रेणियां हैं। उनमें बहुतसे सफेद और बहुतसे काले होते हैं। फिर कितनोंहीकी पूंछमें काली काली छिट्टियां रहती हैं। खञ्जनके चञ्चु काले और पांव मांसल तथा श्वेतवर्ण होते हैं। लम्बाई प्रायः १० इञ्च रहती है। बाजू ४इञ्च, पुच्छ ५से ६इञ्च तक और चञ्चु पौन इञ्च बैठते हैं। छोटे छोटे पक्षियोंके छिट्टियां नहीं आतीं। हिमालय अञ्चलमें खञ्जन बहुत देख पड़ते हैं। आसाम, आराकान और ब्रह्मदेशमें भी बहुत हैं। पूंछ हिलानेसे इनकी विशेष शोभा होती है। पहाड़से जहां नदी निकलती अथवा जहां जलप्रपात रहता है, खञ्जन प्रायः देखनेमें आया करते हैं। खञ्जन पथमें अकेला विचरण करता हो और यदि आप उस समय जाके उपस्थित होवें, तो वह शीघ्र उड़ कर नदीके किनारे या वनमें चला जावेगा। खञ्जन छोटे छोटे कीड़े पतिङ्गे पकड़ पकड़ खाया करते हैं। इसको प्रायः निर्जनमें एकाकी रहना अच्छा लगता है। कभी कभी दो-तीन एकत्र भी देख पड़ते हैं। किन्तु अधिकक्षण नहीं। शीघ्र ही वह परस्पर विवाद करके एक दूसरेको भगा देता है। अन्यान्य पक्षियोंकी तरह यह भी घास फूससे अपना घोसला बनाते हैं। खञ्जनपक्षी छोटे छोटे ग्रामोंमें भी देख पड़ता है। इसके प्रथम दर्शनका शुभाशुभ फल वराहमिहिरकी वृहत्संहितामें इस प्रकार निर्णीत हुवा है—

स्थूल, उन्नत तथा कृष्णवर्ण कण्ठयुक्त खञ्जनको भद्र कहते हैं। इसके दर्शनसे मङ्गल होता है। मुखसे कण्ठ पर्यन्त कृष्णवर्ण खञ्जन सम्पूर्ण कहलाता है। इसके दर्शनसे आशा पूर्ण हो जाती है। जिस खञ्जनके गलेमें कृष्णवर्ण विन्दुओंके मध्य दो एक श्वेतवर्ण विन्दु रहते, उसके दर्शनसे आशा निष्फल जाती है। इसीसे उसका नाम रिक्त रखा गया है। पीतवर्ण खञ्जन देखने

से क्रोध मिलता है। सुमिष्ट तथा सुगन्धि फलयुक्त वृक्ष, किसी पवित्र जलाशय, हाथी घोड़ा या सांपके मस्ते, दालान, उपवन, हर्म्य, गोष्ठ, यज्ञगृह, हस्तीशाला वा अश्वशाला पर खञ्जन देख पड़नेसे श्रीवृद्धि होती है। राजा वा ब्राह्मणके निकट, छत्र, ध्वज वा चामरादि पर, दधिपात्र, धान्यपुञ्ज वा पद्मादि-परिशोभित सरोवरमें भी खञ्जन देखनेसे श्रीवृद्धि हुवा करती है। पङ्क पर मिष्टान्न प्राप्ति, हरितवर्ण तृण पर वस्त्रलाभ और गाड़ी पर खञ्जन दृष्ट होनेसे देशका विनाश होता है। घरके बरामदे या छत पर अर्थनाश, रम्य पर बन्धन और अपवित्र स्थान पर खञ्जन देखनेसे रोग लगता है। परन्तु मेषादिके पृष्ठ पर खञ्जन देख पड़नेसे अल्प दिन मध्य ही प्रियसमागम होता है। महिष, उष्ट्र, गर्दभ, अस्थि, श्मशान, गृहकोण, पर्वत, प्राचीर, भस्म वा केश पर खञ्जन दृष्ट होनेसे अमङ्गल और मृत्युभय रहता है। खञ्जन पक्षीको पक्षसञ्चालन करते देखना अशुभ है, किन्तु नदीमें जल पीते देखना शुभ होता है। सूर्य उदयके समय खञ्जन दर्शन प्रशस्त है, अस्तकालको शुभकर नहीं ठहरता। यात्राकालको खञ्जन जिस दिक् उड़कर देख पड़े, राजाको उसी ओर गमन करना चाहिये। इस प्रकारसे यात्रा करने पर शत्रु वशीभूत होता है। जिस स्थान पर खञ्जन-मिथुन देख पड़े वहां कोई निधि मिलनेकी सम्भावना रहती है। खञ्जन पक्षी जहां वमन करता उसके नीचे काच और जहां पुरीष परित्याग करता वहां अङ्गार (कोयला) रहता है। मृत, विकल वा रोगयुक्त खञ्जन निज शरीरानुरूप फल प्रदान करता है। राजाको शुभ स्थान पर शुभ खञ्जन अवलोकन करके सुगन्धि कुसुम और धूपयुक्त अर्घ्य भूमितलमें देना चाहिये। इससे समस्त मङ्गल बढ़ जाते हैं। अशुभ खञ्जन देखने पर सात दिन मांस न खानेसे अशुभ फल मिटता है। प्रथम खञ्जनके दर्शनका फल संवत्सरके मध्य मिला करता, किन्तु इसी बीच फिर दर्शन होनेसे उसी दिन फल मिल जाता है। (बृहत्संहिता ४५ अ०)

कहते हैं—खञ्जन बराबर पहाड़ पर रहता, केवल शीतकालके आरम्भमें नीचे उतरता है। शिर परशिखा आनेसे यह छिप जाता और किसीकी दृष्टिमें नहीं आता। "जानि शरदऋतु खञ्जन आये।" (तुलसी)

खंजनका मांस लघु, रूक्ष और कफ, पित्त तथा विदन्धघ्न है। (राजनिघण्टु)

खञ्जनक, खञ्जन देखो।

खञ्जनरत (सं० क्ली०) खञ्जनस्येव गोप्यं रतम्। यतियोंकी गोपनीय रति।

खञ्जना (सं० स्त्री०) खञ्जन इवाचरति, खञ्जन-ङाच् क्विप्-टाप्। क्षुद्र खञ्जन जाति हापुत्रिका, दलदलोंमें रहनेवाली खञ्जन जैसी एक छोटी चिड़िया।

खञ्जनाकृति (सं० स्त्री०) खञ्जनस्येव आकृतिर्यस्याः, बहुव्री०। १ खञ्जनी, सर्षपी, खंजन-जैसी एक छोटी चिड़िया। खञ्जनस्य आकृतिः, ६-तत्। २ खञ्जनका आकार, खंकरैचेकी सूरत-शकल।

खञ्जनासन (सं० क्ली०) रुद्रयामलोक्त एक आसन। दोनों पैरोंको पीठ पर चढ़ाके दोनों हाथ भूमिपर रखना चाहिये। फिर दोनों हाथोंको पीठ पर डालके पैर टेढ़े कर लेते और वायु पान किया करते हैं। इसीका नाम खञ्जनासन है। इस आसनमें उपासना करनेसे जय होता है। (रुद्रयामल)

खञ्जनिका (सं० स्त्री०) खञ्जनस्तदाकारोऽस्त्यस्याः, खञ्जन-ठन्-टाप्। १ खञ्जनाकार कोई मादा चिड़िया। इसकी चोंचके दोनों पक्ष बहुत लम्बे होते हैं। इसको सर्वदा कीचड़ पर रहना अच्छा लगता है। इसका संस्कृत पर्याय—हापुत्रिका, तुलिका, स्फोटिका और सर्षपी है। (त्रि०) २ खञ्जनाकृति।

खञ्जनी—भारतवर्षीय क्षुद्र आनद्ध यन्त्रविशेष, खञ्जड़ी। चक्राकार खोदित काष्ठके एक मुखपर छागादिका चर्म आच्छादन करके यह यन्त्र बनाना पड़ता है। खञ्जनी तीन चार प्रकारकी होती है। अच्छे वादकके निकट इसका वाद्य सुननेमें आमोद मिलता है। यन्त्र देखो।

खञ्जरीट (सं० पु०) खञ्ज इव खर्च्छति, ऋ गतौ बाहुलकात् कीटन्। खञ्जन, खंडरैचा।

खञ्जरीटक (सं० पु०) खञ्जरीट एव स्वार्थे कन्। खञ्जन पक्षी।

खञ्जरीटी (सं० स्त्री०) खञ्जरीट जातित्वात् ङीष्। मादा खञ्जन।

खञ्जबाहु (सं० पु०) एक दैत्य। (हरिवंश २१० अ०)

खञ्जा (सं० स्त्री०) एक मात्रावृत्त। शिखा वृत्तके दोनों खंड बदलके रचना करनेसे खंजावृत्त कहलाता है। शिखा देखो

खञ्जार (सं० पु०) खञ्ज इव ऋच्छति, ऋ-अच् यद्वा। खञ्जति कुटिलं गच्छति, खञ्ज-आरन्। एक ऋषि। यह शब्द पाणिनीय अश्वादि गणके अन्तर्गत है।

खञ्जाल (सं० पु०) खजि-कालन्। खञ्ज इव अलति, अल-अच् वा। एक ऋषि। यह शब्द पाणिनीय अश्वादि गणान्तर्गत है। इसके उत्तरको गोत्रापत्यार्थमें फञ होता है।

खट (सं० पु०) खट्-अच्। १ अन्धकूप, अंधा कूवां। २ कफ, बलगम। ३ टङ्क। ४ शस्त्रविशेष, कोई हथियार। ५ हल। ६ कत्तृण, कोई खुशबूदार घास। ७ तृण, घास।

खट (हिं० पु०) कोई राग। यह बराडी, आसावरी, तोड़ी, ललित, बहुली, गम्धार अथवा सिन्धुवी, धनाश्री, तोड़ी, भैरवी, रामकिरी और मल्लारके योगसे बनती है यह मध्यम वादी है। किसी किसीके मतमें खट दीपक रागका पुत्र है। प्रातःकालको १ दण्डसे ५ दण्ड तक इसको गाना चाहिये। इसका स्वरग्राम स ऋ ग म प ध नि स है। (सङ्गीतदामोदर)

कहते हैं षड़ानन कार्तिकेयके मुखसे प्रथमको यह राग निकला था। इसीसे इसको षट वा खट कहते हैं।

खटक (सं० पु०) खट बाहुलकात् वुन्। १ घटक, बिचवानी। इसका संस्कृत पर्याय—नागवीट, टाक्कर और व्राक्षर है। २ कुञ्चितपाणि, लूला।

खटक (हिं० स्त्री०) शब्दविशेष, एक आवाज।

खटक—पञ्जाबके कोहाट और पेशावर जिलेकी मध्यस्थ पर्वतश्रेणी। इस पर्वत पर खटक (खड़क) नामक अफगान लोग रहते हैं। यही पर्वतमाला पेशावर जिलेकी दक्षिण सीमा और सफेदकोहसे सिन्धु तक विस्तृत है। कोहाटके मध्य खटक क्षुद्र क्षुद्र शिखरोंमें विभक्त हो गया है। उसके बीच बीच कितनी ही अनुर्वर उपत्यकायें हैं। तेरितोई नदीने इस पर्वतमालाको उत्तर और दक्षिण भागमें विभक्त कर डाला है। दक्षिण भागमें नाई बाहादुरखेल और खड़क प्रदेशकी विख्यात लवणखनि और उत्तरभागमें मलगिन तथा उक्त प्रदेशकी खनि है। कोहाटका मध्यवर्ती सोग्रानाईशीर नामक सर्वोच्च शिखर २१९० हाथ ऊंचा है। जिस तरह बर्फ वा तुषारशिला पर्वतगात्रमें जम जाती, उसी तरह इस पर्वतमालाके पूर्वोक्त सभी स्थानोंमें पत्थर जैसा लवण लगा करता है। पत्थर काटनेकी प्रणालीसे इस लवणको भी तोड़ लेते हैं। वृहत् प्रस्तराकार ऐसा लवणक्षेत्र पृथिवी पर कहीं देख नहीं पड़ता। नमकका रंग नीलापन लिये भूरा है, परन्तु पीसनेसे सफेद पड़ जाता है। पञ्जाब, अफगानिस्तान और अन्यान्य देशोंको इस नमककी रफ्तनी होती है। जाबी नामक स्थानमें इस नमकका बड़ा कारखाना है।

पेशावरके सर्वोच्च मध्यवर्ती शिखरका नाम 'जोला शीर' है। यह ३४०६ हाथ ऊंचा पड़ता है। इसी पर्वतश्रेणीमें काकाखेल मुसलमान रहते हैं। यहीं काका साहबकी कब्र भी है। काकाखेल लोग खटक जातीय रहीमशेख नामक सरदारके वंशधर हैं। यह मध्यभारत तक व्यवसाय करने पहुंचते और लोग इन्हें धार्मिक-जैसा समझते हैं। जोलाशीर पर्वतके निकट चरट नामक ग्रीष्मावास है। मीरकलान् गिरिपथ इसी पर्वतश्रेणीमें अवस्थित है। आपाततः यहां सैन्य गमनागमनके लिये एक प्रशस्त पथ निर्मित हुवा है। इन सकल पर्वतोंमें स्लेट पत्थर यथेष्ट मिलता है। खटक प्रदेश आकोरा और टेरी दो भागोंमें विभक्त है। इन दोनों भागोंमें दो सरदार हैं। यह अंगरेजोंके वशीभूत होते भी स्वाधीन रहते हैं।

खटकना (हिं० क्रि०) १ खटखटाहट होना, खटखट आवाज आना। २ रह रहके दुखना, तपकना। ३ अच्छा न लगना, बुरा मालूम पड़ना। ४ हटना, अलग होना। ५ भय करना, डरना। ६ झगड़ा लगाना, न बनना। ७ अनिष्टकी आशङ्का होना, दिल धड़कना।

खटकर भीमगज—राजपूतानेका एक गांव। इसके उत्तरपूर्वको पर्वतश्रेणी माइज नदी पर्यन्त विस्तृत है। फिर इस गांवके २ कोस उत्तर पूर्वको ही नाना-

विध पुरातन भग्न मन्दिर देख पड़ते हैं। उनमें जो पर्वतको दक्षिणदिक् है, सर्वापेक्षा पुरातन-जैसा मालूम होता है। सम्भवतः इसी स्थान पर पुरातन नगर रहा। परन्तु नदी पश्चिमवाहिनी हो जानेसे उसको छोड़ कर खटकर ग्राम बनाया गया है। नदी की ही वक्रगतिसे इस स्थलपर पर्वत टुकड़े टुकड़े हुवा है। आजकल यहां सब जगह जङ्गल है। गांवसे दक्षिण और दक्षिणपश्चिम पत्थरके बने तीन नये मन्दिर मौजूद हैं। इन नये मन्दिरोंमें विष्णुमन्दिर सबसे बड़ा पड़ता है। यहां जैनोंका बनाया हुवा पार्श्वनाथका भी एक मन्दिर है। उत्तरको पूर्व दो मन्दिर और यात्रियोंका वासभवन बना है। उसको तीर दीवारी कहते हैं। यहां पहाड़के बीच गुहापथ है। उसमें एक द्वारसे प्रवेश करना पड़ता है। लोग कहते हैं कि उस राहसे दश कोस दूर पाली गांव पहुंचते हैं। भीमगज दूसरा स्वतन्त्र ग्राम है। खटकके निकट भीमगज भी रहनेसे दोनों स्थान खटक भीमगज जैसे कहलाते हैं।

खटका (हिं० पु०) शब्दविशेष, एक अवाज, खटक, खटखट। २ आशङ्का, डर। ३ चिन्ता, फिक्र। ४ कोई पेंच जो दबानेसे खटसे होता हो। ५ बिल्ली, चिटकनी, सिटकनी। ६ खटखटा, पक्षियोंको उड़ानेके लिये पेड़में डोरीसे लगा कर बांधा हुवा फटे बांसका एक टुकड़ा।

खटकाना (हिं० क्रि०) १ खट खट करना, आवाज निकालना। २ बजाना, छेड़ना। ३ डराना, खटका पैदा करना। ४ चलाना, फेंकना।

खटकामुख (सं० पु०) १ तीर छोड़ते समय हाथोंका टेढ़ापन, किसी किस्मकी तीरन्दाजी। (त्रि०) तीर फेंकते समय हाथोंको टेढ़ा किये हुवा।

खटकीरा (हिं० पु०) खटमल। कहते हैं—रातको नाम लेनेसे खटमल बहुत बढ़ते हैं।

खटक्किका (सं० स्त्री०) खिड़कीका दरवाजा।

खटखट (हिं० स्त्री०) १ शब्दविशेष, कोई आवाज। किसी कठिन चीज पर दूसरी वैसी ही चीजका धीरे धीरे आघात लगनेसे यह शब्द निकलता है। खटखट कानोंको बहुत बुरी लगती है। हिन्दू शास्त्रमें खटखट करना मना है। २ फसाद, उलझन। ३ विवाद, बखेड़ा। (क्रि० वि०) ४ झटपट, जल्दीसे।

खटखटा (हिं० पु०) १ खट खट शब्द करनेवाला। २ चिड़ियोंको भगानेके लिये पेड़में बंधा हुवा बांसका एक टुकड़ा।

खटखटाना (हिं० क्रि०) १ खट खट करना, बार बार आघात लगाना। २ चेताना, सुझाना, मांगते जाना।

खट्खादक (सं० पु०) १ काक, कौवा। २ काचपात्र, शीशेका बर्तन। ३ शृगाल, गीदड़। (त्रि०) ४ भक्षक, खानेवाला।

खटदर्शन—सम्प्रदायविशेष, एक फिरका। इसमें हिन्दू, मुसलमान, जैन आदि साधु सम्मिलित हैं। राजपूताने मारवाड़ प्रान्तमें इनकी संख्या अधिक है। वहां इनके लिये पहले एक अदालत भी अलग लगती थी।

खटपट (हिं० स्त्री०) १ लड़ाई-झगड़ा, वादविवाद, अनबन। २ खट खट शब्द।

खटपटिया (हिं० वि०) लड़ाका, झगड़ालू, लड़नेवाला।

खटपापड़ी (हिं० स्त्री०) करमई, अमली, एक पेड़।

खटपूरा (हिं० पु०) मुंगरी, मट्टी तोड़नेका एक औजार।

खटभिलावां (हिं० पु०) पियालवृक्ष, एक पेड़। इसीमें चिरौंजी होती है।

खटभेमल (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक छोटा पेड़। यह हिमालयकी तराई, आसाम, बङ्गाल और दाक्षिणात्यमें उत्पन्न होता है। इसकी नन्हीं नन्हीं पत्तियां पशुओंको खिलायी जाती है। ज्यैष्ठसे आश्विन मासके मध्य फूलता फलता है। इसके फूल पीले और फल मटर-जैसे छोटे होते हैं।

खटमल (हिं० पु०) कीटविशेष, एक कीड़ा। यह छोटा और उन्नावी रङ्गका होता है। ग्रीष्मकालको अपरिष्कृत शय्या आदिमें इसकी उत्पत्ति होती है। खटमल अपने डङ्कसे मनुष्योंका लोहू चूसता है। इसकी आकृति उड़दके दाने-जैसी और अण्डा बहुत छोटा तथा सफेद रहता है। अण्डेसे निकलनेके पीछे तीन महीने बाद खटमल अपने पूर्णरूपको प्राप्त होता है। इसको स्पर्श करनेसे हाथ दुर्गन्धि हो जाता है।

कहते हैं—खटमल रक्तबीजका वंशज है। इसका रक्त भूमिमें पड़नेसे अनेक खटमल उत्पन्न हो जाते हैं। ग्रीष्म वर्षा वा शीतके आधिक्यसे इसका मृत्यु आता है। भारतवासी खटमल दूर करनेको चारपाईमें टेवने या महवेकी पत्ती लाकर खोंस देते हैं। लोगोंको विश्वास है कि इसकी महकसे खटमल भाग जाता है। यह रातको सोनेमें बड़ा दुःख देता और मनुष्य विवश हो कर इधरसे उधर करवटें लेता है। कभी कभी झुण्डके झुण्ड खटमल सोते आदमीके लिपट जाते और उसके गात्रमें सुइयां-जैसी चुभाते हैं।

जैन-शास्त्रानुसार यह मलसे पैदा होनेवला संमूर्च्छन जीव है। यह नपुंसक ही होता है और अधिकसे अधिक उनचास दिन तक जीवित रहता है। उसके स्पर्श, रसना और नासिका ये तीन ही इंद्रियां होती हैं, आंख व कान नहीं होते।

खटमली (हिं० पु०) एक रंग।

खटमिट्ठा (हिं० वि०) मधुराम्ल, खटाई और मिठाई दोनोंका जायका रखनेवाला।

खटराग (हिं० पु०) १ व्यर्थ वस्तु, बेकामकी चीजें। २ झगड़ा, झञ्झट। ३ सामग्री, सामान।

खटलर (हिं० पु०) यन्त्रविशेष, एक औजार। यह काष्ठमय रहता और सान धरनेवालोंके काममें लगता है।

खटला (हिं० पु०) १ स्त्रीपुत्रादि, बालबच्चे। २ स्त्रीयोंके कानमें बाली पहननेका छेद।

खटाई (हिं० स्त्री०) १ अम्लता, तुरशी, खट्टापन। २ अम्लद्रव्य, खट्टी चीज। ३ वैरभाव, अनबन। ४ काम काज, मेहनत मशक्कत।

खटाका (हिं० पु०) १ जोरका खटका। (क्रि० वि०) २ खटसे।

खटाखट (हिं० स्त्री०) १ खटखट। (क्रि० वि०) २ खट खट करके। ३ झटपट, तुर्तफुर्त।

खटाङ्ग—बङ्गालके वीरभूम जिलेका एक परगना। इसका अधिकांश जङ्गल होते भी समतल है। जहां जङ्गल नहीं, बहुतसे लोग रहते हैं। इस परगनेके पश्चिम भागमें पर्वतश्रेणी, उत्तर दिक्‌को पहाड़ोंके छोटे छोटे टुकड़े और जङ्गल और दक्षिण तथा मध्यभाग पर जगह जगह उर्वरा भूमि है। यहां चावल, यव, इक्षु, जुआर, शहतूत और पान उपजता है। आम, कटहल, ताल, वट और पीपलके पेड़ बहुत हैं। स्थान स्थान पर बड़े बड़े तालाब हैं। उनसे खेतोंमें पानी दिया जाता है। एतद्‌व्यतीत उच्चभूमि भी रहती है। उसका पानी निम्नभूमिको पहुंचाया जाता है। एक क्षुद्र नदी इसके ठीक मध्यभागमें प्रवाहित है। ग्रीष्मऋतुमें इसका जल इतना कम पड़ जाता है कि लोग विना रुकावटके पैदल ही पार उतरा करते हैं। इस परगनेका सिउली नगर वीरभूम जिलेका प्रधान नगर है। सिमुलिया, हरिशकोपा, विष्णुपुर आदि कई ग्रामोंमें नीलकी कोठियां रहीं।

खटाना (हिं० क्रि०) १ खट्टा पड़ना, खटाई पाना। २ निभना, टिकना। ३ लगा रहना, परीक्षोत्तीर्ण होना ४ काम लेना। ५ बिगड़ना।

खटापट (हिं० स्त्री०) खटपट।

खटाल (सं० पु०) तण्डुलीयवृक्ष, एक पेड़।

खटाल (हिं० पु०) समुद्रका उच्च तरङ्ग। यह पूर्णिमाको आता है।

खटाव (हिं० पु०) १ निर्वाह, गुजारा। २ नाव बांधनेका खूंटा।

खटाव—बम्बई प्रदेशके सतारा जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० १७° १८′ तथा १७° ४८′ उ० और देशा० ७४° १४′ एवं ७४° ५१′ पू०के बीच पड़ता है। लोकसंख्या प्रायः ८६४१६ है। यरला नदी इस तालुकके उत्तरसे निकल करके दक्षिणको बही है।

खटास (हिं० स्त्री०) १ खटाई, तुर्शी, खट्टापन। २ मुश्क बिलाव। ३ वैरभाव, अनबन। ४ बिगाड़।

खटिक—एक हिन्दू जाति। यह प्रायः फल और मेवा बेचते हैं। खटिक सूअर भी पालते हैं। इनकी स्त्रियां हिन्दुओंके लड़का होने पर उसको जाकर धोती पोछती हैं। विहारके खटिकोंमें खटिक और दासी दो श्रेणियां हैं। यह सब अपनेको काश्यप गोत्रीय बताते हैं। कन्याओंका विवाह ५से १२ वर्षके भीतर हुवा करता है। सपिण्ड पांच पुरुषोंके मध्य आदान प्रदान नहीं

होता। किसी स्थानमें विवाहका सम्बन्ध लगनेसे ग्रामके मण्डल वा पञ्चायतसे पूछा जाता—विवाहमें कोई सम्बन्ध दोष तो नहीं ग्राता। कोई सम्बन्ध दोष न रहने-से पञ्चोंका विवाहकी मत मिलनेसे वरदेखी और वर-देखी होती और पानसुपारी तथा मिठाई बंटती है। वरके पक्षसे कन्याके घरको वस्त्र, बर्तन और एक रुपया भेजते हैं। इसीका नाम तिलकदान है। तिलक-दानके पीछे ब्राह्मण ग्राके दिन स्थिर कर जाता है। फिर यथारीति विवाह होता है। विवाहमें खटिक जातिके वैरागी ब्राह्मणका कार्य करते हैं। द्वितीय दारपरि-ग्रहका विधान नहीं है। फिर भी स्त्री वन्ध्या होनेसे दूसरी पत्नीको ग्रहण कर सकते हैं। पञ्चोंकी अनुमति ले कर विवाहके विच्छेदका नियम भी है। खटिक हिन्दू धर्म और हिन्दू व्यवस्थाके अनुसार ही चलते हैं। बुधवारके दिन बन्दी और मीरा नामक देवताके अर्थ छागवलि और पिष्टक तथा मिष्टान्न निवेदन किया जाता है।

खटिक (सं० पु०) कुब्जितपाणि, लूंला।

खटिका (सं० स्त्री०) खट्-अच्-टाप संज्ञायां कन् अत इत्वम्। १ कठिनी, खड़िया, कुही। इसकी घोलके बच्चे तख्तियों पर अक्षरादि लिखनेका अभ्यास करते हैं। कहते हैं—पहले खड़ियासे लिखने पर हाथ अच्छा बैठता है। २ कर्णरन्ध्र, कानका छेद। ३ गन्धवीरण, खस। ४ खड़ीतृण, एक घास।

खटिनी (सं० स्त्री०) खट बाहुलकात् इनि ङीप् च।

खटिया देखो।

खटिया (हिं० स्त्री०) चारपाई, खाट, खटोली।

खटी (सं० स्त्री०) खट् अच् गौरादित्वात् ङीष्। कठिनी, खड़िया, कुही। खटी, मधुर, तिक्त, शीतल और पित्त, दाह तथा व्रणदोष एवं कफ, रक्त और नेत्ररोग दूर करनेवाली है। (राजनिघण्टु)

यह एक जातीय प्रस्तरविशेष है। भूतत्त्ववेत्ता खटीके उत्पत्ति सम्बन्धमें जिस सिद्धान्तको उपनीत हुए हैं, उससे समझ सकते हैं कि प्राणीदेहसे ही इसकी उत्पत्ति है। यह जगत् प्राणीदेहसे परिपूर्ण है। क्या वायु क्या स्थल क्या जल सभी स्थानोंमें प्राणी प्रचुर परिमाणसे विद्यमान हैं। इन सकल प्राणियोंका देह मृत्युके पीछे भूपतित होता है। मत्स्य, शम्बुक आदिके अस्थि जलके नीचे रहते हैं। क्योंकि वह वहीं मरते और उनके अस्थि भी वहीं पड़े रहते हैं। समुद्र और बड़े बड़े ह्रदोंके तलदेशमें इसी प्रकार अनेक प्राणीदेह जम जाते हैं। मट्टी और दलदलसे भी यह सब जाकर नदी गर्भमें गिरता है। नदीगर्भस्थ अन्यान्य द्रव्योंके साथ स्रोतमें प्राणीदेह बह कर कभी डेल्टाकार परिणत हो जाते और कभी सागरगर्भमें समाते हैं। यह समवेत हो कर एक स्तररूपमें परिणत होते हैं। समुद्रका खारा पानी लगनेसे चूने और नाइट्रोजेन की रासायनिक क्रियाद्वारा यह स्तर क्रमशः शुभ्रवर्ण धारण करते और ऊपरी स्तरोंके दबावसे कठिन पड़ते रहते है। इङ्गलैण्डके पश्चिम आयर्लैण्डसे जब अमेरिकाको समद्रके भीतर ही भीतर तार लगा था, गभीर जलको मट्टी निकाल कर देखने पर मालूम हुवा कि वह बिलकुल कच्ची खड़िया-जैसी थी अंगरेजीमें इसे 'उज़' अर्थात् कीचड़ कहते हैं। इसका अल्पांश लेकर अणु-वीक्षण-यन्त्रसे परीक्षा करने पर छोटे छोटे घोंघों और शङ्खोंका चूर्ण देख पड़ता है। खड़िया पीस कर जलके ग्लासमें छोड़ देनेसे उसके नीचे एक तह पड़ जाती है। पानी फेंक कर नीचेको तहसे थोड़ीसी निकाल खुर्दवीनसे देखने पर घोंघे और शङ्खपूर्ण अवयव तथा भग्न अवस्थामें पाये जाते हैं। अष्टादश शताब्दीके प्रथम स्वीडनके विद्वान् लिनियसने खटीको जीवदेह जैसा ठहराया था। आधुनिक विद्वानोंने भी विशेष प्रमाणद्वारा उसी सिद्धान्तको स्थिर जैसा निर्णय किया है।

आधुनिक भूवेत्ताओंने पृथिवीके जीवनको चार भागों वा युगोंमें विभक्त किया है। उनका द्वितीय युग त्रिस्तर वा नूतन लोहित-प्रस्तर-अन्तरयुग, जुरासिक अन्तयुंग और खटी वा क्रिटेसस अन्तयुंग तीन भागोंमें बंटा है। खड़िया अन्तयुंगकी अधिकांश स्तर खड़िया-के बने जैसे ही कहे गये हैं। इससे पहले भी खड़िया रही। किन्तु इस समय खटीका बाहुल्य होनेसे उक्त नाम पड़ा है। सर चार्लस लायल और अध्यापक रामजे-

का कहना है कि ग्रेटब्रटेन पूर्वकालीन किसी महादेशकी एक प्रकाण्ड नदीके डेल्टा-द्वीपका अवशेष मात्र है। ज्वार भाटेके कार्यवशतः समुद्रजलमें मिली हुई खड़िया नदीके उक्त द्वीपमें जमकर पर्वताकार बन गयी है। फिर उक्त महादेशके कई स्थान आजकल जलमग्न हैं। आजकल इङ्गलैण्डके केण्ट और ससेक्स प्रदेशमें खड़ियाके जो पहाड़ देख पड़ते इसी द्वीपसे निकले हैं। भारतका खसिया पहाड़ भी उसी समय बना होगा। परन्तु यहां उतनी खड़िया नहीं है। फ्रान्स, जर्मनी, डेनमार्क, स्वीडेन, रूस और उत्तर अमेरिकाके पर्वतोंमें खटीके स्तर देख पड़ते हैं।

खटीक (हिं० पु०) खटिक, एक हिन्दू जाति।

खटिक देखो।

खटेटी (हिं० वि०) बिछौनेसे खाली, जिस पर बिस्तर न हो।

खटोलना (हिं० पु०) खटोला।

खटोला (हिं० पु०) १ छोटी चारपाई या खटिया। २ कोई प्राचीन देश। यह बुंदेलखण्डके अन्तर्गत रहा। खटोलामें भीलोंका वाड़ा था। वर्तमान सागर और दमोह अञ्चल इसीमें लगता था। ३ उड़न खटोला वायुयान यानी हवाई जहाजको कहते हैं।

खटौरी—सन्ताल परगनेकी एक कृषजीवी जाति।

खटौली—युक्तप्रान्तीय मुजफ्फरनगर जिलेकी जानसथ तहसीलका एक नगर। यह अक्षा० २९° १७′ उ० और देशा० ७७° ४४′ पू०में नार्थ-वेष्टर्न-रेलवे पर अवस्थित है। यह नगर कुछ पुराना है, इसमें ४ जैनमन्दिर और शाहजहांकी बनायी हुई एक बड़ी सराय मौजूद है। यहांसे प्रधानतः अनाज और शक्करकी रफ्तनी होती है।

खट्टन (सं० त्रि०) खर्व, छोटा, बौना।

खट्टा (सं० स्त्री०) खट्ट-टाप्। खट्टा, खटोला, खाट।

खट्टा (हिं० वि०) १ अम्ल, तुर्श, जिसमें खटाई हो। (पु०) २ गलगल, नीबू जैसा एक अम्ल फल।

खट्टाचूक (हिं वि०) अतिशय अम्ल, निहायत तुर्श, बहुत खट्टा।

खट्टामीठा (हिं० वि०) मधुराम्ल, खटमिट्ठा।

खट्टाश (सं० पु०) खट्टः सन् अश्नुते, अश् व्याप्तौ अच्। सुगन्ध मार्जार, मुश्क बिलाव। इसका संस्कृत पर्याय—गन्धौतु, वनवासन, खट्टाशी, वनाखु, वनखा, शालि और पूयलक है।

यह नकुलजातीय पशु है। अंगरेजीमें इसको 'सिवेट कैट' (Civet cat) कहते हैं। पाश्चात्य प्राणीतत्त्वविदोंने नकुलजातीय (Fam Viverridae) जीवोंके मध्य खट्टाशको नकुलशाखा (Sub Fam. Viverrinae) में गिना है। इस शाखाके बीच भी श्रेणी-विभाग हैं। उनमें खट्टाश-श्रेणी ही प्रधान है। इसका आकार विड़ालकी अपेक्षा दीर्घ, पांव अपेक्षाकृत छोटे, उल्कामुखी (लोमड़ी)की तरह मुंह ढलवां, कर्ण क्षुद्र, चक्षु सतेज, शरीर मांसल, गात्रके लोम छोटे और नेवलेके रूयेंकी तरह कुछ पीले होते हैं। फिर इसके बालों पर नानाप्रकारकी रेखायें पड़ी रहती हैं। विड़ालकी भांति इसके मुखपार्श्वों पर भी मोटे मोटे लोम आ जाते हैं। खट्टाशका लाङ्गूल अपेक्षाकृत लोमश लगता है। इसीसे वह सर्वदा फूला करता है। लाङ्गूल देहकी अपेक्षा दीर्घ-जैसा रहनेसे वक्राग्र होता है। इसके गुह्यस्थान पर एक स्वतन्त्र चर्मकोष रहता है। इसमें मृगनाभि जैसा एक प्रकार सुगन्धि द्रव्य सञ्चित होता है। विड़ालकी भांति इसके चक्षुओंकी भी तारा दिवालोकसे सिकुड़ जाती है। खट्टाश रात्रिचर मांसाशी है।

खट्टाश त्रिविध होता है—बङ्गदेशीय, मलबारी और मलक्काद्वीपीय। बङ्गदेशीय मुश्कबिलावका अंगरेजी प्राणीतत्त्वोक्त नाम विवेरा जिबेथा अथवा बङ्गालेन्सिस (Viverra Zibetha or Bengalensis) है। हिन्दीमें इसको 'खटाश', नेपालीमें 'निटबिडाल', नेपाली तराईकी भाषामें 'भ्राण', भोटानीमें 'कुङ्ग', लेपचामें 'सफोङ्ग' और अंगरेजीमें जिबत (Zibt) कहते हैं।

इसका गात्रवर्ण पीताभ वा तुषाराभ धूसर होता है। गात्रमें काले काले धब्बे और डोरे पड़े रहते हैं। गला सफेद होता है। उसपर एक पार्श्वसे अपरपार्श्व पर्यन्त सफेदके बाद काला और कालेके बाद सफेद चार डोरे पड़े रहते हैं। उदरादिका वर्ण सफेद होता

६। पूंछमें छह काली धारियां पड़ी रहती हैं। कंधेसे गले तक बाल कुछ बड़े बड़े और विरल लगते हैं।

इसका शरीर साधारणत: ३२से ३६ इञ्च तक और पुच्छ १३से २० इञ्च तक दीर्घ होता है। बङ्गालमें इसको अधिकांश स्थलोंपर 'गन्धगोकुल' (गन्धविलाव) कहते हैं। नेपाल, सिकिम, उड़ीसा और मध्यभारतमें भी यह देख पड़ता है। परन्तु दाक्षिणात्यके मलवार उपकूलमें मलवारी श्रेणीका ही गन्ध-विलाव अधिक होता है। आसाम, ब्रह्म, दक्षिण चीन और मलय प्रदेशमें भी इस जातिका खट्टाश मिलता है। घाट पर्वतोंमें इस श्रेणीकी जो शाखा देख पड़ती, उसका युरोपीय प्राणितत्त्वज्ञोंने विवेरा रासी (Viverra Rasse) नाम रखा है। इसका गात्रवर्ण कुछ गहरा और डोरे ज्यादा खुले रहते हैं। तृण तथा गुल्माच्छादित वन और नदीके बांध पर यह वास करता है। खट्टाश गृहपालित पक्षी, मत्स्य, केंकड़ा और कीटादि खाता है। शिकारी कुत्ते इसका गन्ध आनेसे सब कुछ छोड़के इसीको पकड़ने दौड़ता है। अधिक भीत होनेसे यह पानीमें लेट प्राण रक्षा करता है।

मलवारी खट्टाशका अङ्गरेजी वैज्ञानिक नाम विवेरा सिवेटिना (Viverra Civetina) है। सामान्यतः अङ्गरेज लोग इसको मलवारी मुश्कविलाव कहते हैं। इसके मस्तक पर मध्यस्थलमें बड़े लोम नहीं, कंधेके पास निकलते हैं। गात्रवर्ण कुछ मटमैला रहता है। गलेकी दोनों ओर दो तिरछे धब्बे और गलेके ऊपर भी दो काले दाग रहते हैं। रङ्गमें कुछ हेर फेर और गलेमें दो सफेद धब्बे रहने पर ही वङ्गदेशीय खट्टाशसे यह विभिन्न-जैसा समझ पड़ता है। मलवार उपकूल और कुमारिका अन्तरीपमें इसका वास है। यह घन वन और निम्न भूमिमें रहता है। त्रिवाङ्कुड़में इसकी संख्या अधिक है। मलयद्वीप और फिलिपाइन द्वीपपुञ्जमें भी इसकी शाखा है। प्राणीतत्त्वज्ञ उसे Viverra Tangalunga कहते हैं। फिर अफरीकामें देख पड़नेवाली श्रेणी विवेरा सिवेटा (Viverra Civetta) कहलाती है।

मलकाद्वीपीय खट्टाशका वैज्ञानिक नाम विवेरा मलाकेनसिस (Viverra Malaccensis) है। सामान्यतः इसे छोटा मुश्कविलाव कहते हैं। हिन्दीमें इसका नाम 'मुश्कबिल्ली' या 'कस्तूरी' बङ्गलामें 'गन्धगोकुल', गुजरातीमें 'विनागिनवेक' तैलङ्गीमें 'पुनागुपिल्लि' और नेपालीमें 'वागनिवल' है।

इसका गात्रवर्ण तरल धूसराभ पिङ्गल होता है। इसकी पीठ और पूंछ पर तिरछी लकीरें और बगलमें कतारकी कतार फुटकियां रहती हैं। मस्तकका वर्ण अधिक कृष्णाभ और कानसे कन्धे तक डोरा पड़ा होता है। पूंछ कुछ बड़ी रहती और उसमें ८।८ छल्ले पड़ जाते हैं। इस जातिका खट्टाश हिमालयसे कुमारिका पर्यन्त भारतके सब स्थलों, सिंहल, आसाम, ब्रह्म और भारतमहासागरीय द्वीपावलीके गर्तों, पर्वतगह्वरों और निविड़ झाड़ियोंमें वास करता है। यह प्रायः अकेले शिकार ढूंढने घूमता और पक्षी, पक्षीडिम्ब, सर्प, भेक तथा कीटादि खाता है। समय समय फल मूलादि भी खा लेता है। नेपालके पहाड़ी इसका मांस भक्षण करते हैं।

खट्टाशकी स्त्रीजातिके ६ स्तन होते हैं। ज्येष्ठ और आषाढ़ मासको इसका शावक निकलता है। यह एक साथ ५।६ शावक प्रसव करती है। यह पालनेसे हिल जाता, परन्तु यवद्वीपका गन्धविलाव काबूमें नहीं आता।

खट्टाशोंको पाल कर भारतीय सप्ताहमें दो बार गन्धद्रव्य संग्रह करते हैं। इङ्गलैण्डमें इसको एक सन्दूकमें बन्द करके एक लकड़ीसे गन्ध निकाल लिया जाता है। वैद्य लोग इस गन्धद्रव्यको पाकतैलादिमें डालते हैं। इसमें कोई चीज मिलाके अति सुगन्धि द्रव्य प्रस्तुत किया जाता है। यह चीज देखनेमें बिलकुल गले मोम जैसी होती है। मुश्कविलाव, शिकार करना सिखाने पर पुष्करिणियोंसे मत्स्य और हंसादिसे पक्षी तथा पक्षीशावक पकड़ लाता है।

गन्धविलावका अण्ड खट्टाशी कहलाता है। उसकी शुद्धि इस प्रकार होती है—यथालाभ अपामार्ग वा स्नुहादि क्षारसे खट्टाशीको लेपन करके वाष्प स्वेदसे लोमरहित करना चाहिये। फिर उसे आम्र, जम्बु,

कपित्थ, मातुलुङ्ग और विल्वपल्लव जलसे दोलायन्त्रमें पकाते, निःस्नेह बनाते और छागमूत्र वा शोभांजन क्वाथको बार बार भावना लगाते हैं। अन्तको शिग्रुमूल तथा केतकीपुष्पपत्रसे सम्पुटीकृत खट्टाशी शुद्ध मृगनाभि जैसा होता है। (चक्रदत्त)

खट्टाशी (सं० स्त्री०) खट्टाशाखण्ड, मुश्कबिलावका अण्डा।

खट्टास (सं० पु०) खट्टाश पृषादरादिवत् शकारस्य सत्वम्। खट्टाश देखो।

खट्टि (सं० पु०) खट्ट-इन्। शवयान, जनाजा, ठठरी, मुर्दोंकी खाट।

खट्टिक (सं० पु०) खट्टनमावरणं खट्टः स शिल्पत्वेन अस्त्यस्य ठन्। शाकुनिक, चिड़ीमार।

खट्टिका (सं० स्त्री०) खट्टा स्वार्थे स्वल्पार्थे वा कन्-टाप् अत इत्वम्। १ क्षुद्र खट्टा, छोटी खटोली। इसका संस्कृत पर्याय—निषद्या, सन्दी और आसन्दी है। २ शवयान, अरथी।

खट्टेरक (सं० त्रि०) खट्ट बाहुलकात् कर्मणि एरक। खर्व, बौना।

खट्ताली (हिं० स्त्री०) एक घन यन्त्र। यन्त्र देखो।

खटतोड़ी (हिं० स्त्री०) खट और तोड़ीके योगसे बनी एक रागिणी।

खट्योगिया (हिं० पु०) खट और योगियाके मेलसे उत्पन्न कोई रागिणी।

खट्वा (सं० स्त्री०) खट्यते काङ्क्ष्यते शयनार्थिभिः, खट-क्वन्। अशूप्रुषि-लटिकणिखटिविशिभ्यः क्वन्। उण् १।१५१। १ काष्ठादि रचित शय्याधार, पर्यङ्क, चारपाई, पलंग, खटोली। इसका संस्कृत पर्याय—शयन, मञ्च, पल्यङ्क, तल्प और शय है। युक्तिकल्पतरु नामक संस्कृत ग्रन्थमें खट्वाके सम्बन्ध पर लिखा है—

खट जिन चार काठके टुकड़ों पर निर्भर करके अवस्थान करती, उनको चरण (पावा) कहते हैं। मस्तककी ओरका काष्ठ व्यपधान (सरवा), अधःस्थ निरूपक और दोनों ओरवाला आलिङ्गन (पाटी) कहलाता है। दोनों आलिङ्गन चार चार हाथ लम्बे रखने पड़ते हैं। निरूपक तथा व्युपधान आलिङ्गनसे आधा और चरण निरूपक तथा व्युपधानसे आधा रहता है। इस प्रकारकी खट्वा सर्वसमेत १६ हाथ जैसा काष्ठ रहनेसे षोड़शिका कहलाती है। यह सभी विषयोंमें शुभप्रद है। आलिङ्गन ४॥ हाथ, व्युपधान तथा निरूपक ढाई ढाई हाथ और चारो चरण एक एक हाथ परिमाण रहनेसे खाटको सर्वाष्टदशिका कहा जाता है। यह सकल अभीष्ट पूरण करती है। जिस खटोलीके दोनों आलिङ्गन पांच पांच हाथ, व्युपधान तथा निरूपक तीन तीन हाथ और चरणोंका परिमाण एक एक हाथ रहता, उसका नाम सर्वविंशतिका है। यह भी अच्छी होती है। जिस खट्वाका आलिङ्गन ५॥ हाथ, व्यपधान तथा निरूपक उसका आधा और चरण उससे भी आधा होता, उसको सर्वद्वाविंशिका कहते हैं। यह सर्वसम्पद् प्रदान करती है। आलिङ्गन छह हाथ, व्युपधान तथा निरूपक तीन हाथ और प्रत्येक चरण १ हाथ रखनेसे खट्वा चतुर्विंशतिका कहलाती है। इसमें शयन करनेसे सकल रोग विनष्ट होते हैं। जिस चारपाईकी पाटियां सात सात हाथ, सरवा तथा निरूपक तीन तीन हाथ और पावे डेढ़ डेढ़ हाथ रहते, उसको सर्वषड्विंशिका कहते हैं। यह सर्वभोग प्रदान करती है। आलिङ्गन ७॥ हाथ, व्युपधान तथा निरूपक ३॥ हाथ और चरण १॥ हाथ रखनेसे पर्यङ्क सर्वाष्टविंशिका कहलाता है। फिर आलिङ्गन ८ हाथ, व्युपधान एवं निरूपक ४ हाथ और चरण १॥ हाथ लगानेसे सर्वत्रिंशिका नाम पड़ता है। इन कई प्रकारकी चारपाईयोंमें सर्वषोड़शिका सभीका मङ्गल करनेवाली है। भोजराजने इन आठ प्रकारकी खट्वाओंको यथाक्रम मङ्गला, विजया, पुष्टि, क्षमा, तुष्टि, सुखासन, प्रचण्डा और सर्वतोभद्रा नामसे उल्लेख किया है।

बृहत्संहिताके मतमें पियासाल, देवदारु, गाव, शाल, काश्मरी, अंजन, पद्मक, शाक और शिंशपावृक्ष प्रशस्त होता है। इन्होंकी लकड़ीसे चारपाई बनाना चाहिये। किन्तु वज्रपातसे निहत, जल, वायु वा हस्ती कर्तृक निपातित और जिस वृक्षमें मक्खियोंका छत्ता या चिड़ियोंका घोंसला हो अच्छा नहीं होता। सिवा इसके यज्ञस्थान, श्मशान, पथ, महानदीके सङ्गमस्थान वा

देवमन्दिरका उत्पन्न, कण्टकयुक्त और काटनेसे दक्षिण या पश्चिमदिक्‌को गिरनेवाला पेड़ भी बुरा ही है। जो सकल वृक्ष अप्रशस्त जैसे कहे गये हैं, उनकी बनी चारपाई या दूसरा कोई आसन व्यवहार करनेसे कुल-नाश, व्याधि, भय, व्यय और कलह प्रभृति नानाप्रकार-के अमङ्गल लगा करते हैं। (वृहत्स० ७९ अध्याय) खट्वा-का शयन वातकर है। (राजवल्लभ)

२ हनुशङ्खगण्डका व्रणबन्धनाकृतिविशेष, सुश्रुत-की कही फोड़ा वगैरह बांधनेकी १४ प्रकारका पट्टियों-में एक पट्टी। हनुप्रदेश, गण्डदेश और ललाट पर यह चढ़ायी जाती है। (सुश्रुत सूत्र १८ अ०) ३ तृणविशेष, कोई घास। ४ कोलशिम्बी।

खट्वाका (सं० स्त्री०) खट्वा स्वार्थे कन्-टाप् पूर्वस्यात: आकारादेशश्च। भादाचार्याणाम्। पा ७।३।४९। १ खट्वा, खाट। अल्पार्थे कन्। २ क्षुद्र खट्वा, खटिया। खट्वा शब्दके उत्तर कन् आनेसे खट्वाका, खट्विका और खट्वका तीन रूप होते हैं।

खट्वाङ्ग (सं० क्ली०) खट्वाय अङ्गम्, ६-तत्। १ खट्वा-का चरण, खाटका पावा। २ शिवका कोई अस्त्र। (वटुकस्तव) (पु०) खट्वाङ्ग इति आख्या यस्य। ३ कोई राजा। भागवतके मतमें यह सूर्यवंशीय राजा विश्वसह के पुत्र थे। किसी समय देवताओंका कोई उपकार करके इन्होंने उनसे अपने परमायुकी बात पूछी। उससे मालूम पड़ा कि जीवन मुहूर्त मात्र ही अवशिष्ट था। खट्वाङ्ग उसी घड़ीको हरिके शरणापन्न हुए। (भागवत ९।९।३२) किन्तु हरिवंशमें इनको विश्वसहका पुत्र नहीं लिखते। तदनुसार यह सूर्यवंशीय राजा अंशुमानके पुत्र और दिलीप नामसे परिचित थे। (हरिवंश १५ अ०) ४ खट्वाङ्ग जैसा कोई पात्र। धर्मशास्त्रके विधाना-नुसार प्रायश्चित्त करनेवालेको यह पात्र लेकर भिक्षा मांगना पड़ती है। (भारत १२।३५)

खट्वाङ्गधर (सं० पु०) खट्वाङ्ग धरति खट्वाङ्ग-धृ अच्। १ शिव। (त्रि०) २ खट्वाङ्गधारी, खट्वाङ्ग रखने-वाला। खट्वाङ्गभृत् प्रभृति शब्द भी इसी अर्थमें व्यव-हृत होते हैं।

खट्वाङ्गनामका (सं० स्त्री०) वटपत्रपाषाणभेद, बड़ा पथरचटा।

खट्वाङ्गनामिका, खट्वाङ्गनामका देखो।

खट्वाङ्गपादी (सं० स्त्री०) कोलशिम्बी।

खट्वाबन्ध (सं० पु०-क्ली०) व्रणबन्धनाकृतिविशेष, जखम पर चढ़ाई जानेवाली एक पट्टी। यह बहुपाद और बहुतसे चोरों द्वारा आवृत रहता है।

खट्वाङ्गमुद्रा (सं० स्त्री०) एक तन्त्रोक्त मुद्रा। दाहने हाथकी पांचों उंगलियां मिलाके ऊपरको उठाना चाहिये। इसीका नाम खट्वाङ्गमुद्रा है। यह मुद्रा देवताओंको अतिशय प्रीति देनेवाली है। (रुद्रयामल)

खट्वाङ्गवन (सं० क्ली०) नित्यकर्मधा। किसी वनका नाम। (हरिवंश ७९ अ०)

खट्वाङ्गी (सं० पु०) खट्वाङ्ग अस्त्रविशेषो यस्यास्ति, खट्वाङ्ग-इनि। १ शिव। २ प्रायश्चित्तके लिये खट्वाङ्ग सदृश पात्र धारण करनेवाला व्यक्ति। (मनु ११।१०५)

खट्वाङ्गी (सं० स्त्री०) सह्याद्रिकी एक निकटस्थित नदी। (हरिवंश ९६ अ०)

खट्वारूढ़ (सं० त्रि०) निन्दार्थे नित्यसमासः। १ जालम, निन्दित, बदनाम। (सिद्धान्तकौमुदी २।१।२६) २ उत्पथ प्रस्थित, भूला भटका (भट्टि)।

खट्विका (सं० स्त्री०) खट्वा स्वार्थे कन्-टाप् इत्वञ्च। १ खट्वा, खटोली। २ क्षुद्र खट्वा, खटिया। ३ खट्वा विशेष, किसी किस्मकी चारपाई।

"ब्रह्मचर्यविशेषैः स्थाना चतुःषड्‌ष्टकोणिकाः।
खट्विकाः सुखसम्भूताः शक्रकाष्ठसिताम्बराः॥" (युक्तिकल्पतरु)

खड़ (सं० क्ली०) खड्यते छिद्यते धान्ये पक्वे सति, चुरादि खड़ धातोर्णिजभाव पक्षे अप्। १ तृणविशेष, खरपतवार। धान कट जाने पर बचनेवाली घास खड़ कहलाती है। (पु०) २ पानकविशेष, पना। सुश्रुतके मतमें यह पना भोजनकालका पथरके बर्तनमें रखकर खाया जाता है। (सुश्रुत सूत्र ४६ अ०) ३ कोई ऋषि। इस अर्थमें खड़ शब्द पाणिनीय अश्वादि गणान्तर्गत है। गोत्रापत्यार्थको इसके उत्तर यञ् प्रत्यय होता है। ४ खड़यूष।

खड़ंजा (हिं० पु०) खड़ी ईंटोंका जोड़। खड़ंजा फर्श पर बांधा जाता है।

खड़क (सं० क्ली०) खड़ संज्ञायां कन्। स्थाणु। (कात्या-यन श्रौतसूत्र १४।३।१२। कर्क) खड़ देखो।

खड़क (हिं० स्त्री०) खटक, धीमी आवाज।

खड़कना (हिं० क्रि०) खड़खड़ होना, खटकना।

खड़का (हिं० पु०) खड़खड़ाहट, खटका।

खड़काना (हिं० क्रि०) खटकाना, लड़ाना, बजाना।

खड़किका (सं० स्त्री०) खड़क् इत्यव्यक्तं शब्दं करोति, खड़क् कृ-ड गौरादित्वात् ङीष् ततः स्वार्थे कन्-टाप् पूर्वह्रस्वश्च। पक्षद्वार, खिड़की।

खड़की (किरकी)—बम्बई प्रेसिडेन्सीके पूना जिलेका एक नगर। यह अक्षा० १८° ३४´ उ० और देशा० ७३° ५१´ पू०को पूनासे उत्तर-पश्चिम २ कोस दूर अवस्थित है। यहां ग्रेट-इण्डियन-पेनिनसुला रेलवेका एक ष्टेशन भी है। लोकसंख्या प्रायः १०७८७ है। १८१७ ई०को ५वीं नवम्बरको यहां महाराष्ट्राधिप पेशवा बाजीरावसे अंगरेजोंका एक युद्ध हुवा था। खड़की उस समय एक सामान्य ग्राममात्र रही। अंगरेजोंकी ओर करनल बरवेके अधीन २८०० और पेशवाके पक्षमें मन्त्री गोकुलके अधीन २६००० सेना थी। किन्तु लड़ाईमें अंगरेजी फौजकी जीत हुई। आजकल यहां एक सेनानिवास (छावनी) है। उसमें गोलन्दाज और सफरमैनाकी पलटन रहती है। छावनीमें एक बाजार भी है।

खड़की (सं० स्त्री०) खड़क् इत्यव्यक्तं शब्दं करोति, खड़क्-कृ-ड गौरादित्वात् ङीष्। पक्षद्वार, खिड़की।

खड़खड़ा (हिं० पु०) १ खटखटा, चिड़ियोंके उड़ानेका बांस। २ कोई ढांचा। यह लकड़ीका बनता है। इसमें जोतके घोड़ोंको निकालते हैं। (वि०) ३ खड़खड़ानेवाला।

खड़खड़ाना (हिं० क्रि०) १ खड़खड़ होना। २ खड़खड़ करना।

खड़खड़ाहट (हिं० स्त्री०) खड़खड़, खटपट।

खड़खड़िया (हिं० स्त्री०) पीनस, किसी प्रकारकी पालकी। इसे चार कहार वहन करते हैं।

खड़्गसेन—हिन्दीके एक विख्यात कवि। इनका जन्म १६०३ ई०को हुआ था। यह ग्वालियरके रहनेवाले एक कायस्थ थे। इन्होंने 'दानलीला' और 'दीपमालिकाचरित्र' नामक दो प्रशंसनीय ग्रन्थ लिखे हैं। इनकी कविताका एक नमूना नीचे दिखलाते हैं—

"गौरीशङ्कर राधाकृष्णको नाम लीने सकल सिद्ध काम।
निशदिन सुमरो सोवत जागत उठो प्रात कहो सीताराम॥
मीन कच्छप वराह नरसिंह वामनरूप परशुराम।
हरि हलधर बुध कलङ्की यशोदाधाम।
एते प्रभु रचपाल खड़गसेन प्रभुकृपाल हजिये सहाय अष्ट याम॥"

खड़गांव—बङ्गालके वीरभूम जिलेका एक विभाग। इसमें १६ महल लगते हैं। लोकसंख्या प्रायः १३०७२ है। इसमें बहुतसे अच्छे अच्छे गांव हैं। भूमि प्रायः समतल और उर्वरा आयी है।

खड़गी (हिं० पु०) गैंडा जानवर।

खड़जी, खड़गी देखो।

खड़तू (सं० पु०) खड़-ऋतू। बाहु और जङ्घाका आभरण। (संक्षिप्तसार)

खड़द—बम्बई प्रेसिडेन्सीके अहमदनगर जिलावाले जामखेड़ उपविभागका एक नगर। यह अहमदनगरसे २८ कोस दक्षिण-पश्चिम अक्षा० १८° ३८´ उ० और देशा० ७५° ३१´ पू०के मध्य अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ५८३० है। १७९५ ई०को महाराष्ट्रोंके साथ निजामका एक युद्ध हुवा। निजामको पराजित हो खड़द भागने पर मराठोंने चारों ओरसे घेर लिया था। निजामने अगत्या सन्धि करके निष्कृति पायी। खड़दमें पूर्वको निजामके अधीनस्थ निम्बालकर नामक किसी सम्भ्रान्त व्यक्तिकी जमींदारी थी। नगरके मध्यस्थलमें निम्बालकरके प्रकाण्ड भवनका भग्नावशेष आज भी देख पड़ता है। १७४५ ई०को उन्होंने नगरके दक्षिणपूर्व एक दुर्ग बनाया। किला पत्थरका चौकोर बना है। उसकी चारों ओर खाई खुदी है। प्रवेशद्वारमें २ बड़े फाटक हैं। बीचमें विस्तीर्ण पथ लगा है। गढ़का अब भग्नावशेष मात्र रह गया है। नगरमें बहुतसे रोजगारी, दूकानदार और पोद्दार हैं। वह नानाविध शस्य और देशी वस्त्रका व्यवसाय करते हैं। प्रति मङ्गलवारको गोमेषादिका बाजार लगता है।

खड़दह—बङ्गालके चौबीसपरगने जिलेका भागीरथी तीरवर्ती एक ग्राम। यह अक्षा० २२° ४४´ उ० और देशा० ८८° २२´ पू०को कलकत्तेसे ५॥ कोस दूर अवस्थित है। लोकसंख्या १७७७ है। यहां ईष्टर्न-बेङ्गाल-रेलवे-

का एक ष्टेशन बना है। खड़दह वैष्णवोंका एक तीर्थ-स्थान है। वङ्गीय वैष्णव समाजमें प्रवाद प्रचलित है—महाप्रभु चैतन्यदेवके प्रधान शिष्य नित्यानन्द-प्रभुने घूमते घूमते यहीं आकर गङ्गातीर पर अवस्थान किया था। एक दिन सन्ध्याको किसी स्त्रीके क्रन्दनका शब्द उनके कर्णमें पड़ा। शब्दको लक्ष्य करके उन्होंने देखा कि एक औरत एकलौती बेटीके मर जानेसे रोती थी। कन्याको मरे बहुत देर न हुई थी, मृतदेह पड़ा था। नित्यानन्द अवस्थाको अवलोकन करके सब कुछ समझ गये और कन्याकी मातासे कहने लगे—रोती क्यों हो, तुम्हारी लड़की तो सो रही है। माताने प्रभुकी कथाको हृदयङ्गम किया और उनसे अलौकिक क्षमता पर विश्वास करके कहा था—प्रभो! मेरी बेटीको बचा दीजिये, मैं आजन्म आपकी दासी बनी रहूंगी। असलमें लड़की बच गयी। ब्राह्मणकन्या होते भी वह वैष्णव नित्यानन्दकी गृहिणी बनी थी। नित्यानन्दने गृही होके स्थानीय जमींदारसे वासोपयोगी एक खण्ड भूमिकी प्रार्थना किया। जमींदारने गङ्गा किनारे खड़े हो दहके ऊपर एक टुकड़ा खड़ फेंक कर कहा था—यह स्थान आपको रहनेके लिये मैंने दे डाला। दहके घूर्णीजलमें खड़ डूब गया। किन्तु अल्पक्षण पीछे ही वहां रेत पड़ कर उत्तम वासोपयोगी स्थान निकला था। फिर अनेक अधिवासी अलौकिक महिमा देखके उनके भक्त बन गये। उसी दिनसे इस स्थानको खड़दह कहते हैं।* परन्तु यह ठीक नहीं कि नित्यानन्दके समयसे ही खड़दह नाम निकला है। कृत्तिवासका रामायण पढ़नेसे समझ पड़ता कि नित्यानन्दके बहुत पहले वह खड़दह नामसे प्रसिद्ध था। कृत्तिवास देखो। खड़दहके गोस्वामी लोग नित्यानन्द-वंशोद्भव हैं। वह अनेक वैष्णवोंके दीक्षागुरु होते हैं। शिष्य लोग उनकी बड़ी भक्ति करते हैं। होली, दीवाली और रास आदि वैष्णव पर्वोंपर यहां बहुतसे लोगोंका समागम होता है। खड़दहमें श्यामसुन्दरकी श्रीकृष्णमूर्ति प्रसिद्ध है। उसके सम्बन्धमें भी बहुतसी बातें सुन पड़ती हैं। कहा जाता है—रुद्र नामक किसी योगीने गौड़नगरस्थ मुसलमान शासनकर्ताके निकट पहुंच सूचना दी कि उस घरके द्वारदेशपर एक प्रस्तरखण्ड था। भगवान्‌का प्रत्यादेश रहा कि उसके वहां रहनेसे अमङ्गल होगा। सुतरां विना विलम्ब उसको स्थानान्तरित करना विशेष आवश्यक था। इसीके अनुसार पत्थरका टुकड़ा निकाल कर रुद्रको दे दिया गया। रुद्र उसको लेकर नाव पर चढ़ने चले, परन्तु इसी समय हठात् हाथसे छूट वह पानीमें डूबा था। श्रीरामपुरके निकट वल्लभपुरमें रुद्रका वास रहा। उन्होंने घर जाकर देखा कि गङ्गाके घाट पर वह पत्थर जाके पड़ा था। इसी प्रस्तरसे वल्लभपुरका विग्रह निर्मित हुआ है। फिर खड़दहके गोस्वामियोंने इसी पत्थरका एक टुकड़ा लेकर श्यामसुन्दरकी मूर्ति बनवायी। खड़दहमें गङ्गा किनारे २४ शिवमन्दिर हैं।

खड़बड़ (हिं॰ स्त्री॰) १ खटपट, खटर पटर। २ उत्तेजना, चहल पहल। ३ उलट पुलट, बेतरतीबी।

खड़बड़ाना (हिं॰ क्रि॰) १ व्याकुलत्व आना, घबरा जाना। २ उलट-पुलट होना, बिगड़ना। ३ खटकाना, खड़खड़ाना। ४ क्रम बिगाड़ना, सिलसिला तोड़ देना। ५ घबराहटमें डालना।

खड़बड़ाहट (हिं॰ स्त्री॰) खड़बड़, खड़खड़ाहट।

खड़बड़ी (हिं॰ स्त्री॰) १ व्यतिक्रम, खड़बड़। २ घबराहट, सनसनी।

खड़बिड़ा (हिं॰ वि॰) उच्चनीच नाहमवार।

खड़मण्डल (हिं॰ पु॰) व्यतिक्रम, घुटाला, गोलमाल।

खड़यवागू (सं॰ स्त्री॰) खड़पक्का यवागूः। पानकविशेष, किसी प्रकारका पना। पानक देखो।

खड़यूष (सं॰ पु॰-क्ली॰) यूषविशेष, किसी किस्मका रसा। कपित्थ, चाङ्गेरी, मरिच, कृष्णजीरक और चित्रकके साथ पाक करने पर खड़यूष कहलाता है। (चक्रदत्त) भावप्रकाशके मतमें मुद्गयूषरस, तक्र, धनियां, जीरक और सैन्धव मिलानेसे खड़यूष बनता है।

खड़रपुर—मीठी विरधी—बम्बई प्रान्तके काठियावाड़

---

* W. W. Hunter's Statistical Account of Bengal Vol. I. p. 107-8.

जिलेका ग्रामद्वय। यह दोनों गांव एक दूसरेसे प्राय: २ मीलके अन्तर पर अवस्थित हैं। मीठो विरधी समुद्र किनारे और खड़रपुर देशमध्यस्थ है। मीठी विरधी अपने मीठे पानीके कुओंके लिये प्रसिद्ध है, जो पहाड़ पर समुद्र किनारे खोदे जाते हैं। प्रति दिन दो बार समुद्रकी लहरसे भर जाते भी इन कूपोंका जल मधुर ही बना रहता है। सिवा इन कूपोंके वैसी ही प्रकृतिके कई एक झरने भी हैं। मीठी विरधीसे प्राय: २०० और खड़रपुरमें ८७९ मनुष्योंका निवास है। भावनगरसे खड़रपुर २० मील पड़ता है।

खड़्वान् (सं० त्रि०) खड़ चातुरर्थिक मतुप् मस्य वः। मध्वादिभ्यश्च। पा ४।२।८६। खड़ सन्निहित (देशादि), खड़के पासवाला।

खड़ा (हिं० वि०) १ दण्डायमान, सीधा उठा हुआ। २ स्थिर, कायम, टिका हुआ। ३ प्रस्तुत, तैयार। ४ प्रचलित, जारी। ५ स्थापित, रखा हुआ। ६ वर्तमान उपस्थित, मौजूद। ७ अपक्क, कच्चा। ८ पूरा, जो टूटा न हो। ९ अचल बंधा हुआ।

खड़ाऊं (हिं० स्त्री०) पादुका, काठकी जूती। यह पांवमें पहनी जाती है। इसके नीचे एड़ी और पंजेकी जगह काठके दो टुकड़े लगा देते हैं, जिसमें पटरी जमीन्से उठी रहे। फिर खड़ाऊंके ऊपर आगेकी एक खूंटी लगती, जो परके अंगूठे और उंगलीके बीच पड़ती है। इसी खूंटी पर जोर देकर लोग चलते फिरते हैं। कहा जाता है कि अधिक खड़ाऊं पहननेसे कौशल्य आता है। भारतवासी इसको प्राय: पूजा पाठ और भोजनादिको जाते समय व्यवहार करते हैं। खड़ाऊंको पीतलका बारीक तार जड़के खूबसूरत बनाया जाता है।

खड़ाका (हिं० पु०) १ खटाका, खड़खड़ाहट। (क्रि० वि०) २ खड़से।

खड़ा दसरङ्ग (हिं० पु०) कुश्तीका एक दाव। इसका दूसरा नाम हनुमन्तबन्ध है। अपनी जोड़की जङ्घामें अपना हाथ लगा उसके पेट पर रहनेवाले हाथको दबाने और उसके पृष्ठ पर उपस्थित हो उसको मरोड़ कर गिरानेसे खड़ा दसरंग होता है।

खड़ापठान (हिं० पु०) नौकाके पश्चाद्भागका कूपदण्ड, जहाजका पिछला मस्तूल।

खड़ायता विप्र—गुजराती सम्प्रदायभुक्त एक ब्राह्मण-जाति। खेदरा, अहमदाबाद, भड़ौंच आदि स्थानोंमें इनकी संख्या अधिक है। खांडा (तलवार) की पूजा करनेसे यह खड़ायत कहलाते हैं। इनका प्रधान कार्य पौरोहित्य है। खड़ायतोंके शिष्य भी बहुत होते हैं।

खड़ाल—बम्बई प्रान्तके महीकांठा जिलेका एक राज्य। इसमें १३ गांव लगते और कोई २२१५ लोग रहते हैं। यहांके मियां ४थे दरजेके सरदार हैं और मकवानोंसे मुसलमान बने हैं। इनका धर्म हिन्दू और मुसलमान दोनों धर्मोंकी मिलावट है। बड़ोदाको प्राय: १७५१) रु० घास दाने और २५०) रु० जमाबन्दीका देना पड़ता है। खड़ालके राजवंशको दत्तक पुत्र ग्रहण करनेका अधिकार नहीं, राज्यके उत्तराधिकारमें वयोज्येष्ठताका अनुसरण करते हैं।

खड़ि—बङ्गाल प्रान्तके वर्धमान जिलेकी एक नदी। यह बुदबुद विभागके अन्तर्गत धान्यक्षेत्रसे निकली और वक्रपथसे भ्रमण करके बहुरे-नन्दाई नामक स्थान पर भागीरथीमें जा मिली है।

खड़िक (सं० त्रि०) खड़मस्त्यस्य, खड़-ठन्। खड़युक्त।

खड़िका (सं० स्त्री०) खड़, गौरादित्वात् ङीष्, ततः स्वार्थे कन् पूर्वह्रस्वश्च। कठिनी, खड़िया।

खड़िया (हिं० स्त्री०) १ खड़ी, कुही। खटी देखो। २ अड़हरका एक बड़ा डण्ठल। इसमें फूल या पत्ती कुछ भी नहीं रहता।

खड़ी (सं० स्त्री०) खड़ अच् गौरादित्वात् ङीष्। १ खटिका, खड़िया। २ शुक्लमृत्तिका, सफेद मट्टी।

खड़ी (हिं० स्त्री०) पहाड़ी। मालखम्भकी एक कसरत 'खड़ीडकी', सिकलीगरोंका खुरचकर बर्तनको साफ करनेवाला रुखानी-जैसा एक कुन्द औजार 'खड़ीमसकला' और कुश्तीका एक पेंच 'खड़ीसकी' कहलाता है। खड़ीसकी पेंचमें बायें हाथसे जोड़की दाहनी कलाई और दाहने हाथसे उसकी कुहनी पकड़ते हैं। फिर उसको अपनी ओर आकर्षण करना और अपने दाहने पांवको उसके पैरोंमें डाल उसकी पिंडली तथा

एड़ीको अपनी ओर घसीटते हुए उसके वक्षःस्थल पर धक्का मारके चित्त गिराना पड़ता है।

खड़ु (सं॰ पु॰) मृतशय्या, मुर्देका बिस्तर।

खड़ुआ (हिं॰ पु॰) कड़ा, चूड़ा। इसे हाथ या पांवमें पहनते हैं।

खड़ू (सं॰ स्त्री॰) खड़-ऊः। खडेडुंड्वा। उण् १।८४। मृतशय्या, मुर्देका बिस्तर।

खड़ूर (वै॰ त्रि॰) खड़मस्त्यस्य, बाहुलकात् ऊरच्। खड़युक्त। (अथर्व ११।९।१७)

खड़ोन्मत्ता (सं॰ स्त्री॰) खड़ेन उन्मत्ता, ३-तत्। खड़ छणसे उन्मत्त हुई स्त्री। यह शब्द पाणिनीय शुभ्रादि गणके अन्तर्गत है। अपत्यार्थमें इसके उत्तर ढक् प्रत्यय आता है।

खड्ग (सं॰ पु॰-क्ली॰) खड़ति भिनत्ति, खड्-गन्। कापुखड़िभ्यः कित्। उण् १।१२२ १ गण्डक, गैंडा। (मनु ७ अ॰) २ गण्डक शृङ्ग, गैंडेका सींग। ३ कोई बुद्ध। ४ चोर नामक गन्ध द्रव्य, चोवा। ५ अस्त्र विशेष, खांड़ा, इसी अस्त्रसे छाग महिष प्रभृति पशुओंका बलिदान किया जाता है। यह हिन्दुओंका एक प्राचीन युद्धास्त्र है। परन्तु आजकल खड्ग युद्धास्त्र रूपसे व्यवहृत नहीं होता। मन्त्र और पूजादिमें पशुहननको ही इसे व्यवहार करते हैं। कालीप्रतिमाके हाथमें जो असि वा खड्ग रहता, वह भी आकृतिमें ऐसा ही देख पड़ता है।

आपाततः खड्ग—कहनेसे खांडा और असि कहनेसे तलवारको समझा जाता है। किन्तु पहले आकृति विभिन्न रहते भी असि और खड्ग दोनों शब्द एकार्थ-बोधक थे। इसी पशुच्छेदक खाड़े जैसे एक अस्त्रको उस समय 'लवित्र' कहते थे। लवित्रको भुग्न अर्थात् वक्र और पृष्ठ भाग तीक्ष्ण रखते हैं। उसका व्यास ५ अङ्गुलि, वर्ण काला और मूठ बहुत बड़ी लगायी जाती है। लवित्रसे महिषादि कर्तित करनेमें विशेष सुविधा पड़ती है। दोनों हाथोंको उठाके उस अस्त्रसे आघात करते हैं।

उस समय असि और खड्गका नानाविध आकार तथा परिमाण रहा। तदनुसार भिन्न भिन्न नाम भी रखे जाते थे। फिर उन सभी निराले नामोंसे साधारणतः प्रत्येक श्रेणीकी तलवारें समझी जाती थीं।

अति प्राचीन कालसे खड्ग वा असिका व्यवहार प्रचलित है। धनुर्वेदादि पुराने शास्त्रोंसे समझ पड़ता है कि उस समय भारतीयोंका जैसा पैना खांड़ा बनता था, आजकल वैसा नहीं रहता। धनुर्वेदमें लिखते और बहुविध गल्पमें भी सुनते हैं कि उस समयके खड्गसे पत्थर कटते थे। पत्थर पर चोट मारनेसे वह मांस या हड्डीकी तरह दो टुकड़े हो जाता और इसकी धार पर मल न आता था। आजकल किसी देशके शिल्पी ऐसी असि नहीं बना सकते हैं। धनुर्वेदादि शास्त्रोंसे इसका संक्षिप्त विवरण नीचे प्रदत्त हुआ है—उस समय कितने प्रकारकी तलवारें रहीं, कैसे लोहसे किस प्रदेशमें बनती थीं, क्यों कर धार चढ़ाते और कैसे कौशलसे उन्हें चलाते थे।

खड्गके नामान्तर यह हैं—असि, विशसन, तीक्ष्ण-वर्मा, दुरासद, विजय, धर्मपाल वा धर्ममाल, श्रीगर्भ, निस्त्रिंश, चन्द्रहास, रिष्टि, कौक्षेयक, मण्डलाग, कर-वाल, करपाल, तलवार, तलवारि। इन नामोंसे आकार और परिमाण भेदमें असिश्रेणीके अस्त्रोंका बोध होता और साथ ही असिश्रेणीका कोई भी अस्त्र समझ पड़ता है। एतद्भिन्न और भी कई श्रेणियां हैं। वह पीछे यथास्थान विवृत होंगी।

भारतमें कहां तलवार अच्छी बनती थी—वह सभी देशोंमें समान न होती रही। विभिन्न स्थानोंमें विभिन्न लक्षणोंकी तलवारें तैयार होती थीं।

१ खटी और खट्टर देशजात असि अति सुदृढ़ लगती है।

२ हिमालयके उत्तरवर्ती ऋषिक देशका खड्ग शरीर च्छेद-समर्थ और गुरुभारयुक्त होता है।

३ वङ्गदेश—जात असि तीक्ष्ण च्छेद-भेदमें पटु है।

४ शूर्पारक देशीय असि सर्वापेक्षा कठिन होती है।

५ विदेह देशजात खड्ग अति प्रभावशाली और असह्य तेजस्वी है।

६ अङ्गदेशजात तरवार अति तीक्ष्ण और दृढ़ पड़ता है।

७ मध्यम ग्राममें बननेवाली तलवारें हलकी और पैनी रहती हैं।

८ अन्तर्वेदी देशका खांडा लघुभार और तीक्ष्ण आता, किन्तु सारहीन पाया जाता है। (वर्तमान कुरुक्षेत्रके पास वेदी देश था।)

९ सहर ग्रामका खड्ग भी तीक्ष्ण तथा लघु होता है।

१० कालञ्जरकी तलवार बहुत दिन चलती और पैनी तथा सुलक्षणयुक्त रहती है।

११ चीनका करवाल निर्मल और तीक्ष्ण आता है।

प्राचीन कालको खड्ग लौहसे प्रस्तुत होता था। असि-निर्माणका उपयुक्त लौह औषधके लौहेसे अलग है। यह द्विविध होता है—सङ्ग और निरङ्ग। फिर यह द्विविध लौह काम्बि, गाक्ष्कि प्रभृति बहुतेरे भागोंमें विभक्त है। इन सभी लोहोंकी तलवारमें व्याधिविनाशक गुण होता है। परन्तु साधारणतः सङ्ग लोहेकी ही तलवार बनती थी। यह भी नाना प्रकारका होता है। असिकर्ममें दश प्रकारका लौह प्रशंसाके साथ लगाते थे—रोहिणी, नीलपिण्ड, मयूरग्रवक, मयूरवक्ष, तितिराङ्ग, सुवर्णवज्र, शैवल-मालान, मौषलवज्र, कल्लोलवज्र वा स्वर्णक और ग्रन्थिवज्र। इस दश तरहके लोहेकी अलग अलग पहचान है। लौहार्णव नामक लौहशास्त्र और वीरचिन्तामणि, शार्ङ्गधरपद्धति आदि ग्रन्थोंमें इसका विस्तृत विवरण दिया है। लौह देखो।

सिवा इसके निरङ्ग लौहके अन्तर्गत रोहिणी, पाण्डर और दक्ष वा कान्त त्रिविध लौह भी तलवारमें लगाता था।

उक्त सकल लोहोंसे खड्ग बनाया जाता, फिर उसमें नानाविध कौशल आवश्यक आता था। यही नहीं कि अच्छा लोहा मिलनेसे कारीगर अच्छी तलवार बना सकता था। परन्तु यह भी समझना पड़ता था—कौन लोहा कैसे कितने बार तपाने और किस तरह पत्थर या शान लगानेसे टिकाऊ और पैना निकलता है। इसके सम्बन्ध पर भी धनुर्वेदमें यथेष्ट उपदेश है। किन्तु अपने हाथों न करने और गुरुके निकट प्रत्यक्ष न पड़नेसे यह सकल विधि सिखाये—पढाये नहीं जा सकते।

असिको प्रस्तुत होने पर परिष्कार करना चाहिये बाढ़के ऊपर लवण वा अन्य चार परिष्कार कर्दममें मिला कर प्रलेप चढ़ाते, फिर आगमें तपा जल वा अन्य किसी तरल द्रव्यमें बुझाते हैं। महर्षि उशना वा शुक्राचार्यने असि बुझानेकी सकल व्यवस्था बतायी है—श्रीलाभार्थ अस्त्रको रुधिरमें बुझा लेना पड़ता है। इसी प्रकार गुणवान् पुत्र लाभार्थ अस्त्र घी, अक्षय धनलाभार्थ अस्त्र जल और अन्यान्य उद्देशोंके अनुसार वह घोटकीदुग्ध, उष्ट्रदुग्ध, हस्तिनीदुग्ध आदिमें बुझाया जाता है। हाथीकी सूंड काटनेके लिये तलवारको मछलीके पित्त, हिरनोंके दूध और बकरीके दूधमें बुझाते हैं। (कहते हैं—महाराणा प्रतापकी ऐसी ही तलवार रही।) इस बुझाईके पहले आकनादिका गोंद, भेड़ेका सींग, कोयल और कबूतर तथा चूहेकी विष्ठा एकत्र सानके धारके मुख पर तेल लगा कर उस पर प्रलेप चढ़ाना चाहिये। फिर पूर्वोक्त किसी द्रव्यमें तलवार बुझायी जाती है। इसके बाद सान धरा लेनेसे वह हथियार पत्थर पर मारते भी धार नहीं बिगड़ती। कदलीचारमें एक दिन एक रात भिगो कर रखनेके पीछे उक्त किसी द्रव्यमें बुझा लेनेसे भी पत्थर पर मारनेसे हथियार नहीं टूटता। विष किंवा विषवत् द्रव्यमें बुझानेसे अस्त्र भीषण क्षमता पाता है। उस अस्त्रके सामान्य आघातमें ही मृत्यु निश्चित हो जाता है। बुझानेके समय भिन्न भिन्न गन्ध और वर्ण निकलते हैं। उन रंगों और खुशबूओंसे भी शुभाशुभ जाना जाता है। करवीर, उत्पल, हस्तिमद, घृत, कुङ्कुम, कुन्दपुष्प और चम्पक पुष्प सदृश गन्ध उठनेसे अस्त्र शुभदायक होता है। गोमूत्र, पङ्क, मेद, कूर्म, वासा, रक्त वा क्षीण गन्धसे अस्त्र अशुभदायक है। फिर वैडूर्य, स्वर्ण वा विद्युतको प्रभा रहनेसे अस्त्र जय और आरोग्य करता, नहीं तो किसी अन्य वर्णसे अशुभ पड़ता है। बहुतसे लोग इन बातोंको मिथ्या बतला सकते हैं। परन्तु परीक्षा करनेका उपाय किसीको मालूम न रहनेसे एकाएक मिथ्या कहना भी अनुचित है।

प्राचीन कालको ४ अङ्गुलि प्रशस्त और ५० अङ्गुलि दीर्घ असि श्रेष्ठ और इससे अर्धपरिमाण

मध्यम समझी जाती थी। २५ अङ्गुलिसे कम पड़ने पर असि न कह कर असिपुत्र बोलते थे। चौड़ाईमें २ अङ्गुलसे कम पड़ने पर तलवार असि नामसे गण्य न होती थी। ३० अङ्गुलिसे दीर्घ असि 'निस्त्रिंश' कहलाती है। गठनमें पद्मपुष्पकी पखुड़ीके अग्रभाग और करवीर पुष्पकी पखुड़ी-जैसी तलवार उत्तम-जैसी विवेचित हुई है। मण्डलाग्र अर्थात् अग्रभाग सुगोल वा ईषत् वक्र रहनेसे असि उतनी प्रशस्त जैसी नहीं गिनी जाती थी। मण्डलाग्र असिको आजकल 'बकी' कहते हैं। गोजिह्वा, कोई, नालपुष्पकी पखुड़ी, बांसके पत्ते और शूलके अग्रभाग-जैसा खड्ग ही प्रशस्त होता है।

तरवारिको बजानेसे जो शब्द निकलता, उससे भी भला बुरा ठहराना पड़ता है। यदि काकस्वर जैसा कर्कश शब्द वा 'भं' निकले, तो राजा महाराजाओंको उसका परित्याग करना चाहिये। मधुर, किङ्किणी जैसा झुनझुनाता और दीर्घस्थायी शब्द उठनेसे अति श्रेष्ठ समझी जाती है।

तलवार बनाते समय उसके फलक पर अपने आप कई चिह्न उत्पन्न होते हैं। उन सभी चिह्नोंका नाम व्रणअङ्क है। व्रण अङ्कोंसे भी भलाई बुराई समझा जाती है। अङ्गुलि परिमाणमें यदि युग्म अङ्गुलि परिमित स्थान पर कोई विशेष चिह्न देख पड़े, तो उसे शुभ और अयुग्म परिमित स्थानमें आनेसे अशुभ कहते हैं। सब मिलाकर १०० प्रकारके चिह्न होते हैं—१ रौप्यरेखा और २ स्वर्णरेखा। दोनो प्रकारके यह खड्ग अति उत्तम हैं। ३ गजशुण्डाकार चिह्नाङ्क, यह भी अच्छा होता और रक्तके स्पर्शमात्रसे अपने आप शरीरमें गहरा धस जाता है। इसका अङ्कधौत जल पान करनेसे अनेक व्याधि नष्ट होते हैं। ४ रक्तबीज चिह्न। यह खड्ग भी बुरा नहीं। ५ दमनपत्र चिह्नविशिष्ट खड्ग उत्तम रहता है। ६ शुभ्र स्थूलरेखायुक्त अति उत्तम है। इसके आघातसे सारा शरीर सूज जाता है। ७ सूक्ष्म अरुणवर्ण रेखाओंका खड्ग भी उत्तम है। इसमें सूर्यकिरण लगनेसे एक प्रकार तेज निःसृत होता और रातको इसके निकट पद्मकोरक रखनेसे खिल उठता है। ८ तिलविह्नित खड्ग उत्तम होता है। इससे आहत होने पर क्षतस्थानमें तिलतैलवत् पूय पड़ता जाता है। ९ अग्निशिखा चिह्नविशिष्ट खड्ग पर जल रखनेसे उष्ण हो जाता है। १० माला चिह्नविशिष्ट खड्गके धौतजलमें सुगन्ध उठता और उष्ण जलमें इसको डुबानेसे वह शीतल पड़ता है। इसका धौतजलसे पित्तरोग नष्ट होता है। १२ जीरक चिह्नवाले खड्गके आघातसे ज्वर आता है। १२ भ्रमर चिन्हविशिष्ट खड्ग विसूचिका रोग लगा देता है। १३ लाङ्गूलाग्र चिह्नयुक्त खड्गके स्पर्शमात्रसे सर्प मर जाता है। १४ मरिचचिह्न खड्गके आघातसे रक्त फट पड़ता और इसके धौत जलसे पीनस रोग मिटता है। १५ सर्पफणा चिह्नविशिष्ट असिके आघातसे शरीरमें विषविकार लग जाता और इसके छूते ही मेंढका प्राण निकल आता है। १६ अश्वखुरके चिह्नका खड्ग उत्तम है। आरोही के कटिदेशमें यह रहनेसे घोड़ोंकी चाल बढ़ती और धौतजलसे कई प्रकारकी बीमारी मिट जाती है। १७ सरसोंके फूलजैसे निशानवाली तलवार अच्छी होती है। यह इतनी लचीली रहती कि लपेट लेनेसे कुण्डल-जैसी बनती और छोड़ देनेसे फिर सीधीकी सीधी निकलती ह। १८ मयूरपुच्छ चिह्नयुक्त खड्ग उत्तम है। इसके छू जाते ही सांप मर मिटता और आघातसे निरन्तर वमी हुवा करता है। १९ मधुबुदबुद चिह्नविशिष्ट खड्ग भी बुरा नहीं। इस पर सदा मधुमक्षिकायें बैठनेकी इच्छा रखती हैं। २० मक्षिका चिह्नयुक्त असि उत्तम होती है। इस पर तैल पड़ते ही सूख जाता है। २१ सिंह चिह्नकी तलवार लगनेसे आहत व्यक्ति पागल हो जाता है। २२ तण्डुलचिह्नयुक्त खड्ग अच्छा है। इसको धोनेसे चावलके धोवन-जैसा पानी छूटता है। २३ मकर पुच्छचिह्नविशिष्ट असिके स्पर्शसे सभी मत्स्य मर जाते हैं। २४ चक्षु-जैसे चिह्नवाले खड्गके धौतजलसे रात्र्यान्धता दूर होती है। २५ बिम्बफलयुक्त असिका पानी तिक्तास्वाद होता है। उस जलसे पित्त श्लेष्माका विकार मिटता है। २६ लशुन चिह्नका खड्ग आमवातको नष्ट करता है। २७ प्रोष्ठी

शल्क चिह्नविशिष्ट असि पानी पर तैरती है। यह अति दुर्लभ वस्तु है। २८ चम्पक पुष्प चिह्नित खड्गका जङ्ग भी तीता लगता है। २९ लोम चिह्न-युक्त तलवारकी चोटसे शरीरमें व्रण होता है। ३० मनसा पत्राकार तथा मनसाकण्टकाकार चिह्न-विशिष्ट असिके क्षतसे दाह, तृष्णा और मूर्च्छा आती और सर्पफणा पर इसको रखनेसे वह विदीर्ण हो जाती है। इस तलवारके धुले पानीसे कोढ़ अच्छा होता है। ३१ वकुलचिह्नविशिष्ट खड्गको शाण पर रगड़-नेसे मौलसिरीके फूलकी खुसबू निकलती है। एतद्भिन्न ३२ वय, ३३ गोखुर, ३४ शिरा, ३५ उपल, ३६ काक-पद, ३७ कपाल (मुर्देकी खोपड़ी), ३८ तुवरीफल, ३९ भृङ्गराजपुष्प, ४० खुर, ४१ जलतरङ्ग, ४२ मार्जार-राम, ४३ वटारोह, ४४ ज्येष्ठी, ४५ जाल (शाण रखने पर जालचिह्न युक्त असि रक्तवर्ण शिखा निक-लनेसे अच्छी होती है), ४६ कर्कन्धु (बेरीकी उलटी पत्तीआदि जैसे निशानवाली और निश्चिह्न तलवार न रखना चाहिये), ४७ कृष्णरेखा, ४८ मूलसे अग्र पर्यन्त तीन सूक्ष्मरेखा, ४९ पद्मदलाकार रेखा, ५० गदा, ५१ पिप्पली, ५२ ग्रन्थि, ५३ शालपर्णपत्र, ५४ तित्तिर पक्षीका पक्ष, ५५ ऊर्ध्वगामी कपिलवर्ण शिखा, ५६ धान्य, ५७ अतसी, ५८ शिवलिङ्ग, ५९ व्याघ्रनख, ६० पत्रावली, (चन्दनादि द्वारा वरकन्या वा विलासिनियोंके मुख तथा वक्ष पर बनाये जानेवाले चित्रोंको पत्रावली कहते हैं), ६१ प्रियङ्गु, ६२ नीली रसतरङ्ग, ६३ रक्तवर्ण त्रिरेखा, ६४ मञ्जिष्ठा लता, ६५ शमीपत्र, ६६ मारिषपत्र, ६७ गुञ्जाफल, ६८ सूक्ष्म सूक्ष्म वर्णाचक्र, ६९ विल्वपत्र, ७० मसूरपत्र, ७१ शण पुष्प, ७२ शटीपत्र, ७३ केतकीपत्र, ७४ मूर्वातन्तु, ७५ कलायपुष्प, ७६ वलाक्तापत्र, ७७ पत्रशिराकार रेखा, ७८ पिपीलिका, ७९ नलपत्र, ८० कुष्माण्डवीज और ८१ निर्मल चिह्न भी होता है। ऊर्ध्व तथा वक्र रेखा चिह्न युक्त तलवारोंका शुभाशुभ शास्त्रमें निर्दिष्ट हुवा है। सिवा इसके दूसरे बाकी चिह्नोंमें धार, भग्न लता, समलता इत्यादिके सम्बन्धसे प्रभेद रखा गया है।

खङ्गकी परीक्षा अष्टविध होती है। इसीसे खङ्ग विज्ञानको अष्टाङ्ग कहा जाता है। खङ्गका पहले अङ्ग, दूसरे रूप, तीसरे जाति, चौथे नेत्र, पांचवें अरिष्ट, छठें भूमि, सातवें ध्वनि और ८ वें परिमाण देखना भालना आवश्यक है।

अङ्गपरीक्षा और कुछ नहीं, पूर्वोक्त चिह्नोंका विचारमात्र है। अङ्गमें चिह्न रहनेसे नेत्रप्रीतिकर जो प्रतीति आती, वही जाति कहलाती है। माहात्म्य सूचक चिह्नको नेत्र कहते हैं। अशुभताबोधक चिह्नका नाम अरिष्ट है। अङ्गादिका लक्षणधारण भूमि वा क्षेत्र कहलाता है। हाथके नाखून या लकड़ीसे ठोंकने पर जो शब्द उठता, उससीका नाम ध्वनि पड़ता है। फिर तौल, दीर्घता और प्रशस्तादिके विचारको परिमाण कहते हैं।

खङ्गपरीक्षा देखो।

जिसकी भूमि वा फलकगात्र नीलरस, कलाय पुष्पवर्ण, गाजरके फूल जैसा और नीलमणि आभा वा मरकत वर्ण विशिष्ट आता, उसको नीलरूप कहा जाता है। कृष्णवर्ण और मेघ, मसी, कालसर्प अङ्ग, अन्धकार, केशकलाप किंवा भ्रमरवर्णका नाम कृष्ण रूप है। जिसका वर्ण नववर्षाजात भेकके गात्रवर्ण और गोमेद मणिके वर्ण जैसा रहता, उसको पिङ्गलवत् कहना पड़ता है। अनति गाढ़वर्ण और धूमपटल वा शिरीषपुष्प जैसेको ही धूम्र कहा जाता है। एतद्भिन्न मिश्रवर्ण भी होता है।

विशुद्ध अङ्गचिह्न, विशुद्धरूप, उत्तम नेत्र, उत्तमध्वनि कोमलस्पर्श, उत्तम गठन और उत्तम धारयुक्त खङ्ग ब्राह्मण जाति है। इससे अल्प क्षत आने पर ही सर्वाङ्गमें यन्त्रणा तथा शोथ आता और मूर्च्छा, पिपासा, दाह एवं ज्वराभिभूत हो शीघ्र आहत व्यक्ति मर जाता है। कच्ची हरीतकी, आमलकी और वहेड़ा तीन फलोंको चूर्ण करके तलवार पर रखनेसे कषाय रसके कारण मोरचा नहीं लगता, उलटे इसका वर्ण अधिक परिष्कृत देख पड़ता है। नवोदित सूर्यके किरणमें शुष्क तृण पर इस खङ्गको थोड़ी देर रखनेसे ही घास जल जावेगी। यह अति दुर्लभ है। कभी कभी कुश-द्वीप और हिमालय प्रदेशमें इसको देखते हैं।

क्षत्रियजातीय असि धूम्रवर्ण, सारयुक्त, तीक्ष्णधार, कर्कशध्वनियुक्त और आघातसह्यकारी होती है। इससे आघात लगने पर दाह, तृष्णा, मलमूत्रविष्टम्भ, ज्वर, मूर्च्छा और अन्तको मृत्यु भी हो जाता है। इसको शाणयन्त्र पर चढ़ानेसे वह अग्निकणायें निकलतीं और विना संस्कार यह दीर्घकाल तक निर्मल रहती है।

जो तलवार कृष्ण वा नीलवर्ण युक्त रहती, संस्कारसे चमकती और शाण न देनेसे खरता घटती, उसीकी संज्ञा वैश्यजातीय पड़ती है।

मेघकी भांति वर्णयुक्त, मोटी धारवाले मृदुध्वनि, संस्कार करनेसे भी निर्मल न होनेवाले और शाण पर चढ़ते भी कुन्द रहनेवाले खड्गका नाम शूद्रजातीय है।

यदि किसी खड्गमें दो जातियोंका लक्षण पाया जाता, तो वह जारज वा 'द्विजाति' कहलाता है। इसी प्रकार तीन जातियोंके लक्षणसे 'त्रिजाति' और चारों जातियोंका लक्षण मिलनेसे जातिसङ्कर खड्ग कहते हैं।

नेत्र तीस होते हैं। यथा—चक्र, पद्म, गदा, शङ्ख, डमरु, धनु, अङ्कुश, छत्र, पताका, वीणा, मत्स्य, शिवलिङ्ग, ध्वज, अर्धचन्द्र, कलस, शूल, व्याघ्रनेत्र, सिंहासन, सिंह, हस्ती, हंस, मयूर, जिह्वा, दण्ड, खड्ग, मनुष्य, पुत्रिका, चामर, शिखा, पुष्पमाला, सर्प। नेत्रचिह्न शुभदायक है। किसी किसी तलवारमें एकसे अधिक नेत्र भी होते हैं।

अरिष्ट तीस हैं-छिद्र (छिद्रतुल्य चिह्न), काकपद, ऊर्ध्व वा तिर्यक् रेखा, भिन्न (ऐसा निशान जिससे तलवार टूटी-जैसी मालूम पड़े), भेकशिरः, मूषिक, विड़ालनेत्र, शर्करा (जिस चिह्नको छूने या देखनेसे खांड़ा खुरखुरा लगे), नीली (नीलरसके धब्बे पड़ने जैसा निशान), मशक, भृङ्गमा (बहुतसी फूटकियां या भौंरेके पीवके निशान), सूची (ऊंची या तिरछी सूई जैसी लकीर), विन्दु (पास ही पास तीन फुटकियां या बहुतसी फुटकियोंकी कतार), कालिका (ऊपर ही ऊपर तीन तीन फुटकियोंकी कतार), कपोताक्ष, काक, खर्पर, लाङ्गल, शकल (छोटे टुकड़े जुड़े रहनेकासा निशान), क्रोड़ (सूअरकी सूरत), कुशपत्रक, जाल, मध्यस्थान या कोई स्थान निम्न जैसा लगनेका चिह्न, कराल (ऐसी लकीर जिससे अगला हिस्सा लम्बा और पत्तीदार देख पड़े), कङ्कपत्र, खर्जुरपत्र, गोशृङ्ग, गोपुच्छ, खनित्र, वड़िश प्रभृति। इन्होंका नाम अरिष्ट अर्थात् अशुभ लक्षण है।

खड्गकी भूमि अर्थात् जन्मस्थान द्विविध है। दि[illegible] और भौम। पूर्वकालकी देवदानव लोगोंने ही प्रथमतः खड्गका सृष्टि की थी। इन सकल खड्गोंके अनुरूप खड्ग पृथ्वी पर भी किसी किसी स्थानमें अभावनीयरूपसे उत्पन्न होता है। स्थूलधार, लघु, शुभचिह्न, निर्मल नेत्रयुक्त, अरिष्टहीन, सुरूप, दुर्भेद्य, असंस्कारमें भी निर्मल, उत्तम ध्वनिविशिष्ट, टूटनेसे फिर न जुड़ सकनेवाला और व्रणसे दाह तथा अल्पपाक उपस्थित करनेवाला खड्ग ही दिव्य कहलता है। शुद्धलौह अर्थात् वाराणसी, नेपाल, मगध, अङ्ग, सुराष्ट्र और सिंहलदेशजात लौहकी निर्मित असि भौम तथा उत्कृ होती है।

ध्वनि प्रधानतः दो प्रकारका है—घोर और भार। तलवारको ठोंकनेसे हंसध्वनि, कांस्यध्वनि, मेघध्वनि, ढक्काध्वनि, काकध्वनि, तन्त्रीध्वनि, खरध्वनि, प्रस्तरध्वनि इत्यादि ध्वनि जैसे ध्वनि होते हैं। इनमें पिछले चार अशुभकर हैं। गभीर तथा तारध्वनि अच्छा और उत्तान तथा मन्दध्वनि बुरा होता है। उत्तमध्वनि रहनेसे सुचिह्नहीन खड्ग भी अच्छा है।

परिमाण प्रथमतः द्विविध है—उत्तम और अधम। विशाल तथा लघु अच्छा और खर्व तथा गुरु बुरा होता है। यह भी फिर त्रिविध है—आदि, अन्त्य और मध्य। जिसकी दीर्घता २० मुष्टि, विस्तृति ५ अङ्गुलि और तौल ८ पल रहती, उसको विद्वन्मण्डली मध्यम कहता है। आठ, नौ या १२ मुष्टे लम्बा, पाव अङ्गुल चौड़ा और एक पल वजनी अच्छा नहीं।

खड्गकी क्रिया ३२ प्रकार है—भ्रान्त, उद्भ्रान्त, आविद्ध, आप्लुत, विप्लुत, सृत, सम्पात, समुदीर्ण, निग्रह, प्रग्रह, पदावकर्षण, सन्धान, मस्तकभ्रामण, भुजभ्रामण, पाश, पाद, विबन्ध, भूमि, उद्भ्रमण, गति, प्रत्यागति, आक्षेप, पातन, उत्थानक, प्लुति, लघुता, सौष्ठव, शोभा, स्थैर्य, दृढ़मुष्टिता, तिर्यक्प्रचार और ऊर्ध्वप्रचार। इन सब हाथोंको लिख कर बताना कठिन है। विना देखे

कुछ समझ नहीं पड़ता। खड्गके यह कई एक भेद हैं—

१ धवलगिरि—पाण्डुर लौहजात और रौप्य जैसा शुभ्रवर्ण होता है।

२ कालगिरि—जिसके अङ्गमें सूक्ष्म सूक्ष्म सुवर्णाकार अथवा कृष्णाभ पत्रभङ्गाकार चिह्न रहते, उसीको कहते हैं।

३ कज्जलगात्र—जिसकी धार सफेद, बीचका हिस्सा काजल जैसा और बिलकुल काली तलवारका नाम है।

४ कुटीरक—रजतपत्र चिह्नयुक्त अथच कृष्णवर्ण खड्गको कहा जाता है। इसके आघातसे शोथ होता है।

५ केतकीवज्र—केवड़ाके फूल जैसे धब्बे रखता है।

६ निरङ्ग—निरङ्ग कान्तलौहसे बनता, शीर्षपत्र चिह्न रहता और वर्ण अल्प नील लगता है। यह महामूल्य और दुर्लभ है।

७ दमनवज्र—दमनपत्र वा कुन्दपत्र चिह्नयुक्त होता है।

८ कालखड्ग वा डाकुनीवज्र उसको बोलते, जिसका फलक काला होते भी सोने जैसा चमकता और अल्प वज्रचिह्न रखता है।

९ नकुलाङ्ग—ऊर्ध्वगामी कपिलद्युतिविशिष्ट दृष्ट होता है।

१० क्षुद्रवज्र—जिसके शरीरमें कुण्डलीकृत क्षुद्र क्षुद्र पत्तिकामालायें रहती हैं।

११ महत्—अति गाढ़ अन्तर्भाग, सर्वप्रकार चिह्नहीन गात्र, स्थूल मध्यदेश, स्थूलधार और साथ ही अत्यन्त तीक्ष्ण खड्गका नाम है।

१२ वामनाख्य—महान् खड्ग है। यह छेदनकालको छेद्य वस्तुमें तन्तु सृष्टि नहीं करता।

१३ महिषाख्य—नील मेघ जैसा चमकता और गात्रमें एरण्डवाज चिह्न रखता है।

१४ अङ्गपत्र—मार्जन करनेसे दर्पण जैसा प्रतिबिम्ब निकलता है।

१५ गजवज्र—जिसके अङ्गमें स्थूलरेखायें हों, गात्र मसृण रहे, धार अति तीक्ष्ण लगे और अङ्गधौतजल पानसे व्याधि नष्ट हो जावे।

१६ पट्टिश—किसी प्रकारकी विशेष तरवारि है। आग्नेय धनुर्वेद, वैशम्पायनीय धनुर्वेद और शुक्रनीतिमें इसमें एक-जैसी वर्णना ही मिलती है। उनके मतमें पट्टिश नामक अस्त्र खड्गका सहोदर अर्थात् प्रायः तलवार-जैसा और पुरुष प्रमाण दीर्घ होता है। इसमें दोनों ओर धार रखी जाती हैं। अग्रभाग अति तीक्ष्ण रहता है। इसका मुष्टि हस्तत्राणयुक्त लगाते हैं। इसकी क्रिया भी असिक्रियासे मिलती है। हिन्दीमें इसका दुधारा नाम है।

अङ्गरेजी और नयी तलवारके बारमें तलवार शब्द देखना चाहिये।

खड्गकोष (सं० पु०) १ खड्गलता, एक बेल। इसका संस्कृत पर्याय—खड्गपत्र, खड्गिमार और अश्वपुच्छक है। खड्गस्य कोषः, ६-तत्। २ खड्गाधार, तलवारका म्यान। खड्गकोश शब्द भी इसी अर्थमें व्यवहृत होता है।

खड्गट (सं० पु०) खड्ग इव अटति, अट-अच्, शकन्ध्वादित्वात् साधुः। १ बृहत् काशतृण, बड़ा कांस। २ खग्गड़, खगड़ा घास।

खड्गधार (सं० पु०) खड्गं धरति, खड्ग-धृ-अण्। १ खड्गधारी, तलवार बांधे हुआ। २ खड्गका तीक्ष्णभाग, तलवारका पैना हिस्सा।

खड्गधेनु (सं० स्त्री०) १ खड्गपुत्रिका, छुरी। २ गण्डकस्त्री, मादा गैंडा।

खड्गपत्र (सं० पु०-क्ली०) खड्गाकाराणि पत्राणि यस्य, बहुव्री०। १ खड्गलता, तरवार जैसी पत्तियोंकी एक बेल। खड्गस्य पत्रम्, ६-तत्। २ ढाल, तलवार रोकनेका एक औजार। ३ खड्गकोष, म्यान। ४ असिफलक, तलवारका धार।

खड्गपरीक्षा (सं० स्त्री०) खड्गस्य परीक्षा, ६-तत्। चिह्नविशेष द्वारा खड्गका शुभाशुभ निर्णय, तलवारकी जांच। युक्तिकल्पतरुमें तलवारके ८ चिह्न ठहराये हैं—अङ्ग, रूप, जाति, नेत्र, अरिष्ट, भूमि, ध्वनि और मान। इन्हीं आठों चिह्नोंसे खड्गका शुभ अशुभ सूचित होता है। तलवारको अच्छी तरह देखनेसे मालूम पड़े कि यह दो टकड़े मिलाकर बनायी गयी है और वास्तविक वैसा न रहे, तो इसको अङ्गचिह्न कहा जाता है। नील, पीत प्रभृति वर्णोंका रूप और इन सकल रूपों द्वारा

प्रतीत होनेवालेका नाम जाति है। खड्गकी माहात्म्य-सूचक अङ्गातिरिक्त जातिको नेत्र, अशुभतासूचक चिह्नको अरिष्ट और अङ्गादि धारणको भूमि कहते हैं। खड्ग पर नख अथवा किसी दण्ड आदि द्वारा आघात करनेसे उत्पन्न होनेवाला शब्द ध्वनि और तौल ही मान है। अङ्ग १०० प्रकार, रूप तथा जाति ४ प्रकार, नेत्र तथा अरिष्ट ३० प्रकार, भूमि तथा मान २ प्रकार और ध्वनि ८ प्रकारका होता है। इन सकल चिह्नोंसे समझा जाता है, खड्ग अच्छा निकलेगा या बुरा। खड्ग देखो।

खड्गपाणि (सं० त्रि०) खड्गः पाणौ यस्य, बहुव्री०। प्रहारोद्यत, तलवार हाथमें लिये हुआ।

खड्गपिधान (सं० क्लो०) खड्गस्य पिधानम्, ६-तत्। खड्ग-कोष, म्यान।

खड्गपिधानक (सं० क्लो०) खड्गस्य पिधानकम्, ६-तत्। खड्गकोष, म्यान। पर्याय–प्रत्याकार, परिवार, और कोष।

खड्गपुच्छ (सं० त्रि०) जिसके ढालकी तरह देहावरण-के निम्नभागमें दीर्घ खड्गाकार शलाका रहे।

खड्गपुत्र (सं० पु०) खड्गपुत्रिका देखो।

खड्गपुत्रिका (सं० स्त्री०) कटार, क्षुरिका, छुरी। इसका अपर नाम असिधेनु है। यह १ हाथ लम्बी और तलअरहित होती है। परन्तु पकड़नेके लिये इसमें मूठ लगा दी जाती है। रङ्गत काली, तीन धारें और २ अङ्गुलि विस्तार रखा जाता है। निकटागत शत्रु विनाशके लिये यह बहुत उपयोगी है। इसी असिधेनुको मेखलामें ग्रथित करनेसे खड्गपुत्रिका कहा जाता है। मुष्टिग्रहण, विदारण और विवकरण ही इसका काम है। प्रधान प्रधान राजा इसको सर्वदा कटिदेशमें बांधते थे।

खड्गफल (सं० पु०) खड्गः फलमिव त्वगाद्यतत्वामध्ये यस्य, बहुव्री०। खड्गपिधान, म्यान।

खड्गफलक (सं० पु०) खड्गः फलमिव मध्ये यस्य, वा कप्। असिपिधान, तलवारका म्यान।

खड्गमांस (सं० क्लो०) खड्गस्य मांसम्, ६-तत्। १ गण्डकमांस, गैंड़ेका गोश्त। खड्गी देखो। २ महिष-मांस, भैंसेका गोश्त।

खड्गमुद्रा (सं० स्त्री०) एक तन्त्रोक्त मुद्रा। शक्ति-पूजामें यह मुद्रा आवश्यक है। अङ्गुष्ठ द्वारा कनिष्ठा तथा अनामिका अङ्गुलि बद्ध करके अवशिष्ट अङ्गुलि मिलाके फैला देना चाहिये। इसीका नाम खड्गमुद्रा है। (तन्त्रसार)

खड्गसेन—खंडेला नगरका सूर्यवंशी चौहान जातिका राजा। इनके कोई पुत्र नहीं होता था। एक दिन किसी उत्सवमें राजाने ब्राह्मणोंको आमंत्रण दिया। उनके आने पर राजाने उनका खूब आदर सत्कार किया. इस पर ब्राह्मण लोग बड़े प्रसन्न हुए और ऐसा वर दिया–हे राजन्! तू शिवशक्तिकी सेवा कर तब तेरे बुद्धिमान और वीर पुत्र पैदा होगा। परन्तु वह सोलह वर्ष तक उत्तरमें न जाय, सूर्यकुण्डमें स्नान न करे और ब्राह्मणोंसे विद्वेष न करे, तो वह साम्राज्य (चक्र-वर्तिराज्य) का भोग करेगा; नहीं तो इसी देहसे पुन-र्जन्मको प्राप्त हो जावेगा। राजाने उनकी आज्ञा पालन करनेका प्रण किया। इस पर ब्राह्मणलोग 'तथास्तु' कह कर चले गये। राजाके २४ रानियां थी, उनमेंसे रंपावती-के पुत्र हुआ। उसने बारह वर्षकी अवस्थामें ही घोड़े पर सवार होना, शस्त्र चलाना आदि चौदह विद्याओं-को सीख लिया। यह ब्राह्मणोंको बहुत दान देने लगा; और शिवकी भक्ति करने लगा, इस प्रवृत्तिको देख कर राजा इस पर बड़े प्रसन्न हुए। किसी समय एक जैन साधु राजकुमारसे मिले और उनने राजकुमारको पवित्र अहिंसा धर्मका उपदेश देकर जैनधर्मका उपदेश दिया। अतएव राजकुमारकी बुद्धि शिवमतसे हटकर जैनमतमें प्रवृत्त हो गई; और वह ब्राह्मणोंसे यज्ञकी हिंसाका वर्णन करने लगा तथा उसका खण्डन भी करने लगा। आखिरकार उसने राजधानीकी तीनों दिशाओंमें घूम घूम कर एकदम जीव-हिंसा बंद करा दी और नरमेध, अश्वमेध तथा गोमेध आदि सब यज्ञोंको बंद कर दिया; तब ब्राह्मणों और ऋषिजनोंने उत्तर दिशामें जा कर यज्ञ करना शुरू किया। जब यह समाचार कुमारके पास पहुंचा, तब वह बड़ा क्रुद्ध हुआ, सिर्फ पिताकी आज्ञा न होनेसे वह संकोच करने लगा; परंतु होनहार

मिटती नहीं। उमरावों सहित वह चल दिया और सूर्यकुण्डके ऊपर हो जा खड़ा हुआ। वहां देखा तो, छह ऋषीश्वरों (पाराशर, गौतम आदि)ने यज्ञ प्रारम्भ कर कुण्ड, मण्डप, ध्वजा और कलश आदि स्थापन कर रक्खे हैं; तथा वेदध्वनिसहित यज्ञ कर रहे हैं। राजकुमारने उमरावोंको आज्ञा दी कि, इन "ब्राह्मणोंकी यज्ञसामग्री छीन लो और यज्ञ नष्ट भ्रष्ट कर दो।" आगे व ना ही चाहते थे कि, इतनेमें ऋषियोंने इन्हें देख लिया और इन लोगोंको राक्षस समझ कर यह शाप दिया कि "हे निर्बुद्धियो! तुम लोग पाषाणवत् हो जाओ।" शाप देनेके साथ ही बहत्तर उमराव और एक राजकुमार घोड़ों सहित जड़ (पाषाणवत्) हो गये। अर्थात् हलन चलन रहित जड़बुद्धि हो गये। इससे राजाको इतनी वेदना हुई कि, वह मर गये। उनकी सोलह रानियां भी उनके साथ सती हो गईं तथा शेष रानियोंने ऋषि और ब्राह्मणोंकी शरण ली। राजकुमारकी स्त्री उन उमरावोंकी ७२ स्त्रियों सहित वहां आकर रोने पीटने लगी। उनको देख कर ऋषियोंने शिवका अष्टाक्षरीमन्त्र दे कर उन्हें एक गुफा बतला दी और यह वर दिया कि "तुम्हारे पति महादेव पार्वतीके वरसे शुद्धबुद्धि हो जावेंगे।" इस पर वे सब शिवको स्मरण करने लगीं। कुछ समय के बीतने पर पार्वतीको साथ लेकर महादेवजी पधारे। इनको देख कर उन्होंने चरण स्पर्श किया। इनकी भक्तिसे मुग्ध हो कर पार्वतीने उनको आशीर्वाद दिया कि—'तुम सब सौभाग्यवती हो कर अपने पतियोंके साथ संसार सुख अनुभव करती हुई चिरंजीव होओ।" और पीछे महादेवने उनको चैतन्य कर दिया। राजकुमार पार्वती पर मोहित हो गया, यह जानकर पार्वतीने क्रोधित हो कर यह शाप दिया, अरे "मंगते। तू मांग खा।" बस! उसी दिनसे वह भिक्षुक हो गया। उमरावोंको महादेवने कहा कि, "तुम शस्त्र चलाना छोड़ दो और वैश्योंका काम करो; तुमारे हाथोंकी जड़ता सूर्यकुण्डमें नहानेसे दूर होगी।" तब उन लोगोंने ऐसा ही किया। इस पर ऋषियोंने महादेवसे शिकायत की कि, हमारे आपको भेंट कर आपने वर दिया, सो अच्छा नहीं किया। हमारे वरमें ये लोग बाधा पहुंचायेंगे। शिवने इस पर यह कहा कि इन लोगोंके पास करनेको तो कुछ है नहीं, पर आप लोग इनको भी उत्सवमें शामिल किया करें, ये यथाशक्ति द्रव्य देते रहेंगे। इधर तो शिवजीका वहांसे पधारना हुआ और उधर उन बहत्तर उमरावोंका ऋषियोंके चरणोंमें गिरना हुआ। फिर इनमेंसे एक एक ऋषिके १२, १२ शिष्य हो गये।

कुछ दिन बाद ये खंडेलाको छोड़ कर डीडवालामें आ गये, और तबहीसे इन बहत्तर खांपोंके डीड महेश्वरी कहलाने लगे; फिर कालान्तरमें इनकी वृद्धि हो गई अर्थात् सब मुल्कोंमें फैल गये। वर्त्तमानमें इनकी सब खांपें ७५० हैं।

आजकल महेश्वरी वैश्योंमें धनवानोंकी संख्या अधिक होने पर भी विद्याको बहुत ही कमी है।

खड्गसिंह—पञ्जाबके एक राजा। यह महाराज रणजित्सिंहके ज्येष्ठ पुत्र रहे। १८०२ ई०को लाहोरके नकीर खूजनसिंहकी कन्या राजकुमारीके गर्भसे इन्होंने जन्म लिया। यह राजकुमारी रणजित्की द्वितीया पत्नी थीं। १८११ ई०के ज्येष्ठमास रणजित्सिंहने नकीर-विपक्ष सामन्त दमन करनेके लिये ८ वर्षके बालक खड्गसिंहको सेनाका नायक बना कर भेज दिया। इसके बालक-जैसे रहने पर दीवान् माखनचन्द साथ चले। बालक खड्गसिंहने प्रथम उद्यममें ही जय पाया और अपनेको पिताका सुख्यातिभाजन बनाया था। १८१२ ई०को जयमल धुनियाकी कन्याके साथ इनका विवाह हुआ। यह जयमल धुनया पठानकोट और जालन्धर तराईके अधिपति रहे। १८०८ ई०को रणजित्सिंहने यह सकल प्रदेश अपने अधिकारमें लगा लिया था। जो हो, खड्गसिंहके विवाहसे लाहोरमें बड़ी धूमधाम हुई। अङ्गरेजसेनापति करनल आकटरलोनी निमन्त्रित हो लुधियानासे विवाहमें गये थे। विवाह उत्सव पूरा हो जाने पर कुमार खड्गसिंह भीमवार और राजोरी (राजपुरी) जय करनेको प्रेरित हुवे। यह उक्त दोनों

प्रदेश और भगत नामक स्थान अधिकार करके राजधानी लौटे थे। रणजित्‌सिंहने पुत्रके वीरत्वसे सन्तुष्ट हो उक्त सभी प्रदेश इनको जागीरकी तरह दे डाले।

धीरे धीरे खड्गसिंह महाराज रणजित्‌के बहुत ही प्रियपात्र बनने लगे। उन्होंने इन्हें और भी जागीर दी। इस समस्त सम्पत्तिके तत्त्वावधानका भार खड्गसिंहकी माताको अर्पित हुआ। दीवान् रामसिंह रानीके अधीन सारी देखभाल करनेको रखे गये। जागीरकी प्रथाके अनुसार उन्हें अश्वारोही कितनी ही सिख सेना रखनी पड़ी। उक्त सेनाको सर्वदा इस लिये साजसज्जा और शिक्षामें प्रस्तुत रखते थे, कि युद्धके समय उससे राजाको साहाय्य करेंगे। कुछ दिन पीछे रणजित्‌सिंहने सुना कि जागीरोंका तत्त्वावधान भली भांति नहीं होता। प्रजावर्ग पर अत्याचार और उत्पीड़न पड़ा है। जो सकल सेना रखी गयी है, उसकी साजसज्जा और शिक्षा बिगड़ी है। उन्होंने लड़केको बुला कर कितनी ही मीठी धमकियां दी थीं। रणजित्‌सिंहने कहा—अब तुम्हारा वयस आ गया है, तुम अपने आप सब कुछ देख भाल सकते हो, तुम कितने बड़े वीरके लड़के हो, तुम्हें परमुखापेक्षी होके रहना अच्छा नहीं लगता। परन्तु उनको उत्तेजनासे कोई फल न निकला, माता और दीवान्‌के कहने पर खड्गसिंहको चलना पड़ा। रणजित्‌सिंहने उस समय अपनी मूर्ति धारण की थी। उन्होंने दीवान्‌को कारागारमें डाल उसका हिसाब देने और खड्गसिंहकी माताको सेखूपुरके दुर्गमें जाकर रखनेके लिये कहा। फिर खड्गसिंहकी तीव्र भर्त्सना करके पेशावरके भवानीदासको दीवान् बनाया गया। इसके बाद १८१८ ई०को जब सिखोंकी फौज राज्यके दक्षिण भागमें जाकर ठहरी, रणजित्‌ने कुमार खड्गसिंहको उसका अधिनायक करके भेजा और दीवान् चन्द्रमिश्रको इनके साथ पहुंचाया गया। दीवान्‌चन्द्र ही प्रकृत अधिनायक रहे। परन्तु वहांके अधिवासी उनके ऊपर विरक्त-जैसे रहनेसे कुमार नाममात्रको अधिनायक बन गये। १८३१ ई०को २५वीं नवम्बरको जब अंगरेजी गवर्नर जनरल लार्ड विलियम बेनटिङ्क शतद्रु पार रणजित्‌सिंहसे साक्षात्कार करने चले, खड्गसिंह ६ सिख सरदारोंके साथ उन्हें महाराज रणजित्‌सिंहका अभिवादन ज्ञापन करने आगे जाकर मिले थे।

मियां ध्यानसिंह नामक कोई व्यक्ति किसी कार्यमें विशेष दक्षता दिखाके महाराज रणजित्‌सिंके प्रियपात्र बन गये और ड्योढ़ीवालेके पद पर नियुक्त हुए। ड्योढ़ीवालकी विना अनुमति महाराजसे कोई कैसे मिल सकता था। अन्तको उनका प्रभुत्व इतना बढ़ा, कि महाराजके बेटोंको भी विना उनसे पूछे महाराजसे मिलना कठिन पड़ा। ध्यानसिंहके शिशुपुत्र हीरासिंह हमेशा रणजित्‌के निकट रहते थे। क्रमशः महाराज उनके प्रति इतने अनुरक्त हुए, कि उन्हें एक दण्ड न देखनेसे अस्थिर हो जाते रहे। ध्यानसिंह धीरे धीरे अपने पुत्रको राज्यका उत्तराधिकारी बनानेका उद्योग करने लगे। पहले ही स्थिर हुआ—आगे खड्गसिंह पर महाराजकी विरक्ति उत्पादन करना आवश्यक था। ध्यानसिंहने महाराजको समझाया कि खड्गसिंहकी बुद्धि बिगड़ गयी है। वह अकर्मण्य है और उन्माद होनेके लक्षण देख पड़ते हैं। इससे भविष्यको वह कैसे राज्यग्रहण कर सकते हैं? ध्यानसिंह खड्गसिंहको युद्धमें भेजते तो थे, किन्तु सेना और नौकर चाकरोंका ऐसा प्रबन्ध कर देते थे कि इनका पराजय अवश्य हो जाता था। फिर खड्गसिंहका हारने पर वह महाराजके सामने बहुत भला बुरा कहते थे। वास्तविक इन्होंने बाल्यकालसे जैसे वीरत्वका परिचय दिया था, उससे इन्हें कापुरुष कहनेका दाव न था। वीरत्वमें पुत्र पितासे किसी अंशमें न्यून न थे। पिताकी अपेक्षा यह अधिक न्यायपरायण और धर्मभीरु थे। खड्गसिंह यह देख कर कुछ विषम रहते थे कि पिताके सम्मुख उन पर अन्याय दोषारोप होता है और पिताकी भी वैसी ही धारणा हो गयी है। सुतरां इनकी स्फूर्तिका नाश हुआ। इससे ध्यानसिंह और भी सुविधा पाकर सबको समझाते थे—वास्तविक खड्गसिंहकी बुद्धि बिगड़ी है, नहीं तो सर्वदा चिन्तित और म्लान क्यों रहते हैं?

उसके बाद खड्गसिंह महाराजके पास न जाने पाने लगे। उधर हीरासिंहको राजा उपाधि मिला था। उनकी तकियाके नीचे प्रतिदिन प्रातःकाल ५००) रु० इस लिये रख दिया जाता था, कि वह उठ कर गरीब लोगोंको दान करेंगे। इसमें कोई सन्देह न रहा कि महाराजके स्वर्गवासके पीछे हीरासिंह सिंहासन अवरोहण करेंगे।

क्रम क्रम रणजित्‌सिंहका मृत्यु काल उपस्थित हुवा। उन्होंने खड्गसिंहको बुलाकर ध्यानसिंहके हाथ पर उनका हाथ रख दिया और कहने लगे—इन्हें सिंहासन पर बैठाइयेगा और यथारीति रक्षणावेक्षण रखियेगा; मैंने इतने दिन आपके प्रति जैसा असाधारण अनुग्रह प्रकाश किया है, उसका सिवा इसके कोई प्रतिदान नहीं चाहता कि राजभक्त विश्वस्त भृत्यकी भांति आप कुमारके प्रति व्यवहार करें। उनकी बातसे ध्यानसिंह स्तम्भित हुये और उन्हींके साथ इनकी चिरपोषित आशा भी मिट गयी।

कहते हैं—महाराज रणजित्‌सिंहकी अन्त्येष्टि क्रियाके समय ध्यानसिंहने शोकसे अभिभूत हो चितामें देहत्यागकी चेष्टा की थी। लोगोंने अतिकष्टसे उन्हें पकड़ रखा था।

खड्गसिंह।

१८३९ ई०की २७वीं जूनको यह पञ्जाबके सिंहासन पर बैठे थे। खड्गसिंह ध्यानसिंहके प्रति यथोचित सम्मान प्रदर्शन करने लगे। रणजित्‌सिंह महाराजके जनाना-खानेमें रहते भी ध्यानसिंह वहां पहुंचते और बैठ कर परामर्शादि करते थे। इनके समय भी वह वैसा ही करने लगे। परन्तु खड्गसिंहको वह अच्छा न मालूम होता था। इन्होंने ध्यानसिंहको वैसा करनेसे रोक दिया। ध्यानसिंहने इनसे कहा कि वैसा न करने पर सब बात बाहर फैल जावेगी और राजकार्य चलनेमें अड़चन आयेगी। मुंहसे तो उन्होंने ऐसा कहा, परन्तु मन ही मन विरक्त हो इनके अनिष्टसाधनका सङ्कल्प कर लिया।

इधर अन्यान्य मन्त्री इस कार्यके लिये खड्गसिंहकी विशेष प्रशंसा करने लगे। उन्होंने यह भी बताया कि ध्यानसिंह कहते फिरते हैं—यदि राजा हमें पहले जैसा अधिकार न देंगे, तो वह क्या राज्य कर लेंगे। जो व्यक्ति वैसा कह सकता है, उसे मन्त्रित्व पद पर रखना उचित नहीं। ध्यानसिंहने उधर यह अफवाह उड़ाई थी—खड्गसिंह और उनके मन्त्री चेतसिंह राज्यभार अङ्गरेजोंको सौंप हमें नीचा दिखा राज्य करनेकी साजिस करते हैं। अंगरेजोंको रुपयेमें छह आने कर देना पड़ेगा, राज्यका सिख-सेनादल तोड़के सरदारोंको कर्मच्युत करना होगा इत्यादि नानाप्रकारकी बातें देशमें फैल जल्पना होने लगी। ध्यानसिंह बस इतना ही करके निश्चन्त न हुए। उस समय खड्गसिंहके ज्येष्ठपुत्र नवनिहालसिंह पेशावर और वह खैबरघाटीमें थे। दोनों पत्र द्वारा परामर्श करने लगे। खड्गसिंहने ध्यानसिंहको कहला भेजा था कि कुमार नवनिहालसिंहको लेकर वह शीघ्र ही लौट पड़ें। ध्यानसिंह नवनिहालके साथ मिल गये। चलते चलते राहमें दोनोंने स्थिर किया था कि खड्गसिंहके घोर शत्रुरूपसे लाहोरमें प्रवेश करना होगा। कुमार नवनिहालने राजधानीमें पहुंच अविलम्ब खड्गसिंहको बन्दी बनानेके लिये ध्यानसिंह प्रभृतिसे कह दिया। ऐसी कई जाली चिट्ठियां भी दिखलायी गयीं, मानो अंगरेजोंसे लिखा पढ़ी हुई थी। नवनिहालकी अल्पमात्र भी पितृभक्ति लुप्त हो गयी। अंगरेजोंके हाथसे देशरक्षाका इतना बड़ा प्रयोजन समझ पड़ा कि नवनिहालकी माता खड्गसिंहकी पत्नी चन्द्रकुमारीने भी स्वामीके कारावासको अपना मत प्रदान किया।

रातको तीन बजेके बाद ध्यानसिंह, गुलाबसिंह, सुचेतसिंह और कई एक सरदार सिन्दवाला किलेमें घुस खड्गसिंहके शयनकक्षके निकटवर्ती हो गये।

उन्होंने राहमें दो नौकरोंको मार डाला था। खड्गसिंह उस समय शयनकक्षमें पहुंच ईश्वरकी आराधना करते थे। कोई प्रहरी दुरात्माओंका आगमन वृत्तान्त अवगत हो जैसे ही दौड़कर संवाद देनेको चलने लगा, ध्यानसिंहने उसको गोली मार दी। प्रभुभक्त भृत्य उसी समय धराशायी हुवा। इससे कुछ गड़बड़ मच गया। गुलाबसिंहने भ्राताको विलक्षण तिरस्कार किया और कहा था—जा कुछ करना होगा निःशब्द और तरवारि द्वारा करना होगा। आधी रातको निःशब्दमें दुरात्मा आगे बढ़ने लगे। चेतसिंह उस समय खड्गसिंहके निकट रहे। वह विपद् आती देख पासकी एक अंधेरी कोठरीमें जा घुसे। शयनकक्षसे अनतिदूर प्रहरी सेनादल रहा। ध्यानसिंहने अपना कह अङ्गुलिविशिष्ट हाथ फैला कर खड्गसिंहको देखाया था। सेना मन्त्रमुग्धवत् स्थिर हो कर रह गयी। दुरात्माओंने जाकर खड्गसिंहको बांध लिया था। रानी चन्द्रकुमारी और नवनिहालसिंहने प्रस्ताव किया कि राजाके शरीरमें कोई आघात न लगाया जावे। यदि नवनिहालसिंह उपस्थित न रहते, तो शायद उसी समय खड्गसिंह मार डाले गये होते। पार्श्वस्थ गृहसे घसीट ध्यानसिंहने अपने हाथों चेतसिंहको छातीमें छुरी घुसेड़ दी। इसके बाद सब दुरात्मा मिल कर चेतसिंहको मारने लगे और वह अविलम्ब हो चल बसे। महाराज खड्गसिंह दुर्गमें अवरुद्ध हुए और कुमार नवनिहालसिंह राजसिंहासन पर बैठ गये।

राज्यमें घोषणा हुई—महाराज खड्गसिंहने राज्यका शत्रु‌ताचरण किया है, अतएव वह राज्यशासनके अनुपयुक्त हैं और इसीसे नवनिहालसिंहने राज्यभार ग्रहण किया है। कहते हैं—नवनिहालसिंह प्रकाश्यरूपसे खड्गसिंहकी निन्दा न चलाते, बीच बीच कारागारमें पितासे मिल उन्हें निर्बोध और कापुरुष जैसी भर्त्सना सुना आते थे।

मनोदुःखसे इनका शरीर भग्न हो गया। खड्गसिंह बीमार पड़े थे। चिकित्साके लिये कई एक चिकित्सक नियुक्त हुवे। उनकी चिकित्सासे पीड़ा मिटना तो दूर रहा, उलटे बढ़ती ही गयी। उधर षड्यन्त्रकारी यह कहते घूमने लगे कि खड्गसिंह बीमारीका बहाना करके अंगरेजो राज्यको भागनेकी चेष्टामें हैं। नवनिहालसिंहने भी अपने मनमें यही बात समाजानेसे पिताको देखसे जाना छोड़ दिया और इनको चारों ओर और भी कितने ही पहरेदारोंको नियुक्त किया था। पुत्रके ऐसे व्यवहार पर भी खड्गसिंहके हृदयसे उनका स्नेह नहीं घटा। यह नवनिहालको देखनेके लिये जितना ही कहते, सुनते, उतना ही उनके प्रति अविश्वासी बनते थे। ध्यानसिंह भीतर ही भीतर दोनोंका विद्वेष बढ़ा बाहर लोगोंसे कहते रहते—हम पिता और पुत्रमें सद्भाव उत्पन्न करनेकी नियत चेष्टा किया करते हैं। कभी कभी पिताके देखनेको जानेके लिये पुत्रको अनुरोध करते करते उनकी दोनों चक्षु आंसुओंसे डूब जाते थे। इनके निकट जाकर भी वह ऐसा ही कहते कि उतनी चेष्टा करके भी वह किसी प्रकार नवनिहालसिंहको समझा न सके।

खड्गसिंहको अधिक काल यह यन्त्रणा न सहना पड़ी। झटपट उनका मृत्यु हो गया। कहनेमें आता कि औषधके साथ उन्हें सफेदा और रसकपूर खिलाया जाता था। मृत्युके पूर्व यह यन्त्रणासे अस्थिर हो आक्षेप करते थे—हमारे एकलौते बेटेको एकबार दिखला दो, हम उसको पापसे बचावेंगे। ध्यानसिंह पुत्रको जाकर कहते थे—खड्गसिंहको विकार उपस्थित है, वह सीधे बेटेको गाली देते हैं।

१८४० ई०की ५वीं नवम्बरको इनका मृत्यु हुवा। मृत्युका संवाद पुत्रके पास भेजा गया। वह उस समय शिकार खेलते थे। समाचार मिलने पर भी उन्होंने शिकारको न छोड़ा। दो घण्टे पीछे शिकारसे वापस आ नवनिहालसिंहने पितृदेह भस्म करनेको अनुमति दी थी। हजारीबागमें राजप्रासादके निकट चिता प्रज्वलित हुई। नवनिहाल और ध्यानसिंह खड़े हो कर तमाशा देखने लगे। नवनिहालसे फिर ठहरा न गया। पिताकी मृतदेह चितामें जल ही रहा था, कि वह पैदल पासके एक नालेमें जा नहाने लगे। स्नान करके लौटते समय वह और गुलाबसिंहके लड़के मियां उत्तमसिंह जैसे ही एक छज्जेके नीचेसे निकले, वह

कल्ला दोनोंके मस्तक पर टूट पड़ा। उत्तमसिंह उसी समय मर गये और पितृद्वेषी नवनिहालसिंह भी कुछ क्षण पीछे छटपटा कालग्राममें पतित हुए। १७वीं नवम्बरको यह दुर्घटना पड़ी थी।

खड्गसेन—दिगंबर जैन संप्रदायके एक गृहस्थ ग्रन्थकर्त्ता। इनका निवासस्थान आगरा था। इन्होंने आशाधरकृत-सहस्रनामकी "पूजा" रची है और त्रिलोक दर्पण नामक छन्दोबद्ध एक कथा ग्रंथ वि० सं० १७१३में लिखा। और ग्रंथ उपलब्ध नहीं हैं।

खड्गहस्त (सं० त्रि०) खड्गो हस्ते यस्य, बहुव्री०। १ खड्ग धारण करनेवाला, तलवार हाथमें लिये हुवा। २ क्रुद्ध, नाराज, मारने पर उतारू।

खड्गाीट (सं० पु०) खड्गस्यारिरिव अटति गच्छति, इट-क। १ चर्ममय फलक, चमड़ेकी ढाल। खड्ग तद्धारातुल्यव्रतं आक्रंति, खड्ग-आ-क्रम कोटन्। असि धारा व्रतधारी, असिधारा नामक व्रत करनेवाला।

खड्गावलोक—किसी राजाका नाम वा उपाधि। इसका अर्थ शाणित खड्ग जैसा तीक्ष्ण दृष्टि है। कोल्हापुर राज्यके समाङ्गद नामक स्थान पर एक पहाड़ी दुर्गमें कोई ताम्रशासन मिला है। उसमें ६७५ शकको दन्तिदुर्ग, दन्तिवर्म वा खड्गावलोकके दानकी कथा लिखी है। ताम्रशासनके लेखानुसार—गोविन्दराजके पुत्र श्रीकर्कराज, कर्कराजके पुत्र इन्द्रराज और इन्द्रराजके पुत्र श्रीदन्तिदुर्गराज वा खड्गावलोक श्रीदन्तिदुर्गराजदेव थे।

खड्गिक (सं० पु०) खड्गः खड्गाकारोऽस्त्यस्य, ठन्। १ महिषीक्षीरफेन, भैंसके दूधका फेना। खड्गेन चरति, खड्ग-ठन्। २ शौणिक, मृगयाकारी, शिकारी।

खड्गिधेनु (सं० स्त्री०) खड्गिनी चासौ धेनुश्चेति, कर्मधा०, जातित्वात् खड्गिनीशब्दस्य पूर्वनिपातः पुंवच्च। पोटायुवतिस्तोककतिपयगृष्टिधेनुवशावेहद्वष्कयणीप्रवक्तृश्रोत्रियाध्यापकधूर्तैर्जातिः। पा २।१।६५। गण्डक जातिस्त्री, मादा गैंड़ा।

खड्गिमार (सं० पु०) खड्गिनं मारयति, मृ-णिच्-अण् उपपदस०। १ खड्गकोषलता, एक बेल। २ अस्त्रविशेष, किसी किस्मका हथियार।

खड्गी (सं० पु०) खड्गस्तदाकारः शृङ्गं अस्त्यस्य, खड्ग-इनि। १ गण्डक, गैंड़ा। यह सुश्रुतोक्त आनूपवर्गके कुलचरोंमें पड़ता है। संस्कृत पर्याय—गण्डक, खड्ग, खड्गमृग, क्रोड़ी, युग्म, तुङ्गमुख, वली, वज्रचर्मा, वार्धीनस, एकचर, गणोत्साह, गण्ड और खनोत्साह है। इसका मांस बलकारी, बृंहण, गुरु, कषाय, पवित्र, पितृलोकतृप्तिकर, आयुष्कर, मूत्ररोधकारी, रूक्ष और कफ तथा वायुनाशक है। (राजवल्लभ) गैंडा देखो। २ महादेव। (त्रि०) खड्गोऽस्त्यस्य, खड्ग इनि। खड्गधारी, तलवार रखनेवाला।

खड्गक (सं० क्ली०) खड्गे तत्कर्मणि कुशलम्, खड्ग बाहुलकात् ईकः। दाव, दांता।

खड्ड (हिं० पु०) खात, गड्ढा, खाड़ा।

खड्डक (सं० पु०) देवताड़वृक्ष, ताड़का एक पेड़।

खड्ढा (हिं० पु०) १ खात, गड्ढा। २ गहरी रगड़का निशान्, खाला।

खणक (हिं० पु०) चूहा, मूसा।

खणनाड़िका (हिं० स्त्री०) घड़ी, धर्मघड़ी।

खण्ड (सं० पु०-क्ली०) खन-ड। अमन्ताड्डः। उण् १।११४। १ इक्षुविकारविशेष, किसी किस्मका गुड़। चलती बोलीमें इसे खाड कहते हैं। खण्ड अतिशय वृष्य, चक्षुको हितकर, वात तथा पित्तनाशक, मधुर, बृंहण, शीतल, स्निग्ध, बलकर और वातनाशक होता है। (भावप्रकाश) २ अंश, हिस्सा। ३ भेद, टुकड़ा (मार्कण्डेय चण्डी) "प्रभु दोउ चापखण्ड महि डारे।" (तुलसी) ४ विड़् लवण, काला नमक। ५ कोई देश। ६ मणिदोष, नगीनेका ऐब। ७ योगिविशेष। (हठयोगप्रदीपिका) ८ कोई असभ्य-जाति। ९ शर्करा, चीनी। १० इक्षुजातिभेद, किसी किस्मकी ऊख। हिन्दीमें खण्ड तलवारको भी कहा जाता है। (त्रि०) ११ खण्डित, काटा हुवा।

खण्डक (सं० पु०) खण्डेन निर्वृत्तः, खण्ड ऋश्यादित्वात् क। १ खण्डनिर्मित सिताखण्ड, बताशे, इलायचीदाने, गट्टे आदि। (त्रि०) खण्डयति, खड़ि-ण्वुल्। २ छेदक, काटनेवाला।

खण्डकथा (सं० स्त्री०) १ स्वल्पकथा, थोड़ी बात। २ किसी प्रकारकी कथा। इसमें चार प्रकारका विरह और करुणरस प्रधान रहता है। ३ कोई झूठी कहानी।

इसके प्रत्येक खण्डमें एक पृथक् कथा रहता है।

खण्डकर्ण (सं० पु०) खण्ड इव कर्णो यस्य, बहुव्री०। १ आलुकविशेष, शकरकन्द। इसका पर्याय वज्रकन्द है। खण्डकर्ण कफ तथा पित्तनाशक और कटुपाक होता है। २ शाकविशेष, कोई सब्ज़ी।

खण्डका (सं० स्त्री०) यवासशर्करा, खांड़।

खण्डकाद्यलौह (सं० क्ली०) औषधविशेष, रक्तपित्तकी एक दवा। इसकी प्रस्तुत-प्रणाली नीचे लिखते हैं— शतावरी, गुड़ूची, वासक, मुण्ड (किसी किस्मका लोहा), बला, तालमूली, खदिरकाष्ठ, त्रिफला, भार्गी और पुष्करमूल पांच पांच पल ६४ शरावक जलमें पाक करना और अष्टमांश अवशिष्ट रहने पर दिव्यौषध तथा माक्षिक द्वारा मारित रुक्म लौहका १२ पल चूर्ण डाल देना चाहिये। फिर इसको १६ पल घृतके साथ गुड़पाककी तरह पकाया करते हैं। ताम्र-पात्रमें पाक करना विधेय है। पाक प्रायः शेष होने पर १ सेर मधु और शिलाजतु, दालचीनी, शृङ्गी, विड़ङ्ग, पिप्पली, शुण्डी तथा जातीफलका आठ आठ तोले चूर्ण पड़ता है। अच्छी तरह मन्थन करके यह पाक उतारा और स्निग्धपात्रमें डाला जाता है। गव्य-क्षीर अनुपानके योगसे खण्डाद्यलौह सेवनीय है। मांसका यूष और दुग्ध इस पर खानेसे उपकार करता है। छाग, पारावत, तित्तिर, क्रकर, शश, हरिण और कृष्णसारका मांस सेवन करना चाहिये। नारिकेलका जल, वास्तुकशाक, पटोल, वृहती, बैंगन, पक्का आम, खजूर, अनार और आनूपमांस एकान्त वर्जनीय है। यह औषध रक्तपित्त, क्षयरोग, काश, पंक्तिशूल, वात-रक्त, प्रमेह, शीतपित्त, वमि, क्लम, पाण्डुरोग, कुष्ठ, प्लीहा, आनाह, रक्तस्राव और अम्लपित्त रोग पर व्यव-हार किया जाता है। खण्डकाद्यलौह चक्षुको हितकर, वृंहण, बलकर, प्रीतिवर्धक, कामद, अग्निवर्धक और लावण्यकर होता है। (चक्रदत्त)

खण्डकालु (सं० क्ली०) खंड इव कायति, कै-क ततः कर्मधा०। खंडकर्णालुक, शकरकन्द।

खण्डकाव्य (सं० क्ली०) खंडं काव्यस्य एकदेशानु-सारिकाव्यम्, कर्मधा०। जो काव्य सम्पूर्ण काव्य-लक्षणयुक्त न हो। (साहित्यदर्पण ६ अ०)

खण्डकुष्माण्ड (सं० क्ली०) औषधविशेष, रक्तपित्तकी एक दवा। निष्कुलीकृत पुराण कुष्मांडके १०० पल शस्यको टुकड़े टुकड़े करके २०० पल वारिमें डाल पकाना और १०० पल जल अवशिष्ट रहने पर नीचे उतार कुष्मांड खंडोंको निकाल पीसकर धूपमें सुखाते हैं। फिर यह चूर्ण २ शरावक घीमें भूना जाता है। लाल हो जाने पर पहलेका १०० पल पानी और बराबर चीनी छोड़ इसको लेहवत् पका कर बना लेते हैं। ठंडा हो जाने पर इसमें पिप्पली, शुंठी तथा जीरक सोलह सोलह तोले, दालचीनी, एला, पत्र, मरिच एवं धान्यक चार चार तोले और मधु १ शरावक पड़ता है। दूसरा खंड-कुष्मांड रक्तपित्त तथा अम्लपित्तके लिये हित है— १०० पल कुष्मांडोदक, गव्यदुग्ध १०० पल और ८ पल शर्करा एकत्र पाक करके लेह-जैसा होने पर ८ पल धात्रीचूर्ण डालके उतार लेना चाहिये। अम्लपित्तके अन्य अवलेहमें केवल २ पल घी ज्यादा लगता है। (भावप्रकाश)

खण्डकुष्माण्डक (सं० पु०) खण्डेन पक्वं कुष्माण्डमत्र, बहुव्री० कप्। चक्रदत्तोक्त औषधविशेष, एक दवा। कुष्माण्डरसायन देखो।

खण्डकुष्माण्डावलेह, खण्डकुष्माण्ड देखो।

खण्डखण्ड (सं० त्रि०) टुकड़े टुकड़े किया हुआ।

खण्डखर्जूर (सं० क्ली०) खण्डेन पक्वं खर्जूरम्, मध्य-पदलो०। खण्डपक्व खजूर, मीठी खजूर।

खण्डगिरि—उड़ीसाके पुरी जिले बीचका एक पर्वत। यह अक्षा० २०° १६´ उ० और देशा० ८५° ४७´ पू०के मध्य भुवनेश्वरसे प्रायः २ कोस पश्चिम तथा कटकसे पुरी जानेवाली राहके ३ कोस पश्चिमको अवस्थित है। यह पहाड़ रेतीली मट्टीका बना है। इसमें जो अनेक आश्चर्यजनक काण्ड देख पड़ते, वर्णनातीत हैं। इसके पार्श्ववर्ती हटकिया गांवकी ओर एक खात है। यहां ३ अनोखी गुहायें हैं। दक्षिणदिक्की गुहासे और भी दक्षिण चारो ओरसे गोल और धतूरके फूल-जैसा एक जलाशय है। इसका उपरिभाग प्रशस्त और निम्न-देश क्रमशः ढालू है। इसी जलाशयको आकाशगङ्गा कहते हैं। ग्रीष्मकालको इसमें जल नहीं रहता। इसी

स्थानसे आरम्भ करके पर्वतकी वामदिक्की पहाड़की चारों ओर घूमने पर जहां जो देखनेमें आता, उसका विवरण नीचे दिया जाता है—

प्रथमत: पर्वतके निम्नदेशमें एक मन्दिर है। उसके उत्तरांशके पास ही पास दो असम्पूर्ण गुहा-मन्दिर पड़े हैं। यह खूब समझा जाता है कि दोनों गुहायें मानवनिर्मित हैं। आज भी उनमें हथियारोंके निशान बने हैं। गुहाको मन्दिर निर्माणके लिये उपयोगी बनानेको अलग और दीवारसे भिड़ा कर खम्भे तथा छज्जे लगाये गये हैं। इसके सामने बरामदा और भीतर गृह है। बरामदेको चारो ओर वेदी बनी हैं। सम्मुखभागमें तीन स्वतन्त्र स्तम्भ हैं। एतद्व्यतीत पार्श्व भागकी भित्तिसे संलग्न और दो खम्भे खड़े हैं। स्तम्भके ऊपर छतके नीचे नानाविध मूर्तियां खोदित हुई हैं। बाहर वामदिक्को द्वारके उपरिभागमें एक शिल्पलिपि लगी है। स्तम्भोंके मध्य मध्य चार गृहोंके चार द्वार हैं। द्वारोंको सम्मुखभागमें ऊपरको ओर दोनों बगलोंमें दो दो सर्पमूर्तियां बनी हैं। सांप फणा फैलाये हुए हैं। द्वारको अर्धगोलाकार भित्ति पर नानाविध मूर्तियां खुदी हैं। उनका अनेक अंश टूट गया है। अवशिष्ट मूर्तियोंमें एक हस्ती, चार अश्वयुक्त रथ पर एक छत्रधारी राजा और पद्महस्ता कमलेकामिनीके दोनों पार्श्वों पर दो हाथी शुण्डको उठा मानो उनके मस्तक पर जल छोड़ रहे हैं। कहीं बोधिवृक्ष है। उस पर राजछत्र रखा और पास ही जनसमूह खड़ा है। मेहराबके नीचे नाना मूर्तियां हैं। दीवारके ऊपर मध्यभागमें बोधिवृक्ष और स्वस्तिक प्रभृति जैनचिह्न विद्यमान हैं। खोदित लिपिका अधिकांश मिट गया है। पत्थर अति पुरातन हैं। सम्भवत: वह १५ या १६ सौ वर्ष पहलेके होंगे। इस गुहाका नाम अनन्तगुहा (गुफा) है।

उसी स्थान पर पर्वतके निम्नदेशमें एक चतुष्कोण गुहा है। यह दैर्घ्यमें १२ हाथ और प्रस्थमें ११॥ हाथ आती है। पूर्वोक्त अनन्तगुहाकी तरह इसमें भी २ द्वार हैं। भारहुत लिपि-जैसे अक्षर खुदे हैं। भारहुत देखो। बौद्धोंके धरणको चारो ओर सोखचे लगी दरवाजे पर खोदित पद्माकृति है। दूसरी सब बातोंमें यह अनन्तगुहासे मिलता जुलता, केवल अष्टकोणी स्तम्भोंको आकृतिमें ही भेद पड़ता है। बरामदेको कुरसोमें अभ्यन्तरस्थ गृहके स्तम्भ भी अष्टकोणी ही हैं। बरामदेको कुर्सी भीतरी घरकी कुर्सीसे लगभग १५ इञ्च नीची है। अनन्तगुहाकी तरह इसके बरामदेकी चारो तर्फ बेञ्च-जैसी वेदी लगी है। एक स्तम्भका निम्नदेश टूट गया है। ऊपरी कारनिसके नीचे एक एक करके पत्थर निकल पड़े हैं। मन्दिरके अभ्यन्तरमें चन्द्र सूर्य और नाना देवदेवियोंकी मूर्तियां खोदित हैं। स्थान स्थान पर शिलालिपि है। अनेक अक्षर मिट जानेसे आजकल वह अपाठ्य हो गयी है। निर्णय करना बहुत कठिन है—अक्षर कितने दिनके हैं। इस गुहाके निम्नदेशमें और एक ऐसा ही मन्दिर खोदित है।

उपर्युक्त स्थानसे और कियद्दूर चलने पर कोई दूसरी गुहा देख पड़ती है। इसमें अधिक शिल्पांश नहीं है। यह स्वाभाविक है, परन्तु मानवहस्त द्वारा और भी वर्धितायतन हो गयी है। इसीके पास दो प्रकोष्ठविशिष्ट कोई दूसरी गुहा बनी है। इसमें वैसा आडम्बर नहीं देख पड़ता। ऊपर चढ़नेको सुदीर्घ सोपानश्रेणी है। इसीके बगलमें और दो छोटी छोटी गुहायें हैं। बीचमें जगन्नाथदेवकी एक रङ्ग भरी मूर्ति विराजमान है। इसके बाद फिर और एक गुहा है। इसकी भी भग्नदशा है। इसके उपरिभागमें कोई दूसरी गुहा है। ऊपरसे दराज आने और नीचे तक फैल जाने पर इसने खण्डाकृति धारण की है। इसीसे पहाड़का नाम भी खण्डगिरि पड़ा है।

और भी थोड़ी दूर जानेसे एक बड़ी गुहा देख पड़ती है। इसके दो स्तम्भ हैं, सुतरां इसमें ३ प्रकोष्ठ बन गये हैं। यह सब दालान ही दालान है, भीतर घर नहीं, बीचमें एक खोदित लिपि है, जिसका पाठ करना दु:साध्य समझा जाता है। इससे अनतिदूर एक ही में मिली दो गुहायें हैं। इनके बीचमें एक प्राचीर तो है, किन्तु गृहाभ्यन्तरमें एकसे दूसरीको जानेका द्वार लगा है। इसमें भी अनेक खोदित मूर्तियां देख पड़ती हैं। यह मूर्तियां बौद्ध और जैन

देवदेवियोंकी हैं। एक एक स्थानमें युगलमूर्ति विद्यमान हैं। किसी किसीके साथ वृष, हस्ती, अश्व, वानर, पद्म, अश्वत्थ, चक्र और सर्पमूर्ति बनी है। इसके बीच आदिनाथ, अजितनाथ, सम्भवनाथ आदि जैन तीर्थङ्करों और शाक्य बुद्धकी मूर्ति भी है। चित्रोंमें विशेष नैपुण्य देख पड़ता है। इसके निम्नभागमें गणेश, अष्टशक्ति तथा बुद्धोंकी मूर्तियां हैं। गुहाकी चारो ओर वेदी बनी है। यहांसे थोड़ी दूर आगे बढ़ने पर नानाविध मूर्तिशोभित और एक गुहा मिलती है। इसके ऊपर "श्रीमदादित्यकेशरीदेवस्य प्रवर्धमानविजयराज्यस्य संवत्" इत्यादि लिखा है। इसकी तीन ओरों नानाविध मूर्तियां और खोदित शिलालिपियां हैं। उनमें कई समझ पड़ती और कई नहीं पड़तीं। स्थान स्थान पर अनेक रमणीमूर्तियां बनी हैं। उनमें कोई दशभुजा, कोई चतुर्भुजा, कोई अष्टभुजा वा द्वादशभुजा है। कई स्त्रीमूर्तियोंके साथ पुरुषों और उनके वाहनोंकी भी मूर्तियां बनी हैं।

उक्त गुहाके पार्श्वमें और एक गुहा है। इसको भी पहलेकी तरह देखनेसे भली भांति जाना जाता कि पुरानी गुहा टूट जानेसे स्थान स्थान पर पुनर्वार निर्माणकार्य किया गया है। यह दि० जैनोंके आदिनाथका मन्दिर है। आज भी दिगम्बर जैनोंका ही इस पर अधिकार है। यहां चतुर्विंश तीर्थङ्कर और उनके चिह्नादि वर्तमान हैं।

इसी प्रकार पहाड़की चारो तर्फ गुहामन्दिरोंके चिह्न विद्यमान हैं। कहीं कोई सम्पूर्ण, कोई अधूरा और किसीका भग्नावशेष देख पड़ता है। किसी स्थान पर पहाड़के बीच एक जलाशय है। इसकी सोपानावलीका परिसर इतना छोटा पड़ता, कि उससे अवतरण करना दुःसाध्य लगता है। खण्डगिरि देखनेसे अच्छी तरह समझा जाता कि वह दिगम्बर जैनोंका तीर्थस्थान रहा। पहाड़ गुफाओंसे भरा है। ठीक नहीं कह सकते, कब वह गुहायें बनी थीं। जो हो, खण्डगिरि दर्शकोंके देखनेकी एक चीज है।

खण्डघोष—१ बङ्गालके वर्धमान जिलेका एक उपविभाग। यह वर्धमानसे सोनामुखी और बांकुड़ा जानेकी राह पर अवस्थित है। २ उक्त विभागका प्रधान नगर। यह अक्षा० २३° १२´ ३०´´ उ० और देशा० ८७° ४४´ २०´´ पू०में पड़ता है।

खण्डज (सं० पु०) खण्ड इव जायते, जन-ड। १ खण्ड, खांड, शक्कर। २ गुड़।

खण्डजा (सं० स्त्री०) यवासशर्करा, बूरा।

खण्डजोद्भवज (सं० पु०) खण्डज उद्भवो यस्य तस्मात् जायते। यवासशर्करा द्वारा प्रस्तुत खण्डविशेष, पक्की शक्कर, घुटी हुई चीनी।

खण्डतारण—विहारके चम्पारन जिलेका एक नगर।

खण्डताल (सं० पु०) तालविशेष, एकताला। (सङ्गीतदामोदर)

खण्डदेव—एक विख्यात दार्शनिक। इनका अपर नाम श्रीधरेन्द्र था। यह रुद्रदेवके पुत्र और जगन्नाथपण्डितराज तथा शम्भुभट्टके गुरु रहे। १६६५ ई०को इन्होंने काशीधाममें प्राणत्याग किया। इनकी विरचित भाट्टदीपिका, जैमिनीसूत्रकी मीमांसाकौस्तुभनाम्नी टीका और भाट्टरहस्य नामक संस्कृत ग्रन्थ मिलता है। भाट्टदीपिकाकी फिर अनेक टीकायें हुई हैं। उनमें १७०८ ई०की खण्डदेवके शिष्य शम्भुभट्ट कर्तृक रचित 'भाट्टदीपिकाप्रभावली' प्रधान है।

खण्डधार (कुण्डधार) स्थानविशेष, एक जगह। यह गण्डालसे ५ कोस पश्चिम पड़ता है। यहां एक दुर्ग है। वह गण्डाल-सामन्त लाखाजीके अधिकारमें था। १८०८ ई०को अंगरेजोंने उसे जय किया।

खण्डधारा (सं० स्त्री०) कतरी, कैंची, कतरनी।

खण्डन (सं० क्लो०) खड़ि भावे ल्युट्। १ भेदन, काटछांट। २ निराकरण, किसी सिद्धान्तको अप्रमाणित करनेका काम। ३ छेदन, चीरफाड़। (जयदेव) खडि करणे ल्युट्। ४ परमतादि निराकरण-शास्त्रविशेष। इसका पूरा नाम खंडनखंडखाद्य है। श्रीहर्षने इसको प्रणयन किया है। इस ग्रन्थमें सब पदार्थोंकी निरुक्तिके खंडनकी प्रणाली अति सुन्दरभावसे वर्णित है। इसके ४ परिच्छेद हैं। प्रथम परिच्छेदमें प्रमाण तथा प्रमाणाभासकी निरुक्तिका खंडन, द्वितीय परिच्छेदमें हेत्वाभास एवं निग्रहस्थानका निरुक्तिखंडन, तृतीय परि-

च्छेदमें सर्वनामार्थकी निरुक्तिका खंडन और चतुर्थ परिच्छेदमें भाव, अभाव और सत्ता प्रभृति पदार्थोंकी निरुक्तिका खंडन बताया गया है। नैयायिक-शिरोमणि रघुनाथने इसकी टीका रचना की है। यह दोनों न्याय ग्रन्थ भली भांति अभ्यास करने पर विचारनिपुण हो सकते हैं। (त्रि०) ५ खंडक, काटनेवाला।

खण्डन कवि—बुंदेलखंडके एक हिन्दी कवि। इनका जन्म १८२७ ई०को हुआ था। प्रेमियों पर इन्होंने एक अच्छी पुस्तिका लिखी है।

खण्डना (सं० स्त्री०) खडि भावे युच्-टाप्। १ खंडन, कटाई, कटाव। २ छेदन, छिदाई, चीरफाड़।

(खण्डनखण्डखाद्य १ परि०)

हिन्दीमें 'खंडना' क्रियारूपसे काटकूट, चीरफाड़ या तोड़फोड़के अर्थ पर व्यवहृत होता है।

खण्डनीय (सं० त्रि०) खडि-अनीयर्। खंडनयोग्य, काटने लायक। (पञ्चतन्त्र)

खण्डनील (सं० पु०) खंडकर्णालुक, शकरकन्द।

खण्डपत्र (सं० क्ली०) नानाविध पत्रगुच्छ।

खण्डपरशु (सं० पु०) खंडयति शत्रून् खंडः तादृशः परशुर्यस्य, बहुव्रो०। १ शिव। (भारत ७ प० रुद्रमाहात्म्य) २ विष्णु। (भारत १३।१४९।७४) ३ जामदग्न्य। (वीरचरित) ४ खंडामलक भैषज्य।

खण्डपर्शु (सं० पु०) खंडयति शत्रून् इति खंडस्तादृशः पर्शुरस्य, बहुव्रो०। १ परशुराम। २ शिव। ३ चूर्णलेपी। ४ राहु। ५ खंडामलक औषध। ६ भग्नदन्त हस्ती, दांत टूटा हाथी।

खण्डपाड़ा—उड़ीसेका एक देशी राज्य। यह अक्षा० २०° ११´ से २०° २५ उ० और देशा० ८५° से ८५° २२´ पू० बीच अवस्थित है। क्षेत्रफल २४४ वर्गमील है। लोकसंख्या ६९४५० है। खंडपाड़ेके उत्तर महानदी, पूर्व कटक तथा पुरी जिला, दक्षिण पुरी तथा नयागढ़ और पश्चिम दशपाल्ला है। पहले यह नयागढ़का टुकड़ा रहा। २०० वर्ष पहले नयागढ़के किसी राजाने खंडपाड़ामें अपना अलग राज्य बनाया था। यहां राजा लोग अपनेको क्षत्रिय-जैसा बतलाते हैं।

राज्य बहुत ही उपजाऊ जैसा है। अनाजकी खासी पैदावार होती है। कुअरिया और दौका नाम्नी महानदीकी दो शाखायें इस राज्यके भीतरसे होकर निकली हैं। समतल भूमिपर आम्र तथा वटवृक्ष और पहाड़ी जगहोंमें शालका पेड़ खूब देख पड़ता है।

इस राज्यमें ३२५ गांव बसे हैं। इस राज्यकी आमदनी ३००००) रु० और मालगुजारी ४२१२) रु० गवर्नमेण्टको देना पड़ती है। दातव्य चिकित्सालय, स्कूल प्रभृति हैं।

खण्डपाणि (सं० पु०) पुरुवंशीय एक राजा

(विष्णुपु० ४,२१ अ०)

खण्डपाल (सं० पु०) खण्डं पालयति, खण्डपालि-अण्। मोदक, हलवायी।

खण्डपाश (सं० पु०) धातकीपुष्पशर्कराजात मद्य।

खण्डप्रलय (सं० पु०) खंडस्य भूम्यादि खंडस्य प्रलयः, ६-तत्। १ कालविशेष, कयामत। इस समय भूमि प्रभृति भूत पदार्थोंका नाश हो जाता है। ब्रह्माके दिन अवसानको क्षिति, जल, तेज और वायु चार भूत नहीं रहते, किन्तु रात्रिके बीतने पर फिर उपजा करते हैं। ब्रह्माकी रात ही खंडप्रलय कहला सकती है। वैदान्तिक इसको प्राकृतिक लय बतलाते हैं।

हरिवंशमें खण्डप्रलयका विषय इस प्रकारसे कहा है—इकोस युगोंमें एक मन्वन्तर होता है। १४ मन्वन्तरोंमें ब्रह्माका एक दिन है। ब्रह्माका दिन बीतने पर रुद्रदेव संहारमूर्ति धारण करके प्राणियोंका शरीर विनाश आरम्भ करते हैं। देव, दैत्य, यक्ष, राक्षस, किन्नर, देवर्षि, ब्रह्मर्षि, राजर्षि, गन्धर्व, अप्सरा, पशु, पक्षी आदि सकल जातीय प्राणियोंका शरीर विनष्ट हो जाता है। धीरे धीरे नदनदी पर्वत प्रभृति भी मट्टीमें मिलते हैं। (हरिवंश १९८ अ०)

हरिवंशके दूसरे स्थानमें लिखा है, कि खंडप्रलयसे पहले सूर्यका किरण भयानक रूपसे तीक्ष्ण पड़ जाता है। समझ पड़ता है, मानो साथ ही साथ सहस्र सूर्य निकल आये हैं। कड़ी धूपमें नदनदी, समुद्र, कूप, तड़ाग, निर्झर आदि सब जलाशय सूख जाते हैं। पृथिवीको सुखा कर सूर्यकिरण धीरे धीरे रसातलमें घुस उसका जल भी सुखा देता है। इसी समय वायु

भी अतिशय प्रबल हो समस्त पदार्थ विनाश करता है। संवर्तक नामक अग्नि धांय धांय प्रज्वलित होके पर्वत, वृक्ष, गुल्म, लता आदि समस्त भौतिक पदार्थोंको जला डालता है। क्रम क्रमसे सभी भस्मीभूत हो जाते हैं। कोई भौतिक पदार्थ नहीं रहता। केवल एक मात्र हरि ही बचते हैं। (हरिवंश १९९ अ०)

दार्शनिक मतसे पृथिवी जलमें, जल तेजमें, तेज वायुमें और वायु आकाशमें लीन होता है। फिर आकाश और इन्द्रियगण अहङ्कारमें, अहङ्कार महत्तत्वमें और महत्तत्त्व प्रकृतिमें समाता है। उस समय सत्व, रजः और तमोगुणकी साम्यावस्था आती है। इसी अवस्थाका नाम प्राकृतिक लय वा खंडप्रलय है। लय देखो। २ विवाद, विसंवाद, कहासुनी।

जैन शास्त्रानुसार संसारके समस्त पदार्थोंका प्रलय कभी नहीं होता। अवसर्पिणी कालके अंतमें इस भरतक्षेत्रके आर्यखंडमें ही प्रलय होता है। वर्तमान काल अवसर्पिणीका पंचम दुःषमा नामक चल रहा है। उसके बाद छठा दुःषमा दुःषमा आवेगा। उसके अंतमें कार्तिक मासकी अमावस्याके दिन प्रातः काल धर्मका, दुपहरको राजा और अग्निका नाश होगा फिर सब लोग नंगे मत्स्य आदिके मांसको खानेवाले हो जायेंगे। उस समय पुद्गल (पृथ्वी जल आदि) परमाणु रूक्ष होकर सबको दुःखदायी होंगे, मनुष्य पशु पक्षी सब अंधे हो जायेंगे। संवर्तक नामका पवन चलने लगेगा और उससे समस्त पेड़ पर्वत नष्ट भ्रष्ट हो कर मनुष्य आदि मारे जायेंगे। उस समय जो मनुष्य विजयार्ध पर्वतस्थ गंगा सिंधु नदियोंकी वेदी व छोटे २ बिलोंमें घुस जायगे व विद्याधर और देवों द्वारा दूसरी जगह लेजाये जायेंगे वही बचे रहेंगे। उन बचे हुये स्त्रीपुरुषोंसे ही फिर इस क्षेत्रमें मनुष्य पशुओंकी सन्तति चलेगी।

खण्डफण (सं० पु०) दर्वीकर सर्प, किसी किस्मका सांप।

खण्डभट्ट—संस्कारभास्कर नामक संस्कृत ग्रन्थप्रणेता। इनके पिताका नाम मयूरेश्वर था।

खण्डमण्डल (सं० क्ली०) १ कटा हुआ घेरा, जो चक्कर पूरा न हो। २ काटकूट, मटियामेट।

खण्डमय (सं० त्रि०) खंड मयट्। टुकड़ा टुकड़ा। (मर्तृहरि ३।१६)

खण्डमेरु (सं० पु०) पिङ्गलभेद। इसमें मेरु वा एकावली बिना बनाये ही उसका कार्य सिद्ध हो जाता है।

खण्डमोदक (सं० पु०) खंड इव मोदयति, मुद-णिच्-ण्वुल्। सिताखंड, बताशा, गट्टा आदि।

खण्डर (सं० त्रि०) खंड अश्मादित्वात् र। १ खंड सन्निहित (देशादि)। २ यवासशर्करा, बताशा।

खण्डराज दीक्षित—गोदालहरी नामक संस्कृत काव्यकार।

खण्डराजी (सं० स्त्री०) वाकुची, एक ओषधि।

खण्डल (सं० पु०-क्ली०) खंडं लाति, खंड-ला-क। खंडधर, खंड धारण करनेवाला। अर्धादि गणान्तर्गत आनेसे यह शब्द उभय लिङ्ग होता है।

खण्डलवण (सं० क्ली०) खंड्यते, खडि कर्मणि घञ्, खंडश्चासौ लवणश्चेति, कर्मधा०। विड्लवण, काला नमक।

खण्डव, खण्डल देखो।

खण्डवल्ली (सं० स्त्री०) कांडवल्ली, करेला।

खण्डवा—मध्यप्रदेशके नीमार जिलेका प्रधान नगर या सदर। यह अक्षा० २१° ५०´ उ० और देशा० ७६° २२´ पू०में बम्बईसे ३५३ मील पड़ता है। यहां ग्रेट इण्डियन पेनिसुला और मऊकी राजपूताना मालवा रेलवेकी शाखाका जङ्क्शन है। लोकसंख्या प्रायः बीस हजार होगी।

यह एक अति प्राचीन स्थान है। कनिङ्गहम साहब इसे टलेमिका कहा Kognabanda समझते है। ११वीं शताब्दीके आरम्भमें अल्‌बरूनीने भी इसका उल्लेख किया है। १२वीं शताब्दीको खंडवा जैनोंकी पूजार्चाका प्रधान स्थान रहा। नगरमें चार पुख्ता तालाब बने हैं। फरिश्ता नामक ऐतिहासिकने लिखा है कि १५१६ ई०को वह मालवाके एक स्थानीय सूबेदारकी राजधानी था। १८०२ ई०को जसोवन्तराव होलकरने खंडवा जलाया और १८५८ ई०को तांतिया टोपीने भी फिर कुछ कुछ उसको भस्मीभूत बनाया।

१८६७ ई०को यहां म्युनिसपालिटी पड़ी थी। मोघघाटसे नगरमें पानी आता है। यह रूईके व्यापारका

केन्द्रस्थान है। कपास औंटने और गांठ बांधनेके कई कारखाने हैं। यहां गांजेका बड़ा गुदाम है।

खण्डविन्दु (सं० पु०) सर्पजातिभेद, कौड़ियाला।

खण्डशर्करा (सं० स्त्री०) खण्ड इव शर्करा। शर्करा, चीनी।

खण्डशाखा (सं० स्त्री०) मण्डिपवल्ली, कोई बेल।

खण्डशीला (सं० स्त्री०) दुष्टा नारी, वेश्या, रण्डी।

खण्डशुण्ठी (सं० स्त्री०) औषधविशेष, किसी किस्मकी बनी हुई सोंठ। यह अम्लपित्त रोगमें हित है। प्रस्तुत प्रणाली इस प्रकारसे बतायी जाती है—शुण्ठीचूर्ण ३२ तोला, शर्करा १२८ तोला, घृत ६४ तोला और दुग्ध ८ शरावक एक होमें पकाते हैं। पाक घनीभूत होने पर काण, धात्री, दालचीनी, इलायची, तेजपत्र, वंशलोचन, जीरा, काला जीरा, हड़, मोथा तथा धनियाका चूर्ण बारह बारह मासे, मरिचचूर्ण ६ मासा, नागकेसर ६ मासा और मधु ३ पल या २४ तोला डालनेसे खण्डशुण्ठी बन जाती है। इसको शुण्ठीखण्ड भी कहते हैं। (रसरत्नाकर)

खण्डसर (सं० पु०) खण्ड इव सरति, सृ-अच्। यवास शर्करा, चीनी।

खण्डसार, खण्डसर देखो।

खण्डा (सं० स्त्री०) खण्ड, खांड़।

खण्डाइत—उड़ीसेकी एक योद्धजाति। खण्ड वा खड्गास्त्र धारण करनेसे इन्हें खण्डाइत कहा जाता है। यह अपनेको क्षत्रिय-सन्तान-जैसा बतलाते हैं।

पूर्वको उड़ीसाके राजा अनेक योद्धा रखते थे। उनको जमीन् खाने पानेके लिये दे दी जाती थी। इन सकल सैनिकोंके उच्चपदस्थ कर्मचारी कुलीनों और निम्नस्थ पार्वत्य वा देशस्थ सामान्य लोगोंसे सङ्गृहीत होते थे। उत्तर भारतमें क्षत्रिय एक स्वतन्त्र जाति जैसे परिगणित हैं, यह वैसे नहीं, इनमें नाना श्रेणियां रहती हैं। आपाततः जैसा देखनेमें आता, उससे समझा जाता है कि खण्डाइत दक्षिणके भूयाओंके ही वंशधर हैं। किन्तु इनका आचार व्यवहार कितना ही क्षत्रियों जैसा है। छोटानागपुरके खण्डाइत कहते हैं कि वह २० पुरुष पहले उड़ीसेसे वहां पहुंचे थे। इनमें आजकल भी उड़िया भाषा प्रचलित है। यह अपनेको भुइनां पायक बतलाते हैं। सिंहभूमके भुइयांओंमें जिस प्रकार उत्तर दक्षिण और पश्चिम कवाट आदि उपाधि पाते, उड़ीसेके खण्डाइतोंमें भी देखे जाते हैं। ८० वर्ष पहले उड़ीसेके खण्डाइतोंमें भुइयां उपाधि चलता था।

छोटानागपुरके खण्डाइतोंमें निम्नलिखित उपाधि मिलते हैं—अमावत, भड़, बोहदार, कोतवार, गोणभू, नायक, पात्र, प्रधान, महापात्र, मांझि, मिरदाह और रावत। उड़ीसेके खण्डाइतोंके यह उपाधि हैं—उत्तर कवाट, दक्षिण कवाट, गड़नायक वा सिंह, जेना, दौवारिक, नायक, पश्चिम कवाट, प्रहराज, बाघा, बाहुबलेन्द्र, महारथ वा महारथी, मल्ल, मल्लराज, रणसिंह, रावत, राई, सामन्त, सेनापति। इनमें फिर बड़घरी और छोटघरी नामक श्रेणीविभाग भी हैं। बड़घरियोंमें दशघरिया लोग सिंहभूमके सरन्द प्रदेश, पाच घरिया छोटानागपुर तथा पचासघरिया, गाङ्गपुर, पन्द्रह घरिया गाङ्गपुर, बोनाई, बामरा तथा सम्बलपुर अञ्चल और छोट घरिया छोटानागपुर अञ्चलमें अधिकांश रहते हैं। सिवा इसके चासा वा ओड़ खण्डाइत तथा महाजनिक वा श्रेष्ठ खण्डाइत बालेश्वर और कटक, भञ्ज खण्डाइत तथा हरिचन्दन खण्डाइत पुरी और खण्डाइत पायक और श्रेष्ठ खण्डाइत उड़ीसे करदराज्योंमें देख पड़ते हैं। खण्डातोंमें कछुवा, कदम, मोर, नाग, साल (मत्स्य) प्रभृति श्रेणियां भी होती हैं।

पूर्वोक्त बड़घरियोंमें आदान प्रदान होता है। पचास घरियों और पन्द्रह घरियोंको कन्या दश घरियों तथा पांच घरियोंमें व्याही जानेसे उनका मान टूटता है। फिर स्वश्रेणीके लोग उनके हाथसे अन्नग्रहण नहीं करते। दश घरिया और पांच घरिया पचास घरियोंका बनाया भात खा लेंगे, परन्तु यह उनके हाथका अन्न न छुवेंगे। फिर पचास घरिया पन्द्रह घरियोंका अन्न खाते, किन्तु पन्द्रह घरिया पचास घरियोंमें उन्हींके भातसे हाथ लगाते जो अविवाहित हैं। छोट घरिया कुक्कुटमांस भक्षण और मद्यपान करते हैं। बड़घरियों और छोट घरियोंमें आदान प्रदान नहीं चलता।

उड़ीसेके खण्डाइतोंमें महानायक या श्रेष्ठ खण्डा-

इतोंने बड़ी बड़ी जागीरें पायी हैं। पूर्वकालकी यह सैनिक-विभागमें सेनापतिका कार्य करते थे। चासा खण्डाइत पायक सेनाविभागको निम्नश्रेणीमें नियुक्त रहे। यह आजकल चौकीदारी और किसानी करते हैं। ब्राह्मणोंकी तरह महानायकों या श्रेष्ठ खण्डाइतोंका भरद्वाज, कौण्डिल्य, नागस आदि गोत्र होते हैं।

खण्डाइतोंमें अधिकांश कन्याओंका बड़ी अवस्थामें विवाह करते हैं। उच्चश्रेणीके लोगों अर्थात् जागीरदारोंकी कन्याओंका विवाह अल्पवयसमें ही हो जाता है। किन्तु जब तक वह वयस्था नहीं होतीं, स्वामी सहवास करने या ससुराल जानेसे अलग ही रहता है। विवाह प्राजापत्य मतसे सम्पन्न होता है। हाथमें कुश वा दूर्वाघास रखना और गांठ जोड़ देना ही विवाहका प्रधान लक्षण है। बहुविवाह निषिद्ध नहीं। फिर भी प्रथमा पत्नी यदि वन्ध्या वा रुग्णा नहीं होती, तो विवाहकी कम ठहरती है। छोटानागपुरके खण्डाइतोंमें विधवाविवाह प्रचलित है। परन्तु विधवाविवाहमें भी प्रथम विवाहका सम्पर्क निषेध माना जाता है। पतिसे बड़ी उमरके लोगोंके साथ विवाह निषिद्ध और देवरके साथ प्रशस्त होता है। उड़ीसेके बड़े खण्डाइतोंमें विधवाविवाह करनेकी रीति नहीं, किन्तु निम्नश्रेणीमें वैसा हो जाता है। विवाहके विच्छेदका भी विधान है। पत्नी व्यभिचारिणी, अवाध्य वा अन्य गुरुतर दोषाश्रित होने पर स्वामी पञ्चोंसे आवेदन करके उनकी सम्मतिके अनुसार विवाहबन्धन तोड़ सकता है। किसी किसी स्थल पर तलाक देनेसे एक वत्सर काल पत्नीको खिलाना पिलाना पड़ता है। निम्नश्रेणीकी परित्यक्त पत्नी सगाई कर सकती है।

इनमें अधिकांश लोग वैष्णव हैं, शाक्त और शैवोंकी संख्या अल्प है। शासनी ब्राह्मण इनके पुरोहित होते हैं। फिर सेवक वा दण्डा चासाओं (किसानों)-के पुरोहित हैं। शासनी सेवकोंसे श्रेष्ठ समझे जाते हैं। उड़ीसेमें ग्राम्य देवी और छोटानागपुरमें बड़े पहाड़ प्रत्येक गृहस्वामीके उपास्य हैं। पूजामें बलिदानादि हुआ करता है। उड़ीसेके खण्डाइतोंमें तरवारिका विशेष सम्मान है। दशहराके समय गृहस्थ समस्त अस्त्रादि सुसज्जित करके पुष्पचन्दनादिसे पूजा करता है। मृत्युके पीछे इनका देह सत्कार अग्नि और यथारीति श्राद्ध आदि होता है।

उड़ीसेके राजपूतोंकी संख्या बहुत थोड़ी है। जातिमें वही श्रेष्ठ जैसे गण्य होते हैं। खण्डाइत उनके अव्यवहित निम्नमें परिगणित हैं। श्रेष्ठ खण्डाइत विवाहके समयमें यज्ञसूत्र ग्रहण करते हैं। करणोंके साथ कभी कभी इनका आदान प्रदान हो जाता है। किसानोंमें यह बात नहीं। फिर भी ब्राह्मण इनके हाथका पानी पी सकते हैं। यह किसान हैं, गोड़ग्वालोंके हाथकी मिठाई वगैरह खा लेते हैं। छोटानागपुरके ब्राह्मण बड़घरियोंके हाथका जल ग्रहण करते हैं। वहां छोट घरियोंके हाथका पानी अशुद्ध समझा जाता है। कहते हैं, उड़ीसेसे जाकर उन्होंने विरू, वासिया, बेलसिरां, दिम्बा, गोवरा, लाकरा, लोधमा और श्रीपुर नामक आठ गढ़ अधिकार किये थे। किसी समय उन्हें सैनिक कर्मके लिये कई एक परगने जागीरकी तौर पर मिले। अङ्गरेजोंके अधिकारमें पुरुषानुक्रमकी वह सम्पत्ति हस्तान्तरित हो गयी। परन्तु उड़ीसे खण्डाइतोंने अभी अपना स्वत्व नहीं छोड़ा है। बड़े बड़े घर बेलगान जमीन रखते हैं। निम्नश्रेणीके लोगोंके पास भी बेलगान जमीन है, परन्तु उन्हें गोड़ैती और चौकीदारी करनी पड़ती है। कोई मजदूरी करके ही अपना कार्य चलाता है। अस्त्रधारी खण्डाइत खेती नहीं करते।

खण्डाभ्र (सं० क्ली०) खण्डञ्च अभ्रञ्चेति, कर्मधा०। १ खंड खण्ड मेघ, बदली, बादलके टुकड़े। खण्डः अभ्रमिव। २ दन्तरोगविशेष, दांतकी कोई बीमारी।

खण्डामलक (सं० क्ली०) १ आमलकचूर्ण, आंवलेकी बुकनी। २ आमलकीखंड, आंवलेका मुरब्बा। ३ परिणामशूलका औषधविशेष, पेटके दर्दकी कोई दवा। विष्टनिष्पीड़ित पुराण कुष्माण्डरस ५० पल और घृत १६ पल एकत्र भूनना चाहिये। फिर शर्करा ५० पल, आमलकरस ३२ पल, वारि १६ शरावक और कुष्माण्डरस ३२ पल इसमें डाल अवलेह जैसा पाक करते हैं। पीछे पिप्पली, जीरक तथा शुण्ठीचूर्ण दो-दो पल, मरिचचूर्ण १ पल और तालीश, धान्यक, दालचीनी,

इलायची, तेजपत्र, नागकेशर और मुस्तकचूर्ण दो दो तोला डालनेसे यह औषध प्रस्तुत हो जाता है।

(सारकौमुदी)

खण्डाल—बम्बई प्रदेशके पूना जिलेका एक ग्राम। यह अक्षा० १८° ४६´ उ० तथा देशा० ७३° २२´ पू०के बीच पड़ता है। सह्याद्रिकी चूड़ासे खण्डाल १३० हाथ नीचे है। इसकी भूमि उत्तर-पश्चिमदिक्‌को ढलकर परह और उलहा नदीकी ओर चली गयी है। खण्डालकी चारों ओर पर्वतमाला है। बम्बईके भूतपूर्व गवर्नर एलफिनष्टोन साहब इसका सौन्दर्य देख मोहित हुए थे। पर्वतके अंशविशेषको उलहा, राजमाची, ढाकगिर या तुङ्गाल, इन्द्राणी, भामा, उम्बारी, नागफनी* आदि कहते हैं। इसके पास ही दो जलप्रपात हैं। एक स्थान पर पानी २०० हाथ नीचे गिरता है। पर्वतमें खोदित गम्भीरनाथका मन्दिर देखने योग्य है। यहां रेलवेका एक ष्टेशन बन गया है और तबसे बसती बढ़ रही है। अधिवासियोंमें अधिकांश महाराष्ट्र ब्राह्मण हैं। लोक-संख्या प्रायः २३२२ है। यहां स्कूल, होटल, गिर्जा प्रभृति हैं।

खण्डाम्र (सं० क्ली०) वाजीकरणौषधभेद, कमजोरीकी एक दवा। सुपक्व मधुर आम्ररस ६४ शरावक, शर्करा ८ शरावक, घृत ४ शरावक, शुण्ठीचूर्ण ३२ तोला, पिप्पलीचूर्ण १६ तोला और जल ८ शरावक एकत्र पकाना चाहिये। खण्डपाक सिद्ध होने पर तेजपत्रचूर्ण ३२ तोला और ग्रन्थिपर्ण चिवुक, मस्तक, धान्यक, जीरकद्वय, त्रिकटु, जातीफल, दालचीनी, इलायची तथा नागकेशरचूर्ण आठ आठ तोला डालते हैं। फिर ठण्ढा हो जानेसे ४ तोला मधु मिला देनेसे यह औषध तैयार होता है। (वैद्यकनिघण्टु)

खण्डाली (सं० स्त्री०) खण्ड पद्मादिखण्डं आलाति, आ-ला-क ततो गौरादित्वात् ङीष्। १ सरोवर, तालाब। खण्डं दम्भनखादिखण्डं आलाति। २ कामुकी स्त्री, छिनाल औरत। ३ तैलपरिमाणविशेष, तेलकी एक नाप।

* अङ्गरेज इसको 'ड्यूक्स नोज' (Duke's nose) अर्थात् ड्यूककी नाक कहा करते हैं। ड्यूक अव वेलिङ्गटनकी नासिकासे इस पहाड़की तुलना की जाती है।

खण्डिक (सं० पु०) खण्डोऽस्यास्ति, खण्ड-ठन्। १ कक्ष, कोख। २ कलायविशेष, चटरी। इसका अपर नाम त्रिपुट है। खण्डिक लघु, शीतमधुर, सकषाय, विरूक्षण और पित्त तथा श्लेष्मा पर उपकारी होता है। (चरक) ३ कोई ऋषि। इनके पिताका नाम उद्दरि रहा। (शतपथब्रा० ११।८।४।१) (त्रि०) ४ क्रुद्ध, नाराज।

खण्डिका (सं० स्त्री०) खण्डशर्करा, खांड़।

खण्डिकादि (सं० पु०) खण्डिक आदिर्यस्य, बहुव्री०। एक पाणिनीयगण। इसके उत्तर समूहार्थमें अञ् प्रत्यय लगता है। खण्डिकादि गणमें निम्नलिखित शब्द परिगणित हैं—खण्डिक, वड़वा, क्षुद्रक (मालव शब्दके परस्थित), सेना (संज्ञा अर्थमें), भिक्षुक, शुक, उलूक, श्वन्, अहन्, युगवरत्र और हलबन्ध।

खण्डित (सं० त्रि०) १ भिन्न, अलग। २ छिन्न, कटा हुवा। ३ द्विधाकृत, दो टुकड़े किया हुआ। इसका संस्कृत पर्याय—छिन्न, लून, छित, दित, छेदित, वृक्ण और वृत्त है।

"चन्द्रे कलङ्कः सुजने दरिद्रता विकाशलक्ष्मीः कमलेषु चञ्चला।
सुखे प्रसादः सधनेषु सर्वदा यशो विधातुः कथयन्ति खण्डितम्॥"

(शब्दार्थचिन्तामणि)

४ खण्डिताङ्ग, हीनाङ्ग, टूटाफूटा, धर्मशास्त्रकार शातातपके मतमें दुष्टवादी परजन्ममें खण्डिताङ्ग होता है। इस पाप प्रायश्चित्तके लिये ब्राह्मणको २ पल रौप्य और दो घट दुग्ध दिया जाता है। (शातातप) कोई कोई संग्रहकार 'खण्डित' के स्थल पर खण्डिक पाठ करते हैं।

खण्डितकर्ण (सं० पु०) खंडकर्णालु, शकरकन्द।

खण्डिता (सं० स्त्री०) खण्डित-टाप्। किसी प्रकारकी नायिका। किसी नायिकाका पति जब अपर कामिनी-के सम्भोगचिह्नसे चिह्नित हो उसके पास जाता, तो उस नायिकाका हृदय अतिशय ईर्ष्याकलुषित दीखता है। पण्डित लोग उसी नायिकाको खण्डिता कहते हैं। खण्डिता नायिकामें अस्फुट आलाप, चिन्ता, सन्ताप, दीर्घनिश्वास, तूष्णीम्भाव और अश्रुपातादि चिह्न प्रकाशित होते हैं।

खण्डिनी (सं॰ स्त्री॰) खंडोऽस्या अस्तीति, खंड-इनि-ङीप्। यद्वा खण्डयति आत्मानं द्वीपपर्वतसमुद्रादिव्यवच्छेदेन, खडि-णिनि-ङीप्। पृथिवी, जमीन्।

खण्डिम (सं॰ पु॰) खंड भावे इमनिच्। खंडता, टुकड़े टुकड़े होनेकी हालत।

खण्डी (सं॰ त्रि॰) खंडयति, खड़ि-णिनि। १ खंडक, टुकड़े करनेवाला। खंडोऽस्यास्ति, खंड-इनि। २ खंडयुक्त, टुकड़ेवाला। (पु॰) खंडयति आत्मानं द्विदलरूपेण। ३ वनमुद्ग, जङ्गली मोठ।

खण्डी (सं॰ स्त्री॰) खड़ि-अच् गौरादित्वात् ङीष्। वनमुद्ग, जंगली मोठ।

खण्डीर (सं॰ पु॰) अपकृष्टा-खंडो शुंडादित्वात् रः। पीतमुद्ग, सोनामूंग।

खण्डु (सं॰ त्रि॰) खंडयति, खड़ि-उण्। खंडक, टुकड़े करनेवाला। यह शब्द परोहणादि गणान्तर्गत है। इसके उत्तर चतुरर्थमें वुञ् प्रत्यय होता है।

खण्डुल—एक पेड़। इससे गोंद जैसा रस निकलता है। गाय बछड़ेको बीमार होनेसे इसकी पत्ती खिलायी जाती है। खंडुलकी लकड़ी बहुत कोमल होती है। छालसे रस्सी बनती है। यह वृक्ष सिंहल और दाक्षिणात्यमें ही अधिक देख पड़ता है। इसके पुष्पमें एक प्रकार बीज रहता है। उसको लोग आदरसे खाते हैं। पुष्पके छिल्कमें कण्टक और मध्य मध्य छिद्र होते हैं। इसकी छाल कषाय और सङ्कोचगुणविशिष्ट है, मुखमें डालनेसे लाल रङ्ग देती है। ग्रीष्मकालको इससे अपने आप दूध निकला करता है। उसे विलायत भेजते हैं। दूध देखनेमें स्वच्छ और हरिद्राभ होता है। वह निकलने पर कुछ कड़ा हो जाता, परन्तु पानीमें भिगोनेसे फूल उठता और नर्म पड़ता है।

खण्डेराव गायकवाड़—बड़ोदेके एक राजा। १८५६ ई॰को १९वीं नवम्बरको पुत्रहीन राजा गणपतिराव गायकवाड़के मरने पर उनके भ्राता खण्डेराव बड़ोदाके सिंहासन पर बैठे थे। थोड़े दिन पीछे ही राज्यमें सिपाहियोंका विद्रोह आरम्भ हुवा। उस समय इन्होंने यथासाध्य अंगरेजोंकी सहायता की थी। बलवा ठण्डा पड़ जाने पर अंगरेजोंने खण्डेराव पर विशेष अनुग्रह प्रकाश किया। पहली सन्धिके अनुसार इन्हें अंगरेजोंको गुजराती अश्वारोही सेनाके व्ययको प्रति वर्ष ३ लाख रुपया देना पड़ता था, परन्तु १८५८ ई॰ की १४वीं जूनके पत्रमें इस व्ययभारसे अव्याहति दी गयी। १८६२ ई॰को ११वीं मार्चको अंगरेजोंसे इन्होंने जो सनद पायी, उसमें गायकवाड़-राजवंशके लिये पुत्राभाव पर दत्तक ग्रहणकी अनुमति आयी है। फिर सन्धिमें गवर्नमेण्टने गायकवाडको 'हिज हाइनेस' (His Highness) उपाधिसे सम्बोधन भी किया है।

१८६३ ई॰को सुन पड़ा कि कोई उनके प्राण विनाशकी चेष्टा करता है। सन्धानसे जाना गया कि वह इनके भाई मल्हाररावका कार्य रहा। मल्हारराव इसी पर कारागारमें डाल दिये गये और खण्डेरावको जीवित अवस्थामें बाहर निकल न सके।

किसी सिपाहीको अपना विद्रोही होने पर इन्होंने हाथीके पैरके नीचे दबा कर मारनेका आदेश किया था। इसीसे अंगरेज सरकार इन पर कुछ विरक्त हुई। १८६७ ई॰को खण्डेरावने एक मन्त्री रखना चाहा था। किन्तु बम्बई गवर्नमेण्टने इन्हें स्वेच्छासे मन्त्री इसलिये नियुक्त न करने दिया, कि पहले अंगरेजोंसे उसकी बाबत कुछ कहा सुना न गया था। शेष अवस्था पर शायद यह किसी कदर अमितव्ययी और विलासप्रिय बन १८७० ई॰को २८वीं नवम्बरको कालमुखमें पतित हुए।

खण्डेराव होलकर—इन्दोरके प्रथम राजा। यह मल्हाररावके पुत्र रहे। १७५४ ई॰को सूर्यमल जाटसे डीगमें युद्ध करते समय खण्डेराव निहत हुए। मालेराव नामक इनके एक पुत्र रहे। सुप्रसिद्ध अहल्याबाई इन्हीं खण्डेरावकी पत्नी थीं। मल्हारराव देखो।

खण्डेराय—१ परशुरामप्रकाश नामक स्मृतिसंग्रहकार। यह जातिके शाकद्वीपी ब्राह्मण, नीलकण्ठके कनिष्ठ भ्राता और नारायण पंडितके पुत्र रहे। परशुरामके आदेशसे निज ग्रन्थ रचना करने पर इन्होंने उसका नाम 'परशुरामप्रकाश' रखा। ग्रन्थका दूसरा नाम 'आचारोल्लास' है। २ सुभाषित-सुरद्रुमनामक संस्कृत ग्रन्थकार। इनका अपर नाम वासवयतीन्द्र था।

खण्डेल—राजपूताना-जयपुर राज्यकी तोरावती निजामतका एक क्षुद्र राज्य और उसका बड़ा शहर। यह नगर अक्षा० २७° ३७′ उ० और देशा० ७५° ३०′ पू०में जयपुर शहरसे कोई ५५ मील उत्तर-पश्चिम अवस्थित है। इसकी लोकसंख्या प्रायः ८१५६ है। खण्डेल अपनी रंगी हुई चीजों और खिलौनोंके लिये प्रसिद्ध है। इसमें एक दुर्ग भी विद्यमान है। खण्डेल राज्यका प्रबन्ध २ राजा करते और जयपुर-दरबारको ७२५५०) रु० कर देते हैं।

खण्डेलवाल जैन—खंडेला नगरमें सूर्यवंशी चौहान खंडेलगिरि राज्य करता था। उस समय जिनसेनाचार्य ५०० मुनियों सहित विहार करते हुए इस (खंडेला) नगरके उद्यानमें आ कर ठहरे। उक्त नगरकी अमलदारीमें ८४ गांव लगते थे। दैववश कुछ दिनोंसे संपूर्ण राजधानीमें प्लेग और हैजा अत्यन्त फैल रहा था जिससे हजारों आदमी मर चुके थे, और मर रहे थे। रोगके प्रकोप और मरीको देख कर राजा बहुत भयातुर हो अपने ब्राह्मण गुरु तथा ऋषियोंके पास पहुंचा। हाल सुन कर उन ब्राह्मण गुरु और ऋषियोंने उनको नरमेधयज्ञ करनेकी आज्ञा दी और कहा कि, इसीसे यह उपसर्ग दूर होगा। इस पर राजाने पियादोंको एक मनुष्य पकड़ लानेकी आज्ञा दी। पियादे ढूढ़ते ढूढ़ते श्मशानमें पहुंचे, वहां एक दि० जैन मुनि तपस्या कर रहे थे। पियादे उन्हें ही पकड़ लाये। उनको नहला धुलवा कर वस्त्राभूषण पहरा कर यज्ञशालामें उपस्थित किया। मुनि महाराजने उपसर्ग जान कर मौन धारण कर लिया था। आखिर वेदोक्तमन्त्र पढ़ कर पुरोहितने उन्हें हवनकुंडमें स्वाहा कर दिया। परन्तु इससे मरी रोग जरा भी न घटा, वल्कि दिन दूना रात चौगुना बढ़ने ही लगा। नाना तरहके उपद्रव, अग्निदाह, अग्निवृष्टि और प्रचंडपवन (आंधी) चलने लगी। प्रजा अत्यन्त व्याकुल हो राजाके पास आकर रोने धोने लगी। राजा भी चिन्ताके मारे वेहोश हो गया, मूर्छाके होते ही राजाने स्वप्नमें उन दिगम्बर मुनिको देखा, जो कि अग्निकुंडमें स्वाहा किये गये थे। उस ही दिन वह अमीर उमरावोंके साथ नगरके वाहर निकला और वहीं पहुंचा, जहां ५०० मुनि सहित जिनसेनाचार्य विराजते थे। वहां दिगम्बर मुनियोंको ध्यानारूढ़ देख कर उसे बड़ा विस्मय हुआ, वह तुरन्त ही भक्तिवश होकर उनके चरणोंमें गिर पड़ा और नगरमें शान्ति हो ऐसी प्रार्थना करने लगा। इसके विनययुक्त और गदगद कंठसे कहे हुए वचनोंको सुनकर जिनसेन आचार्यने कहा—"हे राजन्! तू दया धर्मकी वृद्धि कर"। राजा बोला—"हे महाराज, मेरे देशमें उपद्रव क्यों हो रहा है?" तब उन अवधिज्ञानके धारक आचार्यने कहा—"हे राजन्! तू और तेरी प्रजा मिथ्यात्वसे अन्धे हो कर जीवहिंसा करने लगी हैं तथा मांसभक्षण और मदिरा पान कर अनेक पापाचरण करने लगी हैं, इसीलिए तेरे देशमें महामारी फैली थी, और उसका विशेष बढ़नेका कारण यह है कि, तूने शान्तिके बहानेसे नरमेधयज्ञमें दिगम्बर मुनिका होम कर सब प्रजाको कष्टमें डाला। बस इसी लिए और दूसरे भी उपद्रव फैल रहे हैं। तुझे यह भी स्मरणमें रहे कि, वर्तमानमें जो जीवहिंसासे अनेक उपद्रव हो रहे हैं यह तो एक सामान्य बात है, इसकी विशेषता तो तुझे दूसरे भव (परलोक)में विदित होगी, अर्थात् दूसरे भवमें तू नरकादिके महा कष्ट भोगेगा। क्यों कि जीवहिंसाका फल कठोर ही होता है।" मुनिके ये वचन सुन कर राजाने अपने किये हुये पापके लिये बड़ा पश्चात्ताप किया और मुनिसे सत्यधर्म पूछा; तब दिगम्बराचार्य बोले—"हे राजन्! बुरे कामोंसे अच्छे फलकी प्राप्ति कदापि नहीं हो सकती। तू हिंसा करना छोड़ दे। अपने देशमें हिंसात्मक सब काम वन्द करा दे। पंच अणुव्रत धारण कर सम्यक्त्वी वन कर सुखी हो। इस उपदेशको सुन कर राजाको बड़ा आनन्द हुआ। जिनमन्दिरोंमें पूजा और शांति-विधान कराया; तथा खुद भी उसमें शामिल हुआ। उपद्रव धीरे धीरे शांत होने लगा। बस, उसी समय राजाने चौरासी गोत्रों सहित (८३ उमराव और १ खुद, इस प्रकार ८४) दि० जैन धर्म धारण किया। ऊपर कहे हुए ८४ गांवोंमेंसे ८२ गांव राजपूतोंके और २ गांव सोनारोंके थे। ये ही लोग चौरासी

गोत्रवाले सरावगी (दिगम्बर जैन धर्मके धारक) कहाये। इन गांवोंके अनुसार ही गोत्रोंके नाम रक्खे गये। राजाका साह गोत था। येही खंडेलवाल जैन हैं।

(जै॰ सं॰ शि॰ ६७५)

खण्डेलवाल बनिया—वैश्य जातिभेद। इनकी उत्पत्ति खंडेलवाल ब्राह्मणों, खण्डु ऋषि तथा खंडेल स्थानके अधिवास आदि कई प्रकारसे बतलायी जाती है। फिर एक विद्वान्‌ने कहा है—

चार क्षत्रिय भाई थे। उन्होंने एक दिन शिकार करने जा जङ्गलमें किसी महात्माका पालू हरिण मार डाला। महात्मा उन्हें शाप देने लगे। उस समय उन्होंने महात्माके कहनेसे क्षत्रियत्व परित्याग करके वैश्यत्वको ग्रहण किया था। खंडेलवाल बनिये ७२ गोत्रोंमें विभक्त हैं। जयपुरमें इनकी संख्या अधिक है। बहुतसे खंडेलवाल जैन सम्प्रदायभुक्त हैं।

खण्डेलवाल ब्राह्मण—एक प्रकारके गौड़ ब्राह्मण। यह जयपुरमें अधिक रहते हैं। इनका खानपान छहो ज्ञातियोंमें चलता, परन्तु आदान प्रदान अलग रहता है। किसी किसीके कथनानुसार 'खंडेल' के अधिवासी होनेसे ही वह खंडेलवाल कहलाये। एक विद्वान्‌ने इन्हें खण्डु ऋषिका सन्तान भी बतलाया है। इनके ८४ भेद तक मिलते हैं।

खण्डोपला (सं॰ स्त्री॰) खण्डशर्करा, चीनी।

खण्डोया (खंडवा)—मध्यभारतके नीमार जिलेका प्रधान-नगर। यह अक्षा॰ २१° ३१´ एवं २२° २०´ उ॰ और देशा॰ ७६° ४´ तथा ७६° ५९´ पू॰ पर अवस्थित है। क्षेत्रफल २०४६ वर्गमील है। लोकसंख्या २ लाखके करीब है। इस नगरमें एक जिला और ४३० गांव लगते हैं। पहले भारतके उत्तर और पूर्वभागसे दाक्षिणात्य जानेको यहां राह चलना पड़ता था। जी॰ आई॰ पी॰ रेलवेका यहां एक ष्टेशन है। प्रसिद्ध ऐतिहासिक टलेमिने खंडवेका नाम 'कम्बन्द' लिखा है। अबू-रेहान्‌की 'तौवरीख हिन्द' किताबमें यह कण्डरोहा नामसे वर्णित है। आजकल शहरमें दो बड़े रास्ता हैं। बीचमें चौक पड़ता है। सड़ककी दोनों तर्फ दो मञ्जिले मकान खड़े हैं। सिवा इसके दूसरी छोटी छोटी गलियां भी हैं। पहाड़ पर निर्मित होनेके कारण यह पार्श्वस्थ स्थानोंसे ऊंचा है। नगरके उत्तर-पश्चिम एक समचतुष्कोण पुष्करिणी है। उसका एक एक बाहु ६० हाथ लम्बा होगा। इस तालाबको पद्मकुण्ड कहते हैं। इसके पार्श्वमें प्रस्तरनिर्मित प्राचीर है। प्राचीर-में स्थान स्थान पर आले (तिखाल) जैसी बड़ी बड़ी जगहें हैं। इनके ऊपर छोटी छोटी शिलालिपि देख पड़ती है। उसमें ११८९ संवत् लिखा है। कहीं भैरव, कहीं नन्दीकी मूर्ति विद्यमान है। पद्मकुण्डके बीच किसी मन्दिरके एक स्थानमें कुर्सीके ऊपर एक खोदित लिपि है। वह पानीके भीतर चली गयी है। लोगोंको विश्वास है कि उस पत्थरके नीचे धनरत्न भरा है। कहते हैं— किसी समय नागपुर, होशङ्गाबाद और खंडवेके तीन बलवान् लोग उस पत्थरको तोड़ने लगे। पत्थर तोड़ते ही तोड़ते वह पीड़ाग्रस्त हुए और मर गये। लोगोंका कहना है कि अधिष्ठात्री देवीने क्रुद्ध हो उन्हें मार डाला था। पद्मकुण्डमें अनेक शिलालेख हैं। लिखा-वट अधिकांश मिट गयी है। "मूर्तिजलश्याम" और 'मूर्तिश्री' जैसे कई एक नाममात्र पढ़े जाते हैं।

इस कुंडके पास ही पद्मेश्वरका एक मन्दिर है। उसमें पद्मेश्वरकी मूर्तिको छोड़ कर और भी कई एक मूर्तियां देख पड़ती हैं। यह मन्दिर नया-जैसा समझा जाता है। सम्भवतः पद्मेश्वरका एक पुरातन मन्दिर रहा, उसीको तोड़ कर नया मन्दिर बनाया गया। यहांसे उत्तर-पश्चिमदिक्‌को गमन करने पर भैरवताल नामक एक सरोवर मिलता है। यह तालाब एक एक ओर ४०० हाथसे कम नहीं। नगरसे दक्षिण-पश्चिम कुलालकुंड नामक पुष्करिणी है। इसकी एक एक दिक् ३० हाथसे अधिक न होगी। दक्षिण पश्चिमको रेलवेके लोहे पुलके पास भीमकुंड और उत्तर-पश्चिमको सूर्यकुंड है। कुलालकुंडके पास तुलजा देवीका मन्दिर बना है। प्रति पौषमासकी पूर्णिमाको यहां मेला लगता है। इसी मन्दिरके पास एक प्रकांड गणेश-मूर्ति है। उसके शुंड पर कई एक छोटी छोटी और मूर्तियां देख पड़ती हैं।

कोई कोई खंडवेको महाभारतोक्त "खांडव" जैसा समझता है। खांडव देखो।

इस शहरमें १२सौ वर्षका पुराना एक और नवीन कई जैन-मन्दिर भी तथा धर्मशाला है।

खण्डोबा—देवताविशेष। दाक्षिणात्यमें इनकी उपासना विशेष प्रचलित है। पूना अञ्चलके हिन्दू विश्वास करते हैं कि खंडोबा दाक्षिणात्यकी अधिष्ठात्री देवता हैं। क्या ब्राह्मण क्या चमार सभी इनकी उपासना किया करते हैं। खण्डोबा शब्दका अर्थ खांडा या तलवारकी देवता है। अर्थात् भैरवकी भांति यह तलवार लिये देश रक्षा किया करते हैं। जेजूरीमें इनका बड़ा मन्दिर है। वहां लिङ्गमूर्ति प्रतिष्ठित है। एतद्व्यतीत विभिन्न मूर्तियों में भी इनकी पूजा होती है। कहते हैं कि मल्लारिरूपसे अश्वारोहण पर जाके उन्होंने मणि और मल्ल नामक असुरको मारा था। उसीसे कहीं कहीं इनकी अश्वारूढ़ मूर्ति भी है। घोड़े पर खंडोबा और पत्नी महालसा बाई दोनों बैठे हैं। घोड़के साथ एक कुत्ता भी रहता है। कुत्ता वाहन-जैसा रहनेसे कुक्कुरखण्डि नामसे खंडोबाको पूजा चढ़ाना पड़ती है। फिर हरिद्रामें अंश जैसा रहनेसे हरिद्रा वृक्ष भांडार नामसे भी इनको पूजते हैं। खंडोबामूर्ति धातुसे गठित होती है, प्रस्तर वा काष्ठसे निर्माण करनेका निषेध है। इनकी पूजा करनेसे विघ्न निवारण होता और पीड़ा इत्यादि दूर रहते हैं। रामासी लोग इन देवताकी बड़ी भक्ति करते हैं। वह यदि हलदी हाथमें ले कोई बात करने कहते, तो उसे पूरा करके ही छोड़ते हैं।

पूर्वकालको खंडोबा मल्लारि नामसे पूजित होते थे। आनन्दगिरिके शङ्करविजयमें मल्लारि-मतावलम्बियोंका प्रसङ्ग आया है। (शङ्करविजय १९ अ०)

खण्डोष्ठ (सं० पु०) ओष्ठरोगभेद, होंठकी एक बीमारी। वातसे फट कर होंठके दो टुकड़े हो जानेका नाम खण्डोष्ठ है। (वाभट)

खतंग (हिं० पु०) कपोतभेद, किसी किस्मका कबूतर। इसका रंग, कुछ मैला होता है।

खत (अ० पु०) १ पत्र, चिट्ठी। पत्रव्यवहारको 'खत-किताबत' कहते हैं। २ लेखनप्रणाली, लिखावट, हर्फ। ३ रेखा, धारी। ४ श्मश्रु, दाढ़ीके बाल। ५ क्षौरकर्म, हजामत।

खतम (अ० वि०) पूर्ण, समाप्त, पूरा।

खतमाल (सं० पु०) खे आकाशे तमाल इव। १ धूम, धूवां। २ मेघ, बादल।

खतमी (अ० स्त्री०) वृक्षविशेष, एक पौदा। यह गुल-खैरूकी जातिकी रहती और काश्मीर तथा पश्चिम हिमालयमें उपजती है। इसमें नील, रक्तवर्ण आदि कई रंगके फूल आते हैं। परन्तु श्वेतपुष्पयुक्त वृक्ष सर्व-श्रेष्ठ माना जाता है। खतमीकी पत्ती पीस कर फोड़े पर लगाते और बीज तथा मूलको औषधमें काम लाते हैं।

खतमीखतमा (हिं० पु०) अन्त, अखीर, काम पूरा जैसा होनेकी हालत।

खतर, खतरा देखो।

खतरम्मा (हिं० पु०) १ खत्रियोंका सम्प्रदाय वा समाज। २ खत्रियोंसे भरी हुई जगह, खतराना।

खतरा (अ० पु०) १ भय, खौफ, डर। २ आशङ्का, शक।

खतराना (हिं० पु०) खत्रियोंका मोहाल।

खतरानी (हिं० स्त्री०) खत्रीजातीय स्त्री, खत्री कौमकी औरत।

खतरेटा (हिं० पु०) खत्री, खत्री जातिका नौजवान्।

खता (अ० स्त्री०) १ अपराध, क़ुसूर, भूलचूक। २ छल, कपट, फरेब।

खतावार (फा० वि०) अपराधी, क़ुसूरवार, दोषी।

खति (हिं०) क्षति देखो।

खतियाना (हिं० क्रि०) रोजाना आमद-खर्च और खरीद फरोखत आदिको खातेमें अलग अलग चढ़ाना।

खतियानी (हिं० स्त्री०) १ खाता, खतियानेकी बही। २ खतियान, खतियानेका काम। ३ पटवारीका एक कागज। इसमें हरेक आसामीकी जमीनका रकबा और लगान वगैरह दर्ज रहता है।

खत्ता (हिं० पु०) १ गर्त, गड्ढा। २ खौं, अनाज रखनेका गड्ढा। ३ नील या शोरा भरनेकी जगह।

खत्री (हिं० पु०) भारतकी एक जाति। खत्री लोग बड़े विद्वान् और धनी होते हैं। पञ्जाब इनका प्रधान निवासस्थान है, परन्तु राजपूताना, युक्तप्रदेश आदि अन्य प्रान्तोंमें भी इनकी प्रधानता पायी जाती है।

खत्री अपनी सुन्दरताके लिये प्रसिद्ध हैं। यह लोग अपनेको क्षत्रियवर्ण बतलाते और "खत्री" शब्दको 'क्षत्रिय' का अपभ्रंश ठहराते हैं। क्षत्रिय देखो।

२ कपड़े पर बेल बूटे छापनेको लकड़ीका एक ठप्पा 'खत्रीपरदेदार' कहलाता है। इसकी लम्बाई तीनसे ६ इञ्च तक रहती है।

खत्रीब्रह्म—एक हिन्दू जाति। इनको ब्रह्मखत्री भी कहा जाता है। यह लोग राजपूतानेमें प्रायः रहते हैं। कहते हैं, परशुरामसे डर करके कितने ही क्षत्रिय सारासुर ऋषिके पास जा छिपे थे। परशुराम जब उनके खोजमें उक्त ऋषिके पास पहुंचे, उन्होंने ब्राह्मण बतला करके इनके साथ खा लिया। छापना, रंगना आदि इनका काम है।

खद (सं० पु०) खद बाहुलकात् भावे अप्। १ स्थिरता, ठहराव। २ वध, कत्ल।

खद (हिं० पु०) मुसलमान।

खदन (सं० क्लो०) भोजन, खाना।

खदबदाना (हिं० क्रि०) खदबद करना, उबलना, चुरना।

खदरा (हिं० पु०) १ गड्ढा। २ बक्कड़ा। (वि०) ३ बेकाम, निकम्मा।

खदान (हिं० स्त्री०) खानि।

खदिका (सं० स्त्री०) खे भर्जनपात्रादूर्ध्वं आकाशे दीयते, ख-दो-क टाप् ततः संज्ञार्थे कन् अत इत्वञ्च। लाजा, लाई।

खदिजा—मुहम्मदकी पहली पत्नी। यह एक अरब देशकी सम्पत्तिशाली विधवा रमणी रहीं। अरब देशकी प्रथाके अनुसार इनका वाणिज्य व्यवसाय चलता था। खदिजाके वाणिज्यका द्रव्यादि उष्ट्रके पृष्ठ पर लद कर अरब और तुर्किस्तानके अन्तर्गत सीरिया प्रदेशके बजारोंमें जाकर बिकता था। मुहम्मद उस समय लड़के रहे, मैदानमें पशु चराते घूमा करते थे। खदिजाने एक उष्ट्रचालकका प्रयोजन पड़ने पर मुहम्मदको उसी काममें लगा लिया। कार्यकी दक्षता देख कर थोड़ दिनों बाद उनके पदकी उन्नति की गयी। खदिजाने धीरे धीरे पण्यद्रव्योंका समस्त भार उन्हींके ऊपर डाला था। फिर सज्जनता और कर्तव्यनिष्ठासे सन्तुष्ट हो कर मुहम्मदको 'अल आमीन' उपाधि दिया। 'अल आमीन'का अर्थ भला आदमी है। मुहम्मदका वयस उस समय २५ वत्सर रहा। उनका कोमल सुन्दर गठन यौवनकी पूर्णतामें विकसित हो कर मनोहर बन गया था। खदिजाने अपना वयस ४० वत्सर होते भी रूप तथा गुणसे मुग्ध हो उन्हें पतित्वमें वरण किया। विवाहके ११ वर्ष पीछे उनके फातिमा नाम्नी एक कन्या हुई। क्रमशः और भी सन्तान-सन्तति उत्पन्न हुई थी। किन्तु ३ कन्याओंको छोड़ कर दूसरे सभी सन्तान शैशवमें मर गये। ६१९ ई०को ६२ वर्षके वयसमें खदिजाका मृत्यु हुआ। इनका कब्रस्तान आज भी देख पड़ता है। तीर्थयात्री उसको देखने जाया करते हैं। कब्रके एक पत्थर पर कुरानकी एक आयत खुदी है। पीछेको मुहम्मदके अन्यान्य रमणियोंसे विवाह करते भी इसका प्रमाण पाया जाता है कि उनसे उनका बड़ा प्यार था।

मुहम्मद देखो।

खदिर (सं० पु०) खद-किरच् निपातने साधुः। अजिर-शिशिरशिथिलस्थिरस्फिरस्थविरखदिराः। उण् १।५४। १ स्वनामख्यात वृक्ष, खैरका पेड़। इसका संस्कृत पर्याय—गायत्री, बालतनय, दन्तधावन, तिक्तसार, कण्टकीद्रुम, बालपत्र, खद्यपत्री, क्षितिक्षम, सुशल्य, वक्रकण्ठ, यज्ञाङ्ग, जिह्वाशल्य, कण्ठी सारद्रुम, कुष्ठारि, बहुसार, मेध्य, बालपुत्र, रक्तसार, कर्कटी, जिह्वाशल्य, कुष्ठहृत, बालपत्रक और यूपद्रुम है। खदिरको दक्षिणमें कठकिकार, पञ्जाबमें खरैच, तेलङ्गमें पोदलामनु, तामिलमें वोदलय, सिंहलमें किहिरि, ब्रह्ममें शविन और वैज्ञानिक अङ्गरेजीमें Acacia Catechu कहते हैं। यह वृक्ष १० हाथ तक बढ़ता है। खदिर भारतको समतल भूमि और पार्वत्य प्रदेश सर्वत्र ही उत्पन्न होता है। इसका काष्ठ बहुत कड़ा और टिकाऊ है, जल्द घुन नहीं लगता। इससे कड़ी, बरगा, ढाल और तलवारका हत्था, हल, रुईका पेंच, गाड़ी आदि नानाविध द्रव्य प्रस्तुत होते हैं। ज्यैष्ठ आषाढ़ मासको इसमें फूल आता और शीतकालको बीज पक जाता है। सिंहलियोंको

विश्वास है कि इसका निर्यास रक्तपरिष्कारक होता है। इसके क्वाथसे कत्था निकलता है। अङ्गरेजोमें इसका नाम Catechu or Terra japonica है। इसका अभ्यन्तरस्थ सार लेकर मट्टीके बरतनमें पकानेसे परिष्कार सुरा निकलती है। इसका सार कपड़े आदि रङ्गनेमें काम आता है। युरोपीय चिकित्सकोंके मतमें यह सङ्कोचक और व्रण, उपदंश तथा क्षतरोग पर फलदायक है। खदिर सविच्छेद ज्वर, शीताद, लाला निःसरण, गलेके कागको शिथिलता, तालुके पार्श्व-ग्रन्थिकी विवृद्धि आदिरोगोंमें उपकारी होता है। श्वेतप्रदर और असृग्दर होनेसे इसकी पिचकारी लगायी जा सकती है।

वैद्यक मतमें खदिर—तिक्तरस, शीतल, पाचन और पित्त, कफ, कुष्ठ, कास, रक्तदोष, शोथ, कण्डु, तथा व्रणनाशक है। (राजनिघण्टु) राजवल्लभने इसे विसर्प, वेदना, मेह और मेदनाशक कहा है। भावप्रकाशको देखते खैर शीतवीर्य, दन्तहितकारक, तिक्त-कषाय रसयुक्त और कण्डु, कास, अरुचि, मेददोष, क्रिमि, प्रमेह, ज्वर, व्रण, श्वित्र, शोथ, आमदोष, पित्त, रक्तदोष, पाण्डु, कुष्ठ तथा कफ नाशक होता है। खदिर दो प्रकारका है—रक्तसार और श्वेतसार। रक्तसारको बात पहले ही लिख चुके हैं। श्वेतसारको चलती बोलीमें पापड़ी कत्था कहते हैं। यह वर्ण-परिष्कारक और मुखरोग, रक्तदोष तथा कफनाशक है। (भावप्रकाश) शतपथब्राह्मण (१३।४।४।९)में लिखा है कि प्रजापतिके प्राण शरीर छोड़ने पर उनके अस्थिसे खदिर उत्पन्न हुआ था; इसीसे यह इतना कठिन हो गया है।

खदति हन्ति शत्रून्। २ इन्द्र। खे आकाशे दीर्घ्यते इष्टापूर्तकारिभिर्यतः अपादाने किरच्। ३ चन्द्र। जो इष्टपूर्तादि पुण्य कर्मोंका अनुष्ठान करते, वे अपने उसी पुण्यबलसे जलमय शरीर धारण करके चन्द्रलोकमें जा बसते हैं। पुण्यके अवसानको चन्द्रलोकसे आकाशमें पतित हो फिर वह मर्त्यलोकमें आ जन्म लेते हैं। इसी कारण पूर्वप्रदर्शित व्युत्पत्तिके अनुसार खदिर शब्दसे चन्द्रमण्डलका बोध होता है। चन्द्र देखो। ४ कोई ऋषि। यह शब्द अश्वादि गणान्तर्गत है। गोत्रापत्यर्थमें इसके उत्तर फञ् होता है। ५ शाकभेद, कोई सब्जी।

खदिरक (सं० पु०) खदिर एव स्वार्थे कन्। खदिर, खैर।

खदिरकषाय (सं० पु०) औषधविशेष, खैरका काढ़ा। लोह और मुस्तचूर्णके साथ इसको सेवन करने पर हलीमक रोग विनाश होता है।

खदिरपत्रिका (सं० स्त्री०) खदिरस्य पत्रमिव पत्रमस्याः, बहुव्री० कप्-टाप् अत इत्वञ्च। १ अरिखदिर, एक पेड़। २ लज्जालुका, लाजवंती।

खदिरपत्री (सं० स्त्री०) खदिरस्य पत्रमिव पत्रं यस्याः, बहुव्री०, विकल्पेन कप् प्रत्ययः ततः ङीप्। लज्जालुलता, लजाधुर।

खदिरमय (सं० त्रि०) खदिरस्य विकारः, खदिर-मयट्। खदिरकाष्ठनिर्मित, खैरकी लकड़ीका बना हुवा।

खदिरवटी (सं० स्त्री०) मुखरोगहरी वटिका, मुंहकी बीमारी दूर करनेवाली एक गोली। १०० पल खदिर ६४ शरावक जलमें पाक करके ८ शरावक पानी बचनेसे उतार लेते हैं। फिर इसे कपड़ेसे छान दोबारा पकाया जाता है। घनीभूत होने पर इसमें जावित्री, कपूर, गुवाक, काकोली और जायफलचूर्ण आठ आठ तोले डालनेसे यह वटी तैयार होती है। (सारकौमुदी)

खदिरवन (सं० क्ली०) खदिराणां वनम्, णत्वञ्च ६-तत्। खदिरका वन, खैरका जङ्गल।

खदिरवल्ली (सं० स्त्री०) १ अरिखदिर, मट्टीका फल।

खदिरसार (सं० पु०) खदिरस्य सारः निर्यासः, ६-तत। खदिरनिर्यास, कत्था। यह कटु, तिक्त, उष्ण, रुच्य, दीपन और कफ, वात, व्रण तथा कण्ठरोगघ्न होता है। (राजनिघण्टु)

खदिरा (सं० स्त्री०) खदिरस्तत् पत्राकारोऽस्त्यस्याः पत्रे, खदिर-अच्-टाप्। लज्जालुकालता, लाजवंती।

खदिराङ्गार (सं० पु०) खदिरकाष्ठाङ्गार, खैरका कोयला।

खदिरादिपञ्चतिक्तघृत (सं० क्ली०) कुष्ठका घृत, कोढ़का एक घी। ४ शरावक घृत, पञ्चतिक्त प्रत्येक दश दश पल और ६४ शरावक वारिको एकत्र पाक

करके ८ शरावक शेष रहने पर उतार लेना चाहिये। फिर खदिर, आरग्वध, त्रिकटु, त्रिवृत्, चित्रक, दन्ती, पटोल, त्रिफला, निम्ब, हरिद्रा, सोमराजी, कटुका, अतिविषा, पाठा, त्रायन्ती, दुरालभा, कुष्ठ, करञ्जबीज, शालिवाहय, इन्द्रयव, भल्लातकास्थि, विड़ङ्ग और गुग्गुलु दो दो तोले डालनेसे यह प्रस्तुत हो जाता है।

खदिराद्य (सं० पु०) औषधविशेष, कोई दवा। खदिर और त्रिफलाके क्वाथका नाम खदिराद्य है। महिषघृत और विड़ङ्गके साथ पान करने पर यह भगन्दर रोगको विनाश करता है। (वैद्यक)

खदिराष्टक (सं० पु०) मसूरिकाधिकारका एक क्वाथ। खदिर, त्रिफला, निम्ब, पटोल, अमृता और वासक आठ पदार्थोंका नाम खदिराष्टक है। इसका क्वाथ पीनेसे दाम, वसन्त, कुष्ठ, विसर्प, विस्फोट और कण्डु प्रभृति विनष्ट होते हैं। (चक्रदत्त)

खदिरिका (सं० स्त्री०) खदिरः खदिररसेन तुल्यो रसोऽस्त्यस्याः, खदिर-ठन्-टाप्। १ लाक्षा, लाह, लाख। २ लज्जालुका, लाजवंती।

खदिरी (सं० स्त्री०) खद-किरच् गौरादित्वात् ङीष्। १ वराहक्रान्ता। २ लज्जालुका, लाजवंती। इसका संस्कृत पर्याय—नमस्कारी, गण्डकाली, समङ्गा, गंडकारी, शमीपत्रा, रक्तपत्रा, अञ्जलिकारिका और रारना है। ३ लताविशेष, हड़जोड़।

खदिरीय (सं० त्रि०) खदिरस्य सन्निहितो देशादिः, खदिर चातुरर्थिक क। खदिरका निकटवर्ती (देशादि)।

खदिरीबीज (सं० क्ली०) अशोकबीज।

खदिरोपम (सं० पु०) खदिर उपमा यस्य, बहुव्री०। १ बर्बूरवृक्ष, बबूलका पेड़। २ कदर, पापड़ी कत्था।

खदी (हिं० स्त्री०) तृणविशेष, एक घास। यह तलावोंमें उपजती है।

खदीव (फा० पु०) मिसरके अधिपतिकी उपाधि।

खदुका (हिं० पु०) १ ऋण लेकर व्यापार करनेवाला, जो कर्जसे रोजगार चलाता हो। २ ऋणग्रस्त, कर्जी।

खदुहा (हिं० पु०) तुच्छ वा क्षुद्र व्यवसायी मनुष्य, खोटा आदमी।

खदूरक (सं० पु०) खद बाहुलकात् ऊरच् ततः संज्ञायां कन्। १ ऋषिविशेष। यह शब्द शिवादि गणके अन्तर्गत है। इसके उत्तरको अपत्य अर्थमें अण् प्रत्यय आता है। २ वामन, बौना आदमी।

खदूरवासिनी (सं० स्त्री०) खे आकाशे दूरे वसति, वस-णिनि ततो ङीप्। एक बुद्धशक्ति।

खदेरना (हिं० क्रि०) भगाना, पीछे पड़ना, हटाना।

खद्दर (हिं० पु०) गजी। हाथसे कते सूतेसे करघासे बुना हुआ कपड़ा।

खद्य (सं० त्रि०) खदाय हितम्, खद्-यत्। उगवादिभ्यो यत्। पा ५।१।२। स्थिरताके विषयमें हितकर।

खद्यपत्री (सं० स्त्री०) खद्यं पत्रमस्य, बहुव्री० ततो गौरादित्वात् ङीष्। खदिर, खैर।

खद्योत (सं० पु०) खे आकाशे द्योतते, द्युत-अच्। १ कीटविशेष, जुगनू। इसका संस्कृत पर्याय—ज्योतिरिङ्गण, खज्योति, प्रभाकीट, उपभूर्यक, ध्वान्तोन्मेष, तमोमणि, दृष्टिबन्धु, तमोज्योतिः, ज्योतिरिङ्ग और निमेषक है।

"सूर सूर्य तुलसी शशी उड़गण केशवदास।
अबके कवि खद्योत सम जहं तहं करत प्रकाश॥"

खं आकाशं द्योतयति प्रभायुक्तं करोति, ख-द्युत-णिच्-अण्। २ सूर्य। (भागवत ४।२६।१०)

खद्योतक (सं० पु०) खद्योत इव कायति, कै-क। यद्वा खद्योत संज्ञार्थे कन्। १ कोई विषाक्त फल, किसी किस्मका जहरीला मेवा। फलविष देखो। स्वार्थे कन्। २ सूर्य।

खद्योतन (सं० पु०) खं आकाशं द्योतयति, द्युत-णिच् ल्यु। सूर्य।

खधूप (सं० पु०) खं आकाशं धूपयति, धूप-अण् उपपदस०। आकाशगामी अग्निशिखायुक्त पदार्थविशेष।

खन (हिं० पु०) १ क्षण, लहमा। २ समय, वक्त। ३ खंड, मञ्जिल, तल्ला। ४ वृक्षविशेष, कोई पेड़। ५ वस्त्रभेद। ६ रुपयेकी आवाज।

खनक (सं० पु०) खन-वुन्। शिल्पिनिष्वुन्। पा ३।१।१४५। १ मूषिक, चूहा। २ सन्धितस्कर, नकबजन, सेंध करनेवाला चोर। ३ वनमूषिक, जंगली चूहा। ४ आकर, खान, स्वर्णादिकी उत्पत्तिका स्थान। (भारत ३।१५) (त्रि०) ५ भूमिविदारक, जमीन खोदनेवाला।

६ भूतत्त्वज्ञ, जमीन्‌का असली हाल जाननेवाला। ७ स्वर्णादिकी उत्पत्तिका स्थान समझनेवाला, जो सोना निकलनेकी जगहको पहचानता हो।

खनकना (हिं० क्रि०) खन खन होना, खन खनाना, बजना।

खनकाना (हिं० क्रि०) खनखन करना, बजाना।

खनखजूरा (हिं० पु०) शतपदी, कानखजूरा।

खनखना (हिं० वि०) खन खन शब्दयुक्त, जिससे खन खनाहटकी आवाज निकले।

खनखनाना (हिं० क्रि०) १ खनकना, खन खन होना। २ खनकाना, खनखन करना, बजाना।

खनन (सं० क्ली०) खन-ल्युट्। १ खातकरण, गड्ढा खोदाई। २ आकरसे धातु, मणि प्रभृतिका निकास।

खनना (हिं० क्रि०) १ खनन करना, खोदना। २कोड़ना, गोड़ना।

खननीय (सं० त्रि०) खन-अनीयर्। खनन किया जाने-वाला, जो खोदने लायक हो।

खनपान (सं० पु०) अनुवंशीय एक क्षत्रिय।

खनवाखां—पञ्जाबकी शतद्रु नदीका एक नाला। नदीमें बाढ़ आनेसे उसका पानी इसी नालेसे बहा करता है। पूर्वको यहां एक स्वतन्त्र नदी रही। अब सूख गयी है। शतद्रु नदीसे एक नहर निकाल इस पुरानी नदीमें मिला दी गयी है। इससे उसका जल पुरातन नदी-गर्भमें बहता है। कहते हैं कि सम्राट् अकबरके समय खांखानन इस प्रदेशके जमीन्दार रहे। शायद उन्होंने यह नहर कटायी होगी।

१८३८ ई०को इसका मुंहाना बन्द हो गया था। महाराज रणजित्‌सिंहके पुत्र खड्गसिंहने अन्यान्य जमीन्दारोंसे रुपया इकट्ठा करके फिर उसे खोलवा दिया।

१८४३ ई०को महाराज शेरसिंहने एकबार अच्छी तरह खोदवाके इसको कृषिकार्यका व्यवहारोपयोगी बनाया था। उसी समय नहरका पानी कृषिकार्यमें व्यवहार करनेके लिये मूल्य भी निर्धारित हुआ। फिर प्रदेशके अंगरेजोंके हाथमें जानेसे यह नहरविभागको सौंपा गया है। यह नहर लाहोर जिलेके बीच मामोकी नामक स्थान पर शतद्रुनदीसे आरम्भ हो धापाई तक गयी है।

खनयित्री (सं० स्त्री०) खन णिच् वृद्ध्यभावः ततः तृच् ङीप्। अस्त्रविशेष, खन्ता। नारदपञ्चरात्रमें यात्रा-कालको खनयित्री चलानेका विधान है—

"खनयित्री शुभा यात्रा जयाय युद्धकाङ्क्षिः।
पञ्चवर्णयुक्तयुता चालनीया पुरःस्थिता॥" (नारदपञ्चरात्र)

खना—एक विदुषी रमणी। प्रवाद है कि उन्होंने सिंहल-द्वीपमें जन्मग्रहण किया था। फिर प्रसिद्ध ज्योतिर्विद् मिहिरके साथ इनका विवाह हुआ। मिहिरके पिता ज्योतिःशास्त्रमें अतिशय निपुण रहे। इनके जन्म पीछे उन्होंने गणना करके देखा कि मिहिरका एक वत्सर-मात्र परमायु था। उन्होंने स्वचक्षुसे पुत्रका मृत्यु देखना न चाहा और एक ताम्रपात्रमें लड़केको रखके समुद्रमें बहा दिया। दैवक्रमसे यही पात्र जाकर सिंहल-द्वीप पहुंचा। कई एक राक्षसियोंके साथ खना स्नान कर रही थीं, हठात् एक पात्रमें सुन्दर बालकको देख खींच लायीं। इन्होंने पहले ही राक्षसियोंसे ज्योतिः-शास्त्र पढ़ा और उसमें इन्हें अतिशय दक्षता रही। खनाने अपने विद्याबलसे गिनके निकाला कि उस बालकका परमायु १०० वत्सर था, उसके पिताने भ्रममें पड़कर उसको परित्याग किया। यह बालकको प्रतिपालन करने लगीं। राक्षसियोंके पास उसने भी ज्योतिःशास्त्र अभ्यास किया था। फिर इन्होंने उससे विवाह कर लिया। बहुत दिन पीछे मिहिर इनके मुखसे अपना वृत्तान्त सुन जन्मभूमि देखनेको उत्सुक हुए। खनाने भी उनका अनुगमन किया था। वह चलते समय ज्योतिषकी पोथियां संग्रह करके इस देशको लेते आये। राक्षसियोंने कितने ही दौरात्म्य दिखाये थे, जिससे कई किताबें बिगड़ गयीं। उन्होंने इस देशमें आ पिताके पास जाकर अपना परिचय दिया। परन्तु उन्होंने कुछ भी सुना न था। वह फिर अपने पुत्रका आयु गिनने लगे और १ वत्सरसे अधिक इस बार भी निकाल न सके। उस समय खनाने कहा था—किसका वार और किसकी तिथि, जन्मनक्षत्रसे हिसाब लगा कर आयु देखिये। इनकी वैसी बातें सुन कर मिहिरके

पिताकी भ्रान्ति मिट गयी, उन्होंने मिहिर और खनाको परम समादरसे ग्रहण किया।

उपर्युक्त प्रवादके मूलमें कुछ भी सत्य नहीं। खनाके नामसे जो वचन चले, सब बंगला भाषामें बने हैं। यदि यह वराहमिहिरकी पत्नी होतीं, कभी बंगला बोलीमें ज्योतिषकी बातें न लिखतीं। इनके वचन और भाषा देखनेसे समझ पड़ता है कि खना स्त्री हों या पुरुष, बङ्गाली व्यक्ति थीं, सम्भवतः तीन या चारसौ वर्षके बीच आविर्भूत हुईं। ज्योतिःशास्त्रमें यह असाधारण पांडित्य रखती थीं। इनके अधिकांश प्रचलित वचनोंका अर्थ वराहमिहिरके जातकादि ज्योतिःशास्त्रसे मिलता है। इसीसे मालूम पड़ता है कि ज्योतिर्विदोंने खनाको मिहिरकी पत्नी जैसा कल्पना किया होगा।

खनि (वै० त्रि०) खन्-इ। (खनिकष्यज्यसिवसिवनिसनिध्वनिग्रन्थिचरिभ्यश्च। उण् ४।१३९।) खनक, खोदनेवाला। (अथर्व १६।१।६)

खनि (सं० स्त्री०) खान, स्वर्णाद्याकर, सोने वगैरहकी खान, खदान। भूगर्भके जिस स्थानको खनन करके धातु, प्रस्तर वा मूल्यवान् मृत्तिकादि उत्तोलन करते, खनि कहते हैं। बहु पूर्वकालसे भारतवर्षमें खनिकार्य होता चला आता है। भारतवासी अति प्राचीनकालसे ही समझते, खानसे कैसे रत्नसंग्रह करते हैं। वाष्पीय यन्त्रके प्रभावसे आजकल इस कार्यकी विशेष उन्नति हो गयी है। कठिन पर्वतगात्र वा समतल भूमिको भेद करके पृथिवीके अति गभीर प्रदेशमें पहुंच आजकल लोग नाना धातु निकालते हैं। केवल स्वर्ण प्रभृति अति अल्पसंख्यक धातु ही विशुद्धभावमें मिलते, दूसरे समुदय धातु नाना पदार्थोंके साथ रासायनिक रूपमें मिश्रित रहते हैं। इसी प्रकारके अविशुद्ध धातुको आकर Ore कहते हैं। नाना उपायोंमें अपरापर पदार्थोंको पृथक् करके खालिस धातु निकाल लेना पड़ता है। भूतत्त्व विद्या (Geology)की सहायतासे मालूम किया जा सकता—कहां, कैसा, कितना, कौन धातु रहनेकी सम्भावना है। समस्त उपायोंको अवलम्बन करके भूगह्वरसे धातुका आकर जो ऊपर उठाया सकता, उसीका नाम खनिकार्य (Mining) है। जिस विद्याकी सहायता पर आकरसे दूसरे पदार्थ अलग करके विशुद्ध धातु निकाल सकते, उसको धातुतत्त्व (Metallurgy) कहते हैं। धातुको छोड़ कर स्लेट, अपरापर प्रस्तर, पत्थरका कोयला, नाना वर्णोंसे रञ्जित मृत्तिका, मट्टीका तेल आदि अन्यान्य वस्तु भी खनिसे सङ्गृहीत होते हैं।

पृथिवीके नीचे स्तरोंमें (Strata) सज्जित हो कर खनिज पदार्थ अवस्थिति करते अथवा प्राचीर सदृश प्रस्तरराशिके मध्य शिरा (Vein) भावसे शायित रहते हैं। समुदय विषय निर्देश करना अति कठिन है—पृथिवीके किस स्थान पर, कैसे भावसे, कौनसे परिमाणमें खनिज पदार्थ अवस्थित है और उससे आकर उत्तोलन करनेमें लाभ हो सकता है या नहीं। इस प्रकारके अनुसन्धानको अंगरेजीमें Prospecting कहते हैं। जमीन्‌के नीचे जो धातु छिपा है, कभी कभी उसका कियदंश जलस्रोत वा किसी अपर कारणसे अपने आप बाहर निकल आता है। आकर ऊपर उठ आनेसे वहिःस्थ आकर (Out-crop) कहलाता है। इस प्रकारका वहिःस्थ आकर देख कर विचक्षण खनक उसका मूलदेश अनायास ही स्थिर कर सकते हैं। परन्तु जिस स्थान पर खनिज पदार्थ इस तरह निकल नहीं आता, कितने ही अनुसन्धानोंके पीछे भूनिम्नस्थ धातुका अस्तित्व ठहराया जाता है। किसी स्थानमें किसी प्रकारके धातु रहनेका चिह्न भूतत्त्वविद्याकी सहायतासे निर्दिष्ट होने पर खनक जा कर वहां अनुसन्धान (Prospecting) आरम्भ करते हैं। पहले उस स्थानकी मृत्तिका और निकटस्थ नदी नालेकी वालुका उत्तम रूपसे परीक्षा करके देखी जाती है। अणुवीक्षण और रासायनिक परीक्षा द्वारा उस मट्टी और वालूमें यत्न यदि धातुकी सूक्ष्म सूक्ष्म कणाओंका अस्तित्व समझा जाता, तो खनक ऐसा ठहराता कि वह उपरिस्थ पर्वतादिसे छूट कर चला आता है। फिर इस विषयका अनुसन्धान लगाया जाता, किस स्थानसे वह धातु छूट छूट कर आता है। पृथिवीगात्र पर नाना स्थानोंमें बहुत गहरे छोटे छोटे छिद्र करके और तद्देशसे मट्टी निकालके भी देखा करते हैं। इसप्रकारसे पृथिवीमें छेद करनेको बहुतसे यन्त्र हैं। उन्हें Boring apparatus

कहते हैं। आकरकी असली जगह ठीक हो जाने-
से खानका काम लगाना पड़ता है। ऊपरिभागसे
जितना नीचे आकर पाते, पहले वहीं तक कूप खोद
ले जाते हैं। पृथिवीके नीचे आकर जिस भावमें रहता
कूआं भी उसी तरह खोदना पड़ता है। यह कूप कहीं
सीधा, कहीं तिरछा जमीनके नीचे चलता है। फिर
पृथिवीके बहुतसे सुरङ्ग लगाके खदान खोदी जाती है।

एक सामान्य कूप खोदनेमें कितना पानी निकलता
है। परन्तु खानके भीतर इसकी अपेक्षा सहस्रगुण
जल निकला करता है। बहुतसे स्थानों पर यह पानी
धीरे धीरे एकत्र हो के स्रोतका आकार धारण करता
है। खानका कूआं जितना बड़ा आवश्यक आता, बहुतसे
लोग उसकी अपेक्षा अधिकतर गभीर बनाते हैं। इसी
गभीर स्थानमें पानी जाके भर रहता है। कूपके एक
पार्श्वको अञ्जन लगाके वह जल निकाल डाला जाता है।
खानके अन्दर विशुद्ध वायुका विशेष प्रयोजन है। साफ
हवा न रहनेसे मजदूर काम करनेसे हट जाते हैं। इसी
लिये आजकल लगभग सब खानोंमें एकसे ज्यादा कूप
रहते हैं। एक कूवेंके पेंदे पर रात दिन प्रखर अग्निको
प्रज्वलित रखना पड़ता है। उस स्थानका वायु हलका
होकर ऊपर चढ़ जाता है। इसी प्रकार एक ओरसे
खदानकी हवा खाली होती और दूसरे कूवेंसे ऊपरकी
खालिस हवा भीतर पहुंचा करती है। सुतरां ऐसा
उपाय अवलम्बन करनेसे खानिके भीतर विशुद्ध वायुका
अभाव नहीं होता।

कोयलेकी खानमें ऐसी कितनी ही सुरङ्गे रहती
हैं। मट्टीके भीतर कोयलेकी खान एकबारगी ही उभरे
हुए मैदान-जैसी नहीं होती। शहरमें जैसे चारो तर्फ
राहें और गलियां पड़ती, वैसे ही राहों और गलियों
जैसी चारो ओर सुरङ्गे लगाके लोग कोयला बाहर
नकालते हैं। बीच बीच जो प्राचीर रहता, स्तम्भका
कार्य करता है। इससे छत टूटने नहीं पाती। बहुतसी
खानोंमें इतनी सुरङ्गे लगतीं, कि सबको एकत्र करके
जोड़नेसे बीस पचीस कोस-राह बन सकती है। सुरङ्गमें
उत्तमरूपसे वायु-सञ्चालनको कहीं कहीं कपाट द्वारा
उसे आवद्ध रखना पड़ता है। थोड़े दिन पहले विला-
यतमें ऐसे कपाटोंके निकट एक एक लड़का बैठा रहता
था। कोयला भरी गाड़ी आ पहुंचने पर वह कपाट
खोल और उसके निकल जानेसे बन्द कर देता था।
आजकल खानके अन्दर ऐसे बच्चोंको किसी काममें
लगाना कानूनसे रोक दिया गया है।

खानके अन्दर मजदूरोंको बहुत कठोर परिश्रम
करना पड़ता है। यहां दिनको सूर्य और रातको चन्द्र
तारादिका दर्शन नहीं होता, सर्वदा घोर अन्धकार
रहता है। मशाल या बत्तीकी रोशनीसे काम करते हैं।
किसी किसी खनिमें दहनशील बाष्प वर्तमान रहता
है। वहां खुली मशाल या बत्ती लेकर काम करनेका
मौका नहीं मिलता। तारसे बंधी एक प्रकारकी
लालटेन (Safety-lamp) होती है। उसीके आलो-
कसे कार्य किया जाता है। जिस खानमें जल उठने-
वाली ऐसी भाप नहीं, वहां बारूदके जोरसे आकर
और कोयला आदि पदार्थ चकनाचूर हो सकते हैं।
फिर जिस खदानमें दहनशील बाष्प मिलता, बारूद
काममें लानेसे घोरतर अग्न्युत्पात हो सकता है।
वहां हथौड़ेसे आकर या कोयला तोड़ना पड़ता है।
सुरङ्ग सब जगह बराबर ऊंची नहीं होती। सकल
स्थानोंमें मजदूरोंको सीधा खड़ा होना मुश्किल है।
सुतरां किसी स्थान पर खड़े होकर, कहां बैठ कर,
किसी जगह लेट कर आकर काटना पड़ता है।

आकर कट जाने पर नाना उपायोंसे उसको ऊपर
उठाते हैं। बड़ी बड़ी खानोंके भीतर राह और रेलवे-
लाइन होती है। आकरको गाड़ीमें भरके कूपके नीचे
लाते, फिर उसको ऊपर चढ़ाते हैं। इन गाड़ियोंमें
कहीं घोड़े जोते जाते, कहीं मनुष्य ही ठेलके ले जाते।
जिन खानोंमें गाड़ियां नहीं होती, मजदूर पीठ
पर रखके आकरको कूवेंके नीचे लाते अथवा आकर
पूर्ण द्रोणीमें (टब) शृङ्खला लगा उसको अपनी कमरमें
भी बांधते और अभिलषित स्थान पर उसको खींच ले
जाते हैं। विलायतमें कुछ रोज पहले इस काम पर
अनेक स्त्रियां नियुक्त थीं। अब कानून बन गया है—
ऐसे कष्टसाध्य कार्यमें कोई स्त्रियोंको न लगावे।

कूवेंके नीचे खनिज पदार्थ आ पहुंचने पर उसको

ऊपर चढ़ाना पड़ता है। तरह तरहके उपायोंसे यह कार्य साधित होता है। जिस खनिमें कूप सरल नहीं-तिर्यक्‌भावसे रहता, आकर भरी गाड़ी एञ्जिनके सहारे एकबारगी ही ऊपर चढ़ायी जा सकती है। परन्तु जहां कूवां बिलकुल सीधा जमीन्‌के नीचे चला गया है, नांदमें कच्चा धातु वगैरह रखके ऊपर पहुंचाते हैं। नांदके कड़ेमें जञ्जीर डाल उसको एक ऊपरी पेंचसे मिलाया जाता है। पेंच घुमानेसे जञ्जीर उसमें लिपटती रहती और नांद ऊपरको चढ़ा करती है। फिर उसको उलटा फिरानेसे जञ्जीर जैसे ही खुला करती, नांद नीचेको उतरती है। अनेक स्थलों पर लोग हाथसे पेंच चलाते हैं।

खान बहुत ही मामूली होने पर मनुष्य इस काम-को चला सकता है। इस कार्यमें अधिक मनुष्य आवश्यक होने पर कलके पास काष्ठनिर्मित एक बड़ा गोला-कार यन्त्र लगाना पड़ता है। इसीका नाम जिन है। कलके ऊपर नांदकी जञ्जीर लाकर जिनमें लपेटी जाती है। फिर बहुतसे लोग पकड़के इस जिनको घुमा सकते हैं। जिनके घूमते ही कल चलने लगती और इससे नांद चढ़ा उतरा करती है। रानीगञ्ज अञ्चलमें खानसे पत्थरका कोयला इसी प्रणाली पर उत्तोलित होता है।

हमारे देशकी भांति विलायतमें मजदूर सस्ते नहीं मिलते। सुतरां इन दिनों वहां भापकी कलसे यह काम होता है। लोगोंकी मजदूरी जब बढ़ी पहले पहल घोड़ोंसे कल चलायी गयी। कलमें दो नांदोंकी दो जञ्जीरें इस तरह लगी रहतीं, कि उसको घुमानेसे एक जञ्जीर लपटती और दूसरी खुलती है। अतएव एक नांद ऊपर चढ़ती और दूसरी नीचे उतरती जाती है।

आजकल विलायतकी सब खानों, विशेषतः कोय-लेकी खदानोंमें कल और जिन वाष्पीय यन्त्रसे परि-चालित होता है। भापके पेंचका बड़ा चक्कर चमड़ेकी रस्सीसे जिनके साथ संयुक्त रहता है। कलका पहिया जैसे ही भापके जोरसे घूमता, जिन भी उसके साथ चक्कर मारने लगता है। फिर एक नांदकी जञ्जीर उससे लिपटा और दूसरीको खुला करती है। जिस नांदकी जञ्जीर लिपटी रहती, ऊपरको चढ़ती और जिसकी खुला करती, नीचेको उतरती है। इसी प्रकार साथ ही एक नांद चढ़ा और दूसरी उतरा करती है। यही नहीं कि नांदसे केवल आकर ऊपर चढ़ाया जाता है। पहले इस नांदमें बैठ कर मजदूर भूगर्भका कार्य करनेको अवतरण करते और काम हो जाने पर बाहर निकलनेको फिर ऊपर चढ़ते हैं।

धातुकी अनेक खनियोंमें जहां कूप सरलभावमें नहीं होता, बीच बीच सिड़ियां लगी रहती हैं। उन्हीं सिड़ियोंसे मजदूर चढ़ उतर सकते हैं। कूवेंके भीतर अनेक समय नांदसे नांद टक्कर खा जाती थी। ऐसी दुर्घटना बचानेको आजकल कूप दो भागोंमें विभक्त किया गया है—एक ओर नांद चढ़ने और दूसरा ओर उतरनेके लिये। फिर कितनी ही बार नांद हिल कर कूपप्राचीरके गात्रसे जोरोंमें भिड़ टूट जाती थी। इस वारदातको बचानेके लिये कूवेंके बीचमें एक लौहशालाका गाड़ी गयी है। नांदका कड़ा इसी छड़में पिरोया रहता है। सुतरां नांद इसी सीखचेको पकड़ कर चढ़ती उतरती, इधर उधर हिलडुल कर जा नहीं सकती और न कूवेंके घेरेको उसमें टक्कर लगती है। कितने ही मरतबे जञ्जीर टूट कर नीचे गिरने पर बहुतसे लोगोंका प्राणनाश हो जाता था। इस विपद् निवारणके लिये भी उपाय उद्भावित हुआ है। नांदकी जञ्जीरमें एक कब्जा लगता है। यह उपरिउक्त लौहदण्डके साथ कुछ कुछ संलग्न रहता है। जब टब (नांद) चढ़ता उतरता, जञ्जीरके खिंचा-वसे कब्जेके दोनों मुंह खुले रहते हैं—यह अलग हो जाता, लोहेके सासवेका नहीं पकड़ता। परन्तु एकाएक जञ्जीर टूट जानेसे कब्जेके दोनों सिरे उसी मुहूर्तको बिलकुल चिपकके बैठ जाते हैं। टब जहांका तहां शून्यमें ही रहता, कूवेंके पेंदे पर छूट कर गिर नहीं सकता।

कोयले या कच्चो धातुसे भरा टब कूवेंके मुंह पर आ पहुंचनेसे तत्क्षणात् कलको बन्द कर देना और उसको सरका लेना पड़ता है।

पत्थरके कोयले आदि पदार्थोंको व्यवहारोपयोगी बनानेमें और अधिक परिश्रम नहीं करना पड़ता। किन्तु अपरापर धातुके आकरसे विशुद्ध धातुको पृथक करना बड़ी मिहनतका काम है। लौहके आकरको पजावे जैसी बड़ी भट्टीमें जलाना होता है। रौप्यके आकरमें गन्धक प्रभृति नाना द्रव्य मिले रहते हैं। गन्धकमिश्रित रौप्यका आकर लवणके साथ पहले भट्टीमें जलाया, फिर जल और लौहकणके साथ पीपेमें बन्द करके हिलाया जाता है। ऐसा करने पर गन्धकसे चांदी छूट पड़ती है। अवशेषको अग्निके उत्तापसे पारद निकालके विशुद्ध रौप्य सङ्ग्रहीत होता है। पूर्वकालको नदीकी बालुका धौत करके लोग सोना इकट्ठा करते थे। जिन पत्थरोंसे छूट छूट कर स्वर्णकणा नदीजलमें पहुंचती, आजकल जनता उन्हींसे स्वर्ण उद्धार करती है। पहले खानसे इन पत्थरोंको निकाल करके चूर कर डाला, फिर इस पर धीरे धीरे पानी बहाया जाता है। उससे प्रस्तरचूर्णकी वालुका प्रभृति धुलती और अपेक्षाकृत गुरु लौहकणा वा स्वर्णकणा निकल पड़ती है। फिर इसमें पारद मिलानेसे वह दूसरी चीजोंको छोड़ करके स्वर्णकणाके साथ मिश्रित हो जाता है। भट्टीमें आंच देकर पारेको अलग करने पर खालिस सोना निकलता है।

पहिलेकी तरह अब जीवजन्तुओंसे खानिका काम नहीं लिया जाता। आजकल खानिके तमाम काम बिजलीकी शक्तिके सहारेसे होते हैं। वैद्युतिकशक्तिसे चालित यंत्रके द्वारा (Electric lift) लोग खानिमें आया जाया करते हैं। खनिके भीतर इलेक्ट्रिक ट्रलि और मालगाड़ी द्वारा कोयला आदि खनिज द्रव्य स्थानान्तरित किये जाते हैं। पहिले अधिकांश खानोंमें अन्धकार रहता था। मशाल आदि जला कर किसी प्रकारसे काम निकाला जाता था; पर अब वह बात नहीं रही। बिजलीकी बत्तियां जला कर काफी प्रकाशमें काम होता है। इस बिजलीके आविष्कृत होनेसे खनिवालोंके लिए बहुत सुविधा हुई है।

भारतवर्षमें कोयलेकी खानि ही अधिक हैं। यहांकी कोयलेकी खानोंमेंसे रानीगंज, बराकर, गिरिडी आदिकी खानि उल्लेखयोग्य हैं। गिरिडीमें ई० आई० आर० कम्पनीकी भिक्टोरिया पिट नामक खानि सबसे बड़ी और अत्यन्त गहरी है। इस खानिकी सारी जगह बिजलीकी रोशनीसे आलोकित है।

कोयलेकी खानके सिवा भारतमें और भी नाना स्थानोंमें अभ्र, लवण, गन्धक, तामा, मैंगानिस् आदि धातुओंकी खानि हैं। सन्तालपरगणामें और छोटानागपुरमें जगह जगह अभ्रकी खान हैं। मैंगानिस् पहिले पहल भारतमें आविष्कृत नहीं हुई। कुछ ही सालों हुई हैं; जब सिंहभूममें कई जगह मैंगानिस्‌का खान निकली थीं। खोज करनेसे भारतवर्षमें अब भी बहुत जगह कीमती धातुओंकी खानें मिल सकती हैं।

खनिके भीतर हवा भी जाती आती है, हजारों आदमी दिनरात काम करते हैं, सैकड़ों जानवरोंसे उसमें काम लिया जाता है और असंख्य बत्तियां भी उसमें जलती रहती हैं। इन कारणोंसे खानकी वायु अत्यन्त दूषित होती है। जीवजन्तुओंकी श्वासप्रश्वाससे जिस प्रकार वायु दूषित हो जाती है, वैसे ही अधिक बत्तियोंके जलनेसे वायुकी आक्सिजेन गैस जलकर तथा कार्वनिक एसिड गैसकी अधिकतासे वायु दूषित हो जाती है। इसके सिवा खनिके खोदनेमें तरह तरहके विस्फोरक (explosives) पदार्थ व्यवहृत होते हैं। इन सब विस्फोरक पदार्थोंसे जो गैस निकलती है, उसमें कार्वन मोनोक्साइड (Carbon monoxide) आदि अत्यन्त तीव्र विषाक्त गैस मिली हुई रहती है। यह विषाक्त गैस थोड़ीसी भी निःश्वासके साथ फेफड़ेमें चली जाय तो मनुष्य मौतका महमान बन बैठता है। इसके अलावा खानिके भीतर पर्वतगात्र वा खनिज धातुसे भी सर्वदा नानातरहकी गैस निकलती रहती है। इनमें कार्वनिक एसिड और हाइड्रोजेन सालफाइड (Carbon dioxide and hydrogensulphide) मुख्य है। अधिकांश कोयलेकी खानोंमें मार्स गैस (Marsh gas) नामकी एक प्रकारकी गैस उत्पन्न होती है। इस गैसके साथ कोयलेकी दाह्य गैस उत्पन्न होती है। किसी तरहसे उसमें आगका सम्पर्क होते ही वह गैस विस्फोरक

पदार्थकी भांति शब्दायमान हो कर समस्त खानिको उड़ा कर चूर्ण कर देती है। इस मार्स गैसके जरिये कोयलेकी खानोंमें कितना अनिष्ट हुआ और कितने हजार आदमी मरे होंगे, उसकी कोई तादाद नहीं। इन दुर्घटनाओंका विवरण पीछे लिखा गया है।

ऊपर कही हुई दूषित वायुको साफ करनेके लिए खानमें वायुचलाचलकी व्यवस्था करनी पड़ती है। खानमें बाहरकी साफ हवा जितनी ज्यादा जायगी, उतनी ही वहांकी मार्स गैस आदि दूषित वायु उस वायुके साथ निकलती रहेगी। इस प्रकारसे दुर्घटनाओंका प्रतीकार करनेसे, भय कम रहता है। पहिले कहा जा चुका है कि, खानमें वायु जानेके लिए एक मार्ग और उसको निकालनेके लिए एक स्वतन्त्र मार्ग रहता है। इसके सिवा बिजलीसे चलनेवाली हवाकी दमकलें, पंखे धौंकनीकी तरहके यन्त्र आदि तरह तरहके वैज्ञानिक यन्त्रोंसे आजकल वायु-चलाचल करनेका काम लिया जाता है।

खानिकी गभीरता। खान कितनी गहरी करनेसे, उसमें अच्छी तरह काम किया जा सकता है, उसका अभी तक कुछ निर्णय नहीं हुआ। खान जितनी गहरी होती जाती है, उसके भीतरका उत्ताप (Temperature) भी उतना ही बढ़ता जाता है। ज्यादा नीचेसे पानी निकाल कर फेंकनेसे दिक्कत उठानी पड़ती है और गहरी खानकी जमीन बहुत कड़ी होती है, इस लिए खोदनेमें भी बहुत परेशानी उठानी पड़ती है। कभी कभी ऐसा मालूम पड़ने लगता है कि, वह अच्छेद्य भूमि है। मिचिगान देशके हटन (Houghton) काउण्टिकी तमरक (Tamarack) नामकी खान इस पृथिवीमें सबसे बड़ी और गहरी खान है। इसकी गहराई ५२०० फीट है। तमरक कम्पनीकी और तीन खनि हैं, उनकी तथा उनके पासकी खानोंका गहराई ४००० फीटसे लेकर ५००० फीट तक है। इङ्गलैण्डमें बहुतसी खानें ३००० फीट गहरी हैं, और बेलजियममें ४००० फीट गहरी दो खानें हैं। देखनेमें आता है कि, पृथिवीके विभिन्न देशकी खानका आभ्यन्तरिक उत्ताप गहराईके साथ समान अनुपातसे वृद्धि नहीं होता। सचराचर प्रत्येक ५०से १०० फीट तक नीचेमें एक डिग्री उत्ताप बढ़ता जाता है। परन्तु मिचिगान देशकी खानोंमें प्रत्येक २०० फीट और कभी कभी उससे भी अधिक नीचेमें एक डिग्री मात्र उत्ताप बढ़ता है और कहीं कहीं १३०° डिग्री फा० उत्तापमें खनिका काम चलता है। परन्तु ऐसी खनियोंमें बाहरसे सर्वदा प्रति मिनिटमें १००० घनफीट वायु लोहेकी पाइपके द्वारा खनिके भीतर पहुंचानी पड़ती है। ऐसी हवा क्रमागत भीतरमें जाती रहनेसे उत्ताप ११०°से १२०° डिग्री ही रह जाता है। परन्तु ऐसी गरममें लोग चार घण्टेसे ज्यादा काम नहीं कर सकते।

खानिकी दुर्घटना। खनिका काम निहायत खतरेका है, किस समय क्या विपत्ति आवेगी, उसका किसीको पता नहीं। प्रायः कोयले या कोई पत्थर आदिके गिर जानेसे अथवा धसक जानेसे लोग तो मरा ही करते हैं। इसके अलावा नाना प्रकारकी विस्फोरक गैस और अग्निके उपद्रवसे महाविपत्तियां आ खड़ी होती हैं। ये दुर्घटनायें जिससे न होने पावें; इसके लिए बहुतसे कानून बने हैं तथा नियमावली प्रचलित हुई है। इतना होने पर भी बहुतसी दैवदुर्घटनाओंसे असंख्य मनुष्य मरा ही करते हैं। खानके भीतर काम करनेवाले प्रायः लापरवाहीसे काम करते हैं; इसी लिए उनके ऊपर कोयला, धातु आदिकी धरनि गिर पड़ती है और हजारों आदमियोंकी मृत्यु होती है।

पहिले लिखा जा चुका है कि, मार्स गैस वा फायार डैम्प नामक एक प्रकारकी विस्फारक गैससे खनिमें अग्निका उत्पात होता है। इस मार्स गैसमें किसी तरह अग्निका संयोग होनेसे, वह जल उठती है और साथ ही साथ भयानक शब्द करती हुई खानको उड़ा देती है वा चकना चूर कर देती है। सब ही खानोंमें ज्यादा मार्स गैस नहीं पैदा होती, पर थोड़ीसी गैसमें कोयलेके सूक्ष्म कण मिश्रित हो जानेसे तीव्र विस्फोरककी भांतिका पदार्थ बन जाता है; वह भी मार्स गैसकी तरह विपत्ति लानेवाला होता है और कभी कभी कोयलेकी कणा ही जलकर अग्निकाण्ड फैला देता है। इन सब नानाकारणोंसे उत्पन्न हुई विपत्ति-

योंके निवारणार्थं बड़ी सावधानीसे काम लेना चाहिये और खानि-खननमें बहुत थोड़ा विस्फोरक पदार्थ काममें लाना चाहिये। जिन खनियोंमेंसे मार्स गैस निकला करती है, उसमें किसी प्रकारकी आग वा बत्ती ले जाना ठीक नहीं। वैज्ञानिक डेभी साहबने पहले एक प्रकारकी लालटेन आविष्कृत की थी। इस लालटेनके भीतर जो बत्ती रहती थी, उससे मार्स गैस नहीं जलती थी; तथा मार्स गैस निकलती है या नहीं भी भी उससे जान लिया जाता था। इस लालटेनकी बहुत उन्नति हुई है और संस्कार भी हुए हैं। इस लालटेनका नाम "निरापद लालटेन" (Safety-lamp) है। इस लालटेनके आविष्कृत होनेसे लाखोंके प्राण बचे हैं।

मार्स गैसके विना भी साधारण असावधानतावश खनियोंमें आग लग जाती है। भीतरमें एकबार आग लगनेसे उसका बुझाना कठिन हो जाता है, क्योंकि वह अग्नि क्षणभरमें भयानकमूर्ति धारण कर लेती है। पानीसे भी बुझाई नहीं जा सकती, क्यों कि पानीसे और भी विषाक्त गैस पैदा हो कर लोगोंके प्राण नष्ट करती है। खानमें जहांकी जगह खोद ली जाती है, वह लकड़ोंसे पाट कर ठीक कर दी जाती है। आगके लगनेसे वे लक्कड़ जल जाते हैं और वह जगह धसक जाती है। इसीलिए लोगोंका पानीसे बुझानेका साहस नहीं होता। कभी कभी खानमें ऐसी आग लगती है कि, वह किसी भी तरह बुझाई नहीं जा सकती, ऐसी हालतमें खनिका मुख बन्द कर दिया जाता है। फिर २।३ मासमें जब ऐसा निश्चय हो जाता है कि अब आग बुझ गई होगी और कोयले आदि अन्यान्य खनिज पदार्थ ठंडे हो गये होंगे, तब दरवाजा खोल कर उसमें लोग काम करने लगते हैं। इस प्रकार दरवाजा बन्द कर देनेका मतलब यह है कि, जिससे खनिके भीतर हवा न जाने पावे। हवा भीतर न जानेसे; तथा भीतरकी वायुमें जो अक्सीजेन है वह खतम हो जानेसे ही अग्नि बुझ जाती है। ऐसे खनिका मुंह बन्द कर देनेसे आग तो १०।१५ दिनमें बुझ जाती है, पर खनिज द्रव्योंके शीतल होनेमें २।३ माससे कम समय नहीं लगता।

कभी कभी जलप्लावनके कारण भी खनिकी विशेष हानि होती है। बाहरके मैदानसे पानी आजाने अथवा ज्यादा वर्षात होनेसे अगर खनिमें ज्यादा पानी घुस आता, तथा जमीनसे ज्यादा पानी निकल पड़ता तो खनि जलप्लावित हो जाती है। ऐसे जलप्लावनसे बहुतसे आदमी सहसा मर जाते हैं। खनियोंकी दुर्घटनाओंका और भी एक कारण है। खनि जितनी गहरी होगी, उसके खम्भ और खिलान भी उतने ही मजबूत होने चाहिये। पर खिलान और खम्भे हर समय मजबूत नहीं दिये जाते, इसीलिये कभी कभी खनि ऊपरसे टूट पड़ती है और उसमें दब कर हजारों आदमी मर जाते हैं। इसके सिवाय खान खोदते समय और लापरवाहीसे विस्फोरक द्रव्योंका व्यवहार करते रहनेसे भी बहुतसी दुर्घटनाएं हो जाती हैं। इसीलिए कौनसी विस्फोरक चीज कितनी काममें लानी चाहिये, इसके लिए कानून और नियम प्रचलित हुए हैं। परन्तु अफसोस है कि, खानवाले उन नियमोंका यथारीति पालन नहीं करते, दुःसाहसके साथ असावधानीसे विस्फोरक पदार्थ ज्यादा काममें लाते हैं, और उसका भयानक फल भी हाथों हाथ भोगते हैं। इन कानूनोंको तोड़नेसे बहुत जगह कठिन दण्ड भी दिया जाता है। धातु, धातुतत्त्व, भूतत्त्व आदि शब्दोंमें विस्तृत विवरण देखना चाहिये।

खनिज (सं० त्रि०) खनि-जन-ड। खनिसे उत्पन्न, खानसे निकला हुवा। मनुष्यका व्यवहारोपयोगी जो पार्थिव पदार्थ मट्टी खोद कर निकाला जाता, खनिज कहलाता है। हीरा माणिक आदि रत्न, स्लेट, रेतीला पत्थर, पत्थरका चूना, खड़िया मट्टी, गेरू, पहाड़ी नमक, सोना, चांदी, लोहा आदि धातु सभी खनिज हैं।

जिस शास्त्रसे खनिज पदार्थका गुणागुण देखते और परीक्षा करते, उसको खनिजतत्त्व (Mineralogy) कहते हैं। धातु, धातुतत्त्व प्रभृति शब्द देखो।

खनिजौषध (सं० क्ली०) पञ्चविध खनिजद्रव्य। इसके पांचों पदार्थ यह हैं—रस, उपरस, धातु, लवण और रत्न।

खनित्र (सं० क्ली०) खन-इत्र। अस्त्रविशेष, खन्ता, गेंती।

खनित्रक (सं० क्ली०) खनित्र स्वार्थे कन्। खनित्र, खन्ता, बेलचा, कुदाल।

खनित्रिम (सं० त्रि०) खननेन निवृत्तः, खन-त्रिमक्। खनन द्वारा उत्पन्न होनेवाला, जो खोदनेसे पैदा हो।

खनिनेत्र (सं० पु०) विविंशके ज्येष्ठपुत्र। इनके पुत्रका नाम सुवर्चा था। (भारत आश्व० ४ अ०) सुवर्चा देखो। किसी स्थल पर खनीनेत्र पाठ भी मिलता है।

खनियाधान—मध्यभारत एजेन्सीमें ग्वालियर रेसीडेंसटके अधीन एक क्षुद्र राज्य। इसका क्षेत्रफल ६८ वर्गमील है। इसके पूर्व युक्तप्रान्तका झांसी जिला और दूसरी ओर ग्वालियर राज्य है। भौगोलिक रूपसे यह राज्य बुंदेलखण्डमें पड़ता है और १८८८ ई० तक उसीमें लगता भी था।

प्रकृतरूपमें यह ओरछाका एक अंश रहा। परन्तु १७२४ ई०को ओरछाके महाराज उदितसिंहने इसे अपने बेटे अमरसिंहको मोहनगढ़ और अहर गांवोंके साथ दे डाला। मराठाओंने ओरछा राज्य विभाग करते समय १७५१ ई०को एक सनद दे अमरसिंहकी यह जागीर बरकरार रखी। उस समय झांसीका मराठा राज्य और ओरछा दोनों अपने अपनेको इसका प्रमुख बतलाते थे। १८५४ ई०को जब झांसी राज्य टूटा, खनियाधानके राजा पृथ्वीपाल बहादुरजू देवने पूर्ण स्वाधीनता पानेका दावा किया। १८६२ ई०को उन्हें गोद लेने और वृटिश गवर्नमेण्टके अधीन रहनेको सनद दी गयी। यहांके राजा ओरछा घरानेके बुंदेला राजपूत हैं और जागीरदार कहलाते हैं। १८७७ ई०को राजा चित्रसिंहको राजा उपाधि मिला।

खनियाधानकी लोकसंख्या प्रायः १५५२८ है। बुंदेलखण्डी यहां चलती बोली है। देश पार्वत्य है। इस राज्यका प्रधान नगर खनियाधान है। वह अक्षा० २५° २´ उ० और देशा० ७८° ८´ पू०में पड़ता है, लोकसंख्या प्रायः २१८२ है। खनियाधान नगरमें एक दुर्ग बना, जिसमें राजाका निवास है।

खनिसम्भव (सं० पु०) १ स्वर्ण, सोना। (त्रि०) २ खनिज, खदानी।

खनिहाना (हिं० क्रि०) खाली करना, समेटना, सबका सब ले लेना।

खनी (सं० स्त्री०) खन इन् वा ङीप्। १ धातु रत्न आदिकी उत्पत्तिका स्थान, खदान। २ भूमिदारण, खोदाई। ३ आधार, टेक, सहारा। ४ खात, गड्ढा।

खनि देखो।

खन्न—पञ्जाबके लुधियाना जिलेकी समराल तहसीलका एक नगर। यह अक्षा० ३०° ४२´ उ० और देशा० ७६° १३´ पू०में नार्थ-वेष्टर्न रेलवे पर अवस्थित है। इसकी लोकसंख्या लगभग ३८३८ होगी। खन्नमें २ कपास ओटने और आटा पोसनेका कारखाना है। यहां अंगरेजी संस्कृतकी एक मध्य पाठशाला चलती और आम पासमें खेतीकी चीज बिकती है। १८७५ ई०का खन्नमें म्युनिसपालिटी पड़ी थी।

खन्न (हिं० पु०) खन खन, खनक, खनाका।

खन्न खन्न करना (हिं० क्रि०) खनकाना, खनखनाना, बजाना

खन्ना (हिं० पु०) १ कटिया काटनेकी जगह। २ खत्री लोगोंका एक भेद। बनजाई खत्रियोंके ढाई या चार घरमें खन्ना एक कुल होता है।

खन्य (सं० त्रि०) खन्-यत्। खननीय, खोदा जानेवाला

खपची (हिं० स्त्री०) १ कमची, खपाच बांसकी पतली तीली। २ बांसकी पतली पटरी। इससे अस्त्रचिकित्सा भग्न अङ्ग बांधते हैं।

खपटा (हिं० वि०) १ वृद्ध, बुड्ढा। २ कुरूप, बदसूरत। ३ दुबला पतला। (पु०) ४ खपड़ा।

खपटी (हिं० स्त्री०) १ क्षुद्रखर्पर, छोटा खपड़ा। २ छोटे छोटे तख्ते। कड़ियोंके बीचमें आईनाबन्दीके लिये खपटी लगयी है।

खपड़भार (हिं० स्त्री०) कृषिकोंकी एक रीति, किसानोंकी कोई रस्म। यह हरसाल पहले पहल उखारी चढ़ने पर होती है। इसमें ब्राह्मणों और दरिद्रोंको रस पिलाते और किसी कदर गुड़ तैयार कर देवताके उद्देश प्रसाद चढ़ाते हैं।

खपड़ा (हिं० पु०) १ मृत्तिकाका कोई पक्व खण्ड। यह मकानकी छतमें लगाया जाता है। खपड़ा दो प्रकारका होता है—खपुआ और नरिया। चपटे और चौकोरको खपुआ और लम्बे और नाली-जैसेको नरिया कहते हैं। छतमें खपुआ बिछा कर उनके जोड़ पर नरिया

रखा जाता है। २ मृत्पात्रका निम्नस्थ अर्धभाग। यह गोल जैसा होता है। ३ भिक्षुकोंके भिक्षा ग्रहण करनेका पात्र। ४ भग्न मृत्पात्रखण्ड, ठीकरा। ५ कच्छपके पृष्ठका कठोरावरण। ६ चौड़ो गांसोका वाण। ७ गोधूमकीटविशेष, गेहूंका कोई कोड़ा।

खपड़ो (हिं० स्त्री०) १ भड़भूजांके बहुरी भूननेका बर्तन। २ मट्टोका नांद-जैसा छोटा बर्तन। ३ खोपड़ी।

खपड़ैल (हिं० पु०) १ खपड़ेकी छत या छाजन। २ खपड़ेकी छतका मकान।

खपत (हिं० स्त्री०) १ समाई, गुञ्जायश। २ विक्रय, कटती।

खपती खपत देखो।

खपना (हिं० क्रि०) १ लगना, खर्च होना। २ चलना, निकलना। ३ बिगड़ना। ४ मरना, मिटना।

खपरा (हिं०) खपर देखो।

खपरिया (हिं० स्त्री०) १ खपरी, खानसे निकलनेवाली एक चीज। खपरी देखो। २ क्षुद्र खपरा, छोटा खपड़ा। ३ चनेकी फसलका कोई कोड़ा।

खपरैल, खपरैल देखो।

खपली (हिं० स्त्री०) गोधूमभेद, किसी किस्मका गेहूं। यह बम्बई, सिन्धु, महिसुर आदि प्रान्तोंमें उत्पन्न होती है। खपली खरीफके साथ होनेवाला गेहूं है। इसकी भूसी बड़ी मुश्किलसे कूटती है। कोई कोई इसे गोधी या कफली भी कहता है।

खपाट (हिं० स्त्री०) १ यन्त्रविशेष। यह बांसकी दो तालियां नीचे ऊपर लगानेसे बनता है। रेशमवाले इस औजारको बरतते हैं। २ खपची।

खपाची, खपाच देखो।

खपाट (हिं० स्त्री०) धौंकनीके छोटे छोटे डण्डे। यह लकड़ीकी बनती और धौंकनीके मुंह पर लगती है। खपाटके ही बल धौंकनीको उठाते और दबाते हैं।

खपाना (हिं० क्रि०) लगाना, काममें लाना, खर्च कर डालना।

खपुआ (हिं० वि०) १ भयभीत, भगोड़ा, डरपोक। (पु०) २ लकड़ीकी कोई खपाच। यह द्वारके अधोभागमें चूलकी छेदमें मजबूतीसे बैठानेके लिये लगती है।

खपुट (सं० पु०) व्याघ्रनख, बघनखा।

खपुर (सं० पु०-क्ली०) खं विपर्ति उच्चतया, पू-क। १ गुवाक, सुपारी। खेन आकाश गतेन हिमकरकादिना पूर्यते, कर्मणि क:। २ भद्रमुस्तक। ३ शल्लकीनिर्यास, बघनखा। ४ बालक, ह्रीवेर। ५ रसुन, लहसुन। खे आकाशे उदितं पुरम्, शाकार्थिवादिवत् समा०। ६ गन्धर्वनगर। हठात् आकाशमें गन्धर्वमण्डल देख पड़नेसे कोई न कोई अशुभ हुवा करता है। बृहत्संहितामें लिखा है, खपुर किस प्रकारके भावमें कहां उदित होनेसे क्या फल मिलता है—गन्धर्वनगर उत्तर, पूर्व, दक्षिण वा पश्चिम देख पड़नेसे यथाक्रम पुरोहित, राजा, सैन्याध्यक्ष और युवराजका विघ्न होता है। फिर उसके श्वेत, रक्त, पीत वा कृष्णवर्ण लगनेसे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य वा शूद्रका विनाश निश्चित है। ईशान, अग्नि और वायुकोणमें यह दृष्ट होनेसे हीन जाति मर मिटते हैं। शान्तदिक्‌की तोरणयुक्त गन्धर्वनगर नजर आनेसे राजाका विजय होता है। जिस वर्णकी गन्धर्वनगर सकल समयों और सभी दिशाओंमें देखा जाता, राजा और राज्यको भय आ दबाता है, किन्तु धूम, अग्नि वा इन्द्रधनुः तुल्य होनेसे चोर तथा अरण्यवासी मरते मिटते हैं। ईषत् पाण्डुवर्ण गन्धर्वनगर निकलनेसे वज्रनिपात होता और झंझा वायु बहता है। किन्तु इसके दीप्त होनेसे शत्रुभय बढ़ता और दक्षिण भागमें रहनेसे जय मिलता है। जिस समय अनेक वर्णाकृति पताका, ध्वज और तोरणादियुक्त गन्धर्वपुर आकाशमें चढ़ आता, घोरतर संग्राम लगाता और पृथिवीको हस्ती, मनुष्य तथा अश्वका रक्त पिलाता है। (बृहत्सं० ३६ अ०)

खे आकाशे चरं पुरम्। ७ आकाशगामी दैत्यपुरविशेष। दैत्यकन्या पुलोमा और कालकाने बहुत दिनों कठोर तपस्या की। उनकी तपस्याको देख कर ब्रह्मा वर देने गये थे। उन्होंने दैत्योंके दुःख निवारणको आकाशगामी एक नगर प्रस्तुत करनेकी प्रार्थना की। ब्रह्माने उनकी प्रार्थनाके अनुसार खपुरनगर निर्माण कर दिया। (भारत, वन १७३ अ०)

८ हरिश्चन्द्र राजाकी पुरी।

खपुष्प (सं० क्लो०) खस्य आकाशस्य पुष्पम्, ६-तत्। १ आकाशकुसुम, आसमानका फल। खपुष्प वास्तविक कोई पदार्थ नहीं है। किसी अलीक पदार्थके उपमा रूपसे शास्त्रकार लोग खपुष्पका उल्लेख करते हैं। इसीसे खपुष्प अनहोनी बातको कहा जाता है। २ पनसवृक्ष, कटहलका पेड़।

खप्पर (हिं० पु०) १ मृत्पात्रविशेष, मट्टीका कोई बर्तन। यह तसला-जैसा होता है। २ कालीके रुधिर-पानका पात्र। ३ भीख लेनेका बर्तन। ४ खोपड़ा।

खफगी (फा० स्त्री०) १ अप्रीति, नाराजगी। २ क्रोध, गुस्सा।

खफा (अ० वि०) १ अप्रसन्न, नाराज, बिगड़ा हुआ। २ क्रुद्ध, गुस्सासे भरा हुआ।

खफीफ (अ० वि०) १ अल्प, थोड़ा। २ लघु, हलका। ३ क्षुद्र, हकीर।

खफीफा (अ० वि०) खफीफ, थोड़ा।

खफ्फा (हिं० स्त्री०) कुश्तीका एक पेंच। इसमें जोड़की गर्दन पर बायें हाथसे थपका मार फौरन उसको अपने दाहने हाथसे फांस लिया और अपनी कलाईको उसके गले पर रखा जाता है। फिर अपने बायें हाथसे उसका दाहना पोंहुचा पकड़के कुछ ऊपर उठाते या झटका लगाते और जोड़को नीचे गिराते हैं।

खबर (अ० स्त्री०) १ संवाद, बात। २ सूचना, इत्तिला। ३ संदेशा। ४ संज्ञा, होश। ५ अनुसन्धान, खोज।

खबरगीरी (फा० स्त्री०) १ पूछताछ, देखभाल। २ सहानुभूति तथा सहायता, हमदर्दी और मदद।

खबरदार (फा० वि०) सावधान, होशियार, समझने बूझनेवाला।

खबरदारी (फा० स्त्री०) सावधानता, होशियारी, वाकिफी।

खबीस (अ० पु०) शैतान, भूत, राक्षस, बदमाश और डरावना आदमी।

खब्त (अ० पु०) उन्माद, सनक, पागलपन।

खब्ती (अ० वि०) उन्मत्त, पागल।

खब्बर (हिं० पु०) दूर्वातृण, दूब।

खब्बरखब्बर (हिं० पु०) शब्दविशेष, एक आवाज। जल्द जल्द पानी मंझानेसे यह शब्द निकलता है।

खब्बा (हिं० वि०) १ वाम, बायां। वाम हस्तसे कार्यकारी, काममें जिसका बायां हाथ ज्यादा चले।

खभड़ (हिं० वि०) जीर्णशीर्ण, दुबला पतला।

खभ (सं० पु०-क्लो०) ग्रह, नक्षत्र।

खभरना (हिं० क्रि०) १ मिश्रित करना, मिलाना। २ उलटपुलट देना, तरतीब बिगाड़ना।

खभरुआ (हिं० वि०) व्यभिचारिणी स्त्रीसे उत्पन्न, जो छिनालसे पैदा हो।

खभुक् (सं० पु०) ख-भुज-क्विप्। इन्द्र।

खभ्रान्ति (सं० पु०-स्त्री०) खे आकाशे भ्रान्तिर्भ्रमणं मांसान्वेषणाय यस्य। चिल्लपक्षी, चील चिड़िया।

खम (फा० पु०) १ वक्रता, टेढ़ापन, झुकाव। २ गानेकी एक लचक।

खमणि (सं० पु०) खे आकाशे मणिरिव प्रकाशकत्वात्। सूर्य, सूरज।

खमती—आसामके सीमान्तप्रदेशका एक पहाड़ी देश। यह ब्रह्मपुत्र उपत्यकाके पूर्वप्रान्त पर पड़ता है। खमतीके अधिवासी खमती हैं। खम्पती देखो।

खमदार (फा० वि०) वक्र, टेढ़ा, झुका हुआ।

खमसना (हिं० क्रि०) मिलाना, डालना।

खमसा (अ० पु०) १ पांच पांच शेरोंके बन्दकी गजल। २ कोई ताल। इसमें ५ भरी और १ खाली तालें लगती हैं।

खमा (हिं०) चमा देखो।

खमीर (अ० पु०) १ आटेका पतला सड़ाव। इससे जलेबियां बनायी जाती हैं। २ पदार्थविशेष, कोई चीज। यह कटहल, अनन्नास वगैरहको सड़ा कर तैयार किया जाता है। खमीर पीनी तम्बाकूमें खुशबूके लिये पड़ता है।

खमीरा (अ० पु० वि०) १ खमीरसे तैयार किया हुआ। २ शक्कर या शीरेमें पकी हुई दवा।

खमीलन (सं० क्लो०) खानां इन्द्रियाणां मीलनम्, ६-तत्। तन्द्रा, ऊंघाई।

खमूर्ति (सं० पु०) खं मूर्तिरस्य, बहुव्री०। अष्टमूर्तिधर, भीमरूप, शिव।

खमूर्ति (सं० स्त्री०) खस्य ब्रह्मणो मूर्तिः स्वरूपम्। ब्रह्मस्वरूप। (मनु २।८२)

खमूलिका (सं० स्त्री०) खं शून्यभूतं मूलमस्या, बहुव्री० ततो ङीप् क-टाप् ईकारस्य ह्रस्वत्वम्। कुम्भिका, पानीका एक पौदा।

खमो (हिं० पु०) एक चिरहरित वृक्ष। यह भारत, ब्रह्मदेश तथा अन्दामान द्वीपमें समुद्रके मृण्मय तीरों और सन्धियोंमें उपजता है। इसकी छालमें सज्जी ज्यादा रहती और चमड़ा सिझानेमें लगती है। खमोके रङ्गमें कार्पासवस्त्र रञ्जित होता है। फल सुमिष्ट और खाद्य है। खमोदकी शाखाओंसे सूत जैसी महीन जटा निकलती है। उससे लोग किसी किस्मका नमक बनाते हैं। इसका काष्ठ भी कुछ बुरा नहीं। खमोका दूसरा नाम भोर और राई है।

खम्पती (खमती)—भारतके पूर्वप्रान्तवासी शानवंशीय लोग। आसामके लक्ष्मीपुर जिले और उसके पूर्व पार्वत्यप्रदेशमें इनका वास है। अष्टादश शताब्दके मध्यभाग यह विवाद विसंवादके कारण आसामके सदिया विभागमें जाकर बसे। किसी किसीके मतमें यह इरावतीके उत्पत्तिस्थानके निकट बड़ी खम्पती नामक स्थानसे वहां गये थे। किन्तु खम्पती अपने आपको बहुत दिनसे उक्त प्रदेशका अधिवासी बताते हैं। भाषामें अधिकांश श्यामदेशकी भाषाके शब्द भरे हैं, वर्णमाला भी प्रायः एकही है।

किसी समय इनका वशां विस्तृत राज्य रहा। मणिपुरवाले इस राज्यको पोङ्गराज्य कहते थे। यह त्रिपुरासे श्याम पर्यन्त विस्तृत रहा। इसकी राजधानीको शान लोग मोङ्गमारङ्ग और ब्रह्मदेशीय मोङ्गोङ्ग नामसे अभिहित करते थे। १८वें शताब्दके मध्यभाग ब्रह्मराज आलम्पराने यह राज्य ध्वंस किया। राज्य बिगड़ने पर कुछ लोगोंने जाकर आसाममें उपनिवेश लगाया था। डिहिङ्ग नदीतीरके फकि या फकियाल और सदियाके कनिजङ्ग लोग भी खम्पतियोंके ही अन्तर्गत हैं।

यह बौद्ध हैं और अपनी रीतिके अनुसार मठ तथा याजक रखते हैं। अधिकांश खम्पती अपनी भाषामें लिख पढ़ सकते हैं। यह लकड़ीकी दीवार और खर पतवारका छप्पर लगा ऊंची कुरसीके मकान तैयार करते हैं। छप्पर इस प्रकार लटका देते हैं कि बाहरसे दीवार नहीं देख पड़ती। बुद्ध-मन्दिर और मठादि भी ऐसे ही होते हैं। मन्दिरोंमें किन्तु सुन्दर खोदित काष्ठ-कार्य रहता है। खम्पती मठको 'वापुचङ्ग' कहते हैं।

इनके याजक मस्तकमुण्डन, मालाधारण और पीतवास परिधान करते हैं। वंशानुक्रमसे याजकता नहीं मिलती। कोई भी याजक हो सकता है। याजक बननेवालेको केवल अविवाहित अवस्थामें वापुचङ्गमें रहके प्राचीन याजकके पास पाठ, शिक्षा और धर्म-कर्मादि अभ्यास करना पड़ता है। याजक लोग प्रति दिन प्रातःकाल अपने बालकशिष्यको साथ लेकर भिक्षाको निकलते हैं। बालकके हाथमें एक घण्टा और लाहसे रंगी एक कठौती रहती है। वह घण्टा बजाते याजकके साथ द्रुतपदसे राहके बीच मुहल्ले मुहल्ले घूमता है। भिक्षाके लिये किसीका द्वारस्थ होना नहीं पड़ता। घरके दरवाजे पर गृहस्थ रमणियां प्रस्तुत खाद्य लिये खड़ी रहतीं और बालकोंके पहुंचने पर उनका पात्र भर देती हैं। आहारादिके पीछे कोई दूसरा काम न लगनेसे याजक और शिष्य लोग मिल कर गजदन्त, अस्थिखण्ड अथवा काष्ठखण्ड पर कारु-कार्य किया करते हैं। हाथीदांत पर इनकी बनायी मूर्तियां देख युरोपीय लोग चमत्कृत हुए हैं। यह अन्यान्य शिल्पकार्य भी किया करते हैं।

खम्पती सोने, चांदी और लोहेके गहने अपने आप बनाते और हथियार वगैरह भी तैयार करते हैं। गैंड़ेके चमड़ेकी नक्काशीदार बहुत बढ़िया ढाल बनायी जाती है। स्त्रियां विशेष परिश्रम करती हैं। शिरमें यह तरह तरहका फीता बांधते हैं। खेतीके काममें औरतें भी मर्दोंको कितनी ही मदद देती हैं।

खम्पतियोंका प्रधान अस्त्र गंड़ासा है। यह सादा और नक्काशीदार भी होता है। कमरमें इस तरह गंड़ासा लटका करता, कि इच्छा होते ही दाहने हाथ मूंठ पकड़के म्यानसे निकाला जा सकता है। हाथमें गंड़ासा और पीठ पर ढाल रखके यह प्रधानतः युद्ध

करते हैं। आजकल बहुतोंने बन्दूक उठाना आरम्भ किया है।

खम्पती सूती कपड़ा और छींट या रेशमी डोरिया पहनते हैं। जो लोग कुछ गण्य मान्य और सम्पतिशाली हैं, पैरों तक पोशाक लटका लेते हैं। मामूली लोगोंका पहनावा घुटनों तक ही है। फिर वक्षःस्थल पर कार्पासनिर्मित और गात्रमें नीले रंगका छापा कुरता सटा रहता है। सर पर लम्बे बाल होते हैं। सफेद पगड़ीमें बालोंको बांध लिया जाता है। स्त्रियोंका पहनावा भी प्रायः पुरुषों जैसा ही है। परन्तु वह सरके बालोंको चारो ओरसे मत्थेके सामने लगा कपाल पर चोटी गूथती हैं। उसको चारो तर्फ तरह तरहका फीता बांधा रहता है। एक लंबा अंगरखा पैरों तक पहना जाता है। उसे छाती पर बांध देती हैं। अलङ्कारोंके बीच साधारणतः गलेमें मूंगे और दूसरी चीजोंकी बनी माला और कानमें छेद करके अम्बरकी पोली सोंकें डाल लेती हैं।

यह देखनेमें अधिक सुन्दर नहीं हैं। शानवंशीय अन्यान्य जातियोंकी अपेक्षा इनका रङ्ग कुछ धुंधला है। परन्तु जिन्होंने आसाम जाकर आसामी रमणियोंसे विवाह कर लिया है, उनकी वंशसम्भूत सन्तानसन्ततिका गठन कोमल और अपेक्षाकृत सुश्री होता है।

अष्टादश शताब्दके मध्यभागको खमतियोंमें जो आसाम गये, सदिया विभागमें बस गये। इनके प्रधान व्यक्ति सदिया-खोया गोसाईंने अंगरेजोंका अनुग्रह लाभ किया था। उनके मरने अंगरेज सरकारने सदिया ले लिया। खमती लोग इससे विरक्त हो सदियाके सिपाहियोंकी फौज और अंगरेज अफसरको मारके भाग गये। अंगरेजोंने थोड़े समय तक उनका अनुसरण किया। अब वह ठण्डे हो तिङ्गपनी और नवदिहिङ्ग नदीतीरको रहते हैं।

खमती आसामकी अन्यान्य जातियोंकी अपेक्षा कितने ही शिक्षित और सुसभ्य हैं। नारायणपुरमें इनका प्रधान उपनिवेश पड़ा है। यह गोमांस व्यतीत और सभी प्रकारका मांस खाया करते हैं। इनका धर्मग्रन्थ खमति-भाषामें लिखा है। बुद्धदेवको यह कदोमा (गोतम) कहते हैं। खमती दुर्गा वा देवी-पूजा भी करते हैं। किन्तु अपने पुरोहितों द्वारा ही पूजा सम्पन्न होती है। ब्राह्मणोंसे पूजा नहीं कराते। देवी पूजाका पुरोहित स्वतन्त्र है। उसको 'पमू' और कदोमाके पुरोहितको 'खोमन' कहा जाता है। देवीपूजामें कुक्कुट, वराह, महिष प्रभृति बलि होते हैं। छाग वा हंसका बलि होते नहीं देखते। गोतमकी पूजा फूलोंसे ही की जाती है। उनके जन्म और मृत्यु उपलक्षमें यह धर्मोत्सव किया करते हैं।

खम्पा—कुनवारके तातारजातीय भिक्षुक। यह नाचकर और नाना भावभङ्गी बता कर भिक्षासे जीविका चलाते और समय समय पर मुसलमानोंके पवित्र तीर्थ दर्शन करते चक्कर लगाते हैं।

खम्बाली—एक प्रकारके गुजराती ब्राह्मण। खम्बा रियासतमें अधिक रहनेसे इनका वह नाम पड़ा है।

खम्बू—नेपालके कोई योद्‌ृजाति। यह प्रधानतः दूधकोसी तथा कांकि नदीके मध्यवर्ती किरांती देशमें लिम्बू और याखा लोगोंके साथ रहते हैं। खम्बू बतलाते हैं—कि उनके पूर्व पुरुष काशीधाममें वास करते थे, वहींसे जाकर आसाममें बस गये। पारुवङ्ग इनके आदि पुरुष और गृहदेवता हैं। सभी गृहस्थ उनकी पूजा किया करते हैं। इनसे यदि जातिकी बात पूछिये, जमोन्दारसिंह वा मण्डल बतलायेंगे। फिर नेपाल राज्यके गुर्खा दलमें जो नियुक्त हैं अपना राय-जैसा परिचय देते हैं।

यह वयस्था कन्याओंका विवाह करते हैं। मामूली तौर पर पुरुषका १५से २० और स्त्रीका १२से १६ वर्षके बीच विवाह होता है। २५ वर्षके लड़कों और २० वर्षकी लड़कियोंके भी कितने ही विवाह होते देखे जाते हैं। शादीके पेश्तर भी कभी कभी स्त्रियां पुरुषोंका संसर्ग कर बैठती हैं। किन्तु कोई कुमारी गर्भवती हो जानेसे उसका प्रणयी आदरसे उसको व्याह लेता है। विवाहमें कन्यापण पड़ता है। शादीसे पहले वरपक्षीय प्रथमतः कन्याके घरको बांसके दो पीपोंमें भर कर महुवेकी शराब और सूवरकी एक रान भेजते हैं। विवाहकी रात वर कन्याकर्ताको सेमन्दी यानी बयाने-

का १) रु० देता है। कन्यापण ८०) रु० बंधा है। एककालको न दे सकनेसे धीरे धीरे चुकाना पड़ता है। कन्याके सीमन्तमें सिन्दूरदान और वस्त्रदान ही विवाह का प्रधान अङ्ग है। विधवाओंका भी विवाह होता है। परन्तु उसका दहेज बहुत कम है। विधवा रमणी युवती और देखनेमें अच्छी होनेसे कोई आधा और उम्र जरा ज्यादा बढ़ जानेसे चौथाई दहेज लगता है। स्त्री भ्रष्टा होनेसे उसको परित्याग किया जाता है। ऐसे मौके पर बिगाड़नेवाला आदमी कन्याके पणका रुपया वरको देने पर वाध्य है। दहेजका झगड़ा चुका देनेसे दोनों विवाहित हो सकते हैं। परन्तु इनमें भ्रष्टा नारियां नहीं-जैसी ही हैं। जिसको कोई चरित्र दोष लगता, प्रणयीको लेकर दूसरी जगह भाग जाती है।

खम्बू हिन्दू ही हैं, परन्तु ब्राह्मण इनका पौरोहित्य नहीं करते। इनके स्वजातियोंमें एक एक पुरोहित रहते, जिन्हें 'होमे' कहते हैं।

यह चैत्र और कार्तिक मासको पारुवङ्ग नामक गृहदेवताके उद्देश्य शूकर, छाग और मद्यको पूजा चढ़ाते हैं। देवीके लिये मेष, महिष, छाग, कपोत आदि वलि किये जाते हैं। खम्बू दुग्ध तथा दूर्वाधानसे सिद्ध नामक किसी देवताको पूजते हैं।

पुरोहितके मतानुसार शवदेहको अग्निक्रिया अथवा समाधि होता है। मृतके उद्देश उसके आत्मीय श्राद्धादि करते हैं।

बहुत दिनसे यह खेतीबारी और जमीन्दारी करते आते हैं। अब कोई कोई नेपालके सेनादलमें घुस गया है। फिर कोई कोई वयनादि कार्य भी करता है। खम्बू खाद्यसामग्री पर उतना छूत विचार नहीं रखते। घरकी पालू मुर्गी, सुवरका गोश्त और शराब खाने पीनेमें किसीको कोई उज्र नहीं। इनकी श्रेणियोंके नाम हैं—काशी, कुयासच्छा, च्छालिङ्ग, खेरेसाच्छ, खुद्राछा, चौरासी, जुभियङ्गे, ताङ्गबुया, कुलुङ्ग, दिलपाली, दुङ्माली, नरदौछा, निनोछा, निमामवोच्छ, नामहङ्ग, निमावौछा, नोमहङ्ग, पदेयाछा, पलेमवोछा, फुरकेली, फुलेली, फलूमाछा, वरलोस, वाभौछा, वाङ्गदेल, वोथिमे, वौथाछया, वोयोङ्ग, बूमाकामछा, मेद्रूछा, मैकन मले कुमछा, मयाहाङ्ग, मकारच्छा, मुलुकुपास, रजविन, रवछाली, राखाली, रानोछा, रापुङ्गछा, रिमचिङ्ग, रेगालौछा, रोचिङ्गाछा, लाफौछा, बाहसल, सिलौछा, साङ्गपाङ्ग, सुङ्गदेले, सोठंगे इत्यादि।

खम्भड़—बम्बईके काठियावाड़ प्रान्तका एक ग्राम। यह स्थान अपने खम्बड़िओ नागमन्दिरके लिये प्रसिद्ध है। ग्रामके प्रवेशद्वार पर रातको प्रायः सांप पड़े रहते, परन्तु उनको छेड़ा नहीं करते हैं। ई० १२वीं शताब्दीके अन्त वा १३वीं शताब्दीके आरम्भकाल जालकदेवजीने सम्भवतः इसको स्थापन किया था। खम्भड़ नागकी कहानी इस प्रकार है—छावड़वंशके ७ राजपूत भाई भाल जिलेमें रहते थे। उनकी अकेली बहनका नाम लाछूबाई था। डाकुओंने उनके ग्रामको आक्रमण किया और पशुओंको हांक करके अपना मार्ग लिया। सातो भाई घोड़े पर चढ़ पशु छोड़ानेको चले थे, परन्तु बारी बारी मार डाले गये। मरने पर वही सर्प बने और आज भी पूजे जाते हैं। लाछूबाई सती हो गयी थीं। प्रत्येक सर्पको आवाहन करनेमें लाछूबाईका भाई कहना पड़ता है। पहले भाईका मन्दिर शियानीमें बना है और उन्हें शियानिओनाग कहते हैं। दूसरेका स्थान देवधोलेराके निकट है। और उन्हें देवधोलेरिओनाग नामसे अभिहित करते हैं। तीसरा तलसानमें तलसानिओ नामसे प्रसिद्ध है। तावीका चौथा ताविओ कहलाता है। खम्भड़के पांचवें को खम्भड़िओ कहा जाता है। बेचरके छठेको बुचेरिओ नामसे पुकारते है। धवानका सातवां मन्दिर धवानिओ नाग नामसे प्रसिद्ध है। खम्भाड़िया नागकी प्रतिष्ठाके दिनसे इस गांवमें सोनार, रंगरेज, मोची, चमार और खटीक नहीं रह सकते और उनके आने पर, कहते हैं-सांप उन्हें बहुत तङ्ग करते हैं। फिर भी इस गांवमें सांप काटनेका खबर सुन नहीं पड़ती। लोकसंख्या कोई ८४१ होगी। सीठाकी भांति खम्भड़ भी अपने मट्टीके बर्तनोंके लिये मशहूर हैं। यहां मोटा सूती कपड़ा भी बनता है। रूईका व्यापार बड़ा है, परन्तु कुछ कुछ अनाज भी बिकता है। शिवके मन्दिरमें संवत् १५२० (१४६४ ई०) पड़ा है और सम्भवत्

१५१२ (१४५६ ई०के) भी पुराने समाधिस्थान विद्यमान है।

खम्भलाव—बम्बईके काठियावाड़ जिलेका पृथक् कर देनेवाला एक तालुक। इसमें खम्भलाव और चमारड़ी २ गांव लगते हैं। लिंडीम्बका ष्टेशन ७ मील पश्चिम पड़ता है। लोकसंख्या प्राय: १४४८ है। झाल राजपूत और लिम्बडी घरानेके दायाद तालुकदारी करते हैं।

खम्भात—काम्बेका प्रकृत नाम। यह 'स्तम्भतीर्थ' शब्दका अपभ्रंश है। काम्बे देखो।

खम्भालिया—बम्बई-प्रान्तीय काठियावाड़ जिलेके जाम राज्यका एक नगर। यह अक्षा० २२° १२´ उ० और देशा० ६९° ४४´ पू०में अपने सलाय बन्दरसे लगभग १० मील दूर पड़ता है। यहां एक न्यायाधीश और बन्दोबस्तदार रहते हैं। नवानगरके खालसा सरकार बनने पर जबतक औरङ्गजेब जीये, जामसाहब खम्भालियामें ही रहते रहे। पहले यहां वाघेलोंका अधिकार था, जिनसे जाम रावलने इसे छीन लिया। इसमें कई एक प्राचीन देवमन्दिर हैं। खम्भालियाके लोहार अपनी कारीगरीके लिये प्रसिद्ध हैं। यहां बन्दूकें बनानेवाले कारीगर भी मौजूद हैं। यहां द्वारका जानेवाले समस्त यात्रियों पर नीचे लिखी रीतिसे कर लगाया जाता है।

२ पहियेकी गाड़ी—२६ कोड़ी १० आना।
४ " " —१२५ "।
प्रति हाथी— १२५ "।
एक सवारका ऊंट—७ "८ आना।
दो सवारका ऊंट—१० कोड़ी ११ आना।
प्रति घुड़सवार—५ कोड़ी ५ आना।
प्रति लदे हुए बैल—२ कोड़ी ८ आना।
प्रति भैंसा—२ कोड़ी ८ आना।
प्रति पैदल यात्री—१ कोड़ी १२ आना।
पालकी—२५०से ५०० कोड़ी।

दूसरी राह जानेवाले यात्रियोंसे यह कर वसूल करनेके लिये गुरगढ़, गाङ्ग, गांधवी और लाम्बमें भी करिन्दे रहते हैं। खम्भालियाके अधीन पिण्डतारकमें सुप्रसिद्ध प्राचीन देवमन्दिर हैं। उनके दर्शनको जानेवाले यात्रियोंको भी कर देना पड़ता है। पिण्डतारकके एक कुण्डमें चावलका गोला डालनेसे नहीं डूबता। इसकी लोकसंख्या प्राय: ८५७६ है। शहरकी दीवारके पास ही घी और तेली नामकी २ नदियां बहती हैं।

खम्ममेत—हैदराबाद राज्यके वारङ्गल जिलेका दक्षिण तालुका। इसका रकबा ९९० वर्गमील और आबादी कोई १५४१५९ है। इसके सदर खम्ममेतमें लगभग ३००१ आदमियोंकी बसती है। यहां चावल बहुत होता है। निजामकी गारण्टीड ष्टेट रेलवे इस तालुकमें उत्तरसे दक्षिण तक चलती है।

खम्माच (हिं० पु०) एक रागिणी। यह मालकोस रागकी दूसरी रागिणी है। खम्माच केवल छह स्वर लगनेसे षाड़व कहलाता और रातको दूसरे पहर पिछली घड़ीमें गाया जाता है।

खम्माचकान्हड़ा (हिं० पु०) एक राग। यह सम्पूर्ण जातीय एक सङ्कर राग है। रात्रिको द्वितीय प्रहरके समय इसे गाते हैं।

खम्माचटोरी (हिं० स्त्री०) एक रागिणी। यह संपूर्ण जातिकी होती और खम्बावती तथा टोरीसे मिलकर बनती है।

खम्माची (हिं० स्त्री०) खम्माच देखो।

खय (हिं) क्षय देखो।

खयानत (अ० स्त्री०) १ गबन, धरोहर न देनेकी बात। २ चोरी, बेईमानी।

खरंजा (हिं० स्त्री०) १ खूब जली हुई ईंट। पजावेमें पकते समय ज्यादा आंच लग जानेसे जब दो-तीन ईंटें एक होमें पक कर काला पड़ जातीं, खरंजा कहलाती है। २ झावां। ३ खड़ंजा, पक्की गच।

खर (सं० पु०) खं मुखकुहरं अतिशयेन अस्त्यस्य, यद्वा खं इन्द्रियं लाति, ला-क बाहुलकात् लकारस्य रत्वम्। १ गर्दभ, गधा। २ अश्वतर, खच्चर। (मनु ११।२०) ३ कोई राक्षस। यह रावणका भ्राता रहा। इसके और एक भाईका नाम दूषण था। यह दोनों रावण-भगिनी सूर्पनखाके साथ पञ्चवटी वनमें रहते थे। लक्ष्मणके हाथों सूर्पनखाके जब नाक कान काटे गये, खर दूषण

राममें लड़ पड़े और उन्हींके बाणोंसे निहत हुए। (रामायण अरण्यकाण्ड) खर राक्षसने विश्रवाके औरससे राकाके गर्भमें जन्मग्रहण किया था। (भारत, वन २७२ अ०)

"खरदूषण सो सम बलवन्ता।

तिनहिं को मारि बिनु भगवन्ता॥" (तुलसी)

४ यास, जवासा। ५ काक, कौवा। ६ कङ्कपक्षी ७ कुररपक्षी। ८ ज्योतिषशास्त्रके प्रदर्शित षष्टि संवत्सरोंमें पञ्चविंशतितम वत्सर। इस वर्षमें भयानक उपद्रव उपस्थित होते है। चोरों, चूहों और टिड्डियोंके उत्पातसे प्रजावर्ग अतिशय दुःख पाता और देश भङ्ग हो जाता है। ज्योतिस्तत्त्व) ९ सूर्यके पार्श्वचर। १० पश्चिमद्वार गृह, पच्छिम मुंह दरवाजेका घर। ११ उष्णस्पर्श, आंच। (त्रि०) १२ उष्णस्पर्शयुक्त, गर्म। १३ कठिन, कड़ा। १४ घर्म। १५ निष्ठुर, बेरहम।

खरक (सं० पु०) क्षेत्रपर्पटी, खेतका पित्त पापड़ा।

खरक (हिं० स्त्री०) १ खटक, खड़क, खड़ खड़ाहट। "खरक चुरीनकी" (पद्माकर) २ टट्टर। ३ ठाढ़ा, बाड़ा, घेरा।

खरकत्ता (हिं० पु०) पक्षिविशेष, एक चिड़िया। यह लटोरेकी जातिका होता है।

खरकदिहा—विहारप्रान्तके हजारीबाग जिलेका एक परगना। पहले यह स्थान सिवार-मुहम्मदाबाद जमीन्दारीके अन्तर्गत और महाराज मोदनारायणदेवके अधिकारभुक्त रहा। नवाब अलीवर्दीने मोदनारायणको हटा खरकदिहा इकबाल अलीखांको दे डाला।

महाराज मोदनारायणके समय यह भूभाग ३८ विभागोंमें बंटा था और उनके अधीन प्रत्येक भागमें एक एक संरक्षक रहा। संरक्षक लोग अर्धस्वाधीन थे। जब कोई राजा सिंहासन पर बैठते, यह उनको अधीनता स्वीकार करते और प्रतिवर्ष कुछ न कुछ कर देते थे।

मोदनारायणने राज्य खो रामगढ़ जाकर आश्रय लिया और उनके पौत्र गिरिवरनारायणने वहां अंगरेजोंको यथेष्ट साहाय्य दिया। जब अंगरेजी फौज खरकदिहामें घुसी, ३८ संरक्षकोंमें छब्बीसने गिरिवरनारायणका पक्ष लिया था। उसी समय इकबाल अलीखां राज्यसे ताड़ित हुए। उनके खास अपने १७ गांव रहे, जो गिरिवरनारायणको निष्कर दिये गये। गिरिवर और अंगरेजोंका पक्ष लेनेवाले २६ संरक्षकोंके साथ दवामी बन्दोबस्त हुआ। विपक्षताचरण करनेवाले अपनी संरक्षकता खो बैठे। बाकी ५४ गावोंका अलग लोगोंके साथ अस्थायी प्रबन्ध किया गया। १८०८ ई०को गिरिवरनारायणने ६३३४) रु० सालाना मालगुजारी पर बडेलाटसे सब गांवोंका मुदामी पट्टा लिखा लिया। आजकल इस राज्यका कितना ही अंश खास गवर्नमेण्टके राज्यमें आ पड़ा है।

खरकदी—बम्बई प्रादेशिक अहमदाबाद जिलेके गोघा उपविभागका एक ग्राम। यह धोलेरासे प्रायः १० मील दक्षिण-पूर्व अवस्थित है। इसमें बालन शाहका मशहूर मकबरा बना है। मकबरेके शिलाफलकमें १२६६ ई०को तारीख है। उसमें लिखा है—बालन शाह अबु-मुहम्मद जकरियाके लड़के थे। वह मुलतानसे अपने बापसे लड़ करके शेख जमर नामक नौकरके साथ गोघा भाग आये। फिर वह खरकदी पहुंचे और किसी मुसलमान तेलीके पास जाकर ठहरे। वहां उन्होंने उस तेलीको अन्धी माको अच्छा किया और दूसरे अलौकिक कार्य भी सम्पन्न किये। अन्तको वह साधु जीवन व्यतीत करते १०० वर्षको अवस्थामें चल बसे। बालन शाहके मरने पर गांववाले उनके मकबरेको पूजने लगे। कहते हैं कि उनके भाई इब्राहीम और भतीजे सचिन्दा उन्हें ढूंढने चले थे, परन्तु जमीनने फट कर उन्हें निगल डाला। बालन शाहका मकबरा पहले उक्त मुसलमान तेली और शेख जमरके अधिकारमें रहा, फिर शेख जमरने उसको वध करके अपना एकाधिपत्य जमा लिया। कितने ही वर्ष पीछे खोखर। मोहोताके बाबानी गोहिलोंने खरकदिका आधा भाग प्राप्त किया। आजकल यहां बाबानी गोहिलों और शेख जमरके वंशधरोंका सम्मिलित अधिकार है। मकबरेके दूसरे शिलाफलकमें लिखा है कि १२४५ ई०को उसकी मरम्मत की गयी।

खरकना (हिं० क्रि०) १ धीमी धीमी अवाज आना, खरखराना। २ दुखना, दर्द होना, तपकना। फांस

चुभने और उसके रह रह दुखनेको 'खरकना' कहते हैं।

खरकपुर (खड़गपुर)—विहार-प्रान्तीय मुंगेर जिलेके खरकपुर परगनेका एक शहर और सदर मुकाम। यह अक्षा० २५° ७´ उ० और देशा० ८६° ३४´ पू० पर अवस्थित है।

यह परगना दरभङ्गा महाराजके अधीन है। यहां प्रायः ३ हजार लोग रहते हैं। खरकपुरमें दरभङ्गा-महाराजका स्थापित औषधालय और विद्यालय वर्त्तमान है।

खरकपुर (खड़गपुर)—बङ्गालके मेदिनीपुर जिलेका एक गांव। यह अक्षा० २२° २०´ उ० और देशा० ८७° २१´ पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या कोई ३५२६ होगी। यह बङ्गाल-नागपुर-रेलवे और ईष्टकोष्ट शाखाका बड़ा जङ्क्शन है। फिर बड़ी लाइन कलकत्तेको बम्बईसे मिलाती और उत्तरमें एक शाखा बांकुड़ा तथा झरियाको भी जाती है। गांवमें पीर लोहानीका मकबरा है।

खरकर (सं० पु०) खरस्तीव्रः करोऽस्य, बहुव्री०। सूर्य, सूरज। खरकिरण प्रभृति शब्द भी इसी अर्थमें आते हैं।

खरकर्म—जैनशास्त्रमें क्रूर व्यापार अर्थात् प्राणियोंको दुःख पहुंचानेवाले खोटे रुजगारको खरकर्म कहते हैं। खरकर्म न करनेवाले खरकर्मव्रती कहलाते हैं। यह व्रत पन्द्रह अतिचारोंसे रहित ही पक्का होता है। वे पंद्रह अतिचार ये हैं,—वनजीविका, अग्निजीविका अनोजीविका (शकटजीविका) स्फोटजीविका, भाट-जीविका, यंत्रपीड़न, निर्लांछन, असतीपोष, सरःशोष, दवप्रद, तथा जीवोंको पीड़ा देनेवाले विषवाणिज्य, लाक्षावाणिज्य, दंतवाणिज्य, केशवानिज्य और रस-वाणिज्य। (सागरधर्मामृत, पृ० २१६)

खरकवट (हिं० स्त्री०) एक चिकनी पटरी। यह दो अङ्गुलि परिमित विस्तृत होती है। इसे करघे पर दो खूंटियोंमें अटका कर तिरछा लगा देते और ताना फैला कर गुलबदन आदि बुन लेते हैं।

खरका (हिं० पु०) १ सींक या किसी दूसरी लकड़ीका पतला और छोटा टुकड़ा। यह भोजनोपरान्त दांतोंमें लगी अन्नादिको छोड़ानेके लिये व्यवहृत होता है। नीमका खरका सबसे अच्छा समझा जाता है। चांदी, तांबे आदिके भी खरके बनते हैं। २ पक्वान्नविशेष। आटा मांडके उसके बारीक बारीक लम्बे टुकड़े काट लिये जाते हैं। फिर उन्हें घीमें भूनने और चीनी पड़े दूधमें भिगोनेसे खरका तैयार होता है। यह प्रायः विवाहके समय कच्चीके दिन परोसा जाता है। ३ खरक, खरखराहट।

खरकाष्ठिका (सं० स्त्री०) खरं उग्रं काष्ठं यस्याः, बहुव्री० कप्-टाप् अत इत्वञ्च। बेला, एक पौदा।

खरकुटि, खरकुटी देखो।

खरकुटी (सं० स्त्री०) खरा चासौ कुटी चेति, कर्मधा०। १ नापितशाला, नाईका घर। खरस्य गर्दभस्य कुटी, ६-तत्। २ गर्दभगृह, गधोंका बाड़ा।

खरकोण (सं० पु०) खरं तीव्रं कुणति शब्दायते, खर-कुण्-अण्। तित्तिरपक्षी, तीतर।

खरकोमल (सं० पु०) ज्यैष्ठमास।

खरक्वाण, खरकोण देखो।

खरखरा (हिं० वि०) खुरखुरा, नाहमवार, जो चिकना न हो।

खरखशा (फा० पु०) १ विवाद-विसंवाद, झगड़ा, बखेड़ा, लड़ाई। २ आशङ्का, खौफ, डर।

खरखोदा—पञ्जाबके रोहितक जिलेकी समपला तहसीलका एक नगर। यह अक्षा० २८° ५२´ उ० और देशा० ७६° ५७´ पू० पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः पांच हजार निकलेगी। यह नगर अति प्राचीन है। आज भी इसके अनेक निदर्शन मिलते—किसी समय वह विशेष समृद्धिशाली रहा। यहां थाना, मदरसा, डाकघर वगैरह बना है।

खरगन्धनिका, खरगन्धा देखो।

खरगन्धनिभा (सं० स्त्री०) खरं गन्धेन गोमूत्रगन्धेन नितरां भाति, निभा-क। १ नागबला, गोरखमुण्डी। २ वन-तुलसी।

खरगन्धा (सं० स्त्री०) खरः उग्रः गन्धो यस्याः, बहुव्री० ततः टाप्। १ नागबला। २ वनतुलसी।

खरगृह (सं० क्ली०) गर्दभगृह, गधेके रहनेकी जगह।

खरगेह, खरगृह देखो।

खरगोन—मध्यभारतीय इन्दोर राज्यके नीमाड़ जिलेक सदर। यह अक्षा० २१° ५०' उ० और देशा० ७५° ३७' पू०में कुन्दी नदीके वाम तट पर अवस्थित है। लोक-संख्या प्राय: ७६२४ होगी। मालूम होता है कि मुग-लोंने खरगोन बसाया था। यह पहले मालवा-सूबेको बीजागढ़ सरकारके किसी महलका प्रधान नगर रहा, पीछे उक्त सरकारका ही सदर मुकाम बन गया। बड़े मकानों और बहुतसी कब्रोंका भग्नावशेष देखनेसे समझ पड़ता है कि खरगोन उस समयको एक बड़ी चढ़ी जगह था। म्युनिसपालिटी स्थानीय कार्यों का प्रबन्ध करती है।

खरगोश (फा० पु०) एक तीक्ष्णदन्त चतुष्पद जीव, खरहा, चौगड़ा। इसका संस्कृत पर्याय—शश, शशक, मृगलोमक, शूलिक और लोमकर्ण है। खरगोशको हिन्दीमें 'खरहा', बंगलामें 'खरगोस' या 'ससक', मराठीमें 'शश', तामिलमें 'मुसल', तेलगुमें 'कुन्देलि', कनाड़ीमें 'मल्ला' और गाड़ीमें 'मोलोम' कहते हैं।

शशकजाति (Lepus) प्रधानतः दो प्रकारके होते हैं। कई एक अपेक्षाकृत बड़े दीखाते, जो अंगरेजीमें 'हेयर' (Hare) कहलाते हैं। फिर छोटे खरहोंका अंगरेजी नाम 'रेबिट' (Rabbit) है।

प्रथम श्रेणीके खरगोशोंमें फिर आकार गठन और वर्णके अनुसार १५ प्रकारकी शाखायें निकाली गयी हैं। इस प्रकारके खरहे अष्ट्रेलियाको छोड़ कर पृथिवी पर सर्वत्र मिलते, यहां तक कि चिरतुषारा वृत हैं, सुमेरु प्रदेशमें भी बर्फके बीच देख पड़ते हैं।

छोटे खरगोश भी पृथिवी पर सब जगह रहते हैं।

सकल ही पशुओंके मध्य शशक अति भीरु होता है। इसका शिर गोल और मुंह छोटा रहता और उसको दोनों बगलोंमें बड़े बड़े बाल आ जाते हैं। कान कुछ कुछ बड़े लगते, जो इच्छानुसार पीछेको घुमाये जा सकते हैं। आंखकी पुतली खूब साफ और बड़ी होती है। चाहने पर खरगोश पीछे भी देख सकता है। अङ्ग अति कोमल और चिकने बालोंसे ढंका रहता है। यह घने जङ्गलों और गांवके पास गड्ढे खोद कर वास करता और रातको चरने निकलता है। शस्यक्षेत्र निकट होनेसे फिर निस्तार नहीं, दलके दल खरहे जाकर उसे नष्ट कर डालते हैं। इसलिये विलायत वगैरह बहुतसी जगहोंमें, जहां खरगोश ज्यादा हैं, इनके मारनेको नाना प्रकारके उपाय अवलम्बन किये गये हैं।

शशकके पद पद पर शत्रु हैं। ऐसा कोई अस्त्र नहीं जिससे विपद् पड़ने पर छुटकारा मिल सके। फिर भी ईश्वरकी कृपासे इनकी श्रवणशक्ति बहुत प्रबल है। वायुका थोड़ासा शब्द होते और पेड़का पत्ता खड़कते ही यह सावधानी हो भाग खड़े होते हैं। पीछे शत्रुको आते देख खरहे प्राण छोड़ कर दौड़ते और थोड़ी दूर पर जा ठहरते, फिर दूसरी ओर उकल घने जङ्गलके किसी गड्ढेमें अपना मुंह छुपा रखते हैं। यह बड़े कोमल होते और कुत्ते वगैरह दुश्मनोंका दांत लगते ही मरते हैं। खरगोश आंख फाड़ कर सोते और दो दो पैर उठा कर चलते हैं।

खरही कुछ महीनेमें गर्भवती होती है। वह एक महीने पीछे साथ साथ सात आठ बच्चे निकालती और १०।१५ दिन पीछे फिर गर्भवती हो जाती है। जगत्में इसके बहुतसे शत्रु न रहते, समझ पड़ता है, खरहोंसे आधी पृथिवी भर जाती। इसका मांस बहुत कोमल और सुस्वादु होता है। विलायतमें बहुतसे आदमी मुह-ब्बतके साथ खरगोशका गोश्त खाते हैं। इसके मुलायम रूयेंदार चमड़ेकी उम्दा उम्दा टोपियां बनती हैं। सुतरां व्यापारमें शशकका चर्म मूल्यवान् है।

खरगोश पालनेसे हिल जाता, परन्तु पांच छह वर्षसे ज्यादा बचने नहीं पाता। वराहमिहिरके मतमें रातको खरहके बायीं ओर बोलनेसे मङ्गल होता है। (वृहत्सं० ८८।२१) शशक देखो।

खरग्रह (सं० पु०) खरस्य ग्रहः गृहम्, ६-तत्। गर्दभ-गृह, गदहा रहनेका घर।

खरघातन (सं० पु०) खरमुग्ररोग तन्नामक राक्षसं वा घातयति, हन् स्वार्थे णिच्-ल्यु। १ नागकेशरवृक्ष २ श्रीराम।

खरच्छद (सं० पु०) खरस्तीव्रश्छदः पत्रमस्य, बहुव्री०। १ उलुपनामतृण, एक घास। २ स्लाट नाम क्षुद्र क्षुप, कोई छोटी झाड़ी। ३ कुंदुरतृण। ४ भूमिसहवृक्ष, एक पेड़। ५ शाकवृक्ष, सागौनका पेड़। ६ शाखोट वृक्ष। ७ रक्तापामार्ग, लाल लटजीरा।

खरच्छदा (सं० स्त्री०) १ त्रिपुरमल्लिका। २ चिविल्लिका।

खरज (हिं० पु०) षड्ज, गानेका प्रधान स्वर। खरजको साध कर ही गाना आरम्भ करते हैं। षड्ज देखो।

खरज्र् (वै० त्रि०) खरं जीर्यति, जॄ बाहुलकात् कुः। तीव्रगति, जल्द चलनेवाला। (ऋक् १०।१०६।७)

खरटी (सं० स्त्री०) रङ्गधातु, रांगा।

खरणस् (सं० त्रि०) खरस्य नासेव नासा यस्य, बहुव्री०। खरा नासा यस्य इति वा, नासाया नसादेशः विकल्प-पक्षे अजभावः। १ गर्दभ सदृश नासिकायुक्त, जिसकी नाक गधेकी नाकसे मिलती है। २ तीक्ष्णनासिक, जिसकी नाक धारदार हो।

खरणस (सं० त्रि०) खरा तीक्ष्णा नासा अस्य, बहुव्री० अच् नासाया नसादेशश्च। खरखराभ्यां वानस्।(पा ५।४।११८ वार्तिक) ततो णत्वम्। पूर्वपदात् संज्ञायामगः। पा ८।४।३। १ तीक्ष्ण नासिक, तीखी नाकवाला। २ गधे जैसी नाक रखने-वाला।

खरतर (सं० त्रि०) खर-तर। अतिशय तीक्ष्ण, ज्यादा पैना।

"खरतर-वरशर-हतदश-वदन खगचर नगधर फणधर-शयन।
जगदघमपहर भवभय-तरण परपद-लयकर कमलजनयन॥" (उद्भट)

खरतरगच्छ—जैनसम्प्रदायकी एक शाखा। प्रसिद्ध जैना-चार्य हेमचन्द्र खरतरगच्छ शाखाभुक्त रहे। राज-पुतानाके राजा खरतरगच्छके यतियोंका बड़ा सम्मान करते हैं। गच्छ देखो।

खरतुण्डक (सं० पु०) लज्जालुका, लाजवंती।

खरत्वक् (सं० स्त्री०) खरा तीक्ष्णा त्वक् यस्याः, बहुव्री०। अलम्बुषा, किसी किसकी लाजवंती।

खरथुआ (हिं० पु०) १ तृणविशेष, एक घास। यह बथुवा जैसी एक घास है। पञ्जाब और मध्यप्रदेशमें खरथुआ बहुत होता है। इसका दूसरा नाम चमर-बथुवा है। यह सबसे निकृष्ट शाक समझा जाता है। २ कोई निकृष्ट व्यक्ति वा द्रव्य, खराब चीज।

खरदंष्ट्रा (सं० स्त्री०) गोक्षुरक्षुप गोखुरूका, पौदा।

खरदण्ड (सं० क्ली०) खर उग्रः कण्टकाढ्यत्वात् दण्डो यस्य, बहुव्री०। पद्म, कंवल।

खरदला (सं० स्त्री०) खरं दलं यस्याः, बहुव्री०। १ श्यामालता। २ काष्ठोदुम्बर, कठगूलर।

खरदा (हिं० पु०) अङ्कुरमें लगनेवाला एक कीड़ा या रोग। इससे अङ्कुरके पत्ते लाल पड़ जाते और पौदे बढ़ने नहीं पाते।

खरदी—बम्बई-प्रान्तके थाना जिलेका एक रेलवे ष्टेशन। यहां मुसाफिरों और मालका आना जाना बढ़ रहा है। १८२७ ई०को क्लूनने जा कर देखा कि वह एक सामान्य शहर और मामूली सराय था। खरदीमें उस समय ७५ घर, ३ दूकानें, कई एक कूएं और एक अच्छा बाग रहा।

खरदूषण (सं० पु०-क्ली०) खरं उग्रं दूषणं मादकता-जनकदोषो यत्र, बहुव्री०। १धुस्तूरवृक्ष वा फल, धतूरेका पेड़ या फल। खरश्च दूषणश्च, इतरेतरद्वन्द्व। २ खर और दूषण नामक दोनों राक्षस। खर देखो। (त्रि०) खरं तीव्रं दूषणं यस्य, बहुव्री०। ३ तीव्रदोषयुक्त, बहुत बुरा।

खरधन्विका (सं० स्त्री०) गोरक्षतण्डुला।

खरधार (सं० त्रि०) खरा उग्रा धारा यस्य, बहुव्री०। तीव्रधार, पैना, तेज। सुश्रुतके मतमें करपत्र भिन्न दूसरा कोई खरधार अस्त्र व्रणादि पर प्रयोग करना अविधेय है।

खरध्वंसी (सं० पु०) खरं खरनामानं राक्षसं ध्वंस-यति, खर-ध्वंस-णिच्-णिन्। १ श्रीराम, जिन्होंने खर राक्षसको मारा था। २ कंसके खर नामक चरको ध्वंस करनेवाले श्रीकृष्ण।

खरना (हिं० क्रि०) जर्णाको जलमें उत्तापन करके परि-ष्कार करना, उनको पानीमें गर्म करके साफ करना।

खरनादिनी (सं० स्त्री०) खरनादिन् ङीप्। रेणुका नामक गन्धद्रव्य, एक खुशबूदार चीज़।

खरनादी (सं० त्रि०) खरं नदति, नद-णिनि। गर्दभ-जैसा शब्द करनेवाला, जो गधेकी तरह बोलता हो।

खरनाल (सं० क्लो०) खरं नालं यस्य, बहुव्री०। पद्म, कमल। (भागवत ३।८।२०)

खरप (सं० पु०) खरं पिबति, पा-क। १ ऋषिविशेष। यह शब्द नरादि गणके अन्तर्गत है। गोत्रापत्य अर्थमें इसके उत्तर फञ् लगनेसे 'खारपायण' शब्द बनता है।

खरपत (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड। यह नील-गिरि, बुन्देलखण्ड, अवध और ब्रह्मदेशमें बहुत उत्पन्न होता है। वैशाख ज्येष्ठ मास इसके फूलने और कार्तिक अग्रहायण फलनेका समय है। खरपतका फल मकोय-जैसा आता और कच्चा ही खाया जाता है। इसकी पत्तियां खानेमें हाथीको बहुत अच्छी लगती हैं। खरपतके वल्कलसे चमड़ा सिझाते हैं। इससे हरा पीला एक गोंद भी निकलता है। खरपतका दूसरा नाम 'धोगर' है।

खरपत्र (सं० पु०) खरं पत्रमस्य, बहुव्री०। १ शाकवृक्ष, सागवन। २ क्षुद्रतुलसीवृक्ष, छोटी पत्तीकी तुलसी। ३ ताम्रतुलसीवृक्ष, खुशबूदार तुलसीका पेड़। ४ भूर्ज-पत्र। ५ यावनाल, किसी किस्मका रमसर। ६ मरुवक-वृक्ष, मरवा।

खरपत्रक (सं० पु०) तिलवृक्ष।

खरपत्री (सं० स्त्री०) खरं पत्रं यस्याः, बहुव्री०। १ गोजिह्वा नामक्षुप। २ काकोदुम्बरिका, कठगूलर।

खरपर्णिनी, खरपत्री देखो।

खरपल्लव (सं० पु०) शाखोटवृक्ष।

खरपा (हिं० पु०) चौबगला।

खरपाक्य (सं० पु०) कपित्थवृक्ष, कैथेका पेड़।

खरपात्र (सं० क्लो०) खरञ्च तत् पात्रञ्चेति, कर्मधा०। लौहपात्र, लोहेका बर्तन।

खरपादाढ्य (सं० पु०) खरैः पादैर्मूलैराढ्यः। कपित्थ-वृक्ष, कैथेका पेड़।

खरपुष्प (सं० पु०) खरं पुष्पमस्याः, बहुव्री०। मरुवक-वृक्ष, मरवेका पौदा।

खरपुष्पा (सं० स्त्री०) खराणि पुष्पाणि यस्याः, बहुव्री०। ङीबभाव पक्षे टाप्। १ बर्बरी, एक सब्जी। २ वन-तुलसी, बबई।

खरपुष्पिका, खरपुष्पा देखो।

खरपुष्पी, खरपुष्पा देखो।

खरप्रिय (सं० पु०) खरः धान्यकलाय प्रभृति शस्य-मर्दनस्थानं प्रियो यस्य, बहुव्री० लस्य रः। पारावत, कबूतर।

खरब (हिं०) खर्व देखो।

खरबूजा (हिं० पु०) लताविशेष, एक बेल। यह कर्कटी जातीय एक लता है। इसके फल गोल, मीठे और सुगन्धि होते हैं। खरबूजेका बीज पौष माघ मासको प्रायः नदी किनारे गड्ढा खोद कर गाड़ा जाता है। फिर उसको घास फूससे ढांक देते हैं। थोड़े ही दिनोंमें बीजसे बेल फूट आती और चारो ओर फैल जाती है। चैत्रसे आषाढ मास तक खरबूजा फलता है। यह कई प्रकारका होता है—सरदा, सफेदा, चितला, लखनवी, जौनपुरी इत्यादि। खरबूजेके बीजको ठण्डाईमें घोंटकर पीते या छिलका निकाल शक्करमें पागकर खाते हैं। खरबूजेके बीजका तेल खाया और उससे साबुन भी बनाया जाता है। इसके फलका खरबूजा ही कहते हैं। यह खानेमें गर्म और दस्तावर है। खरबूजा खाकर प्रायः शर्बत पी लेते हैं। लखनऊ और जौनपुरका फल बहुत मीठा होता है।

खरबोजना (हिं० पु०) पात्रविशेष, रङ्गरेजोंका मट-घड़ा। इस पर रङ्गका माट रख कर उसको टपकाया जाता है।

खरभर (हिं० पु०) १ खड़खड़ाहट, खटपट। २ कोला-हल, गुलगपाड़ा। ३ हलचल, चल फिर।

खरभराना (हिं० क्रि०) खरभर खरभर करना, चीजोंको उलट पुलटके एक खास आवाज निकालना। २ हल्ला करना। ३ हलचल डालना। ४ घबराना।

खरभराहट, खरभर देखो।

खरमञ्ज (वै० पु०) खरं मज्जयति, मस्ज-र। अत्यन्त शोधक। खरज देखो।

खरमञ्जरी (सं० स्त्री०) खरा मञ्जरी यस्याः, बहुव्री०।

समासान्त विधेरनित्यत्वात् न कप्। १ अपामार्ग, चिचड़ा। २ श्वेतापामार्ग। क्रस्वान्त खरमञ्जरि शब्दका प्रयोग भी देख पड़ता है।

खरमस्ती (फा० स्त्री०) मोटमर्दी, शरारत पाजीपन।

खरमास (हिं० पु०) पौष तथा चैत्र मास। यह समय शुभकार्यके लिये अच्छा नहीं।

खरमूत्र (सं० क्ली०) गर्दभमूत्र, गधेका पेशाब। यह कटु, उष्ण, क्षार, तिक्त, कामोन्मादहर और कफ तथा महावातघ्न होता है। (राजनिघण्टु) खरमूत्र तैल और नस्यमें छोड़ा जाता है। (चरकसंहिता)

खरयष्टिका (सं० स्त्री०) लघुवात्यालक।

खररश्मि (सं० पु०) खरस्तीक्ष्णाः रश्मियस्य, बहुव्री०। सूर्य, आफताब।

खरराह (सं० पु०) मुखपुण्ड्रकयुक्त खङ्गाहाश्व, एक घोड़ा जिसके मुंहमें टीका हो।

खररोमा (सं० त्रि०) खरं रोम यस्य, बहुव्री०। १ कठिन रोमयुक्त, जिसके बाल कड़े हों। धर्मशास्त्रकार शातातपके मतमें गर्दभको मार डालनेसे परजन्मको खररोमा होते हैं। (पु०) २ नागविशेष।

खरल (हिं० पु०) खल, पत्थरकी एक कूंड़ी। यह गहरा, गोल या लम्बा होता है। इसमें औषधियां घोंटते या कूटते हैं।

खरवट (हिं० स्त्री०) यन्त्रविशेष, एक औजार। यह लकड़ीके दो टुकड़ोंसे तिकोनी बनती है। जब किसी वस्तुको रेतना होता, इसीमें डाल कर रेत लिया करते हैं।

खरवल्लरिका, खरवल्लिका देखो।

खरवल्लरी, खरवल्लिका देखो।

खरवल्लिका (सं० स्त्री०) खरा चासौ वल्ली चेति, कर्मधा० ततः स्वार्थे कन्-टाप् ईकारस्य ह्रस्वत्वञ्च। नागवला।

खरवल्ली, खरवल्लिका देखो।

खरवांस (हिं० पु०) खरा महीना। सूर्यके धनु और मीनराशि पर आनेसे खरवांस होता है।

खरमास देखो।

खरवार—छोटानागपुर और बिहारमें रहनेवाली एक जाति। कोई खरवारोंको द्राविड़ और कोई कोल-जातिकी ही एक शाखा बतलाता है। पाश्चात्य विद्वानों-को विश्वास है कि वह तूरानी लोगोंसे उत्पन्न हैं। किसी किसीके कथनानुसार नेपालके किरातोंमें इनका कितना ही सादृश्य है और दोनों एक जाति भी हो सकते हैं। मुख्य बात यह है कि मालूम नहीं—वह किस जातिसे निकले हैं।

खरवार कहा करते हैं—राजा वेणके समय जब सार्वजनिक विवाह निषिद्ध न था, क्षत्रियके औरस और भरजातीय रमणीके गर्भसे उनकी उत्पत्ति हुई।

यह और भी परिचय देते हैं कि सूर्यवंशीय राजा हरिश्चन्द्रपुत्र रोहिताश्वके प्रियभवन रोहतासगढ़में उनका परवास रहा; वह भी सूर्यवंशी हैं और इसीसे तब भी जनेऊ पहनते हैं।

इनमें राजासे लेकर अति दीन दरिद्र किसान तक—सब श्रेणियोंके लोग देख पड़ते हैं। जिनकी अवस्था अच्छी है, शारीरिक गठन भी कितना ही उच्चश्रेणीके हिन्दुओं जैसा होता है। फिर केवल खेती करनेवाले निर्धन किसान सन्तालों जैसे लगते हैं। रामगढ़ और यशपुरके राजा खरवार ही हैं। दोनों राजपरिवारोंको देखनेसे फिर और जाति कहा नहीं जाता। अब इनके शरीरमें राजपूतोंका रक्त दौड़ गया है, रुपयेके जोरसे ऊंचे राजपूतोंसे आदान प्रदान होता है। रामगढ़के परलोकवासी महाराज शम्भुनाथसिंह बहुत भले आदमी थे। हसिरसारम् नामक स्थानके ठाकुर और खैरेके कुछ राजपूत भी राजाके घरमें विवाह करके अब खरवार बन गये हैं।

पलामू जिलेमें इस जातिकी प्रधानतः तीन श्रेणियां हैं—पाटबन्द, देवालबन्द और खेरो। लोहार-डागीकी श्रेणियां देशवारी, खरवार, भोगता, रावत और मांझी कहलाती हैं।

खरवारोंमें पाटबन्द ही सबसे बड़े हैं। यह यज्ञो-पवीत धारण करते हैं। लोहारडागीके भोगता भी अपने पाटबन्द श्रेणीभुक्त जैसा बतलाते हैं। जिनके पूर्वपुरुष राजपाट अर्थात् रोहतासगढ़में रहते थे, वही पाटबन्द-जैसे गिने जाते हैं। इनका आचार विचार

कितना ही उच्च श्रेणीके हिन्दुवोंसे मिलता है।

पलामूं जिलेके खरवार 'अट्ठारह हजार' भी अपनेको कहते हैं। बहुतसे लोग अनुमान करते—जब चेरुदलपति भगवन्तराय चेरु और खरवार-सैन्य ले पलामूं पर चढ़े, सम्भवत: उनकी संख्या १८००० थी।

खरवारोंसे चेरु लोग बहुत मिलते जुलते हैं और एक दूसरेके साथ आदान प्रदान भी चलता है।

चेरु देखो।

खरवारोंमें कितने ही 'खर' होते हैं। कछुवा, कांस, गाई, बैल, बाघ, नाग, सोनार, बनिया, मुरगी आदि खरोंको देख बहुतसे लोग समझते कि वह द्राविड़ीय महाजातिसे उत्पन्न हुवे और भारतके आदिम अधिवासियोंमें गिने जा सकते हैं। जिसका जो खर रहता, उसी खरके जीवजन्तु वा वृक्ष आदिको सम्मान करता है—उसको कोई हानि पहुचाना या हाथ लगाना नहीं चाहता। फिर भी सर्वत्र यह नियम नहीं चलता। वरकन्या एक खर होनेसे कितने ही खलों पर विवाह रुक जाता है।

इनकी विभिन्न श्रेणियोंमें विवाह प्रचलित रहते भी भोगता लोग देशवारियोंसे आदान प्रदान नहीं करते। परन्तु कितने ही स्थानोंमें दोनों एकत्र उठते बैठते हैं। भोगता दूसरोंसे श्रेष्ठ होते भी अनेक कलङ्कोंसे लाञ्छित किये जाते हैं।

इनमें बाल्यविवाहका बड़ा आदर है। परन्तु दरिद्रताके कारण अनेक समय अधिक वयसमें विवाह होता है। देशवारी खरवार कन्यापण नहीं लेते। किन्तु भोगता और मांझी विना पण लिये सर्वदा कन्यादान करनेसे दूर रहते, अन्तत: पांच सात रुपये तो ग्रहण ही करते हैं।

देशवारी लोग विधवा विवाह नहीं करते। भोगताओं और मांझियोंको उसमें कोई आपत्ति नहीं, फिर भी विधवाको देवरसे ही विवाह करना पड़ता है। स्त्री चरित्रमें दोष होनेसे छोड़ी जा सकती, परन्तु उसकी सगाई रुक नहीं सकती। खरवार चेरुओं जैसे हिन्दू धर्मावलम्बी है। जिसकी अवस्था अच्छी होती, प्राय: एक ब्राह्मण गुरु रखता है। परन्तु ब्राह्मणोंको लोग वैसी भक्ति नहीं करते। प्रत्येक ग्राममें कोलोंकी भांति इनके एक पाहन या बैंगा (पुरोहित) होता है।

खरवारको परमेश्वरको मानते हैं, किन्तु मूर्तिको नहीं पूजते। दड़ा, डाकिन, गंहेल, पचियान, चेरो, चत्तर और दुर्जागिया इनको कई एक उपास्य देवता हैं।

दुर्जागियाका दूसरा नाम मोचकरानी है। उनके विवाहका इनमें प्रधान उत्सव होता है। रानीका विवाह तीन तीन वर्ष बाद आता है। खरवार कहते कि पीछे प्रतिवर्षको रानीका विवाह होता था, किन्तु किसी समय विवाहके दूसरे दिन सवेरे रानी एकाएक बैंगाके घर जा पहुंचीं। उस समय बैंगा घर पर न थे। बैंगाकी स्त्रीने हठात् उनके जानेका कारण पूछा था। रानीने कोई उत्तर न दिया। इससे बैंगानी चिढ़ गयी थीं। उसी समयसे व्यवस्था की गयी, फिर रानीका विवाह प्रतिवर्ष न होगा।

लोहारडागेके अन्तर्गत जुरुयाहर गांवमें बहुराज नामक पहाड़ पर बहुरानीका गृह है। विवाहके समय खरवारोंमें धूमधाम मच जाती है। पासके गांवोंसे पुरुष और स्त्रियां नाचती गाती और बजाती बहुराज पर्वत पर चढ़ती हैं। बैंगा (पुरोहित) आगे आगे चलता है। सब पहाड़ पर चढ़ एक गुहाके पास जा पहुंचते हैं। इसी गुहामें रानीका घर है। बैंगा उसमें घुस कर एक लम्बा चौकोर पत्थर निकाल लाते हैं। यही पत्थर मोचक रानीकी प्रतिमा हैं। रेशमी कपड़ेसे प्रतिमा लपेट कर कंधे पर रख ली जाती है। फिर बड़ी धूम धामसे सब लोग उमाकाण्ड गांवके कांडो पहाड़को यात्रा करते हैं। वहीं वरका घर है। वहां पहुंचनेपर गुड़, दूध और २ पैसे चढ़ाकर वरकन्याकी पूजा की जाती है। वरक घरमें भी एक गुहा है। इसमें एक अतलस्पर्शी गह्वर विद्यमान है। लोगोंको विश्वास है कि राह लगी है। बहुरानीको इसी गड्ढमें डाल देते हैं। सब लोग स्थिर हो कर उनके गिरनेका शब्द सुन पड़नेसे समझ लेते हैं कि वरकन्याकी भेंट हो गयी। फिर अपने अपने घरोंको जाया जाता है। लोगोंको विश्वास

है कि वह पत्थर फिर बज्रराज पहाड़ पर अपने स्थानमें जा पहुंचता है।

खरवुक (सं० पु०) मरुवकवृक्ष, मरवेका पौदा।

खरवुस, खरवुक देखो।

खरशब्द (सं० पु०) खरः उग्रः शब्दो यस्य, बहुव्री०। १ कुररपक्षी, कड़ी आवाजकी एक चिड़िया। २ गधेका रेंकना। ३ उग्रशब्द, तीखी आवाज।

खरशाक (सं० पु०) खरं शाकमस्य, बहुव्री०। भार्गी, भंगरैया।

खरशाका (सं० स्त्री०) खरं शाकं यस्याः, बहुव्री० टाप्। भार्गी, एक ओषधि।

खरशाला (सं० स्त्री०) खराणां शाला, ६ तत्। गधोंका घर।

खरशूक (सं० पु०) पीतशाल, एक पेड़।

खरस (हिं० पु०) भल्लूक, भालू।

खरसा (हिं० पु०) १ भोज्यपदार्थविशेष, खानेकी एक चीज। २ मत्स्यविशेष, कोई मछली। यह आसाम तथा ब्रह्मदेशकी नदियोंमें बहुत होता है। ३ ग्रीष्म, गर्मीका मौसम। ४ दुर्भिक्ष, कहत। ५ कण्डू, खुजली, खाज।

खरसाइंध (हिं० स्त्री०) किसी चीजके ज्यादा पक जाने पर उसके जलनेकी खुशबू।

खरसान (हिं० स्त्री०) किसी किस्मकी सान। यह बहुत तीखी रहती और इस पर तलवार उतरती है।

खरसावां—छोटानागपुरका एक सामन्तराज्य। यह अक्षा० २२° ४१´ तथा २२° ५३´ उ० और देशा० ८५° ३८´ एवं ८५° ५५´ पू०के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल १५३ वर्गमील लगता है। इसके उत्तर रांची तथा मानभूम जिला, पूर्व सरायकेलाराज्य और दक्षिण तथा पश्चिमको सिंहभूम जिला है। सोनाई नदी इस राज्यमें उत्तर-पश्चिमसे दक्षिण-पूर्वको बहती है। इस नदीके उत्तर और दक्षिण तट पर जङ्गली पहाड़ खड़े हैं। बहुतसे पहाड़ोंमें लोहा मिलता है। सोनाई नदीकी रेतमें कुछ कुछ सोना भी है। इस राज्यमें तांबेकी भी खानियां मिल सकती हैं। जङ्गलमें कई प्रकारकी लकड़ी होती है। जगह जगह कई तरहके सांप देखनेमें आते हैं।

खरसावां राजाके पोड़ाहाट राजवंशकी निम्नशाखासे सम्बन्ध रखते हैं। अंगरेजी शासन स्थापित होनेसे बहुत पहले राजाके कनिष्ठ भ्राता कुमार विक्रमसिंहने ११ पीर अपने परवरिशके लिये पाये थे। वही वर्तमान समयको सरायकेला और खरसावां रियासतें हैं। विक्रमसिंहको उनकी २ पत्नियोंसे ५ पुत्र हुए। उनमें ज्येष्ठको सरायकेला और द्वितीय पुत्रको खरसावां राज्य मिला था। १७९३ ई० जब पुराने जङ्गली महलोंकी सीमा पर झगड़ा लगा, खरसावांके ठाकुर और सरायकेलाके कुमारको भागे हुए अपराधियोंके विषयमें वृटिश गवर्नमेण्टसे कुछ प्रतिज्ञाएं करनी पड़ीं। खरसावांके सरदार काम पड़ने पर अंगरेजोंको सहायता करने पर उद्यत रहते, किन्तु किसी प्रकारका कर नहीं देते। १८९९ ई०को उन्हें मौजूदा सनद दी गयी। श्रीरामचन्द्रसिंह देवको नाबालगीमें वृटिश गवर्नमेण्ट अपने आप इस राज्यका प्रबन्ध करते रहे।

खरसावांकी लोकसंख्या प्रायः ३६५४० है। खरसावां नगर इस राज्यका प्रधान स्थान है। स्थानीय व्यवहारके लिये सूता कपड़े और लोहेके बर्तन बनते हैं। कुछ गांवोंमें पत्तियोंकी चटाइयां भी तैयार की जाती हैं। चावल, दाल, तेलहन, वत्तोकी लाख और लोहेकी रफ्तनी होती है। बङ्गाल-नागपुर-रेलवे खरसावांमें १२ मील तक गयी है।

खरसुमा (हिं० वि०) खड़े सुमोंवाला (घोड़ा)। इसके सुम गधेकी तरह ऊपरको उठे हुए रहते हैं।

खरसैला (हिं० वि०) कण्डूयुक्त, जिसके खुजली हो। यह शब्द साधारणतः पशुओंके लिये प्रयुक्त होता है।

खरसोनि (सं० स्त्री०) खे आकाशे रसमुनयति, उन्नि इन्। लोहिकालता, एक बेल।

खरसोन्द (सं० पु०) खं शून्यभूतः रसान्दः रसलेदनमत्र, बहुव्री०। लौहपात्रभेद, लोहेका एक बर्तन।

खरस्कन्ध (सं० पु०) खरः स्कन्धोऽस्य, बहुव्री०। १ पियालवृक्ष। २ खर्जूरीवृक्ष।

खरस्कन्धा (सं० स्त्री०) खरः स्कन्धोऽस्य। खरस्कन्ध देखो।

खरस्पर्श (सं० त्रि०) गोजिह्वादिवत् खर, गायकी जीभ जैसा खुरखुरा।

खरस्पर्श (सं० स्त्री०) खरः । स्पर्शं यस्याः, बहुव्री० ततः टाप् । पीतदेवदालीलता, एक पीली बेल । खरो देखो ।

खरस्वरा (सं० स्त्री०) खरं स्वरति उपतापयति, स्व-अच् । १ वनमल्लिका, जंगली चमेली । २ त्रिपुरमल्लिका ।

खरहर (हिं० पु०) १ वृक्षविशेष, एक पेड़ । बलूत जातिका यह पेड़ हिमालयकी तराईमें उत्पन्न होता है । इसकी पत्तियां बेरकी पत्तियोंसे दीर्घ रहती हैं । फल बलूत ही जैसे आते हैं । खरहरका कच्चा काष्ठ सफेद होता, परन्तु पकनेसे गाढ़ धूसरवर्ण बन जाता है । उससे कृषियन्त्र निर्मित होते हैं । खरहरका वल्कल चमड़ा सिझानेमें लगता है । २ वह जगह जहां कूटा करकट पड़ा हो या घासफूस भरा हो ।

खरहरा (हिं० पु०) १ बरहंचा, महतरोंका भाड़ू । यन्त्रविशेष, एक औजार । यह प्रायः लोहेका बनता है । लोहेको एक चौकार टुकड़े पर उसकी दांतदार ४।५ कंघियां पास ही पास जड़ दी जाती हैं और बीचमें थोड़ी थोड़ी जगह खाली रहती है । खरहरेसे घोड़े, बैल वगैरहका जिस्म साफ किया जाता है । चमड़ेके एक टुकड़ेमें किसी खास तौरसे लोहेके पतले तार लगा कर भी खरहरा बनाते हैं । इसमें आदमी भी अपने बाल और कपड़े साफ कर सकता है ।

खरहरी (हिं० स्त्री०) एक फल या मेवा ।

खरहा (हिं० पु०) शशक, खरगोश, चौगड़ा । यह चूहेकी नसलका एक जानवर है जो डीलडौलमें उससे कुछ बड़ा होता है । इसके कान लम्बे, मुंह और सर गोल, चमड़ा मुलायम, पूंछ छोटी और पिछले पैर अगले पैरोंसे कुछ ऊंचे पड़ते हैं । खरहेके दांत बहुत पैने होते हैं । खरगोश और शशक देखो ।

खरही (हिं० स्त्री०) राशि, ढेर । प्रायः तृण वा अन्नादिके राशिको ही 'खरही' कहा जाता है ।

खरा (सं० स्त्री०) खं आकाशं लाति गृह्णाति, ख-ला-क लकारस्य रकारः । पीतदेवताड़ ।

खरा (हिं० वि०) १ तीक्ष्ण, तीखा । २ विशुद्ध, खालिस । ३ करारा, खूब पका हुआ, कुरकुरा । ४ कठिन, कड़ा । ५ निश्छल, साफ । ६ नकद । ७ स्पष्टवादी, साफ साफ कहनेवाला ।

खरांशु (सं० पु०) खरस्तीक्ष्णाः अंशुर्यस्य, बहुव्री० । सूर्य, सूरज ।

खराई (हिं० स्त्री०) खरापन, करारापन, सफाई ।

खरागरी (सं० पु०) खरं आगिरति, खर-आ-गृ-अच् गौरादित्वात् ङीष् । पीत देवताड़वृक्ष ।

खराग्नि (सं० पु०) अर्कनिष्काशनार्थं तीक्ष्णाग्निविशेष, तेज आंच ।

खराटावाड़—काठियावाड़ प्रान्तके भावनगर राज्यका एक नगर । यहांसे १ मील दूर पहाड़में चित्राधार नामकी कोई बौद्धगुहा है । लोग उसे 'अघोरी बाबाकी गुफा' कहा करते हैं । यहां एक दुर्गका ध्वंसावशेष विद्यमान है । किलेके कूएंका नाम 'पांच बीबी नो कुवो' है । जैन, वैष्णव और स्वामी नारायणमतानुयायियोंके भी मन्दिर बने हैं । यह नगर मालन नदीके दक्षिण तट पर अवस्थित है । यहांसे आध मील पूर्वको मालन, रोझकी और जिलिग्री तीन नदियां मिलनेसे त्रिवेणी कहलाती है । यहां विल्वेश्वर महादेवका मन्दिर है । प्रतिवर्ष श्रावणकी अमावस्याको मेला लगता है । आम और नारियलकी पैदावार अच्छी है ।

खराणक (सं० पु०) शिवके एक अनुचर ।

खराद (हिं० पु०) यन्त्रविशेष, एक औजार । इस पर काष्ठ वा धातु आदिको चढ़ा कर चिकना और सुडौल बनाया जाता है । २ खरादनेका काम । ३ गठन, बनाव ।

खरादना (हिं० क्रि०) खराद पर चढ़ाना, चिकनाना और सुडौल बनाना ।

खरादी (हिं० वि०) खरादनेवाला ।

खरादी—बम्बई प्रान्तके बेलगांव जिलेकी एक जाति । यह बेलगांव और दूसरे बड़े शहरोंमें मिलते हैं । औरङ्गजेबने इन्हें सुतारसे मुसलमान बनाया था । यह लोग आपसमें हिन्दी और दूसरोंके साथ मराठी या कनाड़ी भाषा बोलते हैं । इनकी स्त्रियां हिन्दुओंकी जैसी पोशाक और चोली पहनती और सर्वसाधारणमें उपस्थित हो करके पुरुषोंको साहाय्य करती हैं । यह लोग लकड़ीके पावे, झूले और खिलौने बनाते और उन पर लाल, पीला, नारङ्गी, हरा और नीला रंग चढ़ाते हैं ।

खरादी—खातियोंकी एक जाति। यह लोग खरीद पर लकड़ीको चढ़ा करके तरह तरहकी चीजें बनाते हैं। इनका आचार व्यवहार पवित्र है। परन्तु मुसलमान खरादी भी होते हैं। खरादियोंकी स्त्रियां भी लकड़ी पर लकारी करती हैं। यह वैष्णवसम्प्रदायभुक्त और गोभक्त होते हैं।

खरापन (हिं० पु०) खराई, सफाई, कराराापन।

खराब (अ० वि०) १ निकृष्ट, बुरा, जो अच्छा न हो। २ दुरवस्थ, बुरी हालतमें पड़ा हुआ। ३ पतित, कमीना।

खराबी (फा० स्त्री०) १ बुराई, ऐब, अवगुण। २ दुर्दशा, बुरी हालत।

खराब्दाङ्कुरक (सं० क्ली०) खराब्दात् तीव्रगर्जनमेघात् अङ्कुरयति, अङ्कुर-खुल्। वैदूर्यमणि, लहसुनियां। नये बादलके गरजनेसे इस मणिमें अङ्कुर उत्पन्न होता है। वैदूर्य देखो।

खरार—पञ्जाब-प्रदेशके अम्बाला जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० ३०° ३४ से ३०° ५६ उ० और देशा० ७६° २२ से ७६° ५५ पू०के बीच पड़ती है। भूमिका परिमाण ३७० वर्गमील है। लोकसंख्या १६६२६७ है। इस तहसीलसे ३ लाख रु० सालाना मालगुजारी जाती है। यहां २६८ गांव हैं। यहां गेहूं, ज्वार, काबुन, चना, चावल, कपास और ईख खूब होती है। दीवानी और दौड़के मुकद्दमे करनेको एक तहसीलदार और एक आनरेरी मजिष्ट्रेट रहते हैं। पुलिसके ३ थाने भी हैं। इस तहसीलके प्रधान नगरको भी खरार ही कहा जाता है। नगरमें स्वास्थ्यके लिये म्युनिसपालटी मोजूद है।

खरार—बङ्गाल-प्रान्तीय मेदिनीपुर जिलेके घाटाल उप-विभागका एक नगर। यह अक्षा० २२° ४०´ ३० और देशा० ८७° ४४´ पू०में अवस्थित है। लोकसंख्या कोई ८५०८ होगी। यहां पीतल और अष्टधातुकी सामान बहुत बनता है। १८८८ ई०को खरारमें म्युनिसपालिटी पड़ी।

खराल—गुजरात प्रदेशके महीकांठा विभागका मध्य-वर्ती एक छोटा राज्य। यह वातरक नदीके तीर पर अवस्थित है। इसमें १२ गांव लगते हैं। सरदारसिंह खरालके सामन्त राजा थे। पहले वह हिन्दू रहे, परन्तु पीछेको मुसलमान बन गये। वह हिन्दू और मुसल-मानी दोनों धर्मोंकी चाल ढाल देख काम करते थे। राजाका ज्येष्ठपुत्र ही राज्य पा सकता है। लड़का गोद लेनेको उन्हें क्षमता नहीं। बड़ोदेके गायकवाड़-को १०५०) और अंगरेजी गवर्नमेण्टको ७६०) रु० करकी तरह वार्षिक देना पड़ता है।

खरालिक (सं० पु०) खरं आलाति, खर-आ-ला-खिनि ततः स्वार्थे कन्। १ नापित, नाई। २ क्षुराधार, क्षुर-छुरी। ३ लोहेका तीर। ४ उपाधान, तकिया। खरालिक देखो।

खराश (फा० स्त्री०) १ खरोंच, छिलन, किसी तीखी चीजकी जिस्म पर रगड़ पड़नेसे बन जानेवाला निशान् या जख्म।

खराश्वा (सं० स्त्री०) खरैरश्यते भुज्यते, अश्-व। १ रुद्रजटा, मयूरशिखा। २ अजमोदा। यह कफ, वात और वस्तिरोगको दूर करती है। (चरक)

खरास्त्र (सं० क्ली०) खरस्य अस्त्रम्, ६-तत्। गर्दभरक्त, गधेका खून।

खराह्वा (सं० स्त्री०) खरं तीव्रगन्धं आह्वयति, आ-ह्वे-क-टाप्। अजमोदा।

खरिक (हिं० पु०) इक्षुभेद, किसी किस्मकी ऊख। यह खरीफके पीछे बोया जाता है।

खरिका (सं० स्त्री०) खं राति, रा-क ततः स्वार्थे कन्-टाप् अत इत्वम्। नेपालज चूर्णाकृति कस्तूरीभेद, नेपालीका बुकनी जैसा मुश्क।

खरिया (हिं० स्त्री०) १ पांसी, पतली रस्सीकी जाली। इसमें फूस बांधते हैं। २ कण्डेकी राख। ३ काष्ठ-खण्डविशेष, किसी किस्मकी लकड़ी। इसके सहारे नांदमें नील कस कर दबाया जाता है। ४ खड़िया मट्टी।

खरिया—छोटानागपुरकी एक कृषिजीवी आदिम जाति। किसीके मतमें खरिया कोलोंकी एक शाखा और किसीके मतमें द्राविड़जातिसम्भूत हैं। किन्तु ठीक ठीक इनका मूलनिर्णय करना दुःसाध्य है।

शारीरिक गठन किसी कदर मुण्डा लोगों जैसा रहते भी मुंहकी आकृति उनको देखते बुरी लगती है। कोई कोई कहता है कि धौरावन लोगोंके बाद रोहतास-गढ़ और पटनेमें जाकर उन्होंने वास किया। अपरापर चलित प्रवादोंसे मालूम पड़ता कि वह पुराण लोगोंके साथ मयूरभञ्जमें एकत्र रहते थे। यह कहते हैं—मोरके अण्डेके सफेद लुआबसे पुराण, उसके छिलकेसे खरिया और उसके ही फूलसे भञ्जराजवंश निकला है। मयूरभञ्जसे यह लोहारडागा जिलाके दक्षिण पश्चिम कायल उपत्यकामें जाकर बसे। इस असभ्य जातिमें विद्वान कोई नहीं। खरिया अक्षरादि लिखना नहीं जानते। लिखने पढ़नेकी चाल न रहनेसे इनका विशेष इतिहास कैसे मालूम कर सकते हैं?

लोहारडागेके खरिया लोग इन कई भागोंमें बंटे हैं—देल्की खरिया, दुधखरिया, अरेंगा, मुण्डा, बर्गा और उरावन। सिवा इनके दूसरे भी ३४ घराने हैं। सभी लोग खेतीबारी करते हैं। इनको जमीन मौरूसी होती है। दूसरी जगहोंके खरिये भी कृषिजीवी हैं, परन्तु इच्छानुसार एक स्थानसे दूसरे स्थानमें जा कर बस रहते हैं। परन्तु लोहारडागेके किसान खरिया कुछ सभ्य होते हैं। भले आदमियों जैसा उनके पहनेका कपड़ा और ठाटबाट रहता है। रहनेके घर खूब साफ और सुथरे हैं। यह स्वास्थ्यकर और सुस्वादु द्रव्य आहार करते हैं। हिन्दूधर्मपर सभीकी आस्था है। एक बार जिसने यह धर्म ग्रहण किया, इह जन्म जैसी अपनी आदिमजातीय अवस्था भूल गया; यहां तक कि फिर पहचानना कठिन है—क्या वह खरिया-वंशसंभूत है। अब यह मानभूमके पहाड़ी खड़ियों, होओं और भूमियोंके संस्रवमें नहीं रहते।

मानभूमके दलमा पहाड़ और गाङ्गपुरके जङ्गलमें जो जङ्गली खरिये रहते, लोहारडागेवालोंकी तरह खेतीबारी पसन्द नहीं करते और लगातार एक जगहसे जाकर दूसरी जगहमें बसते हैं। पहाड़की ऊंची चोटी या बगलमें पास पास दो-तीन घर बनाये जाते हैं। वह बांसों या कहीं कहीं सालकी डालोंसे बनते हैं। यह वनमें कुछ जगहके पेड़ पत्ते जला उसके भस्म पर अलग अलग बाजरा, यव और कोदो बो देते और उसीको खाकर अपना निर्वाह कर लेते हैं।

जङ्गली खरिये बड़े पेटू होते हैं, यहांतक कि बन्दर, गाय, बकरी, भैंस आदि सभी प्रकारके मृतजन्तु पाते ही खाने लगते हैं। साधारणतः यह जङ्गली फल, पत्ते और कन्दमूल आदि खाकर जीवन धारण करते हैं। सिवा इसके पासके गांवमें जाकर जङ्गलका शहद, लोबान, लाह, रेशमी कीड़ा, सालके पत्ते, बांसके पैमाने वगैरहसे चावल बदल लाते और उन्होंको प्रत्यह खाते हैं। जङ्गली खरियाओंको कहीं कहीं वनमानुस भी कहा जाता है। दुध खरिये गोमांस भक्षण करते हैं। इनमें खाने दाने और पकानेकी चाल निराली है। छोटानागपुरके निकटस्थ ग्रामोंमें उरावन लोगोंके साथ जो खरिये बसते, ब्राह्मणोंके अधीन रह कर हिन्दू हो गये हैं और उनको श्रद्धा भक्ति करना सीखने लगे हैं। यह अपनी हांडी अलग अलग पकाते और अपनी स्त्रीके हाथकी बनी चीज भी नहीं खाते। यदि कोई अपरिचित व्यक्ति इनके घर पहुंचता, हंडिया घड़ा वगैरह मट्टीके बर्तन फेंक दिये और कांसे पीतल आदिके पात्र मांज लिये जाते हैं। इस श्रेणीके खरियाओंका आचार विचार बहुत ही कदर्य है। अपने आप यह इतने मैले रहते कि न तो कभी नहाते और न देहको उजलाते है।

खरिया वैसे अच्छे लोहेके बर्तन बना नहीं सकते। पहाड़ोंसे कन्दमूल निकालनेके लिये फावड़े चलाते हैं। लम्बी लम्बी घाससे पत्तोंको गांठ कर एक प्रकारकी धौंकनी तैयार करते और उसीसे आगको धधका लोहा तपा कर पीट लेते हैं।

खरिया स्ववंश और माई, मौसी, भानजी आदिके साथ विवाह नहीं करते। साधारणतः ऋतुके पीछे कन्याका विवाह होता है। विवाहसे पहले स्त्री यदि किसी पुरुषके साथ गमन करती, उसको कोई भी दोष नहीं लगता। समृद्धिशाली खरियाओंमें अब हिन्दुओं जैसा बालविवाह चल गया है। विवाहका सम्बन्ध दोनों ओरके माता पिता या मालिक ही पक्का करते हैं। विवाहका दिन स्थिर हो जाने पर वरके पिताका

समाईके अनुसार एकसे दस तक गाय या भैंस दहेजमें देना पड़ता है। माघ मासको यह शुभ विवाह कार्य सम्पन्न होता है। इस मासको छोड़ कर खरिया दूसरे महीने विवाह कर नहीं सकते। विवाहके पूर्व दिन कन्याके घरको स्त्रियां उसको साथ लेकर वरके घर जाती हैं। फिर विवाहके दिन बड़े सबेरे वर और कन्याके देहमें अच्छी तरहसे तेल लगा स्नान कराते हैं। पांच पूले घास मट्टी पर बिछा उसके ऊपर हलका जुवा रखा जाता है। वर और कन्या दोनों एक दूसरेके सामने हो इसी जुवे पर खड़े होते हैं। वर कन्याके सीमन्तमें सिन्दूर चढ़ाता, कहीं कहीं कन्या भी उसके मत्थेमें सिन्दूरको एक टिपकी लगा देती है। इसी प्रकार विवाहका कार्य शेष हो जाता है। कन्याका पिता यदि अङ्गीकृत पण एकबारगी ही नहीं दे सकता, एक महीनेके बीच कन्याके पहननेको उसे ७ कपड़े और जामाताको १ बैल देना पड़ता है। विवाहके समय वरकर्ता अपने घरके पास किसी वृक्षका तल झाड़ पोंछ रखते हैं। कन्यायात्री इसी जगह आकर डेरा डालते, फिर वरयात्री जाकर उनमें मिल जाते हैं। दोनों दलोंको एक करके कोई कच्चा कलस लाते जिसकी चारों ओर धानकी भूसी फैलाते और मुंह पर एक दीपक जलाते हैं। सारा दिन खाते, पीते, नाचते, गाते और हंसते खेलते बीत जाता है। इस भोजका सभी खर्च वरकर्ताको उठाना पड़ता है। जब दोनों दलके लोग खाने लगते, उनके सामने कन्याको ले जाकर गर्म पानीसे कपड़ा धोनेके लिये देते हैं। इससे आये हुये सब लोग समझ सकते कि वह कन्या सभी गार्हस्थ्य कार्य करनेमें निपुण निकलेगी।

खरियाओंमें विधवाविवाह प्रचलित है। स्वामीके मरने पर विधवा अपने देवरके साथ सगाई कर सकती है या किसी दूसरेसे भी विवाह करे, तो भी कोई हानि नहीं। विधवा-विवाहमें नूतन स्वामी विधवाको १ कपड़ा और कन्याके पणस्वरूप १ गाय दिया करता है। विधवा स्त्री व्यभिचारिणी होनेसे छोड़ जा सकती और कन्याके पिताको विवाहके समय दहेजके तौर पर मिली हुई चीज वरको लौटाना पड़ती है। अपनी स्त्रीके साथ विवाह करनेमें भी दो गाय या भैंस लगती हैं।

पिताके विषयका केवल पुत्रोंको ही अधिकार होता है। दुधखरिया बतलाते कि मिताक्षराके नियमानुसार ही वह अपनी सम्पत्तिका उत्तराधिकारी ठहराते हैं। किन्तु यों तो पञ्चायतसे काम चलता है। बड़े लड़के पर अपनी बहनोंके खिलाने पिलानेका भार रहता है। यदि व्यक्तिके विवाहिता पत्नीके गर्भजात २ पुत्र और रखी हुई स्त्रीके भी २ लड़के रहते और उसी व्यक्तिके धानके १६ खेत होते, तो विवाहिता रमणीके दोनों पुत्रोंको बारह और दूसरे लड़कोंको ४ खेत मिलते हैं। इसी हिसाबसे उत्तराधिकारीका धन बंटा करता है। व्याही औरतका बड़ा लड़का ७ अंश और छोटा ५ अंश और रखी हुई स्त्रीके बेटे केवल २ अंश पाते हैं।

इनमें स्वजातीय पुरोहित रहता है। उसको 'कालो' कहा जाता है। यही कालो पुरोहित अपने अपने गांवोंके खरियाओं, पाहनों, मुण्डाओं और ओरावनोंकी अन्त्येष्टिक्रिया करते हैं। खरियाओंमें व्याहेका शव जलाया और अविवाहिताका गाड़ दिया जाता है। लाश जल जाने पर किसी मट्टीके बर्तनमें थोड़े चावल, मृतका भस्म और अस्थि रखके नदीके जल या पहाड़के गड्ढेमें डाल आते हैं।

यह प्रकृतिके सेवक हैं। 'बड़ा पहाड़' इनके सर्वप्रधान देव हैं। उनके सामने समय समय पर भैंस भेंड़ और जङ्गली मुर्ग बलि दिया करते हैं। उक्त देवताकी पूजा मुण्डाओं और उरावनोंसे खरियाओंमें चली है। इनके और भी कई देवता हैं। जैसे—जड़ो (जलदेव), नाग्रन देव (रोग और संहारकर्ता); गिरिङ्गदेव (सूर्य), जैलो देव (चन्द्र), पाटदेव (पर्वत), दोंगा-दाड़ा, महादान, गूमी, अजिनजड़ा (शस्यरक्षक देवता)। बगरा सरना (गोमहिषादिमें रोगप्रवर्तक देवता)। इन सकल देवताओंको सन्तुष्ट करनेके लिये खरिया पशु पक्षी नाना जन्तु बलि चढ़ाते है।

खरियार—मध्यप्रदेशके रायपुर जिलेकी एक जमीन्दारी

यह बिन्दर-नवागढ़के पूर्वको अवस्थित है। खरियार उत्तरदक्षिण ५३ मील और पूर्व-पश्चिम ३२ मील पड़ता है। इसमें ५०८ कसबे और १५५८७ घर आबाद हैं। प्रवाद है—पटनाके किसी सामन्तराजने अपनी कन्याके विवाहकाल दामादको यह जमीन्दारी दहेजके तौर पर दी थी। खरियारके वर्तमान मालिक चौहान-वंशीय हैं।

खरिहट (हिं० स्त्री०) एक पतली लकड़ी या तिनका इसमें कुम्हारका एक डोरा बंधा रहता, जिससे वह बने हुए कच्चे वर्तन चाकको मट्टीसे काट कर उतारा करता है।

खरिहान (हिं० पु०) खलियान, कटे हुए अनाजका ढेर।

खरी (हिं० स्त्री०) १ किसी किस्मकी जख। २ खली। ३ खड़िया मट्टी। ४ कराही, खूब सिंकी हुई। ५ विशुद्ध, खालिस। ६ स्पष्ट, साफ।

खरीजङ्घ (सं० पु०) खर्या गर्दभ्या इव जङ्घा यस्य, बहुव्री०। १ कोई ऋषि। २ शिव।

खरीता (अ० पु०) १ थैली। २ जेब। ३ कोई बड़ा लिफाफा। इसमें कोई बड़ा हाकिम अपने मातहतको हुक्मनामा वगैरह भेजता है।

खरीतिया (हिं० पु०) करविशेष, किसी किस्मका महसूल या टेक्स। यह मुसलमानोंके समय लगता था। परन्तु अकबरने खरीतिया उठा दिया।

खरीद (फा० स्त्री०) क्रय, मोल लेनेकी बात।

खरीदना (हिं० क्रि०) क्रय करना, मोल लेना।

खरीदार (फा० पु०) १ क्रेता, मोल लेनेवाला। २ अभिलाषी, ख्वाहिशमन्द।

खरीदारी (फा० स्त्री०) क्रेताका भाव, खरीदारकी हालत।

खरीफ (अ० स्त्री०) आषाढ़से अग्रहायण मास तक कटनेवाली फसल। इसमें ज्वार, मकई, बाजरा, धान, उड़द, मोठ, मूंग, मटर, लोबिया आदि अनाज होते हैं। पहला पानी गिरनेसे यह बोई जाती है। प्रायः खरीफको नहीं सींचते, वृष्टिके जल पर ही निर्भर करते हैं।

खरीम (हिं० पु०) पक्षिविशेष, एक चिड़िया। यह प्रायः पानीके किनारे रहती और मुर्गीसे मिलती जुलती है। इसके पर तीतरकी तरह चितले होते हैं।

खरील (हिं० पु०) अलङ्कारविशेष, एक गहना। इसको स्त्रियां बेंदीकी तरह सरमें लगाती हैं।

खरु (सं० पु०) खनखन-कु निपातने साधुः। १ शिव। २ दर्प, शेखी। ३ अश्व, घोड़ा। ४ दन्त, दांत। ५ कामदेव। ६ शुक्लवर्ण। (त्रि०) ७ श्वेतवर्ण विशिष्ट, सफेद। निषिद्ध कार्यके अनुष्ठानकी रुचि रखनेवाला, जिसे बुरा काम करना अच्छा लगे। ९ निर्बोध, नाखादा। १० क्रूर, पाजी। ११ तीक्ष्ण, पैना। (स्त्री०) १२ पतिम्वरा कन्या। इस शब्दके उत्तर स्त्रीलिङ्गमें ङीष् नहीं होता।

खरुवक (सं० पु०) श्वेत मरुवक वृक्ष, सफेद मरवा।

खरे (हिं० पु०) १ रुपये पीछे एक आना दला ली। २ 'खरा' का बहुवचन।

खरेठ (हिं० पु०) किसी किस्मका धान। यह अग्रहायण मासको पकता है।

खरेला—युक्तप्रदेशके हमीरपुर जिलेका एक नगर। यह अक्षा० २५° ३२′ उ० और देशा० ७९° ५०′ ४५″ पू०में बसा है। यहां एक विद्यालय, बाजार, थाना और कई एक अच्छे अच्छे देवमन्दिर हैं।

खरोंच (हिं० स्त्री०) १ खराश, छिलन, रगड़का हलका निशान्। २ पतौर, खानेकी एक चीज। यह घुइयां आदिके पत्ते बेसन या पीठेसे लपेट तेलमें तलनेसे बनती है।

खरोंचना (हिं० क्रि०) १ छीलना। २ खरोंचा मारना। ३ जोरसे खुजलाना।

खरोंचा (हिं० पु०) खरोंच, गहरी रगड़।

खरोत—एक हिन्दू जाति। यह लोग युक्तप्रदेशके बरेली जिलेमें बहुत पाये जाते हैं। इनके प्रधानतः ३ भेद हैं— दखिनाहा, जड़ौत और माहोर।

खरोरी (हिं० स्त्री०) किसी किस्मकी खूंटी। यह छकड़ामें दोनों ओर रक्के बांस बांधनेको लगायी जाती है।

खरोश्री—बम्बईके बेलगांव जिलेका एक गण्डग्राम। यह

चिकोदीसे कोई ४ मील दक्षिण चिकोदी हुकेरी राहपर पड़ता है। लोकसंख्या लगभग २०२४ है। इसमें घण्टा बसवन्नाका मन्दिर बना, जो बिगड़ गया है। श्रावण मासमें प्रथम सोमवारको उक्त देवताके उपलक्षमें मेला लगता है।

खरोष्ठी (सं० स्त्री०) लिपिविशेष, किसी किस्मकी लिखावट। यह अशोकके समयसे भारतकी पश्चिमोत्तर सीमाकी ओर चलती थी। खरोष्ठी फारसीकी तरह वाम दिक्से दक्षिणकी लिखी जाती और गन्धारलिपि भी कहलाती है। अ खरलिपि देखो।

खरोष्ठो, खरोष्ठी देखो।

खरोस्ति (सं० स्त्री०) जनपदविशेष, कोई मुल्क।

खरौंहां (हिं० वि०) १ खरा जैसा, खरसानेवाला, जो भुननेमें कुछ कुछ जल गया हो। २ किसी कदर ज्यादा नमकीन, जिसमें थोड़ा ज्यादा नमक पड़ गया हो।

खर्खोद (सं० पु०-क्ली०) भौतिक विद्या, एक प्रकार इन्द्रजाल, किसी किस्मकी बाजीगरी।

खर्गला (सं० स्त्री०) उलूकी, फाख्ता। (ऋक् ७।१०४।७)

खर्च (हिं० पु०) १ व्यय, सरफा, खपत, उठाव। २ व्ययमें लगनेवाला, उठनेवाला रुपया।

खर्चना (हिं० क्रि०) व्यय करना, लगाना, उठाना।

खर्चा, खर्च देखो।

खर्ची (हिं० स्त्री०) फीस, मिहनताना, रण्डियोंको दिया जानेवाला रुपया-पैसा।

खर्चीला (हिं० वि०) अमितव्ययी, फजूलखर्च, काफीसे ज्यादा खर्च करनेवाला।

खर्जन (सं० क्ली०) खर्ज-ल्युट्। कण्डूयन, खुजली, चुल।

खर्जरा (सं० स्त्री०) खर्ज लाति, खर्ज-रा-क-टाप्। खर्जवार, सज्जीमट्टी।

खर्जिका (सं० स्त्री०) खर्ज खुल्-टाप् अत इत्यत्व। अवदंश, एक चरपरा खाना। इससे प्यास बढ़ आती है।

खर्जु (सं० पु०) खर्ज-उन्। १ कण्डुविशेष, किसी किस्मकी खारिश्त, चुल। २ पिण्डी खर्जुरवृक्ष, पिण्डखजूर। ३ कीटविशेष, कोई कीड़ा।

खर्जुर (सं० क्ली०) खर्ज-उरच्। रौप्य, चांदी।

खर्जू (सं० स्त्री०) खर्ज-ऊ। कृषिचमितनिभ्य न सर्जिखर्जिभ्याम्। उण् १।८१। १ कण्डू, खुजली। २ कीट, कीड़ा। ३ पिण्डी खजूर वृक्ष, पिण्डखजूर। (पु०) ४ वणिक्, बनिया।

खर्जूघ्न (सं० पु०) खर्जू कण्डूयनं हन्ति, हन् टक्। १ चक्रमर्द क्षुप, जकोड़िया। २ अर्कवृक्ष, मदार। ३ धुस्तूरवृक्ष, धतूरा।

खर्जूर (सं० पु० क्ली०) खर्ज-ऊर। खर्जिपिञ्जादिभ्य ऊरो-लचौ। उण् ४।९०। १ स्वनामख्यात वृक्ष, खजूरका पेड़। खर्जूरस्य फलम्, खर्जूर अण् तस्य लोपः। २ खर्जूरफल, खजूर, खजुरियां। इसको कहीं कहीं 'सेंदखजूर' या 'खर्जी,' तामिलमें 'इतसमयेन' और तैलगुमें 'ऐट्टा तेल' वा 'इटाचेट्ट' कहते हैं। (Phoenix sylvestris)

खजूरका पेड़ भारतवर्षमें सर्वत्र उपजता है। एक एक वृक्ष ३२।३३ हाथ तक बढ़ता है। किसी किसी दरख्त ८ छतरियां तक देख पड़ती हैं। इसके काठकी बेंड़ी खेतोंमें पानी देनेके लिये काम आती है। उससे उठाउ पुल भी बनाया जाता है। खजूरका पेड़ ७।८ वर्षका होने पर मोचा छेद देनेसे रस निकलता है। यह रस खूब सुस्वादु रहता और इससे चीनी तथा बढ़िया गुड़ बनता है। इसके रेशेसे जहाजको रस्से तैयार किये जाते हैं। खजूरका अन्तःसार पकानेसे कत्थे जैसी एक चीज निकलती, जो चमड़ा रंगनेमें लगती है। सर हामफ्रे डेवीने इसका अन्तःसार परीक्षा करके देखा है। उसमें सैकड़े पीछे चर्मोपयोगी अंश ५४०५, द्रवणीय पदार्थ ३४, मण्ड ६५ और बालू, चुना आदि अद्रवणीय पदार्थ ५ भाग होता है।

वैद्यक मतमें खजूर—मधुर, शीतल, गुरु, क्षय, अभिघात, बृंहण तथा शुक्रवृद्धिकर और दाह और वात पित्तरोगके लिये हितकर है।

भावप्रकाशके मतमें खर्जूर तीन प्रकारका है। सचराचर मिलने और क्षुद्र आकार रखनेवाला भूमिखजूर कहलाता है। पश्चिमाञ्चलमें एक प्रकारका खजूर होता है। उसका नाम पिण्डखजूर या खर्जूरिका है। सिवा इसके किसी प्रकारका दूसरा खर्जूर इस देशमें पहले बाहरसे आता था। उसको कोहारा कहा

जाता है। अब छोहारा पश्चिमदेशमें उपजने लगा है। यह तीनों प्रकारका खजूर शीतवीर्य, मधुररस, विपाक, स्निग्ध, रुचिकारक, हृदयग्राही, गुरु, तृप्तिकर, पुष्टिकर, विष्टम्भी, शुक्रवृद्धिकारक, बलकर और क्षत, क्षय, रक्तपित्त तथा कोष्ठगत वायु, वमि, कफ, ज्वर, अतिसार, क्षुधा, तृष्णा, काश, श्वास, मत्तता, मूर्च्छा एवं वातपैत्तिक और मदात्यय रोगनाशक है। खजूरका रस मत्तताजनक, पित्तकारक, वातघ्न, कफनाशक, रुचिकारक, अग्निवृद्धिकारी, बलकर और शुक्रवर्धक होता है। (भावप्रकाश)

३ रौप्य, चांदी। ४ हरिताल। ५ खल, पाजी। ६ वृश्चिक, बिच्छू।

खजूरक (सं० पु०) वृश्चिक, बिच्छू।

खजूरपत्रक (सं० क्ली०) खजूरपत्राकार व्रणच्छेदविशेष, खजूरकी पत्ती-जैसा एक नश्तर।

खजूरफल (सं० क्ली०) खजूरीफल, खजूर, खजुरियां। यह रक्तपित्तमें हित होता है। (सिद्धयोग)

खजूरफलक (सं० पु०) गोधूमविशेष, किसी किस्मका गेहूं।

खजूरवेध (सं० पु०) एक योग। इसका अपर नाम एकार्गल है। खजूरवेध योगमें विवाह निषिद्ध होता है। योग देखो।

खजूरिका (सं० स्त्री०) खजूर गौरादित्वात् ङीष् ततः संज्ञायां कन्-टाप् ईकारस्य ह्रस्वत्वम्। १ खजूरवृक्ष, खजूरका पेड़। २ कृष्णमुसली, काली मूसर। ३ मिष्टान्नविशेष, एक मिठाई।

खजूरी (सं० स्त्री०) खजूर गौरादित्वात् ङीष्। १ वनखजूरवृक्ष, जङ्गली खजूरका पेड़। २ खजूरवृक्ष, खजूरका पेड़। इसका संस्कृत पर्याय—खरस्कन्धा, दुष्प्रधर्षा, दुरारुहा, निःश्रेणी, कषायी, यवनेष्टा और हरिप्रिया है।

खर्परतुत्थ (सं० क्ली०) खर्परीतुत्थ, खपरियाका तूतिया।

खर्पर (सं० पु०) कर्पर पृषोदरादित्वात् ककारस्य खः। १ तस्कर, चोर। २ धूर्त, धोकेबाज। ३ भिक्षाभाण्ड, खप्पर। ४ मृण्मय भग्नपात्रका अंश, मट्टीके टूटे बर्तनका हिस्सा। ५ कपाल, खोपड़ा। ६ छत्र, छाता। ७ तुत्थविशेष, किसी किस्मका तूतिया। ८ उपधातुविशेष, खपरिया। वैद्यकशास्त्रमें इसके शोधनकी प्रणाली अनेक प्रकार लिखित हुई है। रसेन्द्रसारसंग्रहके मतमें खर्पर रक्त तथा पीतपुष्पके रसमें रगड़के नरमूत्र, गोमूत्र और सैन्धवलवणके साथ यवकी कांजीमें ७ या ३ दिन भावना देनेसे खर्पर शुद्ध होता है। कोई कोई कहता कि वह सात बार जलाकर कागजी नीबूके रसमें भिगोकर रखनेसे शुद्ध हो जाता है। खपरियाका भस्म इस प्रणालीसे बनता है—विशुद्ध खर्पर पारेके साथ घोंटने और वालुकायन्त्रमें एक दिन पाक करनेसे भस्म हो जाता है। विशुद्ध खर्पर नेत्ररोगनाशक, क्लेदकर, क्षयरोगघ्न और गुरु होता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह) भावप्रकाशके मतमें यह कटु, क्षार, कषाय, वमिकारक, लघु, लेखन तथा भेदन गुणयुक्त, चक्षुको हितकर, रक्तपित्तनाशक और विष तथा कण्डुनिवृत्तिकर है। (भावप्रकाश) ९ खड्गाकार धूपपवनादिपात्र, तवा। १० नेत्राञ्जनभेद, आंखोंका एक सुरमा।

खर्परक (सं० पु०) लौहपात्र, तवा।

खर्पराल (सं० पु०) अश्वत्थविशेष, एक पीपल।

खर्परिकातुत्थ, खर्परीतुत्थ देखो।

खर्परी (सं० स्त्री०) खर्पर उपधातुभेदः कारणत्वेन अस्त्यस्याः, खर्पर-अच्-ङीष्। खर्परीतुत्थ, किसी किस्मका तूतिया।

खर्परीतुत्थ (सं० क्ली०) तुत्थविशेष, किसी किस्मका तूतिया।

खर्परीतुत्थक (सं० क्ली०) १ नेत्रप्रसाधनविशेष, एक सुर्मा। २ तुत्थाञ्जन, कृत्रिम रसाञ्जन। यह कटु, तिक्त, चक्षुष्य, रसायन, त्वग्दोषघ्न, दीपन और बलपुष्टिकर होता है। ३ खर्पर, खपरिया।

खर्परीयक (सं० क्ली०) १ खर्परीतुत्थ, खपरियेका तूतिया। २ खर्पर, खपरिया।

खर्परीरसक (सं० क्ली०) खर्परीतुत्थ, खपरियाका तूतिया।

खर्व (सं० पु०) खर्व-अच्। १ कुवेरका निधिविशेष। २ कुब्जकपुष्पवृक्ष, कूजा पेड़। ३ संख्याविशेष, कोई अदद। कोटिको १० गुण करनेसे अर्बुद, अर्बुदको १०-

गुण करनेसे अब्ज और अब्जको १० गुण करनेसे खर्व होता है। यह संख्या सहस्रकोटिके (१०००००००००००) बराबर है। (लीलावती)

रामायणके मतमें महापद्मको सहस्र गुण करनेसे खर्व आता है। (रामायण ६।४।५९) (त्रि०) ४ ह्रस्व, छोटा। ५ वामन, बौना।

खर्व्वक (सं० त्रि०) खर्व एव स्वार्थे कन्। ह्रस्व, वामन, छोटा, पौना।

खर्व्वट (सं० पु०) खर्व-अटन्। १ चारसौ गांवोंके बीचका गांव। इसमें नदी और पर्वत भरे रहते हैं। (भागवत-टीका, स्वामी)

खर्व्वपत्रा (सं० स्त्री०) खर्वं पत्रं यस्याः, बहुव्री० ङीव-भाव पक्षे टाप्। द्रोणपुष्पी, देवना।

खर्व्वपत्रिका (सं० स्त्री०) खर्वपत्रा स्वार्थे कन्-टाप् इत्वञ्च। द्रोणपुष्पी।

खर्व्ववासी (सं० त्रि०) खर्वः सन् वसति, वस-णिनि। खर्व होकर रहने या खर्वमें अधिष्ठान करनेवाला।

खर्व्वशाख (सं० त्रि०) खर्वा ह्रस्वा शाखास्ततुल्या हस्त-पादादयो यस्य, बहुव्री०। वामन, बौना।

खर्व्वा (सं० स्त्री०) नागबला।

खर्वित (सं० त्रि०) खर्व कर्तरि क्त। ह्रस्व, छोटा, कटा हुआ।

खर्विता (सं० स्त्री०) खर्वित-टाप्। १ अमावस्याविशेष, एक अमावस। यदि अमावस्या चतुर्दशी मिली आती, वह खर्विता वा गताध्वा कहलाती है। (कर्मप्रदीप) २ पूर्वदिनकी तिथिसे पर दिनको अल्पकालस्थित तिथि जो तिथि, पहले दिनकी तिथिसे कम पड़े।

खर्वुर (सं० पु०-क्ली०) नदानिष्पाव, किसी किस्मका अनाज।

खर्वुरा (सं० स्त्री०) खर्व उरच्-टाप्। तरदीवृक्ष, एक पेड़।

खर्वूज (सं० क्ली०) तन्नामक फलविशेष, ककड़ीकी जातिका एक गोल गोल फल। यह मूत्रल, बल्य, कोष्ठ-शुद्धिकर, गुरु, स्निग्ध, स्वादु, शीत, वृष्य और पित्त तथा वातरोगको दूर करनेवाला है। फिर जो खरबूजा खट्-मिट्ठा और खारी निकलता, रक्तपित्त तथा मूत्रकृच्छ्र रोग उत्पन्न करता है। (भावप्रकाश)

खर्स (सं० क्ली०) १ पट्टवस्त्र, रेशमी कपड़ा। २ पौरुष, मरदानगी। ३ परम्पराशुद्धि।

खर्रांच (हिं० वि०) अधिखर्व, खर्चीला।

खर्रा (हिं० पु०) १ लम्बाचिट्ठा, बड़ा कागज जो खूब लिखा है। २ रोगविशेष, कोई बीमारी। पृष्ठदेश पर क्षुद्र क्षुद्र पिड़का पड़ने और चर्म खरस्पर्श लगनेसे 'खर्रा' रोग कहलाता है। ३ सोनेमें होनेवाली गलेकी घरघरा-हट।

खर्राटा (हिं० पु०) निद्रित अवस्थामें निकलनेवाला शब्द, जो आवाज़ सोनेमें नाकसे निकले।

खर्ला (हिं० पु०) नाला, पहाड़के नीचे बहनेवाली छोटी नदी।

खर्सिया झालरिया—मध्यभारतीय इन्दोर एजेन्सीका एक अधीनस्थ देशीय राज्य। ग्वालियर और देवासको दी हुई पहली सन्धिके अनुसार इस राज्यको १७५०) रु० ग्वालियर और २२०) रु० देवाससे भत्तेकी तौर पर मिलता है। ठाकुर स्वरूपसिंह और फतहसिंहको उक्त वृत्ति और यह राज्य दिया गया था।

खल (सं० पु०-क्ली०) खल-अच्। १ धान्यादिका मर्दन-स्थान, खलियान। (मनु ११।१७) २ धूलिराशि, गर्दका ढेर। ३ भू, जमीन्। ४ स्थान, मुकाम। ५ तिलकल्क, खली। खे आकाशे लीयते, ली-ड। ६ सूर्य। खं तहर्ष लाति, ला-क। ७ तमालवृक्ष। ८ प्रस्तरनिर्मित औषध घोंटनेका पात्र। ९ खड़। १० धुस्तूरवृक्ष, धातूरेका पेड़। ११ मालवदेशका कोई व्यञ्जन। (त्रि०) १२ नीच, कमीना। १३ अधम, नालायक। १४ दुर्जन, पाजी।

> "खल उपहास होत हित मोरा।
> काक कहहिं पिक कण्ठ कठोरा॥" (तुलसी)

खल (हिं० पु०) १ किटकिना, सुनारोंका एक ठप्पा। २ वृहत् प्रस्तरखण्ड, पत्थरका बड़ा टुकड़ा।

खलक (सं० पु०-क्ली०) खं शून्यं मध्यं लाति, ला-क संज्ञार्थे कन्। १ कुम्भ, घड़ा। २ गुग्गुलु।

खलक् (अ० पु०) १ प्राणिमात्र, जानवर। २ जगत्, दुनिया।

खलकत (अ० स्त्री०) १ सृष्टि, दुनिया। २ भीड़, जमाव।

खलकाम्बलिक (सं० पु०) तिलकल्क, खली।

खलकुल (सं० पु०) खलको खलभूमौ लीयते, ली बाहुलकाद् डः। कुलत्थकलाय, किसी किस्मका मटर।

(बृहदारण्यक उप०)

खलखलाना (हिं० क्रि०) १ उबलना, खौलना, खदबदाना। २ खंगारना, थोड़ा पानी डाल कर हिलाना। ३ उबालना, खौलाना।

खलज (सं० त्रि०) खले खलाद्वा जायते, खल-जन-ड। खलमें वा खलसे उत्पन्न। (अथर्व ८।६।१५)

खलड़ी (हिं० स्त्री०) त्वक्, चर्म, खाल, चमड़ा।

खलता (सं० स्त्री०) खस्य लता, ६-तत्। १ आकाशलता, अमरबेल। खलस्य भावः, खल्-तल्। २ दुर्जनता, पाजीपन। परद्रोहशून्य शान्त व्यक्तिके प्रति विद्वेषका नाम खलता है। (माघ)

खलति (सं० पु०) स्खलन्ति केशा अस्मात्, स्खल-अतच् निपातने साधुः। खलतिः। उण् ३।११२। १ इन्द्रलुप्तरोगी, गंजा। २ इन्द्रलुप्तरोग, गञ्जापन। इन्द्रलुप्त देखो।

खलतिक (सं० पु०) खलतिरिव कायति कै-क। १ पर्वत, पहाड़। (क्ली०) खलति कस्य पर्वतस्य अदूरभवानि वनानि खलतिक शब्दात् उत्पन्नस्य चातुरर्थिक तद्धित-प्रत्ययस्य लोपः। २ पर्वतका अदूरवर्ती वन, पहाड़के पासका जङ्गल।

खलधान (सं० पु०) खलाः खड़ा धीयन्तेऽस्मिन्, धा आधारे ल्युट्। खलियान।

खलधान्य (सं० क्ली०) खलधान, खलियान।

खलना (हिं० क्रि०) १ चुभना, लगना, नागवार समझ पड़ना। २ मोड़ना, झुकाना।

खलनी (हिं० स्त्री०) यन्त्रविशेष, एक औजार। सुनार इस पर घुण्डी वगैरह बनाते हैं।

खलपू (सं० त्रि०) खलं भूमिं पुनाति, पु-क्विप्। स्थान शोधनकारक, झाड़ू लगानेवाला।

खलप्रीति (सं० स्त्री०) खलस्य प्रीतिः, ६-तत्। दुर्जन व्यक्तिकी सन्तुष्टि, पाजीकी मुहब्बत।

"खलकी प्रीति यथा थिर नाहीं।" (तुलसी)

खलबल (हिं० पु०) १ हलचल, दौड़धूप, गड़बड़। २ कोलाहल, हल्लागुल्ला। ३ कुलबुलाहट, हिलाव डुलाव। ४ उबाल, खौलाहट।

खलबलाना (हिं० क्रि०) १ खलबल खलबल करना। २ उबलना, खदबदाना। ३ कुलबुलाना, चलफिर करना। ४ घबराना।

खलबली (हिं० स्त्री०) १ हलचल, धरपकड़, मारकाट। २ व्याकुलता, घबराहट। ३ उबाल।

खलमूर्ति (सं० पु०) खलइव अनिष्टकारकत्वात् उग्रा मूर्तिर्यस्य, बहुव्री०। पारद, पारा।

खलयज्ञ (सं० पु०) खलकर्तव्यो यज्ञः। यज्ञविशेष। खलियानमें यह यज्ञ किया जाता है।

(लाट्यायनश्रौ० ४।२।२५)

खलयूष (सं० पु०) खड़यूष, एक रसा।

खलल (अ० पु०) बाधा, अवरोध, रुकावट। पागलपनको 'खलल दमाग' कहा जाता है।

खलसा (हिं० स्त्री०) बृहत् मत्स्यविशेष, किसी किस्मकी बड़ी मछली। यह उत्तर भारत, आसाम और चीनमें उत्पन्न होती है। खलसा अधिक कण्टकाकीर्ण रहती और पानीसे निकलने पर भी थोड़ी देर तक नहीं मरती। खलसाका मांस रूक्ष और वातवर्धक है।

खलाजिन (सं० क्ली०) खलस्थितं अजिनम्, मध्यपदलो०। खलस्थित चर्म, खलका चमड़ा।

खलादि (सं० पु०) पाणिनिका एक वार्तिकोक्त गण। खल, डाक, कुटुम्ब, द्रुम, गो, रथ और कुण्डल शब्दोंको खलादि गण कहते हैं। इसके उत्तरको समूह अर्थमें इनि प्रत्यय होता है।

खलाधारा (सं० स्त्री०) खल आधारो यस्याः, बहुव्री०। तैलपायिका, तिलचट्टा।

खलाना (हिं० क्रि०) १ खाली करना, निकाल डालना। २ खोदना, गहराना। ३ तांबा पीतल दबा कर कटोरी जैसा करना। ४ पचकाना, फूले हुए हिस्सेको नीचेकी तर्फ दबाना।

खलार (हिं० वि०) खाली, गहरा, ऊंचा, नीचा।

खलारी—मध्यप्रदेशके रायपुर जिलेका एक कसबा। यह रायपुरसे ४५ मील उत्तरपूर्व पड़ता है। साधारणतः इस ग्रामको लोग 'खर्रौ खलारी' कहते हैं। यहां अनेक देवालय हैं। उनमें गांवके किलेके पास छोटे

तालाव पर जो शिवमन्दिर बना, प्रधान है। यह मन्दिर पूर्वद्वारी और तीन भागोंमें विभक्त हुवा है—अन्तराल, महामण्डप और अर्धमण्डप। इसके द्वार पर गणेशको मूर्ति है। मन्दिरकी नक्काशी वैसी न होते भी बनावट बहुत अच्छी है। इसी गांवमें दूसरा भी एक ऐसा ही छोटा मन्दिर है। यह दोनों मन्दिर ग्रेनाइट पत्थरके बने हैं। छोटे मन्दिरके शिवमूर्तिके पास पहुंचनेमें बाईं ओर सङ्गमरमरकी एक शिलालिपि खुदी हुई है। इसमें १४७० संवत् और १३३४ शक दो समय उल्लिखित हैं। उससे हैहयवंश और कलचुरि-वंश निर्णीत हो सकता है।

इसी खलारी गांवके पास पहाड़के नीचे चौरस जमीन पर प्रतिवर्ष चैत्रपूर्णिमाके दिन मेला लगता है। किसी सतीस्तम्भमें अच्छी तरह सिन्दूर चढ़ा रखते और यात्री उसको खलारीमाता जैसा पूजा करते हैं। कहते हैं कि उस दिन खलारी माता इत्यादि ले मेलामें बैठती और जो जो मांगता, दिया करती हैं।

खलाल (अ० पु०) चांदी, तांबे, पीतल आदि धातुका बना खरका, धातुको दन्तखोदनी।

खलाल (हिं० पु०) पूरी हार या मात। यह शब्द ताशके खेलमें अधिक व्यवहृत होता है।

खलास (अ० वि०) १ मुक्त, छूटा हुआ। २ समाप्त, खतम। ३ खारिज।

खलासी (अ० स्त्री०) १ मुक्ति, छुटकारा।

खलासी (हिं० पु०) १ जहाजी नौकर, नावका आदमी। पाल चढ़ाना, रस्से बांधना और ऐसे ही दूसरे काम करना खलासियोंका काम है। २ भृत्यविशेष, कोई नौकर। यह खेमा वगैरह लगाता और असबाब लाद ले जाता है।

खलि (सं० पु०) खल-इन्। १ तिलकिट्ट, खली। (भारत ३।१९८) २ तालमूल।

खलिद्रुम (सं० पु०) सरल देवदारु।

खलिन (सं० पु० क्ली०) खे अश्वमुखच्छिद्रे लीनम्, पृषोदरादित्वात् विकल्पे ह्रस्वः। १ लगाम, बागडोर। (त्रि०) २ आकाशलीन।

खलिनी (सं० स्त्री०) खलानां समूहः, खल-इनि-ए कन्यापत्य। पा ४।२।५१। १ खलसमूह, खलियानोंका ढेर। २ कृष्ण तालमूली।

खलियान (हिं० पु०) १ धान्यादि काटकर उनके रखनेका स्थान। खलियानमें अनाज मांडा और उड़ाया जाता है। २ राशि, ढेर।

खलियाना (हिं० क्रि०) १ खाल खींचना, चमड़ा उतारना। २ खाली करना।

खलिवर्धन (सं० पु०) मुखरोगान्तर्गत दन्तवेष्टक एक रोग, ममूड़ोंकी सूजन। कुपित वायु द्वारा वर्धित दांतोंमें अतिशय तीव्र वेदना उठनेका नाम खलिवर्धन है। यह रोग बिलकुल अच्छा नहीं होता। (भावप्रकाश)

खलिश (सं० पु०) खे आकाशे जलादूर्ध्वभागे लिशति, लिश क। मत्स्यविशेष, खलसा मछली। इसका संस्कृत पर्याय—कङ्कलोट, खलिशय, खलेश और खशेट है। इसमें कांटे बहुत और मांस कम होता है। साधारणतः लाटिन भाषामें इसको Trichopodus कहा जाता है। किन्तु इसके अनेकप्रकार भेद हैं। डे साहबने इसका Trichogaster नाम लिखा है। पानीसे निकाल लेने पर भी यह बड़ी देर तक जीया करती है। भारतके सिन्धु, पञ्जाब, युक्तप्रदेश, बङ्गाल, आसाम, ब्रह्मदेश, मन्द्राज, प्रान्त, सिंहल और चीन तक खलिश मिलता है। यह मामूली तौर पर ३॥ से ४॥ इञ्च तक लम्बा होता है। इसका श्वासयन्त्र छोटा रहता, किन्तु रीढ़के पास अधिक पुष्ट पड़ता है। मेरुदण्डके ऊपरीभाग और उसको विपरीत दिक्‌को एक बड़ा पक्ष या बाजू आता है। यही खलिशका अस्त्र है। पकड़ते समय यही कांटा लोगोंके हाथमें चुभ जाता है। इसके मेरुदण्डसे पेट तक तिरछी धारियां कटी होती हैं। रङ्ग मैला रहता है। धारियां कहीं काली और कहीं लाल लगती हैं। वैद्यकके मतानुसार यह ग्राही, कषाय, वातकोपकर, रूक्ष, लघु, शूलहर और कुछ कुछ आमविनाशक है।

खली—एकप्रकार पर्वताकार दानव जाति। इन दानव लोगोंने मानसरोवरके तीर देवताओंके यज्ञमें विघ्न डाला था, अतः ये वशिष्ठदेव कर्तृक निहत हुए। (भारत, अनु० १५५ अ०)

खली (हिं० स्त्री०) १ खलि, तेलहनकी सीठी। तेल निकल जाने पर यह बच रहती है। खली प्रायः दूध देनेवाली गायों और भैंसोंको भूसेके साथ घोलकर दी जाती है। इससे उनका दूध बढ़ता है। स्त्रियां खलीसे अपने बाल भी धोती हैं। काले तिलकी खलीका 'पीना' नाम है। उसे लोग सूखा ही खाया करते हैं। पीली सरसोंकी खली सबसे अच्छी होती है।

खलीकार (सं० पु०) खल-च्वि-कृ-घञ्। १ अपकार, बुराई, दूसरेका नुकसान। २ भर्त्सन, झिड़की।

खलीज (अ० स्त्री०) खात, खाड़ी।

खलीता (हिं० पु०) खरीता, जेब, थैली।

खलीफा (अ० पु०) १ अधिकारी, हाकिम, मालिक। २ वृद्ध पुरुष, बड़ा बूढ़ा। ३ दरजी। ४ खानसामा। ५ नाई। ६ पटेबाज। ७ मुसलमान राज्यमें सबसे उच्च पदवी। ६३२से १२५८ ई० तक खलीफा नाम-धारी जितने राजा हुए सबके नाम उनके राजत्वकाल-के साथ नीचे दिये हैं—

राजाका नाम	राजत्वकाल	
अबूबकर	६३२	ई०
उमर	६३४	,,
उसमान	६४४	,,
अली	६५६	,,
मुआविया	६६१	,,
यजीद	६८०	,,
मुआविया (२रे)	६८३	,,
मरान (१ले)	६८३	,,
अब्दुल मलिक	६८५	,,
वालिद	७०५	,,
सुलेमान्	७१५	,,
उमर इब्न् अब्दुल अजीज	७१७	,,
यजीद (२रे)	७२०	,,
हश्शाम	७२४	,,
वालिद (२रे)	७४३	,,
यजीद (३रे)	७४४	,,
मरान (२रे)	७४४	,,
अब्बास वंश		
अब्दुल्ला-उस्-शफा	७५०	,,
अबूजाफर अल मन्सूर	७५४	ई०
मुहम्मद अल मेहदी	७७५	,,
मूसा अल हादी	७८५	,,
हारून्-अल रसीद	७८६	,,
मुहम्मद अल आमीन्	८०९	,,
अब्दुल्ला अल मामून्	८१३	,,
कासिम अल मुतासिम	८३३	,,
हारून् अल वाकिफ	८४२	,,
जाफर अल मुतवक्किल	८४७	,,
(८४७से ८६० ई० तक तुर्की फौजके अत्याचारसे कोई खलीफा न हुआ)		
मुहम्मद अल मुनतसिर	८६१	ई०
अहमद अल मुस्तईन	८६२	,,
मुहम्मद अल मुमताज	८६६	,,
मुहम्मद अल मुहतादि	८६९	,,
अहमद अल मुतामिद	८७०	,,
अहमद अल मुताधीन्	८९२	,,
अली अल मुक्तफी	९०२	,,
जाफर अल मुतकादिर	९०७	,,
मुहम्मद अल कबीर	९३२	,,
अहमद अल रादी	९३४	,,
इब्राहीम अल मुतकी	९४०	,,
बोदी राजवंश		
अलमुफदहल अल मूती	९४४	,,
अब्दुल करीम	९७४	,,
अलहद अलकादर	९९२	,,
अब्दुल्ला अल कायम	१०३१	,,
सेलजुक वंश		
मुहम्मद अल मुतकादी	१०७१	,,
अहमद अल मुस्ताजिर	१०९४	,,
फदहल अल मुस्तरशीद	१११८	,,
मन्सूर-अल-रसीद	१११९	,,
मुहम्मद अल मुकतफी	१११९	,,
यूसुफ अल-मुस्तौजिद	११६०	,,
हुसेन अल मुसतादही	११७०	,,
अहमद अल नसर	११८०	,,

मुहम्मद जाहिर	१२२५	ई०
अबू जाफर अल मुस्तनजीर	१२२६	,,
अबदुल्ला अल मुस्तसिम	१२४२	,,

खिलाफत देखो।

खलीलाबाद—युक्तप्रदेशके बसती जिलेकी दक्षिणपूर्व तहसील। यह अक्षा० २६° २५´ तथा २७° ५´ उ० और देशा० ८२° ५०´ एवं ८३° १३´ के बीच पड़ता है। इसका क्षेत्रफल ५६४ वर्गमील और लोकसंख्या प्रायः ३८४६७५ है। खलीलाबादको कुवाना, अमी और कई एक छोटी नदियां पार करती हैं।

खलु (सं० अव्य०) खल् बाहुलकात् उन्। १ नहीं, खबरदार। (माघ २।७०) २ वाक्यालङ्कार पूर्वक, बात बनाके। ३ क्या। (गणरत्न) ४ कृपा करके, मिहरबानीसे। ५ नियमितरूपसे, सोच समझके। (किरातार्जुनीय १ सर्ग) ६ निश्चय, जरूर। (कुमार ४।२८) ७ अब, इस समय। खलु शब्द वाक्यका पाद पूरा करनेमें भी व्यवहृत होता है।

खलूज (सं० पु०) ख इन्द्रियं दर्शनेन्द्रियं लुञ्चन्ति हन्ति, ख-लुञ्च-क्विप्। अन्धकार, तारीकी, अंधेरा।

खलुरेव (सं० पु०) खलुरिष्यते वध्यते ऽसौ, रिष कर्मणि घञ्, सुप सुपेति समासः। मृगविशेष, किसी प्रकारका हिरन।

खलूरिका (सं० स्त्री०) शस्त्राभ्यासभूमि, व्यायामभूमि, अखाड़ा।

खलेकपोत (सं० पु०) खले पतन्तः कपोताः, अलुक्स०। खलमें पतित सकल कपोत, खलियानमें गिरनेवाले सारे कबूतर।

खलेकपोतन्याय (सं० पु०) खले कपोततुल्यो न्यायः, मध्यपदलो०। खलेकपोतिकान्याय, एक लागू मिसाल। खलियानमें सब कबूतरोंके एकबारगी ही उतर पड़नेकी तरह समुदय पदार्थको एक ही विषय पर ढाल देनेका नाम खलेकपोतन्याय है। न्याय देखो।

खलेकपोतिकान्याय, खलेकपोतन्याय देखो।

खलेधानी (सं० स्त्री०) खले धीयन्ते वृषभा अत्र, धा आधारे ल्युट्-ङीप्। १ खल पशुबन्धनदारु, खलियानमें बैल जोतनेका दांव। २ धूलि, गर्द।

खलेवाली (सं० स्त्री०) खले वाल्यन्ते चाल्यन्ते वृषभा यत्र, वल आधारे घञ्, गौरादित्वात् ङीप्। खलका गोबन्धनकाष्ठ, खलियानमें बैल बांधनेका वह खूंटा जिसकी चारो ओर उन्हें मंडाईके लिये घूम घूम कर चलना पड़ता है। (कात्यायनश्रौ० २२।३।४८)

खलेयव (सं० अव्य०) खले यवो यत्र काले, बहुव्री० तिष्ठद्गु प्रभृतिवत् समासः। खलस्थित यवके कालको, जब खलियानमें जौ पड़ा हो।

खलेल (हिं० पु०) तेलमें मिली हुई खली। यह निथारने या छाननेसे पृथक् होता है।

खलेबुस (सं० अव्य०) खले बुसमत्र काले, तिष्ठद्गु प्रभृतिवत् समासः। खलस्थित बुसके कालको, जब खलियानमें भूसा पड़ा हो।

खलेश (सं० पु०) खे जलादूर्ध्वाकाशे लिशति संश्लिष्यति क्विप्। खलिशमत्स्य, एक मछली।

खलेशय (सं० पु०) खलेशं जलादूर्ध्वाकाशसंसर्गं याति, या-क। खलिशमत्स्य, एक मछली।

खल्य (सं० त्रि०) खलाय हितम्, खल-यत्। खलयवमाषतिलवृषब्रह्मणश्च। पा ५।१।७। खलको उपकारक, खलियानके लिये अच्छा।

खल्या (सं० स्त्री०) खलानां समूहः, खल-यत्-टाप्। खलसमूह, खलियानोंका ढेर।

खल्ल (सं० पु०) खलति, खल-क्विप् तं लाति, खल्-ला-क। १ वस्त्रविशेष, किसी किस्मका कपड़ा। २ गर्त, गड्ढा। ३ चर्म, चमड़ा। ४ चातकपक्षी, पपीहा। ५ चर्मनिर्मित पात्र, मसक। ६ औषधमर्दनपात्र, खल, खरल। ७ वाजीके दन्तायका निम्नकक्षत्व, घोड़ेके दांतोंकी नोकके नीचेका कालापन। (जयदत्त)

खल्लकी (सं० स्त्री०) शर्करा, खांड़।

खल्लड़ (हिं० पु०) लटकी हुई खालका बुड्ढा आदमी।

खल्लड़ (हिं०) खल देखो।

खल्ला (हिं० पु०) १ खल, खलियान। २ जूता। ३ नाचनेकी एक चाल। इसमें पेट खाली समझ पड़ता है।

खल्ली (हिं० स्त्री०) जूती।

खल्लातक (सं० पु०) विन्दुसार राज्यके पहले मन्त्री।

खल्लासार (सं० पु०-क्ली०) ज्योतिषका कहा हुआ १०वां योग।

खल्लिका (सं० स्त्री०) खल्ल संज्ञार्थे कन्-टाप् अत इत्वञ्च। पिष्टकादि भर्जनपात्र, कड़ाही।

खल्लिट (सं० त्रि०) खल्ल-इन् खल्लि तद्वत् टलति, टल-ड खल्वाट, गञ्जा।

खल्लिश (सं० पु०) खल्लिशमत्स्य, एक मछली।

खल्ली (सं० स्त्री०) खल-क्विप् तं लाति, ला-क बाहुलकात् ङीष्। १ हस्तादिका शिरामोटन, हाथ वगैरह टेढ़े पड़नेकी बीमारी। त्रिकुट, सैन्धव, कड्ड, इमली और तेल एक साथ गर्म करके मलनेसे खल्लीरोग अच्छा हो जाता है। (भावप्रकाश) २ सरल देवदारु।

खल्लीट (सं० पु०) खल्लीव टलति, खल्ली-टल-ड। १ इन्द्र-लुप्तरोग, गञ्ज, बाल उड़नेकी बीमारी। (त्रि०) २ खल्वति, गञ्जा, जिसके सरके बाल उड़ गये हों। धर्मशास्त्रकार शातातपके मतमें जो दूसरेकी निन्दा करता, उसीके यह रोग लगता है। किन्तु धेनुदान करनेसे पापका प्रायश्चित्त हो जाता है। (शातातप)

खल्लीवर्धन (सं० पु०) दन्तवेष्टज-रोगविशेष, मसूड़ोंकी एक बीमारी।

खल्व (सं० पु०) खल्-क्विप् तं वाति, खल्-वा-क। १ धान्यधानभेद, किसी किस्मका धान। (वृहदारण्यक उ०) २ चणक, चना। (वाजसनेयसं० १८।१२) ३ इन्द्रलुप्तरोग, गञ्ज।

खल्वट (सं० पु०) कासरोग, खांसी।

खल्वाट (सं० पु०) खल्-क्विप् तं वटते वेष्टयते, वट्-अण्, उपपदस०। १ इन्द्रलुप्तरोग, गञ्ज। (त्रि०) २ इन्द्रलुप्तरोगयुक्त, गंजा। कहते हैं—खल्वाट प्रायः निर्धन नहीं होता।

खल्वालिका (सं० स्त्री०) नाभिगड़ु।

खवल्ली (सं० स्त्री०) खे आकाशे शून्ये वल्ली, ७-तत्। आकाशवल्ली, अमरबेल। यह ग्राही, तीती, पनकुट, कसैली, भूख बढ़ानेवाली, हृद्य और पित्त तथा श्लेष्माका दूर करनेवाली है। (भावप्रकाश)

खवा (हिं० पु०) स्कन्ध, कन्धा।

खवाई (हिं० स्त्री०) १ भोजनव्यापार, खाने पीनेका काम। २ नावमें मस्तूल लगानेका गड्ढा।

खवाना (हिं० क्रि०) खिलाना, भोजन देना।

खवारि (सं० क्ली०) खे आकाशे स्थितं वारि, ७-तत्। आन्तरिक्षोदक, बादलका पानी।

खवास (अ० पु०) एक हिन्दू जाति। राजपूतानेमें नाईको 'खवास' कहा जाता है। परन्तु यह शब्द 'खास'का बहुवचन जैसा लगता और प्रधान भृत्यका अर्थ रखता है।

खवास खान्—सलीम शाहके एक मातहत अमीर। यह धन, मान, वीरत्व और युद्धकौशलके लिये विख्यात थे। इन्होंने बादशाहके विरुद्ध अपने भाई आदिल शाहका पक्ष लिया और बहुतसे स्थानोंमें विताड़ित होने पर अन्तको सम्भलके शासनकर्ता ताजखान्के पास जाकर आश्रय ग्रहण किया। १५५१ ई०को ताज-खान्ने सलीम शाहको खुश करनेके लिये बहुत बुरी तरहसे इनको मार डाला। पीछे इनका देह दिल्लीको भेजा और वहीं गाड़ा गया। मुसलमान तीर्थयात्री आज भी खवासकी कब्र देखने जाते और इन्हें साधु-पुरुष-जैसा बतलाते हैं।

खवासी (हिं० स्त्री०) १ खवासगरी, खासबरदारी, नौकरी, चाकरी।

खवास्प (सं० पु०) खस्य आकाशस्य वास्पः, ६-तत्। हिम, ओस।

खवी (हिं० स्त्री०) तृणविशेष, किसी किस्मकी घास। यह अगिया घास-जैसी रहती और महका करती है। इसकी लम्बी पत्तियोंका तेल दवामें डाला जाता है। खवी प्रायः रेतीली जमीन्में उपजती है। इसका पञ्जाबी नाम 'घटियारी' है।

खवैया (हिं० पु०) आहारकर्ता, खानेवाला। अधिका-धिक खानेवालेको 'खवैया वीर' कहते हैं।

खश (हिं०) खस देखो।

खश—१ जनपदविशेष, एक देश। मनुसंहिता प्रभृति ग्रन्थोंमें किसी स्थान पर तालव्ययुक्त और कहीं दन्त्य-सकारयुक्त यह शब्द आया है। उसीसे आभिधानिक लोग दोनोंको स्वीकार करते हैं। वृहत्संहिताके कूर्म-विभागमें लिखा है कि वह पूर्वदिक्‌को बसा है। महा-भारतके मतमें यह स्थान आरट्ट-जैसा भ्रष्टाचारसम्पन्न है। (कर्णपर्व)

खश—वर्तमान गढ़वाल और तिब्बतके नारीखोरसूम जिलेके बीचमें रहा। २ खश देशके अधिपति, राजा। ३ कोई जाति। मनुके मतमें व्रात्यक्षत्रियोंसे खश लोगोंकी उत्पत्ति है। ब्राह्मणादर्शनप्रयुक्त इन्हें वृषलत्व प्राप्त हुवा है। (मनु १०।२२·४०)

हरिवंशमें लिखा है कि महाराज सगरने उन्हें पराजय किया था। (हरिवंश १४ अ०)

महाभारतमें लिखते हैं कि उन्होंने महाराज युधिष्ठिरको पैपीलिक सोना उपहार दिया था।

काश्मीरकी राजतरङ्गिणीमें कहा है—मिहिरकुलके समय नरपुरमें खश रहते थे। राजा क्षेमगुप्तने उन्हें ३६ गांव दे डाले। काश्मीरकी अधीश्वरी दिद्दा खश लोगों पर विशेष अनुग्रह रखती थीं। किसीके मतमें दिद्दा महारानी भी खशवंशसम्भूता हो रहीं।

इन लोगोंमें भी कहीं कहीं प्रवाद है—जब परशुराम क्षत्रिय वधको उद्यत हुए, हम लोग जल्पीश हो कर हिमशृङ्ग पर जा बसे।

आजकल यह लोग नेपालराज्यमें रहते और अपनेको क्षत्रिय-जैसा समझते हैं। सभी खश सनातनधर्मावलम्बी हैं और ब्राह्मणको विशेष श्रद्धा-भक्ति करते हैं। नेपालके ब्राह्मण भी बहुत दिनोंसे इनकी लड़कियोंके साथ विवाह करते चले आते हैं। ब्राह्मणके औरस और खश-रमणीके गर्भसे जन्म लेनेवाला पुत्र भी द्विजोचित संस्काराधिकारी क्षत्रिय-जैसे परिचित होते हैं। वह ब्राह्मणोंका गोत्र ग्रहण किया करते हैं। खश शुद्धाचारी है। नेपालका अधिक सैन्य खश-जातीय ही है। यह चतुर, कार्यकुशल, परिश्रमी, बलिष्ठ, साहसी और युद्धप्रिय होते हैं। इनके देहका गठन न तो बहुत स्थूल और न कृश ही है। यह कोई शिल्पकर्म करना नहीं चाहते, किन्तु कुछ लोग कभी कभी खेतीमें लग जाते हैं।

अब खश लोगोंको व्रात्यक्षत्रिय नहीं बतलाया जा सकता। क्योंकि आजकल यह यथाकाल उपनयन ग्रहण करते और नेपालके ब्राह्मण इन्हें क्षत्रिय-जैसा समझते हैं।

नेपालमें 'एकथरिया' नामकी कोई जाति है। राजपूत या दूसरे क्षत्रियोंके औरस और खशकन्याके गर्भसे एकखरिया निकले हैं। यह पिताका गोत्र तो पा जाते, किन्तु क्षत्रिय हो नहीं सकते। फिर भी एकखरिया दो पीढ़ी तक खशोंके साथ आदान प्रदान करने पर खश-जैसे परिचित होते और क्षात्रिय लोगोंका कार्य करनेसे रोके नहीं जाते।

कुमाऊं, गढ़वाल और तिब्बतके दक्षिण अंशमें बीच बीच खश लोग देख पड़ते हैं। तिब्बतके निकट रहनेवाले आधे हिन्दू और आधे बौद्ध होते हैं। इनकी बोली हिन्दी भाषाका ही अपभ्रंश है। खासिया देखो।

खशब्दाङ्कुर (सं० पु०-क्ली०) वैदूर्यमणि, लहसुनिया।

खशरीरी (सं० त्रि०) खशरीरं आकाशरूपशरीरमस्य अस्ति, खशरीर-इनि। खमूर्तिमान्।

खशा (सं० स्त्री०) खश-टाप्। १ मुरामांसी, एक खुशबूदार चीज। २ दक्षकी कन्या। यह कश्यपकी पत्नी और यक्ष तथा रक्षोगणकी जननी थीं। (गरुड़पु० ६ अ०)

खशीर (सं० पु०) १ देशविशेष, कोई मुल्क। २ खशीर देशवासी। ३ खशीर देशके राजा (भारत ११९ अ०)

खशेट (सं० पु०) खं शेटति, शिट् अनादरे अण्। खलिस मत्स्य, एक कांटेदार मछली।

खश्वास (सं० पु०) खस्य आकाशस्य श्वास इव। वायु, हवा।

खष्प (सं० पु०) खन्-प निपातनात् नस्य षः। क्रोध, गुस्सा। २ बलात्कार, जबर्दस्ती। (सिद्धान्तकौमुदी)

खस (सं० पु०) खानि इन्द्रियाणि स्यति निश्चलीकरोति, सो-क। १ पामा, खुजली। २ देशविशेष, कोई मुल्क। ३ व्रात्यक्षत्रियजातिविशेष। खश देखो। ४ वीरणमूल।

खस (फा० स्त्री०) वीरणमूल, गाडरघासकी खुशबूदार जड़। यह ब्रह्मदेश, भारत और सिंहलमें मैदानों और पहाड़ियोंमें नदियों तथा पुष्करिणियोंके तट पर अधिक उत्पन्न होती है। ग्रीष्मकालको गृहादि शीतल रखनेके लिये इसकी टट्टियां द्वारोंमें लगा देते हैं। खसके पंखे भी बनाये जाते हैं। इसके पनवसनेमें पान रखनेसे महंकने लगते हैं। खसका अतर भी गर्मीके दिनों बहुत अच्छा लगता है। इसको पीस कर मत्थे पर लेप देनेसे पागलपन अच्छा हो जाता है। उशीर देखो

खसकंत (हिं० स्त्री०) खसकाई, खसक जानेकी क्रिया।

खसकना (हिं० क्रि०) १ सरकना, हटना, जगह छोड़ देना। २ चुपकेसे चल देना।

खसकन्द (सं० पु०) खस इव कन्दोऽस्य, बहुव्री०। १ चोरीशवृक्ष। २ वराहीकन्द। ३ क्षीरकञ्चुकी वृक्ष।

खसकाना (हिं० क्रि०) १ सरकाना, हटाना। २ चुपकेसे निकालना। ३ खसकानेका काम कराना।

खसखस (फा० स्त्री०) पोस्ताका दाना। यह सरसोंसे भी छोटा और सफेद होता है। खसखसकी ठण्डाईमें डाल कर पीते हैं। खसतिल देखो।

खसखसा (हिं० वि०) १ भुरभुरा, मुलायम, मुंहमें डालनेसे अपने आप चूर चूर हो जानेवाला। २ बहुत ही छोटा।

खसखाना (फा० पु०) खसकी टट्टियोंका मकान, जिस घरमें बहुतसी खसकी टट्टियां लगी हों।

खसखेली—भावलपुरकी राजसभाका एक वंश।

खसगन्ध (सं० पु०) क्षीरकञ्चुकी।

खसतिल (सं० पु०) खसः खसपूय इव तिलति स्निह्यति गात्रक्लेदत्वात्, तिल स्नेहे क। खसखस, पोस्त। भावप्रकाशके मतमें तिलभेद, खसतिल और खाखस—पोस्तेके दानेके तीन नाम हैं। इसकी छाल शीतवीर्य, लघु, धारक, तिक्त तथा कषायरस, वायुवृद्धिकर, मोहजनक, रुचिकारक, कफघ्न, कासनाशक, धातुशोषक, रूक्ष, मदकारक, वाक्यवृद्धिकर और अधिक खानेसे पुरुषत्वनाशक होती है। इसके फलका दूध अफीम कहलाता है। अफीम शोषणकारी, धारक, कफनाशक, वायुवृद्धिकारी, पित्तवर्धक और खस फलके वल्कल तुल्य गुणविशिष्ट है। (भावप्रकाश)

खसना (हिं० क्रि०) सरकना, अपने आप नीचेको छट जाना। "खसी माल मूरति मुसकानी।" (तुलसी)

खसनोब (फा० पु०) किसी किस्मका गन्धाविरोजा। यह शीराजसे आया करता है।

खसफल (सं० क्ली०) खसखस, पोस्त, अफीमकी ढोंड़ा।

खसफेनक्षीर (सं० क्ली०) अहिफेन, अफयून।

खसम (अ० प०) १ खाविन्द, भर्तार। २ मालिक, खामी।

खसम्भवा (सं० स्त्री०) खे सम्भवति, सम्-भू-अच्। आकाशमांसी, सूक्ष्म जटामांसी।

खसरा (अ० पु०) १ क्षेत्रपत्रविशेष, खेतका एक कागज। इसमें पटवारी हरेक खेतका नम्बर रकबा, लगान, असामीका नाम वगैरह लिखता है। २ कच्चा चिट्ठा।

खसरा (हिं० पु०) कच्छूभेद, किसी किस्मकी खुजली। इसमें बड़ी तकलीफ होती है।

खसर्प (सं० पु०) खे वन्धनच्छेदेन ऊर्ध्वदेशे सर्पणमस्य, बहुव्री०। बुद्ध। बुद्ध देखो।

खसर्पणवटी, खर्परवटी देखो।

खसलत (अ० स्त्री०) खासियत, प्रकृति, स्वभाव।

खसवक्त्र (सं० पु०) अंकुश, लुकाट।

खसबीज (सं० क्ली०) खसखस, पोस्तेका दाना। यह वृष्य, वृष्य गुरुर, कफकर और वातशमन होता है। (भावप्रकाश)

खसा (सं० स्त्री०) कश्यपपत्नी।

खसात्मज (सं० पु०) खसायाः कश्यपपत्न्याः आत्मजः, ६-तत्। राक्षस।

खसाना (हिं० क्रि०) खिसकाना, गिराना, नीचेको धकियाना।

खसिन्धु, (सं० पु०) चन्द्र, चांद।

खसिया (हिं० वि०) १ बधिया, खस्सी। २ नपुंसक, नामर्द। (पु०) ३ छाग, बकरा।

खसियाना (हिं० क्रि०) बधिया बनाना, नपुंसक कर डालना।

खसीस (अ० वि०) कृपण, कञ्जूस।

खसीसी (फा० स्त्री०) कार्पण्य, बखीली, कञ्जूसी।

खसूम (सं० पु०) खे आकाशे सरति गच्छति, सृ-मक्। विप्रचित्ति दानवका पुत्र। (गरुड़पु० ६ अ०)

खसोट (हिं० स्त्री०) १ बुरी नोचाई, झिटकेकी तोड़ाई। २ छीन, झपट।

खसोटना (हिं० क्रि०) १ नोचना, हाथके झिटकेसे तोड़ना। २ छीन लेना।

खस्खस (सं० पु०) खस प्रकारे द्विर्वचनं पृषोदरादिवत् अकारलोपः। खसतिल, पोस्ताका पेड़। यह पाकमें मधुर और कान्ति, वीर्य तथा बलप्रद है। (राजनिघण्टु)

खखसरस (सं० पु०) अहिफेन, अफीम।

खस्तनी (सं० स्त्री०) खं आकाशः स्तन इव यस्याः, बहुव्री०। पृथिवी, जमीन्।

खस्ता (फा० वि०) भुरभुरा, खूब मोवन डाल कर सेंका हुआ।

खस्फटिक (सं० पु०) खमिव निर्मलः स्फटिकः। १ सूर्यकान्तमणि, आतशी शीशा। २ चन्द्रकान्तमणि, आबी शीशा।

खस्वस्तिक (सं० क्ली०) खं ऊर्ध्वोर्ध्व स्थित आकाशः स्वस्तिकमिव। समसूत्रपातमें मस्तकोपरिस्थ आकाश विभाग, खोपड़ीके ठीक ऊपरका आसमान। यह एक माना हुआ विन्दु है, जो आकाशमें शिरके ऊपर पड़ता है। इसे शीर्षविन्दु भी कहते हैं।

खस्सी (अ०) खसिया देखो।

खहर (सं० पु०) खं शून्यं हरो यस्य, बहुव्री०। शून्यहारकराशि, खाली बटेकी अदत। जिस राशिका हर शून्य आता, खहर कहलाता है। इसका दूसरा नाम अनन्त है। कोई दूसरा राशि घटाने या मिलानेसे खहर नहीं घटता बढ़ता, एक ही-जैसा बना रहता है, जैसे— $\frac{२}{०}$ खहरराशिके साथ २ वियोग किंवा योग करनेसे वह अविकृत ही निकलेगा ($\frac{२}{०}+\frac{२}{१}=\frac{२}{०}+\frac{०}{०}=\frac{२}{०}$, $\frac{२}{०}-\frac{२}{१}=\frac{२}{०}-\frac{०}{०}=\frac{२}{०}$) (बीजगणित) गणित देखो।

खा (सं० वि०) खन-विट् आत्व। जनसनखनक्रमोगम विट्। पा ३।२।६७। खननकर्ता, खोदनेवाला।

खाँ (सं० स्त्री०) नदी, दरया।

खाँ (फा० पु०) १ सम्भ्रान्त लोगोंका उपाधि, खान, बड़े आदमियोंका खिताब। २ मण्डलेश्वर, कई गांवोंका मुखिया। ३ मुसलमानोंको सम्मानसूचक पदवी।

तुर्किस्थान और सारे एशियाखण्डमें यह खिताब चलता है। मध्यएशियामें तातार लोगोंने सबसे पहले खाँ उपाधि ग्रहण किया था। किसीके मतमें चङ्गेज खाँने यह खिताब निकाला। तुर्किस्थानके सुलतान चीनके राजा और ईरानके अमीर उमरा ही इस पदवीको ले सकते हैं। बलूचिस्तान और अफगानस्तानके सभी अधिनायक खाँ उपाधि लिया करते हैं। विशेषतः अफगान इसको अपना खानदानी खिताब बतलाते हैं। इसलिये वहां जन्म लेते ही लोग खाँ कहलाने लगते हैं। मुसलमान बादशाहोंकी अमलदारीमें भारतको सभी जातियोंके बीच जो ऊंचे राजकर्मचारी थे, उनमें कितनों ही ने यह उपाधि पाया था।

खाँ (कान) मालवकी एक नदी। यह अक्षा० २२° २६´ उ० और देशा० ७५° ५५´ पू०में विन्ध्यपहाड़के उत्तर अंशसे निकल सरस्वती नदीको जा मिली है। फिर अक्षा० २३° ८´ उ० और देशा० ७५° ५०´ पूर्वमें उज्जैनके पास शिप्रानदीके साथ भी इसका मिलान हुआ है। इस नदीमें आने जानेका बड़ा सुभीता है।

खाँ आलम्—१ बादशाह अकबरके एक सेनापति। इन्होंने दिल्लीसे २००० फौजके साथ जा कर पटनाके पास हाजीपुरका किला घेरा और उसे जीता था।

२ कोई अमीर। इनका पूरा नाम मिर्जा बरखुर्दार था। इन्होंने मुगलबादशाह शाहजहान्‌के नीचे पांच हजारी दरजा पाया, फिर सम्राट् आलमगीरके सलतनत करते छहहजारी और विहारके सूबेदार हो गये। जिन्दगीके आखीर वक्त इन्हें बादशाहसे १ लाख रुपया सालाना मिलता था। आखिरकार उनके जहर देनेसे यह मर गये। आगरा शहरमें यमुना किनारे इनको ४० बीघे एक फुलवाड़ी लगी है।

३ शेख निजामके बेटे। इसका असली नाम अखलास खाँ था। बादशाह आलमगीरने १६९८ ई०को इन्हें पांच हजारी दरजा और 'खाँ आलम' खिताब दिया। १६९८ ई०को यह छह हजारी हुए। सम्राट् आलमगीरके मरने पर इन्होंने बहादुरशाहके बदले उनके भाई आजम शाहको तख्त पर बैठानेकी कोशिश की थी। १७०७ ई०को लड़ाईमें यह मारे गये।

खाँई (हिं० स्त्री०) खाई, किसी बागको चारो ओर उसके बचावके लिये खोदा हुआ गहरा गड्ढा।

खाँख (हिं० स्त्री०) १ छिद्र, छेद। २ छितरो बिनाई। ३ खोख, पोलापन।

खाँखर (हिं० वि०) १ छिद्रयुक्त, फूटा, जिसमें छेद हों। २ दूर दूर बुना हुआ। ३ खाली, पोला। ४ सूखा, खड़ खड़ानेवाला।

खाँ खानान्—दिल्ली सरकारके सबसे बड़े वजीरका एक पुराना खिताब। बहराम खां और उनके लड़के खाँ मिर्जाको यह उपाधि मिली थी। बहराम खां देखो।

खांग (हिं॰ स्त्री॰) १ कांटा, खाट। २ तीतर आदि जानवरोंके पैरका कांटे-जैसा नाखन। ३ गैंड़ेका सींग। ४ जङ्गली सूअरका बड़ा दांत। यह मुंहसे बाहर निकल आता है। ५ खुरपका, सुममें जख्म आनेकी बीमारी। ६ सांड़की तीखी बोली। गुस्सा आनेसे सांड़ खांगता है। ७ अभाव, कमी।

खांगड़ (खान्गढ़)—पञ्जाबप्रदेशके मुजफ्फरगढ़ जिलेका एक नगर। यह अक्षा॰ २९° ५५´ उ॰ और देशा॰ ६७° १०´ पू॰में सिन्धुको जानेवाली सड़क पर चेनाबसे ४ मील पश्चिम पड़ता है। यह मुजफ्फरगढ़ नगरसे ५॥ कोस दक्षिण और चन्द्रभागानदीके वर्तमान गर्भसे २ कोस दूर पड़ता है। यहां एक बड़ा थाना है। लोकसंख्या कोई ४ हजार निकलेगी।

मुजफ्फर खांकी बहन खान बीबीने इसको निर्माण किया था। इसकी चारो ओर प्राचीर लगा है। गत शताब्दीकी आरम्भ काल यह एक अफगान अड्डा था। १८४९ ई॰को अङ्गरेजी राज्यमें मिलने पर खानगढ़ जिलेका सदर बना, परन्तु १८५९ ई॰को चेनाबमें बाढ़ आने पर छोड़ना पड़ा। १८७३ ई॰का यहीं म्युनिसपालिटी बैठी। खानगढ़की जमीन बहुत अच्छी और खूब खेती होती है।

शहरकी चारो तर्फ पेड़ोंसे लहलहाती उपजाऊ भूमि है। खेतीका काम खूब होता है। शहरके घर अधिकांश पक्के हैं। बीचसे अच्छीसी राह निकल गयी है। खांगड़में समाजकी मण्डी, औषधालय, सराय और स्कूल मौजूद है।

खांगड़ (हिं॰ वि॰) १ खांग रखनेवाला, खांगी। २ मुसल्ह, हथियारबन्द। ३ बलशाली, ताकतवर। ४ उद्दण्ड, अक्खड़, मनचला।

खांगड़ा (हिं॰) खांगड़ देखो।

खांगना (हिं॰ क्रि॰) १ लंगड़ाना, पांवमें जख्म होनेसे अच्छी तरह चल न सकना। २ घटना, कम पड़ना। ३ जोर जोरसे बोलना।

खाँगी (हिं॰ स्त्री॰) १ कमी, घटती। (वि॰) २ खांगड़।

खाँगी—बम्बई-प्रान्तके बड़ोदा राज्यका एक उपविभाग। पहले इस उपविभागके ग्राम पृथक् राज सम्पद् रहे।

खाँगी—एक हिन्दूजाति। यह लोग युक्तप्रान्तस्थ रुहेलखण्डमें रहते और खेती किया करते हैं। "खांगी" शब्द 'खड्गी' का अपभ्रंश-जैसा समझ पड़ता है। पूर्वकालको यह तलवार बजाते थे। खांगी अपनेको चौहान राजपूत समझते हैं। इनके १२५ भेद तक मिलते हैं।

खांच (हिं॰ स्त्री॰) १ सन्धि, जोड़। २ गठन, बनावट।

खांचा (हिं॰ पु॰) १ झावा, बड़ा टोकरा। यह पतली पतली टहनियोंसे बनाया जाता है। २ बड़ा पिंजड़ा। ३ खन्दक, गड्ढा।

खाँ जमान् (हैदर) सुलतान उजबकके लड़के। यह बादशाह हुमायूंके हाथ नीचे काम करते थे। इनका असली नाम अलीकुली खाँ रहा। सम्राट् अकबरने इनके काम पर खुश हो जौनपुर और उसके दक्षिणी प्रदेश जागीरकी तौर पर दिये थे। आखीरको यह और इनके भाई बहादुर खाँ दोनोंने बलवा खड़ा किया। १५६७ ई॰के जून महीने बादशाहने लड़ कर उन्हें मार डाला।

२ आज़िम खांके बेटे और आसफ खाँ जाफरबेगके भतीजे। इनका असली नाम मीर खलील था। यह बादशाह शाहजहान्के नीचे काम करते रहे। आलमगीर बादशाहने इन्हें पांचहजारीका दर्जा दिया। फिर यह जिन्दगीके आखीर वक्त मालवके सूबेदार बनाये गये और १६८४ ई॰को वहीं इस दुनियासे चल बसे।

(फतेहजङ्ग) ३ हैदराबादके सूबेदार अबुल हुसेनके कोई अधीनस्थ कर्मचारी। इनका प्रकृत नाम शेख निजाम हैदराबादी था। बादशाह आमलगीरके नीचे काम करते वक्त यह शिवजीके पुत्र शम्भुजीको पकड़ कर ले गये थे। उसीसे सम्राट्ने इन्हें सातहजारी दर्जा और खाँ जमान् फतेहजङ्गका खिताब दिया। १६९६ ई॰को यह मर गये।

(बहादुर) ४ महावत खाँ जमाना बेगके लड़के।

इनका असली नाम अमानउल्‌ला था। बादशाह जहान्‌गीरने इन्हें बङ्गालका सूबेदार बना कर भेजा, फिर उन्होंने इनको पांचहजारी ओहदा और खां जमान् बहादुर खिताब दिया। यह एक अच्छे कवि रहे। मुख्‌तलिफ मुल्कोंके मुसलमान बादशाहोंका हाल इकट्ठा कर 'मजमूआ' नामकी एक किताब इन्होंने फारसी जबान्‌में लिखी है। १६३७ ई०को इनका मृत्यु हुआ।

खां जहान्—अकबर बादशाहके एक पांच-हजारी अमीर। इनका नाम हुसेन कुलीबेग था। १५७६ ई०को यह बङ्गालके सूबेदार बनाये गये। इन्होंने दाऊद खां बलवाईकी लड़ाईमें हरा कर पकड़ लिया और उसका शिर उतार आगरेमें बादशाहके पास भेज दिया। १५७८ ई०को टांडामें इनका मृत्यु हुआ।

खां जहान् अली—एक मुसलमान। यह बङ्गालके सूबेदार महमूदशाह सुलतानके समकालवर्ती थे। बागेरहाट अञ्चलके खलीफताबादमें इस प्रकारका प्रवाद प्रचलित है वह गौड़के शासनकर्ता हुसेन बादशाहके मरफल बरदार थे। इनका प्रकृत नाम किशवर खां था। नवाब इनको बहुत चाहते थे। उन्होंने इनको सुन्दरवन आबाद करने भेजा और वहां रह कर इन्होंने बहुत रुपया कमाया। किसी रोज नींदमें इन्होंने स्वप्न देखा कि परमेश्वर उनसे सत्कार्य करने और खाञ्जाली पद लेनेको कहते थे।

खां जहान् अली सुन्दरवन आबाद करने जा अपनी बहुतसी कीर्तियां छोड़ आये हैं। साठ गुम्बज नामकी इनकी बनायी एक बड़ी मसजिद है। उसका भीतरी दालान १४४ फुट लम्बा और ९६ फुट चौड़ा है। मसजिदका मुंह पूर्वको ओर है और ११ दरवाजे लगे हैं। लोगोंके साठगुम्बज कहते भी इसमें ७७ गुम्बज बने और ६० खंभे खड़े हैं। खां जहान् अलीको बनायी दूसरी मसजिद है। वह ४७ फुट ऊंची उठी है। ऊपरी गुम्बज बहुत बड़ा है। यहीं मृत्युके पीछे खांजाली गाड़े गये। कब्र पर चार अरबी और एक फारसी भाषामें शिलालिपियां खुदी हैं। उसमें लिखा है कि १४५८ ई०को उलघ खां जहान् अलीने दुनियाको छोड़ा। यशोहरके लोग इन्हें पीर-जैसा मानते हैं। प्रति वर्ष मुसलमान इस मसजिदमें खां जहान् अलीकी कब्र देखने जाते हैं। सिवा इसके कपोताक्षनदीतीरकी आमादी गांवकी मसजिद और गम्भकेशवपुरके पास इनकी कृत अनेक कीर्तियां हैं। इन्होंने बागेरहाट नदी किनारेसे साठगुम्बज और सुन्दरवनसे चट्टग्राम तक एक पक्की सड़क बनवा दी थी।

पीर अली देखो।

खां जहान् कोकलतास—एक अमीर। यह सम्राट् आलमगीरके धात्रीपुत्र थे। इनका दूसरा नाम मीर मालिक हुसेन था। १६७० ई०को यह दक्षिणके सूबेदार बनाये गये। १६७४ ई०को बादशाहने इन्हें सातहजारी ओहदा और 'खां जहान् बहादुर कोकलतास जाफर जङ्ग' खिताब दिया था। १६९७ ई०को इनका मृत्यु हुआ। इन्होंने 'तारीख आसाम' (आसामका इतिहास) नामकी एक किताब फारसी जबान्‌में लिखी है।

खां जहान् जाफरजङ्ग—जहान्‌दार शाहके धात्रीपुत्र। इनका असली नाम अलीमर्द था। बादशाह बहादुर शाहने इन्हें 'कोकलताश खां' खिताब दिया। जब जहान्‌दार शाह दिल्लीके तख्त पर बैठे उन्होंने अपने धर्मके भाई अलीमर्दको नौहजारी ओहदा, 'खां जहान् जाफर जङ्ग' खिताब और मीरबख्शीका काम सौंपा था। किन्तु यह ऊंचा दरजा ज्यादा दिन न चला, १७१३ ई०को जहान्‌दार शाहके साथ होनेवाली फर्रुखसियारकी लड़ाईमें यह मारे गये।

खां जहान् बाड़ा—एक मुसलमान ओहदेदार। इनका दूसरा नाम सैयद मुजफ्फर खां था। सम्राट् शाहजहान्‌की अमलदारीमें इन्हें छह-हजारी ओहदा मिला। १६४५ ई०को लाहोरमें इन्होंने प्राणत्याग किया।

खां जहान् मकबूल—दिल्लीसम्राट सुलतान फीरोजशाह बारबकके बड़े वजीर। इनका खिताब 'करीमउल्-मुल्क' था। यह जातिके हिन्दू रहे। मुसलमान होने पर इनका नाम सुलतान मुहम्मदने खां जहान् मकबूल रखा और सुलतानका सूबेदार बना दिया। फिर यह नायब वजीर हुए। सुलतान मुहम्मदके मरने पर जब

सुलतान फीरोज दिल्ली पहुंचे, इन्होंने उनकी बड़ी मदद की थी। फीरोजने खुश हो इन्हें अपना वजीर कर दिया। कहते हैं कि १३७४ ई०को उनका मृत्यु हुआ।

खाँ जहान् लोदी—सम्राट् जहांगीर बादशाहके एक सैनिक कर्मचारी। यह जातिके अफगान थे। कोई इन्हें सुलतान बहलोल लोदी और कोई दौलत खान् लोदीका वंशधर बतलाता है। इन्होंने पञ्चहजारी ओहदा पाया था। जहान्गीरके लड़के सुलतान परवेजके साथ यह दक्षिणके सिपहसालार हो कर गये। परवेजके मरने पर भी खाँ जहान् सेनापति हो बने रहे। शाहजहां के दिल्लीके तख्त पर बैठनेसे इन्होंने आजाद होनेकी कोशिश की। १६२१ ई०को इनसे दिल्लीकी फौज लड़ी थी। इस युद्धमें खाँ जहान् अपने लड़कोंके साथ मारे गये और दोनोंके सर भेंटकी तौर पर बादशाह शाहजहान्के पास दिल्लीको प्रेरित हुए।

खाँजादा—राजपूतानेका एक मुसलमान सम्प्रदाय। यह लोग अलवर और जयपुरमें रहते हैं। इनकी पैदायशके बारेमें बड़ी गड़बड़ है। अबुल फजलके मतमें यह मेवाड़के अधिपति जनूहा राजपूतोंके वंशमें जन्म लिया था। बहुतोंकी रायमें दिल्ली-सम्राट् फीरोज शाह तुगलकके अत्याचारसे मेवाड़के जो राजा मुसलमान हो गये थे, खाँजादे उन्हींकी औलाद हैं।

ई० १६वें शताब्द तक यह मेवात राज्य शासन करते रहे। १५२८ को बाबरसे लड़ाई होनेपर इन्होंने राजपूतोंका पक्ष लिया था। सामाजिकतामें यह अपने आपको वहांके दूसरे मुसलमानोंसे ज्यादा इज्जतदार समझते हैं।

इनका चाल चलन देखनेसे भी समझ पड़ता, किसी समय वह हिन्दू रहे। यह हिन्दुओंके किसी धर्मोत्सवमें शामिल न होते भी शादियोंमें आते जाते और हिन्दुओंकी ही तरह अपनी शादियां रचाते हैं और ब्राह्मण भी इनकी शादियोंके वक्त बहुतसे काम चलाते हैं।

इनकी हालत वैसी अच्छी नहीं है। बहुतसे अलवर रियासतकी फौजमें भर्ती हैं। कोई कोई ब्रटिश गवर्नमेण्टके नीचे भी फौजमें काम करता है। दूसरोंको मामूली खेतीसे गुजर है। खाँजादे लड़कियोंको कभी खेत पर नहीं भेजते। मेवात देखो अयोध्या, लखनऊ वगैरह जगहोंमें भी एक प्रकारके खांजादा मुसलमान रहते हैं।

खांड़ (हिं० स्त्री०) खण्ड, कच्ची शक्कर।

खांड़ा (हिं० पु०) १ खड्ग, तलवार, छुरा। २ खण्ड, टुकड़ा। विशेषतः चतुर्थांशको 'खांड़ा' कहा जाता है।

खांड़िया—बम्बई-प्रान्तके काठियावाड़ जिलेका पृथक् कर देनेवाला एक ताल्लुका। इसमें केवल खांड़िया गांव ही लगता है। ताल्लुकदार लिम्बडीके भयाद और झाल राजपूत हैं। लोकसंख्या प्रायः ७८१ होगी।

खांड़ेरी—बम्बई प्रान्तीय कुलाबा जिलेके अलीबाग ताल्लुकका एक क्षुद्र द्वीप। यह अक्षा० १८° ४२´ ३० और देशा० ७२° ४८´ पू०में बम्बई बन्दरके निकट अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः १३० होगी। यह टापू डेढ़ मील लम्बा और आध मील चौड़ा है। १८६७ ई०को यहां एक आलोकगृह बनाया गया।

१६७९ ई०को शिवजी कोई ३०० सिपाही और उतने ही मजदूर साथ हथियारों और सामानके खांडेरी भेज उतरनेकी जगहों पर कंगूरे बनाना शुरू किया था। इस पर अंगरेजों और पोर्तगीजोंने आपत्ति की। दो बार मराठोंको निकालनेकी चेष्टा व्यर्थ हुई, अंगरेज ८ जहाजोंसे ५० जहाजोंको हरा कर भी मराठोंको खांडेरी आनेसे रोक न सके। मुगलसेनापति सीदीने खांडेरी आक्रमण किया और खांडेरीको सुदृढ़ बना लिया। शिवजीके सेनापति दौलत रावने सामने भूमि पर तोपें लगा उनके काममें बाधा डालनी चाही, परन्तु वह परास्त और घोररूपसे आहत हुए और उनकी छोटी नावें सीदीका मुकाबला कर न सकीं। इसके बाद कुछ दिनों तक सीदी और महाराष्ट्र-दलमें इन टापुओंके अधिकार पर सङ्घर्ष चलता रहा। १६८२ ई०को खाफी खांने लिखा था—कुलाबा और गण्डेरीमें शिवजीने नये किले बहुत मजबूत बनाये हैं। १७१८ ई० अक्तोबरको अंगरेजोंने खांड़ेरी लेना चाहा था, परन्तु सफल न हुए। १७४० ई०को सीदी और अंगरे-

लोमें यह ठहर गया कि विजय प्राप्त होने पर खांडेरी अपनी सब तोपों और सामानके साथ अंगरेजोंको सौंप दिया जावेगा। परन्तु १८७५ ई०की सूरतकी सन्धिके अनुसार यह स्थान अंगरेजोंको मिला, परन्तु थोड़े ही दिन पीछे पुरन्दरकी जो सन्धि हुई, फिर ले लिया गया। इसके बाद मराठे खांडेरीके अधिकारमें रहे। १८१८ ई०को यह पेशवाके राज्यांश-जैसा अंगरेजोंको प्राप्त हुआ।

खाँड़ो (हिं० पु०) षाड़व, छह स्वरोंका राग।

खाँ दौरान् (१म) मुगल बादशाह अकबर शाहके वक्तके एक अमीर। १६०७ ई०को इन्होंने जहानगीर बादशाहसे 'शाह-बेग खां काबुली' खिताब पाया और उन्होंने इन्हें काबुलका सूबेदार भी बनाया। १६२० ई०को ८० सालकी उम्र पर लाहोरमें इनका मृत्यु हो गया।

खाँ दौरान् (२य) ख़्वाजा हीसारी नवाकबन्दीके बेटे। इनका दूसरा नाम ख़्वाजा साबिर नसरत जङ्ग रहा। यह बादशाह शाहजहांके नीचे काम करते थे। सम्राट्ने सातहजारीपन प्रदान करके इनको सम्मानित किया। १६४५ ई०को लाहोरमें किसी कश्मीरी ब्राह्मणके लड़केने रातको सोते समय इनको छातीमें छुरी घुसेड़ दी। इसी छुरीके जख्मसे खाँ दौरानको मौत हो गयी। उसी ब्राह्मणबालकको छुरी लगनेसे पहले इन्होंने मुसलमान बनाया था। मौतके पीछे इनको लाश ग्वालियरमें ले जा कर गाड़ी गयी।

खाँ दौरान् (३य) नसरत जङ्ग खाँ दौरानके लड़के। बादशाह आलमगीरकी अमलदारीमें इन्हें पञ्चहजारी ओहदा मिला था। जिन्दगीके अखीर वक्त सम्राट्ने खाँ दौरानको उड़ीसे सूबेदार बना दिया। वहीं सरकारी काममें रह कर १६६७ ई०को इन्होंने प्राण छोड़ा।

खाँ दौरान् (४र्थ) बादशाह फर्रुखसियारके वक्तके एक अमीर। मुहम्मद शाहकी अमलदारीमें सैयद हुसैन अली खाँका कत्ल और उनके भाई कुतुब-उल्-मुल्ककी कैद हो जाने पर १७२१ ई०को यह अमीर-उल्-उमरा बनाये गये। फिर बादशाहने राजी हो इन्हें शमस-आम-उद्-दौला खिताब दिया था। १७३९ ई०को नादिरशाहके खिलाफ लड़ने जा कर यह बुरी तौर पर जख़्मी हुए और तीन दिनके बीच ही मर गये। इनका असली नाम ख्वाजा मुहम्मद आसिम था। कोई कोई इन्हें अब्द-उस्-समद खाँ भी कहता था।

खांपना (हिं० क्रि०) १ खोंसना, अटकाना। २ लगाना, जमाना। ३ चारपाईकी बुनावटको कसना। यह काम एक नोकदार कीलसे किया जाता है।

खांपुर—१ पञ्जाबकी भावलपुर रियासतका एक शहर। यह अक्षा० २८° २९´ उ० और देशा० ७° ४१´ पू०में पड़ता है। भावलपुर शहरसे ६२ मील दक्षिण-पश्चिम पड़ता है। लोकसंख्या ८६११ है। पहले यहां नाना प्रकारका व्यवसाय होता था, आजकल वैसी समृद्धि देख नहीं पड़ती। यहां मट्टीका एक किला, बड़ा बाजार और रेलवेका ष्टेशन बना है।

२ बम्बई प्रदेशके शिकारपुर जिलेका कोई कसबा। यह अक्षा० २८° १५´ उ० और देशा० ६८° ४७´ पू०में बसा है। शिकारपुर शहरसे खांपुर ४ कोस उत्तरको है। लोकसंख्या कोई ३ हजार है। यहां बपर और सघर मुसलमान ज्यादा रहते हैं। खांपुरमें टप्पादारोंकी कचहरी, मुसाफिरखाना और मवेशीखाना मौजूद है। यहां मट्टीके अच्छे अच्छे बर्तन, जूते और कपड़े बनते हैं।

खाँ बहादुर—पटनावाले राजा मित्रजित्के पुत्र। इन्होंने युरोपीय गणित और विज्ञानके शास्त्रोंका निचोड़ निकालके फारसी जबान्में 'जामबहादुरखानी' नामक एक ग्रन्थ सङ्कलन किया। सिवा इसके 'इल्म-उल्-मनजरात्' नामको एक किताब मुसव्वरी पर भी लिखी गयी।

खांभ (हिं० पु०) १ स्तम्भ, खंभा। २ खाम, लिफाफा।

खांभना (हिं० क्रि०) लिफाफेमें रखना, खाममें बन्द करना।

खाँ मिर्जा—मुगल बादशाह अकबरके मुहाफिज और बहराम खाँ वजीरके लड़के। इनका असली नाम अब्द-उर-रहीम खां था। सम्राट् अकबरने इन्हें प्रधान मन्त्री बनाया और खान्‌खानान् उपाधि दिलाया।

खांवां (हिं० पु०) १ खूब गहरी और लम्बी खाई। २ पुष्पपत्तुपविशेष, एक छोटा पौदा। इनमें श्वेत पुष्प लगते हैं।

खांसना (हिं० क्रि०) १ खोंकना, धांसना, गलेमें अटके हुए कफ या किसी दूसरी चीजको निकालनेके लिये हवाकी आवाजके साथ बाहर फेंकना। २ खखारना, किसीको सचेत करनेके लिये हवाके झिटकेसे गला बजाना।

खांसी (हिं० स्त्री०) गलेमें अटके हुए कफ या किसी दूसरी चीजको निकालनेके लिये आवाजके साथ हवा छोड़नेका काम। खांसी प्रायः अजीर्ण होने या कड़वा चरपरा खानेसे आने लगती है। भारतवर्षमें इसे रोगका घर मानते हैं। कास देखो।

खारमखानी— राजपूतानेकी एक इसलाम धर्मावलम्बी जाति। पहले यह लोग चौहान राजपूत रहे, मुसलमान बने ज्यादा दिन नहीं हुए। यह कहते हैं कि शेखावाटी राज्य परकालको उन्हींके अधिकारमें था, शेखजीने उनसे छीन लिया। अलवर और जयपुरमें खाइमखानी रहते हैं।

खाइरिम—आसामके खासिया पहाड़का एक मध्यवर्ती छोटा राज्य। इसकी लोकसंख्या ३१३२७ हजार और वार्षिक आय १२१६१) रु० है।

यहां खनिज द्रव्योंमें चूना, कोयला और लोहा निकलता है। पहले खाइरिममें लोहा गलानेका बड़ा कारखाना रहा। उसके चिह्नोंके तौर पर जगह जगह आज भी गड्ढे पड़े हुए हैं। यहां कच्चा लोहा बहुत साफ होता है। उसके बांट बना कर जगह जगह भेजे जाते हैं। देशके लोहार विलायती लोहेसे इसको अच्छा समझते हैं। विलायती लोहेकी आमदनीसे कीमत घट जानेपर देशी काम काज चौपट होता जाता है। किन्तु आज भी पहाड़ी गंड़ासे, कुदालें, हथौड़े और तसले इस लोहेसे बना कर नाना देशोंको भेजे जाते हैं। सिवा इसके यहां रूई, अण्डी, (रेशम) चटाई और टोकरीका भी काम होता है। धान, काकुन, कपास, आलू, नारङ्गी, लालमिर्च, सुपारी और पानकी खेती की जाती है। खाइरिमके जङ्गलमें शहद, काला जीरा तथा लाह वगैरहकी पदायश है।

खाई (हिं० स्त्री०) खन्दक, गड्ढा। यह किसी स्थानकी रक्षाके लिये उसके चारों ओर खोद दी जाती है। कहते हैं—खाई इतनी ऊंची चढ़ाना चाहिये, जिसमें आदमी या चौपाया उस पर चढ़ न सके।

खाऊ (हिं० वि०) अधिक खानेवाला, पेटू, मरभुखा।

खाक (फा० स्त्री०) भस्म, राख, गर्द। यह शब्द क्रिया-विशेषणकी भांति भी आता और उस अर्थमें 'कुछ नहीं' बतलाता है।

खाकरोब (फा० पु०) मेहतर, झाड़ू लगानेवाला।

खाकसीर (हिं० स्त्री०) खूबकली, एक ओषधि। खाकसीर किसी घासका दाना है। यह मैदानों, बागों, जङ्गलों और पहाड़ों पर उपजती है। खाकसीरकी लम्बी पत्तियां टहनीकी दोनों तर्फ आती हैं। फूल झड़ने पर छोटी छोटी फुलियां निकलती हैं। इन्हींमें छोटे छोटे दाने आते जो झिल्लीमें लिपट जाते हैं। दाने छोटे और बड़े दो किसमके होते हैं। छोटोंमें कुछ सुर्खी और बड़ोंमें स्याही रहती है। छोटी खाकसीर बड़ीसे ज्यादा कड़वी है। यह अरब, फारस वगैरह मुल्कोंमें ज्यादा पैदा होती है।

खाका (फा० पु०) ढांचा, डौल, नकशा, रेखामात्र। २ तखमीना, खर्चके अन्दाजाका चिट्ठा। ३ मसविदा, आलेख्य।

खाकी (फा० वि०) १ धूसरित, भूरा, मटमैला। २ बेसींग, धुरियां।

खाकी—एक उपासक सम्प्रदाय। यह रामानन्दी संप्रदायसे निकले हैं। रामानन्द-प्रशिष्य कृष्णदासके कील नामक कोई वैष्णव शिष्य रहे। उन्होंने यह संप्रदाय चलाया था। भक्तमाला आदि किसी ग्रन्थमें उल्लेख न रहनेसे बहुतसे लोग इस संप्रदायको अत्यन्त आधुनिक जैसा समझते हैं। शरीर या पहननेके कपड़ेमें भस्म या मट्टी लगानेसे ही इनका नाम खाकी पड़ा है। भस्म और मट्टीका लगाना ही इनको दूसरे वैष्णवोंसे निराला-जैसा रखता है। खाकियोंमें जो घर बांधके रहता, उसका खाना पीना, पहनना, ओढ़ना वैष्णवोंसे बहुत कुछ मिलता है। परन्तु जगह जगह घूमने फिरनेवाले नङ्गे-जैसे रहते और भस्मके साथ मट्टी मिलाकर अवलेपन करते हैं। सिवा इसके खाकी शैवोंकी भांति शिरमें जटा भी रखते हैं।

अयोध्याके हनूमानगढ़में खाकियोंका बड़ा मठ है। सब लोग कहते हैं कि इनके प्रवर्तक कील स्वामीका सिंहासन जयपुरमें रखा है। फरुखाबाद और उसके आसपास बहुतसे खाकी देख पड़ते हैं। सीताराम इनके उपास्य और हनूमान् भक्तिपात्र हैं।

खाखरेचो—बम्बई-प्रान्तीय काठियावाड़ जिलेके मालिया राज्यका प्रधान नगर। यह मालियासे कोई १० मील पूर्व लगता और एक प्राचीन नगर समझ पड़ता है कहते हैं, पहले खाखरेचोकी सीमामें फुलवादार एक बन्दरगाह था। परन्तु रानका पानी कम पड़ जानेसे व्यापारी यहांसे चलते बने और कुनबी आकर जमीन जोतने लगे। ई० १८वीं शताब्दीके आरम्भ काल ठाकुर कायाजीको माच्छूकांठा और वागड़की कुछ भूमि मिली थी। कायाजीके मरने पर मालिया और खाख-रेचो उनके पुत्र मोरजोको मिला। उन्होंने कहते हैं, वागड़से मियानाओंको बुला करके मालिया सङ्कट-मार्गकी रक्षामें नियुक्त किया और अपने आप खाख-रेचोमें रहने लगे। मालिया और मोरवीमें पुराना झगड़ा था। १८वीं शताब्दीके पिछले भागमें मोरवीके १म वाघजीने १५००००) रु० दे करके फतेहसिंह गायक-वाड़की फौज अपनी सहायताको बुला ली। इस लड़ाईमें गायकवाड़ और मोरवीकी फौजोंने खाखरेचो लूटा था। इस ग्रामके दक्षिण एक अच्छासा तलाव है। लोकसंख्या प्रायः २२४१ होगी। यह रानसागर तटसे ४ मील दक्षिण पड़ता है।

खाखस (सं० पु०) खसतिल, पोस्तेका दाना

खाखसतिलोद्भूत (सं० क्लो०) खसखस, पोस्त।

खागड़ा (हिं० पु०) खगड़ तृण, एक घास।

खागना (हिं० क्रि०) १ लगना, चुभना। २ खांगना।

खागर—एक हिन्दू जाति। यह लोग युक्तप्रदेशमें रहते हैं। बुंदेलखण्डमें खागर अधिक देख पड़ते और ८४ भेदोंमें विभक्त हुए कहते हैं। किसी समय इनका राजत्व तक रहा। यह अपनेको क्षत्रियवर्ण बतलाते हैं। कहते हैं, कि उनके पूर्वपुरुष युक्तप्रदेशसे जाकरके बुंदेला राजपूतोंके पास नौकर हुए थे। उन्होंने अक-बर बादशाहसे भीखमगढ़ राज्यके कुरारगढ़का अधि-कार तो पाया, परन्तु मालगुजारी वक्त पर न चुका सकनेसे अपनेको अधिकारियोंका कोपभाजन बनाया और समस्त मान सम्भ्रम गंवाया। यह क्षत्रिय माने जाते हैं।

खागा—युक्तप्रदेशके फतेहपुर जिलेका एक नगर। यह अक्षा० २५° २६′ तथा २६° १′ उ० और देशा० ८१° तथा ८१° २०′ पू०में बसा है। यहां तहसीलदारी भी लगती है। क्षेत्रफल ४८१ वर्गमील है। लोकसंख्या प्रायः २२४३४८ है। वहां ४८३ गांव हैं और किशनपुर नामक एक शहर है। रहनेवालोंमें चमार बहुत हैं। प्रत्येक वर्ष कार्तिकमासको खागामें एक मेला लगता है। यहां डाकघर, थाना, बाजार और रेलवे ष्टेसन मौजूद है।

खाचरोद—मध्यभारत-ग्वालियर राज्यके उज्जैन जिलेका एक शहर। यह अक्षा० २३° २६′ उ० और देशा० ७५° २०′ पू० समुद्र पृष्ठसे १७०० फुट ऊंचे बम्बई बड़ोदा और सेण्ट्रल इण्डिया रेलवेकी रतलाम गोधरा शाखा पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ८१८६ है। आईन-इ-अकबरीमें लिखा है कि खाचरोद मालवा सूबे-की उज्जैन सरकारके एक महलका सदर रहा। यह रङ्गीन लकड़ीके काम और तम्बाकूके लिये मशहूर है।

खाड्गाह (सं० पु०) खे आकाशे अङ्गमाहन्ति, गतिकाले, आ-हन्-ड। श्वेतपिङ्गलाश्व, सफेद पीला घोड़ा।

खाज (हिं० स्त्री०) खुजली, एक बीमारी।

खाजा (हिं० पु०) १ खाद्य, खुराक। २ किसी किस्मकी मिठाई। यह मैदेसे बनती है। पहले यह पेड़ा काट कर सीधा बेला जाता है। फिर घी चुपड़ चुपड़ इसे दोहरा दोहरा कर बार बार बेलते हैं। अन्तको खाजा चौकोर बना कर घी या तेलमें तला और शक्करकी चाशनीमें पागा जाता है। यह दूधमें भिगोकर खानेसे बहुत अच्छा लगता है। ३ वृक्षविशेष, कोई पेड़। ४ ख्वाजा। ख्वाजा देखो।

खाजिक (सं० पु०) खे ऊर्ध्वदेशे आजः क्षेपः तत् साधुः, खाज-ठन्। लाजा, लाई।

खाञ्जन (सं० पु०) खञ्जनस्यापत्यम्, खञ्जन-अण्। खञ्जनके अपत्य

खाञ्जार (सं० पु०) खञ्जारस्यापत्यम्, खञ्जार-अण्। खंजार नामक ऋषिके अपत्य।

खाञ्जाल (सं० पु०) खंजालस्यापत्यम्, खंजाल-अण्। खंजाल नामक ऋषिके अपत्य।

खाट् (सं० अव्य०) अव्यक्त शब्द, समझमें न आनेवाली आवाज़।

खाट (सं० पु०) खे ऊर्ध्वमार्गे अटत्यनेन, अट् करणे घञ्। १ शवरथ, जनाजा। २ खटोली, खटिया। भारतवासी मरणासन्न व्यक्तिको खाटके नीचे उतार देते हैं।

खाटवे—विहारकी एक जाति। पालकी उठाना और खेती करना ही इनकी उपजीविका है। इनमें वहिवो और गोरो नामकी दो शाखाएं हैं। सभीका गोत्र काश्यप और उपास्य देवता भगवती हैं। ब्राह्मण इनका पौरोहित्य नहीं करते। इसी जातिके वैरागी पुरोहित होते हैं। शशिया, काली, धर्मराज, नरसिंह और मीरा इनकी गृहदेवता हैं। देवताके उद्देश भेड़, बकरा, कबूतर आदि बलि दिये जाते हैं। गृहदेवताकी पूजामें पुरोहितोंका कोई काम नहीं, गृहस्थ अपने आप उसे कर लेते हैं।

विवाहके समय गांवके मुखियासे पूछना पड़ता है। उनकी राय मिल जाने पर वरकी ओरसे कन्याके घर कपड़े भेजे जाते हैं। मैथिल ब्राह्मण विवाहका शुभदिन स्थिर कर देते, परन्तु विवाह आदि किसी कामके करनेका भार अपने ऊपर नहीं लेते। इनमें विधवा-विवाह होता है। किन्तु वह सपिण्डके साथ ऐसा कर नहीं सकती। यह शव दाह करते, फिर तीसरे दिन भस्म श्मशानके पास ही गाड़ देते हैं।

खाटि (सं० स्त्री०) खट काङ्क्षायां बाहुलकात् इञ्। १ किण। २ असद्‌ग्रह। ३ शवरथ, अरथी। ४ शुष्कव्रण, सूखा ज़ख्म।

खाटिका (सं० स्त्री०) खाटि स्वार्थे कन् ततः टाप्। शवरथ, जनाजा, ठठरी।

खाटिन (हिं० पु०) धान्यविशेष, किसी किस्मका धान। यह अग्रहायण मासमें प्रस्तुत होता है।

खाड़ (हिं० पु०) गर्त, गड्ढा।

खाड़िया—एक हिन्दू जाति। यह लोग विशेषतः मारवाड़में रहते हैं। कहते हैं कि वह पहले क्षत्रियवर्ण थे, तुर्कोंके डरसे हथियार छोड़ खेती करने लगे। जालोरके राव कानड़देवने उन्हें नवमांश पर जोतनेको भूमि दे करके साहाय्य किया था।

खाड़व (हिं०) षाड़व देखो।

खाड़व (सं० पु०) १ मधुर, अम्ल, लवण और नाना सुगन्धि द्रव्ययुक्त खाद्य विशेष, मीठी, खट्टी, खारी और तरह तरहकी खुशबूदार चीजोंसे बनी हुई खानेकी एक चीज़। २ द्वीपान्तरखजूर, किसी किस्मका छोहारा या पिण्डखजूर। ३ कोई चूर्ण। इसके बनानेकी रीति यह है—बेर और आंवलेको अच्छी तरह पीस डालना चाहिये। फिर उसको सोंठ, इलायची और थोड़ीसी शक्कर मिला कर बिजौरे नीबूके रसमें भिगाते और धूपमें सुखाते हैं। इसी प्रकार बार बार बिजौरे नीबूके रसमें भिगाना और धूपमें इसको सुखाना पड़ता है। इसमें थोड़ासा नमक भी मिला लेना चाहिये, इसी चूर्णका नाम खाड़व है। यह मुंहको साफ करनेवाला, रुचिकर और हृद्रोग तथा मुंहका फीकापन मिटानेवाला है। आहारके पीछे इसे खाना चाहिये। (भावप्रकाश)

खाड़ायन (सं० पु०) खड़ गोत्रापत्यार्थे फञ्। खड़ नामक ऋषिके गोत्रापत्य।

खाड़ायनक (सं० त्रि०) खड़ायनेन निर्वृत्तम्, खड़ायन-वुञ्। खाड़ायनकर्तृक निर्मित, खाड़ायनका बनाया हुआ।

खाड़ायनभक्त (सं० क्ली०) खाड़ायनस्य विषयो देशः, खाड़ायन-भक्तल्। भौरिकाद्यैषुकार्यादिभ्योविधल् भक्तलौ। पा ४।२।५४। खाड़ायनका देश।

खाड़ायनी (सं० पु०) खाड़ायनप्रोक्तमधीयते खाड़ायन-णिनि। शौनकादिभ्यश्छन्दसि। पा ४।३।१०६। खाड़ायनका कहा हुआ शास्त्र पढ़नेवाला।

खाड़ायनीय (सं० त्रि०) खाड़ायन-छ। गहादिभ्यश्च। पा ४।२।१३८। खाड़ायन सम्बन्धीय।

पञ्चमभाग सम्पूर्ण।